दित्वात् वलोपः। गजपिप्पली, गजपीपर।

गजपिप्पली देखो।

कपिवक्त्र (सं॰ पु॰) कपेर्वानरस्य वक्त्रमिव वक्त्रं यस्य, बहुव्री॰। १ देवर्षि नारद। महाभारतमें नारदके वानरमुख सम्बन्धपर इस प्रकार लिखा,—किसी समय देवर्षि नारद और उनके भागिनेय पर्वत ऋषिने इस लोकमें आ मनुष्योंके साथ एकत्र रहने-को विचार किया। फिर दोनों दोनोंको शुभाशुभ यावतीय मनोभाव बता देनेकी प्रतिज्ञाकर सृञ्जय राजाके राज्यमें बस गये। राजाने उभय ऋषिकी परिचर्याके लिये स्वीय कन्याको नियुक्त किया था। कुछ दिन पीछे नारद उस कन्याके प्रति अत्यन्त आसक्त हुये, किन्तु लज्जावशतः यह मनोभाव भागिनेय पर्वत-से बता न सके। पर्वतको आकार इङ्गित द्वारा उनका मनोभाव अवगत हुआ था। उन्होंने अतिशय क्रुद्ध हो नारदको प्रतिज्ञाभङ्ग करनेपर अभिशाप दिया,—"यह राजकन्या तुम्हारी भार्या बनेगी। फिर तुम वानरका मुख धारण कर इस मर्त्यभूमिपर घूमते फिरोगे।" (भारत, शान्ति ३० अ॰) (क्लो॰) २ वानरका मुख, बन्दरका मुंह।

कपिवदान्य (सं॰ पु॰) आम्रातकवृक्ष, आमड़ेका पेड़।

कपिवल्लिका, कपिवल्ली देखो।

कपिवल्ली (सं॰ स्त्री॰) कपिरिव कपिलोम इव वल्ली, मध्यपदलो॰। गजपिप्पली, गजपीपर। २ कपित्थ-वृक्ष, कैथेका पेड़।

कपिवास (सं॰ पु॰) पारिशाश्वत्थवृक्ष, किसी किस्मके पीपलका पेड़।

कपिविरोचन (सं॰ क्ली॰) मरिच, मिर्च।

कपिविरोधि, कपिविरोचन देखो।

कपिवीज (सं॰ क्ली॰) शूकशिम्बीबीज, केवांचका तुख्म।

कपिवृक्ष (सं॰ पु॰) पारिशाश्वत्थ, किसी किस्मका पीपल।

कपिश (सं॰ पु॰) कपिः वर्णविशेषः कपिल नाम वा अस्त्यस्य, कपि-श। लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः शनेलचः। पा ५।२।१००। १ श्यामवर्ण, मटमैला रंग। यह कृष्ण एवं पीत उभय वर्ण मिलनेसे बनता है। २ सिल्हक नाम गन्धद्रव्य, लोबान। ३ द्राक्षामद्य, अङ्गूरी शराब।

"धाता न पश्यत् कपिशं पिपासतः।" (माघ)

४ शिव। ५ जनपदविशेष, एक बसती। कापिशी देखो। (त्रि॰) ६ कपिशवर्णयुक्त, मटमैला।

कपिशा (सं॰ स्त्री॰) कपिश-टाप्। १ सुरा, शराब। २ माधवीलता, चमेली। ३ नदीविशेष, एक दरया। रघुराजा इसी नदीको पारकर उत्कल पहुंचे थे। (रघुवंश) इसका वर्तमान नाम कसाई है। यह मेदिनीपुरके दक्षिणांशसे प्रवाहित हो बङ्गाप-सागरमें जा गिरी है। ४ पिशाचोंकी माता। यह कश्यपकी एक स्त्री रहीं।

कपिशाञ्जन (सं॰ पु॰) कपिशं अञ्जनं कपिशयुक्तं वा अञ्जनं यस्य, बहुव्री॰। शिव।

कपिशापुत्र (सं॰ पु॰) कपिशायाः मदोन्मत्तायाः पिशाच्याः पुत्रः, ६-तत्। पिशाच, शैतान्।

कपिशायन (सं॰ पु॰) १ देवता। २ मद्यविशेष, किसी किस्मकी शराब। यह कपिश देशमें अङ्गूरसे बनायी जाती है।

कपिशिका, कपिशीका देखो।

कपिशीका (सं॰ स्त्री॰) कपिश स्वार्थे बाहुलकात् ईकन् टाप् च। मद्यविशेष, किसी किस्मकी शराब।

कपिशीर्ष (सं॰ क्ली॰) कपीनां प्रियं शीर्षं प्राका-रादीनां अग्रप्रदेशः, मध्यपदलो॰। प्राचीरादिका अग्रभाग, दीवारका सिरा।

कपिशीर्षक (सं॰ क्ली॰) कपीनां शीर्षवर्णवत् कायति प्रकाशते, कपिशीर्ष-कै-क। १ हिङ्गुल, शिङ्गरफ, ईंगुर। २ प्राचीरादिका अग्रभाग, दीवारका सिरा।

कपिशीर्षी (सं॰ स्त्री॰) वादित्रविशेष, किसी किस्मका बाजा।

कपिष्ठल (सं॰ पु॰) ऋषिविशेष। कापिष्ठल देखो।

कपिस्कन्ध (सं॰ पु॰) कपीनां स्कन्ध इव स्कन्धो यस्य, मध्यपदलो॰। दानवविशेष। (हरिवंश)

कपिस्थल (सं॰ क्ली॰) कपीनां स्थलं आवासम्, ६-तत्।

१ वानरोंके निवासका स्थान, बन्दरोंके रहनेका मुकाम। २ पञ्जाबका एक प्राचीन जनपद। वर्तमान नाम कोयल है। यहां अञ्जनाका मन्दिर विद्यमान है।

कपिस्वर (सं॰ त्रि॰) कपीनां स्वर इव स्वरो यस्य, बहुव्री॰। वानरकी भांति स्वरविशिष्ट, जो बन्दरकी तरह आवाज़ रखता हो।

कपिहस्तक (सं॰ पु॰) कपिकच्छु, केवांच।

कपी (हिं॰ स्त्री॰) घिरनी, चरखी, रस्सी लपेटनेका औज़ार।

कपीकच्छु (सं॰ स्त्री॰) कपिकच्छु, संज्ञायां वा दीर्घः। कपिकच्छुलता, केवांच।

कपीज्य (सं॰ पु॰) कपिभिर्वानरैरिज्यते पूज्यते, कपि-यज्-क्यप्। १ रामचन्द्र। २ क्षीरिकावृक्ष, खिरनी। ३ सुग्रीव। ४ हनूमान्।

कपीत (सं॰ पु॰) कपिभिरितः प्राप्तः प्रियत्वेनेति शेषः। क्षेत्रवृक्षावृक्ष, एक बेल।

कपीतक (सं॰ पु॰) प्लक्षवृक्ष, पाकुर, सहोरा।

कपीतन (सं॰ पु॰) कपीनां ईं लक्ष्मीं तनोति, कपि-ई-तन् पचाद्यच्। १ आम्रातक, आमड़ा। २ गर्दभाण्डवृक्ष, पाकर, सहोरा। ३ शिरीष, सरसों। ४ अश्वत्थ, पीपल। ५ गुवाकवृक्ष, सुपारीका पेड़। ६ बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़। ७ गण्डमुण्ड। ८ उदुम्बरवृक्ष, गूलर।

कपीन्द्र (सं॰ पु॰) कपिरिन्द्र इव कपिषु इन्द्रः श्रेष्ठो वा। १ हनूमान्। २ वालि। ३ सुग्रीव। ४ विष्णु।

"शरीरभूतभृद्भोक्ता कपीन्द्रो भूरिदक्षिणः।" (भारत १३।१४९।९९)

५ जाम्बवान्।

कपीवह (सं॰ क्ली॰) कपिवह दीर्घः। इको वहे ऽपीलोः। पा ६।३।१२१। सरोवरविशेष, एक तालाब।

कपीवान् (सं॰ पु॰) वशिष्ठ ऋषिके एक पुत्र। यह चतुर्थ मन्वन्तरके सप्तर्षियोंमें रहे।

कपीवान् (सं॰ पु॰) वशिष्ठ ऋषिके एक पुत्र। (हरिवंश)

कपीश (सं॰ पु॰) कपियोंके राजा, बन्दरोंके मालिक। वालि, सुग्रीव, हनुमान् प्रभृतिको कपीश कहते हैं।

कपीष्ट (सं॰ पु॰) कपीनां इष्टः प्रियः, ६-तत्। १ राजादनीवृक्ष, खिरनी। २ कपित्थवृक्ष, कैथा।

कपुच्छल (वै॰ क्ली॰) कस्य शिरसः पुच्छमिव लाति, क-पुच्छ-ला-क। १ केशचूड़ा। २ स्रुक्‌का अग्रभाग।

"इदमेव कपुच्छलमयं दद्यः आदाकारः।" (शतपथब्राह्मण ४।३।१।१०)

कपुष्टिका (सं॰ स्त्री॰) कस्य शिरसः पुष्टौ पोषणाय कायति, क-पुष्टि-कै-क-टाप्, कस्य शिरसः पुष्टौ पोषणाय हितं, क-पुष्टि-कन्-टाप् वा। केशकी चूड़ाके संस्कारका कार्य।

"यथातत् तीर्थे वर्ण चूड़ाकरणं कपुष्टिका।" (गोभिल)

कपूत (हिं॰ पु॰) कुपुत्र, खराब लड़का, जो पुत्र अपने कुलका धर्म छोड़ असदाचरण करता हो।

कपूती (हिं॰ स्त्री॰) पुत्रका असदाचरण, बुरे लड़केकी हालत।

कपूय (सं॰ त्रि॰) कुत्सितं पूयते, कु-पूय अच् पृषोदरादित्वात् उलोपः। दुर्गन्धि, बदबूदार, खराब।

कपूर (हिं॰ पु॰) कर्पूर, काफ़ूर। यह एक जमा हुआ खुशबूदार मसाला है। कपूर हवा लगनेसे उड़ता और आगकी लपट छू जानेसे जलता है। कर्पूर देखो।

कपूरकचरी (हिं॰ स्त्री॰) गन्धपलाशी, गंधौली। यह एक प्रकारकी लता है। इसके मूलसे सुगन्ध निकलता है। आसामके लोग इसके पत्रसे पाटीय निर्माण करते हैं। गन्धपलाशी देखो।

कपूरकाट (हिं॰ पु॰) धान्यविशेष, किसी किस्मका अगहन धान। यह सूक्ष्म होता है। इसका तण्डुल सुगन्ध और स्वादु है।

कपूरा (हिं॰ पु॰) मेष छाग प्रभृति पशुका अण्डकोष, भेड़ बकरे वग़ैरह चौपायोंके बेज़ोंका थैला।

कपूरी (हिं॰ त्रि॰) १ कर्पूरविशिष्ट, काफ़ूरी, जो कपूरसे तैयार किया गया हो। २ कर्पूरवर्णविशिष्ट, काफ़ूरका रङ्ग रखनेवाला, हलका पीला। (पु॰) ३ वर्णविशेष, एक रङ्ग। यह कुछ-कुछ पीतवर्ण रहता है। केसर, फिटकरी और हरसिंगारके फूलसे इसे तैयार करते हैं। ४ ताम्बूलविशेष, किसी किस्मका पान। यह अति दीर्घ एवं कटु होता है। इसका प्रान्त भङ्गुर रहता है। इसको बम्बईकी ओर लोग अधिक खाते हैं। सुननेमें आता—कपूरी पान खानेसे

हिन्दी विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,

सिद्धान्त-वारिधि, शब्दरत्नाकर, एम, आर, ए, एस,

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्कलित।

चतुर्थ भाग

[कपिल—कृषि]

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. IV.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, Prâchyavidyâmahârnava,

Siddhânta-vâridhi, Sabda-ratnâkara, M. R. A. S.,

Compiler of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of Banglya Sâhitya Parishad and Kâyastha Patrikâ; author of Castes & Sects of Bengal, Mayurabhanja Archæological Survey Reports and Modern Buddhism; Hony. Archæological Secretary, Indian Research Society; Member of the Philological Committee, Asiatic Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by H. C. Mitra, at the Visvakosha Press.

Published by

K[illegible]ndranath Vasu and Visvanath Vasu

9, Visvakosha Lane, Baghbazar, Calcutta.

1922.

पुरुष नपुंसक हो जाता है। (स्त्री०) ५ ओषधिविशेष। इसका पत्र दीर्घ होता है। पत्रके मध्य भागमें एक श्वेत रेखा पड़ी रहती है। मूल कर्पूरकी भांति सुगन्ध देता है।

कपृथ् (वै० पु०) कुत्सितं प्रथयति, कु-प्रथि-क्विप् वैदिकत्वात् निपातनेन सिद्धम्। १ पुरुषत्व, मर्दानगी। (त्रि०) २ कुत्सित प्रकाशक।

कपोत (सं० पु०) को वायुः पोतः नौरिवास्य, कवपोतच् यस्य वा। कबेरोतच् पच। उण् १।६२। १ पक्षी, चिड़िया। २ छायोंकी एक अनोखी स्थिति। ३ पक्षिविशेष, घुग्घू। ४ मूषिकभेद, एक चूहा। ५ कपोतसमूह, कबूतरोंका झुण्ड। ६ पारद, पारा। ७ सर्जिक्षार, सज्जीखार। ८ पारीशवृक्ष, पलाशपीपल। ९ भूरा रङ्ग। १० सुरमेकी सफेदी। ११ पारावतपक्षी, कुमरी, कबूतर। लाटिन भाषामें कपोतजातिका नाम कोलम्बिडी (Columbidæ) है।

इसका संस्कृतपर्याय—गृहकपोत, पारावत, पारापत, कलरव, छेद्य और गृहकुक्कुट है। जङ्गली कबूतरको वनकपोत, चित्रकण्ठ, कोकदेव, दहन, धूसर, भीषण, धूम्रलोचन, अग्निसहाय और गृहनाशन कहते हैं।

पृथिवीपर सर्वत्र कपोत देख पड़ता है। किन्तु अष्ट्रेलिया और भारत-महासागरके उपकूलवर्ती प्रदेशोंमें इसकी संख्या अधिक है। अमेरिकामें यथेष्ट कपोत होते भी विभिन्न प्रकारका नहीं मिलता। भारतवर्ष एवं मलयद्वीपमें जैसे इसकी संख्या अधिक आती, वैसे ही विभिन्न प्रकारकी श्रेणी देखाती है। युरोप और उत्तर-एशियामें इसकी संख्या सर्वापेक्षा अल्प है।

खगतत्त्ववेत्ताओंने आजतक प्रायः तीन सौसे भी अधिक कपोतश्रेणी आविष्कार की है। उन सकल विभिन्न श्रेणियोंमें अधिकांश अति सुन्दर देख पड़ते हैं। अनेक कपोतोंका गात्र भिन्न भिन्न वर्णमें चित्रित रहनेसे बहुत ही मनोहर मालूम देता है। प्रायः सकल श्रेणियोंका अङ्गसौष्ठव सम्यक् सुगठित और सुदृश्य है। कपोतकी अधिकांश श्रेणियां मनुष्यका उपयोगी खाद्य हैं। फिर अनेक स्थलमें यह खाद्यरूपसे प्रचुर व्यवहृत होती हैं।

कपोतोंके मध्य दाम्पत्य प्रेम अति सुन्दर है। एक बार जो जोड़ी मिल जाती, वह जीवन रहते कभी छूटते नहीं देखाती। इनके इस अविच्छिन्न प्रेमकी कथा सकल देशोंके काव्यमें विशेष प्रसिद्ध है।

कपोत और कपोती दोनों घर बना लेने, अण्डे देने और बच्चे सेनेमें एक दूसरेको साहाय्य करते हैं। यह किसी स्थानको तोड़ फोड़ अथवा घोंसला बना नहीं सकते। वृक्षके ऊपर, पर्वतके गह्वरमें, इष्टकालयकी कार्निसके नीचे या देवालयके गात्रपर गर्तको निकाल कपोत अलग घोंसला तैयार करता है। एकबार दो श्वेतवर्ण डिम्ब होते हैं। कोई कोई श्रेणी एकमात्र डिम्ब देती है। किन्तु दोसे अधिक किसीके नहीं रहते। कपोत प्रति मास डिम्ब दिया करते हैं। फिर डिम्ब फूटनेमें १५ दिन लगते हैं। यह १५ दिन ताप पहुंचानेके हैं। कपोती डिम्ब दे प्रथम ३ दिन एकाक्रम दिवारात्र बराबर ताप लगाती, केवल एक बार खानेको उठ जाती है। प्रथम ३ दिन अधिक क्षण वह कपोतको ताप पहुंचानेसे रोकती अथवा क्षणमात्र भी डिम्बको खाली नहीं छोड़ती। कपोती जब खानेको जाती, तब ताप पहुंचानेको कपोतकी बारी आती है। कपोतको निकट न देख वह अत्यन्त क्षुधातुर होते भी डिम्बको अनावृत छोड़ कैसे उठेगी! कपोत निकट न रहनेसे क्षुधा लगने पर कपोती उसे बुलानेको गभीर शब्द करती है। कपोत दूर होते भी उक्त शब्द सुनते ही घोंसलेमें आ पहुंचता है। प्रथम तीन दिन बीत जानेसे वह डिम्बको छोड़ उठ जाती है। दिनको अधिक क्षण कपोत ताप पहुंचाता और रातको कपोतीके कार्य करनेका समय आता है। १५ दिन पीछे डिम्ब फूटनेसे शावक निकलता है। यह शावक चर्माच्छादित मांसपिण्डमात्र होता है। इसके गात्रमें पालकका कोई चिह्न देख नहीं पड़ता और चक्षुद्वय बन्द रहता है। डिम्ब फूटनेसे कपोती फिर ३ दिन ताप देनेको बैठती है। प्रथम ३ दिनकी भांति इस बार भी वह

आहार तथा निद्रा त्याग करती है। कपोत और कपोती दोनों शावकको खिलाते हैं। प्रथमतः यह जो खाते, उसीको अपने उदरस्थ खाद्यके आधारमें रख और दुग्धवत् तरल पदार्थमें परिणत कर शावकके मुखमें पहुंचाते हैं। कुछ दिन बीतने पर वही पदार्थ मण्डवत् कर और शेषको अर्धगलित रख खिलाया जाता है। इसी प्रकार वयोवृद्धिके साथ खाद्यकी अवस्था बदल क्रमशः कठिन द्रव्य खिलाना सिखाते हैं।

डिम्ब फूटनेसे ५।६ दिन पीछे पालकको रेखा देख पड़ती है। एक मासके मध्य शावकका सर्वाङ्ग पालकसे आच्छादित हो जाता, किन्तु उसे चुगना नहीं आता। फिर भी इस समय वह पितामाताके साथ उड़ भूमिपर उतरना और घोंसलेपर चढ़ना सीखता है। इतने दिन उसे खिला देना पड़ता है। मास वा दो मासका होनेपर शावक चुगने लगता है।

कपोत-पक्षके शेष भागमें ३।४ बड़े पालक रहते हैं। प्रथम उनसे पक्षमें उड़नेके उपयुक्त १० पालक निकलते हैं। जिस प्रकार सात वत्सरकी वयसमें मनुष्यके कच्चे दांत गिर फिर आते, वैसे ही उड़ना आरम्भ करनेवाले कपोतके पक्षस्थित पालक झड़कर पुनः प्रकाश पाते हैं। सर्वाग्र पक्षके उड़नेयोग्य भीतरी पर प्रथमसे आरम्भ हो झड़ा करते हैं। एक जबतक झड़कर भर नहीं जाता, तबतक दूसरेका गिरना असम्भव आता है। इसी प्रकार पञ्चम पालक गिरनेपर कपोतका वयस बदलता है। फिर दशम पालक झड़ जानेसे यह युवावस्थाको प्राप्त होता है।

कपोत फल शस्यादि खा जीवनधारण करता है। यह किसी प्रकारके कीटादि नहीं खाता। किन्तु किसी श्रेणीका कपोत क्षुद्र-क्षुद्र शम्बूक खा जाता है। हिन्दूस्थानका कबूतर 'गुटरगू' बोलता है। यह हर्षके समय ही शब्द करता, पीड़ित होनेपर मौनी रहता है। कपोत अपनी श्रेणीकी कपोतीको मनोनीत करता, किन्तु गृहपालित मनुष्यके वशीभूत हो जानेसे भिन्न श्रेणीवालीके साथ भी रहता है। कपोतोंमें स्त्रीजाति ही यथेच्छ-व्यवहार चलाती है। अनेक स्थलमें एक कपोतीके लिये दो कपोत लड़ते देखे गये हैं। फिर कपोती नूतन कपोतकी ओर झुक पड़ी है। इसी प्रकार दो दम्पतीके मध्य विवाद बढ़नेपर परस्पर स्त्रीपरिवर्तन हुआ है। सन्ध्याकाल कपोत अति शीघ्र शीघ्र गृहप्रवेश करता, किन्तु अन्यान्य पक्षियोंकी भांति प्रातःकाल ही उसे छोड़ नहीं चलता। सूर्यका किरण कुछ अधिक अच्छा लगता है। इसकी दृष्टिशक्ति और श्रवणशक्ति अति तीक्ष्ण है। कपोतके दोनों पक्ष अति सबल और लघु होते हैं। इसीसे यह बहुत द्रुत उड़ सकता है।

साधारणतः कपोत देखनेमें अति सुन्दर लगता है। इसका वर्ण और आकार नानाप्रकार है। चञ्चु अधिक दीर्घ नहीं रहता, प्रायः १ इञ्चसे भी अल्प पड़ता है। उसके दोनों भाग सरल एवं ईषत् सङ्कुचित होते हैं। किसी चञ्चुका अग्रभाग अल्प और किसीका अधिक झुक जाता है। ऊपरी चञ्चुके मूलमें ईषत् मांस उभरता है। यह मांस अति कोमल और समान होता है। इसी मांसपर बिलकुल कपालके नीचे दोनों सरल नासाविवर रहते हैं। कपालसे ऊपर मस्तक गोल हो पश्चात् दिक्को ढल जाता है। मुखका विवर अत्यन्त क्षुद्र वा अति वृहत् नहीं होता। दोनों चक्षु चञ्चुसे विस्तर पश्चात् मस्तकके दोनों पार्श्वपर समसूत्रपातसे अवस्थान करते हैं। पक्ष अधिक दीर्घ होते हैं। किसी-किसी श्रेणीके कपोतका पक्ष लपेट लिया जानेसे शेष प्रान्त सूक्ष्म पड़ता और किसीका ईषत् गोलाकार बनता है। पुच्छके पालक भी इसी प्रकार भिन्न-भिन्न आकार धारण करते हैं। पुच्छमें प्रायः १२से १४ तक पालक रहते हैं। वह अन्यान्य स्थानके पालकसे यथेष्ट दीर्घ होते हैं। फिर किसी-किसी श्रेणीवाले कपोतके पुच्छमें सोलह या दश मात्र पालक होते हैं। साधारणतः इसके पैर घुटनेके ऊपरी भाग पर्यन्त पालकसे आच्छादित रहते हैं। अङ्गुलि नातिदीर्घ होती हैं। पैरमें तीन अङ्गुलि आगे और एक पीछे पाते हैं। पश्चात्की अङ्गुलि

हिन्दी विश्वकोष

(चतुर्थ भाग)

कपिल (सं० त्रि०) कम्-इलच् पादेशश्च। कमेः पश्च। उण् १।५६। १ पिङ्गलवर्ण, भूरा, तामड़ा, मटमैला। (पु०) २ अग्नि, आग। ३ वर्णविशेष, मटमैला रंग। ४ कुक्कुर, कुत्ता। ५ शिलारस, लोबान्। ६ महादेव। ७ विष्णु। ८ सर्पविशेष, एक सांप। ९ दानवविशेष, एक राक्षस। १० वरुणवृक्ष, एक पेड़। ११ पित्तल, पीतल। १२ मूषिकभेद, किसी किस्मका चूहा। इसके काटनेसे व्रणकोथ, ज्वर और ग्रन्थ्युद्भव होता है। (सुश्रुत) १२ कुशद्वीपका पर्वतविशेष, एक पहाड़। (भागवत ५।२०।१५) १३ सूर्य, आफताब। १४ वितथके पुत्र। १५ वसुदेवके पुत्र। नराचीके गर्भसे यह उत्पन्न हुये थे। १६ मुनिविशेष। इनके पिताका नाम कर्दम और माताका नाम देवहूति रहा। इन्होंने सांख्यदर्शन बनाया है।

सांख्याचार्य कपिल एक अति प्राचीन ऋषि थे। वेदके उपनिषद्भागमें इनका नाम मिलता है*। यह सिद्धर्षियोंमें सर्वश्रेष्ठ रहे। इसीसे भगवान्ने गीतामें कहा है—

"गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः।" (गीता १०।२६)

हम गन्धर्वोंमें चित्ररथ और सिद्धोंमें कपिल मुनि हैं।

भागवतमें लिखते—कपिल भगवान्का पञ्चम अवतार रहे। उन्होंने महायोगी कर्दमके औरस और देवहूतिके गर्भसे जन्म लिया था। उनके जन्मकाल आकाशमें वर्षणशील मेघसे नानाविध वाद्य बजे, गन्धर्व गाने लगे, अप्सरोंने आनन्दगीत आरम्भ किये, पक्षियों द्वारा पुष्प बरसाये गये और दिक्, जल एवं सर्वप्राणीके मन प्रसन्न हुये। स्वयं ब्रह्मा कर्दमके आश्रम आये थे। उन्होंने कर्दमकी ओर देखकर कहा—हे मुने! तुम्हारे यह बालक साक्षात् ईश्वर हैं। यह सिद्धोंके अधीश्वर हो जायेंगे और सांख्याचार्य मात्रके पूजित हो जगत्में 'कपिल' नाम पायेंगे। इन्होंने ज्ञानसाधन सांख्यशास्त्र उपदेश करनेको ही यह अवतार लिया है।

कपिलने अपने पिता कर्दम और माता देवहूतिको ज्ञान उपदेश किया था। देवहूतिने स्त्री होते भी पुत्रसे तत्त्वकथा सुन ज्ञान और मोक्ष पाया।

भागवतमें देवहूतिके उपदेशच्छलसे कपिलकर्तृक सांख्यमत वर्णित है,—

"जो सकल इन्द्रिय प्रकाशात्मक रहते और जिनके द्वारा शब्द स्पर्शादि विषय अनुभव करते, सत्त्वमूर्ति भगवान्के प्रति उनकी स्वाभाविक वृत्तिको ही निष्कामा भागवती भक्ति कहते हैं। यहसत्त्व पुरुषके लिये यह मुक्तिसे श्रेष्ठ है। किन्तु इन्द्रियमें यह

* "ऋषिं प्रसूतं कपिलं यस्तमग्रे ज्ञानैर्बिभर्ति।" (श्वेताश्वतर ५।२) प्रथम कपिल ऋषिको जिन्होंने सर्वप्रकार ज्ञानद्वारा पोषण किया।

अग्रखण्डको अङ्गुलिको भांति समसूत्रपातसे अवस्थान करती है। नख दण्डोपवेशी पक्षीकी भांति वक्र रहते हैं। फिर अङ्गुलि भी दण्डोपवेशी पक्षीको भांति ग्रन्थित होती हैं। किसी किसी श्रेणीवाले कपोतके समस्त पादपर पालक निकल आते हैं।

हिन्दुस्थानमें कबूतर खेलके लिये पाला जाता है। इसीसे इसका व्यवसाय चला करता है। केवल हिन्दुस्थानमें ही नहीं, पृथिवीके सकल स्थलपर कपोत मनुष्यके आलयमें पलता है।

शाकुनशास्त्रके अनुसार पालक वा व्यवसायी इसकी श्रेणी आकार, कार्य एवं गुणादि देख विभाग करते हैं। इसकी प्रायः दो जाति हैं— गोला और गिरहबाज़। इन दो जातिके कपोत फिर अनेक विभागमें बंटते हैं। गोलावोंमें लक्का, गुली, शीराज़ी, कौड़ियाला, बुग़दादी, मुक्खा, आख़ुता, कबरा, मूंगिया, लोटन प्रभृति प्रधान हैं।

हिन्दुस्थानी लोगोंके घरों और मठोंमें एक-प्रकारका गोला स्वयं अयाचित रूपसे रहा करता है। उसे जङ्गली कबूतर कहते हैं। यह नाना वर्णका होता है। इसका मूल्य अति अल्प है।

गिरहबाज़ोंमें कागज़ी, सब्ज़ा, नीला, स्याहा, अबलक़ा, सुर्ख़ा, सादा, ज़र्दा, भूरा, गण्डेदार, दोबाज़ वग़ैरह अच्छे समझे जाते हैं।

गोला और दोबाज़ देखते ही पहचान पड़ता है। गोलेसे गिरहबाज़की चोंच साफ़ होती है। फिर गोलेके चक्षुमें सर्वदा शान्त भाव रहता, किन्तु गिरहबाज़ अपनी आंख घुमाया करता है।

गिरहबाज़ पैरमें पर आनेसे झबरा और मत्थेपर चोटी बढ़ जानेसे चोटियाला कहाता है। फिर पैरमें पर और मत्थेपर चोटी दोनों होनेसे इसको झबरा-चोटियाला कहते हैं।

पहले हिन्दुस्थानमें कपोतके असंख्य भेद रहे। किन्तु आजकलकी श्रेणियोंको देख प्राचीन नामोंके निर्णय करनेका कोई उपाय नहीं। प्राचीन कवियोंके काव्यमें प्रमाण आता, कि पुराने समय भी हिन्दुस्थानमें कपोत पाला जाता था। राजा-महाराज और सेठ-साहूकार इसे यथेष्ट रूपसे क्रीड़ादिके लिये रख लेते। उस समय लोग कपोतको बहुत अच्छा समझते और बड़ा आमोद करते थे।

हिन्दुस्थानमें बालक इसे उड़ा खेला करते हैं। कपोत उड़ानेके लिये गृहके सर्वापेक्षा उच्च प्राचीर या किसी वृक्षको ऊर्ध्व शाखापर बल्ली गाड़ना या बांधना पड़ती है। इस बल्लीपर एक चौकोन छतरी लगती है। कपोत उड़नेसे इसी छतरी पर आकर बैठता है। छतरीमें कपड़ेका जाल रहता है। इस जालमें एक डोरी लगती, जो भूमिपर लटका करती है। डोरी नीचेसे खींचनेपर छतरीका जाल चारो ओरसे ऊपरको उभर बन्द हो जाता है। जब कोई बाहरी कबूतर भूलसे आ छतरीपर बैठता, तब खेलाड़ी नीचेसे डोरी खींचता है। इससे छतरीका जाल बन्द होते ही कबूतर फंसता है। फिर छतरीको गरारी ढीली कर उतार देते और नवागत कपोतको पकड़ लेते हैं। यह अपना स्थान ख़ूब पहचानता है। कलकत्तेके कबूतर मिर्ज़ापुर और इलाहाबादसे छूटते भी अपने स्थानपर आ पहुंचते हैं। वर्तमान युरोपीय महासमरमें इसने इधरसे उधर पत्र पहुंचानेमें बड़ा साहाय्य किया है। पूर्व समय भी कबूतर हरकारेका काम करते थे। उर्दू के किसी कविने कहा है—

"अब कबूतर किसतरह से आये बामेयार पर।
पर कतरनेको लगी हैं कैंचियें दीवार पर॥"

काठ या बांसके जिस घरमें इसे रखते, उसको काबुक कहते हैं। इसमें एक-एक जोड़ा कबूतर रहनेको दरबे बने होते हैं। उन्होंमें खेलाड़ी इसे खिला-पिला सन्ध्याको बन्द कर देते हैं। हिन्दुस्थानमें प्रायः कबूतरको बजरा खिलाया जाता है।

हिन्दुस्थानमें इसे शीतला, यक्ष्मा, शोषा या शोथ रोग अधिक लगता है। शीतला निकलनेसे कपोतको जलमें भीगने देना न चाहिये। फिर तारपीनका तेल चुपड़नेसे उक्त रोग आरोग्य होता है। शोथ बढ़नेपर इसे रौद्रमें रखते और लहसुनका एक बीज खिलाया करते हैं। शोषापर भी यही औषध चलता है। यक्ष्मा होनेसे सरसोंके तेलका फुलोता अथवा भस्म खिलाया

वृत्ति स्वतः नहीं आती, वेदविहित कर्ममें प्रवृत्ति लगनेसे उत्पन्न हो जाती है। ऐसी भक्ति होनेपर क्रमसे मुक्ति भी मिलती है। जो ईश्वरको आत्मवत् प्रिय, पुत्रवत् स्नेहपात्र, सखा-जैसा विश्वासभाजन, गुरुकी भांति उपदेष्टा, बन्धुकी तरह हितकारी और इष्टदेव सदृश पूज्य समझता अर्थात् जो सर्वतोभावसे भगवान्‌का भजन करता, उसका काल कुछ बना नहीं सकता।

"प्रतिलोम बुद्धिविशिष्ट आत्मा ही पुरुष है। वह पुरुष अनादि, निर्गुण और प्रकृतिसे भिन्न है। पुरुष केवल साक्षीस्वरूप होता है। वह स्वयं प्रकाश पाता और यह विश्व उसके साथ मिलजुल प्रकाशित हो जाता है। वही पुरुष अपने निकट विष्णुकी शक्तिरूपा अव्यक्तगुणमयी प्रकृतिको लीलावशतः पहुंचने पर अयत्नक्रमसे ग्रहण कर लेता है। प्रकृति अपने गुणसे समानरूप विचित्र प्रजासृष्टि करती है। जिसमें अविशेष आत्म विशेषका जो आश्रय प्रधान आता, वही प्रकृति कहाता है। फिर प्रधान त्रिगुण रहता, अतएव अव्यक्त अर्थात् अकार्य ठहरता है। सुतरां वह न तो महत्तत्त्व और न जीवनस्वरूप नित्य अर्थात् जीवको ही प्रकृति है। प्रधानके कार्यस्वरूप चतुर्विंशति पदार्थ हैं। यथा—भूमि, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश पञ्च महाभूत, गन्धतन्मात्र, रसतन्मात्र, रूपतन्मात्र, स्पर्शतन्मात्र तथा शब्दतन्मात्र पञ्चतन्मात्र, चक्षु, कर्ण, जिह्वा, घ्राण, त्वक्, वाक्, पाणि, पाद, पायु एवं उपस्थ दश इन्द्रिय, मनः, बुद्धि, अहङ्कार और चित्त चार अन्तरिन्द्रिय। अन्तःकरणके अन्तरिन्द्रिय ठहरते भी वृत्तिभेदसे उक्त चार प्रकारका प्रभेद पड़ जाता है। यह चतुर्विंशति तत्त्व सगुण ब्रह्मके सन्निवेशका स्थान हैं। तद्भिन्न काल पञ्चविंश तत्त्व है।

"निष्काम धर्म, निर्मल मनः, भक्तियोग, तत्त्वदर्शिज्ञान, प्रबल वैराग्य, तपोयुक्त योग एवं दृढ़तर आत्मसमाधि द्वारा पुरुषकी प्रकृति क्रमशः काष्ठकी भांति अग्नि शेषको तिरोहित हो सकती है। पुरुषकी प्रकृति इसप्रकार एकबार जल जानेसे फिर उभरने नहीं पाती। उस समय पुरुष समझता—इसका भोग भुक्त हो गया। पुरुषको जन्मजन्मान्तरमें अध्यात्मरत हो जब ब्रह्मलोकप्राप्तिके विषयमें भी वैराग्य आता और भगवान्‌के प्रति ऐकान्तिक भक्तिमान् बननेसे आत्मतत्त्व देखाता, तब वह कैवल्यधाममें देहातिरिक्त सदाश्रयस्वरूप परमानन्द पाता है। फिर लिङ्गशरीर नाश हो जानेसे आनन्दलाभ कर पुनर्वार उसको निवटना नहीं पड़ता। आत्मज्ञानके बलसे सकल मिथ्या ज्ञान विनष्ट हो जाता है।"

कपिल मुनिने अपने सांख्यसूत्रमें भी देखाया है—

वस्तुमात्र सत् है अर्थात् किसी वस्तुका उद्भव किंवा विनाश नहीं। वस्तुको आविर्भाव होनेसे हम देख पाते और तिरोभाव होनेसे उसके लिये पछताते हैं। आविर्भावके पूर्व भी वस्तुकी सत्ता स्वीकार करना पड़ती है। ऐसा न मानने पर एकमात्र उपादानसे सकल कार्य उत्पन्न हो सकते हैं। असत्कार्यवादिमतमें उपादान मृत्तिकाके साथ घटके सम्बन्धकी भांति पटका भी सम्बन्ध नहीं लगता। सम्बन्ध न रहते भी जैसे मृत्तिकासे घट बनता, वैसे ही पट भी बन सकता है। किन्तु उत्पत्तिके पूर्व कार्यको सत् स्वीकार करते मृत्तिकासे पटोत्पत्तिकी आपत्ति पड़ नहीं सकती। क्योंकि मृत्तिकासे पटका कोई सम्बन्ध नहीं। जिसके साथ जिसका कोई विशिष्ट सम्बन्ध नहीं रहता, उससे वह कैसे उपजता है! घटके साथ उत्पत्तिसे पूर्व भी मृत्तिकाका सम्बन्ध होता है। इसीसे मृत्तिकासे घट बन जाता है। यदि उत्पत्तिसे पूर्व कार्य असत् ठहरे, तो मृत्तिका-रूप सत्कारणके साथ असत् घटरूप कार्यका सम्बन्ध बंध न सके। सुतरां असत्कार्यवादियोंके मतमें घटसंसर्गशून्य मृत्तिकासे घटोत्पत्ति होनेकी भांति असम्बन्ध मृत्तिकासे पटकी उत्पत्ति होनेमें क्या बाधा है? अथवा संसर्ग न रहते मृत्तिकासे पटोत्पत्ति न होनेकी भांति घट भी कैसे बन सकता है! उक्त दोनों विषय सत्कार्यवादके स्थापनकी प्रधानतम युक्ति हैं।

आहार तथा निद्रा त्याग करती है। कपोत और कपोती दोनों शावकको खिलाते हैं। प्रथमतः यह जो खाते, उसीको अपने उदरस्थ खाद्यके आधारमें रख और दुग्धवत् तरल पदार्थमें परिणत कर शावकके मुखमें पहुंचाते हैं। कुछ दिन बीतने पर वही पदार्थ मण्डवत् कर और शेषको अर्धगलित रख खिलाया जाता है। इसी प्रकार वयोवृद्धिके साथ खाद्यकी अवस्था बदल क्रमशः कठिन द्रव्य खिलाना सिखाते हैं।

डिम्ब फूटनेसे ५।६ दिन पीछे पालककी रेखा देख पड़ती है। एक मासके मध्य शावकका सर्वाङ्ग पालकसे आच्छादित हो जाता, किन्तु उसे चुगना नहीं आता। फिर भी इस समय वह पितामाताके साथ उड़ भूमिपर उतरना और घोंसलेपर चढ़ना सीखता है। इतने दिन उसे खिला देना पड़ता है। मास वा दो मासका होनेपर शावक चुगने लगता है।

कपोत-पक्षके शेष भागमें ३।४ बड़े पालक रहते हैं। प्रथम उनसे पक्षमें उड़नेके उपयुक्त १० पालक निकलते हैं। जिस प्रकार सात वत्सरके वयसमें मनुष्यके कच्चे दांत गिर फिर आते, वैसे ही उड़ना आरम्भ करनेवाले कपोतके पक्षस्थित पालक झड़कर पुनः प्रकाश पाते हैं। सर्वाग्र पक्षके उड़नेयोग्य भीतरी पर प्रथमसे आरम्भ हो झड़ा करते हैं। एक जबतक झड़कर भर नहीं जाता, तबतक दूसरेका गिरना असम्भव आता है। इसी प्रकार पञ्चम पालक गिरनेपर कपोतका वयस बदलता है। फिर दशम पालक झड़ जानेसे यह युवावस्थाको प्राप्त होता है।

कपोत फल शस्यादि खा जीवनधारण करता है। यह किसी प्रकारके कीटादि नहीं खाता। किन्तु किसी श्रेणीका कपोत क्षुद्र-क्षुद्र शम्बूक खा जाता है। हिन्दूस्थानका कबूतर 'गुटरगूं' बोलता है। यह हर्षके समय ही शब्द करता, पीड़ित होनेपर मौनी रहता है। कपोत अपनी श्रेणीकी कपोतीको मनोनीत करता, किन्तु गृहपालित मनुष्यके वशीभूत हो जानेसे भिन्न श्रेणीवालीके साथ भी रहता है। कपोतीमें स्त्रीजाति ही यथेच्छ-व्यवहार चलाती है। अनेक स्थलमें एक कपोतीके लिये दो कपोत लड़ते देखे गये हैं। फिर कपोती नूतन कपोतकी ओर झुक पड़ी है। इसी प्रकार दो दम्पतीके मध्य विवाद बढ़नेपर परस्पर स्त्रीपरिवर्तन हुआ है। सन्ध्याकाल कपोत अति शीघ्र शीघ्र गृहप्रवेश करता, किन्तु अन्यान्य पक्षियोंकी भांति प्रातःकाल ही उसे छोड़ नहीं चलता। सूर्यका किरण कुछ अधिक अच्छा लगता है। इसकी दृष्टिशक्ति और श्रवणशक्ति अति तीक्ष्ण है। कपोतके दोनों पक्ष अति सबल और लघु होते हैं। इसीसे यह बहुत दूर उड़ सकता है।

साधारणतः कपोत देखनेमें अति सुन्दर लगता है। इसका वर्ण और आकार नानाप्रकार है। चञ्चु अधिक दीर्घ नहीं रहता, प्राय: १ इञ्चसे भी अल्प पड़ता है। उसके दोनों भाग सरल एवं ईषत् सङ्कुचित होते हैं। किसी चञ्चुका अग्रभाग अल्प और किसीका अधिक झुक जाता है। ऊपरी चञ्चुके मूलमें ईषत् मांस उभरता है। यह मांस अति कोमल और समान होता है। इसी मांसपर बिलकुल कपालके नीचे दोनों सरल नासाविवर रहते हैं। कपालसे ऊपर मस्तक गोल हो पश्चात् दिक्को ढल जाता है। मुखका विवर अत्यन्त क्षुद्र या अति वृहत् नहीं होता। दोनों चक्षु चञ्चुसे विस्तार पश्चात् मस्तकके दोनों पार्श्वपर समसूत्रपातसे अवस्थान करते हैं। पक्ष अधिक दीर्घ होते हैं। किसी-किसी श्रेणीके कपोतका पक्ष लपेट लिया जानेसे शेष प्रान्त सूक्ष्म पड़ता और किसीका ईषत् गोलाकार बनता है। पुच्छके पालक भी इसी प्रकार भिन्न-भिन्न आकार धारण करते हैं। पुच्छमें प्रायः १२से १४ तक पालक रहते हैं। यह अन्यान्य स्थानके पालकसे यथेष्ट दीर्घ होते हैं। फिर किसी-किसी श्रेणीवाले कपोतके पुच्छमें सोलह या दश सात पालक होते हैं। साधारणः इसके पैर घुटनेके ऊपरी भाग पर्यन्त पालकसे आच्छादित रहते हैं। अङ्गुलि नातिदीर्घ होती हैं। पैरमें तीन अङ्गुलि आगे और एक पीछे पाते हैं। पश्चात्की अङ्गुलि

आशङ्का कैसे आ सकती है—उत्पत्तिसे पूर्व कार्यको सत्ता स्वीकार करते उत्पत्तिसे पूर्व कार्यका प्रत्यक्ष क्यों नहीं होता। कारण महर्षि कपिलके मतानुसार कार्यमात्र उत्पत्तिसे पहले कारणमें अव्यक्तावस्थाके डिम्बस्थित सर्पकी भांति अवस्थान करता है। डिम्बसे निकलनेके पहले जैसे सर्प देख नहीं पड़ता, वैसे ही कारणसे अभिव्यक्त होनेके पहले कार्य भी दृष्टिमें नहीं चढ़ता।

पदार्थोंकी संख्या ठहरानेसे ही इनका बनाया दर्शनसूत्र सांख्य कहाता है। सांख्य देखो। कपिलके कहे पचीसों पदार्थ यह हैं—१ महत्तत्त्व, २ अहङ्कार, ३ मन, ४ शब्दतन्मात्र, ५ स्पर्शतन्मात्र, ६ रूपतन्मात्र, ७ रसतन्मात्र, ८ गन्धतन्मात्र, ९ चक्षुः, १० कर्ण, ११ नासिका, १२ जिह्वा, १३ त्वक्, १४ वाक्, १५ पाणि, १६ पाद, १७ पायु, १८ उपस्थ, १९ आकाश, २० वायु, २१ तेजः, २२ जल, २३ क्षिति, २४ आत्मा और २५ प्रकृति। कार्यकारिता-रहित सत्व, रजः और तमः त्रिगुणको प्रकृति कहते हैं। इस प्रकृतिका प्रथम कार्य बुद्धितत्त्व है। बुद्धितत्त्व ही महत्तत्त्व कहाता है। बुद्धितत्त्वसे अहङ्कार और अहङ्कारसे शब्द प्रभृति तन्मात्र तथा चक्षुः प्रभृति इन्द्रियकी उत्पत्ति हुयी है। फिर पञ्चतन्मात्रसे पञ्च महाभूत निकले हैं। अर्थात् शब्दतन्मात्रसे आकाश, स्पर्शसे वायु, रूपसे तेज, रससे जल और गन्धसे पृथिवीकी उत्पत्ति है। आत्मा नित्य स्वप्रकाश और निर्विकार है। सुख दुःख प्रभृति कुछ भी उसे स्पर्श नहीं करता। जब अन्तःकरणके बुद्धितत्त्वका सुख एवं दुःखाकार भाव उठता, तब अन्तःकरणके साथ आत्माका अभेद ज्ञान लगनेसे अन्तःकरणका सुख तथा दुःखादि आत्मामें मालूम पड़ता है। किसी दर्पणमें भ्रम पड़नेसे मनुष्यका हस्त मस्तकादि देखायी देनेको भांति अभेद ज्ञानसे अन्तःकरणका धर्म सुखदुःखादि आत्मामें झलकता है।

कपिलने तीन प्रमाण माने हैं—प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द। इन्द्रियसे जो ज्ञान आता, उसका करण प्रत्यक्ष प्रमाण कहाता है। घटादि विषयके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध लगनेसे अन्तःकरणमें विषयाकार परिणाम उत्पन्न होता है। वह परिणाम अत्यन्त निर्मल रहता है। फिर उसमें स्वप्रकाश आत्मा प्रतिबिम्बित होनेसे सकल विषय अनुभव करता है। व्याप्तिज्ञानके लिये ज्ञानको अनुमिति कहते हैं। अनुमितिका करण ही अनुमान प्रमाण है। जो हेतु साध्यका अव्यभिचारी रहता (साध्यशून्य स्थान नहीं होता), उसीमें साध्यके सामानाधिकरण्य (साध्याधिकरणमें उसी हेतुके अस्तित्व)को व्याप्ति कहते हैं। फिर साधन किये जानेवालेका नाम साध्य है। जैसे "पर्वतो वह्निमान् धूमात्" अर्थात् 'धूमसे पर्वत वह्निमान् है' स्थानपर पर्वतमें साधन किये जानेसे वह्नि साध्य ठहरता है। जिसके द्वारा साध्यका साधन करते, उसीको हेतु कहते हैं। जैसे धूम है। कारण धूम देखकर ही पर्वतमें वह्निका साधन किया जाता है। वह्निशून्य स्थानमें धूम नहीं रहता। किन्तु वह्निके अधिकरणमें धूमका अस्तित्व होता है। अतएव धूममें वह्निकी व्याप्ति पड़ते कोई विरोध नहीं आता। शब्दसे होनेवाले ज्ञानके करणको ही शब्दप्रमाण कहते हैं। कपिल वेदान्तिककी भांति एक जीववादी नहीं। इनके कथनानुसार सकलका एक जीवात्मा माननेसे रामको सुख मिलनेपर श्याम भी उसे अनुभव कर सकता है। नैयायिकादिकी भांति सांख्य पण्डित आत्मामें दुःख और सुखका होना नहीं मानते। वह विषयमें ही सुख और दुःख स्वीकार करते हैं। यदि विषयमें सुख एवं दुःख न रहता, तो अभिलषित विषय मिलते ही सुख और अनभिलषित विषयसे दुःख न पड़ता। अभिलषित विषयमें सत्वगुणके उद्रेकसे सुख और रजोगुणके उद्रेकसे दुःख होता है।

कपिलने सांख्यसूत्रमें वेदका प्राधान्य स्वीकार किया है। किन्तु ईश्वरका अस्तित्व इन्होंने नहीं माना। सांख्यसूत्रके मतसे अस्तित्व माननेपर ईश्वरको जगत्का कर्ता कहना पड़ेगा। ऐसा होनेसे विषम सृष्टिकारी ईश्वर मनुष्यकी भांति पक्षपाती ठहरता है। किसी मतसे ईश्वरके लिये एकका सुखी और दूसरेको दुःखी करना उचित नहीं। क्योंकि

सम्मुखवाली पङ्क्तिकी भांति समसूत्रपातसे अवस्थान करती है। नग्न दण्डोपवेशी पक्षीकी भांति वक्र रहते हैं। फिर अङ्गुलि भी दण्डोपवेशी पक्षीकी भांति ग्रन्थिल होती हैं। किसी किसी श्रेणीवाले कपोतके समस्त पादपर पालक निकल आते हैं।

हिन्दूस्थानमें कबूतर खेलनेके लिये पाला जाता है। इसीसे इसका व्यवसाय चला करता है। केवल हिन्दुस्थानमें ही नहीं, पृथिवीके सकल स्थलपर कपोत मनुष्यके आश्रयमें पलता है।

शाकुनशास्त्रके अनुसार पालक वा व्यवसायी इसकी श्रेणी आकार, कार्य एवं गुणादि देख विभाग करते हैं। इसकी प्रायः दो जाति हैं—गोला और गिरहबाज़। इन दो जातिके कपोत फिर अनेक विभागमें बंटते हैं। गोलावोंमें लक्का, गुली, शीराज़ी, कौड़ियाला, बुग़दादी, सुक्खा, आख्ता, कबरा, लूंगिया, लोटन प्रभृति प्रधान हैं।

हिन्दुस्थानी लोगोंके घरों और मठोंमें एक-प्रकारका गोला स्वयं अयाचित रूपसे रहा करता है। उसे जङ्गली कबूतर कहते हैं। यह नाना वर्णका होता है। इसका मूल्य अति अल्प है।

गिरहबाज़ोंमें कागज़ी, सब्ज़, नीला, स्याह, अबलक़, सुर्ख़, सादा, ज़र्द, भूरा, गण्डेदार, दोबाज़ वग़ैरह अच्छे समझे जाते हैं।

गोला और दोबाज़ देखते ही पहचान पड़ता है। गोलेसे गिरहबाज़की चोंच साफ़ होती है। फिर गोलेके चक्षुमें सर्वदा शान्त भाव रहता, किन्तु गिरहबाज़ अपनी आंख घुमाया करता है।

गिरहबाज़ पैरमें पर आनेसे झबरा और मत्थेपर चोटी बढ़ जानेसे चोटियाला कहाता है। फिर पैरमें पर और मत्थेपर चोटी दोनों होनेसे इसको झबरा-चोटियाला कहते हैं।

पहले हिन्दुस्थानमें कपोतके असंख्य भेद रहे। किन्तु आजकलकी श्रेणियोंको देख प्राचीन नामोंके निर्णय करनेका कोई उपाय नहीं। प्राचीन कवियोंके काव्यमें प्रमाण आता, कि पुराने समय भी हिन्दुस्थानमें कपोत पाला जाता था। राजा-महाराज और सेठ-साहूकार इसे यथेष्ट रूपसे क्रीड़ादिके लिये रख लेते। उस समय लोग कपोतको बहुत अच्छा समझते और बड़ा आमोद करते थे।

हिन्दुस्थानमें बालक इसे उड़ा खेला करते हैं। कपोत उड़ानेके लिये लड़के सर्वापेक्षा उच्च प्राचीर या किसी वृक्षकी ऊर्ध्व शाखापर बल्ली गाड़ना या बांधना पड़ती है। इस बल्लीपर एक चौकोन छतरी लगती है। कपोत उड़नेसे इसी छतरी पर आकर बैठता है। छतरीमें कपड़ेका जाल रहता है। इस जालमें एक डोरी लगती, जो भूमिपर लटका करती है। डोरी नीचेसे खींचनेपर छतरीका जाल चारो ओरसे ऊपरको उभर बन्द हो जाता है। जब कोई बाहरी कबूतर भूलसे आ छतरीपर बैठता, तब खिलाड़ी नीचेसे डोरी खैंचता है। इससे छतरीका जाल बन्द होते ही कबूतर फंसता है। फिर छतरीको गरारी ढीली कर उतार देते और नवागत कपोतको पकड़ लेते हैं। यह अपना स्थान खूब पहचानता है। कलकत्तेके कबूतर मिर्ज़ापुर और अलाहाबादसे छूटते भी अपने स्थानपर आ पहुंचते हैं। वर्तमान युरोपीय महासमरमें इसने इधरसे उधर पत्र पहुंचानेमें बड़ा साहाय्य किया है। पूर्व समय भी कबूतर हरकारेका काम करते थे। उर्दूके किसी कविने कहा है—

"खत कबूतर किसतरह ले जाये बामेयार पर।
पर कतरनेको लगी हैं कैंचियां दीवार पर॥"

काठ या बांसके जिस घरमें इसे रखते, उसको काबुक कहते हैं। इसमें एक-एक जोड़ा कबूतर रहनेको दरबे बने होते हैं। उन्हींमें खिलाड़ी इसे खिला-पिला सन्ध्याको बन्द कर देते हैं। हिन्दुस्थानमें प्रायः कबूतरको बाजरा खिलाया जाता है।

हिन्दुस्थानमें इसे शीतला, यक्ष्मा, श्लेष्मा वा शोथ रोग अधिक लगता है। शीतला निकलनेसे कपोतको जलमें भीगने देना न चाहिये। फिर तारपीनका तेल चुपड़नेसे उक्त रोग आरोग्य होता है। शोथ बढ़नेपर इसे रौद्रमें रखते और लहसुनका एक बीज खिलाया करते हैं। श्लेष्मापर भी यही औषध चलता है। यक्ष्मा होनेसे उसीके तेलका पलीता अथवा भस्म खिलाया

ईश्वर सबके निकट समान है। अयस्कान्त मणिमें चेतन-सम्बन्ध न रहते भी लोह आकर्षण करनेवाली प्रवृत्तिकी भांति चैतन्यमय ईश्वर अचेतन प्रकृतिको सृष्टि रचनेमें लग सकता है। कपिलके कथनानुसार अन्तःकरण जब प्रकृतिमें लीन हो जाता, तब पुरुष मुक्ति पाता है। अन्तःकरण बना रहनेसे पुरुषको मुक्ति नहीं मिलती।

कपिलके ही कोपानलसे सगरराजाका वंश ध्वंस हुआ था। कोई सगरनामक कपिलको स्वतन्त्र बताता है।

१७ ब्राह्मण-सम्प्रदायविशेष। यह अपनेको कपिल-वंशोद्भव बताते हैं। सूरत, भडोंच और जम्बूसरमें कपिलब्राह्मण रहते हैं।

पिलक (सं॰ त्रि॰) कप-इलच् स्वार्थे क, इस्व त्वः। १ कम्पान्वित, कांपनेवाला। २ कपिल, भूरा, तामड़ा। (पु॰) ३ पिङ्गलवर्ण, भूरा रंग।

:पिलक्षेत्र—नर्मदा और महोसागरका मध्यवर्ती उप-कूल। स्कन्दपुराणोक्त रैवाखण्डके मतसे यह अति पुण्यस्थल है। कपिलाश्रम देखो।

:पिलगङ्गा (सं॰ स्त्री॰) कपिलगङ्गा, काम-रूपकी एक नदी। (कालिकापु॰ ७८।१०८) इसका वर्त-मान नाम कपिली है।

कपिलच्छाया (सं॰ स्त्री॰) मृगनाभि, कस्तूरी, मुश्क।

कपिलता (सं॰ स्त्री॰) १ शुकशिम्बी, केवांच। २ भूरापन।

कपिलदेव (सं॰ पु॰) किसी स्मृतिशास्त्रके प्रणेता।

कपिलद्युति (सं॰ पु॰) कपिला रक्ता पिङ्गलवर्णा वा द्युतिर्यस्य, बहुव्री॰। सूर्य, सूरज।

कपिलद्राक्षा (सं॰ स्त्री॰) कपिला कपिलवर्णा द्राक्षा, कर्मधा॰। कपिलवर्ण वृहद् द्राक्षाविशेष, एक बड़ा और तामड़ा अङ्गूर। इसका संस्कृत पर्याय—मृद्वीका, गोस्तनी, कपिलफला, अम्लतरला, दीर्घफला, मधुवल्ली, मधुफला, मधुली, हरिता, हारहारा, सुफला, मही, हिमोत्तरा, पथिका, हैमवती, शतवीर्या और काश्मरी है। यह मधुर, शीतल, हृद्य तथा मदहर्षद और दाह, मूर्छा, ज्वर, श्वास, तृष्णा एवं हृल्लास (वमनवेग) निवारक होती है। (राजनिघण्टु

कपिलदामोदर—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। (सुभाषितावली)

कपिलद्रुम (सं॰ पु॰) कपिलः कपिलवर्णो द्रुमः, मध्यपदलो॰। काचीनाम सुगन्धकाष्ठ, एक खुशबूदार लकड़ी।

कपिलदीप—एक पवित्र तीर्थ। यहां भगवान्‌की अनन्तमूर्ति विराजती है।

कपिलधारा (सं॰ स्त्री॰) कपिलानां धारा दुग्धधारा इव शुभ्रा धारा यस्याः कपिलानां दुग्धधाराभिः सम्भृता निर्मला धारा यस्याः इति वा, आकारस्य ह्रस्वत्वम्। कपिलः गंगा कपिलो धारया... । १ गङ्गा। २ तीर्थ-विशेष। (काशी॰ ९९ अ॰) ३ कपिला गायके दुग्धकी धारा।

कपिलफला (सं॰ स्त्री॰) कपिलं फलमस्याः, बहुव्री॰। कपिलद्राक्षा, अङ्गूर।

कपिलमत (सं॰ क्लो॰) कपिलस्य मुनेर्मतम्, ६-तत्। कपिलमुनि या सांख्यदर्शनका मत।

कपिलमुनि (सं॰ पु॰) बङ्गाल प्रान्तके खुलना जिलेका एक ग्राम। यह कपोताक्ष (कवदक) नदीके तटपर अवस्थित है। पूर्वकाल कपिल नामक किसी साधुने यहां कपिलेश्वरी देवमूर्ति स्थापन की थी। उन्होंके नामानुसार यह स्थान कपिलमुनि कहाया। चैत्रमासमें वारुणीके दिन कपिलेश्वरी देवीका महोत्सव होता है। फिर उसी समय मेला भी लगा करता है। वारुणीको यहां कपोताक्ष नदीमें स्नान और देवीदर्शन करनेसे अशेष पुण्य मिलता है। इसके उपलक्षमें नाना स्थानसे तीर्थयात्री आते हैं। जाफर अली नामक किसी मुसलमान पीरकी यहां सुन्दर मसजिद बनी है। यह ग्राम अक्षा॰ २२° ४१′ उ॰ और देशा॰ ८९° २१′ पू॰पर पड़ता है।

कपिलरुद्र—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। (सुभाषितावली)

कपिललिङ्ग—लिङ्गविशेष। यह मेघना नदीके पूर्वतट प्रायः दो हजार हाथ दूर नरपालके निकट अवस्थित है। (म॰ ब्रह्मख॰ १९।४४)

कपिललोह (सं॰ क्लो॰) पित्तल, पीतल।

जाता है। होमिओपाथिके मतका कोई कोई औषध इसके लिये विशेष उपकारी है।

गिरहवाज़ कबूतर आकाशमें उड़ते या भूमिपर उतरते समय उलट-पुलट गिरह लगाता है। यह इसकी जातिका स्वभावसिद्ध कार्य है। इस कामको गिरहबाज़ी कहते हैं। कोई कोई कबूतर बड़ी गिरहबाज़ी करता है। गिरहवाज़ एकबार उड़नेसे बहुत ऊंचे चढ़ता, इसीसे अनेक समय श्येन (शिकरा) पक्षी द्वारा मारे पड़ता है। फिर कोई कोई एक-बारगी ही दोनों ओर गिरह लगा उड़ सकता है। एक प्रकारका गिरहवाज़ बांसों चढ़ता है। किन्तु पट्ठा पहले पूरे तौरपर गिरहबाज़ी कर नहीं सकता, थोड़ा-बहुत घूम फिर सीधे उड़ने लगता है। जो गिरहवाज़ अति अल्प दूर जा गिरहवाज़ी करता, उसे गरमाया समझना पड़ता है। गर्म होनेसे अधिक दूर उड़ना असम्भव है।

क्या गोला, क्या गिरहवाज़—सब तरहके कबूतरोंको धूप अच्छी लगती और उनके लिये फ़ायदेमन्द भी ठहरती है। विशेषतः गिरहवाज़ भली भांति धूप न मिलनेसे घबरा जाता है। आतपहीन स्थान इसके लिये विषम अनिष्टकर है। गिरहवाज़ व्याकुल होनेसे पुच्छके पालक उखड़ने या कटनेपर आराम पाता है। यह दैर्घ्यमें अधिक बड़ा नहीं पड़ता, साधारणतः १२से १५ इञ्च पर्यन्त रहता है। इसको अंगरेज़ीमें टम्बलर-पिजन (Tumbler-pigeon) कहते हैं।

गोला कबूतर देखनेमें अति सुन्दर लगता है। इसके भिन्न भिन्न परिवारको आकृतिमें जो विशेष वैलक्षण्य आता, वह नीचे लिखा जाता है—

कलगीदार—इस कपोतकी श्रेणीका विशेष लक्षण—मस्तकके पश्चाद्देशसे चक्षुके पार्श्व की राह पक्षके ऊपरी भाग पर्यन्त दो स्तर उच्च पालकोंका होना है। इसका एक स्तर वक्ष और अपर स्तर पृष्ठकी ओर झुक पड़ता, मध्यस्थल सीमन्तकी भांति रहता है। जैकोबिन सुर्ख़, स्याह, सफ़ेद और ज़र्द रङ्गका होता है। पृष्ठ, पुच्छ, वक्षःस्थल और मस्तक प्रायः श्वेत रहता, केवल पक्षके वर्णमें ही भेद पड़ता है। फिर जो चिह्न सदृश लगता, वह ईष्टक-के रङ्गमें ईषत् पीत मिला देनेके वर्णसे मिलता है। स्याहका रंग निहायत काला रहता, जिसमें कुछ कुछ नीलापन झलकता है। दोनों पक्षोंपर ही उक्त वर्ण होता है। फिर गलदेशवाले पूर्वोक्त दोनों स्तरोंमें पालकको शिखायें उन्हीं उन्हीं वर्णोंकी देख पड़ती हैं। बिलकुल सफ़ेद और कुछ बैंगनी लगनेवाले खाकी रंगका जैकोबिन (कलगीदार) भी कहीं कहीं मिल जाता है। इसका चञ्चु ईषत् क्षुद्र और चक्षुके मणिका चतुष्पार्श्व अमित होता है। पक्षके शेष बड़े पालक तीन ही रहते हैं। यह अति मोह होता है। अंगरेज़ीमें इस श्रेणीको जैकोबाइन और जाक (Jacobine and Jack) कहते हैं।

लक्का—क्षुद्र श्रेणीका कपोत है। लक्केका विशेष चिह्न पुच्छके पालकोंका मयूर-पक्षकी भांति सर्वदा छत्राकार रहना है। ऐसे कबूतरको पूरालक्का कहते हैं। साधारणतः जिनके पुच्छमें पालकपूर्ण छत्राकार नहीं आते, वह आधे लक्का कहाते हैं। पूरे लक्केका वर्ण समस्त श्वेत होता है। फिर वर्ण अधिक उज्ज्वल सफ़ेद रेशमकी भांति रहते इसको रेशमी लक्का कहते हैं। कोई कोई पूरा लक्का बिलकुल काला भी रहता, जो देखनेमें अधिक मनोहर नहीं लगता। आधा लक्का सफ़ेद, काला और बिलुनकाल्लाके रङ्गका होता है। जो लक्का देख-नेमें नानावर्णविशिष्ट और सुन्दर रहता, उसका नाम नक्शा पड़ता है। पूरा लक्का भूमिपर चुगते समय बहुत अच्छा लगता है। यह बैठ जाते या चलनेको पैर उठाते अथवा गलदेश कुछ झुका ऐसे सुन्दर भावसे दिखाता, कि देखते ही हृदयमें आनन्द उमड़ आता है। दो-एक श्रेणीवाले लक्कोंके मस्तकपर चोटी नहीं रहती। किन्तु सकलके ही पैरोंमें पर होते हैं। अंगरेज़ीमें इसको फैन-टेल-पिजन (Fantail pigeon) यानी लकपरा कबूतर कहते हैं।

शीराजी—स्याह, सुर्ख़, ज़र्द, गहरा खाकी और

कपिलवस्तु (सं० क्लो०) प्राचीन नगरविशेष, एक पुराना शहर। यह शाक्य-राजावोंकी राजधानी रहा। शाक्यसिंहने यहीं जन्मग्रहण किया था। बौद्धग्रन्थ पढ़नेसे समझ पड़ता—बुद्धदेवके समय कपिलवस्तुमें विस्तर व्यक्तियोंका वास रहा। सुन्दर राजप्रासाद, मनोहर उद्यान और असंख्य सुरम्य हर्म्य स्थान स्थान पर शोभित थे। फिर यहां नाना देशीय लोग आते-जाते रहे। शाक्य देखो।

प्रसिद्ध चीन-परिव्राजक फाइहियान् और हिउएन सियङ्ग कपिलवस्तु देखने आये थे। उन्होंने क्रमान्वयसे 'किआ-वी-लो-वे' और 'कि-पि-लो-फ-सु-ति' नामपर इस स्थानका उल्लेख किया है।

हिउएन सियङ्गके वर्णनामें समझते—कपिलवस्तु एक क्षुद्रराज्य और परिमाणका फल प्रायः ६०० मील (४००० लि) है। उभय परिव्राजकोंके समय कपिलवस्तुकी अवस्था नितान्त शोचनीय हो गयी थी। पूर्व जो-जो स्थान समृद्धिशाली रहे, वही उनको जनमानवशून्य मरुप्राय देख पड़े। यहां तक, कि उस समय शाक्य-राजधानी कपिलवस्तु नगरको पूर्णश्री देखनेमें आती न थी। नगरका प्राचीन इष्टकनिर्मित प्रासाद टूटा-फूटा पड़ा रहा। उसीके निकट हीनयान मतावलम्बियोंका एक सङ्घाराम था। सिवा इसके हिन्दुवोंके दो मन्दिर भी रहे। प्रासादके मध्यस्थलमें शुद्धोदन राजाकी प्रस्तरमूर्ति थी। उससे थोड़ी दूरपर बुद्धजननी मायादेवीका अन्तःपुर रहा। फिर नगरके इधर उधर अनेक स्तूप देख पड़ते थे।

वर्तमान फैजाबादसे घर्घरा एवं गण्डकी नदीके मध्यवर्ती स्थान और दोनों नदीके सङ्गम पर्यन्त चीनपरिव्राजक-वर्णित कपिलवस्तु राज्य समझ पड़ता है। फैजाबादसे २५ मील उत्तर-पूर्व अवस्थित बस्ती जिलाके अन्तर्गत मन्सूर परगनेका सामील भुइला स्थान ही प्राचीन कपिलवस्तु नगर माना गया है। आजकल सबलोग उसे 'भुइला ताल' कहते हैं। (Cunningham's Arch. Survey of India, Vol. XII. p. 83-172.)

कपिलशिंशपा (सं० स्त्री०) कपिला पिङ्गलवर्णा शिंशपा, कर्मधा०। शिंशपा वृक्षविशेष, भूरी सीसम। इसका संस्कृत पर्याय—कपिला, [illegible], सारिणी, कपिलाक्षी, भस्मगर्भा और कुशिंशपा है। राजनिघण्टुके मतसे यह तिक्त एवं शीतवीर्य और वामवात, पित्त, ज्वर, वमन तथा हिक्कानाशक है।

कपिलसंहिता (सं० स्त्री०) एक उपपुराण। इसमें उत्कल देशके तीर्थोंका माहात्म्य वर्णित है।

कपिलस्मृति (सं० स्त्री०) कपिलप्रणीता स्मृतिः, मध्यपदलो०। सांख्यशास्त्र। वेदके पथका अनुभव रहने और मुनिप्रणीत उपदेशमें सांख्यशास्त्रका कापिलत्व माना जाता है। "कपि[illegible] [illegible]सांख्यम्' प्रत्याख्यातम्।" "[illegible] इत्यादि सांख्य।" (सांख्यसूत्र-भाष्य)

कपिला (सं० स्त्री०) कपिलो वर्णो [illegible] अर्शआदित्वात् अच-टाप्। १ पुण्ड[illegible] दिग्गजकी पत्नी। २ भस्मगर्भ शिंशपावृक्ष, भूरा सीसम। ३ रेणुका नामक गन्धद्रव्य, एक सुगन्धि [illegible]। ४ स्वर्णवर्ण गाय। ५ दक्षकन्या। ६ [illegible]कन्या। ७ कामधेनु। ८ शिंशपा, सीसम। ९ [illegible], किसी किस्मकी पीतल। १० कामरूपस्थ नदीविशेष। (कालिकापु० ८१ अ०) ११ मध्यप्रदेशके अन्तर्गत एक नदी। यह नर्मदा नदीसे मिल गयी है।

"आपगा कपिला नाम [illegible] देवतैः।
नर्मदा सङ्गमतस्तु वरदायतं पठ्यते॥" (रेवाखण्ड [illegible] अ०)

कपिला और नर्मदा नदीका सङ्गमस्थान वरदायतं कहाता है। रेवाखण्डके मतसे यहां स्नानध्यानपूर्वक महेश्वरको पूजा करनेसे अक्षय स्वर्गलाभ होता है। १२ तीर्थविशेष। १३ [illegible]। १३ विशाल देशका एक ग्राम। (म० [illegible]) १४ निर्विषजलायुका, जोंक। १५ कष्टसाध्य लूताभेद, मुश्किलसे आराम होनेवाली मकड़ी। १६ कपिलवर्णा भूगी।

कपिलाक्षी (सं० स्त्री०) कपिले कपिलवर्णे [illegible] पुष्पं यस्याः। १ मृगविशेष, किसी किस्मका [illegible] हिरन। इसकी आंखें भूरी होती हैं। २ कपिलशिंशपा, भूरी सीसम।

काश्मीरी वगैरह तरह तरहके रङ्गोंका होता है। इसके विशेष चिह्नमें चञ्चुके मूलसे चञ्चुके पश्चात् अवटु (गुद्दी), पृष्ठ एवं पक्षको राह पुच्छके मूल पर्यन्त एकमात्र वर्ण रहता और निम्न चञ्चुके नीचे गलदेश, वक्षस्थल, पक्षका निम्नभाग तथा पुच्छका पालक श्वेत देख पड़ता है। फिर वयोवृद्धिके साथ जघनदेश अङ्गुलिके ग्रन्थि पर्यन्त पालकसे ढंक जाता है। इस जातिका कपोत बहुत बड़ा होता है। शीराजी देखनेमें अति सुन्दर लगता, किन्तु गम्भीर भीमकाय और बलशाली रहता है। शुभ्र शीराजीका रङ्ग बिलकुल लाल नहीं होता। उसमें चित्रके वर्णपर ईषत् कृष्णाभ पीतका भाग ही अधिक देख पड़ता है। स्याह शीराजीका वर्ण घोर नीलवर्णयुक्त कृष्ण लगता है। जर्द शीराजी हरिताभ पिङ्गल होता है। खाकी शीराजी देखनेमें सुन्दर और स्याहीसे मन्दप्रकृति रहता है। काश्मीरी खाकी होते भी पालक, वक्ष, पृष्ठ, पक्ष तथा अवटु (गुद्दी)का वर्ण श्वेत लगता और बैंजनी मिला बूंद बूंद दाग पड़ता है। एकरंगे शीराजीको वक्ष एवं उदरमें भिन्न वर्णका एक क्षुद्र पालक रहनेसे गुलदार कहते हैं। गुलदार शीराजी देखनेमें अति सुन्दर लगता है।

मुक्खा—प्रधानतः दो श्रेणीका होता है—स्याह और धब्बेदार। यह देखनेमें अति सुन्दर रहता है। इसके विशेष चिह्नमें चञ्चुके ऊपर चञ्चुके उपरिभागसे शिखाके कोण पर्यन्त मस्तक धब्बेदार सफ़ेद लगता और दोनों पक्ष तथा समस्त देहका अन्य वर्ण पड़ता है। यह अति क्षुद्र जातिका कपोत है। फिर मुक्खा जितना ही क्षुद्र रहता, उतना ही सुदृश्य लगता है। यह भी लक्केकी तरह गर्दन हिलाता और अवटु (गुद्दी) उठाते समय सुन्दर एवं सौष्ठवसम्पन्न देखाता है। स्याह मुक्खेमें उज्ज्वलता अधिक होती है। इसका भी गलदेश नानावर्णमिश्रित चित्रित रहता है। सिवा स्याहीके दूसरे रङ्गके मुक्खेको ही किसीके मतमें धब्बेदार कहते हैं। धूसर चित्र-सदृश वर्णविशिष्ट मुक्खा अत्युत्कृष्टकर होता है। इसके पैरमें पर नहीं रहता। किन्तु मस्तक पर शिखा निकल आती है। मस्तकका श्वेतवर्ण चञ्चुके नीचे या गल-देशमें फैल जानेसे इसको दागी मुक्खा कहते हैं। दागी मुक्खेका मूल्य एवं आदर अल्प रहता और रूप भी ईषत् विश्री लगता है। विलायती मुक्खेके मस्तक तथा पक्षवाले तीन बड़े पालक और पुच्छका वर्ण काला होता है। शिखा कुछ बढ़ मस्तकके सम्मुख झुक आती है। गात्रका वर्ण श्वेत रहता है। यहां तीन प्रकारका मुक्खा होता है। इन तीनों श्रेणीवाले कपोतके मस्तकका वर्ण यथाक्रम कृष्ण, पीत और रक्त लगता है। फिर मस्तकका वर्ण, पक्ष एवं पुच्छके बड़े पालकोंमें भी रहता है। अंगरेज़ोंमें इसे नन-पिजन (nun-pigeon) यानी वैरागन कहते हैं।

कौड़ियाला—चञ्चु कौड़ी जैसे होते हैं। चक्षुके चतुष्पार्श्व और नासिकाके मूलमें चञ्चुके ऊपर ईषत् रक्ताभ कोमल मांसके बड़े बड़े फूल पड़ जाते हैं।

चोटियाला—विशेषत्वसे मस्तकपर शिखा और पादमें पालकका विकाश देखाता है। पैरमें पहोंके पास जो पर रहते, वह बहुत बड़े लगते हैं। चोटियाला देखनेमें अधिक सुदृश्य नहीं होता। शीराजीकी तरह यह भी अति वृहत् एवं भीमकाय रहता, किन्तु माधुर्यपूर्ण गम्भीर भावके बदले अपनेमें कुछ भीम-दर्शनत्व रखता है। चोटियालोंमें किसी किसी श्रेणीका चक्षु ईषत् कृष्णाभ लगता है। इनमें सुर्खोंकी संख्या ही अधिक है। फिर सफ़ेद काला चोटियाला भी होता है। यह कोटरमें बैठ गुटरगूं शब्द निकाला करता है। उक्त शब्द करते समय गलदेशका अभ्यन्तरस्थ खाद्याधार फूल उठता है। उक्त खाद्याधार या खोल को अंगरेज़ोंमें क्राप (Crop) और इस श्रेणीके कपोतको क्रापार (Cropper) कहते हैं। पैरके परोंको देख कोई इसे फ़्लेयाइड पिजन (Flay-thighed pigeon) भी कह देते हैं।

लक्का—दो प्रकारका है—स्याह और सफ़ेद। यह अति वृहत्काय होता है। इसके चञ्चुसे नीचे वक्षःस्थल पर्यन्त समस्त स्थान थैलीकी तरह फूल

कपिलाचार्य (सं० पु०) कपिलः कपिलनामा आचार्यः, कर्मधा०। १ कपिलऋषि। २ विष्णु।

"महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपतिः।" (विष्णुस०)

कपिलाञ्जन (सं० पु०) कपिलं अञ्जनं यस्य, बहुव्री०। शिव, महादेव।

कपिलातीर्थ (सं० स्त्री०) तीर्थविशेष। इस तीर्थमें ब्रह्मचारी रह स्नान और पितृलोक तथा देवताकी अर्चना करनेसे सहस्र कपिला गोदानका फल मिलता है। (भारत ३।८३।४५)

कपिलादान (सं० स्त्री०) कपिलाया दानम्, ६-तत्। कपिलागोदान। मत्स्यपुराणमें कपिलाके दानका यह मन्त्र लिखा है—

"कपिले सर्वभूतानां पूजनीयासि रोहिणी।
तीर्थदेवमयी यस्मात् अतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥"

घण्टा, चामर, किङ्किणी, दिव्य वस्त्र एवं हेमदर्पण भूषित, पयस्वी, सुशील, तरुण और वत्सयुक्त कपिला देना चाहिये। इस दानसे स्वर्गलाभ होता है।

कपिलाधिका (सं० स्त्री०) तैलपिपीलिका, तिलचटा।

कपिलापुर—दक्षिणापथका एक नगर। (रेवाखण्ड १०८) यह सम्भवतः नर्मदा किनारे अवस्थित है।

कपिलार्जक (सं० पु०) कपिलवर्ण-तुलसीवृक्ष, भूरी तुलसीका पेड़।

कपिलावट (सं० पु०) कपिलया कृतो ऽवटः गर्तः। तीर्थविशेष। (भारत, वन ८४।१८८)

कपिलावर्त—बम्बईप्रान्तके भड़ोंच जिलेमें नर्मदा और कपिला नदीका सङ्गमस्थान। स्कन्दपुराणके रेवाखण्डमें इसका नाम रुद्रावर्त लिखा है।

कपिलाश्व (सं० पु०) कपिलाः कपिलवर्णा अश्वा यस्य, बहुव्री०। १ इन्द्र। २ एक राजा। ३ सूर्यवंशीय कुवलयाश्वके पुत्र।

कपिलासङ्गम—कपिला और नर्मदा नदीके सङ्गमका स्थान। यहां स्नान करनेसे अशेष फललाभ होता है। इसके निकट अनेक पवित्र तीर्थ हैं। (रेवाखण्ड ११५०) यह बम्बई प्रान्तवाले वर्तमान भड़ोंच जिलेके अन्तर्गत है।

कपिलाह्रद (सं० पु०) तीर्थविशेष। (भारत, वन ८४ अ०)

कपिलिका (सं० स्त्री०) कपिला संज्ञायां कन्-टाप् अतइत्वम्। १ शतपदीभेद, किसी किस्मकी कनखजूरी।

"शतपद्यस्तु परुषा कृष्णा चित्रा कपिलिका पीतिका रक्ता श्वेता अग्निप्रभा इत्यष्ट।" (सुश्रुत) २ पिपीलिकाविशेष, एक चींटी।

कपिली—नदीविशेष, एक दरया। इसका प्राचीन नाम कपिला वा कपिलगङ्गिका है।

कपिलीकृत (सं० त्रि०) अकपिलं कपिलं कृतम्, कपिल अभूत तद्भावे च्वि-कृ-क्त। कपिल बनाया हुआ, जो भूरा किया गया हो।

कपिलेन्द्रदेव—उत्कलके एक राजा। बाल्यकाल यह किसी ब्राह्मणके मवेशी चराते थे। फिर इन्होंने उत्कलराज नेत्रवासुदेवके निकट जा नौकरी की। कार्यदक्षता गुणसे यह नेत्रवासुदेवके अत्यन्त प्रियपात्र बन गये। वासुदेवके मरने पर इन्होंने अपने साहस-बलसे उत्कलका राजसिंहासन पाया था। इनके राजत्वका काल २७ वर्ष (१४५२—१४७८ ई०) रहा।

कपिलेश (सं० स्त्री०) कपिलेन प्रतिष्ठापितं ईशं लिङ्गम्, मध्यपदलो०। काशीस्थ शिवलिङ्गविशेष।

"कपिलेशं महालिङ्गं कपिलेन प्रतिष्ठितम्।
दृष्ट्वा अपयोऽध्यस्य सर्वमात् किल मानवः॥" (काशीखण्ड)

कपिलेश्वर—१ एक प्राचीन नगर। २ मन्द्राज प्रान्तवाले गोदावरी जिलेका रामचन्द्रपुर तहसीलका एक ग्राम। यह अक्षा० १६° ४५´ उ० और देशा० ८१° ५७´ २०´´ पू० पर अवस्थित है। यहांकी लोकसंख्या पांच हजारसे अधिक है।

कपिलोमफला (सं० स्त्री०) कपीनां लोम इव लोमावृतं फलं यस्याः, बहुव्री०। कपिकच्छु, केवांच।

कपिलोमा (सं० स्त्री०) कपीनां लोम इव लोम-मञ्जरी यस्याः, बहुव्री०। रेणुका नामक गन्ध द्रव्य, एक खुशबूदार चीज़।

कपिलोह (सं० क्ली०) कपिवत् पिङ्गलं लोहम्। १ पित्तल, पीतल। २ राजरीति, बढ़िया पीतल। पित्तल देखो।

कपिल्लक (सं० पु०) कम्पिल्लक, नारङ्गीका चूरन।

कपिल्लिका (वै० स्त्री०) कपिवर्णा मल्लिका पृषोदरा-

उठता है। अंगरेजीमें इसे पोउटर पिजन (Pouter pigeon) कहते हैं।

लोटन—एक प्रकारका क्षुद्रजातीय श्वेतवर्ण गोला है। यह मट्टीमें लोट सकता है। इसीसे इसको लोटन कहा करते हैं। लोटानेके लिये लोटनको दक्षिण हस्तसे ऐसे पकड़ते, जिसमें वृद्धाङ्गुष्ठ द्वारा एक और अनामिका तथा कनिष्ठा द्वारा अपर पक्ष दबा रखते हैं। तर्जनी एवं मध्यमा गलदेशके दोनों पार्श्वसे वक्षःस्थलके दोनों पार्श्वपर पहुंच जाती है। फिर दक्षिण एवं वाम लोटनको इसप्रकार हिलाते, जिसमें घाट (गुद्दी)को एकबार दाहने और बायें हिलना पाते हैं। कोई एक मिनट ऐसे ही हिला मट्टीपर छोड़ देनेसे यह लोटा करता है। ४।५ लोट लगाने पर इसे पकड़ उठा देना चाहिये। नतुवा कड़ी मट्टीसे टकरा मत्था फट जाना सम्भव है। इसको अंगरेजीमें स्वतन्त्र नाम न रहते भी टम्बलर (Tumbler) कह सकते हैं। जो एकबारगी ही बहुत लोट सकता, उसे कबूतर बाज़ पैदम-लोटन कहता है।

चाउब—(घुग्घु) के अनेक भेद हैं। इसका चञ्चु अधिक क्षुद्र होता है। गलदेशके पालक वक्षके ऊपर उत्तराभिमुखी हो नहीं रहते, दोनों पार्श्वको झुक बीचमें बालोंकी विणुनीसदृश लगते हैं। इसका समस्त गलदेश भर नहीं जाता, वक्षके ऊर्ध्व देशमें अर्ध अङ्गुलि परिमित स्थान वैसा देखाता है। इस जातिका कपोत सुगठित और दृढ़काय होता है। इसको मस्तक पर शिखा रहनेसे 'टरपेट' कहते हैं।

काबूरा—वर्णमें छायाकी अधिकता लिये धूसर रहता है। चक्षु रक्तकमलकी भांति लाल होते हैं। चञ्चु क्षुद्र और कृष्णवर्ण लगता है। गलदेश मयूरकी भांति चिक्कण देख पड़ता है। चञ्चुमें फूल नहीं पाते। चक्षुको आवरणी कृष्णवर्ण रहती है।

कबरा—मस्तकसे गलदेश पर्यन्त कृष्णका आधिक्य लिये धूसर रहता है। फिर पृष्ठ और वक्षस्थल पाटल तथा श्वेत विन्दुयुक्त होता है।

मुंडिया—रक्त एवं पीतमिश्रित होता है। फिर चक्षु रक्तवर्ण रहता और चञ्चुके पार्श्वपर फूल पड़ता है।

दरयायी—देखनेमें खर्वाकार लगता है। इसका चञ्चु क्षुद्र होता है। इस कपोतका गलदेश पर्यन्त मस्तक और पुच्छ एकवर्ण रहता, मध्यस्थल श्वेत पड़ता है। जिसके मध्यस्थलमें गुल निकलता, उसको कबूतरबाज़ गुल-दरयायी कहता है। यह कृष्ण, रक्त और पीतवर्ण होता है।

बुगदादी—देखनेमें काला होता है। इसका चञ्चु प्रायः डेढ़ इञ्च लम्बा और उसका अग्रभाग टेढ़ा रहता है। बड़े बड़े चक्षुवोंके पार्श्वमें फूल पड़ जाता है। यह एक हस्त पर्यन्त दीर्घ होता है। किसी किसीके कथनानुसार यह कपोत तुर्कीके बुग़दाद नगरसे इस देशमें आया है।

उलूक-जातीय—प्रवादानुसार उलूक और कपोतके सङ्गमसे उत्पन्न है। यह देखनेमें श्वेत और खर्वाकार होता है। फिर कोई कोई उलूक सदृश भी देख पड़ता है। यह उलूककी भांति बोलता है।

गिरहबाजोंमें नीचे लिखे कबूतर अच्छे होते हैं—

अबलका—देखनेमें सफेद लगता है। चक्षुके पार्श्व-पर सरसों-जैसा एक क्षुद्र चिह्न अथवा पक्षपर कलङ्क रहता है। सर्षप-सदृश कृष्ण चिह्नविशिष्ट अब-लक़ोंका अधिक चिह्नयुक्त श्रावक उत्कृष्ट जातीय समझा जाता है।

कदा—पीताधिक्य रक्तवर्ण देख पड़ता है। पक्षपर रेखा रहती है। फिर चक्षुके मध्य दो गोलाकार दाग़ होते हैं।

कागज़ी—सफ़ेद होता है। इसको चक्षुमें वर्णविशिष्ट कलङ्क रहनेसे मोतीचूर कहते हैं।

गु.लसी—ईषत् पिङ्गल रहता और चक्षुमें गोलाकार कलङ्क लगता है। इसमें स्त्रीजातिकी संख्या अति अल्प आती है।

इस परिवारवाले दोबाज़के पक्षमें अनेक पालक श्वेत होते हैं। जिसके पक्षमें केवल एकमात्र पालक श्वेत आता, वह एकबाज़ कहाता है।

आसमानी—देखनेमें तरल धूसरवर्ण होता है। इसका चक्षु श्वेत रहता है।

सफ़ेदा—स्याहा, चीना और मामूली तीन श्रेणीमें विभक्त है। स्याहेकी पूंछ काली या लाल होती है। गलेमें कयी चपटे और आंखमें गोल दाग़ रहते हैं। चीनाके गलेमें कितनी ही लाल छींटें पड़ जाती हैं। आंख रङ्गीन रहती है। फिर उसमें दो गोल दाग़ भी होते हैं। स्याहा और चीना दोनों देखनेमें बहुत अच्छे लगते हैं। मामूली सफ़ेदेके अङ्ग, गलदेश और पुच्छमें कलङ्क रहता है।

मूरा—इस कपोतके गलदेश, पृष्ठ एवं पुच्छमें सफेद और काली छींट रहती है। फिर किसीके केवल अङ्ग और चक्षुमें ही कलङ्क देख पड़ता है।

सब्ज़ा—देखनेमें गाढ़ धूसरवर्ण होता है। पक्षपर दो-दो रेखा रहती हैं। यह कपोत बाज़ी, चक्कर और उड़ानके हिसाबसे भला-बुरा समझा जाता है।

अंगरेज़ खगतत्त्ववेत्तावोंके मतसे कपोत और उलूकका साधारण नाम कोलम्बिडी (Columbidee) है। यह प्रधानतः शस्य खा जीवन धारण करते हैं। फिर इन्हें भूमिपर घूम घूम चुगना अच्छा लगता है। इनमें अधिकांशका वर्ण नील रहता है। वर्ण और स्वभावके अनुसार कपोतकी तीन श्रेणी ठहरायी गयी हैं। १म लफोलोमिनी (Lapholaeminœ) अर्थात् कलगीदार, (Crested-pigeons) २य पालम्बिनी (Palumbinea) अर्थात् वन्य (Wood-pigeons) और ३य कोलम्बिनी (Columbinae) अर्थात् पार्वत्य (Rock-pigeons) कपोत।

प्रथम श्रेणीकी एकमात्र जाति आजकल अष्ट्रेलियामें देख पड़ती है। इस कपोतके मस्तकपर मयूरकी चूड़ाके समान द्विगुण शिखा रहती है। अंगरेज़ी खगतत्त्वमें इसको लाफोलीमस आण्टार्टिकस (Lapholaemus antarticus) अर्थात् दक्षिण-महासागरीय, द्विगुण शिखायुक्त कपोत कहते हैं। २य श्रेणीमें एक प्रकार बैंजनी चमक लिये पतले आसमानी रङ्गका कबूतर होता है। यह मध्य-भारतके पूर्वांशसे समुद्रोपकूलपर्यन्त सकल स्थानोंमें मिलता है। आसाम, आराकान और रामरी द्वीपमें भी इसकी संख्या यथेष्ट है। हिमालयके मध्यप्रदेशमें इसी जातिका एकप्रकार शिखायुक्त कपोत होता है। इसका रूप अति मनोहर लगता है। दारजिलिङ्गके निकट इस जातिके जो एक प्रकार कपोत रहते, उन्हें नेपाली 'नामघुम्पो' कहते हैं। फिर नीलगिरि पर्वतमें इसी जातिके होनेवाले एकप्रकार कपोत राजकपोत कहाते हैं। यह दैर्घ्यमें पुच्छके पालक समेत प्रायः १५ इञ्च पहुंता है। हिन्दुस्थानके जङ्गली गोले और गिरहबाज़ इस श्रेणीमें आ सकते हैं। ३य श्रेणीके पार्वत्य कपोत कुमायूं प्रदेशके उत्तर, उत्तर-एशिया और जापानसे समस्त युरोपखण्ड पर्यन्त देख पड़ते हैं। इनका वर्ण अधिक नील नहीं रहता, नीलका आधिक्य लिये धूसर लगता है। काश्मीर अञ्चलमें हिमालय पर एकप्रकार श्वेतचक्षु कपोत होते हैं। यह देखनेमें अतिसुन्दर समझ पड़ते हैं।

इन सकल एवं अन्यान्य जाति वा कपोत भेदके अंगरेज़ी खगतत्त्वमें लिखे लक्षणालक्षण अतिसूक्ष्म रूपसे बता देना एकप्रकार असम्भव है। कारण उक्त जातीय पक्षी न देख केवल कविकी वर्णनाके सहारे कोई आकृति कल्पना कर लिखना कैसे युक्तिसिद्ध हो सकता है। इसीसे अंगरेज़ी खगतत्त्वके अनुसार समस्त जातिके लक्षणालक्षण नहीं लिखे।

कपोत अति सुखी प्राणी है। अति सामान्य असुख और विपद्से इसकी समूह क्षति हो जाती है। हिन्दुस्थानमें कपोतको लक्ष्मीका वरपुत्र मानते हैं। अनेकको विश्वास रहता—इसे पालनेसे गृहस्थका मङ्गल बढ़ता, दरिद्रत्व घटता और लक्ष्मीका दर्शन मिलता है। फिर इसके परका वायु मनुष्यके शरीरमें लगनेसे सर्वरोग दूर होता है। इसीसे कितने ही लोग कपोत पालते हैं। वन्य कपोतको गृहमें आ बसने पर कोई नहीं उड़ाता। कलकत्तेमें बङ्गाली और हिन्दुस्थानी महाजन अपने अपने व्यवसायके स्थानमें सयत्न कपोत प्रतिपालन करते हैं।

मनुष्यके असाधारण अध्यवसायसे राजकपोतका एक अपूर्व गुण आविष्कृत हुवा है। यह सिखाने

कफिनी (सं॰ स्त्री॰) कफिन्-ङीप्। १ हस्तिनी, हथिनी। २ कफप्रधान स्त्री, बलग़मी औरत। ३ नदी-विशेष, एक दरया।

कफिया (हिं॰ पु॰) काठ या लोहका कोष। यह जहाज़के तिरछे शहतीर जोड़नेमें लगता है। कफिया शब्द अंगरेज़ी 'कफ़'से बना है।

कफी (सं॰ वि॰) कफो ऽस्त्यस्य, कफ-इनि। द्वन्द्वोपतापगर्ह्यात् प्राणिस्थादिनिः। पा ५।२।१२८। १ श्लेष्मयुक्त, बलग़मी। (पु॰) २ गज, हाथी।

कफ़ीना (हिं॰ पु॰) जहाज़की फ़र्शका तख़्ता। यह अंगरेज़ी 'कफ़' शब्दसे बना है।

कफ़ील (अ॰ पु॰) बन्धक, ज़ामिन, ज़मानत देनेवाला।

कफेलु (सं॰ त्रि॰) कफ लाति आदत्ते, कफ-ला-कु निपातनात् एत्वम्। मन्द्रहलफलकमूलक्य कफेलुकलंभ्युदिथिषु। उण् १।९५। १ कफयुक्त, बलग़मी। २ श्लेष्मातकवृक्ष, लसोड़ेका पेड़।

कफोणि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) केन सुखेन फणति स्फुरति वा, क-फण-स्फुर वा इन्, पृषोदरादित्वात् साधुः। कूर्पर, कोहनी।

कफोणिघात (सं॰ पु॰) कूर्परप्रहार, कोहनीकी मार।

कफोत्कट (सं॰ त्रि॰) कफप्रधान, बलग़मी, जो बड़ा बलग़म रखता हो।

कफोत्क्लिष्ट (सं॰ पु॰) नेत्ररोगभेद, आंखकी एक बीमारी। यह रोग होनेसे मानव कफके कारण स्निग्ध, श्वेत, सलिलप्लावित और परिणाम रूप देखता है। (माधवनिदान)

कफोत्क्लेश (सं॰ पु॰) कफके वमनकी उपस्थिति, बलग़म निकालनेके लिये आमादगी।

कफोदर (सं॰ क्लो॰) कफजन्य उदररोग, बलग़मसे होनेवाली पेटकी एक बीमारी। इससे उदर शीतल, गुरु, स्थिर, महच्छोफयुत, ससाद, स्निग्ध एवं शुक्ल शिरावनद्ध रहता और आनन तथा नखका वर्ण श्वेत लगता है। (माधवनिदान)

कफोड़ (दे॰ पु॰) कफोणि वेदे कफोड़ादेशः पृषो-दरादित्वात्। कफोणि, कोहनी।

कब (हिं॰ क्रि॰-वि॰) कदा, किस समय।

कबड़िया (हिं॰ पु॰) जातिविशेष, एक क़ौम। यह लोग मुसलमान होते और अधिकतर तरकारी बोते हैं। फिर अपनी बोई तरकारी बेचना भी इन्हींका काम है।

कबड्डी (हिं॰ स्त्री॰) १ बालकोंकी एक क्रीड़ा, लड़कोंका एक खेल। इसमें बालक पहले अपने दो दल बनाते हैं। फिर मैदानमें एक लकीर खींची जाती, जो पाला या हाड़मेड़ कहाती है। इसकी एक ओर एक दल और दूसरी ओर दूसरा दल रहता है। फिर क्रीड़ा आरम्भ होती है। किसी दलका एक बालक 'कबड्डी-कबड्डी' कहते पालेकी दूसरी ओर जाता और विपक्ष दलके किसी बालकको छूनेकी चेष्टा लगाता है। यदि वह किसी बालकको छूकर और आता और विपक्ष दलके किसी बालकको छूनेकी चेष्टा लगाता है। यदि वह किसी बालकको छूकर लौट आता और विपक्ष दलको ओर पकड़ा नहीं जाता, तो जिस बालकको वह छू आता, वह मरा कहाता अर्थात् खेलसे निकाल दिया जाता है। किन्तु छूनेवाला बालक छूकर और न सकने और विपक्ष दलके बालकोंके पकड़में पड़नेसे स्वयं मर जाता अर्थात् हार खाता है। इसीप्रकार एक ओरके जब सब बालक मर जाते, तब दूसरी ओरके बालक पूर्णरूपसे विजय पाते हैं। फिर दूसरी ओरके बालक छूने आते और पूर्वोक्त रीतिसे मारते या मर जाते हैं। इस खेलसे बालकोंमें दौड़ने-झपटनेकी शक्ति आती और उनकी बुद्धि तथा दृष्टि तीव्र पड़ जाती है। २ कांपा, कम्पा।

कबन्ध (सं॰ क्लो॰) कस्य आप्यायी: बन्ध आश्रयः, ६-तत्। १ जल, पानी। (पु॰) कं जलं बध्नाति, क-बन्ध-अण्। २ उदर, पेट। ३ राहु। ४ धूम-केतु। इनकी संख्या ९८ है। आकृति कबन्धसे मिलती है। कबन्ध कालके पुत्र हैं। इनका उदय दारुण फल देता है। ५ मस्तकहीन जीवित एवं क्रियायुक्त कलेवर, सरकटा जीता जागता धड़। आल्हामें लिखते, कि कबन्ध घोररूपसे तलवार चलाते थे। ६ आथर्व विशेष। ७ मुनिविशेष। ८ मेघ, बादल। ९ गन्धर्वविशेष। १० दीर्घग्रीवाकार काष्ठ

पर दूर देशसे लिपि ला सकता है। इसका पक्ष अत्यन्त सबल होता है। आश्चर्यका विषय देखाता—इस श्रेणीके कपोतमें जिसका पक्ष जितना सबल आता, वह उतना ही अधिक जी जाता है। यह स्वभावतः दीर्घकाय और बलिष्ठ रहता, किन्तु देखनेमें अति सुन्दर लगता है। राजकपोत हिन्दुस्थानी कौड़ियालेके अन्तर्गत है। आजकल इसके द्वारा लिपि प्रेरणकी बात अधिक सुन नहीं पड़ती। पहले तुर्की राज्यमें उक्त प्रथा बहुत चलती थी। आज भी वहां कहीं कहीं बनियोंके पास दो-एक लिपिवाही कपोत विद्यमान हैं। ११४७ ई०को बुग़दादके सम्राट् नूरद्दीन मुहम्मदने यह प्रथा चलायी थी। फिर १२५८ ई०को बुग़दाद नगर मङ्गोलीयोंके हाथ पड़नेसे यह प्रथा रहित हुयी। फ्राङ्को-प्रूसिया युद्धमें भी यह कपोत देख पड़े थे। थोड़े ही दिन हुये कलकत्तेकी बड़ी अदालतमें एक पत्रवाही कपोत आ गया था। अंगरेजीमें इसे कारियर पिजन (Carrier pigeon) अर्थात् चिट्ठी पहुंचानेवाला कबूतर कहते हैं। वर्तमान युरोपीय समरमें इसने कुछ कम काम नहीं किया।

लिपिवाही कपोतको सिखानेमें बहु यत्न, आयास और समय लगता है। शावक परिणत होनेपर एक स्त्री और एक पुरुष निकाल एकत्र रखना और यथेष्ट प्रणय उपजानेको यत्न करना पड़ता है। फिर पत्र जानेके स्थानको इन्हें पिंजड़ेमें डाल भेज देते हैं। इनमें एकको पृथक् कर कहीं से जानेपर दूसरा भी उड़ उसके पास निश्चय पहुंच जाता है। बहुत पतले और कड़े काग़ज़पर पत्र लिख किसी पक्षके पालकमें आलपीनसे नत्थी कर देते हैं। आलपीनका सूक्ष्माग्रभाग शरीरकी बाहरी ओर रहता है। फिर उड़ा देने पर यह उसी घरमें जा पहुंचता, जिसमें इसका जोड़ा रहता है। वासस्थानके प्रति अत्यन्त ममता बढ़नेसे एकमात्र कपोत पालनेसे भी काम चल सकता है। इसी प्रकार शिक्षित कपोत जहां संवाद लेना आवश्यक आता, वहां किसीके हाथ सौंप भेज दिया जाता है। पूर्वोक्त रूपसे लिपि लगा देनेपर कपोत प्राणपणसे उड़ प्रतिपालकके गृह आ पहुंचता है। इसको सिखानेमें प्रथमतः घर भूल न जाने और बड़ी दूरसे लौट आनेके लिये पाव कोस दूर ले जाकर छोड़ना पड़ता है। पाव कोस अभ्यस्त होनेपर आधकोस, धीरे-धीरे एक, दो, तीन, चार, पांच कोस पर ले जाकर इसे छोड़ते हैं। पीछे ग्रामान्तर और अवशेषको देशान्तर ले जा इसे सिखाना पड़ता है। यह अति शीघ्र सीखता है। शेषको इतनी क्षमता आती, कि यह समुद्र पार भी आता-जाता है। शिक्षित कपोत एक घण्टेमें २० कोस उड़ सकता है। अधिक दूरसे पत्र मंगानेको इसे उड़ानेके पहले आठ घण्टे अनाहार किसी अन्धकार गृहमें बन्द कर देते हैं। शेषको छोड़ने पर एकबारगी ही अति ऊर्ध्व देशसे उड़ते उड़ते क्षुधाकी ज्वालामें प्रभुके निकट आ पहुंचता है। सुननेमें आया, कि समुद्र पार करनेमें कितने ही कपोतोंने पानी पर गिर अपना प्राण गंवाया है। कुहरा पड़ने या पानीकी झड़ लगनेसे यह सहज और स्वच्छायासमें उड़ नहीं सकता। सुतरां ऐसे समय उड़ाने या राहमें ऐसा समय आ जानेसे इसपर अत्यन्त विपद् पड़ती है।

यह प्रथा केवल तुर्कीमें ही न रही, पीछे युरोपके नाना स्थानोंमें चल पड़ी। पहले मिसर, पालेस्टाइन, तुर्की, अरबस्थान और ईरानमें युद्धके समय जय-पराजय, सैन्य आगमन, खाद्य अप्राप्ति प्रभृतिका संवाद इस कपोत द्वारा सहजमें सम्पन्न होता था। इङ्गलैण्डके विलासी धनी लोग भी उस समय इनके द्वारा प्रणयिनी और बन्धुबान्धवके निकट संवादादि भेजते रहे।

अनुमान लगा सकते—रामायण महाभारतादिके समय भी भारतमें पक्षीके मुखसे संवाद भेजनेकी प्रथा चलती थी। महाभारतमें एक गल्प लिखा है—गृहमें ऋतुमती और कामातुर पत्नी छोड़ चेदि-देशाधिपति महाराज उपरिचर पिताके निदेशसे मृगयाको गये थे। वहां वृक्षकी छायामें श्रान्ति दूर करते-समय पत्नीको स्मरण पर आते ही उनका रेतः

पात, लकड़ीका बड़ा पोथा। ११ राक्षसविशेष। रामायणमें लिखा—दनु नामक किसी दानवको उग्र-तपस्या द्वारा तुष्ट करनेपर ब्रह्मासे दीर्घ जीवनका वर मिला था। वरके प्रभावसे अत्यन्त गर्वित हो किसी समय वह इन्द्रसे युद्ध करनेको जा पहुंचा। इन्द्रने वज्राघातसे उसका हस्त और मस्तक शरीरमें घुसेड़ दिया था। किन्तु ब्रह्मवरके कारण उससे भी प्राण-वियोग न हुआ। इसीप्रकार विकृत शरीरमें दिन दिन क्लिष्ट हो दनु बारम्बार इन्द्रसे अनुग्रह प्रार्थना करने लगा। फिर इन्द्रने भी उसके प्रति सदय हो योजन-परिमित हस्तद्वय और वक्षःस्थलके उपरिभागमें एक वदन बना दिया था। दनु उसी मूर्तिसे वन-वन जा और दीर्घबाहु द्वारा वन्यजन्तु खा अवस्थान करने लगा। फिर एकदा पिताकी आज्ञा प्रतिपालन करनेको राम लक्ष्मण और सीताके साथ उसी वनमें जा पहुंचे। इस राक्षसने दीर्घ बाहुद्वारा उन्हें पकड़ लिया था। रामने वीर्यभरमें लघु हस्तसे स्वीय खड्ग द्वारा दनुका प्राण विनाश किया। रामहस्तसे मरने पर कबन्ध दिव्यमूर्ति धारण कर स्वर्गको चला गया।

महाभारतके मतसे यह राक्षस पहले विश्वावसु नामक गन्धर्व रहा, पीछे किसी ब्राह्मणके अभिशाप वश राक्षसयोनिको प्राप्त हुवा।

कबन्धता (सं॰ स्त्री॰) मस्तकहीनता, कतल, शिर काट जानेकी हालत।

कबन्धी (वै॰ पु॰) १ ऋषिविशेष। 'अथ कबन्धी कात्यायन उपेत्य पप्रच्छ।' (प्रश्नोपनिषद्) (त्रि॰) कं जलं बन्धोऽस्ति, क-बन्ध-इनि। जलयुक्त, आबदार।

कबर, कब्र देखो।

कबरस्थान, कब्रस्तान देखो।

कबरा (हिं॰ वि॰) कर्बुर, अबलक, सफेद रङ्गपर काले, लाल, पीले या किसी दूसरे रंगके अथवा काले, पीले, लाल या किसी दूसरे रंगपर सफेद धब्बे रखनेवाला।

कबरिस्थान, कब्रस्तान देखो।

कबरी—जातिविशेष, एक क़ौम। मन्द्राजप्रदेशमें इस जातिके लोग रहते हैं। यह प्रायः १८ शाखामें विभक्त हैं। इनमें वलिगि और तोत्तियार शाखा ही प्रधान है।

पहले कबरी खेतीबारीके लिये ज़मीन् रखते थे। उसी ज़मीन्को अपर निकृष्ट जाति द्वारा जोता-बोया जो आय मिलता, उससे इनकी जीविकाका काम चलता। आजकल इनमें वह पूर्वप्रथा रहते भी कितने ही लोग स्वयं कृषिकार्य करते हैं। फिर कोई नाव चलाता और कोई बनियेकी दुकान् लगाता है।

तोत्तियार शाखा किसी किसी स्थानमें तोत्तियान वा कम्बलत्तार नामसे भी प्रसिद्ध है। यह परिश्रमी और बड़े उत्साही हैं। कृषिकार्यसे लगा अनेक उच्च काम पर्यन्त इनके द्वारा सम्पन्न होते हैं। मन्द्राज नगरमें तोत्तियार अनेक उत्तम उत्तम कार्य चलाते हैं।

तोत्तियार ८ श्रेणीमें विभक्त हैं। प्रत्येक श्रेणी अपर श्रेणीसे स्वतन्त्र रहती है। प्रायः पांच-सौ वर्ष पहले कितने ही तोत्तियारोंने मदुरा जिलेमें जाकर उपनिवेश किया था।

यह सकल ही विष्णुके उपासक हैं। विष्णुकी अलौकिक लीला-क्रीड़ामें यह आन्तरिक विश्वास रखते हैं। किसीके विष्णुकी निन्दा करनेपर इनके प्राणमें बड़ा आघात लगता है। फिर निन्दाकारीको यथोचित शास्ति देनेसे कोई पीछे नहीं हटता। इनमें बहुतसे लोग इन्द्रजाल जानते हैं। इसीसे साधारण इनको भय भक्ति दिखाते हैं। सुनते—यह इन्द्रजालके बलसे सांपके काटेका विष उतार सकते हैं। पुरुष मस्तक पर पगड़ी बांधते हैं। स्त्रियां नानाविध अलङ्कार पहनती हैं। उनका वक्षःस्थल कितना ही अनावृत रहता है। किन्तु उससे उन्हें लज्जा नहीं आती।

तोत्तियारोंमें बहुविवाहकी प्रथा प्रचलित है। किन्तु प्रायः सकल ही एकबार विवाह करते हैं। एक पत्नीके मरनेपर अपर पत्नी ग्रहण की जाती है। इनके विवाह वा धर्मकर्ममें ब्राह्मणोंकी आवश्यकता नहीं पड़ती। कोड़ाङ्गिनायकन नामक इनका एक प्रधान रहता है। वही विवाहादि सम्पन्न करता है। अग्निकुण्डको बनाना भी उसीका काम है।

गिर पड़ा। महाराजने उद्विग्न हो उस रेतःको पत्तेके दोनेमें भर और किसी श्येन पक्षीको सौंपकर पत्नीके निकट भेजा था। श्येनने वह दोना मुखमें दबा चेदिराजधानीके अभिमुख जाते जाते किसी दूसरे श्येनसे झगड़ फेंक दिया। इससे मत्स्यके उदरमें व्यासकी जननी मत्स्यगन्धाका जन्म हुवा। उक्त उपाख्यानसे समझ पड़ता—श्येनपक्षी भी शिक्षित होनेसे लिपिवहनका कार्य कर सकता है। एतद्भिन्न नलदमयन्तीमें 'हंसदूत' की कथा मिलती है। दमयन्तीका पोषित हंस आकर नलसे उनके रूपका उत्कर्ष बता गया था। यह उपाख्यान इतने दिन कविकी कल्पना मात्र उपेक्षित होते रहे। किन्तु जब कपोतके इस स्वभावकी बात खुली, तब उक्त पारायिक उपाख्यानोंके अमूलक होनेकी श्रद्धा घटी।

हम देखते—प्रायः सकल ही देशोंमें लोग कपोतको पवित्र पक्षी समझते हैं। भारतवासी इसे लक्ष्मीका वरपात्र कहते हैं। फिर मक्का नगरमें कपोतेश्वर नामक शिवलिङ्ग और कपोतेशी नाम्नी भवानीकी मूर्ति विद्यमान है। प्राचीन आसिरीया देशके राजा इसकी परम भक्ति करते थे। अरब देशके वृहत्काय नील कपोतको महासम्मान मिलता है। मुसलमानोंके धर्मग्रन्थमें इसे 'स्वर्गदूत' कहा है। मुसलमान् बताते—मुहम्मद जब कुछ जानना चाहते, तब स्वर्गसे कपोत आ उनके कानमें सब बात सुनाते थे। मक्केके काबेमें यह अति यत्नसे पाले जाते और मुसलमान् इन्हें काबेकी कुमरी समझ कभी नहीं खाते। पहले अंगरेज भी कपोतको होली बर्ड (Holy bird) अर्थात् पवित्र पक्षी समझ आदर करते थे।

हमारे पुराणमें भी लिखते—शिवि राजाको दानशीलता देखनेको अग्नि कपोत और इन्द्र श्येनका रूप बना उनके निकट उपस्थित हुये। कपोतने श्येनके भयसे भीत हो शिविके क्रोड़में पड़ आश्रय मांगा था। शिविने शरणागतको बचा और श्येनको तुष्ट करनेके लिये अपने देहका समस्त मांस गंवा महायश पाया। इसीसे कपोतका नाम अग्निमूर्ति पड़ा है।

हमारे आयुर्वेद शास्त्रमें इसके मांसका गुणागुण लिखा है। महर्षि चरकके मतसे कपोतका मांस कषाय, मधुर, शीतल और रक्तपित्तनाशक है। हारीत उसे वृंहण, बलकर, वातपित्तनाशक, तृप्तिकर, शुक्रवर्धक, रुचिकर और मानवको हितकर बताते हैं। फिर भावमिश्रने कपोतके मांसको गुरु, स्निग्ध, रक्तपित्त एवं वायुनाशक, संग्राही, शीतल, त्वक्को हितकर और वीर्यवर्धक कहा है। सुश्रुत तथा वाग्भटके मतमें कृष्णवर्ण कपोतका मांस गुरु, लवणयुक्त, स्वादु और सर्वदोषकर होता है। कपू देखो।

(क्ली०) सौवीराञ्जन, सुरमा। २ कपोताञ्जन, भूरा सुरमा।

कपोतक (सं० क्ली०) कपोत इव कपोतवर्णवत् कायति प्रकाशते, कपोत-कै-क। १ सौवीराञ्जन, सुरमा। २ कपोताञ्जन, भूरा सुरमा। (पु०) ३ क्षुद्रकपोत, छोटा कबूतर। ४ हाथ जोड़नेकी एक रीति।

कपोतकनिपाती (सं० पु०) अश्वका एक वातव्याधि, घोड़ेको होनेवाली बाईकी एक बीमारी। कठिनतासे उठाने पर भी जो घोड़ा भूमिपर गिर पड़ता, वह इस रोगसे पीड़ित ठहरता है। कपोतनिपाती होनेपर अश्व मुश्किलसे जीता है। (जयदत्त)

कपोतकीय (सं० त्रि०) कपोतोऽस्त्यस्य, कपोत-छ कुक् च। नडादीनां कुक् च। पा ४।२।९१। कपोतयुक्त, कबूतरोंसे भरा हुवा।

कपोतकीया (सं० स्त्री०) कपोतयुक्त देश, कबूतरोंसे भरा हुवा मुल्क।

कपोतचक्र (सं० पु०) कबाटचक्र वृक्ष, बेंटुवा।

कपोतचरणा (सं० स्त्री०) कपोतस्य चरणचरणवत् आकारो ऽस्त्यस्याः, कपोत-चरण अर्श आदित्वात् अच्-टाप्। १ नलीनामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज। २ चोरिका, चिरनी।

कपोतपर्णी (सं० स्त्री०) एला, इलायचीका पेड़।

कपोतपाक (सं० पु०) कपोतस्य पाकः डिम्भः, ६-तत्। १ कपोतशिशु, कबूतरका बच्चा। २ पार्वत्य जातिभेद, एक पहाड़ी कौम।

कपोतपाद (सं० त्रि०) कपोतस्य पादाविव पादौ यस्य, हस्त्यादित्वात् आन्त्यलोपः। पादस्य लोपोऽहस्त्यादिभ्यः। पा

कवरी प्रधानतः तैलङ्ग होते हैं। यह प्रधानतः तैलङ्ग भाषा ही व्यवहार करते हैं। किन्तु स्वदेश छोड़ अन्य स्थानमें रहनेवालोंकी बात स्वतन्त्र है।

कबा (अ० पु०) परिच्छदविशेष, पहननेका एक कपड़ा। यह जानुपर्यन्त दीर्घ एवं ईषत् शिथिल होता है। इसका अग्रभाग मुक्त और बाहु चलित रहता है।

कबाड़ (हिं० पु०) १ निष्प्रयोजन वस्तु, बेकाम चीज़। २ निरर्थक कार्य, बेहूदा काम।

कबाड़ा (हिं० पु०) निरर्थक व्यापार, झगड़ा-झञ्झट।

कबाड़िया, कबाड़ी देखो।

कबाड़ी (हिं० पु०) १ निरर्थक वस्तुविक्रेता, बेकाम चीज़ बेचनेवाला। २ क्षुद्र व्यवसायी, जो अगड़म छोटा मोटा रोज़गार करता हो। (वि०) ३ नीच, कमीना, छोटा।

कबाब (अ० पु०) मांसभेद, किसी किस्मका गोश्त। पहले मांसको भली भांति काटकूट बारीक बनाते, फिर उसमें बेसन, नमक और मसाला मिलाते हैं। अन्तको इनकी गोलियां बना लोहेकी सीखमें गोदते और घीके पुटसे कोयलेकी आंचपर सेंकते हैं। इन्हीं सेंकी हुई गोलियोंका नाम कबाब है। इसे प्रायः मुसलमान् ही खाते हैं।

कबाबचीनी (हिं० स्त्री०) शीतलचीनी। इसे संस्कृतमें कक्कोल वा कङ्कोल, नेपालीमें तिम्बूई, कश्मीरीमें सुरतमर्ज, मारवाड़ीमें हिमसीमीर, गुजरातीमें तदामरी, दक्षिणीमें हुमकी, तामिलमें वालमिलकु, तैलगुमें तोकमिरियालु, कनाड़ीमें बालमेनसु, मलयमें कोमुनकुस, ब्रह्ममें सिनबनकरव, सिंहलीमें वलगुमदरिस, अरबीमें कबाबा और फारसीमें किबाबेह कहते हैं। (Piper cubeba)

यह झाड़ी यवद्वीप और मोलूकास द्वीपमें स्वभावतः उत्पन्न होती है। भारतवर्षमें भी कहीं कहीं इसकी कृषि की जाती है। भारतवासी इसके फलको बाहरसे मंगाते हैं। इसके गोंदकी राल किसी बड़े काममें नहीं लगती। पत्र बेरके पत्तोंसे मिलते हैं। किन्तु उनमें सुकोमलपन कुछ अधिक रहता है। पत्तोंकी खड़ी नसें ऊपरको उठ आती हैं। फल गुच्छेमें रहता और गोल-मिर्च जैसा देख पड़ता है। इसे भी कबाबचीनी ही कहते हैं। यह खानेमें मरिचसे मृदु, कटु एवं तिक्त लगती है। पहले यवद्वीपवासी इसे किसी विदेशीयके हाथ बेचनेमें हिचकते थे। वह भय रखते—कोई हमारे इस अपूर्व फलको अपने देशमें जाकर लगा न ले। अरबके प्राचीन वैद्योंको विदित था—कबाबचीनी मूत्रप्रवाहके मार्गकी लसदार झिल्लीको बड़ा लाभ पहुंचाती है। किन्तु लोग इसे वायुनाशक गन्ध द्रव्यकी भांति ही व्यवहार करते आये हैं। कबाबचीनी धातुदौर्बल्य और प्रमेहका महौषध है। यह दीपन, पाचन और मूत्रवर्धक होती है। बम्बईके वैद्य इसे औषधोंमें अधिक व्यवहार करते हैं। कबाबचीनी कण्ठके स्वरको भी सुधारती है। गाने-बजानेवाले इसे प्रायः मुंहमें डाले रहते हैं। कक्कोल देखो।

कबाबी (अ० वि०) १ कबाब बेचनेवाला। २ कबाब खानेवाला।

कबाय (हिं०) कबा देखो।

कबार (हिं० पु०) १ व्यवसाय, कामकाज। २ वृक्षविशेष, एक पेड़।

कबाल (हिं० स्त्री०) खर्जूरिकातन्तु, खजूरका रेशा। इसे बटकर रस्सी तैयार की जाती है।

कबाला (अ० पु०) लेख्यभेद, एक दस्तावेज़। इसके द्वारा एककी सम्पत्ति दूसरेके अधिकारमें आती है।

कबाला लिखनेवाले मुहरिरको 'कबालानवीस', और जायदाद बेचनेवालेकी ओरसे खरीदनेवालेको दी जानेवाली सनदको 'कबाला-नीलाम' कहते हैं।

कबाहट (हिं०) कबाहत देखो।

कबाहत (अ० स्त्री०) १ अभद्रता, बुराई। २ कठिनता, दिक्कत, अड़चन।

कबित्थ (सं० पु०) कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

कबिल (सं० त्रि०) कपिल, भूरा, तांबड़ा। (पु०) २ कपिलवर्ण, भूरा या तांबड़ा रंग।

कबीठ (हिं० पु०) १ कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़। २ कपित्थफल, कैथेका मेवा।

४।४।१६८। कपोतकी भांति पादयुक्त, जो कबूतरकी तरह पैर रखता हो।

कपोतपालिका (सं॰ स्त्री॰) कपोतान् पालयति, कपोत-पाल-णिच्-ण्वुल्, स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। विटङ्क, कावुक, दर्बा, चाखियाना, चिड़ियाखाना।

कपोतपाली (सं॰ स्त्री॰) कपोतान् पालयति, कपोत-पाल-णिच्-अण्-ङीप्। कपोतपालिका, कावुक, दर्बा, कबूतरोंकी छतरी।

"विश्र'ख्या हविमपदिर्द": कपोतपालीषु निकेतनानाम्।" (माघ)

कपोतपुट (सं॰ क्ली॰) औषधपुटभेद, दवाकी एक तह। जो पुट अष्टसंख्यक वनोपलसे खातमें दिया जाता, वही कपोतपुट कहाता है। (भावप्रकाश)

कपोतपुरीष (सं॰ पु॰) पारावतविष्ठा, कबूतरका बीट। यह व्रणदारण होता है।

कपोतराज (सं॰ पु॰) पारावतप्रभु, कबूतरोंका राजा या सरदार।

कपोतरेतस् (सं॰ पु॰) प्रवरमुनि विशेष।

कपोतरोमा (सं॰ पु॰) १ राजा उशीनरके पुत्र। कपोतरूपी अग्निके वरसे इनका जन्म हुआ था। (भारत, वन १६६ अ॰) २ यदुवंशीय कुक्कुर नृपतिके पौत्र। (हरिवंश ३८ अ॰)

कपोतलुब्धकीय (सं॰ क्ली॰) कपोतं लुब्धकञ्च अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, कपोतलुब्धक-छ। महाभारतके अन्तर्गत आख्यायिका विशेष। इसमें कपोत और लुब्धकके गल्पच्छलसे उपदेश दिया है—गृहस्थको प्राण देकर भी अतिथिसत्कार करना चाहिये।

कपोतवक्रा (सं॰ स्त्री॰) काकमाची, मैनेया।

कपोतवक्त्रा, कपोतवक्रा देखो।

कपोतवङ्का (सं॰ स्त्री॰) कपोतो वञ्चति प्रतार्य्यते अनया, कपोत-वञ्च् करणे घञ्, कुत्वं टाप् च। ब्राह्मी, एक बूटी। ब्राह्मी देखो।

कपोतवर्ण (सं॰ त्रि॰) धूसर, चमकीला भूरा, कबूतरका रङ्ग रखनेवाला।

कपोतवर्णा, कपोतवर्णी देखो।

कपोतवर्णी (सं॰ स्त्री॰) कपोतस्य वर्ण इव वर्णो यस्याः, गौरादित्वात् ङीप्। सूक्ष्मैला, छोटी इलायची।

कपोतवल्ली (सं॰ स्त्री॰) कपोतवर्णा वल्ली, मध्यपदलो॰। ब्राह्मी, एक बूटी। युक्तप्रदेशमें यह बरसाती किनारे होती है।

कपोतवाण (सं॰ स्त्री॰) कपोतपाद इव यो वाणस्तद्वत् आकारो यस्य। नलिका नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़।

कपोतविष्ठा (सं॰ स्त्री॰) कपोतपुरीष देखो।

कपोतवृत्ति (सं॰ त्रि॰) कपोतानां येनो वृत्तिरिव वृत्तिर्यस्य बहुव्री॰। १ सञ्चयहीन, इकट्ठा न करनेवाला, जो कबूतरकी तरह रोज़ कमाता-खाता हो। (स्त्री॰) २ सञ्चयशून्य जीविका, जिस रोज़गारमें कुछ जोड़ न सकें।

कपोतवेगा (सं॰ स्त्री॰) कपोतानां वेगो गतिरिव वेगः द्रुत-वृद्धिर्यस्याः, मध्यपदलो॰। ब्राह्मीनामक महाक्षुप, एक झाड़।

कपोतव्रत (सं॰ त्रि॰) १ कपोतकी भांति कष्ट पाते भी मौनधारण करनेवाला, जो सताया जाते भी कबूतरकी तरह बोलता न हो। (पु॰) २ कपोतका व्रत, कबूतरका अहद। मौनधारणपूर्वक ताड़नादि सहन करना कपोतव्रत कहाता है।

कपोतसार (सं॰ क्ली॰) कपोतवर्ण इव सारः श्याम-वर्णो यस्य, बहुव्री॰। स्रोतोऽञ्जन, सुरमा।

कपोतहस्त (सं॰ क्ली॰) उपासनाके समय हाथ जोड़नेकी एक रीति।

कपोतहस्तक, कपोतहस्त देखो।

कपोताक्षनदी—वङ्गालकी एक नदी। चलित भाषामें इसे कपोतक कहते हैं। नदिया ज़िलेमें चन्द्रपुरके निकट माथाभांगा नदीसे यह निकली है। उत्पत्ति-स्थलसे थोड़ी दूर पूर्वको ओर चल नदिया और यशोरके मध्य यह दक्षिणाभिमुखी हो गयी है। इस स्थानपर यही नदी नदिया, चौबीसपरगना और यशोर ज़िलेकी सीमाका निर्देश करती है। चौबीसपरगनेके आशासुनीसे ५ मील पूर्व 'मरीछाप' गङ्गामें कपोताक्ष नदी जा गिरी है। गङ्गामें कलकत्तेसे नौका आया-जाया करती हैं। उक्त गङ्गाके सङ्गमस्थानसे २ मील दक्षिण इससे पूर्वमुख यशोर

कबीर (अ० वि०) सुप्रतिष्ठ, बड़ा। बहुत बड़े आदमीको अमीर-कबीर कहते हैं। (हिं० स्त्री०) अश्लील गीत, फोहश गाना। यह होलीमें गायी जाती है। कोई कबीर कहनेसे पहले लोग 'अररर कबीर' पद लगा लिया करते हैं।

कबीर—कबीरपन्थी नामक सम्प्रदायके प्रवर्तक। ठीक कह नहीं सकते—कबीर किसके पुत्र अथवा किस जातिके व्यक्ति रहे। इनकी जाति, सन्तति और उत्पत्तिके विषयमें नाना विवरण मिलते हैं। मुसलमान् इन्हें अपनी जातिके व्यक्ति बताते हैं। किन्तु भक्तमालमें लिखा है—

रामानन्द-शिष्य किसी ब्राह्मणके एक बालविधवा कन्या रही। किसी दिन वह ब्राह्मण कन्या साथ ले गुरुदर्शनको पहुंचे। फिर रामानन्दने उस ब्राह्मण-कन्याकी भक्ति देख सहसा पुत्रवती होनेको आशीर्वाद दिया था। आशीर्वाद भी वृथा न गया, बालविधवा कन्याके एक पुत्र उत्पन्न हुवा। उसी पुत्रका नाम कबीर है। भूमिष्ठ होते ही अभागिनी जननी लोकापवादके भयसे गुप्तभावमें शिशुको स्थानान्तरपर छोड़ आयी थी। फिर किसी जोलाहे और उसकी स्त्रीने दैवात् शिशुको पाकर निज पुत्रकी भांति लालनपालन किया।

कबीरपन्थी भक्तमालके प्रथम अंशको बिलकुल नहीं मानते। उनके मतमें कबीर एकदिन काशीके निकट 'लहर तालाब' नामक सरोवरके पद्मपत्र पर तैरते थे। उसी स्थानसे नूरी जोलाहा अपनी पत्नी नीमाके साथ विवाहनिमन्त्रणमें जाता रहा। नीमा इस शिशुको देख अपने स्वामीके निकट ले आयी। फिर शिशुने उससे पुकार कर कहा—हमें काशी ले चलो। नूरी सद्योजात शिशुकी बात सुन अतिशय विस्मयापन्न हुवा और सोचने लगा—कोई उपदेवता मानवदेह धारणकर आ गया। अन्तको उसने प्राणके भयसे डर और शिशुको फेंक पलायन किया। किन्तु शिशु उसके पीछे पड़ा था। कोई आध कोस जाकर नूरीने देखा, कि शिशु उसके सम्मुख रहा। उस समय वह भयसे जड़ीभूत हो गया। शिशुने उसका भय निवारणकर कहा था—तुम हमें प्रतिपालन करो और किसी बातसे न डरो। इसीप्रकार शिशुरूपी कबीर जोलाहेके हाथ लालित पालित हुये।

कबीरके जीवनका प्रथमांश जैसा कौतुकावह आता, वैसा ही अवशिष्ट अंश भी देखाता है। भक्ति-माहात्म्य नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा है—

पूर्वकाल वेदान्ताभ्यासनिरत एक ब्राह्मण रहे। वह स्त्री-पुत्रके लिये शिल्पकार्यसे जीविका चलाते थे। एकदिन सूत लेनेको उन्हें तन्तुवायके भवन जाना पड़ा। वहांसे अपने घर लौटनेपर वह ज्वर रोगसे आक्रान्त हुये और दैवयोगसे उसी ज्वरमें मर गये। मृत्युकालको स्मरण आनेसे ही तन्तुवायके घर उनका जन्म हुवा। तन्तुवायके घर जन्म ले ब्राह्मणने प्रथम वस्त्रादि निर्माण करना सीखा था। किन्तु पूर्वसंस्कार-वशतः उनमें ब्रह्मज्ञान भी उत्पन्न हुवा। वह सर्वदा कहा करते थे—संसार असार और यह जीवन पद्म-पत्रपर जलके समान है। इस काशीधाममें कौन हमारा गुरु होगा? कौन हमें इस संसार-सागरसे बचायेगा? कर्णधार न मिलने पर यह देहतरी कैसे चलेगी?

किसी दिन उन्होंने कितने ही साधुवोंके निकट उपस्थित हो अपना मनोभाव प्रकट किया। वैष्णव-साधुवोंने उनसे पूछा,—तुम कौन और क्या चाहते हो। उन्होंने कहा—हम जातिके तन्तुवाय और रामानन्दके शिष्य होना चाहते हैं। वैष्णव उपहास कर कहने लगे—तुम म्लेच्छ हो, तुम्हारा गुरु कौन होगा!

फिर तन्तुवायरूपी कबीर भग्नमनोरथ घरको लौटे थे। उनका मन अस्थिर हो गया। उन्होंने फिर साधुवोंके निकट जा अपने मनका दुःख देखाया था। किन्तु इस बार भी उनकी मनस्कामना पूर्ण न हुयी। फिर वह अस्थिर चित्तसे वाराणसीमें घूमने लगे। वह जिसको देखते, उसीसे पूछते थे—क्या आप बता सकते, गुरु रामानन्द कहां हैं। इसीप्रकार बहुदिन बीत गये। किसी दिन एक वैष्णवने उनसे दयाकर कहा था—गुरु रामानन्द अमुक स्थानपर रहते हैं।

जिलेका 'चांदखाली' नाला निकला है। चांदखाली नालेके मुखसे अक्षा० २२° १३´ उ० और देशा० ८८° २०´ पू० पर इससे खोल-पटुवा नदी आ मिली है। इन दोनों संयुक्त नदियोंके सङ्गमस्थलसे दक्षिण कहीं इसे पांगासो, कहीं बाड़, कहीं पांगा, कहीं मामगाद और कहीं समुद्र कहते हैं। सागरके निकटवर्ती स्थानपर इसका नाम मालञ्च है। यह अवशेषको मालञ्च नामसे ही वङ्गोपसागरमें प्रविष्ट हुयी है।

यशोर जिलेमें इस नदीके तीर सागरदांड़ी नामक एक क्षुद्र ग्राम है। १८२८ ई०को इसी ग्राममें वङ्गालके प्रसिद्ध कवि और मेघनादवध तथा व्रजाङ्गनादि काव्यके प्रणेता माइकेल मधुसूदनने जन्मग्रहण किया था।

कपोताङ्घ्रि (सं० स्त्री०) कपोतस्य अङ्घ्रि इव, उपमि०। नलिका नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़।

कपोताञ्जन (सं० क्ली०) कपोतवर्णं अञ्जनम्, मध्यपदलो०। स्रोतोञ्जन, सुरमा।

कपोताण्डोपमफल (सं० क्ली०) निम्बूभेद, किसी क़िस्मका कागज़ी नीबू।

कपोताभ (सं० पु०) कपोतस्य आभा इव आभा यस्य, मध्यपदलो०। १ कपोतवर्ण, पीला या मैला भूरा रङ्ग। २ मूषिकविशेष, किसी क़िस्मका चूहा। इसके काटनेसे दष्टस्थान पर ग्रन्थि, पिड़का और शोथकी उत्पत्ति होती है। फिर उससे वायु, पित्त, कफ और रक्त चारों बिगड़ जाते हैं। (सुश्रुत) (त्रि०) ३ कपोतसदृश वर्णविशिष्ट, चमकीला भूरा, जो कबूतरका रङ्ग रखता हो।

कपोतारि (सं० पु०) कपोतानां अरिर्मारकः, ६-तत्। श्येनपक्षी, बाज़ चिड़िया।

कपोतिका (सं० स्त्री०) कपोत स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। १ कपोती, कबूतरी। २ चाणक्यमूल, किसी क़िस्मकी मूली।

कपोती (सं० स्त्री०) कपोत-ङीप्। १ कपोतजातिकी स्त्री, कबूतरी। २ पक्षीय शुभविशेष। ३ पिड़की, फ़ाख़्ता। (त्रि०) ४ कपोतयुक्त, कबूतर रखनेवाला। ५ कपोतसदृश आकारयुक्त, जो कबूतरकी शक्ल रखता हो। ६ कपोतवर्ण, कबूतरका रङ्ग रखनेवाला।

कपोतेश्वरी (सं० स्त्री०) कपोतेश्वर-ङीप्। पार्वती, दुर्गा।

कपोल (सं० पु०) कपि-ओलच् नलोपः। कपिगडि-गण्डिकटिपटिभ्य ओलच्। उण् १।६६। १ मस्तक, माथा। २ गण्डस्थल, गाल। यह लज्जासे सिकुड़ता, भयसे उभरता, क्रोधसे कांपता, हर्षसे खिलता, स्वाभाविक भावसे सम रहता, कष्टसे शुष्क पड़ता और उत्साहसे पूर्ण लगता है।

कपोलकल्पना (सं० स्त्री०) अमूलक कल्पना, झूठ बात।

कपोलकल्पित (सं० त्रि०) असत्य, झूठ।

कपोलकवि—संस्कृतके एक प्राचीन कवि।

कपोलकाष (सं० पु०) कपोलानां काषः (कष्यते अनेन इति काषः) कर्षणस्थानम्। १ हस्तिगण्डस्थल, हाथीको कनपटी। २ हस्त्यादिका स्कन्धस्थान, हाथीके अपनी कनपटी रगड़नेका मुकाम; पेड़का तना।

"गौलानिः सुरकरिणां कपोलकाषः।" (भारवि)

कपोलगेंदुवा (हिं० पु०) गण्डस्थलोपधान, गलतकिया।

कपोलफलक (सं० पु०) कपोलः फलक इव। प्रशस्त गण्डस्थल, चपटा गाल। सम्भवतः कपोलास्थिको ही कपोलफलक कहते हैं।

कपोलभित्ति (सं० स्त्री०) कपोला भित्तिः इव, उपमि०। विस्तृतकपोल, लम्बा-चौड़ा गाल।

कपोलराग (सं० पु०) गण्डस्थलकी रक्तता, गालकी चमक।

कपोली (सं० स्त्री०) जान्वग्रभाग, घुटनेका अगला हिस्सा।

कपोला (हिं० पु०) वैश्यजातिविशेष, बनियोंकी एक कौम।

कप्तान (अं० पु०=Captain) १ सेनानी, सिपहसलार। २ पोताध्यक्ष, जहाज़का सुपरिन्टेंडेंट। ३ नायक, अगुवा।

कप्तानी (हिं० स्त्री०) १ अध्यक्षता, सरदारी। (त्रि०) अध्यक्षसम्बन्धीय, सरदारसे सरोकार रखनेवाला।

कप्पर (हिं० पु०) कर्पट, कपड़ा।

रात्रि बीतनेपर वह बहिर्द्वार खोल प्रत्यह गङ्गा-स्नानको निकलते हैं। तुम रातको उनके बहिर्द्वारके सम्मुख जाकर सो रहो। जब वह द्वार खोल बाहर आयेंगे, तब उनके पद तुम्हारे अङ्गमें छू जायेंगे। उस समय उनके मुखसे निकले नामको तुम गुरुमन्त्र समझ ग्रहण कर लेना। सिवा इसके रामानन्दके शिष्य होनेका दूसरा कोई उपाय नहीं।

कबीर वैष्णवकी बातसे आश्वस्त हुये और शुभ-दिनको रात्रि बीतनेसे रामानन्दके द्वारपर लेट गये। रात्रि शेष होनेपर रामानन्द प्रातःकृत्यादि निबटा और हाथ तिल उठा जैसे ही बाहर निकले, वैसे ही कबीरके अङ्गमें उनके पद छू गये। कबीरने भी महासमादरसे गुरुके पद चूम लिये थे। रामानन्द म्लेच्छके गात्रमें पद लगते देख बोल उठे—राम! राम! तुम कौन। इसप्रकार कबीरका मनोरथ पूरा हुवा। उन्होंने रामानन्दको गुरु कह साष्टाङ्ग प्रणिपात किया।*

उसी दिनसे कबीरने 'राम' नामको सार माना था। वह स्तव-स्तुति कुछ न करते, केवल 'राम' नामको ही मुक्तिका सोपान समझते रहे। फिर कबीर तिलक-माला धारण कर अपरापर वैष्णवोंकी भांति काशीधाममें रहने लगे।

कबीरका आचार व्यवहार देख वैष्णव बिगड़े थे। एकदिन उन्होंने कबीरको बोलाकर कहा—रे म्लेच्छा-धम! तू किस साहससे तिलकमाला धारण करता है! तुझको यह दुर्बुद्धि किसने दी है।

कबीरने शान्तशिष्ट भावसे उत्तर दिया—मैं सत्य कहता हूं, गुरु रामानन्दने मुझे राममन्त्र दिया और इसीसे मैंने ऐसा कार्य किया है।

फिर सबने जाकर रामानन्दसे कबीरकी कथा कही थी। रामानन्दने अत्यन्त क्रुद्ध हो उन्हें बोला भेजा। उन्होंने गुरुके निकट जा कृताञ्जलिपुटसे धीरभावमें कहा—हे नाथ! क्या आप भूल गये? उस दिन रात्रिशेष पर मैं आपके द्वारपर जाकर लेटा था। आपने मेरे अङ्गपर पद रख राम नाम उच्चारण किया। उसी दिन मैंने राममन्त्र लाभ किया था। उसी दिनसे मैं नियत राम नाम जपता हूं। प्रभो! इसमें यदि मेरा दोष मान लीजिये, तो दयाकर क्षमा कीजिये।

रामानन्दको कबीरका परिचय मिला और उन्होंने क्रोध परित्यागकर हंसते हंसते आशीर्वाद दिया। उसी दिनसे सब लोग कबीरको एक भक्त समझने लगे। यह नहीं—कबीर केवल भक्त ही रहे। उनका हृदय दरिद्रके दुःखसे पिघल उठता था। किसी दिन वह एक वस्त्र बेचने जाते रहे। पथमें कोई वृद्ध मिल गया। उस समय शीतकाल रहा। दरिद्र वृद्धने शीतार्त हो उनसे वस्त्र मांगा था। कबीरने दरिद्रकी दुर्दशा देख प्रसन्नवदन वस्त्र दे डाला। दान किया तो सही, किन्तु परमुहूर्त उनके मनमें संसारका उपाख्यान निकल पड़ा—हाय! आज मेरे घरमें अन्न नहीं, माता राहमें बैठी मेरे आनेकी ताक लगाये होगी; मैं रिक्त हस्त कैसे घर वापस जाऊंगा। फिर उन्होंने मन ही मन सोचा—आज दरिद्रको यह वस्त्र दे मुझे जो सुख मिला, वस्त्र बेच कर अर्थ ले उसका होना कहां था; मेरे अदृष्टमें जो आये, वही पड़ जायेगा। कबीर घर जो लौट आये। आकर उन्होंने सुना था—माता अन्नव्यञ्जन बना बैठे राह देख रही हैं। कबीरने मातासे पूछा—माता! आज हमारा संसार कैसे चला, आज तो हमारे कोई संस्थान न था। माताने उत्तर दिया—कबीर! यह क्या, तुम्हींने तो आदमी भेज हमारे पास अर्थ पहुंचाया है। कबीर आश्चर्यमें आ गये और आवेग गद्गद्भावमें मातासे कहने लगे—'माता! तुम धन्य हो। साक्षात् भक्तवत्सल भगवान् आकर तुम्हें अर्थ दे गये हैं। माता! दीनदुःखीको धन वितरण करो। हमें धनका क्या प्रयोजन है?'

कबीरकी माताने दीन-दरिद्रको धन बांटा था। चारो ओर रट्ट हो गया—'कबीर बड़े दाता हैं। जो आता वही पाता, कोई वृथा घूम नहीं जाता।'

यह वदान्यता सुन एक दिन चारो ओरसे बहुतसे

* रेखुअई मठमें कबीरने रामानन्दसे दीक्षाकी प्रार्थना की थी—
"प्रथमहि कप मोंदारा कीन्हा। आदित्य मोहिं काहु न चीन्हा॥
रामानन्द गुरु दीक्षा दीन्ह। दृढ़पूजा कछु हमसों लीन्ह॥"

कप्फा (हिं० पु०) १ अहिफेनस्वेद, अफीमका अर्क। इसमें वस्त्र आर्द्र कर मदक प्रस्तुत करनेको शुष्क करते हैं। २ चालनी, गिरवाला, साफा। यह एक प्रकारका वस्त्र होता है। किसी पात्रके मुखमें लपेट इसपर अफीमको शुष्क करते हैं।

कप्याख्य (सं० पु०) कपिराख्या यस्य, बहुव्री०। १ वानर, बन्दर। २ सिल्हक, लोबान्।

कप्यास (सं० पु०) कपीनां आस: (आस्यते अनेन इति आस:), ६-तत्। वानरगुद, बन्दरको पीठके सामनेका हिस्सा।

कफ (सं० पु०) केन जलेन फलति, क-फल-ड। अन्येष्वपि दृश्यते। पा ३।२।१०१। शरीरस्थ धातुविशेष, श्लेष्मा, बलगम। "क" शब्दका अर्थ देह और "फल" धातुका अर्थ गति है। सुतरां इससे स्पष्ट समझ पड़ता—प्राणियोंके देहमें सर्वत्र गमन करनेवालेको विद्वान् कफ कहता है। यह शरीरस्थ सौम्य (जलीय, स्निग्ध-गुणविशिष्ट) धातु है। हिन्दीमें भी इसे प्रायः कफ ही कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—क्लेदन, सङ्घात, सौम्यधातु, श्लेष्मा, घन और बली है। कफ देहको धारण करनेसे 'धातु', समस्त देहको दूषित करनेसे 'दोष' और क्लेद द्वारा सर्वशरीरको मलिन करनेसे 'मल' कहलाता है। यह नाम, स्थान और कार्यभेदसे पांच भागमें विभक्त है—

"अवस्थे तानि नामानि क्लेदनश्चावलम्बनः।
रसनः स्नेहनश्चापि श्लेषणः स्थानभेदतः॥" (सुश्रुत)

१ क्लेदन, २ अवलम्बन, ३ रसन, ४ स्नेहन और ५ श्लेषण कफके पांच नाम हैं।

"आमाशये उप हृदये कण्ठे शिरसि सन्धिषु।
स्थानेष्वेषु मनुष्याणां श्लेष्मा तिष्ठत्यनुक्रमात्॥" (शब्दबोध)

१ आमाशय, २ हृदय, ३ कण्ठ, ४ मस्तक, और सन्धिस्थान—शरीरके पांच स्थानोंमें श्लेष्मा प्रधानतः रहता है। क्लेदन नामक श्लेष्माका आमाशय, अवलम्बनका हृदय, रसनका कण्ठ, स्नेहनका मस्तक और श्लेषणका आश्रयस्थल सन्धिस्थान है। सर्वशरीर-व्यापी होते भी जब यह अविकृत अवस्थामें रहता, तब केवलमात्र पूर्वोक्त आमाशयादि पञ्चस्थानमें ही ठहरता है। श्लेष्माके जो उल्लिखित पञ्चविध कार्य क्लेदनादि पृथक् पृथक् पड़ते, उन्हें भी इस स्थलपर लिखते हैं—

"क्लेदनः क्लेदयत्यन्नमात्मशक्त्याऽपरानपि।
अनुगृह्णाति च श्लेष्मस्थानान्युदककर्मणा॥
रसयुक्तात्मवीर्येण हृदयस्थानलम्बनम्।
त्रिकसन्धारणञ्चापि विदधात्यवलम्बनः।
रसनास्थितस्त्वेव रसनो रसबोधनात्।
स्नेहनः स्नेहदानेन समस्तेन्द्रियतर्पणः।
श्लेषणः सर्वसन्धीनां संश्लेषं विदधात्यसौ॥" (सुश्रुत)

१म—क्लेदन नामक श्लेष्मा अपनी शक्तिसे भुक्त द्रव्यको भिगाता और पित्ताशलि सकल आहारीय वस्तुको गलाता है। फिर यह भिन्न (गला हुवा) अन्न देहके अन्यान्य सकल स्थानोंमें पहुंच हृदयाव-लम्बन, त्रिक (मेरुदण्डके निम्न एवं उपरिस्थ सन्धि-स्थान अर्थात् गुह्यके सन्निकट श्रोणास्थि तथा घाट), सन्धारण, रसग्रहण एवं इन्द्रियसमूहको शैत्यगुणसे सन्तर्पितकरण तथा सन्धिसंश्लेषण प्रभृति उदककर्म द्वारा आनुकूल्य पहुंचाता है। २य—वक्षःस्थल-स्थित अवलम्बन नामक श्लेष्मा रसके सहयोग स्वीय शक्ति द्वारा हृदयको अवलम्बन और त्रिक-देशको धारण करता है। ३य—रसन नामक रसनास्थ कफ आहारीय वस्तुसमूहके रसका ज्ञान उपजाता है। ४र्थ—स्नेहन नामक श्लेष्मा स्नेहपदार्थ प्रदानपूर्वक समस्त इन्द्रियको तृप्ति लाता है। ५म—श्लेषण नामक कफ सन्धिसमूहका संश्लेष (मेल) विधान करता है। वाभटके मतसे—

"कफधाम्नाञ्च शेषाणां यत् करोत्यवलम्बनम्।
अतोऽवलम्बकः श्लेष्मा यस्त्वामाशयसंस्थितः।
क्लेदकः सोऽन्नसङ्घातक्लेदनात् रसबोधनात्।
बोधको रसनास्थायी शिरःसंस्थोऽक्षितर्पणात्।
तर्पकः सन्धिसंश्लेषात् श्लेषकः सन्धिषु स्थितः।" (वाभट)

अवलम्बक, क्लेदक, श्लेषक, बोधक एवं तर्पक—पांच नामसे कफ ५ भागमें विभक्त है। अवलम्बक श्लेष्मा पूर्वोक्त अवलम्बन कफोक्त क्रियाशील एवं स्थानगत, क्लेदक श्लेष्मा क्लेदनकी भांति कार्यकारी तथा स्थानगत, श्लेषक पूर्वोक्त श्लेषणके सदृश क्रिया-

लोग इनके घर आकर अतिथि हुये। इन्होंने देखा,—'बड़ा ही विभ्राट है! मैं दरिद्र, निर्धन हूं। गृहमें अन्नका संस्थान नहीं। कैसे इतने लोगोंकी मनस्तुष्टि की जायेगी।' इनका मन अस्थिर पड़ गया था। यह गृहान्तरमें जा सोचने लगे। उधर भगवान्ने कबीरका रूप बना और अतिथियोंको धनरत्नसे सजा बिदा कर दिया। इन्होंने घर आकर यह अपूर्व घटना सुनी। फिर कबीर क्या स्थिर रह सकते थे! प्राण छोड़ छोड़ यह केवल इष्टदेवको पुकारने लगे।

किसी दिन इन्होंने राजसभामें पहुंच एक अञ्जलि जल भर पूर्वमुख फेंका था। राजा इन्हें पागल समझ हंस पड़े। उस समय इन्होंने निर्भय राजाको सम्बोधन कर कहा था,—राजन्! हंसनेका कोई कारण नहीं। जगन्नाथपुरीमें किसी पूजक ब्राह्मणके पैरपर उष्ण ओदन गिर पड़ा है। मैंने उसीके पैरपर शीतल जल डाला।

कबीरकी बातसे राजाको बड़ा कौतूहल लगा था। उन्होंने जगन्नाथपुरीको दूत भेजा। उसने लौट कबीरकी बात सप्रमाण की थी। फिर राजाने कबीरको एक सिद्धपुरुष ठहरा लिया। साक्षात् करनेको वह स्वयं इनके घर जा पहुंचे। कबीर राजाको अपने क्षुद्र कुटीरमें देख अतिशय आह्लादित हुये और हाथ जोड़ कहने लगे,—'महाराज! आपके आगमनसे यह दास कृतार्थ हुआ। किङ्करको कुछ करनेके लिये आदेश दीजिये।' राजाने इन्हें आलिङ्गन कर कहा,—हे वैष्णव! आप हमारा दोष ग्रहण न कीजिये। हमने बेसमझे आपका उपहास किया है। बतलाइये, क्या करनेसे आप सुखी होंगे। धनरत्न जो चाहिये, हम अभी देनेको प्रस्तुत हैं।

इन्होंने सहास्यमुख उत्तर दिया था,—'राजन्! धनरत्नका क्या प्रयोजन है। जीवन और मरण—उभय समान होते हैं। मैं मूर्ख हूं। इस तुच्छ जीविकानिर्वाहके लिये धन नहीं चाहता। जो दीन दरिद्र, क्षुधातुर और धर्मके लिये लालायित है, अपनी इच्छाके अनुसार उसे धन दीजिये। आपको महापुण्य होगा।' राजा हृष्टचित्त निज प्रासादको लौटे थे। उसी दिन उन्होंने राज्यमय घोषणा की—कबीर हमको अति प्रिय हैं।

कुछ दिन पीछे यह तीर्थयात्राको निकले और मथुरा दर्शन कर दिल्ली पहुंचे थे। उस समय दिल्लीमें मुसलमानराज सिकन्दर लोदीका राजत्व रहा। दुष्टोंने जाकर सुलतानसे कह दिया—एक दाम्भिक जोलाहा आकर अनेकोंको वञ्चना करता है। ऐसे व्यक्तिको राजदण्ड मिलना उचित है।

सिकन्दरने कबीरको पकड़नेके लिये आदेश लगाया था। यथासमय राजपुरुषोंने आ इन्हें पकड़ लिया। फिर इन्होंने उनके मुख प्राणदण्ड मिलनेकी बात सुनी। सिकन्दरके समीप पहुंचने पर पारिषदोंने इनसे नमस्कार करनेको कहा था। किन्तु इन्होंने उनकी बातपर कर्णपात न किया और हंसते हंसते सुना दिया—किसको प्रणाम किया जाये, इस संसारमें कौन वध्य नहीं।

फिर सुलतानने अति क्रुद्ध हो और इन्हें शृङ्खलाबद्ध कर यमुनाके अगाध सलिलमें डालनेका आदेश निकाला था। राजपुरुषोंने तत्पश्चात् कबीरको यमुनाके जलमें निक्षेप किया। कालिन्दीके श्याम नीरमें इनका देह अदृश्य हो गया। किन्तु परक्षण ही सकलने यमुनाके परपार इन्हें सहास्य मुख घूमते देखा। दुष्ट लोगोंने सुलतानसे जाकर कह दिया—'कबीर ऐन्द्रजालिक हैं। सामान्य इन्द्रजाल-विद्याके प्रभावसे निश्चय उन्हें रक्षा मिली है। इसबार अग्निके मध्य निक्षेप कराइये।' दिल्लीश्वरने दुष्टोंकी बातोंमें पड़ राजपुरुष बोला कर इन्हें महानलमें जला डालनेको कहा था। किन्तु कैसा आश्चर्य! ज्वलन्त अनलमें इनका एक केश नष्ट न हुआ।

कबीरकी इस अमानुष घटनासे भी दिल्लीश्वरको चैतन्य आया न था। उन्होंने क्रोधसे उन्मत्त और दुर्जनोंकी बातके वशीभूत हो हाथीके पैर नीचे इन्हें दबा मार डालनेको आदेश दिया। किन्तु भगवान् जिसपर सदय रहते, हजार हाथी भी उसका क्या कर सकते हैं। आज मतवाला हाथी भी इनका सिंहरूप देख भयसे भाग गया।

विशिष्ट एवं स्थानगत, बोधक रसनकी भांति कार्यकारी तथा स्थानगत और तर्पकश्लेष्मा सुस्तीक्ष्ण स्नेहनके सदृश क्रियाकारी एवं स्थानाश्रयी है।

"श्लेष्मा श्वेतो गुरुः स्निग्धः पिच्छिलः शीत एव च।
मधुरस्त्वविदग्धः स्याद्विदग्धो लवणः स्मृतः॥" (सुश्रुत)

श्लेष्मा श्वेत, गुरु (भारी), स्निग्ध, पिच्छिल, शीतल, मधुर रसात्मक और बिगड़नेसे लवण रस-विशिष्ट होता है।

कफके प्रकोपका कारण और काल—गुरुपाकी, मधुररस-विशिष्ट, अत्यन्त स्निग्ध, द्रव (तरल) तथा पिष्टक एवं घृतसंयुक्त द्रव्य, दुग्ध तथा मधुररस खाने, दिनको सो जाने, और बाल्यकाल, शीतकाल, वसन्तकाल, रात्रिका प्रथमकाल, प्रभात तथा भोजनका अन्त समय आनेसे कफ प्रकुपित होता है। कफ उभरनेसे स्तिमितभाव, मधुररस, शीतता, शीकृत्य, प्रसेक, मल-प्राचुर्य, स्थिरता, लवणाक्तता, कण्डू, आलस्य, चिर-कारिता, कठिनता, शोथ, अरुचि, स्निग्धता, तन्द्रा, तृप्ति, उपदेह, कास और गुरुता—विंशतिप्रकार लक्षण देख पड़ता है। कफज रोगमें रूक्ष द्रव्य, क्षार द्रव्य, कषाय द्रव्य, तिक्त द्रव्य एवं कटु द्रव्यका सेवन, व्यायाम, निष्ठीवन (खखारकर थूकना), धूमपान, उष्ण शिरोविरेचक द्रव्य (नस्यादि)का व्यवहार, वमनकारक द्रव्यका प्रयोग, स्वेद (गर्म जलसे अभिषिक्त फलालेन आदि वस्त्रद्वारा सेंक-प्रदान), उपवास, मैथुन, पथपर्यटन, युद्ध, जागरण, जलक्रीड़ा और पदादि द्वारा आघात लगाना उपकारी है। ऐसे ही आहार विहार और औषधादिसे प्रकुपित कफ दब जाता है। उक्त सब द्रव्यादिको कफ-संशमनवर्ग कहते हैं।

जलक्रीड़ा (सन्तरण) और शीतल क्रिया द्वारा किस प्रकार कफ प्रशमित होता है—प्रश्नके उत्तरमें कहा जाता, कि जलक्रीड़ाजनित शीतलतासे शारीरिक ताप चलने नहीं पाता। सुतरां चतुर्दिक् कर्दम लेपन कर देनेसे पाकाग्नि प्रखर पड़ने पर सत्वर पाकक्रिया सम्पन्न होनेकी भांति शारीरिक अग्नि जलक्रीड़ादिसे अत्यन्त प्रखर हो कफको सुखाता है। कफ बढ़नेसे अग्निमान्द्य, नासिकादिसे कफस्राव एवं आलस्य आता, देह गुरु तथा श्वेतवर्ण देखाता, अङ्गादि शीतल एवं शिथिल पड़ जाता और श्वास, कास तथा निद्राका आधिक्य सताता है। फिर कफ घटनेसे ग्लानि लगती, हृदयादि श्लेष्माशयकी शून्यता झलकती, द्रवलकी अल्पता पड़ती और शारीरिक सन्धि-समूहकी शिथिलता बढ़ती है। जिस व्यक्तिके शरीरमें कफ अधिक परिमाणसे रहता, वह कफके गुण-क्रियादि विशिष्ट हो कफात्मक प्रकृतिको पहुंचता है। ऐसे व्यक्तिको कफप्रकृतिक कहते हैं। श्लेष्म-प्रकृतिका लक्षण—गम्भीर बुद्धि, श्यामवर्ण एवं स्निग्ध केश, क्षमाशीलता, वीर्यवत्ता, स्थूलदेह, समधिक बलवत्ता और निद्रावस्थामें स्वप्नयोगसे जलाशय-दर्शन है। फिर श्लेष्मप्रकृति बिगड़नेसे स्नेह, बन्ध (बद्धता), स्थिरता, गौरव, वृषकी भांति बल, क्षमा, धृति और अलोभ लक्षित होता है। (वाग्भट)

सुश्रुतके मतसे श्लेष्मप्रकृतिका लक्षण—नीलवर्ण केश, सौभाग्यवत्ता, मेघ एवं मृदङ्गकी भांति स्वर, निद्रावस्थामें स्वप्नयोगसे प्रफुल्ल पद्म कुमुदादि विविध पुष्प, सन्तरणशील हंस चक्रवाकादि जलक्रीड़क पक्षी तथा हरित् मनोहर सरोवरादि जलाशय-दर्शन, रक्तान्तनेत्र, सुविभक्तगात्र, समावयव, स्निग्धदेह, सत्व-गुणयुक्त क्लेशसहिष्णुता और गुरुको मान्यकारिता है।

मानवके शरीरमें दो प्रकारका कफ होता है—साम और निराम। आम (अपक्व)-रस-मिश्रित रहने-वाले कफका नाम साम है। फिर अपक्व रस-विहीन कफ निराम कहाता है। निराम कफ अविकृत और निर्दोष होता है। उससे किसीप्रकार अनिष्ट आनेकी सम्भावना नहीं। किन्तु साम कफ विकृत और दूषित है। वह नानाप्रकार अहित उत्पन्न करता है। इसीसे उसके सकल लक्षण लिखे गये हैं—

"आलस्यतन्द्राहृदयाविशुद्धिदोषाप्रवृत्त्यास्यमूढतादिः।
गुरुत्वाजीर्णमुखाभिरामान्वितं स्यान्निहृदयादरति॥" (भावप्रकाश)

आलस्य, तन्द्रा, हृदयकी अविशुद्धता (वक्षःस्थलमें कफवर्द्धक बाधादोष), दोषकी अप्रवृत्ति (वात न

सिकन्दर कबीरको भूयसी प्रशंसा करने लगे। इसप्रकार सुलतानका मन भी झुक पड़ा था। उन्होंने इन्हें बोला सादर सम्भाषणमें कहा—साधु! हमारा दोष क्षमा कीजिये। आप महाजन हैं। आज आपकी महिमा हम समझ सके हैं।

यह दिल्लीश्वरसे विदाय हो काशीधाम पहुंचे और संसारकी अनित्यता देख आत्मज्ञानके लाभको यत्नवान् हुये। काशीमें भी चारो ओर इनके विपक्ष घूमते थे। एक दिन कोई दुष्ट कबीरके नामसे काशीवासी समस्त साधुवोंको निमन्त्रण दे आया। घटनाक्रमसे उसी दिन यह स्थानान्तर गये थे, कुटीरमें केवल कुछ शिष्य रहे। निमन्त्रण मिलनेसे काशीके सहस्र सहस्र साधु इनके वासस्थान पर उपनीत हुये। सहस्राधिक अतिथियोंको क्षुधार्त देख शिष्योंका प्राण सूख गया। सकल हो सोचते थे—इतने लोगोंको खिला पिला कैसे विदा करेंगे। परक्षण ही भक्तवत्सल भगवान् कबीररूपसे भक्ष्य भोज्य ला सर्वसमक्ष देख पड़े और स्वहस्तसे साधुवोंको भोजन करा चल दिये। प्रकाश कर नहीं सकते—साधु कितने परितृप्त हुये थे। यह अहरको लौट महासमारोह देखकर अत्यन्त विस्मयमें आये। किसी शिष्यको पुकार इन्होंने पूछा था—वत्स! यह क्या व्यापार है, किस लिये इतने लोग आये हैं। शिष्य आश्चर्य हो कहने लगा—आप क्या कुछ रहे हैं; आपने जिन सहस्राधिक व्यक्तियोंको खिलाया पिलाया, उन्होंने आकर यह महोत्सव मचाया है।

कबीर समझ गये—यह सकल हरिकी लीला है। इन्होंने मनोभाव छिपा शिष्यसे कहा था—वत्स! मैं क्षुधासे अतिशय कातर हो गया हूं, मुझे साधुवोंका प्रसाद ला दो।

फिर जो कबीरके नियत अनिष्टकी चेष्टा करते, वह दुर्जन भी महत्त्वके गुणसे वशीभूत होने लगे। जब वह इनके निकट निज निज दोष स्वीकार कर कितनी ही क्षमा मांगते, तब साधु कबीर सकलको आलिङ्गनकर राम नाम पुकारते थे।

काशीवासी मात्र इनके गुणके पक्षपाती बन गये। किसी दिन एक रूपवती वेश्याने कबीरके निकट आ कहा था—महात्मन्! मैं नृत्यगीतादि नानाप्रकार उपभोग द्वारा आपको सन्तुष्ट करना चाहती हूं।

रूपसौन्दर्यशालिनी और नृत्यगीतादि-निपुणा नर्तकीको देख यह सहास्य बोल उठे,—मैं सुखभोग और नृत्यगीत नहीं समझता। फिर मैं स्त्री और पुरुष दोमें एक भी नहीं। मुझसे आपकी मनस्कामना कैसे पूर्ण होगी।' नर्तकीने अति काकुतिमिनति भावमें इनसे प्रार्थना की—मैं बड़ी आशासे आयी हूं। मुझे क्या हताश हो लौटना पड़ेगा।

इन्होंने धीर भावसे उत्तर दिया—देखो! मेरे गृहमें स्वयं भक्तवत्सल हरि विराजते हैं। वह अति रागी और महाभोगी हैं। उनके सामने नाच-गा आप अपनी भोगपिपासा मिटा सकती हैं।

नर्तकी महा आनन्दित हुयी—मेरा ऐसा सौभाग्य, कि मैं स्वयं भगवान्‌को नृत्यगीत द्वारा रिझाऊंगी। उसी दिनसे वह वेश्या कबीरके गृहमें रह प्रत्यह नाचने गाने लगी। इसी प्रकार कुछ दिन बीते थे। मनही मन वेश्या कबीरको चाहती थी। एक दिन गभीर रजनीको सब लोग सो गये। किन्तु वेश्याकी आंख न झपकी। कबीरके सम्भोगको लालसासे उसका चित्त अस्थिर हुआ था। वह किसी प्रकार आत्मसंयम कर न सकी और कबीरके सोनेकी जगह मनके आवेगमें जा पहुंची। उसने गभीर अमारजनीको वहां कबीरके बदले ज्योतिर्मय हरिकी मूर्ति देखी थी।

फिर उसकी कामपिपासा न जाने कहां अन्तर्हित हुयी। चक्षुसे प्रेमाश्रुकी धारा बही थी। उसके लिये संसार असार समझ पड़ा। वेश्या उसी अमानिशाको एकाकी गृह छोड़ निविड़ अरण्यकी ओर चली गयी।

इन्होंने प्रत्यूष उठ वेश्याको घरमें न देखा। उसके अलङ्कार वस्त्रादि सकल पड़े थे। कबीरने भावना लगायी—इतने दिनमें सम्भवतः वेश्याने सद्‌गति पायी है। इन्होंने शिष्योंको बोलाकर कहा—मेरे चलनेका समय आ पहुंचा है। वत्स! तुम काशीवासियोंको संवाद दो—मणिकर्णिकाघाट पर सब लोग कबीरसे आकर मिलें।

होना), मूत्रकी आविलता (मैलापन), उदरमें भारबोध, अरुचि और निद्रालुता—साम कफका लक्षण है।

प्रथम ही प्रकृति प्रत्यय निर्देशक व्युत्पत्ति द्वारा प्रतिपन्न किया—कफ सर्वशरीरमें चलता-फिरता है। फिर यह भी कहा जा चुका—अविकृत अवस्थापर हृदय, कण्ठ, आमाशय मस्तक एवं सन्धिस्थलमें रहता और विकृत होनेपर कफ स्वस्थान छोड़ शरीरके सर्वस्थानमें पहुंच नानाप्रकार रोग उत्पादन करता है। किन्तु यह सर्वत्र देहमें प्रसरणशील रहते भी वायुके साहाय्य व्यतीत हृदयादि स्वस्थानसे अन्यत्र कैसे जा सकता है। यथा—

"पित्तं पङ्गु कफः पङ्गुः पङ्गवो मलधातवः।
वायुना यत्र नीयन्ते तत्र गच्छन्ति मेघवत्॥" (शार्ङ्गधर)

पित्त, कफ, विष्ठामूत्रादि मल और रस रक्तादि धातु समस्त पङ्गुवत् अचल हैं। वह स्वयं शरीरमें कदाच चलफिर नहीं सकते। फिर वायुकर्तृक जिस स्थानमें पहुंचाये जाते, वहीं उक्त धातु मेघ वर्षणकी भांति अपनी क्रिया देखाते हैं। अर्थात् कफ बिगड़ने, उभरने या बढ़ने पर वायुद्वारा शरीरके नाना स्थानोंमें पहुंच नानाप्रकार व्याधि उत्पादन करता है। जैसे—वक्षःस्थ फुसफुसमें श्वास तथा कासरोग, मस्तकमें शिरःपीड़ा और नासिकामें आ कफ प्रतिश्याय रोग लगा देता है।

पथ्य—वमन, उपवास, नेत्राञ्जन, मैथुन, शरीरमार्जन, उष्ण जलादिके स्वेद, चिन्ता, जागरण, परिश्रम, अत्यधिक पथपर्यटन, तृष्णाके वेगधारण, गण्डूषधारण, प्रतिसारण (दन्त, जिह्वा एवं मुखमें घर्षण द्रव्यके प्रयोग), शिरोविरेचक नस्य, हस्ती अश्वादि यानारोहण, धूमपान, शरीरास्फालन, युद्ध, मनोदुःख उत्पादन, रूक्षद्रव्य, उष्णद्रव्य, पुरातन तथा षष्टिक धान्य, शिम्बिक, तृणधान्य, चणक, मुद्ग, कुलत्थ, माष, यव, क्षार, सर्षपतैल, उष्णजल, धन्वदेशज मांस, राजसर्षप, वेताग्र, पटोल, कारवेल्ल, वार्ताकी, उडुम्बर, कर्कोटक, मोचा, रसुन, निम्ब, आम मूलक, कटुकी, अदरक, मधु, ताम्बूल, पुरातन मद्य, त्रिकटु, त्रिफला, गोमूत्र, लाई, कटुतक्त लवणाम्ल, द्रवद्रव्य रहित, कांस्य, लौह, मुक्ता, कर्पूरयुक्त तिक्तकार एवं कषाय द्रव्य और अधोगमनके आचरण, पान वा आहारादिसे कफ नष्ट होता है।

अपथ्य—स्नेहप्रयोग, तैलाभ्यङ्ग, उपवेशन, दिवानिद्रा, स्नान, नूतन जल, नूतन तण्डुल, मटर, मत्स्य, मांस, गुड़ादि मिष्टद्रव्य, छेनें या मावे, दधि प्रभृति दुग्धविकृत द्रव्य, आमरस, पोय, कटहल, धान, खजूर, दुग्ध, अनुलेपन, नारिकेल, मिष्टान्न, मधुरद्रव्य, अम्लद्रव्य, गुरुद्रव्य और हिम—सकलका आचरण, आहार वा विहारादि कफके लिये अपथ्य ठहरता अर्थात् कफ अनिष्ट उत्पन्न करता, उभरता तथा बढ़ता है।

कफ़ (अ० पु० = Cuff) १ पिप्पलाञ्चल, आस्तीनकी तुलदार सञ्जाफ्। यह एक दोहरी पट्टी रहती, जो कुरते या कमीजको बांहमें हाथके पास लगती है। इसमें कोई दो, कोई तीन और कोई चार बटन तक टंकाता है। चुन्नीदार कुरतेमें इसको प्रायः रखते हैं। कमीजमें कफ ज़रूर रहता है। २ मुष्टि प्रहार, धौल, थप्पड़, तमाचा। ३ यन्त्रविशेष, एक औज़ार, नाल। यह लोहेका होता है। इसको मार-मार चमकसे आग निकाली जाती है।

कफ़ (फा० पु०) फेन, झाग।

कफकर (सं० त्रि०) कफं करोति, कफ-कृ-अच्। १ कफवृद्धिकारक, बलगम बढ़ानेवाला। २ श्लेष्मा उत्पादन करनेवाला, जो जुकाम लाता हो। महर्षि सुश्रुतके मतसे काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा, महामेदा, छिन्नरुहा, कर्कटशृङ्गी, तुगाक्षीरी, पद्मक, प्रपौण्डरीक, ऋद्धि, वृद्धि, मृद्वीका, जीवन्ती और मधुक—काकोल्यादिगणोक्त सकल द्रव्य कफकर हैं।

अन्यान्य द्रव्य कफ शब्दमें देखो।

कफकूर्चिका (सं० स्त्रि०) कफं कूर्चति विकृतं करोति, कफ-कूर्च-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम् च। लाला, लार।

कफकेतु (सं० पु०) कफरोगाधिकारका औषध, बलगमकी एक दवा। टङ्कण, मागधी, शङ्ख एवं

शिष्योंने चारो ओर गुरुकी आज्ञा घोषणा की थी। दल दल लोग आ-आ पुण्यसलिलाके तटपर समवेत हुये। सकल ही कबीरकी बात सुननेको उत्कण्ठित थे। यह अपने प्रियजनोंको उपस्थित देख मिष्ट भावसे कहने लगे—मैं परपार जाऊंगा। मेरे इह-जीवनकी लीला समाप्त हो गयी है। भाइयो! मैं अन्त्यज म्लेच्छके घरमें जन्म ले कर्मसूत्रसे वैष्णव बना हूं। इस मिथ्या अपवित्र देहको रखनेसे क्या फल मिलेगा। मगरराज्य*में मेरा मोक्ष होगा।

कबीरकी बात सुन सकल ही हाहाकार करने लगे। इन्होंने मधुर भाषासे देहकी अनित्यता देखा सर्वसाधारणको सान्त्वना दी।

अनन्तर यह सकलको साथ ले मणिकर्णिकाके परपार पहुंचे थे। वहीं जाकर इनका निद्राकर्षण लगा। कबीर भूमिमें लेट गये। शिष्योंने इनके शरीर पर वस्त्राच्छादन किया था। फिर दो घण्टे बीतते भी यह न उठे। इससे सबलका मन अस्थिर हुवा था। शिष्योंमें भी कोई साहस कर इनके अङ्गका आवरण खोल न सका। दो घण्टे अपेक्षा कर सबके मनमें विजातीय भाव उदय हुवा था। सभीने बारम्बार इन्हें जगानेको कहा। फिर अगत्या शिष्योंने गुरुका आवरणवस्त्र खींच लिया। किन्तु वस्त्रके मध्य कबीरका दर्शन मिला न था। सबने वस्त्र और शरासन पड़ा पाया। इसी प्रकार भक्त कबीरने परमपद लाभ किया। (भक्तिमाहात्म्य)

वस्तुतः कौन न मानेगा—कबीर एक महत् व्यक्ति रहे। यह कोई जाति क्यों न हों, इनके निकट हिन्दू-मुसलमान, सकल ही समान थे। यह अकुतोभयसे शास्त्र और क़ुरानका प्रतिवाद कर गये हैं। कबीर कहते—'हिन्दुवोंके राम और मुसलमानोंके रहीम स्वतन्त्र नहीं, अनुसन्धान करनेसे हृदयमें मिलेंगे। यह विश्व जिनका संसार और अलो एवं राम जिनके सन्तान ठहरते, उन्हींको हम पीर समझते हैं।' कबीर जप पूजादि मानते न थे। इसके सम्बन्धमें यह कहा करते—

"मनका फेरत युग गयो गयो न मनका फेर।
करका मनका छोड़ कर मनका मनका फेर॥"

जपके मालाकी गुरिया सरकाते-सरकाते युग बीत गया, किन्तु मनका द्वन्द्व न मिटा। इसीसे कहते—हाथकी गुरिया छोड़ मनकी गुरिया सरकाया कीजिये।

यह जातिभेद भी मानते न थे।* इनके वचनमें मिलता है—

"सबसे हिलिये सबसे मिलिये सबका लिजिये नाव।
हांजी हांजी सबसे किजिये बसिये अपनी गांव॥"

सबके साथी बनो, सबसे मिलो और सबका नाम ग्रहण करो। फिर सबसे 'हांजी हांजी' भी कहो, किन्तु अपने ही स्थानपर रहो।

कबीर संसारकाण्डको देख दुःखसे कहते थे—

"ब्राह्मन टाह्मन मूरख भये शूद्र पढ़े गीता।
ठग ठग्गर बद अच्छा खावे दुःख पावे पछीता॥
सांचेको मारे लठा झूठा जगत् पिआय।
गोरस गलियनमें फिरे बैठे सुरा बिकाय॥
सतीको ना धोती मिले गला पहरे खासा।
कहे कबीरा देखो भाई दुनियाकेर तमाशा॥"

जातिकुलकी भांति इनके समयपर भी कबीरपन्थी गड़बड़ डाला करते हैं। उनके कथनानुसार कबीरने संवत् १२०५ को टकसार-शास्त्र प्रकाश किया और

* भक्तिमाहात्म्यका जो पुस्तक मिला, उसमें 'मगर'के स्थानमें 'मगध' शब्द लिखा है। किन्तु 'मगर' ही युक्तिसङ्गत समझा जाता है। इसीसे यह पाठ ग्रहण किया गया।

सुना जाता—मृत्यु होनेसे कबीरके शवदेहपर हिन्दुवों और मुसलमानोंमें विवाद उठा था। उसी समय कबीर स्वयं आ यह बात कह कर अन्तर्हित हुये—मेरे शवदेहका आवरण खोलकर देखिये। आवरण खोलनेपर शवके अभावमें सबको कुछ फूल देख पड़े। काशीके राजा वीरसिंहने वही आधे फूल ला जलाये थे। फिर फूलोंका भस्म काशीके 'कबीर-चौरा' नामक स्थानमें समाहित किया गया। उधर पठानराज बिजलीखान् आधे फूल गोरखपुरके निकट मगर नामक ग्राममें ले जाकर गड़ाये थे। उन्होंने वहां एक सुन्दर समाधिस्तम्भ भी बनवा दिया। उक्त 'कबीरचौरा' और 'मगरका समाधिस्तम्भ' कबीरपन्थियोंका प्रधान तीर्थस्थान गिना जाता है।

* जाति पांति कुल कापरा यह शोभा दिन चारि।
कहे कबीर सुनहु रामानंद येहु रहे भखमारि॥
जाति हमारी बानिया कुल करता उर माहि।
कुटुंब हमारे सन्त हैं मूरख समझत नाहि॥

वत्सनाभ बराबर बराबर ले आद्रकके खरसमें तीन भावना देनेसे यह रस बनता है। मात्रा गुञ्जामात्र है। (भैषज्यरत्नावली)

कफक्षय (सं० पु०) कफानां क्षयः, ६-तत्। शरीरस्थ स्वाभाविक कफका नाश, जिस्मके कुदरती बलगमका बिगाड़।

कफगण्ड (सं० पु०) गलरोग, गलेकी एक बीमारी। यह स्थिर, सवर्ण, गुरु, उग्रकण्डू, शीत, महान्‌कफात्मक, पाकव्ययुक्त और चिरवृद्धिपाक होता है। फिर इस रोगके प्रभावसे रोगीका मुख वैरस्य पकड़ता और तालु तथा गल सूखने लगता है। (माधवनिदान)

कफगीर (फा० पु०) कफ्चा, करछी, डोई। इसका अग्रभाग करतलकी भांति चपटा रहता और दण्ड लम्बा लगता है। कफगीरसे दाल, भात, खिचड़ी, घी वग़ैरहका मैल उतारते और पूरी-कचौरी भी निकालते हैं। हिन्दुस्थानमें इसे प्रायः चलतुआ कहते हैं।

कफगुल्म (सं० पु०) श्लेष्मज गुल्म, बलगमके बिगाड़से पेटमें पड़नेवाली गिलटी या गांठ। इसका रूप—स्तैमित्य, शीतज्वर, गात्रसाद, हृल्लास, कास, अरुचि, गौरव, शैत्य और कठिनोन्नतत्व है। (चरक)

कफघ्न (सं० त्रि०) कफं तद्विकारञ्च हन्ति, कफ-हन्‌-टक्। श्लेष्मनाशक या कफजनित पीड़ानाशक, बलगम या बलगमकी बीमारी दूर करनेवाला। सुश्रुतोक्त आरग्वधादि, वरुणादि, सालसारादि, लोध्रादि, अर्कादि, सुरसादि, पिप्पल्यादि, एलादि, वचत्यादि, पटोलादि, ऊषकादि तथा मुस्तादि गणोक्त और त्रिकटु, त्रिफला, पञ्चमूल एवं दशमूल प्रभृति सकल द्रव्य कफनाशक हैं।

अन्यान्य कफघ्न द्रव्य कफ शब्दमें देखो।

कफघ्नी (सं० स्त्री०) कफघ्न-ङीप्। १ शूकनाशा, केवांच। २ चतुर्याभेद, एक पेड़।

कफज (सं० त्रि०) कफाज्जायते, कफ-जन-ड। श्लेष्मासे उत्पन्न, बलगमसे पैदा।

कफज्वर (सं० पु०) कफनिमित्तो ज्वरः, मध्यपदलो०। श्लेष्मजन्य ज्वर, बलगमी बुखार। ज्वर देखो।

कफणि (सं० पु०-स्त्री०) केन सुखेन फणति अनायासेन सङ्कोच-विकोचमत्वं प्राप्नोति, क-फण्‌-इन्‌; केन अनायासेन स्फुरति, क-स्फुर-इन्‌ पृषोदरादित्वात्‌ साधुः। कफोणि, मिरफक़, कोहनी, बांहके बीचकी गांठ।

कफणी (सं० स्त्री०) कफणि देखो।

कफद (सं० त्रि०) कफं ददाति, कफ-दा-क। श्लेष्मकारक, बलगम पैदा करनेवाला।

कफ़न (अ० पु०) शवाच्छादनवस्त्र, मुर्देपर डाला जानेवाला कपड़ा।

कफ़नखसोट (हिं० वि०) १ शवके आच्छादनका वस्त्र नोच लेनेवाला, जो मुर्देपर डाला जानेवाला कपड़ा फाड़ लेता हो। पहले डोम श्मशानमें मुर्देका कपड़ा उतार आपसमें फाड़ लेते थे। २ कृपण, कञ्जूस। ३ दरिद्रका धन हरण करनेवाला, जो ग़रीबका माल खड़ा लेता हो।

कफ़नखसोटी (हिं० स्त्री०) १ शवाच्छादनवस्त्रकी नोचफाड़, मुर्देपर डाले जानेवाले कपड़ेकी नोचखसोट। यह डोमोंका कर है। २ वृत्तिविशेष, रुपया कमानेकी एक चाल। अयोग्य रीतिसे दरिद्रका धनहरण करना कफ़नखसोटी कहाता है। ३ कृपणता, कञ्जूसी।

कफ़नचोर (हिं० पु०) १ प्रधान तस्कर, बड़ा चोर। जो गड़े मुर्देको उखाड़ कफ़न चुराता, वही कफ़नचोर कहाता है। २ दुष्ट, बदमाश, उचक्का। क्षुद्र द्रव्य चोराने और किसीको देखमें न आनेवालेका नाम कफ़नचोर है।

कफनाड़ी (सं० स्त्री०) दन्तमूलगत रोगविशेष, दांतोंकी जड़में होनेवाली एक बीमारी।

कफ़नाना (हिं० क्रि०) शवको वस्त्रसे आच्छादन करना, मुर्देको कपड़ा ओढ़ाना।

कफनाशन (सं० त्रि०) कफं नाशयति, कफ-नश-णिच्‌-ल्युट्‌। कफको नाश करनेवाला, जो बलगम मिटाता हो।

कफ़नी (हिं० स्त्री०) १ शवके कण्ठमें पड़नेवाला वस्त्र, जो कपड़ा मुर्देके गलेमें डाला जाता हो।

संवत् १२०५ को मगर नगरमें इहलोक छोड़ दिया। ऐसा होनेसे प्राय: ३ शतवर्ष इनका परमायु आता है। यह क्या सम्भव है। किन्तु भक्तिमालाका और कई मुसलमानी इतिहासके ग्रन्थ पढ़नेसे हम समझते—कबीर सिकन्दर लोदीके समसामयिक रहे। १५४४ संवत् सिकन्दरने राज्य पाया था। अतएव सम्भवपर मानते उस समय कबीर विद्यमान रहे।

सिखोंके धर्मगुरु नानकने कबीरका मत अपने ग्रन्थमें उद्धृत किया है। एतद्भिन्न सत्नामियों, साधवों, श्रीनारायणियों और शून्यवादियोंके पुस्तकोंमें भी इनका मत मिलता है। इससे समझ पड़ा—उक्त सम्प्रदायप्रवर्तकोंने इनका मत ले साथ साथ अपना धर्म प्रचार किया है। अन्यान्य विवरण कबीरपन्थी शब्दमें देखो।

कबीर-उद्-दीन्—ताज-उद्-दीन हरकोंके पुत्र। दिल्लीवाले बादशाह अला-उद्-दीन्के समय यह जीवित रहे। इन्होंने उनके अभिभवपर एक पुस्तक लिखा था।

कबीरपन्थी—सम्प्रदाय विशेष। इन्होंने महात्मा कबीरका प्रवर्तित धर्ममत अवलम्बन किया है।

कबीरपन्थी सकल देवतावोंकी अपेक्षा विष्णुके प्रति अधिक भक्ति देखाते हैं। रामानन्दी प्रभृति वैष्णव सम्प्रदायके साथ यह सद्भाव रखते और आचार-व्यवहारमें भी मिलते-जुलते हैं। इसीसे कितने ही लोग इन्हें वैष्णव कहते हैं। कबीरपन्थी अपरापर वैष्णवोंकी भांति तिलक लगाते, नासिकापर चन्दन वा गोपीचन्दनकी रेखा बनाते, गलेमें तुलसीमाला लटकाते और हाथमें भी जपकी माला झुलाते हैं। किन्तु यह इस तिलकमुद्राको वृथा आडम्बरमात्र समझते हैं। वास्तविक इनकी विवेचनामें शास्त्रोक्त देवदेवीका पूजन अथवा क्रियाकलापका अनुष्ठान प्रयोजनीय नहीं ठहरता।

कबीरपन्थियोंमें प्रधानत: दो दल होते हैं—गृहस्थ और सन्यासी। गृहस्थ स्व स्व जातिगत और वर्णगत आचार व्यवहार अवलम्बन करते हैं। फिर कोई निज धर्मको छोड़ हिन्दुवोंके उपास्य देवतावोंको भी पूजता है। संसारत्यागी सन्यासी एकमन नयनके अगोचर केवल कबीरदेवका ही भजन करते हैं। उन्हें गुरुके निकट मन्त्र लेना नहीं पड़ता। वह केवल विह्वल हो प्राणभर धर्मगान करनेको ही उपासना समझते और अपनी इच्छाके अनुसार वेशभूषा रखते हैं। फिर कोई नग्नप्राय हो कर भी पथ पथ घूमते फिरता है। सन्यासियोंके महन्त मस्तक पर टोपी लगाते हैं। उक्त दोनों दल प्राय: १२ शाखामें विभक्त हैं। इन १२ शाखाप्रवर्तकोंके नाम नीचे लिखते हैं,—

(१) श्रुत गोपालदास—सुखनिधानके प्रणेता रहे। इनके शिष्य परम्परासे द्वारकाके अखाड़े, वाराणसीके कबीर-चौरे, मगरके समाधि और जगन्नाथके अखाड़े पर कर्तृत्व रखते हैं।

(२) भगोदास—बीजकके रचयिता थे। इनके अनुगामी शिष्य-प्रशिष्य धनौती नामक स्थानमें रहते हैं।

(३) नारायण दास और (४) चूड़ामणि दास—धर्मदास नामक वणिक्के पुत्र तथा गृहस्थ रहे। इसीसे सब लोग इन्हें 'वंशगुरु'की भांति सम्बोधन करते थे। आजकल चूड़ामणिका वंश समाज-भ्रष्ट और नारायणका वंश नष्ट हो गया है।

(५) जीवनदास—सत्नामी सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। सत्नामी देखो।

(६) जग्गूदासकी गद्दी कटकमें है।

(७) कमलको लोग कबीरका पुत्र बताते हैं। किन्तु इस पक्षपर कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता। यह बम्बईमें रहते थे। इनके मतावलम्बी योगाभ्यासी होते हैं।

(८) टकसाली—बड़ौदावासी थे।

(९) ज्ञानी—सहसरामके निकट मझनी ग्राममें रहते थे।

(१०) साहबदास—कटकनिवासी और मूलपन्थी नामक सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। मूलपन्थी देखो।

(११) नित्यानन्द और (१२) कमलानन्द—दाक्षिणात्यवासी थे।

सिवा इनके दान-कबीरी, मंगरेल्-कबीरी, हंस-कबीरी प्रभृति दूसरी शाखा भी विद्यमान हैं।

२ परिच्छदविशेष, पहननेका एक कपड़ा। इसे साधु धारण करते हैं। कफनी सिलाई नहीं जाती। इसमें शिर निकालनेको एक छिद्र रहता है। इसका दूसरा नाम चोलना है।

कफप्रकृति (सं० स्त्री०) स्थिरचित्तता स्निग्धकेशत्व आदि, दिलका ठहराव और बालोंका चिकनापन वगैरह।

कफप्राय (सं० त्रि०) कफः प्रायः बाहुल्येन यत्र, बहुव्री०। कफबहुल, जो बहुत बलग़म रखता हो।

कफमन्दिर (सं० पु०-क्ली०) मण्डभेद, माड़, झाग।

कफवल्ली (सं० स्त्री०) नागरमुस्ता, नागरमोथा।

कफरोग (सं० पु०) कफजन्य रोगमात्र, बलग़मसे पैदा होनेवाली कोई बीमारी।

कफरोहिणी (सं० स्त्री०) कफजन्य गलरोगविशेष, बलग़मसे गलेमें होनेवाली एक बीमारी। गलरोहिणी देखो। यह स्रोतनिरोधन, मन्दपाक, स्थिराङ्कुर और कफसम्भव होती है। (माधवनिदान)

कफल (सं० त्रि०) कफः बाहुल्येन अस्त्यस्य, कफलच्। कफविशिष्ट, बलग़मी।

कफवर्धक (सं० त्रि०) कफं वर्धयति, कफ-वृध-णिच्-ण्वुल्। श्लेष्माकी वृद्धि करनेवाला, जो बलग़म बढ़ाता हो।

कफवर्धन (सं० पु०) कफं कफजनितं विकारं वा वर्धयति, कफ-वृध-णिच्-ल्यु। १ पिण्डीतगर वृक्ष, किसी किस्मके तगरका पेड़। (त्रि०) २ कफवर्धक, बलग़म बढ़ानेवाला।

कफविरोधि (सं० क्ली०) कफं विशेषेण रुणद्धि, कफ-वि-रुध-णिनि। १ मरिच, मिर्च। (त्रि०) २ श्लेष्मरोधक, बलग़म रोकनेवाला।

कफविरोधी (सं० त्रि०) श्लेष्मरोधक, बलग़म रोकनेवाला।

क़ुफ़स (अ० पु०) १ पिञ्जर, पिंजरा। २ बन्दीगृह, क़ैदखाना। ३ कटघरा। ४ सङ्कुचित स्थान, तङ्ग जगह। जिसमें वायु और प्रकाश नहीं रहता, उस स्थानका नाम क़ुफ़स पड़ता है।

कफसंशमनवर्ग (सं० पु०) कफशान्तिकर द्रव्यगण, बलग़म ठण्डा करनेवाली चीज़ोंका जख़ीरा। कफ देखो।

कफसम्भव (सं० त्रि०) कफात् सम्भवः उत्पत्तिर्यस्य ५-तत्। कफजात, बलग़मसे निकलनेवाला।

कफस्थान (सं० क्ली०) कफाशय, बलग़मका मुक़ाम आमाशय, वक्षःस्थल, कण्ठ, शिर और सन्धिको कफस्थान कहते हैं।

कफस्राव (सं० पु०) नेत्रसन्धिगत रोगविशेष, आंखके जोड़में पैदा होनेवाली एक बीमारी। इसमें नेत्रकी सन्धि पकती और उससे श्वेत, सान्द्र एवं पिच्छिल पूय पड़ता है। (माधवनिदान)

कफहर (सं० त्रि०) कफं हरति नाशयति, कफ-हृ अच्। कफनाशक, बलग़म दूर करनेवाला।

कफहृत् (सं० स्त्री०) कफं हरति, कफ-हृ-क्विप् श्लेष्मनाशक, बलग़म दूर करनेवाला।

कफातिसार (सं० पु०) कफजन्य अतिसार, बलग़मी दस्त। इसमें प्रथम लङ्घन और पाचन हितकर है। फिर आमातिसारघ्न दीपनगण प्रयोग करना चाहिये। कफातिसारमें मनुष्य शुक्ल, सान्द्र, सकफ, श्लेष्मयुक्त, पूतिगन्ध, शीत और हृष्टरोमा हो जाता है। (माधवनिदान)

कफात्मक (सं० त्रि०) कफ आत्मा यस्य, कफात्मन्-कन्। १ कफमय, बलग़मी। २ कफरूपी, बलग़मकी सूरत रखनेवाला।

कफान्तक (सं० पु०) कफस्य अन्तको नाशकः। बर्बूरक वृक्ष, बबूलका पेड़।

कफ़ाबन्द (हिं० पु०) कण्ठके पश्चाद्भागको फांस कर किया जानेवाला एक पेंच। कुश्तीमें जब एक पहलवान नीचे आ जाता, तब ऊपरवाला दाहनी ओर बैठ अपना वाम हस्त उसकी कटिमें घुसेड़ दक्षिण हस्त तथा पादसे उसका कण्ठ दबाता और वामहस्तसे लंगोट पकड़ उसे उलटाता है। इसीका नाम कफ़ाबन्द है। फ़ारसीमें 'कफ़ा' कण्ठके पश्चाद्भागको कहते हैं।

कफारि (सं० पु०) कफस्य अरिः शत्रुः, ६-तत्। १ आर्द्रक, अदरक। २ शुण्ठी, सोंठ।

कफ़ालत (अ० पु०) बन्धकता, ज़मानत। प्रतिभूपत्रको कफ़ालतनामा कहते हैं।

कफाशय (सं० पु०) कफस्थान, बलग़मका मुक़ाम।

यह पूर्वोक्त स्थानोंमें वाराणसीके 'कबीरचौरा'को ही सर्वप्रधान तीर्थ समझते हैं।

कबीरपन्थियोंका प्रकृत धर्ममत सहजमें मालूम नहीं पड़ता। किन्तु सम्प्रदायका ग्रन्थ पढ़नेसे अनेक अंशमें माना गया—हिन्दूधर्मसे ही यह मत निकला है। कबीरपन्थी एकमात्र अपने मतको छोड़ अपरापर सकल धर्म दूषित बताते हैं। इनके मतमें कबीर-प्रवर्तित धर्मव्यतीत दूसरे सकल सम्प्रदाय भ्रमपूर्ण हैं।

कबीरपन्थी एक ईश्वरको मानते हैं। वह साकार और सगुण है। उसके पाञ्चभौतिक शरीर और त्रिगुण-विशिष्ट अन्तःकरण विद्यमान है। वह सर्व-शक्तिमान् एवं सर्वदोष-विवर्जित रहता और स्वेच्छानुसार सर्वप्रकार आकार बना सकता, किन्तु अपरापर सकल विषयमें मनुष्यसे पार्थक्य नहीं पड़ता। यह अपने सम्प्रदायके साधुवोंको ईश्वरानुरूप बताते, जो परलोकमें उसके समान रह एकत्र परम सुख पाते हैं। ईश्वर आद्यन्तहीन और नित्यस्वरूप है। बीजमें वृक्षके शाखापत्रकी भांति सकल वस्तु व्यक्त होनेसे पूर्व ईश्वरके शरीरमें अव्यक्तभावसे अन्तर्निविष्ट रहते हैं।

फिर इनके कथनानुसार परमपुरुष परमेश्वरने प्रलयान्तको ७२ युग पर्यन्त एकाकी रह विश्व-सृष्टिकी इच्छा की थी। अवशेषको उसकी इच्छाने एक स्त्रीमूर्ति बनायी। उसी स्त्रीका नाम माया है। माया आद्याशक्ति वा प्रकृति कहाती है। परमेश्वरने मायाके साथ सम्भोग किया था। उससे ब्रह्मा, विष्णु और शिवकी उत्पत्ति हुयी। फिर परमपुरुष छिप गये। क्रमशः माया अपने पुत्रोंके निकट पहुंचने लगी। उन्होंने उसका परिचय पूछा था। मायाने उत्तरमें कहा—'मैं निराकार, अगोचर और आदिपुरुषकी सहधारिणी हूं। इस समय तुम्हारी सहचर्याके लिये आयी हूं।' किन्तु ब्रह्मा, विष्णु और शिवने सहसा उसकी बात मानी न थी। विशेषतः विष्णु ऐसे वैसे व्यक्ति न रहे, मायासे कठिन प्रश्न करने लगे। फिर अतस्त कुछ हो माया अपने पुत्रोंको डरानेके लिये दुर्गामूर्तिमें आविर्भूत हुयी। उस महाभयङ्करी मूर्तिको देख ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश्वर बहुत डरे और आत्मविस्मृत हो मायाको मनोवाञ्छा पूर्ण करते गये। इससे तीन कन्या हुयीं—सरस्वती, लक्ष्मी और उमा। माया ब्रह्मादिके साथ तीनों कन्यावोंका विवाह कर ज्वाला-मुखी प्रदेशमें रहने लगी। उसने उक्त छहों पर विश्व बनाने और नानाविध भ्रमात्मक ज्ञान एवं अमूलक क्रियाकाण्ड चलानेका भार डाला था। ब्रह्मादि सकल मायाके अधीन हैं। इसीसे उनका पूजनादि करनेकी विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती। केवल कबीरके स्वरूपज्ञानको लाभ करना ही सर्वधर्मका मूल अभिप्राय है। फिर भी सकल देवता और उपासक उस दुर्लभ ज्ञानको पा नहीं सकते।

सकल जीवोंका आत्मा समान है। वह पापमुक्त होनेसे मनमाना रूप परिग्रह कर सकता है। जीवात्मा जबतक पापसे नहीं छूटता, तबतक नाना योनि घूमता है। उल्कापात होनेसे वह किसी वृक्षके शरीरमें प्रवेश करता है। स्वर्ग और नरक—उभय मायाके कार्य हैं। वास्तविक स्वर्ग और नरक कहीं नहीं होता। पृथिवीका सुख ही स्वर्ग और पृथिवीका दुःख ही नरक है।

कबीरपन्थी संसारके त्यागको ही सत् परामर्श बताते हैं। कारण—संसारमें रहते आशा, भय, लोभ प्रभृति द्वारा चित्तकी शुद्धि नहीं होती। सुतरां शान्तिके लाभमें भी नाना विघ्न पड़ते हैं। गुरुकी भक्ति ही प्रधान धर्म है। दोष करने पर गुरु शिष्यको भर्त्सना कर सकता, किन्तु दण्ड देनेका अधिकार नहीं रखता। कबीर देखो।

युक्तप्रदेश और मध्यभारतमें अनेक कबीरपन्थी रहते हैं। इनमें कोई विषयी और कोई धर्मव्रताव-लम्बी है। यह अत्यन्त सत्यप्रिय, उपद्रवशून्य और सुशील होते हैं। इनके उदासीन अपरापर सन्यासियोंकी भांति न तो दुरन्तस्वभाव रहते और न भिक्षा मांगते ही फिरते हैं।

काशीधाममें कबीरचौरा नामक स्थानपर अनेक कबीरपन्थी पहुंच वास करते हैं। पूर्व काशीराज बलवन्तसिंहने इनके आहारादिकी वृत्ति बांध दी थी।

उनके पुत्र चेतसिंहने इनको संख्या निरूपण करनेको काशीके निकट एक मेला लगाया। उसमें प्रायः ३५००० कबीरपन्थी सन्यासी पहुंचे थे।

कबीर-बड़ (हिं० पुं०) विशाल वटवृक्ष, बरगदका बड़ा पेड़। यह भड़ोंचके निकट नर्मदा किनारे अवस्थित है। इसका परीणाह चतुर्दश सहस्र हस्त-परिमित आता है। कबीरबड़की छायामें सप्त सहस्र व्यक्ति विश्राम कर सकते हैं।

क़बीला (अ० स्त्री०) पत्नी, जोड़ू।

कबीला (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह बङ्गालके सिंहभूम, छोटेके पुरी, युक्तप्रदेशके गढ़वाल तथा कुमायूं और पञ्जाबके कांगड़े जिलेमें उत्पन्न होता है। मध्यप्रदेश, दाक्षिणात्य, काश्मीर तथा नेपालकी तराईमें भी इसका अभाव नहीं। कबीला एक क्षुद्र वृक्ष है। पत्र अमरूदसे मिलते हैं। फलोंका गुच्छ बनता, जो रक्तवर्ण धूलिसे आच्छादित रहता है। इस धूलिसे रेशमको रंगते हैं। पहले एक सेर रेशमको आधसेर सोडा डाल जलमें उबालते हैं। मुलायम पड़नेसे रेशम निकाल लेते हैं। फिर १ पाव कबीला (रक्तवर्ण धूलि), आधछटांक तिलतेल, १ पाव फिटकरी और सोडा छोड़ वही जल पावभर उबाला जाता है। पीछे रेशम डाल कोई १५ मिनट और उबालना पड़ता है। इससे रेशम नारङ्गीके रंगका हो जाता है। कबीलासे मरहम भी बनता, जो फोड़े-फुन्सीपर पड़ता है। कबीला उष्ण, रेचक और विनाश रहता है। इसकी अधिकसे अधिक मात्रा ६ रत्ती है। कम्पिल्ल देखो।

कबुलाना (हिं० क्रि०) स्वीकार या कबूल कराना, मुंहसे कहाना।

कबुलि (सं० स्त्री०) जन्तुके देहका पश्चात् भाग, जानवरके जिस्मका पिछला हिस्सा।

कबूतर (फ़ा० पु०) कपोत, परेवा। कपोत देखो।

कबूतरका झाड़ (हिं० पु०) एक पितपापड़ा। यह क्षुप दक्षिण-पश्चिम भारत और सिंहलमें उत्पन्न होता है। फिर दक्षिण कोङ्कण, मलय और अष्ट्रेलियामें भी इसका अभाव नहीं। कहीं प्रान्तमें कहीं कहीं इसे लोग आहारमें व्यवहार करते हैं। यह क्षुप सुखा कर पितपापड़ेकी भांति औषधमें डाला जाता है। किन्तु इसका आस्वाद उससे कुछ कटु और अप्रिय लगता है।

कबूतरका फूल (हिं० पु०) पुष्पविशेष, एक फूल।

कबूतरकी जड़ (हिं० स्त्री०) मूलविशेष, एक जड़ी।

कबूतरबाज़ (फ़ा० पु०) कपोतपालक, कबूतर पालने या उड़ानेवाला।

कबूतरबाज़ी (फ़ा० स्त्री०) कपोतपालका कार्य, कबूतर पालने या उड़ानेका काम।

कबूतरी (फ़ा० स्त्री०) १ कपोतिका, मादा कबूतर। २ मैड़न, गांवकी नाचनेगानेवाली रण्डी।

कबूद (फ़ा० वि०) १ नील, श्याम, आसमानी, नीला। (पु०) २ नीला वंशलोचन, नीलकण्ठी।

कबूदी (फ़ा० वि०) कृष्ण, श्याम, आसमानी, नीला।

क़बूल (अ० पु०) १ स्वीकार, मञ्जूर। २ सम्मति, रज़ा, एकमत। ३ अनुकूल ग्रहण, मुआफ़िक पहुंच। ४ प्रतिपत्ति, इक़रार। ५ ताजक ज्योतिषोक्त योग-विशेष।

कबूलना (हिं० क्रि०) स्वीकार करना, कह देना, मानना।

क़बूलसूरत (अ० वि०) सुन्दर, खूबसूरत।

क़बूलियत (अ० स्त्री०) १ प्रतिपत्ति, मञ्जूरी, इक़रार। २ पट्टोलिकाकी प्रतिमूर्ति, पट्टेकी नकल।

कबूली (फ़ा० स्त्री०) तण्डुल एवं चणक-मेदनका पक्व सम्मिश्रण, चावल और चनेकी दालसे बनी हुयी खिचड़ी।

क़ब्ज़ (अ० पु०) १ मलावरोध, क़ब्ज़ियत, पड़, दस्त साफ़ न आनेकी हालत। २ अधिकार, दख़ल। ३ नियमविशेष, एक क़ायदा। यह मुसलमान् बादशाहोंके समय चलता रहा। इसके अधिकार पर सेनानी अपना वेतन ज़मीन्दारसे लेता और लिया हुवा धन भूमिके करमें मुजरे देता था। अकबरने यह नियम रहित किया, किन्तु अवधके नवाबोंने फिर चला दिया। वह दो प्रकारका होता था—ज़ाबतायो और अमानी या वसूली। ज़ाबतामीके

कान्तके भवन पहुंचे। उन्होंने गङ्गातीर जानेके लिये बहुत अनुनय विनय किया, जिसपर कमलाकान्तने एक पदावली गा कर मत फिरा दिया।

अनन्तर इन्होंने इहसंसार छोड़ा था। प्रवादानुसार कमलाकान्तका शवदेह साधकको उपशय्या भेदकर भोगवतीके स्रोतवेगमें बह गया।

कमलाकान्त विद्यालङ्कार—बङ्गालके एक सुप्रसिद्ध पण्डित। आजकल अंगरेज प्राच्य विषयमें ज्ञान लाभ-कर और-खोदित-लिपि, प्राचीन हस्ताक्षर प्रभृति पढ़ जो तत्त्व ढूंढ़नेमें लगे, उसके मूल पण्डित कमलाकान्त विद्यालङ्कार ही रहे। १८०० ई०के मध्यभाग यह एशियाटिक सोसाइटीके पण्डितपदपर प्रतिष्ठित थे। फिर उसी समय प्रिन्सेप साहब उक्त सभाके सम्पादक रहे। प्राचीन शिलालेख, ताम्रफलक और हस्ताक्षर प्रभृतिका मर्मोद्धार करना ही पण्डित कमलाकान्तका कार्य था। दिल्ली और इलाहाबादमें दो लोहस्तम्भोंपर प्राचीन अप्रचलित भाषासे कोई विषय अङ्कित रहा। उसकी अनुलिपि पूर्व ही प्रचारित हो चुकी थी। किन्तु सर विलियम जोन्स, कोलब्रुक और होरेस-हेमेन विल्सन प्रभृति संस्कृतवित् साहब उसका अर्थ लगा या उस जातिके अक्षरोंका विन्दु विसर्ग भी बता न सके। शेषको कमलाकान्त उक्त लिपिका मर्मोद्धार करनेपर दृढ़प्रतिज्ञ हुये और अक्षर ठहरानेकी चेष्टा चलाने लगे। फिर देहली, सांची और गिरनार प्रभृति स्थानोंकी खोदितशिलालेखका साहाय्य पा तथा वङ्गाक्षरों एवं देवनागराक्षरोंसे मिला इन्होंने एक-एक अक्षर बता दिया। सर्वाग्र 'द' और 'न' स्थिर हुवा था। उक्त दोनों अक्षर पढ़ने पड़नेसे काम कितना ही सीधा पड़ गया। तत्पर 'ा', 'ि' और '' आदिको कमलाकान्तने स्थिर किया था। क्रमशः अन्यान्य वर्णों और शब्दोंको निकाल इन्होंने दोनो लिपिका प्राचीन पाली भाषामें खोदित होना ठहराया। प्राचीन पाली वर्णमालाके उद्धारनका मूल बङ्गीय पण्डित कमलाकान्त विद्यालङ्कार ही थे।

पीछे इन्होंने उक्त दोनो लिपिका अर्थोद्धार और भाष्य किया। १८३७ ई०को यही अर्थ और भाष्य साधारणमें प्रचारित हुवा था। विद्वज्जन-समाजमें बड़ी खलबली पड़ी। भारतेतिहासके तमसाच्छन्न अध्यायपर नूतन आलोक पड़ा था। किन्तु जिनके द्वारा इतना काण्ड हुवा, उनको कोई फल न मिला। फल सम्पादक प्रिन्सेप साहबने पाया था। अमेरिका और युरोपके विद्यानुरागी प्रिन्सेप साहबको धन्य धन्य कहने लगे। किन्तु प्रिन्सेप साहब कृतघ्न न थे। वह अपनी प्रबन्धावलीमें कमलाकान्तको ही मर्मोद्भेदक और टीकाकार लिख गये हैं।

बरेलीमें मिली एक कुटिल लिपिकी समालोचनाके समय इन्होंने मुक्तकण्ठ बताया—ऐसा सुन्दर भाव और भाषण हमने अन्य किसी लिपिमें आजतक नहीं पाया। कमलाकान्तने ही प्रथम यह बात कही—इसी लिपिसे बङ्गीय वर्णमाला निकली या मिली है। यह दूसरा भी विशेष कार्य कर पुरातत्त्वकी आलोचनामें समधिक उन्नति देखा गये हैं। दिल्ली और इलाहाबादकी पूर्वोक्त लिपिके अक्षरोंसे संख्यावाचकत्व प्रतिपादित होता था। नाना संकेत प्रस्तु देख कमलाकान्तने ठहराया—कौन अक्षर किस संख्याके लिये आया है। इस स्थलपर उनके दो एक उदाहरण देते हैं—"कमयुक्तातियतुरेको विसर्गः।" (कातन्त्र)

४ (चार)का अङ्क लोके व्यञ्जनयुग और विसर्गकी आकृति रखता है। कातन्त्र व्याकरणमें कमलाकान्तने उक्त सूत्र देख निर्णय किया—विसर्ग (:) अर्थ (४) चारके अङ्कका बोधक माना गया है। इसी प्रकार विश्वलङ्कृत प्राकृत व्याकरणका सूत्र ६ (छह) संख्याको बतानेवाला ठहरा है।

इससे पूर्व और पर प्रिन्सेप साहब कमलाकान्त-पण्डितके साहाय्यपर नाना विषयमें कृतकार्य हुये। वह स्वयं विशेषरूपसे संस्कृत भाषाके अभिज्ञ न रहे। पण्डित कमलाकान्त ही उनके चक्षु बन गये। हम अच्छी तरह समझते—कमलाकान्त यशोलिप्सु न थे। कारण विन्दु मात्र भी यशोलिप्सा रहते यह निज कृत अनेक कार्योंमें अन्य न एक अपने नामपर चलाते और लाभ एवं कीर्ति उठाते। फिर डाक्टर

अनुसार सेनानी अपना वेतन पहले ही जमीन्दारसे पाता, पीछे भूमिके करसे उतना धन पाता या न पाता। अमानी या वसूलीके अनुसार सेनानी यथा-शक्ति धन ग्रहण करता था। फिर वह सैकड़े पीछे ५) रु० कमीशन भी पाता रहा। ४ आज्ञापत्रविशेष, एक हुक्मनामा। इसीके अधिकार पर मुसलमान् बादशाहोंके समय सेनानी अपना वेतन जमीन्दारोंसे ग्रहण करता था। बलपूर्वक अधिकार करनेको 'क़ल-बिल-जब्र' और पूर्ण अधिकारको 'क़ल-मो-दख़ल' कहते हैं।

क़ला (अ० पु०) १ मुष्टि, गिरफ़्त, मुट्ठल, पञ्जा। २ दण्ड, दस्ता, बेंट। ३ द्वारसन्धि, नरमादगी, कड़ा। यह लौह पित्तल प्रभृति धातुसे बनता है। कलेमें दो चतुष्कोण खण्ड संयुक्त रहते, जो सूचीपर चल सकते हैं। यह कपाट एवं पेटिकादिमें सन्धिस्थान घुमानेको लगाया जाता है। ४ ग्रहण, दख़ल। ५ उपरिस्थ बाहु, ऊपरला बाज़ू, भुजदण्ड। ६ मल्लयुद्धका कूटोपायविशेष, गद्दा, पट्ठा, कुश्तीका एक पेंच। कुश्तीमें एक पहलवान्‌को दूसरेका गद्दा पकड़ने, उसके हाथपर चोट चलाने, झटका लगाने और अपने हाथको छोड़ा लानेका नाम क़ला है।

क़लादार (फ़ा० वि०) १ अधिकारी। २ क़ला लगा हुआ, जो क़लेसे जुड़ा हो।

क़ब्ज़ियत (अ० स्त्री०) मलावरोध, क़ब्ज़, दस्त साफ न उतरनेकी हालत।

क़बूलवसूल (फ़ा० पु०) पत्रविशेष, एक कागज। इसपर वेतन लेनेवाला अपने हस्ताक्षर करता है।

कब्बल—महिसुर राज्यका एक कोणाकार गिरि। यह मागडीकी तहसीलमें सिङ्गसा और अर्कावती नदीके मध्य अक्षा० १२° ३′ उ० तथा देशा० ७७° २२′ पू०पर अवस्थित है। पहले महिसुरके हिन्दू और मुसलमान् राजा दोषी व्यक्तिको इसी गिरि पर ले जा कर बन्दी बनाते थे। इस स्थानका वायु अस्वास्थ्यकर है। इसीसे अपराधीका जीवन शीघ्र निःशेष हो जाता था।

क़ब्र (अ० स्त्री०) शवस्थान, समाधि, तुरबत, मज़ार।

क़ब्रस्तान (फ़ा० पु०) प्रेतावास, गोरिस्तान, बहुतसी क़ब्रोंकी जगह।

कभी (हिं० क्रि०-वि) १ पूर्व, एकदा, पेश्तर, किसी समय। २ क्वचित्, कदाचित्, गाह-गाह, बाज़ औक़ात्। ३ कदापि, कहिंचित्, किसी वक़्त।

कभी कभी (हिं० क्रि० वि०) कदा कदा, गाहे, लवतव।

कभू, कभी देखो।

कम् (सं० अव्य०) १ जल, पानी। २ मस्तक, मत्था। ३ सुख, आराम। ४ मङ्गल, भलाई। ५ पादपूरणार्थ निरर्थक शब्द।

कम (फ़ा० वि०) १ अल्प, थोड़ा। २ गर्ह्य, ख़राब। यह शब्द उपरोक्त दोनों अर्थमें क्रियाविशेषणकी भांति भी आता है।

कम-असल (फ़ा० वि०) अकुलीन, वर्णसङ्कर, हरामी, कुमूत, घटियल।

कमक (सं० त्रि०) कम्-णिङ् भावे अच् स्वार्थे कन्। १ कामुक, ख़ाहिशमन्द, चाहनेवाला। (पु०) २ गोत्र-प्रवर्तक एक ऋषि।

कम-कम (फ़ा० क्रि-वि०) अल्प-अल्प, थोड़ा थोड़ा।

कमकस (हिं० वि०) अलस, सुस्त, जोरसे काम न करनेवाला।

कमख़ाब (फ़ा० पु०) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह गाढ़ एवं स्थूल रहता और कोटसूत्रसे बनता है। फिर इसपर सुवर्ण एवं रजतके सूत्रसे प्रसून भी बना देते हैं। किसी कमख़ाब पर एक ओर और किसी पर दोनों ओर कलाबत्तूके बेलबूटे रहते हैं। यह बहुमूल्य वस्त्र है। इसका खण्ड (थान) चार या साढ़े चार गज पड़ता है। काशीमें कमख़ाब बहुत तैयार होता है।

कमख़ोरा (फ़ा० पु०) पशुरोगविशेष, चौपायोंकी एक बीमारी। यह रोग पशुके मुखमें होता है। इसके प्रभावसे पशु अपना मुख चला नहीं सकते और भूखे रहते हैं।

कमङ्गर (हिं० पु०) १ कार्मुककार, कमानगर, चाप बनानेवाला। २ अस्थियोजयिता, हड्डियां जोड़ने या

राजेन्द्रलाल मित्रकी भांति इनका नाम पृथिवीके सकल स्थानोंमें विघोषित हो जाता।

कमलाकार (सं० पु०) १ एक छप्पय। इसमें २७ गुरु एवं ९८ लघु अर्थात् १२५ वर्ण और १५२ मात्रा-का समावेश होता है। (त्रि०) २ कमलका आकार रखनेवाला, जो कमल जैसा हो।

कमलावेशव (सं० पु०) पुण्यस्थानविशेष, एक परस्रिग-गाह। इसे कमलवतीने बनवाया था। (राजत०)

कमलाक्ष (सं० त्रि०) कमलमिव अक्षि यस्य, बहुव्री०। १ पद्मकी भांति सुन्दर चक्षुविशिष्ट, जो कमलकी तरह आंखें रखता हो। (पु०) २ पद्म-बीज, कमलगट्टा। यह स्वादु, रुच्य, पाचन, कटुक, शीतल, तुवर, तिक्त, गुरु, विष्टम्भकारक, गर्भस्थिति-कर, रुच, हृद्य, वातकर, वल्य, ग्राही, कफक्षत एवं लेखन और पित्त, रक्त, वमि तथा दाहनाशक है। (वैद्यनिघण्टु) ३ स्थानविशेष, किसी जनपदका नाम।

कमलाग्रजा (सं० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी।

कमलादेवी—१ कादम्बराज शिवचित्तवीरप्रमादिदेवकी पटरानी। दाक्षिणात्यकी शिलालिपि पढ़नेसे समझते—कमलादेवीके पति गोपकपुरी (गोवा)में राजत्व करते थे। यह अपने पतिकी प्रियतमा महिषी रहीं। देवद्विजपर इन्हें बड़ी भक्ति श्रद्धा थी। अपनी दान-शीलता और परोपकारिताके गुणसे यह श्रेष्ठ रम-णीके मध्य परिगणित रहीं। इन्होंने वेद-वेदाङ्ग-पारदर्शी ब्राह्मणोंको अनेक ग्राम दे डाले। फिर इन्होंके अनुरोधसे ११७४ ई०को कादम्बराजने ब्राह्म-णोंको देगम्ब ग्राम प्रदान किया। कमलादेवी उमा-को पूजती थीं।

इतिहासमें दूसरी कमलादेवीका नाम भी मिलता है। नीचे उनका विवरण लिखा है,—

२ गुजरातके राजा करणरायकी परमासुन्दरी पत्नी। १२९७ ई०को सम्राट् अला-उद्-दीन् खिल-जीने गुजरात जय किया था। उस समय बन्दियोंके साथ कमलादेवी भी दिल्ली पहुंचायी गयीं। कुछ दिन पीछे अला-उद्-दीन्की कुमन्त्रता और प्ररोचनासे इन्होंने सम्राट्को गले लगाया था। फिर १३०६ ई०को कमलादेवीके गर्भसे उत्पन्न गुजरातकी राज-कन्या देवलदेवी भी दिल्ली पहुंच गयीं। अला-उद्-दीन्के पुत्र शाहजादे खिज्र खां उनके रूपसे मुग्ध हुये थे। अवशेषको देवलदेवी और शाहजादे खिज्रखान्का भी विवाह हो गया। मुबारिक शाहने सम्राट् बन अपने भ्राता खिज्र खान्को ग्वालियरके निकट बन्द कर मारा और देवलदेवीको घरमें डाला था। खिज्र खान् और देवलदेवीका प्रणय कथापर तदानीन्तन राजकवि अमीर खुसरो एक सुन्दर फ़ारसी काव्य लिख गये हैं। इतिहासलेखक मुसलमानोंने कमला-देवीको 'कंवला देवी' कहा है।

कमलानन्दन—कमलाके पुत्र दिनकर मिश्र।

कमलानिवास (सं० पु०) लक्ष्मीका वासस्थान, कमल।

कमलापति (सं० पु०) कमलायाः पतिः, ६-तत्। लक्ष्मीके स्वामी, विष्णु।

कमलायताक्ष (सं० त्रि०) कमलके समान दीर्घ चक्षु रखनेवाला, जिसके कमलकी तरह बड़ी आंख रहे।

कमलायुध (सं० पु०) १ संस्कृतके एक प्राचीन कवि। २ कान्यकुब्जके एक प्राचीन नृपति।

कमलालय (सं० क्ली०) मन्द्राजप्रान्तीय तञ्जोर ज़िलेके तिरुवलूर नगरका एक पवित्र तीर्थ। यहां महादेवकी लिङ्गमूर्ति विद्यमान है।

कमलालया (सं० स्त्री०) कमलं आलयो यस्याः। कमलमें रहनेवाली लक्ष्मी।

कमलासख (सं० पु०) कमलायाः सखा, टच्। राजाहः सखिभ्यष्टच्। पा ५।४।९१। लक्ष्मीके सखा विष्णु।

कमलासन (सं० पु०) कमलं आसनं यस्य, बहुव्री०। १ कमलपर बैठनेवाले ब्रह्मा। "आनानि पूर्वं कमला-सनेन।" (कुमार) (क्ली०) कमलाया लक्ष्मा असनं क्षेपणं दानमित्यर्थः। २ लक्ष्मीका दान। ३ पद्मा-सन। यह दो प्रकार होता है—बद्ध और मुक्त। मुक्तमें वामपद पहले दक्षिण पदकी जङ्घापर चढ़ाया जाता, फिर दक्षिणपद वामपदकी जङ्घापर आता है। अन्तको दोनों हाथकी हथेली जानुपर खुली रखते हैं।

बेठानेवाला। ३ चित्रकार, मुसौवर। (वि०) ४ कुशल, होशियार।

कमङ्गरा (हिं० स्त्री०) १ कार्मुककरण, कमानगरी, चाप बनानेका काम। २ अस्थियोजनविद्या, हड्डियोंके जोड़ने या बांधनेका हुनर।

कमचा (हिं० पु०) १ क्षुद्र कार्मुक, कमानचा, छोटी कमान्। २ सारङ्गी, चौतारा, किंगरी। ३ स्थिति-स्थापकत्वविशिष्ट चित्रायस-पदार्थ, लोहेकी कमानी। इस शब्दको तबक व्यवहार करते हैं। पहले कमचेमें एक रज्जु बांध आस्फोटनीको आहत कर लेते, पीछे घुमा देते हैं। ४ कुञ्चित पटल, मेहराबदार छत। ५ अन्तःशाला, खास कमरा। ६ वेणु या झावू प्रभृतिकी चाम एवं नमनशील शाखा, बांस या झावूकी पतली और लचीली डाल। इससे मञ्जूषा बनती है। ७ वेणुका चाम तथा नमनशील खण्ड, बांसकी तीली। ८ चाम एवं नमनशील यष्टि, पतली और लचीली छड़ी। ९ काष्ठादिका चामखण्ड, लकड़ी वगैरहका नाजुक टुकड़ा।

कमची (तु० स्त्री०) १ कञ्चिका, बांसकी डाल। २ यष्टिविशेष, नाजुक छड़ी। ३ काष्ठादिका चाम-खण्ड, लकड़ी वगैरहका नाजुक टुकड़ा।

कमच्छा (हिं०) कामाख्या देखो।

कमजोर (फा० वि०) निर्वीर्य, नाताकत, लचर।

कमजोरी (फा० स्त्री०) असामर्थ्य, नातवानी, लिचर-मिचर।

कमचा (हिं० पु०) स्थितिस्थापकत्वविशिष्ट, चित्रायस-पदार्थविशेष, लोहेकी कमानी। कमचा देखो।

कमटा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह कण्टकाकीर्ण एवं क्षुद्र होता है।

कमटी (हिं०) कमची देखो।

कमठ (सं० पु०-क्ली०) कम-अठ। कमेरठः। उण् ११०२। १ कच्छप, कछुवा। कच्छप देखो। २ विष्णुका द्वितीय अवतार। ३ वंश, बांस। ४ दैत्यविशेष, एक राक्षस। ५ शल्लकी, खारपुश्त, सेह। ६ काम्बोजराजविशेष, एक राजा। (भारत ३।४।२२) ७ भाण्डविशेष, एक बरतन। प्रधानतः तुम्बी वा नारिकेलको खोलकर जो पात्र मुनियोंके लिये बनाया जाता, वही कमठ कहाता है। ८ मुनिविशेष, एक ऋषि। ९ वादित्रविशेष, एक बाजा। यह एक पर्वतीय प्राचीन वाद्य है।

कमठपति (सं० पु०) कच्छपराज, कछुवोंके राजा।

कमठा (हिं० पु०) १ चाप, कमान्। २ एक जैन महात्मा। इन्होंने उग्र तपस्या करके सकाम निर्जरा पायी थी।

कमठासुरवध (सं० पु०) गणेशपुराणका एक अंश। इसमें कमठ दैत्यके वधकी कथा लिखी है।

कमठी (सं० स्त्री०) कमठ-ङीप्। १ क्षुद्रकच्छप-जाति, छोटे-छोटे कछुवोंका गिरोह। २ कच्छपी, कछुयी। ३ शल्लकी, खारपुश्त, सेह।

कमण्डल (हिं०) कमण्डलु देखो।

कमण्डली (हिं० वि०) १ कमण्डलुयुक्त, जो कमण्डल रखता हो। २ पाषण्ड, पुर-फितरत, बहुरूपिया। (पु०) ३ ब्रह्मा।

कमण्डलु (सं० पु०-क्ली०) कस्य जलस्य प्रजापतेर्वा सारः तं लाति गृह्णाति, क-मण्ड-ला-कु। पृषोदरादौ सिद्धम्। पा ६।३।१०९ वार्तिक। १ मृत्तिका, काष्ठ, तुम्बी वा नारिकेल द्वारा निर्मित सन्यासियोंका एक पात्र, कमण्डल, तोंबा। इसका संस्कृत पर्याय—कुण्डीय और करक है। २ प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़। ३ प्रश्नस्थभेद, पारस-पीपल।

कमण्डलुतरु (सं० पु०) प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़।

कमण्डलुधर (सं० पु०) शिव, कमण्डलु धारण करने-वाले महादेव।

कमती (हिं० स्त्री०) १ अल्पत्व, कमी, घटी। (वि०) २ अल्प, काम, थोड़ा, जो बहुत न हो।

कमद्यू (सं० स्त्री०) स्त्रीविशेष, सेनपुत्री।

"कमद्युवं विमदायोहथुर्युवम्।" (ऋक् १०।६५।१२)

कमन (सं० त्रि०) कम-णिङ् भावे युच्। १ कम-नीय, खूबसूरत। २ कामुक, ख्वाहिशमन्द, चाहने-वाला। (पु०) ३ अशोकवृक्ष। ४ मदन, कामदेव। ५ ब्रह्मा।

कमनचा (हिं० पु०) कमानचा, कमचा, बढ़ईका एक औजार। यह बरमा घुमानेमें काम देता है।

इसी प्रकार मेरुदण्डको सीधा कर बैठनेका नाम सुख पद्मासन है। बद्ध पद्मासनमें पदोंके चढ़ानेका नियम तो ऐसा ही रहता है। किन्तु वाम हस्तको पीठके पीछे घुमा वाम पदका और दक्षिण हस्तको पीठके पीछे घुमा दक्षिण पदका अङ्गुष्ठ पकड़ते हैं। फिर चिबुक वक्षःस्थलपर जमा और नासाके अग्रभागपर दृष्टि लगा सीधे बैठा जाता है। यह पद्मासन अति उत्तम रहता और घण्टे आध घण्टे अभ्यस्त होनेपर साधकके सब रोग हरता है।

कमलासनस्थ (सं॰ पु॰) कमलं विष्णोर्नाभिकमलं तद्रूपे आसने तिष्ठति, कमल-आसन-स्था-क। विष्णुके नाभिकमलपर रहनेवाले ब्रह्मा।

कमलाहट्ट (सं॰ पु॰) काश्मीरका एक बाजार। काश्मीरको रानी कमलावतीने इसे लगाया था।
(राजतरङ्गिणी ४।२०८)

कमलाहास (सं॰ पु॰) पद्मका खुलना या मुंदना, कंवलके फूलने या बंद होनेकी हालत।

कमलाकर—संस्कृतके एक प्राचीन ग्रन्थकार। यह नृसिंहके पुत्र, कृष्णके पौत्र और दिवाकरके प्रपौत्र रहे। इन्होंने अपूर्वभावनोपपत्ति, जातकतिलक, ज्योत्पत्तिविचार, लिखती, मनोरमाग्रहलाघवटीका, शेषाङ्कगणना, सिद्धान्ततत्त्वविवेक (यह १५०२ ई॰को बनारसमें लिखा गया) और सूर्यसिद्धान्तटीका सौरवासना ग्रन्थ लिखा है।

कमलाकर देव—आनन्दविलास नामक ग्रन्थके रचयिता।

कमलाकर भट्ट—एक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थकार। १६१६ ई॰को इन्होंने 'निर्णयसिन्धु' बनाया था। इनके लिखे ग्रन्थ यह हैं—अग्निनिर्णय, आचारदीप वा आचारदीपिका, आश्वलायनशाखा श्राद्धप्रयोग, आह्निकविधि, उत्तरपाद, ऐन्द्रीमहाशान्ति-सहित-राजाभिषेकप्रयोग, कर्मविपाकरत्न, कल्पलताहोम-प्रयोग, काव्यप्रकाश-व्याख्या, क्रियापाद, गयाकृत्य, गीतगोविन्दभाष्यरत्नमाला, गोत्रप्रवर-निर्णय वा गोत्र-प्रवरदर्पण, चरणव्यूह, चण्डीविधानपद्धति, जलाशयोत्सर्गविधि, जीर्णोद्धारविधि, तन्त्रवार्तिकटीका, तिल-गर्भदानप्रयोग, तीर्थयात्रा, तुलापद्धति, त्रिपथदान-विधि, त्रिस्थलीसेतु, दानकमलाकर, दायविभाग, धर्मतत्त्व, नारायणबलिप्रयोग, निर्णयसिन्धु, नीतिकमलाकर, पद्मबन्ध, पद्मलाङ्गलदानविधि, पितृभक्तितरङ्गिणी, पूर्तकमलाकर, प्रतिष्ठाविधि, प्रवरदर्पण, प्रायश्चित्तरत्न, बह्वृचाह्निक, भक्तिरत्न, भाषावाद, मन्त्रकमलाकर, रजतदानप्रयोग, रथदानविधि, रामकल्पद्रुम, रामकौतुकमहाकाव्य, लक्षहोमविधि, लिङ्गार्चाप्रतिष्ठाविधि, विघ्नशदानविधि, विवादताण्डव, विश्वचक्रदानविधि, व्यवहार, व्रतकमलाकर, व्रतार्क, शतचण्डीसहस्रचण्डी-प्रयोग, शतमान दानविधि, शान्तिरत्न वा शान्तिरत्नाकर, शास्त्रदीपिकालोक, शास्त्रमाला, शिवप्रतिष्ठा, शूद्रधर्मतत्त्व, श्राद्धनिर्णय, श्राद्धसार, श्रावणीप्रयोग, श्वेताश्वदानविधि, षोडशसंस्कार, संस्कारपद्धति, समयकमलाकर, सरस्वतीदानविधि, सर्वशास्त्रार्थनिर्णय, सहस्रचण्ड्यादिप्रयोगपद्धति, सुवर्णपृथिवीदानविधि, सौमीपाकप्रयोग, हिरण्यगर्भदानविधि और कमलाकरभट्टीय। नृसिंहने वृत्तरत्नसागर, पुरुषोत्तमने द्रव्यशुद्धिदीपिका और बालकृष्णने ऋग्वेदद्वैतासृम-नामक ग्रन्थमें इनका वचन उद्धृत किया है।

कमलाकरमिश्र—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। वासवदत्तामें सुबन्धुने इनका उल्लेख किया है।

कमलिनी (सं॰ स्त्री॰) कमलानि सन्ति यत्र, कमल-इनि। पुष्करादिभ्यो देशे। पा ५।२।१३५। १ पद्मिनी, कंवलका पेड़। यह शीतल, गुरु, मधुर, लवण, रुक्ष, पित्त, अस्रक् तथा कफघ्न और वात एवं विष्टम्भकर होती है। कमलिनीका कन्द शीत, तुवर, मधुर, तिक्त, पाकमें अति कटु, लघु, ग्राहक, वातहृत् और कफ एवं पित्तनाशक है। (वैद्यकनिघण्टु) २ पद्माकर, कंवलोंका खजाना। जिस सरोवर या ह्रदमें बहुतसे कमल रहते, उसे ही कमलिनी कहते हैं। ३ गङ्गा।

"कुमुदती कमलिनी कान्तिः कमलिनी।" (काशीखण्ड २९।१०)

कमली (सं॰ पु॰) ब्रह्मा।

कमली (हिं॰ स्त्री॰) छोटा कम्बल, कमरी।

कमलेक्षण (सं॰ त्रि॰) कमलमिव ईक्षणं यस्य, बहुव्री॰। पद्म चक्षु, कंवलकी तरह खूबसूरत आंखें रखनेवाला।

कमनच्छद (सं॰ पु॰) कमनः कमनीयः छदः पक्षो यस्य, बहुव्री॰। कङ्कपक्षी, बगला, बूटीमार।

कमना (हिं॰ क्रि॰) न्यून पड़ना, घटना, उतरना, ढलना, नीचेको चलना।

कमनीय (सं॰ वि॰) काम्यते यत्, कम् कर्मणि अनीयर्। १ स्पृहणीय, कामना करने योग्य, चाहने क़ाबिल। २ सुन्दर, खूबसूरत। इसका संस्कृत-पर्याय—चारु, हारि, रुचिर, मनोहर, वल्गु, कान्त, अभिराम, बन्धुर, वाम, रुच्य, सुषम, शोभन, मञ्जु, मञ्जुल, मनोरम, साधु, रम्य, मनोज्ञ, पेशल, हृद्य, सुन्दर, काम्य, कम्र, सौम्य, मधुर और प्रिय है।

कमनीयता (सं॰ स्त्री॰) कमनीयस्य भावः, कमनीय-तल्-टाप्। तस्य भावस्त्वतलौ। पा ५।१।११९। १ सौन्दर्य, खूबसूरती। २ कामनोयत्व, मरग़ूबी, दिलख़ाही।

कमनैत (हिं॰ पु॰) १ धनुर्धर, कमानबरदार, जो कमान रखता हो।

कमनैती (हिं॰ स्त्री॰) धनुर्विद्या, कमानबरदारी, कमान इस्तेमाल करनेका इल्म।

कमन्द (फ़ा॰ स्त्री॰) १ पाश, जाल। २ अस्थिर-ग्रन्थि, सरकफन्दा। ३ रज्जुकी तुलाधिरोहिणी, रस्सीकी तुली हुयी सीढ़ी। इससे तस्कर उच्च भवनों पर चढ़ जाते हैं। ४ पाशबन्ध, जालका फन्दा।

कमन्द (हिं॰) कबन्ध देखो।

कमन्ध (सं॰ क्ली॰) कं शिरः अन्धं शून्यं यस्य। १ कबन्ध, सरकटा धड़। कमं दीप्तिं जीवनं वा दधाति, कम-धा-ड पृषोदरादित्वात्। २ जल, पानी। हिन्दीमें लड़ायी-झगड़े और सरफन्द को भी कमन्ध कहते हैं।

कमबख़्त (फ़ा॰ वि॰) दैवोपहत, बदनसीब, अभागी।

कमबख़्ती (फ़ा॰ स्त्री॰) मन्दभाग्य, बदनसीबी।

कमयाब (फ़ा॰ वि॰) विरल, अनोब, मुश्किलसे मिलनेवाला।

कमर (सं॰ वि॰) कम-अर-चित्। अर्तिकमिभ्रमिचमिदेविव-सिभ्यश्चित्। उण् ३।१३२। कामुक, ख्वाहिशमन्द, चाहने-वाला।

कमर (फ़ा॰ स्त्री॰) १ श्रोणी, कटि, सुलब, कूल्हा। कटि देखो। २ मध्य, दरमियान, बीच। ३ मेखला, मिन्तक़ा, पट्टा। ४ मल्लयुद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका कोयी पेंच। यह कटिप्रदेशसे चलता है। इसी प्रकार 'कमरकी टंगड़ी' भी होती है। एक पहलवान् जब दूसरेकी पीठपर आता और अपना बायां हाथ उसकी कमर पर पहुंचाता, तब नीचेवाला अपना बायां हाथ बगलसे निकाल उसकी कमर पर चढ़ाता और बायीं टांग लड़ा कमरके जोरसे उसको सामने घुमा लाता है।

कमरंग (हिं॰ पु॰) कर्मरङ्ग, कमरख। कमरख देखो।

कमरकोटा (हिं॰ पु॰) प्राकार, वप्रोदध्र, सोनापनाह, कंगूरेदार ऊंची दीवार।

कमरकस (हिं॰ पु॰) पलाशनिर्यास, ढाकको गोंद। इसे चुनिया-गोंद भी कहते हैं। यह रक्तवर्ण एवं भासुर होता है। इसका आस्वाद कषाय है। कमरकस संग्रहणी और कासश्वासकी महौषध है।

कमरकसायी (हिं॰) कमरकुशायी देखो।

कमर-कुशायी (फ़ा॰ स्त्री॰) अपराधीमें लिया जाने-वाला एक कर, असामीसे वसूल होनेवाला रुपया। यह प्रथा पूर्वकाल प्रचलित रही। जब कोयी असामी सिपाहीसे मुतफ़र्रीकके लिये अवकाश लेता, तब उसे करस्वरूप कुछ धन देता था। इसीका नाम 'कमर-कुशायी' है। २ मेखलोद्घाटन, कमरबन्दको खोलायी।

कमरकोट, कमरकोटा देखो।

कमरकोठा (हिं॰ पु॰) रथ पाका एक भाग, शहतीर लट्ठे या कड़ीका एक हिस्सा। यह भित्तिसे बहिर्वर्ती रहता है।

कमरख (हिं॰ पु॰) कर्मरङ्ग, एक पेड़। (Averrhoa Carambola) इसे बंगलामें कामरांगा, आसामीमें करदयी, गुजरातीमें तमरक, मराठीमें करमर, तामिलमें तमर्त, तेलगुमें करोमोंग, मलयमें तमरत्तक और तामीलमें जौमसी कहते हैं। कमरखमें अम्लत्व, उष्णत्व, वातहरत्व एवं पित्तजनकत्व रहता, किन्तु पकनेसे मधुराम्लत्व तथा बल-पुष्टि-रुचिकरत्व बढ़ता है। (राजनिघण्ट) यह कटुपाक, श्लेष्म-पित्तकर और तीक्ष्ण गुणविशिष्ट है। (राजवल्लभ) कमरखका

कमलेश (सं० पु०) कमलाके ईश विष्णु।

कमलेश्वर (सं० क्ली०) एक तीर्थ। (कूर्मपु० ३५०) किसी किसी पुस्तकमें कमलेश्वरके स्थानपर 'कालके-श्वर' पाठ देख पड़ता है।

कमल्ली (हिं० पु०) उष्ट्र, ऊंट, सांडिया।

कमलोत्तर (सं० क्ली०) कमलमिव उत्तरं श्रेष्ठं कमला-दुत्तरं उत्तममिव वा। कुसुम्भपुष्प, कुसुमका फल।

कमवाना (हिं० क्रि०) १ लाभ करवाना, दिलवाना। २ मलमूत्र उठवाना, साफ करवाना। ३ मुण्डन करवाना, बाल बनवाना। ४ संस्कार करवाना, सुधरवाना।

कमसमझी (हिं० स्त्री०) मन्दमतिता, नासमझी, बेवकूफी।

कमसरियट (अं० पु०=Commissariat) सेनाका एक विभाग, फौजका कोई महकमा। यह सेनाको खाद्यादि सामग्री पहुंचाता है।

कमसिन (फा० वि०) अल्पवयस्क, जो उम्रमें छोटा हो।

कमसिनी (फा० स्त्री०) शैशव, लड़कपन।

कमहा (हिं० वि०) कार्यकारी, कामकाजी।

कमहिम्मत (फा० वि०) भीरुहृदय, डरपोक।

कमहिम्मती (फा० स्त्री०) भीरुता, बुजदिली, डरपोकी।

कमा (सं० स्त्री०) कम-णिङ् भावे अ-टाप्। शोभा, खूबसूरती, चमक।

कमाई, कमायी देखो।

कमाऊ, कमाऊ देखो।

कमाची (हिं० स्त्री०) १ कम्बिका, कमची। २ कमा-नचा, झुकी हुयी तीली।

कमाण्डर (अं० पु०=Commander) सेनाध्यक्ष, सरदार, सरगिरोह। यह अफसर फौजमें लफटनण्ट-के ऊपर और कप्तानके नीचे काम करता है।

कमाण्डर-इन-चीफ (अं० पु०=Commander-in-chief) प्रधान सेनाध्यक्ष, सिपह-सालार, जङ्गी लाट।

कमान (फा० स्त्री०) १ कार्मुक, धनुष, चाप, कमठा। २ खण्डमण्डल, तोरण, मेहराब। ३ इन्द्र-धनुः, इन्द्रायुध, कौस-कुज़ा। ४ तोपनाली, अग्न्यस्त्र, तोप, तुपक, बन्दूक। ५ व्यायामविशेष, एक कसरत। इसमें मालखम्भपर कसरत करनेवाला कमानकी तरह टेढ़ा पड़ जाता है। ६ यन्त्रविशेष, एक औजार। इससे आस्तरण बुना जाता है। ७ यन्त्रभेद, कोयी औज़ार। इससे दो पदार्थों के मध्यका अन्तर निर्धा-रित होता है। (वि०) ८ कुञ्चनीय, नमनशील, लचीला। ९ वक्र, टेढ़ा, झुका हुवा।

कमान (हिं० स्त्री०) १ आदेश, हुक्म। २ अधिकार, दख़ल, तियार। यह अंगरेजोंके कमाण्ड (Command) शब्दका अपभ्रंश है।

कमान-अफसर (हिं० पु०) आज्ञापक पुरुष, हुक्म देनेवाला सरदार। यह अंगरेजोंके कमाण्डिङ्ग आफिसर (Commanding officer) शब्दका अप-भ्रंश है।

कमानगर (फा० पु०) १ कार्मुककार, कमान बनानेवाला। २ अस्थि-योजयिता, हड्डी जोड़नेवाला।

कमानगरी (फा० स्त्री०) १ कार्मुक विधान, कमान बनानेका काम। २ अस्थियोजना, हड्डीको जोड़ायी।

कमानचा (फा० पु०) १ क्षुद्र कार्मुक, छोटी कमान, कमठा। २ सारङ्गी, चौतारा, किंगरी। ३ सार-लोहका स्थितिस्थापकत्वविशिष्ट पदार्थ, लोहेकी कमानी। ४ खण्डमण्डलाकार पटल, मेहराबदार छत। ५ विवित्त भवन, पोशीदा कमरा।

कमानदार (फा० वि०) १ खण्डमण्डलाकार, मेह-राबदार। (पु०) २ धनुर्धर, कमान लिये हुवा।

कमानदार (हिं० पु०) आज्ञापक, सेनापति, सर-दार, सरगिरोह।

कमाना (हिं० क्रि०) १ उपार्जन करना, घर भरना। २ परिश्रम करना, मरना-मिटना। ३ अभ्यास बढ़ाना, मश्क़पर लाना। ४ परिष्कार करना, मसालेसे भरना। ५ मलमूत्र उठाना, झाड़ लगाना। ६ भूमि प्रस्तुत करना, जरखेज़ीमें भरना। ७ पौरुषसे निर्वाह करना, हिनालसे पेट भरना। ८ धनोपार्जन करना, रुपयेकी पैदामें पड़ना। ९ क्षुर चलाना, बाल बनाना। १० न्यून बनाना, घटाना।

-आम-फल ग्राही, अम्ल, वातनाशन, उष्ण एवं पित्त-कर रहता, किन्तु पक जानेसे मधुर तथा अम्ल लगता और बल, पुष्टि एवं रुचिकी वृद्धि करता है। (वैद्यकनिघण्टु) यह हिम, ग्राही, अम्ल और कफ तथा वातनाशन है। (भावप्रकाश)

कमरख एक क्षुद्र वृक्ष है। इसके पत्र एक अङ्गुल प्रशस्त, दो अङ्गुल दीर्घ तथा ईषत् तीक्ष्णाग्र रहते और सुषिरमें लगते हैं। ऊंचाईमें यह १५।२० फीटसे अधिक नहीं चलता। भारतमें कमरखकी कृषि बहुत होती है। फल उबालनेसे अति स्वादु लगते हैं। यह उत्तरमें लाहोरतक मिलता है।

कच्चे फलोंका रस रंगनेमें खटाईकी तरह छोड़ा जाता और संभवतः काटका काम देखाता है। इसका पत्र, मूल और फल शीतल औषधकी भांति व्यवहृत होता है। सूखा फल ज्वरमें खिला सकते हैं।

कमरख दो प्रकारका होता है—मीठा और खट्टा। मीठा कमरख ज्वरके लिये उपयोगी है। किन्तु कच्चा खानेसे ज्वर आता और वक्षःस्थल दुःख पाता है। पक्का फल चटनी और तरकारीमें भी पड़ता है।

कमरख वर्षामें फूलता और शीतकालको पकता है। फल प्रायः ३ इञ्च लम्बा होता है। ग्रामीण इसे कच्चा भी खाते हैं। इसका शस्य मृदु, सरस और आम्लादन है। इसको उबाल और थोड़ी दारचीनी डाल शर्बत बनाते हैं। यह शर्बत पीनेमें बहुत अच्छा लगता है। कमरखका गुलकन्द भी उम्दा होता है।

इसका काठ हलका, लाल, कड़ा और दानेदार रहता है। सुन्दरवनमें इसे मकान् और माज़सामान् बनानेमें व्यवहार करते हैं।

कमरखी (हिं॰ वि॰) १ कर्मरङ्गाकार, कमरख-जैसा, फांकदार। (स्त्री॰) २ कर्मरङ्गाकार रचना, फांकदार काटाव।

कमरघण्डो (हिं॰ स्त्री॰) खड्ग, तलवार।

कमरटूटा (हिं॰ वि॰) १ वक्रपृष्ठ, खर्मोदापृष्ठ, कुबड़ा। २ नपुंसक, नामर्द, कमरका ढीला।

कमरतेगा (हिं॰ पु॰) मल्लयुद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका कोई पेंच।

कमरतोड़, कमरतेगा देखो।

कमर-दिवाल (हिं॰ पु॰) चर्मेमेखला, चमड़ेका पट्टा। इससे अश्वके पृष्ठपर पर्याण कसा जाता है।

कमरपट्टी (हिं॰ स्त्री॰) कटिबन्ध, कमरकी पट्टी। इसे चपकन वगैरहमें कमरके ऊपर लगाते हैं।

कमरपेटा (हिं॰ पु॰) १ व्यायामविशेष, एक कसरत। इसे माल खम्भपर लगाते हैं। यह कमरमें बेंत लपेट और खाली हाथ—दो प्रकार किया जाता है। 'कमरलपेटेकी उलटी' भी एक कसरत है। २ मल्ल-युद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका एक पेंच। एक पहलवान् नीचे आनेसे दूसरा अपनी दाहनी टांग नीचेवालेकी कमरमें डाल अपने बायें पैरकी जांघ और पिंडलीके बीच लाता तथा बायें हाथका पञ्जा उसके बांये हाथके घुटनेपर भीतरसे दबाता है। फिर दाहने हाथसे उसका दाहना बाज़ू खींच इक़ा चढ़ाता और उसको आसमान देखाता है।

कमरबन्द (फ़ा॰ पु॰) १ मेखला, कलका, घेरा। २ कटिकी चारो ओर लपेटा हुवा वस्त्र, कमरकी चारो ओर कसा जानेवाला कपड़ा। (वि॰) ३ बद्ध-कटि, तैयार, कमर बांधे हुवा।

कमरबन्दी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ युद्धसज्जा, लड़ाईकी पोशाक। २ युद्धके अर्थ सज्जीकरण, जङ्गकी तैयारी।

कमरबन्ध (फ़ा॰ पु॰) मल्लयुद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका कोई पेंच। यह वक्षःस्थल और जङ्घाके बल होता है।

कमरबल्ला (हिं॰ पु॰) काष्ठखण्डविशेष, एक लकड़ी। यह खपड़ेके पटलमें दीर्घस्थाके नीचे तहकपर पड़ता है।

कमरबस्ता (फ़ा॰ वि॰) १ सन्नद्ध, उद्यत, तैयार, कमर कसे हुवा। (पु॰) २ कमरबल्ला, खपड़ेमें लगनेवाली एक लकड़ी।

कमरा (पो॰ पु॰=Camera) १ कोठ, आगार, कोठरी, कोठा। २ आलोकलेख्य-यन्त्रविशेष, चकमसे तस्वीर उतारनेके फनका एक औज़ार। यह सम्पुट-सदृश बनता और मुखपर प्रतिबिम्ब लेनेका गोलाकार स्फटिक लगता है। इसको प्रयोजन पड़नेसे घटा-

कमानिया (हिं॰ पु॰) धानुष्क, कमानदार।
कमानी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ स्थिति-स्थापकत्व-विशिष्ट पदार्थ, कोयी लचीली चीज़। जैसे—लौहायस दण्ड पात्र या व्यावर्तन, भारतीय वर्षक पिण्ड, संहत समीरणका समवाय। यह द्रव्य नाना प्रकार यन्त्र-विषयक कार्यमें लगता है। कमानीसे बल पाते या पहुंचाते, गतिको नियमपर लाते, गुरुत्व या अन्य शक्ति नपाते और सहट्ट लगाते हैं। यन्त्र सामग्रीमें इसके जो प्रधान भेद चलते, उन्हें नीचे लिखते हैं—१ संश्लिष्ट (पेचदार), २ व्यावर्तित (लचीली या बालकमानी), ३ विलोल (मरगोल), ४ अण्डाकार (बेज़ावी), ५ अर्धाण्डाकृति (निस्फ़ बेज़ावी), ६ प्रधान (बड़ी), ७ साटोप (ऐंठदार)। यह लोह या पित्तलसे बनती है। भारतीय वर्षक (रबरकी) तथा वायव (हवायी) कमानी अर्धाण्डाकार रहती और चलनशील (चलते) द्रव्यपर लगती है। यह घड़ी या पङ्खा चलाती, झटका बचाती, तौल ठहराती और धक्का लगाती है। दबानेसे दब जाते भी कमानी अपने आप ऊपर उठ आती है।

२ वक्र एवं नमनशील लौहशलाका, लोहेकी झुकी हुयी लचकदार तीली। यह छाते और घड़ी बगैरहमें लगती है। ३ मेखलाविशेष, एक पेटी। यह चर्ममय होती है। इस कमानीके भीतर लौहमय एवं नमनशील पट्ट रहता है। फिर उभय प्रान्तपर उपाधान लगा देते हैं। जिस रोगीका अन्त्र उतरता, वह कटिमें कमानी कसता है। इससे अन्त्र उतरने नहीं पाता। ४ धनुराकार काष्ठविशेष, झुकी हुयी कोई लकड़ी। इसके दोनों प्रान्त रज्जु, लोहसूत्र या कुन्तलसे बंधे रहते हैं। ५ वंशखण्डविशेष, बांसकी एक छड़ी। यह सूक्ष्म रहती और दरी बुननेके यन्त्रमें लगती है। ६ लोहनाड़ीके तालकका विशीर्ण स्थितिस्थापकत्व विशिष्ट पदार्थ, बन्दूकके तालेकी सुखी कमानी।
कमानीदार (फ़ा॰ वि॰) स्थितिस्थापकत्वविशिष्ट पदार्थयुक्त, जो कमानी रखता हो।
कमायज (हिं॰ स्त्री॰) कमानचा, सारङ्गीका गज़।
कमायी (हिं॰ स्त्री॰) १ उपार्जित, अर्थागम, उजरत, आमदनी। २ लाभ, फ़ायदा। ३ उद्यम, कामकाज।
कमाल (अ॰ पु॰) १ सिद्धि, तकमील, पूरापन। २ आश्चर्य, ताज्जुब, अचम्भा। ३ कौशल, होशियारी। ४ नैपुण्य, कारीगरी। ५ कबीरके पुत्र। यह भी एक पहुंचे साधु थे। कबीरकी बात काट डालना इनका लक्ष्य रहा। (वि॰) ६ सिद्ध, पूरा। ७ अत्यन्त, बहुत ज़्यादा।
कमाऊ (हिं॰ वि॰) उपार्जन करनेवाला, जो पैदा करता हो।
कमासुत (हिं॰ वि॰) धनोपार्जन करनेवाला, जो रुपया कमाता हो।
कमिता (सं॰ पु॰) कम-णिङ्-भावे तृच्। कामुक, मस्त, चाहनेवाला।
कमिश्नर (अं॰ पु॰=Commissioner) १ नियोगी, मुख़्तारकार। २ अधिकारी, अमीन। माल और पुलिसके बड़े अफ़सरको भी कमिश्नर कहते हैं।
कमी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ न्यूनता, कोताही, घाटा। २ अप्राप्ति, कमयाबी, तङ्गी। ३ हानि, नुक़सान्। ४ ह्रास, तक़लील, उतार। ५ अपचय, गबन, खाव-पव। ६ उपयम, तख़फ़ीफ़, नरमी।
कमीज़ (हिं॰ स्त्री॰) पुतक, अधोवसन, पहननेका एक कपड़ा। यह एक प्रकारका कुर्ता है। इसमें कली और चौबगला नहीं लगाते। पीठ पर चुनट पड़ती है। फिर हाथमें कफ और गलेमें कालर भी रहता है। भारतीयोंने अंगरेज़ोंसे कमीज़ पहनना सीखा है। अरबीमें इसे क़मीस कहते हैं।
कमीनगाह (अ॰ स्त्री॰) निभृत स्थान, घातकी जगह।
कमीना (फ़ा॰ वि॰) अधम, जघन्य, कम-असल, रज़ील, पाजी, ओछा।
कमीनापन (हिं॰ पु॰) अधमता, कम-असली, ओछापन।
कमीनो बाछ (हिं॰ स्त्री॰) करविशेष, किसीकिस्मकी उगाही। यह कर गांवमें खेती न करनेवाले नीच लोग ज़मीन्दारको देते हैं।
कमीला, कबीला देखो।

बढ़ा सकते हैं। उक्त स्फटिक (Lens)के सम्मुख एक निराधार काच (Ground glass) पड़ता है। उसीपर प्रथम केन्द्र (Focus) किया जाता है। पीछे निराधार काच हटा स्खलन (Slide) लगाते हैं। उसीके अन्तर्गत पट्ट होता है। स्खलनका आच्छादन उठानेसे पट्ट खुलता और स्फटिक निकलनेसे प्रतिबिम्ब पड़ता है। यह दो प्रकारका होता है—लूसिडा (Lucida) अर्थात् सुप्रभ और अबस्क्यूरा (Obscura) अर्थात् निष्प्रभ। सुप्रभ यन्त्र असाधारण आकारके क्रकचायत वा दर्पण-विन्यास द्वारा प्रतिबिम्बपर चित्र प्रदान करता है। उक्त चित्रको यथासुख देखनेके लिये पत्र वा स्थूल पटपर उतार सकते हैं। निष्प्रभ उपकरण द्विगुण कूर्मपृष्ठाकार स्फटिक द्वारा प्राप्त बाह्य द्रव्यकी प्रतिमा काच वा सम्पुटके केन्द्रमें रखे शुक्ल पृष्ठपर उतारता है। (हिं०) २ कम्बल। ३ कीटविशेष, एक कीड़ा।

कमरिया (हिं० स्त्री०) १ छोटा कम्बल। "सूर श्यामकी कारी कमरिया चढ़े न दूजो रङ्ग।" (सूर) २ कटि, कमर। (पु०) हस्तिविशेष, एक हाथी। इसका देह क्षुद्र, शुण्ड दीर्घ और पद स्थूल रहता है। कमरिया अति प्रबल हस्ती है।

कमरी (फा० वि०) १ दुर्बलकटि, कमजोर कमर-वाला। यह शब्द प्रायः अश्वके विशेषणमें आता है। (स्त्री०) २ क्षुद्रकञ्चुक, मिरज़ई। ३ कमली, छोटा कम्बल। ४ काष्ठखण्डविशेष, एक लकड़ी। यह साढ़े किष्कुपरिमित दीर्घ रहती और चक्रके शीर्षपर लगती है। (पु०) ५ भग्ननौका, उखड़ा जहाज़। ६ अश्वरोगविशेष, घोड़ेकी एक बीमारी। इसके कारण अश्व अपने पृष्ठपर भार वा आरोहीको अधिक क्षण रख नहीं सकता।

कमरंगा (हिं० पु०) मिष्टान्नविशेष, एक मिठाई। यह बङ्गालमें बहुत बनता है।

क़मरुद्दीन खान्—एतमाद्-उद्-दौला मुहम्मद अमिन खान् वज़ीरके लड़के। इनका प्रधान नाम मीर मुहम्मद फ़ाज़िल था। १७२४ ई०को निज़ाम-उल्-मुल्क आसफ़् जाहके पदत्याग करने पर बादशाह मुहम्मद शाहने 'एतमाद-उद्-दौला नवाब क़मरुद्दीन खान् बहादुर नसरतजङ्ग' उपाधि दे इन्हें स्वयं वज़ीर बनाया। अहमदशाह अबदालीके प्रथम आक्रमण करते ही यह शाहज़ादे अहमदके साथ लड़नेको भेजे गये थे। किन्तु १७४८ ई०को ११ वीं मार्चको सरहिन्दके युद्धपर अपने डेरेमें नमाज़ पढ़ते समय तोपका गोला लगनेसे इनका देहान्त हुआ।

क़मरुद्दीन मीर—एक सुप्रसिद्ध मुसलमान् कवि। इनका उपनाम मिन्नत रहा। यह दिल्लीके अधिवासी थे। वारन हेष्टिङ्गसने मुरशिदाबादके नवाबकी सिफ़ारिश पर 'मलिक-उश-शुअरा' अर्थात् कविराजका उपाधि इन्हें प्रदान किया। यह दक्षिण हैदराबाद निज़ामसे मिलने गये थे। वहां इन्होंने उनकी प्रशंसामें एक 'क़सीदा' लिखा, जिसके लिये ५०००) रु० नक़द पुरस्कार मिला। यह १७९३ ई०को कलकत्तेमें उर्दू और फ़ारसीके डेढ़ लाख शेर छोड़ मरे थे। इनका बनाया 'चमनिस्तान' और 'शकरिस्तान' ग्रन्थ छप गया है।

कमल (सं० पु०-क्ली०) कम-णिङ् भावे इत्यादित्वात् कलच्, कं जलं अलति अलङ्करोति, कम्-अल-अच् वा। १ पद्म, कंवल। अतएव और पद्म देखो। यह श्वेत, नील और रक्त—त्रिविध होता है। कमल शीतल, वर्णकर एवं मधुर, और पित्त, कफ, तृष्णा, दाह, रक्त, विस्फोटक, विष तथा विसर्पहर है। श्वेत शीतल एवं मधुर और कफ तथा पित्तघ्न होता है। किन्तु रक्त एवं नीलमें श्वेत कमलसे अल्प गुण रहता है। (भावप्रकाश)

२ जल, पानी। ३ ताम्र, तांबा। ४ क्लोम, जहरा, तलखा। ५ औषध, दवा। ६ सारसपक्षी। ७ मृगविशेष, एक हिरन। ८ पाटलवर्ण, एक रंग। ९ आकाश, आसमान्। १० चातकपक्षी, एक चिड़िया। ११ भ्रुयक, एक ताल।

"रक्तो मलयवातीन लघुमध्ये भ्रु दैद गुरुः।
सद्यदाचन्द्रयुक्तः कमलोऽयं भयानकः॥" (सङ्गीतदामोदर)

१२ पद्मकाष्ठ। १३ कुङ्कुम, रोरी। १४ मूत्राशय, मसाना। १५ ब्रह्मा। १६ कमलाका बसाया एक

कमीशन (अं॰ स्त्री॰=Commission) १ आचरण, दस्तिकाव, करतब। २ समर्पण, सुपुर्दगी। ३ अधिकार, इख़्तियार। ४ आदेश, हुक्म। ५ परार्थविक्रय, दलाली। ६ नियुक्तजन, जमात, जथा।

क़मीस (अ॰ स्त्री॰) कमीज, किसी किस्मका कुरता।

कमुवन्दर (हिं॰ पु॰) धनु भञ्जनकारी रामचन्द्र।

कमुवा (हिं॰ पु॰) नौदण्डका मुष्टि, नाव चलानेके डांडका कब्ज़ा।

कमून (अ॰ पु॰) जीरक, जीरा।

कमूनी (फ़ा॰ वि॰) १ जीरक-सम्बन्धीय, जीरेसे तालुक रखनेवाला। जीरकके अवलेहको 'जवारिश कमूनी' कहते हैं। (स्त्री॰) २ औषधविशेष, एक दवा। इसमें जीरा बहुत पड़ता है।

कमूल, कमल्लई देखो।

कमेटी (अं॰ स्त्री॰=Committee) कार्यसम्पादिका सभा, पञ्चायत।

कमेड़ी (हिं॰ स्त्री॰) कुमरी, कपोतिका।

कमेरा (हिं॰ पु॰) कर्मकार, मजदूर, नौकर। प्रधानतः खेतीके काम करनेवाले नौकरको 'कमेरा' कहते हैं।

कमेला (हिं॰ पु॰) १ शूना, वध्यस्थान, कतलगाह। २ कमीला, एक पौदा।

कमेहरा (हिं॰ पु॰) संस्थानविशेष, एक सांचा। यह मट्टीका होता है। इसमें कचकुटकी चूड़ियां ढाली जाती हैं।

कमोदन (हिं॰ स्त्री॰). कुमुदिनी, कोकाबेली।

कमोदपुष्प (सं॰ क्ली॰) जलपुष्पविशेष, पानीमें होनेवाला एक फूल।

कमोदिक (हिं॰ पु॰) १ कमोदराग गानेवाला। २ गायक, गवैया।

कमोदिन (हिं॰ स्त्री॰) कुमुदिनी, कोकाबेली।

कमोना—युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिलेका एक ग्राम। यह काली नदीके दक्षिण तटसे थोड़ी दूर अवस्थित है। यहां एक सुप्रसिद्ध दुर्ग विद्यमान है।

कमोरा (हिं॰ पु॰) १ मृत्पात्रविशेष, मट्टीका एक बरतन। इसका मुख प्रशस्त रहता है। इसमें दुग्ध दूहते और रखते हैं। यह दही जमानेके काम भी आता है। २ घट, घड़ा।

कमोरी (हिं॰ स्त्री॰) क्षुद्र मृत्पात्रविशेष, मट्टीका एक छोटा बरतन। इसका मुख प्रशस्त रहता है। यह दुग्ध दूहने तथा रखने और दही जमानेके काम आती है।

कम्प (सं॰ पु॰) कपि भावे घञ् इदित्वात् नुम्। १ स्फुरण, लर्जिश, थरथराहट, कपकपी। इसका संस्कृत पर्याय—वेपथु, वेपन, वेप और कम्पन है। २ उच्चारणविशेष, एक तलफ़्फ़ुज़। यह स्वरितका एक संस्कार है। स्वरितके आगे उदात्त स्वर आनेसे इस स्फुरणकी आवश्यकता पड़ती है। ३ वेपथु, बुख़ारकी कंपकपी। ४ अनुभावविशेष। यह शृङ्गाररसका सात्विक अनुभाव है। इसमें शीत, कोप, भय प्रभृतिसे अकस्मात् शरीर कांपने लगता है। ५ कंगनी, उभरा हुआ दीवारका किनारा। यह मन्दिरों और स्तम्भोंके नीचे रहती है।

कम्प (अं॰ पु॰=Camp) १ शिविर, डेरा, खेमा। २ सैन्यनिवास, पड़ाव, छावनी। ३ सेना, फ़ौज, लशकर।

कम्पज्वर (सं॰ पु॰) कम्पयुक्तो ज्वरः, मध्यपदलो॰। शीतज्वर, विषम, तपतरला, जूड़ी। यह ज्वर वायुसे उत्पन्न होता है। ज्वर देखो।

कम्पति (सं॰ पु॰) समुद्र, बहर।

कम्पन (सं॰ त्रि॰) कपि-युच् इदित्वात् नुम्। १ कम्पयुक्त, कांपनेवाला, जिसको कपकपी लगी हो या जो कांपता हो। इसका संस्कृत पर्याय—चलन, कम्प्र, चल, लोल, चलाचल, चञ्चल, तरल, पारिप्लव, परिप्लव, चपल और चटुल है। २ कम्पकारक, कंपानेवाला। (पु॰-क्ली॰) ३ कम्प, कपकपी। ४ शीतऋतु, जाड़ेका मौसम। ५ एक राजा।

"काम्बोजराजः केमतः कम्पनस्तु महारथः।
शत्रुः कम्पयामास यवनांश्च एव यः॥" (महाभारत १।११।१९)

६ अस्त्रविशेष, एक हथियार। ७ सन्निपातजन्य ज्वरविशेष, एक बुख़ार। भावमिश्रने कर्कोटक सन्निपात ज्वरको ही कम्पन कहा है,—

नगर। १७ छन्दोविशेष। इसमें तीन तीन छन्द-वर्णके चार पद होते हैं। एकमात्रिक छन्द और छप्पय भी कमल कहाता है। १८ चक्षुर्गोलक, आंखका डेला। १९ गर्भाशयका अग्रभाग, धरन, फल। २० दीपक रागका द्वितीय पुत्र और जय-जयन्तीका पति। २१ काचपात्रविशेष, शीशेका एक गिलास। इसकी आकृति कमलसे मिलती है। वह मोम-बत्ती जलानेके काम आता है। २२ रोगविशेष, एक बीमारी। इससे चक्षु पीले हो जाते हैं। बहुधा लोग इसे 'कांवर' कहते हैं। (त्रि०) २३ कामुक, खाहिशमन्द, चाहनेवाला। २४ पाटलवर्णयुक्त।

कमल-घण्डा (हिं० पु०) पद्मबीज, कमल-गट्टा।

कमलक (सं० क्ली०) कमल स्वार्थे कन्। १ कमल, कंवल। २ काश्मीरस्थ नगरविशेष। (राजत० ८।११११)

कमलकन्द (सं० पु०) शालूक, कमलकी जड़। यह कटु, तुवर, मधुर, गुरु, मलस्तम्भकर, रुक्ष, नेत्र्य, वृष्य, शीतल, दुर्जर एवं दाहक और रक्तपित्त, दाह, तृष्णा, कफ, पित्त, वात, गुल्म, कास, क्रमि, मुखरोग तथा रक्तदोषनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कमलकर्णिका (सं० स्त्री०) पद्मबीजकोष, कमल-गट्टेकी खोल। यह मधुर, तुवर, शीतल, लघु, तिक्त, मुखस्वच्छकर और रक्तदोष तथा तृषाहर होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

कमलकीट (सं० पु०) कमलस्य: कीटः। १ कीट-विशेष, कोई कीड़ा। २ ग्रामविशेष, कोई गांव।

कमलकेशर (सं० पु०-क्ली०) पद्मकिञ्जल्क, कमलका सूत। यह शीतल, ग्राही, मधुर, कटु, रुक्ष, गर्भ-स्थैर्यकर और वृष्य होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कमलकोरक (सं० पु०) कमलस्य कोरकः, ६-तत्। पद्मकलिका, कमलकी कली।

कमलकोष (सं० पु०) कमलस्य कोषः, ६-तत्। कमलकोरक, कमलकी कली।

कमलखण्ड (सं० क्ली०) कमल-खण्ड। कमलादिभ्यः खण्डः। पा ४।२।५१। (वार्तिक) पद्मसमूह, कमलोंका मजमा।

कमलगट्टा (हिं० पु०) पद्मबीज, कंवलका तुख्म। यह छत्तकसे वहिर्गत होता है। वल्कल कठोर पड़ता है। कमलगट्टा खेतवर्ण सारभूत द्रव्यके समान रहता है। कमलबीज देखो।

कमलगर्भ (सं० पु०) पद्मछत्रक, कंवलका छाता।

कमलगर्भाभ (सं० त्रि०) कमलगर्भस्य आभा इव आभा यस्य, मध्यपदलो०। पद्मके मध्यस्थलकी भांति कान्तिविशिष्ट, कंवलके छत्तेकी तरह चमकनेवाला।

कमलगुप्त—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। (सूक्तिकर्णामृत)

कमलच्छद (सं० पु०) कमलः कमलवर्णः छदः पक्षो यस्य, बहुव्री०। १ कङ्कपक्षी, बगला, बूटीमार। २ पद्मदल, कंवलका पत्ता।

कमलज (सं० पु०) कमलात् विष्णोर्नाभिकमलात्, जायते, कमल-जन-ड। ब्रह्मा।

कमलदेव—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। इनका निवासस्थान चन्द्रपुर रहा। कमलदेव विश्वेदेवके पिता और गणितप्रदीप-रचयिता लक्ष्मीधर तथा पदन्यासविधि-रचयिता नागनाथके पितामह थे।

कमलदेवी (सं० स्त्री०) काश्मीरराज ललितादित्यकी पत्नी और राजा कुवलयापीड़की माता। (राजतरङ्गिणी ४।१०१)

कमलनयन (सं० त्रि०) कमलसदृश सुन्दर नेत्रयुक्त, जिसके कंवलकी तरह खूबसूरत आंख रहे। (पु०) २ विष्णु। ३ रामचन्द्र। ४ कृष्ण।

कमलनयन—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। देवराजने निघण्टुभाष्यमें इनका वचन उद्धृत किया है।

कमलनयनदीक्षित—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। कवीन्द्रने इनका उल्लेख किया है।

कमलनाभ (सं० पु०) नाभिमें कमल रखनेवाले विष्णु।

कमलनाल (सं० क्ली०) मृणाल, कंवलकी डण्डी।

"कमलनाल इव चाप चढ़ाऊं।
सत योजन प्रमाण लै धाऊं॥" (तुलसी)

कमलपलाश (सं० त्रि०) कमलपत्रवत् चक्षुर्युक्त। कमलपत्रकी भांति चक्षुविशिष्ट, जिसके कंवलकी पखुड़ी जैसी आंख रहे।

कमलबन्ध (सं० पु०) चित्रकाव्यविशेष, किसी

"जड़ता वैद्यता वाचो रात्रौ निद्रा भवत्यपि।
प्रलापो श्रवणे चैव मुखमाधुर्य मे च॥
कफोल्वणस्य लिङ्गानि सन्निपातस्य लक्षयेत्।
मुनिभिः सन्निपातो ऽयमुक्तः कम्पनसंज्ञकः॥" (भावप्रकाश)

कफोल्वण सन्निपातमें शरीरमें जड़ता आती, वाणी गद्गद पड़ जाती, रात्रिको निद्रा अधिक सताती, आंख मचाती और मुखमें मिठास देखाती है। मुनियोंने इसी ज्वरका नाम कम्पन रखा है। ८ काश्मीर-निकटवर्ती एक नगर। ९ अस्त्रविशेष, एक तलफ्-फुज। १० कंपायी, हिलने डुलनेकी हालत।

कम्पना (सं० स्त्री०) कम्पन-टाप्। १ नदीविशेष, एक दरया। २ सेना, फौज।

कम्पनीय (सं० त्रि०) कम्पन-टक। चलनशील, मुतहरिक, जो हिल डुल सकता हो।

कम्पमान (सं० त्रि०) कपि-शानच् इदित्वात् नुम्। कम्पयुक्त, जो कांपता हो।

कम्पयत् (सं० त्रि०) कंपानेवाला, जो हिलाता डुलाता हो।

कम्पलक्ष्मा (सं० पु०) कम्पः चलनं लक्ष्म लक्षणं यस्य, बहुव्री०। वायु, हवा।

कम्पवायु (सं० पु०) कम्पः कम्पकरः वायुः। वातरोगविशेष, वायीकी एक बीमारी। इसमें शरीर कंपने लगता है। वातव्याधि देखो।

कम्पा (सं० स्त्री०) कपि भावे अ-टाप्। कम्पन, कंपकंपी।

कम्पाक (सं० पु०) कम्पया चलनेन कायति प्रकाशते, कम्प कै-क। वायु, हवा।

कम्पान्वित (सं० त्रि०) कम्पयुक्त, कंपनेवाला, जो घबराया हो।

कम्पित (सं० स्त्री०) कपि भावे क्त। १ कम्पन, कंपकंपी। (त्रि०) २ कम्पयुक्त, कंपनेवाला। ३ कंपाया, जो हिलाया डुलाया गया हो।

कम्पिल (सं० पु०) कम्प-इलच्। १ रोचनी, सफेद नौसादर। इसका संस्कृत पर्याय—कम्पिल, काम्पिल्य, कम्पील, कम्पिलक, रक्ताङ्ग, रेची, रेचनक, रञ्जक, लोहिताङ्ग और रक्तचूर्णक है। राजनिघण्टुके मतसे यह विरेचक, कटु, उष्ण एवं लघु और व्रण, कफ, कास तथा जन्तुकृमिनाशक है। फिर सुश्रुत इसके तैलको तिक्त, कटु, कषायरस एवं संशोधक और अधोगत दोष, कृमि, कफ, कुष्ठ तथा वायुनाशक बताते हैं। २ युक्तप्रदेशके फर्रुखाबाद जिलेकी कायमगञ्ज तहसीलका एक ग्राम। महाभारतमें इसका नाम काम्पिल्य लिखा है। काम्पिल्य देखो।

कम्पिला (सं० स्त्री०) घृतकुमारी, घीकुवार।

कम्पिल्ल (सं० पु०) कम्प-इल्ल। श्वेतमिहृत्, सफेद नौसादर।

कम्पिल्लक (सं० पु०) कम्पिल्ल स्वार्थे कन्। श्वेतमिहृत्, सफेद नौसादर।

कम्पिल्लमालक (सं० पु०) वकुलभेद, किसी किस्मकी मौलसिरी।

कम्पिल्य, कम्पिल्ल देखो।

कम्पी (सं० त्रि०) कम्पो ऽस्यास्ति, कम्प इनि। १ कम्पयुक्त, कांपनेवाला। २ कंपानेवाला, जो कंपाता हो। "गीती शीघ्री शिरःकम्पी तथा लिखितपाठकः। अनर्थज्ञो ऽल्पकण्ठश्च षडेते पाठकाधमाः॥" (शिक्षा ३२)

कम्प्य (सं० त्रि०) कपि-णिच् कर्मणि यत्। १ चलनशील, मुतहरिक, जो हिलाया डुलाया जा सकता हो। २ स्फुरणके साथ उच्चारित होनेवाला, जो आवाज़को हिला डुला कर बोला जाता हो।

कम्प्र (सं० त्रि०) कम्पि-र। नमिकम्पिस्म्यजसकमहिंसदीपो रः। पा ३।२।१६७। कम्पान्वित, कांपनेवाला। "विभाय कम्प्राणि मुखानि कम्पते।" (नैषध १।८९)

कम्बा (सं० स्त्री०) कम्ब स्त्रियां टाप्। शाखा, डाल।

कम्बन—दाक्षिणात्यके प्रसिद्ध तामिल कवि। मन्द्राज प्रान्तीय मैसूर जिलेके वेण्णेय नल्लूर नामक ग्राममें इन्होंने जन्म लिया था। यह ब्राह्मण शूद्रवंशीय रहे। इन्होंने बारह वर्षके वयससे वाल्मीकि-रामायणका तामिल भाषामें अनुवाद आरम्भ किया और पञ्चास वर्षके वयःक्रमकाल पूरे उतार दिया। चोलाधिप करिकाल चोल कवित्वके गुणसे मुग्ध हो इनकी प्रशंसा करते थे। फिर राजेन्द्र-चोलने इन्हें पदवी

मिलता और ग्रीक वर्णनामें भी नाम निकलता। नारङ्गी चीनसे भारत आयी है।' किन्तु डाक्टर कोनेविया इसे भारतका ही द्रव्य बताते हैं।

यह चार प्रकारकी होती है—(१) सन्तरा, (२) नारङ्गी, (३) मलता और (४) मन्दारिन।

(१) सन्तरेका छिलका चिकना, पीला और नारङ्गी रहता है। त्वक् पृथक् पड़ती है। इस जातिकी कमला नागपुर, दिल्ली, अलवर, गुड़गांव, लाहोर, मूलतान, पूने, मन्द्राज, कुर्ग, सिलहट, भोटान, नेपाल और सिंहलमें लगायी जाती है। अग्रहायण वा पौष मास इसका फल पकता है।

(२) नारङ्गी सन्तरेसे अधिक उत्पन्न होती है। लगानेसे यह भारतमें सब जगह उपज सकती है। इसका छिलका सन्तरेसे कड़ा और पतला रहता है। फिर त्वक् भी पृथक् नहीं पड़ती। यह माघ मास फल देती और धूप सह लेती है। इसका रस सन्तरेसे फीका निकलता है।

(३) मलता या सुर्ख नारङ्गी कई प्रकारकी होती है। आजकल हिमालय और दारजिलिङ्गमें जो हरी और बड़ी नारङ्गी उपजती, वह इसीकी अवनति मात्र समझ पड़ती है। ब्रह्मदेशमें बिलकुल इसी प्रकारकी एक नारङ्गी मिलती है। पूनेकी छोटी लाल 'मुसिम्बी' अफ्रीकासे इस देशमें आयी है। लखनऊमें सिपाही विद्रोहसे पहले सुर्ख नारङ्गी बहुत लगायी जाती थी। यह कंकरीली जमीनमें खूब होती है। इस अमृततुल्य स्वादु रहती है। गुजरान्वालेकी सुर्ख नारङ्गी अंगरेजोंको बहुत अच्छी लगती और सबसे उम्दा समझ पड़ती है।

(४) मन्दारिन देखनेमें क्षुद्राकार और रक्तवर्ण होती है। यह खानेमें सुस्वादु लगती है। सकल प्रकार कमलाकी अपेक्षा इसके पत्र और फलमें सद्गन्ध अधिक रहता है। प्रधानतः यह पर्वतोंपर उपजती है। भारतवर्षमें प्रकृत मन्दारिन नहीं मिलती, सिंहलमें देख पड़ती है।

पहले युरोपमें कमला उपजती न थी। इसे पोर्तुगीज़ भारतवर्षसे वहां ले गये हैं।

नारङ्गीका व्यवसाय प्रधानतः दो स्थानोंमें होता है—सिलहट (श्रीहट्ट) और नागपुर। इसके लगानेमें मूलपर आर्द्रता रहना आवश्यक है। किन्तु जल निश्चल होना न चाहिये। श्रीहट्टमें इस बातकी सुविधा है। भूमि ढाल् रहनेसे नदीकी लहर आती और वृक्षोंको सींचकर चली जाती है। वहां कमसे कम १००० एकरमें नारङ्गी लगाते हैं। अधिक घण्टे दो घण्टे इस बागमें घूम सकता है। दिसम्बर और जनवरी मास नारङ्गीसे लदे वृक्ष देख हृदय फूल उठता है। ऐसा बाग युरोपमें भी कहीं देख नहीं पड़ता।

कृषि—बीज जनवरी और फरवरी मास प्रायः ६ इञ्च भूमिके सम्पुटमें सघनरूपसे बोया जाता है। उक्त सम्पुट इतने ऊंचे रहते, कि शूकर अपना दांत लगा नहीं सकते। फिर चूहों और गिलहरियोंको दूर रखनेके लिये जाल भी डाल देते हैं। वृष्टि होनेसे बीजाङ्कुर भिन्न किये जाते हैं। किन्तु इस कार्यमें सम्पुट तोड़ मूलसे मृत्तिकाको इस प्रकार झटकते, जिसमें कोई हानि न पड़े। पीछे उन्हें उद्यानके पोषणस्थानमें लगाते हैं। बीजाङ्कुर पोषणस्थानमें जबतक रहते, तबतक उद्यानमें अपने ईप्सित स्थलपर फिर नहीं पहुंचते। किन्तु यह नियम सदोष प्रतीत होता है। कारण पोषणस्थान वर्षमें केवल एकबार अक्तोबर मास गिराया जाता है। क़लम लगाना किसीको मालूम नहीं। फिर बीज चुननेमें भी अल्प ही चेष्टा करते हैं।

संग्रहण एवं विक्रयण—प्रत्येक संग्राहकके पास २० फीट ऊंची बांसकी सिढ़ी होती है। उसकी पीठपर एक मोटा जालीदार थैला लटकता, जिसका मुंह बेतके छल्लेसे खुला रहता है। इसी थैलेमें वह नारङ्गी तोड़ तोड़ डालता है। फिर वह उतरनेसे पहले मुरझायी पत्तियां और सूखी डालियां भी गिरा देता है। सिवा इसके नारङ्गीके वृक्षमें दूसरा हाथ नहीं लगाते। लड़के गुलेल लिये कौवे उड़ाया करते हैं। आंधीसे गिरी नारङ्गियां सूअरों और कुत्तोंको खिलायी जाती हैं। इसकी गणना गण्डेके हिसाबसे चलती है। ८५० गण्डे (३४००)का एक सौन होता है। इसकी नारङ्गियां ६) रु० सौन बिकती हैं।

सभामें बोला राजकविका उपाधि दिया। यह ८०७ शकको विद्यमान रहे। इनका बनाया तामिल रामायण 'कम्बनपादम', 'काञ्चिवरम् विलतामम', 'चोलकुवंञ्ज' (करिकाल चोलका इतिहास) और 'कम्बन अगराधि' नामक तामिल अभिधान दाक्षिणात्यमें प्रसिद्ध है। इन्होंने मदुरा नगरमें ६० वर्षके वयःक्रमकाल इहलोक छोड़ा था। (Wilson's Mackienzie Collection.)

कोई कोई इनका नाम कम्बर और जन्मस्थान तञ्जोर जिलेका कम्ब नाडु नामक ग्राम बताता है। इन्होंने रामायणका अपना तामिल अनुवाद राजेन्द्र चोलके समयसे आरम्भ कर कुलोत्तुङ्ग चोलके राज्यकाल पूरे उतारा था। (Caldwell's Dravidian Grammar, p. 134.)

कम्बम्—मन्द्राजप्रान्तके कर्णोल जिलेका एक नगर।

कम्बर (सं० पु०) कम्ब-अरन्। विविधवर्ण, चित्रवर्ण, गूनागून रंग। (त्रि०) २ नानाविध वर्णविशिष्ट, रंग-ब-रंग।

कम्बर—सिन्धुप्रदेशकी एक तहसील। यह अक्षा० २७° २८´ एवं २७° ५८´ १०´´ उ० और देशा० ६७° २२´ ४५´´ तथा ६८° १०´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ८७७ वर्गमील पड़ता है। यहां प्रायः एक लक्ष मनुष्य रहते हैं। इसका अपर नाम शहादतपुर है। शिकारपुर जिलेसे यहां तहसील उठ आयी है। इसके प्रधान नगरका नाम भी कम्बर ही है। वह अक्षा० ७१° ३५´ उ० और देशा० ६८° २´ ४५´´ पू०पर अवस्थित है। १८४४ ई०को बलूचियोंने उक्त नगर लूटा था। फिर दूसरे ही वर्ष अग्निप्रयोगसे कम्बर एककाल ध्वंस हो गया।

कम्बल (सं० पु० क्ली०) कम्ब वृषादिलत् कमच्। १ भेड़ादिके लोमसे निर्मित एक वस्त्र, भेड़ वगैरहके बालसे बना एक कपड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—रलक, देवक, रोमयोनि, रैणुका और प्रावार है। इस देशमें जितने ही कम्बल व्यवहार करते हैं। पूर्व कम्बल अवयवका कार्य देता था। किसी किसीके कथनानुसार कम्बलको रुयी भरा पहननेसे बन्दूककी गोली तक शरीरमें घुस नहीं सकती। २ सर्पविशेष, कोई सांप। ३ गो प्रभृतिके गलका रोम, मवेशियोंकी गर्दनका बाल। ४ उत्तरीय, ऊनी चादर। ५ मृगविशेष, एक हिरन। ६ नागद्वय, सांपका जोड़ा। इसमें एक पाताल और एक वरुण देवके सभास्थलमें रहता है। ७ क्रमिविशेष, एक कीड़ा। ८ तीर्थविशेष।

"प्रयागं सुप्रतिष्ठानं कम्बलाश्वतरौ तथा।
तीर्थं भोगवती चैव वेदिरेषा प्रजापतेः॥" (भारत, वन ८५ अ०)

९ जल, पानी। १० लोमिकाशाक, लोनिया। ११ सास्ना।

कम्बलक (सं० पु०) कम्बल स्वार्थे कन्। कम्बल, ऊनी कपड़ा, ऊनी पोशाक।

कम्बलकारक (सं० पु०) कम्बलं करोति, कम्बल-कृ-ण्वुल्। कम्बलनिर्माता, ऊनी कपड़ा बनानेवाला।

कम्बलधारक (सं० पु०) कम्बल-धृ-ण्वुल्। कम्बलधारी, ऊनी कपड़ा ओढ़नेवाला।

कम्बलधावक (सं० पु०) कम्बल परिष्कार करनेवाला, जो ऊनी कपड़ा धोता हो।

कम्बलबर्हिष (सं० पु०) १ अन्धकराजके एक पुत्र। (भागवत ९।२४।११)

कम्बलवान् (सं० त्रि०) कम्बलो ऽस्यास्ति, कम्बल-मतुप्, मस्य वः। १ कम्बलविशिष्ट, ऊनी कपड़ा रखनेवाला। २ प्रशस्त गलकम्बलविशिष्ट, गर्दनपर खूब बाल रखनेवाला।

कम्बलवाह्य (सं० पु०) रथविशेष, एक गाड़ी। इस पर मोटा कम्बल ढका रहता है। इस गाड़ीमें बैल ही जुतते हैं।

कम्बलवाह्यक, कम्बलवाह्य देखो।

कम्बलहार (सं० पु०) कम्बलं हरति, कम्बल-हृ-अण्। १ कम्बलहारक, ऊनी कपड़ा चोरानेवाला। २ सर्पविशेष।

कम्बलार्ण (सं० क्ली०) कम्बलरूपं ऋणम्, कम्बल-ऋण वृद्धिः। वसनवसनकम्बलवत्सराणां दशानामृणे। पा ६।१।८९। (वार्तिक) कम्बलरूप ऋण, ऊनी कपड़ेका कर्ज।

कम्बलिका (सं० स्त्री०) कम्बल-इ-स्वार्थे कन् ह्रस्वः टाप् च। १ क्षुद्र कम्बल, कमली। २ कम्बलमृगकी स्त्री।

नागपुर और कामठोमें भी नारङ्गीके बहुतसे बाग हैं। मध्यप्रदेशमें इसकी कृषि बढ़ रही है। नागपुरका सन्तरा बम्बई अधिक जाता है। युक्तप्रदेशमें नेपाल, दिल्ली और कुछ नागपुरसे भी नारङ्गी आती है।

नारङ्ग—मधुराम्ल, अग्निप्रदीपक और वातनाशक है। फिर दूसरी नारङ्गी अत्यन्त अम्लरस, उष्णवीर्य, दुर्पच्य, वायुनाशक और सारक होती है। (भावप्रकाश)

राजनिघण्टुके मतसे यह मधुर एवं अम्ल, गुरु, रोचन, बल्य, रुच्य और वात, आम, कृमि, शूल तथा श्रमनाशक है।

हकीमोंमें नारङ्गीके छिलके और फूलको गर्म और खुश्क समझते हैं। इसका गूदा तर रहता है। ठण्डकसे खांसी आने या बोखार चढ़ जानेसे नारङ्गी खिलाते हैं। इसका अर्क सफ़रे और सफ़रेके दस्तको दूर करता है। कीड़े या कृमिको रोकनेके लिये इसे बहुत काममें लाते हैं। नारङ्गीका अर्क भी निहायत ताक़तवर है। इसके छिलके और फूलसे तेल बनता, जो मालिशमें दवाके तौर पर चलता है।

डाक्टर ऐनुसली लिखते,—'हिन्दू चिकित्सकोंके मतानुसार नारङ्ग रक्तशोधक, ज्वरमें पिपासानिवारक, पीनसरोगहर और क्षुधावर्धक है। ग्रीष्मके समय खूब पकी नारङ्गीका शर्बत अंगरेजोंके लिये बहुत उपादेय होता है। इसका छिलका वातनाशक और अजीर्ण रोगके लिये हितकर है।'

भारतवर्षीय फार्माकोपियाके मतसे नारङ्गी बलकर और अग्निवर्धक है। अजीर्ण रोग और साधारण दुर्बलता पर यह बड़ा उपकार करती है। इसके पत्रको चुआनेसे जो जल निकलता, वह आध छटांक स्नायवीय एवं मूर्छारोगपर प्रयोग करनेसे आक्षेप मिटता है।

मुखपर व्रण होनेसे कोई कोई नारङ्गीका सूखा छिलका पिसकर लगाता है। फिर सूखे ही छिलकेको जलमें रगड़ चर्मरोगपर व्यवहार करनेसे आशु फल मिलता है।

भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र ही नारङ्गी सुस्वादु फलकी भांति समादृत होती है। इसका वृक्ष बहुदिन पर्यन्त जीता जागता है। सुननेमें आया—एक एक वृक्ष ५।६ शत वर्षसे नहीं मुरझाया। इसका वृक्ष ५० फीट पर्यन्त उच्च विस्तृत होता है। प्रत्येक वृक्षमें ५००से १००० पर्यन्त फल उतरते हैं।

नारङ्गका पत्र जलमें चुआनेपर एक प्रकार तैल निकलता है। उसका गन्ध अति तीव्र अथच तृप्तिकर होता है। अंगरेज़ उसे 'निरोली आयेल' कहते हैं। यह अतर बनानेमें काम आता है। विलायतवाले लेवेण्डर, साबुन प्रभृति द्रव्योंमें उसे मिलाते हैं।

नारङ्गीके फूलसे जो तैलवत् निर्यास निकलता, उसका अतर अति उत्कृष्ट रहता है।

किसी-किसी वैज्ञानिकने देखभाल नारङ्गीके तैलसे कपूर निकाला है। उस कपूरको 'निरोली काम्फर' कहते हैं।

४ गङ्गा। "कमला कमलतिका कान्ती वसुधैरिवो।" (काशीख० २८।११) ५ नर्तकी विशेष,एक नाचने-गानेवाली रण्डी। यह पीछे राजा जयापीड़की पत्नी बनी थी। ६ काश्मीरस्थ पुरीविशेष, काश्मीरका एक शहर। (राजतरङ्गिणी ४।४८१) ७ छन्दोविशेष। इसमें दो नगण और एक सगण रहता अर्थात् ८ लघु वर्णके पीछे एक गुरुवर्ण लगता है।

"द्विज नगण ललित: सगण इह हि विदित:।
कवितति अति विमला विदित भवति कमला॥" (वृत्तरत्नाकर)

८ कामरूपमें प्रवाहित एक नदी। इस नदीके तीरकी भूमि अधिक उर्वरा है। (भ० ब्रह्मख० १६।१४)

९ उत्तर विहारकी एक नदी। यह नदी नैपाल राज्यमें हिमालयसे निकली है। इसके दक्षिण अंशको बूढ़ी कमला कहते हैं। ब्रह्मखण्डमें इसीको तैरभुक्तकी पुण्यसलिला कमला नदी बताया है। इसके तीरपर गिलानाथ ग्राम है। उसी ग्राममें गिलानाथ नामक महादेवकी लिङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित है।
(भ० ब्रह्मख० ४५।११८)

१० विद्यानगरराज्यका एक प्राचीन ग्राम। (भ०ब्रह्मख० ४८।२०)

कमला (हिं० पु०) १ कम्बल, झांझा, सूंड़ी। यह रुयेंदार कीड़ा है। मनुष्यका देह इसके स्पर्शसे खुजलाने लगता है। २ कृमिविशेष, ढोला, सट,

कम्बलिवाह्यक (सं॰ क्ली॰) कम्बलः साधा अस्त्यस्य, कम्बल-इनि; कम्बलिभिर्वह्यते, कम्बलिन्-वह कर्मणि ण्यत् स्वार्थे संज्ञायां वा कन्। गोगकट, बैलगाड़ी। इसका संस्कृत पर्याय—गन्त्री और गान्त्री है।

कम्बली (सं॰ पु॰) कम्बलः गलकम्बलः प्रशस्तो इत्यस्य, कम्बल-इनि। १ वृष, बैल। (त्रि॰) २ कम्बलाच्छादित, ऊनी कपड़ेसे ढका हुआ।

कम्बलीय (सं॰ त्रि॰) कम्बलाय हितम्, कम्बल-छ। मेषलोमयुक्त, ऊनी कपड़ेके लायक।

कम्बल्य (सं॰ क्ली॰) कम्बल-यत्। कम्बलाच संज्ञायाम्। पा ५।१।३। शतपलपरिमित ऊर्णा, सौपल ऊन।

कम्बलायी (सं॰ पु॰) यज्ञविशेष, किसी किस्मकी चील।

कम्बि (सं॰ स्त्री॰) कम् बाहुलकात् विन्। १ दर्वी, कल्छा, चम्मच। २ वंशांश, बांसकी खपाच। ३ वंशाङ्कुर, बांसकी कोंपल।

कम्बिका (सं॰ स्त्री॰) वादित्रविशेष, एक बाजा।

कम्बु (सं॰ पु॰) कम-उण्-बुकच्। १ शङ्ख, घोंघा, कौड़ी। २ वलय, सीपकी चूड़ी। ३ शम्बुक, घोंघा। ४ हस्ती, हाथी। ५ चित्रवर्ण, कई तरहका रंग। ६ ग्रीवादेश, गर्दन। ७ नलक, नली, हड्डी। ८ मानभेद, एक माप।

कम्बुक (सं॰ पु॰) कम्बु स्वार्थे कन्। १ कम्बु, शङ्ख। २ नीचपुरुष, कमीना शख्स।

कम्बुकण्ठी (सं॰ स्त्री॰) कम्बुरिव कण्ठो ऽस्याः, कण्ठ-ङीप्। शङ्खकी भांति कण्ठमें तीन चिह्न रखनेवाली स्त्री, जिस औरतके गलेमें शङ्खकी तरह तीन दाग रहें।

कम्बुककुसुमा (सं॰ स्त्री॰) शङ्खपुष्पी, सखौली।

कम्बुका (सं॰ स्त्री॰) अश्वगन्धालता, असगन्धका पेड़। अश्वगन्धा देखो।

कम्बुकाष्ठा (सं॰ स्त्री॰) कम्बु चित्रवर्णं काष्ठं यस्याः, बहुव्री॰। अश्वगन्धाक्षुप, असगन्धका झाड़।

कम्बुग्रीव (सं॰ त्रि॰) कम्बुरिव रेखात्रययुक्ता ग्रीवा यस्य। शङ्खकी भांति रेखात्रयविशिष्ट गलदेशयुक्त, जिसके गलेमें शङ्खकी तरह तीन सतरें रहें। "कम्बुग्रीव पुष्कराक्षो महाबाहुर्महेश्वरम्।" (भारत १।१६१)

कम्बुग्रीवा (सं॰ स्त्री॰) कम्बुरिव रेखात्रययुक्ता ग्रीवा, उपमि॰। शङ्खकी भांति रेखात्रययुक्त ग्रीवा, शङ्खकी तरह तीन सतर रखनेवाली गर्दन।

कम्बुपुष्पी (सं॰ स्त्री॰) कम्बुवत् शुभ्रं पुष्पं यस्याः, बहुव्री॰। शङ्खपुष्पी, सखौली।

कम्बुमालिनी (सं॰ स्त्री॰) कम्बुतुल्य पुष्पाणां माला-समूहः अस्त्यस्याः। शङ्खपुष्पी, सखौली।

कम्बू (सं॰ त्रि॰) कम्ब-ऊ निपातनात् साधुः। चन्द्रुकम्बकम्बकफिङ्क्वमेग्नूडिति। उण् १।८६। १ अपहरणकारी, चोरानेवाला। (पु॰) २ तस्कर, चोर। ३ वलय, चूड़ी। (स्त्री॰) ४ शङ्ख।

कम्बूक (सं॰ पु॰) कम्बू स्वार्थे कन्। १ कम्बू, शङ्ख। (सं॰) २ पलालक, धानकी भूसी।

कम्बुपूत (सं॰ पु॰) शङ्ख, खरमोहरा।

कम्बो—जातिविशेष एक कौम। आजकल इस जातिके लोग पञ्जाब और युक्तप्रदेशके बिजनोर जिलेमें रहते हैं। पूर्वको कम्बो सिन्धुनद छोड़ काबुलके उत्तर प्रदेशमें वास करते थे। संस्कृत भाषामें इन्होंको 'काम्बोज' और इनके पूर्ववासस्थानको 'कम्बोज' कहते हैं। उस समय यह सकल भारतीय क्षत्रिय रहे। किन्तु मुहम्मद गजनवीने इनमें कितनों को को मुसलमान बना डाला। मुगल इनसे बड़ी घृणा रखते थे। फारसीमें कहते हैं,—

"औवल कम्बो दोयम अफगान् सोयम बदजात काश्मीरी।"

काम्बोज (सं॰ पु॰) कम्ब-भोज। १ शङ्खविशेष, किसी किस्मका खरमोहरा या घोंघा। २ हस्तिविशेष, एक हाथी। ३ देशविशेष, एक मुल्क। यह अफगानिस्तानका एक भाग है। इसकी अवस्थिति गान्धारके निकट मानी जाती है। किन्तु शक्तिसङ्गमतन्त्रमें लिखा है,—

"पाञ्चालदेशमारभ्य म्लेच्छादक्षिणपूर्वतः।
काम्बोजदेशो देवेशि वाजिराशिपरायणः॥"

पञ्चालसे लगा म्लेच्छ देशके दक्षिणपूर्व पर्यन्त काम्बोज गिना जाता है। यहां बिस्तर घोटक उत्पन्न होते हैं।

एक लम्बा और सफेद कीड़ा। यह अन्न और चीयमाण फलादिमें पड़ता है।

कमलाकर (सं० पु०) कमलानां आकरः उत्पत्तिस्थानम्, ६-तत्। सरोवरविशेष, एक तालाब। जिस सरोवर या तड़ागमें अधिक कमल रहते, उसे ही कमलाकर कहते हैं। २ पद्मसमूह, कमलोंका मलमा। ३ कमलाकरभट्टनिर्मित स्मृतिशास्त्रका एक ग्रन्थ। ४ गोदावरी-तीरवर्ती देवगिरिनिवासी नृसिंहके पुत्र। इन्होंने सिद्धान्ततत्त्वविवेक और जातकतिलक नामक संस्कृत ग्रन्थ बनाया था।

कमलाकर भट्ट—विख्यात स्मृतिसंग्रहकार। यह रामकृष्णभट्टके पुत्र, नारायणभट्टके पौत्र और दिनकर भट्टके सहोदर थे। इन महात्माने अनेक स्मृतिशास्त्र बनाये। इनके निम्नलिखित ग्रन्थ प्रधान हैं—१ तत्त्वकमलाकर, २ पूर्तकमलाकर, ३ तीर्थकमलाकर, ४ संस्कारप्रयोग या संस्कारपद्धति, ५ कार्तवीर्यार्जुनदीपदानप्रयोग, ६ शान्तिरत्न, ७ शूद्रधर्मतत्त्व, ८ सहस्र चण्डादि विधि, ९ निर्णयसिन्धु, १० विवादताण्डव। इनके ग्रन्थ पढ़नेसे समझ सकते—कमलाकर भट्ट १५३८ शकको विद्यमान रहे।

कमलाकान्त (सं० पु०) १ लक्ष्मीपति विष्णु। २ राम। ३ कृष्ण।

कमलाकान्त भट्टाचार्य—१ बङ्गालके एक दिग्गजपण्डित। यह नवद्वीपाधिपति महाराज कृष्णचन्द्रके समसामयिक रहे। किसी किसी श्लोकमें इनका नाम आया है—"श्रीकान्तकमलाकान्त बलरामच शङ्करः।" किन्तु अन्य कोई परिचय नहीं मिलता। कहते—श्रीकान्त, कमलाकान्त, बलराम और शङ्कर चारों पण्डितोंके एकत्र एकपक्ष हो विचारपर बैठनेसे स्वयं सरस्वती भी अपर पक्ष अवलम्बन कर जीत सकती न थीं। महाराज कृष्णचन्द्रने इन्हें स्वीय सभामें रखनेके लिये बड़ी चेष्टा की। किन्तु किसी विशेष कारणसे यह विरक्त हो और राजसभा छोड़ अपने ग्राममें आकर रहने लगे। चौबीस-परगनेके अन्तर्गत 'पूंड़ा' ग्राममें इनका वास था। पण्डितमण्डलीका वास रहनेसे पूंड़ा छोटे नवद्वीपके नामसे विख्यात हुआ। आज भी वहां इनके वंशधर रहते हैं।

२ एक प्रसिद्ध साधक और वर्धमानको राजसभाके पण्डित। १८०८ ई०को अम्बिकाकालनासे वर्धमान आ इन्होंने तत्कालीन वर्धमानाधिपति तेजश्चन्द्रको रिझाया और सभाके पण्डितका पद पाया था।

कमलाकान्त सात्विक, अभिमानशून्य और देवीके परम भक्त रहे। इष्टकी निष्ठासे मुग्ध हो तेजश्चन्द्रने इन्हें अपने गुरुपदपर वरण किया और निवासार्थ वर्धमानके निकट कोटालहाट ग्राममें सुन्दर भवन बनवा दिया। उक्त भवनमें कमलाकान्त महासमारोहसे श्रीश्यामापूजा मनाते। इस पूजाके दिन सब मित्र सकल एकत्र हो इन्हें कृतार्थ करते और इनकी भक्तिगाथा सुनते थे।

जैसी पदावलीसे रामप्रसादने देशोंको रिझाया और जैसी पदावलीने, आजतक बङ्गालियोंके हृदयमें अमृत बहाया, कमलाकान्तने वैसी ही पदावली गा कर किसी समय वर्धमानवासियोंको उन्मत्त बनाया। क्या बालक, क्या युवक, क्या वृद्ध—जो लोग अनुरोध लगाते, उन्होंको यह किसी न किसी ताल-स्वरमें एक श्यामाविषयक पद स्वयं बना, गा एवं सुनाकर रिझाते थे।

यह निर्भीक और सरलचित्त रहे। लोगोंसे सुन पाते,—एक दिन कमलाकान्त रात्रिकालको ओड़गांवके मैदानसे चले जाते थे। हठात् कतिपय दस्युने भीमरवसे उनपर आक्रमण किया। उन्होंने देखा, कि उसबार उनका अन्तिमकाल उपस्थित था। फिर वह निर्भय परमानन्दसे रामप्रसादके स्वरमें श्यामा माताको पुकारने लगे। उक्त गान सुन दस्यु मोहित हुये थे। उन्होंने वैरभाव छोड़ और उनके पदपर लोट क्षमा मांगी। कमलाकान्त उन्हें सन्तुष्ट कर वर्धमान लौट गये।

यह विवेकके स्रोतमें डूब रहते, संसारकी कुछ भी ममता रखते न थे। सुननेमें आया—स्त्रीको जलानेके लिये चिता प्रज्वलित होते कमलाकान्तने नाच नाच श्यामामाताका नाम गाया।

कुमार प्रतापचन्द्रभी इनके शिष्य हो गये थे। कहते—मृत्युकाल महाराज तेजश्चन्द्र स्वयं कमला-

किन्तु कोई कोई खम्भातको कम्बोज कहता है। रघुवंश देखते—महाराज रघुने पारसीकों, सिन्धुनदतीरवासियों और हूणोंको हरा कम्बोजदेशीय राजावोंको जीता था। काम्बोजोंने उनके निकट अवनत हो उत्कृष्ट अश्व और राशीकृत सुवर्ण उपढौकन-स्वरूप प्रदान किया। फिर रघु अश्वके साहाय्यसे गौरीगुरु पर्वतपर चढ़ गये।* (रघुवंश ४र्थ सर्ग)

रघुवंशकी उक्त वर्णनासे समझ पड़ा—कम्बोज देश सिन्धुनदके उत्तर और गौरीगुरु† पर्वतके निकट रहा। मार्कण्डेयपुराणमें गौरग्रीव और महाभारतमें सुवास्तु नदीके साथ गौरीनदीका उल्लेख मिलता है। यह सुवास्तु और गौरीनदी वर्तमान पञ्जाबके उत्तरस्थ स्वात प्रदेशके उत्तर अवस्थित है।

सुतरां रघुवंशका मत मानते वर्तमान सिन्धु और सन्दई नदीके उत्तरांशमें पूर्वकाल कम्बोज नामक जनपद रहा। पहले कम्बोजवासी संस्कृत भाषा बोलते थे। (निरुक्त २।२) कम्बो देखो।

(त्रि०) ४ कम्बोजदेशवासी, खम्भातका रहनेवाला।

कम्बोज (कम्बोडिया)—जनपदविशेष, एक मुल्क। यह अक्षा० ८° ४७′ से १५° उ० पर्यन्त विस्तृत है। इससे उत्तर लियस देश, पूर्व कोचिन-चीन, दक्षिण श्यामोपसागर एवं चीनसागर और पश्चिम श्यामदेश पड़ता है।

पहले स्वाधीन रहते समय कम्बोज राज्य बहुदूर पर्यन्त विस्तृत रहा। अनेक भारतीय राजा इस दूरदेश पर राजत्व करते थे। उनका कीर्तिकलाप, धर्मानुराग, देवद्विजभक्तिभाव और असाधारण शौर्य-वीर्यका गौरव बहुशतवर्ष गत होते भी आज कम्बोजके नगर, कानन, पर्वतगह्वर, शिलाफलक तथा प्रकाण्ड प्रकाण्ड देवमन्दिरादिके भग्नावशेषपर देदीप्यमान है। इस देशके प्राचीन भारतीय राजावोंका इतिहास इतने दिन खनिगर्भमें मणिकी भांति छिपा था। किन्तु अन्तको फरासीसी पण्डितोंने अपनी गभीर गवेषणाके प्रभावसे उसे साधारणके समक्ष खोल दिया। भारतीयोंके लिये यह न्यून गौरवका विषय नहीं। दीन दरिद्र धर्मभीरु भारतीय अपने प्राचीन राजावों द्वारा सुदूरवर्ती कम्बोज राज्यमें स्थापित अतुलनीय कीर्तिको अब समझ सकते हैं। जिसे हम भारतवर्षमें भी ढूंढ नहीं पाते, उसीके अनेक उदाहरण इस सामान्य देशमें देखाते हैं।

पुरातत्त्व—वर्तमान कम्बोजके वट्, वकङ्ग, लोलि, प्रे, अमनम, फनम, विसोर पर्वत, बोम्पङ्ग जिले (आजकल यह श्याम राज्यके अन्तर्गत है), फिमनक, ऊंदिचर और अङ्कचमनिक नामक स्थानसे प्राचीन कार्पाटी अक्षरके अनेक संस्कृत शिलालेख मिले हैं। उक्त शिलालेख पढ़नेसे समझ पड़ा—पूर्वकालको कम्बोज राज्य पश्चिम श्यामदेशसे पूर्व अनामके दक्षिणांश पर्यन्त विस्तृत रहा। इसके प्राचीन अधिवासी 'कम्बुज' वा 'काम्बोज' कहाते थे। उक्त काम्बोज वर्तमान कम्बोज राज्यके आदिम अधिवासी न रहे। प्रवाद है—

"तक्षशिलासे अनतिदूर रोमविषयपर एक धर्मनिष्ठ विधवाच नृपति राजत्व करते थे। उनके पुत्र युवराज 'कृष्णु' किसी गर्हित कर्मके लिये राज्यसे निर्वासित हुये। उन्हीं राजकुमारने नाना स्थान घूमफिर इस कम्बोज राज्यमें आ उपनिवेश स्थापन कर दिया।"

* "विनीताध्वश्रमास्तस्य सिन्धुतीरविचेष्टनैः।
तत्र हूणावरोधानां भर्तृषु व्यक्तविक्रमम्।
काम्बोजाः समरे सोढुं तस्य वीर्यमनीश्वराः।
गजालानपरिक्लिष्टैरक्षोटैः सार्धमानताः।
तेषां सदश्वभूयिष्ठास्तुङ्गा द्रविणराशयः।
उपदा विविशुः शश्वन्नोत्सेकाः कोशलेश्वरम्।
ततो गौरीगुरुं शैलमारुरोहाश्वसाधनः।" (रघु ४र्थ सर्ग)

† टीकाकारने 'गौरीगुरु'का अर्थ हिमालय बताया है। किन्तु इस स्थानपर गौरीगुरु एक स्वतन्त्र पर्वत समझ पड़ता है। पाश्चात्य प्राचीन भौगोलिक टलेमिने 'गोरिया' (Goryaia) नामक एक जनपदका उल्लेख किया है। (Ptolemy, BK. VII. ch. I.) इसी जनपदके मध्य गौरीनदी प्रवाहित है। यह नदी वर्तमान काबुल नदीमें जा गिरी है। फिर हमें बृहत्संहिता और महाभारतमें भी गौरीनदी ही लिखा है। उसकी घाटी और पर्वतमाला रही है। कालिदासने इसी पर्वतमालाको गौरीगुरु कहा है। विशेषतः इस पर्वतसे ही गौरीनदी निकली है। इस प्रान्तीय प्रदेशको ही टलेमिने 'गोरिया' बताया है।

उक्त प्रवाद प्रकृत होनेसे मानना पड़ेगा—वह राजकुमार पञ्जाब और काबुलके उत्तरस्थ कम्बोज नामक प्राचीन जनपदसे इस देशमें आये थे। वास्तविक कम्बोजके वर्तमान कम्बोजोंके साथ काश्मीरियों और कम्बोजोंका बहुत कुछ सौसादृश्य लक्षित होता है। फिर यहांके प्राचीन देवमन्दिरादिके निर्माणकी प्रणाली भी काश्मीरके मन्दिरोंसे मिलती है। सुतरां स्वीकार करना पड़ा—इस कम्बोज राज्यका नाम भारतीय शास्त्रोक्त सिन्धु नदके उत्तर अवस्थित 'कम्बोज'से हुआ है।

समझ न पाये—किस समय इस देशमें वह राजकुमार आये थे। किसी किसीके अनुमानसे काश्मीरराज तुञ्जिनके राजत्वकाल (२१८ ई०) भारतके पश्चिम प्रदेशमें नानारूप उलटपलट पड़ी। सम्भवतः उसी समय इस देशमें भारतीय उपनिवेश स्थापित हुआ होगा। किन्तु निश्चय कह नहीं सकते—यह विषय कहांतक सत्य है।

स्थानीय शिलालेखमें 'किरात' जातिका नाम मिलता है। सम्भवतः वही इस देशके आदिम अधिवासी हैं। विष्णु, कूर्म, वामन, गरुड़, ब्रह्माण्ड प्रभृति पुराणोंके अनुसार भी भारतवर्षके पूर्वसीमान्तवासी किरात कहाते हैं।

कम्बोज और आनाम (चमम्) देश ब्रह्माण्ड-पुराणोक्त अङ्गद्वीप ही समझ पड़ता है। उक्त द्वीपके विवरणमें लिखा है,—

"अङ्गद्वीपं निबोधध्वं नानाद्रुमलताकुलम्।
नानाम्लेच्छगणाकीर्णं महीदं बहुविस्तरम्॥
हेमविद्रुमरत्नाढ्यं रत्नाकारं स्थितौ।
नदीनिर्झरचित्रं सरितिश्च स्वच्छाम्भसा॥
तत्र चन्द्रगिरिर्नामदेवनिर्झरकन्दरः।
तत्र सानुदरी चारु नानासत्त्वसमाकुला॥
तस्यैव नातिदूरस्थ मेकदेशो महागिरिः।
आदिमा नामनिम्नगा नाम्नी नदनदीपतिः॥"

(ब्रह्माण्ड ५० अ०)

युरोपीय ऐतिहासिकोंने कहा—७४६ ई०को चीनपति: सिङ्ग होयाङ्गतीने टङ्किनमें 'अनाम' नामक एक सामरिक जिला संस्थापन किया था। उसीके अनुसार समस्त देशका नाम अनम् या आनाम हुआ। किन्तु हमारी विवेचनामें 'चमम्' 'अङ्गम्' शब्दका अपभ्रंश है। भारतवर्षमें जैसे अङ्ग-राज्यकी राजधानी चम्पा कहाती, वैसे ही चमम् देशकी राजधानी भी चम्पा नामसे पुकारी जाती है। इसलिये पूर्वकाल (शिलालेखके अनुसार) उक्त चमम् देशको चम्पा-राज्य भी कह देते थे। वर्तमान कम्बोजके जिस स्थानसे सर्वप्राचीन संस्कृत शिलालेख निकला, उसका नाम 'अङ्ग-चमनिक' खुला है। यह नाम भी 'अङ्ग-चम्पिक' या 'अङ्गचम्पा' शब्दका अपभ्रंश समझ पड़ता है। इन कई प्रमाणोंसे उक्त स्थानको एक स्वतन्त्र अङ्गदेश या अङ्गद्वीप मान सकते हैं। कम्बोज और चमम्का मध्यवर्ती पर्वत ही सम्भवतः ब्रह्माण्ड-पुराणोक्त चन्द्रगिरि है। चम्पा शब्दमें चम्पाका विवरण देखो।

इतिहास—कम्बोजके भारतीय राजाओंका इतिहास अन्धकाराच्छन्न है। आज भी समस्त शिलालेख अथवा स्थानीय प्राचीन पुस्तकादि संगृहीत नहीं हुये, जिनके द्वारा घोर अन्धकारसे ऐतिहासिक सत्य निकाला जा सके।

अधुनातन कम्बोजसे मिलनेवाले सर्वप्राचीन शिलालेखका समय ५२१ शक है। किन्तु उसमें किसी राजाका नाम नहीं। शिलालेखोंसे जिन राजाओंके नाम निकले, उनमें 'भववर्मा' नृपति ही सर्वप्रथम ठहरे हैं। भववर्माके पीछे शिलालेखोंमें निम्नलिखित राजाओंके नाम मिलते हैं,—

राजाका नाम	समय
भववर्मा	५४८ शक
महेन्द्रवर्मा, ईशानवर्मा ...	
जयवर्मा	५८६-५८८ ,,
भववर्मा	५८८ ,,
पृथिवीवर्मा	
इन्द्रवर्मा (पृथिवीवर्माके पुत्र)	७९९ शक
यशोवर्मा (इन्द्रवर्माके पुत्र)	८११ ,,
हर्षवर्मा (यशोवर्माके ज्येष्ठपुत्र)	—
ईशानवर्मा २य (यशोवर्माके २य पुत्र)	८४२ ,,

जिलोंकी अपेक्षा इस जिलेमें कुछ अधिक है। धातुमें नमक और नौसादर होता है। कैथल तहसीलमें नौसादर बनाया जाता है। करनाल शिकारके लिये प्रसिद्ध है। हरिण, नीलगाय और दूसरे मृग बहुतायतसे मिलते हैं। नहरोंके निकट अनेक प्रकारके पक्षी विद्यमान हैं। यमुना, दलदल और धामके तालाबमें मछलियां भरी पड़ी हैं।

इतिहास—करनाल नगरको कर्णने बसाया था। कुरुक्षेत्रका अधिक अंश इसी जिलेमें आ गया है। पानीपतके मैदानमें तीन बार घोर युद्ध हुआ। १५२६ ई०को बाबरने इब्राहीम लोदीको हराया था। फिर १५५६ ई०में अकबरने शेरशाहको यहांसे मार भगाया। १७६१ ई०को ७वीं जनवरीको अहमदशाह दुर्रानीने मराठोंको नीचा देखा दिल्लीका सिंहासन पाया। १७३९ ई०में नादिरशाहने मुहम्मदशाहकी फौजको परास्त किया था। १७६७ ई०को सिख देसासिंहने कैथलका किला लूट लिया। फिर भींदके राजाने करनालका निकटस्थ देश अधिकार किया था, किन्तु मराठोंने १७८५ ई०में उनसे छीन जार्ज टोमसको दे दिया। राजा गुरदित्त सिंहने टोमसको हटा यहां अधिकार जमाया और १८०५ ई०तक अपना राज्य चलाया। अन्तको अंगरेजोंने उसे उससे छीन अपने राज्यमें मिला लिया। १८४३ ई०को कैथल अंगरेजोंके हाथ लगा था। १८५० को थानेश्वर जिलोंसे छूटा। यमुनाके उस किनारे रेलवे लगी है। करनालमें कृषिकार्य और व्यवसायकी कोई कमी नहीं। यहां गेहूं बहुत होता है। खरीफमें चावल, रुई, ऊख, ज्वार और दाल भी देते हैं। खेत खूब सींचे जाते हैं। खाद डालनेकी चाल भी चल पड़ी है।

अम्बाला, दिल्ली और हिसारको करनालसे अनाज तथा कच्चा माल भेजा जाता है। आमदनी कुछकी अच्छी है। बाहरसे विलायती कपड़ा, नमक, ऊन और तेलहन आता है। रुई कपड़ा बुननेमें लगती है। कैथल और गूलकी मट्टीसे हजारों रुपयेका नौसादर तैयार होता है। करनालमें कम्बल, जूते तथा शीशेके लकपदार बरतन और पानीपतमें अमड़ेके कुप्पे बनते हैं। ग्राण्डट्रङ्क रोड करनालके बीच दिल्लीसे अम्बाले तक लगी है। नदी और नहरमें नाव चलती है।

करनालमें डिपटी कमिश्नर, असिष्टण्ट-कमिश्नर और तहसीलदार प्रबन्धकर्ता हैं। पुलिसके १७ थाने बने हैं। करनालमें एक जेल है। यहां पशुओंकी चोरी अधिक होती है। सांसिये, मलूचे और नागू चोर समझे जाते हैं। करनालमें शिक्षा बढ़ रही है। पानीपतमें अरबीका बड़ा मदरसा है। लोग हिन्दी बोला करते हैं।

प्रायः करनालमें २८ इंच वृष्टि होती है। किन्तु कहीं कहीं १८ इंचसे भी कम पानी पड़ता है। नहर किनारे ज्वर, संग्रहणी और उदरव्याधिका प्रावल्य रहता है। समय समय पर शीतला और विसूचिका भी फूट पड़ती है। इस जिलेमें ६ दातव्य औषधालय प्रतिष्ठित हैं।

२ करनाल जिलेकी तहसील। क्षेत्रफल ८१२ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः २ लाखसे अधिक लगती है। ७ फौजदारी और ६ दीवानी अदालतें हैं।

३ करनाल जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २९° ४२' १०" उ० और देशा० ७७° १' ४५" पू०पर अवस्थित है। करनाल अत्यन्त प्राचीन नगर है। स्थानीय दुर्गमें बहुत दिन तक अंगरेजोंकी छावनी रही। सन् १८४१ ई०को फिर अंगरेजोंने यह दुर्ग छोड़ दिया था। १८८० ई०को काबुलके अमीर दोस्त मुहम्मद यहां कुछ महीनेतक बन्दी रहे।

करनाल उच्चभूमि पर बसा है। नीचे यमुनाकी नहर बहती है। नगरको चारो ओर १२ फीट ऊंचा प्राचीर खड़ा है। लोकसंख्या प्रायः २५ हजार है। नहर और दलदलके कारण ज्वरका प्रकोप रहनेसे बस्ती कुछ उजड़ गयी है। सड़कें पक्की होते भी तङ्ग हैं।

करनाल—बम्बई प्रान्तके थाना जिलेका एक दुर्ग तथा पर्वत। यह अक्षा० १८° ५३' उ० और देशा० ७३° १०' पू०पर पनवलसे कुछ मील पश्चिम अवस्थित है। इसमें एक बुर्ज और एक निम्न दुर्ग विद्यमान है। बुर्ज दुर्गपर १२५ फीटका एक स्तम्भाकार बना

राजाका नाम	समय
जयवर्मा (इन्द्रवर्माके २य पुत्र)	८५० शक
हर्षवर्मा २य, (जयवर्माके कनिष्ठ भ्राता)	८६४ ,,
राजेन्द्रवर्मा (हर्षवर्माके ज्येष्ठभ्राता)	८६६ ,,
जयवर्मा (राजेन्द्रवर्माके पुत्र)	८९० ,,
उदयादित्यवर्मा १म ...	९२३ ,,
जयवीरवर्मा ...	९२४ ,,
सूर्यवर्मा ...	९२९-९५० ,,
उदयादित्यवर्मा २य, ...	९५१ ,,
हर्षवर्मा ३य, (उदयके कनिष्ठभ्राता)	
उदयाकर वर्मा ...	९८८ ,,
जयवर्मा ...	
धरणीधर वर्मा ...	१०२१ ,,
सूर्यवर्मा ...	१०३४ ,,
जयवर्मा (परम वैष्णव) ...	११०८ ,,

उपरोक्त राजाओंमें पृथिवीचन्द्रके पुत्र हर्षवर्माने वशु नामक स्थानपर ८०० शकको पृथिवीचन्द्रेश्वर नामसे एक वृहत् शिवमन्दिर प्रतिष्ठा किया था। उनके मरने पर पुत्र यशोवर्मा भी शिवमन्दिर प्रतिष्ठा कर पिताके अनुवर्ती बने। यशोवर्माके भ्राता जयवर्माके समयमें यहां बौद्धधर्म घुसा था। उससे पहले कम्बोजमें कहीं बौद्ध न रहे। किन्तु प्रचारित होते भी उस समय किसी भारतीय राजाने बौद्धधर्म ग्रहण न किया। जयवर्मा परम वैष्णव रहे। सम्भवतः ११०० शकको उन्होंने स्थानीय अङ्कोरवटका देवमन्दिर प्रतिष्ठा किया। उक्त जयवर्माके पीछे शिलालेखमें किसी दूसरे भारतीय राजाका नाम आजतक नहीं निकला। किन्तु अनुसन्धान हो रहा है। कौन कह सकता—कहांतक फल मिलेगा।

चीनका इतिहास पढ़नेसे समझ पड़ा—ई॰के ६ष्ठ शताब्द कम्बोजराजने चीनराजके निकट अपना दूत भेजा था।

सम्भवतः ई॰के द्वादश शताब्दसे इस राज्यमें बौद्ध-धर्म बढ़ने लगा। कारण उसी समयसे फिर भारतीय राजाओंका नाम सुननेमें न आया। किन्तु कम्बोजके बौद्धोंका इतिहास भी गाढ़ तिमिराच्छन्न है। मालूम पड़ता—श्यामदेशीय बौद्ध राजाओंके प्रबल होनेसे कम्बोज उनके अधीन हुवा।

ई॰के सप्तदश शताब्द फरासीसी वाणिज्यके अभि-प्रायसे कम्बोजमें घुसे थे। १७८७ ई॰को आनामके राजा घियालङ्गने फरासीसके अधिपति षोड़श लुयीसे सन्धि स्थापन की। उसके अनुसार फरासीसी युद्धकाल आनामके राजाको साहाय्य पहुंचाते थे। उन्हींके साहाय्यसे घियालङ्गने उस समय टनकिङ्ग और कम्बोज अधिकार किया। १८२१ ई॰को आनामके राजा मर गये। फिर १८४१ ई॰को उनके पौत्र तियेनको राजा हुवे। उन्होंने कयी फरासीसी और स्पेनी खृष्टान धर्मप्रचारकोंको मार डालनेका आदेश दिया था। उससे समस्त फरासीसी और स्पेनी बिगड़ उठे। १८४७ ई॰को कप्तान रिगल डि गिनोली १७८७ ई॰का सन्धिपत्र निष्पत्ति करनेको ससैन्य भेजे गये। किन्तु आनामके राजाने फरासीसका आदेश सुना न था। फिर फरासीसी सेनापतिने युद्ध घोषणा की। अनेक बार युद्ध चलते भी आनामके राजा फरासीसियोंसे न दबे। किन्तु आनाममें गड़बड़ देख १८५८ ई॰को कम्बोजके ईसाइयोंने मिलजुल विद्रोह लगाया था। नौसेनापति गिनोली उन्हें साहाय्य करनेको सैगन नदीकी राह कम्बोजमें घुस पड़े। फिर फरासीसी भी छोड़ सके थे। उनके पुनः पुनः आक्रमण मारने-पर कम्बोजराज डोल उठे। १८६२ ई॰को २६ वीं मयीको आनामराजने सन्धि करनेको कम्बोजकी राजधानी सैगन नगर दूत भेजा था। १५ वीं जूनको सन्धिपत्र स्वाक्षरित हुवा। फरासीसियोंने अपने युद्धका व्ययादि और पूर्व सन्धिपत्रके अनुसार प्राप्य अर्थ ले लिया। पीछे खृष्टान-धर्मप्रचारकोंको अबाध धर्मप्रचार करनेकी क्षमता मिली।

उस समय कम्बोज आनाम और श्यामके अधीन करद राज्य-भुक्त रहा। एक राजप्रतिनिधि द्वारा यह शासित होता था। फरासीसी कम्बोजराज्यमें पहुंचे और मिकङ्ग नदी तीरवर्ती प्रदेशकी उर्वरता एवं शस्यशालिता देख विमोहित हुये। उन्होंने उक्त स्थान हस्तगत करना चाहा था। अन्यतम नौसेना-

करदीकृत (सं॰ वि॰) अकरदं करदं क्रियते येन, च्वि। कर देनेको बाध्य किया हुवा, जो खिराज अदा करनेको मजबूर बनाया गया हो।

करदोना (हिं॰ पु॰) दोना।

करद्रुम (सं॰ पु॰) किरति विक्षिपति समन्तात् शाखाः कॄ-अच्, करश्चासौ द्रुमश्चेति, नित्यसमा॰। कारस्करवृक्ष, कुचिला।

करद्विष् (सं॰ पु॰) करं द्वेष्टि, कर-द्विष-क्विप्। १ गोत्रभेद। २ वेदशाखाभेद।

करधनी (हिं॰ स्त्री॰) १ किङ्किणी, कमरका एक गहना। यह स्वर्ण वा रौप्यमय होती है। बालकोंकी करधनीमें घुंघरू लगाते हैं। फिर स्त्रियोंके पहननेकी करधनी सादी ही रहती है। २ कटिमें धारण किया जानेवाला एक सूत, कमरमें पहननेका लड़दार सूत। (पु॰) ३ धान्यविशेष, किसी किस्मका धान। इसकी भूसी काली होती है। किन्तु चावल रक्ताभ निकलता है।

करधर (हिं॰ पु॰) १ खाद्यविशेष, मडुवेकी रोटी। इसे मडुवरी भी कहते हैं। २ मेघ, बादल।

करधृत (सं॰ त्रि॰) हस्तद्वारा धारण किया हुवा, जो हाथसे पकड़ लिया गया हो।

करन (हिं॰ पु॰) औषधिविशेष, जरिश्क, एक जड़ी-बूटी। यह खानेमें अम्लमधुर होता है। इसे चटनी आदिमें व्यवहार करते हैं। करनका सेवन करनेसे दस्त साफ़ उतरता है। यह रेचक भी है।

करनधार (हिं॰) कर्णधार देखो।

करनफूल (हिं॰ पु॰) अलङ्कारविशेष, एक गहना। यह स्वर्ण वा रौप्यमय होता है। स्त्रियां इसे कर्णमें धारण करती हैं। करनफूल पुष्पाकार बनता है। इसे पहननेको कानकी लौ छेदायी और बारीक-बारीक सींकोंके कई टुकड़े डाल डाल बढ़ायी जाती है। यह दो प्रकारका होता है—साधारण एवं जड़ाऊ। करनफूलमें स्त्रियां झुमके भी लटका लिया करती हैं।

करनबेध (हिं॰) कर्णवेध देखो।

करना (हिं॰ पु॰) १ वृक्षविशेष, एक पौदा। इसके पत्र केतकको भांति दीर्घ एवं कण्टकरहित रहते हैं। पुष्प श्वेतवर्ण आते हैं। सौरभ किञ्चित् मिष्ट लगता है। इस वृक्षको कार्य और सुदर्शन भी कहते हैं। २ निम्बुक विशेष, एक नीबू। यह बिजौरेकी भांति दीर्घ होता है। अपर नाम पहाड़ी नीबू है। ३ कार्य, काम। (क्रि॰) ४ समाप्तिपर लाना, भुगताना, निपटाना। ५ पकाना, बनाना। ६ भेजना, पहुंचाना। ७ प्रणय लगाना, मुहब्बत बढ़ाना। ८ व्यवसाय चलाना, काम लगाना। ९ सवारी लाना, भाड़ा ठहराना। १० बुझाना, उठाना। ११ रूप बदलना। १२ उठाना। १३ रंगना। १४ मारना। १५ मजा लेना।

यह क्रिया सर्वप्रधान है। इससे सब क्रियावोंका अर्थ निकल सकता है। फिर किसी संज्ञाके पीछे लगा देनेसे यह उस संज्ञाके अर्थकी क्रिया बना देती है।

करनाई (हिं॰ स्त्री॰) करनाय, तुरही।

करनाटक (हिं॰) कर्णाटक देखो।

करनाटकी (हिं॰ पु॰) १ कर्णाटक, करनाटकका बाशिन्दा। २ नट, कला खेलनेवाला। ३ बाजीगर, इन्द्रजाल देखानेवाला।

करनाल (हिं॰ पु॰) १ करनाय, नरसिंहा। २ बड़ा ढोल। यह गाड़ीपर लद कर चलता है। ३ किसी किस्मकी तोप।

करनाल—१ पञ्जाबप्रान्तका एक ज़िला। यह अक्षा॰ २८° ८´ एवं ३०° ११´ उ॰ और देशा॰ ७६° १२´ तथा ७७° १५´ ३०´´ पू॰के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर अम्बाला ज़िला तथा पटियाला राज्य, पश्चिम पटियाला एवं झींद, दक्षिण दिल्ली तथा रोहतक ज़िला और पूर्व यमुना नदी पड़ती है। करनाल ज़िलेमें तीन तहसीलें हैं—पानीपत, करनाल और कैथल। भूमिका परिमाण २३८६ वर्गमील माना है। लोकसंख्या प्रायः सवा छह लाख है। भूमि दो प्रकारकी है—बांगर और खादर। ऊंचे मैदानको 'बांगर' और नीची जगहको 'खादर' कहते हैं। यमुना, घाघरा, सरस्वती, बड़ा नदी, चौतङ्ग और मार्या नदी प्रधान नदी हैं। खेत सींचनेको कयी नहरें भी निकली हैं। झील और दलदल बहुत देख पड़ते हैं। पञ्जाबके दूसरे

नायक प्राण्डेयार तत्रत्य राजप्रतिनिधिके निकट भेजे गये। राजप्रतिनिधिने फरासीसियोंका मनोभाव समझ श्यामराजका मतामत लेनेको समय मांगा था। किन्तु फरासीसी दूतने उनको बात न सुनी। फिर उस समय कम्बोजके राजप्रतिनिधिको फरासीसियोंके विपक्ष स्वीय मतप्रकाश करनेको क्षमता कहां थी। सुतरां बाध्य हो उन्हें सन्धि करना पड़ी। इस सन्धिके अनुसार उभय पक्षको वाणिज्य चलानेकी पूर्ण क्षमता मिली थी। कम्बोजमें फरासीसी मालका जो महसूल देना पड़ता, वह छूट गया और कम्बोजके उत्पन्न द्रव्यादि पर जो कर लगता, वह भी न रहा। फरासीसियोंको कम्बोजके नाना स्थानोंमें अपना एक एक प्रतिनिधि (रसीडण्ट) रखनेका आदेश मिला था। फिर उन्होंने उदङ्ग नामक नगरमें अपनी आवश्यकताके अनुसार मकान्, कारखाना और गुदाम बनानेको भूमि पायी। उसी सन्धिपत्रमें यह भी ठहर गया था—फरासीसियोंकी अनुमतिके व्यतीत दूसरा कोई वैदेशिक प्रतिनिधि उदङ्ग नगरमें रह न सकेगा।

पहले कम्बोजपति एक सामान्य राजप्रतिनिधि ही रहे, पीछे फरासीसियोंके साहाय्यसे राजाका उपाधि पा गये; किन्तु पूर्वकालके अनुसार श्यामराजको कर देते रहे।

१८६५ ई०को मिकाङ्ग और वैका नदीकी मध्यवर्ती जलप्राय भूमिके देशीय दल बांध राजविद्रोही बने थे। फिर वह फरासीसियोंपर अत्याचार चलाने और उनके वाणिज्यके द्रव्यादिको लूट मचाने लगे। उसी समय कम्बोजके किसी सामन्तने विद्रोहियोंसे मिल कम्बोजराज नरोदनके विरुद्ध अस्त्रधारण किया था। उधर फरासीसियोंने भी कम्बोजराजसे मिल विद्रोहियोंके दबानेको यथासाध्य चेष्टा लगायी। किन्तु सहजमें किसीने सफलता पायी न थी। उक्त युद्धमें दो तीन फरासीसी सेनापति मर गये।

१८६६ ई०को १६वीं अगस्तको विद्रोही सामन्तने अपने दलबलके साथ प्रबल वेगसे राजधानी पर आक्रमण मारा था। उस समय राजपरिवार पर दारुण विपद् पड़ी। फरासीसियोंकी प्रायः दो सौ रणतरी उदङ्ग नगरमें ठहर शत्रुओंको यथासाध्य रोक रही थीं। किन्तु १७वीं दिसम्बर आ पहुंची। वह कम्बोजके इतिहासका एक भयङ्कर दिन था। राजविद्रोही कम्बोजवासी अपनी जातीयता बचानेको अकुतोभयसे जी छोड़ फरासीसी और कम्बोजराजकी सेनासे लड़ने लगे। शत सहस्र कम्बोज जन्मभूमिके नामपर रणमें मारे गये। फिर उक्त युद्धमें फरासीसी और कम्बोजराजकी सेनाके भी अनेक प्रधान प्रधान सैनिक पुरुषोंने प्राणत्याग किया था। अन्तको बहु यत्न, अनेक कष्ट और विस्तर सैन्यक्षयके पीछे विद्रोहियोंके कराल ग्राससे कम्बोजकी राजधानी उदङ्ग नगर रक्षित हुआ।

इस बार कम्बोजपति फरासीसियोंके साहाय्यसे स्वाधीन राजा बने थे। कम्बोजराज नरोदनने अपने नामसे राजधानी स्थापन की। फरासीसियोंको भी मिकाङ्गनदीके कूलपर उपनिवेश डालनेकी क्षमता मिली।

आजकल कम्बोजका प्रधान नगर संगम और सिङ्के बन्दर है।

भारतीय कीर्ति—प्रथम ही लिख चुके—कम्बोजराज्यमें प्राचीन भारतीय राजाओंने कीर्तिस्तम्भ स्थापन किये थे। बहु वर्ष व्यतीत होते भी उनका चिह्न आजतक बना है। कम्बोजके गहन वन और मालयके अगम्य स्थानमें उस असाधारण कीर्तिका राशि परिलक्षित होता है। उत्साही फरासीसी प्रत्नतत्त्वविदोंके यत्नसे वही पुराकीर्तिसमूह जगत्के समक्ष खुल गया है। जितना सङ्कलित हो सका, नीचे उसका संक्षिप्त विवरण दिया है—

कम्बोजके नाना स्थानोंमें अनेक पुराकीर्ति आविष्कृत हुयी हैं। वह स्थानभेदसे तीन भागमें विभक्त हैं। १म अङ्कोरवट, २य मकु एवं सोलि और ३य कम्बोजका दक्षिण तथा मध्यम अंश है।

अङ्कोरवट—श्यामवासियोंके निकट 'नगरवट' अर्थात् नगर-मन्दिर नामसे परिचित है। यह महामन्दिर अङ्कोट नगरसे प्रायः दो कोस दक्षिण पड़ता है।

ज़िलोंकी अपेक्षा इस ज़िलेमें कुछ अधिक है। धातुमें नमक और नौसादर होता है। कैथल तहसीलमें नौसादर बनाया जाता है। करनाल शिकारके लिये प्रसिद्ध है। हरिण, नीलगाय और दूसरे मृग बहुतायतसे मिलते हैं। नहरोंके निकट अनेक प्रकारके पक्षी विद्यमान हैं। यमुना, दलदल और ग्रामके तालाबमें मछलियां भरी पड़ी हैं।

इतिहास—करनाल नगरको कर्णने बसाया था। कुरु क्षेत्रका अधिक अंश इसी ज़िलेमें आ गया है। पानीपतके मैदानमें तीन बार घोर युद्ध हुआ। १५२६ ई०को बाबरने इब्राहीम लोदीको हराया था। फिर १५५६ ई०में अकबरने शेरशाहको यहांसे मार भगाया। १७६१ ई०को ७वीं जनवरीको अहमदशाह दुर्रानीने मराठोंको नीचा देखा दिल्लीका सिंहासन पाया। १७३९ ई०में नादिरशाहने मुहम्मदशाहकी फ़ौजको परास्त किया था। १७६७ ई०को सिख देसूसिंहने कैथलका क़िला लूट लिया। फिर झींदके राजाने करनालका निकटस्थ देश अधिकार किया था। किन्तु मराठोंने १७९५ ई०में उनसे छीन, जार्ज टोमसको दे दिया। राजा गुरदित्त सिंहने टोमसको हटा यहां अधिकार जमाया और १८०५ ई०तक अपना राज्य बसाया। अन्तको अंगरेजोंने उसे उससे छीन अपने राज्यमें मिला लिया। १८४३ ई०को कैथल अंगरेजोंके हाथ लगा था। १८५० को थानेश्वर सिखोंसे छूटा। यमुनाके उस किनारे रेलवे लगी है। करनालमें कृषिकार्य और व्यवसायकी कोयी कमी नहीं। यहां गेहूं बहुत होता है। ख़रीफ़में चावल, रुयी, ऊख, ज्वार और दाल बो देते हैं। खेत खूब सींचे जाते हैं। खाद डालनेकी चाल भी चल पड़ी है।

अम्बाला, दिल्ली और हिसारको करनालसे अनाज तथा कच्चा माल भेजा जाता है। ग्रामसे गुड़की अच्छी है। बाहरसे विलायती कपड़ा, नमक, लोहा और तेलहन आता है। रुयी कपड़ा बुननेमें लगती है। हिसार और गूलकी मट्टीसे हजारों रुपयेका नौसादर तैयार होता है। करनालमें कम्बल, जूते तथा शौकीन कलमदार, बरतन और पानीपतमें चमड़ेके कुप्पे बनते हैं। ग्राण्डट्रङ्क रोड करनालके बीच दिल्लीसे अम्बाले तक लगी है। नदी और नहरमें नाव चलती है।

करनालमें डिपटी कमिशनर, असिस्टण्ट-कमिशनर और तहसीलदार प्रबन्धकर्ता हैं। पुलिसके १७ थाने बने हैं। करनालमें एक जेल है। यहां पशुओंकी चोरी अधिक होती है। सांसिये, बलूची और नागू चोर समझे जाते हैं। करनालमें शिक्षा बढ़ रही है। पानीपतमें अरबीका बड़ा मदरसा है। लोग हिन्दी बोला करते हैं।

प्रायः करनालमें २८ इञ्च वृष्टि होती है। किन्तु कहीं कहीं १८ इञ्चसे भी कम पानी पड़ता है। नहर किनारे ज्वर, संग्रहणी और उदरव्याधिका प्रावल्य रहता है। समय समय पर शीतला और विसूचिका भी फूट पड़ती है। इस ज़िलेमें ६ दातव्य औषधालय प्रतिष्ठित हैं।

२ करनाल ज़िलेकी तहसील। क्षेत्रफल ८१६ वर्गमील है। लोकसंख्या सवा दो लाखसे अधिक लगती है। ७ फौजदारी और ६ दीवानी अदालतें हैं।

३ करनाल ज़िलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २९° ४२' १०" उ० और देशा० ७७° १' ४५" पू०पर अवस्थित है। करनाल अत्यन्त प्राचीन नगर है। स्थानीय दुर्गमें बहुत दिन तक अंगरेज़ोंकी छावनी रही। सन् १८४१ ई०को फिर अंगरेज़ोंने यह दुर्ग छोड़ दिया था। १८४० ई०को काबुलके अमीर दोस्त मुहम्मद यहां कुछ कालतक बन्दी रहे।

करनाल उच्चभूमि पर बसा है। नीचे यमुनाकी नहर बहती है। नगरकी चारो ओर १२ फीट ऊंचा प्राचीर खड़ा है। लोकसंख्या प्रायः २५ हजार है। नहर और दलदलके कारण ज्वरका प्रकोप रहनेसे बस्ती कुछ उजड़ गयी है। सड़कें पक्की होते भी तङ्ग हैं।

करनाल—बम्बई प्रान्तके थाना ज़िलेका एक दुर्ग तथा पर्वत। यह अक्षा० १८° ५१' उ० और देशा० ७३° १०' पू०पर वेतवती नदीसे कुछ मील पश्चिम अवस्थित है। इसमें एक उच्च और एक निम्न दुर्ग विद्यमान है। उच्च दुर्गपर १६२५ फीटका एक भूमार्ग बना

इसका ऐसा वृहत् मन्दिर अति अल्प ही देख पड़ता है। मन्दिरका आयतन कोयी आध कोस होगा। इसका परिवेष्टक प्राचीर १०८०×११०० फोट पड़ता, जो चारो ओर २३० फ़ीट विस्तृत खात द्वारा घिरता है। खातके ऊपर मन्दिर जानेके लिये सुदृढ़ सुरम्य स्तम्भ परिशोभित सेतु बंधा है। सेतुके आगे गोपुर है। उसके मध्यसे मन्दिरके वहिर्प्राङ्गणको जाना पड़ता है।

नैऋतकोणसे मन्दिरमें घुसनेपर वाम दिक् अपूर्व दृश्य नयनगोचर होता है। यहां भीष्मको शरशय्या बनी है। मध्यस्थलमें कुरुपितामह भीष्म शरशय्यापर शायित हैं। उनको दोनों ओर मुकुट एवं किरीट शोभित कुरु तथा पाण्डवपक्षीय वीर खड़े और गज एवं रथपर तेजःपुञ्ज महारथी चढ़े हैं। पितामह भीष्मसे अनतिदूर गजके ऊपर राजा दुर्योधन म्लान-वदन अपेक्षा कर रहे हैं। शत शत वर्ष गत होते भी इन मूर्तियोंमें कोयी वैलक्षण्य नहीं पड़ा। यह प्रस्तर-खोदित सकल मूर्ति दूरसे देखनेपर जीवन्त बोध होती हैं।

मन्दिरके मध्य पश्चिमोत्तर रामायणका दृश्य है। राक्षस और वानर घोरतर युद्ध कर रहे हैं। विकट मूर्तिधारी राक्षसवीर रथपर बैठ बाण बरसाते हैं। मध्यस्थलमें राम हनूमान् पर चढ़ रावणके प्रति बाण निक्षेप करते हैं। उनके दोनों पार्श्व लक्ष्मण और विभीषण दण्डायमान हैं। सिंहयोजित रथपर रावण रामके शरवाहनसे जर्जरित हो बैठा है।

उत्तर-पश्चिम भागमें देवासुरके समरका दृश्य है। विविध मूर्तिधारी मुकुटशोभित देव अश्वयोजित रथपर चढ़ बाण फेंकते हैं। विकट मूर्तिधारी असुर भी जी तोड़ लड़ रहे हैं। यहां की मूर्तियोंमें सूर्य और चन्द्रदेवकी ज्योतिर्मय मूर्ति अति सुन्दर है। देव स्व स्व वाहनपर आरूढ़ हैं।

तदनन्तर—यहां भी देवासुरका युद्ध है। चतुरा-नन, पञ्चानन, षडानन और गरुड़ोपरि शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी विष्णु असुरदलन करते हैं। वह सुख एवं वह हस्तविदिष्ट देव अश्व, गज, सिंह वा मेढ़ेपर चढ़ धनुर्बाण लिये युद्धमें व्याप्त हैं। युद्धस्थलसे अदूर जटाजूटविलम्बित महादेवकी मूर्ति है। सिद्धर्षि योगी पुष्पकरसे उनकी अर्चना कर रहे हैं।

उत्तरभागसे ईषत् पूर्व दूसरा मण्ड है। यहांका शिल्पनैपुण्य और स्थापत्य कार्यादि अभीतक शेष नहीं हुआ। सकल ही मानो असम्पूर्ण पड़ा है। यहां भी पौराणिक दृश्य है। विष्णु गरुड़ोपरि आरोहण कर किसी गजारोही असुरको मार रहे हैं। दूसरी भी अनेक देवासुरमूर्ति असम्पूर्ण अवस्थामें पड़ी हैं।

पूर्वदक्षिण भागमें समुद्रके मन्थनका दृश्य है। क्या शिल्पकार्य, क्या चित्रकार्य, क्या स्थापत्यविद्या—सर्व विषयमें इस मण्डने पराकाष्ठा पायी है। बोध होता— समुद्रके मन्थनका ऐसा जीवन्त दृश्य दूसरे स्थानपर कहीं नहीं। मध्यस्थलमें कूर्मके ऊपर मन्दराचल स्थापित है। उसके ऊपर विष्णु बैठे हैं। मन्दर वासुकी द्वारा वेष्टित है। नागराजके मुखकी ओर प्रायः एक शत विकटाकार दैत्य और पुच्छभागमें एक शत देवमूर्ति हैं। दैत्य खर्व, बलिष्ठ, शिरस्त्राण एवं कवचावृत, कर्णोंमें कुण्डल पहने और लम्बी दाढ़ी रखे हैं। देवोंके मस्तकपर मुकुट, कण्ठमें हार, हस्तमें वलय, दो-दो अङ्गद और यज्ञसूत्र शोभित हैं। यह दोनों ही मूर्ति एक भावसे खड़ी हैं।

जहां समुद्र मथा जाता, उसकी उपरिभागका दृश्य अति चमत्कार देखाता है। मानो शत शत स्वर्ग-विद्याधरी और अप्सरा आकाशके पथमें नृत्य करती हैं। फिर अधोभागमें सागरका दृश्य है। नाना प्रकार सामुद्रिक जीवजन्तु मत्स्यादि इस कल्पित समुद्रमें खेलते फिरते हैं। स्वच्छ सलिलमें धीरे धीरे स्रोत चल रहा है।

दक्षिणपूर्व भागमें दूसरा मण्ड है। यहां यमा-लयका दृश्य विद्यमान है। पापका निग्रह और पुण्यका पुरस्कार देख पड़ता है। स्वर्ग एवं नरक और सुख तथा दुःखका दृश्य प्रदर्शित हुआ है। नरक यन्त्रणाकी ३४ मूर्तियां खोदी गयी हैं। प्रत्येक मूर्तिके नीचे खोदित लिपिमें लिखते—इस प्रकार पाप कमानेपर मनुष्य ऐसे ही नरकभोग करते हैं।

है। लोग उसे पाण्डुका पट्ट कहते और चढ़नेसे दूर रहते हैं। उत्तर कोङ्कण पर आक्रमण करनेको पहले यहां मुसलमानोंकी सेना सन्निवेशित थी। १५४० ई०को अहमदनगरके सिपाहियोंने इसे अधिकार किया। फिर पोर्तगीजोंने करमाल लिया, किन्तु कई हजार रुपया पानेपर छोड़ दिया। १६७० ई०को शिवाजीने मुगलोंको निकाल इसे छीना था। शिवाजीके मरनेपर औरंगजेबके सेनापतियोंने इसे फिर ले १७३५ ई०तक अपने अधिकारमें रखा। अन्तको १८१८ ई०को यह अंगरेजोंके हाथ आया।

कारनिहित (सं० त्रि०) हाथमें रखा हुआ।

करनी (हिं० स्त्री०) १ कर्म, करतूत। २ अन्त्येष्टि-क्रिया, मरनेपर किया जानेवाला कामकाज। ३ कन्नी, एक औजार। यह लोहेकी होती है। राजमिस्त्री इससे मकान बनानेमें ईंटपर गारा लगा दूसरी ईंट रखते हैं।

कारनूल—मन्द्राज प्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० १४° ५४´ एवं १६° १४´ उ० और देशा० ७७° ४६´ तथा ७९° १५´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर तुङ्गभद्रा तथा कृष्णानदी, दक्षिण कड़प्पा एवं बल्लारी जिला, पूर्व नेल्लूर तथा कृष्णा और पश्चिम बल्लारी जिला है। क्षेत्रफल ७७८८ वर्गमील निकलता है। लोकसंख्या ७ लाखसे ऊपर है। बङ्गनपल्लीका क्षुद्रराज्य इसी जिलेमें पड़ता है।

कारनूलके केन्द्रस्थलसे नल्लमलय और येल्लमलय दो पर्वतमाला दक्षिण तथा उत्तर समानान्तर गयी हैं। नल्लमलय प्रायः ७० मील लम्बी और कहीं कहीं २५ मीलतक चौड़ा है। बिरमकोंड, गुन्दलब्रह्मेश्वरम् और दुर्गपूकोंड ३००० फोटसे ऊंची चोटियां हैं। इस पर्वतकी पांच अधित्यकामें गुन्दलब्रह्मेश्वरम्‌की उपत्यका प्रधान है। ऊपर चढ़नेको दो पगडण्डियां लगी हैं। पूर्वीय विभाग कम्बममें पर्वत अधिक है। इस अधित्यकाकी पूर्वसीमापर वेलीकोंड पर्वतमाला खड़ी है। नल्लमलयके समानान्तर अनेक क्षुद्र पर्वतमाला हैं। देशीय नृपतियोंने घाटियोंमें दाम बांध भूमि सींचनेको सरोवर बनाये थे। कुन्दलकम्म नदीके दाममें सुप्रसिद्ध कम्बम सरोवर भरा है। यह प्रायः १५ वर्गमील परिमित है। १०००० एकर भूमि इससे सींची जाती है। दक्षिण विभागमें सगिलेरु और उत्तर विभागमें गुन्दलकम्म नदी बहती है।

कर्नूम अधित्यकासे नन्दीकनम् तथा मन्तराल सङ्कटमार्ग द्वारा मध्य विभागमें पहुंचते हैं। यह अधित्यका अतिशय प्रशस्त और समान है। काली मट्टीमें रूयी बहुत होती है। उत्तरको भवनाशी और दक्षिणको कुन्देरु नदी प्रवाहित है। ग्रीष्म ऋतुमें यह प्रान्त शुष्क पड़ जाता है। किन्तु पर्वतके पार्श्व पर हरेभरे जङ्गल तथा बाग मिलते और नाले एवं झरने चलते हैं। ठीक इसी अधित्यकाके नीचे मन्द्राज-इरिगेशन-कम्पनीकी नहर लगी है। कुछ दिन हुये, पर्वतके पार्श्वाङ्गमें भूतत्त्वज्ञोंने पत्थरके यन्त्र पाये थे। कहते—उन यन्त्रोंसे वह लोग कार्य करते, जो अधित्यकाओंके पानीमें डूबते भी विद्यमान रहे।

पश्चिम विभाग दूसरे विभागोंसे विभिन्न देख पड़ता है। इसके पर्वत छत्रराक्षित हैं। दक्षिणसे उत्तरको हिन्द्री नदी बहती और कारनूलके निकट तुङ्गभद्रामें गिरती है। १८६० ई०को सङ्केसलमें तुङ्गभद्राका बांध भूमि सींचने और नाव खेनेके लिये नहर निकालनेको पड़ा था। बाढ़ टूटनेपर रेतमें बढ़िया तरबूज होता है। सङ्गमेश्वरम्‌में कृष्णा और भवनाशी दोनो मिल गयी हैं। इसी सङ्गमके नीचे चक्रतीर्थम् विद्यमान है।

कुन्देरु अधित्यकामें चूर्णखण्डकी शिला भरी है। यह मकान् बनानेका अच्छा मसाला है। कारनूलका चूर्णखण्ड (Lithograph) लिथोमें लगता है। इस जिलेमें हीरक, लौह, सिन्दूर और ताम्रकी खनि विद्यमान है। नल्लमलय और येल्लमलयसे अनेक उष्णप्रपात भी निकलते हैं।

नल्लमलयका प्रायः २००० वर्गमील परिमित वन सुप्रसिद्ध है। इसमें हजारों रुपयेकी बढ़िया लकड़ी होती है। पश्चिमके वन सघन और पूर्वके वन विरल हैं। उत्तरके जङ्गलोंमें गोचर-भूमि बहुत है। एरमलयके पर्वत छत्ररहित हैं किन्तु अवसर्पिणी

उक्त मञ्चको छोड़ थोड़ी दूर पश्चिम चलनेपर दूसरा सुदृश्य मञ्च मिलता है। यहां काम्बोजके राजाओं और उनके परिवारवालोंकी मूर्ति खुदी हैं। इस कारुकार्यका पारिपाट्य देख चमत्कृत होना पड़ता है। ऐसा भडकीला दृश्य काम्बोजमें दूसरे स्थानपर कहां देख सकते हैं। कहीं पीनोन्नत-पयोधरा सुचारुहासिनी राजमहिला विविध अलङ्कारसे विभूषित हो एक रथपर बैठी समारोहके साथ वीचमें चली जा रही हैं। ऊपर चित्रविचित्र चन्द्रातप दोदुल्यमान है। फिर उन्हींके पश्चात् दिव्यरूपधारिणी मनोमोहिनी राजकन्या नरचालित रथपर चढ़ मानो किसी स्थानको गमन करती हैं। उनके साथ सखी पुष्पचयनकर उपहार देती हैं। दास और दासी दोनों निकटवर्ती फलशाली वृक्षसे फल लाकर छोटे छोटे बच्चोंको बांटते हैं। राजकन्याओंके पार्श्वपर सहचरियोंमें कोयी चामर डोलाती, कोई मस्तकपर छाता लगाती और कोयी सुस्वादु फल लिये अपनी स्वामिनीको देखाती है। उसीसे अदूर निर्जन उपवनका दृश्य है। गिरिमालाके मध्य तरुराजी खड़ी है। तरुके तलपर मृगका शिशु खेल रहा है। फिर तरुकी शाखापर नानाविध पक्षी बैठे हैं।

मञ्चके उपरिभागमें कवचावृत राजपुरुष, नर्तक और धानुष्क दण्डायमान है। इनकी वेशभूषा भी राजसभाके लिये उपयोगी है। सम्मुख ही राजसभा है। कुण्डलधारी जटाजूट-विलम्बित ब्राह्मण गम्भीर भावसे समासीन हैं। राजा और राजकुमार पदोचित वेशभूषा बना यथायोग्य आसनपर उपविष्ट हैं। अस्त्रधारी योद्धा राजसभाको उज्ज्वल कर रहे हैं। उक्त दृश्य देखनेसे धारणा पड़ती—प्राचीन भारतीय राजसभा किस भावसे लगती थी। परम वैष्णव जयवर्मा अङ्कोरवटको उक्त महाकीर्ति स्थापन कर गये हैं।

अङ्कोरवट नामक मन्दिरसे दक्षिणपूर्व साढ़े पांच कोस दूर दूसरे भी तीन पवित्र स्थान विद्यमान हैं। उनके नाम बकङ्ग, बकु और लोलि हैं।

बकङ्गका मन्दिर अति प्राचीन है। वह देखनेमें त्रिकोणाकार और छह तलमें विभक्त है। प्रत्येक तलमें निर्गम विद्यमान है। ऊपर ही ऊपर स्थापित हो अन्तको १८ हाथ ऊंचे त्रिभुजने मन्दिररूप धारण किया है। प्रत्येक मध्यस्थलमें सिंही है। उसमें जो सिंहमूर्ति खोदित रही, वह आजकल प्रायः देख नहीं पड़ती। निर्गमके प्रत्येक कोणमें गजमूर्ति विद्यमान है। मन्दिरकी चारो ओर इष्टकनिर्मित क्षुद्र क्षुद्र आठ मन्दिर हैं। स्थानीय लोगोंके कथनानुसार वहांतक प्रधान मन्दिरकी सीमा चली गयी है। आठो मन्दिरके तोरण-प्राचीरमें संस्कृत भाषासे ८१० पङ्क्ति लिपि खुदी हैं। इससे मन्दिरके निर्माताका कुछ परिचय मिलता है। काम्बोजके राजा इन्द्रवर्माने हरगौरीपूजाके लिये उक्त मन्दिर बनवाया था।

बकु नामक स्थानमें पास ही पास छह शिवमन्दिर बने हैं। प्रत्येक प्रवेशद्वारके प्राचीरपर बकङ्गके मन्दिरकी भांति संस्कृत भाषामें लिपि खोदित है। बकङ्गके मन्दिरसे केवल संस्कृत भाषाकी लिपि निकली, किन्तु बकुके मन्दिरमें संस्कृत एवं काम्बोज-प्रचलित ख्मेर भाषाकी लिपि भी मिली है। शिलालेखके अनुसार परमेश्वर और इन्द्रेश्वर नामपर उक्त देवमन्दिर उत्सर्ग किये गये हैं। बकुमें तीन शक्तिमन्दिर हैं। मन्दिरका कारुकार्य अति सुन्दर है।

बकुसे कोई पांच कोस उत्तर चलने पर लोलि नामक स्थान मिलता है। वहां इष्टकनिर्मित चार देवमन्दिर हैं। स्थान स्थानपर भग्न स्तम्भ पड़े हैं। उन्हें देखते ही समझ पड़ता—यहां कोई वृहत् देवालय रहा। आजकल मण्डप और शिखिका सामान्य ध्वंसावशेष मात्र पड़ा है। प्रत्येक मन्दिरमें वामदिक् अनुशासनलिपि खोदित है। उसको पढ़नेसे समझ पाये—काम्बोजराज यशोवर्माने ८१५ शकको शिव एवं भवानीके सेवार्थ उक्त मन्दिर बनवाये थे। वह अपने उत्तराधिकारियोंको देवसेवामें विशेष मनोयोग करनेके लिये पुनः पुनः आदेश दे गये हैं।

ऊपर जिनके संक्षिप्त विवरण दिये, उनको छोड़ दूसरे भी अनेक मन्दिर बने हैं। उनमें वेयोन नगरका ब्रह्ममन्दिर ही सर्वप्रधान है। शिल्पशास्त्रवित्

भूमिपर अनेक प्रकार गुल्म देख पड़ते हैं। वनमें कटु पूंगफल, मधु, मधूच्छिष्ट (मोम), चिंचा (इमली), लाक्षा और वंशतण्डुलको उत्पत्ति अधिक है।

नल्लमलय पर्वतपर व्याघ्र बहुत हैं। किन्तु वह मनुष्यपर प्रायः टूटा करते हैं। चीते, भेड़िये, हायने, लोमड़ियां और गीदड़ दूसरे हिंस्र जीव हैं। भालू कहीं देख नहीं पड़ता। पर्वतपर चितकूट और अनेक प्रकारके हरिण चरते फिरते हैं। उत्तर नल्लमलयमें जङ्गली भैंसा मिलता है। नील और सूअर भी जङ्गलमें बहुत हैं। नानाप्रकार पक्षी उड़ा करते हैं। यहां मछली मारनेका व्यवसाय नहीं चलता। अजगर सांप भरे पड़े हैं। व्याघ्र एवं वृक-चर्म और हरिणशृङ्ग कुछ कुछ बिकता है।

इस जिलेमें ईसायी बहुत रहते हैं। तैलगु भाषा चलती है। किन्तु पत्तोकोंड़ेमें बहुतसे लोग कनारी बोली कहते हैं। नल्लमलय पर वन्यजातिके चेंचु विद्यमान हैं। कृषिकार्य उन्हें अच्छा नहीं लगता। पर्वतमें उत्सवके समय वह यात्रियोंसे कर लिया करते हैं। करनूलके प्रधान नगर यह हैं,—करनूल, नन्दियाल, कम्बम, गुटूर, महोबेरा और येयली।

यहां ज्वार, दाल, रुयी, तेल और नीलकी कृषि अधिक होती है। खेत और धानकी सींच सींच बढ़ाते हैं। गेहूं और चना कहनेको बोया जाता है। तम्बाकू, मिर्च, केले और अखरोटको ग्रामके निकट लगाते हैं। लोगोंका प्रधान खाद्य जुवार है। यह प्रधानतः दो प्रकारकी होती है—पीली और सफेद। पीली जुवार जून मास माघ या काली भूमिमें बो दी जाती है। किन्तु पीली जुवार सितम्बर या अक्टोबर मास खेतमें पड़ती और फरवरी तथा मार्च मास कटती है। नल्लमलयकी कितनी ही कृषिभूमि अब जोती-बोयी न जानेसे वन्य बन गयी है। सङ्केसलसे कड़प्पा तक १९८ मील नहरी नहर लगी है। करनूल जिलेमें इसकी लम्बायी १४० मील है। यह ६० गज चौड़ी और ८ फीट गहरी बहती है।

करनूलमें कपड़े बुननेका काम अधिक होता है। नल्लमलय पर्वतके नीचे लोहा भी मिलता है। यल्लमलयमें हीरा निकालते हैं। पत्थर काटनेमें बहुतसे आदमी लगे रहते हैं। नील और गुड़ भी तैयार होता है। अनेक नगरों और ग्रामोंमें साप्ताहिक हाट लगते हैं। यहांसे अनाज बाहर भेजा नहीं जाता और पूर्वतटसे नमक आता है। किन्तु करनूलमें मट्टीका नमक बहुत बनता है। रुयी, नील, तम्बाकू, चमड़ा और रुयीके कपड़े तथा कालीनका चालान होता है। बाहरसे आनेवाले द्रव्यमें विलायती वस्त्र, सुपारी, नारियल और सूखा मसाला प्रधान है। करनूलमें कोयी ६०० मील सड़क लगी है।

करनूल वरङ्गलके प्राचीन तैलङ्ग राज्यका विभाग है। उक्त राज्यके अधःपतनसे यह सम्भवतः स्वतन्त्र हो गया था। ईश्वर-राव राजा रहे। उनके पुत्र नरसिंह रावको विजयनगरके महाराजने गोद लिया था। फिर वह अर्द्ध वियाले राज्यके राजा बन गये। विजयनगराधिप अच्युतदेवरायके समय करनूलका दुर्ग निर्मित हुवा। फिर यह प्रान्त रामराजाको जागीरमें मिला था। १५६४ ई०को तालिकोट युद्धमें बीजापुर, गोलकुण्डा तथा अहमदनगरके नवाबोंने विजयनगरके राजाको हराया और करनूलको बीजापुरके एक प्रान्तमें लगाया। अबदी सूबेदार अबसीनियावासे अबदुल वहाब रहे। उन्होंने मन्दिरोंको मसजिद बना डाला।

१६९१ ई०को औरङ्गजेबने बीजापुर जीत पठान खिजीर खान्को सैनिक-सेवाके पुरस्कारमें दिया था। उनके पुत्र दाऊद खान्ने उन्हें मार डाला। दाऊद खान्के मरनेपर उनके भाई इब्राहीम खान् और अलिफ् खान्ने मिलकर राज्य चलाया। उन दोनों भाइयोंका उत्तराधिकार अलिफ् खान्के पुत्र इब्राहीम खान्को मिला था। उन्होंने दुर्ग बनाया और उसका बल बढ़ाया। फिर उनके पुत्र और पौत्रने राज्य किया था। पौत्रका नाम हिम्मत खान् रहा। कर्णाटकको चढ़ायी पर निजाम नासिरजङ्गको औरसे कड़प्पा और सवनूरवाले नवाबोंके साथ हिम्मत खान् भी गये थे। वहां कड़प्पाके नवाबने धोखेसे नसीरजङ्गको मारा। निजामके भतीजे दक्षिणके सूबेदार

करञ्जाद्यघृत (सं॰ क्लो॰) करौंदि प्रभृति औषधिसे बना हुआ घी। करञ्ज, निम्ब, अर्जुन, शाल, जम्बु एवं वटकी त्वक् ४ शरावक, तथा इन्हीं द्रव्योंका कल्क १ शरावक, घृत ४ शरावक और ४ शरावक जल डाल डाल सबको एक बरतनमें पकाते हैं। फिर १६ शरावक शेष रहनेसे यह घृत बनता है। करञ्जाद्यघृत दाहपाक और स्रुतिरागयुक्त उपदंशके दोषको दूर करता है। (चक्रपाणिदत्त)

करञ्जिका (सं॰ स्त्री॰) १ कंटीला करौंदा। यह पाकमें कटु, तुवर, पाचक, उष्णवीर्य, एवं तिक्त और शैत्य, कुष्ठ, अर्श, व्रण, वात तथा कृमिनाशक है। इसका पुष्प वीर्यमें उष्ण, तिक्त और वात तथा कफहर होता है। (वैद्यकनिघण्टु) २ नतमालफल, बड़ाकरौंदा।

करञ्जी (सं॰ स्त्री॰) १ महाकरञ्ज, बड़ा करौंदा। यह स्तम्भन, तिक्त, तुवर, कटुपाक एवं वीर्योष्ण और पित्त, अर्श, वमि, कृमि, कुष्ठ तथा प्रमेहघ्न है। (भावप्रकाश) २ करञ्जवल्ली, करौंदेकी बेल।

करट (सं॰ पु॰) कं कुत्सितं यथा रटति रवं करोति, क-रट्-अच्। पचादिभ्यो नुर्वक्तव्यः। पा ३।१।१३४। १ काक, कौवा। २ हस्तिगण्ड, हाथीकी कनपटी।

"मद''दि सिंहकरटे पतिर्भ मधुमीयरम्।
उपलय मंडलायोने करिकः मदंरं तुमीत॥" (माघ)

३ कुसुम्भवृक्ष, कुसुमका पेड़। ४ दुष्ट जीवनधारी, खुराब आदमी, बुरा पेशा करनेवाला। ५ एकादशाह श्राद्ध। ६ दुर्द्दुरूढ, कट्टरनास्तिक। ७ वाद्यभेद, एक बाजा।

करटक (सं॰ पु॰) करट स्वार्थे कन्। १ चौरशास्त्र प्रवर्तक कर्णीके पुत्र। २ हितोपदेश वर्णित एक शृगाल। करट देखो।

करटा (सं॰ स्त्री॰) करट-टाप्। १ दुःखदोह्य गाय, मुश्किलसे लगनेवाली गाय। २ हस्तिगण्डस्थल, हाथीकी कनपटी।

करटिनी (सं॰ स्त्री॰) हस्तिनी, हथिनी।

करटी (सं॰ पु॰) करटो विद्यतेऽस्य, करट-इनि। हस्ती, हाथी।

करटु (सं॰ पु॰) क-अटु। यः कं रटु प्रकोटं, इसकी सारसे। इसकी गर्दन काली होती है। कानोंके पर आगे बढ़ दो सुन्दर सफेद गुच्छे बना देते हैं। यह एशिया और अफ्रीकाके कयी भागोंमें पाया जाता है।

करड़-करड़ (हिं॰ पु॰) १ शब्दविशेष, एक आवाज़। जब कोयी चीज बार-बार टूटती फूटती या चटखती, तब यह आवाज़ निकलती है। प्रायः दांतसे कठिन वस्तु भङ्ग करते जो शब्द पुनः पुनः आता, वही करड़-करड़ कहाता है। (क्रि॰ वि॰) २ शब्दके साथ तोड़फोड़।

करण (सं॰ क्लो॰) क्रियते अनेन, कृ-ल्युट्। १ व्याकरणोक्त कारकविशेष। क्रियानिष्पत्तिके कारणसमूहमें कारणान्तरका व्यवधान न पड़ते जो वस्तु क्रियाकी निष्पत्तिका कारण माना जाता, वही करणकारक कहाता है। इसके द्वारा कर्ता क्रियाको सिद्ध करता है। जैसे—रामने रावणको बाणसे मार डाला। यहां धनुरादि मारनेका निष्पन्न कारक ठहरते भी संयोगके प्राधान्यसे बाण ही करणकारक होता है। हिन्दीमें इस कारकका चिह्न 'से' है।

"क्रियायाः परिनिष्पत्तिर्यद्व्यापारादनन्तरम्।
विवक्ष्यते यदा यत्र तत् करणमुदाहृतम्॥" (हरिकारिका)

२ चक्षुरादि इन्द्रिय। ३ देह, जिस्म। ४ क्रिया, काम। ५ स्थान, जगह। ६ हेतु, सबब। ७ हस्तलेख, हाथकी लिखायी-पोतायी। ८ नृत्यका प्रकार, नाचका तर्ज़। ९ गीतविशेष, एक गाना। १० क्रियाभेद, एक काम। ११ संवेशन, बैठाव। १२ ज्योतिषके गणितकी एक क्रिया। बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि, शकुनि, चतुष्पद, किंस्तुघ्न और नाग—ग्यारह करण होते हैं। इनके अधिष्ठातृदेवता यथाक्रम यह हैं—इन्द्र, कमलज, मित्र, अर्यमा, भू, श्री, यम, कलि, हर, फणी और मारुत। बवादि सात करण शुक्लप्रतिपद्के शेषार्धसे कृष्णचतुर्दशीके प्रथमार्ध और अवशिष्ट चार कृष्णचतुर्दशीके शेषार्धसे शुक्लप्रतिपद्के प्रथमार्ध तक रहते हैं। १३ विष्णु। १४ जातिविशेष, एक क़ौम। ब्रह्मवैवर्तपुराणमें लिखते—वैश्यके औरस तथा शूद्राके गर्भसे करण

है। लोग इसे पाण्डुका चह्न कहते और चढ़नेसे दूर रहते हैं। उत्तर कोङ्कण पर आक्रमण करनेको पहले यहां मुसलमानोंकी सेना सन्निवेशित थी। १५४० ई०को अहमदनगरके सिपाहियोंने इसे अधिकार किया। फिर पोर्तगीजोंने करनाल लिया, किन्तु ढाई हज़ार रुपया पानेपर छोड़ दिया। १६७० ई०को शिवाजीने मुगलोंको निकाल इसे छीना था। शिवाजीके मरनेपर औरंगजेबके सेनापतियोंने इसे फिर ले १७३५ ई०तक अपने अधिकारमें रखा। अन्तको १८१८ ई०को यह अंगरेजोंके हाथ आया।

करनिहित (सं० त्रि०) हाथमें रखा हुआ।

करनी (हिं० स्त्री०) १ कर्म, करतूत। २ अन्त्येष्टि-क्रिया, मरनेपर किया जानेवाला कामकाज। ३ कन्नी, एक औज़ार। यह लोहेकी होती है। राजमिस्त्री इससे मकान बनानेमें ईंटपर गारा लगा दूसरी ईंट रखते हैं।

करनूल—मन्द्राज प्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० १४° ५४' एवं १६° १४' उ० और देशा० ७७° ४६' तथा ७९° १५' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर तुङ्गभद्रा तथा कृष्णानदी, दक्षिण कडप्पा एवं बल्लारी जिला, पूर्व नेल्लूर तथा कृष्णा और पश्चिम बल्लारी जिला है। क्षेत्रफल ७७८८ वर्गमील निकलता है। लोकसंख्या ७ लाखसे ऊपर है। बङ्गनपल्लीका क्षुद्रराज्य इसी जिलेमें पड़ता है।

करनूलके केन्द्रस्थानसे नल्लमलय और यल्लमलय दो पर्वतमाला दक्षिण तथा उत्तर समानान्तर गयी हैं। नल्लमलय प्रायः ७० मील लम्बा और कहीं कहीं १५ मीलतक चौड़ा है। विरमकोंड, गुन्दलब्रह्मेश्वरम् और दुर्गपूकोंड ३००० फीटसे ऊंची चोटियां हैं। इस पर्वतकी पांच अधित्यकामें गुन्दलब्रह्मेश्वरम्की उपत्यका प्रधान है। ऊपर चढ़नेको दो पगडण्डियां लगी हैं। पूर्वीय विभाग कमबममें पर्वत अधिक है। इस अधित्यकाकी पूर्वसीमापर वेलीकोंड पर्वतमाला खड़ी है। नल्लमलयके समानान्तर अनेक क्षुद्र पर्वतमाला हैं। देशीय नृपतियोंने घाटियोंमें दाम बांध भूमि सींचनेको सरोवर बनाये थे। गुन्दलकम्मा नदीके दामसे सुप्रसिद्ध कमबम सरोवर भरा है। यह प्रायः १५ वर्गमील परिमित है। १०००० एकर भूमि इससे सींची जाती है। दक्षिण विभागमें सगिलेरु और उत्तर विभागमें गुन्दलकम्मा नदी बहती है।

कमबम अधित्यकासे मन्द्रोकनम् तथा मन्द्राज सड़कमार्ग द्वारा मध्य विभागमें पहुंचते हैं। यह अधित्यका अतिशय प्रशस्त और समान है। काली मट्टीमें रुयी बहुत होती है। उत्तरको भवनाशी और दक्षिणको कुन्देरु नदी प्रवाहित है। ग्रीष्म ऋतुमें यह प्रान्त शुष्क पड़ जाता है। किन्तु पर्वतकी पार्श्वपर घोरतर जङ्गल तथा बाघ मिलते और नाले एवं झरने बहते हैं। ठीक इसी अधित्यकाके नीचे मन्द्राज-इरिगेशन-कम्पनीकी नहर लगी है। कुछ दिन हुये, पर्वतके पार्श्वाङ्गमें भूतत्त्वज्ञोंने पत्थरके यन्त्र पाये थे। कहते—उन यन्त्रोंसे वह लोग कार्य करते, जो अधित्यकाओंके पानीमें डूबते भी विद्यमान रहे।

पश्चिम विभाग दूसरे विभागोंसे विभिन्न देख पड़ता है। इसके पर्वत उच्चस्थित हैं। दक्षिणसे उत्तरको हिन्दरी नदी बहती और करनूलके निकट तुङ्गभद्रामें गिरती है। १८६० ई०को सहायतासे तुङ्गभद्राका बांध भूमि सींचने और नाव खींचनेके लिये नहर निकालनेको पड़ा था। बाढ़ टूटनेपर रेतमें बढ़िया सरबूज़ होता है। सङ्गमेश्वरम्में कृष्णा और भवनाशी दोनो मिल गयी हैं। इसी सङ्गमके नीचे श्रमलोरम् विद्यमान है।

कुन्देरुके अधित्यकामें स्लेटपत्थरकी मिला भरी है। यह मकान बनानेका अच्छा मसाला है। करनूलका चूनापत्थर (Lithograph) लिथोमें लगता है। इस जिलेमें हीरक, लोहे, सिन्दूर और ताम्रकी खनि विद्यमान है। नल्लमलय और यल्लमलयसे अनेक जलप्रपात भी निकलते हैं।

नल्लमलयका प्रायः २००० वर्गमील परिमित वन सुप्रसिद्ध है। इसमें हजारों रुपयेकी बढ़िया लकड़ी होती है। पश्चिमके वन सघन और पूर्वके वन विरल हैं। उत्तरके जङ्गलोंमें गोचर-भूमि बहुत है। परमलयके पर्वत उच्चस्थित हैं। किन्तु अवसर्पिणी

मिलती हैं। (कायस्थ ८५ पृ०) यह भारतवर्षके नाना स्थानोंमें रहते हैं। इनका आचार व्यवहार ब्राह्मणोंसे मिलता-जुलता है। १५ कायस्थ जातिकी एक श्रेणी। कायस्थ देखो। दाक्षिणात्यमें कहीं कहीं कर्णम् नाम भी प्रसिद्ध है। १६ स्मृतिशास्त्रके मतसे एक व्रात्यक्षत्रिय जाति।

"झल्लो मल्लश्च राजन्याद् व्रात्यान्निच्छिविरेव च।
नटश्च करणश्चैव खसो द्रविड एव च॥" (मनु १०।२२)

१७ असभ्य अवस्थामें पतित एक जाति। आसामके पूर्वांश पार्वतीय प्रदेश, एवं ब्रह्म और श्याम देशमें यह लोग रहते हैं। समस्त स्थानोंके करण देखनेमें एक प्रकार नहीं लगते। देशभेदसे आकारमें भी वैलक्षण्य आ गया है। यह बलशाली, साहसी और भीमकाय होते हैं। मुखपर गोदा रखनेके कारण स्त्रीपुरुष दूरसे भयङ्कर देख पड़ते हैं। असभ्य होते भी करण अति सरल, सत्यवादी और निरीह हैं। युद्धविग्रह किसीको अच्छा नहीं लगता। सब लोग शान्तिप्रिय होते हैं। किन्तु किसीके अनिष्ट करने या दोषी ठहरनेसे इनका वीर्यवह्नि भभक उठता है। ५।७ बङ्गवासी मल्लवीरोंमें एक करणके समकक्ष पड़ते हैं। बलशाली होते भी यह लड़ने भिड़नेसे अलग रहते हैं। किन्तु इससे करण अलस नहीं ठहरते। यह जहां वास करते, वहां अपने अपरिसीम परिश्रम और यत्नसे भूमिको प्रचुर शस्यशालिनी बना रखते हैं। फिर भी इन्हें एककाल निर्दोष कह नहीं सकते। कारण यह मद्य बहुत पीते हैं। करण मद्यके लिये लालायित रहते और उसी पानेपर अर्थको भी तुच्छ समझते हैं।

यह लिखना-पढ़ना कुछ नहीं जानते और न किसी धर्मशास्त्रको ही मानते हैं। मूर्खताका कारण पूछने पर इनके मुखसे सुननेमें आया, किसी समय ईश्वरने महिषचर्मपर अपना आदेश और धर्मशास्त्र लिख मनुष्योंको बुलाया था। मनुष्योंमें सब लोग ईश्वरका आदेश और धर्मशास्त्र ग्रहण करनेको पहुंचे, किन्तु समय न मिलनेसे केवल करण आ न सके; सुतरां चिरकालको धर्मशास्त्रहीन हो गये।

१८ जम्बीरवृक्ष, जंभीरी नीबूका पेड़। (स्त्री०) १९ योगियोंका आसन। २० क्षमादि। २१ लेख्यपत्र, साक्षिदिव्यादि।

करणक (सं० त्रि०) १ द्वारा, से। पूर्ववर्ती किसी पदके साथ बहुव्रीहि समास न रहते इसका प्रयोग असम्भव है।

करणत्राण (सं० स्त्री०) करणौ हस्तादिभिः त्रायते यत्, करण-त्रै-ल्युट्। मस्तक, सर, मत्था।

करणत्व (सं० स्त्री०) साधनत्व, तायीद, जरिया।

करणनियम (सं० पु०) इन्द्रियनिग्रह, हवासकी रोक।

करणवाचक (सं० पु०) करणं वाचयति, करण-वच-णिच्-ण्वुल्। करणबोधक, जरियेको जाहिर करनेवाला।

करणवास—युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिलेका एक नगर। यह बुलन्दशहरसे ३० मील दक्षिणपूर्व अनूपशहरकी तहसीलमें गङ्गाके दक्षिण तीर अवस्थित है। प्रायः समस्त अधिवासी हिन्दू और जमींदार बैस-राजपूत हैं। दशहरेको यहां एक मेला लगता है। इतना बड़ा मेला बुलन्दशहर जिलेमें दूसरा नहीं होता। शीतलाका एक अतिप्राचीन मन्दिर विद्यमान है। प्रति सोमवारको उक्त मन्दिरमें स्त्रियां उपस्थित हो पूजा चढ़ाया करती हैं। दिबायीसे करणवास तक सड़क लगी है।

करणविन्यास (सं० पु०) उच्चारणका नियम, तलफ्फुज़का तरीक़ा।

करणस्थानभेद (सं० पु०) इन्द्रियका पार्थक्य, हवासका फ़र्क़।

करणा (सं० स्त्री०) वाद्ययन्त्रविशेष, एक बाजा। यह वृहत् और सच्छिद्र यन्त्र है। भारतवर्ष और पारस्यमें इसे व्यवहार करते हैं। ध्वनि कर्णभेदी है। इसका दैर्घ्य १५ फीट होता है।

करणाधिप (सं० पु०) करणानां अधिपः, ६-तत्। १ जीव, रूह। २ इन्द्रियाधिष्ठाता देवता। कर्णके दिक्, त्वक्के वायु, नेत्रके अर्क, रसनाके प्रचेता, नासिकाके अश्विनीकुमारद्वय, वाक्यके वह्नि, पाणिके इन्द्र, पादके उपेन्द्र, पायुके मित्र, उपस्थके प्रजापति,

भूमिपर अनेक प्रकार गुल्म देख पड़ते हैं। वनमें कटु पूगफल, मधु, मधूच्छिष्ट (मोम), चिरा (इमली), लाचा और वंशतण्डुलकी उत्पत्ति अधिक है।

नल्लमलय पर्वतपर व्याघ्र अल्प हैं। किन्तु वह मनुष्यपर प्रायः टूटा करते हैं। चीते, भेड़िये, हायने, लोमड़ियां और गीदड़ दूसरे हिंस्र जीव हैं। भालू कहीं देख नहीं पड़ता। पर्वतपर विश्रृंग और अनेक प्रकारके हरिण चरते फिरते हैं। उत्तर नल्लमलयमें जङ्गली भैंसा मिलता है। नेड़ और सूवर भी जङ्गलमें बहुत हैं। नानाप्रकार पची उड़ा करते हैं। यहां मछली मारनेका व्यवसाय नहीं चलता। अजगर सांप भरे पड़े हैं। व्याघ्र एवं मृग-चर्म और हरिणशृङ्ग कुछ कुछ बिकता है।

इस जिलेमें ईसायी बहुत रहते हैं। तैलगु भाषा चलती है। किन्तु पत्तोकोंडमें बहुतसे लोग कनारी बोली कहते हैं। नल्लमलय पर वन्यजातिके चेंचू विद्यमान हैं। कृषिकार्य उन्हें अच्छा नहीं लगता। पर्वतमें उत्सवके समय वह यात्रियोंसे कर लिया करते हैं। करनूलके प्रधान नगर यह हैं,—करनूल, नन्दियाल, कमबम, गुटूर, मद्दीखेरा और पेपली।

यहां ज्वार, दाल, रूयी, तेल और नीलकी कृषि अधिक होती है। लोग और ग्रामको सींच सींच बढ़ाते हैं। गेहूं और सन अहनेको बोया जाता है। तम्बाकू, मिर्च, केले और अखरोटको ग्रामके निकट लगाते हैं। लोगोंका प्रधान खाद्य जुवार है। यह प्रधानतः दो प्रकारकी होती है—पीली और सफेद। पीली जुवार जून मास लाल या काली भूमिमें बो दी जाती है। किन्तु पीली जुवार सितम्बर या अक्टोबर मास खेतमें पड़ती और फरवरी तथा मार्च मास कटती है। नल्लमलयकी कितनी ही कृषिभूमि अब जोती-बोयी न जानेसे वन्य बन गयी है। सङ्के-सलसे कड़प्पा तक १८८ मील लम्बी नहर लगी है। करनूल जिलेमें इसकी लम्बायी १४० मील है। यह ६० गज चौड़ी और ८ फीट गहरी बहती है।

करनूलमें कपड़े बुननेका काम अधिक होता है। नल्लमलय पर्वतके नीचे लोहा भी मिलता है। नल्लमलयसे हीरा निकालते हैं। पत्थर काटनेमें बहुतसे आदमी लगे रहते हैं। नील और गुड़ भी तैयार होता है। अनेक नगरों और ग्रामोंमें साप्ताहिक हाट लगते हैं। यहांसे अनाज बाहर भेजा नहीं जाता और पूर्वतटसे नमक आता है। किन्तु करनूलमें मट्टीका नमक बहुत बनता है। रूयी, नील, तम्बाकू, चमड़ा और रूयीके कपड़े तथा कालीनका चालान होता है। बाहरसे आनेवाले द्रव्यमें विलायती वस्त्र, सुपारी, नारियल और सूखा मसाला प्रधान है। करनूलमें कोयी ६०० मील सड़क बनी है।

करनूल पहले प्राचीन तैलङ्ग राज्यका विभाग है। उक्त राज्यके अधःपतनसे यह सम्भवतः स्वतन्त्र हो गया था। ईश्वर राव राजा रहे। उनके पुत्र नरसिंह रावको विजयनगरके भंडारालने गोद लिया था। फिर वह उक्त विशाल राज्यके राजा बन गये। विजयनगराधिप अच्युतदेवरायके समय करनूलका दुर्ग निर्मित हुआ। फिर यह प्रान्त रामराजाको जागीरमें मिला था। १५६४ ई०को तालिकोट युद्धमें बीजापुर, गोलकुण्डा तथा अहमदनगरके नवाबोंने विजयनगरके राजाको हराया और करनूलको बीजापुरके एक प्रान्तमें लगाया। पहले सूबेदार अबीसीनियावाले अबदुल वहाब रहे। उन्होंने मन्दिरोंको मसजिद बना डाला।

१६५१ ई०को औरङ्गजेबने बीजापुर जीत पठान खिजर खान्को सैनिक-सेवाके पुरस्कारमें दिया था। उनके पुत्र दाऊद खान्ने उन्हें मार डाला। दाऊद खान्के मरनेपर उनके भाई इब्राहीम खान् और अलिफ खान्ने मिलकर राज्य चलाया। उक्त दोनों भाइयोंका उत्तराधिकार अलिफ खान्के पुत्र इब्राहीम खान्को मिला था। उन्होंने दुर्ग बनाया और उसका बल बढ़ाया। फिर उनके पुत्र और पौत्रने राज्य किया था। पौत्रका नाम हिम्मत खान् रहा। कर्णाटकको चढ़ायी पर निजाम नजीरजङ्गको और कड़प्पा और सवनूरवाले नवाबोंके साथ हिम्मत खान् भी गये थे। वहां कड़प्पाके नवाबने धोखेसे नजीरजङ्गको मारा। निजामके भतीजे दक्षिणके सूबेदार

मनके चन्द्र, बुद्धिके चतुर्मुख, अहङ्कारके रुद्र और चित्तके अधिप अच्युत हैं। ३ क्रियादिके स्वामी।

करणिक (सं० पु०) करणव्यवहारस्थ कायस्थ।

करणी (सं० स्त्री०) क्रियते क्रियाविशेषोऽत्र, कृ-करणे ल्युट्-ङीप्। १ गणितशास्त्रोक्त क्रियाविशेष। अति सूक्ष्मरूपसे जिस राशिका मूल निकाल नहीं सकते, उसे करणी कहते हैं। (Surds) २ करणकी स्त्री।

करणीय (सं० त्रि०) क्रियते यत् यद्वा, कर्मणि आधारे च कृ-अनीयर्। कृत्यल्युटो बहुलम्। पा ३।३।११३। कार्य, करने लायक।

करणीसुता (सं० स्त्री०) पोष्यपुत्रीरूपसे ग्रहण की जानेवाली सुता, जो लड़की पालनेके लिये बेटीकी तरह रखी जाती हो।

करण्ड (सं० पु०) क्रियते, कृ कर्मणि अण्डन्। कृञ् अण्डन्। उण् १।१२८। १ मधुकोष, शहदका छत्ता। २ असि, तलवार। ३ कारण्डव पक्षी, एक हंस। ४ दलाढक, हजारा चमेली। ५ वंशादि-रचित पुष्पपात्रविशेष, फूलकी डाली या पिटारी। ६ कालखण्ड, यकृत्। ७ पात्रविशेष, किसी किस्मका सेंधार। हिन्दीमें करण्ड चाकू, हथियार वगैरह टेनेके कुरण्ड पत्थरको कहते हैं।

करण्डक (सं० पु०) वंशादिरचित पुष्पपात्रविशेष, बाँसकी डलिया या पिटारी।

करण्डकनिवाप (सं० पु०) बौद्धग्रन्थोक्त एक पुण्य-स्थान। यह राजगृहके समीप अवस्थित है।

करण्डफल (सं० पु०) कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

करण्डफलक, करण्डक देखो।

करण्डा (सं० स्त्री०) करण्ड-टाप्। १ पुष्पभाण्ड, फूल रखनेकी पिटारी। २ यकृत्।

करण्डिक (सं० पु०) करण्डः विद्यते यस्य, करण्ड-इकन्। करण्डवत् चर्ममय खली रखनेवाला कोष, जिस सागरके मुर्देकी तरह चमड़ेकी थैली रहे।

करण्डी (सं० पु०) करण्डवत् आकारोऽस्ति अस्य, इनि। १ मत्स्यविशेष, एक मछली। २ पुष्पपात्र-विशेष, फूलकी पिटारी। हिन्दीमें करण्डी अपनी यानी कच्चे रेशमसे बनी चादरको कहते हैं।

करण्य (सं० पु०) करण-भव यत्। करणिक, कायस्थजाति।

करतब (हिं० पु०) १ कर्तव्य, फर्ज, काम। २ कला, हुनर। ३ जादू। ४ चालाकी।

करतबिया (हिं० वि०) करतब करनेवाला।

करतबी, करतबिया देखो।

करतरी (हिं०) कर्तरी देखो।

करतल (सं० पु०) करस्य तलः, ६-तत्। १ हस्ततल, हथेली। २ छगण, चार मात्राका एक गण। इसमें प्रथम दो मात्रा लघु और अन्तकी एक मात्रा दीर्घ आती है। ३ एक प्रकारका छप्पय।

करतलगत (सं० त्रि०) हथेलीमें पहुँचा हुआ, जो हाथ आ गया हो।

करतलधृत (सं० त्रि०) हथेलीमें रखा हुआ, जो हाथमें पकड़कर रखा गया हो।

करतलस्थ (सं० त्रि०) हथेलीमें रखा हुआ।

करतली (हिं० स्त्री०) १ गाड़ीवानके बैठनेकी जगह। २ हथेली। ३ ताली।

करतव्य (हिं०) कर्तव्य देखो।

करता (हिं० पु०) १ कर्ता, करनेवाला। कर्ता देखो। २ वृत्तविशेष, एक छंद। इसमें एक नगण, एक लघु और एक गुरु—सब पाँच अक्षर आते हैं। ३ गोलीका टप्पा।

करतार (हिं० पु०) १ कर्तार, विधाता। २ करताल।

करतारी (हिं० स्त्री०) ताली, हथेलियोंकी आवाज। २ वाद्यविशेष, एक बाजा।

करताल (सं० स्त्री०) कराभ्यां दीयमानस्तालो यत्र, बहुव्री०। १ मलक, एक बाजा। यह यन्त्र कांस्य धातुसे बनता है। २ शब्दविशेष, एक आवाज। यह दोनों हथेलियाँ बजानेसे निकलता है। ३ मंजीरा, झांझ।

करतालक (सं० क्ली०) करताल स्वार्थे कन्। करताल देखो।

करतालध्वनि (सं० पु०) करतालस्य ध्वनिः, ६-तत्। करतालका नाद, मंजीरा वगैरह बाजा।

करताली (सं० स्त्री०) करताल गौरादित्वात् ङीष्। १ वाद्यविशेष, एक बाजा। २ करतलशब्द

बने। किन्तु पठान-नवाब उनसे असन्तुष्ट रहे। रायचोटीमें हिम्मत खान् बहादुरने उन्हें मार डाला। उत्तेजित सैनिकोंने हिम्मत खान्के भी टुकड़े उड़ाये थे। फिर नज़ीरजङ्गके दूसरे भतीजे सलाबत खान् सूबेदार हुये। १७५२ ई०को हैदराबाद लौटते उन्होंने आक्रमण मार करनूल अधिकार किया था, किन्तु कुछ रुपया ले हिम्मतखान्के भाई मुनव्वर खान्को सौंप दिया। थोड़े ही दिन बाद हैदर अलीने करनूल आक्रमण कर दो लाख (गडवाल) रुपया पाया था।

१८०० ई०को यह जिला कड़प्पा और बल्लारीके साथ अंगरेजोंको दिया गया। उस समयसे नवाब अलिफ खान् एक लाख (गडवाल) रुपया प्रतिवर्ष सरकारको पहुंचाते रहे। १८१५ ई०को अलिफ खान्के मरने पर उनके भाई मुजफ्फर जङ्गने सिंहासन और दुर्ग अधिकार किया। अलिफ खान्के ज्येष्ठपुत्र मुनावर खान्ने अंगरेजोंसे साहाय्य मांगा था। फिर बल्लारीसे कारनेल मरियट फौज लेकर पहुंचे। मुजफ्फर खान् करनूलसे निकाले और मुनव्वर खान् मसनद पर बैठाले गये थे। १८२३ ई०को मुनव्वर खान् मरे। उनके भाई मुजफ्फर करनूल सिंहासनारूढ़ होने आ रहे थे। किन्तु उन्होंने बल्लारीके निकट अपनी पत्नीको मार डाला। इसीसे वह बल्लारीके किलेमें कैद हुये और १८७८ ई०को मर गये।

१८३८ ई०को समाचार मिला—करनूलके नवाब गवरनमेण्टके विरुद्ध युद्धकी तैयारी करनेमें लगे हैं। अन्वेषण करने पर मालूम हुआ—दुर्ग तथा प्रासादमें अस्त्रशस्त्र और गोली बारूदका ढेर किया गया है। फिर अंगरेजोंने तीक्ष्ण युद्धके पीछे दुर्ग और नगर अधिकार किया। नवाब हिन्द्री नदीके वामतट पर जोरापुर ग्रामको भागे थे। अन्तको उन्होंने आत्मसमर्पण किया। वह त्रिचनापल्लीके किलेमें बन्दी रहे। वहां उनके एक भृत्यने उन्हें मार डाला। उनका राज्य जब्त हुआ और उनके लड़कोंको पेनशन मिली। १८५८ ई०को करनूल जिला बनाया गया।

यहां शिक्षाका सुप्रचार नहीं। जलवायु स्वास्थ्यकर है। पश्चिम और उत्तर-पूर्वसे अधिक वायु आता है। जूनसे सितम्बर मासतक वृष्टि होती है। नल्लमलय पर्वतके नीचे ज्वरका प्रकोप रहता है। मैदानमें गोचरभूमि नहीं। पशु पर्वत पर चरते हैं। किन्तु ग्रीष्म ऋतुमें पर्वतकी घास जल जानेसे पशु भूखों मरते हैं। करनूल, कम्बम और नन्दियालमें दातव्य औषधालय विद्यमान हैं।

२ करनूल जिलेके रमलकोट परगनेका प्रधान नगर। यह अक्षा० १५° ४९′ ५८″ उ० और देशा० ७८° ४′ २८″ पू०पर अवस्थित है। लोकसंख्या २० सहस्रसे अधिक आती है। यह करनूल जिलेका हेड क्वार्टर है। हिन्द्री और तुङ्गभद्रा नदीके संगम पर बसती पड़ी है। भूमि पार्वत्य है। स्थानीय दुर्ग गोपाल रायने बनाया था। १८६५ ई०को इसका सामान उतारा गया। आवरणपटके गिराये जाते भी चार पथ (बुर्ज) और तीन द्वार विद्यमान हैं। इसमें नवाबका प्रासाद था। १८७१ ई०तक दुर्गमें सेना रही। किसी समय करनूलमें विसूचिका अधिक देख पड़ती थी। किन्तु म्युनिसपलिटीने कितना ही धन व्यय कर इसका स्वास्थ्य सुधारा है। फिर भी नहर निकलनेसे ज्वरका वेग बहुत बढ़ जाता है। १८७७-७८ ई०को दुर्भिक्ष पड़नेसे करनूल पर बड़ी विपद आयी थी। रेलका गूटी ष्टेशन ३० कोस दूर है। इसमें आधे हिन्दू और आधे मुसलमान रहते हैं।

करनैल (अं० पु० = Colonel) सैन्यदलाध्यक्ष, फौजका अफसर। यह ब्रिगेडियर जनरलके नीचे रहता है।

करन्धम (सं० पु०) करं धमति अग्निप्रयोग करोति, कर-ध्मा-खश् मुम् च। [illegible] पा ३।२।१०। सुवर्चाः इक्ष्वाकुवंशीय खनीनेत्र नामक राजाके पुत्र। सत्ययुगके समय मनु-वंशमें खनीनेत्र राजाने जन्म लिया था। वह अतिशय उद्धत रहे। उन्होंने लोक समाज और प्रजावर्गको निरन्तर सताया। उक्त अप्रकृतिवशतः प्रजाको रक्षा वह लोग पूर्वपुरुषोर्जित धन पा न सके थे। परिशेषमें दिग्विजयी हुये

अभिघातसे उत्पादित शब्द, हथेलियां बजानेकी आवाज।

करती (हिं॰ स्त्री॰) मृतवत्सका चर्म, मरे बछड़ेका चमड़ा। इसमें भूसा भर लोग बछड़ा जैसा बना देते और उसे देखा गायको लगा लेते हैं।

करतू (हिं॰ स्त्री॰) काष्ठखण्डविशेष, लकड़ीका एक टुकड़ा। यह खेत सींचनेकी बेंडीकी रस्सीके सिरेपर लगती और हाथमें रहती है। करतूके ही सहारे बेंडी पानीमें डुबायी और ऊपर उठायी जाती है।

करतूत (हिं॰ स्त्री॰) १ कर्तृत्व, काम, करनी। २ कला, हुनर, करतब। ३ कुकर्म, बुरा काम।

करतूति, करतूत देखो।

करतृण (सं॰ स्त्री॰) श्वेतकेतक, सफेद केवड़ा।

करतोय (सं॰ क्ली॰) वर्षोपलजल, ओलेका पानी।

करतोया (सं॰ स्त्री॰) कराभ्यां च्युतं हरपार्वती-परिणयकालीन हरकराभ्यां क्षरितं तोयं जलं यियते येन, पर्यादित्वादच्। समासमख्यात नदीविशेष, एक दरया। गौरीके विवाह समय शिवके पाणिनिक्षिप्त जलसे यह नदी निकली थी। करतोया अतिशय पवित्र है। वर्षाकाल संक्रम नदीका जल शास्त्रमें अशुचि कहा है। किन्तु इस नदीका जल किसी समय नहीं बिगड़ता। यह तीर्थस्थलोके मध्य गणनीय है। इस तीर्थमें पहुंच त्रिरात्र उपवास करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है। (भारत ३।८५।८)

पूर्वकालको करतोया वङ्ग और कामरूपके मध्य सीमा-निर्देशक रही। कामरूप देखो। किन्तु आजकल इसकी गति सम्पूर्ण बदल गयी है। पहले यह रङ्ग-पुरमें पश्चिमसे बहती थी। सम्प्रति जलपाइगुड़ी जिलेके उत्तर-पश्चिम बैकुण्ठपुरके जङ्गलसे निकल बराबर दक्षिणको जाती और रङ्गपुरके मध्यसे बगुड़ा जिलेके दक्षिण हलहलिया नदीके साथ मिल जाती है। इसी स्थानसे करतोयाकी गतिमें बड़ा गड़बड़ पड़ता है। निर्णय करना सरल नहीं—नाना शाखा चारो ओर हो कही गयी है। विशेषतः गत कयी शतवर्षसे तिस्रोता नदी इस अञ्चलमें जिस भावसे निर्दिष्ट गतिको छोड़ बही, उससे प्राचीन करतोयाकी पूर्वगति निर्णय करनेमें बड़ी असुविधा पड़ी है।

उक्त स्थानसे यह आगे चल फुलभरके नाम अन्य ही नदीसे मिल गयी है। अनेक लोग इस फुलभरको ही प्राचीन करतोया नदी लिखते हैं। फिर किसीके मतमें महानदी और त्रिस्रोताकी मध्यवर्ती 'करतो' प्राचीन करतोयाकी ऊर्ध्वगति और बगुड़ा जिलेकी यमुना मध्यगति है।

आजकल अत्यन्त क्षुद्र आकार बनाते भी पौराणिक समय करतोया महास्रोतस्वतीरूपमें बही जाती थी।

करथरा (हिं॰ पु॰) पर्वतविशेष, एक पहाड़। यह सिन्धुनदके उसपार सिन्धुप्रदेश और बलुचिस्तानके मध्य अवस्थित है।

करद (सं॰ त्रि॰) करं ददाति, कर-दा-ड। १ राजस्व-प्रदानकारी, खिराज देनेवाला। २ परित्राणार्थ हस्त-प्रदानकारी, मददके लिये हाथ फैलानेवाला।

करदक्ष (सं॰ त्रि॰) लघुहस्त, निपुण, दस्तकार, कारीगर।

करदम (हिं॰ पु॰) कर्दम देखो।

करदल, करदला देखो।

करदला (हिं॰ पु॰) वृक्षविशेष, एक पौदा। इस क्षुद्र वृक्षकी त्वक् विलक्षण एवं पीताभ होती है। डालके अन्तमें लघु पत्रके गुच्छ लगते हैं। शरद् ऋतुमें पत्र निकलनेसे पूर्व पीतवर्ण पुष्प आते और उनके मध्य दो-दो बीज पड़ जाते हैं। मार्च एवं अप्रेल मास इसके विकसित होनेका समय है। करदला हिमालय पर पांच हजार फीट ऊंचे जाता है। बीज खाद्य-रूपसे व्यवहृत होते हैं।

करदा (हिं॰ पु॰) १ गर्द, कूड़ा, करकट। यह अनाज वगैरह चीजोंमें मिली धूलका नाम है। इसके परिवर्तनमें दिया जानेवाला द्रव्य या मूल्य भी 'करदा' ही कहाता है। वस्तुतः यह गर्द शब्दका अपभ्रंश है। २ बट्टा, बदलायी। ३ कटौती।

करदायी (सं॰ त्रि॰) करं ददाति, कर-दा-णिनि। नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः। पा ३।१।१३४। करप्रदानकारी, खिराज देनेवाला।

होते भी प्रजाने उन्हें सिंहासनसे उतारे अरण्यको भगाया और उनके पुत्र सुवर्चाको राजा बनाया।

सुवर्चा पिताको विरुद्ध-क्रियारत रहनेसे राज्यच्युत और निर्वासित होते देख संतत संयत-चित्तसे प्रजाके हितसाधनमें लगे थे। प्रजा भी उनको ब्रह्मनिष्ठ, सत्यव्रत, शुचि, शमदमादि गुणभूषित, मनस्वी और धार्मिक पा अत्यन्त अनुरक्त हुयी। कालवश सदा धर्म-निरत सुवर्चाको अर्थहीन होनेसे सामन्त सताने लगे। इन धर्मात्मा नृपतिने कोष एवं वाहनादि विहीन हो सामन्तगणके भयसे अपनी अनुरक्त भृत्योंके साथ स्वपुरीको बचाया था। बलहीन होते भी नियत धर्म-परायण रहनेसे उत्पीड़क सामन्त इन्हें विनष्ट कर न सके। अवशेषमें जब राजाको सामन्तगणने निदारुण रूपसे सताया, तब इन्होंने अपना कर अधरमें लगाया था। उसपर अग्निसे इनका भीमपराक्रम सैन्यसमूह निकल आया। फिर बलीयान् नृपतिने अपूर्वरूप आविर्भूत सैन्यसमूहसे परिवृत हो स्वीय सीमाके अन्तर्वर्ती नृपतिगणको नीचा देखाया था। स्वीय कर अग्निमें जलानेपर उस दिनसे सुवर्चाका नाम 'करन्धम' पड़ गया।

करन्धय (सं० त्रि०) करं धयति छेढ़ि, कर-धे-खश्-मुम्। हस्तलेहक, हाथ चूमने या चाटनेवाला।

करन्यस्तकपोलान्त (सं० अव्य०) हस्तन्यस्त कपोलके अन्तपर, हाथपर रखे हुये गालके सिरे।

करन्यास (सं० पुं०) करे करावयवे न्यासः, ७-तत्। तन्त्रोक्त न्यासविशेष। तन्त्रोक्त मन्त्र उच्चारणपूर्वक अङ्गुष्ठ प्रभृति अङ्गुलिसमूहके तल और पृष्ठदेशपर जो न्यास किया जाता, वही करन्यास कहाता है।

करपत्र (सं० पुं०) करौ पत्रवत् यस्य, बहुव्री०। खीमगोदड़ वगैरह।

करपङ्कज (सं० पुं०) करः पङ्कजमिव। पद्महस्त, कमल-जैसा हाथ।

करपण्य (सं० क्ली०) करार्थं राजस्वार्थं पण्यम्, मध्यपदलो०। राजस्वके लिये दिया जानेवाला विक्रेय वस्तु, जो चीज खिराजके लिये दी जाती हो।

करपत्र (सं० क्ली०) करमवकाश्य पतति, कर-पत-ष्ट्रन्। दाम्नीशसयुयुजस्तुतुदसिसिचमिहपतदशनहः करणे। पा ३।२।१८२। १ क्रकच, करौत। यह सुश्रुतमें कथित विंशति शस्त्रोंका एकप्रकार भेद है। इससे छेदन और सीवन कर्म होता है। २ स्नानके समय जलका इधर-उधर कटाव, नहाते वक्त पानीको अपने इधर उधर हाथसे झकोलनेका काम।

करपत्रक (सं० क्ली०) क्रकच, करौत।

करपत्रवान् (सं० पुं०) करपत्रवत् पत्रं यस्य तत् अस्यास्ति, करपत्र-मतुप् मस्य वः। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्। पा ५।२।९४ तालवृक्ष, ताड़का पेड़।

करपत्रिका (सं० स्त्री०) करौ पत्रे यानमिव यस्याः, कर-पत्र-कप्-टाप् अत इत्वम्। १ जलक्रीड़ा, पानीका खेल। २ तिलपर्णी।

करपर (हिं० पुं०) १ कर्पर, खोपड़ा। (वि०) २ कृपण, कञ्जूस।

करपरी (हिं० स्त्री०) बरी, मुंगौरी-मिथौरी।

करपर्ण (सं० पुं०) करवत् पर्णं यस्य। १ भिण्डा वृक्ष, भिण्डीका पेड़। २ रक्तैरण्ड, लाल रेंड़। एरण्ड देखो।

करपर्णी (हिं०) करपरी देखो।

करपल्लव (सं० पुं०) करस्य पल्लववत्। १ अङ्गुलि, उंगली। २ हस्त, हाथ। ३ अङ्गुलिके सङ्केतसे कथनोपकथन करनेकी विद्या, उंगलियोंके इशारेसे बात करनेका हुनर।

"अहिफल कमल चक्र टङ्कार। तरु पर्वत योवन मञ्जार॥
अङ्गुलिन अक्षर बुझत मात। राम कहे लक्ष्मणसों बात॥"

हाथसे अहिका फण बनानेपर अकारादि स्वर, कमल बनानेपर ककारादि, चक्र देखानेपर चकारादि, टङ्कार लगानेपर टकारादि, तरु बतानेपर तकारादि, पर्वत बनानेपर पकारादि, यौवन देखानेपर यकारादि और मञ्जार सुझानेपर शकारादि वर्णका बोध होता है। फिर एकादिक्रमसे अङ्गुलि देखानेपर अक्षर और चुटकी बजानेपर मात्रा ठहराते हैं।

करपल्लवी (सं० स्त्री०) हस्तके सङ्केतसे कथनोपकथन, हाथके इशारेकी बातचीत। करपल्लव देखो।

करपा (हिं० पुं०) डांट, लेहना। अनाजके बालदार डण्ठको करपा कहते हैं।

करदीकृत (सं॰ त्रि॰) अकरदं करदं क्रियते येन, च्वि। कर देनेको बाध्य किया हुवा, जो खिराज अदा करनेको मजबूर बनाया गया हो।

करदौना (हिं॰ पु॰) दौना।

करद्रुम (सं॰ पु॰) किरति विक्षिपति समन्तात् शाखाः, कृ-अच्, करश्चासौ द्रुमश्चेति, नित्य-समा॰। कारस्करवृक्ष, कुचिला।

करद्विष् (सं॰ पु॰) करं द्वेष्टि, कर-द्विष्-क्विप्। १ गोत्रभेद। २ वेदशाखाभेद।

करधनी (हिं॰ स्त्री॰) १ किङ्किणी, कमरका एक गहना। यह स्वर्ण वा रौप्यमय होती है। बालकोंकी करधनीमें घुंघरू लगाते हैं। फिर स्त्रियोंके पहनने-की करधनी सादी ही रहती है। २ कटिमें धारण किया जानेवाला एक सूत्र, कमरमें पहननेका लड़दार सूत। (पु॰) ३ धान्यविशेष, किसी किस्मका धान। इसकी भूसी काली होती है। किन्तु चावल सफेद निकलता है।

करधर (हिं॰ पु॰) १ खाद्यविशेष, महुवेकी रोटी। इसे महुवरी भी कहते हैं। २ मेघ, बादल।

करधृत (सं॰ त्रि॰) हस्तद्वारा धारण किया हुवा, जो हाथसे पकड़ लिया गया हो।

करन (हिं॰ पु॰) ओषधिविशेष, अतिरक, एक जड़ी-बूटी। यह खानेमें अम्लमधुर होता है। इसे चटनी आदिमें व्यवहार करते हैं। करनका सेवन करनेसे दस्त साफ उतरता है। यह रेचक भी है।

करनधार (हिं॰) कर्णधार देखो।

करनफूल (हिं॰ पु॰) अलङ्कारविशेष, एक गहना। यह स्वर्ण वा रौप्यमय होता है। स्त्रियां इसे कर्णमें धारण करती हैं। करनफूल पुष्पाकार बनता है। इसे पहननेकी कानको लौ छेदायी और बारीक-बारीक सींकोंके कई टुकड़े डाल डाल बढ़ायी जाती है। यह दो प्रकारका होता है—साधारण एवं जड़ाऊ। करनफूलमें स्त्रियां झुमके भी लटका लिया करती हैं।

करनबेध (हिं॰) कर्णवेध देखो।

करना (हिं॰ पु॰) १ वृक्षविशेष, एक पौदा। इसके पत्र केतकको भांति दीर्घ एवं कण्टकरहित रहते हैं। पुष्प श्वेतवर्ण आते हैं। सौरभ किञ्चित् मिष्ट लगता है। इस वृक्षको वर्ण और सुदर्शन भी कहते हैं। २ निम्बुक विशेष, एक नीबू। यह बिजौरेकी भांति दीर्घ होता है। अपर नाम पहाड़ी नीबू है। ३ कार्य, काम। (क्रि॰) ४ समाप्तिपर लाना, भुगताना, निबटाना। ५ पकाना, बनाना। ६ मिलना, पहुंचाना। ७ प्रणय लगाना, मुहब्बत बढ़ाना। ८ व्यवसाय चलाना, काम लगाना। ९ सवारी लाना, भाड़ा ठहराना। १० बुझाना, उठाना। ११ रूप बदलना। १२ उठाना। १३ रंगना। १४ मारना। १५ मजा लेना।

यह क्रिया सर्वप्रधान है। इससे सब क्रियावोंका अर्थ निकल सकता है। फिर किसी संज्ञाके पीछे लगा देनेसे यह उस संज्ञाके अर्थकी क्रिया बना देती है।

करनाई (हिं॰ स्त्री॰) करनाय, तुरही।

करनाटक (हिं॰) कर्णाटक देखो।

करनाटकी (हिं॰ पु॰) १ कर्णाटक, करनाटकका बाशिन्दा। २ नट, कला खेलनेवाला। ३ बाजीगर, इन्द्रजाल देखानेवाला।

करनाल (हिं॰ पु॰) १ करनाय, नरसिंहा। २ बड़ा ढोल। यह गाड़ीपर लद कर चलता है। ३ किसी किस्मकी तोप।

करनाल—१ पञ्जाबप्रान्तका एक ज़िला। यह अक्षा॰ २९° ९´ एवं ३०° ११´ उ॰ और देशा॰ ७६° १३´ तथा ७७° १५ ३०´´ पू॰के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर अम्बाला ज़िला तथा पटियाला राज्य, पश्चिम पटियाला एवं झींद, दक्षिण दिल्ली तथा रोहतक ज़िला और पूर्व यमुना नदी पड़ती है। करनाल ज़िलेमें तीन तहसीलें हैं—पानीपत, करनाल और कैथल। भूमिका परिमाण २३८६ वर्गमील माना है। लोक-संख्या प्रायः सवा छह लाख है। भूमि दो प्रकारकी है—बांगर और खादर। ऊंचे मैदानको 'बांगर' और नीची जगहको 'खादर' कहते हैं। यमुना, घाघरा, सरस्वती, बड़ा नदी, चौतङ्ग और मार्या नदी प्रधान नदी हैं। खेत सींचनेको कयी नहरें भी निकली हैं। झील और दलदल बहुत देख पड़ते हैं। पञ्जाबके दूसरे

करपात्र (सं॰ क्ली॰) करः पात्रवत् यत्र। १ जल-क्रीड़ा, पानीका खेल। २ हस्तरूप पात्र, बरतनका काम देनेवाला हाथ। योगी अपने करका पात्र और उदरकी झोली रखते हैं।

करपात्रिका (सं॰ स्त्री॰) करपात्र देखो।

करपान (हिं॰ पु॰) रोगविशेष, एक बीमारी। यह एकप्रकारका चर्मरोग है। इससे बालकोंके शरीरपर रक्तवर्ण दाने उभरते हैं।

करपाल (सं॰ पु॰) करं पालयति, कर-पाल-अण्। कर्मण्यण्। पा ३।२।१। खड्ग, तलवार। इसमें एक ही ओर धार रहती है।

करपालिका (सं॰ स्त्री॰) करं पालयति, कर-पाल-ण्वुल्-टाप्। ण्वुल् तृचौ। पा ३।१।१३३। १ क्षुद्र हस्त-यष्टि, हाथकी छोटी छड़ी। २ छुरा। ३ मुद्गर।

करपाली (सं॰ स्त्री॰) करं पालयति, कर-पाल-णिनि-ङीप्। नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः। पा ३।१।१३४। १ क्षुद्रहस्तयष्टि, हाथकी छोटी छड़ी। २ छुरा। ३ मुद्गर।

करपीड़न (सं॰ क्ली॰) करस्य वधूकरस्य पीड़नं ग्रहणं यत्र, बहुव्री॰। विवाह, पाणिग्रहण।

करपुट (सं॰ पु॰) करयोः पुटः, ६-तत्। बद्धाञ्जलि, अंजुरी।

करपृष्ठ (सं॰ क्ली॰) हस्तका पश्चाद् भाग, हाथका पिछला हिस्सा।

करप्रचेय (सं॰ त्रि॰) १ हस्तद्वारा ग्रहण किया जानेवाला, जो हाथसे पकड़ा जाता हो। २ करद्वारा इकट्ठा किया जानेवाला, जो टिकससे लिया जाता हो।

करप्रद (सं॰ त्रि॰) करं प्रददाति, कर-प्र-दा-क। आतोऽनुपसर्गे कः। पा ३।२।३। १ करदाता, महसूल या टिकस देनेवाला। २ हस्तप्रदान करनेवाला, जो हाथ लगाता हो।

करप्राप्त (सं॰ त्रि॰) हस्तगत, पाया हुआ, जो हाथमें आ गया हो।

करफु (बौद्धशब्द) कोयी विशेष उच्च संख्या, बहुत बड़ी अदद।

करफूस (हिं॰ पु॰) दौना।

करबध (हिं॰ स्त्री॰) गौन, खुरजी। यह एक प्रकारकी दोहरी थैली रहती और बैलपर लदती है।

करवह्लावली (सं॰ स्त्री॰) मत्स्यपर्णी, मछीपूरन।

करबला (अ॰ स्त्री॰) १ अरब देशकी एक समतल भूमि। यह अत्यन्त निर्जन स्थान है। मुसलमानोंके हुसैनका यहीं वध हुआ था। २ ताज़िये गाड़नेकी जगह। करबलेका मेला मुहर्रमके १०वें दिन होता है। ३ निर्जल स्थान, पानी न मिलनेकी जगह।

करवस (हिं॰ पु॰) कशाभेद, किसी क़िस्मका चाबुक। यह दरयायी घोड़ेके चर्मसे अफ़रीकाके सिनार नगरमें बनता है। मिस्र देशमें इसका व्यवहार अधिक है।

करवाल (सं॰ पु॰) करस्य बालः सुत इव। १ नख, नाख़ून। करं आश्रित्य वलते हिनस्ति, वल-अण्। २ खड्ग, तलवार। इसका संस्कृत पर्याय असि, खड्ग, तीक्ष्णवर्म, दुरासद, विशसन, श्रीगर्भ, विजय, धर्मपाल वा धर्मपाल, निस्त्रिंश, चन्द्रहास, कौक्षेयक, मण्डलाग्र, करपाल, तरवार और रिष्टि है। गठनके आकारानुसार इसके दूसरे भी कयी नाम मिलते हैं।

अति पूर्वकाल अर्थात् वैदिक समयसे भारतवर्षीय वीर करवाल व्यवहार करते आये हैं। वैशम्पायनोक्त धनुर्वेद, वीरचिन्तामणि, लोहार्णव, युक्तिकल्पतरु, बृहत्संहिता प्रभृति प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें करवाल वा खड्गका विवरण यथेष्ट मिलता है।

वीरचिन्तामणिके मतसे खड्ग निर्माण करनेको दो प्रकारका लोह उपयुक्त है—निरङ्ग और साङ्ग। फिर शार्ङ्गधरपद्धति ग्रन्थमें प्रधान साङ्गलोह दश प्रकारका कहा है। यथा—१ रोहिणी, २ मयूरग्रीवक, ३ मयूरवक्ष, ४ सुवर्णवज्र, ५ नीपत्रवज्र, ६ स्वर्णक, ७ अग्निवज्र, ८ शैवालमालान, ९ नीलपिण्ड और १० तित्तिराङ्ग।

१ रोहिणी छोटे कङ्कड़-जैसी, अत्यन्त कठिन और अल्प नीलवर्ण लोह है। इससे क्षत आनेपर बड़ी वेदना बढ़ती है।

२ जो लोह मयूरके कण्ठकी भांति वर्णविशिष्ट देखाता, वही मयूरकण्ठ कहाता है।

३ नागकेशरके पुष्पकी आभा रखनेवाला लोह मयूरवज्र है।

४ सुवर्णवज्रमें स्वर्णके चिह्न होते हैं। यह अधिक मूल्यवान् है।

५ सौपल वज्रके दोनों पार्श्व आभायुक्त रहते हैं। मध्यमें स्वर्णरेखा पड़ जाती है। फिर आघात लगाने पर संघात श्याम धूम्रवर्ण निकल आता है।

६ स्वर्णकको तोड़नेसे ऊपरी भागमें पद्मके दलदल-की भांति सूक्ष्म छिद्र देख पड़ता है। इसका अपर नाम कल्लोलवज्र है।

७ ग्रन्थिवज्रके सर्वाङ्गमें गांठ रहती है। यह लोह मूल्यवान् और दुर्लभ है।

८ जिसके अङ्गमें अविच्छिन्न सूत्र रहता और दूर्वाकी भांति वर्ण देख पड़ता, उसको विद्वान् शैवालमालाल कहता है।

९ नीलवर्णसे आभामें मिलता जुलता लोह नील-पिण्ड कहाता है।

१० तित्तिराङ्गका वर्ण तित्तिर पक्षीसे मिलता है। यह महामूल्य और दुर्लभ लोह है। इससे उत्कृष्ट अस्त्र बनता है।

लौहार्णवके मतसे निरङ्ग लोह तीन प्रकारका होता है—रोहिणी, पाण्डर और कृष्ण। इसको आजकल कान्तलोह (फौलाद) कहते हैं।

प्राचीन ग्रन्थमें १५ प्रकार लक्षणाक्रान्त करवालका उल्लेख मिलता है। यथा—१ कालखड्ग, २ नकुलाङ्ग, ३ क्षुद्रवज्र, ४ महाखड्ग, ५ केतकीवज्र, ६ कुटीरक, ७ कज्जलगात्र, ८ कालगिरि, ९ धवलगिरि, १० कान्ति-लोह, ११ दमनयकृत्, १२ वामनाच, १३ महिष, १४ पद्मपत्र और १५ गजवज्र।

१ काली लकीरवाली तलवारका नाम कालखड्ग है। यह स्वर्णकी भांति चमकता और अल्प वज्रचिह्न-युक्त रहता है। कालखड्गको आहुनीवज्र भी कहते हैं।

२ नकुलाङ्गपर ऊर्ध्वगामी कपिलकी आभा देख पड़ती है। इसके आघातसे सर्पादि भी मर जाते हैं।

३ अपने शरीरमें मालाकार छोटी छोटी कुण्डली रखनेवाला करवाल क्षुद्रवज्र है।

४ महाखड्गका अग्रभाग अति कठिन होता है। भूमिपर कोई चिह्न देख नहीं पड़ता। किन्तु मध्य एवं पार्श्व स्थल अत्यन्त तीक्ष्ण पड़ता है।

५ केतकीवज्रकी भूमिपर केतकीपत्रकी भांति चिह्न रहते हैं।

६ कुटीरकका अङ्ग सूक्ष्म रक्तपत्राकार अथच कृष्णवर्ण होता है। इसके द्वारा क्षत लगने पर शोथ उपजता है।

७ कज्जलगात्रकी धार साढ़ी रहती है। मध्यभाग कज्जलकी भांति होता है। फिर सर्वाङ्गमें कृष्णवर्ण चिह्न देख पड़ते हैं।

८ कालगिरिके अङ्गमें स्वर्णविन्दु और श्याम चिह्न रहते हैं।

९ धवलगिरि पाण्डर लोहसे बनता है। भूमि तथा अङ्गकी आभा रौप्यकी भांति साफ चमका करती है।

१० कान्तिलोह-निर्मित, अङ्गमें रौप्यचिह्नयुक्त और अल्प नीलवर्ण करवालका नाम निरङ्ग वा कान्तिलोह है। यह दुर्लभ और अति मूल्यवान् होता है।

११ जिस तीक्ष्णधार असिके अङ्गमें दोनोंसे पत्र जैसा चिह्न रहता, उसे विद्वान् दमनयकृत कहता है।

१२ वामनाच अति कठिन और चिह्नरहित होता है।

१३ महिषमें नील मेघकी भांति आभा और एरण्ड बीजकी भांति रेखा रहती है।

१४ पद्मपत्रको रगड़नेसे दर्पणकी भांति प्रतिबिम्ब देख पड़ता है।

१५ गजवज्रका अङ्ग अति मसृण, घन और स्थूल रेखाविशिष्ट होता है। धार अति तीक्ष्ण आती है। यह रक्त छूते ही शरीरमें घुस जाता है। इस असिका धौत जल पीनेसे आधिव्याधि दूर होता है।

देशभेदसे करवालका गुणागुण स्वतन्त्र होता है। प्राचीन धनुर्वेदके मतसे खटी, खट्टेर, ऋषिक, अङ्ग, शूर्पारक, विदेह, अङ्ग, मध्यमग्राम, चेदी, सहग्राम, चीन और कालञ्जरमें जो लोह निकलता, वही खड्गके निर्माणार्थ प्रशस्त पड़ता है।

करशाखा (सं० स्त्री०) करस्य शाखा इव। १ अङ्गुली। इसका संस्कृत पर्याय अग्रुव, शाखा, क्षिप, विश, शर्या, रसना, धीति, अथर्य, विप, कक्ष्या, अवनि, हरित्, स्वसार, जामि, सनाभि, योक्त्र, योजन, धुर, शाखा, अभीशु, दीधिति और गभस्ति है। (वेदनिघण्टु, २ अ०)

करशीकर (सं० पु०) करात् करिशुण्डात् निःसृतः शीकरः करस्य शीकरो वा। १ हस्तिशुण्डनिक्षिप्त जलकण, हाथीकी सूंड़से फेंका हुआ पानी। इसका अपर संस्कृत नाम वमथु है।

"उद्यानमपि मस्वावभूतु गंजा निविष्टाः करशीकरेव।" (रघु)

२ कमल, पौ, छांट।

करशुद्धि (सं० स्त्री०) करस्य शुद्धिः, ६-तत्। हस्तशोधन, हाथ की सफाई। 'फट्' मन्त्र पढ़ गन्धपुष्प द्वारा हस्तशोधन करते हैं। "आदाम्यादिकमाभः करशुद्धितः परम्।" (तन्त्रसार) पूजादि कार्यमें अर्घ्यादि न्यासके पीछे ही करशुद्धि आती है।

करशू (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह विशाल वृक्ष सर्वदा हरिद्वर्ण बना रहता है। अफगानिस्तानसे भूटानतक करशू पाया जाता है। काठ सुदृढ़ होता है। अङ्गार (कोयला) अति उत्तम निकलता है। पत्र पशुखाद्य है। चीनांशुकका कीट करशूपर प्रतिपालित होता है।

करशूक (सं० पु०) करस्य करे वा शूकः सूक्ष्मापः शूकाग्र इव वा। नख, नाखून।

करशोथ (सं० पु०) हस्तशोथ, कलाईकी सूजन।

करश्मा (फा० पु०) आश्चर्य कर्म, अनोखा काम, जादू, चालाकी।

करष (हिं०) कर्ष देखो।

करषक (हिं०) कर्षक देखो।

करषना, करखना देखो।

करस (वै० क्ली) क्रियते यत्, कृ-असुन्। कर्म, काम।

"इमे पूर्वाणि करणानि विप्रा विद्वां आह विदुषे करांसि।" (ऋक् ४।१९।१०)

करस (हिं० पु०) कण्डेका चूर। यह आग सुलगानेके काम आता है।

करसना (हिं० क्रि०) १ आकर्षण करना, खींचना, घसीटना। २ सुखाना, झुराना। ३ एकत्र करना, समेटना।

करसनी (हिं० स्त्री०) लताविशेष, एक बेल। यह उत्तर भारतमें उत्पन्न होती है। पत्र २।३ इञ्च दीर्घ और धूम्रवर्ण रोमसे आच्छादित रहता है। फरवरी और मार्च मास पुष्प आते हैं। पक्व फलके रंगसे बैंगनी स्याही तैयार होती है। मूल एवं पत्र औषधमें पड़ता है। करसनीका अपर नाम चीर है।

करसमा (हिं०) करश्मा देखो।

करसमुद्र (सं० स्त्री०) रोमकलवण, सांभर नमक।

करसा, करस देखो।

करसाइल, करसायल देखो।

करसाद (सं० पु०) करस्य सादः अवसन्नता, कर-सद भावे घञ्। १ हस्तदौर्बल्य, हाथकी कमजोरी। २ किरणकी अवसन्नता, सूर्यादीका क्षुर्भिलाव।

करसान (हिं० पु०) कृषाण, किसान।

करसायर, करसायल देखो।

करसायल (सं० पु०) कृष्णसार, काला हिरन।

"जाके कुमको सौन है मरे रहै सो मौन।
करसायलके सींगको पेड़ कमायत कौन॥"

करसी (हिं० स्त्री०) १ करस, कण्डेका चूरचार। २ उपला, उपरी।

करसूत्र (सं० क्ली०) करे स्थितं सूत्रम्, ७-तत्। १ हस्तका सूक्ष्म सूत, हाथका बारीक सूत। २ विवाहादिकालीन मङ्गलार्थ हस्तधृत सूत्र, रखिया, कंगन।

करस्थाली (सं० पु०) करः स्थालीव अस्य। महादेव। जैसे स्थाली (हांडी) में पाक पड़ता, वैसे ही प्रलय काल महाकालरूप महादेवके हाथ समुदाय भूत मरता है।

"नमस्तातः करस्थाली कर्दं संदमनो महान्।" (भारत, अनु० १७ अ०)

करस्न (वै० पु०) कर्म स्नाति करोति धातूनामनेकार्थत्वात्, कृ-अप्-स्ना-क। कर्मकर बाहु, काम करने वाला बाजू।

"देवत् सूना करना दधिरे बहुभि।" (ऋक् ३।१८।३)

करस्पर्शन (सं० क्ली०) नृत्योतपन्न करणविशेष, नाचका एक ढंग। इसमें पीछा उभकार उछालो जाती

खेटी और खेट्टेर देशजात करवाल अत्यन्त सुदृश्य आता है। स्फटिक देशका खड्ग सुकुमार रहता और अल्पायाससे ही शरीर छेदन करता है। बङ्गदेशका करवाल अति तीक्ष्ण होता है। इससे छेद भेद करनेमें देर नहीं लगती। शूर्पारक देशीय खड्ग अतिशय कठिन लगता है। विदेहका करवाल असह्य तेजस्वी और प्रभावशाली है। मध्यमग्रामका खड्ग लघु और अति तीक्ष्ण रहता है। चेदिदेशका करवाल हलका और तीक्ष्ण लगता, किन्तु सारहीन ठहरता है। सहग्रामका खड्ग अति तीक्ष्ण और बहुत हलका होता है। चीनदेशीय करवाल तीक्ष्ण और अधिक निर्मल निकलता है। कालञ्जरके निकट जो खड्ग बनता, वह दीर्घकाल स्थायी, तीक्ष्ण और सुलक्षणयुक्त रहता है।

करवालको अष्टाङ्ग भी कहते हैं। कारण इसकी परीक्षा ८ प्रकार करना पड़ती है—१ अङ्क, २ रूप, ३ जाति, ४ नेत्र, ५ अरिष्ट, ६ भूमि, ७ ध्वनि और ८ परिमाण।

१ प्रस्तुत होनेपर खड्गके शरीरमें जो नाना प्रकार चिह्न रहते, उन्हींको अङ्क कहते हैं। अङ्क प्रायः १०० प्रकार हो सकते हैं।

२ करवालका रङ्ग ही रूप कहाता है। प्रधानतः रूप चार प्रकार होता है—नीलरूप, कृष्णरूप, पिङ्गलरूप और धूम्ररूप। सिवा इसके मिश्ररूप भी देखनेमें आता है।

३ खड्गकी जाति चारप्रकार है—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। फिर जातिसङ्कर भी हुवा करता है। सब विषयमें श्रेष्ठ गिना जानेवाला करवाल ब्राह्मण है। इसके द्वारा अल्प क्षत लगते भी सर्वाङ्ग दुखता और शोथ उठता है। मूर्छा, पिपासा, दाह और ज्वरका वेग बढ़नेसे शीघ्र प्राण निकल जाता है। हर, आंवला और बहेड़ा—तीनों द्रव्य कूट पीस एक दिन लगा कर रखते भी यह मलिन नहीं पड़ता, वर अधिक परिष्कार निकलता है। हिमालय और कुशद्वीपमें कभी कभी ब्राह्मण करवाल मिल जाता है।

घनवर्ण, तीक्ष्णधार, कर्कशध्वनियुक्त और आघातसह खड्गको क्षत्रिय कहते हैं। यह संस्कार न करते भी बहु दिन परिष्कार रहता और शाण यन्त्रपर चढ़ते बहु अग्निकणा निकाला करता है। इसका क्षत होनेसे तृष्णा, दाह, मलमूत्ररोध, ज्वर, तथा मूर्छा रोग बढ़ता और किसी समय मृत्यु पर्यन्त आ पड़ता है।

वैश्य जातीय करवाल नील तथा कृष्णवर्ण होता है। संस्कार करनेसे यह अति उज्ज्वल निकलता है। किन्तु इसमें तीक्ष्णता शाण पर चढ़ानेसे ही आती है।

जो खड्ग देखनेमें मिश्रवर्ण लगता, मोटी धार रखता, मृदुध्वनि करता और आघातपर चढ़ते भी तीक्ष्ण नहीं पड़ता, उसे विद्वान् शूद्र कहता है।

बहु जातिके लक्षण रखनेवाला करवाल जातिसङ्कर कहाता है।

४ भिन्न भिन्न चिह्नका नाम नेत्र है। खड्गवेत्ताओंके मतमें नेत्रचिह्न तीससे अधिक नहीं होते। यथा—चक्र, पद्म, गदा, शङ्ख, डमरु, धनु, अङ्कुश, छत्र, पताका, वीणा, मत्स्य, शिव, ध्वज, अर्धचन्द्र, कलस, शूल, व्याघ्रनेत्र, सिंह, सिंहासन, गज, हंस, मयूर, पुत्रिका, जिह्वा, दण्ड, खड्ग, चामर, शिखा, पुष्पमाला और सर्पाकार चिह्न।

५ करवालके अमङ्गलजनक चिह्नका ही नाम अरिष्ट है। यह ३० प्रकार होता है। यथा—छिद्र, रेखा, भिन्न, काकपद, सेकाशिर, विडालपद, कुन्दुर, शर्करा, नीला, मशक, भ्रमरपद, सूची, बिन्दु, कपोतक, निम्नबिन्दु, खर्पर, शकल, शूकर, कुम्भपत्र, जाल, कराल, कङ्कपत्र, खर्जुर, शृङ्ग, गोपुच्छ, खञ्जा, लाङ्गल और वडिश। अरिष्ट लक्षणाक्रान्त खड्ग धारण करनेवालेपर नाना विपद् पड़ती है।

६ खड्गकी भूमि दो प्रकारके अर्थोंमें व्यवहृत होती है—प्रथम क्षेत्र वा आयाम और द्वितीय जन्मस्थान। करवालकी भलायी बुरायी देखनेको जन्मस्थानका विषय समझ लेना चाहिये। इसका जन्मस्थान (भूमि) द्विविध रहता है—दिव्य और भौम। स्वर्गमें जो लौह उपजता, उसका नाम दिव्य पड़ता है। फिर भारतवर्षमें उत्पन्न होनेवाला लौह भौम है।

है। फिर नर्तक पृथिवी पर पड़ता और कुक्कुटासन बना उभय हस्त उलटा करता है।

करम्रा (हिं) करमा देखो।

करस्वन (सं० पु०) हस्तध्वनि, हाथकी आवाज, ताल।

करह (हिं० पु०) १ करभ, ऊंट। २ पुष्पकलिका, फूलकी कली।

करहंस, करहच, करहञ्च, करहन्त (हिं०) करहचा देखो।

करहकटङ्क (हिं० पु०) गढ़करङ्क, मालवेके सूबेकी एक सरकार। यह अकबरके समय बनी थी।

करहचा (सं० स्त्री०) समाचर छन्दोविशेष, सात हरफकी एक बहर।

करहनी (हिं० पु०) धान्य विशेष, एक अगहनी धान। यह अग्रहायण मास काटता है। इसका तण्डुल बहुदिन पर्यन्त चलता है।

करहा (हिं० पु०) श्वेतशिरीष वृक्ष, सफेद सरिसका पेड़।

करहाई (हिं० स्त्री०) लताविशेष, एक बेल।

करहाट (सं० पु०) करैण विकिरणेन हाट्यते दीप्यते, कर-हट-णिच्-अण्। १ पद्मादिका मूल, कंवलकी जड़। इसे सुरार और भसीड़ भी कहते हैं। २ मदनवृक्ष, मैनफल। ३ महापिण्डीतरु, बड़ी खजूरका पेड़। ४ शकर्करा। ५ देशविशेष, एक मुल्क।

करहाटक (सं० पु०-स्त्री०) करहाट इव स्वार्थे कन्। अथवा करं हटयति, कर-हट-णिच्-ण्वुल्। १ मदन वृक्ष, मैनफल। २ कमलकन्द, सुरार। ३ कमलपत्रान्तर्गत छत्र, कमलका भीतरी छाता। यह प्रथम पीतवर्ण रहता, किन्तु बढ़नेसे हरिद्वर्ण निकलता है। ४ जनपदविशेष, एक बसती। (भारत, अनु०) आजकल इसे कराढ़ कहते हैं। कराढ़ देखो। ५ स्वर्णका हस्तालङ्कार, हाथमें पहननेको सोनेका गहना।

करही (हिं० स्त्री०) बालका बचा हुवा दाना। जो दाना कूटने पीटनेपर भी बालमें लगा रह जाता, वही करही कहाता है।

करा (हिं०) कला देखो।

कराइत (हिं० पु०) कृष्णसर्पविशेष, एक काला सांप। यह अत्यन्त विषमय होता है।

कराइन (हिं० स्त्री०) कपासके ऊपरकी घास।

कराई (हिं० स्त्री०) द्विदलत्वक्, दालका छिलका।

करांकुल (हिं०) कलाङ्कर देखो।

करांत (हिं० पु०) करपत्र, करौत, आरा।

करांती (हिं० पु०) करपत्र चलानेवाला, आराकश, जो आरेसे लकड़ी चीरता हो।

करागार (सं० पु०) करस्य आगारः। राजस्वके आयका स्थान, खिराज आनेकी जगह।

कराग्र (सं० पु०) करिपुष्कर, हाथीकी सूंड़का सिरा।

करायपल्लव (सं० पु०) अङ्गुलि, उंगली।

कराघात (सं० पु०) करेण आघातः, ३-तत्। १ हस्ताघात, हाथकी मार। ठूंसे, घूंसे, थप्पड़ वगैरहको कराघात कहते हैं। २ वृद्धाङ्गुलि, अंगूठा।

कराङ्गण (सं० क्ली०) करस्य अङ्गनम्, ६-तत्। १ राजस्व आदायका स्थान, महसूल पड़नेकी जगह। २ हाट, बाजार।

कराङ्गुलि (सं० पु०) करस्य अङ्गुलिः, ६-तत्। हस्ताङ्गुलि, हाथकी उंगली।

कराची—भारतके सर्वपश्चिम प्रदेशस्थ सिन्धुदेशका एक जिला और नगर। इसके उत्तर शिकारपुर, पूर्व हैदराबाद जिला तथा सिन्धु नद, पश्चिम सागर एवं बलूचिस्तान और दक्षिण कोरी नदी तथा सागर है। कराची जिले और बलूचिस्तानके बीच बहुत दूर तक हाब नदी सीमास्वरूप प्रवाहित है। यह जिला उत्तर-दक्षिण प्रायः २०० मील दीर्घ और पूर्व-पश्चिम ११० मील विस्तृत है। परिमाणफल १४११५ वर्गमील है। कराची शहर जिलेका सदर मुकाम है। सिन्धु नदके मुहानेसे बलूचिस्तानकी पूर्व सीमा पर्यन्त कराचीका भूमिभाग सकल स्थल पर समान उच्च नहीं आता। पश्चिमांशमें कोहिस्तान नामक उपविभागके मध्य कितना ही पार्वत्य प्रदेश पड़ता है। बलूचिस्तानके पूर्वांशस्थित हाला पर्वतसे कुछ पर्वतशिखर निकले हैं। इस पार्वत्य प्रदेशके मध्य मध्य उर्वर उपत्यका आ गयी है। भूमिभाग साधारणतः दक्षिणपूर्वमुख नीचा है। उपकूल भागमें बहु संख्यक क्षुद्र सागरशाखाने प्रवेश किया है। देशके

युक्तिकल्पतरु नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा—पुराकालको प्रथमतः देवासुर-युद्धमें खड्ग निकला था। तदनुरूप करवाल किसी किसी स्थानमें रखे हैं। उनमें स्थूलधार, अति लघु, निर्मल, सुन्दरनेत्र, अरिष्ट-हीन, दुर्भेद्य, उत्तम ध्वनियुक्त, संस्कार न करते भी निर्मल रहनेवाले और टूटनेसे दो धारा न छुड़नेवाले दिव्य हैं। दिव्य खड्गका आघात लगनेसे दाह और अन्नपाक उत्पन्न होता है। सम्भवतः उल्काके लोहसे बने करवालको भी दिव्य कह सकते हैं।

भौम खड्गका लक्षण देखनेको प्रथम लोहतत्त्व समझ लेना उचित है। लौह दो प्रकारका होता है—अमृत और विषजन्मा। एक प्राचीन किंवदन्तीके अनुसार पूर्वकालको देवादिदेवने विषपान किया था। वह पीत विष क्रमशः बिन्दु बिन्दु नाना देशोंमें गिर पड़ा। उन्हीं विषबिन्दुसे कालायस (इस्पात) बन विषजन्मा कहाया है। देवगणने समुद्र-मन्थनोत्थित अमृत पान किया था। उस पीत अमृतका बिन्दु जहां गिरा, वहीं शुद्ध लोह बना। शुद्ध-लोहको ही अमृतजन्मा कहते हैं। यह लोह खरा-खमी, मगध, सिंहल, नेपाल, अङ्गदेश, सुराष्ट्र प्रभृति स्थानमें उत्पन्न होता है। पौण्ड्र, कलिङ्ग, भद्र, पाण्डर, अयस्कान्त और वज्र प्रभृति विविध शुद्ध लोह मिलता है। इस लोहका खड्ग ही उत्कृष्ट बनता है।

७ ध्वनि अर्थात् शब्द सुनकर करवालकी भलायी-बुरायी पहचानी जाती है। ध्वनि प्रथमतः दो प्रकार होता है—घोर और भार। शंख, कांस्य, ढक्का और मेघका ध्वनि घोर कहाता है। घोर-ध्वनियुक्त खड्गको उत्तम समझते हैं। काक, वीणा, खर और प्रस्तरोत्थित ध्वनि भार होता है। भारध्वनियुक्त करवाल बुरा ठहरता है।

८ खड्गका मान उत्तम और अधम भेदसे विविध है। विशाल एवं अल्पभारको उत्तम और क्षुद्र तथा भारवान्‌को अधम कहते हैं। फिर इसमें उत्तम, मध्यम और अधम तीन भेद पड़ते हैं। नागार्जुनकी भांति जितने मुष्टि दीर्घ, उतनी ही अङ्गुलिके चतुर्थ भाग विस्तृत और पलपरिमित करवाल उत्तम होता है। मध्यम खड्ग जितने मुष्टि दीर्घ रहता, विस्तृतिमें उसको अर्ध अङ्गुलिके तीन भागमें एक भाग और परिमाणमें अर्ध पल पड़ता है। अधम करवाल जितने मुष्टि दीर्घ, उतनी ही अङ्गुलिके चार भागमें एक भाग विस्तृत और उसके अर्ध या अधिक पल परिमित होता है।

पूर्वकालको राजा बड़े यत्नसे असिचालना सीखते थे। वैशम्पायनोक्त धनुर्वेदमें ३२ प्रकारकी असि-चालन-क्रियाका नाम मिलता है। यथा—भ्रान्त, उद्भ्रान्त, आविद्ध, आप्लुत, विप्लुत, सृत, संपात, समुदीर्ण, निग्रह, प्रग्रह, पदावकर्षण, सन्धान, मस्तक-भ्रामण, भुजभ्रामण, पाश, पाद, विबन्ध, भूमि, उद्भ्रमण, गति, प्रत्यागति, आक्षेप, पातन, उत्थानक, प्लुति, लघुता, सौष्ठव, शोभा, स्थैर्य, दृढ़मुष्टिता, तिर्यक्-प्रचार और ऊर्ध्वप्रचार।

करवालिका (सं॰ स्त्री॰) एक अस्त्रविशेष, एक छोटी तलवार।

करवी (हिं॰ स्त्री॰) शस्यखाद्यविशेष, कटिया, चरी, चौपायोंका एक खाना। ज्वार या मकायीके हरे भरे पेड़ 'करवी' कहाते हैं। यह गंडासेसे उंगुटे पर बारीक काट काट गाय-भैंस प्रभृति पशुको खिलायी जाती है।

करवीला (हिं॰ वि॰) करवीवाला, जो करवीसे भरा हो।

करवुर (हिं॰) कर्बुर देखो।

करवूस (हिं॰ पु॰) चर्म या सूतरज्जु, एक रेशो या तसमा। यह भावके पर्याण (जीन)में अस्त्रयन्त्र रखनेको टांक दिया जाता है।

करभ (सं॰ पु॰) १ मणिबन्धसे कनिष्ठ अङ्गुलि पर्यन्त हस्तका बहिर्भाग, कफ़दस्त, कलायीसे अंगुलियोंकी जड़तक हाथका हिस्सा। २ करिशावक, हाथीकी सूंड़। ३ गजशिशु, हाथीका बच्चा। ४ उष्ट्र, ऊंट। ५ उष्ट्रशावक, ऊंट या किसी दूसरे जानवरका बच्चा। ६ नखी नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज। ७ सूर्यावर्त। ८ एक दोहा। इसमें १६ गुरु और १६ लघु लगते हैं।

करभक (सं॰ पु॰) अनुकम्पितः करभः, करभकः,

अभ्यन्तरमें नदी-किनारे बबूलका वन यथेष्ट है। सिन्धु नद ही स्थानीय प्रधान नदी है। किन्तु हाव नदीसे इस जिलेके अधिकांश स्थलमें जल-पाता है। कराचीमें सिन्धु नद प्रायः १२५ मील विस्तृत है। दक्षिणांशको सिन्धु बहु शाखामें विभक्त हो सागरसे जा मिला है। उक्त शाखाकी गति अत्यन्त परिवर्तनशील है। पहले सीता और बाघियार शाखा बहुत विस्तृत थी। जहाज, स्टीमर आते-जाते थे। किन्तु १८१७ ई०से बाघियार नदीका जल भिन्न पथको पकड़ बहता है। प्राचीन स्रोत क्रमशः बन्द हो गया। बागना नामक शाखाके तीर कराची जिलेका पुराना 'शाहबन्दर' अवस्थित था। यह स्थान बहु दिन पर्यन्त कलहोरा राजवंशका जहाजी बन्दर रहा। फिर यहां युद्धके जहाज भी ठहरते थे। किन्तु आजकल इस स्थानसे नदी प्रायः १० मील हट गयी है। अब हजामरी शाखा ही सिन्धुका प्रधान मुख मानी जाती है। १८४५ ई० को यह शाखा अति क्षुद्र रही। छोटी नौका भी अति कष्टसे आती जाती थी। इस जिलेके बीच, ऊपरी भाग सेवयानमें 'मञ्चर' नामक एक वृहत् ह्रद भरा है। इतना बड़ा ह्रद सिन्धु प्रदेशमें दूसरे स्थानपर देख नहीं पड़ता। कराची नगरसे ७८ मील उत्तर पार्वत्य प्रदेशमें 'पीरमांगो' नामक स्थानपर कितने ही उष्ण प्रस्रवण विद्यमान हैं। इस स्थानकी प्राकृतिक शोभा अति सुन्दर है। भ्रमणकारी प्रायः इस स्थानकी शोभा देखने आया करते हैं। यहां एक दलदल भी है। इस दलदलमें असंख्य कुम्भीर रहते हैं। अरण्य जन्तुमें चीता, हायना, भेड़िया, शृगाल, उल्कामुखी, भल्लुक, हरिण और वन्यमेष प्रधान हैं। पक्षियोंमें शकुनिकी संख्या यथेष्ट आती है। कोहिस्तानमें नाना जातीय सरीसृप देख पड़ते हैं।

कराची जिलेमें मुसलमानोंकी ही संख्या सर्वापेक्षा अधिक है। फिर हिन्दुवों और दूसरे लोगोंकी गणना लगती है। हिन्दुवोंमें ब्राह्मण, राजपूत और लोहाने अधिक देख पड़ते हैं। अन्यान्य जातिमें जैन, ईसाई, यहूदी और बौद्ध हैं। यह जिला कराची, सेवयान, जोवक और शाहबन्दर नामक चार उपविभागमें विभक्त है। करारो, कोटरो, सेवयान, बुबक, जदु, ठाठा, केती बन्दर, मभन्द, और मीरपुर बतोरा नगर प्रधान समझा जाता है। कराची, केती और सिरगण्ड (श्रीगण्ड) तीन बन्दर हैं।

स्थानीय लोगोंके कथनानुसार ठाठा नगरसे ग्रीक सम्राट् अलकसेन्दर (सिकन्दर) के सेनापति नियारकस् पारस्य सागरको गये थे। सेवयान नगरमें किसी अति प्राचीन दुर्गका भग्नावशेष विद्यमान है। अनेक लोग कहते, कि उक्त दुर्गके निर्माता भी अलकसेन्दर ही रहे। कराची जिलेका अति अल्प स्थान ही बोया जाता है। वृष्टि, कूप और निर्झरके जल पर ही कृषिकार्य चलता है। मलीरमें ज्वार, बाजरा, यव और इक्षुकी उपज है। जोवक और शाहबन्दरके निकटवर्ती स्थानमें चावल, गेहूं, जव, मकई, रुई तथा तम्बाकू बोते हैं। कोहिस्तानके पार्वत्य क्षेत्रमें किसी प्रकारका शस्य नहीं होता। यहांके लोग प्रायः पशुपाली हैं। पशुमांससे ही जीवन धारण करते हैं। यहां तीन फसलें होती हैं। एक ज्येष्ठ-आषाढ़में बोयी और कार्तिक-अग्रहायणमें काटी जाती है। दूसरी कार्तिक-अग्रहायणमें पड़ती और वैशाख-ज्येष्ठ कटती है। तीसरीको फाल्गुन-चैत्रमें डाल आषाढ़ श्रावण मास काट लेते हैं। कराची जिलेका प्रधान पण्य द्रव्य रुई, गेहूं और ऊन है।

शाहबन्दरके निकट योगण्ड खाड़ीमें यथेष्ट लवण निकलता है। कपतान बार्कने १८४० ई०को स्थानीय लवणस्तर देख कहा था, 'इस लवणसे क्रमागत ४०० वत्सर समस्त पृथिवीका निर्वाह हो सकता है।' किन्तु लवणके शुल्कका परिमाण द्विगुण रहनेसे कोई व्यवसाय चला नहीं सकता। समुद्रमें मत्स्य पकड़नेका काम भी होता है। मुहाने मुसलमान यह व्यवसाय करते हैं। ठाठा नगरी लुंगी नामक शीतवस्त्र और बुबक नगर कालीनके लिये विख्यात है। कराची जिलेके अधिकांश नगर सिन्धुके इतिहाससे विशेष संश्लिष्ट हैं। सिन्धु देखो।

कराची नगरमें सिन्धु प्रदेशका सेनावास स्थापित

करभ-खन्। (? ... पा ...) १ प्रियतम हस्तिशावक या उष्ट्रशावक। २ करभ। करभ देखो।

करभकाण्डिका (सं॰ स्त्री॰) करभस्य प्रियं काण्डं यस्याः, बहुव्री॰। करभकाण्ड-कप्-टाप् इत्वम्। उष्ट्रकाण्डी, ऊंटकटारेका पेड़।

करभञ्जक (सं॰ त्रि॰) करं भनक्ति, कर-भन्ज-ण्वुल्। ण्वुल् तृचौ। पा ३।१।१३३। १ करभङ्गकारी, हाथ तोड़नेवाला। (पु॰) २ प्राचीन जनपदविशेष, एक पुरानी बसती। (महाभा॰ भीष्म ९।११)

करभञ्जिका (सं॰ स्त्री॰) करभञ्ज-टाप् इत्वम्। १ करभङ्गकारिणी, हाथ तोड़नेवाली। २ महाकरञ्ज, बड़ा करौंदा। ३ लताकरञ्ज, बेलका करौंदा।

करभञ्जन (सं॰ त्रि॰) करं भनक्ति, भन्ज-ल्युट्। करभङ्गकारी, हाथ तोड़नेवाला।

करभण्डिका, करभञ्जिका देखो।

करभप्रिय (सं॰ पु॰) क्षुद्र पीलुवृक्ष, छोटे पीलूका पेड़।

करभप्रिया (सं॰ स्त्री॰) करभस्य उष्ट्रस्य करिशावकस्य वा प्रिया, ६-तत्। १ क्षुद्र दुरालभा, छोटा जवासा। २ दुरालभा, जवासा। ३ उष्ट्र वा करिशावकादिकी स्त्री, छोटी हथिनी या ऊंटनी।

करभवल्लभ (सं॰ पु॰) करभस्य वल्लभः, ६-तत्। १ उष्ट्रप्रिय पीलुवृक्ष, छोटा पीलू। २ कपित्थ वृक्ष, कैथा।

करभवारुणी (सं॰ स्त्री॰) उष्ट्रकण्टकागुल्मोत्थित वारुणी, ऊंटकटारेकी शराब।

करभादनिका, करभादनी देखो।

करभादनी (सं॰ स्त्री॰) करभेन उष्ट्रेन अद्यते, करभ-अद कर्मणि ल्युट्-ङीप्। क्षुद्र दुरालभा, छोटा जवासा।

करभी (सं॰ पु॰) करभः हस्तस्य अवयवभेदस्तद्वत् आकारो हस्ति शुण्डे यस्य अथवा करो हस्त इव भाति, कर-भ-ड; करभः शुण्डस्तदस्ति यस्य, बहुव्री॰। १ हस्ती, हाथी। (स्त्री॰) करभस्य स्त्री, करभ-ङीप्। जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्। पा ४।१।६३। २ स्त्रीकरभ, हथिनी या ऊंटनी। ३ क्षुद्रमेषशृङ्गी, छोटी मेढ़ासींगी। ४ श्वेतापराजिता, एक बूटी।

करभीय (सं॰ त्रि॰) करभ-छञ्। हस्ती या उष्ट्रसम्बन्धीय, हाथी या ऊंटके मुताल्लिक।

करमीर (सं॰ पु॰) करमिनं करिणं ईरयति प्रेरयति मृत्युमुखम्, करभ-ईर-अण्। सिंह, शेर।

करभू (सं॰ स्त्री॰) करात् भवति, कर भू-क्विप्। नख, नाखून।

करभूषण (सं॰ क्ली॰) करो भूष्यते अनेन, कर-भूष-ल्युट्। १ कङ्कण, चूड़ी। २ हस्तालङ्कार मात्र, हाथका कोयो गहना।

करभोरु (सं॰ स्त्री॰) करभ-वत् ऊरुर्यस्याः ऊङ्। प्रशस्त ऊरुविशिष्टा स्त्री, मोटी जांघवाली औरत।

करम (हिं॰ पु॰) १ कर्म, काम। २ भाग्य, किस्मत। ३ वृक्षविशेष, एक पेड़। यह अत्यन्त उच्च वृक्ष है। करम शीतल भूमिमें उत्पन्न होता है। इसकी त्वक् श्वेतवर्ण एवं मसृण निकलती और बाध इसे मोटी पड़ती है। काष्ठ पीतवर्ण तथा सुदृढ़ रहता है। करम सन्दूक मेज और अलमारी बनानेमें लगता है। (अ॰ पु॰) ४ कृपा, मेहरबानी। ५ निर्यासविशेष, एक गोंद। यह अरब और अफ्रीकामें होता है।

करमई (हिं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह कामरूपमें मिलती और दाक्षिणात्यमें उपजती है। बङ्गाल, आसाम और ब्रह्मदेशमें भी करमयी होती है। इसके कटु पत्र चबाने और शाक बनानेमें काम आते हैं।

करमकल्ला (हिं॰ पु॰) गांठ गोभी, पत्तोंका एक फूल। इसमें अनेक पत्र एकत्र हो पुष्पाकार बन जाते हैं। यह शाकमें व्यवहृत होता है। शीतकाल-को गोभी उठ जानेपर करमकल्ला आता है। चैत्र मास इसके पत्र फूट पड़ते हैं। बीचके डण्ठलमें सर्षपकी भांति बीज और पत्र निकलते हैं। इसकी फलीमें छोटे छोटे बीज रहते हैं। पहले इसको सरकारी उच्च वर्णके लोग खाते न थे। किन्तु अब लोग बहुत कम परहेज करते हैं।

करमङ्गल—बारह-मंडलके मध्यका एक प्राचीन ग्राम। आजकल यहां जङ्गल हो गया है। किन्तु इससे थोड़ी दूर पर्वतपर देवमन्दिर और राजप्रासादि बने हैं। करमङ्गल राजकोटसे २१ कोस दक्षिणपूर्व अवस्थित है।

है। इसी नगरमें बिलकुल दक्षिण कराची उपसागर है। उपसागरके एक पार्श्वपर मानोरा अन्तरीप पड़ता है। मानोरा अन्तरीप और क्लिफटन नामक स्वास्थ्यनिवासके बीच कराची उपसागर प्राय: साढ़े तीन मील विस्तृत है। किन्तु प्रवेशका मुख घोंघेके पर्वत (क्षुद्र क्षुद्र पार्वत्य द्वीप) और कियामारी नामक द्वीपसे रुका है। मानोरा अन्तरीपमें एक आलोकस्तम्भ है। इस आलोकस्तम्भके पश्चात् एक क्षुद्र दुर्ग भी खड़ा है।

१७२५ ई०को जहां हाब नदी सागरसे मिली, वहां खड़क नामक एक नगरी रही। उस समय खड़कका व्यवसाय वाणिज्य बहुत विस्तृत था। क्रमश: बालू आनेपर खड़क बन्दरके प्रवेशका पथ बालूसे रुक गया। फिर थोड़ी दूर दक्षिण वर्तमान कराची नगरके स्थानपर 'कलाचीकुण' नामक दूसरा क्षुद्र नगर रहा। इसी स्थानसे कराचीकी चारो ओर व्यवसाय वाणिज्यका लेनदेन बढ़ा। क्रमश: यहां दुर्ग बना था। फिर मसकट नगरसे तोप मंगा दुर्गकी रक्षा की गयी। अन्तको शाहबन्दरका व्यवसाय बिलकुल बन्द हो जानेसे यह स्थान समृद्धिशाली हुवा। लोगोंके विश्वासानुसार उक्त कलाची नामसे ही 'कराची' शब्द निकला है।

कराचीन (सं० पु०) खञ्जन, खड़रैचा।

कराट (सं० स्त्री०) कराय विक्षेपाय अटति, अट-अच्। थप्पड़, तमाचा।

करातग्राम काशी जिलेका एक ग्राम। (भवि० ब्रह्मख० ३३।४६)

कराड़ (हिं० पु०) १ क्रय करनेवाला, महाजन, जो माल खरीदता हो। २ वणिक् जातिविशेष। यह वनिये पञ्जाबमें उत्तरपश्चिम रहते हैं। महाजनी इनका धन्धा है। ३ नदीके ऊपरका ढिस्सा, टीला। सम्यक् उच्च नदीतटको कराड़ कहते हैं।

कराढ़—१ बम्बईप्रान्तके सतारा जिलेका एक विभाग। इसकी भूमिका परिमाण ३८५ वर्ग मील है। महाभारतमें अर्ब्बयन्ती नगरीके साथ 'करहाटक' नामसे इस स्थानका उल्लेख पाया है।

"नगरीं सञ्जयन्तीञ्च पाषण्डं करहाटकम्।
दूतैरेव वशे चक्रे करञ्चैनानदापयत् ॥" (सभा ३१।७०)

दाक्षिणात्यवाले वनवासी प्रभृति प्राचीन स्थानके किसी किसी शिलाफलकमें भी कराढ़का नाम करहाटक लिखा है। स्कन्दपुराणके सह्याद्रिखण्डमें यह भूभाग कारराष्ट्र नामसे उक्त है। सह्याद्रिखण्डके मतसे कारराष्ट्र कोयनासङ्गमके दक्षिण और वेदवती नदीके उत्तर सब मिलाकर १० योजन पड़ता है।

"वेदवत्याश्चोत्तरे तु कोयनासङ्गदक्षिणे।
कारराष्ट्रनाम देशस्य दुष्टदेश: प्रकीर्तित: ॥" (उत्तरार्ध ४।३)

यहां सर्वाधिक हिन्दू रहते हैं। उनमें कराढ़ ब्राह्मणोंकी ही संख्या अधिक है। कराढ़-ब्राह्मण देखो।

२ कराढ़ विभागका प्रधान नगर। यह कृष्णा एवं कोयना नदीके सङ्गम स्थान, अक्षा० १७° १८' उ० तथा देशा० ७४° १३' ३०" पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: ११ सहस्र है। उसमें ८ हजार हिन्दू निकलते हैं। यह अजकी अदालत, डाकघर, औषधालय प्रभृति विद्यमान है।

कराढ़-ब्राह्मण (कारराष्ट्र ब्राह्मण) महाराष्ट्र ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। जन्मभूमिके अनुसार यह ब्राह्मण भी कराढ़ कहाते हैं। स्कन्दपुराणमें इन्हें अतिनिन्दित और दुष्ट लिखा है—

"कारराष्ट्रो नाम देशस्य दुष्टदेश: प्रकीर्तित: ॥३
सर्वे लोकाश्च कठिना दुर्जना: पापकर्मिण:।
तद्देशजाश्च विप्रास्तु कारराष्ट्रा इति नामत: ॥४
पापकर्मरता नष्टा व्यभिचारसमुद्भवा:।
खरस्य चास्थियोगेन रेत: चित्वा विनाशकम् ॥५
तेन तेषां समुत्पत्तिर्जाता वै पापकर्मिणाम्।
तद्देशे मातृकादेवी महादुष्टा भयङ्करी ॥६
तस्या: पूजा वर्षाचे च ब्राह्मणो दीयते बलि:।
ते देवीमात्मनां नष्टा ब्रह्महत्यां करोति च ॥७
न कृता येन वा हत्या कुले तस्य मृतं भवेत्।
एवं पुरा तया देव्या वरो दत्तो द्विजान् प्रति ॥८
तेषां दर्शनमात्रेण सचेलं स्नानमाचरेत्।
तेषां देशान्तरे याति श्राद्धे योजनवर्जनम् ॥९
केवलं विषमाप्नोति पातकं ह्यतिदुस्तरम्।" (सह्याद्रिखण्ड ४।१ अ०)

कराढ़ ब्राह्मण अपने को शाक्त होते हैं। लोग कहते—पहले इनमें प्रति वर्ष देवी प्रतिके उद्देश एक

करमचन्द (हिं॰ पु॰) कर्म, काम, भाग्य, किस्मत।

करमट्ट (सं॰ पु॰) करं हस्तिशुण्डं अट्टति अतिक्रामयति, कर-अट्ट-अच्-मुम्। १ गुवाकवृक्ष, सुपारीका पेड़।

करमहा (हिं॰ वि॰) कृपण, कञ्जूस।

करमठ (हिं॰) कर्मठ देखो।

करमण्डल—भारतवर्षके दक्षिण पूर्वका उपकूल। इस नामकी उत्पत्तिपर कुछ गड़बड़ चलता है। किसी किसीके कथनानुसार पुलिकटके निकटस्थ प्राचीन 'करमण्डल' ग्रामसे यह नाम निकला है। पूर्वको करमण्डलमें पोर्तगीजोंका जहाज लगता और अट्टालियोंका वास रहता था। फिर कोई कहता—तामिल 'चोरमण्डल'को अंगरेजोंने विगाड़ 'करमण्डल' नाम बनाया है। शेषोक्त मत युक्तिसङ्गत है। तामिल 'चोरमण्डल'को संस्कृतमें चोलमण्डल कहते हैं। प्राचीन चोल राजावोंके समयसे यह नाम निकला है। चोल देखो। प्राचीन पाश्चात्य भौगोलिक टलेमिने इस स्थानका नाम सोरेते (Soretai) लिखा है। (Ptolemy, Geog. Bk. VII. ch. 1.)

करमध्य (सं॰ क्ली॰) कर्ष, २ तोलेका वजन।

करमरिया (हिं॰ स्त्री॰) शान्ति, अमन, चैन। समुद्रमें वायु मन्द पड़नेसे तरङ्गका वेग घटना करमरिया कहाता है। यह शब्द पोर्तगीज भाषासे लिया गया है।

करमरी (सं॰ पु॰) किरति विक्षिपति दण्डादीन् अत्र, कृ अधिकरणे अप्, करः कारागारः तत्र मरः मृत्युवत् क्लेशो यस्य, बाहुलकात् इनि अथवा करे म्रियते, कर-मृ-इनि। बन्दी, कैदी।

करमर्द (सं॰ पु॰) करं मृद्नाति, कर-मृद-अण्। करमर्दक वृक्ष, करौंदेका पेड़। भावप्रकाशमें इसके अपक्व फलको अम्ल, गुरु, तृष्णानाशक, उष्ण एवं रुचिकर और पित्त, रक्त तथा कफ-प्रविकारक कहा है। पक्व करमर्द मधुर, रुचिजनक एवं लघु और पित्त तथा वायुनाशक है। करञ्ज देखो।

करमर्दक (सं॰ पु॰) करं मृद्नाति, कर-मृद-ण्वुल् वा करमर्द एव, स्वार्थे कन्। १ करमर्द, करौंदा। २ लताविशेष, एक बेल।

करमर्दिका (सं॰ स्त्री॰) करमर्दक देखो।

करमर्दा—एक नदी या दरया। यह नदी नर्मदासे मिल गयी है। इसका सङ्गमस्थान पुण्यतीर्थ माना जाता है। उक्त स्थानपर करमर्देश्वर शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित है। स्कन्दपुराणीय रेवाखण्डके मतानुसार करमर्दा सङ्गममें नहा करमर्देश्वरका दर्शन करनेसे पुनर्जन्म नहीं होता।

करमर्दिका (सं॰ स्त्री॰) करौंदी। यह पर्वतज द्राक्षाके सदृश होती है। (भावप्रकाश)

करमर्दी (सं॰ पु॰-स्त्री॰) करं मृद्नाति, मृद णिनि। १ करमर्दवृक्ष, करौंदा। २ करञ्जवृक्ष, करील।

करमशोषि—द्वारभङ्गके अन्तर्गत ग्रामविशेष, दरभङ्गाका एक गांव। द्वारभङ्गराजाके मन्त्री करमशोषिने इसे बसाया था। (अवि॰ रत्नपंच ७।११६०-६१)

करमसेंक (हिं॰ पु॰) १ अनायती वृक्ष। २ अल्प घृतमें सेंका हुवा पराठा। यह बड़ी मुश्किलसे खानेमें आता है।

करमा (हिं॰) कैमा देखो।

करमा बाई—एक असाधारण भक्तिमती ब्राह्मणकन्या। दाक्षिणात्य प्रदेशके खाजल ग्राममें इनका जन्म हुवा था। पिताका नाम परशुराम पण्डित रहा। वह स्थानीय राजाके पुरोहित थे। राजा और राजपुरोहित—दोनों परमवैष्णव रहे। उस समय धर्मशास्त्रका मूल उद्देश्य समझनेको स्त्रियां भी विद्या पढ़ती थीं। करमा बायी शैशवकाल ही विद्यावती बन गयीं। विद्याशिक्षाके साथ-साथ इन्हें वैष्णवधर्मपर भी अधिकतर भक्ति बढ़ी। पण्डित परशुरामने यथाकाल करमा बाईको सत्पात्रके हाथ सौंपा था। सम्पूर्ण अनिच्छा रहते भी पिताके अनुरोधसे इन्होंने विवाह कर लिया। किन्तु स्वामीको अवैष्णव एवं विषयी देख यह सहवास या गृहस्थाली करनेसे असम्मत हुयीं। इनके सकल कार्यों से साधारणको विस्मय आ जाता। फिर करमा बाई सर्वदा निर्जन स्थानमें बैठ इष्टदेवके पादपद्मको चिन्ता करती, पागलकी भांति कभी हंसती, कभी रो उठती और कभी 'हा नाथ!' पुकारकर चिल्लाने लगती थीं। कुछ काल पीछे पुनर्वार इन्हें स्वामीके गृह पहुं-

ब्राह्मणविग्र बलि चढ़ानेकी प्रथा रही। १८१८ ई० पीछे यह प्रथा एक काल उठ गयी है। इनका आचार व्यवहार अनेक अंशमें अपर महाराष्ट्रोंसे मिलता है। सुप्रसिद्ध महाराष्ट्र कवि मोरोपन्त कराड़ ब्राह्मण होते थे। इनमें भिन्न गोत्र और अनेक घर देख पड़ते हैं। यथा—

गोत्र		घर
काश्यप गोत्र	...	७२
अत्रिगोत्र	...	७५
भरद्वाजगोत्र	...	७७
जमदग्निगोत्र	...	७५
वशिष्ठगोत्र	...	८०
कौशिकगोत्र	...	४७
मैत्र्युयगोत्र	...	२४
गौतमगोत्र	...	१५
गार्ग्यगोत्र	...	१६
मुद्गलगोत्र	...	८
विश्वामित्रगोत्र	...	१
बादरायणगोत्र	...	१
कौण्डिन्यगोत्र	...	१
उपमन्युगोत्र	...	१
आङ्गिरसगोत्र	...	१
कौशिलायगोत्र	...	१
वैण्यगोत्र	...	६
शाण्डिल्यगोत्र	...	६
कुत्सगोत्र	...	३
वात्स्यगोत्र	...	२
भार्गवगोत्र	...	२
पार्थिवगोत्र	...	२

महाराष्ट्र देखो।

कर्णाटक प्रदेशमें कराड़ ब्राह्मण मिलते हैं। यह चितपावनोंसे मिलते जुलते हैं। वर्ण कुछ अधिक काला रहता है। किसीकी आंख भूरी या नीली नहीं होती। विजयदुर्गा, आर्यदुर्गा और महालक्ष्मी इनकी कुलदेवता हैं। महिसुर राज्यके शङ्कराचार्य गुरु माने जाते हैं। यह व्रतादि और उत्सवादि दूसरे ब्राह्मणोंकी भांति सम्पन्न किया करते करते हैं। बालक विद्यालयोंमें पढ़ते हैं। कराड़ शुद्ध, स्वच्छ, अतिथिसेवी और आज्ञाकारी होते हैं। इनमें कोई व्यवसायी, कोई ज्योतिषी और कोई भिक्षुक है। ऋग्वेद इनका प्रधान वेद है।

करात (हिं० पु०) कीरात, ४ जौकी तौल। इससे स्वर्ण, रौप्य या औषध तौलते हैं।

कराना (हिं० क्रि०) कार्यमें लगाना, करवाना।

क़राबत (अ० स्त्री०) १ आसन्नता, इत्तिसाल, नज़दीकी। २ सम्बन्ध, अपनायत।

क़राबतदारी (फा० स्त्री०) सम्बन्धिभाव, रिश्तेदारी।

क़राबा (अ० पु०) काचपात्र विशेष, शीशेका एक बरतन। इसका आकार वृहत् और मुख क्षुद्र रहता है।

करामर्द (सं० पु०) करं आ सम्यक् मृद्नाति, कर-आ-मृद-अण्। करमर्दवृक्ष, करौंदेका पेड़।

करामात (अ० स्त्री०) आश्चर्यव्यापार, सिद्धि, करिश्मा, अनहोनी। यह शब्द 'करामत' का बहुवचन है। करामात दिखानेवालेको करामाती (सिद्ध) कहते हैं।

कराम्लक (सं० पु०) कीर्यते विक्षिप्यते अम्लं यस्मात्, कॄ कर्मणि अप्-कप्। क्षुद्राम्लफल वृक्ष, करौंदेका पेड़।

कराम्ल, कराम्लक देखो।

कराम्लक (सं० पु०) करं कीयमाणं अम्लं यस्मात्, कर-अम्ल-कप्। करमर्दक वृक्ष, करौंदेका पेड़।

कराग्रजा (हिं० पु०) १ कुटज, कोरैया। २ इन्द्रयव।

करायल (हिं० पु०) १ कलौंजी, मंगरैला। २ तैल या घृतसे किया हुआ बेसवार, तेल या घी-में पकाया हुआ मूंग या उड़दकी दालका झोल। प्रायः तरकारीके झोलको भी करायल कह दिया करते हैं।

करायिका (सं० स्त्री०) कराविव आचरति उड्डयनकाले करवल्लम्बमानत्वात्, कर-क्यङ्-ण्वुल्-टाप्। उपमानादाचारे। पा ३।१।१०। १ बलाकापक्षी, छोटा बगला। २ पक्षिभेद, एक चिड़िया।

करार (हिं० पु०) १ नदीका उच्च तट, दरयाका

चानेकी विशेष यत्न हुआ। कृष्णके प्रेमरसका आस्वाद पानेसे करमा बाईको संसार विषवत् बुरा लगता था। सुतरां स्वामीके गृह जानेको अत्यन्त अनिष्टकर समझ यह सर्वदा रोते रहीं। अन्तको किसीसे कुछ न कह इन्होंने चुपके चुपके वृन्दावन जाना स्थिर किया। रात्रिकालको यह अपनी कोठरीसे बाहर निकलीं। घरके सकल द्वार बन्द थे। बाहर जानेकी कोई राह न देख करमा बाई मनके आवेगमें अटारीसे नीचे कूद पड़ीं। किन्तु यह कभी घरसे बाहर निकलती न थीं। इन्हें क्या मालूम—कहां वृन्दावन और कहां पथ रहा। फिर भी इन्होंने कङ्गालकी तरह अकेले ऊर्ध्वश्वाससे वृन्दावनके उद्देश यात्रा आरम्भ की।

प्रभात होनेपर परशुराम पण्डित गृहमें कन्याको न देख अत्यन्त व्यस्त हुये और राजाके निकट पहुंच सकल कथा कहने लगे। राजाने उन्हें आश्वास दे चारो ओर करमा बाईको ढूंढनेके लिये आदमी भेजे थे। इन्होंने राहमें जाते जाते पीछे घूमकर देखा—मुझे ढूंढनेको लोग आते हैं। इससे यह अत्यन्त व्यतिव्यस्त हुयीं। चारो ओर खुला मैदान था। छिपनेको कहीं उपयुक्त स्थान न मिला। समीप उष्ट्रका केवल एक मृतदेह पड़ा रहा। शृगालों और कुक्कुरोंने उसका मांसादि प्रायः खा डाला था। भीषण दुर्गन्ध उठता; निकट पहुंचना दुःसाध्य रहा। बुद्धिमती करमा उसी उष्ट्रदेहके उदरमें छिप गयीं। उद्देश्य भी सिद्ध हुआ। अन्वेषणकारी उसको दूसरी दिक् चल दिये। अनाहार केवल कृष्णचिन्ता करते इन्होंने इस भयसे तीन दिन उसी उष्ट्रदेहमें काटे थे—फिर कोई कहीं आ न पहुंचे। तीन दिन पीछे वहांसे बाहर आ और नदीमें नहा करमा बाईने शरीरको निर्मल किया। इसीप्रकार प्रथम बहु क्लेश उठा यह वृन्दावन पहुंची थीं। पवित्र वृन्दावनके दर्शनसे बहु दिनका अभिलाष पूर्ण हुआ और मन एवं प्राण आनन्दसे फूल उठा। फिर यह ब्रह्मकुण्डके तीर वनमें कृष्णदर्शन पानेको ध्यानयोगसे बैठ गयीं।

इधर परशुराम पण्डित कन्याके विरहसे अत्यन्त घबरा देशदेशान्तर घूमते घूमते वृन्दावन पहुंचे थे। उन्हें बहु वन और बहु ग्राम ढूंढते भी कन्याका कोई सन्धान न मिला। अन्तको वह एक दिन किसी विशाल वृक्षकी उच्च शाखापर चढ़ चारो ओर देखने लगे। देखते देखते उन्होंने हठात् ब्रह्मकुण्डके तीर निविड़ वनमें करमा बाईको बैठे पाया। वह घबराकर वृक्षसे उतरे और साथियोंको ले कन्याके निकट पहुंचे। किन्तु उन्होंने अपनी कन्या विभिन्न पायी थी। संसारकी मलिनता करमा बाईके देहमें न रही। समुदाय शरीरमें तपःप्रभा चमकती थी। मुखमण्डल एक आश्चर्य ज्योतिसे पवित्र रहा। फिर यह बाह्यज्ञान न रख ध्यानमें मग्न थीं। चक्षुद्वयसे प्रेमाश्रुकी धारा बहते रही। कन्याकी ऐसी अवस्था देख परशुरामका हृदय फटने लगा। फिर वह करमा बाईको कन्या समझ न सके। अन्तको अत्यन्त घबरा परशुरामने इन्हें साष्टाङ्ग प्रणिपात किया।

बहुक्षण पीछे इन्होंने चक्षु खोले थे। सम्मुख पिताको देख करमाबाईने नीरव प्रणाम किया। फिर यह नीरव हो बैठ रहीं, मानो पिताको कहीं देखा नहीं। पण्डित परशुरामने विनयपूर्वक इनसे लौटनेको कहा और घरमें बैठ कृष्णचिन्तामें लगनेको अनुरोध किया। किन्तु यह किसीप्रकार उसपर स्वीकृत न हुयीं। इन्होंने पिताको उस आशा छोड़ने पर अनुरोध किया और सर्वदा कृष्ण कृष्ण रटनेको उपदेश दिया। कृष्णनाम लेनेको उपदेश देते समय यह प्रेमसे मूर्छित हुयीं एवं पुनर्वार अपने आप मानो चेत उठीं।

परशुराम पण्डित कन्याकी ऐसी असाधारण भक्तिसे चौंक पड़े थे। बारंबार अनुरोध करते भी वह इन्हें वापस ला न सके। अन्ततः परशुराम रोते पीटते घर लौट आये और राजाको जाकर सब हाल सुनाये। राजा भी विशेष भगवत् प्रेमिक रहे। वह करमा बाईको देखने वृन्दावन पहुंचे थे। वहां साक्षात्कार होनेपर राजाने इनको अनिच्छा रहते भी एक कुटीर बनवा दिया। इस कुटीरका ध्वंसावशेष आज भी वृन्दावनमें विद्यमान है। किसी करमा

ऊंचा किनारा। यह पानीके काटसे निकल आता है। २ ठौर ठीक।

करार (अ० पु०) १ स्थैर्य, मजबूती। २ धैर्य, धीरज। ३ सुख, आराम। ४ प्रतिज्ञा, कौल।

करारना (हिं० क्रि०) कां कां करना, श्रुतिकटु शब्द निकालना। यह क्रिया काकपक्षीका बोलना बताती है।

करारबीर—काशीका एक ग्राम। यह काशीसे ४ योजन दूर वायुकोणमें अवस्थित है। यवनपुर यहांसे बहुत नजदीक पड़ता है। करारबीरमें एक प्राचीन दुर्ग विद्यमान है। (भवि० ब्रह्मखण्ड ९०।१०१)

करारा (हिं० पु०) १ नदीका उच्च तट, दरयाका ऊंचा किनारा। २ टीला, टूह। ३ करट, कौवा। ४ मिष्टान्न विशेष, एक मिठाई। (वि०) ५ कठोर, कड़ा। ६ सुदृढ़, मजबूत, दिलका कड़ा। ७ कड़ा सेंका हुआ, सुरसुरा। ८ तीक्ष्ण, तेज। ९ उत्तम, अच्छा। १० बड़ा, भारी। ११ बलवान्, ताकतवर।

करारापन (हिं० पु०) कठोरभाव, कड़ाई।

करारी (हिं० पु०) १ इकरार करनेवाला, जो वचन दे चुका हो। २ उपासक सम्प्रदायविशेष। यह काली, चामुण्डा प्रभृति देवीकी भयङ्कर मूर्ति पूजते हैं। भारतके नाना स्थानमें जो शलाकादि द्वारा अपना मांस छेद भिक्षा मांगते फिरते हैं, उन्हींको बहुतसे लोग करारी कहते हैं।

करारोट (सं० पु०) करे आरोटते भाति, कर-आ-रट-अच्। अङ्गुरीयक, अंगूठी, हाथका छल्ला।

करार्पित (सं० त्रि०) हस्तसे अर्पण किया हुआ, जो हाथमें दिया गया हो।

कराल (सं० स्त्री०) कराय चक्षुरोगादिविघाताय अलति शक्नोति, कर-अल्-अच्। १ वर्षास, काली तुलसी। २ घृतादि भ्रष्ट वेसवार, करायल। (पु०) करं आलाति गृह्णाति अथवा भयप्रदर्शनाय अलति पर्याप्नोति, कर-आ-ला-क। ३ सर्जरसयुक्त तैल। ४ दन्तरोग भेद, दांतकी एक बीमारी। कुपित वायु दन्तका आश्रय पकड़ क्रम क्रमसे उन दांतोंको विकृत और भयानक भावसे उठा देता है। इसीको कराल रोग कहते हैं। यह असाध्य होता है। (माधवनिदान) ५ कस्तूरमृग, एक हिरन। ६ दैत्यविशेष, एक राक्षस। ७ गन्धर्वविशेष। ८ मत्स्यविशेष, एक मछली। ९ कृष्णार्जक, काला बबूल। (त्रि०) १० तुङ्ग, ऊंचा। दन्तुर, ऊंचे दांतवाला। ११ भयानक, डरावना। १२ प्रशस्त, खुला हुआ।

करालक, कराल देखो।

करालकर (सं० त्रि०) १ बलवान् हस्तविशिष्ट, ताकतवर हाथ रखनेवाला। २ बलवान् शुण्डयुक्त, जोरदार सूंड रखनेवाला।

करालकलिक (सं० पु०) कुन्दपुष्पवृक्ष, कुन्दके फूलका पेड़।

करालकेशर (सं० पु०) करालाः केशरो यस्य। सिंह, शेर।

करालत्रिपुटा (सं० स्त्री०) करालानि त्रीणि पुटानि यस्याः। लङ्का नामक शिम्बी धान्य, किसी किस्मका अनाज।

करालदंष्ट्र (सं० त्रि०) भयङ्करदंष्ट्राविशिष्ट, खूंख्वार दाढ़ रखनेवाला।

करालदंष्ट्रा (सं० स्त्री०) करालाः दंष्ट्रा यस्याः। १ काली। २ भयानकदन्तविशिष्टा स्त्री, खौफनाक दांतवाली औरत।

करालमञ्च (सं० पु०) सङ्गीततालविशेष, गानेका एक ताल। इसमें तीन खाली और दो भरे ताल लगते हैं। मृदङ्गमें करालमञ्च इस प्रकार बोलता है—धा केटे खत्ता केटेताग गदिघेने नागदेत धा।

करालम्ब (सं० स्त्री०) करं आलम्बते शरणार्थं गृह्णाति, लम्ब-अच्। १ करग्रहणकारी, हाथ पकड़नेवाला। (पु०) २ हस्त द्वारा साहाय्य प्रदान, हाथकी पकड़।

कराललोचन (सं० त्रि०) कराले लोचने यस्य। भयानक चक्षुविशिष्ट, डरावनी आंखोंवाला।

करालवदना (सं० स्त्री०) करालं वदनं यस्याः। १ काली। २ भयङ्करमुखी स्त्री।

कराला (सं० स्त्री०) कराल-टाप्। १ शारिवा, अनन्तमूल। २ विड़ङ्ग।

करालाङ्ग (सं० स्त्री०) विड़ङ्ग।

करालानन (सं० त्रि०) करालं आननं यस्य। भयङ्कर मुखविशिष्ट, डरावनी सूरतवाला।

वाईवा-पुरीमें भी एक मन्दिर खड़ा है। इस मन्दिरमें जगन्नाथजीको खिचड़ीका भोग लगता है।

करमाल (हिं० पु०) कर्म, नसीब। यह शब्द केवल पद्यमें पड़ता है।

करमाल (सं० पु०) करिशुण्डः तदाकृतिवत् माला समूहो यस्य। १ धूम, धुवां। २ मेघ बादल।

करमाला (सं० स्त्री०) कर कराङ्गुलि-पर्व माला इव जपसंख्या हेतुत्वात्। करपर्वरूप माला, उंगलियोंके पोरकी जपनी। अनामिकाके मध्यसे कनिष्ठादि क्रम पर तर्जनीके मूलपर्व पर्यन्त क्रमशः दश बार जप करनेको करमाला कहते हैं। इसमें मध्यमाका मूल और मध्य पर्व छूट जाता है।

"आरभ्यानामिकामध्यं दक्षिणावर्त्तयोगतः।
तर्जनीमूलपर्यन्तं करमाला प्रकीर्त्तिता॥" (तन्त्रसार)

करमाली (सं० पु०) सूर्य, आफताब।

करमी (हिं० वि०) कर्मकारी, काम करनेवाला।

करमुंहा (हिं० वि०) १ कृष्णवर्ण मुखविशिष्ट, काला दहन रखनेवाला। २ कलङ्कयुक्त, बदनाम।

करमुक्त (सं० स्त्री०) करेण गृहीत्वा मुञ्चति प्रति मुञ्चति, कर-मुच-क्त। (सिद्धा। पा ३।३।११२) १ अस्त्रभेद, बरछा। (त्रि०) २ हस्तच्युत, हाथसे छूटा हुआ। ३ निष्कर, लाखिराज।

करमुखा, करमुंहा देखो।

करमूल (सं० स्त्री०) मणिबन्ध, कलायी।

करमूली (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह एक पार्वत्य वृक्ष है। कुमायूं और गढ़वालमें इसे अधिक देखते हैं। काष्ठ कठोर तथा श्याम धूसरवर्ण होता है, गृहनिर्माण एवं कृषियन्त्र निर्माणमें लगती है। करमूलीके छोटे छोटे पात भी बनते हैं।

करमेल (हिं० पु०) काष्ठखण्ड विशेष, अमेर, कुलेबांसी। यह करगहमें ऊपर बंधता है। करमेलकी मचनियां पैरसे दबाने पर सूत चढ़ता उतरता है।

करमैती करमा बाई देखो।

करमोद (हिं० पु०) धान्यविशेष, एक धान। यह मार्गशीर्ष मासमें कटता है।

करमोदा (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक दरया। (लिङ्ग, मार्क और ब्रह्माण्डपु०)

करम्ब (सं० त्रि०) क्रियते, कृ-अम्बच्। कृकदिकडिकडिभ्यो ऽम्बच्। उण् ४।८२। १ मिश्रित, मिलावटी। (स्त्री०) २ मिश्रण, मिलावट। (पु०) ३ दधिमिश्रित खाद्य, दही मिला खाना।

करम्बक, करम्ब देखो।

करम्बित (सं० त्रि०) करम्बमिश्रणं जातोऽस्य, करम्ब-इतच्। १ मिश्रित, मिला हुवा। २ खचित, जड़ा हुवा।

"मधुकरनिकर करम्बित कोकिलकूजित कुञ्जकुटीरे।" (गीतगोविन्द)

करम्बी (सं० स्त्री०) कलम्बी शाक, एक सब्जी।

कलम्बी देखो।

करम्भ (सं० पु०) क्रियते, रभ्यते, एकत्रीक्रियते धातूनामनेकार्थत्वात् कृ-रभ-घञ्। "अकर्त्तरि च कारके संज्ञायाम्।" पा ३।३।१९। "रभेरशब्लिटोः।" पा ७।१।६३। १ दधिमिश्रित सत्तू, दहीदार सत्तू। २ दग्ध यवमात्र, घरेगा, बहुरी। ३ अविरल पिष्ट यव, दरा हुवा दाना। ४ मिश्रगन्ध, मिलावटी बू। ५ प्रियङ्गु फल। ६ शतमूली, सतावर। ७ शकुनिके पुत्र और देवरातके पिता। ८ रम्भके भ्राता। ९ त्वक्सार-निर्यासविष, एक जहर। १० पुष्पविशेष, एक फूल।

करम्भक (सं० क्ली०) करम्भ स्वार्थे कन्। १ दधिमिश्रित सक्तु, दहीदार सत्तू। इसका अपर नाम यवक्षार है। "निर्भेदमलिभिः प्रादात् विजयश्रीः करम्भकम्।" (राजत० ३।११) २ श्वेतकिणिही, एक दरख्त। ३ अविरल पिष्ट यव, दरा हुवा दाना।

करम्भा (सं० स्त्री०) क्रियते लक्ष्यते वायुना रभ्यते क्षिप्यते विकीर्य्यते वा, कृ-रभ-घञ्-टाप्। १ शतावरी। २ प्रियङ्गु वृक्ष। ३ इन्दीवरा। ४ कलिङ्ग देशीय, स्वनामख्यात एक रमणी। पुरुवंशीय अक्रोधन नृपतिने इनसे विवाह किया था। करम्भाके ही गर्भमें देवातिथिका जन्म हुवा। (भारत, आदि ९५।२१)

करम्भाद (सं० त्रि०) करम्भ भक्षण करनेवाले। यह पूषाका एक उपाधि है।

करम्भि (सं० पु०) यदुवंशीय एक राजा। इनके पिताका नाम शकुनि और पुत्रका नाम देवरात था।

करालास्य (सं० त्रि०) दन्तुरवदन, खौफनाक दाँतोंवाला।

करालिक (सं० पु०) करालां करसदृशशाखानां आलिः श्रेणिर्यत्र कराल-कप् इत्वम्। १ वृक्ष, पेड़। २ करवाल, तलवार।

करालिका (सं० स्त्री०) दुर्गा देवी।

करालित (सं० त्रि०) कराल-इतच्। भययुक्त, डरा हुवा। २ भयङ्कर किया हुवा, जो खौफनाक बना दिया गया हो। ३ बढ़ाया हुवा।

कराली (सं० स्त्री०) कराल-ङीप्। १ अग्निकी सप्त जिह्वाके अन्तर्गत जिह्वाविशेष, आगकी सात जीभोंमें एक जीभ।

"काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा।
स्फुलिङ्गिनी विश्वरुची च देवी लेलायमाना इति सप्त जिह्वाः॥"
(मुण्डकोपनिषत्)

(पु०) २ महादोषान्वित अश्व, निहायत ऐबदार घोड़ा। जिसके नीचे या ऊपर एक बड़ा दांत निकल आता, वह घोड़ा कराली कहाता है। (जयदत्त)

कराव (हिं० पु०) कर्म, कामकाज। यह शब्द प्रायः विवाहादि कर्मके लिये व्यवहृत होता है।

करावा, कराव देखो।

करास्फोट (सं० पु०) करेण आस्फोटः शब्दो यत्र। १ वक्षःस्थलपर एक हाथ सङ्कुचित भावसे रख अन्य हस्त द्वारा ताड़न, ताल ठोंकाव। २ कराघात, हाथकी मार।

कराह (सं० पु०) १ वेदनासूचक स्वर, तकलीफ की आवाज़। शरीरमें पीड़ा होनेसे मनुष्य कराहता है। २ कड़ाह, लोहेकी बड़ी कड़ाही।

कराहना (हिं० क्रि०) पीड़ित स्वरसे बोलना, कांखना, हाय हाय करना।

कराहा (हिं० पु०) कड़ाह, बड़ी कड़ाही।

कराही (हिं० स्त्री०) कड़ाही।

करि (हिं० पु०) करी, हाथी।

करिक (सं० पु०) करो विशेषोऽस्ति अस्य, कन्। विट्खदिर, एक खैर।

करिकणवल्ली (सं० स्त्री०) करिकणः गजपिप्पल्यवयव इव वल्ली। चविका लता।

करिकणा (सं० स्त्री०) गजपिप्पली, बड़ी पीपल।

करिकणावल्ली (सं० स्त्री०) करिकणायाइव वल्ली। चविका वृक्ष, चव्यका पेड़।

करिकर (सं० पु०) करिणः करः, ६-तत्। हस्तिशुण्ड, हाथीकी सूंड़।

करिकर्णपलाश (सं० पु०) हस्तिकर्णपलाश, बड़ा ढाक।

करिकवल (सं० पु०) विधान, व्यवस्था, तजवीज़।

करिका (सं० स्त्री०) करो विलेखनमस्ति अस्याः, अर्शआदित्वादच्। १ कारोहव, कटैया। २ नखक्षत, नाखूनका दाग़ या ज़ख्म।

करिकाल—कर्णाटकका एक नगर। यह अक्षा० १०° ५५´ उ० और देशा० ७०° ५१´ पू०पर तिरुवाड़ोड़ नगरसे ४ कोस दक्षिण अवस्थित है। करिकाल अति प्राचीन नगर है। १७४० से १७६१ ई० तक चलनेवाले कर्णाटक समरके समय यह नगर सुदृढ़ किया गया था। यहां अंगरेजोंसे फरासीसी लड़ मरे। करिकाल नदी कावेरी नदीकी शाखा है। इसकी चारो ओर अपर्याप्त शस्य उत्पन्न होता है। लवण यहांसे बाहर भेजते हैं।

करिकालचोल—एक विख्यात चोलराज। यह पराक्रम चोलके ज्येष्ठ पुत्र रहे। इन्होंने पाण्ड्यराज वीरपाण्ड्यको युद्धमें हराया था। फिर करिकाल चोलने कावेरीके जलप्लावनसे तञ्जोर ज़िला बचानेको एक बांध बनवाया। ८०० शकमें यह विद्यमान थे।

करिकुम्भ (सं० क्ली०) करिणः कुम्भः ६-तत्। १ गजकुम्भ, हाथीके मत्थेकी घड़े जैसी जगह। २ गन्धचूर्ण।

करिकुम्भक (सं० पु०) नागकेशरचूर्ण।

करिकुसुम्भ (सं० पु०) करी नागकेशरस्तद्वत् कुसुम्भः। १ नागकेशरवृक्ष। २ नागकेशरचूर्ण।

करिकृष्णा (सं० स्त्री०) गजपिप्पली, बड़ी पीपल।

करिकेशर (सं० क्ली०) नागकेशर।

करिखई (हिं० स्त्री०) १ नीलता, कालिख। २ कलङ्क, बदनामी।

करर (हिं० पु०) १ विपक्षमिविशेष, कोई जहरीला कीड़ा। इसका शरीर ग्रन्थिविशिष्ट होता है। २ अश्वविशेष, किसी रंगका एक घोड़ा। ३ वृक्षविशेष, एक पेड़। इसे जङ्गली कुसुम कहते हैं। यह भारतके उत्तर-पश्चिम पंजाब प्रभृति देशमें अधिक उत्पन्न होता है। पोलीका तेल इसीके बीजसे निकलता है। अफ़रीदी अथवा मोमजामा उक्त तैलसे प्रस्तुत करते हैं। कररमें पुष्प बहुत आते हैं। काठ मृदु रहता है। शाखा एवं पत्र पशुका खाद्य है।

कररना, कर्राना देखो।

कर्राम (हिं० स्त्री०) धनुःके आकर्षणका शब्द, कमान् चढ़ानेकी आवाज़।

कर्राना (हिं० क्रि०) १ मरराना, चरराना, टूट फूट जाना। २ कठोर शब्द कहना, कड़े पड़ना।

करारी (सं० स्त्री०) करिदन्तमूल, हाथीके दांतकी जड़।

कररी (हिं० स्त्री०) गन्धमटी, वनतुलसी।

कररुद्ध (सं० त्रि०) करे कारागारे हस्ते न वा रुद्धः। १ कारागारमें आबद्ध, कैद खानेमें पड़ा हुआ। २ हस्त द्वारा आबद्ध, हाथसे रुका हुआ।

कररुह (सं० पु०) करात् रोहति उत्पद्यते, कर-रुह-क। इगुपध। पा ३।१।१३५। १ नख, नाख़ून। २ अङ्गुलि, उंगली। ३ कृपाण, तलवार। ४ नखी नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़। ५ अगर्वादि धूप।

कररेखा (सं० स्त्री०) करस्य रेखा, हाथकी लकीर। सामुद्रिकके मतानुसार यह शुभाशुभ फल देती है।

कररेचक रत्न (सं० स्त्री०) नृत्यमुद्राविशेष, नाचमें हाथका एक घुमाव। यह अत्यन्त कठिन होता है। इसमें दोनों कर कटिपर रख स्वस्तिकके सहारे मस्तक पर्यन्त पहुंचाते और मण्डलाकार बनाते हैं। पुनर्वार एक बार नितम्ब पर लाया और अपर बार चक्रकी भांति घुमाया जाता है। इसी प्रकार दोनों कर झूला करते हैं। इसके पीछे लपेट लगा और फैला दोनों कर स्कन्धके निकट घुमाना पड़ते हैं।

करर्द्धि (सं० स्त्री०) करस्य ऋद्धिः। १ करसम्पत्, हाथकी दौलत। २ करताली, हथेलियोंकी आवाज़। ३ करताल, एक बाजा।

करल (सं० पु०) कपित्थ वृक्ष, कैथेका पेड़।

करल (हिं० पु०) कटाह, कड़ाह।

करला (हिं० पु०) अङ्कुर, किल्ला।

करली (स्त्री०) करला देखो।

करलुरा (हिं० पु०) लताविशेष, एक बेल। यह कण्टकाकीर्ण होता है। पुष्प श्वेत एवं पाटल निकलते हैं। भारतवर्षमें करलुरा सर्वत्र मिलता है। फरवरीसे मयी तक पुष्प आते और अगस्त सितम्बरको फल लग जाते हैं। पुष्पोंका अचार बनता है। शाखा-पत्र खानेमें हाथीको बहुत अच्छे लगते हैं।

करवंठ (हिं० स्त्री०) लताविशेष, एक बेल। यह युक्त प्रदेश, बङ्गाल, दाक्षिणात्य और सिंहलमें होती है। पत्र ४।५ इञ्च दीर्घ और पुष्प पीतवर्ण लगते हैं। करवंठकी कोमल शाखासे छाजन छाते या डोरी बनाते हैं।

करवट (हिं० स्त्री०) १ करवर्त, दक्षिण वा वाम पार्श्व लेटनेकी स्थिति। (पु०) २ करपत्र, करवत, आरा।

करवत (हिं० पु०) करपत्र, आरा।

करवर (हिं० स्त्री०) विपद्, आफ़त, चोट।

करवरना (हिं० क्रि०) कलरव करना, चहकना।

करवल (हिं० स्त्री०) कांस्यमिश्रित रौप्य, जस्तामिली चांदी। करवल रुपयेमें दो आने कांस्य धातु रखती है।

करवा (हिं० पु०) १ पात्रविशेष, एक लोटा-जैसा बरतन। यह मट्टीसे टोंटीदार बनाया जाता है। २ कोनिया, घोड़िया। यह लोहेसे बनती और जहाजमें लगती है। ३ मत्स्यविशेष, एक मछली। यह पञ्जाब, बङ्गाल और दक्षिणमें मिलती है।

करवा-गौर (हिं० स्त्री०) कार्तिक कृष्णचतुर्थी, कार्तिक महीनेके अंधेरे पाखकी चौथ। भारतवर्षमें इस दिन सौभाग्यवती स्त्रियां गौरीका व्रत रहती हैं। सायंकाल मट्टीके करवेसे चन्द्रमाको अर्घ्य दिया जाता है। पक्वान्नयुक्त करवेका दान भी होता है।

करवाचौथ, करवागौर देखो।

करवाना (हिं० क्रि०) कराना, काममें लगाना।

करवार (सं० पु०) करं वृणोति वारयति आक्रमणकारिभ्यो वा, कर-वृ-अण्। कर्मण्यण्। पा ३।२।१। कृपाण, तलवार।

करिखा (हिं॰ पु॰) १ मोलता, कालिख। २ कलङ्क, बदनामी।
करिगर्जित (सं॰ क्लो॰) करिणः गर्जितं गर्जनम्, भावे क्त। बृंहित, हाथीका चिङ्घार।
करिगह, करगह देखो।
करिङ्ग—मन्द्राज प्रान्तके राजमहेन्द्री जिलेका एक बन्दर। यह समुद्रके तटपर राजमहेन्द्री नगरसे १५ कोस दक्षिण-पूर्व अवस्थित है। नाना स्थानोंसे यहां जहाज आ लगा करते हैं। वाणिज्य-व्यवसाय भी खूब होता है। पहले यह नगर अधिक समृद्धिशाली रहा। किन्तु अब वह बात देख नहीं पड़ती। १७८४ ई॰को समुद्रसे तरङ्ग आनेपर करिङ्ग डूब गया था। उससे बहुत लोग मरे और मकान् गिर पड़े। इसके पार्श्वस्थ समुद्रको करिङ्गसागर कहते हैं। 'करिङ्ग' कलिङ्ग शब्दका अपभ्रंश है। कलिङ्ग देखो।
करिचर्म (सं॰ क्लो॰) गजचर्म, हाथीका चमड़ा।
करिज (सं॰ पु॰) करिणो जायते, करि-जन-ड। पञ्चम्यामजातौ। पा ३।२।९८। गजशावक, हाथीका बच्चा।
करिजा (सं॰ स्त्री॰) गजमुक्ता।
करिणी (सं॰ स्त्री॰) करिन् स्त्रियां ङीप्। १ हस्तिनी, हथिनी। २ देवताविशेष, एक देवी। ३ वैश्यके औरस और शूद्राके गर्भसे उत्पन्न होनेवाली कन्या।
करिणीसहाय (सं॰ पु॰) गज, हथिनीका जोड़ा हाथी।
करिदन्त (सं॰ पु॰) गजदन्त, हाथीका दांत।
करिदन्ताभ (सं॰ क्लो॰) मूलक, मूली।
करिदमन (सं॰ पु॰) नागदमन, नागदौना।
करिदारक (सं॰ पु॰) करिणं दारयति, करि-दृ-णवुल्। सिंह, शेर।
करिनासिका (सं॰ स्त्री॰) करिणः नासिका। १ गजनासिका, हाथीकी नाक। २ यन्त्रविशेष, एक बाजा।
करिनी (हिं॰) करिणी देखो।
करिप (सं॰ पु॰) करिणं पाति रक्षति, करि-पा-क। हस्तिपालक, महावत।
करिपत्र (सं॰ क्लो॰) तालीशपत्र।
करिपत्रक, करिपत्र देखो।
करिपथ (सं॰ पु॰) करिणः पथ, ह-सत्। १ गजके गमनयोग्य पथ, हाथीके चलने लायक राह। २ देवपथ, हाथीकी राह। ३ जनपदविशेष, एक बसती।
करिपिप्पली (सं॰ स्त्री॰) करिसंज्ञका पिप्पली, मध्यपदलो॰। गजपिप्पली, बड़ी पीपल।
करिपोत (सं॰ पु॰) करिणं बध्नाति यत्र, बन्ध आधारे घञ्। १ हस्तिबन्धनस्तम्भ, हाथी बांधनेका खूंटा। (क्लो॰) भावे घञ्। भावे। पा ३।३।१८। २ गजबन्धन, हाथीका बंधाव।
करिवर (सं॰ पु॰) करिणां वरः। श्रेष्ठ गज, बढ़िया हाथी।
करिबू (हिं॰ पु॰) हरिणविशेष, एक बारहसिङ्गा। यह अमेरिकाके उत्तरीय भ्रुवप्रदेशमें पाया जाता है। इससे लोगोंका बड़ा काम निकलता है। मांस खानेमें आता है। चर्म वस्त्ररूपसे व्यवहृत होता है। फिर उसका तम्बू और जूता भी बनता है। अस्थिसे छुरी प्रस्तुत करते हैं।
करिभ (सं॰ क्लो॰) करीव भाति, भा-क। अश्वत्थ वृक्ष, पीपलका पेड़।
करिमकर (सं॰ पु॰) काल्पनिक राक्षस, झूठा देव।
करिमाचल (सं॰ पु॰) करिणं हन्तुं माचं माव्यं लाति विस्तारयति, करि माच ला क। सिंह, शेर।
करिमुख (सं॰ पु॰) करिणो मुखमिव मुखं यस्य। १ गणेश। ब्रह्मवैवर्तके गणेशखण्डमें लिखते—पार्वतीनन्दन गणेशके जन्म लेनेपर सकल देव सुन्दरमूर्ति देखने पहुंचे थे। भगवतीने क्रमशः सकल देवको आ कोटर देखा। किन्तु उस देवमण्डलीमें शनिको न देख उन्होंने अपने प्राण-प्यारे सुन्दर पुत्रको आकर देखनेके लिये उनसे बारंबार अनुरोध किया था। शनि इस भयसे गणपतिको देखने न गये—मेरी दृष्टिसे समुदय भस्म हो जाता है। अन्ततः भगवतीके आदेशसे उन्हें जाना पड़ा। शनिने आकर भगवतीसे कहा था—मैं जिसे देख पाता, वही भस्म हो जाता है। बारंबार ऐसा कहनेपर भी भगवतीने उनसे गणेशको देखनेके लिये आग्रह प्रकाश किया। उस समय शनिने निरुपाय हो गणेशको देखनेके लिये अपने मुखवस्त्रका एक प्रान्त खोला था। उनकी दृष्टि

करवार—कनाड़ा प्रान्तका एक नगर। यह अक्षा॰ १४° ५०´ उ॰ और देशा॰ ७४° ११´ पू॰पर गोवासे २२ कोस दक्षिणपूर्व अवस्थित है। १६६३ ई॰को विलायतकी ईष्ट इण्डिया कम्पनीने यहां अपनी कोठी बनायी थी। किन्तु टीपू सुलतान्‌के समय उसका विनाश हुआ। स्थानीय अधिवासी कोङ्कण भाषा बोलते हैं। फिर बहु दिन विजयपुर राज्यके अधीन रहनेसे महाराष्ट्र भाषा भी चलती है।

करवारक (सं॰ पु॰) करं वारयति आच्छादयति, कर-वृ-ण्वुल्। १ स्कन्धदेश। २ हस्तावरणकारी, हाथको रोक लेनेवाला। ३ राजस्वबन्धकारी, खिराज न चुकानेवाला।

करवाल (हिं॰ पु॰) १ तलवार, २ नख, नाखून।

करवालिका (सं॰ स्त्री॰) करपालिका, छोटी गदा।

करविन्द स्वामी—आपस्तम्ब-श्रौतसूत्रके एक भाष्यकार।

करवी (सं॰ स्त्री॰) कस्य वायोः रवो विद्यतेऽत्र, गौरादित्वात् ङीष। १ हिङ्गुपत्री, एक बूटी। २ कवरी, जटा। ३ स्वनामख्यात प्रसिद्ध पुष्प, एक फूल। करवीर देखो।

करवीक (सं॰ स्त्री॰) करवी स्वार्थे कन्। करवी। करवी देखो।

करवीर (सं॰ पु॰) करं वीरयति, वीर विक्रान्तौ अण्। १ कृपाण, तलवार। २ देशभेद, काराष्ट्रदेश। ३ राजपुरीविशेष, एक शहर। यह चेदिदेशके निकट अवस्थित है। गोमन्त पर्वतसे करवीर पैदल पहुंचनेमें तीन दिन लगते हैं। कंसका वध सुन जरासन्ध क्रुद्ध हुये और राम तथा कृष्णके विनाशकी कामनासे मथुरापुरी घेरे पड़े थे। किन्तु रामकृष्णने अपने पराक्रमसे उन्हें सम्पूर्णरूप पराजय किया। जरासन्ध फिर भागे थे। वृद्ध चेदीश्वरके अभिप्रायानुसार राम और कृष्णने चेदिसे अनतिदूरवर्ती करवीरपुरकी ओर यात्रा की। आगमनकी वार्ता सुन उक्त करवीरपति शृगाल रामकृष्णको राह रोकनेको उपस्थित हुये, किन्तु घोरतर युद्धमें मारे गये। (हरिवंश ९९-१०१ अ॰) महाभारतके समयसे यह एक तीर्थस्थान माना जाता है। स्कन्दपुराणके सह्याद्रिखण्डमें लिखा है—

> "योजनं दश हे पुत्र काराष्ट्रो देशदुर्धरः ॥ २४
> तन्मध्ये पञ्चक्रोशञ्च काश्याद्यधिकं भुवि।
> क्षेत्रं वै करवीराख्यं क्षेत्रं लक्ष्मीविनिर्मितम् ॥ २५
> तत्क्षेत्रं हि महत् पुण्यं दर्शनात् पापनाशनम्।
> तत्क्षेत्रे ऋषयः सर्वे ब्राह्मणा वेदपारगाः ॥ २६
> तेषां दर्शनमात्रेण सर्वपापक्षयो भवेत्।
> तत्क्षेत्रं केवलं पीठं महालक्ष्म्याश्च तत्त्वतः ॥२७(उत्तरार्ध १४०)

हे पुत्र! दुर्दम काराष्ट्रदेश दशयोजन विस्तृत है। उसीके मध्य काशी प्रभृतिसे अधिक पुण्यस्थान लक्ष्मीविनिर्मित करवीर क्षेत्र है। इस क्षेत्रको देखनेसे महापुण्य मिलता और पाप मिटता है। यहां वेदपारग ब्राह्मण और ऋषि रहते हैं। उनके दर्शन मात्रसे सकल पाप भागता है। केवल इसी क्षेत्रको महालक्ष्मीका पीठ कहते हैं।

काराष्ट्रदेशका वर्तमान नाम कराड़ है। इसी कराड़में करवीर पड़ता है। कराड़ देखो।

४ श्मशान, मरघट। ५ ब्रह्मावर्त। ६ दृषद्वती तीरको चन्द्रशेखरनामक राजपुरी।

७ पुष्पवृक्षविशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—प्रतिहास, शतप्रास, चण्डात, हयमारक, प्रतीहास, शकुन्द, हयारि, अश्वमारक, श्वेतकुम्भ, तुरङ्गारि, अश्वहा, वीर, हयमार, हयघ्न, शतकुन्द, अश्वरोधक, वीरक, कुन्द, शकुन्द, श्वेतपुष्पक, अश्वान्तक, नखराह्व, अश्वनाशन, स्थलकुमुद, दिव्यपुष्प, हरिप्रिय, गौरीपुष्प और सिध्रपुष्प है। यह दो प्रकारका होता है—श्वेत और रक्त। श्वेतको श्वेतपुष्प, श्वेतकुम्भ एवं अश्वमार और रक्तकरवीरको रक्तपुष्प, चण्डात तथा लगुड़ कहते हैं। हिन्दी तथा दक्षिणी भाषामें कनेर, तामिलमें अलारि, तैलङ्गमें गन्नेरु और अंगरेजीमें यह ओलीण्डर (Oleander) कहाता है। इसका वैज्ञानिक अंगरेजी नाम नेरियम ओडोरम (Nerium odorum) है। कनेर देखो।

उभयप्रकार करवीर भारतवर्षके नाना स्थानमें उत्पन्न होता है। किसी वृक्षमें केवल रक्त अथवा श्वेत और किसी किसीमें श्वेतरक्तमिश्रित पुष्प आते हैं। शेषोक्त करवीरको अनेक लोग पद्मकरवी कहते हैं। वैद्यकशास्त्रके मतसे उभयप्रकार करवीर तिक्त,

प्रथम गणपतिके मस्तकपर पड़ी। उससे मस्तक जल गया था। मस्तक विनष्ट होते देख शनिने अपनी आंख पर फिर परदा डाला। पार्वती भी प्रियपुत्रको मस्तकहीन देख शोकसे घबरा गयीं। उसी समय देववाणी हुई थी, 'उत्तरकी ओर शिर किये एक हाथी सोता है। उसीका मुण्ड गणेशका मस्तक बनेगा।' देवगणने अनुसन्धानको निकल देखा था—इन्द्रका हस्ती ऐरावत इसी प्रकार सोता है। उस समय अगत्या देवताने उसी करिका मुण्ड काट गणेशके देहमें जोड़ दिया। इसी प्रकार गणपतिका करिमुख बना था। २ गजमुख, हाथीका मुंह।

करिया (हिं० पु०) १ कर्ण, पतवार। २ कर्णधार, मल्लाह, नाव चलानेवाला। ३ सर्प, काला सांप। ४ इक्षुरोगविशेष, ऊखकी एक बीमारी। इससे रस सूखने लगता और पौदा काला पड़ता है। (वि०) ५ कृष्णवर्ण, काला।

करियाई (हिं० स्त्री०) १ कालता, स्याही, कालापन। २ कालिख।

करियाद (सं० क्ली०) जलहस्ती, दरयायी घोड़ा। यह एक दूध पीनेवाला जन्तु है। जङ्गली सुवरसे करियाद मिल जाता है। इसका शिर मोटा और वर्गाकार होता है। मुंह बहुत बड़ा रहता है। चक्षु एवं कर्ण क्षुद्र और शरीर मोटा तथा भारी लगता है। पैर छोटे रहते हैं। पैरमें चार उंगलियां होती हैं। पूंछ छोटी पड़ती है। पेटमें दो थन लगते हैं। खालपर बाल नहीं जमते। यह प्रायः अफरीकामें सब जगह रहता है। लम्बाई १७ फीट आती है। पानीमें रहना इसे बहुत अच्छा लगता है। किन्तु भूमिपर घासपात खा यह अपना जीवन चलाता है। करियाद अनेक प्रकारका होता है।

करियारी (हिं० स्त्री०) १ कलिकारी, कलियारी, एक जहर। २ लगाम।

करिर (सं० पु०-क्ली०) किरति विक्षिपति, कृ संज्ञायां इरन्। १ वंशाङ्कर, बांसका किल्ला। प्रवजगुच्छ, एक झाड़। २ घट, घड़ा।

करिरत (सं० क्ली०) करिणो रतमिव रतम्, मध्यपद-लो०। १ कामशास्त्रोक्त एक प्रकार रति।

"भुग्नाननस्याङ्गमथोत्सरता..." (शब्दचि०)

२ गजका रमण, हाथीका भोग।

करिरा (सं० स्त्री०) हस्तिदन्तका मूल, हाथीके दांतकी जड़।

करिरी, करिरा देखो।

करिघ्न (सं० त्रि०) करिणं हन्ति हिनस्ति, करिन्-हन्-क। करिको मार डालनेवाला, जो हाथीको मौतके मुंहमें पहुंचाता हो।

करिवर, करिवर देखो।

करिवैजयन्ती (सं० स्त्री०) गजपताका, हाथीका निशान या झण्डा।

करिशावक (सं० पु०) करिणः शावकः। हस्तिशिशु, हाथीका बच्चा। पांच या दश वर्षवाले बच्चेको शावक कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—कलभ, करभ, करिपोत, करिज, विक्क और भिक्क है।

करिशुण्ड (सं० क्ली०) करिणः शुण्डम्। गजशुण्ड, हाथीकी सूंड।

करिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन कर्ता, इष्ठन्। कर्तृतम, बड़ाकाम करनेवाला।

"युद करिष्ठ ...करिष्ठः।" (ऋक् ...)

करिष्णु (सं० पु०) कृ-इष्णुच्। करणशील, करनेवाला।

करिष्यत् (सं० त्रि०) करनेको इच्छुक, करनेवाला।

करिष्यमाण (सं० त्रि०) करनेको प्रस्तुत, जो करने जाता हो।

करिसुत (सं० पु०) करिणः सुतः, ६-तत्। हस्तिशावक, हाथीका बच्चा।

करिसुन्दरिका (सं० स्त्री०) करीव सुन्दरी, करि-सुन्दरी संज्ञायां कन्-टाप् ह्रस्व। १ नागयष्टि। २ वस्त्र शुष्क करनेका यन्त्रविशेष, कपड़ा सुखानेकी एक कल। (हारावली)

करिस्कन्ध (सं० क्ली०) करिणां समूहः, करिन्-स्कन्धच्। १ गजसमूह, हाथियोंका झुण्ड। करिणः

कषाय, कटु और उष्णवीर्य होता है। व्रण, चक्षुरोग, कुष्ठ, क्षत, क्रमि और कण्डु प्रभृति रोगपर इसका मूल लगाया जाता है। करवीरका मूल विषाक्त है। (चक्रदत्त, भावप्रकाश, शार्ङ्गधर) हकीमी किताबोंमें इसका नाम खरजहरा लिखा है। यह प्रदाह और स्फोटक निवारक होता है। यह लगानेमें ही आता, खानेसे क्या आदमी क्या जानवर सबके लिये जहरका काम कर जाता है। मीर मुहम्मद हुसेन नामक मुसलमान हकीमने कहा,—कि कनेरका मूल अपर सकल स्थलमें विषमय पड़ते भी सर्पके काटनेपर विषनिवारक ठहरा है। कोड़ामकोड़ा मारनेको इसका मूल प्रयोगमें आता है।

स्त्रियां अनेक समय करवीरका मूल खा आत्महत्या करती हैं। इसीसे दक्षिणदेशमें स्त्रियोंके मध्य विवाद उपस्थित होनेपर कहा जाता है—कनेरके पास जावो। डाक्टर डाइमकके कथनानुसार करवीरके मूलमें तीव्र हृद्विष होता है। इसका ·००१६ ग्रेनमात्र एक मेंढकको खिलाया गया था। १४ मिनट पीछे ही उसकी हृद्गति रुक गयी। इसका मूल खानेसे दिलका चलना और पसीनेका निकलना बन्द हो जाता है।

करवीपुष्प हिन्दू देवताओंको अति प्रिय है। फिर इसका पत्र एवं वल्कल सुखा बांटकर लगानेसे सर्वप्रकार चर्मरोगको उपकार पहुंचाता है।

करवीरक (सं० क्ली०) करवीरवत् कायति प्रकाशते, कै-क वा करं वीरयति, वीर विक्रान्तौ ण्वुल्। १ अर्जुन वृक्ष। २ करवीर, कनेर। ३ खड्ग, तलवार। ४ करवीर मूलरूप विष, जहरीली कनेरकी जड़।

करवीरकन्दसंज्ञ (सं० पु०) करवीर कन्द इति संज्ञा यस्य। तैलकन्द।

करवीरका (सं० स्त्री०) मनःशिला।

करवीरणी (सं० स्त्री०) पुष्पवृक्ष विशेष, एक फूलदार पेड़। कोङ्कण देशमें इसे 'कफर-खिरणी' कहते हैं। यह ग्रीष्म ऋतुमें होती है। पुष्प रक्त लगते हैं। करवीरणी तिक्त, उष्ण एवं कटु रहती और कफ, वात, विष, आध्मानवात, छर्दि, ऊर्ध्व श्वास तथा क्रमिको दूर करती है। (वैद्यकनिघण्टु)

करवीरतैल, करवीराद्यतैल देखो।

करवीरपुर (सं० क्ली०) करवीर देखो।

करवीरभुजा (सं० स्त्री०) करवीरभुजः शाखा इव भुजः शाखा यस्याः, बहुव्री०। आढ़की, वृक्ष, अड़हरका पेड़।

करवीरभूषा (सं० स्त्री०) करवीरस्य भूषेव भूषा यस्याः। आढ़की, अड़हर।

करवीराक्ष (सं० पु०) खर राक्षसका सेनापति।

करवीराद्यतैल (सं० क्ली०) करवीरं आद्यं प्रधानं यत्र, बहुव्री०। तैल विशेष, कनेरका तैल। श्वेतकरवीरके मूलका रस, गोमूत्र, चित्रक और विड़ङ्ग डाल यथाविधि तैल पकानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। इसमें तिलतैल ४ शरावक, करवीरादिकल्क १ शरावक और जल १६ शरावक पड़ता है। करवीराद्य तैल कुष्ठरोग और भगन्दरको दूर करता है।

श्वेत करवीरका मूल और विष समभाग कूटपीस गोमूत्र एवं तैलमें यथाविधि पाक करनेसे श्वेत करवीराद्यतैल प्रस्तुत होता है। इसके लगानेसे चर्मदल, सिध्म, पामा, विस्फोट प्रभृति रोग मिटते हैं।

रक्त करवीर, जाती, पीतपाल एवं मल्लिकाका पुष्प समभाग और सबके बराबर तैल यथाविधि डालकर पकानेसे जो तैल बनता, वह नासारोगको दूर करता है।

करवीरानुजा (सं० स्त्री०) आढ़की, अड़हर।

करवीरिका (सं० स्त्री०) मनःशिला।

करवीरी (सं० स्त्री०) किरति विक्षिपति दानवराक्षसादीन्, कॄ-अच् करः वीरः पुत्रो यस्याः। १ अदिति। २ पुत्रवती, जिस औरतके बहादुर लड़का रहे। ३ श्रेष्ठगवी, अच्छी गाय।

करवीर्य (सं० पु०) करवीरपुरे भवः, करवीर-यत्। १ धन्वन्तरिके प्रति आयुर्वेद ग्रन्थकर्ता ऋषि विशेष, एक पुराने हकीम। २ वाहुबल, हाथका जोर।

करवील (हिं० पु०) करील, करीर, कचड़ा।

करवैया (हिं० वि०) कर्ता, करनेवाला।

करवोटी (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसे करचोटिया भी कहते हैं।

स्कन्धम्, ६-तत्। २ गजका स्कन्ध, हाथीका कन्धा। (त्रि०) करि स्कन्धमिव स्कन्धं यस्य। ३ करिकी भांति स्कन्धविशिष्ट, हाथीकी तरह कन्धा रखनेवाला।

करिहस्ताचार (सं० पु०) नृत्यभेद, किसी किस्मका नाच। यह एक देशी भूमिचार है। इसमें हंसास्यामक बना उभय पद तिर्यक् रखते और भूमिपर मर्दन करते हैं।

करिहां (हिं० स्त्री०) करिहांव देखो।

करिहांव (हिं० पु०) कटि, कमर। २ कोल्हका मध्य भाग। यह गड़ारीदार होता है। इसीमें कनेठा और भुजेला चक्कर खाया करता है।

करिहारी (हिं० स्त्री०) कलियारी, करियारी।

करी (सं० पु०) करः शुण्डः अस्ति अस्य, कर-इनि। १ हस्ती, हाथी। २ अष्ट संख्या, आठकी अदद।

करी (हिं० स्त्री०) १ कड़ी, धरन, काठका लम्बा और पतला शहतीर। यह छत पाटनेमें लगती है। २ कलिका, कली। ३ छन्दोविशेष, चौपैया। इसमें १५ मात्रा लगती हैं।

करीति (सं० पु०) महाभारतोक्त जनपदविशेष, एक बसती। (भारत, भीष्म)

करीना (हिं० पु०) १ छेनी, टांकी। इससे पत्थर गढ़ा जाता है। २ मसाला, केराना।

करीना (फा० पु०) १ नियम, तरीका। २ प्रथा, चाल। ३ क्रम, सिलसिला। ४ व्यवहार, कायदा। ५ नैचेका एक हिस्सा। यह वस्त्रसे आच्छादित रहता है। करीना फरशीके मुंहपर जमकर बैठता है।

करीन्द्र (सं० पु०) करिणां इन्द्रः, ६-तत्। १ करिश्रेष्ठ, बढ़िया हाथी। २ ऐरावत, इन्द्रका हाथी।

करीब (अ० क्रि० वि०) १ निकट, नज़दीक, पास। २ प्रायः, लगभग।

करीम (अ० पु०) १ ईश्वर। (वि०) २ करुणामय, मिहरबान्।

करीमखान्—१ एक पठान-दलपति। यह ई० अष्टादश शताब्दके शेषभाग चीतूसे मिल ग्वालियरका राज्य लूटने लगे। अन्तको सेंधियाने इन्हें पकड़ लिया था। किन्तु इन्होंने बहुतसा रुपया ले इन्हें छोड़ दिया। छूटनेपर यह अधिक प्रबल पड़े थे। देशके लोग करीमका नाम सुनते ही कांपने लगते। अनेक कष्टसे यह फिर इन्दौरमें पकड़े गये। कुछ दिन पीछे छूटनेपर इन्होंने अंगरेजोंके विरुद्ध अस्त्र उठाये थे। १८१८ ई०को करनेल आदमने इनके विरुद्ध सैन्य भेजा। इन्होंने उस समय यशोवन्त रायका आश्रय लेना चाहा था। किन्तु १५ वीं फरवरीको इन्हें बाध्य हो मालकोमके निकट वश्यता मानना पड़ी। करीमखानकी जीविका निर्वाहके लिये गोरखपुर जिलेमें बुरहियापार मिला था। इनके सन्तान १८५७ ई०के विद्रोह पर्यन्त उक्त स्थानका आय उपभोग करते रहे।

२ ईरानी, जन्द जातिके एक सरदार। इन्होंने जन्दों और माफियोंकी फौज लूटा, पारस्यसे अफगानोंको भगाया था। १७५८ से १७७९ ई०तक करीम खान्ने ईरान्में निष्कण्टक राज्य किया। १७७९ ई०को २री मार्चको ८० वत्सरके वयसपर यह मर गये।

करीमभाट (हिं० पु०) वन्यतृणविशेष, एक जङ्गली घास। यह पशुका खाद्य है।

करीर (सं० पु०-स्त्री०) किरति विक्षिपति आवरणात्, कृ-ईरन्। कृगृपृकटिपटिशौटिभ्य ईरन्। उण् ४।३०। १ वंशाङ्कुर, बांसका कल्ला। यह कटु, तिक्त, अम्ल, कषाय, लघु, शीतल, रुचिकर और पित्त, रक्त, दाह तथा कफकृत् होता है। इसका पर्याय निगुण है। (राजनिघण्टु) २ घट, घड़ा। ३ अङ्कुरमात्र, कोई अंखुवा।

"द्विगाय वंशस्य करीरमेव मां निमग्न विमाथि यज्ञे यदिवा।" (मेघ)

४ मरुभूमिजात उष्ट्रप्रिय कण्टकद्रुम विशेष, करील, कचड़ा। इसे हिन्दुस्थान तथा बङ्गालमें अंटकटारा, अरब एवं बम्बईमें कबर, सीरियामें कबार, तुरुष्कमें कबरिश, और पारस्यमें कबर या कुरक कहते हैं। (Capparis aphylla) संस्कृत पर्याय—क्रकर, ग्रन्थिल, क्रकच, निष्पत्रिका, करिर, गूढ़पत्र, करक और तीक्ष्णकण्टक है। यह प्रायः भारतवर्षमें अधराकर उत्पन्न होता है। फल व्यवहारमें आया करता है। यह कटु, तिक्त, स्वेदजनक, उष्ण और

भेदक है। अर्श, कफ, वायु, आम, विषज शोथ और व्रणको करीर नाश करता है। त्वक् लगानेमें चलती है। मात्रा २ माशे है। (भावप्रकाश)

मखजन-उल्-अदविया नामक हकीमी ग्रन्थके मतानुसार इसके मूलकी त्वक् ग्रहणीय है। यह कण्डुघ्न, कटु, परिष्कारक और पक्षाघात तथा सकल प्रकार वातरोगके लिये उपकारक है। इसका अर्क कानमें डालनेसे कीड़ा मर जाता है।

ऐन्सली साहब दूषित व्रणका इसे महौषध बताते हैं।

यह घना और डालदार झाड़ है। प्रधानतः कंकरीली जगहमें करीर उपजता है। अरब, इजिप्ट (मिस्र) और नूबियामें भी यह पाया जाता है। वसन्त ऋतुके आदिमें फूल और अप्रेल मास फल आते हैं। फल खाया जाता है। करीरका अचार भी लोग बना लेते हैं। इसमें पत्र नहीं लगते। डण्ठल हरा और फूल गुलाबी होता है। काठ हलका पीला रहता और सूखा रखनेसे भूरा निकल पड़ता है। इसमें चमक, कड़ाई और दानेदारी अच्छी होती है। परिमाण प्रत्येक घन-फुटमें कोई ३५ सेर बैठता है। इससे छतकी छोटी कड़ियां, बल्ली और नावकी कोनियां तैयार करते हैं। यह तेलकी कलों और खेतोंके औजारोंमें भी लगता है। करीलकी लकड़ी कड़वी रहने और दीमक न लगनेसे मूल्यवान् समझी जाती है। यह जलानेमें भी अच्छी रहती है। डालें हरी ही मशालकी तरह जला करती हैं।

कवितामें भी करीलका यथेष्ट उल्लेख है। मालती इसपर भ्रमरको जाते देख कुढ़ती और जलती है। पत्र न आनेपर कवि इसीके अदृष्टको बुरा बताते, वसन्तपर कोई दोष नहीं लगाते।

करीरक (सं० क्ली०) करीर एव स्वार्थे कन्। १ वंशाङ्कुर, बांसका अंखुआ। २ युद्ध, लड़ाई।

करीरकुम्भ (सं० क्ली०) करीरस्य पाकः, करीर-कुम्भच्। "तेन पाकमूले पिलादिकर्णादिभ्यः कुणजाहचौ।" पा ५।२।२४।

१ करीरशाक, करीलकी तरकारी। २ करीरफल-काल, करीलके फलनेका समय।

करीरप्रस्थ (सं० पु०) नगरविशेष, एक शहर। कारीरिप्रस्थ भी एक पाठ है।

करीरफल (सं० क्ली०) करीरबीज, करीलका तुख्म।

करीरा (सं० स्त्री०) करीर-टाप्। १ चीरिका, झींगुर। २ हस्तिदन्तमूल, हाथीके दांतकी जड़। ३ मनःशिला।

करीरिका (सं० स्त्री०) करीरमिव आकृतिर्यस्याः, करीर-ठन्-टाप् च। १ हस्तिदन्तमूल, हाथीके दांतकी जड़। २ झिल्ली, झींगुर।

करीरी (सं० स्त्री०) किरति, कृ-ईरन् गौरादित्वात् ङीष्। १ हस्तिदन्तमूल, हाथीके दांतकी जड़। २ चीरिका, झींगुर।

करील (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। करीर देखो।

करीष (सं० पु० क्ली०) कीर्यते विक्षिप्यते, कृ-ईषन्। कृतृभ्यामीषन्। उण् ४।२६। १ शुष्कगोमय, सूखा गोबर। २ पशुका पुरीषमात्र, गोबर। ३ वनभव गोमय, जङ्गली गोबर, बिनुवां कण्डा। इसका अग्नि अति उत्तम होता है। ४ पर्वतविशेष, एक पहाड़।

करीषक (सं० पु०) करीष एव स्वार्थे कन्। १ करीष। करीष देखो। २ जनपदविशेष, एक मुल्क। (भारत, भीष्म)

करीषगन्धि (सं० त्रि०) करीषस्य गन्ध इव गन्धो यस्य। शुष्क गोमयकी भांति गन्धयुक्त, सूखे गोबरकी तरह महकनेवाला।

करीषङ्कष (सं० त्रि०) गोमय झाड़नेवाला, जो गोबर उठाता हो।

करीषङ्कषा (सं० स्त्री०) करीषं कषति हिनस्ति, करीष-कष-खच्-मुम्। सर्वकूलाभ्रकरीषेषु कषः। पा ३।२।४२। वायु, हवा।

करीषाग्नि (सं० पु०) करीषस्थितो ऽग्निः। शुष्क-गोमयवह्नि, सूखे गोबरकी आग।

करिषी (सं० स्त्री०) करीषिन् स्त्रियां ङीप्। गोमयाधिष्ठात्री लक्ष्मी देवी।

"गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्" (श्रीसूक्त)

नृपोंकी तालिका।	समय।
पृथ्वीपाल	१२५२ „
राजापाल	१२६४ „
त्रिलोकपाल	१२८६ „
विपलपाल	१३०८ „
असलपाल	१३३० „
मुकुन्दपाल	१३५२ „
अर्जुनपाल (१म)	१३७४ „
विक्रमजित्पाल	१३९६ „
अभयचांदपाल	१४१८ „
पृथ्वीराजपाल	१४४० „
चन्द्रसेनपाल	१४६२ „
भारतीचंद	१४८४ „
गोपालदास	१५०६ „
द्वारकादास	१५२८ „
मुकुन्ददास	१५५० „
जगपाल	१५८२ „
तुलसीपाल	१५९४ „
धर्मपाल (२य)	१६१६ „
रतनपाल	१६३८ „
शान्तिपाल	१६६० „
अजयपाल (२य)	१६८२ „
रविपाल	१७०३ „
सुजानपाल	१७२६ „
कुंवरपाल (२य)	१७४८ „
गोपीपाल	१७७० „
माणिकपाल	१७९१ „
अमृतपाल	१८११ „
हरिपाल (२य)	१८३६ „
मधुपाल	१८५६ „
अर्जुनपाल	१८७६ „

करौलीके राजा अर्जुनपाल अपनेको कृष्णके वंशधर और यदुवंशीय बताते थे। पहले यह वंश वृन्दावनके निकट व्रजधाममें वास करता था। किसी समय बरसानेमें भी इसका राजत्व रहा। १०५२ ई०को मुसलमानोंने यह स्थान अधिकार किया था। उस समयसे इस वंशने करौलीमें आ अपना राज्य जमाया। १४५४ ई०को मालवपति महमूद खिलजीने करौली आक्रमण किया था। अकबर बादशाहने मालव-जयके पीछे इस राज्यको दिल्लीमें मिला लिया। मुगलोंके गौरवका रवि जब डूब गया, तब महाराष्ट्रोंने इस स्थानको अधिकार कर २५०००) रु० वार्षिक कर लगा दिया। १८१७ ई०को पेशवाने करौलीका उपसत्व अंगरेजोंको सौंपा था। अंगरेजोंने करौलीके राजासे यह बन्दोबस्त बांधा—विपद् पड़नेसे करौलीके राजा सैन्यसंग्रह द्वारा अंगरेजोंको यथासाध्य साहाय्य देंगे। फिर करौलीका राज्य अंगरेजोंके आश्रित हुवा।

१८५२ ई०को महाराज नरसिंहने इहलोक छोड़ा था। उनके पुत्रादि न रहनेसे करौलीको अंगरेजी राज्यमें मिलानेकी बात चली। किन्तु अनेक आन्दोलनके पीछे राजाके आत्मीय मदनपालको राज्यका सिंहासन सौंपा गया। मदनपालने १८५७ ई०को विद्रोहके समय कोटाके विद्रोहियोंके विपक्ष सैन्य भेज अंगरेजोंको यथेष्ट साहाय्य दिया था। इसीसे अंगरेजोंने उनको जि, सी, एस, आईकी उपाधिसे विभूषित किया। १५के स्थानमें १७ तोपोंकी सलामी भी हो गयी थी। १८६७ ई०को मदनपालका मृत्यु होनेपर दो राजावोंके पीछे १८७९ ई०में अर्जुनपालको करौलीका सिंहासन मिला।

करौली राज्यके महसूलसे कितना ही कर दिया जाता है। यहां रीतिके अनुसार पुलिस नहीं। राजाके सिपाही ही पुलिसका काम करते हैं। करौलीमें १६० सवार, १७७० पैदल, १२ गोलन्दाज और ४० तोपें हैं। सिपाही निम्नलिखित १२ दुर्गोंमें रहते हैं—करौली नगर, ऊंटगढ़, मन्द्रैल, नारौली, सपोतरा, दौलतपुर, थाली, अम्बूरा, निन्दा, खुदा, उन्द और खोदाई। करौलीकी टकसाल अलग है। उसमें चांदीका रुपया बनता है।

२ करौली राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २६° ३०´ उ० और देशा० ७७° ५´ पू०पर मथुरासे ३१ कोस दूर अवस्थित है। किसी किसीके मतानुसार अर्जुनदेवके प्रतिष्ठित कल्याणजीवाले मन्दिरसे ही इस नगरका नाम करौली पड़ा। १३४८ ई०को अर्जुनदेवने यह नगर बसाया था। किसी समय

करीषी (सं॰ पु॰) करीषः विद्यते यत्र, करीष-इनि। करीषयुक्त देश, सूखे गोबरका मुल्क।

करखी (हिं॰ क्रि॰ वि॰) तिर्यक् दृष्टि द्वारा, तिरछी नज़रसे।

करुण (सं॰ पु॰) करोति मनः आनुकूल्याय, क-उनन्। कृवृदारिभ्य उनन्। उण् ३।५३। १ स्वनामख्यात निम्बुक वृक्ष, किसी क़िस्मके नीबूका पेड़। (Citrus decumana) इसे हिन्दीमें महानीबू, चकोतरा, बातावी नीबू या सदाफल, बंगलामें बतोर या बातावी नीबू, सिन्धीमें बिजोरा, गुजरातीमें खोबकोलत, मराठीमें पपनस, मारवाड़ीमें दप्पा, तामिलमें बोम्बलिमस, तेलगुमें पाद-पन्डू, कनाड़ीमें चकोतराहन्नू, मलयमें बोम्बेलिमचल्ह, मद्दिसरीमें पूमपलेमूस,ब्रह्मीमें क्कतोनिस और सिंहली-में जमबूल कहते हैं। यह मलयद्वीपपुञ्ज, फ्रेण्डली और फिजीमें स्वभावतः उत्पन्न होता है। करुण जवद्वीपसे भारतमें आया है। उष्णप्रधान देशमें अधिकांश इसे लगाते हैं। भारत तथा ब्रह्ममें यह अधिक होता है। किन्तु दाक्षिणात्य तथा बङ्गदेशकी अपेक्षा आर्यावर्तमें यह कम मिलता है। बताविया से आने कारण ही इसे बतावी कहते हैं। इसका फल बहुत बड़ा रहता और तौलनेपर कभी कभी पांचसे दश सेरतक निकलता है। यह देखनेमें गोलाकार होता है। त्वक् चिकनी और पीली देख पड़ती है। गूदा सफेद या गुलाबी लगता है। गोंद किसी काम नहीं आता। यह वृक्ष सदा फला करता है। बम्बईके बाज़ारमें जो करुण दिसम्बर या जनवरी मास आता, वह सबसे अच्छा कहा जाता है।

राजवल्लभने इसके फलको कफ, वायु, आम तथा मेदोनाशक और पित्त-प्रकोपक बताया है।

२ शृङ्गारादि अष्टरसके अन्तर्गत तृतीय रस। साहित्यदर्पण इसका लक्षणादि इस प्रकार लिखता—इष्टबान्धवादिके वियोगसे करुण रस उठता है। इसका कपोतवर्ण होता है। अधिष्ठात्री देवता यम हैं। करुणरसका स्थायिभाव शोक,आलम्बन-भाव शोच्य जन (जिसका वियोग पड़ गया हो) और उसके दाहादि-की अवस्था ही उद्दीपनभाव है। इसका अनुभाव दैवनिन्दा, भूतलपर पतन, क्रन्दन, विवर्णता, ऊर्ध्व-श्वास, निर्वातस्थ प्रदीपकी भांति निर्जीववत् निश्वासकी रोक और प्रलाप है। करुण रसका व्यभिचार भाव वैराग्य, जड़ता और चिन्ता प्रभृति है। दैवनिन्दाका उदाहरण नीचे देते हैं,—

"विपिने क्व जटानिबन्धनं तव चेदं क्व मनोहरं वपुः।
अनयोर्घटना विधेः स्फुटं ननु खड्गेन शिरीषकर्तनम्॥"
(साहित्यदर्पणधृत राघवविलास)

सङ्गीतशास्त्रमें यह रागरागिनी करुणरसमें गेय है,—भैरव, भैरवी, रामकली, खट, गान्धार, जोगिया, विभास, ककुभ, देवकरी, अलैया, विला-वल, सिंदूरा, सिन्धु, मुलतानी, पूर्वी, टोड़ी, गौरी, केदारा, ईमन कल्याण, जयजयन्ती, हमीर, भूपाली, कानड़ा, खम्माच, झंझोटी, विहाग, बागीश्वरी, सूरत, शङ्करा, मोहिनी, मालकोष, बङ्गाली, मलार और ललित।

३ दया, मेहरबानी, दूसरेका दुःख दूर करनेकी इच्छा। ४ करुणाका विषय, मेहरबानीकी बात। "करुणविमुखेन मृत्युना हरता त्वां वद किं न मे हृतम्॥" (माघ) ५ बुद्धदेव, किसी बुद्धदेवका नाम। ६ परमेश्वर। ७ प्राणियोंके अभयजनक परिव्राजक। ८ तीर्थविशेष। (कालिकापुराण) ९ फलितवृक्ष, मेवादार पेड़। १० मल्लिका वृक्ष, चमेली। ११ असुरविशेष। (त्रि॰) १२ दयालु, मेहरबान्। १३ शोकार्त, रञ्जीदा। (अ॰) १४ शोकसे रो रो कर। (क्ली॰) १५ पावन कर्म, पकीज़ा काम।

करुणध्वनि (पु॰ सं॰) करुणासूचकः ध्वनिः। दुःख या शोकमें मानव मुखसे निर्गत शब्द, अफ़सोसकी आवाज़।

करुणमल्ली (सं॰ स्त्री॰) करुणा करुणयोग्या मल्ली। नवमल्लिका, मोतिया। (Jasminum sambac) इसे हिन्दीमें मोतिया, बेला, वनमल्लिका या मोगरा, बंगलामें मल्लिक, पञ्जाबीमें चम्ब, मराठीमें मोगरी, मारवाड़ीमें मोगरा, गुजरातीमें मोगरो, तामिलमें मल्लिग्, तेलगुमें बोड्डु मल्ले, कनाड़ीमें मल्लिगे, मलयमें

बढ़से भी. पार्वतीय मीना जातिके उत्पातसे इसकी समृद्धि मिट गयी। १५०६ ई०को राजा गोपालदासके शासनकाल इस नगरने पूर्वश्री पायी थी। उसी समय यहां बहु सुरम्य हर्म्य बने। नगर प्रायः एक कोस है। इसकी चारो ओर मिट्टीकी पत्थरका प्राचीर खड़ा है। नगरमें घुसनेको ६ सिंहद्वार और ११ गुप्तद्वार हैं। करौलीके मध्य गोपालदासके समयका एक सुवृहत् राजप्रासाद बना है। प्रासादकी चारो ओर अत्युच्च प्राचीर है। सिंहद्वार दो हैं। प्रासादके मध्य राजमहल और दीवान-आम नामक गृह देखने योग्य है। इन दोनों गृहोंका चित्र विचित्र कारुकार्य और शिल्पनैपुण्य देखनेसे निर्माणकारियोंकी यथेष्ट प्रशंसा करना पड़ती है। यहां शिकारगञ्ज, शिकारमहल और आममहल नामक तीन मनोरम उद्यान बने हैं।

कर्क (सं० पु०) क-क। कृदाधारार्चिकलिभ्यः कः। उण् ३।४०। १ श्वेत अश्व, सफेद घोड़ा। २ कुलीर, केकड़ा। इसका शरीर वल्कलसदृश शङ्कास्थिसे आच्छादित रहता है। पाद दश होते हैं। उनमें अगला जोड़ा शुङ्गल बन जाता है। ३ दर्पण, आयीना। ४ घट, घड़ा। ५ कर्कटराशि। पुनर्वसुके अन्तिम चरण, पुष्या और अश्लेषा नक्षत्रपर यह राशि रहता है। ६ अग्नि, आग। ७ तिल। ८ सौन्दर्य, खूबसूरती। ९ कण्टक, कांटा। १० कर्कटशृङ्ग, ककड़ासींगी। ११ कङ्कर, किसी किस्मका पत्थर। १२ बदरी वृक्ष, बेरका पेड़, बेरी। १३ बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़। १४ गन्धक। १५ काक, कौवा। १६ कङ्कपक्षी, एक चिड़िया। १७ नागकेसर, एक तौल। १८ वृक्षविशेष, एक पेड़। १९ कात्यायनश्रौतसूत्रके एक भाष्यकार। (त्रि०) २० शुभ्रवर्ण, सफेद। २१ श्रेष्ठ, बड़ा। २२ उत्तम, अच्छा।

कर्क—राष्ट्रकूटाधिपति गोविन्दराजके पुत्र। खोदित शिलालेखके अनुसार यही प्रथम कर्क रहे। इनके दो पुत्र थे—इन्द्रराज और कृष्णराज। कर्कके मरनेपर राष्ट्रकूटराज्य दो भागमें बंट गया। ६८५ ई०को कर्क राज्य करते थे। राष्ट्रकूट देखो।

राष्ट्रकूट-वंशीय २य कर्क—गुजरातराज ३य इन्द्रके पुत्र रहे। उनका अपर नाम सुवर्णवर्ष था। वह गुजरातमें राजत्व चलाते थे। २य ध्रुवराज उनके पुत्र रहे। बरदा और अपर स्थानके ताम्रशासन और शिलालेखमें उनका समय ७३४ और ७४८ शक निर्दिष्ट है। उक्त उभय राष्ट्रकूटराज प्रबल पराक्रान्त थे। इस वंशमें एक ३य कर्क भी रहे। उनका अपर नाम अमोघवर्ष वा वल्लभनरेन्द्र था। पिता ४र्थ कृष्णराज रहे। समय ८७२-७३ ई० बताया जाता है।

कर्क उपाध्याय—कात्यायनश्रौतसूत्र और पारस्कर गृह्यसूत्रके भाष्यकार। सायणाचार्यसे पहले यह विद्यमान रहे। सायणने अपने वेदभाष्यमें कर्कका मत उद्धृत किया है।

कर्कखण्ड (सं० पु०) कर्कः खण्डः भूमिभागो यत्र, बहुव्री०। जनपदविशेष, एक मुल्क। (भारत, वन २५५-७८)

कर्कचिर्भिटिका, कर्कचिर्भिटी देखो।

कर्कचिर्भिटी (सं० स्त्री०) कर्कवर्णा शुक्ला चिर्भिटी, मध्यपदलो०। १ चिर्भिटी, छोटी ककड़ी। २ ककटी भेद, किसी किस्मकी ककड़ी।

कर्कट (सं० पु०) कर्क-अटन्। १ वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—कर्क, क्षुद्रधात्री, क्षुद्रामलक और कर्कफल है। फल छोटे आंवलेके बराबर होता है। यह रुच्य, कषाय, अतिदीपन, कफपित्तकर, ग्राही, चक्षुष्य, लघु और शीतल है। (राजनिघण्टु) २ जलजन्तुविशेष, केकड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—कर्कटक, कुलीर, कुलीरक, षंढमक, पङ्गवास और तिर्यक्‌गामी है। इसको बंगलामें कांकड़ा, मराठीमें दरलाका केकड़ा, तामिलमें नदुलमोंडु, तेलगुमें समुद्रपु, मलयमें कवितिङ्ग, फारसीमें पञ्चपा, अरबीमें खिरचिङ्ग, लाटिनमें कानसर (Cancer) और अंगरेजीमें क्राब (Crab) कहते हैं। युरोपीय प्राणितत्वविदोंमें कर्कट जातिको दशावरणविशिष्ट दशपादी जीवमें भी (Crustaceans of the order Decapoda)के मध्य माना है।

इसके वक्षःस्थलनिःसृत पांच जोड़े प्रत्यङ्ग होते हैं। इसीसे फारसीमें इसे 'पञ्चपा' अर्थात् पञ्चपद-

पुन मुल, मद्रासीमें मल्लि, सिंहलीमें विचिमल, अरबीमें समन और फ़ारसीमें गुले सुफ़ेद कहते हैं।

करुणमल्ली एक सुगन्धिलता है। भारत, ब्रह्मदेश और सिंहलमें सर्वत्र २००० फ़ीट ऊंचे स्थानमें उत्पन्न होती है। दोनों गोलार्धके उष्णप्रधान देशमें इसे लगाया करते हैं।

इसका पुष्प अति सुगन्धि होता है। भारतवर्षमें करुणमल्लीका तैल अधिक व्यवहारमें आता है। पुष्पको बांटकर स्तनपर लगानेसे दुग्ध बहुत उतरता है। नासूरपर पत्तीका पुलटिस चढ़ता है। पञ्जाबमें यह पागलपन, आंखकी कमज़ोरी और मुंहकी बीमारीपर चलती है।

पूर्वीय देशमें सुगन्धके कारण इसके पुष्पका बड़ा आदर है। अरबी, फ़ारसी और संस्कृतके कवि प्रायः इसका उल्लेख किया करते हैं।

करुणविप्रलम्भ (सं० पु०) करुणयुक्तो विप्रलम्भः। शृङ्गार-रसका एक भेद। नायक-नायिकाके मध्य एकके परलोक जाने पर पुनर्वार मिलनकी आशासे जीवित व्यक्ति जिस प्रकार कष्टसे जीवन बिताता, वही करुणविप्रलम्भ कहाता है। जैसे—कादम्बरीके पुण्डरीक और महाश्वेता-वृत्तान्तमें पुनः और पुण्डरीकके लाभ विषयपर करुण रस ही पटकता है। किन्तु देववाणी सुननेपर पुण्डरीकसे मिलनेकी आशा शृङ्गाररसका उद्रेक है।

करुणवेदित्व (सं० क्ली०) करुणं दयां वेत्ति जानाति, विद्-णिनि भावे त्व। दयावानका धर्म, मेहरबानका फ़र्ज़।

करुणवेदी (सं० त्रि०) करुणं दयां वेत्ति परदुःखं अनुभवति, विद्-णिनि। दयावान्, मेहरबान्।

करुणा (सं० स्त्री०) करोति चित्तं परदुःखहरणाय, कृ-उनन्-टाप्। १ अपरके दुःखविनाशकी इच्छा, दया, तर्स। इसका संस्कृत पर्याय—कारुण्य, घृणा, कृपा, दया, अनुकम्पा, अनुक्रोश और शूक है। २ शोक, रञ्ज, अफ़सोस। ३ गङ्गाका एक नाम। "कृष्णा करुणा काला कृष्णाणा कलावती।" (काशीख० २९।३१) ४ पुलस्त्य मुनिकी कनिष्ठा कन्या। ५ करुणावृक्ष।

करुणाकर (सं० त्रि०) करुणाया आकरः, ६-तत्। अत्यन्त दयालु, निहायत मेहरबान्। (पु०) २ पद्मनाभके पिता।

करुणात्मक (सं० त्रि०) करुणः करुणारसः आत्मा यस्य, बहुव्री०। करुणरसविशिष्ट, रहमदिल, अफ़सोससे भरा हुआ।

करुणात्मा (सं० पु०) करुणो दयार्द्र आत्मा यस्य, बहुव्री०। दयावान्, मेहरबान्।

करुणादृष्टि (सं० स्त्री०) १ दयाकी दृष्टि, मेहरबानी। २ दृष्टि विशेष, एक नज़र। यह नृत्यकी एक दृष्टि है। इसमें ऊपरी पलक दबायी और आंसू गिरा नाककी नोकपर नज़र लायी जाती है।

करुणानिदान (सं० त्रि०) करुणा निदीयते निधित्य दीयते येन, करुणा-नि-दा-ल्युट्। दयालु, मेहरबानी करनेवाला।

करुणानिधान, करुणानिदान देखो।

करुणानिधि (सं० त्रि०) करुणा निधीयतेऽत्र, करुणा-नि-धा-कि। कर्मण्यधिकरणे च। पा ३।३।९३। दयावान्, मेहरबान्।

करुणान्वित (सं० त्रि०) करुणाया अन्वितः, ३-तत्। करुणायुक्त, मेहरबान्।

करुणापर, करुणान्वित देखो।

करुणामय (सं० त्रि०) करुणा प्राचुर्येण अस्त्यस्य, करुणा-मयट्। दयामय, मेहरबान्।

करुणामल्ली, करुणमल्ली देखो।

करुणायुक्त (सं० त्रि०) करुणया युक्तः, ३-तत्। दयावान्, मेहरबान्।

करुणारम्भ (सं० त्रि०) करुणः करुणरस आरम्भो यस्य, बहुव्री०। १ करुणारससे आरम्भ कर लिखित, अफ़सोससे शुरू कर लिखा हुआ। (पु०) २ करुणरसका आरम्भ, अफ़सोसका आग़ाज़।

करुणार्द्र (सं० पु०) करुणाया आर्द्रः, ३-तत्। अत्यन्त दयालु, रहमदिल।

करुणार्द्रचित्त (सं० पु०) करुणाया आर्द्रं चित्तं यस्य, बहुव्री०। दयालुहृदय, रहमदिल।

करुणावान् (सं० त्रि०) शोकार्त, रहमके लायक़।

विशिष्ट कहा है। वक्षदेशके प्रत्येक पार्श्वमें स्पर्शेन्द्रिय वेष्टित है।

कर्कट पृथिवीके नाना स्थानमें रहता है। फिर यह कयी प्रकारका है। समुद्रमें रहनेवाला कर्कट स्वभावतः बहुत बड़ा होता है। किन्तु जो नदीमें वास करता, वह सामुद्रिक कर्कटकी अपेक्षा क्षुद्र पड़ता है। फिर जलाशयमें रहनेवाला नदीके कर्कटसे भी छोटा निकलता है। सकल प्रकार कर्कटका पृष्ठावरण देखनेमें समान नहीं लगता। देशभेद और जलवायुके अवस्थाभेदसे नाना स्थानपर कयी आकारका कर्कट होता है। यह अण्डज जीव है। प्रथमावस्था पर मातृवक्षमें कर्कट अति क्षुद्र डिम्बाकार रहता है। समय आनेसे डिम्ब फूटनेपर यह निकल पड़ता है। उस अवस्थामें इसको किसी प्रकारका कीड़ा समझनेसे भ्रम उत्पन्न होता है। यह डिम्बसे निकलते ही जलमें तैरने लगता है। उस समय इसको अनेक विपद् झेलना पड़ता है। जलचर जीव अपना आहार समझ सद्योजात कर्कट पकड़कर खा जाते हैं। यह जितना ही बढ़ता, उतना ही इसका रूप भी बदलता है। प्रथमावस्थासे पांच प्रकार रूप बदलनेपर प्रकृत कर्कट रूप देख पड़ता है।

यह समुद्रके अतल सलिल, जलके तट अथवा सलिल निकटस्थ पर्वतके गर्तमें रहता है। फिर उस वनमें भी कर्कट गर्त बना वास करता, जहां समुद्र अथवा नदीका जल समय-समय पहुंचता है। दो-एक जातिको छोड़ सकल प्रकार कर्कट पद द्वारा तैर नहीं सकता, वरं स्थलपर घूमा करता है।

इसके बराबर झगड़ालू और भुक्खड़ जलचर जीव दूसरा नहीं होता। बहुत कर्कट एकत्र होते ही युद्ध बच पड़ता है। बलवान् विजय पाता और अतिदौर्बल्य मारा जाता है। शीतकालको यह गभीर जलमें रहता, फिर ग्रीष्म लगनेपर तटके निकट आ पहुंचता है। पृथिवीका सकल प्रकार कर्कट मानवजातिके खाने लायक होता है। राजनिघण्टुके मतसे यह मलमूत्रपरिष्कारक, भग्नसन्धानकारी (भङ्गस्थानको जोड़ सकनेवाला) और वायुपित्तनाशक है। कृष्णकर्कट अर्थात् काला केकड़ा बलकारक, ईषत् उष्ण और वायुनाशक होता है।

३ कङ्कपक्षी, करकरा, एक चिड़िया। ४ पद्ममूल, भसीड़, कंवलको मोटी जड़। ५ तुम्बी, लौकी। ६ मेषादि द्वादश राशिमें चतुर्थ राशि। यह राशि पुनर्वसु नक्षत्रके शेष पादसे पुष्या और अश्लेषा नक्षत्र तक रहता है। इसके देवता कुलीराकृति हैं। उनका पृष्ठदेश उन्नत होता है। वह श्वेतवर्ण, कफप्रकृति, स्निग्ध, जलचर, विप्रवर्ण, उत्तर दिक्पाल, बहुस्त्रीसङ्ग और बहु सन्तानशाली हैं। कर्कट राशिमें जन्म लेनेसे मनुष्य कपटचित्त, मृदुभाषी, अन्नपानाश्रयत, प्रवासी और अकर्मा निकलता है। फिर जन्मकालीन चन्द्र इस राशिमें रहनेसे मानव नृत्यगीतादि बहु कलाप्रिय, निर्मलवृत्ति, क्षम, सुगन्धप्रिय, जलकेलिप्रिय, धनवान्, बुद्धिमान् और दाता होता है। जो कर्कट लग्नमें जन्म ग्रहण करता, वह भोगी, सर्वजनप्रिय, मिष्टान्नपानभोजी और आत्मीयप्रिय रहता है।

७ सर्पविशेष, एक सांप। ८ कलश, घड़ा। ९ कीलक, कील। १० कण्टक, कांटा। ११ रोगविशेष, एक बीमारी (Cancer)। यह अर्बुदजात-रोग असाध्य होता है। १२ तुलादण्डका आभुग्न प्रान्त, तराजूकी डण्डीका टेढ़ा सिरा। इसीमें पलड़ेकी रस्सी बंधती है। १३ मण्डलको जीवा, दायरेका निस्फ कुतर। १४ शाल्मलीवृक्ष, सेमरका पेड़। १५ बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़। १६ कर्कटशृङ्गी, काकड़ासींगी। १७ सड़ंसा। १८ नृत्यहस्तविशेष, नाचकी एक क्रिया। इसमें हस्तद्वयकी अङ्गुलि बाह्य एवं अभ्यन्तर रूपसे मिला घटकायी जाती हैं। यह आलस्यके भावको बताता है।

कर्कटक (सं० पु०-क्ली०) कर्कट एव स्वार्थे कन्। १ कुलीर, केकड़ा। २ कर्कटराशि। ३ वृक्षविशेष, एक पेड़। ४ काण्ड-भग्न नामक अस्थिभङ्गविशेष, हड्डी टूटनेकी बीमारी। ५ विषविशेष, एक जहर। यह त्रयोदशविध स्थावरकन्द विषमें अन्यतम है। ६ कीलक, कीला। यह केकड़ेके पञ्जेकी भांति

करुणाविप्रलम्भ, करुणविप्रलम्भ देखो।

करुणार्द्रचित्त, करुणार्द्र देखो।

करुणावेदिता (सं० स्त्री०) करुणवेदित्व देखो।

करुणासागर (सं० पु०) करुणायां सागर इव, उपमि०। दयाका समुद्रस्वरूप, निहायत मेहरबान्।

करुणी (सं० पु०) करुणा अस्त्यस्य, करुणा-इनि। सुखादिभ्य। पा ५।२।१३१। १ करुणायुक्त, दयावान्, मेहरबान्। २ शोकार्त, पुर-अफसोस। (स्त्री०) शोणपुष्पी, गरमीमें फूलनेवाला एक पेड़। इसे कोङ्कणमें कवरखिरनी कहते हैं। करुणीका संस्कृत पर्याय—शोणपुष्पी, रक्तपुष्पी, चारिणी, राजप्रिया, राजपुष्पी, सूक्ष्मा और ब्रह्मचारिणी है। यह कटु, तिक्त, उष्ण और कफ, वायु, आध्मान (पेट फूलना), विषवमन तथा ऊर्ध्वश्वासनाशक होती है। (राजनिघण्टु)

करुत्याम (सं० पु०) तुर्वसुवंशीय दुष्मन्त राजाके एक पुत्र। (हरिवंश ३२ अ०)

करुना (हिं०) करुणा देखो।

करुन्धक (सं० पु०) शूरके पुत्र और वसुदेवके भ्राता।

करुन्धम (सं० पु०) तुर्वसुवंशीय त्रैसानुके एक पुत्र। (हरिवंश ३२ अ०)

करुम (वै० पु०) अथर्ववेदोक्त पिशाच विशेष।

"ये शालाः परिनृत्यन्ति सायं गर्दभनादिनः।
कुसूला ये च कुक्षिलाः ककुभाः करुमाः स्त्रिमाः।
तानोषधे त्वं गन्धेन विषूचीनान् विनाशय॥" (अथर्व ८।६।१०)

करुर (हिं०) कटु देखो।

करुवा (हिं०) कटु देखो।

करुवा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह दारचीनीसे मिलता जुलता है। दाक्षिणात्यके उत्तर कनाड़ेमें करुवा उत्पन्न होता है। इसके सुगन्धि वल्कल तथा पत्रका तैल शिरःपीड़ादि रोगपर व्यवहार किया जाता है। फल दारचीनीकी अपेक्षा बृहत्-आकार और काली दारचीनी कहाता है।

करुवायी (हिं० स्त्री०) कटुता, तीखापन।

करुवार (हिं० पु०) १ नौदण्डविशेष, नावका एक डांड़। इसका बांस अधिक लम्बा लगता है। बेपतवारकी नाव इसीसे चलायी जाती है। २ लोहेका एक यन्त्र। इसके नोकदार किनारे मुड़े रहते हैं। इससे काठ या पत्थर जोड़ा जाता है।

करू (हिं०) कटु देखो।

करू (सं० स्त्री०) कृ-ऊ। १ कर्तन, काट-छांट। २ क्षत, कटा हुआ।

करूकर (वै० स्त्री०) ग्रीवा तथा कशेरुकाका ग्रन्थि, गर्दन और रीढ़का जोड़।

करूलती (वै० वि०) भग्नदन्त, दंतटूटा।

करूवा (हिं० पु०) १ कड़ुआविशेष, चायका काढ़ा। २ स्वर्णविशेष, एक सोना। इसमें तोले पीछे ४ रत्ती चांदी रहती है। ३ कुला।

करूष (सं० पु०) कृ-ऊषन्। जनपदविशेष, एक मुल्क। दन्तवक्र इस देशके अधिपति थे। (भारत, सभा ३ अ०) वर्तमान शाहाबाद जिलेका ही नाम करूष है। रामायणमें इसका अवस्थान गङ्गातट पर लिखा है। पहले करूषमें वन अधिक था। ताड़का राक्षसी यहीं बसती रही।

करूषक (सं० पु०) १ वैवस्वत मनुके पुत्र। २ फलविशेष, फालसा।

करूषज (सं० पु०) करूषदेशे जायते, करूष-जन-ड। दन्तवक्र।

"नाविशाय युक्तांशौ शिशुपालकरूषजौ।" (भारत, आदि)

करूषाधिपति (सं० पु०) करूषस्य तन्नामकजनपदस्य अधिपतिः, ६-तत्। १ करूष देशके राजा। २ दन्तवक्र।

करेंसी (अं० स्त्री० = Currency) १ प्रचार, रिवाज, चलन। २ प्रचलित मुद्रा, सिक्का, चलता रुपया, सरकारी नोट।

करेला (हिं० पु०) यकृत्, कलेजा, दिल।

करेली (हिं० स्त्री०) पशुकी यकृत्का मांस, जानवरके कलेजेका गोश्त। चट्टानोंकी तहमें जो सोंधी पपड़ी रहती, उसे जनता 'पत्थरकी करेली' कहती है।

करेट (सं० पु०) करे कराङ्गुलिषु, अटति उत्पद्यते, करे-अट-अच् अलुक्समा०। नख, नाखून।

करेटव्या (सं० पु०) करे अटं अटनं व्ययति, करे-

टेढ़ा रहता है। ७ वस्तुभेद, किसी चीजकी जात। ८ वृक्ष, जड़। ९ काष्ठामलक, जङ्गली आँवला। १० सन्निपातज्वर विशेष, एक बुखार। यह मद्यहीन-प्रबल वातादिसे उत्पन्न होता है। इससे व्यथा, वेपथु, तृष्णा, दाह, गौरव, अग्निसान्द्य प्रभृति रोग लग जाते हैं। फिर अन्तर्दाह और वाक्यनिरोध भी हुआ करता है। (भावप्रकाश) ११ कर्कटशृङ्ग, ककड़ासींगी।

कर्कटकरञ्ज (सं० पु०) करञ्जविशेष, एक करञ्जी। इसमें केकड़ेके पञ्जे-जैसी एक कील लगी रहती है।

कर्कटकास्थि (सं० क्ली०) कुलीरकास्थि, केकड़ेकी खोल।

कर्कटकी (सं० स्त्री०) १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। २ कर्कटकी, मादा केकड़ा।

कर्कटक्रान्ति (सं० स्त्री०) निरक्षरेखासे साढ़े तेरह अंश उत्तरस्थित अक्ष-रेखा, खत-सरतान्। (Tropic of cancer)।

कर्कटचरण (सं० पु०) कुलीरकपाद, केकड़ेका पैर।

कर्कटच्छदा (सं० स्त्री०) १ पीतघोषा, पीले फूलकी तरोई।

कर्कटवल्ली (सं० स्त्री०) १ गजपिप्पली, बड़ी पीपल। २ कुम्भिनी, खजोहरा। ३ अपामार्ग, लटजीरा।

कर्कटशृङ्गिका (सं० स्त्री०) कर्कटस्य शृङ्गमस्याः, कर्कटशृङ्ग स्वार्थे अन्-टाप् इत्वम्। कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।

कर्कटशृङ्गी (सं० स्त्री०) कर्कटस्य शृङ्गमिव शृङ्गमग्रभागो यस्याः, बहुव्री०। लताभ्यन्तर कर्कटदंष्ट्राकार ओषधि, ककड़ासींगी। इसे नेपालीमें रसोधसयी और पञ्जाबीमें ककर कहते हैं। (Rhus succedanea) यह वृक्ष कोई १० फीट लंबा होता है। हिमालयपर काश्मीरसे सिकिम और भूटानतक कर्कटशृङ्गी मिलती है। यह खसिया-पहाड़ और जापानमें भी पायी जाती है। जापानमें इसकी छालको खोदकर रस निकालते हैं। इस रससे रङ्ग (वार्निश) तैयार होता है। फिर फलको कुचल कर एक दूसरे फलके साथ उबालते और मोम निकालते हैं। इस मोमकी बत्तियां बनती हैं। कभी कभी यह जापानी मोमके नामसे विलायत भी बिकनेको भेजा जाता है। इसका दुग्ध अति तीक्ष्ण होता है। फल एक बाजारू चीज़ है। काश्मीरमें इसे क्षयरोगपर प्रयोग करते हैं।

मनुष्य कर्कटशृङ्गीका वल्कल खाता है। काठ श्वेत, प्रभायुक्त तथा मृदु रहता, किन्तु अभ्यन्तरमें कुछ कृष्ण निकलता है। इसका संस्कृत पर्याय—कर्कटाख्या, महाघोषा, शृङ्गी, कुलीरशृङ्गी, चक्राङ्गी, कुलिङ्गी, कासनाशिनी, घोषा, वनमूर्धजा, वक्रा, शिखरी, कर्कटाङ्गा, कर्कटी, विषाणिका, कोशोरा, चन्द्रास्पदा और नाशाङ्गा है। यह कषाय एवं तिक्तरस, उष्णवीर्य और कफ, वायु, क्षय, ज्वर, ऊर्ध्ववायु, तृष्णा, कास, हिक्का, अरुचि तथा वमिनाशक होती है। (राजनि०)

कर्कटा (सं० स्त्री०) १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। २ खिमुषा। यह एक लता है। इसमें कारवेल्ल सदृश क्षुद्र फल आते हैं। कर्कटाके फलका शाक बनाया जाता है।

कर्कटाक्ष (सं० पु०) कर्कट इव अक्षि अक्षिभेदोऽस्य, बहुव्री०। कर्कटिकालता, ककड़ीकी बेल।

कर्कटाख्य, कर्कटाक्ष देखो।

कर्कटाख्या (सं० स्त्री०) कर्कटस्य आख्या एव आख्या यस्याः, बहुव्री०। १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। २ कर्कटिका, ककड़ी।

कर्कटाङ्गा (सं० स्त्री०) कर्कटस्य अङ्गं शृङ्गमिव शृङ्गाग्रभागमस्याः, कर्कटाङ्ग-टाप्। कर्कटाख्या देखो।

कर्कटादिलेह (सं० पु०) लेहविशेष, एक चटनी। कर्कटशृङ्गी, अतिविषा (अतीस), शुण्ठी, धातकी (धायके फूल), बिल्व, बालक (बाला), मुस्ता तथा कोलमज्जा (बेरकी गुठलीकी मींगी) बराबर बराबर कूटपीस और छानकर मधुके साथ बालकको चटानेसे ज्वर अतीसार एवं अरुचिरोग दूर हो जाता है। ([illegible])

कर्कटास्थि (सं० क्ली०) कर्कटस्य अस्थि, ६-तत्। कुलीरका अस्थि, केकड़ेकी खोल।

कर्कटाह्व (सं० पु०) कर्कटमाह्वयते स्पर्धते कण्टकमयत्वात्, कर्कट-आ-ह्वे-क। बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़।

भट-ध्वें-ङ-टाप् बहुकुशा०। धनेच्छू पक्षी, धनेस चिड़िया। इसका तेल गठियेकी अकसीर दवा है।

करेटु (सं० पु०) के जले वायौ वा रेटति, क-रेट-कु। १ पक्षिविशेष, किसी क्रिस्मका सारस। इसका संस्कृत पर्याय—कर्करेटु, करट और कर्कराटुक है।

करेटुक, करेटु देखो।

करेडुक (सं० पु०) १ करेटु पक्षी, एक सारस। २ कर्कट, केकड़ा।

करेणु (सं० पु०-स्त्री०) क-एणु। ककृत्यादिभ्यः। उण् ३।१। १ गज, हाथी। २ हस्तिनी, हथिनी। वैद्यक मतसे हस्तिनीका दुग्ध किञ्चित् कषाययुक्त, मधुररस, वृष्य, गुरु, स्निग्ध, स्थैर्यकर, शीतल, चक्षुको हितकर और बलकारक होता है। ३ कर्णिकार वृक्ष, कनेरका पेड़। ४ महौषधिविशेष, एक बूटी। ५ सफेद गजाकार कन्दविशेष, एक दूधिया कन्द। इसके कन्दमें दूध बहुत होता है। आकार गजसे मिलता है। इसमें हस्तिकर्णपलाश-जैसे दो पत्र निकलते हैं। गुणमें यह सोमरसके तुल्य है। (सुश्रुत)

करेणुक (सं० क्ली०) कर्णिकारका विषमय फल।

करेणुका (सं० स्त्री०) करेणु स्वार्थे कन्-टाप्। हस्तिनी, हथिनी।

करेणुपाल (सं० पु०) करेणुं पालयति रक्षति, करेणु-पाल-णिच्-अण्। हस्तिनी-पालक, हथिनीका महावत।

करेणुभू (सं० पु०) करेणौ करेणुविषये भवति हस्ति शास्त्रप्रवर्तनाय प्रभवति, करेणु-भू-क्विप्। १ पालकाप्य नामक मुनि। यही हस्तिशास्त्रके प्रवर्तक थे। (त्रि०) २ हस्तिनीसे उत्पन्न, हथिनीसे पैदा।

करेणुमती (सं० स्त्री०) नकुलकी पत्नी। यह चेदि-राजकी कन्या थीं। (भारत, आदि ९५ अ०)

करेणुवर्य (सं० पु०) सुविशाल वा बलवान् हस्ती, बड़ा या ताक़तवर हाथी।

करेणुसुत (सं० पु०) १ पालकाप्य मुनि। २ गज-शावक, हाथीका बच्चा।

करेणू (सं० पु०-स्त्री०) क-एणू। १ गज, हाथी। २ हस्तिनी, हथिनी।

करेता (हिं० पु०) बच्चा, बरियारा।

करेमर (सं० पु०) १ तुरुष्क नामक गन्ध द्रव्य, शिलारस, लोबान। २ मूषिक, चूहा।

करेन्दुक (सं० पु०) करेण रश्मिना इन्दुरिव कायति शोभते, कर-इन्दु-कै-क। भूतृण, गन्धतृण, चांदकी तरह चमकनेवाली घास। गन्धतृण देखो।

करेपाक (हिं० स्त्री०) कृष्णनिम्ब, काली या मीठी नीम।

करेब (हिं० स्त्री०) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह रेशमसे बनती और काली तथा पतली रहती है। अङ्गरेजीमें इसे क्रेप (Crape) कहते हैं।

करेमू (हिं० पु०) कलम्बु, एक घास। यह जलमें उत्पन्न होता है। जल पर करेमू फैल पड़ता है। डण्ठल पोला और पतला रहता है। डण्ठलको गांठसे दो सुदीर्घ पत्र फूटते हैं। बालक डण्ठलको बाद्य रूपसे व्यवहारमें लाते हैं। करेमूका शाक भी बनता है। यह अहिफेनके विषका महौषध है। इसका रस निकालकर पिलानेसे अफीम उतर जाती है। कलम्बी देखो।

करेर (हिं० वि०) कठोर, कड़ा।

करेरुवा (हिं० पु०) लताविशेष, एक बेल। इसमें कण्टक रहते और पत्र निम्बूकके पत्रसे मिलते हैं। चैत्र-वैशाख मास यह फूलता है। इसके पटोलवत् फलमें बीज अधिक होते हैं। करेरुवा अति कटु लगता है। फलका शाक बनता है। लोगोंके विश्वा-सानुसार आर्द्रा नक्षत्रके प्रथम दिवस करेरुवा भक्षण करनेसे वत्सर पर्यन्त पिड़का नहीं होती। इसका पत्र क्षतस्थान पर प्रयोग किया जाता है।

करेल (हिं० पु०) १ मुद्गरविशेष। यह एक वृहत् मुद्गर है। इसे उभय करसे घुमाते हैं। परिमाणमें करेल दो मुद्गरसे कम नहीं पड़ता। पाददेश गोला-कार होनेसे इसे भूमिपर रख नहीं सकते। २ करेल भांजनेकी कसरत।

करेलनी (हिं० स्त्री०) एक फरही। इससे कणोंको एकत्र कर ढेर लगाया जाता है।

करेला (हिं० पु०) १ कारवेल्ल, एक बेल। यह

कर्कटाख्या (सं॰ स्त्री॰) कर्कटाख्य-टाप्। कर्कटशृङ्गी, काकड़ासींगी।

कर्कटि (सं॰ स्त्री॰) करं कटति प्राप्नोति, कर-कट्-इन् शकन्ध्वादित्वात् पलोपः। ककटी, ककड़ी।

कर्कटिका (सं॰ स्त्री॰) कर्कटी स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वश्च। ककटी, ककड़ी।

कर्कटिकेश (सं॰ क्ली॰) कामरूपका एक ग्राम। श्राद्धके पीछे इस ग्रामका प्रदक्षिण करना पड़ता है।

"उपस्पृश्य गयां गत्वा श्राद्धं कृत्वा विधानतः।
विधाय कर्कटिकेशे ग्रामस्यास्य प्रदक्षिणम्।" (योगिनीतन्त्र)

कर्कटिनी (सं॰ स्त्री॰) कर्कटवत् आकारो ऽस्त्यस्याः, कर्कट-इन्-ङीप्। दारुहरिद्रा, दारुहल्दी।

कर्कटी (सं॰ स्त्री॰) कर्क कण्टकं अटति गच्छति, कर्क-अट्-इन्-ङीप् शकन्ध्वादित्वात् पलोपः वा करं कटति, कर-कट-इन्-ङीप्। १ शाल्मलीवृक्ष, सेमरका पेड़। २ सर्पविशेष, एक सांप। ३ देवदाली लता, एक बेल। ४ कर्कटशृङ्गी, काकड़ासींगी। ५ एर्वारु, फूट। ६ घोंटिका वृक्ष, एक पेड़। ७ वदरी, बेरी। ८ कोमल श्रीफल। ९ घट, गगरी। १० तरोयी। ११ फललताविशेष, ककड़ी। (Cucumis Utilissimus) इसका संस्कृत पर्याय—कटुदली, छर्दापनिका, पीतपुष्पा, मूत्रफला, त्रपुषा, हस्तिपर्णी, लोमशकाण्डा, मूत्रला, बहुकन्दा, कर्कटाख्य, शान्तनु, चिभिटी, वालुकी, एर्वारु और त्रपुषी है।

इसे पश्चिमोत्तर प्रदेश, बङ्गाल और पञ्जाबमें बोते हैं। फल सीधा या सुंका होता है। यह कच्ची पक्की खायी जाती है। कच्ची ककड़ी छीलकर नमक और काली मिर्चके साथ खानेसे बहुत अच्छी लगती है। कोई कोई इसकी तरकारी भी बना डालते हैं।

कर्कटीका फल १-३ फीट लम्बा होता है। नर्म ककड़ियोंपर मुलायम भूरे रूयें रहते हैं। पहले यह पीली हरी लगती, किन्तु पकनेसे नारङ्गी पड़ती है। कर्कटी ग्रीष्म ऋतुका फल है। युक्तप्रदेशमें दूसरे समय यह हो नहीं सकती। इसके लिये भूमि सूखी, ढीली और खुली रहना चाहिये। खाद डालकर खेतमें क्यारी बनाते और तीन चार बीज ३ फीटके अन्तर लगाते हैं। दश दिनमें खेत सींचना पड़ता है।

ककड़ीके बीजका तेल मीठा होता है। यह खाने और जलानेमें लगता है।

भावप्रकाशके मतसे कर्कटी मधुर, शीतल, रूक्ष, मलरोधक, गुरु, रुचिकर और पित्तनाशक है। पक्व कर्कटी तृष्णा, अग्नि एवं पित्त बढ़ाती और मूत्ररोध घटाती है। तिक्त कर्कटी रक्तपित्तनाशक और कफदोषकारक होती है। इसका पाक इस प्रकार बनता है—परिपुष्ट कर्कटीको वल्कल तथा बीज निकाल गोलाकर खण्ड खण्ड काटते हैं। फिर उस तेलमें तलकर घृत, दुग्ध और शर्कराके साथ यह पागी जाती है। अन्ततः सूक्ष्म एलाका चूर्ण सुवासित कर-नेको पड़ता है। यह पाक खानेमें अति स्वादु और स्वास्थ्यके लिये लाभदायक है।

कर्कटीबीज (सं॰ क्ली॰) कर्कटीके फलका बीज, ककड़ीका बीआ। इसे ठण्डाईमें डालते हैं।

कर्कटु (सं॰ पु॰) कर्कट-उ। करेटुपक्षी, एक चिड़िया।

कर्कड़ (सं॰ पु॰) खटिका, खड़िया मट्टी।

कर्कंद—वाहलस्य ग्रामविशेष। (भवि॰ ब्रह्मख॰ ११।२२)

कर्कन्दु, कर्कन्धु देखो।

कर्कन्धु (सं॰ पु॰ स्त्री॰) कर्कं कण्टकं दधाति, कर्क-धा-कु-नुम्। क्षुद्रवदरवृक्ष, झड़बेरीका पेड़। (Zizyphus jujuba) यह समस्त भारत, सिंहल, मलक्का, ब्रह्मदेश, अफगानस्तान, अफरीका, मलय-द्वीपपुञ्ज, चीन और अष्ट्रेलियामें होता है। भारतवर्ष इसका आदि उत्पत्तिस्थान है। यहींसे कर्कन्धु अन्य देशोंमें फैला है। कहते—पहले साधुसन्त बदरिकाश्रम-में इसीका फल खा जीवनयात्रा निर्वाह करते थे।

इसका वल्कल और फल चमड़ा रंगनेमें लगता है। ब्रह्मदेशमें कर्कन्धुके फलसे रेशम भी रंगा जाता है। दरिद्र फलको अधिक खाया करते हैं। कभी कभी फलको कूट पीस रोटी भी बना लेते हैं। पत्र पशुका खाद्य है। लाहके कीड़े भी इसके पत्रपर पलते हैं।

भावप्रकाशके मतसे यह अम्ल, कषाय तथा ईषत्

लता क्षुद्र होती है। इसके पत्र नोकदार और पांच भागमें विभक्त रहते हैं। फल लम्बा तथा गुलो-जैसा आता और अपनी त्वक् पर छोटा-बड़ा दाना लाता है। करेलेकी तरकारी बहुत अच्छी होती है। यह कच्चे आमका कुचला और मसाला भर तेलमें पकाया जाता है। भली भांति भूंजा करेला कई दिन तक नहीं बिगड़ता। इसका छीलन भी तेलमें तलकर खाते हैं। करेलेका अचार बाजारमें बिका करता है। इसे ग्रीष्म और वर्षा ऋतुमें बोते हैं। ग्रीष्म ऋतुका करेला फाल्गुन मास क्यारियोंमें लगाया जाता है। इसकी लता भूमि पर फैल पड़ती और तीन-चार मास चलती है। फल पोला निकलता और कलौंजी बनानेमें लगता है। वर्षा ऋतुका करेला किसी पेड़ या लकड़ीके ठाट पर चढ़ाया जाता है। यह कई वर्ष तक फूला फला करता है। फल सूक्ष्म एवं भरा रहता है। जङ्गली करेलेका नाम करेली है।

इसका अङ्गरेजी वैज्ञानिक नाम मोमोर्डिका चार-नशिया (Momordica Charantia) है। इसे बंगलामें करला, उड़ियामें करेन, आसामीमें ककरल, पञ्जाबीमें करिला, सिन्धीमें करेली, मराठीमें कारला, मारवाड़ीमें कारली, गुजरातीमें करेलु, तामिलमें पावक्कायेदि, तेलगुमें तेलकाकर, कनाड़ीमें कांगलकाइ, मलयमें कप्पक, ब्रह्मीमें केडिमगाबिन, सिंहलीमें करविल और अरबीमें क़िसाउलबरी कहते हैं। यह समग्र भारतमें लगाया और मलय, चीन तथा अफ्रीकामें भी पाया जाता है। करेला नाना प्रकारका होता है। इसे फरवरी-मार्च मास उत्तम भूमिमें बोना चाहिये। क्यारियों और उनमें बोये जानेवाले बीजोंके बीच दो-दो फीटका अन्तर रहता है। पहले इसे प्रति सप्ताह दो बार सींचते हैं। लता फैल पड़ने पर सप्ताहमें एक ही बार पानी देना पड़ता है। १८७७-७८ ई०को दुर्भिक्षके समय खानदेश जिलेके लोगोंने करेलेकी पत्तियां खा जीवन धारण किया था।

२ शरकी गुटिका। यह दीर्घ रहता और मालामें बड़ी गुटिका या कोड़ेदार मुद्राके मध्य पड़ता है। ३ अग्निक्रीड़ाविशेष, एक आतशबाजी। *करैल देखो।*

करेली (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कारवेल्ल, छोटा करेला। इसका फल अतिक्षुद्र और कटु होता है।

करेवर (सं० पु०) कीर्यते क्षिप्यते पाषाणः क्वचिभिरिति यावत् करस्तस्मिन् म्रियते उत्पद्यते, करे-वृ-अच्। सिल्हक, लोबान्।

करैत (हिं० पु०) सर्पविशेष, एक सांप। यह काला और ज़हरीला होता है।

करैल (हिं० स्त्री०) १ मृत्तिकाविशेष, कविला मट्टी। यह काली होती है। ग्रीष्म ऋतुमें तड़ागका जल सूखने पर करैल निकलती है। यह अपनी कठोरताके लिये प्रसिद्ध है। इसकी दीवार बहुत मज़बूत बनती है। पानीमें घोलनेसे करैल सलसलानेसे लगती है। यह सिर मलनेके भी काम आती है। कुम्हार इसे चाक पर चढ़ा खिलौने वगैरह तैयार करते हैं। २ भूमिविशेष, एक ज़मीन्। इसकी मिट्टी काली और चिकनी रहती है। यह भूमि मालव देशमें अधिक देख पड़ती है। (पु०) ३ करीर, बांसका अंखुवा।

करैला (हिं० पु०) कारवेल्ल, करेला।

करैली (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कारवेल्ल, छोटा करेला।

करैलो (हिं० स्त्री०) कविला मट्टी।

करोट (सं० पु०) के मस्तके रोटते दीप्यते, क-रुट्-अच्। शिरोस्थि, मत्थेकी हड्डी, खोपड़ा। (Cranium)

करोट (हिं० स्त्री०) करवट, दाहने या बायें हाथके बल लेटनेकी हालत।

करोटक (सं० पु०) सर्पविशेष, एक सांप।

करोटन (अं० पु० = Croton) वृक्ष जातिविशेष, पौदेकी एक क़िस्म। यह गुल्मवत् (झाड़दार) होता है। त्वच आर्द्र और रस कटु दुग्धवत् निकलता है। किसी किसी करोटनमें कण्टक भी रहते हैं। यह वृक्ष अनेक प्रकारके देखे जाते हैं। प्रत्येक करोटनमें मञ्जरी आती है। फलमें बीज रहते हैं। वरण्डादि वृक्ष इसी श्रेणीके वृक्ष हैं। करोटनका तैल और अन्य औषधमें व्यवहृत होता है।

मधुररस, स्निग्ध, तिक्त, गुरु और वातपित्तनाशक है। शुष्क कर्कन्धु भेदक, अग्निकारक, लघु और उष्णा, क्रान्ति तथा रक्तनाशक होता है।

कहीं कहीं कर्कन्धु शब्द क्लीवलिङ्ग भी कहा गया है। २ कर्कन्धुफल, झड़बेरी।

कर्कन्धुक (सं॰ क्ली॰) बदरी फल, छोटा बेर। यह मधुर, स्निग्ध, गुरु और पित्तानिल तथा वातपित्तहर होता है। (मदनपाल)

कर्कन्धुकी (सं॰ स्त्री॰) १ बदरीभेद, किसी किस्मकी बेरी। २ क्षुद्रबदरवृक्ष, झड़बेरी।

कर्कन्धुक्षण (सं॰ पु॰) कर्कन्धूनां पाकः, कर्कन्धु-कुणप्। कर्कन्धुके पाकका समय, बेर पकनेका मौसम।

कर्कन्धुमती (सं॰ स्त्री॰) कर्कन्धुरस्त्यत्र भूमौ इति शेषः, कर्कन्धु-मतुप्-ङीप्। कर्कन्धुयुक्त भूमि, झड़-बेरीकी ज़मीन्।

कर्कन्धुरोहित (सं॰ स्त्री॰) कर्कन्धुफलसदृश रक्त-वर्ण, झड़बेरीके बेरकी तरह सुर्खीसुर्ख।

कर्कन्धू (सं॰ पु॰ स्त्री॰) कर्क कण्टकं दधाति, कर्क-धा-कु ततो निपातनात् सिद्धम्। कर्कन्धुवृक्ष, झड़-बेरीका पेड़। कर्कन्धु देखो।

कर्कफल (सं॰ क्ली॰) कर्कस्य कर्कटस्य फलम्, ६-तत्। १ कर्कटफल, ककोड़ा। २ क्षुद्र आम-लकी, छोटा आंवला।

कर्कर (सं॰ पु॰ क्ली॰) कर्क-रा-क। १ चूर्ण खण्ड, चूनेका कङ्कड़। २ कङ्कर, कांकर। ३ दर्पण, आईना। ४ सर्पविशेष, एक सांप। (भारत १।३५।१६) ५ मुद्गर, हथौड़ा। ६ अस्थि, हड्डी। ७ तरुण पद्म, नया कामधर। ८ चर्मखण्ड विशेष, चमड़ेका तसमा। (त्रि॰) कर्क-अरन्। ९ कठोर, कड़ा। १० दृढ़, मजबूत।

कर्करट (सं॰ पु॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कर्कराक्ष (सं॰ त्रि॰) कर्करं कर्कशं अक्षि यस्य, बहुव्री॰। १ कर्कश चक्षु, कड़ी आंखवाला। (पु॰) २ खञ्जनपक्षी, ममोला, भांपो, खोबम।

कर्कराङ्ग (सं॰ पु॰) कर्कटतुल्यं अङ्गं यस्य, बहुव्री॰। कालकण्ठ, खञ्जन, खोबम।

कर्कराटु (सं॰ पु॰) कर्कं हासं रटति प्रकाशयति, कर्क-रट-कु कुञ् वा। १ कटाक्ष, तिरछी नज़र। २ कर्करेटु पक्षी, एक चिड़िया।

कर्कराटुक (सं॰ पु॰) कर्कं कर्कशं रटति रौति, कर्क-रट-उकञ् स्वार्थे कन्। १ कर्करेटु पक्षी, एक चिड़िया। इसकी बोली बहुत कड़ी होती है। २ कटाक्ष, तिरछी नज़र।

कर्करान्धक, कर्करान्धुक देखो।

कर्करान्धुक (सं॰ पु॰) कर्करः कठोर अन्धः; स्वार्थे-कन्, कर्मधा॰। अन्धकूप, अंधा कूआं। इसका मुख तृणादिसे आच्छादित हो छिप जाता है।

कर्करास (सं॰ पु॰) कर्करः सन् अलति प्राप्नोति, कर्कर-अल-अच्। चूर्णकुन्तल, जुल्फ़, लट्टा, घूंगर।

कर्करि (वै॰ स्त्री॰) वाद्यविशेष, किसी किस्मका बाजा।

कर्करिका (सं॰ स्त्री॰) अश्वलत्तु, आंखकी खुजली या किरकिराहट। कर्करी देखो।

कर्करी (सं॰ स्त्री॰) कर्क हासवत् निर्मलं सलिलं राति, कर्क-रा-क गौरादित्वात् ङीष्। १ सनाल जलपात्र, गड़ुवा। इसका संस्कृत पर्याय—आलु, गलन्तिका, अलु और आह है। २ तण्डुलधावनपात्र, चावल धोनेका बरतन। ३ गलन्तिका, झझर। ४ भाण्डविशेष, एक बरतन। ५ दर्पण, आईना। (वै॰) ८ वाद्यविशेष, एक बाजा।

कर्करीका (सं॰ स्त्री॰) कर्करी स्वार्थे कन् न ह्रस्वः। क्षुद्र सनाल जलपात्र, छोटा गड़ुवा।

कर्करेट (सं॰ क्ली॰) कर्क कर्कति शब्दं रेटते यत्र, कर्क-रेट-घञ्। अङ्गरवत् सङ्कुचित हस्त, पञ्जेकी तरह सिकोड़ा हुआ हाथ। हस्तकी यह स्थिति किसीका कण्ठ पकड़ते समय होती है।

कर्करेटु (सं॰ पु॰) कर्क कर्कति शब्दं रेटते भाष्यते रौति वा, मृगय्वादित्वात् साधुः। करेटु पक्षी, कर-वारा, करकटिया। यह एक प्रकारका सारस है।

कर्कश (सं॰ पु॰) कर्कः कासोऽस्त्यस्य, कर्क-श। १ काम्पिल्लवृक्ष, कमीलेका पेड़। २ कासमर्द, कसौंदी। ३ पटोल, परवल। ४ इक्षुभेद, एक ऊख।

करोटि (सं० स्त्री०) क-रुट्-इन्। शिरोस्थि, खोपड़ी। कपाल देखो।

करोटिका, करोटि देखो।

करोटी (सं० स्त्री०) करोट-गौरादित्वात् ङीप्। शिरोस्थि, खोपड़ी।

करोड़ (हिं० वि०) एक कोटी, एक शत लक्ष, सौ लाख, १००००००० ।

करोड़खुख (हिं० वि०) मिथ्यावादी, झूठा, डींगिया, ढकोसलबाज।

करोड़पती (हिं० वि०) कोटि कोटि रुपयेका अधीश, करोड़ों रुपये रखनेवाला।

करोड़ी (हिं० पु०) टहलबोश, खजांची, रोकड़िया।

करोत (हिं० पु०) करपत्र, आरा।

करोत्कर (सं० पु०) कराणां उत्करः समूहः। १ कर-समूह, किरणोंका ढेर। २ गुरुकर, भारी महसूल।

करोत्पल (सं० क्ली०) करपङ्कज, कंवल-जैसा हाथ।

करोदक (सं० क्ली०) हस्तधृत जल, हाथमें रखा या पड़ा हुवा पानी।

करोदना, करोना देखो।

करोद्भव (सं० पु०) कृष्णसर्षप, काला सरसों।

करोध (हिं०) क्रोध देखो।

करोना (हिं० क्रि०) किसी पैनी चीजसे रगड़ना, खुरचना।

करोनी (हिं० स्त्री०) १ खुरचन, करोचन। पक्व दुग्ध या दधिका जो अंश पात्रमें चिपका रहनेसे खुर-चकर उतारा जाता, वही करोनी कहाता है। प्रवा-दानुसार करोनी या करोचन खानेसे बालकोंकी बुद्धि मन्द पड़ जाती है। इसीसे स्त्रियां प्रायः अपने बालकोंको करोचन नहीं खिलातीं। २ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह पित्तल या लोहसे बनती और पक्व दुग्ध या दधिके पात्रमें चिपके हुये अंशको खुरचनेमें चलती है।

करोर (हिं० वि०) कोटि, करोड़।

करोला (हिं० पु०) १ पात्रविशेष, गड़वा। २ भक्षुक, रीछ।

करौंहा (हिं० वि०) कृष्ण, श्याम, सांवला।

करौंजी (हिं० स्त्री०) १ कृष्णजीरक, काला जीरा।

करौंट (हिं० स्त्री०) करवट, दाहने या बायें हाथके बल लेटनेकी हालत। बायीं करौंट लेटनेसे खाना जल्द हज़म होता है।

करौंदा (हिं० पु०) १ करमर्दवृक्ष, एक कंटीला झाड़। इसके पत्र क्षुद्र रहते और निम्बूकके पत्रसे मिलते हैं। पुष्प यूथिकाकी भांति श्वेत एवं सुगन्धि लगते और देखनेमें बहुत सुन्दर लगते हैं। वर्षा ऋतुमें फल आते और पक्व होनेसे चटनी तथा अचार बनानेके काममें लाये जाते। करौंदेसे लाक्षा निक-लती और फलको रङ्गमें डालते हैं। लाक्षा औटनेसे लाक्षा प्राप्त होता है। दाक्षिणात्यमें करौंदेके काष्ठसे केशमार्जनी और खजाका बनायी जाती है। करम देखो।

२ गुल्मविशेष, एक झाड़। यह कण्टकाकीर्ण रहता और वनमें उपजता है। फल क्षुद्र एवं मिष्ट होता है। ३ कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। कर्णके निकट जो गिलटी निकल आती, वही करौंदा कहलाती है।

करौंदिया (हिं० वि०) कृष्ण-रक्तवर्णविशिष्ट, करौं-देका रङ्ग रखनेवाला। (पु०) २ वर्णविशेष, एक रङ्ग। यह वर्ण रक्त रहता, किन्तु उसमें नीलताका कुछ अंश झलकता है। यह अब्बासी रङ्गकी तरह एक पाव शहाबके फूल, आध छटांक अमचूर और आठ माशे नील मिलानेसे तैयार होता है।

करौत (हिं० पु०) १ करपत्र, आरा। (स्त्री०) २ उढ़री औरत।

करौता (हिं० पु०) १ करौत, आरा। २ करैल, कचिला मट्टी। ३ कराबा, बड़ी शीशी। (स्त्री०) ४ उढ़री औरत।

करौती (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र करपत्र, आरी। २ कराबा, मंझोली शीशी। ३ शीशेकी भट्ठी।

करौना (हिं० पु०) यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह एक छेनी या कलम है। कसेरे इससे पात्रों पर कारुकार्य बनाते हैं।

करौला (हिं० पु०) हांकेवाला आदमी, जो अहेर शिकारको हला मचा उठाता हो।

५ गुड़त्वक्, दालचीनी। ६ खड्ग, तलवार। (त्रि०) ७ असमस्पर्श, खुरखुरा। ८ निर्दय, बेरहम। ९ क्रूर, पाजी। १० दुर्बोध, समझमें मुश्किलसे आनेवाला, कड़ा। ११ कृपण, कंजूस। १२ साहसी, हिम्मतवर। १३ कठोर, सख्त।

कर्कशच्छद (सं० पु०) कर्कशः छदः पत्रमस्य, बहुव्री०। १ पटोल, परवल। २ पाटलवृक्ष, सुलतान चम्पा। ३ आखोट वृक्ष, सहोरेका पेड़। ४ शाकवृक्ष, सागोनका पेड़। ५ कृष्णकुष्माण्ड, काला कुम्हड़ा।

कर्कशच्छदा (सं० स्त्री०) कर्कशः असमस्पर्शः छदो यस्याः, कर्कशच्छद-टाप्। १ घोषा, तरोयी। २ दग्धावृक्ष, बंदाल। कोङ्कणमें इसे कड़ही कहते हैं।

कर्कशता (स्त्री०) कर्कशत्व देखो।

कर्कशत्व (सं० क्ली०) कर्कशस्य भावः, कर्कश त्व। कर्कशता, कड़ापन, सख्ती। कर्कश देखो।

कर्कशदल (सं० पु०) कर्कशं दलं पत्रमस्य, बहुव्री०। १ पटोल, परवल। २ सहोरेका पेड़।

कर्कशदला (सं० स्त्री०) कर्कशं दलं यस्याः, कर्कशदल-टाप्। १ दग्धिका, बंदाल। २ कोषातकी, तरोयी।

कर्कशवाक्य (सं० क्ली०) कर्कशञ्च तत् वाक्यञ्चेति, कर्मधा०। १ निष्ठुर वचन, कड़ी बात। २ नीरस वाक्य, रूखा बोल।

कर्कशा (सं० स्त्री०) कर्कश-टाप्। १ व्यभिचारिणी स्त्री, छिनाल औरत। २ वृश्चिकाली वृक्ष, बिछुवा। ३ क्षुद्रमेषशृङ्गी, छोटी मेढ़ासींगी। ४ वनबदर, झड़बेरी।

कर्कशिका (सं० क्ली०) कर्कश-कन्-टाप् अत इत्वम्। वनकोली, झड़बेरी।

कर्कसार (सं० क्ली०) कर्कः कर्कशः सारो यत्र, बहुव्री०। दधिसक्तु, दहीका सत्तू।

कर्काङ्ग (सं० पु०) कर्कटिका, ककड़ी।

कर्कारु (सं० पु०) कर्कं हास्यवत् शौक्ल्यं ऋच्छति प्राप्नोति, कर्क-ऋ-उण्। १ कुष्माण्डभेद, कुम्हड़ा, पेठा। भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, गुरु, मलबद्धकारक, क्षारयुक्त और कफ तथा वायुनाशक है। २ कलिङ्गलता, कलौंदा, तरबूज। ३ अतिक्षुद्रकुष्माण्ड, बहुत छोटा कुम्हड़ा, कुम्हड़ी। (स्त्री०) ४ कुष्माण्डीलता, कुम्हड़ेकी बेल।

कर्कारुक (सं० पु०) कर्कं हासं शितकारित्वात् ऋच्छति जनयति, कर्क-ऋ-उकञ्। १ कालिन्दवृक्ष, कलौंदेका पेड़। सुश्रुतके मतसे इसका फल गुरु, विष्टम्भी, शीतल, स्वादु, कफकारक, मलमूत्र परिष्कारक, क्षारयुक्त और मधुररस होता है। २ कुष्माण्ड, कुम्हड़ा।

कर्कारु (सं० स्त्री०) कुष्माण्डीलता, कुम्हड़ेकी बेल।

कर्कि (सं० पु०) कर्क-इन्। १ कर्कट राशि, बुर्जसरतान्। २ औरङ्गाबादका पूर्व नाम।

कर्की (सं० स्त्री०) कर्क-अच्-ङीप्। १ कर्कटी, ककड़ी। (पु०) कर्क-इन्। २ कर्कट राशि, बुर्जसरतान्।

कर्कीप्रस्थ (सं० पु०) नगरविशेष, एक पुरातन शहर।

कर्केतन (सं० पु०-क्ली०) कर्कं हास्यादौ तनोति, कर्क-तन-अच् अलुक् समा०। रत्नविशेष, एक जवाहर। इसे हिन्दीमें तथा फारसीमें ज़मुरद, हिब्रूमें टारशिस, ग्रीकमें बेरलस, लाटिनमें स्मारगडास (Smaragdus), पोलण्डीमें जमरगद, रूसीमें इझुमरद, ओलन्दाजमें स्मरगड्‌ या एसमरद्, दिनेमार एवं स्विसमें स्मरद, रोमकमें समरलदो, पोर्तगीजमें ऐसमरल्द, आइबेल तथा फरासीसीमें बेरिल (Beril) और अंगरेज़ीमें बेरिल या क्रिसोबेरिल (Beryl or Chrysoberyl) कहते हैं।

गरुड़पुराणमें लिखा है—वायुने हृष्टचित्त दैत्यपतिके सकल नख उठा चतुर्दिक् फेंकने पर कर्केतन नामक पूज्यतम रत्न पृथिवीसे उत्पन्न हुआ। स्निग्ध, विशुद्ध, सर्वत्र समवर्ण, परिमाणमें गुरु, विचित्र और त्रासव्रणादि-दोषवर्जित कर्केतन अति उत्कृष्ट होता है। रक्तकी भांति लोहित, चन्द्रकी तरह पाण्डुर, मधुकी भांति ईषत् पीत, ताम्रकी तरह अल्प रक्त पीत, और अग्निकी भांति उज्ज्वल, नील तथा श्वेत कर्केतन पापनाशक है। संस्कारकके दोषसे यह अधिक ज्योतिर्मय नहीं होता। कर्केतन स्वर्णपर जड़ कण्ठ वा हस्तमें पहननेसे अति सुन्दर लगता है। इससे

करौली (हिं० स्त्री०) खड्ग, तलवार। यह सीधी रहती और भोंकनेमें चलती है।

करौली—१ राजपूतानेका एक देशीय राज्य। यह अक्षा० २६° ३′ एवं २६° ४८′ उ० और देशा० ७६° ३५′ तथा ७७° २६′ पू०के मध्य अवस्थित है। यहां भरतपुर और करौली एजेन्सीका तत्त्वावधान चलता है। इसके उत्तर एवं उत्तरपूर्व भरतपुर तथा धवलपुर, दक्षिणपश्चिम जयपुर और दक्षिण-पूर्व चम्बल नदी है। चम्बल नदी ही इसे ग्वालियरसे पृथक् करती है। भूमिका परिमाण १२०८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १५ लाख है।

करौली राज्य उच्च, निम्न और पर्वतमय है। उत्तर और गिरिमाला सीमाके प्राचीररूपसे मस्तक उठाये खड़ी है। गिरिका शृङ्ग उच्चतामें १४०० फीटसे अधिक नहीं। यहां चम्बल नदी ही प्रधान है। इस नदीसे पांच शाखा निकल करौलीमें बही हैं। नाम पञ्चनद है। पञ्चनद उत्तरमुखी हो बाणगङ्गासे मिल गया है। करौली नगरके दक्षिण-पश्चिम कालिञ्जर और जिरौते नामसे दो क्षुद्र नदी बहती हैं। इन दोनों नदीमें वर्षाकाल भिन्न अपर समय अतिसामान्य जल रहता है। यहां पर्वतोंके कुण्डोंका जल उष्णप्रधान और अस्वास्थ्यकर है।

पर्वतमें प्रधानतः दो प्रकारका प्रस्तर है—एक विन्ध्य और अपर मणिप्रस्तर। जहां मणिप्रस्तर रहता, उसीकी चारो ओर अधिक परिमाणसे विन्ध्य भी देख पड़ता है। स्थानीय चूनेका पत्थर नीलाभ, कपिल अथवा हरिद्वर्णविशिष्ट होता है। बढ़िया सिलोरी पत्थर भी पाया जाता है। ताजमहलका प्रायः अनेकांश करौलीके पत्थरसे ही बना है। यहांका एक पत्थर अनेक स्थानमें चूनेके लिये फूंका जाता है। करौलीके अधिकांश ग्राम प्रस्तरनिर्मित हैं। यहांसे उत्तरपूर्व पर्वतपर लौह-खनि निकली है।

जीवजन्तु—चम्बल नदीके निकट वनमें सिंह, भल्लूक, हरिण, सांभर, और नीलगाय बहुत हैं। नगरके पास शशक, उद्बिड़ाल, चक्रवाक, कुक्कुट, एवं जलाशयादिमें बक, हंस, कारण्डव प्रभृति नाना प्रकार पक्षी देख पड़ते हैं। मत्स्यादि भी बहुत हैं। करौलीके पश्चिमांशमें विषधर सर्प, कुम्भीर प्रभृति सरीसृप रहते हैं।

उद्भिज्ज—करौलीकी उच्च गिरिमालामें बड़ा कोयी वृक्ष नहीं। चम्बलनदीके ऊर्ध्वभागमें धातकी, पलाश, खदिर, कार्पास, शाल, गर्जन, और निम्बवृक्ष होता है। यहां कृषिमें यव, गेहूं, चना, तम्बाकू, धान्य, ज्वार, बाजरा, इक्षु और सनकी उत्पत्ति है। स्थानीय जलाशय, कुण्ड और चम्बल नदीके तरङ्गसे कृषिकार्य चलता है।

वाणिज्य—यहां वस्त्र, लवण, इक्षु, तुला, अहिफेन एवं दुग्ध मंगाया, और धान्य, कार्पास तथा छाग बाहर भेजा जाता है।

जलवायु—स्थानीय जलवायु अधिक मन्द नहीं। ज्वर, अतिसार और वातरोग लग जाता है। किन्तु दूसरी बीमारी इस राज्यमें नहीं होती।

इतिहास—मुकजीकी कारिकाके अनुसार करौलीके प्रथम राजा धर्मपाल थे। नीचे उक्त कारिका दी जाती है—

मुकजीकी कारिका।	वंशावलीभाटका विवरण।	समय।
धर्मपाल		
सिंहपाल		
जगपाल		
नरपालदेव		
संग्रामपाल		
कुन्तपाल		
भीमपाल		
पीथपाल		
विरामपाल		
भोजपाल		
विजयपाल	विजयपाल	१०१० ई०
तिहुनपाल	तिहुनपाल	१०५० ,,
धर्मपाल	द्वितिपाल	१०८० ,,
कुमार (कुंवर) पाल	धर्मपाल	११२० ,,
अजयपाल	कुंवरपाल	११५० ,,
हरिपाल	अजयपाल	११८० ,,
सोहपाल	हरिपाल	११८८ ,,
अनङ्गपाल	सोहनपाल	१२२० ,,

आयु, वंश तथा सुख घटता और रोग एवं कलिदोष छूट पड़ता है। निर्दोष कर्केतन पहननेवाला सर्वत्र पूजित, अनेक धनशाली, बहुबान्धव, दीप्तिमान् और नित्यप्रसन्न रहता है। यह मणि जितना उज्ज्वल तथा गुरु मिलता, उतना ही मूल्य भी अधिक लगता है। (७१ अ०)

कर्केतन भारतवर्ष, सिंहल, उत्तर-अमेरिका, मिसर, रूसके यूराल पर्वतस्थ कतीवाजगदीगमें, ब्रेजिल, मोरविया और पेगुमें होता है।

दक्षिण भारतमें कोयम्बातुरसे २० कोस ईशान कोण पर कर्केतनकी खानि है। यह नाना स्थानपर मरकत, इन्द्रनील प्रभृतिके साथ देख पड़ता है।

यह हरित्, नील प्रभृति नानावर्णविशिष्ट होता है। उत्कृष्ट कर्केतन अल्प हरित् वा दूर्वा दलके वर्ण सदृश रहता है। इसमें औज्ज्वल्य भी अधिक देख पड़ता है। आपेक्षिक गुरुत्व ३·६से ३·८ पर्यन्त लगता है। इससे स्फटिक काटते हैं। फिर कर्केतनको काटने छाटनेमें इन्द्रनील और माणिक्य आवश्यक है। इसको रगड़नेसे वैद्युतिक ज्योतिः निकलता, जो गुणके अनुसार कयी घण्टे रह सकता है। अर्धस्वच्छ कर्केतन बिड़ालाक्षी (लहसुनिया) नामसे बाजारमें बिकता है।

अति उज्ज्वल स्वच्छ कर्केतनका मूल्य अधिक है। यह १०००)से २०००) रु० तक आता है।

कर्केतर, कर्केतन देखो।

कर्कन्धुकी (सं॰ स्त्री॰) भूबदरी, झड़बेर।

कर्कोट (सं॰ पु॰) कर्क-ओट। नागराजविशेष, सांपोंका एक राजा। "अनन्तो वासुकिः शेषो महापद्मश्च तक्षकः। कर्कोटः कुलिकः शङ्ख इत्यष्टौ नागनायकाः॥" (तिथ्यादितत्त्व)

कर्कोटक (सं॰ पु॰) कर्के कण्टकमयत्वात् कठोरं अटति प्राप्नोति अटत् कायति प्रकाशते, कर्क-अट-क्वस्-कन् पृषोदरादित्वात् ओकारादेशः। १ बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़। २ अष्टकुल नागराज। ३ इक्षु, ऊख। ४ फलशाकलताविशेष, ककोड़ा, खेखसा। इसका फल खाकर विषके अन्तर्गत है। कर्कोट देखो। ५ महाभारत तथा पुराणोक्त जनपदविशेष। (मार्कण्डेयपु॰ ५८, महाभा॰ द्रोण, बृहत्संहिता १४।१२)। इसका वर्तमान नाम कारा है। यह जयपुर राज्यमें पड़ता है।

कर्कोटकविष (सं॰ क्ली॰) कर्कोटकस्य विष, ककोड़ेका जहर।

कर्कोटका, कर्कोटकी देखो।

कर्कोटकी (सं॰ स्त्री॰) कर्कोटक गौरादित्वात् ङीष्। १ पीतघोषा, जंगलतरोयी। इसका संस्कृत पर्याय—कटुफला, महाजालिनी, धामार्गव और राजकोषातकी है। धामार्गव देखो। २ कोषातकी, तरोयी। ३ फलशाकविशेष, गोल कुम्हड़ा। यह मूत्राघात, प्रमेह, अरोचक, लघु, पथ्यरी तथा तृष्णाहर, पुष्टिकर, वृष्य, स्वादु और पथ्य होती है। (राजनिघण्टु)

कर्कोटकीफल (सं॰ क्ली॰) १ घोषाफल, तरोयी। २ कुसकुष्माण्ड, गोलकुम्हड़ा। ३ झिङ्गाफल, ककोड़ा।

कर्कोटपत्र (सं॰ क्ली॰) कर्कोटपत्र, ककोड़ेका पत्ता। यह वमनमें घोंटकर पिलानेसे रोगीका हितसाधन करता है।

कर्कोटमूल (सं॰ क्ली॰) कर्कोटकमूल, ककोड़ेकी जड़।

कर्कोटवापी (सं॰ स्त्री॰) कर्कोटनाम नागेन कृता वापी, मध्यपदलो॰। काशीस्थ तीर्थविशेष।

"कर्कोटवाप्यां स्नात्वा नरोऽपि कुलमुत्तमम्।" (काशीखण्ड)

कर्कोटिका (सं॰ स्त्री॰) कर्कोट स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। १ कुष्माण्डी लता, पेठेकी बेल। २ कर्कोटक, ककोड़ा।

कर्कोटिकाकन्दरज (सं॰ क्ली॰) कर्कोटमूलचूर्ण, ककोड़ेकी जड़का चूरन। कण्ठरोगमें यह सुंघा जाता है।

कर्कोटी (सं॰ स्त्री॰) १ कर्कोटिका, ककोड़ा। २ देवताड़ वृक्ष।

कर्कोल (सं॰ क्ली॰) कङ्कोल, शीतलचीनी।

कर्चरिका (सं॰ स्त्री॰) कं सुखं यथा तथा चर्च्यते उपयुज्यते, क-चर्च-कन् पृषोदरादित्वात् साधुः। पिष्टकविशेष, कचौरी, दालपुरी। यह उड़दकी पीठी दाल मैदेके आटेमें भर और घीमें तलकर बनायी जाती है।

कर्चूरी (सं॰ स्त्री॰) कं सुखं चूर्यते अत्र, क-चुर-टाप् पृषोदरादित्वात् साधुः। कर्चरिका देखो।

कर्ची (हिं॰ स्त्री॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

नृपतिओंकी तालिका।	समय।
पृथ्वीपाल	१२९२ ,,
राजापाल	१२६४ ,,
त्रिलोकपाल	१२८६ ,,
विपलपाल	१३०८ ,,
असन्तपाल	१३३० ,,
युगलपाल	१३५२ ,,
अर्जुनपाल (१म)	१३७४ ,,
विक्रमजित्पाल	१३९९ ,,
अभयचाँदपाल	१४१८ ,,
पृथ्वीराजपाल	१४३० ,,
चन्द्रसेनपाल	१४६२ ,,
भारतीचंद	१४८४ ,,
गोपालदास	१५०६ ,,
द्वारकादास	१५२८ ,,
मुकुन्ददास	१५४० ,,
तुरपाल	१५६२ ,,
तुलसीपाल	१५८४ ,,
धर्मपाल (२य)	१६१६ ,,
रतनपाल	१६१८ ,,
शान्तिपाल	१६६० ,,
अजयपाल (२य)	१६८२ ,,
हाकिमपाल	१७०४ ,,
सुजानपाल	१७२६ ,,
कुँवरपाल (२य)	१७३८ ,,
गोपालपाल	१७७० ,,
माणिकपाल	१७९२ ,,
अमोलपाल	१८१४ ,,
हरिपाल (२य)	१८१६ ,,
मधुपाल	१८३६ ,,
अर्जुनपाल	१८७९ ,,

करौलीके राजा अर्जुनपाल अपनेको कृष्णके वंशधर और यदुवंशीय बताते थे। पहले यह वंश वृन्दावनके निकट ब्रजधाममें वास करता था। किसी समय बरसानेमें भी इसका राजत्व रहा। १०५२ ई०को मुसलमानोंने यह स्थान अधिकार किया था। उस समयसे इस वंशने करौलीमें आ अपना राज्य बसाया। १४५४ ई०को मालवपति महमूद खिलजीने करौली आक्रमण किया था। अकबर बादशाहने मालवजयके पीछे इस राज्यको दिल्लीमें मिला लिया। मुगलोंके गौरवका रवि जब डूब गया, तब महाराष्ट्रोंने इस स्थानको अधिकार कर २५०००) रु० वार्षिक कर लगा दिया। १८१७ ई०को पेशवाने करौलीका उपस्वत्व अंगरेजोंको सौंपा था। अंगरेजोंने करौलीके राजासे यह बन्दोबस्त बांधा—विपद् पड़नेसे करौलीके राजा सैन्यसंग्रह द्वारा अंगरेजोंको यथासाध्य साहाय्य देंगे। फिर करौलीका राज्य अंगरेजोंके आश्रित हुवा।

१८५२ ई०को महाराज नरसिंहने इहलोक छोड़ा था। उनके पुत्रादि न रहनेसे करौलीको अंगरेजी राज्यमें मिलानेकी बात चली। किन्तु अनेक कल्पनाके पीछे राजाके आत्मीय मदनपालको राज्यका सिंहासन सौंपा गया। मदनपालने १८५७ ई०को विद्रोहके समय कोटाके विद्रोहियोंके विपक्ष सैन्य भेज अंगरेजोंको यथेष्ट साहाय्य दिया था। इसीसे अंगरेजोंने उनको जि, सी, एस, आईके उपाधिसे विभूषित किया। १५के स्थानमें १७ तोपोंकी सलामी भी हो गयी थी। १८६७ ई०को मदनपालका मृत्यु होनेपर दो राजावोंके पीछे १८७९ ई०में अर्जुनपालको करौलीका सिंहासन मिला।

करौली राज्यके महसूलसे कितना ही कर दिया जाता है। यहां रीतिके अनुसार पुलिस नहीं। राजाके सिपाही ही पुलिसका काम करते हैं। करौलीमें १६० सवार, १७७० पैदल, ३२ गोलन्दाज और ४० तोपें हैं। सिपाही निम्नलिखित १२ दुर्गोंमें रहते हैं—करौली नगर, ऊंटगढ़, मन्द्रैल, नारोली, सपोतरा, दौलतपुर, याली, जम्बुरा, निन्दा, खुदा, उन्द और कोटाई। करौलीकी टकसाल अलग है। उसमें चांदीका रुपया बनता है।

२ करौली राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २६° ३०´ उ० और देशा० ७७° ५´ पू०पर, मथुरासे ३१ कोस दूर अवस्थित है। किसी किसीके मतानुसार अर्जुनदेवके प्रतिष्ठित कल्याणजीवाले मन्दिरसे ही इस नगरका नाम करौली पड़ा। १३४८ ई०को अर्जुनदेवने यह नगर बसाया था। किसी समय

कर्चर (सं॰ क्ली॰) १ सुवर्ण, सोना। २ हरिताल विशेष, किसी किस्मका हरताल।

कर्चूर (सं॰ पु॰ क्ली॰) कर्ज-उर, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ कर्बुर, हरताल। २ स्वर्ण, सोना। ३ एकाङ्गी-नाम वणिग् द्रव्य, कचूर। यह कटु, तिक्त, उष्ण, मुख-परिष्कारक और कफ, कास तथा गलगण्डनाशक है। (राजनिघण्टु) चरकमें त्वक्शून्य कर्चूरको रुचि-कारक, अग्निवर्धक, सुगन्धि, कफ एवं वायुनाशक और श्वास, हिक्का तथा अर्शोरोगके लिये हितकर कहा है। ४ आमहरिद्रा, आमाहलदी। ५ शटी, जङ्गली अदरक।

कर्चूरक (सं॰ पु॰) कर्चूर स्वर्णमिव कायति प्रका-शते, कर्चूर-कै-क। कर्चूर देखो।

कर्ज (अ॰ पु॰) ऋण, उधार।

कर्जदार (फा॰ वि॰) ऋणी, देनदार, उधार लेनेवाला।

कर्जा, कर्ज देखो।

कर्जी (हिं॰ वि॰) अधमर्ण, कर्जदार, जो उधार ले चुका हो।

कर्ण (सं॰ पु॰) कीर्यते क्षिप्यते वायुना शब्दो यत्र, कॄ-न-नित् कर्णते आकर्णयते अनेन, कर्ण करणे अप् वा। कृवृजृसिद्रुपन्यनिस्वपिभ्यो नित्। उण् ३।१०। १ श्रवणेन्द्रिय, गोश, कान। इसका संस्कृत पर्याय—शब्दग्रह, श्रोत्र, श्रुति, श्रवण, श्रव, श्रोव और वचोग्रह है। श्रवणेन्द्रियके वाह्याभ्यन्तर समुदाय अवयवके लिये 'कर्ण' शब्द व्यव-हृत होता है। किन्तु गह्वरके आकाशस्थानमें ही कर्णेन्द्रियका कार्य चलता है। सुतरां उसी आका-शको 'श्रवणेन्द्रिय' कहते हैं। इस इन्द्रियको अधि-ष्ठाता देवता दिक् है। शब्द कर्णका विषय ठहरता है।

आजकलके शारीरतत्त्वविद् पण्डित मनुष्य और याव-तीय स्तन्यपायी जीवकाकर्ण तीन भागमें विभक्त करते हैं—१ वहिःकर्ण, २ ढक्का (Tympanum) और कर्णा-भ्यन्तरस्थ विवर (Labyrinth)। फिर वहिःकर्णके दो अंश होते हैं—कर्णशष्कुली (Auricle) और कर्ण-प्रणाली या कर्ण-वहिर्द्वार (Auditory canal or external meatus)।

कर्णशष्कुली उपास्थिक सङ्गठनके अनुसार उच्च और निम्नगामी है। इसके गभीर एवं प्रशस्त मध्यस्थानको कर्णस्थाली (Concha) और निम्नतम दोलायमान अंशको कर्णपाली (Lobe) कहते हैं। कर्णस्थालीसे गोल छिद्र नीचे चले गये हैं। भारतमें कर्णवेधके समय कर्णपाली छेदी जाती है। वहिःकर्णमें एक उपास्थि होता है। उसमें कई छिद्र रहते हैं। वही छिद्र सूत्राकार सारी झिल्लीमें पूर जाते हैं। कर्ण-शष्कुलीके एक भागसे अपर भागको कई पेशियां पहुंची हैं। पेशियां कुल तीन हैं। वह पार्श्वस्थ शिरस्त्वक् (Scalp)से कर्णमें फंसी हैं। मनुष्यके लिये पेशियां अधिक आवश्यक नहीं। किन्तु स्तन्यपायी जीवके पक्षमें पेशियां अवश्य रहना चाहिये।

कर्णप्रणाली प्रायः इञ्च परिसर होती है। वह कर्णस्थालीसे अभ्यन्तरको गयी है। उसके उभय पार्श्वको अपेक्षा मध्य भाग अधिक सीधा रहता है। इसीसे कर्णके अभ्यन्तर कोई चीज घुस जाने पर निका-लनेमें कष्ट पड़ता है। अधोभाग ऊपरी भागकी अपेक्षा वृहत् रहने कारण कर्णप्रणालीके शिरेसे मध्य कर्णकी झिल्ली तिर्यग्भावपर अवस्थित है। कर्ण-प्रणाली अस्थिगर्भ और उपास्थियुक्त है। अस्थिगर्भ भागके मध्य झिल्लीसे लिपटा सूक्ष्म भ्रूण होता है। किसी किसी प्राणीके वह स्वतन्त्र भावसे केवल अस्थिकी भांति रहता है।

कर्णरन्ध्रके वहिर्भागमें मुखाभिमुखी स्थानका नाम कर्णपत्रक (Tragus)। कर्णके रन्ध्रमें खोलदार ग्रन्थि रहता है। इसी ग्रन्थिके कारण कीट वा मशकादि कर्णमें प्रवेश कर नहीं सकता।

कर्णके वहिर्द्वार और विवरके मध्यवर्ती गह्वर-को मध्यकर्ण वा ढक्का (Tympanum) कहते हैं। यह स्थान वायुपूर्ण है। वायु गलकोषसे युष्टिकियान नली होकर ढक्कामें घुसता है। ढक्काको झिल्ली और कर्णविवरके साथ सचल अस्थियोंसे संयुक्त है।

ढक्काका गह्वर देखनेमें असमान और सीधी सीधी सूक्ष्म लोमवत् उपलकसे आच्छन्न है। यह उपलक

करौली (हिं॰ स्त्री॰) खड्ग, तलवार। यह सीधी रहती और नोंकमें चलती है।

करौली—१ राजपूतानेका एक देशीय राज्य। यह अक्षा॰ २६° ३´ एवं २६° ४९´ उ॰ और देशा॰ ७६° ३५´ तथा ७७° २६´ पू॰के मध्य अवस्थित है। यहां भरतपुर और करौली एजेन्सीका तत्त्वावधान चलता है। इसके उत्तर एवं उत्तरपूर्व भरतपुर तथा धवलपुर, दक्षिणपश्चिम जयपुर और दक्षिण-पूर्व चम्बल नदी है। चम्बल नदी ही इसे ग्वालियरसे पृथक करती है। भूमिका परिमाण १२०८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १५ लाख है।

करौली राज्य उच्च, निम्न और पर्वतमय है। उत्तर और गिरिमाला सीमाके प्राचीररूपसे मस्तक उठाये खड़ी है। गिरिका शृङ्ग उच्चतामें १४०० फीटसे अधिक नहीं। यहां चम्बल नदी ही प्रधान है। इस नदीसे पांच शाखा निकल करौलीमें बही हैं। नाम पञ्चनद है। पञ्चनद उत्तरमुखी हो बाणगङ्गासे मिल गया है। करौली नगरके दक्षिण-पश्चिम कालिसार और जिरोते नामसे दो क्षुद्र नदी बहती हैं। इन दोनों नदीमें वर्षाकाल भिन्न अपर समय अतिसामान्य जल रहता है। यहां पर्वतोंके कुण्डोंका जल उष्णप्रधान और अस्वास्थ्यकर है।

पर्वतमें प्रधानतः दो प्रकारका प्रस्तर है—एक विन्ध्य और अपर सन्धिप्रस्तर। जहां सन्धिप्रस्तर रहता, उसीको चारो ओर अधिक परिमाणसे विन्ध्य भी देख पड़ता है। स्थानीय चूनेका पत्थर नीलाभ, कपिल अथवा हरिद्वर्णविशिष्ट होता है। बढ़िया बिल्लौरी पत्थर भी पाया जाता है। ताजमहलका प्रायः अनेकांश करौलीके पत्थरसे ही बना है। यहांका एक पत्थर अनेक स्थानमें चूनेके लिये फूंका जाता है। करौलीके अधिकांश ग्राम प्रस्तरनिर्मित हैं। यहांसे उत्तरपूर्व पर्वतपर लौह-खनि निकली है।

जीवजन्तु—चम्बल नदीके निकट वनमें सिंह, भल्लूक, हरिण, सांभर, और नीलगाय बहुत हैं। नगरके पास शशक, उद्बिडाल, शृगाल, लुकट, एवं जलाशयादिमें वक, हंस, कारण्डव प्रभृति नाना प्रकार पक्षी देख पड़ते हैं। मत्स्यादि भी बहुत हैं। करौलीके पश्चिमांशमें विस्तर सर्प, कुम्भीर प्रभृति सरीसृप रहते हैं।

उद्भिज्ज—करौलीको उच्च गिरिमालामें बड़ा कोयी वृक्ष नहीं। चम्बलनदीके ऊर्ध्वभागमें धानकी, पलाश, खदिर, कार्पास, शाल, शर्जन, और निम्बवृक्ष होता है। यहां कृषिमें यव, गेहूं, चना, तम्बाकू, धान्य, ज्वार, बाजरा, इक्षु और सनकी उत्पत्ति है। स्थानीय जलाशय, कुण्ड और चम्बल नदीके तटसे कृषिकार्य चलता है।

वाणिज्य—यहां वस्त्र, लवण, इक्षु, गुड़, मद्य एवं द्रव्य मंगाया और धान्य, कार्पास तथा भांग बाहर भेजा जाता है।

जलवायु—स्थानीय जलवायु अधिक मन्द नहीं। ज्वर, अतिसार और वातरोग लग जाता है। किन्तु दूसरी बीमारी इस राज्यमें नहीं होती।

इतिहास—सुकजीकी कारिकाके अनुसार करौलीके प्रथम राजा धर्मपाल थे। नीचे उक्त कारिका दी जाती है—

सुकजीकी कारिका।	ख्यातभाटका विवरण।	समय।
धर्मपाल		
सिंहपाल		
जगपाल		
नरपालदेव		
संग्रामपाल		
कुन्तपाल		
सोमपाल		
गोपपाल		
विरामपाल		
अनङ्गपाल		
विजयपाल	विजयपाल	१०५० ई०
तिहुनपाल	तिहुनपाल	१०९० ,,
धर्मपाल	क्षितिपाल	१०९८ ,,
कुमार (कुंवर) पाल	धर्मपाल	११४० ,,
अजयपाल	कुंवरपाल	११५० ,,
हरिपाल	अजयपाल	११८० ,,
सोहनपाल	हरिपाल	११९९ ,,
नागरपाल	सोहनपाल	१२१० ,,

गलकोषसे निकल युष्टेकियान नली द्वारा कर्णमण्डलमें पहुंची है।

ढक्कामें तीन क्षुद्रास्थि होती हैं। वह अपने आकारानुसार मुद्गरास्थि (Malleus), पताकास्थि (Incus) और पादधारस्थास्थि कहाती हैं। ढक्काकी झिल्ली उक्त गह्वरके बहिःप्राचीर रूपसे सङ्गठित है। वह डिम्बाकृति देख पड़ती है। उसी झिल्लीके ऊपरी और अधोदिक्‌के बीचोंबीच क्षुद्र श्रेणीका प्रथम अस्थि मुद्गरकी मुठियाके आकार संलिप्त है। उसीको मुद्गरास्थि कहते हैं।

इसी गह्वरमें कर्णाभ्यन्तरके साथ संस्रव रखनेको दो गवाक्ष हैं। वह कोमल झिल्लीसे आवद्ध रहते हैं। उनमें एकको डिम्बाकार (Fenestra ovalis) और अपरको गोल गवाक्ष (Fenestra rotunda) कहते हैं। प्रथम कर्णविवरके प्रवेशद्वारका प्रदर्शक है। वह अपनी झिल्लीके जरिये क्षुद्र श्रेणीके अन्त्यास्थि (पादधारस्थास्थि)से दृढ़ रूपमें संयुक्त है। द्वितीय गवाक्ष कर्णविवरके शम्बुकाकार गह्वर (Cochlea)की ओर अवस्थित है।

ढक्केके मुद्गरास्थिसे एकाधिक पेशी लिप्त हैं। उनमें एक कंरोटीवाले कीलकास्थिके सन्नावत् स्थानसे उत्पन्न हुयी है। उसका वैज्ञानिक अंगरेजी नाम लाक्सटोर टिंपनी (Laxator tympani) है। फिर दूसरी शङ्खास्थिके प्रस्तरवत् कठिन स्थानसे निकली है। उसे वैज्ञानिक अंगरेजीमें टेनसोर टिम्पनी (Tensor tympani) कहते हैं। शेषोक्त पेशी मुद्गरास्थिकी मूठसे सन्निविष्ट है। शारीरतत्त्वविदोंमें अनेकको प्रथम श्रेणीके अस्तित्व पर सन्देह है। उनकी समझमें उसे—पेशी नहीं—बन्धनी कह सकते हैं।

ध्वजके आकारका अस्थि पताकास्थि कहाता है। किन्तु यह बात देख नहीं पड़ती। वह पेषण-दन्तकी तरह रहता है। क्षुद्र अंग पीछे बढ़ ढक्का-गह्वरके पश्चाद्भागमें शुण्डाकार कोष (Mastoid cells) पर झुका और वृहद् अंश अधोगामी हो अपनी पादधारस्थी-अस्थिके मस्तक पर गोलाकार तथा समान पड़ा है।

पादधारस्थी-अस्थि अश्वारोहीके पद रखनेके रकाब-जैसा होता है। वह मस्तक, ग्रीवा, दो बाहु और भूमि रखता है। उसके कोणाकार उच्चांगसे एक सूक्ष्म पेशी (Stapedius) निकल डिम्बाकार गवाक्षके पश्चाद्भागमें ग्रीवादेशपर सन्निवेशित है। ग्रीवादेशका पश्चाद्भाग खींचनेसे वह कर्णविवरके द्वारको सिकोड़ती है।

पहले लिखा—युष्टेकियान नलीमें ढक्काका गह्वर खुला है। युष्टेकियान एक शारीरविद् रहे। उन्होंने पहले उक्त नलीको आविष्कार किया था। इससे उसको भी युष्टेकियान कहते हैं। वह प्रायः डेढ़ इञ्च लम्बी है। अंश भाग अस्थिमय और अधिकांश उपास्थियुक्त होता है। उक्त नलीके मध्यसे वायु चल ढक्काके ऊपर और बीच पहुंचता है। इसी पथसे गह्वरस्थ सञ्चित श्लेष्मादि भी निकलता है।

कर्णाभ्यन्तरस्थ विवर श्रवणेन्द्रियका मूल अंग है। यहां कर्णेन्द्रिय-वायुके स्पन्दनमक सूत्र पड़े हैं। वह तीन अंशमें विभक्त है—विवरद्वार (Vestibule), अर्धगोलाकार नलीसमूह (Semi-circular canals) और शम्बुकाकार गह्वर (Cochlea)। उक्त तीनों गर्ताकार कर्णाभ्यन्तरस्थ विवरकी तरह निपट शङ्खास्थिके प्रस्तरवत् अति कठिनांशमें अवस्थित हैं। ढक्काके गोल तथा डिम्बाकार गवाक्षसे उनका बाहरी और कर्णाभ्यन्तरकी श्रोत्रनलीसे भीतरी सम्बन्ध है। श्रोत्रनली ही कंरोटीके गह्वरसे कर्णविवर तक श्रोत्र सम्बन्धीय स्नायु (Auditory nerve) को वहन करती है।

उपरोक्त गर्तके चारो पार्श्व अस्थिमय कर्णाभ्यन्तरस्थ विवर (Osseous labyrinth) है। उसमें फिर झिल्लीका कर्णाभ्यन्तरस्थ विवर (Membranous labyrinth) झलकता है।

विवरद्वार कर्णाभ्यन्तरके मध्यगह्वररूपसे अवस्थित है। इसी स्थानसे अर्धगोलाकार नलीसमूह और शम्बुकाकार गह्वर निकलता है। उक्त द्वार उच्चतामें इञ्चका अष्टम भाग पड़ता है। उसके बहिर्भागमें पांच छिद्र होते हैं। उन्हीं छिद्रोंसे अर्धगोलाकार नलीसमूह निकला है। पश्चात् डिम्बकी

शम्बुकाकार गह्वर है। उसके बहिर्गात्रमें डिम्बाकार गवाक्ष और मध्यस्थरमें क्षुद्र क्षुद्र गोलाकार छिद्र रहते हैं। उनसे श्रोत सम्बन्धीय स्नायुका शब्दजनक सूत्रसकल भीतरको सरकता है।

उक्त गोलाकार नली तीन हैं। उनके उभय पार्श्वोंमें छोटे-बड़े द्वार होते हैं।

शम्बुकाकार गह्वर देखनेमें शम्बुक-जैसा लगता है। वह कर्णविवरका अग्रवर्ती है।

अस्थिमय कोमल विवरद्वार और अर्धगोलाकार नलीके मध्यका कोमल अंश 'कानका चक्कर' (Membraneus labyrinth) कहाता है। अस्थिमय चक्कर झिल्लीके चक्करसे आकार प्रकारमें मिलता है। फिर भी उभयके आयतनमें अन्तर है। दोनों चक्करोंमें पेरिलिम्फ (Perilymph) नामक एक तरल पदार्थ रहता है। झिल्लीके चक्करमें एण्डोलिम्फ (Andolymph) नामक एक दूसरा तरल पदार्थ भी है। फिर उनके किसी किसी स्थान विशेषतः विवरद्वारवाले स्नायुके प्रान्तभागमें क्या मनुष्य क्या निकृष्ट पशुके चूने जैसा एक पदार्थ देख पड़ता है। मानव, स्तन्यपायी जन्तु, पक्षी और सरीसृपके मध्य चूना मिली एक बुकनी (Otoconia) रहती है।

विवरके द्वारांशमें दो परदे होते हैं। ऊपरवाला किञ्चित् दीर्घ और डिम्बाकार है। अंगरेजीमें उसे युट्रिकुलस या कामनसिनस (*Utriculus or commonsinus*) कहते हैं। अपर देखनेमें प्रथमसे किञ्चित् क्षुद्र और गोलाकार है। वह नीचे रहता है। उसका नाम कोषाणु (Sacculus) है।

सुश्रुतके मतसे प्रत्येक कर्णमें एक एक शृङ्गाटक सन्धि होती है। अस्थि दो रहती, जिन्हें तरुण कहते हैं। फिर कर्णमें २ पेशी, १० शिरा और ६ धमनी हैं। उक्त छह धमनीमें २ वायुवाहिनी, २ शब्दवाहिनी और २ शब्दकारिणी होती हैं। चरकने कर्णको आन्तरीय पदार्थ माना है।

"शरीरच्छिद्रमणवो महान्ति चाणूनि च स्रोतांसि तदन्तरिक्षं शब्दः श्रोत्रं च।"

(चरक, शारीरस्थान ७ अ०)

शरीरका छिद्रसमूह, वृहत् एवं सूक्ष्म स्रोतसकल, शब्द और कर्ण आन्तरिक्ष पदार्थ है।

कर्णके अवयव हमने एक एक कर लिख दिये हैं। अब देखना चाहिये—कर्णसे कैसे सुनते और कर्णके यन्त्र कैसे चलते हैं।

युरोपीय वैज्ञानिकोंके मध्य किसी किसीके मतानुसार शब्द कर्णगोचर होनेसे पूर्व प्रथम वायुद्वारा कर्णशष्कुलीमें पहुंचता है। उसी क्षण वायुके प्रभावसे उसके तरल पदार्थका आणविक कम्पन होने लगता है। शब्द सञ्चालित होते ही वायु द्वारा ढक्काकी झिल्ली हिलती है। वायुसे शब्द जितने बार इधर उधर चलता, ढक्केकी झिल्लीका भी उतने ही बार तत्कम्पन उठता है। फिर क्षुद्रास्थि हिलडुल पताकास्थि और डिम्बाकार गवाक्षकी झिल्लीको लगा देता है। तत्पश्चात् ढक्काकी पेशीसे झिल्लीका वितान कांपता है। ढक्काके गह्वरमें वायु दो प्रकार कार्य सम्पादन करता है। प्रथमतः वह गवाक्षकी झिल्लीके बहिर्भागमें रीत्यनुसार ताप पहुंचाता है। उससे झिल्लीकी स्थितिस्थापकता नहीं बिगड़ती। द्वितीयतः ढक्काके गह्वरमें वायु घुसते क्षुद्रास्थिमाला चलने लगती है। शब्दविज्ञानके अनुसार वायुसंघर्षसे क्षुद्रास्थिमें शब्द उठता है।

कर्णाभ्यन्तरस्थ विवरमें तीन प्रकार शब्द पहुंचता है—प्रथमतः अस्थिकोषेणो, द्वितीयतः ढक्कागह्वरके वायु और तृतीयतः मस्तकास्थिके मध्यसे।

कर्णके भीतरी विवरद्वारको ही श्रवणेन्द्रियका मूलयन्त्र कहते हैं। पक्षादिके कर्णमें अपरांग न रहते भी उक्त अंश तो होता ही है।

वृहत्काय जन्तुमें कर्णके मध्यभागपर एक विवरद्वार देख पड़ता है। वहां कानकी बुकनी मिलनेसे शब्दको विशेष सुविधा मिलती है। उसके पास पहुंचते ही शब्द झनझनाने लगता है। उक्त शब्द विवरद्वारकी झिल्ली और अर्धगोलाकार नलीके प्रसारित अंश (Ampullæ) तथा स्नायुमें सञ्चारित होता है।

अर्धगोलाकार नलीसमूहकी दीर्घता, विस्तृति और उच्चता द्रष्टव्य है। उसीसे शब्दकी गति समझ

"यथाप्युक्रमयुक्त सर्वाभूतविद्याधकर्णविट्।
ये माम् दूषिका स्वेदी श्राद्धेते मृगा मनाः॥" (मनु)

कर्णविट्क (सं० त्रि०) कर्णविट्विशिष्ट, जिसके खूंट रहे।

कर्णविद्रधि (सं० पु०) कर्णस्रोतोगत स्फोटक, कानका भीतरी फोड़ा। यह दोषज और आगन्तुज—द्विविध होता है।

कर्णविधि (सं० पु०) कर्णस्वेदनादि, कानमें तेल वगैरह डालनेका तरीका।

कर्णविवर (सं० क्ली०) कर्णच्छिद्र, कानका छेद।

कर्णवेध (सं० पु०) कर्णयोः, कर्णस्य वा वेधः, ६-तत्। संस्कारविशेष, कनछेदन। इसमें शास्त्रोक्त विधानके अनुसार कान छेदना पड़ते हैं। जन्मके मासमें ६ठें, ७वें, ८वें, १२वें या १६वें महीने, बुध, वृहस्पति, शुक्र वा सोमवार, द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, द्वादशी अथवा त्रयोदशीको ब्राह्मण तथा वैश्यका रौप्य, क्षत्रियका स्वर्ण और शूद्रका लौहशलाका द्वारा कर्णवेध किया जाता है। जन्ममास, चैत्र एवं पौष, युग्मवत्सर, हरिके शयनकाल, दूषित सूर्य, जन्मपक्ष, जन्मनक्षत्र, दिवसके पूर्व भाग और रात्रिकालमें कर्णवेध करना न चाहिये। (मदनरत्न) उत्तरायण सूर्यका समय कर्णवेधके लिये अच्छा है। दक्षिणायनमें यह संस्कार करना न चाहिये। (गर्ग) एक पिताके दो पुत्रका कर्णवेध संस्कार न होते पुनर्वार पुत्रोत्पत्तिकी सम्भावना आनेसे दोनोंमें बड़े वर्षवालेका कर्णवेध कर्तव्य है। ऐसे समय ज्येष्ठ कनिष्ठका विचार आवश्यक नहीं। कारण कर्णवेधरहित तीन पुत्र हो जानेसे 'कर्णपट्क' दोष लगता, जो अतीव कुत्सित ठहरता है। (मलमासतत्त्व) ब्राह्मणके कर्णमें अङ्गुष्ठके यव प्रमाण प्रशस्त छिद्र रखना चाहिये।

"अङ्गुष्ठमात्रसुषिरौ कर्णौ न भवतो यदि।
तस्मै श्राद्धं न दातव्यं दत्तं चेदासुरं भवेत्॥" (निर्णयसिन्धु)

कर्णमें अङ्गुष्ठके यव प्रमाण छिद्र न रहते कोयी कैसे श्राद्धका अधिकारी हो सकता है। उसके करनेसे श्राद्ध असुरका भोज्य बन जाता है।

"कर्णरन्ध्रे रवेश्छाया न विशेदग्रजन्मनः।
तं दृष्ट्वा विलयं यान्ति पुण्यौघाश्च पुरातनाः॥"(हेमाद्रिधृत देवलवचन)

जिस ब्राह्मणके कर्णरन्ध्रमें सूर्यका किरण नहीं घुसता, उसको देखनेसे प्राचीन पुण्यशील व्यक्ति भी नरक पहुंचता है। कर्णव्यधविधि देखो।

कर्णवेधनिका (सं० स्त्री०) विध्यते ऽनया, कर्ण-विध करणे ल्युट् स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। १ करिकर्णवेधनास्त्र, हाथीके कान छेदनेका औज़ार। २ कर्णवेधनास्त्र, कान छेदनेका औज़ार।

कर्णवेधनी (सं० स्त्री०) विध्यते ऽनया, कर्ण-विध करणे ल्युट्-ङीप्। कर्णवेधकी सूयी, कान छेदनेकी सूयी।

कर्णवेष्ट (सं० पु०) कर्णौ वेष्टयति, कर्ण-वेष्ट-अच्। १ कुण्डल, बाली, पात। २ द्वापर युगके एक राजा। (भारत, आदि ६७ अ०)

कर्णवेष्टक (सं० क्ली०) कर्णौ वेष्टयति, कर्ण-वेष्ट-ण्वुल्। १ कुण्डल, बाला। २ शिरस्त्राणका प्रालम्ब, टोपीका दामन। इससे कान बांधे जाते हैं।

कर्णवेष्टकीय (सं० त्रि०) कर्णवेष्टक-छण्। कर्णवेष्टक सम्बन्धीय, बाले या टोपीके दामनसे सरोकार रखनेवाला।

कर्णवेष्टन (सं० क्ली०) कर्णौ वेष्ट्यते ऽनेन, कर्ण-वेष्ट-ल्युट्। १ कुण्डल, बाला। २ शिरस्त्राणका प्रालम्ब, टोपीका दामन। ३ कर्णका वेष्टन, कान लपेटनेका काम।

कर्णव्यध (सं० पु०) कर्णवेधन, कनछेदन।

कर्णव्यधविधि (सं० पु०) कर्णव्यधस्य कर्णवेधस्य विधिः, ६-तत्। १ कर्णवेधका नियम, कनछेदनका तरीका। २ रक्षाभूषणको बालकके कर्णवेधका सुश्रुतोक्त नियम। षष्ठ वा सप्तम मास, प्रशस्त तिथि करण मुहूर्त तथा नक्षत्रयुक्त दिवस मङ्गल कार्य एवं स्वस्तिवाचन कर धात्रीके क्रोड़में बालकको बैठाना और विविध क्रीड़ाद्रव्य द्वारा सान्त्वना दिलाना चाहिये। फिर भिषक् वामहस्त द्वारा खींचकर पकड़ और सूर्य किरणमें दैवकृत छिद्र लक्ष्यकर दक्षिण हस्त सूक्ष्म सूचीसे सरल भाव पर कान छेदता है। पुत्रका दक्षिण और कन्याका वाम कर्ण छेदा जाता है। वेधके बाद

गये,—'पाण्डव परम धार्मिक हैं। इसीसे युद्धमें आत्मीय कुटुम्बको न मिटा उन्होंने सन्धिका प्रस्ताव उठाया है। वास्तविक अर्जुनकी भांति दूसरा योद्धा पृथिवी पर देख नहीं पड़ता। कौरव पक्षमें उनके सम्मुख जानेवाला कौन वीर है!' यह बातें कर्ण सह न सके। उन्होंने भीष्मकी बड़ी निन्दा उड़ायी। अन्तको कर्ण और शकुनिके परामर्शसे सन्धि रह गयी।

कुरुक्षेत्रके महासमरमें प्रथम भीष्म कौरव-सेनापति बने थे। उन्होंने अपनी सेनाका सुप्रबन्ध बांध दुर्योधनसे कहा,—'देखो। कर्ण नीच जाति और क्षुद्र प्रकृति है। वह परशुरामके निकट अभिशप्त हुआ और कवचकुण्डल खो चुका है। ऐसे सामान्य व्यक्तिको अर्धरथी ही विवेचना करना उचित है।' यह बात सुन कर्णका सर्वाङ्ग जल उठा। उसी समय उन्होंने प्रतिज्ञा की,—'जितने दिन भीष्म जीवित रहेंगे, उतने दिन हम कभी युद्धमें अस्त्रधारण न करेंगे।' यही कहकर उन्होंने रणक्षेत्र छोड़ा था।

दश दिन युद्ध होने पीछे कुरुपितामह भीष्म शरशय्यापर सो गये। कर्णने एक दिन रात्रिकालको उनसे मिल कहा था,—'आप सर्वदा जिसकी निन्दा करते रहे, मैं वही कर्ण हूं।' भीष्मने इसे देख रक्षकोंको हटाया, पीछे सस्नेह यह कहते कर्णको गले लगाया,—'हमने नारद और व्यासके मुख तुमको कुन्तीका पुत्र सुना है। पाण्डवगणसे द्वेष रखनेपर ही हम तुम्हें कुछ कड़ी बात बोल देते थे। वास्तविक तुम्हारी तरह दाता और ब्रह्मनिष्ठापर दूसरा देख नहीं पड़ता था। तुमसे हमारा पूर्व भाव दूर हो गया है। अब तुम हमारी मानो, तो अपने सहोदर पाण्डवोंकी ओरसे युद्ध ठानो।'

तेजस्वी कर्णने उत्तर दिया,—'आपके कहनेसे अब मेरे कुन्तीपुत्र होनेमें कोई सन्देह नहीं। किन्तु पितामह! इतने दिन मैं दुर्योधनके ऐश्वर्यसे ही प्रतिपालित हुआ हूं। फिर उनको मैंने एक बार आश्वास भी दिया था। अब मैं कैसे उन्हें प्रिय बन्धु दुर्योधनसे कहूं। प्राण जाना अच्छा है। मैं अपनी प्रतिज्ञा न तोड़ूंगा।' भीष्मने कहा,—'तो स्वर्गकाम होकर लड़ो। कूट युद्धसे अलग रहो।'

भीष्मके पीछे द्रोणाचार्य कौरवोंके सेनापति हुये। कर्णने उनके अधीन अनेक बार युद्ध किया था। उसी समय उन्होंने बालक अभिमन्युको कूट युद्धमें मारनेका परामर्श उठाया और इस कार्यमें यथेष्ट साहाय्य पहुंचाया।

कर्ण एकाघ्नी शक्ति द्वारा अर्जुनको मारना चाहते थे। किन्तु उनके मनकी आशा मनमें ही रह गयी। भीमनन्दन घटोत्कच कुरुसैन्यके दमनमें दौड़ कर्णके सामने आये थे। उन्होंने अपने बचानेके लिये एकाघ्नी शक्ति छोड़ घटोत्कचको मार डाला। द्रोणके निहत होने पर कर्ण कुरुसैन्यके सेनापति बने। उनके सारथी शल्य रहे। यथा समय महावीर कर्ण ससैन्य समरक्षेत्रमें उतर पड़े। उनकी युद्धनीति और वीरता देख पाण्डवपक्षमें हाहाकार उठा। किन्तु कर्णके सारथी शल्य विमुख थे। कर्ण अर्जुनके मारनेको जितना आस्फालन लगाते, शल्य उतना ही प्रतिवाद कर अर्जुनकी प्रशंसा सुनाते और उनकी निन्दा करते थे। किन्तु कर्णने निज बाहुबलसे ७० प्रभद्रक, २५ पाञ्चाल, भानुदेव, चित्रसेन, सेनाबिन्दु, तपन, शूरसेन चेदि और अपरापर लोगोंके असंख्य सैन्यको मार गिराया। फिर उन्होंने अर्जुन व्यतीत युधिष्ठिरादि पाण्डवको भी हराया। कर्णने कुन्तीके निकट अर्जुनको छोड़ अपर किसी पाण्डवके न मारनेकी प्रतिज्ञा की थी। इसीसे युधिष्ठिरादि पाण्डव हार कर भी जीते रहे।

अन्तको अर्जुनके साथ कर्णका घोरतर युद्ध हुआ। उस युद्धमें योद्धव्यके कौशलसे यह अन्तिम शय्यापर सो गये। (महाभारत)

कर्णका प्रथम नाम वसुषेण रहा। पालक पिता सूतने उनका यही नाम रखा था। पीछे पृथक् पृथक् कार्यके अनुसार कर्ण, वैकर्तन, अर्कनन्दन, अङ्गराज, अङ्गेश्वर, चम्पेश, चम्पाधिप, अङ्गाधिप और घटोत्कचान्तक प्रभृति नाम हुआ। प्रतिपालक पिता तथा पालिका माताके परिचयानुसार कर्णको लोग सूतपुत्र,

उसमें रुईकी बत्ती बनाकर डुबाना और अथवा तेल लगाना चाहिये। अधिक रुधिर गिरने या वेदना बढ़नेसे अन्य स्थानका वेध समझते हैं। यथारीति कर्णवेध होनेसे किसी प्रकार उपद्रव उठनेकी आशङ्का नहीं आती। किन्तु अज्ञ भिषक् द्वारा कोई दूसरी शिरा छिद जानेसे विविध उपद्रव उठते हैं। कालिका शिरा विद्ध होनेसे ज्वर, दाह, शोथ और दुःख बढ़ता है। फिर मर्मरिका वेधसे वेदना, ज्वर एवं ग्रन्थि और लोहितिका वेधमें मन्यास्तम्भ, अपतानक, शिरोग्रह और कर्णशूलरोग लगता है।

कष्टकर क्रिया, मलिन सूईके वेध, गाढ़तर बत्ती प्रवेश अथवा दोषके प्रकोपसे वेदना तथा शोथ होने पर यष्टिमधु, एरण्डमूल, मञ्जिष्ठा, यव एवं तिल बांट और मधु घृत डाल प्रलेप चढ़ाते हैं। इस प्रलेपसे अच्छा हो जानेपर फिर पूर्वोक्त नियमसे कर्णवेध करना पड़ता है। छिद्र बढ़ानेको तीन दिन पीछे क्रमशः स्थूलवर्ति डाल उसे सेंक देना चाहिये। (सुश्रुत)

कर्णशष्कुली (सं० स्त्री०) कर्णयोः कर्णस्य वा शष्कुलीव, उपमि०। १ कर्णगोलक, कानका पारा। (Auricle or external ear)

कर्णशिरीष (सं० पु०) कर्णगतः शिरीषः, मध्यपद-लो०। कर्णपर अलङ्कारवत् धारण किया हुआ शिरीष पुष्प, जो शिरीषका फूल कानपर गहनेकी तरह रखा हो। प्रवादानुसार कानमें फूल खोंसना न चाहिये।

कर्णशूल (सं० पु०) कर्णस्य शूलः शूलवत् यन्त्रणा-प्रदो रोगः। कर्णस्रोतोगत रोगविशेष, कानका दर्द। दूषित कफ, पित्त एवं रक्तसे पथ रुकते वायु कर्णमें आती और चलता और अत्यन्त वेदना उत्पन्न करता है। इसी पीड़ाका नाम कर्णशूल है। कर्णशूल कष्ट-साध्य होता है। लहसुन, शिग्रु एवं आर्द्रकका रस अथवा मूली, मधु, सैन्धव तथा तैल वा लहसुन, आद्रक, शोभाञ्जन, रक्तशोभाञ्जनादि मूल और कदलीका रस किञ्चित् उष्ण कर कानमें डालनेसे कर्णशूल निवारित होता है। केवल कटुतैलको भी कुनकुना कानमें डाल सकते हैं। गोमूत्र, हस्तिमूत्र, मनुष्यमूत्र अथवा गर्दभमूत्र द्वारा कर्णपूरण करनेसे कर्णशूल मिट जाता है। अर्कपत्रके पुटमें रखा मेषशृङ्गका अग्र रस कर्णमें डालनेसे उक्त रोग आरोग्य होता है। फिर घी लगा अर्कका पत्ता अग्नि वा रौद्रमें तपाने और बांटने दबा कानमें रस टपकानेसे भी कर्णशूल घटता है। (सुश्रुत)

कर्णशूली (सं० त्रि०) कर्णशूलो ऽस्त्यस्य, कर्णशूल-इन्। कर्णशूलविशिष्ट, जिसके कानमें दर्द रहे।

कर्णशेखर (सं० पु०) शालवृक्ष, सालका पेड़।

कर्णशोथ (सं० पु०) कर्णस्रोतोगत रोगविशेष, कानकी सूजन। इस रोगमें कर्णमें अर्बुद और अर्श उत्पन्न होते हैं। (भावप्रकाश) फिर कर्णशोथसे कान बहने और रोगी बहरा पड़ने लगता है। (चरक)

कर्णशोधक, कर्णशोधनी देखो।

कर्णशोभन (सं० त्रि०) कर्णं शोभयति, कर्ण-शुभ-णिच्-ल्युट्। कर्णभूषण, कानका गहना।

कर्णश्रव (सं० त्रि०) कर्णेन श्रवः श्रवणयोग्यः शब्दो यस्य, कर्ण-श्रु-अच्, बहुव्री०। श्रवणके योग्य, सुन पड़ने लायक।

"कर्णश्रवेऽनिले रात्रौ दिवा पांशुसमूहने।" (मनु)

कर्णसंस्राव (सं० पु०) कर्णस्य कर्णयो वा संस्रावः पूयशोणितादेः निःस्रावणं यत्र रोगे, बहुव्री०। कर्ण-स्रोतोगत रोगविशेष, कानकी एक बीमारी। मस्तकमें कोई आघात लगने, जलमें डूब पड़ने अथवा अकस्मात् कोई विद्रधि पकनेसे वायुके कर्णद्वार द्वारा पूय बहानेपर कर्णसंस्रावरोग समझा जाता है। (भावप्रकाश)

जामुन, आम, कंगनी, मौलसिरी और बेरीकी छालका चूर्ण कैथके रसमें मिला शहदके साथ कानमें डालनेसे कर्णसंस्राव रोग अच्छा हो जाता है। अथवा पुटपाकसे सिद्ध आमोंकी छालका रस निकालने और तैल तथा सैन्धव मिला कर्णसंस्राव रोगमें कानमें डालते हैं। (चरक)

कर्णसमीप (सं० पु०) गण्डदेश, कनपटी, गुलगुलो।

कर्णसुवर्ण—भारतवर्षका एक प्राचीन जनपद। प्रसिद्ध चीनपरिव्राजक युएन-चुयङ्गने 'किए-लो-न-सु-फ-ल-न' नामसे इस जनपदका वृत्तान्त लिपिबद्ध किया,

राधेय, राधापुत्र प्रभृति भी कहते थे। २ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। (भारत, आदि ११७२)

कर्ण—मेवाड़के एक राणा। यह राजपूत-वीरकेशरी प्रतापसिंहके पौत्र और राणा अमरसिंहके ज्येष्ठपुत्र थे। पितृनिर्देशपर विधर्मी कवलसे जन्मभूमिको बचानेके लिये इन्होंने अनेक बार मुगल-सम्राट्से युद्ध किया।

इनके समय मेवाड़ बहुत बिगड़ा था। पुनः पुनः लड़नेपर मेवाड़का राजकोष शून्य हुवा और मेवाड़के प्रधान प्रधान वीरका प्राण गया। ऐसी अवस्थामें राजपूत-वीर कितने दिन मुगलवाहिनीके विरुद्ध अस्त्र चला सकते थे! अन्तको राजकोष शून्य होनेसे कर्ण सूरत नगर लूट अर्थसंग्रह करनेपर बाध्य हुये। १६१३ ई०को यह जहांगीरके पुत्र खुरम (शाहजहान्)-से हार गये। फिर मेवाड़के राणा अमरको मुगल-सम्राट्से लड़ना पड़ा था। सन्धि होनेपर कर्ण खुरमके साथ अजमेर जा जहांगीर बादशाहसे मिले। बादशाहने यथेष्ट आदर-अभ्यर्थनाके साथ इन्हें अपने दक्षिण पार्श्व बैठनेको आसन दिया। उस समय प्रति दिन बादशाह कर्णसे मिलते और बहुमूल्य वस्त्रोपहार तथा विविध द्रव्य-सामग्री दे सम्मानवर्धन करते थे। जहांगीर अपनी जीवनीमें लिख चुके हैं—

'मातृभूमिकी प्राकृतिक अवस्थाके अनुसार कर्ण सुपसेव्य द्रव्यसामग्री अपने व्यवहारमें लाना जानते न थे। वह अतिशय लाजुक और अतिमल्पभाषी रहे। फिर हमसे बहुत मिलने जुलनेको इच्छा भी वह रखते न थे। अपने प्रति विश्वास बढ़ानेके लिये हम उनको सान्त्वनावाक्यसे आश्वास दिया करते। हम एक दिन उन्हें नूरजहांके निकट ले गये। महिषीने उन्हें हस्ती, अश्व, खड्ग प्रभृति नाना प्रकार पारितोषिक दिया था।'

वास्तविक जहांगीर कर्णसे विजेताकी तरह व्यवहार करते न थे। वह सर्वदा कर्णका सम्भ्रम बढ़ानेको सचेष्ट रहते। १६२१ ई०में मेवाड़के अन्तिम स्वाधीन राजा महाराणा अमरसिंहने ज्येष्ठपुत्र कर्णको सिंहासन दे डाला।

कर्णके राणा बननेपर मेवाड़में शान्तिका राजत्व चला था। मुगलोंके आक्रमणसे मेवाड़के भग्न और नष्ट अंशोंका इन्होंने पुनः संस्कार कराया। राजधानीके चतुःपार्श्वस्थ प्राकार परिखा द्वारा घेरे गये। पेशोलाका जलरोधक बांध भी बढ़ा था। १६२८ ई० (१६८४ संवत्)को प्रियपुत्र जगत्‌सिंहके हाथ राज्य-भार सौंप इन्होंने परलोक गमन किया।

२ आर्यावर्तके एक सम्राट्। यह कर्णचेदि नामसे प्रसिद्ध थे। कर्णदेव देखो।

कर्णक (सं० पु०) कर्णयति विभिद्य जायते, कर्ण ण्वुल्। १ वृक्ष प्रभृतिका शाखापत्रादि, पेड़ वगैरहको फोड़कर निकलनेवाला पत्ता वगैरह। २ मत्स्यविशेष, एक मछली। ३ सन्निपातविशेष। इस रोगमें दोषत्रयसे कर्णमूलपर शोथ उठता और तीव्र ज्वर चढ़ता है। फिर कण्ठग्रह, बधिरता श्वास, प्रलाप, प्रस्वेद, मोह और दहनका प्राबल्य भी देख पड़ता है। ४ हस्त्यादिका एक रोग, पेड़ वगैरहकी एक बीमारी। ५ कर्णधार, मांझी। (पु०) ६ नौकाके पार्श्वका उत्सेध, नाव या जहाजका बगली उभार। ७ तन्तु, किसलय, सूत, किला। ८ प्रसारित पद, फैले हुये पैर। (त्रि०) ९ भिक्षुक, भीख मांगनेवाला।

कर्णकवान् (सं० त्रि०) कर्णकविशिष्ट, जिसमें बगली डालें रहें।

कर्णकटु (सं० त्रि०) अप्रिय, कानमें खटकनेवाला, जो सुननेमें बुरा लगता हो।

कर्णकण्डु (सं० पु०-स्त्री०) कर्णस्य कर्णे जातो या कण्डुः। कर्णस्रोतोगत रोगविशेष, कानके गड्ढेकी खुजली। कफसंयुक्त मारुत यह रोग लगा देता है। (माधवनिदान) कफनाशक विधिसमूह ही कर्णकण्डुका प्रधान औषध है।

कर्णकण्डू (सं० स्त्री०) कर्णकण्डु देखो।

कर्णक-सन्निपात, कर्णक देखो।

कर्णकिट्ट (सं० क्ली०) कर्णमल, कानका मैल।

कर्णकीटा (सं० स्त्री०) कर्णगतः कर्णस्य भेदकः कीटः, कर्णकीट-टाप् मध्यपदलो०। १ कर्णजलौका, कनसलायी। २ शतपदी, हजारपा, कनखजूरा। (Julus cornifex)

पुरातत्त्वविद्‌ने उसीका नाम 'कर्णसुवर्ण' रख लिया है। उक्त चीन-परिव्राजकके वर्णनानुसार—यह जनपद दैर्घ्य-प्रस्थमें प्रायः १४०० या १५०० लि (१२५ कोससे अधिक) है। इसका राजधानी कोयी २० लि (डेढ़कोस) लगती है। यहां बहुत लोग रहते हैं। सभी शान्त, शिष्ट और सम्पत्तिशाली हैं। निम्नभूमि उर्वरा है। नियमित कृषिकार्य चलता है। नानाविध मूल्यवान और उपादेय कुसुमभूषणसे यह जनपद अलङ्कृत है। जलवायु मनोरम है। अधिवासी विद्योत्साही देख पड़ते हैं। (उस समय) यहां दश सङ्घाराम बने, जिनमें २००० बौद्ध यति बसे हैं। सभी सम्मतीय हीनयानमतावलम्बी हैं। नगरके पार्श्व रक्तविटि (लो-तो-वेइ-चि) नामक एक सङ्घाराम खड़ा है। इसका शालादेश सुविस्तृत और प्राकार अति उच्च है। पहले यहां कोयी बौद्ध न था। राजाके आदेशसे एक श्रमण आये। उनको ज्ञानगर्भ कथामें मुग्ध हो राजाने बौद्ध धर्म ग्रहण किया। उसी समयसे यहां बौद्ध धर्मका आदर बढ़ गया। इसी सङ्घारामसे अनतिदूर अशोक राजाने एक स्तूप बनाया था।

यह कर्णसुवर्ण जनपद कहां था? इसके वर्तमान स्थान पर गड़बड़ पड़ता है। किसी-किसीके मतानुसार मुर्शिदाबादसे ६ कोस उत्तर 'कुरुसोनका-गड़' नामक प्राचीन नगर कर्णसुवर्ण हो सकता है। (J. As. Soc. Bengal. Vol. XXII. 281ff. J. R. As. (n. s.) Vol. VI. 248. Ind Ant. Vol. VII. 197.) फिर कोयी भागलपुरके निकटस्थ कर्णगड़को कर्णसुवर्ण समझता है। (*Beal's Record, Vol. II. p. 20*) वस्तुतः कर्णसुवर्णका प्रकृत स्थान आज भी ठीक नहीं ठहरा। किन्तु चीन-परिव्राजकको वर्णना देखते यह जनपद ताम्रलिप्तसे ७०० लि (प्रायः ५० कोससे अधिक) उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। वर्तमान राढ़ और मयूरभञ्ज पूर्व कर्णसुवर्ण राज्यका अंश था।

कर्णसू (सं० स्त्री०) कर्ण-सू-क्विप्। कर्णकी जननी कुन्ती।

कर्णसूची (सं० स्त्री०) कर्णवेधनार्थं सूची, मध्यपदलो०। कर्णवेध करनेकी सूची, कान छेदनेकी सलाई।

कर्णस्फुटी (सं० स्त्री०) कीटविशेष, एक कीड़ा।

कर्णस्फोटा (सं० स्त्री०) कर्णस्य स्फोटेव स्फोटा विदारणं यस्याः। लताविशेष, एक बेल। इसका संस्कृत पर्याय—श्रुतिस्फोटा, त्रिपुटा, कृष्णतण्डुला, चित्रपर्णी, कोपलता, चन्द्रिका, और अर्धचन्द्रिका है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु, तिक्त, शीतल और सर्व प्रकार विषरोग, ग्रहदोष, भूतादिबाधा तथा पीड़ानाशक होती है।

कर्णस्राव (सं० पु०) कर्णस्य कर्णयोर्वा स्रावः पूयादि-निःसरणम्, ६-तत्। कर्णरोगविशेष, कान या कानोंसे पीब वगैरह बहनेकी बीमारी। कर्णस्राव देखो।

कर्णस्रोतोभव (सं० पु०) कर्णस्रोतसो विष्णुकर्णविवरात् भवति, कर्णस्रोतस्-भू-अच्। १ मधु नामक असुर। २ कैटभ नामक असुर। कैटभ देखो।

कर्णहीन (सं० पु०) १ सर्प, सांप। सांपके कान नहीं होते। (भारत, अनु० ८८ अ०) (त्रि०) २ बधिर, बहरा, जिसे सुन न पड़े।

कर्णाकर्णि (सं० अव्य०) कर्णे कर्णे गृहीत्वा प्रवृत्तं कथनम्, व्यतिहारे इच्, पूर्वस्य दीर्घश्च। कर्णसे कर्ण पर्यन्त, कानों कान, कानाफूसीसे।

"कर्णाकर्णि हि कपयः कथयन्ति च मत्कथाम्।" (रामायण ६।११।१८)

कर्णाख्य (सं० पु०) श्वेतझिण्टी, सफेद झाड़।

कर्णाञ्जलि (सं० पु०) कर्णः अञ्जलिरिव, उपमि०। कर्णशष्कुली, कानका छेद। अञ्जलिसे द्रव्यग्रहणको भांति यह शब्दग्रहणको योग्यता रखता है। इसीसे अञ्जलिके साथ उपमा दी गयी है।

कर्णाट (सं० पु०) दाक्षिणात्यका एक प्राचीन जनपद। शक्तिसङ्गमतन्त्रमें लिखा—

"रामनाथं समारभ्य श्रीरङ्गान्तं शिवेश्वरि।
कर्णाटदेशो देवेशि साम्राज्यभोगदायकः॥"

रामनाथसे लेकर श्रीरङ्गकी सीमा तक साम्राज्यभोगदायक कर्णाटदेश है।

रामनाथका वर्तमान नाम रामनाद है। वह भारतके दक्षिण समुद्रके निकट अवस्थित है। श्रीरङ्ग त्रिशिरापल्लीके निकट कावेरी और कोलरुण नदीके मध्य पड़ता है। ऐसा होते शक्तिसङ्गमतन्त्रके मतानुसार

कर्णकीटी (सं० स्त्री०) कर्णे स्थिता कर्णस्य कीटिका कीटी, गौरादि ङीप् मध्यपदलो०। कर्णजलौका, कनसलायी। इसका संस्कृत पर्याय—कर्णजलौका, शतपदी, विशाखी, इषिका और कर्णदुन्दुभि है।

कर्णकुब्ज (सं० क्ली०) नगरविशेष, एक शहर। यह वर्तमान गुजरात प्रदेशके जूनागढ़का पौराणिक नाम है। कर्णकुब्ज देखो।

कर्णकुहर (सं० क्ली०) कर्णगतं कुहरम्, मध्यपदलो०। कर्णगत छिद्र, कानका छेद।

कर्णकूपकशायिक (सं० पु०) जीवविशेष, किसी किस्मका जानवर। यह जलके मध्य अधोगमन द्वारा श्वास ग्रहण करता है। शम्बुकादि इसी श्रेणीके जीव हैं।

कर्णक्रिमि (सं० पु०) कर्णगतः क्रिमिः कर्णभेदकः क्रिमिः, मध्यपदलो०। शतपदी, कनखजूरा।

कर्णक्ष्वेड (सं० पु०) कर्णस्य कर्णे जातो वा क्ष्वेडः। कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। पित्तादिसे युक्त वायु कानमें वेणुघोषके समान शब्द किया करता है। इसीको कर्णक्ष्वेड कहते हैं। (भावप्र०) कर्णके मध्य सर्षपतैल डालनेसे यह रोग विनष्ट होता है।

कर्णखरिक (सं० पु०) वैश्य जाति, बनियोंकी एक कौम। वैश्य देखो।

कर्णग (सं० पु०) कर्णं गच्छति, कर्ण-गम-ड। १ शब्द, आवाज। (त्रि०) २ कर्णस्थित, कानमें पड़ा हुआ। ३ आकर्ण, कानतक फैला हुआ।

कर्णगढ़—बिहारप्रान्तके भागलपुर जिलेकी एक पार्वत्य भूमि। यह अक्षा० २५° १४′ ४५″ उ० और देशा० ८६° ५८′ ६०″ पूर्व पर अवस्थित है।

देशावली और भविष्य-ब्रह्मखण्डमें इसका नाम कर्णदुर्ग लिखा है। 'पहले यहां सामन्तभूमिकी राजधानी थी। संवत् १६०८ को कर्णदुर्गमें समासिंह राजत्व करते थे। उन्हें राजा कीर्तिचन्द्रने मार डाला। समासिंहके पीछे हेमन्तसिंहने यहां राजत्व किया। इसी कर्णगढ़से आधकोस पूर्व शिलावती नदी बहती है। उससे सवा कोस पश्चिम विद्यामाली माधी महामायाका मन्दिर है।'

(देशावलीके बंगलाअनुवादसे)

कर्णगढ़का शिवमन्दिर विख्यात है। सब मिला-कर चार मठ बने हैं। एकमें गुम्बदाकार शिव-लिङ्ग है। यह शिवमन्दिर प्रायः ५।६ शत वर्षका प्राचीन है। यहां अधिवासी शैव न रहते भी कार्तिक-संक्रान्तिके दिवस बड़े समारोहसे शिवकी पूजा होती है। प्रवादानुसार इस स्थान पर कुन्ती-पुत्र कर्णका राजत्व था। उन्होंने एक दुर्ग निर्माण कराया, जिसके अनुसार यह कर्णदुर्ग वा कर्णगढ़ कहाया। प्राचीन अट्टालिकाका भग्नावशेष नाना स्थान पर पड़ा है।

पहले यहां पहाड़ी बड़ा उत्पात उठाते थे। इसीसे १८८० ई०को भागलपुर जिलेके तहसील-दार क्लीवलैण्ड साहबने यहां एक दल देशीय सैन्य स्थापन किया।

कर्णगूथ (सं० क्ली०) कर्णस्य कर्णजातं वा गूथम्। कर्णमल, कानका मैल।

कर्णगूथक (सं० पु०) कर्णगूथ संज्ञायां कन्। कर्ण-रोगविशेष, कानकी एक बीमारी। कर्णकुहरमें पित्तके उत्तापसे कैथा सूखनेपर यह रोग उठता है। (सुश्रु०) तैल वा स्वेदप्रयोगसे ढीला कर शलाका द्वारा कर्णका मल निकाल डालना चाहिये। (चक्रदत्त)

कर्णगृहीत (सं० त्रि०) कर्णे गृहीतः, ७-तत्। १ श्रुत, सुना हुआ। २ कर्णकर्षक धृत, जो अपने कान पकड़ा हुआ हो।

कर्णगोचर (सं० त्रि०) कर्णस्य गोचरः विषयीभूतः, ६-तत्। कर्णके विषयीभूत, सुन पड़नेवाला, जो कानमें आ सकता हो।

कर्णग्राम—१ भागीरथीतीरवर्ती बङ्गका एक ग्राम।

(भविष्य ब्रह्मख० ७।११)

कर्णग्राह (सं० पु०) कर्णमरित्रं गृह्णाति, कर्ण-ग्रह-अण्। कर्णधार, मल्लाह, मांझी।

कर्णग्राहवत् (सं० त्रि०) कर्णधारयुक्त, जिसमें मांझी रहे।

कर्णछिद्र (सं० क्ली०) कर्णस्य छिद्रम्, ६-तत्। कर्णरन्ध्र, कानका छेद।

कर्णजप (सं० पु०) गुप्तसंवाददाता, मुखबिर, भेदिया।

भारतका सर्वदक्षिण अंश रामेश्वरसे कावेरी नदी पर्यन्त कर्णाट देश ठहरता है। किन्तु महाभारत, मार्कण्डेयपुराण और बृहत्संहितामें कर्णाट अवन्ति, दशपुर, महाराष्ट्र तथा चित्रकूटके साथ उक्त है। यथा

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])
"[illegible]" ([illegible])

शक्तिसङ्गमतन्त्रमें भी एक स्थानपर कहा है—

"[illegible]
[illegible]"

यहां महाराष्ट्रके निकट कर्णाटस्थानोंका उल्लेख मिलता है।

मध्यदक्षिण कर्णाटके राजाओंके खोदित शिला-लिपिमें पढ़ते, कि वह वर्तमान महिसुरके उत्तरांशमें विजयपुर पर्यन्त समुदाय भूभागमें राजत्व करते थे। वस्तुतः इसी भूखण्डको महाभारत, मार्कण्डेयपुराण और बृहत्संहितामें कर्णाट कहा है। आजकल कितने ही लोग कनाड़ा और कर्णाटिक प्रदेशको कर्णाट समझते हैं। किन्तु यह उनका भ्रम है। जिस लिये कर्णाटिक कहते, उसमें कोई प्राचीन कर्णाटराज रहते न थे। मुसलमानोंके आनेसे महिसुरका दक्षिण अंश कर्णाटिक कहाता है। (कर्णाटक देखो।) श्रीमद्भागवतमें दक्षिण कर्णाटका नाम है। वह स्थान कोङ्क, वेङ्कट और कुटक नामक जनपदके साथ उक्त है। ([illegible]) वर्तमान कर्णाटिकका आर्यावर्तप्रान्त स्थान उस दक्षिणकर्णाट हो सकता है।

कनाड़ा कर्णाट शब्दका ही अपभ्रंश है। किन्तु कनाड़ा प्राचीन कर्णाट राज्यके भीतर नहीं पड़ता। मुसलमानोंके महिसुरके दक्षिणांशको कर्णाटिक कहनेकी तरह अंगरेजोंने भी गोवाके दक्षिणस्थित समुद्र-कूलवर्ती जिलोंके भूभागका नाम कनाड़ा रख लिया। प्राचीन काल समुद्रकूलवर्ती उक्त जिलोंके भूभाग कदम्बवंशके अधीन था। (कदम्ब देखो।)

कर्णाटदेशमें चालुक्य, चेर, गङ्ग, यादव और होय-सल वंशने राजत्व किया। (चालुक्य आदि शब्द देखो।) ई० दशम शताब्दको कर्णाटका दक्षिणांश चोल राजाओंके हाथ लगा। उस समय उत्तर अंशमें चालुक्यों ने राजत्व रखा था।

बल्लालदेव महिसुरके तोणूरमें जाकर रहे। उस समय वह और उनके वंशधर कल्याणनगरके कलचुरि राजाओंको कर देते थे। कलचुरीके अधःपतनसे बल्लाल-वंशका अभ्युदय हुआ। १३३६ ई०को विजयनगरने प्रबल हो तुङ्गभद्राके दक्षिण कर्णाट प्रदेश अधिकार किया। १५६५ ई० पर्यन्त उसका प्रभाव अक्षुण्ण रहा। मुसलमानोंसे हार वह प्रथम पेनाकोंडा, फिर चन्द्रगिरिमें जाकर बसे। उनकी एक शाखा आन-गुण्डीमें भी थी। उसी समय कर्णाटिक नाम निकला। प्राचीन कर्णाटमें कर्णाटिकको अलग देखानेके लिये एकको 'कर्णाटपायन-घाट' अर्थात् कर्णाटकी निम्न भूमि और उसके ऊपर पार्वतीय स्थानको 'कर्णाट बालाघाट' कहते थे।

मुसलमानोंने विजयनगरके हिन्दू राजाका कर्णाटको दो भागमें बांट लिया—कर्णाटिक हैदरा-बाद या गोलकुण्डा और कर्णाटिक बीजापुर। फिर उभय विभाग पायानघाट और बालाघाट दो विभागोंमें विभक्त हुये।

व्युत्पत्ति—भारतके संस्कृतज्ञ पण्डित कर्णाट शब्दको कर्ण-अट्-अच् प्रत्ययादि व्युत्पत्ति बताते हैं। किन्तु शब्दशास्त्रविद् पण्डितोंके मतानुसार द्राविड़ी करनाडु (कर् कृष्ण+नाडु स्थान) अर्थात् कृष्णदेश या कृष्णकार्पासोत्पादक क्षेत्रसे कर्णाट बना है। मार्कण्डेय-पुराण, महाभारत और वराहमिहिरकी बृहत्संहिता पढ़नेसे कर्णाट नाम बहु प्राचीन मालूम पड़ता है।

कर्णाट शब्द स्थानवाचक होते भी बहु दिनसे तत्रस्थ जाति और भाषाका बोधक है।

कर्णाट—द्राविड़ भाषाओंकी एक श्रेणी। भारतके [illegible] [illegible], [illegible], गोंड, [illegible] तथा [illegible], [illegible] दाक्षिणात्यमें द्राविड़ शब्दसे महाराष्ट्र, तैलङ्ग, द्राविड़, कर्णाट और गुर्जर [illegible] समझ पड़ते हैं।

द्राविड़ भाषाओंकी एक श्रेणी कर्णाट है। वह

कर्णजलूका (सं॰ स्त्री॰) कर्णस्य कर्णे वा जलूका इव, उपमि॰। कर्णकीटा, कनखजूरा।
कर्णजलौका (सं॰ स्त्री॰) कर्णे जलौकेव। कर्णकीटी, कनसलायी।
कर्णजाप (सं॰ पु॰) गुप्तसंवाद, कानाफूसी।
कर्णजार्श (सं॰ स्त्री॰) कर्णोंमें रोग, कानको एक बीमारी। प्रकुपित दोष श्रोत्र, चक्षु, प्राण और वदनमें मस्से डाल देते हैं। उनसे कान पक और रोगी बधिर पड़ जाता है। (सुश्रुत)
कर्णजाह (सं॰ क्ली॰) कर्णास्य मूलम्, कर्ण-जाहम्। कर्णमूल, कानको जड़।
कर्णजित् (सं॰ पु॰) कर्णं जितवान्, कर्ण-जि-क्विप्। अर्जुन। इन्होंने कर्णको जीता था।
कर्णजीरक (सं॰ क्ली॰) क्षुद्र जीरक, छोटा जीरा।
कर्णज्योति (सं॰ स्त्री॰) कर्णस्फोटा, कानकी मुग्गी।
कर्णतः (सं॰ अव्य॰) कर्णसे पृथक्, कानसे दूर।
कर्णताल (सं॰ पु॰) कर्णे तालः ताड़ना, ७ तत्। कर्णताड़ना, कानको फटफार।
कर्णतीर्थ (सं॰ क्ली॰) तीर्थविशेष। (ब्रह्मोत्तरख॰)
कर्णदर्पण (सं॰ पु॰) कर्णे दर्पण इव, उपमि॰। ताड़ङ्क नामक कर्णभूषणविशेष, कानमें पहननेकी एक बाली।
कर्णदुन्दुभि (सं॰ स्त्री॰) कर्णे कर्णाभ्यन्तरे दुन्दुभिरिव तत्तुल्य ध्वनिजनकत्वात्। शतपदी, कनखजूरा।
कर्णदेव—चेदिराजवंशके एक अद्वितीय महावीर और दिग्विजयी राजा। यह कलचुरि राजा गाङ्गेयदेवके पुत्र और उत्तराधिकारी थे। हूण-राजकुमारी आवल्लदेवीसे इन्होंने विवाह किया। इन्होंने कर्णावती नगर बसाया; और पाण्ड्य, मुरल, कुङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, कीर और हूणके राजाओंको वशीभूत किया था।

कर्णदेवके पिता गाङ्गेयदेवने बुंदेलखण्डमें पश्चिम कन्नौजतक राज्य किया। उन्हींके समय इन्होंने प्रथम मगधपर आक्रमण मारा था। किन्तु दीपङ्कर श्रीज्ञ-के यत्नसे सन्धि हो गयी। १०४० ई॰को प्रयागके सुप्रसिद्ध अक्षयवट मूलपर गाङ्गेयदेवने प्राण छोड़ा था। (Memoirs, A. S. B. Vol. III. Vol. p. 11) उसके पीछे ही कर्णदेव सुविस्तृत पैतृकराज्य पा कर दिग्विजयको उच्चाशासे निकल पड़े। इन्होंने गुजरातसे बङ्गालतक समग्र देश जीता। कर्णदेवकी सभामें गङ्गाधर कविका बड़ा आदर था। फिर चोड़, कुङ्ग, हूण, गौड़, गुर्जर और कीरके राजा इनकी हाजिरीमें रहते थे। नागपुर-प्रशस्तिके अनुसार जिसे देशके अन्य राजाओंने सताया और कर्णने अपने अधीन बनाया था, उसे मालवके उदयादित्यने छोड़ाया। कृष्णमिश्रके प्रबोधचन्द्रोदय और अन्य शिलालेखमें लिखा है—"चन्देल कीर्तिवर्माके सेनापति गोपालने कर्णको पराजय किया था। हेमचन्द्रके वचनानुसार यह अनहिलवाड़के २य भीमदेवसे हार गये। फिर बिल्हणने भी विक्रमाङ्कदेवचरितमें पश्चिमीय चालुक्य १म सोमदेवसे इनके हारनेकी बात लिखी है।
कर्णदेव (सं॰ पु॰) एक प्रसिद्ध चालुक्यराज। यह अनहिलवाड़ाधिपति भीमदेवके पुत्र थे। राज्यकाल संवत् ११२०-११५० रहा। इनके पुत्रका नाम जयसिंह सिद्धराज था। इसी वंशमें दूसरे कर्णदेव भी हुये। वह सारङ्गदेवके पुत्र थे। उन्होंने संवत् १३५३से १३६० तक गुजरातके अनहिलवाड़में राजत्व किया।
कर्णदेवता (सं॰ पु॰) श्रोत्रेन्द्रियके अधिपति वायु।
कर्णधार (सं॰ पु॰) कर्णमरित्रं धारयति, कर्ण-धृ-अण् उपपदात् अच् वा। १ नाविक, मल्लाह। (त्रि॰) २ दुःखादि निवारक, तकलीफ वगैरह मिटानेवाला।

"नकर्णधारा पृथिवी शक्येव प्रतिभातिमे।
मने दशरथे स्वर्गं रामे चारण्यमाश्रिते॥" (रामायण २।८८।१७)

कर्णधारता (सं॰ स्त्री॰) नाविकका कार्य, मल्लाही।
कर्णधारिणी (सं॰ स्त्री॰) कर्णौ अन्यजीवापेक्षया विपुलं धारति, कर्ण-धृ-णिनि-ङीप्। हस्तिनी, हथिनी। इसके कान दूसरे जीवको अपेक्षा बड़े होते हैं।
कर्णनाद (सं॰ पु॰) कर्णस्रोतोगत रोग, कानकी एक बीमारी। जब वायु नीहोके मार्गसे हट जाता, तब कर्णमें पहुंच भेरी, मृदङ्ग और शङ्खवत् नाद लगाता है। (माधवनिदान, सुश्रुत) सर्षपतैल अथवा अपामार्ग जला और कल्कके साथ तिलतैल पका

अपर द्राविड़ोंके निकट आभिजात्य और मर्यादामें कुछ हीन हैं। अपर श्रेणीके ब्राह्मण इन्हें अपनी कन्या नहीं देते। किन्तु खाना पीना एक हो में चलता है।

कनाड़ा या कर्णाटिक प्रदेशमें यह रहते हैं। कनाड़ेके सकल अधिवासी प्रायः लिङ्गायत् हैं। सम्मान प्रदानकी बात छोड़ यह समय समय इनकी निन्दा उड़ाया करते हैं। फिर भी किसी कर्णाटके उनके घर अतिथि होनेपर आदर अभ्यर्थनाकी परिसीमा नहीं रहती। वह कायमन-वाक्यसे सेवा उठा उसको यथेष्ट सन्तुष्ट करते हैं।

कर्णाट इस प्रान्तके ब्राह्मणोंकी भांति यजमान द्वारा परिपोषित न होते जीविकानिर्वाहके लिये स्व स्व कर्म छोड़ नानाप्रकार कार्य चलाते हैं। किसी किसीको पेटकी जलनसे खेती भी करना पड़ती है।

यह ऋक् अथवा यजुर्वेदी होते हैं। इनकी प्रधानतः अष्ट शाखा हैं—१ हैग, २ कात, ३ चौबेलरी, ४ वर्गीनार, ५ कन्दाव, ६ कर्णाटक, ७ महिसुर-कर्णाटक और ८ श्रीरमाद (श्रीनाथ)। वासस्थानानुसार कर्णाट ब्राह्मणोंके भिन्न भिन्न नाम मिलते हैं—

गोत्र	उपाधि	कुल
काश्यप	आद्यकर्णाटक	महिसुर।
गौतम	अर्धकड़	अयङ्गुर।
भरद्वाज	मुलिनाद	मङ्केरी।
वशिष्ठ	वयमनाद	श्रीरङ्गपत्तन।
विश्वामित्र	अर्धकम्मु	ईवन्दहाल्ली।
शाण्डिल्य	मुर्किनाद	कोसुरबामशोर।
गर्ग	नवीन कर्णाटक	भागडी।
अङ्गिरा	पेरीवरद	तुलुकामन्।
वत्स	हिगत्य	मागोड।
भरद्वाज	हुलकर्णिक	मूर्धपुरम्।
मुद्गल	प्राचीनकर्णाटक	श्यामराजनगरम्।
काश्यप	पेरीवरथ	कुरक।
शाण्डिल्य	प्राचीनकर्णाटक	हागलवाडो।
गौतम	मुर्किनाद	चित्रदुर्ग।
भरद्वाज	मुर्किनाद	शिवमगी।

सिवा इसके कुटी, नञ्जनगुड प्रभृति दूसरे भी कई घर हैं।

कर्णाट ब्राह्मण उत्तर एवं दक्षिण कनाड़ा, तुलुव, मलवार, कोचिन और महिसुरमें रहते हैं। इनकी संख्या १० लाखसे अधिक है। यह देहके गठनकी सुश्री और आकृतिसे उत्तराञ्चलके ब्राह्मणोंकी भांति लगते हैं।

कर्णाट (सं॰ पु॰) रागविशेष। यह मेघरागका द्वितीय पुत्र है। इसको रात्रिके प्रथम प्रहर गाते हैं। कर्णाटको स्त्री कर्णाटी, रङ्गनाथी, मल्लारी, मल्लिका और गौरङ्गी है।

कर्णाटक—१ दाक्षिणात्यकी एक भाषा। यह प्रधानतः तीन भागमें विभक्त हैं—तेलगु (तैलङ्ग), तामिल (द्राविड़ी) और कर्णाटक (कर्णाटी)। तेलगु उत्तर, तामिल दक्षिण और कर्णाटक भाषा मन्द्राजके पश्चिमांशसे पश्चिमोपकूल पर्यन्त समस्त प्रदेशमें प्रचलित है। यही तीन दाक्षिणात्यकी प्रधान भाषा हैं। इनमें कानाड़ा, दक्षिण महाराष्ट्र, महिसुर, निज़ाम राज्यके पश्चिमांश और बिदरमें कर्णाटक भाषाका अधिक चलन है। नीलगिरिमें रहनेवाली बड़गजाति भी शायद प्राचीन कर्णाटी भाषा ही बोलती है। प्राचीन कर्णाटीको आजकल 'हलकनड़' कहते हैं। महाराष्ट्र और महिसुरमें जो खोदित शिलाफलक मिले, उनमें अनेक प्राचीन कर्णाटी अक्षरसे लिखे हैं।

मन्द्राज वा बम्बई प्रेसिडेन्सीके सिविलियन और अन्यान्य गवरमेण्ट कर्मचारीको यह सकल देशीय भाषा सीखना पड़ती हैं। इनकी शिक्षा देनेकी प्रबन्ध बांधते समय कर्णाटी भाषाके सम्बन्धमें अनेक विषय संग्रह किये और लिखे गये। इसीमें ई॰ उत्तम शताब्दको केशवपण्डितने 'शब्दमणिदर्पण' नामक एक धातु सम्बन्धीय पुस्तक बनाया, जो इस भाषका मूलव्याकरण कहाया है।

कर्णाटी भाषा संस्कृतादिकी भांति वाम दिकसे दक्षिणको लिखी जाती है। इसके शब्द लिखनेमें जिस जिस वर्ण वा युक्ताक्षरका प्रयोजन पड़ता, वह पास ही पास बनता है। दो शब्दों या पदोंके मध्य आवश्यक छेद डालनेको न तो कोयी व्यवस्था और न वाक्य या वाक्यांशके पीछे किसी चिह्नका व्यवहार है। कर्णाटी वर्णमालामें सब ५२ अक्षर होते हैं। उनमें १६ स्वर,

कानमें डालनेसे कर्णनादरोग आरोग्य होता है। (चक्रदत्त)

कर्णनासा (सं॰ स्त्री॰) श्रोत्रेन्द्रिय तथा घ्राणेन्द्रिय, कान और नाक।

कर्णन्दु (सं॰ स्त्री॰) स्त्रीके कानकी बाली, तरौना, पात।

कर्णपत्रक (सं॰ पु॰) कर्णं पत्रमिव कायति शोभते, कर्ण-पत्र-कै-क। कर्णपाली, बाहरी कानका हिस्सा।

कर्णपथ (सं॰ पु॰) कर्ण एव पन्थाः, अच्। कर्ण-च्छिद्र, कानका छेद। कर्णकुहर ही शब्दके प्रवेशका पथ है।

कर्णपर (सं॰ पु॰) कर्णालङ्कार, कानका जेवर।

कर्णपरम्परा (सं॰ स्त्री॰) कर्णानां परम्परा, ६-तत्। श्रोत्रेन्द्रियकी प्राचीन प्रथा, कानकी पुरानी चाल। एकसे दूसरे और दूसरेसे तीसरे कानमें क्रमशः विषयको विस्तृति होनेका नाम कर्णपरम्परा है।

कर्णपराक्रम (सं॰ पु॰) अपभ्रंशयोग्य विविध छन्दो-युक्त काव्यविशेष, किसी किस्मकी शायरी।

कर्णपर्व (सं॰ क्ली॰) महाभारतका अष्टम पर्व। इस पर्वमें कर्णके सेनापतित्व ग्रहण करनेके पीछे होनेवाली सकल घटना वर्णित है। कर्ण देखो।

कर्णपाक (सं॰ पु॰) कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। क्षत, अभिघात, पिड़का या वातादि तीन दोष कुपित होनेपर रक्त अथवा पीतवर्ण स्राव निक-लता और कर्णका मध्य अतिशय उष्ण पड़ जलने लगता है। इसीको कर्णपाक रोग कहते हैं। (सुश्रुत) मालती-पत्रका रस अथवा मधुके साथ गोमूत्र कर्णमें डालनेसे कर्णपाकरोग विनष्ट होता है। फिर हरि-ताल तथा गोमूत्र मिला अथवा जामुन और आमके नूतन पत्र एवं कपित्थ तथा कार्पासके बीज समभाग कूट पीस और रस निकाल कानमें भरनेसे भी कर्ण-पाक मिट जाता है। (चक्रदत्त)

कर्णपालि (सं॰ स्त्री॰) कर्णं पालयति शोभयति, कर्ण-पाल-इन्। कर्णलतिका, बिनागोश, कानकी लौ। (Lobe)

कर्णपाली (सं॰ स्त्री॰) कर्णं पालयति शोभयति, कर्णपाल-अण्-ङीप्। १ कर्णलतिका, कानकी लौ। २ कर्णभूषणविशेष, कानकी बाली। ३ कर्णपाली-गत रोग, कानकी लौमें होनेवाली एक बीमारी। यह पञ्चविध होती है—परिपोट, उत्पात, उन्मन्थ, दुःख-वर्धन और परिलेही। (सुश्रुत)

कर्णपात्र (सं॰ पु॰) सुन्दर कर्ण, खूबसूरत कान।

कर्णपिशाची (सं॰ स्त्री॰) कर्णमुद्दिश्य पिनष्टि, कर्ण पिट् आचयति नाशयति स्वरूपदर्शनेन, कर्ण-पिश्-क्विप्-आ-चि-क्विप्-अण्-ङीप्। देवीविशेष, एक शक्ति। इसका ध्यान है—

"कृष्णां रक्तविलोचनां त्रिनयनां खर्वां च लम्बोदरीं,
हस्ताभ्यां वरखड्गकौ दधतीमुग्रामत्युग्रां घोरां।
वामाभ्यां दधतीं कपालमभयं मांसाश्रयां भीषणाम्,
वन्दे तां पितृकाननवासिनीं कर्णपिशाचीं सदा मुदा॥"

रक्तवर्णा, रक्तचक्षु, त्रिनयना, खर्वाकृति, लम्बो-दरी, खड्ग कपुष्पवत् रक्तजिह्वा, वर तथा अभयदानमें उभयकर व्यापृता, ऊर्ध्वमुखी, धूम्रवर्णा, जटामालिनी, अपर हस्त द्वयमें नरमुण्डधृता, चपला, श्मशान-वासिनी और सर्वदा पैशाचिकोंकी नमस्कार है।

निशाकाल या अर्धरात्रको उक्त ध्यान लगा पूजा करना चाहिये। इस मन्त्रका बलि निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर चढ़ाया जाता है—"ओं कर्णपिशाचि इदं बलिं गृह्ण गृह्ण मम सिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।"

पूजाके दिन प्रातःकाल कुछ जप कर मध्याह्नको एकबार निरामिष खाना चाहिये। प्रातःकालकी ही बराबर रातको भी जप करना पड़ता है। ताम्बू-लादि भिन्न रातको अन्य भोजन नहीं चाहिये। जपका दशमांश तर्पण करना चाहिये। निम्नलिखित मन्त्र एक लक्ष पुरश्चरण कर दशमांश होम होता है—

"ओं कर्णपिशाची वद वद ह्रीं स्वाहा।"

अभावमें दशमांश तर्पण कर वर मांगना चाहिये। तत्पर चन्दनसे कुसुमोंसे यथा इष्टदेवताकी पूजा करना पड़ती है। आकाशमें हुङ्कारादिकी भांति शब्द उठने और दीर्घ अग्निशिखा झलकने पर साधकका कार्य सिद्ध होता है।

कर्णपुट (सं॰ क्ली॰) कर्णस्य पुटम्, ६-तत्। कर्ण-च्छिद्र, कानका छेद।

२ अर्धस्वर और ३८ व्यञ्जन हैं। किन्तु विशुद्ध कर्णाटीमें ४७ ही वर्ण रहते हैं। बाकी ९ वर्ण संस्कृत शब्दोंका यथायथ निकालनेको बने हैं। संस्कृतादि भाषाकी भांति कर्णाटीमें भी यथेष्ट विशुद्ध मुहावरा विद्यमान है।

इसके समुदय शब्द पांच भेदोंमें विभक्त हैं—१म मूल कर्णाटी, २य कर्णाटी प्रत्ययादि युक्त संस्कृत, ३य संस्कृत-परिवर्तित, ४र्थ अपभ्रंश एवं अपभाषा और ५म अन्यान्य भाषाके शब्द। फिर कर्णाटी भाषामें विशेष्य शब्दके चार भाग हैं—वस्तुवाचक, विशिष्ट, क्रियावाचक और यौगिक। इसमें देवता तथा मनुष्यको पुंलिङ्ग, देवी और मानवीको स्त्रीलिङ्ग और समस्त पशुपक्षी कीटपतङ्गादि एवं अचेतन जड़ पदार्थको क्लीबलिङ्ग माना है। वचन दो ही हैं—एकवचन और बहुवचन। सर्वनामको ८ भागमें बांटा है—व्यक्तिवाचक, पुरुषवाचक, अनिश्चयात्मक, संख्यावाचक, स्थानवाचक, समयपरिमाणवाचक और प्रश्नसूचक। क्रिया सकर्मक और द्विकर्मक होती है। काल आठ प्रकारका है। द्वितीय पुरुषके अनुज्ञा-कालका रूप ही धातुका मूलरूप रहता है।

इसमें उपसर्गादि अव्यय, क्रियाविशेषण, समुच्चयादि अव्यय और विस्मयादि अव्यय भी होते हैं। किन्तु भाषामें जो विशेषत्व रहता, उसको विस्तार देखानेका कोई उपाय नहीं ठहरता। शून्यके योगसे दशगुणोत्तर संख्या समझी जाती है।

कर्णाटी भाषाके सम्बन्धमें विशेष विवरण समझनेको Dr. Mc Kerrell's Grammar of the Carnataka language और Caldwell's Dravidian Grammar देखना आवश्यक है।

२ नेपालका एक राजवंश। पार्वतीय वंशावलीके पढ़नेसे समझ पड़ता, कि कर्णाटक राजवंशने नेपालमें संवत् ९से २३८ (८८० से ११०८ ई०) तक २१८ वर्ष राजत्व किया था। निम्नलिखित नेपालाधिप कर्णाटोंका नाम मिलता है—

नाम	राज्यकाल
१ नान्यदेव	५० वर्ष
२ गङ्गदेव (नान्यपुत्र)	४१ वर्ष
३ नरसिंहदेव (गङ्गदेव पुत्र)	३१ ,,
४ शक्तिसिंहदेव (नरसिंह पुत्र)	३९ ,,
५ रामसिंहदेव (शक्तिसिंह पुत्र)	५८ ,,
६ हरिदेव।	मिथिला देखो।

कर्णाटकदेश, कर्णाट देखो।

कर्णाटक भट्ट—एक प्राचीन संस्कृत कवि। (सुभाषितावली)

कर्णाटक भाषा (सं० स्त्री०) कर्णाटदेशकी भाषा।

कर्णाटदेव—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। (शार्ङ्गधर)

कर्णाटदेश, कर्णाट देखो।

कर्णाटशिखर (सं० क्ली०) महाराष्ट्र प्रदेशस्थ चित्रकूटादि पर्वतका शृङ्गदेश।

कर्णाटिक—मन्द्राजप्रान्तका एक प्रदेश। कुमारी अन्तरीपसे उत्तर नलोर-पर्यन्त पूर्वघाट और करमण्डल उपकूल अर्थात् समस्त तामिल प्रदेशका भाग करके युरोपीयोंने यह नाम रखा है। कर्णाटिक शब्दसे कर्णाट भाषाभाषियोंका बोध होता है। किन्तु इस विस्तीर्ण भूखण्ड प्राचीन कर्णाट राज्यके अन्तर्गत न रहा। कर्णाट देखो। वरं इसके उत्तरीय निजामराज्य और कावेरी नदीका अवकूलस्थ भूमिखण्ड किसी समय दक्षिण कर्णाट कहाता था। आजकल अंगरेज लिखित कर्णाटिक कहनेसे, वर्तमान आर्काट (अर्काडु), मदुरा और तंजोर राज्य उसीके अन्तर्गत आते हैं।

अनाओ-युद्धके समय कर्णाटिकमें अंगरेज कई बार लड़े थे। उसीसे दाक्षिणात्यमें अंगरेजोंके प्रभुत्वकी भित्ति दृढ़ पड़ गयी। नीचे उस युद्धका विवरण देते हैं—

जिस समय फ्रान्स अपनाओंके अंगरेजोंसे विरुद्ध युद्ध अष्टिलस चाटमनके साथ बढ़ानेको और अंगरेजोंके समय (अर्थात् १७४८ ई०) कप्तान कालियट नामक मन्द्राजके एक अंगरेज-सिपाही बालो रावट मिसको मदुरापर चढ़े। कप्तान कालियट त्रिचना-पल्लीके शासनकर्ता थे। उनके मदुरा जीतनेको त्रिचना-पल्ली छोड़ने ही अंगरेजोंके सदाशिवम नामक प्रतापी त्रिचनापल्लीका आक्रमण करनेको एक दल सैन्य भेज दिया। अराबीजोंने केवल त्रिचनापल्ली छोड़ अंगरेजोंका दुर्ग अधिकार किया था। कप्तान कालियट यह संवाद सुनते ही त्रिचनापल्लीको और लौट पड़े।

कर्णपुटिका (सं० स्त्री०) कर्णशष्कुली, कानकी साल।

कर्णपुर (सं० क्ली०) कर्णस्य पुरम्, ६-तत्। कर्णकी राजधानी चम्पानगरी। आजकल इसे भागलपुर कहते हैं।

कर्णपुरी (सं० स्त्री०) कर्णस्य पुरी, ६-तत्। चम्पानगरी, भागलपुर।

कर्णपुष्प (सं० पु०) कर्णवत् कर्णाकारं कर्णभूषणयोग्यं पुष्पं वा यस्य। १ मोरटलता, एक बेल। २ नीलझिण्टी, काली झाड़ी।

कर्णपूः (सं० स्त्री०) कर्णस्य पूः पुरम्, ६-तत्। कर्णके राज्यकी पुरी, भागलपुर। इसका संस्कृत पर्याय—चम्पा, मालिनी और लोमपादपूः है।

कर्णपूर (सं० पु०) कर्णं पूरयति अलङ्करोति, कर्ण-पूर-अण्। १ शिरीषवृक्ष, शिरिसका पेड़। २ नील-पद्म, काला कंवल। ३ अशोकवृक्ष। ४ कर्णभूषण, करनफूल। ५ बालग्रह। यह स्कन्दादि नाम रखते और बालकोंको पीड़ा करते हैं। ६ मन्दोवृक्ष, एक पौधा।

कर्णपूरक (सं० पु०) कर्णं पूरयति भूषयति, कर्ण-पुर-ण्वुल्, कर्णपूर स्वार्थे कन् वा। १ कदम्बवृक्ष, कदम्बका पेड़। २ अशोकवृक्ष। ३ तिलक, तिल।

कर्णपूरण (सं० क्ली०) कर्णस्य पूरणम्, ६-तत्। तैलादिसे कर्णका पूरण, तेल वगैरहसे कानका भराव। क्वेदादिकी मात्रासे भिषक्को भली भांति कर्ण भरना चाहिये। नित्य कर्णपूरणसे मनुष्य न तो ऊंचा सुनता और न बहरा पड़ता है। रसादिसे भोजनके पहले और तैलादिसे सूर्यास्तके पीछे कर्णको भरना अच्छा है। (रैद्य) २ कर्णपूरणद्रव्य, कानमें डालनेकी चीज़।

कर्णप्रणाद (सं० पु०) कर्णे अङ्गुलिविहितकर्णे प्रणादः शब्दविशेषः, ७-तत्। कर्णनादनामक रोगविशेष।

कर्णनाद देखो।

कर्णप्रतिनाह (सं० पु०) कर्णे जातः प्रतिनाहः रोगविशेषः, मध्यपदलो०। कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। कर्णका मल पिघल नाक और मुख तक आ पहुंचनेसे कर्णप्रतिनाह रोग समझा जाता है। इस रोगसे मस्तकके अर्ध भागमें वेदना हुवा करती है। (माधवनिदान) कर्णप्रतिनाह रोगमें स्नेह और स्वेद प्रयोगकर नस्यादि लेना चाहिये। (चक्रदत्त)

कर्णप्रतीनाह (सं० पु०) कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। कर्णप्रतिनाह देखो।

कर्णप्रयाग—युक्त प्रदेशके गढ़वाल जिलेका एक ग्राम। यह पिण्डार तथा अलकनन्दा नदीके सङ्गमस्थान (अक्षा० ३०° १५´ उ० और देशा० ७९° १४´ ४०´´ पू०) पर अवस्थित है। कर्णप्रयाग अतिपूर्वसे एक महातीर्थ माना जाता है। यहां गङ्गाके सङ्गममें नहानेसे अधिक पुण्य मिलता है। हिमालयको जाते समय यात्री इस तीर्थका दर्शन करते हैं। यहां हिमाचलनन्दिनी उमाका मन्दिर है। स्थानीय पण्डावोंके कथनानुसार भगवान् शङ्कराचार्यने यह देवीमन्दिर बनाया था। पहले यहां पिण्डार उतरनेके लिये रस्सीका झूला रहा। किन्तु अब लोहका सेतु बन गया है।

कर्णप्रयागके एक मन्दिरमें कर्णकी प्रतिमूर्ति है। किसी किसीके मतानुसार कर्णके नामपर ही इसे कर्णप्रयाग कहते हैं। यह समुद्रतलसे २५६० फीट ऊंचा है।

कर्णप्रान्त (सं० पु०) कर्णस्य प्रान्तः सीमादेशः, ६-तत्। कर्णकी शेष सीमा, कानका छोर।

कर्णप्राय (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क। यह देश नैऋत दिक्में अवस्थित है। (बृहत्सं० १४।१८)

कर्णप्रावरण—जनपदविशेष, एक मुल्क। महाभारतमें यह जनपद दक्षिणदेशीय कालमुख, कोलगिरि, निषाद प्रभृतिके साथ उक्त है। (सभाप० ३०अ०)

देशावलीके मतमें कर्णप्रावरण मालव देशसे पश्चिम पड़ता है। मत्स्यपुराणमें एक अपर कर्णप्रावरणका नाम है। उसी जनपदसे पावनी नदी प्रवाहित है। (मत्स्यपु० १२१।४८) वह सम्भवतः हिमालयसे उत्तर लगता है।

कर्णप्रावरण अपने अधिवासियोंका भी बोधक है। पाश्चात्य भौगोलिकोंने भारतपुस्तकमें कर्णप्रावरणोंका एनेटोकटे (Enotokoitoi) लिखा है।

कर्णफल (सं० पु०) कर्णः फलमिव यस्य। मत्स्यविशेष, एक मछली। (Ophiocephalus kurraway) राजवल्लभके मतसे यह अजीर्ण और कफकर है।

कर्णफुली—चट्टग्रामकी एक नदी। यह अक्षा० २२°

मदुराके युद्धमें उनका पराजय हुवा। किन्तु उन्होंने त्रिचनापल्ली पहुंचते ही फरासीसी सैन्यको उखाड़ डाला। फरासीसी सैन्याध्यक्षने हार कर त्रिचनापल्ली अंगरेज़ोंको सौंपी। इसी बीच बन्दीवास नामक स्थानके शासनकर्ताने अंगरेजोंको राजस्व देना अस्वीकार किया। करनल आलडार क्रून उनके विरुद्ध बढ़े और नगर घेर पड़े थे। किन्तु फरासीसी बन्दीवासके शासनकर्ताका पक्ष ले अंगरेजोंसे लड़नेको अग्रसर हुये, जिससे कप्तान आलडार क्रून अपना अवरोध उठा चलते बने। फिर मराठोंने वहांके नवाबसे जा राजस्वकी चौथका बाकी ४ लाख रुपया मांगा था। किन्तु नवाब उस समय इतना रुपया कहां पाते। वह नाना अनुनय विनय करने लगे। अन्तको महाराष्ट्रीय साढ़े चार लाख रुपयेमें समस्त ऋण निबटानेपर सम्मत हुये। उस समय पठाननवाब दाक्षिणात्यके सूबेदार और मराठा-नायक मुरारी रावकी अधीनता अधिक मानते न थे। सुतरां उन्होंने अंगरेजोंसे कहला भेजा—हम मराठोंके विरुद्ध आपको साहाय्य देनेपर प्रस्तुत हैं। किन्तु अंगरेज उनसे वैसी सन्धि स्थापन कर न सके। कारण उस समय महाराष्ट्र अंगरेजोंसे सदय व्यवहार रखते थे। इसी प्रकार एक मास बीतनेपर दूसरे मास (जून १७५७ ई०) कप्तान कालियडने फिर मदुरापर चढ़नेको उद्योग लगाया। युद्धमें अंगरेज़ोंकी विस्तर क्षति हुयी और प्रथम आक्रमणसे कोई बात न बनी। किन्तु कालियड उतनी क्षति उठा भी युद्धसे क्लान्त न हुये और ८वीं अगस्तको नगरमें घुस पड़े। फिर उन्होंने शासनकर्तासे (१०००००) रु० बाकी राजस्व पाया था। इसके पीछे भी अंगरेज़ मदुरा राज्यके क्षुद्र क्षुद्र दुर्ग आक्रमण करते रहे। किन्तु किसी पक्षपर जय पराजय स्थिर न हुवा।

इसी समय फिर युरोपमें अंगरेज़-फरासीसी लड़ पड़े। फरासीसियोंने काउण्ट डि-लाली नामक एक-जन विख्यात सैनिकको सेनाका नायक बना एक दल नौ-सेनाके साथ भारत भेजा। लालीके साथ निजका भी एक सहस्र आइरिश सैन्य था। १७५८ ई०के अप्रेल मास वह सबको अपने साथ ले भारत आ पहुंचे। उन्होंने आते ही अंगरेज़ोंका सेण्ट-डेविड दुर्ग आक्रमण किया था। एडमिरल पिकॉकी अधीनस्थ अङ्गरेज सेनाने उन्हें रोकनेको किया, किन्तु उसका कोई फल न हुवा। लालीने दुर्ग अधिकार कर मन्द्राजपर चढ़ना चाहा था। किन्तु आवश्यक अर्थ न मिलनेसे वह सङ्कल्प जैसेका तैसा ही बना रहा। फिर अर्थ संग्रहके लिये उन्होंने तञ्जोरराज-प्रदत्त ५६ लाख रुपयेका तमस्सुक भुनानेकी दौड़ धूप लगायी, किन्तु उसमें भी कोई सिद्धि न पायी। तञ्जोरके राजाने अंगरेजोंकी मन्त्रणामें पड़ रुपया देनेपर वृथा विलम्ब डाला था। इसी अवकाशमें अंगरेज़ोंकी नौ-सेना आ पहुंची। लालीने बाध्य हो सेण्ट डेविड दुर्गका अवरोध छोड़ा था। लालीने किविलूरका एक प्राचीन हिन्दू-मन्दिर तोड़ पूजक ब्राह्मणोंको तोपसे उड़ा दिया। इसी समय फरासीसी सेनानी बुसी निजाम राज्यमें महासमादरसे रहते थे। लालीने उन्हें बोला भेजा। बुसीके लालीके निकट पहुंचते ही उत्तर-सरकारके फरासीसी अधिकारमें गड़बड़ पड़ा था। विशाखपत्तनके राजा आनन्दराजने फरासीसी अधिकार आक्रमण किया। किन्तु भविष्यत्‌में फरासीसी आक्रमणसे राज्यरक्षाकी चिन्तापर वह घबरा उठे। अन्तको अन्य उपाय न देख उन्होंने बङ्गालसे क्लाइवका साहाय्य मांगा था। क्लाइवने आवश्यक सन्धि ठहरा उत्तर-सरकारसे फरासीसियोंको भगानेके लिये करनल फोर्डको २ हज़ार सिपाही, ५०० गोरे और ६ तोपोंके साथ राजमहेन्द्रीकी ओर भेजा। राहमें फरासीसी सेनानी कनफलाङ्गने उतनेही सैन्यके साथ उन्हें हरा सब तोपें छीन लीं। किन्तु फोर्ड उससे दुःखित न हो कनफलाङ्गके लौटते ही पीछे दौड़ पड़े। राजमहेन्द्री जा उन्होंने वहां किसीको पाया न था। सुतरां वह ससैन्य मछलीपत्तनकी ओर बढ़े। बीचमें अनेक स्थल पर आनन्दराजने बाधा डालनेकी चेष्टा लगायी थी। किन्तु अन्तको (छठीं मार्च १७५८ ई०) फोर्ड अपने दलके साथ मछलीपत्तन पहुंच गये। कनफलाङ्गने निजामसे साहाय्य मांगा। निज़ामने भी साहाय्य देना स्वीकार किया। इधर फोर्डके

२२´ उ० और देशा० ९२° ३४´ पू० पर अवस्थित है। कर्णफुली लुशाद्रिसे निकल दक्षिणमुख बङ्गोपसागरमें जा गिरी है। इसके दक्षिण कूलपर चट्टग्राम नगर और बन्दर है। प्रधान शाखा चार हैं—कासालङ्ग, चिङ्गड़ी, कपताई और रङ्गियाङ्ग।

कर्णफुलीके उत्पत्तिस्थान पर नीलकण्ठ नामक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित है। इस नदीमें नहानेसे पुण्य होता है। (भविष्य ब्रह्मख० १०।८)

कर्णयन्त्रनाकृति (सं० स्त्री०) कर्णवेधके अनन्तर कर्णके यन्त्रकी आकृति। यह पञ्चदश विध होती है— १ नेमिसन्धानक, २ उत्पलभेद्यक, ३ वल्लूरक, ४ आसङ्गिम, ५ गण्डकर्ण, ६ आहार्य, ७ निर्वेधिम, ८ व्यायोजिम, ९ कपाटसन्धिक, १० अर्धकपाटसन्धिक, ११ संक्षिप्त, १२ हीनकर्ण, १३ वल्लीकर्ण, १४ यष्टिकर्ण और १५ काकौष्ठक।

कर्णभूषण (सं० क्ली०) कर्णौ भूषयति, कर्ण-भूष-ल्यु। १ कर्णालङ्कार, कानका जेवर। २ कर्णीकवच। ३ नागकेशर।

कर्णभूषा (सं० स्त्री०) कर्णौ भूषयति, कर्ण-भूष-अच्-टाप्। कर्णभूषण, कानका जेवर।

कर्णमद्गुर (सं० पु०) मत्स्यभेद, एक मछली। (Silurus unitus)

कर्णमल (सं० क्ली०) कर्णस्य मलम्, ६-तत्। कर्णगूथ, खूंट, कानका मैल।

कर्णमुकुर (सं० पु०) कर्णौ मुकुरः दर्पण इव, उपमि०। कर्णालङ्कार विशेष, कानका गहना।

कर्णमुख (सं० त्रि०) कर्णके अधीनस्थ, कर्णके पीछे रहनेवाले।

कर्णमूल (सं० क्ली०) कर्णस्य मूलम्, ६-तत्। १ कर्णका मूलदेश, कानकी जड़। २ कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। इसमें कानकी जड़ सूजती है।

कर्णमूलीय (सं० त्रि०) कर्णमूल-छ। कर्णमूल सम्बन्धीय, कानकी जड़से मुताल्लिक।

कर्णमुद्गर (सं० पु०) कानकी भीतरी झिल्ली। यह अस्थि पर चढ़ा रहता है। इसी पर जब बाहिरी वायुका आघात लगता, तब लोगको शब्दका ज्ञान उपजता है।

कर्णमोचक (सं० पु०) कर्णस्फोटा, कानकी लौ।

कर्णमोटा (सं० स्त्री०) बहुरङ्गल, दूधका पेड़।

कर्णमोटि, कर्णमोटी देखो।

कर्णमोटी (सं० स्त्री०) कर्णौ कर्णोपलक्षितं रोगविशेषं मोटयति नाशयति, कर्ण-मुट्-अण्-ङीप्। चामुण्डा देवी।

कर्णमोरट (सं० पु०) कर्णस्फोटा, एक बेल।

कर्णयुगलकोण (सं० क्ली०) नृत्यकामनाविशेष, नाचकी एक चाल। इसमें हस्ताङ्गुलको पुतली आंखके सम्मुख आते हैं।

कर्णयोनि (सं० त्रि०) कर्णः योनिः स्थानमस्य, बहुव्री०। १ कर्णपात्र, कानमें पहने लायक। २ कर्णसे उत्पन्न, कानसे पैदा।

कर्णरन्ध्र (सं० पु०) कर्णस्य रन्ध्रः, ६-तत्। कर्णगत छिद्र, कानका छेद।

कर्णराज—गुजरातके अनहिलवाड़वाले एक राजा। यह भीमराजके एक पुत्र थे। १०७२ ई०को भीमके स्वर्गारोहण करनेसे इनपर राज्यका भार पड़ा। मालव-कोंकिंक गुजरात राज्यके सामन्त और पार्श्ववर्ती राजा कर्णराजके वशीभूत हुये। इन्होंने चन्द्रपुर विद्युत् था कदम्बराज जयकेशीकी कन्या मयानल्लदेवीसे विवाह किया। उनसे पुत्र न होनेसे इन्होंने लक्ष्मीदेवीका ध्यान लगाया था। फिर लक्ष्मीके वरसे मयानल्लदेवी पुत्रवती हुयीं (१०८३ ई०)। वृद्धावस्थामें इन्होंने अपने पुत्र जयसिंहका राज्य सौंप वानप्रस्थ अवलम्बन किया।

कर्णरोग (सं० पु०) कर्णस्य कर्णजातो रोगः। कर्ण-व्याध, कानकी बीमारी। यह २८ प्रकारका होता है—कर्णशूल, कर्णनाद, बाधिर्य, कर्णक्ष्वेड़, कर्णस्राव, कर्णकण्डु, कर्णगूथ, कर्णप्रतीनाह, कृमिकर्ण, कर्णपाक, पूतिकर्ण, ४ प्रकार अर्श, ७ प्रकार अर्बुद, ४ प्रकार शोथ और २ प्रकार विद्रधि। (वि० निदा०)

कर्णरोगप्रतिषेध (सं० पु०) कर्णरोगस्य प्रतिषेधः अस्मिन्नध्याये-छत्, बहुव्री०। १ कर्णरोगचिकित्सा, कानकी बीमारीका इलाज। २ सुश्रुतसंहिताका एक अध्याय।

कर्णरोगविज्ञान (सं० क्ली०) कर्णगत व्याधिका विज्ञान, कानके रोगोंकी बीमारीकी जांच।

और निजामके साथ ही बंगाल और मछलीपट्टनकी भूटका अंश न पानेसे बिगड़ पड़े। किन्तु निजामको कोई रुपया और दूर रह जाने बुरा न मिला हुये। कोई मछलीपट्टन तक अधिकार कर बैठे। निजाम फरा-सीसी सैन्य आनेको राह देखते थे। फरासीसी रत-नगरी कृष्णपर आये। किन्तु कोई उत्तरको खबर मिलने न पाये। निजामने फरासीसियोंसे भिड़ चलना छोड़ बनानेको अंगरेजोंके साथ सन्धि कर ली। उसमें अंगरेजोंको सिरकार चार मात्र हाथ आये कपड़ा भूपम्पत्ति सह मछलीपट्टन नगर मिलते, आदिमतमें अपना नदीके उत्तर फरासीसियोंको कोई कोठी न रखने या अपने और सूबेदारके अपने काममें कोई फरासीसी न रखनेकी बात ठहरी।

लाली ... हैदिबका चवरोध छोड़ चल दिये। अंगरेजोंके आदमियोंके चौकीका और फरासीसियोंके कारमण्डल उपकूलमें साथ भौतिमाके साथ अवस्थित थे। पार्कोकने अपनी ओरसे दो बार आक्रमण किया। अन्त तक पुंदिचेरी भाग गये। फिर सभी लालीने फटकार मानकर उन्हें सहित ... राह देखा गये। लालीका बल इसमें घटा था। किन्तु कर्णाटकके नवाब आद साहबका मृत्यु हुवा। फरासीसी उसके पुत्र राजा साहबको कर्णाटकका नवाब मान नदीपर सेनाकी चेष्टामें थे। हरा कारण हुये। सुचतुर अपने वाकोटके शासनकर्ता थे। वहाँ बन्दरगाह बनानेको लालीने प्रकाशपूर्वक कहा—(१७६०) ई० में यह वाकोट किलेको स्थान है। सुचतुर अपने उसमें मान गये। लालीने इसको युद्ध करके दखल किया। वाकोट बीरे दौड़ कर पिबलिदर दुर्ग पानेके आयोजनमें लगे। किन्तु अंगरेज सम्राटके निकट फरासीसी शक्ति कभी ठीक थी। उन्होंने पिबलिदर दुर्ग हैदराबाद फिर सुरक्षित किया। लालीने मद्रास अधिकार कर सकनेको ठहर चल न पाया। फिर भी वह आक्रमण-पूर्वक किले तक बजाय कुछदिन उन्होंने दिनभर साथ मद्रास घेरनेको लगे रहे। मद्रास पर आक्रमण अपनेको समझ था। किन्तु ... अधिक न

रहो। ८ मासके फरासीसी सेनाका अवरोध चला। १७५८ ई०को १६वीं तारीखको मद्रास छोड़ आगा दिया गया। किन्तु उसी समय अंगरेजोंकी जो सेना आ पहुंची। फरासीसी भी सामानिके अभावमें वाकोटको लौट पड़े।

अङ्गरेजोंको मराठाओंका साथ और सैन्यका साहाय्य मिलता था। किन्तु फरासीसी पुंदिचेरीसे कोई साहाय्य न पानेपर बिलकुल बैठ रहे। १०वीं सितम्बरको फरासीसी नौ-सेनाके कुछ अंगरेजी सिल-कमकोंके निकट आने पर अङ्गरेज सेनाको ओकोकने आक्रमण किया। फिर फरासीसी नौ-सेनाका एक दल आमण्ड पानिके अधीन चार मास ठहरनेके पीछे और मेरठादि से पहुंचा, किन्तु भारतवर्षमें जल-रनेका आदेश न पाने वापस चला गया। उसी बीच वन्दिवाश अङ्गरेजोंने आक्रमण किया और १७६० ई०को कुटमें फरासीसियोंने हरा दिया। फरासीसी यहाँसे भागने लगे। वन्दिवासके युद्धमें बुसि बन्दी बने थे। कुटने फिर वाकोट और अन्य स्थान अधिकार किये। फरासीसी कुछ भी विनाश न कर सके। साथ नामके मध्य उपकूल पर कालिकट और पुंदि-चेरीको छोड़ फरासीसियोंका दूसरा कोठी अधिकार न रहा। लालीको यहाँ था सैन्यसाहाय्य न था अथवा व्यतिव्यस्त हुये और अपनेको अधिकृत कैदर अपनेको मदद मांगने लगे। हैदर अली सौजन्य हुये, किन्तु हठात् किसी कारण वह सैन्य हटानेको आज्ञा दे दिये। सुतरां फरासीसियोंका कोई उप-कार न सका। इधर मिरट समयमें फासिसियोंको अंगरेजों पर धावा था। किन्तु लालीने हठात् उसी सितम्बरको अङ्गरेजोंका शिविर आक्रमणकर सजमनको सुरक्षा स्थान खाइन किया, किन्तु कुटने मद्रास घेरा लिख छोड़ा रहा। कुटने फिर पुंदिचेरीको घेर लिया। क्रमशः दुर्गमें खाद्यका अभाव आया। दो दिनसे अधिक खाद्य न बचने देख लालीने दुर्ग छोड़ मद्रा-सके राजा साहबके निकट आत्म समर्पण किया।

इसी प्रकार फरासीसियोंका वाक्यतीय भारतमें अन्त था। कर्णाटकके मध्यमा केवल निजाम और सिन्धि मालिक

कर्णल (सं० त्रि०) कर्णः कर्णशक्तिरस्त्यस्य, कर्ण-लच्। प्रशस्त श्रवणशक्तिविशिष्ट, अच्छी तरह सुन सकनेवाला, जिसके कान रहे।

कर्णलग्नस्कन्ध (सं० पु०) स्कन्धस्थितिभेद, कन्धेके रहनेकी एक हालत। नृत्यमें स्कन्धको सरल बना और उठा कर्णके निकट लानेसे यह स्थिति हो जाती है।

कर्णलता (सं० स्त्री०) कर्णस्य लता इव, उपमि०। कर्णपाली, कानकी लौ।

कर्णलतिका (सं० स्त्री०) कर्णस्य लता इव, कर्ण-लता स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। कर्णपाली, कानकी लौ। (Lobe of the ear)

कर्णवंश (सं० पु०) कर्णः कर्णाकृतिवत् वंशो यत्र, बहुव्री०। मञ्च, बांसका ऊंचा ठाट।

कर्णवत् (सं० त्रि०) कर्णः प्रशस्तोऽस्यास्ति, कर्ण-मतुप् मस्य वः। १ दीर्घकर्णविशिष्ट, बड़े कानवाला। २ कर्णयुक्त, कानवाला। ३ कोमलशाखा वा कीलक विशिष्ट, किले या कीलवाला। ४ अरित्रयुक्त, जिसके पतवार रहे।

कर्णवर्जित (सं० पु०) कर्णेन श्रवणेन्द्रियेण वर्जितः हीनः। १ सर्प, सांप। इसके पृथक् कर्णेन्द्रिय नहीं होता। (त्रि०) २ कर्णहीन, कनकटा। ३ बधिर, बहरा।

कर्णवश (सं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह ह्रस्व, गोल, श्लक्ष्ण और शल्कवान् होता है। मांस दीपन, पाचन, पथ्य, हृद्य और बलपुष्टिकर है।

कर्णवालिस—भारतके एक भूतपूर्व गवरनर-जनरल। १७३८ ई०को ३१वीं दिसम्बरको इन्होंने जन्म लिया। नाम चार्लस कर्णवालिस था। यही कर्णवालिस प्रदेशके द्वितीय अर्ल और प्रथम मारक्विस बने। पिताके रहते कर्णवालिस लार्ड ब्राउम कहाते थे। १७६२ ई०को इनके पिता मरे। पितृपदके अधिकारी होनेपर यह इङ्गलेण्डेश्वरके विशेष प्रियपात्र हुये। शासनके कार्यमें इन्हें सर्वतोमुखी क्षमता और स्वाधीन मत प्रकाश करनेकी शक्ति थी। जब अमेरिका-वासियोंने स्वाधीनताके लिये युद्ध किया, तब इन्होंने अति उत्साह तथा विशेष कौशलके साथ न्यूयार्क, वर्जिनिया, कामडेन, ग्वाइफर्ड, कमफर्ट प्रभृति स्थानको जीत लिया। किन्तु इयर्क नदीके तीर इयर्क टौ नामक नगरके युद्धमें फरासीसी और अमेरिका-वासी द्वारा एक बार आक्रान्त होनेपर हार कर शत्रुके हाथ सदल इन्हें आत्म समर्पण करना पड़ा। (१७८१ ई०) इन्होंके पराजयसे अंगरेज़ ढीले हुये। १७८२ ई०को अंगरेज़ोंने सन्धि कर कर्णवालिसको छोड़ाया था। राजाके प्रियपात्र रहनेसे पराजय पाते भी यह विशेष तिरस्कृत न हुये।

१७८६ ई०को लार्ड कर्णवालिस भारतके गवरनर जनरल बनाये गये और उसी वर्ष सितम्बर मास कलकत्ते आ पहुंचे। यह शान्तस्वभाव, गम्भीर-बुद्धि, सुविचारक्षम, लोकप्रिय, महान् हृदय और लोकहितैषी थे। इनके आते समय भारतमें युद्ध विग्रहादि कुछ न रहा। किन्तु वारन हेष्टिङ्गसके शासन कालकी दुर्नीतिसे देश भरा पड़ा था। अत्याचार अविचारसे आपामर साधारण घबरा गये और अनेकानेक देशी राजा विध्वस्त हुये। सुतरां ऐसी अवस्थामें लार्ड कर्णवालिस आ और स्वीय स्वभावके गुणसे नाना हितकर कार्य उठा भारतीय प्रजाके विशेष प्रिय बने। उस समय बड़े बड़े अंगरेज कर्मचारी तथा सैनिक इस देशके लोगोंसे वाणिज्य व्यवसाय चलाते और राजाओंके निकट उपढौकन पाते थे। सैनिक नानाविध उपायसे पुरस्कार ले लेते। शान्तिरक्षाके लिये जितना ही सैन्य रखा जाता था। लार्ड कर्णवालिसने यह सकल कुप्रथा उठायी। इन्होंने सैनिक और अन्यविध कर्मचारीके लिये वेतनका प्रबन्ध बांधा था।

लखनऊके नवाबसे जो सन्धि हुयी, उसमें अनेक अनीति और असङ्गत रीति रही। इन्होंने पुनर्वार उक्त विषयकी विवेचना लगायी और यह बात ठहरायी—सीमान्त प्रदेशमें सैन्यव्ययके लिये नवाब प्रतिवर्ष ७४ लाखके बदले ५० लाख ही रुपये देंगे। फिर उनसे दूसरे विषयपर लिया जानेवाला सब रुपया बन्द कर दिया गया। नवाबको अपने राज्यमें स्वाधीन भावसे शासनकार्य चलानेकी क्षमता मिली।

पहले हैदराबाद राज्यमें निजामसे गण्टूर अव-

स्थान फरासीसियोंके अधिकारमें रह गया। कुछ दिन पीछे अङ्गरेजोंके यह भी हस्तगत हुवा।

कर्णाटिका (सं० स्त्री०) कर्णाटी स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वः। कर्णाटी देखो।

कर्णाटी (सं० स्त्री०) कर्णाट-ङीप्। १ कोई रागिनी। यह मालव राग वा कर्णाटकी स्त्री है। इसके गानेका समय रात्रिके द्वितीय प्रहरकी द्वितीय घटिका है। २ हंसपदीक्षुप, एक बेल। ३ कर्णाटदेशकी स्त्री। ४ अनुप्रास विशेष। शब्दालङ्कारमें कवर्गका अनुप्रास कर्णाटी कहाता है। ५ कर्णाटकी भाषा।

कर्णाट्ट (सं० क्ली०) कर्णः तिर्यग्रेखाकारवान् इव अट्टम्। गृहविशेष, किसी किस्मका मकान्। यह तिर्यक् यानकी भांति पायापादि फैलाकर बनाया जाता है। "विभिदुर्ते महिषवान् कर्णाट्टानिरासि च।" (भारत, वन, २६१ अ०)

कर्णादेश (सं० पु०) कर्णालङ्कार विशेष, कानका एक गहना।

कर्णानुज (सं० पु०) कर्णस्य अनुजः, कर्ण-अनु जन् ड। कर्णके छोटे भाई युधिष्ठिर।

कर्णान्तिक (सं० त्रि०) कर्णसमीपस्थ, कानके पास पड़नेवाला।

कर्णान्दु (सं० क्ली०) कर्णस्य आन्दुरिव। १ कर्ण-पाली, कानकी लौ। २ हस्तिघण्टिका, बाली।

कर्णान्दू (सं० स्त्री०) कर्णान्दु-ऊङ्। १ कर्णपाली, कानकी लौ। २ मुरकी, बाली।

कर्णाभरण (सं० क्ली०) कर्णस्य कर्णे वार्थे वा आभरणम्। कर्णालङ्कार, कानका गहना।

कर्णाभरणक (सं० पु०) कर्णाभरणमिव पुष्पैः कायति प्रकाशते, कर्णाभरण-कै-क। आरग्वध वृक्ष, अमलतासका पेड़।

कर्णारा (सं० स्त्री०) कर्णः अर्यते विध्यते अनया, कर्ण-ऋ-घञ्-टाप्। कर्णवेधनी, कान छेदनेकी सलायी।

कर्णारि (सं० पु०) कर्णस्य अरिः ६-तत्। १ कर्णके शत्रु अर्जुन। २ अर्जुनवृक्ष। ३ नदीसर्जवृक्ष, एक पेड़।

कर्णार्पण (सं० क्ली०) कर्णस्य कर्णयोर्वा अर्पणं। श्रुतियोग्यविषयमें कर्णका अर्पण, कानकी लगाई।

कर्णार्बुद (सं० पु०) कर्णस्रोतोगत रोग विशेष, कानका फोड़ा या मस्सा।

कर्णार्श, कर्णार्बुद देखो।

कर्णालङ्कार (सं० पु०) कर्णं अलंक्रियते येन, कर्ण-अलं-कृ-घञ्। कर्णभूषण, कानका गहना।

कर्णालङ्कृति (सं० स्त्री०) कर्णयोरलङ्कृतिरलङ्करणम्, ६-तत्। कर्णभूषण, कानका गहना। २ कर्णशोभा, कानकी सजावट।

कर्णालंक्रिया (सं० स्त्री०) कर्णयोरलंक्रिया अलङ्करणम्, ६-तत्। कर्णशोभा, कानकी सजावट।

कर्णास्फाल (सं० पु०) कर्णयोरास्फालः आस्फालनम्। हस्तिप्रभृतिका कर्णसञ्चालन, हाथी वगैरहके कानकी फटकार।

कर्णि (सं० पु०) कर्ण-इन्। १ शर विशेष, किसी किस्मका तीर। भावे इन्। २ भेदकार्य, छेदाई।

कर्णिक (सं० पु०) १ गणिकारिका, कोई पेड़। २ पद्मकोष, कंवलकी खोल। ३ सन्निपातज्वरविशेष, एक बुखार। इसमें दोषत्रयसे तीव्र ज्वर आता और कर्णके मूलपर शोथ चढ़ जाता है। फिर कण्ठ रुकता, कानसे सुन नहीं पड़ता, श्वास चढ़ता, प्रलाप बढ़ता, प्रस्वेद चलता, मोह लगता और देह जल उठता है। (भावप्रकाश)

कर्णिका (सं० स्त्री०) कर्ण-इकन्-टाप्। कर्णललाटात् कनलङ्कारे। पा ४।३।६५। १ कर्णभूषण विशेष, कानका एक जेवर। इसका संस्कृत पर्याय—तालपत्र, ताड़ङ्क और दन्तपत्र है। २ करिशुण्डाग्रभागरूपाङ्गुलि, हाथीको सूंड़के अगले हिस्सेकी उंगलीजैसी चीज़। ३ पद्मबीजकोष, कंवलका छत्ता। ४ हस्तकी मध्यम अङ्गुलि, हाथके बीचकी उंगली। ५ कलसुकादिस्फुटांश, डण्ठल। ६ लेखनी, कलम। ७ अग्निमन्थवृक्ष। ८ अजशृङ्गी, मेढ़ासींगी। ९ अप्सरो विशेष, एक परी। "मेनका सहजन्या च कर्णिका पुञ्जिकस्थला।" (भारत, आदि १२२।६१) १० सेवती, सफेद गुलाब। इसका संस्कृत पर्याय—शतपत्री, तरुणी, चारुकेशरा, महाकुमारी, गन्धाढ्या, लघुपुष्पा और अतिमञ्जुला है। भावप्रकाशके मतसे यह आह्लादकर, शीतल, संग्राही, शुक्रवर्धक, लघु,

इसके अंगरेजोंके अधीन रहनेकी बात ठहरी थी। बहुत दिन तक अधिकार न पाने पर १७८८ ई०को इन्होंने कप्तान कनवेको दूत बनाकर भेज दिया। किन्तु निज़ामने कुछ न सुना। लार्ड कर्णवालिसने उनको युद्धका भय दिखा सैन्य प्रेरण किया। निज़ामने शान्त भावसे वश्यता मानी और टीपू सुलतानके हाथसे जितना भी राज्य छोड़ा लेनेको अंगरेजोंसे सहायता मांगी। फिर उन्होंने टीपूको डरानेके लिये एक फ़रमान भेज कहलाया था—'अमुक विषय अंगरेजोंसे विवाद आवश्यक नहीं लगता। एक धर्मावलम्बी रहते हम दोनोंके विवाद मिटानेको दूसरेकी मध्यस्थता मानना क्या अच्छा है।' टीपूने उत्तर दिया, 'यदि आप अपनी कन्यासे हमारा विवाह कर दें, तो हम भी आपकी बात मान लें।' निज़ाम इस पर बहुत बिगड़े थे। फिर इसयका युद्ध रुक न सका। मङ्गलोरमकी सन्धिके अनुसार अंगरेज निज़ाम पक्षी टीपूसे हकूमिदर छीनते हुये। टीपूके साथ विवादका दूसरा भी कारण था। महसूरके सन्धिपत्रानुसार त्रिवाङ्कोड़ अंगरेजोंका रक्षित राज्य निर्दिष्ट हुआ। त्रिवाङ्कोड़के राजाने ओलन्दाजोंसे कङ्गानूर और आयकोटा नामक दो नगर खरीदे। टीपूने यह क्रय न माना और कोचिनराजका पक्ष ले त्रिवाङ्कोड़से युद्ध ठाना था। लार्ड कर्णवालिसने त्रिवाङ्कोड़के साहाय्यार्थ परिकर बांधा।

युद्ध छिड़ गया। १७८८ ई०को जनरल आवरने उदकूलन कामनका एक प्रदेश अधिकार किया। प्रथम सहित्युद्ध इतनेसे बन्द हो गया। द्वितीय बार (१७९१ ई०) लार्ड कर्णवालिस स्वयं सेनापति बन लड़ने चले। इस युद्धमें टीपू हारे थे। किन्तु इन्हें भी खाद्यके अभावसे सम्पूर्ण जय न मिला और सैन्य पीछे लौटना पड़ा। अन्तको मराठोंके साहाय्यसे फिर युद्ध चला। टीपूने आधा राज्य दे सन्धि कर ली।

सन्धिमें कृतकार्य हो इन्होंने शासनविधिके इस्तमरारपर मन लगाया। उस समय कर लेनेका ढङ्ग बहुत विशृङ्खल था। अकबरने जैसा कर ठहराया, वही बराबर चला आता। कर लेनेवाले [illegible] ठेकानुक्रम [illegible] अत्याचार दिखाते थे। लार्ड कर्णवालिस इन सब विषयोंका अनुसन्धान लेने लगे। अन्तको तालुकदारोंसे इन्होंने एक नियम किया था। यह दशसाला बन्दोबस्त कहाता है। किन्तु इस नियममें भी असुविधा देख लार्ड कर्णवालिसने ज़मींदारोंको चिरकालके लिये मुस्तकिल दिया और गवर्नमेण्टके साथ करका प्रबन्ध किया। यही चिरस्थायी बन्दोबस्त कहाता है। १७९३ ई०की २२वीं मार्चको यह बन्दोबस्त हुआ था।

पहले विचारक और तहसीलदार या कलेक्टरका काम एक ही व्यक्ति करता था। इन्होंने इन दोनों कार्यपर दो स्वतन्त्र व्यक्ति रखनेकी व्यवस्था बांधी। लार्ड कर्णवालिसने ही ज़िले ज़िले दीवानी अदालत खोली थी। फिर दीवानी अदालतकी अपील सुननेको दूसरी चार अदालतें बनीं। अपीली अदालतोंके विचार जांचनेका भार कलकत्तेकी सदर दीवानी अदालतपर आया। फिर निज़ामतकी अदालतके आईनकानून भी बहुत कुछ बदल गये।

१७९३ ई०के अक्टोबर मास यह स्वदेशको चले थे। इनके पीछे दशसाला और चिरस्थायी बन्दोबस्तकी प्रथा स्थिर करनेवाले सर जान शोरने भारतके शासनका भार उठाया।

देशमें जाकर लार्ड कर्णवालिसने महासम्मान और मार्किस उपाधि पाया था। १७९८ ई०को यह आयर्लेण्डके शासनकर्ता बने। वहां भी लार्ड कर्णवालिस शान्त भावसे विद्रोहादि मिटाने पर लोकप्रिय हो गये। १८०१ ई०को राजदूत बन यह फ्रान्स (अमीन्स) पहुंचे थे। इन्होंकी मध्यस्थतासे अमिन्सकी सन्धि स्थापित हुयी।

१८०५ ई०को यह फिर भारतके राजप्रतिनिधि बने थे। यहां अगस्त मास पहुंचते ही लार्ड कर्णवालिस एक दम रोगके अधिभूत हो पश्चिमोत्तर प्रदेशको चले और गाज़ीपुर पहुंच पड़े। उसी मासकी ५वीं तारीखको इनका मृत्यु हुआ। गाज़ीपुरमें लार्ड कर्णवालिसकी कब्र बनी है।

कर्णविट् (सं० पु०) कर्णस्य कर्णं मलं विट्। मल, कानका मैल।

त्रिदोष तथा रक्तनाशक, मधुर, तिक्त, कटु और पित्तवर्धक होती है। ११ योनिरोगविशेष, औरतोंके पेड़ूकी जगह होनेवाली एक बीमारी। इसमें योनिपर कर्णिकाकार मांसपिण्ड पड़ जाता है। प्रसवसे पूर्व असमय जोरसे कांखनेपर गर्भके द्वारा वायु रुक जाता तथा रक्तमें मिलता, जिससे यह रोग लगता है। (चरक)

इस रोगमें सर्वप्रकार कफनाशक औषध व्यवस्थेय है। कुष्ठ, पिप्पली, अर्कमूलकी कोमल शाखा अर्थात् अग्रभाग और सैन्धव लवण बकरेके मूत्रमें पीस बत्ती बनाने और योनिमें प्रविष्टकर लगानेसे कर्णिकारोग निवारित होता है। (सुश्रुत)

१२ हाथपीड़ा, दर्द-मरोड़।

कर्णिकाचल (सं० पु०) कर्णिकायां स्थितः अचलः। सुमेरु पर्वत। "[illegible]" (मत्स्य [illegible])

कर्णिकाद्रि (सं० पु०) कर्णिकायां स्थितः अद्रिः। सुमेरुपर्वत।

कर्णिकापर्वत, कर्णिकाचल देखो।

कर्णिकार (सं० पु०-क्ली०) कर्णि भेदनं करोति, कर्णि-कृ-अण्। १ वृक्षविशेष, कनियार, कनकचम्पा। इसका संस्कृत पर्याय—द्रुमोत्पल, परिव्याध और द्रुमोत्पल है। २ कर्णिकारपुष्प, कनकचम्पाका फूल। "स्वर्णवर्णं धत्ते कर्णिकारम्।" (कुमार०) ३ आरग्वध विशेष, छोटा अमलतास। इसका संस्कृत पर्याय—राजतरु, प्रग्रह, कृतमालक, सुवर्ण, चक्र, परिव्याध, व्याधिरिपु, पित्तशोधक और कर्णारम्भ है। यह एक विशाल वृक्ष है। इसके फल दीर्घ और आरग्वध सदृश होते हैं। इसका गूदा जुलाबमें लगता है। राजनिघण्टुके मतानुसार कर्णिकार मारक, तिक्त, कटु, लघु और कफ, शूल, उदररुजि, क्रिमि, व्रण तथा गुल्मनाशक है।

कर्णिकारक, कर्णिकार देखो।

कर्णिकारप्रिय (सं० पु०) शिव। शि[illegible] कार अत्यन्त प्रिय है।

कर्णिकारिका (सं० स्त्री०) कर्णिकारक, [illegible]

कर्णिकी (सं० पु०) कर्णिका [illegible]

अस्त्यस्य, कर्णिका-इनि। हाथी, सूंड़की [illegible] रखनेवाला हाथी।

कर्णिन (सं० त्रि०) दीर्घकर्ण, बड़े कानोंवाला।

कर्णिनी (सं० स्त्री०) योनिरोगविशेष, औरतोंके पेड़ूकी जगह होनेवाली एक बीमारी। (Disease of the uterus or Polypus uteri)। कर्णिका देखो।

कर्णिल (सं० त्रि०) कर्णौ प्राशस्त्येन अस्त्यस्य, कर्ण-इलच्। [illegible] दीर्घकर्ण, बड़े कानोंवाला।

कर्णिशर (सं० पु०) शरविशेष, किसी किस्मका तीर।

कर्णी (सं० पु०) कर्णौ अस्त्यस्य, कर्ण-इनि। १ सप्तवर्ष पर्वतके मध्य पर्वत विशेष, एक पहाड़।

"[illegible]
[illegible] कर्णी च [illegible] सप्तैते वर्षपर्वताः॥" ([illegible])

२ वाणविशेष, किसी किस्मका तीर।

"[illegible]
[illegible]" (किरात० [illegible])
"[illegible]" ([illegible])

३ आरग्वधवृक्ष, अमलतासका पेड़। ४ गणिकारिका, कोई पेड़। ५ कर्णपार्श्व, कनपटी। ६ कर्णधार, मांझी, मल्लाह। (त्रि०) ७ लम्बकर्ण, बड़े कानोंवाला। ८ कर्णयुक्त, जिसके कान रहे। ९ कानमें कोई चीज रखे हुआ। १० [illegible], दामनदार। ११ वन्दिपुत्र, गंडोला। १२ पतवारवाला।

कर्णी (सं० स्त्री०) कर्ण-ङीष्। १ वाणविशेष, किसी किस्मका तीर। २ मूलदेवकी माता। मूलदेव देखो।

कर्णीवान् (सं० पु०) कर्णी वाणविशेषाकारः फलो [illegible], कर्णिन्-मतुप्, संज्ञायां दीर्घः। आरग्वध, अमलतास।

कर्णीरथ (सं० पु०) कर्णः [illegible] अस्त्यस्मिन् प्राशस्त्येन, कर्ण-इनि; कर्णी [illegible] [illegible], [illegible], [illegible] गाड़ी।

आदमीके [illegible]

[illegible]

कर्णीसुत (सं॰ पु॰) कर्ण्याः सुतः, ६-तत्। मूलदेव, चौर-शास्त्रकार।

कर्णेचुरचुरा (सं॰ स्त्री॰) कर्णे चुरचुरा मन्त्रणाकथनम्, निपातनात् सिद्धम्। पात्रे समितादयश्च। पा २।१।४८। गुप्त-मन्त्रणा, कानाफूसी।

कर्णेजप (सं॰ त्रि॰) कर्णे जपति अपकार्य्यं यथातथा अनुचितं प्रबोधयति कर्णे लगित्वा परापकारं वदति वा, अलुक्समा॰। १ गोपनमें अनुचित विषय पर परामर्शदाता, छिपकर नाजिब सलाह देनेवाला। २ परके अनिष्ट विषयका मन्त्रदाता, चुगलखोर। इसका संस्कृत पर्याय—सूचक, पिशुन, दुर्जन और खल है। इनमें कर्णेजप एवं सूचक दूसरेका अप-कार बताता और पिशुन, दुर्जन तथा खल परस्पर भेद लगाता है।

कर्णेजपमन्त्र (सं॰ पु॰) विषनाशन मन्त्रविशेष, जहर उतारनेका एक मन्त्र। उक्त मन्त्र यह है—

"ओं हर हर नीलग्रीवजटाजूटकटाजटाघनसिक्तमस्तमुण्डमालमकधार विषमुपसंहर उपसंहर हर हर हर नास्ति विषं नास्ति विषं नास्ति विषं छिन्धि छिन्धि छिन्धि।" (कविचिन्तामणि)

इस मन्त्रको बार बार पढ़ तालमूलके शीतल जलसे कई बार सींचनेपर विष उतर जाता है।

कर्णेटिरटिरा (सं॰ स्त्री॰) गुप्तपरामर्श, कानफूसी।

कर्णेन्दु (सं॰ पु॰) कर्णयोः कर्णे वा इन्दुरिव, उपमि॰। अर्धचन्द्राकार कर्णालङ्कारविशेष, कानका एक गहना।

कर्णेन्द्रिय (सं॰ पु॰) श्रोत्रेन्द्रिय, कानका यन्त्र।

कर्णोत्पल (सं॰ क्ली॰) कर्णस्थितमुत्पलम्, मध्य-पदलो॰। कर्णस्थित पद्म, कानका कंवल। २ एक प्राचीन कवि।

कर्णोपकर्णिका (सं॰ स्त्री॰) कर्णादुपकर्णे ऽस्त्यस्य, कर्णोपकर्ण-ठन् टाप् अत इत्वम्। १ कानाफूसी करने-वाली स्त्री।

कर्णोर्णा (सं॰ क्ली॰) कर्णरोम, कानका बाल। (पु॰) कर्णे ऊर्णाधिकं लोम यस्य, बहुव्री॰। २ मृग-विशेष, एक हिरन।

"कर्णोर्णेऽपदतार्का निंकुद्दं रङ्कनाभिभिः।" (भागवत ३।७।१०)

कर्णोर्णा (सं॰ स्त्री॰) कर्णोर्ण देखो।

कर्ण्य (सं॰ त्रि॰) कर्णे भवः, कर्ण-यत्। शरीरावयवाच्च। पा ४।३।५५। १ कर्णसे उत्पन्न, कानसे पैदा। २ कर्णके योग्य, कानके लायक। कर्मणि यत्। ३ भेदके योग्य, छेदने काबिल।

कर्त (सं॰ पु॰) कर्त भावे घञ्। १ भेद, काट।

"सम्यक् निरस्य कर्ता बमकर्तमीशं जहुः शर्वादिवे निपातयनि-मिश्रिः।" (भागवत ३।४।४८) 'कर्तो भेदः तद्रहितो प्रकर्तः।' (श्रीधर)

(वै॰) २ गर्त, गढ़ा। (त्रि॰) कर्तयति भिनत्ति, कर्त-अच्। ३ भेदक, तोड़ने-फोड़ने या चीरने-फाड़नेवाला।

कर्तन (सं॰ क्ली॰) कृत् भावे ल्युट्। १ छेदन, काट-छांट। २ कताई, सूत कातनेका काम। ३ शिथिल करनेका काम। करणे ल्युट्। ४ काटनेका अस्त्र, तराशनेका औजार। कर्तरि ल्यु। ५ छेदकारक, काटनेवाला।

कर्तनी (सं॰ स्त्री॰) कर्तन-ङीप्। १ कृपाणी, कटारी। २ अस्त्रकर्तनोपयुक्त अस्त्र, बाल काटने लायक औजार। छुरे, कैंची वगैरहको कर्तनी कहते हैं।

कर्तब, कर्तव देखो।

कर्तरि (सं॰ स्त्री॰) कृत्-इन्। काटनेका अस्त्र, तराशनेका औजार। कर्तरी देखो।

कर्तरि-स्वस्तिक (सं॰ क्ली॰) नृत्यभेद, किसी किस्मका नाच। यह एक उत्प्लुत करण है। इसमें नर्तक करण-स्वस्तिकके सहारे उछलता है।

कर्तरिका (सं॰ स्त्री॰) कर्तरी स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्व। कर्तरी देखो।

कर्तरिलोठिका (सं॰ स्त्री॰) नृत्योत्प्लुतकरण विशेष, किसी किस्मका नाच। इसमें पहले करण-स्वस्तिक लगाते, फिर उसे खोलते समय उछलकर तिरछे पड़ जाते हैं।

कर्तरी (सं॰ स्त्री॰) कृन्तति, कृत-अर-ङीप्; यद्वा कर्त राति, कर्त-रा-क। १ कृपाणी, काती, सोनेके पत्तर काटनेका एक औजार। २ अस्त्रकर्तनोपयुक्त अस्त्र, बाल काटने लायक औजार, छुरा कैंची वगैरह। ३ क्षुद्र करवाल, कटारी। ४ वाद्यविशेष, एक बाजा। ५ योगविशेष। ज्योतिषशास्त्रमें लिखा—चन्द्र अथवा

कर्पूररस वा रसकर्पूर कहाता है। कुसुम, चन्दन, कस्तूरी तथा कुङ्कुमयुक्त रसकर्पूर सेवन करनेसे फिरङ्ग रोग हटता और अग्नि एवं बलवीर्य बढ़ता है। (भावप्र०)

कर्पूररस (सं० क्ली०) सरोवर विशेष, एक तालाब।

कर्पूरहरिद्रा (सं० स्त्री०) स्वनामख्यात द्रव्य, कपूरहलदी। यह शीतल, वातल, मधुर, तिक्त और पित्त तथा सर्वकण्डुघ्न होती है।

कर्पूरा (सं०स्त्री०) कृप-उर्-टाप्। तरटी,आमा हलदी।

कर्पूरादितैल (सं० क्ली०) तैलविशेष, एक तेल। कपूर, भल्लातक, शङ्खचूर्ण, यवक्षार तथा मनःशिला चार चार तोले तेलमें भली भांति पका २० तोले हरिताल मिलानेसे यह बनता है। इसके प्रयोगसे सकल योनिरोग आरोग्य होते हैं।

कर्पूराश्मा (सं० पु०) उपरत्नविशेष, एक कीमती पत्थर। २ स्फटिक, बिल्लौरी पत्थर।

कर्पूरिक (सं० त्रि०) कर्पूरो ऽस्यास्ति, कर्पूर काशादित्वात् इल्। (काश्यादिभ्यष्ठञ्ञिठौ। पा ४।२।८०।) कर्पूरयुक्त, काफ़ूरी, कपूरी।

कर्फर (सं० पु०) कीर्यते क्षिप्यते, कृ-विच्, फल्यते फल फलस्य रः; कीर्यमाणः फलः प्रतिबिम्बो यत्र, बहुव्री०। दर्पण, आयीना।

कर्ब (सं० पु०) मूषिक, चूहा।

कर्बर (सं० पु०-क्ली०) १ पुण्ड्रकेलु, पौंड़ा। २ स्वर्ण, सोना। ३ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पौदा। ४ व्याघ्र, बाघ।

कर्बरी (सं० स्त्री०) १ शृगाली, मादा गीदड़। २ व्याघ्री, बाघन।

कर्बु (सं० त्रि०) मिश्रितवर्ण, कबरा, धब्बेदार।

कर्बुदार (सं० पु०) कर्बुरिव कर्बुः सन् वा श्लेष्माणं मलं वा दारयति, कर्बु-दृ-णिच्-अच्। १ कोविदारवृक्ष, लसोड़ेका पेड़। २ श्वेतकाञ्चन, सफेद कचनार। यह ग्राही और रक्तपित्तमें हितकर है। (राजनिघण्टु) ३ नीलझिण्टी, तेंदू। इसीसे आबनूस निकलता है।

कर्बुदारक (सं० पु०) कर्बुदारवत् कायति, कर्बुदार-कै-क यद्वा कर्बुरिव श्लेष्माणं दारयति, कर्बु-दृ-णिच्-ण्वुल्। श्लेष्मान्तक वृक्ष, लासोड़ेका पेड़।

कर्बुर (सं० पु०-क्ली०) कर्वति गर्वति अस्मात् अनेन वा, कर्ब दर्पे उरच्। (मद्गुरादयश्च। उण् १।४१।) १ स्वर्ण, विद्रुम। २ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पौदा। ३ गन्धशटी, कपूर। ४ आमहरिद्रा, कच्ची हलदी। ५ जल, पानी। ६ राक्षस। ७ पाप, गुनाह। ८ नदीजात निष्याव धान्य, जडहन धान। ९ स्वर्ण, सोना। १० हरिताल, हरताल। (त्रि०) ११ नानावर्ण, कबरा।

कर्बुरक (सं० पु०) १ आमहरिद्रा, कच्ची हलदी। २ गन्धशटी, कपूर। ३ निष्यावधान्य, जडहन धान।

कर्बुरफल (सं० पु०) कर्बुरं चित्रवर्णं फलं यस्य, बहुव्री०। साकुरुण्डवृक्ष, एक पेड़।

कर्बुरा (सं० स्त्री०) कर्बुर-टाप्। १ कृष्णतुलसी। २ बबरी। ३ सविष जलायुका भेद, एक ज़हरीली जोंक। ४ पाटलावृक्ष, पाड़रीका पेड़।

कर्बुरित (सं० त्रि०) कर्बुरो ऽस्य जातः, कर्बुर-इतच्। चित्रित, चितकबरा।

कर्बुरी (सं० स्त्री०) कर्बुर गौरादित्वात् ङीप्। दुर्गा।

कर्बूर (सं० पु०-क्ली०) कर्वति गर्वं प्राप्नोति यस्मात्, कर्ब-ऊरच्। १ स्वर्ण, सोना। २ हरिताल। ३ गठी, कचूर। ४ राक्षस। ५ द्राविड़क,कच्ची हलदी। ६ नानावर्ण, चितकबरा रंग।

कर्बूरक (सं० पु०) कर्बूर स्वार्थे कन्। १ हरिद्राभ वृक्ष। २ कृष्ण हरिद्रा, काली हलदी। ३ कर्पूरहरिद्रा, आमाहलदी।

कर्बूरित (सं० त्रि०) कर्बूरोऽस्य सञ्जातः, कर्बूर-इतच्। नानावर्णविशिष्ट, चितकबरा।

कर्म (सं० पु० क्ली०) कृ कर्मणि मनिन् धर्मादि। कार्य, काम। जो किया जाता, वह कर्म कहाता है। वैयाकरण पण्डित कहते हैं,—

"तत्क्रियानाश्रयत्वे सति तत्क्रियाजन्यफलशालित्वं कर्मत्वम्।"

जो क्रियाका आश्रय न होते भी क्रियाजन्य फलविशिष्ट रहता, वही क्रियाका कर्म ठहरता है। जैसे—वह भोजन बनाता है। यहां कर्तृसमवेत पाकक्रियाका अनाश्रय भोजन पाकजन्य विक्लित्ति रूप फलविशिष्ट होता है। इसीसे उक्त भोजन कर्म लक्षणका लक्ष्य लगता है। यह कर्म तीन प्रकारका है—निर्वर्त्य, विकार्य और प्राप्य। जो अविद्यमान वस्तु उत्पत्ति

विदोष तथा रक्तनाशक, वर्णकर, तिक्त, कटु और परिपाकक्षारक होती है। ११ योनिरोगविशेष, औरतोंके पेशावकी जगह होनेवाली एक बीमारी। इससे योनिपर कर्णिकाकार मांसग्रन्थि पड़ जाता है। प्रसवसे पूर्व अनुपयुक्त समय जोरसे कांखनेपर गर्भके द्वारा वायु रुक श्लेष्मा तथा रक्तमें मिलता, जिससे यह रोग लगता है। (चरक)

इस रोगमें सर्वप्रकार कफनाशक औषध व्यवस्थेय है। कुष्ठ, पिप्पली, अर्कवृक्षकी कोमल शाखा अर्थात् अग्रभाग और सैन्धव लवण छागके मूत्रमें पीस बत्ती बनाने और योनिमें प्रविष्टकर लगानेसे कर्णिकारोग निवारित होता है। (चक्रदत्त)

१२ दारुणपीड़ा, दर्दमर्दीद।

कर्णिकाचल (सं॰ पु॰) कर्णिकायां स्थितः अचलः। सुमेरु पर्वत। "एषा माध्यामवस्थितः पर्वतः कौशेयः कुलगिरिराजो मेरुद्वीपायामसमुन्नाहः कर्णिकाभूतः कुवलयकमलस्य।" (भागवत ५।१६।७)

कर्णिकाद्रि (सं॰ पु॰) कर्णिकायां स्थितः अद्रिः। सुमेरुपर्वत।

कर्णिकापर्वत, कर्णिकाचल देखो।

कर्णिकार (सं॰ पु॰-क्ली॰) कर्णिं भेदनं करोति, कर्णि-कृ-अण्। १ वृक्षविशेष, कनियार, कनकचम्पा। इसका संस्कृत पर्याय—द्रुमोत्पल, परिव्याध और द्रुमोत्पल है। २ कर्णिकारपुष्प, कनकचम्पाका फूल। "वर्णप्रकर्षे सति कर्णिकारम्।" (कुमारस॰) ३ आरग्वध विशेष, छोटा अमलतास। इसका संस्कृत पर्याय—राजतरु, प्रग्रह, कृतमालक, सुफल, चक्र, परिव्याध, व्याधिरिपु, पित्तशोधक और लघ्वारग्वध है। यह एक विशाल वृक्ष है। फल दीर्घ और आरग्वध सदृश होता है। इसका गूदा जुलाबमें लगता है। राजनिघण्टुके मतानुसार कर्णिकार सारक, तिक्त, कटु, उष्ण और कफ, शूल, उदरक्रमि, मेह, व्रण तथा गुल्मनाशक है।

कर्णिकारक, कर्णिकार देखो।

कर्णिकारप्रिय (सं॰ पु॰) शिव। शिवको कर्णिकार अत्यन्त प्रिय है।

कर्णिकारिका (सं॰ स्त्री॰) हरिद्राद्रुम, हल्दीका पेड़।

कर्णिकी (सं॰ पु॰) कर्णिका गण्डाकाङ्गुलिः अस्यास्ति, कर्णिका-इनि। हस्ती, सूंड़की उंगली रखनेवाला हाथी।

कर्णिन (सं॰ त्रि॰) विवृद्धकर्ण, बड़े कानोंवाला।

कर्णिनी (सं॰ स्त्री॰) योनिरोगविशेष, औरतोंके पेशावकी जगह होनेवाली एक बीमारी। (Disease of the uterus or Polypus uteri)। कर्णिका देखो।

कर्णिल (सं॰ त्रि॰) कर्णः प्राशस्त्येन अस्यास्ति, कर्ण-इलच्। तुन्दादिभ्य इलच्। ५।२।११७। दीर्घकर्ण, बड़े कानोंवाला।

कर्णिशर (सं॰ पु॰) शरविशेष, किसी किस्मका तीर।

कर्णी (सं॰ पु॰) कर्णौ अस्त्यस्य, कर्ण-इनि। १ सप्तवर्ष पर्वतके मध्य पर्वत विशेष, एक पहाड़।

"हिमवान् हेमकूटश्च निषधो मेरुरेव च।
चैत्रः कर्णी च शृङ्गी च सप्तैते वर्षपर्वताः॥" (शब्दरत्ना)

२ वाणविशेष, किसी किस्मका तीर।

"करोति कर्णिनो येन धनु खड्ग आदि क्षुर।
प्रयान्ति ते विशसने नरके यम शासने॥" (विष्णु॰ ३।१।१६)
"कर्णिनो वाणविशेषान्।" (श्रीधर)

३ आरग्वधद्रुम, अमलतासका पेड़। ४ गणिकारिका, कोई पेड़। ५ कर्णपार्श्व, कनपटी। ६ कर्णधार, मांझी, मल्लाह। (त्रि॰) ७ प्रशस्तकर्ण, बड़े कानोंवाला। ८ कर्णयुक्त, जिसके कान रहे। ९ कानमें कोई चीज रखे हुवा। १० ढीली लटकती चीजवाला, दामनदार। ११ ग्रन्थियुक्त, गंठीला। १२ पतवारवाला।

कर्णी (सं॰ स्त्री॰) कर्ण-ङीप्। १ वाणविशेष, किसी किस्मका तीर। २ मूलदेवकी माता। मूलदेव देखो।

कर्णीमान् (सं॰ पु॰) कर्णो वाणविशेषाकारः फलो ऽस्त्यस्य, कर्णिन्-मतुप् संज्ञायां दीर्घः। आरग्वध, अमलतास।

कर्णीरथ (सं॰ पु॰) कर्णः सामीप्यात् स्कन्धः अस्यास्ति वाहनत्वेन, कर्ण-इनि; कर्णी चासौ रथश्चेति दीर्घत्व, कर्मधा॰। १ क्रीडारथ, खेलनेकी गाड़ी। २ मनुष्यके वहन करने योग्य रथ, आदमीके चला सकने लायक गाड़ी। ३ स्त्रीवहनार्थ वस्त्राच्छादित यान विशेष, परदेदार डोली। इसका संस्कृत पर्याय—प्रवहण, डयन, प्रहरण और डयन है।

कर्णीवान्, कर्णीमान् देखो।

द्वारा प्रकाश पाता, वह निर्वर्त्य कहलाता है। जैसे—वह चटाई बनाता है। यहां चटाई पहले न रही, पीछे उत्पत्ति द्वारा आत्मलाभकर प्रकाशित हुयी। सुतरां चटाईको निर्वर्त्य कर्म कहते हैं। जो वस्तु पहले सत् रहते पीछे अवस्थान्तर पाता, वह विकार्य कहलाता है। जैसे—वह चावल सिभाता है। यहां चावल पहले सत् रहा, पीछे केवलमात्र अवस्थान्तरको प्राप्त हुवा। इसलिये चावल विकार्य कर्म समझा गया। फिर विकार्य कर्म द्विविध है—प्रकृति-नाशसम्भूत और गुणान्तरोत्पत्ति द्वारा नामान्तरविशिष्ट। जैसे—वह काठको भस्म करता है। यहां काठ जलने पर भस्म बननेसे प्रकृतिनाशसम्भूत कर्मका उदाहरण ठहरा। 'सुवर्णको कुण्डल बनाता है' स्थलमें सुवर्णसे गुणान्तरविशिष्ट कुण्डलकी उत्पत्ति हुयी और गुणान्तरोत्पत्तिसे सुवर्णकी ही कुण्डल संज्ञा पड़ी। इसीसे यह गुणान्तरोत्पत्ति द्वारा नामान्तरविशिष्ट कर्मका उदाहरण है। फिर निर्वर्त्य और विकार्य भिन्न कर्म प्राप्य है। जैसे—वह सूर्यको देखता है।

मीमांसक दो प्रकारका कर्म बताते हैं—अर्थकर्म और गुणकर्म। जिस कर्मसे किसी प्रकारका अदृष्ट उठता, उसे विद्वान् अर्थकर्म कहता है। जैसे अग्निहोत्र याग। यह यज्ञ करनेसे याज्ञिकके आत्मामें स्वर्गजनक अदृष्ट जगता और उसी अदृष्टसे पीछे यज्ञकर्ताको स्वर्ग मिलता है। फिर जिस कर्मसे वस्तु संस्कृत बनता, उसका नाम गुणकर्म पड़ता है। जैसे वह व्रीहि प्रोक्षण करता है। यहां प्रोक्षणसे व्रीहि संस्कृत होता है। इसीसे प्रोक्षण गुणकर्म है।

अर्थकर्म नित्य, नैमित्तिक और काम्य भेदसे तीन प्रकार है। जिसको न करनेसे पाप पड़ता, वह नित्य कर्म ठहरता है। अग्निहोत्रादि यज्ञ न करनेसे ब्राह्मणको पाप लगता है। इसीसे अग्निहोत्र प्रभृति ब्राह्मणका नित्यकर्म है। किसी निमित्तके उपलक्ष्य किया जानेवाला कर्म नैमित्तिक कहाता है। गोवधादि पापक्षयार्थ प्रायश्चित्त गोवधादि निमित्तके उपलक्ष्य किया जाता है। इसीसे यह नैमित्तिक कर्मके मध्य परिगणित है। नित्य तथा नैमित्तिक कर्म न करनेसे पाप लगने और करनेसे कोई फल न मिलनेका मत कोई कोई पण्डित मानते हैं। किन्तु वास्तविक उक्त विषय अमूलक है। कारण नित्य और नैमित्तिक कर्मसे पापक्षय होनेका मत स्मृतिमें कहा है,—

"नित्यनैमित्तिकैरेव कुर्वाणो दुरितक्षयम्।" (मीमांसा-दर्शन)

फलको कामनासे किया जानेवाला कर्म काम्य कहाता है। जैसे—कारीरि याग। यह वृष्टि कामनाशील पुरुष द्वारा अनुष्ठित होता है। इसीसे इसको काम्य कहते हैं। काम्य कर्म तीन प्रकारका होता है—ऐहिक फलक, आमुष्मिक फलक और ऐहिकामुष्मिकफलक। जिस कर्मसे इहलोकमें फल मिलता, उसका नाम ऐहिक पड़ता है। इहलोकमें वृष्टिरूप फल देने कारण कारीरियाग ऐहिकफलक है। परलोकमें फलोत्पादक कर्म आमुष्मिकफलक होता है। अग्निहोत्रादि याग इहकाल किसीको स्वर्गप्रदान नहीं करता। उसका फल परकालको ही मिलता है। सुतरां अग्निहोत्रयाग आमुष्मिकफलक है। इहकाल और परकाल फलप्रद कर्म ऐहिकामुष्मिकफलक होता है।

बौधायनाचार्य ज्ञानसहकारमें इस कर्मको मुक्तिका कारण बताते हैं। किन्तु अद्वैतवादी शङ्कराचार्यका दूसरा मत है। उनके कथनानुसार ब्रह्म भिन्न सकल विषय मिथ्या है। जब चित्तक्षेत्रमें एकमात्र ब्रह्म सत्य होनेका ज्ञान उठता, तब ज्ञानी पुरुष कर्म तथा तत्साधनको मिथ्या समझता और परब्रह्मसे पृथक् अपना अस्तित्व भी स्वीकार नहीं करता। सुतरां कर्मकर्ता और साधनके मिथ्यात्व प्रयुक्त ज्ञानके समय कर्म रहनेकी सम्भावना कैसी। इसीसे ज्ञानसहकारसे कर्म मुक्तिका कारण हो नहीं सकता। केवल मात्र ज्ञान ही मुक्तिका कारण है। फलाकाङ्क्षा परित्यागपूर्वक कर्म करनेसे चित्त परिशुद्ध होकर अद्वितीय ब्रह्मके तत्त्वज्ञानको क्षमता पाती है। फिर विशुद्ध चित्तमें कूटस्थ ब्रह्मका प्रतिबिम्ब पड़नेसे मुक्ति मिल जाती है।

जैन-मतसे कर्म दो प्रकारका होता है—घाति और अघाति। मुक्तिके लिये विघ्नकर कर्म घाति कहाता

कर्णीसुत (सं० पु०) कर्ण्याः सुतः, ६-तत्। मूलदेव, चौर-शास्त्रकार।

कर्णे चुरचुरा (सं० स्त्री०) कर्णे चुरचुरा मन्त्रणाकथनम्, निपातनात् सिद्धम्। (पात्रे समितादयश्च। पा २।१।४८।) गुप्त-मन्त्रणा, कानाफूसी।

कर्णेजप (सं० त्रि०) कर्णे जपति अपकार्यं यथातथा अनुचितं प्रबोधयति कर्णे लगित्वा परापकारं वदति वा, अलुक्समा०। १ गोपनमें उचित विषय पर परामर्शदाता, छिपकर वाजिब सलाह देनेवाला। २ परके अनिष्ट विषयका मन्त्रदाता, चुगलखोर। इसका संस्कृत पर्याय—सूचक, पिशुन, दुर्जन और खल है। इनमें कर्णेजप एवं सूचक दूसरेका अप-कार बताता और पिशुन, दुर्जन तथा खल परस्पर भेद लगाता है।

कर्णेजपमन्त्र (सं० पु०) विषनाशन मन्त्रविशेष, ज़हर उतारनेका एक मन्त्र। उक्त मन्त्र यह है—

"ओं हर हर नीलग्रीवमखेतापशखजटापमस्तिलकसेन्दुक तैलमचपाव विषमुपहर्रहर उपस'हर हर हर हर नाशि विषं नाशि विषं नाशि विषं छिन्धि छिन्धि छिन्धि।" (अग्निसंहिता)

इस मन्त्रको बार बार पढ़ तालमूल शीतल जलसे कइ बार सींचनेपर विष उतर जाता है।

कर्णे टिरटिरा (सं० स्त्री०) गुप्तपरामर्श, कानफूसी।

कर्णेन्दु (सं० पु०) कर्णयोः कर्णे वा इन्दुरिव, उपमि०। अर्धचन्द्राकार कर्णालङ्कारविशेष, कानका एक गहना।

कर्णेन्द्रिय (सं० पु०) श्रोत्रेन्द्रिय, कानका रन्ध्र।

कर्णोत्पल (सं० क्ली०) कर्णस्थितमुत्पलम्, मध्य-पदलो०। कर्णस्थित पद्म, कानका कंवल। २ एक प्राचीन कवि।

कर्णोपकर्णिका (सं० स्त्री०) कर्णादुपकर्णो ऽस्त्यस्य, कर्णोपकर्ण-ठन् टाप् अत इत्वम्। १ कानाफूसी करने-वाली स्त्री।

कर्णोर्ण (सं० क्ली०) कर्णरोम, कानका बाल। (पु०) कर्णे ऊर्णाधिकं लोम यस्य, बहुव्री०। २ मृग-विशेष, एक हिरन।

"कर्णोर्णं 'कपदश्चास्त्रैर्निकुष्ट' इवमाभिभिः।" (भागवत ३।१।१०)

कर्णीर्णा (सं० स्त्री०) कर्णोर्ण देखो।

कर्ण्य (सं० त्रि०) कर्णे भवः, कर्ण-यत्। शरीरावयवाच्च। पा ४।३।५५। १ कर्णसे उत्पन्न, कानसे पैदा। २ कर्णके योग्य, कानके लायक्। कर्णमर्हति यत्। ३ भेदके योग्य, छेदने काबिल।

कर्त (सं० पु०) कर्त भावे घञ्। १ भेद, काट।

"वधमुक्त्वा नियम्य कर्ती यमकर्तं इतीतिं यतः; भवादिश्र निपातनसि-द्धमिदः।" (भागवत ३।२।४८) 'कर्तो भेदः तस्मिन्नासी इकर्तः।' (श्रीधर)

(वि०) २ गर्त, गड्ढा। (त्रि०) कर्तयति भिनत्ति, कर्त-अच्। ३ भेदक, तोड़ने-फोड़ने या चीरने-फाड़नेवाला।

कर्तन (सं० क्ली०) कृत् भावे ल्युट्। १ छेदन, काट-छांट। २ कताई, सूत कातनेका काम। ३ शिथिल करनेका काम। करणे ल्युट्। ४ काटनेका अस्त्र, तराशनेका औज़ार। कर्तरि ल्यु। ५ छेदकारक, काटनेवाला।

कर्तनी (सं० स्त्री०) कर्तन-ङीप्। १ छपाणी, कटारी। २ स्मन्नुकर्तनोपयुक्त अस्त्र, बाल काटने लायक, औज़ार। छुरे, कैंची वगैरहको कर्तनी कहते हैं।

कर्तब, करतब देखो।

कर्तरि (सं० स्त्री०) कृत्-इन्। काटनेका अस्त्र, तराशनेका औज़ार। कर्तरी देखो।

कर्तरि-पक्षित (सं० क्ली०) नृत्यभेद, किसी क़िस्मका नाच। यह एक उत्प्लुत करण है। इसमें नर्तक करण-स्वस्तिकके सहारे उछलता है।

कर्तरिका (सं० स्त्री०) कर्तरी स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्व। कर्तरी देखो।

कर्तरि-लोहिड़ी (सं० स्त्री०) नृत्योत्प्लुतकरण विशेष, किसी क़िस्मका नाच। इसमें पहले करण-स्वस्तिक लगाते, फिर उसे खोलते समय उछलकर तिरछे पड़ जाते हैं।

कर्तरी (सं० स्त्री०) कृन्तति, कृत-अर-ङीप्; यद्वा कर्त राति, कर्त-रा-क। १ छपाणी, कातो, सोनेके पत्तर काटनेका एक औज़ार। २ स्मन्नुकर्तनोपयुक्त अस्त्र, बाल काटने लायक औज़ार, छुरा कैंची वगैरह। ३ क्षुद्र करवाल, कटारी। ४ वाद्यविशेष, एक बाजा। ५ योगविशेष। ज्योतिषशास्त्रमें लिखा—चन्द्र अथवा

हैं। फिर घाति कर्म चार प्रकारका है—ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और आन्तर्य। तत्त्वज्ञान द्वारा मुक्ति न मिलनेका ज्ञान ज्ञानावरणीय कर्म है। आर्हत दर्शन पढ़नेसे मुक्ति न होनेका ज्ञान दर्शनावरणीय कर्म कहाता है। शास्त्रमें मुक्तिके परस्पर विरुद्ध अनेक पथ प्रदर्शित हुये हैं। किन्तु उनमें मुक्तिके प्रकृत कारणका अनवधारण मोहनीय कर्म है। मोक्षके पथमें प्रवृत्तिका विघ्न डालनेवाला कर्म आन्तर्य कहाता है। फिर अघाति कर्म भी चार प्रकारका है—वेदनीय, नामिक, गोत्रिक और आयुष्क। ईश्वरतत्त्वको अपना ज्ञातव्य माननेवाला अभिमान वेदनीय कर्म है। अमुक नामविशिष्ट होनेका अभिमान नामिक कर्म कहाता है। अमुक वंशमें जन्म ग्रहण करनेका अभिमान गोत्रिक कर्म है। फिर शरीररक्षाके लिये किया जानेवाला कर्म आयुष्क माना गया है। उक्त चारो प्रकारका कर्म मुक्तिके लिये विघ्नकारी न रहनेसे अघाति कहाता है।

नैयायिक क्रियाको कर्म बताते और उसके पांच विभाग लगाते हैं। यथा—उत्क्षेपण, अवक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन। जिस क्रिया द्वारा कोयी चीज़ उठायी जाती, वह उत्क्षेपण कहाती है। अधोदेशको किसी वस्तुका संयोग करानेवाली क्रिया अवक्षेपण है। जिस क्रिया द्वारा प्रस्फुटित वस्तु मुद्रित पड़ती, उसे विद्वन्मण्डली आकुञ्चन कहती है। मुद्रित वस्तुको प्रस्फुटित करनेवाली क्रिया प्रसारण है। गमनक्रिया द्वारा एक स्थानसे अन्य स्थान पहुंचते हैं। फिर गमन पांच प्रकारका होता है—भ्रमण, रेचन, स्यन्दन, ऊर्ध्वज्वलन और तिर्यग्गमन। यथा—

"उत्क्षेपणं ततोऽवक्षेपणमाकुञ्चनं तथा।
प्रसारणञ्च गमनं कर्माण्येतानि पञ्च च॥
भ्रमणं रेचनं स्यन्दनोर्ध्वज्वलनमेव च।
तिर्यग्गमनमप्यत्र गमनादेव लभ्यते॥" (भाषापरिच्छेद ६)

पूर्वमीमांसक ज्ञान अपेक्षा कर्मका प्राधान्य स्वीकार करते, किन्तु वेदान्तिक कहते—'कर्मसे ज्ञान श्रेष्ठ है। कारण ज्ञान न होनेसे मुक्ति कैसे मिल सकती है।'

उक्त मतवैषम्य मिटानेको महायोगेश्वर श्रीकृष्णने भगवद्गीतामें अतिचमत्कार महोत्कृष्ट मत देखाया और दुर्ज्ञेय कर्मतत्त्व अति मनोहर तथा विस्तारित रूपसे सुबोधगम्य बना बताया है।

गीताके तृतीयाध्यायसे षष्ठाध्याय तक, तथा त्रयोदशाध्यायमें कर्मसम्बन्धीय अनेक विषय और अन्यान्याध्यायमें कर्मसद्धान्त कोयी न कोई महत् प्रसङ्ग विहित है। किन्तु तृतीय अध्याय केवल कर्मात्मक है। इसीसे उसको कर्मयोगाध्याय कहते हैं। श्रीकृष्णके मतसे शारीरिक व्यापारका नाम कर्म है। कर्मका अभाव अकर्म कहाता है। फिर कर्म शास्त्रविहित और अकर्म शास्त्रनिषिद्ध होता है। सिवा इसके कर्मसे अकर्म और अकर्मसे कर्म भी बन सकता है। कर्मका विभाग नाना प्रकार है। वैषयिक विविध सुखाभिलाष, तृप्ति वा स्वर्गादि पुण्यफलप्राप्तिकी कामनासे किया जानेवाला कर्म काम्य कहाता है। वैषयिक कामना न रख अहंज्ञान परित्यागपूर्वक सर्वव्यापक ईश्वरकी एक मात्र सत्ताके ज्ञानसे अनन्यचित्त उसकी भक्तिमें उसीके प्रीत्यर्थ जो कर्म करते, उसे निष्काम कहते हैं। फिर चित्तशुद्धिके लिये नियमित कर्म नित्यकर्म है। शरीर, वाक्य, मन प्रभृतिका प्रवर्तक पञ्चविध कारण शरीर, कर्ता (अर्थात् चित्त एवं अहङ्कार), चक्षु, कर्ण, इन्द्रियादि, प्राणादिके विविध वायुका व्यापार और चक्षुकर्णादिका आनुकूल्यकारी सूर्यवायु इत्यादि है। ईश्वरकी ही सत्तामें दुर्ज्ञेय मायाकी सत्ता रहती है। सत्त्व, रजः और तमः त्रिविध गुण मायासे निकला है। पृथिव्यादिमें ऐसा कोई सत्त्व नहीं, जो त्रिगुणसे मुक्त हो। सुतरां सभी त्रिगुणके प्रादुर्भावभेदसे भिन्न भिन्न कर्म करते और कर्मके सात्त्विक, राजसिक तथा तामसिक त्रिविध विभाग बनते हैं। विशेष कर्मके विशेष विशेष फल और पापपुण्यादिका नियन्ता ईश्वर नहीं। प्राकृतिक अलङ्घनीय नियमसे वह हुवा करता है। अहंभाव अर्थात् कर्तृत्वाभिमानशून्य, आत्मीयके प्रति स्नेह तथा शत्रुके प्रति द्वेषवर्जित और फलाकाङ्क्षा-रहित हो जो नित्य कर्म किया जाता, वह सात्त्विक कहाता है। फलाकाङ्क्षा और अहङ्कारसे अतिशय आयाससे होनेवाला कर्म राजसिक है। अपनी भविष्यत् शुभाशुभे

लग्न क्रूर अर्थात् प्रथम, तृतीय, पञ्चम, सप्तम, नवम और एकादश राशिके मध्य आनेसे कर्तरी योग होता है। यह योग कन्याको मार डालता है।

कर्तरीय (सं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। इस वृक्षका वल्कल, सार और निर्यास विषमय होता है। २ त्वक्-सार-निर्यास-विषभेद, छाल और और दूधका ज़हर।

"कदम्बकर्करीयकोशीयकरघाटकरम्भनन्दनवराटकानि सप्त त्वक्सारनिर्यासविषाणि।" (सुश्रुत)

कर्तरीयुग (सं० क्ली०) सिन्धुवारद्वय, संभालूका जोड़ा।

कर्तव्य (सं० त्रि०) कर्तुं योग्यम्, कृ योग्यार्थे तव्यः। १ करनेके उपयुक्त, किये जाने लायक।

"होनसेवा न कर्तव्या कर्तव्यो महदाश्रयः।" (हितोपदेश)

२ लगाया जानेवाला। ३ फेरा जानेवाला। ४ दिया जानेवाला। (क्ली०) ५ कार्य, फ़र्ज़, करने लायक काम। ६ छेद्य, काटने लायक चीज़।

कर्तव्यता (सं० स्त्री०) कर्तव्यस्य भावः, कर्तव्य-तल्-टाप्। १ विधेयता, वजूब, ज़रूरत। २ औचित्य, मौज़ूनियत, दुरुस्ती। ३ उपयुक्त उपाय, माकूल तदबीर।

कर्तव्यविमूढ़ (सं० त्रि०) अपना कर्तव्य न देखनेवाला, जिसे अपना फ़र्ज़ न सूझ पड़े।

कर्तव्याकर्तव्य (सं० क्ली०) करने एवं न करने योग्य कार्य, भला-बुरा काम।

कर्ता (सं० पु०) करोति सृजति सम्पादयति वा, कृ-तृच्। ण्वुल्तृचौ। पा ३।१।१३३। १ ब्रह्मा। २ कर्मसम्पादक, काम बनानेवाला। यह कर्ता चार प्रकारका होता है—१ हेतुकर्ता, २ प्रयोजककर्ता, ३ अनुमन्ताकर्ता और ४ अधिष्ठाताकर्ता।

न्यायमतानुसार क्रियाकृति जिसमें समवाय सम्बन्धसे रहती उसीको विद्वन्मण्डली कर्ता कहती है। वेदान्तपरिभाषामें उपादानविषयक अपरोक्षज्ञान-चिकीर्षा तथा कृतिमानको कर्ता माना है। फिर भामतीके मतानुसार इतर कारक द्वारा प्रेरित न होते सकल कारकका प्रयोजक (प्रेरक) कर्ता है।

गुणके अनुसार कर्ता त्रिविध होता है—सात्विक, राजस और तामस। मुक्तसङ्ग, निरहङ्कारी, धैर्यशाली, उत्साही और सिद्धि तथा असिद्धिमें निर्विकार रहनेवाला पुरुष सात्विक कर्ता है। रागी, कर्मफलाकाङ्क्षी, लुब्ध, हिंस्र, अशुचि और हर्षशोकादियुक्त पुरुष राजस कर्ता कहाता है। फिर आलस्यके काममें निविष्ट, शठ, प्रतारक, अलस, विषयभोगी, दीर्घसूत्री और स्तब्धप्रकृति पुरुषको तामस कर्ता कहते हैं।

३ प्रभु, मालिक। ४ अध्यक्ष, अफ़सर। ५ महादेव।

"क्षीयहा क्षीयकृत् कर्ता विश्वबाहुर्महीधरः।" (भारत १३।१८।३०)

६ व्याकरणका एक कारक, फ़ायल। क्रियाके करनेवालेको कर्ता कहते हैं। यह हिन्दी भाषा तथा संस्कृतादिमें सर्व प्रथम कारक माना गया है। इसका चिह्न 'ने' है। जैसे—रामने रावणको मारा। यहां मारनेकी क्रिया रामद्वारा सम्पादित हुयी। इसीसे राम कर्ता कारक ठहरा और उसमें 'ने' चिह्न लगा। किन्तु अकर्मक क्रिया रहते कर्तामें कोई चिह्न लगाया नहीं जाता। जैसे—रावण मर गया। अंगरेजीमें इसे नमिनेटिव केस (Nominative case) कहते हैं।

कर्ताभजा (कर्ताभजनी)—बङ्गालका एक उपासक सम्प्रदाय। इस सम्प्रदायके लोगोंकी व्याख्याके अनुसार वही कर्ताभजना हो सकता, जो कर्ता अर्थात् परमेश्वरका पूर्ण रूपसे भजन करता है। कर्ताभजनी सम्प्रदायके प्रवर्तक, प्रथम सत्प्रतिष्ठाता और प्रचारक औलिया-चांद थे। इस सम्प्रदायवाले उनको एकवाक्यसे ईश्वरका अवतार मानते हैं। प्रवादानुसार माधवेन्द्रपुरी नामक एक बालक गोपीनाथ-विग्रहके श्रीमन्दिरमें एक दिन अतिथि हुये। उन्होंने वैकालिक जलपानका क्षीर पीना चाहा था। भक्तवत्सल गोपीनाथने भोगके थालमें एक कटोरा क्षीर-चोरा रखा और पीछे पुजारीसे उन्हें देनेको कहा। इसी घटनाके पीछे यशोनन्दन गोपेमध्यदेव गोपीनाथके मन्दिरसे अप्रकट हो अनन्य सन्यासीके वेश आमोरपुरी परगनेके घोसा-दुग्धो नामक स्थानमें पहुंच कुछ समय तक अध्ययन भावसे रहे। पीछे वह उलाधाम गये और महादेव-संबोलीकी भौटमें बालक वेश देख पड़े। महादेवके कोई सन्तान न था। उन्होंने उक्त अज्ञातकुलशील बालकको या पुत्रनिर्विशेष पालन किया। बारह वत्सरकाल औलिया-चांद महादेव

चित्त बिगाड़, परहिंसा विचार और निज सामर्थ्य पर दृष्टि न डाल किये जानेवाले कर्मका नाम तामसिक है। ज्ञान, बुद्धि, धृति, श्रद्धा और कर्ताका भी सत्वानुरूप त्रिविध लक्षण दर्शित हुआ है। फिर यज्ञ, तपः, दान और आहारके भी इसी प्रकार तीन तीन भेद कहे हैं। कर्मका रूपभेद इन्हीं सबपर निर्भर करता है।

श्रीकृष्णने ज्ञान तथा कर्म उभयको प्रशंसाकर ज्ञानकी सर्वोत्कर्षता देखायी है। उन्होंने कहा,—'जो व्यक्ति प्रकृत ज्ञानी, आत्मतत्त्वज्ञ तथा आत्माके प्रसाद आत्मक्रियासे ही आत्मामें सन्तुष्ट रहता, उसको अपने लिये कर्मका कोई प्रयोजन नहीं पड़ता। फिर कर्म करनेसे न तो उसे कोई इष्ट और न करनेसे न कोई प्रत्यवाय (पाप) लगता है।' किन्तु इस उक्ति अनुयायी कर्मकाण्डकी अकर्तव्यताकी आपदा मिटानेको भिन्न भिन्न प्रकार भिन्न भिन्न अध्यायमें श्रीकृष्णने सर्वदा कर्तव्य उपदेश दिया और सांख्य, योग तथा पूर्वमीमांसाके आपाततः विरोध मतका सामञ्जस्य किया है। कर्म बन्धनस्वरूप अर्थात् मुक्तिके लाभका बाधक कहा गया है। इसीसे सांख्य-मनीषियोंने दोषावह देख कर्मका त्याग ठहराया है। फिर भी मीमांसकोंके मतानुसार यज्ञ, दान और तपस्याको कभी छोड़ना न चाहिये। उक्त उभय मत मानते महाविरोध पड़ जाता है। किन्तु प्रकृत पक्षमें कोयी विरोध नहीं। कारण देहधारी मात्रको अशेषरूप कर्म त्यागकी क्षमता कहां। कर्मको छोड़ कोई क्षणकाल भी टिक नहीं सकता। इच्छाके विरुद्ध प्रकृतिका गुण मनुष्यको कर्मरत बनाता है। दर्शन, श्रवण, स्पर्श, घ्राण तथा भोजन पांच ज्ञानेन्द्रियके और गमन, आलाप, ग्रहण, निश्वास, मलमूत्रादित्याग, नेत्र उन्मीलन एवं निमीलन पांच कर्मेन्द्रियके कर्म हैं। यह इन्द्रियोंको स्वतः प्राकृतिक नियमसे करना पड़ते हैं। इच्छा इनको रोक नहीं सकती। अभ्यासके बल कर्मेन्द्रिय (वाक्, पाणि, पाद, पायु और उपस्थ)को संयत करने भी जिसके मनमें वासना बनी रहती, उसे विद्वन्मण्डली कपटाचारी कहती है। त्याग भी सत्वानुरूप त्रिधा भेदात्मक है। आसक्ति और कर्मफल परित्यागपूर्वक केवल कर्तव्य बोधसे कार्यका अनुष्ठान सात्त्विक त्याग है। ऐसा त्यागी सत्वगुणसम्पन्न मेधावी और संशयविरहित होता है। वह दुःखावह विषयसे द्वेष और सुखावह विषयसे अनुराग नहीं रखता। फलतः उसीको कर्मफलत्यागी कह सकते हैं। दुःखावह विषय कायक्लेशके भयसे छोड़ना राजसिक त्याग है। फिर मोहवशतः नित्य कर्म न करना तामसिक त्याग कहाता है। इस स्थानपर उभय मतके सामञ्जस्यसे श्रीकृष्णने कहा—पण्डितोंने काम्यकर्मके त्यागको संन्यास और सकल प्रकार कर्मफल छोड़नेको त्याग बताया है। यज्ञ, दान और तपस्या छोड़ना न चाहिये। यह कार्य विवेकियोंकी चित्तशुद्धिका कारण है। निश्चयरूपसे आसक्ति और कर्मफलको छोड़ यह समस्त कार्य करना ही श्रेष्ठ है। कर्मका त्याग कभी कर्तव्य नहीं ठहरता। ज्ञानयोग श्रेष्ठ है। फिर ज्ञानभित्तिस्थापित भक्ति-प्रवाहित शान्ति उससे भी श्रेष्ठ होती है। किन्तु विवेक कर्मारम्भ बिना जब ज्ञानलाभमें व्याघात आता, तब तत्तत् कर्म अर्जन भी अपेक्षा साधन अवश्य लगाया जाता है। ज्ञानोपदेशसे मानस-वृत्तिकी प्रकृत धारणा द्वारा और अभ्यासके बल इन्द्रिय वशीभूतकर आसक्ति परित्यागपूर्वक जो व्यक्ति कर्मका अनुष्ठान उठाता, वही श्रेष्ठ कहाता है। आसक्ति त्यागपूर्वक ईश्वरके उद्देश न किया जानेवाला कर्म बन्धन है। ईश्वरके उद्देश कृत कर्म प्रकृत यज्ञ कहाता है नाना कामना-सिद्धिके लिये जो कर्म और वैदिक क्रियाकलाप चलता, उससे मन केवल कर्मकी सिद्धि पर ही टिका रहता और ईश्वरसे विमुख पड़ता है। फिर नाना मनुष्य नाना प्रकृतिक होते हैं। वैसी अवस्थामें जैसे बालकको मधुका लोभ देखा विद्याकी शिक्षामें लगाते, वैसे ही कर्मफलको आशासे क्रियाकलापादि सनातनधर्मके सोपानका एक भिन्न अङ्ग बताते हैं। "सहयज्ञाः प्रजाःसृष्ट्वा" आदि श्लोकमें श्रीकृष्णने यही भाव व्यक्त किया है। जैसे अग्नि प्रथम धूमाच्छन्न रहता, वैसे ही सकल कर्मके प्रारम्भमें दोष देख पड़ता है। किन्तु परित्याग न कर कर्मको धैर्यावलम्बनपूर्वक चलाना चाहिये। इसमें

तंबोलीके घर रहे। इससे उसको छोड़ कुछ दिन किसी गन्धवणिक्‌के पास भी वह टिके थे। फिर औलिया-चांद एक भूस्वामीके भवन डेढ़ वर्ष ठहरे। वहांसे चलने पर बङ्गालके पूर्वांशमें कोई कोई स्थान कुछ दिन घूम फिर २७ वत्सर वयःक्रमके समय बेजड़ा नामक ग्राममें वह जा रहे। उक्त ग्राममें २२ शिष्य उनके अनुचर बने। फिर औलिया-चांद चाकदहके निकट परारी नामक स्थानमें बहुत दिन टिके और १६८१ शाकको बयालमें मर गये। आठ प्रधान शिष्योंने उनको कन्धा उसी स्थान पर गाड़ देहको परारी ग्राममें ले जाकर समाहित किया।

कहते—मराठोंके हङ्गामेमें किसी सैन्याध्यक्षने औलिया-चांदको बेगार पकड़ा था। किन्तु वह त्रिवेणीके निकट चन्द्रहाटी घाटसे अपने कमण्डलुमें गङ्गाको डाल जलशून्य पङ्किल गङ्गागर्भ पार कर गये। उनके कमण्डलुका गङ्गाजल आज भी घोषपाड़ेमें पालोंके घर रखा है। कर्ताभजनी विश्वास लाते, कि उस जलसे लोग सकल अभिलाष और मोक्ष पाते हैं।

औलिया-चांदके २२ शिष्योंमें रामशरणपाल एक सद्‌गोप जातीय गृहस्थ थे। उन्होंने इस मतको फैलाया है। औलियाचांद अतिदीर्घकाय और आजानुलम्बित बाहु रहे। वह फलमूल या लतापत्र ही खाकर अपना जीवन चलाते थे। उन्होंने अन्धको नयन, पङ्गुको चरण, अपुत्रको पुत्र, दरिद्रको धन तथा मृतको जीवन दे अपने मतावलम्बियोंको विमोहित किया और बहुतसे लोगोंको अनुयायी बना लिया। उनके प्रसादसे रामशरण भी अलौकिक शक्तिसम्पन्न हुये।

रामशरणके मरनेपर उनके पुत्र रामदुलालने इस मतकी बड़ी उन्नति की। वह फ़ारसी खूब पढ़े थे। उन्होंने सब लोगोंके समझने योग्य सात-आठ सौ गीत सामान्य भाषामें बनाये। उनमें कोयी प्राचीन हिन्दू शास्त्रानुगत, कोयी मुसलमान सूफ़ी सम्प्रदायसिद्ध और कोयी गीतरचयिताका अभिप्रेत है। कर्ताभजनी रामदुलालके उक्त गीतोंको शास्त्र समझते हैं। प्रति शुक्रवारको प्रातः और सायंकाल जो समाज लगाते, उसमें लोग वही गीत गाते हैं।

रामदुलालके समय अनेक धनी, मानी और ज्ञानी व्यक्तियोंने यह मत अवलम्बन किया था। १८३१ ई०के चैत्र मासको कृष्ण-एकादशीको उन्होंने इस लोकसे अवसर लिया।

पीछे रामदुलालकी पत्नी सरस्वतीने 'कर्तामा' और 'सती मा' के नाम गद्दी पर बैठ इस सम्प्रदायकी श्रीवृद्धि की।

कर्ता-भजनी सम्प्रदायके बीजमन्त्रका मूलसूत्र 'गुरु सत्य' है। यही सबको पहले सिखाया जाता है। फिर निम्नलिखित मन्त्र तीन बार सुनाते हैं—

"कर्ता औलिया महाप्रभु। तुम हमारे और हम तुम्हारे हैं। तुम्हारे ही सुखसे हम चलते हैं। हम तुमसे तिलार्ध भी अलग नहीं। हम तुम्हारे ही साथ हैं। दोहाई महाप्रभु।"

कर्ता-भजनियोंके मतमें परस्त्रीगमन, परद्रव्यहरण, परहत्यासाधन, मिथ्याकथन, सुरापान और प्रलापभाषका निषेध औलिया-चांदकी आज्ञा है। इनमें जातिविचार नहीं होता। मनुष्य मनुष्यका सेव्य और पूज्य है। दूसरे देवदेवीकी उपासना आवश्यक नहीं।

कर्ताभजनियोंके कथनानुसार पृथिवीका दूसरा सर्वप्रकार धर्म असत्य अनुमान और स्वीय धर्म सत्य प्रधान है। ज्ञानसाधन द्वारा मनुष्य अपने इष्टदेवको प्रत्यक्ष कर सकता है। किन्तु प्रत्यक्षकरण क्रिया सबसे नहीं बनती। घोषपाड़ेमें महन्तकी गद्दी है। फाल्गुनकी पूर्णिमाको दोलका मेला लगता है। फिर रथयात्रा प्रभृति दूसरे भी महोत्सव होते हैं।

कर्तार (हिं० पु०) १ कर्ता, करनेवाला। यह संस्कृत 'कर्तृ' शब्दकी प्रथमा विभक्तिका बहुवचन है। किन्तु हिन्दीमें एकवचनकी ही भांति आता है। २ विधाता, परमेश्वर, दुनियाको बनानेवाला।

कर्तित (सं० त्रि०) कर्त-क्त-इट्। कर्तन किया हुवा, कटा, छंटा, जो काटा गया हो।

कर्तिष्यत् (सं० त्रि०) कर्तन करनेकी इच्छा रखनेवाला, जो काटना चाहता हो।

कर्तिष्यमाण, कर्तिष्यत् देखो।

कर्तुकाम (सं० त्रि०) कर्तुं कामः अभिलाषो यस्य, बहुव्री०। करनेका इच्छुक, जो करना चाहता हो।

सिद्ध व्यक्तिको किसी क्रियाकलापका प्रयोजन नहीं लगता। किन्तु कर्मकी सिद्धि चाहनेवालेको उसका प्रयोजन बना रहता है। फिर इतर पुरुष श्रेष्ठके कार्यका अनुगामी होता है। इससे सिद्ध पुरुष जनहितार्थ तत्तत् कर्म कर सकता है। सिद्धिके सर्वोच्च सोपान पर चढ़ने अर्थात् ईश्वरके तत्त्वमें अभिनिविष्ट रहनेको कर्मफलत्यागी बन निष्काम साधन करना आवश्यक है। इसी प्रकार कर्ममें प्रवृत्तिके लिये निम्नश्रेणीके लोगोंको सकाम कर्म भी करना चाहिये। किन्तु निम्न श्रेणीके लोगोंको सतत आचार्य उपदेश देनेके लिये तत्त्वज्ञानकी शिक्षाका प्रयोजन पड़ता है। कर्मके मुख्य उद्देश्य ईश्वरज्ञान और ईश्वरभक्तिकी चित्तशुद्धिको भूल केवल कर्मपरायण हो जीवनयात्रा निर्वाह करना वृथा है।

ईश्वरमें सर्व कर्म समर्पण करने अर्थात् यज्ञ, तपस्या, दान तथा अन्यान्य सत्कार्यसे उसीका स्मरण, उसीकी महिमाका कीर्तन और उसीकी विभूतिका दर्शन रखनेसे मोक्षलाभ होता है। ईश्वरका विश्वरूप और उसीकी सौम्यमूर्ति देखना चाहिये। फिर ज्ञानी कर्मनिष्ठ अहंभावको छोड़ सोऽहंभाव पकड़ता है। किन्तु ऐसी परासिद्धि साधकको मिलना दुर्लभ है। इसलिये केवलमात्र ईश्वरपरायण हो व्यवसायात्मिका बुद्धि खोजना पड़ती है। फिर उसमें सत्कार्य न होते भी कोयी क्षति नहीं आती। यह धर्म जितना सधता, उतना ही कल्याणकर रहता है। वेदयिका अकिञ्चित्कर सुख और सिद्धि न मिलते भी दुःख कैसे होगा! क्योंकि इसप्रकार कर्मसमर्पण द्वारा ईश्वरमय बननेपर, पवित्र सुखकी इयत्ता नहीं रहती। फिर अनिर्वचनीय आनन्द मिलने लगता है। इस जन्ममें योगभ्रष्ट हो जाते अर्थात् चरम सिद्धि न पाते कियत् परिमाण कार्यके बल परजन्म उक्त कर्मके साधनमें अधिक सामर्थ्य आता है। कोई अनेक जन्मान्तर और कोई पूर्वार्जित कर्मके बल शीघ्र सिद्ध हो जाता है। द्रव्य यज्ञादि यावतीय कर्ममें ईश्वर-परायणतास्वरूप ज्ञान ही श्रेष्ठ है। ज्ञानयज्ञका प्रधान फल ऐहिक भाव प्राप्त होना है। उसमें सर्वभूतके प्रति समदृष्टि और सौहार्द परिगणित है। सुतरां जो सर्वभूतके हितमें रत रहता, शत्रु मित्र पर समान प्रीति तथा दया रखता और स्वीय इष्टानिष्ट भूल सर्वकर्म ईश्वरको समर्पण करता, उसीको विद्वान् परम योगी कहता है।

इस जगत्‌में भला बुरा कर्म कौन नहीं समझता। किन्तु लोग ऐहिक स्वार्थसिद्धिके लिये अनुचित काम किया करते हैं। ऐसी अवस्थामें आवश्यक है—कोई महापुरुष शुभ कर्मका लाभ और अशुभ कर्मका दोष देखाता रहे। भारतवर्ष कर्मक्षेत्र है। यहां क्या किसी वयमें बुरा कर्म करना न चाहिये।

कर्मकर (सं० त्रि०) कर्म करोति मूल्येन, कर्मन्-कृ-ट। कर्मणि भृतौ। पा ३।२।२२। १ वेतन पर कार्य करनेवाला, नौकर, मजदूर। इसका संस्कृत पर्याय—भृतक, भृतिभुक्, वैतनिक, वेतनोपजीवी, भरण्यभुक और कर्मण्यभुक् है। २ कर्मकारक, काम करनेवाला।

"मिथ्याभिशंसितत्यागतुर्यांशधिकमेवम्। एते कर्मकरा भेदाः।"

(मिताक्षरा)

(पु०) कर्म हिंसां करोति, कृ हेत्वादौ ट। १ यम।

कर्मकरी (सं० स्त्री०) कर्मन्-कृ-ट, ङीप्। १ दासी, बांदी। २ मूर्वालता, मरुआकी बेल। ३ बिम्बिका लता, एक बेल।

कर्मकर्ता (सं० पु०) कर्मणः कर्ता सम्पादकः, ६-तत्। १ कार्यकारक, काम करनेवाला। कर्मैव कर्ता। २ व्याकरणोक्त वाच्य विशेष (Passive voice)। इसमें कर्तृत्वकी विवक्षासे कर्म ही कर्ता होता है।

"क्रियमाणन्तु यत् कर्म स्वयमेव प्रसिध्यति।
सुकरैः स्वैर्गुणैः कर्तुः कर्मकर्तेति तद्विदुः॥" (व्याकरणकारिका)

कर्ताका कर्म अपने निज गुणसे स्वतः सम्पन्न होने पर कर्मकर्ता कहाता है। किन्तु ऐसे स्थलपर हिन्दीमें कर्ताका प्रकाश चिह्न 'ने' कभी नहीं लगता।

कर्मकर्तृता (सं० स्त्री०) कर्मका कर्तृत्व, सफलकी कारगुजारी। जैसे—रोटी बनती है। यहां रोटी अपने आप बन नहीं सकती। उसका बननेवाला कोयी अवश्य रहता है। इसलिये रोटी कर्म ठहरते भी कर्तृत्वको प्राप्त होती है।

कर्मकाण्ड (सं० क्ली०) कर्मणां कर्तव्यताप्रतिपादक-

कर्तृ, कर्ता देखो।

कर्तृक (सं॰ त्रि॰) प्रतिहस्त, प्रतिनिधि, कारगुज़ार, करनेवाला।

कर्तृका (सं॰ स्त्री॰) कृन्तति छिनत्ति, कृत्-तृच् स्वार्थे कन्-टाप्। क्षुद्रखड्ग, कटारी।

"[illegible]।" ([illegible])

कर्तृत्व (सं॰ क्ली॰) कर्तृभावः, कर्तृ-त्व। कर्ताका धर्म, कारगुज़ारी, करनेवालेकी माक़ूलियत।

"न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।" (गीता ५।१४)

कर्तृपुर (सं॰ क्ली॰) नगरविशेष, एक शहर। यह भारतके उत्तरपूर्व अञ्चलमें अवस्थित है। समुद्रगुप्तने यह स्थान जय किया था। समुद्रगुप्त देखो।

कर्तृवाचक, कर्तृवाच्य देखो।

कर्तृवाची, कर्तृवाच्य देखो।

कर्तृवाच्य (सं॰ पु॰) कर्ता वाच्यो यत्र, बहुव्री॰। क्रियापद द्वारा कर्ताको लक्षित करनेवाला वाक्य, जिस जुमलेमें फ़ेलसे फ़ायलको समझ सकें। (Active voice) इसमें कर्ता प्रधान रहता और कर्ममें 'को' चिह्न लगता है जैसे—रामने रावणको मारा। प्रत्येक क्रियाका प्रकृत रूप कर्तृवाच्य ही होता है। जैसे—लिखना, पढ़ना, लड़ना, हंसना, खेलना, कूदना। किन्तु कर्मवाच्यमें प्रधान क्रिया भूतकालमें आती और उसमें 'जाना' क्रिया पीछे जोड़ दी जाती है। जैसे—लिखा या पढ़ा जाना। फिर कर्तृवाच्यसे कर्मवाच्य बनानेमें कर्मको कर्ता और कर्ताको करण ठहराते हैं। जैसे—'रामने रावणको मारा' कर्तृवाच्यका 'रावण रामसे मारा गया' कर्मवाच्य हुवा।

कर्तृवाच्यक्रिया (सं॰ स्त्री॰) कर्तृवाच्य देखो।

कर्तृस्थ (सं॰ त्रि॰) कर्तरि कर्तृसम्पादनयोग्ये तिष्ठति, कर्तृ-स्था-क। कर्तृस्थानीय, कर्ताका प्रतिनिधि, करनेवालेकी जगह रहनेवाला।

कर्तृस्वक्रियक (सं॰ त्रि॰) कर्तामें अपने कार्यको लगानेवाला, जो अपना काम फ़ायलसे रखता हो।

कर्तृस्वभावक (सं॰ त्रि॰) कर्तामें अपना भाव रखनेवाला।

कर्त्तृका (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रखड्ग, कटारी, शिकारीकी छुरी।

कर्त्तिका, कर्तिका देखो।

कर्त्त्री (सं॰ स्त्री॰) कतरनी, कैंची।

कर्त्य (सं॰ त्रि॰) कर्तन किया जानेवाला, जो कटनेवाला हो।

कर्त्री (सं॰ स्त्री॰) करोति या, कृ-तृच्-ङीप्। १ कार्यसम्पादन-कारिणी, काम बनानेवाली। २ प्रभुपत्नी, मालिककी बीवी।

कर्त्व (सं॰ क्ली॰) कृ-त्वन्। कृत्यार्थे तवैकेन्केन्यत्वनः। पा ३।४।१४। घृत, घी।

कर्द (सं॰ पु॰) कर्द-अच्। कर्दम, कीचड़।

कर्दङ—पञ्जाबके कांगड़ा ज़िलेका मध्यवर्ती एक ग्राम। यह भागनदीके वामकूलपर अवस्थित है। कर्दङमें अच्छे अच्छे मकान् बने हैं।

कर्दट (सं॰ पु॰) कर्द कर्दमं अटति व्याप्यत्वेन प्राप्नोति, कर्द-अट्-अच्। १ पङ्क, कीचड़। २ कमलाट, कंवलकी जड़। ३ मृणाल, कंवलकी डण्डी। ४ जलजतृणमात्र, पनिहा घास। (त्रि॰) ५ पङ्कार, कीचड़में चलनेवाला।

कर्दन (सं॰ क्ली॰) कर्दते, कर्द भावे ल्युट्। कुक्षिशब्द, पेटकी आवाज़, गुड़गुड़ाहट।

कर्दम (सं॰ पु॰-क्ली॰) कर्द-अम। [illegible]। १ पङ्क, कीचड़, चहला। इसका संस्कृत पर्याय—निषद्वर, जम्बाल, पङ्क और शाद है। राजवल्लभके मतसे कर्दम शीतल, कफ और पित्तरोग, वेदना, दाह तथा शोथनाशक होता है। २ स्वायम्भुव मन्वन्तरके प्रजापति विशेष। इनके पिताका नाम कीर्तिमान् और पुत्रका नाम अनङ्ग था। (भारत, शान्ति) यह ब्रह्माकी छायासे उत्पन्न हुये। फिर इन्होंने सरस्वतीतीर विन्दुसरतीर्थमें दश सहस्र वत्सर तपस्या की। स्वायम्भुवमनुकी कन्या देवहूति इनकी पत्नी थीं। पुत्रका नाम कपिलदेव रहा। इनके कलादि नव कन्या भी थीं। कपिल और कला देखो। ३ पाप, गुनाह। ४ छाया, परछाईं। "[illegible]।" ([illegible]) ५ नागविशेष, एक सांप। "कर्दमश्च महानागो नागश्च बहुमूलकः।" (भारत १।३५।१६) ६ मृत्तिका, मट्टी। ७ मल, कूड़ा। ८ प्रजापति पुलहके एक पुत्र।

काण्डम्, मध्यपदलो०। १ कर्मका कर्तव्यता-प्रतिपादक वेदांश। कर्म देखो। २ धर्मसम्बन्धीय कर्म यज्ञादि।

कर्मकाण्डी (सं० पु०) १ यज्ञादि कर्म विधिवत् करनेवाला, जो कर्मका कर्तव्यताप्रतिपादक वेदांश पढ़ा हो।

कर्मकार (सं० त्रि०) कर्म करोति भृतिं विना इति शेषः। १ वेतन व्यतिरेक कार्यकारक, बेगार, जो बिना उजरत काम करता हो। २ कार्यकारक, काम बनानेवाला। (पु०) ३ वृष, बैल। ४ जातिविशेष, लोहार। लोहार देखो। यह विश्वकर्माके औरस और शूद्राके गर्भसे उत्पन्न हुआ है।

"[illegible]
[illegible] कर्मकारं [illegible]॥" (शब्द)

कर्मकारक (सं० त्रि०) कर्म-कृ-ण्वुल्। १ कार्यकारक, काम करनेवाला। (पु०) व्याकरणोक्त कारक विशेष। कर्म देखो।

कर्मकारी (सं० त्रि०) कर्म करोति, कर्म-कृ-णिनि। कर्मकारक, काम करनेवाला।

"[illegible] कर्मकारिभिः।" (मनु ८।१४१)

कर्मकार्मुक (सं०पु०-क्ली०) सुदृढ़ चाप, बढ़िया कमान।

कर्मकीलक (सं० पु०) कर्मणा कीलक इव वस्त्र-क्षालनादिना वस्त्राणां मालिन्यापाटकीलक-रूपः। रजक, धोबी।

कर्मकुशल (सं० त्रि०) कर्मणि कुशलः, ७-तत्। कर्ममें निपुण, काममें होशियार।

कर्मकृत् (सं० त्रि०) कर्म करोति, कर्मन्-कृ-क्विप्। कर्मकारक, काम करनेवाला।

"[illegible]
[illegible] कर्मकृतां [illegible]॥" (किरात०)

कर्मकृतवान् (सं० पु०) धर्मसम्बन्धीय कृत्य करानेवाला।

कर्म[illegible] (हि० स्त्री०) व्यवसाय, कमाई, फुरती।

कर्मक्षम (सं० त्रि०) कर्मणि क्षमः समर्थः, ७-तत्। कर्म करनेको समर्थ, काम कर सकनेवाला।

"[illegible] कर्मक्षमाण्यभवन्॥" (रघु)

कर्मक्षेत्र (सं० क्ली०) कर्मणां क्रियानुष्ठानानां क्षेत्रम्, ६-तत्। १ कर्म करनेकी भूमि, काम बनानेकी जगह। २ भारतवर्ष। इस स्थानपर कर्म करनेसे फलानुसार अन्यान्य वर्षोंमें जन्म मिलता है।

"अत्रापि भारतमेव वर्षं कर्मक्षेत्रम्। अन्यान्यष्टवर्षाणि स्वर्गिणां पुण्यशेषोपभोगस्थानानि भौमस्वर्गपदानि व्यपदिशन्ति।" (भागवत ५।१७।११)

कथित वर्षसमूहके मध्य भारतवर्ष ही कर्मक्षेत्र है। अन्यान्य अष्ट वर्ष स्वर्गवासियोंके अवशिष्ट पुण्यभोगका स्थान होते हैं। इसीसे उनको भौमस्वर्ग कहते हैं।

कर्मग्रन्थि (सं०पु०) कर्मणां ग्रन्थिरिव बन्धकत्वात्, बहुव्री०। अज्ञानजन्य वासनारूप दोष। यही वासना सकल प्रवृत्ति और बन्धनका हेतु है।

कर्मघात (सं० पु०) कर्मका विनाश, काम छोड़ बैठनेकी हालत।

कर्मचण्डाल (सं० पु०) कर्मणा चण्डाल इव। १ असूयक, हिंसक, मारकाट करनेवाला। २ पिशुन, खल, चुगलखोर। ३ कृतघ्न, एहसान-फरामोश। ४ अत्यन्त क्रोधी, निहायत गुस्सावर।

"असूयकः पिशुनश्च कृतघ्नो दीर्घरोषकः।
चत्वारः कर्मचण्डाला जन्मतश्चापि पञ्चमः॥" (वशिष्ठ)

५ राहु।

"[illegible]
कर्मचण्डालं [illegible]॥" ([illegible])

कर्मचन्द्र (सं० पु०) १ मालव देशके एक राजा। हिन्दीमें कर्मचन्द्र भाग्यको कहते हैं।

कर्मचारी (सं० त्रि०) कर्मणि चरति, कर्म-चर्-णिनि। वेतन पर कार्य करनेवाला, जो तनखाह पर काम करता हो।

कर्मचित् (सं० त्रि०) कर्म-चि भूते क्विप्। १ कृतकर्मा, किया हुआ काम। (वै०) २ कर्म द्वारा सञ्चित, काममें जमा हुआ।

"[illegible]" ([illegible])

कर्मचित (सं० त्रि०) कर्मणा चितः, कर्म-चि-क्त। कर्म-निष्पाद्य, कर्म द्वारा सम्पादन किया जानेवाला।

"[illegible]" (वेदान्त०)

८ गन्धरास। ९ मांस, गोश्त। १० त्रयोदशविध कन्दविषमें एक विष। कन्दविष देखो। ११ वर्त्मकर्दमाख्य नेत्ररोग, आंखकी एक बीमारी। वर्त्मकर्दम देखो। (त्रि०) १२ कर्दमयुक्त, कीचड़से भरा हुवा।

कर्दम—१ विन्ध्यपार्श्वके अन्तर्गत एक ग्राम। २ काशी प्रदेशके मध्यका एक ग्राम। (भ० ब्रह्मख०)

कर्दमक (सं० पु०) कर्दमे कायति प्रकाशते, कर्दम-कै-क। १ धान्यविशेष, एक अनाज। शालि देखो। २ पङ्क, कीचड़। ३ राजिमत् सर्पविशेष, एक सांप। सर्प देखो। ४ वन, अगाज।

कर्दमराज (सं० पु०) काश्मीरके एक राजा। इनके पिताका नाम क्षेत्र या क्षेमगुप्त था। (राजत०)

कर्दमविसर्प (सं० पु०) विसर्परोगभेद, किसी किस्मका कोढ़। माधवनिदानके मतमें यह कफपित्त ज्वरसे स्तम्भ, निद्रा, तन्द्रा, शिरोरुक्, अङ्गावसाद, विक्षेप, प्रलाप, अरोचक, भ्रम, मूर्छा, अग्निहानि, अस्थि-भेद, पिपासेन्द्रियका गौरव बढ़ाता, और पीत, लोहित, पाण्डुर, स्निग्ध, असित, मलिन, शोफवान्, गुरु तथा गम्भीरपाक देखाता है। अपरान्यों विसर्पको कर्दम कहते हैं।

कर्दमाटक (सं० पु०) कर्दमो मलादिः अट्यते निक्षिप्यते यत्र, कर्दमस्य मलादेः आटो निक्षेपोऽत्र इति वा। विष्ठादि फेंकनेका स्थान, गूगोबर डालनेकी जगह।

कर्दमित (सं० त्रि०) कर्दम-इतच्। कर्दमरूपमें परिणत, कीचड़ बना हुवा, मैला।

कर्दमिनी (सं० स्त्री०) कर्दमानां देशः, कर्दम-इनि-ङीप्। प्रचुर कर्दमयुक्त देश, कीचड़का मुल्क।

कर्दमिल (सं० क्ली०) कर्दम-इनि। तुन्दपद्धकर्दमिलादि-लिशलच्पापकक् विनिमप्रभक्रूरको कणेइलादिस्यादि। पा ४।२।८०। जनपदविशेष, एक मुल्क।

"एतत् कर्दमिलं नाम भरतस्याभिषेचनम्।" (भारत, वन)

कर्द्दमी (सं० स्त्री०) सुदरहच, गन्धराजका पेड़।

कर्नफूली, कर्णफुली देखो।

कर्नेल, करनेल देखो।

कर्नेता (हिं० पु०) अश्वविशेष, किसी रंगका घोड़ा।

कर्पट (सं० पु०) कीर्यते क्षिप्यते, कृ-विच्; कर् चासौ पटश्चेति। १ जीर्णवस्त्र, पुराना कपड़ा, चिथड़ा, गूदड़, लत्ता। इसका संस्कृत पर्याय—लक्तक और नक्तक है। २ पर्वतविशेष, एक पहाड़। यह नाभि-मण्डलसे पूर्व और भस्मकूटसे दक्षिण अवस्थित है। यहां शमन रहते हैं। (कालिकापुराण ८२ अ०) ३ मलिन वस्त्र, मैला कपड़ा। ४ वस्त्रखण्ड, कपड़ेका टुकड़ा। ५ कषाय रक्तवस्त्र, भूरा लाल कपड़ा।

कर्पटक, कर्पट देखो।

कर्पटधारी (सं० पु०) कर्पटं धरति, कर्पट-धृ-णिनि। मलिन जीर्णवस्त्रखण्डधारी भिक्षुक, फटापुराना कपड़ा पहननेवाला फकीर।

कर्पटिक (सं० त्रि०) कर्पटो ऽस्त्यस्य, कर्पट-ठन्। कर्पटधारी, फटापुराना कपड़ा पहननेवाला।

कर्पटिनी (सं० स्त्री०) कर्पटिन्-ङीप्। कर्पटधारिणी, फटापुराना कपड़ा पहननेवाली।

कर्पटी (सं० त्रि०) कर्पटो ऽस्त्यस्य, कर्पट-इनि। कर्पटधारी, फटा पुराना कपड़ा पहननेवाला।

कर्पण (सं० पु०) कृप-ल्युट्। लौहमयशस्त्रविशेष, शान।

"आपतत्कणयकर्पणपाशदण्डमुद्गरतोमरादि अहरणजालपहरणुपात्तः।" (दशकुमार)

कर्पर (सं० पु०) कृप् बाहुलकात् अरन् लत्वाभावः। १ कपाल, खोपड़ा। २ अस्त्रभेद, एक हथियार। ३ कटाह, कड़ाह। ४ उडुम्बरवृक्ष, गूलरका पेड़। ५ कच्छपके पृष्ठका आवरण, कछुवेकी हड्डी। ६ खर्पर, खपड़ा। ७ ज्वालातप्तकपाल, गर्म खप्पर। ८ कपोल, गाल। ९ शर्करा, चीनी।

कर्परांश (सं० पु०) कर्परस्य अंशः, ६-तत्। मृत्-कपालखण्ड, मट्टीके खपड़ेका टुकड़ा।

कर्पराल (सं० पु०) कर्पर इव अलति पर्याप्नोति, कर्पर-अल्-अच्। अक्षोटवृक्ष, अखरोटका पेड़। यह पहाड़ी पीलू है।

कर्पराशी (सं० पु०) कर्परं अश्नाति, कर्पर-अश-णिनि। वटुकभैरव।

"श्मशानवासी मांसाशी कर्पराशी महान्तकृत्।" (वटुकस्तव)

कर्परिका (सं० स्त्री०) कर्परी स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वः। कर्परी देखो।

कर्मचेष्टा (सं० स्त्री०) कर्मणि चेष्टा, ७-तत्। क्रियाके अनुष्ठानका उद्योग, कामकी कोशिश।

"आत्मजन्या भवेदिच्छा इच्छाजन्या भवेत् कृतिः।

कृतिजन्या भवेच्चेष्टा चेष्टाजन्या क्रिया भवेत्॥" (मनु)

कर्मचोदना (सं० स्त्री०) कर्मणि कर्मावबोधने चोदना विधिः। १ कर्मविषयमें प्रेरणाकारक विधि। कर्म चोद्यते प्रवर्तते ऽनया,च-टाप्। २ कर्ममें प्रवृत्तिका हेतु।

"ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना।" (गीता)

३ कर्मविधि।

"चोदना चोदयतीव विधिरिति कार्यवाचिनः शब्देन एवं प्रत्ययं विधु-वात्मकः ज्ञानादिविषयसम्बन्धः कर्मविधिः प्रवर्तते।" (श्रीधरस्वामी)

कर्मज (सं० पु०) कर्मणः कर्मजन्यादृष्टाज्जायते, कर्म-जन-ड। १ कर्मफलजन्य रोगादि। यह रोग शास्त्रानुसार निर्णीत औषधप्रयोगसे भी नहीं दबता। केवल कर्मके क्षयसे ही इसकी शान्ति होती है। २ जन्मपरिग्रह। कायिक, वाचिक और मानसिक कर्मविशेषके फलसे योनिविशेषमें जन्म लेना पड़ता है। ३ पापपुण्यादि। ४ क्रियाजन्य संयोगविभागादि। ५ वेगात्मक संस्कार। "मूर्तमात्रे तु वेगः स्यात् कर्मजो वेगजः क्वचित्।" (भाषापरि०) ६ वटवृक्ष। कर्मणो जातः विष-भोगवासनावशात् भ्रमतो मलिनीयमानवृत्तिभिर्जात इत्यर्थः। ७ कलियुग। (त्रि०) ८ क्रियाजात, कामसे बना हुवा।

"तथा दहति वैद्यः कर्मजं दोषमात्मनः।" (मनु १२।१०)

कर्मजगुण (सं० पु०) कर्मणो जायते यो गुणः, कर्मधा०। क्रियाजन्य संयोग, विभाग और वेग गुण।

"संयोगश्च विभागश्च वेगश्चैते तु कर्मजाः।" (भाषापरि०)

कर्मजित् (सं० पु०) १ जरासन्धवंशीय मगधके एक नृपति। २ उड़ीसेके कोई राजा। इन्होंने ७८ से १४३ ई० तक राजत्व किया।

कर्मज्ञ (सं० त्रि०) कर्म जानाति, कर्मन्-ज्ञा-क। कर्मबोधक, हिताहित और समय देख कर्म विशेष करनेका ज्ञान रखनेवाला।

कर्मठ (सं० त्रि०) कर्मणि घटते, कर्मन्-घठच्। कर्मणि घटोऽठच्। पा ५।२।३५। १ कर्मकुशल, काममें होशियार।

"आत्मवश्यस्य ततो भ्यात्मीय। स कर्मठः कर्मसु चालयन्ति॥" (भट्टि ३।१२)

कर्मणा (सं० अव्य०) कर्मसे, क्रिया द्वारा, कामके साथ।

कर्मणिवाच्य (सं० पु०) व्याकरणोक्त वाच्यविशेष। इस वाच्यमें कर्मकर्ता बन जाता है। फिर वचन और पुरुष भी कर्मपदका ही निर्दिष्ट होता है।

कर्मण्य (सं० स्त्री०) कर्मणि साधुः, कर्मन्-यत्। १ कर्मयोग्य, काम कर सकनेवाला। २ कर्म विशेषमें आवश्यक, किसी कामके लिये जरूरी। ३ कर्म-कुशल, काम करनेमें होशियार।

कर्मण्यता (सं० स्त्री०) कर्मण्यस्य भावः। कर्म-कुशलता, तत्परता, मुस्तैदी।

कर्मण्यभुज् (सं०त्रि०) कर्मण्यं वेतनं भुङ्क्ते, कर्मण्य-भुज-क्विप्। वेतनोपजीवी, नौकर।

कर्मण्या (सं० स्त्री०) कर्मणा सम्पाद्यते, कर्मन्-यत्-टाप्। १ वेतन, तनखाह। २ मूल्य, कीमत।

कर्मतः (सं० अव्य०) कार्यानुसार, कामके मुवाफिक।

कर्मत्याग (सं० पु०) कर्मणः त्यागः, ६-तत्। १ वैत-निक कर्मका त्याग, नौकरीका इस्तेफा। २ सांसारिक कर्मका त्याग, दुनयावी काम छोड़ बैठनेकी हालत।

कर्मत्व (सं० स्त्री०) कर्मकी स्थिति, फर्ज अदा करनेकी हालत।

कर्मदक्ष (सं० त्रि०) कर्मणि दक्षः, ७-तत्। काममें पटु, काम करनेमें होशियार।

कर्मदुष्ट (सं० त्रि०) कर्मणा दुष्टः, ३-तत्। १ कर्म विशेषसे पतित, किसी कामसे गिरा हुवा। २ पापी, गुनाहगार।

कर्मदेव (वै० पु०) कर्मणा देवः प्राप्तदेवभावः। देव-विशेष। अष्टवसु, एकादश रुद्र, द्वादश आदित्य, इन्द्र और प्रजापति—तैंतीस कर्मदेव हैं। अग्निहोत्रादि वैदिक कर्मके फलसे इन्हें देवलोक मिला है। इनमें इन्द्र प्रभु और बृहस्पति आचार्य हैं। देवयोनिमें जन्म लेनेवालेको आजानदेव कहते हैं।

कर्मदेवी (सं० स्त्री०) मेवाड़के राजा समरसिंहकी पत्नी। इनके पुत्रका नाम राहुप था। समरसिंह देखो।

कर्मदेवता (सं० स्त्री०) कर्मदेव, यज्ञादि कर्मसे बने हुये देव।

कर्मदोष (सं० पु०) कर्मैव दोषः कर्महेतुदोषो वा।

कर्परिकातुत्थ (सं॰ क्ली॰) कर्परिकेव तुत्थम्। १ तुत्थविशेष, एक तूतिया।

कर्परी (सं॰ स्त्री॰) कृप् बाहुलकात् अरट् ततो गौरादित्वात् ङीष्। कार्योद्भव तुत्थ, खपरिया, दारुहल्दीके काढ़ेका तूतिया। इसका संस्कृत पर्याय—दार्विका और तुत्थाञ्जन है।

कर्पास (सं॰ पु॰-क्ली॰) कृ-पास। कृपः पासः। उण् ४।४३। कर्पास वृक्ष, कपासका पौदा। कार्पास देखो।

कर्पासक, कार्पास देखो।

कर्पासफल (सं॰ क्ली॰) कर्पासस्य फलम् ६-तत्। कार्पासबीज, बिनौला, कपासका बीज। यह स्तन्यवर्धक, वृष्य, स्निग्ध, गुरु और कफकारक है। (भावप्रकाश)

कर्पासी (सं॰ स्त्री॰) कर्पासजातित्वात् गौरादित्वात् वा ङीष्। कर्पास वृक्ष, कपासका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—कार्पासी, तुण्डिकेरी और समुद्रान्ता है। भावमिश्रने इसे लघु, ईषत् उष्णवीर्य, मधुररस और वायुनाशक कहा है। कर्पासीका पत्र वायुनाशक, रक्त तथा मूत्रवर्धक और कर्णपीड़ा, कर्णनाद और पूयस्राव शान्तिकारक है।

कर्पूर (सं॰ पु॰-क्ली॰) कृप्-ऊर। खर्जिपिञ्जादिभ्य ऊरोलचौ। उण् ४।९०। सुगन्धित द्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज। इसे फारसीमें काफूर, हिन्दीमें कपूर, तामिलमें करुपूरम, सिंहलीमें कपूरु और अंगरेजी भाषामें काम्फर (Camphor) कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—घनसार, चन्द्रसंज्ञ, सिताभ्र, हिमवालुका, हिमकर, शीतप्रभ, सिताभ, घनसारक, सितकर, शीत, शशाङ्क, शीला, शीतांशु, शाम्भव, शुभ्रांशु, स्फटिकाभ्र, तारमिहिका, ताराभ्र, चन्द्रार्क, चन्द्र, लोकतुषार, गौर, कुमुद, इन्दु, हिमाह्वय, चन्द्रभस्म, वेधक और रेणुसारक है। कर्पूर चतुर्दश प्रकार होता है,—पोतास, भीमसेन, सितकर, शङ्करवास, पांशु, पिञ्ज, अब्दसार, 'हिमवालुक,' घृतिका, तुषार, हिम, शीतल और पक्किकाख्य। भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, वृष्य, चक्षुःहितकर, लेखन, लघु, सुगन्धि, मधुर, तिक्त रस, और कफ, पित्त, विषदोष, दाह, तृष्णा, मुखविरसता, मेदः तथा दुर्गन्धनाशक है। चीना कपूर कफनाशक, तिक्तरस और कुष्ठ, कण्डु तथा वमिनिवारक होता है।

यह उद्भिद्‌जात, दृढ़ीभूत, गन्धयुक्त और उड़न उड़ायुगुणविशिष्ट (उड़ जानेवाला) एक श्वेत पदार्थ है। रसायनशास्त्र इसे उद्भिद्के उड़ायुगुणयुक्त तेलकी द्वितीय अवस्था बताते हैं। नानाप्रकार उद्भिद्से ही कपूर मिलता है।

कर्पूरका इतिहास—इस बात पर बड़ा गड़बड़ पड़ा—किस समयसे कपूर मानव जातिके व्यवहारमें लगा और गुणागुण निर्णय हो सका। युरोपीय पण्डितोंके निर्णयानुसार ई॰ ६ठ शताब्दसे प्राचीन ग्रन्थोंमें इसका उल्लेख मिलता है। इद्रमोलके किन्दा राजवंशीय अमरू कैस नामक किसी राजपुत्रने ६ठ शताब्द अरबीमें एक कविता लिखी थी। उसमें कपूरका उल्लेख आया है।

किन्तु हमारी समझमें उससे बहु पूर्व भारतवासियोंको इसका सन्धान लगा था। सुश्रुत, चरक, वाभट, हारीत प्रभृति प्राचीन आयुर्वेदप्रचारक कपूरका नाम और गुणागुण पर्यन्त लिख गये हैं।

इशाक-इब्न्-आमन् नामक किसी अरबी चिकित्सक और इब्न् खुर्दद्बा नामक एक अरबी भौगोलिकने ई॰ ९ठ शताब्दको लिखा था—'मलय प्रायोद्वीपसे कपूर बाहर भेजा जाता है।' फिर ई॰ त्रयोदश शताब्दको प्रसिद्ध भ्रमणकारी मार्कोपोलोने लिखा,—'फनसूर नामक स्थानमें सर्वोत्कृष्ट कपूर उत्पन्न होता है।' फनसूर स्थान सुमात्रा द्वीपके मध्य है। आजकल, वहांका कपूर 'बरस' कहाता है। पहले युरोपमें इसे कोई जानता न था। चीनसे यह युरोपमें पहुंचा। इसी प्रकार १५६३ ई॰से युरोपीयोंको इसका सन्धान मिला।

प्राचीन काल भारतवर्षके लोग कपूरको पक्व और अपक्व दो भागमें बांटते थे।

डाक्टर उदयचन्द्रके कथनानुसार पक्व कपूर (Cinnamomum Camphora) जिसमें चीनदेशीय वृक्षके काष्ठसे निकलता और रौद्रके तापसे पकता है। अपक्व कपूरकी उत्पत्ति बोर्नियो द्वीपके एक वृक्ष-

१ दुष्ट कर्म, पापजनक हिंसादि, गुनाह, बुरायीका काम। २ कर्मजन्य पापादि, कामका दुराव। ३ कर्म विपयक दोष, गलती, भूल। ४ कर्मके मूल कारणस्वरूप मिथ्याज्ञानकी वासनाका दोष, बुरा चालचलन।

कर्मधारय (सं॰ पु॰) व्याकरणोक्त समानाधिकरण पदघटित समास विशेष। समानाधिकरणस्तत्पुरुषः कर्मधारयः। पा १।२।४२। इसमें विशेषण और विशेष्यका समान अधिकरण होता है। जैसे—रक्तलता। हिन्दीमें यह समास नहीं लगता, क्योंकि विशेषण और विशेष्य अलग रहता है। फिर संस्कृतकी भांति विशेषणमें विभक्ति भी लगायी नहीं जाती।

कर्मध्वंश (सं॰पु॰) कर्मणो ध्वंशः, ६-तत्। कर्मक्षति, मजदूरी कामके फायदेका नुकसान, नाउम्मेदी।

कर्मना (हिं॰) करंगा देखो।

कर्मनाम (सं॰ क्ली॰) क्रियासे बना हुआ नाम, इस्मफायल।

कर्मनाशा (सं॰ स्त्री॰) कर्म नाशयति, कर्मन्-नश-णिच्-अण्-टाप्। एक प्रसिद्ध नदी। यह (अक्षा॰ २४° ३८´ २०´ ३०´´ उ॰ तथा देशा॰ ८३° ४१´ २०´´ पू॰) विहार प्रदेशस्थ शाहाबाद जिलेके कैमोर पर्वतसे निकली है। इसने उत्तरपश्चिम मुख पहुंच दरिहार ग्रामके निकट शाहाबाद और मिर्जापुर जिले दोनों ओर रख विहार एवं युक्तप्रदेशको स्वतन्त्र कर दिया है। फिर चौसा ग्रामके निकट यह गङ्गा नदीसे जा मिली है। इसकी दो शाखा हैं—धर्मावती और दुर्गावती। पर्वत पर जहां कर्मनाशा बहती, वहां नदीगर्भकी भूमि प्रस्तरमय पड़ती है। किन्तु मृत्तिका मिलनेसे नदीगर्भ कर्दमयुक्त और गभीर रहता है। माघ फाल्गुन मास यह नदी सूख जाती है। किन्तु वर्षाकाल इसके वेगका कोयी ठिकाना नहीं। उस समय अल्प जलमें भी उतरना कठिन पड़ता है। द्रव्य-सामग्रीसे भरी बड़ी नौका अनायास इस पर चला करती हैं। मिर्जापुर जिलेके छानपाथर नामक स्थानमें यह नदी १०० फीट नीचे गिरती है। अधिक वृष्टिके समय उक्त जलप्रपात अतिसुन्दर देख पड़ता है। अनेक लोगोंके कथनानुसार इस नदीको छूनेसे महापाप लगता है। कारण रावणके प्रस्रावसे इसकी उत्पत्ति है। देवगांव देखो। किसी किसीके मतानुसार सूर्यवंशीय त्रिशङ्कु राजाने ब्रह्महत्याका पाप किया था। वह अपना पाप छोड़ाने पृथिवीकी यावतीय पुण्यतोया नदीका जल लाये और उसमें नहा ब्रह्महत्याके पापसे छूट गये। आजकल जो कर्मनाशा बहती, उसको विद्वन्मण्डली त्रिशङ्कु-राजाका गात्रधौत अपवित्र जल कहती है। फिर कोई उस समयसे अपवित्र बताता, जिस समय युक्त-प्रदेशका निष्ठावान् प्राचीन ब्राह्मण इसको पार कर कीकट अथवा वङ्गदेश जाता न था। किन्तु नदीकूलके अधिवासी कर्मनाशाको अपवित्र नहीं समझते और जलसे सायंसन्ध्याकार्य किया करते हैं। भविष्य ब्रह्म-खण्डके लेखानुसार गङ्गा और कर्मनाशाके सङ्गममें नहानेसे अशेष पुण्य मिलता है—

"भागीरथ्या समं तत्र कर्मनाशा नदी द्विजः।
स्नाति पुण्यार्थं यात्रा लोकतारणहेतवे॥" (१८।४०)

उक्त ब्रह्मखण्डमें ही लिखा, कि कर्मनाशाके कूल पर ताड़का राक्षसीका वन था।

कर्मनिबन्ध (सं॰ पु॰) कर्मका आवश्यक फल, कामका जरूरी नतीजा।

कर्मनिर्हार (सं॰ पु॰) असत्कर्म वा फलका दूरीकरण, बुरे काम या उसके नतीजेका हटाव।

कर्मनिष्ठ (सं॰ त्रि॰) कर्मणि निष्ठा यस्य, बहुव्री॰। यागादि कर्मासक्त, नित्य नैमित्तिक कर्म करनेवाला।

"ज्ञाननिष्ठा द्विजाः केचित् तपोनिष्ठास्तथापरे।
तपःस्वाध्यायनिष्ठाश्च कर्मनिष्ठास्तथा परे॥" (मनु)

कर्मनिष्ठा (सं॰ स्त्री॰) कर्मणि निष्ठा आसक्तिः, ७-तत्। कर्ममें आसक्ति, काममें लगे रहनेकी हालत।

कर्मन्द—भिक्षुसूत्रकार एक ऋषि।

कर्मन्दी (सं॰ पु॰) कर्मन्देन भिक्षुसूत्रकारकेन ऋषि-विशेषण प्रोक्तं भिक्षुसूत्रमधीते, कर्मन्द-इनि। कर्मन्द-कृशाश्वादिनिः। पा ४।३।१११। भिक्षु, सन्यासी।

कर्मन्यास (सं॰ पु॰) कर्मणां विहितकर्मणां विधिना-न्यासः त्यागः। १ कर्मत्याग, सन्यास। २ कर्मफल-त्याग, कामके नतीजेको छोड़ देनेकी हालत।

स्कन्ध (Dryobalanops aromatica)से है। यही कपूर सर्वोत्कृष्ट होता है। हिन्दीमें इसे 'भीमसेनी कपूर' कहते हैं। दाक्षिणात्यमें चार प्रकारका कपूर चलता है—कैसरी, सूरती, चीना और बटाई।

युरोपीय डाक्टरोंने स्थान और गुणभेदसे इसे चार श्रेणीमें विभक्त किया है—प्रथम फारमोसा या चीन-जापानका कपूर है। फारमोसा द्वीप और चीनके मध्य राज्यमें 'काम्फर लरेल' (Cinnamonum Camphora) नामक एक वृक्ष होता है। भारतमें खदिर वृक्षसे जैसे खैर निकलता, वैसे ही उक्त वृक्ष-काष्ठके क्वाथके निर्यासमें स्वच्छ काचके सदृश कपूर उतरता है। फिर उसका सार ले लिया जाता है। उक्त वृक्षका कपूरमात्र चीनमें कपूर कहाता है। पहले विलायत और भारतमें यह कपूर बहुत बिकता था। किन्तु अब इसकी आमदनी कम पड़ गयी।

जापानमें उक्त वृक्ष अधिक उत्पन्न होता है। समुद्रका शीतल वायु उसके लिये अति उपकारी है। सनुसमा और बङ्गो जिलेमें कपूरका काम चलता है।

द्वितीयको भीमसेनी कपूर कहते हैं। इसका प्रकृत नाम 'बरस' है। सुमात्रा द्वीपके बरस नामक स्थानमें शाल सदृश एक वृक्ष (Dryobalanops aromatica) होता है। इसके काण्डमें काचके समान एक प्रकार पदार्थ जम जाता है। खदिरमें खैर और चन्दनमें अगुरुकी तरह काण्डके अभ्यन्तर तथा वृक्षके हृदयमें भीमसेनी कपूर देख पड़ता है। उक्त वृक्ष जितना बड़ा लगता, कपूर भी उतना ही अधिक निकलता है। किन्तु लोग उसे बहुत बढ़ने नहीं देते। कपूरके लोभसे प्रतप्त वृक्ष काट डाले जाते हैं। ७। ८ वर्षका वृक्ष न होनेसे कपूर कम मिलता है।

ओलन्दाज-अधिकृत सुमात्रा-द्वीपके उत्तर-पश्चिम उपकूल अयार-बाङ्गीसे बरस और सिङ्केल नामक नगर पर्यन्त समुदाय स्थान, बोरनिओ द्वीपके उत्तरांश और लेबुयानद्वीपमें कपूरका वृक्ष होता है।

तृतीयका नाम नगैया कपूर है। अंगरेज इसे ब्लुमिया काम्फर (Blumea Camphor) कहते हैं। चीन देशके काण्टन नगरमें यह कपूर बनता है। इसका वृक्ष बहुत बड़ा होता है। इस जातिका वृक्ष हिमालयके पूर्वांचल, खसिया गिरि, चट्टग्राम, पेगू, ब्रह्म और चीनके दक्षिणांशमें उपजता है। किन्तु ब्रह्मदेशमें ही इसकी अधिक उत्पत्ति है। ब्रह्मदेशीय कपूरवृक्षके विषयमें किसीने कहा है,—यदि सब वृक्षोंसे कपूर निकलने पाये, तो पृथिवीके अर्धांशका कार्य बन जाये।

डाक्टर डाइमकको बम्बई अञ्चलमें उक्त जातीय एक प्रकार कपूरोत्पादक वृक्ष मिला था। बम्बईवाले कण्डु (खुजली) मिटानेको उसे व्यवहार करते हैं।

चतुर्थको सुगन्धि द्रव्यमें पड़नेवाला कपूर कहते हैं। यह नाना जातीय वृक्षसे उत्पन्न होता है। इसे तम्बाकूका पत्ता, किंवा आंशिक परिमाणमें थिमस (Thymus) तेलका सार टपका निकालते या पाचुली वृक्षसे बनाते हैं। शेषोक्त वृक्षसे निकलनेवाला कपूर अनेक स्थानमें 'पाचुली कपूर' कहाता है। नारङ्गीसे जो कपूर बनता, उसका अंगरेजीमें नेरोली काम्फर (Neroli Camphor) नाम पड़ता है। बङ्गालमें भी एक वृक्ष (Nimnophila gratioloides)से कपूर निकलता है। भारतवर्षमें लाखों रुपयेका कपूर आता जाता है।

देशीय वैद्य इसे कामोद्दीपक और मुसलमान काम-शक्तिह्रासकारक बताते हैं। हिन्दू और मुसलमान दोनोंके मतानुसार चक्षुकी प्रदाह अवस्थामें पलक पर कपूर लगानेसे विशेष फल मिलता है।

श्वासरोग अधिक बढ़नेपर कपूर और हिङ्गु चार चार ग्रेन गोली बनाकर २।३ घण्टे पीछे खिलानेसे बड़ा उपकार होता है। इसीके साथ छातीपर तारपीनका तैल मलना चाहिये। पुरातन वातरोगमें ५ ग्रेन कपूर १ ग्रेन अफीमके साथ सोते समय खिलानेसे पसीना निकलता और व्यथाका लाघव लगता है। कपूर और हिङ्गु एकत्र खिलानेसे हृद्रोग दूर होता है।

बालककाल लड़कोंको खांसी आनेपर एक लत्तेमें कपूर लगा और तथा रात्रिकाल वक्षपर रखनेसे बड़ा काम पहुंचता है।

स्नायुदौर्बल्य और यक्ष्मा प्रभृति रोगमें रात्रिकाल सोते समय ४ ग्रेन कपूरके साथ आध ग्रेन अफीम

कर्मपञ्चम (सं॰ पु॰) एक रागिणी। यह ललित, हिन्दोल, वसन्त और देशकारके योगसे बनती है।

कर्मपञ्चमी (सं॰ स्त्री॰) कर्मपञ्चम देखो।

कर्मपथ (सं॰ पु॰) कर्मणां पन्थाः, कर्मन्-पथिन्-अच्। कर्मपद्धति, कामकी राह। यह दशप्रकार है। इसके परित्यागका उपदेश दिया गया है,—

"कायेन त्रिविधं कर्म वाचा चापि चतुर्विधम्।
मनसा त्रिविधञ्चैव दशकर्मपथांस्त्यजेत्॥
प्राणातिपातः स्तैन्यञ्च परदारमथापि वा।
त्रीणि पापानि कायेन सर्वतः परिवर्जयेत्॥
असत्प्रलापं पारुष्यं पैशुन्यमनृतं तथा।
चत्वारि वाचा राजेन्द्र नजल्पे नानुचिन्तयेत्।
अनभिध्या परस्वेषु सर्वसत्त्वेषु सौहृदम्॥
कर्मणां फलमस्तीति त्रिविधं मनसा चरेत्॥" (महाभारत)

त्रिविध कायिक, चतुर्विध वाचिक और त्रिविध मानसिक—दश कर्मपथ परित्याग करना चाहिये। प्राणनाश, चौर्य और परदारगमन तीन प्रकारके कायिक कर्म सर्वतोभावसे छोड़ने योग्य हैं। असत्, कर्कश, निष्ठुर और मिथ्यावाक्य यह चार प्रकारके वाक्य बोलना अच्छा नहीं। परसम्पत्तिसे निस्पृह रह, सर्व जीव पर सौहार्द रख और कर्मके फलमें विश्वासकर चलना उचित है।

कर्मपद्धति (सं॰ स्त्री॰) कर्मणां पद्धतिः, ६-तत्। कर्मकी प्रणाली, काम करनेका कायदा।

कर्मपाक (सं॰ पु॰) कर्मणः धर्माधर्ममूलकस्य पाकः परिणामः, ६-तत्। धर्माधर्मका सुखदुःखादि रूप परिणाम, भलायी बुरायीसे आराम और तकलीफ मिलनेका नतीजा। कर्मविपाक देखो।

कर्मपुरुष (सं॰ पु॰) जीव, जानवर।

कर्मप्रधानक्रिया (सं॰स्त्री॰) क्रियाविशेष, एक फेल। इसमें कर्म ही प्रधान रहता और कर्ताके समान पड़ता है। फिर क्रियाका लिङ्ग और वचन भी उसी कर्ता बने कर्मके अनुसार लगता है।

कर्मप्रधान वाक्य (सं॰ क्ली॰) वाक्यविशेष, एक जुमला। इसमें कर्म कर्ताके स्थानपर रहता है।

कर्मप्रवचनीय (सं॰ पु॰) कर्मप्रोक्तवान्, कर्मन्-प्रवच-अनीयर्। कर्मप्रवचनीयाः। १।४।८३। पाणिनि-व्याकरणोक्त संज्ञाविशेष।

कर्मफल (सं॰ क्ली॰) कर्मणः जीवकृत शुभाशुभरूपस्य फलं परिणामः। १ शुभाशुभ कर्मका सुखदुःख भोगरूप परिणाम, भले बुरे कामसे आराम और तकलीफ मिलनेका नतीजा। २ सुख, आराम। ३ दुःख, तकलीफ। ४ कर्मरङ्ग फल, कमरख।

कर्मफलोदय (सं॰ पु॰) कर्मके परिणामका विकाश, कामके नतीजेका उठान।

कर्मबन्ध (सं॰ पु॰) कर्मणा बन्धः शरीरसम्बन्धः, ३-तत्। १ कर्मके अदृष्टसे परजन्मका बन्धन, कामकी गांठ। इसीसे जीव सुखदुःख भोगता है। (त्रि॰) कर्मबन्धं बन्धनसाधनं यस्य, बहुव्री॰। २ कर्मके बन्धनका कारण रखनेवाला, जो कामकी गांठ रखता हो।

कर्मबन्धन (सं॰ क्ली॰) कर्मणा बन्धनं कर्म एव बन्धनं वा। १ कर्मसे जन्मग्रहण, कामसे पैदा होनेकी हालत। २ कर्मका बन्धन, कामकी गांठ।

कर्मभू (सं॰ स्त्री॰) कर्मणः कर्मणि उचिता वा भूः, ६ वा ७-तत्। १ कृष्ट भूमि, जोती हुयी जमीन्। २ भारतवर्ष।

"तत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बुद्वीपे महामुने।
यतो हि कर्मभूरेषा अतोऽन्या भोगभूमयः॥"

कर्मभूमि (सं॰ स्त्री॰) कर्मणः पुण्यजनक यज्ञादि रूपक्रियायाः भूमिः, ६-तत्। १ आर्यावर्त, विन्ध्याचल और हिमालयके बीचका देश।

"भरतैरावतानि विदेहाश्च कुरून् विना।
वर्षाणि कर्मभूम्यः स्युः शेषाणि फलभूमयः॥" (हेमचन्द्र)

कुरुको छोड भारत, ऐरावत और विदेह कर्मभूमि है। बाकी वर्ष भोगभूमि कहाते हैं।

२ भारतवर्ष, हिन्दुस्तान।

"उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः॥
नवयोजनसाहस्रो विस्तारोऽस्य महामुने।
कर्मभूमिरियं स्वर्गमपवर्गञ्च गच्छताम्॥" (विष्णु॰ २।३।२)

समुद्रसे उत्तर और हिमाद्रिसे दक्षिण पड़नेवाले

देनेसे रोगका प्रतिकार पड़ता है। मेहादि रोगमें लिङ्गोछ्वास घटने उक्त औषधके साथ अफीम अधिक देनेसे और लिङ्गपर कर्पूरका लिनिमेण्ट लगा लेनेसे आशु फल मिलता है।

स्त्रियोंके जरायुमें इसी प्रकार नाना रोगके कारण प्रदाह उठने पर अवस्थानुसार ४।६ ग्रेनकी मात्रामें कपूरकी एक एक गोली बना दिनको २।३ बार खिलानेसे विशेष उपकार होता है। किन्तु ऐसे स्थलमें रोगियोंका अन्न खाली रखना पड़ेगा।

प्रसवकाल पीड़ा उठते कपूर और कालोमेल पांच-पांच ग्रेन मधु डाल दो गोली बनाते और एक खिलाते हैं। इससे बड़ा लाभ पहुंचता है। कोई एक घण्टे पीछे जुलाब भी देना पड़ता है।

पीनस रोगमें कपूरका वाष्प बड़ा उपकार करता है। फिर स्नायुशूलमें ३।४ ग्रेन कपूर आध ग्रेन मेलोडोनाके साथ लगानेसे अधिक लाभ होता है।

ऐसे में कभी कपूर उपकारी और कभी अनुपकारी है। गर्भवतीको अधिक मात्रामें कर्पूर खिलानेसे गर्भस्राव होता है।

वस्त्रादिमें कपूर डाल रखनेसे कीड़ा नहीं लगता। भारतवर्षमें यह पुण्य द्रव्य समझा जाता है। प्रत्येक देवदेवीकी आरती इससे हुवा करती है। फिर सुगन्धके लिये पानासव और पक्वान्नमें भी यह पड़ता है।

कर्पूर—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान् ग्रन्थकार। यह शतानन्दके पिता और मेघदूत-टीकाकार कल्याणमल्लके पितामह थे।

कर्पूरक (सं॰ पु॰) कर्पूर इव कायति प्रकाशते; कर्पूर-कै-क। १ कर्पूरक, कचोरी हल्दी। २ कर्पूरक, कचूर।

कर्पूर कवि—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। भोजप्रबन्धमें इनका उल्लेख है।

कर्पूरखण्ड (सं॰ पु॰) कर्पूरस्य खण्डः, ६-तत्। कर्पूरका खण्ड, कपूरका डला।

कर्पूरगौर (सं॰ त्रि॰) कर्पूरवत् गौरः शुभ्रः। कर्पूरकी भांति शुभ्रवर्ण, कपूरकी तरह गोरा।

कर्पूरगौरी (सं॰ स्त्री॰) एक रागिणी। इसमें ज्योतिः, खम्भावती, जयतश्री, टक्क और मरहाटीके स्वर लगते हैं।

कर्पूरतिलक (सं॰ पु॰) कर्पूर इव शुक्लं तिलकं ललाटचिह्नं यस्य, बहुव्री॰। हस्तिविशेष, एक हाथी।

कर्पूरतुलसी (सं॰ स्त्री॰) कर्पूरगन्धिका तुलसी, कपूरकी तरह महकनेवाली तुलसी।

कर्पूरतैल (सं॰ क्ली॰) कर्पूरस्य तैलमिव स्नेहः। कर्पूरस्नेह, कपूरका तेल। इसका संस्कृत पर्याय—हिमतैल और सुधांशुतैल है। यह कटु, उष्ण, दन्तदार्ढ्यकर और वात, कफ, पित्त तथा आमहर होता है। (शार्ङ्गधर)

कर्पूरनालिका (सं॰ स्त्री॰) पक्वान्नविशेष, एक मिठायी। मोयन मिली मैदाकी एक लम्बी नली बना लवङ्ग, मरिच, कर्पूर और शर्करा भरते हैं। फिर मुख बन्द कर घृतमें भूननेसे कर्पूरनालिका बनती है। यह शरीरवर्धक, बलकारक, सुमिष्ट, गुरु, पित्त तथा वायुनाशक, रुचिजनक और दीप्ताग्नि मानवके लिये अत्यन्त लाभदायक है। (भावप्रकाश) हिन्दीमें इसी कपूरकी गोझिया कह सकते हैं।

कर्पूरमणि (सं॰ पु॰) कर्पूरवर्णो मणिः। पाषाणभेद, कपूरकी तरह एक सफेद पत्थर। यह तिक्त, कटु, उष्ण और व्रण तथा त्वक् एवं वातदोषनाशक होता है। (राजनिघण्टु)

कर्पूररस (सं॰ पु॰) १ अतिसाराधिकारका रसविशेष, दस्तकी एक दवा। यह हिङ्गुल, अहिफेन, मुस्तक, इन्द्रयव, जातीफल और कर्पूर यत्नसे घोटनेपर बनता है। दो गुञ्जापरिमित वटिका जलसे बांधी जाती है। (भैषज्यरत्नावली) २ रसकर्पूर, रसकपूर। इसमें प्रथम सामान्य रूपसे पारद शोधा जाता है। शुद्ध पारदके परिमित गैरिक, पुटिका, स्फटिका, सैन्धव, वल्मीक, क्षारलवण और भाण्डरञ्जक मृत्तिका एक प्रहर घोंटते हैं। फिर उक्त चूर्णके साथ शुद्ध पारद एक हांडीमें रख ऊपर दूसरी हांडी लगा मट्टीसे द्वार बन्द करना पड़ता है। क्रमशः तीन बार मट्टीका लेप सुखानेपर हांडी अग्निमें फूंकी जाती है। चार दिन बराबर आंच देने पीछे पांचवें दिन हांडी उतार कर रखते हैं। अन्तको अति सावधानतासे ऊपरकी हांडी खोलते हैं। उसमें कर्पूरकी भांति जो पारद लग जाता, वही

यर्षका नाम भारत है। यहां भारती सन्तति होती है। विस्तार नौ हजार योजन है। इसीको कर्मभूमि कहते हैं। यहां पुण्यकर्म करनेसे स्वर्ग अपवर्ग मिलता है।

कर्मभोग (सं० पु०) कर्मणः कर्मजन्य सुखदुःखादेर्भोगः, ६-तत्। कर्मफलानुसार सुखदुःखादिका भोग, कामके नतीजेसे आराम तकलीफ मिलनेकी हालत।

कर्ममन्त्री (सं० पु०) कर्म मन्त्रयति, कर्मन्-मन्त्र-णिच्-णिनि। कर्मके सम्बन्धमें मन्त्रणादाता, कामकी सलाह देनेवाला।

कर्ममय (सं० त्रि०) कर्मसे बना हुवा, कामसे निकलनेवाला।

कर्ममार्ग (सं० पु०) १ कर्मका नियम, कामका तरीक़। २ भित्ति प्रभृति तोड़नेको दस्यु द्वारा व्यवहार किया जानेवाला एक शब्द, दीवार वगैरहमें सेंध लगनेको एक इबारेका लफ़ज़।

कर्ममीमांसा (सं० स्त्री०) कर्मणि मीमांसा। कर्म सम्बन्धमें निर्णयकारक शास्त्रविशेष। मीमांसा देखो।

कर्ममूल (सं० क्ली०) कर्मणो मूलमिव मूलमस्य यद्वा कर्मणि यज्ञादि क्रियाजन्य सत्कर्मार्थं मूलं यस्य। १ कुश। २ शरहण।

कर्मयुग (सं० क्ली०) छणाति हिनस्ति अन्योऽन्यं यत्र, छ-मनिन्; कर्म हिंसाप्रधानं युगम्, कर्मधारय। हिंसाप्रधान कलियुग।

कर्मयोग (सं० पु०) कर्मसु योगस्तत् कौशलम्, ७-तत्। १ चित्तशुद्धिजनक वैदिक कर्म।

"भवमेव क्रियायोगो ज्ञानयोगस्य साधकः।
कर्मयोगं विना ज्ञानं कस्यचिन्न ह दृश्यते॥" (भवभावतत्व)

कर्मयोगको ही क्रियायोग कहते हैं। बिना इसके किसीको ज्ञान प्राप्त नहीं होता। कर्म देखो। २ परिश्रम, मेहनत। ३ यज्ञादिसे सम्बन्ध।

कर्मयोगी (सं० पु०) कर्म योगो उस्यास्ति, कर्मयोग-इनि। कर्मयोगमें रत, ईश्वरको प्राप्तिके अभिलाष यज्ञ ध्यानादि वैदिक कर्म करनेवाला।

कर्मयोनि (सं० पु०) कर्मणो योनिः आदिकारणम्, ६-तत्। कर्मका मूलकारण, कामका असली सबब।

कर्मर (सं० पु०) कर्म हिंसां राति, कर्मन्-रा-क। कर्मरङ्ग, कमरख।

कर्मरक (सं० पु०) कर्मर स्वार्थे कन्। कर्मरङ्ग, कमरख।

कर्मरङ्ग (सं० पु० क्ली०) कर्मणि हिंसायै रज्यते रोगादिजनकत्वादिति भावः, कर्मन्-रञ्ज घञ्। स्वनामख्यात वृक्ष, कमरखका पेड़। (Averrhoa carambola) इसका संस्कृत पर्याय—शिराल, दृढ़दन्त, रुजाकर, कर्मार, कर्मरक, पीतफल, कर्मर, मुद्गरक, मुद्गर, धाराफल और कर्मारक है। मराठीमें इसे करमल, तामिलमें तमतमृत्तरम्, तैलगुमें तमतचेतु, मलयमें बनिङ्गबिङ्ग मनिस, ब्रह्मीमें ज़ुंगया और पोर्तुगीज़ भाषामें कारम्बोल कहते हैं।

कर्मरङ्ग अम्ल, उष्ण, वायुनाशक, तीक्ष्ण, कटुपाकी और अम्लपित्तकारक होता है। इसका पक्वफल मधुर, अम्लरस और बल, पुष्टि तथा रुचिकारक है। (राजनि०)

भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, मलबद्धकारक और कफ एवं वायुनाशक होता है।

कर्मरङ्ग दो प्रकारका होता है—मिष्ट और अम्ल। किन्तु पक्व अम्ल फल ही लोगोंको अच्छा लगता है। कारण खानेमें यह अधिक सुखरोचक है। वृक्ष १४से १६ फीट तक बढ़ता है। युरोपीयोंके मतानुसार यह प्रथम भारत-महासागरके मलक्का द्वीपमें उत्पन्न होता था। वहांसे कर्मरङ्ग सिंहल गया और सिंहलसे भारत आ पहुंचा। किन्तु हमारी विवेचनामें यह बात ठीक नहीं। बहु प्राचीन कालसे कर्मरङ्ग भारतमें उपजता, जिसका प्रमाण रामायणमें मिलता है। आजकल भारतमें प्रायः सर्वत्र यह वृक्ष होता है।

कर्मराष्ट्र—दाक्षिणात्यका एक प्राचीन उपविभाग। (Ind. Ant. VII. 189.)

कर्मरी (सं० स्त्री०) कर्म भैषज्योपयोगक्रियां राति ददाति, कर्म-र-क गौरादित्वात् ङीष्। वंशलोचना।

कर्मरेख (सं० पु०) कर्मकी रेखा, मत्थेका लिखा, होनहार।

कर्मर्घ (सं० पु०) अथर्ववेदो एक प्राचीन ऋषि।

कर्मवचन (सं॰ क्लो॰) कर्मवाक्य, बौद्धमतानुयायी क्रियाकाण्ड।

कर्मवज्र (सं॰ पु॰) कर्म श्रौताद्यनुष्ठानं वज्रमिव यस्य, बहुव्री॰। शूद्र। शूद्रको श्रौतादि अनुष्ठान वज्रकी भांति कठोर लगता है।

कर्मवत् (सं॰ त्रि॰) कर्म अस्यस्ति, कर्म-मतुप् मस्य वः। कर्मविशिष्ट, कामकाजी।

कर्मवश (सं॰ त्रि॰) कर्मणो वशः, ६-तत्। १ कर्मके अधीन, कामका मारा। (पु॰) पूर्वजन्मके कर्मका अवश्यम्भावी फल, कामका जरूरी नतीजा। यह शब्द हिन्दीमें क्रियाविशेषणकी भांति भी आता है। किन्तु उस अवस्थामें करणकारकका चिह्न 'से' छिपा रहता है।

कर्मवशिता (सं॰ स्त्री॰) कर्मवशिनो भावः, कर्म-वशिन् तल्-टाप्। कर्माधीनका भाव, काममें दबे रहनेकी हालत। यह बोधिसत्वका एक गुण है।

कर्मवशी (सं॰ पु॰) कर्मणो वशः वश्यता अस्यास्ति, कर्म-वश-इनि। कर्माधीन, कामका मारा।

कर्मवश्यता (सं॰ स्त्री॰) कर्मणो वश्यता अधीनता, ६-तत्। कर्मकी अधीनता, कामका दबाव।

कर्मवाच्यक्रिया, कर्मप्रधानक्रिया देखो।

कर्मवाटी (सं॰ स्त्री॰) कर्मणां शास्त्रोक्त तिथि-निमित्तीभूतक्रियाणां चन्द्रकलाक्रियाणां वा वाटीव। तिथि, चान्द्र मासका तीसवां विभाग।

कर्मवाद (सं॰ पु॰) मीमांसाशास्त्र। इसमें कर्मकी ही प्रधानता स्वीकृत हुयी है।

कर्मवादी (सं॰ पु॰) मीमांसक, कर्मको सर्वप्रधान स्वीकार करनेवाला।

कर्मवान्, कर्मवत् देखो।

कर्मविघ्न (सं॰ पु॰) कर्मका अन्तराय, कामकी मुजाहिमत या अड़।

कर्मविधि (सं॰ पु॰) कर्मणो विधिः नियमः, ६-तत्। कर्मका नियम, कामका कायदा।

कर्मविपर्यय (सं॰ पु॰) १ कार्यका अनुक्रम, कामका सिलसिला। २ कर्मका व्यतिक्रम; कामका उलट फेर।

कर्मविपाक (सं॰ पु॰) कर्मणः धर्माधर्ममूलकस्य विपाकः परिणामः, ६-तत्। शुभाशुभ कर्मका फल, भले बुरे कामका नतीजा। मुक्ति, स्वर्ग, परजन्ममें ऐश्वर्यादिका उपकरण वा सुख प्रभृति शुभकर्मका और रोग तथा नरकादि अशुभ कर्मका फलभोग है। हमारे शास्त्रके मतसे अधर्मके न्यूनाधिक्य अनुसार प्रथम नरक-भोग कर पीछे पापयोनि विशेषमें उत्पत्ति होती है। गरुडपुराणमें कैसे पापसे कैसी योनिमें जन्म लेनेकी बात लिखी है—पतित व्यक्तिका दानग्रहण करनेसे नरकान्त-पर पापी कृमि, उपाध्यायको मारने-पीटनेसे कुक्कुर, गुरु-पत्नी वा गुरुद्रव्यके लोभसे गर्दभ, माता प्रभृति अन्य गुरुजनको आक्रमण करनेसे शारिका, माता पिताको यन्त्रणा देनेसे कच्छप, प्रभुदत्त आहार छोड़ अन्य द्रव्य खानेसे वानर, गच्छित धन मारनेसे कृमि, किसीके गुणमें दोष लगानेसे राक्षस, विश्वासघातकतासे मत्स्य, यव धान्य प्रभृति शस्य चोरानेसे इन्दुर, परस्त्रीगमनसे व्याघ्र वृक प्रभृति, भ्रातृजायाहरणसे कोकिल, गुरु प्रभृतिके पत्नी-हरणसे शूकर, यज्ञदानविवाह प्रभृतिमें विघ्न डालनेसे कृमि, देवता पितृलोक एवं ब्राह्मणको न दे भोजन कर-नेसे वायस, ज्येष्ठ भ्राताकी अवमानना करनेसे क्रौञ्च, शूद्र हो ब्राह्मणी गमन करनेसे कृमि, ब्राह्मणी-गर्भसे पुत्र निकालते काष्ठमाणक कीट, कृतघ्नतासे कृमिकीट पतङ्ग वा वृश्चिक, शस्त्रहीन व्यक्तिको मारनेसे खर, स्त्री तथा शिशुवध करनेसे कृमि, किसीका भोज्यवस्तु चोरानेसे मक्षिका, अन्नहरण करनेसे बिड़ाल, तिल-हरणसे मूषिक, घृत हरणसे नकुल, मद्गुर मत्स्य हरणसे काक, मधु हरणसे मशक, पिष्टक हरणसे पिपीलिका, जल हरणसे वायस, काष्ठ हरणसे हारीत वा कपोत, स्वर्णभाण्ड चोरानेसे कृमि, वस्त्रादि हरणसे क्रौञ्च, अग्निहरणसे बक, वर्णक एवं शाक पत्रादि चोरानेसे मयूर, रक्तवस्त्र हरणसे चकोर, सुगन्धि वस्तु चोरानेसे छछुन्दर, वंश हरणसे शशक, मयूरका पुच्छ चोरानेसे पङ्गु, काष्ठहरणसे काष्ठकीट, फल चोरानेसे चातक और गृहहरण करनेसे रौरवादि नरक भोग तृण गुल्म लता वृक्षादि रूपमें जन्म लेना पड़ता है। गो सुवर्णादि हरणसे भी ऐसा ही फल मिलता है। फिर मनुष्य विद्या चोरानेसे बहुनरक भोग पीछे मूक और इन्धनशून्य अग्निमें आहुति डालनेसे मन्दाग्नि हो जन्म लेता है। (गरुड़पु॰ २२८ अ॰)

कामका अभ्यास। ३ कार्यप्रबन्ध, कामका इन्तिज़ाम। ४ कृष्टभूमि, जोता हुवा खेत।

"बहन्यहन्यवेक्षेत कर्मान्तान् वाहनानि।" (मनु ८।४१९)

कर्मान्तर (सं० क्ली०) कर्मणः अन्तरं तस्मादन्य इत्यर्थः, ६-तत्। १ कार्यान्तर, दूसरा काम। २ यज्ञादि धर्म कार्यके मध्यका अवकाश, कामके बीचकी छुट्टी। ३ प्रायश्चित्त, कफ़ारा।

कर्मान्तिक (सं० पु०) कर्म अन्तिके समीपे यस्य, बहुव्री०। १ कर्मकारक, कामकाजी। (त्रि०) २ अन्तिम, आख़िरी।

कर्मार (सं० पु०) कर्म लौहनिर्माणादि कार्यं गच्छति प्राप्नोति, कर्मन्-ऋ-अण्। १ कर्मकार, लोहार।

"कर्मारस्य निषादस्य रङ्गावतारकस्य च।" (मनु ४।२१५)

२ वंश, बांस। ३ कर्मरङ्ग, कमरख।

कर्मार—काठियावाड़के झालावाड़ विभागका एक क्षुद्र राज्य। इसकी भूमिका परिमाण ३ मील मात्र है। यहां एक सामन्त रहते हैं। वर्षमें ७६६५) रु० राज्यका आय है। इसमें २१०) रु० अंगरेज सरकार और कोयी ५०) रु० जूनागढ़के नवाबको राजस्वरूप देना पड़ता है।

कर्मारक (सं० पु०) कर्मार स्वार्थे कन्। १ कर्मार, लोहार। २ कर्मरङ्ग वृक्ष, कमरख। (त्रि०) ३ कर्मप्राप्त, काम पाये हुवा।

कर्मारम्भ (सं० पु०) कर्मका आरम्भ, कामका आग़ाज़।

कर्मार्ह (सं० पु०) कर्म अर्हति, कर्मन्-अर्ह-अण्। १ मनुष्य, आदमी। (त्रि०) २ कर्मके योग्य, काम कर सकनेवाला।

कर्माल—१ बम्बईप्रान्तके शोलापुर ज़िलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० १७° ५७´ तथा १८° ३२´ उ० और देशा० ७४° ५२´ एवं ७५° ११´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ७६६ वर्ग मील आता है।

इस उपविभागमें कोयी १२२ ग्राम और ८२०० गृह होंगे। पश्चिमको भीमा और पूर्वको सीना नदी प्रवाहित है। कर्मालका अर्ध भाग उर्वर एवं कृष्णवर्ण और अपरार्ध रक्तवर्ण तथा रेतीला है।

यहां एक दीवानी और दो फौजदारीकी अदालतें हैं। पुलिसके तीन थाने लगते हैं। नानाप्रकार शस्य, माष, शण, सर्षप और अपरापर द्रव्य उत्पन्न होता है। सोनारीमें प्रति वर्ष मेला लगता है।

२ कर्माल उपविभागका प्रधान नगर। यह अक्षा० १८° २४´ उ० और देशा० ७५° १४´ २०´´ पू० पर अवस्थित है। शोलापुरसे कर्माल ६६ मील उत्तर-पश्चिम पड़ता है। नगरका क्षेत्रफल १८८ एकर है।

पहले कर्मालमें निम्बालकर मण्डलेश्वरोंका आधिपत्य था। उन्होंने एक सुन्दर दुर्ग बनाया। आजकल उसमें अंगरेज़ कर्मचारियोंका कार्यालय खुला है। दुर्ग प्रायः चौथायी वर्गमील विस्तृत है। उसमें १०० गृह बने हैं। किसी समय यहां बड़ा वाणिज्य व्यवसाय था। पूना, अहमदाबाद, शोलापूर, बारसी प्रभृति स्थानसे अनेक द्रव्यसामग्रियां आती-जाती थीं। किन्तु आजकल वह बात नहीं रही। फिर भी पशु, शस्य, तैल, वस्त्रादिका बड़ा बाज़ार लगता है। देशी कपड़ा बुननेके कयी करघे चलते हैं। वार्षिक मेला ४ दिन रहता है। यहां विद्यालय, औषधालय, डाकघर और पाठागार विद्यमान है।

कर्माविधायक (सं० त्रि०) कर्मणः अविधायकः, ६-तत्। कार्यकी विधान करनेवाला, जो काम बताता हो।

कर्माशय (सं० पु०) कर्मणामाशयः, ६-तत्। कर्मके धर्माधर्मका गुण, कामको भलाई बुराईका असर।

कर्मिक (सं० त्रि०) कर्म अस्त्यस्य, कर्म-ठक्। कर्मविशिष्ट, कामकाजी।

कर्मिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन कर्मी, कर्मिन्-इष्ठन्। इनो लुक्। अतिशय कार्यकारक, काममें लगा रहनेवाला।

कर्मिष्ठता (सं० क्ली०) कर्मिष्ठस्य भावः, कर्मिष्ठ-तल्-टाप्। अतिशय कार्यकारिता, काममें लगे रहनेकी आदत।

कर्मी (सं० पु०) कर्म अस्यास्ति, कर्म-इनि। १ कर्मविशिष्ट, कामकाजी। २ फलकी आकाङ्क्षासे यज्ञादि कार्य करनेवाला।

पापकार्य विशेषसे इहजन्म या परजन्ममें रोग-विशेष भी भोगना पड़ता है। शातातप ऋषिने जिस पापसे जिस रोगका विधान किया, नीचे वह लिख दिया है। पापसे जो रोग लगता, उसका प्रायश्चित्त करना पड़ता है। प्रायश्चित्त न करनेसे वही रोग परजन्ममें भी मनुष्यको कष्ट देता है। महापातकसे सात, उपपातकसे पांच और पापसे तीन जन्म तक रोग पीछा नहीं छोड़ता। महापातक, उपपातक और पातकके प्रायश्चित्तका भी न्यूनाधिक्य रहता है। महापातकमें पूर्ण, उपपातकमें अर्ध और पातकमें पादांश प्रायश्चित्त करना पड़ता है। फिर अतिपातकमें दानादि साधारण विधान द्वारा मुक्त हो सकते हैं।

पाप	रोग	प्रायश्चित्त
छागहत्या	अधिकाङ्ग	विधियुक्त छागदान।
अश्वहत्या	वक्रमुख	शतपल चन्दन दान।
मेषहत्या	पाण्डुरोग	ब्राह्मणको एक पल कस्तूरी दान।
शुकहत्या	विस्तस्वर	कर्पूरक फलदान।
काकहत्या	कर्णहीनता	कृष्णवर्ण गोदान।
खरहत्या	कर्कशलोम	तीन मुद्रा परिमित स्वर्णप्रतिकृति दान।
हस्तिहत्या	सर्वकार्यमें असिद्धि	मन्दिर बना गणेशमूर्ति प्रतिष्ठा अथवा कृत्य श्राद्ध तथा ऋत्विक द्वारा गणसमूहका शान्ति विधान और एक लक्ष गणेशमन्त्र जप।
तरक्षुहत्या	क्षीणराधि	गुड़मयी धेनुका दान।
गोहत्या	कुष्ठ	पञ्च पल्लव संयुक्त, पञ्चवर्ण विशिष्ट, रक्तचन्दनलिप्त, रक्तपुष्प एवं रक्तवस्त्र आच्छादित एक रक्तकुम्भ दक्षिण दिक् स्थापित कर, तिलपूर्ण ताम्रपात्र उसपर रख उसमें १०८ माशा परिमित स्वर्णकी यममूर्ति तथा पुरुषसूक्त मन्त्रसे पूजा और उनसे अपने पापकी शान्ति प्रार्थना करना चाहिये। उसके पीछे सामवेदी ब्राह्मण समस्त सामगायन करेंगे। फिर उस भाव अर्घ द्वारा पापात्माका अभिषेचन होता है। यमको निम्नलिखित मन्त्र द्वारा मूर्ति विसर्जन कर भक्तिसहकारसे आचार्यको निवेदन करना चाहिये,— "यमोऽपि महिषारूढो दण्डपाणिर्भयावहः। दक्षिणाशापतिर्देवो मम पापं व्यपोहतु॥"
महिषहत्या	कृष्णगुल्म	१०८ माशा स्वर्णकी प्रतिकृतिका दान।
मार्जारहत्या	हस्तपद पीतवर्ण	१०८ माशा परिमित स्वर्णके बने पारावतका दान।
बकहत्या	दीर्घनासिका	धवलवर्ण गोदान।
शुकसारिकहत्या	स्खलितवाक्य	ब्राह्मणको दक्षिणा सहित और आसनका दान।
शूकरहत्या	दन्तुर	दक्षिणा सहित घृतकुम्भदान।
शृगालहत्या	पदशून्यता	एकपल परिमित स्वर्ण अश्वदान।
हरिणहत्या	खञ्ज	एकपल परिमित स्वर्ण अश्वदान।
पितृहत्या	पीतलालाय	१० माशाका बना एक पलपरिमित स्वर्णको शीशा पर ताम्रपात्रमें रौप्यमय कुम्भ रख १०८ माशा परिमित स्वर्णका विष्णुविग्रह पञ्चरत्न सहित यथा विधि पूजा करना चाहिये। पीछे यह समस्त द्रव्य ब्राह्मणको देते हैं। पितृहत्याका भी प्रायश्चित्त इसमें भी करना पड़ता है।
भ्रातृहत्या	अन्ध	
मातृहत्या	मूक	आपस्तम्ब मत कर 'सरस्वति जगन्मातः शब्दब्रह्माधिदेवते। दुष्कर्मकरणात् पापात् पाहि मां परमेश्वरि॥' मन्त्र पढ़ पल परिमित स्वर्ण सह ब्राह्मणको पुस्तक दे।
स्त्रीहत्या	अतीसार	१० कलस दुग्ध रौप्य, शर्करा तथा तिलदान और शत ब्राह्मणभोजन।
बालकहत्या	[illegible]	ब्राह्मणको विवाहदान, हरिवंश श्रवण, महारुद्रका जप, अयुत संख्यक दूर्वा आहुति दे दक्षिणार्थ १०८ माशा परिमित ११ खण्ड स्वर्ण अथवा ११ पल स्वर्ण ११ ब्राह्मणको देना चाहिये। फिर पश्चात् ब्राह्मणको भी दक्षिणा-दान करना कर्तव्य है। अवशेषमें आचार्य वरुणदैवतमन्त्र द्वारा

कर्मीर (सं० त्रि०) कर्म-ईरन्। चित्रित, चितकबरा।

कर्मीरक (सं० पु०) आक्षोट वृक्ष, अखरोटका पेड़।

कर्मेन्द्रिय (सं० क्लो०) कर्मणां सम्पादनाय कर्मार्थं वा इन्द्रियम्, मध्यपदलो०। वाक्यादि कर्म सम्पादक पञ्चेन्द्रिय, काम करनेवाला अङ्ग। वाक्, हस्त, पद, गुह्य और उपस्थ पांच कर्मेन्द्रिय होते हैं। यथाक्रम इनका कार्य उच्चारण, आदानादि, गमनादि, उत्सर्ग और आनन्द है। फिर अधिष्ठातृदेवता वह्नि, इन्द्र, उपेन्द्र, मित्र और ब्रह्मा हैं। इन्द्रिय देखो।

कर्मोदार (सं० पु०) उदार कर्म, इज्जतका काम।

कर्मोद्युक्त (सं०त्रि०) कर्मणि उद्युक्तः, ७-तत्। कर्मका उद्योग लगानेवाला, जो खूब काम करता हो।

कर्मोद्योग (सं० पु०) कर्मका उद्योग, कामकी कोशिश।

कर्रा (हिं० पु०) १ तन्तुवायके सूत्रप्रसारणका कार्य, जुलाहोंके सूतको फैला तानेका काम। (त्रि०) २ कठोर, कड़ा। ३ कठिन, सख्त।

कर्राना (हिं० क्रि०) कठोर पड़ना, सख्त बनना।

कर्री (हिं० स्त्री०) १ वृक्षविशेष, एक पौदा। यह देहरादून तथा अवधके वन और दक्षिणापथमें होता है। इसका पत्र अति दीर्घ रहता और मार्च मास झड़ता है। फल जून मास पका करता है। कर्रीके पत्ते पशुको खिलाये जाते हैं।

कर्ष (सं० पु०) किरति विक्षिपति चित्तं विषयेषु, कॄ-य। कॄगॄदृभ्यो वः। उण् ।।१५। १ काम, ख्वाहिश, प्यार। २ इन्दुर, चूहा।

कर्वट (सं० पु०-क्लो०) कर्व-अटन्। दो शत ग्रामके मध्यका सुन्दर स्थान, दो सौ गांवके बीचकी अच्छी जगह। २ शतग्रामवासियोंके क्रयविक्रयका स्थान, जिस शहरमें सौ गांवके लोग जाकर लेनदेन करें। ३ चारो ओर समग्राम, चौकोर गांव। ४ चतुर्दिक् समान गृहस्थान विशेष, चारो ओर बराबर घरकी जगह। ५ नगर [illegible]

कर्वट—मद्र [illegible] दक्षिणका एक प्राचीन जनपद। मार्कण्डेयपुराण [illegible] नाम [illegible] लिखा है।

"[illegible] कर्वटाश्रयाः [illegible]
[illegible] (मार्क० ५८।२१)

कर्वटक (सं० पु० क्लो०) कर्वट स्वार्थे कन्। १ कर्वट, मण्डी, शहर। २ पर्वतका उतार, पहाड़का उतार।

कर्वटी (सं० स्त्री०) कर्वट-ङीप्। नदीविशेष, एक दरया। (रामायण)

कर्वर (सं० क्लो०) कृ-वरच् वा कृ विक्षेपे वरच्। कृगृशृवृचतिभ्यः वरच्। उण् ३।१२२। १ व्याघ्र, बाघ। २ राक्षस। ३ पाप। ४ कर्म, काम। ५ औषधविशेष, एक दवा।

कर्वरी (सं० स्त्री०) कर्वर-ङीप्। १ उमा, पार्वती। २ व्याघ्री, बाघन। ३ हिङ्गुपत्री, एक घास। ४ राक्षसी।

कर्वायत नगर—मन्द्राजके उत्तर अर्काट (अर्काट) जिलेकी एक बड़ी ज़मीन्दारी। यह अक्षा० १३° ४′ तथा १३° ३६′ ३०″ उ० और देशा० ७८° १०′ एवं ७८° ५३′ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ६८० वर्गमील लगता है। लोकसंख्या प्रायः तीन लाख है। इसके उत्तर चन्द्रगिरि, पूर्व कालहस्ती तथा वेङ्कलपट, दक्षिण वालाजापेट और पश्चिम चित्तूर पड़ता है। कर्वायत नगरमें पार्वत्य भूमि अधिक है। मन्द्राजरेलवे यहां चलती है। नगरी पर्वतसे काष्ठ काटकर मन्द्राज भेजते हैं। सौमें साठ भाग भूमि कृषिके योग्य नहीं। शेषके अर्धांशमें हल चलता है। नील बहुत होता है। कृषक परिश्रमी और बुद्धिमान् हैं। पुत्तूर और तिरुत्तानीमें सब-मजिष्ट्रेट रहते हैं। पटनिर्माण प्रधान शिल्पकर्म है। इस स्थानको किसी किसीने बमराज कहा है। प्रथम कर्णाटिक-युद्धके समय बमराज नामक एक पलिगार राजत्व करते थे। कर्वायत नगरका पेशकश या स्थायी कर प्रायः २००७३५) रु० है।

इस भूभागके प्रधान नगरको भी कर्वायत नगर ही कहते हैं। यह पुत्तूरसे ७ मील पश्चिम अवस्थित है। कर्वायतनगर पहले ८ फीट उच्च प्राचीरसे सुरक्षित था। दक्षिण और पश्चिम एक-एक तोरणद्वार रहा। आजकल वह बात नहीं, केवल भग्नावशेष पड़ा है।

कर्वुदार (सं०पु०) कर्वं दारयति, कर्व-दृ-अण्। कोविदार वृक्ष, कचनारका पेड़।

कर्वुर (सं० पु०) कर्वति छिनत्ति, कर्व-उरच्।

पाप	रोग	प्रायश्चित्त
		दम्पतीको स्नान कराना है। यजमान आचार्यको वस्त्र अलङ्कार प्रभृति प्रदान करे।
राजहत्या	क्षयरोग	गो, भूमि, स्वर्ण, मिष्टान्न, जल, वस्त्र, घृतधेनु और तिलधेनु दान।
ब्रह्महत्या	पाण्डुकुष्ठ	चारों ओर पञ्चपल्लव एवं पञ्चवर्ण संयुक्त कलस रख मध्य कलस पर रौप्यनिर्मित अष्टदल पद्म लगा उसके ऊपर १० तोले स्वर्णनिर्मित दशहस्त चतुर्मुख देव स्थापन करे। द्वादश दिन पर्यन्त ब्रह्मचारी ब्राह्मणको कलसस्थ देवकी पूजा, वेदपाठ, होम प्रभृति प्रत्यह सम्पादन करना चाहिये। पीछे सब द्रव्य आचार्यको देना पड़ता है।
वैश्यहत्या	रक्तार्बुद	४ प्राजापत्य व्रत तथा सप्त धान्योत्सर्ग।
शूद्रहत्या	दण्डापतानक	१ प्राजापत्य व्रत दक्षिणाके साथ एक धेनुदान।
वंशनाश	मूढ़ और निर्वंश	शत प्राजापत्य व्रत ब्राह्मणको भूमि तथा दक्षिणादान और भारत श्रवण।
अभक्ष्य भोजन	उदरकृमि	भीमपञ्चकका उपवास।
अन्यस्पृष्ट अन्नभोजन	उदरकृमि	त्रिरात्र उपवास।
गर्भपात	यकृत्, प्लीहा, और जलोदर	तीन पल परिमित स्वर्ण रौप्य तथा ताम्रयुक्त जल एवं धेनु दान।
दावाग्निदाता	रक्तातिसार	जलपान तथा वटवृक्ष रोपण करना चाहिये।
दुष्टवचन	खञ्जित	दुग्ध पूर्ण घटद्वय तथा दो पल रौप्य ब्राह्मणको दान।
सुरस रहते मन्द अन्नदान	मन्दाग्नि	तीन प्राजापत्य व्रत १०० ब्राह्मण खिलाना चाहिये।
धूर्तता	अपस्मार	ब्रह्मकूर्चमयी धेनुका दान।
परनिन्दा	खल्ली	कांस्यसह धेनुदान।
अन्यके भोजनमें विघ्नदान	अजीर्ण	यथाविधि लक्ष होम कर्तव्य है।
अन्यको दुःखदान	शूल	अन्नदान और रुद्रका जप करना चाहिये।
अन्यको उपहास	काना	स्वर्ण सह गाभीदान

पाप	रोग	प्रायश्चित्त
नृशंसता	श्वासकास	सहस्र पल घृत दान।
प्रतिमाभङ्ग	अप्रतिष्ठ	तीन वत्सर पर्यन्त अनन्त भीम विघ्नराजकी पूजा करे।
मद्यपान	रक्तपित्त	स्वर्ण सह एक लोटे घृत वा आधे लोटे मधुदान।
परनाश	पादरोग	अन्नदान।
रजस्वला-स्पृष्ट अन्न भोजन	कृमि	त्रिरात्र गोमूत्र तथा शाकभोजन।
विषदान	छर्दिरोग	दस दुग्धवती गाभी दान करना चाहिये।
सभामें पक्षपातिता	पक्षाघात	सत्यवादी ब्राह्मणको ६ निष्क (३२० माशा) स्वर्णदान।
सुरापान	श्यावदन्त	प्राजापत्य व्रत आचरण कर ७ तोला शर्करादान, महारुद्रका जप, उसके दशांश तिलसे होम और वरुण मन्त्र द्वारा अभिषेक।
देवालय और जलमें मलमूत्रत्याग	गुदरोग	एक मास काल देवता पूजा और १ प्राजापत्य तथा २ गाभी दान।
अगम्यागमन	मुष्कव्रण	कार्पास भार एवं कांस्य दोह संयुक्त वत्सहित तिलपञ्चपरिमित स्वर्ण धेनुदान। दानकाल यह मन्त्र पढ़ना पड़ेगा—"सुरभी वैष्णवी माता मम पापं व्यपोहतु।"
पशुयोनि गमन	मूत्राघात	दो मास काल प्रति दिन सहस्र संख्यक स्नान।
अपत्य अपहरण	हीनदीप्ति	दो निष्क (२१६ माशा) स्वर्णसे अश्विनीकुमार बना दान करना चाहिये।
गुड़विकार हरण	गुल्मोदर	गुड़ तथा मधु दान
शर्कराक्षत्यादि तथा शीघ्रगोमशात द्रव्य हरण	लोमश	१०८ माशा परिमित स्वर्णसे अग्निमूर्ति बना पूजा करना चाहिये, पीछे वह मूर्ति और कम्बलदान करे।
औषध हरण	सूर्यावर्त	एक मास काल सूर्यार्घ्य और आसन दान।
कन्दमूल हरण	मृद्धङ्ग	यथाशक्ति देवालय और उद्यान निर्माण करना चाहिये।

१ श्वेतवर्ण, सफेद रंग। २ राक्षस, आदमखोर। ३ चित्रवर्ण, चितकबरा रंग। ४ शटी, कचूर।

कर्बूर (सं० पु०) कर्ब-ऊर्। १ राक्षस, आदमखोर। २ शठी, कचूर।

कर्बुक—भारतके दक्षिणपश्चिमका एक जैनशास्त्रोक्त जनपद। (जैनहरिवंश ११।७४)

कर्शन (सं० क्ली०) कृश-ल्युट्। कृशकरण, दुबला बनानेका काम।

कर्शफ (सं० पु०) राक्षस, पिशाच, प्रेत, शैतान।

कर्शित (सं० त्रि०) कृश-णिच्-क्त। कृशीकृत, दुबलाया हुवा।

कर्श्य (सं० पु०) कृश-यत्। कर्चूर, कचूर।

कर्ष (सं० पु०-क्ली०) कृष यथायथं कर्मणि करणे वा घञ्। १ षोलह माषा परिमाण, १६० रत्तीकी एक तौल। २ तोलकद्वयात्मक परिमाणादिमान, दो तोलेकी एक तौल। ३ दशमाषाकी एक तौल। ४ अरुणद्वयात्मक ब्रीह्यादिमान, ८० रत्तीकी एक तौल। ५ विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़। ६ सुवर्ण, सोना। ७ आकर्षण, कशिश। ८ कर्षण, जोताई। ९ हलरेखा, बाहन, लीक। १० विलेखन, खसोट।

कर्षक (सं० त्रि०) कर्षति भूमिम्, कृष-ण्वुल्। १ कृषिजीवी, किसान। इसका संस्कृत पर्याय क्षेत्राजीव, कृषिक, कृषीवल और कार्षक है। २ आकर्षणकारी, खींचनेवाला। ३ सुन्दर, खूबसूरत। (पु०) ४ अयस्कान्तमणि, मिकनातीस।

कर्षण (सं० क्ली०) कृष भावे ल्युट्। १ कृषिकार्य, जोताई। लाङ्गल प्रभृति द्वारा भूमिखननको ठेठ हिन्दीमें खेती कहते हैं। २ आकर्षण, कशिश, घसीट। ३ शोषण, सुखाव। ४ पीड़न, दबाव।

"शरीरकर्षणात् प्राणाः क्षीयन्ते प्राणिनां यथा।
तथा राज्ञामपि प्राणाः क्षीयन्ते राष्ट्रकर्षणात्॥" (मनु ७।११२)

शरीरकर्षणसे प्राणियोंके प्राणकी भांति राष्ट्रकर्षणसे राजाके प्राण क्षीण होते हैं। ५ प्रसरण, बढ़ाव, फैलाव।

कर्षणि (सं० स्त्री०) कृष-अनि। १ असती, छिनाल। २ असतीवृक्ष, असतीका पेड़।

कर्षणी (सं० स्त्री०) कर्षण गौरादित्वात् ङीष्। १ क्षीरिणीवृक्ष, खिरनीका पौदा। २ श्वेतवचा, सफेद बच।

कर्षणीय (सं० त्रि०) कर्षण छ। १ कर्षणके योग्य, खींचने लायक। २ कर्षण किया जानेवाला, जिसे खींचना पड़े।

कर्षणीया (सं० स्त्री०) कायफलका बीज।

कर्षफल (सं० पु०) कर्षं कर्षमात्रं फलं यस्य, बहुव्री०। १ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—विभीतक, अक्ष, कलिद्रुम, भूतवास और कलियुगालय है। बहेड़ा देखो।

२ भल्लातक वृक्ष, भेलावेंका पेड़।

कर्षफला (सं० स्त्री०) कर्षफल-टाप्। आमलक वृक्ष, आंवलेका पेड़। आमलकी देखो।

कर्षयत् (सं० त्रि०) १ आकर्षण करते हुवा, जो खींच रहा हो। २ मोह लेनेवाला, जो फरेफ्ता बना रहा हो। ३ पीड़न करनेवाला, जो सता रहा हो।

कर्षापण (सं० पु०) कर्षेण आपण्यते क्रीयते, कर्ष-आ-पण-अच्। कर्षपरिमित मूल्यसे क्रय किया जानेवाला द्रव्य।

कर्षार्ध (सं० क्ली०) कर्षस्य अर्धम्, ६-तत्। तोलकपरिमाण, तोला।

कर्षिका (सं० स्त्री०) कायबीज।

कर्षिणी (सं० स्त्री०) कृष-णिनि-ङीप्। १ क्षीरिणीवृक्ष, खिरनीका पेड़। २ खला, लगामका दहाना। इसका संस्कृत पर्याय—खलीन, कवीय और कविका है। ३ मनोहारिणी, दिलको फरेफ्ता करनेवाली।

"प्राप्यकान्तमधुगन्धकर्षिणीः प्राप्यभूमिरचनाः प्रियसखः।" (रघु० १९।११)

कर्षित (सं० त्रि०) कृष-णिच्-क्त। १ आकर्षित, खींचा हुवा। २ जोता हुवा। ३ पीड़ित, सताया हुवा।

कर्षी (सं० त्रि०) कृष-णिनि। १ आकर्षक, खींचनेवाला। २ जोतनेवाला। ३ मनोहर, दिलकश।

कर्षु (सं० पु०) १ करीषाग्नि, जङ्गली कण्डेकी आग। २ जीविका, एक नदी।

कर्षू (सं० पु०) कृष-ऊ। कृषिचमितनिधनिसर्जिखर्जिभ्य ऊः।

पाप	रोग	प्रायश्चित्त	पाप	रोग	प्रायश्चित्त
कांस्यहरण	पुण्डरीक	ब्राह्मणको अलङ्कृत कर शतपल कांस्य देना उचित है।	नानाविध द्रव्यहरण	ग्रहणी	यथाशक्ति अन्न, वस्त्र और स्वर्णदान।
गुरुपत्नीगमन	मूत्रकृच्छ्र	भौम माषायुक्त एवं नीलवस्त्राच्छादित घट पश्चिम ओर रख उस पर ताम्रपात्रमें कह निष्क स्वर्णनिर्मित वरुणमूर्ति पुरुषसूक्तसे पूजना चाहिये। फिर सामवेदी ब्राह्मणको उसी समय सामवेद पढ़ना उचित है। पीछे १० निष्क परिमित स्वर्णपुत्तलिका 'विष्णापोऽस्तु' कहके ब्राह्मणको और उक्त वरुणमूर्ति आचार्यको प्रदान करना चाहिये। वरुणमूर्ति देते समय यह मन्त्र पढ़ना पड़ता है,— "यादसामधिपो देवो विश्वेषामधिपो वरः। संसारसागराद्धारी वरुणः पावनोऽस्तु मे॥"	पक्वान्न हरण	जिह्वारोग	लक्ष बार गायत्री जप और तिल द्वारा उसका दशांश हवन।
			पट्टसूत्रहरण	लोमशून्यता	धेनुदान।
			पशुयोनिगमन	मूत्राघात	दो तिलपात्र दान।
			पितृष्वसागमन	दक्षिणभागमें व्रण	यथाशक्ति छागदान।
			पुत्रवधूगमन	कृष्णकुष्ठ	कन्यागमनके प्रायश्चित्तसे आधा प्रायश्चित्त और घृतयुक्त तिलद्वारा दशांश होम करना चाहिये।
			फलहरण	अङ्गुलिव्रण	ब्राह्मणको अयुतसंख्यक नानाविध फलदान।
			भ्रातृजायागमन	गुह्य और कुष्ठ	कन्यागमनके प्रायश्चित्तसे आधा प्रायश्चित्त और घृतयुक्त तिलसे दशांश होम कर्तव्य है।
			मधुहरण	नेत्ररोग	उपवासी रह मधु और धेनुदान करना चाहिये।
श्वश्रूगमन	हीनमुष्कता	मातृगामीकी भांति प्रायश्चित्त करना चाहिये।	मातुलानीगमन	कुब्जता	ब्रह्मसगर्भ दान।
तपस्विनीगमन	प्रमेह	एक मास रुद्रका जप और यथाशक्ति स्वर्णदान।	मातृगमन	लिङ्गहीनता	उपवास दिन कृष्णमाल्ययुक्त कुम्भ वस्त्रावृत रख उसके ऊपर ताम्रपात्रमें कह निष्क परिमित स्वर्णनिर्मित नरवाहन कुबेरकी मूर्ति स्थापनकर पुरुषसूक्तसे यज्ञ करे। अथर्ववेदविद् ब्राह्मण उसी समय अथर्ववेदीय कार्य करता रहे। अनन्तर विंशति निष्क परिमित स्वर्णकी धेनु ब्राह्मणको 'विष्णापोऽस्तु' कहकर और उस कुबेरमूर्ति ब्राह्मणको दे जावे। कुबेरकी मूर्ति देते समय यह मन्त्र पढ़ना चाहिये,—"निधीनामधिपो देवः शङ्करस्य प्रियः सखा। सौम्याधिपतिः श्रीमान् मम पापं व्यपोहतु॥"
सुवासिनीगमन	अश्मरी	मधु, धेनु और स्वर्णसह शत द्रोणपरिमित तिलदान।			
ताम्बूलहरण	श्वेतोष्ठता	दक्षिणा सह उत्तम फलत्रय देना चाहिये।			
ताम्रहरण	औदुम्बर कुष्ठ	प्राजापत्य व्रत और शतपल परिमित ताम्रदान।			
तैलहरण	कण्डु प्रभृति	उपवासी रह ब्राह्मणको दो घड़े तैलदान करे।			
मधु (शीरा) हरण	नेत्ररोग	उपवास रख यथाविधि ब्राह्मणको घृत और धेनु देना चाहिये।			
दधिहरण	मत्तता	ब्राह्मणको दधि और धेनुदान।			
काष्ठहरण	हस्तस्वेद	ब्राह्मणको दो पल कुङ्कुम दान।			
दौहित्रीगमन	दुष्टरक्तजन्य शिरारोग	दो प्राजापत्य करना चाहिये।	मातृष्वसागमन	सर्वाङ्गव्रण	दास दान और कन्यागमनका प्रायश्चित्त करे।
दुग्धहरण	बहुमूत्र	ब्राह्मणको यथाविधि दुग्ध धेनुदान।	मित्रभार्यागमन	मृतभार्या	एक ब्राह्मणको विवाह दे।
देवताहरण	विविध ज्वर	ज्वरमें रुद्र, महाज्वरमें महारुद्र, रौद्रज्वरमें अतिरौद्र और वैषम्यज्वरमें महारुद्र तथा अतिरौद्रका जप करे।	रक्तवस्त्र और प्रवालहरण	वातरक्त	मणि और प्रवाल मणिकी दान।
			लौहहरण	चित्तदाह	एकदिन उपवास रख शतपल लौहदान करे।

वद्।११८१। १ कृषि, खेती। २ जीविका, रोज़गार। ३ करीषाग्नि, सूखे गोबरकी आग। (स्त्री०) ४ कृत्रिम क्षुद्र जलाशय, छोटा बनाया हुआ तालाब। ५ नदीमात्र, दरया। ६ हरिखात, पक्का गड्ढा। इसमें यज्ञीय अग्नि स्थापन करते हैं। ७ नहर।

कर्पूरस्वेद (सं० पु०) स्वेदविशेष, किसी क़िस्मका पसेव। स्थानको देख एक गड्ढा खोद लेते और उसे दीप्त अधूम अङ्गारसे पूर देते हैं। फिर उस पर पलंग बिछाकर सोनेसे पसीना आता और शरीर हलका पड़ जाता है। (सुश्रुत)

कर्हि (सं० अव्य०) किम्-र्हिल् कादेशः। अनद्यतने र्हिलन्यतरस्याम्। पा ५।३।२१। किस समय, कब।

कर्हिचित् (सं० अव्य०) कर्हि च चित्, द्वन्द्व। किसी समय, कभी न कभी।

कल (सं० पु०-क्ली०) कड़ति माद्यति अनेन, कड़-घञ् डलयोरैकत्वम्। इत्यत्र। पा ३।३।१२१। १ शुक्र, वीर्य। २ शालवृक्ष, सालका पेड़। ३ बदरीगुल्म, बेरका झाड़। ४ मधुरास्फुट ध्वनि, मीठी और समझ न पड़नेवाली आवाज़। ५ चार मात्राका अवकाश। (त्रि०) ६ अजीर्ण, कच्चा। ७ अव्यक्त, समझ न पड़नेवाला। ८ मधुर वा निम्नस्वरयुक्त, मीठी या नीची आवाज़वाला। ९ दुर्बल, कमज़ोर।

कल (हिं० स्त्री०) १ स्वस्थता, सेहत, आराम। २ सुख, चैन। ३ सन्तोष, तसल्ली। ४ आगामी दिवस, आनेवाला दिन। ५ गत दिवस, गया हुआ दिन। ६ भविष्यत् काल, आयिन्दा वक़्त। ७ पार्श्व, पहलू, ओर। ८ अङ्ग, पुरज़ा। ९ कला, ढङ्ग। १० यन्त्र, औज़ार। ११ बन्दूकका घोड़ा। (वि०) १२ काला, स्याह। यह शब्द विशेष्यके पहले यौगिक रूपसे आता है। यथा—कलमुंहा।

कलउवा (हिं०स्त्री०) १ कलावाज़ी, कलैया। २ कतरो, काट फूट, तोड़मरोड़।

कलई (अ० स्त्री०) १ रङ्ग, रांगा। २ रङ्गलेपन, रांगेकी पोत। यह बरतनपर कसाव न लगनेको चढ़ायी जाती है। ३ वर्णक, रंग, वारनिश। ४ आवरण, चमक, दिखाव। ५ चूर्णपाक, चूना।

कलईगर (फ़ा० पु०) रङ्गलेपन चढ़ानेवाला, जो कलई करता हो।

कलईदार (फ़ा० वि०) रङ्गलेपनविशिष्ट, कलई किया हुआ।

कलक (सं० पु०) कलते, कल्-वुन् स्वार्थे कन्। १ शकुलमत्स्य, एक मछली। २ वेतसवृक्ष, बेतका पेड़, तिलक।

कलक (अ० पु०) १ दुःख, रञ्ज, सोच। २ व्याकुलता, घबराहट।

कलक (हिं० पु०) कल्क, चूरन। कल्क देखो।

कलकण्ठ (सं० पु०) कलप्रधानः कण्ठो यस्य। १ कोकिल, कोयल। २ हंस। ३ पारावत, कबूतर। ४ शुकपक्षी, तोता। ५ कलध्वनि, मीठी आवाज़। (त्रि०) ६ कलध्वनिकारी, मीठी आवाज़ निकालनेवाला।

कलकत्ता—भारतका सर्वप्रधान नगर। यह अक्षा० २२° २४' उ० और देशा० ८८° २४' पू०में भागीरथी नदीके पूर्व तट पर अवस्थित है। इसकी भूमिका परिमाण २०२१० एकर और लोकसंख्या प्रायः १० लाख है। पहले यह भारतकी राजधानी रहा। किन्तु १९१२ ई०के दिसम्बर मास राजधानी दिल्ली चली गयी।

इतिहास—१५९६ ई०को सम्राट् अकबरके प्रधान सचिव अबुलफज़लके बनाये आईन-इ-अकबरी ग्रन्थमें कलकत्तेका प्रथम ऐतिहासिक उल्लेख मिलता है। इससे पूर्व अन्य किसी ऐतिहासिक अथवा प्रामाणिक ग्रन्थमें कलकत्तेका नाम नहीं आया। अकबरके राजस्व-सचिव टोडरमलकी बनायी तालिका बङ्गदेशको कई भागों या सरकारोंमें बांटती है। कलकत्ता सातगांव सरकारमें रहा, कलकत्ते, बारबाकपुर और बकुया तीनों महालोंसे २३४०५) रु० राजस्वस्वरूप बादशाही कोषमें जमा होता था।

आईन-इ-अकबरी बननेके पीछे और बङ्गदेशमें युरोपीयोंका संस्रव आनेसे पहले किसी मुसलमान-इतिहास-लेखकके विरचित पुस्तकमें कलकत्ता शब्द देख नहीं पड़ता। किन्तु बङ्गीय कविकङ्कण मुकुन्द-

पाप	रोग	प्रायश्चित्त
वस्त्रहरण	कुष्ठ	निष्क परिमित स्वर्णनिर्मित प्रजापति और १ जोड़ा वस्त्र दे।
विद्यापुस्तक हरण	मूकता	ब्राह्मणको दक्षिणा सह न्याय इतिहास प्रभृतिका दान।
ब्राह्मणका रत्नहरण	अनपत्यता	महारुद्रजपादि, पञ्चांगके कालसे दशांश होम और मनुवचनका प्रायश्चित्तोक्त प्रायश्चित्त।
ब्राह्मणका स्वर्णहरण	कृपणता	तीन चान्द्रायण कर सौ अशरफी देना चाहिये।
ग्रास हरण	नील लोचन	ब्राह्मणको दो महानीलमणि दान।
शक्तिहरण	पाण्डुकेश	उपवास रख शतपल शक्तिदान करे।
सुगन्धि द्रव्यहरण	अङ्गदौर्गन्ध	लक्ष पद्मद्वारा अग्निमें होम करे।
स्वगोत्र स्त्रीगमन	भगन्दर	महिषी दान।
स्वजाति स्त्रीगमन	हृदयव्रण	दो प्राजापत्य करे।
स्वकन्यागमन	रक्तकुष्ठ	कुंदिक् पीतमाल्य तथा पीतवस्त्र आच्छादित कलश रख उसके ऊपर स्वर्णपात्रमें ८ निष्क परिमित स्वर्णनिर्मित वासव मूर्ति स्थापन कर पुरुषसूक्त द्वारा यज्ञ करे। इस बीच ऋक्, यजुः एवं साम तीनों वेदके अनुसार जपना चाहिये। पूजाके अन्त 'निष्पापोऽहं' कह कर ब्राह्मणको सुवर्ण निर्मित शत पुत्तली और आचार्यको वासवमूर्ति दे। मूर्ति देनेका मन्त्र यह है—"देवानामधिपो देवो वज्री विष्णुनिकेतनः। शतयज्ञः सहस्राक्षः पापं मम निकृन्तु॥"
	मृत्यु	
अनध्यायमें अध्ययन	गर्भपातसे	विद्यादान।
अस्तु भी	अधर्मसङ्करसे	वेदपारायण।
बरवृत्ति	कुकर वा शूकरसे	यथाशक्ति स्वर्णदान।
कुमतिदान	विषप्रयोगसे	तैलयुक्त भूमिदान।
कुमारीगमन	व्याघ्रादिसे	परकन्याको विवाह दान।
मन्त्रच्छेदन और निष्क्रमण	ज्वरसे	ब्राह्मणको गोधूम मात्र दान।
मन्त्रनिन्दा वा देवनिन्दा	हलसे	दक्षिणा सह महिषी दान।

पाप	मृत्यु	प्रायश्चित्त
गुरुहत्या	शय्यासे	निष्क परिमित स्वर्णनिर्मित पात्रमें विष्णु अधिष्ठान युक्त और कुशलीपन भूषित शय्या दान।
दक्षिणाहरण	दावाग्नि वा कुठाराघातसे	घरमें सभा करना चाहिये।
विद्रोह	विवाद-संस्कारहीन अवस्थामें मरण	कुमारको विवाह दान।
ब्राह्मणनिन्दा	वज्राघातसे	वत्सा दुग्धवती गायी दान।
ब्राह्मणका वस्त्रहरण	अनपत्यावस्थामें	५० कृच्छ्रव्रतोंका आचरण।
गच्छित धनहरण	कुक्कुराघातसे	व्याघ्रादि हनकी तरह प्रायश्चित्त।
राजहत्या	गजाघातसे	चार निष्क परिमित स्वर्णनिर्मित हस्तिदान।
पशुहत्या	चोरहस्त मृत्यु	धेनुदान।
आखादि द्वारा पशु पक्षी धारण	वनमध्य व्याघ्राघातसे मृत्यु	व्याघ्रादि हनकी तरह प्रायश्चित्त।
अहङ्कार	अशुचि अवस्थामें मृत्यु	दो निष्क स्वर्णका हरिदान।
मद्यविक्रय	गिरनेसे मृत्यु	षोडश प्राजापत्य कर्तव्य है।
मित्रभेद	शत्रु हस्त मृत्यु	अश्वदान।
यज्ञहानि	अग्निदग्ध	यथाशक्ति पादुका दान।
राजकुमार हत्या	राजहस्त मृत्यु	स्वर्णमय पुरुष दान।
राजपत्नि हत्या	खड्गाघातसे	स्वर्णसह स्वर्णरथ दान।
शौचहरण	अतीसार रोगसे	संवत् मासमें लक्ष संख्यक गायत्री जप।
विषदान	सर्पाघात	नाग बलिदान और स्वर्णदान।
शिवनिन्दा	मकराघात	वत्ससह वृषदान।
शास्त्रहरण	जलरोग वा अस्पृश्य अर्थ नहीं मृत्यु	शास्त्रग्रन्थदान।
खलता	घोड़ा आघात	उपकरण सह अश्वदान।
सेतुभेद	जलमग्न	तीन निष्कपरिमित स्वर्णमय मत्स्यदान।
दम्भसहित कार्य	शाकिनी प्रभृतिके आवेश	यथोचित रुद्र नाम जप।
हिंसा	उदरस्रवमें	दुग्धवती गायीदान।
	अश्वाघात	तीन निष्क परिमित अश्वदान।
	वानराघात	स्वर्णनिर्मित वानर दान।
	विसूचिका रोग	१०० ब्राह्मण भोजन।
	कण्ठव्रण	तिल धेनुदान।
	क्षयरोग	८ कृच्छ्रव्रत आचरण करना चाहिये।

राम चक्रवर्तीके चण्डीमङ्गलमें कलकत्तेका उल्लेख है। सम्भवतः १४६६ शाकको सम्राट् अकबरके सिंहासनारूढ़ होनेसे बारह वर्ष पहले उक्त ग्रन्थ बना था। वणिक् धनपति और उनके पुत्र श्रीमन्त सौदागरके समुद्रयात्राको कलकत्ते पहुंचनेकी कथा है। अतएव अकबरसे भी अनेक पूर्व कलकत्ता वर्तमान था। किन्तु नाममें कुछ गड़गड़ पड़ता है। आईन-इ-अकबरीमें कलकत्ता महालके ग्रामोंका नाम नहीं। फिर उसी समयके संस्कृत ग्रन्थकारोंने कलकत्तेको किलकिला लिखा है। मगधाधिप बैजलराजकी सभाके पण्डित कविरामने 'दिग्विजयप्रकाश' नामक पुस्तकमें किलकिलाका विवरण दिया है। उनके मतसे भी किलकिलामें अनेक ग्राम लगते थे। नीचे कविरामका विवरण उद्धृत है,—

'पश्चिम सरस्वती और पूर्व यमुना नदीके मध्य २१ योजन परिमित किलकिला भूमि है। यह दो भागमें विभक्त है। दानगली नदीसे पश्चिम गङ्गाके निकट शाहेश्वरी देवी विराजती हैं। यहां उपवास करनेपर कुष्ठादि दारुण रोग देवीकी कृपासे आरोग्य होते हैं। माहेश और खड़्गदाह (खड़दा) ग्रामके मध्य दीर्घगङ्गा (बूढ़ी गङ्गा) के निकट कुलपाल नामक राजा रहते थे। किसी किसीके कथनानुसार गङ्गा नदी किनारे अनूपदेश-समूहके मध्य श्रेष्ठतम वासभूमि है। यहां कदली, पृश्निपर्णी, पूगफल (सुपारी) प्रभृति वृक्ष उत्पन्न होते हैं। पीठमालातन्त्रके मतसे भागीरथी-तीर सती देवीके शरीरसे वामहस्तकी अङ्गुलि गिर पड़ी थी। काली देवीके प्रसादसे किलकिलावासी धन-धान्यवान् रहते हैं। सकल प्रकार मत्स्यादि उपजनेसे लोग इसे उत्तमदेश कहा करते हैं। यहां सकल वर्णके लोग नियत रूपसे बसते हैं। किलकिला अव्यय शब्द है। लोग नानाप्रकार इसका अर्थ लगाते हैं। स्थानीय देशवासियोंके मतसे समुद्र मथते समय कूर्मपृष्ठस्थित सुन्दर पर्वतके भारसे घबरा दैत्योंके मोहनको अनन्त देवने निश्वास छोड़ा था। उसी निश्वासका कल्लोल जहां तक पहुंचा, वहां तक किलकिला देश हुआ। सती देवीके बलसे महाबलवान् कुलपाल और देश-पालका नाम भागीरथीके पश्चिम तीर चला था। कुलपालके दो पुत्र रहे—हरिपाल और अहिपाल। ज्येष्ठ हरिपालने सिङ्गुरसे पश्चिम अपने नामपर हट्टवापीयुक्त एक महाग्राम स्थापन किया। फिर वहां ब्राह्मण, तन्तुवाय और शाङ्खायि बसा वह राजा बने। अहिपाल माहेशमें त्रिवेणीके निकट चक्रद्वीप (चाकदा) और डमुरद्वीप (डमुरद) के मध्य जाकर बसे। अहिपालके तीन पुत्र थे—छत्रध्वज, विभाण्ड और महाबल केशिध्वज। वह किलकिलासे पश्चिम योजनान्तर ग्राम-ग्रामके मध्य राजा हो वैद्य जातिको पालने लगे। छत्र-ध्वजके पुत्र महाबल विरलि सुगन्धि नामक ग्राममें रहते थे। विभाण्ड पूर्वपारकी शाख राजाके मन्त्री हुये। उनके वंशधर जङ्गलमें वास करते थे। ...... यशोरराज प्रतापादित्य भागीरथीके उभय पार्श्वस्थ देश समूहके राजा रहे। राजा केशिध्वजने आन्दोल-में नाना स्थानसे कायस्थ बोला राजत्व चलाया। आज कल ब्राह्मी नदीतीर केशिध्वजके वंशोद्भव कायस्थ राजा हैं। शिवपुर और बालुक (बाली) ग्रामके मध्य तथा भद्रेश्वरके निकट श्रीरामपुरमें ब्राह्मण रहते हैं। हुगलीके निकट वंशवाटी (बांसबेड़िया) प्रभृति ग्राम हैं। यहां खलापि नदी दामोदरसे निकल गङ्गामें आ गिरी है। खलपानि ग्राममें धीवर राजाका राजत्व है। आजकल गङ्गा और यमुना नदीके मध्य पाटलिग्राम कायस्थ अधिवासियोंके अधीन है। गोविन्दपुरादि ग्राम, भट्टपल्लिक, काली देवीके निकटस्थ शृगालदाह (सियालदा) और सारपल्लिमें भी कायस्थोंका शासन चलता है। सब मिलाकर २००० ग्राम किलकिलामें लगते हैं। विश्वसारतन्त्रके प्रथम पटलमें किलकिलास्थ शिव-लिङ्गका विषय निरूपित है। इसी तन्त्रके मतसे किलकिला देशान्तर्गत नवद्वीप नगरके ब्राह्मणवंशमें शचीसुत (चैतन्यदेव) और खड़्गद ग्रामस्थ हाड़ायि पण्डितके घर नित्यानन्द जन्म लेंगे।'*

* "पश्चिमे सरस्वतीसीमा पूर्वे कालिन्दिका मता।
एकविंशतियोजनं च मितो किलकिलाभिधः॥ ५५१

समस्त परित्याग कर केवलमात्र अर्थ जोड़ता, जो गो तथा भूमि दबा बैठता, जो निठुर पड़ता और जो सरल एवं सच्चरित्र युवती भार्याको छोड़ता, वह व्यक्ति नरकान्तमें यक्ष्मारोगग्रस्त हो जन्म लेता तथा पशु द्रव्य धन प्रभृतिसे मुंह मोड़ता है।

३३ पाण्डु—परभार्या वा नीच जातिकी स्त्रीसे सङ्गत होनेपर बहुकाल पर्यन्त विविध यमदण्ड झेल मनुष्य-जन्ममें पाण्डुरोगग्रस्त और क्षीणचेता रहते हैं।

३४ कामला—पत्नादि चोरानेसे जीवनान्तमें विविध नरकभोग अष्टादशवर्ष पर्यन्त काककङ्क प्रभृति तिर्यक् योनि पाते और मनुष्यजन्ममें कामला रोगका कष्ट उठाते हैं।

३५ कास—कर्मभेदके अनुसार पांचो प्रकारका कास उत्पन्न होता है। १ अतिकठोर मिथ्यावाक्यसे किसीको सतानेपर पित्तप्रबल कासरोग लगता है। २ ब्राह्मण-का स्थान विनाश करनेसे वातजन्य कास आता है। ३ जलाशय ध्वंस करनेसे श्लेष्मजन्य कास उठता है। ४ ब्रह्मा,विष्णु और शिवको विभिन्न माननेसे सन्निपात-जन्य कास होता है। ५ यज्ञको छोड़ पशु मार कर खानेसे सर्वदोषजन्य कासरोगका क्लेश उठाना पड़ता है।

३६ श्वासकास—यह रोग भी कर्मविशेषसे महा, ऊर्ध्व, छिन्न, तमक और क्षुद्र भेदमें पांच प्रकारसे होता है। १ यज्ञ व्यतीत श्वासरोधपूर्वक पशुको मार मांस खानेसे महाश्वास चलता है। २ पुराणकथाके समय दूसरी बात छेड़नेसे ऊर्ध्वश्वास उठता है। ३ निषिद्ध दान लेनेसे छिन्नश्वास आता है। ४ शास्त्रार्थ-में वृथा दोष लगानेसे तमकश्वास बढ़ता है। ५ पाक-कालको विघ्न डालनेसे क्षुद्रश्वासरोग होता है।

३७ यक्ष्मा—विप्रहत्या, गच्छितधनहरण, वृत्ति-च्छेद, प्रजापीड़न तथा गुरुद्रोह करनेसे जीवनान्तमें विविध दुःसह यन्त्रणा उठा कुछ कालतक क्रमियोनिमें रहना और मनुष्य जन्म मिलनेपर यक्ष्मारोगका दुःख सहना पड़ता है।

३८ रक्तपित्त—अत्यन्त दुर्व्यवहार, परद्रव्य अभि-लाष, परभार्या कामना और पितृव्यवधू गमन करनेसे रक्तपित्त रोगाक्रान्त होते हैं।

३९ गुल्म—एकाकी मिष्ट वस्तु भोजन तथा नीच-जातीय स्त्री-गमन करनेसे जीवनान्तमें क्रमिपूयपूर्ण काकोल नामक नरकभोग मनुष्य ४ वत्सर पिपी-लिकायोनिमें रहता और मानवयोनिमें गुल्मरोगका क्लेश सहता है।

४० शूल—निरपराध किसीको शूल मारने अथवा शूलसम कष्टदायक वाक्य कह डालने और दम्पतीमें भेदभेद निकालनेसे ४ मन्वन्तर यमयन्त्रणा उठानेपर पक्षियोनिमें वियोगका दुःख होता है। फिर मनुष्य जन्ममें शूलरोग लग जाता है।

४१ अर्शोरोग—साध्वी ऋतुस्नाता स्त्रीसे सहवास न रखने और आत्महत्या, भ्रूणहत्या वा गोहत्या करने पर ३५१८०००० वत्सर नरक भोग मनुष्यजन्ममें अर्शोरोग होता है।

४२ भगन्दर—आचार्यकी भार्यासे साथ गमन अथवा स्त्री, बालक तथा वृद्धका धन हरण करनेसे नरकान्त-में फिर जन्म ले मनुष्य भगन्दररोगका दुःख उठाता है।

४३ छर्दि—गोके मुखसे कोयी वस्तु खींच फेंक देनेपर परजन्ममें वायुजन्य छर्दिरोग होता है। फिर पितृलोकको तर्पण न कर स्वयं जल पीनेसे पित्तजन्य छर्दिरोग लगता है।

४४ हिक्का—किसी योगीकी तपस्या बिगाड़नेसे हिक्कारोग होता है।

४५ अरोचक—पिता, माता और अतिथिको अन्न न दे स्वयं खा लेनेसे परजन्मपर होम जातिमें उत्पन्न हो अरोचक रोगका कष्ट उठाते हैं।

४६ स्वरभङ्ग—गानकी समाप्ति न आते गायकको बाधा पहुंचानेसे जन्मान्तरमें स्वरभङ्ग रोगग्रस्त होना पड़ता है।

४७ अतितृष्णा—तृषित गोसमूहके जलपानमें बाधा डालने अथवा जल निकालनेसे असंख्यकाल मरु-भूमिपर कीटयोनि रह मनुष्यजन्म पा कर अति-तृष्णा लगती है।

४८ विस्फोट—अपक्कालके जलाशयमें नहाने और जल पी जानेसे नरकान्तको विस्फोट रोग होता है।

४९ भ्रम और मूर्छा—जो कुटिल व्यक्ति सभाजन

फिर भी पलासीके पीछे अंगरेजोंके पदार्पण करते समय कलकत्तेकी अवस्था अत्यन्त हीन थी। क्षितीश-वंशावलिचरितमें इसका प्रमाण मिलता है। नदिया-वाले राजा कृष्णचन्द्रके समय कलकत्ता उनकी जमीन्दारीमें लगता था। वह बङ्गालके सूबेदार नवाब अली-वर्दीखान्के विशेष प्रियपात्र रहे। उनके ऊपर पितृपितामहके देय राजस्वका दश लाख रुपया बाकी था। उन्होंने वह रुपया माफ करनेके लिये नवाबसे बार बार कहा। किन्तु किसी प्रकार वह कृतकार्य

किलकिलाभूमिमध्ये यो देवो भृगवेश्वर ।
दामदन्नीनदितीरे पश्चिमांशे विराजते ॥ ६६४
तत्र गाङ्गे महीदेवो महाभागैव सन्निधौ ।
कुशादिपुष्करोत्पन्नो विप्रावदोपनामतः ॥ ६६५
माहेशसह्रदाख्यग्रामयोरन्तरे महान् ।
भीमं गङ्गा समीपे च राजा हि कृष्णपालकः ॥ ६६६
किञ्चिद्वदन्ति भूपाल चाणीभूमिं दोतटे ।
चतुष्पाठ्ये देवानां मध्ये यो ह्यागतः स्मृतः ॥ ६६७
यत्र कलकत्तेश्वरः तथा नाफ्लिङ्गकः ।
तथा ककुत्स्थाख्यो गङ्गायां तत्र जायते ॥ ६६८
पीठमालात्मनस्य कालीदेव्याः शरीरतः ।
वामपदाङ्गुलिपाते जाते कालीक्षेत्रतटे ॥ ६६९
कालीदेव्याः प्रसादेन किलकिलादेशवासिनः ।
हरिभिः पूरिता नित्यं भक्तिताविरतावनः ॥ ६७०
महादेवस्य नामानि कुर्वन्ति तस्य वर्तनात् ।
प्रायशो सर्वसदा वाची हि सर्वदा भुवि ॥ ६७१
कंसार भूमि लोका हि यावानो समतो यत ।
कालीक्षेत्रादिविषयाः दियोजनपरमायतः ॥ ६७२
किलकिलाप्रदेशस्य बहुवर्षे तु वर्तते ।
यदा कदाचित् नृपतिः करदो वा हि साधुभिः ॥ ६७३
समुद्रमध्यगात्रेके कूर्मपृष्ठे च मन्दरः ।
भार नीतिवित्सु देवानां मोहनाय च ॥ ६७४
कूर्मनिवासो कालेन मन्दरनामधारकात् ।
तेन कालीक्षेत्रं ख्याती यदवधि च ॥ ६७५
नरपतिः किलकिलादेशी भोगति देवपालिनि ।
किलकिलायामपि वैकल्ति विकटेश च यत्र च ॥ ६७६
कमलात् प्रथमं तत्र किलकिला विख्याता भुवि ।
कालीदेवा प्रदेशेव भोग्यमुदकपुष्कलः ॥ ६७७
कृष्णाख्यो देवपालो विख्याते नदीतटे ।
कृष्णजामास यो भूपो कलियुगेऽपि विनायको ॥ ६७८
शिवहः किञ्चिद्दक्षिणे सुवर्णवणिजः जनाः ।
वणिजो महाजनाः कृष्णादिप्रमर्दिताः ॥ ६७९
वणिजां हि तत्र व तत्सुवर्णवं कोष्ठिषु ।
दास्यं वदन्ति दासानि कोष्ठेषु च ॥ ६८०
पश्चिमे माहेशी च राज्यं स्मृतं च दक्षिणे ।
त्रिवेणीसन्निधाने च चक्रदेवस्य सन्निधौ ।
चतुरद्वीपमध्ये च वसतिं कृतवान् मुदा ॥ ६८१
पश्चिमावश्च तथा पुत्राः वैद्यदेविकु जन्मिरे ।
कलकत्ता विभाग्य च कलिकाता महाजनः ॥ ६८२
दक्षिणे योजनार्धे, च कालीग्राम महाजनः ।
एषो सुत्वा देवतार्ति...पथाश च ॥ ६८३
कलकत्ता तथा विश्ववित्ताख्यो यतिः ।
सुवर्णवणिजमध्ये च चकार वसतिं मुदा ॥ ६८४
विभाग्यो नामतश्च पूर्वपारे स्थितः स च ।
भरतवंशे महाभाग यत्र च वंशोऽपि वर्तते ॥ ६८५
स्ताम्भादिस्तम्भस्य यशोरसुविशेष च ।
महाराजपाल्यो नाम दशानां वर्तते यत ॥ ६८६
कलिकाता महाभागे काशीश...मिश्रेऽपि ।
कालयात् महत्तात् लोका राज्यस्य चकार च ॥ ६८७
तस्य वंशेषु भोगपत्रा कालीक्षेत्रतटे यत ।
तैरा काव्यकालीनामविशेषोऽपि शासनम् ॥ ६८८
त्रिवपुरं समारभ्य वाणुकी हि विराजते ।
श्रीरामादिपुरं दिव्यं मध्ये श्वरस्य सन्निधौ ॥ ६८९
वंशवाटी ग्राम् तथो कुमारीनाम वर्तते ।
तथापि नदिनी नित्यं वहति भागुवाशरे ॥ ६९०
कालीदत्तादासता च यत्रा विसन्ति सादरम् ।
सप्तग्रामविशालो यत्र राजा च धीवरः ॥ ६९१
महाप्रभुनरोत्तमो वाटविलासवासिनाम् ।
नवद्वीपो ग्रामश्च वर्तते मधुना नृप ॥ ६९२
गोविन्दादिपुरं यत्र तथा हि महत्त्विकम् ।
कालीदेवाः सन्ति च यत्रानन्दवत्सादिकं यत ॥ ६९३
गायत्रि महाभागे काशीवासादि शासनम् ।
तत्रायां किलकाशिका किलकिलानाम वर्तते ॥ ६९४
त्रिपुरादिनदातमध्ये पदचं दद्यमोऽपि च ।
त्रिकटं प्रसिद्धं किलकिलाविषयं च ॥ ६९५
ततः किलकिलादेशे भवदोषप्रनाशये ।
तत्र विन्ध्यती भाई कर्माणि पर्यटितः ॥ ६९६
ततः किलकिलादेशे यत्र सदानन्दश्रयः ।
वाराणसिप्रशेषे विद्यानदो भविष्यति ॥" ६९७

(दिग्विजयप्रकाश, किलकिलादिविवरण)

पर लोगोंको भ्रान्तिमें डाल अन्य प्रकार कथा कहने लगता, उसे नरकान्तको भ्रम या मूर्छा रोगाक्रान्त हो जन्म लेना पड़ता है।

५० हृद्रोग—लोभ या द्वेषसे किसीको सताने या मर्मान्तिक वेदना पहुंचाने पर परजन्ममें हृद्रोग उठता है।

५१ आमवात—यज्ञकी दक्षिणा अथवा उत्सर्ग किया हुआ वस्तु ब्राह्मणको न देने और अधर्माचरणसे धन जमा जोड़ लेने पर जन्मान्तरमें आमवात सताता है।

५२ सर्वाङ्गवातव्याधि—सुरा पीकर हठात् स्त्री-सहवासके लिये जो चल जाने अथवा परस्त्रीका वस्त्र चोरानेसे नरकान्तको तिर्यक्योनि घूम मनुष्यजन्ममें सर्वाङ्गगत वातरोग लगता है।

५३ तुन्दरोग—ब्राह्मणका घट चोरा लेने अथवा यज्ञकाल सङ्कल्पकर दक्षिणादि न देनेसे मेद सञ्चित होकर तुन्द अर्थात् स्थौल्य रोग उठता है।

५४ अम्लपित्त—लोभसे निषिद्ध द्रव्य खानेपर जीवनान्तको काक, कुक्कुर और गृध्र योनि पाकर परजन्ममें मनुष्य देह धारण करना और अम्लपित्त रोग झेलना पड़ता है।

५५ शोथोदर—लोभ, मोह या द्वेषसे अधर्माचरण करनेपर नरकान्तमें जन्म ले मनुष्य शोथोदरी होता है।

५६ जलोदर—ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरको भिन्न समझनेसे जन्मान्तरमें जलोदर रोग लगता है।

५७ शोथ—विना अपराध बेत्र प्रभृतिसे किसीको मारनेपर जन्मान्तरमें शोथरोग उठता है।

५८ मूत्रकृच्छ्र—विधवागमन या मद्यपान करनेसे नरकान्तमें जन्म ले मूत्रकृच्छ्र रोग भोग करते हैं।

५९ मूत्राघात—दम्पतीके मैथुनमें विघ्न डालनेसे जन्मान्तरको मूत्राघात रोग होता है।

६० अश्मरी—अप्रीति या क्रोधसे ऋतुस्नाता स्त्रीके पास न जानेपर मृत्युके पीछे पूयशोणितपूर्ण नरक भोग परजन्मको अश्मरी रोग दौड़ता है।

६१ मेह—कर्मानुसार विंशति प्रकार मेह होता है। १ शूकरयोनिमें मैथुन करनेसे उदक मेह चलता है। २ मातृगमनसे मधुमेहकी उत्पत्ति है। ३ रजकी-के गमनसे क्षार मेह हो जाता है। ४ सतीत्वहरणसे सान्द्रमेह पड़ता है। ५ रोगिणीगमनसे माञ्जिष्ठमेह बढ़ता है। ६ मित्रस्त्रीके गमनसे शुक्रमेह बहता है। ७ चतुष्पदगमनसे सिकतामेह आने लगता है। ८ स्वर्णहरणसे क्षीरमेह निकलता है। ९ सुरापानसे सितमेह उठता है। १० ऋतुमतीगमनसे कालमेह होता है। ११ रजस्वलागमनसे रक्तमेह चलता है। १२ नीचजातीय स्त्रीगमनसे अम्लमेह आता है। १३ विधवासङ्गमसे इक्षुमेह उठता है। १४ ब्राह्मणी-गमनसे हस्तिमेह उभरता है। १५ अक्षतयोनिगमनसे हारिद्रमेह भड़कता है। फिर माता, भगिनी, कन्या, स्नुषा, अक्षतयोनि, भ्रातृजाया, मातुलानी, गुरुपत्नी, राजपत्नी, मित्रपत्नी प्रभृति अन्यान्य कुटुम्बिनीके गमन-से जीवनान्तको ज्वलन्त लोहपिण्ड भक्षण प्रभृति बहु-विध यमयन्त्रणा उठा पांच वत्सर शूकरयोनि, दश वत्सर कुक्कुरयोनि, तीन मास पिपीलिकायोनि तथा एक वत्सर वृश्चिकयोनिमें उत्पन्न हो नरजन्म लेना और सर्वशेष मनुष्य बन अनेकप्रकार मेहरोग झेलना पड़ता है।

६२ पुंस्त्वनाश—धर्मपत्नीको छोड़ अन्य स्त्रीके साथ सम्भोग करनेसे पुंस्त्व नष्ट होता है।

६३ शुष्कदृष्टि—लुब्धकके साथ मित्रताकर सर्वदा वनमें व्याधकी भांति मृगादि मार घूमनेसे नरकान्तको पुनर्जन्म पानेपर शुष्कदृष्टिरोग लगता है।

६४ उन्माद—वैष्णव, पितामाता तथा ब्राह्मण प्रभृति सम्मानार्ह व्यक्तिको न पूजने, अथवा निन्दा करने, किंवा ब्राह्मण गुरु प्रभृतिके प्रति दण्डाचरण रखने और उनको भ्रान्तिजनकारी कोई द्रव्य देनेसे जन्मान्तरमें उन्माद आता है।

६५ अपस्मार—कोप बढ़ने, उपकारीके निकट अशालय बकने, अधम मानवके साथ ब्राह्मणका पास रोक रखने अथवा रज्जु द्वारा गोमुख जकड़नेसे नर-कान्तमें शृगाल, व्याघ्र और शूकरयोनि भोग मनुष्य होनेपर अपस्मार रोग झेलना पड़ता है।

६६ अस्थिशूलादि—छागी, तिलधेनु, लौहचर्म, तिलाजिन, गज, सालुक, मधु, तैल, लवण एवं महा-दान लेने किंवा कामवश अधर्माचरण पूर्वक मैथुन

न हुये। एकदा नवाब जलपथसे नौकापर चढ़ कलकत्तेकी ओर आते थे। भागीरथीतीरके अन्यान्य ग्राम छोड़ अवशेष उनकी तरणी कलकत्तेके पास पहुंची। उस समय यहां एक अतिसामान्य पल्ली थी। दक्षिणांश बिलकुल जलसे भरा जङ्गल रहा। सिर्फ उत्तरांशमें गङ्गा किनारे कुछ लोग बसते थे। मुरशिदाबाद और कलकत्तेके बीच भागीरथीके पूर्व-तट पर किसी ग्राम या नगरके निकट ऐसा वन न रहा। इसीसे सुचतुर कृष्णचन्द्रने अपनी ज़मीन्दारीकी दुरवस्था नवाबको देखानेके लिये इस प्रदेशमें प्रवेश करने पर आग्रह लगाया। नवाब अलीवर्दी राजाका एकान्त अनुरोध टार न सके और ज़मीन्दारीकी अवस्था अपनी आंखों देखनेको निकल पड़े। लोकालयको छोड़ वह जितनी दूर आगे चले, उतनी दूर सिवा अरण्यके दूसरे दृश्य देखनेको न मिले। फिर राजा कृष्णचन्द्रकी शिक्षाके अनुसार नवाबके साथी परस्पर कहने लगे—यहां व्याघ्र आदि हिंसकका भय है। राजाने भी समय पा सजल नयन और कातर वचनसे निवेदन किया,—"धर्मावतार! मेरे सौभाग्यसे कृपापूर्वक विशेष कष्ट उठा आप यहां तक आये हैं। इसलिये कुछ दूर अभी चले चलिये। फिर इस ज़मीन्दारीकी अवस्था देखनेमें कुछ रह न जायेगा।" नवाबने उत्तर दिया,—'अब आगे जाना आवश्यक नहीं। आज तुम अपने पितृपितामहके ऋणसे मुक्त हुये।' इससे हम सहजमें ही समझ सकते—उस समय कलकत्तेकी अवस्था कैसी थी।

कलकत्तेमें अंगरेजोंका आगमन, तत्कालीन सूबादार और आनुषङ्गिक इतिहास।—अंगरेजोंकी पहली कोठी बालेश्वरके निकट पिप्पलीमें बनी थी। फिर कई तरहका गड़बड़ पड़नेसे अंगरेज़ कुछ दिन अपना वाणिज्य बङ्गालमें फैला न सके। उस समय सूरतमें भी अंगरेजोंकी एक कोठी रही। उसके अधीन 'होपवेल' जहाज़ चलता था। मिस्टर ग्रेब्रियेल बौटन इस जहाज़के शस्त्रचिकित्सक रहे। उन्होंने १६४४ ई०को सम्राट् शाहजहान्‌की एक कन्याका दुरारोग्य क्षत आरोग्य करनेके पुरस्कारमें एक सनद पायी। उसमें अंगरेज़ोंको दिल्लीके साम्राज्यमें सर्वत्र विना शुल्क वाणिज्य चलाने और बङ्गदेशमें इच्छानुसार सकल स्थल पर कोठी बनानेका आदेश था। इसीसे अंगरेज़ोंने नवाब शायस्ता खान्‌के समय हुगलीमें कोठी बना हुगली, पटना, बालेश्वर, कासिम बज़ार, ढाका प्रभृति स्थानमें विपुल उत्साहसे बहु विस्तृत वाणिज्य आरम्भ किया। उस समय बङ्गालकी प्रति कोठीमें एक अनसाइन और ३० रक्षी सैन्यको छोड़ दूसरा कोई सामरिक बल न था। किन्तु अल्प दिनमें ही अंगरेजवणिक् वाणिज्यसे प्रबल पड़ गये, जिससे बङ्गालके नवाब कुछ क्रुद्ध हुये। उन्होंने छल बलसे अंगरेज़ी वणिक्-दलको शासनमें रखनेकी नानाविध चेष्टा की थी। अन्तको अंगरेज नवाबके अत्याचारसे अत्यन्त पीड़ित हुये। वह सम्राट्‌की सनदको न देख नाना प्रकार अंगरेज़ोंसे शुल्क लेने लगे। अंगरेज़ वणिकोंका प्राण नाकमें था। उन्होंने कोर्ट अव डिरेक्टर-को इस विषयकी सूचना दी। डिरेक्टरोंने इङ्गलेण्डके राजाकी अनुमतिसे अपनी वाणिज्यतरी दो बेड़ों (Fleet)में बांट एकको सूरत और दूसरेको गङ्गाके मुहाने भेजा था। गङ्गाके मुहाने आनेवाले बेड़ेमें ६०० युरोपीय शिक्षित सेना रही।

डाइरेक्टरोंने कम्पनीके गुमाश्ते जब चारनकको लिख भेजा,—'बङ्गालके सब अंगरेज़ इस प्रकार प्रस्तुत रहें, कि बालेश्वरमें बेड़ा पहुंचते ही जहाज़ पर चढ़ सकें।' फिर जहाज़ी बेड़ेके अध्यक्षको आदेश था,—'बालेश्वरसे सब अंगरेज़ोंको जहाज़पर चढ़ा चट्टग्राम नगर आक्रमण करो और वहां आत्मरक्षोपयोगी दुर्गादि बना सतर्कतासे रहो।'

जहाज़ी बेड़ा आनेमें कुछ विलम्ब लगा। अक्तोबर मास बेड़ेके पहुंचनेका संवाद मिलनेपर जब-चारनकने शीघ्र अध्यक्षको लिखा था,—आप सदल हुगलीके नीचे आ जाइये। उन्होंने स्वयं भी हुगलीकी कोठीके अधीन एक पोर्तगीज़ पदाति दल प्रस्तुत किया था। नवाब शायस्ता खान्‌ने इस संवादसे डरकर सन्धिकी बात ठहरायी।

नवाब सन्धिका प्रस्ताव उठावे भी भविष्यत्‌में युद्ध

करने अथवा परस्त्री तथा गो प्रभृति पर रेतः डालने, ब्राह्मण वा राजाका द्रव्य चोराने और आश्रित व्यक्ति वा विवाहिता पत्नीको छोड़नेसे हस्ती, व्याघ्र, सिंह, नखी, वा दस्युके हाथ मृत्यु होता है। मरने पीछे बहुकाल क्लेशजनक योनि घूम मनुष्यजन्ममें अस्थि-शूलादि रोग लग जाता है।

६७ मूत्रकृमि—विना मन्त्र अग्निमें घृत डालनेसे नरकान्तको मनुष्य जन्म ले मूत्रकृमि रोगसे आक्रान्त होते हैं।

६८ विद्रधि—फल अपहरण करनेसे नरकान्तमें वानरजन्म मिलता है। फिर मनुष्यजन्ममें विद्रधि रोग उठता है।

६९ अपची और वातग्रन्थि—विशाल वृक्ष, पर्वत, नदीतीर, वल्मीकाग्र, गोष्ठस्थल, गोगृह वा देवालयमें, मूत्रत्याग और निष्ठीवनादि निक्षेप करनेसे बहुविध नरक यन्त्रणा उठा परजन्मको अपची तथा ग्रन्थिरोग भोगते हैं।

७० शिरोरोग—तीर्थस्थानमें विहित कार्यादि और गुरु ब्राह्मण प्रभृतिको देख प्रणाम न करनेसे नरकान्तपर दश वत्सर भल्लूकयोनि तथा तीन वर्ष मेषयोनि भोग मनुष्य जन्म मिलते शिरोरोगाक्रान्त होना पड़ता है।

७१ नेत्रहीनता—परस्त्रीके प्रति कुटिल दृष्टि डालने अथवा गुरु वा ब्राह्मणके चक्षुमें आघात मारनेसे प्राणान्तको विविध नरकयन्त्रणा उठा जन्मान्तरमें नेत्रहीन रहते हैं।

७२ रात्रान्धता—कामबुद्धिसे परस्त्रीके प्रति दृष्टि डालने, नग्न स्त्रीको देखने किंवा गोहिंसा तथा विप्र हिंसा दर्शन करनेसे रात्रान्ध, दृष्टिक्षीणता, दिवान्धता और अर्बुददृष्टिरोग लगता है।

७३ दृष्टिक्षीणता—उदय, अस्त और मध्य समय सूर्यके प्रति दृष्टि चलाने अथवा अशुचि अवस्थामें सूर्य, चन्द्र, अनल, ब्राह्मण, अग्नि एवं गोको और देखनेसे परजन्मको दृष्टिक्षीणतारोग होता है।

७४ विषमाक्षिता और विरूपाक्षिता—पुत्रीके प्रति जार दृष्टि लगानेसे मनुष्य परजन्ममें विरूपाक्षी होता है। पुरुष परस्त्री और स्त्री परपुरुषको कुटिल भावसे देखनेपर परजन्ममें विषमाक्षिरोग लगता है।

७५ गलगण्ड और गण्डमाला—गुरुपत्नीका कण्ठ देखनेसे नरकान्तमें गलगण्ड वा गण्डमाला रोग उठता है।

७६ नासारोग—कामाविष्ट चित्तसे ब्राह्मणकर्म परित्यागपूर्वक सुगन्धि कुसुमादि ब्राह्मण देवता प्रभृतिको न दे स्वयं आघ्राण करनेपर परजन्ममें नासारोग होता है।

७७ दुग्धहीनता—अपर बालकके लिये दुग्ध रहते भी जो स्त्री उसको नहीं देती, वह प्राणान्तमें ४ वत्सर सर्पिणी और ४ वर्ष कच्छपी रह पीछे मनुष्यजन्म लेनेपर दुग्धहीन निकलती है।

७८ स्तनविस्फोट—अन्य पुरुषको जो स्त्री स्वीय स्तन देखाती, वह नरकान्तको पुनर्जन्म ले स्तनविस्फोट रोगसे दुःख पाती है।

७९ वैधव्य—स्वामीके मरनेपर जो स्त्री पर-पुरुषसे दृष्टि लगाती, प्राणान्तको वह तप्त लोहमय पुरुष आलिङ्गन प्रभृति यमयन्त्रणा उठा परजन्ममें वेश्या बन जाती है।

८० बाधिर्य—धर्मचिन्तामें सुख और पितामाता, ब्राह्मण और तीर्थ प्रभृतिकी निन्दा उड़ानेसे परजन्ममें बाधिर्य रोग लगता अर्थात् कुछ सुन नहीं पड़ता।

८१ श्लेष्मरोग—नित्य क्रियासे बहिर्भूत हो भोजन करने पर प्राणान्तको काष्ठोपजीवी और वायस जन्म ले परजन्ममें श्लेष्मरोगाक्रान्त होते हैं।

८२ हस्तशूल—सन्ध्यादिविहीन ब्राह्मण जीवनान्तको एक वत्सरकाल कङ्क और पारावतयोनि भोग मनुष्यजन्म होने पर हस्तशूल रोगकी वेदना उठाता है।

८३ योनिरोग—जो स्त्री रमणकाल पतिको सन्तोष नहीं पहुंचाती अथवा अन्यका भोज्य वस्तु चोराती, वह १४ वत्सर उष्ट्रयोनि भोग मनुष्य-जन्ममें योनि-रोगका दुःख पाती है।

८४ प्रदर—सुधार्त पतिको न खिला जो स्त्री आगे खाती, किंवा तथा अग्रहत्या लगाती अथवा भोज्य वस्तु चोराती, प्राणान्तको वह अन्धतामिस्र नरक भोग दश

होनेकी आशङ्का पर सूबेदारीकी चारो ओर सैन्य संग्रह करने लगे। यह सैन्यदल फौजदारके अधीन रहनेको हुगली भेजा गया। इधर सन्धिकी बात चलती ही थी। किन्तु १६८६ ई०की २८ वीं अक्तोबरको हुगलीके बाजारमें अंगरेज़ पक्षीय कई सैनिकोंसे नवाबके कुछ सैनिक लड़ पड़े। इसमें तीन अंगरेज मरे थे। फिर एक क्षुद्र युद्ध होने लगा। कई घण्टे लड़ने पीछे नवाबके सिपाही विशृङ्खलता वश अंगरेज़ोंसे हारे। सर्व प्रथम अङ्गरेज़ इसी युद्धमें नवाबसे लड़े थे। फिर अङ्गरेज़ोंने हुगली नगर आक्रमण किया। जहाज़ी बेड़ेके अध्यक्ष आडमिरल निकलसन जहाजसे नगरपर गोले मारने लगे। इससे हुगलीके कोई ५०० घर गिरे थे। अंगरेज़ोंने नगर लूटनेको आग्रह प्रकाश किया, किन्तु जब-चारनकने रोक दिया। अन्तको लूटने न देने कारण डाइरेक्टरोंने जब-चारनकका तिरस्कार किया था। उन्होंने कहा- यदि अङ्गरेज़ोंको आप नगर लूटने देते, तो नवाबके सिपाही और देशी लोग हमारा प्रभाव समझ लेते।*

अङ्गरेज़ जीतकर युद्धसे हट गये। फौजदारने डर कर सन्धिका प्रस्ताव उठाया था। सन्धि होनेपर स्थिर हुआ,—जब तक सम्राट्के निकटसे नया फरमान् न निकलेगा, तब तक अगली सनदके अनुसार अङ्गरेज़ोंका वाणिज्य चलेगा और नवाबको क्षतिपूरणके लिये ४६ लाख रुपया देना पड़ेगा। सन्धि करने पीछे मुसलमान भीतर ही भीतर युद्धका आयोजन लगाने लगे। नवाबने ढाका, मालदह, पटना और कासिम-बाज़ारकी कोठियां लूट अङ्गरेज़ोंको बन्दी बनाया था। फिर १६८६ ई०के दिसम्बर मास नवाबने सैन्य जुटा हुगलीको भेज दिया।

अङ्गरेज़ोंने यह सैन्य संग्रह देख परामर्श किया—हुगलीमें रह इस प्रकार नित्य उत्पीड़ित और क्षतिग्रस्त होनेसे बड़ी कोठी उठा लेना युक्तियुक्त है। अन्तको हुगलीसे कई कोस दक्षिण गङ्गाके पूर्व पार सूतानूटी जाना ठहर गया। यह स्थान अनेक कारणसे सुविधाजनक देख पड़ा। उस समय गङ्गाके पश्चिम-तीर चन्दननगरमें फरासीसी और चुंचुड़ामें ओलन्दाज़ कोठी अपना समुद्रके नैकट्य वश अपना वाणिज्यव्यवसाय बढ़ाये थे। इसीसे अङ्गरेज़ोंने भी सोचा,—गङ्गाके दक्षिण किसी स्थल पर वाणिज्यकी प्रधान कोठी बना समुद्रसे आने-जानेकी सुविधा लगनेपर हमारा वाणिज्य भी अधिक चलेगा। वाणिज्यका केन्द्र होते भी सागरसे दूर पड़ने पर हुगली विदेशीय वाणिज्यके लिये विशेष लाभदायक न थी। नवाबी अत्याचार, वाणिज्यतरीके गमनागमनकी विशेष असुविधा और मराठोंके आक्रमणसे मुक्त रहनेके लिये अङ्गरेज़ोंने एकबारगी ही गङ्गाका पश्चिम कूल छोड़ना चाहा।†

सूतानूटी स्थानको अङ्गरेज़ बहुत पहलेसे जानते थे। बङ्गोपसागरसे हुगली जातेआते समय गङ्गाके उभय कूलस्थ सकल स्थान अङ्गरेज़ोंने खूब देखे-सुने। हुगली छोड़नेका परामर्श स्थिर होते स्थानानुसन्धानके समय उन्हें वाणिज्यकी बड़ी कोठी बनानेको सूतानुटी सबसे बढ़कर स्थान समझ पड़ा।

प्रथमतः हुगलीके फौजदारसे सर्वदा सशङ्कित न रहनेकी बात थी। द्वितीय भागीरथीका गर्भ दिन दिन मृत्तिकासे पूरते जाता था। उससे कुछ समय पीछे हुगलीके नीचे जहाज़ लग न सकते। सूतानुटीमें वह आशङ्का बिलकुल न थी। तृतीय फरासीसियोंसे अङ्गरेज़ोंको भय था बड़ी। चन्दननगरसे बड़ी बड़ी वाणिज्यतरी हुगली ले जानेमें विषम भय था। चुंचुड़ा और चन्दननगरसे दक्षिण पड़ते सूतानुटीमें उस भयकी सम्भावना न रही। चतुर्थ समुद्र निकट था। पञ्चम गङ्गा नदीके पूर्व पार रहते सूतानुटीमें मराठोंके उपद्रवका भय न लगा। षष्ठ जहाजमें ही अन्य द्रव्य चढ़ाया उतारा जा सकता था। सप्तम—गङ्गाको आ न सकनेवाले जहाज़ बङ्गोपसागरमें ही लेकर काम

* Vide (a) Stewart's History of Bengal, (b) Broom's History of the Rise and Progress of the Bengal Army and (c) Cook's Monthly Mail and Indian Advertiser, Vol. I, or VIII.

† Vide "Some Observations and Remarks on a late publication entitled Travels in Europe, Asia and Africa" by J. Price.

वत्सर वायसयोनि और शुकयोनिमें रह मनुष्यजन्म होने- से प्रदर रोगकी यन्त्रणा उठाती है। (शातातपीय कर्मविपाक)

कर्मविशेष (सं॰ पु॰) कर्मणो विशेषः अन्यस्मात् पार्थक्यम्, ६-तत्। साधारण कार्यसे विभिन्न कार्य, मामूली कामसे निराला काम।

कर्मबीज (सं॰ क्लो॰) कर्मणो बीजं मूलकारणम्, ६-तत्। कर्मका मूल कारण, कामका असली सबब।

कर्मव्यतिहार (सं॰ पु॰) कर्मणां व्यतिहारः, ६ तत्। परस्पर एक जातीय कार्य करनेकी स्थिति, जिस हालतमें एक ही तरहका काम साथ-साथ करें।

कर्मशाला (सं॰ स्त्री॰) कर्मणः शिल्पादेः शाला, ६-तत्। शिल्पादि कार्यका गृह, कारखाना।

कर्मशील (सं॰ त्रि॰) कर्मशीलं कर्मकरणरूपस्वभावो यस्य, बहुव्री॰ कर्मशीलयति वा। १ कर्म करनेके ही स्वभाववाला, जो नतीजेकी ओर न देख दिलसे काम करता हो। २ उद्योगी, कोशिश करनेवाला।

कर्मशुचि (सं॰ त्रि॰) कर्मसु शुचिः, ७ तत्। पवित्र- कर्मा, साफ काम करनेवाला।

कर्मशुद्ध (सं॰ त्रि॰) कर्मसु शुद्धः, ७-तत्। पवित्र- कर्मा, साफ काम करनेवाला।

कर्मशूर (सं॰ त्रि॰) कर्मणि शूरः दक्षः। १ कार्य कारक, मेहनती, मुस्तैदीके साथ काम करनेवाला। २ कार्यदक्ष, होशियार, कामगर।

कर्मशौच (सं॰ क्लो॰) कर्मसु शौचं दोषहीनता। कर्म विषयमें निर्दोषता, कामकी सफाई।

कर्मश्रेष्ठ (सं॰ पु॰) १ पुलहके पुत्रविशेष। इनकी माताका नाम गति था। (भागवत ४।१।३९)

कर्मष (सं॰ क्लो॰) कर्म शुभकर्म स्यति नाशयति, कर्म-सो-क निपातनात् षत्वम्। कल्मष, पाप, गुनाह।

कर्मस (सं॰ पु॰) पुलहके एक पुत्र। इनकी माताका नाम क्षमा था।

कर्मसङ्ग (सं॰ पु॰) कर्मणि सङ्ग आसक्तिः, कर्मन्- सन्ज-घञ्। कर्ममें आसक्ति, काममें लगे रहनेकी आदत।

कर्मसंग्रह (सं॰ पु॰) कर्मणां संग्रहः, ६-तत्। कर्म समुदाय, कामका हुजूम।

कर्मसचिव (सं॰पु॰) कर्मसु सचिवः सहायः। कार्यमें साहाय्य देनेवाला, जो काममें मदद पहुंचाता हो।

कर्मसन्न्यास (सं॰ पु॰) कर्मणः स्वरूपतः फलतो वा सम्यक्सन्त्यागः, ६-तत्। १ कर्मत्याग, काम छोड़ बैठनेकी हालत। २ कर्मफलत्याग, कामका नतीजा न देखनेकी हालत।

कर्मसन्न्यासिक (सं॰ पु॰) कर्मणां सन्न्यासोऽस्त्यस्य, कर्मन्-सन्न्यास-ठन्। प्रव्रज्यायुक्त भिक्षुक, दुनयावी काम न करनेवाला फ़क़ीर।

कर्मसन्न्यासी (सं॰ पु॰) कर्मसन्न्यासोऽस्त्यस्य, कर्मन्- सन्न्यास-इनि। १ यथा-विधान कर्मत्यागी भिक्षुक, क़ायदेसे दुनयावी काम छोड़नेवाला फ़क़ीर। २ कर्म- फलत्यागी, कामका नतीजा न देखनेवाला।

कर्मसमाधि (सं॰ क्लो॰) कर्मणः समाधिः परि- समाप्तिः। १ कर्मका शेष, कामका आख़ीर। २ मुक्ति, छुटकारा।

कर्मसम्भव (सं॰ त्रि॰) कर्मणः सम्भव उत्पत्तिर्यस्य, बहुव्री॰। १ कर्मजात, कामसे निकला हुवा। (पु॰) २ कर्मकी उत्पत्ति, कामका निकास।

कर्मसाक्षी (सं॰ पु॰) कर्मणां साक्षी प्रत्यक्षकारी, ६-तत्। १ कर्मको प्रत्यक्ष करनेवाला सूर्य, आफ्ताब। २ चन्द्र, चांद। ३ यम। ४ काल। ५ पृथिवी, ज़मीन्। ६ जल, पानी। ७ तेजः, आग। ८ वायु, हवा। ९ आकाश, आसमान।

"सूर्यः सोमो यमो कालो महाभूतानि पञ्च च।
एते शुभाशुभस्येह कर्मणो नव साक्षिणः॥" (वैदिक क्रियापद्धति)

सूर्य, सोम, यम, काल और पञ्च महाभूत शुभाशुभ कर्मके साक्षी हैं।

कर्मसाधक (सं॰ त्रि॰) कर्म साधयति निष्पादयति, कर्म-साध-ण्वुल्। कार्यनिष्पादक, काम बनानेवाला।

कर्मसाधन (सं॰ क्लो॰) कर्मणः साधनं सम्पादनम्, ६-तत्। १ कार्यकी सिद्धि, कामकी तकमील। २ यज्ञादिके लिये आवश्यक द्रव्य, किसी मज़हबी कामकी ज़रूरी चीज़।

कर्मसिद्धि (सं॰ स्त्री॰) कर्मणः सिद्धिः, ६-तत्। कर्मके इष्ट वा अनिष्ट फलकी प्राप्ति, कामयाबी।

रखनेसे साविध्य वश कोयी असुविधा देख न पड़ी। अष्टम—गङ्गा पूर्ववङ्गकी अन्यान्य नदीकी भांति वन्य और प्रबल कहां। नवम—सूतानुटीके निकट अनेक बहु जनाकीर्ण ग्राम थे। सुतरां व्यवसाय और वस-वासको सुविधा रही। दशम—सूतानुटीमें उस समय तन्तुवाय बहुत बसते थे। वह वस्त्र बुनने और सूत प्रस्तुत करनेमें विशेष पारदर्शी रहे। सुतरां उन्हें कोठीके अधीन रख वस्त्र व्यवसाय खोल सकते भी विशेष लाभ उठानेको आशा थी।

१६८६ ई०को २० वीं दिसम्बरको जब-चारनकने हुगली छोड़ी। वह अपने समस्त वाणिज्य द्रव्य और यावतीय कर्मचारी ले सूतानुटी पहुंचे। जिस स्थान पर जब-चारनक प्रथम उतरे, उसको सूतानुटी कहते थे।* उस समय सूतानुटीमें तुला, सूत और वस्त्रका बाज़ार लगता था। बाजारके सामने ही अङ्गरेजोंके उतरनेका घाट रहा। कम्पनीके असुद्रित पत्रादिमें एक मानचित्र है। उसमें सूतानुटीका स्थल निर्दिष्ट है। सम्भवतः सूतानुटी वर्तमान आहीरीटोलेके उत्तर चम्पातले और रथतले घाटके निकट थी। फिर भी सूतानुटी घाटका यथार्थ अवस्थान आजकल नगरके पूर्वांशमें पड़ गया है। प्रवादके अनुसार सूतानुटीका घाट और हाट वर्तमान बड़े-बाजारके सेठ-बसाकोंके यत्नसे बना था।† उस समय सूतानुटी और उसके दक्षिणवर्ती कलकत्ते तथा गोविन्दपुर ग्राममें उनका वास रहा।

* Vide Map attached to the Selections from Unpublished Records of Government.

† सेठ बसाक कहते—कई शताब्द पूर्व बङ्गालके प्रधान वाणिज्यकेन्द्र सप्तग्रामके नीचे सरस्वती नदीका (आजकल आन्दूल, मटियाड़ी और राजगञ्जके नीचेसे आकर जो नदी गङ्गामें मिल जाती, वह सरस्वती कहाती थी। शिवपोरके नीचे सरस्वतीका कुछ अंश विद्यमान है। किन्तु आदि-गङ्गाकी भांति सरस्वती भी मिट्टी भरी है। आदिगङ्गा स्थान स्थान पर पूर आनेसे 'घोषगङ्गा' और 'बोसगङ्गा' नामक पुष्करणी आकारमें परिवर्त हुयी है। इसी प्रकार आन्दूल, अमाई प्रभृति ग्रामके नीचे सरस्वती नदीके पुरातन गर्भविशिष्ट सरोवर और चिह्न देख पड़ते हैं।) स्रोत घट जानेसे हुगली शहर बङ्गालका सबसे बड़ा वाणिज्यस्थान बन गया था। उस समय सेठोंके एक बसाकोंके चार आदिपुरुष सुता-

जब-चारनक सूतानुटीमें* पहुंच घाटसे कुछ दक्षिण एक वृहत् निम्ब वृक्षके नीचे झोपड़े डाल रहने लगे। उक्त निम्ब वृक्षके नामसे ही वर्तमान 'नीमतला' नाम निकला है। १८८३ ई०को आनन्दमयीके मन्दिर निकट अग्निदाहसे गिरनेवाला प्राचीन निम्बवृक्ष जब-चारनकके समय का नहीं। कारण उस समय नीम-तलेकी भूमि गङ्गाके गर्भमें डूबी थी।

१६८७ ई०के फरवरी मास जब-चारनकको संवाद मिला,—'नवाब शायस्ताखान्‌के सेनापति अब्दुल समदखान् बहु संख्यक अश्वारोही सैन्य ले हुगली पहुंचे हैं। बङ्गालसे अङ्गरेजोंको निकाल देना ही उनका उद्देश्य है।' इससे उन्हें सूतानुटीमें भी रहना युक्तिसङ्गत देख न पड़ा। कारण बङ्गालके नवाबसे लड़ने योग्य स व्यवस्था न था। फिर उस प्रकार परचित

नुटीके दक्षिण गोविन्दपुर ग्राममें आकर रहे। बसाकोंके कथनानुसार युरोपीयोंके साथ वाणिज्य करनेके लोभसे ही वह गोविन्दपुरमें रहने लगे। किन्तु यह बात ठीक समझ नहीं पड़ती। कारण वाणिज्यके लिये उन्हें केन्द्र हुगली या उसके निकटवर्ती स्थानको जाना था। इतनी दूर आना आवश्यक न रहा। फिर सेठके वंशधर अपने आदिपुरुष मुकुन्ददाससे १०म पुरुष, कालिदास बसाकसे वंशधर १४म पुरुष और अन्य तीन बसाकोंके वंशधर १५म पुरुष अवस्थान थे। यह वंशावली देखनेसे समझ पड़ता,—उक्त आदिपुरुषोंके आते समय (ई० पञ्चदश शताब्द) सप्तग्रामकी अवस्था अधिक बिगड़ी न थी। उस समय भी सप्तग्राम बङ्गालका प्रधान वाणिज्य स्थान था। इससे अनुमानसे किसी विशेष कारण वश उत्पीड़ित और विरक्त हो वह आत्मीय बान्धवोंसे दूर रहनेके लिये ही गोविन्दपुर गये। क्योंकि उस समय कलकत्तेके प्रसिद्ध वाणिज्यस्थान रहनेका कोई प्रमाण नहीं मिलता। ई० १६ शताब्दको वाणिज्यको आशासे उनका गोविन्दपुर आना कैसे ठहर सकता है।

*इसके ठहरानेका कोई लिखित प्रमाण नहीं मिलता—सूतानुटीका नाम युरोपीयोंको कितने दिनसे अवगत था। वार्डेल्मि नामक किसी ओलन्दाज साहबने १६१६ ई०को एक मानचित्र बनाया। उसमें सूतानुटीके स्थल पर "चिन्नानुटी" (Chittanuttee) नाम पड़ा है। फिर कर्नेल युलने 'इण्डिया आफिस'के कागजपत्र देखते समय कई बहुत पुरानी चिट्ठियां पायीं। उनमें एक सूतानुटीसे १६८६ ई०को ११ वीं दिसम्बरको लिखी गई थी। उनके पुस्तकसे भी समझ पड़ता—अङ्गरेजोंको १६८६ ई०से पहले सूतानुटी स्थान मालूम रहा। यूल साहबने कहा—१७०१ ई०के 'इङ्गलिश पाइलट और प्राचीन समुद्रयात्रियोंके मानचित्र में सूतानुटीका उल्लेख जाता है।

कर्मसूत्र (सं॰ क्लो॰) कर्म एव सूत्रम्। कर्मरूप सूत्र, कामका सिलसिला।

कर्मस्थ (सं॰ त्रि॰) कर्मणि तिष्ठति, कर्मन्-स्था-क। कर्ममें नियुक्त, काममें रहनेवाला।

कर्मस्थक्रियक (सं॰ त्रि॰) विषयमें अपने कर्मको रखनेवाला (धातु), जो (मसदर) अपना काम मुद्देमें रखता हो।

कर्मस्वभावक (सं॰ त्रि॰) अपना भाव कर्ममें रखनेवाला (धातु), जिस (मसदर) की हालत मुद्देमें रहे।

कर्मस्थान (सं॰ क्लो॰) कर्मणः स्थानम्, ६-तत्। १ कर्मक्षेत्र, कारखाना, कामकी जगह। २ ज्योतिषशास्त्रोक्त जन्म अवधि दशमस्थान।

कर्महीन (सं॰ त्रि॰) १ शुभकर्म न करनेवाला, जो अच्छा काम करता न हो। २ मन्दभाग्य, कमबख्त, अभागा।

कर्महेतु (सं॰ त्रि॰) कर्मसे उत्पन्न, कामसे निकलनेवाला।

कर्मा—१ मल्लिमती पतिपुत्रहीना कोई ब्राह्मणकन्या।

करमाबाई देखो।

२ युक्तप्रदेशके इलाहाबाद जिलेकी करछाना तहसीलका एक नगर। यह प्रयागसे ६ कोस दक्षिण अवस्थित है। यहां मङ्गल तथा शुक्रवारको बाजार लगता, जिसमें पशादि, शस्य, तुला और धातुका पात्र प्रभृति बिकता है।

कर्माक्षम (सं॰ त्रि॰) कर्मसु अक्षमः असमर्थः, ७-तत्। कार्य करनेमें असमर्थ, निकम्मा, काम न कर सकनेवाला।

कर्माङ्ग (सं॰ क्लो॰) कर्मणो अङ्गम्, ६-तत्। विहित यज्ञादि कर्मका अङ्ग, कामका हिस्सा।

कर्माजीव (सं॰ पु॰) कर्मणा आजीवः जीवनम्, ३-तत्। शिल्पादि कार्यसे जीवनयापन, कामके सहारे जिन्दगीका बसर।

कर्मात्मा (सं॰ पु॰) कर्मणा आत्मा आत्मभावो यस्य, बहुव्री॰। १ प्राणी, जानवर।

"तस्मिन् स्वपिति तु स्वस्थे कर्मात्मानः शरीरिणः।" (मनु)

(त्रि॰) कर्मणि आत्मा मनो यस्य। २ कर्मासक्तचित्त, काममें दिलको लगानेवाला।

कर्मादान (सं॰ पु॰) जैनशास्त्रानुसार व्यापारविशेष। यह १५ प्रकारका होता है—१ इङ्गलाकर्म, २ वनकर्म, ३ साकटकर्म, ४ भाडीकर्म, ५ स्फोटिककर्म, ६ दन्तकुवाणिज्य, ७ लाक्षाकुवाणिज्य, ८ रसकुवाणिज्य, ९ केशकुवाणिज्य, १० विषकुवाणिज्य, ११ यन्त्रपीड़न, १२ निर्लाञ्छन, १३ दावाग्निदानकर्म १४ शोषणकर्म और १५ असती पालन। श्रावकको कर्मादान करना न चाहिये।

कर्मादि (सं॰ पु॰) कर्मण आदिः, ६ तत्। कार्यका आरम्भकाल, कामका आग़ाज़।

कर्माधिकार (सं॰ पु॰) कर्मका स्वत्व, कामका हक़।

कर्माधिकारी (सं॰ पु॰) कर्मणि अधिकारोऽस्त्यस्य, कर्मन्-अधिकार-इनि। कर्मका अधिकार रखनेवाला, जिसे कामका इख़्तियार रहे।

कर्माध्यक्ष (सं॰ पु॰) कर्मसु अध्यक्षः, ७-तत्। कार्यका अध्यक्ष, जो काम करनेवालेका काम जांचता हो।

कर्मानुबन्ध (सं॰ पु॰) कर्मणः अनुबन्धः संयोगः लेशो वा, ६-तत्। कर्मका संयोग, कामका लगाव।

कर्मानुबन्धी (सं॰ त्रि॰) कर्मका संयोग रखनेवाला, काममें लगा हुआ।

कर्मानुरूप (सं॰ त्रि॰) कर्मणः अनुरूपः, ६-तत्। १ कर्मसदृश, कामसे मिलताजुलता। २ कर्मोपयोगी, कामके लिये अच्छा।

कर्मानुरूपतः (सं॰ अव्य॰) कर्मके अनुसार, कामके मुताबिक़।

कर्मानुष्ठान (सं॰ क्लो॰) कर्मणः अनुष्ठानम् ६-तत्। कर्मका अनुष्ठान, कामका इनसिराम।

कर्मानुसार (सं॰ पु॰) कर्म अनुसरति, कर्मन्-अनु-सृ-घञ्। कर्मका फल, कामका सिलाय।

कर्मानुसारतः (सं॰ अव्य॰) कर्मके फलसे, कामके सिलावमें।

कर्मान्त (सं॰ पु॰) कर्मणः जीवकस्य सुकृत-दुष्कृतक्रियायाः यद्वा कर्मणः कृषिकार्यस्य तत् फलस्य धान्यादिसंग्रहरूपक्रियायाः अन्तो यत्र, बहुव्री॰। १ कर्मस्थान, कामकी जगह। २ कर्मका अन्त,

स्थान भी वृहत् युद्धके उपयोगी न ठहरा। इसीसे वह सदल सुतानुटी छोड़ गङ्गानदीके मुहानेकी हिजलीकी ओर चल पड़े। राहमें उन्होंने गङ्गाके पश्चिम कूल पर सुतानुटीसे ५ कोस दक्षिण 'टाना' नामक स्थानका दुर्ग अधिकार किया। फिर वह जितने ही दक्षिणको आगे बढ़े, उतने ही नदीतीरस्थ मुसलमानी लवण और गन्धके गोले लूटने लगे। नदीके गर्भमें मुसलमानोंकी जो नावें देख पड़ीं, वह भी पकड़ जहाजोंके साथ बालेश्वर भेजी गयीं। फिर देशीय वणिकोंकी ४० नावें उन्होंने आग लगाकर जला डालीं।

उस समय हिजली एक द्वीपकी भांति थी। पश्चिम दिक् एक क्षुद्र खाड़ी थी। सुतरां हिजली पहुंचनेके लिये नौकाको छोड़ दूसरी कोई राह न रही। फिर हिजलीमें कोई रहता भी न था। चारो ओर वनमें व्याघ्र भरे थे। प्रहत पक्षमें नवाबका अत्याचार रोकनेको ही अङ्गरेजोंने उक्त स्थान मनोनीत किया।

जब-चारनकने हिजलीमें सदल उतर पग कटाया और चारों ओर तोपोंका मुरचा लगाया था। वह सब जहाज गङ्गाके ऊपर छोड़ मुहानेको रोक बैठे। किन्तु इसका फल उलटा हुआ। हिजलीमें एक बिन्दु भी पानोपयोगी परिष्कार जल मिलता न था। दूसरे दक्षिण पवनसे समस्त अङ्गरेज सैन्य पीड़ित हुआ और जलाभावसे अधिकांश मृत्युके मुख पड़ा। जो लोग बचे, वह पीड़ासे ऐसे डरे कि जीवनकी आशा छोड़ चले। इस सङ्कटके समय नवाब शायस्ता-खान्ने उसी समय सन्धिका प्रस्ताव उठाया। चारनकने झटपट सन्धि जोड़ी थी। सन्धिसे अङ्गरेजोंको सब कोठियां वापस मिलीं। समुद्रसे ४० कोस ऊपर गङ्गाके पश्चिम कूल 'उलूबेड़िया'में डक और गोला बनानेकी अनुमति हुयी थी। अङ्गरेजोंका वाणिज्य बिना शुल्क चलने लगा। केवल मुसलमानोंकी छीनी नौकायें लौटाना पड़ीं। नवाबके हठात् सन्धि करनेका कारण था। कुछ दिनोंमें जहाजी बेड़ा लेकर आनेवाले आडमिरल निकोलसनको इङ्गलेण्डसे मुसलमानोंकी समस्त नौकायें अधिकार करनेका आदेश मिला था। नवाबने यह संवाद सुन शीघ्र सन्धि ठहरा ली।

फिर जब चारनक उलूबेड़ियामें डक बनाने लगे। पीड़ित सिपाहियों और अङ्गरेजोंको उन्होंने सुतानुटी भेज दिया। वह जाकर कोठीमें रहे थे। उसी समय मलवरमें अङ्गरेजों और मुगलोंका युद्ध हुआ। सुतरां शायस्ताखान्के मनमें फिर अङ्गरेजोंको सतानेकी बात उठी। उन्होंने आदेश दिया था,—'सब अङ्गरेज सुता-नुटीसे हुगली चले जायें। उनके गड़बड़से बाजार बिगड़ गया है। इसके लिये यथेष्ट रुपया देना पड़ेगा। सिपाही अङ्गरेजोंका,यथा सर्वस्व लूट सकते हैं।' चार-नककी अवस्था अच्छी न थी। उन्हें युद्ध चलाने या रुपया पहुंचानेमें असुविधा लगी। इसीसे उनके आदे-शानुसार कोठीवाले दो अङ्गरेज नवाबको विज्ञा सुझा उक्त अत्याचार निवारणके लिये ढाके पहुंच गये।

फिर निकोलसनको आक्रमणकार्यसे बिगड़ इङ्गलेण्डके डिरेक्टरोंने कप्तान हिथको ६४ तोपों और १६० अङ्गरेज सिपाहियोंके साथ बङ्गाल भेजा। उन्हें आदेश था—उपयुक्त नियमसे युद्ध कर अङ्गरेजोंका वाणिज्य बङ्गालमें चलावें, अथवा सब अङ्गरेज सिपाहियों और कोठीवालोंको मन्द्राज पहुंचा चट-गांव पर आक्रमण लगावें।

१६८८ ई०के अक्तोबर मास हिथ सुतानुटी आये। इधर चारनकने दो कोठीवाले अङ्गरेजोंको नवाबके निकट ढाके भेज कह दिया था,—यदि नवाब कुछ बात सुनें, तो आप उनसे सुतानुटी और निकटवर्ती भूमि खरीद वासस्थानादि बनानेकी अनुमति ग्रहण करें। हिथने यहां नवाबके अत्याचारकी कथा सुनी। वह उद्धतस्वभाव थे। उन्होंने उसी जब चारनकका मत न मिलते भी स्थिर रूपसे लड़नेकी प्रतिज्ञा की। हिथ सब कोठीवालों और लोगोंको साथ ले बालेश्वरकी ओर चल दिये। बालेश्वरके शासनकर्ताने सन्धि करना चाहा। किन्तु उन्होंने किसी बात पर कर्णपात न किया। शासनकर्ताने बालेश्वरकी कोठीके दो अङ्गरेजोंको जमानतके लिये बन्दी किया था। उस समय नवाबके निकट ढाके दो पहले भेजे जानेवाले, दूसरी कोठियोंके दो कोठीवाले और बाले-श्वरके उक्त दो बन्दियोंको छोड़ बाकी सब अङ्गरेज

हिदके जहाजोंमें रहे। उक्त ६ लोगोंके प्राणकी आशङ्का रहते भी हिदने सैन्य सामन्त बढ़ा बालेश्वर आक्रमण किया। बालेश्वर आक्रमणके दिन ही ढाकेवाले दूतने आकर संवाद दिया—नवाबकी फौज अङ्गरेज़ोंके अधीन आराकान अधिकार करेगी। हिद-चट्टग्राम लेनेकी सम्भावना देख उक्त प्रस्तावमें सम्मत हुये। १६८८ ई०को १३ वीं दिसम्बरको वह बालेश्वर छोड़ चट्टग्रामकी ओर चले थे। चट्टग्राम सुरक्षित देख आराकानके राजाको हस्तगत कर उन्होंने कार्योद्धारकी चेष्टा लगायी। किन्तु राजाके उत्तर देनेमें विलम्ब हुआ। इससे हिदने चट्टग्राम आक्रमण करनेको ठहरायी। उन्होंने पूर्वोक्त छुटे लोग बङ्गालमें ही छोड़ अन्य सकलको मन्द्राज पहुंचाने लिये १३ वीं फरवरीको यात्रा की।

औरङ्गजेबने इस संवादसे बिगड़ देशसे अङ्गरेजोंको निकालनेका आदेश दिया था। फिर नाना अत्याचार हुये। शायस्ता-खान्ने वृद्ध वयसमें आगरे जाकर प्राण छोड़ा। अलवर्दी-खान्के पुत्र इब्राहीम-खान् नवाब बने। वह बड़े दयालु थे। उन्होंने नवाब होते ही सब बन्दी अङ्गरेजोंको छोड़ दिया और सम्राट्का आदेश मंगा बंगदेशमें अङ्गरेज लानेके लिये चारनकको पत्र लिखा।

१६९० ई०को २४वीं अगस्तको अङ्गरेज सुतानुटीमें आकर स्थायी रूपसे रहने लगे। बादशाही कोषमें वात्सरिक ३०००) रु० जमा दे पूर्वकी भांति बङ्गालके नाना स्थानोंमें कोठी बनाने और व्यवसाय वाणिज्य चलानेको (१६९१ ई०, हिजरी १००२) सब चारनकने नवाब इब्राहीम खान्से सम्राट्का दिया आदेश पाया। अङ्गरेजोंको सुतानुटीमें उपनिवेश स्थापन करनेकी अनुमति मिलते भी दुर्गको बनानेकी आज्ञा न हुयी।* फिर १६९२ ई०को १०वीं जनवरीको चारनक मर गये। डिरेक्टरोंने आज्ञा रखी थी,—चारनकके जीवनकाल पर्यन्त बङ्गालमें मन्द्राजसे पृथक् व्यवसाय कार्य चलेगा, किन्तु उनके मरनेपर फिर फोर्ट सेण्ट जार्ज (मन्द्राज)के अधीन रहेगा।*

चारनकके मरनेपर बङ्गाल पुनर्वार मन्द्राजके अधीन हुआ और उनका पद इलिस साहबको मिला। किन्तु इलिस कमिसारीजेनरल और सुपरवाइजर सर जे गोल्डसबरोको सन्तुष्ट कर न सके। इसलिये उनके पद पर ढाकेकी कोठीके अध्यक्ष आयार साहब नियुक्त हुये।

१६९५ ई०को डिरेक्टरोंके आज्ञानुसार सुतानुटी बङ्गालके प्रधान एजेण्टका वासस्थान ठहरायी गयी। उस वर्ष सुतानुटीमें २०००) रु० शुल्क लगा था।

१६९६ ई०में एक घटना वश युरोपीय वणिकोंको विशेष सुविधा हुयी। शोभासिंह नामक वर्धमानके किसी तालुकदारने उक्त स्थानके राजाको मार उड़ीसेवाले पठान सरदारके साहाय्यसे बङ्गालवाले सूबेदारके विपक्षमें विद्रोहका अनल भड़काया था। यह राजद्रोह दबानेको यशोरके फौजदार नूरुल्ला पर भार पड़ा। किन्तु वह भीरुता वश हुगलीके किलेसे भाग गये। विद्रोहियोंने सुविधा देख हुगली अधिकार किया। शोभासिंहने बङ्गालके अधीश्वर बननेका भी बड़ा उद्योग लगाया था। इसी सुयोगमें अङ्गरेज, ओलन्दाज, फरासीसी प्रभृति युरोपीय वणिकोंको अपने उपनिवेश सुरक्षित रखनेके लिये नवाबकी अनुमति मिली। फलतः कलकत्तेमें अङ्गरेजोंका दुर्ग बनने लगा। इङ्गलैण्डके तत्कालीन राजा विलियमके नामसे दुर्ग खड़ा किया गया।†

उपरोक्त घटनासे सम्राट् औरङ्गजेब बङ्गालके सूबेदार इब्राहीम खान्पर असन्तुष्ट हुये। उन्होंने उनके लड़के आजिम-उस-शानको बङ्गालका सूबेदार बनाकर भेजा था। १६९८ ई०को अङ्गरेज वणिकोंने मुद्रा तथा विविध उपढौकनादि प्रदानपूर्वक प्रीति बढ़ा आजिम-उस-शानसे सुतानुटी, कलकत्ता और गोविन्दपुर तीन ग्राम क्रय किये।

* Broom's History of the Rise and Progress of the Bengal Army, Vol. I, p. 24.

* Vide Bruce's Annals of the East India Coy. Vol. III, p. 143-4.

† Vide Historical and Topographical Sketch of Calcutta, by James Rainey.

अङ्गरेज़ वणिक् उनसे तन्तुवायोंसे सूत (या सूतकी नुटी अर्थात् गोली) क्रय करते रहे। इसी बाज़ारके पार्श्वमें दूसरा बड़ा बाज़ार था। मालूम पड़ता,—युरोपीय वणिकोंने सूतानुटीहाटके निकटवर्ती समुदाय स्थानका नाम सूतानुटी रखा है। कारण अङ्गरेजों अथवा अपरापर युरोपीयोंके आगमनसे पहले किसी देशीय पत्रमें 'सूतानुटी' नाम नहीं मिलता। अङ्गरेजोंके अधिकार कालसे १७७८ ई०. पर्यन्त यह स्थान ईष्ट इण्डिया कम्पनीके अधिकारमें रहा, फिर उसी वर्षकी १६वीं जनवरीको नवापाड़े मौजेके परिवर्तनमें महाराज नवकृष्णके हाथ लगा। ईष्ट इण्डिया कम्पनीने महाराज नवकृष्णको जो पत्र (सनद) दिया, उसमें इन कई स्थानोंका नाम लिखा है,—१ महाल सूतानुटी (२११७ बीघा), २ हाट सूतानुटी, ३ बाज़ार सूतानुटी, ४ सूता बाज़ार, ५ चार्लस बाज़ार, ६ बाग़बाज़ार (१०० बीघा) और ७ हुगलकुड़िया (२८७) बीघा। इसके लिये महाराज नवकृष्णको प्रतिवर्ष १२२७) रु० और कुछ आने महसूल लगता था।* आज भी शोभाबाज़ारके राजवंशीय उक्त स्थानोंकी तालुकदारीका स्वत्व भोग करते हैं।

विद्यालय—कलकत्तेमें ४ सरकारी (गवरनमेण्ट), ५ मिशनरी और लोगोंके यत्नसे स्थापित ५ देशीय कालेज (विद्यालय) विद्यमान हैं। डाक्तरी (चिकित्सा-विद्या) सिखानेको मेडिकलकालेज, कार्माइकेलकालेज तथा काम्पबेल मेडिकल स्कूल और शिल्पविद्याके लिये आर्ट स्कूल या शिल्पविद्यालय (Government School of Art) खुला है। सिवा इसके ३०० अपर विद्यालय चलते हैं। इनमें १५५ बालकों और १४५ विद्यालय बालिकाओंके लिये हैं। फिर ८२ में बालकोंको अङ्गरेज़ी तथा ७२ में बंगला और १२० विद्यालयोंमें बालिकाओंको बंगला पढ़ाई जाती है। पुरुषों और स्त्रियोंको शिक्षकता सिखानेके लिये ३ नार्मल स्कूल भी विद्यमान हैं। इधर हिन्दुस्तानी बालक श्रीविशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालयमें संस्कृत, हिन्दी और अङ्गरेज़ी पढ़ते हैं।

अस्पताल—कलकत्तामें ८ बड़े अस्पताल खुले हैं, मेडिकल कालेज अस्पताल, मेयो अस्पताल, कम्पबेल अस्पताल, स्थानीय पुलिस अस्पताल, बेलगछिया अस्पताल और स्त्रियोंका डफ़रिन तथा ईडेन अस्पताल। हरीसनरोडपर मारवाड़ियोंका भगवान्दास बागला अस्पताल विद्यमान है।

धर्मसमाज—कलकत्तेमें नाना जातियोंके रहनेसे अनेक धर्मसमाज देख पड़ते हैं। हिन्दुओं, मुसलमानों और ईसाइयोंके धर्मसमाज छोड़ ५६ हरिसभा और ३ ब्राह्मसमाज भी हैं। कार्णवालिस ष्ट्रीटपर आर्यसमाज लगता है।

जल—बङ्गालके अपर स्थानोंकी भांति यहां पुष्करिणी (तालाब)का जल किसीको पीना नहीं पड़ता। म्युनिसिपालिटी कलका जल सर्वत्र पहुंचाती है। यह जल पलता नामक स्थानसे आता और कारखानेमें अच्छी तरह शोधित हो नलसे चारो ओर जाता है। आजकल प्रायः प्रत्येक घरमें कमसे कम जलकी एक एक कल लगी है। फिर साधारणकी सुविधाके लिये राहकी मोड़ों पर भी बड़ी कल खड़ी की गयी है। बीच बीच स्नानागार बने हैं। पहले हिन्दुस्तानी लोग कलकत्तेमें आकर बीमार पड़ जाते थे। किन्तु कलका पानी पीनेको मिलनेसे अब वह बात नहीं रही। अनेक धर्मप्राण पुरुषों और विधवा स्त्रियोंके व्यवहारमें अपवित्र होनेसे कलका जल कम आता है। इसलिये उन्हें भागीरथीका जल छानकर पीना पड़ता है। किन्तु भागीरथीका जल समुद्रकी लहर आनेसे खार लगता और साधारणतः स्वास्थ्यके लिये ठीक नहीं पड़ता। प्रातःकालसे सायंकाल पर्यन्त भागीरथीके तट पर स्नान करनेवालोंकी भीड़ रहती है।

रेल और ट्रामवे—सन्ध्या समय सेही कलकत्तेको

* कलकत्ते, गोविन्दपुर और सूतानुटीके प्राचीन भौगोलिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं वाणिज्यघटित विषय समझनेके उपायको विशेष चेष्टाके साथ अवलम्बन करना चाहिये। सदर कोर्ट, कलकत्ते या चौबीस परगनेकी कलक्टरी, महाराजके पुराने कागज़, निज़ामतकी रक्षित कागज़ आर्काइव और ब्रिटिश म्यूज़ियम (अङ्गरेज़ी अजायब घर)में पुरातन पत्र (कागज़) विद्यमान हैं। उन्हें ढूंढनेसे अनेक ऐतिहासिक तत्त्व प्रकाशित हो सकते हैं।

उक्त तीनों ग्राम क्रय करनेका विशेष कारण रहा। उस समय अङ्गरेज़ सूतानुटीमें अपना वाणिज्य स्थान जमानेको आयोजन लगाते, किन्तु उपयोगी भूमि पाते न थे। ज़मीन्दारको महसूल दे बहु विस्तृत व्यवसाय फैलानेमें असुविधा पड़ी। फिर नवाबकी आज्ञा न होनेसे भूमि कैसे खरीदी जाती! इसलिये अङ्गरेज़ लोगोंने अज़ीम-उस-शानको अर्थसे लिप्सा कार्योद्धारकी चेष्टामें लगे। उस समय अज़ीम वर्धमानमें थे। ओल-न्दाजोंने भी अङ्गरेजोंकी भांति बिना शुल्क वाणिज्य चलानेकी आशामें उनके पास दूत भेजा। अङ्गरेजोंने उसीका प्रतिवाद, भूमिक्रय और क्षतिपूरणादिका प्रबन्ध करनेको मिष्टर वैल्स नामक एक विचक्षण कर्मचारी रवाना किया।

१६९८ ई०के जनवरी मास वैल्स अज़ीमके शिविरमें पहुंचे और जुलाई मासके मध्य ही नानाविध अर्थ दे अपना कार्य बना सके। अनुमतिपत्र उसी समय सूतानुटी भेजा गया। किन्तु सूतानुटी, कलकत्ते और गोविन्दपुरके* ज़मीन्दार उसमें दीवान्‌की सही न देख विक्रयसे असम्मत हुये। अन्तको १७०० ई०के जनवरी मास अङ्गरेज़ दीवान्‌से अनुमतिपत्र ले आये। फिर ज़मीन्दार कोई आपत्ति उठा न सके।

बिवरली साहबके लेखानुसार इस तीनों ग्रामोंकी विस्तृति नदी (भागीरथी) किनारे तीन मील लम्बी और एक मील चौड़ी होगी।* किन्तु बोल्टने कहा—'यह समस्त स्थान दैर्घ्य प्रस्थमें डेढ़ मीलसे अधिक नहीं।'† इसका वार्षिक कर ११९४) रु० बङ्गालके नवाबको देना पड़ता था। किन्तु नवाब अज़ीम-उस्-शानने उसे अपने आयमें लगा लिया।‡ फिर क्रयसम्बन्धीय सनद पानेपर सूतानुटीसे प्रधान वणिक् प्रतिनिधिने लन्दननगरके कोर्ट-अव-डाइरेक्टरको समाचार दिया। उन्होंने प्रत्युत्तरमें कलकत्तेकी प्रेसिडेन्सी बना प्रबन्ध बांधा,—प्रेसिडेण्टको २००) रु० मासिक वेतन और १००) मासिक भत्ता मिलेगा। उनके अधीन एक सभा रहेगी। सभामें चार सभ्य बैठेंगे। परामर्श आदि दे वह प्रेसिडेण्टको साहाय्य करेंगे। सभ्योंमें प्रथम हिसाब करनेवाला (Accountant), द्वितीय गुदामका रक्षक (Warehouse keeper), तृतीय सामुद्रिक कोषाध्यक्ष (Marine-purser) और चतुर्थ राजस्व-ग्राहक (Receiver of Revenues) होगा।

आयार साहबके विलायत जाने पर बियार्ड साहब कोठीके प्रधान हुये। १६९९ ई०को जब बङ्गाल एक विभिन्न प्रेसिडेन्सी बना, तब जोहन बियार्ड साहबको ही प्रेसिडेण्टका पद मिला था। किन्तु अल्प दिनमें ही सर चार्लस आयार विलायतसे प्रेसिडेण्ट हो वापस आ गये। उस समय बियार्ड साहबको हिसाब करनेवालेके द्वितीय पद पर जाना पड़ा। फिर डालसो वाणिज्यद्रव्यादि (गुदाम)के रक्षक, ह्वाइट सामुद्रिक कोषाध्यक्ष और राफेलसटन राजस्व-ग्राहक थे। किन्तु आयार साहबके कार्यवहन न करनेसे बियार्ड साहब ही प्रेसिडेण्ट बने रहे।§

---

* सूतानुटीसे दक्षिण कलकत्ता और कलकत्तेसे दक्षिण गोविन्दपुर नाम ग्राम रहे। आज कल कलकत्तेमें जहां [illegible] कलकत्ता महाल मिलता, वहां सूतानुटी या गोविन्दपुरका नाम देख नहीं पड़ता। किन्तु कलकत्तेके साथ एक बस्तीमें [illegible] और [illegible] नामक दूसरे दो महालोंका उल्लेख आता है। यह निश्चित नहीं—[illegible] और [illegible] वा सूतानुटी या गोविन्दपुरके ही परिवर्तित नाम हैं। [illegible] साहबके [illegible] बात कही जा चुकी है। उसमें गोविन्दपुरके स्थान पर [illegible] लिखा है। [illegible] सबसे प्राचीन [illegible] है। उस [illegible] गोविन्दपुरका नाम देख पड़ता है—

"[illegible]
गोविन्दपुर[illegible]"

इसमें सन्देह नहीं—यह [illegible] गोविन्दपुर है।

[illegible] (१६६६ ई०) [illegible] पर गोविन्दपुर नाम लिखा है।

* Vide Report on the Census of the Town of Calcutta taken on the 2nd April 1876, by Beverly, C. S.

† Vide Bolt's Consideration on Indian Affairs, Vol. 1772. I 60.

‡ Vide Orme, Vol. II. p. 17.

§ History of the Rise and Progress of the Bengal Army, by Arthur Broome, I. 32.

होता है। सम्भवतः किलकिला ही कलकत्तेका अति प्राचीन नाम है। किलकिलाके अपभ्रंशसे ही आईन-इ-अकबरी प्रभृति ग्रन्थमें कलकत्ता, कलता, कल्ता, कलकत्ता, कलकत्ता, कलिकता आदि शब्दकी उत्पत्ति है। मालूम पड़ता, कि भाषाके लिखे भिन्न भिन्न आईन इ-अकबरी ग्रन्थमें पाठान्तर चलता है। सुतरां किलाकिला शब्द भाषान्तरसे लिखते कलकत्ता, कलकता, कलकत्ता हो सकता है।

गोविन्दपुर नामकी उत्पत्ति।

कलकत्तेके भूतपूर्व कलक्टर होलवेल साहबके मतमें गोविन्दराम मित्रके नामसे गोविन्दपुर बना है। फिर बड़े बाजारके सेठ बसाकोंके कथनानुसार यहां उनके इष्टदेव गोविन्दजीका मन्दिर था। उसीसे इस स्थानका नाम गोविन्दपुर पड़ गया। यह दोनों मत विशेष युक्तिसङ्गत मालूम नहीं होते। प्रथमतः गोविन्दराम मित्रके बहुत पहले गोविन्दपुर नाम विद्यमान था। द्वितीयतः यदि गोविन्दजीके नामसे गोविन्दपुर निकलता,तो सकल प्राचीन ग्रन्थोंमें गोविन्द-पुरके साथ गोविन्दजीका उल्लेख अवश्य मिलता। कविराम विरचित दिग्विजयप्रकाश नामक ग्रन्थमें गोविन्दपुरके नामकरण सम्बन्ध पर जो विवरण मिला, उसे नीचे लिखा है,—

"इदानीं शृणु राजेन्द्र आश्चर्य्यां कथां प्रभु।
कालीदेव्याः समीपे च गङ्गायां प्राक्तटे ॥ १०५२
गोविन्ददत्तो राजा च कलिदेवाब्दकः ।
सिन्धुसङ्गमतीर्थयात्रायां समागतः ॥ १०५३
गोविन्ददत्तभूपालं तीर्थात् प्रत्यागतं प्रभुम्।
कालीदेवी स्वप्नेन नौकायामुक्तवान् ह ॥ १०५४
अयं नौपुरीं राजन् मत्सत्त्व हि समागतः।
आदरं तत्र पृथिव्यां तु देवदिक्याः शर्वादिकम् ॥ १०५५
पुरं.........भवेन्मे मनुष्वजातः।
आदेशानि अत्र सुधान्ते न कर्म न चेदपि ॥ १०५६
कालीदेव्याः वचो श्रुत्वा स राजा नटावरे।
वसति भूमौ तत्र चकार हि सुरालयः ॥ १०५७
पारीन्द्र नामान् वसतिं ह्यकरोत् नरोत्तमः।
कालिका च वसति भवान् सुरसरित्तटे ॥ १०५८
तास्रो स्थित्रमृत: देवाः पुष्ठे च वनानि।
खनादेव तत्र च.........॥ १०५९
तस्मा देवि च भूते च अतिशयास्तदुर्वे निरेः।
कांचनकर्षं पुलिकाभाण्डं देवासुरेवपि ॥ १०६०
तीर्थे द्रविणादेव प्राप्य गोविन्दभूपतिः।
चतुःषष्टिं तस्येव बलिभिः पूजनं कृतम् ॥ १०६१
गोलकश्च चित्रकश्च तैलकश्च हि भूमिप।
बभूव गोविन्ददत्तो वर्द्धि श्रमवशो महान् ॥ १०६२
भागीरथ्योपूर्वतटे पुरोवर्द्धनहेतवे।
बाह्मणान् विप्रान् गोला बकार वासयति ॥"१०६३

हे नृपश्रेष्ठ! अब वरभूमिकी कथा सुनिये। काली देवीके निकट गङ्गाके पूर्व तट पर ४४०० कल्यब्दको सिन्धुसङ्गम (गङ्गासागर) तीर्थ यात्रा करने गोविन्द-दत्त राजा आये थे। वह सकुशल तीर्थसे लौट पड़े। फिर स्वप्नके छलसे काली देवीने उन्हें नौकामें ही आदेश दिया,—"हे राजन्! मेरी आज्ञासे तुम अकर्षपुरीको चलो और आदररूपा पृथिवीमें दक्षा-दिक कटा मेरे निकट एक बड़ी पुरी स्थापन करो। नहीं तो तुम्हारा अमङ्गल होगा।" काली देवीकी बात मान राजाने गङ्गातटके अन्तर पर बड़ी बसती बनायी। पारीन्द्र नामसे सब धनरत्न संग सुरसरित्के तटपर लोग बसाये गये। देवीके पृष्ठ पर दो वन रहे थे। उनके आदेशसे वनोंके नीचे खोदने पर मृत्तिकाके अभ्यन्तरमें काञ्चनका ढेर देख पड़ा, जो देवों और असुरोंको भी अलभ्य था। भूरि भूरि द्रव्य पानेसे प्रसन्न हो गोविन्द भूपने चतुःषष्टि बलि द्वारा पूजन किया। गोल, चित्त और तैल पढ़नेसे गोविन्ददत्त महान् वर्धित प्रवर भूमिप बन गये। फिर उन्होंने पुरीके वर्धन हेतु भागीरथीके पूर्व तट पर ब्राह्मणोंको बोलाकर वासयान किया।'

कविरामकी बात वर्णनासे समझ पड़ा, कि राजा गोविन्ददत्तसे इस स्थानका नाम 'गोविन्दपुर' पड़ा था।

सूतानुटी।

पहले सूतानुटीके सम्बन्धमें बहुत सी बातें कह चुके हैं। यहां अङ्गरेजोंके आनेसे पहले तन्तुवाय (जुलाहे) सूतका गोला (नुटी वा लुटी) बना (अब शामबाजार सूतानुटीके) बाजारमें (वर्तमान हटखोलेके पास) बेचते थे। इसी बाजारका नाम सूतानुटीका हाट रहा। बाजारके सामनेही सूतानुटी घाट था। यहां

इससे पहले जो सकल पत्र आदि 'लण्डनके कोर्ट अव डिरेक्टर्सको अथवा अन्यत्र लिखा गया, उस पर 'सूतानुटी' नाम पड़ा था।* फिर 'प्रेसिडेन्सी अव फोर्ट विलियम' लिखने लगे। शेषोक्त नाम अद्यापि चल रहा है। किन्तु यह निर्णय करना कठिन है—सूतानुटी, कलकत्ता और गोविन्दपुर तीनों ग्राम कलकत्ता नामसे कब अभिहित हुये। किसी किसीके मतमें ई० १७ वें शताब्दको कलकत्ता नाम निकला था। किन्तु यह मत भ्रमात्मक है। क्योंकि १७०१ ई०को दो विसम्वादी अङ्गरेज वणिक-समितियों (अर्थात् इङ्गलिश कम्पनी और ईष्ट इण्डिया कम्पनी)के सम्मिलित होनेको सनद बनी, उस पर सूतानुटी लिखी गयी। कलकत्तेका नाम कहीं नहीं मिलता। फिर भी उपरोक्त तीनों ग्राम इसी प्रकार सन्निवेशित हुये। टालीनाले (तत्कालीन गोविन्दपुरकी खाड़ी या आदिगङ्गा)से आरम्भ कर वर्तमान किले तक गोविन्दपुर रहा। यह ग्राम कुछ कच्चे मकानोंका समष्टिमात्र था। मध्यभाग वनसे परिपूर्ण रहा।

उत्तर चितपुरका नाला, (मराठा खात), पश्चिम भागीरथी, दक्षिण वर्तमान टकसाल तथा बड़ा बाज़ार और पूर्व कार्नवालिसका कुछ अंश एवं सरक्युलर रोडका थोड़ा पश्चिमांश सूतानुटी नामसे प्रसिद्ध था।† गोविन्दपुर और सूतानुटीके मध्यवर्ती स्थानको कलकत्ता कहते थे। ठीक ठीक निर्णय किया नहीं जाता, भागीरथी तीरसे पूर्व किस स्थान तक कलकत्ता विस्तृत था। बड़ा बाज़ार, पथरिया गिर्जा, पोष्ट-आफिस, कष्टम हाउस प्रभृति स्थान इसी कलकत्तेमें रहे। फलतः उक्त तीनों ग्राम और कई सामान्य पल्लियां मिल कर यह "सौधमयी नगरी" (City of Palaces) बनी है।

१७०२ ई०को जान बियार्ड साहबने "सम्मिलित पूर्वभारत वणिक्समिति" (United Company of Merchants trading in the East India)को बङ्गीय सभाके सभापति हुये। फोर्ट विलियम प्रेसिडेन्सी इलाकेका कार्यसमूह चलानेको उनके अधीन आठ कमिशनर रखे गये। इस विसम्वादी वणिक् समितिके सम्मिलनसे उक्त दोनों कम्पनियोंके कर्मचारियोंका विवाद न घटा।

इङ्गलैण्डके राजाने सम्राट् अकबरके निकट सर विलियम निवासको दूतस्वरूप भेजा था, किन्तु उनका कार्य निष्फल हुआ। सम्राट्ने अपने राज्यके मध्य समस्त युरोपीयोंको बन्दी बनानेकी आज्ञा निकाली थी। पटना और राजमहलका अङ्गरेज़ उपनिवेश लूटा गया। फिर कलकत्तेको लूटनेके लिये भी हुगलीके फौजदारने अङ्गरेजोंको भय देखाया था। किन्तु बियार्ड साहबने कलकत्तेको उत्तमरूपसे सुरक्षित कर फौजदारके भयप्रदर्शनकी उपेक्षा की। फौजदारने भी अवस्थाको समझ बूझ विशेष गड़बड़ डाला न था।

१७०६ ई०को प्रेसिडेण्ट बियार्ड साहब मर गये। उनके पदपर दोनों कम्पनियोंका हिसाब साफ़ करनेको हेजेस और रोलडन साहब नियुक्त हुये। उस समय बहुत सी तोपोंके साथ ११० युरोपीय सिपाही फोर्ट विलियमकी रक्षा करते थे। कलकत्तेकी अवस्था दिन दिन सुधरनेपर निर्विघ्न व्यवसाय वाणिज्य चलानेको चारो ओरसे लोग आकर रहने लगे। महानगरी कलकत्तेका इसी प्रकार प्रथम अवयव बना।

औरङ्गजेबकी सनदसे ठहरा था—वार्षिक ३०००) रु० देनेपर अङ्गरेजोंका सर्वप्रकार शुल्कसे अव्याहति मिलेगी। किन्तु नवाब मुरशिद-कुलीखान्ने अन्यान्य व्यवसायियोंकी भांति अंगरेजोंसे भी सैकड़े पीछे २॥) रु० शुल्क लेनेकी आज्ञा दी। कलकत्तेके तत्कालीन गवरनर हेजेस साहबने अङ्गरेजोंके प्रति यथा व्यवहारके प्रतिविधानकी आशासे दूत भेजनेके लिये १७१२ ई०को कोर्ट-अव-डिरेक्टर्स से अनुमति ली। उक्त दौत्यकार्यको जोहन-सर्मन तथा ष्टेफेन्सन नामक दो अभिज्ञ कोठीवाल, ख्वाजा सरहन्द दुभाषिया और डाक्टर

---

* Historical Notices concerning Calcutta in the days of Job Charnok (in Indian and Colonial Magazine)

† सूतानुटीके प्राचीन चिह्नसे समझते, कि बागबाज़ार, श्यामबाज़ार, सिमुलिया प्रभृति कई स्वतन्त्र ग्राम उसकी सीमासे बाहर थे।

अङ्गरेज़ वणिक् उतर तन्तुवायोंसे सूत (या सूतकी नुटी अर्थात् गोली) क्रय करते रहे। इसी बाज़ारके पार्श्वमें दूसरा बड़ा बाज़ार था। मालूम पड़ता,—युरोपीय वणिकोंने सूतानुटीघाटके निकटवर्ती समुदाय स्थानका नाम सूतानुटी रखा है। कारण अङ्गरेजों अथवा अपरापर युरोपीयोंके आगमनसे पहले किसी देशीय पत्रमें 'सूतानुटी' नाम नहीं मिलता। अङ्गरेज़ोंके अधिकार कालसे १७७८ ई० पर्यन्त यह स्थान ईष्ट इण्डिया कम्पनीके अधिकारमें रहा, फिर उसी वर्षकी १६वीं जनवरीको नवापाड़े मौजेके परिवर्तनमें महाराज नवकृष्णके हाथ लगा। ईष्ट इण्डिया कम्पनीने महाराज नवकृष्णको जो पत्र (सनद) दिया, उसमें इन कई स्थानोंका नाम लिखा है,—१ महाल सूतानुटी (२२१७ बीघा), २ हाट सूतानुटी, ३ बाज़ार सूतानुटी, ४ सूबा बाज़ार, ५ चार्लस बाज़ार, ६ बागबाज़ार (१०० बीघा) और ७ डुगलकुड़िया (२८७) बीघा। इसके लिये महाराज नवकृष्णको प्रतिवर्ष १२३७) रु० और कुछ आने महसूल लगता था।* आज भी शोभाबाज़ारके राजवंशीय उक्त स्थानोंकी तालुकदारीका स्वत्व भोग करते हैं।

विद्यालय—कलकत्तेमें ४ सरकारी (गवरनमेण्ट), ५ मिशनरी और लोगोंके यत्नसे स्थापित ५ देशीय कालेज (विद्यालय) विद्यमान हैं। डाक्टरी (चिकित्सा-विद्या) सिखानेको मेडिकलकालेज, कार्माइकेलकालेज तथा काम्पबेल मेडिकल स्कूल और शिल्पविद्याके लिये आर्ट स्कूल वा शिल्पविद्यालय (Government School of Art) खुला है। सिवा इसके ३०० अपर विद्यालय चलते हैं। इनमें १५५ बालकों और १४५ विद्यालय बालिकाओंके लिये हैं। फिर ८२ में बालकोंको अङ्गरेजी तथा ७२ में बंगला और १२० विद्यालयोंमें बालिकाओंको बंगला पढ़ाई जाती है। पुरुषों और स्त्रियोंको शिल्पकला सिखानेके लिये ३ नार्मल स्कूल भी विद्यमान हैं। इधर हिन्दुस्थानी बालक श्रीविशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालयमें संस्कृत, हिन्दी और अङ्गरेज़ी पढ़ते हैं।

अस्पताल—कलकत्तामें ८ बड़े अस्पताल खुले हैं, मेडिकल कालेज अस्पताल, मेयो अस्पताल, कम्पबेल अस्पताल, स्थानीय पुलिस अस्पताल, बेलगछिया अस्पताल और स्त्रियोंका डफारिन तथा ईडेन अस्पताल। हरीसनरोडपर मारवाड़ियोंका भगवानदास बागला अस्पताल विद्यमान है।

धर्मसमाज—कलकत्तेमें नाना जातियोंके रहनेसे अनेक धर्मसमाज देख पड़ते हैं। हिन्दुओं, मुसलमानों और ईसाइयोंके धर्मसमाज छोड़ ५६ गिरिजा और ६ ब्राह्मसमाज भी हैं। कार्नवालिस ष्ट्रीटपर आर्यसमाज लगता है।

जल—बङ्गालके अपर स्थानोंकी भांति यहां पुष्करिणी (तालाब)का जल किसीको पीना नहीं पड़ता। म्युनिसिपालिटी कलका जल सर्वत्र पहुंचाती है। यह जल पलता नामक स्थानसे आता और कारखानेमें अच्छी तरह शोधित हो नलसे चारो ओर जाता है। आजकल प्रायः प्रत्येक गृहमें कमसे कम जलकी एक एक कल लगी है। फिर साधारणकी सुविधाके लिये राहकी मोड़ों पर भी बड़ी कल खड़ी की गयी है। बीच बीच स्नानागार बने हैं। पहले हिन्दुस्थानी लोग कलकत्तेमें आकर बीमार पड़ जाते थे। किन्तु कलका पानी पीनेको मिलनेसे अब वह बात नहीं रही। अनेक धर्मप्राण पुरुषों और विधवा स्त्रियोंके व्यवहारमें अपवित्र होनेसे कलका जल कम आता है। इसलिये उन्हें भागीरथीका जल मंगाकर पीना पड़ता है। किन्तु भागीरथीका जल समुद्रकी लहर आनेसे खार लगता और साधारणतः स्वास्थ्यके लिये ठीक नहीं पड़ता। प्रातःकालसे सायंकाल पर्यन्त भागीरथीके तट पर स्नान करनेवालोंकी भीड़ रहती है।

दीप और बिजली—सन्ध्या समय सैकड़ों कलकत्तेकी

* कलकत्ते, गोविन्दपुर और सुतानुटीके प्राचीन भौगोलिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं वाणिज्यघटित विषय समझनेके उपायको विविध रेकार्डोंका साहाय्य अवलम्बन करना चाहिये। सदर बोर्ड, कलकत्ते या चौबीस परगनेकी कलक्टरी, महाराजके पुराने कचिहरी, विलायतको इण्डिया आफिस रेकर्ड्स और ब्रिटिश म्युजियम (अङ्गरेज़ी अजायब घर)में पुरातन दफ्तर (कागज) विद्यमान हैं। उन्हें ढूंढनेसे अनेक ऐतिहासिक तथ्य प्रकाशित हो सकते हैं।

विलियम हामिल्टन नियुक्त हुये। १७१५ ई०के प्रारम्भमें दूत लोग कलकत्तेसे युरोपजात बहुमूल्य विविध द्रव्यादिका उपढौकन ले ८वीं जुलाईको दिल्ली पहुंचे।*

उस समय सम्राट् फरुखसियारके साथ अजित्‌सिंह नामक राजपूत राजाकी कन्याका विवाह था। किन्तु सम्राट् ऐसे पीड़ित हुये कि राजकीय चिकित्सक यथासाध्य चेष्टा लगाके भी रोगको दबा न सके। फलतः विवाह रुक गया। फिर खान्‌-दौरान्‌के अनुरोधसे सम्राट्‌ने समागत अङ्गरेज दूतदलके डाक्टर हामिल्टन साहबको अपनी चिकित्सा करनेकी अनुमति दी। सौभाग्य-क्रमसे उन्होंने चिकित्सा विद्याके साथ अति अल्प कालमें ही सम्राट्‌का रोग आरोग्य किया। इस घटनासे हामिल्टन साहब सम्राट्‌के विशेष प्रियपात्र बने। रोगसे मुक्ति लाभ करने पीछे सम्राट्‌ने राजकीय वदान्यताका यथेष्ट परिचय दे प्रतिज्ञा की थी,—हामिल्टन साहब जो मांगेंगे, वह यथासाध्य पावेंगे। हामिल्टन साहबने भी बाल्टनकी भांति अपना स्वार्थ और लाभाभिलाष सम्पूर्णरूपसे छोड़ जिससे दौत्यकार्यको आये अङ्गरेजोंका मनोरथ पूर्ण पड़ता, उसीको प्रार्थना किया। सम्राट् उनका ऐसा निःस्वार्थभाव देख चमत्कृत और सन्तुष्ट हुये। उन्होंने प्रतिज्ञापूर्वक कहा था,—विवाहकार्य सुसम्पन्न होने पर आपकी प्रार्थना विशेष रूपसे सोच समझ अपने साम्राज्यकी मर्यादाके उपयुक्त देनेमें हम उठा न रखेंगे। रोगशान्तिके पीछे ही विवाह सुसम्पन्न हुआ। किन्तु १७१६ ई०में पहले अङ्गरेज् अपना आवेदनपत्र सम्राट्‌के समीप पहुंचा न सके। फिर किसतरह उज्ञायके साहाय्यसे अङ्गरेज-दूतोंका उद्देश्य सफल हुआ। १७१७ ई०के समय (हिजरी ११२८) बङ्गाल, बिहार और उड़ीसेमें वाणिज्य चलानेके लिये ईष्ट-इण्डिया कम्पनीको सम्राट् फरुखसियारसे सनद मिली थी। तद्द्वारा कम्पनीका पूर्वप्राप्त अधिकार बढ़ गया। अङ्गरेजोंने वाणिज्य द्रव्यादिकी भोकाचौकी अनुसन्धानसे अव्याहति और मुर्शिदाबादकी टकसालमें तीन दिन कम्पनीका रुपया ढालनेकी अनुमति पायी। सूतानुटी, कलकत्ते और गोविन्दपुरके लिये अङ्गरेजोंको कोई ११८१) रु० वात्सरिक देना पड़ता था। फिर ८१२१॥) रु० अधिक प्रति वर्ष बादशाही कोषमें भरना स्वीकार कर उक्त ग्रामत्रयके सन्निकट दक्षिणको भागीरथीके उभय पार पांच कोसके बीच उन्हें ३८ ग्राम मोल लेनेका आदेश मिला।*

सम्राट्‌से इस प्रकार सनद ले आनेसे नवाब मुरशिद्‌कुली-खान्‌ अङ्गरेजों पर बहुत बिगड़े थे। ग्राम खरीदनेकी सम्राट्‌की आज्ञा अवज्ञा कर प्रकाश्यमें किसी प्रकार शत्रुतास्वरूपका साहस न देखाते भी गुप्त भावसे उक्त ग्रामोंके जमीन्दारोंको उन्होंने धमका दिया। नवाब कुलीखान्‌ने चुपके कहा था,—कितना ही अधिक मूल्य मिलते भी यदि कोई जमीन्दार अङ्गरेजोंके हाथ अपनी भूमि बेचेगा, तो वह हमारे कोपका प्रमाण देखेगा। उन्होंने अपने मनमें सोचा—यह समस्त स्थान हाथ लगनेसे भागीरथी सम्पूर्ण रूपसे अङ्गरेजोंके आयत्ताधीन हो जायेगी और इच्छानुसार उभय पार दुर्गादि बनानेपर उनकी शक्ति वृद्धि पावेगी।†

बोल्ट साहबके कथनानुसार सम्राट्‌ने उक्त ३८ ग्राम अङ्गरेजोंको दे न डाले थे। उन्हें उपयुक्त मूल्य दे केवल क्रय करनेकी आज्ञा रही। जमीन्दार ग्राम बेचनेको सम्मत न हुये, किन्तु अङ्गरेजोंने उनको धनिकोंसे प्रतारणा अथवा बलपूर्वक ग्रहण किये।‡

कप्तान हामिल्टन १७१० ई०को कलकत्ते आये

* Stewart's History of Bengal, p. 395-6; Auber, Vol. I. p. 15.

* Appendix C, History of the Rise and Progress of the Bengal Army by Capt. A. Broome and East India Records, Book No. 193.

† Broome's Rise and Progress of the Bengal Army, vol. I. p. 35.

‡ Bolt's Consideration on Indian Affairs, 1772, App. p. I. note.

बड़ी बड़ी राहों और छोटीमोटी गलियोंमें बिजली तथा गैसकी रोशनी होती है। इसलिये दिनकी भांति रातको चलने फिरनेमें कोई कष्ट नहीं पड़ता। फिर बिजलीसे ट्राम, आटा पीसनेकी चक्की और छापेकी कल भी चलती है। घर घर बिजलीके पङ्खे लगे हैं।

ड्रेन—कुछ दिन पहले कलकत्तेकी राहोंके इधर उधर गन्दा नाला था। किन्तु अब वह बात नहीं रही। प्रायः सर्वत्र भूमिके भीतर ड्रेन चलता है। सब जगहका मैला उसमें गिर धापेके बिल पहुंचा करता है। कलकत्तेके रहनेवालोंको नालेका दुर्गन्ध भोगना नहीं पड़ता।

बन्दर और व्यवसाय—कलकत्ता बन्दर भागीरथी किनारे ५ कोस विस्तृत है। १८७० ई०से पोर्ट कमिश्नरोंका तत्त्वावधान चलता है। १८७१ ई०को २२ लाख रुपये खर्च कर कलकत्तेसे हावड़े तक वर्तमान बड़ा पुल बना था। पोर्टकमिश्नर ही इसकी देख भाल रखते हैं। फिर पोर्ट कमिश्नरोंका प्रधानकार्य भागीरथी किनारे जहाज, नाव तथा माल रखनेको जेटी एवं गुदाम बनाना, नदी पर रोशनी कराना और नौकादिका चलिट बनाना है। कलकत्तेका वाणिज्य जहाज और रेलसे नाना देशोंके साथ होता है। प्रति वर्ष करोड़ों रुपयेका माल आया जाया करता है। मारवाड़ियोंने इसमें पड़ अपनी अच्छी उन्नति देखायी है। यहां पाट (सन)का बड़ा कारबार है।

कलकत्तेमें अजायब घर, चिड़ियाखाना, बोटानिकल गार्डन और सेठ दुलीचन्द तथा राय बदरीदास बहादुरका उद्यान देखने योग्य है। सन्ध्याको इडन गार्डन (लेडी बाग्)में बैण्ड बाजा बजता है।

कलकना (हिं० क्रि०) १ चीत्कार करना, चिल्लाना। २ दुःख करना, रञ्ज मानना।

कलकफल (सं० पु०) दाड़िमवृक्ष, अनारका पेड़।

कलकल (सं० पु०) कलादपि कलः, कलयन्दे कलः कलः प्रकारः, प्रकारार्थे द्वित्वं वा। १ कोलाहल, शोर, हल्ला। २ सर्जनिर्यास, धोवान्, धूना। ३ शिव। ४ जलप्रपातध्वनि, झरनेकी आवाज। ५ विवाद, बकबक, झगड़ा।

कलकल (हिं स्त्री०) कष्ट, खुजली, कसाहट।

कलकलवान् (सं०त्रि०) कलकलो ऽस्यास्ति, कल-कल-मतुप् मस्य वः। कलकलविशिष्ट, बकबक लगानेवाला।

कलकलो (हिं० स्त्री०) क्रोध, गुस्सा।

कलकानि (हिं० स्त्री०) कोलाहल, शोर, हल्ला।

कलकि, कलकी (हिं०) कल्कि देखो।

कलकोट (सं० पु०) कलप्रधानः कोटः, मध्यपदलो०। उत्कलका ग्रामविशेष, गांवका एक नाम।

कलकूजिका (सं० स्त्री०) कलं कूजयति उच्चारयति, कल-कूज-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। १ मधुरध्वनिकारिणी, मीठी आवाज निकालनेवाली। २ विलासिनी, कुलटा, छिनाल।

कलकूजिका, कलकुणिका देखो।

कलकूट (सं० पु०) क्षत्रिय जाति विशेष तथा उसके रहनेका देश।

कलकूणिका, कलकूजिका देखो।

कलक्टर (अं० पु० =Collector) १ संग्राहक, जमा करनेवाला, बटोरू। २ करग्राहक, उगाहनेवाला, जो तहसील करता हो। ३ जिलेदार, जिलेका बड़ा हाकिम। यह मालगुजारी वसूल कराता और तालके मुकद्दमे भी निबटाता है।

कलक्टरी (हिं० स्त्री०) १ जिलेदारी, कलक्टरका ओहदा। २ मालके मुकद्दमेकी अदालत। (वि०) ३ कलक्टर-सम्बन्धीय, कलक्टरके मुतालिक।

कलगट (हिं० पु०) तबर, कुल्हाड़ा।

कलगा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। इसे मुर्गकेश और जटाधारी भी कहते हैं। कलगेका फूल मुर्गकी चोटी-जैसा लाल और चपटा लगता है। भादोंमें यह मिलता है। वर्षा ऋतु इसकी उत्पत्तिका समय है। आश्विन या कार्तिक मास लगता फूलता है।

कलगी (तु० स्त्री०) १ बहुमूल्य पालक, कीमती पर। यह राजाओंकी पगड़ीमें लगती है। कभी कभी इसमें मोती भी पिरो देते हैं। शुतुरमुर्ग वगैरह चिड़ियोंके

थे। उन्होंने लिखा,—'नदी किनारे दक्षिण गोविन्दपुर और उत्तर बराहनगरमें कम्पनीके उपनिवेशका एक सीमाचिह्न रहा। इन दोनों चिह्नोंका व्यवधान तीन कोस होगा। भूमिकी ओर आधे या तीने मिल तक सीमा थी।' फलत: निर्णय कर नहीं सकते—उस समय कलकत्तेकी प्रकृत सीमा क्या रही।

१७४२ ई०को भास्कर-पण्डितके परिचालनाधीन मराठे उड़ीसेसे मेदिनीपुर तथा वर्धमानको राह राजमहलतक नगर एवं पल्लीग्राम समस्त लूटने लगे। फिर उन्होंने कलकत्तेके सन्निकट भागीरथीके अपर पार टाना किला और हुगली लूटी। उस समय भागीरथीके पश्चिमपारवाले अधिवासियोंने कलकत्तेमें आ आश्रय लिया था। मराठोंके आक्रमणसे रक्षा करनेको अङ्गरेजोंने पूर्व पार रहते भी कलकत्तेको चारो ओर किलेको एक गहरी खाई खोदनेके लिये नवाब अलीवर्दी खान्से अनुमति मंगायी। सूतानुटीके उत्तर अंशसे गोविन्दपुरके दक्षिण अंश पर्यन्त खाई खोदनेकी बात थी। छह मासमें डेढ़ कोस (तीन मील) भूमि खुदी। किन्तु अलीवर्दीके अध्यवसायसे मराठे कलकत्तेसे ३० कोस दूर ही रहे। इस लिये खाई खोदना रुक गया। इस खाईको "मराठा खात" (Mahratta Ditch) कहते हैं। श्यामबाज़ारके निकट दमदमे जाते समय इस खात (खाई)का स्थान मिलता है। अर्मी साहबके मतानुसार अधिवासियोंके ही अनुरोध और व्ययसे यह खाई खोदी गयी।*

हलवेल साहबका कहना है—१७५२ ई०को भी सिमुलिया, मलङ्गा, मिर्ज़ापुर (कलकत्तेके एक महल्ले) और हुगलकुड़ियामें कुल १०५० बीघे भूमि थी। यह चारो स्थान उपनिवेशकी सीमामें न रहते कम्पनीने खरीदनेकी विशेष चेष्टा लगायी, किन्तु अधिकारियोंकी किसी प्रकार सम्मति न पायी।† सुतरां यह कई स्थान कलकत्तेकी सीमासे बाहर थे। किन्तु बनियापोखर, पटलडांगा, टांगरा और धमन्द मिलकर २८८ बीघे भूमि कलकत्तेके अंशमें परिगत रही। दो वर्ष पीछे अर्थात् १७५४ ई०को हलवेल साहबने कम्पनीके लिये रसिक मल्लिक और नवाबराम मल्लिकसे २२८।)६० मूल्यमें सिमुलिया खरीद ली।*

१७५६ ई०को सिराजुद्दौलाने कलकत्ता आक्रमण और अधिकार किया था। उस समय उनके आदेशसे (अल्पकालके लिये) इसका नाम 'अलीनगर' रखा गया। फिर अन्धकूपहत्या हुयी। दूसरे वर्ष ही जनवरी मास क्लाइव और वाटसनने कलकत्ता ले लिया। उमीचन्द, अन्धकूप और क्लाइव शब्द देखो। १७५७ ई० को ८वीं फरवरीको सिराजुद्दौलासे सन्धि चली। सन्धिमें ठहर गया,—"कम्पनीको सनदसे मिले सब ग्रामोंका अधिकार देना पड़ेगा और वैसनेमें जमीन्दारोंको कोई वक्तव्य न रहेगा।"

पलासी युद्धके पीछे नवाब मीरजाफर नये सूबेदार हुये। उन्होंने किसी सन्धि द्वारा अङ्गरेजोंको कलकत्तेका मौरूसी जमीन्दार बना दिया।†

पलाशी और मीरजाफर देखो।

उस सन्धि द्वारा मध्यस्थित भागको छोड़ मीरजाफरने कम्पनीको कलकत्तेकी सीमासे बाहर ११०० हस्त परिमित भूमि सौंपी थी। फिर उन्होंने कलकत्तेसे दक्षिण कुलपी तक कम्पनीको जमीन्दारी ठहरायी। मीरज़ाफरको आज्ञा थी—इस अंशके समस्त कर्मचारी कम्पनीके अधीन रहेंगे और दूसरे जमीन्दारोंकी भांति अङ्गरेज़ भी राजस्व दे देंगे।‡

दूसरे वर्ष १७८५ ई०के दिसम्बर मास फर्दसलातसे तालुक या जागीरको तौर पर कलकत्ता कम्पनीके हाथ आया। अर्थात् अङ्गरेज़ वणिकोंने अपनी कोठी सुरक्षित रखनेका अधिकार पाया। बन्दरोंकी देखभाल भी उन्हींके अधीन रहनेसे मीरजाफरने ८८३१) रु० दिया कर कम्पनीको कलकत्ता,

* Orme's History of India, Vol II. p. 15.

† Holwell's Indian Tracts, 2nd ed. 1764. p. 140.

* Selections from the Unpublished Records of the Government, p. 56.

† Bolt's Indian Affairs, p. 81.

‡ Rise, Progress and State of the English Government in Bengal, by Harry Vereleat, 1772. App. p. 154

खूबसूरत परोंकी हो कलगी होती है। २ शिरोभूषण-विशेष, सरपेंचका एक गहना। यह सुक्ता और सुवर्णसे प्रस्तुत होती है। ३ पक्षियोंकी उच्च शिखा, चिड़ियोंकी ऊंची चोटी। ४ प्रासादशिखर, ऊंची इमारतकी चोटी। ५ किसी किस्मकी लावनी। इसको गानेवाला कलगीवाज़ कहलाता है।

कलघण्टिका (सं॰ स्त्री॰) कृष्णशारिका, काली मैना।

कलघोष (सं॰ पु॰) कलो मधुरो घोषो ध्वनिर्यस्य, बहुव्री॰। कोकिल, कोयल।

कलङ्क (सं॰ पु॰) कल् चासौ अङ्कश्चेति, कल-किप् कर्मधा॰। १ चिह्न, निशान्, धब्बा। २ अपवाद, बदनामी। ३ दोष, ऐब। ४ लौहमल, लोहेका कीट। ५ क्रोड़, गोद। ६ मत्स्यभेद, एक मछली।

कलङ्ककर (सं॰त्रि॰) कलङ्कं करोति जनयति, कलङ्क-कृ-ट। १ कलङ्कजनक, बदनामी लानेवाला। २ चिह्न लगानेवाला, जो निशान् डालता हो।

कलङ्ककला (सं॰ स्त्री॰) चन्द्रकी छायामें रहनेवाली कला, चांदका अंधेरा हिस्सा।

कलङ्कधर (सं॰ पु॰) चन्द्र, चांद।

कलङ्कमय (सं॰ त्रि॰) १ चिह्नित, धब्बेदार। २ अपवाद-विशिष्ट, बदनाम।

कलङ्कष (सं॰ पु॰) करैण कषति हिनस्ति, कल-कष-खच्-मुम्। सिंह, पञ्जेसे मारनेवाला शेर।

कलङ्कषा (सं॰ स्त्री॰) कलङ्कष-टाप्। करताल, हथेलियोंकी आवाज़।

कलङ्कहृत् (सं॰ पु॰) कलङ्कं हरति नाशयति, कलङ्क-हृ-क्विप्। कलङ्क मिटानेवाले शिव।

कलङ्काङ्क (सं॰ पु॰) चन्द्रका असित चिह्न, चांदका काला धब्बा।

कलङ्कित (सं॰ त्रि॰) कलङ्कोऽस्य जातः, कलङ्क-इतच्। १ चिह्नयुक्त, धब्बेदार। २ कलङ्कविशिष्ट, बदनाम।

कलङ्की (सं॰ त्रि॰) कलङ्को-ऽस्त्यस्य, कलङ्क-इनि। १ कलङ्कित, बदनाम। २ चिह्नयुक्त, धब्बेदार। ३ लौहमलयुक्त, ज़ङ्ग लगा हुवा। (पु॰) ४ चन्द्र, चांद।

कलङ्की (हिं॰) कल्कि देखो।

कलङ्कुर (सं॰पु॰) कं जलं लङ्कयति गमयति भ्रामयति इत्यर्थः, क-लकि-णिच्-उरच्। आवर्त, गिरदाव, पानीका भंवर।

कलङ्गड़ा (हिं॰ पु॰) १ कलिङ्ग, कलौंदा, तरबूज़। २ सङ्गीत भेद, एक गाना।

कलङ्गा (हिं॰ पु॰) १ यन्त्रविशेष, लोहेकी एक छेनी। इससे ठठेरे थाल पर नक्काशी करते हैं। २ छोपियोंका एक ठप्पा। इसमें अट्ठारह फूल पड़ते हैं। ३ वृक्ष-विशेष, एक पौदा। कलगा देखो।

कलङ्गी (हिं॰) कलगी देखो।

कलचिड़ी (हिं॰ स्त्री॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसका उदर कृष्णवर्ण, पृष्ठ धूसर और चञ्चु लोहित होता है। यह मधुर ध्वनिसे बोलती है।

कलचुरि—भारतवर्षका एक प्राचीन राजवंश। चेदि, डाहलमण्डल और कर्णाटमें किसी समय कलचुरियोंने प्रबल प्रतापसे राजत्व किया था। कर्णाट और चेदि देखो। भारतवर्षके नाना स्थानोंसे इनके खोदित शिलालेख और ताम्रशासन निकले हैं।

शिलालेखों और ताम्रशासनोंमें कालचुरी वा कलचुरी नाम मिलता है। किसी किसी प्रत्नतत्त्ववित्‌के मतानुसार इस वंशके राजा शिलाफलकोंमें 'कलत्चुरि' वा 'कलचुर्य' नामसे भी अभिहित हुये हैं।

गुप्तराजाओंके पूर्वप्रताप खोने और हीनबल तथा हीनावस्थ होनेपर कलचुरि कालञ्जर जीत अपना आधिपत्य फैलाने लगे। ६०० ई॰को नर्मदातटस्थ डाहलमण्डल जीत पहले इन्होंने छत्तीसगढ़ और पीछे कर्णाट राज्य क्रमान्वयसे अधिकार करनेको उद्योग किया।

उस समय कलचुरि-वंशीय गोदावरीके तीरपर क्षुद्र क्षुद्र राज्य जमा राजत्व रखते थे। इनमें कोई बरद राजा, कोई सामन्त और कोई मण्डलेश्वर बना। किन्तु चेदि (वर्तमान बुंदेलखण्ड और बघेलखण्ड)के राजाओंने राजचक्रवर्ती उपाधि लिया और पार्श्ववर्ती तथा अपरापर नरेशोंको अपने वश किया।

कल्याणका चालुक्य-वंश प्रबल पड़नेपर दक्षिणा-पथमें कलचुरि राजाओंका पूर्वतेज घट गया। ई॰ अष्ट

पाइकान, मानपुर तथा अमीराबाद चार परगनोंके बीच २० मौजे और दो बाज़ार दे डाले। फौजदारीका काम भी अङ्गरेज़ ही करते थे। मौजोंके नाम यह हैं,—१ गोविन्दपुर, २ मिर्ज़ापुर, ३ चौरङ्गी, ४ बरन्द, ५ शिमिलेबन्द, ६ बैलेडांगा, ७ पानहाटी ८ निदालन्दन, ९ बाहरबिर्जी, १० किमपुर पाड़ा, ११ बाहर श्रीरामपुर, १२ सूतानुटी, १३ हुमनकुड़िया, १४ सिमला, १५ मालन्द, १६ चाडिङ्गी, १७, डिही कलकत्ता, १८ दक्षिण पाइकपाड़ा, १९ श्रीरामपुर और २० मण्डा ग्राहरीका मध्यवर्ती गणेशपुर। दोनों बाज़ार—१ सूतानुटी बाज़ार और २ गोविन्दपुर बाज़ार थे।

उपरोक्त ग्राममें कई मराठा-खातकी सीमामें और कई उससे १२०० हाथके बीच रहे। किन्तु उस समय लोग साधारण बातचीतमें मराठा-खातको ही कलकत्तेकी सीमा ठहराते थे। फिर भी कम्पनीके २४ परगना लेते समय मराठा-खातसे बाहर पड़नेवाले उक्त ग्राम कलकत्तेकी ही सीमामें रहे। उक्त सकल ग्राम और दूसरी कितनी ही भूमिको कलकत्ते तथा २४ परगनेसे विभिन्न कर डिही पञ्चान्नग्राम बनाया गया। आजकल भी ग्राम कलकत्ते शहरके सरहदसे लगते, वही अपने डिही पञ्चान्नग्राम कहाते हैं। १८५७ ई०को २१वें आईनके अनुसार पञ्चान्नग्रामकी समस्त भूमि कलकत्तेमें शामिल की गयी। फिर उसका अति सामान्य अंश छूटा था।* इससे समझनेका कोई उपाय नहीं—किस समय कलकत्ते और पञ्चान्नग्रामके मध्य सीमा निर्धारित हुयी। किन्तु ग्रेट ब्रिटेनके १७९४ ई०की १० वीं जिन्सरको गवर्नर जनरलने कौन्सिल-सभासे एक आईनी निकाल घोषणापत्र द्वारा कलकत्तेकी सीमा ठहरायी थी।† घोषणा पत्रका मर्म नीचे लिखते हैं,—

उत्तर सीमा—चितपुरके दक्षिण और बागबाज़ारवाले खालसे गङ्गासे पुराने रास्तेके जिस बाज़ार हो कर दमदमी जानेको राह पोल (श्यामबाज़ार रोड)के पाददेश पर्यन्त। पूर्व सीमा—मराठा खातके पश्चिम किनारे अथवा उसके पार्श्वस्थ मार्गके पूर्व किनारे होकर श्यामबाज़ारके उत्तरकोणसे उक्त खातके दक्षिण किनारेके पूर्वमुख, वहांसे खातके उत्तर किनारे पश्चिम मुख, उक्त स्थानसे खातके पश्चिम एवं बैठकखाना राहके पूर्व किनारे दक्षिण और मराठा खातकी शेष सीमा होकर राजा रामलोचन बाज़ारके कोने अथवा नारायण चाटुर्यो गलीकी ठीक विपरीत और बेलियाघाटाकी सड़क लगने तक। फिर मिर्ज़ापुरके बीच बैठकखाना सड़कके पूर्व किनारे होकर और पोर्तुगीजोंके गोरस्तानकी पूर्वदिक् छोड़ बैठकखानेके प्राचीन पुलिस्टेशन तक, अर्थात मछुआबाज़ार और बैठकखाना बाज़ारकी विपरीत ओर सड़कके दोनों पार्श्व बैठकखाना राहके पूर्व किनारेसे गोपीबाबूके बाज़ार और वहांसे सीधे उस उक्त राहकी पश्चिम मोड़ तक। यहां डिही श्रीरामपुर पूर्व तथा दक्षिण पूर्व छोड़ कुछ दूर आगे बढ़ने पर पूर्व सीमा शेष हुयी है। कलकत्ते शहरके मोटेहाथटोला तत्कालीन गोरस्तान, चौरङ्गी और डिही बिर्जी इसी सीमाके अन्तर्भुक्त थी। दक्षिण सीमा—उक्त स्थानसे वाम दिक् पूर्व डिही बिर्जीके अन्तर्गत बनियापोखर या पंडितापोखर सीमारेखाके मध्य छोड़ पश्चिमाभिमुख चौरङ्गीके बड़े मार्गसे विपरीतदिक् रसापागला सड़कसे लेकर पुलिस थाने और साधारण अस्पतालके मध्य जानेवाली सड़कके दक्षिण और थोड़ी दूर उस पुरवार पश्चिममुख साधारण अस्पताल, दानकामारादि तथा डिही मनोहरपुरके अस्पतालका गोरस्तान छोड़ कलीपुरके पाददेश पर्यन्त। वहांसे कलीपुर पुलके दक्षिण होकर टालो नाले (आदिगङ्गा)की उस अन्तर्वाले किनारे तक। फिर उक्त स्थानसे आगे बढ़ खिदिरपुरके पुल होकर बिरम्भा उस छोड़ आदिगङ्गाके मुख तक (जहां आदिगङ्गा मिली है)। उक्त स्थानसे टोल नालेसे एक नालेके ऊपर दा पश्चिम पार किनार खिदरपुर वाले दक्षिणपूर्वकोण (उक्त बाग, और खिदरपुरको छोड़) पर

* Census Report of Calcutta, 1876 by Mr. Beverly.

† 152th Section Cap. 52 of the Act passed in the 33 year of His Majesty's reign.

शताब्दको (५६०-६१० ई०) चालुक्यराज मङ्गलीशने किसी किसी कलचुरि राजाको हरा कर दबाया था।

फिर भी डाहल और कर्णाटके उत्तरांशमें इस वंशके राजावोंने ई० द्वादश शताब्द पर्यन्त निर्विवाद राजत्व चलाया। डाहलमण्डल देखो।

इस वंशने प्रायः जो सो वर्षकाल उत्तर जेपुर वा चेदि, पश्चिम भेलसा (विदिशा), पूर्व छत्तीसगढ़ और दक्षिण गोदावरीतट पर्यन्त विस्तीर्ण भूमिखण्ड उपभोग किया।

यह सब शैव या शक्तिके सेवक थे। चेदिवाले कलचुरिराज कर्णदेवके अनुशासनमें सुवर्ण वृषभध्वज और चतुर्हस्तपरिशोभिता हस्तिपरिवृता कमलाकी मूर्ति अङ्कित है। इनके पुत्र गाङ्गेयदेवकी स्वर्णमुद्रामें भी चतुर्हस्ता पार्वतीमूर्ति मिलती है।

देशावली नामक संस्कृतग्रन्थमें 'करचुलि' राजपूतोंका नाम लिखा है,—

"शोणनद दक्षिणत रैवोत्तरतः परम्।
करचुलिः क्षत्रियो वाऽस्ते ख्यातो रघोपमः॥
यासीन्नो वरधो भूपः बहुधा राजपुत्रकः।
राठौरो रघुवंशश्च राजाऽचरबहुर्नृपः॥
निर्भरः सदा धर्मे वर्ष्मणः परिकीर्तितः।" (देशावली विवरण).

यह करचुलि राजपूत किसी समय बघेलखण्ड (प्राचीन चेदिराज्य)में रहे। रीवासे ९ कोस उत्तर-पूर्व अनेक सम्भ्रान्त राजपूत वास करते और अपनेको 'कारचुलि राजपूत' कहते हैं। यह बताते,—"हम हैहय वंशीय सहस्रार्जुनके वंशधर हैं। हमारे पूर्व-पुरुष रायपुर-रत्नपुरसे आकर इस अञ्चलमें बसे थे।"

करचुलि वा कारचुलि राजपूत ही सम्भवतः प्राचीन शिलालिपिवर्णित कलचुरि वा कालचुरि होंगे। प्रत्नतत्त्वविद् फ्लीटने इन्हीं कलचुरिवंशीयोंको आर्जुनायन माना है। (Fleets' Inscriptionum Indicarum, Vol. III, p. 10) किन्तु इस स्थल पर हम फ्लीट साहबका मत कैसे युक्तिसङ्गत कह सकते हैं। कार्तवीर्यार्जुनके वंशधर हैहय नामसे परिचित हैं। वह किसी पुराण वा प्राचीन ग्रन्थमें आर्जुनायन लिखे नहीं गये। किसी किसी पुराण, वृहत्संहिता तथा पाणिनिके गणादिगणमें आर्जुनायन शब्द एक जनपद और उसी जनपदवासीके लिये आया है। वराहमिहिरने उक्त जनपदको भारतके उत्तरपश्चिम अञ्चलमें अवस्थित अपरापर जनपदोंके साथ उल्लेख किया है। उनका मत माननेसे आर्जुनायन पाणिनि-गणोक्त अग्र (अग्रक) जनपदके निकट पड़ता है। आर्यावर्त तथा आर्जुनायन देखो। वर्तमान जलालाबाद जाते समय उक्त स्थानको लोग 'आर्जुन' कहा करते हैं। प्राचीन कालको उसी प्रदेश और तज्जनपदवासियोंका नाम आर्जुनायन था। कलचुरिवंश समुद्रगुप्तके अनुशासन-स्तम्भका वर्णित आर्जुनायन हो नहीं सकता।

पूर्वकालको कलचुरिराज एक स्वतन्त्र संवत् व्यवहार करते थे। इनके अनुशासन तथा खोदित-शिलाफलकमें उक्त संवत् व्यवहृत हुआ है।

कलचुरि संवत्का आरम्भकाल निर्णय करना सुकठिन है। प्रत्नतत्त्वविद् कनिङ्गहमके मतमें कलचुरिराजकर्तृक कालञ्जर अधिकारके समयसे उक्त संवत् चला है। वह २४९-५० ई०को उसका आरम्भकाल बताते हैं। फिर अध्यापक किलहोर्नके मतानुसार २४८-४९को उक्त संवत् चलाया गया। (Cunningham's Indian Eras, p. 60; Archæological Survey of India, Vol. IX. p. 9; Academy, December 1887, p. 394; R. Sewell's Sketch of the Dynasties of Southern India, p. 286.)

कलछा (हिं० पु०) हस्ताकार चमस; बड़ा चम्मच।

कलछी (हिं० स्त्री०) क्षुद्रचमस, छोटा चम्मच।

कलछुल (हिं० स्त्री०) चमचा, करछी। यह लोहे या पीतलकी होती है। लम्बी डण्डीके सिरे पर कटोरी जैसा एक थोड़ा हिस्सा लगा रहता है। यह तरकारी टारने या पूरी कचौरी निकालनेके काम आती है।

कलछुला (हिं० पु०) १ हस्ताकार चमस विशेष, बड़ी कलछुल। २ चबेना भूननेकी एक छड़। यह लोहेका होता है। इसके सिरेपर एक कटोरा लगा देते हैं। भड़भूंजे चबेना या बहुरी भूनते समय भाड़में

दक्षिण सीमा-का अन्त है। पश्चिम सीमा—शेषोक्त स्थानसे लगाकर भागीरथीके पश्चिम तीर निम्न जल-रेखाके चिह्न हो क्रमशः रामकृष्णपुर, हावड़ा और सलकियाघाट छोड़ चितपुरवाले पुलके निकट (नदीके पश्चिम तीर) पूर्वोक्त जाफरपुरमें करनेल राबर्टसनके बागके उत्तर कोण होकर शेष हुयी है।

पूर्वकथित विधि (Act 56)के अनुसार स्थानीय गवरनमेण्ट सीमा बदलनेको अक्षम थी। किन्तु कलकत्तेकी सीमामें फिर कुछ हेरफेर न हुवा। किन्तु मालूम नहीं—किस समय कलकत्ते और पञ्चान्नग्राम उभयकी सीमा ठहरायी गयी। १७९४ ई॰को घोषणा-पत्र निकलनेसे इस सीमाके सम्बन्धमें कुछ गड़बड़ पड़ा। क्योंकि उसमें पूर्व सीमाके लिये लिखा था—जहां तक मराठा खात देख पड़ता, वहीं कलकत्तेकी सीमाका अन्त मिलता है।* किन्तु न तो यह खात सम्पूर्ण खोदा गया और न मछुवाबाज़ार सड़कके दक्षिण इसका कोई चिह्न देख पड़ा। यहांसे आगे सरकुलर रोड (उस समय इसको बैठकखाना रोड कहते थे) और सरकुलर रोडसे आदिगङ्गाके दक्षिण तक सीमा लगी है। स्पष्ट समझ नहीं सकते १७९४ ई॰को कहां तक पूर्वदक्षिण सीमा रही। १७५७ ई॰को कलकत्तेका जो मानचित्र बना, उसको मापमें सम्भवतः भ्रम था। अथवा कलकत्तेकी सीमा उस समय सम्पूर्ण भिन्न थी। उक्त मानचित्रमें एस्प्लेनेडकी भूमिका परिमाण असली मापसे बिलकुल आधा लगा है। फिर १८३८ ई॰को 'फीवर हसपिटाल कमिटी'के समय साक्ष्यप्रदानमें डाक्टर निकोलसन साहबने कहा था,—'३० वत्सर पूर्व साधारण तथा सामरिक अस्पतालसे आध मील दक्षिण एक स्तम्भ प्रोथित था। उसमें लिखा रहा—यहां फोर्ट विलियमका एस्प्लेनेड शेष हुवा है।'† फलतः यह निर्णय करना अतीव सुकठिन है—किस समय कलकत्तेकी क्या सीमा थी।

आदिगङ्गा और भागीरथी-सङ्गमके मुख पर एक सेतु है। वह मारक्विस अव-हेष्टिङ्गसके शासन काल साधारण अर्थसे बना था। इसीसे उसका नाम 'हेष्टिङ्गस् ब्रिज' पड़ा। खिदिरपुरसे उक्त सेतु पार कर कुलीबाज़ार जाना पड़ता है। यहां गवरनमेण्टकी कमसरियटके गुदाम हैं। १७७५ ई॰को ५ वीं अगस्तको ब्राह्मण-वंशके महाराज नन्दकुमारने यहीं फांसी पायी थी। नन्दकुमार देखो।

वर्तमान अलीपुरके सेतुसे थोड़ी दूर दो हक्ष रहे। उन्हींके नीचे वारेन हेष्टिङ्गस और सर फिलिप फ्रान्सिस्का द्वन्दयुद्ध हुवा। अलीपुरके सामरिक अस्पतालमें पहले सदर दीवानी या अपीलकी अदालत लगती थी। वही अदालतसे भिन्न जानेपर उक्त भवनमें सामरिक अस्पताल (Military Hospital) हो गया। भवनसे पूर्व नगरके सामने पागला गारद और साधारण चिकित्सालय (General Hospital) रहा। शेषोक्त भवन पहले किसी धनीका बाग था। पीछे १८८६ ई॰को गवरनमेण्टने उसे मोल ले साधारण चिकित्सालय स्थापन किया।

उक्त चिकित्सालयसे कुछ पूर्वदिक् आनेपर चौरङ्गी नामक मार्ग है। यह चितपुरसे कालीघाट तक विस्तृत है। पहले यात्री चितपुरमें चित्रेश्वरीका दर्शन कर कालीघाट जाते थे। चौरङ्गीसे पश्चिम किलेका मैदान और पूर्व सम्भ्रान्त अङ्गरेजोंके रहनेका स्थान है। पूर्वकालको यह स्थान और मैदान निविड़ वनसे आच्छन्न था। वन्य वराह व्याघ्र प्रभृति हिंस्रक जन्तु इसमें भरे रहे। वनके मध्य दुर्दान्त डाकुवोंका अड्डा था। अस्त्रशस्त्र ले कर इस पथमें चलना कठिन रहा। किसी किसीके कथनानुसार उस समय यहां गोरख-नाथके एक शिष्य वास करते थे। उनका नाम चौरङ्गी हठयोगी रहा। इसीसे लोग इस राहको चौरङ्गी कहते हैं। परन्तु चौरङ्गी नाम अधिक दिनका प्राचीन समझ नहीं पड़ता। १७५८-५९ ई॰को नवाब मीरजाफरके पुत्र मीरनने एक सनद दी थी। उसके एक अंशमें सबसे पहले चौरङ्गी-मौजेका नाम लिया गया। उस समय यह स्थान कुछ परगने कलकत्ते और कुछ परगने पार-

* Selections from the Calcutta Gazette, Vol. II by W. S. Seton Karr, C. S., p. 129.

† Census Report of Calcutta, 1876, by H. Beverly, Esqr C. S., p. 34.

गरम बालू इसमें भरकर निकालते और खपड़ीमें डालते हैं।

कलछुली (हिं॰ स्त्री॰) लौह या पित्तलपात्रविशेष, लोहे या पीतलका एक बरतन। कलछुल देखो।

कलञ्ज (सं॰ पु॰) कुक्कुट, मुरगा।

कलजात (सं॰ पु॰) कलमशालि, कलमी धान।

कलजिभा (हिं॰ वि॰) १ कृष्णवर्ण जिह्वाविशिष्ट, काली जीभवाला। २ अनिष्ट विषयका सत्यवक्ता, जिसके मुंहसे निकली बुरी बात झूठ न ठहरे।

कलजीभा (हिं॰ वि॰) १ कलजिभा। कलजिभा देखो। (पु॰) हस्तिविशेष, काली जीभका हाथी। यह दूषित होता है।

कलझंवां (हिं॰ वि॰) श्यामवर्ण, सांवला।

कलञ्ज (सं॰ पु॰) कं खञ्जयति, क-खजि-अण्। १ विषाक्तहत मृग वा पक्षी, ज़हरीले हथियारसे मारा हुआ जानवर या परिन्द। २ ताम्रकूट, तम्बाकू। ३ परिमाणविशेष, एक तौल। यह १० पलका होता है। ४ वेत्रलता, बेतकी बेल। (क्ली॰) ५ विषाक्तहत मृगपक्षीमांस, जहरीले हथियारसे मारे हुये जानवर या परिन्दका गोश्त।

कलञ्जाधिकरण (सं॰ क्ली॰) पञ्चावयव न्यायविशेष, एक मन्तिक। इसमें 'कलञ्ज न खाना चाहिये' प्रभृति वाक्य अवलम्बन किये जाते हैं।

कलट (सं॰ क्ली॰) कं जलं लटति आप्नोति, क-लट-अच्। तृणादि निर्मित गृहाच्छादन, छप्पर। इसका संस्कृत नामान्तर कुटल है।

कलटोरा (हिं॰ पु॰) कपोतविशेष, एक कबूतर। इसका समग्र शरीर श्वेत और अक्ष कृष्णवर्ण होता है।

कलट्टर, कलक्टर देखो।

कलण्डर (अं॰ पु॰ = Calendar) पञ्जिका, तक़वीम, पत्रा।

कलत (सं॰ वि॰) अकेश, गञ्जा, जिसके सरपर बाल न रहे।

कलता (सं॰ स्त्री॰) कलस्य भावः, कल-तल्-टाप्। अव्यक्त मधुरता, खुशनवायी, समझमें न आनेवाली आवाज़की मिठास।

कलतूलिका (सं॰ स्त्री॰) कं सुखं विषयत्वेन लाति गृह्णाति कलं कामं तूलयति पूरयति, कल-तूल-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। १ इच्छावती, ख्वाहिश रखनेवाली। २ कामुकी, छिनाल। इसका संस्कृत पर्याय—वाञ्छिनी और लञ्जिका है।

कलत्र (सं॰ क्ली॰) गड़ सेचने अत्रन् गकारस्य ककारः। गडादेश कः। उण् ३।१०६। १ स्त्री, औरत। २ भार्या, बीबी। ३ नितम्ब, चूतड़। ४ भग। ५ दुर्गस्थान, क़िला।

कलत्रवान् (सं॰ पु॰) कलत्रमस्यास्ति, कलत्र-मतुप् मस्य वः। सस्त्रीक, जोड़वाला।

कलत्री (सं॰ पु॰) कलत्रमस्त्यस्य, कलत्र-इनि। कलत्रवान् देखो।

कलदार (हिं॰ वि॰) १ यन्त्रविशिष्ट, पेंचदार। (पु॰) २ अङ्गरेजी रुपया।

कलदुमा (हिं॰ वि॰) १ कृष्णवर्णपुच्छविशिष्ट, काली पूंछ वाला। (पु॰) २ कपोतविशेष, एक कबूतर। इसका पुच्छ कृष्णवर्ण होता है।

कलधूत (सं॰ क्ली॰) कलेन अवयवेन धूतं शुद्धम्, ३-तत्। १ रौप्य, चांदी। (त्रि॰) कलेन अव्यक्त-मधुरध्वनिना धूतं मनोरमम्। २ अव्यक्त मधुरस्वर युक्त, समझ न पड़नेवाली मीठी आवाज़से भरा हुआ।

कलधौत (सं॰ क्ली॰) कलेन अवयवेन धूतं शुद्धम्। १ स्वर्ण, सोना। २ रौप्य, चांदी।

"क्वचिदपि यत्र निपतत्कलधौतकलशकलधौतनिवर्तितमना यशो।" (माघ)

३ अव्यक्त मधुर ध्वनि, मीठी मीठी बोली।

कलध्वनि (सं॰ पु॰) कलः अस्फुटमधुरः ध्वनिर्यस्य, बहुव्री॰। १ कपोत, कबूतर। २ कोकिल, कोयल। ३ मयूर, मोर। ४ अव्यक्त मधुर स्वर, मीठी मीठी बोली।

"मधुकरीमधुकरीकलध्वनिनिनादिते।" (महानिर्वाण॰)

कलन (सं॰ क्ली॰) कल्यते लक्ष्यते दूष्यते वा, कल-ल्युट्। १ चिह्न, धब्बा। २ दोष, ऐब। कल्यते शुक्रशोणिताभ्यां अन्योऽन्यं मिश्र्यते। ३ गर्भमें मिश्रित शुक्रशोणितका प्रथम विकार, दमबमें मिले मनी और खूनकी पहली बनावट। कलल देखो। ४ गर्भवेष्टन,

स्थानमें लगता था। १८५० ई०को यहां सब परिष्कार होने लगा। चौरङ्गीको वर्तमान समस्त शोभमाला आधुनिक है। समसामयिक आपजान साहबका मानचित्र देखनेसे समझ सकते—१७८४ ई०को यहां कुल २४ मकान् थे। उस समय यहां (वर्तमान मिडलटन रो नामक गलीके 'लोरेटो हाउस' नामक मकानमें) सर इलाइजा इम्पी रहते। उनके मकानके निकट पुष्करिणी (झील) थी। यह झील पूरते समय माहामारिक विसूचिका रोगका सूत्रपात हुआ। इसीसे वर्तमान 'मिडलटन रो' नामक मार्ग कुछ दिन 'कालरा ष्ट्रीट' या विसूचिकामार्ग (हैजेको राह) कहा गया। यह समस्त स्थान इम्पीके उद्यानमें रहे।

कलकत्ता नामकी उत्पत्ति।

कलकत्ते नामके सम्बन्ध पर लोग अनेक कथा कहा करते हैं। उनमें दो एक बात हम सुनाते हैं।

१ प्रवाद है—सर्व प्रथम एक अङ्गरेज यहां आये थे। उन्होंने किसी दूसरेको न देख एक कृषकसे इस स्थानका नाम पूछा। वह अङ्गरेजी बोली समझ न सका। उसने अपने मनमें सोचा—साहबने मेरे धान्यके विषयमें प्रश्न किया। इसीसे वह कह उठा—'कल काटा' अर्थात् कल धान्य काटा था। सब साहबने इस स्थानका नाम 'क्यालकाटा' ठहरा लिया।

२ लङ्ग साहबके कथनानुसार सम्भवतः मराठा खात अर्थात् 'खाल काटा'से कलकत्ता नाम निकला है।

३ किसी किसी विचक्षण अङ्गरेजके मतमें 'कलिचूण'से कलकत्ता नामकी उत्पत्ति है।

४ कोई कालीघाट शब्दको कलकत्ते नामका आदिरूप बताता है।

ऊपर लिखी सब बातें हमारी विवेचनामें युक्तियुक्त वा प्रामाणिक मानी जा नहीं सकतीं।

अङ्गरेजोंके आगमन और मराठा-खातके खननसे पहले कलकत्ता विद्यमान था। क्योंकि यह बात अबुल फजलके आईन-इ-अकबरी ग्रन्थमें देख पड़ती है। इससे 'कल काटा' प्रवाद और 'खाल काटा'से कलकत्ता नाम बनाना कल्पना उपज मस्तिष्कको कहा है।

कालीघाट शब्दसे भी कलकत्ता नाम नहीं निकला। क्योंकि भारतीय नाना स्थानके प्राचीन तथा आधुनिक जनपद नगरादिका नाम मनोयोगपूर्वक देखनेसे समझा जा सकता—कालीके स्थानमें 'कल' और घाटके स्थानमें 'कत्ता'की तरह अपभ्रंश वा नाम परिवर्तन कभी नहीं पड़ता। विशेषतः कालीघाटके स्थानमें कलकत्ता बनना शब्द शास्त्रके नियमसे सम्पूर्ण बहिर्भूत है। भारतमें जिस स्थानके नामसे पहले 'काली' शब्द आता, वह भारतवासियों तथा मुसलमानोंके द्वारा भी विकृत होता नहीं जाता। सुतरां यह अयौक्तिक सिद्धान्त एककाल ही छोड़ना उचित लगता, कि कालीघाट नामसे 'कलकत्ता' बनता है। कालीन्द्र देखो।

इस नगरको देहाती पुराने 'कोलकाता' और हिन्दुस्थानी 'कलकत्ता' कहते हैं। बंगला भाषामें 'कलिकाता' लिखते भी 'कोलिकाता' बोला जाता है। हमारे एक विश्वस्त बन्धुने 'कोल्का ताता' या 'कोलिका ताता' नामसे 'कलकत्ता'की उत्पत्ति मानी है। उनके अनुमानानुसार प्राचीन कालको कोल अथवा कोलि जातिके लोग यहां नदी किनारे रहते थे। सम्भवतः उन्हींके वास करनेसे कोल्काता या कोलिकाता नाम पड़ गया। संस्कृत, प्राकृत, पालि और द्राविड़ भाषामें 'कोल' शब्दका अर्थ शूकर मिलता है। फिर सुन्दरवनमें अरण्य रहते समय कलकत्ता भी विस्तर शूकरोंसे भरा था। अनुमानसे उसी समयसे इस स्थानका नाम 'कोल्काता' पड़ा है। अकबरके समय (सम्भवतः उसके भी पूर्व) कलकत्ता महालके पार्श्ववर्ती नीच लोग शूकर पकड़नेका व्यवसाय करते थे। बराहनगर० इस व्यवसायका प्रधान स्थान था। ओलन्दाजों और फरासीसियोंकी ईष्ट इण्डिया कम्पनीका इतिहास पढ़नेसे अनेक स्थलोंमें इस बातका प्रमाण मिलता है। फिर भी निःसन्देह कहा जा नहीं सकता—शूकर अथवा

० बराहनगर [illegible]

कमलका लिपटाव। ५ एकमासिक गर्भ, एक महीनेका कमल।

"कललं त्वेकरात्रेण पञ्चरात्रेण बुद्बुदम्।
दशाहेन तु कर्कन्धूः पेश्यण्डं वा ततः परम्॥" (भागवत ३।३१।२)

६ पङ्क, कीचड़। ७ पाप, कीच। ८ ग्राम, समझ, अहंभाव।

"मोहमहार्णवतरणाकुलितः कलिमलसंकुलहृदयः।" (सुभाषित)
'कललमकः कार्यविपर्ययरूपः ...' (रहनाथ)

(पु०) कं सलं माति, क-मा-क; कलः सन् नमति, कल-नम-ड। ९ वेतस, बेंत।

कलना (सं० स्त्री०) कल भावे युच्-टाप्। १ वशीभूतता, तावेदारी।

"करोतु सर्वेषु च कलितवतः कामकलना।" (आनन्दलहरी)

२ कल्पना, कहासुनी, भलकना। ३ अवमोचन।

"दिव्यादयः पुरा कलनाविमोचः।" (माघ)

कलनाद (सं० पु०) कलो नादोऽस्य, बहुव्री०। १ कलहंस। २ कलध्वनि, मीठी मीठी बोली। (त्रि०) ३ कलध्वनियुक्त, गानेवाला।

कलन्तक (सं० पु०) पक्षिविशेष, किसी किस्मकी चिड़िया।

कलन्दक (सं० पु०) १ गोत्रप्रवरमुनिविशेष, किसी ऋषिका नाम। २ कलन्तक, एक चिड़िया।

कलन्दर (सं० पु०) कलं आचारविहितं वाचं शिष्टाचारं वा दृणाति, कल-दृ-खच्-मुम्। वर्णसङ्करजाति विशेष, एक दोगली कौम। सेट पुरुषके औरस और तीवर स्त्रीके गर्भसे कलन्दर निकले हैं।

क़लन्दर (अ० पु०) मुसलमान साधुविशेष, किसी किस्मका फ़क़ीर। यह संसारसे विरक्त रहते हैं। २ मदारी। यह भालू और बन्दर नचाते हैं।

कलन्दर देखो।

कलन्दर, कलन्दर देखो।

कलन्दरा (अ० पु०) १ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह रुयी, रेशम और टसरसे बनता है। २ कांटा, खूंटी। यह चौखटमें कपड़ा या रेशम लपेट कोई चीज़ टांगनेके लिये लगाया जाता है।

कलन्दरी (हिं० स्त्री०) कलन्दर लगा हुआ खेमा, खूंटीदार छोलदारी।

कलन्दिका (सं० स्त्री०) कलं ज्ञानं सर्वांशेन ददाति, कल-दा-क संज्ञायां कन्-टाप् अत इत्वम् पृषोदरादित्वात् मुम् च। सर्वविद्या, इल्म, सब ज्ञान सिखानेवाली समझ।

कलम्बु (सं० पु०) कलायाः मात्राया अम्बुरिव, शकन्ध्वादित्वाल्लोपः। कोलीशाक, एक भाजी।

कलप (हिं० पु०) १ कलफ़, कपड़े पर चढ़ाया जानेवाला एक लेप। २ खिज़ाब, बाल काले करनेका रोगन। ३ कल्प। कल्प देखो।

कलपत्तर (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह शिमले और जौनसरमें अधिक उपजता है। इसका काठ श्वेतवर्ण तथा सुदृढ़ रहता और गृहनिर्माण एवं कृषिके यन्त्रादिमें लगता है।

कलपना (हिं० क्रि०) १ दुःख करना, बिलपना, रह रहके रोना। २ कलप चढ़ाना, कलफ़ लगाना। ३ कल्पना करना, अन्दाज़ लगाना।

कलपना (हिं०) कलना देखो।

कलपनी (हिं०) कलना देखो।

कलपाना (हिं० क्रि०) दुःख दिलाना, तरसाना, रुलाना।

कलपून (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह वृक्ष उत्तर एवं पूर्व बङ्गालमें उपजता और सतत हरित रहता है। काठ रक्तवर्ण तथा सुदृढ़ निकलता, बहुमूल्य पड़ता और गृहके निर्माण कार्यमें लगता है।

कलपोटिया (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसका पोटा कृष्णवर्ण होता है।

कलप्पा (हिं० पु०) द्रव्यविशेष, एक चीज़। यह कठोर तथा श्वेत वर्ण रहता और कभी कभी नारिकेलके अभ्यन्तरमें मिलता है। चीना लोग इसे बहुमूल्य समझते और 'नारियलका मोती' कहते हैं।

कलफ़ (हिं० पु०) तण्डुल या आरारोटका तरल लेप, चावल या आरारोटकी पतली लेई। इसे माड़ी भी कहते हैं। यह वस्त्रका आस्तरण कठिन तथा समान बनानेमें लगता है। २ मुखका कृष्णवर्ण चिह्न, झांईं, चेहरेका कालापन।

कोल जातिके नामसे कलकत्ता शब्द निकलता है। इसलिये अब विवेचना करना चाहिये—कैसे कलकत्ता नाम पड़ा था।

आजकल बङ्गाली कलिकाता और हिन्दुस्थानी कलकत्ता कहा करते हैं। किन्तु आजकल इस बात पर बड़ा सन्देह है—अकबरके समयमें एवं अङ्ग-रेजोंके आनेसे पहले इस स्थानको क्या प्रकृतरूप कलिकाता अथवा कलकत्ता कहते थे? हम पूर्व बतला चुके—आईन-इ-अकबरीमें 'कलकत्ते महाल' और कविकङ्कणके मुद्रित चण्डीग्रन्थमें 'कलिकाता' नामका उल्लेख मिला है। किन्तु दूसरा विषम विभ्राट् यह उपस्थित हुवा—एशियाटिक सोसाइटीके प्रथम प्रकाशित आईन-इ-अकबरी ग्रन्थमें सातगांव सर-कारके बीच कलकत्ता महालके उल्लेखसे नीचे 'कालता', 'कल्ना', 'तलपा' आदि पाठान्तर पड़ा है। फिर मुद्रित पुस्तकमें रहते भी कविकङ्कण-रचित चण्डीमङ्गलकी कई प्राचीन पोथियोंमें 'कलिकाता' नाम नहीं मिलता। सिवा इसके अकबरके समसामयिक कवि माधवाचार्यके चण्डी ग्रन्थमें धनपति एवं श्रीमन्तकी समुद्रयात्राके प्रसङ्गमें वराहनगर, चितपुर, कालीघाट प्रभृति पार्श्वस्थ स्थानोंका उल्लेख आया है। किन्तु कलकत्ता नाम उसमें भी देख नहीं पड़ता। ईष्ट-इण्डिया-कम्पनीके पत्रादि ढूंढनेसे सर्व प्रथम १६८८ ई०की ११वीं अगस्तको कलकत्ता (Calcutta) नामका उल्लेख मिलता है। इसलिये बड़ा सन्देह उपस्थित हुवा है—ई० १६ वें शताब्दसे पूर्व 'कलिकाता' या 'कलकत्ता' नाम वर्तमान था या नहीं। कारण फोनन्दाज वालेण्टाइनके मानचित्रमें प्राचीन कलकत्ता ग्रामके उभय पार्श्वस्थ चिह्नानुटी (वा सुतानुटी) और गोवर्णपुर (वा गोविन्दपुर)का उल्लेख पड़ा है। किन्तु कलकत्तेका नाम कहीं नहीं। फिरभी दूसरे स्थान पर वालेण्टाइनने किसी कल-कत्ता (Calcuta) ग्रामकी बात लिखी है। करनेल यूल साहब उक्त स्थानको 'खोलखाली' अनुमान करते हैं। कम्पनीके समय किसी अतिप्राचीन समुद्र-यात्रीके मानचित्रमें 'कलकत्ता'के स्थान पर कलकत्ता (Calcutta) लिखा देख पड़ता है। फिर टामस किचेन नामक किसी भौगोलिकने कलकत्ता (Calcutta) की जगह 'कलकला' (Culcula) नाम व्यवहार किया है। यूलके कलकत्ताको 'खोलखाली' मानते भी आनुषङ्गिक प्रमाणसे समझ पड़ता—किसी समय कलकत्तेको कोई कोई 'कलकला' भी कहता था। वास्तविक १६८८ ई०से पहले किसी पत्रादिमें स्पष्टतः कलकत्तेका उल्लेख नहीं आया। फिर १६५६ ई०को फोनन्दाज् मानचित्रमें सुतानुटी और गोविन्दपुरका नाम मिलते भी कलकत्ता छिपा है। हां एक स्थल पर उसमें 'कलकला' नाम लिखा है। इससे अनुमान किया जा सकता कि कलकत्तेका प्राचीन नाम 'कलकला' था।

राजा राधाकान्तदेवने अपनी शेषावस्थाको वृन्दा-वनधाममें एक बंगला पदावली बनायी थी। उन्होंने अपनी मुद्रित पदावलीके मुखबन्धमें 'कलिकाता' स्थान पर 'किलकिला' नाम दिया है। इससे समझ पड़ता, कि राजा राधाकान्तको कलकत्तेका अपर नाम किल-किला अवश्य अवगत था। राजा प्रतापादित्यके सम-सामयिक कविरामने अपने बनाये दिग्विजयप्रकाशमें 'किलकिला' भूमिका विवरण लिखा है। उसे हम पहले ही यथास्थान वर्णन कर चुके हैं। इसमें सन्देह नहीं, कि उक्त भूमि ही आईन-इ-अकबरीका 'महाल कलकत्ता'* रही। यह असम्भव कैसे हो सकता, कि उसी किलकिलाको बिगाड़ कर फोनन्दाज भौगो-लिकने 'कलकला' लिखा था। कविरामके दिग्विजय प्रकाशमें एक स्थल पर किलकिलाका वर्णन मिलता है। उससे किलकिला भूमिके अन्तर्गत किलकिला नामक ग्राम भी समझ सकते हैं,—

"किलकिला दक्षिणामे योजनत्रयमध्यतः।
सहस्रधारा गङ्गा हि ग्रामा च बहिर्वोटवे॥"
(किलकिला विवरण १८० श्लो०)

उक्त किलकिला प्राचीन कलकत्ता ग्राम ही मालूम

* यह वर्तमान शहर कलकत्ता हो नहीं सकता। कारण अकबरसे बहुत पीछे ईष्ट इण्डिया कम्पनीके प्रथम अधिवेशन आदिके समय कलकत्ता एक सामान्य ग्राम कहाता था।

कलफा (हिं॰ स्त्री॰) देशीय दारचीनीकी त्वक् या छाल। यह मलयरमें उत्पन्न होती है। चीनकी दार चीनीको सुलभ बनानेके लिये इसे मिला देते हैं।

कलब (हिं॰ पु॰) एक रंग। यह टेसूके फूल उबालकर बनाया जाता है। फिर इसमें कत्था, लोध और चूना डाल अगरई रंग तैयार करते हैं।

कलबल (हिं॰ पु॰) १ उद्योगउपाय, जोड़ तोड़, दांवपेंच। (स्त्री॰) २ कोलाहल, हल्ला-गुल्ला। (वि॰) ३ अस्पष्ट, साफ़ समझ न पड़नेवाला।

कलबीर (हिं॰ पु॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह हिमालय पर उत्पन्न होता है। इसका मूल रेशम पर पीत वर्ण चढ़ानेमें लगता है। कलबीर भांगके पौदेसे मिलता-जुलता रहता है।

कलबूत (हिं॰ पु॰) १ उपष्टम्भ, कालबुद, सांचा। २ जूता सीनेका ढांचा। यह काष्ठमय होता है। ३ चौगोशिया या अठगोशिया टोपी बनानेका ढांचा। यह मट्टी, लकड़ी या टीनका होता है। इसे गोलम्बर और कालिब भी कहते हैं।

कलभ (सं॰ पु॰) कलेन करेण शुण्डेन, भाति कलभा-क यद्वा कल-अभच्। कृशृशलिकलिगर्दिभ्योऽभच्। उण् ३।१२२। १ पञ्चवर्षपर्यन्त करिशावक, पांचवर्ष तक हाथीका बच्चा। इसका संस्कृत पर्याय—करिशावक, व्याल और दुर्दान्त है। २ हस्ति मात्र, हाथी। "मदा रगन्ते कलभा विकल्पैः।" (माघ) ३ उष्ट्र, ऊंट। ४ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पेड़।

कलभवल्लभ (सं॰ पु॰) कलभस्य हस्तिशावकस्य वल्लभः प्रियः, ६-तत्। पीलुवृक्ष, पीलूका पेड़। इसे हाथीका बच्चा बड़ी रुचिसे खाता है।

कलभवल्लभा (सं॰ स्त्री॰) पिकी, कोकिला।

कलभाषण (सं॰ क्ली॰) बालालाप, बच्चोंकी बातचीत या बातचीत।

कलभी (सं॰ स्त्री॰) कं जलं आश्रयतया लभते, क-लभ-अच् गौरादित्वात् ङीष्। चञ्चु क्षुप, चेंचका पौदा।

कलभैरव (सं॰ पु॰) कलं भैरवश्च, कर्मधा॰। १ भयङ्कर अव्यक्त शब्द, समझ न पड़नेवाली खौफ़नाक आवाज़। "रक्षसां दिनैः कलभैरवः।" (माघ) २ तासी और नर्मदा नदीके मध्यवर्ती पर्वतका एक गभीर कन्दर या नाला।

कलम (सं॰ पु॰) कलयति अक्षरं जनयति, कल णिच्-अम। कलिकर्दोरमः। उण् ४।८४। १ लेखनी, लिखनेका औज़ार। इसका संस्कृत पर्याय—लेखनी, वर्णतुली और अक्षरतुलिका है। २ शालिधान्य विशेष, किसी क़िस्मका धान। राजवल्लभके मतसे यह कषायरस, चक्षुके लिये हितकर और रक्त दोष तथा त्रिदोषनाशक होता है। काश्मीरमें इसे महालगड़ल कहते हैं। ४ वाद्ययन्त्रविशेष, एक बाजा। आकारमें लेखनीसे मिलनेके कारण ही यह कलम कहलाता है। ईरान, अफ़ग़ानिस्तान और यूनान प्रभृति देशमें इसका नाम कलम ही चलता है। एक मुख कलमकी भांति कर्तित और अपर मुख अन्यान्य वंशोंकी भांति अनावृत रहता है। दैर्घ्य अपेक्षाकृत अल्प लगता है। तारके रन्ध्र सात होते हैं। कलम सरल भावसे बजाया जाता है। फूंकनेकी जगह सहनाईकी भांति एक छोटा नल लगता है।

कलम (अ॰ पु॰-स्त्री॰) १ लेखनी, लिखनेका एक औज़ार। यह सरकण्डेको छड़ काट कर बनायी जाती है। अंगरेज़ी कलम लकड़ीके दस्तेमें लोहेकी जीभ लगानेसे तैयार होती है। २ वृक्षकी एक शाखा, पेड़की कोयी डाल। यह काट कर दूसरी जगह लगायी या दूसरे पेड़में मिलायी जाती है। ३ कलमी पौदा। ४ धान्यविशेष, जड़हन। इसे पहले किसी खेतमें बो देते, फिर उखाड़ कर दूसरी जगह जमा लेते हैं। ५ कनपटीके बाल। यह बनानेमें छोड़ दिये जाते हैं। ६ वाद्यविशेष, किसी क़िस्मकी बांसुरी। इसमें सात छिद्र रहते हैं। ७ यन्त्रविशेष, बालोंकी कूची। यह चित्र बनाने या रंग चढ़ानेके काम आती है। ८ काचखण्डविशेष, शीशेका एक टुकड़ा। यह लम्बी रहती और झाड़में लगती है। ९ शोरे नौ-सादर वगैरहका जमा हुवा लम्बा टुकड़ा। यह रवादार होता है। १० फुलझड़ी। ११ कारुकार्यका यन्त्रविशेष, बारीक नक़्क़ाशी करनेका एक औज़ार। इसे सोनार या संगतराश व्यवहार करते हैं। १२ अक्षर

होता है। सम्भवतः किलकिला ही कलकत्तेका अति प्राचीन नाम है। किलकिलाके अपभ्रंशसे ही आईन-इ-अकबरी प्रभृति ग्रन्थमें कलकता, कलूता, कलूना, कलकत्ता, कलकत्ता, कलिकता आदि शब्दकी उत्पत्ति है। मालूम पड़ता, कि भाषामें लिपि भिन्न भिन्न आईन-इ-अकबरी ग्रन्थमें पाठान्तर चलता है। दूसरे किलकिला शब्द भाषान्तरसे बिगड़के कलकत्ता, कलकता, कलकत्ता हो सकता है।

गोविन्दपुर नामकी उत्पत्ति।

कलकत्तेके भूतपूर्व कलकर होलवेल साहबके मतसे गोविन्दराम मित्रके नामसे गोविन्दपुर बना है। फिर बड़े बाजारके सेठ बसाकोंके कथनानुसार यहां उनके इष्टदेव गोविन्दजीका मन्दिर था। उसीसे इस स्थानका नाम गोविन्दपुर पड़ गया। यह दोनों मत विशेष युक्तिसङ्गत मालूम नहीं होते। प्रथमतः गोविन्दराम मित्रके बहुत पहले गोविन्दपुर नाम विद्यमान था। द्वितीयतः यदि गोविन्दजीके नामसे गोविन्दपुर निकलता, तो सकल प्राचीन ग्रन्थोंमें गोविन्दपुरके साथ गोविन्दजीका उल्लेख अवश्य मिलता। कविराम विरचित दिग्विजयप्रकाश नामक ग्रन्थमें गोविन्दपुरके नामकरण सम्बन्ध पर जो विवरण मिला, उसे नीचे लिखा है,—

"[illegible]
[illegible] ॥ १०५१
[illegible]
[illegible] ॥ १०५२
[illegible]
[illegible] ॥ १०५३
[illegible]
[illegible] ॥ १०५४
[illegible]
[illegible] ॥ १०५५
[illegible]
[illegible] ॥ १०५६
[illegible]
[illegible] ॥ १०५७
[illegible]
[illegible] ॥ १०५८
[illegible]
[illegible] ॥ १०५९
[illegible]
[illegible] ॥ १०६०
[illegible]
[illegible] ॥" १०६१

हे नृपश्रेष्ठ! अब आरम्भकी कथा सुनिये। काली देवीके निकट गङ्गाके पूर्व तट पर ४४०० कलाब्दको सिन्धुसङ्गम (गङ्गासागर) तीर्थ यात्रा करके गोविन्ददत्त राजा आये थे। वह सकुशल तीर्थसे लौट पड़े। फिर रातको स्वप्नमें काली देवीने उन्हें कौशलसे आदेश दिया,—"हे राजन्! मेरी आज्ञासे तुम सुवर्णपुरीको बनो और आदरसहित दुश्विदोंको यथादिक यहां मेरे निकट एक बड़ी पुरी स्थापन करो। नहीं तो तुम्हारा अमङ्गल होगा।" कालीदेवीकी बात मान राजाने गङ्गातटके ऊपर पर बड़ी बस्ती बसायी। पारीन्द्र आसके नव उत्तम संज्ञा सुरसरित्के तटपर लोग बसाये गये। देवीके वृक्ष पर दो हंस रहे थे। उनके प्रादेशसे वृक्षोंके नीचे खोदने पर कुलिशाके मध्यभागमें काञ्चनका ढेर देख पड़ा, जो देवी और पुरीको भी अलभ्य था। भूरि भूरि द्रव्य पानेसे समय ही गोविन्द भूपने चतुःषष्टि बलि द्वारा पूजन किया। गौड़, विश और लेख प्रदेशसे गोविन्ददत्त महान् वर्धित प्रवर भूमिप बन गये। फिर उन्होंने पुरीके वर्धन हेतु भागीरथीके पूर्व तट पर ब्राह्मणोंको बोलाकर वासस्थान किया।'

कविरामको यह वर्णनासे समझ पड़ा, कि राजा गोविन्ददत्तसे इस स्थानका नाम 'गोविन्दपुर' पड़ा था।

सूतानुटी।

पहले सूतानुटीके सम्बन्धमें बहुत भी बातें कह चुके हैं। वहां पहलेहीके पासमे पहले तन्तुवाय (जुलाहे) सूतका नोला (नुटी या लुटी) बना (अब समझते सूतानुटीके) बाजारमें (वर्तमान हटखोलेके पास) बेचते थे। इसी बाजारका नाम सूतानुटीका हाट रहा। बाजारके नामसेही सूतानुटी नाम था। इसी

खोदनेका यन्त्रविशेष, हरफ़ खोदनेका एक औज़ार। इससे मुहर बनती है। ११ काटने, खोदने और नक़्क़ाशी करनेका यन्त्रमात्र या कोई औज़ार।

कलमष, कल्मष देखो।

कलमकार (फ़ा॰ पु॰) १ चित्रकार, मुसव्वर। यह क़लमसे तसवीरमें रंग भरता है। २ लेखनीसे कारुकार्य करनेवाला, जो कलमसे खोदी दस्तकारी करता हो। ३ वस्त्रविशेष, एक छापृता कपड़ा। इसमें तरह तरहके बेल बूटे रहते हैं।

कलमकारी (फ़ा॰ स्त्री॰) लेखनीका कारुकार्य, क़लमकी कारीगरी।

कलमकोली (हिं॰ स्त्री॰) मल्लयुद्धकौशलविशेष, कुश्तीका एक पेंच। इसमें खेलाड़ी अपने दाहने हाथका पञ्जा दूसरेके बायें पञ्जेमें फंसाता और अपना दाहना हाथ खींच उसका बायां हाथ अपनी गरदन पर लाता है। फिर खेलाड़ी अपनी दाहनी कोहिनी उसकी बायीं कलाई पर पहुंचा और नीचेको दबा उसे चित मारता है।

कलमख (फ़ा॰ पु॰) किसी क़िस्मका पत्थर। यह बलूचिस्तानमें अधिक उत्पन्न होता है।

कलमग़ (हिं॰) कलम्ब देखो।

क़लमतराश (फ़ा॰ पु॰) १ क़लम बनानेका चाकू, तेज़ छुरी। २ अक्षरकी खूंटी। यह कहारों और हाथीवानोंकी बोली है।

क़लमदान (फ़ा॰ पु॰) सम्पुटविशेष, क़लम वग़ैरह रखनेका एक छोटा सन्दूक़। यह पतला और लम्बा होता है। इसमें क़लम, दवात, चाक़ू वग़ैरह रखनेको खाने बने रहते हैं।

कलमना (हिं॰ क्रि॰) कलम काटना, टुकड़े उड़ाना।

कलमरिया (पोर्त॰ स्त्री॰) वायुके प्रवाहका प्रतिबन्ध, हवाका रुकाव।

कलमलना (हिं॰ क्रि॰) सङ्कुचित स्थानमें पड़ इतस्ततः हिलाना डुलाना, कुलबुलाना।

कलमलाना, कलबलाना देखो।

कलमा (सं॰ स्त्री॰) शालिधान्य, एक धान।

कलमा (अ॰ पु॰) १ वाक्य, जुमला। २ मुसलमानोंके धर्मका मूलमन्त्र।

कलमाच (हिं॰) कल्माष देखो।

कलमी (हिं॰) कलम्बी देखो।

कलमी (फ़ा॰ वि॰) १ लिखित, लिखा, हुआ। २ कलमसे पैदा, जो डाल काट कर लगानेसे उपजा हो। ३ कलम या रवा रखनेवाला।

कलमी शोरा (हिं॰ पु॰) रवेदार शोरा। कलमी शोरा भिगो देने और मैल उतार लेनेपर जमाकर बनाया जाता है। यह मामूली शोरेसे अच्छा रहता है।

कलमुंहा (हिं॰ वि॰) काले मुंहवाला। २ कलङ्कित, बदनाम।

कलमोत्तम (सं॰ पु॰) कलमेभ्यः शालिषु वा उत्तमः। सुगन्धशालि, एक खुशबूदार धान।

कलमोत्तमा (सं॰ स्त्री॰) कलमोत्तम देखो।

कलम्ब (सं॰ पु॰) कलते क्षिप्यते शत्रुं प्रति, कल-अम्बच्। १ शर, तीर। २ शाकनालिका, शाकका डण्ठल। ३ कदम्ब वृक्ष, कदमका पेड़। ४ सर्षप, सरसों। ५ धाराकदम्ब, कमदू।

कलम्ब (Colombo) सिंहलका एक जनाकीर्ण नगर। यह आजकल सिंहलकी राजधानी है। सिंहलवासियोंके प्राचीन पुस्तकमें इसका नाम 'कलम्' (समुद्रतट) लिखा है। १५०५ ई॰को पहले यहां पोर्तगीज़ आये थे। फिर १६५६ ई॰को अङ्गरेजोंने इसे अधिकार किया। कलम्बमें मायार उपसागरके निकट हिन्दुओंके बहुतसे देवमन्दिर बने हैं।

कलम्बक (सं॰) कदम्ब देखो।

कलम्बकुलक (सं॰ क्ली॰) एक तीर्थ। ([illegible])

कलम्बशालि (सं॰ पु॰) शालिधान्यविशेष, कड़वन।

कलम्बिक (सं॰ पु॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कलम्बिका (सं॰ स्त्री॰) कलम्ब टाप् अत इत्वम्। १ कलम्बीशाक, करेमू। कलम्बीव कायति प्रकाशते, कलम्बी-कै-क-टाप् ह्रस्वः पृषोदरादित्वात् साधुः। २ ग्रीवापश्चाद्भाग, गरदनकी पिछली रग। इसका अपर संस्कृत नाम मन्या है।

कलम्बियन (अं॰ पु॰) मुद्रायन्त्रविशेष, छापेका-

एक कल। इसमें दो लङ्गर लगते हैं—एक ऊपर और एक नीचे। ऊपरी लङ्गर पक्षी (चिड़िया)के आकारका रहता है। इसमें कमानी नहीं चढ़ती। कलस्क्रियमको हिन्दीमें चिड़ियाकल कहते हैं।

कलम्बी (सं० स्त्री०) के जले लम्बते, लवि स्रंसने अच् ङीष्। १ जलज लताविशेष, करेमू। इसका संस्कृत पर्याय—कलम्बी, कलम्बु और कलम्बिका है। (Convolvulus repens) राजवल्लभने इसे मधुर एवं कषायरस, गुरु और स्तन्यदुग्ध, शुक्र तथा श्लेष्मकारक कहा है। २ उपोदकीलता, पोय।

कलम्बु (सं० स्त्री०) के जले लम्बते, क-लम्ब-उण्। कलम्बीशाक, करेमू।

कलम्बुका, कलम्बी देखो।

कलम्बुट (सं० क्ली०) के जले लम्बते भासते, क-लम्ब-उटन्। १ हैयङ्गवीन, ताजे दूधका घी। २ नवनीत, मक्खन।

कलम्बू (सं० स्त्री०) के जले लम्बते, लम्ब बाहुलकात् ऊङ्। कलम्बीशाक, करेमू।

कलयक्ष (सं० पु०) सर्जरस, धूना।

कलरव (सं० पु०) कलः मधुरास्फुटो रवः ध्वनिर्यस्य, बहुव्री०। १ कपोत, कबूतर। "मौर्व्यमालादीपरि लिनीतुरिव 'कलरवः क्वणति" (आर्यासप्तशती १८१) २ कोकिल, कोयल। ३ वनकपोत,जङ्गली कबूतर। ४ कलध्वनि,मीठी आवाज़।

कलरिन (हिं० स्त्री०) जलौका लगानेवाली स्त्री, जो औरत जोंक लगाती हो। इसे कञ्जड़िन भी कहते हैं।

कलल (सं० पु०-क्ली०) कल्यते वेष्ट्यते अनेन, कल वृषादिभ्यः कलच्। १ जरायु, गर्भवेष्टनचर्म, झमलके लपेटकी झिल्ली। २ शुक्र और शोणितका प्रथम विकार। गर्भके प्रथम मास कलल उठता है। ऋतुस्नाता स्त्रीके स्वप्नमें मैथुन आचरण करनेसे गर्भ रह जाता है। किन्तु उस गर्भमें अस्थि प्रभृति पैतृक गुण नहीं होता। इसीसे कललमात्र निकल पड़ता है। (सुश्रुत)

कललज (सं० पु०) कललमिव जायते, कलल-जन-ड। १ राल, धूना। २ गर्भ, झमल।

कललजोद्भव (सं० पु०) कललजस्य उद्भवः उद्भवति यस्मात्, ५-तत्। शालवृक्ष, सालका पेड़।

कलवरिया (हिं० स्त्री०) मद्यपणागार, कलवारकी दुकान।

कलवार (हिं० पु०) जातिविशेष, एक कौम। यह हिन्दुस्थान और विहारके बनियोंसे उत्पन्न हैं। कलवार शराबका व्यवसाय करते हैं। कोई कोई समझता, कि खदिर बनानेवाली 'खैरवार' नामक वन्य जातिसे कलवार शब्द निकला है। फिर कोई 'कलवाला' शब्दसे कलवार नामकी उत्पत्ति बताता है। किन्तु इन बातोंमें कोई समीचीन मालूम नहीं पड़ती।

इस जातिके लोग प्रधानतः कई श्रेणियोंमें विभक्त हैं,—बनौधिया, बियाहुतिया या भोजपुरी, देशवार, जैसवार, अयोध्यावासी, खालसा और खरिदहा। सिवा इसके कलवारोंमें बहुतसे मुसलमान भी हैं। उन्हें 'रांकी' या 'कलाल' कहते हैं। बनौधिये मुसलमान कलालोंको रायबरेलीके रहनेवाले बताते हैं।

इस जातिमें विधवाविवाह प्रचलित है। बियाहुतियोंके कथनानुसार पहले विधवाविवाह प्रचलित न था, किन्तु पीछे होने लगा। फिर यह स्वजातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कहते—आदि पुरुषसे सब कलवार निकले हैं। आदि पुरुषके दो पत्नी रहीं। 'बियाही' और 'सगाई'। बियाही पत्नीके गर्भजात सन्तान बियाहुत और सगाई पत्नीके गर्भजात सन्तान अन्यान्य नामसे परिचित हैं। बियाहुत मद्यका व्यवसाय, मद्यपान और अपने हाथसे गोदोहन या वृषभका "अण्डच्छेद" नहीं करते। यह केवल ताड़ीका काम चलाते हैं। खरिदहा अपनी श्रेणीका नामकरण गाज़ीपुर ज़िलाके किसी ग्रामपर ठहराते हैं। उन्हें बियाहुतोंकी भांति निजहस्त गोदोहन और वृषभके अण्डच्छेदनसे अलग रहते भी मद्यपान वा मद्य व्यवसायमें कोई आपत्ति नहीं। दूसरे कलवार जैसवालोंको जारजवंश पुकारते हैं। किसी कलवारके 'जैसिया' नाम्नी एक उपपत्नी रही। उसीके गर्भजात सन्तानोंसे जैसवार निकले हैं। किन्तु जैसवारोंके कथनानुसार 'जैसपुर' नामक ग्रामसे इस श्रेणीका नामकरण

सार भूतशुद्धि आदि विधानकर शिष्यके देहपर मन्त्रोक्त न्यास करना पड़ता है। कुम्भस्थ देवताको पञ्चोपचारसे पुनर्वार पूज अलङ्कृत शिष्यको अन्य आसनपर बैठाते हैं। कुम्भके कल्पवृक्षरूप सकल पल्लव शिष्यके मस्तकपर रख मन ही मन मातृका जपपूर्वक वशिष्ठसंहितोक्त अभिषेकके मन्त्रसे कुम्भका जल शिष्यके शरीरपर सेचन करना चाहिये। शिष्य अवशिष्ट जलसे आचमन ले वस्त्रद्वय परिवर्तनपूर्वक गुरुके समीप उपवेशन करता है। फिर गुरु शिष्यसंक्रान्त और आत्मदेवताको एक समझ गन्धादि द्वारा पूजते हैं।

इसके पीछे मन्त्रसे शिष्यको शिखा बांध शिष्यके शरीरमें कलान्यास और मस्तकपर हाथ रख १०८ बार मन्त्र जप कर 'मैं अमुक मन्त्र तुम्हें सुनाता हूं' कहते हुये शिष्यके हाथपर जलदान करना पड़ता है। शिष्यको भी 'ददस्व' कहकर जल लेना चाहिये। फिर गुरु ऋष्यादियुक्त मन्त्र द्विजातिके दक्षिण कर्णमें तीन बार तथा वाम कर्णमें एकबार और स्त्री वा शूद्रके वाम कर्णमें तीन बार एवं दक्षिण कर्णमें एक बार सुनाते हैं। मन्त्रग्रहण पीछे शिष्यको गुरुके चरणपर गिर जाना और गुरुको उसे मन्त्र द्वारा उठाना चाहिये। शिष्य उठकर उक्त मन्त्र १०८ बार जपता और कुश, तिल एवं जल ले गुरुको स्वर्णखण्ड दक्षिणा तथा दीक्षाके ग्रहणकी समस्त सामग्री प्रदान करता है। अन्यान्य ब्राह्मणोंको भी यथाशक्ति दान दे परितुष्ट करना पड़ता है। गुरु मन्त्रदानके पीछे अपनी शक्तिकी रक्षाके लिये १००८ वा १०८ बार मन्त्र जपते हैं। अन्तमें ब्राह्मणोंको मिष्टान्न आदि खिला शिष्य भोजन करता है। कारण दीक्षाके दिन गुरु और शिष्य दोनोंको उपवास निषिद्ध है।

कलावन्त (हिं॰) कलावान् देखो।

कलावा (हिं॰ पु॰) १ सूत्रविशेष, सूतका एक लच्छा। यह टेकुवेमें लिपटा रहता है। २ मङ्गलसूत्र, राखीका लच्छा। इसका सूत्र रक्तपीत रहता है। इसे मङ्गल कार्यमें हस्त तथा कलस प्रभृति पर लपेट देते हैं। ३ हस्तीके कण्ठका एक सूत्र। इसमें कयी बड़े रहती हैं। महावत कलावेंमें अपना पैर डाल हाथीको हांकता है। ४ हस्तिकण्ठ, हाथीकी गरदन।

कलावान् (सं॰ पु॰) कलाः सन्त्यस्य, कला-मतुप् मस्य वः। १ सङ्गीतविद्यावित्, कलावन्त। २ चन्द्र, चांद। ३ नट, कलाबाजी करनेवाला। (त्रि॰) ४ कलाविशिष्ट, हुनरमन्द।

कलाविक (सं॰ पु॰) कलं आविकायति विशेषेण रौति, कल-आ-वि-कै-क। कलाधिक, मुरगा।

कलाविकल (सं॰ पु॰) कलया कामावेशेन विकलः यस्य, ५-तत्। चटक, चिड़ा। चटक देखो।

कलाविधितन्त्र (सं॰ क्ली॰) एक तन्त्रशास्त्र।

कलास (सं॰ पु॰) वाद्यविशेष, एक बाजा। यह अतिप्राचीन समयमें बजाया और चमड़ेसे मढ़ाया जाता था।

कलासारतन्त्र (सं॰ क्ली॰) एक तन्त्रशास्त्र।

कलासी (हिं॰ स्त्री॰) रेखाविशेष, एक सतर। दो तख्तोंके जोड़की लकीरको कलासी कहते हैं।

कलाहक (सं॰ पु॰) कलं आहन्ति, कल-आ-हन्-ड संज्ञायां कन्। काहल नामक वाद्ययन्त्र, एक बाजा।

कलि (सं॰ पु॰) कलते कलेराश्रयत्वेन वर्तते, १ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़। नलराजाके निर्यातनको किसी समय कलिने विभीतक वृक्षका अवलम्ब लिया था, इसीसे उसका नाम कलि पड़ गया। (वामनपु॰ १० अ॰) कलते स्पर्धते। २ शूर, वीर, बहादुर। कलन्ते स्पर्धमाना आपन्ते। ३ विवाद, झगड़ा। ४ युद्ध, लड़ायी। कलयति पापेन जड़यति। ५ युगविशेष, एक जमाना। चतुर्थ युगको कलि कहते हैं। कल्किपुराणमें कलियुगकी उत्पत्ति-कथा इस प्रकारसे लिखी है,—

प्रलयके अन्तमें लोकपितामह ब्रह्माने पृष्ठदेशसे पापमय मलिन घोर अधर्मकी सृष्टि की थी। अधर्मने अपनी मार्जारलोचना मिथ्या नाम्नी पत्नीके गर्भसे 'दम्भ' नामक पुत्र उत्पादन किया। फिर दम्भने माया नाम्नी स्वीय भगिनीके गर्भसे 'लोभ' नामक पुत्र और 'निकृति' नाम्नी कन्याको निकाला था। इन्हीं भ्राता भगिनीसे क्रोधने जन्म लिया। क्रोधके औरस

हुआ है। इसी प्रकार पूर्वोक्त कई निर्दिष्ट श्रेणियोंके तारतम्यसे अन्यान्य श्रेणियोंका विभाग कल्पना किया जाता है। बिआहुत और खरिदहा अपने वंश, मातामहकी गोष्ठी, पितृमातामहकी गोष्ठी या पितामहके मातामहकी गोष्ठीमें विवाह नहीं करते। यही चाल क्षेमशाखोंमें भी देख पड़ती है।

बिआहुत तथा खरिदहा ५से १४, ओमवार ५से १०, और अयोधिये ७से १४ वत्सर तक कन्याका विवाह देते हैं। किन्तु कन्याकी अपेक्षा वरका वयस कमसे कम अधिक रहना आवश्यक है। पुरुषका विवाह सब श्रेणियोंमें ८से १४ वर्ष तक हो जाता है। विवाहमें हिन्दुस्तानी बनियोंकी रीति रहती है। "सिन्दूरदान"के पीछे विवाह सम्पन्न होता है।

विवाहसे पहले 'घर देखो' 'वर देखो' और 'पानबांटी' तीन कुलाचार हैं। केवल अयोधियोंमें यह तीनों आचार देख नहीं पड़ते। वरके पिताको मर्यादाकी रक्षाके लिये कुछ नक़द रुपया देना पड़ता है। इस प्रथाको 'तिलक' कहते हैं। २१) रु०से अधिक तिलक नहीं चढ़ता। कलवार एकसे चार तक विवाह कर सकते हैं। प्रथमा पत्नीके बन्ध्या होने पर ही ऐसा अवसर पड़ता है। सभी श्रेणियोंमें विधवाविवाह चलता है। व्यभिचारिणी होनेसे यह पत्नीको छोड़ देते हैं।

धर्म—प्रायः कलवार वैष्णव होते हैं। फिर भी अन्यान्य ग्रामदेवताओंकी पूजा किया करते हैं। बिआहुत और खरिदहा श्रावण शुक्लके दो सोमवारोंको गोराय नामक देवतापर चावल और दूध चढ़ाते हैं। फिर उसी समय (श्रावण शुक्ल) बुध तथा बृहस्पतिवारके दिन 'काली' एवं 'बन्दी'को छागल तथा मिष्टान्न और मङ्गल वारके दिन 'गौरैया' देवताको स्तन्यपायी शूकर शावक एवं मद्य उत्सर्ग किया जाता है। श्रावण शुक्ल शनि-वारके दिन ओमवार 'बांकपीर' पर और भाद्र कृष्ण एकादशी तथा माघ शुक्ल एकादशी एवं चतुर्दशीको अयोधिये 'ब्रह्मदेव' पर पिष्टक एवं मिष्ट चढ़ाते हैं। उक्त सकल निवेदित द्रव्य कलवार स्वयं भोजन करते हैं। केवल उत्सर्गित स्तन्यपायी शूकरशावक खाया नहीं—मृत्तिकामें गाड़ा जाता है। पांच-पीरोंका प्रसाद मुसलमानोंको भी बांट देते हैं।

पूजादि और पौरोहित्यादिका काम एक श्रेणीके ब्राह्मण करते हैं। अयोधियोंके पुरोहित कनौजिये ब्राह्मणोंकी भांति सम्मानार्ह हैं। कलवार शवको जलाते हैं। त्रयोदश दिन श्राद्ध होता है। अयोधिये ७म वर्षसे न्यून मृत सन्तानका शव गाड़ देते हैं।

जीविका और अवस्था—शराब बनानेका व्यवसाय ही इनकी मूल जीविका है। अयोधियों, देशवालों और खालसाओंको छोड़ अन्यान्य श्रेणीके कलवार दूसरा व्यवसाय भी चलाते हैं। अधिकांश कृषिकार्य किया करते हैं। वाणिज्यादि चलानेवाले लोगोंको भी कलवारोंमें सम्भ्रम मिलता है। छोटे-नागपुरमें भक्त श्रेणीके कलवार व्यवसाय करनेसे समधिक सम्भ्रान्त हैं। किन्तु उनमें विलासिता देख नहीं पड़ती। सामान्य मजदूरोंकी भांति यह भी खाते पीते हैं।

यह अनाचरणीय हैं। ब्राह्मणादि कलवारोंका छूआ जल व्यवहार नहीं करते। आजकल अधिक लोग खेतीबारीमें लगे रहते हैं। कारण गवरनमेण्टने इनका जातिगत व्यवसाय अपने हाथमें ले लिया है।

सर्वापेक्षा चम्पारन और मुजफ्फरपुर जिलेमें कलवार अधिक रहते हैं।

कलविङ्क (सं० पु०) कलं मधुरास्फुटं यथा तथा रौति, कल-वञ्च-अच् पृषोदरादित्वात् चस्य ङत्वम्। १ चटक-पक्षी, गौरवा। इसका संस्कृत पर्याय—कुलिङ्ग और ग्रामकचटक है। भावप्रकाशमें कलविङ्कको शीतल, स्निग्ध, स्वादु, शुक्र एवं कफकारक और सन्निपात-नाशक कहा है। अरण्यचटक अतिशय शुक्रकारक है। २ कलिङ्गक वृक्ष, कसौंदेका पेड़। ३ कलङ्क, धब्बा। ४ श्वेतचामर, सफ़ेद चंवर। ५ त्वष्टाके पुत्र विश्वरूपका एक नाम। भागवतमें लिखा है,—

किसी समय इन्द्रने ऐश्वर्यके मदमें मत्त हो बृहस्पतिकी अवमानना की थी। इससे बृहस्पति अन्तर्हित हुये। फिर असुरोंने देवताओंको बहुत सताया। ब्रह्माने त्वष्टृपुत्र विश्वरूपको पौरोहित्यमें

और उसकी भगिनीके गर्भसे कलि उत्पन्न हुवा। उसका रूप तैलसंयुक्त अञ्जनकी भांति कृष्णवर्ण, मुख कराल, जिह्वा लोल, उदर काककी तरह और सर्वाङ्गमें पूतिगन्ध था। ऐसी ही भयानक मूर्तिके साथ वाम हस्त द्वारा उपस्थ धारण किये कलिने जन्म लिया और जन्म लेते ही स्त्री, मद्य, द्यूत, सुवर्ण प्रभृतिमें आसक्त हो गया। कलिके औरस और उसकी भगिनी दुरुक्तिके गर्भसे 'भय' नामक पुत्र तथा 'मृत्यु' नाम्नी कन्याकी उत्पत्ति हुयी। (कल्कि १ अ०)

कलियुगका लक्षण—जिस समय सर्वदा मिथ्या, तन्द्रा, निद्रा, हिंसा, विषादन, शोक, मोह, हीनता प्रभृतिका प्रभाव रहेगा, उसीका नाम कलिकाल पड़ेगा।

इस युगमें मनुष्य कामी और कटुभाषी होंगे। सकल जनपद दस्युपीड़ित रहेंगे। चारो वेद पाषण्डसे दूषित बन जायेंगे। राजा प्रजापीड़न करेंगे। ब्राह्मण शिश्न और उदरपरायण बनेंगे। ब्रह्मचारी व्रतशून्य और अशुचि निकलेंगे। भिक्षु परिवारपोषक देख पड़ेंगे। तपस्वी ग्राममें टिकेंगे। न्यायी अर्थलोलुप ठहरेंगे। फिर मनुष्यमात्र क्षुद्रकाय, अधिक भोजनशील और चौर्य माया प्रभृतिमें समधिक साहसी होंगे।

कलिकालमें भृत्य प्रभुको और तपस्वी व्रतको त्याग करेंगे। शूद्र तपोवेशके उपजीवी बन प्रतिग्रह लेंगे। सब मनुष्य उद्विग्न, अनवहार एवं पिशाचतुल्य हो अस्नात अवस्थामें भोजन करते भी अग्नि, देवता, अतिथि प्रभृतिको पूजेंगे। पिण्डोदक क्रिया लोप हो जायेगी। सकल ही स्त्रीरत और शूद्रसम बनेंगे। स्त्रियां अल्पभाग्य, अधिक सन्तानवती और सत्पतिकी अवज्ञाकारिणी निकलेंगी। कोयी विष्णुकी पूजा न करेगा। किन्तु कलिकालमें एक भलाई रहेगी, कि कृष्णनाम कीर्तन करनेसे ही मानवको मुक्ति मिलेगी। (गरुड़पु० ११० अ०)

उल्लासतन्त्रमें भी कलियुगका लक्षण कहा है,—इस युगमें वैदिकी शिक्षा, पौराणिकी शिक्षा और पापपुण्यको वेदसम्भव परीक्षा लोप हो जायेगी। स्थान स्थान पर गङ्गा छिन्नभिन्न देख पड़ेंगी। राजा म्लेच्छजातीय और धनलोलुप बनेंगे। स्त्रियां अतिशय दुर्दान्त, कर्कश, कलहरत और पतिनिन्दक निकलेंगी। पृथिवी अल्प शस्य उत्पादन करेगी। मेघ अधिक न बरसेंगे। वृक्षोंमें स्वल्प फल लगेंगे। भ्राता, आत्मीय, अमात्य प्रभृति सामान्य मात्र धनके लिये परस्पर लड़ेंगे। मद्य पीने और मांस खानेमें कोई न हिचकेगा। सबकी निन्दा होगी। पापियोंको दण्ड न मिलेगा।

माघी पूर्णिमाको शुक्रवारके दिन कलियुगकी उत्पत्ति हुयी थी। इसका आयुःकाल चार लाख बत्तीस हजार (४३२०००) वत्सर है। आर्यभटके मतमें कलियुग १५७७९१७५० दिन रहता है।

श्रीमद्भागवतमें वर्णित है,—कलिमें मनुष्योंका ५० वर्ष परमायु होगा। कलिके दोषसे देहियोंका देह क्षीण पड़ जायेगा। वर्णाश्रमाचारी लोगोंका धर्मपथ बिगड़ेगा। धार्मिक पाषण्डप्राय बनेंगे। राजा दस्युप्राय निकलेंगे। मनुष्य चौर्य, मिथ्या, वृथाहिंसा आदि नाना वृत्तियां पकड़ेंगे। ब्राह्मण आदिवर्ण शूद्रप्राय ठहरेंगे। गो छागलप्राय रहेंगी। बन्धु यौनप्राय होंगे। मेघ विद्युत्प्राय देख पड़ेंगे। ओषधिका गुण घटेगा। पर्वत नीचेको झुकेंगे। गृह शून्यप्राय और धर्मरहित बनेंगे। लोग दुःखचेष्टित देख पड़ेंगे। फिर धर्मके परित्राणको सत्वगुणसे भगवान् कल्कि अवतीर्ण होंगे। आप (परीक्षित)के जन्मसे महानन्दके राज्याभिषेक पर्यन्त १११५० वर्ष बीतेंगे। उस नक्षत्रात्मक सप्तर्षि मण्डलके मध्य उदयके समय दो नक्षत्ररूप ऋषि आकाशमें प्रथम उदित होते देख पड़ते हैं। उन दोनोंके बीच समदेशपर अवस्थित अश्विनी आदि नक्षत्र रातको रहते हैं। उनमें एक एकसे मिल सप्तर्षि मनुष्य परिमाणके सौ सौ वत्सर अवस्थिति करते हैं। वह सकल ऋषि अब आप (परीक्षित)के समयमें मघाको पकड़े हुये हैं। सप्तर्षिमण्डलके मघानक्षत्रमें घूमनेसे कलिकी प्रवृत्तिके १२०० वर्ष बीतेंगे। फिर सन्ध्या अतिक्रान्त होगी। जिस समयसे सप्तर्षिमण्डल मघा छोड़ पूर्वाषाढ़ाको चलेगा, उस समय अर्थात् नन्दाभिषेक तक कलि अतिशय बढ़ेगा। जिस दिन कृष्णका वैकुण्ठ जाना हुवा, उसी दिनसे कलियुग लगा

सगा असुर संग्राममें उतरनेके लिये उपदेश दिया। देवगण भी तदनुसार उन्हें पुरोहित बना कार्य सम्पादन करने लगे। किन्तु विश्वरूप पितामह-वंशके प्रति स्वाभाविक स्नेहवशतः छिपकर असुरोंको यज्ञ भाग दे देते थे। क्रमशः इन्द्रको यह बात अवगत हुयी। उन्होंने क्रोधमें विश्वरूपके मस्तक काट डाले। उनके तीन मस्तक थे,—कपिञ्जर, कलविङ्क और तित्तिर। जिस मुखसे वह सुरापान करते, उसे कलविङ्क कहते थे। (८८ अ०) ६ तीर्थविशेष। ७ पारावत, कबूतर। ८ ग्रामचटक, गांवका गौरवा। ९ कृष्णचटक, काला गौरवा।

कलविङ्कविनोद (सं० पु०) नृत्यकी एक चाल, नाचका एक ढंग। इसमें मस्तकपर दोनों हाथ ले जाकर घुमाये जाते हैं। फिर उन्हें पसली पर लगाकर नीचे ऊपर चलाते हैं।

कलश (सं० पु०) कलं मधुरास्फुटशब्दं यथा जलपूरणसमये प्राप्नोति, कल-श गतौ ड। जलाधारविशेष, घड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—घट, कुट, निप, कलस, कलसि, कलसी, कलशि, कलशी, कुम्भ और करीर है। तन्त्रसारोक्त कलावतीके दीक्षा-प्रकरणमें कलशका परिमाण इस प्रकार लिखा है,—"कलश व्यासमें ४० अङ्गुलि और उच्चतामें सोलह अङ्गुलि रहना चाहिये। मुख आठ अङ्गुलि होता है। फिर ३६ अङ्गुलि विस्तार और उच्चताविशिष्ट कलशको कुम्भ कहते हैं। यह सोलह या बारह अङ्गुलिसे कम रहना चाहिये।" २ द्रोणपरिमाण, ८ सेरकी तौल।

कलशदिद् (वै० पु०) कलशस्य दीदरणम्, कलश-दृ भावे क्विप्। याज्ञिक कलश विदारण, पूजाके घटकी तोड़ फोड़।

कलशपोतक (सं० पु०) सर्पविशेष, किसी नागका नाम।

"आर्यकश्चोपकश्चैव नागः कलशपोतकः।" (भारत, आदि ३५ अ०)

कलशि (सं० स्त्री०) कलं शरीरमालिन्यं श्यति नाशयति, कल-शो-इनि। १ पृश्निपर्णी, पिठवन। कल-श-ङि। २ घट, घड़ा।

"कलशिमुदधिगुर्वीं बल्लवा लोडयन्ति" (माघ)

कलशी (सं० स्त्री०) कलशि-ङीप्। १ नगरविशेष, गगरी। २ पृश्निपर्णी, पिठवन। ३ तीर्थविशेष।

कलशीकण्ठ (सं० त्रि०) कलश्याः कण्ठ इव कण्ठः यस्य, बहुव्री०। १ कलशीके कण्ठकी भांति कण्ठयुक्त, सुराहीदार गरदनवाला। (पु०) २ ऋषिविशेष।

कलशीपदी (सं० स्त्री०) कलशीकी भांति पद रखनेवाली, जिसके घड़े-जैसा पैर रहे।

कलशीमुख (सं० पु०) वाद्ययन्त्र विशेष, एक बाजा। इसका मुख कलशीकी भांति होता है।

कलशीसुत (सं० पु०) कलश्याः सुत इव कलशीतः उत्पन्नत्वात्। अगस्त्य मुनि। अगस्त्य देखो।

कलशोदर (सं० पु०) कलश इव उदरमस्य, बहुव्री०। १ दानवविशेष। (हरिवंश २३० अ०) (त्रि०) कलशकी भांति उदरविशिष्ट, जिसके घड़े-जैसा पेट रहे।

कलस (सं० पु०) केन जलेन लसति शोभते, क-लस्-अच्। १ कलश, घड़ा। २ द्रोण परिमाण, ८ सेरकी तौल। ३ कुम्भ। कालिकापुराणमें लिखा है,—अमृतकुम्भको देवासुरके सागर मथते समय विश्वकर्माने देवोंकी कलासे भी घट पृथक् पृथक् बनाये थे। इसीसे घटका नाम कलस पड़ा। निर्णयतन्त्रमें भी कहा है,—

"कलां कलां गृहीत्वा तु देवानां विश्वकर्मणा।
निर्मितो ऽयं सुरै र्यस्मात् कलसस्तेन कथ्यते॥"

४ नागविशेष, एक सांप। (महाभारत) ५ मन्दिरका शिखरमण्डल, इमारतकी चोटीका कंगूरा। ६ काश्मीरके एक राजा। इनका अपर नाम रणादित्य था। यह तुरुके पुत्र रहे। ९८५ शकको श्रावण मास तुरुने इन्हें राजा बनाया। राजा होते ही यह पिताको कुटिल दृष्टिसे देखने लगे। फिर इन्होंने तुरु पर बड़ा अत्याचार किया था। किन्तु मन्त्री उक्त अत्याचार सह न सके। अन्ततः प्रधान मन्त्रीने अनन्तने पिताको सिंहासन पर बैठाया। फिर कलस पिताके अधीन रहने लगे। भण्ड सम्मट इनके सहचर थे। क्रमशः उनके सहवाससे चरित्र इतना बिगड़ा, कि इन्होंने अपनी भगिनी और तनयाका सतीत्व नष्ट किया। वृद्ध राजा इनके आचरणसे अत्यन्त व्यथित

है। दिव्य परिमाणसे सहस्र वत्सर पीछे चतुर्थ कलि बीतनेपर पुनर्वार सत्ययुग आरम्भ होगा।

(भागवत १२श स्कन्ध, २ अ०, १०-२८ श्लो०)

इस युगमें धर्म एक पाद और अधर्म तीन पाद है। मनुष्यके आयुका परिमाण १०८ वत्सर और देहका प्रमाण अपने अपने हाथसे साढ़े तीन हाथ पड़ता है। अवतार श्रीकृष्ण हैं। युगके शेषको दशम अवतार कल्कि उत्पन्न हो पापियोंका विनाश साधन करेंगे। ब्राह्मण निरग्नि, अभगतप्राण और भोजनपात्रके अनियम बन जायेंगे। कलियुगका विशेष धर्म दान है। संहिता प्रभृतिमें लिखा है,—

"तपःपरं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते।
द्वापरे यज्ञमेवाहुर्दानमेकं कलौ युगे॥" (मनुसंहिता)

सत्ययुगमें तपस्या, त्रेतायुगमें ज्ञान, द्वापरमें यज्ञ और कलियुगमें दानमात्र विशेष धर्म है।

"तपःपरं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते।
द्वापरे यज्ञमेवाहुः कलौ दानं दया दमः॥" (महाभारत)

सत्ययुगमें तपस्या, त्रेतायुगमें ज्ञान, द्वापरमें यज्ञ और कलियुगमें दान, दया तथा दम विशेष धर्म है।

"त्रयीधर्मः कृतयुगे ज्ञानं त्रेतायुगे स्मृतम्।
द्वापरे चाध्वरः प्रोक्तः कलौ दानं दया दमः॥" (वृहस्पति)

सत्ययुगमें वैदिक धर्म, त्रेतामें ज्ञान, द्वापरमें यज्ञ और कलिमें दान, दया तथा दम विशेष धर्म है।

इसी प्रकार लिङ्गपुराण, अग्निपुराण प्रभृतिमें भी एकवाक्यसे दानका विषय अनुमोदित है।

कलियुगकी संहिताके निर्णय सम्बन्धमें पराशरने लिखा है,—

"कृते तु मानवो धर्मस्त्रेतायां गौतमः स्मृतः।
द्वापरे शङ्खलिखितौ कलौ पाराशरः स्मृतः॥"

सत्ययुगमें मनुसंहिता, त्रेतामें गौतम, द्वापरमें शङ्ख तथा लिखित और कलियुगमें पाराशरसंहिता धर्मशास्त्र है।

कलिके दोषकी शान्तिको लिङ्गपुराण, वृहन्नारदीय, महाभारत और शिवपुराणमें शिवपूजाका उपदेश दिया है। फिर स्कन्दपुराणमें एकमात्र शङ्कर ही कलियुगके देवता कहे गये हैं।

"ब्रह्मा कृतयुगे देवः त्रेतायां भगवान् रविः।
द्वापरे भगवान् विष्णुः कलौ देवो महेश्वरः॥" (स्कन्दपुराण)

सत्ययुगमें ब्रह्मा, त्रेतामें सूर्य, द्वापरमें विष्णु और कलिमें महेश्वर देवता हैं।

अन्यान्य स्थलोंमें कालिका और गोपालको कलिका जाग्रत देव माना है:—

"कलौ जागर्ति गोपालः कलौ जागर्ति कालिका।"

काशीवास, गङ्गास्नान प्रभृति कलिकालमें मुक्तिका उपाय है,—

"नान्यत् पश्यामि जन्तूनां मुक्त्वा वाराणसीं पुरीम्।
सर्वपापप्रशमनं प्रायश्चित्तं कलौ युगे॥
ये विशन्ति पुरीं प्राप्य न मुञ्चन्ति कदाचन।
विजित्य कलिजान् दोषान् यान्ति तत् परमं पदम्॥" (स्कन्दपुराण)

कलियुगमें वाराणसीपुरीको छोड़ जीवोंका सर्व पापनाशक प्रायश्चित्त दूसरा नहीं। जो ब्राह्मण इस पुरीमें आकर सर्वदा बना रहता, वह कलिज पापसे छूट परम पद पा सकता है। गङ्गास्नानके सम्बन्धमें लिखा है—

"कृते सर्वाणि तीर्थानि त्रेतायां पुष्करं स्मृतम्।
द्वापरे तु कुरुक्षेत्रं कलौ गङ्गैव केवलम्॥" (अग्निपुराण)

सत्ययुगमें समुदाय तीर्थ, त्रेतामें पुष्कर, द्वापरमें कुरुक्षेत्र और कलियुगमें एकमात्र गङ्गा ही को तीर्थ समझना चाहिये।

"गीता गङ्गा तथा भिक्षुः कपिलाश्वत्थसेवनम्।
वासरं पद्मनाभस्य अधमं न कलौ युगे॥" (महाभारत)

गीता, गङ्गा, भिक्षुक, कपिला, अश्वत्थ वृक्ष (पीपर-का पेड़) और हरिवासरकी सेवा को छोड़ कलियुगमें उत्तम धर्मकार्य नहीं होता।

हरिनामकीर्तनके माहात्म्य सम्बन्धपर कहा है,—

"ये ऽहर्निशं जगद्धातुर्वासुदेवस्य कीर्त्तनम्।
कुर्वन्ति तान् नरव्याघ्र न कलिर्बाधते नरान्॥
चक्रायुधस्य नामानि सदा सर्वत्र कीर्तयेत्।
नाशौचं कीर्तने तस्य स पवित्रकरो यतः॥
अज्ञानादथवा ज्ञानादुत्तमश्लोकनाम यत्।
सङ्कीर्तितमघं पुंसो दहेदेधो यथानलः॥" (विष्णुधर्मोत्तर)

जो दिन रात जगत्स्रष्टा वासुदेवका कीर्तन लगाता,

डाली गयी थी। फिर भी प्रमाण मिला, कि सुदूर विगतकाल पर कलादगीमें नगर स्थापित हुआ। ई०के २रे शताब्दमें टलेमिने यहांकी बादामी, कलकेरी और इन्दी नामक नगरोंका उल्लेख किया है। इन तीनोंमें बादामी या वातापीपुरी नामक ग्राम ही अतिप्राचीन है। चलुक्य राजावोंने दुर्भेद्य दुर्ग बना निराश्रय प्रथम प्रतापसे राजत्व रखा था। ई०के ६ठे शताब्दमें चालुक्य राजा १म पुलिकेशीने पल्लवोंको हटा बादामी अधिकार किया। पुलिकेशीके पीछे ७६० ई० तक चालुक्योंका राज्य चला। फिर राष्ट्रकूट राजा हुये। ८७३ ई०में राष्ट्रकूटवंश गिर जानेसे कलचुरि और हयशाल बल्लाल वंशकी ठहरी। उन्होंने ११८० ई० तक राज्य किया। अनन्तर कलादगीमें देवगिरिके यादवोंका शासन लगा। उस समय देवगिरि (वर्तमान दौलताबाद) नगरमें यादव राजावोंकी राजधानी रही। १२८४ ई०को अलाउद्दीनने देवगिरिपर आक्रमण किया। यादववंशीय रामचन्द्र देवगिरिके राजा थे। उन्होंने मुसलमानोंके आक्रमणसे घबरा दिल्लीके अधीश्वरकी अधीनता मानी। ई०के १५वें शताब्द यूसफ आदिल शाहने दक्षिणापथमें एक स्वाधीन राज्य जमाया। बीजापुर उनकी राजधानी बन गया। बिजापुर देखो।

पहले कलादगीके अनेक बोहलूप भील-परि-पालक दण्ड सुयाहको आकर देते थे। उन्होंने इस राज्यको ६००० मि (कोई साढ़े चार सौ कोस) विस्तृत किया है।

इस जिलेमें भीमा, कृष्णा, दोन, घाटप्रभा और मालप्रभा नदी प्रवाहित है। सिवा इनके और भी कितने ही छुद्र स्रोतस्वती विद्यमान हैं। दोनका जल बहुत खारी, किन्तु दूसरी नदियोंका मीठा है।

कलादगीमें लोहा, स्लेट (तख्तीका पत्थर), कालापत्थर, चूना, काच विलौर प्रभृति खनिज द्रव्य उत्पन्न होते हैं।

कृषिमें ज्वार, बाजरा, गेहूं और कपासकी उपज अधिक है। फिर चने, अलसी, तिल और कुसुमकी भी कोई कमी नहीं। कलमके आनन्दमें कुसुमका लुवडला कुम मिल जाता है।

इसमें व्याघ्र, शूकर, वृक (भेड़िये), शृगाल और हरिण रहते हैं।

जलवायु अत्यन्त मन्द नहीं। फिर भी यथा-कालको वृष्टि बन्द रहनेसे अच्छा शस्य कम उपजता, जिससे दुर्भिक्ष पड़ता है। १३९६ ई०से १४०६ ई० तक बहुवर्षव्यापी दुर्भिक्ष लगा था। इससे कलादगी जनशून्य हो उजाड़ हुआ। दूसरे भी कई दुर्भिक्ष पड़े। १७८१ ई०में अन्नके अभावसे सैकड़ों नरनारियोंने प्राण छोड़ा। इस अकालको लोग कहाकटी महामारी कहते हैं। वास्तविक अकालमें मरे असंख्य लोगोंकी कहास भूगर्भ खोदते समय आज भी मिलता है।

कलाधर (सं० पु०) कलाः धरति, कला-धृ-अच्। १ चन्द्र, चांद। २ चतुःषष्टिकलाभिज्ञ व्यक्ति, चौसठ कला जाननेवाला। ३ शिव। ४ छन्दोविशेष। यह दण्डकका भेद है। इसके प्रत्येक चरणमें १५ गुरु और १५ लघुके पीछे एक गुरु लगता है।

कलाधिक (सं० पु०) कुक्कुट, मुरगा।

कलानक (सं० पु०) शिवके एक अनुचर।

कलानाथ (सं० पु०) १ चन्द्र, चांद। २ गन्धर्वविशेष। इन्होंने कौशिकसे संगीत सीखा था।

कलानिधि (सं० पु०) कलाः निधीयन्ते ऽस्मिन्, कला-नि-धा-कि। १ चन्द्र, चांद। २ चतुःषष्टि कलाभिज्ञ व्यक्ति, हुनरमन्द।

कलानुनादी (सं० पु०) कलं अनुनदति, कल-अनु-नद-णिनि। १ मन्द मिठासमें मिठासे गानकारी, धीरे धीरे गानेवाला। २ भ्रमर, भौंरा। ३ कलविङ्क, गौरया। ४ चटक, चिड़ा। ५ कपिञ्जल, एक चिड़िया। ६ चातक, पपीहा।

कलान्तर (सं० क्ली०) अन्या कला अंशः, मयूरव्यंसकादि समासः। १ लाभवृद्धि, सूद, ब्याज। २ [illegible]

*पुष्टिर लाभवन्तश्च [illegible]

कलान्यास (सं० पु० [illegible]
तन्त्रोक्त न्यासविशेष। [illegible]
करना चाहिये। [illegible]

हे नरश्रेष्ठ! उसे कलि किसी प्रकार की बाधा नहीं पहुंचाता। सर्वदा सकल स्थानों पर चक्रपाणिका नाम लेना चाहिये। इसमें अशौचकी विवेचना आवश्यक नहीं। क्योंकि नामकीर्तन ही पवित्रकारक है। ज्ञान वा अज्ञानवश हरिनामकीर्तन करनेसे पुरुषके सकल पाप अग्निसे काष्ठराशिकी भांति जल जाते हैं।

"गोविन्दनाम्ना यः कश्चिन्नरो भवति भूतले।
कीर्तनादेव तस्यापि पापं याति सहस्रधा॥" (स्कन्दपुराण)

गोविन्द नामयुक्त किसी मनुष्यको पुकारनेसे भी सहस्र पाप विनष्ट होते हैं। महानिर्वाणतन्त्रमें लिखते हैं,—

"मध्यागेऽव्यविचाराणां न शुद्धिः श्रौतकर्मणा।
न संहितायैः स्मृतिभिरिष्टसिद्धिर्नृणां भवेत्॥ ६॥
विना ह्यागममार्गेण कलौ नास्ति गतिः प्रिये॥ ७॥
श्रुतिस्मृतिपुराणादि मयैवोक्तं पुरा शिवे।
आगमोक्तविधानेन कलौ देवान् यजेत सुधीः॥ ८॥" (२य उल्लास)

पवित्रापवित्र विचारहीन ब्राह्मण आदि वर्णों की शुद्धि वेदोक्त कर्म द्वारा न होगी। पुराण, संहिता और स्मृतिसेभी मनुष्य अपनी इष्टसिद्धि न पावेंगे। कलिकालमें आगमोक्त विधानसे देवताओंकी पूजा करना चाहिये।

"पशुभावः कलौ नास्ति दिव्यभावोऽपि दुर्लभः।
वीरसाधनकर्माणि प्रत्यक्षाणि कलौ युगे॥ १९॥
कुलाचारं विना देवि कलौ सिद्धिर्न जायते॥" (४ र्थ उल्लास)

कलियुगमें पशुभाव नहीं होता। फिर देवभाव भी दुर्लभ हैं। इस युगमें वीरसाधन प्रत्यक्ष फलदायक है। हे देवि! कलियुगमें कुलाचारको छोड़ दूसरे उपायसे सिद्धि मिल नहीं सकती।

महानिर्वाणतन्त्रमें यह भी लिखा है,—जो इन्द्रियोंको जीत कुलाचारका अनुष्ठान करेगा, जो दयाशील रहेगा, जो गुरुकी सेवामें तत्पर, पितामाताके प्रति भक्तिमान्, अपनी पत्नीमें अनुरक्त, सत्यव्रत, सत्यनिष्ठ एवं सत्यधर्मपरायण हो 'कुलसाधन' कोही सत्य समझेगा, जो हिंसा, मात्सर्य, दम्भ तथा द्वेष न रखेगा और जो कुलाचारके अनुसार स्नान, दान, तपस्या, तीर्थदर्शन, व्रत, तर्पण, गर्भाधान, पितृश्राद्ध प्रभृति करेगा, उसको कलि पीड़ा पहुंचा न सकेगा। कलिके दोषोंमें एक प्रधान गुण यह निकलता, कि कलियोंके सङ्कल्प मात्रसे श्रेय फल मिलता है। कलिका तारक ब्रह्मनाम है—

"हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥"

बृहन्नारदीयमें निम्नोक्त सकल कार्य कलिके लिये निषिद्ध कहे हैं;—समुद्रकी यात्रा, कमण्डलुका धारण, असवर्ण कन्याका विवाह, देवरसे पुत्रका उत्पादन, मधुपर्कमें पशुका वध, श्राद्धमें मांसका दान, वानप्रस्थाश्रम, अक्षता होते भी दत्तकन्याका पुनर्वार दान, दीर्घ काल पर्यन्त ब्रह्मचर्य, नरमेध, अश्वमेध, महाप्रस्थानगमन, गोमेध यज्ञ, आततायी रहते भी ब्राह्मणकी हिंसा, सुरापान, अग्निहोत्रकी हवनीमें भी लेहलीढ़ाका ग्रहण, (चाटचूट) वृत्त एवं स्वाध्याय सापेक्ष अशौच, सङ्कोच, मरणके अन्तमें प्रायश्चित्तका विधान, संसर्गका दोष लगते भी चौर्य प्रभृति दोषोंसे मुक्तिलाभ, दत्तक तथा औरसको छोड़ अन्य पुत्रका ग्रहण, गुरु एवं स्त्रीका परित्याग, दूसरेके लिये आत्मत्याग, उच्छिष्टका वर्जन, दास गोपाल आदिके अन्नका भोजन, गृहस्थके लिये अतिदूर तीर्थकी सेवा, गुरुस्त्री में शिष्यकी गुरुवत् वृत्ति, द्विजातियोंकी आपद्वृत्ति, अश्वस्तनिकता, ब्राह्मणका प्रवास, मुखसे अग्निधमन, (आग सुलगाना) बलात्कारादि दोषदुष्ट स्त्रीका ग्रहण, सर्वजातिसे यतिका भिक्षाग्रहण, ब्राह्मणादिके लिये शूद्रादिका पाक, पर्वतके उच्च स्थानसे गिर अथवा अग्निमें पड़ प्राणका त्याग प्रभृति।

युधिष्ठिर, हरिश्चन्द्र, मुनिचन्द्र, तेजःशेखर, विक्रमादित्य, विक्रमसेन, लाउसेन, बल्लालसेन, देवपाल, भूपाल एवं महीपाल-कई कलियुगके प्रधान राजा और युधिष्ठिर, विक्रमादित्य, शालिवाहन, विजय, नागार्जुन तथा बलि छह राजचक्रवर्ती शककारक हैं*। अब देखो।

६ देवगन्धर्वविशेष। कश्यपके औरस और दक्ष

*"युधिष्ठिरो विक्रमशालिवाहनौ धराधिनाथो विजयाभिनन्दनः।
इमेऽनु नागार्जुनमेदिनीपतिर्बलिः क्रमात् षट् शककारकाः कलौ॥"
(ज्योतिर्विदाभरण)

जानुसे नाभितक 'ओं प्रतिष्ठायै नमः', नाभिसे कण्ठ देश तक 'ओं विद्यायै नमः', कण्ठसे ललाट तक 'ओं शान्त्यै नमः' और ललाटसे ब्रह्मरन्ध्र तक 'ओं शान्तातीतायै नमः' मन्त्र द्वारा न्यास कर पुनर्वार उक्त सकल मन्त्र द्वारा ब्रह्मरन्ध्रसे यथाक्रम पदतल तक लौट आते हैं।

कलावत (हिं॰) कलावान् देखो।

कलाप (सं॰ पु॰) कलां मात्रां आप्नोति, कला-आप्-अण्, कला आप्यते अनेन, कला-आप्-घञ्-वा। ष्लय। पा ३।३।१। १ समूह, ढेर। २ मयूरपुच्छ, मोरकी पूंछ। ३ मेखला, चन्द्रहार। ४ अलङ्कार, जे़वर।

"बद्धल तुलाः कलपशुरस्य शुक्राकलापस्य च निस्वनस्य।" (कुमार)

५ तूण, तरकश। ६ चन्द्र, चांद। ७ चतुर, होशियार आदमी। ८ व्याकरण विशेष। कलाप-व्याकरणका अपर नाम कुमार और कातन्त्र है। कलापचन्द्र नामक संस्कृत ग्रन्थमें इस व्याकरणकी उत्पत्तिके सम्बन्ध पर लिखा है,—

राजा शालिवाहन किसी महिषीके साथ जलक्रीड़ा करते थे। जलके सेचनसे रानीने रतिके रसमें सुध बुध भूल राजाको कहा,—'मोदकं देहि देव' अर्थात् हे देव! मुझपर पानी मत डालो। मूर्खता वश राजाने उक्त स्वरघटित पद न समझ रानीको एक मोदक (लड्डू) दिया था। इससे बुद्धिमती रानीने यह कर निन्दा उड़ायी—मेरे पति होते भी राजा मूर्ख हैं। शालिवाहनने भार्याकी सब बात शर्ववर्मा गुरुसे कही थी। फिर शर्ववर्माने उनको शिक्षाके लिये कातन्त्र (कलाप-व्याकरण) बनाया। कातन्त्र वा कलापकी रचनाके सम्बन्धमें एक किम्वदन्ती है।

शर्ववर्मासे शालिवाहनको व्युत्पन्न बनानेके लिये प्रतिश्रुत हो कुमारकी आराधना लगायी थी। भगवान् कार्तिकेय आराधनासे प्रीत हो अपने व्याकरण ज्ञानके आविर्भावको 'सिद्धो वर्णसमाम्नायः' पद्यपादरूप सूत्र उन्हें प्रदान किया। कुमारसे व्याकरणका प्रथम सूत्र मिलने पर इसका दूसरा नाम 'कुमारव्याकरण' पड़ गया।

दूसरी किम्वदन्ती यह है,—शर्ववर्माने शालिवाह-नके निकट प्रतिज्ञा कर कुमारकी आराधना उठायी थी। कुमार मयूर पर चढ़ उनके समक्ष आविर्भूत हुये। शर्ववर्माने मयूरके कलापदेश पर 'सिद्धो वर्ण-समाम्नायः' सूत्र लिखा देखा था। यह देखते ही उनके मनमें व्याकरणका पूर्ण ज्ञान आ गया।

शर्ववर्माने उक्त सूत्रको प्रथम लगा स्वतन्त्र व्याकरण बनाया है। मयूरके कलापमें प्रथम सूत्र लिखा रहनेसे इस व्याकरणका नाम कलाप पड़ा।

कलाप-टीकाकारोंके मतानुसार शर्ववर्माने ईषत् तन्त्र अर्थात् अल्पसूत्रमें यह व्याकरण प्रणयन किया था। इसीसे इसका नाम कातन्त्र हुआ।*

भारतमें कलाप नाम प्रसिद्ध है। वैयाकरण पाणिनिसे नीचे इसीकी श्रेष्ठता मानते हैं। वास्तविक केवल कलाप व्याकरणको आद्योपान्त मन लगाकर पढ़नेसे विद्यार्थी पण्डित हो सकता है।

शर्ववर्माने कलापमें तीन अंशोंके सूत्र बनाये हैं,—सन्धि, चतुष्टय और आख्यात। उन्होंने कृत्सूत्र प्रणयन नहीं किये।

दुर्गसिंहने कलापकी वृत्ति बनायी थी। उनकी वृत्ति न लगनेसे कलापव्याकरण सम्पूर्ण और साधा-रणके लिये सुबोधगम्य कैसे होता। दुर्गसिंहने अपनी वृत्तिमें असाधारण पाण्डित्यका परिचय दिया है। वास्तविक उसको देख चमत्कृत होना पड़ता है।

दुर्गसिंह देखो।

कलाप व्याकरणकी अनेक टीकायें भारतमें प्रच-लित हैं। उनमें श्रीपति-रचित कलापवृत्तिटीका, त्रिलोचनकृत पञ्जिका, कविराजकृत कलापवृत्ति टीका, हरिरामकृत व्याख्यासार, रघुनाथशिरोमणि रचित व्याख्या, कातन्त्रचन्द्रिका और लघुवृत्ति प्रसिद्ध है।

---

* (१) "कातन्त्रमिति सति कुटुम्बधारणे पुरादिविषनः। तन्नाम्नो व्युत्पाद्यन्ते शब्दा अनेनेति कातन्त्रमित्युच्यतामण् (कलाप ३।३।१२) इति करणेऽल् प्रत्ययः। स चाल्पार्थेऽप्यत्रानुवर्त्तते ईषदर्थेऽपि वर्त्तते। तेन तन्त्रमिह सूत्रमुच्यते। ईषत् तन्त्रं कातन्त्रम्। कुत्सार्थे तत्रान्दे परे। का लोमहर्ष इव यति ईषदर्थे कादेशः।" (त्रिलोचनकृत कातन्त्रवृत्ति)
(२) "ईषत्तन्त्रं कातन्त्रम्। ईषच्छब्दो स्वल्पार्थवाचकः।" (कविराज तथा कातन्त्रचन्द्रिका)

कन्याके गर्भसे इन्होंने जन्म लिया था। ७ एक अति प्राचीन ऋषि। इनका नाम ऋक्‌संहितामें मिलता है। ८ सङ्गीतका अन्तरा। ९ शिव। १० वैष्णवोंका एक तिलक। इसकी आकृति पुष्पकी कलिकाकी भांति रहती है। फिर आदि तथा अन्त सूक्ष्म और मध्य स्थूल होता है। अति सुन्दर देख पड़नेसे इसे 'रसकलि' कहते हैं।

(स्त्री०) ११ कलिका, फूलकी कली।

कलिक (सं० पु०) कलो मन्दगभीरो ध्वनिरस्यस्य, कल मत्वर्थे ठन्। १ क्रौञ्चपक्षी, कराकुल या पनकुकड़ी चिड़िया। २ वंगधान्यभेद, बांगमें होनेवाला एक चावल।

कलिकर्म (सं० स्त्री०) युद्ध, लड़ाई।

कलिका (सं० स्त्री०) कलिरिव स्वार्थे कन्—टाप्। १ कली, गुञ्चा। इसका संस्कृत पर्याय—पुष्पकोरक, कलि और कली है।

"मुग्धामनालरजसा कलिकामकामे।
व्यर्थं कदर्थयसि किं नवमालिकायाः॥" (साहित्यदर्पण)

२ वीणाका मूलदेश, बीन या सितारकी जड़का हिस्सा। ३ रचनाविशेष, एक बनाव। तालवाले पदसमूहका नाम कला है। कलायुक्त रहनेसे ही इस रचनाको कलिका कहते हैं। कलिका छह प्रकारकी होती है,—चण्डवृत्त, दिगादि गणवृत्त, त्रिभङ्गीवृत्त, मध्य, मिश्र और केवल। चण्डवृत्तमें दशप्रकार संयुक्त वर्ण रहते हैं। मधुर, श्लिष्ट, विश्लिष्ट, शिथिल एवं ह्रस्वादि संयुक्त वर्ण ह्रस्व तथा दीर्घ भेदसे भिन्न हुवा करते हैं। ह्रस्व तथा मधुर संयोगसे शङ्कर, पङ्कज और किङ्करकी उत्पत्ति है। श्लिष्ट संयोगसे दर्प, कर्पर और सर्प वर्ण निकलते हैं। विश्लिष्टके संयोगसे भक्त, कल्माष और चित्ति बनते हैं। शिथिल संयोगसे पक्ष्म, कश्यप और यक्ष्म उठा करते हैं। फिर ह्रस्वादि संयोगसे मह्य, गुह्य, सह्य और प्रसह्य पाये जाते हैं। कोई कोई गर्हादि शब्दको ही ह्रस्वादि संयुक्त बताता है। दीर्घसंयोगसे तुङ्ग, अङ्ग, कार्पास, वात्स्य, वैश्य और वाह्लीक प्राप्त होते हैं। चण्डवृत्तमें द्वादशसे चतुःषष्टि पर्यन्त कलाका नियम है। इसमें न्यूनाधिक कर नहीं सकते। चण्डवृत्त दो प्रकारका होता है—नख और विशिख। फिर नख बीस प्रकारका है। वर्धित, वीरभद्र, समग्र, अच्युत, उत्पल, तुरङ्ग श्रीगुणरति-मातङ्गखेलित और तिलक। नो प्रकारको छोड़ अन्य भेदका नाम प्रायः देखनेमें नहीं आता। विशिख पांच प्रकारका होता है—पद्म, कुन्द, चम्पक, बकुल और वकुल। फिर पद्म छह प्रकारका है—पद्मोद्‌भव, सितकञ्ज, पाण्डूत्पल, इन्दीवर, अरुणाम्भोज और कह्लार। बकुल दो प्रकारका होता है—भासुर और मङ्गल। इसी भांति चण्डवृत्त बीस प्रकार बनता है। दिगादिगणवृत्त पांच प्रकारका है—कोटक, गुच्छ, सम्फुल्ल, कुसुम और गन्ध। त्रिभङ्गी वृत्त दण्डक और विदग्ध भेदसे दो प्रकारका होता है। मिश्रकलिका गद्यसम्पृक्ता और सप्तविभक्तिका भेदसे दो प्रकार है। केवला भी दो प्रकारकी है—अक्षरमयी और सर्वलघ्वी। ४ छन्दोविशेष।

"प्रथमपरचरणममलं यदि स यदि नयः। इतरदितरदितमपि यदि च तुर्यं चरणं गुरुकलविलसदरमिति कलिका सा॥" (वृत्तरत्नाकर ४ अ०)

प्रथम, द्वितीय एवं चतुर्थ एकरूप सगणाक्रान्त और तृतीय चरण अविज्ञात रहनेसे कलिका छन्द बनता है।

५ कला, चन्द्रकी ज्योतिका अंश।

"तस्मै कलिका प्रकाशकाणाभिमयः प्रभा:।" (सिद्धान्तशिरोमणि)

६ वृश्चिकाली, बिछुआ। ७ शरपुङ्खा, सरफोंका। ८ हस्तमौलिका, कालो झाड़ी। ९ पुष्पविशेष, एक फूल। १० वाद्यविशेष, एक बाजा। इस पर चर्म चढ़ता था। ११ कलाजाली, मंगरैला।

कलिकाता (सं० स्त्री०) कलकत्ता देखो।

कलिकापूर्व (सं० स्त्री०) कलिकया अंशेन सम्यं अपूर्वम्। कर्मविशेष, एक काम। यह कर्म पूर्वजन्मके कर्मसे कोई सम्बन्ध नहीं रखता और भावी फल उत्पादन करता है। जैसे दर्श और पौर्णमास यागका अङ्ग आग्नेयादि यागसे अपूर्व होता है। इसे चरम भी कहते हैं।

"आग्नेयादियागजन्यं कर्मांगाद्यपूर्वं दर्शादिजन्यफलापूर्वनिष्पत्तौ तत्तत् कर्मोत्पन्नमदृष्टम्।" (श्रुति)

कलिकार (सं० पु०) कलिं कलहं करोति, कलि-

डाली गयी थी। फिर भी प्रमाण मिला, कि सुदूर विगतकाल पर कलादगीमें नगर स्थापित हुवा। ई०के २रे शताब्दमें टलेमिने यहांकी बादामी, कलकेरी और इन्दी नामक नगरोंका उल्लेख किया है। इन तीनोंमें बादामी वा वातापीपुरी नामक स्थान ही अतिप्राचीन है। पल्लव राजावोंने दुर्भेद्य दुर्ग बना निरापद प्रबल प्रतापसे राजत्व रखा था। ई०के ६ठे शताब्दमें चालुक्य राजा १म पुलिकेशीने पल्लवोंको हटा बादामी अधिकार किया। पुलिकेशीके पीछे ७६० ई० तक चालुक्योंका राज्य चला। फिर राष्ट्रकूट राजा हुये। ९७३ ई०में राष्ट्रकूटवंश गिर जानेसे कलचुरि और हयशाल बल्लाल वंशकी ठहरी। उन्होंने ११९० ई० तक राज्य किया। अनन्तर कलादगीमें देवगिरिके यादवोंका शासन लगा। उस समय देवगिरि (वर्तमान दौलताबाद) नगरमें यादव राजावोंकी राजधानी रही। १२९४ ई०को अलाउद्दीन्‌ने देवगिरिपर आक्रमण किया। यादववंशीय रामचन्द्र देवगिरिके राजा थे। उन्होंने मुसलमानोंके आक्रमणसे घबरा दिल्लीके अधीश्वरकी अधीनता मानी। ई०के १५वें शताब्द यूसफ़ आदिल शाहने दक्षिणापथमें एक स्वाधीन राज्य जमाया। बीजापुर उसकी राजधानी बन गया। बिजापुर देखो।

पहले कलादगीके अनेक बौद्धस्तूप चीन-परिव्राजक युएङ्ग चुयाङ्गने आकर देखे थे। उन्होंने इस राज्यको ६००० लि (कोई साढ़े चार सौ कोस) विस्तृत लिखा है।

इस ज़िलेमें भीमा, कृष्णा, दोन, घाटप्रभा और मालप्रभा नदी प्रवाहित है। सिवा इनके और भी कितनी ही क्षुद्र स्रोतस्वती विद्यमान हैं। दोनका जल बहुत खारी, किन्तु दूसरी नदियोंका मीठा है।

कलादगीमें लोहा, स्लेट (तख्तीका पत्थर), कालापत्थर, चूना, लाल खिल्लौर प्रभृति खनिज द्रव्य उत्पन्न होते हैं।

कृषिमें ज्वार, बाजरा, गेहूं और कपासकी उपज अधिक है। फिर अण्डे, अलसी, तिल और कुसुमकी भी कोई कमी नहीं। वसन्तके आगममें कुसुमका सुनहला फूल खिल जाता है।

वनमें व्याघ्र, शूकर, वृक (भेड़िये), शृगाल और हरिण रहते हैं।

जलवायु अत्यन्त मन्द नहीं। फिर भी यथाकालको वृष्टि बन्द रहनेसे अच्छा शस्य कम उपजता, जिससे दुर्भिक्ष पड़ता है। १३९६ ई०से १४०६ ई० तक बहुवर्षव्यापी दुर्भिक्ष लगा था। उससे कलादगी एककाल ही उजड़ा हुवा। दूसरे भी कई दुर्भिक्ष पड़े। १७९१ ई०में अन्नके अभावसे सैकड़ों नरनारियोंने प्राण छोड़ा। इस अकालको लोग कड्डाबरूपी महामारी कहते हैं। वास्तविक अकालमें मरे असंख्य स्त्रीपुरुषोंका कङ्काल भूगर्भ खोदते समय आज भी मिलता है।

कलाधर (सं० पु०) कलाः धरति, कला-धृ-अच्। १ चन्द्र, चांद। २ चतुःषष्टिकलाभिज्ञ व्यक्ति, चौंसठ कला जाननेवाला। ३ शिव। ४ छन्दोविशेष। यह दण्डकका भेद है। इसके प्रत्येक चरणमें १५ गुरु और १५ लघुके पीछे एक गुरु लगता है।

कलाधिक (सं० पु०) कुक्कुट, मुरगा।

कलानक (सं० पु०) शिवके एक अनुचर।

कलानाथ (सं० पु०) १ चन्द्र, चांद। २ गन्धर्वविशेष। इन्होंने सोमेश्वरसे सङ्गीत सीखा था।

कलानिधि (सं० पु०) कलाः निधीयन्ते ऽस्मिन्, कला-नि-धा-कि। १ चन्द्र, चांद। २ चतुःषष्टि कलाभिज्ञ व्यक्ति, हुनरमन्द।

कलानुनादी (सं० पु०) कलं अनुनदति, कल-अनु-नद-णिनि। १ शब्द निकालते निकालते गमनकारी, बोलते बोलते चलनेवाला। २ भ्रमर, भौंरा। ३ कलविङ्क, गौरवा। ४ चटक, चिड़ा। ५ कपिञ्जल, एक चिड़िया। ६ चातक, पपीहा।

कलान्तर (सं० क्ली०) अन्या कला अंशः, सुपसुपेति समासः। १ लाभवृद्धि, सूद, व्याज। २ चन्द्रकी अन्य कला।

"पुपोष लावण्यमयान् विशेषान् ज्योत्स्नान्तराणीव कलान्तराणि।" (कुमार १।२५)

कलान्यास (सं० पु०) कलानां न्यासः, ६-तत्। तन्त्रोक्त न्यासविशेष। शिष्यके शरीरपर कलान्यास करना चाहिये। पादतलसे जानुतक 'ओं नृहल्ल नमः',

वल्य, पित्तदाहघ्न, सन्तर्पण और वीर्यकर होता है। (राजनिघण्टु) ८ चातक, पपीहा। ९ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कलिङ्गज (सं॰ पु॰) इन्द्रयव।

कलिङ्गड़ा (हिं॰ पु॰) कलिङ्ग, एक राग। यह दीपक रागका पञ्चम पुत्र है। रात्रिके चतुर्थ प्रहर इस रागको गाते हैं। कलिङ्गड़ेमें सातो स्वर लगते हैं। इसका स्वरपाठ इस प्रकार चलता है—म ग ऋ स स ऋ ग म प ध नि सा।

कलिङ्गड़ी (सं॰ स्त्री॰) दुर्गा।

कलिङ्गद्रु (सं॰ पु॰) कुटजवृक्ष, कुटकीका पेड़।

कलिङ्गयव (सं॰ पु॰) इन्द्रयव।

कलिङ्गबीज (सं॰ क्ली॰) इन्द्रयव।

कलिङ्गशुण्ठी (सं॰ स्त्री॰) कलिङ्गदेशकी शुण्ठी, एक सोंठ। यह तिक्त, बलकर, अग्निदीपन, अजीर्णहर और वातकातिसारघ्न होती है। फिर यवक्षार मिलाकर खिलानेसे कलिङ्गशुण्ठी गर्भिणीकी वान्ति दूर कर देती है। (अत्रिसंहिता)

कलिङ्गा (सं॰ स्त्री॰) काय सुखाय लिङ्गमस्याः, कलिङ्ग-टाप् बहुव्री॰। १ नारी। २ त्रिवृता, तेवरी। ३ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। ४ सुन्दर स्त्री, खूबसूरत औरत। ५ भोजराजकी पत्नी। यह दुष्मन्तकी माता थीं। (हरिवंश पुराण ३८। १८)

कलिङ्गादिकषाय (सं॰ पु॰) कलिङ्ग, पटोलपत्र और कटुरोहिणीका पाचन। यह पित्तज्वरको दूर करता है। (चक्रदत्त)

कलिङ्गाद्यगुड़िका (सं॰ स्त्री॰) ज्वरातिसार रोगका एक औषध, बोखारके दस्तोंकी एक दवा। कलिङ्ग (इन्द्रयव), बिल्व, जम्बू, आम्र, कपित्थ, रसाञ्जन, लाक्षा, हरिद्रा, ह्रीवेर, कट्फल, शुकनासिका (श्योनाकत्वक्), लोध्र, मोचरस, शङ्ख, धातकी और वटशुङ्गक (बरगदकी बो) बराबर बराबर तण्डुलो-दकसे रगड़ बटी बनाते और छायामें सुखाते हैं। तण्डुलोदक अष्टगुण जलमें चावल धोनेसे होता है। इस गुड़िकाके सेवनसे ज्वरातिसार, शूल, अतिसार और रक्तदोष निवारित होता है। (परिभाषाप्रदीप)

कलिङ्गिका (सं॰ स्त्री॰) कलिङ्गगङ्गा, कामरूपकी एक नदी। (कालिकापुराण)

कलिञ्ज (सं॰ पु॰) कं वायुं लञ्जति तिरस्करोति रोधनेन इति शेषः, क-लजि-अण् निपातनात् साधुः। १ कट, चटाई। इसका अपर संस्कृत नाम किलिञ्ज है। २ कुलिञ्जन, कुलींजन।

कलिञ्जन (सं॰ पु॰) वृक्षविशेष, एक पेड़।

कलित (सं॰ त्रि॰) कल-क्त। १ विदित, ज़ाहिर। २ प्राप्त, मिला हुवा। ३ भेदित, अलग किया हुवा। ४ गणित, गिना हुवा। ५ उपार्जित, कमाया हुवा। ६ अनुगत, दबाया हुवा। ७ आश्रित, सहारा पकड़े हुवा। ८ विचारित, समझा हुवा। ९ बद्ध, बंधा हुवा। १० उक्त, कहा हुवा। ११ गृहीत, लिया हुवा। १२ धृत, पकड़ा हुवा।

"करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणिः।" (भैरवध्यान)

(क्ली॰) भावे क्त। १३ ज्ञान, समझ।

कलितरु (सं॰ पु॰) विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कलिद्रु, कलिद्रुम देखो।

कलिद्रुम (सं॰ पु॰) कलिना आश्रितो द्रुमः, मध्य-पदलो॰। १ सरल देवदारु, सीधा देवदार। २ भल्ला-तक वृक्ष, भिलावेंका पेड़। ३ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कलिनाथ (सं॰पु॰) कलेः कलिरेव वा नाथः। १ कलि-युगके प्रभु, कलि। २ मुनिविशेष। इन्होंने एक गान्धर्ववेद प्रणयन किया था।

कलिन्द (सं॰ पु॰) कलिं ददाति द्यति वा, कलि-दा दो वा खच्-मुम्। १ सूर्य, सूरज। २ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़। ३ पर्वत विशेष, एक पहाड़। इसी पर्वतसे यमुना नदी निकली हैं। (रामायण,किष्किन्धा ४० स॰)

कलिन्दक (सं॰ पु॰) १ कर्कारु, पेठा, विलायती कुम्हड़ा। २ तरम्बुज, तरबूज, कलींदा।

कलिन्दकन्या (सं॰ स्त्री॰) कलिन्दस्य पर्वत विशेषस्य कन्या इव। यमुना नदी।

"कलिन्दकन्या मथुरां गतापि गङ्गोर्मिसंसक्तजलेव भाति।" (रघुवंश)

कलिन्दजा, कलिन्दकन्या देखो।

कलिन्दनन्दिनी (सं॰स्त्री॰) कलिन्दं नन्दयति, कलिन्द-

जानुसे नाभितक 'ओं प्रतिष्ठायै नमः', नाभिसे कण्ठदेश तक 'ओं विद्यायै नमः', कण्ठसे ललाट तक 'ओं शान्त्यै नमः' और ललाटसे ब्रह्मरन्ध्र तक 'ओं शान्तातीतायै नमः' मन्त्र द्वारा न्यास कर पुनर्वार उक्त सकल मन्त्र द्वारा ब्रह्मरन्ध्रसे यथाक्रम पदतल तक लौट आते हैं।

कलावत (हिं०) कलावान् देखो।

कलाप (सं० पु०) कलां मात्रां आप्नोति, कला-आप्-अण्, कला आप्यते अनेन, कला-आप्-घञ्-वा। ँलय। पा ३।३।१। १ समूह, ढेर। २ मयूरपुच्छ, मोरकी पूंछ। ३ मेखला, चन्द्रहार। ४ अलङ्कार, जेवर।

"काञ्चन्य सूत्राः समसुपुरस्य शुभ्राकलापस्य च निखनस।" (कुमार)

५ तूण, तरकश। ६ चन्द्र, चांद। ७ चतुर, होशियार आदमी। ८ व्याकरण विशेष। कलाप-व्याकरणका अपर नाम कुमार और कातन्त्र है। कलापचन्द्र नामक संस्कृत ग्रन्थमें इस व्याकरणकी उत्पत्तिके सम्बन्ध पर लिखा है,—

राजा शालिवाहन किसी सखियोंके साथ जलक्रीड़ा करते थे। उसके सेचनसे रानीने रतिके रसमें सुध बुध भूल राजाको कहा,—'मोदकं देहि देव' अर्थात् हे देव! मुझपर पानी मत डालो। मूर्खता वश राजाने उक्त स्वरघटित पद न समझ रानीको एक मोदक (लड्डू) दिया था। इससे बुद्धिमती रानीने यह कर निन्दा उड़ायी—मेरे पति होते भी राजा मूर्ख हैं। शालिवाहनने भार्याकी सब बात शर्ववर्मा गुरुसे कही थी। फिर शर्ववर्माने उनको शिक्षाके लिये कातन्त्र (कलाप-व्याकरण) बनाया। कातन्त्र वा कलापकी रचनाके सम्बन्धमें एक किम्वदन्ती है।

शर्ववर्माने शालिवाहनको व्युत्पन्न बनानेके लिये प्रतिश्रुत हो कुमारकी आराधना लगायी थी। भगवान् कार्तिकेय आराधनासे प्रीत हो अपने व्याकरण ज्ञानके आविर्भावको 'सिद्धो वर्णसमाम्नायः' अद्यपादरूप सूत्र उन्हें प्रदान किया। कुमारसे व्याकरणका प्रथम सूत्र मिलने पर इसका दूसरा नाम 'कुमारव्याकरण' पड़ गया।

दूसरी किम्वदन्ती यह है,—शर्ववर्माने शालिवाहनके निकट प्रतिज्ञा कर कुमारकी आराधना उठायी थी। कुमार मयूर पर चढ़ उनके समक्ष आविर्भूत हुये। शर्ववर्माने मयूरके कलापदेश पर 'सिद्धो वर्णसमाम्नायः' सूत्र लिखा देखा था। यह देखते ही उनके मनमें व्याकरणका पूर्ण ज्ञान आ गया।

शर्ववर्माने उक्त सूत्रको प्रथम लगा स्वतन्त्र व्याकरण बनाया है। मयूरके कलापमें प्रथम सूत्र लिखा रहनेसे इस व्याकरणका नाम कलाप पड़ा।

कलाप-टीकाकारोंके मतानुसार शर्ववर्माने ईषत् तन्त्र अर्थात् अल्पसूत्रमें यह व्याकरण प्रणयन किया था। इसीसे इसका नाम कातन्त्र हुआ।*

भारतमें कलाप नाम प्रसिद्ध है। वैयाकरण पाणिनिसे नीचे इसीकी श्रेष्ठता मानते हैं। वास्तविक केवल कलाप व्याकरणको आद्योपान्त मन लगाकर पढ़नेसे विद्यार्थी पण्डित हो सकता है।

शर्ववर्माने कलापमें तीन अंशोंके सूत्र बनाये हैं,— सन्धि, चतुष्टय और आख्यात। उन्होंने कृत्सूत्र प्रणयन नहीं किये।

दुर्गासिंहने कलापकी वृत्ति बनायी थी। उनकी वृत्ति न रहनेसे कलापव्याकरण सम्पूर्ण और साधारणके लिये सुबोधगम्य कैसे होता। दुर्गासिंहने अपनी वृत्तिमें असाधारण पाण्डित्यका परिचय दिया है। वास्तविक उसको देख चमत्कृत होना पड़ता है।

दुर्गासिंह देखो।

कलाप व्याकरणकी अनेक टीकायें भारतमें प्रचलित हैं। उनमें श्रीपति-रचित कलापवृत्तिटीका, त्रिलोचनकृत पञ्जिका, कविराजकृत कलापवृत्ति टीका, हरिरामकृत व्याख्यासार, रघुनाथशिरोमणि रचित व्याख्या, कातन्त्रचन्द्रिका और लघुवृत्ति प्रसिद्ध हैं।

---

* (१) "कातन्त्रमिति तत्र कुटुम्बधारणे सुरादिविषयः। तस्मात् व्युत्पत्तौ शब्दा अर्थेनेति ... (कलाप ३।३।०१) इति ... प्रत्ययः। स ... व्युत्पादनमिति वदन्ति। तेन तन्त्रमिह सूत्रमुच्यते। ईषत् तन्त्रं कातन्त्रम्। कुशब्दस्य तदर्थे ... का ... इव इति ईषदर्थे कादेशः।" (त्रिलोचनकृत कातन्त्रपञ्जिका)
(२) "ईषत्तन्त्रं कातन्त्रम्। ईषच्छब्दो ह्रस्वार्थवाचकः।" (कविराज कृत कातन्त्रचन्द्रिका)

नन्द-णिनि-ङीप्। यमुना नदी।

कलिन्दशैलजा (सं॰ स्त्री॰) कलिन्दशैलात् जायते कलिन्द-शैल-जन-ड-टाप्। यमुना नदी।

कलिन्दशैलजाता, कलिन्दशैलजा देखो।

कलिन्दिका (सं॰स्त्री॰) कलिं द्यति नाशयति, कलिन्दी-खच्-मुम् स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। सर्वविद्या, हिकमत।

कलिन्दी (हिं) कालिन्दी देखो।

कलिपुर (सं॰क्ली॰) १ पद्मराग मणिकी एक पुरातन खनि, मानिककी एक पुरानी खान। २ पद्मराग मणि भेद, किसी किस्मका मानिक। इसे लोग मध्यम समझते थे।

कलिप्रद (सं॰ पु॰) मद्यशाला, शराबखाना।

कलिप्रिय (सं॰ पु॰) कलिः कलहः प्रियो यस्य, बहुव्री॰। १ कलहप्रिय नारद मुनि। "कलिप्रियस्य प्रियविग्रहैषी:।" (रघुवंश) २ वानर, बन्दर। ३ विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़। (त्रि॰) ४ दुष्टप्रकृति, बदमिजाज, झगड़ालू।

कलिफल (सं॰ क्ली॰) विभीतक फल, बहेड़ा।

कलिम (सं॰ पु॰) शिरीष वृक्ष, सिरिसका पेड़।

कलिमल (सं॰ क्ली॰) पाप, गुनाह।

कलिमार, कलिमारक देखो।

कलिमारक (सं॰ पु॰) कलिना खदेहस्थ कण्टकेन मारयति, कलि-मृ-णिच्-ण्वुल्। १ पूतिकरञ्ज, करील। २ कण्टकवान् करञ्ज, कंटीला करौंदा।

कलिमाल, कलिमालक देखो।

कलिमालक (सं॰ पु॰) कलीनां कण्टकानां माला यत्र, कलि-माला-क। पूतिकरञ्ज, करील।

कलिमाल्य (सं॰ पु॰) कलीनां माल्यं यत्र, बहुव्री॰। पूतिकरञ्ज, करील।

कलिया (अ॰ पु॰) घृतपक्व मांस, घीमें भूना हुवा गोश्त। इसमें मसालेदार झोल रहता है।

कलियाना (हिं॰ क्रि॰) १ कली आना, गुञ्चा फूटना। २ पंख आना, नये पर निकलना।

कलियारी (हिं॰ स्त्री॰) कलिहारी, एक जहरीला पौदा। इसका हिन्दी पर्याय—करियारी, करिहारी, लांगुली और कुलहारी है। इसे बंगलामें उलटकम्बल, सन्थालीमें सिरिक समनो, पञ्जाबीमें मुलिम, दक्षिणीमें नातका बछनाग, मराठीमें करियानाग, मारवाड़ीमें इनदई, तामिलमें कलैप्पै ककिशङ्ग, तेलगुमें कलप्पागड्डा, मलयमें मेनतोनी, मान्द्राजीमें क्षिमदोन और सिंहलीमें नियङ्गल कहते हैं। (Gloriosa superba)

यह एक विशाल ओषधि है। करियारी अपने पत्तोंकी नोकके सहारे ऊपरको चढ़ती है। भारत, ब्रह्म और सिंहलके वनमें यह स्वभावतः उत्पन्न होती है। वर्षा ऋतुके समय इसमें सुन्दर और सुदीर्घ पुष्प आता है। पत्र पतले और नोकदार होते हैं। मूल ग्रन्थिविशिष्ट रहता है। पुष्प झड़ने पर मिर्चजैसा फल लगता है। पक्व फलके अन्तर्गत बीज होता है। इसका मूल विषाक्त है।

करियारीकी जड़को भारतीय वैद्य और मुसलमानी हकीम ओषधमें व्यवहार करते हैं। बिच्छू और कनखजूरेके काटने पर इसका पुलटिस चढ़ता है।

कलियुग (सं॰ क्ली॰) कलिरेव युगम्। चतुर्थ युग। कलि देखो।

कलियुगाद्या (सं॰ स्त्री॰) कलियुगस्य आद्या आद्यतिथिः, ६-तत्। माघी पूर्णिमा, माहकी पूरनमासी। इसी तिथिको कलियुग लगा था।

कलियुगालय, कलिगृह देखो।

कलियुगावास, कलिगृह देखो।

कलियुगी (सं॰त्रि॰) १ कलियुगमें उत्पन्न होनेवाला। २ पापी, बुरा।

कलिल (सं॰ त्रि॰) कल्यते मिश्रते, कलि-इलच्। सलिकल्यनिमहिभडिभण्डिशण्डिपिण्डिपुतुण्डिकुकिभूभ्य इलच्। उण्। १।५५। १ मिश्रित, मिला हुवा। २ गहन, घना। ३ आच्छन्न, भरा हुवा। (क्ली॰) ४ समूह, ढेर।

"यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति।" (गीता २।५२)

कलिवर्ज्य (सं॰ त्रि॰) कलियुगमें न करने योग्य, जिसे वर्तमान युगमें बचाना पड़े। अश्वमेधादि यज्ञ, देवरादिसे नियोग, संन्यास, मांस-पिण्डदान प्रभृति कर्म अन्य युगमें कर्तव्य रहते भी कलिमें वर्ज्य है।

कलिवल्लभ—चालुक्यराज ध्रुवका एक नाम।

९ ग्रामविशेष, एक गांव। (भागवत ९।१२।६) १० अस्त्र विशेष, एक हथियार। (भारत ७।१।९८) ११ बाण, तीर। १२ धेनु, गाय। १३ व्यापार, काम।

"दवदहनज्वाला कलापायते।" (साहित्यदर्पण)

कलापक (सं० पु०-क्ली०) कलाप संज्ञायां कन्। १ हस्तीका गलबन्ध, हाथीका गेलावां। स्वार्थे-कन्। २ कलाप। कलाप देखो।

यस्मिन् काले मयूराः कलापिनो भवन्ति सकलापि तस्मिन् काले देयं ऋणम्, कलापिन्-वुन्। ३ ऋणविशेष। ४ कवितविशेष, किसी किस्मकी शायरी। चार प्रकारकी कविता एकत्र मिल जानेसे कलापक कहाता है,—

"छन्दोबद्धपदं पद्यं तेनैकेन च मुक्तकम्।
द्वाभ्यान्तु युग्मकं सन्दानितकं त्रिभिरिष्यते।
कलापकं चतुर्भिश्च पञ्चभिः कुलकं मतम्।" (साहित्यद० ६।३१८)

सन्दानितकका नामान्तर विशेषक है। किसी किसी ग्रन्थमें 'त्रिभिः श्लोकैर्विशेषकम्' पाठ मिलता है।

कलापग्राम (सं० पु०) कलापनामको ग्रामः, मध्यपदलो०। ग्रामविशेष, एक गांव। महाभारतमें लिखा— कलापग्राम हिमालयके उत्तर बसा है।

"हिमवन्तमतिक्रम्य कलापग्राममाविशन्।" (भविष्य ब्रह्मखण्ड ११।११)

कलापच्छन्द (सं० पु०) मुक्ताका एक आभूषण, मोतियोंका एक गहना। इसमें मोतियोंकी चौबीस लड़ियां लगती हैं।

कलापट्टी (हिं० स्त्री०) नौकाकी पटरियोंमें शण प्रभृतिका प्रवेशनकार्य, जहाजकी पटरियोंमें सन् वगैरहका ठूंसा जाना। यह शब्द पोर्तगीज् 'कलफेटर'का अपभ्रंश है।

कलापद्वीप (सं० पु०) कलापः तन्नामको ग्रामः द्वीप इव, उपमितस०। कलापग्राम, एक पुराना बसती। कलापद्वीपमें सोमवंशीय देवर्षि और सूर्यवंशीय सुदर्शन—दो ऋषि तपस्या करते हैं। कलियुगके अन्तमें यही दोनों ऋषि चन्द्र और सूर्यवंश पुनः चलावेंगे। (भागवत)

कलापशिरा (सं० पु०) एक मुनि।

कलापा (सं० स्त्री०) चक्रद्वारके तीन कारणका स्थान।

कलापानुसारी (सं० पु०) कलापव्याकरणका मतानुयायी।

कलापिनी (सं० स्त्री०) कलापश्चन्द्रः अस्त्यस्याम्, कलाप-इनि-ङीप्। १ रात्रि, रात। २ नागरमुस्ता, नागरमोथा। ३ मयूरी, मोरनी।

कलापी (सं० पु०) कलापो ऽस्त्यस्य, कलाप-इनि। १ अश्वत्थ वृक्ष, पीपलका पेड़। २ मयूर, मोर। ३ कोकिल, कोयल। ४ तूण बाणादिधारी, तरकश तीर वगैरह रखनेवाला। ५ कलाप व्याकरणाध्यायी। ६ वैशम्पायनके एक छात्र। ७ मयूरके पक्ष फैलाकर नाचनेका समय।

कलापूर (सं० पु०-क्ली०) वाद्ययन्त्रविशेष, एक बाजा।

कलापूर्ण (सं० पु०) कलाभिः पूर्णः, ३-तत्। १ चन्द्र, चांद। २ चतुःषष्टि कलाभिज्ञ, हुनरमन्द। ३ अंशमात्रसे परिपूर्ण, एक हिस्सेसे भरा हुवा।

कलाबतून (तु० पु०) १ स्वर्ण या रौप्यमय सूत्र, सोने या चांदीका तार। यह रेशमपर चढ़ाकर लपेटा जाता है। २ कलाबतूनका फीता। यह सबसे पतला रहता और कपड़ेके किनारे पर टंकता है।

कलाबतूनी (तु० वि०) स्वर्ण रौप्य प्रभृतिके सूत्रसे निर्मित, कलाबत्तूसे तैयार किया हुवा।

कलाबत्तू (हिं०) कलाबतून देखो।

कलाबाज् (हिं० वि०) नटक्रियाकारक, कला खानेवाला, जो सफायीसे उछलता कूदता हो।

कलाबाजी (हिं० स्त्री०) १ नटविद्या, उछलने कूदनेका हुनर, ढेकली। २ नृत्यादि, नाच वगैरह।

कलाबोन (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह श्रीहट्ट, चट्टग्राम और ब्रह्मदेशमें उपजता है। उंचाई ४०.५० फीट रहती है। फलका बीज सुंगरा चावल या कलौंची कहाता है। इसका तैल चर्मरोग पर चलता है।

कलाभृत् (सं० पु०) कलां बिभर्ति, कला-भृ-क्विप् तुगागमश्च। १ चन्द्र, चांद। २ गीतादि कलाभिज्ञ, हुनरमन्द।

कलाम (अ० पु०) १ वाक्य, जुमला। २ कथन, बात। ३ प्रतिज्ञा, वादा। ४ वक्तव्य, एतराज्।

कलिविक्रम—दक्षिणापथके एक प्राचीन चालुक्य राजा। इनका अपर नाम त्रिभुवनमल्ल या विक्रमादित्य (४र्थ) था। यह आहवमल्लके पुत्र रहे। इनके राजत्वका काल संवत् ९९०—१०४८ था।

कलिविष्णुवर्धन—पूर्व चालुक्यराज विजयादित्य नरेन्द्र मृगराजके पुत्र। इन्होंने डेढ़ वर्ष राजत्व किया।

कलिवृक्ष (सं० पु०) कलेराश्रयरूपो वृक्षः, मध्यपद-लो०। विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कलिसंश्रय (सं० पु०) कलेः संश्रयः आवेशः, ६-तत्। १ शरीरमें कलिका प्रवेश, पापमें पड़नेकी हालत। २ कलिकी आकृति, गुनाहकी सूरत।

कलिहारी (सं० स्त्री०) कलिं हरति, कलि-हृ-अण् ङीप्। लाङ्गली, करियारी। करियारी देखो।

कली (सं० स्त्री०) कलि-ङीप्। कलिका, गुञ्चा।

कली (हिं० स्त्री०) १ अक्षतयोनि कन्या, वाकरा। २ पक्षीका नया पर। ३ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह तिकोनी कटती और अंगरखे, कुरते, पायजामे अगैरहमें लगती है। ४ हुक्केके नीचेका हिस्सा। इसमें गड़गड़ा लगता और पानी रहता है। ५ वैष्णवों का एक तिलक। ६ कलई, पत्थर या सीपका फूंका हुवा टुकड़ा। इसीसे चूना बनता है।

कलौंदा (हिं० पु०) तरब्बुज, तरबूज।

कलील (अ० वि०) अल्प, थोड़ा, कम।

कलीसिया (हिं० स्त्री०) ईसाइयों या यहूदियोंकी धर्ममण्डली। यह यूनानी 'इकलीसिया' शब्द का अपभ्रंश है।

कलु (सं० पु०) गरुड़शालि, किसी किस्मका धान।

कलु—आसामके गारो पर्वतकी एक नदी। यह तुरा नामक स्थानसे निकल ब्रह्मपुत्र नदमें जा गिरी है।

कलुक (सं० पु०) वाद्यविशेष, एक बाजा।

कलुका (सं० स्त्री०) १ गुण्डा, शरावखाना। २ उल्का, उत्पात, शहाब-साकिब, टूटता तारा।

कलुख (हिं०) कलुष देखो।

कलुखाई (हिं०) कलुषता देखो।

कलुखी (हिं०) कलुषी देखो।

कलुवावीर (हिं० पु०) देवताविशेष। इनकी दोहाई सावरी मन्त्रमें लगती है। यह जादू टोनेके प्रधान देव हैं।

कलुष (सं० क्ली०) कं सुखं लुषति हिनस्ति, क-लुष्-अण् काल-उषच् वा। पृषदिकत्वात् उषच्। उण् ४। ७५। १ पाप, गुनाह। २ मलिनता, मैलापन। "विगत-कलुषमम्भः शालिपक्का धरित्री।" (ऋतुसंहार) (पु०) कस्य जलस्य लुषः हिंसक आविलत्वकारकः, क-लुष-क। ३ महिष, भैंसा। ४ मण्डलिसर्प। ५ क्रोध, गुस्सा। (त्रि०) ६ बद्ध, बंधा हुवा, जो बहता न हो। ७ निन्दित, बदनाम, खराब। ८ कषायित, कसेला। ९ दुःखित, अफसुर्दा। १० क्षुब्ध, घबराया हुवा। ११ असमर्थ, नाताकत।

"भाताबभौधकलुषा दयितेव रात्री।" (रघु ५।६४)

कलुषता (सं० स्त्री०) १ मलिनता, मैलापन। २ अन्धकार, अंधेरा। ३ क्षुब्धता, घबराहट।

कलुषमञ्जरी (सं० स्त्री०) जिञ्जिनी, मजीठ।

कलुषयोनि (सं० त्रि०) वर्णसङ्कर, हरामजादा, दोगला।

कलुषित (सं० त्रि०) कलुषमस्य सञ्जातः, कलुष-इतच्। १ पापयुक्त, गुनाहगार। २ दूषित, खराब। ३ मलिन, मैला। ४ कषायित, कसैला। ५ बद्ध, बंधा हुवा। ६ दुःखित, रञ्जीदा। ७ क्षुब्ध, घबराया हुवा। ८ असमर्थ, नाताकत।

कलुषी (सं० त्रि०) कलुषमस्यास्ति, कलुष-इनि। १ पापी, गुनाह करनेवाला। २ मलिन, मैला रहनेवाला।

कलूटा (हिं० वि०) अत्यन्त श्यामवर्ण, निहायत काला।

कलूना (हिं० पु०) स्थूल धान्य विशेष, एक मोटा धान। यह पञ्जाबमें होता है।

कलूतर (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क।

कलेऊ (हिं० पु०) १ भोजन विशेष, एक खाना। यह लघु रहता और प्रातःकाल जलपानके समय चलता है। २ विवाह होते समय वरका एक भोजन। यह पाणिग्रहण होनेके तीसरे और चौथे दिन सन्ध्या समय किया जाता है। विवाहमें प्रथम दिवस पाणिग्रहण होता है। दूसरे दिन रात को कच्ची रसोयी खाने वरपक्षीय लोग जाते हैं। तीसरे और चौथे

कलामक (सं॰ पु॰) कलाम-कनि पृषोदरादित्वात् साधुः। कलमधान्य, जड़हन।

कलामोचा (हिं॰ पु॰) धान्यविशेष, किसी किस्मका धान। यह प्रधानतः बङ्गालमें होता है।

कलाम्बि, कलाम्बिका देखो।

कलाम्बिका (सं॰ स्त्री॰) कला अर्थः विक्रायते प्रयुज्यते अस्याम्, कला-वि-कै-क-टाप् पृषोदरादित्वात् मुम्। १ ऋणदान, कर्ज देनेकी हालत। २ वृद्धि-जीविका, सूदखोरी।

कलाय (सं॰ पु॰) कलां अयते, कला-अय-अण्। शिम्बीधान्यविशेष, मटर। (Pisum sativum) इसका संस्कृत पर्याय—सतीलक, हरेणु, खण्डिक, त्रिपुट, अतिवर्तुल, मुण्डचणक, शमन, नीलक, कण्ठी, सतील, हरेणुक, सतीन और सतीनक है। भाव-प्रकाशके मतसे यह मधुररस, पाकमें मधुर, रुक्ष और वायुवर्धक होता है।

कलायका शाक ईषत् कषाययुक्त, मधुररस, रुक्ष, भेदक और वायुप्रकोपक है। (राजनिघण्टु)

कलायक (सं॰ पु॰) कलमशालि, जड़हन। यह किञ्चित् कषाय, मधुर, रक्तप्रशान्तिजनक, बल्य, ईषत् वातल, पित्तघ्न और मुद्गसमानरूप होता है। (चरकसंहिता)

कलायका (सं॰ स्त्री॰) १ मत्स्याक्षी, मछरिया। २ गण्डदूर्वा, पानीपर होनेवाली एक दूब।

कलायखञ्ज (सं॰ पु॰) वायुरोगभेद, वातकी एक बीमारी। इस रोगमें मनुष्य गमनारम्भमें खञ्जकी भांति लड़खड़ाने लगता है। कारण उसकी सन्धिका प्रबन्ध ढीला पड़ जाता है। (सुश्रुत) खञ्ज और पङ्गुकी भांति इसकी भी चिकित्सा करना चाहिये। कलायखञ्ज रोगमें तैल लगानेसे बड़ा उपकार होता है।

कलायखण्ड, कलायखञ्ज देखो।

कलायन (सं॰ पु॰) कलानां नृत्यगीतादीनां अयनं प्राप्तिर्यत्र, बहुव्री॰। नर्तक, तलवारकी धारपर नाचनेवाला।

कलायशाक (सं॰ क्ली॰) शाकविशेष, मटरका साग। यह भेदक, लघु और त्रिदोषको जीतनेवाला है। (भावप्रकाश)

कलायसूप (सं॰ पु॰) कलायकृत यूष, मटरका झोल या रसा। यह लघु, ग्राही, सुशीतल, रुच्य और पित्त, अरोचक तथा कफनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कलाया (सं॰ स्त्री॰) कलाय-टाप्। १ गण्डदूर्वा, पानीपर होनेवाली एक दूब। गण्डदूर्वा देखो। २ श्वेतदूर्वा, सफेद दूब। ३ कृष्णचणक, काला चना।

कलार (हिं॰ पु॰) कल्यपाल, कलवार।

कलारुहा (सं॰ स्त्री॰) स्वर्णकेतकी वृक्ष, पीला केवड़ा।

कलाल (हिं॰ पु॰) कल्यपाल, शराब बेचनेवाला कलवार।

कलालाप (सं॰ पु॰) कलं मधुरास्फुटं आलपति, कल-आ-लप्-अण्। १ भ्रमर, गूंजनेवाला भौंरा। कर्मधा॰। २ मधुर आलाप, मीठी बोली। (त्रि॰) ३ मधुर आलापकारी, गूंजनेवाला।

कलावती (सं॰ स्त्री॰) कलाः सङ्गीतादयः सन्ति अस्याम्, कला-मतुप् ङीप् मस्य वः बहुव्री॰। १ तुम्बुरु नामक गन्धर्वकी वीणा। २ द्रुमिल राजाकी पत्नी। ३ राधिकाकी माता। ४ अप्सरोविशेष, कोई परी। ५ गङ्गा। "दुर्गमेषा कलावती।" (काशी २८।४०) ६ दीक्षा विशेष। तन्त्रसारमें इसका नियम लिखा है,—शिष्यको उपवासी रह नित्यक्रिया समापनपूर्वक प्रथम स्वस्तिवाचनके साथ सङ्कल्प करना चाहिये। गुरु आचमन ले द्वारदेशमें सामान्य अर्घ्यदानपूर्वक द्वारको पूजें। फिर उन्हें दक्षिणपद आगे बढ़ा द्वारको वाम शाखा छू और दक्षिण अङ्ग सिकोड़ मण्डपमें प्रवेश करना चाहिये। वहां गुरु नैऋत दिक्में वास्तुपुरुष और ब्रह्माको पूजते हैं। इसके पीछे उन्हें दिव्य मन्त्रसे आकाशकी ओर देख दिव्य विघ्न, अस्त्र मन्त्र एवं जल द्वारा अन्तरीक्षस्थ विघ्न और वाम पार्ष्णिके आघात द्वारा भौम विघ्न हटाना पड़ता है। तण्डुलादि द्रव्य अस्त्रमन्त्रसे अभिमन्त्रित कर गुरु फेंकते हैं। फिर गुरुको आसनशुद्धि, स्वस्तिकक्रम, विघ्नोत्सादन, पञ्च गव्य प्रभृति द्वारा मण्डपशोधन करना और दक्षिण पूजा द्रव्य, वाम सुवासित जलपूर्ण कुम्भ तथा पृष्ठ-देशको वस्त्र प्रसारणके लिये एक पात्र रखना पड़ता है। इसके पीछे सर्वदिक् घृतका प्रदीप जला पुटा-

दिन तीसरे पहर चौथी पाँच बजे कन्यापक्षीय जनवासे (जहाँ वरपक्षीय ठहरते हैं) में बरात न्योतने आते हैं। जब बरात न्योत जाता, तब कन्यापक्षीय मण्डली वरको भोजन करनेके लिये बोलाती है। इसीका नाम कलेऊ है। कलेऊमें सिवा शक्कर और पूरीके दूसरी चीज़ नहीं खिलाते। वरके साथ सहबाला भी कलेऊ करने जाता है।

कलेनई (हिं॰ पु॰) १ वर्णविशेष, एक रंग। यह फिटकरी, हरे कसीस और मजीठ या पतङ्गके योगसे बनता है। इसका अपर नाम सुनौटिया रंग है। (वि॰) २ सुनौटिया।

कलेजा (हिं॰पु॰) १ वक्षःस्थलान्तर्गत अवयव विशेष, छातीका एक भीतरी हिस्सा। यकृत् देखो। २ वक्षःस्थल, सीना, छाती। ३ साहस, हिम्मत।

कलेटा (हिं॰ पु॰) अजविशेष, एक बकरा। इसकी ऊनसे कम्बल बनते हैं।

कलेवर (सं॰ क्ली॰) कले शुक्रे वरं श्रेष्ठम्, देहोत्पत्तिहेतुकत्वात् पवित्रम्, अलुक् समा॰। शरीर, जिस्म, चोला।

कलेस (हिं॰) क्लेश देखो।

कलैया (हिं॰स्त्री॰) १ कला, उलट-पुलट। २ ताड़ना, उत्पीडन, मारपीट।

कलोईवाड़ा (हिं॰ पु॰) सर्पविशेष, अजगरकी भाँति एक बड़ा साँप। यह बङ्गालमें होता है।

कलोद्भव (सं॰ पु॰) कलमशालि, जड़हन।

कलोपनता (सं॰ स्त्री॰) मूर्छनाविशेष, एक स्वरक्रम।

"मध्यमे स्यात् सौवीरी हारिणाश्वा ततः परम्।
स्यात् कलोपनता शुद्धमध्या मार्गी च पौरवी॥
हृष्यका सप्तमी प्रोक्ता मूर्छनेत्यभिधा क्रमात्॥" (सङ्गीतदर्पण)

मध्यम ग्रामकी सात मूर्छना होती हैं,—सौवीरी, हारिणाश्वा, कलोपनता, शुद्धमध्या, मार्गी, पौरवी और हृष्यका। कलोपनता मध्यम ग्रामकी तृतीय मूर्छनाका नाम है।

कलोर (हिं॰ वि॰) बेब्याही, जो ब्याही न हो। यह शब्द गायके ही लिये आता है।

कलोल (हिं॰) कल्लोल देखो।

कलोलना (हिं॰क्रि॰) कलोल करना, खेलना-कूदना।

कलौंस (हिं॰ वि॰) १ कृष्णवर्ण विशिष्ट, कालापन लिये हुये। (पु॰) २ कृष्णवर्ण, कालापन। ३ कलङ्क, धब्बा।

कलौंजी (हिं॰ स्त्री॰) १ कृष्णजीरक, काला जीरा। इसे बङ्गलामें सुगरेला, काश्मीरीमें तुख्म गन्दन, अफ़ग़ानीमें सियाह दाऊ, मराठीमें कालेंजिरे, तामिलमें कारुनशिरोगम्, तेलगुमें नल्ल जिलकर, कनाड़ीमें काड़ी जिड़गी, मलयमें कारुन चीरकम, ब्राह्मीमें समोनने, सिंहलीमें कलुदुरु, अरबीमें कमूनअसवद और फारसीमें सियाहदाना कहते हैं। (*Nigella sativa*) किन्तु कालीजीरो कलौंजीसे भिन्न वस्तु है।

यह दक्षिण यूरोपमें स्वभावतः उत्पन्न होती है। दक्षिण भारत और नेपालकी तराईमें इसे नदी किनारे मार्ग शीर्ष या पौष मासमें बोते हैं। वालुकामय भूमि कलौंजीके लिये अच्छी रहती है। डेढ़ या दो हाथ उच्च होता है। पुष्प झड़ जानेसे कोई तीन अङ्गुलि परिमित कली निकलती हैं। उनमें कृष्णवर्ण कण भरे रहते हैं। कणका आस्वाद कटु, तीक्ष्ण और सुगन्धि होता है। लोग कलौंजीको तरकारीमें डाल कर खाते हैं। इससे दो प्रकारका तैल निकलता है—एक कृष्णवर्ण, सुगन्धि एवं वायु परिणामशील और दूसरा स्वच्छ तथा एरण्डतैल सदृश। प्रथमोक्त तैलसे सुन्दर नीलवर्ण प्रतिबिम्ब फूटता है। कलौंजी सुगन्धित, वायुनाशक, अग्निदीपन और पाचक होती है। यह अग्निमान्द्य अरुचि, ज्वर और अर्शादि प्रभृति रोगोंमें औषधकी भाँति व्यवहार की जाती है। कलौंजीके सेवनसे दुग्ध भी अधिक उतरता है। मुसलमान हकीमोंके मतानुसार कलौंजी उत्तेजक, लयनाशक, परिपाकशील, शोधन, और मूत्रवर्धक है। कलौंजी कपड़ेमें रखने को नहीं लगता

२ एक तरकारी। यह करेले, परवल, भिण्डी, बैंगन वगैरहको बीचसे चीर और नमक, मिर्च, खटाई, धनिया प्रभृति द्रव्य भर कर बनायी जाती है। इसे भरवाँ भी कहते हैं।

कलौंयो (हिं॰ स्त्री॰) कुकृत्य, मुँगरा चावल।

प्रक्षालपूर्वक वाम ओर गुरु, परमगुरु एवं परापर, दक्षिण गणेश और मध्यमें इष्टदेवताको वह प्रणाम करते हैं। अस्त्रमन्त्र एवं गन्धपुष्प द्वारा दोनों हाथ संशोधन करने पीछे उन्हें ऊर्ध्व दिक् तीन तालि और दशदिक् तुड़िसे बांधना चाहिये। फिर गुरु वह्नि, वीज तथा जलसे वह्निके आकारको सींच भूतशुद्धि करते हैं। इसके पीछे मातृकान्यास, प्राणायाम, पीठन्यास, अङ्गादिन्यास और मन्त्रन्यास होता है। फिर गुरुकी मुद्रा देखा ध्यान, मानसपूजा और अर्घ्य-स्थापन करना चाहिये। इसके पीछे अर्घ्यपात्रसे किञ्चित् जल प्रोक्षणीपात्रमें डाल उसी जलसे आत्मा और पूजाके उपकरणको गुरु तीन बार सींचते हैं। पीठमन्त्रसे शरीरमें धर्मादिकी पूजा की जाती है। फिर हृत्पद्मके पूर्व आदि केशरोंमें पीठशक्ति पूज मध्यमें पीठपूजा होती है। हृदयमें मूल देवताको पूजा नैवेद्य व्यतीत केवल गन्धादि द्वारा करते हैं। इसके पीछे मस्तक, हृदय, मूलाधार, पद प्रभृति सब अङ्गोंमें मूलमन्त्रसे पांच पुष्पाञ्जलियां दे यथाशक्ति मन्त्र जप समापन करना चाहिये।

यह समस्त कार्य प्रोक्षणीपात्रके जलसे सम्पादित होता है। फिर प्रोक्षणीका जल बदल वहिःपूजा आरम्भ करते हैं। प्रथम शारदोक्त सर्वतोभद्रमण्डलके आदिका अन्यतम मण्डल विधान कर घट रखना चाहिये। मण्डलकी पूजाके पीछे कर्णिका धान्य पूर्ण कर तण्डुल फैलाते हैं। फिर तण्डुलोंपर कुश विस्तार-पूर्वक आतपतण्डुल संयुक्त कुशासन विन्यास किया जाता है। इसके पीछे मण्डलमें पीठोक्त देवता और प्रादक्षिण्यके वह्निकी दशकलाको विन्यास कर पूजना पड़ता है। फिर अस्त्र मन्त्रसे प्रक्षालन, चन्दन, अगुरु एवं कर्पूरसे धूपदान और त्रिगुण सूत्रसे वेष्टन कर स्वर्ण आदिसे रचित कुम्भको पूजते हैं। इसके पीछे कुम्भमें सिंदूर, आतपतण्डुल एवं नवरत्न डाल और प्रणव उच्चारणपूर्वक कुम्भ तथा पीठका एकत्र पीठ-स्थापन करना पड़ता है। फिर कुम्भकी चारो दिक् घेर सूर्यकी द्वादश कलाका स्थापनपूर्वक पूजते हैं।

इसके पीछे आत्माके भेदसे मातृकामन्त्र प्रतिलोम भावमें जप, देवता बुद्धि पर वटादि वृक्ष किंवा पलाश वल्कलके कषाय, तीर्थजल अथवा सुवासित कषाय द्वारा कुम्भ भरना चाहिये। चन्द्रकी अमृत आदि षोड़शकलाको प्रादक्षिण्यसे जलमें विस्ता तथा मन्त्र द्वारा पूजा कर और एक शङ्ख वटादि वृक्षके कषाय अष्टतिथि भर अष्ट गन्धद्रव्यसे विलोड़ित करते हैं। उसमें आवाहनपूर्वक सकल कलाओंकी पूजा होती है। प्रथम अग्निको दश कला पूजी जाती हैं। प्रति-लोम भावसे मूल मन्त्रका जप और मनही मन मन्त्र-देवताका ध्यान करते हैं। फिर प्राणप्रतिष्ठापूर्वक प्रत्येकको पूजना पड़ता है। इसके पीछे सूर्यकी तपिनी आदि द्वादश और चन्द्रकी अमृत आदि षोड़श कलाको आवाहन कर पृथक् पृथक् पूजते हैं। परि-शेषको पचास कलाको पूजा करना पड़ती है। सृष्टि आदि कवर्ग एवं चवर्ग दश, जरादि टवर्ग तथा तवर्ग दश, तीक्ष्णादि पवग एवं यवर्ग दश, पीतादि षवर्ग पंच और निवृत्त्यादि अवर्ग षोड़श कलाओंकी पूजना चाहिये। समर्थ होनेसे प्रत्येकको आवाहन कर पाद्य आदिसे पूजा करना उचित है। फिर कलामय शङ्खका क्वाथ कुम्भमें डालते हैं। कुम्भका मुख अश्वत्थ, पनस एवं आम्रपल्लव इत्यादिसे लपेट कल्पवृक्ष बुद्धिसे आच्छादन करना चाहिये। फिर कल्पवृक्षफल बुद्धिसे उक्त मुखपर फल, आतप और अक्षत रखना पड़ता है। इसके पीछे निर्मल पट्टवस्त्रद्वयसे कुम्भको वेष्टन और मूल मन्त्रसे कुम्भको मूर्ति कल्पन कर यथोक्तरूप देवताके ध्यानपूर्वक आवाहनादि सत्कारसे पूजा करते हैं। देवताके अङ्गमें षड़ङ्गन्यास, धेनु एवं प्रणमी-करणमुद्रा प्रदर्शन, प्राणप्रतिष्ठा और षोड़शोपचार पूजा समापन होनेपर १००८ वा १०८ बार मन्त्र जपा जाता है।

फिर मन्त्रके दश संस्कार समापन कर गुरुको शिष्यके नेत्रद्वय मन्त्र और वस्त्रसे बांधना चाहिये। पुष्प द्वारा उसको अञ्जलि भर स्वयं मन्त्र पाठपूर्वक देवताको प्रीतिके लिये गुरु कलसमें उक्त पुष्पाञ्जलि चढ़ाते हैं। इसके पीछे नेत्रका बन्धन खोल शिष्यको कुशासनपर बैठाना चाहिये। उक्त पूजाके क्रमानु-

कल्क (सं०पु०) कल्-क। कृदाधारार्चकलिभ्यः कः। उण् ३।४०। १ शिलापिष्ट द्रव्य, पत्थर पर पीसी हुयी चीज़। शुष्क या जलमिश्रित द्रव्यमात्र पत्थर पर पीसनेसे कल्क कहाता है। इसका संस्कृत पर्याय—पिष्ट, विनीय, आवाप और प्रक्षेप है। हिन्दीमें इसे चूरन और बुकनी या बुकनू कहते हैं। एक प्रहरसे अधिक काल रखने पर कल्क द्रव्यका वीर्य घट जाता है। २ रसपिष्ट द्रव्य, पानीमें पीसी हुयी चीज़। ३ मध्वादिपेषित द्रव्य, शहद वग़ैरहमें पीसी हुयी चीज़। इसमें प्रधान द्रव्य एक भाग और मधु, घृत वा तैल द्विगुण पड़ता है। फिर सिता वा गुड़ द्विगुण और द्रव चतुर्गुण डालते हैं। (परिभाषा प्रदीप) ३ घृत तैलादिका शेष, घी तेल वग़ैरहका बचा हुआ हिस्सा। ४ दम्भ, घमण्ड। ५ विभितकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़। ६ विष्ठा, मैला। ७ किट्ट, ८ पाप, गुनाह। ९ द्रव्यमात्रका चूर्ण, किसी चीज़की बुकनी। १० कर्णमल, कानका मैल। तुरुष्क नामक गन्ध द्रव्य, लोबान। ११ प्रतारणा, फटकार। १२ अवलेह, चटनी। १३ कठिदन्त हाथी दांत। (त्रि०) कलयति पापं आचरति। १४ पापात्मा, पापी गुनाहगार।

कल्कन (सं० क्ली०) कल्कं शाठ्यं करोति, कल्क-णिच् भावे ल्युट्। १ शठताचरण, फरेब, धोकेबाज़ी। २ विवाद, झगड़ा।

कल्कि (सं० पु०) कल्कं पापं हार्य्यतया अस्ति अस्य, इन्। भगवान् नारायणके दश अवतारोंमें दशम वा शेष अवतार। भूमण्डलमें कलिका चारो पाद या पूर्ण अधिकार आने अर्थात् समुदय मानवोंके एक वर्ण हो जाने और विष्णुका नाम भुलानेसे भगवान् कल्कि नामसे अवतीर्ण होंगे। वह कलिको निपीड़ित कर पृथिवीसे भगायेंगे; म्लेच्छकुलको मिटा सधर्म चलावेंगे। (महाभारत, भागवत, विष्णु, गरुड़, मार्कण्डेय इत्यादि)

सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि—चार युगोंको पृथिवी पर अधिकार मिला करता है। इन्हीं चारो युगोंके समष्टि कालको 'दिव्ययुग' कहते हैं। ७१ दिव्ययुगोंमें एक मन्वन्तर होता है। आजकल ७म मनु वैवस्वतका अधिकार चलता है। वैवस्वत अधिकारके ७१ दिव्ययुगोंमें अष्टाविंशति दिव्ययुगका वर्तमान कलियुग है। इससे पहले स्वायम्भुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रवत और चाक्षुष नामक छह मन्वन्तर बीत चुके हैं। इन मन्वन्तरोंमें इकहत्तर इकहत्तरके हिसाबसे ४२६ दिव्य युग हुये। प्रत्येक दिव्ययुगमें एक एक कलियुग निकला है। वर्तमान वैवस्वत मनुके २७ दिव्य युग और उसीके साथ २७ कलियुग भी हैं। वर्तमान श्वेतवराहकल्पमें कुल ४५३ कलियुग बीते हैं। प्रत्येक कलिको शेष अवस्थामें नारायणके कल्किमूर्ति परिग्रह करते ४५३ बार कल्किलीला हुयी है। फिर वर्तमान कलियुगके अन्तमें भी एक बार कल्कि अवतार लेंगे। प्रत्येक मन्वन्तरमें नारायणके अवतारादि समान होते हैं यह किसीभी पुराणसे स्पष्ट समझ नहीं सकते। सुतरां कौन निश्चय कर सकता है कि विगत मन्वन्तरों या कलियुगोंमें कल्कि अवतार हुआ था या नहीं। भगवान्‌की कल्कि लीलाके सम्बन्धमें कल्किपुराणकारने लिखा है,—

कल्किका शेषपाद आते ही स्वाध्याय, स्वधा, स्वाहा, वषट् एवं ओङ्कार अन्तर्हित हुआ, सुतरां देवों का आहारादि भी रुक गया। उस समय वह समवेत हुये और दीना, क्षीणा, तथा मलिना धरणी को आगे कर अत्यन्त हताश मनसे ब्रह्मलोक जा पहुंचे। विपन्न मन ब्रह्मलोकमें उपनीत होते उन्होंने सनक, सनन्द, सनातनादि एवं सिद्धगण द्वारा स्तूयमान लोकपितामह ब्रह्माको सुखोपविष्ट देख अवनत मस्तक प्रणामपूर्वक अवस्थान किया था। पितामहने उनसे सादर बैठनेको कह कुशल पूछा। फिर देवोंने कलिके दोषसे जो धर्मनाश हुआ, वह सब यथायथ बता दिया। ब्रह्माने देवोंकी अवस्था देख आश्वास प्रदानपूर्वक कहा था,—चलिये, विष्णुको रिझावुझा तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध करेंगे। ब्रह्मा देवोंके समभिव्याहारसे विष्णुके निकट गये। विष्णुको स्तव आदिसे सन्तुष्टकर उन्होंने देवोंकी प्रार्थना बतायी थी। नारायण विधिके मुखसे कलिको विवरण सुन कहने लगे—विभो! हम आपके अभिप्रायानुसार शम्भलग्राममें विष्णुयशाके औरस और सुमतिके गर्भसे जन्म लेंगे। हमारे तीन ज्येष्ठ भ्राता

होंगे। हम उन्हीं तीनों भाइयोंके साथ कलि जय करेंगे। हमारी प्रियतमा लक्ष्मी पद्मा नाम पर सिंहल देशमें बृहद्रथकी पत्नी कौमुदीके गर्भसे जन्मग्रहण करेंगी। देवगण! तुम भी भूमण्डलमें अपने अपने अंशसे अवतार लो। हम तुम्हारे साहाय्यसे देवापि और मरु नामक दो राजाओंको पृथिवीके राज्य पर बैठा सत्ययुग तथा धर्म चलायेंगे। विष्णुकी यह बात सुन ब्रह्मा देवोंके साथ लौट पड़े।

देवोंको विदाकर भगवान्‌ने शम्भलग्राममें विष्णुयशाके औरस और सुमतिके गर्भसे जन्म लिया। इससे पहले कवि, प्राज्ञ और सुमन्त्रक नामसे विष्णुयशाके तीन पुत्र हो चुके थे। यथाकाल वैशाख मासकी शुक्ला द्वादशीके दिन भगवान्‌ने अवतार लिया। इस बार भी वह कृष्णावतारकी भांति भूमिष्ठ होते ही चतुर्भुज देख पड़े। महाषष्ठी धात्री बनी थीं। भगवती अम्बिकाने नाभिच्छेदन किया। भागीरथीने गर्भका क्लेद निकाला था। सावित्री देवीने नहलाया-धुलाया था। पृथिवी देवीने दूध पिलाया था। षोड़शमातृकाने आशीर्वाद दिया। ब्रह्मा स्वर्गसे भगवान्‌की चतुर्भुज मूर्तिमें अवतीर्ण होते देख बहुत घबरा गये। उन्होंने पवनको सूतिकागृहमें भेजा था। पवनने आकर भगवान्‌के कानमें कहा—प्रभो! आपकी चतुर्भुज मूर्तिका दर्शनलाभ देवताओंको भी दुर्लभ है, सुतरां इस मूर्तिको छिपा मनुष्यमूर्ति धारण कीजिये। भगवान् पवनके मुखसे ब्रह्माका अभिप्राय समझ उसी क्षण द्विभुज मानव शिशु बन गये। विष्णुयशा एकाएक पुत्रका रूपान्तर देख विस्मित हुये। किन्तु विष्णुकी मायामें मोहित हो उन्होंने पूर्वदृष्ट रूपको भ्रम ठहरा लिया।

भगवान्‌के जन्म ग्रहणसे शम्भलग्रामका पापताप अन्तर्हित हुवा था। अधिवासी मङ्गलानुष्ठान करने लगे। पुत्रको क्रमशः प्राप्तवय देख विष्णुयशाने वेदविद् ब्राह्मण बुला नामकरणका आयोजन उठाया था। नामकरणके दिन परशुराम, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और व्यासदेव भिक्षुकका रूप बना शिशुरूपी हरिको देखने गये। विष्णुयशाने आह्लादपूर्वक सूर्यसम तेजस्वी चारो अतिथियोंको रोमाञ्चितकलेवर हो संवर्धनाकी। सुखसे बैठने पर पितृक्रोड़स्थ बालकको देखते ही उन्होंने समझ लिया, कि भगवान्‌ने कलिकल्कविनाशके लिये यह रूप परिग्रह किया था। यह बालकका 'कल्कि' नाम ठहरा और जातकर्म तथा नामकरणादि संस्कार करा प्रसन्न मन विदा हुये। फिर गर्ग, भर्ग, विशाल प्रभृति नामोंसे देवता कल्किकी ज्ञातिमें अवतार लेने लगे।

उस समय शम्भलग्रामके निकटस्थ प्रदेशमें विशाखयूप नामक नरपति राजत्व करते थे। वह ब्राह्मणोंके प्रतिपालक रहे। कुछ काल पीछे कल्किका वयस उपनयनके योग्य होने पर विष्णुयशाने कहा,—वत्स! हम तुम्हारा यज्ञसूत्ररूप प्रधान संस्कार सम्पन्न करेंगे, फिर तुम्हें चतुर्वेद पढ़ना पड़ेगा। कल्किने यह बात सुन पूछा, वेद, सावित्री, यज्ञसूत्र, ब्राह्मण, दशविध संस्कार, विष्णुपूजा प्रभृतिका अर्थ क्या था। फिर वह प्रश्न करने लगे,—जो ब्राह्मण सत्पथ पर चल हरिके प्रिय बनते और त्रिलोकका अभीष्ट तथा निखिल भुवनका उद्धार साधन करते, वह कहां मिलते हैं। विष्णुयशाने इस प्रश्नके उत्तरमें कलिके अत्याचारकी कथा सुनायी। पिताके मुखसे कलिका संवाद पाकर कल्कि मानो जाग उठे। उनके मनमें कलिके निग्रहका अभिलाष उत्पन्न हुवा था। पीछे यथानियम उपनयन शेष होनेपर वह गुरुकुलमें रहनेको चल दिये।

उस समय परशुराम महेन्द्र पर्वतपर वास करते थे। उन्होंने कल्किको आते देख आश्रममें लाकर अपना परिचय दिया। और फिर वह कहने लगे, 'हम तुम्हें पढ़ायेंगे। भृगुवंशमें जमदग्निके औरससे हमारा जन्म है। वेदवेदाङ्गके तत्त्व और धनुर्विद्यामें हम पारदर्शी हैं। हमने समुदय पृथिवी निःक्षत्रियकर ब्राह्मणोंको दक्षिणा दी है। आजकल तपस्याके लिये इसी महेन्द्रपर्वत पर रहते हैं। तुम हमें गुरु समझो और अभिलषित शास्त्र अभ्यास करो। कल्कि परशुरामकी बात सुन पुलकित हुये और प्रणाम कर उनके निकट रहे। उन्होंने चतुः-

मरुलाट, काञ्चनपुरी प्रभृतिके नाम लिखे हैं, उनमें अधिकांश प्राचीन पौराणिक देख पड़ते हैं।

कल्किपुराणकारने मरु और देवापिको पाण्डवोंसे अधस्तन चतुर्थ पुरुष शान्तनुका भ्राता कहा है। अन्यान्य पुराणोंकी कथा देखते युधिष्ठिरादिने कलिके प्रारम्भमें ६५३ वर्ष राजत्व किया था। सुतरां उनसे अधस्तन चतुर्थ पुरुष कैसे बहु परवर्ती कलिके शेष पादमें आ सकते हैं। मरु और देवापिमें भी सात पुरुषोंका पार्थक्य पड़ता है। फिर कल्कि अवतारके पीछे सत्ययुगका आरम्भ लिखा है। यदि कल्किदेवने देवापि और मरुको पृथिवीका राज्य सौंप सत्ययुगका प्रारम्भ किया ऐसा स्वीकार करें तो वे सत्ययुगके प्रथम राजा ठहरते हैं। किन्तु अन्य किसी पुराणमें यह कथा नहीं मिलती। कल्कि देखो।

इतिहासको छोड़ पुराणकथाको भांति यथार्थ समझें और भक्तिके साथ विश्वास करें तो इसका वर्णित विषय भविष्यत्‌में होनेकी बात है। किन्तु कल्कि पुराणकी वर्णना पढ़नेसे वैसा मालूम नहीं पड़ता। इसमें जो कुछ लिखा है, उनसे अतीत कालकी घटनाका ही ज्ञान होता है।

उग्रश्रवा ऋषिने पूछनेपर कहा था,—'शुकदेवके अनुमति क्रमसे हमने उस पुण्याश्रममें सकल भविष्य घटना सुनी थी। इस स्थल पर हम वही शुभकर भागवतधर्म कीर्तन करते हैं।' उग्रश्रवाके ही मुखसे भविष्यत् कालकी बोधक एक बात निकली है। दूसरे स्थलपर कहीं कुछ दिखलाई नहीं पड़ता। भविष्यत् कालको बतायी जाते भी यह कथा वैसी मालूम नहीं पड़ती। किन्तु महाभारत, भागवत, विष्णुपुराण, नारसिंह पुराण प्रभृतिमें कल्कि अवतारको जो कथा लिखी, उसमें सर्वत्र भविष्यत्‌काल-बोधक क्रिया लगी है। सुतरां समझ सकते हैं, कि उत्तर कालको कल्कि अवतार होनेमें कोई सन्देह नहिं। फिर भी कल्किपुराणमें संक्षेपसे अनेक गभीर भावमयी सत्‌कथाओंकी आलोचना लगी है। पाठ करनेसे आनन्द आता है। इन्हीं कारणोंसे कल्किपुराणको 'अनुभागवत' कहते हैं। इसमें जो तर्क ऊपर दिखाये, वह सुने सुनाये हैं। भगवान्‌की लीला अपार है। कौन कह सकता है भविष्यत्‌में क्या होगा? दूसरे त्रिकालदर्शी महर्षिका कथनोपकथन समझना भी कुछ सरल नहीं। ऐसी अवस्थामें कल्किपुराणका उल्लिखित विषय भक्तिपूर्वकारसे मान लेना ही अच्छा है।

कलुकफल (सं॰ पु॰) कलुकस्य विभीतकस्य फलमिव फलं यस्य, मध्यपदलो॰। दाड़िमवृक्ष, अनारका पेड़। दाड़िम देखो।

कल्करोध (सं॰ पु॰) पट्टिकारोध्र, लाल लोध।

कल्किधर्म, कल्कि शब्द देखो।

कल्किप्रादुर्भाव (सं॰ पु॰) कल्केः दशमावतारस्य प्रादुर्भावः उत्पत्तिः। कल्कि अवतारकी उत्पत्ति।

कल्कि राज—एक प्राचीन राजा। गुप्त राजवंशके पीछे इन्द्रपुरमें इन्होंने ४१ वर्ष राजत्व किया। (जैन हरिवंश) इनके भ्राता राजा अजितञ्जय थे। (जैन उत्तर पुराण)

कल्किवृक्ष (सं॰पु॰) विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कल्की (सं॰ पु॰) कल्कः पापं नाश्यतया अस्त्यस्य, कल्क-इनि। १ कल्कि अवतार। (त्रि॰) २ पापी, मलीन, गुनाहगार, मैला।

कल्प (सं॰ पु॰) कल्प्यते विधीयते असौ, क्लृप-कर्मणि घञ्। १ विधि, तरीका।

"एष वै प्रथमः कल्पः प्रदाने हव्यकव्ययोः।" (मनु ३। १४७)

कल्पति वृष्टं भाव या अनु-क्लृप-णिच्। २ प्रलय, क़यामत। ससन्धियुक्त चतुर्दश मनु द्वारा प्रलय काल निर्णीत होता है।

"ससन्धयस्ते मनवः कल्पे ज्ञेयाश्चतुर्दश।
कृतप्रमाणः कल्पादौ सन्धिः पञ्चदश स्मृतः॥" (सूर्यसिद्धान्त)

कल्पते स्वक्रियायै समर्थो भवति अत्र। ३ ब्रह्माका दिन। देवताओंके दो सहस्र युगोंमें ब्रह्माका एक दिन (कल्प) और तीस कल्पोंमें एक मास होता है। उनके संस्कृत नाम—श्वेतवाराह, नीललोहित, वामदेव, गाथान्तर, रौरव, प्राण, बृहत्‌कल्प, कन्दर्प, सत्य, ईशान, ध्यान, सारस्वत, उदान, गरुड़, कौर्म, (ब्रह्माकी पौर्णमासी), नारसिंह, समाधि, आग्नेय, विष्णुज, सौर, सोम, भावन, सुप्तमाली, वैकुण्ठ, आर्चिष, वल्ली-

षष्टि कला साङ्गवेद और धनुर्वेद पढ़ दक्षिणा देना चाहा था। परशुरामने दक्षिणा की बात सुन कर कहा,—ब्राह्मणकुमार! भगवान् ब्रह्माने विष्णु-से कलिनिग्रहके निमित्त प्रार्थना की थी। विष्णुने वही प्रार्थना पूर्ण करने को अवतार लिया है। तुम वही पूर्णब्रह्मरूपी हरि हो। तुमने हमसे विद्या पढ़ी है। आगे तुम शिवसे अस्त्र तथा सर्वज्ञ शुक पक्षी और सिंहलदेशकी राजकन्या पद्मानाम्नी लक्ष्मी पाओगे। फिर तुम्हारे हाथसे धर्महीन नृपतियोंका विनाश, कलिका निग्रह और स्वधर्मका संस्थापन किया जायेगा। तुम अन्तमें मरु और देवापिको पृथिवीके राज्यपर अभिषिक्त कर गोलोक पहुंचोगे। तुम्हारे इस साधुकार्यके अनुष्ठानसे हम परम प्रसन्न होंगे। यही हमारी दक्षिणा है।' कल्किने गुरु-देवसे आज्ञा ले विल्वोदकेश्वर नामक शिवमन्दिरमें पहुंच महादेवकी पूजा और स्तुति की। स्तवसे तुष्ट हो देवादिदेव पार्वतीके साथ आविर्भूत हुये और वर देकर कहने लगे,—'तुमने जो स्तव बनाकर पढ़ा, वही सब पढ़ने वालेका सर्वाभीष्ट सिद्ध होगा। यह द्रुतगामी बहुरूपी गरुड़के अंशसे उद्भूत अश्व और यह सर्वज्ञ शुक तुम्हें देते हैं। आजसे मानव तुम्हें सर्वविध शास्त्रमें निपुण, वेदपारदर्शी और सर्वभूत-विजयी समझेंगे। यह महाप्रभाशाली रत्नखचित मुष्टिविशिष्ट कराल करवाल ग्रहण करो। इसीसे पृथिवीका भार हरण करना पड़ेगा।' यह कह कर महादेव अन्तर्हित हुये। कल्कि भी हर पार्वतीको प्रणाम कर शिवदत्त वस्तु उठा अश्व पर चढ़े और अपने घरको लौट आये। विष्णुयशा पुत्रके मुखसे अवगत हो इधर उधर उस समस्त कथाकी आलो-चना करने लगे। क्रमशः राजा विशाखयूपको खबर लगी। विशाखयूप सुनते ही समझ गये, कि यथार्थ विष्णु अवतीर्ण हुये थे। कारण जिस समय कल्किने जन्म लिया, उसी समयसे उनकी राजधानी माहिष्मती नगरीमें याग, दान, तपस्या और ममका अनुष्ठान होने लगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य आदि अपना दुराचरण छोड़ते थे। इससे



कल्कि अवतार।

विशाखयूप भी स्वयं धर्माचरण अवलम्बन पूर्वक विशुद्ध हृदयसे प्रजापालन करने लगे। कल्किने उपयुक्त समय देख खड्ग तथा धनुर्बाण लिया और अश्वपर चढ़ माहिष्मतीपुरकी ओर गमन किया। उनके दो भ्राता और गर्ग भर्गादि ज्ञातिगण भी पीछे पीछे चले। विशाखयूप कल्किकी बातें सुन आगे बढ़े थे। उन्होंने पुरीद्वार पर पहुंच देवता-परिवृत उच्चैःश्रवारोही इन्द्रकी भांति स्वजनवेष्टित कल्किको दण्डायमान देखा। विशाखयूपने अवनत हो कल्किको प्रणाम किया था। कल्किने भी प्रसन्न दृष्टिसे उनकी ओर देख दिया। भगवान्की कृपादृष्टि प्राप्तकर विशाखयूप उसी दिनसे पुण्यात्मा वैष्णव बन गये।

कल्कि राजाके साथ रहने लगे। फिर उन्होंने संक्षेपमें आश्रमधर्मका निर्देश करा कहा था,—'हमारे अंशवाले कलिके पापसे भ्रष्टाचार बने, किन्तु अब हमसे आ मिले हैं। तुम राजसूय और अश्वमेध यज्ञ कर हमारी उपासना उठाओ। हमीं परमलोक और हमीं सनातन धर्म हैं। काल, स्वभाव और संस्कार हमारा अनुगामी है। हम चन्द्रवंशीय देवापि तथा सूर्यवंशीय मरुको धर्मराज्य पर संस्थापित और सत्य युग प्रवर्तित कर गोलोक चले जायेंगे।' विशाख-यूपने यह बात सुन कल्किसे वैष्णव धर्मका प्रसङ्ग पूछा।

कल्प, वैराज, गौरीकल्प, महेश्वर और पितृकल्प (ब्रह्माकी अमावस्या) हैं। इसी प्रकार बारह मासमें ब्रह्माका एक वत्सर बीतता है। उनका आयुकाल शत वत्सर है। अभी ब्रह्माके पचास वर्ष अतीत हुये हैं। एक पञ्चाशत्वर्षीय श्वेतवाराहकल्प चल रहा है। चैत्र मासकी शुक्ल प्रतिपद्से प्रथम कल्प लगा है,

"चैत्रे मासि जगद् ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि।
शुक्लपक्षे समग्रन्तु तदा सूर्योदये सति।
प्रवर्त्तयामास तदा कालस्य गणनामपि ॥" (ब्रह्मपुराण)

चैत्रमासके शुक्ल पक्षीय प्रथम दिनको सूर्योदय होने पर ब्रह्माने समग्र जगत् बनाया और उसी समयसे कालकी गणनाको चलाया है।*

एकसप्तति (७१) महायुगोंमें एक मन्वन्तर पड़ता है। सत्ययुगके परिमाणसे मन्वन्तरकी सन्धि निकलती है। प्रत्येक मन्वन्तर बीतने पर जलप्लावन होता है। फिर प्रत्येक कल्पमें सन्धिके साथ चतुर्दश (१४) मन्वन्तर रहते अर्थात् सन्धिवाले चतुर्दश मन्वन्तरोंको ही एक कल्प कहते हैं। एक सत्ययुगके परिमाण पर ऐसे ही कल्पादिमें पञ्चदश (१५) सन्धियां मानी जाती हैं।

	देवमान	सौरमान।
आदिसन्धि	४८००	१७२८०००
एकसप्तति महायुग	८५२०००	३०६७२००००
एकसन्धि	४८००	१७२८०००
एक मन्वन्तर	८५६८००	३०८४४८०००
चतुर्दश मन्वन्तर	११९९५२००	४३१८२७२०००
कल्प	१२००००००	४३२००००००००

सहस्र (१०००) महायुगोंमें एक कल्प होता है। प्रति कल्पके अवसानमें सर्वभूतोंका विनाश अर्थात् प्रलय पड़ता है। एक कल्पमें ब्रह्माका एकदिन ठहरता और उनकी रात्रिका परिमाण भी वैसा ही लगता है। पूर्वकथित अहोरात्रोंकी संख्यासे एकशत (१००) वत्सरकाल ब्रह्माका आयु है। आज तक ब्रह्माकी आयुका अर्द्धकाल (५० वत्सर) बीता है। वर्तमान कल्पके आरम्भमें ब्रह्माके अवशिष्ट आयु (५० वत्सर) का प्रथम दिवस देखना पड़ेगा। वर्तमान कल्पमें भी छह मन्वन्तरोंके साथ सात सन्धियां अतीत हुई हैं। आज कल वैवस्वत नामक, सप्तम मनुका काल चलता है। फिर वैवस्वत मनुके भी सप्तविंशति (२७) युग बीते हैं [illegible] अष्टाविंश (२८ वें) युगके सत्य, त्रेता और [illegible] गया, कलियुग लगा है।

(सूर्य सिद्धान्त, मध्याधिकार २१-२४)

[illegible] कल्पतरु। ८ शास्त्र [illegible] अन्तर्गत याग [illegible] ८ व्याकरण [illegible] पड़ता है। [illegible] १११५)

* मापादि स्थूल कालका नाम मूर्तकाल और त्रुटादि परमाणु सदृश सूक्ष्मकालका नाम अमूर्तकाल है। सुस्थ शरीरमें निश्वास प्रश्वासमें जो काल लगता, उसे विद्वान् प्राण कहते हैं। अर्थात् दश गुरु अक्षरोंके उच्चारणका काल प्राण है। छह अक्षरोंको १ विकलोंको बराबर पड़ता है। ऐसेही ६ प्राणोंमें १ विनाडी और ६० विनाडियोंमें १ नाड़ी (दण्ड) होती है। ६० दण्डोंका १ नाक्षत्र अहोरात्र और ३० नाक्षत्र अहोरात्रोंका १ नाक्षत्र मास माना है। एक सूर्योदयसे दूसरे सूर्योदय तक १ सावन अहोरात्र और ३० सावन अहोरात्रोंमें १ सावन मास पड़ता है। एक तिथिसे दूसरी तिथि तक चान्द्र अहोरात्र रहता है। ३० चान्द्र अहोरात्रोंका एक चान्द्रमास ठहरता है। सूर्यके एक राशि संक्रमणसे दूसरे राशि संक्रमण पर्यन्त सौरमास चलता है। इसी प्रकार द्वादश मासोंमें एक वर्ष बीतता है। एक सौर वत्सरमें देवताओंका एक अहोरात्र होता है। देवताओंके दिनमें असुरोंकी रात्रि और रात्रिमें असुरोंका दिन है। ऐसे ही ३६० अहोरात्रोंमें देव[illegible] असुरोंका एक एक वत्सर लगता है। दैव[illegible] महायुग (चतुर्युग) आता है। महायु[illegible] और बीतते हैं। सन्ध्या (कलियुगको आदिको [illegible] युगको अन्त सन्धि) के साथ चार युग [illegible] [illegible]

कल्किने कलिकलुषविनाशके लिये विशाखयूपको सभामें सृष्टिसे आरम्भ कर विराट्मूर्ति, ब्रह्मा, माया, देवदानव-मानव-स्थावर जङ्गम आदिकी उत्पत्ति, वेदमाहात्म्य, ब्राह्मणमहिमा, अपने अवतारको आवश्यकता प्रभृति सब बातें बतायी थीं। सन्ध्याकाल विशाखयूपके स्थानान्तर जाते प्रियदर्श शुक इतस्ततः विचरण कर कल्किके निकट आ पहुंचे। कल्किने शुकसे कहा,—शुक! कहो, तुम किस देशसे क्या आहार कर आये हो; तुम्हारा मङ्गल तो है? शुकने उत्तर दिया,—'देव! सागरके मध्य सिंहल नामक एक द्वीप है। वहांके नृपति बृहद्रथ कहाते हैं। कौमुदी नाम्नी उनकी पत्नीके गर्भसे एक कन्या हुयी है। उसका नाम पद्मावती त्रिलोकदुर्लभा है। उनका चरित्र अतीव रमणीय है। रूपसे मन्मथ भी पागल बन जाता है। पद्मावतीने हर पार्वतीकी उपासनाकर वर पाया है, कोई मनुष्य-राजपुत्र पद्मावतीके उपयुक्त नहीं। इस जगत्में जो मानव वा देव असुर नाग गन्धर्व प्रभृति पद्माको कामभावसे निरीक्षण वा अभिलाष करेगा, वह तत्क्षण स्वीय पुरुषजन्मके वयसानुरूप स्त्रीत्व भावको पहुंचेगा। एकमात्र नारायण ही उनके स्वामी हैं। पद्मा महादेवसे यह वर लाभ कर परम हृष्ट हो इतने दिनसे नारायणकी राह देख रही है। सम्प्रति उनके पिता स्वयम्बरका आयोजन लगाया हैं। नृपतिका उद्देश है, स्वयम्बरकी सभामें श्रीकृष्णने जैसे रुक्मिणीको ग्रहण किया, वैसे ही नारायण पद्माको भी ग्रहण करेंगे। फिर स्वयम्बरकी सभामें जो सकल नृपति पहुंचे, वह पद्माको काम भावसे देखते ही स्व स्व वयसके अनुरूप विपुलनितम्बा, स्तनयुगशालिनी और सुमध्यमा रमणी बन गये। जिसने जैसी रमणीको चाहा, उसने वैसा ही रूप पाया था। वह हास्यविलासव्यसन भी निपुणतासे देखने लगी। फिर नृपति लोग प्रसन्नतासे पद्माको सहचरियोंमें मिल गये। मैं विवाह देखनेको एक निकटस्थ तरुपर बैठा था। किन्तु यह व्यापार उठते मैं अत्यन्त दुःखित हुआ। पद्मा भी रोने लगीं। मैंने उनका विलाप सुना है। वह श्रीहरिकी चिन्तामें अतिकातर हैं। मैं अधिक अपेक्षा कर न सकनेपर पद्मावतीको उसी अवस्थामें छोड़ तुम्हें संवाद देने आया हूं।

कल्किने शुकको पद्मावती लक्ष्मीको वैसी अवस्था बताते देख आश्वास दिलानेके लिये यथोपयुक्त उपदेश प्रदान पूर्वक फिर सिंहल भेजा था। शुक सिंहल पहुंच गये और पद्मावतीको आश्वास देने लगे। उनके मुखसे शिवोक्त विष्णुपूजाकी पद्धति, भगवान्के देहकी वर्णना और श्रीचरणसे केश पर्यन्त प्रति अङ्गका ध्यान सुन शुकने संवाद दिया, कि समुद्रके अपरपार शम्भलग्राममें विष्णुने कल्कि अवतार लिया है। पद्माने कल्किका संवाद सुन शुकको रत्नालङ्कारसे सजाया, भगवान्को बुला लानेके लिये दूत बनाया और कह सुनाया,—देखो, जो कहना है, कहोगे। तुमसे अविदित कुछ भी नहीं है। यह दूसरी कौन बात कह सकती हैं। कल्कि अपने मनुष्यभ्रममें स्त्रीप्राप्तिकी आशाहासे सिंहल आई न आयें, किन्तु आप श्रीचरणमें हमारा प्रणाम अवश्य पहुंचायें। कल्किसे कह दीजियेगा, कि पद्माके अदृष्ट दोषसे शिवका वर अभिशाप बन गया। शुक उनसे विदा हो कल्किके निकट पहुंचे। कल्कि पद्माकी कथा सुन प्रियदर्श अश्वपर चढ़े और शुकको सङ्ग ले तन्मयचित्तसे त्वरितपद सिंहलकी ओर चल पड़े। कल्कि यथाकाल राजधानी कारुमती नगरमें पहुंचे थे। नगरके प्रान्तभागमें मनोहर सरोवर देख उन्होंने शुकसे कहा,—"इस स्थानपर स्नान करना पड़ेगा।" शुक उनका उद्देश देख पद्मावतीके सन्निधानको चल दिये। कल्किने सरोवरके तीर पर अवस्थान किया। शुकने जाकर पद्मावतीको भगवान्के आगमनका संवाद दिया था। पद्मावती सुनते ही सरोवरस्नानके छलसे सहचरी सङ्ग ले कल्किके दर्शनको चल पड़ी हुयीं। उनके आनेका समाचार पा गृहविपिनोंमें जो सकल पुरुष रहे, वह भयसे भागने लगे। उनको कामिनियां पुण्यकार्यका अनुष्ठान करतीं, जिसमें पतिलोक स्त्रीत्वको न पहुंचें। पद्मावती सहचारियोंके साथ सरोवरके सोपानपर जा उतरीं। उस समय भगवान्

२ कर्चूर, कचूर। कल्पयति गद्यपद्यादिकमुद्भाव्य रचयति। ३ ग्रन्थकर्ता, किताब बनानेवाला। ४ संस्कार, रस्म। (त्रि॰) ५ रचक, बनानेवाला। ६ आरोपक, लगानेवाला।

कल्पकतरु, कल्पतरु देखो।

कल्पकार (सं॰ पु॰) कल्पं कल्पसूत्रं करोति, कल्प-कृ-अण्। १ कल्पसूत्रकारक आश्वलायनादि। कल्पं वेशं करोति। २ नापित, नायी। (त्रि॰) ३ वेश-कारक, रूप बनानेवाला। ४ छेदक, छेदनेवाला।

कल्पकारक (सं॰पु॰) कल्प-कृ-ण्वुल्। कल्पकार देखो।

कल्पक्षय (सं॰पु॰) कल्पस्य सृष्टेः क्षयो यत्र, बहुव्री॰। प्रलय, कयामत, संसारका नाश।

"कल्पक्षये पुनस्ते तु प्रविशन्ति परं पदम्।" (विष्णुपुराण)

कल्पगा (सं॰ स्त्री॰) गङ्गा नदी।

कल्पतरु (सं॰ पु॰) कल्पयासौ तरुश्चेति, कर्मधा॰ अथवा कल्पस्य तरुः राहोः शिरः इत्यादिवत्, ६-तत्। १ देवलोकका वृक्षविशेष। विहिश्तका एक पेड़। यह वृक्ष मांगनेसे सकलपदार्थ देता है।

"निगमकल्पतरोर्गलितं फलम्।" (भागवत १।१।३)

२ स्मृतिशास्त्रविशेष। ३ शारीरकसूत्रभाष्यपर भामती टीकाकी एक व्याख्या। ४ उदारपुरुष, सखी, मुंहमांगी चीज देनेवाला। ५ क्रमुकवृक्ष, सुपारीका पेड़। ६ रसविशेष, एक कुश्ता। रस (पारद), गन्ध (गन्धक), विष (वत्सनाभ) और ताम्रको समभाग पीस क्रमशः पांच दिन तक पांच बार गोरो-चनाकी भावना लगती हैं। फिर अम्लको निर्गुण्डीके रसमें सात दिन घोट लेने और फिर आर्द्रकके रसकी तीन भावना देनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। इसकी वटी सर्षप समान बना छायामें सुखाते हैं। जीर्णज्वर और विषमज्वरमें २१ वटी खिलायी जाती हैं। इसके सेवन समय रोगीको कजली पिप्पलीका उष्ण जल पिलाना, शर्करा तथा दधि खिलाना और नहलाना चाहिये। (भैषज्यरत्नावली)

कल्पद्रु (सं॰ पु॰) कल्पयासौ द्रुश्चेति, कर्मधा॰। १ कल्पतरु, स्वर्गका एक पेड़। २ कलारगुच्छ वृक्ष, छोटे अमलतासका पेड़। ३ केशवप्रणीत एक शब्दकोष।

कल्पद्रुम (सं॰ पु॰) कल्पयासौ द्रुमश्चेति, कर्मधा॰। १ कल्पवृक्ष। २ छोटा अमलतास। ३ स्मृतिशास्त्र विशेष। ४ तन्त्रशास्त्र विशेष।

कल्पन (सं॰ क्ली॰) क्लृप भावे ल्युट्। १ छेदन, काट छांट। २ रचना, बनाव। ३ विधान, ठहराव। ४ आरोप, लगाव। ५ अप्रकृत विषयका उद्भावन, अन्दाज।

कल्पना (सं॰ स्त्री॰) क्लृप-णिच् भावे युच्-टाप्। १ हस्तिसज्जा, सवारीके लिये हाथीकी सजावट। २ अनुमान, अन्दाज। ३ रचना, बनावट। ४ अर्था-पत्तिरूप प्रमाण विशेष, एक सबूत। इसमें होनेवाली बातोंका ख्याल रहता है। ५ नूतन विषयका उद्भा-वन, नयी बातका निकास। काव्य, उपन्यास और चित्र आदि कल्पनासे ही बनते हैं।

कल्पनाकाश (सं॰त्रि॰) कल्पनायाः काश इव काशो यस्य, बहुव्री॰। सहलकी भांति आप्य विनाशी, मन-सूबेकी तरह जल्द बिगड़ जानेवाला। यह शब्द अस्थिर पदार्थका विशेषण है।

कल्पनाथ (हिं॰ पु॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। (Justicia paniciculata)

कल्पनाशक्ति (सं॰ स्त्री॰) कल्पनायाः नवोद्भावनस्य शक्तिः, ६-तत्। नूतन विषयके उद्भावनकी शक्ति, नयी बात निकालनेकी ताकत।

कल्पनी (सं॰ स्त्री॰) कल्पयति केशादीन् छिनत्ति अनया, क्लृप च्छेदने ल्युट्-ङीप्। कतरनी, कैंची।

कल्पनीय (सं॰ त्रि॰) कल्पनाय हितम्, कल्पन-ठक्। १ कल्पनाके उपयोगी, अन्दाजके लायक। २ छेद्य, काटने का विल। ३ विधानके उपयुक्त, ठहराने लायक। ४ आरोपके उपयोगी, लगाने का विल।

कल्पपादप (सं॰ पु॰) कल्पयति सर्वकामं सम्पाद-यति कल्पः, कल्पयासौ पादपश्चेति, कर्मधा॰। १ कल्प-तरु, स्वर्गका एक पेड़। "यथा न चक्रे द्विजकल्पपादपः।" (नैषध १।१५) २ विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कल्कि कदम्बतरुके मूलदेशपर सोते थे। पद्मावती यथाकाल स्नान समापन कर उसी तरुके मूलपर जा पहुंचीं और कल्किका रूपलावण्य देख मोहित हुयीं। उन्होंने शुकसे महापुरुषकी निद्रा न भङ्ग करने और उनके जग कर स्त्रीत्व प्राप्त होनेसे डर लगनेको कहा था। वैसा होते उनकी क्या दशा होती। महादेवका वर पद्माके लिये शाप था। कल्कि मन ही मन उनका अभिप्राय समझ जाग उठे। उन्होंने मधुर प्रेमसम्भाषणसे पद्मावतीको मनाया था। पद्मावती कल्किदेवके मधुर वचन सुन तथा पुरुषत्व अक्षत रहते देख सातिशय आनन्दित हुयीं और लज्जा नम्रमुखमें प्रेम-गद्गद स्वरसे भगवान् कल्किको स्तव द्वारा रिझा घर लौट पड़ीं। उन्होंने पिताके घरमें भगवान् कल्किदेवके आगमनकी वार्ता कही थी। बृहद्रथने नगरमें श्रीहरिको पदार्पण करते सुन नानाविध नृत्य, गीत, वाद्यादिका आयोजन उठाया। फिर वह पात्रों, मित्रों, परिजनों और ब्राह्मणों आदिके साथ कल्किदेवको लेने चल दिये। पुरोहित पूजाका उपकरण उठा पीछे रहे। राजाने सरोवरके तीर कल्किको देख स्तवपूजादि द्वारा रिझाया था। पुरीमें आनेपर कल्किका पद्मावतीके साथ विवाह हुवा। स्त्रीत्व प्राप्त राजा कल्किका स्तव करने लगे और प्रसन्न होने पर उनके आदेशानुसार रेवा नदी में नहा अपना अपना पुरुष देह पा गये। फिर उन्होंने दश अवतारोंका नामोल्लेख और भगवान् कल्किका स्तव कर स्वस्व देशको प्रस्थानका उपक्रम लगाया। पुरुषोत्तम कल्किने उस समय उन्हें वर्णाश्रमधर्म, वैदिक अनुशासनादि और प्रवृत्तिमार्ग तथा निवृत्तिमार्गका यथिकोचित कार्य बताया था। नृपति वह बातें सुन पुलकित हुये और पूछने लगे,—'देव! किस कारणसे स्त्री और पुरुष भेदमें सृष्टि पड़ती है। सुख, दुःख और जरा कहांसे है? किसके आदेश और किस उद्देशसे यह विहित हैं? आज तक इन सकल विषयोंका यथार्थतत्त्व विवेचित नहीं हुवा। फिर हमसे जो विषय भिन्न पड़ता, वह समझ पर नहीं चढ़ता। तुम अनुग्रह कर हमसे कहो।' कल्किदेवने यह प्रश्न सुन अगस्त्य मुनिको स्मरण किया। वे वहां पहुंचे थे। कल्किने राजाओंका प्रश्न बता सदुत्तर देनेको कहा। मुनिवर अगस्त्यने अपने पूर्व जन्मका वृत्तान्त सुना राजाओंके सकल प्रश्नोंका उत्तर दिया। राजा फिर अपने अपने घर लौट गये। राजाओंके स्वराज्यको जाते भगवान् कल्किने भी अपने राज्य को प्रत्यागमन करनेका सङ्कल्प किया। देवराज इन्द्रने भगवान्का अभिप्राय समझ विश्वकर्मासे शम्भलग्राममें उनके लिये स्वस्ति प्रभृति नानाविध भवन बनवाये थे। यथाकाल पद्मावतीको साथ ले धूमधामसे कल्कि शम्भलग्रामको ओर चल दिये।

वह सब लोग शम्भल ग्राम पहुंचे थे। कल्कि और पद्मावतीने आकर जनक-जननीको प्रणाम किया। फिर वह बन्धुओंके समभिव्याहारसे नगरमें गये और विश्वकर्माके बनाये भवनमें रहने लगे। उसी समय कल्किके भ्राता कविने स्वपत्नी कामकलाके गर्भसे बृहत्कीर्ति तथा बृहद्बाहु, प्राज्ञने अपनी पत्नी सन्नतिके गर्भसे यज्ञ एवं विज्ञ और सुमन्त्रकने मालिनीके गर्भसे शासन तथा वेगवान् नामक पुत्र उत्पादन किये।

कुछ दिन बीतने पर विष्णुयशाने अश्वमेधयज्ञ करना चाहा था। कल्कि पिताकी इच्छा देख धनरत्न संग्रह करनेको दिग्विजयके लिये चले गये।

कल्कि स्वजनोंको लेकर ससैन्य प्रथमतः कीकट देशमें जा उतरे। कीकटदेशमें उस समय सब एकाकार रहा। स्त्री, धन वा अन्न आदि लेनेमें कोयी अपना पराया देखता न था। वहां जिन नामक एक राजा रहे। वह कल्किका आते सुन दो अक्षौहिणी सैन्य लेकर लड़ने चले।

प्रथम युद्धमें जिन राजकी बौद्धसेना हारकर भागी थी। फिर कल्कि और जिन दोनों लड़ने लगे। कल्कि शराघातसे मूर्छित हुये थे। जिन राजाने अचेतन कल्किका देह उठा ले जाना चाहा। किन्तु वह विश्वम्भर देह उठाये उठा न था। उसी बीच विशाखयूपने निकटस्थ हो गदाघातसे जिनको हटाया और कल्किको लाकर अपने रथ-

कल्पान्तस्थायी (सं॰ त्रि॰) कल्पान्तपर्यन्तं तिष्ठति, कल्पान्त-स्था-णिनि। प्रलयकाल पर्यन्त वर्तमान रहनेवाला, जो क़यामत तक टिक सकता हो।

कल्पिक (सं॰ त्रि॰) उपयुक्त, क़ाबिल।

कल्पित (सं॰ पु॰) कल्प्यते सज्जीक्रियते असौ, कल्प-णिच् कर्मणि क्त। १ सज्जितहस्ती, लड़ाईकेलिये सजा हुआ हाथी। (त्रि॰) २ रचित, बनाया हुआ।

"ब्रह्मादि ब्रह्मपर्यन्तं मायया कल्पितं जगत्।" (महानिर्वाण)

३ उद्भावित, फ़र्ज़ी, माना हुआ। ४ सम्पादित, ठीक किया हुआ। ५ सज्जित, सजा हुआ। ६ दत्त, दिया हुआ। ७ आरोपित, लगाया हुआ। ८ अवधारित, सोचा हुआ। ९ कृत्रिम विषय सत्यकी भांति स्थिरीकृत, गुलतकी तरह ठहराया हुआ।

कल्पितार्घ, कल्पितार्घ्य देखो।

कल्पितार्घ्य (सं॰ त्रि॰) कल्पितं दत्तं अर्घ्यं यस्मै। अर्घ्य दिया हुआ, जो अर्घ पा चुका हो।

कल्पितोपमा (सं॰ स्त्री॰) अमूतोपमा, अन्दाज़ी मिसाल। इसमें प्रकृत उपमान न मिलनेसे कल्पना लगती है।

कल्पी (सं॰ त्रि॰) कल्पयति, क्लृप-णिच्-णिनि। १ रचनाकारक, बनानेवाला। २ आरोपक, लगानेवाला। ३ वेशकारक, सुधारनेवाला। (पु॰) ४ नापित, नाई।

कल्प्य (सं॰ त्रि॰) क्लृप-णिच्-यत्। १ रचनीय, बनाने लायक़। २ आरोप्य, आच्छा हो सकनेवाला। ३ अनुष्ठेय, किया जानेवाला। ४ विधेय, मानने लायक़।

कल्म (सं॰ क्ली॰) रचयोरैक्यात्। कर्म, काम।

कल्मलि (सं॰ पु॰) कलयति अपगमयति मलम्, पृषोदरादित्वात् साधुः। तेजः, रोशनी।

कल्मलीक (सं॰ क्ली॰) कल्मलि देखो।

कल्मलीक (सं॰ पु॰) कल्मलीकमस्यास्ति, कल्मलीक इनि। १ रुद्र। (त्रि॰) २ तेजोयुक्त, चमकदार।

कल्मष (सं॰ क्ली॰) कर्म शुभकर्म स्यति नाशयति, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ पाप, गुनाह। २ हस्तिपुच्छ, हाथीकी पूछ। ३ मलिनता, मैलापन। ४ दुष्कर्म। (पु॰) ५ नरक विशेष, एक दोज़ख़। ६ मास विशेष, एक महीना। जिस मास अब मङ्गलको मङ्गलवार या शनिवार आता, वह कल्मष कहाता और मनोदुःख देखाता है। (दीपिका) (त्रि॰) ७ मलिन, गन्दा, मैला।

कल्मषध्वंसकारी (सं॰ त्रि॰) १ पाप वा तिमिरनाशक, गुनाह या अंधेरेको दूर करनेवाला। २ पापकर्मसे बचानेवाला, जो जुर्म करने न देता हो।

कल्माष (सं॰ पु॰) कलयति, कल्-क्विप्; माषयति, स्वभासा अभिभवति, अन्यवर्णान्, माष-णिच्-अच्; कल् आमो माषयेति, कर्मधा॰। १ चित्रवर्ण, चितकबरा रंग। २ कृष्णवर्ण, सांवला रंग। ३ राक्षस, आदमखोर। ४ गन्धशालि, खुशबूदार चावल। ५ सर्पविशेष, एक सांप। ६ अग्निविशेष, एक आग। ७ सूर्यके एक अनुचर। ८ पूर्व जन्मके शाक्यमुनि। (त्रि॰) ९ चित्रवर्ण विशिष्ट, चितकबरा। १० कृष्णबिन्दुयुक्त, काले धब्बेवाला।

कल्माषकण्ठ (सं॰ पु॰) कल्माषः कृष्णवर्णः कण्ठो यस्य, बहुव्री॰। नीलकण्ठ, शिव।

कल्माषग्रीव (सं॰ त्रि॰) कल्माषा कृष्णवर्णा ग्रीवा यस्य, बहुव्री॰। १ कृष्णवर्ण ग्रीवावाला, जिसके काली गर्दन रहे। (पु॰) कल्माषा ग्रीवा सामीप्यात् कण्ठो यस्य। २ महादेव।

कल्माषता (सं॰ स्त्री॰) कल्माषस्य भावः, कल्माष-तल्। १ चित्रवर्णता, चितकबरापन। २ कृष्णपाण्डुरवर्णता, कालापन, स्याही।

"राघवं शाक्मषतां धारि कल्माषता गतः।" (भागवत ८।८।११)

कल्माषपाद (सं॰पु॰) कल्माषौ कृष्णवर्णौ पादौ यस्य, बहुव्री॰। सौदास राजा। यह नलसखा राजा ऋतुपर्णके वंशीय थे। किसी समय सौदासने मृगयाको निकल एक राक्षस मारा था। उसका भ्राता वैर निर्यातन उपायके अनुसन्धानको आशासे राजाके घर आ पाचक वेशसे रहने लगा। एक दिन राजगुरु वशिष्ठ भोजन करने पहुंचे। उसने नरमांस खानेको रखा। वशिष्ठने वह मांस देख राजाका दुर्व्यवहार समझ लिया और अभिशाप दिया,—सौदास तुम

पर बैठाया। रथपर चढ़ते ही कल्कि जाग पड़े। फिर वह मुहूर्त मध्य जिनके सम्मुख पहुंचे थे। मल्ल-युद्धमें हरा कल्किने उन्हें काट तोड़ तोड़ मार डाला। जिनके भ्राता शुद्धोदन भ्रातृघातीसे प्रतिशोध लेने गये थे। किन्तु कल्किके ज्येष्ठभ्राता कविने उनसे लड़ने लगे। शुद्धोदन और कविमें बड़ी गदायें चलीं। शुद्धोदनने कविको किसी प्रकार दबा न सकनेपर माया देवीका स्मरण किया। माया देवी सिंहध्वज रथपर चढ़ सैन्यके पुरोभागमें आ खड़ी हुईं। मायाके आते ही कल्किका सैन्य अकर्मण्य बना था। बौद्धसेना जयध्वनिके साथ आगे बढ़ी। किन्तु कारण समझनेपर कल्कि स्वयं मायाके सम्मुख जा पहुंचे। माया देखते ही विष्णुके शरीरमें समा गयीं। मायाको न देख बौद्धसेना घबरायी थी। अस्त्रको युद्ध होने लगा। क्रमशः शुद्धोदन, काकाच, कपोतरोमा प्रभृति बौद्धनायक खेत रहे। अनेक लोग भागे थे। फिर बौद्धपत्नियां लड़ने पहुंचीं। कल्किने उन्हें अबलाजनसुलभ प्रकृतित्व समझा युद्धसे निवृत्त होनेको कहा। रमणियोंने उनकी बात न सुन पतिके शोकमें अस्त्र छोड़े थे। किन्तु अस्त्रोंने शत्रुके प्रति मूर्ति परिग्रह पूर्वक उनसे कह दिया,—जिन भगवान्‌की शक्तिके आश्रयसे हम शत्रुओंको ध्वंस करते, यह वही भगवान् हरि देख पड़ते हैं। भगवान्‌ने प्रह्लादके लिये जिस समय नृसिंह मूर्ति बनायी थी, उस समय भी हरिके गात्रमें आघात मारने को हमारी कुछ चलने न पायी। अब हम क्या कर सकेंगे। बौद्धकामिनियां यह बात सुन विस्मित हुयीं। और अवशेषको हरिके शरण गयीं। कल्किने उन्हें भक्तियोगका उपदेश दिया था। फिर उन्होंने भी क्रमशः मुक्ति पायी।

कल्किने कीकटसे चक्रतीर्थको जा सदल शास्त्र-विहित विधानके अनुसार स्नान आदि किया था। एक दिन वहां भगवान्‌से वालखिल्य नामक मुनियोंने विषण्ण वदन जाकर कहा,—कुम्भकर्णके निकुम्भ नामक एक पुत्र रहा। उसके कुथोदरी नाम्नी एक कन्या है। कालकञ्ज नामक किसी राक्षससे विवाह हुवा। उसके विकञ्ज नामक एक सन्तान विद्यमान है। आपाततः कुथोदरी हिमालय पर्वतपर मस्तक लगा और निषध पर्वतपर दोनों पैर फैला सो गयी है। हिमालयकी एक उपत्यकामें बैठ विकञ्ज स्तन्यपान करता है? उसी राक्षसीके निश्वास पवनसे प्रतिहत और विवश हो हम आपके शरण आये हैं। आपने हमें चिरकाल राक्षसी-भीतिसे उबारा है। इसबारभी आप कृपापूर्वक हमारा दुःख मिटा दीजिये।

कल्कि मुनियोंकी बात सुन हिमालयकी उपत्यका पर पहुंचे थे। उन्होंने वहां एक दुग्धमयी नदी अति खरस्रोतसे बहते देखी। पूछने पर खबर लगी, कि वह कुथोदरीके एक स्तनकी दुग्धधारा रही। विकञ्ज एकही स्तन पीता था। उससे अपर स्तनकी दुग्धधारा नदी बनकर बह चली। अर्धघटिका पीछे अपर स्तन बदलते वह नदी सूख जाती और दूसरी ओर नदीकी दुग्धधारा बहते दीखती थी। फिर कल्कि कुथोदरीके भीषण आकारकी चिन्तामें पड़े और उसके अभिमुखको चल गये। उन्होंने जाकर देखा, कि राक्षसीका कर्ण पर्वतगह्वरके भ्रमसे सिंहोंका आश्रय और लोमकूप पुत्रपौत्रादि सह हस्तियोंके सुखसे रहने को निकेतन बना था। कल्किने राक्षसीको देख शर छोड़ा। राक्षसी शरविद्ध होते गभीर गर्जन करने लगी। वह शब्द सुन कल्किकी सेना मूर्छित हुयी। फिर राक्षसीके श्वास लेते ही हस्ती, अश्व, रथ और पदातिके साथ कल्कि नासापथमें जाने लगे। उसने निकट पाकर सबको खा डाला।

भगवान् कल्कि ससैन्य राक्षसीके उदरमें पहुंचे थे। उससे जगत्‌संसार डर गया। फिर वह राक्षसीका उदर वाणाग्नि जला और करवालसे उसे बाहर निकले। सैन्य लोग भी योनिरन्ध्र कर्ण, नासारंध्र प्रभृति स्थानोंसे निकल प[illegible]। कुथोदरी अचलको पहुंची। विकञ्ज जननीको मरते देख निरायुध हाथसे कल्किसेना मारने लगा। कल्किने पञ्चवर्षीय भीषण राक्षस शिशुको ब्रह्म अस्त्रसे यमालय भेज दिया।

दूसरे दिन असंख्य ऋषि मुनि गङ्गाका स्तव पढ़ते पढ़ते कल्किको देखने गये। उनमें अत्रि, अङ्गिरा,

राक्षस होंगे। विना अपराध अभिशाप पा राजाने भी गुरुको प्रतिशाप देनेके लिये जल उठाया। किन्तु राजमहिषी मदयन्तीने द्रुतपद उपस्थित हो राजाको रोका। राजाने वह जल अपनेही पैर पर डाला था। इससे दोनों पैर काले पड़ गये और लोग उन्हें कल्माषपाद कहने लगे। (भागवत ८।९ अ०)

कल्मषाङ्घ्रि कल्माषपाद देखो।

कल्माषाङ्घ्रिक (सं० पु०) कल्माषौ अङ्घ्री यस्य, कल्माषाङ्घ्रि-कन्। कल्माषपाद देखो।

कल्माषी (सं० स्त्री०) कल्माष-ङीप्। १ चित्रवर्णा स्त्री, काली या सांवली औरत। २ श्यामवर्णा यमुना, कालिन्दी नदी। "कल्माषीमीरयं चैव गतवन्त मिथस्तां शयोः।" (भारत, सभा ७८ अ०)

कल्मेश्वर—मध्यप्रदेशके नागपुर जिलेका एक नगर। यह नागपुर शहरसे ७ कोस पश्चिम पड़ता है। यहां कुनबीकी जमींदारी है। वह नगरके मध्य एक दुर्गमें रहते हैं। दिल्लीसे किसी हिन्दू मनसबदारने आकर यह दुर्ग बनाया था। कल्मेश्वरमें धान्य, तैल और देशीय वस्त्रका व्यवसाय चलता है। यहांकी जमीनमें अफीम, ऊख और तमाखू होती है।

कल्य (सं० क्ली०) कलयति आगम्यते, कल कर्मणि यत्। १ प्रातःकाल, सवेरा, भोर। कलयति मिष्टतां सम्पादयति, कल-यक्। २ मधु, शहद। ३ सुरा, शराब। ४ कल्याणवाक्य, मुबारकबादी, बधाई। ५ शुभाकाङ्क्षा, खैरख्वाही। ६ शुभ समाचार, अच्छी खबर। (त्रि०) ७ सज्ज, प्रस्तुत, तैयार। ८ नीरोग, चङ्गा, जो बीमार न हो। ९ वाक्श्रुतिरहित, बौरा और बहरा, जो कह सुन न सकता हो। १० दक्ष, होशियार, चालाक। ११ माङ्गलिक, खुशगवार। १२ शिक्षाप्रद, नसीहत, अङ्गेज।

कल्यजग्धि (सं० स्त्री०) कल्ये प्रातः जग्धि भोजनम्, ७-तत्। १ प्रातःकालका भोजन, सवेरेका नाश्ता। २ प्रातःकालका भोज्य, सवेरेके खानेकी चीज।

कल्यत्व (सं० क्ली०) कल्यस्य नीरोगस्य भावः, कल्य-त्व। आरोग्य, आराम, बीमारीसे छुटकारा।

कल्यद्रुम (सं० पु०) विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कल्यपाल (सं० पु०) कल्यं मधु मद्यं पालयति, कल्य-पाल-अण्। शौण्डिक, कलवार, शराब टपकानेवाला।

कल्यपालक (सं० पु०) कल्यं पालयति, कल्य-पाल-ण्वुल्। कल्यपाल देखो।

कल्यवर्त (सं० पु०) कल्ये प्रातः वर्तते जीव्यते अनेन, कल्य-वृत-णिच्-अच्। १ प्रातराश, सवेरेका नाश्ता। २ लघुभोजन, हलका खाना। (क्ली०) ३ तुच्छ वस्तु, मामूली चीज।

कल्या (सं० स्त्री०) कलयति मादयति, कल-णिच्-यक्-टाप्। १ मद्य, शराब। २ हरीतकी, हड़। ३ कल्याणवाक्य, मुबारकबादी।

कल्याङ्ग (सं० पु०) पर्पटक्षुप, दमन पापड़ेका पेड़।

कल्याण (सं० पु०-क्ली०) कल्ये प्रातः अण्यते शब्दते, कल्य-अण्-घञ्। अकर्तरि च। पा ३।३।१९। १ मङ्गल, भलाई। इसका संस्कृत पर्याय—श्व, श्रेयस्, शिव, भद्र, शुभ, भावुक, भविक, भव्य, कुशल, क्षेम और शस्त है। २ अक्षय स्वर्ग। ३ रागविशेष। इस रागमें ध, नि, सा कर, ग, म और प क्रमसे स्वर लगाये जाते हैं। दश दण्ड रात्रि बीतनेसे यह राग गाया जाता है। इसके ठाटपर राजधानी, कल्याण, विराटी, ऐरावत और कोकिल कल्याण प्रभृति रागिणियां चलती हैं। कल्याणके पुत्र हिमाल, बसन्त, चौर, जङ्गाल, कलिङ्गड़ा, पुलिन्द और गुरुसागर हैं। ४ राजविशेष, एक राजा। वह 'भट्टयो कल्याण' नामसे ख्यात थे। ५ 'गीतगङ्गा' नामक पुस्तकके प्रणेता। (त्रि०) ६ कल्याणयुक्त, भला।

कल्याण—बम्बई प्रान्तके थाना जिलेका एक उपविभाग और नगर। इस उपविभागका परिमाणफल २७८ वर्ग मील है। कल्याणसे उत्तर उलहास तथा भातसा नदी, पूर्व शाहपुर एवं मुरबाद, दक्षिण करजत तथा पनवेल और पश्चिम पारसिक पर्वतमाला है। उत्पन्न द्रव्योंमें धान्य, माष और सर्षपादि प्रधान हैं। सन अत्यन्त होता है। कल्याण प्रायः त्रिकोणाकार है। पश्चिमांशमें प्रशस्त समतल भूमि पायी है। फिर पूर्व और दक्षिणमें पर्वतमालाका अंशसमूह परिव्याप्त है। यहां वैशाख-ज्येष्ठ मासमें पूर्वदिक्से वायु चलता

वशिष्ठ, गालव, भृगु, पाराशर, नारद, दुर्वासा, देवल, दगल, अश्वत्थामा, परशुराम, कृपाचार्य, त्रित, मैद-प्रमिति महर्षि रहे। उनके साथ मरु और देवापि नामक दो राजर्षि भी आये थे। कल्कि के परिचय पूछने पर मरुने कहा,—'सूर्यवंशोद्भूत अग्निवर्णका पौत्र और शास्त्रका पुत्र हूं। व्यासदेवके मुखसे कल्कि अवतारकी कथा सुन दर्शन करनेको यहां चला आया। देवापिने अपनेको चन्द्रवंशीय प्रतीपकरका पुत्र बताया। वह शान्तनुको राज्य सौंप कलापग्राममें तपस्या करते थे; व्यासके मुखसे कल्किका संवाद सुन देखनेको पहुंच गये।

उनका परिचय पाकर भगवान् कल्किको पूर्वकथा स्मरण पड़ी। उभयको आश्वास दे उन्होंने कहा,—'मरु! प्रजापीड़क तथा प्राणिहिंसक म्लेच्छोंको मार तुम्हें अयोध्याके और पुक्कादिका उच्छेद साधन कर देवापिको हस्तिनापुरके सिंहासनपर बैठावेंगे। तुम दस शस्त्र शतविद्य हो। अब योद्धवेशमें रथपर चढ़ हमारे साथ चलो। मरु! तुम विशाखयूपकी सुन्दरी रुचिराङ्गी कन्याको पत्नी बनावो और देवापि तुम भी रुचिराश्व नृपतिकी कन्या शान्ताको विवाह कर लावो।' कल्किके यह बात कहते ही आकाशसे अस्त्र-शस्त्र शज्जित दो रथ उतर पड़े। उससे सबको विस्मय लगा था। कल्किने कहा,—"तुम दोनों लोकपालनार्थ सूर्य, चन्द्र, इन्द्र, यम और कुबेरके अंशसे धराधामपर अवतीर्ण हुये हो। तुम्हारे ही लिये इन्द्रके आदेशसे विश्वकर्माने यह रथ बनाये हैं। तुम इनपर चढ़कर हमारे पीछे पीछे चलो।' उनकी इस बातपर पुष्पवृष्टि होने लगी।

इसी समय समक सदृश एक तेजःपुञ्ज ब्रह्मचारी आ पहुंचे। कल्किने पाद्यादि द्वारा उनको पूजा कर परिचय पूछा। ब्रह्मचारीने कहा,—'कमलापते! मैं आपका आदेशवह सत्ययुग हूं। आपका आविर्भाव और प्रभाव देखनेको यहां आ पहुंचा हूं।' सत्ययुग यह कह कल्किका स्तव करने लगे। फिर वह उनके अनुगामी बने थे। महर्षियोंने अपने अपने स्थानको प्रस्थान किया।

उसके पीछे कल्कि विशाखन राज्यपर पर चढ़े। विशाखयूप, देवापि और मरु उनके पीछे थे। धर्म भी उसी समय वृद्ध ब्राह्मणवेशमें कल्किके निकट अपना परिचय दे उनको आश्वास दिया था। कीकट बौद्धोंके विदलित होनेकी बात सुन धर्म आल्हादित हुये और सिद्धाश्रम अपने परिजनोंको छोड़ कल्किके पीछे चल दिये।

कल्कि खश, काम्बोज, शबर, बर्बर प्रभृतिको दबानेके लिये कलिकी पुरीके अभिमुख हुये।

कलिकी पुरी अत्यन्त भीषण थी। उसे देखते ही लोग कांपने लगते। सर्वदा भूत, सारमेय, काक, उलूक और शृगाल वहां देख पड़ते थे। गोमांसका पूतिगन्ध सर्वत्र परिपूर्ण रहा। कामिनियां द्यूत, विवाद प्रभृति विषयोंमें अनुरक्त थीं। फिर वही वहां कर्त्री रहीं। अन्य प्रभुकी बात चलती न थी।

कलिने कल्किदेवको लड़ने आते सुन स्वीय परिजन बुला लिये। फिर वह पेचकाच रथपर चढ़ विशासन नगरके बाहर जाकर लड़नेको प्रस्तुत हुये।' कल्किने ससैन्य रणक्षेत्र पहुंच धर्मसे कलि, ऋतसे दम्भ, प्रसादसे लोभ, अभयसे क्रोध, सुखसे भय, इपसे व्याधि, प्रज्ञयसे ग्लानि और स्मृतिसे जराको लड़ाया था। अन्यान्य प्रतिद्वन्द्वियोंमें भी उन्होंने युद्ध घोषणा करायी। क्रमक्रम विषम युद्ध उठा था। आकाशमें देवता देखने गये। मरु राजा खशों काम्बोजों, देवापि चीनावों बर्बरों और विशाखयूप पुलिन्दो श्वपाकोंसे लड़ने लगे। कलिके काक और विकाक नामक दो दानव सेनापति थे। वह वृकासुरके पौत्र और शकुनिके पुत्र रहे। दोनों देखनेमें एक रूप थे। ब्रह्माके वर पा वह देवताओंसे अजेय रहे। उन दोनों वीरोंके गदाहस्त रथमें आतरनेसे मृत्यु भी डर कर भागते थे। कल्किदेव स्वयं काक और विकाकके प्रतिद्वन्द्वी बने। युद्धमें अश्वोंकी झड़ा झड़ी और वीरोंकी कड़ाकड़ीमें पृथिवी थरथराने लगी। अवशेषको कलिके अनुचर पराजित हो नाना देशोंमें चले गये। कलि स्वयं हारने पर लौहामिक भवनमें घुसा था। पेचकाचरथ घर

है। [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] रहता है। [illegible] और [illegible] है। फौज-दारोंके दो [illegible] है। कल्याण नगर इस प्रदेशका [illegible] है। यह अक्षा० १९° १४″ उ० और देशा० ७३° १०′ पू० पर अवस्थित है। नगरमें बन्दर विद्यमान है। चावल छांटनेका काम बहुत होता है। मुसलमानोंके अधिकार समय कल्याणमें ११ मसजिदें बनी थीं। चतुर्दिक् प्राचीरसे वेष्टित नगरमें प्रवेश करनेकेलिये चार द्वार थे।

कल्याण अतिप्राचीन है। नाना स्थानोंके ई० प्रथम, पञ्चम तथा षष्ठ शताब्दके खोदित शिलालेखों में भी इसका नाम मिलता है। पेरिप्लासके मतसे ई० द्वितीय शताब्दकी दाक्षिणात्यमें कल्याण नामक एक प्रधान राज्य था। कसमस इण्डिकोप्लुटेसकी वर्णनासे समझ पड़ता है,कि ई० षष्ठ शताब्दमें भारतकी वाणिज्यप्रधान पांच नगरियोंमें कल्याण एकतम और वस्त्र पित्तल प्रभृतिका विस्तृत व्यवसाय केन्द्र रहा। ई० चतुर्दश शताब्दको मुसलमानोंने जिलेका सदरखाना बना इसका नाम इसलामाबाद रखा। पोर्तगीजोंने १५३६ ई०को कल्याणपर अधिकार किया था। किन्तु उन्होंने इसकी रक्षा रखनेका कोई प्रबन्ध न बांधा। फिर १५७० ई०को वह इसका उपकण्ठ लूट यथेष्ट धन रत्न ले गये। पीछे यह प्रदेश अहमद नगर राज्यमें लगा। १६३६ ई०को बीजापुरके राजाने प्रबल हो इसे अधिकारमें किया। १६४८ ई०को शिवाजीके सेनापति आवाजी सोमदेवने कल्याणपर आक्रमण कर शासनकर्ताको बन्दी बनाया। १६६० ई०को मुसलमानोंने इसे शिवाजीके हाथसे छुड़ाया, किन्तु १६६२ ई०को फिर गंवाया। १६७८ ई०को शिवाजीने अंगरेजोंको यहां कोठी बनानेका [illegible] था। १७८० ई०को मराठोंका साहाय्य [illegible] जोंने यह प्रदेश अधिकार किया। [illegible] कल्याण अंगरेजोंके अधीन है।

प्राचीन इतिहास—इसका जो प्राचीन [illegible] बहु अधिकांश [illegible] खोदित लेखोंसे

करनेल मेकेञ्जी संग्रहमें संस्कृतपुस्तकोंका संक्षिप्त इतिहास लिपिबद्ध किया है। उसमें 'महराज यमराज वंशावली' लगी है। वह तिरुपती पर्वतके निकटवर्ती नारायणपुर वा नारायणवरम् नामक स्थानके अधिपतियों या प्राचीन कर्वेती नगरके मह राजवंशीय राजाओंका वंशविवरण कीर्तन करती है। सोमनाथ चक्रवर्तीके एक वंशीय धनञ्जय चोल थे। उन्हीं सोमराजपुत्रसे उक्त वंशकी उत्पत्ति है। धनञ्जयके वंशमें नारायणराज नामक किसी व्यक्तिने जन्म लिया। उन्हीं नारायणराजने नारायणवरम् वा कल्याणपत्तन स्थापित किया था। कल्याण पत्तन प्राचीन कल्याण वा आधुनिक नारायणवरम् नदीपर अवस्थित है।

कर्णाटिक खोदित शिलालेखोंसे जो प्रमाण मिले उन्हें देख समझ सकते हैं—एक समय गोदावरी और कृष्णानदीके अन्तर्गत भूभागमें चालुक्य राजा अतिशय प्रबल पराक्रान्त पड़े थे। उस समय कोङ्कण, कल्याण, बनवासी प्रभृति राज्योंपर उनका अधिकार फैला था। कल्याण बहुत समृद्धिशाली और विख्यात था। चालुक्य राजा शिलालेखोंमें अपना कल्याण या कल्याणपुरके 'चालुक्य राजा' कहकर परिचय दे गये हैं। कोङ्कणप्रदेशमें चित्तराज नामक एक महामण्डलेश्वर नृपति (८४६ शक) थे। उनकी प्रदत्त छाड़के सम्बन्धमें मतामत देते समय अध्यापक लासेनने कहा है,—'इसको लिखी शिलाहार जाति काफिरिस्तानकी उत्तरस्थ काफिर जातीय "शिलार" जातिको छोड़ अन्य जाति हो नहीं सकती।' किन्तु दाक्षिणात्यमें एक शिलार जाति थी। वह लोग पहले मान्यखेटीय राष्ट्रकूटोंके पीछे कल्याणवाले चालुक्योंके अधीन हुये। उस समय शिलाहारोंके ही शासनमें कोङ्कण प्रदेश, बेलगांव और सतारेका मध्यवर्ती समुदय स्थान [illegible] पराजयके बाद उक्त सकल प्रदेश [illegible] हुआ।

[illegible] कवि विह्लणने विक्रमाङ्क [illegible] एक काव्य है। [illegible] था। काव्यके मतमें विक्रमा-

हुआ। धर्मभ्रष्ट खश चण्डालादि भी मरु देवापि तथा विशाखयूपसे मारे गये।

कोक और विकोकसे कल्किदेव लड़े। मधुकैटभका युद्ध भक मारता था। कल्कि उनके अस्त्राघातसे अत्यन्त पीड़ित हुये। उन्होंने क्रुद्ध हो विकोकका सिर काट डाला। किन्तु कोकके मृतदेहको ओर देखते ही वह जी उठा और फिर दोनों भाइयोंका जोड़ा कल्किपर टूट पड़ा। कल्किने कई बार दोनोंका सिर काटा था। किन्तु एकके देखते ही दूसरा जीवित हुवा। शेषमें कल्किने अपने अश्वको उनपर छोड़ दिया। कामगामी अश्वके खुरप्रहारसे दानव बार बार मूर्छित होने लगे। फिर भी उन्हें मरते न देख कल्कि चिन्तामें पड़ गये। ब्रह्माने उस समय रणमें पहुंच कर कहा,—'विभो! यह दानव अस्त्रशस्त्रसे अवध्य हैं। हमने इन्हें एकको मरते दूसरेके देखनेसे फिर जीउठनेका वरदान दिया था। सुतरां आप वह उपाय करें, जिससे दोनों साथ ही मरें।' कल्किने उक्त रहस्य समझ गदाको हाथसे डाला और दोनोंके एक काल वज्रमुष्टि मारा था। दोनों विदीर्ण मस्तक हो पञ्चत्वको पहुंच गये और एक दूसरेका मृतदेह देख न सके। देवता और मनुष्य सब उनके मरनेसे परम प्रीत हुये। सिद्धचारणादि कल्किको सराहने लगे। कल्किपुरमें उन्होंने रण जीता था।

कल्कि उसके पीछे भल्लाटनगरको शय्याकर्णोंसे लड़ने चले। भल्लाटनगरके राजा शशिध्वज अति कृष्णपरायण और योगियोंमें अग्रगण्य थे। भगवान् कल्किको लड़ने आते सुन वहभी प्रीति और भक्ति सहकारसे सैन्य सजाकर प्रस्तुत हुये। उनकी विष्णुपरायणा सुशान्ता पत्नीने स्वामीको जगत्पतिसे युद्धोद्यत देख कहा था,—नाथ! भगवान्‌के कोमल शरीरपर आप कैसे अस्त्र छोड़ेंगे। उन्होंने उत्तर दिया,—'प्रिये! रणस्थलमें गुरु शिष्यको और उपास्य उपासकको बेलाग मार सकता है। युद्धमें यदि बचेंगे, तो कैसेके तैसे राजा बनेही रहेंगे। और साथ ही कल्किको जीतनेसे लोग हमारी प्रशंसा करेंगे। नहीं तो युद्धमें मरनेसे स्वर्गप्राप्त होना तो निश्चित ही है। सुतरां हमें दोनों ओर लाभ ही लाभ देख पड़ता है। वह ईश्वर और हम सेवकाधम हैं। कल्कि हमसे जो सेवा कराना चाहेंगे, उसके लिये वे हमें अप्रस्तुत न पायेंगे। सुतरां प्रभु जब हमसे लड़ने आये हैं, तब हमने भी अपने अस्त्रशस्त्र उठाये हैं। उनकी इच्छाके अनुसार हम कार्य करनेको बाध्य हैं।' रानीने यह सुनकर उत्तर दिया,—'हरिके सेवक कभी कामनासक्त नहीं होते। सुतरां स्वर्ग वा यशकी कामनासे आपका लड़ना असम्भव है। फिर आप जब कोयी कामना नहीं रखते, तब वह भी क्या दे सकते हैं। सुतरां हमें आप लोगोंका यह युद्धोद्यम मोहकी लीलामात्र मालूम पड़ता है।' इसी प्रकार कथनोपकथनके पीछे शशिध्वज हरिनाम स्मरण और हरिध्यान कर हरिसे लड़ने चले। शय्याकर्ण लोग अस्त्र उठा उनके साथ हुये। राजकुमार सूर्यकेतु भी परम वैष्णव और अस्त्रविदोंमें श्रेष्ठ थे। युद्ध आरम्भ हुवा। विशाखयूपसे शशिध्वज, मरुसे सूर्यकेतु और देवापिसे बृहत्केतु लड़ने लगे। कल्किसैन्य विध्वस्त हुवा था। सूर्यके युद्धमें मूर्छित होते ही सारथि मरुको ले भागा। बृहत्केतु देवापिसे हार गये। उनके क्रोड़में निष्पेषित होने लगे। परन्तु इतनेमें ही सूर्यकेतु साहाय्यके लिये पहुंचे और उन्होंने मुष्टिके आघातसे गिरा देवापिके भुजबन्धनसे अपने भ्राताको छोड़ा लिया। शशिध्वज विशाखयूपको हरा कल्कि-सम्मुखीन हुये।

शशिध्वजने कल्किसे कहा,—पुण्डरीकाक्ष! आइये और हमारे हृदयपर प्रहार लगाइये, नतुवा हमारे भयसे हमारे अन्धकार हृदयमें छिप जाइये। यदि आप हमें शत्रु समझें, तो निर्विवाद प्रहार करें; जिससे हम अनायास शिव अथवा विष्णुलोकको चले।

कल्कि यह बात सुन मनही मन सन्तुष्ट हुये और ऊपरसे शशिध्वज पर बाण वर्षण करने लगे। दोनोंमें महायुद्ध हुवा। दोनों दिव्य अस्त्र चलाते थे। शेषको कल्किके मुष्ट्याघातसे शशिध्वज मुहूर्त मात्र अचैतन्य रहे। फिर उन्होंने भी उठकर कल्किके मुष्टि मारा था। कल्कि उस आघातसे छिन्नमूल कदलीकी भांति अचेतन हो गिर पड़े। धर्म एवं

दित्यका राजत्व काल शक ९९७—१०४८ ठहरता है। विक्रमके पिता २य आहवमल्ल कल्याणनगरीके प्रतिष्ठाता थे। (Ind. Ant. Vol. I. p. 209.) कल्याणप्रदेश विक्रमादित्य महाराजको अतिप्रिय रहा। वह नाना स्थानोंसे युद्ध जीत यहीं आकर ठहरते थे।

कल्याण उपाध्याय—बालतन्त्र नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता। यह महीधरके पुत्र और रामदासके पौत्र थे। अहिच्छत्र नगर इनका जन्मस्थान रहा। इन्होंने ६४४ शककी श्रावणपूर्णिमाको रविवारके दिन अपना बालतन्त्र समाप्त किया था।

कल्याणक (सं॰क्ली॰) कल्याण स्वार्थे कन्। १ कल्याण, भलाई। (पु॰) २ पर्यटक, दमनपापड़ा। (त्रि॰) ३ कल्याणयुक्त, भला, अच्छा।

कल्याणकगुड़ (सं॰ पु॰) ग्रहणीरोगका वैद्यकोक्त औषधविशेष, दस्तोंकी बीमारीमें दी जानेवाली एक द्रव्य। आमलकीका रस २ सेर और इक्षु-गुड़ ६ सेर एकत्र पाक करे। पाक प्रायः समाप्त होने पर पिप्पलीमूल, जीरक, चव्य, मरिच, पिप्पली, शुण्ठी, गज, पिप्पली, कुटुवा, अजमोदा, विड़ङ्ग, सैन्धव, हरीतकी, आमलकी, विभीतक, यमानी, पाठा, चित्रक एवं धान्यकका चूर्ण आठ-आठ तोले, त्रिवृत्चूर्ण १ सेर और तैल १ सेर डाल अवलेह बना लेते हैं। यह अवलेह आठ तोले इलायची और तेजपत्रका चूर्ण मिला कर खानेसे ग्रहणी, श्वास, कास, स्वरभेद, शोथ, मन्दाग्नि, पुरुषत्वहानि और वन्ध्यादोष निवारित होता है। इसे त्रिवृत्के तैलमें तलकर देना चाहिये। (चक्रदत्त)

कल्याणकघृत (सं॰ क्ली॰) वैद्यकोक्त घृत औषधविशेष, दवाका एक घी। विड़ङ्ग, त्रिफला, मुस्तक, मञ्जिष्ठा, दाड़िमत्वक, उत्पल, प्रियङ्गु, एला, एलवालुक, रक्तचन्दन, देवदारु, वेणामूल, कुष्ठ, हरिद्रा, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, अनन्तमूल, श्यामा, रेणुका, त्रिवृत्, दन्ती, वचा, तालीशपत्र और मालतीमूल प्रत्येकका कल्क दो-दो तोले, घृत ३२ पल तथा जल १६ शरावक एकत्र पाक करनेसे यह घृत बनता है। इसके सेवनसे विषमज्वर, श्वास, गुल्म, उन्माद, विषरोग, अलक्ष्मीपद, रक्षोदोष, अग्निमान्द्य, अपस्मार, शुक्रहीनता, वन्ध्यादोष, चक्षुरोग और शुक्रमार्गका दोषसमूह छूट आयुर्वृद्धि होती है। (सुश्रुत) इसी घृतको द्विगुण जल और चतुर्गुण दुग्ध डाल कर पकानेसे क्षीरकल्याण कहते हैं। (भावप्रकाश) फिर दाहरोग पर महत्कल्याणक घृत चलता है। यथा घृत ४ शरावक, शतमूलिका रस १६ शरावक, दुग्ध १६ शरावक और जीरक, बला, मञ्जिष्ठा, अश्वगन्धा, हरिद्रा, काकोली, क्षीरकाकोली, यष्टिमधु, मेदा, महामेदा, ऋद्धि वृद्धि तथा देवदारुका कल्क आठ-आठ तोले एकत्र पाककरनेसे महत्कल्याणकघृत प्रस्तुत होता है। (रत्नाकर)

कल्याणकर (सं॰ त्रि॰) माङ्गलिक, भलाई करनेवाला।

कल्याणकामोद (सं॰ पु॰) मिश्ररागविशेष, एक मिलावटी राग। ईमन और कामोद मिलनेसे यह बनता है। इसे प्रथम प्रहरमें गाते हैं।

कल्याणकार, कल्याणकारक देखो।

कल्याणकारक (सं॰ त्रि॰) कल्याणप्रद, भलाई करनेवाला।

कल्याणकृत् (सं॰ त्रि॰) कल्याण-कृ-क्विप्। १ कल्याणकारक, भलाई करनेवाला। २ शास्त्रविहित कार्यकारक, भला काम करनेवाला।

कल्याणकोट—सिन्धुप्रदेशवाले ठाठानगरके पार्श्वका एक प्राचीन गिरिदुर्ग। आजकल इसे तुगलकाबाद कहते हैं।

कल्याणगुड़, कल्याणकगुड़ देखो।

कल्याणघृत, कल्याणकघृत देखो।

कल्याणचन्द्र (सं॰ पु॰) एक ज्योतिःशास्त्रकार। यह ई॰ १२ वें शताब्दमें विद्यमान थे।

कल्याणचार (सं॰ त्रि॰) १ शुभमार्ग अवलम्बन करनेवाला, जो अच्छी राह चलता हो। २ भाग्यशाली, किस्मतो।

कल्याणधर्मा, कल्याणधर्मी देखो।

कल्याणधर्मी, (सं॰ त्रि॰) कल्याणो मङ्गलमयो धर्मोऽस्यास्ति, कल्याण-धर्म-इनि। मङ्गलकर धर्मविशिष्ट, नेक, अच्छा।

सत्ययुगके साथ कल्किको उठानेके लिये शशिध्वज निकट पहुँचे थे। वह धर्म तथा सत्ययुगको अपने दोनों कक्षोंमें दबा और कल्किको वक्षस्थलसे लगा अपनी पुरी चले गये। उनने घरमें पहुँच रानीको सखियोंके साथ हरिगुण गाते पाया था। राजा उनसे कहने लगे,—'प्रिये! भगवान् कल्कि मूर्छाकालमें हमारे वक्षस्थलमें लग तुम्हारी भक्ति देखने आये हैं। फिर हमारे दोनों कक्षोंमें धर्म और सत्ययुग हैं। इन की यथोचित अर्चना कीजिये।' सुशान्ता सबको प्रणामकर और हरिप्रेमसे विह्वल बन नाचने गाने लगीं। इसके तुष्ट हो कल्किने सुप्तोत्थितकी भांति ईषत् लज्जितमुखसे सुशान्ताका परिचय पूछा। उन्होंने अपनेको दासी बताया था। धर्म और सत्ययुग सुशान्ताकी हरिभक्ति सराहने लगे। कल्कीने कहा यथार्थ तुम्होंने हमको जीत लिया। शेषको उन्होंने शशिध्वज-की कन्या रमाका पाणिग्रहण किया। फिर कल्किके सहचर राजाओंने शशिध्वजसे उस अपूर्व भक्तिको कथा पूछी। उन्होंने परिचय देकर जिस प्रकार हरिभक्ति पायी, उसी प्रकार सब बात खोलकर बतायी थी।

उसके पीछे कथाप्रसङ्गमें शशिध्वजने भक्ति एवं वासनातत्त्व देखा दिया और द्विविद तथा जाम्बवान्की भांति मरणकी प्रार्थना की। राजाओंने उन दोनों वानरोंका वृत्तान्त सुनना चाहा था। राजाने सब बताकर कहा,—'हमीं कृष्णावतारमें सत्यभामाके पिता सत्राजित् थे।' इसके बाद कल्कि श्वशुर शशिध्वजको सान्त्वना दे चल दिये और ससैन्य काञ्चनपुरी पहुँच गये। वह पुरी गिरिदुर्गसे वेष्टित और सर्पजालसे रक्षित थी। कल्कि विविध बाणों द्वारा विपाक्त हटा पुरीमें घुसे। पुरीके मध्य सुन्दर प्रासाद हरिचन्दन वृक्षसे वेष्टित और मणिकाञ्चनसे अलङ्कृत थे। किन्तु मनुष्योंका कोई सम्पर्क न रहा। केवल नागकन्या चारो ओर घूमती फिरती थीं। कल्कि पुरीमें घुसते हिचकिचाने लगे। उसी समय देववाणी हुयी,—'आप अकेले ही प्रवेश कीजिये। इस पुरीमें एक विषकन्या है। उसके देखते आपको छोड़ सब मर जावेंगे।' फिर वह केवल शुकको पकड़ और अश्वपर चढ़ काञ्चनपुरीमें खड्गहस्त घुसे थे। विषकन्या एक स्थानपर देख पड़ी। कन्याने कहा,—'मेरे तुल्य हतभागिनी विषनेत्रा कामिनी दूसरी नहीं। आप कौन हैं?' कल्किने उससे विषनेत्रा होनेका कारण पूछा। उसने उत्तर दिया मैं गन्धर्वराज चित्रग्रीवकी भार्या सुलोचना हूं। एक दिन मैं पतिके साथ गन्धमादन कुञ्जवनमें रङ्गालाप करती थी। उसी समय मय मुनिका कदर्य कलेवर देख मुझे बड़ी हंसी आयी। मुनिने क्रोधवश विषनेत्रा होनेका अभिशाप दिया था। आज आपके दर्शनसे मेरे शापका अन्त हुआ। अब मैं स्वामीके पास जाती हूं।'

विषकन्या स्वर्गको चली गयी। कल्किने उस पुरीके अधीश्वर अमर्षको राज्यपर अभिषिक्त किया। फिर उन्होंने मरुको अयोध्या, सूर्यकेतुको मथुरा, देवापिको वारणावत, अरिस्थल, वृकस्थल, कामन्दक एवं हस्तिना, कविप्रभृति भाइयोंको गौड़, पौण्ड्र आदि, शान्तिवर्गको कोकट प्रभृति और विशाखयूपको कोल तथा कलाप राज्य दिया था। फिर सब शम्भल लौट गये। पृथिवीपर धर्म और सत्ययुगका अधिकार प्रवर्तित हुआ।

कुछ दिन बीतने पर विष्णुयशाने यज्ञ करनेको पुत्रसे कहा था। कल्किने उनके आदेशसे राजसूय, वाजपेय और अश्वमेधयज्ञ सम्पन्न किया। क्रतु, राम, वशिष्ठ, व्यास, धौम्य, अकृतव्रण, अश्वत्थामा, मधुच्छन्दा और मन्दपाल प्रभृति महर्षि उन सकल यज्ञोंमें उपस्थित थे। कल्किने यज्ञान्तमें गङ्गायमुना-के सङ्गमस्थलपर ब्राह्मणोंको खिलाया पिलाया। पीछे सब लोग शम्भल लौट गये।

समय पाकर परशुराम कल्किके भवन पहुँचे। उसी बीच कल्किके पद्मावती-गर्भजात जय और विजय दो पुत्र हुये थे। रमाके कोयी बालक न रहा। उन्होंने परशुरामको देख अपना अभिलाष कहा। परशुराम-ने रमासे रुक्मिण्योव्रत कराया था। व्रतके प्रभावसे रमाने मेघमाल और बलाहक नामक दो पुत्र पाये। कल्कि पत्नीपुत्रके साथ महासुखसे दिन बिताते थे। फिर ब्रह्मादि देवताओंने उनसे स्वर्ग जानेको अनुरोध किया। कल्किने पुत्र तथा प्रजावर्गको कहा अपने

है। स्थान बहुत ही अस्वास्थ्यकर है। शीतकालमें ज्वरका कुछ प्रादुर्भाव रहते भी अच्छा रहता है। एक दीवानी अदालत और एक थाना है। फौजदारीकी दो कचेहरियां लगती हैं। कल्याण नगर इस प्रदेशका प्रधान स्थान है। यह अक्षा० १९° १४″ उ० और देशा० ७३° १०′ पू० पर अवस्थित है। नगरमें बन्दर विद्यमान है। चावल छांटनेका काम बहुत होता है। मुसलमानोंके अधिकार समय कल्याणमें ११ मसजिदें बनी थीं। चतुर्दिक् प्राचीरसे वेष्टित नगरमें प्रवेश करनेकेलिये चार द्वार थे।

कल्याण अतिप्राचीन है। नाना स्थानोंके ई० प्रथम, पञ्चम तथा षष्ठ शताब्दके खोदित शिलालेखों में भी इसका नाम मिलता है। पेरिप्लसके मतसे ई० द्वितीय शताब्दको दाक्षिणात्यमें कल्याण नामक एक प्रधान राज्य था। कसमस इण्डिकोप्लुस्टेसकी वर्णनासे समझ पड़ता है, कि ई० षष्ठ शताब्दमें भारतकी वाणिज्यप्रधान पांच नगरियोंमें कल्याण एकतम और वहां पित्तल प्रभृतिका विस्तृत व्यवसाय केन्द्र रहा। ई० चतुर्दश शताब्दको मुसलमानोंने जिलेका सदरथाना बना इसका नाम इसलामाबाद रखा। पोर्तगीजोंने १५३६ ई०को कल्याणपर अधिकार किया था। किन्तु उन्होंने इसकी रक्षा रखनेका कोई प्रबन्ध न बांधा। फिर १५७० ई०को वह इसका उपकण्ठ लूट यथेष्ट धन रत्न ले गये। पीछे यह प्रदेश अहमद नगर राज्यमें लगा। १६३६ ई०को बीजापुरके राजाने प्रबल हो इसे अधिकारमें किया। १६४८ ई०को शिवाजीके सेनापति आवाजी सोमदेवने कल्याणपर आक्रमण कर शासनकर्ताको बन्दी बनाया। १६६० ई०को मुसलमानोंने इसे शिवाजीके हाथसे छुड़ाया, किन्तु १६६२ ई०को फिर गंवाया। १६७४ ई०को शिवाजीने अंगरेजोंको यहां कोठी बनानेका आदेश दिया था। १७८० ई०को मराठोंका साहाय्य न मिलनेसे अंगरेजोंने यह प्रदेश अधिकार किया। उसी समयसे कल्याण अंगरेजोंके अधीन है।

प्राचीन इतिहास—इसका जो प्राचीन इतिहास मिला, वह अधिकांश कर्णाटकके खोदित लेखोंसे मिलता है। कर्नेल मेकेञ्जी साहबने संस्कृतपुस्तकोंका संक्षिप्त इतिहास लिपिबद्ध किया है। उसमें 'महराज यमराज वंशावली' लगी है। वह तिरुपती पर्वतके निकटवर्ती नारायणपुर वा नारायणवरम् नामक स्थानके अधिपतियों या प्राचीन कर्वेती नगरके मह राजवंशीय राजावोंका वंशविवरण कीर्तन करती है। सोमसान चक्रवर्तीके एक वंशीय धनञ्जय चोल थे। उन्हीं चोलराजपुत्रसे उक्त वंशकी उत्पत्ति है। धनञ्जयके वंशमें नारायणराज नामक किसी व्यक्तिने जन्म लिया। उन्हीं नारायणराजने नारायणवरम् या कल्याणपत्तन स्थापित किया था। कल्याण पत्तन प्राचीन कल्याण वा आधुनिक नारायणवरम् नदीपर अवस्थित है।

कर्णाटक खोदित शिलालेखोंसे जो प्रमाण मिले उन्हें देख समझ सके हैं—एक समय गोदावरी और कृष्णानदीके अन्तर्गत भूभागमें चालुक्य राजा अतिशय प्रबल पराक्रान्त पड़े थे। उस समय कोङ्कण, कल्याण, वनवासी प्रभृति राज्योंपर उनका अधिकार फैला था। कल्याण बहुत समृद्धिशाली और विख्यात था। चालुक्य राजा शिलालेखोंमें अपना कल्याण वा कल्याणपुरके 'चालुक्य राजा' कहकर परिचय दे गये हैं। कोङ्कणप्रदेशमें शिवराज नामक एक 'महामण्डलेश्वर नृपति (८४१ शक) थे। उनकी प्रदत्त छाड़पे सम्बन्धमें मतामत देते समय अध्यापक लासेनने कहा है,—'इसकी लिपी शिलाहार जाति काफिरिस्तानकी उत्तरस्थ काफिर जातीय "शिलार" जातिको छोड़ अन्य जाति हो नहीं सकती।' किन्तु दाक्षिणात्यमें एक शिलार् जाति थी। वह लोग पहले मान्यखेटीय राष्ट्रकूटोंके पीछे कल्याणवाले चालुक्योंके अधीन हुये। उस समय शिलाहारोंके ही शासनमें कोङ्कण प्रदेश, थिलगांव और सतारेका मध्यवर्ती समुदय स्थान था। शिलारोंके पराजयके बाद उक्त सकल प्रदेश कल्याणके अधीन हुवा।

दाक्षिणात्यके चालुक्य राजावोंमें कलिविक्रम विक्रमादित्य त्रिभुवनमल्लदेवकी महिमाका एक काव्य है। बिह्लण नामक कविने उसे बनाया था। काव्यका नाम 'विक्रमाङ्कचरित' है। उसके मतसे विक्रमा-

स्वर्गगमनका संवाद सुनाया था। वह सब शोकार्त हुये। कल्कि राजत्व छोड़ दोनों पत्नियोंके साथ हिमालय प्रदेशमें गङ्गा किनारे पहुंचे थे। वहां उन्होंने अपने आपको स्मरण किया। फिर चतुर्भुज मूर्तिमें परिवर्तित हो वह गोलोक गये। पद्मा और रमाने अनलमें देह छोड़ पतिलोक पाया था। पृथिवी पर सत्ययुगका प्रभाव अक्षुण्ण रहा। देवापि और मरु राज्य शासन करने लगे। कल्किपुराण देखो।

भागवतमें कल्कि भगवान्‌का त्रयोविंश अवतार कहा है। (भागवत १।३।२४—२५)

जैनियोंमें भी कल्कि अवतारकी कथा सुन पड़ती है। वह कहते हैं—महावीरके निर्वाण पानेके पीछे प्रति सहस्र वर्ष कल्कि होता है और वह जैनधर्मके विरुद्ध मत स्थापन करते हैं। (जैन हरिवंश)

कल्किपुराण—एक अतिरिक्त उपपुराण। यह अष्टादश उपपुराणोंसे बाहर है। इसमें तीन अंश लगे हैं। प्रथम एवं द्वितीयमें सात सात चौदह और तृतीयांशमें इक्कीस सब पैंतीस अध्याय हैं। इनमें क्रमान्वयसे शुकमार्कण्डेयका संवाद, अधर्मके वंशका कीर्तन, कलिका विवरण, पृथिवी तथा देवगणका ब्रह्मलोकको गमन, ब्रह्मवाक्यानुसार शम्भलस्थ ब्राह्मण विष्णुयशाके गृहमें सुमतिके गर्भसे विष्णु एवं उनके अंशभूत तीन ज्येष्ठ सहोदरके जन्मका विवरण, कल्कि-विष्णुयशाका संवाद, कल्किका उपनयन, परशुरामसे कल्किका साक्षात्, उनसे वेदाध्ययन, अस्त्रशस्त्रशिक्षा, कल्किका शिवाराधन, हरपार्वतीके समक्ष कल्किका शिवस्तव-पाठ, शिवसे अश्व, खड्ग, शुक, अस्त्रादि एवं वरका लाभ, शम्भलको प्रत्यागमन, बन्धुगणसे वरका कीर्तन, नरपति विशाखयूपकी सभामें कल्किका संक्षेपसे वर्णाश्रमधर्मकथन, शुकका आगमन, शुककल्किसंवाद सिंहलका वर्णन, पद्माका चरित, शिवसे पद्माका वरलाभ, पद्माके स्वयम्बरका आयोजन, स्वयम्बरकी सभामें आगत राजाओंका स्त्रीभाव, पद्माका विषाद, शुकको दूतरूपसे प्रेरण, शुकपद्मा-संवाद, पद्माका विष्णु-पूजन, पदादिसे केशान्त पर्यन्त विष्णुके प्रत्येक अङ्गका वर्णन तथा ध्यान, शुकको अलङ्कार दान, शुकका प्रत्यागमन, पद्माके उद्देश, कल्कि एवं शुकका सिंहलगमन, स्नानके छल सरोवरमें पद्माका अभिसार, पद्माका जल कौतूहल, कल्कि तथा पद्माका मिलन, बृहद्रथका संवर्धन, कल्कि-पद्मा-विवाह, कल्किके दर्शनसे स्त्रीत्व प्राप्त राजाओंका पुंस्त्वलाभ एवं कल्किस्तव, वर्णाश्रम धर्मपर कल्किका उपदेश, राजाओंका प्रश्न, अनन्त मुनिका आगमन, अनन्तका पूर्व वृत्तान्त कथन, शिवका स्तव, पिताके मृत्युपर अनन्तका मायादर्शन और वैराग्यावलम्बन, अनन्तका मोक्ष, राजाओंका प्रत्यागमन, कल्कि पद्माका शम्भलको प्रस्थान, विश्वकर्माका विधान, स्वाहवर्गका वंशवर्धन, विष्णुयशाका यज्ञाभिलाष, कल्किका स्वजनोंके साथ दिग्विजयको गमन, जिनराजका वध, बौद्धोंका निग्रह, मायाका अन्तर्धान, बौद्ध-रमणियोंका युद्धोद्योग, अस्त्र देवतादिका आविर्भाव, ज्ञानके योगका कथन, मुनियोंका आगमन, कुथोदरीका वृत्तान्त, सपुत्रा कुथोदरीका वध, हरिद्वारको कल्किका गमन, मुनियोंका साक्षात्, मरु एवं देवापिका मिलन, उभयके परिचय-सूत्रसे सूर्यवंश तथा चन्द्रवंशका कीर्तन, मरुका रामचरितश्रवण, मरु एवं देवापिके साथ कल्किको युद्धार्थगमन, धर्म तथा सत्ययुगका मिलन, कोक विकोकका विनाश, भल्लाटमें गमन, शय्याकर्णोंका युद्ध, युद्धान्तमें शशिध्वजका विष्णुभक्तिकीर्तन, रणस्थलमें शशिध्वज कर्तृक कल्किधर्म एवं सत्ययुगका पराजय, उनको उठा शशिध्वजका अपनी पुरीमें प्रवेश, सुशान्ता कर्तृक स्तव, कल्किके साथ रमाका विवाह, शशिध्वजके पूर्वजन्मका विवरण, द्विविद एवं जाम्बवान्‌का वर्णन, स्यमन्तकोपाख्यान, शशिध्वजका मोक्ष, विषकन्याका मोचन, राजाओंको राज्यदान, पुत्रादिका अभिषेक, मायास्तव, शम्भलमें यज्ञादिका अनुष्ठान, नारदसे विष्णुयशाका भक्तिलाभ, धर्म एवं सत्ययुगका अधिकार, हरिनिर्योतन, कल्किका विहार, पुत्रपौत्रादिका वर्णन, ब्रह्मकल्कि-संवाद, विष्णुका वैकुण्ठगमन, पद्माकथाका शेष, शुकदेवका प्रस्थान, मुनिगणोक्त गङ्गास्तव, पुराणका विवरण और पुराणके श्रवणका फल लिखा है।

दित्यका राजत्व काल शक ८८७—१०४८ ठहरता है। विक्रमके पिता २य चाहवमल्ल कल्याणनगरीके प्रतिष्ठाता थे। (Ind. Ant. Vol. I. p. 209.) कल्याणप्रदेश विक्रमादित्य महाराजको अतिप्रिय रहा। वह नाना स्थानोंसे युद्ध जीत यहीं आकर ठहरते थे।

कल्याण उपाध्याय—बालतन्त्र नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता। यह महीधरके पुत्र और रामदासके पौत्र थे। अहिच्छत्र नगर इनका जन्मस्थान रहा। इन्होंने ६४४ शकको श्रावणपूर्णिमाको रविवारके दिन अपना बालतन्त्र समाप्त किया था।

कल्याणक (सं॰क्लो॰) कल्याण स्वार्थे कन्। १ कल्याण, भलाई। (पु॰) २ पर्पटक, दमनपापड़ा। (त्रि॰) ३ कल्याणयुक्त, भला, अच्छा।

कल्याणकगुड़ (सं॰ पु॰) ग्रहणीरोगका वैद्यकोक्त औषधविशेष, दस्तोंकी बीमारीमें दी जानेवाली एक द्रव्य। आमलकीका रस २ सेर और इक्षु गुड़ ६ सेर एकत्र पाक करे। पाक प्रायः समाप्त होने पर पिप्पलीमूल, जीरक, चव्य, मरिच, पिप्पली, शुण्ठी, गज, पिप्पली, हवुषा, अजमोदा, विड़ङ्ग, सैन्धव, हरीतकी, आमलकी, विभीतक, यमानी, पाठा, चित्रक एवं धान्यकका चूर्ण आठ-आठ तोले, त्रिवृत्‌चूर्ण १ सेर और तैल १ सेर डाल अवलेह बना लेते हैं। यह अवलेह आठ तोले इलायची और तेजपत्रका चूर्ण मिला कर खानेसे ग्रहणी, श्वास, कास, स्वरभेद, शोथ, मन्दाग्नि, पुंस्त्वहानि और वन्ध्यादोष निवारित होता है। इसे त्रिवृत्‌के तैलमें तलकर देना चाहिये। (चक्रदत्त)

कल्याणकघृत (सं॰ क्लो॰) वैद्यकोक्त घृत औषधविशेष, दवाका एक घी। विड़ङ्ग, त्रिफला, मुस्तक, मञ्जिष्ठा, दाड़िमत्वक्, उत्पल, प्रियङ्गु, एला, एलवालुक, रक्तचन्दन, देवदारु, वेणामूल, कुठ, हरिद्रा, मासपर्णी, अग्निकुल्या, अनन्तमूल, श्यामा, रेणुका, त्रिवृत्, दन्ती, वचा, तालीशपत्र और मालतीमूल प्रत्येकका कल्क दो-दो तोले, घृत ३२ पल तथा जल १६ शरावक एकत्र पाक करनेसे यह घृत बनता है। इसके सेवनसे विषमज्वर, श्वास, गुल्म, उन्माद, विषरोग, अपस्मारोपद्रव, रक्षोदोष, अग्निमान्द्य, अपस्मार, शुक्रहीनता, वन्ध्यादोष, चक्षुरोग और शुक्रमार्गका दोषसमूह छूट आयुर्वृद्धि होती है। (सुश्रुत) इसी घृतको द्विगुण जल और चतुर्गुण दुग्ध डाल कर पकानेसे क्षीरकल्याण कहते हैं। (भावकौमुदी) फिर दाहरोग पर महत्‌कल्याणक घृत चलता है। यथा घृत ४ शरावक, शतमूलिका रस १६ शरावक, दुग्ध १६ शरावक और जीरक, मेदा, मञ्जिष्ठा, अश्वगन्धा, हरिद्रा, काकोली, क्षीरकाकोली, यष्टिमधु, मेदा, महामेदा, ऋद्धि वृद्धि तथा देवदारुका कल्क आठ-आठ तोले एकत्र पाककरनेसे महत्‌कल्याणकघृत प्रस्तुत होता है। (रत्नाकर)

कल्याणकर (सं॰ त्रि॰) माङ्गलिक, भलाई करनेवाला।

कल्याणकामोद (सं॰ पु॰) मिश्ररागविशेष, एक मिलावटी राग। ईमन और कामोद मिलनेसे यह बनता है। इसे प्रथम प्रहरमें गाते हैं।

कल्याणकार, कल्याणकारक देखो।

कल्याणकारक (सं॰ त्रि॰) कल्याणप्रद, भलाई करनेवाला।

कल्याणकृत् (सं॰ त्रि॰) कल्याण-कृ-क्विप्। १ कल्याणकारक, भलाई करनेवाला। २ शास्त्रविहित कार्यकारक, भला काम करनेवाला।

कल्याणकोट—सिन्धुप्रदेशवाले ठाठानगरके पासका एक प्राचीन गिरिदुर्ग। आजकल इसे तुग़लकाबाद कहते हैं।

कल्याणगुड़, कल्याणकगुड़ देखो।

कल्याणघृत, कल्याणकघृत देखो।

कल्याणचन्द्र (सं॰ पु॰) एक ज्योतिःशास्त्रकार। यह ई॰ १२ वें शताब्दमें विद्यमान थे।

कल्याणचार (सं॰ त्रि॰) १ शुभमार्ग अवलम्बन करने वाला, जो अच्छी राह चलता हो। २ भाग्यशाली, किस्मती।

कल्याणधर्मा, कल्याणधर्मी देखो।

कल्याणधर्मी, (सं॰ त्रि॰) कल्याणो मङ्गलमयो धर्मोऽस्यास्ति, कल्याण-धर्म-इनि। मङ्गलकर धर्मविशिष्ट, नेक, अच्छा।

कल्किपुराणको लोग द्वैपायन प्रणीत बताते हैं। किन्तु कोई कोई इस बातको नहीं मानते। कारण वेदव्यासप्रणीत सकल पुराण और उपपुराण नामक अन्यान्य ग्रन्थोंमें इसका नाम नहीं मिलता। एतद्भिन्न कल्किपुराणके मध्यही तृतीयांशके एकविंश अध्यायमें एक स्थानपर लिखा है,—'सकल पुराणाभिज्ञ लोमहर्षणनन्दन सूत वेदव्यासके शिष्य थे। हम उन्हें प्रणाम करते हैं।' यदि यह पुराण वेदव्यासरचित रहता, तो उनको लेखनीसे स्वशिष्यके प्रति प्रणामज्ञापक श्लोक लिखा देख न पड़ता। फिर कल्किपुराणमें वेदव्यासके रचना होनेका प्रमाण कहां है? प्रथम अंशके शौनकादि ऋषियोंके प्रश्नानुसार इस पुराणकी व्याख्याका अनुक्रम लगाया है। पुराणोत्पत्ति निरूपण करते समय उन्होंने कहा, 'पुराकालको नारदके पूछनेपर ब्रह्माने यह उपाख्यान सुनाया था। नारदने व्यासदेवके निकट व्याख्या की। फिर वेदव्यासने स्वपुत्र ब्रह्मरात (शुकदेव?)को यह विवरण बताया था। ब्रह्मरातने अभिमन्युके पुत्र विष्णुरात (परीक्षित?)की सभामें यह कथा कीर्तन की, किन्तु कथा शेष न हुयी। विष्णुरात स्वर्गको चले गये। मार्कण्डेय आदि महर्षियोंने शुकदेवसे अनुरोधकर शेष पर्यन्त कथा सुनी थी। उनके मुखसे सुना हुआ विषय हम विवृत करेंगे। इसमें अष्टादश सहस्र श्लोक विद्यमान हैं।' किन्तु तृतीयांशके शेष अध्यायमें ग्रन्थके उपसंहारकालमें उग्रश्रवाके मुखसे ही भिन्नरूप वर्णना मिलती है,—'निरतिशय पापी लोग भी इस पुराणके प्रभावसे अभीष्ट लाभ कर सकते हैं। इस कल्किपुराणके छह सहस्र एकमात्र श्लोकोंमें सकल शास्त्रोंका अर्थ और तत्त्व संगृहीत हुआ है। प्रलयावसानमें श्रीहरिके मुखसे यह कल्किपुराण निकला है। इस पुराणसे चतुर्वर्ग मिलते हैं। भगवान् वेदव्यासने ब्राह्मणरूप परिग्रह किया था। उन्होंने ही धरातलपर अवतीर्ण हो परम विस्मयकर भगवान् कल्किके प्रभावकी यह वर्णना सुनायी है।' पूर्वोक्त दोनों अंश देख श्लोक संख्याके सम्बन्धपर भी विभिन्न रूप वचन मिलता है।

कल्किपुराणमें पुराणोपपुराण-वर्णित सकल विषयोंकी बहुत वर्णना नहीं। लेखक इस सम्बन्धमें जो कथायें लिखते, उनको देखनेसे ही समझा जा सकता है कि यह सकल अंश केवल पुराणके लक्षणकी रक्षा करनेके लिये ही ग्रन्थमें लगाये गये हैं। रघुवंश, नैषध, कुमार प्रभृति महाकाव्योंमें जैसे किसी एक व्यक्ति वा विषयकी वर्णना चलती है, इसमें भी वैसे ही एक मात्र कल्किचरित्रकी कथा मिलती है। कल्किपुराणमें शृङ्गार, शान्ति एवं वीररस विशेष देखाया, अन्यान्य रसोंका भाव अविस्पष्ट रूपसे झलकाया और पुराणादिकी भांति पुनरुक्तिदोष वा अनर्थक अव्यय शब्दोंका प्रयोग नहीं लगाया है। इन सकल कारणोंसे इसको एक सुन्दर महाकाव्य कहना अधिक युक्तिसङ्गत है। इसकी रचनाप्रणाली पुराणोंकी भांति रसहीन नहीं। कल्किपुराणकी भाषाको भी प्राचीन कहनेमें सन्देह है।

इसमें कलियुगके शेष पादकी वर्णना लिखी है। उसके अनुसार कलिप्रभावसे समस्त पृथिवी एकवर्ण होनेपर भगवान् कल्कि रूपसे जन्म ले कलिको हटावेंगे और सत्ययुग चलावेंगे। सूक्ष्म भावमें मनोयोग पूर्वक विचार कर देखनेसे कल्किके समय पृथिवीकी वर्णित अवस्था शेषपादकी नहीं—प्रथमपादकी घटना समझ पड़ती है। कल्किके साथ मायावादी बौद्धोंका युद्ध जिस अंशमें लिखते हैं, वह अंश निविष्ट चित्तसे पढ़नेपर सहजमें ही समझ सकते हैं कि यह वर्णना भारतमें बौद्ध धर्म बढ़ने समयकी ठहरती है। यही बात कल्कि शब्दमें बहुत श्लोकसे भी प्रतिपन्न होती है। अनुमानसे कल्किपुराणकार उस समयके मालूम पड़ते, जिस समय बौद्ध धर्मकी प्रबलता घटनेसे ब्राह्मणधर्मके तत्त्व कुछ कुछ ऊपर उठते थे। उस समय उनको आंखोंमें भारतको जो दुर्दशा समायी, उन्होंने वही लिख कल्किके शेषपादकी अवस्था बतायी।

कल्किपुराणमें जिन स्थानों (माहिष्मती, प्रभास, कीकट, सिंहल, पाण्ड्य, चोल, सुराष्ट्र, पुलिन्द, मगध, मध्यकर्णाट, अन्ध्र, पौण्ड्र, कलिङ्ग, अङ्ग, बङ्ग, कङ्क, कलापक, द्वारका, मथुरा, वारणावत, परिस्थल, शकस्थल, माकन्द, हस्तिनापुरी, घोल, बर्बर, कर्णट,

कल्याणनट (सं॰ पु॰) मिश्ररागविशेष, एक मिलावटी राग। यह कल्याण और नटके संयोगसे बनता है।

कल्याणपञ्चमीक (सं॰ पु॰) मास पक्षविशेष, महीनेका एक पाख। जिस पक्षकी पञ्चमी कल्याणकारक रहती, उसकी संज्ञा कल्याणपञ्चमीक पड़ती है।

कल्याणपुर—१ युक्तप्रदेशके फतेहपुर जिलेकी एक तहसील। यह गङ्गा और यमुना नदीके बीच अवस्थित है। इसमें २१८ ग्राम लगते हैं। भूमिका परिमाण २८७ वर्ग मील है।

२ काश्मीरका एक प्राचीन नगर। ६६७ शकमें कल्याणदेवीने यह नगर बसाया था।

३ दाक्षिणात्यके कल्याण प्रदेशका प्राचीन राजधानी। चालुक्य राजाओंके शिलालेखोंमें यह स्थान प्रसिद्ध है। कल्याण देखो।

४ युक्तप्रदेशके कानपुर जिलेका एक ग्राम। यह कानपुर शहरसे कोई ६ मील पश्चिम पड़ता है। यहां पुलिसका थाना और बम्बई-बरोदा-मध्यभारत तथा राजपूतना-मालवा-रेलवेका ष्टेशन विद्यमान है। फिर विठूर (ब्रह्मावर्त)से कानपुरको सूबेदार साहबकी रेल भी उस ष्टेशनसे जाती है। थानेके पास एक पक्का तलाव और महादेव तथा देवीका मन्दिर है।

कल्याणभार्य (सं॰ पु॰) पुरुषविशेष, एक मर्द। स्त्रीके मरने पर फिर विवाह होनेकी बात उठनेसे पुरुषको 'कल्याणभार्य' कहते हैं।

कल्याणमल—युक्तप्रदेशके प्रान्त हरदोई जिलेका एक परगना। इसका प्राचीन नाम थोलिया है। प्रवादानुसार रामचन्द्र रावणको मार लङ्कासे लौटते समय यहां रथसे उतरे थे। फिर उन्होंने रावणवधजनित पापक्षालनके लिये 'हत्याहरण' नामक पवित्र कुण्डमें स्नान किया। पांचवीं वर्ष पहले यह स्थान ठठेरोंके अधिकारमें था। पीछे बैसवार राजपूत-कुलोद्भव राजकुमारने ठठेरोंको भगा ८४ ग्रामों पर राजत्व चलाया। उन्होंने रथोलिया नगरमें एक दुर्ग बनाया था। उसका भग्नावशेष आजभी देख पड़ता है। नागमल नामक किसी नायकने प्रभुको मार (किसीके मतसे छलप्रयोग पूर्वक) यह स्थान छीन लिया। आजभी नागमलवंशीय शकरवार राजपूत ६१ ग्रामका उपभोग करते हैं।

इस परगनेका परिमाण ६१ वर्गमील है। उसमें ३१ वर्गमील पर कृषि कार्य होता है। यहांकी भूमि बहुत अच्छी नहीं। हत्याहरणकुण्डके निकट प्रति वर्ष भाद्रमासमें मेला लगता है। उसमें न्यूनाधिक पन्द्रह हजार आदमी इकट्ठा होते हैं। इस परगनेमें कल्याण नामक ग्राम ही प्रधान है।

कल्याणमल (सं॰ पु॰) १ अनङ्गरङ्ग नामक ग्रन्थके प्रणेता। २ गजमलके पुत्र। इन्होंने मेघदूतकी मालती नाम्नी टीका बनायी थी।

कल्याणमित्र (सं॰ क्लो॰) कल्याणस्य धर्मस्य मित्रमित्र। १ महर्षि सुतपाके पुत्र। इनका नाम लेनेसे नष्ट द्रव्य मिलता और वज्रका भय भगता है। (ब्रह्मवैवर्तपुराण)

२ धर्मका सङ्गी, नेक सलाह देनेवाला।

कल्याणयोग (सं॰ पु॰) कल्याणकरो योगः, मध्यपद-लो॰। ज्योतिःशास्त्रोक्त यात्राका एक योग। बृहस्पति केन्द्रस्थल (लग्नसे १म, ४र्थ, ७म और १०म) और सूर्य त्रिकोण (५म और ८म) अथवा १०म या ११म स्थानमें रहनेसे यह योग आता है। इस योगमें यात्रा करनेसे मङ्गल हुवा करता है।

कल्याणलेह (सं॰ पु॰) अवलेहविशेष, एक चटनी। हरिद्रा, वचा, कुष्ठ, पिप्पली, शुण्ठी, जीरक, अजमोदा (यमानी), यष्टी मधु, मधुकपुष्प और सैन्धवको सम-भाग बारीक चूर्ण प्रत्यह २१ दिन घीमें सानकर चाटने-से वातव्याधि, हिक्का और श्वासरोग आरोग्य होता है। (चरक)

कल्याणवचन (सं॰ क्लो॰) कल्याणं मङ्गलमयं वचनम्, कर्मधा॰। मङ्गल वाक्य, भली बात।

कल्याणवर्मा (सं॰ पु॰) १ कोई प्रसिद्ध ज्योतिर्विद्। इन्होंने सारावली नामक एक ज्योतिष बनाया था। २ काश्मीरवाले राजा बृहस्पतिके एक मातुल (मामा)। इन्होंने बृहस्पतिकी शैशवावस्थामें कुछ दिन न्याय-मार्गसे साथ राजकार्य चलाया था। फिर कल्याण-वर्माने 'कल्याणस्वामी केशव' नामक विष्णुकी एक मूर्ति प्रतिष्ठित की। (राजतरङ्गिणी ४।६९९)

कल्याणवाचन (सं॰ क्ली॰) कल्याणस्य वाचनं उच्चारणम्, ६-तत्। शास्त्रविहित कर्मसमूहके प्रथम ब्राह्मणसे पढ़ाया जानेवाला एक मन्त्र। यजमानको शास्त्रविहित कर्म आरम्भ करते समय 'ॐ मम कर्तव्येऽस्मिन् कर्मणि कल्याणं भवन्तोऽधिब्रुवन्तु' मन्त्रसे प्रार्थना करना चाहिये। इस पर ब्राह्मण 'ॐ कल्याणम्' मन्त्र तीन बार पढ़ता है। फिर उसे निम्नलिखित मन्त्रसे कल्याणवाचन करना पड़ता है,—

"ओं यदिच्छामुद् नायाग्नु सदकल्याणं सुदाकरम्।
ऋषिभिः निहतमश्वेभ्यः कल्याणं सदास्तु नः॥"

कल्याणवादी (सं॰ त्रि॰) कल्याणं वदति, कल्याण-वद-णिनि। कल्याणवक्ता, भलाईकी बात कहनेवाला।

कल्याणविनोद, कल्याणनट देखो।

कल्याणबीज (सं॰ पु॰) कल्याणं बीजं यस्य, बहुव्री॰। १ मसूरवृक्ष, मसूरकी दालका पेड़। मसूर देखो। (६-तत्) २ मङ्गलका कारण, भलाईका सबब।

कल्याणवर्मा (सं॰ पु॰) वराहमिहिरकृत बृहत् संहिताके एक टीकाकार।

कल्याणसिंह—बीकानेरके एक राजा। यह राजा जैतसिंहके पुत्र थे। १५०१ शकमें कल्याणसिंह राज्याभिषिक्त हुये। २७ वर्ष इन्होंने राजत्व किया था।

कल्याणसुन्दराभ्र (सं॰ क्ली॰) राजयक्ष्माका एक रस। ८ तोले जारित अभ्रको आमलकी, मुस्तक, बृहती, शतमूली, इक्षु, बिल्वपत्र, अग्निमन्थ, वासा, वासक, कण्टकारी, श्योणाक, पाटलि तथा बलाके ११ पल रसमें पृथक् मर्दन कर गुञ्जा समान वटी बनानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है।

कल्याणाचार (सं॰ पु॰) कल्याणकरः आचारः, मध्यपदलो॰। १ मङ्गलकर आचरण, भला चाल चलन। (त्रि॰) २ मङ्गलकरकार्य करनेवाला, जो अच्छी चाल चलता हो।

कल्याणाचारी (सं॰ त्रि॰) कल्याणाचारं अस्त्यस्य, कल्याणाचार-इनि। मङ्गलमय आचारयुक्त, अच्छी चाल चलनेवाला।

कल्याणाभिजनन (सं॰ क्ली॰) कल्याणकरं अभिजननम्, कर्मधा॰। १ मङ्गलकर जन्म, नेक पैदायश। (त्रि॰) २ मङ्गलकर जन्म लेनेवाला, जो अच्छे वक्त पैदा हुआ हो।

कल्याणालय (सं॰ त्रि॰) कल्याणस्य आलयः, ६-तत्। १ मङ्गलका आश्रय, नेकीका ठिकाना। (पु॰) २ परमेश्वर।

कल्याणास्पद (सं॰ त्रि॰) कल्याणस्य आस्पदः, ६-तत्। १ मङ्गलका पात्र, भलाईका घर। (पु॰) २ जगदीश्वर।

कल्याणिका (सं॰ स्त्री॰) कल्याण संज्ञायां कन्-टाप् अत इत्वम्। मनःशिला। मनःशिला देखो।

कल्याणिनी (सं॰ स्त्री॰) कल्याणं अस्त्यस्याः, कल्याण-इनि-ङीप्। १ बला। बला देखो। २ कल्याणविशिष्टा स्त्री, भली औरत।

कल्याणी (सं॰ त्रि॰) कल्याणमस्यास्ति, कल्याण-इनि। कल्याणयुक्त, नेक, भला।

कल्याणी (सं॰ स्त्री॰) कल्याण-ङीप्। १ माषपर्णी। २ गाभी, गाय। "उपस्थितेयं कल्याणी नाम्नि कीर्तित एव यत्।" (रघु १।८७) ३ रास्ना वृक्ष, रासनाका पेड़। ४ सर्ज वृक्ष, धूनेका पेड़। ५ प्रयागकी एक प्रसिद्ध देवी।

कल्याणीय (सं॰ त्रि॰) कल्याण ढक्। कल्याणके योग्य, मङ्गलमय, नेक, भलाई करनेवाला।

कल्याण्यादि (सं॰ पु॰) पाणिनि-व्याकरणका एक गण। कल्याण्यादीनामिनङ् च। पा ४।१।१२६। इसमें कल्याणी, सुभगा, दुर्भगा, बन्धकी, अनुदृष्टि, अनुसृष्टि, जरती, बलीवर्दी, ज्येष्ठा, कनिष्ठा, मध्यमा और परस्त्री शब्द अन्तर्भूत है। ढक् प्रत्ययके अन्तमें उक्त शब्दके अन्तीय-से इनङ् आदेश होता है।

कल्यान (हिं॰) कल्याण देखो।

कल्यापाल, कल्यापाल देखो।

कल्यापालक, कल्यापाल देखो।

कल्युष (सं॰ क्ली॰) मणिबन्ध, कलाई।

कल्ल (सं॰ त्रि॰) कलते शब्दं न गृह्णाति, कल-अच्। बधिर, बहरा, जिसे कानसे सुन न पड़े।

कल्लट (सं॰ पु॰) स्पन्दसर्वस्व और स्पन्दसूत्र-विवरण नामक ग्रन्थके प्रणेता। काश्मीर इनका जन्मस्थान था। पाश्चात्य पण्डित इन्हें ई॰ ९वें शताब्दके व्यक्ति मानते हैं। किन्तु हमारे विवेचनामें कल्लट

कशाघात (सं॰ पु॰) कशेन कशया वा आघातः, ३-तत्। कशाका आघात, चाबुककी मार।

कशात्रय (सं॰ स्त्री॰) कशानां कशाघातानां त्रयम्, बहुव्री॰। तीन प्रकारका कशाघात, तीन तरहसे चाबुककी मार। यह मृदु, मध्य और निष्ठुर होता है। अश्वोंको साधारण दण्ड देते समय मृदु आघात लगाते हैं। किन्तु उपवेशन, निद्रा, स्खलन, दुष्ट चेष्टा, अश्विनी (घोड़ी) देखनेका औत्सुक्य, गर्वित ह्रेषारव (ज़ोरकी हिनहिनाहट), त्रास, दुरुत्थान, विमार्गगमन, भय, शिक्षात्याग, चित्तभ्रम प्रभृति अपराधोंमें मध्य और निष्ठुर आघात देना पड़ता है। अपराध विशेषमें आघातका स्थान भी पृथक् है। त्रास एवं भयमें गलदेश, शिक्षात्याग तथा चित्तविभ्रममें अधर, गर्वित ह्रेषारव एवं अश्विनी देखनेके औत्सुक्यमें बाहु तथा स्कन्धदेश, उपवेशन एवं निद्रामें कटिदेश, दुर्व्यवहार तथा विमार्ग प्रधानमें कुक्ष, स्खलन एवं दुरुत्थानमें जघन और कुपढ़ प्रकृतिमें सर्वस्थानपर कशा मारते हैं।

कशारि (सं॰ स्त्री॰) यज्ञकी एक वेदी। यह यज्ञ स्थलमें उत्तर दिक् रहती है।

कशार्ह (सं॰ त्रि॰) कशां अर्हति, कशा-अर्ह-अच्। कश्य, चाबुक लगाने लायक। कश्य देखो।

कशावान् (सं॰ त्रि॰) कशा लिये हुआ, जो चाबुक रखता हो।

कशिक (सं॰ पु॰) कशति हिनस्ति सर्पम्, कश बाहुलकात् इक। नकुल, सांपको मार डालनेवाला नेवला।

कशिकपाद (सं॰ त्रि॰) कशिकस्य पादाविव पादौ यस्य, बहुव्री॰। हस्त्यादित्वात् नान्त्यलोपः। पादस्य लोपोऽहस्त्यादिभ्यः। पा। ५।४।१३८। नकुलकी भांति पदविशिष्ट (जन्तु), नेवलेकी तरह पैरवाला (जानवर)।

कशिका (सं॰ स्त्री॰) चर्मकशा, चमड़ेका चाबुक।

कशिपु (सं॰ पु॰) कशति दुःखं कश्यते वा, मृगय्वादित्वात् निपातनात् साधुः। अन्न, अनाज। २ आच्छादन, कपड़ा। ३ भक्त, भात। ४ शय्या, पलंग। "सत्यां क्षितौ किं कशिपोः प्रयासैः।" (भागवत २।२।४) ५ आसन विशेष, एक बैठक।

कशिपूपवर्हण (वै॰ क्ली॰) उपाधान वस्त्र, तकियेका गिलाफ़।

कशिश (फा॰ स्त्री॰) आकर्षण, खींच।

कशीका (वै॰ स्त्री॰) कश बाहुलकात् ईकन्-टाप्। प्रसूता नकुली, ब्याई हुई नेवली।

कशीदया (भा॰ पु॰) मल्लयुद्धका कूटोपायविशेष, कुश्तीका एक पेंच। इसमें खिलाड़ी अपनी जोड़की गर्दनपर हाथ रख वाम पदसे उसका दक्षिण पद अपनी ओर खींच लेता और उसे दक्षिण करसे पकड़ गिरा देता है।

कशीदा (फा॰ पु॰) सूचिकर्म विशेष, कढ़ाव। इसमें वस्त्रपर सूची तथा सूतसे नानाप्रकार कृत्रिम पत्रपुष्प बनाते हैं।

कशेरक (सं॰ पु॰) एक पक्ष। (भारत २।१०अ॰)

कशेरु (सं॰ पु॰-स्त्री॰) के देहे शीर्यते, क-शॄ-उ अरहादेशश्च। कैयटधृतभाष्य। उण् १।९०। १ पृष्ठास्थि, रीढ़, पीठकी बड़ी हड्डी। कं जलं वातं वा शृणाति। २ जलजात तृणविशेष, कसेरु। इसका संस्कृत पर्याय—कशेरुक, कसेरु, कसेरुक और कशेरुक है। हिन्दीमें कसेरु, बंगलामें केशुर, मराठीमें कचेर, अन्ध्रोंमें दिला और तैलगु (तिलङ्गी)में गुन्द-तुङ्ग गड्डी कहते हैं। (Sripus dubius)

कशेरु एक प्रकारकी घास है। यह समग्र भारतमें सरोवरों और नदियोंके किनारे उत्पन्न होता है। इसका ग्रन्थिल मूल जातिफल (जायफल) सदृश रहता और ऊपरसे कृष्णवर्ण देख पड़ता है। यह सङ्कोचनशील है। अतिसार और विसूचिका रोगमें देशीय वैद्य इसे औषधकी भांति व्यवहार करते हैं। यह रोग न लगनेके लिये भी चबाया जाता है।

शीतकालमें कशेरु खोद कर खाया करते हैं। इसके ऊपरका छिलका छील डाला जाता है। कोई कोई कसेरुको उबालकर भी खाता है। स्थानमें यह देवताओं पर चढ़ता है। कशेरु खानेमें मधुर और शीतल है। यह दो प्रकारका होता है—राजकशेरुक और चिचोड़। बड़े कशेरुको राजकशेरुक

ई० ८वें शताब्दमें विद्यमान रहे। कारण उस समय काश्मीरमें कल्लट नामक एक शैव राजा राजत्व करते थे। सम्भवतः स्पन्दसर्वस्वकारने उक्त राजाके नामसे ही अपना ग्रन्थ निकाला होगा। स्पन्दसूत्रके वार्तिककार भास्करभट्टके मतानुसार वसुगुप्तने कल्लटको शिवसूत्र बताया था। फिर इन्होंने स्पन्दसूत्रको कारिकाके साथ उसी जनसमाजमें प्रचार किया। कल्लटने स्पन्दसूत्रकी एक लघुवृत्ति भी बनायी थी। शैवदर्शन देखो।

कल्लत्व (सं० स्त्री०) कल्लस्य भावः, कल्ल-त्व। १ स्वरभेद, आवाज़का फर्क। २ बाधिर्य, बहरापन, सुन न पड़नेकी हालत।

कल्लर—दक्षिणापथकी एक असभ्य कृष्णवर्ण जाति। तामिल, तेलगु (तिलङ्गी) प्रभृति भाषाके अनुसार 'कल्लन'का एक अर्थ चोर या डाकू है। सम्भवतः पूर्वकालमें छिपकर माल मारने डाका डालनेसे यह नाम निकला होगा। मदुराराज्यमें इस जातिका वास है। किसी समय कल्लर लोग बसामोंसे कुछ स्थान छीन स्वाधीन भावमें रहते थे। अंगरेजोंके आनेसे पहले यह जाति मदुरा और निकटस्थ राज्यमें बड़ा उत्पात उठाती थी। १८०१ ई०को मदुरा अंगरेजोंके अधिकारमें आयी। फिर इन लोगोंका वह प्रभाव और दौरात्म्य घटने लगा। फिर भी उद्धत स्वभाव, अतुल साहस और शरीरका तेज आज भी वैसा ही बना है।

कल्लर जातिके विवाहकी पद्धति अति चमत्कारक है। एक रमणी अनायास दो-से दश तक पति ग्रहण कर सकती है। किन्तु एक एक जोड़े पति रखना पड़ता है; जोड़ा फूटनेसे काम बिगड़ता है। इनके सन्तान अपनेको छह, आठ या दश लोगोंके सही—आठ और दो, छह और दो या चार और दोके पुत्र बताते हैं। अनेक पिता रहते भी कोई गड़बड़ नहीं होती। कारण सन्तान सबके समझे जाते हैं। फिर सबको उन्हें पालना पड़ता है।

कल्लर अपने पुत्रोंको शैशवकालसे ही चौर्यवृत्ति सिखाते हैं। इस कार्यमें जो जितना परिपक्क पड़ता, उसे स्वजातिके निकट उतना ही आदर और सम्मान मिलता है। यह शिवकी पूजा करते हैं। किसीके मरनेपर शव जलाया या भूमिमें गड़ाया जाता है।

कल्लमूक (सं० त्रि०) बधिर एवं मूक, जो कह सुन न सकता हो।

कल्लर (हिं० पु०) १ कल्लर, खारी मट्टी। २ रेह, नोना। ३ अनुर्वरा भूमि, ऊसर।

कल्ला (हिं० पु०) १ अङ्कुर, किल्ला। २ कुल्ला, कुल्ली, गट्टा। यह ओठ पर पान खोंसनेको खोदा जाता है। ३ कपोलके अभ्यन्तरका अंश, जबड़ा। ४ विवाद, झगड़ा। ५ शरीरका स्थानविशेष, जिसका एक हिस्सा। जबड़ेके नीचे गलेतक फैला रहता है।

कल्लांच ((हिं० वि०) १ दुष्ट, लुच्चा। २ दरिद्र, कङ्गाल। यह तुर्कीके 'कल्लाच' शब्दका रूपान्तर मात्र है।

कल्लातोड़ (हिं० वि०) प्रबल, जोरावर, जो बराबरी कर सकता हो।

कल्लादराज़ (फा० वि०) कर्कशवादी, मुंहजोर, कड़ी बात कहनेवाला।

कल्लादराज़ी (फा० स्त्री०) कठोर वचन, मुंहजोरी, कड़ी बात।

कल्लाना (हिं० क्रि०) सुलगाने अथवा जलानेसे चर्ममें अल्प पीड़ा होना, चमड़ा जलना।

कल्लि (सं० अव्य०) आगामी दिवसको, कल।

कल्लिनाथ (सं० पु०) एक प्रसिद्ध सङ्गीतशास्त्ररचयिता।

कल्लू (हिं० पु०) कृष्णवर्णविशिष्ट, काले रंगवाला। यह शब्द प्रायः काले आदमियों या कुत्तोंका नाम होता है।

कल्लोल (सं० पु०) कल्ल शब्दे बाहुलकात् ओलच्। १ महा तरङ्ग, बड़ी लहर। २ हर्ष, खुशी। ३ शत्रु, दुश्मन। (त्रि०) ४ शत्रुता रखनेवाला, जो दुश्मनी मानता है।

कल्लोलित (सं० त्रि०) कल्लोलोऽस्य संजातः, कल्लोल-इतच्। तरङ्गयुक्त, लहर लेनेवाला।

कल्लोलिनी (सं० स्त्री०) कल्लोलोऽस्त्यस्याः, कल्लोल-इनि-ङीप्। नदी, दरया।

और मुस्ताकृति समूको चिचोड़ कहते हैं। दोनों प्रकारका कशेरु शीत, मधुर, तुवर (कषाय), गुरु, पित्तशोणित दाहघ्न और आंखकी बीमारी दूर करनेवाला होता है। (भावप्रकाश)

सिङ्गापुरका कशेरु बहुत बड़ा निकलता है। कहीं कहीं इसे ठण्डाईमें भी घोंट कर पीते हैं।

३ भारतवर्षका एक विभाग।

"भारतस्यास्य वर्षस्य नवभेदान्निशामय।
इन्द्रद्वीपः कशेरुश्च ताम्रवर्णो गभस्तिमान्।
नागद्वीपस्तथा सौम्यो गान्धर्वस्त्वथ वारुणः॥" (विष्णुपुराण)

कशेरक, कशेरु देखो।

कशेरुका (सं० स्त्री०) कशेरुक-टाप्। १ पृष्ठास्थि, रीढ़, पीठकी बड़ी हड्डी। २ कशेरु, कसेरु।

कशेरुमान् (सं० पु०) यवनराजविशेष, एक राजा।

"इन्द्रद्युम्नो हतः कोपाद् यवनश्च कशेरुमान्।" (हरिवंश १६ अ०)

३ भारतवर्षका एक खण्ड।

कशेरुस् (सं० क्ली०) कशेरु, कसेरु।

कशेरु (सं० क्ली०) क-शृ-उ एरक् पान्तादेशः। १ तृणकन्दविशेष, कसेरु। २ विश्वकर्माकी चतुर्दशी कन्या। नरकासुरने हस्तिरूपसे इन्हें हरण किया था। (हरिवंश, १२१ अ०)

कशरुक, कशेरु देखो।

कशेरुका, कशेरु देखो।

कशोक (सं० त्रि०) कश ताड़ने बाहुलकात् ओक। १ हिंसक, मार डालनेवाला। (पु०) २ राक्षसादि, शैतान वगैरह।

कश्चन (सं० अव्य०) किम्-चन इति मुग्धबोधः। कोई, एक न एक यह अनिर्दिष्टवाचक है। पाणिनिने इसे पृथक् शब्द माना है।

कश्चित् (सं० अव्य०) किम्-चित् इति मुग्धबोधः। कोई, एक न एक। यह अनिर्दिष्टवाचक है। पाणिनिके मतमें 'कश्चित्' शब्द पृथक् ठहरता है।

"कश्चित् कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारप्रमत्तः।" (मेघदूत)

कश्नी, किश्नी देखो।

कश्मल (सं० क्ली०) कश-कल-मुट्। कुटिकशिकौतिभ्यः प्रत्ययस्य मुट्। उण् १।१०८। १ मूर्छा, मूर्च्छा, एकाएक बेहोश हो जानेकी हालत। २ मोह, कमजोरी। ३ पाप, गुनाह। (त्रि०) ४ मलिन, गन्दा। ५ दुराचार, बदकाश। ६ पापी, गुनाहगार।

कश्मश (वै० क्ली०) वेदे पृषोदरादित्वात् लस्य शः। कश्मल देखो।

कश्मीर (सं०पु०) कश-ईरन् मुडागमश्च। कशेर्मुट् च। उण् ४।३१। काश्मीर जनपद। काश्मीर देखो।

कश्मीरज (सं० क्ली०) कश्मीरे जायते, कश्मीर-जन-ड। कुङ्कुमविशेष, ज़ाफ़रान्, केसर। कुङ्कुम देखो।

कश्मीरजन्म (सं० क्ली०) कश्मीरे जन्म यस्य, बहुव्री०। कुङ्कुम, केसर।

कश्मीरी (हिं० वि०) १ कश्मीरसम्बन्धीय, कश्मीरके मुताल्लिक। (स्त्री०) २ कश्मीर देशकी भाषा या बोली। ३ लेह विशेष, एक चटनी। आर्द्रककी छोल क्षुद्र क्षुद्र खण्ड करते हैं। फिर उनमें पीस कर मरिच, कङ्कोल, काश्मीरज (केसर), एला, जावित्री, सौंफ और जीरक पीसकर मिलाना पड़ता है। अनन्तर लवण, सिरका और शर्करा डालनेसे कश्मीरी-चटनी तैयार हो जाती हैं। (पु०) ४ कश्मीर देशका अधिवासी यानी रहनेवाला। ५ कश्मीरका अश्व यानी घोड़ा।

कश्य (सं० पु०-क्ली०) कशां अर्हति, कशा-य। दण्डादिभ्यो यः। पा ५।१।६६। १ अश्व, घोड़ा। २ अश्वका मध्यदेश, घोड़ेका पुट्ठा। ३ मद्य, शराब। (त्रि०) कशाघातके योग्य, कोड़ा खाने लायक।

कश्यप (सं० पु०) कश्यं सोमरसादिजनितं मद्यं पिबति, कश्य-प-क। १ कोई ऋषि। ब्रह्माके मानस-पुत्र मरीचिके औरस और कलाके गर्भसे इनका जन्म हुआ था। मार्कण्डेयपुराणके मतानुसार कश्य अर्थात् सोमरसके मद्यसे इनकी उत्पत्ति है, उसीसे कश्यप नाम पड़ गया।

"ब्रह्मणस्तनयो योऽभूत् मरीचिरिति विश्रुतः।
कश्यपस्तस्य पुत्रोऽभूत् कश्यपानात् स कश्यपः॥"
(मार्कण्डेयपुराण १०८।९)

शुक्ल यजुर्वेद प्रभृति वैदिक संहिताओंके मतमें हिरण्यगर्भ ब्रह्मासे कश्यपने जन्म लिया था।

कल्लोलिनीवल्लभ (सं० पु०) कल्लोलिनीनां नदीनां वल्लभ इव। समुद्र, सागर।

कल्व (सं० पु०) द्वारप्रान्त विशेष, दरवाजेका एक किनारा। वास्तु या भवन निर्माणशिल्पके अनुसार यह तीच्णाग्र रहता है।

कल्ह (हिं०) कल्हि देखो।

कल्हक (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह कपोतके समान होती है। इसका वर्ण इष्टकाकी भांति लोहित होता है। फिर कण्ठ कृष्णवर्ण, चञ्चु श्वेत और पद रक्तवर्ण रहते हैं।

कल्हण (सं० पु०) राजतरङ्गिणी नामक प्रसिद्ध संस्कृत इतिहासके रचयिता। यह काश्मीरवाले प्रधान राजमन्त्री चम्पक प्रभुके पुत्र रहे। राजतरङ्गिणीसे समझते हैं, कि कल्हण ४२२४ सप्तर्षि या लौकिकाब्द और १०७० शक (११४८ ई०)को जीवित थे।* इनकी राजतरङ्गिणी भारतवासियोंके आदरका बड़ा धन और भारतीय पुरातत्त्वविदोंका अमूल्य वस्तु है। पहले साधारण विश्वास करते, कि भारतवासी अपने प्राचीन इतिहास लिखनेको आवश्यक न समझते थे। कल्हणने यह अपवाद मिटा दिया है। इन्होंने महाराज युधिष्ठिरके समकालीन गोनन्दसे आरम्भकर अपने समसामयिक सिंहदेवके राज्यकाल पर्यन्त काश्मीरका इतिहास लिखा। इनकी राजतरङ्गिणी पढ़नेसे काश्मीरके प्राचीन राजाओंकी वंशावली, सङ्क्षिप्त जीवनी, राज्यकालकी विवरणी और काश्मीर तथा उसके निकटस्थ जनपदकी अवस्था समझ पड़ती है। राजतरङ्गिणीकी रचना-प्रणाली भी अधिक कवित्व और शब्दलालित्यसे पूर्ण है।

कल्हर, कह्लार देखो।

कल्हरना (हिं० क्रि०) १ ईषत् तैल या घृतमें भुनना, थोड़े घी या तेलसे कड़ाहीमें सिंकना। २ दुःखसे उठने न पाना, पड़े पड़े चिल्लाना।

कल्हार (सं० स्त्री०) कुमुद, बघोला, कोकाबेली।

कल्हारना (हिं० क्रि०) ईषत् घृत या तैलमें तलना, थोड़े घी या तेलमें गर्म कड़ाहीमें किसी चीज़को उलटना-पुलटना।

कल्होरा—सिन्धु प्रदेशकी अब्बासी मुसलमान जाति। यह लोग अपनेको अब्बासका वंशधर बताते हैं।

कवक (सं० पु०-क्ली०) कवते आच्छादयति विस्तारयति वा, कव-अच् संज्ञायां कन्। १ छत्राक, कुकुरमुत्ता। यह अखाद्य समझा जाता है। "लशुनं गृञ्जनञ्चैव पलाण्डुं कवकानि च।" (मनु) लहसुन, गाजर, प्याज और कुकुरमुत्ता खाना न चाहिये। २ कवल, ग्रास, लुकमा, कौर।

कवच (सं० पु०-क्ली०) कु-ष्वुन्। कनकगिरिवदवचापिंनद्धवक्षः इत्यादि। उण् ४।२। अथवा कं देहं वञ्चति विपक्षास्त्राणि वञ्चयित्वा रक्षति, क-वञ्च-अच्; कं वातं वञ्चति वा। १ सन्नाह, ज़िरह। इसका संस्कृत पर्याय—तनुत्र, वर्म, दंशन, उरश्छद, कङ्कटक, जगर, जागर, अजगर, कटक, योग, सन्नाह और कञ्चुक है।

स्वर्ण, रौप्य, ताम्र और लौह कई धातुसे कवच बनता है। इसको लोह काठ, चर्म और वल्कल द्वारा भी कवच प्रस्तुत होता है। उक्त द्रव्योंमें उत्तरोत्तर द्रव्यसे बना कवच अधिक गुणयुक्त है। ऋक्‌संहिता पढ़नेसे समझ पड़ता है, कि वैदिक कालमें स्वर्णनिर्मित कवच ही चलता था। शरीरका आवरक, लघु, दृढ़ और दुर्भेद्य कवच साधारण होता है। छिद्रयुक्त, अतिशय भार या सूक्ष्म और सहजभेद्य कवच निकृष्ट है। कवचको श्वेत, पीत, रक्त और कृष्ण कई प्रकार रंगते हैं। आजकल युद्धमें प्रायः कवच पहना नहीं जाता। फिर भी गत युरोपीय युद्धमें इसकी उपयोगिता प्रदर्शित हुयी थी।

२ शरीररक्षाके लिये देवताका एक मन्त्र। पहले मन्त्रविशेषसे उद्दिष्ट देवताकी पूजा कर कवच पढ़ते हैं। फिर भूर्जपत्र पर कवचको लिख और स्वर्ण, रौप्य वा ताम्रसे मढ़ कण्ठ अथवा दक्षिण बाहुमें धारण करते हैं। तान्त्रिक मन्त्र 'हुं' (हुङ्कार)को भी कवच कहते हैं।

३ पटह, दमन बाजा। ४ गर्दभाण्डवृक्ष, पाक-

* "लौकिकेऽब्दे चतुर्विंशे शककालस्य साम्प्रतम्।
सप्तत्याभ्यधिकं यातं सहस्रं परिवत्सराः।" (राजतरङ्गिणी १।५२)

"हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका यासु जातः कश्यपो यास्विन्द्रः॥"
(तैत्तिरीयसंहिता ५।६।१।१)

कश्यप एक प्रजापति थे। साम, यजुः और अथर्वसंहितामें इन्हें इन्द्र चन्द्र प्रभृति देवोंमें एक माना है। (साम १।१।१।४, शुक्लयजुः ३।६२, अथर्व १।१४।१०)

कात्यायनने अपनी वेदानुक्रमणिकामें लिखा है कि कश्यप ऋक्संहितावाले कई सूक्तोंके ऋषि थे। श्रीमद्भागवतमें देखते हैं कि कश्यप ऋषिने दक्षकी १७ कन्याओंसे विवाह किया। उनके गर्भसे १७ जातियां उत्पन्न हुयीं,—१ अदितिसे देव, २ दितिसे दैत्य, ३ दनुसे दानव, ४ काष्ठासे अश्वादि, ५ अरिष्टासे गन्धर्व, ६ सुरसासे राक्षस, ७ इलासे वृक्ष, ८ मुनिसे अप्सरायें, ९ क्रोधवशासे सर्प, १० ताम्रासे श्येन गृध्र प्रभृति, ११ सुरभिसे गोमहिषादि, १२ सरमासे श्वापद, १३ तिमिसे जलजन्तु, १४ विनतासे गरुड़, एवं अरुण, १५ कद्रुसे नाग, १६ पतङ्गीसे पतङ्ग और १७ यामिनिसे शलभ। किन्तु महाभारत और अन्यान्य पुराण प्रभृतिमें कश्यपकी त्रयोदश भार्यायें लिखी हैं। मार्कण्डेयपुराणके मतसे उनके नाम थे,—१ अदिति, २ दिति, ३ दनु, ४ विनता, ५ खसा, ६ कद्रु, ७ मुनि, ८ क्रोधा, ९ अरिष्टा, १० इरा, ११ ताम्रा, १२ इला और १३ प्रधा।
(मार्कण्डेयपुराण १०४ अ०)

पश्यतीति पश्यः, सर्वज्ञः पश्य एव पश्यकः आद्यन्तवर्णविपर्ययात् सिध्यति यद्वा कश्यं मद्यपानं अविद्यामित्यर्थः पिबति नाशयति अथवा कश्यं विज्ञानघनं पाति रक्षति आत्मनीति शेषः। २ परब्रह्म।

"तदेव ब्रह्म वा आत्मा एतस्य नामा इतो ब्रह्मणो नीडा नामक कश्यपीय बीजमन्त्रमनीषा नाम्नि।" (तापनिश्रुति ७।११)

३ कच्छप, कछुआ। ४ मृगविशेष, एक हिरन। ५ मत्स्यविशेष, एक मछली। (त्रि०) ६ श्यावदन्त, बड़दन्ता।

कश्यपनन्दन (सं० पु०) कश्यपस्य नन्दनः पुत्रः, ६-तत्। १ कश्यपके पुत्र गरुड़। २ देव, असुर आदि।

कश्यपपुर (सं० क्ली०) कश्यपस्य पुरम्, ६-तत्। वर्तमान काश्मीरका यह नाम रखा था। कश्यपपुरको ही हेरोदोतसने 'कस्पतुरस्' और टलेमिने 'कसपीरा' लिखा है।

कश्यपसंहिता (सं० स्त्री०) कश्यपस्य संहिता, ६-तत्। कश्यपप्रणीत एक धर्मशास्त्र।

कश्यपस्मृति, कश्यपसंहिता देखो।

कष (सं० पु०) कषति अत्र अनेन वा, कष-अप् यद्वा-कष-घ निपातनात् साधुः। गोचरसञ्चरवहव्रजव्यजापणनिगमाश्च। पा ३।३।११९। १ कष्टिप्रस्तर, कसौटी। इसपर स्वर्ण आदि घिसकर जांचते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—शान और निकष है। २ घर्षण, घिसाव। (त्रि०) घर्षण करनेवाला, जो घिसता या रगड़ता हो।

कषण (सं० त्रि०) कष्यते हिंस्यते, कष कर्मणि ल्युट्। १ अपक्व, कच्चा। (पु०) कषति अत्र। २ कष्टिप्रस्तर, कसौटी। (क्ली०) भावे ल्युट्। ३ घर्षण, खुजलाहट, रगड़।

"कषणकम्पनिरस्तमहाहिभिः क्षणविमुक्तमतङ्गजवर्जितैः॥" (भारवि ५।४०)

कषपाषाण (सं० पु०) कषश्चासौ पाषाणश्चेति, कर्मधा०। स्पर्शमणि, कसौटी।

कषा (सं० स्त्री०) कष्यते ताड्यते अनया, कष बाहुलकात् करणे अप्-टाप्। कशा, चाबुक।

कषाघात (सं० पु०) कषाका आघात, चाबुककी मार, उधड़े।

कषाकु (सं० पु०) कष—आकु। १ सूर्य, आफताब। २ अग्नि, आतिश, आग।

कषापुत्र (सं० पु०) निकषात्मज, एक राक्षस।

कषाय (सं० पु० क्ली०) कषति कण्ठम्, कष—आय। १ रसविशेष, कसेलापन। इसका संस्कृत पर्याय—तुवर, तवर और तूवर है। सुश्रुतके मतानुसार आस्वादनसे मुखको सुखाने, जिह्वाको ठहराने, कण्ठको बद्ध बनाने और हृदयको कुरेद पीड़ा पहुंचानेवाला रस कषाय कहाता है। पृथिवी वायुगुणबहुल होनेसे यह उपजता है। पूगफल आदि खानेसे इसका आस्वाद मिलता है। कषाय रस मलपाचक, व्रणरोपक, स्तम्भन, शोधन, लेखन, शोषक, पीड़ादायक, क्लेदनाशक और वायुवर्धक है। इसके अतिरिक्त व्यवहारसे पीड़ा, मुखशोष, उदराध्मान, वाक्यग्रह (वात

रका पेड़। ५ त्वक्, दारचीनी। ६ भूर्जपत्र, भोजपत्र। ७ मन्दीवृक्ष, धनिया पीपर। ८ डिण्डिमवाद्य, ढक्का, नक्कारा। ९ पाषाण जातिभेद। कोष देखो।

कवचपत्र (सं॰ क्लो॰) कवचस्येव रक्षासाधनं पत्रमिव पत्रं वल्कलं यस्य, बहुव्री॰। भूर्जपत्र, भोजपत्र।

कवचपाश (वै॰ पु॰) कवच व वर्मबन्ध, जिरह बांधनेका पट्टा। (भरद्वाजसंहिता)

कवचहर (सं॰ पु॰) कवचं हरति येन वयसा, कवच-हृ-अच्। १ कवच हरणका उद्यम करनेके उपयुक्त वयस्क बालक, लड़का, बच्चा। (त्रि॰) २ कवचधारी, जिरह पहननेवाला। ३ कवचका यन्त्र धारण करनेवाला, जो तावीज पहने हो। ४ कूर्पासकधारी, मिरजाई पहने हुआ।

कवचित (सं॰ त्रि॰) कवचं सञ्जातमस्य, कवच-इतच्। कवचयुक्त, जिरह पहने हुआ।

कवची (सं॰ त्रि॰) कवचं अस्त्यस्य, कवच-इनि। १ वर्मयुक्त, जिरह पहने हुआ। (पु॰) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। (महाभारत १।११७।११) शिव, महादेव।

कवचीयन्त्र (सं॰ क्लो॰) औषधके पाकार्थ यन्त्रविशेष, दवा पकानेका एक आला। किसी दृढ़ काचकूपी (शीशी)का यह बनता है। कूपी न तो अतिक्षुद्र और अतिदीर्घ रहना चाहिये। पहले इसे कर्द-माक्त (भीगे) वस्त्रसे अच्छीतरह लपेट पीछे मृदु मृत्तिकाका लेप चढ़ाते हैं। फिर धूपमें कूपी सुखायी जाती है। अन्तको इसमें औषध रख मुख बन्द कर देते हैं। इसी प्रकार कठिन और दृढ़ अग्निमें पक सकनेवाली कूपीका नाम कवचीयन्त्र है। (भावप्रकाश)

कवटी (सं॰ स्त्री॰) कौति शब्दायते, कु-अटन् ङीप्। कपाट, किवाड़ी।

कवड़ (सं॰ पु॰) येन जलेन वमति अमति, क-वल-अच् लडयोरैक्यम्। १ ग्रास, लुकमा, कौर। २ गण्डूष, कुल्ला।

कवड़दह (सं॰ पु॰) कर्ष, २ तोलेकी तौल।

कवती (सं॰ स्त्री॰) कशब्द अस्त्यस्य, क-मतुप्-ङीप् मस्य वः। 'कयामपि' इत्यादि वाक्-विशेष, जो अथवा 'क' से शुरू हो।

कवत्नु (वै॰ त्रि॰) १ व्यापंदर, मतलबी। २ मन्द-कर्मी, बुरा काम करनेवाला।

"इन्द्रि न देवाः कवत्नवे।" (ऋक् ७।३२।९)

कवन (सं॰ क्लो॰) कौति शब्दायते, कु-ल्युट्। १ जल-पानी। (पु॰) २ श्वफल्कके एक पुत्र।

कवन (हि॰) कौन देखो।

कवन्तक (सं॰ पु॰) ऋषिविशेष, किसी आदमीका नाम। पाणिनिने इनका उल्लेख किया है।

कवन्ध कबन्ध देखो।

कवपथ (सं॰ पु॰) कु पथ, कोः कवादेशः। (सिद्धान्तकौमुदी। पा ६।३।१०८) मन्दपथ, बुरा रास्ता।

कवयि, कवयी देखो।

कवयी (सं॰ स्त्री॰) कात् जलात् वयते गच्छति, क-वय-इन् ङीप्। मत्स्यविशेष, कुम्भा मछली। इसका संस्कृत पर्याय—कविकापुच्छ और चक्रपृष्ठी है। (Coius coloius) अन्यान्य मत्स्यकी अपेक्षा यह जलशून्य स्थानमें अधिक क्षण जी सकती है। इसके तालवृक्षपर चढ़नेका प्रवाद सुन पड़ता है। वस्तुतः यह कर्णदेशस्थ कण्टकके सहारे उच्चस्थान पर पहुंच जाती है। फिर भूमिपर भी कवयी बहुत दूर तक चला करती है। बङ्गालके यशोर और फरिदपुर जिलेमें यह प्रचुराकार देख पड़ती है। वैद्यक मतसे कवयी मधुर, स्निग्ध, कषाय, रुच्य, बल्य, ईषत्-पित्तकर और वातघ्न होती है।

कवर (सं॰ पु॰-क्ली॰) कं शरीरं वरं शोभमानत्वात् श्रेष्ठम्। १ केशपाश, जूड़ा। २ कबरी, चमनुलबी। कु-अरम्। (उणादि १।११५) ३ पाठक, व्याख्यान दाता। ४ लवण, नमक। ५ अम्ल, खटाई। (त्रि॰) ६ मध्यस्थ, गुच्छेदार। ७ खचित, जड़ाऊ। ८ चित्र-वर्ण, चितकबरा।

"इन्द्रनीलशिलाकबरितास्यावलम्बात्।
ग्रासोर्मितानाश्वा कबरी कवचः।" (रघु ६।१८)

कवर (हि॰) कौर देखो।

कवर (अं॰ पु॰ =Cover) १ आच्छादन, गिलाफ। २ ढांप, ढकना। ३ लिफाफा, खोल। ४ ढक्कन, ढकनी।

करने तक आनेकी हालत) मन्यास्तम्भ (गला जकड़ जानेकी हालत), गात्रस्फुरण, स्रोतअवरोध, श्यावत्व (भूरापन), शुक्रनाश, आकुञ्चन, आक्षेपण प्रभृति वायुविकार बढ़ते हैं।

२ क्वाथ, पाचन, जोशांदा, औटी, काढ़ा। इसका अपर संस्कृत नाम निर्यूह है। इसके पांच भेद है—स्वरस, कल्क, क्वथित, शृत और फाण्ट। स्वरस, कल्क, क्वथित, शृत और फाण्ट देखो।

३ निर्यास, गोंद। ४ विलेपन, लुपड़ाव।

"कषायितं तौ लोध कषायरुक्षे गोरोचनाक्षेपनितान्तगौरे।" (कुमारसम्भव)

५ अङ्गराग, उबटन। ६ श्योनाकवृक्ष, सोनापाठा। ७ कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़। ८ महासर्जवृक्ष, धूनेका बड़ा पेड़। ९ मण्डलिसर्प, एक सांप। १० राग, आसक्ति, लगाव। ११ कलियुग, बुरा ज़माना। निर्विकल्प समाधिका एक विघ्न। बाह्य विषयसे घट अखण्ड वस्तु ग्रहणमें लगते भी जो राग आदि संस्कार उठ मनको स्तब्ध और अखण्ड वस्तु ग्रहणसे पृथक् रखते, उन्हें कषाय कहते हैं। १२ लोहितवर्ण, लालरंग। (त्रि०) १४ कषायरसविशिष्ट, कसैला। १५ सुरभि, खुशबूदार।

"प्रत्यग्रं पेतु ... कषायः" (मेघदूत)

१६ लोहित, सुर्ख, लाल। १७ रक्तपीत मिश्रित, लाल-पीला। १८ अपटु, नावाकिफ़। १९ सुश्राव्य, अच्छीतरह सुन पड़नेवाला, जो कानमें खटकता न हो। २० रञ्जित, रंगदार। २१ आसक्त, संसारलिप्त, फंसा हुवा। जैनशास्त्रमें लिखा है,—

"कषं संसारकान्तारमयं ते यान्ति ये जनाः।
ते कषायाः क्रोधमानमायालोभाः इति श्रुताः॥" (लोकप्रकाश ३।१०९)

जैनशास्त्रमें 'कषाय'के ऊपर बहुत विचार किया है। क्रोध, मान, माया, लोभका नाम ही कषाय है। इसके उत्तरोत्तर भेदोंका बड़ी ही सूक्ष्मताके साथ दिग्दर्शन कराया गया है। गोम्मटसार (जीवकाण्ड)में कषाय शब्दकी दो तरहसे निरुक्ति लिखी है। जैसे—

सुहदुक्खसुबहुसस्सं कम्मक्खेत्तं कसेदि जीवस्स य।
संसारदूरमेरं तेण कसाओत्ति णं बेंति॥ २८१॥

अर्थात् जीवके सुख दुःख आदि अनेक प्रकारके धान्यको उत्पन्न करनेवाले, तथा जिसकी संसाररूपी मर्यादा अत्यन्त दूर है ऐसे कर्मरूपी क्षेत्र (खेत)का जो कर्षण करता है उसे कषाय कहते हैं। दूसरी प्रकार कष् धातुसे भी इसकी व्युत्पत्ति बतलाते हैं—

सम्मत्तदेससयलचरित्तजहक्खादचरणपरिणामे।
घादन्ति वा कषाया चउसोलअसंखलोगमिदा॥ २८२

जीवके सम्यक्त्व, देशसंयम, सकलसंयम और यथाख्यात चारित्ररूपी शुद्ध परिणामों को जो कषे—न होने दे उसको कषाय कहते हैं। इसके अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान और सञ्ज्वलन ये चार भेद हैं इन चारमें प्रत्येकके क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार चार भेद हैं इसतरह सोलह हो जाते हैं। फिर इनके भी उत्तरोत्तर असंख्यात भेद हैं। कषाय की विशेष व्याख्या करने लिये जैन धर्ममें अनेक शास्त्र हैं। सबसे बड़ा कषायप्राभृत है। गोम्मटसारमें भी इसका अनेक व्याख्यान है।

कषायकृत् (सं० पु०) कषायं कषायरागं करोति, कषाय-कृ-क्विप् तुगागमः। १ रक्तलोध्र, लाल लोध। इसको लाल रंगनेमें लगती है। (त्रि०) २ कषायप्रस्तुतकारी, काढ़ा बनानेवाला।

कषायचित्र (सं० त्रि०) लोहितवर्ण द्वारा रञ्जित, ऊपरसे सुर्ख रंगसे बनाया हुवा।

कषायजल (सं० क्ली०) जलविशेष, एक पानी। प्लक्ष (पाकर), अश्वत्थ (पीपर) और वटके सिद्ध जलको कषायजल कहते हैं।

कषायता (सं० स्त्री०) कषायस्य भावः, कषाय-तल्-टाप्। कषायका धर्म, कसैलापन।

कषायदन्त (सं० पु०) मूषिक विशेष, किसी किस्मका चूहा। इसका मूत्र जहां गिरता, वहां शोथ, कोथ आदि उठता है। (सुश्रुत)

कषायदशन, कषायदन्त देखो।

कषायनित्य (सं० त्रि०) नित्य अतिमात्र कषायरससेवी, रोज़ हदसे ज़्यादा कसैली चीज़ खानेवाला।

कषायपाक (सं० पु०) द्रव्य विशेषके क्वाथकी प्रस्तुत प्रणाली, किसी चीज़के जोशांदा बनानेका तरीका।

कवरकी (सं० स्त्री०) कवरं केशपाशं किरति विकिरति यत्र, कवर-कृ-ड-ङीप्। कारागारबद्धस्त्री, कैदमें पड़ी हुई औरत। अपने केशपाशको बांध न सकनेसे कारागारमें पड़ी स्त्री कवरकी कहाती है।

कवरना, कौरना देखो।

कवरपुच्छी (सं० स्त्री०) कवरं चित्रवर्णं पुच्छं यस्याः, ६-तत्। १ मयूरी, मोरनी। २ विचित्रपुच्छविशिष्टा, चितकबरी पुच्छवाली (चिड़िया वगैरह)

कवरा, कबरी देखो।

कवरी (सं० स्त्री०) कं शिरः वृणोति आच्छादयति, क-वृ-अच्-ङीप् अथवा कु-अरन्-ङीप्। १ केशविन्यास, जुल्फ। इसका संस्कृत पर्याय—केशवेश, कवर और केशगर्भक है। २ वर्वरा, बबई। ३ वनतुलसी। ४ कर्पूरक वृक्ष, बबूलका पेड़। ५ रक्त करवीर, लाल कनेर। ६ मनःशिला। ७ हिङ्गुपत्री, हींगकी पत्ती।

कवरीक (सं० पु०) सुगन्ध पत्रवृक्ष विशेष, एक पेड़। इसकी पत्ती खुशबूदार होती है।

कवरीकला (सं० स्त्री०) मनःशिला।

कवरीकूटक (सं० पु०) कवरी, बबई।

कवरीभर, कवरीभार देखो।

कवरीभार (सं० पु०) कवर्याः भार आधिक्यम्, ६-तत्। १ स्थूल कवरी, बड़ी जुल्फ। २ कवरीका भारत्व, जुल्फका बोझ।

कवरीभृत् (सं० त्रि०) कवरीं बिभर्ति, कवरी-भृ-क्विप्। कवरीधारी, जुल्फोंवाला।

कवर्ग (सं० पु०) ककारादि पञ्च वर्णसमूह, कसे ङ तक पांच अक्षर। क, ख, ग, घ और ङ पांचो अक्षरोंका नाम कवर्ग है। यह कण्ठ स्थानसे उच्चारित होता है।

कवर्गीय (सं० त्रि०) कवर्गात् भवः, कवर्ग-छ। कवर्गसे उत्पन्न, जो क, ख, ग, घ और ङ अक्षरसे निकला हो।

कवर्धा—मध्यप्रदेशके विलासपुर जिलेका एक क्षुद्र राज्य। यह अक्षा० २१° ५१´से २२° २८´ उ० और देशा० ८१° १´से ८१° ४०´ पू० तक अवस्थित है। क्षेत्रफल ८८० वर्ग मील लगता है। कोई ३८८ ग्राम इस राज्यके अन्तर्गत हैं।

कवर्धके पश्चिम अंशमें विलयी गिरिश्रेणी है। राज्यमें यह स्थान उत्कृष्ट समझा जाता है। यहां रूयी, धान और गेहूंकी उपज अच्छी है। जङ्गलमें साखू, महुवा और कई तरहका गोंद पाते हैं।

राज्यका प्रधान नगर कवर्धा। अक्षा० २२° १´ उ० और देशा० ८१° १५´ पू० पर बसा है। कार्पास और लाक्षाका व्यवसाय ही प्रधान है। कबीरपन्थी सम्प्रदायके प्रधान यहां रहते हैं।

कवल (सं० पु०) केन जलेन वलते वलति, क-वल-अच्। १ ग्रास, कौर।

"व्यसनन् कवलागाला यासो बभूवान् न पायसम्।" (रामायण १।६।१८)

२ गण्डूष ग्रहण, कुल्ली। कवलका बड़ी मात्रा आती, जो सुखसे मुखमें चल जाती है। गण्डूष देखो। इषिलिविमत्स्य, एक मछली।

कवल (हिं० पु०) १ कोण, किनारा। २ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। ३ अश्व विशेष, किसी किस्मका घोड़ा। ४ प्रतिज्ञा, कौल।

कवलग्रह (सं० पु०) कर्ष परिमाण, कोई एक तोले की तौल। २ कवलका ग्रहण, कुल्ली लेनेका काम। यह चार प्रकारका होता है—स्नेही, प्रसादी, शोधी और रोपण। वातमें स्निग्धोष्ण द्रव्यसे स्नेही, पित्तमें स्वादु, शीत द्रव्यसे प्रसादी, कफमें कटु-अम्ल-लवण-रुक्ष-उष्ण द्रव्यसे शोधी और व्रणमें कषाय-तिक्त-मधुर-कटु-उष्ण द्रव्यसे रोपण ग्रहण किया जाता है। (सुश्रु०) कवलग्रह लेनेसे भोजन अच्छा लगता, कफ घटता और तृषा, शोष, वैरस्य तथा दन्तचालका दोष मिटता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कवलग्रस (सं० पु०) कवलस्य ग्रस्तः, ६-तत्। १ कवलयोग्य परिमाण विशेष, कुल्लीके लायक एक माप।

कवलिका (सं० स्त्री०) व्रणबन्धनार्थं उदुम्बरादिवल्कल, जखम बांधनेके लिये गूलर वगैरहकी छाल।

कवलित (सं० त्रि०) कवलं करोति, कवल-णिच

जिन सकल कार्योंमें जलका परिमाण नहीं लिखते, उनमें आर्द्र द्रव्य रहनेसे अष्ट गुण और शुष्क द्रव्य रहनेसे षोड़श गुण जलसे सिद्ध कर चतुर्थांश अवशिष्ट रखते हैं।

कषायपाण (सं॰ पु॰) कषायः पानं यस्य, बहुव्री॰ णत्वम्। पानं देशे। पा ८।४।९ गान्धार जाति।

कषाय प्राभृत—एक जैन शास्त्र। इसमें जीवको संसारमें भ्रमण करानेवाली कषायों का वर्णन है।

कषायफल (सं॰ क्ली॰) पूगफल, सुपारी।

कषाय मार्गणा—जैन शास्त्रमें संसारी जीवोंकी विशेष अवस्था बतलानेके लिये १४ मार्गणा लिखी हैं। उनमें की एक मार्गणा।

कषाययावनाल (सं॰ पु॰) कषायः रक्तवर्णः यावनालः, कर्मधा॰। तुवर यावनाल धान्य, कसैली जुवार।

कषाययोनि (सं॰ स्त्री॰) कषायाधिकरण, कसैलेपनकी बुनियाद। यह पांच प्रकारकी होती है,—मधुर कषाय, कटुकषाय, तिक्तकषाय और कषायकषाय। (चरक)

कषायरस (सं॰ पु॰) रसविशेष, एक जायका। कषाय देखो।

कषायवर्ग (सं॰ पु॰) कषायाणां कषायरसयुक्तद्रव्याणां वर्गः समूहः, ६ तत्। कषायरस द्रव्यगुण, कसैली चीज़ोंका ज़खीरा। त्रिफला, शल्लकी, जम्बु, आम्र, बकुल, तिन्दुकफल, न्यग्रोध आदि, अम्बष्ठादि, प्रियङ्गु आदि, लोध्रादि, शालसारादि, कलायशाक, पाषाणभेदक, वनस्पतिफल, कुरबक, कोविदारक, जीवन्ती, चिल्ली पालङ्की, सुनिषण्ण आदि, नीवारकादि और मुद्ग आदि द्रव्य कषायवर्गमें पड़ते हैं। (सुश्रुत)

कषायवासिक (सं॰ पु॰) सुश्रुतोक्त कीट विशेष, एक ज़हरीला कीड़ा। यह कीट सौम्य होनेसे श्लेष्मप्रकोपक है। इसका मूत्र विषाक्त निकलता है।

कषायवृक्ष (सं॰ पु॰) वटामलकादि कषायत्वक् फलवृक्ष, बरगद आंवला वगैरह कसैली छालके फलवाला वृक्ष।

कषायस्कन्ध (सं॰ पु॰) प्रियङ्गु आदि कषाय द्रव्यकृत आस्थापन विशेष, एक कसैली दवा।

कषाया (सं॰ स्त्री॰) कष-आय टाप्। १ क्षुद्र दुरालभा, छोटा जवासा। (Small sort of Hedysarum) इसका संस्कृत पर्याय—यास, यवसा, दुःस्पर्श, धन्वयास, दुरालभा, समुद्रान्ता, रोदिनी, गान्धारी, कच्छुरा, अनन्ता, हरविग्रहा और दुरभिग्रहा है। भावप्रकाशके मतमें यह मधुर, तिक्त एवं कषायरस, सारक, शीतल, लघु और कफ, मेद, मत्तता, भ्रम, पित्त, रक्त, कुष्ठ, कास, तृष्णा, विसर्प, वातरक्त, वमि तथा ज्वरनाशक है। दुरालभा देखो।

कषायान्वित (सं॰ त्रि॰) कषाय रसविशिष्ट, कसैला।

कषायित (सं॰ त्रि॰) कषायः रक्तपीतादिवर्णः सञ्जातोऽस्य, कषाय-इतच्। १ रक्तादि वर्णयुक्त, लाल रंगा हुआ। "अनुनैव कषायितस्तनी सुभगेन प्रियगात्रभस्मना।" (कुमारसम्भव ४।१४)

कषायी (सं॰ पु॰) कषायो विद्यतेऽस्य, कषाय-इनि। १ शालवृक्ष। २ लकुचवृक्ष, लुकाटका पेड़। ३ खर्जूरी वृक्ष, खजूरका पेड़। ४ सर्जवृक्ष, धूनेका पेड़। ५ शाकवृक्ष, सागौनका पेड़। ६ क्षुद्रपनस, छोटा कटहल। (त्रि॰) ७ कषायविशिष्ट, गोंददार। ८ कषायान्वित, कसैला। ९ संसारासक्त, दुनियाकी बातोंमें उलझा हुआ।

कषायीकृत (सं॰ त्रि॰) अकषायः कषायः कृतः, कषाय-च्वि-कृ-क्त। कषायवर्ण हुआ, जो सुर्ख किया गया हो।

कषायीकृतलोचन (सं॰ त्रि॰) कषायवर्ण चक्षु बनाये हुआ, जो आंखें लाल कर चुका हो।

कषायीभूत (सं॰ त्रि॰) अकषायः कषायो भूतः, कषाय-च्वि-भू-क्त। रक्त वर्ण बना हुआ, जो लाल पड़ गया हो।

कषि (सं॰ त्रि॰) कषति हिनस्ति, कष-इ। अभिकषिबधिपधि इत्यादि। उण् ४।११८। हिंसक, नुकसान पहुंचानेवाला।

कषिका (सं॰ स्त्री॰ पक्षिजाति, कोई चिड़िया।

कषित (सं॰ त्रि॰) कष-क्त। परीक्षित, कसा हुआ, जो चोट खा चुका हो।

कषीका (सं॰ स्त्री॰) कषति, कष-ईकन्-टाप्। अनिदृशिभ्यामीकन्। उण् ४।१६। १ पक्षि जाति, चिड़िया। कषत्यनया। २ खन्ता।

कवितायी (हिं॰) कविता देखो।

कवितावेदी (सं॰ त्रि॰) कवितां वेत्ति, कविता-विद्-णिनि। कविताज्ञ, शायरी समझनेवाला, जो कवितायी जानता हो।

कवित्र (सं॰ त्रि॰) ज्ञानवान्, बुद्धिमन्त्।

कवित्त (हिं॰ पु॰) छन्दोविशेष। यह दण्डकके अन्तर्गत है। इसमें चार पाद और प्रत्येक पादमें इकतीस-इकतीस अक्षर लगाते हैं। यह मनहरन और घनाक्षरी भी कहाता है। कवित्तका अन्तिम वर्ण गुरु रहता, अन्य वर्णोंके लिये गुरु लघुका कोई नियम नहीं चलता। उदाहरण नीचे लिखा है,—

"भावन है तम पै समावत है भावन पै, चन्दावन पीवित बिहार छंदीवट पै। कहै पदमाकर चलाव राजमपाल पै, नचित उमड मता कालिन्दीके तट पै॥ कत पर काम पर वसुन कराम पर चलित ललाम पर कालिन्दीकी तट पै। चाही अब कहीं वह करद कीन्हाई जिहि' वाही कवि काल पी कन्हाईके मुकट पै॥" (पद्माकर)

कवित्थ (सं॰ पु॰) कपित्थ वृक्ष, कैथका पेड़।

कवित्व (सं॰ क्ली॰) कविभावः, कवि-त्व। १ कविता रचनाकी शक्ति, शायरी करनेका माद्दा। २ ज्ञान, समझदारी।

कवित्वन (वै॰ क्ली॰) १ स्तुति, तारीफ। २ ज्ञान, समझ।

कविनासा (हिं॰) कर्मनाशा देखो।

कविपुत्र (सं॰ पु॰) कवेः भृगुपुत्रस्य पुत्रः, ६-तत्। १ शुक्राचार्य। २ भार्गव ऋषि।

"कवेः पुत्रः कविर्विद्वान्।" (महाभारत, आदि ६६ अ॰)

कविप्रशस्त (वै॰ त्रि॰) कवियों द्वारा अत्यन्त प्रशंसित, शायरोंसे बड़ा नाम पाये हुवा।

कविभूषण (सं॰ पु॰) कवीनां भूषणमिव। १ उपाधि-विशेष, एक खिताब। २ कविचन्द्रके पुत्र।

कविय (सं॰ क्ली॰) कं सुखं अजति, क-अज-क, वीभावाभे वि आदेशः। खलीन, लगाम।

कविरञ्जन, बङ्गालके एक विख्यात शाक्त कवि।

रामप्रसाद देखो।

कविरथ (सं॰ पु॰) एक राजा। इनके पिताका नाम चित्ररथ था।

कविराज (सं॰ पु॰) कवीनां राजा श्रेष्ठः, कवि-राजन्-टच्। १ कविश्रेष्ठ, बड़ा शायर। २ भाट, कवित्त कहनेवाली एक जाति। ३ बङ्गदेशीय वैद्योंका उपाधि।

कविराज, एक कवि। इन्होंने 'राघवपाण्डवीय' काव्य बनाया था। शायद सन्‌में यह ई॰ १०म शताब्दमें विद्यमान रहे।

कविराजी (हिं॰ स्त्री॰) १ बङ्गदेशीय वैद्यक चिकित्सा, हकीमी। (त्रि॰) २ कविराजसम्बन्धीय, हकीमके मुताल्लिक।

कविराजी, एक उपासक सम्प्रदाय। रूप कविराजने यह सम्प्रदाय चलाया था। गुरुने रूपके ब्रह्मचारिणी रम-णीके हाथका भोजन ग्रहण करनेको रोका था। इसीसे उन्होंने एक दिन ब्रह्मचारिणी गुरुपत्नीके हाथसे भोजन न किया। गुरुने यह सुनकर उनकी तीन कण्ठियोंमें दो कण्ठियो छीन लीं। फिर रूप वही हुयी एक कण्ठी लेकर भागे थे। उन्होंमेंसे अनेक वैष्णव उनके मतानुयायी हुये। इसीसे लोग इस सम्प्रदायवालों को कविराजी कहते हैं। कविराजी अन्य वैष्णवोंके घरमें न तो विवाह और न किसी-दूसरेका बनाया भोजन करते हैं। यह प्रायः सभी सदाचारी होते हैं। कोई कोई कविराजियोंको ही 'मरदायक' कहते हैं।

कविराम, दिग्विजयप्रकाश नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। कह नहीं सकते, यह किस राजाको सभाके पण्डित थे। इनका ग्रन्थ पढ़नेसे समझते, कि कविराम यशोरवाले राजा प्रतापादित्यके समसामयिक रहे। कविरामके दिग्विजयप्रकाशमें भारतवर्षका तत्-कालीन भूवृत्तान्त और प्रवाद [illegible]

२ [illegible]

कहते हैं।

कविरामायण (सं॰ [illegible]

काव्येषु या रामः [illegible]

कविताके रामका [illegible]

कविराय (हिं॰ पु॰) [illegible]

कविल (सं॰ त्रि॰) [illegible]

तारीफ करनेवाला। २ [illegible]

कर्पेरुका (सं० स्त्री०) कप-एरक्—ड संज्ञायां कन् टाप्। १ पृष्ठास्थि, रीढ़। २ कशेरु, कसेरु।

कप्कय (वै०पु०) कप इति अव्यक्त शब्दमुच्चार्य्य कपति, कप-कप्-अच्। विषधर कृमिविशेष, एक ज़हरीला कीड़ा।

"दिवापाम: कप्कयास पजत्काः सिवसित् काः।
हदय हन्यतां क्रमिस्ताढ़स्य हन्यताम्॥" (अथर्ववेद ५। २३।७)

कष्ट (सं० त्रि०) कष्यते ऽसौ, कष कर्मणि क्त नेट्। कृच्छ्रगहनयोः कष:। पा ७।२।२२। १ पीड़ायुक्त, पुरदर्द, दुखनेवाला। २ गहन, मुश्किल। ३ पीड़ाकारक, तकलीफ़ देनेवाला। ४ कष्टसाध्य, बहुत खराब। ५ कुत्सित, बुरा। (क्ली०) कष भावे क्त। ६ पीड़ा-मात्र, कोई दर्द या बीमारी। इसका संस्कृत पर्याय—पीड़ा, बाधा, व्यथा, दुःख, अमानस्य, प्रसूतिज, कृच्छ्र, कललाकल, अर्ति, आर्ति, पीड़न, बाधन, आमानस्य, विबाधन, विवेठन, विधानक, पीड़ित, स्राय और अघ्रम है। अर्थ-प्रतीति व्यवहित (अलग) होनेसे कष्ट या क्लिष्टता दोष कहलाता है,—

"क्लिष्टत्वमर्थप्रतीतेर्व्यवहितत्वम्।" (साहित्यदर्पण ७ प०)

इसका उदाहरण 'क्षीरोदजावसतिजन्मभुवः प्रसन्नाः' वाक्यमें मिलता है। उक्त वाक्य 'जल प्रसन्न है' अर्थमें प्रयोग किया गया है। किन्तु सहजमें उसके समझनेका कोई उपाय देख नहीं पड़ता। क्षीरोदजा लक्ष्मी, उनकी वसति पद्म और पद्मका जन्म-स्थान जल है। अतएव यहां पर क्लिष्टत्व या कष्टदोष लगता है।

(अव्य) ७ कृच्छ्र। हाय।

कष्टकर (सं०त्रि०) कष्टं करोति, कष्ट-कृ-ट। १ पीड़ा-जनक, दर्द पैदा करनेवाला। २ दुःखजनक, तकलीफ़ देनेवाला।

कष्टकल्पना (सं० स्त्री०) कष्टेन कल्पना, ३-तत्। कठोर अनुमान, कड़ी अन्दाज़। जिसे देख स्थिर करनेमें कष्ट पड़ता और जो सहजमें कल्पनापर नहीं चढ़ता, उसे विद्वान् कष्टकल्पना कहता है।

कष्टकल्पित (सं० त्रि०) कष्टेन कल्पितं रचितम्। कष्टसे बना हुवा, जो मुश्किलसे ठीक किया गया हो।

कष्टकारक (सं० त्रि०) कष्टकार स्वार्थे कन्, कष्ट-कृ-ण्वुल् वा कष्टस्य कारकः, ६-तत्। दुःखका कारण बननेवाला, जो तकलीफ़का सबब ठहरता हो। (पु०) २ संसार, दुनिया।

कष्टजीवी (सं० त्रि०) कष्टेन जीवति, कष्ट-जीव-णिनि। १ कष्टसे जीविका निर्वाह करनेवाला, जो मुश्किलसे काम चलाता हो। २ अनेक भोग कर बचनेवाला, जो मुश्किलसे बचा हो। ३ पक्षिजाति, चिड़िया।

कष्टतपस् (सं० पु०) कष्टं कष्टकरं तपो यस्य, बहुव्री०। कठिन तपस्या करनेवाला, जो इसतिफ़गारके मुताबिक अमल करता हो।

कष्टतर (सं० त्रि०) अतिशय पीड़ायुक्त, ज़्यादा तक-लीफ देनेवाला।

कष्टद (सं० त्रि०) कष्टं ददाति कष्ट-दा-क। कष्ट-दायक, तकलीफ़ पहुंचानेवाला।

कष्टरिपु (सं०त्रि०) कष्टः कष्टसाध्यो रिपुः, कर्मधा०। कष्टसे पराजय किया जानेवाला शत्रु, जो दुश्मन मुश-किलसे हारता हो।

"प्राज्ञं कुलीनं शूरञ्च दक्षं दातारमेव च।
कृतज्ञं धृतिमन्तञ्च कष्टमाहुररिं बुधाः॥" (मनुसंहिता)

विद्वान्, कुलीन, वीर, दक्ष, दाता, कृतज्ञ और धैर्यशाली शत्रुको पण्डित कष्टरिपु कहते हैं।

कष्टलभ्य (सं० त्रि०) कष्टेन लभ्यम्, ३-तत्। कष्टसे मिलनेवाला, जो मुश्किलसे हाथ आता हो।

कष्टश्रित (सं० त्रि०) कष्टं श्रितं आश्रितं येन, बहुव्री०। १ कष्टपानेवाला, जो तकलीफ़में हो। २ कठोर व्रत-कारक, कड़े इसतिफ़गारको अमलमें लानेवाला।

कष्टश्रोत्रिय—बङ्गदेशके श्रोत्रिय ब्राह्मणोंका एक विभाग। श्रोत्रिय देखो।

कष्टसह (सं० त्रि०) कष्टं सहते, कष्ट-सह-अच्। कष्टसहिष्णु, तकलीफ़ उठा सकनेवाला।

कष्टसाध्य (सं० त्रि०) कष्टेन साध्यम्, ३-तत्। १ कष्टसे आरोग्य होनेवाला, जो मुश्किलसे अच्छा हो। २ कष्टसे पराजय किया जानेवाला, जो मुश्किलसे हारता हो।

कष्टस्थान (सं० क्ली०) कष्टं कष्टकरं स्थानम्, कर्मधा०।

कविलास (हिं॰ पु॰) १ कैलाश, महादेवके रहनेका पहाड़। २ स्वर्ग, बिहिश्त।

कविलासिका (सं॰ स्त्री॰) कं सुखं विलासयति उद्दीपयति, क-वि-लस-णिच्-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। वीणाविशेष, किसी किस्मका तम्बूरा।

कविवर (सं॰ त्रि॰) कविषु वरः श्रेष्ठः। कविश्रेष्ठ, शायरोंमें बड़ा।

कविवल्लभ (सं॰ पु॰) कालादर्श वा कालनिर्णय नामक ज्योतिर्ग्रन्थके रचयिता। इनका अपर नाम आदित्यसूरि था। विश्वेश्वर आचार्यने इन्हें शिक्षा दी थी।

कविवृध (वै॰ त्रि॰) कवियोंको बढ़ानेवाला।

कविवेदी (सं॰ त्रि॰) कविं कवित्वं वेत्ति, कविविद्-णिनि। १ काव्यवेत्ता, शायरी समझनेवाला। २ कवि, शायर।

कविशस्त (सं॰ त्रि॰) कविषु शस्तः ख्यातः, ७-तत्। कवियोंमें विख्यात, शायरोंमें मशहूर।

कविशेखर (सं॰ पु॰) १ साधनमुक्तावली नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता। २ सङ्गीत तालविशेष।

कवी (सं॰ स्त्री॰) कवि-ङीष्। खलीन, लगाम।

कवीठ (हिं॰ पु॰) कपित्थ, कैथा।

कवीन्द्र आचार्य (सरस्वती) कविचन्द्रोदय और पदचन्द्रिका नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

कवीन्द्रनारायण (शर्मा) एकाक्षचन्द्रिका और विरजामाहात्म्य नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। इन्होंने उक्त दोनों ग्रन्थ उत्कलराज बलावुकेशरीके समयमें बनाये थे।

कवीय (सं॰ क्ली॰) कवि स्वार्थे छ। खलीन, लगाम।

कवीयत् (सं॰ त्रि॰) कविरिव आचरति, कविं स्तोतारं इच्छति वा, कवीय-शतृ। १ कविसदृश, शायरके बराबर। २ अपनी प्रशंसा इच्छुक, जो, अपनी तारीफ़ चाहता हो।

कवीयान् (सं॰ त्रि॰) अयमनयोरतिशयेन कविः, कवि-ईयसुन्। द्विवचनविभज्योपपदेतरबीयसुनौ। पा ५।३।५७। उभय कवियोंमें श्रेष्ठ, दोनों शायरोंमें बड़ा।

कवुल, ज्योतिषका एक योग।

कवेरा (हिं॰ पु॰) ग्रामीण, देहाती, गंवार।

कवेल (सं॰ क्ली॰) कं जलं विलति स्थगति, क-विल-अण्। १ उत्पल, नीला कंवल।

कवैया (हिं॰ पु॰) भ्रमणका कीलक, चक्रकी कील। यह दिग्दर्शनयन्त्र (कुतुबनुमा) की सूची लगाती है। २ कामयावक, कीनेका मसा।

कवोड़क, कपाटक देखो।

कवोष्ण (सं॰ क्ली॰) कुत्सितं ईषत् उष्णम्, कर्मधा॰ कोः कवादेशः। ईषत् उष्णस्पर्श, थोड़ी गर्मी। (त्रि॰) २ ईषत् उष्णस्पर्शयुक्त, कुछ गर्म।

"मत्परं दुर्लभं मत्वा नूनमावर्जितं मया।
पयः पूर्वैः स्वनिश्वासैः कवोष्णमुपभुज्यते॥" (रघु १।६७)

कव्य (वै॰ त्रि॰) कवि यत्। (मधुघ्यस् चोमगदिरेकवर्णेतु-शिष्टेषु तद्धपुपसृष्टमधु एवंविधेषु इसे वेमन्त्रर्षिव ... यत्। कात्यायन ५।१।१०) १ स्तवकारी, तारीफ़ करनेवाला। (सायण) (पु॰) २ वेदोक्त पितृलोक विशेष।

"मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिः।" (ऋक्संहिता १०।१४।३)

३ चतुर्थ मन्वन्तरके सप्तर्षियोंमें एक ऋषि।

(क्ली) कूयते दीयते पितृभ्यः यत् अन्नादिकम्, कु॰-अच्-यत्। अचो यत्। पा ३।१।९७। पितृलोक विशेषके उद्देश्यसे दिया जानेवाला अन्न।

कव्य पदार्थ श्रोत्रिय ब्राह्मणको दान न करनेसे निष्फल हो जाता है। मनुसंहितामें लिखते हैं कि विद्वान् ब्राह्मणको कव्य खिलानेसे अनेक पुष्कल फल मिलते हैं। किन्तु अमन्त्रज्ञ बहु ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे भी वह लाभ नहीं मिल सकता। दूसरे अमन्त्रज्ञ ब्राह्मण जितने ग्रास लेता, पितृलोकके मुखमें उतने ही तप्त लोहेके गोले छोड़ देता है। अतएव प्रथम ही परीक्षाके साथ ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मणको कव्य भोजन कराना चाहिये। वेदतत्त्वविद् ब्राह्मणोंमें ज्ञाननिष्ठ, तपोनिष्ठ, तपःस्वाध्यायनिष्ठ और कर्मनिष्ठ भेदसे चार श्रेणियां होती हैं। हव्यके भोजनमें चारों श्रेणियोंका विधान है। किन्तु कव्यके भोजनमें एक मात्र ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मणको ही अधिकार है।

"ज्ञाननिष्ठाः द्विजाः केचित् तपोनिष्ठास्तथापरे।
तपःस्वाध्यायनिष्ठाश्च कर्मनिष्ठास्तथापरे॥

दुःखजनक स्थान, खराब जगह, तकलीफ देनेवाला मुकाम।

कष्टहरण पर्वत—बिहार प्रान्तके मुङ्गेर जिलेका एक पहाड़।

कष्टहरणी (सं॰ स्त्री॰) कीकटदेशकी एक नदी। (भविष्य ब्रह्मखण्ड २१।४०) २ अङ्गदेशमें देवीकर्णके निकट प्रतिष्ठित देवीकी एक मूर्ति। (देवीभागवत ७।३०।७६) यह मुङ्गेरके निकट वर्तमान थी।

कष्टागत ((सं॰ त्रि॰) कष्टसे आया हुवा, जो मुश्किलसे पहुंचा हो।

कष्टि (सं॰ स्त्री॰) कष भावे क्ति। १ परीक्षा, जांच, कसायी। अधिकरणे क्ति। २ स्वर्णमणि, कसौटी, कसनेका पत्थर। ३ पीड़ा, दर्द, बीमारी।

कष्टी (हिं॰ स्त्री॰) प्रसवका कष्ट उठानेवाली।

कष्टीर (सं॰ क्ली॰) रङ्ग, रांगा।

कस (सं॰ पु॰) कसति विकसति स्वर्णादिरत्र,कस-अच्। १ स्वर्णमणि, कसौटी, सोना-चांदी कसनेका पत्थर।

कस (हिं॰ पु॰) १ खड्गका स्थितिस्थापकत्व, तलवारकी लचक। इससे तलवारकी तेज़ी पहंचानी जाती है। २ शक्ति, ताक़त। वश, क़ाबू। कुश्तीका एक पेंच, यह 'कसकी मोढ़ी' कहाता है। ३ अवरोध, रोक। ४ कषाय, अर्क। ५ सार, निचोड़। (स्त्री॰) ६ बन्धनरज्जु, कसनेकी रस्सी। (क्रि॰ वि॰) ७ किस प्रकार, कैसे। कसई, कभी देखा।

कसक (हिं॰ स्त्री॰) १ पीड़ा विशेष, एक दर्द। २ कोई आघात आने और अच्छा हो जानेसे यह धीरे धीरे उठा करती है। ३ कसनकी चमक। ४ पुरातन वैर, पुरानी दुश्मनी। ५ सहानुभूति, हमदर्दी। ६ अभिलाष, हौसला।

कसकना (हिं॰ क्रि॰) १ पीड़ा करना, दुखना, चमकना, रह रहके दर्द उठना। २ अप्रिय लगना, बुरा मालूम पड़ना।

कसका (सं॰ स्त्री॰) कासमर्द, कसौंदी।

कसकुट (हिं॰ पु॰) मिश्रधातु विशेष, एक मिलावटी फ़लज़्। इसमें तांबा और जस्ता बराबर बराबर पड़ता है। कसकुटसे लोटे, कटोरे, थालियां वगैरः बरतन बनते हैं। किन्तु इसके पात्रमें अम्ल द्रव्य रखनेसे बिगड़कर विषाक्त हो जाता है। कसकुटका दूसरा नाम भरत है।

कसगर (हिं॰ पु॰) जाति विशेष, कासागर क़ौम। यह मुसलमान होते हैं। इनका काम मट्टीके छोटे छोटे बरतन बनाना है।

कसन (सं॰ पु॰) कसति हिनस्ति, कस-ल्यु। कस, कास, खांसी। २ वेदना विशेष, एक दर्द।

कसन (हिं॰ स्त्री॰) १ बन्धन, बंधाई, कसाई। २ बन्धनकी रीति, कसनेका तरीका। ३ बन्धनरज्जु, कसनेकी रस्सी। बधी, तङ्ग, पट्टी।

कसनई (हिं॰ स्त्री॰) पक्षि विशेष, एक चिड़िया। इसका पक्ष कृष्णवर्ण, वक्षःस्थल एवं पृष्ठदेश पाटल और चक्षु रक्तवर्ण होता है।

कसनमर्दन (सं॰ पु॰) कासमर्दवृक्ष, कसौंदीका पेड़।

कसना (सं॰ स्त्री॰) कष्टसाध्य लूता विशेष, एक ज़हरीली मकड़ी। लूता देखो।

कसना (हिं॰ क्रि॰) १ बन्धन करते समय रज्जु आदि दृढ़तापूर्वक खींचना, ज़ोरसे तानना, जकड़ना। २ निष्कर्ष लगाना, दबाना। ३ बन्धन करना, बैठना, ठिकाने पहुंचाना। ४ सज्जित करना, (हाथी-घोड़ा) सजाना। ६ भरना, ठूंसना। ७ खिंचना, तनना। ८ तङ्ग पड़ना, कड़ा रहना। ९ दबना, फुटना। १० प्रस्तुत या तैयार होना। ११ भर जाना। १२ घिसना, रगड़ना। १३ परीक्षा करना, परखना। १४ औटना, गढ़ियाना। १५ सधाना, नथना। १६ परिपाक करना, तलना। १७ कष्ट देना, तकलीफ पहुंचाना। (पु॰) १८ बन्धन, बंधना। १९ गिलाफ़, खोल। २० कृमि विशेष, एक ज़हरीला कीड़ा।

कसनि (हिं॰ स्त्री॰) बन्धन, बंधाई, खींच।

कसनी (हिं॰ स्त्री॰) १ रज्जु, रस्सी। २ गिलाफ़, खोल। ३ कञ्चुकी, चोली। ४ स्वर्णमणि, कसौटी। ५ परीक्षा, जांच। ६ कचौड़ी। ७ काषायकल्प, कसावका चढ़ाव।

कवितायी (हिं०) कविता देखो।

कवितावेदी (सं० त्रि०) कवितां वेत्ति, कविता-विद्-णिनि। कविताज्ञ, शायरी समझनेवाला, जो कवितायी जानता हो।

कविद्द (सं० त्रि०) ज्ञानवान्, अक्लमन्द।

कवित्त (हिं० पु०) छन्दोविशेष। यह दण्डकके अन्तर्गत है। इसमें चार पाद और प्रत्येक पादमें इकतीस-इकतीस अक्षर लगाते हैं। यह मनहरन और घनाक्षरी भी कहाता है। कवित्तका अन्तिम वर्ण गुरु रहता, अन्य वर्णोंकेलिये गुरु लघुका कोई नियम नहीं चलता। उदाहरण नीचे लिखा है,—

"तालन पै ताल पै तमालन पै मालन पै, वृन्दावन वीथिन विहार बंशीवट पै। कहि पद्माकर अखण्ड रासमण्डल पै, मण्डित उमण्ड महा कालिंदीके तट पै॥ छत पर छान पर कुसुम कटान पर ललित लतान पर लाड़िलीकी लट पै। छायी भल छायी यह शरद जोन्हाई जिहि पायी छवि आज ही कन्हाईके मुकट पै॥" (पद्माकर)

कवित्थ (सं० पु०) कपित्थ वृक्ष, कैथका पेड़।

कवित्व (सं० क्ली०) कवेर्भावः, कवि-त्व। १ कविता रचनाकी शक्ति, शायरी करनेका माद्दा। २ ज्ञान, समझदारी।

कवित्वन (वै० क्ली०) १ स्तुति, तारीफ़। २ ज्ञान, समझ।

कविनाशा (हिं०) कर्मनाशा देखो।

कविपुत्र (सं० पु०) कवेः भृगुपुत्रस्य पुत्रः, ६-तत्। १ शुक्राचार्य। २ भार्गव ऋषि।

"भृगोः पुत्रः कविर्विद्वान्।" (महाभारत, आदि ६६ अ०)

कविप्रशस्त (वै० त्रि०) कवियों द्वारा अत्यन्त प्रशंसित, शायरोंमें बड़ा नाम पाये हुवा।

कविभूषण (सं० पु०) कवीनां भूषणमिव। १ उपाधि-विशेष, एक खिताब। २ कविचन्द्रके पुत्र।

कविय (सं० क्ली०) कं सुखं अजति, क-अज-क, वीजस्थाने वि आदेशः। खलीन, लगाम।

कविरञ्जन, बङ्गालके एक विख्यात शाक्त कवि। रामप्रसाद देखो।

कविरथ (सं० पु०) एक राजा। इनके पिताका नाम चित्ररथ था।

कविराज (सं० पु०) कवीनां राजा श्रेष्ठः, कवि-राजन्-टच्। १ कविश्रेष्ठ, बड़ा शायर। २ भाट, कवित्त कहनेवाली एक जाति। ३ बङ्गदेशीय वैद्योंका उपाधि।

कविराज, एक कवि। इन्होंने 'राघवपाण्डवीय' काव्य बनाया था। पाश्चात्य मतसे यह ई० १०म शताब्दमें विद्यमान रहे।

कविराजी (हिं० स्त्री०) १ बङ्गदेशीय वैद्यक चिकित्सा, हकीमी। (त्रि०) २ कविराजसम्बन्धीय, हकीमके मुताल्लिक।

कविराजी, एक उपासक सम्प्रदाय। रूप कविराजने यह सम्प्रदाय चलाया था। गुरुने रूपसे ब्रह्मचारिणी रम-णीके हाथका भोजन ग्रहण करनेको रोका था। इसीसे उन्होंने एक दिन ब्रह्मचारिणी गुरुपत्नीके हाथसे भोजन न किया। गुरुने यह सुनकर उनको तीन कण्ठियोंमें दो कण्ठियां छीन लीं। फिर रूप बची हुयी एक कण्ठी लेकर भागे थे। उन्होंसे अनेक वैष्णव उनके मतानुयायी हुये। इसीसे लोग इस सम्प्रदायवालों को कविराजी कहते हैं। कविराजी अन्य वैष्णवोंके घरमें न तो विवाह और न किसी दूसरेका बनाया भोजन करते हैं। यह प्रायः सभी सदाचारी होते हैं। कोई कोई कविराजियोंको ही 'अष्टदायक' कहते हैं।

कविराम, दिग्विजयप्रकाश नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। कह नहीं सकते, यह किस राजाकी सभाके पण्डित थे। इनका ग्रन्थ पढ़नेसे समझते, कि कविराम यशोरवाले राजा प्रतापादित्यके समसामयिक रहे। कविरामके दिग्विजयप्रकाशमें भारतवर्षका तत्-कालीन भूवृत्तान्त और प्रवाद लिखा है।

२ विहारमें डोम जातिके भाटोंको भी कविराम कहते हैं।

कविरामायण (सं० पु०) कविना कवितया कविषु काव्येषु वा रामः अयनं आश्रयो यस्य, बहुव्री०। कवितासे रामका आश्रय रखनेवाले वाल्मीकि मुनि।

कविराय (हिं० पु०) कविराज, भाट।

कविल (सं० त्रि०) कु कव वा वर्णने इलच्। १ स्तोता, तारीफ़ करनेवाला। २ शब्दकारक, आवाज़ देनेवाला।

कसूर, पञ्जाब प्रान्तके लाहौर जिलेकी अपनी तहसील और प्रधान नगर। यह अक्षा० ३१° ६′ ४६″ उ० और देशा० ७४° २०′ ३१″ पू० पर अवस्थित है। लाहौर नगरसे कसूर ३४ मील दक्षिणपूर्व फीरोजपुरकी सड़क पर पड़ता है। पहले सिन्धु नदके पूर्वसे पठान लोग आकर यहां बसे थे। १७६३ और १७७० ई० को सिखोंने आक्रमण मार कुछ दिनके लिये पठानोंको दबाया, किन्तु १७९४ ई० को उन्होंने फिर अपना पूर्वाधिकार पाया। अनन्तर १८०७ ई० में नवाब कुतब-उद्-दीन खान्‌को रणजित्‌सिंहने हरा कसूर लाहौरसे मिला दिया। यहां घोड़ेका साजसामान बनता है। किसी डिपटी कमिश्नरको प्रतिष्ठित शिल्पशालामें नमदे और कालीन तैयार होते हैं। सिन्धु, पञ्जाब, दिल्ली रेलवेकी रायविन्द-फीरोजपुर शाखा इसे लाहौर और फीरोजपुरसे मिलाती है। अतिरिक्त असिष्टण्ट कमिश्नरकी कचहरी, तहसीली, पुलिसका थाना, पाठागार, औषधालय और डाक बंगला विद्यमान है। देशीय द्रव्यांके व्यवसायका कसूर केन्द्रस्थल है। बड़ी सड़कें पक्की बनी हैं। पानी निकलनेका बड़ा सुभीता है। लोगोंके कथनानुसार मर्यादा पुरुषोत्तमके पुत्र कुशने कसूर बसाया था।

कसेरा (हिं० पु०) कांस्यकार, कांसेकी चीजें बनाने और बेचनेवाला। यह एक वणिक् जाति है। संस्कृत पर्याय कंसकार, कंसवणिक् और कांस्यकार है। इस जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें मतका भेद लक्षित होता है। ब्रह्मवैवर्तपुराणके ब्रह्मखण्डमें लिखा है,—

किसी समय विश्वकर्मा स्वर्गकी वेश्या घृताचीको देख कामके शरसे पीड़ित हुये। उस समय घृताची कामदेवके निकट जाती थीं। विश्वकर्माने अपना अभिलाष उनको बता कर कहा, 'हे सुन्दरी। हमने कामदेवसे कामशास्त्र पढ़ा है। हमारी इच्छा पूर्ण कीजिये। हम आपको विविध अलङ्कार देंगे।' घृताची बोल उठीं, 'देखो। आप कामदेवसे कामशास्त्र सीखनेकी बात कहते हैं। इस समय हम उन्हीं कामदेवके चित्तरञ्जनको जा रही हैं। आज हम तुम्हारे गुरु कामदेवकी पत्नीके स्थानमें हैं। ऐसे स्थल पर हमारी कामना करनेसे आपको गुरुपत्नीके गमनका महापातक लगेगा। हम किसी प्रकार आज आपके प्रस्तावमें सम्मत हो नहीं सकतीं।' विश्वकर्माने घृताचीकी बातसे अत्यन्त घबरा शाप दिया था, 'तूने मेरा मनोरथ पूर्ण न किया। अब मेरे अमोघ शापके प्रभावसे मर्त्यलोकमें शूद्राके गर्भसे तुझे जन्म लेना पड़ेगा।' फिर घृताचीने भी विश्वकर्माको शापित किया 'तू भी मेरे शापसे स्वर्ग छोड़ नरलोकमें जाकर उत्पन्न होगा।' घृताची नरलोकमें शूद्राके गर्भसे जन्म ले मदनगोपकी पत्नी बनीं। उधर विश्वकर्मा किसी ब्राह्मणके घर उत्पन्न हुये। घटनावश मदनगोपकी स्त्रीसे ब्राह्मणरूपी विश्वकर्माने सहवास किया था। उससे नौ पुत्रोंने जन्म लिया। उन्हीं नौ पुत्रोंसे मालाकार, कर्मकार, कंसकार (कसेरा) प्रभृति नौ जातियां चली हैं। मालाकार, कर्मकार शङ्खकार, तन्तुवाय, कुम्भकार, और कंसकार (कसेरा) छह जातियां प्रधान हैं।* वृहद्धर्मपुराणके मतमें ब्राह्मणके औरस और वैश्याके गर्भसे अम्बष्ठ, गन्धवणिक्, शङ्खकार और कांसकार (कसेरा) जाति निकली है।†

भार्गवराम विरचित जातिमालामें लिखा है,

"गान्धिकः शाङ्खिकश्चैव कांसिको मणिकारकः।
सुवर्णवणिकश्चैव पञ्चैते वणिजः स्मृताः॥"

वणिक् अर्थात् बनिया जाति पांच प्रकारकी है—गन्धवणिक, शङ्खवणिक, कंसवणिक (कसेरा) मणिकार और सुवर्णवणिक।' गन्धवणिकके औरस तथा शङ्खवणिक्‌की कन्याके गर्भसे ताम्र और कांस्य उपजीवी कंसवणिक (कसेरा) जाति उत्पन्न हुयी है।

भार्गवरामके मतानुसार विलोमक्रम पर अपर

---

* "विश्वकर्मा च शूद्रायां वीर्य्याधानं चकार सः।
ततो बभूवुः पुत्राश्च नवैते शिल्पकारिणः।
मालाकार-कर्मकार-शङ्खकार-कुविन्दकाः।
कुम्भकारः कंसकारः षडेते शिल्पिनां वराः॥"
(ब्रह्मवैवर्तपुराण, ब्रह्मखण्ड, १०।१९-२०)

† "वैश्यायां ब्राह्मणाज्जातः अम्बष्ठो नामितो ध्रुवम्।
कंसकारशङ्खकारौ ब्राह्मणात् सम्बभूवतुः॥" (वृहद्धर्मपुराण)

कविलास (हिं॰ पु॰) १ कैलास, महादेवके रहनेका पहाड़। २ स्वर्ग, बिहिश्त।

कविलासिका (सं॰ स्त्री॰) कं सुखं विलासयति उद्दीपयति, क-वि-लस-णिच्-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। वीणाविशेष, किसी किस्मका तम्बूर।

कविवर (सं॰ त्रि॰) कविषु वरः श्रेष्ठः। कविश्रेष्ठ, शायरोंमें बड़ा।

कविवल्लभ (सं॰ पु॰) कालादर्श वा कालनिर्णय नामक ज्योतिःसंग्रहके रचयिता। इनका अपर नाम आदित्यसूरि था। विश्वेश्वर आचार्यने इन्हें शिक्षा दी थी।

कविवृध् (वै॰ त्रि॰) कवियोंको बढ़ानेवाला।

कविवेदी (सं॰ त्रि॰) कविं कवित्वं वेत्ति, कवि-विद्-णिनि। १ काव्यवेत्ता, शायरी समझनेवाला। २ कवि, शायर।

कविशस्त (सं॰ त्रि॰) कविषु शस्तः ख्यातः, ७-तत्। कवियोंमें विख्यात, शायरोंमें मशहूर।

कविशेखर (सं॰ पु॰) १ साधनमुक्तावली नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता। २ सङ्गीत तालविशेष।

कवी (सं॰ स्त्री॰) कवि-ङीप्। खलीन, लगाम।

कवीठ (हिं॰ पु॰) कपित्थ, कैथा।

कवीन्द्र आचार्य (सरस्वती) कविचन्द्रोदय और पदचन्द्रिका नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

कवीन्द्रनारायण (शर्मा) एकाक्षरचन्द्रिका और विरजामाहात्म्य नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। इन्होंने उक्त दोनों ग्रन्थ उत्कलराज प्रतापकेशरीके समयमें बनाये थे।

कवीय (सं॰ क्ली॰) कवि स्वार्थे छ। खलीन, लगाम।

कवीयत् (सं॰ त्रि॰) कविरिव आचरति, कविं स्तोतारं इच्छति वा, कवीय-शतृ। १ कविसदृश, शायरके बराबर। २ अपनी प्रशंसा इच्छुक, जो अपनी तारीफ चाहता हो।

कवीयान् (सं॰ त्रि॰) अयमनयोरतिशयेन कविः, कवि-ईयसुन्। द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ। पा ५।३।५७। उभय कवियोंमें श्रेष्ठ, दोनों शायरोंमें बड़ा।

कवुस, ज्योतिषका एक योग।

कवेरा (हिं॰ पु॰) ग्रामीण, देहाती, गंवार।

कवेल (सं॰ क्ली॰) कं जलं विलति स्तृणाति, क-विल-अण्। १ उत्पल, नीला कमल।

कवेला (हिं॰ पु॰) भ्रमणका कीलक, चक्रकी कील। यह दिग्दर्शनयन्त्र (कुतुबनुमा) की सूई लगाती है। २ काकशावक, कौवेका बच्चा।

कवोड़वक, कवाटवक देखो।

कवोष्ण (सं॰ क्ली॰) कुत्सितं ईषत् उष्णम्, कर्मधा॰ कोः कवादेशः। ईषत् उष्णस्पर्श, थोड़ी गर्मी। (त्रि॰) २ ईषत् उष्णस्पर्शयुक्त, कुछ गर्म।

"मत्परं दुर्लभं मत्वा नूनमावर्जितं मया।
पयः पूर्वैः स्वनिःश्वासैः कवोष्णमुपभुज्यते॥" (रघु १।६७)

कव्य (वै॰ त्रि॰) कवि यत्। ([illegible] काशिका ५।१।१०) १ स्तवकारी, तारीफ करनेवाला। (सायण) (पु॰) २ वेदोक्त पितृलोक विशेष।

"मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिः।" (ऋक्संहिता १०।१४।३)

३ चतुर्थ मन्वन्तरके सप्तर्षियोंमें एक ऋषि।

(क्ली॰) कूयते दीयते पितृभ्यः यत् अन्नादिकम्, कु-अच्-यत्। अचो यत्। पा ३।१।९७। पितृलोक विशेषके उद्देश्यसे दिया जानेवाला अन्न।

कव्य पदार्थ श्रोत्रिय ब्राह्मणको दान न करनेसे निष्फल हो जाता है। मनुसंहितामें लिखते हैं कि विद्वान् ब्राह्मणको कव्य खिलानेसे अनेक पुष्कल फल मिलते हैं। किन्तु अमन्त्रज्ञ बहु ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे भी वह लाभ नहीं मिलता। दूसरे-अमन्त्रज्ञ ब्राह्मण जितने ग्रास लेता, पितृलोकके मुखमें उतने ही उत्तप्त लोहेके गोले छोड़ देता है। अतएव प्रथम ही परीक्षाके साथ ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मणको कव्य भोजन कराना चाहिये। वेदतत्त्वविद ब्राह्मणोंमें ज्ञाननिष्ठ, तपोनिष्ठ, तपःस्वाध्यायनिष्ठ और कर्मनिष्ठ भेदसे चार श्रेणियां होती हैं। हव्यके भोजनमें चारो श्रेणियोंका विधान है। किन्तु कव्यके भोजनमें एक मात्र ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मणको ही अधिकार है।

"ज्ञाननिष्ठाः द्विजाः केचित् तपोनिष्ठास्तथापरे।
तपःस्वाध्यायनिष्ठाश्च कर्मनिष्ठास्तथापरे॥

जातियोंके संसर्गसे कंसवणिक (कसेरे)से निम्न लिखित जातियां निकली हैं,—

"शङ्खिकात् कांसिकन्यायां मणिकारश्च जायते।
कांस्यकाराश्च माणिक्यां सुवर्णकौशिको भवेत्॥
मणियुक्तां कांस्यकारात् गोपालश्च च सम्भवः।
गोपालात् कांस्युवयां तैलिकाश्च निरूपतः॥" (जातिमाला)

शङ्खवणिक्के औरस एवं कंसवणिककी कन्याके गर्भसे मणिकार, कांसवणिकके औरस तथा मणिकारकी कन्याके गर्भसे सुवर्णवणिक, सुवर्णवणिककी कन्याके गर्भ एवं कांस्यकारके औरससे गोपाल और गोपालके औरस तथा कंसवणिककी कन्याके गर्भसे तैली तंबोली हुये हैं।

किन्तु कसेरे अपनेको प्रकृत वैश्यजाति बतलाते हैं। वास्तविक शिल्पियों और वणिकोंमें इनका सम्मान कुछ कम नहीं। यह यज्ञोपवीत व्यवहार करते हैं। उपाधिके भेदसे कसेरोंमें सात शाखायें हैं,—१ पुरविहा, २ पछैहां, ३ गोरखपुरी, ४ लड़, ५ तांवरा, ६ भरिहा और ७ गोलर।

उक्त शाखाओंमें परस्पर आदान प्रदान और आहार व्यवहार प्रचलित नहीं। मिर्जापुरमें कसेरे अधिक देख पड़ते हैं। वहां यह कांसेके पात्र प्रभृति प्रस्तुत कर दूर देशान्तरको बिकनेके लिये भेजते हैं।

विहार अञ्चलके कसेरे हिन्दुस्थानी कसेरोंकी भांति पदमर्यादा पा न सकते भी ठठेरे वगैरह दूसरे वणियोंसे कुल और गोत्रमें श्रेष्ठ हैं। ठठेरे इन्होंके बनाये द्रव्य पर खोदायी करते हैं। ठठेरा देखो।

विहारके कसेरोंमें अनेक गोत्र चलते हैं,—अमोधिया, असैया, औरङ्गी, औधरा, हरिहरना, ककड़-महोलिया, मलुआ, महोलिया, मोहरिया, सुकरिया और सुघट। यह अपने गोत्रमें विवाह कर नहीं सकते। फिर कन्याका विवाह बाल्यकालमें ही करना पड़ता है। कभी कभी कन्याका वयस कुछ अधिक हो जाता और ऋतुमती बनने पीछे उसे पतिका मुख देखाता है। स्त्री रुग्ना, मृतवत्सा, मूढ़गर्भा अथवा वन्ध्या होने पर पुरुष स्वतन्त्र पत्नीको वरण कर सकता है। विधवायें मनमें आनेसे 'सगाई' प्रथाके अनुसार अपना विवाह गभीर रात्रिको अन्धकार गृहमें होता है। उसमें केवल विधवायें ही जातीं, सधवायें अपवित्र समझ देखने नहीं पातीं। पुरुष सिन्दूर चढ़ा विधवाको अपने अञ्चलमें ग्रहण करता है। भोज, आमोद प्रमोद और शास्त्रके धर्मकर्मका अभाव रहता है। समाजमें इन्हें सत्शूद्र कहते हैं। ब्राह्मण इनके हाथका पानी पी सकते हैं।

वङ्गदेशके कसेरोंमें पद, घर और गोत्र प्रचलित हैं,—पद—कुण्ड, प्रमाणिक, दास, दां, पाल, नन्दन, दे इत्यादि। घर—सप्तग्रामी, मुरशिदाबादी, मौता, मेती।

गोत्र—शङ्ख ऋषि, शाण्डिल्य, सप्तर्षि, ऋषिकेश, दधि ऋषि।

विवाहादि कार्यपर इन्हें विषम दायमें गिरना पड़ता है। सब घरोंको निमन्त्रण देना आवश्यक है। भोजका बड़ा आयोजन होता है। इसीसे गरीब कसेरे एक ही साथ ७।८ कन्याओंका विवाह कर डालते हैं। बङ्गाली कसेरोंमें विधवाविवाह नहीं चलता। और भाद्रमासके ३० वें दिन विश्वकर्माकी पूजा होती है। उस दिवसको कोयी कसेरा यन्त्रादि नहीं छूता।

बम्बईके कसेरे अपनेको कालिंजरी संयोग क्षत्रिय सेनापतिके औरस और क्षत्रियाणीके गर्भसे उत्पन्न बताते हैं। शूद्रोंकी अपेक्षा यह कुल, शील और मानमें बहुत श्रेष्ठ हैं।

कसैलापन (हिं॰ पु॰) कषायरस, बाकपन।

कसैली (हिं॰ स्त्री॰) पूगफल, सुपारी।

कसोरा (हिं॰ पु॰) कटोरा, प्याला।

कसौंजा (हिं॰ पु॰) कासमर्द भेद, एक पौदा। यह वर्षा ऋतुमें उपजता और तीन चार हाथ ऊंचे उठता है। पत्रक एक सुषिर (सींके)में परस्पर सम्मुखीन आते और प्रशस्त तथा तीक्ष्णाग्र देखाते हैं। शीतकाल इसके फूलनेका समय है। फल छह-सात अङ्गुलि दीर्घ एवं समान होते हैं। बीज एक दिक् तीक्ष्णाग्र रहते हैं। साधारणतः कसौंजा सतत हरित् रूप है। पत्र और पुष्प रक्ताभ होते हैं। यह कटु, उष्ण और रूक्ष, वात तथा कास नाशक है। लोग इसका साग भी बनाते

आनयिष्ठे तु कव्यानि प्रतिष्ठाप्यानि यत्नतः।
कव्यानि तु यथान्यायं सर्वं श्रेव चतुर्थ्वपि॥" (मनु ३ अ०)

ऐसे ब्राह्मणका अभाव होनेसे मातामह, मातुल, भागिनेय, श्वशुर, गुरु, दौहित्र, जामाता, बन्धु पुरोहित या यजमानको कव्य दे देना चाहिये। मनुके मतसे वेदज्ञ रहते भी निम्नोक्त ब्राह्मणको कव्य खिलाना निषिद्ध है,—चिकित्सक, देवल, कन्याविक्रेता, दुकानदार, चौर्यादि दोषोंसे पतित, क्लीव, नास्तिक, जटाधारी, दुर्बल, प्रतारक, राजाके प्रेष्य, कुनखु, श्यावदन्त, गुरुके प्रतिरोधी, अग्नित्यागी, राजयक्ष्मी, पशुपालक, ज्यष्ठसे अभिनेता, शूद्राणीपति, विधवाके गर्भजात, काने, वेतन ग्रहणपूर्वक अध्यापना करनेवाले, शूद्रके शिष्य, दुष्टवादी, माता पिता एवं गुरुके अकारणपरित्यागी, गृहदाहक, विषदाता, कुण्डाशभोजी, सोमविक्रेता, समुद्रयात्री, अविवाहित, अग्रजके वर्तमान रहते विवाहकारी, जारज, बन्दी, तैलिक, कुटकारक, पितासे विवादकारी, मद्यप, पापरोगी, दाम्भिक, रसविक्रेता, धनु तथा शरनिर्माता, दिधिषूपति, मित्रद्रोही, द्यूतवृत्ति, पुत्राचार्य, अपस्माररोगी, गण्डमालारोगी, श्वित्ररोगी, खल, उन्मत्त, अन्ध, वेदनिन्दक, ज्योतिषी, व्यवसायी, पक्षिपोषक, युद्धशास्त्रके आचार्य, स्थपति, दूत, वृक्षारोपक, कुक्कुरके क्रीड़ाशील, श्येनपक्षिजीवी, कन्यादूषक, हिंस्र, शूद्रवृत्ति, गणयागकारी, आचारहीन, कृषिजीवी, श्लीपदरोगी, और सज्जननिन्दित।

कव्यता (वै० स्त्री०) १ स्तुति, तारीफ। २ ज्ञान, समझ।

कव्यवाड़, कव्यवाल देखो।

कव्यवाल (सं० पु०) कव्यं वल्यते दीयते अस्मै, कव्य-वल-घञ्। १ पितृगणविशेष।

"कव्यवाडो ऽनलः सोमो यमश्चैवार्यमा तथा।
अग्निष्वात्ता बर्हिषदः सोमपाः पितृदेवताः॥" (ब्रह्माण्डपुराण)

२ अग्नि, आग। अग्निमुखमें ही पितृगणके उद्देशसे दान किया जाता है।

कव्यवाह् (सं० पु०) कव्यं वहति, कव्य-वह-ण्वि। अग्नि, आग। इसमें पितृगणके उद्देशसे कव्य डाला जाता है।

कव्यवाह (सं० पु०) कव्यं वहति प्रापयति पितृनिति शेषः, कव्य वह-अण्। अग्नि, पितरोंको कव्य पहुंचानेवाली आग।

कव्यवाहन (वै० पु०) कव्यं वहति, कव्य-वह-ञ्युट्। कव्यपुरीषपुरीष्येषु ञ्युट्। पा ३। २। ६५। १ अग्नि, पितरोंको कव्य पहुंचानेवाली आग।

"अग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा।" (शुक्ल यजुः २। २९)

यजुर्वेदके मतमें अग्नि तीन प्रकारका होता है,—हव्यवाहन, कव्यवाहन और सहरक्षा। देवगणका हव्यवाहन, पितृगणका कव्यवाहन और असुरगणका अग्नि सहरक्षा कहाता है। (तैत्तिरीयसंहिता २। ५। ८। ६)

कश (सं० पु०) कशति शब्दायते ताड़यति वा, कश-अच्। १ अश्वादिताड़िनी, चाबुक, कोड़ा। यह चर्म, वस्त्र, वेत्र प्रभृति द्वारा प्रस्तुत होता है।

"स राजा तं कशेन अताडयत्।" (महाभारत ३।१८८ अ:)

२ क्षुद्र पशु विशेष, एक छोटा जानवर।

कश (फा० स्त्री०) १ आकर्षण, खींच। २ दम, फूंक।

कशक्कु (सं० पु०) गवेधुक, कसी, एक पौदा।

कशकोल (फा० पु०) कपाल, खप्पर। इसे भिक्षुक अपने हाथमें रखते हैं।

कशमकश (फा० स्त्री०) १ आकर्षण, खींचखांच। २ समारोह, रेलपेल। ३ असमञ्जस, आगा पीछा।

कशस् (सं० क्ली०) कशति नीचं गच्छति, कश-असुन्। जल, नीचे रहनेवाला पानी।

कशा (सं० स्त्री०) कश टाप्। १ अश्वादिताड़िनी, चाबुक, कोड़ा। "जघान कशया क्रोधात् तथा राजहनुमिम्।" (भारत १।१००।१०) २ मांसरोहिणी, एक खुशबूदार पेड़। ३ रज्जु, रस्सी।

कशाई—१ नदी विशेष, एक दरया। यह बङ्गालके मेदिनीपुर जिलेमें प्रवाहित है। पढ़े लिखे लोग इसे कंशवती कहते हैं। किन्तु कालिदासने अपने रघुवंशमें कपिशानदीके नामसे इसका परिचय दिया है।

कशाईफुलिया—पश्चिम बङ्गालकी एक बागदी जाति। यह कसाई नदीमें नौका चलाते और मत्स्य मार लाते हैं। चौदह प्रकारके बागदियोंमें कशाईफुलिया अपनेको श्रेष्ठ बताते हैं।

है। रक्तवर्ण कसौंजीके पत्र और बीज चर्मरोगमें औषधकी भांति व्यवहृत होते हैं।

कसौंजी (हिं॰ स्त्री॰) कसौंजा देखो।

कसौंदा, कसौंजा देखो।

कसौंदी (हिं॰ स्त्री॰) कसौंजा देखो।

कसौटी (हिं॰ स्त्री॰) स्वर्णमणि, चांदीसोना कसनेका पत्थर। यह काली होती है। शालग्राम कसौटीके बनते हैं। लोग इसके खरल भी तैयार करते हैं। २ परीक्षा, जांच।

कसौली—पञ्जाबके शिमला जिलेका एक सैन्यवास (छावनी) और निरामय स्थान। यह एक पर्वतके शिखर (अक्षा॰ ३०° ५३´ १३″ उ॰ तथा देशा॰ ७६°०´ ५२″ पू॰)पर अवस्थित है। कालिकाकी उपत्यका नीचे देख पड़ती है। कसौली अम्बालेसे ४५ मील उत्तर और शिमलेसे १२ मील दक्षिण-पश्चिम लगती है। १८४४-४५ ई॰को देशीय राज्य बीजासे भूमि ले यहां छावनी डाली गयी थी। उस समयसे बराबर कसौलीमें अंगरेज सिपाही रहते हैं। पर्वत समुद्रतलसे ६३२२ फीट ऊंचा है। इससे दक्षिणपश्चिम समभूमि और उत्तर हिमालयका दृश्य अत्यन्त मनोहर लगता है। यहां कुक्कुट और शृगाल आदिके विषकी चिकित्सा होती है।

कस्कादि (सं॰पु॰) पाणिनि व्याकरणोक्त गण विशेष। इसमें विसर्गस्थानपर नित्य 'स' होता है। कस्कादिके मध्य यह हैं,—कस्क, कौतस्कुत, भ्रातुष्पुत्र, शुनस्कर्ण, सद्यस्काल, सद्यस्की, साद्यस्क, कांस्कान्, सर्पिष्कुण्डिका, धनुष्कपाल, बर्हिष्पल, यजुष्पात्र, अयस्कान्त, तमस्काण्ड, अयस्काण्ड, मेदस्पिण्ड, भास्कर, अहस्कर और आकृतिगण। (पा॰ ८।३।४८)

कस्तम्भी (सं॰ स्त्री॰) कं शिरोऽग्रभागं स्तभ्नाति, क-स्तन्भ-अण्-ङीप्। शकटका अधः पतन रोकनेकी एक अवष्टम्भ, गाड़ीके बांसकी थूनी।

कस्तरी (हिं॰ स्त्री॰) दुग्धपात्रभेद, एक बरतन। इसमें दूध पकाकर रखा जाता है। मुख विस्तृत रहता है। फारसीमें इसे 'कसा' और साधारण हिन्दीमें 'दूधहंडी' कहते हैं।

कस्तीर (सं॰ क्ली॰) पिच्चट, रांगा। इसका संस्कृत पर्याय—पुत्रपिच्चट, मृदङ्ग, वङ्ग, रङ्ग, त्रपुः, स्वर्णज, नागजीवन, गुरुपत्र, चक्र, तमर, नागज, प्राचीनक और सिंहल है। रङ्ग देखो।

कस्तीर्ण (सं॰ क्ली॰) रङ्ग, रांगा।

कस्तुरिका (सं॰ त्रि॰) कस्तूरी स्वार्थे कन्-टाप् पृषोदरादित्वात् साधुः। कस्तूरिका मृग, एक हिरन। इसकी तोंदीसे कस्तूरी निकलती है। कस्तूरिकामृग देखो। २ कस्तूरी, मुश्क।

कस्तूरमल्लिका, कस्तूरीमल्लिका देखो।

कस्तूरा (हिं॰ पु॰) १ कस्तूरी, मुश्क। २ शम्बिभेद, एक घोंघा। यह लहरोंकी तलहटीमें पड़ता है। ३ शुक्तिभेद, एक सीप। इसमें मोती रहता है। ४ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह धूसरवर्ण होता है। पद तथा चञ्चुका वर्ण पीत लगता और उदर श्वेताभ रहता है। कस्तूरा पार्वत्य प्रदेशमें काश्मीरसे आसाम तक मिलता है। इसकी बोली सुननेमें अच्छी लगती है। ५ द्रव्य विशेष, एक चीज। इसे पोर्टब्लेयरके पर्वतोंकी शिलाओंसे खुरच-खुरच निकालते हैं। कस्तूरा अत्यन्त मूल्यवान् होता है। इसे दुग्धके साथ १ रत्ती सेवन करते हैं। लोग इसे अबाबील पक्षीके मुखका फेन समझते हैं।

कस्तूरिक (सं॰ पु॰) करवीर वृक्ष, कनेरका पेड़।

कस्तूरिका (सं॰ स्त्री॰) कस्तूरी स्वार्थे कन्-टाप् पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। कस्तूरी, मुश्क।

कस्तूरिकाकुल, कस्तूरीकाकुल देखो।

कस्तूरिकामृग (सं॰ पु॰) एक प्रकार हरिण, मुश्की हिरन। तलपेटके निकट नाभिमें कस्तूरी सञ्चित रहने और शरीरसे कस्तूरिका गन्ध निकलनेसे ही इसको कस्तूरिकामृग कहते हैं। संस्कृत पर्याय—कस्तूरीमृग, गन्धवाह और गन्धमृग है। भारतवर्षमें अति पूर्वकालसे यह मृग परिचित और समादृत है। प्राचीन शास्त्रकारोंने पांच प्रकारके मृग कहे हैं। कस्तूरिका मृग 'पार्थिवमृग'के अन्तर्गत है। *

*"हरिण्यप्रकृतिसमासे बीजविकाश प्रथमा।
निपण मे कमेदाय समता मदयादः॥"

ये गन्धिनः श्रीवपरीरक बांवते पार्दिवा गन्धमृगाः प्रदिष्टाः ॥"

(युक्तिकल्पतरु)

मृगजाति एक प्रकार नहीं। पार्थिवमृग, जलमृग वायुमृग, गगनमृग और तैजोमृग पांच भेद विद्यमान है। जिस मृगका शरीर एवं कर्ण श्वेत तथा गन्ध-विशिष्ट देखाता, वह पार्थिव गन्धमृग कहाता है। मृग देखो। इसी गन्धमृगका अपर नाम कस्तूरिकामृग है। कस्तूरिकामृग रोमन्थक (पागुर करनेवाले) चतुष्पद पशुवोंमें परिगणित हैं। यह साधारण हरिणोंकी भांति नहीं होता। दूसरे हरिणोंके बड़े बड़े सींग रहते हैं। किन्तु इसके वह देख नहीं पड़ते। फिर भी गति हावभाव बिलकुल हरिणोंकी ही भांति है। इसीसे यह विभिन्न जातीय हरिण कहाता है। हरिणोंकी भांति चक्षुके मूलमें इसके अश्रुछिद्र नहीं होते। इसकी छोड़ ऊपरी चौंड़से गालके दोनों पार्श्वोंमें इसके दो गजदन्त दो-तीन अङ्गुलि बाहर निकल आते हैं। लोमसमूह करनेसे चंवरपुच्छके बालकोंकी भांति कर्कश लगते हैं। कस्तूरी हीके लिये इसका इतना आदर है। कस्तूरी नामक सुगन्धि द्रव्य बहु दिनसे भारतवर्षमें प्रचलित है।

"कस्तूरिकामृगविमर्दे सुगन्धिरेति।" (माघ)

पहले भारतवर्षमें तीन जगह तीन प्रकारका कस्तूरिकामृग मिलता था। स्थानभेदसे कस्तूरीका भी तारतम्य रहा। काश्मीरपण्डित नरहरिके विरचित निघण्टुराज नामक ग्रन्थमें लिखा है,—

"कपिला पिङ्गला कृष्णा कस्तूरी त्रिविधा मता।
नेपालेऽपि काश्मीरे कामरूपेऽपि जायते ॥
कामरूपोद्भवा श्रेष्ठा नैपाली मध्यमा भवेत्।
काश्मीरदेशसम्भवा कस्तूरी अधमा स्मृता ॥"

नेपाल, काश्मीर तथा कामरूप तीन प्रदेशोंमें कपिला, पिङ्गला एवं कृष्ण तीन प्रकारकी कस्तूरी उत्पन्न होती है। कामरूपकी सर्वोत्कृष्ट एवं कृष्णवर्ण, नेपालकी मध्यम तथा नीलवर्ण और काश्मीरकी कस्तूरी अधम एवं कपिलवर्ण रहती है। उक्त प्रमाण द्वारा समझ पड़ता—पूर्वकालमें कामरूप, नेपाल और काश्मीरमें भिन्नप्रकारका कस्तूरीमृग रहता था। अधिक टीकाकार मल्लिनाथके मतमें हिमालय-प्रदेश ही इस जातीय मृगका प्रधान वासस्थान है,—

"मृगनाभिः कस्तूरी तद्गन्धि कम रीमगाधिष्ठानादिदम्"
तेन हिमालयेऽपि तम्मृगस्य सद्भावो द्योतित भवते।"

(कुमारसम्भवके ऊपर मल्लिनाथकृत टीका १।५४)

यह मृग ग्रीष्मकालमें समुद्रसे ८००० फीट ऊंचे स्थान पर साइबेरिया, मध्य एशिया एवं हिमालय प्रदेशमें टङ्किनमें और आसाममें देख पड़ता है। सकल स्थानोंकी अपेक्षा तिब्बत देशीय कस्तूरिकामृग अधिक आदरणीय है। इसे तिब्बतमें 'ला' एवं 'लव', काश्मीरमें 'रौस', कुनावरमें 'बैना', हिन्दुस्थानमें 'कस्तूरा', महाराष्ट्रमें 'पेगोरी' और ईरानमें 'मुश्क' कहते हैं। इसका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम मुष्कस् मस्चिफेरस (Moschus moschiferus) है।

यह ढाई फीटसे अधिक बड़ा नहीं होता। चर्म कृष्णवर्ण रहता है। बीच-बीच लाल और पीले दाग पड़ जाते हैं। गलदेश पीताभ लगता है। लेज (पुच्छ) कोई एक इञ्च दीर्घ देखाता है। स्त्रीपुरुष दोनोंके पुच्छ पर दो वत्सर पर्यन्त लोम और निम्न भागमें पश्म रहता है। बढ़नेपर पुरुषका लोम या पश्म उड़ जाता है। वयःप्राप्त पुरुषके केवल नाभिसे ही कस्तूरी निकलती है।



कस्तूरिका मृग।

यह अति भीरु, निरीह, भालुक और निर्जनप्रिय है। निविड़ अरण्य और मानवके अगम्य उपत्यका प्रदेशमें इसके विचरणकी भूमि रहती है। शिकारी बड़े कष्टसे धर पकड़ कर सकते हैं। किसी प्रकार

है। इससे बहुधा पक्षी मर जाते हैं। परन्तु पक्षियोंका कांटा निकाल डालते हैं। ४ मुखरोगविशेष, मुंहकी एक बीमारी। इससे मुखमें तीक्ष्णाग्र और पिड़कायें पड़ जाती हैं। ५ लौहकीलक, लोहेकी कील। ६ कंटिया, मछली मारनेकी कील। गोला आटा लपेट इसको पानीमें डाल देते हैं। छोकेसे खा जाने पर यह मछलीके मुखमें अटकता और निकाले नहीं निकलता। फिर शिकारी कांटेसे लगी मोटे डोरेकी बन्सीके सहारे खींच मछलीको ऊपर खींच लेता है। ७ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह लोहेकी झुकी हुयी कीलोंका एक गुच्छा है। इससे कुयेंमें गिरे लोटे, गगरे वग़ैरह निकाले जाते हैं। ८ तीक्ष्णाग्र वस्तुमात्र, कोई नुकीली चीज़। ९ ग्रन्थनयन्त्र विशेष, गूंथनेका एक औज़ार। यह लोहेकी एक टेढ़ी कील है। पटवे इसमें धागा डाल गूंथनेका काम चलाते हैं। १० लौहसूचीभेद, लोहेकी एक सुयी। यह तुलादण्डके पृष्ठदेशपर लगती है। इससे तराज़ूके दोनों पलड़ोंकी बराबरी मालूम होती है। ११ लौह तुलाभेद, लोहेकी एक तराज़ू। इसकी डांड़ीमें कांटा लगा रहता है। १२ नासालङ्कारविशेष, लौंग, कील, नाकका एक ज़ेवर। १३ खाद्य सम्बन्धीय यन्त्रविशेष, खानेका एक औज़ार, इससे उठा उठा अंगरेज़ रोटी वग़ैरह खाते हैं। १४ काष्ठयन्त्रविशेष, बैसाखी, पांचा। इससे कृषक तृणादि बटोरते हैं। १५ सूचिविशेष, सूजा। १६ घटिका सूचि, घड़ीकी सुयी। १७ गणितमें गुणनफलकी यथार्थपरीक्षा, ज़रबकी जांच। इसमें दो रेखायें आरपार बनायी जाती हैं। फिर गुण्यके अङ्क एकत्र संयुक्त कर ९से भाग लगाते हैं। शेष अङ्क एक रेखाकी किसी सीमापर रखते हैं। इसी प्रकार गुणकके भी अङ्क जोड़ और नौसे तोड़कर शेष अङ्क रेखाके दूसरे प्रान्त पर रखा जाता है। यह संयुक्तीन उभय अङ्क गुणन और ९से विभागकर शेष अङ्कको दूसरी रेखाके एक अवसान पर लगाते हैं। फिर गुणनफलके अङ्क जोड़ने और ९से तोड़ने पर यदि शेष अङ्क पूर्वोक्त अङ्कसे मिल जाता, तो गुणनफल शुद्ध समझा जाता है। १८ गणितसम्बन्धीय यथार्थ परीक्षाकी क्रिया, हिसाब जांचनेकी तरकीब। १९ मल्लयुद्धविशेष, किसी क़िस्मकी कुश्ती। इसमें पहलवान् भिड़कर नहीं लड़ते, दूर होते काट छांट करते हैं। २० अनुर्वरा भूमिविशेष, एक ऊसर। यह यमुना किनारे मिलता है। कांटेमें कोयी चीज़ उत्पन्न नहीं होती। २१ किसी क़िस्मका बेलबूटा। यह दरीमें नोकदार निकाला जाता है। २२ अग्निक्रीड़ाविशेष, एक आतशबाज़ी। २३ मछलीका कांटा। २४ दुःखदायी पुरुष, तकलीफ़ देनेवाला आदमी।

कांटादार (हिं० वि०) कण्टकान्वित, कंटीला।

कांटी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र कीलक, छोटी कील। २ क्षुद्रतुलाभेद, एक छोटी तराज़। इसके दण्डपर सूचि लगती है। स्वर्णकारादि कांटीसे काम लेते हैं। ३ कंटिया, अंकुड़ी। ४ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह किनारे पर लोहेकी अंकुड़ी लगी एक लकड़ी है। इससे सर्प पकड़े जाते हैं। ५ बेड़ी, क़ैदियोंके पैरमें डाले जानेवाले लोहेके कड़े। ६ किसी क़िस्मकी घसी। यह झुकि जाने पीछे बिनौलोंमें लिपटी रहती है। २ बालकोंकी एक क्रीड़ा, लट्टू लगानेका खेल।

कांटेदार, कांटादार देखो।

कांठा (हिं० पु०) १ कण्ठ, गला। २ चिह्न विशेष, एक निशान। यह शुकपक्षीके गलप्रान्त पर मण्डलाकार पड़ जाता है। ३ उपकण्ठ, किनारा। ४ पार्श्व, बग़ल। ५ काष्ठदण्डविशेष, एक लकड़ी। यह एक बित्ते लम्बी और पतली होती है। इस पर तन्तुवाय धागा बुननेको रेशम चढ़ाते हैं। बादलेका ताना कांठेसे ही बुना जाता है।

कांड़ना (हिं०क्रि०) १ खण्डन करना, रौंद डालना। २ कूटना, कुटना। ३ मारना-पीटना, लतियाना।

कांडनी (हिं० स्त्री०) खण्ड, कुलफा, लोनी।

कांड़ा (हिं० पु०) १ कृषरोग विशेष, पेड़ोंकी एक बीमारी। इससे वृक्षोंके काष्ठमें कीटादि लग जाते हैं। २ काष्ठकीट, लकड़ीका कीड़ा। ३ दन्तकीट, दांतोंमें लगनेवाला कीड़ा।

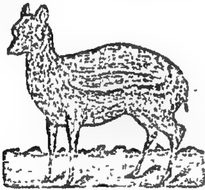
कांड़ी (हिं० स्त्री०) १ उदूखलगर्त, ओखलीका गड्ढा। इसमें डालकर मूसलसे अन्न कूटा जाता है। २ निम्नभू

पकड़ सकते; यह इसका नाभि काट लेते और अधिक मूल्य पर व्यवसायियोंके हाथ बेच देते हैं।

कस्तूरिकामृगका नाभि (musk-bag) कबूतरके छोटे अण्डेकी भांति होता है। आकार मुक्तकसे मिलता है। प्रसिद्ध भ्रमणकारी टाभार्णियारने ७६७१ नाभि संग्रह किये थे।

यह पर्वतजात सामान्य तृण खा जीवन धारण करता है। चारो पैर अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। दूरसे लङ्गादिका भेद समझ नहीं पड़ता। इसीसे लोग कहते, कि कस्तूरिकामृगके घंटने नहीं रहते।

भारत महासागरीय द्वीपोंमें इसकी भांति दूसरे भी कितने ही क्षुद्र पशु हैं। किन्तु उनके नाभिसे कस्तूरी नहीं निकलती। सुमात्रा तथा यवद्वीपमें उक्त क्षुद्र अर्धहस्तपरिमित हिरणको कहीं 'केमोटन' और कहीं 'नेपू' कहते हैं। अंगरेजी वैज्ञानिक नाम ट्रागुलस् जवनिकस् (Tragulas Javanicus) है।



कस्तूरी मृगसदृश हरिण।

यह यवद्वीप-वासियोंको अत्यन्त प्रिय लगता और पालनेसे बहुत हिलता है।

कस्तूरी (सं० स्त्री०) कसति गन्धो ऽस्याः, कस-उर-तुट्-ङीप् पृषोदरादित्वात् साधुः। सुगन्धि द्रव्यविशेष, मुश्क, एक खुशबूदार चीज़। कस्तूरिका मृग देखो। इसका संस्कृत पर्याय—मृगनाभि, मृगमद, मृग, मृगी, नाभि, मद, वातामोद, योजनगन्धिका, मदनी, गन्धकेलिका, वेधमुख्या, मार्जारी, सुभगा, बहुगन्धदा, सहस्रवेधी, श्यामा, कामान्धा, मृगाण्डजा, कुरङ्गनाभि, ललिता, श्याममता, मोदिनी, कस्तूरिका, कस्तुरिका, नाभी, लता, योजनगन्धा, मार्ग, गन्धबोधिका, काण्डाङ्गी, धूपसंचारी, मिश्रा और गन्धपिशाचिका है। कस्तूरी-मृगके नाभि (एक छोटी थैलीके आकारमें) रहता है। उसीमें कस्तूरी उत्पन्न होती है। इसीसे लोग इसे मृगनाभि (नाफा) कहते हैं। अरबी और फारसी मुश्क, बंगला, तामिल तथा तैलगु कस्तुर, यव एवं मलय-में दिदेश, सिंहली सत्ता, ब्रह्मी दो, चीना मिहियङ्ग, रूसी मुस्कस, इटालीय मुसचियो, जर्मन बिसम्, पोर्तगीज़ अल मिस्कार, पोलन्दाज मस्क, डेनमार्की दिसमेर, फरासीसी मस्क और अंगरेजी नाम मास्क हैं। मृगनाभि कुछ उष्ण होती है। आस्वाद कटु लगता है। मुखमें कस्तूरी डालनेसे विपुल सद्गन्ध निकलता है।

प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें भूरि भूरि प्रमाण मिलता कि भारतवर्षमें बहु पूर्वकालसे मृगनाभिका आदर है। प्राचीन वैद्यक मतसे कामरूप, नेपाल और काश्मीर तीन देशोंमें कस्तूरी उत्पन्न होती है। कामरूपकी कस्तूरी सर्वोत्कृष्ट और कृष्णवर्ण रहती है। फिर नेपालकी मध्यम एवं नीलवर्ण और काश्मीरकी कस्तूरी अधम तथा कपिलवर्ण ठहरती है। यह पांच श्रेणियोंमें विभक्त है—खरिका, तिलका, कुलत्था, पिण्डा और नायिका। (भावप्रकाश) राजवल्लभके मतसे कस्तूरी सुगन्धि, तिक्त, चक्षुके लिये हितकर, और मुखरोग, किलास, कफ, दौर्गन्ध्य, वन्ध्यदोष, अलक्ष्मी, मल, रक्तपित्त तथा छर्दिनाशक है। दूसरे भावप्रकाशमें इसे कटु, क्षार, उष्ण, शुक्रजनक, गुरु और शीत तथा शोषनाशक भी कहा है।

पहले युरोपके लोग कस्तूरीका विषय समझते न थे। ई० ८म शताब्दको अरबी इसे युरोप ले गये। अरबी और ईरानी कस्तूरीको मुश्क कहते हैं। इसी 'मुश्क'से लाटिन मुस्कस (Muschus) और अंगरेजी मास्क (Musk) शब्द निकला है।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे यह उत्तेजक और आक्षेपजनक है। श्वासकास (१०से १५ ग्रेन), कास (१ ग्रेन दिनको ३।४ बार), मृगीरोग, ताण्डवरोग, धनुष्टङ्कार, स्त्रियोंके प्रसवकालीन आक्षेप, हिष्टिरिया, मोहकर एवं तान्त्रिक ज्वर (Pneumonia), फुसफुसके प्रदाह (२४-३० ग्रेन) और वातरोगमें कस्तूरी विशेष

गड़ा हुआ काठ या प्रस्तरखण्ड, ज़मीनमें गड़ा हुआ लकड़ी या पत्थरका टुकड़ा। इसमें पशु फूटनेको मर्म रहता है। ३ हस्तिरोगविशेष, हाथीकी एक बीमारी। इससे पैरके तलवेमें एक बड़ा व्रण पड़ जाता और हाथी चलने फिरनेमें बड़ा कष्ट पाता है। व्रणमें क्षुद्र क्षुद्र कृमि होते हैं। ४ काष्ठदण्डभेद, लकड़ीका डण्डा। इससे गुरुभार द्रव्योंको चढ़ाते, उतारते और हटाते हैं। ५ समुद्रकी डांड़ी। यह मुड़े हुये अंकुड़ों पर रहती है। ६ वंश या काष्ठखण्ड विशेष, बांस या लकड़ीका एक लट्ठा। यह पतला तथा सीधा रहता और मकानके छप्परोंमें लगता है। इससे दूसरे काम भी निकलते हैं। ४ काण्ड, लट्ठा। ५ रहठा, अरहरकी सूखी लकड़ी। ६ दियासलाई। ७ मत्स्यसमूह, मछलियोंकी टोली।

कांयरि (हिं०) कायर देखो।

कांदना (हिं० क्रि०) रोदन करना, चीख़ मारना, फूट फूट रोना।

कांदव (हिं० पु०) कर्दम, कीचड़।

कांदा (हिं० पु०) १ कन्दली, एक पौधा। यह प्याजकी भांति ग्रन्थिविशिष्ट होता है। पत्रक प्याजसे कुछ प्रशस्त रहते हैं। कांदा सरोवरोंके निकट उपजता है। वर्षाका जल मिलनेसे पत्र निकलते हैं। पुष्प श्वेतवर्ण रहते हैं। उन पर रक्तवर्ण पांच छह खड़ी रेखायें पड़ जाती हैं। रेखाओंके मध्य भागपर अर्ध-चन्द्राकार पीतवर्ण चिह्न होते हैं। कांदेके इलेसे माड़ी बनती है। इसका अपर नाम कंदरी या कंदली है। २ प्याज।

कांदू (हिं० पु०) कंदोयी, बनियोंकी एक जाति। यह हलवाईका काम करते हैं।

कांदो, कांदव देखो।

कांध (हिं० पु०) १ स्कन्ध, कन्धा। २ कोल्हूका एक हिस्सा। यह पतला रहता और आठमें मुण्डीके ऊपर पड़ता है।

कांधना (हिं० क्रि०) १ कन्धे या सिर पर रखना, उठाना। २ माथना, मचाना। ३ स्वीकार करना, मानना। ४ भार सहन करना, बोझ उठाना।

कांधर (हिं० पु०) कृष्ण, कान्हा।

कांधा (हिं०पु०) १ स्कन्ध, कान्धा। २ कृष्ण, कान्हा।

कांधी (हिं० स्त्री०) स्कन्ध, कांध।

कांप (हिं० स्त्री०) १ तीली, पतली छड़। यह बांस या किसी दूसरी चीज़की रहती और लचानेसे झुक पड़ती है। २ कनकौवेकी पतली तीली। यह कमानकी तरह झुका कर कनकौवेके ऊपरी हिस्सेपर लगायी जाती है। कनकौवा कंपियानेसे इसमें कन्ना बंधता है। ३ शूकरका कांटा या दांत। ४ हस्तिदन्त, हाथीदांत। ५ कर्णालङ्कार विशेष, कानका एक जेवर, यह सादी और जड़ाऊ दो तरहकी होती है। कांप सोनेकी रहती और पत्तेके आकारमें बनती है। स्त्रियां एक साथ पांच-पांच सात-सात कांपें अपने कानोंमें डाल लेती हैं। यह धक्का लगनेसे हिल उठती है। ६ कास-फूल। ७ कलईका चूना। ८ कंपकंपी।

कांपना (हिं० क्रि०) कम्पित होना, थरथराना। २ भय करना, डरना।

कांपिल (हिं०) काम्पिल्य देखो।

कांयकांय (हिं०स्त्री०) काकका शब्द, कौवेकी बोली।

कांव कांव (पु०) कांय कांय देखो।

कांवर (हिं० स्त्री०) १ बहंगी, बांसका मोटा फट्टा। इसके दोनों किनारे द्रव्यादि रखनेको छींके लगा देते हैं। २ यात्रियोंके गङ्गाजल ले जानेका यन्त्र। यह एक डण्डा होता है। किनारों पर बांसकी दो टोक-रियां बांध दी जाती हैं।

कांवरा (हिं० वि०) उद्विग्न, घबराया हुआ।

कांवरि, कांवर देखो।

कांवरिया (हिं० पु०) कांवर ले जानेवाला।

कांवरु (हिं०पु०) १ कामरूप। कामरूप देखो। २ कमल रोग, एक बीमारी।

कांवाथी (हिं० पु०) एक तीर्थयात्री। यह अपनी कामनाके लिये कांवर ले तीर्थयात्रा करता है।

कांश (सं० पु०) कं से मदः, कंस बाहुलकात् इन, वेदे पृषोदरादित्वात् मस्य शत्वम्। कांस्य, कांसेका प्याला। कांसनील, कांसदीप देखो।

कांस (हिं०) काश देखो।

उपकारी है। बालकोंके आक्षेपरोगमें अधिक आक्षेप होनेसे १·५ ग्रेन कस्तूरी पिचकारीसे लगानेमें फल मिलता है।

आजकल तीन प्रकारकी कस्तूरी प्रचलित है— तिब्बती, रूसी और चीना। तिब्बती सर्वोत्कृष्ट, चीना मध्यम और रूसी अधम होती है। इस देशीय मृगकी कस्तूरी उत्कृष्ट नहीं रहती। व्यवसायी इस देशीय मृगके नाभिमें लगा देते हैं। इससे इस देशीय कस्तूरीका गन्ध बहुत कुछ बदल जाता है।

मृगनाभि अधिक मूल्यमें बिकती है। प्रत्येक नाभिका मूल्य १५) या १७) रु० है। इसीसे व्यवसायी मांस और रक्त मिला और कृत्रिम चर्म लेप लगा इसे बेचते हैं। किन्तु मृगनाभिकी परीक्षा बहुत सीधी है। कृत्रिम मृगनाभि अग्निमें डालनेसे दुर्गन्ध उठता है। किन्तु प्रकृत कस्तूरीमें यह बात नहीं होती है।

कस्तूरिया (हिं० पु०) १ कस्तूरिकामृग। (वि०) २ कस्तूरी मिश्रित, मुश्की। ३ कस्तूरी सदृश वर्ण विशिष्ट, जो मुश्क रंग रखता हो।

कस्तूरिक, कस्तूरिक देखो।

कस्तूरीकाण्डज (सं० पु०) मृगनाभि, मुश्क।

कस्तूरीतिलक (सं० क्ली०) कस्तूर्यास्तिलकम्, ६-तत्। कस्तूरीका तिलक, मुश्कका टीका।

"कस्तूरीतिलकं ललाटपटले" (बिल्वमङ्गल)

कस्तूरीभैरवरस (सं० पु०) रसविशेष, एक कुश्ता। हिङ्गुल, विष, टङ्क (सोहागा), जातीकोषफल (जायफल), मरिच, पिप्पली और कस्तूरी बराबर बराबर जलमें घोटनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। मात्राका परिमाण २ रत्ती है। इसके सेवनसे शीताङ्ग सन्निपात दूर होता है। (भैषज्यरत्नावली) बृहत् कस्तूरीभैरवरस बनानेका विधि यह है—कस्तूरी, कर्पूर, ताम्र, धातकी, शूकशिम्बी, रौप्य, स्वर्ण, मुक्ता, प्रवाल, लौह, पाठा, विड़ङ्ग, मुस्तक, शुण्ठी, बाला, हरिताल, अभ्र और आमलकी समभाग अर्कपत्रके रसमें घोटनेसे यह रस प्रस्तुत होता है। इसे १ रत्ती आर्द्रकके रसमें सेवन करनेसे विषमज्वर छूटता है। (रसरत्नाकर)

कस्तूरीमल्लिका (सं० स्त्री०) कस्तूरी गन्धयुक्ता मल्लिका मध्यपदलो०। १ मृगनाभि, हिरनका नाफा। २ मल्लिका-पुष्पभेद, किसी किस्मकी चमेली। यह मृगमदवासा होती है। कस्तूरीमल्लिका दो प्रकारकी मिलती है— एक लता सदृश और दूसरी एरण्डवृक्षके समान। दोनोंमें फलफूल आते हैं। पुष्प और फलके बीजमें मदगन्ध रहता है। केश मलनेके मसालेमें इसका बीज डाला जाता है।

कस्तूरीमृग, कस्तूरिकामृग देखो।

कस्तूरीमोदक (सं० पु०) मोदकभेद, किसी किस्मका लड्डू। कस्तूरी, प्रियङ्गु, कण्टकारी, दोनो जीरक, त्रिफला, पक्वकदलीफल, खर्जूर, लप्पातिलक तथा कोकिलाक्षका बीज समभाग और सबके बराबर शर्करा डाल सद्वैद्य इस चूर्णको मन्द मन्द अग्निसे धात्रीरस, दुग्ध एवं कुष्माण्डरसमें पाक करे। मोदक अक्षपरिमित बनता है। इस मोदकको खानेसे प्रमेह रोग आरोग्य होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कस्तूरीवल्लिका (सं० स्त्री०) कस्तूरीगन्धयुक्ता वल्लिका, मध्यपदलो०। लताकस्तूरी, एक खुशबूदार बेल। भावप्रकाशके मतसे यह मधुर एवं तिक्त रस, शीतल, लघु, चक्षुके लिये हितकर, भेदक और तृष्णा, वस्तिरोग, मुखरोग तथा श्लेष्मनाशक होती है।

कस्तूरीहरिण, कस्तूरिकामृग देखो।

क़स्द (अ० पु०) प्रतिज्ञा, सङ्कल्प, इरादा।

कस्मल (सं० क्ली०) कश-कल मुट्, निपातनात् शस्य सत्वम्। १ मूर्च्छा, घबराहट। २ मोह, भ्रम।

कस्मात् (सं० अव्य०) किस कारणसे, किसलिये, क्यों।

कस्य (हिं० स्त्री०) सुरा, शराब।

कस्वर (सं० त्रि०) कस्-वरच्। १ गमनशील, चलता हुआ चालू। २ हिंसक, खूंखार।

कस्सी (हिं० स्त्री०) आकर्षण, खींचतान। यह शब्द लङ्गर खींचने या तानेके अर्थमें आता है।

कस्सा (हिं० पु०) बबूरवल्कल, बबूलकी छाल। इसमें रंगनेके लिये चमड़ा भिगोया जाता है। २ मद्यभेद, सुरा, एक शराब। यह बबूरकी छालसे प्रस्तुत होता है।

कस्साचना (हिं० स्त्री०) दुधिया मटर, लोबिया।

कस्साब (अ० पु०) गोघातक, कसाई।

कांस (सं० त्रि०) कंसो देशभेदो ऽभिजनो ऽस्य, कंस-अण्। 'सिन्धुतक्षशिलादिभ्योऽणञौ।' पा ४।३।९३। कंसाधिष्ठित भोजदेशीय, कंस देशमें पैदा होनेवाले।

कांसपात्र (सं० क्लो०) आढ़क परिमाण, ४०९६ मासेकी तौल।

कांसा (हिं० पु०) १ कांस्य, कसकुट, भरत। यह तांबे और रांगेसे मिलकर बनता है। २ कासा, भीख मांगनेका खप्पर।

कांसागर (हिं०) कांसकार देखो।

कांसिका (सं० स्त्री०) मुद्गपर्णी, मोठ अनाज।

कांसी (सं० स्त्री०) १ सौराष्ट्रमृत्तिका। २ कांस्यधातु।

कांसी (हिं० स्त्री०) १ धान्यरोगविशेष, धानके पौदेकी एक बीमारी। २ कांस्य, कांसा। ३ कनिष्ठा, सबसे छोटी औरत। ४ कासरोग, खांसी। कांसीय, कांस देखो।

कांसुला (हिं० पु०) यन्त्रविशेष, एक औज़ार, कंसुला। यह कांस्य धातुका एक चतुष्कोण खण्ड होता है। इसकी चारों ओर गोलाकार गर्त बनाये जाते हैं। स्वर्णकार कंसुले पर रौप्य वा स्वर्णके पत्र रख कण्ठा घुण्डी तैयार करते हैं।

कांस्टेबिल (अं० पु०—Constable) दण्डधर, राजपुरुष, गुरैत, चौकीदार, पुलिसका सिपाही। पुलिसके सिपाहियोंका जमादार 'हेड कांस्टेबिल' और चन्दोंलका चौकीदार 'स्पेशल कांस्टेबिल' कहलाता है।

कांस्य (सं० क्ली०) कंसाय पानपात्राय हितं कंसीयं तस्य विकारः, कंसीय-यञ् छलोपः। 'कंसीयपरशव्ययोर्यञञौ लुक् च।' पा ४।३।१६८। कंसमेव इति स्वार्थे यञ् वा। १ पानपात्र, कटोरा, प्याला। २ ताम्र और रङ्गका उपधातु, कांसा, कसकुट, तांबे और जस्तेको मिला कर बनाया हुआ एक उपधातु। इसका संस्कृत पर्याय कंस, कंसास्थि, ताम्रार्ध, सौराष्ट्रक, घोष, कांसीय, वह्निलोहक, दीप्तिलोह, घोरपुष्प, दीप्तिकांस्य और कांस्य है। राजनिघण्टुके मतसे यह तिक्त, उष्ण, रूक्ष, कषाय, लघु, अग्निदीपक, पाचक, स्रोतःशुद्धि तथा चक्षुके लिये हितकारक, रुचिकारक और वायु एवं कफरोगनाशक होता है। राजवल्लभने इसे स्वादु, विशद, लेखन, सारक और पित्तनाशक भी कहा है। मुखशोधके समय यह देहको हटता और वायु बढ़ाता है। इसका शोधन मारण प्रभृति शास्त्रमें भांति किया जाता है। किसी किसीने इसके शोधन और मारणका विधि स्वतन्त्र भी माना है। शोधनके लिये कांस्यके पतले पतले पत्र अग्निमें खूब तपाये और तीन तीन बार तैल, तक्र, काञ्जिक, गोमूत्र तथा कुलत्थमें बुझाये जाते हैं। मारणमें कांस्यके शुद्ध पत्रोंपर अर्कक्षीरसे गन्धक लेप गाढ़ लेपन चढ़ाते और मूषापुटमें उन्हें रख गजपुटसे पकाते हैं। (भावप्रकाश) ३ वाद्यविशेष, घड़ियाल। ४ मानविशेष, एक तौल। (त्रि०) ५ ताम्ररङ्ग उपधातुसे सम्बन्ध रखनेवाला, भरतिया।

कांस्यक (सं० क्ली०) कांस्य देखो।

कांस्यार (सं० पु०) कंसं तत् पात्रं करोति, कांस्य-कृ-अण्। कांसकार, कसेरा। कसेरा देखो।

कांस्यज (सं० त्रि०) कांस्याज्जायते, कांस्य-जन-ड। कांस्य धातु द्वारा प्रस्तुत, कांसेका बना हुआ।

कांस्यताल (सं० पु०) कांस्येन निर्मितः तालः, मध्यपदलो०। १ करताल। २ मंजीरा।

कांस्यदोहनी (सं० स्त्री०) कमोरी, कांसेकी दुदहंडी।

कांस्यनील (सं० पु०) कांस्यम् इव नीलः, मध्यपदलो०। नीलतुत्था, तूतिया, नीलाथोथा। इसका संस्कृत पर्याय मयूर-तुत्थ, हेमसार और शितुथक है।

कांस्यभाजन (सं० क्ली०) ताम्र और रङ्गका उपधातु, कांसा।

कांस्यमय (सं० त्रि०) कांस्यसे बना या भरा हुआ, जो कांसेसे बना या भरा हो।

कांस्यमल (सं० क्ली०) ताम्रकिट्ट, जङ्गार, तांबेका कसाव।

कांस्यमाक्षिक (सं० क्ली०) धातु द्रव्यविशेष, किसी किस्मका उपधातु।

कांस्यांग (सं० त्रि०) कांस्यसदृश आभाविशिष्ट, कांसेकी तरह चमकनेवाला।

कांस्यास्थ्मु. कांस्य देखो।

काक (सं० पु०) १ तृण विशेषकी वाहूनत्वक्, पयाल, कागजी छाल। यह मृदु रहता और दबानेमें कुछ

कस्सी (हिं० स्त्री०) १ खनित्रभेद, एक फावड़ा। यह छोटी रहती और मालियोंके काममें लगती है। २ मानविशेष, एक नाप। यह दो पद परिमित रहती और भूमि नापनेमें चलती है।

कहं (हिं० प्र०) १ को। (क्रि० वि०) २ कहां।

क़हक़हा (अ० पु०) अट्टहास, ठट्ठा, खिलखिलाहट।

क़हक़हा दीवार (फ़ा० स्त्री०) १ प्राचीर विशेष, एक ऊंची दीवार। चीनके राजा सीहवाङ्गतीने चीनके उत्तर ई०से पूर्व ३य शताब्दके अन्तमें फ़ुकिन, कुआङ्ग तुङ्ग और कुआंसी नामक मोङ्गलोंका आक्रमण निवारण करनेके लिये इसे बनाया था। यह १५०० मील दीर्घ, २० से २५ फीट तक उच्च और इतनी ही प्रशस्त है। सौ-सौ गजके अन्तर पर वप्र (बुर्ज) विद्यमान हैं। चीन देखो। २ कठिन अवरोध, कड़ी रोक।

कहगिल (हिं० स्त्री०) गारा, फेनिया, घास मिली हुयी गीली मट्टी। यह शब्द फ़ारसी भाषाके काह (घास) और गिल (मट्टी)का समाहार है।

क़हत (अ० पु०) दुर्भिक्ष, अकाल, अनाजकी कमी।

कहतरी (हिं० स्त्री०) कसरी, लङ्गर उठायी।

कहता (हिं० पु०) कथनकार, कहनेवाला।

कहतूत (हिं० स्त्री०) प्रसिद्ध वार्ता, मशहूर बात।

कहन (हिं० पु०-स्त्री०) १ कथन, बोलचाल। २ वचन, बात। ३ लोकोक्ति, मसल, कहतूत। ४ कविता, शायरी। ५ भाषण भाव, बोलनेका तौर।

कहना (हिं० क्रि०) १ बोलना, बताना, समझना। २ उद्घाटित करना, खोलना। ३ संवाद सुनाना, खबर पहुंचाना। ४ बोलाना, नाम लेना। ५ सिखाना पढ़ाना, देखाना-सुनाना। ६ झप्पी लेना, धोका देना। ७ अयोग्य बोलना, कह बैठना। ८ कविता बनाना, शायरी सजाना। (पु०) ९ अनुरोध, तरगीब, समझाव।

कहनावत (हिं० स्त्री०) १ किंवदन्ती, मसल, कहावत। २ कथन, कहासुनी।

क़हर (अ० पु०) १ आपद्, आफ़त, अनहोनी। (वि०) २ भयङ्कर, खौफ़नाक।

कहरना, कराहना देखो।

कहय (सं० पु०) कस्य सूर्यस्य हयः अश्वः। सूर्यका अश्व या घोड़ा। सूर्यके सातो अश्वोंका वर्ण हरित है।

कहरवा (हिं० पु०) १ सङ्गीततालविशेष, गाने-बजानेका एक ठहराव। इसमें पांच मात्रायें लगती हैं,—चार पूरी और दो आधी। आघात चार पड़ते हैं। ताल है—धागे टेते नागधिन धा। २ गीत-विशेष, दादरा। यह नाचगानेके पीछे होता है। ३ नृत्यभेद, एक नाच। यह सबेरे मिलजुलकर किया जाता है। ४ कहार, पानी भरनेवाला।

कहरुवा (फ़ा० पु०) १ निर्यासभेद, एक गोंद। यह ब्रह्मदेशकी खनियोंसे निकलता है। वर्ण पीत है। इसे औषधोंमें व्यवहार करते हैं। चीनमें कहरुवा गला मालकी गुटिका और मुहनाल बनाते हैं। इस रंग भी चढ़ता है। वस्त्र प्रभृति पर रगड़ निकट रखनेसे यह तृणादिको यह चुम्बक भांति आकर्षण करता है। २ सर्जद्रुम, धूनेका पेड़। इसीके गोंदको धूप या राल कहते हैं। यह सततहरित् वृक्ष है। पश्चिमघाटके पर्वतोंमें इसकी अधिक उत्पत्ति है। दूसरा नाम सफ़ेद डामर है। तारपीनके तेलमें इसे घोल रंग चढ़ाते हैं। कहरुवेकी मालाभी उत्तम होती है। उत्तर-भारतमें स्त्रियां इसे तेलमें उबाल गोंद बना लेती और उसी गोंदसे चिपका मस्तक पर टिकली देती हैं। कषाय प्रभृति प्रस्तुत करनेमें भी यह कहीं कहीं व्यवहृत होता है।

कहरुवा, कहरवा देखो।

कहल (हिं० पु०-स्त्री०) १ उष्मा, गरमी, उमस। २ ताप, बुखार, तकलीफ़।

कहलना (हिं० क्रि०) व्याकुल होना, घबराना।

कहलवाना (हिं० क्रि०) १ कहाना, कहनेका काम दूसरेसे कराना। २ कहलाना, घबरवाना।

कहलाना (हिं० क्रि०) १ कहाना, कहनेका काम दूसरेसे कराना। २ नाम पाना, कहा जाना। ३ दहलाना। ४ संवाद पहुंचाना, संदेसा देना।

क़हवा (अ० पु०) एक पेड़का बीज, काफ़ी (Coffee)। अंगरेजी वैज्ञानिक नाम कफ़िया अरेबिका (Coffea arabica) है। इसे बंगलामें काफि, गुजरातीमें

रबरकी तरह लगता है। इससे बोतलमें लगानेको गद्दा बनाते हैं। पिधान, डाट, काग।

यह शब्द अंगरेजी 'कार्क' (Cork) का अपभ्रंश है।

काक (सं० क्लो०) कु ईषत् कं जलम्, को कादेशः। १ ईषत् जल, थोड़ा पानी। काकस्य समूहः। २ काक-सकल, कौवोंका झुण्ड। ३ सुरतबन्धविशेष।

काकपद देखो।

(पु०) कायति शब्दायते, कै-कन्। इण्भीका पाशल्यतिमर्चिभ्यः कन्। उण् ३।४३। ४ पक्षिविशेष, कौवा, एक चिड़िया। इसका संस्कृत पर्याय—करट, अरिष्ट, बलिपुष्ट, सकृत्प्रज, ध्वाङ्क्ष, आत्मघोष, परभृत्, बलिभुक्, वायस, वातजन, यम, दीर्घायु, चषक, छाया, ग्रामीण, विहग, कटुध्वादक, द्विक, काग, काय, धूलिजंघ, निमित्तज्ञ, कौशिकारि, चिरायु, मुखर, खर, महानील, चिरजीवी, चलाचल, आरटक, नागवीरक, गूढमैथुन, मत्ताक, ध्वाक्ष और रतज्वर है।

पृथिवीके उत्तरांशमें प्रायः सर्वत्र काक देख पड़ता है। फिर भारतवर्षमें सकल स्थानोंपर यह मिलता है। हिन्दुस्थानमें इसे कौवा, काग और कागला कहते हैं। काककी श्रेणीका विभाग नाना प्रकार है। वैदेशिक शाकुनशास्त्रवेत्ताओंके मतमें काक 'करविडी' (Corvidæ) विभागका अन्तर्गत 'करविनी' (Corvinæ) श्रेणीयुक्त 'करवस' (Corvus) जातीय होता है। 'करवस' जातीय पक्षियोंका नासारन्ध्र कपालके बिलकुल नीचे नहीं पड़ता, ऊर्ध्व चञ्चुके प्रायः मध्यस्थलमें नासाके १२।१४ लोम (चञ्चुकी और आगेपर तीक्ष्ण लोमकी भांति आकारविशिष्ट कोमल अथच सूक्ष्म पालक)से आवृत रहता है। यही इस जातिका विशेष चिह्न है। फिर चञ्चु दीर्घ, कठिन, गुरु और सरल होता है। ऊर्ध्व चञ्चुकी उच्चता कुछ अधिक लगती है। पक्षका प्रान्त सूक्ष्म और दीर्घ रहता है। प्रथम पर छोटा होता है। किन्तु द्वितीय पर प्रथमकी अपेक्षा बड़ा पड़ता है। फिर तृतीय और चतुर्थ पर सबसे बड़ा निकलता है। पञ्चमसे क्रमशः पर छोटे पड़ते जाते हैं। पुच्छ मध्यविध रहता है। पुच्छका अग्रभाग अधिकांश गोलाकार होता है। पैर दृढ़ लगता है। अङ्गुलि सरल रहते हैं। पैरका आला मध्यविध लगता है। क्षुद्र अङ्गुलियां प्रायः समान आती हैं। नख तीक्ष्ण और सुदृढ़ वक्र होते हैं। यह शाखा प्रशाखाओंपर बैठ और भूमिपर भी चल सकता है।

१ देशी कौवा—हिन्दुस्थानमें जो कौवे साधारणतः देख पड़ते, उन्हें 'काग' 'कौवा', 'कागला' प्रभृति कहते हैं। ठीक नाम देशी कौवा है। इसका कपाल, मस्तक एवं मुखमण्डल चिक्कण कृष्णवर्ण, घाड़, गलदेश, पृष्ठ, वक्षःस्थल तथा उदर पांशुवर्ण, पुच्छ एवं मुखमण्डल चिक्कण कृष्णवर्ण, और गलदेशका पालक (पर) विरल रहता है। कृष्णवर्ण पालकोंमें विद्रुम और हरित् वर्णकी स्निग्धता झलकती है। यह १५से १७।१८ इञ्च दीर्घ होते हैं। पुच्छका पालक ७ इञ्च, पक्ष ११ इञ्च और पद २ इञ्च रहता है। पाश्चात्यपक्षितत्त्वविदोंके मतमें इसका नाम 'करवस स्प्लेण्डेन्स' (C. Splendens) अर्थात् साधारण काक है। अंगरेज इन्हें 'भारतीय साधारण' कौवा कहते हैं। संस्कृतमें यह 'ग्राम्यकाक' कहला सकते हैं। हिमालयके पादमूलसे सिंहल पर्यन्त सर्वत्र यह काक देख पड़ते हैं। सिकिममें इसका अभाव है। नेपाल और काश्मीरमें यह कम मिलते हैं। भारतवर्षके भिन्न भिन्न स्थानोंमें जलवायुके गुणसे इनका वर्णव्यत्यय पड़ता है। सिन्धु राजपूताना प्रभृति शुष्क प्रदेशोंमें इनके नातिकृष्ण रंगवाले पर प्रायः आते रहते हैं। फिर सिंहलद्वीप और दाक्षिणात्यके समुद्रोपकूलमें इनके पालक (पर) गाढ़ कृष्णवर्ण होते हैं।

काक स्वजातीयोंमें परस्पर बन्धुता देख पड़ती है। नगर, ग्राम और बहुजनाकीर्ण स्थानमें यह अधिक संख्यामें दल बांध एकत्र रहते हैं। उन सकल स्थानोंके निकटवर्ती किसी बृहत् वृक्षपर प्रायः १००।२०० देशी मिल कर रात बिताते हैं। केवल गर्भके समय कोई घोंसला बनाता। अण्डे देनेमें संलग्न स्त्री पुरुष दो ही काये घोंसलेमें सुप्त हैं। दूसरे सबके सब एक पर ही रह रात काटते हैं। सन्ध्याकालको सूर्यास्तके पीछे जो १०।२० काक दूरसे कौवे दल बांध आते और रात्रिको दो तीन दण्ड पहले अपने-वासका स्थान

कफि, मराठीमें कफ्फी, मारवाड़ीमें कफि, तामिलमें कपिकोत्तई, तेलगुमें कपिवित्तुलु, मलयमें कापि, कनाड़ीमें कापिबीज, फारसीमें बुन, अरबीमें कापिसि और सिंहलीमें कापिकोत्ता कहते हैं।

अधिकांश ग्रन्थकार कहवेको अबिसीनिया, सोदान और गीनिया तथा मोजाम्बिकके पूर्व समुद्रतटका वृक्ष मानते हैं। अरबमें किसीने इसे उत्पन्न होते नहीं देखा।

कहवा एक क्षुद्र वृक्ष है। इसमें शाखायें बहुत होती हैं। यह १५ से २० फीट तक बढ़ता है। वल्कल श्वेताभ और पुष्प श्वेतवर्ण रहता है। फल पकनेपर लाल पड़ जाता और छोटे शाहदाने की भांति देखाता है। फलमें दो बीज परस्पर चिपटे रहते हैं। यही बीज निकालनेसे बुन कहलाते और बाजारमें बेचे जाते हैं। बीजोंको भूनने और पीसनेसे दुकानका कहवा तैयार होता है।

दाक्षिणात्यको इसकी कृषि अधिक है। कहवे और रुईको एक ही प्रकारकी भूमिमें लगाते हैं। इसे पानी बराबर मिलना चाहिये। उष्ण प्रदेशमें यह बहुत पनपता है। निविड़ मेघ ठीक नहीं पड़ता और प्रबल वायु लगनेसे पुष्प झड़ता, जिससे आधा कहवा निकलता है। विशेष उष्णता और शोष रहनेसे छाया आवश्यक आती और प्रबल वायु चलनेसे वृक्षोंको आड़ लगायी जाती है। निम्नप्रदेशकी भूमिमें उपयुक्त आर्द्रता न रहनेसे अच्छी फसल कम होती है।

ई० १५वें शताब्दको शेख शहाबुद्दीन इसे अदन ले गये थे। यमनसे यह मक्के, काहरा, दामास्कस, अलेप्पो और कुस्तुनतुनिये पहुंचा। सबसे पहले १५५४ ई०को कुस्तुनतुनियामें ही कहवेका दुकान खुली थी। १५७३ ई०को अलेप्पोमें रावोल्फ नामक यूरोपीयको इसका नाम सुन पड़ा।

मुसलमानोंमें कहवा पीनेका बड़ा आदर बढ़ा। मसजिदोंसे भी अधिक लोग कहवेकी दुकानोंमें देख पड़ने थे। इससे मोलवियोंने बिगड़ इसका पर बड़ा महसूल बांधा। ग्रेट ब्रटेनमें यह १६५२ ई०को पहुंचा। किन्तु १६७५ ई०को २य चार्लसने इसकी दुकानें बन्द करा दीं। उनका कहना था—कहवेकी दुकानों पर बदमाश इकट्ठा होते हैं।

ई० १७वें शताब्दके अन्त कहवेकी कृषि बढ़ी। भारत, सिंहल, यवद्वीप, जमैका और ब्रेजिलमें यह लगाया जाने लगा। १६९० ई०से पहले यह अरबमें ही होता था। आजकल कोष्टा, रिका, ग्वाटेमाला, वेनेजुयेला, गियाना, पेरु, बोलिविया, क्यूबा, पोर्टोरिको और पश्चिम-भारतीय द्वीपपुञ्जमें भी कहवा खूब उपजता है। कहते दो शताब्द पूर्व मक्केसे बाबा बूदन कहवेके ७ बीज महिसुर लाये थे।

इसको भूमि उत्तम और आर्द्र रहना चाहिये। यह रक्तवर्ण एवं कृष्णवर्ण भूमिमें अधिक पनपता है। प्रबल वायु लगनेसे इसे बड़ी हानि पहुंचती है। भूमि ढालू रहना चाहिये। सींचनेकी सुविधा पड़ना अच्छा है। भूमिको १८से २४ इंच तक गहरी जोत घास फूस निकाल डालते हैं। एकर पीछे ५०से ८०मन तक खाद पड़ती है। पानी निकलनेको राह क्यारियों रखी जाती है। बीजोंको ६ कतारोंमें बोना चाहिये। प्रत्येक कतार ८ इंच पृथक् और २ इंच गभीर रहती है। बीज एक एक इंच दूर डाले जाते हैं। सवेरे और सन्ध्याकाल सिंचायी होती है। बीज उत्तम रहनेसे फसल भी अच्छी निकलती है। दो चार पत्तियां निकलनेसे वृक्षोंको खोद दूसरी जगह लगाते हैं। जल भरा रहनेसे जड़ें सड़ जाती हैं। एक एकर भूमिमें १०२०से अधिक वृक्ष न रहना चाहिये। गोबरकी खाद अच्छी होती है। डालियां बढ़नेसे थोड़ी थोड़ी काट देते हैं। ५ फीटसे अधिक इसका बढ़ना खराब है। इससे साथ दूसरी चीज लगा नहीं सकते। इसकी कृषिका समय मई या जून मास है। दूसरे वर्ष मार्च मासमें पुष्प आते और अक्तूबर मास कलम काटनेका प्रबन्ध लगाते हैं। फल नवम्बरसे जनवरी तक पका करते हैं। पके फलको शीघ्र तोड़ लेना और पकनेपर फल गिरा देना चाहिये।

साधारणतः देशीय लोग फलोंको धूपमें सुखा ओखलीमें कूट पछोड़ कर बीज निकालते हैं। किन्तु यह रीति अधिक लाभकर देख नहीं पड़ती। अतएव

ठहरानेके लिये वृक्षकी डालोंपर कांकां मचाते हैं। दूसरे दिन सवेरे प्रायः दो दण्ड रात्रि रहते फिर अपना वही ध्वनि लगा यह इधर उधर चक्कर लगाते और अन्तको सूर्य निकलनेसे आश्रय छोड़ चारो ओर उड़ जाते हैं। उड़ते समय कौवे तीनसे तीस चालीस तक एकत्र एक दिक्को चलते हैं। आहारकी चेष्टाको अधिक दूर जानेवाले ही सवेरे सवेरे निकलते हैं। निकट रहनेवाले वृक्षपर बैठ अनेक अथ आलाप लगाया वा पर बनाया करते हैं।

यह मनुष्यके खाद्यावशेषसे भी प्रायः जीविका चलाते हैं। कौवे जिस ग्राम या नगरके निकट ठहरते, उसमें घर घरके भोजन बनने और उच्छिष्ट फिकनेसे अवगत रहते हैं। फिर समय देख यह वहां जा पहुंचते हैं। सभी कौवे यह बाते समझते हैं। किन्तु सबके सब एक ही स्थानपर धावा नहीं मारते। कुछ इसी प्रकार लोकालयोंमें आते, कुछ नदी किनारे कर्कट भेक एवं क्षुद्र मत्स्य वा कीटादि पकड़ने जाते, कुछ मैदानमें पहुंच गवादिके शरीर जात कीट अथवा गव्यकी कषायें खाते, कुछ मृत जन्तुका शरीर ढूंढने को पैर बढ़ाते और कुछ कदली, वट, आम्र प्रभृतिके फलित वृक्षों पर दृष्टि लगाते हैं। वर्षाकालमें सन्ध्या या सवेरे पतिङ्गे उड़नेसे यह फूले नहीं समाते। दलके दल कौवे आ उन्हें पकड़ पकड़ खाते हैं। ग्रीष्मकालमें इन्हें बड़ा कष्ट मिलता है। प्रति दिन आठ दश घड़ी धूप चढ़ते ही ग्रीष्मसे घबरा अट्टालिकादि वृक्षादिकी छायामें बैठे कौवे हांफा करते हैं। रौद्र कम पड़नेसे यह फिर घूमने निकलते हैं। सन्ध्या चुगनेको चलते समय कौवे राहमें दल बांधते जाते हैं। घूम फिर एक एक अट्टालिकाकी छत या क्षुद्र वृक्षादिपर बैठ जाते और अपने दलके आवासकी ओर चलते समय साथही दौड़ लगाते हैं।

वैशाख और भाद्रके मध्य कौवे अण्डे देते हैं। एक एक वृक्ष पर अधिकसे अधिक तीन कौवे घोंसला बनाते हैं। चार पांच दिनमें ही इनका घोंसला तैयार हो जाता है। किन्तु कलकत्तेवाले कौवोंके घोंसलोंमें टीनके टुकड़े और तारभी मिलते हैं। यह एक साथ चार अण्डे देते हैं। अण्डे कुछ हरे रहते और उनपर भूरे भूरे दाग पड़ते हैं। अण्डेका रंग बहुत सुन्दर लगता है। कोकिल स्वयं घोंसला नहीं बनाता, कौवेके घोंसले हीमें अण्डे देनेका ढंग लगाता है। चालना सीखते ही कोकिलके शावकको काकी ठोकर मार घोंसलेसे भगा देती है। ईश्वरकी महिमा अपार है। जब तक कोकिलका शावक उड़ नहीं सकता, तब तक उसे चीन्हना भी कठिन पड़ता है। सुतरां काकी उसे स्वीय सन्तानके निर्विशेषसे पालती है। काक उसको अनेक दिनों आहार दिया करते हैं।

काक अतिदुष्ट उड़ मचाता है। बड़ी चील कभी कभी सुखाद्य आहार छीननेके लिये कौवेको खदेड़ती है। उस समय यह जिस तेजीसे भगता, उसे देख विस्मित होना पड़ता है।

काक अतिचतुर और बुद्धिमान् है। इसकी धूर्तताके सम्बन्धमें यथेष्ट गल्प चलते हैं। यह बहुत निर्भीक रहता है। मनुष्यके भोजन करते और निकट ही बिड़ाल बैठा रहते भी कुछ भक्ष्य ले कर काक खिड़कीसे घुस पड़ता और पात्रमें पद उठा चलते बनता है। यह आदमीके सामने कूद कूद भूमि पर फिरता, बिन्दुमात्र भी भय नहीं करता। किन्तु किसीके एक दृष्टि ताक लगाते काक उसी क्षण भाग खड़ा होता है। यह अत्यन्त सन्दिग्धचित्त है। सामान्य भयकी सम्भावना रहते भी कौवा उस ओर कम जाता है।

काक, स्वजातीयका मृतदेह देखने या बन्दूककी आवाज सुननेसे महाकोलाहल उठा एकत्र होते हैं। फिर यह उस स्थानको विरक्त कर डालते हैं। जब तक कोई भय कम नहीं देखाता, तब तक कौवोंका दल कहीं आता जाता है।

इसको परिहास बहुत प्रिय है। दो-तीन काक मिल मिल, शकुनि या अन्यान्य पक्षीका पुच्छ पकड़कर घसीटते घसीटते अथवा ठेल देते हैं। उसके चिल्ला उठने या चीत्कार मारनेसे महा आनन्दसे यह कांकां करने लगते हैं। इसी प्रकार काक बिड़ालके मुखसे आहार भी छीन लेते हैं।

लोग कलमें लाल बीजोंका गूदा छोड़ाते हैं। उसका नाम डिस्क-पल्पर (disc pulpar) है। इसमें गूदेसे बीज छूट अलग जा पड़ता है। फिर बीजको हौज़में डाल १२ घण्टे धोते हैं। धुलधुला बीज धूपमें सुखाया जाता है। सुखानेकी भूमिपर मोटी चटायी बिछा देते हैं। सुखाते समय कहवेको लोटते रहना चाहिये।

भारतवर्षमें जितना अधिक और उत्तम कहवा उपजता, उतना किसी दूसरे अंगरेजी अधिकारमें देख नहीं पड़ता। किन्तु इसमें अनेक रोग लग जाते हैं। यथा,—पत्तियोंका पीला और काला पड़ना, पत्तियों, फूलों और फलोंका चिपचिपा उठना और कीड़ा लगना। टिड्डियां भी इसको बड़ी हानि पहुंचाती हैं। कहवेकी पत्तियां भी उबाल कर पीनेसे अच्छी लगती हैं। गूदेमें चीनी रहती है। अरबमें लोग गूदेका अर्क तैयार करते हैं। कहवेमें तेल भी होता है।

यह उत्तेजक है। इसके सेवनसे थकावट दूर हो जाती है। शिरःपीड़ाका यह उत्तम औषध है। कासश्वास रोगमें भी इससे लाभ होता है। विशूचिका और ग्रहणीरोग इसके सेवनसे दब जाता है। कहवा ज्वर पर भी चलता है। पीनेसे मूत्रकृच्छ्र और वात-रक्त रोग नहीं लगता।

कहवाना (हिं० क्रि०) कहलाना, कहाना।

कहवैया (हिं० वि०) कथनकार, कहनेवाला।

कहा (हिं० पु०) १ कथना, बातचीत। (क्रि०वि०) २ कैसे, किस प्रकार। (सर्व०) ३ क्या। (वि०) ४ कौन। ५ कथित।

कहां (हिं० क्रि० वि०) १ कुत्र, किस जगह। (पु०) २ शब्दविशेष, एक आवाज़। सद्योजात शिशुके शब्द करने या रोदनको 'कहां कहां' कहते हैं।

कहाना (हिं० क्रि०) कहलाना, कहा जाना।

कहानी (हिं० स्त्री०) १ कथा, क़िस्सा। २ मिथ्या वचन, झूठी बात।

कहार (हिं० पु०) जातिविशेष, एक क़ौम। यह लोग पानी भरते और डोली लेकर चलते समय अनेक प्रकारके सांकेतिक शब्द व्यवहार करते हैं। बेहारमें कहार लोग शूद्रमन्दका वंशीय कहलाता है।

कहारा (हिं० पु०) टोकरा, दौरी, झौवा।

कहाल (हिं० पु०) वाद्यविशेष, एक बाजा।

कहावत (हिं० स्त्री०) १ लोकोक्ति, मसल, कहनी बात। २ कथित विषय, कही हुयी बात।

कहासुना (हिं० पु०) अनुचित वचन, नैरवाजिब बात, भूल चूक।

कहासुनी (हिं० स्त्री०) वादविवाद, लड़ाई झगड़ा।

कहाह (सं० पु०) १ महिष, भैंसा। २ कटाह, कड़ाह।

कहिक (सं० पु०) कहोड़-ठक्। एक ऋषि।

कहिया (हिं० क्रि० वि०) १ किस समय, कब। (पु०) २ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। कलईगर इससे रांग रख जोड़ लगाते हैं। यह एक प्रकारका लौह दण्ड है। इसमें मुष्टि रहता है। एक किनारा काक-चञ्चुकी भांति कुटिल होता है।

कहीं (हिं० क्रि० वि०) १ किसी स्थान पर, दूसरी जगह। २ नहीं। इस अर्थमें यह प्रश्न रूपसे आता है। ३ यदि, अगर। ४ अतिशय बहुत, बहुत।

कहुं, कहीं देखो।

कहूं, कहीं देखो।

कहुय (सं० पु०) कः सूर्यः हूयो यस्य, ह्वे-क्यप् बहुव्री०। सूर्यको आह्वान करनेवाले एक ऋषि।

कहोड़ (सं० पु०) एक ऋषि। यह उद्दालकके शिष्य और अष्टावक्रके पिता थे।

कह्लक, कल्हार देखो।

कह्लण (सं० पु०) कल्हण, राजतरङ्गिणीके प्रणेता।

कल्हण देखो।

कह्लार (सं० क्ली०) कस्य जलस्य हार इव के जले ह्लादते वा, क-ह्लाद पचाद्यच्, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ श्वेत उत्पल, बघवल, कोकाबेली। (Nymphæa edulis) यह भारतके नाना स्थानोंपर जलमें उत्पन्न होता है। कल्हार शीतल, ग्राही, विष्टम्भी, गुरु और रुक्ष है। (भावप्रकाश) २ ईषत् श्वेत रक्तकमल, कुछ सफेदी लिये लाल कंवल। ३ कमलसाधारण, कोई कंवल।

कल्हाराद्यघृत (सं० क्ली०) घृतविशेष, एक घी।

यह दुष्ट दरिद्रोंके लिये अति अनिष्टकर है। कभी कभी कौवा फूसके छप्पर या झोपड़ेमें खाद्यादि छिपा रखता है। आवश्यक स्थान न पाने यह अधिकांश खाद्यादि खींच घर तक उलट देता है।

यह अरघोटियेसे बहुत घबराता है। उसे देखते ही काक स्थान छोड़ भागता है। वह भी इसके पीछे पड़ जाता है।

भारतवासियोंके नवान्न पर्वपर काकका बड़ा आदर होता है। प्रत्येक गृहस्थ 'नवान्न' ले घरकी छतपर चढ़ता और इसको आने बोलाया करता है। किन्तु उस दिन काकका आना कठिन पड़ता है। क्योंकि यह सर्वत्र भोज्य मिलनेसे तृप्त रहता है।

२ (क) गड्डापारी कौवा—'करवस' जातिमें सबसे बड़ा होता है। भारतवर्षके उत्तरांचलमें यह अधिक देख पड़ता है। इसीसे हिन्दूस्तानी इसे 'गड्डापारी' कौवा कहते हैं। सिन्धु, राजपूताना प्रभृति कई देशोंमें यह शीतकालको नहीं रहता। शरत्के प्रथम यह आता और वसन्तके पश्चात् ही अफगानस्थान, काश्मीर प्रभृति शीतप्रधान देशोंको चला जाता है। हिमालय प्रदेशमें १४००० फीट ऊंचे यह मिलता, दूसरे पार्वत्य प्रदेशमें देख नहीं पड़ता। पञ्जाब, युक्त प्रदेश और पश्चाबमें भी यह होता है। गाढ़ गाढ़ नील आभायुक्त चिक्कण कृष्णवर्ण रहता है। गलदेशके पालक दीर्घ और विरल होते हैं। ऊपरी चोंच (टोंट) का अग्रभाग कुछ वक्र लगता है। ऊर्ध्व पक्षकी उच्चता अधिक पड़ती है। यह १५ इञ्च और २६ २५से २७ इञ्चतक दीर्घ होता है। चञ्चुके उभय पार्श्वोंमें गड्डा रहता है। चञ्चु और पदद्वय घोर कृष्ण वर्ण होता है। ऊर्ध्व चञ्चुका अग्रभाग कुछ वक्र रहता है। इसे बङ्गाली 'डोम काग' अंगरेज 'रावेन' (Raven), रूस 'वर्वो' स्वीडनवासी 'क्र', डिनमार 'रेन', जर्मन 'कोलक्रेह', फरासीसी 'करबो', इटालीय 'कर्वो', रोमक 'दरवस्', स्पेनीय 'एल कुरवों', पश्चिम भारतीय द्वीपवासी 'कप कप लिउ', और एस्कुइमाउ 'तुलुगाक' कहते हैं। वैदेशिक शाकुन्तशास्त्री इनका करवस् कोराक्स (Corvus Corax) कहते हैं।

हिमालय और युरोपमें रहनेवाला डोमकाक अधिक बेहद होता है। यह कभी लोकालयमें आना नहीं चाहता। किन्तु भारतके अन्यान्य स्थानोंका डोम-काक देशी कौवेकी भांति निर्भीक रहता और गांवमें इच्छानुसार आया जाया करता है। यह अति द्वन्द्वप्रिय है। डोमकाक लड़ते लड़ते इतना उन्मत्त पड़ता, कि दोनों एक न एक अवश्य मरता है। सिन्धु प्रदेशमें प्रति वर्ष शरत्कालको जब इनका दल आता, तब अनेकोंको मृत्यु घर दबाता है। इससे लोग अनुमान लगाते कि डोम काक स्वभावसुलभ द्वन्द्वप्रियताके कारण ही मर जाते हैं। सिन्धुदेशवासी जातिगत कण्ठस्वरसे भिन्न घण्टेके ध्वनिकी भांति एक प्रकार शब्द निकाल सकते हैं। युक्तप्रदेशमें यह घास फूससे मैदान या जङ्गलके जङ्गलमें बड़े बड़े वृक्षोंकी शिखा ऊपर घोंसले बनाते हैं। इसके चार-पांच अण्डे होते हैं। प्रायः पौष माससे फाल्गुन तक यह अण्डे देते हैं। अण्डे हरित् आभायुक्त तरल नील वर्ण होते हैं। उनपर काले मटमैले, बैंगनी और लाल रङ्गके धब्बे पड़ जाते हैं।

(ख) भूटानका डोमकाक—हिमालयके ऊर्ध्वतम देश, काश्मीर, कुमाऊं राज्य और तिब्बतमें यह प्रकारका २८ इञ्च दीर्घ काक होता है। इसका पक्ष १८ इञ्च बढ़ता है। ऊर्ध्व चञ्चुके मूलकी उच्चता अधिक रहती और पूंछ भी दीर्घ लगती है। अन्यान्य अवयव साधारण देशीय काककी भांति होते हैं। दो चार वैदेशिक शाकुन्तशास्त्रविद् इसे एक स्वतन्त्र जाति मान 'करवस् टिबेटेनस्' (Corvus Tibetanus) नामसे अभिधान करते हैं। किन्तु आकारकी लम्बाई दीर्घता छोड़ इसमें कोई अन्य विभिन्नता देख नहीं पड़ती। इसीसे बहुतसे लोग तिब्बती कौवेको देशीमें गिनते हैं।

युरोपीय शाकुन्तशास्त्रविद् कहते कि डोमकाक (Raven) मनुष्योंके कण्ठस्वरका अतिसुन्दर अनुकरण कर सकते हैं।

(ग) दाढ़चूड़ (गुलाबी घेंटीवाला) काक—सरस्वतीमें होता है। इसका कपाल और मस्तक

कल्हार, उत्पल, पद्म, कुमुद और मधुयष्टिकाको जलमें पकाने तथा घृतके साथ कल्क लगानेसे यह प्रस्तुत होता है। इसके खानेसे यावतीय हृद्रोग आरोग्य होते हैं। (रसरत्नाकर)

कह्न (सं॰ पु॰) के जले ह्रयति क शब्दायते स्पर्धते वा, आ-ह्वे-क। बक, बगला।

का (सं॰ अव्य॰) १ काकका शब्द, कौवेकी आवाज़। (त्रि॰) का पथ्यक्षयोः। पा ६।३।१०४। २ मन्द, खराब।

का (हि॰ प्रत्य॰) १ सम्बन्धीय, वाला। यह षष्ठीका चिह्न है। इसे अधिकारी अधिकृत, आधार आधेय, कार्य कारण, कर्तृकर्म प्रभृति अनेक भाव देखनेको दो शब्दोंके बीच लगाते हैं। स्त्रीलिङ्गमें 'का' का रूप बदलकर 'की' हो जाता है। (सर्व) २ क्या।

"का बर्षा जब कृषी सुखाने।
समय चुकि पुनि का पछिताने॥" (तुलसी)

काई (हिं॰ स्त्री॰) तृण विशेष, एक घास। यह जल तथा शीतल स्थल पर उपजती और सूक्ष्म लगती है। इसका वर्ण और आकार विभिन्न होता है। शिला और भूमिपर पड़नेवाली काई सूक्ष्म सूत्रवत् हरिद्वर्ण रहती है। किन्तु जलपर फैलनेवालीमें गोलाकार सूक्ष्म पत्रक और पुष्प आते हैं। वस्तुतः यह एक प्रकारका मल है। काई उबल कर तरल पदार्थों पर आ जाती है। २ मण्ड, फेन, मांड। ३ मल, मैल। ४ पयोमल, मोरचा।

काउ (हिं॰ स्त्री॰) १ यष्टिविशेष, कामी, एक छोटी खूंटी। यह पाटेमें पहलोके सिरेपर लगायी जाती है। (सर्व॰) २ कोई। ३ कुछ। (क्रि॰ वि॰) ४ कभी। (पु॰) ५ काक, कौवा।

काइयां (हिं॰ वि॰) धूर्त, चालाक, अपने मतलबका पक्का।

काहें (हिं॰ अव्य॰) १ क्यों, किस लिये। (सर्व॰) २ किसे, किसको। ३ क्या।

कांक (हिं॰ पु॰) शस्यविशेष, एक अनाज। इसे कंगनी भी कहते हैं।

कांकड़ा (हिं॰ पु॰) कार्पासबीज, बिनौला।

कांकर (हिं॰ पु॰) कर्कर, कंकड़।

कांकरी (हिं॰ स्त्री॰) क्षुद्र कर्कट, छोटा कंकड़, कंकरी।

कांकां (हिं॰ पु॰) काकका शब्द, कौवेकी बोली।

कांकुन, कांकुनी, कंगनी देखो।

कांख (हिं॰) कक्ष देखो।

कांखना (हिं॰ क्रि॰) १ पीड़ित अवस्थामें दुःखसूचक शब्द उच्चारण करना, कराहना। २ मूत्रपुरीषोत्सर्गार्थ उदरके वायुको पीड़न करना, आंतपर ज़ोर देना।

कांखासोती (हिं॰ स्त्री॰) वस्त्रपरिधानभेद, दुपट्टा रखनेका एक तरीक़। इसमें दुपट्टा बायें कंधे और पीठ पर होता और दाहिनी बगलके नीचे पहुंचता, फिर बायें कन्धे पर आ पड़ता है।

कांछी (हिं॰)- काछी देखो।

कांगड़ा (हिं॰ पु॰) कङ्कपक्षी, एक चिड़िया। यह धूसरवर्ण होता है। इसका वक्षःस्थल श्वेत, गण्डस्थल रक्त और शिखाका वर्ण कृष्ण रहता है।

कांगड़ा—पञ्जाब प्रान्तका एक ज़िला। यह अक्षा॰ ३१° २०′ से ३३° उ॰ और देशा॰ ७५° ५८′ से ७८° ३५′ पू॰ तक अवस्थित है। भूमिका परिमाण ८०६८ वर्ग मील है। इसमें प्रायः साढ़ेसात लाख आदमी रहते हैं।

कांगड़ा सर्वत्र अत्युच्च गिरिमालासे परिवेष्टित है। सकल गिरि समुद्रके समतलकी अपेक्षा ८३०से १५८५ फीट पर्यन्त उच्च हैं। धवलाधारगिरि कांगड़ेके उत्तर सीमाकूलमें खड़ा है। उसीके आगे बड़ा बङ्गाहल निकला, चढ़ता है। गिरिमालासे परिवेष्टित और समाकीर्ण रहते भी इसमें स्थान स्थान पर ग्राम तथा उपनिवेश विद्यमान हैं।

उत्तर सीमापर हिमालय पर्वत कांगड़ेको तिब्बतके लद्दाख और चीन साम्राज्यकी सीमासे पृथक् किया है। दक्षिण पूर्वको मण्डर, मण्डी, बिलास-पुर प्रभृति पार्वतीय राज्य हैं। दक्षिणपश्चिम होशि-यारपुर ज़िला तथा उत्तरपश्चिम रावी नदी गुरुदासपुर और चम्बा राज्यको काटती है। कांगड़ा ज़िलेमें पांच तहसीलें हैं, कूलू, कांगड़ा, हमीरपुर, डेरा और नूरपुर। कांगड़ा तहसील मध्यस्थलमें लगती है।

धवलाधार-गिरिने बङ्गाहल प्रान्तको दो भागोंमें

पाटलाभ (गुलाबी) पिङ्गलवर्ण रहता है। थोड़ेसे अंशमें बैंगनी रंगकी चिक्कणता झलकती है। ऊपरी स्तरके पालक चिक्कण एवं कृष्णवर्ण और निम्न स्थानीय पाटलाभ पिङ्गलवर्ण लगते हैं। पिङ्गलवर्ण पालकोंका प्रान्तभाग रक्ताभ होता है। चञ्चुका पुट काला पड़ता है। दोनों पद भी काले ही रहते हैं। दैर्घ्य २२ इञ्च है। सिन्धुप्रदेशके याकूबाबाद और लारखानेके मरुप्रदेशमें शीतकालमें भी यह देख पड़ता है। पञ्जाबी डोमकाक (C. corax)से इसके गात्रका वर्ण भिन्न लगता है। दूसरा पार्थक्य गलदेशके पालकोंकी क्षुद्र आकृति और देहके परिमाणकी लघुता है। इसका वैज्ञानिक नाम 'करवस् अम्ब्रिनस्' (C. Umbrinus) अर्थात् पाटलचूड़ काक है। यह भारतके युक्तप्रदेशसे मिसर और एशियाके पश्चिम तथा दक्षिणस्थ देश तक सकल स्थानोंमें मिलता है।

२ कौड़ियाला कौवाको उत्तर-भारतीय 'डांड' या 'डाल कौवा', दक्षिणमें 'घेरी कोवा', तैलङ्ग 'काकी', तामिल 'काका', लेपचा 'उलककी', भूटानी 'उलक' और अनेक अंगरेज् 'रावेन' (Raven) कहते हैं। किन्तु शाकुनतत्त्वज्ञ अंगरेज पण्डितोंने इसका नाम 'इण्डियन कर्बी' (Indian Corby) रखा है। इसकी श्रेणीके कई भेद हैं। उनमें कुछ नीचे लिखते हैं।

(क) गलित मांसभुक्—भारतीय कौड़ियाले कौवेके ऊपरी पर चिकने और खूब काले होते हैं। किन्तु नीचेवाले अधिक कृष्णवर्ण नहीं रहते। पुच्छके पालकोंका संस्थान ईषत् गोलाकार लगता है। पक्ष विशेष दीर्घ पड़ता और प्रायः पुच्छके अन्ततक विस्तृत रहता है। चञ्चुका पुट सरल बैठता है। अध चञ्चुका मध्यस्थ भाग उच्च और अग्रभाग वक्र होता है। गलदेश (घाड़) और चञ्चुपार्श्वद्वयके पालकोंमें चिक्कणता कम झलकती है। इस स्थानके पालक इधीके पासेकी भांति लगते हैं। उनमें खूंटी (डांठि) देख नहीं पड़ती। कण्ठ, पद और अङ्गुलिका वर्ण काला होता है। यह १८·इञ्च दीर्घ रहता है। पक्षका ग्यारहसे चौदह, पुच्छका सात, पैरकी खूंटीका दोसे अधिक और कण्ठका दैर्घ्य ढाई इञ्च है।

इसको अंगरेजी शाकुनशास्त्रमें 'करवस माक्रोरिंकस' (C. macrorhynchus) अथवा 'करवस कल्मिनाटस्' (C. culminatus) लिखते हैं। यह भारत वर्षके वनों, पर्वतों, लोकालयों प्रभृति सकल स्थानोंमें रहते हैं। पूर्व उपद्वीप और भारतीय द्वीपपुञ्जोंमें भी इनकी कोई कमी नहीं। ग्रामकाककी भांति पगल्भ न रहते भी अन्यान्य जातीयोंकी अपेक्षा यह संख्यामें अधिक बैठते हैं। लोकालयकी अपेक्षा इन्हें वन अथवा पर्वतमें रहना अच्छा लगता है। यह प्रधानतः मृत जन्तुका मांसादि खाते हैं। इसीसे अंगरेज इन्हें 'कर्बी' या 'कैरियन' अर्थात् 'गलितमांसभुक्' (सड़ा गोश्त खानेवाले) कहते हैं। यह भी अण्डे देते समय किसी दुर्गम वनमें निबपद्रव वृक्षपर घोंसला बनाते हैं। घोंसला सूखी घास, पत्ते और बालसे कोमल तथा उष्ण कर लिया जाता है। एक बारमें तीन-चार अण्डे होते हैं। अण्डा हलका हरा रहता और उस-पर भूरा भूरा दाग पड़ता है। वैशाखसे श्रावण मासके मध्य तक अण्डे देनेका समय है। इनके भी घोंसलोंमें कोयल अपने अण्डे रख देती है। यह बड़े अनिष्टकारी हैं। छोटे छोटे मुरगी, कबूतरके बच्चे और चिड़े पकड़ ले खाते हैं। बकरीका छोटा बच्चा भी इनके चञ्चु-पुटाघातसे मृत्युमुखमें पड़ता है। दूसरे पक्षियोंका घोंसला या अण्डा तोड़ते देख इनको 'राजकाक' खदेड़ता है। अनेक अंगरेज् इन्हें 'जङ्गल-का' (Jungle crow) कहते हैं।

(ख) युरोपीय 'कारियनको' (Carrian crow) बिलकुल भारतीय गलित मांसभुक्की भांति होता है। केवल इसके गात्रका वर्ण घोर कृष्ण और कपोल (गाल)का पालक मृदु नहीं रहता। सर्वाङ्गोर चिक्कण लगता है। पुच्छका पालक आठ, पक्ष ग्यारह चौदह और कण्ठ तीन इञ्च पड़ता। केवल भारत और काश्मीरमें यह काक देख पड़ता है। इस जातीय पक्षीका आदि वासस्थान साइबेरियाके पूर्वांशमें इनसीनदीसे प्रशान्त-महासागर पर्यन्त है। उस स्थानसे दक्षिण काश्मीर और पश्चिम इङ्गलैण्ड पर्यन्त समस्त देशमें यह रहते हैं। इन्हें अंग-

बांटा है। उत्तरार्धको बड़ा बङ्गाहल और दक्षिणार्धको छोटा बङ्गाहल कहते हैं। बड़े बङ्गाहलमें कूलूके मध्य स्थलपर बड़ा बङ्गाहल पहाड़ है। यह दैर्घ्यमें पन्द्रह मील और उच्चतामें १७००० हजार फीट पड़ता है। इसमें एक सामान्य ग्राम है। उसमें कोई ८००० कुनैत रहते हैं। एक वर्ष दारुण तुषारपातसे लोगोंके बहुतसे घर बह गये। इसी गिरिका अत्युच्च शृङ्ग फोड़ इरावती नदी निकली है।

छोटे बङ्गाहलके बीचमें १००० फीट ऊंचा एक गिरिशृङ्ग है। उसने इस स्थानको दो भागोंमें बांटा है। निम्नांशमें १८।२० ग्राम विद्यमान हैं। सकल ग्रामोंमें केवल कुनैत और दागी रहते हैं।

बङ्गाहल तालुक़के कुछ अंशका नाम छोर बङ्गाहल है। इस स्थानका प्राकृतिक सौन्दर्य मनोहर है।

कांगड़ा ज़िलेके बीच तीन गिरि श्रेणियां समभावसे निकली हैं। इन्हीं गिरिश्रेणियोंसे विपाशा, चन्द्रभागा, चिति और इरावती नदी निकली है।

पुरातत्त्व और इतिहास—भारत और पुराणादिमें कुलिन्द और कुलूत नामक पार्वतीय जातिका नाम लिखा है। वही यहांके प्राचीन अधिवासी थे। उस समय कांगड़ा कुछ कुलूत और कुछ कुलिन्द (कुनिन्द) जनपदमें रहा। आजकल कुलूत तथा कुलिन्द जातिको कुलू और कुनैत कहते हैं। कुलूत और कुलिन्द देखो।

कुलूत और कुलिन्द लोगोंको हरा राजपूतोंने यह स्थान अधिकार किया। उन्होंने यह पार्वतीय भूभाग विभागकर बहुकाल राजत्व चलाया। वह अपनेको कुरुपाण्डवके समकालीन जालन्धरका कतोच राजवंश बताते थे। मुसलमानोंके आक्रमणसे उक्त कतोच-राजकुमारोंने कांगड़ेको गिरिदुर्गमें आश्रय लिया। उनका विपुल राज्य क्षुद्र क्षुद्र अंशोंमें बंट गया। उस समयभी यहांके नगरकोटवाले भारतीय देवमन्दिर विशेष प्रसिद्ध थे। ऐसा ऐश्वर्य अन्यान्यके किसी दूसरे देवमन्दिरोंमें न रहा। भारतीय लोगोंमें देवमूर्तिको बड़ी श्रद्धा भक्ति करते थे। १००८ ई०को महमूद गजनवीने कांगड़ेके मन्दिरोंको बड़ाई सुनी। उनका लोभ और विद्वेष बढ़ गया। वह पेशावरके सेनाभिमुख ससैन्य आये थे। भारतीय राजाओंने बाधा देनेको यथा साध्य चेष्टा लगायी. किन्तु कोई बात बन न पायी। महमूदने कांगड़ेका दुर्ग अधिकार कर देवमूर्तियोंके साथ स्वर्ण, रौप्य, मणिमाणिक्य प्रभृति बहुमूल्य धन लूटा था। कोई ३५ वर्ष पीछे राजपूतोंने कांगड़ेका दुर्ग छीन फिर राजपूतोंने बड़े समारोहसे देवमूर्ति प्रतिष्ठा किया था।

कुछ दिन कोई गड़बड़ न पड़ा। १३६० ई०को फीरोजशाह तुगलक कांगड़ेकी ओर लड़ने आये। कांगड़ेके राजाओंने उनकी वश्यता माननेसे अपना राज्य तो पाया, किन्तु पवित्र देवमूर्तियोंको गंवाया था। मुसलमानोंने देवमूर्तियां लूट मक्के भेज दीं।

१५५६ ई०को अकबर बादशाहने कांगड़ेका दुर्ग अधिकार किया। उसी समयसे यह पार्वतीय भूभाग दिल्लीके साम्राज्यमें मिल गया, केवल दुर्गम सङ्कट स्थान देशी सरदारोंके हाथ रहा। राजपूतोंने दो बार विद्रोही हो कांगड़ा दुर्गके उद्धारको चेष्टा लगायी थी। जहांगीर दोनों बार (१६१५ और १६२८ ई०) कतोच राजकुमारोंको शासन करने आये थे। अन्तको वेतु-सरदार कर देनेपर सम्मत हुये।

जहांगीरने प्राकृतिक सौन्दर्यसे मोहित हो यहां रहनेके लिये ग्रीष्मभवन बनानेको आदेश किया था। आज भी कांगड़ेके गर्गरी ग्राममें उस ग्रीष्मभवनका चिह्न देख पड़ता है।

दिल्लीके मुसलमान बादशाह कांगड़ेके सरदारोंको उपेक्षा करते न थे। सब लोग विशेष सम्मानार्ह रहे। पदके अनुसार मर्यादा मिलती थी। १६४६ ई०को नूरपुरके राजा जगत्‌चन्द्र शाहजहान्‌के आदेशसे १४००० सैन्यका अधिनायकपद पाया। उन्होंने उसी सैन्यके साहाय्यसे बलख और बदख्शान्‌के आक्रमणोंको हराया था।

१६६१ ई०को औरङ्गजेबके राजत्वकाल जगत्‌चन्द्रके पौत्र मान्धाता कुछ दिनके लिये सहूरवर्ती बामियान और गोरबन्दके शासनकर्ता बने। २० वर्ष पीछे उन्होंने दो हजारी मनसबदारका पद पाया था।

१७५८ ई०को कांगड़ेके राजा घमण्डचन्द जालन्धर

यह दुष्ट दरिद्रोंके लिये अति अनिष्टकर है। कभी कभी कौवा फूसके छप्पर या झोपड़ेमें खाद्यादि छिपा रखता है। आवश्यक स्थान न पाते यह अधिकांश तृणादि खींच घर तक उलट देता है।

यह करचोटियेसे बहुत घबराता है। उसे देखते ही काक स्थान छोड़ भागता है। वह भी इसके पीछे पड़ जाता है।

भारतवासियोंके नवान्न पर्वपर काकका बड़ा आदर होता है। प्रत्येक गृहस्थ 'नवान्न' ले घरकी छतपर चढ़ता और इसको आने बोलाया करता है। किन्तु उस दिन काकका आना कठिन पड़ता है। क्योंकि यह सर्वत्र भोज्य मिलनेसे तृप्त रहता है।

२ (क) गङ्गापारी कौवा—'करवस' जातिमें सबसे बड़ा होता है। भारतवर्षके उत्तरांशमें यह अधिक देख पड़ता है। इसीसे हिन्दूस्थानी इसे 'गङ्गापारी' कौवा कहते हैं। सिन्धु, राजपूताना प्रभृति कई देशोंमें यह ग्रीष्मकालको नहीं रहता। शरत्के प्रथम यह आता और वसन्तके पश्चात् ही अफगानस्थान, काश्मीर प्रभृति शीतप्रधान देशोंको चला जाता है। हिमालय प्रदेशमें १४००० फीट ऊंचे यह मिलता, दूसरे पार्वत्य प्रदेशमें देख नहीं पड़ता। बङ्गाल, युक्त प्रदेश और पञ्जाबमें भी यह होता है। गात्र गाढ़ नील आभायुक्त चिक्कण कृष्णवर्ण रहता है। गलदेशके पालक दीर्घ और विरल होते हैं। ऊपरी चोंच (टोंट) का अग्रभाग कुछ वक्र लगता है। ऊर्ध्व चञ्चुकी उच्चता अधिक पड़ती है। पक्ष १५ इञ्च और देह २५से २७ इञ्चतक दीर्घ होता है। चञ्चुके उभय पार्श्वोंमें गढ़ा रहता है। चञ्चु और पदद्वय घोर कृष्ण वर्ण होता है। ऊर्ध्व चञ्चुका अग्रभाग कुछ वक्र रहता है। इसे बङ्गाली 'डोम काग' अंगरेज 'रावेन' (Raven), रूस 'कर्वो' स्वीडनवासी 'कार', डिनमार 'रौन', जर्मन 'कोलक्रेड', फरासीसी 'करबो', इटालीय 'कर्वो', रोमक 'करवस्', स्पेनीय 'एल कुरवर्वो', पश्चिम भारतीय द्वीपवासी 'कप कप मिच', और एमकंदमानी 'तुलुपाक' कहते हैं। वैदेशिक शाकुनशास्त्रमें इनका करवस् कोराक्स (Corvus Corax) लिखते हैं।

हिमालय और युरोपमें रहनेवाला डोमकाक अधिक भीरु होता है। यह कभी लोकालयमें आना नहीं चाहता। किन्तु भारतके अन्यान्य स्थानोंका डोम-काक देशी कौवेकी भांति निर्भीक रहता और घरोंमें इच्छानुसार आया जाया करता है। यह अति द्वन्द्वप्रिय है। डोमकाक लड़ते लड़ते इतना उन्मत्त पड़ता, कि दोमें एक न एक अवश्य मरता है। सिन्धुप्रदेशमें प्रति वर्ष शरत्कालको जब इनका दल आता, तब अनेकोंकी मृत्यु धर दबाता है। इससे लोग अनुमान लगाते कि डोम काक स्वभावसुलभ द्वन्द्वप्रियताके कारण ही मर जाते हैं। सिन्धुप्रदेशवाले जातिगत कण्ठस्वरसे भिन्न घण्टे की ध्वनिकी भांति एक प्रकार शब्द निकाल सकते हैं। युक्तप्रदेशमें यह घास फूसके मैदान या हलके जङ्गलमें बड़े बड़े वृक्षोंकी शिख पीपर घोंसले बनाते हैं। इसके चार-पांच अण्डे होते हैं। प्रायः पौष माससे फाल्गुन तक यह अण्डे देते हैं। अण्डे हरित् आभायुक्त तरल नील वर्ण होते हैं। उनपर काले मटमैले, बैंगनी और भाव रङ्गके धब्बे पड़ जाते हैं।

(ख) भूटानका डोमकाक—हिमालयके ऊर्ध्वतम प्रदेश, काश्मीर, कुमायूं राज्य और तिब्बतमें एक प्रकारका २८ इञ्च दीर्घ काक होता है। इसका पक्ष १८ इञ्च बढ़ता है। ऊर्ध्व चञ्चुके मूलकी उच्चता अधिक रहती और पूंछ भी दीर्घ लगती है। अन्यान्य अवयव साधारण देशीय काककी भांति होते हैं। दो चार वैदेशिक शाकुनशास्त्रविद् इसे एक स्वतन्त्र जाति मान 'करवस् टिबेटेनास्' (Corvus Tibetanius) नामसे अभिधान करते हैं। किन्तु आकारकी सामान्य दीर्घता छोड़ इसमें कोई अन्य विभिन्नता देख नहीं पड़ती। इसीसे बहुतसे लोग तिब्बती कौवेको देशीयोंमें गिनते हैं।

युरोपीय शाकुनशास्त्रविद् कहते कि डोमकाक (Raven) मनुष्योंके कण्ठस्वरका अतिसुन्दर अनुकरण कर सकते हैं।

(ग) दाढ़चूड़ (गुम्बाकी चोटीवाला) काक—मरुप्रदेशमें होता है। इसका कपाल और मस्तक

और इरावती तथा शतद्रु नदीके मध्यवर्ती प्रदेशमें शासनकर्ता बनाये गये।

दिल्लीके बादशाहोंका पूर्व पराक्रम विलुप्त होनेसे राज्यमें एक प्रकारकी अराजकता आई थी। उसी समय प्रायः १७५२ ई०को राजपूत-सरदार स्वाधीन हो कांगड़ेका अधिकार उपभोग करने लगे। केवल मात्र दुर्ग अहमद शाह दुरानीके आयत्तमें रहा। १७७४ ई०को जयसिंह नामक किसी सिख सरदारने कौशल-क्रमसे कांगड़ेका दुर्ग अधिकार किया, किन्तु १७८५ ई०को कांगड़ेका राजपूत-सरदार संसारचन्द्रको सौंप दिया। इतने दिन पीछे कांगड़ेका दुर्ग फिर कतोच-राजवंशके हस्तगत हुआ। कतोचराज संसारचन्द्र अपने पूर्वपुरुषोंकी भांति स्वाधीन भावसे राजत्व चलाने लगे। पार्वतीय प्रदेशस्थ नाना स्थानोंके सर-दारोंने उन्हें कर दिया। दिग्विजयको निकलते समय सब सरदार सैन्य ले संसारचन्द्रके अनुवर्ती बनते थे। वर्षमें एक एक बार प्रत्येक सरदार राजदर्शनको आने पर बाध्य रहा। संसारचन्द्रने २० वर्ष प्रबल प्रतापसे राजत्व चलाया। सम्भ्रम और यशमें यह सब कतोच राजाओंसे श्रेष्ठ थे। १८०५ ई०को संसारचन्द्र और विलासपुरके राजाने शतद्रु और घर्घरा नदी-मध्यवर्ती प्रदेशके गोरखा-सरदारोंसे साहाय्य मांगा था। गोरखा शतद्रु नदी पार आये। वह महलमोरी नामक स्थानमें (१८०६ ई०) कतोच-राजपूतों पर टूट पड़े। बाहु-बलके प्रभावमें राजपूतोंने हार पीठ देखायी। गोरखा-सरदार कांगड़े राज्यमें घुस दारुण अत्याचार मचाने लगे। कांगड़ा रक्तके स्रोतमें डूबा था। नगर, ग्राम, उपवन, सुन्दर राजप्रासाद प्रभृति सब उजड़ गये। उस समय कांगड़ा राज्य श्मशान और मरुभूमिके समान था। कतोच-राजकुमारोंने आप छोड़ गिरिकी गुहामें आश्रय पाया। ऐसा लोमहर्षण-काण्ड क्या कोयी कभी भूल सकता है। कांगड़ेके प्रत्येक ग्राम एवं प्रत्येक नगरमें लोगोंके हृदय पर वह भीषण व्यापार खटकता है।

तीन वत्सर अत्याचार देखने पीछे संसारचन्द्रने महाराज रणजित सिंहसे साहाय्य मांगा। १८०८ ई०को रणजितसिंहने गोरखाओंके विरुद्ध युद्धकी घोषणा लगायी थी। भीषण समर आरम्भ हुआ। बड़े कष्टमें रणजित्को जय मिला। गोरखा शतद्रु उतर गये। प्रथम उन्होंने समस्त कांगड़ा राज्य संसार-चन्द्रको सौंप दिया, केवल कांगड़ेका दुर्ग और ६६ ग्रामोंका कर सैन्यव्ययके निर्वाहको अपने हाथ रख लिया। पीछे रणजित् धीरे धीरे पहाड़ी सरदारोंके अधीनस्थ स्थान अपने समयमें मिलाने लगे। १८२४ ई०को संसारचन्द्र मरे। उनके पुत्र अनिरुद्धचन्द्र राजा बने थे। अनिरुद्धचन्द्रने केवल चार वर्ष राजत्व किया। रणजित् सिंहने अपने मन्त्री ध्यानसिंहके पुत्रसे अनिरुद्धकी भगिनीका विवाह ठहराया। कतोच राजकुमारने इससे अपनेको अपमानित होते देख राज्य छोड़ा और हरिद्वारकी ओर मुंह मोड़ा। उसी समय समस्त कांगड़ा महाराज रणजित्सिंहके राज्यमें मिल गया। १८४५ ई०को प्रथम सिख-युद्ध होने पर अंगरेजोंने कांगड़ा अधिकार किया। १८४५ ई०को मूल-तानी विद्रोहके पीछे यहांके पहाड़ी सरदारोंने विद्रोह बढ़ानेकी चेष्टा चलायी थी, किन्तु कुछ सिद्ध न पायी। फिर सिपाही-विद्रोहके समय सूचना मिली कि कांगड़े-में सामान्य विद्रोहकी आग भड़की है। उस समय छह विद्रोही सरदारोंको फांसी दी गयी। आज तक फिर कांगड़ेमें कोयी अशान्ति न फैली।

इस जिलेके प्रधान नगरका भी नाम कांगड़ा है। यह अक्षा० ३२° ५४′ ११″ उ० और देशा० ७६° १०′ ४६″ पू० पर अवस्थित है। पहले यह नगर नगर-कोट नामसे विख्यात था। कांगड़ा बाणगङ्गा और विपाशा नदीसङ्गमके निकट पर्वत बना है। इस नगरमें एक बहुप्राचीन दुर्ग है। भवानी और भवानी-पतिका पूर्वनिर्मित मन्दिर सुन्दर है। कांगड़ेमें जड़ाव और मीनेका काम अच्छा बनता है।

कांगड़ेके लोग साहसी, बलशाली, नम्र और स्वाधीनचेता हैं। राजपूत अधिक देख पड़ते हैं।

यहां चिकित्सकोंका एक दल रहता, जो नक-कटोंको अच्छा कर सकता है। अकबर बादशाह-उद्दीन एक चिकित्सक थे। उन्होंने नाक बनानेको

पाटलाभ (गुलाबी) पिङ्गलवर्ण रहता है। थोड़ेसे अंशमें बैंगनी रंगकी चिक्कणता झलकती है। ऊपरी स्तरके पालक चिक्कण एवं कृष्णवर्ण और निम्न स्थानीय पाटलाभ पिङ्गलवर्ण लगते हैं। पिङ्गलवर्ण पालकोंका प्रान्तभाग श्याम होता है। चञ्चुका पुट काला पड़ता है। दोनों पद भी काले ही रहते हैं। दैर्घ्य २२ इञ्च है। सिन्धुप्रदेशके याकूबाबाद और कारखानेके मरुप्रदेशमें शीतकालमें भी यह देख पड़ता है। पहाड़ी डोमकाक (C. corax)से इसके गात्रका वर्ण भिन्न लगता है। दूसरा पार्थक्य गलदेशके पालकोंकी क्षुद्र आकृति और देहके परिमाणकी लघुता है। इसका वैज्ञानिक नाम 'करवस् अम्ब्रिनस्' (C. Umbrinus) अर्थात् पाटलधूम्र काक है। यह भारतके युक्तप्रदेशसे मिसर और एशियाके पश्चिम तथा दक्षिणस्थ देश तक सकल स्थानोंमें मिलता है।

२ कौड़ियाला कौवाको उत्तर-भारतीय 'डांड' या 'डाम कौवा', दक्षिणमें 'घेरो कौवा', तैलङ्ग 'काकी', तामिल 'काका', सिंघल 'कलकधो', भूटानी 'उलक' और अनेक अंगरेज 'रावेन' (Raven) कहते हैं। किन्तु शाकुनतत्त्वज्ञ अंगरेज पण्डितोंने इसका नाम 'इण्डियन कर्बी' (Indian Corby) रखा है। इसकी श्रेणीके कई भेद हैं। उनमें कुछ नीचे लिखते हैं।

(क) गलित मांसभुक्—भारतीय कौड़ियाले कौवेके ऊपरी पर चिकने और खूब काले होते हैं। किन्तु नीचेवाले अधिक कृष्णवर्ण नहीं रहते। पुच्छके पालकोंका संस्थान ईषत् गोलाकार लगता है। पक्ष विशेष दीर्घ पड़ता और प्रायः पुच्छके अन्ततक विस्तृत रहता है। चञ्चुका पुट नरम बैठता है। यह चञ्चुका मध्यस्थ भाग उच्च और अग्रभाग वक्र होता है। गलदेश (घाड़) और चञ्चुपार्श्वद्वयके पालकोंमें चिक्कणता कम झलकती है। इस स्थानके पालक कपोतके पालेकी भांति लगते हैं। उनमें खूंटी (डांठि) देख नहीं पड़ती। कण्ठ, पद और अङ्गुलिका वर्ण काला होता है। यह १८ इञ्च दीर्घ रहता है। पक्षका ग्यारहसे चौदह, पुच्छका सात, पैरकी खूंटीका दोसे अधिक और कण्ठका दैर्घ्य ढाई इञ्च है।

इसकी अंगरेजी शाकुनशास्त्रमें 'करवस माक्रोरिंकस' (C. macrorhynchus) अथवा 'करवस कलमिनाटस' (C. culminatus) लिखते हैं। यह भारतवर्षके वनों, पर्वतों, लोकालयों प्रभृति सकल स्थानोंमें रहते हैं। पूर्व उपद्वीप और भारतीय द्वीपपुञ्जमें भी इनकी कोई कमी नहीं। ग्रामकाककी भांति अगण्य न रहते भी अन्यान्य जातीयोंकी अपेक्षा यह संख्यामें अधिक बैठते हैं। लोकालयकी अपेक्षा इन्हें वन अथवा पर्वतमें रहना अच्छा लगता है। यह प्रधानतः मृत जन्तुका मांसादि खाते हैं। इसीसे अंगरेज इन्हें 'कर्बी' या 'कैरियन' अर्थात् 'गलितमांसभुक्' (सड़ा गोश्त खानेवाले) कहते हैं। यह भी अण्डे देते समय किसी दुर्गम वनमें निरुपद्रव वृक्षपर घोंसला बनाते हैं। घोंसला सूखी घास, पत्ते और बालसे कोमल तथा उष्ण कर लिया जाता है। एक बारमें तीन-चार अण्डे होते हैं। अण्डा हलका हरा रहता और उसपर भूरा भूरा दाग पड़ता है। वैशाखसे श्रावण मासके मध्य तक अण्डे देनेका समय है। इनके भी घोंसलोंमें कोयल अपने अण्डे रख देती है। यह बड़े अनिष्टकारी हैं। छोटे छोटे मुर्गी, कबूतरके बच्चे और चिड़े पकड़ ले जाते हैं। बकरीका छोटा बच्चा भी इनके चञ्चुपुटाघातसे मृत्युमुखमें पड़ता है। दूसरे पक्षियोंका घोंसला या अण्डा तोड़ते देख इनको 'राजकाक' खदेड़ता है। अनेक अंगरेज इन्हें 'जङ्गल-क्रो' (Jungle crow) कहते हैं।

(ख) युरोपीय 'कारियनक्रो' (Carrian crow) बिलकुल भारतीय गलित मांसभुक्की भांति होता है। केवल उसके गात्रका वर्ण घोर कृष्ण और कपोल (गाल)का पालक मृदु नहीं रहता। सर्वशरीर चिक्कण लगता है। पुच्छका पालक आठ, पक्ष बारह चौदह और कण्ठ तीन इञ्च बढ़ता। केवल भारत और काश्मीरमें यह काक देख पड़ता है। इस जातीय पक्षीका आदि वासस्थान साइबेरियाके पूर्वांशमें इनसीनदीसे प्रशान्त-महासागर पर्यन्त है। उस स्थानसे दक्षिण काश्मीर और पश्चिम इङ्गलैण्ड पर्यन्त समस्त देशमें यह रहते हैं। इन्हें अंग-

चिष्किरमा निकाली। पकबर बादशाहने गुप्तकीपससे सन्तुष्ट हो उन्हें कांगड़ेका कुछ स्थान जागीर दिया था।

इस जिलेमें स्वर्ण, रौप्य, लौह, ताम्र, रसाञ्जन, हीरक, मर्मर प्रभृति नानाप्रकार बहु मूल्य द्रव्य उत्पन्न होते हैं।

उद्भिज्ज पौर पण्यद्रव्यमें यव, गेहूं, चना, शण, कार्पास, इक्षु, तमाखू, चाय, मधु, लवण, पौर धान्य प्रधान है।

कांगड़ी (हिं॰ स्त्री॰) सन्तप्त क्षुद्र पात्र विशेष, एक छोटी अंगीठी। काश्मीरके अधिवासी शीतसे परित्राण पानेको इसे कण्ठमें बांध वक्षः स्थलपर लटका लेते हैं। यह पद्म रके काष्ठसे प्रस्तुत होती है। कांगड़ीके भीतर मृत्तिका चढ़ा देते हैं।

कांगरू, कंगरू देखो।

कांग्रेस (अं॰ स्त्री॰=Congress) सभा, परिषद्, मुल्कोंका प्रदेशोंका जलसा। इसमें विभिन्न प्रदेशोंके प्रतिनिधि एकत्र हो राजनीतिक विषयोंपर अपना अपना मन्तव्य प्रकाश करते हैं। संयुक्त अमेरिकाकी राजसभा भी कांग्रेस ही कहाती है। भारतमें प्रति वर्ष जातीय कांग्रेस (National Congress) होती है।

कांच (हिं॰ स्त्री॰) १ कांग, धोतीका एक छोर। यह दोनों टांगोंके बीचसे निकाल कमरपर खोंसी जाती है। २ गुदावर्त, गुदाका भीतरी भाग। कभी कभी जोरसे कांखनेपर यह बाहर निकल आती है।

(पु॰) ३ मिश्र धातुविशेष, एक मिलावटी धात। यह बालुका पौर क्षारको अग्निमें गलानेसे प्रस्तुत होता है। इसमें काचप, पात्र, दर्पण प्रभृति अनेक द्रव्य बनते हैं। काच देखो।

कांचरी (हिं॰ स्त्री॰) कञ्चुलिका, सांपकी केंचुल।

कांचली, कांचरी देखो।

कांचा, कचा देखो।

कांचू (हिं॰ पु॰) १ कञ्चुलिका, केंचुल। (वि॰) २ कांचका रोगी, जिसके कांच निकल पड़े।

कांछना, काछना देखो।

कांछा (हिं॰ पु॰) १ कांच, कमरमें पीछे खोंसा जानेवाला धोतीका किनारा। २ लंगोटा, चिट। (स्त्री॰) ३ आकांक्षा, ख्वाहिश।

कांजी (हिं॰ स्त्री॰) १ काञ्जिक, एक रस। यह खट्टी रहती पौर कई प्रकारसे बनती है। इसमें अचार पौर बड़ा भी भिगोया जाता है। कांजी बनानेके चार विधि नीचे लिखते हैं—

१ चावलका माड़ किसी मृत्पात्रमें दो-तीन दिन रख लवणादि डालनेसे यह तैयार होती है।

२ राई पीसकर पानीमें घोल दी जाती है। फिर लवङ्ग, जीरक, शुण्ठी प्रभृति पीसकर मिला उसको मृत्पात्रमें रख छोड़ते हैं। खट्टी होनेसे पहले बड़ा पौर अचार भी डाल दिया जाता है।

३ दहीका पानी राई पौर नमक मिलाकर रखनेसे उठनेपर कांजी कहाता है।

४ शर्करा पौर निम्बूका रस अथवा सिरका मिलाकर पकाया पौर किमाम बनाया जाता है।

मट्ठे, दही या फटे दूधके पानीको भी कांजी कहते हैं। काञ्जिक देखो। २ कारागारका गृहविशेष, कैद खानेकी एक कोठरी। इसमें कैदियोंको मांड पिलाया जाता है।

कांजीवरम् (हिं॰) काञ्चीपुर देखो।

कांजी हाउस (अं॰ पु॰=Kine-house) पशुशाला विशेष, मवेशीखाना। इसमें कृषि आदिको क्षतिग्रस्त करनेवाले पशु सरकार रखती है। फिर प्रभु दण्ड स्वरूप कुछ पैसा रुपया दे उन्हें छोड़ता है। जिसकी कृषिकी हानि पहुंचाते, वह पशुवोंको पकड़ कांजी-हाउसमें हांक आते हैं।

कांट (हिं॰) कण्टक देखो।

कांटा (हिं॰ पु॰) १ कण्टक, खार। यह तीक्ष्णाग्र अङ्कुर होता है। कतिपय वृक्षोंकी शाखोंपर सूचीकी भांति कांटा निकलता पौर पुष्ट होनेपर कठिन पड़ता है। २ पदकण्टक, पैरका खूंट। यह मोर, मुर्गे, तीतर वगैरह नर चिड़ियोंके पैरमें निकलता है। लड़ाईमें उक्त पक्षी इसीसे प्रहार करते हैं। कांटेका दूसरा नाम खांग है। ३ गलरोग विशेष, गलेकी एक बीमारी। यह पक्षियोंके गलदेशमें उत्पन्न होता

रेजी शाकुनशास्त्रमें 'करवस् कोरोन' (C. Corune) कहते हैं।

(ग) काश्मीरमें दूसरी तरहका एक काक होता है। यह परिमाणमें गलित मांसभुक्से क्षुद्र लगता है। गात्रका वर्ण अन्धकारकी भांति काला रहता है। यह अतिद्रुत उड़ सकता है। चीलसे इसका विषम विवाद है। यह भी गलित मांस खाता है। काश्मीर, शिमला, और डुगशायी उपत्यकामें इसे देखते हैं। यह पार्वतीय काक (पहाड़ी कौवा) नामसे विख्यात है। अंगरेजी शाकुनशास्त्रमें इसे डांक काक और ग्राम्य काक मध्यवर्ती काक 'करवस् इण्टरमेडियस्' (C. intermedius) कहते हैं।

(घ) सूक्ष्मचञ्चु—मात्र नीलमिश्रित कृष्णवर्ण होता है। मस्तक, स्कन्ध, पृष्ठ, उदर और वक्षका वर्ण अपेक्षाकृत तरल रहता है। कपाल गाढ़ कृष्णवर्ण लगता है। इसका दैर्घ्य १८ इञ्च है। पक्ष साढ़े बारह, पुच्छ सात, चञ्चुपुट ढाई इञ्च दीर्घ बैठता है। किन्तु चञ्चुपुट पौन इंचसे ज्यादा मोटा नहीं होता। अंगरेजी शाकुनशास्त्रमें इसका नाम 'करवस टेनुइरोसट्रिस्' रखा है।

एतद्भिन्न चीनदेशीय 'करवस् पेकटोरालिस' (C. pectoralis) और यवद्वीप 'करवस एङ्का' (C. enca) भी डांडकाक जातीय हैं। यवद्वीपका 'करवस एङ्का' सूक्ष्मचञ्चु काकसे मिलता, किन्तु क्षुद्रकाय रहता है। चीन देशीय 'पेकटोरालिस' भारतीय डांड़काककी जातीय होता है।

ब्रह्मदेशीय ग्राम्यकाक—इसका कपाल, मस्तक, चिबुक और कण्ठ चिक्कण कृष्ण होता है। स्कन्ध (घाड़) और वक्षपार्श्व तरल पिङ्गलवर्ण रहता है। कर्णावरक और निम्न देशके पालक पिङ्गलाभ मिश्रित कृष्णवर्ण देख पड़ते हैं। पक्ष, पुच्छ और अवशिष्ट पालक चिक्कण कृष्णवर्ण लगते हैं। इसके कृष्णवर्ण पालकोंसे मयूरकण्ठकी भांति नील और हरिद्वर्णमिश्रित आभा निकलती है। स्वभाव बिलकुल भारतीय ग्राम्यकाकसे मिलता है। समस्त ब्रह्मदेशसे दक्षिण मरगुई और पश्चिम आसामसे मणिपुरके पूर्वाञ्चल तक यह रहता, अन्यत्र देख नहीं पड़ता। इसका ब्रह्मदेशीय नाम 'किगियान' है। वैदेशिक शाकुनशास्त्रमें 'करवस् इनसोलेन्स' (C. insolens) लिखते हैं।

५ चोटियाला कौवा—इसके मस्तकपर काकातूआकी भांति चोटी रहती है। मस्तक, स्कन्ध, गलदेश, वक्षःस्थलका ऊर्ध्वभाग, पक्ष, पुच्छ और उरु चिक्कण देखते हैं। अवशिष्ट पालक गङ्गाकी बालू जैसे धूसर होते हैं। ऊपरी पालक कृष्णवर्ण और नीचेवाले पाटल लगते हैं। पैर, कण्ठ और उंगलीका रंग काला रहता है। दैर्घ्य १८ इञ्च है। पुच्छ साढ़े सात, पक्ष साढ़े बारह, पदकी खूंटी दो और चञ्चुका दैर्घ्य दो इञ्च है। साधारण अंगरेजीमें इसे 'हुडेड क्रो' (Hooded Crow) कहते हैं। अंगरेजी शाकुनशास्त्रसम्मत नाम 'करवस् कारनिक्स' (C. Cornix) है। इसकी तीन श्रेणियां होती हैं। आकृतिका प्रभेद स्पष्ट देख पड़ता है। एक दूसरेको सहजमें ही पहचान सकते हैं। सच्चा चोटियाला कौवा (True Corvus Cornix) भारस्योपसागरके उपकूलसे पश्चिम युरोप पर्यन्त मिलता है। कृष्णवर्ण पक्षको छोड़ इसके दूसरे पालक पांशुल धूसर होते हैं। एक जातीय 'करवस कैपेलेनास' (C Capellanus) पारस्य-उपसागरके उपकूल और मेसोपोटेमिया प्रदेशमें रहता है। इसके पर सफेद और कलम काले होते हैं। आकार वर्णादिकी बात पहले ही बता चुके हैं। ग्रीष्मकालमें यह पञ्जाबके उत्तरपश्चिम कोण, हजारा प्रदेश और गिलगिट प्रान्तमें देख पड़ता है। इसका स्वभावादि मांसभुक् काककी भांति होता है। किन्तु यह भक्ष्य मिलनेकी आशासे इसे दल बांध मैदानमें घूमना पड़ता है। भारतवर्षमें न तो यह घोंसला बनाता और न अण्डे ही देता है। साइबेरियामें चोटियाला गलित मांसभुकोंके साथ सहवासादि रख सन्तान उत्पादन करता है। यह वर्णसङ्कर काक इस देशमें देख नहीं पड़ता।

६ काश्मीर प्रदेश, पश्चिम एशिया और युरोपमें एक प्रकारका कौड़ियाला कौवा होता है। अंगरेजी शाकुनशास्त्रके मतसे यह भिन्न श्रेणीभुक्त है। इसके

सब अवयवोंका वर्ण काला रहता है। मस्तक, स्कन्ध, और निम्न देशके पालकोंमें नीलवर्णकी चिक्कणता तथा पाटलकी आभा झलकती है। परिमाण दण्डकाकसे मिलता है। इतरविशेष सामान्य है। अंगरेजीमें इसे 'रुक' (Rook) कहते हैं। शाकुनशास्त्रका वैज्ञानिक नाम 'करवस् फ्रुगिलेगस' (C, Frugilegus) है। पांच मास बीतते ही इसके शावककी नासाका लोम (Nasal bristles) गिर जाता हैं। फिर दो मास पीछे मुखके सम्मुख भाग अर्थात् चञ्चुके मूलमें बिलकुल पालक नहीं रहते। यह भारतवर्षमें कहीं रहता या सन्तानोत्पादन करता है। इसे शस्यभोजी देखते हैं। यह चुगनेके लिये दलदल मैदानमें घूमता और नदीस्रोत तथा जलाशयमें कीटादि ढूंढ़ता है।

७। काश्मीरमें भी एक क्षुद्राकार दण्डकाक होता है। इसे क्षुद्रवपु दण्डकाक कहते हैं। मस्तक तथा कपाल चिक्कण कृष्णवर्ण और स्कन्ध गाढ़ धूसरवर्ण रहता है। मस्तकका पार्श्व एवं गलदेश मरस धूसरवर्ण होता है। प्रायः आधे गलदेशमें सफेद धारियां पड़ जाती हैं। स्करका पालक और पुच्छ सुचिक्कण नीलाभ कृष्णवर्ण लगता है। परका कलम भूरा होता है। गलदेशका निम्नभाग कृष्णवर्ण रहता है। अन्यान्य पालक भी स्लेटकी भांति वर्णविशिष्ट देख पड़ते हैं। दीर्घता १३ इंच है। पुच्छ साढ़े पांच, पद नौ, पैरकी खूंटी डेढ़ और चोंच डेढ़ इंच है। अंगरेजीमें इसे 'जाकड' (Jackdaw) कहते हैं। शाकुनशास्त्रके अनुसार वैज्ञानिक नाम 'करवस मोनेडुला' (C, monedula) है। भारतके मध्य काश्मीर और उत्तर पश्चिममें यह देख पड़ता है। शीतकालमें अम्बाला प्रदेशस्थ पर्वतके निकट भी इसे पाते हैं। काश्मीरमें यह पुरातन अट्टालिकाओं और दरोंपर घोंसला लगा रहता है। इसका अण्डा ४से ६ इंचतक दीर्घ होता है।

८ शेतकाक—काककी भांति अविकल आकारका एक पक्षी है। इसका समस्त अवयव काकातूआकी भांति सफेद रहता है। पदद्वय, चक्षु एवं चञ्चु एवं चञ्चुका आकार भी काकातूवेसे मिलता है। इसे सफेद कौवा कहते हैं।

काकके सम्बन्धमें कई प्रवाद सुन पड़ते हैं। उनमें कुछ नीचे लिखे जाते हैं,—

(१) कौवे दो आंखसे देख नहीं सकते। कारण एक दिन राम और सीता उभय वनमें घूमते थे। इन्द्रके पुत्र जयन्त सीताका रूप देख मोहित हुये और काकरूपसे उनका वक्षोवसन खोंच ले गये। नखाघात लगते सीताके स्तनसे रक्त गिरा था। रामने यह देख बाण छोड़ा। वह काकके चक्षुमें जाकर लगा था। उसी दिनसे कौवोंकी एक आंख फूटी है।

(२) किसी गृहस्थके मकानपर बैठ एक काकके दूसरेका गात्र काट निकालते या मस्तकस्थित पालक संवारते सधवापुत्रसम्भाविता वधू या कन्याके देख पानेसे उसी मासके ऋतुस्नान पीछे वह वधू या कन्या गर्भिणी हो जाती है।

(३) काकका पालक छूनेसे पूर्वधर्म विनष्ट होता है। बहुतसे लोग इसी विश्वास पर पर छूकर उनको नष्ट डालते हैं।

(४) काक बिना झगड़े दूसरे समय नहीं मरता।

(५) काक सब सवेरे उठ बोलता और उड़ता किन्तु आहार ग्रहण नहीं करता, तब प्रग डहेगारी चलनेपर अग्रसर रहता है।

(६) पक्षियोंमें काक चण्डालजातीय है। यह सबका देह परिष्कार करता है।

(७) काकका मांस तिक्त रहता और किसी पशु-पक्षीके खाद्यमें नहीं लगता। स्वार्थपरताकी तुलनामें कहा जाता है काक सबका मांस खाता, किन्तु उसका मांस किसी काम नहीं आता। काकरुत देखो।

मदनपालके मतसे इसका मांस लघु, अग्निदीपक, बृंहण, बलकारक, आयु एवं चक्षुके लिये हितकर और क्षत तथा क्षयरोगनाशक है।

५ एक कपर्दकका चतुर्थांश। ६ द्वीपविशेष, एक टापू। ७ तिलकविशेष। ८ शिरोऽवक्षालन। (त्रि०) ९ कुत्सित भावसे गमनकारी, घराक और पर चलनेवाला। १० अतिदुष्ट, बड़ा बदमाश।

फलानि यस्याः, काकतुण्ड-ठन्-टाप्। १ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची। २ महाश्वेतकाकमाची, बहुत सफेद केवैया। काकचिञ्चा, घुंघची।

काकतुण्डी (सं॰ स्त्री॰) काकं ईषत् दुःखं तुण्डति नाशयति, तुण्डि वधे अच्-ङीप्। राजपित्तल, किसी किस्मकी पीतल। काकतुण्डस्येव आकृतिर्यस्याः। २ स्वनामख्यात लता, कौवाटोंटी। इसका संस्कृत पर्याय—काकादनी, काकपीलु, काकशिम्बी, रक्तला, आह्लादनी, वक्रशल्या, दुर्मोहा, वायसादनी, आह्ननखी, वायसी, काकदन्तिका और ध्वांक्षदन्ती है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु, उष्ण, तिक्त, द्रव, रसायन, वायुदोषनाशक, रुचिकारक और पलित स्तम्भक (बालोंकी सफेदी रोकनेवाली) होती है। ३ गुञ्जा, घुंघची। ४ लघुरक्त काकमाची, छोटी लाल केवैया।

काकतुल्य (सं॰ त्रि॰) काकस्य तुल्यम्, ६-तत्। काकके समान, कौवेके बराबर, चालाक।

काकतेय (काकत्य)—दक्षिणापथका एक प्राचीन राजवंश। इस वंशवाले प्रथम कल्याणके चालुक्य राजाओंद्वारा शासित रहे। पाश्चात्य पुरातत्त्वविदोंके मतमें ई॰ एकादश शताब्दके शेष भागसे इस वंशका अभ्युदय हुआ।

इस राजवंशमें जिन जिन राजाओंके नाम मिलते, उनमें काकतिप्रलय प्रधान हैं। कहीं कहीं ऐसी बातें सुन पड़तीं हैं कि प्रलय राजाकी पटरानी काकती देवीकी पूजा करती थीं। राजाभी पत्नीके पीछे चल काकती देवीके उपासक बने। इसीसे उन्होंने अपना नाम काकतिप्रलय रख लिया। घटनाक्रमसे राजाने एक शिवलिङ्ग पाया। सम्भवतः वह पारस पत्थर था। उस प्रस्तरके गुणसे राजाको विस्तर धन मिला। पत्थर बहुत भारी था। किसीमें उसको हिलानेका सामर्थ्य न था। इसीसे प्रलयराजको अनमकोण्ड छोड़ ८८० शक (१०५८ई॰)में उक्त शिवलिङ्ग मिलनेके स्थान पर नया नगर बसाना पड़ा। प्रथम काकतिप्रलय चालुक्य राजाओंके अधःपतनसे स्वाधीन हुए। पुत्रजन्म लेने पर दैवज्ञोंने राजासे कहा था,-यह पितृघाती होगा। दैवज्ञोंकी बातसे वह पुत्रको वनमें छोड़ आये। किसी व्यक्तिने पाकर उसे पुत्रकी भांति पाला पोसा। वयोप्राप्त होनेपर वह पारसलिङ्गका रक्षक बना। घटनाक्रमसे किसी रातको प्रलयराज मन्दिरमें देवदर्शन करने गये। साथमें नौकर चाकर कोई न था। राजकुमार राजाको गुप्तभावसे जाते देख सोचने लगे, सम्भवतः चोर आता है। फिर उनसे रहा न गया। उन्होंने तलवार आघात लगाया था। प्रलयराज धरा पर गिर पड़े। अन्तमें उन्हें मालूम हुआ कि वह उसी पुत्रको कार्य था, जिसको मातृक्रोड़से निकाल अपनी रक्षाके लिये वनमें छोड़ा। उन्होंने देखा अदृष्टका लेख नहीं मिटता। पुत्रका क्या दोष था। पुत्रके हाथ उन्हें मरना रहा। अन्तिम काल पर राजाने पुत्रको अपना राज्य दे डाला।

काकतिप्रलयके पुत्रका नाम रुद्रदेव था। उन्होंने पितृहत्यारूप महापातकके प्रायश्चित्तमें सहस्र शिवमन्दिर बनवाये। उनके बाहुबलसे कटक और वस नादके राजाने वश्यता मानी थी। किन्तु कनिष्ठभ्राता महादेवने विद्रोही हो युद्धमें उनको हराया और राजसिंहासन पाया। रुद्रदेव मारे गये। कुछ दिन पीछे महादेवगिरिके राजासे लड़ने चले और युद्धमें कट मरे। उनके पीछे रुद्रदेवके ज्येष्ठपुत्र गणपतिदेव राजा हुए। उन्होंने देवगिरिके रामराजासे युद्धमें पितृव्यके मृत्युका बदला लिया था। राम राजाको कर देना पड़ा। उन्होंने अपनी कन्या प्रदान कर गणपति देवका आनुगत्य माना था। गणपतिदेवने पल्लिगारोंके यत्नसे वेलनाद, नेलूर प्रभृति प्रदेश अधिकार किये। वह बड़े जैनविद्वेषी थे। उन्होंने तोड़ फोड़ असंख्य जैनमन्दिरोंके स्थान पर शिवलिङ्ग लगवा दिये। फिर गणपतिदेवने अनेक नगर पत्तन बसाये। राजधानीका नाम 'एकशिलानगर' रखा गया और चारो ओर प्राचीर बना। उनके राजत्व कालमें अनेक तेलङ्ग कवियोंने जन्म लिया था। मन्त्री गोपराजके यत्नसे नियोगी ब्राह्मण मामूली मोहरिर बनाये गये। वैदिक ब्राह्मणोंने इस नियमका घोर प्रतिवाद किया था। किन्तु राजमन्त्रीका आदेश कोई टाल न सका।

काककङ्गु, (सं० स्त्री०) काकप्रिया कङ्गुः मध्यलो। धान्यविशेष, चीना। 'चीनकङ्गु काककङ्गु' (हेम ११७४)

काककण्टक (सं० पु०) जलचर पक्षिविशेष, पानीकी एक चिड़िया।

काककर्कटी (सं० स्त्री०) खर्जूरी वृक्ष, खजूरका पेड़।

काककला (सं० स्त्री०) काकस्य कला अवयव इव अवयवो यस्याः, मध्यपदलो०। काकजङ्घावृक्ष, एक पेड़।

काककुड्मल (सं० क्ली०) नीलपद्म, आसमानी कंवल।

काककुष्ठ (सं० क्ली०) कङ्कुष्ठ, दवामें पड़नेवाली एक मट्टी।

काककूर्ममृगाखु (सं० पु०) कौवा कछुवा, हिरन और चूहा।

काकघ्नी (सं०स्त्री०) काकं हन्ति, काक-हन्-ट ङीप्। महाकरञ्जवृक्ष, बड़े करौंदेका पेड़।

काकचरित्र (सं० क्ली०) काकस्य चरित्रं वर्णितं यत्र, बहुव्री०। शाकुनशास्त्रका अंशविशेष, इल्मफ़िशूनीका एक हिस्सा। इसमें यही उपदेश लिखते काकके शब्द विशेष चेष्टादिसे कैसे लाभालाभ मालूम कर सकते हैं। वसन्त राजप्रणीत शाकुन शास्त्रमें कहा है—

काक पांच श्रेणियोंमें बांटा है,—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज। वर्ण, स्वर और स्वभावसे यह भेद पहचान लेते हैं। जो परिमाणमें वृहत् कृष्णवर्ण, दीर्घ, विशाल मस्तकयुक्त और गम्भीरस्वर रहते, उन्हें विप्रजाति कहते हैं। स्निग्धवर्ण, विद्रुम अथवा नील चञ्चु, तीक्ष्णरव और अतिशय बलवान् काक क्षत्रियजाति हैं। पाण्डु वा नीलवर्ण, श्वेत अथवा नीलचञ्चु और शब्द अस्पष्ट वैश्यजाति होते हैं। भस्मकी भांति वर्णविशिष्ट, कृशशरीर, अधिकांश ककार शब्द युक्त, और चञ्चल स्वभाव शूद्रजाति माने गये हैं। रूक्ष, अथवा सूक्ष्म मुख, दीप्तिविशिष्ट स्कन्धदेश, शब्द एवं बुद्धिहसित स्थिर और अल्प आगहवाले अन्त्यज कहाते हैं। द्रोण नामक कृष्णवर्ण विप्रकाक श्रेष्ठ होता है। अभावमें जिनका कण्ठदेश श्यामवर्ण लगता, उनका लक्षणादि देखना पड़ता है। प्रकृत दर्शन होनेसे शेलकाक ग्राह्य नहीं ठहरता। विप्रकाक प्रश्न करने पर परिष्कार उत्तर देता है। क्षत्रियकाक विप्रकाककी अपेक्षा अल्प रहता है। वैश्यकाक अधिवेशन और शूद्रकाक पूजार्चन आनेसे बोलता है। किन्तु अन्त्यज काक सर्वदा समस्त प्रश्न लगाया करता है। इन पांचों काकोंके शब्दसे उसी समय, तीन दिन, सप्ताह या एक पक्षमें फल अवश्य मिल जाता है।

शान्त और प्रदीप्त भावमें बोलना शुभप्रद है। किन्तु रौद्र स्वरविशिष्ट शब्द प्रशस्त नहीं होता। मधुर स्वर ही सर्वत्र अच्छा है। प्रदीप्त भाव अथच परुषस्वरसे बोलनेपर कार्य बनकर भी बिगड़ जाता है। किन्तु प्रदीप्त अथच शान्तभावसे शब्द करते सिद्धि मिलती है। यदि काक शान्त एवं प्रदीप्त भावसे एक बार बाहर बोल भीतर आता और फिर वैसा ही शब्द सुनाता, तो समस्त विघ्न विनष्ट हो कार्य बन जाता है। प्रथम दीप्त और पश्चात् शान्त शब्द निकालनेसे कार्य बिगड़कर बनता है।

सूर्योदयके समय पूर्वदिक् किसी निर्दोष स्थानमें सम्मुख बैठकर काकके बोलनेसे विन्तित कार्य निकलता और स्त्रीरत्नादि मिलता है। अग्निकोणमें बैठ शब्द करनेसे शत्रुनाश, भयनाश और स्त्रीलाभ होता है। दक्षिण दिक्में परुष स्वरसे शब्द करनेपर अति दुःख, रोग वा मृत्यु आता, किन्तु मधुरस्वर रहते कार्य बन जाता और स्त्रीलाभ देखाता है। नैऋत और सहसा बोल उठनेपर मा र कार्य लग जाता, दूत आता और मनुष्य मध्यम सिद्धि पाता है। पश्चिम दिक्में शब्द करनेसे वृष्टि पड़ती, राजपुरुषको अपायी ठहरती और स्त्रीसे लड़ायी चलती है। वायुकोणमें बोलनेसे वाञ्छित वस्त्र, अन्न एवं यान मिलता, किन्तु पहला आजीवन बिगड़ता, अतिथि आ पहुंचता और अपनेको स्वदेशसे विदेश जाना पड़ता है। उत्तरदिक्में शब्द करनेपर दुःख, सर्पका भय, दारिद्र, धनका नाश और प्रियव्यक्तिलाभ होता है। ईशान दिक्में बोलनेसे अन्त्यज आते, रोगके कारण उठते देखाते प्रियवस्तु मिल जाते और पीड़ाका आधिक्यमें रहते मृत्यु पाते हैं। ब्रह्मदेश अर्थात् ऊर्ध्व दिक्को मधुर स्वरसे शब्द करने पर वाञ्छित अर्थ, मधुर अनुग्रह और धन मिलता है।

गणपतिदेवके कोई पुत्र न था। उनकी एक मात्र कन्या उमाकदेवीसे राज महेन्द्रीके राजकुमार चालुक्यतिलक वीरभद्रका विवाह हुआ। मृत्युसमय गणपतिके दौहित्रका भी जन्म न था। सुतरां उनकी पत्नी रुद्रयादेवीने अभिषिक्त हो २८ वर्ष राजत्व रखा। फिर वयोप्राप्त होने पर उमाकदेवीके पुत्र प्रतापरुद्र-देवको मातामह गणपतिदेवका सिंहासन मिल गया। प्रतापरुद्रदेव ही वरङ्गलके अन्तिम स्वाधीन थे। उन्होंने गोदावरीसे सेतुबन्ध-रामेश्वर पर्यन्त अप्रतिहत प्रभावसे राजत्व चलाया। सुननेमें आता है कि उनके प्रबल प्रतापसे घबरा कटकके राजाने दिल्लीमें बादशाहसे साहाय्य मांगा था। मुसलमानोंका इतिहास पढ़नेपर समझ पड़ता है कि १३२३ई०को प्रतापरुद्र उनसे परास्त हुए और पकड़ कर दिल्ली भेजे गये। कुछ दिन पीछे प्रतापरुद्र स्वाधीनता लाभ कर वरङ्गलको लौटे थे। किन्तु फिर वह अधिक दिन इहलोकमें न रहे। मरनेपर उनके पुत्र वीरभद्र राजा बने। उनके समय मुसलमानोंके आक्रमणसे वरङ्गल राजधानी भस्मीभूत हुई। वीरभद्रने वरङ्गल छोड़ कोण्डवीड़ नामक स्थानमें एक नूतन नगर बसाया था। उसी समय वरङ्गलके काकत्य (काकतेय) राजवंशका राजत्व जाता रहा। कोण्डवीड़ देखो।

काकदन्त (सं० पु०) काकस्य दन्तः। काकका दन्त, कौवेका दांत। कौवेके दांत नहीं होते। इसीसे असम्भव विषयको काकदन्त कहते हैं। शशविषाण, कूर्मलोम, और वन्ध्यापुत्रकी भांति यह भी निरर्थक वाक्य है।

काकदन्तकि (सं० पु०) प्राचीन क्षत्रियजातिविशेष।

काकदन्तकीय (सं० पु०) काकदन्तकि क्षत्रियोंके एक राजा।

काकदन्तगवेषण (सं० पु०) काकस्य दन्ताः सन्ति न वा इति संशये तत्र वर्णभेदस्य संख्याविशेषस्य च गवेषणमिव अनर्थकः प्रयत्नो यत्र। अकारण अन्वेषणबोधक न्यायविशेष, बेफायदा खोजमें पड़नेका एक लौकिक न्याय।

काकके दन्त रहने या न रहनेका सन्देह, निश्चित होनेसे पहले वर्ण और संख्या पर बात बढ़ाना अनर्थक है। यह न्याय अनर्थक वितण्डाके स्थल पर लगता है।

काकदन्तिका (सं० स्त्री०) १ काकादनी लता, सफेद या लाल घुंघची। २ दन्तीवृक्ष, दांतीका पेड़। ३ रक्तकाकमाची, लालकैया

काकद्रुम (सं० पु०) वृक्ष विशेष, एक पेड़। (Dalbergia rimosa) श्रीहट्ट (सिलहट)में इसे काकद्रुम कहते हैं। यह झाड़दार पेड़ है। काकद्रुम पूर्व हिमालयके उष्ण प्रदेशमें ४००० फीट ऊंचा होता है। खसिया पर्वत, श्रीहट्ट और आसाममें इसे अधिक देखते हैं। यमुनासे पश्चिम सिवालिक प्रान्त और हिमालयके बहिर्भागमें भी यह पाया जाता है। मङ्गलोर (बङ्गलोर)में इसकी कृषि होती है।

काकध्वज (सं० पु०) काकं ईषज्जलं वाष्पं ध्वज इव यस्य। वाडवाग्नि, समुद्रका भीतरकी आग। वाडवाग्नि देखो। २ और्व ऋषि।

काकनन्ती (सं० स्त्री०) कु ईषत् नन्ती निमीलन्ती, कोः कादेशः। काकदन्तिका, घुंघची।

काकनामा (सं० पु०) काकस्य नाम इव नाम यस्य, मध्यपदलो०। वकवृक्ष, अगस्तिका पेड़। काकपीठ देखो

काकनाशा काकनासा देखो।

काकनास (सं० पु०) काकस्य नासाया वर्ण इव फलं यस्य। विकण्टक वृक्ष, गोखुरीका पेड़।

काकनासा (सं० स्त्री०) काकस्य नासा इव फलमस्याः। १ महाश्वेत काकमाची, कौआठोंठी। (Solanum indicum) यह मधुर, शीतल, पित्तघ्न, रसायन, दार्ढ्यकर और विशेषतः पलितघ्न होता है। (राजनिघण्टु) भावप्रकाशमें इसे कषाय, उष्ण, रस एवं पाकमें कटु, कफघ्न, वान्तिकर, शिरः और शोथ, अर्श, श्वित्र तथा कुष्ठनाशक कहा है।

काकनासिका (सं० स्त्री०) काकनासा स्वार्थे कन्टाप् अत इत्वम्। १ रक्तत्रिवृत्, लाल निशोत। २ काकजंघा, चकसेनी।

काकनिद्रा (सं० स्त्री०) काकस्य निद्रा इव निद्रा, मध्यपदलो०। काककी निद्रा-जैसी अतिसतर्क निद्रा, कौवेकी तरह होशियारीके साथ सोना।

प्रथम प्रहरके समय पूर्व दिक्को काक बोलनेसे चिन्तित कार्य बनता, अभीष्ट व्यक्ति आ पड़ता और विनष्ट विषय मिला करता है। अग्निकोणमें सवेरे शब्द करनेसे स्त्रीलाभ और शत्रुनाश होता है। दक्षिण दिक्को प्रातःकाल बोलनेसे स्त्री, सुख और प्रियसङ्ग पाते हैं। नैऋत दिक्में पहले पहर टेर लगानेसे प्रियपत्नी, मिष्टान्न सामग्री और चिन्तित विषयकी सिद्धि मिलती है। पश्चिम ओर पुकारनेसे पूज्य जन आते और मेघ बरसने लग जाते हैं। वायुकोणमें बोलने शुभ, राजप्रसाद और पथिक देख पड़ता है। उत्तर कोणको टेर उठानेपर भय, चोर, शोक, सुख अथवा धन लाभका संवाद मिलता है। ईशानकोणसे शब्द आने पर प्रिय व्यक्तिके साथ आलाप, अग्निका नाश, और बहुतसे लोगोंका साथ होता है। मध्यदेशमें बोलनेसे सुख एवं कामभोग, सम्मान, सम्पद्, धन और सिद्धि पाते हैं।

द्वितीय प्रहर पूर्वदिक्में काकका शब्द सुननेसे कोई पथिक आता, चोरका भय देखता और व्याकुलता तथा अतिशय आशङ्काका वेग बढ़ जाता है। अग्निकोणमें बोलना प्रियव्यक्तिके आगमनसंवाद और स्त्रीलाभका सूचक है। दक्षिणके शब्दसे पानी पड़ता, अतिशय भय बढ़ता और प्रिय व्यक्ति आ पहुंचता है। नैऋतमें दो पहरको काक बोलनेसे प्राणभय, स्त्री एवं भोज्यलाभ और यावतीय रोगका नाश होता है। पश्चिममें पुकारनेसे स्त्री मिलती, सम्पद् बढ़ती और सुवृष्टि पड़ती है। वायुकोणमें बोलनेसे ध्वज तथा और यान, दूतका आगमन, और स्त्री मांस तथा अन्नलाभ होता है। उत्तरको रम्य रव निकालनेसे स्वगण एवं दुष्ट व्यक्ति आता और जयलाभ देखाता, किन्तु अरम्य स्वर रहते चोरभय बढ़ जाता है। ईशानमें रुक्ष भावसे बोलने पर चोर तथा अग्निका भय समाता और विरुद्ध वाक्य सुनाता, किन्तु मधुर लगने पर गुरुआगमन एवं जयलाभ देखाता है। मध्यदेशमें दिनके द्वितीय प्रहर सुशब्दसे राजप्रसाद तथा मिष्टान्न मिलता, किन्तु कुशब्दसे चोरभय लगता है।

तृतीय प्रहरको पूर्वदिक्में काकके रुक्ष शब्द निकालते सम्पद् बढ़ती तथा चोरभीति आ पड़ती, किन्तु रम्य ध्वनि रहनेसे राजाकी अथायी ठहरती और जयप्राप्ति एवं कार्यसिद्धि लगती है। इसी प्रकार अग्निकोणमें विरुद्ध शब्दसे अग्निभय, कलह, अशुभ संवाद तथा यात्राकी विफलता और विरुद्ध स्वरसे जयादि संवाद पाते हैं। दक्षिण दिक् बोलनेसे शीघ्र ही राग लगता, आप्त व्यक्ति आ पड़ता और क्षुद्र कार्य बनता है। नैऋत दिक्को शब्द करनेसे मेघागम, मिष्टान्न लाभ, शत्रुनाश, शूद्रागमन, प्रभुके विरुद्ध संवाद श्रवण और यात्रामें कार्यनाश होता है। पश्चिमको टेर लगानेसे नष्टधन मिलता, दूर पथ चलना पड़ता, सुहृद् व्यक्ति आ पहुंचता, अभीष्ट जयादिका संवाद लगता, स्त्रीलाभ ठहरता और यात्रामें कार्य बनता है। वायुकोणमें बोलनेसे दुर्दिनवार्ता, अपहृत वस्तुका लाभ, सन्तोषकर संवाद, उत्तम स्त्रीलाभ और यात्रा होता है। उत्तर दिक् शब्द कर उठनेपर कार्य बनता, अर्थ मिलता, भोज्यवृद्धिका शुभ संवाद सुन पड़ता और गमन तथा वैश्यसमागम रहता है। ईशान दिक्के सुशब्दसे भोज्य एवं जय मिलता, किन्तु कुशब्दसे हानि तथा कलह उठाना पड़ता है। मध्यदिक्को बोलनेसे तिलतण्डुल एवं ताम्बूलयुक्त भोज्यलाभ होता है।

चतुर्थ प्रहर—पूर्व दिक्को काक बोलनेसे अर्थलाभ, राजपूजा, अभय, सम्पद्वृद्धि और रोग तथा अग्निकोणमें शब्द आनेपर भय, रोग, मृत्यु और शिष्टागम, दक्षिण दिक् पुकारनेसे तस्कर तथा शत्रुका भय बढ़ता, शिष्टजन आ पहुंचता और रोग एवं मृत्यु देख पड़ता है। नैऋतकी टेरसे अतिवृष्टि, अभीष्टसिद्धि और पथमें चोरके साथ युद्ध होता है। पश्चिममें पुकारनेसे ब्राह्मणका आगमन, अर्थ लाभ, स्त्री एवं जयलाभ, वर्षण, यात्रामें मनोरथ पूरण और राजप्रसाद होता है। वायुकोणमें बोलनेसे प्रियपत्नीका आगमन, अमात्यके मध्य प्रवास और सत्वर प्रत्यागमन है। उत्तरको शब्द कर उठने पर पथिक आता, ताम्बूल पाया जाता, कुशल संवाद सुनाता, वेश्यावेशन मिलते देखाता, अश्वादि पर आरोहण लगता और विरुद्ध यात्रामें रोगी प्राण गंवाता है। ईशान दिक्को शब्द सुन पड़ते

काकनीला (सं० स्त्री०) काक इव नीला। काकजम्बु वृक्ष, जङ्गली जामनका पेड़।

काकन्दी (सं० स्त्री०) कृष्णशिम्बी, काली सेम।

काकन्दक (सं० त्रि०) काकन्दी देशे भवः, काकन्दी-वुञ्। रोपधेतोः प्राचाम्। पा।४।२।१२३। काकन्दी देशवासी, काकन्दी मुल्कका रहनेवाला।

काकन्दि (सं० पु०) क्षत्रिय जातिविशेष।

काकन्दी (सं० स्त्री०) काकन्दि-ङीप्। १ देशविशेष, कोई मुल्क। २ विद्या, इमली।

काकन्दीय (सं० त्रि०) काकन्दी-छ। काकन्दी देशवासी, काकन्दी मुल्कका रहनेवाला। २ काकन्दि क्षत्रियोंका राजा।

काकपक्ष (सं० पु०) काकस्य पक्ष इव आकारो ऽस्त्यस्य, काक-पक्ष-अच्। १ मस्तकके उभय पार्श्व केशरचना, शिरकी दोनों ओर बालोंका बनाव। इसका संस्कृत पर्याय—शिखण्डक और शिखण्डि है। पूर्व समयमें बालकोंके मस्तक पर ऐसी ही केशरचनाका व्यवहार था,—

"कौशिकेन स किल क्षितीश्वरो राममध्वरविघातशान्तये।
काकपक्षधरमेत्य याचितस्तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते॥" (रघु ११।१)

२ कर्णके उभय पार्श्व केशरचनाविशेष, कानोंकी दोनों ओर बालोंका बनाव, पट्टा, जुल्फ।

"काकपक्ष शिर सोहत नीके।
गुच्छा बिच बिच कुसुमकलीके॥" (तुलसी)

काकपक्षयुक्त (सं० त्रि०) काकपक्षेण केशसंस्कारविशेषेण युक्तः, ३-तत्। १ शिखण्डकयुक्त, जुल्फोंवाला। २ कानोंके पास पट्टे रखाये हुआ।

काकपद (सं० पु०) काकपद इव आकारो ऽस्त्यस्य, काक-पद-अच्। १ रतिबन्ध विशेष।

"पादौ तौ स्कन्धयुग्मस्थौ विन्यस्य लिङ्गं ततो लघु।
कामयेत् कामुकीं कामी बन्धः काकपदो मतः॥" (रतिमञ्जरी)

(क्ली०) काकस्य पदं पदपरिमाणम्। २ काककी पदकी भांति परिमाण, कौवेके पैरकी तरह नाप। स्मृतिशास्त्रमें इसी परिमाणसे शिखा रखनेकी व्यवस्था है। ३ कपालसे शिरपर्यन्त मुण्डन। काकपदवत् आकृतिरस्त्यस्य। ४ चिह्न विशेष, एक निशान। (वा०) पुस्तकमें लिखित विषयकी अपेक्षा स्थान स्थान पर कुछ अधिक भी मिला देना पड़ता है। ऐसे स्थलपर यह चिह्न लगता है। इस चिह्नके नीचे ऊपर जो लिखते उसे उक्त विषयमें ही संलग्न समझते हैं। काकपद छूटे हुये लेखको पूरा करनेमें व्यवहृत होता है।

काकपर्णी (सं० स्त्री०) काक इव कृष्णपर्णं यस्याः, काकपर्ण-ङीप्। मुद्गपर्णी, मोठ। मुद्गपर्णी देखो।

काकपीलु (सं० पु०) काकप्रियः पीलुः। १ काकतिन्दुक, कुचिला। काकादनीलता, कौवाटोंटी। ३ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची। ४ रक्त गुञ्जा, लाल घुंघची।

काकपीलुक (सं० पु०) काकपीलु संज्ञायां कन्। काकपीलु देखो।

काकपुच्छ (सं० पु०) काकस्य पुच्छं इव पुच्छो यस्य, मध्यपदलो०। कोकिल, कोयल।

काकपुष्ट (सं० पु०) काकेन पुष्टः, ३-तत्। कोकिल, कोयल। कोकिलो अपने अण्डेको पोस नहीं सकती। इसीसे वह काकके घोंसलेमें जा उसके अण्डे फेंक अपने अण्डे रख आती हैं। काक उन्हें अपने अण्डे समझ सेवा करता है। अण्डे फूटने पीछे भी जबतक सम्पूर्ण रौत्या पल नहीं जाते, तबतक कोकिलके शावक सुमकिलसे पहचाने जाते हैं। सुतरां काकभी उनका पालन करता रहता है। काककर्तृक प्रतिपालित होनेसे ही कोकिल 'काकपुष्ट' कहाता है।

काकपुष्प (सं० क्ली०) काकवत् कृष्णं पुष्पं यस्य, बहुव्री०। १ ग्रन्थिपर्ण, एक खुशबूदार चीज। २ सुगन्धतृण, खुशबूदार घास।

काकपेय (सं० त्रि०) काकेनतकन्धरः पीयते, काकपा-यत्। कृत्यैरधिकार्थवचने। पा २।१।३३। काकके पान करने योग्य, जिसे कौवा पी सके।

काकप्राणा (सं० क्ली०) १ काकनासा, कौवाटोंटी। २ महाश्वेतकाकमाची, बड़ी सफेद केवैया।

काकफल (सं० पु०) काकप्रियं फलमस्य, मध्यपदलो०। १ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़। निम्ब देखो। २ काकजम्बु, कठजामन।

स्वर्णका संवाद आता और रोग नष्ट हो जाता है। अग्निदिक्में बोलनेसे मध्यम वार्त्ता और मध्यम सिद्धि होती है।

दिक् और प्रहरादिके अनुसार सकल शुभाशुभ विमिश्रभावसे कहा है। इसमें दीप्तशब्दको अशुभ और शान्त शब्दको शुभकर समझना चाहिये। दूसरे दीप्तदिक्का रव शान्त दिक्को प्रसारित होनेसे अधिक फलप्रद है। दीप्तदिक्को बैठ उसी ओर देखते देखते बोलना अच्छा नहीं होता। दीप्त दिक्में रह प्रदीप्त दिक्को देखते देखते शब्द करना भी दुष्ट है। दीप्त दिक्में बैठ प्रशान्त दिक्को घूम बोलनेसे तुच्छ और दुष्टफल मिलता है। शाखा पर रह शान्तदिक्को देखते देखते रूक्ष शब्द निकालनेसे अल्प अनिष्ट होता है। शान्त दिक्को दृष्टि डालते डालते शान्त स्वरसे बोलना अल्प अभीष्टप्रद है। शान्त दिक्में रह दीप्त दिक् देखते देखते शब्द करना शीघ्र अभीष्टप्रद होता है। इसी प्रकार मनुष्योंको काकोंका आकार, प्रकार, भाव और रव विभाग कर दिवारात्रमें चारो प्रहरोंका शुभाशुभ देखना चाहिये।

काल और स्थान विशेषमें काकका गृह निर्माण देखकर भी शुभाशुभ निरूपित होता है।

वैशाख मासको निरुपद्रव वृक्षमें गृहनिर्माण करनेसे देशका मङ्गल और कुत्सित, शुष्क वा कण्टकयुक्त वृक्षमें घोंसला लगानेसे दुर्भिक्ष होता है। प्रशस्त वृक्षकी पूर्व शाखा पर घर बांधते पानी बरसता, शकुनप्रसाद मिलता, नीरोग रहता और विषय हाथ लगता है। अग्निकोणकी शाखासे वृष्टि, भय, कलह वा पाप, दुर्भिक्ष एवं शत्रु द्वारा देश नाश और अश्वोंको पीड़ा है। दक्षिण शाखासे अल्प वृष्टिपात, अन्ननाश और शत्रु विरोध होता है। नैर्ऋत शाखा पर घोंसला लगानेसे वर्षाकालको अल्प जल बरसता, मनुष्यको रोग शत्रु तथा चोर भय रहता, दुर्भिक्ष पड़ता और युद्ध चलता है। पश्चिम शाखासे वृष्टि, नीरोग, मङ्गल, सुभिक्ष, सम्पद् और आनन्द है। वायुकोणस्थ शाखापर घोंसला रहनेसे अत्यन्त वायु आता, मेघ अल्प जल बरसता, मूषिकोंका उपद्रव बढ़ जाता, शस्य नशाता और दोनों ओर महाविरोध देखाता है। उत्तर शाखा पर होनेसे वर्षाकालको परिमित वृष्टि, मङ्गल, सुभिक्ष, सुख, नीरोग, सम्पद्-वृद्धि और समृद्धि है। ईशानदिक्स्थ शाखापर रहनेसे अल्प जल बरसता, शत्रु बढ़ता, प्रजावर्गका उत्सर्ग पड़ता, बान्धव कलह लगाने लगता और जनसमूह मर्यादाशून्य बनता है। वृक्षके अग्रभागमें अति वृष्टि, मध्यदेशमें मध्यमरूप वृष्टि और निम्न देशमें रहनेसे अनावृष्टि होती है। भूमिमें कोष बनानेसे अवृष्टि और रोगादि भयकी वृद्धि है। शुष्क वृक्षपर बसनेसे विग्रह और अन्ननाश है। प्राचीरके रन्ध्रमें काक रहनेसे प्रभूत भय लगता है। निम्नप्रदेश, तरुकोटर, वल्मीकरन्ध्र और लतामें सो जानेसे पीड़ा, अवृष्टि और देशके नियमकी शून्यता रहती है।

अण्डसंख्याके अनुसार शुभाशुभका निर्णय—एकको वारुण, दोको अग्नि, तीनको वायु और चार अण्डे देनेको ऐन्द्र कहते हैं। वारुणसे पृथिवीमें शस्य बहुत बढ़ता, अग्निसे मन्द वर्षण पड़ता तथा रोपित बीजमें अङ्कुर नहीं उठता, वायुसे शस्य उत्पन्न होते भी सूखते सूखते शलभ प्रभृति कीटोंका भक्षण-बनता और ऐन्द्र अण्ड प्रसव करनेसे मङ्गल, सुभिक्ष, सुख और कार्य निकलता है।

काकके शब्द चेष्टादिसे यात्राकालीन शुभाशुभका निर्णय—काकोंको दधि और अन्नयुक्त पूजा चढ़ा यात्राके समय प्रवासी निम्नोक्त मन्त्रपाठपूर्वक नमस्कार करते हैं,—

"भुङ्क्ष्व बलिं पवित्र मन्त्रपूतं त्वं खादितु खादितु वर्णलक्षम्।
शुभे मम त्वं भजसे नमोऽस्तु तुभ्यं खगेन्द्राय महाप्रभाय॥"

नमस्कारके पीछे अपना कार्य सोच सिद्धिकी कामनासे काक दर्शन करना पड़ता है। उस समय यदि वह वामदिक्से मधुर शब्द कर दक्षिण ओर चला आता, तो सर्वार्थ सिद्ध हो जाता और प्रत्यागमन देखाता है। फिर वाम दिक्से घूम लौट आने पर भी अभीष्ट कार्य बनता, मङ्गल लगता और शीघ्र प्रत्यागमन पड़ता है। वामदिक्में अनुलोम लगाते अर्थात् ऊपरसे नीचे आते समय मधुर रव निकालने पर प्रयोजन सिद्ध होता है। वाम और दक्षिण उभय

काकफला (सं० स्त्री०) काकप्रियं फलमस्याः, मध्यपदलो०। काकजम्बू, जङ्गली जामन।

काकवन्ध्या (सं० स्त्री०) काकीव वन्ध्या, पुंवद्भावः। एकमात्रप्रसवा भार्या, एक ही बच्चा पैदा करनेवाली औरत। काकी केवल एक बार प्रसव करती है, इसीसे जो स्त्री एक ही प्रसवसे वन्ध्या हो जाती, वह काकवन्ध्या कहाती है।

काकबलि (सं० पु०) काकेभ्यो देयो बलिरन्नादिकम् मध्यपदलो०। काकको दिया जानेवाला अन्नादि। प्रथम काकको पाद्यादि दे निम्नोक्त मन्त्रसे पूजते हैं,—

"ॐ यमद्वारावस्थित-नानादिग्देशीयवायसेभ्यो नमः।"

फिर इस मन्त्रसे प्रार्थना की जाती है।

"ॐ काक त्वं यमदूतोऽसि गृहाण बलिमुत्तमं।
यमलोकगतं मे तं समाप्यायितुमर्हसि॥"

इस प्रार्थना पर पिण्डदान या मन्त्रपाठ करना पड़ता है—

"(ओं) काकाय काकपुत्राय वायसाय महात्मने।
बलिविधं प्रयच्छामि कथ्यतां धर्मराजनि॥"

आह्निकतत्त्वमें पिण्डदानका दूसरा मन्त्र कहा है,—

"ऐन्द्रावारुणवायव्याः सौम्या वै नैऋ'तास्तथा।
वायसः प्रतिगृह्णन्तु भूमौ पिण्डं मयार्पितम्॥
ॐ काकेभ्यो नमः।"

उक्त मन्त्रसे दान पिण्डपर जल छिड़कना पड़ता है।

काकभण्डी (सं० स्त्री०) श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची।

काकभाण्डी (सं० स्त्री०) काकस्य ईशज्जलस्य सुखस्रावरूपस्य भाण्डी क्षुद्रभाण्डमिव, उपमि०। १ महाकरञ्ज, बड़ा करौंदा। २ लघु रक्तमाचिका, छोटी लाल कौवाटोंटी।

काकभीरु (सं० पु०) काकात् भीरुर्भयशीलः, ५-तत्। पेचक, कौवेसे डरनेवाला उल्लू। पेचक देखो।

काकभुशण्डि (सं० पु०) एक ब्राह्मण। यह रामके सच्चे भक्त रहे। लोमशके शापसे इन्हें काक होना पड़ा था। काकभुशण्डिने रामकी कथा गरुड़से कही है।

काकमद्गु (सं० पु०) काक इव सन्धो मद्गुर्जलचर पक्षिविशेषः। दात्यूह, पानीकी मुरगी या कुकड़ी।

"हंसं हत्वा तु दुर्बुद्धिः काकमद्गुः प्रजायते॥" (भारत, १३।१११।१११)

काकमर्द (सं० पु०) काकं मृद्नाति, काक-मृद-अण्। महाकालसता। किसी किस्मकी कड़वी लाकी। यह कौवेको मार डालता है।

काकमर्दक, काकमर्द देखो।

काकमांस (सं० क्ली०) वायसमांस, कौवेका गोश्त।

काकमाचिका (सं० स्त्री०) काकमाची स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वः। काकमाची देखो।

काकमाची (सं० स्त्री०) काकान् मचते, मचि-अण्-ङीष् पृषोदरादित्वात् नलोपः। स्वनामख्यात पत्रशाक विशेष, एक छोटा पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—वायसी, ध्वाङ्क्षमाची, वायसाह्वा, सर्वतिक्ता, बहुफला, कटुफला, रसायनी, गुच्छफला, काकमाता, स्वादुपाका, सुन्दरी, तिक्तिका और बहुतिक्ता है।

हिन्दीमें काकमाचीको कैवैया या मकोय, बंगलामें काकते या मधुनी, मराठीमें कमुनी या घाटी और तामिलमें मनोतककी कहते हैं। (Solanum nigram).

यह शाकप्रधान क्षुद्र क्षुप है। भारत और सिंहलमें ७००० फीट ऊंचे इसे सर्वत्र पाते हैं।

भारतके अनेक विभागोंमें इसके पत्र और मृदु अङ्कुर पालककी भांति उबालकर खाये जाते हैं। सुपक्व गुटिकायें बालकोंके खानेमें आतीं और कोई असर नहीं देखातीं।

राजनिघण्टु तथा राजवल्लभके मतमें यह कटु, तिक्त, उष्ण, हृद्य, रसायन, रोचक, भेदक, और कफ, शूल, अर्शोरोग, शोथ, कुष्ठ एवं कण्डुनाशक है। भावप्रकाशमें इसे ज्वर, मेह, नेत्ररोग, हिक्का, वमि और हृद्रोग मिटानेवाली भी कहा है। यकृत् बढ़नेपर हिन्दपाव काकमाचीके रस प्रयोगसे विशेष उपकार होता है। शोथरोगमें भी इसके पत्रका क्वाथ अथवा रस दिनमें तीनबार एक-एक ड्राम पिलाया जा सकता है।

काकमाची श्वेत रक्त भेदसे दो प्रकारकी होती है। श्वेतको श्वेता तथा महाश्वेता और रक्तको लघुरक्त काकमाची कहते हैं। श्वेत काकमाची मधुर, रसायन, शीत, कषाय, कटु, तिक्त, उष्ण, वमिमर्द, ततुदार्ढ्यकर और कफ, शोथ, अर्श, पलित, पित्त,

दिक् उक्त प्रकारसे हो शब्द करने पर कुछ कार्य बनते और कुछ बिगड़ते भी हैं। पृष्ठदेशको मधुर स्वरसे बोलते बोलते पहुंचनेपर मङ्गल होता है। शब्द करते करते आगे आने, पहुंचकर हर्ष देखाने अथवा पद द्वारा मस्था खुजलानेसे अभिष्ट सिद्ध होता है। हाथी बांधनेके खूंटे पर बैठ कर हाथी बोलनेसे हाथी मिलता और हाथीपर राजत्व भी चलता है। अश्वके बन्धन-स्तम्भ पर बैठकर पुकारनेसे वाहन एवं भूमिका लाभ होता है। ध्वजसे विजय, कूपसे नष्टवस्तु एवं जयका लाभ, नदीतीरसे कार्य सिद्धि, पूर्ण घटसे धनलाभ, प्रासादसे धान्य राशि और हर्म्यपृष्ठ एवं शस्यतृणपूर्ण भूमिपर अवस्थित हो बोलनेसे धनलाभ है। फिर शुभ शब्द निकालनेसे भी धन मिल जाता है। पृष्ठदेश वा सम्मुखको गोमय अथवा घटादि वृक्ष पर बैठ कर स्निग्धमुख बोलनेसे अभिलषित भोजन पान लाभ होता है। फिर मुखमें अन्नादि, विष्ठा, फल, मूल, पुष्प वा भक्ष्य देख पड़ते भी मिष्टान्न भोजन पाते हैं। नारी-शिरस्थ पूर्ण घट पर चढ़ कर पुकारनेसे स्त्री एवं धन लाभ है। शय्यापर बैठ कर बोलनेसे सुजन समागम होता है। सामने गोपृष्ठ, वृक्ष, दूर्वा वा गोमय पर चञ्चु रगड़ते अथवा अन्यको आहार प्रदान करते देखनेसे विचित्र भोज्य मिलता है। धान्य, यव, दधि वा घृत देख बोल उठनेसे धन पाते हैं। मुखमें हरिद्वर्ण तृण ले सम्मुख आनेसे लाभ रहता है। मनोरम अङ्कुर, पत्र, पुष्प, फल तथा छायायुक्त वृक्षपर शब्द करनेसे कार्यसिद्धि होती है। वृक्षके शिखरदेशमें प्रशान्त भावसे शब्द करने पर स्त्रीसङ्ग गठता है। धान्यादि राशिपर रव लगानेसे धनलाभ है। गोपृष्ठ पर बैठकर बोलनेसे गो एवं स्त्रीको पाते हैं। हस्तिशिशुके पृष्ठपर शब्द करनेसे मङ्गल होने लगता है। इसी प्रकार गर्दभके पृष्ठसे शत्रु भय तथा वध, शूकरके पृष्ठसे वध, घन पङ्कयुक्त शूकरके धन लाभ, महिषके पृष्ठसे सद्योज्वर, मृतके शरीरसे मृत्यु, शून्यकलससे कार्यक्षति और काष्ठ पर अवस्थित हो शब्द करनेसे कलह है। दक्षिण दिक्में बोल चलते, सम्मुखसे मृत्यु, शून्यकलससे कार्यक्षति और काष्ठपर अवस्थित हो शब्द करनेसे कलह है। दक्षिण दिक्में बोल चलते, सम्मुखसे आ पड़ते अथवा पश्चाद् दिक् शब्द सुनाते सुनाते विपरीत भावसे गमन करते रक्तपात होता है। वाम और दक्षिण क्रमसे उभय दिक् शब्द करनेपर अनर्थ रहता है। वाम दिक्को विपरीत भावसे जानेपर विघ्न पड़ता है। पश्चात् दिक्से बोलते दक्षिण ओर गमन करनेपर रक्तपात होता है। लतादि ले प्रदक्षिण लगानेपर सर्पभय रहता है। गोपुच्छ और वल्मीक पर बैठ बोलनेसे सर्पदर्शन होता है। अङ्गार, चिता और अस्थिपर अवस्थानकर शब्द निकालनेसे मृत्यु आती है। कर चर्वण कर बोलनेसे हानि और पीड़ा है। पृष्ठदेशको निष्ठुर शब्द करनेसे मृत्यु होती है। शून्यमुख फैलाये रहनेसे अमङ्गल लगता है। पराङ्मुख होते रक्तपात वा बन्धन होता है। परस्पर लड़नेसे वध है। पराङ्मुख हो शुष्क वृक्ष पर रहनेसे रोग लगता है। तिक्त वृक्ष पर अवस्थान करनेसे कलह और कार्यनाश होता है। कण्टकयुक्त वृक्ष पर पक्षद्वय कंपा रूक्ष शब्द करने पर मृत्यु आती है। भग्न शाखापर रहनेसे वध है। लतावेष्टित स्थान पर अवस्थित होते बन्धन पड़ता है। कण्टकयुक्त रम्य वृक्षपर बैठते कलह कार्य सिद्धि है। आच्छन्न वृक्षपर रहनेसे रक्तपात होता है। विष्ठा, आवर्जना, मृत्तिका, तृण, काष्ठ, कूप और भस्मादि पर बैठनेसे कार्य बिगड़ जाता है। काकके मुखमें लता, रज्जु, केश, शुष्क काष्ठ, चर्म, अस्थि, जीर्णवस्त्र वल्कल, अङ्गार तथा रक्तोपल आदि देखनेसे पुण्यक्षय, पाप समागम, पथ एवं आलयमें महत्भय, रोग, बन्धन, वध और सर्वधनापहरण प्रभृति होता है। मुखको ऊपर उठा चञ्चल पक्षसे कर्कश शब्द निकालनेसे मृत्यु आती है। एक पैर सिकोड़ और सूर्यको ओर मुख मोड़ दीन स्वरसे बोलने अथवा काष्ठादि फोड़नेपर युद्धादिमें असमर्थ रहता है। चञ्चुसे पुच्छदेश खुजला शब्द करने पर मृत्यु होती है। एक पैरसे बैठते बन्धन है। मस्तक पर विष्ठा वा गोमय डाल देनेसे यात्राकारी बन्धनमें पड़ता है। अस्थि फेंकनेसे मृत्यु होती है। ऊर्ध्व दिक् बोलनेसे स्त्रीदोष लगता

तथा श्वेतकुष्ठनाशक है। महाश्वेत काकमाची तुवर, पथ्य, रसायन, कटु, तिक्त, रुचिकर, और वात, कुष्ठ, पाण्डु, प्रमेह, कफ, छर्दि, क्रमि, ज्वर एवं पलितघ्न होती है। रक्त काममाची श्रीवत्, वात एवं कफकर, हृद्य रसायन और पित्त तथा त्रिदोषनाशक है।

काकमाचीतैल (सं॰ क्ली॰) स्वनामख्यात पत्रशाकका तैल, मकोयका तेल। मनःशिला, शोमराजी बीज, सिन्दूर तथा गन्धकके साथ चार पल कटुतैल काकमाचीके रसमें पकाते हैं। इस तैलको १ माष (४ माशे) लगानेसे पर्पटिका (सरकी खुजली) अच्छी हो जाती है। (रसरत्नाकर)

काकमाता (सं॰ स्त्री॰) काकस्य मातेव पोषिका तत् फलप्रियत्वात्। काकमाची क्षुप, मकोयका पौदा।

काकमुख (सं॰ त्रि॰) काकस्य मुखमिव मुखं यस्य, बहुव्री॰। काकवत् मुखविशिष्ट, जो कौवेकी तरह मुंह रखता हो। (पु॰) २ पुराणोक्त जातिविशेष। यह सम्भवतः महानदीके उपकूलमें रहते थे।

काकमुद्गा (सं॰स्त्री॰) काकेन ईषल्लक्षेन मुदं गच्छति, काक-मुद्-गम-ड-टाप्। मुद्गपर्णी, मोट। मुद्गपर्णी देखो।

काकमृग (सं॰ पु॰) वायस एवं हरिण, कौवा और हिरन।

काकम्बीर (वै॰ पु॰) वृक्षविशेष, किसी पेड़का नाम।

काकयव (सं॰ पु॰) काकवत् निर्गुणो यवः। शस्यहीन धान्य, खोखला धान। इसमें चावल नहीं होता।

"तथैव पाण्डवाः सर्वे तथा काकयवा इव।" (महाभारत)

काकयाम (सं॰ क्ली॰) कोङ्कणदेशख्यात हासानाम वृक्षविशेष, एक पेड़।

काकर—बम्बई प्रान्तके शिकारपुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा॰ २६° ५८' उ॰ और देशा॰ ६७° ४४' पू॰ पर अवस्थित है। भूमिका परिमाण ५८८ वर्ग मील है। इसमें ११ थाने और फौजदारीकी २ अदालतें हैं। मालगुजारीमें गवरनमेण्टको १८६२१०) रु॰ मिलता है। लोकसंख्या प्रायः पचास हजार है।

काकरव (सं॰ पु॰) भीरुपुरुष, डरपोक आदमी। जो व्यक्ति काकवत् भयभीत हो कोलाहल करता है उसको 'काकरव' कहते हैं।

काकराला (ककराला)—युक्तप्रदेशके बुदाऊं जिलेको दातागञ्ज तहसीलका एक नगर। यह बुदाऊं नगरसे छह कोस दूर है। यहां भारतीयोंके देवमन्दिर और मुसलमानोंकी मसजिदें विद्यमान हैं। सिपाही विद्रोहके समय बलवाईयोंने ककराला जलाया था। १८७५ ई॰के अपरैल मासमें अंगरेज सेनानायक जनरल पेनी विद्रोहियोंका शासन करने आये। किन्तु कुछ मुसलमानों (जानियों)ने उन्हें मार डाला। आखिर उनके सैन्यसमूहने विद्रोहियोंको सम्पूर्णरूपसे हराया था। लोकसंख्या प्रायः छह हजार है। भारतीयोंसे मुसलमान अधिक मिलते हैं।

काकरासींगी (हिं॰) कर्कटशृङ्गी देखो।

काकरिपु (सं॰ पु॰) उलूक, कौवेका शत्रु, उल्लू।

काकरी (हिं॰) कर्कटी देखो।

काकरुक, काकरुक देखो।

काकरुत, (सं॰ क्ली॰) काकस्य रुतम्, ६-तत्। काकरव, कौवेकी बोली। काकचरित देखो।

काकरुहा (सं॰ स्त्री॰) काक इव रोहति मूलशून्यतया वृक्षाद्यवलम्बनेन जायते, काक-रुह-क-टाप् यद्वा काकपुरीषात् रोहति उत्पद्यते वृक्षोपरि इत्यर्थः। वन्दाहस, बांदा, कौवेकी तरह चढ़ने यानी जड़ न रहनेसे पेड़ वगैरहके सहारे उपजने या कौवेके मलसे निकलनेवाली बेल।

काकरूक (सं॰ त्रि॰) कु कुत्सितं करोति, कु-कृ-ऊक कोः कादेशः। १ स्त्रीवशीभूत, औरतका ताबेदार। २ नग्न, नङ्गा। ३ भीरु, डरपोक। ४ निःस्व, गरीब। (पु॰) ५ दम्भ, धोका। काकेन लूयते छिद्यते, काक-लू कर्मणि क्विप् संज्ञायां कन् लस्य रः। पेचक, कौवेसे मारा जानेवाला उल्लू।

काकरेजा (हिं॰ पु॰) १ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह काकरेजी होता है। २ वर्णभेद, एक रंग। यह काकरेजी रहता है।

काकरेजी (फा॰ पु॰) १ वर्णभेद, कोकची, एक रंग। यह लाल-काला होता है। कपड़ेको आलके रंगमें बोर लोहारकी खाड़ीसे रंगने पर काकरेजी निकलता है। (वि॰) २ वर्णविशेष-युक्त, कोकची, लालकाला।

है। मनुष्य, हस्ती या अश्वके मस्तक पर बैठ शब्द निकालनेसे मृत्यु आती है। नदीतीर वा वनमध्य घूमते घूमते कर्कश भावसे बोलनेपर व्याघ्रभय होता है। पीड़ित वा दुश्चेष्ट काक देखनेसे अमङ्गल है। मनुष्य वा अश्वके मस्तक और रथपर देख पड़नेसे सैन्यवध होता है। सैन्यके संमुखसे आनेपर पराजय है। मांस न रखते भी गृध्र एवं कङ्कके साथ शिविरमें प्रवेश करनेपर शत्रु युद्धमें आते बड़ी लड़ाई और अन्तमें जाते सन्धि होती है। छिन्न ध्वज पर चढ़ समुद्यत शत्रुसैन्यको और देखते रहने अथवा वटादि क्षीरिवृक्ष पर बैठ शब्द करनेसे युद्धमें जय मिलता है। एतद्-भिन्न दिक् और प्रहरके अनुसार भी यात्राकालको काक शब्दका कथित शुभाशुभ देखते हैं।

काककी चेष्टाविशेषसे शुभाशुभका निरूपण—अकारण बहुतसे काक एकत्र बोलनेसे ग्राममें अन्न नाश होता है। चक्राकृति हो काकोंके शब्द करनेसे ग्राम घेरा जाता है। वाम और दक्षिण दिक् काकसमूह घूमनेसे ग्राममें भय लगता है। रात्रिकालको शब्द करनेसे लोगोंका विनाश होता है। चरण और चञ्चुसे लोगों पर चोट करनेसे शत्रु बढ़ते हैं। नहा कर भूमिमें लोटते बोलनेसे वृष्टि होती है। इस प्रकार अन्य जलजन्तुओं और स्थलजन्तुओंके विपरीत देखाने अर्थात् जलचरोंके स्थल पर आने और स्थलचरके जलमें जानेसे वर्षाकालको पानी बरसता और दूसरे समय भय बढ़ता है। मध्याह्न काल किसीके गृह पर बैठ काकके शब्द करनेसे चोर उसका धन चोराता अथवा कोई अन्य प्रमाद आता है। अदृष्ट भावमें तृणपूर्ण मुखसे बोलने पर अग्निभय लगता अथवा स्वस्थानमें रहते प्रवासमें चलते भी तीन दिनके मध्य विविध दुःख उठाना पड़ता है। भूमिपर बोलनेसे भूमि मिलती है। जलमें रहते शब्द करनेसे विघ्न पड़ता है। प्रस्तर पर बोलनेसे कार्य नष्ट होता है। (स्वस्थानमें रहते या प्रवासको चलते भी मनुष्यको इस शब्दका प्रभाव अनुभव करना पड़ता है) द्वारदेशमें रुधिर लिप्त शब्द करनेसे शिशु मरता है। पक्ष हिलाते हिलाते किर-किरानेसे गृहका अमङ्गल है। ऊर्ध्व दिक् पक्ष उठा कड़ा बोल बोलनेसे प्रलय होता है। क्रुद्ध होकर अपर काक पर चढ़से शब्द करनेसे रोग द्वारा मृत्यु आती है। काकसहित द्रव्य नष्ट वा अपहृत होनेसे विनाश और लाभ है।

रोग विनाशका प्रश्न करनेपर काकके सुरव लगाते शीघ्र रोग छूट जाता और शान्त प्रदेशमें किरकिराते रोगके नाशमें विलम्ब देखाता है। पूछने पर शान्त दिक्को पकड़ धीरेसे बोलनेपर शुभ और विपरीत पड़ने पर अशुभ है। कुम्भ पर शब्द करनेसे गर्भिणी पुत्रोत्पादन करती है। कण्टकयुक्त शाखा लेकर उड़नेसे राजा आता है। अन्नादि विष्ठा, और मांस प्रभृतिसे पूर्ण मुख काक अभीष्ट फल देता है। ऐसा काक तन्त्रादिमें सिद्धि तथा वाणिज्यादिमें लाभ प्रद और विवाहादिमें प्रशस्त है। अश्वादि वाहन पर अवस्थित होनेसे इष्ट सिद्धि है। छत्रादि पर बैठनेसे तदनुरूप द्रव्य मिलता है। प्राचीर पर चढ़नेसे वधू आती है। मनोरम स्थानपर अवस्थान करनेसे मनोज्ञ विषयका लाभ है। गृहको ओर घूम कुलकुल ध्वनि निकालनेसे पथिक आता और सर्व कार्य बन जाता है। काकमैथुन वा श्वेतकाक देखनेसे पृथिवी पर महाभय लगता और उत्पात उठता है। ऐसे अद्भुत दर्शनसे उद्वेग, विद्वेष, भय, प्रवास, धनक्षय, व्याधिभय, प्रहार, बुद्धिनाश, व्याकुलत्व और प्रमाद होता है। इस दुःख राशिको शान्तिके लिये देखते ही सवस्त्र नहाना, ब्राह्मणोंको वस्त्र दिलाना, कुछ न खाना, भूमि पर सो एक सप्ताह हविष्यान्नसे जीवन चलाना और स्त्रीके पास न जाना चाहिये। सातों दिन अकाकघाती व्रत रहता है। फिर प्रभात होते नहा धो शान्तिविधान और यथाशक्ति गुणी ब्राह्मणोंको धन दान करते हैं। यह अद्भुत दर्शन जहां मिलता वहां अवर्षण, दुर्भिक्ष, उपसर्ग, चोर, अग्नि तथा शस्त्र भय और धर्म नाश आ पहुंचता है। इसकी शान्तिके लिये राजाको शान्तिक और पौष्टिक कर्म कर ब्राह्म-णोंको अन्न, गो, भूमि तथा धन देना और एक वर्ष युद्धका नाम न लेना चाहिये।

स्वर विशेषसे शुभाशुभका निर्णय—'कर्रा' से महत्, 'केवां'

काकल (सं॰ क्ली॰) ईषत् कलो यस्मात्, कोः कादेशः। १ कण्ठमणि, गलेका जोहर। (पु॰) का ईषत् कलो यस्य बहुव्री॰। २ द्रोणकाक, जङ्गली, पहाड़ी या काला कौवा। यह 'का का' करता है।

काकलक (सं॰ पु॰) काकल-कप्। १ कण्ठमणि, गलेका जौहर। २ कण्ठका उन्नत देश, सांस लेनेवाली नली (हलकूम, नरकसी) का सिरा। ३ वल्कि धान्यविशेष, साठीधान।

काकलि (सं॰ स्त्री॰) कल-इन् कलिः, कुईषत् कलिः कोः कादेशः। १ सूक्ष्म मधुरास्फुटध्वनि, समझमें न आनेवाली बारीक मीठी आवाज़।

"ध्वनौ काकलिगीतस्य नदीषां निनदस्य च।" (कथासरित्सागर)

२ अप्सरी विशेष, एक परी।

काकली (सं॰ स्त्री॰) काकलि-ङीप्। १ सूक्ष्म मधुर अस्फुट ध्वनि, समझ न पड़नेवाली बारीक मीठी आवाज़। "श्रीमत्कोकिलकाकलीकलकलोद्दामीकर्णज्वराः।" (उत्तरचरित, १ अ॰)

२ यन्त्रविशेष, एक बाजा। इसका स्वर नीचा रहता है। काकली बजानेसे मालूम पड़ता है कि कौन निद्रामें अचेतन रहता और कौन जगता है। हिन्दीमें सेंधकी सबरी, साठी धान और घुंघचीकोभी काकली कहते हैं। ३ रत्नविशेष, एक जवाहर।

काकलीक (सं॰ पु॰-क्ली॰) अस्फुट मधुरध्वनि, मीठी मीठी आवाज़।

काकलीद्राक्षा (सं॰ स्त्री॰) काकलीव सूक्ष्मा द्राक्षा, मध्यपदलो॰। द्राक्षाविशेष, किशमिश। इसका संस्कृत पर्याय—जम्बुका, फलोत्तमा, लघुद्राक्षा निर्बीजा, सूक्ष्मा और रसाधिका है। राजनिघण्टुके मतमें काकलीद्राक्षा मधुर, अम्ल, रसाल, रुचिकारक, शीतल, श्वास तथा कुकासनाशक और जनसमूहको प्रिया है। किशमिश देखो।

काकलीनिषाद (सं॰ पु॰) विकृत स्वर विशेष, एक आवाज़। यह कुमुद्वती श्रुतिसे चलता है। काकली निषादमें चार श्रुति गाते हैं।

काकलीरव (सं॰ पु॰) काकली मधुरास्फुटो रवो यस्य, बहुव्री॰। १ कोकिल, मीठी मीठी आवाज़ लगानेवाली कोयल। कर्मधा॰। २ सूक्ष्म और मधुर अस्फुट ध्वनि, मीठी मीठी आवाज़।

काकवत् (सं॰ अव्य॰) काककी भांति, कौवेकी तरह।

काकवर्ण (सं॰ पु॰) शुनिकवंशीय एक राजा। यह शिशुनागके पुत्र थे। (विष्णुपुराण ४।२४।२)

काकवर्तक (सं॰ पु॰) वायस तथा वर्तक, कौवा और बटेर।

काकवर्मा (सं॰ पु॰) नेपालके एक सोमवंशीय राजा। इनके पिताका नाम समाद्य था।

काकवल्लभा (सं॰ स्त्री॰) काकस्य वल्लभा प्रिया। काकजम्बू, कौवेको अच्छी लगनेवाला वनजामुन।

काकवल्लरी (सं॰ स्त्री॰) काकप्रिया वल्लरी, मध्यपदलो॰। १ स्वर्णवल्ली, एक सुनहली बेल। २ पीत-काञ्चन, पीले फूलका कचनार।

काकविष्ठा (सं॰ स्त्री॰) काकमल, कौवेका मैला।

काकवृन्ता (सं॰ स्त्री॰) रक्त कुलत्थक, लाल कुरथी।

काकव्याघ्रगोमायु (सं॰ पु॰) वायस, व्याघ्र तथा शृगाल, कौवा, बाघ और गीदड़।

काकशब्द (सं॰ पु॰) काकरव, कौवेकी बोली।

काकशालि (सं॰ पु॰) कृष्ण शालिधान्य, किसी किस्मका धान।

काकशिम्बी (सं॰ स्त्री॰) काकप्रिया शिम्बी, मध्यपदलो॰। १ काकतुण्डी, कौवा ठोंटी। २ रक्तगुञ्जा, लाल घुंघची।

काकशीर्ष (सं॰ पु॰) काकः शीर्षं अग्रेऽस्य, बहुव्री॰। वकवृक्ष, अगस्तका पेड़।

काकसादी (सं॰ पु॰) १ षड्भलक्षणान्त, ऐसी घोड़ा। २ आग्नेय।

काकसेन (हिं॰ पु॰) कार्यनिरीक्षक विशेष, जहाज़के मज़दूरोंकी निगरानी करनेवाला एक जमादार। यह अंगरेजीके 'काक्सवेन' शब्दका अपभ्रंश है।

काकस्फी (सं॰ स्त्री॰) काकस्य स्फीव नामसादृश्यात्। वकपुष्पवृक्ष, अगस्तके फूलका पेड़।

काकस्फूर्ज (सं॰ पु॰) काक-स्फूर्ज-अच्। काकतिन्दुक वृक्ष, एक पेड़। काकतिन्दुक देखो।

काकस्वर (सं॰ पु॰) काकस्य इव स्वरो यस्य, बहुव्री॰।

से अभिलषित भोजन एवं ग्राम लाभ, 'कूं कूं' से अर्थ प्राप्ति, 'कं कं' से स्वर्णलाभ, 'कें कें' से सुन्दरी स्त्रीप्राप्ति, 'कां कां' से यात्रासिद्धि, 'क्रौं क्रौं' से शुभलाभ और 'कुंकुं' शब्दसे प्रिय सङ्गम है। 'क्रां क्रूं' 'क्रां' एवं 'क्रां क्रां' युद्धजनक और 'क्रां क्रां क्रौं क्रौं क्रुं क्रूं' तथा 'क्रौं कुकुकु' मृत्यु लाता, 'क्रीं क्रीं' इष्टार्थ घटाता, 'जल जल' अग्नि लगाता, 'को को' तथा 'कों कों' कष्ठ कटाता, 'कों' सर्वदा विफल देखाता, 'क' मित्र मिलाता, 'काका' हानि पहुंचाता, 'कु कु' युद्ध लड़ाता, 'के के', 'का कुटि' एवं 'किं टिकिं' परदोष बनाता, 'कां कां कां' महत् युद्धका समाचार सुनाता, 'कां' वाहन बढ़ाता और 'कु कु कु' शब्द हर्ष दिखाता है। श्रान्त, दीन और उत्साहहीन काक दीर्घ 'का' बोलनेसे कार्य नाशक है। 'वक वक' से भोजन मिलता और 'कलि कलि'से रसनेन्द्रियग्राह्य द्रव्य दूर रहता है। (रुक्ष स्वरसे बोलनेपर विदेशी व्यक्ति आता है) 'शवशव'से मृत्यु, 'कणकण' से कलह 'कुलु कुलु' से प्रिय व्यक्तिका आगमन और 'कट कट' से अन्न एवं दधि भोजन होता है। इसी प्रकार कई प्रदीप्त और शान्त स्वरोंसे शुभाशुभ देख पड़ता है।

बलि अर्थात् अभीष्ट आहारादि पानेसे काक नित्य ही हितकी कहता है। प्राचीन मुनियोंने काकबलि प्रदानका जो नियम रखा, उसे हमने नीचे लिखा है,–

दक्षिणको छोड़ अन्यान्य और वटादि क्षीरी वृक्षके आश्रयमें बहु काकोंके एकत्र रहनेके स्थलपर निवृत्त दिनमें पहुंच कर बलि पिण्डके लिये निमन्त्रण देना पड़ता है। दूसरे दिन प्रातःकाल उक्त वृक्षका निम्न देश झाड़ पोंछ गोमयसे लीपते हैं। फिर वहां वेदी बना ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य, इन्द्र, अग्नि, वैवस्वत, राक्षस, वरुण, वायु, कुबेर, शम्भु और अष्ट लोकपालकी पूजा की जाती है। पूजाके समय प्रणव और नमः शब्द युक्त पृथक् पृथक् नाम लेते हैं। अर्घ्य, आसन, आलेपन, पुष्प, धूप, नैवेद्य, दीप, तण्डुल और दक्षिणा पूजाका उपकरण है। पूजान्तपर तन्निविष्ट काकोंको मन्त्रपाठपूर्वक आह्वान कर दधि पिण्ड युक्त बलि निम्नलिखित मन्त्र पढ़ते पढ़ते देना चाहिये,–

"इन्द्राय यमाय वरुणाय धनदाय भूतवायसाय बलिं प्रदास्ये स्वाहा।"

उक्त समस्त कार्यके अन्तको वहांसे हट निभृत देशमें निश्चल भावसे खड़े हो काकोंकी विशेष चेष्टासे शुभाशुभ देखते हैं। पूर्वदिक्से खाना आरम्भ करते सुख और धन बढ़ता है। अग्निकोणसे भोजन आरम्भ होते आग लगती है। दक्षिण दिक्से खाते अर्थ नाश है। नैऋतसे कार्य हानि होती है। पश्चिमसे अभीष्ट सिद्धि है। वायु दिक्से अल्प जल बरसता है। उत्तरसे सुख, आरोग्य और कार्य सिद्धि है। फिर ईशान दिक्से काकोंके बलि खाते अभीष्ट मिल जाता है। चारों ओरसे बलि बिलकुल विलुप्त होनेपर शत्रु और अशुभ दोनों पड़नेकी सम्भावना है। भोजन न करनेसे भयकी आशङ्का उठती है।

क्षीरीवृक्ष, उपवन, चतुष्पथ, नदीतीर एवं देवालय प्रभृति स्थानों पर भूतदिन (चौदश) तथा अष्टमी तिथिको अर्धनिद्र गोधूम वा चणक है। एतद्भिन्न दूसरे प्रकार भी पिण्डदानकी व्यवस्था है। नारदादिने तीन पिण्ड देनेकी बात कही है।

शुभ दिनको चतुर्थ प्रहरके समय पूर्वोक्त स्थान पर पिण्डत्रय खानेके लिये काकोंको सयत्न निमन्त्रण देते हैं। दूसरे दिन प्रातःकाल भूमि लेप पोंछ पूर्वकथित मन्त्र द्वारा ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, वरुण, लोकपाल और काकको यथाक्रम दध्योदन, आड़वातण्डुल, पुष्प धूप प्रभृतिसे पूजते हैं। फिर पूर्वादि दिक्के अनुसार प्रथम पिण्डमें स्वर्ण, द्वितीयमें रौप्य और तृतीयमें लौह लगा अवशिष्ट द्रव्यसे बलि प्रदानके उपयुक्त पिण्ड बनाना चाहिये। बलि भोजन करनेके लिये निम्नोक्त मन्त्रसे काक बोलाये जाते हैं,–

ॐ हिलि हिलि हिलि काकचण्डालाय स्वाहा।
ॐ ब्रह्मणे विनाय काकचण्डालाय स्वाहा॥"

काकके सुवर्णयुक्त पिण्ड भोजन करनेसे उत्तम कार्य होता है। फिर रौप्य युक्त खानेसे मध्यम और लौहयुक्त लेनेमें अधम समझते हैं।

विवाद, वाणिज्य, विवाह, दृष्टि, सङ्गम, धन, कृषि, भोग, रोग, संग्राम, सेवा, राजकार्य और देशके

काकवत् स्वर निकालनेवाला, जो कौवेकी तरह बोलता हो। ६-तत्। २ काकरव, कौवेकी बोली।

काका (सं° स्त्री°) काकवत् आकारोऽस्त्यस्य, काक-अच्-टाप्। १ काकनासा, कौवाठोंटी। २ काकोली-वृक्ष, एक पेड़। ३ काकजङ्घा, मसी। ४ इस्तिका-लता, घुंघची। ५ मलपूवृक्ष, निर्मलीका पेड़। ६ काकमाची, कैवैया। ७ काकोदुम्बरिका, कठगूलर।

काका (हिं° पु°) पिताका भ्राता, बापका भाई, चाचा।

काकाकौवा (हिं° पु°) शुकविशेष, काकातुवा, बड़ा तोता।

काकाचि (सं° क्ली°) काकस्य अचिः चक्षुः, ६-तत्। काकका चक्षु, कौवेकी आंख।

काकाचिगोलकन्याय (सं° पु°) काकस्य अचि-गोलकमिव न्यायः, उपमि°-। न्यायविशेष, एक मन्तिक। काकका एक मात्र चक्षु जैसे उभय अचिके गोलकका कार्य चलाता है, वैसे ही एकमें दो विषयोंका सम्बन्ध रहनेसे 'काकाचिगोलकन्याय' कहलाता है।

काकाङ्गा (सं° स्त्री°) काकस्य अङ्गं इव आकारो यस्याः, बहुव्री°। १ काकजंघा, चकसेनी। २ काक नासा, कौवाठोंटी।

काकाङ्गी, काकाङ्गा देखो।

काकाची (सं° स्त्री°) काकं अचति प्राप्नोति, काक-अच्-अण्-ङीप्। काकजंघावृक्ष, मसी, कौवेकी जांघ-जैसा पेड़।

काकाण्ड (सं° पु°) काकस्य अण्ड इव फलं यस्य, बहुव्री°। १ महानिम्ब, बड़ो नीम। २ काकतिन्दुक वृक्ष, एक पेड़। ६-तत्। ३ काकका अण्डा, कौवेका अण्डा।

काकाण्डक (सं° पु°) काकस्य अण्डः, काकोऽण्ड स्वार्थे कन् पुंवद्भावः; ६-तत्। १ काकका अण्ड, कौवेका अण्डा। "केचित् दरिद्राद्भवाः काकाण्डकनिभास्तथा।" (भारत, वन) २ लूताभेद, किसी किस्मका मकड़ा।

काकाण्डा (सं° स्त्री°) काकस्य अण्डइव बीजमस्याः, बहुव्री°। १ कोलशिम्बी, कोचकी फली। २ महा-ज्योतिष्मती लता, रतनजोत। ३ लूता विशेष। लूता देखो।

काकाण्डाहृषिक—बङ्गालमें मेदिनीपुरकी ब्राह्मणभूमिका एक ग्राम। यहां 'काकाण्डाहृषिक' नामक एक जाग्रत देवता विद्यमान हैं।

काकाण्डी, काकाण्डा देखो।

काकाण्डोला (सं° क्ली°) काकाण्डं भोरति तत् साहृश्यं बीजं प्राप्नोति, काक-उर्-अच्-टाप् रस्य लत्वम्। कोलशिम्बी, कोचकी फली। २ अटमी, इव्य-वस्-कलकल, कनफटिया।

काकातुवा (हिं° पु°) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। वर्तमान शाकुनतत्त्वविदोंके मतमें यह शुक जातीय पक्षी है। सिर्फ भेद यही है कि काकातुवा तोतेसे आकारमें बड़ा पाया जाता है। मस्तकपर खूब बिखरे पत्रकी भांति शिखा रहती है। पुच्छ बहुत बड़ा होता है। अंगरेजीमें इसे 'कोकातू' (Cockatoo) कहते हैं। शाकुनशास्त्रमें यह पक्षीवंश 'काकात्विना' (Cacatuina) माना गया है। काकातुवा शब्द अंगरेजी 'कोकातू'का अपभ्रंश है।

प्रकृत काकातुवेका पालक (पर) श्वेतवर्ण होता है। किन्तु किसी किसीका श्वेतवर्ण पालक अल्प रक्त वर्ण वा अपर वर्ण मिश्रित रहता है। भारतवर्षके दक्षिणाञ्चल और अष्ट्रेलिया द्वीपमें दो प्रकारका काला काकातुवा मिलता है। अंगरेजी शाकुनशास्त्रमें एकको 'केलिप्टोरिङ्कस' (Calyptorhynchus) और दूसरेको 'माइक्रोग्लोसस' (Microglossus) कहते हैं। शेषोक्त काला काकातुवा खूब बड़ा होता है। न्यूगिनीमें यह पाया जाता है। इसकी जिह्वा कण्ठ-कान्वित रहती है। उससे सुलभतया यह खाद्य द्रव्यादि उठा सकता है।

भारत महासागरके द्वीपपुञ्ज और अष्ट्रेलियामें इसकी संख्या सबसे अधिक है। काकातुवा फल, मूल बीज और स्वेदज कीटादि खा अपनी जीविका चलाता है। यह पालनेसे खूब हिल जाता और सिखानेसे तोतेकी तरह बातचीत करता है। काकातुवा अपनी चोटी इतस्ततः चला सकता है। इसका शब्द मधुर नहीं होता।

काकादनक (सं° पु°) काकादनी देखो।

सम्बन्धमें शुभाशुभ देखनेको उक्त प्रकारसे बलिप्रदान कर समझते हैं,—

काकके शिशुको ले अनुकूल चेष्टा लगाने और दक्षिण पर तथा ग्रीवा उठा बोलते बोलते मनोज्ञ स्थान या मनोज्ञ वृक्ष पर जानेसे शुभ और अभीष्टकी सिद्धि होती है। इससे विपरीत चेष्टामें उलटा फल मिलता है। प्रधान शिशुको लेकर प्राग्दिक् चलनेसे पूर्ण लाभ होता है। किन्तु पिण्डके साथ प्रदीप्त-दिक्‌को प्रस्थान करनेसे कार्य प्रथम बनते भी पीछे बिलकुल बिगड़ जाते हैं। द्वितीय पिण्ड उठा प्रान्त दिक्‌को जानेसे शुभ रहता और कार्यका फल विलम्बमें मिलता है। जघन्य पिण्डके साथ प्रदीप्त दिक्‌को चलनेसे कार्य भी जघन्य होता है।

पिण्डादान दानकी व्यवस्था—शुभदिनमें सायंकाल बलि भोजनके लिये काकोंको निमन्त्रण देना चाहिये। दूसरे दिन प्रातःकाल समस्त उपकरणके साथ किसी निर्जन देशस्थ तरुके तलपर पहुंच भूमिको मृत्तिका गोमय प्रभृतिसे परिष्कृत और पञ्च गव्यसे परिशुद्ध करते हैं। फिर सौम्य उपहार दे कुलदेवताको पूज घृत एवं दधिमिश्रित आठ पिण्ड पूर्वादि क्रममें आठो दिक् इन्द्र, वह्नि, भव, नैऋत, विष्णु, ब्रह्मा, कुबेर, महेश्वर और काकको देते हैं। प्रत्येकका नाम ले प्रणव एवं नमः शब्दयुक्त मन्त्र, तथा अर्घ्य, आसन, आलेपन, पुष्प, धूप, नैवेद्य, दीप, आतप और दक्षिणादिसे पूजा करते हैं। पूजाका मन्त्र नीचे लिखा है,—

"ॐ नमः खगपतये गरुड़ाय द्रोणाय पक्षिराजाय स्वाहा।
द्रोणाद्‌काकधर्मं पिण्डं गृहाणत्वमशङ्कितः।
यथादृष्टं निमित्तञ्च कथयस्वाद्य मे स्फुटम्॥"

पिण्डदानके पीछे वहांसे खिसक किसी निभृत स्थानमें खड़े हो काकचेष्टा देखना चाहिये। प्रथम पिण्ड लेनेसे कार्य सिद्ध होता है। द्वितीयसे उद्वेग शोक, यात्राकी विफलता, हानि या कलह, तृतीयसे रोग, आपद्, भय एवं मृत्यु चतुर्थसे युद्धमें जय, पञ्चम सहजमें अभीष्टसिद्धि, षष्ठसे प्रवास तथा विफलता, सप्तमसे असिद्धि और अष्टम पिण्ड ग्रहण करनेसे सन्ताप, शोक एवं यात्राकी विफलता है। यदि काक पिण्डको बिलकुल नहीं खाता अथवा चञ्चुनखसे फेंक जाता, तो सर्वकार्यमें अमङ्गल आता या गहरा युद्ध देखाता है।

काकचिञ्चा (सं॰ स्त्री॰) काकवर्णं चिञ्चा प्रान्तभागः फले यस्याः, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ गुञ्जा, घुंघची। गुञ्जा देखो। २ रक्तगुञ्जा, लाल घुंघची।

काकचिञ्चि, काकचिञ्चा देखो।

काकचिञ्चिक (सं॰ क्ली॰) काकचिञ्चावृक्ष, घुंघचीका पेड़।

काकचिञ्ची (सं॰ स्त्री॰) काकचिञ्चि-ङीप्। गुञ्जा, घुंघची।

काकच्छद (सं॰ पु॰) काकस्य छदः पक्षः इव छदो यस्य, मध्यपदलो॰। १ खञ्जनपक्षी, खड़रैचा। २ चापपक्षी, नीलकण्ठ। ३ कौवेका पर।

काकच्छदि (सं॰ पु॰) काकच्छद बाहुलकात् इच्। काकच्छद देखो।

काकच्छर्दि, काकच्छद देखो।

काकजंघा (सं॰ स्त्री॰) काकस्य जंघेव जंघा आकृति र्यस्याः, मध्यपदलो॰। १ स्वनामख्यातवृक्ष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—काकाङ्गी, काकाक्षी, काकनासिका, ध्वांक्ष्मजंघा, काकाह्व, सुलोमशा, पारावतपदी, दासी और नदीकान्ता है। राजनिघण्टुके मतमें यह तिक्त, उष्ण और व्रण, कफ, बधिरता, अजीर्ण, जीर्णज्वर तथा विषमज्वरनाशक होती है। वाग्भटके कथनानुसार काकजंघा ज्वर, कण्डु, विषमज्वर और कृमिको दूर करती है।

पुष्यानक्षत्रमें इसका मूल उखाड़ रक्त सूत्रसे गले या हाथमें बांधनेसे एक दिनके अन्तरसे आनेवाला ज्वर (एकातरा) छूट जाता है।

कोई कोई इसे मसी या चकसेनी भी कहते हैं। काकजंघाका नाम तेलगुमें सुरपदि (द्रिविकि वेलमा) है। अंगरेजी उद्भिद शास्त्रमें ल्याहिरटा (Leea hirta) लिखते हैं। यह ४।५ हाथ बढ़ता है। काण्ड-सन्धिका मध्यभाग काकजंघाकी भांति उन्नत रहता है। इसी स्थानसे पत्र निकलते हैं। काकजंघाके

काकादनी (सं॰ स्त्री॰) काकैरद्यते भुज्यते ऽसौ, काक-अद् कर्मणि ल्युट् ङीप्। १ रक्तगुञ्जा, लाल घुंघची। २ श्वेतगुञ्जा, शफ़ेद घुंघची। ३ रक्त काकमाची, लाल मकोय। ४ काकतिन्दुका, कौवा ठोंठी। ५ कण्टकपालीलता। इसका संस्कृत पर्याय—हिंस्रा, वधानन्दी, तुण्डी, काला, अहिंस्रा, कटुका, पाणि, कापाल और कुलिक है। सुश्रुतमें संक्षेपतः इसे कफशमनी कहा है।

काकानन्ती (सं॰ स्त्री॰) रक्तगुञ्जा, घुंघची।

काकाम्र (सं॰ पु॰) समष्ठीलक्षुप, ककूंया।

काकायु (सं॰ पु॰) काकस्य आयुर्यस्मात्, बहुव्री॰। स्वर्णवल्लीलता, एक सुनहली बेल।

काकार (सं॰ त्रि॰) कं जलं आकिरति, क-आ-कृ-अण्। जल-स्रावकार, पानी फैलानेवाला।

काकारि (सं॰ पु॰) काकःअरिर्यस्य, बहुव्री॰। पेचक, कौवेका दुश्मन उल्लू।

काकाल (सं॰ पु॰) का इति शब्दं कलति रौति, का-कल्-अण्। १ द्रोणकाक, पहाड़ी कौवा। २ वत्सनाभविष, वच्छनाग, एक ज़हरीली चीज़।

काकावलि (सं॰ स्त्री॰) काकानां आवलिः श्रेणी, ६-तत्। श्रेणीबद्ध बहुसंख्यक काक, कौवेका झुण्ड।

काकाह्वा (सं॰ स्त्री॰) महाश्वेत काकमाची, सफेद मकोय।

काकाह्ना (सं॰ स्त्री॰) काकमाची, मकोय।

काकिया—बङ्गालके रङ्गपुर ज़िलेका एक गण्डग्राम। यह त्रिस्रोता नदीके वामकूलपर अवस्थित है। इस अञ्चलके विज्ञ लोग 'काकिया' शब्दको 'काइन'का अपभ्रंश मानते हैं। यह ग्राम अधिक प्राचीन नहीं। फिर भी एक प्रधान ज़मीन्दार यहां रहते हैं। बाज़ार लगा करता है। जव, तमाखू और सन बाहर बिकनेको भेजते हैं।

काकिणिका (सं॰ स्त्री॰) काकिणी स्वार्थे कन् प्रत्यय। पणका चतुर्थांश, पांच गण्डा कौड़ी।

काकिणी (सं॰ स्त्री॰) ककते गणनाकाले चञ्चली भवति, काक-णिनि-ङीप् पृषोदरादित्वात् नस्य णः। १ पणका चतुर्थांश, पांच गण्डा कौड़ी। २ एक-वराटिका, एक कौड़ी। ३ मानदण्ड, मापकी छड़। ४ रक्तिका, घुंघची। माषाका चतुर्थांश, माशेका चौथा हिस्सा।

काकिणीक (सं॰ त्रि॰) एक काकिणीके मूल्यवाला, जो कीमतमें पांच गण्डे कौड़ियोंके बराबर हो।

काकिनी (सं॰ स्त्री॰) काकिणी, पांच गण्डा कौड़ी।

"ईश्वरा भूरिदानेन यल्लभन्ते फलं किल।
दरिद्रस्तच्च काकिण्या प्राप्नुयादिति न श्रुतिः॥" (पञ्चतन्त्र)

काकिल (सं॰ पु॰) कु-ईषत् किरति, कु-कृ क-कोः कादेशः रस्य लत्वम्। कण्ठमणि, गलेका जवाहिर।

काकी (सं॰ स्त्री॰) काकस्य स्त्री। १ वायसी, मादा कौवा। २ श्वेतकाकमाची, सफेद मकोय। ३ काकोली, एक बूटी। ४ कश्यपकी एक कन्या। इन्होंने ताम्राके गर्भसे जन्म लिया। काकीहीसे सब काक उत्पन्न हुये हैं। ५ चाची।

काकी (हिं॰ स्त्री॰) पितृव्यकी पत्नी, बापके भाईकी औरत, चाची, चची।

काकीय (सं॰ त्रि॰) काकस्य इदम्, काक-छण्। काकसम्बन्धीय, कौवेके मुताल्लिक।

काकु (सं॰ स्त्री॰) काक-उण्। १ शोकभयादि द्वारा स्वरका विकार, खौफ़ गुस्से तकलीफ़ वगैरहमें आवाज़की तबदीली। २ विरुद्ध अर्थबोधक स्वर विशेष, उलटा मतलब ज़ाहिर करनेवाली आवाज़।

"भिन्नकण्ठध्वनिर्धीरैः काकुरित्यभिधीयते।" (साहित्यदर्पण २।११)

३ दैन्योक्ति, गिड़गिड़ाहट। ५ जिह्वा, जीभ। ६ उत्ताप, ज़ोरकी बात।

काकुत्स्थ (सं॰ पु॰) ककुत्स्थस्य नृपतेरपत्यं पुमान्, ककुत्स्थ-अण्। १ ककुत्स्थ राजाका वंशज। इस शब्दसे अनेनस्, अज, दशरथ, राम और लक्ष्मणका बोध होता है। २ पुरञ्जय राजा। स्वार्थे अण्। ३ ककुत्स्थ नृपति।

काकुत्स्थवर्मा—वनाश्रिका और वनवासीके एक प्राचीन कादम्ब राजा। इनके पुत्रका नाम शान्तिवर्मा था।

कदम्ब देखो।

काकुद (स्त्री॰) काइद देखो।

काकुद (सं॰ क्ली॰) काकुं ददाति, काकु-दा-क। तालु, काम, तालू।

पत्र आध हाथ दीर्घ और ४ अङ्गुलि प्रशस्त होते हैं। उनका अग्रभाग सूक्ष्म तथा बहु शिरायुक्त लोमश और किञ्चित खरस्पर्श लगता है। फल गुच्छेदार होता है। उसका ऊपरी वर्तुल प्रदेश कुछ निम्न पड़ता है। काकजंघाकी पुरानी मोटी गांठमें एक कीड़ा भी रहता है। वह बच्चोंको पसली धमकनेसे औषधकी भांति व्यवहार किया जाता है।

भारतमें नाना स्थानोंपर काकजंघा उत्पन्न होती है। विशेषतः वङ्गदेशीय यशोर अञ्चलके नदीकूलवर्ती वनमें यह बहुत देख पड़ती है।

२ गुञ्जा, घुंघची। ३ क्षुद्रपर्णी लता, सुगोन।

काकजम्बु (सं॰ स्त्री॰) काकवर्णं जम्बुः। १ भूमिजम्बूवृक्ष, जङ्गली जामनका पेड़। (Ardisia humilis) इसे बंगलामें वनजाम, मलयमें बीधी, उड़ियामें कुदना, तेलगुमें कोंदमयाइ काकी मारेडु, नागपुरीमें कतनीना, महिसूरीमें कोदिमागिढा, ब्रह्मीमें ग्येङ्ग मोप और सिंहलीमें बलूदम कहते हैं।

यह एक छोटी झाड़ी है। भारतमें काकजम्बु प्रायः सर्वत्र पायी जाती है। किन्तु उत्तर-भारत और सिंहलमें यह नहीं होती। इसके फलोंके रक्तवर्ण रससे अच्छा पीला रंग निकलता है। काष्ठ धूसरवर्ण एवं ईषत् कठिन आता और जलाया जाता है। वैद्यक-निघण्टुके मतसे यह कषाय, अम्ल, गुरु, पाकमें मधुर, वीर्य-पुष्टि-बलकारक और दाह, श्रम तथा अतीसारनाशक है।

२ नागरङ्गवृक्ष, नारङ्गीका पेड़।

काकजम्बू (सं॰ स्त्री॰) कं जलं अकति प्राप्यत्वेन गृह्णाति, क-अक-अण्-टाप्; काका चासौ जम्बू चेति, कर्मधा॰। जलजात जम्बु विशेष, पानीमें पैदा होनेवाली एक जामन। इसका संस्कृत पर्याय—काकफला, नादेयी, काकवल्लभा, भृङ्गेष्टा, काकनीला, धाङ्क्षजम्बु और धनप्रिया है। काकजम्बु देखो।

काकजात (सं॰ पु॰) काकेन जातः प्रतिपालेन वर्धित इत्यर्थः। १ काकपुष्ट, कोकिल, कौवेसे परवरिश पायी हुई कोयल। (त्रि॰) २ काकसे उत्पन्न, कौवेसे पैदा।

काकजानुका (सं॰स्त्री॰) काकजंघा, मसी, चकसेनी।

काकड़ा (हिं॰ पु॰) १ वृक्षविशेष, एक पेड़। यह सुलेमान और हिमालय पर्वत पर होता है। कूमायूंमें इसे अधिक देखते हैं। ग्रीष्मकालमें इसके पत्र झड़ते हैं। काष्ठ पीताभ धूसरवर्ण होता है। इससे विष्टर (कुरसी), मञ्च (मेज), शय्या (पलंग) प्रभृति बनाते हैं। पत्र पशुवोंको खिलाये जाते हैं। काकड़ेके बांदे काकड़ाशींगी कहलाते हैं। कर्कटशृङ्गी देखो।

काकड़ाशींगी (हिं॰ स्त्री॰) कर्कटशृङ्गी, एक पीला बांदा। यह काकड़े पेड़में लगता है। काकड़ा देखो। इससे दूसरी चीज़ोंपर रंग चढ़ाते और चमड़ा सिझाते हैं। लौहचूर्णमें मिला देनेसे काकड़ाशींगी काली पड़ जाती है। इसका आस्वाद कषाय है। कर्कटशृङ्गी देखो

काकडुम्बुर (सं॰ पु॰) कृष्णडुम्बुर, काला गूलर। यह छोटा होता है।

काकण (सं॰ क्ली॰) कु ईषत् कणति निमीलति, कु-कण्-अच्, कोः कादेशः। १ गुञ्जा, घुंघची। काकड़मिव आकृतिरस्यास्ति कृष्णरक्तचिह्नितत्वात्। २ कुष्ठविशेष, काले और लाल धब्बेवाला जुज़ाम या कोढ़। (Leprosy with black and red spots)

गुञ्जाकी भांति वर्णविशिष्ट, अपाक (न पकनेवाले) और वेदनायुक्त कुष्ठको 'काकण' कहते हैं। यह कुष्ठ त्रिदोषसे उत्पन्न होता है। सुतरां इसमें त्रिदोषके लक्षण देख पड़ते हैं। काकण असाध्य कुष्ठ है।

काकणक (सं॰ क्ली॰) काकण स्वार्थे कन्। काकण कुष्ठ, घुंघची-जैसा कोढ़।

काकणघ्नवटी (सं॰ स्त्री॰) कुष्ठघ्न औषध, जुज़ाम या कोढ़की एक दवा। लौहभस्म, विष, चित्रकका मूल, कटुका, त्रिफला, त्रिकटु और त्रिमद (विड़ङ्ग, मुस्त तथा चित्रक) समभाग ले पीस डालते हैं। फिर इस चूर्णको पथ्या (हर), निम्ब, विड़ङ्ग, वासक और अमृता (गुर्च)के क्वाथसे भावना दे गोलियां बना लेते हैं। भावनाके लिये अष्टावशेष क्वाथ कहा है। एक मास यह औषध खानेसे काकणकुष्ठ अच्छा हो जाता है। (रसरत्नाकर)

काकणन्तिका (सं॰ स्त्री॰) कु ईषत् कणन्ती निमी-

काकुदी (सं॰पु॰) ककुदावर्तमें महादोषान्वित अश्व, एक ऐसी घोड़ा। इसके तालूमें बड़ा दोष होता है।

काकुद्र (सं॰ त्रि॰) उद्गाता। (ऐतरेयब्राह्मण ७।१)

काकुन (हिं॰ स्त्री॰) एक अनाज। यह चिड़ियोंको बहुत खिलायी जाती है।

काकुभ (स्त्री॰) काकुद देखो।

काकुभ (सं॰ त्रि॰) ककुभ इदम्, क-कुभ्-अण्। १ ककुभ् छन्दोयुक्त गाथादि। २ दिक् सम्बन्धीय। ३ ककुभ वंशजात।

काकुभवार्हत (सं॰ पु॰) एक प्रगाथ। यह ककुभसे आरम्भ हो वृहतीपर जाकर पूरा होता है।

काकुम (सं॰पु॰) नकुलभेद, किसी किस्मका नेवला। यह तातार देशके शीतल अंशोंमें होता है। इसका चर्म अति श्वेत वर्ण, मृदु तथा उष्ण रहता और पोस्तीनमें लगता है।

काकुरुत (सं॰ क्लो॰) विकृत शब्द, बिगड़ी आवाज।

काकुल (फा॰ स्त्री॰) केशपाश, जुल्फ, कानोंके नीचे लटकनेवाले बड़े बड़े बाल।

काकुलीमृग (सं॰ पु॰) चतुर्विध बिलेशय मृग, मांद (कुहर)में रहनेवाला चार तरहका हिरन।

काकुवाद (सं॰ पु॰) काका दैन्यस्वरेण वादम्, ३-तत्। दीन स्वरमें उक्ति, गिड़गिड़ा कर कही हुई बात।

काकूक्ति (सं॰ स्त्री॰) काकुवाद देखो।

काकूपुर—(काकपुर) युक्तप्रदेशके कानपुर जिलेका एक प्राचीन नगर। यह कानपुर शहरसे १० कोस उत्तर-पश्चिम पड़ता है। बौद्ध राजाओंके समय काकूपुर अवध प्रदेशका प्रधान नगर कहाता था। किसी किसी प्रत्नतत्त्वविद्के मतसे यही काकूपुर भोट देशके बौद्ध ग्रन्थोंमें 'कागुद' नामसे लिखा गया है। काकपुर और बिठूरके बीच 'पयस्विनी उत्पलारण्य' नामक पवित्र स्थान विद्यमान है। आजकल यहां 'कन्नपुर' नामक दुर्गका भग्नावशेष पड़ा है। इस दुर्गको कोई ८२० वर्ष पहले चन्देल राजा छत्रपालने बनवाया था। काकूपुरमें वीरेश्वर महादेव और अश्वत्थामाके नामसे दो बड़े मन्दिर खड़े हैं। प्रतिवर्ष देवताके उत्सव उपलक्ष्यमें मेला लगता है।

काकेचि, काकेचु देखो।

काकेचु (सं॰ पु॰) काकं ईषज्जलं यत्र तादृश इक्षुः। १ इक्षुगन्ध तृण, ऊखकी तरह लम्बी एक खुशबूदार घास। २ खागड़, खगरा। ३ कासतृण, कांस। ४ कोकिलाक्षक्षुप, तालमखानेका झाड़।

काकेन्दु (सं॰ पु॰) काकस्य इन्दुरिव आह्लादकत्वात्, ६-तत्। कुलिक वृक्ष, आबनूस, तेंदू। २ कटुतिन्दुक, कुचिला।

काकेन्दुक, काकेन्दु देखो।

काकेन्दुकी, काकेन्दु देखो।

काकेष्ट (सं॰ पु॰) काकस्य इष्टः, ६-तत्। निम्बवृक्ष, नीमका पेड़। निम्ब देखो।

काकेष्टा (सं॰ स्त्री॰) १ रेणुका, गिर्द। २ काकमाची, मकोय।

काकोचिक (सं॰ पु॰) कु ईषत् कोची सङ्कोची। कु-कच-णिनि स्वार्थे कन् को कादेशः। मत्स्यविशेष, किसी किस्मकी मछली।

काकोची (सं॰स्त्री॰) काकोच-ङीप्। काकोचिक देखो।

काकोडुम्बर (सं॰ पु॰) काकप्रियः उडुम्बरः, मध्यपदलो॰। काकोडुम्बरिका देखो।

काकोडुम्बरिका (सं॰ स्त्री॰) काकोडुम्बर स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। स्वनामख्यात वृक्ष, कठगूलर। इसका संस्कृत पर्याय—फल्गुफला, पत्रली, राजिका, क्षुद्र-दुम्बरिका, फल्गुवाटिका, फल्गुनी, काकोडुम्बर, फल-वाटिका, मलपुफला, कुष्ठघ्नी, अजाक्षी, चित्रभेषजा, और श्वाङ्क्षनाशी है। इसे बंगलामें काकडुमुर, हिन्दीमें गवला, पञ्जाबीमें देगर, मराठीमें धेदू, मारवाड़ीमें बरबत, गुजरातीमें जङ्गली अञ्जीर, तैलगुमें करसन और अरबीमें तिने-बरी कहते हैं। (Ficus Hispidia)

यह एक मंझोला पेड़ या झाड़ है। काकोडुम्बरिका पेशावरसे पूर्व बाह्य हिमालय, बङ्गाल, मध्य एवं दक्षिण भारत, ब्रह्मदेश और आन्दामानद्वीपपुञ्जमें होता है। मलका, सिंहल, चीन और अष्ट्रेलियामें भी यह मिलती है।

काकोडुम्बरिकाकी छालका सूत्र पटलिका बांधनेमें व्यवहार किया जाता है। फल छोटा होता है, जिसपर

यन्ती, काकयन्ती-कन्-टाप्, कोः कदादेशः। १ गुञ्जा, लाल घुंघची। २ रक्तकम्बल वृक्ष, लाल बबीलेका पेड़।
काकयन्ती (सं० स्त्री०) कु-कय-शतृ ङीप्। काकयन्तिका देखो।
काकयान्तक (सं० पु०) सिन्दूर।
काकयी (सं० स्त्री०) काकय-ङीष्। १ गुञ्जा, घुंघची। २ कुष्ठविशेष, किसी क़िस्मका जुज़ाम। काकय देखो।
काकरुहा (सं० स्त्री०) काकनासा, सफेद छोटी घुंघची।
काकतन्द्रा (सं० स्त्री०) काकस्य तन्द्रेव तन्द्रा मध्यपदलो०। १ काककी तन्द्राकी भांति अति सतर्क भावमें तन्द्रा, कौवेकी काहिली-जैसी निद्रायत होशियारीमें सुस्ती। २ काककी तन्द्रा, कौवेकी काहिली।
काकता (सं० स्त्री०) काकस्य भावः, काक-तल्-टाप्। १ काकका धर्म, कौवेका फ़र्ज़। २ काकका स्वभाव, कौवेकी आदत, कौवापन।
काकतालीय (सं० क्ली०) काकतालमधिकृत्य उपदिष्टम्, काक-ताल-छ। समासाच्च तद्विषयात्। पा ५।३।१०६। न्याय विशेष, एक मन्तिक़। सुपक्व ताल अपने आप गिरते समय यदि काक वृक्षपर आकर बैठ जाता, तो कहा जाता कि काक ही ताल गिराता है। इसी प्रकार कोई काम स्वतः सिद्ध होते यदि किसीका हाथ लगता, तो वह उसीका किया ठहरता है। ऐसी ही घटनामें काकतालीय न्याय होता है।
"तदिदं काकतालीयं घोरमासादितं त्वया।" (रामायण ३।४१।१०)
(त्रि०) २ आकस्मिक, दैवायत्त, नागहानी, इत्तिफ़ाकी। (अव्य०) ३ अकस्मात्, इत्तिफ़ाक़से, अचानक।
काकतालीय न्याय, काकतालीय देखो।
काकतालीयवत् (सं० अव्य०) अकस्मात्, इत्तिफ़ाक़से अचानक।
काकतालुकी (सं० त्रि०) काकवत् तालुरस्यास्ति, काक-तालुक-इनि। इन्नोपतापगर्ह्यात् प्राणिस्थादिनिः। पा ५।२।१२८। काककी भांति तालुविशिष्ट, कौवेकी तरह तालू रखनेवाला, खराब, बुरा।
काकतिक्तका, काकतिक्ता देखो।
काकतिक्ता (सं० स्त्री०) काकमांसवत् तिक्ता, मध्यपदलो०। १ लताकरञ्ज, बेलदार करौंदा। २ काकजंघा, मसी, चकसेनी। ३ श्वेत गुञ्जा, सफेद घुंघची।
काकतिन्दु, काकतिन्दुक देखो।
काकतिन्दुक (सं० पु०) कं जले अकति, क-अक-अण्; काकयाती तिन्दुकश्चेति, कर्मधा० यद्वा काकवर्णस्तिन्दुकः काकप्रियो वा तिन्दुकः, मध्यपदलो०। तिन्दुकविशेष, किसी क़िस्मका आबनूस। (Diospyros tomentosa)

इसे भारतके विभिन्न प्रदेशोंमें कन्दुली, मिनाई इल्लिन्द, पेद्दा इल्लिन्द, तोगरिके, कौलखे, इल्लिन्द या उलिमेरा कहते हैं। यह मध्य आकारका वृक्ष है। काकतिन्दुक दाक्षिणात्यमें उड़ीसे तक मिलता है। सूरत और नासिकमें यह अधिक देख पड़ता है। इसे गोदावरी वनका झाड़ कहते हैं। बालाघाट पर्वत और मन्द्राजमें भी यह पाया जाता है। इसका फल गोल बड़े मटरकी भांति होता है। पकनेपर लोग इसे खाते हैं। यह अति सुरस निकलता है। काठ कठिन, स्थायी और सुन्दर वर्णविशिष्ट रहता है। यह अनेक कार्योंके लिये उपयोगी है।

काकतिन्दुकका संस्कृत पर्याय—काकेन्दु, कुलक, काकपीलुक, काकपीलु, काकाण्ड, काकस्फूर्ज, काकाह्व और काकबीजक है। राजनिघण्टुके मतसे यह गुरु, कषाय, अम्ल, वातविकारघ्न और मधुर होता है। इसका पक्व फल मधुर, किञ्चित् कफकारक और वह्नि तथा पित्तनाशक है।
काकतीयरुद्र (सं० पु०) नागपुरके एक प्राचीन राजा।
काकतुण्ड (सं० पु०) काकतुण्डस्य इव वर्णो ऽस्यस्य, काकतुण्डमस्य। १ कृष्ण अगुरु, काला अगर। २ जलपक्षिविशेष, पानीकी एक चिड़िया। ३ योषोर्ध्वगत काकतुण्डाकार सन्धि, जिस्म का एक जोड़। यह हनुद्वय (दोनों जबड़ों) की सन्धि है।
काकतुण्डफला (सं० स्त्री०) काकतुण्डमिव फलमस्याः बहुव्री०। काकनासिका, सफेद घुंघची।
काकतुण्डा, काकतुण्डिका देखो।
काकतुण्डिका (सं० स्त्री०) काकतुण्डस्येव वर्णः

सफेद फूल उठता है। यह एक प्रकारका खाद्य है। पत्तियां काटकर पशुओंको खिलाई जाती हैं। काठसे कोई बडा काम नहीं निकलता। यह प्राचीर फाडकर उठ जाती और भवनकी मिट्टीमें मिला देती है।

राजनिघण्टुके मतसे काकोडुम्बरिका कषायरस, शीतल, व्रणनाशक, गर्भरक्षाके लिये हितकारक और स्तन्यदुग्धवर्धक है। एतद्व्यतीत भावप्रकाशमें इसे कफ, पित्त, श्वित्र, कुष्ठ, चर्म, पाण्डु और कामला-नाशक कहा है।

काकोदर (सं० पु०) कु कुत्सितं अकति, कु-अक्-अच् कोः कादेशः, काकं वक्रगमनकारि उदरं यस्य वा, बहुव्री०। सर्प, सांप।

काकोदुम्बरिका, काकोडुम्बरिका देखो।

काकोदुम्बरिकाफल (सं० क्ली०) अञ्जीर, कठगूलर।

काकोलूक (सं० पु०) द्रोणजातीय पक्षी, कौड़ेके साथ रहनेवाला परिन्द।

काकोर—युक्तप्रदेशके लखनऊ जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २६° ५१´ ५५´´ उ० और देशा० ८०° ४८´ ४५´´ पू० पर अवस्थित है। काकोर नगर अति प्राचीन समझा जाता है। पहले यहां भारजातिके लोग रहते थे। आजकल लखनऊके वकीलों और मुख्तारोंको काकोरमें रहना बहुत अच्छा लगता है। यहां बहुतसे मुसलमान पीरोंके गोरस्थान मौजूद है। काकोरका बाज़ार सप्ताहमें दो बार लगता है।

काकोल (सं० पु०-क्ली०) कु कुत्सितं कोलनं यथा स्यात्तथा कलति पीड़यति, कु-कुल-घञ् कोः कादेशः। १ कृष्णवर्णस्थावर विषभेद, पेड़में पैदा होनेवाला काले रंगका एक ज़हर। इसका संस्कृत पर्याय—प्रपौण्डः, सर्पाकृति, महाविष, गरल, स्नेह, वत्सनाभ, प्रदीपन, शौक्लिकेय, ब्रह्मपुत्र और विष है। २ द्रोणकाक, पहाड़-कौवा। ३ सर्प, सांप। ४ वन्य शूकर, जङ्गली सूअर। ५ कुम्भकार, कुम्हार। ६ काकल नामक ओषधि विशेष, एक बूट। (क्ली०) काकैर्उलूयते भक्ष्यते यत, पृषोदरादित्वात् साधुः। ७ नरक विशेष, एक दोजख। इसमें कौवे पापीको नोच नोच खाते हैं।

काकोली (सं०स्त्री०) काकोल-ङीष्। १ कन्दविशेष, एक लता। यह क्षीरकाकोलीके भांति लगती और कुछ अधिक कृष्णवर्ण होती है। इसका संस्कृत पर्याय—मधुरा, काकी, कालिका, वायसोली, वरा, ध्वाङ्क्षिका, वरा, शुक्ला, धीरा, मेदुरा, ध्वाङ्क्षलि, स्वादुमांसी, वयःस्था, जीवनी, शुक्लक्षीरा, पयस्विनी, पयस्या और मतपाकु है। राजनिघण्टुके मतसे काकोली—मधुर रस, शीतल, कफ एवं शुक्रवर्धक और क्षयरोग, पित्त, वातव्याधि, रक्तदोष, दाह तथा ज्वरनाशक होती है। यह नेपाल वा मरङ्गसे आती है। २ क्षीरकाकोली। ३ फलघृत, एक पकाया हुवा घी। फलघृत देखो।

काकोलीद्वय (सं० क्ली०) काकोलीका जोड़ा, दोनो काकोली। काकोली और क्षीरकाकोलीको काकोलीद्वय कहते हैं।

काकोलूकिका (सं० स्त्री०) काकोलूक-वुन्-टाप्। द्वन्द्वात् वुन् वैरमैथुनिकयोः। पा ४। ३। १२५। काक और पेचककी स्वाभाविक शत्रुता, कौवे और उल्लूजातकी दुश्मनी।

काकोल्यादि (सं०पु०) सुश्रुतोक्त औषधसमूहगण, काकोली वगैरह जड़ी बूटियोंका मजमूआ। इसमें काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा, महामेदा, गुलञ्च, कर्कटशृङ्गी, वंशलोचन, क्षीरी, पद्मक, प्रपौण्डरीक, ऋद्धि, वृद्धि, मृद्विका, जीवन्ती और मधुका काकोल्यादि द्रव्य है। इसका गुण रक्तपित्त तथा वायुनाशक और शुक्र, आयुः, स्तन्य एवं श्लेष्मवर्धक है। (सुश्रुत) कर्ण बंधकी आकृति विशेष।

काकोष्ट, काकोष्ठक देखो।

काकोष्ठक (सं० पु०) काकस्य ओष्ठ इव कायति प्रकाशते, काक-ओष्ठ-कै-क। मांस शून्य सूक्ष्म अग्रभाग और रक्तविशिष्ट कर्ण पाली। निर्मांससंक्षिप्ताग्रास्त्र शोणितपालिः काकोष्ठपालिरिति (सुश्रुत १६ अ)

काकौष्ठक, काकोष्ठक देखो।

काक्ष (सं० पु०) कुत्सितं अक्षं यत्र, कोः कादेशः। का पथ्यक्षयोः। पा ६। ३। १०४। १ कटाक्ष, नज़ारा, तिरछी नज़र। कर्मधा०। २ कुत्सितचक्षु, बुरी आंख।

काक्षतव (सं० क्ली०) कक्षतुका फल।

काक्षसेनि (सं० पु०) अभिप्रतारीका नामान्तर।

काक्षी (सं० स्त्री०) कक्षे कक्षे भवः कक्ष-अण्-ङीप्।

जव भव:। पा ४।३।११। १ सौराष्ट्रमृत्तिका, एक खुशबूदार मट्टी। २ मड़हर, तोर।

काचौरी (सं॰ स्त्री॰) वंशलोचना भेद, किसी किस्मका वंशलोचन।

काचीव (सं॰ पु॰) कु ईषत् चीवति, चीव-पिच्-की: कादेश:। शोभाञ्जनवृक्ष, एक पेड़। २ गौतम ऋषिके एक पुत्र। यह चौशीनरी नाम्नी शूद्राणीके गर्भसे उत्पन्न हुये।

"शूद्रायां गौतमो यत्र महात्मा स'शितव्रत:।
चौशीनर्यामजनयत् काचीवादगान् सुतान् मुनि:॥" (भारत, सभा)

काचीवक, काचीव देखो।

काचीवत्, काचीवत देखो।

काचीवत (सं॰ पु॰) कचीवतो समोरपत्य' पुमान्, कचीवत्-अण्। १ कचीवत् ऋषि सम्बन्धीय।

काचीवती (सं॰ स्त्री॰) काचीवत-ङीप्। व्युषिताश्वकी स्त्री। इनका नाम भद्रा था।

काचीवान् (सं॰ पु॰) १ दीर्घतमाऋषिके शूद्रागर्भजात एक पुत्र। २ चण्डकौशिकके पिता गौतम। ३ कोई राजा। (भारत, आदि १ अ॰)

काग, काक देखो।

कागज (पारसीक शब्द) "कागज" क्या चीज है,—यह किसी को समझानेकी जरूरत नहीं। पृथिवीमें ऐसे देश बहुत ही कम हैं, जहां कागज नहीं। भिन्न भिन्न देशोंमें इसके नाम भी भिन्न भिन्न हैं। जैसे,—

उत्तर-भारत और पारस्यमें	कागज।
आरबमें	कर्त्तास्।
तामिलमें	वरक।
डेन्मार्कमें	पेपिर।
फ्रांस और जर्मनीमें	पेपियार।
इटाली और प्राचीन लाटिनमें	कार्टं या कार्टा।
पर्त्तुगीज और स्पेनमें	पेपेल।
रूसियामें	बुमाड्गो।
इंगलैंडमें	पेपर।

अप्राचीन तान्त्रिक संस्कृत ग्रंथोंमें 'कागद' नाम भी मिलता है। आजकल भी आगरा, एटा आदि प्रान्तोंमें 'कागद' नाम प्रचलित है।

अब सब देशोंमें, प्रधानत: लिखनकार्यमें कागजका व्यवहार होता है। यह कागज भी आजकल प्रधानत: नाना प्रकारके वाष्पीय यंत्रोंकी सहायतासे युरोप, अमेरिका और एसियामें बनते हैं; किन्तु अब भी एसियाके दक्षिण और पूर्व प्रदेशसमूहमें हाथोंसे यथेष्ट परिमाणमें कागज तैयार होता है। यह कागज दुर्मूल्य है और विशेष विशेष कार्योंमें व्यवहृत होते हैं। भारतवर्षमें विशेषत: जैनियोंके प्राचीन (हस्तलिखित) शास्त्र इसी कागजमें लिखे जाते थे; और अब भी लिखे जाते हैं। भारत, पूर्व-उपद्वीप, चीन, जापान, पारस्य आदि देशोंमें ही ऐसे हाथके बने हुए कागजका अधिक आदर पाया जाता है।

भारतवर्षमें बंगाल, बिहार, भुटान, नेपाल, अहमदाबाद, सूरत, धारवाड़, कोल्हापुर, औरंगाबाद, और दौलताबादमें ऐसा (हाथसे बनाया हुआ) कागज यथेष्ट प्रस्तुत होता है। औरंगाबादका कागज सबसे उत्कृष्ट गिना जाता है। देशीय रजवाड़ोंमें इसी कागजका अधिक आदर है। यह कागज सब कागजोंकी अपेक्षा मसृण, चिक्कण और सुदृश्य होता है। इसके बाद दौलताबादके "बहादुरखानि" और "आधागरि" कागज समधिक आदरणीय होते हैं। इन कागजोंमें बनाते वक्त इसके मण्ड पर स्वर्णका सूक्ष्म पात मिला देते हैं, फिर कागज बनने पर उसमें (कागजके) सर्वत्र वह स्वर्णका सूक्ष्मांश फैल जाता है; जिससे देखनेमें अति चमत्कार शोभा देता है,—इस कागजका नाम "अफशानि कागज" है। देशीय राजन्यगण इस कागज (अफशानि) पर राजकीय कार्यादि करते हैं। इन हाथसे बने हुए कागजों पर दलील, सनद, आदि लिखे जाते हैं।

जिसके ऊपर लिखा जाता है, उसे संस्कृतमें "पत्र" कहते हैं। हिन्दी भाषामें (प्रचलित भाषामें) 'पत्रे' या "पत्ते" कहनेसे जो अर्थ ज्ञात होता है, संस्कृतमें "पत्र" शब्दका यथार्थ अर्थ वही है। किस लिए अक्षर, पत्र और लिखनप्रणालीकी उत्पत्ति हुई, इस विषयमें एक कौतूहलजनक होने पर भी

की छालोंसे कागज बनता है जापानवासी इसको "कादजी" कहते हैं ; इसमें भातका माड़ "ओरेणि" (Oreni) मिलाकर खूबसूरत और मजबूत बनाते हैं और भी एक प्रकारके उसी जातीय वृक्षके छालसे कागज बनाते हैं, इस श्रेणीके वृक्षको वहां "कादज" या "कादजिरा" कहते हैं। इस कागजमें खूब अच्छी छपाई आती है। यह "कादजिरा" इतना मजबूत होता है कि इससे रस्सा भ बनाये जाते हैं सिरिगा प्रदेशके सिरिगाम नगरमें एक तरहका कागज बनता है जो बिलकुल रेशमसा जान पड़ता है। हाथमें लेकर देखनेसे भी इसमें रेशमका भ्रम होता है। बहुतोंका अनुमान है कि जापानी "कागज" शब्दसे ईरानियोंने कागज शब्द बनाया है।

समरकंदमें सबसे ज्यादा पतला रेशमी कागज बनता है। चीनके कागजसे भी इसका अधिक आदर होता है। सबसे पहिले चीनवासियोंने ही रेशमसे कागज बनाया था यहांसे भारतवर्षमें भारतसे पारस्य में पारस्यसे आरबमें आरबसे योरूपमें और योरूपसे प्राचीन रोमक राज्यमें रेशमी कागज बनानेकी परिपाटी चली है।

भारतवर्षमें केवल नेपालमें ही बांससे कागज बनता है। नेपालवासी बांसोंको काटकर काठकी ओखलीमें कूट कूट कर 'मंड' बनाते हैं फिर पानीमें धो कर साफ करके, नाना उपायोंसे उसे रेशमके ऊपर ढाल कर सुखा लेते हैं। इसको पत्थरकी बटनियासे घिस घिस कर बराबर करते हैं। यह कागज बहुत कड़ा होता है; और टेढ़ा नहीं फटता, सीधा ही फटता है। यह कागज "फिल्टार" (Filter) करनेके लिए सबसे अच्छा है, क्योंकि यह पानीमें भीग जानेसे मुरझाता नहीं; और न जल्दी नष्ट हो होता है। "नेपाली कागज" नामका भी एक तरहका कागज होता है। यह महादेव का-फूल (Daphne cannabina) नामक वृक्षके वक्कलसे बनाया जाता है। ईस्वी सन् १८५१ की प्रदर्शिनीमें इसी वक्कलसे बना हुआ एक बड़ा कागज दिखाया गया था, दर्शकोंने इसे देख कर बड़ा आश्चर्य किया था। इसको बनाने की तरकीब जापानके तूंत-छालके कागज सरीखी ही है, सिर्फ फरक इतना ही है कि, ये लोग डालीको उबाल कर सिर्फ भीतरी छालको ही उबालते हैं। यह कागज कभी कभी कड़ी से घिस कर भी बराबर किया जाता है। यद्यपि यह कागज 'नेपाली-कागज' कहलाता है; पर वास्तवमें यह नेपालमें नहीं बनता। भोट राज्यमें और हिमालय प्रदेशमें ही इस वृक्षके बहुतसे जंगल है, और वहीं पर यह कागज बनता हैं। भुटिया लोक इस वृक्षकी लकड़ी जलाया करते है। १८२८ ईस्वीसे पहिले इस काठकी ईंटके आकारके कुछ टुकड़े इङ्गलैंडमें परीक्षार्थ भेजे गये थे। वहां इसके द्वारा हाथोंसे जैसा कागज बना, उसके सम्बन्धमें एक मुद्रकका कहना है कि, इस कागज पर जैसी सूक्ष्मसे सूक्ष्म छपाई हो सकती है. वैसी किसी अंग्रेजी कागज पर नहीं हो सकती। यह चीन देशीय "इंडिया-पेपर"के समान गुणविशिष्ट होता था। नेपालमें ऐसे कागज पर लिखी हुई कुछ प्राचीन पोथियां मौजूद हैं, सुनते हैं ये बहुत ही प्राचीन हैं। इन पोथियोंको देख कर बहुतसे अनुमान करते हैं कि, चीन देशसे प्राय॰ ७००वर्ष पहिले भुटिया लोगोंने यह कागज बनाना सीखा है। "महादेव का-फूल" छोटा कंटक-वृक्ष मात्र है, देखनेमें बहुतसा विलायती लरेलकी भांतिका होता है। यह दो वर्ष तक जीता है; और जाड़ेमें इसके पत्ते नहीं झरते। इसका फल विषाक्त होता है। यह वृक्ष कई तरह होता हैं, पर सबसे कागज बनता है। कुछ वृक्षोंके फूल सफेद होते है; और कुछका रंग थोड़ा मटीला और बैंगनी रंग मिला हुआ सफेद सा होता है। बहुतोंका विश्वास है कि, हिमालयके नीचेके लोग नेपाली कागजमें हड़ताल मिलाते हैं; पर यह बिलकुल गलत है, क्योंकि नेपालमें वैसा विष कोई बेच नहीं सकता; और छिपाकर बेचने पर भी उसे विशेष दंड दिया जाता है। "महादेवका फूल"का वृक्ष भी थोड़ा विषैला होता है; पर कागज बन जाने पर उसमें विष नहीं रहता, क्योंकि देखा गया है कि इसमें भी कीड़े लगते हैं। यह सूखने पर बड़ा कड़ा हो जाता है; सूखी चीजों

तन्मूलक प्रमाण रघुनन्दनके 'ज्योतिस्तत्त्व' में देखनेमें आया है,—

"षाण्मासिके तु समये भ्रान्तिः संजायते यतः।
धात्राक्षराणि सृष्टानि पत्रारूढान्यतः पुरा॥"

अर्थात् छह मास बीतने पर भ्रम उपस्थित होते देख विधाताने पूर्व कालमें अक्षरकी सृष्टि की और वे पत्र पर लिखे गये। छह मासके बाद अधिकांश बातोंमें ही भूल हो जाती है, यह ठीक है।

जगत्‌की उन्नतिका इतिहास पर्यालोचना करने पर समझ सकते हैं कि, पहिले ही कागजके ऊपर स्याही और कलमसे लिखने की प्रथा प्रचलित नहीं हुई। कागज आविष्कृत होनेसे पहिले किस पर लिखा जाता था, किससे कागज हुआ, पहिले किस देशमें कागजकी सृष्टि हुई और कौन कौनसी द्रव्यसे कैसे अब कागज बनता है, यह यथाक्रमसे वर्णन किया जाता है।

१। कागज बननेसे पहिले कौन कौन सामग्री लेख्यरूपसे व्यवहृत होती थी ? यह बतलाते हैं।

(क) पत्थर और काठ—सबसे पहिले काठ और पत्थर ही लेख्यरूपसे व्यवहृत होता था। अति प्राचीन कालमें काठ और पत्थर पर अक्षरादि खोद कर रक्षितव्य विषय लिखे जाते थे। काल्दीया प्रदेशमें प्राचीन समाधिस्तम्भके और मिस्र देशके पिरामिडके ऊपर खोदित अस्पष्ट अक्षरमाला ही इसका प्राचीनतम निदर्शन है।

(ख) इष्टक—काल्दीयगण इष्टक (ईंट) के ऊपर अपना ज्योतिषिक पर्यवेक्षणादिका फलाफल उत्कीर्ण कर रखते थे। इस प्रकारकी लिपि विशिष्ट इष्टक अब किसी किसी यूरोपीय अजायबघरमें संरक्षित हैं।

(ग) सीसा—प्राचीन कालमें सीसेके ऊपर दलील आदि खोद कर रखनेकी प्रथा थी। कहा जाता है कि, हिसियड की "धन्यावली और उनका समय" नामक पुस्तक एक बड़ी सीसेकी टेबिल पर खोदी गई थी और बहुत दिनोंतक मिनिर्भ मन्दिरमें रक्षित थी। सीसेकी पत्ती, हथौड़ासे पीटकर पतली कर लेख्यरूपमें व्यवहृत होती थी। रोमनगरमें ऐसे सीसा पर खुदी हुई एक पुस्तक मिली है। उसका आकार ४ इञ्च लम्बा और ३ इञ्च चौड़ा है। यह प्राचीन मिसरीय अस्पष्ट अक्षरोंमें लिखित है।

(घ) पीतलआदि—रोमनगरमें साधारण प्रस्तर आदिका फलाफल उस समय पीतल आदिमें खोदा जाता था। प्राचीन रोमीय सैनिकगण युद्धक्षेत्रमें पीतलकी म्यान (तलवार रखनेकी) में अपना "इच्छा-पत्र" (Wills) लिख रखते थे। १२ तख्तोंके कानून (Laws of 12 tables) पित्तल पर खोदी गई थी। रोमक सम्राट् भेस्पेसीयानके राजत्वकालमें जब अग्निदाहसे राजधानी जल गई थी, तब करीब ३००० (तीन हजार) पीतलकी पात नष्ट हो गई थी; इन सब पातोंमें बहुत प्रयोजनीय कानून (नियम) और दलीलादि भस्मीभूत हो गये। सिरीयाके प्राचीन मठमें डा० बुकाननको ६ (छे) धातुफलक मिले थे। वे धातु त्रिमिश्रित थे। ६ धातुफलकोंमें करीब ११ पृष्ठ थे। यह त्रिकोणाकार अक्षरमें लिखित थे। कोचीनके यहूदियोंके पास और भी ऐसे कई एक धातुफलक हैं।

(ङ) काठ—सोलनके कानून काठके ऊपर खोदित हैं;—इस काष्ठमय कानून-पुस्तक का नाम "अक्सोनस्"(Axones) है। उनमेंसे कितने ही कानून पत्थर पर भी खुदे हुए हैं। इन प्रस्तर-लिपिका नाम ग्रीक भाषामें "किरबिस्" (Kyrbies) है। होमरके समयसे पहिले की तालिका-पुस्तक भी (ग्रीकका) काठ पर खोदी जाती थीं। बकुम नीबूके पेड़का काठ और हाथीके दांत ही इन सब कार्योंमें अधिक व्यवहृत होते थे। तब इन सब काठोंके ऊपर मोम लगा कर सींक (सोना, चांदी, पीतल, लोहा या तांबेकी पैनी सलाई) को गड़ा गड़ा कर लिखनेकी प्रणाली प्रचलित थी। इन सब लिखे हुए काठके टुकड़ोंको बांध कर रखनेसे जो पुस्तकें बनती थीं, उनको "कडेक्स" (codex) अर्थात् पोथी कहते थे। इन काठोंके ऊपर कभी कभी खड़ियामिट्टी से भी लिखा जाता था। बंगाल और उत्तर-पश्चिम प्रदेशोंमें

की पुड़िया बांधनेके लिए भी अच्छा होता है। कल-कत्तेके अजायब घरमें ऐसा एक मौजूद है; जो लम्बाईमें ५० फुट और चौड़ाईमें २१ फुट मापका है।

भूटान वासी अपने यहांके "डिया" नामके एक तरहके वृक्षकी छालसे कागज बनाते हैं। ये लोग उस वृक्षकी छालकी लम्बी लम्बी चीर कर, लकड़ीको राखके साथ उबालते हैं, फिर पत्थरके ऊपर रख कर काठके मुद्गरसे कूट कूट कर "मंड" बनाते हैं। बादमें जापानियोंकी तरह कागज बनाते हैं। इससे साटिन और रेशम बुनी जा सकती है। चीनदेशमें यह उसी रूपसे ही व्यवहृत होता है।

ब्रह्मदेशमें एक भांतिको खराब कागज बनता है। यह पेस्ट बोर्डकी तरह मोटा और कड़ा होता है। इस कागज पर रंग चढ़ा कर, इस पर सिलेट-पेन्सिलकी भांतिकी एक तरहके फीके पीले रंगके पत्थरकी पेन्सिलसे लिखते हैं।

श्याम देशमें एक प्रकारके वल्कलसे २ तरहके कागज बनते हैं,—१ सफेद और २रे काले रंगके। जिस वृक्षकी छालसे यह बनाये जाते हैं, उस वृक्षका नाम है—"पिलकृकोई"। यह अच्छा कागज नहीं होता; और बनता भी अच्छा नहीं।

पहिले ही कह चुके हैं कि भारतवर्षमें भी हाथसे कागज नहीं बनते। यहां पुराने बोरा, फटे कपड़े, पुराने कागज और पाटसन इत्यादिसे कागज बनते हैं। पहिले इन सबको पानीमें भिगो कर चूनेकी पुट मिला कर कूटते हैं। फिर 'मंड' को धो कर चूनाके पानीमें सड़ाते हैं, ४-५ दिन बाद यह पानी बदल दिया जाता है। इसी तरह दो-तीन बार पानी बदल कर अच्छी तरह सड़ा कर फिर उसे सांचेमें ढाल कर सुखा लेते हैं। कागज सूख जाने पर भातके मांड़से घोट कर सुखाया जाता है; फिर दो-चार दिन दबा रखा जाता है; बादमें चिकना-पत्थरसे घिस कर चिकना किया जाता है।

१८ वीं शताब्दीके प्रारम्भमें यूरपमें रुई और सन से प्रधानतः कागज बनाये जाते थे; फटे पुराने कपड़े और रेशमसे नहीं। अब प्रधान रूपसे फटे पुराने कपड़े और रेशमसे बनाये जाते हैं, क्योंकि इनका सहजमें और कम खर्चमें 'मंड' बन जाता है इसी उद्देश्यकी सिद्धिके लिये आज कल यूरपमें नाना स्थानोंसे फटे पुराने वस्त्रादिकी आमदनी होती है।

मादागास्कर द्वीपमें "आवो" नामके वृक्षकी छालसे एक प्रकारका कागज बनता है। यह कागज भी भूटानके "डिया" नामक वृक्षकी छालके कागजकी तरह बनाया जाता है। इसमें भातका मांड़ दिया जाता है; इस लिए यह कागज स्याही नहीं सोखता।

रुईके कागजका इतिहास।—यूरोपीय विद्वानोंके मतसे, बुकेरिया प्रदेशमें खृष्टीय ७वीं शताब्दीके अन्तके समयमें अथवा १०वीं शताब्दीके प्रारम्भमें सबसे पहिले "बाम्बिसिनो" (Bombycinnee) नामक रुईका कागज बना था। आरबीयगण कहते हैं कि, जुसुफ् आमरा नामको व्यक्तिने ही सबसे पहिले ऐसा कागज बनाया था। परन्तु हमारी समझसे इससे पहिले भी तुलाट या रुईका कागज भारतवर्षमें प्रचलित था। इसका प्रमाण माकिदनवीर सिकन्दरके सेनापति नियार्कसके "तुलापापड़ान" के हिसाबके उल्लेखसे मिलता है। आरबियोंने कागज बनानेकी प्रणाली पारसियोंसे सीखी; और इन्हीं लोगोंने सबसे पहिले आफ्रिकाके अन्तर्गत सेप्टा नगरमें, फिर स्पेन देशमें भलेंटिश्रा प्रलेन्सिया और टलिडो नगरमें रुईके कागजका कारखाना खोला था यूरोपवासी १२वीं शताब्दीमें पूर्व-यूरोप और सिसिलि द्वीपमें रुईके कागज बनाते थे। कागज बनानेके योग्य, वस्तुओंके अभावसे ही रुईके कागजका आविर्भाव हुआ था। इन कागजके बननेसे क्रमशः पेपिरि कागज उठ गया था। १३वीं शताब्दीसे रुईका कागज खूब ही व्यवहृत होने लगा। यह पहिले खृ॰ पू॰ १लो शताब्दीसे खृष्टीय ८मो शताब्दीमें चीन और भारत, क्रमशः पारस्य, आरब, ग्रीस, अट्टोया (भिसिसिया) और जर्मन तक फैल गया। तब इसका नाम था ग्रीक पार्चमेण्ट; उस समय ग्रीक लोग इसे "बम्बरकिनि" कहते थे; क्योंकि ग्रीक भाषामें रुईके वृक्षको "बम्बिक्स" कहते हैं। प्राचीन लाटिन लोग इसे "चार्टा बम्बिसिना"(Charta

अब भी छोटे छोटे दूकानदारोंकी दुकान पर ऐसी वस्तु देखनेमें आती है। ये लोग ६—४ इञ्चके ३ काठके टुकड़े एकत्र रस्सीमें पिरो लेते हैं; और उस रस्सीके छोरमें एक लोहेकी कील बांध रखते हैं। उन टुकड़ों पर मोम और कालोंच मिला कर लगा देते हैं। खरीद बिक्री करते करते यदि उधार देनेका या और कोई हिसाब आ पड़ता है; तो ये उन टुकड़ों पर उसी कीलसे लिख लेते हैं। बंगाल प्रांतको छोड़कर प्रायः सारे हिन्दुस्थानमें विशेषतः मारवाड़ और युक्तप्रान्तमें काठकी पट्टियों (१ फुट+१॥०) पर खड़ियामिट्टी घोल कर सरपते (रेंटा) की कलमसे लिखा करते हैं। यह रेंटा उन प्रान्तोंमें घासकी तरह अपने आपही उपजता है। सिलेट और पेन्सिलका उन प्रान्तोंमें बहुत ही कम प्रचार है, वहांके मदर्शोंमें भी यही "पट्टी" काममें लायी जाती है। पहिले जमानेमें ऐसे काठोंके टुकड़ों पर चिट्ठी लिख कर रस्सीसे बांध कर, गांठके ऊपर मुहर लगा देते थे। सडोमन-पुस्तकालयमें २ फुट ६६ इञ्च काठके तख्तापर पत्र लिखा हुआ मौजूद है। चीनमें भी काठके तख्ते लिखनेके काममें आते हैं।

(च) पत्ता—प्राचीन कालमें अधिकांश जातियां पेड़ोंके पत्तोंको लेख्यरूपसे व्यवहारमें लाती थीं। आफ्रिकाके मिसरीयोंने सबसे पहिले ताड़पत्र पर लिखना सीखा था। सिराकिउसके जज लोग 'अलपाइ' वृक्षके पत्ते पर निर्व्वासन-दण्डके आसामियोंके नाम लिखते थे। भारतवर्षमें, सिंहलमें और ब्रह्मदेशमें ताड़-पत्रका अधिक व्यवहार होता है। ब्रह्मदेशमें उत्तम पुस्तकें हाथीके दांतकी पत्तियों पर लिखी जाती थीं। हाथीके दांतकी पत्तियां पहिले काली रंगली जाती थीं और फिर उसपर सोनेकी या चांदीकी 'चित्र' से अक्षर लिखे जाते थे। उड़िया और सिंहलीय लोग "तालिपत" वृक्षके पत्ते व्यवहार करते हैं; यह पत्ते बहुत चौड़े और पतले होते हैं। इसके ऊपर अक्षरोंको स्पष्ट करनेके लिये उस पर लोहेकी सींकसे लिख कर फिर उस पर कोयलेका चूरा घिस कर पोंछ देते थे। अब भी सिंहलमें 'तालिपत' और भारतमें 'ताड़-पत्र' का बहुत कुछ व्यवहार किया जाता है। दक्षिण (श्रवणबेलगोला आदि)में ताड़-पत्र पर शास्त्र लिखनेका बहुतही प्रचार था और अब भी है। जैनबद्री मूड़बद्री नगरमें "जयधवल-महाधवल" नामक ताड़पत्र पर लिखे हुए दिगम्बर जैनियोंके महान् ग्रंथ अब भी मौजूद हैं। आराके जैनसिद्धान्त-भवनमें भी बहुतसे ग्रन्थ ताड़-पत्रोंमें लिखे हुए मौजूद हैं। नेपालमें महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्रीजीने जितने हस्तलिखित ग्रन्थ देखे हैं, उनमेंसे ईस्वीके ६ठ शतककी पोथी सबसे प्राचीन गिनी जाती है। परंतु दक्षिणके उपर्युक्त ग्रन्थों (जयधवल-महाधवल) परसे निश्चय किया जाता है कि, भारतमें ताड़-पत्रों पर लिखनेकी प्रथा बहुत दिनोंसे चली आती है।

(छ) वृक्षवल्कल—पेड़ोंकी छाल भी किसी समय पृथिवीके सर्वत्र लिखनेके काममें लाई जाती थी। पहिले कालदीयगण पेड़ोंकी भीतरी छालको "लेबर" (Leber) कहते थे और उसको लिखनेके काममें लाते थे। इसी 'लेबर'से ही अब 'लेबर' शब्दसे पुस्तकका ज्ञान होता है। ब्रह्मदेशमें बांस की खपच पर पवित्र पुस्तकें लिखी जाती थीं। सुमात्राद्वीपमें बुद्धाजाति अब भी एक तरहके पेड़की भीतरी छाल पर लिखा करती हैं। ये लोग इस छालको लंबी लंबी चीर कर चौखूटी घरी करके रखते हैं। रजन या टार्पिन-तेलके वृक्ष जातीय एक प्रकारके वृक्षके रसमें इक्षुरस मिला कर स्याही बनाते हैं। साधारणतः व्यवहारके लिए ये लोग बांसके गांठमें लगी हुई खोल (असिफलक) पर भी लिखा करते हैं। बोडलियन लाइब्रेरीमें मेक्सिको देशके अस्पष्ट सांकेतिक अक्षरोंमें लिखी हुई एक पुस्तक है, उसके अक्षर-समूह भी वल्कलके ऊपर लिखे है। भारतके मलबार उपकूल-वासी अब भी प्रधानतः वल्कलके ऊपर लिखा करते हैं।

(ज) रेशमीवस्त्रखंड—प्लिनि कहते हैं कि, रेशमी वस्त्रके ऊपर लिखना पहिले अप्रसिद्ध व्यक्तियोंमें प्रचलित था। इन रेशमी वस्त्र पर लिखित पुस्तका-दिमें मजिष्ट्रेट लोगोंके नाम और साधारणकी

Bombycina) बीचमें लेखकगण "चार्टा गसिपेना" या "एक्सजीलीना" (Charta Gossipena or xglina) और स्पेनिके लोग "पार्गामिनो डि पानो" (Pergamino di panno) कहते थे। डामास्कसमें जो कागज बनता था, वह अच्छा बनता था ; इसलिए उसको "चार्टा डामास्केन" (Charta Damascena) और बहुत से "चार्टा कटोनिया" (Charta Gotonia) एवं अन्तमें "चार्टा सेरिका" (Charta Serica) कहते थे। क्योंकि, चीनके सेरिका प्रदेशसे ही पहिले पहल रुई आमदनी होती थी। उसके बाद क्रमशः उन्नति हुई है।

रुईके कागजके बाद रेशमसे कागज बनना शुरू हुआ। प्लिनिकी वर्णना पढ़नेसे मालूम होता है कि, रेशमी वस्त्रके एक टुकड़ेको नाना उपायोंसे बनाकर उसी पर लिखनेकी रिवाज भी थी, इसको "लिबिलिण्टाइ" (Libitintic) कहते थे। आजकल रेशम पर चित्र बनानेके लिए, चित्रकार रेशमको पहिले जिस प्रकार बना लेते हैं ; उस समय भी रेशम पर लिखनेके लिए ऐसा करते थे। ११०८ ईस्वीमें सबसे पहिले यूरोपमें जर्मनियोंने रेशमसे कागज बनाया था। कोई कोई इटालियोंको प्रथम निर्माता कहते हैं। यूरोपियनोंने चीनवासियोंसे यह सीखा था। कोई कोई कहते हैं कि, ईस्वीकी १२वीं शताब्दीमें भी यूरोपमें रेशमी कागज था।

कागजकी मिलें और व्यापार इत्यादि—अब यूरोपके सर्वत्र, एसिया और अमेरिकाके अनेकानेक स्थानों पर साधारणतः वाष्पीय यन्त्रोंकी सहायतासे तरह तरहका कारखानोंमें कागज बनता है। इस समय कूटना, पीसना, 'मंड' बनाना, धोना, सांचेमें डालना, सुखाना, चिकना बनाना, मापके अनुसार काटना-इत्यादि सबही काम कल या मशीनोंसे होता है। आजकल यूरोप, अमेरिका आदि सर्वत्र फटे पुराने कपड़ेसे ही प्रधानतया कागज बनाया जाता है। बहुतसे मिल वालोंका कहना है कि, रुई सरीखी चीजों (वस्त्रादि) से जैसा 'मंड' बनता है, वैसा ही आधुनिक मिलोंमें अच्छी तरह लग सकता है ; पर कच्ची रुई (अर्थात् सूत या वस्त्रादिके सिवा दूसरी अवस्थामें) से जो 'मंड' बनाया जाता है, वह सहजमें व्यवहृत नहीं हो सकता। समय समय पर तरह तरहके मनुष्योंने तरह तरहकी चीजोंसे कागज बनाया है ; सहजमें और कम खर्चमें अधिक कागज बनानेकी आशासे लोग घास, पूला, पत्ते इत्यादिसे कागज बनानेकी तरकीब निकाल रहे हैं ; पर आज तक रुई और रेशमके वस्त्रोंके कागजकी भांतिके कागज किसी दूसरी वस्तुसे नहीं बन सके। हां, बराबर प्रयत्न करने पर भविष्यमें कैसा फल हो यह नहीं कहा जा सकता। क्योंकि, पैपिरस वक्कल खृष्ट जन्मके बाद भी प्रायः १२ सौ वर्ष तक चला था ; और रुई रेशमके कागजकी उमर तो अभी १२५० वर्षकी ही हुई है। लन्डनमें ईस्वी सन् १८००में धानके पूलासे कागज बनता था। उस समय मार्कुइस आफ् सल्-बारिने इङ्गलैंडके राजा तृतीय जर्जको एक पुस्तक उपहारमें दी थी ; जिसका कागज धानके पूलासे बना हुआ था। और जिस जिस चीजोंसे कागज बन सकता था, उन सबका जितना विवरण उस समय मिला था, उसीका इतिहास उस पुस्तकमें मुद्रित था। धानके पूलासे बनाया हुआ कागज आज कल यूरोपमें सर्वत्र प्रचलित है ; और यथेष्ट बनता भी है। एकबार शिल्पसमितिमें भारतवर्षके कुछ तृणोंकी परीक्षा की गई थी, इसमें स्थिर किया गया था कि, सब तृणोंसे ही कागज बन सकता है ; पर इनमेंसे धानका पूला ही सबसे अच्छा है। १७०२ ई०में जर्मन भाषामें, एक पुस्तक लिखी गई थी ; जिसमें भिन्न भिन्न ६० प्रकारके स्वतन्त्र द्रव्योंसे बने हुए कागज थे।

अफ्रिकामें एस्पार्टो (Esparta) तृण और एडान्-सोनिया (Adansonia) वृक्षके वक्कलके सिवा "डिस्" घास (Diss-grass) से भी कागज बनाया जाता है, पर यह सहज-प्राप्य नहीं। आलजिरिया प्रदेशमें एक प्रकारका छोटा ताड़ होता है, इससे भी कागज बन सकता है ; पर यह भी दुष्प्राप्य है और इसमें तेल रहता है, इस लिए कागज भी अच्छा नहीं बनता। दक्षिण-अफ्रिकामें नदीके बहावको रोक कर एक

दलील आदि लिखी जाती थीं। मिसरके लोग भी ऐसी पुस्तकों पर रचितमध्य विषय लिख रखते थे।

(झ) पशुचर्म—एक समयमें कहीं कहीं लोग पशुओंके चमड़े पर भी लिखा करते थे। जोन जाति पुस्तकको "डेफ्टेरो" (Defterae) वा चर्म (?) कहती थी। "बिब्लस" (Biblos) पेड़ जब दुष्प्राप्य हो उठा तब लोग बकरी और भेड़ोंकी खाल पर लिखते रहे। ईसाके ५म शतकमें 'कन्स्टांटिनोपल'में जो भीषण अग्निकांड हुआ था, तब एक जातिके सर्पके पेट का चमड़ा जल गया था। उसी सर्प-चर्म पर ग्रीकका महाकाव्य "इलियाड" और "वडेसि" सोनेके अक्षरोंमें लिखा गया था। यह हिंसक लिखन-प्रणाली अब कहीं भी नहीं रही।

(ञ) पार्चमेंट और विलाम्—बकरी और भेड़की खालको रीति अनुसार ऐसा बना लिया करते हैं; जिसमें "छापा" हो सके। ऐसे बने हुए चमड़ेका नाम 'पार्चमेंट' है। सूक्ष्म और अच्छा पार्चमेंट विलाम् कहलाता है। विलाम् चमड़ेसे नहीं बनता; अकाल-प्रसूत या दुग्धपायी गोवत्सके चर्मसे बनता है। पहिले यहूदी लोग इस पर कानूनादि लिखा करते थे। पारसी लोग इस पर स्वदेशप्रचलित गल्प वा इतिहास लिखते थे। दस्तावेज़ादि लिखनेमें यह अब भी व्यवहृत होता है। ड्रेसडेन लाइब्रेरीमें हुमापचीके चमड़े पर लिखी हुई एक मेक्सिको-पञ्जिका और भियेना-लाइब्रेरीमें एक पुस्तक है।

(ट) बना हुआ चमड़ा (लोम छील कर, पीट कर साफ किया चमड़ा; जो आजकल भारतमें भी खूब व्यवहार किया जाता है।)—ऐसे चमड़े पर आरबी लोग अधिक लिखते थे।

२। कागजकी उत्पत्ति—पहिले ही एकदम अंशुमाल पदार्थके 'मण्ड'से कागज बनानेकी प्रणाली उद्भावित नहीं हुई। पहिले तृण और वृक्षादिका अंशविशेषसे कागजवत् एक प्रकारका पदार्थ बनता था। इसमें विदेशीय ऐतिहासिकोंके मतसे "पेपिरस" (Pepirus Antiquorum) वा बाईबिलके मतसे "बुलरश" (Bulrush) नामक तृणके अङ्गसे बने हुए कागज सबसे प्राचीन हैं। इससे जो कागज बनता था, उसको "पेपिरस पेपर" और संक्षेपमें "पेपिरि" कहते थे। नेव साइब कृत Exodus नामक ग्रंथमें देखा जाता है कि, ईसासे १४०० वर्ष पहिले भी पेपिरिका बहुत प्रचार था; और ईसाके ३०० वर्ष बाद भी इस पेपिरिके व्यवहारका उल्लेख मिलता है।

यह तृण शरकी भांति जलाशय-भूमि पर उत्पन्न होता है। मिसरदेशमें, सिरियामें और सिसिलिद्वीपमें यह तृण उत्पन्न होते हैं। सिरीयामें इसको 'बेबिर' (Babeer), ग्रीकमें 'बिबलोस' (Biblos) और उद्भिद्शास्त्रमें पाश्चात्य मनीषिगण 'साइपेरस सिरिया-कास' (Cyperus Syriacus) कहते हैं। यह करीब ८ फुटसे लेकर १२ फुट तक लंबा होता है। इसके पत्ते शरके पत्ता सरीखे नहीं होते, बंगाल प्रांतके "झाउ" वृक्षके पत्तेकी भांति इस तृणके अग्रभागमें ८ पत्ते होते हैं। इसके सर्वाङ्गमें पत्ते नहीं होते और न शरकी भांति इसमें गांठे ही होती हैं। इसका वर्ण सबुज होता है; पर जो अंश कीचमें रहता है, वह सफेद होता है। इस सफेद अंशकी छाल बहुत ही पतली होती है; और १८।२० परतें भी होती हैं। इन परतियोंको सावधानीसे खोल कर चौड़ाईकी ओर जोड़ देनेसे ही कागज बन जाता था। उन छालोंके जोड़नेके लिए उस समय सिरीष वा अन्य कोई वैसी ही वस्तु काममें लाई जाती थी। 'पेपिरस्' घासकी जड़ मनुष्यके हाथके समान मोटी होती है, अतः जितनी मोटाई उसकी होती है, उतनी ही कागज की भी चौड़ाई होती है। यह छाल जितने भीतरकी होगी उतनी ही पतली होगी, इसलिए तब मोटा पतला सब तरहका 'पेपिरि' बनता था। जो 'पेपिरि' सबसे अधिक पतला होता था, उसको ग्रीक लोग 'हेरिटिका' कहते थे, कारण कि—इस तरहका 'पेपिरि' सिर्फ मिसरीय याजकगण ही व्यवहारमें लाते थे, अन्य साधारण वा विदेशीय वणिक् इसे खरीद नहीं सकते थे। मिसरीय याजकगण इस पर धर्मकथा लिख कर विक्रय करते थे। इस समयमें केवल मिसरीय लोग ही 'पेपिरि' बना जानते थे, अतः ग्रीक

प्रकारके वृक्ष पयप्रित किये जाते हैं; जो कि "पामेट" (Palmeta) नामसे प्रसिद्ध है। ये वृक्ष आठ-दश फुट ऊंचे होते हैं; और इससे भी कागज बन सकते हैं।

घास कस विमोलि (कपासके बीज) की भुसीसे कागज बनते हैं। बहुतोंका कहना है कि, इसका कागज बहुत अच्छा होता है। पहिले स्पेन देशीय एस्पार्टोके सम्बन्धमें जो कहा है, उनमें "मेरोकोया टेनासिसामर" (Merochea Tenacissamr) और "लिगियाम् स्पार्टम्" (Lygeum Spartum) जातीय घास ही अच्छी होती है, यह घास भूमध्यसागरके किनारे पर ही अधिक होती है।

भारतवर्षके वायुना वृक्षकी भीतरकी छालसे भी बहुत अच्छे कागज बन सकते हैं।

रूसिया राज्यमें "बोरो" नामके वृक्षसे कागज बनता है।

कागज पर रंग चढ़ाना।—इङ्गलैंडमें सबसे पहिले जैसा रंगीन कागज चला था, उसका उल्लेख पहिले कर चुके हैं। पहिलेसे साधारणतः कागजका रंग सफेद होता आया है; और उसके ऊपर काली स्याही से लिखनेकी रीति चली आई है। कागज बननेसे पहिले जब चमड़े पर लिखा जाता था, तब भेड़ वगैरहके चमड़े पर पीला, नीला आदि रंग चढ़ा कर उस पर सुनहरी या रुपैरी हिस्से लिखा जाता था। रोमकगण हाथीके दांतकी पत्तियों पर सब रंगकी मोम लगाते थे। बहुत जगह सिन्दूरसे लिखनेका खूब प्रचार था। पोपके राज्य संघमें प्रायः सब ही लिखा-पढ़ी लालरंगसे होती थी। भारतवर्षमें चन्दन, लालरंग और सिन्दूरसे मन्त्रादि लिखनेकी प्रथा बहुत प्राचीन समयसे चली आई है।

बंगालमें और भारतके अन्यान्य स्थानोंमें बालकोंको पहिले प्रथम 'खिड़ा माटी' नामक एक प्रकारके नरम पदार्थके टुकड़ेसे जमीन पर लिखना सिखाया जाता है; फिर क्रमशः ताड़पत्र पर, केलेके पत्ते पर; और आखिरमें कागज पर लिखते हैं। इससे भारतकी लेख्य वस्तुका क्रमविकास स्पष्ट झलक जाता है। भारतवर्षमें प्राचीन कालमें जितनी लेख्य वस्तुएं थीं, उनमेंसे ताड़-पत्र, केलेके पत्ते, भट-पत्र, भेरेट-पत्र, भूर्ज-पत्र, तुलात् या तुलट-कागज, पत्थर और धातु-फलक आदि ही प्रधान हैं। अब भी ताड़-पत्रका व्यवहार है। मन्त्रादिका 'गदा' बांधनेके लिए अब भी भूर्ज पत्र काममें आता है। केलेके पत्ते भी अब तक गावोंकी पाठशालाओंमें लिखनेके काममें लाये जाते हैं। केलेका पत्ता जल्दी सूख कर नष्ट हो जाता है, इसी लिए इस पर कोई रक्षितव्य विषय नहीं लिखा जाता। इस विषयकी बंगालमें एक कहावत है कि,— "लिखे दिलाम कलार पाते, सेई बेड़ाय पथे पथे"— अर्थात्, केलेके पत्ते पर लिखा दिया है; इस लिए लिखना न लिखना बराबर है। भेरेठपत्र पर लिखित पोथियां अब भी कहीं कहीं मिलती हैं। यह ताड़-पत्रकी भांतिका ही होता है; पर उससे कुछ पतला और चौड़ाईमें बड़ा होता है। यह ताड़-पत्रकी अपेक्षा अधिक स्थायी होता है। बट वृक्षके पत्तेका अब बिलकुल व्यवहार नहीं है। धातुफलक और पत्थर पर अब सिर्फ मन्दिरादिमें शिल्पलिपि खोदी जाती है। तांबेकी चद्दर पर जैनियोंका सिद्ध-यन्त्र भी खोदा जाता है। यन्त्र परम पूज्य होता है; और जैन विवाह पद्धतिसे जो विवाह होता है, उसमें इस यन्त्रकी स्थापना करके पूजा की जाती है। यह यन्त्र प्रायः करके सब ही दि० जैन मन्दिरोंमें प्रतिमाके पास विराजमान रहता है और इसमें सिद्ध भगवान (अष्ट कर्मोंसे मुक्त) की स्थापना करके अष्ट द्रव्योंसे पूजा की जाती है। तान्त्रिक उपासक लोग तांबे, सोने और चांदीमें खोदित देवताओंके यन्त्र मन्त्रादिकी पूजा आदि करते हैं। तुलात् या तुलट कागजका भी यथेष्ट प्रचार है। पहिले इस कागज पर गोंद, इमलीके बियाकी लेई; और हड़ताल लगा कर घोंट कर रंग चढ़ाया जाता था, कोई भातका माड़ भी लगाता था। इससे न तो कीड़े लगते थे और न कागज स्याही सोखता था। जिस कागजमें माड़ लगता था, उस पर संस्कृतकी पुस्तक नहीं लिखी जाती थीं।

मुसलमानोंके जमानेमें भारतमें कई तरहके

लोग वैसा सुन्दर 'पेपिरि' नहीं बना सकते थे। रोमकगण भी इसी लिए 'हेरिटिका पेपिरि' नहीं पाते थे ; परन्तु पीछेसे इन लोगोंने वैसा बना लिया था। रोमकसम्राट् अगस्तासके समयमें रोमकगण मिसर देशसे याजकोंके लिखे हुए 'हेरिटिका' खरीद लाते थे और एक प्रकार की औषधिसे उसके अक्षर मिटा कर अपने व्यवहारमें लाया करते थे, यह औषध भी रोमवासियोंने बनाई थी। इस कागजका नाम, रोमवासियोंने अपने सम्राटके नामानुसार ; "अगस्तास" कागज रक्खा। उससे नीचे दर्जेके 'पेपिरि'का नाम, वहांकी रानीके नामानुसार, 'लिभियाना' पड़ा। पीछेसे जब इन लोगोंको 'पेपिरि' बनाना आ गया ; तब उक्त दो श्रेणिके सिवा 'ऐम्फिथियेटिका' 'फेनियाना' 'एम्पोरटिका' 'क्लभिया' आदि नामके भिन्न भिन्न दामोंके पेपिरि बनाने लगे थे। प्लिनिके इतिहास पढ़नेसे समझ सकते हैं कि, ग्रीस या रोमके सर्वसाधारणका विश्वास था कि, पेपिरि बनानेके लिए, मिसर देशीय नील नदके पानीकी अत्यन्त ही आवश्यकता है, क्योंकि नीलनदके पानीमें स्वभावतः एक प्रकारका गोंदसा मिला हुआ है, उससे पेपिर जोड़नेमें अधिक सहायता मिलती है। पेपिरिकी छाल एक टेबिल पर समान भावसे सजा कर उस पर नीलनदके पानीके छींटे दे कर, कुछ देर तक घाममें सुखा लेनेसे ही पेपिरि बनता था ; परन्तु यह ठीक नहीं था। पेपिरिकी छालको भिगोनेसे ही, उसमें एक प्रकारका गोंदसा निकलता था और उसे घाममें सुखा लेने ही वह सूख कर जुड़ जाता था।

इसके बाद कैसे, किस रीतिसे अंशुमान् पदार्थको 'मंड' बनाके कागज बनानेकी तरकीब निकाली गई, यह जाननेका उपाय नहीं है। हां, खोजीगणोंका अनुमान है कि, जैसे बरैंया, भौंरा और भौंहारके छत्ते देखनेमें बहुत कुछ कागजसे हैं और वह वृक्ष आदिसे ही उत्पन्न होते हैं। उक्त बरैंया आदि जिस प्रकार वृक्षांश विशेषको तरल बनाकर थोड़ा थोड़ा मुंहमें लेकर बड़े बड़े छत्ते बना लेते हैं, इसी प्रकार ही शायद कागज बनाया जाता था। अंग्रेज ऐतिहासिकोंने स्थिर किया है कि, करीब ईस्वी सन् ८५में चीनके लोगोंने ही अंशुमान् पदार्थसे सबसे पहिले कागज बनाया था।

कन्फूचिके समयमें चीनवासी बांसके भीतरी छालके ऊपर तीक्ष्ण लेखनी द्वारा लिखा करते थे। फिर इन लोगोंने बांसकी ही छाल, रुई, रेशम और अन्यान्य वृक्षोंकी छालसे 'मंड' बनाके कागज बनाना सीखा था। हैनवंशीय होटि नामक चीनसम्राट्के राजत्वकालमें काई एक वृक्षोंकी छाल, मछली पकड़नेके पुराने जालके टुकड़े, सन, और रेशम एकसाथ उबाल कर 'मंड' बनाते थे और इसी मंडसे ही कागज बनता था। कागज बनानेके लिए पहिले जो कुछ यंत्र आदि बनाये गये थे, अब उसीकी उन्नति करके उन्हीं यंत्रोंसे उत्तमोत्तम कागज बनाये जाते हैं। अब चीनदेशमें नानाप्रकारके कागज बनते हैं। इस देशमें हो-सि नामक घास या फूंस इतना अधिक उत्पन्न होता है कि, ये लोग उसीसे शवका दाह करते हैं।

जो कुछ भी हो, इंगलैंडीय ऐतिहासिक कागज की उत्पत्तिमें चीनको ही प्रथम उपाधि दें या और किसीको; परन्तु ग्रीक इतिहाससे यथार्थ बात जानी जा सकती है। पञ्जाब-विजयी ग्रीकसम्राट् अलेकजन्दरके सेनापति नियरखुस् लिख गये हैं कि, उस समय उनने भारतवर्षमें उत्तम, नरम, चिकने और मजबूत एक तरहके 'रुइके' वस्तुके ऊपर कलवारके लेन देनका हिसाब लिखनेका बहुत प्रचार देखा है। यह शायद तुलात या तुलाट अथवा तुलट कागजकी भांतिका होगा। माकिदन-राजने खृष्ट-जन्मसे ३२१ वर्ष पहिले भारतपर आक्रमण किया था, इसलिए उसके बहुत पहिलेसे भारतमें तुलाटके भांतिका कागजका प्रचार था,—यह निश्चित बात है। बहुतोंकी धारणा है कि विलायती कागज वा आधुनिक मिलोंके कागज पर हड़ताल फेर देनेसे ही तुलट कागज बन जाता है ; पर वास्तव में ऐसा नहीं है। पहिले मालदह जिलेमें यह तुलट कागज बहुत ही ज्यादा बनता था। देश विदेशोंमें भी इसका बहुत कुछ आदर होता था। इसीलिए माल-

कागज बनते थे, जिनमेंसे (१) सर्वसाधारणके लायक कागज, (२) अमीर उमरावोंके कागज और (३) घुटे हुये कागज ही प्रधान हैं। घुटा हुआ कागज भी तीन तरहका था।

१ सफेद।—सिर्फ कुड़िया सुडियासे घिस कर चिकना किया हुआ।

२रा जरफ़सान—सुनहला और रुपहला; अर्थात् दाक्षिणात्यके "अफसानी" कागजकी भांतिका।

३रा, टिकलीदार—जिसमें छोटी छोटी सुनहली और रुपहली टिकली लगी रहती हैं। यह मर्यादाके अनुसार भिन्न भिन्न रूपसे व्यवहृत होता था।

यह कागज चौड़ाईकी तरफ लम्बा होता था। इन कागजों पर विषय लिखे जानेके बाद, फिर इनको मोड़कर ऊपरसे एक वैसे ही कागजका टुकड़ा लपेट दिया जाता था। ऐसे कागजके टुकड़ेका नाम "कमरबन्द" था। फिर मखमलकी थैलीमें रखकर, उसे मखमलसे या ज़रीसे बांध कर रख दिया करते थे।

काश्मीरमें एक तरहका पुराना देशी कागज देखा जाता है। यह कागज देखनेमें सफेद न होनेपर भी ऐसा चिकना कागज भारतमें बहुत कम ही है। सुना गया है कि, ऐसा कागज काश्मीरमें बहुत दिन पहिलेसे बनता आया है।

आज तक परीक्षा करके जिन जिन उद्भिज वस्तुओंसे कागज बनाया गया, उनके नाम नीचे लिखे जाते हैं;—

इससे पहिले मिलों में सनकी (परित्यक्त) जड़से कागज बनाया जाता था, परन्तु आज कल मिलोंमें सन की जड़ से बोरे बनाये जाते हैं, इस लिये उसका मूल्य बढ़ गया है। इसी कारण सन की जड़से आज कल कागज नहीं बनाये जाते।

साबुई या बबुई घास ही कागजकी मिलों में कागज बनानेके लिये अधिक काम में लाई जाती है। छह लाख या सात लाख मन के करीब यह उत्पन्न होती है। यह घास १।) या १।) मन मिलती है।

'नल' और मूंजसे भी कागज बनाया जा सकता है, परन्तु इससे किफायत नहीं हो सकती। क्योंकि यह घास अधिक पैदा नहीं होती; और इसका मूल्य भी अधिक होता है।

कहीं कहीं बांस से भी कागज बनाया जाता है। इसदेश में बांस द्वारा कागज बनाने की कल अभी तक स्थापित नहीं हुई है। आसाम और ब्रह्म देश के जंगलों में यथेष्ट बांस उत्पन्न होते हैं। बांसों की कटाई, रेलका किराया, मजदूरोंकी मजदूरी आदि जोड़ कर हिसाब लगाने पर १) या १।) मन से कम नहीं पड़ेगा। जर्मनी में सिर्फ धान के पूलों से कागज बनाया जाता है।

हाल ही में कृषि तत्वविद् श्रीयुक्त निवारणचन्द्र, चौधरी ने गवेषणा पूर्ण यह मन्तव्य प्रकाशित किया है कि, 'सन,-काटी' से कागज बन सकता है। उन्होंने रासायनिक परीक्षा करके देखा है कि 'सन काटी से सैकड़ा पीछे ६० भाग कागज तैयार करनेके सूत्र होते हैं। उनके परीक्षा फल से जाना गया है कि—

सनकटी से सैकड़ा पीछे	६०	भाग सूत्र
बांस से "	४१	" "
सबुई बाबुई घाससे "	३८	" "
नल से "	३७	" "
धान के पूला से "	३३	" "

सनकटी आजकल सिर्फ जलाने के काम में आती और गांवों में कम कीमत में मिलती है। ।) या ।/) आने मन इसका भाव है। श्रीयुत निवारणचन्द्र ने हिसाब करके दिखाया है कि बंगाल, बिहार, उड़ीसा प्रदेश की सनकटियों से १साल में साढ़े पांच करोड़ मन कागजके सूत्र बन सकते हैं। भारतवर्ष के लिये सिर्फ २५, पचीस लाख मन कागज-सूत्रकी जरूरत है। बाकी के सूत्र या बने हुए कागज विदेशों में भेजने से देश को आर्थिक लाभ और गरीबों का कल्याण हो सकता है।

कागज़ात (अ० पु०) पत्रादि, बहुतसे कागज़। यह शब्द कागज़ का बहुवचन है।

कागज़ी (अ० वि०) १ पत्रक-सम्बन्धीय, कागज़के मुताबिक। २ पत्रकनिर्मित, कागजसे बना हुआ। ३ सूक्ष्म त्वक्-विशिष्ट, बहुत पतले छिलकेवाला। (पु०) ४

देशसे नानाप्रकारका तुलट कागज देशविदेशोंमें रवाना होता था। उस समय अंग्रेजोंने ही चीनके किसी एक तरहके कागजका नाम "India proof" रक्खा था। मालूम होता है कि, यह कागज पहिले चीन देशमें उत्पन्न नहीं होता था; सबसे पहिले भारतवर्षसे ही यह कागज चीन देशमें पहुंचा हो। क्योंकि अगर ऐसा नहीं होता तो इसका ऐसा नाम ही क्यों पड़ता? और चीनके साथ भारतका अन्तर्वाणिज्य पहिले प्रचलित था, इसका प्रमाण यथेष्ट है। चार-पांच सौ वर्ष पहिले मालदहमें इस कागजका व्यवसाय खूब ही विस्तृत था और किसी एक श्रेणीके लोगोंकी यही उपजीविका थी। अब भी अनेक पुराने जमींदारोंके घरमें साटिनकी भांति उज्ज्वल और नरम एकतरहके कागजपर बादशाही सनद, फाड़ इत्यादि देखनेमें आते हैं। यह सब पुरातन देशी कागज गौड़में बनते थे। हमने तुलट कागज पर लिखी हुई छह सात सौ वर्षकी प्राचीन पोथी देखी है। भारतवर्षमें मुसल-मान भी कागजका व्यापार करते थे। मुसलमान, तांतियोंको जैसे "जुलाह" तथा मत्स्यजीवियोंको "नैकारी" आदि कहते थे, वैसेही इन कागजके व्यवसायियोंको "कागजी" कहते थे। अब भी कागजी मुसलमान लोग ढाका प्रान्तमें "कागज" बनाकर ही जीविका निर्वाह करते हैं। कलकत्तेकी अन्तर्जातीय प्रदर्शनी (ई० १८८३—८४)में कई प्रकारके पट सनके कागज, ढाका मुंशीगंजके 'मेघु कागजी'के बने हुए एक तरहके कागज, आहमदाबाद सासेरामसे ४ तरहके देशी कागज, बरहमपुर-कपड़ौलि (मुजफ्फरपुर) से दो तरहके देशी कागज, और भूटानसे एक तरहके दुधकी छालका कागज आया था। तुटिया कागजमें कीड़े नहीं लगते। यही कागज सुन्दर और नरम होता है—ऐसा प्रसिद्ध है।

पहिले पारस्य देशमें कठिन दुध-छालसे एकतरहका कागज बनता था। उस छालका नाम तुस, वा तुज़ है। पहिलेके पारसीलोग इस तुज़को अमड़ेके साथ मिलाकर कागज बनाते थे। ये लोग इस कागजको खूब व्यवहारमें लाते थे और उनसे पञ्जाब आदि उत्तर-भारतमें भी यह कागज आता था।

मुसलमान-धर्मप्रवर्त्तक मुहम्मदकी कुछ पुस्तकें भेड़ोंके कन्धेकी हड्डियोंकी पत्तियों पर लिखी गई थीं।

१।—विलायती कागजका इतिहास—

पहिले कहा जा चुका है कि, चीनवासियोंने ही, ईसाके पूर्व समयमें कागज बनानेके लिए; सन, रेशम और फटे वस्त्रोंसे 'मंड' बनानेकी तरकीब निकाली थी। अरबीय लोगोंने इसे चीनसे सीख कर ७०६ ईस्वीमें समरकंद शहरमें पहिले कारखाना खोला था। इनसे फिर यह कागज ईस्वी १२वीं शतकमें पहिले यूरोपमें प्रचारित हुआ। इसी समयमें ही सबसे पहिले स्पेन देशमें रुईसे कागज बनानेका एक कारखाना खुला था। ११५० ई०में भेलेन्सिया प्रदेशके प्राचीन नगर जटिभा नगरके कारखानेके कागजकी सबसे अधिक प्रसिद्धि हो गई। यह कागज पूर्व और पश्चिममें सब देशोंमें जाया करता था। क्रमशः भेलिन्सिया और टलेडो प्रदेशके खृष्टानोंने कागजके कारखानोंकी विशेष उन्नति की। ईस्वीय १२वीं शतकके अन्तके समयमें यूरोपमें सर्वत्र रुईके बने हुए कागज व्यवहृत होते थे। उसी कागज पर लिखी हुई एक दलील उत्तर सिसीया प्रदेशके गल नगरके एक कैदखानेमें सुरक्षित है। यह दलील रोमकसम्राट् द्वितीय फ्रेडारिकका आदेश-पत्र है। इसमें १२४२ ईस्वीकी तारीख लिखी हुई है। अवशेषमें १४ वीं शतकमें सन और रेशमसे अधिक कागज बन निकले और ये रुईके कागजसे अधिक व्यवहृत होने लगे। तब रुईके कागजसे सनका कागज ज्यादा मजबूत बनता था। उस समय सन आदिसे जो कागज बनता था, वर्त्तमान प्रणालीकी भांति तब सन धोकर सफेद नहीं किया जाता था, सिर्फ उसमें नील घो दिया जाता था। ये सब कागज जहां हैं, वहां आज तक भी खूब मजबूत और समान उज्ज्वल हैं;—देखते ही इनकी प्रशंसा करनी पड़ती है। १४वीं शताब्दीमें इंगलैंड, फ्रांस, इटाली और स्पेनमें

पत्रक विक्रेता, कागज़ फरोख़्त करने वाला। ५ श्वेत अर्ककपास, सफ़ेद खजूर। सुन्नसकोफाको 'कागजी नींबू' और सूक्ष्मत्वक् विशिष्ट निम्बुक को 'कागज़ी नीबू' कहते हैं। कागज़ी बादामका भी छिलका बहुत पतला होता है। हिन्दी में जिस वस्तुके पहले 'कागज़ी' शब्द लगता, वह अति पतला रहता है।

कागद (हिं॰ पु॰) पत्रक, कागज।

काग सुसुण्ड, काक भुशुण्डि (हिं॰) काकभुशुण्डि देखो।

कागर (हिं॰ पु॰) १ पत्रक, कागज। २ पक्ष, पर।

कागरो (हिं॰ वि॰) तुच्छ, हकीर, थोड़ा।

कागल—बम्बई प्रदेशके कोल्हापुर राज्यका एक क्षुद्र राज्य। यह अक्षा॰ १६° ३८′ उ॰ और देशा॰ ७४° २०′ ३०″ पू॰ पर अवस्थित है। इसकी भूमि का परिमाण १२८ वर्गमील है। प्रति वर्ष २००००) रु॰ कर लगता है। वर्तमान शासक राजाके पूर्व पुरुष सखाराम राव सेंधिया के एक कर्मचारी थे। १८०० ई॰ को उन्हें कोल्हापुर राज्यके निकट कागलकी सनद मिली। राजा साहब ८ तोपोंकी सलामी पाते हैं। इस राज्यके नगर का नाम भी कागल ही है। दूधगङ्गा और वेदगङ्गा दो नदी हैं।

कागान—पञ्जाब प्रदेशके हज़ारा जिलेकी एक उपत्यका। दक्षिणांश-व्यतीत इसके तीनों ओर काश्मीर राज्य लगा है। भूमि का परिमाण ८०० वर्गमील और दैर्घ्य ६० मील तथा प्रस्थ १५ मील है। कागानके शृङ्ग प्रायः १७०००फीट ऊंचे पड़ते हैं। यह हिमालयके अन्तर्निविष्ट है। इसमें २२चरगाह हैं। उनमें अच्छी अच्छी घासें होती हैं। मनुष्य अधिक नहीं। कहीं कहीं दो चार घरों में लोग रहते हैं। कागान नामक ग्राम अक्षा॰ ३४° ४६′ ४५″ उ॰ और देशान्तर ७३° ३४′ १५″ पर अवस्थित है।

कागाबासी (हिं॰ स्त्री॰) प्रातःकाल की बनीबासी विजया, कौवे बोलनेके समय छननेवाली भांग।

कागारि (सं॰ पु॰) कागस्य अरिः काग: अरिर्यस्य। पेचक, उल्लू।

कागारोल (हिं॰ पु॰) कोलाहल, कौवोंका शोर, गुलगपाड़ा।

कागिया (हिं॰ स्त्री॰) भेड़ी विशेष, एक तरहकी भेड़। यह तिब्बत में होती है। इसका सिर बड़ा और पर छोटा रहता है। मांसका आस्वाद सुप्रसिद्ध है। कागिया मांसके लिये ही पाली और मारी जाती है (पु॰) २ कृमिविशेष, एक कीड़ा। यह नाजको बिगाड़ता है।

कागौर (हिं॰ पु॰) काकबलि, कौवेको दिया जानेवाला कौर। इसे श्राद्धादि के समय कच्चसे निकाल कर काकको खिलाते हैं। काकबलि देखो।

काग्नि (सं॰पु॰) ईषत् अग्निः। अल्प अग्नि, थोड़ी आग।

काङ्कायन (सं॰पु॰) एक मुनि। इन्होंने चरकसंहिता प्रणेता अग्निवेश ऋषि के साथ भरद्वाज-पुनर्वसु, से आयुर्वेद पढ़ा था। चरक संहिता देखनेसे इनकी बनाई संहिता का भी पता लगता है। किन्तु वह देखने में नहीं आती।

काङ्कायनमोदक, (सं॰पु॰) मोदक विशेष, किसी किस्म का लड्डू। यह हरीतकी ५ पल, जीरक १ पल, मरिच १ पल, पिप्पली १ पल, पिप्पलीमूल २ पल, चविका १ पल, चित्रकमूल ४ पल, शुण्ठी ५ पल, यवक्षार २ पल, भल्लातक ८ पल तथा शूरणकन्द १६ पल (प्रत्येक) और उक्त सर्व चूर्ण से द्विगुण गुड़ डालने से बनता है। इसके सेवन से अर्शोरोग अच्छा हो जाता है।

काङ्क्षणीय (सं॰त्रि॰) इच्छा के योग्य, चाहने लायक।

काङ्क्षा (सं॰ स्त्री॰) काक्षि-भटाप्। आकांक्षा, इच्छा।

काङ्क्षित (सं॰त्रि॰) कांक्षि-क्त। १ अभिलषित, चाहा जानेवाला। (क्ली॰) २ इच्छा, चाहिश।

काङ्क्षिता, (सं॰स्त्री) अभिप्राय, चाह।

काङ्क्षी (सं॰ त्रि॰) काङ्क्षतीति, काक्षि-णिनि। अभिलाषी, चाहनेवाला।

काङ्क्षोद (सं॰ पु॰) कल्पपक्षी, एक चिड़िया।

काङ्गयम,—मन्द्राज प्रान्तके कोयम्बतूर जिले का एक ग्राम।

यह धारापुर तहसीलके अन्तर्गत अक्षा॰ ११° १′ उ॰ और देशा॰ ७७° ३६′ पू॰ पर अवस्थित है। प्राचीन नाम कोङ्गु है। सम्भवतः पूर्व कालको दाक्षिणात्यके कोङ्गु राजा यहां राजत्व करते होंगे।

सन, रेशमादिके कागजके कारखाने खूब ही खुले थे। जर्मनके नुरेम्बर्गनगरमें ई० १३७० में और इङ्गलैंडमें हार्टफोर्डसायरके स्टेभेनेज नगरमें सबसे पहिले कागजके कारखाने स्थापित हुए थे। इन्हीं लोगोंने कुछ पहिले वस्कीरभाइल कागज ढालनेका बुना हुआ सांचा बनाया था। इसी सांचेको व्यवहार करते करते फरासियोंने इसकी और भी उन्नति की और इसके मशीनोंमें इन्हीं सांचोंमें उस समय "वेलम्" (Vellum) कागज बनते थे। इसी समयमें सन, रेशमादि उवाल कर कूटनेके लिए कैंची और कूटनी-कल इङ्गलैंडमें बनी थी। ई० १७८८में फ्रांसमें मुसोंडिडोने सर्व-प्रकारके तन्तुओंसे ही कागज बनानेकी तरकीब निकाली थी। मुसोंडिडोने इस तरकीबका ई० १८०१में इङ्गलैंडमें प्रचार किया। ई० १८०४में फुड्रिनियार कम्पनीको इसका कंट्राक्ट मिला; इस कम्पनीके सिवा दूसरा कोई ऐसा कागज नहीं बना पाता था। आखिरमें दूसरोंने इनसे भी उत्तमोत्तम कल-कारखाने खोले; जिससे इस कम्पनीको घाटा पड़ा। रुपियाके राजकोषसे तब इसने १ लाखसे कुछ अधिक कर्ज लिया था। ७५ वर्षकी उमरमें फुड्रिनियार नामक एक कर्मचारी अपनी एकमात्र कन्याको साथ लेकर यह रुपये वसूल करनेके लिए इङ्गलैंड आये। ऐसी दशामें लोगोंने ब्रिटिश गवर्नमेंट से यह आवेदन किया कि, जब यह कम्पनी चालू थी; तब इससे गवर्नमेंटको करीब ५ लाख रुपयेकी आमदनी थी, इस लिये इस समय सरकारको कुछ दया करनी चाहिये। पार्लियामेंटमें इस आवेदन पर विचार किया गया कि सरकारकी तरफसे सिर्फ ७००० पाउंड दिया जा सकता है। यह सुन कर अन्यान्य कागजवालोंने चंदा करके और भी कुछ रुपये देनेको तैयार हुए परन्तु इसी बीचमें उक्त कम्पनीके मालिकोंके एकमात्र वंशधर ८८ वर्षकी उमरमें इहलोक त्याग गये। इनकी दो कन्याओंको, बहुत कोशिश करने पर; राजकोषसे थोड़ी बहुत मासिक वृत्ति मिलने लगी।

आजकल चिट्ठीके कागजोंमें और फुलिस्कोप कागजोंमें जैसी पानीकी लकीरें सी रहती हैं; पहिले विलायतके सब ही कागजोंमें वैसी पानीकी लकीरें रहा करती थीं। यह चिन्ह भिन्न भिन्न व्यवसायियोंका भिन्न भिन्न प्रकारका होता था। हिसाबमें वा दलील आदिमें जाल तो नहीं किया गया—इसकी परीक्षा उसी जलीय चिह्न द्वारा हुआ करती थी। पहिले जमानेमें सबसे पुराना जलीय चिह्न, फ्रेंडार्स नगरमें जो कागज बनता था; उसमें हाथका पंजा होता था, इस पंजेके बीचकी अंगुलीसे एक तारकाविशिष्ट शलाका बाहिर होती थी। इस कागज पर तब साधारण पत्र व्यवहारका काम चलता था। भिनसके एक अजायबघरमें ऐसे कागज पर लिखी हुई एक चिट्ठी मौजूद है, यह चिट्ठी २० जुलाई १५०२ ईस्वीमें इंगलैंडके राजा सप्तम हेनरी प्रासिस्को केपेलोजेने लिखी थी। यह पञ्जा-मार्का कागज "हाथ-कागज" (Hand-paper) कहाता था। और एक प्रकारके चिट्ठीके कागज (Note-paper)में उस समय सरायके ग्लासका चिन्ह रहता था; पर फिर इसको बदल कर ढालके ऊपर राजचिन्ह (Royal arms) रक्खा गया। डाकघरके कागज (Post paper)में उस समयके डाकियाका 'शिंगा' और ढालके ऊपर राजमुकुटका चिन्ह रहता था। नकल करनेके कागज (copy paper) में फरासी जातीय पुष्पका चिन्ह रहता था। डिमी कागजमें फरासी-पुष्प और ढालके ऊपर राजमुकुटका, रायल कागजमें टेढ़ा आधा हाथका और कैप (cap) कागजमें घुड़सवारकी टोपी (jokey cap) की भांति कोई वस्तुका चिन्ह रहता था। इस कैप कागज पर सेक्सपीयरकी ग्रंथावली सबसे पहिले छपी थी। आर्कियलजियाके मतसे, १६६८ सालमें फुलिस्केप कागज चला था प्रथम चार्लसने अपना खजाना खाली देख कर कुछ व्यवसायियोंको इस फुलिस्केप कागजका कंट्राक्ट दे दिया था। सरकारी कामोंमें यही कागज लगता था। पहिले इस कागजमें राजचिन्ह रहता था; परन्तु क्रमवेलके राजत्वमें इसके स्थानमें "गधेकी टोपी" (Foolscap) और एक घंटेका चिन्ह रक्खा गया। फिर जब राज्यका शासन भार रेम्प

काङ्गा (सं॰ स्त्री॰) कुत्सितं अंगं यस्याः, काङ्ग टाप् बहुव्री॰। बचा, वच।

काङ्‌क (सं॰ क्ली॰) षष्टिक धान्यविशेष, किसी किस्मका धान। यह रस एवं पाकमें मधुर, वातपित्तशमन और शालिवद् गुण होता है। (सुश्रुत)

काच (सं॰ क्ली॰) कच्यते बध्यते अनेन कच-घञ् न कुत्वम्। १ मोम। २ लाख या चपड़ा। ३ काचलवण। (पु॰) ४ शिक्य। ५ मणि विशेष। ६ नेत्र रोगविशेष, मोतियाबिंद लिङ्गनाश और नीलिका ये दो इसके नामान्तर हैं। तिमिर रोगकी पहिली अवस्था में जब केवल चन्द्र, सूर्य्य, नक्षत्र, विद्युत् और उज्ज्वल रत्न आदि ही दिखाई देते हैं, उसी अवस्थाका नाम 'काच' या लिङ्गनाश रोग है।

शङ्खनाभि, बहेड़ाकी मींगी, हरीतकी, मनःशिला, पीपल, मिरच, कुष्ठ, और वच,—इन सब चीजोंका समान रीतिसे एकत्र करके बकरी के दूधके साथ पीसना चाहिये। फिर मटर को बराबर गोलियां बना कर उन्हें सुखा लेना चाहिये। इसके बाद इन गोलियों को पानी में घिस कर आंखों में लगाना चाहिये। इस अञ्जन से काच, तिमिर, पटलरोग, मांसवृद्धि अर्बुद और रात्र्यन्ध आदि रोग नष्ट हो जाते हैं। ७ समुद्र गुप्त का नामान्तर। ८ मृत्तिका विशेष। इसका दूसरा संस्कृत नाम क्षार है। राजवल्लभ के मत से इसका गुण—क्षाररस, उष्णवीर्य और चक्षुमहारा दृष्टि-प्रसन्नता कारक है।

काच भङ्गप्रवण स्वच्छ वस्तु है। युरोपकी सर्व प्रधान व्यवहार्य वस्तु यही है। हमारे देशमें जिस प्रकार कांसे, पीतल, पत्थर आदि के बर्त्तन व्यवहार में आते हैं, उसीप्रकार इस (कांच) के बर्त्तन यूरोपमें व्यवहृत होते हैं। इसी लिए इसदेश को अपेक्षा यूरोप में काच अधिक तैयार होता है और इस शिल्प की उन्नति भी खूब हुई। यूरोप मे काच इतना अधिक तैयार होता है कि, उससे देश का अभाव पूरा कर विदेशोंमें वाणिज्यके लिये भी भेजा जाता है। भारतमें भी यूरोप से काच आता है। कांचके बोतल, शीशी, कांच की चादर, पोत, कृत्रिम मोती, तरह तरहके बर्त्तन, झाड़, लालटेन, फानूस और नाना प्रकार की बिल्लौरी चीजें, चूड़ी, बाजा, बाजी आदि अलङ्कार बनते हैं और नाना देशोंमें भेजे जाते हैं। यूरोपकी कांच की चीजें हमारे अकेले भारतमें ही प्रत्येक वर्ष में ३५—३६ लाख रुपये की आती हैं; जिनमें १० लाख के तो मोती आदि आते हैं।

बालुकिस और क्षार से कांच बनता है। भारत में इन दोनों चीजोंका अभाव नहीं है। साधारण बालू में ही यथेष्ट बालुकिस प्राप्त हो सकता है; और क्षार नाना तरहकी वस्तुओं से संग्रह किया जा सकता है। अच्छा कांच बनाने के लिये बालुकिस की जगह चूल्हे की जली हुई मिट्टी (Fire-clay)का चूर काममें लाया जा सकता है, भारतमें उसका भी अभाव नहीं है। इतनी सुविधा होने पर भी भारत में आज तक कांचके व्यापार की उन्नति न हुई। यहां आज कल जैसा काच बनता है, उससे एक तो चूड़ियां और दूसरी अवन्य ग्रन्थो की कच्ची शीशियां या कुप्पियों के सिवा और कुछ भी नहीं बनाया जा सकता। इस देश के कांच बनाने वाले क्षार अधिक काम मे लाते हैं, इसी लिये कांच अच्छा या साफ नहीं बनता। कभी कभी ये लोग क्षार इतना अधिक डाल देते हैं कि कांच तक नुनखुरा हो जाता है। इसके बाद जैसी भट्टी में कांच गलाया जाता है, वह भी ठीक कामके काबिल नहीं। कारण उसमें आवश्यकतानुसार उत्ताप नहीं पैदा होता और जो कुछ होता भी है, वह बराबर एकसां नहीं रहता। क्योंकि इस देश की भट्टी में अग्नि प्रज्वलित रखनेके लिए धौंकनी से हवा दी जाती है। इसीलिए धौंकनी को हवा के अनुसार आग का तेज सर्वदा घटता बढ़ता रहता है। फिर ऐसी हवासे गले हुए कांच में कुछ अंश पतला और कुछ अंश गाढ़ा हो जाता है, इसलिए साफ भी नहीं होता। देशी काचमें विशुद्ध क्षारके बदले सज्जीमिट्टी काममें लाई जाती है। इससे काच अच्छा नहीं बनता। क्योंकि इसमें ज्यादा-तर कड़े अंगारकी क्षार (crude carbonate of soda), कुछ उद्भिज्ज क्षार (potash) सैकड़ा पीछे ६०—७० भाग चूना, ३०—४० भाग कुछ पीली रंग की बालू,

पालियामेंट (Rump poarliament)के हाथमें आया तब यह चिन्ह उठा दिया गया था ; पर आज तक भी उसका और पार्लियामेंटकी रोकड़ बही आदिका नाम "फ़ुलिस्कोप" ही है।

बहुतसे विलायती कागज नीले रंगके होते हैं। इसप्रकार कागज रंगे जानेकी पहिले एक आकस्मिक घटना घट चुकी है। मि॰ बुटेन्स नामक एक कागज व्यवसायी १७८० खृष्टाब्दमें अपनी स्त्रीके साथ एकदिन अपने कारखानेमें गया। कारखानेका कार्यादि देखते हुए ये दोनो घूम रहे थे, अचानक ही स्त्रीके हाथसे एक नील रंगकी पुड़िया कागजके 'मंड'के ऊपर गिर पड़ी ; जिससे वह रंग उसी समय 'मंड'में मिल गया फिर उस 'मंड'से जो कागज बना वह नील रंगका बना। इस कागजका खूब आदर हुआ। बुटेन्सकी स्त्रीने भी नीले रंगकी आटि (Cake) बेचकर यथेष्ट लाभ उठाया।

ईस्वीसन् ११८५में स्कोटलैंडमें कागज बनाना शुरू हुआ। एडिनबरा नगरमें इसके लिए सभा हुई थी। इस सभामें जो कुछ नियमादि स्थिर किये गए थे, वे आज तक भी हटिश मिउजियममें विद्यमान हैं। उस समय सबसे ज्यादा सूक्ष्म (पतले) कागज स्पेन देशीय एक प्रकारके घास (Eapart Alfa, Lygeum Sparteum) से बनता था।

इसी तरह खृष्टीय ११वीं शताब्दीके अन्तके समयसे लेकर १८वीं शताब्दीके पूर्वार्द्धकालके मध्यमें यूरोपीय कागज बननेके लिए जो चीजें व्यवहारमें लाई गई हैं और प्रत्येक चीज सबसे पहिले किस किस सालमें किस किसने व्यवहार की है, इसकी एक तालिका नीचे लिखी जाती है ;—

द्रव्य	ईस्वीसन्	सबसे पहिले व्यवहार करनेवाले
रुई सन रेशम पशम	... १६८२	... ब्लाडन (Bladen)
चमड़ा	... १७८०	... हूपर (Hooper)
घासका पूला कांटेके पेड़ लकड़ी पेड़की छाल सूखी घास	... ८०० ... ८०० ... १८०१ ... १८०० ... १८००	... कूप्स (Koops)
पशुविष्टा ...	... १८०५	... गोंस् (Gones)
शैवाल (पोखरकी काई)	१८२४	नेसबिट् (Nesbitt)
'रप'हस ...	... १८१५	दिला-गर्दे Dela-Gorde
साल, रोम ...	... १८३३	विलियमस् (williams)
घृतकुमारी केलेके पेड़का खोपटा	१८३८ ...	बेरि (Birry)
मूंगकी डांठरा	... १८३८	डि'हरकोर्ट D'Harcourt
ईखकी छोई	... १८३८	... बेरि (Birry)
पेड़के पत्ते पेड़की जड़	... १८३८	बैलमैन (Balmane)
जौकी भूसी और डंठल मटरका डंठल	१८३८ ...	डि'हारकोर्ट (D'Harcourt)
'गटापर्चा'	... १८४६	... हैनक (Honoak)
पट-सन	... १८४६	... केलभार्ट (Calvart)
नारियलकी जटा	१८५२	... निउटन (Neuton)
भूसी 'कराल'का गुड़	१८५२	... विल्किन्सन् (Wilkinson)
तमाखूका डंठल	१८५२	ऐडकक् (Adocock)
घासादि ...	... १८५२	... ... ष्टिफ (Stiff)
नारियलकी खोल	१८५४	डियापर (Diaper)
बादामके छिलके	१८५४	कुपलैंड (oupland)
जलज तृण ...	१८५५	आरचर (Archer)

इसके सिवा और भी नाना प्रकारकी वस्तुओंसे कागज बन सकता है ; पर सब चीजोंसे कागज बनाने से व्यापार चल सकता है, ऐसा नहीं। इस विषयमें चीनवासियोंने सबसे अधिक संख्यामें भिन्न भिन्न उपादानोंसे कागज बनाया था और बनाते हैं। चीनराज्यके प्रत्येक विभागमें, प्रत्येक जिलेमें भिन्न भिन्न उपादानोंसे कागज बनते हैं। पहिले कह चुके हैं कि, चीनवासी शो-चि नामक कागजसे व्यवहार करते हैं। चि-ट्जि नामक कागज तूँतियाके पेड़की

बहुत थोड़ा कोबाल्टिक, मैंगनीज़ और शीशा आदि रहता है। परन्तु यूरोप में काँच की बोतलों के लिये जो चीजें काममें लाई जाती हैं, उनमें सैकड़ा पीछे ५८ भाग बालू, गन्धक क्षार, (Sulphate of soda) २८ भाग, चूना ११ भाग और अङ्गारम्लक्षार ११ भाग रहता है। गन्धक क्षार में सैकड़ा पीछे ४५ भाग क्षार रहता है। और काच मण्ड में सैकड़ा पीछे २८ भागमें १३ भाग मात्र यह क्षार पड़ता है; किन्तु सज्जीमिट्टी से जो अङ्गार क्षार मिलता है, उसमें ३०—४० भाग क्षार रहता है, इसी लिए भारतके काँच में और यूरोप के काचमें क्षार-परिमाण करीब २३ और १३ भाग हो जाता है।

इस देश में काच पर रंग चढ़ाने के लिए लोहा, तांबा और सम्बलक्षार (arsenic) काममें आते हैं। पञ्जाबमें काच बनानेके कारखाने हैं। वहां जिस बालू से काच बनता है, वह स्वभावतः काच सज्जीसे मिली और क्षार विशिष्ट होती है। उस देश में इस बालू को रेह कहते हैं। यह जिस ज़मीन में रहती है, वह ज़मीन खेती के काम में नहीं आती। बहुत जगह यह हवासे अपने आप जम कर काच सज्जी हो जाती है। इस जमी हुई बालूका रंग विलायती शीशियों की तरह कुछ नीलापन का लिए हुए रहता है। इससे बहुत उत्तम सफेद वर्ण का काच बनता है।

फीरोजाबाद (जिला-आगरा) में भी काल काच के कारखाने बहुत हैं। इन में चूड़ियां बहुत बनती हैं।

चीन में भारत की अपेक्षा काच के कारखाने अधिक प्रचलित हैं।

काच के भिन्न भिन्न भाषाओं में नाम लिखे जाते हैं। काच को अरबी में ज़िजाज, फारसी में—शिशह, हिन्दी बंगला में 'काच'। इटालीमें 'भेट्रो', फ्रान्समें—भेराल, स्पेनमें—'हिड्रो', रूसमें—'सिद्रो', जर्मन में 'ग्लास', सैलङ्गमें 'गाजुलु' और उर्दू में 'शीशा' कहते हैं।

रसायन-शास्त्रके मतानुसार काचमें निम्नलिखित चीजें रहती हैं—

बालुकिन (Silica), उद्भिज्जक्षार (Potash—Pearl ash और wood ash), सोडा (Soda, Sulphate of soda, carbonate of soda) बेराइटा (Baryta) स्ट्रन्सिया (Strontia), चूना (Lime) और फिटकिरी (Alumina)।

अस्थिभस्म (bone-ash) से एक प्रकारका काच बनता है; जिसे अंग्रेज लोग बोन ग्लास (boneglass) कहते हैं।

काच का आपेक्षिक वजन करीब २·७१२ है। जर्मनोंके बने हुए आईनोंमें लगाने के काचोंमें सिकतो बालू १०० भाग, उद्भिज्ज क्षार ५० भाग, खड़ियामिट्टी २५ या ३० भाग, और शोरा २ भाग रहता है।

फरासीसियोंके (दरवाजोंके दर्पणके) काचका आपेक्षिक वजन २·४८८ है। इसका रंग कुछ नीलापन को लिए हुए होता है। भिनिसके दर्पणका काच कुछ पीले रंग का होता है।

बोहिमिया का काच स्वच्छतामें सबसे अच्छा होता है। इसका आपेक्षिक वजन २·३९६ है।

विलायती "क्राउन" काच बोहिमियाके काचकी तुलना करता है। इसका आपेक्षिक वजन २·४८७ है

स्फटिक काच (crystal glass) का आपेक्षिक वजन २·८ से ३·२५५ तक होता है। इसमें सीसेका कुछ अंश रहता है। इसका विशेष कोई वर्ण नहीं। इसमें १०० भाग बालू, ३० या ४० भाग उद्भिज्जक्षार, ६० या ७० भाग मिनियाम, ४ भाग सुहागा, १ भाग पारा, १५ भाग सम्बल क्षारादि इत्यादि है। लण्डनके क्रिष्टल ग्लाससे वैज्ञानिक यंत्रादि बनते हैं।

दोबार काच (Flint glass) सबसे परिष्कार चीजों से बनता है। इसमें १०० भाग बालू, ५० भाग उद्भिज्ज क्षार, १०० भाग मिनियाम और बाकी स्फटिक की भांति ही कोई वस्तु रहती है। चुन्निया काच (Ruby glass) एक प्रकार सुवर्णयुक्त स्वर्णप्रभामय काच है। यह परिमाण करके बनाया जाता है और बनते समय इसके "मण्ड" में स्वर्णद्रावक मिला दिया जाता है। यह काच जब बनता है, तब इसमें कोई भी रंग नहीं रहता। बाद में फारनेसके

-डालसे बनता है ; यह कागज चीनमें घावकी लिंट (Lint) या पट्टीके काममें आता है, फटे लत्तेकी जगह भी यह कागज काममें आता है। कियांसिमें पियाउ-सिन् नामका एक तरहका कागज होता है। इस कागजमें पुड़िया बांधी जाती है। होयामिन् नामके कागजमें सिर्फ दवाईयोंकी पुड़िया बांधी जाती है। कियांसि प्रदेशमें होयांयियान् नामक कागजसे हो-सि कागजकी भांति शवदाह किया जाता है। ता-से और चं-से नामके कागज हिसाबकी बही-खातोंके लिए बनता है। म-पियेन और लियेनसि नामके सुन्दर और पतले कागज, लिखन मुद्रणादि करनेके लिए तथा चित्रादि बैठानेके लिए और कोइ लियेनसि नामके पीले रंगके पतले कागज औषधालयोंमें चूर्ण-औषधियोंकी पुड़िया बांधनेके काममें आता था। त्स-सियेन नामके चिकने कागज पर पत्रादि लिखे जाते थे। इनके सिवा और भी एक प्रकारका रंगीला कागज बहुत सस्ते दामोंमें बिकता है, इसके कुछ कागजों पर ७ और कुछ पर ८ लाल रंगकी रेखाएं (लम्बाईमें) रहती हैं।

ये सब कागज ही भिन्न भिन्न उपादानोंसे बनता है। फो-कियेन प्रदेशमें खूब कच्चे बांस से, चि-कियां प्रदेशमें धानके पूलासे ; और कियां-नान प्रदेशमें फटो-पुरानी रेशमसे कागज बनता है। इनमेंसे रेशमका कागज कोमल, आदरणीय और देखनेमें खूबसूरत होता है। कागज स्याही न सोख सके, इसके लिए ये लोग उस पर फिटकिरीका एक पदार्थ लगाते थे। यह देखनेमें मोमकी 'पटपटी' की भांतिका होता है। मछलीके कांटोंको खूब अच्छी तरह धोकर उसके तैलांशको नष्ट करके उन्हें नियमानुसार फिटकिरीके साथ मिला कर रख देते हैं ; जिससे दोनों गलकर तरल हो जाते हैं, फिर बोमटीमें एक कागज उठा कर उसमें डुबा कर घाममें या आगके सामने रखकर उसे सुखा लेते हैं। ये लोग और भी एक भांतिका कड़ा कागज बनाते हैं, वह आधा इंच मोटा होता है। यह कागज सहजमें आग लगते ही जल नहीं सकता। ये लोग "भारत" नामका एक प्रकारका कागज (India-papsr) बनाते हैं, इस पर अति सूक्ष्म शिल्प कोदित होता है और बहुत ही बढ़िया छपाई होती है। चीनमें नौका या घरकी छतमें छेद हो जाने पर, उसमें तेलाक्त कागज ठूंस कर उस पर दागराजी कर दी जाती है। पहिले जिन जिन कड़े कागजोंका उल्लेख किया है, उनसे ये लोग नौका या जहाजके पालमें पैगा लगाते हैं ; और दूकानदार लोग इससे चीज वस्तु बांधनेके लिये सुतली बना लेते हैं। चीनमें नित्य प्रति कागजका इतना खर्च है कि, वह लिखा नहीं जा सकता। इससे सुलभ वाणिज्य चीनमें और दूसरा नहीं है। चीनवासियोंकी पूला, भूसी, रूई, सन, कच्चे बांस, रेशम इत्यादि जो कुछ मिलता है, उसीमेंसे ये लोग कागज बनाया करते हैं। चंनकी कागजों पर मोम लगाया जाता है, इसीसे ये देखनेमे खूब चिकनी होती है। कागज पर मोम लगानेसे पहिले, उनको पत्थरसे घिस लिया जाता है। चीनमें विदेशीय कागज बहुत कम टिकते हैं। देशीय कागज ऐसे नियमसे बनाया जाता है कि, अकस्मात् नष्ट न होनेसे वह जल्दी नष्ट नहीं होता। इस लिये वहां लिखने पढ़नेके काममें, देशीय कागज ही व्यवहार किये जाते हैं। विदेशी काग पर शिरोष लगानेसे वह ज्यादा दिन तक नहीं ठहरता।

चीनवासी खूब आसानीके साथ बांससे कागज बनाते हैं। खूब कच्चे बांसोंको पहिले पानीमें डाल देते हैं ; जब बांसोंमें अच्छी तरह पानी भिद जाता है, तब उनका चीर कर चूनाके पानीमें डाल देते हैं। इससे यह कोचकी तरह नरम हो जाता है ; फिर कूटा जाता है। कूटते जब यह 'मंड' बन जाता है, तब पानीमें उबाला जाता है। इस प्रकार उबाले जाने पर सांचेमें ढाल कर आवश्यकतानुसार पतले और मोटे कागज बनाये जाते हैं। इस कागजसे लिखने और पुड़िया बांधनेके सिवा और भी एक काम लिया जाता है। ईंट खोलामें ईंट बनते समय मिट्टीमें इस कागजको कूट कर मिला दिया करते हैं। बांसका कागज खूब पतले और साफ होते हैं। चीन वासियोंने ईस्वी सन् ५०में इस कागजको सबसे पहिले

८३५ डिग्रि उत्तापसे गरम करने पर खासा चुन्नी सरीखा रक्तवर्ण हो जाता है।

मीना-कांच (Enamel glass) भी एक तरह का खूबसूरत और चिकना काच होता है।

काच-मणि—संस्कृत शास्त्रोंके अनुसार कांच एक मणि माना जाता है।

"आकरे पद्मरागानां जन्म काचमणेः कुतः।"

कांच और स्फटिक एकही चीज है—

"काच-स्फटिक- पात्रेषु"

स्फटिक मणिके सम्बन्धमें संस्कृतग्रन्थोंमें लिखा है—

"हिमालये सिंहले च विन्ध्याटवीतटे तथा।
स्फटिकं जायते चैव नानारूपं सुनिर्मलम्॥
हिमाद्रौ चन्द्रकान्तं स्फटिकं तद्विधा भवेत्।
सूर्यकान्तञ्च तत्रैकं चन्द्रकान्तं तथा परम्॥
सूर्यांशुस्पर्शमात्रेण वह्निं वमति तत्क्षणात्।
सूर्यकान्तं तदाख्यातं स्फटिकं रत्नवेदिभिः॥
पूर्णेन्दुकरसंस्पर्शादमृतं स्रवति क्षणात्।
चन्द्रकान्तं तदाख्यातं दुर्लभं तत् कलौ युगे॥"

हिमालय, सिंहल और विन्ध्यारण्यमें स्फटिक मणि उपजता है। हिमालयमें यह दो प्रकार का होता है। उसमें एक सूर्य सदृश रहता है, जो सूर्यके किरण स्पर्शसे अग्नि उगलता है। इसीका नाम सूर्यकान्त है। दूसरा चन्द्र सदृश होता है। यह चन्द्रके स्पर्शसे अमृत उद्गीरण करता है। किन्तु कलियुगमें यह नहीं मिलता। इसको चन्द्रकान्त कहते हैं।

सूर्यकान्त मणि आतशी शीशेकी भांति गुणविशिष्ट होता है।

काचक (सं॰ पु॰) काच स्वार्थे कन्। १ काच, शीशा, पत्थर। २ काचलवण, रेह।

काचकूपी (सं॰ स्त्री॰) काचनिर्मिता कूपी। शीशी, बोतल।

काचघटी (सं॰ स्त्री॰) काचनिर्मिता घटी अल्प घटः, मध्यपदलो॰। कांचका गिलास।

काचज (सं॰ पु॰) काचलवण, रेह।

काचतिन्तिड़ी (सं॰ स्त्री॰) आमतिन्तिड़ी, कच्ची इमली।

काचतिलक (सं॰ क्ली॰) काचलवण, रेह

काचन, काचनक देखो

काचनक, (सं॰ क्ली॰) काच्यते लेखो निबध्यते अनेन, कच-णिच् ल्युट् स्वार्थे कन्। पत्र या पुस्तक बांधनेका उपकरण, पोथी लपेटनेका डोरा या फीता।

काचनकी (सं॰पु॰) काचनकं अस्त्यस्य, काचनक इनि। पत्र पुस्तकादि, पोथी पत्रा। इसका संस्कृत पर्याय—पर्णदूत, स्वस्तिमुख, लेख, वाचिक, हारक और तालक है।

काचमय (सं॰ पु॰) काचलवण, रेह।

काचभाजन (सं॰ क्ली॰) काचनिर्मितं भाजनम्। कांचका पात्र, शीशेका बर्तन।

काचमणि (सं॰ पु॰) काचवत् मणिः काच एव मणिर्वा। १ कांचकी भांति अत्य उज्ज्वल मणि, जो जवाहिर शीशेकी तरह चमकता हो। २ काच, शीशा।

काचमल (सं॰ क्ली॰) काचस्य क्षारमृत्तिकाया मलमिव। काचलवण, शोरा।

काचमालिका (सं॰ स्त्री॰) मद्य, शराब।

काचर (सं॰ त्रि॰) कु ईषत् चरति दीप्त्या दूरं गच्छति, कु-चर-अच्, कोः कादेशः। पीतवर्ण, पीला।

काचल—पूर्ववङ्गकी एक कायस्थ जाति। इन लोगोंका गोत्र शाण्डिल्य, काश्यप तथा पाराशर और उपाधि दे, दत्त एवं दास है। पूर्ववङ्ग और फरीदपुरके मदारीपुरमें यह अधिक रहते हैं

काचलवण (सं॰ क्ली॰) काचात् क्षारमृत्तिकातः जातं लवणम्। लवण विशेष, सांचर नोन। इसका संस्कृत पर्याय—नील, काचोद्भव, कार्च, शोधक, काचसम्भव, काचसौवर्चल, कृष्णलवण, पाक्य, काचोत्थ, द्वयगंध, कालवण, कुरुविन्द, काचमल और कृत्रिम है। राजनिघण्टुके मतसे यह ईषत् क्षार, रुचिकारक, अग्निवर्द्धक, पित्तवृद्धि एवं दाहकारक और कफ, वायु, गुल्म तथा शूलनाशक होता है।

काचवकयंत्र (सं॰क्ली॰) काचनिर्मितं वकयंत्रम्, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। काचनिर्मितयंत्र विशेष, अर्क्यगैरह उतारनेको शीशेका बना हुआ एक टोंटीदार बरतन। बकयंत्र देखो।

काचविन्दु (सं॰ पु॰) नेत्ररोग विशेष, आंखकी एक बीमारी। काच देखो।

बनाया था। कोई कोई कहते हैं कि, इससे भी पहिले चीनमें बांसके कागजका प्रचार था। चीनमें एक एक प्रदेशमें एक एक चीजसे प्रधानतः कागज बनाया जाता है। कहीं सनसे, कहीं कच्चे बांससे, कहीं गूंतछालसे, कहीं धानके पुआलसे और कहीं गेहूंके पुआलसे प्रधानतः बहुत कागज बनाये जाते हैं। वेनमर्की 'गुटो' से पार्चमेंटकी भांतिका एक तरहका कागज होता है, इसको चीन लोग लो-कोयेन-ची कहते हैं। यह अत्यन्त कोमल होता है; और इस पर खुदाई करके लिखा जा सकता है। एक प्रदेशमें 'को-चा' या 'चा' नामक एक प्रकारके वृक्षसे यथेष्ट कागज उत्पन्न होता है। ये लोग उस समयका सा कागज अब भी बनाया करते हैं। चीनवासी चीन या इच देशी तूं'त-छा (Bronssonetia papyrifera pepermulderry) के कागज बनानेमें पहिले डालियोंके १-१ हाथ लम्बे टुकड़े कर उन्हें खारे पानीमें उबाल लेते हैं। इस प्रकार उबाल लेनेसे भीतरी छाल पृथक हो जाती है। फिर उस छालको पृथक करके घाममें सुखा लेते हैं। इस तरह जब पर्याप्त रूपसे छाल एकत्र हो जाती है, तब उसे ३—४ दिन तक पानीमें डाल कर नरम बनाते हैं। और बचे हुए अंशसे बाहर निकाली हुई छालको फेंक देते हैं। सबसे पीछे बाहर निकली हुई छालको फेंक कर; जो कुछ बाकी बचती है, उसको उबालते हैं। जब तक यह उबाली जाती है; तब तक एक बटनेसे उसे घोंटा करते हैं। फिर नाना प्रकारके यंत्रोंकी सहायतासे इसे 'मंड' (रूंड) बना लेते हैं; और कूट कर इसे धो लेते हैं। फिर इसमें भातका मांड़ मिला कर सांचेमें ढाल कर इसका कागज बनाते हैं। बांसके कागजसे इसमें अधिक यत्न करना पड़ता है। फिर इनको रखते समय, प्रत्येक कागज पर एक एक तिनका रख कर रखते हैं। बादमें फिर एक एक साथ घाममें सुखाया जाता है। यह कागज अब नरम और पतले होते हैं, इसमें दोनों तरफ नहीं लिखा जा सकता। ये लोग कभी कभी इनके दो ताव मिरियके एक साथ जोड़ लेते हैं। ऐसा जोड़ देते हैं कि, कोई समझ नहीं सकता कि, यह एक है या दो।

जापानमें ऐसे कागज बनाते समय, ये लोग (जापानी) छालको खारे पानीमें न उबाल कर छाई (राख)के पानीमें पात्रके मुंहको ढककर उबालते हैं। जब डालीके दोनों किनारेकी छाल आधइंचके करीब गल जाती है; तब उसे उतार लेते हैं; और ठंढा होनेपर उसके वक्कल छुड़ाकर ३-४ घंटे पानीमें डाल रखते हैं। इसी समय ये लोग ऊपरकी काली छालको छुरीसे छील देते हैं। फिर मोटी छाल और पतली छालको अलग अलग कर लेते हैं। इसके बाद फिर इन वक्कलोंको उबालते हैं; और एक लकड़ीसे घोंटा करते हैं। इस प्रकार जब यह 'मंड' (लूंड़) बन जाता है। तब इसमें भातका मांड़ तथा अन्यान्य वस्तुएं मिला कर; चटाई पर ढाल कर कागज बनाया जाता है। और बने हुए कागजोंको सम्भाल कर रखते समय प्रत्येक कागजके नीचे एक एक तृण रख देते हैं; फिर उसपर वजनदार चीज रख कर उसका पानी निकाल देते हैं। इसको घाममें सुखा लेनेसे ही कागज बन जाता है। इसके ढांचोंके अनुसार यह कागज फाड़ा जाता है। इसको घी वारके रखनेसे उस घीका दाग नहीं होता; और यूरोपीय कागजसे यह खूब मजबूत भी होता है। बाजारमें जो चीनके पंखे बिकते हैं, वे इसी कागजके बने हुए हैं। इस कागजके द्वारा घरकी भीत भी बनाई जाती है पुड़िया बांधनेके काममें भी यह लगता है। वहांके बहुतसे लोग रुमालकी जगह इस कागजको काममें लाते हैं। वास्तवमें यह कागज होता ही ऐसा है कि; इसको देखते ही कपड़ेका भ्रम हो जाता है। कारण, यह कपड़ेकी भांति कोमल और सर्वत्र एकसा होता है तथा इसमें भांज भी नहीं पड़ती वहांके लोग इस कागज पर लाहका काम करके टोपी बनाते हैं और तोशियां.टेबिलका आच्छादन, पहिरनेको फतूही आदि भी बनाते हैं।

जापानमें प्रधानतः "मोरस पेपिरिफेरा सेटाइवा (*Morus Papyrifera Sativa*) या 'कागजके पेड़-

काचसम्भव (सं॰ क्लो॰) काचः सम्भवः उत्पत्तिस्थानमस्य, बहुव्री॰। काचलवण, कालानमक।

काचसौवर्चल (सं॰ क्लो॰) काचवज्जातिर्क सौवर्चलम्, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। काचलवण, कालानमक।

काचस्थाली (सं॰ स्त्री॰) काचस्य स्थालीव, उपमितसमा॰। १ पाटलावृक्ष, पाडरीका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय पाटलि, पाटला, अमोघा, मधुदूती, फलेरुहा, कृष्णवृन्ता, कुबेराक्षी, कालस्थाली और ताम्रपुष्पी है। भावप्रकाशके मतसे यह कषाय एवं तिक्तरस, ईषदुष्णवीर्य्य और वायु, पित्त, श्लेष्मा, अरुचि, श्वास, शोथ, रक्तवमि, हिक्का तथा तृष्णानाशक होती है। इसका पुष्प कषाय, मधुररस, शीतवीर्य्य, हृदयग्राही, कफशोषक और कफ, रक्तदोष, पित्त तथा अतिसारघ्न है। फल हिक्का और रक्तपित्तको दूर करता है। २ काचपात्र।

काचा, (सं॰ स्त्री॰) १ काच-मणि, बिल्लौरी पत्थर। २ हाथीके दन्तकी शुभ्र रेखा, घोड़ेके दांतकी सफेद लकीर। यह पन्द्रहसे सत्रह वर्षकी अवस्था तक घोड़ेके दांतोंमें सरसोंकी तरह पड़ जाती है।

काचाक्ष, (सं॰ पु॰) काच इव अक्षि यस्य, बहुव्री॰। १ तडदक, बड़ा बगला। २ पद्मकन्द, कमलकी जड़।

काचाह्वा, (सं॰ स्त्री॰) हरिद्रा, हलदी।

काचिघ, (सं॰ पु॰) कचते दीप्यते, बाहुलकात् इघ; काचिं॰ काचि' इति संस्कृति, काचि-हन्-ड-पृषोदरादित्वात् घस्य घः। १ कांचन, सोना। २ मूषिक, चूहा। ३ सिन्धी-धान्यविशेष, एक धान।

काचिल्लिक (सं॰ पु॰) [illegible], पुंश्चली।

[illegible] (सं॰ [illegible]) कर्मिदिष्ट-स्त्री।

और कहावाबाद मौजूद है। १०८२ ई॰को जेमविल साहेबने यह बाजार लगाया था। ग्रामके मध्य एक नाला निकला, जिससे यह दो भागमें बंट गया है। जाने आनेके लिए पुल बंधा है। यहां मधु (मुरदा) बहुत होती है।

काचूक (सं॰ पु॰) काच बाहुलकात् ऊकञ्। १ कुक्कुट, मुरगा। २ चक्रवाक, चकवा।

काच्छ (सं॰ त्रि॰) कच्छस्थानीय, नदीके किनारेका।

काच्छप (सं॰ त्रि॰) कच्छपसम्बन्धीय, कछुएका।

काच्छिम (सं॰ त्रि॰) परिष्कार, साफ।

काछ (हिं॰ पु॰) १ जङ्घाका ऊपरि भाग, जांघका ऊपरी हिस्सा। २ कांछा, लांग। ३ रूपका भराव।

काछना (हिं॰ क्रि॰) १ पोंछना, लगाना। २ शृंगार करना, बनाना।

काछनी, (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकार की धोती। यह कस और ऊपर चढ़ा कर पहनी जाती है। २ परिधेय वस्त्रविशेष, जांघियेके ऊपर पहना जानेवाला कपड़ा। यह घांघरेकी तरह रहती और घुटने पड़ती है। रासलीला और अन्य लीलामें पुरुषमात्र प्रायः काछनी पहनते हैं।

कांछा (हिं॰ पु॰) लांग, कछौं धोती।

काछी—युक्त प्रान्तकी एक कृषक जाति। यह लोग प्रायः खेत जोतते—बोते और भाजी तरकारी बाजारमें बेचते हैं। युक्त प्रान्तके काछी ७ श्रेणियोंमें विभक्त हैं—कनौजिया, हरदिया, सिंगोरिया, जौनपुरिया, मगहिया, भरेठा और कछवाह। इन ७ श्रेणियोंमें परस्पर आदान-प्रदान और पान भोजनादि प्रचलित नहीं। भाजी श्रेणियोंमें कनौजिये सर्वापेक्षा मध्यमाएं और कछवाह सबसे छोटे समझे जाते हैं। कछवाह कहते कि यही सर्वापेक्षा मध्यमाएं सबसे छोटे होते हैं। कनौजके काछी पश्चिम हरदिये, पश्चिम दक्षिणमें जौनपुरिये, मगहिये [illegible] एवं अयपुरादि [illegible] श्रेणियोंकी [illegible] —भाजक,

सुखसेन और सचन। यह विहारमें अधिकांश देख पड़ते हैं।

ललितपुरके काछियोंमें पूर्वोक्त ७ या १० श्रेणी नहीं पातीं। यह कछ्वाह, सलोरिया, हरदिया और अम्बर—चार श्रेणियोंमें बंटे हैं।

झांसीके काछी अपनेको कछवाह बताते हैं। वह कछवाह राजपूतोंसे उपजी और उनके पूर्वपुरुष नरवर प्रदेशसे उस अञ्चलमें पहुंचे थे।

काछी जातिकी श्रेणीके नाम अनुधारण करनेसे समझ पड़ता—यह अपनी वासभूमिके अनुसार भिन्न भिन्न श्रेणीमें बंटे हैं कनौजिया—कनौज या कान्यकुब्ज, हरदिया—हरदियागञ्ज, सिंगौरिया—सिंगौर (इलाहाबादसे २५ मील उत्तर गङ्गाके पश्चिमकूल पर अवस्थित है। यह रामायणोक्त निषादराज्य की "शृङ्गवेर पुरी" है), जौनपुरिया—जौनपुर, मगहिया मगध, कछवाह—कच्छ और सुखसेन सङ्किसा (रामायणोक्त "साङ्काश्य"। काली नदीके तीर मैनपुरी और फरुखाबादके बीच आज भी इसका भग्नावशेष विद्यमान है) से निकला है।

अनेक स्थलोंमें इन्हें कोरी और मुराई भी कहते हैं। यह कृषिकर्ममें अति पटु होते और अति परिष्कार परिच्छन्न रूपसे उत्तमोत्तम शस्यादि फल उत्पादन कर सकते हैं।

आगरा अञ्चलमें कछवाह काछियोंकी ही संख्या अधिक है। दाक्षिणात्यमें यह जाति यथेष्ट है। यह कुरमी जातिकी सदृश पदवीमें गण्य हैं। बम्बई प्रदेशमें यह फलमूल और तरकारी बेचते तो हैं, किन्तु साधारण लोगोंके लिये नहीं। देशवेशाके लिये यह मल्ले पर चीजोंको बेचते फिरते हैं। दाक्षिणात्यमें इनके बीच केवल मात्र २ श्रेणियोंका भेद है—बंदेला और नरवरी।

राजपूतानेके धौलपुर प्रदेशमें ही काछी जाति यथेष्ट देख पड़ती है।

काछ (हिं॰पु॰) १ कार्य्य, काम। २ व्यवसाय, रोजगार। ३ प्रयोजन, मतलब। ४ विवाह, शादी। ५ छिद्रविशेष, अटन लगाने का छेद।

काजर (हिं॰ पु॰) कज्जल, आंखमें लगनेवाली दीपके धुयेंकी कालिख। इसको सरवे या परई पर पार लेते हैं।

काजर—मुसलमानोंकी एक जाति। पारस्य का वर्त्तमान राजवंश इसी जातिका है। जिस समय सुफवी वंशीय प्रथम सम्राट् शाह इस्माइलने शिया मतको पारस्यके राजकीय मतरूपमें फैलाया, उस समय ७ तुर्की जातियां उनको पृष्ठपोषक थीं। काजर उन्हीं सात जातियोंमें एक हैं। किसी समय प्राचीन हिरकोनिया (वर्त्तमान मसन्दरान) राज्यमें काजरोंने महा प्रतिष्ठा पायी थी। १५०० ई॰से पहले इस जातिकी बात सुन नहीं पड़ती। उक्त समयके एक हस्तलिखित ग्रन्थमें "पिरिको काजर" नामक किसी जातिका उल्लेख है। जिससे पहले किसी भी साहित्यमें "काजर" जातिका नाम नहीं पाया। अस्तराबाद और मसन्दरान प्रदेशमें यह अधिक संख्यक रहते हैं। राजपूतोंकी भांति यह केवल युद्धव्यवसायी होते हैं। इसी जातिके सम्भूत आगा मुहम्मद खां १७९४ ई॰को प्रथम सम्राट् हुये और अस्तराबादके निकट रहे। (यह एक सामान्य सैनिकके पुत्र थे और किसी समय नादिर शाहको सभासे निकाले गये थे) नादिरके एक भतीजेने इन्हें बाल्यकालमें खोजा बना डाला था। यह शौर्य्य और पराक्रम प्रिय थे। इनके पीछे इनके भ्रातुष्पुत्र फतेह अली—(१७९७ ई॰) सम्राट् बने। उन्होंके समयमें रूस और पारस्यका युद्ध हुवा। करनेल मैकेग्रिगरके मतसे तैमूर बादशाह ८०१ हिजरको काजर यहां ले गये थे। इनमें लोकरीबास और आशोगाबास दो श्रेणी और प्रत्येक श्रेणीमें वंश भेद है। जियाडोगलु नामक काजरजातीय एक वंश रूसी अरमेनियाके गाजी प्रदेशमें जा कर रहा है। अजदानल वंशीय १म तमास्प शाहके समय यह मार्व प्रदेश पहुंचे थे। किन्तु बुखारेवाले खां साहबके अधीन उजवाक वंशीयोंने उन्हें निकाला और अवशिष्ट अनेकोंको समूल विनष्ट कर डाला।

काजरी (हिं॰ स्त्री॰) एक गाय। इसकी आंखके किनारे काला काला घेरा रहता है।

दोनों स्थानोंके दर्शनीय वस्तुवोंके मध्य शिवकांचीस्थित 'एकाम्रनाथ' नामक महादेवका आदिलिङ्ग, भगवती कामाक्षी देवीकी मूर्ति, भगवान् शङ्कराचार्यको प्रतिमा एवं समाधिस्थल तथा कम्पानदी तीर्थ और विष्णुकांचीस्थित 'श्रीवरदराजस्वामी' नामक भगवान् विष्णुकी मूर्ति, उत्सङ्गमूर्ति, वेगवतीधारा तीर्थ, रवितीर्थ, सोमतीर्थ, मङ्गलतीर्थ, बुधतीर्थ, बृहस्पतितीर्थ, शुक्रतीर्थ एवं शनितीर्थ प्रभृति प्रधान है। इसके अतिरिक्त कांचीके निकट केदारेश्वर और वालुकारण्य दो पुण्यस्थान भी हैं। (उक्त तीर्थोंका विवरण शिवकांचीमाहात्म्य, कामाक्षीविलास, केदारेश्वर-माहात्म्य प्रभृति संस्कृत ग्रन्थोंमें देखना चाहिये।)

दक्षिण देशीय आर्तोंके मतसे शिवकांची वाराणसी तुल्य है। इस स्थानके उत्पत्ति-विषय पर स्कन्दपुराणमें लिखा, कि महादेवने पार्वतीसे पुण्य तीर्थको बात करते करते कहा था,—"वाराणसी रामेश्वर, श्रीशैल आदि पुण्यक्षेत्रोंसे कांचीपुर उत्कृष्ट है। यहां जो लोग रहते, जो दर्शन करते या इसका विषय सुनते अथवा इसका विषय मनमें रखते एवं आन्दोलन करते और जो पशु पक्षी यहां बसते, वह भी मुक्ति लाभ करते हैं। इस नगरके मध्यस्थलमें समस्त शास्त्रको आम्रके वृक्षरूपमें रख और अपने लिङ्गरूप एकाम्रनाथ नामसे अभिहित हो हम रहा करते हैं। इस कांचीपुरमें वास करते नर सर्वपापसे मुक्त हो जाते हैं। कांचीपुर चारो ओर पंचयोजन विस्तृत है। इसके मध्य पूर्व-पश्चिम एवं उत्तर-दक्षिण ढाई कोस हम सर्वदा विराजमान रहेंगे। फिर प्रलयके समय हम इसको अपने त्रिशूल पर रखेंगे। अतएव इसका कभी विनाश नहीं। इसका हमारी ही, आकृति समझना चाहिए।"

आर्यावर्तके लोग जैसे जीवनके शेष भागमें काशी जा रहते तथा काशीमें मर सकनेपर शिवत्व प्राप्तिका विश्वास रखते, वैसे ही दाक्षिणात्यवासी भी कांचीमें रहने और कांचीमें मरनेसे अपनी मुक्ति समझते हैं।

दाक्षिणात्यके नाना स्थानोंमें महादेवको पांच भौतिक मूर्ति हैं। कांचीपुरका "एकाम्रनाथ लिङ्ग" उनमें क्षितिमूर्ति होनेसे ही मृत्तिकासे गठित है। सुतरां अन्यान्य देवालयकी भांति यहां जलाभिषेक नहीं होता।

एकाम्रनाथका मन्दिर दाक्षिणात्यमें अति विख्यात और देखनेमें भी अति सुन्दर तथा पुरातन है। यह मन्दिर किसी समय एकबारगी ही न बना था। इसकी वृद्धि क्रम क्रम हुई है। इस मन्दिरकी दीवारें परस्पर सरल भावसे नहीं बनीं और घर भी परस्पर सम्मुखीन नहीं। अनेक लोगोंके अनुमानमें इसका मूल स्थान चोल राजाओंने बनवाया था, फिर विजयनगरके राजा कृष्णरायने गोपुर निर्माण कराया। इस मन्दिरके प्राङ्गणमें एक पुरातन आम्रवृक्ष है। उसका वयस ३।४ शत वत्सर होगा। दक्षिणके लोग इस आम्रवृक्षको अनादि और सर्वशास्त्ररूपी मानते हैं। इसकी चार शाखावोंमें पृथक्२ मिष्ट, कटु, तिक्त और अम्ल चार प्रकारके आम्र होते हैं। फल खानेवाले इस विषयका साक्ष्य दिया करते हैं। देवसेवकोंके कथनानुसार पहले इस आम्रवृक्षसे प्रत्यह एक पका आम गिरता, जिसका भोग एकाम्रनाथको लगता था। अनेक लोगोंके कथनानुसार इसीसे लिङ्गका नाम 'एकाम्रनाथ' पड़ा है। किन्तु आजकल प्रत्यह आम्र नहीं मिलता।

कामाक्षी देवीके उत्पत्ति-सम्बन्ध पर स्कन्दपुराणमें लिखा है—किसी समय पार्वती देवीने कौतुकच्छलसे पीछे जा महादेवके चक्षु मूंद लिये थे। इसीसे विश्व संसार अन्धकारमय हो गया। कारण सूर्यचन्द्र-वह्निरूपी नयनत्रय ढक जानेसे प्रकाश किस प्रकार होता? इससे भगवतीको पाप लगा। उसी पापके प्रायश्चित्तको महादेवके आदेशसे उन्हें मर्त्यलोक आना पड़ा। एकाम्रनाथके मन्दिरप्राङ्गण-स्थित कम्पानदी नामक तीर्थमें कामाक्षी देवीरूपसे छह मास तपस्या करनेपर महादेवने उन्हें फिर ग्रहण किया। तदवधि कामाक्षीमूर्ति स्वतंत्र मन्दिरमें प्रतिष्ठित है। फाल्गुन मासके पंचदश दिन बराबर एकाम्रनाथका वार्षिक महोत्सव होता है। उसके दशम दिवस रात्रिको

काचसम्भव (सं० क्लो०) काचः सम्भवः उत्पत्तिस्थानमस्य, बहुव्री०। काचलवण, कालानमक।

काचसौवर्चल (सं० क्लो०) काचस्थानिकं सौवर्चलम्, मध्यपदलोपी कर्मधा०। काचलवण, कालानमक।

काचस्थाली (सं०स्त्री०) काचस्य स्थालीव, उपमितसमा०। १ पाटलावृक्ष, पाड़रीका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय पाटलि, पाटला, अमोघा, मधुदूती, फलेरुहा, कृष्णवृन्ता, कुबेराक्षी, कालस्थाली और ताम्रपुष्पी है। भावप्रकाशके मतसे यह कषाय एवं तिक्तरस, ईषदुष्णवीर्य्य और वायु, पित्त, श्लेष्मा, अरुचि, श्वास, शोथ, रक्तवमि, हिक्का तथा तृष्णा नाशक होती है। इसका पुष्प कषाय, मधुररस, शीतवीर्य्य, हृदयग्राही, कण्ठशोधक और कफ, रक्तदोष, पित्त तथा अतिसारघ्न है। फल हिक्का और रक्तपित्तको दूर करता है। २ काचपात्र।

काचा, (सं० स्त्री०) १ काच-मणि, बिल्लौरी पत्थर। २ अश्वके दन्तकी शुभ्र रेखा, घोड़ेके दांतकी सफेद लकीर। यह पन्द्रहसे सत्रह वर्षकी अवस्था तक घोड़ेके दांतोंमें सरसोंकी तरह पड़ जाती है।

काचाक्ष, (सं० पु०) काच इव अक्षि यस्य, बहुव्री०। १ दुन्दुक, बड़ा बगला। २ पद्मकन्द, कमलकी जड़।

काचाह्वा, (सं० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी।

काचिघ, (सं० पु०) कचते दीप्यते, बाहुलकात् इन्; काचिं कान्तिं हन्ति गच्छति, काचि-हन्-ड-पृषोदरादित्वात् हस्य घः। १ काञ्चन, सोना। २ मूषिक, चूहा। ३ शिम्बी-धान्यविशेष, एक धान।

काचिच्चिक (सं० पु०) काकचिञ्चा, घुंघची।

काचित्—(सं० अव्य०) कोई भी अनिर्दिष्ट-स्त्री।

काचित (सं०त्रि०) कच्यते बध्यते असौ, कच-णिच-क्त। शिक्यारोपित, शिकहरमें रखा हुआ।

काचिम, (सं० पु०) कच-णिच-इमन्। देवकुलोद्भववृक्ष, पाक पेड़।

काचिलिन्दि, काचिघिक देखो।

काचुया—बङ्गालके खुलना जिलेका एक गांव। यह भैरव और मधुमती नदीके सङ्गम स्थानपर बाघेरहाट से तीन कोस पूर्व अवस्थित है। यहां पुलिसका थाना और बड़ाबाजार मौजूद है। १०८२ ई०को बेसकेल साहेबने यह बाजार लगाया था। ग्रामके मध्य एक नाला निकला, जिससे यह दो भागमें बंट गया है। आने जानेके लिए पुल बंधा है। यहां कद्दू (सुपारी) बहुत होती है।

काचूक (सं०पु०) काच बाहुलकात् उकञ्। १ कुक्कुट, मुरगा। २ चक्रवाक, चकवा।

काच्छ (सं० त्रि०) कच्छस्थानीय, नदीके किनारेका।

काच्छप (सं० त्रि०) कच्छपसम्बन्धीय, कछुवेका।

काच्छिम (सं० त्रि०) परिष्कार, साफ।

काछ (हिं०पु०) १ जङ्घा उपरि भाग, जांघका ऊपरी हिस्सा। २ कांछा, लांग। ३ रूपका भराव।

काछना (हिं० क्रि०) १ खोंसना, लगाना। २ शृंगार करना, बनाना।

काछनी, (हिं०स्त्री०) एक प्रकार की धोती। यह कस और ऊपर चढ़ा कर पहनी जाती है। २ परिधेय वस्त्रविशेष, जांघियेके ऊपर पहना जानेवाला कपड़ा। यह घांघरेकी तरह रहती और चुनट पड़ती है। रामलीला और कृष्ण लीलामें पुरुषमात्र प्रायः काछनी पहनते हैं।

कांछा (हिं० पु०) लांग, उठी धोती।

काछी—युक्त प्रान्तकी एक कृषक जाति। यह लोग प्रायः खेत जोतते—बोते और भाजी तरकारी बाजारमें बेचते हैं। युक्त प्रान्तके काछी ७ श्रेणियोंमें विभक्त हैं—कनौजिया, हरदिया, सिंगोरिया, जौनपुरिया, मगहिया, अरेठा और कछ्वाह। इन ७ श्रेणियोंमें परस्पर आदान-प्रदान और पान भोजनादि प्रचलित नहीं। सातों श्रेणियोंमें कनौजिये सर्वापेक्षा सम्मानाई और कछ्वाह सबसे छोटे समझे जाते हैं। किन्तु कछ्वाह कहते कि वही सर्वापेक्षा सम्मानार्ह और कनौजिये सबसे छोटे होते हैं। कनौजसे काशी तक कनौजिये, पूर्व अवधमें हरदिये, अवधके दक्षिणपश्चिमांशमें सिंगोरिये, बनोधेमें जौनपुरिये, मगहिये और अरेठे विहारमें तथा कछ्वाह व्रज एवं जयपुरादि स्थानोंमें मिलते हैं। इन सात श्रेणियोंको छोड़ काछियोंमें दूसरी भी ३ श्रेणी चलती हैं,—धाकड़,

कामाक्षी देवीकी भोगमूर्तिके* साथ एकाम्रनाथकी भोगमूर्ति मिलायी जाती है।

कामाक्षी देवीका मन्दिर कुछ छोटा है। इसीके प्राङ्गणमें भगवान् शङ्कराचार्यका समाधि है। इसी समाधि पर उनकी प्रस्तरमयी मूर्ति प्रतिष्ठित है।

शिवकाञ्चीमें अनेक शिवलिङ्ग हैं। इनके सम्बन्धमें एक प्रवाद है—किसी समय एकाम्रनाथने एक मुष्टि बालुका छोड़ी थी। उससे बालुकाके जितने कण गिरे, वह प्रत्येक शिवलिङ्ग बन गये।

एकाम्रनाथकी पूजाको १४००) रु० आयके कई ग्राम लगे हैं। ८०५) रु० नकद कलक्टरीसे आता है।

इस मन्दिरमें प्रत्यह वेदपाठ और वेदगान होता है। उत्सवके समय भोगमूर्तिको रत्नालङ्कारसे सजा वाहक ब्राह्मण अपने स्कन्ध पर ले जाते हैं। पीछे दूसरे ब्राह्मण वेद गाते चलते हैं। फाल्गुन मास रथोत्सव होता है। उस समय बिस्तर यात्री आते हैं।

यह देवालय कर्णाटक युद्धके समय सेनावास या अस्पतालकी भांति व्यवहृत होता था। द्वार पर उसी युद्धके एक गोलेका चिह्न आज भी देख पड़ता है।

उक्त शिवमन्दिरसे २ कोस दूर विष्णुकाञ्ची है। यहीं वरदराज स्वामीका प्रसिद्ध मन्दिर बना है। स्कन्दपुराणमें वरदराज स्वामीके उत्पत्ति-सम्बन्ध पर इस प्रकार लिखा है,—"किसी समय ब्रह्माने अश्वमेध यज्ञ किया था। कांचीपुरमें यज्ञस्थल निरूपित हुआ। यज्ञभूमिका उत्तर द्वार नारायण, पश्चिम द्वार विरञ्चि-पुर, दक्षिण द्वार चिह्नलिपट्ट और पूर्व द्वार महाबली-पुर था। सरस्वती देवीने ब्रह्माके यज्ञकी बात न सुनी। नारदने ब्रह्मलोक जा उनको संवाद दिया था। उनको इससे बड़ा क्रोध हुआ कि ब्रह्माने उनसे न कह यज्ञ करना आरम्भ किया। वह यज्ञस्थल बहानेको नदी बन गयीं। ब्रह्माने यह सुन विष्णुसे साहाय्य मांगा था। विष्णुके आकर गति रोकने पर सरस्वती अन्तःसलिला होकर बहने लगीं। विष्णु फिर नग्न रूपसे वदोचोरी नामक स्थान पर नदीके सामने जा पड़े। तब सरस्वती देवीने लज्जासे अधोमुखी हो अपना पूर्व सङ्कल्प परित्याग किया था। इधर यथासमय यज्ञीय अश्वमांसकी आहुति दी गयी। भगवान् विष्णु. वही हुत मांस खाते खाते यज्ञीय अग्निसे आविर्भूत हुये। विष्णुके दर्शनसे ब्रह्माकी मनस्कामना सिद्ध हुयी। समागत ऋषियों और ऋत्विकोंने विष्णुसे उसी स्थान पर रहनेकी प्रार्थना की थी। नारायण उनकी प्रार्थनासे सन्तुष्ट हो कांचीपुरमें श्रीवरदराज स्वामीके नामसे रहने लगे।

सुननेमें आया कि ११श शताब्दको कांचीपुरके शासन-कर्ता गंजागोपाल राजने विष्णुमन्दिर प्रतिष्ठा किया था। पहले वह अपुत्रक रहे। वरदराजकी कृपासे उनके पुत्रसन्तान हुवा। इसीसे उन्होंने एक शिवमन्दिर तोड़वा उसीकी ईंटोंसे एक वृहत् विष्णु-मन्दिर निर्माण कराया और उसमें वरदराज स्वामीको जा बिठाया। इसी विष्णुमन्दिरसे यह स्थान विष्णु-कांची कहाता है।

विष्णुमन्दिरके देवीभवनके एक स्तम्भपर १०१२ शकको एक शिलालिपिमें लिखा कि—श्रीलनतन्बली-मल नामक कोई व्यक्ति उदैयर पलैयमसे वरदराजकी मूर्ति विष्णुकांची ले गया था। विष्णुमन्दिरके द्वितीय प्रकोष्ठमें कृष्णराय निर्मित प्रसिद्ध शतस्तम्भ-मण्डप विद्यमान है। एक पत्थरको काटकर यह मण्डप बनाया गया है। इसके निकट दूसरे भी कई मण्डप हैं। उनमें वाहनमण्डप और कल्याण-मण्डप ही श्रेष्ठ है। इस मन्दिरको देवसेवाके लिये २०००) रु० आयका एक ग्राम लगा है। फिर मन्द्राज गवरनमेण्ट भी ८८६१) रु० वार्षिक देती है। यह मन्दिर अतिसमृद्धिशाली है। इसकी केवल मणिमुक्ताका मूल्य ही लाख रुपयेसे अधिक होगा। लार्ड क्लाईवने ३६६१) रु० मूल्यका एक कण्ठाभरण चढ़ाया था। वैशाख मास १० दिन बराबर इसका महोत्सव हुआ करता है। उस समय यहां प्रायः पचास हजार यात्री आते हैं।

काञ्चीपुरी (सं० स्त्री०) काञ्चीपुर देखो।

* दाक्षिणात्यके प्रायः प्रत्येक विग्रहकी दो मूर्ति होती हैं। मूलमूर्ति मन्दिरमें प्रतिष्ठित रहती है और भोगमूर्ति उत्सवादिमें नगरयात्राको चलती है। भोगमूर्ति को अलङ्कारादिसे सजायी जाती है।

सुखसेन और सचन। यह विहारमें अधिकांश देख पड़ते हैं।

ललितपुरके काछियोंमें पूर्वोक्त ७ या १० श्रेणी नहीं होतीं। वह कछुाह, सलोरिया, हरदिया और अम्बर—चार श्रेणियोंमें बंटे हैं।

झांसीके काछी अपनेको कछवाह बताते हैं। वह कछवाह राजपूतोंसे उपजे और उनके पूर्वपुरुष नरवर प्रदेशसे उस अञ्चलमें पहुंचे थे।

काछी जातिकी श्रेणीके नाम अनुधारण करनेसे समझ पड़ता—यह अपनी वासभूमिके अनुसार भिन्न भिन्न श्रेणीमें बंटे हैं कनौजिया—कनौज या कान्य-कुब्ज, हरदिया—हरदियागञ्ज, सिंगौरिया—सिंगौर (इलाहाबादसे २५ मील उत्तर गङ्गाके पश्चिमकूल पर अवस्थित है। यह रामायणोक्त निषादराज्य को "शृङ्गवेर पुरी" है), जौनपुरिया—जौनपुर, मगहिया मगध, कछवाह—कच्छ और सुखसेन सङ्किसा (रामायणोक्त "साङ्काश्य"। काली नदीके तीर मैनपुरी और फरुखाबादके बीच आज भी इसका भग्नावशेष विद्यमान है) से निकला है।

अनेक स्थलोंमें इन्हें कोरी और मुराई भी कहते हैं। यह कृषिकर्ममें अति पटु होते और अति परिष्कार परिच्छन्न रूपसे उत्तमोत्तम शस्यादि फल उत्पादन कर सकते हैं।

आगरा अञ्चलमें कछवाह काछियोंकी ही संख्या अधिक है। दाक्षिणात्यमें यह जाति यथेष्ट है। यह कुरमी जातिकी सदृश पदवीमें गण्य हैं। बम्बई प्रदेशमें यह फलमूल और तरकारी बेचते तो हैं, किन्तु साधारण लोगोंके लिये नहीं। देशसेवाके लिये यह मले पर बीजोंको बेचते फिरते हैं। दाक्षि-णात्यमें इनके बीच केवल मात्र २ श्रेणियोंका भेद है—बंदेला और नरवरी।

राजपूतानेके धौलपुर प्रदेशमें ही काछी जाति यथेष्ट देख पड़ती है।

काज (हिं॰पु॰) १ कार्य्य, काम। २ व्यवसाय, रोजगार। ३ प्रयोजन, मतलब। ४ विवाह, शादी। ५ छिद्रविशेष, बटन लगाने का छेद।

काजर (हिं॰ पु॰) कज्जल, आंखमें लगनेवाली दीपेके धुयेंकी कालिख। इसको सरसे या परदे पर पार लेते हैं।

काजर—मुसलमानोंकी एक जाति। पारस्य का वर्त्तमान राजवंश इसी जातिका है। जिस समय सुफवी वंशीय प्रथम सम्राट् शाह इस्माइलने शिया मतको पारस्यके राजकीय मतरूपमें फैलाया, उस समय ७ तुर्की जातियां उनको पृष्ठपोषक थीं। काजर उन्हीं सात जातियोंमें एक हैं। किसी समय प्राचीन हिरकोनिया (वर्त्तमान मसन्दरान) राज्यमें काजरों-ने महा प्रतिष्ठा पायी थी। १५०० ई॰से पहले इस जातिकी बात सुन नहीं पड़ती। उक्त समयके एक हस्तलिखित ग्रन्थमें "चिरिको काजर" नामक किसी जातिका उल्लेख है। जिससे पहले किसी भी साहित्य-में "काजर" जातिका नाम नहीं पाया। अस्तराबाद और मसन्दरान प्रदेशमें यह अधिक संख्यक रहते हैं। राजपूतोंकी भांति यह केवल युद्धव्यवसायी होते हैं। इसी जातिके सम्भूत आगा मुहम्मद खां १८८४ ई॰-को प्रथम सम्राट् हुये और अस्तराबादके निकट रहे। (यह एक सामान्य सैनिकके पुत्र थे और किसी समय नादिर शाहकी सभासे निकाले गये थे) नादिरके एक भतीजेने इन्हें बाल्यकालमें खोजा बना डाला था। यह लोभी और पराक्रम प्रिय थे। इनके पीछे इनके भ्रातुष्पुत्र फतेह अली—(१८८८ई॰) सम्राट् बने। उन्हीं के समयमें रूस और पारस्यका युद्ध हुआ। करनेल मेकग्रिगरके मतसे तैमूर बाद-शाह ८०१ हिजरको काजर वहां ले गये थे। इनमें लोकरीमास और आसोगावास दो श्रेणी और प्रत्येक श्रेणीमें वंश भेद है। जियाडोगलु नामक काजर-जातीय एक वंश रूसी अरमेनियाके गाजी प्रदेशमें जा कर रहा है। अफदानल वंशीय १म तमास्प शाहके समय यह सार्व प्रदेश पहुंचे थे। किन्तु बुखारेवाले खां शाहके अधीन उजबाक वंशीयोंने उन्हें निकाला और अवशिष्ट अनेकोंको समूल विनष्ट कर डाला।

काजरी (हिं॰ स्त्री॰) एक गाय। इसकी आंखके किनारे काला काला घेरा रहता है।

काञ्चीप्रस्थ (सं० क्ली०) काञ्चीपुर देखो।

काञ्जिक (सं० क्ली०) कु कत्सितं अञ्जिका प्रकाशो यस्य, कु-अञ्ज-ण्वुल्-टाप् अत इत्वं कोः कादेशः। धान्याम्ल, कांजी। अन्नमें जल डाल सड़ानेसे जब खट्टा पड़ जाता, तब वही जल 'काञ्जिक' कहाता है। इसका संस्कृत पर्याय—आरनाल, सौवीर, कुल्माष, अभिषुत, अवन्तिसोम, धान्याम्ल, कुञ्जल, कुल्मास, कुल्माषाभिषुत, काञ्जीक, काञ्जिका, कञ्जिक, काञ्जी, भक्तवारी, धान्यमूल, धान्ययोनि, तुषाम्बु, महाम्ल, महारस, तुषोदक, शुक्त, चुक्र, धातुघ्न, उन्नाह, रक्षोघ्न, कुण्डगोलक, सुवीराम्ल, वीर, अभिषव और अम्लसारक है।

राजवल्लभके मतसे यह भेदक, तीक्ष्ण, उष्ण, स्पर्शशीतल, श्रम एवं क्लान्तिनाशक, अग्निवर्धक और पित्त, रुचि तथा वस्तिशुद्धिकारक है। फिर राजनिघण्टु देखते इसे अङ्गपर मलनेसे वायु, शोथ, पित्त, ज्वर, दाह, मूर्च्छा, शूल, आध्मान और विबन्ध रोग विनष्ट होता है।

काञ्जिकवटक (सं० पु०) खाद्यद्रव्य विशेष, कांजी बड़ा। मट्टीका एक नूतन पात्र कटु तैल लगा निर्मल जलसे भरते हैं। फिर उसमें राई सरसों, जीरा, नमक, हींग और हलदीके चूर्ण साथ कुछ बड़े भिगो तीन दिन तक मुख बांध रख छोड़ते हैं। यही बड़े जब खट्टे पड़ जाते, तब 'काञ्जिकवटक' कहाते हैं। यह रुचि एवं कफकारक और शूल, अजीर्ण, दाह तथा वायुनाशक है।

काञ्जिकषट्पदघृत (सं० क्ली०) घृत विशेष, एक घी। घृत ४ शरावक, काञ्जिक १६ शरावक और त्रिकटु, शुण्ठी, पिप्पली, मरिच, चव्य तथा सैन्धवलवणका कल्क एक एक पल एकत्र पकानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। काञ्जिकषट्पदघृत आमवातके लिये हितकर है। (चक्रपाणिदत्त)

काञ्जिका (सं० स्त्री०) कुत्सितं अञ्जिका यस्याः, टाप्। १ लघुजीवन्ती। २ पलाशी लता। ३ काञ्जिक, कांजी।

काञ्जितैल (सं० क्ली०) काञ्जिक विशेष, एक कांजी। इसे मलनेसे वात घटता, दाह उठता, गात्र शिथिल पड़ता और केश पकने लगता है। किन्तु खानेमें कोई दोष नहीं। (राजनिघण्टु)

काञ्जिपत्रिका (सं० स्त्री०) कृष्णदन्ती क्षुप, काली दांती।

काञ्जी (सं० स्त्री०) कं जलं अनक्ति, क-अनुज-अण् ङीप्। १ महाद्रोणपुष्पी, एक फूलदार पेड़। २ काञ्जिक, कांजी। ३ भार्गी, एक ओषधि।

काञ्जीक (सं० क्ली०) काञ्जिक, कांजी।

काट (सं० पु०) कं जलं अटति अत्र, क-अट-घञ्। १ कूप, कूवां। २ विषमपथ, नीची-ऊंची राह।

काट (हिं० पु०-स्त्री०) १ छेदन, कटाई। २ कर्तन, तराश। ३ आहत स्थान, कटी हुयी जगह। ४ पीड़ा, दर्द। ५ छल, धोका। ६ मल्लयुद्धका कौशल विशेष, पेंचपर लगनेवाला पेंच। ७ काउंं, चिट्ठी लिखनेका एक कागज। ८ ताशके खेलमें तुरुपका रंग। इससे दूसरे सब रंग कट जाते हैं। ९ मल, कीट।

काटकी (हिं० स्त्री०) यष्टिविशेष, एक छड़ी। इससे मदारी तमाशा देखाते और बकरे, बन्दर तथा भालू नचाते हैं।

काटन (हिं० स्त्री०) खण्डविशेष, एक टुकड़ा। यह निरर्थक होनेसे छोड़ दिया जाता है।

काटना (हिं० क्रि०) १ कर्तन करना, तीक्ष्ण अस्त्रसे खण्ड उतारना, टुकड़े उड़ाना। २ रगड़ना, पीसना। ३ चर्मपर आघात लगाना, चमड़ा उड़ाना। ४ छांटना, खोंसना। ५ मिटाना, छोड़ाना। ६ व्यतीत करना, बिता देना। ७ गमन करना, चलना। ८ अधर्मसे धनोपार्जन करना, चोरीसे रुपया कमाना। ९ रद्द करना, छेंकना। १० प्रस्तुत करना, बनाना। ११ निकालना, ले आना। १२ खींचना, तैयार करना। १३ बांटना, भाग लगाना। १४ तराश लेना। १५ सफायीसे फेंटना। १६ उठाना, भोगना। १७ दांत मारना, डस लेना। १८ लगाना, फाड़ना। १९ पार करना। २० आना, देख पड़ना। २१ मारना, उड़ाना। २२ असिद्ध करना, साबित होने न देना। २३ चोराना। २४ अलग करना, तोड़ना। २५ सहन न होना, सह न जाना। २६ झाड़ना, साफ करना।

काजल (सं॰ क्ली॰) कुत्सितं जलम्, कोः कादेशः। कुत्सित जल, खराब पानी।

काजल (हिं॰) कज्जलदेखो।

काजलवास—एक मुसलमान जाति। यह शिया सम्प्रदाय भुक्त हैं। ईरानका तबरीज, शीराज, मशीद और किरमान नगर इनकी जन्मभूमि है। यह अश्वपालन, मेषपालन और कृषिकार्य्यसे अपनी जीविका चलाते हैं। काजलवास विलक्षण साहसी, दुर्दान्त और युद्धप्रिय होते हैं। यह पारस्यपति नादिर शाहकी विपुल वाहिनीमें भरती किये गये थे। नादिर शाहका वध होने पर इन्होंने अहमद शाहसे मिल काबुल जीता। अहमद शाह जब मर गये, तब यह काबुलके निकटवर्त्ती चान्दोल ग्राममें रहने लगे। इनकी संख्या कोयी डेढ़ लाख है। यह सुन्नीसम्प्रदाय वाले दुरानी सरदारोंके घोर शत्रु हैं। अफगान सरदार काजलवासोंसे डरा करते हैं।

काजाक (कज्ज़ाक) मध्य एशियाकी घूमनेवाली एक जाति। युरोपमें इन्हें कोशाक कहते हैं। यह मध्य एशियाके उत्तर विभागस्थ मरु प्रदेशमें प्रधानतः रहते हैं। तुर्कोंकी तरह इनमें नानाविध श्रेणी, शाखा और वंशविभाग हैं। युरोपमें यह वृहत्, मध्य और क्षुद्रदलमें विभक्त हैं। किन्तु ऐसा विभाग मध्य एशियामें नहीं होता। भ्रमणप्रियता और युद्धप्रियताके लिये अति दूरवासी भिन्न भिन्न श्रेणियोंके लोग आ मिलते हैं। एम्बा नदी, आराल ह्रद और बलकाश तथा आलाती ह्रदके तीर यह अधिक संख्यक देख पड़ते हैं। किन्तु इतने दूरवर्ती होते भी सर्वदा सकल प्रदेशोंमें घूमते रहनेसे इनमें भाषाका विशेष पार्थक्य नहीं पड़ता।

ट्रानसाकसियाना प्रदेशमें तोकेल या तियोकेल सुलतान नामक किसी व्यक्तिके अधीन इन्होंने प्रथम अभ्युत्थान किया था। १५२४ ई॰को (८३१ हिजरी) सकभरतेश नदीके तीर यह बहुत दुर्दान्त बन गये। सुलतान तोकेलने मास्को नगरको रूस-सम्राट् फेडोरके निकट अनेक बार दूत भेजा था।

यह युद्धप्रिय लोग विश्वास रखते कि "यद तदाई" (देवशक्ति सम्पन्न प्रस्तरखण्ड) पत्थर रोग छोड़ाता, युद्धमें जय दिलाता और भूत भगाता है।

१६ वें शताब्दको तातार सेनादलके मध्य सम्मुख भागमें यह कज्ज़ाक ही लड़ते थे। रूस उस समय क्षुद्र क्षुद्र राज्योंमें विभक्त था। इन्होंने उसी समय सुविधा देख प्रायः समस्त रूस-राज्यको विध्वंस्त कर डाला और अष्ट्राकानतक अधिकार किया। अन्तको प्रचण्ड वीर इवान (Ivan the terrible) ने इन्हें रूसी-सीमासे बाहर भगा दिया। यह परास्त हो समरकन्द, बोखारा और खीवाको चले आये। यहां भी यह दुर्दमनीय हो गये। फिर रूसका अधिकार यहांतक आ जानेसे इन्होंने नाम मात्र रूसकी अधीनता स्वीकार की। काजन प्रदेशमें सर्वाधिक कज्ज़ाक रहते हैं।

इनमें भिन्न श्रेणीकी भिन्न मसजिद, भिन्न कबर और डेरा डालनेकी जगह रहती है। इनमें अनेक धनी वणिक् और अनेक सम्भ्रान्त विद्वान् भी हैं। रूसका कोई कानून यह नहीं मानते। भाषा और आचार व्यवहारमें यह तुरुक जातिसे विशेष पृथक् नहीं होते। इनकी स्त्रियों और शिशुओंके गात्रका वर्ण युरोपीयोंसे मिलता, केवल सूर्यके उत्तापसे अपेक्षाकृत काला पड़ जाता है। इनका मस्तक दीर्घ, पगड़ी कोणाकार, चक्षु बादाम जैसे तथा औज्ज्वल्य-विशिष्ट, हनु उच्च, नाक चपटी, प्रशस्त ललाट, ओष्ठ वृहत् और मूछ थोड़ी होता है। इनके मतमें काजू नयाजकोंकी स्त्रियां ही सुन्दरी हैं। यह ग्रीष्मकालमें कल्पक नामक पगड़ी और शीतकालमें तुमक नामक टोपी पहनते हैं। इन्हें सामुद्रिक शास्त्र, फलित ज्योतिष और भूतादिके आह्वान प्रभृतिपर विश्वास है। उक्त शास्त्रोंकी बहुत आलोचना हुवा करती है।

१८१२ से १८१६ ई॰ तक इनमेंसे कितने ही उपयुक्त लोगोंको लेकर रूस-सम्राट्ने ८० सेनादल प्रस्तुत किये थे।

युरोपीय कज्ज़ाक देखनेमें सुपुरुष, आतिथेय और सम्भ्रान्त हैं। विवाहित स्त्रियां मस्तकपर एक राशि कालोचित रेशमी टोपी लगातीं और अपने गात्रमें एक रूमाल बांध लेती हैं।

काटवेम (सं॰ पु॰) कालिदास-प्रणीत शकुन्तला नाटकके एक टीकाकार।

काटव्य (सं॰ स्त्री॰) कटोर्भावः, कटु-ष्यञ्। १ कटुता, कड़ुआपन, कड़ुवाहट। २ कार्कश्य, करकसपन।

काटाखाल—दक्षिण कछारवाली धवलेश्वरी नदीकी एक शाखा। कहते बहुत पहले कछारके किसी राजाने इस नदीमें नहर निकाल बाराक नदीमें जा मिलाई थी। फिर उन्होंने उक्त स्थानपर एक बांध बंधाया। आज-कल बारहो मास इसमें जल रहता और स्रोत बहता है।

काटाल—बङ्गालके मालदह जिलेका एक कंटीला जङ्गल। यह भूभाग पूर्व और उत्तरपूर्वांशमें विस्तृत है। उत्तरपूर्व और दक्षिणपूर्वको काटाल महानदीको चर-भूमिसे दीनाजपुरकी सीमातक चला गया है। इसका प्रकृत गठन अति अद्भुत है। बड़ा वृक्ष या गहन वन कहीं देख नहीं पड़ता। केवल कंटीली झाड़ियां चारो ओर लगी हैं। पहले यहां बहुत लोग रहते थे। पुष्क-रिणी और गृहादिका भग्नावशेष आज भी इसको प्राचीन समृद्धिका साक्ष्य देता है। प्रसिद्ध पाण्डुया नगर इसी वनमें बसा था। काटालमें कई खाड़ी और नदियां हैं। यहां केवल असभ्य लोग रहते हैं। उनमें अनेक शिकार करते और मछली खा अपना पेट भरते हैं। कुछ कुछ सन्थाल अब आ और घर बना इसमें रहे हैं।

काटुक (सं॰ स्त्री॰) कटुकस्य भावः, कटुक-अण्। कटुता, कड़ुवाहट।

काटू (हिं॰ पु॰) १ कर्तन करनेवाला, जो काटता हो। २ भयानक, ख़ौफ़नाक, काट खानेवाला।

काटोया—बङ्गाल प्रान्तके वर्धमान जिलेका एक नगर। यह भागीरथीके पश्चिम तीर अक्षा॰ २३° ३०′ उ॰ और देशा॰ ८८° १०′ पू॰ पर अवस्थित है। यहां केशव भारतीने चैतन्यदेवको संन्यासकी दीक्षा दी थी। गौराङ्ग देवका मन्दिर अभी बना है। मुसलमान नवाबोंके समय यह नगर बहुत बढ़ा। १७४२ ई॰ को महाराष्ट्र राज-मंत्री भास्करपंथ बङ्गविजयके लिये थोड़े दिन यहीं आकर ठहरे थे। १७६३ ई॰को कासिमअली ने उससे युद्ध किया। अधिवासियोंमें तन्तुवाय (जुलाहे) वर्धिष्ठ हैं। पीतल और कांसेका व्यवसाय बहुत होता है।

काट्य (सं॰ त्रि॰) काटे विषममार्गे कूपे वा भवः, काट-यत्। १ विषममार्गजात, बीहड़ राहसे निकला हुआ। २ कूपजात, कूएंसे पैदा। (पु॰) ३ रुद्र विशेष।

काठ (सं॰ पु॰) काठ्यते नदति, काठ-घञ्। १ पाषाण, पत्थर। (त्रि॰) कठस्य इदम्, कठ-अण्। २ कठसम्बन्धीय, कठका लिखा हुआ।

काठ (हिं॰ पु॰) १ काष्ठ, लकड़ी। २ ईंधन, जलानेको लकड़ी। ३ शहतीर, तख़्ता। ४ बेड़ी, कलन्दरा।

काठक (सं॰ क्ली॰) कठानां धर्मः आम्नायः समूहो वा कठ-वुञ्। १ कठ शाखाध्यायीका धर्म। २ कठ शाखाध्यायीका शास्त्र। ३ कठ शाखाध्यायीका समूह।

काठड़ा (हिं॰ पु॰) कठौता, काठकी बड़ी परात।

काठवनिया—बिहारके वणिकोंकी एक श्रेणी। इनमें अधिकांश वैष्णव होते हैं। मैथिल ब्राह्मण इनका पौरो-हित्य करते हैं। हिन्दू शास्त्रोक्त देवदेवियोंके अतिरिक्त यह लोग यमुनाथ और सत्यनारायण नामक ग्राम्य देवताको पूजते हैं। अपर वणिकोंके मध्य कन्या और वर उभय पक्षमें सप्तपुरुषका सम्बन्ध रहते भी बिगड़ पड़ते विवाह रुक जाता है। किन्तु इनमें वैसी कोई बाधा नहीं लगती। यह बाल्यकालमें कन्याका विवाह करते और एक पत्नी रखते अपर पत्नी ला सकते हैं। इनमें विधवाविवाह प्रचलित है। फिर भी विधवा पूर्वपतिके कनिष्ठ सहोदर अथवा सम्पर्कीय कनिष्ठ भ्रातासे विवाह करनेकी मजाल नहीं। कोई गुरुतर अपराध प्रमाणित होते स्वामी पंचायतकी अनुमतिसे पत्नी परित्याग कर सकता है। इस प्रकार परित्यक्त स्त्रियोंका फिर विवाह नहीं होता। यह शवदाह करते और अशौचान्त ११ दिन श्राद्धका नियम रखते हैं। सामान्य व्यवसाय और कृषिकार्य इनकी उपजीविका है।

काठवेल (सं॰ स्त्री॰) लताविशेष, एक बेल। यह भारतके कुछ प्रान्त, अफगानिस्तान और फारसमें उपजती है। इसका फल इन्द्रायणकी भांति कटु होता है। बीजसे तेल निकालते हैं। कहीं कहीं काठ-

काज़ी—मुसलमान समाजका विचारपति। जहां मुसलमानोंका राजत्व रहता, वहीं काज़ीसमाज-नीति, धर्मनीति, फौजदारी और दीवानी विधिके अनुसार विचार करता है। भारतका राज्य मुसलमान राजाओंके अधीन रहते समय काज़ी लोग विचारक पदपर अभिषिक्त थे। हिन्दुस्तानमें भी अनेक काज़ी विचार करते रहे। लोगोंके कथनानुसार उनमें पक्षपात और स्वेच्छाचारिताका कुछ प्रावल्य था। आजकल अंगरेजाधिकृत भारतसाम्राज्यके मध्य काज़ी मुसलमानोंके विवाह कार्यमें उपस्थित हो विवाहके बन्धनको दृढ़ किया करते हैं। किन्तु तुर्किस्तान, अरब और ईरानमें यह आजकल भी विचारक हैं। वहां देशभेदसे इनकी मर्यादाका कुछ तारतम्य रहता है। तुर्किस्तानमें विचारककी पूर्ण क्षमता रखते भी यह मुफ्तीके अधीन होते हैं। तुर्किस्तानके खलीफा हारून अल रशीदके समयसे काज़ियोंके हाथमें विचारका भार अर्पित हुवा है। सर्वप्रथम काज़ीका नाम अबू यूसुफ था। सब देशोंकी अपेक्षा अरब राज्यमें काज़ियोंकी क्षमता अधिक है। यदि प्रजा किसी कारण देशके अधिपति पर अभियोग लगाती, तो प्रबल पराक्रान्त सम्राटके अधिपतिकी उपस्थिति भी काज़ीके समक्ष अनिवार्य आती है। ईरानके प्रत्येक नगरमें काज़ी रहते हैं। फिर प्रत्येक शेख-उल-इसलामके अधीन होता है।

काज़ी अज़ीम खां—एक मुसलमान चिकित्सक। यह उमराव भी थे। १५५१ ई० को आगरा नगरमें यमुनाके तीर इन्होंने एक सुन्दर उद्यान बनवाया था। उस उद्यानका पूर्व-सौन्दर्य अब देख नहीं पड़ता, अधिकांश बिगड़ गया है। जो बचा है, उसे आज भी "हकीमका बाग" कहते हैं।

काज़ी अहमद—एक विख्यात ऐतिहासिक। इनका पूरा नाम काज़ी अहमद बिन मुहम्मद अलग़फ़्फ़ारी था। इन्होंने नुसख-ए-जेहन-आरा नामक एक इतिहास लिखा। इस ग्रन्थमें मुसलमान-राज्यके स्थापनसे ९७२ हिजरी तक लेख्य घटनावली लिखी है। काज़ी अहमद पदव्रजमें (पैदल) ईरानसे मक्का दर्शन करने गये थे। वहां से लौटने पर सिन्धु प्रदेशके देवाल नामक ग्राममें इनकी मृत्यु हुयी। (१५६७ ई०)

काजू (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। इसे बङ्गलामें हिजली बादाम, बम्बईमें काजुकलिया, तामिलमें मुन्दिरी, तेलङ्गमें जिदीमेमिदी, कनाड़ेमें गेम्पु, मलयमें परनकिमाव कुरु और ब्रह्मदेशमें थीनोह कहते हैं। (Anacardium occidentale)

यह वृक्ष ३०से ४० फीटतक ऊंचा होता है। काजू दक्षिण अमेरिकासे भारतवर्षमें आया है। आजकल यह भारत, चट्टग्राम, टनासरिम तथा आन्दामान द्वीपपुञ्जके समुद्रतटके वन और दक्षिण भारतमें बहुत होता है। 'काजू' दक्षिण अमेरिकाके 'अकाजाऊ' शब्दका अपभ्रंश है।

इसकी छालसे पीला या लाल गोंद निकलता, जो पानीमें कम घुलता है। कीड़े इससे भागते हैं।

छालको गोदनेसे एक प्रकारका रस बहने लगता है। इससे चिह्न डालनेकी पक्की रोशनाई बनती है। देशी कारीगर काजूका रस लगा कर धातकी चीज़ जोड़ते हैं।

छाल रंगनेके काममें लग सकती है। आन्दामानवासी काजूके बीजकी छालका तेल मछली पकड़नेके जाल रंगनेमें व्यवहार करते हैं। गोवामें इसे 'डोक' कहते हैं। वहां यह नावों और जालोंमें रालकी भांति लगता है। काजूका तेल दो प्रकार निकलता है—गुठलीके छिलके और मींगीसे। मींगीका तेल कुछ पीला, मुलायम, ताकतवर और बादामके तेलकी तरह होता है। जैतूनका तेल इसकी बराबरी कर नहीं सकता। किन्तु भारतवर्षमें मींगी बहुत खायी जाती है। गुठलीके छिलकेका तेल काला, कड़वा और फफोले डालनेवाला है। लकड़ीमें इसे चुपड़ देनेसे दीमक नहीं लगती।

औषधमें काजूका तेल कोढ़, नासूर, गुमड़ी और छालेपर लगता है। मींगी खानेसे रक्त सुधरता और अङ्गकी पीड़ाका प्रकोप दबता है। गुठलीके छिलकेका तेल लगानेसे पैरका फटना बन्द हो जाता है।

केवल औषधमें इन्द्रायणके अभावसे डाल दी जाती है। इसका अपर नाम 'कारित' है।

काठमाण्डू—स्वाधीन नेपाल राज्यको राजधानी। वाग-मती और विष्णुमती नदीके सङ्गम स्थलपर नागार्जुन गिरि अवस्थित है। इसी गिरिके पाददेशसे आध कोस दूर उपत्यकाके पश्चिमांशमें काठमाण्डू नगर है। इसका प्राचीन नाम 'मञ्जुपत्तन' है। देशीय लोगोंके विश्वासानुसार पूर्वकालको मञ्जुश्री नामक किसी बुद्धने यह नगर स्थापन किया था। राजधानीकी भूमि चतुरस्र वा त्रिकोण अथवा वृत्त अर्धवृत्त कोई नियमित आकार विशिष्ट नहीं। हिन्दू इसका आकार देवीके खड्गकी भांति बताते हैं। फिर बौद्ध निवासी इसके आकारको मञ्जुश्री नामक नगरस्थापयिताकी तलवारसे मिलाते हैं। इस कल्पित खड्गका मुष्टि नगर-की दक्षिण ओर वागमती तथा विष्णुमतीका सङ्गमस्थल और नगरकी उत्तर ओर 'तिम्माली' नामक उपकण्ठ स्थान इसका सूक्ष्म अग्रभाग है। मञ्जुश्रीकी तलवारकी मूठमें जैसे एक खण्ड वस्त्र छत्राकार वेष्टित रहता, उक्त तिम्माली जनपद भी वैसे ही देख पड़ता है।

प्रकृत पक्षमें प्रायः ७२३ ई०को काठमाण्डू गुण-कामदेव द्वारा प्रतिष्ठित हुआ था। नगर उत्तर-दक्षिणको ही अधिक दीर्घ, कोई आध कोस होगा। इसे काठमाण्डू बहुत दिनसे नहीं कहते। १५९६ ई०को राजा लक्ष्मणसिंह मल्लने नगरके मध्य संन्यासियोंके लिये एक काष्ठमय वृहत् मन्दिर वा साधुमण्डप निर्माण कराया। यह मन्दिर आज भी बना और इसी कार्यमें लगा है। इसी काष्ठमण्डपसे 'काठमाण्डू' नाम निकला है। पहले यह नगर प्राचीर वेष्टित था। प्राचीरके गात्रमें बीच बीच सुन्दर तोरण रहे। आजकल स्थान स्थान पर प्राचीरका भग्नावशेष मात्र मिलता, किन्तु अधिकांश स्थलमें कोई चिह्नतक देख नहीं पड़ता। ३२ तोरण विद्यमान रहते भी कवाटका अभाव है।

काठमाण्डू क्षुद्र क्षुद्र ३२पल्लियों या टोलोंमें विभक्त है। उनमें आसमान, इन्द्रचक, काठमाण्डू टोला, लगणटोला और राजभवनका निकटवर्ती स्थान ही अधिक प्रसिद्ध है।

नगरके मध्यभागमें दरबार या राजभवन अवस्थित है। यह देखनेमें अधिक सुन्दर न होते भी बहुत बड़ा है। इसका कोई कोई अंश बहुत प्राचीन ब्रह्मदेशीय मन्दिरादिके आकारका बना है। इस प्रासादके मोटे मोटे उत्कीर्ण शिल्प देखनेमें बहुत अच्छे लगते हैं। प्रासादके मध्यका दरबार बने २० वर्ष हुये। राज-भवनका आकार कुछ कुछ चतुरस्र और उत्तर और नगरमुखको उन्मुक्त है। इस ओर अत्युच्च 'तलिजू' नामक मन्दिर अवस्थित है। दक्षिण ओर शेष भागमें मल्लागारह, 'वसन्तपुर' नामक अट्टालिका और नूतन दीर्घ सभागृह (दरबार) है। पूर्वमें उद्यान और अश्वशाला विद्यमान है। पश्चिममें प्रधान तोरण-द्वार है। इसके सम्मुख नगरका प्रधान पथ निकला है। पथके पार्श्वमें हिन्दुओंके अनेक मन्दिर हैं। सभागृहके उत्तर-पश्चिम 'कोट' वा युद्धविषयादिका मन्त्रणागार है। इसी गृहसे १८४६ ई०को भीषण नरहत्याका आदेश निकला था। राजभवनके पश्चिम कचहरी अदालत और सम्मुख अनेक सुन्दर देव-मन्दिर हैं। इन मन्दिरोंमें अनेक अति उच्च और बहुतल विशिष्ट हैं। मन्दिरोंका उत्कीर्ण काष्ठ, चित्र और स्वर्णादि वर्णके मुलम्मेका काम बहुत अच्छा है। अनेकोंके समस्त द्वारों पर पीतल या तांबेका मुलम्मा चढ़ा है। मन्दिरोंके कारनिसमें बहुतसी पतली घण्टियां लटकती हैं। कुछ जोरसे हवा चलने पर सब घण्टियां टन टन बजते अति मधुर शब्द होने लगता है। इन मन्दिरोंमें कईके द्वारोंपर प्रस्तरके सिंहादिकी मूर्ति उभय ओर स्थापित हैं।

अनेक सरदारोंने आजकल शहरमें सुन्दर सुन्दर अट्टालिका बनवा शोभा बढ़ायी है।

इस नगरमें एक प्रकार दूसरे मन्दिर भी देख पड़ते, जो स्तूपपर गुम्बज रख बने हैं। इस श्रेणीके मन्दिर विशेष कारुकार्य न रहते भी देखनेमें बहुत परिष्कार और परिच्छन्न हैं। पूर्वोक्त तलेजू मन्दिर देखनेमें ब्रह्मदेशीय मन्दिरसे मिलता और

भूनकर खानेसे इसकी मींगी बहुत अच्छी लगती है।

काजूकी लकड़ी लाल, कुछ कुछ कड़ी और दानेदार होती है। मध्यदेशवासी इसे सन्दूक तथा नाव बनानेमें लगाते हैं।

काजूत (सं० पु०) क्षुपविशेष, एक झाड़। महाराष्ट्र देशमें इसे 'जांबी' कहते हैं। यह मधुर, उष्ण, लघु, धातुवृद्धिकर और वात, कफ, गुल्मोदर, ज्वर, क्रमि, व्रण, अग्निमान्द्य, कुष्ठ, श्वेतकुष्ठ, संग्रहणी और अर्शोनाशक होता है।

काजूभोज (हिं० वि०) देखाऊ, कार्य्यमें न आनेवाला।

काञ्च (सं० क्ली०) काचलवण, सोंचर नोन।

काञ्चन (सं० पु० क्ली०) काञ्चते दीप्यते, कचि-ल्यु। १ स्वर्ण, सोना। २ पुन्नागपुष्प, सुलतानी चम्पा। ३ पद्मकेशर, कंवलकी घल। ४ धन, दौलत। ५ नागकेशरका पुष्प। ६ दीप्ति, चमक। ७ बन्धन, बंधाव। ८ उदुम्बर, गूलर। ९ धुस्तूर, धतूरा। १० सम्पत्ति, जायदाद। ११ पुरुरवा वंशीय भीमके एक पुत्र।

"भीमस्तु विजयस्याथ काञ्चनो होत्रकस्तथा।" (भागवत ९।१५।१)

१२ पञ्चम बुद्ध। १३ नारायणके एक पुत्र। १४ धनञ्जय-विजय नामक ग्रन्थके प्रणेता। १५ वृक्षविशेष, कचनारका पेड़। इसका पुष्प पीत, रक्त और श्वेत भेदसे त्रिविध है। रक्त पुष्पका संस्कृत पर्याय—रक्तपुष्प, कोविदार, युग्मपत्र एवं कुण्डल और श्वेतका पर्याय—काञ्चनाल, कर्बुदार तथा पाकारि है। भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, ग्राही, कषाय, श्लेष्मपित्त, क्रमि, कुष्ठ, गुदभ्रंश तथा गण्डमाला रोगनाशक होता है। १६ हरिताल।

काञ्चनक (सं० क्ली०) काञ्चन संज्ञायां कन्। १ हरिताल। २ धान्यविशेष, एक धान। ३ काञ्चन वृक्ष, कचनार।

काञ्चनकदली (सं० स्त्री०) काञ्चनवर्णा कदली, मध्यपदलोपी कर्मधा०। १ चम्पा केला। २ कदलीविशेष, एक केला।

काञ्चनकन्दर (सं० पु०) काञ्चनस्य कन्दरः, ६-तत्। स्वर्णकी खनि, सोनेकी खान।

काञ्चनकारिणी (सं० स्त्री०) काञ्चनं बहुमूल्येन बन्धनं करोति, काञ्चन-कृ-णिनि-ङीप्। शतमूली, सतावर।

काञ्चनचीरी (सं० स्त्री०) काञ्चनमिव चीरमस्याः, बहुव्री०। १ स्वर्णक्षीरिणी क्षुप, एक प्रकारकी खिरनी। २ क्षीरिणी, खिरनी। ३ यवतिक्ता, एक बूटी। इसका दुग्ध पीत और पत्र वृहत् होता है। ४ कद्रुष्ठ, किसी किसकी गोंद।

काञ्चनगिरि (सं० पु०) काञ्चनमयो गिरिः। १ सुमेरु पर्वत। २ स्वर्णनिर्मित कृत्रिम पर्वत, सोनेका बनाया हुआ पहाड़। यह दान करनेके लिये बनता है।

काञ्चनगुड़िका (सं० स्त्री०) औषध विशेष, एक दवा। त्रिफला प्रत्येक एक एक तोलेके हिसाबसे ३ तोला, त्रिकटु प्रत्येक दो दो तोलेके हिसाबसे ६ तोला, रक्तकाञ्चन (लाल कचनार) की छाल १२ तोला और सबके बराबर गुग्गुल डाल गोली बनानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। इसके सेवनसे गण्डमाला और गलगण्ड रोग दब जाता है। (रसरत्नाकर)

काञ्चनगैरिक (सं० क्ली०) सुवर्णगैरिक धातु, सोना मिट्टी।

काञ्चनचक्र (सं० क्ली०) बौद्धशास्त्रके मतसे पृथिवीका मध्यभाग (दिव्यावदान १९। ८।८)

काञ्चनचय (सं० क्ली०) काञ्चनस्य चयः राशिः, ६तत्। स्वर्ण राशि, सोनेका ढेर।

काञ्चनजङ्घा—पूर्व हिमालयका एक अत्युच्च शृङ्ग। यह सिकिम और नेपालकी प्रान्तीय सीमामें अक्षा० २७° ४२´ ५´´ और देशा० ८८° ११´ २६´´ पू० पर अवस्थित है। धवलगिरिका छोड़ इतना बड़ा शृङ्ग जगत्में दूसरा नहीं। यह २८१७६ फीट ऊंचा है। यह शृङ्ग गोसामीस्थानसे ६५ कोस पूर्व रहते मानो नेपालकी पूर्व सीमाको बचाता है। यह निरवच्छिन्न तुषारावृत रहता है। सूर्योदयकाल दूरसे ठीक काञ्चनकी भांति देख पड़ते यह शृङ्ग 'काञ्चनजङ्घा', 'काञ्चनलिङ्ग', 'काञ्चनशृङ्ग' और किसी किसी संस्कृत पुस्तकमें 'काञ्चनाद्रि' नामसे अभिहित है।

काञ्चनपत्रिका (सं० स्त्री०) कृष्णमुषली, कालीमूसर।

काञ्चनपल्ली—बङ्गाल प्रान्तके चौबीस परगनेका एक

मन्दिरोंमें सर्वापेक्षा उच्च लगता है। लोगोंके कथनानुसार १५४८ ई० को राजा महेन्द्रमल्लने यह मन्दिर बनवाया था। अनेक मन्दिरोंके सम्मुख उनके प्रतिष्ठाता प्राचीन राजाओंकी प्रस्तरमूर्ति स्थापित हैं। यह मूर्तियां प्रायः मन्दिरकी ओर घुटने लगा हाथ जोड़े बैठी हैं। उनके मस्तक पर राजसम्मानसूचक धातुनिर्मित सर्पफणा परिशोभित है। फणापर एक क्षुद्र पक्षी बैठा है। राजभवनसे कुछ दूर एक मन्दिरमें एक बड़ा घण्टा लगा और दूसरे दो मन्दिरोंमें एक एक बड़ा दमामा रखा है। समस्त मन्दिरोंमें नानाविध हिन्दू देवदेवीकी मूर्ति विद्यमान हैं।

राजभवनसे २०० गज दूर अर्ध-युरोपीय प्रणालीसे निर्मित 'कोट' नामक अट्टालिका है। जहां यह स्थान बना, वहीं सार जङ्गबहादुरको (१८४६ ई०) अभ्युदयमूलक भीषण नरहत्या हुयी। राज्यके समस्त सम्भ्रान्त और क्षमताशाली लोग उस समय मर मिटे थे।

यहां कई क्षुद्र मन्दिर हैं। वह एक ही प्रस्तर-खण्डसे निर्मित हैं। उनकी देवमूर्ति एक हस्त प्राय दीर्घ हैं। अनेक मन्दिरोंमें मोर, हंस, छाग और महिषादिका बलिदान होता है।

नगरके पथादि अप्रशस्त और अपरिष्कार हैं। प्रत्येक पथके किनारे नाबदान होता, जो कभी परिष्कार नहीं किया जाता। नगरका मैला जमीनमें खाद डालनेके लिये खर्च होता है। घर प्रायः चतुरस्र, अभ्यन्तर चक्राकार और पथका द्वार अप्रशस्त रहता है। बीचमें चौड़ा चबूतरा बनाते हैं।

उत्तरपूर्वके सिंहद्वार होकर नगरसे निकले पर दक्षिण ओर 'रानीपोखरी' नामक बृहत् दीर्घिका मिलती है। इसके चारो ओर प्राचीर वेष्टित है। दीर्घिकाके मध्यस्थलमें एक मन्दिर है। इसके पश्चिम होकर इष्टकनिर्मित सेतु द्वारा मन्दिरमें प्रवेश करना पड़ता है। मन्दिरके दक्षिण एक बृहत् प्रस्तरके हस्ती-पृष्ठ पर राजा प्रतापमल्लकी मूर्ति उत्कीर्ण है। यही राजा उक्त मन्दिर और दीर्घिकाके निर्माता थे। कुछ दक्षिण और आगे बढ़कर बकायन (Cape lilac वृक्षकी कतारके बीचसे एक राह नगरसे मैदानमें जा मिली है। पहले इस मैदानमें जङ्गबहादुरकी तलवार लिये मूर्ति ३० फीट ऊंचे स्तम्भ पर रखी थी। पीछेको वह बागमती नदीके तीर एक प्रासादमें स्थानान्तरित हुयी। इस मैदानकी पश्चिम ओर प्राचीन सेनापति भीमसेन थापाका 'दरहरा' नामक २५० फीट ऊंचा प्रस्तर-स्तम्भ है। इस स्तम्भकी गठनप्रणाली अति सुन्दर है। इन सेनापतिका दूसरा भी बृहदाकार स्तम्भ था, जो १८३३ ई० के भूमिकम्पमें भूमिसात् हो गया। यह स्तम्भ १८५६ ई० को वज्राघातसे टूटा था। १८६८ ई०को इसकी अच्छी मरम्मत हुयी। इसके अभ्यन्तरमें एक गोलाकार सीढ़ी है। इस स्तम्भपर चढ़नेसे नगरकी शोभा अच्छी तरह देख पड़ती थी।

इसके कुछ दक्षिण पुरातन अस्त्रागार है। मैदानके पूर्व पुराना तोपखाना है। यहां बारुद तोप वगैरह तैयार करते हैं। आजकल नगरसे दक्षिण ४ मील दूर तुकू नामक नदीके तीर एक कारखाना खुला है। वहां तोपें बनायी जाती हैं।

इस पथमें पूर्वमुख घूम एक मील चलने पर ठाटपटली नामक स्थान मिलता है। यहां बागमती तीर अवस्थित जङ्गबहादुरका महल है। इस महलके सामने बागमतीका मनोहर सेतु उतरते पत्तन नामक स्थान आता है।

काठमाण्डूके रेसीडेण्टका स्थान नगरकी उत्तर ओर एक मील दूर है। जगह अच्छी है। लोगोंके कथनानुसार भूतोंका उपद्रव रहनेसे रेसीडेण्टके वासके लिये यह स्थान मनोनीत हुआ है।

मन्त्री रणदीप सिंह नगरके उत्तर पूर्व पार्श्व एक बृहत् प्रासादमें रहते थे। काठमाण्डूमें १२००० पदातिसैन्य है। पुरानी चालकी २५० बन्दूकें रहती हैं। काठमाण्डू किसी विशेष व्यवसायके लिये प्रसिद्ध नहीं।

काठशाठी (सं० पु०) कठशाठेन प्रोक्तं अधीयते, कठशाठ-णिनि। कठशाठ-कथित शास्त्राध्यायी।

काठिन (सं०क्ली०) कठिनस्य भावः, कठिन-अण्। १ दृढ़ता, कड़ापन। (पु०) २ खर्जूरद्रुम, खजूरका पेड़।

गण्डग्राम (कसबा)। यह कलकत्तेसे १४ कोस उत्तर अवस्थित है। यहां पूर्ववङ्ग रेलवेका एक अड्डा है। पहले इस ग्राममें बहुसंख्यक पण्डित और विचक्षण चिकित्सक रहते थे। यहां कृष्णका श्रीमन्दिर, भोगमन्दिर तथा दोलमन्दिर बना और नित्यसेवाकी निर्वाहको कृष्णवाटी नामक गांव लगा है। चैतन्यचन्द्रोदय नाटकके रचयिता पुरीगोस्वामीको यह जन्मभूमि है। यहां रथयात्रा बड़े समारोहसे होती थी।

काञ्चनपुर (सं॰ क्ली॰) कलिङ्ग राज्यका एक नगर। (जैनहरिवंश २४।११)

काञ्चनपुष्पक (सं॰ क्ली॰) काञ्चनमिव पीतं पुष्पं यस्य, काञ्चनपुष्प-कप्। आहुल्य-क्षुप, तगर। आहुल्य देखो।

काञ्चनपुष्पिका (सं॰ स्त्री॰) पीतजाती, पीली चमेली।

काञ्चनपुष्पी (सं॰ स्त्री॰) काञ्चनमिव पुष्पं यस्याः, ङीप्। गणिकारिका, अरनी।

काञ्चनप्रभ (सं॰ पु॰) १ ऐलवंशीय एक राजा। (त्रि॰) २ स्वर्णकी भांति प्रभाविशिष्ट, सोनेकी तरह चमकनेवाला।

काञ्चनभू (सं॰ स्त्री॰) काञ्चनमयी भू, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। १ स्वर्णमय स्थान, सोनेकी जगह। २ स्वर्णरेणु, सोनेका बुरादा।

काञ्चनभूपा (सं॰ स्त्री॰) स्वर्णगैरिक, सोनामाटी।

काञ्चनमय (सं॰ त्रि॰) काञ्चनस्य विकारः, काञ्चन-मयट्। मयट् वैतयोर्भाषायामभक्ष्याच्छादनयोः। पा ४।३।१४३। स्वर्णनिर्मित, सोनेका बना हुआ।

काञ्चनमाक्षिक (सं॰ पु॰) स्वर्णमाक्षिक, सोनामाखी।

काञ्चनमाला (सं॰ स्त्री॰) १ अशोक राजाके पुत्र कुणालकी पत्नी। २ स्वर्णश्रेणी, सोनेका लड़। ३ काञ्चनहृक्षकी श्रेणी, कचनारकी कतार।

काञ्चनमोहनरस (सं॰ पु॰) रसविशेष, एक दवा। रससिन्दूर, ताम्रभस्म एवं स्वर्णभस्म समभाग अर्क (मदार) तथा मञ्जो (थूहर) के दुग्धमें दिन भर घोंटनेसे यह रस प्रस्तुत होता है। गोली एक रत्तीकी बनती है। काञ्चनमोहन रसके सेवनसे गुल्म रोग आरोग्य होता है। (रसरत्नाकर)

काञ्चनरस (सं॰ क्ली॰) हरितालविशेष, किसी किस्मका हरताल। कोदन देखो।

काञ्चनवप्र (सं॰ पु॰) काञ्चनमयो वप्रः, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। १ स्वर्णनिर्मित प्राचीर, सोनेकी दीवार। २ सुमेरु पर्वतका सानुदेश।

काञ्चनवर्मा (सं॰ पु॰) एक प्राचीन राजा। हिरण्यवर्मा देखो।

काञ्चनष्ठीवी (सं॰ पु॰) सृञ्जय राजाके पुत्र। (महाभारत, शान्ति ३१-११)

काञ्चनसन्धि (सं॰ पु॰) काञ्चनवत् दुर्भेद्यः सन्धिः। सुदृढ़ सन्धि, मजबूत सुलह।

काञ्चनसन्निभ (सं॰ त्रि॰) स्वर्णवत् सुन्दर, सोनेकी तरह चमकीला।

काञ्चनसूप (सं॰ पु॰) काञ्चन नामक द्विदलधान्यसाधित सूप, एक दाल। यह सरसोंके तेलमें कलहार कर बनाया जाता है।

काञ्चना (सं॰ स्त्री॰) महीरावणकी राजधानी। इसका अपर नाम स्वर्णभूमि है।

काञ्चनाक्ष (सं॰ पु॰) एक दानव। (हरिवंश २४० अ॰)

काञ्चनाक्षी (सं॰ स्त्री॰) सरस्वती नदी।

काञ्चनाङ्ग (सं॰ त्रि॰) काञ्चनवत् सुन्दरं अङ्गं यस्य, बहुव्री॰। १ स्वर्णवत् सुन्दर अङ्गविशिष्ट, सोनेकी तरह चमकीले जिस्मवाला। (क्ली॰) २ स्वर्णनिर्मित अवयव, सोनेका बना हुआ बदन।

कांचनाभिधानसन्धि (सं॰ पु॰) कांचनसन्धि, दोनों तर्फ बराबर शर्तों पर होनेवाली सुलह।

कांचनाभ्ररस (सं॰ पु॰) रसविशेष, एक दवा। रससिन्दूर, मुक्ताभस्म, लौह, अभ्रक, प्रवाल, हरीतकी, रौप्य, मृगनाभि और मनःशिला दो दो तोले जलमें घोंटनेसे यह रस प्रस्तुत होता है। इसे बिन्दुमात्र अनुपानके अनुसार सेवन करनेसे सर्वोपद्रवसंयुक्त नानारोग दब जाते हैं। क्षय, काश और श्लेमपित्त पर यह बड़ा गुण देखाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) बृहत् कांचनाभ्र रस बनानेकी विधि यह है—स्वर्णभस्म, रससिन्दूर, मुक्ताभस्म, लौहभस्म, अभ्रभस्म, प्रवालभस्म वैक्रान्तभस्म, रौप्य, ताम्र, वङ्ग, कस्तूरी, लवङ्ग, जाति-

काठिन्य (सं॰ क्लो॰) कठिनस्य भावः, कठिन-ष्यञ्। १ कठिनता, कड़ापन। २ निष्ठुरता, बेरहमी।

"काठिन्यस्य परीक्षार्थं चक्रं कर्मक्षतामपि।"

(राजतरङ्गिणी ३।७४)

काठिन्यफल (सं॰ पु॰) काठिन्यं फले यस्य, बहुव्री॰। कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

काठियावाड़ (सौराष्ट्र) बम्बई प्रान्तका एक प्रायोद्वीप। यह अक्षा॰ २०° ४१' एवं २३° ८' उ॰ और देशा॰ ६८° ५६' तथा ७२° २०' पू॰ के मध्य अवस्थित है। काठियावाड़ गुजरातका पश्चिमांश है। यह प्रायोद्वीप २२० मील लम्बा और १६५ मील चौड़ा है। क्षेत्रफल कोई २३४४५ वर्गमील होगा। लोकसंख्या २५ लाखसे अधिक है। इसमें १२४५ वर्गमील भूमिपर गायकवाड़ राज्य करते, १२८८ वर्ग मील अहमदाबाद जिलेके अधीन पड़ते, २० वर्गमील पोर्तगीज़ राज्यमें लगते और २०८८२ वर्गमील पर अन्यान्य देशी राजा अपना प्रभुत्व रखते हैं। इन राजावोंके राज्यकी एक एजेंसी १८२२ ई॰में बनी। काठियावाड़ एजेंसी ४ प्रान्तमें विभक्त है—झालावाड़, हालार, सोरठ और गोहिलवाड़। इस एजेन्सीके अधीन राज्य १८६३ ई॰ से ७ श्रेणियोंमें निबद्ध हैं। प्रथमके ८, द्वितीयके ६, तृतीयके ८, चतुर्थके ८, पंचमके १६, षष्ठके ३० और सप्तम श्रेणीके ५ राज्य हैं।

काठियावाड़ प्रायोद्वीप वर्गाकार है। यह अरब सागरमें कच्छ और गुजरात समुद्र तटके मध्य विद्यमान है। इसके आकार प्रकारसे समझ पड़ता कि पहले यह अग्निउद्गीरण करनेवाले द्वीपोंका एक समूह था। उत्तरीय तटपर रनका उथला जल और पूर्वको लवणाक्त भूमि है। ई॰ १३ वें और १४वें शताब्दको काठियोंने कच्छसे आ यहां आश्रय लिया और १५ वें शताब्दको इसे अधिकार किया।

पर्वत निम्नश्रेणीके हैं। झालावाड़के पश्चिम ठांगा और माण्डव तथा हालारके कुछ क्षुद्र पर्वतोंको छोड़ इस देशका उत्तरीय विभाग सपाटा है। किन्तु दक्षिणमें गोघासे और पर्वत बराबर गिरनार तक चला गया है।

भादर प्रधान नदी है। यह माण्डव पर्वतसे निकल बरड़ामें नवी बन्दरके समीप समुद्रमें जा गिरी है। इसकी धाराका परिमाण ११० मील है। नदीके दोनों ओर खेती होती है। दूसरी नदी आजी, माछू, भोगाव और शतरंजी हैं। शतरंजीका बन्ध दृश्य सुप्रसिद्ध है।

हंसस्थान, भावनगर, सुन्दरी, नवलियाणी और धोलेरा लवणाक्त जलके खात हैं।

जफ़राबादके उत्तर-पूर्व कोणपर वेयत बन्दर है। पिराम, चांव, शाल, डिज, वेयत और चांक प्रधान द्वीपोंमें गण्य है। नव और मेडस छोटे छोटे झील हैं। दक्षिण-पश्चिम कोणपर खाराघोड़ नामक लवणागार है। पोरबन्दरका पत्थर अच्छा होता है। काठ बहुमूल्य नहीं। नारियल और जंगली खजूर बहुत है। पहले काठियावाड़में सिंह सर्वत्र देख पड़ते थे, किन्तु अब गीर वनके अतिरिक्त दूसरे स्थानमें नहीं मिलते। काठियावाड़का जलवायु प्रसन्नताकारक और स्वास्थ्यकर है। दक्षिण भागमें तप्त वायु अधिक चलता है। काठियावाड़में पित्तप्रकोपसे ज्वर आ जाता है। जूनागढ़ और राजकोटमें वृष्टि अधिक होती है।

पूर्वतन समय काठियावाड़में ब्राह्मणोंने अपना प्रभाव बहुत बढ़ाया था। जूनागढ़ और गिरनारके बीच अशोककी शिलालिपि (२६५-२३१ पूर्व खृष्टाब्द) मिलती है। ष्ट्राबोने सारओसटोस (Saraostos) सम्भवतः सौराष्ट्रको ही लिखा है। ऐसा होनेसे सीदीय राजावोंने खृष्टपूर्वाब्द १८०—१४४को काठियावाड़ जीता था। अलेकसेन्द्राके वणिक् भी ई॰ १म तथा २य शताब्दको इससे परिचित थे। किन्तु उन्होंने जिन स्थानोंके नाम लिखे, उनके मिलानेमें चिह्न न् उलझ पड़े हैं।

काठियावाड़का प्राचीन इतिहास बहुत कम मिलता है। सम्भवतः क्रमागत मयूर, यूनानी और क्षत्रप इसके अधिपति रहे। फिर गुप्तोंने सेनापतियों द्वारा यहां थोड़े दिन राज्य किया। सेनापतियोंने राजा हो अपने प्रधानोंको वल्लभी नगरमें (भावनगर से १८ मील दूर) रखा था। गुप्त साम्राज्यका पतन होनेसे वल्लभी राजावोंने अपना अधिकार कच्छ तक बढ़ाया और ४७० तथा ५२० ई॰ को काठियावाड़में

कोष और एलवालुक दो दो तोले घृतकुमारी तथा देगराजके रस एवं भङ्गाचीरमें तीन तीन दिन घोंटते हैं। मात्रा चार रत्ती है। यह रस भी अनुपानके अनुसार सर्वरोग दूर करता है।

काञ्चनार (सं॰ पु॰) काञ्चनं तद्वर्णं ऋच्छति पुष्पैः काञ्चन-ऋ-अण्। रक्तकाञ्चनवृक्ष, लाल कचनार। यह कषाय, संग्राही, व्रणरोपण, दीपन और कफ, वात तथा मूत्रकृच्छ्र नाशक होता है। (राज निघण्टु) २ श्वेतकाञ्चन वृक्ष, सफेद कचनार।

कांचनारक (सं॰ पु॰) कांचनार स्वार्थे कन्। काञ्चनार देखो।

काञ्चनारगुग्गुलु (सं॰ पु॰) औषध विशेष, एक दवा। कचनारकी छालका चूर्ण ५ पल, शुण्ठी, पीपल एवं मरिचका चूर्ण एक-एक पल, हरीतकी, आमलकी तथा विभीतकका चूर्ण चार-चार तोला, वरुणकी छालका चूर्ण २ तोला, गुड़त्वक्, पत्रक (तेजपात) एवं एलाका चूर्ण एक एक तोला और सब चूर्णके बराबर गुग्गुलु डाल एकत्र मर्दन करनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। इसके सेवनसे गण्डमाला, गलगण्ड और अर्बुदादि रोग नष्ट होता है। मात्रा आध तोले तक है। (भावप्रकाश)

काञ्चनाल (सं॰ पु॰) काञ्चनं कांचनवर्णं अलति, काञ्चन-अल्-अण्। १ श्वेतकांचन वृक्ष, सफेद कचनारका पेड़। २ आरग्वध वृक्ष, अमिलतास।

कांचनाह्वय (सं॰पु॰) कांचनं स्वर्णं आह्वयति स्पर्धते स्वभासा इति शेषः कांचन-आ-ह्वे-क। १ नागकेशर वृक्ष। २ पद्मकेशर।

कांचनिका (सं॰ स्त्री॰) गणिकारी पुष्पवृक्ष, अरनी।

कांचनी (सं॰ स्त्री॰) कच्यते दीप्यते अनया, काचि-ल्युट्-ङीप्। १ हरिद्रा, हलदी। २ गोरोचना। ३ स्वर्णक्षीरी, खिरनी। हिन्दीमें 'कांचनी' नर्तकी और गायिकाको कहते हैं।

कांचनी—गोस्वामी सम्प्रदायविशेष। यह लोग नृत्य गीत द्वारा जीविका निर्वाह करते और गैरिक वस्त्र पहनते हैं। आचार-व्यवहार साधारण गोसाइयोंसे मिलता है। आवश्यक आनेसे यह विवाह कर सकते हैं। मरने पर इनके शवको समाधि देते या नदीके जलमें बहाते हैं।

कांचनीय (सं॰ वि॰) स्वर्णजात, सोनेका बना हुआ।

कांचनीया (सं॰ स्त्री॰) १ हरिताल। २ गोरोचना।

कांचि (सं॰ स्त्री॰) कांचि-इन्। १ रसना, करधनी। २ दाक्षिणात्यके द्राविड़ राज्यकी राजधानी। कांचीपुर देखो।

कांचिक (सं॰ क्ली॰) कांचि संज्ञायां कन्। कांजिक, कांजी।

कांची (सं॰ स्त्री॰) कांचि-ङीप्। १ रसना, करधनी। इसका संस्कृत पर्याय—मेखला, सप्तकी, रसना, सारसन, कांचि, कक्षा, कक्ष्या, सप्तका, सारशन, रसन और बंधन है। इन पर्यायोंमें किसी किसीके मतानुसार विभिन्नता रहती है। एक लड़वाली यष्टिको कांची कहते हैं। फिर आठ लड़वाली मेखला, सोलह लड़वाली रसना और पचीस लड़वाली करधनी कलाप कहलाती है। २ द्राविड़ राज्यकी राजधानी। ३ गुञ्जा, घुंघची।

कांचीनगर (सं॰ क्ली॰) कांचीपुर देखो।

कांचीपद (सं॰ क्ली॰) काञ्च्याः पदं स्थानम्, ६ तत्। जघनदेश, नितम्ब, करधनी बांधने की जगह।

कांचीपुर—मन्द्राज प्रांतस्थ चेंगलपट जिलेके कांचीपुरम् तालुकका एक प्रसिद्ध नगर। यह अक्षा॰ १२° ४८' ४५" उ॰ और देशान्तर ७९° ४५' पू॰पर अवस्थित है। भूपरिमाण ५८५८ एकर है। यहां न्यायालय, कारागार, चिकित्सालय और विद्यालय विद्यमान है।

पुरातत्त्व—कांचीपुर अति प्राचीन नगर है। महाभारतमें उल्लेख मिलता है,

"ततस्तत् सहसा तां पुच्छात् प्रवरास्त्रविशारदान्।
म्लेच्छांश्च विविधान् वर्वरांश्च पार्श्वतः॥" (महाभारत, आदि, १७४।३७)

अनेक महात्माओंके मतसे महाभारतमें कांची नामका उल्लेख रहते भी केवल उसी प्रमाण पर निर्भर कर इसको महाभारतका समकालीन अति प्राचीन नगर कह नहीं सकते। तामिल भाषाके "कांचीपुर स्थलपुराण"में लिखा कि प्रसिद्ध चोलराज कुलोत्तुङ्गने कांचीपुर नगर स्थापन किया था। तद्

प्रमुख बनानेवाले मैरोंको नीचा देखाया। गुप्तसेनापति भट्टारक वल्लभी राजवंशके प्रतिष्ठाता थे। ध्रुवसेनके समय (६३२—४० ई०) चीन-परिव्राजक हिउएन् चियङ्ग वल्लभी (व-ल-पी) और सोराष्ट्र (सु-ल-च) आये। वह लिखते हैं,—"वहांके अधिवासी सामान्य हैं। वह लिखना पढ़ना नहीं जानते, किन्तु समुद्र निकट रहनेसे उन्हें लाभ है। वह व्यवसाय और विनिमयमें लगे रहते हैं। इनकी संख्या अधिक है। वह धनी हैं। बौद्ध परिव्राजकोंके अनेक विहार विद्यमान हैं।"

विदित नहीं वल्लभीका पतन कैसे हुआ। सम्भवतः सिन्धुसे मुसलमानोंने आकर इसे दबाया था। फिर राजधानी अनहिलवाड़ उठ गयी (७४६-१२९८ ई०)। उस समय अनेक सामन्त राजा बने। काठियावाड़के पश्चिम जेठवाओंका बल बहुत बढ़ा था। ११९४ ई०को मुसलमानोंने अनहिलवाड़ लूटपाट १२९८ ई०को अपने राज्यमें जोड़ा। अनहिलवाड़के राजाओंने झालाओंको उत्तर काठियावाड़में बसाया था। गुहिल (अब पूर्व काठियावाड़में रहनेवाले) १३ वें शताब्दको उत्तरसे मुसलमानोंके सामने हटते आये और अपने लिये नये स्थान अनहिलवाड़के पतनसे जीत पाये। कच्छको राह पश्चिमसे जाड़ेजाओं और काठियोंका आगमन हुआ था। १०२४ ई० को महमूद-गजनवी द्वारा दक्षिण काठियावाड़में सोमनाथकी लूट खसोट और ११९४ ई० को अनहिलवाड़का विजय काठियावाड़के मुसलमानी आक्रमणोंकी प्रस्तावना था। १३२४ ई०को जाफ़र ख़ान् ने सोमनाथका मन्दिर तोड़ा। वह गुजरातके प्रथम मुसलमान राजा थे। उन्होंने १३९६ से १५३५ ई० तक प्रभुताके साथ राज्य किया। १५७२ ई० को अकबरने गुजरात जीता था। काठियावाड़के सरदार अहमदनगरके राजाओंके नीचे रहे। उन्होंने व्यवसाय बढ़ा मांगरोल, बरावल, दिउ, गोघे और कम्बे बन्दरकी उन्नति की।

कोई १५०८ ई० को समुद्र तट पर पोर्तगीजोंका भय बढ़ा था। हुमायूंके डंटे आदरसे शाह बहादुर दिउमें जा छिपे। फिर पोर्तगीजोंको एक कारखाना बनानेके लिये उन्होंने आज्ञा दी थी। उस कारखानेको पोर्तगीजोंने किलेमें बदल डाला। १५३७ ई०को उन्होंने छलसे बहादुरके प्राण लिये थे। आज भी दिउके द्वीप और दुर्गमें पोर्तगीजोंका अधिकार है। १५७२ ई०को अकबरके विजय करने पीछे दिल्लीके राजप्रतिनिधि या काठियावाड़ शासन करते थे। फिर उनके स्थान पर महाराष्ट्र आये। महाराष्ट्र १७०५ ई०को गुजरात पहुंचे और १७६० ई० तक पूर्ण रूपसे राजा बन बैठे। फिर ५० वर्ष तक काठियावाड़में छोटी छोटी लड़ाइयां होते रहीं। १८ वें शताब्दके अन्तिम भागमें बड़ोदाके गायकवाड़ अपने और अपने प्रभु पेशवाके लिये कर एकत्र करनेको प्रति वर्ष सेना भेजते थे। पश्चिम और उत्तर गुजरातके राजा उनके अधीन थे। १८०३ ई०को निर्बल राजाओंने बड़ोदाके रेसीडेण्टसे प्रार्थना की कि वह उनकी रक्षा करते। राजा अपना राज्य ईष्ट इण्डिया कम्पनीको देनेपर राजी थे। १८०७ ई०को सन्धिके अनुसार काठियावाड़के राजा कर देते हैं। अंगरेज सरकार उसका रुपया वसूल करती और बड़ोदाको भरती है। १८१८ ई०के सतारा-आदेशके अनुसार काठियावाड़में अंगरेजोंको पेशवाका स्वत्व मिला था। पत्थर काटकर बनी हुई बौद्धोंकी गुफा और मन्दिर जूनागढ़में विद्यमान हैं। शतरंजा पहाड़ और गिरनार पर जैनोंके मन्दिर खड़े हैं। इनमेंभी कितने ही प्राचीन स्थानोंका ध्वंसावशेष देखते हैं।

काठियावाड़के बहुतसे आदमी बम्बई और अहमदनगरमें रहते हैं। समुद्र तटके मुसलमान दक्षिण अफ्रीका तथा नेटाल जाते हैं। लोगोंमें हिन्दुओंकी संख्या अधिक है। भूमि दो प्रकारकी है—लाल और काली। लालमें उपज कम होती है। काली और उपजाऊ भूमिको 'कामपाल' कहते हैं।

भादर नदीकी दलदलमें मधुरा और लिलियाके पास बहुत उत्तम स्थान है। यहां उत्तम फल और शाक होता है। गन्नेकी उपज अधिक है। पोरबन्दरका पान प्रसिद्ध है। झालावाड़के उत्तरीय और पूर्वीय प्रान्तमें रुई बहुत उपजती है। बाजरी ज्वार,

पुत्र कदम्बो तोण्डीरके समय इसकी विशेष समृद्धि हुई। पाश्चात्य पुराविद् फार्गुसनने उक्तमत समर्थनकर लिखा है,—"पहले यह स्थान जंगलसे परिहत था। उस समय यहां असभ्य कुरुम्बर रहते थे। ई०११वें या १२वें शताब्द कदम्बो चक्रवर्तीने यह नगर स्थापन किया। (Fergusson's History of Indian and Eastern Architecture.)

उक्त उभय मत समीचीन नहीं समझ पड़ते। वास्तविक यह कांचीपुर अति प्राचीन नगर है। प्राचीन शिलालिपि और प्राचीन संस्कृत पुस्तक पढ़नेसे अनायास उपलब्धि आती, कि चोल राजाओंके अभ्युदयसे बहुत पहले कांचीपुरमें दक्षिणापथके प्रबल पराक्रांत नृपतियोंकी राजधानी स्थापित हुई थी। आजकल यह जैसा क्षुद्र नगर है, पूर्वकालको वैसा न था। उस समय कांचीपुर एक विस्तीर्ण जनपदमें विभक्त था। स्कान्दपुराणके कुमारिकाखण्डमें लिखा है—

"पुराणां नगरवच काञ्चीपुरं प्रकीर्तितम्।" (१० अ०)

महाभारतके समय कांचीपुर सम्भवतः कलिङ्गके क्षत्रिय राजाओंके अधीन था। उस समय भी यह स्थान द्राविड़ राज्यके अन्तर्गत न हुआ था। यही बात महाभारतमें द्राविड़ और कांचीके स्वतन्त्र उल्लेखसे अनुमित होती है। फिर दक्षिणापथके पाण्ड्य राजाओंने इसे अधिकार किया।

पाण्ड्य राजाओंके पीछे ही कांचीपुर पल्लव राजाओंके हाथ लगा। किसी समय पल्लव राजाओंने द्राविड़ और दक्षिणापथका अधिकांश जीत इसी कांचीपुरमें राजधानी स्थापित की थी। बौद्ध और जैन धर्म प्रबल पड़ते भी तत्कालीन कांचीपुरके पल्लवराज हिन्दू धर्मावलम्बी रहे। खृष्टीय ४र्थ और ५म शताब्दकी शिलालिपि उक्त विषयका साक्ष्य देती है। उक्त शिलालिपि पढ़नेसे समझ पड़ता, कि उस समय और उससे पहले कांचीपुरमें जैन धर्म भी विशेष प्रबल था। तत्कालीन पल्लव राजाओंने वेदज्ञ ब्राह्मणोंको अनुशासन द्वारा जो ग्राम दिये, उन सकल स्थानोंमें ब्राह्मणोंके अव्यवहित पूर्व जैनोंके अधिकार रहे। सम्भवतः हिन्दू राजाओंने जैनोंको निकाल उन स्थानोंमें ब्राह्मणोंको रखा था। (Indian Antiquary, VIII. 281.)

बौद्धगण अनुमान खृष्टीय ४थ शताब्दको काशीसे जा कांचीपुरमें रहे थे। पाण्ड्य राजाओंके समय यहां जैनधर्म प्रबल हो गया और जैन राजाओंने अधिकांश बौद्ध अधिवासियोंको भगा दिया। (Wilson's Mackenzie Collection, p. 40-41.)

शिलालिपिके अनुसार सिंहविष्णु ही कांचीपुरके प्रथम पल्लवराज थे, जो खृष्टीय ४र्थ शताब्दको राजत्व कर गये। वह वैष्णव थे। अनेक लोग अनुमान करते, कि उन्हींके समय विष्णुकांचीके वरदराजस्वामी आविर्भूत हुये थे।

खृष्टीय ६ष्ठ शताब्दको पुलिकेशी (२य) ने एकबार पल्लवराज पर आक्रमण किया। ५०७ शकमें खोदित पुलिकेशीका शिलालिपि पढ़नेसे समझते कि पल्लवराज उनसे हार कांचीपुरके प्राकारमें छिप रहे थे।

"अज्ञानामयलोद्धतिबलरजस्सन्नद्धकाञ्चीपुरः।
प्राकारान्तरितप्रतापमकरोद्यः पल्लवानाम्पतिम् ॥"
(५०० शके खोदित ऐहोल शिलालिपि।)

खृष्टीय ७म शताब्दको चीन-परिव्राजक हुएन-सुयाङ्ग कांचीपुर (कि-एन-चि-पु-लो) आये थे। उस समय यह द्राविड़ राज्यकी राजधानी था। विस्तृति प्रायः २॥ कोस रही। बौद्ध, निर्ग्रन्थ और हिन्दू तीन दल प्रबल थे। १०० बौद्ध सङ्घाराम और ८०देवमन्दिर रहे। कांचीपुर धर्मपाल बोधिसत्वका जन्मस्थान है। इसीसे बौद्ध इस स्थानको पुण्यभूमि समझते और नाना देशोंसे बौद्ध यात्री यहां आ पहुंचते थे।

अनेक लोगोंके अनुमानसे चीन-परिव्राजकके आगमनकाल यहां बौद्धराज राजत्व करते थे। किन्तु यह बात ठीक नहीं। खृष्टीय ७म शताब्दकी शिलालिपि पढ़नेसे समझ पड़ता कि उस समय भी कांचीपुरमें वैष्णव धर्मावलम्बी पल्लव राजाओंका राजत्व था।

पूर्वतन पल्लव राजाओंके वैष्णव होते भी खृष्टीय ८म शताब्दको शिलालिपिमें कांचीपुराधिप नरसिंहवर्माने अपनेको शैव वा महेश्वरोपासक लिखा है। सम्भवतः उसी समय यहां शैवधर्म प्रबल हुवा था।

बाजरा और गेहूं अधिक होता है। जिमवडी और काठियावाड़के पूर्वीय समुद्र तटकी भूमिमें खाद डालना नहीं पड़ती। हल्दी और मूंग बहुत होती है। सींचके लिये कई तालाव बनाये गये हैं।

काठियावाड़में घोड़े बहुत अच्छे होते हैं। गीरकी गाय भैंसें बड़ी दूध देनेवाली हैं। भेड़ोंका ऊन, रूई और अनाज बाहर भेजा जाता है।

गीरमें १५०० वर्गमीलका जंगल है। बांकानेर और पंचालमें जंगलके लिये भूमि निर्धारित की गई है। भावनगर, मोरवी, गोंडाल और मानावडारमें बबूल लगा है। भावनगरमें छोहारे और आमके बाग़ बनाये गये हैं।

काठियावाड़में पत्थर अच्छा होता है। प्रधान धातु लोहा है। पहले बरडा और खमभालियामें लोहा गलाया जाता था। पोरबन्दरके निकट जो पत्थर निकलता, वह मकान बनानेके लिये बम्बईमें बहुत बिकता है। नवानगरके पास कच्छकी खाड़ीमें अच्छा मोती निकलता है। कुछ मोती भेराई और चांचके पास जूनागढ़ और भावनगरमें भी मिलते हैं। मांगरोल और सोलमें कुछ लाल मूंगा होता है।

काठियावाडका देश धनी है। रूईका कपडा, चीनी और गुड़ बाहरसे मंगाते हैं। सड़कें भी कई बना दी गयी हैं। १८६५ ई०को यहां कोई सड़क न थी।

१८८० ई० को देशी राज्योंके व्ययसे यहां रेल चली। बम्बई-बड़ोदा-मध्यभारत-रेलवेकी कम्पनी १८८२ ई०को पहले पहल काठियावाड़में रेल ले गयी थी।

१८१४-१५ ई० को यहां बड़े बड़े लाखों चूहे निकल पड़े थे। उन्होंने फसलको बड़ी हानि पहुंचायी। १८९९-१९०२ ई०को काठियावाड़में घोर दुर्भिक्ष पड़ा था।

१८२२ ई०से बम्बई गवरनमेण्टके अधीन पोलिटिकल एजण्ट काठियावाड़ शासन करने लगे। १९०३ ई०को उन्हें गवरनरके एजण्टका पद मिला। यहां सैकड़ों अस्पताल खुले हैं।

काठी (हिं० स्त्री०) १ पर्यायविशेष, एक तरहका जीन। इसमें काठ लगता है। २ डीलडौल, ढांचा। ३ दियासलायी। ४ काठका म्यान। (वि०) ५ काठियावाड़ सम्बन्धीय।

काठू (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पौदा। यह कूटूसे मिलता है। हिमालयके अल्प शीत स्थानमें इसकी कृषि की जाती है। काठूका शाक भी बनता है।

काठेरणि (सं० पु०) एक ऋषि।

काठेरणीय (सं० त्रि०) काठेरणेरिदम्, काठेरणि-छ। काठेरणि ऋषि सम्बन्धीय।

काठौं (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किस्मका धान। यह पञ्जाबमें उपजता है।

काठोडुम्बर (सं० पु०) काष्ठडुम्बरिका, कठगूलर।

काड (अं० पु० = Cod) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह उत्तर-समुद्रमें रहता और न्यूफाउण्डलेण्डके किनारे अधिक मिलता है। अमेरिकाके युक्तराज्यमें अटलाण्टिक महासागरके तीर भी एक प्रकारका 'काड' होता है। यह मत्स्य तीन वर्षमें बढ़ कर पूरा निकलता है। इसका दैर्घ्य ६ फीट और परिमाण ६ से ८ सेर तक रहता है। काडका मांस बलकारक है। इसके कलेजेका तेल (Cod liver oil) निर्बल मनुष्योंको खिलाते हैं।

काढना (हिं० क्रि०) १ खींचना, निकालना। २ प्रकाश करना, दिखाना। ३ चित्रकारी करना, बेलबूटा बनाना। ४ ऋण लेना, क़र्ज़ करना। ५ पकाना, उतारना, छानना।

काढा (हिं० पु०) क्वाथ, जोशांदा, उबाली हुयी दवा।

काण (सं० पु०) कणति एक चक्षुर्निमीलति, कण-घञ्। १ काक, कौआ। (त्रि०) २ एक चक्षुविशिष्ट, काना, जिसके एक ही आंख रहे।

काणकपोत (सं० पु०) कपोतभेद, एक कबूतर। यह कषाय, स्वादुलवण और गुरु होता है। (सुश्रुत)

काणत्व (सं० क्ली०) काण होनेका भाव, कानापन।

काणभाग (सं० पु०) त्रिभाग, चार हिस्सेमें तीन हिस्सा।

काणभूति (सं० पु०) पिशाचरूपी एक यक्ष। यह कुबेरके एक अनुचर रहे। नाम सुप्रतीक था। स्थूल-

खृष्टीय ८म शताब्दको चोलराज कुलोत्तुङ्गने * काञ्चीपुर अधिकार किया। तत्पुत्र अदग्डी चक्रवर्त्तीके समय काञ्चीपुर तोण्डीरमण्डलको राजधानी हुआ।

खृष्टीय १०म और ११श शताब्दके मध्य चालुक्य राजाओंने काञ्चीपुर लेनेकी चेष्टा की थी। विह्लण कवि विरचित विक्रमाङ्कचरित पुस्तक पढ़नेसे समझ पड़ता कि चालुक्यराज आहवमल्लने (१०४०-६९ ई०) चोलराजधानी काञ्चीको आक्रमण किया। वह युद्धमें जय पाते भी चोल राजाओंको स्ववशमें ला न सके। उनके आदेश-क्रमसे तत्पुत्र विक्रमादित्य चालुक्य कई बार काञ्चीपर चढ़े।

(विह्लणकृत विक्रमाङ्कचरित ३।६१, ६६।२२-२८)

मालूम पड़ता कि उसी समय काञ्चीका कोई कोई अंश पल्लव राजाओंके भी अधिकारमें था। कारण शिलालिपि और विह्लणका ग्रन्थ पढ़नेसे समझ पड़ता कि विक्रमादित्यके पुत्र विनयादित्यसे काञ्चीके तेराज्य पल्लवकी विपुलवाहिनी आक्रान्त और पर्यंदस्त हुयी।

१०७४ शकको एक शिलालिपिमें खोदित है कि उस समय (खृष्टीय १२श शताब्द) काकत्यराज रुद्रदेव काञ्चीपुर शासन करते थे। (Ind. Antiquary, XI. 19.)

१५श शताब्दके मध्यकाल उत्कलके केशरीवंशीय एक राजाने काञ्चीपुर लूटा था। फिर १४७७ ई०को बहमानी वंशीय मुसलमानराज मुहम्मदने काञ्चीपुर छीन अपना अधिकार जमाया। इसी प्रकार यह कुछ काल बहमानियोंके शासनाधीन रहा। उसके पीछे विजयनगरके राजा नरसिंह रायने बहमानियोंके हाथसे इसे छोड़ाया। उन्होंने वीरवसन्त रायको काञ्चीपुरमें शासनकर्त्ताके पद पर बैठाया। नरसिंह रायके पुत्र कृष्णदेव राय १५०८ ई० को राज्याभिषिक्त हुये थे। वह १५१५ ई०को यहां आये। उन्होंने काञ्चीपुरके विख्यात शतस्तम्भ और कई शिवमन्दिरका संस्कार कराया था। १४३८ शकके खोदित अनुशासन-पत्र पढ़नेसे समझते कि कृष्णदेव रायने काञ्चीपुरके प्रसिद्ध वरदराज स्वामीके मन्दिर व्ययको ११ सौ रुपये आयके विशरा, तिरुप्य, कदाह, उपंयगाम और गोविन्दवदी प्रभृति अनेक ग्राम प्रदान किये।

१६४४ ई० को विजयनगर यवन-कवलित होने पर काञ्चीपुर गोलकुण्डावाले मुसलमान राजाके हाथ लगा। कुछ दिन पीछे यह अरकाटमें शामिल हुआ। १७५१ ई०को लार्ड क्लाइवने फरासीसियोंके हाथसे काञ्चीपुर अधिकार किया था। किन्तु उसी वर्ष राजा साहबको छोड़ देना पड़ा। १७५७ ई०को फरासीसियोंने यह स्थान आक्रमण कर आग लगायी थी। दूसरे वर्ष अंगरेजी सैन्य काञ्चीपुर छोड़ मन्द्राजमें फरासीसियों पर चढ़ा। किन्तु फिर लौटकर फरासीसियोंके अवरोधसे इसे उद्धार किया। काञ्चीपुरसे अदर पुल्लूर स्थानपर अंगरेजों और मुसलमानोंमें एक घोरतर युद्ध हुआ था। उसमें हैदरअलीने (१७८० ई०) जनरल बेलीके सैन्यव्यूहका भेद किया।

काञ्चीपुर एक प्राचीन महातीर्थ है। भारतवर्षकी जो सात पुण्यनगरी दर्शन करनेसे जीव अनायास सिद्धि पा सकता, उनमें इसका भी नाम मिलता है,—

"अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता सिद्धिदायिका॥"

तोड़लतन्त्रके मतसे यही तीर्थ विश्वरूप महादेवका कटिदेश है,—

"नाभिमूले महेशानि अयोध्यापुरी संस्थिता।
काञ्चीपीठं कोटिदेशे कोरह पृष्ठदेशके॥"

(तोड़लतन्त्र, ८म उल्लास)

केवल तीर्थ ही नहीं, काञ्ची महापीठस्थान है। बृहन्नीलतन्त्रके मतमें यहां कनककाञ्ची देवी विराजती हैं,—

"काञ्च्यां कनककाञ्चीत्यादि कामनिवासिनी।"

(बृहन्नीलतन्त्र ५म पटल)।

काञ्चीपुर नगर दो भागमें विभक्त है—विष्णुकाञ्ची और शिवकाञ्ची। शिवकाञ्चीमें शिवमन्दिर और विष्णुकाञ्चीमें विष्णु मन्दिर अवस्थित है। इस

* आर्कट जिलेके वासी पुराविदोंके मतसे खृष्टीय ११श या १२श शताब्दके मध्य कुलोत्तुङ्ग चोलराजका राजत्वकाल रहा। किन्तु रविवासरके प्रसिद्ध रुद्रोत्तरलोहारम नामक पुस्तक देखते खृष्टीय ८म शताब्दको वह यहां राज्य करते थे।

गिरा नामक किसी राक्षसके साथ इनका बन्धुत्व रहा। कुबेरने उसका साथ छोड़नेको कहा। किन्तु यह बन्धुत्वके अनुरोधसे उसका साथ छोड़ न सके। इसीसे कुबेरके अभिशाप वश इन्हें पिशाच योनिमें उत्पन्न हो काणभूति नामसे विन्ध्याटवी पर कुछ दिन रहना पड़ा। फिर दीर्घजङ्घ नामक अपने भ्राताकी चेष्टा पर पुष्पदन्तके मुखसे इन्होंने महादेव कथित बृहत्-कथा सुनी और माल्यवान्‌के निकट उसे प्रकाश करने पर पिशाचयोनिसे मुक्ति मिली। (कथासरित्-सागर)

काणा (सं॰ स्त्री॰) १ काकोली, एक जड़ी बूटी। २ काकिनी, घुंघची। ३ पिप्पली, पीपल।

काणाद (सं॰ त्रि॰) कणादस्य इदम्, कणाद-अण्। १ कणादप्रणीत (शास्त्र)। इसे वैशेषिक या औलूक्य कहते हैं। कणाद देखो।

२ कणाद-सम्बन्धीय।

काणादामोदर—बङ्गाल प्रान्तके हुगली जिलेकी एक नदी। पहले यह दामोदर नदीकी एक शाखा थी। किन्तु आजकल इसने दामोदरको छोड़ दिया है। इसीका निम्नांश काणसोना कहलाता है।

काणानदी—बङ्गालके हुगली जिलेकी एक नदी। पहले यह दामोदरका प्रधान भाग थी। किन्तु अब क्षुद्रस्रोत व्यतीत और कुछ भी नहीं। वर्धमानके दक्षिण सलीमाबादके पास वर्तमान दामोदरसे यह पृथक् हुई, फिर दक्षिणाभिमुख जा घिया नदीसे मिली और कुन्ती नदीके नामसे नईसरायके निकट भागीरथीमें गिरी है। इसी नदीमें दामोदरका जल आ पहुंचता है।

काणुक (सं॰ त्रि॰) कण दीप्तौ उकञ्। १ कान्त, कमनीय, चाहने लायक। २ आक्रान्त, दबाया हुआ। ३ पूर्ण, भरपूर। काणूक देखो।

काणूक (सं॰ पु॰) कणति शब्दायते, कण उकञ्। कणिस्यापूकोवकौ। उण् ४।१८।

१ वायस, कौआ। २ कुक्कुट, मुरगा। ३ हंसभेद। ४ करट, एक पक्षी।

काणेय (सं॰ पु॰) काणायाः अपत्यं पुमान्, काणा ढक्। १ एक चक्षुहीनाका पुत्र कानी औरतका लड़का। २ काकशावक, कौवेका बच्चा। (त्रि॰) ३ काण, काना।

काणेयविध (सं॰ क्ली॰) काणेयानां विषयो देशः, काणेय-विधल्। भौरिक्याद्यैषुकार्यादिभ्यो विधल्भक्तलौ। पा ४।२।५४।

काणेयोंका विषय या देश।

काणेर (सं॰ पु॰) काणायाः अपत्यं पुमान्, काणा ढ्रक्। क्षुद्राभ्यो वा। पा ४।१।१३१।

१ एकनेत्र स्त्रीका पुत्र, कानीका लड़का। २ काकशावक, कौवेका बच्चा। (त्रि॰) ३ काण, काना।

काणेली (सं॰ स्त्री॰) १ अविवाहिता कन्या, बेब्याही लड़की। २ व्यभिचारिणी, छिनाल।

काणेलीमातृ (सं॰ पु॰) काणेलीमाता यस्य, बहुव्री॰ १ अविवाहिता स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न पुत्र, बेब्याही औरतका लड़का। २ व्यभिचारिणीका पुत्र, छिनालका लड़का।

काण्टकमर्दनिक (सं॰ त्रि॰) कण्टकमर्दनेन निर्वृत्तम्, कण्टकमर्दन-ठक्। निर्वृत्तेऽक्षद्यूतादिभ्यः। पा ४।४।१९। कण्टक या शत्रु मर्दन द्वारा सम्पादित, जो कांटों या दुश्मनोंके कुचलनेसे हासिल हो।

काण्टकार (सं॰ त्रि॰) कण्टकारस्य अवयवो विकारो वा, कण्टकार-अण्। प्राणिरजतादिभ्योऽञ्। पा ४।३।१५४। कण्टकारके काठसे निर्मित, जो किसी कंटीले पेड़की लकड़ीसे बना हो।

काण्ठेविद्धि (सं॰ पु॰) कण्ठेविद्धस्य ऋषेः अपत्यं पुमान्, कण्ठेविद्ध-इञ्। कण्ठेविद्ध नामक ऋषिके पुत्र।

काण्ड (सं॰ पु॰ क्ली॰) कनि-ड दीर्घश्च। १ दण्ड, छड़। २ नाल, डाल। ३ बाण, तीर। ४ शरस्तम्ब, रम-सर। ५ अश्व, घोड़ा। ६ कई एक जातीय वस्तुका एकत्र समावेश, ढेर। ७ परिच्छेद, बाब। ८ अवसर, मौका। ९ प्रस्ताव। १० जल, पानी। ११ तृणादिका गुच्छ, घासका गुच्छा। १२ स्कन्धकाण्ड, पेड़का तना। १३ निर्जनस्थान, सूनी जगह। १४ श्लाघा, आपलूमी। १५ व्यापार, काम। १६ पर्व। १७ दम्भ, शेखी। १८ अट्टोठ वृक्ष, एक पेड़। १९ एक सन्धिके निकटसे अन्य सन्धि पर्यन्त दीर्घ अस्थि, लम्बी हड्डी। २० विभाग, महकमा। २१ गुप्तस्थान, पोशीदा जगह।

काण्डक (सं॰ पु॰) मासुककर्कटी, एक ककड़ी।-

काण्डकटुक (सं० पु०) काण्डे लतायां कटुकः, ७-तत्। कारवेल्लक, करेला। कारवेल्ल देखो।

काण्डकण्ट (सं० पु०) १ अपामार्ग क्षुप, लटजीरेका पेड़। २ श्वेतापामार्ग, सफेद लटजीरा।

काण्डकण्टक, काण्डकण्ट देखो।

काण्डकाण्डक, काण्डकाण्ड देखो।

काण्डका (सं० स्त्री०) १ करालत्रिपुटा, किसी किस्मका घास। २ वालुकीककंटी, एक ककड़ी। ३ अलाबु, लौकी।

काण्डकाण्डक (सं० पु०) काण्डस्य शरवृक्षस्य, काण्डमिव काण्डं यस्य, काण्डकाण्ड-कप्। १ काश-तृण। २ बदरी वृक्ष, बेरका पेड़।

काण्डकार (सं० क्ली०) काण्डं स्कन्धं किरति दीर्घतया उत्क्षिपति, काण्ड-कृ-अण्। १ गुवाक, सुपारी। (पु०) काण्डं वाणं करोति। २ वाणनिर्माता, तीर बनानेवाला।

काण्डकीर, काण्डकार देखो।

काण्डकीलक (सं० पु०) काण्डे स्कन्धे कीलमिव यस्य, काण्डकील-कप्। लोध्रद्रुम, लोधका पेड़।

काण्डकुष्ठ (सं० पु०) एक ऋषि।

काण्डखेट (सं० त्रि०) अधम, खराब।

काण्डगुड़, काण्डगुण्ड देखो।

काण्डगुण्ड (सं० पु०) काण्डेन गुच्छेन गुण्डयति वेष्टयति भूमिम्, काण्डगुड़ि-अण्। १ गुण्डतृण, एक पेड़। २ त्रिधारातृण, एक घास।

काण्डगोचर (सं० पु०) काण्डस्य वाणस्य गोचर इव गोचरो यस्य, मध्यपदलोपी कर्मधा०। नाराच नामक एक लौहमय अस्त्र, लोहेका तीर।

काण्डग्रह (सं० पु०) काण्डस्य विषयस्य प्रकरणस्य वा ग्रहः ज्ञानम्। काण्डज्ञान, उपस्थित प्रकरण वा विषयमात्रके अर्थका बोध।

काण्डग्रहरहित (सं० त्रि०) काण्डग्रहेण रहितः हीनः, ३-तत्। काण्डज्ञानशून्य, जो कोई भी बात समझता न हो।

काण्डचारी (सं० पु०) काण्डे तरुशाखायां चरति, काण्ड-चर-णिनि। वृक्षकी शाखापर विचरण करने-वाला पक्षी, जो चिड़िया पेड़की डाल पर घूमती हो।

काण्डचित्रा (सं० स्त्री०) सर्पजातिभेद, किसी किस्मका सांप।

काण्डज्ञान (सं० क्ली०) काण्डस्य प्रकरणस्य विषयस्य वा ज्ञानम्, ६-तत्। १ विषयज्ञान, बातकी समझ। २ प्रकरणबोध, सिलसिलेका इल्म। ३ साधारण ज्ञान, मामूली समझ।

काण्डणी (सं० स्त्री०) काण्डेन स्कन्धेन नीयतेऽसौ, काण्ड नी क्विप् ङीप् णत्वम्। सूक्ष्मपर्णी लता, एक बेल।

काण्डतिक्त (सं० पु०) काण्डे स्कन्धे तिक्तः, ७-तत्। किराततिक्त, चिरायता।

काण्डतिक्तक (सं० पु०) काण्डतिक्त स्वार्थे कन्। चिरायता।

काण्डधार (सं० पु०) काण्डं धारयति अत्र, काण्ड-धृ-णिच्-अच्। १ देशविशेष, एक मुल्क। (त्रि०) स अभिजनोऽस्य, काण्डधार-अञ्।

सिन्धुतक्षशिलादिभ्यो ऽणञौ। पा ४।३।९३।

२ काण्डधार देशवासी, काण्डधार मुल्कका रहनेवाला।

काण्डनी (सं० स्त्री०) १ रामदूती, एक बेल। २ *नागवल्लीलता, पानकी बेल।*

काण्डनील (सं० पु०) काण्डे स्कन्धे नीलः कीटवत्त्वात्। लोध्र, लोध।

काण्डपट (सं० पु०) काण्डे काष्ठादिनिर्मितस्तम्भे स्थितः पटः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। यवनिका, परदा।

काण्डपटक, काण्डपट देखो।

काण्डपतित (सं० पु०) नागराजविशेष, सांपोंके एक राजा।

काण्डपात (सं० पु०) वाणका पतन वा गमन, तीरका गिराव या उड़ान।

काण्डपुङ्खा (सं० स्त्री०) काण्डस्य वाणस्य पुङ्ख इव पुङ्खो यस्याः। शरपुङ्खा, सरफोंका।

काण्डपुष्प (सं० क्ली०) काण्डात् स्कन्धं व्याप्य पुष्पं यस्य, बहुव्री०। द्रोणपुष्प, घोना।

काण्डपृष्ठ (सं० पु०) काण्डः वाणः पृष्ठे यस्य, बहुव्री०। १ अस्त्राजीव, व्याध, शिकारी। २ वेश्यापति। (क्ली०)

आधानमें विहित दक्षिणाभेदका विकल्प कर्तव्य है, किन्तु समुच्चय नहीं। अनेक साधनकार्यमें अवध्यादि कार्यका समुच्चय करना पड़ता है। सर्वत्र गार्हपत्य तथा आहवनीय कार्यमें प्रदक्षिण कर अपसव्य एवं अपसव्य कर प्रदक्षिण करते हैं। विहारको उत्तरदिक् समुदाय कार्य किया जाता है। सुतरां ब्रह्म और यजमानका आसन विहारको दक्षिणदिक् कर्तव्य है। आसनद्वयके मध्य प्रथमतः यजमान एक आसन पर वेदिके मध्य पदका अग्रभाग संस्थापन कर बैठे, फिर ब्रह्मको बैठना चाहिये। व्यक्तिविशेषका आदेश न रहते अध्वर्युको यजुर्विहित कर्म सम्पादन करना कर्तव्य है, आदेश रहनेसे अन्य किया जाता है। हविःपात्रस्थ द्रव्यसमूह जैसे पर पर संगृहीत होता, प्रदान कालमें वैसे ही वह सकल द्रव्य पूर्व पूर्व लेना चाहिये। प्रतापनादि अग्निसाध्य संस्कार गार्हपत्य अग्निमें सम्पादन करते हैं। समुदाय कार्यमें ही हविः प्रदान गार्हपत्य वा आहवनीयमें कर्तव्य है। संस्कार-शून्य घृतमात्रको आज्य शब्दका अर्थ समझना चाहिये। घृत शब्दसे गव्यघृत लिया जाता है। द्रव्यविशेष कथित न रहनेसे सर्वत्र ही घृतद्वारा होम कर्तव्य है, किन्तु विशेष द्रव्यका विधान होनेसे उसी द्रव्य द्वारा होम करते हैं। चात्वालसे * बहिःस्थ पुरीष ग्रहण करना चाहिये। पृथक् आदेश न रहते आहवनीय यज्ञमें ही समुदाय याग कर्तव्य है। किन्तु आदेशको विभिन्नता आते आदेशानुसार याग करना पड़ता है। ऐसा आदेश न होते एक बार मात्र गृहीत द्रव्य द्वारा होम करते हैं। आदेश रहनेसे आदेशानुसार किया जाता है। ८म कण्डिकामें—सकल स्थल पर व्रीहि वा यव हविःरूप कल्पना करते हैं। उभयके विधानस्थल पर विधानानुसार कहीं पहले यव पीछे व्रीहि और कहीं पहले व्रीहि पीछे यव देना चाहिये। किन्तु आपस्तम्बके मतसे सर्वदा केवल व्रीहि ग्राह्य है। द्विविध ग्रहणका विधान रहनेसे प्रथम बार पुरोडाश चरुके मध्यदेशसे वक्रभावमें एक अङ्गुष्ठ-परिमित ग्रहण है। द्वितीय बार हविःके पूर्वभागसे ऐसे ही नियममें ग्रहण करना पड़ता है। जमदग्नि प्रभृति पर्वसमूहमें तीन बार हविः ग्रहण कर्तव्य है। उसमें प्रथम बार मध्यदेशसे, द्वितीय बार पूर्वभागसे और तृतीय बार पश्चाद्भागसे लेते हैं। जहां आज्यभाग पत्नीसंयाज, उपांशुयाज और अग्निहोत्रादि होममें चार बार ग्रहणका विधि है, वहां जमदग्नि प्रभृतिका पांच बार ग्रहण किया जाता है। दधि दुग्धका भी अवदान स्रुव द्वारा अङ्गुष्ठपर्व परिमित ग्रहण करना पड़ता है। पुरोडाशादि हविःके अवदानसे प्रथम आज्य एक बार ले अन्य हविः ग्रहण करना चाहिये। शेष बार फिर आज्य लिया जाता है। स्विष्टिकृत् होममें हविर्ग्रहणके प्रधान अवदानकी अपेक्षा एक बार घटा देते हैं। उपस्तारका कार्य एक बार करते हैं। उपरि देशमें अभिघारण दो बार कर्तव्य है। अवदेय और अवदान हविःका प्रत्यभिघारण करना पड़ता है। एक कपाल पुरोडाश सर्वस्थानमें आहुति देना चाहिये। "अग्नये अनुब्रूहि" की भांति वाक्यसे चतुर्थी विभक्त्यन्त देवतापद द्वारा अनुवचन करना पड़ता है। आश्रावणके पीछे जहां मैत्रावरुणका अनुसन्धान करते, वहां भी चतुर्थी विभक्त्यन्त देवतापद रखते हैं। किन्तु आश्रावणके पीछे जहां मैत्रावरुणका अनुसन्धान नहीं करना पड़ता, वहां द्वितीयान्त देवता-पद प्रयोग करना चाहिये। प्रैषसम्बन्धी अनुवचनस्थलमें द्रव्यके उत्तर षष्ठी होती है। किन्तु दो प्रैषोंका सम्बन्ध रहनेसे षष्ठी नहीं लगती। जहां ऐसे प्रयोगका विधान रहता कि नाम ग्रहणपूर्वक इन्हें यजन करो, वहां इन्हें पदके परिवर्तमें उन्हीं उन्हीं नामोंका प्रयोग करना चाहिये। वषट्कारके साथ आहुतिप्रदानस्थल पर वेदीके दक्षिण भागमें उत्तर-पूर्व वा ईशान मुख अवस्थित हो वषट्कारके पीछे वा वषट्कारके साथ आहुति देते हैं। इन सकल स्थलोंपर घृतमिश्रित हविः देना पड़ता है। उसका नियम है—प्रथम घृताहुति, मध्यमें हविःकी आहुति और पीछे फिर घृतकी आहुति प्रदान करना चाहिये। अथवा घृत और हविः एकत्र ही प्रदान करना पड़ता है। १०म कण्डिकामें

* उत्तरवेदी प्रस्तुतकरणार्थ मिट्टी खोद कर बनाया हुआ गर्त।

काण्डं तरुस्कन्ध इव स्थूलं पृष्ठं यस्य। ३ स्थूलपृष्ठधनुः, मोटी पीठवाली कमान। ४ महावीर कर्णका धनु।

काण्डभग्न (सं० क्लो०) काण्डे अस्थिखण्डे भग्नम्, ७ तत्। अस्थिभङ्गविशेष, हड्डियोंका टूटाव। यह बारह प्रकारका होता है।

काण्डभङ्ग (सं० पु०) अस्थिभङ्ग, हड्डीकी टूट।

काण्डमध्या (सं० स्त्री०) काण्डवल्ली, एक बेल।

काण्डमय (सं० त्रि०) बेंतका बना हुआ।

काण्डरुहा (सं० स्त्री०) काण्डात् छिन्नस्कन्धात् रोहति, काण्ड-रुह-क-टाप्। कटुकी, कुटकी।

काण्डर्षि (सं० पु०) काण्डस्य वेदविभागस्य ऋषिः यद्वा काण्डेषु, एकजातीयक्रियादिसमवायेषु ऋषि विचारकः। किसी वेदकाण्डके अध्यापक एक मुनि। पूर्व मीमांसाशास्त्रके प्रणयनसे क्रियाकाण्डके विचारक जैमिनि, उत्तर मीमांसारूप वेदान्तशास्त्रके प्रणयनसे ज्ञानकाण्डके विचारक वेदव्यास और भक्तिशास्त्रके प्रणयनसे भक्तिकाण्डके विचारक शाण्डिल्य ऋषि 'काण्डर्षि' कहाते हैं।

काण्डलाव (सं० त्रि०) काण्डं लुनाति, काण्ड-लू-अण्। वृक्षस्कन्धका छेदनकारक, पेड़की डाल काटनेवाला।

काण्डवल्ली (सं० स्त्री०) काण्डवेल्लीलता, काटे वरेलेकी बेल। यह दो प्रकारकी होती है—त्रिधारा और चतुर्धारा। यह कटु, तिक्त उष्ण, सर, पित्तल और कफ, गुल्म, कृमि, दुष्टव्रण, प्लीहोदर, अग्निमान्द्य, शूल, वात तथा अपस्तम्भ नाशक है। त्रिधारा सर, मधु, अग्निदीपन, रुक्ष, उष्ण, मधुर और वात, कृमि, अर्श तथा कफनाशन होती है। चतुर्धारा अति उष्ण और भूतोपद्रव, शूल, आध्मान, वात, तिमिर, वातरक्त और अपस्मार नाशक है। (वैद्यकनिघण्टु)

काण्डवान् (सं० पु०) काण्डः शरः प्रहरणतया अस्त्यस्य, काण्ड-मतुप् मस्य वः। काण्डीर, तीरन्दाज।

काण्डवारिणी (सं० स्त्री०) काण्डान् संग्रामपतितान् बाणान् वारयति रक्षत्यादिव इति शेषः, काण्ड-वृ-णिच्-णिनि-ङीप्। दुर्गा।

"[illegible]।

काण्डवारिणी [illegible]।" (देवीपुराण ४५ अ०)

काण्डवीणा (सं० स्त्री०) काण्ड इव स्थूला वीणा, मध्यपदलोपी कर्मधा०। चंडालवीणा, बेंतोंका बना एक बाजा।

काण्डशाखा (सं० स्त्री०) १ मदिवल्ली, एक बेल। २ सोमवल्ली, एक लता।

काण्डसन्धि (सं० पु०) काण्डस्य स्कन्धस्य सन्धिः मिलनस्थानम्, ६-तत्। ग्रन्थि, गांठ।

काण्डस्पृष्ट (सं० त्रि०) स्पृष्टं गृहीतं काण्डं येन, निष्ठान्तत्वात् परनिपातः। शस्त्राजीव, हथियारके सहारे अपना काम चलानेवाला।

काण्डहिता (सं० स्त्री०) लोध्रवृक्ष, लोधका पेड़।

काण्डहीन (सं० क्लो०) काण्डेन स्कन्धेन हीनम्, ३ तत्। १ भद्रमुस्ता, एक प्रकारका मोथा। (पु०) २ लोध्र, लोध।

काण्डा (सं० स्त्री०) मुषली, मूसर।

काण्डानुक्रम (सं० पु०) काण्डस्य अनुक्रमः। तैत्तिरीय संहिताके काण्डसमूहका सूचीपत्र।

काण्डानुक्रमणिका (सं० स्त्री०) काण्डस्य अनुक्रमणिका। तैत्तिरीय संहिताका सूचीपत्र।

काण्डानुक्रमणी (सं० स्त्री०) काण्डस्य अनुक्रमणी अनुक्रमणम्। तैत्तिरीय संहिताका सूचीपत्र।

काण्डारोपण (सं० क्लो०) एक माङ्गल्य क्रिया। देवमूर्तिके चारो ओर चार काण्ड (तीर) गाड़ कर लगानेसे यह क्रिया सम्पन्न होती है।

काण्डाल, काण्डोल देखो।

काण्डिक (सं० पु०) काण्डिका देखो।

काण्डिका (सं० स्त्री०) काण्डः गुच्छः बाहुल्येन अस्त्यस्य, काण्ड-ठन्-टाप्। १ लङ्का नामक धान्यविशेष, एक अनाज। २ अलाबु, लौकी। ३ अश्वगोलता, एक बेल।

काण्डिनी (सं० स्त्री०) हरित मुंडिलता, एक बेल।

काण्डी (सं० त्रि०) काण्डः गुच्छः प्राशस्त्येन अस्त्यस्य, काण्ड इनि। प्रशस्त गुच्छयुक्त।

काण्डो—सिंहलकी मध्यवर्ती काण्डो नामक प्रदेशकाका प्रधान नगर। यह अक्षा० ७° १७′ उ० और देशा० ८०°४८′ पू० पर अवस्थित है।

—'आग्नेयो अष्टकपालो भवति' इत्यादि स्थल पर लट् विभक्ति विधिलिङ्ग बोधक समझी जायेगी। कर्तव्य कर्मके उपकरणका द्रव्यसमूह प्रथम कल्पना कर कर्मदेशस्थानमें स्थापित करना चाहिये। सर्वत्र ही उत्तर दिक्‌को कोण और पूर्व दिक्‌को ग्रीवाविन्यासयुक्त चर्मका आस्तरण प्रदान करते हैं। हविःसमूहके मध्य जो सकल द्रव्य यथास् पठित है, वह देश कालके अनुसार यथास् ही प्रदान करना पड़ता है। ग्रहणादि कार्य पूर्वपठित रहनेसे पूर्व और परपठित रहनेसे पर ही ग्रहण करते हैं। ऐसे ही अभियवणादि कार्य पूर्वपठित रहनेसे दक्षिण दिक् और परपठित रहनेसे उत्तर दिक् स्थापन करना चाहिये। स्थाली, स्रुव और घृत दक्षिण हस्तसे गृहीत होने पर वाम हस्त द्वारा वेदका उपग्रहण किया जाता है। किन्तु उपभृत् प्रभृति द्वितीय द्रव्यका ग्रहणविधि रहनेसे वेदका उपग्रहण नहीं करते। घृत व्यतीत अन्य द्रव्य द्वारा याग करते स्फ्रेणका उपग्रहण करना चाहिये। वेद बल्वादि द्वितीय द्रव्य न रहते कुश द्वारा उपग्रहण करना पड़ता है। स्रुक् ग्रहण करते समय स्रुक् और जुह्व उभय हस्त द्वारा ले उपभृत्‌के उपरि देशमें स्थापन करते हैं। इसके स्थापनकालमें परस्पर स्पर्शसे शब्द निकलना उचित नहीं। विश्वजित् न्यायके अनुसार सकल स्थल पर फलस्वरूप स्वर्ग कल्पित होता है। एक ही कार्यमें वेदविहित वैकल्पिक अङ्गसमूहके मध्य अधिकाङ्ग अनुष्ठित होनेसे फल भी अधिक मिलता है। इसी प्रकार षड् दक्षिणापक्षकी अपेक्षा द्वादश और चतुर्विंशति दक्षिणापक्षका फल अधिक है। यजमानसम्बन्धी दान, अन्वारम्भ, वरण और व्रतप्रमाण ग्रहण करते हैं। अर्थात् दानविधि, सत्यवाक्य तथा अधःशयनादि व्रत यजमानका कर्तव्य है और अग्नि, स्वर, वेदि गृह प्रभृतिका परिमाण यजमानके इच्छानुसार ही स्थिर करना पड़ता है। प्रोक्षित यूप, छिन्न कुश, अवहत व्रीहि, पिष्ट तण्डुल, दोहनजात दुग्ध और दग्ध इष्टकादिसे विहित सकल कार्य सम्पादन करना चाहिये। रौद्रमन्त्र, रक्षोदैवतमन्त्र, असुरदैवतमन्त्र और पैत्रमन्त्र उच्चारण कर उक्त दैवतासम्बन्धीय कार्य सम्पादनपूर्वक आत्मस्पर्श तथा हस्त द्वारा जलस्पर्श करते हैं।

उक्त समस्त कार्यका उपयोगी विधान प्रथमाध्यायमें कथित है।

द्वितीय अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उसकी १म कण्डिकामें यह वृत्तान्त वर्णित है,—पौर्णमास यज्ञकाल, उसमें अग्निका अन्वाधान, अध्वर्यु और यजमानका अधिकार, उसके विधानकी प्रणाली, दीक्षाके ग्रहणमें दीक्षित धर्मसमुदाय, दिवामैथुन और मांसपरिवर्जन, शिखा पर्यन्त केशपरित्याग, व्रतकालानुसार सपत्नीक यजमानको मद्य मांस लवण वर्जित् हविष्यान्न हविके साथ भोजनका विधि, सत्य वाक्यप्रयोग, रात्रिकालको पूर्वविहित विहारस्थानमें अग्निहोत्र होम, सायंकालको भोजनकी इच्छा होनेसे होमके पीछे अधिक रात्रि न चढ़ते ही नीवार प्रभृति वन्य ओषधिके अन्न और वन्य वृक्षके फलका भोजन, आहवनीय गृह और गार्हपत्य गृहमें शय्या व्यतीत अधःशयनविधि, ब्रह्मचर्य आचरणविधान, (यह नियम सपत्नीक यजमानका ही समझना पड़ेगा) पौर्णमासको अन्वाधानादि कार्य समापन होनेसे दो दिन या एक दिनमें कार्यभेदका विधि (यह प्रातःकाल ही सम्पादन करना पड़ता है।)। २य कण्डिकामें अग्नि होत्रके पीछे ब्रह्मवरण विधि और उसका प्रकार है। ३य कण्डिकामें ब्रह्मसदनसे आत्मस्पर्श पर्यन्त कर्मसमूहके अनुष्ठान, प्रकार और मन्त्रादिका कीर्तन है।

३य अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उसमें होत्रसदनसे पौर्णमास समाप्ति पर्यन्त कर्तव्य कार्यसमूहका अनुष्ठानप्रकार और मन्त्रादि वर्णित है।

४र्थ अध्यायमें १५ कण्डिका हैं। उसकी १म, २य और ३य कण्डिकामें दर्शयोगके पूर्वपिण्ड तथा पितृयज्ञके अनुष्ठानका प्रकार और मन्त्रादिका कथन है। द्रव्य देवतायुक्त अत्यागमत्ययान्त कर्म शब्द और वेदबोधित याग शब्दका अर्थ है। समुदाय यज्ञ और अग्नीषोमीय पशुमें दर्शपौर्णमास यागधर्मका अतिदेश है। वैश्वदेव, वरुणप्रघास, साकमेध और शुनासीर नामक चतुः पर्वमय चातुर्मास्यके प्रथम वैश्वदेव-

काण्डीका प्राचीन नाम श्रीवर्धनपुर है। पूर्वकालको सिंहलके राजा यहीं राजत्व करते थे। १८१५ ई० को मयदा-महा-नुवेरा नामक स्थानमें राज विक्रमराज सिंहके साथ अंगरेजोंका एक युद्ध हुआ। उस युद्धमें सिंहलके राजा पराजित और बन्दी हुये। फिर अंगरेजोंने काण्डी अधिकार किया था। तबसे काण्डी अंगरेजोंके अधिकारमें है।

यहां काण्ड्य जातिका वास है। यह पहाड़ पर रहते हैं। सब बलवान्, स्थूलकाय और साहसी हैं। अधिकांश प्राय बौद्ध धर्मावलम्बी हैं। फिर भी अंगरेजोंके आने पीछे किसी किसीने ईसाई धर्म अवलम्बन किया है। पहले इनमें बहुविवाह यथेष्ट प्रचलित था। ५।७ भ्राता एक स्त्रीका पाणिग्रहण कर सकते थे। सन्तान उक्त भ्राताओंमें ज्येष्ठको ही पिता सम्बोधन करते थे। पुरुष अपनी मनोमत बहु स्त्री ग्रहण कर सकता था। ऐसा प्रायः पुरुषके प्रति स्त्रीका अनुराग होनेसे होता था। स्त्री यदि पतिको ले अपने पितृगृहमें रहे, तो अपर भ्राताको भांति पितृसम्पत्ति पर अधिकार मिले। किन्तु पतिको अपने पूर्व विषयका आश्रय छोड़ आना पड़ता है। फिर यदि स्त्री जाकर स्वामीके गृहमें रहे, तो उसका पितृसम्पत्ति पर कोई अधिकार नहीं; किन्तु पतिपर उसका कर्तृत्व चलता है। १८५९ ई० से अंगरेज गवरनमेण्ट काण्ड्य जातिकी कुप्रथा उठानेको चेष्टित हुयी है। आज भी स्त्रीपुरुष मत होनेसे परस्पर विवाह बन्धन छेदन कर सकते हैं। किन्तु यदि विवाहभङ्गके ८ मास मध्य स्त्रीके पुत्रादि हो, तो पूर्व पति उस पुत्रको लेता और उसका भरण पोषण करता है। सिंहल देखो।

काण्डीर (सं०पु०) काण्डः स्तम्बः अस्त्यस्य, कांड-ईरन्।
काण्डाण्डादीरन्नीरचौ। पा ५।२।१११।
१ अपामार्ग, लटजीरा। २ कारवल्ली लता, करेलेकी बेल। इसका संस्कृत पर्याय—कांडकटुक नासासंवेदन, पटु, अग्रकांड, स्थूलवल्ली, कारवल्ली और सुकांडिका है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु, तिक्त, उष्ण, सारक और दुष्टव्रण, लूताविष, गुल्म, उदर, प्लीहा, शूल तथा मन्दाग्नि विनाशक होता है।

कांडीरा (सं०स्त्री०) कांडीर-टाप्। १ मञ्जिष्ठा, मंजीठ। २ कारवेल्लक, करेला। ३ अमृतस्रवा, एक बेल।

कांडीरी (सं० स्त्री०) कांडीर-ङीप्। काण्डीरा देखो।

कांडेक्षु (सं० पु०) कांडे इक्षुरिव। १ श्वेत इक्षु, सफेद ऊख। भावप्रकाशके मतसे यह वातप्रकोपन होता है। २ कृष्ण इक्षु, काली ऊख। ३ काशतृणभेद, एक लम्बी घास। ४ कोकिलाक्षवृक्ष, तालमखानेका पेड़।

कांडेरी (सं० स्त्री०) कांडं बाणाकारं पुष्पं ईर्त्ते प्राप्नोति, कांड-ईर-अण्-ङीप्। नागदन्ती वृक्ष। नागदन्ती देखो।

कांडेरुहा (सं० स्त्री०) कांडे रोहति, कांडे-रुह-क-टाप्। कटकी, कुटकी।

कांडोल (सं० पु०) कंडोल स्वार्थे अण्। १ बांसका टोकरा। २ चट्ट, चट।

काण्व (सं० पु०) कण्वस्य अपत्यं पुमान्, कण्व-अण्। १ कण्व ऋषिके पुत्र। २ कण्ववंशीयके छात्र। ३ यजुर्वेदकी एक शाखा। ४ कण्वदृष्ट सामवेद। (त्रि०) ५ कण्वसम्बन्धीय।

काण्वक (सं० क्लो०) कण्वेन दृष्टं साम, कण्व-वुञ्। कण्वदृष्ट सामविशेष।

काण्वशाखी (सं० पु०) वेदकी कण्वशाखाका अनुयायी।

काण्वायन (सं० पु०) कण्व-अण्-फक्। १ कण्ववंशीय वेदोक्त प्राचीन ऋषि। २ श्रौत और गृह्यसूत्रके रचयिता एक ऋषि। ३ कण्ववंशीय राजा। किसी समय यह वंश भारतवर्षमें राजत्व रखता था। ब्रह्माण्ड, विष्णु, मत्स्य तथा भागवत पुराणके मतसे—कण्ववंशीय महामति वसुदेवने शुङ्गवंशीय शेष नृपति देवभूमिको मार राज्य पालन किया।

ब्रह्माण्डपुराणमें कहा है,—

"अमात्यो वसुदेवस्तु बाल्याद्व्यसनिनं नृपम्।
देवभूमिं ततोऽभ्यस्य शुङ्गेषु भविता नृपः॥
भविष्यति समा राजा नव काण्वायनस्तु सः।
भूमिमित्रः सुतस्तस्य चतुर्द्दश भविष्यति॥
भविता द्वादश समा तस्मान्नारायणो नृपः।
सुशर्म्मा तत् सुतश्चापि भविष्यति समा दश॥

पर्वमें दर्शपौर्ण धर्मका कथन है। अपर तीन पर्वमें विविध बहिः प्रस्तारादि औपदेशिक धर्मविधान है। चातुर्मास्य वरुणप्रघासादि पर्वत्रयमें वैश्वदेव पर्व-धर्मका विधान है। किन्तु साकमेधादिमें ऐसा विधान नहीं। लौकिक स्थानकी अपेक्षा वारुण प्राघासिक स्थानमें धर्म हुआ करता है। ऐसा सन्देह उपस्थित होनेसे कि कहां करेंगे, लौकिकाग्नि ही लेना चाहिये। दर्श और पौर्णमासमें आग्नेयादि छह प्रधान याग हैं। एक देवतायुक्त वैकृत कर्मसमुदायमें आग्नेय धर्मका विधान है। अनेक देवतायुक्त कर्ममें अग्निषोमीय धर्मविधि है। द्रव्य सामान्यमें धर्मप्रवृत्ति है। देवता गुणके पर्यायत्व प्रभृतिकी साम्य अवस्थामें धर्मप्रवृत्ति है। द्रव्य देवता उभयका साम्य विरोध रहते द्रव्यकी समानतामें धर्म होता है, किन्तु देवताके सामान्यमें नहीं। गोमें दुग्धका धर्म होता है, किन्तु दधिका नहीं। इसी लिये चातुर्मास्य प्रभृतिमें परि-वासित शाखा द्वारा पवित्र बन्धनके पीछे वत्स दूरीभूत और दोहन चतुष्टय प्राप्त होता है। पयमें दधिका धर्म नहीं, दुग्धका धर्म होता है। द्रव्य समूहमें स्थाना-पत्तिका धर्म रहता है। प्राकृत स्थानयुक्त द्रव्यका जो स्थानीय धर्मके साथ विरोध पड़ता, स्थानप्राप्त द्रव्यमें वह विरोध लग नहीं सकता। जिस विकृतिसे प्राकृत द्रव्य देवतास्थानमें अन्य द्रव्य देवतादिविहित होता, उस स्थानमें प्राकृत मन्त्रका ऊह नहीं आता। विकृतिमें वचनविशेषसे प्राकृत धर्म नहीं होता। अर्थलोप और प्रयोजनलोपसे प्राकृत धर्म नहीं आते। विकृतिमें विरोध हेतु प्राकृत धर्मसमूहकी प्रवृत्ति नहीं पड़ती। प्रकृतिसे जो पदार्थरूपमें विहित है, पदार्थकी अप्रवृत्तिसे विकृतिसे उसकी अप्रवृत्ति होती है। जहां पदार्थ-जात द्रव्य कहीं कर्मान्तरसाधनके लिये विहित हुआ है, उसमें दूसरेका अभाव रहते भी पदार्थजात द्रव्यका सद्भाव होता है। समुदाय द्रव्यका सद्यः समयविधि है। ४र्थ कण्डिकामें प्रजा, पशु, अन्न और यशः कामादिका काम्येष्ट्यायण यज्ञ, मंत्र एवं पौर्णमासके देव तथा द्रव्यभेद वर्णनपूर्वक उनका विधान है। ५म कण्डिकामें उपांशु मन्त्रका अर्थकथन और उसमें द्रव्यदेवतादिका वर्णन है। ६ष्ठ कण्डिकामें व्रीहि और यवका पाककालमें आग्रयण नामक कर्म कर्तव्य है। परन्तु वसन्त प्रभृति काल, द्रव्यदेवतादिका मंत्रविधान और उसका प्रकार है। दर्शपौर्णमास यज्ञके पीछे आग्र-यणादिका यथाप्रवृत्ति कार्य्यविधि है, किन्तु इस यज्ञके पूर्व विहित नहीं। दर्शपौर्णमासका उत्सर्ग होनेपर अग्नि-होत्रमें आहुतिका विधि एवं आग्रयण विधानप्रकार है। दीक्षितका विशेष विधि है। संवत्सर एवं उपसत्कादि यज्ञमें आग्रयणविशेष कहा है। संवत्सर और सुती प्रभृतिमें द्रव्यविशेषका विधान है। श्यामाक आग्रयण-का विधानप्रकार है। ७म कण्डिकामें अग्नि, आध्येय कर्म, काल, देवता और मंत्रका विधान प्रकारादि कथित है। ८म, ९म और १०म कण्डिकामें आधानके अङ्ग कर्मसमूहका विधान एवं मंत्रादिकथन है। ११श कण्डिकामें पुनर्वार आधानसे अमनाश प्रभृति निमित्त-कथन है। उसका विधानप्रकार है। १२श कण्डिकामें केवलमात्र अग्निहोत्राङ्ग वात्सप्रका उपस्थानप्रकार है। १३श, १४श और १५श कण्डिकामें अग्निहोत्रके काल, द्रव्य, देवता, विधान तथा मंत्रादि कामनाभेदानुसार अवस्था भेदयुक्त अग्निमें होमकी कर्तव्यता है। कामनाभेदके होममें द्रव्यभेदका विधि है। ऐसे ऐसे द्रव्यसमूहद्वारा प्रत्यह संवत्सर होम करने पर तदनुसार कामनासिद्धि होनेकी बात है। अग्निहोत्र होम एवं सर्वविध यज्ञमें गार्हपत्य आगारके दक्षिण द्वारसे प्रवेश-का विधि है। सर्वदा यजमानको स्वयं ही होम करना उचित है, कार्य्यवशतः यजमान अशक्त होते यजमान-नियुक्त अध्वर्यु भी कर सकता है। किन्तु दर्श और पौर्णमासीमें सर्वदा स्वयं होम करना चाहिये। प्रवासमें और सूतकादि अशौचमें विशेष नियम है।

५म अध्यायमें १३ कण्डिका हैं। उनके मध्य १म और २य कण्डिकामें चातुर्मास्य* यज्ञान्तर्गत वैश्वदेव यागका पर्वकाल एवं उसके द्रव्य और देवताप्रयोगा-दिका वर्णन है। ३य, ४र्थ और ५म कण्डिकामें वरुण-प्रघासका रूप और उसका पर्वकाल, द्रव्य, देवता एवं

* वैश्वदेव, शुनासीर, वरुणप्रघास और साकमेध यागचतुष्टय-त्मक चातुर्मास्य याग है। इस यागचतुष्टयको कभी कभी पर्व कहते हैं।

चत्वारः शुङ्गभृत्यास्ते नृपाः काण्वायना द्विजाः।
भाव्याः प्रणतसामन्ताश्चत्वारिंशच्च पञ्च च॥
तेषां पर्य्यायकाले तु भूमिरान्ध्रान् भविष्यति।
काण्वायनमथोद्धृत्य सुशर्माणं प्रसह्य तम्॥"

मत्स्यपुराणमें भी लिखा है,—

"अमात्यो वसुदेवस्तु प्रसह्य ह्यवनीं नृपः॥ ११
देवभूमिमथोत्साद्य शौङ्गस्तु भविता नृपः।
भविष्यति समा राजा नव काण्वायनो नृपः॥ १२
भूमिमित्रः सुतस्तस्य चतुर्दश भविष्यति।
नारायणः सुतस्तस्य भविता द्वादशैव तु॥ १३
सुशर्मा तत्सुतश्चापि भविष्यति दशैव तु।
इत्येते शुङ्गभृत्यास्तु स्मृताः काण्वायना नृपाः॥ १४
चत्वारिंशत्‌ पञ्च चैव भोक्ष्यन्तीमां वसुन्धराम्।
एते प्रणत सामन्ता भविष्या धार्मिकाश्च ये।
तेषां पर्य्यायकाले तु भूमिरान्ध्रान् गमिष्यति॥" १५

(मत्स्यपुराण २७२ अ०)

उक्त ब्रह्माण्ड और मत्स्यपुराणके वचनानुसार समझते कि वसुदेव प्रथम शुङ्गराज देवभूमि * के अमात्य थे। पीछे उन्होंने अपने प्रभुको मार राज्य लिया। उनके वंशीय राजा 'शुङ्गभृत्य' नामसे भी प्रसिद्ध हुये। ब्रह्माण्ड, मत्स्य और विष्णुपुराणके मतसे काण्वायन राजाओंका राजत्वकाल सब मिलाकर ४५ वर्ष था। उसमें वसुदेवने ८, वसुदेवके पुत्र भूमिमित्र वा भूतिमित्रने १४, भूमिमित्रके पुत्र नारायणने १२ और नारायणके पुत्र सुशर्माने १० वर्ष मात्र राज्यशासन किया। किन्तु श्रीमद्भागवतका देखते काण्ववंशीय राजाओंका राज्य ३४५ वर्ष चला था। यथा,—

"'शुङ्ग' हत्वा देवभूतिं काण्वोऽमात्यस्तु कामिनम्।
स्वयं करिष्यते राज्यं वसुदेवो महामतिः॥ १९
तस्य पुत्रस्तु भूमित्रस्तस्य नारायणः सुतः।
काण्वायना इमे भूमिं चत्वारिंश च पञ्च च॥
शतानि त्रीणि भोक्ष्यन्ति वर्षाणां च कलौ युगे॥" २०

(भागवत, १२ स्क० १ अ०)

पाश्चात्य पुराविदोंने काण्वायन राजाओंका शासनकाल इस प्रकार स्थिर किया है,—

वसुदेव	....	खृष्टपूर्वाब्द	७१ से ६६
भूमिमित्र	... ...	„	६६ से ५२
नारायण	... ...	„	५२ से ४०
सुशर्मा	... ...	„	४० से ३१

(R. Sewells Dynaties of Southern India, p.7)

सुशर्माको मार उनके किसी अन्ध्रजातीय भृत्यने राज्य लिया था।†

काण्वायनीपुत्र (सं॰ पु॰) कण्वस्य अपत्यं पुमान् काण्व्यः स्त्रियां ङीप् यलोपः काण्वी; काण्व्याः पुत्रः ६-तत्। कण्ववंशीय एक ऋषि।

काण्वीय (सं॰ त्रि॰) काण्वस्य इदम्, काण्व-छः। कण्ववंशीयोंसे सम्बन्ध रखनेवाला।

काण्व्य (सं॰ पु॰) कण्वस्य अपत्यं पुमान्, कण्व-यञ्। १ कण्वपुत्र। २ काण्ववंशीय। ३ कण्व सम्बन्धीय।

काण्व्यायन (सं॰ पु॰) काण्व्य-फक्।

पाणिनीय। ४।१।१०१।

कण्ववंशीय।

कात् (सं॰ अव्य॰) कुत्सितं अतति अनेन, कु-अत क्विप् कोः का-देशः। तिरस्कार, फटकार।

"कानृकत्यायन गुरुः कर्षति कामुकः।" (भारत ८।७०।८)

कात (हिं॰ पु॰) १ पक्षाविशेष, एक कैंची। इससे भेड़ोंके बाल कतरे जाते हैं। २ सुरगीका काँटा।

कातना (हिं॰ क्रि॰) कातीसे सूत प्रस्तुत करना, रूईसे सूत बनाना। कातनेका यंत्र चर्खा कहाता है।

कातंत्र (सं॰ क्ली॰) कु-ईषत् तंत्रं यस्य, कोः कादेशः। कलाप व्याकरण। शर्ववर्मा इसके प्रणेता थे। वृहत् कथासारमें इस व्याकरणके उद्भव सम्बन्धपर लिखा है,—एक समय कार्त्तिकेयने शर्ववर्माके प्रति प्रसन्न हो दर्शन दिया। कुमारको कृपामें शर्ववर्माके मुखमें सरस्वतीका आविर्भाव हो गया। फिर कार्त्तिकेयने उसी मुखसे 'सिद्धो वर्णसमाम्नायः' सूत्र उच्चारण

* भागवत और विष्णुपुराणके मतमें 'देवभूति' नाम था।

† उस अन्ध्रभृत्यका नाम ब्रह्माण्डपुराणके मतमें 'सिन्धुक' था। किन्तु मत्स्यपुराणमें 'शिशुक', विष्णुपुराणमें 'शिप्रक' और भागवतने 'वृषल' लिखा है।

मन्त्रविधानादि है। ६ष्ठ कण्डिकामें साकमेधका रूप और उसके पर्वकाल, द्रव्य, देवता तथा मन्त्रादिका विधान है। ७म कण्डिकामें इडविषयक क्रौडिनीयमें इष्टिका कालविधान एवं तदीय द्रव्य, देवता और मन्त्रादिका कथन है। ८म एवं ९म कण्डिकामें पित्रेष्टिके काल, द्रव्य, देवता और मन्त्रादिका कथन है। १०म कण्डिकामें त्रैयम्बक होमका कालविधान और द्रव्य, देवता एवं मन्त्रादिका नियम है। ११श कण्डिकामें चातुर्मास्य यज्ञान्तर्गत पर्वविशेषात्मक शुनासीरीयके काल, द्रव्य, देवता और मन्त्रादिका कथन है। शुनकादिमें भी चातुर्मास्यका पुनर्वार आरम्भ है। चातुर्मास्य त्रिविध है—ऐष्टिक, पाशुक और सौमिक। इस त्रिविध चातुर्मास्यके द्रव्य, देवता और मन्त्रका विधानादि है। १२श एवं १३श कण्डिकामें मित्रविन्देष्टि और उसके द्रव्य, देवता तथा मंत्रका विधान है।

६ष्ठ अध्यायमें १० कण्डिका हैं। उनमें निरूढ़, पशुबन्धयाग और उसके काल, द्रव्य, देवता तथा मंत्रका विधानादि कथित है।

७म अध्यायमें ९ कण्डिका हैं। उनमें ज्योतिष्टोम यज्ञके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान है। फिर ज्योतिष्टोमके पूर्वानुष्ठेय सोमयज्ञके भी द्रव्य देवतादिका विधान है।

८म अध्यायमें ९ कण्डिका हैं। उसकी १म एवं २य कण्डिकामें आतिथ्यकर्म, उसके द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान है। ३य कण्डिकामें औपवसथ्यके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान है। ४र्थ, ५म, ६ष्ठ, ७म, ८म और ९म कण्डिकामें ऐसा ही विधानादि कथित है।

९म अध्यायमें १४ कण्डिका हैं। १म कण्डिकामें सोत्यकर्म और उसके काल, द्रव्य, देवता एवं मंत्रका विधानादि है। अपर कण्डिकाओंमें प्रातःसवनका द्रव्य, देवता और मंत्रविधानादि कथित है।

१०म अध्यायमें ९ कण्डिका हैं। उसकी समुदाय कण्डिकाओंमें प्रायः अध्याय शेष पर्यन्त माध्यन्दिन सवन और तृतीय सवनके द्रव्य, देवता और मंत्रका विधान है। अध्याय शेषमें ज्योतिष्टोम यागमें सोमोत्तर कर्तव्य अत्यग्निष्टोम, उक्थ्य, षोडश, वाजपेय, अतिरात्र, आप्तयाम और ज्योतिष्टोम यागमें सोमोत्तर कर्तव्य, सोमका ज्योतिष्टोमविधान और उसमें आध्वर्यव-विधान प्रकार है।

११श अध्यायमें १ही कण्डिका है। उसमें ज्योतिष्टोमका ब्रह्म मन्त्रविधान है।

१२श अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। उनमें द्वादशाह यज्ञका विधान है। एकादशाह प्रभृति यज्ञमें ज्योतिष्टोम धर्मका अतिदेश है। किसीके कथनानुसार उसमें अग्निष्टुत धर्मका अतिदेश वर्णित है। सत्ररूप और अहीनरूप भेदसे द्वादशाह दो प्रकारका है। इन उभय रूपोंका लिङ्गप्रदर्शन है। आद्यन्तमें अतिरात्र रहनेसे सत्र और केवल अन्तमें अतिरात्र रहनेसे अहीन होता है। सत्रयागमें यजमान सह षोड़श ऋत्विक्का कर्तृत्व रहनेसे सकलका यजमानत्व है। सुतरां सकलको फलप्राप्तिका अधिकार होनेसे इस कार्यमें दक्षिणाका अभाव है। षोड़श ऋत्विक्में यजमानत्वका अतिदेश रहनेसे सप्तदश व्यक्तिका दीक्षादि यजमान धर्मनिर्देश है। गृहपतिका अन्वारम्भविधि है। यज्ञसम्पादनके लिये पात्रग्रहणादि कार्यमें एकमात्र जनका ही कर्तृत्व है। तत्कर्तृक सम्पादित होनेपर सकलका सम्पादित होता है। गार्हपत्य और आहवनीय अङ्गारप्रासन है। अध्याय-समाप्ति पर्यन्त तदीय द्रव्य, देवता, मंत्र, दीक्षा और कालका विधानादि निरूपित हुआ है।

१३श अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उसकी प्रथम कण्डिकामें गवामयन यज्ञका प्रकार और उसमें द्वादशाह यज्ञधर्मका अतिदेश है। २य, ३य और ४र्थ कण्डिकामें द्वादशाह धर्मके द्रव्य, देवता और मंत्रका विधानादि वर्णित है।

१४श अध्यायमें ३ कण्डिका हैं। उनमें ज्योतिष्टोम संस्थाभेद, वाजपेय यज्ञके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रका विधानादि कथित है।

१५श अध्यायमें १० कण्डिका हैं। समुदाय कण्डिकामें राजसूय यज्ञ, उसमें क्षत्रिय जातिका

किया था। शर्मवर्मा भी सुनते ही उसका परवर्ती सूत्र पढ़ने लगे। कार्तिकेयने इससे सन्तुष्ट हो शर्मवर्माको उक्त व्याकरणप्रणयन करनेके लिए आदेश दिया और 'कातंत्र' तथा 'कलाप' नाम निर्देश किया। कलाप देखो। त्रिलोचनदासने 'कातंत्रपञ्जिका' नाम्नी एक टीका बनाई है।

कातर (सं॰ पु॰) कं जलं आतरति, क-आ-तृ-अच्। १ मत्स्यविशेष, एक मछली। यह मधुर,गुरु और त्रिदोषघ्न होता है। राजनिघण्टु। २ एक ऋषि। (त्रि॰) ३ व्याकुल, घबराया हुआ। ४ भीत, डरा हुआ। ५ विवश, लाचार। ६ चञ्चल, डावांडोल।

कातर (हिं॰ पु॰) १ जबड़ा। (स्त्री॰) २ कोल्हूका तख़्ता। यह कोल्हूकी कमरमें लगता और चारो ओर चला करता है। कोल्हू पेरनेवाला इसी पर बैठ कर बैल हांकता है।

कातरता (सं॰ स्त्री॰) कातरस्य भावः, कातर-तल्। १ व्याकुलता, घबराहट। २ भीरुता, डरपोकपन।

कातराचार (सं॰ पु॰) नृत्यका एक हस्तक, नाचकी एक चाल।

कातरायण (सं॰ पु॰) कातरस्य ऋषेरपत्यं पुमान्, कातर-फक्। कातर ऋषिके पुत्रादि।

कातरोक्ति (सं॰ स्त्री॰) कातरस्य उक्तिः, ६-तत्। कातर व्यक्तिका वाक्य, डरपोककी बात।

कातर्य (सं॰ क्ली॰) कातरस्य भावः, कातर ष्यञ्। कातरता, डरपोकपन।

कातल (सं॰ पु॰) कातर एव वस्य लः। १ मत्स्यविशेष, एक मछली। २ एक ऋषि।

कातलायन (सं॰ पु॰) कातलस्य ऋषेरपत्यं पुमान्, कातल-फक्। १ कातल ऋषिके पुत्रादि। २ मत्स्यविशेषका बच्चा।

काता (हिं॰ पु॰) १ चाकू, छुरा। इससे बांस काटते या छीलते हैं। २ सूत, डोरा।

काताबारी (हिं॰ स्त्री॰) जहाजकी एक कांडी। यह पसली रहती और जहाजमें ऐंड़ी धरनोंपर लगती है। इसी पर तख़्ते जड़ते हैं।

काति (सं॰ स्त्री॰) १ स्तव, तारीफ़। (त्रि॰) २ अभिलाषी, ख़ाहिशमन्द।

कातिक (हिं॰) कार्तिक देखो।

कातिकी (हिं॰ स्त्री॰) कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा, कार्तिक सुदी पूरनमासी, कतकी। कार्तिकी देखो।

कातिब (अ॰ पु॰) लिपिकार, लिखनेवाला।

कातिल (अ॰ पु॰) हन्ता, मार डालनेवाला।

काती (हिं॰ स्त्री॰) १ कैंची, कतरनी। २ चाकू, छुरी। ३ छोटी तलवार।

कातीय (सं॰ त्रि॰) कात्यायनस्य इदम्, कात्यायन-छ फको वा लुक्। १ कात्यायन-सम्बन्धीय। (पु॰) २ कात्यायनके छात्र।

कातु (सं॰ पु॰) कं जलं अतति सातत्येन गच्छति, क-अत-उन्। कूप, कुआं।

कातृण (सं॰ क्ली॰) कु कुत्सितं क्षुद्रं वा तृणं कोः कादेशः। १ रोहिषतृण, एक खुशबूदार घास।

कातोली (सं॰ स्त्री॰) कोहलसुरा, एक शराब। यव, माष आदिके पिष्टसे उत्थित सुरा 'कातोली' कहाती है।

कात्कृत (सं॰त्रि॰) अपमानित, बेइज़्ज़त किया हुआ।

कात्त्रेय (सं॰ त्रि॰) कत्त्रेरिदम्, कत्त्रि-ढकञ्। कत्त्र्यादिभ्यो ढकञ्। पा ४।२।९५।

कत्त्रि-सम्बन्धीय, तीन छोटी चीजोंसे सम्बन्ध रखनेवाला।

कात्यक (सं॰ पु॰) कात्य-प्रवुन् स्वार्थे कन्। अग्निविशेष। (निरुक्त ८।१४)

कात्य (सं॰ पु॰) कतस्य ऋषेर्गोत्रापत्यम्, कत-यञ्। कात्यायन ऋषि।

कात्यायन (सं॰ पु॰) कतस्य गोत्रापत्यम्, कत-यञ्-फक्। १ अति प्राचीन ऋषिविशेष। यजुर्वेदीय तैत्तिरीय आरण्यक (१।३।४।२२), सांख्यायन आरण्यक (८।१०), आश्वलायन श्रौतसूत्र (१२।१३।१५), रामायण एवं पाणिनिकी अष्टाध्यायी (४।१।१८)में भी इनका नाम मिलता है। यह कात्यायन गोत्र-प्रवर्तक समझ पड़ते हैं। स्कन्दपुराण नागरखण्ड, १०८।११ देखो।

२ धर्मशास्त्रकारक एक मुनि। पाठमें

अधिकार, वाजपेय यज्ञ करने पर राजसूयकी अनावश्यकता और राजसूयके द्रव्य, देवता एवं मंत्रका विधानादि वर्णित है।

१६श अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उनसे १म कण्डिकामें पञ्चचितिक स्थलविशेषस्थित अग्नि-विधानका प्रकार है। चयनरूपाङ्ग विशिष्टाग्निकी सोमाङ्गता कही है। उसमें इच्छानुसार अधिकार है। फिर भी केवलमात्र महाव्रत नामक स्तोत्रसाध्य सोमयागमें पञ्चचितिक स्थलका नियम है। अन्यत्र इच्छानुसार विकल्प है। २य, ३य और ४र्थ कण्डिकामें उखा (यज्ञादिका पात्रविशेष) निर्माण-प्रकार है। ५म कण्डिकामें अग्निचयनप्रकार एवं उसमें देवता और मंत्रादिका विधान है। ६ष्ठ कण्डिकामें पञ्च अग्निविशेषका चयनप्रकार है। ७म कण्डिकामें तत्-सम्बन्धीय प्रायश्चित्त होमविधान है। ८म काण्डिकामें पूर्वोक्त अग्निचयनका प्रकार-भेद एवं उसके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रादिका कथन है।

१७श अध्यायमें १२ कण्डिका हैं। समुदाय कण्डिकामें प्रायश्चित्तान्त कर्मके परवर्ती कर्तव्यका विधान और उसका भेद, द्रव्य, देवता तथा मंत्रादि कथित है।

१८श अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। उनमें शत-रुद्रीय होम, उसके अङ्गकर्म, द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान है। ६ष्ठ कण्डिकाके शेषभागमें अग्निचयनकारी पुरुषका नियम कथित है।

१९श अध्यायमें ७ कण्डिका हैं। उनमें सौत्रा-मणि यागका विधान है। इस यज्ञमें धनाभिलाषी ब्राह्मणका अधिकार है। सोमयज्ञकारी ब्राह्मणोंकी सोमयज्ञके पीछे इसकी कर्तव्यता है। सोमातिपूत अर्थात् मुख, नासिका, कर्ण, गुह्य प्रभृति छिद्र द्वारा पीत सोम निकालनेवाले और सोमवामी अर्थात् पीत सोम मुखसे वमन करनेवालेका इस यज्ञमें अधिकार है। शत्रु कर्तृक स्वराज्यसे बहिष्कृत राजाका पुनर्वार राज्य प्राप्तिके लिये इसमें अधिकार है। पशुके अभावमें पशु पानेकी कामनासे वैश्यको भी इसमें अधिकार है। चार रात्रमें इस यज्ञके सम्पादनका विधि है। इस यज्ञकी अङ्गस्वरूप सुराप्रस्तुतप्रणाली और इस यज्ञका द्रव्य, देवता तथा मंत्रादि कथित है।

२०श अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। समस्त कंडिकाओंमें यज्ञका विधान है। इसमें अभिषिक्त क्षत्रिय राजाका ही एकमात्र अधिकार है। ब्राह्मण और वैश्यका अनधिकार है। तीन रात्रमें इसका सम्पादन-नियम है। इस यज्ञके फलसे समुदाय अभीष्टसिद्धिकी कथा और यज्ञका काल, द्रव्य, देवता तथा मंत्रादि कथित है।

२१श अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उनसे १म कण्डिकामें नरमेधयज्ञका विधि है। सर्वजीवसे उत्कर्षकामी पुरुषका अधिकार है। पांच रात्रमें इसका सम्पादनविधि है। इसमें एकविंशति दीक्षा-नियम है। ब्राह्मण और क्षत्रियको अधिकार है। वैश्यको अनधिकार है। इस यज्ञके द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान विहित है। ३य कण्डिकामें सर्वविषय अभिलाषी व्यक्तिके सर्वमेधयज्ञका विधान है। दश रात्रमें उसका सम्पादनविधि है। ३य और ४र्थ कण्डिकामें मनुष्य, अश्व, गो, मेष और छाग पञ्च पशुका वधविधि है। प्रोषित वा मृत पिताका संवत्सर अतीत होनेसे पितृमेधयज्ञका विधान और उसके नक्षत्रादि काल, द्रव्य, देवता तथा मंत्रका भी विधान वर्णित है।

२२श अध्यायमें ११ कण्डिका हैं। उसकी प्रथम कण्डिकामें यजुर्वेदीय आधानादि, पितृमेध पर्यन्त कर्मविधि और सामवेदीय एकाहसाध्य यागविधि कथित है। इस सम्बन्धकी कई परिभाषा भी लिखी हैं। यथा—विभिन्नसंस्थ कथित न रहनेसे यज्ञ अग्निष्टोमसंस्थ हुआ करता है। धेनुमावदश्चिपा-देय भूर्नामक एकाह और ज्योतिर्नामक एकाहमें कोई संस्थ कहा न जानेसे उभय अग्निष्टोमसंस्थ होते हैं। गो और आयुः नामक एकाह उक्थ्य-संस्थ हैं। अभिजित् और विश्वजित् अग्निष्टोमसंस्थ हैं। ज्येष्ठपुत्रके विभागयोग्य द्रव्य एवं भूमि और

कई कात्यायनोंका परिचय पाते हैं। इनमें विश्वामित्र-वंशीय, गोभिलपुत्र और सोमदत्तके पुत्र वररुचि कात्यायन ही प्रधान हैं। १म विश्वामित्र-वंशीय कात्यायन मुनिने 'कात्यायनश्रौतसूत्र', 'कात्यायन-गृह्यसूत्र', और 'प्रतिहारसूत्र' बनाया था। कात्यायन श्रौतसूत्रको कोई कोई 'कातीयश्रौतसूत्र' कहता है।

कात्यायन श्रौतसूत्रके १म अध्यायकी १म कण्डिकामें यह विषय लिखित है,—वेदवेदाङ्गाध्यायी अपत्नीक द्विज और रथकारका अग्निस्थापनादि कार्यमें अधिकार; अङ्गहीन, क्लीव, पतित और शूद्रका अधिकार, निषाद एवं सूत्रधरका गावेधुक नामक चरुमें अधिकार, व्रतलङ्घनकारियोंका गर्दभयज्ञ नामक प्रायश्चित्तमें अधिकार, गावेधुक चरु तथा व्रतलङ्घनकारियोंके प्रायश्चित्तरूप गर्दभयज्ञकी लौकिकाग्निमें कर्तव्यता, गर्दभयज्ञमें कपालपर हवदान न कर भूमि ही पर हवदानका विधि, अग्निमें शुद्धिकारक होम न कर जलमें करनेका विधान, अन्यान्य आधारका अग्निमें होम करनेका विधि, गर्दभके शिश्नदेशसे प्राशित्रप्रदान; अग्निसमूह, विहार-विषय, गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्निमें कर्तव्य वैदिक कर्म, आवसथ्य अर्थात्—गृहसम्बन्धीय लौकिक अग्निमें स्मृतिविहित कर्तव्य और मांसपाकके निषेधकी व्यवस्था। २य कण्डिकामें देवतागणके उद्देशसे द्रव्यत्यागरूप याग, यागलक्षण, अमावस्या और पौर्णमासी आदि शब्दका अर्थबोधक एक त्याग, उसका प्राधान्य, इस प्रकरणपठित अन्वाधानसे ब्राह्मणोंको दक्षिणा पर्यन्त कर्मसमूहकी अङ्गता, इसीप्रकार प्रयाज तथा पूर्वाघार प्रभृति होमविधि, उसका अङ्गसमूह, होममें दण्डायमान हो वषट्कार-प्रदान, यजति शब्दका अर्थ, उपविष्ट हो स्वाहाकार प्रदान, जुहोति शब्दका अर्थ, समुदाय कर्ममें ब्राह्मणका पौरोहित्यविधि, क्षत्रियवैश्यगणके अवशिष्ट हविर्भक्षणमें निषेधके लिये पौरोहित्यमें निषेध, फलकाममें अभिलाषी होते काम्यकर्मकी अवश्य कर्तव्यता, अग्निहोत्रादि नित्यकर्मकी अवश्यकर्तव्यता, न करनेपर उसके दोषका विधान, दीक्षित व्यक्तिका सत्यवाक्य, भूमिशयन तथा ब्रह्मचर्यादि नियमकी अवश्य-कर्तव्यता, इच्छानुसार अनुष्ठान न करते गृहदाह(?) एवं धनहानि प्रभृति कारणसे प्रायश्चित्तकी अवश्य-कर्तव्यता, यथाशक्ति नित्य कर्मसमूहका प्रतिपालन, काम्य कर्मका सर्वाङ्गरूपसे प्रतिपालन और क्षमता रहते भी काम्यकर्मका अनुष्ठान न करते जब वैदिक अङ्गसमुदाय सम्पन्न करनेकी सामर्थ्य हो; तभी करनेका विधि। ३य कण्डिकामें—ऋक्, यजुः, साम और प्रैष भेदसे चार प्रकार मन्त्र, ऋक् प्रभृतिका लक्षण, यजुके जिस परिमित पद उच्चारण करते पदसमूहकी आकाङ्क्षा शून्य हो, कर्मकालमें उसी परिमित वाक्यका प्रयोगविधि, जहां पठित पदसमूह द्वारा यजुः आकाङ्क्षा शून्य न हो, वहीं यथायोग्य पद अध्याहार कर अथवा पूर्व पठितपद संयुक्त कर आकाङ्क्षाशून्य करनेका विधान, कर्मके आरम्भमें मन्त्र-प्रयोगविधि, यजुर्वेदीय मन्त्रसमूह ऐसे स्वरसे जिसमें अन्य सुन न सके और ऋग्वेद एवं प्रैष मन्त्र उच्चैःस्वर-से प्रयोग करनेका नियम, बर्हिःशब्दका कुशजाति-मात्र अर्थ, साग्निक(?) ब्राह्मणकी होमरहादि(?) और वसुधारा होम प्रभृतिमें संख्याका कोई नियम न रहते जिस परिमित संख्यामें कार्यसिद्धि हो वही ग्रहण करनेका विधि, इध्मबर्हिर्बन्धनके लिये संनहन और त्रिवृत संख्या रज्जुमुष्टिका बन्ध नियत, (संनहनमें भेद, यथा—

१ उत्तरदिक्की बर्हिर्भागमें अग्रभाग स्थापनपूर्वक वामाकी(?) भांति दृढ़ रूपसे बन्धनकर बाहर मूलदेशमें ग्रन्थि गोपनकर रखना चाहिये। इसको वामवर्म-नहन(?) कहते हैं। २ पूर्वदिक्की बर्हिर्भागमें अग्रभाग स्थापनपूर्वक पहलेकी भांति बन्धनकर मूलदेशमें ग्रन्थि छिपानेसे उद्गत संनहन होता है।) १८ या २१ हाथके पलाश काष्ठखण्डको इध्म कहते हैं। किन्तु पलाशके अभावमें वैकङ्कत, वैकङ्कतके अभावमें नविकारी(?), नविकारीके(?) अभावमें वंश, वंशके अभावमें यज्ञडुमुर और यज्ञडुमुरके अभावमें खदिर काष्ठ ग्रहण करनेका विधि, तीन इध्मकाष्ठ द्वारा परिधिपरिमाणकी व्यवस्था, अग्निमन्थनमन्त्रको रुचिके अनुसार इध्मकाष्ठकी

दास व्यतीत पदार्थको सर्वस्वपदार्थ कहते हैं। किसी किसीके मतानुसार धारण भ्रमणादिके लिये भूमि और मनुष्यके लिये दास आवश्यक है; इन उभय द्रव्योंको छोड़ सुवर्णादि अन्य समुदाय द्रव्य सर्वस्व है। पुरुषमेध यज्ञमें गर्भदासके दानका विधान और भूमिके एकदेशपरित्यागमें धारणकी सम्भावना है, इसलिये अपने मतमें भी उभय द्रव्य व्यतीत अन्य समुदाय सर्वस्व होता है। किन्तु अवभृथ-स्नानविहित वसनच्छवि और दीक्षाका उपयोगी द्रव्यसमूह सर्वस्वके मध्य परिगणित नहीं। वस्तुतः सहस्र अपेक्षा अधिकसंख्यक द्रव्य ही सर्वस्व कहाता और वही दक्षिणा माना जाता है। विश्वजित् यज्ञमें द्वादशरात्रि प्रभृति नियमकी विभिन्नता है। अभिजित् सम्पन्न होनेपर विश्वजित्का अनुष्ठान किया जाता है अथवा अभिजित् और विश्वजित्का एकदा अनुष्ठान कर्तव्य है। किन्तु एक ही समय उभय कार्य्य करने पर देवयजनस्थानका विशेष नियम है, उसमें षोडश ऋत्विक्का कार्य्य बाहुल्यप्रयुक्त अन्यतम ऋत्विक् द्वारा अन्यत्र सम्पादन करना पड़ता है। किन्तु बहिर्वेदिक कर्मसमूह उभयका एक रूप है। केवल अन्तर्वेदिक कर्ममें ही उभयकी विभिन्नता पड़ती है। उभय कार्य्य एक ही समय करते भी अभिजित्का एक एक अङ्ग सम्पादन कर विश्वजित्का एक एक अङ्ग सम्पादन करते हैं। सर्वजित् नामक एकाह सद्यःसन नामक सामस्तोमसाध्य है। इस यज्ञमें संवत्सरदीक्षा, मनावका स्नान और तीन या छः उपसद् निहित हैं। अर्थात् संवत्सर दीक्षाके पीछे मास दिवस स्नान करना और उसके अनन्तर सप्ताह अतीत होने पर यज्ञानुष्ठान कर तीन या छः उपसद् करना चाहिये। यह यज्ञ भी अग्निष्टोमसंस्थ है। उक्त समस्त विषय १म कण्डिकामें कथित है।

२४ कण्डिकामें सर्वजित् यज्ञकी दक्षिणाका भेद और उसका विधानादि है। इस यज्ञकी उक्थ्य-संस्थता है। कथित अभिजित् प्रभृतिका नामान्तर है। यथा—अभिजित्का नाम ज्योतिः, विश्वजित्का नाम विश्वज्योतिः और सर्वजित्का नाम सर्वज्योतिः है। इस समुदायकी दक्षिणाका भेद विधानादि है। चतुर्थ उक्थ्यसंस्थका विश्वसम्मित नाम है। साद्यस्क नामक छः यज्ञका विधान है। उसका प्रदर्शन उत्तरोत्तर किया है। यथा—प्रथम साद्यस्कमें स्वर्गकाम, पशुकाम एवं भ्रातृव्य-विशिष्ट पुरुषोंका अधिकार है। द्वितीय साद्यस्कमें दीर्घव्याधिग्रस्त एवं प्रतिष्ठा और अन्नाभिलाषियोंका अधिकार है। अनुक्री नामक तृतीय साद्यस्कमें कर्महीन और कर्म-निवृत्तिप्रार्थियोंका अधिकार है। विश्वजित्शिल्प नामक चतुर्थ साद्यस्कमें दक्षिणाभेद, सर्वस्व प्रतिनिधि-दक्षिणा विधान और सर्वस्व प्रतिनिधि द्रव्यसमूहका वर्णन है। यथा—धेनु, अश्व, क्षीर, धान्य, वस्त्रादि परिमाणोपयोगी स्वर्ण तथा रौप्य, दास, दासी, मिथुन उपकरणके साथ स्थापन, अश्वादि यानारोहण और गृहशय्या। अतएव सर्वस्व पद द्वारा इन समस्तका ही ग्रहण कर्तव्य है। श्येन नामक पञ्चम साद्यस्कमें वैरनिर्यातनकामका अधिकार, उसकी दक्षिणा, अनुष्ठान, मन्त्र और देवतादि कथन है। फिर एकत्रिक नामक षष्ठ साद्यस्कका विधान है। दीक्षा अपेक्षा अतः क्रियमाणताके लिये इनकी साद्यस्कसंज्ञा है। व्रात्यस्तोम नामक चतुर्विध एकाहयागका विधान है। तीन पुरुष पर्यन्त पतित सावित्रीकको व्रात्य कहते हैं। इस दोषकी शान्तिके लिये इनका अनुष्ठान और लौकिक अग्निमें इनका होमविधि है। इनके मध्य प्रथम व्रात्यस्तोममें नृत्यगीतकारी व्रात्यका अधिकार है। द्वितीय उक्तलक्षणमें निन्दित व्रात्यका अधिकार है। तृतीयमें कनिष्ठका अधिकार है। इसमें गृहपति बना कार्य सम्पादन करना पड़ता है। चतुर्थमें अन्यसमतिस्थविर ज्येष्ठका अधिकार है। अर्थात् ऐसे ज्येष्ठको गृहपति बना यह कार्य सम्पादन करना पड़ता है। इन सकल कार्यों का दीक्षा-विधानादि और व्रात्यस्तोम सम्पादनकारियोंके व्यवहारका विधि है। परिशेषको ब्रह्मवर्चस, वीर्य, अन्न एवं प्रतिष्ठादि अभिलाषी और लोक पवित्रता-प्रार्थी व्यक्तिके अग्निष्टोमसंस्थ अग्निष्टुत् नामक एकाहयागकी कल्पना है।

वृद्धिका नियम रहते भी पित्रुद्दिष्ट कार्यमें अग्नि-सन्दीपनमन्त्रका ह्रास आते इध्मकाष्ठके ह्रास-विधिका अभाव, अग्निप्रणयनके लिये पूर्वोक्त इध्म काष्ठकी संख्या अपेक्षा अधिकसंख्यक इध्मकी आवश्यकता, इ काष्ठयज्ञमें २८ हाथ परिमित पूर्वोक्त काष्ठ द्वारा इध्म करनेका विधि और यह इध्म तीन प्रकार संनहन नामक बन्धनविशेष द्वारा बांधनेकी प्रणाली, अमावस्या और पौर्णमासीकी वेदकरण, सूत्रोक्त 'आङ्' शब्दका अभिविधि तथा प्रतिज्ञा अर्थ, सर्वविध कर्ममें अनुरक्त होते भी गार्ह-पत्यके अनुसार आहवनीय तथा दक्षिणाग्निमें उद्धारकी आवश्यकता, किन्तु अन्य कार्यके लिये उद्धार होने पीछे दूसरे आगन्तुक कार्यके लिये उद्धारकी अनावश्यकता, (क्योंकि जिस कार्यके लिये उद्धार किया जाता, वह समाप्त होते अग्नि फिर लौकिकत्वको पहुंचता है। इसीसे दर्श प्रभृति कार्यमें उद्धृत अग्निसे अग्नि-होत्र होम सम्पादित होता है। किन्तु लौकिक हो जानेसे फिर इस अग्निमें आहवनादि कार्य कर नहीं सकते।) जहां पौर्णमासादि कार्यमें पृथक् तंत्रोक्त बहु-विध यज्ञका नियम होता, वहां प्रतियज्ञमें पृथक् पृथक् अग्नि उद्धार कर सम्पादन करनेका नियम, खदिरकाष्ठनिर्मित द्रव्यादि कहीं अनुक्त होते भी वहां उसकी कर्त्तव्यता, स्रुव, अस्र, स्रुक्, जुहू प्रभृति होम-साधन द्रव्यका लक्षण, यज्ञकार्यमें सबके आगे जानेको प्रणीत, और उत्कर व्यतीत पदविधान और उत्तर-वेदिकाकार्यमें चात्वाल एवं उत्करके अन्तरालका पदनियम। ४र्थ कण्डिकामें—विहित द्रव्यका अभाव होनेसे काम्यकर्मके आरम्भका निषेध, नित्यकार्य-समूहमें प्रधान द्रव्यका अभाव होते भी प्रतिनिधि द्रव्यसे उसके अनुष्ठानका विधि, काम्यकार्यमें समुदाय अङ्ग संगृहीत होनेसे कार्य आरम्भ करनेका विधि, फिर भी आरंभके पीछे किसी प्रधान द्रव्यका अभाव होनेसे प्रतिनिधि द्रव्य द्वारा उसका समापन एवं असमाप्त कार्यके त्यागका निषेध, नित्यकार्य आरम्भके पहले या पीछे प्रतिनिधि द्रव्यका आयोजन करते, किन्तु काम्यकार्यकी अवश्यकर्तव्यता न रहते प्रतिनिधि द्रव्य द्वारा आरम्भ किया नहीं जाता; इतना ही उभयका भेदकथन एवं ज्योतिष्टोम दीक्षित-गणके शरीर धारणार्थ पयःपान प्रभृति व्रतमें भी प्रतिनिधि विधान है। इस प्रतिनिधिमें अनेक विशेष नियम निर्दिष्ट हैं। द्रव्यके अभावमें तत्सदृश अन्य द्रव्यकी कल्पना की जाती है। दैवात् वह द्रव्य भी नष्ट होनेसे उसकी भांति अन्य प्रतिनिधि न मिलते प्रधान द्रव्यजातीय द्रव्य द्वारा प्रतिनिधि कल्पना करना चाहिये। जैसे व्रीहिके अभावमें नीवार द्वारा कार्य आरम्भ करते दैवात् जो नीवार नष्ट हो गया, तो नीवार जातीय अन्य द्रव्यकी कल्पना न कर व्रीहिकी ही कल्पना करना पड़ेगी। इसी प्रकार जहां कृष्ण व्रीहिका अभाव होगा, वहां उसका प्रतिनिधि शुक्ल व्रीहि माना जायेगा। किन्तु कृष्ण नीवारको कल्पना कर नहीं सकते। फिर जहां पुंवत्सयुक्त गौके दुग्ध द्वारा विधान है, वहां उसके न मिलनेसे स्त्रीवत्सयुक्त गौका दुग्ध प्रदान करना चाहिये। किन्तु पुंवत्सयुक्त मेषी प्रसूतिका दुग्ध प्रदान करनेसे काम न चलेगा। इसी प्रकार समुदाय द्रव्यका प्रतिनिधि विवेचना करना उचित है। ५म कण्डिकामें श्रुतिपाठ, मन्त्रपाठ एवं अर्थसिद्धिके क्रमानुसार पदार्थके अनुष्ठानका क्रम है। जहां पाठक्रम और अर्थसिद्धिक्रम उभयका विरोध आयेगा, वहां पाठक्रम उपेक्षा कर अर्थसिद्धि-क्रम लिया जायेगा और जहां श्रुतिपाठ तथा मन्त्रपाठ उभयका विरोध दिखायेगा, वहां श्रुतिपाठक्रम छोड़ मन्त्रपाठसे कार्य चलाया जायेगा। फिर बहु प्रधान द्रव्यका एकत्र प्रयोग विधान रहते किसी प्रकारके क्रम-विभागको व्यवस्था न कर समुदयके प्रयोग करनेका नियम है। ६ष्ठ कण्डिकामें अवदानहविः * नष्ट होनेसे अन्यहविः द्वारा कार्यसम्पादन, मन्त्रादि देवता, मन्त्र एवं प्रयाज अनुयाज † प्रभृति क्रियासमूहके प्रतिनिधिका निषेध, दृष्टार्थ अवघात प्रभृति क्रिया-समूहके प्रतिनिधिका विधान, किसी विहित वस्तुके

* आहुति प्रदानार्थ गृहीत हविको अवदानहविः कहते हैं।

† यज्ञविशेषको प्रयाज और अनुयाज कहते हैं।

५म कण्डिकामें अग्निष्टुत्‌के द्रव्य, देवता और मंत्रविधानादिका वर्णन है। त्रिवृत्स्तोम नामक अग्निष्टोमसंस्थके चतुर्विध यज्ञका विधान है। उनके मध्य अनिरुक्त प्रातःसवन प्रथम है। उसका नाम इषु यज्ञ है। स्वर्गादि अभिलाषी किंवा ग्रामादि अभिलाषीका उसमें अधिकार है। उसके द्रव्य, देवता और मंत्रका विधानादि है। बृहस्पतिसव द्वितीय है। राजाके साथ ब्राह्मणका (धर्मस्थापक रूपसे अङ्गीकार किये जानेवाले ब्राह्मणका) उसमें अधिकार है। तृतीयका नाम इषु है। यह श्येनकी भाँति किया जाता है। किन्तु भेद इतना ही है कि यह सद्य अनुष्ठेय नहीं होता। मारणकामनासे इसका अनुष्ठान करना पड़ता है।

६ष्ठ कण्डिकामें सर्वस्वार नामक चतुर्थ एकाह यज्ञ है। जीवनाभिलाषी और मृत्युकामनाकारी उभयका इसमें अधिकार है। सिवाय इसकी दक्षिणा है। इस यज्ञके द्रव्य, देवता और मंत्रका विधानादि है। ऋत्विक् अपोहनीय नामक त्रिविध यज्ञका विधान है। उनमें प्रथमका नाम सर्वस्तोम है। द्वादशाहिक छन्दोमत्रयके मध्य उक्थ्यसंस्थ उत्तम दिन द्वय पृथक् कर द्वितीय और तृतीय ऋत्विक् अपोहनीय सम्पादन करना पड़ता है। वाचस्तोम चतुर्विध है। छान्दोग्यमें इनका विशेष विधि लिखा है। परिशिष्टकी त्रिवृत्, पञ्चदश, सप्तदश, एकविंश, त्रिणव और त्रयस्त्रिंश नामक छह एकाह षट्स्तोम-विध यज्ञका विधान कथित है।

७म कण्डिकामें उनके विधानप्रकार, मंत्र, देवता प्रभृतिका कथन है। अग्न्याधेय, पुनराधेय, अग्नि-होम, दर्शपौर्णमास, दाक्षायण और आग्रयण नामक प्रतिकर्ममें सोमयुक्त छह यज्ञ और उनका विधानादि कथित है। ८म कण्डिकामें सप्तदशस्तोमक पाँच यज्ञका विधान है। उनमें ग्रामाभिलाषी व्यक्तिका उपहव्य नामक अनिरुक्त यज्ञविधान और मिथ्याभिशप्त व्यक्तिका भी इस यज्ञमें अधिकारविधि है। उनकी दक्षिणाका विधानादि है। दुर्गाभिलाषी व्यक्तिका ऋतपेय एवं उसका विधान प्रकार और देवता तथा मंत्रादिका विषय कथित है। ९म कण्डिकामें पशु-काम और वैश्यकामका वैश्यस्तोम है। उसका विधानादि है। उक्थ्यसंस्थ तीव्रसुत् नामक यज्ञ है। तीव्रसुत्‌में सोमका अतिदेश रहते भी विशेष विधान है। उसमें सोमाभिपूत स्वराज्यभ्रष्ट राजाका एवं दीर्घव्याधिशान्ति, ग्राम, प्रजा और पशुकामना-कारीका अधिकार है तथा उसका विधानादि कथित है। १०म कण्डिकामें राज्यप्रार्थी क्षत्रियका राट् नामक यज्ञ है। उसका विधानादि कहा है। उक्त यज्ञको अग्निष्टोमसंस्थता है। ऋषभकी भाँति ऐन्द्रपरियज्ञकी कर्त्तव्यता है। अन्नादि प्रार्थी व्यक्तिका विराट् नामक यज्ञ है। ऐन्द्रपरियज्ञकी भाँति आद्यन्तमें आग्नेय पशुसंयुक्त कर इसको भी करना है। पुत्रार्थीका उपसद नामक एकाह है। उसका विधानादि कहा है। उक्थ्यसंस्थ पुनस्तोम नामक एकाह है। उसमें प्रतिग्रह दोषशान्ति प्रार्थीका अधिकार है। उसका दक्षिणादि है। पशुकाम व्यक्तिका चतुष्टोम नामक और उद्भिद्‌बलभिद् नामक एकाहद्वय है। दर्श-पौर्णमासकी भाँति मिलित उभयकी फलसाधकता है। इषुयज्ञ और उसका विधानादि है। उद्भिद्‌यज्ञके पीछे उसी दिनसे अर्धमास, एक मास अथवा संवत्सर पर्यन्त प्रत्यह इषु यज्ञका अनुष्ठानविधि है। उसका विधानादि है। पुत्राभिलाषी व्यक्तिके अपचिति नामक दो यज्ञोंका विधान है। उनमें राजा वा द्विजातिका अधिकार है। उनका विधानादि है। उभय यज्ञके मध्य प्रथम यज्ञका नाम अपचिति और द्वितीय यज्ञका नाम ज्योतिः है। यह उभय यज्ञ भी सर्वजित्‌की भाँति दीक्षायुक्त है। इनका दक्षिणादि विधि है। ऋषभ और गोसव नामक दो यज्ञोंका विधान है। उनके मध्य अग्निष्टोमसंस्थ ऋषभमें राजाका अधिकार है और उसका दक्षिणाभेद विधि है। उक्थ्यसंस्थ गोसवमें अयुत गो दक्षिणा और वैश्य वा अन्य जातिका उसमें अधिकार है। उसका विधानादि है। मरुत्स्तोम नामक यज्ञविधि है। उसमें एकत्रित भ्रातृसमूह और बन्धुसमूहका अधिकार है। वैश्यस्तोम निर्दिष्ट दक्षिणा-का ही इसके दक्षिणाक्रममें निर्देश है। ऐन्द्राग्न्कुलाय

ग्रहण होते भी निःस्व वस्तुके प्रतिनिधित्वका निषेध, त्याग तथा वपन प्रभृति एवं संस्कार कर्ममें यजमानके प्रतिनिधित्वका अभाव, किन्तु पात्रग्रहण, हविर्दान, अग्निस्थापन, स्तम्भ और वेदस्थापनादि गुणकर्ममें यजमानके प्रतिनिधित्वका विधि, क्योंकि अभावमें भी हविर्दान, अन्वारम्भ और उपाख्यान * प्रभृति गुणकर्ममें प्रतिनिधिकल्पना, यजमानकर्मके साथ सम्बन्धवशत: प्रतिनिधिरूपसे कल्पित व्यक्तिके भी होमादि यजमानधर्मका सम्पादनविधि, ब्राह्मणका ही यज्ञाधिकार, क्षत्रियवैश्यका अन्याधिकार, ब्राह्मण होते भी एक कल्प ब्राह्मणका अधिकार, किन्तु विभिन्न कल्पका नहीं, क्षत्रिय तथा वैश्यका गृहपतित्व अधिकार रहते भी यज्ञमें अधिकार नहीं। सहस्र वत्सर साध्य दश मनुष्यसाध्य है। क्योंकि यहां संवत्सर शब्दका सहस्र दिन मात्र अर्थविधि है। ८म कण्डिकामें जहां एकही फलकी कामनासे एक वाक्य द्वारा बहुसंख्यक प्रधान कार्यका विधान है, वहां समुदाय कार्यका एकत्र प्रयोग होता है। देश, काल, फल और कर्मादि समान रहते प्रधान कार्य-समूहका साथ उपयोगी आधार, प्रयाज और आज्य भाग पृथक् पृथक् न कर एकत्र करनेका नियम है। किन्तु देश, काल वा तन्त्रभेद पड़नेसे एकत्र कर्तव्य नहीं। एक द्रव्यमें अनेक कर्मका विधान रहनेसे प्रत्येक क्रियामें मन्त्रपाठ न कर केवल एक बार ही करनेका विधि है। किन्तु हविर्ग्रहण, कृष्णच्छेद, कुशस्तरण और आज्यग्रहण कार्यमें प्रत्येक बार मन्त्र पढ़ना पड़ता है। आज्यग्रहण कार्यमें तीन बार मन्त्र पढ़ने और अवशिष्ट बार मौनी रहते हैं। दीक्षित व्यक्तिके अनेक दुःस्वप्नदर्शनमें एकबारमात्र मन्त्रपाठ विधि है। एक नदीके अनेक प्रवाह उत्तीर्ण होनेसे एक बार मन्त्र पढ़ते हैं। अनेक हविर्धानका संयोग होते भी दर्शनकालमें एक ही बार मन्त्र पढ़ा जाता है। एक ही समय अनेक अमङ्गल दर्शनसे एकबार मात्र सूर्योपस्थापन करते हैं। विश्रामपूर्वक पुनः पुनः गमन करते समय अभीष्ट दर्शन करनेसे एकबार मात्र मन्त्रपाठ होता है। एक रात्रिके मध्य बारंबार निद्रादि कालको अमङ्गल देखनेसे बारंबार मन्त्र पढ़ना पड़ेगा। ऐसे समय एकबार मन्त्र पढ़नेसे काम नहीं चलता। अवधानकालीन अङ्ग एकबार मात्र होता है, उसका प्रतिधान बदलना नहीं पड़ता। आधानादि कार्यमें केवल यजमान ही नहीं, समुदाय पुरुष कर्त्ता हैं। फिर भी देवताके उद्देशसे द्रव्यत्याग प्रभृति आत्मकर्मसमूह यजमानको ही करना और पुरुषयोनि मन्त्रसमूह जपना चाहिये। वपन अभ्यञ्जनादि संस्कार यजमानका ही है। किसी किसी स्थलमें यह संस्कार पुरोहितका भी होता है। इन सकल कार्योंको छोड़ अन्य कार्य विशेष विधान रहते यजमानको ही करना पड़ेगा। जैसे— यजमान वसुधारा होम करेगा और पात्र प्रकल्प ग्रहण करेगा। तद्भिन्न कार्य पुरोहित प्रभृतिका है। जैसे अध्वर्युका आध्वर्यव कार्य, होताका होत्रकार्य और उद्गाताका उद्गात्र कार्य। समुदाय कार्य यज्ञोपवीतधारीको करना पड़ता है। फिर समस्त कार्य पूर्वदिक् वा उत्तरदिक्स्थ कर सम्पादन करनेका नियम है। परिस्तरण एवं पर्युक्षणादि कार्य प्रदक्षिण क्रमसे और पितृकार्य अपसव्य क्रमसे अर्थात् दक्षिणसे क्रमानुसार वाम ओरको करनेका नियम है। देवकार्यमें जहां पुनरावृत्ति करते, पैत्र कार्यमें वहां एकही बार निबटते हैं। पैत्रकर्ममें दक्षिणदिक् प्रशस्त है। देवकर्ममें जो पूर्वदिकको स्थापन करना पड़ता, पैत्रकर्ममें वह समुदाय दक्षिणदिक्को स्थापन करना उचित रहता है। प्रधान द्रव्य विनष्ट होनेसे निकटस्थ अङ्गसमूहके साथ उसकी पुनरावृत्ति करना [illegible]। इस कण्डिकामें विकल्प विधित्व पर [illegible] करना उचित है। [illegible]

* [illegible]

नामक यज्ञविधि है। पुत्रार्थी और पशुप्रार्थी याज्ञिकका इसमें अधिकार है। गोकुल दक्षिणा है। इसमें दो भ्राता वा दो सखाका अधिकार है, समूहका अधिकार नहीं। राजकर्तव्य उक्थ्यसंस्थ इन्द्रस्तोमका विधान है। पुरोहित प्रार्थीका इन्द्राग्नीस्तोम नामक यज्ञविधि है। सायुज्य अभिलाषी राजा और पुरोहितका इसमें अधिकार है। उभयका एकत्र वा पृथक् भावसे अधिकार है। ऐसे अधिकारका भेद विधि है। पशुकाम याज्ञिकके अग्निष्टोमसंस्थ विधान नामक यज्ञद्वयका विधान है। इसमें अभिचारकाम वा पशुकामका अधिकार है। पशुकाम याज्ञिकका वत्स तथा दुग्धयुक्त इयत् गो और अभिचार कामका तीस गो दक्षिणाविधि है। अभिचारकामके संदंश और वज्र नामक दो यज्ञोंका विधान है। इन्द्रसोम-भावसे उभय यज्ञोंकी कर्तव्यता है। उभयके मध्य वज्रका षोड़शिसंस्थ रूपभेद-कथन है। संदंश द्वारा राजाका अभिचार करना चाहिये, देशका नहीं और वज्र द्वारा देशका अभिचार करना चाहिये, राजाका नहीं। उक्त रूपसे विधान कथित है। मतान्तरमें उभयका विपरीत भावसे विधान है। अभिचार द्वारा राजादिका उपशम वा मारण सम्पादन कर ज्योतिष्टोम यज्ञद्वारा शान्त्यादिका विधान है। इसी प्रकार सामवेदविहित एकाह निर्दिष्ट है।

२१श अध्यायमें ५ कण्डिका हैं। उसकी १म कण्डिकामें अहीन नामक यज्ञसमूहका द्वादश उपसद् एवं एकमासमें उसका समापनविधि है। सुत्योपसद्का विशेष उपदेश है। दीक्षाके भेदका विधि है। यथा सौत्यदिन और उपसद्‌समूहके दिन भिन्न दीक्षानियम है। दो रात्रिसे द्वादश दिन पर्यन्त सम्पादन योग्य याग अहीन कहाता है। अन्यके मतमें पाठ हेतु अतिरात्रको भी अहीनसंज्ञता है। द्व्यहादिमें दशरात्रादिकी प्रवृत्तिकी गोप्या कहते हैं। द्वादश-दिन कर्तव्य दशरात्रका द्व्यहादिमें कर्तव्यता है। द्विरात्र प्रभृतिमें सहस्र दक्षिणा है। चार रात्रि प्रभृतिमें अधिक दक्षिणादान पर प्रत्यह समभागसे दानविधि है। परिशिष्टको अवशिष्ट समुदायका दान है। त्रयोदश अतिरात्रका विधान है। यथा—षोड़शिग्रहरहित चार प्रथम अतिरात्र हैं। उनके मध्य प्रजातिकामका नव सप्तदश नामक प्रथम अतिरात्र है। ज्येष्ठ भ्रातृविशिष्ट स्त्रीके ज्येष्ठपुत्रका कर्तव्य विषुवत् नामक द्वितीय अतिरात्र है। जिसके भ्रातृव्य रहता, उसका गो नामक तृतीय अतिरात्र है। स्वर्गकाम वा आरोग्यकाम याज्ञिकका आयुः नामक चतुर्थ अतिरात्र है। धनाभिलाषीका ज्योति-ष्टोम नामक पञ्चम अतिरात्र है। पशुकामका विश्वजित् नामक षष्ठ अतिरात्र है। ब्रह्मतेजः-प्रार्थीका त्रिवृत् नामक सप्तम अतिरात्र है। वीर्यकाम याज्ञिकका पञ्चदश नामक अष्टम अतिरात्र है। अन्नादि-अभिलाषी याज्ञिकका सप्तदश नामक नवम अतिरात्र है। प्रतिष्ठाकाम याज्ञिकका एकविंश नामक दशम अतिरात्र है। ग्रामपशुका ध्वंस होनेसे पुनर्वार उसकी प्राप्तिके लिये आप्तोर्याम नामक एकादश अतिरात्र है। भ्रातृव्यवान्‌का अभिजित् नामक द्वादश अतिरात्र है। ऐश्वर्यप्रार्थीका सर्वस्तोम नामक त्रयोदश अतिरात्र है। इसी प्रकार त्रयोदश प्रकार अतिरात्रका विषय कहा है।

२य कण्डिकामें दो सूत्रोंके तीन अहीनका विधि है। उनके मध्य द्वितीय और तृतीय अहीनके षोड़शिग्रहरहित दो अतिरात्र हैं। तीन अहीनके आङ्गिरस, चैत्ररथ और कापिवन तीन नाम कहे हैं। द्वितीय द्विरात्रिके उक्थ्य पूर्वाह्न अन्यका मतभेद है। पार्ष्टिक अग्निष्टोमके स्थानमें उक्थ्य निर्देश है। संस्थभेदमात्र ही उसका धर्म है। पुण्ययोग्य होने भी जो पुण्यहीनकी भांति रहता, उसीका आङ्गिरसमें अधिकार है। पुत्रार्थी याज्ञिकका चैत्ररथमें अधिकार है। स्वर्गकाम वा पशुकाम याज्ञिकका कापिवनमें अधिकार है। त्रिसूत्रीमें गर्ग, वैद, छन्दोम, अन्तर्वसु और पराक नामक पांच अहीन यज्ञोंका विधान है। उनके मध्य वैद त्रिरात्रिसाध्य एवं त्रिवृत्स्तोमयुक्त अपर समुदाय अतिरात्रसाध्य है। इस पञ्चभेद यज्ञमें संस्थभेदका कथन है। इस समुदायमें राज्य-कामका अधिकार है। फिर अन्तर्वसुमें पशुकामका

आधानमें विहित दक्षिणाभेदका विकल्प कर्तव्य है, किन्तु समुच्चय नहीं। अनेक साधनकार्यमें अवघ्रादि कार्यका समुच्चय करना पड़ता है। सर्वत्र गार्हपत्य तथा आहवनीय कार्यमें प्रदक्षिण कर अपसव्य एवं अपसव्य कर प्रदक्षिण करते हैं। विहारकी उत्तरदिक् समुदाय कार्य किया जाता है। सुतरां ब्रह्मा और यजमानका आसन विहारकी दक्षिणदिक् कर्तव्य है। आसनद्वयके मध्य प्रथमतः यजमान एक आसन पर वेदिके मध्य पदका अग्रभाग संस्थापन कर बैठे, फिर ब्रह्माको बैठना चाहिये। व्यक्तिविशेषका आदेश न रहते अध्वर्युको यजुर्विहित कर्म सम्पादन करना कर्तव्य है, आदेश रहनेसे अन्य किया जाता है। हविःपात्रस्थ द्रव्यसमूह जैसे पर पर संग्रहीत होता, प्रदान कालमें वैसे ही वह सकल द्रव्य पूर्व पूर्व लेना चाहिये। प्रतापनादि अग्निसाध्य संस्कार गार्हपत्य अग्निमें सम्पादन करते हैं। समुदाय कार्यमें ही हविः प्रदान गार्हपत्य वा आहवनीयमें कर्तव्य है। संस्कार-शून्य घृतमात्रको आज्य शब्दका अर्थ समझना चाहिये। घृत शब्दसे गव्यघृत लिया जाता है। द्रव्यविशेष कथित न रहनेसे सर्वत्र ही घृतद्वारा होम कर्तव्य है, किन्तु विशेष द्रव्यका विधान होनेसे उसी द्रव्य द्वारा होम करते हैं। चात्वालसे * बर्हिःस्थ पुरीष ग्रहण करना चाहिये। पृथक् आदेश न रहते आहवनीय यज्ञमें ही समुदाय याग कर्तव्य है। किन्तु आदेशकी विभिन्नता आते आदेशानुसार याग करना पड़ता है। ऐसा आदेश न होते एक बार मात्र गृहीत द्रव्य द्वारा होम करते हैं। आदेश रहनेसे आदेशानुसार किया जाता है। ८म कण्डिकामें—सकल स्थल पर व्रीहि वा यव हविःरूप कल्पना करते हैं। उभयके विधानस्थल पर विधानानुसार कहीं पहले यव पीछे व्रीहि और कहीं पहले व्रीहि पीछे यव देना चाहिये। किन्तु आपस्तम्बके मतसे सर्वदा केवल व्रीहि ग्राह्य है। द्विविध ग्रहणका विधान रहनेसे प्रथम वार पुरोडाश अहके मध्यदेशसे बकाभावमें एक अङ्गुष्ठ-परिमित ग्रहण है। द्वितीय वार हविःके पूर्वभागसे ऐसे ही नियमसे ग्रहण करना पड़ता है। जमदग्नि प्रभृति पञ्चसमूहमें तीन वार हविः ग्रहण कर्तव्य है। उसमें प्रथम वार मध्यदेशसे, द्वितीय वार पूर्वभागसे और तृतीय वार पश्चाद्भागसे लेते हैं। जहां आज्यभाग पत्नीसंयाज, उपांशुयाज और अग्निहोत्रादि होममें वार वार ग्रहणका विधि है, वहां जमदग्नि प्रभृतिका पांच वार ग्रहण किया जाता है। दधि दुग्धका भी अवदान स्रुव द्वारा अङ्गुष्ठपर्व परिमित ग्रहण करना पड़ता है। पुरोडाशादि हविःके अवदानसे प्रथम आज्य एक वार ले अन्य हविः ग्रहण करना चाहिये। शेष वार फिर आज्य लिया जाता है। स्विष्टकृत् होममें हविर्ग्रहणके प्रधान अवदानकी अपेक्षा एक वार घटा देते हैं। उपस्तरणका कार्य एक वार करते हैं। उपरि देशमें अभिघारण दो वार कर्तव्य है। अवदेय और अवदान हविःका प्रत्यभिघारण करना पड़ता है। एक कपाल पुरोडाश सर्वस्थानमें आहुति देना चाहिये। "अग्नये अनुब्रूहि" की भांति वाक्यसे चतुर्थी विभक्त्यन्त देवतापद द्वारा अनुवचन करना पड़ता है। आश्रावणके पीछे जहां मैत्रावरुणका अनुसन्धान करते, वहां भी चतुर्थी विभक्त्यन्त देवतापद रखते हैं। किन्तु आश्रावणके पीछे जहां मैत्रावरुणका अनुसन्धान नहीं करना पड़ता, वहां द्वितीयान्त देवतापद प्रयोग करना चाहिये। प्रैषसम्बन्धी अनुवचनस्थलमें द्रव्यके उत्तर षष्ठी होती है। किन्तु दो प्रैषोंका सम्बन्ध रहनेसे षष्ठी नहीं लगती। जहां ऐसे प्रयोगका विधान रहता कि नाम ग्रहणपूर्वक इन्हें यजन करो, वहां इन्हें पदके परिवर्तमें उन्हीं उन्हीं नामोंका प्रयोग करना चाहिये। वषट्कारके साथ आहुतिप्रदानस्थल पर वेदीके दक्षिण भागमें उत्तर-पूर्व वा ईशान मुख अवस्थित हो वषट्कारके पीछे वा वषट्कारके साथ आहुति देते हैं। इन सकल स्थलोंपर घृतमिश्रित हविः देना पड़ता है। उसका नियम है—प्रथम घृतआहुति, मध्यमें हविःकी आहुति और पीछे फिर घृतकी आहुति प्रदान करना चाहिये। अथवा घृत और हविः एकत्र ही प्रदान करना पड़ता है। १०म कण्डिकामें

* उत्तरवेदी प्रस्तवकरणार्थ मिट्टी खोद कर बनाया हुआ गर्त।

चार परामें स्वर्गकामका अधिकार है। उक्त मात्र भेदका कथन है। अत्रिचतुर्वीर, जामदग्न्य, वशिष्ट-संसर्प और विश्वामित्र नामक चार चार दिनसाध्य यज्ञका विधान है। उनके मध्य जामदग्न्य यज्ञमें पुष्टिकाम यजमानका अधिकार है। उसमें विंशति दीक्षा एवं इन चार यज्ञमें पुरोडाशविशिष्ट उपसद्का विधान कथित है। ३य कण्डिकामें उसके विधानका प्रकारादि है। ४र्थ कण्डिकामें पञ्चदिन साध्य तीन अहीनका विधान है। उनके मध्य प्रथम अहीनका नाम देवपञ्चाह है। द्वितीयका नाम पञ्चशारदीय है। इन उभय अहीनके विधानादिका कथन है। तृतीय पञ्चाहका व्रतवत् नाम कथन है। इस त्रिविध पञ्चाह यज्ञमें ज्योतिर्गौ, महाव्रत और गौरायु नामक तीन एकाह यज्ञका विधि है। सर्वजित्की भांति इसमें दीक्षानियम और उसका विधानादि निर्दिष्ट है। ५म कण्डिकामें छह दिन साध्य तीन अहीनका विधि है। तीन अहीनके ऋतुषड़ह, पृष्ठ्यावलम्ब और त्रिकद्रुक तीन नाम कहे हैं। इस त्रिविध यज्ञमें स्तोमविधानादि है। सप्ताहसाध्य सात अहीनका विधान है। उनके मध्य चारका उत्तम महाव्रत है। इन चारके मध्य तृतीयमें पशुकामका अधिकार है। पञ्चम अहीनका नाम इन्द्रसप्ताह है। इस पञ्चम सप्ताहमें द्वितीय एकाहसे आरम्भकर छह एकाह एवं तुल्याह समुदायका विधान है। इस सप्ताह समुदायके प्रत्येक सप्ताहमें ज्योतिः, गौः, आयुः, अभिजित् और सर्वजित् छह महाव्रतकी कर्तव्यता है। इसी प्रकार समुदाय दिनसाध्य यज्ञमें महाव्रतका विधान है। उत्तम सर्वस्तोमका विधान है। उसके शेष दिनको ज्योतिः, गौः, आयुः, अभिजित्, विश्वजित् और सर्वजित् महाव्रतविशिष्ट सर्वस्तोम अतिरात्र है। उनका सप्तरात्र नामक षष्ठ सप्ताह है। उसका विधानादि है। उत्तम सप्तम सप्ताहमें बृहद्रथन्तर सामयुक्त पुष्टिका विधान है। इस समुदायकी पुष्टिस्तोम संज्ञा है। इसी प्रकार सप्त-सप्ताह अहीनका विधान कहा है। उसके पीछे उसका विधानादि है। अष्टतुल्य अहीनमें पार्ष्टिक षड़हके पीछे महाव्रत कर्तव्य है। नवरात्रमें त्रिकद्रु, ज्योतिः, गौः, और आयुः नामक महाव्रतका विधान है। उसका प्रकारान्तर है। उसका विधानादि है। चार दशरात्रका विधि है। प्रतिष्ठाकामनाकारी यजमानका त्रिककुप् नामक प्रथम दशरात्र है। अभि-चारकारीका कौसुरविन्द नामक द्वितीय दशरात्र है। पूर्वशरात्र नामक तृतीय दशरात्र है। पशुकाम यजमानका छन्दोह नामक चतुर्थ दशरात्र है। उसका विधानादि है। पौण्डरीक नामक एकादशरात्र एवं उसका विधानादि कथित है।

२४श अध्यायमें ७ कण्डिका हैं। उसकी १म कण्डिकामें द्वादशरात्रसे एक दिन बढ़ा चत्वारिंशत् रात्र पर्यन्त यज्ञविधि है। उसमें जिस क्रमसे जो दिन उपदिष्ट हैं, वह दिन उसी प्रकार समझना पड़ते हैं। आवापिकासमूहका अन्यक्रम और औपदेशिक समूहका उपदेशक्रम लिया जाता है। उपदिष्ट दिन व्यतिरिक्त अन्यदिन समूहका आवाप-क्रम कथन है। यथा—यज्ञ अपूर्ण होनेसे दशरात्र आवाप रहता है। यह पहले नहीं, पीछे होता है। छह पार्ष्टिक अह और चार छन्दोम अह मिलाकर दशरात्र आता है। अथवा पृष्ठ षड़ह, तीन छन्दोम और अविवाक्यके समुदायका नाम दशरात्र है। यह दशरात्र समुदाय दिनके अन्तमें मानना पड़ेगा। दशरात्रके पीछे एकाह विषयमें प्रकृतिविहित समुदायसे महाव्रत होता है। यज्ञ संख्यापूरणके लिये दशरात्र पीछे एकाह व्यतीत महाव्रत पड़ता है। महाव्रत व्यतीत अन्यकार्यसमूह आवापके पीछे और दशरात्रके पहले करते हैं। जहां षड़ह व्यतीत यज्ञसंख्यापूरण नहीं होता, वहां षड़ह पूरणके लिये अभिप्लवका व्यवहार चलता है। अभिप्लवसे पहले पञ्चाह समुदाय भी पञ्चाह व्यतीत संख्यापूरण न पड़नेसे अनुष्ठित होता है। त्र्यह व्यतीत संख्या-पूरण न होनेसे त्र्यह विषयमें ज्योतिः, गौः और आयुःका विधान है। उक्त तीनोंको त्रिकद्रुका कहते हैं। चतुरह व्यतीत यज्ञसंख्या पूरण न होनेसे चतुरह विषयमें ज्योतिः प्रभृति तीन और महाव्रतका अनुष्ठान

सहस्र होते भी निषिद्ध वस्तुके प्रतिनिधित्वका निषेध, त्याग तथा वपन प्रभृति एवं संस्कार कर्ममें यजमानके प्रतिनिधित्वका अभाव, किन्तु पात्रग्रहण, हविर्दर्शन, अग्निस्थापन, व्यूहन और वेदवन्धनादि गुणकर्ममें यजमानके प्रतिनिधित्वका विधि, पत्नीके अभावमें भी हविर्दर्शन, अन्वारम्भ और उपाञ्जन * प्रभृति गुणकर्ममें प्रतिनिधिकल्पना, यजमानकर्मके साथ सम्बन्धवशतः प्रतिनिधिरूपसे कल्पित व्यक्तिके भी दीक्षादि यजमानधर्मका सम्पादनविधि, ब्राह्मणका ही यज्ञाधिकार, क्षत्रियवैश्यका अनधिकार, ब्राह्मण होते भी एक कल्प ब्राह्मणका अधिकार, किन्तु विभिन्न कल्पका नहीं, क्षत्रिय तथा वैश्यका गृहपतित्व अधिकार रहते भी यज्ञमें अधिकार नहीं। सहस्र वत्सर साध्य यज्ञ मनुष्यसाध्य है। क्योंकि यहां संवत्सर शब्दका सहस्र दिन मात्र अपरविधि है। इस कण्डिकामें जहां एकही फलकी कामनासे एक वाक्य द्वारा बहुसंख्यक प्रधान कार्यका विधान है, वहां समुदाय कार्यका एकत्र प्रयोग होता है। देश, काल, फल और कर्मादि समान रहते प्रधान कार्य-समूहका आद्य उपयोगी आघार, प्रयाज और आज्य भाग पृथक् पृथक् न कर एकत्र करनेका नियम है। किन्तु देश, काल वा तन्त्रभेद पड़नेसे एकत्र कर्तव्य नहीं। एक द्रव्यमें अनेक कर्मका विधान लगनेसे प्रत्येक क्रियामें मन्त्रपाठ न कर केवल एक बार ही करनेका विधि है। किन्तु हविर्ग्रहण, कुशच्छेद, कुशस्तरण और आज्यग्रहण कार्यमें प्रत्येक बार मन्त्र पढ़ना पड़ता है। आज्यग्रहण कार्यमें तीन बार मन्त्र पढ़ते और अवशिष्ट बार मौनी रहते हैं। दीक्षित व्यक्तिके अनेक दुःस्वप्नदर्शनमें एकवारमात्र मन्त्रपाठ विधि है। एक नदीके अनेक प्रवाह उत्तीर्ण होनेसे एक वार मन्त्र पढ़ते हैं। अनेक वृष्टिधाराका संयोग होते भी वर्षणकालमें एक ही बार मन्त्र पढ़ा जाता है। एक ही समय अनेक अमङ्गल दर्शनसे एकवार मात्र सूर्योपस्थापन करते हैं। विश्रामपूर्वक पुनः पुनः गमन करते समय अमेध्य दर्शन करनेसे एकवार मात्र मन्त्रपाठ होता है। एक रात्रिके मध्य वारंवार निद्रादि कालको अमङ्गल देखनेसे वारंवार मन्त्र पढ़ना पड़ेगा। ऐसे समय एकवार मन्त्र पढ़नेसे काम नहीं चलता। अग्न्याधानकालीन अङ्ग एकवार मात्र होता है, उसका प्रतिधान बदलना नहीं पड़ता। आधानादि कार्यमें केवल यजमान ही नहीं, समुदाय पुरुष कर्त्ता हैं। फिर भी देवताके उद्देशसे द्रव्यत्याग प्रभृति आत्मकर्मसमूह यजमानको ही करना और पुरुषयोनि मन्त्रसमूह जपना चाहिये। वपन अभ्यञ्जनादि संस्कार यजमानका ही है। किसी किसी स्थलमें यह संस्कार पुरोहितका भी होता है। इन सकल कार्योंको छोड़ अन्य कार्य विशेष विधान रहते यजमानको ही करना पड़ेगा। जैसे—यजमान वसुधारा होम करेगा और पात्र सकल ग्रहण करेगा। तद्भिन्न कार्य पुरोहित प्रभृतिका है। जैसे अध्वर्युका आध्वर्यव कार्य, होताका होत्रकार्य और उद्गाताका उद्गात्र कार्य। समुदाय कार्य यज्ञोपवीतधारीको करना पड़ता है। फिर समस्त कार्य पूर्वदिक् वा उत्तरदिक्स्थ कर सम्पादन करनेका नियम है। परिस्तरण एवं पर्युक्षणादि कार्य प्रदक्षिण क्रमसे और पितृकार्य अपसव्य क्रमसे अर्थात् दक्षिणसे क्रमानुसार वाम औरको करनेका नियम है। देवकार्यमें जहां पुनरावृत्ति करते, पैत्र कार्यमें वहां एकही वार निवटते हैं। पैत्रकर्ममें दक्षिणदिक् प्रशस्त है। देवकर्ममें जो पूर्वदिक्को स्थापन करना पड़ता, पैत्रकर्ममें वह समुदाय दक्षिणदिक्को स्थापन करना उचित रहता है। प्रधान द्रव्य विनष्ट होनेसे निकटस्थ अङ्गसमूहके साथ उसकी पुनरावृत्ति करना चाहिये। इस कण्डिकामें विकल्प विधिस्थल पर एकही द्रव्यद्वारा कार्य सम्पादन करना उचित है। अदृष्ट बहु विषय विहित रहते समुदायको ग्रहण करना चाहिये। यज्ञकालमें मन्त्रसमूह एक श्रुति स्वरसे प्रयोग करते हैं, संहितास्वर वा ब्राह्मणस्वरसे प्रयोग कर्तव्य नहीं। किन्तु सुब्रह्मण्य, साम, जप, न्युङ्ख और यजमान मन्त्र एक श्रुतिसे प्रयोग न कर संहिताके निबद्ध स्वरमें ही प्रयोग करना चाहिये।

* नीराजनादि द्वारा सेवन।

कर पूरण कर्तव्य है। द्वादशातीत संख्यापूरण न होनेसे द्वादश विषयमें गौः और आयुः पूरण हुआ करता है। इसके बादमें अतिरात्र कर्तव्य है। प्रायणीय और उदयनीयके मध्य आवापस्थान करना पड़ता है। जो आवाप करनेका विधि है, उसके अतिरात्रद्वय मध्य करणका विधान है। आवापसमूहके समवाय द्वारा जहां यज्ञ पूरण होता, वहां जो जो अनुष्ठान अल्प आता वही प्रथम किया जाता है। दो त्रयोदशरात्र यज्ञका विधि है। इसमें पृष्ठ सम्पादित होनेसे सर्वस्तोमनामक अतिरात्रका विधान है। अर्थात् समुदाय यज्ञमें द्वादशाह धर्मका विधान है। सुतरां इसमें भी द्वादशरात्र समूह सम्पादन और सर्वस्तोम अतिरात्रका अनुष्ठान करना चाहिये। ऐसा करनेसे त्रयोदशरात्रका पूरण होता है। इसका नाम है। यथा—प्रथम दिन प्रायणीय अतिरात्र होता है। द्वितीय दिनसे छह दिन पर्यन्त पृष्ठ षडह करते हैं। अष्टमदिन सर्वस्तोम अतिरात्र होता है। नवम दिनसे चार दिन तक चार छन्दोम चलते हैं। त्रयोदश दिन उदयनीय अतिरात्र किया जाता है। द्वितीय त्रयोदशरात्रमें दशरात्रके पीछे महाव्रत करना पड़ता है। इसी प्रकार भेद कथित है। समस्त तृतीय त्रयोदशरात्रके गवामयनकी भांति समस्त प्रकार है। चतुर्दशरात्रमें तीन यज्ञका विधान है। उनके विधानका प्रकारादि है। उसके मध्य शेष चतुर्दशरात्रमें विवाहोदकतल्पसंशयित गणका अधिकार है। पञ्चदशरात्रको चार यज्ञोंका विधान है। उनका विधान प्रकारादि एवं सप्तदशरात्रमें, अष्टादशरात्रमें, एकोनविंशरात्रमें और विंशतिरात्रमें इसी प्रकार आवापनपूरण कथित है। ३य कण्डिकामें षोड़शरात्र प्रभृति चारमें आवाप प्रकार है। उसके मध्य षोड़शरात्रको प्रायणीयके पीछे अष्टाह है। अष्टादशरात्रमें प्रायणीयके पीछे षडह है। एकोनविंशरात्रमें प्रायणीयके पीछे षडह एवं दशरात्रके पीछे मत है। इसी प्रकार आवाप उक्तिके द्वारा विधान प्रकार है। एकविंशतिरात्रमें दो अतिरात्र हैं। उसमें आवाप प्रकार और उसका विधानादि है। अन्नादिकाम व्यक्तिके द्वाविंशति रात्रका विधान है। उसके विधानका प्रकारादि है। प्रतिष्ठाकामके त्रयोविंशतिरात्रका विधान है। प्रजाकाम और पशुकाम व्यक्तिके चतुर्विंशतिरात्रका विधान है। यह द्विविध है। उनमें प्रथमका विधानादि और द्वितीयका संघट नाम तथा उसका विधानादि कथित है। अन्नादिकामके पञ्चविंशतिरात्रका विधि है। प्रतिष्ठाकामके षड्विंशतिरात्रका विधान है। धनकामके सप्तविंशतिरात्रका विधि है। प्रजाकाम तथा पशुकामके अष्टाविंशतिरात्र एवं द्वात्रिंशत्रात्रका विधि है। इस समुदायका क्रमशः विधान है। एकोनत्रिंशत्रात्र, त्रिंशत्रात्र, एकत्रिंशत्रात्र एवं द्वात्रिंशत्रात्रका विधानादि है। त्रयस्त्रिंशत्रात्रका त्रिविध भेद है। उसके विधानका प्रकार है। चतुस्त्रिंशत्रात्रावधि चत्वारिंशत्रात्रि पर्यन्त समयज्ञका आवापक्रमानुसार पूरणविधि है। उसका विशेष नियम है। यथा—अन्नादिकामके चतुस्त्रिंशत्रात्र, प्रतिष्ठाकामके षट्त्रिंशत्रात्र, ऐश्वर्यकामके सप्तत्रिंशत्रात्र, प्रजाकाम एवं पशुकामके अष्टात्रिंशत्रात्र चार चत्वारिंशत्रात्र यज्ञका विधान है। एकोनपञ्चाशत् रात्रसाध्य सत यज्ञका विधान है। उनके मध्य प्रथमका नाम विधृति है। उसका विधानादि है। द्वितीयका नाम समातिरात्र है। उसका विधानादि है। तृतीयका नाम अश्वसाध्यक्लृप्तीय है। विद्वानोंके मध्य अपनी ख्यातिके आकांक्षियोंका इसमें अधिकार है। इसका विधानादि है। चतुर्थका नाम संवत्सरमित है। उसका विधानादि है। ३य कण्डिकामें इसके माहात्म्यको अवलम्बन करके पुत्रार्थियोंके कर्तव्य एकषष्टिरात्रका विधान है। सविताके उद्देश्यसे प्रथम कर्मका विधि है। उसका विधानादि है। उसमें पुत्रार्थीका अधिकार है। षष्ठ और सप्तमका सामान्य विधान है। शतरात्रका विधानादि और इस विधानमें विकल्पविवरण कथित है। ४र्थ कण्डिकामें सवन सम्बन्ध प्रभृति होमका विधानादि है। संवत्सर प्रभृति यज्ञमें गवामयन धर्मका अतिदेश है। आदित्यगणके अयन नामक यज्ञका विधानादि है। आदित्यगणके अयनकी भांति आङ्गिरसोंका अयनविधि है। उसका

विशेष नियम है। दृतिवातवान्‌के अयन नामक यज्ञका विधानादि है। कुण्डपायिगणके अयन नामक यज्ञका कालविधानादि है। इस यज्ञमें सुत्या स्थान-समूह पर सोम और उपनहन प्रभृतिका विशेष विधि है। सर्पसत्र नामक यज्ञका भेद विधानादि और उसमें गवामयन धर्मका अतिदेश कथित है। ५म कण्डिकामें तापश्चित नामक यज्ञका विधानादि है। महातापश्चित यज्ञका विधानादि है। क्षुल्लक तापश्चित यज्ञका विधानादि है। त्रिसंवत्सर यज्ञका विधानादि है। महासत्र नामक यज्ञका विधानादि है। द्वादश वत्सरसाध्य प्रजापतिसत्र नामक यज्ञका विधानादि है। षट्‌त्रिंशत् वत्सरसाध्य शाक्त्यानामयन नामक यज्ञका विधानादि है। शतवत्सरसाध्य साध्यानामयन नामक यज्ञका विधानादि है। सहस्रवत्सरसाध्य विश्वसृजामयन नामक यज्ञका विधानादि है। (गौणवृत्ति अनुसार यह यज्ञ सहस्र-दिनसाध्य समझना चाहिये) सारस्वत यज्ञसमूहका विधानादि है। यात्सत्र नामक यज्ञविधि है। शतसंख्यक प्रथमगर्भिणी वत्सतरी और एक वृष सहस्र-संख्या पूरणको इस यज्ञमें वनमें छोड़नेका विधि है। सारस्वत यज्ञका दीक्षाकाल और देशादि विधान है। (यथा—चैत्र शुक्ल सप्तमी तिथिको सरस्वती विनशन नामक स्थानमें दीक्षा कर्तव्य है। सरस्वती नाम्नी जो नदी बहती है, उसका पूर्व और पश्चिम भाग मनुष्यको देख पड़ता है। किन्तु मध्यभाग भूमिमें निमग्न रहनेसे किसीके दृष्टिगोचर नहीं होता। इसी स्थानको सरस्वती-विनशन कहते हैं। इसमें दीक्षा विधानादिका प्रकार है।) १०म कण्डिकामें उसका अङ्ग विधानादि है। सरस्वती और दृषद्वतीके सङ्गमस्थलपर उसका विधानादि है। प्लक्षप्रस्रवण नामक सरस्वतीके उत्पत्तिस्थानपर अग्नयेकामाय नामक यज्ञका विधि है। इस यज्ञमें कारपच नामक एक देशमें यजमानका अवभृथस्नानविधि है। यज्ञशेषमें उदयसनीयको कर्तव्यता है। पृष्ठशमनीयशून्य तीन सारस्वत यज्ञका विधान है। पूर्वोक्त सहस्र यज्ञ पूरण न होते गृहपति वा समुदाय गौ मर जानेसे यह यज्ञ समापनका विधि है। सहस्र पूरण होते भी यह यज्ञ समापन करना पड़ता है। गृहपतिका मृत्यु होनेसे आयुः नामक अतिरात्र यज्ञकर और द्रव्यसमूह नष्ट होनेसे विश्वजित् नामक यज्ञकर समापन करनेका विभिन्न विधि है। उभय घटनाओंमें ज्योतिष्टोम द्वारा समापनरूप अन्य मतका कथन है। इसी प्रकार प्रथम सारस्वत कहा है। द्वितीय सारस्वत दृतिवात-वान्‌के अयनकी भांति कर्तव्य है। उसका विधानादि है। उसमें तिथिको क्षयवृद्धिका भी विशेष विधान है। शुक्लकृष्णपक्षका विशेष विधानादि है। तृतीय सारस्वतमें विश्वजित् और अभिजित् विधानादि है। उसमें ऋत्विक् अथवा आचार्यके दार्षद्वत नामक यज्ञकी कर्तव्यता है। इस यज्ञमें एक वर्षके लिये वनमें गो सकल परित्याग करना चाहिये। द्वितीय वत्सर उन्हें निर्जल स्थानमें रखा करनेका विधि है। इसी वर्ष सरस्वती तीर नैतन्धव नामक जो सकल प्राचीन ग्राम हैं, उनमें अग्न्याधानका आरम्भविधि और कुरुक्षेत्रमें परीणत् नामक स्थलपर अन्वारम्भ-विधि है। उसके पीछे तृतीय वत्सर परीणत् नामक स्थलपर ही दर्शपौर्णमासान्त कार्यको कर्तव्यता है। दृषद्वती तीरसे आ यमुनामें अवभृथ स्नान और उसी स्थान पर मन्त्रपाठका विशेष विधान कहा है। ७म कण्डिकामें चैत्र वा वैशाखमासको शुक्लपक्षिमीको तुरायण नामक सारस्वत यज्ञकी कर्तव्यता है। उसकी दीक्षाका विधानादि है। यह यज्ञ एक वत्सरसाध्य है। उसमें वर्ष पर्यन्त कर्तव्यका उपदेश है। दार्ष-द्वतकी भांति अनियत अवभृथस्नानविधि है। भरत-द्वादशाह प्रभृति द्वादशाह भेद कथन है। उसका विधानादि और उत्सर्गिसत्रमें गवामयनका विकल्प-विधान विहित है।

२५श अध्यायमें १४ कण्डिका हैं। उनमें अङ्ग-वैगुण्य दोषके उपशमको प्रायश्चित्तका विधान है। (प्रायश्चित्त शब्दका अर्थ है। यथा—प्रपूर्वक अय धातुके उत्तर घञ् प्रत्यय लगानेसे प्राय पद निष्पन्न होता है। उसका अर्थ विधि अतिक्रमके लिये दोष है। चित धातुके उत्तर भावमें क्त प्रत्यय लगानेसे

जाति गृह्णाति, कादम्ब-ल-क लस्य रः। १ कदम्बपुष्पोत्थ मद्य, कदमके फूलकी शराब। २ शीधु मद्य, एक शराब। यह मधुर और पित्त एवं श्रम तथा मदघ्न होता है। (राजनिघण्टु) ३ दधिसार, दहीकी मलाई। ४ इक्षुजात गुड़ादि, ऊखसे बना हुवा गुड़ वगैरह। ५ बलराम।

कादम्बरी (सं॰ स्त्री॰) कुत्सितवर्णं नीलवर्णं अम्बरं वस्त्रं यस्य कोः कदादेशः, कादम्बरो बलरामः तस्य प्रिया, कादम्बर-अण्-ङीप्। १ मद्य, शराब। २ कोकिला, कोयल। ३ सरस्वती। ४ शारिकापक्षिणी, टुइयां। ५ कदम्बपुष्पोत्थ मद्य, कदमके फूलकी शराब। ६ सपुष्पक कदम्बके तरुकोटरका वृष्टिजल, फूले हुये कदमकी खोखमें पड़ा बरसातका पानी। ७ बाणभट्ट-विरचित कथाकी नायिका। यह हंस नामक गन्धर्व-राज और चन्द्रकिरणसे उत्पन्न अप्सरोकुलजात गौरीकी कन्या थी। बाणभट्ट देखो।

कादम्बरीबीज (सं॰ क्ली॰) कादम्बर्याः बीजम्, ६-तत्। सुराबीज, खमीर।

कादम्बर्य (सं॰ पु॰) कादम्बर्यै हितम्, कादम्बरी-यत्। १ धाराकदम्ब। २ कदम्बवृक्ष, कदमका पेड़। (क्ली॰) ३ पद्म, कंवल।

कादम्बा (सं॰ स्त्री॰) कादम्ब इव आचरति, कादम्ब-क्विप्-अच्-टाप्। कदम्बपुष्पीलता, एक बेल। इसमें कदम्बकी भांति पुष्प आते हैं।

कादम्बिक (सं॰ त्रि॰) भोज्यद्रव्यकारक, खानेकी चीज बनानेवाला।

कादम्बिनी (सं॰ स्त्री॰) कादम्बाः कलहंसाः सन्ति अस्याम्, कादम्ब-इनि-ङीप्। मेघमाला, घटा।

कादर (हिं॰) कातर देखो।

कादर—भागलपुर और सन्थालपरगनेकी एक जाति। दाक्षिणात्यके अनमलय पर्वत और कोयम्बतूर जिलेमें भी "कादर" नामक एक जाति रहती है। अनेक लोग अनुमानसे इन दोनों जातियोंको एक ही श्रेणीका समझते हैं।

कादर कृषि और मत्स्यधारण कर प्रधानतः जीविका चलाते हैं। अनेक लोग मजदूरी भी कर खाते हैं। किसीके मतमें कादर भुइयां जातिसे निकले हैं। इनमें दो श्रेणी विभाग हैं—कादर और नैया। नैया नामक एक स्वतंत्र जाति भी है। कादर नैयोंसे कोई सम्बन्ध नहीं रखते।

कादरोंमें अनेक गोत्र होते हैं। सकल गोत्रोंमें परस्पर आदान प्रदान नहीं होता। इनमें बाड़े, बारिक, दर्वे, हजारी, कम्पती, कापड़ी, मन्दर, मांझी, मरैया, मरीक, मिर्दाह, नैया, रावत और रिखियासन कई गोत्र हैं। बाड़े गोत्रवाले मिर्दाह, कम्पती और रावत गोत्रको छोड़ दूसरे किसी गोत्रमें विवाह नहीं करते। कम्पती केवल बारिक, कापड़ी, मरीक, दर्वे, मांझी और बाड़े गोत्रसे विवाह सम्बन्ध जोड़ते हैं। मरीक गोत्र बारिक, कापड़ी, मांझी, मन्दर और नैया गोत्रोंमें विवाह करता है। फिर मिर्दाहोंका दर्वे, मांझी, कम्पती, और बाड़े गोत्रवालोंमें और नैयोंका केवल मरीकों, हजारियों, कम्पतियों और बाड़ियोंमें विवाह होता है। यह मातुलकन्या वा पितृव्यकन्यासे विवाह नहीं करते। मातृपर्यायमें ३ और पुरुष तथा पितृपर्यायमें ७ पुरुष छोड़ विवाह होता है।

इनमें बालिका और वयस्था दोनों कन्याओंका विवाह होता है। फिर भी बालिकाकालमें विवाह होना प्रशस्त समझा जाता है। छोटे हिन्दुओंकी चालसे विवाह होता है। सिन्दूरदान ही विवाहका प्रधान कार्य्य है। ग्रामका नापित इनका पौरोहित्य करता है। स्त्रीसे सन्तान न होनेसे यह दूसरा विवाह करते हैं। विधवा सगाईको प्रथाके अनुसार निषिद्धगोत्र और पुरुषादिको छोड़ विवाह कर सकती हैं। स्त्रीको स्वामी-कर्तृक परित्यक्त होनेपर सगाईकी प्रथाके अनुसार पुनर्विवाह करनेका अधिकार है। सगाईवाला विवाह घरसे बाहर अन्तःपुरके पीछे खुली जगहमें और शुभ विवाह घरके चबूतरे पर होता है।

यह शवको जला और उसका भस्म छठा मृत्युके दूसरे दिन समाहित करते हैं। त्रयोदश दिनको मृतके उद्देशसे बलि दिया जाता है। फिर मृत्युके दिनसे कह मास पीछे इसी प्रकार बलि देते हैं। इनमें धार्मिक श्राद्धादि नहीं होता।

चित्त पद निष्पन्न होता है। धातुसमूहका विविध अर्थ विहित रहनेसे उसका अर्थ सन्धान है। प्रायका अर्थात् विधि अतिक्रमके लिये दोषका चित्त अर्थात् सन्धान अर्थ आता है। इस वाक्यमें पाणिनि व्याकरणोक्त 'प्रायस्य चित्ति चित्तयोः' एवं 'पारस्कर प्रभृति' सूत्र द्वारा मध्यमें 'सुट्' आदेशपूर्वक यह पद निष्पन्न हुआ है। सुवर्णार्थके अन्तमें अथवा निमित्तकालमें प्रायश्चित्तकी कर्तव्यता है।) प्रायश्चित्त विशेषका आदेश न रहनेसे सर्वत्र महाव्याहृति होमरूप प्रायश्चित्तका विधि है। विशेष आदेश अनुसार भी प्रायश्चित्त करना पड़ता है। यथा—"प्रणीताः स्रुवा अभिमृशेत" यजुः श्रुतिद्वारा प्रणीताभिमर्षणरूप प्रायश्चित्त विहित होनेसे यही कर्तव्य है।) ऋग्वेदोक्त हौत्रिक कर्म उपघात होनेसे गार्हपत्य अग्निमें 'भूः' स्वाहा बोल अग्निदैवत होम करना चाहिये। इसमें कर्ताका विशेष आदेश न रहनेसे ब्रह्माको ही करना उचित है। ब्रह्मवरणके पूर्व निमित्त उपस्थित होनेसे ब्रह्मवरणके पूर्व ही व्याहृतिहोमका अन्य अपर ब्रह्मवरण कर उसके द्वारा कराते हैं। जिस अग्निहोत्रादिमें ब्रह्मवरणका विधि न हो, वह स्वयं कर्तव्य है। काकाहुति द्वारा सोममें इसका समुच्चय करना पड़ता है। यजुर्वेदोक्त कर्मका उपघात होनेसे "भुवः स्वाहा" कह होम करते हैं। वह भी पूर्वकी भांति ब्रह्माका ही कर्तव्य है। सोमके आग्नीध्रीय अग्निमें "भुवः स्वाहा" कह होम करना पड़ता है। इतनी ही पूर्वके साथ इसकी विभिन्नता है। इसका देवता वायु है। सामवेद विहित कर्मका उपघात होनेसे आहवनीय अग्निमें "स्वः स्वाहा" कह होम करना चाहिये। इसका देवता सूर्य है। सर्ववेदोक्त कर्मका उपघात होनेसे तीन बार पृथक् पृथक् "भूर्भुवः स्वः स्वाहा" वाक्य द्वारा एवं एक बार समुदाय मिलित वाक्य द्वारा चार बार होम करते हैं। "अयाश्चाग्ने" इत्यादि पञ्च ऋक् द्वारा प्रत्येक ऋक् पर आहवनीय अग्निमें पञ्च आहुतिरूप सर्वप्रायश्चित्त नामक होम करना चाहिये। श्रुतिविहित अज्ञात कर्ममें पृथक् और मिलित भावसे चार महाव्याहृति होम करते हैं। (जैसे—यज्ञोपवीतधारी व्यक्ति शिखा बांध पवित्र दक्षिण हस्त द्वारा कर्म करता है। इस नियमस्थलमें यज्ञोपवीतधारणादि श्रुतिविहित कर्म है। इसमें किसी प्रकार उपघात होनेसे व्यस्त और मिलित चार महाव्याहृति होमरूप प्रायश्चित्त कर्तव्य है।) उसके पीछे यजुर्वेदोक्त सर्वप्रायश्चित्त नामक पूर्वोक्त पञ्च ऋक्वेदीय आहुतिरूप प्रायश्चित्त समुदाय ज्ञात या अज्ञात कारणसे करनेका विधि है। (किन्तु इसमें सम्प्रदाय भेद है। यथा—गार्हपत्यमें भूः, दक्षिणाग्निमें भुवः, आहवनीय अग्निमें स्वः, एवं सर्वप्रायश्चित्त नामक पञ्च आहुतिरूप प्रायश्चित्त होममें भूर्भुवः स्वः कहा है।) उसके पीछे कर्मविशेषके अनुसार प्रायश्चित्तविधान कहा है। इस अध्यायकी ७म कण्डिकामें ७म सूत्र पर्यन्त उक्त समस्त विषय वर्णित है। उसके आगे ८म सूत्रसे कर्मसमाप्तिके पूर्व यजमानका मृत्यु होनेसे कर्मसमाप्ति उसी समय हो जाती है। एक ऐसा पक्ष है। दूसरे पक्षमें ऋत्विक् प्रभृति अवशिष्ट भाग समाप्त करते हैं। उसमें कर्मसमाप्ति पर्यन्त उत्तर क्रियाविशेषका विधान विहित है। ८म कण्डिकामें उपहृत पशुके पलायन प्रभृति पर प्रायश्चित्तके भेदका कथन है। उसके आगे अन्त्ययागपद्धति है। ९म कण्डिकामें अस्थिके सञ्चयका प्रकार आदि है। १०म कण्डिकामें यज्ञविशेष करनेके लिये उद्यम करनेके पीछे वह क्रिया न जानेसे विश्वजित् नामक अतिरात्र यज्ञ करनेका विधि है। यज्ञ आदिके लिये दीक्षा करनेसे यदि दैवात् या किसी मनुष्यके लिये वह दीक्षा अपेक्षित रहे या स्वामीका यज्ञ समापन न करे और इस प्रकार शुद्धि उपस्थित हो जावे, तो भोगयुक्त साधारण धान्य घृतादि सर्वस्व दक्षिणाके साथ विश्वजित् नामक अतिरात्र यज्ञ करना चाहिये। अध्वर्यु प्रभृतिका दैवात् मर जाने किया न जानेसे तदविद्याभावमें भी कर्म समापन कर पुनर्वार अन्यको वरणपूर्वक याग आरम्भ करनेका विधि है। उसमें दिनके भेदका विशेष नियम है। दीक्षित व्यक्तिकी पत्नी यदि रजस्वला हो, तो दीक्षारूप शङ्कुनिधान कर रजस्नान पर्यन्त वालुकामें अवस्थान-

हिन्दुओंमें यह बहुत छोटे समझे जाते हैं। डोमों और हाड़ियोंको छोड़ दूसरी कोई जाति इनका छुआ पानी नहीं पीती। कादर मुसलों और कहारोंका पक्व खा लेते हैं, किन्तु यह लोग इनका पक्व ग्रहण नहीं करते। यह लोग गोमांस, शूकरमांस, मुरगा तथा चूहा खाते और मद्यादि भी पी जाते हैं। कभी कभी काली और कुल्हाड़ीकी पूजा होती है।

कादर हिन्दू होते भी अपर असभ्य जातियोंकी भांति कुसंस्काराच्छन्न हैं। इनमें कितने ही लोग विश्वास करते कि कुछ विशेष शक्तिसम्पन्न अपदेवता उनको चारोओर रहते हैं। उन देवताओंमें अनेक इनके पूर्वपुरुषोंके आत्मा होते हैं। दूसरे लोगोंके विश्वासानुसार अपदेवता कहीं नहीं, फिर भी नदी पर्वतादिमें शक्ति उद्भूत होती है। उसकी कोई मूर्ति या प्रतिमा मानी नहीं जाती। कहीं थोड़ीसी रंगी मृत्तिका और कहीं एक खण्ड सिन्दूरलेपित प्रस्तर खण्डमात्र भगवान्‌के उद्देशसे मार्गके मध्य प्रतिष्ठित रहता है। उक्त सकल प्रतिष्ठित देवताओंमें काफदानी, अर्द्धियादानी, छिमरादानी, पहाड़दानी, मोहन, पूया, सिन्, परदोना इत्यादि प्रधान हैं। इनके अलावा लोग समझ नहीं सकते उक्त अपदेवता कौन कौन शक्ति रखते हैं। कादरोंके कथनानुसार उक्त सकल अपदेवताओंकी पूजामें उपेक्षा करनेसे देशमें नाना अमङ्गल होते हैं। पूजाके समय यह लोग शूकरशावक, छागल, कबूतर, और मुरगा काट कर चढ़ाते हैं। मद्यको मिष्ट और घृतादिका उत्सर्ग किया जाता है। इनके देवता जहां स्थापित रहते, उन वृक्षोंको सरना कहते हैं। नापित ही इनके पुरोहित हैं। उपासक पूजाका द्रव्य खाते हैं। यह अपनेको हिन्दू बताते और परमेश्वर महादेव, विष्णु प्रभृति नामोंपर विश्वास करते हैं।

दाक्षिणात्यके कादर पर्वत विभागमें वास करते हैं। यह पुलियार और मालय अरयनार जातिपर प्रभुत्व चलाते हैं। कभी कभी मोम और गुड़ इत्यादि वहन करते भी दासादिके कार्यमें व्यस्त रहते हैं। [illegible]-दार कहनेसे बुरा मानते हैं। यह बड़े विलासी, अल्प-वादी और आलसी होते हैं। कुत्सित वेशका व्यवहार रखता है। जमींसे हरिद्रा, अदरक, मधु, मोम इलायची, रीठा, माजूफल इत्यादि संग्रह कर चावल और तम्बाकूके साथ बदलते हैं। यह अंगरेजी जंगलसे जो चीज लाते, उसका महसूल नहीं चुकाते। कोचिन-राज्यके अधिकृत वनभागसे इलायची संग्रह करनेके लिये केवल वार्षिक १००) रु० राजस्व देते हैं। कादर वनमें पथ प्रदर्शकका कार्य करते हैं, किन्तु कभी बोझ नहीं ढोते।

कादलेय (सं० त्रि०) कदलेन निर्वृत्तम्, कदल-ठञ्। कदल निर्मित, केलेका बना हुआ।

कादा (हिं० पु०) जहाज़की एक पटरी। यह मस्तूलों और कड़ियोंके नीचे लगती है।

कादाचित्क (सं० त्रि०) कदाचित् भवम्, कदाचित्-ठञ्। समय पर होनेवाला, जो कभी कभी हो।

कादाचित्कता (सं० स्त्री०) कादाचित्कस्य भावः कादाचित्क-तल्-टाप्। कदाचित् उत्पत्ति।

कादिपुर—अवध प्रदेशके सुलतानपुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ५८′ १०″ से २६° ११′ उ० और देशा० ८२° ८′ से ८२° ४४′ पू० तक अवस्थित है। इसके उत्तर अकबरपुर तहसील, पूर्व आजमगढ़ जिला, दक्षिण चांदा तहसील और पश्चिम सुलतानपुर तहसील है। भूमिका परिमाण ४३८ वर्गमील है। यहां सुलतानपुर और जौनपुरकी सड़क आ मिली है। राजकुमार जमिन्दार हैं। ब्राह्मण बहुत रहते हैं। तहसीलको छोड़ थाना और स्कूल भी है। एक देहाती बंक खुला है। बाज़ार बहुत छोटा है। भूमि सामान्य-गुणविशिष्ट है। नाले धारे और झीलें हैं। मझुई नदी पर पुल बंधा है।

कादियान—बोरनियो द्वीपकी एक अनार्य जाति। आजकल इस जातिमें मुसलमान धर्म ग्रहण कर लिया है। कादियान ही—बोरनियो द्वीपके आदिम अधिवासी हैं। यह सरल और शान्तिप्रिय हैं। इनकी स्त्रियां अधिक सुन्दरी होती हैं।

कादिर—१ शेख अब्दुल कादिरका उपनाम। आलम-गीरके पुत्र शाहज़ादे मुहम्मद अकबरने इन्हें अपना

करना चाहिये। मृत्या वर्तमान रहते सिकतामें उपवेशन करते हैं। प्रातःकाल और सायंकाल वेदीके निकट सिकता पर बैठते हैं। चतुर्थ दिवस गोमूत्रमिश्रित जल द्वारा स्मृतिविहित स्नान कर वस्त्र परिधानपूर्वक सान्निपातिक कार्य करना चाहिये। आरादुपकारक कर्म कर्तव्य नहीं। (दीक्षणीय भूमि उल्लेखन प्रभृति कार्यको आरादुपकारक कार्य कहते हैं।) पत्नी प्रसूता होनेसे दश रात्रिके पीछे स्नान करना चाहिये। मतान्तरमें गर्भिणीको दीक्षाका निषेध है। किन्तु "अयज्ञियाः गर्भाः" श्रुतिके अनुसार गर्भवतीको भी दीक्षामें अधिकार है। कात्यायनका यही मत है। दीक्षित व्यक्तिके दुःस्वप्नादि दर्शन प्रभृतिमें प्रायश्चित्तका विशेष विधि है। चमसके पान और अपान सम्बन्धमें प्रायश्चित्तका विधान है। सोमके ऊपर मेघ बरसनेसे भक्ष्याभक्ष्य नियमपूर्वक उसमें प्रायश्चित्तका विधि है। चमसके दोषविषयमें और द्रोणकलसके दोषविषयमें प्रायश्चित्तका विधान है। अग्निभेदनमें सोमभेद प्रायश्चित्त है। ११श कण्डिकामें सोमका अपहरण होनेसे अव्यक्त रक्तिमायुक्त पुष्प और तृण सोमकार्यमें निधान कर अभिषव करनेका विधि है। बहुकालीन खदिर वृक्ष लताकी भांति अङ्कुरित होनेसे श्येनहृत कहाता है। श्येनहृत एवं श्यामा (सोम-सदृश पूतिका नामक एक लता), अरुण वर्ण दूर्वा, अव्यक्त रक्तिमायुक्त दूर्वा, हरित्‌वर्ण कुश अथवा अपक्व कुश—सकल द्रव्यमें पूर्व पूर्व द्रव्यका अभाव आनेसे पर पर द्रव्य प्रतिनिधान कर अभिषव करनेका नियम है। उसमें गोदान प्रायश्चित्त कर उक्त द्रव्य द्वारा यज्ञ समापन कर्तव्य है। अवभृथ पीछे पुनर्वार उसमें यज्ञविधि है। सोमकलसके भेदानुसार सामपाठके प्रायश्चित्तका विधान है। अभिषवण कर्ममें प्रस्तुति परिमित सोमरस प्राप्त होनेसे कलसादि द्वारा उसे बढ़ा कलस पूर्ण कर द्रोणकलसकी पूर्णता सम्पादन करना पड़ता है। सोम पीछे मिलने पर जो द्रव्य मिल सके, उसे ही ला पुनर्वार यज्ञ करनेका विधि है। उसमें गोदान प्रायश्चित्त करनेका नियम है। १२श कण्डिकामें सोमका आधिक्य होनेसे आद्य प्रभृति सवनविशेषके अनुसार प्रायश्चित्तके भेदका विधान है। दीक्षित व्यक्तिके रोग लगनेसे द्रोणकलसमें जो पिप्पिलिपिप्पली प्रभृति वपन किया जाये, उसके मध्य जो द्रव्य लेनेकी इच्छा हो वही लेकर चिकित्सकको उसकी चिकित्सा करना चाहिये; किन्तु तद्व्यतीत अन्य द्रव्यद्वारा चिकित्सा विधेय नहीं। उसका विधानादि है। ज्वरयुक्त व्यक्तिके लिये भी पूर्वोक्त देशमें अवस्थानकाल पर्यन्त रोगकी शान्तिका विधान है, अन्यत्र नहीं। प्रातःसवनमें उसके मन्त्रविशेष द्वारा अभिषेकका प्रकार है। सवनके पीछे दीक्षित व्यक्तिको समुदाय ऋत्विक् स्पर्श करते हैं। उसमें यजमानके मन्त्रभेद द्वारा स्पर्शका विधि है। दीक्षित व्यक्तिका मृत्यु होनेसे उसको जलाने पीछे उसका अस्थिसमूह कृष्णमृगके चर्ममें बांध मृत व्यक्तिको पत्नीको स्त्रीय कर्म और पतिका कर्म सम्पादन करना चाहिये। पत्नीका मृत्यु होनेसे उसके नेदेष्ठो भ्रातादि दीक्षित हो यज्ञ समापन करते हैं। इसी प्रकार मतान्तर मिलता है। किन्तु किसीके मतमें मृत्यु होनेसे यज्ञका भी समापन होता है। उभय पक्षपर उसमें प्रायश्चित्तका विधानादि है। १३श कण्डिकामें उखाभरणके दिन यजमानका मृत्यु होनेसे विशेष प्रायश्चित्तका विधान है। यज्ञकी दीक्षाके मध्य ही मृत्यु होनेसे उक्त सोमादि कार्यके लिये दीक्षित व्यक्तिको कर्मफल होता है। किन्तु मतान्तरमें कहा है—दीक्षित व्यक्तिके भ्राता प्रभृतिको ही प्रकृत यज्ञफल मिलता है। स्वकीय अग्निमें स्वकीय द्रव्य द्वारा सान्निक नेदेष्ठो पुत्रादिकर्तृक मान्निचित्यादि यज्ञ अनुष्ठित होनेसे नेदेष्ठोको ही फलप्राप्ति होती है। किन्तु प्रकृत यज्ञफल यजमान पाता है। उसमें उपदीक्षी व्यक्तिको नखच्छेदनके दिनसे द्वादश दिन पर्यन्त सान्निपातिक करना चाहिये। यदि नेदेष्ठो अहिताग्नि न हो, तो यज्ञकारी व्यक्तिका ही अग्निमें कार्य करना पड़ता है। उसमें वैश्वानरनिर्वाप नामक प्रायश्चित्तका विधान है। १४श कण्डिकामें एक राजाके अधीन दो यजमान यदि पर्वत वा नदी प्रभृतिके व्यवधानशून्य समान देशमें यज्ञ करें, तो

मुंशी बनाया था। इन्होंने एक दीवान् लिखा है। २ वज़ीर खान्‌का उपनाम। यह आगरेके निवासी रहे। आलमगीर और उनके दोनों उत्तराधिकारी इन्हें बहुत चाहते थे। १७२४ ई०में इनकी मृत्यु हुई। इन्होंने एक दीवान बनाया है। ३ बदाऊंवाले अब्दुल क़ादिरका उपनाम। इन्हें लोग क़ादिरी भी कहते थे।

कादिर (सं० क्ली०) खदिरसार।

क़ादिर अली—एक मुसलमान पीर। प्रायः सन् ५२७ हिजरीको सीजोस्थानमें इन्होंने जन्मग्रहण किया था। उसके पीछे क़ुतब-उद्-दीनके राज्यकालमें यह अजमेर गये। वहां सैयद हुसैन मशेदीकी कन्यासे इनका विवाह हुआ। ६२८ ई० को यह मर गये। १०२७ हिजरीमें जहांगीर बादशाहने इनकी क़ब्रके पास एक सुन्दर मसजिद् बनवायी थी। इनके आरयार्थ नगरमें भी एक मसजिद है। मोपला मुसलमान कादिर अलीकी बड़ी श्रद्धाभक्ति करते हैं। ११ वां जमाद-उल्-अख़ीर इनके उत्सवका दिन है।

क़ादिरगञ्ज—युक्तप्रान्तके एटा जिलेका एक गांव। यहां कंकड़के बने एक प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष विद्यमान है। क़ादिरगञ्जमें अरबी भाषाकी एक शिलालिपि निकली थी। उसमें लिखा है,—यहां सन् ११०४ हिजरीको आलमगीरके राज्यकालमें शुजात खानकी दरगाह बनी थी।

क़ादिरशाह—मालवके एक बादशाह। सम्राट् हुमायूंने मालवो अधिकार कर अपने अफसरोंके हाथ छोड़ दिया था। किन्तु उनके आगरे वापिस जाते ही पूर्वतन खिलजी राज्यके एक पदाधिकारी मुल्लू खान्‌ने बारह मास दिल्लीके अफसरोंसे लड़ नर्मदा और भेलसा नगरके बीचका समस्त देश अधिकृत किया तथा अपना उपाधि क़ादिरशाह रख लिया। इन्होंने १५४२ ई० तक राज्य चलाया था। पीछे शेरशाहने मालव अधिकार किया और इनके मन्त्री एवं सम्बन्धी शुजा खान्‌को राज्य सौंप दिया।

क़ादिरी—१ शाहजहांके ज्येष्ठ पुत्र शाहजादे दाराशिकोहका उपनाम। २ बदाऊंके अब्दुल क़ादिरका उपनाम। (अ० स्त्री०) ३ चोली।

क़ादीहाटी—बङ्गालके चौबीसपरगनेका एक नगर। यह अक्षा० २२° ३९´ १०´´ उ० और देशा० ८८° २९´ ४८´´ पू० पर अवस्थित है। साधारण लोग इसे केदिटो कहते हैं। यहां प्रायः ५००० आदमी रहते हैं। विद्यालय और डाकघरको छोड़ क़ादीहाटीमें अनेक सम्भ्रान्त लोगोंके घर भी बने हैं।

काद्रवेय (सं० पु०) कद्रोरपत्यं पुमान्, कद्रु-ठक्। स्त्र्यादिभ्यश्च। पा ४।१।१२१। १ कद्रुके पुत्र। शेष, अनन्त, वासुकि, तक्षक, भुजङ्गम और कुलिक 'काद्रवेय' कहाते हैं।*

२ अर्बुद। ३ कसर्पीर।

कान (हिं० पु०) १ कर्ण, गोश। कर्ण देखो। २ श्रवणशक्ति, सुननेकी ताक़त। ३ कना, लकड़ीका एक टुकड़ा। इसे इक्के भारी कूंड़ चौड़ा करनेको बांधते हैं। ४ स्वर्णालङ्कार विशेष, एक गहना। इसे कानमें पहनते हैं। ५ भद्दा कोना। ६ कनेव, चारपायीका टेढ़ापन। ७ पलंगा। ८ रंजकदानी, पियाली। (स्त्री०) कानि देखो।

कानक (सं० क्ली०) कनकं फलमिव उग्रं फलं यस्तास्य, कनक-अण्। १ जैपालवीज, जायफल। राजवल्लभके मतानुसार यह तीक्ष्ण, उष्णवीर्य, सारक और उत्क्लेदकारक है। २ धुस्तूरवीज, धतूरेका बीज। (त्रि०) ३ कनक सम्बन्धीय, सोनेका बना हुआ।

कानकचूर्ण (सं० क्ली०) औषधविशेष, एक दवा। गृहधूम, यवक्षार, त्रिकटु, पाठा, रसाञ्जन, पथ्य, त्रिफला, जारित लौह और चित्रक बराबर बराबर कूटपीस कर छाननेसे यह बनता है। इसे मधुके साथ मुखमें रखनेसे मुखरोग आरोग्य होते हैं। (चक्रदत्त)

कानगो (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह कोङ्कण देशमें होता है। इसका तेल पीना रहता और दवा बनाने तथा जलानेमें लगता है। फल जायफलसे मिलता है।

* "शेषोऽनन्तो वासुकिश्च तक्षकश्च भुजङ्गमः। कूर्मश्च कुलिकश्चैव काद्रवेयाः प्रकीर्तिताः॥" (महाभारत १।६५।४१)

उसमें सोमसंग्रह होता है। फिर यदि परस्पर विरोधी दो यजमान इसी प्रकार एक स्थानपर यज्ञके लिये सोमका अभिषव करें, तो मिलित भावमें कार्य करनेके लिये उसको संसव कहते हैं। उसमें समुदाय कर्म सत्वर सम्पादन करना उचित है। देशकाल भिन्न होनेसे, पर्वतादिका व्यवधान रहनेसे और परस्पर अविरोधी होनेसे वह संसव नहीं होता। इसी प्रकार भेदका कथन है। संसवविषयमें अपनी भांति मृत्युकामनाकारी होमादिकर्तृक कर्तव्य कर्मविशेषका विधान है। यथा—होताके मृत्युकामनाकारी होता, अध्वर्युके मृत्युप्रार्थी अध्वर्यु और यजमानके मरणाकाङ्क्षी यजमानको वही कर्म सम्पादन करना चाहिये। यह यज्ञ परस्पर द्वेष रहनेसे ऐसे देशमें अनुष्ठित होता जहाँ रथपर बैठ एक दिनमें जा सकें। परस्पर द्वेष न रहने अथवा उक्त नियमकी अपेक्षा देशका दूरत्व पड़नेसे अनुष्ठान असम्भव है। पूर्वोक्त होता प्रभृतिके मध्य एक जनमात्र कर्मका अनुष्ठान करनेसे अथवा एक जन मरनेसे स्व स्व यज्ञमध्यवर्ती अध्वर्यु प्रभृति अवशिष्ट कर्म सम्पादन करेंगे। उसमें अन्य वरणकी अपेक्षा करना नहीं पड़ती। सोमादि नष्ट जानेसे प्रतिनिधि द्रव्य द्वारा कर्म समापन करना चाहिये। अथ गोदान कर यह यज्ञ समापन करनेका विधि है। द्वादश रात्रिके पूर्व यह दोष आनेसे पुनर्वार यज्ञारम्भ और परिशेषको अथ गोदान दक्षिणामात्र प्रायश्चित्त करना चाहिये। इसी प्रकार मतान्तरका विधान है। ब्रह्मका जो विहित कर्ममें अधिकार रहने और विशेष आदेश न मिलनेसे समुदाय प्रायश्चित्त होममें ब्रह्मका अधिकार है और ब्रह्मशून्य अग्निहोत्रादि कार्यमें यजमानके ही अधिकारका विधि कहा है।

२६श अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। इन समस्त कण्डिकाओंमें प्रवर्ग्यका उपयोगी महावीरसम्भरण कर्म प्रतिपादित है। (यथा—मृत्पिण्ड, वल्मीकलोष्ट्र, शूकरकर्तृक उत्पाटित मृत्तिका, पूतिका नामक लताविशेष और गवेधुक नामक अजलोमविहित महावृक्षजात शल्कविशेष—समस्त द्रव्य अश्वपूर्वक पूर्वदिक् वा उत्तरदिक् रख कृष्णमृगचर्म और कुद्दालको उत्तरदिक् रखना चाहिये।) उक्त समस्तके ग्रहण और निधानका मन्त्रकथन है। इसमें कुम्भकारकर्तृक भाण्डादि निर्माणको उपयोगी एवं अति चिक्कण मृत्तिका ग्रहण करना पड़ती है। ऐसी मृत्तिका कृष्णमृगचर्मको उत्तरदिक् रखना चाहिये। उसको दक्षिणदिक् वल्मीकलोष्ट्र रखते हैं। समचतुष्कोण भूभागको पूर्वदिक्में द्वार और सात बार भूसंस्कार कर उसके ऊपर वालुका आच्छादनपूर्वक उसमें पञ्च अरत्नि अर्थात् प्रायः पांच हाथ परिमित मृगचर्म डाल उसके ऊपर उपकरणसमूह रख देना चाहिये। उत्क्षेपण, जलद्वारा अभिषिञ्चन और सन्तार द्वारा संसर्गविषयमें मन्त्रसमूहका कथन है। उसके अनन्तर अध्वर्युका गवेधुक और छागदुग्ध पृथक् भावसे रख वल्मीकलोष्ट्रादिके साथ मृत्पिण्ड मिलाना चाहिये। उसके पीछे महावीर कर्तव्य है। उसका स्वरूप है। (यथा—परिमाणमें एक प्रादेश अर्थात् अर्ध हस्त और मध्यदेश उलूखलकी भांति उच्छ्रित रहता है। उपरिभागमें तीन अङ्गुलिपरिमित स्थानके अनन्तर ही यह उच्छ्रित मेखला लगाना पड़ती है।) महावीर निष्पन्न होनेसे "मखस्य शिरः" मन्त्र पाठपूर्वक उसके स्पर्शका विधि है। किसीके मतमें इस मन्त्र द्वारा उसका ग्रहण है। इसी प्रकार अपर दो महावीरका विधान है। अभिमर्शनके पीछे समुदायको भूमिमें निहत करनेका विधि है। स्रुक्के मुखकी भांति आकृतिविशिष्ट, रौहिण कपाल एवं वक्ष्यमाण पुरोडाशकपालकी भांति गोलाकार दोहनपात्रद्वय भूमिमें स्थापनकर अवशिष्ट मृत्तिका प्रायश्चित्तके लिये निहत करना चाहिये। "मखाय त्वेति" मन्त्र पाठपूर्वक गवेधुकसमूह धूपकर अश्वपुरीष द्वारा प्रदीप्त दक्षिणाग्निसे "अश्वस्य त्वेति" मन्त्र पाठपूर्वक इस मृत्तिकामें धूपदान करते हैं। उखाकी भांति प्रदाहन आदिका विधि है। चतुष्कोण अवट खना उसमें श्रपण अर्थात् पाकसाधन काष्ठादि बिछा उसके ऊपर तीन महावीर वक्र भावसे रखने पड़ेंगे। पीछे उसके ऊपर पुनर्वार इस काष्ठका आच्छादन डाल दक्षिणाग्नि द्वारा जलाना चाहिये। दग्ध होने पर फिर

कानड़गौड़ (सं० पु०) कानड़ा और गौड़से उत्पन्न एक राग।

कानड़नट (सं० पु०) कानड़ा और नटके संयोगसे निकला एक राग।

कानड़ा (सं० स्त्री०) एक रागिणी। इसका स्वरग्राम नि सा ऋ ग म प ध है। ११से १५ दण्ड रात्रि चढ़ते यह गायी जाती है। भिन्न भिन्न राग-रागिणीके मिलने पर १८ प्रकारके मिश्रकानड़ाकी उत्पत्ति होती है,— १ दरबारी कानड़ा, २ नायकी कानड़ा, ३ सुहा कानड़ा ४ कौशिकी कानड़ा, ५ बागेश्री कानड़ा, ६ नट कानड़ा, ७ काफी कानड़ा, ८ कोलाहल कानड़ा, ९ मङ्गल कानड़ा, १० श्याम कानड़ा, ११ टङ्क कानड़ा, १२ नागध्वनि कानड़ा, १३ अड़ाना, १४ शाहाना, १५ सुघा कानड़ा, १६ सुघर कानड़ा, १७ हुसेनी कानड़ा और १८ मियांकी जयजयन्ती।

कानड़ा (हिं० वि०) १ काण, काना। २ अन्धो रानीका घर। यह मात समुन्दर खेलमें होता है।

कानद (सं० पु०) भीमरथके पुत्र।

कानन (सं० क्ली०) कं जलं अननं जीवनं अस्य, बहुव्री०। यद्वा काननति दीपयति, कन-णिच्-ल्युट्। १ वन, जंगल। अस्य प्रपञ्चः काननम्। २ ब्रह्माका मुख। ३ गृह, घर।

काननचन्द्र—टिकारीके एक विख्यात राजा।
(टिकारी ११।१।१)

काननाग्नि (सं० पु०) काननस्थ्यातोऽग्निः, मध्यपदलो०। दावानल, जंगलमें लगनेवाली आग।

काननारि (सं० पु०) काननस्य अरिरिव, उपमित समा०। शमीवृक्ष, छुमनिका पेड़। इसकी मध्यस्थित शाखा रगड़नेसे अग्नि प्रज्वलित हो कभी कभी समग्र वन जला डालता है। इसीसे इसको 'काननारि' (जङ्गलका दुश्मन) कहते हैं।

काननौका (सं० पु०) कानने ओकः स्थानमस्य, बहुव्री०। १ वनवासी, जङ्गलमें रहनेवाला। २ कपि, लङ्गूर। ३ वानर, बन्दर।

कानपुर—युक्तप्रदेशका एक जिला और नगर। यह जिला अक्षा० २५° २६' से २६° ५८' उ० और देशा० ७९° ३१' से ८०° ३४' पू० तक अवस्थित है। कानपुर इलाहाबाद विभागके पश्चिमांशमें पड़ता है। इसके उत्तरपूर्व गङ्गानदी, पश्चिम फरुखाबाद तथा इटावा, दक्षिणपश्चिम यमुना और पूर्व फतेहपुर है। इस जिलेका सदर मुकाम कानपुर नगर है।

कानपुर जिला गङ्गा-यमुनाके अन्तर्गत सुविस्तृत दोआब प्रदेशका मध्यवर्ती है। इस जिलेमें गङ्गा और यमुनाको छोड़ दूसरी भी अनेक क्षुद्र क्षुद्र नदी हैं। साधारणतः भूमिका भाग दक्षिण-पश्चिमके अभिमुख ढालू पड़ता है। चार प्रधान क्षुद्र नदियोंसे कानपुर जिला चार प्रधान भागोंमें विभक्त है। गङ्गाकी उपनदी ईशानने उत्तर दिक् एक खण्ड त्रिकोणाकार भूमिको काट दिया है। मध्यमें पाण्डु (पाण्डव) और रिन्द दो नदियोंसे दूसरे दो विभाग बने हैं। फिर अवशिष्ट भूखण्डके मध्य यमुनाकी उपनदी सेंगुर वर्तमान है। इन सकल नदियोंका तोड़ फोड़ बहुत अधिक विस्तृत और गम्भीर है। कानपुर जिलाके मध्य गङ्गा यमुनामें वर्षाके समय बड़ी बड़ी नौका आ-जा सकती है, किन्तु अन्य समय क्षुद्र क्षुद्र नौका व्यतीत बड़ी नौकाओंका चलना कठिन है। क्षुद्र क्षुद्र नदी ग्रीष्मकालमें प्रायः सूख जाती है। १८५७ ई० तक कानपुर नगरके नीचे आने-जानेको गङ्गापर नावका पुल बंधा था। फिर अवध-रुहेलखण्ड रेलपथके लिये गङ्गापर पक्का पुल बना। आजकल बी० एन० डबल्यु० आर० ने भी अपना दूसरा पक्का पुल बनवा लिया है।

कानपुर जिलेकी भूमि स्वभावतः उच्च है, किन्तु अब गङ्गासे नहर निकलनेके कारण अधिक उर्वरा और शस्यशालिनी बन गई है। इस नहरकी शाखाप्रशाखासे छोड़ समस्त जिलेमें जल पहुंचानेका प्रबन्ध बंधा है। इस जिलेमें कई झील हैं। सिकन्दरा परगनेमें सोना झील है; यह सिकन्दरेसे भोगिनीपुर तक चली गई है। सोना झील यमुनासे दो मील दूर है। यमुना आजकल जहां होके निकली कुछ हट कर बही है, यह झील भी ठीक उसके समानान्तर आधी मील लौं घूम घूम कर चली है। इसीसे कोई कोई सोना झीलको यमुना नदीका प्राचीन गर्भ बतलाते हैं। किन्तु,

यह सब छागदुग्धसे सींचना पड़ेगा। २य कण्डिकामें महावीरके विधान पीछे अध्वर्युके आचरणका विधान है। गार्हपत्यके पूर्व प्रागग्रकुशसमूह फैला उस पर पात्रसमूहके स्थापनका विधि है। प्रोक्षणी संस्कृत और उत्थित कर ब्रह्मको अनुज्ञाका करण है। होतादिका प्रेषण है। गृहके पूर्वद्वारसे स्रुवा और मयूख निकाल गृहको दक्षिणदिक् जहां बैठ होता निखात स्रुवा और मयूख देख सके, वहीं उसके निखात करनेका विधि है। गार्हपत्य और आहवनीयमें उत्तरदिक् खरनिवाप है। दक्षिणदिक् भित्तिलग्नभावसे उच्छिष्ट खरनिवापकी कर्तव्यता है। आहवनीयकी पूर्वदिक् सम्राडासन्दी आहरण कर दक्षिणदिक् प्राचीग्रहण होता है। उत्तरदिक् राजासन्दी और कृष्णाजिन आस्तरण कर उसमें महावीर निधान अथवा उसके द्वारा आच्छादन करना चाहिये। अध्वर्यु वा अन्य कोई स्रुवादि निष्क्रामण करेगा। पीछे विहित सिकताके मध्य महावीरका प्रवेशन कहा है। ३य कण्डिकामें प्रस्तोताका प्रेषण है। पत्नीशिरःका आच्छादन है। आज्यसंस्कारके काल शरत्पण जला सिकताके मध्य स्थापनका विधि है। उक्त सकल मुञ्जप्रलवमें संस्कृत घृतपूर्ण महावीरका निधान है। महावीरके ऊपर प्रादेशधारक मन्त्रका पाठ है। दक्षिणदिक् यजमानके उत्तान पाणिका निधान है। उत्तरदिक् प्रादेशका निधान है। महावीरको चतुर्दिक् अङ्गारक्षेप कर परिश्रयणका विधि और महावीरके आच्छादनका विधि कथित है। ४र्थ कण्डिकामें आच्छादनके समय प्रस्तोताका प्रेषण है। महावीरको चतुर्दिक्-कृष्णाजिन निर्मित व्यजन द्वारा व्यजन करनेका विधि है। व्यजनके समय वाम और दक्षिणभावसे तीन बार प्रदक्षिणका विधान है। तेजः प्रदीप्त होनेसे उसमें सौ सोसे घृत द्वारा महावीरको सींचनेका विधि है। उसी समय प्रतिप्रस्थाताके घर्मपाकका विधि है। पाकशेष पर चरुके स्थापनका नियम है। प्रस्तोताका प्रेषण है। यजमानके साथ ऋत्विकोंका परिक्रमण है। प्रस्तोता व्यतीत अपर प्रत्येक ऋत्विक्के उपस्थानका विधि है। प्रस्तोताके साथ छहों छन्दोगोंके परिक्रमणका विधि है। पत्नीके शिरका आच्छादन खोल उसके द्वारा महावीरमोचनविधि है। परिश्रितको रौहिण आहुति-का विषय कथित है। ५म कण्डिकामें घर्मधुक् बन्धनके लिये रज्जु और उसके पद बन्धनको सन्दान ग्रहणपूर्वक गार्हपत्यमें जा मन्त्र एवं उपांशु नाम उच्चारणपूर्वक उच्चैःस्वरसे तीन बार उसके आह्वानका विधि है। प्रस्तोताका प्रेषण है। मन्त्रपाठके अनु-सार समागत गौको उक्त रज्जु द्वारा स्रुवामें बांध और सन्दान द्वारा उसके पद बन्धन कर "धर्माय दीष्वेति" मन्त्र पढ़ वत्सको स्तनपानसे विरत करना चाहिये। विहित मन्त्रपाठपूर्वक पिन्वन नामक पात्र-विशेषमें उसके दोहनका विधि है। स्तनालम्भनका विधि है। ऐसे ही मयूखमें छाग बांध प्रतिप्रस्थाता उसको दोहन करेगा। प्रतिप्रस्थाताके प्रेषणका विधि है। गौके निकटसे अध्वर्युके उत्थानका नियम है। परीशासद्वयके ग्रहणका विधि है। परीशासद्वय द्वारा महावीर ग्रहण एवं उन्हें उत्क्षिप्तकर पुनर्वार उन्हें ग्रहण करनेका नियम है। दुग्धरूप धर्मके निम्न-देशमें उपयमनीका स्थापन है। उपयमनी द्वारा गृहीत महावीर पर छागदुग्ध सेचन कर निर्वापित करने और गोदुग्ध अवनयन करनेका विधि है। ६ष्ठ कण्डिकामें आहवनीयमें जा वातनाम जपका विधि है। उपयमनीमें पतित दुग्ध वा घृतका सिञ्चनविधि है। उसके पीछे प्रस्तोताके प्रेषणका विधि है। वषट्कारके साथ मन्त्रपाठपूर्वक होमका विधि है। तीन बार महावीर उत्कम्पन करनेका नियम है। वषट्कारयुक्त मन्त्रपाठ-पूर्वक पुनर्वार होमका विधि है। हुतावशिष्ट द्रव्यका मन्त्रानुमन्त्रण है। यजमानकर्तृक धर्मका अनुक्रमण है। पतितके लिये पात्रमें उच्छ्रित धर्मके लेशसमूहका अनुमन्त्रण है। ईशानदिक्को गमन कर सिकताके मध्य अध्वर्यु कर्तृक महावीरके निधानका विधि है। निम्नस्थ धर्मके मध्य शकल द्वारा आहुति-दानपूर्वक प्रथम परिधिमें विकङ्कत शकलसमूह निधान करनेका विधि है। ऐसे ही तीन बार आहुति दे अवशिष्ट शकल दक्षिणदिक् कुशमें प्रवेश करा देना चाहिये। अहुत समस्त शकल महावीरस्थ घृतादि द्वारा

आज भी इस सम्बन्धमें कोई प्रमाण वा प्रतिवाद नहीं मिलता। इसी प्रकार रसूलाबाद और शिवराजपुरमें २५ मील विस्तृत स्रोत है। उसे भी लोग प्राचीन नदी का गर्भ मानते हैं। इस जिलेमें जंगल न होते भी स्थान स्थान पर भूमि पड़ी है। पतित भूमिमें किंशुक (ढाक) वृक्ष ही अधिक विद्यमान है। कानपुर जिलेमें चीता, बाघ, नीलगाय, हरिण, लोमड़ी, शृगाल, शूकर इत्यादिको छोड़ अन्य कोई वन्य जन्तु देख नहीं पड़ता।

इस जिलेमें युक्तप्रान्तके सब जातिवाले हिन्दू, सकल श्रेणीके मुसलमान और यूरोपीय रहते हैं। ग्रामका सामाजिक बन्धन अन्तर्वेदके अन्यान्य स्थानोंकी भांति है। जमीन्दार ही प्रथम गण्य है। प्रधानतः ब्राह्मण और राजपूत ही जमीन्दार होते हैं; उसके पीछे साविक अधिवासियोंके वंशधर कृषक हैं। यह जमीन्दारोंकी जमीन वंशानुक्रमसे मौरूसी तौरपर जोतते हैं। फिर बनियों और दुकान्दार हैं। इसी प्रकार दूसरे किसान, नाई, लोहार, कुम्हार इत्यादि रहते हैं।

कानपुर जिलेमें खेती बारीका विशेष प्रभेद देख नहीं पड़ता। दोआबके अन्यान्य स्थलोंमें जैसी प्रणालीसे कृषिकार्य चलता, यहां भी वैसे ही हुआ करता है। कानपुरमें दो बड़ी फसलें होती हैं। शरत्कालमें होनेवाली फसलको खरीफ और वसन्त कालमें होनेवाली फसलको रबी कहते हैं। ज्येष्ठकी प्रथम वृष्टिमें खरीफ बोते हैं। इस फसलमें धान, मकई, बाजरा, ज्वार, कपास, नील इत्यादि होता है। इसका अधिकांश आश्विन मासमें पक जाता है। धान शीघ्र शीघ्र पकनेसे भाद्रमें भी काट लेते हैं, किन्तु कपास फाल्गुन व्यतीत चुननेके लायक नहीं होती। रबी आश्विनमें बोई और चैत्र वैशाखमें काटी जाती है। इस जिलेका प्रधान खाद्य गेहूं है। आज कल कानपुरमें कपास बहुत बोते हैं। कारण इससे लाभ बहुत होता है। यहां खेतीकर लोग एक प्रकार स्वच्छन्द संसारयात्रा चलाते हैं। किन्तु चमार, काछी, कुरमी प्रभृति कृषक श्रेणी बहुत दरिद्र हैं। इसीसे कानपुरकी दरिद्रता अति प्रसिद्ध है। उत्तरांचलमें ज्वार तथा गेहूं और दक्षिणांचलमें बाजरा अधिक उपजता है। बिल्हौर, रसूलाबाद और शिवराजपुरके दक्षिणांशमें धान्य होता है। शिवराजपुरके उत्तरांशमें नील ही प्रधान है। सकल खेत गङ्गाकी नहर, कूप, पुष्करिणी, गड्ढे, झील इत्यादिसे सींच आबाद किये जाते हैं। कानपुरमें अनावृष्टिका भय अधिक रहता है, सुतरां दुर्भिक्ष भी यथेष्ट ठहरता है। प्रधानतः इस जिलेके पश्चिमांशमें दुर्भिक्षके भयसे लोग घबराया करते हैं। कानपुरमें कई दुर्भिक्ष पड़े और उनसे लाखों लोग और जानवर मरे हैं।

कानपुरसे गल्ला, कपास और नीलका बीज बाहर भेजते हैं। यहां जो नील उपजता, उससे केवल बीज ही संग्रहीत होता है, वह बीज बिहार प्रदेशमें अधिक बिकता है। कानपुर नगरमें घोड़ेका साज, जूता, पोटमाण्टो इत्यादि चमड़ेका द्रव्यादि यथेष्ट और उत्कृष्ट रूपसे प्रस्तुत होता है। चमड़ेके कई कारखाने खुले हैं।

कानपुरके पुतलीघरोंमें रूईका कपड़ा भी बनता है। बहुतसे तम्बू और डेरे तैयार किये जाते हैं। कानपुरके पुराने किलेमें गवरनमेण्टने अपना चमड़ेका कारखाना खोल रखा है। उसमें सैन्यका व्यवहार्य द्रव्यादि बनता है। सरकारी आटेकी कल भी है। इसमें सैन्यके लिये आटा, सत्तू इत्यादि तैयार करते हैं। रेलपथ, नदी, नहर, पक्की और कच्ची सड़क प्रभृति नानाविध पथ यथेष्ट है। आर्यावर्तका प्रधान मार्ग ग्राण्ड-ट्राङ्करोड गङ्गाके समान्तराल इस जिलेमें प्रायः ६८ मील विस्तृत है।

यहां एक कलेक्टर मजिष्ट्रेट, दो ज्वाइण्ट मजिष्ट्रेट, एक असिष्टण्ट और दो डिपटी मजिष्ट्रेट रहते हैं। सकल प्रकारके राजस्वका पूरा परिमाण १८०२८६०) रु० है। पुलिस, टेलीग्राफ, विद्यालय इत्यादि सुविधाके अनुसार विद्यमान हैं।

कानपुर जिलेमें चार प्रधान नगर हैं। उनमें प्रत्येकमें ५ हजारसे अधिक लोग रहते हैं। प्रधान नगर कानपुरमें कोई ८०१००, बिठूरमें ७१८३,

लिप्त कर प्रतिप्रस्थाताको देते हैं। उसके पीछे द्वितीय रौहिणके होमका विधि है। मध्यम परिधिमें निहत पशु विकङ्कत गकल आहवनीयमें आहुति देना चाहिये। उपयमनीस्थ धर्मोत्थ अग्निहोत्रके विधानानुसार आहुति दे समुदाय ऋत्विक् प्रभृति भक्षण करते हैं। पात्रमें उच्छिष्ट धो कर उपयमनीको निधान करना पड़ता है। इसी समय उपयित पशु प्रकल आहवनीयमें प्रचार किये जाते हैं। उसके पीछे धेनुको छाप जल देनेका विधि है। समुदाय पात्रसमूह आसन्दी करनेका विधि है। खर, स्रुचा, मयूख, कृष्णाजिन, अभ्रि, उपयाम और आसन्दीके एक बार आच्छादन और प्रोक्षणका विधि कथित है। उस कण्डिकामें उपसदके पीछे प्रवर्ग्य उत्सादनका प्रकार है। अवगमकी भांति अध्वर्यवतर्क सामगानके लिये प्रस्तोताका प्रेषण है। अवगमकी भांति देशगति और निधन है। सामगानके पीछे सकलके उत्सादन देशमें अर्थात् महावीरादि पात्रके त्यागदेशमें गमनका विधि है। उस स्थानमें यज्ञ अग्निचितिशून्य होनेसे सकलके उत्तर वेदिमें गमनका विधि है। किन्तु यज्ञ अग्निचितियुक्त रहनेसे परिधन्वमें जाना पड़ता है। उक्त उत्सादन देश या उत्तर वेदि परिषेक कर उत्तर कार्यकी कर्तव्यता है। अध्वर्युको उत्तर वेदिमें प्रथम महावीर और मध्यदिक्में अपर दो महावीर निधान करना चाहिये। यहीं उपमधा अर्थात् महावीरादिको निर्माणावशेष मृत्तिका स्थापन करना पड़ती है। महावीरादिको चारो ओर परीमासदय निधान करते हैं। नीचे और बाह्य देशमें रौहिणी एवं हरणी नामक स्रुक्‌द्वय निधान करना चाहिये। रौहिणीको उत्तरदिक् अग्नि तथा दक्षिणदिक् आसन्दी और अभ्रिको उत्तरदिक् धवित्र अर्थात् कृष्णाजिन निर्मित व्यजन समूहमें निधान करते हैं। उसके [illegible] परिधि, उपयमनी, रज्जु, सन्दान, [illegible] पिन्व[illegible] रौहिण, कपाल, सु[illegible] धार प्रभृति [illegible] धीरादि सब पात्रके साथ सकलके पात्राव

पीछे यज्ञ दक्षिणाको याज्ञिक द्रव्यसमूहके प्रदानका विधि है। महावीर भग्न होनेसे यथाक्रम प्रायश्चित्त करनेका विधान है। इस प्रायश्चित्तका प्रकारादि है। प्रवर्ग्यके आरम्भका विधि है। उसमें पूर्णाहुति होमका प्रकार है। अभ्रियमाण महावीर भग्न होनेसे उसके प्रायश्चित्तका नियम है। प्रवर्ग्यके अधिकारीका निर्देश है। हुतशेष द्रव्यके भक्षणका विधि है। प्रवर्ग्य-आरम्भके आद्यन्तमें शान्तिकाध्यायके पाठका विधि है। इन दोनों अध्यायोंके मध्य १म अध्याय द्वारविधान पीछे और २य अध्याय आसन्दीमें पात्र निधानके पीछे पढ़ना पड़ता है।

कात्यायनसूत्रमें उक्त समस्त विषय अति विस्तृत भावसे वर्णित है।

निम्नलिखित व्यक्तिने कात्यायनश्रौतसूत्रका भाष्य बनाया है,—

१ अनन्त, २ कर्क, ३ कल्याणोपाध्याय, ४ गङ्गाधर, ५ गदाधर, ६ गर्ग, ७ पितृभूति, ८ भर्तृयज्ञ, ९ महादेव, १० मिश्राग्निहोत्री, ११ श्रीधर, १२ हरिहर। याज्ञिकदेवने श्रौतसूत्रपद्धति और पद्मनाभने कात्यायनसूत्रपद्धति नामसे स्वतन्त्र पद्धति रचना की है।

३ गोभिलके पुत्र कात्यायन। इन्होंने छन्दःपरिशिष्ट और कर्मप्रदीप रचना किया है। किसी किसीके अनुमानमें श्रौतसूत्रकार कात्यायन और छन्दः परिशिष्टके प्रणेता कात्यायन उभय अभिन्न व्यक्ति थे। किन्तु उभयकी रचनाप्रणाली देख वैसा बोध नहीं होता।

हरिवंशमें विश्वामित्रवंशीय कतिके पुत्र कात्यायनोंका * नाम मिलता है। फिर इसी विश्वामित्र वंशमें

---

* "विश्वामित्रस्य च सुता देवरातादयः स्मृताः।
विख्यातास्त्रिषु लोकेषु तेषां नामानि मे शृणु॥
देवश्रवाः कतिश्चैव यस्मात् कात्यायनाः स्मृताः।
शालावत्यां हिरण्याक्षो रेणोर्जातोऽथ रेणुमान्॥
साङ्कृतिर्गालवश्चैव मुद्गलश्चेति विश्रुताः।
मधुच्छन्दो जयश्चैव देवलश्च तथाष्टकः॥
कच्छपो हारितश्चैव विश्वामित्रस्य ते सुताः।
[illegible] कौशिकानां महात्मनाम्॥
[illegible]
[illegible]

कानड़गौड़ (सं० पु०) कानड़ा और गौड़से उत्पन्न एक राग।

कानड़नट (सं० पु०) कानड़ा और नटके संयोगसे मिलता एक राग।

कानड़ा (सं० स्त्री०) एक रागिणी। इसका स्वरग्राम नि सा रे ग म प ध है। ११से १२ दण्ड रात्रि पहुंते यह गायी जाती है। भिन्न भिन्न राग-रागिणीसे मिलने पर १८ प्रकारके मिश्रकानड़ाकी उत्पत्ति होती है,—१ दरबारी कानड़ा, २ नायकी कानड़ा, ३ शुद्ध कानड़ा ४ काफिकी कानड़ा, ५ बागेश्री कानड़ा, ६ नट कानड़ा, ७ कौशी कानड़ा, ८ कोलाहल कानड़ा, ९ मङ्गल कानड़ा, १० श्याम कानड़ा, ११ टङ्क कानड़ा, १२ नागध्वनि कानड़ा, १३ अड़ाना, १४ शाहाना, १५ सूहा कानड़ा, १६ सुघर कानड़ा, १७ हुसेनी कानड़ा और १८ मियांकी जयजयन्ती।

कानड़ा (हिं० वि०) १ काण, काना। २ बच्चो दानोंका घर। यह मात समुन्दर खेतमें होता है।

कानद (सं० पु०) भीमरथके पुत्र।

कानन (सं० क्ली०) कं जलं अननं जीवनं यस्य, बहुव्री० यद्वा काननति दीपयति, कन-णिच्-ल्युट्। १ वन, जंगल। अमर मतमः काननम्। २ ब्रह्माका मुख। ३ गृह, घर।

काननचन्द्र—टिकारीके एक विख्यात राजा। (टिकारी ११।२१२)

काननाग्नि (सं० पु०) काननस्य जातोऽग्निः, मध्यपदलो०। दावानल, जंगलमें लगनेवाली आग।

काननारि (सं० पु०) काननस्य अरिरिव, उपमित समा०। शमीवृक्ष, छोंकरका पेड़। इसकी मध्यस्थित शाखा रगड़नेसे अग्नि प्रज्वलित हो कभी कभी समस्त वन जला डालता है। इसीसे इसको 'काननारि' (जङ्गलका दुश्मन) कहते हैं।

काननौका (सं० पु०) काननं ओकः स्थानमस्य, बहुव्री०। १ वनवासी, जङ्गलमें रहनेवाला। २ कपि, लङ्गूर। ३ वानर, बन्दर।

कानपुर—युक्तप्रदेशका एक जिला और नगर। यह जिला अक्षा० २५° २६' से २६° ५८' उ० और देशा० ७९° ३१' से ८०° ३४' पू० तक अवस्थित है। कानपुर इलाहाबाद विभागके पश्चिमांशमें पड़ता है। इसके उत्तरपूर्व गङ्गानदी, पश्चिम फर्रुखाबाद तथा इटावा, दक्षिणपश्चिम यमुना और पूर्व फतेहपुर है। इस जिलेका सदर मुकाम कानपुर नगर है।

कानपुर जिला गङ्गा-यमुनाके अन्तर्गत सुविख्यात दोआब प्रदेशका मध्यवर्ती है। इस जिलेमें गङ्गा और यमुनाको छोड़ दूसरी भी अनेक छुद्र छुद्र नदी हैं। साधारणत: भूमिका भाग दक्षिण-पश्चिमके अभिमुख ढालू पड़ता है। चार प्रधान छुद्र नदियोंसे कानपुर जिला चार प्रधान भागोंमें विभक्त है। गङ्गाकी उपनदी ईशानने उत्तर दिक् एक खण्ड त्रिकोणाकार भूमिको बांट दिया है। मध्यमें पाण्डु (पाण्डव) और रिन्द दो नदियोंसे दूसरे दो विभाग बने हैं। फिर अवशिष्ट भूखण्डके मध्य यमुनाकी उपनदी सेंगुर वर्तमान है। इन सकल नदियोंका मोड़ फोड़ बहुत अधिक विस्तृत और गम्भीर है। कानपुर जिलाके मध्य गङ्गा यमुनामें वर्षाके समय बड़ी बड़ी नौका आ-जा सकती हैं, किन्तु अन्य समय छुद्र छुद्र नौका व्यतीत बड़ी नौकाओंका चलना कठिन है। छुद्र छुद्र नदी ग्रीष्मकालमें प्रायः सूख जाती हैं। १८५७ ई० तक कानपुर नगरके नीचे आने-जानेको गङ्गापर नावका पुल बंधा था। फिर अवध-रुहेलखण्ड रेलवेके लिये गङ्गापर पक्का पुल बना। आजकल बी० एन० डब्लू० आर० ने भी अपना दूसरा पक्का पुल बनवा लिया है।

कानपुर जिलेकी भूमि स्वभावत: उच्च है, किन्तु अब गङ्गासे नहर निकलनेके कारण अधिक उर्वरा और शस्यशालिनी बन गई है। इस नहरकी शाखाप्रशाखासे छोड़ समस्त जिलेमें जल पहुंचानेका प्रबन्ध बंधा है। इस जिलेमें कई झील हैं। सिकन्दरा थानेमें सींगा झील है; यह सिकन्दरेसे मोहिनीपुर तक चली गई है। सींगा झील यमुनासे दो मील दूर है। यमुना आजकल जहां जैसे जितनी कुछ हट कर बहती है, यह झील भी ठीक उसके समानान्तर भावमें वैसे ही घूम घूम कर चली है। इसीसे कोई कोई सींगा झीलको यमुना नदीका प्राचीन गर्भ बतलाते हैं। किन्तु

वेदशाखाप्रवर्तक साङ्कृति, गालव, मुद्गल, मधुच्छन्दा, देवल, अष्टक, कश्यप, हारित, पाणिनि, बभ्रु, ध्यानजप्य, देवरात, शालङ्कायन, वास्कल, वेणु, याज्ञवल्क्य, अघमर्षण, औडुम्बर, तारकायन प्रभृति आविर्भूत हुये। उनमें याज्ञवल्क्यने शुक्लयजुः अर्थात् वाजसनेयी शाखा का प्रचार किया। श्रौतसूत्रकार कात्यायन उक्त वाजसनेयी शाखाके अनुवर्तक थे। इसी कारण समझते हैं कि विश्वामित्रवंशीय (याज्ञवल्क्यके अनुवर्ती) कात्यायन ऋषि ही कात्यायनश्रौतसूत्रके रचयिता थे।

स्मृतिकार कात्यायन गोभिलके पुत्र थे। * कात्यायनके कर्मप्रदीप नामक स्मृति ग्रन्थमें निम्नलिखित सकल विषय आया है,—

यज्ञोपवीत, आचमन, मातृगण, आभ्युदयिकश्राद्ध, ऊढ़ाश्राद्धका कृत्य, परिवेदनदोष, उसका प्रतिप्रसव, स्थण्डिलरेखा, अग्न्याधान, अरणिविधि, अग्न्याहार, स्रुवादिलक्षण, सायंप्रातर्होमकाल, होमेतिकर्तव्यता, स्नानादिक्रिया, सन्ध्योपासना, तर्पण, पञ्चयज्ञप्रकरण, दक्षिणादिभाव, आज्यस्थाल्यादि, अमावास्या श्राद्धकाल, श्राद्धभोक्तृकथन, चरु विधि, दर्शपौर्णमासहोमकालादि, प्रवासियोंका पूर्वकृत्य, स्त्रीकर्तव्यकर्म, दाम्पत्यसन्निकर्ष कृत्यादि, प्रेतकार्य, शोकोपनोदन, पर्णनरदाहादि, अशौचमें वर्जनद्रव्यादि, षोड़शश्राद्धादि, होमीयविशेष, चरु, गो प्रभृत्यादि काल, नवयज्ञकाल, अन्वाहार्य नाम एवं विधि, अज्ञातादिसंज्ञा और नाना विधि।

छन्दोग्रन्थमें ब्राह्मणोंका दशविध संस्कार और वास्तुक्रियादि लिखा है।

४ कात्यायन वररुचि। अनेक लोग इन्हींको पाणिनिसूत्रका वार्तिककार बताते हैं। सोमदेव भट्टविरचित कथासरित्सागरमें लिखा है,—"पुष्पदन्त नामक महादेवके एक अनुचरने गौरीकर्तृक अभिशप्त हो मर्त्यलोक आ वत्सराजधानी कौशाम्बी नगरीमें सोमदत्त नामक ब्राह्मणके औरससे जन्म ग्रहण किया था। वही कात्यायन वररुचिके नामसे विख्यात हुये। उनके जन्मकाल आकाशवाणी सुन पड़ी थी, 'यह बालक श्रुतिधर होगा और वर्ष पण्डितके निकट समस्त विद्या लाभ करेगा। व्याकरण शास्त्रमें इसकी असाधारण व्युत्पत्ति होगी और वर अर्थात् श्रेष्ठ विषयमें रुचि बढ़नेसे वररुचि * नाम पड़ेगा।' वयोवृद्धिके साथ वह असीम बुद्धि और धीशक्तिसम्पन्न हो गये। एक दिन उन्होंने किसी नाटकका अभिनय देख माताके निकट वही नाटक समस्त आद्योपान्त आवृत्ति किया और उपनयनके पूर्व व्याड़िके मुखसे प्रातिशाख्य सुन उसे समस्त कण्ठस्थ कर लिया था। कात्यायनने अवशेषको वर्षका शिष्यत्व ग्रहण कर नाना शास्त्रमें पाण्डित्य लाभ किया, यहां तक कि उन्होंने व्याकरणिक तर्कमें पाणिनिको भी हरा दिया। अव शेषमें महादेवके अनुग्रहसे पाणिनिने जय पाया। कात्यायनने महादेवको क्रोधशान्तिके निमित्त पाणिनिव्याकरण पढ़ उसको सम्पूर्ण और संशोधित किया था। परिशेषको वह मगधराज योगानन्दके मन्त्रिपदपर नियुक्त हुए।

हेमचन्द्र, मेदिनी और त्रिकाण्डशेष अभिधानमें कात्यायनका एक नाम वररुचि † लिखा है।

अध्यापक मोक्षमूलरके मतमें भी वार्तिककार कात्यायन वररुचि और प्राकृतप्रकाश नामक

---

* "अथातो गोभिलोक्तानामन्येषां चैव कर्मणाम्।
असष्टानां विधिं सम्यग् दर्शयिष्ये प्रदीपवत्॥" (कर्मप्रदीप १।१)

यहां टीकाकारोंने गोभिलको कात्यायनका पिता माना है। छन्दोग्रन्थमें भी ऐसा ही परिचय मिलता है। यथा—
"पुनर्वसुमतिज्ञानं यच्च सिंहावलोकितम्।
गोभिलेन यथाप्रीति न तैः प्रोक्तानि गोभिलम्॥
गोभिलाचार्यपुत्रस्य योऽधीते संवदं पुमान्।
सर्वकर्मसन्दिग्धः परां सिद्धिमवाप्नुयात्॥"
(छन्दःसंग्रह १। २८-२९)

* "एतच्छ्रुतिधरो जातो विद्या वर्षादवाप्स्यति।
किञ्च व्याकरणं लोके प्रतिष्ठां प्रापयिष्यति॥
नाम्ना वररुचिश्चायं यदस्मै हि रोचते।
यद्यद् वरं भवेत् किञ्चिदित्युक्त्वा वागुपारमत्॥"
(सोमदेवकृत कथासरित्सागर)

† हेमचन्द्रकृत अभिधानचिन्तामणि ३।५१६, मेदिनी नान्त १०१ और त्रिकाण्डशेष २।७।२२।

आज भी इस सम्बन्धमें कोई प्रमाण वा प्रतिवाद नहीं मिलता। इसी प्रकार रसूलाबाद और शिवराजपुरमें २५ मील विस्तृत स्रोत है। उसे भी लोग प्राचीन नदी का गर्भ मानते हैं। इस जिलेमें जंगल न होते भी स्थान स्थान पर भूमि पड़ी है। पतित भूमिमें किंशुक (ढाक) वृक्ष ही अधिक विद्यमान है। कानपुर जिलेमें चीता, बाघ, नीलगाय, हरिण, लोमड़ी, शृगाल, शूकर इत्यादिको छोड़ अन्य कोई वन्य जन्तु देख नहीं पड़ता।

इस जिलेमें युक्तप्रान्तके सब जातिवाले हिन्दू, सकल श्रेणीके मुसलमान और यूरोपीय रहते हैं। ग्रामका सामाजिक बन्धन अन्तर्वेदके अन्यान्य स्थानोंकी भांति है। ज़मींदार ही प्रथम गण्य है। प्रधानतः ब्राह्मण और राजपूत ही ज़मींदार होते हैं; उसके पीछे साविक अधिवासियोंके वंशधर लापक हैं। यह ज़मींदारोंकी ज़मीन वंशानुक्रमसे मौरूसी तौरपर जोतते हैं। फिर बनियों और दुकान्दार हैं। इसी प्रकार दूसरे किसान, नाई, लोहार, कुम्हार इत्यादि रहते हैं।

कानपुर जिलेमें खेती बारीका विशेष प्रभेद देख नहीं पड़ता। दोआबके अन्यान्य स्थलोंमें जैसी प्रणालीसे कृषिकार्य चलता, यहां भी वैसे ही हुआ करता है। कानपुरमें दो बड़ी फसलें होती हैं। शरत्कालमें होनेवाली फसलको खरीफ और वसन्त कालमें होनेवाली फसलको रबी कहते हैं। ज्येष्ठकी प्रथम वृष्टिमें खरीफ़ बोते हैं। इस फसलमें धान, मकई, बाजरा, ज्वार, कापास, नील इत्यादि होता है। इसका अधिकांश आश्विन मासमें पक जाता है। धान शीघ्र शीघ्र पकनेसे भाद्रमें भी काट लेते हैं, किन्तु कपास फागुन व्यतीत बुननेके लायक नहीं होती। रबी आश्विनमें बोई और चैत्र वैशाखमें काटी जाती है। इस जिलेका प्रधान खाद्य गेहूं है। आज कल कानपुरमें कपास बहुत बोते हैं। कारण इससे लाभ बहुत होता है। यहां खेतीकर लोग एक प्रकार स्वच्छन्द संसारयात्रा चलाते हैं। किन्तु चमार, काछी, कुरमी प्रभृति लापक श्रेणी बहुत दरिद्र हैं। इसीसे कानपुरको दरिद्रता अति प्रसिद्ध है। उत्तरांशमें ज्वार तथा गेहूं और दक्षिणांशमें बाजरा अधिक उपजता है। बिल्हौर, रसूलाबाद और शिवराजपुरके दक्षिणांशमें धान्य होता है। शिवराजपुरके उत्तरांशमें नील ही प्रधान है। सकल क्षेत्र गङ्गाकी नहर, कूप, पुष्करिणी, गड्ढे, झील इत्यादिसे सींच आबाद किये जाते हैं। कानपुरमें अनावृष्टिका भय अधिक रहता है, सुतरां दुर्भिक्ष भी यथेष्ट ठहरता है। प्रधानतः इस जिलेके पश्चिमांशमें दुर्भिक्षके भयसे लोग घबराया करते हैं। कानपुरमें कई दुर्भिक्ष पड़े और उनसे लाखों लोग और जानवर मरे हैं।

कानपुरसे गल्ला, कपास और नीलका बीज बाहर भेजते हैं। यहां जो नील उपजता, उससे केवल बीज ही संगृहीत होता है, वह बीज बिहार प्रदेशमें अधिक बिकता है। कानपुर नगरमें घोड़ेका साज, जूता, पोर्टमाण्टो इत्यादि चमड़ेका द्रव्यादि यथेष्ट और उत्कृष्ट रूपसे प्रस्तुत होता है। चमड़ेके कई कारखाने खुले हैं।

कानपुरके पुतलीघरोंमें रुईका कपड़ा भी बनता है। बहुतसे तम्बू और डेरे तैयार किये जाते हैं। कानपुरके पुराने क़िलेमें गवरनमेण्टने अपना चमड़ेका कारखाना खोल रखा है। उसमें सैन्यका व्यवहार्य द्रव्यादि बनता है। सरकारी आटेकी कल भी है। इसमें सैन्यके लिये आटा, सत्तू इत्यादि तैयार करते हैं। रेलपथ, नदी, नहर, पक्की और कच्ची सड़क प्रभृति नानाविध पथ यथेष्ट है। आर्यावर्तका प्रधान मार्ग ग्राण्ड-ट्राङ्करोड गङ्गाके समान्तराल इस जिलेमें प्रायः ६८ मील विस्तृत है।

यहां एक कलेक्टर मजिष्ट्रेट, दो ज्वाइण्ट मजिष्ट्रेट, एक असिष्टाण्ट और दो डिपटी मजिष्ट्रेट रहते हैं। सकल प्रकारके राजस्वका पूरा परिमाण ३८०२८६० रु० है। पुलिस, टेलीग्राफ, विद्यालय इत्यादि सुविधाके अनुसार विद्यमान हैं।

कानपुर जिलेमें चार प्रधान नगर हैं। उनके प्रत्येकमें ५ हजारसे अधिक लोग रहते हैं। प्रधान नगर कानपुरमें कोई ८०१७०, बिठूरमें ७१३३,

लिप्त कर प्रतिप्रस्थाताको देते हैं। उसके पीछे द्वितीय रौहिणके होमका विधि है। मध्यम परिधिमें निहत पशु विकङ्कत शकल आहवनीयमें आहुति देना चाहिये। उपयमनीस्थ धर्मोत्थ अग्निहोत्रके विधानानुसार आहुति दे समुदाय ऋत्विक् प्रभृति भक्षण करते हैं। घर्ममें अवशिष्ट घीत कर उपयमनीको निधान करना पड़ता है। इसी समय उपयित पशु शकल आहवनीयमें प्रहार किये जाते हैं। उसके पीछे धेनुको दूध जल देनेका विधि है। समुदाय पात्रसमूह आसन्दी करनेका विधि है। खर, स्रुचा, मयूख, कृष्णाजिन, अभ्रि, उपयाम और आसन्दीके एक बार आसादन और प्रोक्षणका विधि कथित है। ७म कण्डिकामें उपसदके पीछे प्रवर्ग्य उत्सादनका प्रकार है। पवमानकी भांति अध्वर्युकर्तृक सामगानके लिये प्रस्तोताका प्रैष है। पवमानकी भांति देवगति और निधन है। सामगानके पीछे उखाके उत्सादन देशमें अर्थात् महावीरादि पात्रके त्यागदेशमें गमनका विधि है। उस स्थानमें यज्ञ अग्निचितिशून्य होनेसे सकलके उत्तर वेदिमें गमनका विधि है। किन्तु यज्ञ अग्निचितियुक्त रहनेसे परिष्यन्दमें जाना पड़ता है। उक्त उत्सादन देश या उत्तर वेदि परिषेक कर अपर कार्यको कर्तव्यता है। अध्वर्युको उत्तर वेदिमें प्रथम महावीर और सर्वदिक्में अपर दो महावीर निधान करना चाहिये। वहीं उपयमा अर्थात् महावीरादिकी निर्माणावशेष मृत्तिका स्थापन करना पड़ती है। महावीरादिको चारों ओर परीशासद्वय निधान करते हैं। नीचे और बाह्य देशमें रौहिणी एवं हरणी नामक स्रुक्द्वय निधान करना चाहिये। रौहिणीको उत्तरदिक् अभ्रि तथा दक्षिणदिक् आसन्दी और अभ्रिको उत्तरदिक् धवित्र अर्थात् कृष्णाजिन निर्मित व्यजन समूहमें निधान करते हैं। उसके पीछे परिधि, उपयमनी, रज्जु, सन्दाम, वेद, पिन्वन, स्रुचा, मयूख, रौहिण, कपाल, धृष्टि, स्रुव, शुष्ककुट, खर, अवशिष्ट चर प्रभृति निधानका विधि है। दुग्ध द्वारा महावीरादि सब पात्रके गर्तपूरणका विधि है। पत्नीके साथ सकलके आपाद मार्जनका विधि है। उसके पीछे बद्ध प्रभृतिको याज्ञिक द्रव्यसमूहके प्रदानका विधि है। महावीर भङ्ग होनेसे यथाकाल प्रायश्चित्त करनेका विधान है। इस प्रायश्चित्तका प्रकारादि है। प्रवर्ग्यके चरणका विधि है। उसमें पूर्णाहुति होमका प्रकार है। अभिषवमाण महावीर भग्न होनेसे उसके प्रायश्चित्तका नियम है। प्रवर्ग्यके अधिकारीका निर्देश है। हुतशेष द्रव्यके भक्षणका विधि है। प्रवर्ग्याचरणके आद्यन्तमें शान्तिकाध्यायके पाठका विधि है। इन दोनों अध्यायोंके मध्य १म अध्याय दारविधान पीछे और २य अध्याय आसन्दीमें पात्र निधानके पीछे पढ़ना पड़ता है।

कात्यायनसूत्रमें उक्त समस्त विषय अति विस्तृत भावसे वर्णित है।

निम्नलिखित व्यक्तिने कात्यायनश्रौतसूत्रका भाष्य बनाया है,—

१ अनन्त, २ कर्क, ३ कल्याणोपाध्याय, ४ गङ्गाधर, ५ गदाधर, ६ गर्ग, ७ पितृभूति, ८ भर्तृयज्ञ, ९ महादेव, १० मिश्राग्निहोत्री, ११ श्रीधर, १२ हरिहर। याज्ञिकदेवने श्रौतसूत्रपद्धति और पद्मनाभने कात्यायनसूत्रपद्धति नामसे स्वतन्त्र पद्धति रचना की है।

३ गोभिलके पुत्र कात्यायन। इन्होंने गृह्यसंग्रह और छन्दोपरिशिष्ट वा कर्मप्रदीप रचना किया है। किसी किसीके अनुमानमें श्रौतसूत्रकार कात्यायन और स्मृतिप्रणेता कात्यायन उभय अभिन्न व्यक्ति थे। निर्दिष्ट समयको रचनाप्रणाली देख ऐसा बोध नहीं होता।

हरिवंशमें विश्वामित्रवंशीय कतिके पुत्र कात्यायनों का * नाम मिलता है। फिर इसी विश्वामित्र वंशमें

* "विश्वामित्रस्य च सुता देवरातादयः स्मृताः।
विख्यातास्त्रिषु लोकेषु तेषां नामानि मे शृणु॥
देवश्रवाः कतिश्चैव यस्मात् कात्यायनाः स्मृताः।
शालङ्कायनो हिरण्याक्षो रेणोर्जातोऽथ रेणुमान्॥
साङ्कृतिर्गालवश्चैव मुद्गलश्चेति विश्रुताः।
मधुच्छन्दो जयश्चैव देवलश्च तथाष्टकः॥
कच्छपो हारितश्चैव विश्वामित्रस्य ते सुताः।
तेषां ख्यातानि गोत्राणि कौशिकानां महात्मनाम्॥
पाणिनो बभ्रवश्चैव ध्यानजप्यास्तथैव च।
पार्थिवा देवराताश्च शालङ्कायनबाष्कलाः॥
लोहिता यामदूताश्च तथा कारूषकाः स्मृताः।" (हरिवंश २७ अ०)

हिन्दोरामें ५१४६ और दलहरपुरमें ८१६८ आदमीका वास है।

कानपुर नगर गङ्गानदीके दक्षिण कूल पर अवस्थित है। प्रयागके रेलपथसे १२० मील ऊपर यह नगर पड़ता है। युक्तप्रदेशमें कानपुर चतुर्थ नगर है। समुद्रपृष्ठसे यह ५०० फीट ऊपर है। यहां सेनानिवास (छावनी), अदालत, स्टेशन इत्यादि विद्यमान हैं। सेनानिवास और अदालत गङ्गा किनारे है। पूर्वांशमें देशीय अश्वारोही सेनानिवास और कवायद परेडकी जमीन है। कवायद परेडकी जमीनसे पश्चिम युरोपीय पदातिकी बारीक और सेण्टजान गिरजा है। इसके साथ गङ्गा किनारे मेमोरियल गिरजा है (यह १८५७ ई०को सिपाही-विद्रोहके स्मरणार्थ बना था)। नगरके उत्तरांशमें साधारण कवायदपरेडकी जमीन है इसके दक्षिण गङ्गातीर म्युनिसिपल गार्डन है। इस उद्यानमें एक कूप था। आज कल उसी कूप पर एक स्तम्भ बनाया और उसको चारों ओर प्राचीरका घेरा लगाया गया है। इस स्तम्भ पर एक स्वर्गविद्याधरीकी मूर्ति है। स्तम्भके गात्रमें अंगरेजीमें लिखा है,— "पिठूरके विद्रोही नाना धुन्धुपन्थके दलने १८५७ ई०को १५वीं जुलाईको इसी स्थानके निकट अनेक युरोपियों विशेषतः युरोपीय स्त्रियों और शिशुओंको अन्यायरूपसे मार इस कूपमें डाल दिया था।" इस उद्यानकी रक्षाके लिये गवरनमेण्टका वार्षिक ५००० रु० व्यय होता है। उक्त विद्रोहमें जो निहत हुये, सब इसी उद्यानके दक्षिण और पश्चिमांशमें गड़े हैं।

कानपुर नगर प्राचीन नहीं। इस लिये यहां दर्शनीय अट्टालिका, प्रासाद और मन्दिरादि कम हैं।

१७६४ ई० को बक्सर और १७६५ ई०को कोड़ेके युद्धमें सुजा-उद्-दौला (अयोध्याके नवाबवजीर) पराजित होनेपर यह नगर बसा। नवाब अंगरेजोंसे सन्धि कर फतेहगढ़ और कानपुरमें फौज रखने पर सम्मत हुये थे। १७७८ ई०को वर्तमान स्थान नवाबहित अंगरेजी पल्टनोंके रहनेके लिये निर्दिष्ट होनेसे इस नगरकी श्रीवृद्धि हुई। १८०१ ई०को अंगरेजोंने अवधके नवाबसे इसको चारों ओरका स्थान पाया था। इस समयसे कानपुर एक जिला और प्रधान नगर गिना जाता है। १८५७ ई०के सिपाही विद्रोहको छोड़ दूसरी कोई ऐतिहासिक घटना यहां नहीं हुई।

मुसलमानोंके अधीन यह जिला अनेक परगनोंमें विभक्त था। उस समय कानपुर इलाहाबाद और आगरेसे लगता था। ११९४ ई० को शाहब-उद्-दीन गोरीने दोआब अधिकार किया, उसीके साथ कानपुर भी उनके हाथ लगा। औरंगजेबके समय यहां दो एक सामान्य मसजिदें बनी थीं। मुगल सम्राटोंकी दुर्दशाके समय १७१६ ई०को यह अंश महाराष्ट्रोंके अधिकारमें गया। अवधके नवाबसे सन्धि होने पीछे अंगरेजी सेनाने प्रथमतः बेलगांव (बिलग्राम) और फिर कानपुरमें आ अवस्थान किया।

सिपाहीविद्रोहके समय कई दिन तक समस्त जिलेमें विद्रोहानल जला था। मेरठमें विद्रोह आरम्भ होने पीछे जो नानासाहबको कानपुरके धनागारकी रक्षाका भार सौंपा गया। जूनमासके प्रथम यहां चारों ओर किले और गड्ढे बना समस्त युरोपीय बैठे थे। ६ठीं जूनको कानपुरका देशीय द्वितीय अश्वारोही दल तथा प्रथम पदातिदलने बिगड़ जेल तोड़, धनागार लूट और आफिस आदिको गिरा डाला। उसके पीछे विद्रोही दिल्लीके अभिमुख चले गये। उसी समय ५६ एवं ५३ संख्यक देशीय दल विद्रोही हुआ। नानासाहबने विद्रोहियोंसे मिल गढ़के आश्रयमें युरोपियोंके आवास आक्रमणपूर्वक तोप गोलाके वर्षण किये थे। व्हीलरादि अंगरेज (केवल बाल जो या एक प्रकार भी कोम वाले) धूपमें कष्ट भी सहने लगे। विद्रोहियोंका आक्रमण लगातार लगा हुआ था। जिसकी अधिकांश अंगरेज मारे गये। विद्रोही अन्न पानी बन्द कर उनका आवास छिन्न और शिशुओंको भी मारने लगे। २६वीं जूनको नानासाहबने हतावशिष्ट अंगरेजोंको रक्षा करनेमें प्रतिश्रुत हो गङ्गाको सैर कानपुरके सतीचौराघाटमें नौका पर बैठाया था। नौका इलाहाबादको चलनेके पहले तीरस्थ विद्रोही सिपाही नावों पर गोलियोंकी वर्षा करने लगे। दो नौकाओंने भागनेकी चेष्टा की थी। किन्तु सिपाहियोंने

वेदशाखाप्रवर्तक साङ्कृति, गालव, मुद्गल, मधुच्छन्दा, देवल, अष्टक, काश्यप, हारित, पाणिनि, वभ्रु, ध्यानजप्य, देवरात, शालङ्कायन, वास्कल, वेणु, याज्ञवल्क्य, अघमर्षण, औडुम्बर, तारकायन प्रभृति आविर्भूत हुये। उनमें याज्ञवल्क्यने शुक्लयजुः अर्थात् वाजसनेयी शाखा का प्रचार किया। श्रौतसूत्रकार कात्यायन उक्त वाजसनेयी शाखाके अनुवर्तक थे। इसी कारण समझते हैं कि विश्वामित्रवंशीय (याज्ञवल्क्यके अनुवर्ती) कात्यायन ऋषि ही कात्यायनश्रौतसूत्रके रचयिता थे।

स्मृतिकार कात्यायन गोभिलके पुत्र थे। * कात्यायनके कर्मप्रदीप नामक स्मृति ग्रन्थमें निम्नलिखित सकल विषय पाया है,—

यज्ञोपवीत, आचमन, मार्जन, आभ्युदयिकश्राद्ध, उक्तश्राद्धका कृत्य, परिवेदनदोष, उसका प्रतिप्रसव, स्थण्डिलरेखा, अग्न्याधान, अरणिविधि, अग्न्युद्धार, स्रुवादिलक्षण, सायंप्रातर्होमकाल, होमेतिकर्तव्यता, स्नानादिक्रिया, सन्ध्योपासना, तर्पण, पञ्चयज्ञप्रकरण, दक्षिणादिपात्र, आन्यस्थाल्यादि, अमावास्या श्राद्धकाल, श्राद्धभोक्तृकथन, कर्पू विधि, दर्शपौर्णमासहोमकालादि, प्रवासियोंका पूर्वकृत्य, स्त्रीकर्तव्यकर्म, दाम्पत्यसन्निकर्ष कृत्यादि, प्रेतकार्य, शोकापनोदन, पर्णनरदाहादि, अशौचमें वर्जनद्रव्यादि, षोड़शश्राद्धादि, होमीयविशेष, चरु, गो अश्वयज्ञादि काल, नरयज्ञकाल, अन्वाहार्य नाम एवं विधि, अभातादिसंज्ञा और नाना विधि।

गृह्यसंग्रहमें ब्राह्मणोंका दशविध संस्कार और वास्तुक्रियादि लिखा है।

४ कात्यायन-वररुचि। अनेक लोग इन्हींको पाणिनिसूत्रका वार्तिककार बताते हैं। सोमदेव भट्टविरचित कथासरित्सागरमें लिखा है,—"पुष्पदन्त नामक महादेवके एक अनुचरने गौरीशापके अभिशप्त हो मर्त्यलोक आ वत्सराजधानी कौशाम्बी नगरीमें सोमदत्त नामक ब्राह्मणके औरससे जन्म ग्रहण किया था। वही कात्यायन वररुचिके नामसे विख्यात हुये। उनके जन्मकाल आकाशवाणी सुन पड़ी थी, 'यह बालक श्रुतिधर होगा और वर्ष पण्डितके निकट समस्त विद्या लाभ करेगा। व्याकरण शास्त्रमें इसकी असाधारण व्युत्पत्ति होगी और वर अर्थात् श्रेष्ठ विषयमें रुचि बढ़नेसे वररुचि * नाम पड़ेगा।' वयोवृद्धिके साथ वह असीम बुद्धि और धीशक्तिसम्पन्न हो गये। एक दिन उन्होंने किसी नाटकका अभिनय देख माताके निकट वही नाटक समस्त आद्योपान्त आवृत्ति किया और उपनयनके पूर्व व्याड़िके मुखसे प्रातिशाख्य सुन उसे समस्त कण्ठस्थ कर लिया था। कात्यायनने अवशेषको वर्षका शिष्यत्व ग्रहण कर नाना शास्त्रमें पाण्डित्य लाभ किया, यहां तक कि उन्होंने व्याकरणिक तर्कमें पाणिनिको भी हरा दिया। अन्त शेषमें महादेवके अनुग्रहसे पाणिनिने जय पाया। कात्यायनने महादेवको क्रोधशान्तिके निमित्त पाणिनिव्याकरण पढ़ उसको सम्पूर्ण और संशोधित किया था। परिशेषको वह मगधराज योगानन्दके मंत्रिपदपर नियुक्त हुए।

हेमचन्द्र, मेदिनी और त्रिकाण्डशेष अभिधानमें कात्यायनका एक नाम वररुचि † लिखा है।

अध्यापक मोक्षमूलरके मतमें भी वार्तिककार कात्यायन वररुचि और प्राकृतप्रकाश नामक

---

*"अथातो गोभिलोक्तानामन्येषां चैव कर्मणाम्।
अस्पष्टानां विधिं सम्यग् दर्शयिष्ये प्रदीपवत्॥" (कर्मप्रदीप १।१)

यहां टीकाकारोंने गोभिलको कात्यायनका पिता माना है। गृह्यसंग्रहमें भी ऐसा ही परिचय मिलता है। यथा—

"पुनर्वसुमतिज्ञानं यश्च सिद्धान्तकोविदम्।
गोभिलं पितरं यस्य न ते जानन्ति गोभिलम्॥
गोभिलाचार्यपुत्रस्य कोऽधीते संग्रहं पुमान्।
सर्वकर्मसदशुद्धः परां सिद्धिमवाप्नुयात्॥"

(गृह्यसंग्रह १।२८-२९)

*"एकश्रुतिधरो जातो विद्यां वर्षादवाप्स्यति।
किञ्च व्याकरणं लोके प्रतिष्ठां प्रापयिष्यति॥
नाम्ना वररुचिश्चायं तत्तदस्मै हि रोचते।
यद्यद्वरं भवेत् किञ्चिदित्युक्त्वा वागुपारमत्॥"

(सोमदेवकृत कथासरित्सागर)

† हेमचन्द्रकृत अनेकार्थसंग्रह ३।११६, मेदिनी नान्त १०६ और त्रिकाण्डशेष २।७।२६।

दोनों किनारेसे गोली चला एकको डुबा दिया। यहांसे कई लोग कूद फांद शिवराजपुर भाग गये थे। सिपाहियोंने वहांसे भी ४ आदमी छोड़ सबको पकड़ मार डाला। नौकामें जितनी स्त्रियां और शिशु थे, सब सवादाकी कोठीमें आवद्ध किये गये। पीछे जब कानपुरके बहिर्देशमें हावलककी तोपका प्रथम शब्द सुना, तब सिपाहियोंने उक्त सकल स्त्रियों और शिशुओंको टुकड़े टुकड़े उड़ा दिया था। प्रायः दो सौ प्राणी विनष्ट हुये होंगे; जहां यह व्यापार हुआ, वहां मेमोरियल कूप और स्तम्भ बना है।

१५ वीं जुलाईको हावलकने पाण्डु नदीके तीर और अवह्नरमें युद्ध किया था। उसके दूसरे ही दिन कानपुर अधिकृत हो गया।

२७वीं नवम्बरको ग्वालियर और अवधके विद्रोहियोंने आपसमें मिल कानपुर आक्रमणपूर्वक नगर अधिकार किया था। दूसरे दिन सन्ध्याकाल लार्ड क्लाइडने आ फिर आक्रमण किया और ६ठीं दिसम्बरको विद्रोहियोंको नगरसे भगा उनका तोप रहंकला सब छीन लिया। जनरल वोयालपोलने अकबरपुर, रसूलाबाद और डेरापुर उद्धार किया था। १८५८ ई०के मई मास काल्पी उद्धार होनेसे कानपुरमें शान्ति स्थापित हुई।

कानफरेन्स (अ० स्त्री० Conference) १ समाज, मजलिस। २ मन्त्रणा, सलाह।

कानलज (सं० त्रि०) कनल-जुल्। कनल नामक व्यक्ति द्वारा निर्मित, कनलका बनाया हुवा।

कानष्टेबिल (अ० पु० Constable) दण्डधर, चौकीदार, पुलिसका सिपाही। पुलिसके जमादारको 'हेड कानष्टेबिल' कहते हैं।

काना (हिं० वि०) १ काण, एक आंखवाला। २ कृमि कीटादि द्वारा विदारित, कीड़ा लगा हुवा। ३ वक्र, टेढ़ा, जो बराबर न हो। (पु०) ४ आकारकी मात्रा (ा)। यह व्यञ्जनवर्णमें लगता है।

कानाकानी (हिं० स्त्री०) गुप्तकथन, कानाफूसी।

कानाटीटी (हिं० स्त्री०) तृणविशेष, एक घास।

कानाड़ा—दाक्षिणात्यके पश्चिम उपकूलका एक प्रदेश। इसके उत्तर बम्बई प्रान्तका बेलगांव जिला, दक्षिण मन्द्राज प्रदेशका मलवार जिला, पूर्व बम्बई प्रान्तका धारवाड़ जिला, महिसुर राज्य एवं कुर्ग, पश्चिम अरबसागर तथा भारत महासागर और उत्तरपश्चिम कोण गोया प्रदेश है। प्रेसिडेन्सी विभागके समय कानाड़ा दो भागमें बांटा गया था। उससे उत्तरांश बम्बई प्रेसिडेन्सी और दक्षिणांश मन्द्राज प्रेसिडेन्सीके विभागमें पड़ा।

उत्तर कानाड़ा अक्षा० १३° ५१′ एवं १५° ३२′ उ० और देशा० ७४° ४′ तथा ७५° ५′ के मध्य अवस्थित है। उसका प्रधान नगर और बन्दर कारवार है। उत्तर कानाड़ाके मध्य पश्चिमघाट पर्वतका सह्याद्रिखण्ड उत्तरदक्षिण विस्तृत है। उसकी उच्चता २५०० से ३००० फीट तक है। सह्याद्रि उभय पार्श्व भूमिको एक दिक् उच्च और अपर दिक् निम्न है। उच्च भूभागका नाम बालाघाट है। परिमाण प्रायः ३००० वर्गमील है। अनेक क्षुद्र और वृहत् नदियोंका मुखभाग रहनेसे उपकूल भागकी रेखा बहुत छिन्न भिन्न हो गई है। (नदीका मुखप्रशस्त होनेसे) समुद्रकी खाड़ी देशके मध्य दूरतक विस्तृत है। उपकूलके उत्तरपश्चिम कोण कारवार अन्तरीप है। समुद्रतीरकी भूमि प्रायः बालुकामय है, बीच बीच पहाड़ भी हैं। आगे नारियलके पेड़से भरा जंगल और उसके आगे अप्रशस्त धान्यक्षेत्र है। उक्त निम्नभूमिका विस्तार कहीं १५ मीलसे अधिक नहीं। फिर कहीं कहीं यह ५ही मील पड़ता है। उसी भूभागके पार्श्व प्रायः ३००।४००. फीट उच्च पर्वत है। पर्वतमालाके मध्य हजार फीट ऊंचे जंगलसे भरे शिखर भी खड़े हैं। शिखरोंमें बीच बीच उत्तम कर्षित धान्यक्षेत्र और उद्यानशोभित अट्टालिका हैं। बालाघाटकी उपजाऊ जमीन् २५०० फीट तक ऊंची है। नदीतीरवर्ती कुछ स्थानोंको छोड़ यह जंगलसे भरी और गिरी है। नदीके तीर सामान्य ग्राम और क्षुद्र शस्यक्षेत्र वर्तमान हैं।

सह्याद्रिके उभय पार्श्व नदी हैं। उनमें कुछ पश्चिम मुख अरब-सागर और कुछ पूर्व मुख बङ्गोप-

किसी स्थल पर मत परिवर्तन किया है। (४) फिर स्थलविशेष पर पाणिनिके सूत्रका दोष देखा उसका प्रतिषेध किया है। (५) अनेक स्थल पर परिशिष्ट लगा दिया है।

पतञ्जलिने अपने महाभाष्यमें वार्तिकपाठ उद्धृत कर उसका भाष्य बनाया है।

पाणिनि और पतञ्जलि देखो।

इन्हीं कात्यायनने वेदको सर्वानुक्रमणी और प्राति-शाख्यको प्रणयन किया है। प्रातिशाख्य और सर्वानुक्रमणी देखो।

यह पतञ्जलिके बहुत पूर्ववर्ती और पाणिनिके परवर्ती थे।

५ एक बौद्ध आचार्य। इन्होंने अभिधर्मज्ञान-प्रस्थान नामक बौद्धशास्त्र रचना किया है। नेपाली बौद्धग्रन्थके पाठसे समझते हैं कि यह बुद्धनिर्वाणके ४०० वर्ष पीछे प्रादुर्भूत हुये।

६ जैनोंके एक प्रधान और प्राचीन स्थविर।

कात्यायनबोधा (सं॰ स्त्री॰) कात्यायनेन आविष्कृता बोधा, मध्यपदलो॰। कात्यायन-दृष्ट शततम्बी बोधा।

कात्यायनी (सं॰ स्त्री॰) कात्यायन-ङीप्। १ दुर्गा। महिषासुर द्वारा अत्यन्त उत्पीड़ित हो उसके विनाश-साधनको ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरने अपने अपने देहसे यह मूर्ति बनायी थी। महर्षि कात्यायनके सर्वप्रथम इनकी अर्चना करनेसे हो यह कात्यायनी कहायीं। इन्होंने आश्विनकी कृष्णचतुर्दशीको जन्म लिया और शुक्लसप्तमी, अष्टमी तथा नवमी—तीन दिन कात्यायन ऋषिकी पूजा ग्रहण कर दशमीको महिषासुर मारा था। २ अर्धवयस्का काषायवस्त्रपरिधाना प्रौढ़वयस्का विधवा, गेरुवे कपड़े पहने हुयी अधेड़ बेवा औरत। ३ काषाय वस्त्र, गेरुवा कपड़ा। ४ कात्यायन ऋषिकी पत्नी। ५ याज्ञवल्क्यकी द्वितीय पत्नी।

कात्यायनीतन्त्र (सं॰ क्ली॰) तन्त्रविशेष। इसमें विधाने कात्यायनीपूजाके मन्त्रादि कहे हैं।

कात्यायनीपुत्र (सं॰ पु॰) कात्यायन्याः पुत्रः, ६-तत्। १ कार्तिकेय। २ एक प्रसिद्ध बौद्धाचार्य। यह बुद्धके बाद ३०० वर्ष पीछे आविर्भूत हुये।

कात्यायनीय (सं॰ त्रि॰) १ कात्यायन-प्रणीत, कात्यायनका बनाया हुआ। (पु॰) २ कात्यायनके छात्र।

कात्यायनीव्रत (सं॰ क्ली॰) कात्यायन्याः व्रतम्, ६-तत्। कात्यायनी देवीके उद्देश्यसे किया जानेवाला एक व्रत। वृन्दावनमें गोपियां श्रीकृष्णको स्वामीरूपसे पानेके लिये उषाकाल यमुनामें नहा और बालुकाकी प्रतिमूर्ति बना भगवती कात्यायनीकी पूजा करती थीं।

कायक (सं॰ पु॰) कथकस्य अपत्यं पुमान् कथक-अण्। १ कथकके पुत्र। (त्रि॰) २ कथकवंशीय। ३ कथक सम्बन्धीय।

कायक्य (सं॰ पु॰) कथकस्य गोत्रापत्यम् कथक-यञ्। कथक ऋषिवंशीय पुत्र।

कायक्यायन (सं॰ पु॰) कथकस्य गोत्रापत्यम् कथक-यञ्-फक्। कथक-वंशीय पुत्र।

काथंचित्क (सं॰ त्रि॰) कथंचित् ठञ्।

विनयादिभ्यष्ठक्। (पा ५।४।३४)

किसी प्रकार सम्पादन किया हुआ, जो मुश्किलसे बना हो।

कायरी (हिं॰ स्त्री॰) कन्था, कथरी।

काथिक (सं॰ त्रि॰) कथायां साधुः, कथा-ठक्। कथादिभ्यष्ठक्। पा ४।४।१०२। १ कथारचनाके विषयमें सुनिपुण, अच्छी अच्छी कहानी बनानेवाला। २ कथा-सम्बन्धीय, कहानीसे सरोकार रखनेवाला।

कादम्ब (सं॰ पु॰ क्ली॰) कदम्बे समूहे भवः, कदम्ब-अण्। १ कलहंस। इसका मांस शीतल, भेदक, मलकारक और वायु, रक्त तथा पित्तनाशक है। (राजवल्लभ) कदम्ब-स्वार्थे अण्। २ कदम्ब-वृक्ष, कदमका पेड़। ३ कदम्ब पुष्प, कदमका फूल। ४ इक्षु, ऊख। ५ बाण, तीर। ६ दाक्षिणात्यका एक प्राचीन राजवंश कदम्ब देखो। ७ पुष्पविशेष, एक कटोरेका फूल। (त्रि॰) ८ कदम्ब-सम्बन्धीय।

कादम्बक (सं॰ पु॰) कादम्ब स्वार्थे कन्। बाण, तीर।

कादम्बकर (सं॰ पु॰) कदम्बवृक्ष, कदमका पेड़।

कादम्बर (सं॰ पु॰ क्ली॰) कादम्बं कदम्बोद्भवं रसं

विल्हौरमें ५१४३. और अकबरपुरमें ८३४८ लोगोंका वास है।

कानपुर नगर गङ्गानदीके दक्षिण कूल पर अवस्थित है। प्रयागके त्रिवेणीसङ्गमसे १३० मील ऊपर यह नगर पड़ता है। युक्तप्रदेशमें कानपुर चतुर्थ नगर है। समुद्रपृष्ठसे यह ५०० फीट ऊपर है। यहां सेनानिवास (छावनी), अदालत, ष्टेशन इत्यादि विद्यमान हैं। सेनानिवास और अदालत गङ्गा किनारे है। पूर्वांशमें देशीय अश्वारोही सेनानिवास और कवायद परेड़की जमीन है। कवायद परेड़की जमीनसे पश्चिम युरोपीय पदातिकी बारीक और सेण्टजान गिरजा है। इसके मध्य गङ्गा किनारे मेमोरियल गिरजा है (यह १८५७ ई०को सिपाही-विद्रोहके स्मरणार्थ बना था)। नगरके उत्तरांशमें साधारण कवायदपरेड़की जमीन है इसके सम्मुख गङ्गातीर म्युनिसिपल गार्डन है। इस उद्यानमें एक कूप था। आज कल उसी कूपपर एक स्तम्भ बनाया और उसकी चारों ओर प्राचीरका घेरा लगाया गया है। इस स्तम्भ पर एक स्वर्गविद्याधरीकी मूर्ति है। स्तम्भके गात्रमें अंगरेजीसे लिखा है,— "बिठूरके विद्रोही नाना धुन्धुपन्थके दलने १८५७ ई०की १५वीं जुलाईको इसी स्थानके निकट अनेक युरोपियों विशेषतः युरोपीय स्त्रियों और शिशुवोंको अन्यायरूपसे मार इस कूपमें डाल दिया था।" इस उद्यानकी रक्षाके लिये गवरनमेण्टका वार्षिक ५०००) रु० खर्च होता है। उक्त विद्रोहमें जो निहत हुये, वह इसी उद्यानके दक्षिण और पश्चिमांशमें गड़े हैं।

कानपुर नगर प्राचीन नहीं। इस लिये यहां दर्शनीय अट्टालिका, प्रासाद और मन्दिरादि कम हैं। १७६४ ई० को बक्सर और १७६५ ई०की कोड़ेके युद्धमें शुजा-उद्-दौला (अवधके नवाबवजीर) पराजित होनेपर यह नगर बना। नवाब अंगरेजोंसे सन्धि कर फतेहगढ़ और कानपुरमें सैन्य रखने पर स्वीकृत हुये थे। १७७८ ई०को वर्तमान स्थान नवाधिकृत स्थानकी प्रान्तसीमाके सेनानिवासको निरूपित होनेसे इस नगरकी नीव पड़ी। १८०१ ई०को अंगरेजोंने अवधके नवाबसे इसको चारो ओरका स्थान पाया था। उस समयसे कानपुर एक जिला और प्रधान नगर गिना जाता है। १८५७ ई०के सिपाही विद्रोहको छोड़ दूसरी कोई ऐतिहासिक घटना यहां नहीं हुई।

मुसलमानोंके अधीन यह जिला अनेक परगनोंमें विभक्त था। उस समय कानपुर इलाहाबाद और आगरेसे लगता था। ११९४ ई० को साहब उद्-दीन गोरीने दोआब अधिकार किया, उसीके साथ कानपुर भी उनके हाथ लगा। औरंगजेबके समय यहां दो एक सामान्य मसजिदें बनीं थी। मुगल सम्राटोंकी दुर्दशाके समय १७३६ ई०को यह अंश महाराष्ट्रोंके अधिकारमें गया। अवधके नवाबसे सन्धि होने पीछे अंगरेजी सेनाने प्रथमतः बेलगांव (बिल्वग्राम) और फिर कानपुरमें आ अवस्थान किया।

सिपाहीविद्रोहके समय कई दिन तक समस्त जिलेमें विद्रोहानल जला था। मेरठमें विद्रोह आरम्भ होने पीछे ही नानासाहबको कानपुरके धनागारकी रक्षाका भार सौंपा गया। जूनमासके प्रथम यहां चारो ओर किले और गड्ढे बना समस्त यूरोपीय बैठे थे। ६ठीं जूनको कानपुरका देशीय द्वितीय अश्वारोही दल तथा प्रथम पदातिदलने बिगड़ जेल तोड़ा, धनागार लूटा और आफिस आदिको गिरा डाला। उसके पीछे विद्रोही दिल्लीके अभिमुख चले गये। उसी समय ५३ एवं ५४ संख्यक सैन्यदल विद्रोही हुआ। नानासाहबने विद्रोहियोंसे मिल उनके साहाय्यसे यूरोपियोंके आवास आक्रमणपूर्वक तीन सप्ताह अवरोध किये थे। वैलीगारदसे अंगरेज (केवल सात सौ या एक हजार ही लोग होंगे) धूपमें खड़े हो लड़ने लगे। विद्रोहियोंका आक्रमण तीनबार वृथा हुआ था। शेषको अधिकांश अंगरेज मारे गये। विद्रोही उन्हें परास्त कर उन्मत्त भावसे स्त्रियों और शिशुवोंको भी मारने लगे। २६वीं जूनको नानासाहबने हताबशिष्ट अंगरेजोंकी रक्षा करनेमें प्रतिश्रुत हो सबको लेकर कानपुरके सतीचौराघाटमें नौका पर बैठाया था। नौका इलाहाबादको खुलनेके पहले तीरस्थ विद्रोही सिपाही गोली चला आरोहियोंको गिराने लगे। दो नौकाओंने भागनेकी चेष्टा की थी। किन्तु सिपाहियोंने

दोनों किनारेसे गोली चला एकको डुबा दिया। यद्यपि कई लोग कूद फांद शिवराजपुर भाग गये थे। सिपाहियोंने वहांसे भी ४ आदमी छोड़ सबको पकड़ मार डाला। नौकामें जितनी स्त्रियां और शिशु थे, सब सवादाकी कोठीमें आवद्ध किये गये। पीछे जब कानपुरके बहिर्देशमें हावलककी तोपका प्रथम शब्द सुना, तब सिपाहियोंने उक्त सकल स्त्रियों और शिशुवोंको टुकड़े टुकड़े उड़ा दिया था। प्रायः दो सौ प्राणी विनष्ट हुये होंगे; जहां यह व्यापार हुवा, वहां मेमोरियल कूप और स्तम्भ बना है।

१५ वीं जुलाईको हावलकने पाण्डु नदीके तीर और अवङ्गरमें युद्ध किया था। उसके दूसरे ही दिन कानपुर अधिकृत हो गया।

२७वीं नवम्बरको ग्वालियर और अवधके विद्रोहियोंने आपसमें मिल कानपुर आक्रमणपूर्वक नगर अधिकार किया था। दूसरे दिन सन्ध्याकाल लार्ड क्लाइडने आ फिर आक्रमण किया और ६ठीं दिसम्बरको विद्रोहियोंको नगरसे भगा उनका तोप इत्यादि सब छीन लिया। अनन्तर बोपालपीलने अकबरपुर, रसूलाबाद और डेरापुर उद्धार किया था। १८५८ई०के मई मास काल्पी उद्धार होनेसे कानपुरमें शान्ति स्थापित हुई।

कानफरेन्स (अ० स्त्री० Conference) १ समाज, मजलिस। २ मन्त्रणा, सलाह।

कानलक (सं० त्रि०) कमल-कृत्। कनल नामक व्यक्ति द्वारा निर्मित, कनलका बनाया हुवा।

कानष्टेबिल (अ० पु० Constable) दण्डधर, चौकीदार, पुलिसका सिपाही। पुलिसके जमादारको 'हेड कानष्टेबिल' कहते हैं।

काना (हिं० वि०) १ काण, एक आंखवाला। २ क्रमि कीटादि द्वारा विदारित, कीड़ा लगा हुवा। ३ वक्र, टेढ़ा, जो बराबर न हो। (पु०) ४ आकारकी मात्रा (ा)। यह व्यञ्जनवर्णमें लगता है।

कानाकानी (हिं० स्त्री०) गुप्तकथन, कानाफूसी।

कानाटीटी (हिं० स्त्री०) तृणविशेष, एक घास।

कानाड़ा—दाक्षिणात्यके पश्चिम उपकूलका एक प्रदेश। इसके उत्तर बम्बई प्रान्तका बेलगांव जिला, दक्षिण मन्द्राज प्रदेशका मलवार जिला, पूर्व बम्बई प्रान्तका धारवाड़ जिला, महिसुर राज्य एवं कुर्ग, पश्चिम अरबसागर तथा भारत महासागर और उत्तरपश्चिम कोण गोया प्रदेश है। प्रेसिडेन्सी विभागके समय कानाड़ा दो भागमें बांटा गया था। उससे उत्तरांश बम्बई प्रेसिडेन्सी और दक्षिणांश मन्द्राज प्रेसिडेन्सीके विभागमें पड़ा।

उत्तर कानाड़ा अक्षा० १३° ५३′ एवं १५° ३२′ उ० और देशा० ७४° ४′ तथा ७५° ५′ के मध्य अवस्थित है। उसका प्रधान नगर और बन्दर कारवार है। उत्तर कानाड़ाके मध्य पश्चिमघाट पर्वतका सह्याद्रिखण्ड उत्तरदक्षिण विस्तृत है। उसकी उच्चता २५०० से ३००० फीट तक है। सह्याद्रि उभय पार्श्व भूमिको एक दिक् उच्च और अपर दिक् निम्न है। उच्च भूभागका नाम बालाघाट है। परिमाण प्रायः ३००० वर्गमील है। अनेक क्षुद्र और बृहत् नदियोंका मुखभाग रहनेसे उपकूल भागकी रेखा बहुत छिन्न भिन्न हो गई है। (नदीका मुखग्रस्त होनेसे) समुद्रकी खाड़ी देशके मध्य दूरतक विस्तृत है। उपकूलके उत्तरपश्चिम कोण कारवार अन्तरीप है। समुद्रतीरकी भूमि प्रायः बालुकामय है, बीच बीच पहाड़ भी हैं। आगे नारियलके पेड़से भरा जंगल और उसके आगे अप्रशस्त धान्यक्षेत्र है। उक्त निम्नभूमिका विस्तार कहीं १५ मीलसे अधिक नहीं। फिर कहीं कहीं वह ५ही मील पड़ता है। उसी भूभागके पार्श्व प्रायः ३००।४०० फीट उच्च पर्वत है। पर्वतमालाके मध्य हजार फीट ऊंचे जंगलसे भरे शिखर भी खड़े हैं। शिखरोंमें बीच बीच उत्तम कर्षित धान्यक्षेत्र और उद्यानशोभित अट्टालिका हैं। बालाघाटकी उपजाऊ जमीन् २५०० फीट तक ऊंची है। नदीतीरवर्ती कुछ स्थानोंको छोड़ यह जंगलसे भरी और गिरी है। नदीके तीर सामान्य ग्राम और क्षुद्र शस्यक्षेत्र वर्तमान हैं।

सह्याद्रिके उभय पार्श्व नदी हैं। उनसे कुछ पश्चिम मुख अरब-सागर और कुछ पूर्व मुख वङ्गोप-

कान्हर (हिं० पु०) १ श्रीकृष्ण। २ कोल्हूको एक लकड़ी। यह कातरके छोरपर लगता और टेढ़ा मेंढ़ा रहता है। इसके दोनों प्रान्त निकल पड़ते हैं। कान्हर कोल्हूकी कमरके पास चारों ओर घूमा करता है।

कान्हरा—कानड़ा देखो।

काप—बङ्गालके वारेन्द्र ब्राह्मणोंकी एक कुल-श्रेणी।

कापटव (सं० पु०) कापटोर्गोत्रापत्यम्, कापटु-अण्। कापट ऋषिके वंशीय। (क्ली०) कुत्सितः पटुः तस्य भावः, कापटु भावे अण्। २ निन्दित पाटुता, बुरी चालाकी।

कापटवक, कापटव देखो।

कापटिक (सं० पु०) कपटेन चरति, कपट-ठक्। १ छात्र, विद्यार्थी। २ अन्यका मर्मज्ञ, दूसरेका भेद जाननेवाला। ३ प्रतारक, धोकेबाज।

कापट्य (सं० क्ली०) कपटस्य भावः कार्यम्वा, कपट ष्यञ्। १ कपटता, चालाकी। २ प्रतारणा, धोकेका काम।

कापड़ी (हि०पु०) जातिविशेष, एक कौम। गुजरातमें कपड़े बेचनेवालोंको कापड़ी कहते हैं।

कापथ (सं० पु०-क्ली०) कुत्सितः पन्थाः, कु पथिन्-अच् कोः कादेशः। कापथ्यचोः। पा ६।३।१०४।

१ कुत्सित पथ, खराब राह। इसका संस्कृत पर्याय—व्यध्व, दुरध्व, विपथ, कदध्वा, कुपथ, असत्-पथ और कुत्सितवर्त्म है। २ उशीर, खस। ३ एक दानव।

कापर (हिं० पु०) वस्त्र, कपड़ा।

कापरगादि—मन्द्राज प्रान्तके सिंहभूम जिलेकी एक गिरिमाला। उसका शृङ्ग समुद्रपृष्ठसे १३८८ फीट ऊंचा है। वह गिरिमाला दक्षिणपूर्वाभिमुख चल मयूरभञ्जकी उत्तर सीमाके मेघासनि पर्वतसे जा मिली है। उसके उत्तर पत्थरमें तांबा निकलता है। पहले कुछ साहब लोग वहां तांबा तैयार करते थे। किन्तु अधिक व्यय लगनेसे १८६८ ई० को उन्होंने वह कार्य छोड़ दिया।

कापरप्लेट (अं० पु०= Copper plate.) ताम्रपट, तांबेकी चद्दर। यह मुद्रण यन्त्रालयमें काम आता है। इस पर अक्षर खोदे जाते हैं। अक्षरों पर स्याही लगा पोंछ डालनेसे खुदे अक्षरोंके सिवा दूसरा स्थान स्वच्छ निकल आता है। इसी प्रकार कापरप्लेट प्रेसपर चढ़ा कागज छापा जाता है। चित्र आदि छापनेको तेजाबसे काम लेते हैं। जिस प्रेसमें कापर-प्लेट छपता है, उसका नाम 'कापरप्लेट प्रेस' पड़ता है।

कापा (वै० स्त्री०) कं सुखं आप्यते अनया, क-आप-घञ्-टाप्। बन्दियोंका प्रातःकालीन स्तुतिपाठ।

"ग्राहत्येदे अरवेव कापया।" (ऋक् १०।४४।१)

'प्रातः प्रबोधकया बन्दिजीवाची तया।' (भाष्य)

कापाटिक (सं० क्ली०) कपाटिक एव, कपाटिक स्वार्थे अण्। क्षुद्र कपाट, छोटा किवाड़ा।

कापाल (सं० पु०-क्ली०) कपालमेव, कपाल स्वार्थे अण्। १ अष्टादश कुष्ठान्तर्गत वातिककुष्ठ, एक कोढ़। (कपाल देखो।) २ कण्टकलता, वायविडंग। ३ कपालका अस्थि, खोपड़ीकी हड्डी। ४ कर्कटीभेद, एक ककड़ी। ५ किसी शैव सम्प्रदायका अनुयायी। ६ अस्त्रविशेष, एक हथियार। ७ सन्धिभेद, एक सुलह। इसमें विपक्षो तुल्य स्वत्व मानते हैं। (त्रि०) ८ कपाल-सम्बन्धीय, सरके मुताल्लिक।

कापाला (सं० स्त्री०) रक्तत्रिसन्धिका, लाल फूलोंका एक पेड़।

कापालि (सं० पु०-स्त्री०) अहिंस्रा, कौवाटोंटी।

कापालिक (सं० पु०) कपालेन नरकपालेन चरति, कपाल-ठक्। १ जातिविशेष, एक कौम। वह बङ्गदेशमें मिलती है। २ वामाचारी, एक तान्त्रिक साधु। वह शैवमतावलम्बी होते हैं। मांस खाना और मद्य पीना उन्हें अनुचित नहीं मालूम पड़ता। कापालिक अपने हाथमें मनुष्यका कपाल रखते और भैरव वा शक्तिको बलि अर्पण करते हैं। ३ कुष्ठरोग विशेष, एक तरहका कोढ़। कपालकुष्ठ देखो।

कापालिका (सं० स्त्री०) वाद्यविशेष, एक बाजा। पहले यह मुखसे बजायी जाती थी।

कापाली (सं० स्त्री०) कापाल-ङीष्। १ विडङ्ग। २ कण्टकपाली, कौवाटोंटी।

सागरमें आ गिरी है। पूर्वांशकी नदीमें तुङ्गभद्राकी उपनदी वर्षा उल्लेखयोग्य है। पश्चिमांशकी नदीमें उत्तर कालीनदी, बीचों बीच गङ्गावली एवं तद्भिन्न और दक्षिण सिरावती प्रसिद्ध हैं। सिरावतीका जलराशि होनावाड़ नगरके ३५ मील ऊपर ४२५ फीट उच्च पर्वतसे भीषणवेगमें गिरता है। वही विख्यात गारसप्पा प्रपात है। पर्वतमें अधिकांश ग्रेनाइट पत्थर है। फिर अनेकोंके मूलदेशमें लेटिराइट है। करवर और होनावाड़के निकट पार्वत्य प्रदेशसे लेटिराइट प्रस्तर संग्टहीत हो ग्टहादिके निर्माणमें लगता है। उक्त प्रदेशके स्थान स्थान पर लौहखनि है। कुमपतासे १८ मील दूर जान उपत्यकामें चूनेका पत्थर मिलता है।

उत्तर कानाड़ाके वनविभागमें सकल प्रकार वृक्ष उत्पन्न होते हैं। उनमें सागवन, पियासाल प्रभृति अधिक देख पड़ते हैं। वहां गवरनमेंटके वनविभागसे लकड़ी कटती है। कृषकोंको वनसे विना व्यय जलानेके लिये काठ, खादके लिये पत्ता और ग्टह-निर्माणके लिये बांस, खूंटा वगैरह मिल जाता है। पहले उत्तर कानाड़ेकी लकड़ी गुजरात और बम्बई जाकर बिकती थी। आजकल उसे हैंबनेकी करवर ले जाते हैं।

दक्षिण कानाड़ा अक्षा० १२° ७´ एवं १३° ५८´ उ० और देशा० ७४° ३४´ तथा ७५° ४५´ पू०के मध्य अवस्थित है। यह मन्द्राज प्रेसिडेन्सीमें लगता है। प्रधान नगर मङ्गलूर (मंगलोर या बंगलोर) है।

उक्त प्रदेशका प्राकृतिक दृश्य अति सुन्दर है। नदी अनेक होनेसे क्षेत्र शस्यपूर्ण रहता है। वन नाना वृक्षादिसे भरा है। नारियलके बाग वगैरह काफी हैं।

इसके उपकूलभागमें (विस्तारमें ५ से १५ मील तक) उत्तर दक्षिण सब जगह साग रहते हैं। आबादी कुछ घनी है। भूभाग लेटराइट प्रस्तरसे पूर्ण और समुद्रपृष्ठ पर ४०० से ६०० फीट तक उच्च है। उसके आगे ही पश्चिमघाटकी क्षुद्र शिखरमाला है। कमालाबादका पर्वत (बेलतंगड़ीके निकट) और गदभकर्ण पर्वत सर्वापेक्षा विख्यात है। उक्त प्रदेशमें पश्चिम घाट ३००० से ६००० फीट तक ऊंचा है। पूर्वांशमें उसीको एक प्रकारकी सीमा मान सकते हैं। उसमें अनेक गिरिवर्त्म हैं। उनमें सम्पजी, अगुम्बी, चरमादी, हैदरगढ़ी या हुसेनगढ़ी, मंजराबाद तथा कलूर प्रभृति कुर्ग और महिसुरके मध्य अवस्थित हैं। मंगलोरसे उक्त गिरिपथ तक शकटगमनोपयोगी मार्ग है।

दक्षिण-कानाड़ेकी कोई नदी १०० मीलसे अधिक विस्तृत नहीं। फिर सब नदियां पश्चिम घाटसे निकली हैं। उनके मध्य ग्रीष्मकालको भी अनेकोंमें नौका गमन कर सकती है। नदियोंमें नेत्रवती, गुरपुर, गङ्गोली और चन्द्रगिरि या पयस्वनी ही प्रधान है। कारकल नामक स्थानमें एक क्षुद्र और सुन्दर ह्रद है। फिर कुण्डपुरमें निर्मल जलका अपेक्षाकृत वृहत् ह्रद भरा है।

वहां मृत्तिकाके सुन्दर द्र ादि बनते हैं। बहुतसे लोग कलमें उस मृत्तिकासे नल और ईंट तैयार करते हैं। फिर वहां चीनी मट्टीकी भांति एक प्रकारकी श्वेतवर्ण उज्ज्वल मसृण मृत्तिका भी मिलती है। मिजार नामक स्थानमें स्वर्ण, सुब्रह्मराय एवं केम्फल नामक स्थानमें दाड़िम-बीजाकार क्षुद्र पुष्पक-मणि और उदिपी तथा उप्पारंगड़ी तालुक़के मध्य-लौहकी खनि है। लोहा निकालनेका कोई प्रबन्ध नहीं।

दक्षिण कानाड़ेकी अधिकांश भूमि अधिवासियोंके अधिकारमें है। गवरनमेण्टके अधीन केवल पश्चिम-घाटकी निकटवर्ती वनभूमिका कुछ अंश है। उक्त वनमें नाना प्रकार काठ,बांस, पत्ता, वन्य आरारोट, खदिर, दालचीनी, (छाल और तैल), गोंद, राल और तरह तरहका रंग उपजता है। मधु, मोम और अन्यान्य द्रव्यादि पहाड़ी लोग (मलयकुदी) संग्रह करते हैं। वहांसे प्रतिवर्ष प्रायः डेढ़ लाखका चन्दनतैल बनकर बाहर जाता है। महिसुरसे चन्दन काष्ठ आता है। किन्तु उसका तेल केवल दक्षिण कानाड़ामें ही बनाया जाता है।

असलमें तो कानाड़ा नामका कोई स्वतंत्र देश

कापाली (सं॰ पु॰) कपालं धार्यत्वेन अस्त्यस्य, कपाल इनि। १ शिव। २ वासुदेवके एक पुत्र। ३ एक जाति। पूर्ववङ्गमें एक प्रकारके जुलाहे रहते हैं। किसीके मतमें लोहारके औरस और तेलीकी कन्याके गर्भसे वह उत्पन्न हुये हैं। फिर कोई मछुवेके औरस और ब्राह्मणीके गर्भसे कापालियोंका जन्म बताता है। वह अपने पूर्वपुरुषोंको युक्तप्रदेशसे आये कहते हैं। दूसरा प्रवाद यों है—"आदिशूरके समय कापाली शूद्र समझे जाते थे। कान्यकुब्ज देशसे पांच ब्राह्मण और कायस्थ आये। आदिशूरने कापालियोंसे उनके पैर धोनेको कहा। किन्तु कापालियोंने उनका आदेश माना न था। इसीसे गौड़राजने उन्हें समाजकी नीच श्रेणीमें गिन लिया।"

उनमें अधिकांश वैष्णव हैं। विवाह शास्त्रानुसार होता है। प्रथम स्त्री वन्ध्या होनेसे द्वितीय स्त्री ग्रहण कर सकते हैं। आत्मीयकी मृत्यु होने पर ३० दिन अशौचके पीछे ३१ वें दिन श्राद्ध किया जाता है।

कापिक (सं॰ पु॰) कपिरिव ठक्। अङ्गुल्यादिभ्यष्ठक्। पा ५।३।१०८। १ कपि, वानर। (त्रि॰) २ कपिवत् आचरण करनेवाला, जो बन्दरकी तरह पेश आता या देखा जाता हो।

कापिकेचप (सं॰ पु॰) कोकिलाक्ष क्षुप, ताल मखानेका पेड़।

कापिञ्जल (सं॰ पु॰) कपिञ्जलस्य अपत्यं पुमान्, कपिञ्जल-अण्। कपिञ्जलके पुत्र।

कापिञ्जलादि (सं॰ पु॰) कपिञ्जलान् तन्मांसानि अत्ति, कपिञ्जल-अद्-अण्-इञ्। चातक तथा तित्तिर पक्षीका मांसभक्षक, जो पपीहे और तीतरका गोश्त खाता हो।

कापिञ्जलाद्य (सं॰ पु॰) कापिञ्जलादेरपत्यं पुमान्, कापिञ्जलादि-ण्य। कुर्वादिभ्यो ण्यः। पा ४।१।१५१। कापिञ्जलादिका पुत्र, पपीहे और तीतरके गोश्त खानेवालेका बेटा।

कापित्थ (सं॰ क्ली॰) कपित्थस्य विकारः, कपित्थ-अण्। पलाशादिभ्य। पा ४।३।१४१। १ कपित्थ द्वारा निर्मित वस्तु, कैथेकी चीज्। २ कपित्थफल, कैथा।

कापित्थक (सं॰ क्ली॰) देशविशेष, एक मुल्क। (बृहत्संहिता) वर्तमान उत्तर भारतके सङ्किश नामक नगरको चारो ओरका स्थान 'कापित्थक' कहाता है।

सङ्किश और साङ्काश्य देखो।

कापिल (सं॰ पु॰) कपिलेन प्रोक्तं शास्त्रं वेत्ति अधीते वा, कपिल-अण्। १ सांख्यशास्त्रवेत्ता। कपिलमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः। २ कपिल मुनिके मतानुसार लिखित एक उपपुराण। ३ पिङ्गलवर्ण, भूरा रंग। ४ कपिलवर्णाके पुत्र। (त्रि॰) ५ कपिल-सम्बन्धीय। ६ पिङ्गल, भूरा।

कापिलिक (सं॰ पु॰) कपिलिकाया अपत्यं पुमान्, कपिलिका-अण्। कपिलवर्णाके पुत्र।

कापिलेय (सं॰ पु॰) कपिलाया अपत्यं पुमान्, कपिला-ढक्। कपिल मुनिके एक शिष्य। कपिला नाम्नी किसी ब्राह्मणीका स्तनपान करनेसे वह 'कापिलेय' कहाये हैं। (भारत, शान्ति, २१८ अ॰)

कापिल्य (सं॰ त्रि॰) कपिलेन निर्वृत्तम्, कपिल-ण्य। कपिलनिर्मित, कपिलका बनाया हुवा।

कापिवन (सं॰ क्ली॰) दो दिनमें होनेवाला एक अहीन यज्ञ।

"वाजिनस्य चैतस्य कापिवनः।" (कात्यायन, २३।४।१)

कापिश (सं॰ क्ली॰) कपिशा माधवी तत्पुष्पात् जातम्, कपिशा-अण्। १ द्राक्षामद्यविशेष, माधवीके फूलोंकी शराब। २ मद्यमात्र, कोई शराब।

कापिशायन (सं॰ क्ली॰) कापिश्यां जातम्, कापिशी-ष्फक्। कापिश्याः ष्फक्। पा ४।२।९९। १ मद्य, शराब। २ मधु, शहद। ३ देवता। ४ कापिशी जनपदमें रहनेवाला। (त्रि॰) ५ द्राक्षानिर्मित, दाखका बना हुवा।

कापिशायनी (सं॰ स्त्री॰) द्राक्षा, दाख।

कापिशी (सं॰ स्त्री॰) प्राचीन जनपदविशेष, एक पुरानी बस्ती। पाणिनिने अपने सूत्रमें उसका उल्लेख किया है। (४।२।९९) हियेनसियाङ्गने उस जनपदका नाम 'कि-अ-पि-शि' लिखा है। उक्त चीन परिव्राजकके समय भी कापिशी जनपद क्षत्रिय राजाके अधीन रहा। उस समय वहां निर्ग्रन्थ, पाशुपत, कापालिक,-

नहीं है। पहले उसकी चतुःसीमा बता चुके हैं। उसके दक्षिणके कितने ही अंशका नाम मलयालम् (मलय) है। फिर मध्यांश तुलुव और उत्तरका कुछ अंश कर्णाट कहाता है। अनेकोंके कथनानुसार कानाड़ा कर्णाट देशका नामान्तर है। किन्तु यह बात ठीक नहीं। कर्णाट देखो।

दक्षिण कानाड़ेके उदीपी परगनेका उत्तर पर्यन्त भूभाग प्राचीन केरल राज्यके अन्तर्गत है। कहा जाता है कि परशुरामके क्षत्रियविनाशके पीछे पाण्ड्य राजावोंने आ उक्त स्थान पर अधिकार किया था। १२५२ई० तक पाण्ड्यराज प्रबल रहे। फिर १३३८ई०को वह विजयनगरराजके अधिकारमें गया। १५६८ई०को तालिकोटके युद्धमें विजयनगरराजका पराक्रम खर्व हुवा और बदनूरके सरदारने स्वाधीनता या बदनूर राज्य स्थापन किया। उन्होंने कानाड़ेके हनर नामक स्थानसे नीलेश्वर पर्यन्त अधिकार किया था। पीछे चेरकलराजके साथ ईष्टइण्डिया कम्पनीका बन्दोबस्त हुवा। उस समय उक्त प्रदेश शक्रराज्य कानाड़ाके नामसे लिखा जाता था। कानाड़ाका उत्तरांश तुलुव प्रदेशके अन्तर्गत रहा। १६१से ७१४ ई० तक यह कदम्ब राजावोंके अधिकारमें था। कदम्ब देखो।

फिर ७१४से १३३५ई० तक कानाड़ेका उत्तरांश बल्लालवंशके अधीन रहा। बल्लाल देखो

१७६३ई०को हैदरअलीने बदनूरके अधिकार काल कानाड़ाके मध्य मङ्गलोर बाखुर लेनेके पीछे मलवार और समस्त जिला अधिकार किया। दो वर्ष पीछे अंगरेज सैन्यने हनर और मङ्गलोर ला छुड़ाया था। किन्तु अल्प दिन पीछे ही टीपू सुलतानने पुनरधिकार किया। उसके पीछे १७८३-८४ई०को टीपूसे अंगरेजोंका दक्षिण कानाड़ेमें महायुद्ध हुवा। अवशेष १७९९ई० को यह सम्पूर्ण रूपसे अंगरेजोंके अधिकारमें पहुंच गया।

१८३८ई०को कुर्गराजके साम्राज्यच्युतके समय अमर और सुलिय प्रदेशके लोगोंने स्व स्व प्रदेश अंगरेज राज्यभुक्त करनेकी प्रार्थना की थी। १८३७ई०को हटिशराज उनके प्रस्ताव पर स्वीकृत हुए। समय मगनिस जिला दक्षिण कानाड़ाके पुत्तुर विभागसे मिलाया गया। उसी वर्ष कल्याणप्पा सुब्बराय नामक किसी सरदारने कुर्गराजके पतनसे अंगरेजोंके विरुद्ध अस्त्र धारण किया। पुत्तुरसे मङ्गलोर पर्यन्त विद्रोह फैला था। उसके पीछे विद्रोही शासित होने पर कानाड़ा प्रदेश दो भागोंमें बंट बम्बई और मन्द्राज प्रेसीडेन्सीमें मिल गया। दक्षिण कानाड़ाका प्रधान नगर मङ्गलोर, बन्तवाल और उदीपी है। उसमें प्रधानतः हिन्दू, पोर्तगीज, फरासीसी, अरब और अनार्य लोग रहते हैं। हिन्दुवोंमें ब्राह्मणोंकी संख्या अधिक है। वह सारस्वत और कोङ्कणी नामक दो समाजोंमें विभक्त हैं। द्राविड़ोंसे बहुत ब्राह्मण शिवली कहाते हैं।

उक्त देशके अरब मोपला कहाते हैं। अनार्य लोगोंमें मलयकुदिराद प्रधान हैं। वह जिस प्रणालीसे कृषिकार्य करते, उसे 'कुमारी' प्रणाली कहते हैं।

उत्तर कानाड़ाके मध्य हिन्दुवोंमें सुपारीके व्यवसायी हारिक ब्राह्मण ही विख्यात हैं। मुसलमानोंमें नाविक अरब वणिकोंके प्रतिनिधि कहाते हैं। किन्तु वह अल्प संख्यक मिलते हैं। अफरीकासे आनीत पोर्तगीजोंकी क्रीत दासियोंके गर्भजात मुसलमान सीदी नामसे आख्यात हैं। उनकी आकृति इस समय भी बहुत कुछ काफिरोंसे मिलती है।

कानाफूसी (हिं० स्त्री०) गुप्तकथन, धीरेसे कही जानेवाली बात।

कानाबाती (हिं० स्त्री०) १ गुप्तकथन, कानाफूसी। २ बालक हंसानेका एक कार्य। बालकके कर्णमें 'कानाबाती कानाबाती कू' कहते 'कू' शब्द जोरसे बोलते हैं। इससे बालक हंसने लगता है।

कानाबेज (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह सौंकियेसे मिलता-जुलता रहता है।

कानि (हिं०स्त्री०) १ मर्यादा, इज्जत। २ शिक्षा, सीख।

कानिद (हिं० पु०) बांसकी कमची। इसमें पतादते समय डोरा बना दबाया जाता है।

कानिष्ठिक (सं० क्ली०) कनिष्ठिका एव, कनिष्ठिका-अण्। सर्वादिभ्योऽण्। पा ४।१।१७०। कनिष्ठिका सदृश।

देवोपासक और बहुत बौद्ध वास करते थे। उसका विस्तार ४००० लि (करीब १३३ कोस) था। (Beal's Buddhist Record I, 54-58 देखो)

पाश्चात्य प्राचीन भौगोलिक टलेमिने उसका नाम 'कपिशा', प्लिनिने 'कपिशिन्' और सलिनासने 'कफसा' लिखा है।

कनिंहाम साहबके मतसे उक्त प्राचीन जनपद काफरस्थान घोरबन्द और पञ्जशिर पर्यन्त विस्तृत था। चीन-परिव्राजकको वर्णनासे समझ पड़ा, कि वर्तमान बन्नू (पाणिनि-कथित वर्णु) उपत्यका प्रदेश अवधि कापिशी क्षत्रिय राजाका अधिकार रहा।

प्लिनिने उसकी राजधानी 'कपिसा' बतायी है। उसका वर्तमान नाम कुसान अथवा ओपियान है।

कापिशेय (सं० पु०) कपिशाया अपत्यं पुमान्, कपिशा-ढक्। पिशाच, शैतान्।

कापिष्ठल (सं० पु०) कपिष्ठलस्य इदम्, कपिष्ठल-अण्। १ प्राचीन जनपद विशेष, एक पुरानी बसती। बृहत्-संहितामें वह 'कापिष्ठल' नामसे उक्त है। फिर प्राचीन ग्रीक भौगोलिक एरियानने उसे 'कम्बिस्थली' लिखा है। वह पञ्जाबके अन्तर्गत कुरुक्षेत्रका मध्यवर्ती है। वर्तमान नाम कइथल है। वहां अञ्जनामन्दिर प्रसिद्ध है। २ गोत्रभेद।

(शब्दे शाम्र १०८२२)

कापिष्ठलि (सं० पु०) कपिष्ठलस्य गोत्रापत्यम्, कपिष्ठल-इञ्। कपिष्ठल ऋषिके वंशीय।

कापी (सं० स्त्री०) १ नदी विशेष, कोई दरिया। २ स्त्रीविशेष एक तरहकी औरत।

कापी (अं० स्त्री=Copy) १ प्रतिलेख, नकल। यह शब्द अंगरेजी Copyका अपभ्रंश है। (हिं०) २ गड़ारी, घिरनी।

कापी-राइट (अं० पु० =Copy right) मुद्रणस्वामित्व, हक़ तसनीफ या मुसन्निफी। उक्त स्वत्व राजविधिके अनुसार ग्रन्थकार वा प्रकाशकको मिलता है। विना अनुमति लिये दूसरा व्यक्ति किसी ग्रन्थकार वा प्रकाशककी कोई पुस्तक छपा नहीं सकता।

कापु—मन्द्राज प्रान्तकी एक जाति। उसे स्थान-विशेषमें कापलु, रेड्डी या नायडू भी कहते हैं। नेल्लूर, कदपा, करनूल और समस्त तैलङ्ग देशमें कापु लोग रहते हैं। उनकी उपजीविका प्रधानतः कृषिकार्य ही है। किन्तु कोई कोई व्यवसाय भी चलाते हैं। वह चतुर, साहसी और कार्यक्षम होते हैं। कापु जाति १३ शाखामें विभक्त हैं। १ पारे, २ कानिटे, ३ चक्रकुटो, ४ देशुरि, ५ नेरासु, ६ पण्टा, ७ पाकानटी, ८ पेदाकान्ति, ९ पने, १० मोटाति, ११ रत्तु, १२ येराव और १३ रेलामा कापलु।

कापुरुष (सं० पु०) कुः पुरुषः कोः कादेशः। विभाषा पुरुषे। पा। ६।३।१०६। निन्दित पुरुष, खराब आदमी।

कापुरुषता (सं० स्त्री०) कापुरुषस्य भावः, कापुरुष-तल्। १ निन्दित पुरुषका कार्य, खराब आदमीका काम। २ भीरुता, निकम्मापन।

कापुरुषत्व (सं० क्ली०) कापुरुष-त्व (तस्य भावस्त्वतलौ। पा०। ५।१।११९) निन्दित पुरुषका कार्य। कापुरुषता देखो।

कापुरुष्य (सं० क्ली०) कापुरुषस्य भावः, कापुरुष-ष्यञ्। कापुरुषता, निकम्मापन।

कापेय (सं० त्रि०) कपेर्भावः कार्यं वा, कपि-ढक्। १ कपिसम्बन्धीय, बन्दरके मुताल्लिक़। २ अङ्गिरा ऋषिके वंशमें उत्पन्न। (पु०) ३ शौनक ऋषि। (क्ली०) ४ वानर जाति, बन्दरोंकी कौम। ५ वानरके कार्य, बन्दरकी चाल।

कापोत (सं०पु०क्ली०) कपोतानां समूहः, कपोत-अण्। १ कपोतसमूह, कबूतरोंका झुण्ड। २ सौवीराञ्जन, सुरमा। ३ सर्जिक्षार, सज्जीखार। ४ रुचक-लवण, काला नमक। ५ कपोत वर्ण, भूरारङ्ग (त्रि०) ६ कपोत-सम्बन्धीय, कबूतरके मुताल्लिक़। ७ कपोत-वर्णविशिष्ट, भूरा।

कापोतक (सं० त्रि०) कपोताः सन्ति अस्याम् कपोत ठ-कुक् च तत्र भवः अण् तस्य लुक्। कपोतविशिष्ट देशजात, कबूतरोंसे भरे मुल्कका रहनेवाला।

कापोतपाक्य (सं० पु०) कपोतानां पाकः डिम्बः, तस्य समूहः, कपोतपाक-ष्य। कपोतके डिम्ब, कबूतरोंके अंडोंका समूह। २ कपोतपाकोंका राजा।

कापोतवल्लक (सं० पु०) कपोतवङ्का, एक बूटी।

कानिष्ठिनेय (सं० पु०) कनिष्ठाया अपत्यं पुमान्, कनिष्ठा-ढक्-इनङ् आदेशश्च। कल्याण्यादीनामिनङ्। पा ४।१।१२६। कनिष्ठाका पुत्र।

कानी (हिं० स्त्री०) १ एक चक्षुवाली स्त्री, जिस औरतके एक ही आंख रहे। २ कनिष्ठा, सबसे छोटी हाथकी उंगली।

कानीत (सं० पु०) कनीतस्य अपत्यं पुमान्। कनीत नामक ऋषिके पुत्र, पृथुश्रवा।

कानीन (सं० पु०) कन्यायाः जातः, कन्या-अण् कनीन आदेशश्च। कन्यायाः कनीनच। पा ४।१।११६।

१ अविवाहिता कन्याका पुत्र, बेव्याही लड़कीका लड़का। २ कर्ण राजा। ३ व्यासदेव। ४ अग्निवेश्य। ५ लोध्रवृक्ष, लोध। (त्रि०) ६ चक्षुके लिये हितकर, आंखकी पुतलीको फ़ायदा पहुंचानेवाला औषध।

कानीयस (सं० त्रि०) कनीयसः इदम्। कनिष्ठ-सम्बन्धीय, शुमारमें कम।

कानून (अ० पु०) व्यवस्था, आईन, मुल्कमें अमन-चैन रखनेका क़ायदा।

क़ानूनगो (अ० पु०) राजस्व विभागका एक कर्म-चारी, कोई माली अफ़सर। यह पटवारियोंके कागज़ देखता भालता है। कानूनगो दो प्रकारका है—गिरदावर और रजिष्ट्रार। गिरदावर घूम घूम पट-वारियोंका काम देखा करता है। रजिष्ट्रारके दफ़्तरमें पटवारियोंके पुराने काग़ज़ पहुंचाये जाते हैं।

क़ानूनगोई (अ० स्त्री०) कानूनगोका काम या ओहदा। मुसलमानोंके राजत्वकालमें जो राजकर्मचारी भूसम्पत्तिके ज्ञातव्य विषय नवाबके निकट पहुंचाते, वही यह पद पाते थे। आईन-अकबरी पढ़नेसे समझ पड़ता है कि उस समय प्रत्येक सरकारमें एक कानूनगो और उसके अधीन प्रत्येक महलमें एक पटवारी रहता था। चतुःसीमा, विभाग, विक्रय और हस्तान्तरकरण प्रभृति भूसम्पत्ति-सम्बन्धीय कोई कार्य आवश्यक आनेसे पहले कानूनगोसे कहना या उसके आदेश से कार्य करना पड़ता था। भूमिसम्पर्कीय किसी विषयपर तर्क उठनेसे कानूनगो मीमांसा कर देता था।

कानूनदां (फा० पु०) १ व्यवस्था समझनेवाला, जो कानून जानता हो। २ व्यवस्था झाड़नेवाला, जो कानून छांटता हो।

कानूनिया (हिं०) कानूनदां देखो।

कानूनी (अ० वि०) १ व्यवस्था जाननेवाला, जो कानून समझता हो। २ व्यवस्था-सम्बन्धीय, कानूनके मुताबिक़। ३ नियमानुकूल, कायदेके मुताबिक़। ४ हठी, हुज्जती।

कानूम—पञ्जाबके कुनावर उपविभागका प्रधान नगर। यह समुद्रतलसे ८९०० फ़ीट ऊंचे पर्वत पर अक्षा० ३१° ४′ उ० और देशा० ७८° ३०′ पू० में अवस्थित है। यहां एक प्रसिद्ध बौद्ध मठ है। उसमें मोटटेबीय विस्तर बौद्धग्रन्थ संरक्षित हैं। कानूम लाधकवाले प्रधान लामाके अधीन है। काम्बलका व्यवसाय अधिक चलता है।

कान्त (सं० पु० क्ली०) कामते दीप्यते, कम कर्तरि क्त। १ कुङ्कुम, रोरी। २ कान्तलौह, एक लोहा। ३ ग्रीष्मा। ४ चन्द्र, चांद। ५ स्वामी, खाविन्द। ६ चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त और अयस्कान्त मणि, आतशी शीशा वगैरह। ७ नन्दीवृक्ष, एक पेड़। ८ वसन्त ऋतु, मौसम-बहार। ९ विष्णु। १० शिव। ११ कार्तिकेय। १२ कामदेव। १३ चक्रवाक, चकवा। १४ वर्षा, बरसात। १५ हिज्जलवृक्ष, एक पेड़। १६ प्रियतम, प्यारा। (त्रि०) १७ मनोरम, खूबसूरत। १८ अभि-लषित, चाहा हुआ।

कान्त—युक्त प्रदेशके शाहजहांपुर जिलेका एक गण्ड-ग्राम (कसबा)। यह शाहजहांपुर शहरसे साढ़े चार कोस दक्षिण जलालाबादकी राह किनारे अक्षा० २७° ४८′ २०″ उ० और देशा० ७९° ४९′ ४५″ पू० पर अवस्थित है।

यह नगर अति प्राचीन है। शाहजहांपुर बसनेसे पहले कान्त अत्यन्त समृद्धिशाली था। प्राचीन अट्टा-लिका और दुर्गादिके ध्वंसावशिष्ट स्तूप प्रभृति देखनेसे इसका किसना ही पूर्व परिचय मिलता है। आजकल यहां पुलिसका थाना, डाकखाना और सराय मौजूद है। यह जनपद महाभारतोक्त 'कान्ति' (भीष्म ९।१०) और पाश्चात्य भौगोलिक टलेमि-वर्णित 'किण्डिया' समझ पड़ता है।

कापोताञ्जन (सं० स्त्री०) कपोतं तत् पञ्जनञ्चेति, कर्मधा०। सौवीराञ्जन, सुरमा।

कापोति (सं० त्रि०) कपोतस्य इदम्, कपोत-इञ्। कपोत सम्बन्धीय, कबूतरके मुतालिक।

काप्य (सं० पु०) कपेर्गोत्रापत्यम् कपि-यञ्। १ कपि ऋषिके वंशीय, पाङ्गिरस। २ वानर वंशीय, बन्दरसे पैदा होनेवाला। (स्त्री०) ३ पाप, गुनाह।

काप्यकर (सं० पु०) कुत्सितं काप्यं काप्यं पापं करोति, काप्य-कृ-ट। १ स्वकृत पाप प्रकाश करनेवाला, जो अपना किया हुआ गुनाह कह डालता हो। (त्रि०) २ पापकारक, गुनाहगार।

काप्यकार (सं० पु०) काप्यं करोति, काप्य-कृ-अण्। १ पाप करके प्रकाश करनेवाला, जो गुनाह करके कह डालता हो। २ पापकी स्वीकृति, गुनाहको तसलीम। ३ पापकारक, गुनाहगार।

काप्यायनी (सं० स्त्री०) कपेर्गोत्रापत्यम्, कपि-यञ्, फक्-ङीप्। कपिवंशीया, कपिके वंशकी औरत।

काफरी (हिं० स्त्री०) किसी किस्मका मिर्चा। इसका आकार चपटा गोल और वर्ण पीत होता है।

काफल (सं० पु०) कुत्सितं फलं यस्य, कोः कादेशः। कटफल वृक्ष, कायफल।

काफ़िया (अ० पु०) अनुप्रास, तुक। अनुप्रास जोड़नेको काफियाबन्दी कहते हैं।

काफिर (फा० वि०) १ मूर्तिपूजक, बुतपरस्त। २ नास्तिक, ईश्वरको न माननेवाला। ३ निर्दय, बेरहम। ४ दुष्ट, पाजी। ५ काफिरस्तानका रहनेवाला। (पु०) ६ अफरीका का एक मुल्क।

काफिर—एक जाति। अफरीकाके दक्षिणस्थ काफेरिया नामक स्थानके अधिवासी ही काफिर हैं। किन्तु सूदानके दक्षिणदिग्वर्ती समुदाय अफरीकावासी भी उसी नामसे पुकारे जाते हैं। आजकल अधिकांश स्थानोंमें वह देख पड़ते हैं।

भारतवर्षमें भी काफिर हैं। उन्हें साधारणतः हबशी कहते हैं। यह स्थिर कर नहीं सकते काफिर किस समय कैसे इस देशमें आ पहुंचे थे। फिर भी अनुमान आता, जिस समय अरबके साथ भारतका वहिर्वाणिज्य रहा, उसी समय अरबोंके साथ काफिरोंका यहां आगमन हुआ। अफगानों, मुगलों और तुर्कोंके साथ भी अनेक आये हैं। काफिर यहां आ और क्रमशः विशेष प्रश्रय पा शेषको किसी किसी स्थानमें राजा तक हो गये हैं।

आजकल उत्तर कनाड़ेके दाण्डिली जिलेके पार्श्वस्थ प्रदेशमें काफिरोंका वास अधिक है। बम्बई उपकूलके जंजीरा नामक स्थानमें 'हबशी' या "सीदी" जातीय राजा हैं। वह राजवंश अबसीनियाके काफिरोंसे उत्पन्न है। खृष्टीय १८श शताब्द पर्यन्त अबसीनियाके काफिर भारत-उपकूलमें जलदस्यु का व्यवसाय उठा निकटवर्ती सागरमें घूमा करते थे। खृष्टीय १५श और १६श शताब्दको विजयपुरमें आदिल शाही तथा निजामशाही वंश राजत्व करता था। उसके अधीन काफिर पुरुषही सैन्यश्रेणीमें नियुक्त रहे। सिन्धु प्रदेशमें तालपुरके अमीर एक दल काफिरोंका सैन्य रखते हैं। कर्णाटकके नवाबके पास भी काफिर दास रहते हैं। कर्णाट बेलास और नेकराम नामक स्थानमें बहुत काफिर हैं। फिर निजाम राज्यमें निजामके नियमित सैन्यके मध्य उनकी संख्या कुछ अधिक है। भारतके अन्य प्रदेशोंमें भी मुसलमानोंके साथ काफिर फैल पड़े। पहले मुसलमान नवाबोंके अधीन वह पुरुषही सैन्यदलमें नियुक्त रहते थे। नवाबोंकी शांति रक्षा उनके हाथमें थी। उनकी रमणियां भी नवाबोंके अन्तःपुरमें दासी थीं। नवाबोंके अनुकरणसे हिन्दू जमीन्दार और राजा पुरुषोंको काफिर नियुक्त करते थे। बोध होता कि काफिरोंको बड़े विश्वासी, प्रभुभक्त और बलिष्ठ समझ कर ही उस कार्यका भार दिया जाता था।

पूर्व-भारतीय द्वीपपुञ्ज और दक्षिण-एशियाके अन्यान्य स्थलमें भी काफिरोंका वास है। काफिर वहांके उपनिवेशी नहीं। यह सकल स्थान उनको आदिम वासभूमि है। उक्त स्थान अफरीकाके काफिरोंकी वासभूमिके साथ समसूत्रपातमें रहनेसे उन दोनोंके मध्य देशगत पार्थक्यके सिवा अन्य कोई विभिन्नता देख नहीं पड़ती। इसीसे दोनों स्थानोंके लोग काफिर माने जाते हैं।

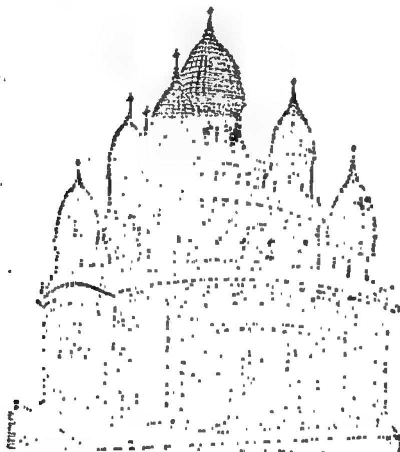
कान्तता (सं० स्त्री०) कान्तस्य भावः कान्त-तल् टाप्। १ सौन्दर्य, खूबसूरती। २ स्वामित्व, खाविन्दी।

कान्तत्व (सं० क्ली०) कान्तस्य भावः, कान्त-त्व। १ मनोहारिता, खूबसूरती। २ स्वामित्व, खाविन्दी।

कान्तनगर—बङ्गाल प्रदेशके दीनाजपुर जिलेका एक गण्डग्राम (कसबा)। यह वीरगञ्ज थानेमें लगता है। दीनाजपुर शहरसे कान्तनगर ६ कोस दूर है।

दुर्गादिके ध्वंसावशेषसे स्पष्ट समझ पड़ता कि उक्त स्थान किसी समय विशेष समृद्धिशाली था। अनेक लोगोंके विश्वासानुसार स्तूपाकार ध्वंसावशेष विराटराज्यका दुर्ग रहा। वह उक्त दुर्गमें वास भी करते थे। पाण्डव अज्ञातवासके समय यहां आये थे।*

कान्तनगरकी चारो ओर पड़े हुए विस्तीर्ण भूभागका नाम उत्तर-गोगृह है। प्रवादानुसार कान्तनगरकी ढापा नदीके पूर्वतीर और कपाई नदीके उभय तीर विराटराजका गोधन चरता था। उक्त गोचारणभूमि किसी समय अत्युच्च प्राकारसे वेष्टित थी। आजकल वृक्ष लतादिसे उक्त सकल स्थान ढक गया है, इसीसे उस प्राचीन प्राकारका चिह्न पर्यन्त पा नहीं सकते।



कान्त मन्दिर।

कान्तनगरका कान्त-मन्दिर अति प्रसिद्ध है। ऐसा सुन्दर और विचित्र मन्दिर बङ्गदेशमें दूसरा नहीं। राजा प्राणनाथ दिल्लीसे कान्त नामक विष्णुविग्रह लाये थे। उक्त कान्तविग्रह प्रतिष्ठा करनेके लिये ही सुप्रसिद्ध कान्तमन्दिर बना। १७०४ ई०को इस मन्दिरका निर्माण कार्य लगा और कोई १७२४ ई०को यह महत् कार्य सुसम्पन्न हुआ था। राजा प्राणनाथने इस मन्दिरके निर्माणार्थ लाखों रुपये खर्च किये। यह मन्दिर बङ्गाल देशके स्थपति और शिल्पी लोगोंका गौरवप्रकाशक है।

* यहांके अधिवासी कहा करते हैं कि दीनाजपुरका अधिकांश स्थान ही प्राचीन मत्स्यदेश है। किन्तु महाभारतादि पढ़नेपर किसी समय इस जनपदमें मत्स्यदेशका अवस्थान निर्णीत हो नहीं सकता। मत्स्यदेश या विराटराज्य युक्तदेश है।

टलेमिके पुस्तकपाठसे समझ पड़ता कि उन्हें उनका विवरण ज्ञात था। उनके "अरिया खेरसनेसास" "याबाडस इन्सिउलि" और "हयिओपिस इकथियोफ्रजि"में सुमात्रा, यवद्वीप एवं नव गिनीकी पपूया जातिका विवरण भरा है। उसे ही रामायणोक्त राक्षस जाति अनुमान करते हैं।

प्राचीनकाल भारतवर्षके दाक्षिणात्यमें वाणिज्य करनेको मिसरीय वणिकोंके साथ अफरीकाके पूर्वाञ्चलवाले लोग अरब और अफरीका उभय स्थानोंसे यहां आते थे। पाश्चात्य ऐतिहासिकोंके मतमें वैसा व्यवसायवाणिज्य प्रायः तीन हजार वर्ष रहा। उस समय यही नहीं कि उक्त सकल देशोंके लोग केवल अर्णवपोतारोहण द्वारा इस देशमें आते और क्रय विक्रय कर बन्दरसे चले जाते थे, किन्तु अनेक वणिकरूपसे इस देशमें रहने भी लगते थे। उक्त सकल स्थायी वणिक् सिंहलमें "मुरजाति" और दाक्षिणात्यमें "मोपला" वा "लब्बाई" नामसे ख्यात हुए। किसी किसीके कथनानुसार दाक्षिणात्यमें आर्योंका अधिकार विस्तृत होनेसे पहले ही काफिर रहने लगे थे। उक्त मत समर्थनके लिये बताते हैं—,

"दाक्षिणात्यके अधिवासियोंसे आर्यजातिका जितना पार्थक्य आजकल देख पड़ता है, उतना भारतमें किसी दूसरे स्थानपर नहीं मिलता। फिर दाक्षिणात्यकी सकल भाषा संस्कृतसे सम्पूर्ण भिन्न है। दाक्षिणात्यके अधिवासियोंमें कितनों होका आकृतिगत सौसादृश्य अधिकांश ईरानियोंकी भांति, कितनों होका सामतीय ईरानियोंकी भांति, कितनों होका अष्ट्रेलियोंकी भांति और कितनों होका मलय पपूयोंकी भांति है। फिर निम्नश्रेणीके लोगोंमें अधिकांशकी आकृति अफरीकावासियोंसे मिलती है। उक्त लोगोंके मतानुसार विन्ध्य एवं घाटपर्वतके पूर्व प्रान्तवर्ती असभ्यजातिकी आकृति अधिकतर उत्तर भारतीय आर्यजातिकी आकृतिसे सौसादृश्य रखती है। किन्तु घाटपर्वतके पश्चिमाञ्चलवासी मलय द्वीपकी जाकुन जातिकी भांति होते हैं। जाकुन जातियोंके साथ अफरीकावासियोंका अधिक सादृश्य है।

पूर्व भारतीय द्वीपावलीमें प्रधानतः चार जातिका वास है—(१) विशुद्ध मलय जाति, (२) मलय उपद्वीपवासी खर्वाकार काफिर या सेमांजाति, (३) फिलिपाइन द्वीपकी क्षुद्राकार काफिर जाति और (४) नवगिनीकी वृहत्काय काफिर या पपूया जाति। एतद्भिन्न नवगिनी और मलयद्वीपके मध्यवर्ती कई द्वीपोंमें उनकी मध्यवर्ती एक जातिके लोग देख पड़ते हैं। उन्हें मलयकी काफिर जाति कह सकते हैं। लिम्बिक और लम्बक द्वीपके पूर्व जो सकल द्वीप हैं, उनके अधिवासी साधारणतः अष्ट्रेलियावासियोंकी भांति होते हैं। उक्त पार्थक्य देख अनेक लोग अनुमान करते हैं कि एशियाके दक्षिणांशके साथ पूर्व भारतीय द्वीपपुञ्जके पश्चिमभागस्थ द्वीप अति प्राचीन कालमें संलग्न थे और कालक्रमसे प्राकृतिक परिवर्तनसे विछिन्न हो गये। *

अफरीकामें जितने काफिर रहते हैं, अनुमानतः उनकी संख्या दो करोड़से अधिक नहीं। इस पूरी संख्यामें काफिरियावासी काफिर और हटेनटट भी रख लिये गये हैं।

लोहितसागरके पूर्वकूल, पारस्योपसागरके तीर और मलय उपद्वीपमें काफिरोंकी संख्या अधिकसे अधिक ५० लाख होगी। किन्तु वङ्गोपसागरके आन्दामान द्वीपसे पूर्व दिक्की द्वीपावलीमें जिन जिन जातीय लोगोंको साधारणतः काफिर कहते हैं, उनके मध्यमें न्यूनकल्पसे १२ आकृतिगत श्रेणी-विभाग हैं। उन १२ श्रेणीगत पार्थक्योंको देख ज्ञात होता है—उनमें कितने ही साढ़े तीन हाथ या चार हाथ तक और कितने ही साढ़े चार हाथ तक लम्बे निकलते हैं।

* यह अनुमान केवल आकृतिगत सौसादृश्य पर निर्भर नहीं करता। सुमात्रा, बोर्णियो, यव, बालि आदि द्वीपकी परस्पर मध्यवर्ती अथाह और एशियाके प्रधान भूखण्डकी मध्यवर्ती अथाह कहीं भी ११० । १०० हाथसे अधिक गभीर नहीं। किन्तु लिम्बिक द्वीपके पूर्वांशकी अथाह और महाद्वीप अनेक स्थलमें ३०० हाथकी अपेक्षा भी गभीर है। एतद्भिन्न एशियाके दक्षिणांशके उत्पन्न पशु पुष्प इत्यादि आरण्य जन्तु और प्राचीन ध्वंसावशेषादिके साथ इन सकल द्वीपोंके उक्त समस्त विषयोंका सम्पूर्ण मिल देख पड़ता है।

कान्तनगरका यह पवित्र देवमन्दिर देखनेसे समझ पड़ता है, कि अंगरेजोंके आनेसे पहले बङ्गालके दीन शिल्पियोंने स्थापत्य और शिल्पविद्यामें कितना उन्नतिलाभ किया था। यह नवरत्न मन्दिर है। मन्दिरकी चूड़ासे विष्णुचक्रसे पाददेश पर्यन्त सुगठित सुचित्रित और कारुकार्य-सुशोभित है। इस मन्दिरमें बिलकुल पत्थरका लगाव नहीं, भित्तिसे चूड़ा पर्यन्त समस्त इष्टक-निर्मित है। मन्दिरके गात्रमें इष्टक खोद बहुसंख्यक देवदेवी मूर्ति-गठित हैं। देवदेवीकी मूर्ति देखनेसे यह भी समझ सकते हैं कि प्रायः दो सौ वर्ष पूर्व बङ्गाल देशमें रीति, पद्धति और वस्त्रादि कैसे प्रचलित थे। हम कह सकते हैं कि ऐसा इष्टकनिर्मित एवं इष्टकखोदित कारुकार्यविशिष्ट मन्दिर दूसरा कहीं नहीं है।

कान्तनगरसे थोड़ी दूर सनका नामक स्थान है। प्रवादानुसार विख्यात वणिक् चांदसौदागरने वहां मट्टीका एक किला बनवाया था।

कान्तपक्षी (सं॰ पु॰) कान्तस्य कार्तिकेयस्य पक्षी, ६-तत,-यद्वा कान्तः मनोहरः पक्षो ऽस्यास्ति, कान्त-पक्ष-इनि। मयूर, मोर।

कान्तपाषाण (सं॰ पु॰) चुम्बक नामक प्रस्तर, मक्न-तिस्जातीय। यह शीत, लेखन (खुजली पैदा करनेवाला) और विषदोष, मेद, पाण्डु, क्षय, कण्डु, मोह तथा मूर्छानाशक है। (वैद्यकनिघण्टु) इसके शोधनका विधि यह है—कान्तपाषाणको पीस महिषी-दुग्ध तथा गव्य घृतमें पकाते हैं। पका कर यह लवण क्षार और शोभाञ्जनमें डाला जाता है। फिर दोला यन्त्रमें महिषीक्षीरादिसे दो बार पकाते हैं। अन्तको अम्लरससे रौद्रमें एक दिन भावना दी जाती है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कान्तपुष्प (सं॰ पु॰) कान्तानि मनोरमाणि पुष्पाण्यस्य, बहुव्री॰। कोविदारवृक्ष, लाल कचनार।

कान्तबाबू—कासिमबाजार राजपरिवारके प्रतिष्ठाता। इनका प्रकृत नाम कृष्णकान्त नन्दी था। जातिके यह तेली थे। प्रथम कान्तबाबू सामान्य मोदीका व्यवसाय करते थे। इसीसे अनेक लोग इन्हें 'कान्तमोदी' कहते हैं। वारन हेष्टिङ्गसके कासिमबाजारमें ईष्टइण्डिया कम्पनीके अधीन कार्य करते सीराज-उद्-दौलाने वहांके अंगरेजोंको पकड़ बंध करनेका आदेश निकाला था। उसी घोर संकटके समय इन्होंने वारेनहेष्टिङ्गसको अपनी दुकानमें निरापद स्थान पर बैठा मरनेसे बचाया। फिर हेष्टिङ्गस गवरनर जनरल होकर आये। किन्तु वह कान्त बाबूका महा उपकार भूले नहीं। प्रथमतः उन्होंने इन्हें अपना दीवान बनाया। कुछ दिन पीछे कान्त बाबूने कम्पनीसे गाजीपुर और आजमगढ़ जिलेके अन्तर्गत (सूबा बिहार) परगना जागीर पाया। इनके पुत्र लोकनाथको भी राजा बहादुरका उपाधि मिला था। ११८५ ई॰के पौषमासमें कान्तबाबूका मृत्यु हुआ। यह हेष्टिङ्गसका दाहना हाथ थे। कान्तबाबूके द्वारा ही उनका सब काम चलता था। प्रयोजन होनेसे यह उनको रुपये उधार लाकर देते थे। हेष्टिङ्गसके साथ ही साथ कान्तबाबू रहते थे। एक बार हेष्टिङ्गसने इनके लिये काशीकी राजमाताको भी डांटा डपटा था। (कान्तबाबुके चरित्र सम्बन्धमें Beveridge's The Trial of Nanda kumar, p. 231-43, 367-401. देखो।

कान्तलक (सं॰ पु॰) कान्तं लकयति आस्वादयति, कान्त-लक अच्‌र्थे वा:। १ नन्दीवृक्ष, एक पेड़। २ तुणवृक्ष, तुनका पेड़।

कान्तलोह (सं॰ क्ली॰) कान्तं लोह र्म्यधत्यात् कमनीयं लोहम्। १ अयस्कान्त, ईस्पात। २ लोह विशेष, एक लोहा। कान्तलोह उसीको कहते, जिसके पात्रमें जल रख कर तैलबिन्दु डालनेसे तैल इतस्ततः न चले, जिसके स्पर्शसे हिङ्गु स्वीय गन्ध परित्याग करे, नीमका क्वाथ भी जिसमें मधुर स्वाद दे, जिसमें दुग्ध पकानेसे बालुकाराशिकी भांति जमे और जिसके पात्रमें चना भिगानेसे कृष्णवर्ण देख पड़े। इस लोहसे वैद्यशास्त्रोक्त अनेक औषध प्रस्तुत होते हैं। औषध प्रयोग करनेके लिये जारण मारण प्रभृति कई कार्य आवश्यक हैं। लौहभस्म देखो।

इसके निरुत्थीकरणसम्बन्ध पर रसेन्द्रसारसंग्रहमें ऐसा उपदेश लिखा है,—"शुद्ध पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, और उभयके समपरिमाण लोहचूर्ण एकत्र

उनके मध्यमें अपेक्षाकृत कई विख्यात श्रेणियोंके वास करते हैं।

आन्दामान द्वीपके मीनकपी काफिर—मालूम पड़ता है कि मनुष्य श्रेणीमें उनकी अपेक्षा असभ्य जाति दूसरी कम मिलेगी। उनके वासस्थानकी स्थिरता नहीं, परिधेय वस्त्रादि नहीं और उन्हें यह भी ज्ञान नहीं जीविकाके लिये किस प्रकार कार्य करना पड़ेगा। मीनकपी लोगोंके साथ मिलना तो चाहते हैं, किन्तु अनिष्टप्रिय होते हैं। नरमांस नहीं खाते भी वह शूकरमांस, मत्स्य प्रभृति भक्षण करते हैं। मीनकपी जङ्गली फल एवं मूल तोड़कर और झील तथा पुष्करिणीसे मत्स्य पकड़कर खा जाते हैं। वह धनुर्वाण ले वन वन और पुष्करिणी पुष्करिणी घूमते फिरते हैं। बांसकी खपाचसे मछली पकड़नेका कांटा वह लोग बना लेते हैं। वह वस्त्र नहीं रखते और नङ्गे रहनेमें कोई लज्जा नहीं करते। मीनकपी क्षुद्रकाय होते हैं। उनका मस्तक छोटा और तालु चपटा रहता है। वह अपना सर्वाङ्ग कांचसे खरोंच खरोंचकर शरीरकी शोभा सम्पादन करते हैं। बाहुमूल तथा कण्ठमूलसे मणिबन्ध एवं कटिदेश पर्यन्त अङ्गको चारो ओर गोलाकार खरोंचके दागोंसे मीनकपी अति विश्री और भयानक लगते हैं। किन्तु वह उसीको अपनी प्रधान शोभा समझते हैं। किसी विषय पर सन्तोष प्रकट करते समय मीनकपी दक्षिण हस्तमें तालुके निम्न भागपर धीरे धीरे दन्ताघात कर वाम स्कन्धेपर एक थप्पड़ लगाते हैं। सईस घोड़ेका बदन मलते वक्त जैसे ठपक देते हैं, वैसे ही शब्द निकाल वह चुम्मा लेते हैं। परस्पर कथोपकथन करते समय मीनकपी ऐसा गड़बड़ उच्चारण करते हैं, मानो चूं चूं कर ही मनोभाव प्रकाश करते हों। किन्तु वास्तवमें यह बात ठीक नहीं। उड़ियोंकी भांति उनकी उच्चारण-प्रणाली अति द्रुत और अस्पष्ट होती है। उनको गाना बहुत अच्छा लगता है। गाते समय वह दोनो हात मस्तककी ओर उठा सङ्गीतके ताल ताल पर कूदते फांदते हैं। फिर नृत्यमें कभी मीनकपी मस्तक घुमाते और कभी समस्त शरीर सम्मुखकी ओर झुका लाते हैं। इसी प्रकार मीनकपी सङ्गीत और नृत्यके ताल ताल पर नानारूप अङ्गभङ्गी किया करते हैं।

सेमां, विन्ता—आन्दामान द्वीपके पूर्व मलय उपद्वीपके अन्तर्गत केदा, पेराक, पाहाङ्ग और विहानु प्रदेशमें जो काफिर रहते हैं, उन्हें मलयके लोग "सेमां" तथा "विन्ता" कहते हैं। उनका वर्ण कृष्ण, केश ऊर्ध्वमुख और गठनादि अफरीकावासियोंकी भांति खर्वाकार होता है। पूर्णवयस्क पुरुषकी उच्चता तीन हाथसे अधिक नहीं बैठती। उनके भी निर्दिष्ट वासस्थान और कृषिकार्यका अभाव है। उनमें अधिकांश घूम घूम कर वनका उत्पन्नादि संग्रह करते हैं और उसे ही मलयजातीयोंके निकट व्यवहार्य द्रव्यादिसे बदलते हैं। वह शिकार मारते और शिकारमें पाये पशु-पक्षी वा उनका चर्म पालकादि विनिमय कर खाद्यादि लाते हैं।

क्रियान नदीकी उपनदी इलानके तीरवर्ती स्थानमें "सेमां बुकित्" नामक श्रेणीके काफिर रहते हैं। वह पूर्णवयसमें सवा तीन हाथ होते हैं। उनका मस्तक क्षुद्र, मस्तकका सम्मुखभाग कुछ कोणाकार उच्च, और पश्चाद्भाग गड्डाकार तथा मध्यांगकी अपेक्षा अप्रशस्त होता है। मलयजातीयोंसे सेमां बुकितोंका मुखमण्डल साधारणतः अप्रशस्त, भ्रूदेश उच्च, नयनकोटर अति गम्भीर, नासिका मोटी और छोटी एवं नासिकाका अग्रभाग सूक्ष्म तथा उठा हुआ होता है। आंखका परदा पीला, पक्ष्म घन-दीर्घ-कुञ्चित, हनुदेश एवं मुखविवर प्रशस्त और होंठ मोटा तथा छोटा रहता है। भ्रू तथा नासिकाके अग्रभाग और छिद्रकी उच्चता समान होती है। उनका उदर बड़ा रहते भी शरीर अपेक्षाकृत क्षीण लगता है। वह वानरकी भांति उदरको घटा बढ़ा सकते हैं। गात्रका चर्म साधारणतः कोमल और चिक्कण होता है।

विहानुकी सेमाङ्ग नामक श्रेणी केदादियोंकी भांति कुछ तरलवर्ण है। वह लोग सेमाङ्ग बुकितोंकी भांति मलिन और कृष्णवर्ण नहीं होते। उनके बाल ऊनसे नहीं मिलते, टेढ़े टेढ़े और घटोत्कचकी भांति ऊंचे रहते हैं। माड़वारियोंकी भांति खूब घनी मोटी मूछ रहती है। मस्तककी बनावट मलयों या काफिरोंकी

घृतकुमारीके रसमें दो पहर घोंट ताम्रके पात्रमें छोटी छोटी गोली बना रखना चाहिये। फिर यह गोलियां दो पहर एरण्डपत्र द्वारा आच्छादित रखनेसे उष्ण हो जायेंगी। उस समय इन्हें धान्यराशिके मध्य तीन दिन तक रख चूर्ण कर लेते हैं। यह चूर्ण कपड़ेसे छान जलमें डालनेसे उतरा आयेगा।

कान्तलौह (सं॰ क्ली॰) कान्तं मनोरमं लोहम्, कर्मधा॰। कान्तलौह, ईसपात। कान्तलौह देखो।

कान्ता (सं॰ स्त्री॰) काम्यते असौ, कम-णिङ्-क्त-टाप्। १ पत्नी, बीबी। २ सुन्दर स्त्री, खूबसूरत औरत। ३ प्रियङ्गु, एक खुशबूदार बेल। ४ स्थूलैला, बड़ी इलायची। ५ रेणुका, बालू। ६ नागरमुस्ता, नागरमोथा। ७ विषम्भिपुष्प वृक्ष, एक फूलदार पेड़। ८ श्वेत दूर्वा, सफेद दूब। ९ वाराहीकन्द, एक कन्द। १० आकाशवल्ली, एक बेल। ११ मूषिकपर्णी, एक बूटी।

कान्ताई—विहार प्रान्तके मुजफ्फरपुर जिलेका एक ग्राम। यह मुजफ्फरपुरसे ४ कोस दूर अक्षा॰ २६° १५´ उ॰ और देशा॰ ८५° २०´ ३०´´ पू॰ पर अवस्थित है। यहां नीलका व्यवसाय अधिक होता है।

कान्ताङ्घ्रिदोहद (सं॰ पु॰) कान्ताया अङ्घ्रिणा चरणघातेन दोहदः पुष्पोद्गमो यस्य, बहुव्री॰। अशोक वृक्ष।

कान्ताचरणदोहद, अशोक देखो।

कान्तायस (सं॰ क्ली॰) अय एव, आयसम् स्वार्थे अण्; कान्तं आयसम्, कर्मधा॰। १ चुम्बक लोह, मक्नातीस। २ कान्तलौह, एक तरहका लोहा।

कान्तार (सं॰ पु॰ क्ली॰) कस्य सुखस्य अन्तं ऋच्छति गच्छति कान्ता मनोज्ञं ऋच्छति वा, कान्त-ऋ-अण्। १ वन, जङ्गल। २ पद्मविशेष, किसी किस्मका कंवल। ३ कोविदार वृक्ष, कचनारका पेड़। ४ वंश, बांस। ५ महावन, बड़ा जङ्गल। ६ दुर्गम पथ, मुश्किल राह। ७ गर्त, गड्ढा। ८ छिद्र, छेद। ९ दुर्भिक्ष, कहत। १० आरग्वधवृक्ष, अमलतासका पेड़। ११ औपसर्गिक रोग, छोटी बीमारी। १२ साधारण इक्षु, ऊख। १३ इक्षुविशेष, कतीरा। भावप्रकाशके मतसे यह गुरु, धारक और शरीरकी स्थूलता, कफ तथा श्लेष्मावृद्धिकारक है।

कान्तारक (सं॰ पु॰) कान्तार स्वार्थे कन्। इक्षुविशेष, कतीरा।

कान्तारग (सं॰ त्रि॰) कान्तारं गच्छति, कान्तार-गम-ड। वनको गमन करनेवाला, जो जङ्गलको जाता हो।

कान्तारपथ (सं॰ पु॰) कान्तारावृतः पन्था:, मध्यपदलो॰। वनमार्ग, जङ्गली राह।

कान्तारपथिक (सं॰ त्रि॰) कान्तारपथेन आहृतम्, कान्तार पथ-ठञ्। वारिजङ्गलस्थलकान्तारपूर्वपदादुपसंख्यानम्। पा ५।१।७७—वार्त्तिक १। १ वनपथद्वारा आहृत, जङ्गली राहसे लाया हुवा। २ वनपथसे गमनकारी, जङ्गली राह जानेवाला।

कान्तारवासिनी (सं॰ स्त्री॰) कान्तारे वासोऽस्त्यस्याः, कान्तार-वास-इनि-ङीप्। १ दुर्गा। २ वनवासिनी, जङ्गलमें रहनेवाली औरत।

कान्तारि (सं॰ पु॰) कान्तारी देखो।

कान्तारिका, कान्तारी देखो।

कान्तारी (सं॰ स्त्री॰) कान्तार-ङीप्। १ मक्षिकाविशेष, एक प्रकारकी मक्खी। मक्षिका देखो। २ इक्षुविशेष, कतीरा।

कान्तारेक्षु (सं॰ पु॰) इक्षुविशेष, कतीरा।

कान्तालक (सं॰ पु॰) नन्दीवृक्ष, एक पेड़।

कान्ति (सं॰ स्त्री॰) कम् भावे क्तिन्। १ दीप्ति, चमक। २ शोभा, खूबसूरती। इसका संस्कृत पर्याय—शोभा, द्युति, दीप्ति, छवि, प्रभा, भासा, भा और अभिख्या है। ३ स्त्री-शोभा, औरतकी खूबसूरती।

"रूपयौवनलालित्य भोगाद्यैरङ्गभूषणम्।
शोभा प्रोक्ता सैव कान्तिर्मन्मथाप्यायिता द्युतिः"। (साहित्यदर्पण ३)

रूप तथा यौवनके लालित्य और अलङ्कारादिसे होनेवाले सौन्दर्यको शोभा कहते हैं। यही शोभा कामचेष्टा-विशिष्ट होनेसे 'कान्ति' कहाती है। ४ इच्छा, ख्वाहिश। ५ कामशक्ति विशेष। ६ दुर्गा। ७ गङ्गा। ८ चन्द्रकी एक कला। ९ चन्द्रकी एक स्त्री। ९ वाराहीकन्द, एक कन्द। महासर्जवृक्ष, सोधानका पेड़।

भांति नहीं होती, अधिकतर पापुयावोंसे मिलती है। उनका स्वर परिष्कार तथा कोमल लगता, किन्तु अनुनासिक रहता है। वह कपाल और कपोलमें गोदना गोदाते हैं। दक्षिण कर्ण छिदा कर बड़ा छेद रखते हैं और सम्मुखभागमें बालोंका एक गोलाकार गुच्छा छोड़ समस्त मस्तक मुण्डन करते हैं। पेराकके नदीकूलवर्ती सेमाङ्ग "सेमातिङ्ग पाय" कहाते हैं। वह समुद्रतीरसे पर्वतके ऊपर तक सकल स्थानमें रहते हैं। किन्तु बुकित वन और पार्वत्य स्थान भिन्न जलके उपकूलभाग वा नदीतीरको नहीं जाते। फिर "तकि" श्रेणीके लोग पार्वत्य प्रदेशसे नीचे उतरना भय जानते हैं। केदा और पेराकके सेमाङ्गोंकी भाषामें दो शब्दोंके योगज शब्द छोड़ अन्य कोई बड़ी कथा वा समासवाक्य नहीं। जिन सकल स्थानोंमें सेमाङ्ग लोग रहते हैं, उनमें मलयजातीय नहीं मिलते।

पापुया श्रेणीके काफिर—फ्लोरिस, सुम्बव वा सन्दना, अदेनारा, सलर, सम्पटा, ललाव, ओम्बे, ओयेटर, रत्ती, सर्वत्ति, बल्यर, तिमर, तिमरलाउत, लाराट, नव कालिडोनिया, नव आयर्लैण्ड, आटाहायटी पलिनेसिया, फिजी, मालक्कस, नवगिनी, पोपो, वासन्दा, किडीप, अस्थयना, सालवत्ती प्रभृति पूर्वांशको द्वीपावलीमें वास करते हैं। जिन सकल द्वीपोंमें उस जातिके काफिर रहते हैं, उन्हें मलयके लोग "तानापापुया" (पापुया जातिके वासस्थान) कहते हैं। बाल घूंघर वाले होनेसे ही उनका नाम "पापुया" पड़ा है। क्योंकि मलय भाषामें टेढ़ बालोंको "पुया-पुया" कहते हैं। पुया-पुया शब्दसे पापुया शब्द निकला है। उनकी आकृति बिलकुल काफिरोंसे मिलती है। नासिका प्रशस्त होती है। ओंठ मोटा और बड़ा रहता है। कपाल दबा हुआ होता है। रङ्ग मटमैला लगता है। अक्षिगोलकका चतुष्पार्श्व सफेद होता है। वह दक्षिणपूर्व एशियाके अन्यान्य काफिरोंसे पूर्णगठित और बलिष्ठ हैं। पापुया लोग उत्साही, अध्यवसायी और परिश्रमी होते हैं। उक्त सब गुणोंसे किसी समय उनको सभ्यदेशमें दासकी भांति अधिक बेचते थे और लोग भी आग्रहसहकारसे ले लेते थे। उनकी मानसिक वृत्ति मलयजातिकी अपेक्षा हीन न रहते भी बहुत चपल होती है। इसीसे वह स्वाधीन भावमें रह नहीं सकते। मलयजातिके साथ विवादमें इसी कारण पापुया हार जाते हैं।

वह नवगिनी तथा उसके निकटवर्ती द्वीपमें समुद्रके उपकूलपर वास और अन्यान्य स्थलोंमें पार्वत्य-प्रदेशपर अवस्थान करते हैं। बहुतसे द्वीपोंमें तो उनकी संख्या बिलकुल घट गई है। सिराम और गिलोलो द्वीपमें वह कभी कभी मुश्किलसे देख पड़ते हैं। बहुतोंका अनुमान है कि, काल पाकर पापुया पृथिवीसे उठ जायेंगे, क्योंकि शिकारके भूखे अपेक्षाकृत ताम्रवर्ण जातीय लोग उनको अधिक मारते हैं। किन्तु यह भ्रम है। कारण जहां जहां आजकल युरोपीय सभ्यता फैलती, वहां वहां उन्हें परस्पर दिन दिन मिलजुल कर रहनेकी शिक्षा मिलती जाती है। सिराम और गिलोलो द्वीपमें रहनेवाले अत्याचारसे उत्पीड़ित हो अतिशय भीरु बन गये हैं। वह किसी अन्य जातिके साथ एक दम ही बैठते उठते नहीं। अपरिचित वा भिन्न जातिके लोगोंको देख जंगलमें भाग छिप जाते हैं। मारसल नामक बृहत् द्वीपमें उस जातिको छोड़ अन्य कोई जाति नहीं रहती। केवल उपकूल भागमें एक प्रकारकी मिश्र वा सङ्करजाति देख पड़ती है। उसकी भी आकृति प्रकृति उनसे बहुत कुछ मिलती है। उक्त सङ्करजाति नाविकतामें विशेष पारदर्शी होती है। वह युरोपीयोंसे सदय व्यवहार करती है। मागेलनमें पापुया जातिके लोग देख पड़ते हैं। किन्तु उसके निकटवर्ती लेतु द्वीपमें वह बिलकुल नहीं पाये जाते। यह भी सुननेमें नहीं आता किसी समय वहां पापुयावोंका वास था। नवगिनि, कि, अरु, मारसल, सालवत्ति प्रभृति द्वीपोंमें उस जातिके लोग रहते हैं और वही श्रेणी फिजी द्वीप तक विस्तृत है। उनके बाल कड़े और बहुत टेढ़े होते हैं। पूर्णवयस्कोंके मस्तकपर उसी प्रकारके बाल खूब बढ़ कर टापीकी भांति बन जाते हैं। उन्हें वैसे ही बाल अच्छे भी लगते हैं। उनकी

सिसिलवकस्के अधीन रहा। उस समयका इतिहास विशेष नहीं मिलता। उसके पीछे पारद और सासान वंशीयोंने उसे अपने अधीन किया। किन्तु उनके समयका भी विवरण लिखित नहीं। फिर हिजरी अब्‌की प्रथमावस्थामें मुसलमान धर्मप्रचारक मुहम्मदके वंशधर वहां आये। ८६५ ई० को याक़ूब बिन-लिस नामक 'साफ़ोरी' वंशके प्रतिष्ठाताने उस पर अधिकार किया। सासानवंशीयोंने उनके हाथसे उसे छीन लिया। फिर गज़नवी वंशीयोंने सासानोंको कान्दाहारसे भगाया था। पीछे गोरी वंशीयोंने गज़नवियोंको खदेड़ वहां अपना अधिकार जमाया। उनके अनन्तर कान्दाहार सेलजुकीयोंके हाथ लगा। अवशेषमें ११५३ ई० को तुर्कोंने कान्दाहार पहुंच नगर अधिकार किया था। फिर कई वर्ष पीछे वह गयास्-उद्दीन मुहम्मद गोरीके हस्तगत हुआ। १२१० ई० को खोरिजमके सुलतान अलाउद्दीन मुहम्मदने वह स्थान अधिकार किया था। १२२२ ई० को उनके पुत्र जहान्‌गीर खान्‌ने उन्हें वहांसे निकाल भगाया। फिर मलिक कुलवंशीयोंके हाथ जहान्‌गीर खान्‌के उत्तराधिकारी दूरीभूत हुये। कुछ दिन पीछे मलिक कुलीय स्थानीय सरदारोंसे हार और नगर छोड़ भाग गये। अवशेषमें १३९८ ई० को तैमूरलङ्गने सरदारोंके हाथसे कान्दाहार छीना था। १४६८ ई० तक वहां तैमूरके वंशीयोंका अधिकार रहा। फिर अबू सैयदके मरनेसे कान्दाहार और कतिपय पार्श्व-वर्ती स्थान स्वाधीन हो गये। १५१२ ई० को भारतके मुगल राज्यस्थापयिता बाबरने शाहबेग नामक स्वाधीन राजाको हरा उसे भारतके राज्यमें मिला लिया। कुछ दिन पीछे पारसिकों (ईरानियों) ने वह स्थान अधिकार किया। इसी प्रकार एक बार पारस्य (ईरान) और दूसरी बार भारतकी अधीनता स्वीकार करते करते कान्दाहारकी राजसत्ता कुछ दिन अस्थिर रही। अवशेषमें १६२० ई० को फिर ईरानियोंने उसे अधिकार किया था। १७३७ ई० को नादिरशाहने दश लाख फ़ौजके साथ १८ मास अवरोध कर कान्दाहार जीता। १८३४ ई० को शाहशुजा कान्दाहार पर चढ़े, किन्तु परास्त हो लौट पड़े। फिर बादोजाइयोंने उसे जीतनेकी चेष्टा की थी। १८३९ ई० को शाहशुजा फिर अंगरेजोंका साहाय्य ले कान्दाहारमें घुसे। उन्होंने सिन्धु नदीके तीरवर्ती सैन्यसाहाय्यसे २०वीं अपरेलको उसे जीता और नगरमध्यस्थ अहमदशाहके समाधिमन्दिरमें ८वीं मईको राजपद पर अभिषेक पाया। उसके पीछे उनका सैन्यदल समुदाय अफ़ग़ानस्थान अधिकार करनेके लिये काबुल और गज़नीकी ओर अग्रसर हुआ। सैन्यका कुछ अंश कान्दाहारमें शुजाके पास रह गया था। उसी समय दुरानियोंने विद्रोही हो बादोजाई जातीय अकबर खान् और सफ़दरजङ्गके अधीन कान्दाहार आक्रमण किया। अवशेषमें १८४२ ई० को नाना युद्धविग्रहादिके पीछे सफ़दर जङ्गने उसे जीता था। किन्तु अति अल्प दिन पीछे ही कोहनदिल खान्‌ने उन्हें वहांसे भगा दिया। कोहनदिल अति अत्याचारी था। १८५५ ई० को कोहनदिल खान्‌की मृत्यु हुई। उनके पुत्र मुहम्मद सादिक़ने पितृत्यक्त सम्पत्तिको लूट लिया और पितृव्य रहीमदिल खान् पर अत्याचार किया, इसीसे रहीमदिल खान्‌ने अफ़ग़ानस्थानके अमीर दोस्तमुहम्मदको साहाय्य भेजनेको लिखा था। दोस्त-मुहम्मद खान्‌ने आ नगर अधिकार किया और अपने पुत्र गुलाम हैदरको शासनकर्ताके पद पर रख दिया। गुलाम हैदरके पीछे शेर अली प्रथम कान्दाहारके शासनकर्ता रहे, फिर वह काबुल चले गये। उन्होंने अपने भ्राता अमीन खान्‌को काबुलसे शासनकर्ता बना वहां भेजा था। अमीन खान्‌ने शेर अलीके विरुद्ध अस्त्र धारण किये और १५६१ ई० को काज-बाजके युद्धमें मारे गये। अमीनके कनिष्ठ मुहम्मद शरीफ़ने एक बार वृथा चेष्टा की, आखिर इन्होंने अधीनता स्वीकार की। अमीन खान् नामक शेर अलीके वैमात्रेय भ्राताने विद्रोही बन १८६० ई० को खिलाति-ए-घिलजाई नामक स्थानमें शेर अलीको हरा दिया। उसके पीछे शेर अलीके पुत्र याक़ूब खान्‌ने पितृराज्य उद्धार किया।

दाढ़ीके बाल भी ऐसे ही टेढ़े होते हैं। दोनों हाथ, पैर और छातीमें भी कुछ वैसे ही बाल रहते हैं। उच्चतामें वह मलय जातिकी अपेक्षा दीर्घ, प्रायः युरोपीयोंकी भांति होते हैं। पदद्वय दीर्घ रहते हैं। मुखमण्डल दीर्घाकार, कपाल चपटा, नासाछिद्र प्रशस्त, मुखविवर बड़ा और ओष्ठ मोटा तथा भारी होता है। वह आमकाज और बातचीतमें बड़े हृष्टचित्त होते हैं। वह लोग चिल्ला कर और खूब जोरसे हंस हंस कर तथा उछल कूद कर आनन्द प्रकाश करते हैं। वह गृह, द्वार, नौका और सेतु आदिको खोद कर चित्र बनाते हैं। अपनी अपनी शिशुसन्तान पर पापुया बहुत स्नेह रखते हैं। वह ऐसे कभी सामाजिक बन्धनमें पड़ रह न सकेंगे। समझमें ऐसा आता कि काल पाकर युरोपीय सभ्यता फैलनेसे उस युद्धप्रिय जातिका लोप होगा। वह बड़े विश्वासी होते हैं।

हृष्टपुष्टकाय पापुया आकृतिमें श्रेष्ठ और बलादिमें विख्यात हैं। उनका विस्तृत स्कन्ध और गभीर वक्षःस्थल प्रीतिकर देख पड़ता है। काफिर जातिका साधारण दोष पदद्वयकी क्षीणता और अपूर्णता है। पापुयाओंमें भी उसका अभाव नहीं। स्वाधीन पापुया जाति बड़ी प्रतिहिंसापरायण और उद्धतस्वभाव है। नवगिनिके उत्तरपूर्व प्रान्तमें वह रहते हैं। पापुया अपने देशमें अन्य किसी जातिको निरापद बसने नहीं देते। निहायत परेशान करके भी भगा न सकनेसे अपना स्थान छोड़ अभ्यन्तरभागमें पार्वत्य प्रदेश पर वह चले जाते हैं। पापुया गोदना नहीं गोदाते। किन्तु बाहु, वक्ष और पृष्ठ पर एक प्रकारके प्रलेपसे चमड़ेको उभार वह कड़ा कड़ा आबला बना लेना अच्छा समझते हैं। कभी कभी बढ़ा कर पापुया उसे एक अंगुल तक ऊंचा उठा देते हैं।

फ्लोरिस और नवगिनि प्रभृति द्वीपोंमें काफिर ही बसते हैं। नवगिनिके पापुया भिन्न भिन्न श्रेणीके साथ परस्पर युद्धमें लिप्त रहते हैं। उस युद्धमें विपक्ष पक्षका मस्तक काट न सकनेसे कोई पद निरस्त नहीं होता। नवगिनिके काफिर एक काष्ठमयी प्रतिमाकी उपासना करते हैं। उस देवताका नाम "कारवर" है। प्रतिमा १८ इञ्च उच्च रहती है। प्रत्येक घटनाको वह उस देवताके निकट प्रकाश करते हैं। उनकी विधवायें स्वामीके गृहमें रहती हैं। अन्यान्य स्थानोंके काफिरोंकी अपेक्षा नवगिनिके पापुया सभ्य हैं। किन्तु अधिकांश अति सामान्य पर्णकुटीरमें रहते हैं और शिकार या स्वभावजात फलमूलसे जीविका निर्वाह करते हैं। उपकूलभागके पापुया अपेक्षाकृत सभ्य हैं। वह ऊंचे खम्भोंपर नसीकी भांति मचे घर बांध रहते हैं।

टोरी द्वीपमें पापुयाओंको "माइफोर" कहते हैं। वह साढ़े तीन हाथ दीर्घ होते हैं। जातिसुलभ कुञ्चित केशोंको माइफोर स्त्रियोंकी भांति बढ़ाकर रखते हैं। उन बालोंके कारण वह अधिक भयानक लगते हैं। पुरुष शिरमें एक कंघी खोंस रखते हैं, किन्तु स्त्रियां ऐसा नहीं करतीं। उनकी दाढ़ीके लोम कुञ्चित, कपाल उच्च एवं अप्रशस्त, चक्षुद्वय बड़े, वर्ण काला, नाक चपटी और ओष्ठ मोटे होते हैं। किन्तु दांत बिलकुल मोतीकी भांति रहते हैं। पुरुष बर्हिर्वास की भांति एक प्रकारका छोटा कपड़ा पहनते हैं। वह कपड़ा "मार" नामक वृक्षकी छालसे बनता है। उनकी स्त्रियां नीले रंगके सूतका अन्तर परिधान करती हैं। वह घुटनेके नीचे नहीं पहुंचता। उभयादिमें वह गोदना गोदाते हैं। वह गोदना अधिक दिन नहीं रहता। गोदना गुदाते समय सर्पोंके दांतसे जहां गोदना बनाना चाहते हैं, वहां रक्त निकाल कर भूसा लगा देते हैं। वह समुद्रगमनमें अतिशय पारदर्शी होते हैं। नौकाके चालन, सन्तरण और समुद्रमें डुबकी मार समुद्रके गर्भपर कर्मादि करनेमें उनको बराबर निपुण और कोई नहीं होता। वह वृक्षको पेड़ी खोद अपनी नौका प्रस्तुत करते हैं। मछली, धान और मिलनेसे शूकर मांस भी खा जाते हैं। वह चौर्य-वृत्तिको सर्वापेक्षा दुष्ट और हस्त्य अपराध समझते हैं। माइफोर मास्यद्य-दोषवर्जित हैं। विवाह एक ही बार होता है।

इस द्वीपमें स्थान-स्थान पर परिष्कार समभूमि, दलदल और दुर्गम जंगल है। वहांके लोग मकान

उसी समय अफगानस्थानके साथ इङ्गलैण्डका मनोमालिन्य बढ़नेके कारण १८७८ ई०को कोटासे सर डोनाल्ड ष्टुयार्टने एकदल सैन्य ले अफगानस्थान राज्यमें प्रवेश किया। सैफ उद्-दीन नामक सेनापतिने तख्तीकुल नामक स्थानमें उन्हें रोका था। किन्तु वह हार गये। १८७९ ई० को कान्दाहार अंगरेजोंके अधीन हुआ।

शेर अलीके मरने पीछे याकूब खान्ने गण्डमक नामक स्थानमें अंगरेजोंसे सन्धि की थी। उससे युद्धादि बंद हो गया। सन्धिके अनुसार कान्दाहार छोड़ सिन्धमें जानेके लिये अंगरेजोंको आदेश मिला। उसी बीचमें सर लुई कैभागनारी काबुलके दरबारमें सदल निहत हुये। सुतरां अंगरेजोंने फिर कान्दाहार अधिकार किया और कान्दाहारकी रक्षाके लिये खिलात-अ-घिलजाई नामक स्थान भी ले लिया। १८८० ई०को बम्बईसे मेजर जेनरल प्रिमरोजके पहुंचने पर सर ष्टुयार्ट ससैन्य लौटे थे। सरदार शेर अली खान् अंगरेजोंके अधीन कान्दाहारके 'वाली' नियुक्त हुये। सरदार मुहम्मद अयूब खान्ने उससे बिगड़ युद्धघोषणा की थी। अंगरेज सेनानी बारोने पथमें बाधा डाली। किन्तु उनका सैन्यदल एकबारगी ही मारा गया। अयूब खान् कान्दाहारका पथ मुक्त पा अग्रसर हुये। उसी बीच अबदुर रहमान खान् अंगरेज गवर्णमेण्टके साथ प्रबन्ध कर अमीर बन बैठे। उससे पहले सर राबर्टस कान्दाहारके उद्धारको नूतन सैन्य ले आगे बढ़े थे।

सर राबर्टसके पहुंचने पर बाबावाली कोटाल और गण्डी-मूला-साहबदाद नामक स्थानमें अयूबके साथ भीषण युद्ध हुआ। युद्धमें अयूबका सर्वस्व गया था। उनका सैन्य, शिविर, तोप, बन्दूक, बारूद, सब सामान् दुश्मनके हाथ लगा। अवशेषमें १८८१ ई० को अप्रेल मास कान्दाहार प्रदेशमें शान्ति स्थापन कर सर राबर्टस कोटा लौट आये। फिर अमीर अबदुर-रहमानने मुहम्मद हशाम खान् नामक किसी षोड़शवर्षीय बालककी सरदार शमस-उद-दीन खान्के अधीन कान्दाहारका शासनकर्ता नियुक्त किया।

अयूब खान् हिरातमें भाग कर रहे थे। वहां वह अमशीदी जातिके अधिपति स्वीय श्वशुरको मार स्वयं अधिनेता बने और अमीरके विरुद्ध अग्रसर हुये। उन्होंने काश्-कुरेज नामक स्थानमें अमीरके सैन्यको हरा कर कान्दाहार दखल किया था। फिर अमीरने स्वयं सैन्यके साथ आगे बढ़ धीरे धीरे अयूबको रसद और तोप छीन ली। अयूब फिर हिरातको भागे। किन्तु सरदार अबदुल कुद्दुस खान्ने उसी बीच हिरात अधिकार कर लिया था। इस लिये अयूबको पारस्य-राजके शरणागत हो वास करना पड़ा।

इसके बाद अमीरने गुलाम हैदर खान्के अधीन ७००० शिक्षित सैन्य भेज कान्दाहारकी रक्षा की। १८८२ ई०को सरदार नूर मुहम्मद खान् शासन कार्यमें नियुक्त हुये।

कान्दाहार नगर देखनेमें आयताकार और साढ़े तीन मील विस्तृत है। उसके चारो ओर उपरोध और गड्ढे हैं। गड्ढ (गढ़ा) २४ फीट गभीर है। उपरोध और गर्तके पीछे रौद्रदग्ध मृण्मय प्राचीर है। उसमें इष्टक वा प्रस्तर नहीं लगा। उसे रौद्रमें सुखा पत्थरकी तरह कड़ा बना दिया है। वह पश्चिम दिक्‌में १८६० गज, पूर्वमें १९१० गज, दक्षिणमें १३४५ गज और उत्तरमें ११६४ गज लम्बा है। नगरमें ६ फाटक हैं। पूर्वको दारदुरानी तथा काबुल द्वार दक्षिणको शिकारपुर द्वार पश्चिमको हेरात एवं तोपखाना द्वार और उत्तरको ईदगाह द्वार है। छहो द्वारोंसे नगरकी ६ बड़ी राहें गयी हैं। मध्यस्थलमें शिकारपुर द्वार और काबुल द्वारकी राह जहां मिली है, वहां चारसू मसजिद खड़ी है। उसके गुम्बजका व्यास ५० गज है। राहें ४० गज चौड़ी हैं। शहरके उत्तर किला है। उसीके निकट तोपखानेका मैदान है। मैदानके पश्चिम अहमदशाह दुरानीकी कबर है। वह अति उच्च अट्टालिका है। नगरके प्रत्येक द्वार और प्रत्येक मार्गसे उसका गुम्बज दृष्ट पड़ता है। उसकी चारो ओर अहमदशाहके वंशधरोंकी दूसरी भी छोटी छोटी १२ कबरें हैं।

कान्दाहारका वाणिज्य बिलकुल ईरानियोंके

और पलिनेसीय काफिरोंकी मध्यवर्ती जाति हैं। अष्ट्रेलीयाके साथ ही उनकी आकृति प्रकृति और व्यवहारका सादृश्य अधिक है। पुरुष जांघ तक तुनकी बुनी चटाई या कपड़ा पहनते हैं और दुपट्टा व्यवहार करते हैं। वह क्रोधनस्वभाव नहीं होते। किन्तु गुरुओं या स्त्रियोंसे तिरस्कृत होने पर हठात् बिगड़ उठते हैं। स्त्रियां तुनकी बुनी चटाईका एक खण्ड सम्मुख और एक खण्ड पश्चात् दिक् लटका लेती हैं। उनमें कितने ही मुसलमान और कितने ही ईसाई हैं। ओलन्दाजोंने अम्बयना द्वीपमें ईसाई धर्म प्रचार कर देशके प्रायः प्रधान प्रधान लोगोंको ईसाई बना डाला है। उस द्वीपके पापुया अपने अपने गृहको धातुफलक और हस्तिदन्त द्वारा सजाते हैं। हस्तीके मर जानेसे वह दन्त संग्रह करते हैं।

कि द्वीपके काफिर मुसलमान होते भी शूकरमांस खाते हैं। उनकी स्त्रियोंमें भी अवरोधप्रथा नहीं। बालक बालिका बड़ी आमोदप्रिय होती हैं और पूर्णवयस्क भी प्रायः सकल विषयोंमें गड़बड़ करते हैं। इस द्वीपमें दो जातिके लोगोंका वास है। उनमें पापुया नारिकेलका तेल, नौका और काठका गमला बनाते हैं। उनकी बनाई बड़ी बड़ी नावोंमें २०से ३० टन तक बोझ लाद सकते हैं। उनमें किसी प्रकारकी मुद्राका चलन नहीं। समस्त क्रय विक्रय विनिमयसे सम्पन्न होता है। वह पेड़की छाल या सूतका कपड़ा पहनते हैं। वहांकी दूसरी जाति बान्दाद्वीपके मुसलमानोंकी है। वह वहांसे भगाये जाने पर यहां आकर बसे हैं। वह सूतका कपड़ा पहनते हैं। वह मलयजातीय मालूम होते हैं। किन्तु आजकल उक्त जातिकी सन्तानपरम्पराके परस्पर संमिश्रणसे एक स्वतन्त्र मध्यवर्ती जाति बन गयी है।

सेरैस द्वीप मलक्कास द्वीपपुञ्जके मध्य सर्वापेक्षा बृहत् है। यहां गिलोलो द्वीपवासी अधिवासियोंके साथ पापुयाओंका अति निकट सादृश्य है। उनके पुरुषका पूर्ण गठन होता है। किन्तु देह कर्कश रहता है। स्त्रियोंकी आकृति मलयजातिकी अपेक्षा अमीति-कर है। उस द्वीपके अधिवासी पापुया "आलफारो" नामसे ख्यात हैं। वह मस्तककी वाम दिक्के बाल बांधते हैं। बालोंके मध्य एक अंगुल मोटा सूआ रखते हैं। सूआका अग्रभाग और पाददेश लाल रंगा रहता है। वह प्रायः नग्न और अलङ्कारवर्जित होते हैं। केवल पुरुष घास या रूपकी बाली कङ्कण और पोत या छोटे छोटे एक फलकी माला पहनते हैं। स्त्रियां बाल नहीं बांधतीं। किन्तु उक्त समस्त अलङ्कार वह भी परिधान करती हैं। वह अपेक्षाकृत दीर्घच्छन्द होते हैं।

सिलिविस द्वीपके काफिर मलय द्वीपवासी और काफिर जातिकी मध्यवर्ती श्रेणी समझ पड़ते हैं। वह मलय जातिकी भांति सभ्य होते हैं। उनका नाम "बुगि" है।

फिलिपाइन द्वीपमें पशमकी भांति बालवाले काफिरोंकी संख्या अधिक है। अफरीकावासियोंकी अपेक्षा उनके गात्रका वर्ण कुछ तरल श्याम रहता है। स्पेनीय उन्हें "क्षुद्रकाय काफिर" कहते हैं। क्योंकि तीन हाथसे अधिक दीर्घ नहीं होते। उनका जातिगत नाम "इटा" या "आएटा" है। उस द्वीपपुञ्जके पालाग, मिण्डोरो, समर, लेयटी, मसबेत, बोहल और जेबू द्वीपके मध्य उस जातिके लोग देख पड़ते हैं। अन्यान्य द्वीपोंमें विशुद्ध इटा श्रेणीके काफिर नहीं मिलते। जेबुद्वीपमें एक भी इटा श्रेणीका काफिर कहां है।

गिनि द्वीपके पापुवाओंकी नाक चपटी होती है। होंठ मोटा, चक्षु कोटरगत और रङ्ग बादामी रहता है। अनेकोंके अनुमानमें नवगिनिकी पापुया जाति और मलय जातिके मिश्रणसे वह जाति उत्पन्न हुई है। उनके बाल भी पापुयाओंसे नहीं मिलते। अष्ट्रेलिया, नवकालिडनिया, फिजि प्रभृति द्वीपोंमें जो सकल पापुया काफिर देख पड़ते, वह पलिनेसिय पापुया काफिरोंके संमिश्रणसे उत्पन्न या मध्यवर्ती जाति ठहरते हैं।

फिजी द्वीपके पापुया ही पापुया श्रेणीके काफिरोंकी पूर्णमूर्ति हैं। वह कथावार्तामें नम्र और व्यवहारमें भद्र होते हैं। किन्तु नवगिनि, नव-

हायमें है। कान्दाहारमें रेशम और उसके कपड़े बहुत बनते हैं। माखको खेती भी अधिक होती है। मेवाको कोई कमी नहीं। शुष्क फल यहांका प्रधान खाद्य है।

कान्दाहारी बेगम—बादशाह शाहजहान्‌की प्रथमा महिषी। वह पारस्यराज इस्माइल शाह (१म) के वंशोद्भव सुलतान मिर्जाशफीकी कन्या थीं। सम्राट् अकबरने पारस्यराज शाह अब्बासको कान्दाहारका शासनभार सौंपा था। किन्तु उन्होंने वह कार्य सुलतान हुसेन मिर्जाके हस्त अर्पण किया। हुसेन मिर्जाके मरने पर उनके पुत्र मुजफ्फर हुसेनको कान्दाहारका शासनभार मिला था। वह १५९२ ई० को तीन भ्राता साथ ले अकबरको सभामें पहुंचे। अकबरने उनको अभ्यर्थना कर पांच हजारीका पद और सम्भल नामक स्थान जागीर दी थी। कान्दाहारी बेगम उनको भगिनी थीं। १६१० ई० को उन सुन्दरी रमणीके साथ युवराज खुरम (शाहजहान्) का विवाह हुआ। आगरेके कंधारीबाग़ नामक उद्यानमें कान्दाहारी बेगमको समाधि दिया गया। उनका समाधिमन्दिर अति सुन्दर है। आजकल वह भरतपुरराजके अधिकारमें है।

कांदि—बङ्गाल प्रान्तके मुर्शिदाबाद जिलेका उपविभाग। इसका परिमाणफल ३५८ वर्ग मील है। इसमें कांदि, भरतपुर और खड़गांव तीन थाने लगते हैं। वीरभूमसे मयूराक्षी नदी आकर जहां मुर्शिदाबाद जिलेमें घुसी है वहीं कांदि नगरी बसी है। पायकपाड़ेके राजाओंका वहां आदिवास है। उक्त राजवंशके आदिपुरुष गङ्गा-गोविन्द सिंहने कान्दिमें ही जन्म लिया था। उन्होंने २० लाख रुपये लगा अपनी माताका श्राद्ध किया और अभ्यागतोंको ब्राह्मण बालकोंसे हांक बैठा हाथों हाथ अनयायसे ताजा प्रसाद मंगा खिला दिया।

कान्दिग्भूत (सं० त्रि०) कां दिशं गच्छामि, इत्या-कुलीभूतः, कान्दिग्-भूत। १ पलायित, दूढ़े राह न पानेवाला, भगोड़ा। २ भीत, डरा हुआ।

"स बर्दयिन् महातकान् त्रिशूली शत्रुवाहनम्।
कान्दिग्भूतो कौन्तिवादौ महाबाहोऽबरद् दिवम्॥" (भारत,कर्ण, १६९ अ०)

कान्दिशीक (सं० पु०) 'कां दिशं यामि' इत्येवं वादिनो अर्थे ठक् प्रत्ययेन पृषोदरादित्वात् सिद्धं। यद्वा कदि वैक्लव्ये भावे इन्, कन्दि वैक्लव्यं ; शीक सेचने भावे घञ्, शीकः अश्रुपातः ; कन्दिश शीकश तौ विद्यते अस्य कदिशीक-अण्। भय देखकर पला-यनकारी, डरसे भगनेवाला।

कान्दू (काण्डु) बङ्गाल और विहार प्रान्तवासी एक जाति। कहीं कहीं इसे भड़भूजा, भुरजी आदि भी कहते हैं। मत्स्यकण्डन ही इस जातिकी प्रधान उपजीविका थी।

कान्यकुब्ज (सं० क्लो०) कन्याः कुब्जाः यत्र, कन्यकुब्ज स्वार्थे अण्। १ देशविशेष, एकमुल्क। हिन्दीमें इसे कनौज कहते हैं। संस्कृत पर्याय—महोदय, कन्याकुब्ज गाधिपुर, कौश और कुशस्थल है। रामायणमें लिखा है कि राजर्षि कुशनाभके औरस और घृताची अप्सराके गर्भसे १०० कन्याओंने जन्म लिया था। उनका रूप-यौवन देख वायुदेव कामातुर हुये। किन्तु बिना पिताकी आज्ञाके कन्याने उनसे सहवास करना स्वीकार न किया। इसपर वायुदेवने उन्हें शाप दे कुबड़ी बना दिया। पिताने प्रसन्न हो अपनी कन्याओंका विवाह काम्पिल्य नगरके राजा ब्रह्मदत्तसे किया था। उनके स्पर्शसे कन्याओंको कुब्जता मिट गई। २ ब्राह्मण-जातिविशेष। कनौजिया देखो।

कान्यकुब्जी। (सं० स्त्री०) कान्यकुब्ज-ङीप्। कान्यकुब्ज देशको स्त्री।

कान्यजा (सं० स्त्री०) कात् कस्मात् अन्यस्मिन् जायते क-अन्य-जन्-ड-टाप्। नलीनामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज।

कान्ह (हि० पु०) श्रीकृष्ण।

कान्हड़ा— कानड़ा देखो।

कान्हड़ो (हि०) कनौटी देखो।

कान्हम (हि० पु०) कृष्णवर्ण भूमि, काली मिट्टी की जमीन। यह भड़ौंचको ओर होती है। इसमें कपास बहुत उपजती और पनपती है।

कान्हमी (हि० स्त्री०) कर्पासविशेष, एक कपास। यह भड़ौंचकी ओर कान्हम भूमिमें उपजती है।

कालिडोनिया और किसीके आपुआ नरमांसभुक् हैं। फिजीद्वीपके आपुआ अफरीकाके हटेण्टटोंकी भांति चूड़ाकार केश बांधते हैं, कालोंकी भांति करोटी (खोपड़ी) अप्रशस्त होती है। नवगिनिके आपुआ धार्मिकता, गुरुजनभक्ति और आतिथेयताके लिये विख्यात हैं। प्रायः सकल स्थलोंमें काफिर स्त्रियोंके मध्य व्यभिचारदोष देख नहीं पड़ता।

काफिरस्थान—भारतवर्षकी उत्तरपश्चिम सीमा और हिन्दूकुश पर्वतके मध्यका एक प्रदेश। इसकी पश्चिम सीमा अफगानस्थानकी अलीसाङ्ग नदी है। पूर्वसीमा कुनार नदी हो सकती है। उस स्थानके अधिवासी काफिर या सियाहपोश कहलाते हैं। १८८३ ई०से पहिले कोई अंगरेज उस प्रदेशमें प्रवेश न कर सका था। सुतरां उसके पहले उसका जो विवरण सुनते, उसपर सहज मनमें आस्था कैसे आ सकते हैं। प्राचीन अंगरेज ऐतिहासिकोंने उस स्थानके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा, उसका अधिकांश पार्श्ववर्ती मुसलमानोंसे संग्रह किया था। किन्तु अब सुनते समझते कि मुसलमान उस प्रदेशमें सहज ही घुस नहीं सकते या घुसना पसन्द नहीं करते। कारण काफिरोंसे उनकी चिर शत्रुता है। कोई काफिर यदि अपने जीवनमें किसी उपायसे एक भी मुसलमानको मार नहीं सकता, तो वह स्वजाति, स्वश्रेणी और स्ववंशमें अपदार्थ एवं हेय रहता है। सुतरां इधर उधर मुसलमानोंसे उस प्रदेश या उस जातिका विवरण ठीक ठीक कैसे मिला होगा।

यहां सियाहपोश नामक एक जाति रहती है। कोई कोई सियाहपोश जातिके सम्बन्धमें कहता कि यह आरब्यको गबर जातिकी भांति आचार-व्यवहार-विशिष्ट किसी अरबी जातिसे उत्पन्न है। कोई इन्हें अलेक्सन्द्रके ग्रीक सैन्यकी औरसोत्पन्न बताते हैं। फिर किसीके अनुमानमें मुसलमानोंका मत फैलनेसे पहले भारतवर्षसे जो लोग पर्वतादिमें रहनेको समतल प्रदेशसे निकाले गये, सियाहपोश उन्हींकी एक शाखा है।

काफिरोंकी भाषाके साथ अरबी, फारसी या तुर्की भाषाका बिन्दुमात्र भी सादृश्य नहीं। हां, संस्कृतके साथ उसकी यथेष्ट घनिष्ठता आती है। इसी कारण आधुनिक ऐतिहासिक अरबों या अफगानोंकी भांति उन्हें बिलकुल स्वतन्त्र जाति नहीं मानते। वह भारतीय जातिके ही अन्तर्गत हैं। केवल देशभेदसे काफिर स्वतन्त्र हो गये हैं।

१८८३ ई०के पूर्व वहांका जो विवरण मिला, उससे समझ पड़ा कि उस देशमें कमार, गम्बीर, देव-कुन्ज, अरमङ, इयगल, अमीसोज, अश्किन, वैगल प्रभृति जनपद विद्यमान हैं। १८८३ ई०को मिष्टर डब्ल्यु म'नेयार नामक अंगरेज ही सम्भवतः सर्वप्रथम उस प्रदेशमें जा सके थे। उन्होंने वहांकी लोकसंख्या अनुमानसे ६ लाख स्थिर की। प्रति ग्राममें १००से ६०० तक लोग रहते हैं।

उनके दैनिक आचार व्यवहार और आकृति प्रकृतिके सम्बन्धमें नानारूप विभिन्न मत मिलते हैं। किसी किसीके कथनानुसार सियाहपोश देखनेमें बलिष्ठ, दृढगठित एवं साहसी रहते भी स्वभावमें सम्पूर्ण विपरीत अर्थात् अलस, विलासी तथा सर्वदा मद्यपायी होते हैं। अफगानस्तानी अनेक पकड़े काफिर रखते हैं। उनका शरीर दृढ़ समझ पड़ता है। उनमें युरोपीय गठनके लोग ही अधिक हैं। अन्धों और बिड़ालाक्षोंकी भी कोई कमी नहीं। उन्हें आसन बांधकर बैठना कठिन लगता है। काफिर कुरसी पर ही सुविधासे बैठ सकते हैं। उनकी स्त्रियां रूपवती और बुद्धिमती होती हैं। यहां रसोत्पन्न क्षेत्र है। अनेकोंके कथनानुसार अतिरिक्त मद्यपान करनेसे वह रक्तवर्ण हो गये हैं। यदि उनसे पूछा जाय उन्हें कैसा आहार अच्छा लगता है, तो वह शीघ्र बोल उठेंगे—प्रतिदिन एक मटका शराब चाहिये। एक मटकेमें प्रायः पंद्रह सेर शराब आती है।

मनेयारका विवरण पढ़नेसे समझते कि काफिरस्थानके लोग सुपुरुष, आलसी और कृषिजीवी हैं। उनकी स्त्रियां बागका काम करती हैं। नृत्यगीतमें यह बहुत अनुराग रखते हैं। प्रायः प्रति सन्ध्या नृत्य-गीतादिमें बीतती है। उनमें आत्मकलह या गृहविवाद-

जनित रक्तपात नहीं होता। मुसलमानोंसे इनका सर्पनकुल सम्बन्ध है। एक दूसरेको देखते ही युद्ध छिड़ जाता है। अंगरेजोंके साथ इनका कोई विवाद नहीं। इनमें दासत्वप्रथा और दासव्यवसाय विद्यमान है। किन्तु समझ पड़ता है कि वह शीघ्र ही छूट जायगा। यह प्रायः बहु विवाह नहीं करते। स्त्रीको व्यभिचार दोषमें सामान्य दण्ड मिलता है, किन्तु पुरुषको बहुसंख्या गोमेषादि जुर्माना देना पड़ता है। यह शवको सन्दूकमें बन्द कर रख छोड़ते हैं। एक मात्र अद्वितीय देवता "इम्ब्र" (अथवा इन्द्र) पूज्य हैं। इम्ब्रका मन्दिर होता है। उक्त मन्दिरमें पवित्र प्रस्तरमूर्ति स्थापित रहती है। पुरोहित आकर पूजा करते हैं। यह धनुर्बाणधारी हैं। गोमेषादि ही इनका मूल्यवान् वस्तु है। यही जिसके अधिक रहता है, वही धनी ठहरता है। इनमें १८ लोग सरदार हैं।

यह लोग परस्पर शपथ उठा बन्धुताके सूत्रमें बंध जाते हैं। किसीके साथ युद्धकी सन्धि टूटनेसे पहले एक तीर भेजा जाता है। यह बड़े अतिथिभक्त हैं। यदि कोई अतिथि इनके घर आता, तो स्वयं गृहकर्ता उसकी परिचर्या उठाता है। फिर यदि कोई दूसरा उस अतिथिको उठा अपने घर ले जाता, तो उभयके मध्य विषम विवाद देखनेमें आता है। यहां तक कि रक्तपात होने लगता है। स्त्रियोंके यथेच्छाभ्रमणमें कुछ बाधा नहीं, अवगुण्ठन नहीं। किन्तु उन पुरुषोंके साथ पानभोजन करने कम पाती हैं। प्रति ग्राममें स्त्रियोंके प्रसवको स्वतन्त्र भवन रहते हैं। इनके आपसमें विवाद होनेसे पीछे मिटते समय विवादियोंके मध्य एक आदमी दूसरेका स्तन और दूसरा स्तन चूमनेवालेका मस्तक चुम्बन करता है। इसी प्रकार विवाद मिट जाता है। काफिर अपने सन्तानको विक्रय नहीं करते। किन्तु कष्टमें पड़नेसे प्रतिवासीके सन्तानको चोरीसे बेच लेते हैं। किसी किसीके कथनानुसार यह व्यापार व्यवहारके मध्य गण्य है। इसीसे चित्रालके सरदार विक्रयार्थ बालक-बालिकाओं पर कर लगा देते हैं। किसी मुसलमान जाति पर युद्धयात्रा करते समय जितने दिन तक आयोजन उपायादि निर्धारित नहीं होता, उतने दिन कोई पुरुष अपने घर जाने नहीं पाता। दिवारात्रि सम्प्रदायगृहमें रहना और वहीं पानभोजन शयनादि करना पड़ता है। जिस स्थानमें आक्रमण करना ठहराते, दिनके समय सब वहीं पहुंच दो दो तीन तीन आदमी झाड़ियोंमें छिप जाते हैं। फिर जैसे ही निकटसे मुसलमान निकलते, वैसेही उनपर टूट मारने लगते हैं। प्रति दिन सन्ध्याकाल स्व स्व कार्यका विवरण बता आमोद प्रमोद करते हैं। मुसलमान भी ऐसे ही काफिरस्थानमें घुस बालक-बालिका चुरा लाते हैं।

यह वक्रोमें गेहूं, यव प्रभृतिके पीस आटेको रोटी बनाते हैं। रोटीको लोहकटाह (तवे) पर सेंक खाया करते हैं। यह गृहपालित पशुका भी मांस खाते हैं। काफिर एक ही वारमें गला काट पशुहत्या करते हैं। यदि दो हाथ मारनेका प्रयोजन आता, तो वह मांस अपवित्र समझ छोड़ दिया जाता है। फिर काफिर वारिजातिके मध्य पारिया श्रेणीको वोला उसे दे देते हैं।

यह अंगूरसे शराब बनाते हैं। अंगूरके वर्णभेदसे मद्यका वर्ण दो प्रकार होता है। बालक वयसमें सकल समय मद्य पीने नहीं पाते। मुगल-सम्राट् बाबरने लिखा है कि काफिर अपने गलेमें मद्यपूर्ण "किझ" नामक चमड़ेकी कुप्पी लटका रखते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि वह जलके बदले मद्य पान करते हैं।

इनका साहाय्य न मिलनेसे काफिरस्थानमें घुसनेको कोई कैसे साहस कर सकता है।

काफिरस्थान देखनेमें अतिसुन्दर देश है। यह निविड़ वृक्षमालामें प्रकृतिका रम्य उपवन समझ पड़ता है। प्रान्त भागमें महावन है। काफिरस्थान प्रधानतः तीन उपत्यकाओंमें विभक्त है। इन्हीं तीन उपत्यकाओंसे यहांकी तीन प्रधान जातियोंका नामकरण हुआ है—रामगल, वेगल और वासगल। इनमें वेगल सर्वापेक्षा पराक्रान्त और उनकी उपत्यका भी सर्वापेक्षा वृहत् है। काफिर या सियाहपोश इनका जातीय नाम नहीं। पार्श्ववर्ती मुसलमान इन्हें इस नामसे अभिहित करते हैं। मुसलमान धर्मेतर

६ इच्छा, चाह। ७ सहमेच्छा, मिलनेकी ख़ाहिश। ८ मद, मोहर।

"सन्तानकामाय तथेति कामं
राज्ञे प्रतिश्रुत्य पयस्विनी सा।" (रघुवंश)

९ महादेव। १० विष्णु। ११ बलदेव। १२ कामदेव। कामदेव देखो। १३ ककार अक्षर। १४ तृष्णा, लालच। इस सम्बन्ध पर भगवद्गीतामें लिखा है,—

"ध्यायतो विषयान् पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।
सङ्गात् संजायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते॥" (२।६२)

प्रथमतः विषयचिन्ता करते करते उसमें आसक्ति उत्पन्न होती है। फिर उसी विषयमें काम अर्थात् तृष्णाका बल बढ़ता है। उसके पीछे वही काम किसी कारण प्रतिहत होने पर क्रोध आ जाता है।

इसी कामके सम्बन्ध पर भगवद्गीताके शङ्कर-भाष्यमें भी कहा है,—"जो शत्रु हो कर भी समुदाय प्राणिवर्गको स्ववशमें रख सकता, उसीका नाम काम पड़ता है। कामही सब अनर्थोंका मूल है। यही किसी कारणसे प्रतिहत होने पर क्रोध रूपमें परिणत हो प्राणियोंको कर्तव्याकर्तव्य विषयमें विचारहीन बनाता है। सुतरां उस समय वह पापाचारी हो जाते हैं। इस लिये प्राणिमात्रको उस विषयमें यत्न करना चाहिये, जिसमें दुरात्मा काम चित्तसे दूर रहे।"

१५ चन्द्रवंशीय माहुल्य राजपुत्र। इनके पुत्र शत्रु थे। (ब्रह्माण्ड १।१०।११)

१६ महिसूरके एक मान्तरराज। कादम्बराज विजयादित्यदेवके साथ इनकी भगिनी चट्टलादेवीका विवाह हुवा था। ११४८ ई०को यह विद्यमान रहे।

१७ हटिश ब्रह्मके थयेतमयो जिलेका एक विभाग। यह अक्षा० १८° ४८′ से १९° ५′ उ०, और देशा० ९४° ४५′ से ९५° १४′ २०″ पू० तक अवस्थित है। इसके उत्तर थयेत तथा मेङ्गडून, पूर्व इरावदी, दक्षिण पदोङ्ग और पश्चिम आराकान-योमा है। भूमिका परिमाण ५०५ वर्गमील है।

पहले यह स्थान मयठुगीके अधीन था। १०८३ ई० को मयठुगी इलाकेमें १३२ ग्राम थे। पहले डिहिदारोंकी भांति मयठुगीर भी क्षमतापन्नो थे। समस्त विषयोंमें कर्तृत्व चलते भी वह किसीके जीवन-मरणमें हस्तक्षेप कर न सकते थे। फिर उन्हें स्वर्ण-छत्र व्यवहार करनेकी भी क्षमता न रही।

पहले ब्रह्मराज कामसे ८५७०) रु० कर पाते थे। आजकल इसकी मालगुजारी कुल ७४८९० रु० है। लोक-संख्या कोई साढ़े पैंतीस हजार होगी।

इस विभागका प्रधान नगर काम है। यह इरावदी नदीके दक्षिण पार्श्व अक्षा० १९° १′ उ० और देशा० ९५° १०′ पू०के मध्य अवस्थित है। इस नगरके बीचमें 'मदे' नामक एक स्रोत बहता है। थोड़ी दूर पर मतून नदी प्रवाहित है।

इस नगरमें अनेक बौद्ध देवालय और आश्रम हैं। पहले इसका नाम "महाग्राम" था। यही बौद्ध शास्त्रमें महाग्राम और पाश्चात्य प्राचीन भौगोलिक टलेमि कर्तृक माग्राम (Magrama) नामसे उक्त हुवा है। ब्रह्मराज अलम्माने इसका नाम काम रखा। लोकसंख्या दो हजारसे कम है।

१८ राजपूतानेके कमान परगनेका प्रधान नगर। यह भरतपुर राज्यके अधीन है। काम भरतपुर राज्यकी उत्तर-पूर्व सीमा पर अवस्थित है। पहले यह स्थान जयपुर राज्यके अधीन था। राजा कामसेनने इसकी श्रीवृद्धि कर अपने नामसे परिचित किया।

यह नगर अतिप्राचीन है। किंवदन्तीके अनुसार भगवान् श्रीकृष्णकी यहां कुछ काल अवस्थिति रही। बौद्ध राजाओंके समय भी यह स्थान प्रसिद्ध हुवा। आज भी यहां विस्तर बौद्ध-कीर्तिका ध्वंसावशेष पड़ा है। उसमें शतस्तम्भ देखनेकी चीज़ है। इस मन्दिरमें बुद्धमूर्ति खोदित है। १७८२ ई०को यह स्थान सेनापति पेरों कर्तृक रणजित् सिंहके अधिकारभुक्त हुवा। यहांसे भरतपुर तक धातुवर्त्म चला गया है।

काम (हिं० पु०) १ कर्म, कार्य। २ कठिन कार्य, मुश्किल बात। ३ उद्देश्य, मतलब। ४ सम्बन्ध, सरोकार। ५ व्यवहार, इस्तेमाल। ६ व्यवसाय, रोज़गार। ७ रचना, कारीगरी।

विश्वास न करनेसे ही यह काफिर कहाते हैं। फिर अधिक संख्यावाले देशवालोंका छाग वर्ण छागचर्मका परिच्छद पहननेसे ही सियाहपोश नाम है। इसीसे सबके सब सियाहपोश नामसे पुकारे जाते हैं। रामगल वा वाइगल जाति चमड़ेका परिच्छद नहीं पहनते। वह उसके बदले सूतके कपड़ेकी पोशाक बनाते हैं। उक्त तीनों जातियोंकी भाषा स्वतन्त्र है।

यह भूत प्रेतमें विश्वास रखते हैं। काफिरोंके मतानुसार जो कुछ दुःख कष्ट मिलता, वह सब भूत प्रेतादिके कारण ही पड़ता है। इनके पानका मद्य शास्त्रसम्मत-प्रणालीके नियमानुसार नहीं बनता। वह ख़ालिस अंगूरका ताजा रस होता है।

परस्पर युद्ध विग्रहादिके पीछे पराजित लोगोंकी स्त्रियां बन्दी बन दासोंकी भांति बिकती हैं। स्त्रियोंमें लज्जा, शीलता या धर्मभाव नहीं देखते। इनके समाजमें इससे विशेष दोष कब गिनते हैं। कारण पूर्व ही लिख चुके कि ऐसे दोषमें उभय पक्ष केवल सामान्य शास्ति रखते हैं।

यह अंगरेज अफगान या तुर्क किसीके अधीन नहीं सम्पूर्ण स्वाधीन हैं। सिन्धु और कामस नदीके मध्य समस्त गिरिवर्त्ममें इनका अक्षुण्ण प्रताप है। हिमालय पर्वतके शेष प्रान्तसे कामस नदीके तीरवर्ती बदख़शान पार्वत्य प्रदेश पर्यन्त और हिन्दूकुश पर्वतमालामें यह अधिकार रखते हैं। काबुल नदीके उत्पत्ति स्थलपर पड़नेवाले सकल गिरिवर्त्म भी इन्हींके अधीन हैं।

यह देशमें सुपुरुष होते भी दीर्घच्छन्द नहीं। इसमें दूसरी जो क्षुद्र क्षुद्र जाति हैं, उनमें दारानूरी जाति अपनेको नानक मतावलम्बी और अति प्राचीन बताती है। लम्पाक (लमगान) नामक स्थानकी भाषाके साथ इनकी भाषा और अफगानोंके आकारके साथ इनके आकारका सौसादृश्य है।

नेजदा (निजा?) नामक स्थानके आसपासमें जुगुनी नामक एक जाति है। इसके लोग अपेक्षाकृत संख्यामें अधिक हैं। किन्तु काफिर इन्हें "मिश्रा" अर्थात् वर्णसंकर कहते हैं। क्योंकि यह काफिर और अफगान उभय जातिकी कन्याका पाणिग्रहण और काफिरस्तानमें निर्भय प्रवेश करते हैं। यह प्रधानतः पथप्रदर्शकका काम चलाते हैं। कुन्द पर्वतमें ही इनका अधिक वास है। जुगुनी अफगानोंकी अपेक्षा क्षुद्रकाय होते हैं। इनकी आकृति भी अपेक्षाकृत कोमलतापूर्ण रहती है। यह मुसलमान धर्मावलम्बी हैं। किन्तु इनमें स्त्रियोंके अवरोधकी प्रथा नहीं।

इस प्रदेशकी अवन उपत्यका ७१०० फीट दीर्घ है। उश्चिन-इयान्चिक नामक गिरिपथका दृश्य परम रमणीय है। कुन्द पर्वतके शिखरपर एक क्षुद्र ह्रद है। प्रवादानुसार इसी ह्रदके तीर नूहकी नौकाका अन्ता-वशेष प्रस्तरीभूत हो गया था, फिर निम्न उपत्यकामें उसीसे नूहके पिताका समाधिस्थल बना है।

काफिला (अ॰ पु॰) यात्रियोंका समूह, मुसाफिरोंका झुण्ड। काफिलाके लोग तीर्थ या व्यापार करने मिल-जुलके निकलते हैं।

काफी (अ॰ वि॰) १ पर्याप्त, पूरा, कम न ज्यादा, नपा तुला। (पु॰) २ रागविशेष। इसमें कोमल गान्धार लगता है। काफीके कई भेद हैं,—काफी कानड़ा, काफी टोड़ी, काफी होली इत्यादि। यह राग प्रायः वसन्त ऋतु गाया जाता है।

काफी—(हिं॰ स्त्री॰) कहवा, बुन।

काफी—(अं॰—Coffee) कहवा, एक प्रकारका रक्तवर्ण क्षुद्र फल। इसे तोड़, भून कर और बुकनी बना चायकी भांति दूधके साथ बहुतसे लोग अक्सर पान करते हैं। इसके भिन्न भिन्न नाम यह हैं,—

हिन्दी … … …	बुन, कहवा, काफी।
बङ्गला … … …	काफि, काफि, काफा।
गुर्जरी … … … …	बुन्द, कावो।
बम्बैया … … …	कफ, बुन, काफी।
दक्षिणी … … …	बुन्द, तखेम-कैहे।
महाराष्ट्री … … … …	कफ, बुन्द।
तामिल … … … …	काफि कोटाइ।
तेलगू … … … …	काफि वित्तुलु।
कर्णाटी … … … …	बोन्द बीज।
अरबी … … … …	बुन, कहवा।

कामकला (सं॰ स्त्री॰) कामस्य कला, ६-तत्। १ कामदेवकी पत्नी रति। २ चन्द्रकी षोडश कला। ३ तन्त्रोक्त विद्याविशेष। पुण्यानन्द-प्रणीत कामकला-विलास नामक तन्त्रग्रन्थमें इसका विषय वर्णित है। तन्त्रभाषा साधारणतः गुह्य रहनेसे पढ़ने पाठ समझ नहीं पड़ता। इस लिये कामकलाविद्याके मूलश्लोक ही उद्धृत किये जाते हैं,—

"[illegible]

[illegible]

फारसी ... ... कहवा।
ग्रीकी ... ... काफउत।
सिंहली ... ... कोपि-अत्ता।
अंगरेजी ... ... काफी (Coffee)
फरासीसी ... ... काफि (Cafe´)
जर्मनी ... ... कफ्फी (Kaffee)
वैज्ञानिक ... ... कफिया एराबिका
(Coffea Arabica)

इसका पेड़ १५ से २० फीट तक ऊंचा होता है। इसमें बहु संख्यक शाखा प्रशाखा रहती हैं, किन्तु वह अधिक नहीं बढ़ती। इसके पेड़की छाल सजना पेड़की छालकी भांति कुछ श्वेत वर्ण होती है। नारङ्गीके आकारका सफेद फूल निकलता है। फूल क्षुद्र वकुल-फलकी भांति आते हैं और पकनेपर लाल हो जाते हैं। प्रति फलमें केवल दो बीज होते हैं। बीज निकाल कर फल बेचे जाते हैं। फिर सूखे फलोंको भून कर और बुकनी बना लेनेसे पीनेका कहवा प्रस्तुत होता है।

अनेकोंके अनुमानसे इसके अरबी "कहवा" नामसे प्रथमतः मद्य समझा जाता था। किन्तु आजकल उससे काफीका बोध होता है। फिर किसीके अनुमानसे यह शब्द अबसीनिया (अफरीका)के अन्तर्गत काफा प्रदेशके नामसे बिगड़कर बना है। इसके हिन्दी नाम "बुन" से वृक्ष तथा फल और "कहवा" नामसे काफीकी बुकनीका बोध होता है।

इस फलका आदिनिवास अफरीकाके अन्तर्गत अबसीनिया, सूदान, गिनी, और मोजाम्बिक प्रदेशका उपकूल है। उक्त सकल स्थलोंमें यह वृक्ष अपने आप वनमें उपजता है। अरबदेशमें यह इस प्रकार नहीं होता। फिर भी कह नहीं सकते कि अरबके दुर्गम मध्यप्रदेशमें यह है या नहीं।

काफीके अनेक श्रेणी-विभाग हैं। उनसे भारतवर्षमें ७ प्रकारकी काफी मिलती है।

१ अरबी काफी। (Coffea Arabica) भारतके नाना स्थानोंमें इस काफीकी यथेष्ट कृषि होती है।

२ बङ्गालकी काफी। (Coffea Bengalensis) कुमायूंसे सिक्किम तक, युक्तप्रदेश, बङ्गाल, आसाम, श्रीहट्ट, चट्टग्राम और तेनासारिम प्रदेशमें यह उपजती है। इसका फल ईषत् आयताकार होता है। चट्टग्राममें इसे "हरीणा" फल कहते हैं।

३ सुगन्धि काफी। (Coffea Fragrans) यह श्रीहट्ट और तेनासारिम प्रदेशमें मिलती है। फल उक्त दोनों जातिकी भांति होता है।

४ आसामी काफी। (Coffea Jenkinisii) आसामके खसिया पर्वतमें उपजती है। फल ईषत् डिम्बाकार लगता है।

५ खसिया काफी। (Coffea Khasiana) खसिया और जयन्ती पहाड़ों पर होती है। इसके फल केवल चौथाई इञ्च मोटे पड़ते हैं। बीज टेढ़े बेरकी भांति होते हैं।

६ त्रिवाङ्कुड़की काफी (Coffea Travancorensis) त्रिवाङ्कुड़में होती है। फल लम्बाईमें छोटा और चौड़ाईमें बड़ा रहता है।

७ मलवारी काफी। (Coffea Wightiana) दाक्षिणात्यके पश्चिमांशमें उपजती है। इस फलका आकार त्रिवाङ्कुड़के फलकी भांति होता, किन्तु एक तरफ बहुत दबका रहता है।

प्रथम श्रेणीको छोड़ कर दूसरी सकल श्रेणियोंकी काफी कम उत्पन्न होती है। दाक्षिणात्यके लोग ही अधिक काफी पीते हैं और उधर ही इसकी खेती अधिक की जाती है। दाक्षिणात्यमें आजकल इतनी कांफी उपजती है कि विदेशमें भी जाकर बिकती है।

१५° उत्तर और १५° दक्षिण अक्षांशके बीचमें काफी भली भांति उपजती है। फिर २६° उत्तर और ३०° दक्षिण अक्षांशके मध्यम प्रदेशमें इसकी उत्पत्ति साधारण है। कपासकी खेती जैसी ज़मीनमें की जाती है, वैसी ही ज़मीन इसकी खेतीके लिये भी आवश्यक होती है। इसकी झाड़ी देखनेमें अति मनोहर आती है। इसीसे अनेक लोग इसे उद्यानकी शोभाके लिये लगाते हैं। जहां फारेनहीटके तापमानमें ६०°से ८०° पर्यन्त उष्णता मिलती है, वहीं यह उपजती है। मासमें एकबार वृष्टि होना और वर्षमें १५ इञ्चसे अधिक जल न पड़ना, इसकी उत्तम उत्पत्तिका

पाशाद् बैन्दवावसुनयरवधाकोऽङ्कितमखरा ।
वाग्भववाहवाद्यो शक्तिमातृकमान् सोपमलिवया ॥
तन्मिथुनं गुणभेदादासौ विन्दुत्रयात्मकं वाच्यं ।
कामेशीमिश्रेयमनु स्वरूपद्वयात्मना विततम् ॥
अमुकोपनिवासिन्यो याश्चा: षट्त्रिंशत्तत्वविन्यासा: ।
पुरंदरमेवेदं चक्रमनो: संभ्रमारम्भो देवत: ॥
तदिदमवयवस्ता: सर्वाद्रि-स्वरूपमापन्ना: ।
चक्रसंचारनिलया लसन्ति शरदिन्दुसुन्दराकारा: ॥
तदाद्यर्पद्विकोणे योगिन्य: सर्वसिद्धिदा: पूर्णा: ।
देवीधी: अर्धे द्विपावरवनदा विश देवमुखाद्या: ।
भुवनारचक्रमवना देवीमनुमाकयविवरवक्त्रवता: ।
संध्यारुणवर्णतना: श्लिष्टा: सम्प्रदायविन्य: ॥
अव्यक्तमहदहं कृतितन्मात्रा: लोकनाड्याकारा: ।
त्रिदश्यकमलयोगि नवाब्ज गुप्ततरयोगिनीवंश: ॥
भूतानीन्द्रियदशकं मनश्च देव्या विकारषोडशकम् ।
कामाकर्षिण्यादिस्वरूप: षोडशारचक्रगा: ॥
मुद्राशिवलयाग्र सन्निमध्य: प्रकटिता: सर्वा: ।
आदिमकाम्बरशाला माता बालार्ककान्तिभि: सदृशा: ॥
आधारनवकमस्या नवचक्रस्येव परिचयं चेत ।
नवनाथचक्रयोऽपि च मुद्राकरेण परिवृता चक्रे ॥
अस्यास्त्रयादिनवकम्बलाकारं समष्टितं व्यक्तम् ।
ज्ञानादिमावयवं आत्ममयूखमालेतद्व्याप्तौ ॥
अणिमादिसिद्धिधाऽऽश्रिता: सौभाग्यकमनीयकामिनीरूपा: ।
विद्याराधनम् आत्मा गुरुमण्डलान्तर्गत् अकिञ्चना: ॥
परमानन्दानुभव: परमगुरुनिर्णीत शिवविज्ञान: ।
स पुन: कथित शिव. कार्यस्त्वयो विमर्शात् ॥
आदौन: श्रीविद्याक्षरगुरुकाले गुरु: शिवा विद्याम् ।
तस्यौ ददौ स्वयम्भू कामेश्वरी विमर्शरूपिणी ॥
साध्वेव निवर्त्यसान् ध्यानेयात् श्रीकलावाङ्मयात्मान् ।
चिन्मात्रविग्रहमूर्तिक्षितात्मकाविकारविगुणम् ॥
श्रीकलितकालियपदीम् परोक्षा विद्या प्रकाशमानाव ।
एतैरोपविलयानुमन्दीतु गुरुकला विदित: ॥"

भावार्थ—आदिसृष्टिका कारण शिव और शक्ति दो विन्दुस्वरूप हैं। इन दोनों विन्दुमें शिवरूप विन्दु शुक्लवर्ण और शक्तिरूप विन्दु रक्तवर्ण है। शिव-विन्दुमें जब शक्तिविन्दु मिलता, तब उभय विन्दुके संयोगका काम नाम पड़ता है। दोनों विन्दु नाना कला और नाद रखते हैं। इन शिवशक्ति विन्दुमें ही छत्तीस अक्षर, समुदाय भाषा एवं पञ्च भूतादि यावतीय पदार्थकी सृष्टि होती है। अकार अक्षरसे शिव और हकार अक्षरसे शक्तिका बोध है। इसीलिये शिवविन्दु, शक्तिविन्दु और नाद तीनोंके संमिश्रणसे "अहं"कारकी उत्पत्ति हुआ करती है। इसीको कामकला कहते और इसी शक्तिका नाम त्रिपुरा-सुन्दरी रखते हैं। उक्त तीनों विन्दु एक त्रिकोण-चक्रके मध्यस्थित हैं। सुतरां त्रिपुरासुन्दरी उसी चक्रके मध्य अवस्थान करती हैं। फिर उसके कोण-समूहमें सिद्धिप्रदा योगिनियोंका अधिष्ठान है। इन त्रिपुरासुन्दरीका बालारुणकी भांति अरुण वर्ण है। मस्तकमें चन्द्रकला है। चन्द्र, सूर्य और अग्नि चक्षुत्रय हैं। पाश, अङ्कुश, इक्षु, धनुः और पञ्चशर इनमें प्रतिष्ठित हैं। षोडशदलमें अव्यक्त, महत्, अहङ्कार और पञ्चतन्मात्र गुप्ततर योगिनीसमूह है। फिर मध्यमें पञ्चभूत, दश इन्द्रिय, मन और षोडश विकार अवस्थित हैं।

यह कामकलाविद्या अवगत हो सकनेसे त्रिपुरा-सुन्दरीत्व मिलता है। किन्तु गुरुके उपदेश व्यतीत केवल शास्त्रपाठसे इसमें कभी ज्ञानलाभ नहीं होता। इसके ३६ मूलतत्त्व हैं। यथा—

१ शिव, २ शक्ति, ३ सदाशिव, ४ ईश्वर, ५ शुद्ध-विद्या, ६ माया, ७ कला, ८ विद्या, ९ राग, १० काल, ११ नियति, १२ पुरुष, १३ प्रकृति, १४ अहङ्कार, १५ बुद्धि, १६ मनः, १७ श्रोत्र, १८ त्वक्, १९ नेत्र, २० जिह्वा, २१ घ्राण, २२ पाद, २३ पाणि, २४ पायु, २५ उपस्थ, २६ शब्द, २७ स्पर्श, २८ रूप, २९ रस, ३० गन्ध, ३१ आकाश, ३२ वायु, [illegible] तेजः, ३४ अप्, ३५ पृथिवी इत्यादि।

कामकलाख्यरस (सं० पु०) वाजीकरणौषध, ताकतकी एक दवा। मृतसूताभ्रक और स्वर्णको अश्वगन्धा एवं गुडूचीके रस और मुसली तथा कदलीकन्दके द्रवमें घोंटते हैं। मृतसूताभ्रक एवं स्वर्णका धीमी धीमी आंचमें पका फिर उक्त द्रवोंमें मर्दन करना चाहिये। इसी प्रकार बारबार घोंटते और पकाते आठ पुट लगाते हैं। शाल्मलीजात निर्यासके साथ चार माशा सेवन करनेसे यह बलवीर्य बढ़ाता है। (रसरत्नाकर)

कामकलावटी (सं० स्त्री०) औषधविशेष, एक दवा।

सहायक है। काफीकी खेतीमें बड़ा यत्न करना पड़ता है। अतिशय शीत पड़ना वा अतिवेगसे वायु चलना, इसके लिए अधम है। ज़ोरसे हवा चलने पर काफीके फूल झड़ जाते हैं और फल नहीं लगते, सुतरां कृषक प्रायः आधे शस्यकी क्षति उठाता है। अत्यन्त शीत होनेसे वृक्षके लिये छाया आवश्यक है। समुद्रके उपकूलमें काफी अच्छी नहीं होती। अफरीकाके अन्तर्गत अबीसीनियाके साथ समसूत्रपातमें भारतमें पड़नेवाले स्थानोंमें यह भली भांति उपजती है। विशेषतः नीलगिरि उपत्यकामें काफीकी उत्पत्ति अच्छी है।

अबीसीनियामें इसके फलको "बुन" कहते हैं। प्राचीनकालमें मिसर और सिरीयामें यह नाम प्रचलित था। उस समय सिरीयाके रहनेवाले इसके बीजको केव (Cave) कहते थे और पका कर खाते थे। अरबी ग्रन्थादिकी आलोचनाके अनुसार शेख शहाबुद्दीन धमानी नामक किसी व्यक्तिने अफरीकाके उपकूलमें काफीका व्यापार देख कर सर्व प्रथम अदनबन्दरमें एक दुकान खोली थी। १४७० ई०को वह मर गये। सुतरां १५वीं शताब्दीके मध्यभागमें काफी अरबमें पहिले आई। १५०१ ई०को यह यमन, मक्का, कायरो, दामास्कस, अलेपो और कुस्तुनियामें फैली थी। १५५४ ई०को कुस्तुनतुनियामें सर्वप्रथम काफीका एक पानागार स्थापित हुआ। १५७३ ई०को अलेपो शहरमें रवल्फ नामक किसी युरोपीयनने इसका प्रथम परिचय पाया। फिर कह नहीं सकते कि भारतमें काफी कैसे आया। अनेकोंके कथनानुसार बाबा बूदन नामक एक मुसलमान यात्री मक्केसे लौटते समय ७ बीज लेकर महिसुर पहुंचे थे। दक्षिण भारतमें उक्त मतपर बड़ा विश्वास करते हैं। क्योंकि उसका समस्त अमूलक होना ध्यानमें नहीं आता। १५७६ से १५८०ई० तक लिनस्कोटेन (Jan Huygen van Linschoten) नामक एक ओलन्दाज इस देशमें घूमनेको आये थे। वह अपने भ्रमणवृत्तान्तमें मलबार उपकूलके समस्त उत्पन्न द्रव्योंकी गवेषणा कर गये हैं। किन्तु उसमें काफीका नाम नहीं मिलता। उनके समसामयिक ग्रन्थोंके पुस्तकमें मिसरियोंके बुन कहवा काम आनेकी बात देखते हैं। इससे अनुमान होता है कि भारतवर्षमें आते समय लिनस्कोटेनने काफीकी बात नहीं सुनी। डाक्टर ओयाभिगनने विलायतमें "हाउस-आव कामन्स"के समक्ष साक्ष्य देते समय कहा था—"कलकत्तेके कम्पनीके बागमें जो काफी होती है, उसको छोड़ इसने दूसरी कोई काफी नहीं पी।" उसके पीछे मिलनेवाला विवरण भी १८वीं शताब्दीका विवरण है। सिंहलमें ओलन्दाजोंके दौरानसे पहले अरबोंने इसे प्रथम प्रचार किया था।

पूर्व भारतीय द्वीपपुञ्जोंमें १६९० ई० के पहलेमें गवर्नर वान हूरनने (Van Hoorne) अरब वणिकोंसे बीज संग्रह कर यवद्वीपके बटेविया नगरमें लगाये थे। उससे जो पेड़ उगे उनका एक पौदा हालैण्ड पहुंचाया गया। फिर हालैण्डके पौदेका एक पौदा १७१८ई०को सुरिनाम नामक स्थानमें आया था। इसके दश वर्ष पीछे अमष्टरडमके काफीबागसे एक पौदा १४वें लुईको उपढौकन दिया गया, फिर उसका पौदा पश्चिम भारतीय द्वीपपुञ्जमें रोपित हुआ। इससे नूतन महाद्वीपमें काफीकी खेती फैल पड़ी। अमेरिका और युरोपकी काफी-कृषिका मूल यवद्वीप है। किन्तु आजकल अमेरिकाकी भांति पृथिवीके दूसरे स्थानमें कहीं काफी नहीं उपजती। अकेले ब्रेज़िलमें दो पांच करोड़ तीन लाख पौदोंसे प्रतिके साथ फल संग्रह किया जाता है। फिर कोष्टारिका, गायाटिमाला, वेनजुएला, गोयाना, पेरू, बलिविया, जामैका, क्युबा, पोर्टोरिको, अन्यान्य पश्चिम भारतीय द्वीप, अफ्रिकाके मध्य लिबेरिया, पूर्वभारतीय द्वीपावलीके मध्य सुमात्रा, बोर्नियो, सण्डविचद्वीप, श्यामदेश, सिंगापुर प्रभृति स्थानोंके मध्यगत द्वीपविभाग और किसी द्वीपमें इसकी खेती होती है। ब्रेज़िल और यवद्वीपकी भांति आबाद अर्थात् दूसरी जगह नहीं। उनके पीछे भारतवर्ष और सिंहलद्वीपकी आबाद अर्थात् उल्लेख योग्य है।

आज देशमें इस प्रथाके फैलनेसे मुसलमान धर्माचार्य काफीपानके विरुद्ध खड़े थे। कारण मसजिद और

मद्दीमका मूल, पिपला, गुड़ूची, सफेद हरिद्रा, कटकारी, गुडमालो सब कुछ दो दो तोले, त्रिकटु, गुग्गुल, रक्तचन्दन, जायफल, तथा इलायची चार चार तोले और शोधित गुग्गुल चौबीस तोले एकत्र घीमें घोटकर वट बनाते हैं। चार माशा इसको सेवन करनेसे वातरक्त रोग आरोग्य होता है। ([illegible])

कामकलाविलास (सं० पु०) कामकलायाः विलासः सम्यक् विवरणं यत्र, बहुव्री०। एक तन्त्रग्रन्थ। इसमें कामकला विद्याका विषय विशेष रूपसे वर्णित है। इसके रचयिता पुण्यानन्द और टीकाकार नटनानन्द हैं। ([illegible])

कामकाज (हिं० पु०) कामधंधा, कारबार, दौड़धूप।

कामकाजी (हिं० पु०) व्यवसायी, कारबारी।

कामकान्ति (सं० त्रि०) कामवती कान्तिः शब्दो यस्य, काम कि शब्दे क्तिन् बहुव्री०। काम शब्दयुक्त, अपनी ख्वाहिश जाहिर करनेवाला।

कामकान्ता (सं० स्त्री०) रामसेवाली, सेवारकी मल्लिका।

कामकाम (सं० त्रि०) कामं कामयते, काम्-कम्-णिङ्-अण्। अभीष्टार्थी, ख्वाहिश की हुयी चीज़ मांगनेवाला।

कामकामी (सं० त्रि०) कामं कामयते, कम्-णिङ्-णिनि। अभीष्टार्थी, मुराद मांगनेवाला।

"आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत् कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी॥"
(गीता)

कामकार (सं० त्रि०) कामं करोति, काम-कृ-अण्। १ काम्यकार्यका निष्पादक, ख्वाहिशके मुताबिक काम करनेवाला। (पु०) २ स्वाभिप्रवृत्ति, ख्वाहिशकी चाल।

कामकाली (सं० स्त्री०) अप्सरोविशेष, एक [illegible]।

कामकूट (सं० पु०) काम एव कूटं यस्य, बहुव्री०। १ वेश्याप्रिय, रण्डीबाज़। २ वेश्याविलास, रण्डीबाज़ी। ३ कामराज नामक योगिनीका एक मन्त्र। यह तीन प्रकारका होता है,—कामकूट, कामकेलि और कामक्रीड़ा। यथा १म कामकूट,—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]" ([illegible])

२य कामकूट,—

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

३य कामकूट,—

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

कामकृत् (सं० त्रि०) कामं करोति, काम-कृ-क्विप्। १ यथेच्छकारक, मर्ज़ीके मुताबिक काम करनेवाला। २ अभीष्ट सम्पादक, अपनी मुराद पूरी करनेवाला। (पु०) ३ विष्णु।

"कामहः कामकृत् कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः।" (विष्णुसहस्रनाम)

कामकेलि (सं० त्रि०) कामे तद्धेतुकरतौ केलिर्यस्य, बहुव्री०। १ लम्पट, ऐयाश, छिनरा। (पु०) कामनिमित्ता केलिः, मध्यपदलो०। २ सुरत, विलास।

कामक्रीड़ा (सं० स्त्री०) कामेन क्रीड़ा, ३-तत्। १ सुरत, ऐयाशी। २ पञ्चदशाक्षरी एक छन्द।

"[illegible]" ([illegible])

जिस छन्दमें पांच मगण अर्थात् पन्द्रहो वर्ण गुरु रहते, उसे 'कामक्रीड़ा' कहते हैं।

कामखड्गदला (सं० स्त्री०) कामे कामोद्दीपने खड्ग इव दलं यस्याः, बहुव्री०। सुवर्णकेतकी, पीला केवड़ा।

कामग (सं० त्रि०) कामेन स्वेच्छया यथेच्छं देशं गच्छति, काम-गम-ड। १ इच्छानुसार चलनेवाला, जो अपनी ख़ुशीसे आता-जाता हो। २ लम्पट, रण्डीबाज़, छिनरा। (पु०) ३ कन्दर्प, कामदेव।

कामगति (सं० त्रि०) कामं यथेष्टं गतिर्यस्य, बहुव्री०। १ इच्छानुसार चलनेवाला, जो मर्ज़ीके मुताबिक आता-जाता हो। २ अभीष्ट देशको गमनकारक, मनमाने जगहको जानेवाला। ३ लम्पट, रण्डीबाज़।

कामगम (सं० त्रि०) कामं यथेष्टं गच्छति, काम-गम-अच्। [illegible]।

कामगा (सं० स्त्री०) कामेन अनुरागेण गच्छति, काम-गम-ड-टाप्। १ कोकिला, कोयल। २ कामुक-पुरुषगामिनी, छिनाल।

दरगाहकी अपेक्षा काफी-पानागारमें लोगोंकी आसक्ति चतुर्गुण बढ़ गई थी। पानासक्ति घटानेके लिये इस पर बहुत शुल्क स्थापित हुआ। ग्रेटब्रटेनमें चायकी पहली दुकान खुलनेसे पहिले (१६५७ ई०) काफी पानागार बना था (१६५२ ई०)। डि, एडवार्डस नामक एक तुर्कस्थानका अंगरेज वणिक् काफी पीनेमें इतना अभ्यस्त हो गया कि, देश जाते समय उसे प्यास्कोया रोसी नामक एक ग्रीक नौकर प्रत्यह काफी बना देनेके लिये अपने साथ रखना पड़ा। उसके बन्धुओंको भी क्रमशः काफीपानका अभ्यास पड़ गया। अवशेषमें बन्धुबान्धवोंका नित्य उपद्रव न सह सकनेके कारण उसने रोसीको करनहिलवाले सेण्टमाइकेलके आली नामक स्थानमें प्रकाश्य रूपसे काफीका पानागार खुलवा दिया। क्रमशः व्यवहार बढ़नेसे पानागारोंकी संख्या भी बढ़ी। २य चार्लसने (१६७५ ई०) पानागारोंमें लोगोंकी भीड़ देख इसका व्यवहार घटानेको राजादेश विधिबद्ध किया था। फ्रांसमें १६४० ई०को काफीका व्यवहार चला और १६६८ ई०को पारिस नगरमें प्रथम पानागार खुला। उसके बाद युरोपमें सर्वत्र इसका व्यवहार बहुत बढ़ा गया था। अवशेषमें १८४० ई०को चायका व्यवसाय और व्यवहार अधिकतर बढ़ जानेसे काफीका आदर घटा। ब्रह्मदेशमें काफीकी खेती होती है, पर लोगका अभाव है। दिन दिन इसके पीनेकी चाह बढ़ रही है।

भारतके दाक्षिणात्यमें काफीकी खेती खूब होती है। १८८३। ८४। ८५ ई०को तीन वर्ष दाक्षिणात्यमें प्राय: १८६५०० एकर भूमिपर काफी बोई गई थी। उसमें महिसुरकी ८२१०० एकर भूमिमें ७११०००० पाउण्ड, मन्द्राजकी ५५१०० एकर भूमिमें १११६०००० पाउण्ड, त्रिवाङ्कुड़की ४८०० एकर भूमिमें ८२०००० पाउण्ड और कोचीनकी २२०० एकर भूमिमें ८३०००० पाउण्ड काफी उत्पन्न हुई।

इसके सम्बन्धमें बाबाबूदनकी बात लिख चुके है—भारतवर्षमें सर्व प्रथम काफी कैसे आई थी। महिसुरमें प्रवाद है कि दो शताब्दी हुयी मक्कासे लौटते समय वह कई एक फल और ७ बीज लाये थे। महिसुरमें वह जिस पर्वत शिखरपर रहते थे, आज कल लोग उनके नामानुसार उसको "बाबा बूदनगिरि" कहते हैं। उक्त शिखर पर उन्होंने अपने कुटीरकी बगलमें उन्हीं ७बीजोंसे वृक्ष उपजाये थे। क्रमशः उस पर्वतमें काफीके अनेक वृक्ष हो गये। फिर ६०।७० वर्ष बीतने पर दूसरे भी निकटवर्ती कई स्थानोंमें इसकी खेती बढ़ी। शेषको आज प्राय: ४० वर्षसे अंगरेजोंकी इस ओर दृष्टि पड़नेसे काफीकी खेती भली भांति की जाती है। मि० क्यानन नामक किसी अंगरेजने सर्वप्रथम बाबा-बूदनगिरिके दक्षिण एक लंबी जमीन् पर काफी बोयी थी।

अंगरेजाधिकृत देशोंके मध्य भारतवर्षमें ही सर्वापेक्षा उत्तम सुगन्धि काफी बहुपरिमाणसे उत्पन्न होती है। काफीकी पत्ती उपयुक्त नियमसे बना लेनेपर चायकी भांति काममें लायी या चायमें मिलायी जा सकती है। सुमात्रामें पाडाङ्ग नामक स्थानके लोग काफीकी पत्ती चायकी भांति बना प्रतिदिन पान करते हैं। चायकी भांति इसमें भी क्षोभहर क्लान्तिनाशक गुण होता है।

काफीके फलके छिलकेमें एक प्रकारका तैल रहता है। किन्तु इस तैलके निकालनेकी प्रणाली अभी अवलम्बित नहीं हुई।

अमेरिकामें काफीका अर्क उत्तेजक और बलकारक औषधकी भांति काममें आता है। किन्तु इङ्गलैंडमें इसका चलन नहीं। सुरासार शरीरमें जैसा कार्य उत्पादन करता, यह भी वैसा ही प्रभाव रखता है। काफी चायकी अपेक्षा धारक है। यह कोष्ठबद्ध नहीं करती। फिर भी अधिक परिमाणमें काफी पीनेसे दस्त कम उतरता है।

टाइफेड ज्वरमें फरासी मोसेमाके मध्य रोगीको दो दो घण्टे पीछे दो इन्सच काफी विना बीच बीचमें क्लारेट या बराण्डी मद्य सेवन कराते हैं। इससे यथेष्ट उपकार होता है। काफी पीनेसे फरासीसियोंमें मूत्रयन्त्रोंके अश्मरी रोगका आतिशय्य घट गया है। तुर्कस्थानमें काफी पीनेसे वातकी पीड़ा नहीं रहती है। तुर्क प्रत्यह: काफी पीते हैं। यही उनका

"पापवासाऽनिन्दिता स्त्रीणां: सर्वत्र कामगारिका: ।
सुरापा आत्मघातिन्यो नार्योऽदत्तभाक्त्रमा: ॥" (याज्ञवल्क्य)

कामगामी (सं॰ त्रि॰) कामं यथेच्छं योनिविचारं अकृत्वैव गच्छति सत्यर्थः, काम-गम-णिनि। योनिविचारशून्य हो यथेच्छ भावसे स्त्रीगमन करनेवाला, रण्डीबाज़, छिनरा। २ कामचारी, ख़ाहिशके मुवाफ़िक़ चलनेवाला।

कामगार (हिं॰ पु॰) राज्यप्रबन्धकर्ता, कामदार।

कामगिरि (सं॰ पु॰) कामप्रधानो गिरिः, मध्यपदलो॰। १ कामरूपका एक पर्वत। (कालिकापुराण) २ दाक्षिणात्यका एक पर्वत।

"कामगिरिं समारुह्य हारकार्णं महेश्वरि।" (भक्तिमाहात्म्य)

कामगुण (सं॰ पु॰) कामकृतो गुणः, मध्यपदलो॰। १ अनुराग, मुहब्बत। २ विषय, ऐश। ३ भोग, मज़ा।

कामङ्गामी (सं॰ त्रि॰) कामं यथेच्छं गच्छति, कामम्-गम-णिनि। कामगामी देखो।

कामचर (सं॰ त्रि॰) कामेन चरति, काम-चर-ट। स्वेच्छाचारी, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ सब जगह घूमनेवाला।

"नो नारदः कामचरः कदाचित्।" (कुमारसम्भव)

कामचरण (सं॰ क्ली॰) कामं यथेच्छं चरणं विचरणम्, कर्मधा॰। यथेच्छभावसे विचरण, मनमानी चलफिर।

कामचरत्व (सं॰ क्ली॰) कामचरस्य भावः, कामचर-त्व। कामचरका कार्य, मनमानी चलफिर।

कामचलाऊ (हिं॰ वि॰) किसी न किसी प्रकार कार्य निकाल देनेवाला, जो काम चला देता हो।

कामचार (सं॰ त्रि॰) कामेन स्वेच्छया चरति, काम-चर-अण्। १ यथेच्छभावसे विचरणकारक, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ घूमने फिरनेवाला। २ यथेच्छभावसे पशु-चरानेवाला, जो मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ मवेशी चराता हो।

कामचारिणी (सं॰ स्त्री॰) सुगन्ध लताविशेष, एक ख़ुशबूदार बेल।

कामचारी (सं॰ त्रि॰) १ कामेन स्वेच्छया चरति, काम-चर-णिनि। कामुक, ऐयाश, छिनरा। २ यथेच्छचारी, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ चलनेवाला। (पु॰) ३ गरुड़। ४ कलविङ्क, एक चिड़िया।

कामज (सं॰ त्रि॰) कामात् जायते, काम-जन-ड। १ अभिलाषजात, ख़ाहिशसे पैदा। कामज व्यसन दश प्रकारका होता है,—

"मृगयाक्षो दिवास्वप्नः परीवादः स्त्रियो मदः।
तौर्य्यत्रिकं वृथाट्या च कामजो दशको गणः॥" (मनुसंहिता)

मृगया (शिकार), द्यूतक्रीड़ा, दिवानिद्रा, परनिन्दा, स्त्रीसम्भोग, मद्यपान, नृत्य, गीत, वाद्य और वृथापर्यटन दश कामज व्यसन हैं। इनमें मद्यपान, द्यूतक्रीड़ा, स्त्रीसम्भोग और मृगया चार उत्तरोत्तर अधिक कष्टदायक होते हैं। कामज व्यसनमें आसक्त होने पर धर्म और अर्थसामग्री वञ्चित रहना पड़ता है। इसलिये इनको सर्वदा छोड़ना चाहिये। २ कामजात, मुहब्बतसे पैदा। (पु॰) ३ कामदेवके पुत्र, अनिरुद्ध।

कामज्वर (सं॰ पु॰) कामजयासौ ज्वरश्चेति, कर्मधा॰। कामजन्य ज्वर, एक बोखार। कामरिपुके आधिक्यसे यह ज्वर आता है। वैद्यशास्त्रके मतसे इसका लक्षण,—

"कामजे चित्तविभ्रंशस्तन्द्रालस्यमभोजनम्।" (माधवनिदान)

मनको विकलता, तन्द्रा, आलस्य और अभोजन है। भावप्रकाशके मतानुसार आश्वासवाक्य, अभीष्ट वस्तुके लाभ, वायुके उपशमकारक कार्य और हृष्ट रहनेके उपायसे यह ज्वर छूट जाता है। क्रोधसे भी इस ज्वरका उपशम होता है।

कामजननी (सं॰ स्त्री॰) नागवल्ली, पानकी बेल।

कामजनि (सं॰ पु॰) कामस्य जनिरुत्पत्तिः यस्मात्, बहुव्री॰। १ कोकिल, कोयल। (त्रि॰) २ सुगन्धि, ख़ुशबूदार।

कामजा (सं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, एक झाड़। यह कर्णाटक देशमें प्रसिद्ध है। इसका बीज भी 'कामजा' कहाता है। वैद्यकनिघण्टु इसे मधुर, बल्य, कामवृद्धिकर, इन्द्रियवलिकर और वृष्य बताता है। राजनिघण्टुके मतसे इसके बीजमें भी उक्त गुण होता है।

कामजान (सं॰ पु॰) कामं जनयति, काम-जन-णिच्-अच् निपातनात् न ह्रस्वः। अथवा कामजं कन्दर्पभावं आनयति, कामज-आ-नी-ड। कोकिल, कोयल।

कामजित् (सं॰ पु॰) कामं जयति, काम-जि-क्विप्। १ महादेव। २ कार्तिकेय। ३ जिनदेव।

कामज्येष्ठ (सं॰ त्रि॰) कामको बड़ा समझनेवाला, जो ख़ाहिशका पाबन्द हो।

प्रियतम पानीय है। अधिराम व्यसनी अफीमकी भांति कभी काफी पिलाते हैं। किन्तु इससे उतना फल नहीं होता। भुनी काफीसे गलित शवशरीर वा इत्यादिका दुर्गन्ध दूर हो जाता और दूषित वायुको संक्रामकताका दोष नहीं जाता है। मन्द्राज और मध्यभारतके अस्पतालमें प्रत्यह काफीको भुकनी जला वायुका दूषित अंश नष्ट करते हैं। अरबोंके कथनानुसार काफीमें कामेच्छानिवारक गुण है। घरके आंगन या खुले मैदानमें काफी जलानेसे हवा साफ होती है। यह मत अनेक विज्ञ चिकित्सकोंका अनुमोदित है। इससे अफीमका विष भी नष्ट होता है।

लाइबेरियाकी काफी (Liberian Coffee) अफ्रीकाके पश्चिम उपकूल पर लाइबेरिया, अङ्गोला, गोलकुो, अमटो प्रभृति स्थानोंमें उत्पन्न होती है। इसका वृक्ष अरबीके काफी वृक्षसे दृढ़ और फल तथा पत्र दीर्घ रहता है। जिस समय काफी वृक्षका सिंहलमें अनुसन्धान हुआ, उस समय इस श्रेणीकी काफीका वृत्तान्त युरोपीयोंने प्रथम जाना। इस श्रेणीकी काफीमें शायद अधिक कीड़ा नहीं लगता।

लिखकर काफीकी खेतीका उपाय बताना कठिन है। कारण अपनी आंखों इसकी खेती या बागान देखनेसे ही समझ सकते हैं। अरबी काफीके वृक्षमें नानाविध पीड़ा उठ खड़ी होती है। आबहवा और खेती बारीके दोषसे ही अधिकांश पीड़ा उपजती है। खेतीके दोषसे अंकड़ेसे पौदा टूट जाता है। पत्तोंमें पीला धब्बा निकल आता है। फिर पत्ते काले पड़ और सिकुड़ जाते हैं। काफीमें कीड़ा और मक्खी लगनेका डर रहता है। इसको छोड़ टिड्डी, चूहा, गिलहरी, गीदड़ वगैरह भी इसे बहुत बिगाड़ते हैं। शृगालोंके अत्याचारसे जो फल गिर जाते वह संग्रह किये जानेपर "शृगाल काफी" (गीदड़ काफी) कहाते हैं।

काफी—१ मिर्जा अमन उद्-दौलाका उपनाम। बादशाह फर्रुखसियरके समय इनको मनसब रहा। २ मुरादाबादके एक मुसलमान कवि। इनका यथोचित नाम सिफायत अली था। इन्होंने 'बहार गुलजार' नामक ग्रन्थ लिखा।

काफूर (अ० पु०) कर्पूर, कपूर। कर्पूर देखो।

काफूर मलिक—दिल्लीशाली बादशाह अला उद्-दीन खिलजीके एक प्रिय कर्मी। इन्हें बादशाहने अपना वजीर बनाया था। बादशाहके मरने पर इन्होंने एक व्यक्ति ग्वालियर, उनके पुत्र खिज्र खां और शादी खांकी आंखें निकालने भेजा था। दासोंसे यह काम सम्पन्न किया गया। फिर काफूर मलिकने बादशाहके कनिष्ठ पुत्र शहाबुद्-दीन्को सिंहासन पर बैठाया और स्वयं राज्यका कार्य चलाया था। किन्तु १३१० ई०के जनवरी मास सम्राटके मरने पर इनका वध हुआ। अलाउद्-दीन्के तीसरे लड़के पीछे सिंहासन पर बैठ गये।

काफूरी (अ० वि०) १ कर्पूरजात, कपूरसे बना हुआ। २ कर्पूरवर्ण विशिष्ट, कपूरका रङ्ग रखनेवाला। (पु०) ३ वर्णविशेष, कपूरी रङ्ग। इसमें हरित् आभा रहती है (कपूरके दीपकको 'काफूरी शमा' कहते हैं।

काब (अ० स्त्री०) पात्र विशेष, चीना मट्टीकी बड़ी रकाबी।

काब—पारस्य उपसागरके किनारे रहनेवाली एक अरब जाति। उत्तरमें शाल्तरसे रामहरमुज और पूर्वमें बेबहानसे हिन्दियन तक यह जाति बसती है। इसकी राजधानी मुहमिरा है। काब लोगोंकी वासभूमिके मध्य बहु शाखाविशिष्ट लाब नदी बहती है। अरबी भौगोलिक इस नदीको दोरक कहते हैं। ई० के १८वें शताब्द आदिमें कई अंगरेजी जहाज आक्रमण किये थे। उसी युद्धमें इनसे युद्ध चल पड़ा। फिर अमीरशाह पाशाने मुहमिरा नगर अधिकार किया। १८५० ई०के पारस्य युद्धके बाद उक्त नगर भारत गवरमेंटके अधीन हुआ।

काबर (सं० पु०) कुत्सितो वर्णः कोः कादेशः पृषोदरादित्वात् सिद्धम्। कुत्सित वर्ण, बुरा रङ्ग।

काबर (हि० वि०) १ कर्बुर, कबरा। (पु०) २ भूमिविशेष, दोमट, रेत मिली हुई जमीन। ३ पक्षिविशेष, एक तरहकी मैना।

कामज्वर, कालज्वर देखो।

कामठ (सं० त्रि०) कमठस्य इदम् कमठ-अण्। १ कच्छपसम्बन्धीय, कछुवेसे सरोकार रखनेवाला। २ कमण्डलु-सम्बन्धीय।

कामठक (सं० पु०) सर्पविशेष, एक सांप। धृतराष्ट्र नामक नागवंशमें इसने जन्म लिया था। फिर जनमेजय राजाके सर्पयज्ञमें यह मारा गया। (महाभारत आदि०)

कामठा—मध्यप्रदेशस्थ भण्डारा जिलेके तिरोरा विभागकी एक जमीन्दारी। भूमिका परिमाण २८१ वर्गमील है। लोकसंख्या ७५ हजारसे अधिक है। कोई सवा सौ गांवोंमें तेरह हजारसे अधिक घर बने हैं। प्रायः सौ वर्षसे ऊपर हुये नागपुरके राजाके अधीन यह कुनबी वंशकी एक जमीन्दारी रही। किन्तु राजाके विपक्षमें विद्रोहाचरणसे उनके हाथसे निकाल यह किसी लोधी वंशीयको दी गयी। वह मालगुजारी दे इसे भोग करते हैं। इसमें कामठा नामक एक ग्राम भी है। वह अक्षा० २१° ११´ और देशा० ८०° २१´ पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या डेढ़ हजारसे अधिक है। अधिवासी खेतीवारी करते हैं। कामठाके सरदार या जमीन्दार यहीं रहते हैं। उनके घर चारो ओर प्राचीर और गड़से वेष्टित हैं।

कामठी—मध्यप्रदेशके नागपुर जिलेका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० २१° १२´ ३०´´ उ० और देशा० ७८° १४´ ३०´´ पू० पर अवस्थित है। यहां सेना-निवास (छावनी) है। कामठी नागपुर शहरसे उत्तर-पूर्व साढ़े चार कोस पड़ती है। लोकसंख्या पचास हजारसे अधिक है। यहां देशी विदेशी वस्त्र और लवण पत्रादिका क्रय-विक्रय होता है। गल्लेका व्यवसाय प्रायः माड़वारी महाजनोंके हाथ है। यहां वंशीलाल अबीरचंदकी बनवायी एक सुन्दर पक्की पुष्करिणी और उसमें लगा एक मन्दिर तथा उद्यान है। कनहान नदीपर सेतु बंधा है। उसके ऊपर नागपुर और छत्तीसगढ़की रेलगाड़ी चलती है। रेलका एक ष्टेशन भी है। औषधालय, विद्यालय और अतिथियोंके लिये धर्मशाला बनी है। यहां ४६० कूप देख पड़ते हैं।

कामड़िया (हिं० पु०) चर्मकार-साधुसम्प्रदायविशेष। यह साधु राजपूतानेमें रहते हैं। रामदेवकी साखी गाना और भिक्षा मांग कर अपनी जीविका चलाना इनका काम है।

कामण्डलव (सं० त्रि०) कमण्डलोर्भावः, कमण्डलु-अण् बहुव्री०। १ कमण्डलु सम्बन्धीय। (क्ली०) २ कमण्डलुका कार्य, कुम्हारका पेशा।

कामण्डलेय (सं० त्रि०) कमण्डलोरिदम्, कमण्डलु-ढ उवर्णस्य लोपः ढस्य एय। ढेलोपोऽकद्र्वाः। पा ६।४।१४७

आवर्ये योगोविधः पदस्सवर्णा प्रकृपादीनाम्। पा ४।१।१

कमण्डलु-सम्बन्धीय।

कामतरु (सं० पु०) कामं यथेच्छं जातस्तरुः, मध्यपदलो०। १ वन्दाक वृक्ष, बांदा। यह पेड़ों पर आप ही आप उत्पन्न होता है। २ कल्पवृक्ष।

कामता—युक्तप्रान्तके बांदा जिलेका एक ग्राम। यह चित्रकूट पर्वतके निकट अवस्थित है। कामदगिरिके नाम पर इसे कामता कहते हैं।

कामतापुर—कोचविहार प्रान्तका एक ध्वंसावशिष्ट प्राचीन नगर। कामरूपके राजा नीलध्वज इसके स्थापयिता थे। यह नगर कामरूपके कामपीठमें अवस्थित है। जब कामरूपका राज्य पश्चिममें करतोया नदी तक विस्तृत था, तब यह नगर उस राज्यकी राजधानी रहा। उस समय इसकी शोभासमृद्धि जैसी थी, उसका चिह्नमात्र भी अब नहीं। आजकल यह एक क्षुद्र ग्रामकी अपेक्षा भी हीनावस्थामें हो गया है। भग्नावशेषके मध्य दुर्ग, राजप्रासाद, सरोवर, उद्यान, देवालय इत्यादि सकल विषयोंका ध्वंसावशेष है। इसके पश्चिम लालबाजार नामक एक छोटा शहर है। युरोपीय साधारणतः इसे लालबाजार ही कहते हैं।

पहले कामतापुर धरला नदीके पश्चिम तट पर अवस्थित था। किन्तु आजकल धरला प्राचीन स्थान छोड़ कितना ही पूर्वको हट गयी है। इसलिये यह उससे बहुत दूर पड़ता है। धरलाका प्राचीन गभीर विस्तृत स्थान आज भी कामतापुरके पूर्व खाली पड़ा है। उस स्थानको देखनेसे मालूम होता है कि पहले धरला आजकलकी अपेक्षा बहुत विस्तृत और

काबला (हिं० पु०) मोटी रस्सी, जहाजका रस्सा या जंजीर। यह शब्द अंगरेजीके 'केबिल' (Cable)का अपभ्रंश है। ठेवरी कसे जानेवाले बड़े पेच या बालटूको भी 'काबला' कहते हैं।

काबा—१ एक जाति। इस जातिके लोग भारतके पश्चिम गुजरातके उत्तरकच्छ उपसागरके उपकूल पर महाराष्ट्र राज्यमें रहते थे। आज कल इनकी बात अधिक सुन नहीं पड़ती।

२ मुसलमानोंका एक परिच्छद। यह चपकनकी भांति रहता, केवल वक्षस्थल पर अर्धांश कटता है। इसके भीतर सूतका कपड़ा पहनते हैं। उस कपड़े पर वक्षस्थलमें जरीका या कोई दूसरा काम रहता है। काबेके कटे अंशसे वह देख पड़ता है। काबेका व्यवहार पहले बहुत था, किन्तु अब घट गया है।

३ समचतुष्कोण आकृति, बराबर चौकोर शक्ल।

४ मुसलमानोंका एक पवित्र स्थान। यह अरब देशके मक्का नगरमें प्रायः चतुष्कोण एक भवन है। इसे मुसलमान एक पवित्र तीर्थ मानते हैं। यह उत्तर पश्चिमसे दक्षिण पूर्व तक २४ हाथ लम्बा, २१ हाथ चौड़ा और २७ हाथ ऊंचा है। पूर्व दिककी इसका द्वार है। द्वारके निकट रौप्यासन पर कृष्णवर्णका एक प्रस्तर रखा है। यात्री मक्का पहुंचते ही हस्तमुख प्रक्षालन वा स्नानादि कर मसजिदमें जाते हैं। पहले कृष्णवर्णका प्रस्तर चूम पीछे काबाकी चारो ओर प्रदक्षिण लगाना पड़ता है। काबाको दक्षिण रख तीन बार जल्द जल्द और चार बार धीरे धीरे प्रदक्षिण कर काबाको वाम ओर रखते परिभ्रमण शेष करते हैं। काबाके निकट एक प्रस्तर पर इब्राहीमका पदचिह्न है। प्रदक्षिणके पीछे यात्री इसी प्रस्तरके निकट जा मन्त्र पढ़ते हैं। उसके पीछे कृष्ण प्रस्तरको फिर चूम चले आते हैं। अरबी परिवारवर्गके मध्य पुत्रसन्तानको उत्पन्न होनेके ४० दिन पीछे काबेमें ले जानेकी प्रथा है। यहां लाकर उस पर मन्त्रादि पढ़े जाते हैं। उसके पीछे लड़केको घर लाने पर नापित आकर गण्डदेशमें छुरेसे चक्षुके कोणसे मुखके कोण पर्यन्त समान्तरालमें तीन दाग बना देता है।

अति प्राचीन कालसे काबा अरबोंका तीर्थस्थान गिना जाता है। कथनानुसार आदमके समय एक प्रस्तरमूर्ति स्वर्गसे गिरी थी। क्रमशः इसमें ३६० मूर्ति प्रतिष्ठित हुयीं। मुहम्मदके धर्मप्रचारसे इसका गौरव कितना ही बिगड़ गया। भारतमें खलीफा उमरके वंशीय करनाटकके नवाबोंने इस काबेमें चढ़नेके लिये एक स्वर्णसोपान प्रदान किया था। १६२७ई०को काबेका गौरव फिर प्रतिष्ठित हुवा।

काबाइज—एक जाति। पारस्यके पूर्व और पश्चिम कुर्द लोग रहते हैं। कबाइज उन्हींके अन्तर्गत हैं।

काबाबचीनी (सं० स्त्री०) कबाब चीनी।

काबालखेल—एक जाति। काश्मीर प्रान्तमें बन्नूके निकट वजीरी लोग रहते हैं। बड़े सम्प्रदायों और वजीरियोंमें काबाल खेल हाते हैं। इनकी तीन श्रेणी हैं,—सियामी, सेफाली और विपाली। इनमें हजारों बलवान् योद्धा पाये जाते हैं। १८५० और १८५४ई०को इन्होंने भारतके प्रान्तभागमें अंगरेजोंका अधिकार रहते भी २० बार लूट मार की थी। अंगरेजोंने इन्हें कई बार मारा और घेरा है।

काबिज् (अ० वि०) अधिकारवान, कब्जा रखने वाला।

क़ाबिल (अ० वि०) १ योग्य, लायक़। २ विद्वान्, समझदार।

काबिल खान् (कबलाई कुबान) एक विख्यात मुगल सम्राट्। यह चङ्गोज खान्के प्रपौत्र और तातारराज मङ्गूके भ्राता थे। १२५८ई०को इन्होंने आधिपत्य प्राप्त हुवा। यही चीन राज्यमें युईन वंशके प्रतिष्ठाता थे। १२६०ई०को यह असंख्य दल बल साथ ले चीन राज्यमें घुसे। फिर इन्होंने तातारोंको हरा उत्तर चीनपर अधिकार किया था। १२७५ई०को इन्होंने सङ्ग वंश निर्मूल कर दक्षिण चीन जीता था। इसी समय यह उत्तरमें उत्तर महासागरसे दक्षिणमें मलक्का प्रणाली और पूर्वमें कोरियासे पश्चिममें एशिया माइनर पर्यन्त समुदय भूखण्डके एकाधिपति थे। दूसरे मुगल सम्राटोंकी भांति यह अत्याचारी और प्रजापीड़क न थे। सुशासनके गुणसे चीनवासी आज इनकी प्रशंसा करते थे। १२९४ई०को इन्होंने इहलोक छोड़ दिया।

प्रबल नदी थी। कामतापुरके बीच इस समय भी एक क्षुद्र नदी प्रवाहित है। इसको "शिङ्गीमारी"* (शृङ्गीमारी या सिंहमारी) कहते हैं। इस क्षुद्र नदीने प्राचीन नगर दो भागोंमें बांट दिया है। पूर्व खण्डसे पश्चिम खण्ड छोटा है। जहां शिङ्गीमारी नगरमें घुसी या जहां नगरसे निकली है, वहीं वहीं अधिकांश स्थान स्रोतके प्रवाहसे विनष्ट हो गया है।

नगर बहुत कुछ आयताकार है। परिधि प्रायः १९ मील होगा। उसके मध्य पूर्वको हो ५ मील अरलाका पुराना कोट उत्तर-पश्चिमसे दक्षिणपूर्व कोणके अभिमुख पड़ता है। नगर अपर तीनों दिक् सन्निकिट तथा मृण्मय वृहत् प्राकारसे परिवेष्टित है। खाईं दो हैं—एक नगरकी चारो ओर, और दूसरी नगरके अभ्यन्तरमें दुर्गके चारो ओर। ऐसा ज्ञान पड़ता है कि—दुर्गकी खाईकी मिट्टी खोद दुर्गके बुरुजे बनाये गये हैं। फिर नगरकी खाईकी मिट्टी निकाल खाईके बाहर डाल पुश्ता बांधा है। यह पुश्ता और दुर्गका बुर्ज आजकल अधिकांश स्थलोंमें टूट गया है। नगरकी खाई और दुर्गका बुरजा हो उक्त कारणसे अति वृहत् और विस्तृत था। नगरकी खाईके आगे ही इसकी तीनों ओर नगर रक्षार्थ बुरुजे हैं। पूर्वकी अरला नदीकी ओर कोई बुरजा नहीं। दुर्गकी खाईका विस्तार आजकल कहीं कम कहीं ज्यादा है। इसके किनारे पर आजकल खेती बारी होने लगी है। इसीसे खेतमें जलसंग्रहके लिये दुर्गकी खाई काट कर नाना स्थानोंमें मैदानसे मिला दी गयी है। दुर्गके बुरजोंका तलभाग प्रायः १२० फीट विस्तृत और २०। ३० फीट ऊंचा होगा। किन्तु देखते हो इसके अधिक उच्च रहनेकी प्रतीति होती है। क्रमक्रमसे शिखरदेशकी मृत्तिका छूट मूलदेशमें आ लगनेसे तलदेशकी विस्तृति कुछ बढ़ गयी है। किन्तु इसके समझनेका कोई उपाय नहीं—पहले आयतन कितना बड़ा था? बुरुजे नीचेसे ऊपर तक मिट्टीके बने हैं। भली भांति समझ पड़ता है कि बाहरी ओर इष्टकका आवरण था। नगरकी खाईका विस्तार इस समय भी २५० फीट है। किन्तु अब ठीक अनुमान कर नहीं सकते—गभीरता कितनी थी। कारण खाई बहुत भर आयी है। बाहरका पुश्ता देखनेसे मालूम होता है कि गभीरता भी बहुत सामान्य न होगी। नगरमें तीन तोरण वर्तमान हैं। फिर शिङ्गीमारीके पश्चिम पूर्व एक तोरण रहनेका अनुमान लगाते हैं। सम्भवतः इस तोरणके पास ही मुसलमानोंका डेरा था। ऐसा अनुमान करनेका कारण यह है कि यहां भी वैसी ही रक्षणोपयोगी व्यवस्था देख पड़ती है, जैसी अन्यान्य तोरणोंके निकट खाईं और बुरजोंमें मिलती है। एतद्भिन्न यहां एक तोरण रहनेका दूसरा प्रमाण भी है। इस स्थानसे एक पुरातन प्रशस्त राह बराबर उत्तरकी ओर नगरके मध्य कोषागार नामक अट्टालिकाके भग्नावशेष तक चली गयी है। फिर वहां यह कुछ टेढ़ी पड़ दक्षिणमुख घोड़ाघाट पहुंची है। इस राह पर दूसरे भी साधारण कार्योंके चिन्ह देख पड़ते हैं। यह राह नगरके बहिर्देशमें शीतल दीघीके तीरसे घोड़ाघाटकी ओर गयी है। नगरसे दीघीतक राह प्रायः ३ मील है। इसके भी उभय पार्श्व पर कई अट्टालिकाओंका भग्नावशेष है। इस देशके लोगोंके कथनानुसार नगरसे शीतल दीघी तक पथिपार्श्वस्थ भग्न अट्टालिकायें मुगलोंने बनवायी थीं। किन्तु यह उनका भ्रम मालूम होता है। इसके मध्य एक इष्टकस्तूपके ऊपर दो और दूसरे इष्टकस्तूप पर चार यानारूढ़ प्रस्तरके असम्पूर्ण एवं सौष्ठवशून्य स्तम्भ हैं। हिन्दू राजाओंके समय यहां बहुत अट्टालिकायें थीं। अवरोधके समय मुसलमानोंने उन अट्टालिकाओंपर अधिकार कर वास किया था। फिर उनकी दुर्दशा भी मुसलमानोंके हाथसे हुई जिस स्थानमें एक तोरण रहनेका अनुमान किया जाता है, उस स्थान और शिङ्गीमारी नदीके दो मील पश्चिम एक भग्नप्रायः तोरण मिला है। प्रस्तर-निर्मित स्तम्भादि रहनेसे इस तोरणका नाम "शिलाद्वार" है। यह सकल स्तम्भप्रस्तर सौष्ठव-शून्य हैं। और किसी प्रकार कारुकार्यविशिष्ट नहीं। शिलाद्वारसे दो मील पश्चिम दूसरा भी तोरण

* बहुतसे लोग भूलसे नदीसे इसका नाम शृङ्गीमारी बताते हैं। फिर दूसरोंके कथनानुसार सिंहमर्दसे सिंहमारी बना है।

काबिलीयत (अ० स्त्री०) १ योग्यता, लियाकत, पटुता। २ विद्वत्ता, समझदारी।

काबिस (हिं० पु०) कपिशवर्ण, एक रंग। इसमें मट्टीके बरतन रङ्ग कर आवा लगानेसे लाल निकल आते और चमकीले दिखाते हैं। काबिस बनानेमें सोंठ, मट्टी, रेह, आमकी छाल और बबूल तथा जामुनकी पत्ती घोल कर डालते हैं। २ मृत्तिकाविशेष, एक मिट्टी। यह रक्तवर्ण होता है। अन्य मिलानेसे इसमें चमक आ जाती है।

काबी (हिं० स्त्री०) मल्लयुद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका कोई पेंच। इसमें एक पहलवान् दूसरेके पीछे जा एक हाथसे उसके जांघियेका पिछोटा पकड़ लेता और दूसरे हाथसे पेर खींच कर पटक देता है।

काबुक (फा० स्त्री०) कबूतरोंका दरबा।

काबुल—१ अफगानिस्तानका एक जिला। इसके पश्चिम कोहबाबा, उत्तर हिन्दूकुश पर्वत, उत्तर पूर्व अलसरा नदी, पूर्व सुलेमान पर्वतश्रेणी, दक्षिण सफेदकोह तथा गजनी और पश्चिम हजारा प्रदेश है।

काबुलका अधिकांशस्थल पर्वतसे परिपूर्ण है। इसकी अनेक उपत्यका उर्वरा हैं। इन उपत्यकाओंमें बड़े बड़े वृक्ष होते हैं। उनके बड़े और घने बन लगते हैं। कोहिस्तान और कुररमें अच्छा अच्छा काठ उपजता है। काबुलके नानास्थानोंमें मेवेके बाग हैं। कोहदामन और इस्तालीफ उपत्यकामें बाग बहुत हैं। बाग देखनेमें अति मनोरम हैं। लोगर और बोरबन्द नामक प्रदेशमें पद्मरागका स्थान है। यहां लौहादिका आकर भी अधिक मिलता है। यहां गेहूं और जव यथेष्ट उत्पन्न होता है। किन्तु इसे केवल दरिद्र लोग व्यवहार करते हैं। सम्पन्न लोग मांस अधिक खाते हैं। गजनीसे नानाविध शस्य यहां आता है। उत्तर बदख्शान्, जलालाबाद, लमगान और कुनारसे चावलकी आमदनी होती है। इस जिलेमें स्थान स्थान पर तमाखू अधिक उपजता है। रामगान और जनारिसे भी आता है। यहां द्रव्यादिका अभाव नहीं। शीतके समय लोग अधिकांश घरोंमें रहते हैं। उत्तर और दक्षिणदिक् घर भी हैं। यहांकी छत भारतवर्षकी भांति समतल होती है। घी और तेल भी यहां बन जाता है। उत्तरमें तुर्कस्तान और दक्षिणमें भारतवर्षके साथ वाणिज्य होता है। तुर्कस्तानके साथ ही वाणिज्य अधिक चलता है। ग्राम छोटे बड़े नाना प्रकारके हैं। एक एक ग्राममें भी भेड़ भी घोड़ी बसती है। ग्रामके भीतर बीच बीच छोटे किले बने हैं। अन्न अनेक स्थानोंमें मिलता है। उपत्यकामें प्रायः बैलगाड़ी चलती है। बहिर्वाणिज्यमें घोड़, ऊन और अन्यतर व्यवहृत होते हैं। तुर्कस्तानमें रूसियोंने शुल्क बढ़ाया था, इस लिये यहांका वाणिज्य कुछ घट गया। पहले भारतसे कपड़ा और चाय भेजते थे। किन्तु यह काम भी बन्द हो गया। इससे इनके शुल्ककी आमदनीमें घटी आई है।

काबुलके प्रादेशिक शासनकर्ताको हाकिम कहते हैं। १८८६ ई०को अमीर शेर अलीके आत्मीय भ्राता सरदार अहमद खान् यहांके हाकिम थे। काबुलका आय प्रायः अठारह लाख रुपया है। अफगानिस्तानके अन्यान्य प्रदेशकी अपेक्षा काबुलकी सैन्य-संख्या कुछ अधिक है। यहांकी राहें भी खराब नहीं। इसका बहुत प्रमाण मिलता है कि पहले काबुलमें हिन्दू राजाओंका अधिकार था।

२ उक्त काबुल जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० ३४° ३१´ उ० एवं देशा० ६९° १८´ पू० में काबुल और लगर नामक दो नदीके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है। काबुल गजनीसे ८८, हिरात व ग़िलजाईसे ३१८ और पेशावरसे १८५ मील दूर है। कोहसल्ला ऊंचाईसे कम है। यहां तापमानयन्त्र ३०° डिगरी उतरता और १०५° डिगरी चढ़ता है।

कोह आसमाई और कोह शेरदरवाजा नामक दो पहाड़ोंसे मिलनेसे कोटरकी भांति बननेवाला स्थान ही समतल है। उसी स्थानपर काबुल नगर अवस्थित है। यह चारोंदिक् डेढ़ कोससे अधिक न निकलेगा। प्रधान दुर्ग बालाहिसार नगरके दक्षिण पूर्व प्रान्तमें खड़ा है। पहले काबुलको चारों ओर शहरका प्राचीर था। किन्तु आजकल

अनुभव करनेके मैदान जा देखा कि उसका गोरक्षक एक पेड़के नीचे पड़ा सोता है और एक सर्प फणा फैला उसके मुखकी धूप रोक रहा है। ब्राह्मण सर्प देख कर डरा और द्रुतपद भागने लगा। उसी समय सर्प मनुष्य आते देख सरक गया। ब्राह्मणने पास जा कर देखा कि उसके पदतलमें अष्टदल पद्म, त्रिशूल, ऊर्ध्वरेखा प्रभृति राजलक्षण हैं। यह देख ब्राह्मण उसे लगा कर घर ले गया और किसी प्रकारका नीचकर्म करनेको निषेध किया। अवशेषको एक दिन ब्राह्मणने उससे बुलाकर प्रतिज्ञा करा ली—किसी दिन राजा होने पर वह उनको मन्त्री बनायेगा। कालक्रमसे कामरूपराज धर्मपालके तदानीन्तन वंशधर दुर्बल पड़ गये। फिर वही गोपालक उनको मार स्वयं नीलध्वज नामसे राजा हुवा और अपने राज्यका "ब्राह्मणराज्य" नाम रख प्रतिपालक ब्राह्मणको मन्त्री बनाया। दूसरे प्रवादके अनुसार किसी ब्राह्मणके घर एक दासी थी। उसीके गर्भसे एक पुत्रसन्तान हुवा। ब्राह्मणने उसे गोरक्षामें नियुक्त किया। काल-क्रमसे उक्त रूपसे वही गोरक्षक नीलध्वज हुवा। फिर कोई कहता है कि गोरक्षक असुर (असभ्य जातीय) था। अस्तु: राजा नीलध्वजने मिथिलासे ब्राह्मण और कायस्थ ले जाकर कामरूपमें बसाये थे। फिर "कामतापुर" * नामसे उन्होंने एक नगर भी बसाया। नीलध्वजने इस नगरमें राजधानी स्थापन कर "कामतेश्वर" उपाधि ग्रहणपूर्वक अपनेको "खाङ्कर" नामसे प्रचारित किया था।

नीलध्वजके पीछे उनके पुत्र चक्रध्वज और चक्रध्वजके पीछे उनके पुत्र नीलाम्बर राजा हुये। नीलाम्बरने ही घोड़ाघाटके गढ़ और अनेक कीर्तिको स्थापन किया। एकबार नीलाम्बरराजके मन्त्रिपुत्र राजरानी पर आसक्त हुये। राजाने उन्हें मार और उनका मांस पका मन्त्रीको खिलाया था। मन्त्रीके खा चुकने पर राजाने उन्हें पुत्रमुण्ड दिखाया और समस्त विवरण बताया। मन्त्री लघु पाप पर गुरु-दण्ड देख पतित राजसंसर्ग परित्याग पूर्वक गङ्गाके स्नानच्छलसे कामरूप छोड़ चल दिये। फिर उन्होंने गङ्गास्नान कर प्रतिशोध लेनेको गौड़ेश्वर हुसैन शाह नवाबसे साहाय्य मांगा था। नवाबने राज्यको अवस्था समझ बूझ कर बहु सैन्य सह कामरूपको यात्रा की। घोर युद्ध होते भी कामतेश्वर पराजित न हुये। इसीसे नवाब नगर घेर बैठ गये। अवरोध १२ वर्ष पर्यन्त रहा। मुसलमानोंने इस दीर्घकालके मध्य नगरके बाहर्भागमें अनेक कीर्ति विनष्ट कर अपने रहने योग्य अट्टालिका और पुष्करिणी तक बनवा लीं। अवशेषमें उन्होंने कौशल अवलम्बन किया था। राजाको यह सम्वाद भेजा गया—मुसलमान अवरोध छोड़ चले जायेंगे, किन्तु जानेसे पहले मुसलमानोंकी रमणी रानीसे साक्षात् करना चाहती हैं। नीलाम्बर प्रस्ताव पर सम्मत हुये। किन्तु मुसलमानोंने दोलामें स्त्रियोंको न भेज सशस्त्र योद्धा रवाना किये। उन्होंने भीतर पहुंच नगर अधिकार किया और राजाको बांध लिया। किसीके कथनानुसार बन्दी राजा गौड़को प्रेरित हुये और किसीके कथनानुसार वह मार डाले गये। फिर कोई कहता है कि राजा प्राण बचा भागे थे। अस्तु: नगर मुसलमानोंने अधिकार किया। १४२० शकको कामतापुरमें मुसलमानोंकी जयपताका उड़ी थी। आज वही नगर भग्नस्तूप मात्रमें परिणत है, जिसने ४००सौ वर्ष पूर्व एककाल मुसलमानोंका द्वादश वार्षिक अवरोध अनायास सह लिया। कालकी विचित्र महिमा है।

"गुरुजनकथाचरित" नामक आसामके ग्रन्थमें लिखा है,—कामतापुरमें दुर्लभनारायण नामक एक राजा थे। उनके साथ गौड़ेश्वर धर्मनारायणका एक भीषण युद्ध हुवा। दुर्लभनारायणको ही कोई काम-रूपके राजा धर्मपालका और कोई "जितारि"का वंशीय बताते हैं। अस्तु: युद्धमें अनेक लोग मारे गये। फिर दोनों राजाओंने रातको स्वप्न देख दूसरे दिन सख्यता-स्थापन-पूर्वक सन्धि कर ली।

* नीलध्वजने सम्भवतः १३८०।८० शकाब्दको कामतापुर स्थापन किया था। किन्तु किसी किसीके अनुमानमें कामतापुर नामक एक क्षुद्र नगर पहलेहीसे रहा। नीलध्वज उसी नगरका विस्तार बढ़ा और दुर्गादि बना [illegible] राजधानी बनाये थे। १३६०।६० शकमें भी इस नगरका नामोल्लेख मिलता है।

स्थान स्थान पर उसका भग्नावशेष देख पड़ता है। नगरका अधिकांश स्थान उद्यानवाटिकासे परिपूर्ण है। बस्ती ५००० घरसे अधिक नहीं। नगरमें आने जानेके लिये पहले सात फाटक थे। आजकल लाहोरी और सरदार नामक दो ही ईंटके फाटक देख पड़ते हैं। लोगोंके घर अधिकांश कच्ची ईंट और मट्टीके बने हैं। नगर कई महल्लोंमें विभक्त है। फिर महल्ले कूचोंमें बटे हैं। कूचे प्राचीरसे वेष्टित हैं। युद्ध विग्रहके समय प्राचीरोंकी मरम्मत होती है। उस समय एक एक कूचा दुर्गकी भांति देख पड़ता है। प्रवेशके लिये कूचेमें सिर्फ एक फाटक रहता है। ऐसी आत्मरक्षाके व्यवहारको कूचाबन्दी कहते हैं। भीतरकी राहें अत्यन्त सङ्कीर्ण हैं। नगरमें अनेक बाजार हैं। उनमें दो प्रधान हैं। वह दोनों प्रायः समान्तरालमें अवस्थित हैं। एकका नाम शोरबाजार और दूसरेका नाम लाहोरी बाजार है। नगरको दक्षिण ओर शोरबाजारमें चहार-छाता नामक एक इमारत है। यह देखनेमें बहुत सुन्दर है। बाजारमें यह देखने लायक चीज है। इसके छतमें चित्र-विचित्र बने हैं। अली मरदान खानने यह इमारत बनवायी थी। नगरके बाहर बाबर और तैमूर शाहका समाधिस्थान है। यह दोनों चीजें भी देखने लायक हैं। काबुलके शासनकर्ता खुद अमीर हैं। पहले बालाहिसारमें ही राजभवन था। आजकल अमीर नगरके मध्य अन्य स्थानमें रहते हैं। नगरमें एक विद्यालय है। विदेशी वणिकों या व्यवसायियोंके रहनेको यहां १४।१५ सराय हैं। इन्हें कारवान्-सराय कहते हैं। साधारण लोगोंके नहानेको स्नानागार हैं। उन्हें हमाम कहते हैं। हमाममें गर्म पानी रहता है। शीतके समय चारो ओरसे वणिक् आते हैं। क्रयविक्रय अधिकांश दलालोंके द्वारा सम्पन्न होता है। नगरमें स्थान स्थान पर कूप है। किन्तु उनका जल कुछ भारी होता है। नदीका जल बहुत अच्छा है।

नगरमें जानेके लिये कई पुल हैं। उनमें किश्तीका पुल प्रधान है। कई नावें जोड़कर नावका पुल बना है। पक्के पुल भी कई हैं। अनेक स्थानों पर नदीमें जल कम रहनेसे सेतुकी आवश्यकता नहीं पड़ती।

तैमूर शाहने काबुलमें अफगानस्थानकी राजधानी स्थापित की थी। उस समय तक सादुजाई वंशीय राजा ही काबुलमें रहते थे। सादुजाई वंशका पतन होने पर यह नगर दोस्तमुहम्मदके हाथ लगा। अंगरेजोंके राज करते समय काबुलमें बहुत युद्धविग्रह हुआ। अफगानस्थान देखो।

१८३९ ई० को ७वीं अगस्तके दिन अंगरेजोंने ससैन्य शाहशुजाको काबुल भेजा था। अंगरेजोंका सैन्यदल दो वर्ष वहां रहा। फिर १८४१ई० की २री नवम्बरके दिन काबुलके सिपाहियोंने विद्रोही हो अमीर शाहशुजाको मार डाला। दोस्त मुहम्मदके पुत्र अकबरखान्ने फिर अंगरेजोंसे सन्धि करना चाहा था। सन्धि होनेकी बात इस मर्म पर चली थी कि अंगरेजोंको काबुल छोड़ना पड़ेगा। सर विलियम माकनाटन सन्धिकी बात चीत करने गये थे। किन्तु वह पिस्तौलसे मारे गये। उनके साथ ट्रेवर, मेकेञ्जी और लारेन्स साहब थे। गिलजाई सिपाहियोंने ट्रेवरको भी मार डाला। दूसरे साहब बांध लिये गये। शेषमें स्थिर हुआ कि अंगरेजोंको रुपया पैसा सब देना और उन्हें सिर्फ ६ तोपें ले लौटना पड़ेगा। १८४२ई०को ६ठीं जनवरीको अंगरेजी सेना लौटने लगी। ४५०० सिपाही और १२००० नौकर सख्त ठण्डी बरफको तोड़ते वापस आते थे। इस दलके मध्य केवल डाक्टर ब्राइडन सशरीर जलालाबाद पहुंचे। बन्दी हुये ९५ लोग भी अवशेषमें आ गये। १८४२ई० को १५वीं सितम्बरको अंगरेजी सेना ले कप्तान पोलकने काबुल पहुंच बालाहिसार दखल किया था। १२वीं अक्तोबर तक अंगरेज नगर पर अधिकार किये रहे। माकनाटन साहबकी हत्याके पीछे उनका देह बाजारमें लटकाया गया था। इसके बदलेमें अंगरेजोंने चहार-छाता बाजार तोपोंसे उड़ा दिया।

१८७९ई०के मई मास गन्दामकमें याकूब खान्के साथ अंगरेजोंकी सन्धि हुई। उससे काबुलमें अंग-

उसके पीछे गौड़ेश्वरने कामरूपकी अवस्था देख राजा दुर्लभनारायणके पास सात ब्राह्मण और सात कायस्थ भेजे थे। इन्हीं चौदह मनुष्योंमें प्रधान १२ आदमियोंको राजा दुर्लभनारायणने "बारभुँया" आख्या दी। कामरूप देखो। बारभूँया ही सम्भवतः गौड़ेश्वरके सेनापति थे। दुर्लभनारायणने उनके साहाय्यसे भोटराजका विद्रोह दबाया था। कालक्रममें कामरूपके मध्य कोचजातिकी संख्या और प्रभाव बढ़नेसे राजा दुर्लभनारायण कुछ श्रीभ्रष्ट हो गये। फिर आदि भूयांवोंके मरनेसे वह अधिक उत्कण्ठित हुये। कुछ दिन पीछे कोचोंके मध्य हाजो नामक किसी सरदारको प्रधानत्व मिला। वह क्रमशः अपना अधिकार बढ़ाने लगा। और अवशेषमें घोड़ाघाटको छोड़ आसाम प्रदेशका राजा बन बैठा। इसके हीरा और जीरा दो कन्या भिन्न अन्य कोई सन्तान न थी। दोनों कन्यावोंके अविवाहितावस्थामें अति अल्प दिनके आगे पीछे दो सन्तान हुये। जीराके सन्तानका नाम शिशु और हीराके सन्तानका नाम विशु था। हाजोराजकुमारी कन्यायोंके पुत्र होते देख महा चिन्तान्वित हुये। उसी समय देववाणी सुन पड़ी थी—यह दोनों पुत्र देवदेव महादेवके औरससे उत्पन्न हुये हैं। किसी किसीके कथनानुसार हरिया नामक किसी मेच जातीय सरदारसे हीराका विवाह हुआ था, किन्तु उसके औरससे उत्पन्न नहीं। अन्तको यह दोनों सन्तान विशेष पराक्रमी हुये। इन्होंने अपना नाम "विश्वसिंह" और "शिवसिंह" रखा तथा अपनेको शिववंशीय एवं स्वश्रेणीके लोगोंको "राजवंशीय" बता प्रचार किया। क्रमशः विश्वसिंह नाना देश (बुकनोके मतमें १४२०से ३० शकके मध्य) कामतापुर अधिकार कर राजा हुये और श्रीहट्टसे वैदिक ब्राह्मण ला "कामरूपी ब्राह्मण" आख्या दे स्वराज्यमें बसा दिये। इन्होंने बौद्धधर्म बढ़ते समय लुप्तप्राय कामाख्यापीठका उद्धार किया था।

कामतापुर कितने दिनका है? बुकनोके मतसे राजा नीलध्वज कामतापुरके स्थापयिता नहीं, संस्कारकर्ता और राजधानीकर्ता मात्र थे। अन्यके अनुसार राजा नीलध्वजने १२५०—६० शकको (१३२८—३८ ई०) यहां राजधानी स्थापित की। उक्त ग्रन्थको ही देखते १४२० शकमें (१४९८ ई०) हुसेन शाहने कामतापुर अधिकार किया था। १२ वर्ष अवरोधके पीछे नगर अधिकृत हुआ। सुतरां १४०८ शकको (१४८६ ई०) हुसेन शाहने प्रथम नगर पर आक्रमण किया। उस समय नीलध्वजके पौत्र नीलाम्बर कामतापुरके सिंहासन पर अधिष्ठित थे। सुतरां नीलध्वजके समयसे नीलाम्बरकी राज्यकाल-समाप्तिके मध्य प्रायः १५०। १६० वर्ष व्यतीत हुये। फिर नीलध्वजवंशीय राजावोंने प्रत्येक न्यूनाधिक ५५ वर्ष राजत्व किया। पूर्वभारतके इतिहास-लेखक मिस्टर मण्टगोमारी मार्टिन साहबने इस सम्बन्धमें जो कालसंख्या निर्देश की है, उसके साथ इसका मेल नहीं। उनके कथनानुसार १४९६ ई०को (१४१८ शक) हुसेन शाहने और १५२३ ई० को (१४४५ शक) अव्यवहित परवर्ती गौड़राज नसरत शाहने राज्यारोहण किया था। सुतरां हुसेन शाहका राजत्वकाल २७ वर्ष रहता है। २७ वर्षसे नगरावरोधके १२ वर्ष (मार्टिन साहब इसे नहीं मानते। वह इस बातको अतिशयोक्ति समझ छोड़ देना चाहते हैं। फिर वह स्वयं भी अवरोधकालकी कोई संख्या नहीं बताते।) निकाल डालने पर १५ वर्ष बचते हैं। फिर विश्वसिंहके कामतापुरका अधिकारकाल बुकनोके मतमें १४२० और १४३० शकके (१४९८ और १५०८ ई०) मध्य था। मिस्टर मार्टिनने विश्वसिंहके कामतापुर अधिकार की कोई बात नहीं लिखी। उक्त कालसंख्याके अनुसार हुसेन शाहने स्वीय राज्यारोहणके कालसे (मार्टिनके मतमें १४९६ ई० या १४१८ शक) प्रायः ७० वर्ष पीछे (बुकनोके मतमें १४०८ शक या १४८७ ई०) कामतापुर पर आक्रमण किया था। किन्तु मार्टिनके मतसे उनके राजत्वकालका परिमाण केवल २० वर्ष था। फिर बुकनोके मतसे कामतापुरका आक्रमण-काल १४०८ शक या १४८६ ई० रहा। किन्तु मार्टिनके मतसे उक्त समय (१४९६+१५) १५११ ई० (१४३३ शक) या उससे दो-चार वर्ष पूर्व था। कारण बुकनोके मतसे विश्वसिंहके कामतापुरका

ईवोंके एक रजीडेण्ट रहनेकी बात ठहरी। कर कूयह रजीडेण्ट बन काबुल गये। उस समय भी अफगान बिलकुल शान्त न थे। ३री सितम्बरके दिन वो सर लूइस ससैन्य बलपूर्वक मारे गये। उस समय कुर्रम उपत्यकामें सर फ्रेडरिक राबर्ट अंगरेजी सेना लिये अपेक्षा करते थे। अंगरेज गवरमेण्टने उन्हें काबुल जानेकी अनुमति दी। राबर्टने ससैन्य प्रस्थान किया था। रास्तेमें नाना विघ्न बाधाओंका अतिक्रम करना पड़ा। ८वीं अक्तोबरको उन्होंने काबुल पर अधिकार किया था। अंगरेज सैन्यने बालाहिसार, किला और राजभवनका अधिकांश तोड़ डाला। अमीर याकूब खान्ने पदत्याग किया। अंगरेज काबुल अधिकार किये रहे। अफगानोंने सोचा था कि अंगरेज लौट जावेंगे। किन्तु उन्हें बैठा देख सब लोग असन्तुष्ट हो गये। थोड़े दिन पीछे अफगानोंने काबुल और बालाहिसार दखल किया। ११वीं दिसम्बरको शेरपुरमें एक युद्ध हुआ। उसमें अंगरेज ही जीते थे। किन्तु उन्हें शेरपुरमें अवरुद्ध हो रहना पड़ा। २३वीं दिसम्बरको वहां ५० हजार अफगान सेनाने पहुंच अंगरेजों पर आक्रमण किया था। किन्तु वह पराजित हुई। दूसरे दिन अधिकतर अंगरेज-सेना पहुंच गई। काबुल फिर अंगरेजोंके हस्तगत हुआ। उसके पीछे ६ मास तक कोई उपद्रव न उठा। २२वीं जुलाईको अबदुर्रहमान काबुलके अमीर मनोनीत हुये। अगस्त मासमें अंगरेज सेना लौट आई। अमीर अबदुर्रहमानके शासनमें शान्ति स्थापित हुई। १८८१ई०को याकूब खान्ने आक्रमण किया था। किन्तु वह पराजित हो हिरातकी राह पारस्यको और चले गये। उसी वर्ष अमीरने एक बार काबुल छोड़ दिया था। फिर शाहक और कोहिस्तानके लोग विद्रोही हुये। किन्तु धीरे धीरे शान्ति हो गई। १८८४ई० को रूस-सैन्य मार्व पर अधिकार कर अफगानस्थानकी सीमामें आ पहुंची थी। अंगरेजोंने रूस और अफगानस्थानकी सीमा स्थिर करनेके लिये ३० कर्मचारी और ३०० सिपाही भेज दिये। १८८५ ई०को भारतके गवरनर जेनरल लार्ड डफरिनने रावल-पिण्डीमें एक दरबार किया था। अमीर उसमें निमन्त्रित हुए। मार्च मासके शेषको अमीर अबदुर रहमान वहां आये थे। एकपक्ष तक रह वह वापस गये।

आजसे कोई तीन वर्ष पहिले भूतपूर्व अमीरको गोलीसे किसीने मार डाला था। उनके पीछे कनिष्ठ पुत्र अमान उल्ला खान्को काबुलका राजपद प्राप्त हुआ, किन्तु इन्होंने अंगरेजोंके विरुद्ध युद्ध घोषणा की। कितनी ही खून खराबीके पीछे युद्ध बन्द हुआ। फिर अफगानोंका एक दूतदल सन्धि करने भारत आया, भारतसे भी अंगरेजोंका दूत-दल काबुल सन्धिकी बातचीत करने गया। गत २८वीं फरवरीको काबुल और रूसमें भी एक सन्धि हुयी है। कहते हैं इस सन्धिके अनुसार अमीरने रूसी बोलशेविकोंको भारत पर आक्रमण करनेके लिये अफगानस्थानकी राह सेना ले जानेका अधिकार दे दिया है। काबुलकी समस्या आजकल बहुत टेढ़ी पड़ गयी है।

२ अफगानस्थानकी एक नदी। इसी नदीके तीर काबुल नगरी है। ऋग्वेदमें यह नदी कुभा नामसे कही गयी है। कुभा देखो।

काबुली (हिं० स्त्री०) [illegible], काबुलके [illegible]।

काबुली बबूल (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, एक तरहका बबूल। यह भारतमें प्रायः सर्वत्र मिलता और नदीकी तरह सीधा चलता है। इसे राम बबूल भी कहते हैं।

काबुली मस्तगी (फा० स्त्री०) निर्यास विशेष, एक गोंद। यह रूमी मस्तगीसे मिलती और उसकी जगह काममें आती भी है। इस वृक्षके [illegible] भारतमें होता है। इसे 'बम्बईकी मस्तगी' भी कहते हैं।

काबू (तु० पु०) १ पकड़, वश, पहुंच। २ अधिकार, इख्तियार।

काम (सं० क्ली०) काम्यते इति, कम्-घञ्। १ [illegible], धैर्य। २ प्रीति, वाञ्छित बात। ३ वासना, ख्वाहिश। ४ [illegible]। ५ अनुमति, रजामन्द। (पु०) [illegible]।

अनुभव करनेका मैदान जा देखा कि उसका गोरक्षक एक पेड़के नीचे पड़ा सोता है और एक सर्प फणा फैला उसके मुखकी धूप रोक रहा है। ब्राह्मण सर्प देख कर डरा और द्रुतपद भागने लगा। उसी समय सर्प मनुष्य आते देख सरक गया। ब्राह्मणने पास जा कर देखा कि उसके पदतलमें अष्टदल पद्म, त्रिशूल, ऊर्ध्वरेखा प्रभृति राजलक्षण हैं। यह देख ब्राह्मण उसे जगा कर घर ले गया और किसी प्रकारका नीचकर्म करनेको निषेध किया। अवशेषको एक दिन ब्राह्मणने उससे बुलाकर प्रतिज्ञा करा ली—किसी दिन राजा होने पर वह उनको मन्त्री बनायेगा। कालक्रमसे कामरूपराज धर्मपालके सदानीन्तन वंशधर दुर्बल पड़ गये। फिर वही गोपालक उनको मार स्वयं नीलध्वज नामसे राजा हुआ और अपने राज्यका "ब्राह्मणराज्य" नाम रख प्रतिपालक ब्राह्मणको मन्त्री बनाया। दूसरे प्रवादके अनुसार किसी ब्राह्मणके घर एक दासी थी। उसीके गर्भसे एक पुत्रसन्तान हुआ। ब्राह्मणने उसे गोरक्षामें नियुक्त किया। कालक्रमसे उक्त रूपसे वही गोरक्षक नीलध्वज हुआ। फिर कोई कहता है कि गोरक्षक असुर (असभ्य जातीय) था। अस्तु: राजा नीलध्वजने मिथिलासे ब्राह्मण और कायस्थ ले जाकर कामरूपमें बसाये थे। फिर "कामतापुर" * नामसे उन्होंने एक नगर भी बसाया। नीलध्वजने इस नगरमें राजधानी स्थापन कर "कामतेश्वर" उपाधि ग्रहणपूर्वक अपनेको "सच्छूद्र" नामसे प्रचारित किया था।

नीलध्वजके पीछे उनके पुत्र चक्रध्वज और चक्रध्वजके पीछे उनके पुत्र नीलाम्बर राजा हुये। नीलाम्बरने ही घोड़ाघाटके गढ़ और अनेक कीर्तिको स्थापन किया। एकबार नीलाम्बरराजके मन्त्रिपुत्र राजरानी पर आसक्त हुये। राजाने उन्हें मार और उनका मांस पका मन्त्रीको खिलाया था। मन्त्रीके खा चुकने पर राजाने उन्हें पुत्रमुण्ड देखाया और समस्त विवरण बताया। मन्त्री लघु पाप पर गुरुदण्ड देख पतित राजसंसर्ग परित्याग पूर्वक गङ्गाके स्नानच्छलसे कामरूप छोड़ चल दिये। फिर उन्होंने गङ्गास्नान कर प्रतिशोध लेनेको गौड़ेश्वर हुसेन शाह नवाबसे साहाय्य मांगा था। नवाबने राज्यकी अवस्था समझ बूझ कर बहु सैन्य सह कामरूपकी यात्रा की। घोर युद्ध होते भी कामतेश्वर पराजित न हुये। इसीसे नवाब नगर घेर बैठ गये। अवरोध १२ वर्ष पर्यन्त रहा। मुसलमानोंने इस दीर्घकालके मध्य नगरके बाह्यभागमें अनेक कीर्ति विनष्ट कर अपने रहने योग्य अट्टालिका और पुष्करिणी तक बनवा लीं। अवशेषमें उन्होंने कौशल अवलम्बन किया था। राजाको यह सम्वाद भेजा गया—मुसलमान अवरोध छोड़ चले जायेंगे, किन्तु जानेसे पहले मुसलमानोंकी रमणी रानीसे साक्षात् करना चाहती हैं। नीलाम्बर प्रस्ताव पर सम्मत हुये। किन्तु मुसलमानोंने दोलामें स्त्रियोंको न भेज सशस्त्र योद्धा रवाना किये। उन्होंने भीतर पहुंच नगर अधिकार किया और राजाको बांध लिया। किसीके कथनानुसार बन्दी राजा गौड़को प्रेरित हुये और किसीके कथनानुसार वह मार डाले गये। फिर कोई कहता है कि राजा प्राण बचा भागे थे। अस्तु: नगर मुसलमानोंने अधिकार किया। १४२० शकको कामतापुरमें मुसलमानोंकी जयपताका उड़ी थी। आज वही नगर भग्नस्तूप मात्रमें परिणत है, जिसने ४००सौ वर्ष पूर्व एककाल मुसलमानोंका द्वादश वार्षिक अवरोध अनायास सह लिया। कालकी विचित्र महिमा है।

"गुरुजनकथाचरित्र" नामक आसामके ग्रन्थमें लिखा है,—कामतापुरमें दुर्लभनारायण नामक एक राजा थे। उनके साथ गौड़ेश्वर धर्मनारायणका एक भीषण युद्ध हुआ। दुर्लभनारायणको ही कोई कामरूपके राजा धर्मपालका और कोई "जितारि"का वंशीय बताते हैं। अस्तु: युद्धमें अनेक लोग मारे गये। फिर दोनों राजाओंने रातको स्वप्न देख दूसरे दिन सख्यता-स्थापन-पूर्वक सन्धि कर ली।

---

* नीलध्वजने सम्भवतः १४६०।८० ई०के मध्य कामतापुर स्थापन किया था। किन्तु किसी किसीके अनुमानसे कामतापुर नामक एक दृढ़ नगर पहलेसे ही रहा। नीलध्वज उसी नगरका विस्तार बढ़ा और दुर्गादि बना कामरूपकी राजधानी बना गये थे। १४६०।८० ई०के पूर्व भी इस नगरका नामोल्लेख मिलता है।

उसके पीछे गौड़ेश्वरने कामरूपकी अवस्था देख राजा दुर्लभनारायणके पास सात ब्राह्मण और सात कायस्थ भेजे थे। इन्हीं चौदह मनुष्योंमें प्रधान १२ आदमियोंको राजा दुर्लभनारायणने "बारभुँया" आख्या दी। (कामरूप देखो।) बारभूँया ही सम्भवतः गौड़ेश्वरके सेनापति थे। दुर्लभनारायणने उनके साहाय्यसे भोटराजका विद्रोह दबाया था। कालक्रमसे कामरूपके मध्य कोचजातिकी संख्या और प्रभाव बढ़नेसे राजा दुर्लभनारायण कुछ श्रीभ्रष्ट हो गये। फिर आदि भूयांवोंके मरनेसे वह अधिक उत्पीड़ित हुये। कुछ दिन पीछे कोचोंके मध्य हाजो नामक किसी सरदारको प्रधानत्व मिला। वह क्रमशः अपना अधिकार बढ़ाने लगा। और अवशेषमें घोड़ाघाटको छोड़ आसाम प्रदेशका राजा बन बैठा। इसके हीरा और जीरा दो कन्या भिन्न अन्य कोई सन्तान न थी। दोनों कन्यावोंके अविवाहितावस्थामें अति अल्प दिनके आगे पीछे दो सन्तान हुये। जीराके सन्तानका नाम शिशु और हीराके सन्तानका नाम विशु था। हाजोराजकुमारी कन्यावोंके पुत्र होते देख महा विस्मान्वित हुये। उसी समय देववाणी सुन पड़ी थी—यह दोनों पुत्र देवदेव महादेवके औरससे उत्पन्न हुये हैं। किसी किसीके कथनानुसार हरिया नामक किसी मेच जातीय सरदारसे हीराका विवाह हुआ था, किन्तु उसके औरससे उत्पन्न नहीं। अस्तु, यह दोनों सन्तान विशेष पराक्रमी हुये। इन्होंने अपना नाम "विश्वसिंह" और "शिवसिंह" रखा तथा अपनेको शिववंशीय एवं स्वश्रेणीके लोगोंको "राजवंशीय" बता प्रचार किया। क्रमशः विश्वसिंह नाना देश (बुकनोके मतमें १४२०से ३० शकके मध्य) कामतापुर अधिकार कर राजा हुये और श्रीहट्टसे वैदिक ब्राह्मण ला "कामरूपी ब्राह्मण" आख्या दे स्वराज्यमें बसा दिये। इन्होंने बौद्धधर्म बढ़ते समय लुप्तप्राय कामाख्यापीठका उद्धार किया था।

कामतापुर कितने दिनका है? बुकनोके मतसे राजा नीलध्वज कामतापुरके स्थापयिता नहीं, संस्कारकर्ता और राजधानीकर्ता मात्र थे। अन्यके अनुसार राजा नीलध्वजने १२५०—६० शकको (१३२८—३८ ई०) यहां राजधानी स्थापित की। उक्त ग्रन्थको ही देखते १४२० शकमें (१४९८ ई०) हुसेन शाहने कामतापुर अधिकार किया था। १२ वर्ष अवरोधके पीछे नगर अधिकृत हुआ। सुतरां १४०८ शकको (१४८६ ई०) हुसेन शाहने प्रथम नगर पर आक्रमण किया। उस समय नीलध्वजके पौत्र नीलाम्बर कामतापुरके सिंहासन पर अधिष्ठित थे। सुतरां नीलध्वजके समयसे नीलाम्बरको राज्यकाल-समाप्तिके मध्य प्रायः १५०। १६० वर्ष व्यतीत हुये। फिर नीलध्वजवंशीय राजावोंने प्रत्येक न्यूनाधिक ५५ वर्ष राजत्व किया। पूर्वभारतके इतिहास-लेखक मिष्टर मण्टगोमारी मार्टिन साहबने इस सम्बन्धमें जो कालसंख्या निर्दिष्ट की है, उसके साथ इसका मेल नहीं। उनके कथनानुसार १४८६ ई०को (१४१८ शक) हुसेन शाहने और १५२३ ई० को (१४४५ शक) अव्यवहित परवर्ती गौड़राज नसरत शाहने राज्यारोहण किया था। सुतरां हुसेन शाहका राजत्वकाल २७ वर्ष रहता है। २७ वर्षसे नगरावरोधके १२ वर्ष (मार्टिन साहब इसे नहीं मानते। वह इस बातको अतिशयोक्ति समझ छोड़ देना चाहते हैं। फिर वह स्वयं भी अवरोधकालको कोई संख्या नहीं बताते।) निकाल डालने पर १५ वर्ष बचते हैं। फिर विश्वसिंहके कामतापुरका अधिकारकाल बुकनोके मतमें १४२० और १४३० शकके (१४९८ और १५०८ ई०) मध्य था। मिष्टर मार्टिनने विश्वसिंहके कामतापुर अधिकार की कोई बात नहीं लिखी। उक्त कालसंख्याके अनुसार हुसेन शाहने स्वीय राज्यारोहणके कालसे (मार्टिनके मतमें १४८६ई० या १४१८ शक) प्रायः ७० वर्ष पीछे (बुकनोके मतमें १४०८ शक या १४८७ ई०) कामतापुर पर आक्रमण किया था। किन्तु मार्टिनके मतसे उनके राजत्वकालका परिमाण केवल २० वर्ष था। फिर बुकनोके मतसे कामतापुरका आक्रमण-काल १४०८ शक या १४८६ ई० रहा। किन्तु मार्टिनके मतमें उक्त समय (१४८६+१५) १५११ ई० (१४४३ शक) या उससे दो-चार वर्ष पूर्व था। कारण बुकनोके मतसे विश्वसिंहके कामतापुरका

कामरुचि (सं० स्त्री०) अस्त्रविशेष, एक हथियार। विश्वामित्रने इसे रामचन्द्रको शत्रुके अस्त्र विफल करनेके लिये दिया था।

कामरू (हिं०) कामरूप देखो।

कामरूप (सं० त्रि०) कामं मनोज्ञं रूपं यस्य, बहुव्री० १ मनोज्ञ रूपविशिष्ट, खूबसूरत। २ इच्छानुसार विविध रूपधारी, मर्ज़ीके मुवाफिक़ तरह तरहकी सूरत बनानेवाला।

"कामरूपः कामगमः कामवीर्यो विहङ्गमः।" (महाभारत)

कामरूप—वर्तमान आसाम प्रदेशका एक विस्तृत जिला। यह अक्षा० २५° ४४´ से २६° ५३´ ३० और देशा० ९०° ४०´ से ९२° १२´ पू०के मध्य ब्रह्मपुत्रके उभय पार पर अवस्थित है। इसके उत्तर भूटान, पूर्व दरङ्ग एवं नौगांव जिला, दक्षिण खसिया पहाड़ और पश्चिम ग्वालपाड़ा जिला है। कामरूपका बड़ा शहर गौहाटी है।

इस जिलेका प्राकृतिक दृश्य अति मनोहर है। भूमि बहुत उर्वरा है। ब्रह्मपुत्रके तीरका स्थान नीचा रहनेसे वर्षाकालमें डूब जाता है। यहां धान्य और सर्षप अपर्याप्त उत्पन्न होता है। सर, वंश प्रभृति स्वभावतः अधिक निकलता है। ब्रह्मपुत्रके तीरसे आगे उत्तर भूटान और दक्षिण खसिया पहाड़ तक भूमि क्रमशः उच्च एवं समतल है। ब्रह्मपुत्रके दक्षिण इस जिलेमें बहुतसे छोटे छोटे पहाड़ हैं। उनमें एक एक दो हजारसे तीन हजार फीट तक ऊंचा है। उक्त पर्वतोंके पार्श्व देशमें चायके बाग हैं।

ब्रह्मपुत्र ही कामरूपकी प्रधान नदी है। बहुतसी नदी और उपनदी ब्रह्मपुत्रमें गिरी हैं। उनमें उत्तर दिक्‌से मानस, चावलखोया तथा बरनदी और दक्षिण दिक्‌से कुलसी नदी आयी है।

ब्रह्मपुत्रके मध्य कई क्षुद्र क्षुद्र द्वीप हैं, इसकी संख्या नहीं।—ब्रह्मपुत्रमें रेत पड़नेसे जितने क्षुद्र द्वीप बनते और बिगड़ते हैं।

कामरूपके पर्वतोंसे कई क्षुद्र नदी निकली हैं। ग्रीष्मकाल प्रायः उनमें जल नहीं रहता। फिर भी वह भीतर भीतर बहा करती हैं। यहां नाला या नहर नहीं। किन्तु शस्यकी रक्षाके लिये बीच बीच सामान्य बांध मौजूद हैं।

इस भूभागमें प्रायः १३० वर्गमील जंगल है। इस जङ्गलसे भी गवरनमेण्टको यथेष्ट आय होता है। इसमें कुलसी नदीके तीरका वनविभाग प्रधान है। जिस जिस वनसे रुपया आता, उसमें बड़दार, दिमरुया, पल्लान, मयरापुर और बरुये नामक वन उल्लेखयोग्य दिखाता है।

वनमें साखू, ग्रोमम, तुन, सुम, नाहर प्रभृति वृक्ष यथेष्ट उपजते हैं। उनसे खूब कीमती कड़ियां, बरगे और तख्ते बनाते हैं। नागुङ्ग, कछारी, गारो, मिकिर और खासी प्रभृति असभ्य लोग वनसे लाख, मोम, तन्तु, गोंद वग़ैरह एकट्ठा कर अपनी जीविका चलाते हैं। उत्तरांचलमें भूटान पहाड़के पास गोचारणका बड़ा मैदान है। वहां नानाविध वृक्ष उपजते हैं।*

जीवजन्तुमें हस्ती, गैंडा, नानाजातीय व्याघ्र, महिष, हरिण, वन्य शूकर, नाना प्रकार सर्प और नानाप्रकार पक्षी देख पड़ते हैं। मत्स्य भी यहां नाना प्रकार होते हैं। उनमें रोहू, चितो और पवी नामक मत्स्य ही अधिक है।†

---

* यहांके योगिनीतन्त्रमें उक्त द्रव्यादिका उल्लेख मिलता है। यथा,—

"इक्षुदीपकवित्तानि कदलामलकानि च।
जम्बीरं पनसञ्चैव तथा नारङ्गकानि च।
दाड़िमं कदलीपत्रं ......
लकुचं मधुकं गुवाकं तथा पूगफलानि च।
धन्य वर्णं विशालञ्च तथा द्राक्षं अक्षोटकम्।
वालुकस्य च आम्रस्य पाण्डुरस्य भव धिये।
किम्पाकानि विशालानां तथा च खिनिकोवकम्।
कुष्माण्डं वार्त्ताकीञ्च तथा चारुष्मावरम्।
चन्दनं बीजपूरञ्च राजञ्च पोतकन्तथा।
कोमलार्थं इक्षवार्थं रम्भादिकानेव च।
रामवार्थं वंशवस्त्र दैवतुषकन्तथा।
ग्रन्थं कोदरवेव ....
बालञ्च श्यामतीरञ्च वरञ्च मार्टिकोरकम्।"

† "क्षपणाख्य मत्स्यानि बहुनां कामरूपकम्।

अधिकारकाल विवेचना करनेसे समझ पड़ता है कि कुछ दिन कामतापुरमें मुसलमानोंका अधिकार रहा।

कामतापुर नामका कारण क्या है? बुरञ्जीके मतसे नीलध्वज इसके स्थापयिता नहीं। किन्तु उनके द्वारा संस्कृत होनेसे इसका प्राचीन नाम मौजूद रहा। क्योंकि बुरञ्जी पढ़नेसे १२२० शकमें भी इसका नाम मिलता है। किन्तु इसके मूल स्थापयिताका नाम बुरञ्जीमें नहीं लिखा है। इस नगरमें सिङ्गीमारीके तीरवर्ती गोसाईंनीमारी नामक स्थानपर कामतेश्वरी देवी हैं। अनेकोंके मतानुसार इन्हीं देवीके नाम पर नगरका नामकरण हुआ है। कामतापुरके दुर्गमें भग्नावशेषके विवरणस्थल पर कामतेश्वरी देवीका उल्लेख किया गया है। दुर्गमें उत्तरांशके वृहत् स्तूप पर इनके प्राचीन मन्दिरका भग्नावशेष है। इन देवीके सम्बन्धमें एक प्रवाद है,—"प्राग्ज्योतिष्यु राधिपति भगदत्तको शिवके वरसे एक कवच मिला था। महाभारतके युद्धमें भगदत्तके मरने पर यह कवच हस्तिनापुरमें ही रहा। शेषको उक्त नीलध्वजके पुत्र चक्रध्वजने एक दिन स्वप्नमें देख और स्वप्ननिर्दिष्ट उपायसे कवच आहरण कर दुर्गके मध्य मन्दिर निर्माण पूर्वक स्थापन किया। उन्हें स्वप्नमें ही कवचकी पूजा-पद्धति और अधिष्ठात्री देवीकी मूर्ति अवगत हुयी थी। उन्होंने उसीके अनुसार देवीकी प्रतिमा बनवा उसके मध्य कवच रख दिया। पहले इसके निकट बलि होता था। अवशेषको मुसलमानोंके हाथ देवीकी प्रतिमा विनष्ट होने पर कवच एक पुष्करिणीमें छिप गया। उसके पीछे विश्वसिंह-वंशीय विहारके चतुर्थ राजा प्राणनारायणके अधिकारकालमें भूना नामक एक धीवरने उस स्थान पर एक पुष्करिणीमें मत्स्य पकड़नेको जाल डाला, जहां सिङ्गीमारी नदीने नगरमें प्रवेश किया है। किन्तु वह जाल इतना भारी समझ पड़ा कि किसी प्रकार उठ न सका। अवशेषको धीवरने राजाके निकट सम्वाद भेजा। राजा प्राणनारायण कवचका व्यापार जानते और उसके लिये उत्सुक भी थे। उक्त सम्वाद सुन वह उल्लसित हुये। उन्होंने ब्राह्मणोंसे परामर्श कर हाथी पर चढ़ा एक ब्राह्मण भेजा था। ब्राह्मणको वहां आने पर डुबकी लगानेसे जालमें कवच मिल गया। उन्होंने इसलिये एक रेशमी थैलीमें डाल उसे हाथीकी पीठ पर रखा और हाथीको उसकी इच्छाके अनुसार चलने दिया। हाथी सिङ्गीमारीके तीरसे जाने लगा। अवशेषको जहां नदीने प्राचीन नगरकी सीमाको छोड़ा है, उसीके निकट गोसाईंनीमारी नामक स्थान पर वह खड़ा हो गया; फिर किसी प्रकार वहांसे न हटा। ब्राह्मणोंने स्थिर किया कि देवी वहांसे जाना चाहती न थीं। इसीसे राजाने वहां मन्दिर बनवा दिया। प्रथमतः विश्वसिंहके आनीत वैदिक ब्राह्मणोंमें एक पूजक नियुक्त हुवा था। किन्तु देवीने स्वप्नमें मैथिली ब्राह्मणोंके मध्य पूजक नियुक्त करनेको आदेश दिया। कारण वही पहले देवीकी पूजा करते थे। इसी प्रकार एक मैथिली ब्राह्मण पूजक बनाये गये। कुछ दिन बीतने पर उन्होंने राजासे कहा—'देवीके आदेशसे हमें प्रत्यह रात्रिको मन्दिरमें चक्षु बांधकर जाना पड़ता है। हम वहां तबला बजाते हैं। देवी एक सुन्दरीके वेशमें नग्न होकर ताल ताल पर नाचती हैं। किन्तु देवीके निषेधसे हमने उन्हें आंखो इस प्रकार आंखसे नहीं देखा।' यह बात सुन राजाको कौतूहल उत्पन्न हुवा। वह उसी रात्रिको मन्दिर जा दरवाजेकी सांधसे झांकने लगे। देवी अन्तर्यामिनी हैं। उन्होंने राजाको देखते ही नृत्य बन्द कर शाप दिया,—अतःपर यदि वर्तमान नारायणवंशीय कोई राजा किसी दिन या रातको मन्दिरकी सीमामें आयेगा, तो उसी समय वह मर जायेगा। उस दिनसे आज तक उनके वंशीय मन्दिरकी सीमाके मध्य प्रवेश नहीं करते। किन्तु सेवाका प्रबन्ध लगा दिया जाता है। यह मन्दिर आज भी बना है। मन्दिर इष्टकनिर्मित है। गठनप्रणाली मुसलमानी आमको है। मन्दिरके चारो ओर पुष्पोद्यान है। प्रतिमा नूतन है। निर्मित प्रतिमाके गर्भमें उक्त कवच रखा है। मन्दिरके मध्य एक प्रस्तरफलक पर वासुदेवकी मूर्ति उत्कीर्ण है। कथनानुसार यह प्रस्तरखण्ड प्राचीन नगरके भग्नावशेषसे मिलता है। प्रवादानुसार अर्थ पाने पर इनके

पुराणादिको देखनेसे कामरूप अति प्राचीन जनपद है। महाभारतके समय यह स्थान किरातपति भगदत्तके अधीन था। उस समय लोग इसे परशुरामका [illegible]तीर्थ मानते थे।

पुराण और तन्त्रमें कामरूप महापीठस्थान माना गया है। गरुड़पुराणमें लिखा है,—

"कामरूपं महातीर्थं कामाख्या यत्र तिष्ठति।" (गरुड़पुराण, ८०।१६)

तारातन्त्रके २०वें पटलमें कहा है,—

"[illegible]"

हे भगवति! यह कामरूप ब्रह्माका पुत्र माना जाता है।

स्कन्दपुराणका प्रभासखण्ड (७८ अ०) देखनेसे इस स्थानमें सुभद्र लिङ्ग विद्यमान है।

नीलतन्त्र और बृहन्नीलतन्त्रके मतसे इस महातीर्थमें योगनिद्रा सर्वदा विराजती हैं।

पूर्वकालको कामरूपका आयतन इस समयकी अपेक्षा अधिक विस्तृत था। कुमारिकाखण्डमें लिखा है,—

"कामरूपे च [illegible] प्रकीर्तिता।" (१० अ०)

वर्तमान आसाम, कोचबिहार, जलपाईगोड़ी और रङ्गपुर कामरूपके अन्तर्गत था। योगिनीतन्त्रमें प्राचीन कामरूपकी चतुःसीमा इस प्रकार वर्णित है,—

"करतोया समारभ्य यावद्दिक्करवासिनी।
उत्तरस्यां कञ्जगिरिः करतोयान्तु पश्चिमे॥
तीर्थश्रेष्ठा दिक्षुनदी पूर्वस्यां गिरिकन्यके।
दक्षिणे ब्रह्मपुत्रस्य लाक्षायाः सङ्गमावधि॥
कामरूप इति ख्यातः सर्वशास्त्रेषु निश्चितः॥१०॥"
"त्रिंशद्योजनविस्तीर्णं दीर्घेण शतयोजनम्।
कामरूपं विजानीहि त्रिकोणाकारमुत्तमम्॥
ईशाने चैव केदारो [illegible]
दक्षिणे [illegible]॥
त्रिकोणमेव [illegible] सुरासुरनमस्कृतम्।"

करतोयासे दिक्करवासिनी तक कामरूप विस्तृत है। इसकी उत्तरसीमामें कञ्जगिरि, पश्चिम करतोया नदी, पूर्वसीमामें तीर्थश्रेष्ठ दिक्षु नदी और दक्षिण ब्रह्मपुत्र नद तथा लाक्षा नदीका सङ्गमस्थल है। यह सीमा निर्देश समुदाय शास्त्रका अनुमोदित है। यह सुरासुर-पूजित कामरूप त्रिकोणाकार है। इसका दैर्घ्य एक शत योजन और विस्तार तीस योजन है। कामरूपके ईशानकोणमें केदार, वायुकोणमें गजमाहन और दक्षिणमें ब्रह्मरेता तथा लाक्षाका सङ्गमस्थल है।

कालिकापुराणमें भी लिखा है,—

"करतोया समारभ्य पूर्वान्तावधि[illegible]।
[illegible]कान्तावधिकं [illegible]॥"

(कालिकापुराण, ८०।४१ अ०)

करतोया नामक सत्यगङ्गासे पूर्वदिक् ललितकान्ता पर्यन्त यह पुर विस्तृत है। (ललितकान्ता दिक्करवासिनीके निकट है।)

मुसलमानोंके मतसे भी कामरूपकी उत्तर सीमा कञ्जगिरि वा भूटानका पार्वत्य प्रदेश है। इसके पूर्व सदाचीन वा चीन-साम्राज्य, दक्षिण लाक्षा नदी (यह नदी ब्रह्मपुत्रसे पृथक् हो बङ्गदेशके सीमान्तमें प्रवाहित है।) और पश्चिम करतोया नदी है।*

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

(योगिनीतन्त्र, ११ पटल)

* रङ्गपुरसे [illegible] उत्तर [illegible] (त्रिस्रोता) नदीसे [illegible] एक छोटी नदी निकली है। यही करतोया नदीका पुराना गर्भ है। [illegible] (Martin's Eastern India, Vol. III, p. 361-62.) करतोया देखो।

[illegible] नदी बहती है। [illegible] (Journey from Upper Assam towards Hookhoom etc. by W. Griffith; see Selections of papers regarding the Hill Tracts between Assam and Burma, p. 129.)

यात्रियोंको प्रतिमाके गर्भसे कवच निकाल कर देखा देते हैं। किन्तु यह कार्य बहुत छिप कर किया जाता है।

कामतापुरके ध्वंसावशेषमें आजकल कृष्णकाय भालुकका आवास बना है।

आईन-अकबरीमें भी कामतापुरका उल्लेख है। मार्टिन साहब मालदहसे हस्तलिखित एक प्राचीन पुस्तक लाये थे। उसमें बंगदेशका विवरण लिखा है। उसके लेखानुसार नसरत शाहके अव्यवहित पूर्ववर्ती हुसेन शाहने कामतापुरेश्वर हरपनारायणको मार उनका राज्य जीता। हरपनारायण सदा लक्ष्मीमान् राजके पौत्र और मालिकाङ्गराजके पुत्र थे।

कामताल (सं० पु०) कामं तालयति प्रतिष्ठापयति, काम-तल्-णिच्-अण्। कोकिल, कोयल।

कामतिथि (सं० स्त्री०) कामस्य पूजार्थं प्रशस्ता तिथिः, मध्यपदलो०। त्रयोदशी, तेरस। इसी तिथिको कामदेवकी पूजा करते हैं।

कामद (सं० त्रि०) कामं अभिलाषं ददाति, काम-दा-क। १ कामदाता, मुराद पूरी करनेवाला। (पु०) कामं द्यति खसौन्दर्येण अवखण्डयति ऊर्ध्वरेतस्त्वात् नाशयति वा, काम-दो-क। २ कार्तिकेय।

कामदगिरि (सं० पु०) चित्रकूट पर्वत। चित्रकूट देखो।

कामदमणि (सं० पु०) चिन्तामणि।

कामदमिनी (सं० स्त्री०) कामस्य दमः उपशमः अस्त्यस्याः, काम-दम-इनि। कामरिपुको वशीभूत करनेवाली स्त्री, जो औरत अपनी ख्वाहिश दबा सकी हो।

कामदर्शन (सं० त्रि०) कामं मनोज्ञं दर्शनं यस्य, बहुव्री०। सुन्दर, खूबसूरत।

कामदहन (सं० पु०) शिव।

कामदा (सं० स्त्री०) कामं अभीष्टं ददाति, काम-दा-क-टाप्। १ कामधेनु। २ नागवल्ली लता, पान। ३ हरीतकी, हर। ४ एक देवी। महिरावण इन्हें पूजता था। ५ छन्दो विशेष। इसमें दश अक्षर रहते और क्रमानुसार रगण, यगण तथा जगण लगते हैं।

कामदानी (हिं० स्त्री०) १ कृत्रिम पुष्पादि, बेलबूटा। यह बादलेके तार या सलमेसितारेसे बनती है। २ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। इसपर सलमेसितारेके फूल निकाले जाते हैं।

कामदार (हिं० पु०) १ राज्यप्रबन्धकारी, रियासतका इन्तिज़ाम करनेवाला। राजपूताने और मालवेके राज्योंमें कामदार रहते हैं। (वि०) कलावत्तूके बेल-बूटोंवाला।

कामदीपकरस (सं० पु०) वाजीकरणका एक औषध, ताक़तकी कोई दवा। श्वेतपुनर्नवाका मूल, मोच रस, पारा और गन्धक बराबर शाल्मलीकी छालके रसमें मिलाकर गोली बांधनेसे यह प्रस्तुत होता है। इसका नाम आण्डालिकयोग है। एक गोली दो पल दूधके साथ खानेसे बहुत बलवीर्य बढ़ता है। (रसरत्नाकर)

कामदुघ (सं० त्रि०) कामं दोग्धि, काम-दुह-क हस्य घः। अभीष्टसम्पादक, मुराद पूरी करनेवाला।

कामदुघा (सं० स्त्री०) कामं-दुह-टाप्। कामधेनु। कामधेनु देखो।

कामदुह् (सं० त्रि०) काम-दुह-क्विप्। अभीष्टप्रद, ख्वाहिश पूरी करनेवाला।

कामदुहा, कामदुघा देखो।

कामदूता (सं० स्त्री०) मनःशिला।

कामदूति, कामदूती देखो।

कामदूतिका (सं० स्त्री०) कामस्य दूतिका इव उद्दीपकत्वात्। नागदन्ती, हाथीसूंड।

कामदूती (सं० स्त्री०) कामस्य दूतीव, उपमित-समा०। १ मनःशिला। २ पाटलवृक्ष, परवलकी बेल। ३ कोकिला, कोयल।

कामदेव (सं० पु०) काम एव देवः। १ कन्दर्प। इसका संस्कृत नामान्तर—मदन, मन्मथ, मार, प्रद्युम्न, मीनकेतन, कन्दर्प, दर्पक, अनङ्ग, पञ्चशर, स्मर, शम्बरारि, मनसिज, कुसुमेषु, अनन्यज, पुष्पधन्वा, रतिपति, मकरध्वज, आत्मभू, मदन् और विश्वकेतु है। शास्त्रकार कामदेवके पचास भेद बताते हैं,—१ काम, २ कामद, ३ कान्त, ४ कान्तिमान्, ५ कामग, ६ कामचर, ७ कामी, ८ कामुक, ९ कामवर्धन,

योगिनीतन्त्रके मतसे विस्तृत कामरूप राज्य नवयोनि-पीठमें विभक्त है,—

"उपपीठञ्च पीठञ्च उपपीठञ्च पीठकम्।
सिद्धपीठं महापीठं ब्रह्मपीठं तदन्तरम्॥
विष्णुपीठं महादेवि रुद्रपीठं तदन्तरम्।
नवयोनिरितिख्याता चतुर्दिक्षु समन्ततः॥"

फिर योगिनीतन्त्रमें सौमारपीठ, श्रीपीठ, रत्नपीठ और कामपीठ इत्यादिका नाम मिलता है।

सिवा इसके योगिनीतन्त्रमें दूसरे भी कई क्षुद्र क्षुद्र पीठों और उपपीठोंका उल्लेख है,—

"चण्डीयामस्य देवेशि प्रादुर्भावः कृते युगे।
पुष्करीणस्य सम्भूतिस्त्रेतायुगस्तुतेः स्मृता॥
द्वापरे जालगेन्द्रस्य कामाख्यस्य कलौ युगे।
पीठस्य कलिपापस्य विनाशाय महेश्वरि॥
प्रतिवर्षं तत्र पीठमुपपीठं युगे युगम्।
नवं नवं महाचैत्र' पुष्यार्कक्ष' नवं नवम्॥
प्रति पीठे महादेवः प्रति पीठे चतुर्मुखः।
प्रति पीठे स्थिता गङ्गा पार्वती प्रतिपीठके॥
प्रति पीठे प्रतिष्ठित' पुष्यार्कक्षानु पीठके।
कालो महान् सुदूरे च तीर्थ' हरिः प्रजायते॥
किन्तु तीर्थानि वै यानि मानसादिहिमाद्रये।
प्रति पीठे पृथक्पृथक् चाकारञ्च पृथक् पृथक्॥
दिव्ये देवि कुमाचारो मङ्गलान्यानि केतुभिः।
पृथक् पूजा पृथक् मन्त्रो मन्त्रे च तीर्थपीठकम्॥
भद्रपीठं दक्षिणाख्ये कण्वदेवस्य पार्श्वतः।
लाङ्गलस्य पायान्ये पूर्वपीठस्य पूर्वतः॥
पिशाचा पूर्वभागे च कामरूप विजानीहि।
लावण्यस्य वायव्ये श्रीनन्दपुरस्य उत्तरे॥
ईशाने चैव विहारं महेन्द्र उत्तरे स्थितम्।
श्रीहट्टमपि पूर्वे च उपपीठाख्यकी स्मृतः॥
सौमारपीठं देवेशि चण्डदिक्षु सीमनि।
प्रकारे श्रीपुरपीठस्य चाकामिति स्मृतं भवेत्॥
अष्टाध्यायक' पीठं चतुष्कार्य मपीठकम्।
चतुर्विंशमायुत' चाद्भुविद्ये न विद्यते॥
तीर्थकोटिसमायुक्तं किन्तु भद्रपीठकम्।
यत्र कामेश्वरं लिङ्गमादिपीठं तदापरम्॥
कालहेतुश्च देवेश यत्र चक्रं हरो हरः।
पीठं विराजते च प्रभाव' तदनन्तरम्॥
मध्यस्य महापीठ' तत्र नातस्वदरम्।
कुरुक्षेत्रं महापुण्या दक्षिणस्य मनन्ततः॥
कुमारस्य महाक्षेत्रं शिवयुक्त पर्वतः।
पश्चिमे पिनाकपादौ उत्तरे तु महाद्रिः॥
दक्षिणे चन्द्रामाया च श्रीहट्टपीठं वरानने।
त्रिंशत्पीठमविस्तीर्णमायाम्या शतयोजनम्॥
यत्र कामेश्वरी देवी योनिमुद्रास्वरूपिणी।
भूपीठपीठकं नाम यत्र वै मीनकेश्वरः॥
मध्यपीठं महापीठं यत्र कामेश्वरो हरः।
चतुर्भुज' महाक्षेत्रं' देवप्रपत्तनं तथा॥
मध्यदेश्य सर्वैव यत्र च तपटः स्थितः।
कुलषं मन्त्र तत्रैव यत्र मायासुता नदी॥
चण्डीश्वारण्यकं पुण्यं चतुर्थं तथा वरम्।
रूपात्मकं महारण्यं यत्र पातालशङ्करः॥
तस्याश्च नदी पूर्वे विश्वपुरस्य पश्चिमे।
दक्षिणे प्रथमं लिङ्ग' उत्तरे चण्डीपत्तनम्॥
एतन्मध्यगतं पीठं चापाकारं मनोरमे।
चन्द्राहतं तथा वर्षं एकवर्षं' विभावयेत्॥
एकादशपताकासु पीठनामा तथा नव।
चतुर्थीरण्टी च प्रकारे त्रिकोण' पीठमुत्तमम्॥
प्रवरं पीठकं तत्र पीठलक्षणकेन च।
दीनास्याख्य महाक्षेत्रं' चन्द्रमाख्याख्यं तथा॥
इदञ्च परमं क्षेत्र' क्षेत्रमुत्तममिदं प्रिये।
मायारण्यकं क्षेत्र' हराण्यारण्यकं तथा॥
चन्द्रारण्यैव अर्णव शतारण्यकं परम्।
उत्तरे मध्ये च दक्षिणे मायावधि॥
पूर्वे तीर्थकूटस्य पश्चिमे श्रीपर्वतं प्रिये।
एतन्मध्यगतं पीठं पुष्पाख्यं नाम नामतः॥
पाशात् पाशान्तरं यावन्मध्य पश्चपदान्तरम्।
त्रिकटाक्षी च श्रवनं सौमारपीठ नायकम्॥
कामरूप' विजानीयात् पटलोचनपर्वतम्।
तत्पूर्वं तत्पूर्वं देव' नवमूल' विभक्तम्॥
पर्वदेवैर्नियुक्त' वेदिमध्ये प्रकीर्तितम्।
मध्यपीठं महापीठं यत्र कामेश्वरी भवेत्॥
तत्र पीठे हि देवेशि सत्र चन्द्रावती नदी।
श्मशानं महाक्षेत्रं सत्र रुद्रपदवम्॥
एकावर्क पर्व क्षेत्र' सत्र नाभाइनदरः।
नाममं' च सवर्ण सत्र विश्वे नरो हरः॥
नाटकारण्यकं क्षेत्र चन्द्रावाराण्यदा।
विष्णिका या दक्षिणतो तीर्थस्य महाचलम्॥"

(योगिनीतन्त्र, ५१ पटल)

'हे देवि! त्रेतायुगके पूर्ववर्ती सत्ययुगमें चण्डयाम नामक पुष्करीणका प्रादुर्भाव हुआ था।' इसके

१० राम, ११ रत, १२ रमण, १३ रतिनाथ, १४ रतिप्रिय, १५ रात्रिनाथ, १६ रमाकान्त, १७ रममाण, १८ निशाचर, १९ नन्दक, २० नन्दन, २१ नन्दी, २२ नन्दयिता, २३ पञ्चबाण, २४ रतिसख, २५ पुष्पधन्वा, २६ महाधनु, २७ भ्रामक, २८ भ्रमण, २९ भ्रममाण, ३० भ्रम, ३१ भ्रान्त, ३२ भ्रामक, ३३ भृङ्ग, ३४ भ्रान्तचार, ३५ भ्रमावह, ३६ मोहन, ३७ मोहक, ३८ मोह, ३९ मोहवर्धन, ४० मदन, ४१ मन्मथ, ४२ मातङ्ग, ४३ भृङ्गनायक, ४४ गायन, ४५ गीतिज, ४६ नर्तक, ४७ खेलक, ४८ उन्मत्तोन्मत्तक, ४९ विलास और ५० लोभवर्धन।

निम्नलिखित कई स्थान कन्दर्पके माने गये हैं,—

"पादे गुल्फे तथोरौ च भगे नाभौ कुचे हृदि।
कक्षे कण्ठे च ओष्ठे च गण्डे नेत्रे श्रुतावपि॥
ललाटे शीर्षकेशेषु कामस्थानं तिथिक्रमात्।
ऊर्ध्वे पुंसां स्त्रिया वामे शुक्लकृष्णे विपर्ययः॥
पादाङ्गुष्ठे प्रतिपदि द्वितीयायाञ्च गुल्फके।
ऊरुदेशे तृतीयायां चतुर्थ्यां भगदेशतः॥
नाभिस्थाने च पञ्चम्यां षष्ठ्यान्तु कुचमण्डले।
सप्तम्यां हृदये चैव अष्टम्यां कक्षदेशतः॥
नवम्यां कण्ठदेशे च दशम्यां ओष्ठदेशतः।
एकादश्यां गण्डदेशे द्वादश्यां नयने तथा॥
श्रवणे च त्रयोदश्यां चतुर्दश्यां ललाटके।
पौर्णमास्यां शिरःस्थाने ज्ञातव्य इति क्रमात्॥"

(स्मरदीपिका)

पदद्वय, गुल्फद्वय, ऊरुद्वय, भग, नाभि, कुचद्वय, हृदय, कक्ष, कण्ठ, ओष्ठ, गण्ड, चक्षु, कर्ण, ललाट, मस्तक और केशमें तिथिके अनुसार कामदेवका अधिष्ठान होता है। शुक्लपक्षमें पुरुषके दक्षिण अङ्ग एवं स्त्रीके वाम अङ्ग और कृष्णपक्षमें पुरुषके वाम अङ्ग तथा स्त्रीके दक्षिण अङ्गके क्रमानुसार उक्त स्थान समूहका विपर्यय पड़ता है। प्रतिपद् तिथिको पदके अङ्गुष्ठ, द्वितीयाको गुल्फ, तृतीयाको ऊरुदेश, चतुर्थीको भग, पञ्चमीको नाभि, षष्ठीको कुचमण्डल, सप्तमीको हृदय, अष्टमीको कक्ष, नवमीको कण्ठ, दशमीको ओष्ठ, एकादशीको गण्ड, द्वादशीको चक्षु, त्रयोदशीको कर्ण, चतुर्दशीको ललाट और पूर्णिमाको मस्तकमें कामदेव रहता है।

कामदेवको ध्येयमूर्ति इस प्रकार कही है,—

"कामदेवस्तु कर्त्तव्यः शङ्खपद्मविभूषणः।
चापबाणकरश्चैव मदाकुञ्चितलोचनः॥
रतिः प्रीतिस्तथा शक्तिर्मदशक्तिस्तथोज्ज्वला।
चतस्रस्तस्य कर्त्तव्याः पत्न्यो रूपमनोहराः॥
चत्वारश्च करास्तस्य कार्या भार्यास्तनोपगाः।
केतुश्च मकरः कार्यः पञ्चबाणमुखो महान्॥"

(हेमाद्रिधृत विष्णुधर्मोत्तर)

कामदेव शङ्ख, पद्म, धनुः और बाण धारण करते हैं। मदके कारण चक्षु ईषत् कुञ्चित हैं। केतु मकर है। पञ्च बाण हैं। रति, प्रीति, शक्ति और उज्ज्वला नाम्नी चार स्त्री हैं।

वेदमें कामकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कहा है,—

"कामो जज्ञे प्रथमो नैनं देवा आपुः।" (अथर्व ९।२।१९)

सर्वप्रथम मनके ऊपर कामका आविर्भाव आता है। अतएव उसीसे पहले उत्पत्तिका कारण निकला है।

कालिकापुराणमें भी लिखा है,—

ब्रह्माने दक्ष प्रभृति मानस पुत्रोंकी सृष्टि की थी। उसी समय सन्ध्या नाम्नी एक रूपवती कन्याभी उत्पन्न हुयी। उस मनोरम कन्याको देख ब्रह्माके हृदयमें चिन्ता उठी—'यह जगत्‌का कौन कार्य करेगी।' इसीसे परम रमणीय मूर्ति कामदेवका जन्म हुआ। ब्रह्माने उन्हें जगत्‌के नरनारीसमूहको मुग्ध करनेके लिये आदेश दे पुष्पधनुः और पुष्पशर प्रदान किया। कामदेवने यह देखना चाहा कि मस पुष्पबाण द्वारा कार्य सिद्धि होगी या नहीं। इसीसे उन्होंने परीक्षाके लिये समीपस्थ ब्रह्मा, दक्षादि ऋषि और सन्ध्या पर बाणाघात किया। सभी सकल कामपीड़ित हो गये। उसी समय महादेव वहां आ पहुंचे। उन्होंने कन्याके प्रति ब्रह्माका कामभाव देख उपहास किया था। ब्रह्माने उस उपहाससे अत्यन्त लज्जित हो कामका वेग रोका। फिर उन्होंने कामको अत्यन्त क्रुद्ध हो अभिशाप दिया था—तू हरके कोपानलसे जल जावेगा। कामदेवने अकारण इस प्रकार अभिशप्त हो ब्रह्मासे अनुग्रहकी प्रार्थना की। उस समय ब्रह्माने भी कामदेवका वैसा अपराध न देख यह कह कर आश्वस्त

पीठ द्वापर युगमें आकर्षण और कलियुगमें कलिपाप-विनाशक कामाख्या पर्वत देख पड़ा। हे महेश्वरि! प्रत्येक वर्षमें तुम्हारे पीठ, उपपीठ, तीन महाक्षेत्र और तीन महारण्य विराजित हैं। फिर प्रत्येक पीठमें महादेव, चतुर्भुज विष्णु, गङ्गा और पार्वतीका अधिष्ठान है। प्रत्येक पीठ और प्रत्येक क्षेत्रमें एक एक पुण्यारण्य अवस्थित है।

'कलिकालमें स्वर्गसे दूरवर्ती स्थान मात्र पर तीर्थ-बुद्धि रहती है। किन्तु जहां भावनाकी सिद्धि पाती, वही भूमि तीर्थ मानी जाती है। प्रत्येक पीठमें धर्म और आचार पृथक् पृथक् है। देशभेदके अनुसार कुलका आचार भी पृथक् होता है। इसलिये प्रत्येक पीठका पूजन और मन्त्र स्वतन्त्र है। हे पार्वति! मर्त्त्यभूमिमें कीरपीठ, दाक्षिणात्य देशमें भद्रपीठ, पाश्चात्य देशमें जालन्धर और पूर्व दिक्में पूर्वपीठ है।

'ईशान और पूर्वभागमें कामरूप है। इसके वायु-कोणमें जालन्धर, उत्तरमें कोल्लापुर, महेन्द्रके किञ्चित् उत्तर ईशानदिक्में विहार और पूर्वमें श्रीहट्ट है। हे देवेश्वरि! अतःपर उपपीठका विवरण श्रवण करो। औड्रपीठ १८ योजन विस्तृत है। शकटाकार पीठ चतुष्कोण, चार द्वारयुक्त और वायुविम्ब चिह्नित है। सिन्धुभद्रक पीठमें दो कोटि तीर्थ हैं। फिर उस स्थानमें सोमेश्वरलिङ्ग अवस्थित है। विरज नामक क्षेत्र और एकाम्रक्षेत्रमें कामधेनु तथा चक्रेश्वर शिवका अवस्थान है। भास्कर नामक महाक्षेत्रमें मातङ्ग महादेव, पवित्र कुशस्थली, दन्तकवन और सुमन्तवन है। इस क्षेत्रके पूर्व शिवयूप, पश्चिम धेनु-कारण्य, उत्तर गयाशिरः और दक्षिण चन्द्रभागा तथा औड्रपीठ है। हे वरानने! इसका दैर्घ्य शत योजन और विस्तार तीस योजन है। यहां योनिमुद्रान्विता कामेश्वरी देवी, भुग्नेशपीठ, गौरीशंकर, धर्मपीठ, महापीठ, कामेश्वर शिव, अविमुक्त एवं कंसप्रपतन क्षेत्र, ब्रह्मयूप, श्वेतवट, कुरुक्षेत्र, भागाख्या नदी, पवित्र पयोष्ण्याख्य, धर्मारण्य, कषायक नामक महारण्य तथा नानाप्रकारका अवस्थान है और जिसके पूर्व गण्डकी नदी, पश्चिम विन्ध्यपुर, दक्षिण ब्रह्मस्थिर एवं उत्तर कदम्बीवन है; इन्हींका मध्यवर्ती धनुषाकार पीठ एक तथा रसवर्ण है। यह पीठ त्रिकोणाकार है। इसका दैर्घ्य १०८ योजन और विस्तार ८८ योजन है। इस पीठस्थलमें भी महादेवका क्षेत्र है। यह क्षेत्र-त्रय और माधवारण्य, महादेवारण्य एवं मन्दारण्य अरण्यत्रय वर्त्तमान है। इस पीठके उत्तर महशैल, दक्षिण समुद्र, पूर्व उदयकूट और पश्चिम गोवर्द्धन है। इसीके मध्यवर्ती पीठका नाम पुण्यपीठ है। काम-रूपके मध्यस्थलमें षट्कोण, नवव्यूह और त्रिमण्डलयुक्त पवित्रतम एकवेदी है। फिर वहां दश पर्वत अव-स्थित हैं। मध्यपीठ नामक महापीठस्थलमें कामेश्वर महादेव और अम्बावती नदी है। कन्याश्रम नामक महाक्षेत्रमें रुद्रदेवका पदद्वय है। एकाम्रक्षेत्रमें नागाह्व-यदर हैं। मानसक्षेत्रमें विश्वेश्वर, नाटकारण्य और अम्बिकारण्यका अवस्थान है। गोतमके दक्षिण भागमें विशिष्टा और महावन है।

प्राचीन कामरूप प्रदेशके समस्त उत्तरांशका नाम सौमार है। योगिनीतन्त्रमें इस प्रकार चतुःसीमा निर्दिष्ट है,—

"पूर्वे स्वर्णनदी यावत् करतोया च पश्चिमे।
दक्षिणे मन्दशैलश्च उत्तरे विहगाचलः॥
[illegible] सौमाराख्य [illegible]।
[illegible] तथा [illegible]॥
अष्टकोणात्मकं सौमारं तत्र दिक्करवासिनी।
तस्मिन् वसति या देवी [illegible]॥
[illegible]॥
[illegible]॥
[illegible] दिक्करवासिनी।
[illegible]॥
[illegible]।
[illegible]॥
[illegible]।
[illegible]॥"

'सौमारकी चतुःसीमामें पूर्व स्वर्णनदी (वर्त्तमान सुवर्णश्री), पश्चिम करतोया, दक्षिण मन्दशैल और उत्तर विहगाश्रम है।

'अष्टकोण सौमार और दिक्करवासिनीके क्रममें

लिया कि वह फिर शरीर पायेगा और दक्षकी देहजात रति नाम्नी सुन्दरी रमणीको कामदेवकी पत्नी बना दिया। (कालिकापुराण १८०)

इधर सन्ध्या यह सोच अत्यन्त दुःखित हुयीं कि पिता तथा भ्राता उन्हें चाहते थे और अपना दूषित देह छोड़नेको तपस्या करने लगीं। कठोर तपस्यासे प्रीत हो भगवान्‌ने उनसे वर मांगनेको कहा। सन्ध्याने प्रथमतः अन्य कोई वर न मांग यही चाहा था कि प्राणी उपजते ही सकाम न हों। भगवान्‌ने उनको इस प्रार्थनाके अनुसार शैशव, कौमार, यौवन एवं वार्धक्य चार भागमें वयःक्रम बांट तृतीय भाग अर्थात् यौवनको कामोत्पत्तिके कालरूपमें निर्देश किया और कौमारका शेष समय भी उसीके भीतर लगा दिया। (कालिकापुराण १८ अ०) इसीसे प्राणियोंके उत्पन्न होते ही कामभाव प्रकाशित नहीं होता।

देव तारकासुरके उत्पीड़नसे अत्यन्त व्यतिव्यस्त हुये थे। उसी समय इन्द्रके आदेशसे कामदेवको शिवका ध्यान भङ्ग करने जाना और कुछ दिनके लिये अङ्गहीन होना पड़ा। शिवपुराणमें इसकी आख्यायिका इस प्रकार वर्णित है,—"महादेवी सतीने दक्षके यज्ञमें देह छोड़ा था। उसके पीछे महादेव कठोर जितेन्द्रियता अवलम्बनपूर्वक महायोगमें निमग्न हुये। उसी समय तारकासुरने देवसमूहके प्रति अत्यन्त उत्पीड़न आरम्भ किया। देव व्यतिव्यस्त हो उसके वधसाधनका उपाय सोचने लगे। इन्द्रादि देवगणने स्वयं कोई उपाय स्थिर न कर सकने पर ब्रह्मासे परामर्श मांगा था। ब्रह्माने उनसे कहा,—'महादेवके वीर्य व्यतीत तारकासुरका निधन न होगा। महेश्वरी सती हिमालयके गृहमें पुनर्जन्म ले महादेवकी शुश्रूषाको सर्वदा उनके निकट रही हैं। इस समय महादेवका योग तोड़ उनको पार्वतीके प्रति अभिलाषी कर सकने पर महादेवके औरससे महावीर कुमार जन्मग्रहण कर तारकासुरका निधनसाधन करेंगे। देवगणने उसी परामर्शके अनुसार कामदेवको महादेवका ध्यान छुड़ाने पर नियुक्त किया था। आज्ञा पाते ही कामदेव रति एवं वसन्तके साथ अभियान पूर्वक महादेवका योग तोड़ने पहुंचे और पुष्पधनुः पर पुष्पबाण चढ़ा महादेवको लक्ष्यकर फेंकने लगे। महादेवने कन्दर्पबाणसे आहत होते ही क्रोधके साथ उन पर अपनी दृष्टि डाली थी। फिर महादेवके ललाटसे प्रदीप्त अग्निशिखाने निकल कन्दर्पमूर्तिको बिलकुल जला दिया।" दूसरे जन्ममें कामदेव ही श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्नरूपसे आविर्भूत हुये। हरिवंशमें कामदेवके जन्मका विवरण इस प्रकार वर्णित है,—"श्रीकृष्णके औरस और रुक्मिणीके गर्भसे प्रद्युम्नका जन्म हुवा था। जन्मके पीछे सातवीं रातको शम्बरासुरने मायाके बल उन्हें सूतिकागृहसे हरण कर स्वीय पत्नी मायावतीको दे दिया। मायावतीके कोई शिशु न था। वह प्रद्युम्नको पा कर अत्यन्त आह्लादित हुयीं। फिर शिशुके अङ्गप्रत्यङ्ग आदि विशेष रूपसे लक्ष्य कर मायावतीने समझा कि वही शिशु उनका प्रियतम स्वामी कन्दर्प था। उनको यह भी स्मरण आया कि हरके कोपानलसे जलनेके पीछे देवगणने वैसे ही उन्हें पुनर्वार पतिको प्राप्तिका विषय बतला दिया था। सुतरां वह मातृवत् शिशुका पालन न कर सकीं। उन्होंने धात्रीके हाथ उसे सौंपा था। फिर रसायन आदिके प्रयोगसे सत्वर वर्धित कर मायावती उससे मिल गयीं। प्रद्युम्न भी वैष्णव बलसे शम्बरासुरको मार पत्नीके साथ पितृगृह लौट आये। कहनेको शम्बरासुरकी पत्नी होते भी वस्तुतः मायावती उसकी पत्नी न थीं। कन्दर्पको पत्नी रति पुनर्वार पतिप्राप्तिको कामनासे देवगणके आदेशानुसार मायाबलसे शम्बरासुरकी पत्नी बन कर रहती थीं।" (हरिवंश १६३ अ०)

महाभारत और विष्णुपुराणमें कामदेव धर्मके पुत्र माने गये हैं,—

"श्रद्धा कामं चला दर्पं नियमं धृतिरात्मजम् ।
सन्तोषञ्च तथा तुष्टिर्लोभं पुष्टिरसूयत ॥
मेधा श्रुतं क्रिया दण्डं नयं विनयमेव च ।
बोधं बुद्धिस्तथा लज्जा विनयं वपुरात्मजम् ॥
व्यवसायं प्रजज्ञे वै क्षेमं शान्तिरसूयत ।
सुखं सिद्धिर्यशः कीर्तिरित्येते धर्मसूनवः ॥"

(हरिवंश, १म ३६-३८)

तेरह धर्मपत्नियोंके मध्य श्रद्धाने काम, चलाने दर्प,

महादेवी अवस्थान करती हैं। फिर उक्त स्थलमें देवीके अनुग्रहसे पीठादि भी अवस्थित हैं। अतःपर नवपीठका विषय कथित है। दिक्करवासिनीमें अजय नामक प्रत्यक्ष पीठ और दिक्करके वायुकोणमें दुर्लभ नीलपीठ है। इसी स्थान पर योनिमुद्रारूपिणी कामेश्वरी देवीका अवस्थान है। आदित्यशंकरको अवस्थितिके स्थानका नाम महाक्षेत्र पारिजात और अपर पीठका नाम कौथेयपुर, अमरकण्टक, आरण्य, आश्रित, गौतमारण्य और शिवनाथारण्य है।'

सौमारके अंशविशेषका नाम सौमारपीठ है। यह आसामके उत्तर-पूर्व भागमें अवस्थित है। इसकी चतुःसीमा इस प्रकार निर्धारित है,—

"अरण्यं शिवनाथस्य यत्तु पीठावधि प्रिये।
पूर्वे कौरशिलारण्यं पश्चिमे स्वर्णदी यथा॥
दक्षिणे ब्रह्मपुत्रस्तु उत्तरे मानसं सरः।
एतन्मध्यगतं पीठं मुक्तिमुक्तिप्रदायकम्॥
सौमाराख्यं महापीठं षट्कोणञ्च त्रिमण्डलम्।
सहस्रयोजनव्यासं कथ्यतायच पञ्चमम्॥" (योगिनीतन्त्र, २।६)

हे प्रिये! इस शिवनाथके अरण्यकी चतुःसीमाका निर्देश श्रवण करो। इसके पूर्व कौरशिलारण्य, पश्चिम स्वर्णदी, दक्षिण ब्रह्मपुत्र और उत्तर मानससरोवर है। इसीके मध्यस्थलमें मुक्तिमुक्तिप्रद षट्कोण और त्रिमण्डल सौमार नामक महापीठ है। इस पीठका परिमाण सहस्र योजन व्यास है। इसको पञ्चम कथ्यतान्त्र भी कहते हैं।

आसामकी बुरञ्जीके मतानुसार भैरवीसे दिक्राई नदी तक सौमारपीठ है।

श्रीपीठकी चतुःसीमा इस प्रकार है,—

"वाराही प्रथमं पीठं द्वितीयं कोलपीठकम्।
कुमारक्षेत्रं प्रथमं द्वितीयं नन्दनाह्वयम्॥
तृतीयं गायत्रीक्षेत्रं मातङ्गं प्रथमं वनम्।
सिद्धारण्यं द्वितीयञ्च तृतीयं विपुलं वनम्॥
कोटिकोटियुतं लिङ्गं कोटिकोटिगणैर्युतम्।
पञ्चतीर्थं भवेत् पूर्वे पश्चिमे अमदा नदी॥
पद्माख्या दक्षिणे चैव उत्तरे कुसुमकाननम्।
एतन्मध्यगतं देवि श्रीपीठं नाम नामतः॥"

(योगिनीतन्त्र, २।१ पटल)

प्रथम पीठका नाम वाराही और द्वितीयका नाम कोलपीठ है। प्रथम क्षेत्रको कुमार क्षेत्र, द्वितीयको नन्दन और तृतीयको गायत्री क्षेत्र कहते हैं। प्रथम वन मातङ्ग, द्वितीय सिद्धारण्य और तृतीय विपुलवन कहलाता है। यह वन कोटि कोटि लिङ्गयुक्त और कोटि कोटि गणाधिष्ठित है। पूर्व सीमापर पञ्चतीर्थ, पश्चिम अमदा नदी, दक्षिण पद्मा और उत्तर कुसुमका वन है। इसीके मध्यस्थलमें श्रीपीठ अवस्थित है।

रत्नपीठका वर्तमान नाम कोचविहार है। सम्भवतः कामतेश्वरी देवीके यहां रहनेसे रत्नपीठ नाम पड़ा है। आसामकी बुरञ्जीके मतमें स्वर्णकोषी नदीसे रूपिका नदी तक रत्नपीठ है। योगिनीतन्त्रमें लिखा है,—

"रत्नपीठे तु वक्ष्यन्ते लौहित्या चैव चतुर्॥"

आसामकी बुरञ्जीके मतमें करतोया और स्वर्णकोषी नदीका मध्यवर्तीस्थान कामपीठ है। किन्तु योगिनीतन्त्रमें कामपीठका अपर नाम योगिनीपीठ लिखा है। योगिनीपीठका वर्तमान नाम कामाख्या है। कामगिरिके ऊपर अवस्थित होनेसे उक्त पीठका नाम कामपीठ पड़ा होगा। यथा,—

"योनिपीठं कामगिरौ कामाख्या तत्र देवता।" (तन्त्रचूडामणि, पीठमाला)

कामाख्या देवी।

कामाख्यासे कुछ दूर योगिनीतन्त्रोक्त उग्रपीठ और मत्स्यपीठ है। यथा,—

"मत्स्यध्वजञ्च पीठं उग्रताराधिदेवतम्।
तत् पीठं त्रिविधं पीठं पुनं धाम महेश्वरि॥
मनोभवगुहामध्ये देवीशिखरसंयुतम्।
तन्मध्यमिति ख्यातं पीठं परमदुर्लभम्॥
त्रिविक्रमो महदेवा देवता भुवनेश्वरी।
नित्यक्लिन्ना वा कामी कारदैत्यविनाशिनी॥"

(योगिनीतन्त्र, १।११)

बुरञ्जीमें स्वर्णपीठ नामक एक पीठका उल्लेख है। किन्तु कालिकापुराण और योगिनीतन्त्रमें स्वर्णपीठका नाम नहीं मिलता। कालिदासने अपने रघुवंशमें इसीको "हेमपीठ" लिखा है,—

"[illegible]
[illegible] ८१
[illegible]
[illegible] ८२ (रघुवंश ४र्थ सर्ग)

धृतिसे नियम, तुष्टिसे सन्तोष, पुष्टिसे लोभ, मेधासे श्रुत, क्रियासे दण्ड, नय एवं विनय, वपुसे व्यवसाय, शान्तिसे क्षेम, सिद्धिसे सुख और कीर्तिसे यशः नामक पुत्र प्रसव किया। यह सभी धर्मके पुत्र कहलाते हैं।

भागवतके मतसे कामदेव ब्रह्माके पुत्र हैं,—

"हृदि कामो भ्रुवः क्रोधो लोभश्चाधरदच्छदात्।"

ब्रह्माके हृदयसे काम, भ्रूद्वयसे क्रोध और अधरोष्ठसे लोभकी उत्पत्ति हुयी है।

भागवतके ही अन्यस्थलमें फिर कामदेवको सङ्कल्पका पुत्र कहा है,—

"सङ्कल्पायास्तु सङ्कल्पः कामः सङ्कल्पजः स्मृतः।" (भागवत ६।६।१०)

ब्रह्माकी कन्या सङ्कल्पाके पुत्र सङ्कल्प हैं। सङ्कल्पसे ही कामकी उत्पत्ति हुयी है।

यजुर्वेदमें भी कामका उल्लेख मिलता है। उसमें कामको ही दाता और ग्रहीता माना है,—

"कोदात् कस्मा अदात् कामोदात् कामायादात्।
कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत्ते ॥" (शुक्ल यजुः ७।४८)

यह प्रश्न होने पर कि—किसने दान किया और किसको दान दिया है, उत्तर होगा कि कामने दान किया और कामको ही दान दिया है। क्योंकि काम ही दाता और काम ही प्रतिग्रहीता है। अतएव हे काम! यह द्रव्य तुम्हारा ही है।

२ गोपकपुरीके एक राजा कदम्बराज। इनकी महिषीका नाम कमलादेवी था। यह विख्यात वीर थे। इन्होंने बाहुके बल मलय, कोङ्कण और सह्याद्रि जीता था। शिलालेखके अनुसार कामदेवने ११८१ ई० से १२०४ ई० तक राजत्व किया। ३ भट्टनारायणके पुत्र। महनारायण देखो। ४ परमेश्वर। ५ महादेव। ६ कोई कवि। ७ कोई राजा। इनकी राजधानी जयन्तीपुरमें थी। यह "राघवपाण्डवीय" प्रणेता कविराज नामक कविके प्रतिपालक थे। ८ प्रायश्चित्त-पद्धति नामक स्मृतिग्रन्थके प्रणेता।

९ "मतुल्यसुधावली" प्रणेता रघुनाथके प्रतिपालक।

१० "चतुर्वर्गचिन्तामणि" प्रणेता हेमाद्रिके पिता। इनके पिताका नाम वासुदेव और पितामहका नाम वामन था।

११ कोई प्राचीन ज्योतिर्वित्।

१२ "कर्मप्रदीपिका" "पारस्करपद्धति" "पारस्करगृह्यपरिशिष्टपद्धति" प्रभृति ग्रंथ बनानेवाले। इनके पिताका नाम गोपाल था।

कामदेव कविवल्लभ—चण्डीके एक प्राचीन टीकाकार।

कामदेवघृत (सं० क्ली०) घृतविशेष, एक घी। अश्वगन्धा १०० पल, गोक्षुर ५० पल और शतावरी, भूमिकुष्माण्ड, शालपर्णी, बला, गुलेचीन, अश्वत्थकी शुङ्गा, पद्मबीज, पुनर्नवा, गाम्भारीफल तथा माषबीज प्रत्येक दश दश पल २५६ शरावक जलमें पका कर ६४ शरावक जल शेष रहनेसे उतार कर छान लेना चाहिये। फिर पुण्ड्रकेक्षुरस १६ शरावक, दुग्ध १६ शरावक, और जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवन्ती, मधुक, ऋद्धि, वृद्धि, द्राक्षा, पद्मकाष्ठ, कुष्ठ, पिप्पली रक्तचन्दन, बालक, नागकेशर, शुकशिम्बीबीज, नीलोत्पल, श्यामा तथा अनन्तामूलका कल्क दो-दो तोला एवं शर्करा २ पल डाल क्वाथमें डाल यह घृत यथारीति पकाते और बनाते हैं। इसको व्यवहार करनेसे रक्तपित्त, क्षत, कामला, वातरक्त, हलीमक, पाण्डु, विवर्णता, स्वरभेद, मूत्रकृच्छ्र, अङ्गदाह और पार्श्वशूल आदि रोग निवारित होते हैं। (चक्रदत्त)

कामदेव मीमांसक (दीक्षित)—'प्रायश्चित्तपद्धतिके प्रणेता।

कामदोही (सं० त्रि०) कामं दोग्धि, काम-दुह-णिनि। अभीष्टप्रद, मुराद पूरी करनेवाला।

कामधर (सं० पु०) कामं इति संज्ञां धरति धारयति वा, काम-धृ-अच्। कामरूपदेशीय महाभद्र नामक पर्वतस्थित सरोवरविशेष, एक तालाब। यह सरोवर एक तीर्थ माना गया है। इसमें स्नान और जलपान करने पर मनुदाय पापसे छूट मुक्ति पाते और शिवलोक जाते हैं। (कालिकापुराण)

कामधरण (सं० क्ली०) अभिलाषप्राप्ति, मुरादका हसूल।

कामधेनु (सं० स्त्री०) कामप्रतिपादिका धेनुः

फिर कामरूपेश्वर अन्य भूपालोंके आक्रमणसे भयः-चकित एवं भग्नमस्तक सब हाथी ले कर दिग्विजयी रघुके शरणापन्न हुये और स्वर्णपीठके अधिदेवता स्वरूप उनके चरणकमल पर रत्नरूप पुष्पोपहार प्रदान किये।

प्राचीनकी मुसल्मानोंके मतमें कपिला या रूपही नदीसे भैरवी या भरली नदी तक स्वर्णपीठ है।

कालिकापुराणके मतानुसार कामदेवको महादेवके क्रोधानलसे भस्मीभूत होनेके पीछे इसी स्थानमें महादेवकी कृपासे स्वरूप प्राप्त हुआ था। इसीसे इसका नाम कामरूप पड़ गया। (कालिकापुराण, २ अ०) पहले ब्रह्माने यहीं रह नक्षत्रोंकी सृष्टि की थी। इसीसे कामरूपका प्राचीन नाम प्राग्ज्योतिष है।

"अत्रैव हि स्थितो ब्रह्मा प्राङ्नक्षत्रं ससर्ज ह।
ततः प्राग्ज्योतिषाख्येयं पुरी शक्रपुरी समा॥"

(कालिकापुराण, ३८ अ०)

कामरूप अति प्राचीन तीर्थ है, यह पहले ही लिख चुके हैं। कालिकापुराणमें कामरूपतीर्थका विवरण इस प्रकार लिखा है,—

'पूर्वकालको महापीठ कामरूपकी नदीमें नहा, जल पी और यथाचार देवता पूज अनेक लोग स्वर्ग जाते थे। फिर किसीने निर्वाणमुक्ति और किसीने शिवत्वको प्राप्त किया। पार्वतीके भयसे यमराज इन लोगोंमें किसीको न तो स्वर्ग जानेसे रोक सके और न अपने पर ले जा सके। प्रथमतः उन्होंने कई बार यमदूतोंको भेजा। किन्तु शिवके दूतोंने यमदूतोंको लोगोंके निकट जाने न दिया। सुतरां यमराजका कर्मकाण्ड एक प्रकार बन्द हो गया। उन्होंने फिर विधाताके निकट पहुंच कर कहा,—हे विधाता! मनुष्य कामरूपमें नहा, जल पी और देवता आदि पूज स्वर्गमें पहुंच कामाख्यादेवी या शिवके पार्श्वचर हो जाते हैं। वहां अपना अधिकार न रहनेसे हम उन्हें किसी प्रकार बाधा नहीं पहुंचा सकते। इसीसे हमारा काम बन्द हो गया है। अब इस सम्बन्धमें किसी उचित उपायका अवलम्बन बहुत आवश्यक है। पितामह ब्रह्मा यह कथा सुन यमको साथ ले विष्णुके निकट पहुंचे और उन्होंने उक्त समस्त कथा विष्णुसे कहने लगे। विष्णु भी सब बातें सुन यम और ब्रह्मा दोनोंको साथ ले शिवके निकट उपस्थित हुये। महादेवने सत्कारपूर्वक अभ्यर्थना कर उनसे आनेका कारण पूछा था। विष्णुने कहा,—कामरूप समस्त देवता, सकल तीर्थ और सकल क्षेत्र द्वारा परिवृत है। इसकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थान दूसरा कोई नहीं। सुतरां इस पीठमें मरनेसे सबको स्वर्ग या आपका पार्श्वचरत्व मिलता है। फिर वहांके लोगों पर यमराजका कोई अधिकार नहीं रहता। यमका भय छूट जानेसे इस पीठका नियम भी बिगड़ सकता है। इसलिये कोई ऐसा उपाय करना चाहिये, जिससे यमका अधिकार पूर्ववत् अक्षुण्ण रहे।

'महादेवने विष्णुवाक्य पालन करने पर श्रीहत हो उन्हें विदा किया। फिर महादेव अपने गणोंके साथ कामरूपमें आ पहुंचे। कामरूपमें आते ही उन्होंने देवी उग्रतारा और अपने गणोंसे कहा,—'सत्वर यहांसे सब लोगोंको भगा दो।'

'शिवकी आज्ञा पाते ही महादेवी उग्रतारा और गणसमूहने समुदाय लोगोंको भगाना आरम्भ किया। क्रमशः उन्होंने कामरूपके अन्यान्य लोगोंको दूरीभूत कर वशिष्ठको निकालनेकी चेष्टा की थी। इससे वशिष्ठने बहुत क्रुद्ध हो उग्रताराको अभिशाप दिया,—'हे वामे! हम मुनि हैं। फिर भी तुम हमें भगानेके लिये चेष्टा कर रही हो। इसलिये तुम गणोंके साथ वाम अर्थात् वेदविरुद्ध भावसे पूजित होगी। तुम्हारे प्रमथगण मदमत्त विरागी म्लेच्छोंकी भांति घूमते फिरते हैं। इसलिये वह म्लेच्छरूपसे इस कामरूपमें वास करेंगे। हम शम-दम-गुणविशिष्ट, वेदपारग और तपोनिरत मुनि हैं। फिर भी महादेवने शिवं-कराभूत हो म्लेच्छकी भांति हमें भगानेको कहा है। इसलिये वह भी म्लेच्छकी भांति भस्म और अस्थि धारण कर इस कामरूपमें रहेंगे। फिर यह कामरूप-पीठ यथाविधि म्लेच्छपरिवृत होगा। जबतक स्वयं विष्णु यहां न आवेंगे, तब तक इसमें यही भाव दिखायेंगे। कामरूपके माहात्म्यप्रकाशक समस्त तन्त्र विरत हो जायेंगे। फिर भी वह अन्तिम विरलतापर

मध्यपदलोपी कर्मधा०। गो विशेष, एक गाय। इस गायसे इच्छानुसार जो वस्तु मांगते, वही पाते हैं।

अग्निपुराणमें कामधेनुका दान महापुण्य माना गया है। दानविधि पर भी उसमें इस प्रकार लिखा है,—'कार्तिक मासको शुक्ल एकादशीको उपवास कर चार दिन तक लक्ष्मीके साथ नारायणकी पूजा करना पड़ती है। फिर पञ्चम दिन प्रातःकाल स्नानकर शुक्ल वस्त्र, शुक्ल माल्य और शुक्ल अनुलेपन धारण करते हैं। दानकी भूमिको मृगके चर्म, तिलके प्रस्थ और स्वर्ण आदिसे सजा सवत्सा कामधेनु वहां लायी जाती है। धेनुके शृङ्ग और खुर स्वर्णसे मढ़ा समस्त गात्रमें शुक्ल वस्त्र लपेट देते हैं। अनन्तर यथाविधि मन्त्रादिसे गायकी पूजा नारायणके उद्देश दान होता है।'

२ दानके लिये स्वर्णनिर्मित धेनुविशेष, देनेको सोनेकी गाय।

दान-सागरमें स्वर्णनिर्मित कामधेनुके दानका विधि लिखा है,—'शक्तिके अनुसार तीन पलसे अधिक सहस्रपल तक स्वर्ण द्वारा सवत्सा कामधेनु बना रत्नसे विभूषित करना चाहिये। सहस्र पल उत्कृष्ट, पांच सौ पल मध्यम और ढाई सौ पल सुवर्ण अधम विधि है। अत्यन्त असमर्थके लिये तीन पलसे अधिक सुवर्णका भी विधान है। शुभाशुभ कथित समयके मध्य किसी दिन दानका काल निर्दिष्ट कर उसके पूर्व दिन गुरु, पुरोहित, यजमान और जापक चारो लोग हविष्य-भोजनादि कर निवेदन एवं सङ्कल्प कर रखते हैं। दूसरे दिन यजमानको गोविन्दादिकी आराधना, मधुपर्कका दान और ब्राह्मणोंकी अनुमतिका ग्रहण करना चाहिये। उसी दिन गुरु, पुरोहित और जापकको उपवास करना पड़ता है। उसके परदिन अग्निस्थापनादि कार्य समापनपूर्वक पुरोहित प्रधान वेदीके मध्यस्थलमें लिखित चक्र पर मृगचर्म एवं गुड़प्रस्थ यथाक्रम स्थापन कर उसके ऊपर कौषेय वस्त्रद्वारा आच्छादित सवत्सा धेनुको खड़ा करते हैं। धेनुके पार्श्वदेशमें आठ पूर्ण कुम्भ, अष्टादश प्रकार धान्य, नानाविध फल, रत्न, इक्षुदण्ड, कांस्यपात्र, पट्टवस्त्र, ताम्रनिर्मित दोहनपात्र, प्रदीप, आतपत्र तथा पादुकाद्वय और धेनुके सम्मुखभागमें मधुरादि षड्रस, हरिद्रा, पुष्प आदि विविध पूजा द्रव्य जीरक, धान्यक एवं शर्करा रखते हैं। फिर मङ्गलगीत वाद्य तथा स्तुतिपाठके साथ यज्ञकुण्डके समीपस्थ चार कुम्भोंके जल द्वारा यजमानको स्नान कराया जाता है। स्नानके अन्तमें यजमान शुक्ल वस्त्र परिधान कर शुक्ल माल्य एवं विविध अलङ्कारधारणपूर्वक कुशहस्तमें पुष्पाञ्जलि ले कामधेनुको प्रदक्षिणपूर्वक पूज गुरुको प्रदान करता है। परिशेषमें गुरु पुरोहित और याचकको दक्षिणा तथा अतिथि ब्राह्मणोंको अर्थ दे दानका व्रत समापन करना पड़ता है।'

३ स्वर्गधेनु सुरभिकी एक दोहित्री धेनु। इसकी उत्पत्तिका विवरण इस प्रकार लिखा है,—'गोसमूहकी आदिप्रसूति सुरभि दक्षकी कन्या थीं। प्रजापति कश्यपके औरससे उनके गर्भमें रोहिणीका जन्म हुआ। रोहिणीने ही तपोनिधि शूरसेन नामक वसुके औरससे सर्वलक्षणसम्पन्ना कामधेनुको प्रसव किया था। कामधेनुका वर्ण श्वेत है। चतुर्वेद चतुष्पदस्वरूप हैं। चारो स्तनोंसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष निकला करते हैं। शिवके वाहन वृषने कामधेनुके गर्भसे ही जन्म लिया था। यौवनमें कामधेनुकी लावण्यश्री अधिकतर बढ़ी। इसीसे कोई कामुक वेताल उनको देख कामातुर हुआ और स्वयं वृषकी मूर्ति बना उनके साथ भोग किया। इस सङ्गमके फलसे एक विशाल काय वृष निकला था। उसने अपनी तपस्याके बल महादेवका वाहनत्व लाभ किया।'

(कालिकापुराण ९१ अ०)

४ कामधेनुकी कुलजाता नन्दिनी [वा] शबला नाम्नी वशिष्ठकी एक धेनु। कामधेनुके लिये ही वशिष्ठके साथ विश्वामित्रका भयंकर विवाद उठा था। उसी विवादके फलसे विश्वामित्रने क्षत्रिय जाति होते भी ब्रह्मर्षि बननेका लिये उद्योग किया। रामायणमें लिखा है,—'किसी समय राजा विश्वामित्रने बहु सैन्य एवं अमात्य परिवार प्रभृतिके साथ वशिष्ठ ऋषिके निकट आतिथ्य ग्रहण किया था। वशिष्ठने कामधेनुसे सकल उत्तमोत्तम प्रचुर दुग्धादि से उनका सत्कार उठाया।

कामरूपतन्त्र समझेंगे, उन्हें यथाकाल सम्पूर्ण फल मिलेंगे।

'यह अभिशाप दे वशिष्ठके अन्तर्हित होते ही कामरूपके प्रमथगण म्लेच्छ बन गये। उग्रतारा वामा हुयीं। महादेव म्लेच्छवत् फिरने लगे। कामरूप-माहात्म्य-प्रकाशक सकल तन्त्र विरलप्रचार हुये। सुतरां अल्पकालके मध्य कामरूप वेदमन्त्रहीन और चतुर्वर्णशून्य बन गया। फिर कामरूपपीठमें विष्णुका आगमन हुवा। इससे कामरूपका शाप छूट गया। फिर वह सम्पूर्ण फल देने लगा। किन्तु देवता और मनुष्य पूर्ववत् उसका माहात्म्य समझ न सके। उसी समय ब्रह्माने सब कुण्ड और नदी छिपानेके लिये शान्तनुपत्नी अमोघाके गर्भसे एक जलमय पुत्र उत्पादन किया था। उस पुत्रने परशुराम* द्वारा अभ्यग्र भावसे अवतारित हो समुदाय कामरूपको जलमें डुबा दिया। सुतरां अन्यान्य तीर्थ गुप्त हो गये।

'जो अन्य किसी तीर्थका विषय न समझ केवल ब्रह्मपुत्रका ही अस्तित्व जानते और उसमें नहाते हैं, वह केवल मात्र ब्रह्मपुत्रके स्नानसे ही सकल फल पाते हैं। फिर जो ब्रह्मपुत्रमें समस्त तीर्थोंका गुप्त भाव समझ कर नहाते हैं वे लोग समस्त तीर्थोंके स्नानका फललाभ करते हैं।' (कालिकापुराण ८१ अ०)

उक्त विवरणके पाठसे समझते हैं कि किसी समय कामरूपमें बहुत तीर्थ थे। वास्तविक आज भी कामरूपके नानास्थानोंमें पर्यटन करनेसे देखते हैं कि कामरूपके अनेक तीर्थ और अनेक पवित्र स्थान ब्रह्मपुत्रके गर्भमें दबे हैं। ब्रह्मपुत्र कामरूपके प्राचीन गौरवके साथ ही हिन्दुओंकी सकल प्राचीन कीर्तियां भी खा गया है। योगिनीतन्त्रमें लिखा है,—

"देवीक्षेत्रं कामरूपं विद्यतेऽन्यं न तत्समम्।
अन्यत्र विरला देवी कामरूपे गृहे गृहे॥"

कामरूप देवीक्षेत्र है। ऐसा स्थान दूसरा देख नहीं पड़ता। अन्यत्र देवीका दर्शनलाभ सुकठिन है। किन्तु कामरूपमें घर घर देवी विराजती हैं।

योगिनीतन्त्रके पाठसे भी कामरूप तीर्थका ऐसा ही परिचय मिलता है,—'महापीठ कामरूप अति गुह्य तीर्थ है। यहां महादेव पार्वतीके साथ नियत अवस्थान करते हैं। इस पीठमें शत नदी और कोटि-लिङ्ग अवस्थित हैं। वायुकूटकी अन्तिम सीमा पर चतुर्हस्त परिमित वायुरूपी चन्द्रका अवस्थान है। वायुगिरिकी पूर्व ओर चन्द्रकूट शैल, मध्यभागमें गोदन्त और चन्द्रशैलके मध्यस्थलमें इन्द्रशैलसे कुछ दक्षिण एवं चन्द्रशैलके कुछ उत्तर चन्द्रकुण्ड नामक सरोवर है। इस सरोवरके दक्षिणदिक्‌भागमें चार धनु परिमित मानसतीर्थ है। मानसकी दक्षिणदिक् २८ धनु परिमित अयुततीर्थ है। उसके दक्षिण भागमें दश धनु परिमित ऋणमोचन नामक सरोवर है। अश्वक्रान्त पर्वतके दक्षिण और अग्निकोणभागमें अश्वक्रान्ता नामक सरोवर भरा है। चन्द्रशैलसे गिरनेवाले निर्झरको जाह्नवी और इन्द्रशैलसे निकलनेवाले निर्झरको सरस्वती कहते हैं। वर्षाकाल अश्वक्रान्ता तीर्थमें दोनों निर्झर मिल जाते हैं। इस लिये यह प्रयागतीर्थके तुल्य माना जाता है।

'इन तीर्थोंमें स्नान, दान और पूजादि कार्य करनेसे विविध पुण्यफल मिलता है। विशेषतः प्रयागतीर्थके तुल्य माना जानेसे अश्वक्रान्ता तीर्थमें मस्तक मुण्डनादि कार्यका भी विधान है। इससे इहलोकमें यावज्जीव सुखसम्भोग और परलोकमें स्वर्गलाभ होता है।'

(योगिनीतन्त्र २। ९म पटल)

'अयुततीर्थकी किञ्चित् पश्चिम चार धनु-परिमित स्थानमें शिवकुण्ड है। इस तीर्थके पश्चिम मठके निकट ३४ धनु-परिमित स्थानमें ब्रह्मसरः तीर्थ है। इन्द्रकूटके उत्तर ८० धनु-परिमित रामक्षेत्र है। यहां भी एक कुण्ड विद्यमान है। रामतीर्थके ८ धनु दूरवर्ती पूर्वदिक्‌भागमें सीतातीर्थ है। सीतातीर्थके दक्षिण १० धनुपरिमित विजयतीर्थ है। यहां विजय नामक शिवलिङ्ग अवस्थित है। इसीके निकट योगतीर्थ है। यहां योगीश नामक शिवलिङ्ग अधि-

* वर्तमान आसामके उत्तरपूर्व प्रान्तवासियोंमें प्रवाद है कि परशुरामने अपने कुठारसे उक्त स्थानमें ब्रह्मपुत्रका अवतरण किया था। अद्यापि उसी स्थानका नाम "परिकुठार" है। यह एक पवित्र तीर्थ है। सदियाके उत्तरपूर्व ब्रह्मकुण्डके निकट परिकुठार अवस्थित है।

विश्वामित्र राजा होते भी उक्त समस्त द्रव्य देख चमत्कृत हुये। उन्होंने देखा कि कामधेनुसे कैसा असाधारण ऐश्वर्य भोग किया जा सकता था। इसीसे विश्वामित्रने शत सहस्र दुग्धवती गायोंके बदले वशिष्ठसे कामधेनु मांगी। किन्तु वशिष्ठने धेनु देना स्वीकार न किया। उस समय विश्वामित्रने हरण करनेके लिये सैन्यको आदेश दिया था। सैन्यने कामधेनुको खोल ले जानेका उद्योग किया। नन्दिनी यह सोच कर अत्यन्त दुःखित हुयीं कि वशिष्ठने उनको छोड़ दिया था। फिर वह अपने बलसे बहु सैन्यको मार वशिष्ठके निकट जा पहुंचीं। उन्होंने वशिष्ठसे पूछा था,—'आपने क्या हमें परित्याग किया है? नतुवा विश्वामित्रके सिपाही हमें क्यों लिये जाते हैं?' वशिष्ठने उत्तर दिया, 'नहीं हमने तुम्हें परित्याग नहीं किया है। तथा फिर हम कभी तुम्हें परित्याग न करेंगे। अतएव तुम शत शत महावीर सैन्य सृष्टि कर विश्वामित्रको पराजित करो।' वशिष्ठकी आज्ञा पाते ही नन्दिनीने योनिदेशसे यवन, पुरीषसे शक और रोमकूपसे म्लेच्छ, हारीत तथा किरात सैन्य निकाले थे। उन्होंने विश्वामित्रको समुदाय सैन्यका विनाश कर पराजित किया। विश्वामित्रके पुत्र इससे बहुत क्रुद्ध हुये और (एकबारगी ही सौ पुत्र) वशिष्ठके ऊपर झपट पड़े। वशिष्ठने क्रोधके साथ एक ही हुङ्कारसे उनको जला डाला। इस अपमानके पीछे विश्वामित्रने राजशक्तिकी अपेक्षा तपस्याकी शक्तिको बड़ा माना था। वह राजकार्य छोड़ कठोर तपस्यामें लग गये। उसी तपस्याके फलसे उन्होंने ब्रह्मर्षिकी भांति 'अमतासाकी बन ब्रह्मर्षि नाम पाया था।'

(रामायण, आदि, ५१ अ०)

कामधेनुतन्त्र (सं० क्ली०) कामधेनुरिव सर्वाभीष्टप्रदं तन्त्रम्। शिवप्रोक्त एक तन्त्र।

कामधेन्वी—रामात या निमात सम्प्रदायभुक्त वैष्णव। इनमें अधिकांश भिक्षुक रहते हैं। कामधेनु नामक भिक्षापात्र व्यवहार करनेसे ही कामधेन्वी नाम पड़ा। कामधेनुयन्त्र वीणाकी भांति होता है। उसकी दोनों ओर दो तख्ते लगे रहते हैं। एक ओरका तख्ता गायके आकारका होता है। दूसरी ओरके तख्तेमें हनूमान्‌की मूर्ति रहती है। यह लोग सबेरे और शाम दोनों समय उक्त यन्त्रकी पूजा तथा आरती करते हैं। कामधेन्वी कामधेनुयन्त्र कन्धे पर रख भिक्षा मांगने निकलते हैं। यह किसीके द्वार पर खड़े नहीं रहते, 'धनुषधारी राम धनुषधारी राम,' कहते राह राह घूमा करते हैं। उसी यह लोग सुन इच्छानुसार कामधेनुपात्रमें भिक्षा डाल देते हैं।

कामध्वंसी (सं० पु०) कामं कन्दर्पं ध्वंसयति, काम-ध्वन्स-णिच्-णिनि। कामको ध्वंस करनेवाले शिव।

कामध्वज (सं० पु०) मत्स्य, मछली। कामदेवकी पताका मछली है।

कामन (सं० त्रि०) कामयतीति, कम-णिङ्-युच्। १ कामुक, चाहनेवाला। (क्ली०) भावे युच्। २ अभिलाष, ख्वाहिश।

कामना (सं० स्त्री०) कामन टाप्। १ इच्छा, ख्वाहिश। २ मन्दाक, बांदा।

कामनाशक (सं० पु०) कामं कन्दर्पं नाशयति, काम-नश्-णिच्-ण्वुल्। १ महादेव। (त्रि०) २ कामशक्तिनाशक।

कामनीड़ा (सं० स्त्री) कस्तूरिका, मुश्क।

कामनीयक (सं० क्ली०) कमनीयस्य भावः, कमनीय-वुञ्। रमणीयता, खूबसूरती।

कामन्दकि (सं० पु०) कामन्दकस्य अपत्यं पुमान्, कामन्दक-इञ्। एक नीतिशास्त्र-प्रणेता। इनके बनाये ग्रन्थका नाम कामन्दकीय नीतिशास्त्र है। वह १८ अध्यायमें विभक्त और महाभारतकी भांति प्राचीनकाल-रचित है। बहुत पहले उक्त नीतिशास्त्र बालि प्रभृति द्वीपमें नीति बना था। यहां महाभारतकी भांति वह कविभाषामें अनुवादित भी हुआ। उसके यवद्वीप पहुंचनेका समय निर्धारित नहीं। कोई अनुमान करता, कि महाभारतके ही समकाल वह भी पहुंचा होगा। [illegible] उसकी चार टीका मिलती हैं। एक टीकाका नाम उपाध्याय-निरपेक्ष है। बाकी तीनमें एक जयराम, दूसरी आत्माराम और तीसरी वरदाराजकी बनायी है।

ष्ठित है। उसके निकट १९ धनु परिमित मुक्तितीर्थ है। मुक्तितीर्थसे बहुत दूर हंसकुण्ड है। इन्द्रशैलके दक्षिण १२ धनु परिमित सूर्यतीर्थ है। यहां सूर्यदेव अदृश्य मूर्तिसे अवस्थान करते हैं। रामचेतके मध्य दो दुर्गकूप और एक ब्रह्मकूप देखते हैं। इन्द्रकूटमें मणिनाथ नामक महादेव अवस्थित हैं। सोमतीर्थकी शेष सीमा पर ५ धनुपरिमित नागतीर्थ है। चन्द्रशैलके उत्तर १४ धनुपरिमित एक पर्वत अवस्थित है, उसके अग्रभागका नाम गयाकुण्ड और तीरकी भूमिका नाम शेष है। पूर्वमें लौहित्य और उत्तरमें ब्रह्मयोनि पर्यन्त विस्तृत २२ धनुपरिमित स्थानको गयाशीर्ष वा गयातीर्थ कहते हैं।

'इन समुदाय तीर्थोंमें स्नान, दान, पूजा एवं प्रदक्षिण और गयातीर्थमें श्राद्धादि कार्य करनेसे अक्षय पुण्य मिलता है।' (कालिकापु०, ८१ अ०)

'सोमशैलकी ईशानदिक् मणिशैल है। मणिशैलके किञ्चित् पूर्वांश ईशानकोणमें ७ धनु दूर वाराणसी नामक कुण्ड है। इस कुण्डका दैर्घ्य २२ धनु है। इसकी दक्षिण दिक् ५ धनु दूर २२ धनुपरिमित मणिकर्णिका नामक कुण्ड है। मणिशैलकी ईशान कोणमें मधुला नदी है। फिर दक्षिण दिक् कामेश्वरी, पश्चिम वर्णपीठ, उत्तर कमलालिङ्ग और पूर्व विरजा है। इन चतुःसीमाके मध्यस्थलमें तीन कोस परिमित स्थानका नाम मणिपीठ है। मानशैलके वायुकोणमें महावर्धन है। उसके पूर्व-दक्षिण भागमें नर-नारायण सरोवर है। इसके वायुकोणमें ८ धनुदूर वैनायक तीर्थ और १०० धनुपरिमित दीर्घ ब्रह्मातीर्थ है। ब्रह्मातीर्थके वायुकोणमें विन्दुसरः है। नाटकाचलके पूर्वभागमें मातङ्ग नामक पर्वत और अग्निकोणमें भगाश्रम है। इस तीर्थको शिवका अन्तःपुर कहते हैं। [illegible] पूर्व और ईशानदिक्‌भागमें [illegible] है। इसकी उत्तर ओर [illegible] नामक तीर्थ है। [illegible] पूर्व ओर गुप्ततीर्थ है। उससे ४ धनु दूरवर्ती पूर्व दिक्‌में [illegible] सरोवर है। [illegible] तीर्थकी [illegible] ओर [illegible] तीर्थ है। [illegible]

८ धनु दूरवर्ती दक्षिण दिक्‌में आगस्त्यतीर्थ है। इस आगस्त्य तीर्थके किञ्चित् पश्चिमभागमें अग्निकोण पर ११ धनुपरिमित स्थानमें वामन नामक तीर्थ है। इसकी पश्चिम ओर अनतिदूरवर्ती ७ धनुपरिमित स्थानमें रथातीर्थ है। उसकी १० धनुपरिमित दूरवर्ती पश्चिम दिक्‌में अग्निकी कुण्ड है। इस कुण्डके वायुकोणमें ८ धनुपरिमित स्थान पर [illegible]तीर्थ है। भस्मशैलके अग्निकोणमें ८ धनु दूर [illegible] तीर्थ है। यहां कपर्दीश्वर नामक शिवलिङ्ग अवस्थित है। भस्मकूटके वायुकोणमें कपालमोचन तीर्थ है। यहां कपालेश्वर नामक शिवलिङ्ग अधिष्ठित है। कपालमोचनसे ५ धनु दूरवर्ती उत्तरको वशिष्ठतीर्थ है। इस स्थानमें वृषभध्वज नामक शिवलिङ्गका अवस्थान है। इस शिवलिङ्गके पश्चिमभागमें २२ धनु परिमित मातङ्गपीठ है। मन्दर पर्वतकी ईशान ओर १६ धनु-परिमित चक्रतीर्थ है। चक्रतीर्थके पश्चिम मन्दन पर्वत है। इसका परिमाण १९ धनु है। यहां कुन्दरूपी जनार्दनदेव अवस्थित हैं। मन्दरशैलके उत्तरांशमें ईशान कोणपर विरजातीर्थ है। [illegible] दक्षिण-पश्चिम भागमें सोमलिङ्ग है। चक्रतीर्थके अग्निकोणमें २ धनु परिमित स्थान पर सोमलिङ्गतीर्थ है। इसीके निकट [illegible]-स्थापित [illegible] नामक शिवलिङ्ग अधिष्ठित है।

'इन तीर्थोंमें स्नान, दान, पूजा, प्रदक्षिण और ध्यान विशेषके सहित श्राद्धादि करनेसे विशेष पुण्यलाभ होता है।' (कालिकापु० ८२ अ०)

'लौहित्यसे दक्षिण दिक् जाने पर [illegible] पर्वत है। [illegible] पर्वतकी पश्चिम ओर पाण्डुनाथ है। उनके वायुकोणमें ब्रह्मकुण्ड नामक १९ धनु विस्तृत सरोवर है। इस सरोवरसे अनतिदूर दक्षिण दिक् [illegible] विस्तृत विष्णुकुण्ड है। विष्णुकुण्डके दक्षिणांशमें नैर्ऋतकोणपर ११ धनुपरिमित शिवकुण्ड है। इसीके निकटवर्ती स्थानमें पाण्डुनाथ है। पाण्डुनाथसे ५ धनुदूरवर्ती नैर्ऋतकोणमें [illegible] है। फिर वहांसे [illegible] धनु दूरवर्ती पूर्वदिक्‌में [illegible] शिला है। यह

कामन्दकीय (सं॰ क्ली॰) कामन्दकेरिदम्, कामन्दकि-छ। (उत्कराद्यः। पा ४।२।११४) कामन्दकि-प्रणीत एक नीतिशास्त्र।

कामन्धमी (सं॰ पु॰) कामं यथेष्टं धमति, काम-ध्मा-णिनि बाहुलकात् धमादेशः निपातनात् मुमि साधुः। कांस्यकार, कसेरा।

कामपति (सं॰ स्त्री॰) कामः पतिर्यस्याः, विकल्पत्वात् न ङीप्। १ रति, कामदेवकी स्त्री (पु॰) २ चन्द्रवंशीय पृथुकुलजात एक राजपुत्र। इन्होंने पुत्रेष्टि याग किया था (ब्रह्मादिखण्ड १।१०।२१)

कामपत्नी (सं॰ स्त्री॰) कामस्य पत्नी, ६-तत्। रति, कामदेवकी स्त्री।

कामपर्णिका, कामपर्णी देखो।

कामपर्णी (सं॰ स्त्री॰) आखुपर्णी, एक पेड़।

कामपाल (सं॰ पु॰) कामान् पालयति, काम-पाल-अण्। १ बलदेव। २ विष्णु।

"कामदेवः कामपालश्च कामी कान्तः कृतागमः" (विष्णुसहस्रनाम)

३ महादेव। ४ चन्द्रवंशीय इन्दुमण्डल राजाके पुत्र। इनके पुत्रका नाम मणिल था। (ब्रह्माद्रिख॰ ११०।२१) ५ एकवीरा देवीभक्त गौतम कुलज जनपालवंशके एक राजा। (ब्रह्माद्रिखण्ड ११।११९-१०) ६ कुमारिकाभक्त अश्वपाक कुलज दत्तराजके पुत्र। इनके पुत्रका नाम सुदर्शन था। (ब्रह्माद्रिखण्ड ११४१।४०) ७ महाराजचूत, एक बढ़िया आम।

कामपीठ (सं॰ पु॰—क्ली॰) कूपादिके उपरिभागका बद्धस्थान, कुवेंके ऊपर बंधी हुयी जगह।

कामपीड़ित (सं॰ त्रि॰) कामेन कन्दर्पपीड़या पीड़ितः, ३-तत्। सङ्गमेच्छुक, मैथुनको ख़ाहिश रखनेवाला।

कामपुर (सं॰ त्रि॰) कामं अभीष्टं पूरयति, काम-पूर-णिच्-अण्। १ अभीष्टप्रद, मुराद पूरी करनेवाला। २ परमेश्वर।

कामप्र (सं॰ त्रि॰) कामं पिपर्ति काम-पृ-क। अभीष्टप्रद, ख़ाहिश पूरी करनेवाला।

कामप्रद (सं॰ पु॰) कामं कामजरतिभेदं प्रददाति, काम-प्र-दा-क। १ रतिबन्धविशेष, एक रतिबन्ध।

"द्वौ पादौ स्कन्धयोर्यस्य विधृत्वाधिष्ठं भवेद्यदा।
कामयेत् कामुकः प्रीत्या बन्धः कामप्रदो हि सः॥" (रतिदीपिका)

कामानां सर्वपुरुषार्थानां प्रदः, ६-तत्। २ विष्णु। (त्रि॰) ३ अभीष्टप्रद, मुराद पूरी करनेवाला।

कामप्रवेदन (सं॰ क्ली॰) कामस्य अभिलाषस्य प्रवेदनं आविष्करणम्, ६-तत्। अभिलाष प्रकाश, ख़ाहिशका इज़हार।

कामप्रश्न (सं॰ पु॰) कामं यथेष्टं प्रश्नः। यथेच्छ प्रश्न, मनमाना सवाल।

कामप्रस्थ (सं॰ पु॰-क्ली॰) कामस्य कामगिरेः प्रस्थः, (कालादीनाथ पा ६।२।८८) आदिवर्णं उदात्तः, ६-तत्। १ कामगिरिका सानुदेश, काम पहाड़की ऊंची हमवार ज़मीन्। २ एक नगर।

कामप्रस्थीय (सं॰ त्रि॰) कामप्रस्थे भवः, कामप्रस्थ-छ। कामगिरिके सानुदेशमें उत्पन्न, काम पहाड़की ऊंची हमवार ज़मीन्का पैदा।

कामप्रि (सं॰ त्रि॰) कामं पिपर्ति, काम-पृ-कि। अभीष्टपूरक, ख़ाहिश पूरी करनेवाला।

कामप्रियकरी (सं॰ स्त्री॰) अश्वगन्धा, असगंध।

कामफल (सं॰ पु॰) कामं यथेष्टं फलमस्य, बहुव्री॰। महाराजाम्र, एक बढ़िया आम।

कामबख्श—बादशाह आलमगीरके कनिष्ठ पुत्र। यह शाहज़ादे बड़े अभिमानी और निर्दय रहे। इनके पिताने इन्हें दक्षिणका राज्य सौंपा था। किन्तु इन्होंने ज्येष्ठ भ्राता बहादुर शाहका संरक्षण स्वीकार न किया और अपने नामका सिक्का चला दिया। इसीसे वह एक बड़ी सेना ले इनसे लड़ने चले। हैदराबादके निकट युद्ध हुवा था। युद्धमें यह हार गये। घोर-रूपसे आहत होने पर १७०८ ई॰ के फरवरी या मार्च मास इनका प्राण छूटा था। इनकी माताका नाम उदयपुरी-महल रहा। १६६७ ई॰ को २५वीं फरवरीको कामबख्श शाहज़ादेने जन्म लिया था।

कामम् (सं॰ अव्य॰) कम-णिङ्-अमु। १ यथेष्ट, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़। २ अनुमतिसे, मञ्ज़ूरीके साथ। ३ स्वच्छन्द, ख़ुशीसे। ४ अच्छा, बहुत अच्छा। ५ माना, हुवा। ६ निःसन्देह, बेशक।

काममञ्जरी (सं॰ स्त्री॰) दण्डिप्रणीत दशकुमार-चरितकी एक नायिका।

शिला लक्ष्मी नामसे अभिहित होती है। इससे अनतिदूर दक्षिणदिक्‌में ८ धनुपरिमित कोलद्वीप है। इसी स्थान पर अश्वत्थके मूलमें विष्णुकी पाषाण-मूर्ति विराजित है। ब्रह्मकुण्डके निकट श्रीकुण्ड नामक २ धनुपरिमित सरोवर है। उसकी पूर्व ओर २२ धनु दूरवर्ती स्थानमें कनखल नामक तीर्थ है। उसके दक्षिणदिक्‌भागमें मनोहर पर्वतके ऊपर ४ धनु-परिमित चम्पकेश्वरकी मूर्ति विराजित है। इस मूर्तिकी पूर्व ओर ८ धनुपरिमित पुष्करतीर्थ है। पुष्करकी नैर्ऋत ओर किञ्चित् वामभागमें २८ धनु-परिमित बदरिकाश्रमतीर्थ है। यहां विभाण्डक नामक शिवलिङ्ग अधिष्ठित है। पुष्करके पूर्वभागमें कुमार नामक सरोवर है। यहां स्थाणु नामक महादेव हैं। उक्त चम्पकेश्वरके नामानुसार ६२ धनुपरिमित स्थानमें एक वन है। वह चम्पकवनके नामसे प्रसिद्ध है। नीलकूटकी पूर्व ओर दुर्गाकूपसे १ धनु दूर आम्रातकेश्वर नामक महादेव हैं। आम्रातकेश्वरकी दक्षिण ओर ८ धनु दूरवर्ती स्थानमें कृष्णवर्ण गजाकार गणदेवकी मूर्ति है। उसकी पूर्व ओर १ धनु दूर त्रिविक्रमकी मूर्ति विराजती है। इस मूर्तिसे १ धनु दूरवर्ती स्थानमें ४० हस्तपरिमित सौभाग्य सरोवर है। यह कामाख्या देवीका क्रीड़ा सरोवर कहाता है। इसीकी ईशान ओर लौहित्य सरोवर, अग्निकुण्ड और यामलसरोवर है। सौभाग्य-सरोवरसे ५ हस्त दूरवर्ती नैर्ऋत दिक्‌में गङ्गासरः है। इसके उपरिभागमें अगस्त्यकुण्ड है। इस कुण्डकी पूर्व ओर कृष्णशिलाकी पश्चिम ओर वराहतीर्थ है। इसके अग्निकोणमें कन्दर्प नामक शिवकी मूर्ति अधिष्ठित है। अनन्तकुण्डकी पश्चिम ओर अग्नि नदी है। उससे पश्चिम वरुणा नदी बही है।

'यह सकल स्थान श्रेष्ठ तीर्थ गिने जाते हैं। यहां यथाविधान पूजादि कार्य करनेसे अनन्त पुण्य होता है।' (योगिनीतन्त्र, ५६ पटल)

'मानसतीर्थ नाम्नी महानदीकी उत्तर ओर २ धनु दूरवर्ती स्थानमें प्रेतशिला है। वासुदेवसे १८ धनु दूर पश्चिम ओर वायुकोण उग्रतीर्थ है। कोटि-लिङ्गसे दक्षिण चतुष्कोण शिवमूर्तिका नाम दक्षिण-मानस है। कामनाथसे ७ धनु दूर पश्चिम ओर दीर्घेश्वरी देवी हैं। कामेश्वरदेवकी उत्तर ओर १२ हस्त दूरवर्ती स्थानमें कामसरोवर है। कम्बलदेवकी दक्षिण ओर ८ धनु दूरवर्ती स्थानमें कोटीश्वरी देवी हैं। लोकचक्षु देवीसे २ धनु दूरवर्ती स्थानमें तीन धारा हैं। उनमें मध्यधारा सरस्वती, दक्षिण धारा वरुणा और उत्तर धारा यमुना कहाती है। त्रिधाराके सङ्गमस्थल पर आकाशगङ्गा हैं। उनकी उत्तर ओर अनतिदूर शुक्लवर्ण वासुदेवकी मूर्ति है। कामेश्वरके पश्चाद्भागमें सिद्धेश्वरकी मूर्ति है। उनके निकटवर्ती स्थानमें छायाछत्र हैं। विन्ध्याचलके निकटवर्ती स्थानमें विन्ध्येश्वरी शिला है। उसकी पूर्व-उत्तर ओर १०० धनु दूर आकाशगङ्गाका चिह्न मिलता है। इसके दक्षिणभागमें सुरदीर्घिका शिला है। यह शिला ललिताकान्ता कहाती है। इस स्थानमें नन्दि-रूपी अश्वत्थ और उसके मूलदेशमें कूर्माकृति शिला है। इससे अनतिदूर व्यासतीर्थ और व्यासेश्वर-देवका अवस्थान है। व्यासतीर्थसे २० धनु दूर पूर्व ओर हस्तिरूपिणी देवीमूर्ति है। इसीकी पूर्व ओर अनतिदूर ९ हस्त परिमित भुवनेश्वरकी मूर्ति है। उसके वायुकोण पर अगस्त्याश्रममें गङ्गाधरकी मूर्ति है। गङ्गाधरकी अनतिदूरस्थ उज्ज्वल श्वेतशिलाका नाम जल्पीश है। उसकी पश्चिम ओर सदाशिव-मूर्ति है। सदाशिवके निकटवर्ती स्थानमें ही गोविन्द पर्वतस्थित गोविन्दकी मूर्ति है। उसकी पूर्व ओर ९ धनु परिमित रक्तवर्ण शिलाका नाम शरणेश्वी है। उस शिलाचलमें प्रकटा नाम्नी महादेवी हैं। विन्ध्या-चलकी उत्तर ओर ९ धनु दूरवर्ती स्थानमें महालक्ष्मी है। श्रीपर्वतमें श्रीकुण्ड नामक तीर्थ है। गोकर्णाश्रममें वृषभध्वज नामक शिवकी मूर्ति और हंसतीर्थ सरोवर है। पाण्डुकूटसे निकलनेवाली धाराका नाम नर्मदा नदी है। शिव और विष्णुमूर्तिके मध्यवर्ती स्थानसे जो धारा आती, वह महानदी कहाती है। नितम्ब और धन उभयकी मध्यवर्ती धारा मङ्गला नामसे विख्यात है। विश्वकी पर्वतके सीमादेशसे निःसृत

काममय (सं॰ त्रि॰) कामस्य विकारः, काम-मयट्। "स्पर्शेन्द्रीमीमांसा कामात्मकमयोः" पा ४।३।१४४। कामविकार, ख्वाहिशसे भरा हुआ।

काममर्दन (सं॰ पु॰) कामं कन्दर्पं मर्दयति नाशयति, काम-मृद्-ल्यु। कामको मर्दन करनेवाले महादेव।

काममलोलुप (सं॰ पु॰) मदवेदा, मच्छा हकीम।

काममलोलुम, काममलोलुप देखो।

काममह (सं॰ पु॰) कामस्य मह उत्सवो यत्र, बहुव्री॰। कामदेवके उद्देश उत्सवका दिन। चैत्री पूर्णिमा इस उत्सवका निर्दिष्ट समय है।

काममालिका (सं॰ स्त्री॰) मद्यविशेष, एक शराब।

काममाली (सं॰ पु॰) गणेश।

काममुद्रा (सं॰ स्त्री॰) तन्त्रशास्त्रोक्त एक मुद्रा।

काममूढ़ (सं॰ त्रि॰) कामेन मूढः, ३-तत्। कामकी पीड़ासे हित और अहितको विवेचना न रखनेवाला, जो शहवतके जोरसे अन्धा बन गया हो।

काममूत (सं॰ त्रि॰) कामेन मूतः मूर्च्छितः, काम-मव-क्त छान्दसत्वात् इट् अभावः ऊट्‌च। १ काममूर्छित, शहवतसे गश खाये हुआ। २ अत्यन्त कामपीड़ित, शहवतके जोरसे बड़ी तकलीफ पाये हुआ।

काममोदी (सं॰ स्त्री॰) कस्तूरी, मुश्क।

काममोहित (सं॰ त्रि॰) कामेन कामशरत्या मोहितः, ३-तत्। १ कामकी पीड़ासे हित और अहितका ज्ञान न रखनेवाला, शहवतके जोरसे अन्धा बना हुआ। २ सुरतासक्त, शहवत-परस्त।

"क्व निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥" (रामायण)

कामयमान (सं॰ त्रि॰) काम-णिङ्-शानच्। कामुक, ख्वाहिशमन्द।

कामयान (सं॰ त्रि॰) काम-णिङ्-शानच् मुगभावः आगमशास्त्रस्य अनित्यत्वात्। कामुक, ख्वाहिशमन्द।

कामयाना (सं॰ स्त्री॰) गर्भिणी, हामिला, जिसके पेटमें लड़का रहे।

कामयाब (फा॰ त्रि॰) सफल, मतलब पाये हुआ।

कामयाबी (फा॰ स्त्री॰) सफलता, मक़सदवरी, आसलाला।

कामयिता (सं॰ त्रि॰) कामयते, काम-णिङ्-तृच्। कामुक, चाहनेवाला।

कामरस (सं॰ पु॰) कामः कामशरत्यादिरेव रसः। सुरतादि, शहवत वगैरह।

कामरसिक (सं॰ त्रि॰) कामे कामशरत्यादौ रसिकः सुनिपुणः, ७-तत्। सुरतादि विषयमें सुनिपुण, शहवतपरस्त।

कामराज—१ कालिकागमज्ञ कौण्डिन्य मुनिकुलोद्भव श्रीधरराजके पुत्र। इनके पुत्र मातृग थे। (कालिका १।१४।१) २ कैवल्य-दीपिका-प्रणेता हेमाद्रिके प्रतिपालक। ३ गोपालचम्पू-प्रणेता जीवराजके पितामह। इनके पुत्र अर्थात् जीवराजके पिताका नाम ब्रजराज था। फिर इनके पिताको श्यामराज कहते थे।

कामराज दीक्षित—काव्येन्दुप्रकाश, शृङ्गारकलिकाकाव्य प्रभृतिके प्रणेता।

कामरान् मिर्ज़ा—बादशाह बाबर शाहके २य पुत्र और बादशाह हुमायूंके भ्राता। १५३० ई॰ को सिंहासनारूढ़ होने पर हुमायूंने इन्हें काबुल, कन्दहार, गज़नी और पञ्जाबका राज्य सौंपा था। किन्तु १५५३ ई॰ को काबुलमें हुमायूंने इनकी आंखें नश्तरसे छेदवा कर निकलवा लीं। कारण इन्होंने राज्यका प्रबन्ध बिगाड़ बड़ा गड़बड़ किया था। आंखोंमें नीबूका रस और नमक पड़ते समय इन्होंने कहा—'हे परमेश्वर! मैंने इस संसारमें जो पाप कमाया, उसका यथेष्ट फल पाया है। अब परलोकमें मेरे ऊपर कृपादृष्टि रखिये।' अन्तमें इन्हें मक्के जानेकी आज्ञा मिली थी। वहां यह तीन वर्ष रहे और १५५६ ई॰ को अपनी मौत मरे। इनके तीन कन्या और अबुल क़ासिम मिर्ज़ा नामक एक पुत्र चार सन्तान रहे। १५६५ ई॰ को अकबरकी आज्ञासे अबुल क़ासिम मिर्ज़ा ग्वालियरके किलेमें कैद किये और मारे गये।

कामरिपु (सं॰ पु॰) १ शरीरस्थ छह रिपुके मध्य प्रथम रिपु। अभिलाष और स्त्रीसम्भोगादि इसका कार्य है। २ शिव।

कामरी (हिं॰ स्त्री॰) कम्बल, कमरी।

धाराको गङ्गा कहते हैं। मतङ्ग पर्वतकी धारा भी नर्मदा नामसे पुकारी जाती है। कामकुण्डकी धाराका नाम कामगङ्गा है। कामाख्याकी धारा गङ्गा कहाती है। नीलकुण्डकी धाराको कावेरी कहते हैं। व्यासकुण्डकी धारा सुभद्रा नामसे अभिहित है। [illegible]की धाराका नाम चन्द्रभागा है। सोमकुण्डकी धारा सरयू नामसे प्रसिद्ध है। यमगोपकी धाराको वेतरणी और [illegible]की धाराको गोदावरी कहते हैं। धर्मारण्यके मध्य रामकूट नामक तीर्थ है। उससे १० धनु दूर उत्तर ओर कोटिलिङ्ग है। वहीं लिङ्गके [illegible] ब्रह्मयोनि है।

'वराह और कामके मध्यवर्ती स्थानमें पञ्चगर्भेय [illegible] पञ्चगर्भेय नामक ८ धनुपरिमित सरोवर है। उसके उत्तर ओर भद्रकाल पर्वत है। इसी पर्वतमें पीतशिला और गोष्पदाङ्कित शिला है। उसके ५ धनु दूरवर्ती स्थानमें [illegible] नामक पीठ है। पञ्चगर्भेयकी पूर्व ओर ८ धनु दूर ७ धनु विस्तृत वाराणसीकुण्ड है। उसकी पूर्व दिक् ५ धनु दीर्घ मार्कण्डेय ह्रद है। उसके उत्तर ओर मार्कण्डेश्वर शिव हैं। [illegible] अनतिदूर ब्रह्मसरः नामक कुण्ड है। उसकी पश्चिम दिक् [illegible] वराहदेव हैं। [illegible]की ईशान दिक् ३ धनु दूरवर्ती स्थान पर मदन पर्वत है। वहां केदार नामक महादेवकी मूर्ति विराजित है। केदारकी पश्चिम दिक् [illegible] है। केदारकी उत्तर दिक् ३ धनु दूरवर्ती [illegible] नगरमें कमलाक्ष महादेव हैं। [illegible] नामक [illegible] ३ धनु दूर दक्षिणदिक्‌की [illegible] पर्वत है। इसीके मध्य देशमें मन्दार नामक उच्च गिरि है। [illegible]की पूर्व ओर मधुरिपुनामक विष्णुकी मूर्ति है। इसी पर्वतकी उत्तर दिक् १० धनु दूर कपिलाश्रम है। यहां कपिलेश्वर देवता हैं। कपिलाश्रमकी पूर्व दिक् ११ धनु दूर [illegible]मोचन तीर्थ है। यहां [illegible] देवता हैं। [illegible]देवकी ईशान दिक् १० धनु दूर [illegible] है। मदन पर्वतकी ईशान दिक् ३ धनु दूर [illegible], [illegible] और [illegible] लिङ्ग हैं। [illegible] है। उसकी पश्चिम दिक् विष्णुका मन्दिर है। मणिकूटकी उत्तर दिक् [illegible] नदी है। मणिकूटकी पूर्व दिक् अनतिदूर विष्णुका पुष्करतीर्थ है।

'यथाविधान इन तीर्थोंमें स्नान, दान, पूजा, प्रदक्षिण आदि कार्य करनेसे अक्षय पुण्य लाभ होता है।'

(योगिनीतन्त्र २ : ७—८ पटल)

कालिकापुराण और योगिनीतन्त्रके पाठसे कामरूपके प्राचीन भूतत्त्वका बहुत परिचय मिलता है।

कालिकापुराणके मतानुसार कामरूपमें निम्नलिखित पर्वत विद्यमान हैं,—

१ चन्द्रगिरि, २ सुरस, ३ नील, ४ [illegible], ५ [illegible], ६ विभ्राट्, ७ [illegible], ८ [illegible], ९ गन्धमादन, १० [illegible], ११ मणिकूट, १२ मदन, १३ दर्पण, १४ [illegible], १५ अग्निमान्, १६ [illegible], १७ वायुकूट, १८ दुर्गाशैल, १९ चन्द्रकूट, २० [illegible], २१ [illegible], २२ [illegible], २३ [illegible], २४ [illegible]कूट, २५ [illegible], २६ [illegible], २७ [illegible]गिरि, २८ [illegible], २९ वराह, ३० [illegible], ३१ [illegible], ३२ दुर्जयगिरि, ३३ [illegible], ३४ [illegible], ३५ [illegible], ३६ [illegible], ३७ नाटक, ३८ [illegible], ३९ [illegible], ४० मन्दर। इनको छोड़ योगिनीतन्त्रमें निम्नलिखित पर्वत भी कहे हैं,—४१ [illegible], ४२ [illegible], ४३ [illegible], ४४ [illegible], ४५ विन्ध्याचल, ४६ [illegible], ४७ [illegible], ४८ [illegible], ४९ [illegible], ५० [illegible], ५१ [illegible], ५२ [illegible], ५३ [illegible], ५४ [illegible], ५५ [illegible], ५६ [illegible], ५७ [illegible], ५८ [illegible], ५९ गन्धर्व, ६० [illegible], ६१ [illegible], ६२ [illegible], ६३ [illegible], ६४ [illegible], ६५ [illegible], ६६ [illegible], ६७ [illegible], ६८ [illegible], ६९ [illegible], ७० [illegible], ७१ [illegible], ७२ [illegible], ७३ [illegible], ७४ [illegible] इत्यादि।

कालिकापुराणमें कामरूपकी निम्नलिखित नदियोंका नाम मिलता है,—

१ [illegible], २ [illegible], ३ [illegible], ४ [illegible], ५ [illegible], ६ [illegible], ७ [illegible], ८ [illegible]

रोका, ८ करतोया, १० शतप्रदा, ११ चन्द्रिका, १२ फेणिला, १३ शतानन्दा, १४ सुमदना, १५ भैरवगङ्गा, १६ देवगङ्गा, १७ भद्रा, १८ पुनर्भू, १९ मानसा, २० भैरवी, २१ वर्णाशा, २२ कुसुममालिनी, २३ चीरोदा, २४ लौहा, २५ शिवाचण्डी वा चण्डिका, २६ सिद्धत्रिस्रोता, २७ वृद्धदेविका, २८ भट्टारिका, २९ दिक्करिका, ३० स्वर्णवहा, ३१ सुवर्णश्री, ३२ कामा, ३३ सोमाश्रमा, ३४ तपोदका, ३५ श्वेतगङ्गा, ३६ कमण्डला, ३७ सीता, ३८ सुमङ्गला, ३९ शाश्वती, ४० कलिङ्गिका, ४१ हयमान, ४२ कपिलगङ्गिका, ४३ दमनिका, ४४ हंसा, ४५ कान्ता, ४६ ललिता, ४७ संध्या, ४८ दीपवती, ४९ भगद नद।

एतद्भिन्न योगिनीतन्त्रमें दूसरी भी कई नदियोंका नाम लिखा है,— ५० चम्पावती, ५१ मानस, ५२ पिच्छिला, ५३ स्वर्णटी, ५४ कौरिका, ५५ धनदा, ५६ पद्माख्या, ५७ मङ्गला, ५८ धवला, ५९ कपिला, ६० सरस्वती, ६१ जाह्नवी, ६२ दिहु इत्यादि।

सुवर्णमानस, जटोड्वा और त्रिस्रोता तीनों नदियां जलपाईगुड़ी जिलेमें प्रवाहित हैं। सुवर्णमानसका वर्तमान नाम स्वर्णकोशी है। चलती बोलीमें सानकोशी कहते हैं। यह नदी भोटानके पर्वतसे निकल ब्रह्मपुत्रमें जा मिली है। जटोड्वा नदी भोटानके पर्वत पर उत्पन्न हो जटोदा नामसे जलपाईगुड़ी जिले और कोचविहार राज्यके मध्य हो कर ब्रह्मपुत्रमें गिरी है। त्रिस्रोताका वर्तमान नाम तिस्ता है। इसके प्राचीन गर्भमें बहुत परिवर्तन हुवा है। आजकल यह सिकिमके पहाड़से निकल जलपाईगुड़ी और रङ्गपुर जिलेके मध्य हो कर ब्रह्मपुत्रमें जा मिली है। इस नदीसे अनतिदूर फकीरगञ्जके मध्य जलपाईगुड़ी नगरसे प्रायः डेढ़कोस दूर जल्पीश नामक पुण्यपीठ है। कालिकापुराणमें कहा है,—

"ततस्तु कामरूपस्य वायव्यां त्रिपुरान्तकः।
आत्मनो लिङ्गमतुलं जल्पीशाख्यं स्वयं धृतम्॥"

कामरूपके वायुकोणमें महादेवने जल्पीश नामक अपना अतुल लिङ्ग दिखाया है।

"वरदाभयहस्तोऽयं हिमकुन्देन्दुसन्निभः।
तत्पुरुषस्य तु मन्त्रेण पूजयेदिन्दुशेखरम्॥
एष पुण्यतरः पीठो जल्पीशस्य महात्मनः।
एतत्स्नात्वा नरो याति मद्वरस्यालयं प्रति॥"

(कालिकापुराण, ७७ अ०)

यह जल्पीश नामक महादेव वरदाभयहस्त और कुन्दतुल्य श्वेतवर्ण हैं। इन्हें तत्पुरुषकी भांति पूजना चाहिये। जल्पीशका विषय जिसे अच्छी तरह मालूम हो जाता, वह शिवलोक पाता है।

कालिकापुराणके मतमें नन्दीने महादेवको आराधना कर यहीं सशरीर गाणपत्य पाया था।

जल्पीशदेवका मन्दिर प्रथम जल्पेश्वर नामक किसी राजाने बनवाया था। मुसलमानोंने प्राचीन मन्दिर तोड़ डाला। उसके पीछे कोचविहारके प्राणनारायणने (कोई २२५ वर्ष हुये) वर्तमान मन्दिर निर्माण कराया। आज कल मन्दिर पहिलेकासा सुन्दर नहीं रहा, जीर्ण अवस्थामें पड़ा है। न मालूम कब वह भूमिसात् हो जावेगा। पहिले यहां बहुतसे यात्री आते थे। किन्तु अब वह समय नहीं है।

जल्पीशपीठसे अनतिदूर तलमा नदीके पास प्राचीन पृथुराजके नगरका ध्वंसावशेष पड़ा है। किसी समय यहां पृथुराजका राजभवन, दुर्गपरिखादि था। आज भी उसका निदर्शन देख पड़ता है। यह प्राचीन स्थान प्रत्नतत्त्वानुसन्धायियोंके देखने योग्य है।

इसके निकट कई क्षुद्र क्षुद्र नदी हैं। वही कालिकापुराणमें लिखी गई चित्रप्रभा और नवतोया समझ पड़ती हैं।

इससे थोड़ी दूर पाटग्राम नामक स्थानमें पाटेश्वरी देवीका प्रसिद्ध मन्दिर है। कोई कोई पाटेश्वरीदेवीको ही कालिकापुराणमें उल्लिखित सिद्धेश्वरी मानता है।

भैरवी नदीका वर्तमान नाम भरली है। यह अकाजातिके देशसे निकल ब्रह्मपुत्रमें पतित हुयी है।

वर्णाशा वर्तमान कामरूप जिलेसे उत्पन्न हो योगीघोपके निकट ब्रह्मपुत्रमें मिली है।

वृद्धदेविका कामरूपमें प्रवाहित बुड़बुड़ी नदी है।

दिक्करिकाका वर्तमान नाम दिकराई है। यह नदी अका पहाड़से निकल दरङ्ग जिलेके मध्य हो कर ब्रह्मपुत्रमें आ गिरी है।

नारायण कोचहाजो प्रदेशमें और लक्ष्मीनारायण कोचविहारमें राजत्व करते थे। पादशाहनामा लक्ष्मीनारायणको परीक्षित्के पितामहका सहोदर बतलाता है। जहांगीरके राजत्वके ८म वर्ष सुसङ्गके राजा रघुनाथने परीक्षित्के विरुद्ध दरबारमें अभियोग लगाया कि उन्होंने उनके परिवारवर्गका अवरोध किया था। शेख अला-उद्-दीन फतेहपुरी इसलाम् खान् उस समय बङ्गालके नवाब रहे। उन्होंने मकराम खान्को कोचहाजो जीतने भेजा था। लक्ष्मीनारायणने मुसलमानोंके पक्ष पर योग दिया। युद्धमें पराजित हो परीक्षित्ने आत्मसमर्पण किया था। फिर उनके भ्राता बलदेवने अहोमराज स्वर्गदेवका आश्रय लिया। उसके पीछे परीक्षित् सम्राट्के आदेशानुसार दिल्ली भेजे गये और मकराम खान् हाजोके शासनकर्ता नियुक्त हुये।

बलदेव आसामराजको सहायतासे हाजोके उद्धारार्थ यत्न करने लगे। अहोमराज स्वीय अधीनता स्वीकार करा उनका साहाय्य करने पर प्रतिश्रुत हुये। मकरामखान् उसी समय शासनकर्तृत्वसे हटे थे। उनके स्थान पर कोई नूतन शासनकर्ता आनेवाला था। इसी अवसरमें सुयोग देख बलदेवने दरङ्ग अधिकार किया। उस समय इस देशमें बङ्गालके नवाबकी ओरसे हायोखेदाकी रक्षा करनेको जागीरदार पायक रहते थे। कासिम खान्ने बङ्गालके नवाब रहते समय बहुत दिन तक हाथियोंकी आमदनी न पायी थी। उन्होंने हायोखेदाके सरदारोंको उपस्थित होनेका आदेश दिया। उपस्थित होने पर नवाबने उन्हें बन्दी बनाया। उनमें सन्तोष और जयरामने भाग कर आसामराज स्वर्गदेवका आश्रय लिया था। फिर इसलाम खान् नवाब हुये। उस समय पाण्डुके अत्याचारी थानेदार शत्रुजित् बलदेवसे मिल गये। उन्होंने उनको हाजोके शासनकर्ताके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये गोपनमें परामर्श दिया था। बलदेव कोचों और आसामियोंका सैन्य ले युद्ध करनेको उपस्थित हुये। १६३८ ई० को इसलाम खान्ने यह बात सुनी। उन्होंने कई मनसबदारोंको १००० सवार, १००० बन्दूकवाले पैदल, १० घराब नामक नौका, २०० कोसा* नौका और बहुसंख्यक जलवाह नौकाके साथ भेजा था। श्रीघाट और पाण्डुके निकट महायुद्ध हुआ। उभय पक्षमें मरते और घायल होते भी युद्ध चलता रहा। इसलाम खान्ने फिर द्विगुण सैन्य भेज दिया। किन्तु उसी समय फिर पायकोंने बलदेवका पक्ष लिया था। इससे मुसलमानी सेनाकी रसद बन्द हो गयी। इसलामखान्ने संवाद सुन रसद भेजी। किन्तु उसके पहुंचनेमें विलम्ब लगा था। उसी समय बलदेव ससैन्य श्रीघाट और पाण्डु छोड़ हाजोके अभिमुख चले गये। फिर उन्होंने राज्य अवरोध कर रसद पहुंचनेकी राह रोकी थी। हाजोके शासनकर्ता अब्द-उस्-सलामको स्वीय भ्राताके (यही प्रधान सेनापति बन डाकेसे आये थे) साथ विपक्ष शिविरमें सन्धिका प्रस्ताव करनेके लिये जाना पड़ा। किन्तु वह मदल बांध कर आसाम भेजे गये। उनके भ्राता सैयदने बलपूर्वक शत्रुशिविरसे निकलनेकी चेष्टा की थी। किन्तु विफल होने पर वह सदल मारे गये। उसके पीछे मीर अली सेनापति हुये। इसी बीचमें ब्रह्मपुत्रके उत्तरकूल राजा चन्द्रनारायण पर मुसलमानोंने आक्रमण किया। चन्द्रनारायण भीत हो दक्षिणकूलके परगने सोलामारीको भागे थे। सोलामारीके जमीन्दार चन्द्रनारायणके भयसे मुसलमानोंसे जा मिले। मुसलमान उसके पीछे गुप्तशत्रु शत्रुजित्के अनुसन्धान करनेको धुबड़ी पहुंचे थे।

शत्रुजित् राय भूषणवाले जमीन्दार (राजा) मुकुन्दरायके पुत्र थे। सम्राट् जहांगीरके समय शेख अला-उद्-दीन बङ्गालके शासनकर्ता रहे। उस समय उन्होंने मुकुन्दरायके हो अधीन एक दल सैन्य भेज एक बार हाजोप्रदेश पर अधिकार किया था। मुकुन्दराय युद्धमें जीतने पर पाण्डु और गोहाटीके थानेदार बने। उसी सुयोगमें आसामियोंके साथ

* [illegible] नौका [illegible] मालूम होती है। कोसा नौकामें एक मस्तूल लगता है। फिर उसमें डांड बहुत रहते हैं। [illegible] नौका (बड़ी जानेसे डोंगे बहारे न चलनेवाली नावें) खींच ले जाते हैं।

स्वर्णरेखा या सुवर्णश्री नदीका वर्तमान नाम सुवर्णसिरी या सोवनसिरी है। यह नदी लखीमपुर जिलेमें प्रवाहित हो ब्रह्मपुत्रमें मिली है। भामा लखीमपुर जिलेकी वर्तमान भारालदी है। यह भी ब्रह्मपुत्रमें मिल गयी है।

सौमारसन्ध्या वर्तमान नाम सिसी है। यह लखीमपुर जिलेमें प्रवाहित है।

सौनगङ्गा वर्तमान नदियोंके निकट प्रवाहित दिक्‌राङ नदी है। इसीके निकट दिक्करवासिनीका प्राचीन मन्दिर है।

दिव्य यमुनाको आजकल केवल यमुना कहते हैं। यह नदी नागापहाड़से निकली है।

दमनिका एक यमुना नदीके पूर्व प्रवाहित है। आजकल यह डिमौना नामसे प्रसिद्ध है।

कलिङ्गिका नौगाँव जिलेकी कलङ्ग नदी है। यह ब्रह्मपुत्रमें पतित हुआ है।

कपिलगङ्गिका या कपिलाको आजकल कपिली कहते हैं। यह जयन्ती पहाड़से निकल ब्रह्मपुत्रमें गिरी है।

शङ्खगङ्गा दरङ्ग जिलेकी बड़गङ्ग नदी है।

दीपवती दरङ्ग जिलेकी दीपौला नदी है।

दिक्षुनदीका वर्तमान नाम दीखू है। यह शिवसागरके निकट ब्रह्मपुत्रमें मिली है। योगिनीतन्त्रके मतसे यही नदी प्राचीन कामरूपकी पूर्व सीमा थी।

चन्द्रावती ग्वालपाड़े जिलेमें प्रवाहित वर्तमान चन्द्रासी नदी है। इसके दक्षिणांशका नाम गदाधर है।

मानसा ग्वालपाड़े जिलेकी मानसा नदी है।

दिखिङ्गा दरङ्ग जिलेकी दिहिङ्ग नदी है। यह विश्वनाथके निकट ब्रह्मपुत्रमें गिरी है।

डोरिका नदीका वर्तमान नाम डिकिल है। यह शिवसागर जिलेके तथा लखीमपुर जिलेके मध्य हो कर ब्रह्मपुत्रमें गिरी है।

धनदा आजकल धनश्री कहाती है। यह नागा पहाड़से निकल ब्रह्मपुत्रमें पतित हुयी है। यही कौमारपीठकी पश्चिम सीमा है।

इतिहास

योगिनीतन्त्रमें लिखा है कि—महीरङ्ग नामक एक दानव कामरूपके आदि प्राचीन राजा थे। इस बातका कोई विशेष विवरण नहीं मिलता—यह दानव कौन थे और कैसे या किस तरह उनके हाथमें कामरूप आया।

महीरङ्गके पीछे नरकासुर कामरूपके राजपद पर प्रतिष्ठित हुये। कालिकापुराणके ३६वें से लेकर ४०वें अध्याय तक यह सम्यक् रूपसे लिखा है—नरकासुर कौन थे और कैसे कामरूपके राजपद पर बैठे। (उसके विशेष विवरणमें लिखा कि भगवान् विष्णुकी कृपासे उन्हें कामरूपका राज्य मिला।) नरकासुरकी कीर्ति अद्यापि कामरूपमें देख पड़ती है। नरकासुर और कामाख्याके सम्बन्धमें निम्नलिखित कई किंवदन्ती प्रचलित हैं,—

नरकासुरने किसी समय नीच आसुरिक दर्पसे उन्मत्त हो भगवती कामाख्यासे विवाह करनेका प्रस्ताव उठाया था। उस समय भगवती कामाख्याका मन्दिरादि बना न था। केवल सामान्य भावसे वस्त्रके मध्य पीठस्थानमात्र था। नरकका प्रस्ताव सुन भगवतीने कहा,—'यदि आप एक रातमें हमारा मन्दिर, मार्ग, पुष्करिणी इत्यादि समस्त निर्माण कर सकें तो हम आपकी पत्नि बन सकती हैं।' नरकने उसी समय विश्वकर्माको बुला उनके साहाय्यसे रात्रि-समाप्त होनेसे पहिले ही प्रायः समस्त कार्य समाप्त करा दिया। भगवतीने देखा,—'सर्वविपद् आ पड़ी। अब हमें असुरकी भार्या बनना पड़ेगा।' इस प्रकार चिन्ताकर उन्होंने एक मायारूपी कुक्कुट बनाया। नरकके कार्यसमाप्त होनेसे कुछ पहिले ही वह अकाल प्रातःकालीन ध्वनि सुनाने लगा। कुक्कुटध्वनि होते ही भगवतीने नरकसे कहा,—'रात्रिशेष होनेसे पहले ही कुक्कुट बोलने लगा। रात्रि बीत गई। प्रभात हुआ। अब आपको वरण करने पर प्रस्तुत नहीं हो सकती।' भगवतीके वाक्यसे क्रोधान्ध हो नरकने उस कुक्कुटको मार डाला था। कुक्कुटके मारे जानेका स्थान आजकल भी "कुकुराकटाचकी" नामसे प्रसिद्ध

उनका सौहार्द्द स्थापित हुआ। फिर उन्होंने भूटियोंके जमीन्दारकी भांति आसाम और कामरूपादेशके अनेक प्रधान व्यक्तियोंके साथ बन्धुता बढ़ाई। शेख अल्ला-उद्-दीनके पीछे होनेवाले सब नवाबोंने उन्हें दरबारमें आनेके लिये कई बार आदेश किया था। किन्तु न तो वह कभी उपस्थित हुये न नियमित पेश-कश ही भेजी। नवाब इसलाम खान्ने देखा कि मुकुन्दरायका दरबारमें पहुंचना कभी सम्भव न था। इसलिये उन्होंने उनके पुत्र शत्रुजित्को बुला भेजा। शत्रुजित् गये। उन्होंने दरबारमें यथारीति नवाबकी वश्यता दिखलाई थी। उस समय नवाब हाजोके विरुद्धमें सैन्य भेज रहे थे। उन्होंने शत्रुजित्को भी उसी सैन्यके साथ भेज दिया। किन्तु शत्रुजित् आसामराज एवं राजा बलदेवसे बन्धुता मान चुपके चुपके गूढ़ संवाद और दूसरे जमींदारोंको उनसे मिलनेके लिये उत्साह देने लगे। अन्तमें नवाबकी सेनाने धुबड़ी पहुंचतेही शत्रुजित्को बांध लिया और जहांगीरनगर भेज दिया। वहां विचार होने पर शत्रुजित्को प्राणदण्ड मिला था।

अब्द-उस् सलामके विनष्ट होने पर कोचों और आसामियोंकी सेना १२००० पदाति तथा बहुसंख्यक कासा नौका ले मनास नदीकी राह ब्रह्मपुत्रके तीर योगीघोपा (योगीगुहा) नामक पर्वत पर पहुंच गयी। उक्त पर्वतके नीचे ही ब्रह्मपुत्रका मनास-सङ्गम है। आसामी वहां एक सुदृढ़ दुर्ग बना नवाबके सैन्यकी प्रतीक्षा करने लगे। फिर उक्त दुर्गके बिलकुल सामने ब्रह्मपुत्रके दूसरे तटपर भी हीरापुर नामक स्थानमें वैसाही एक और दूसरा दुर्ग बना था। योगीगुहाके दुर्गमें ३००० और हीरापुरके दुर्गमें अवशिष्ट ८००० सैन्य रहा। नवाबका सैन्य धुबड़ी छोड़ खानपुर नदीकी राह ब्रह्मपुत्र पार हुआ। फिर वह जङ्गल काट और मार्ग बना योगीगुहाकी ओर बढ़ा था। नवाब-सैन्यके प्रधान सेनापति और सेनानीके अधीन ३००० अयरकलावाले सिपाही थे। क्रमशः राहमें दोनों दल सम्मुखीन हुये। आसामी प्रथम आक्रमणसे ६ कोस हटे थे। दूसरे दिन नवाबके सैन्यने योगीगुहाके दुर्ग पर आक्रमण किया। फिर ठीक उसी समय जमान् खान् दक्षिणकूलके चन्द्रनारायणको ध्वंस कर ससैन्य आ मिले। इसीसे बलदेव नूतन और वर्धित सैन्यका वेग सह न सके। वह ससैन्य दुर्ग छोड़ भागे थे। दुर्ग अधिकार कर नवाबका सैन्य चन्दनकोटको चला गया। राहमें बड़नगरके जमीन्दार उत्तमनारायणका पत्रवाहक एक पत्र ले कर पहुंचा। उसमें लिखा था,—"बलदेवने सुदृढ़ सैन्यदलके साथ बड़नगर पर आक्रमण किया है। किन्तु उत्तमनारायण उन्हें बाधा न पहुंचा सकनेके कारण नवाबके सैन्यमें मिलनेकी आशासे खुण्टाघाट गये हैं।" मुहम्मद जमान् खान्ने कुछ सैन्य ले उसी समय बलदेवके विरुद्ध बड़नगरकी यात्रा की। राहमें उत्तमनारायण मिल गये। नवाबके सैन्यका अवशिष्ट अंश चन्दनकोट पहुंचा था। नवाब जमान् खान्ने पोमारी नदी पार हो बलदेवके एक क्षुद्र दुर्ग पर अधिकार किया। फिर वह अग्रसर होने लगे। बलदेवने देखा कि जमान् खान् प्रायः आ पहुंचे थे। उसी समय उन्होंने बड़नगर छोड़ अबो नामक स्थानको गमन किया। वहां बलदेव पर्वतके किनारे किनारे कई एक दुर्ग बना कर बैठ गये। जमान् खान्ने भी इसीसे कोट विष्णुपुरके जंगलमें स्कन्धावार स्थापन किया था। फिर उन्होंने वर्षा अतीत होनेपर बलदेव पर आक्रमण करना ठहरा लिया। उसी समय बलदेवने विष्णुपुरसे डेढ़ कोस दूर कालापानी नदीके तीरपर रहनेवाले विपक्षियोंका रक्षिदल छिन्न भिन्न कर डाला। पाण्डु और गोहाटीमें उसी समय उनका भी नूतन सैन्य आ पहुंचा था। उन्होंने बीचबीचमें रातको आक्रमण मार नवाबके सैन्यको व्यतिव्यस्त कर दिया। वर्षा बीत गयी। आसाम-राजके जामाता बलदेवसे आ मिले थे। इसके पीछे १६१७ ई० को ११ वीं अगस्तकी रातके समय बलदेवने विपक्षियोंके दो क्षुद्र दुर्ग अधिकार कर लिये। किन्तु दूसरे दिन सवेरे जमान् खान्ने हठात् कितने ही सैन्यके साथ बलदेव पर आक्रमण मारा था। उनके कुछ सिपाही बलदेवसे सामने लड़ते रहे। फिर अवशिष्ट सैन्यके साथ उन्होंने बलदेवके रक्षित स्थानोंपर

है। उसके पहिले नरकासुरने ही उस समय भगवती कामाख्याका मन्दिर बनवाया था।

रामायणके समय कामरूप (प्राग्ज्योतिषपुर)के शासनकर्ता नरकासुर थे। सीताको ढूंढनेके लिये सुग्रीवने वानरादि सब देशों और दिशाओंमें भेजे थे। एक वानर कामरूपमें भी जा पहुंचा। वानरराज सुग्रीवने उस समय कामरूपका ऐसा परिचय दिया था—

"योजनानि चतुःषष्टिर्वराहो नाम पर्वतः।
सुवर्णशृङ्गः सुमहानगाधे वरुणालये ॥ ३०
तत्र प्राग्ज्योतिषं नाम जातरूपमयं पुरम्।
तस्मिन् वसति दुष्टात्मा नरको नाम दानवः ॥३१"
(किष्किन्धाकाण्ड, ४२ सर्ग)

वर्तमान गौहाटीमें नरककी राजधानी थी।* गौहाटीके पश्चिम-दक्षिण पार्श्व नीलाचलके निकट नरकासुर नामक क्षुद्र पर्वत भी है।

नरकासुरके पीछे भगवान् श्रीकृष्णने उनके पुत्र भगदत्तको कामरूपके सिंहासन पर बैठाया था। पूर्वदिक् चीनदेश और दक्षिण समुद्र पर्यन्त भगदत्तने स्वीय शासन विस्तार किया। महाभारतके सभापर्वमें अर्जुनके दिग्विजय पर भगदत्तका विषय इस प्रकार लिखित है,—

"स किरातैश्च चीनैश्च वृतः प्राग्ज्योतिषोऽभवत्।
अन्यैश्च बहुभिर्योधैः सागरानूपवासिभिः ॥"

उन्होंने किरात, चीन, और समुद्रतीरवर्ती राजाओंसे परिवृत हो अर्जुनके साथ युद्ध किया था।

कुरुक्षेत्रमें युद्धके समय भी भगदत्तने चीन और किरातकी सेनासे दुर्योधनको साहाय्य दिया था। अनेक स्थलमें नरकको म्लेच्छ, कामरूपेश्वरको म्लेच्छोंका अधिप और कामरूपके अन्तर्वर्ती देशोंको म्लेच्छदेश लिखा गया है। प्रकृत कामरूपदेशका भी किसी किसी ग्रन्थमें म्लेच्छदेश नाम मिलता है। इसका कारण कामरूप तीर्थविवरणके प्रारम्भमें ही बता दिया है।

* गौहाटीका ही प्राचीन नाम प्राग्ज्योतिषपुर था।
"प्राग्ज्योतिषपुरं स्थानं कामाख्यादीनिषत्यकम्।"
(योगिनीतन्त्र, ११९ पटल)

योगिनीतन्त्रमें कामरूपके राजविवरण पर इस प्रकार भविष्यद्वाणी लिखी है—

"नरकासुरभूपस्य राज्यनाशो यदा भवेत्।
तद्दिनात् परमेशानि म्लेच्छाचारः प्रवर्तते ॥
ततोऽतीव दुराचारो कामरूपे भविष्यति।
सदा युद्धं महामायि सदा दुःखमेव च ॥
ईश्वरानवधन्यर्थाः सदा पीड़ापरायणाः।
कपूर्वकुल्लटापन्दे गते शाके दिवानिशाम् ॥
सौमारेच कुवाचेच यवनैश्च वहुलवधम्।
भविष्यति कामरूपे बहुसैन्यसमाकुलम् ॥
ततो रथी च सौमारं जित्वा यवन-ईप्सितम्।
सर्वमेवाकरोद्दार्यो मध्यार्कर्मदीपतिः ॥
तन्मुख्यार्थं समानाय कुवाचः श्रीघराश्रनाय।
वर्षान्ते यवनं जित्वा सौमारो राज्यनायकः ॥
कुमारीचन्द्रवाणीन्दौ गते शाके महेश्वरि।
कामरूपे:भवे. युद्धं घोरं सम्भविष्यति ॥
कामरूपे तदा राज्यं शाकमाद्यं महेश्वरि।
कुवाचवासतो भूत्वा यवनस्य भविष्यति ॥
यवनानां प्रसादेन तत: ससौरभिष्यति।
आसितव्यं कामरूपं सौमारेण कुवाचकैः ॥
यवनस्य कुवाचस्य सौमारस्य तथा प्रभुः।
कामरूपाधिपो देवि भ्रमणेन चामवः ॥
एवमेव बहुविधं भवेद तवयानीश्वरि।
क्रियते सतुचारवारं प्रथमं परमेश्वरि ॥
अभिषेक तदन्याद्ययवधिः प्राप्स्यति भामिनि।
भविष्यन्ति च ततः प्राणाधायपर्वतीपरि ॥
अस्मिन्नेव किरातानि चैव शैवपुरसन्निधौ।
कामाख्यायाः मठे भवे चण्डिका शक्यागमः ॥
नवयुवस्य देवेशि पुत्रचारा सु मध्यम।
बोधनाम्दे गते शाके श्रमहोरिपुयुवके ॥
विकतो भविता भूयं सौमारकामरूपयोः।
यवमार्दं तत्र संभूता कन्याआम्बर्कास्वयोः ॥
भविष्यन्ति च राजानः सर्व युद्धविशारदाः।
कुवाचेऽनेकेशाप्नेन पूर्व नवमाकुले: ॥
विभिन्नैश्चैव: समानीर्थं महायुद्धं भविष्यति।
चतुर्मुखेऽन्नेनकुमेऽनैरनुयोर्थि येमतः ॥
कौटिल्यो सम्पूर्णं भविष्यति न संशयः।
अत्रैव परमा माया योगिनीवरवन्दिता ॥
कामाख्या सर्वकामात्मा वसिष्ठसा वरप्रयो।
श्रीचक्रिणा सुरुक्माना हिमवद्धा दशनाङ्किता ॥
दर्शनार्थं समादिस्य रत्नमालं करिष्यति।
ततः कुवाचो यवनं जित्वा सौभ्यविशारदः ॥

आक्रमण किया। उस समय उनमें वैसा सैन्य न था। इसीसे वह एक एक कर विपक्षीके हाथ आ लगे। अनेक सेनापति मरे थे। फिर बहु सैन्य भी क्षय हुआ। कितनी ही बन्दूकों, तोपों और दूसरे हथियारोंकी हानि हुयी थी। किन्तु बलदेवको सम्पूर्ण पराजित होते न देख नवाबका सैन्य उसी दिन रातको विष्णुपुरके जङ्गलमें भाग गया। उसके पीछे नवम्बर मासमें चन्दनकोटसे नूतन सैन्यने आ तीन तरफसे बलदेव पर आक्रमण किया था। उस समय बलदेव या आसामराजका सैन्य पहुंचा न था। इसीसे विपक्षके भीषण आक्रमणमें बलदेवका अल्पसंख्यक सैन्य ठहर न सका। वह शीघ्र ही रण छोड़ भागा था। बलदेवने स्वयं दरङ्गकी राह पकड़ी। आसामराजके जामाता बन्दी बन गये। हतावशिष्ट सैन्यदल श्रीघाट और पाण्डुकी ओर भागा। वहां आसामराज ससैन्य रसद वगैरह लिये उपस्थित थे। नवाबका सैन्य एक बार उन पर आक्रमण करने गया। अभय पर्वत, श्रीघाट और पाण्डुमें भीषण युद्ध हुआ। आसामराज परास्त हो स्वराज्य लौट गये। कोचहाजो प्रदेश मुसलमानोंके अधिकारमें हो गया। आसामप्रान्तमें कलङ्ग नदी और ब्रह्मपुत्रके मध्य काजली दुर्ग अधिकार कर मुसलमान शान्त हुये। उधर एक दल सैन्यने दरङ्ग जा बलदेवको भगाया था। बलदेवने अवशेषको आसाममें शुम सिङ्गरो नामक स्थानमें आश्रय लिया। अन्तिम अवस्थामें दो पुत्रोंके साथ उन्होंने वहीं स्वर्गलाभ किया। इसी युद्धमें कामरूप सम्पूर्ण मुसलमानोंके अधीन हो गया।

उपरि-उक्त घटना पादशाह-नामेसे ली गयी है। किन्तु बुरञ्जी या मिस्टर मार्टिनके ग्रन्थमें बलदेवका नाम नहीं मिलता। परीक्षित् नारायणके चन्द्र नारायण* पुत्रकी बात भी किसी ग्रन्थमें देख नहीं पड़ती।

नरनारायणके पीछे होनेवाले सब राजाओंका विषय कोचविहारके इतिहासमें लिखा जावेगा।

कोचविहार देखो।

* फारसी पादशाहनामाके मतसे राजा चन्द्रनारायण परीक्षित्के पुत्र थे।

आसामकी बुरञ्जीको देखते शुक्लध्वजके पुत्र रघुदेवने राजा हो नगर संस्कार और हयग्रीव-माधवका मन्दिर निर्माण कराया। उनके पिताने आसामके अहोम राजाओंको युद्धमें पराभूत कर अपने शासनाधीन रखा था। किन्तु रघुदेव वह कर न सके। उन्होंने आसामके अहोमराजको मङ्गलदेवी नाम्नी निज कन्या दे निरापद राजत्व किया। आधुनिक बुरञ्जीके मतमें १५१५ शकको रघुदेव राजा हुये थे। रघुदेवने गदाधर तीर जो नगर बनाया, उसका वर्णित नाम गिलाझाड़ या गिलाविजय है। (यहां गिला गोलहा या बियन वृक्षका वन यथेष्ट था।)

रघुदेवके पुत्र परीक्षित्-नारायणके जो मन्त्री दिल्लीके बादशाहके पाससे कानूनगो हो कर आये थे, उनका नाम कवीन्द्र बड़ुवा था। रांगामाटीके वर्तमान जमीन्दार उन्हीं कवीन्द्र बड़ुवाके वंशधर हैं।

पटनामें परीक्षित्की मृत्यु हुयी। उनका राज्य मुसलमानोंके हाथ पड़ते भी मानसानदीके पश्चिमसे स्वर्णकोषीके पूर्व पर्यन्त उनके पुत्र विजितनारायणके अधीन रहा। वह मुसलमानोंके नीचे करद राजा बने थे। इसी प्रकार मानसानदीके पूर्वसे दिक्राई तक परीक्षित्के भ्राता बलितनारायण भी करद राजा हुये। बिजनीके राजा विजितनारायण और दरङ्गके राजा बलितनारायणके सन्तान हैं। सम्भवतः विजितनारायणने ही विजितनगर या बिजनी स्थापन किया था। पहले वह मुसलमानोंको करमें अर्थ देते थे। फिर करस्वरूप हाथी देनेका नियम हुआ। शेषको अंगरेजोंके अधीन अर्थ देनेका नियम पुनः बंध गया है।

मुसलमानोंके अधिकारसे कामरूप समस्त परिवर्तित हो गया। देशका आचार व्यवहार, भूमिका प्रबन्ध और राज्यप्रणाली बङ्गदेशकी भांति दीखने लगी।

बलितनारायण जिस भागके राजा हुये, कामतापुरका राजवंश मिटनेसे वह स्थान उतने दिनों तक एक प्रकार अराजक बन गया था। शेषमें अष्टीवरादि भुंयावोंने वह देश कितना ही सुशासित किया। किन्तु वह बात भी अधिक दिन न चली। मुसलमान राज्य जीत कर लूट मार करते थे। सुतरां उनके समय

[illegible]

([illegible], १११६ [illegible])

किसी समय कामरूपराज (नरक) मन्दबुद्धि होंगे। उसी समय उनका राज्य मिट जायेगा। तदवधि कामरूपमें म्लेच्छप्राय होंगे। निरन्तर दुर्व्यवहार और युद्धादि चलेगा। फिर देवतागण गन्धर्व प्रभृति भी पीड़ादायक बन जायेंगे।

१५११ शक(?)में कोमारों, कुवाचो और यवनोंका विपुल युद्ध उपस्थित होगा। इस युद्धमें मन्दारादि कुवाच जय पा एक वर्ष राज्यशासन करेंगे, फिर १५१८ शक(?)में कोमार कामरूप अधिकार कर बारह वर्ष राज्य चलावेंगे। इसी प्रकार ग्राम-कालके मध्य यवन, * कुवाच, कोमार † और ग्रह शासनकर्ता बनेंगे। तदनन्तर दूसरे भी कई म्लेच्छादि प्रबल होंगे। अन्तिम अधिक मर्यादाशाली शासक होनेसे पर्वत पर ग्राम युद्ध छेड़ेंगे। उसी समय दिक्करके पासमें कामाख्याका मठ टूट जायेगा। फिर ब्रह्मपुत्रका प्रवाह होनेसे गर्भोंको कमधारा घटेगी। इन घटनादिके पीछे सोलह वर्ष बीतने पर १५११ शक(?)में कोमार और कामपीठमें एक युद्ध होगा। तब स्थान स्थानमें युद्ध होनेके पीछे समस्त योद्धा करतोयाके तटपर पहुंच भयङ्कर संग्राम करेंगे। इस युद्धमें कुवाच, यवन और यान्ह विविध म्लेच्छ सैन्यमें बहुसंख्यक सैन्य तथा अश्व गजादि मरनेसे युद्धस्थल रक्त-प्लावित हो जायेगा। दिक्करवासी मुक्तमाला विमूर्छित

* [illegible]

[illegible] ([illegible])

† [illegible] ([illegible])

देशमें शान्ति स्थापित होना दूरकी बात थी, अधिक अशान्ति बढ़ गयी। भोट और कछाड़के अधिवासी दोनों ही उस प्रान्तमें महा उपद्रव मचाते थे। फिर भी बलितनारायण दरङ्ग नगरमें राजधानी बना देशके शासन पर मनोयोगी हुये। किन्तु आसामराजका उपद्रव न घटा। पीछे उनकी भ्रातुष्पुत्रीका विवाह होनेसे आसामराजके साथ उनकी मित्रता हो गयी।* स्वर्गनारायणने नूतन पत्नीके नाम पर नगरकी स्थापना और एक नदीका नामकरण किया। बलितनारायणकी धर्मशीलता तथा सद्व्यवहारसे प्रीत हो उन्होंने उन्हें 'धर्मनारायण' उपाधि दिया और उनके कनिष्ठ भ्राता गजनारायणको बेलतलाका राजा बनाया। बेलतलाके राजा उक्त गजनारायणके वंशधर हैं। आधुनिक बुरञ्जीके मतमें १६३८ शकको बलितनारायणने स्वर्गलाभ किया और उनके पुत्र महेन्द्रनारायणको सिंहासन मिला। महेन्द्रनारायणने ब्राह्मणोंको बहुतसी निष्कर भूमि दी थी। उन्होंने १८ वर्ष निरापद यथेष्ट शान्तिसे राजत्व कर १६४१ शकको परलोक गमन किया। फिर उनके पुत्र चन्द्रनारायण राजा हुये। चन्द्रनारायणका राज्यकाल १७ वर्ष रहा। पीछे तत्पुत्र सूर्यनारायण राजा बने। आधुनिक बुरञ्जीके मतमें उनके समय १६८२ ई०को मच्छ्‌र खान् नामक किसी मुसलमान सेनापतिने उक्त देश पर आक्रमण किया था। उस युद्धमें सूर्यनारायण बांध कर दिल्ली भेजे गये। राहमें सूर्यनारायण किसी प्रकार भाग आये। किन्तु वह लज्जासे फिर सिंहासन पर न बैठे। सूर्यनारायणके बन्दी होते समय उनके भ्राता इन्द्रनारायण पांच वर्षके थे। मन्त्रियोंने मिल कर उन्हें राजा बनाया। किन्तु मन्त्रियोंमें परस्पर विवाद उठनेसे आसामके अहोमराजने कामरूप पर्यन्त अधिकार कर लिया था। फिर भी बलितनारायणका वंश बिलकुल मिटा न था। उनके वंशीय दरङ्गके सिंहासन पर प्रतिष्ठित रहे। फिर इन्द्रनारायणके पीछे आदित्यनारायणने सिंहासनाधिरोहण किया। उनके समय राज्यकी सीमा उत्तरमें गोसाईं-कमलकी आलि, दक्षिणमें ब्रह्मपुत्र, पूर्वमें धनगिरी और पश्चिममें बड़नदी निरूपित हुयी। उसीके मध्य कियदंश भाग कर आदित्यके भ्राता मधुनारायण राजा बने। आदित्यके मरने पर ध्वजनारायणको सिंहासन मिला। उनके समय दरङ्ग राज्य सम्पूर्णरूपसे अहोमके अधीन हो गया। सूर्यनारायणके धीरनारायण नामक एक पुत्र थे। (आधुनिक बुरञ्जी मतमें १७४४ शक।) उन्होंने ध्वजनारायणको मार राज्य लिया। किन्तु वह तीन वर्ष ही राज्य कर डिमरुयाकी ओर भाग गये। उनके पीछे महतनारायण बड़े पराक्रमी हुये। वह दोनों भाई एकत्र राजा बने थे। उनके पीछे (१०८८ई०) कीर्तिनारायणके पुत्रने राज्य पाया। उनके समय दरङ्गके राजाओंका पराक्रम बिलकुल खर्व हो गया।

बलितनारायणके समयसे इन्द्रनारायणके समय पर्यन्त वही कामरूप पर शासन करते रहे। मध्य मध्य मुसलमानोंके आक्रमणमें भी उक्त वंशका ही प्राधान्य था। इन्द्रनारायणके समय कामरूपमें अहोमका अधिकार हुवा। किन्तु ध्वजनारायणके समयमें ही कामरूपकी स्वाधीनता मिटी थी। उनके पीछे कीर्तिनारायणके पुत्रके समयसे दरङ्ग राज्यका नाम उठ गया।

बिजनीके राजवंशका इतिहास आलोचना करनेसे समझते हैं कि महाराज विश्वसिंहके दो पुत्र रहे। ज्येष्ठ नरनारायण भूप करतोया तथा विहारके मध्य और कनिष्ठ शुक्लध्वज भूप विहारसे दिकराई तक राज्य करते थे। शुक्लध्वजके पुत्र रघुदेवनारायण रहे। रघुदेवके तीन पुत्र थे। उनमें ज्येष्ठ परीक्षित्नारायण बिजनीके, मध्यम बलितनारायण दरङ्गके और कनिष्ठ गजनारायण बेलतलाके राजा हुये। ज्येष्ठ परीक्षित्नारायणको दिल्लीके सम्राट्‌ने खिलअत दी थी। देशको दिल्लीसे लौटते समय उन्होंने राह-

---

* पहले कह चुके हैं कि परीक्षित्नारायणने आसामराजके आक्रमणसे बचनेके लिये स्वर्गनारायणको माङ्गरेदी नाम्नी कन्या प्रदान की थी। इससे समझ पड़ता कि परीक्षित्नारायणके राज्यकालमें ही बलितनारायण छोड़ इधर पर शासन करते थे। पीछे भ्राताके मरने पर उन्होंने स्वाधीन हो मुसलमान शासकोंसे मिल राज्य ग्रहण कर लिया।

श्यामवर्णा कामाख्या देवी महास्यमुख लोलजिह्वा विस्तारपूर्वक योगिनियोंके साथ पर्वतके शिखर पर चढ़ कर रणका शोणित पान करेंगी। कुवाच (कोच) इस युद्धमें जीत दश दिन वास कर स्वदेशको लौट जायेंगे। इसके पीछे कामरूपदेशमें ब्राह्मण राजा होंगे। राज्यमें वह प्रजादिको पूजा और जप प्रभृति कार्यमें लगा देंगे। इसी प्रकार वह तीन वर्ष राजशासन करेंगे। फिर ब्राह्मणराजा योनिमण्डलके निकटवर्ती स्थानमें वासस्थान ठहरा क्रम क्रमसे एकच्छत्री राजा बन बैठेंगे। इन राजाकी पत्नी श्यामवर्णा होंगी। पति और पत्नी दोनों सर्वदा पार्वतीकी आराधनामें रह यथाकाल सवित नामक एक पुत्र लाभ करेंगे। इस पुत्रके जन्मसे बारह दिन पर्यन्त अश्वाचल पर्वतसे अश्वगन्धिका आविर्भाव होगा। उससे कामरूपवासी सब धनी बन जायेंगे। फिर इसी समय वशिष्ठ ऋषिका अभिशाप छूटेगा।

१६श शताब्दके आरम्भमें कोचविहार राजवंशके मूलपुरुष शिववंशीय विश्वसिंहने पराक्रमता दिखायी थी। कोचवंशसम्भूत हाजो नामक किसी व्यक्तिके हीरा और जीरा नामकी दो परमसुन्दरी कन्या रहीं। कामरूप अराजक होते समय कोच निकटवर्ती अन्यान्य इतर लोगोंको वशीभूत कर कुछ पराक्रान्त बन गये थे। पराक्रममें कोचोंके मध्य हाजो अग्रणी रहे। प्रवादानुसार महादेवके औरससे हीराके गर्भमें शिशु वा शिवसिंहने और जीराके गर्भमें विश्व वा विश्वसिंहने जन्म लिया था।* कामतापुर देखो। ई० १६वें शताब्दके प्रारम्भ पर ही विश्वसिंहने कोचविहारमें राजत्व किया। विश्वसिंहने मुसलमानों द्वारा विध्वस्त कामतापुर राज्य छुड़ा लिया था। आधुनिक पुरवृत्तोंके मतमें उन्होंने १४२०।३० शक (१४९८।१५०८ ई०)के मध्य कामरूप अधिकार किया। उससे पहले कामरूपमें थोड़े दिन मुसलमानोंका राजत्व रहा। हुसेनशाहके पुत्र शासनकर्ता थे। किन्तु उस समय कोचोंका बड़ा उत्पात रहनेसे हुसेनशाहके पुत्र नसरत शाह कामरूप छोड़ने पर बाध्य हुये। विश्वसिंहने इसी सुयोगमें अवशिष्ट मुसलमानोंको भगा राज्य अधिकार किया था। उन्होंने अति पराक्रमके साथ १५२८ ई० तक राजत्व चलाया। उन्हींके राजत्वकालमें लुप्त कामाख्यापीठका उद्धारसाधन किया गया था। फिर कामाख्याके अनुवर्ती अनेक पीठस्थान आविष्कृत भी हुये। कोचविहारके प्रकृतपक्षमें राजा होते भी कामरूप उस समय विश्वसिंहके शासनाधीन था। कामरूपकी सीमा कोचविहार तक फैली हुई थी। विश्वसिंहके समय अहोमोंने उजनिखण्ड पर आक्रमण किया। विश्वसिंहने सैन्य भेज आक्रमण हटाया था। किन्तु उनके सैन्यदलके उक्त स्थान छोड़ते ही फिर अहोमोंने उत्पात उठाया। सुतरां विश्वसिंहने बाध्य हो उनसे सन्धि की थी। उसी समय राङ्गलगढ़ कामरूप और विहार राज्यकी पूर्वसीमा माना गया।

विश्वसिंहने डिमरुया प्रभृति स्थानोंके बलवन्त क्षमताशाली विख्यात लोगोंको वशीभूत कर लिया था। फिर उन्होंने कपास, तांबे, रांगे, सीसे, रूपे, सोने, चांदी, लोहे, कांच, मिट्टी, नमक वगैरह पर कर लगा राज्यका आय बढ़ाया। उन्हींके समय भोटानवाले सर्वदा उपद्रव उठाया करते थे। उस समय भोटानमें देवराज राजा थे। विश्वसिंहने उनके साथ सन्धि की। राज्यके सीमान्त-प्रदेशमें शान्ति रक्षाके लिये विश्वसिंहके सिपाही नियुक्त थे।

विश्वसिंहके १८ सन्तान रहे। उनमें नरनारायण सर्वज्येष्ठ थे। उनको ही सिंहासन मिला। उनके परवर्ती कनिष्ठ भ्राता शिवाराय या शुक्लध्वज राज्यके दीवान या सेनापति बने। नरनारायणने मल्लदेवके* भ्राता रामरायकी कन्या कमलप्रिया आईसे विवाह किया था। किसी किसीके कथनानुसार शुक्लध्वजका

* आसामी भाषामें रामचरणशर्मा पण्डितका लिखा एक ग्रन्थ है। उसको देखनेसे मालूम पड़ता है कि हरिदास नामक किसी व्यक्तिके औरस और हीराके गर्भसे विश्व वा विश्वसिंहका जन्म हुआ। रामचरणशर्मा महाराज नरनारायणकी सभामें पण्डित थे।

* उक्त मल्लदेव नीलाम्बरदेवके वंशसम्भूत थे। वह मूर्खाशेष रहे, समकालिक, कामरूपमें वैष्णवधर्म प्रचार किया था। नीलाम्बरदेवकी भांति वह भी कामरूपमें विशेष आदर पाते हैं।

पर राजमहलमें स्वर्गलाभ किया। उनके साथ जो मन्त्री या दीवान् थे, वह कामरूपके कानूनगो हुये। परीक्षित्‌के चन्द्रनारायण नामक एक पुत्र थे। उन्हींके वंशसे बिजनीके राजाओंकी उत्पत्ति है।

बख्तियारके सहयोगी मिनहाज्‌उद्दीन्‌ने तबकात-इ नासिरी नामक अपने इतिहासमें लिखा है,—"लक्ष्मणावती अधिकारके कई वर्ष पीछे (सम्भवतः ६०१ हिजरीको) बख्तियार तिब्बत और तुर्कस्थान जीतनेको अग्रसर हुये। तिब्बत और लक्ष्मणावतीके मध्यवर्ती भूभागमें उस समय कोच, मेछ तथा तिहारु (वर्तमान थारु) नामक तीन प्रधान जातिका वास था। कोचों और मेचोंका एक सरदार (तबकात-इ-नासिरीमें इस सरदारका नाम मेचोंका "अली" लिखा है) बख्तियारसे हार गया। फिर उसने मुसलमान धर्मग्रहण किया था। वही पथप्रदर्शक बन बख्तियारको ससैन्य वर्धनकोटकी राह बागमतीके तीर ले गया। उस स्थानसे वह दश दिनमें पार्वत्य प्रदेशके किसी बीससे भी अधिक मेहराबवाले प्रस्तर-सेतुके निकट पहुंचे थे। उस सेतुकी रक्षाके लिये बख्तियार एक दल सैन्य छोड़ आगे बढ़े। सेतु पार होने पर कामरूपके रायने किसी विश्वासी व्यक्तिको भेज कहला भेजा कि उस समय तिब्बत पर आक्रमण करना युक्तियुक्त न था। उस समय लौट कर अधिक सैन्य संग्रह करना उचित था। फिर उन्होंने भी स्वीकार किया कि आगामी वर्ष वह अपना सैन्यदल ले उक्त देश जीतनेका प्रयास उठावेंगे। बख्तियारने किन्तु उक्त प्रस्ताव ग्राह्य न किया। उसके पीछे वह १६ वें दिन तिब्बत पहुंचे। वहां युद्धादिके पीछे अपने सैन्यमें कुछ गड़बड़ हो जानेसे लौटनेको बाध्य हुये। उनके लौटनेका मार्ग कामरूप और सिहुतके मध्य तीस गिरिवर्त्मका एकतम था। फिर १५ दिन अनाहार अविश्रान्त चल उक्त सेतुके निकट आने पर उन्हें उसके दो मेहराब टूटे मिले। सेतु रक्षाके लिये नियुक्त सैन्यदलमें दो नायकोंके मध्य विवाद बढ़ा था। इसीसे वह मुख्यकार्य छोड़ चलते बने। फिर कामरूपके हिन्दुओंने उसे तोड़ा था। पार जानेका उपाय न देख बख्तियारने ससैन्य एक देवमन्दिरमें आश्रय लिया। फिर उन्होंने बेड़ा बांध कर पार होनेके लिये काष्ठादिके संग्रह करनेकी चेष्टा की। कामरूपके राय उक्त संवाद सुन ससैन्य बढ़ आये। उन्होंने मन्दिरको चारो ओर तीक्ष्णमुख वंशदण्ड गाड़ और उनमें बरगेअन्दो डाल मुसलमानोंके सैन्यका निर्गमपथ रोकना चाहा। बख्तियारका सैन्य विपद् देख एक ओर तोड कर निकला और बिलकुल नदीतीर पहुंचा था। कामरूपका सैन्य पीछे लगा। फिर मलेच्छोंने प्राणभयसे घोड़ेके साथ नदीमें कूद कर पार जानेकी चेष्टा की। किन्तु नदीके मध्यस्थलमें पहुंच प्रायः सब डूब मरे। केवल बख्तियार और कुछ थोड़े लोग अति कष्टसे प्राण बचा दूसरे पार आये। उक्त कोच-सरदार अलीने जा कर उन्हें उठाया और दीनाजपुरके देवकोटमें पहुंचाया।" बङ्गालवाली एशियाटिक सोसाइटीकी पत्रिकामें २० खण्डके २८१ पृष्ठ पर डाल्टन साहबने सिलहाको नामक सेतुका वर्णना इस प्रकार लिखी है,—"यह सेतु पश्चिम कामरूपमें गोहाटी पहुंचनेकी एक पुरानी ऊंची राहके बीच खड़ा है। सम्भवतः इसी सेतुसे बख्तियार खिलजी (मतान्तरसे बख्तियारके पुत्र मुहम्मद खिलजी) तातारके अश्वारोही ले गोहाटीमें घुसे थे। कारण, यह गोहाटीके उत्तर-पश्चिम प्रान्तको गिरिमालासे अति निकट अवस्थित है। इस पर्वत पर आज भी नगरप्रवेशके मार्ग और पथरक्षोपयोगी बहिर्दुर्गके भग्नावशेषादि देख पड़ते हैं। किन्तु इसके विश्वास करनेका यथेष्ट कारण मिलता है कि वह महम्मद-इ-बख्तियार खिलजीके तिब्बत-पथका मिनहाजोक्त बृहत् प्रस्तर-सेतु हो नहीं सकता।

उसके पीछे गौड़के नवाब गयास-उद्-दीन (१२११-१७ ई०) कामरूप जीतने गये। कामरूपसे सदिया नामक स्थान पर्यन्त उन्होंने जय किया और कर लिया था। किन्तु सदियाको पूर्वओर पहुंच वह परास्त हुये। १२५७-५८ ई०को गौड़के सेनापति मलिक ऐबकने कामरूप पर आक्रमण किया था। उन्होंने वहां एक मसजिद बनवायी। किन्तु वह युद्धमें जयलाभ न कर सके। वर्षासे देश जलमें डूब जाने पर उनको यथेष्ट सैन्यहानि हुयी। अन्तको वह मारा

असमविहारी विवाह हुआ। विवाहके स्थानको आज भी "रामरायको कोठी" कहते हैं। ध्वंसावशिष्ट भित्तिके स्तूप आज भी उस स्थान विद्यमान है। वहां मेला भी लगता है। असमनारायण नामक किसी दूसरे कुमारने भी नारायण और आसामके मध्य समुद्रके तट किनारे एक बांध बांधा था। उस बांधका नाम "गोसाईं कमलकी आलि" है। गोपीनपुर और अलवाईगुड़ीके मध्य अनेक स्थलोंमें उसके चिह्न आज भी वर्त्तमान हैं। उस समय पठान वा मुगल आसाममें पठान रामचान् भुंया नामक एक राजा थे। उन्होंने युद्धमें युद्धके विद्रोहको आग सुलगायी। किन्तु उनका भय देख उन्हें भागना पड़ा।

आसामकी बुरञ्जी और अन्यान्य इतिहासके अनुसार विश्वसिंहके बड़े पुत्र नरनारायण और छोटे शुक्लध्वज वा चिलाराय थे। किन्तु राममहलनी पण्डित-प्रवीत ग्रन्थमें लिखा है,—

विश्वसिंहके मल्लसिंह नामक एक पुत्र थे। मल्लसिंह अल्प वयसमें लोकान्तर प्राप्त हुये। उनकी कन्याके गर्भसे (ठीक नहीं किसके औरससे) अपुत्रक विश्वसिंह राजाके परम सुन्दर रूपवान् एक दौहित्रका जन्म हुआ। पण्डितोंने उसका नाम नारायण रख दिया।

नरनारायण और उनके भ्राता शुक्लध्वज (चिलाराय) का नाम कामरूपमें सर्वत्र प्रसिद्ध है। महाराज नरनारायण अधिक क्षमताशाली थे। उन्होंने विदेशियोंके हाथसे सम्पूर्णरूप उद्धार कर कामरूपकी बहुत उन्नति की। महाराज नरनारायणका दूसरा नाम मल्लदेव वा मल्लनारायण था। उनके समय पुरुषोत्तम विद्यावागीशने 'प्रयोगरत्नमाला' व्याकरण बनाया।* वह व्याकरण आसाममें प्रचलित है।

विधर्मी विदेशी पठान कालापहाड़ने १५५३ वा १५६६ ई०को भगवती कामाख्या देवीका मन्दिर तोड़ने गया था। कोचविहारमें उस समय महाराज नरनारायण राजा थे। कालापहाड़के अत्याचारसे समस्त दो प्रदेश व्यथित थे। कालापहाड़ भगवतीका मन्दिर तोड़ और पीठस्थानमें सुन्दर सुन्दर अन्यान्य देवमूर्ति बिगाड़ कर लौट गया। महाराजने अपने भ्राताके साथ भगवतीके मन्दिरादिका पुनः संस्कार किया। उससे कम बारह वर्षमें वह जीर्णसंस्कारका कार्य सम्पन्न हुआ था। कामाख्या मन्दिरकी वर्त्तमान (चलन्ता) मूर्ति (जो साधारणतः भरवायी जाती है) महाराज नरनारायणकी बनवाई है। वर्त्तमान मन्दिरके मध्यभागमें भी महाराज नरनारायण और उनके भ्राता शुक्लध्वजकी प्रस्तर खोदित सुन्दर दो प्रतिमूर्तियां आज भी वर्त्तमान हैं।

महाराज नरनारायण और शुक्लध्वज महामायाके परम भक्त थे। भगवती भी उन पर अतीव अनुग्रह रखती थीं। महाराज कोचविहारसे नित्य आकर भगवतीकी पूजा आदि निर्वाह करते थे। केन्दुकलाई नामक कामाख्याके एक पुजारी ब्राह्मण, महाराज नरनारायण और शुक्लध्वजके समय पर कामरूपमें अद्यापि निम्नलिखित जनप्रवाद प्रचलित है—सन्ध्याको केन्दुकलाईके आरति करते समय भगवती स्वयं ही अप्सरा बनकर ताल ताल पर नृत्य करती थीं। महाराज नरनारायणने एक दिन केन्दुकलाईसे भगवतीकी चैतन्य मूर्ति देखनेका उपाय पूछा। उन्होंने कहा कि नाट्य समय सन्ध्याको किसी रन्ध्रसे देखने पर आपको भगवतीकी चैतन्य मूर्तिका दर्शन होगा। महाराजने इस परामर्शके अनुसार एक दिन जाकर भगवतीको देखा था। हठात् भगवतीको यह बात मालूम हो गयी। उन्होंने केन्दुकलाईका सिर काट महाराज नरनारायणको शाप दिया,—'अविश्वासी! तुम और तुम्हारे वंशका कोई भी हमारा दर्शन कर न सकेगा। मन्दिरको ओर देखनेसे निर्वंश होगा।' इस कारण आज भी कोचविहार, बिजनी, दरङ्ग इत्यादि स्थानके राजवंशीय कामाख्याके मन्दिरकी ओर देख नहीं

* [illegible] ([illegible]) [illegible] १९०० [illegible]

† [illegible] "[illegible]" "[illegible]" और "[illegible]" भी कहते हैं।

दुरवस्थामें पड़ कर गौड़ लौटे। फिर १२५८ ई०को गौड़के नवाब तुगलक खान् स्वयं कामरूप पर चढ़े थे। कामरूपराजने उन्हें बांध कर मार डाला। यह निरूपित करना दुःसाध्य है, उस समय कामरूपमें कौन राजा थे। कामरूप जिलेमें "वेदरगड़" नामक एक पुरातन गढ़ है। प्रवादानुसार १२०४ से १२५८ ई० बीच कोई मुसलमान-सेनापति कामरूप पर आक्रमण करने गये थे। उनके हाथसे देशको रक्षा करनेके लिये फेंगुआ नामक राजाने वह गढ़ बनवाया। परन्तु उसके पहले वेदरदेवने उक्त गढ़ स्थापित किया था। फेंगुआके पीछे फिर मुसलमान वहां न पहुंचे। एक बार राजा नीलाम्बरके समय गौड़के नवाब हुसेनशाहने (१४९८-१५०६ ई०) १२ वत्सर अवरोध करनेके पीछे कामरूप पर अधिकार किया था। हुसेन शाह कामतापुर जीत कर स्वीयपुत्र नसरत शाहको प्रतिनिधि बना बङ्गालको लौटे। नसरत शाह कोचविहार-राजवंशके आदि-पुरुष विश्वसिंहसे हारकर भागे थे। फिर कामरूपके सौमारखण्ड (वर्तमान आसाम)में चहुंमुङ्ग वा स्वर्ग-नारायण राजा हुये। (१४९७-१५३९ ई०) उस समय तुरबक नामक किसी पठान-सेनापतिने काम-रूपके अन्तर्गत उजाई देश पर आक्रमण किया। आसाममें कलियाबर नामक स्थान पर युद्ध हुआ। युद्धमें तुरबक जीते थे। किन्तु स्वर्गनारायणके प्रधान मन्त्री कन्‌सेंगने उनके विरुद्ध युद्धयात्रा की। वह तुरबकको पराजित कर करतोयाके अपर पार भगा गये थे।* फिर विश्वसिंहके पुत्र नरनारायणके समय कालयवनने कामरूपमें गौहाटी तक पहुंच कर अनेक देवालय नष्ट किये। परीक्षित्‌नारायणके मरने पर ढाकाके नवाबने कामरूपके अन्तर्गत हाजोप्रदेश (परीक्षित्‌का राज्य) ले लिया था। मुसलमान सेनापति मकरम खान् रांगा-माटीमें रह उक्त प्रदेश पर शासन करने लगे। फिर बहटेनीलस्मी नामक कोई व्यक्ति रांगामाटी गया था। उसके पीछे सैयद अबू बकर नामक एक व्यक्ति आसाम जीतने गये। तेजपुरके निकट भरलीमें युद्ध हुआ। युद्धमें अबूबकर मारे गये। उस समय कामरूपका अधिकांश अहोम राजाके, कुछ अंश रांगामाटीवाले मुसलमान शासनकर्ताके और कुछ अंश राजा दरंगके अधीन था। कुछ दिन पीछे मिर्जाबाद नामक रांगा-माटीके किसी शासनकर्ताने अहोम राजाओंके हाथसे गौहाटी निकाल लेनेका यत्न किया। किन्तु वह सफल न पड़ा। शेषको उनके परवर्ती बहरामबेग उसमें कृत-कार्य हुये। फिर क्रमशः मिर्जा रमन खान्, अबदुल-इसलाम शाह, इसलाम खान्, शेख बहराम खान्, शेख उमर्दी खान्, मकदूम इसलाम और मही-उद्-दीन रांगामाटीके शासनकर्ता बने। उसी बीच मोमाई-तामूली बड़बड़ुवा नामक किसी आसामी सेनापतिने एक बार अत्यल्प दिनके लिये गौहाटीका उद्धार किया था। किन्तु वह फिर छोड़नेको बाध्य हुये। फिर मिर्जा जैन-उल-आबदीन, इसफन्दार खान्, नवाब नूर-उल्ला अनवर खान्, मिर्जा हुसेन खान्, जारो मियान्, सैयद हुसेन, हैयद कुतुब, नासुबा, प्रभृति कई लोगोंने कुल २६ वर्ष कामरूप पर शासन किया। उक्त शासन-कर्ताओंमें कोई हाजो, कोई रांगामाटी, और कोई गौहाटीमें रहता था। शेषको उस समय समस्त कामरूप जिला एक प्रकार मुसलमानोंके अधीन था। बिजनीका राज्य और ग्वालपाड़ा जिला भी मुसल-मानोंके ही हाथ था। केवल दरङ्ग-राज स्वाधीन रहे। किन्तु वह भी मुसलमानोंका प्रभुत्व मानते थे। १६५४ ई०को जयध्वज सिंह वा सुतामला रङ्गपुरमें अहोम-सिंहासन पर बैठे। उनके किसी सेनापतिने गौहाटी अधिकार किया। १६६२ ई०को मीर जुमला कोचविहार जीतने गये। गौहाटीके पूर्व उजाई गड़गांव तक उनका अधिकार हुआ। फिर मीर जुमला स्वयं पीड़ित हुये। उनके सैन्यमें भी

* इससे पहले इस ग्रन्थके किसी स्थान पर कामतापुरके विवरणमें नसरत शाहके हाथसे विश्वसिंह द्वारा कामतापुर वा कामरूपराज्यके उद्धार होनेकी बात लिखी जा चुकी है। फिर यहां देखते हैं कि अहोम राजा स्वर्गनारायणके मन्त्री करतोया तक तुरबकके पीछे लगे थे। पक्षान्तर पर तुरबक नामक किसी पठान सेनापतिके कामरूप जीतनेकी बात भारतवर्ष या बङ्गालके दूसरे इतिहासोंमें नहीं मिलती। यह विषय पर्यालोचना करनेसे समझ पड़ता है कि तुरबकके कामरूप आक्रमणकी कथा अमूलक है। क्योंकि विश्वसिंहने कोचविहार और कामतापुरसे इसी तुरबकके अनुचरको उच्छेद की थी?

जाते आंख नहीं उठाते। किसी कार्यवश कामाख्याकी ओर गमन करते समय कपड़ेसे मुंह छिपा लेते हैं।

मृत्युके पीछे विश्वसिंहका राज्य नरनारायण और शुक्लध्वज दोनों पुत्रोंके मध्य बंटा था। नरनारायणको स्वर्णकोषीके पश्चिम तीर और शुक्लध्वजको उसके पूर्व तीरका समस्त राज्य मिला। शुक्लध्वजके अंशमें ही ब्रह्मपुत्रके उभय तीरका भूभाग पड़ा। सुतरां कामरूपमें भी उन्हींका अधिकार था।

शुक्लध्वजके पीछे उनके पुत्र रघुदेवनारायण राजा हुये। उनके दो पुत्रोंमें ज्येष्ठ परीक्षित् थे। कनिष्ठका नाम ज्ञात नहीं। उन्हें जायगीरकी भांति दरङ्ग प्रदेश मिला था। उनके वंशधर आज भी आसामी राजाओंके अधीन उक्त प्रदेश अधिकार करते हैं। परीक्षित्ने समग्र राज्यके अधीश्वर हो गिलाझाड़ नामक स्थानमें प्रासाद बनाया। वहां राजप्रासादका भग्नावशेष आज भी देख पड़ता है। प्रासादके निकट ही १८ दुर्ग भी बने थे। उनकी सभामें नित्य ७०० वेदपारग ब्राह्मण उपस्थित रहते थे। फिर उक्त नगरमें ही ब्राह्मणोंका आवास था। परीक्षित्के ही समयमें ढाकेके मुसलमान शासनकर्ताने मुगलसम्राट्के प्रतिनिधित्वमें राजस्व मांगा था। फिर उन्होंने सताना भी शुरू किया। परीक्षित्ने भीत हो मन्त्रियोंसे परामर्श लिया था। फिर वह सम्राट्के पास आगरे गये। वहां सम्राट्ने उन्हें दरबारमें सादर ग्रहण किया। ढाकेके नवाब पर आदेश हुवा कि परीक्षित् जितना रुपया राजस्वमें दें उतना ही वह ले लें, कोई हिकमत न करें। राजाने लौट कर सरल मनसे नवाबको दो करोड़ रुपये देने कहा। उनके मन्त्रीने यह सुन मुसलमानोंके अपरिमित अर्थलोभकी बात बतायी। इससे वह महाभीत हो गये। शेषको परामर्श करने पर स्थिर हुवा कि एक बार वह फिर सम्राट्के दरबारमें जा भ्रम संशोधन कर आते। उनके साथ मन्त्री भी साथ हो गये। किन्तु दुर्भाग्यक्रमसे जाते समय पटनेमें (किसीके मतानुसार राजप्रासादमें) राजा परीक्षित् मर गये। इसी सुयोगमें नवाबकी फौजने प्रतिश्रुत अर्थके लोभसे राज्य पर अधिकार कर लिया। परीक्षित्के मन्त्री अनेक कष्टसे सम्राट्के दरबारमें पहुंचे थे। उन्होंने जा कर समस्त विवरण निवेदन किया। सम्राट्ने उन्हें कानूनगोके पद पर नियुक्त कर विदा किया था। उस समय यह राज्य चार सरकारोंमें बंट गया—ब्रह्मपुत्रके उत्तर उत्तरकूल या ढेकेरी सरकार, दक्षिण दक्षिणकूल, पश्चिम बङ्गाल सरकार और गौहाटीके साथ कामरूप सरकार। परीक्षित्का भ्रातृराज्य दरङ्ग उन्हींके अंशमें रहा। परीक्षित्के पुत्र चन्द्रनारायणने एक बड़ी जमीन्दारी भी पायी थी। वह जमीन्दारी आज भी उनके वंशीय भोगते हैं। प्राचीन मन्त्री (नये कानूनगो)को भी उनके लिये बहुतसी जमीन्दारी मिली। उक्त घटना प्रायः १६०३ ई०में हुयी थी। एक मुसलमान फौजदार नियुक्त हो रांगामाटी नामक स्थानमें रहने लगे। फिर राजा मानसिंहके बङ्गाल-विहारके नवाब होते समय इस देशकी विशेष उन्नति हुयी। औरङ्गजेबके समय मीरजुमला सैन्यदल ले आसाम जय करने आये थे। उनके पीछे कामरूपराज्यके उक्त अंशसे कामरूप, उत्तरकूल और दक्षिणकूल सरकारका कुछ भाग आसामवाले राजाओंके अधिकारमें चला गया। उक्त घटनाके ७० वर्ष पीछे रांगामाटीकी फौजदारी उठ घोड़ाघाटमें स्थापित हुयी।

मीरजुमलाके आक्रमणके पीछे आसामके राजाओंने हिन्दूधर्म ग्रहण किया था। फिर वह नाममात्र फौजदारकी अधीनता मान राजत्व करने लगे।

नरनारायण और शुक्लध्वज उभयके मध्य राज्यविभागको बात पहले लिख चुके हैं। किन्तु शुक्लध्वजके जीवित कालमें राज्यविभाग हुवा न था। शुक्लध्वजके मरनेके पीछे नारायण अपुत्रक थे। इसीसे उन्होंने शुक्लध्वजके पुत्र रघुदेव नारायणको पोष्यपुत्र मान ग्रहण किया। उसके कुछ दिन पीछे उनके एक पुत्र हुवा। रघुदेवको उससे भविष्यत्में राज्यप्राप्तिकी आशा न रही। इससे वह भीतर ही भीतर विद्रोहाचरणमें प्रवृत्त हुये। अन्तमें

विद्रोह होनेकी सूचना मिली थी। इसीसे वह राजा जयध्वजसे सन्धि कर लौट गये। मजूम खान् अधिकृत प्रदेशमें शासनकर्ता रहे। उनके पीछे मसीद खान् और सैयदफीरोज खान् उक्त प्रदेशके शासनकर्ता हुये। अहोमराज चक्रध्वज सिंहके निकट राजस्व वसूल करनेके लिये उनका दूत गया था। उन्होंने उसे अपमान कर निकाल दिया और गोहाटी पर्यन्त स्थान अधिकार किया। दिल्लीश्वरने क्रुद्ध हो १६६८ ई० के समय राजा रामसिंहको भेजा था। रामसिंहने आ गोहाटी पर अधिकार किया। फिर वह उत्तरके अभिमुख अग्रसर हुये। उस समय कामरूपके सीमान्तस्थानमें वडफूकन उपाधिधारी कोई शासनकर्ता रहते थे। १६२७ ई०को स्वर्गनारायणने उस पदकी सृष्टि की थी। वह सीमान्तस्थानमें रह अहोम राज्यका विदेशीय आक्रमण रोकते थे। राजा चक्रध्वजके समय लाछित बड़फूकन रहे। वह उक्त मोमाई-तामूली फूकनके पुत्र थे। लाछित बड़ फूकनने राजा रामसिंहको गर्वित वचनसे कहला भेजा कि १६६२ ई०को मीरजुमला रणमें हार अहोमराजसे सन्धि कर गये थे। इस समय अहोमराज न तो दिल्ली-सम्राट्के अधीनस्थ रहे और न उन्हें राजस्व देनेको प्रस्तुत थे। लाछित बड़फूकनका सदर्प वाक्य सुन मुसलमानोंका सैन्य युद्धको अग्रसर हुआ। १६६८ ई० को औरंगजेबकी सेनाके साथ कामरूपके शासनकर्ता लाछित बड़फूकनका घोरतर संग्राम सराघाट नामक स्थानमें पड़ा। उस संग्राममें मुसलमानसैन्य पराभूत हो भागा। अहोम-सैन्यने मानहा नदी तक उनका पीछा किया। उसी समयसे मानहा नदी अहोमराज्यकी पश्चिम सीमा मानी गयी। अहोमराजने नदीतीर पर हाथीरात नामक स्थानमें एकदम सैन्य रखा था। १६०१ शकमें अर्थात् १६७८ ई० को दिल्लीसे फिर सैन्य गया। उस समय अहोम-शासनकर्ता भीतस्वभाव गोला वडफूकन थे। उन्होंने कलियाबर पर्यन्त देश मुसलमानोंको दे सन्धि की। उसके पीछे १६०८ शकको सन्दिकै बड़फूकनने निरुपद्रव गोहाटीका उद्धार किया।

फिर दूसरे वर्ष मंजूर खान् नामके एक नवाब युद्ध करने गये थे। गोहाटीके निकट शुक्लेश्वरके हट-खोलेमें भयानक युद्ध हुवा। उस युद्धमें परास्त हो मुसलमान रांगामाटी, हाजो, गोहाटी और कामरूपकी सीमा तक छोड़ कर भागने पर बाध्य हुये। कामरूप सम्पूर्णरूपसे अहोमराजके अधिकारमें पड़ गया। फिर दिल्लीके बादशाह हीनप्रभ हुये। बङ्गालमें अंगरेजों, ओलन्दाजों, फरासीसियों, पोर्तगीजों प्रभृति सुदूर युरोपवासियोंका उपद्रव बढ़ा था। इसीसे नवाबोंको भी कामरूपकी बात सोचनेका समय वा अवकाश न मिला। अहोमराज निरुपद्रव कामरूप भोगने लगे। गोला बड़फूकनके सन्धिपत्रमें कामरूप राजाका नाम लिखा था। उस सन्धिपत्रको अहोम-राजने अग्राह्य किया। इसीसे कामरूप राजाका नाम लोप हो गया और वह आसामका अन्तर्गत प्रदेश बना।

आसाम देशके राजका अहोम नाम है। अनेकोंके अनुमानमें वह श्यान वंशके लोग हैं। वह आसामकी पूर्ववर्ती पर्वतमाला अतिक्रम कर ई० त्रयोदश शताब्दके प्रारम्भमें ब्रह्म और श्यामदेशसे सौमारपीठ राजत्व करने पहुंचे थे। फिर आसामका राज्य स्थापित हुवा। दूसरा पराक्रम न माना जानेसे उक्त राजाका नाम 'असम' पड़ा था। कालक्रमसे स के स्थानमें ह लग जानेसे लोग अहम वा अहोम कहने लगे। अब उसका परिणत नाम आसाम है। पूर्वकाल अहोम लोग हिन्दू न थे। वह सोमदेव नामक देवताको पूजते रहे। राजत्व स्थापनके कुछ काल पीछे उन्होंने हिन्दूधर्म ग्रहण किया और अपनेको स्वर्गके राजा इन्द्रका वंशोद्भव बता दिया। पहले ही लिख चुके हैं कि योगिनीतन्त्रमें वह इन्द्र-वंशोद्भव "सौमार" नामसे अभिहित हैं।

११५१ शकाब्द (१२२६ ई०)को चुकाफा नामक कोई प्रतापशाली व्यक्ति ससैन्य पूर्वदिक्से अग्रसर हुये थे। फिर उन्होंने आदिम निवासी चुटियाओं और बराहियोंको जीत आसामके पूर्वभागमें राज्य स्थापन किया। पीछे उनके बारह पुत्र क्रमसे राजा

नारायणको यह बात मालूम हो गयी। फिर रघुदेव भाग कर पूर्वाञ्चलमें जा छीपे और उनका सैन्य भी स्वेच्छाचारसे राज्य आक्रमणार्थ आ पहुंचे। नारायण भी नारायण रक्षार्थ सैन्य ले कर चले। स्वर्णकोषी नदीके पूर्व पार रघुदेव और पश्चिम पार नारायणकी छावनी पड़ी थी। नारायण स्वयं नावोंकी सेना ले आगे बढ़े। रघुदेव सैन्य ले भागे थे। नारायणने चाहिए कह कर कहा,—"दुःख है कि इस राज्य देनेके लिये ही आये थे। किन्तु वह बात न हुयी। इस लिए अब नदी ही यह दोनों राज्य सीमा रहेगी।" आधुनिक आसामके बुरंजीके मतमें उक्त घटना १५०१ शकको हुयी थी। रघुदेवके राज्यकी सीमा पश्चिम स्वर्णकोषी एवं पूर्व दिकराई और नारायणके राज्यकी सीमा पूर्व स्वर्णकोषी पश्चिम करतोया थी। रघुदेवने ब्रह्मपुत्रके किनारे आधुनिक गौरीपुर नगरसे १० मील दूर गदाधरनदीके तीर नगर स्थापन किया था।

शुक्लध्वजने कोई समय कामाख्याका मन्दिर निर्माण किया था। मन्दिर बनाते होनेमें १० वर्ष लगे। किसी पश्चिमी हिन्दुस्थानीने उसे बनाया था। मन्दिरके पूर्व द्वारके सम्मुख एक केन्दुकलाई पुरोहितकी शिव कुण्डकी प्रतिमूर्ति वर्तमान है। शुक्लध्वजको जीवित कालमें नरनारायण एक बार प्रतिपन्न हुये थे। ज्योतिषियोंने गणना कर उस कथा कह दी। फिर नरनारायणने शुक्लध्वजको राज्यका प्रतिनिधि बना गौड़यात्रा की थी। प्रायः यह वर्ष पीछे वह लौटे। उस समयके समय आसामराज्यके स्वेच्छाचारी पर उनको क्रोध बढ़ा। शुक्लध्वजको यह खबर लग गयी। वह आसामको दमनके लिये आसामराजको युद्धमें परास्त कर चाहते थे। अन्तमें अनुसार उस घटनासे ही उनका नाम "शुक्लध्वज" हुआ।

आधुनिक बुरंजीके मतमें १५०६ शकको नर-नारायण मरे थे। फिर उनके पुत्र लक्ष्मीनारायणने राज्य लिया। स्वर्णकोषीसे महानन्दा और करतोया तीरवर्ती तथा ब्रह्मपुत्रके दक्षिणस्थ पार्वत्य प्रदेश तक समग्र भूभाग उनके राज्यमें सम्मिलित था। उस राज्य पश्चिमोत्तरसे दक्षिणपूर्व तक ८० मील दीर्घ और पूर्वोत्तरसे दक्षिणपश्चिम तक ६० मील विस्तृत रहा। उत्तर पश्चिममें कतरा सीमान्त प्रदेश शिवसिंह (एक वीरर और जीतराम मध्य सीताके पुत्र) को सम्मानोको दिया गया। लक्ष्मीनारायण अपने राज्यका पश्चिमी भी "विहार" कहते थे। कारण शिव पीठ और कोटाके साथ विहार करते थे। किन्तु मध्यदेशके वर्तमान विहार (पटना) प्रदेशसे पार्थक्य दिखानेके लिये "कोचविहार" नाम रखा गया।

आईन-अकबरीके अनुसार लक्ष्मीनारायणने अकबरकी अधीनता मानी थी। उनके समय राज्यकी सीमा उत्तरमें तिब्बत, दक्षिणमें घोड़ाघाट, पश्चिममें त्रिहुत और पूर्वमें ब्रह्मपुत्र थी। भूमिका परिमाण दैर्घ्यमें प्रायः २०० कोस रहा। उनके ४००० अश्वारोही सैन्य, २ लाख पदाति, ७०० हाथी और १००० नौका थी। फिर आईन-अकबरीमें लक्ष्मीनारायणके पिताका नाम मल्लगोसाईं लिखा है। मल्लगोसाईं नहीं, उनके कनिष्ठ भ्राता शुक्लगोसाईं राजा थे। उन्होंने विवाह न किया था। इससे उनके सन्तान कोई न था। शुक्लगोसाईं अति वृद्ध राजा थे। उन्होंने अपने भ्रातुष्पुत्र पाटकुमारको राज्याधिकारी ठहराया। शुक्लगोसाईंने दूसरा विवाह किया था। जिससे लक्ष्मीनारायणका जन्म हुआ। पाटकुमार विद्रोही बने थे। उसी समय मानसिंह बंगालके नवाब रहे। लक्ष्मीनारायणने मानसिंहसे सम्राट्के निकट परिचित होनेका प्रार्थना की। किन्तु मानसिंहसे वह बात न हुआ। मानसिंहने उनकी एक कन्याका पाणिग्रहण किया था। राज-गोसाईंने १५७८ ई० को एक बार अकबरके दरबारको उपस्थित हो १४ हाथियोंके साथ विवाह नजरौकत किया। लक्ष्मीनारायण १५८६ ई०में राज्य करते थे।

तारीख-अकबरीके अनुसार लक्ष्मीनारायणने १५९६ई०को मुगलको राजधानीमें ५०० हाथी नजर भेजे थी।

बादशाहनामेको देखने जनपदसे सम्राट् सत्रीवित

दुरवस्थामें पड़ कर गौड़ लौटे। फिर १२५८ ई०को गौड़के नवाब तुगरल खान् स्वयं कामरूप पर चढ़े थे। कामरूपराजने उन्हें बांध कर मार डाला। यह निश्चित करना दुःसाध्य है, उस समय कामरूपमें कौन राजा थे। कामरूप जिलेमें "बैदरगड़" नामक एक पुरातन गढ़ है। प्रवादानुसार १२०४ से १२५८ ई० बीच कोई मुसलमान-सेनापति कामरूप पर आक्रमण करने गये थे। उनके हाथसे देशकी रक्षा करनेके लिये फेंगुवा नामक राजाने यह गढ़ बनवाया। परन्तु उसके पहले बैद्यदेवने उक्त गढ़ स्थापित किया था। फेंगुवाके पीछे फिर मुसलमान वहां न पहुंचे। एक बार राजा नीलाम्बरके समय गौड़के नवाब हुसेनशाहने (१४९८-१५०६ ई०) १२ वत्सर अवरोध करनेके पीछे कामरूप पर अधिकार किया था। हुसेन शाह कामतापुर जीत कर स्वीयपुत्र नसरत शाहको प्रतिनिधि बना बङ्गालको लौटे। नसरत शाह कोचविहार-राजवंशके आदि-पुरुष विश्वसिंहसे हारकर भागे थे। फिर कामरूपके सौमारखण्ड (वर्तमान आसाम)में चङ्गुसुङ्ग वा स्वर्ग-नारायण राजा हुये। (१४९७-१५३९ई०) उस समय तुरबक नामक किसी पठान-सेनापतिने कामरूपके अन्तर्गत उजाई देश पर आक्रमण किया। आसाममें कलियाबर नामक स्थान पर युद्ध हुआ। युद्धमें तुरबक जीते थे। किन्तु स्वर्गनारायणके प्रधान मन्त्री कन्‌सेंगने उनके विरुद्ध युद्धयात्रा की। वह तुरबकको पराजित कर करतोयाके अपर पार भगा गये थे।* फिर विश्वसिंहके पुत्र नरनारायणके समय कालयवनने कामरूपमें गौहाटी तक पहुंच कर अनेक देवालय नष्ट किये। परीक्षितनारायणके मरने पर ढाकाके नवाबने कामरूपके अन्तर्गत हाजोप्रदेश (परीक्षितका राज्य) ले लिया था। मुसलमान सेनापति मकरम खान् रांगामाटीमें रह उक्त प्रदेश पर शासन करने लगे। फिर महटेनीलस्मो नामक कोई व्यक्ति रांगामाटी गया था। उसके पीछे सैयद अबू बकर नामक एक व्यक्ति आसाम जीतने गये। तेजपुरके निकट भरलीमें युद्ध हुआ। युद्धमें अबूबकर मारे गये। उस समय कामरूपका अधिकांश अहोम राजाके, कुछ अंश रांगामाटीवाले मुसलमान शासनकर्ताके और कुछ अंश राजा दरंगके अधीन था। कुछ दिन पीछे मिर्जाबाद नामक रांगामाटीके किसी शासनकर्ताने अहोम राजाओंके हाथसे गौहाटी निकाल लेनेका यत्न किया। किन्तु वह बन न पड़ा। शेषको उनके परवर्ती बहरामबेग उसमें कृतकार्य हुये। फिर क्रमशः मिर्जा रमन खान्, अब्दुल-इसलाम शाह, इसलाम खान्, शेख बहराम खान्, शेख अमस्ती खान्, मकदूम इसलाम और मही-उद्-दीन रांगामाटीके शासनकर्ता बने। उसी बीच मोमाई-तामुली बड़बड़ुवा नामक किसी आसामी सेनापतिने एक बार अत्यल्प दिनके लिये गौहाटीका उद्धार किया था। किन्तु वह फिर छोड़नेको बाध्य हुये। फिर मिर्जा जैन-उल-आबदीन, इसफन्दार खान्, नवाब नूर-उल्ला अनवर खान्, मिर्जा हुसेन खान्, जारो मियान्, सैयद हुसेन, सैयद कुतुब, माखुमा, प्रभृति कई लोगोंने कुल २६ वर्ष कामरूप पर शासन किया। उक्त शासनकर्ताओंमें कोई हाजो, कोई रांगामाटी, और कोई गौहाटीमें रहता था। शेषको उस समय समस्त कामरूप जिला एक प्रकार मुसलमानोंके अधीन था। बिजनीका राज्य और ग्वालपाड़ा जिला भी मुसलमानोंके हाथ था। केवल दरङ्गराज स्वाधीन रहे। किन्तु वह भी मुसलमानोंका प्रभुत्व मानते थे। १६५४ ई०को जयध्वज सिंह वा सुतामला रङ्गपुरमें अहोम-सिंहासन पर बैठे। उनके किसी सेनापतिने गौहाटी अधिकार किया। १६६२ ई०को मीर जुमला कोचविहार जीतने गये। गौहाटीके पूर्व उजाई गड़गांव तक उनका अधिकार हुआ। फिर मीर जुमला स्वयं पीड़ित हुये। उनके सैन्यमें भी

* इसके पहले इस ग्रन्थके किसी स्थल पर कामतापुरके विवरणमें नसरत शाहके हाथसे विश्वसिंह द्वारा कामतापुर वा कामरूपराज्यके उद्धार होनेकी बात लिखी जा चुकी है। फिर यहां देखते हैं कि अहोम राजा स्वर्गनारायणके मन्त्री करतोया तक तुरबकको [illegible] हैं। [illegible] तुरबक नामक किसी पठान सेनापतिके कामरूप जीतनेकी बात [illegible] या बङ्गालके दूसरे इतिहासोंमें नहीं मिलती। यह विषय पर्यालोचना करनेसे स्पष्ट बोध होता है कि तुरबकके कामरूप आक्रमणकी कथा [illegible] है। क्योंकि विश्वसिंहके कोचविहार और कामतापुरमें रहते तुरबकके [illegible] की जाती ?

नारायण कोचहाजो प्रदेशमें और लक्ष्मीनारायण कोचविहारमें राजत्व करते थे। पादशाहनामा लक्ष्मीनारायणको परीक्षित्‌के पितामहका सहोदर बतलाता है। जहांगीरके राजत्वके ८म वर्ष सुसङ्गके राजा रघुनाथने परीक्षित्‌के विरुद्ध दरबारमें अभियोग लगाया कि उन्होंने उनके परिवारवर्गका अवरोध किया था। शेख अला-उद्-दीन फतेहपुरी इसलाम् खान् उस समय बङ्गालके नवाब रहे। उन्होंने मकराम खान्‌को कोचहाजो जीतने भेजा था। लक्ष्मीनारायणने मुसलमानोंके पक्ष पर योग दिया। युद्धमें पराजित हो परीक्षित्‌ने आत्मसमर्पण किया था। फिर उनके भ्राता बलदेवने अहोमराज स्वर्गदेवका आश्रय लिया। उसके पीछे परीक्षित् सम्राट्‌के आदेशानुसार दिल्ली भेजे गये और मकराम खान् हाजोके शासनकर्ता नियुक्त हुये।

बलदेव आसामराजकी सहायतासे हाजोके उद्धारार्थ यत्न करने लगे। अहोमराज स्वीय अधीनता स्वीकार करा उनका साहाय्य करने पर प्रतिश्रुत हुये। मकरामखान् उसी समय शासनकर्तृत्वसे हटे थे। उनके स्थान पर कोई नूतन शासनकर्ता आनेवाला था। इसी अवसरमें सुयोग देख बलदेवने दरङ्ग अधिकार किया। उस समय इस देशमें बङ्गालके नवाबकी ओरसे हाथीखेदाकी रक्षा करनेको जागीरदार पायक रहते थे। कासिम खान्‌ने बङ्गालके नवाब रहते समय बहुत दिन तक हाथियोंकी आमदनी न पायी थी। उन्होंने हाथीखेदाके सरदारोंको उपस्थित होनेका आदेश दिया। उपस्थित होने पर नवाबने उन्हे बन्दी बनाया। उनमें सन्तोष और जयरामने भाग कर आसामराज स्वर्गदेवका आश्रय लिया था। फिर इसलाम खान् नवाब हुये। उस समय पाण्डुके अत्याचारी थानेदार शत्रुजित् बलदेवसे मिल गये। उन्होंने उनको हाजोके शासनकर्ताके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये गोपनमें परामर्श दिया था। बलदेव कोचों और आसामियोंका सैन्य ले युद्ध करनेको उपस्थित हुये। १६३६ ई० को इसलाम खान्‌ने यह बात सुनी। उन्होंने कई मनसबदारोंको १००० सवार, १००० बन्दूकवाले पैदल, १० घराव नामक नौका, २०० कोशा* नौका और बहुसंख्यक जलवाह नौकाके साथ भेजा था। श्रीघाट और पाण्डुके निकट महायुद्ध हुआ। उभय पक्षमें मरते और घायल होते भी युद्ध चलता रहा। इसलाम खान्‌ने फिर द्विगुण सैन्य भेज दिया। किन्तु उसी समय फिर पायकोंने बलदेवका पक्ष लिया था। इससे मुसलमानी सेनाकी रसद बन्द हो गयी। इसलामखान्‌ने संवाद सुन रसद भेजी। किन्तु उसके पहुंचनेमें विलम्ब लगा था। उसी समय बलदेव ससैन्य श्रीघाट और पाण्डु छोड हाजोके अभिमुख चले गये। फिर उन्होंने राज्य अवरोध कर रसद पहुंचनेकी राह रोकी थी। हाजोके शासनकर्ता अबद्-उस्-सलामको स्वीय भ्राताके (यही प्रधान सेनापति बन ढाकेसे आये थे) साथ विपक्ष शिविरमें सन्धिका प्रस्ताव करनेके लिये जाना पड़ा। किन्तु वह सदल बांध कर आसाम भेजे गये। उनके भ्राता सैयदने बलपूर्वक शत्रुशिविरसे निकलनेकी चेष्टा की थी। किन्तु विफल होने पर वह सदल मारे गये। उनके पीछे मीर अली सेनापति हुये। इसी बीचमें ब्रह्मपुत्रके उत्तरकूल राजा चन्द्रनारायण पर मुसलमानोंने आक्रमण किया। चन्द्रनारायण भीत हो दक्षिणकूलके परगने सोलामारीको भागे थे। सोलामारीके जमीन्दार चन्द्रनारायणके भयसे मुसलमानोंमें जा मिले। मुसलमान उसके पीछे शत्रु शत्रुजित्‌के अनुसन्धान करनेको धुबड़ी पहुंचे थे।

शत्रुजित् राय भूषणवाले जमीन्दार (राजा) मुकुन्दरायके पुत्र थे। सम्राट् जहांगीरके समय शेख अला-उद्-दीन बङ्गालके शासनकर्ता रहे। उस समय उन्होंने मुकुन्दरायके हो अधीन एक दल सैन्य भेज एक बार हाजोप्रदेश पर अधिकार किया था। मुकुन्दराय युद्धमें जीतने पर पाण्डु और गौहाटीके थानेदार बने। उसी सुयोगमें आसामियोंके साथ

* उस समय छदाकार कोशा समुद्रमें दुरबीनकी भांति व्यवहृत होती थी। कोशा नौकामें एक मस्तूल लगता है। फिर उसमें पाल बहुत रहते हैं। उस नौकाके बाहरसे कोई नहीं देखो, दुरबी नौका (बड़ी तोपें से जांकड़ बहारे न चलनेवाली नावें) बीच में रहती थी।

विद्रोह होनेकी सूचना मिली थी। इसीसे वह राजा जयध्वजसे सन्धि कर लौट गये। मअज़म खान् अधिकृत प्रदेशमें शासनकर्ता रहे। उनके पीछे मसीद खान् और सैयदफीरोज़ खान् उक्त प्रदेशके शासनकर्ता हुये। अहोमराज चक्रध्वज सिंहके निकट राजस्व वसूल करनेके लिये उनका दूत गया था। उन्होंने उसे अपमान कर निकाल दिया और गोहाटी पर्यन्त स्थान अधिकार किया। दिल्लीश्वरने क्रुद्ध हो १६६८ ई० के समय राजा रामसिंहको भेजा था। रामसिंहने जा गोहाटी पर अधिकार किया। फिर वह उत्तरके अभिमुख अग्रसर हुये। उस समय कामरूपके सीमान्तस्थानमें बड़फूकन उपाधिधारी कोई शासनकर्ता रहते थे। १६२७ ई०को लर्गीनारायणने उस पदकी सृष्टि की थी। वह सीमान्तस्थानमें रह अहोम राज्यका विदेशीय आक्रमण रोकते थे। राजा चक्रध्वजके समय लाछित बड़फूकन रहे। वह उक्त मोमाई-तामूली फूकनके पुत्र थे। लाछित बड़फूकनने राजा रामसिंहको गर्वित वचनसे कहला भेजा कि १६६२ ई०को मीरजुमला रणमें हार अहोमराजसे सन्धि कर गये थे। उस समय अहोमराज न तो दिल्ली-सम्राट्के अधीनस्थ रहे और न उन्हें राजस्व देनेको प्रस्तुत थे। लाछित बड़फूकनका सदर्प वाक्य सुन मुसलमानोंका सैन्य युद्धको अग्रसर हुआ। १६६८ ई० को औरंगज़ेबकी सेनाके साथ कामरूपके शासनकर्ता लाछित बड़फूकनका घोरतर संग्राम सारापाट नामक स्थानमें पड़ा। इस संग्राममें मुसलमानसैन्य पराभूत हो भागा। अहोम-सैन्यने मानस नदी तक उनका पीछा किया। उसी समयसे मानस नदी अहोमराज्यकी पश्चिम सीमा मानी गयी। अहोमराजने नदीतीर पर हाथोरात नामक स्थानमें एकदल सैन्य रखा था। १६०१ शकमें अर्थात् १६७८ ई० को दिल्लीसे फिर सैन्य गया। उस समय अहोम-शासनकर्ता भीतप्रभाव शोला बड़फूकन थे। उन्होंने कलियाबर पर्यन्त देश मुसलमानोंको दे सन्धि की। उसके पीछे १६०८ शकको सन्दिकी बड़फूकनने निरुपद्रव गोहाटीका उद्धार किया। फिर दूसरे वर्ष मंसूर खान् नामके एक नवाब युद्ध करने गये थे। गोहाटीके निकट शुक्रेश्वरके इटाखोलीमें भयानक युद्ध हुआ। उस युद्धमें परास्त हो मुसलमान रांगामाटी, हाजो, गोहाटी और कामरूपकी सीमा तक छोड़ कर भागने पर बाध्य हुये। कामरूप सम्पूर्णरूपसे अहोमराजके अधिकारमें पड़ गया। फिर दिल्लीके बादशाह हीनप्रभ हुये। बङ्गालमें अंगरेजों, ओलन्दाजों, फरासीसियों, पोर्तगीजों प्रभृति सुदूर युरोपवासियोंका उपद्रव बढ़ा था। इसीसे नवाबोंको भी कामरूपकी बात सोचनेका समय वा अवकाश न मिला। अहोमराज निरुपद्रव कामरूप भोगने लगे। शोला बड़फूकनके सन्धिपत्रमें कामरूप राज्यका नाम लिखा था। उस सन्धिपत्रको अहोमराजने अग्राह्य किया। इसीसे कामरूप राज्यका नाम लोप हो गया और वह आसामका अन्तर्गत प्रदेश बना।

आसाम देशके राजका अहोम नाम है। अनेकोंके अनुमानसे वह श्यान वंशके लोग हैं। वह आसामकी पूर्ववर्ती पर्वतमाला अतिक्रम कर ई० त्रयोदश शताब्दके प्रारम्भमें ब्रह्म और श्यामदेशसे सौमारपीठ राजत्व करने पहुंचे थे। फिर आसामका राज्य स्थापित हुआ। दूसरा समकक्ष न माना जानेसे उक्त राज्यका नाम 'असम' पड़ा था। कालक्रमसे स के स्थानमें ह लग जानेसे लोग अहम वा अहोम कहने लगे। अब उसका प्रचलित नाम आसाम है। पूर्वकाल अहोम लोग हिन्दू न थे। वह चोमदेव नामक देवताको पूजते रहे। राजत्व स्थापनके कुछ काल पीछे उन्होंने हिन्दूधर्म ग्रहण किया और अपनेको स्वर्गके राजा इन्द्रका वंशोद्भव बता दिया। पहले ही लिख चुके हैं कि योगिनीतन्त्रमें वह इन्द्र-वंशोद्भव "सौमार" नामसे अभिहित हैं।

११५१ शकाब्द (१२२६ ई०)को चुकाफा नामक कोई प्रतापशाली व्यक्ति ससैन्य पूर्वदिक्से अग्रसर हुये थे। फिर उन्होंने आदिम निवासी कुटियार्ई और बराहियोंको जीत आसामके पूर्वभागमें राज्य स्थापन किया। पीछे उनके बारह पुत्र क्रमसे राजा

नारायणको सब बात मालूम हो गयी। फिर रघुदेव भाग कर पूर्वांचलके मद्दूवोंसे मिले और उनका सैन्य ले ल्येहअतासके राज्य आक्रमणार्थ आ पहुंचे। नारायण भी स्वराज्य रक्षणार्थ ससैन्य अग्रसर हुये। स्वर्णकोषी नदीके पूर्व पार रघुदेव और पश्चिम पार नारायणको छावनी पड़ी थी। नारायण स्वयं अश्वारोही सैन्य ले आगे बढ़े। रघुदेव भीत हो ससैन्य भागे थे। नारायणने आक्षेप कर कहा,—"दुःख है कि हम राज्य देनेके लिये ही आये थे। किन्तु वह बात न हुयी। इस लिये यह नदी ही अब दोनों राज्य सीमा रहेगी।" आधुनिक आसामको बुरञ्जीके मतमें उक्त घटना १५०२ शकको हुयी थी। रघुदेवके राज्यको सीमा पश्चिम स्वर्णकोषी एवं पूर्व दिकराई और नारायणके राज्यको सीमा पूर्व स्वर्णकोषो पश्चिम करतोया थी। रघुदेवने ग्वालपाड़े जिलेके जोयार परगनेमें आधुनिक गौरीपुर नगरसे १० मील दूर गदाधरनदीके तीर नगर स्थापन किया था।

शुक्लध्वजके जीते समय कामाख्याका मन्दिर फिरसे बना था। मन्दिर समाप्त होनेमें १० वर्ष लगे। किसी पश्चिमी हिन्दुस्थानीने उसे बनाया था। मन्दिरके पूर्व द्वारके सम्मुख उक्त केन्दुकलाई पुरोहितके छिन्न मुण्डकी प्रतिमूर्ति वर्तमान है। शुक्लध्वजके जीवित कालमें नरनारायण एक बार शनिग्रस्त हुये थे। ज्योतिषियोंने गणना कर उक्त कथा कह दी। फिर नरनारायणने शुक्लध्वजको राज्यका प्रतिनिधि बना तीर्थयात्रा की थी। प्रायः एक वर्ष पीछे वह लौटे। उक्त भ्रमणके समय आसामराज्यके क्षेतहस्ती पर उनको लोभ बढ़ा। शुक्लध्वजको यह खबर लग गयी। वह भ्राताकी तृप्तिके लिये आसामराजको युद्धमें परास्त कर हाथी ले आये थे। अनेकोंके कथनानुसार उक्त घटनासे ही उनका नाम "शुक्लध्वज" हुवा।

आधुनिक बुरञ्जीके मतमें १५०६ शकको नरनारायण मरे थे। फिर उनके पुत्र लक्ष्मीनारायणको राज्य मिला। स्वर्णकोषीसे महानन्दा और सरकार घोड़ाघाट तथा भोटानके दक्षिणस्थ पार्वत्य प्रदेश तक समस्त भूभाग उनके राज्यके अन्तर्भूत था। उक्त राज्य पश्चिमोत्तरसे दक्षिणपूर्व तक ८० मील दीर्घ और पूर्वोत्तरसे दक्षिणपश्चिम तक ६० मील विस्तृत रहा। उसर पश्चिममें कुछटा सीमान्त प्रदेश शिवसिंह (उक्त हीरा और जीराके मध्य जीराके पुत्र) के सन्तानोंको दिया गया। लक्ष्मीनारायण अपने राज्यको पहलेसे ही "विहार" कहते थे। कारण शिव हीरा और जीराके साथ विहार करते थे। किन्तु मध्यदेशके वर्तमान विहार (पटना) प्रदेशसे स्वतंत्रता दिखानेके लिये "कोचविहार" नाम रखा गया।

आईन-अकबरीके अनुसार लक्ष्मीनारायणने अकबरकी वश्यता मानी थी। उनके समय राज्यकी सीमा उत्तरमें तिब्बत, दक्षिणमें घोड़ाघाट, पश्चिममें त्रिहुत और पूर्वमें ब्रह्मपुत्र थी। भूमिका परिमाणफल दैर्घ्यमें प्रायः २०० कोस रहा। उनके ४००० अश्वारोही सैन्य, २ लाख पदाति, ७०० हस्ती और १००० जहाज थे। फिर आईन-अकबरीमें लक्ष्मीनारायणके पिताका नाम शुक्लगोस्वामी लिखा है। शुक्लगोस्वामी नहीं, उनके कनिष्ठ भ्राता बालगोस्वामी राजा थे। उन्होंने विवाह न किया था। इससे उनके सन्तान कोई न था। बालगोस्वामी अति सुविज्ञ राजा थे। उन्होंने अपने भ्रातुष्पुत्र पाटकुमारको राज्याधिकारी ठहराया। शुक्लगोस्वामीने दूसरा विवाह किया था। उसीसे लक्ष्मीनारायणका जन्म हुआ। पाटकुमार विद्रोही बने थे। उसी समय मानसिंह बङ्गालेके नवाब रहे। लक्ष्मीनारायणने मानसिंहसे सम्राट्के निकट परिचित होनेको प्रार्थना की। किन्तु मानसिंहने वह बात न सुना। मानसिंहने उनकी एक कन्याका पाणिग्रहण किया था। बालगोस्वामीने १५७८ ई० को एक बार बङ्गालके नवाबकी अधीनता मान दरबारमें ५४ हाथियोंके साथ विस्तर उपढौकन दिया। लक्ष्मीनारायण १५८६ ई०में राजत्व करते थे।

तारक-जहांगीरीके अनुसार लक्ष्मीनारायणने १६१८ई०को गुजरातको राजसभामें ५०० अशरफी नजर भेजी थीं।

बादशाहनामेकी देखते जहांगीरके समय परीक्षित्

हुये। उन्होंने अपने राज्यविस्तार और किसी किसी आदिम निवासी जातिके साथ युद्ध करनेको छोड़ दूसरा कोई योग्य कार्य न किया। फिर १४१८ शकको चुहुंगमुंग राजा या हिन्दू बने और स्वर्गनारायण नामसे ख्यात हुये। वह भी कोई कीर्ति छोड़ न गये। पीछे उनके पुत्र और पौत्र राजा हुये। उन्होंने भी लिखने योग्य कोई कार्य न किया। फिर १५३३ शकको चुचेंगफाने राज्य पाया था। हिन्दू मतसे उनका नाम बुद्धिस्वर्गनारायण या प्रताप सिंह रखा गया। उन्होंने उस देशमें दुर्गोत्सव और स्वर्ण एवं रौप्यकी मुद्राका प्रचार किया। उन्हींके शासनकाल १५४८ शकको कामरूपके शासनकर्ताके आसाम आक्रमण करने पर युद्ध हुआ। उसमें सैयद मारे गये। गौहाटी आसामराजके हाथ लगी। उन्होंने बहुत मार्ग और घाट बनवा आसामकी उन्नति की थी। देवमन्दिर और ब्राह्मणके प्रतिपालनार्थ भूमि देनेकी गौरव उन्हींके समय वृद्धि हुयी। मरने पर उनके जेष्ठ और फिर कनिष्ठपुत्र सिंहासन पर बैठे। किन्तु वह दोनों अत्यन्त उपद्रवी थे। इसीसे मन्त्रियोंने उन्हें राज्यच्युत किया। उनके पीछे चुतमला या जयध्वज राजा हुये। वह पराक्रमी राजा रहे। उन्होंने आसामकी बहुत उन्नति की। १५७७ ई० को मीरजुमला और मजुम खान् दोनोंने आसाम पर आक्रमण किया। आसामराज पराभूत हो सन्धि करने पर बाध्य हुये। उनके मरने पर चुपंगरंग या चक्रध्वज सिंहको राज्य मिला। उन्होंने सन्धिके अनुसार कर न दिया और बादशाहके दूतका अपमान किया। इस कारण बादशाह औरंगजेबकी आज्ञासे राजा रामसिंह आसाम पर चढ़े थे। किन्तु वह युद्धमें हार भागनेको बाध्य हुये। इसलिये कामरूप फिर आसामराजके हाथ लगा। राजधानी उपरी आसाममें थी। वहांसे दूरस्थ कामरूपका शासनकार्य अच्छी तरह चलना कठिन था। इसीसे राजाने गौहाटीमें एक बड़फुकन अर्थात् अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। उनके मन्त्रणागारका चिह्न अद्यापि वर्तमान है। पीछे उनके भ्राता चुन्युनफा या उदयादित्य राजा हुये। उनके मरने पर तद्भ्राता चुक्लमफा या रामध्वज सिंहने सिंहासनारोहण किया। उनके पीछे होनेवाले चार राजाओंने हिन्दू धर्म या हिन्दू नाम रखा न था। उनमें शेष राजा चुलयफा १६०१ शकको कामरूप प्रदेश मुसलमानोंके हाथ समर्पण करनेको बाध्य हुये। उनके मरने पर चुलिकफा या लराराजाको राज्य मिला। मन्त्रियोंने उन्हें सिंहासनसे हटा आहुमरीयवंशीय चुपातफा या गदाधर सिंहका अभिषेक किया था। वह हिन्दू न थे। हिन्दू और हिन्दूधर्म दोनोंसे उन्हें बड़ी घृणा रही। ब्राह्मणोंसे उनका विजातीय विद्वेष था। फिर उन्होंने अनेक ब्राह्मणोंको नगरसे निकाल भी दिया था। वह बलवान् और वृहत्काय पुरुष थे। मद्य-मांस बिना रहना उनके लिये असम्भव था। भेक और गोमांस उनका प्रधान खाद्य रहा। वह कहते थे कि हिन्दूधर्म ही अहोम वंशके पतनका कारण होगा। वह हिन्दूधर्म मानते न थे। इसीकारण उन्होंने कोई हिन्दू देवमन्दिरकी प्रतिष्ठा न की। किन्तु गौहाटीके निकट ब्रह्मपुत्रमध्यस्थित भस्माचल पर्वत पर उमानन्द-शिवका मन्दिर उन्हींके राजत्वकालमें प्रतिष्ठित हुआ। वह अद्यापि वर्तमान है। उनके राजत्वकाल १६०५ शकको मुसलमानोंने फिर आसाम पर आक्रमण किया था। किन्तु युद्धमें हार कर वह आसाम छोड़ने पर बाध्य हुये। आसामराजने गौहाटीमें राजधानी स्थापन कर एक बड़फुकन भेजा था। उनके मरने पर जेष्ठपुत्र चुखरंगफा या रुद्रनाथ सिंह राजा हुये। उनके पिता जैसे हिन्दू और हिन्दूधर्म-विद्वेषी रहे, वह तैसे ही हिन्दूधर्मपरायण और ब्राह्मणभक्त बने। उन्होंने अनेक ब्राह्मणोंको भूमि दी और देव-मन्दिरोंकी स्थापना की। उन्हींके आदेशानुसार शिव-सागरके अन्तर्गत नामडाग नदी पर बना वृहत् और सुदृढ़ प्रस्तरमय सेतु अद्यापि विद्यमान है। उस पर अनेक हस्ती, अश्व और मनुष्य गमनागमन करते हैं। तद्भिन्न उनके स्थापित अनेक देवमन्दिर भी वर्तमान हैं। उन्होंने बङ्गालसे गायक और वादक ले आकर अपने देशमें संगीत-वाद्यका प्रचलन बढ़ाया था।

वह गङ्गा नदीको निज देशान्तर्गत करनेके अभिप्रायसे वङ्गदेश पर चढ़नेको ससैन्य युद्धयात्रापूर्वक गौहाटीमें उपस्थित हुये। किन्तु दुर्भाग्यवश वहां उनको रोग लग गया। फिर कालके कराल कवलमें पड़नेसे उनका अभिलाष सिद्ध न हुआ। उनके पुत्र सुतनफा या शिवनाथ सिंहको सिंहासनका अधिकार मिला था। आसामके समस्त देवोत्तर, ब्रह्मोत्तर वा अन्यप्रकार निष्कर भूमिमें अधिकांश उन्हींका प्रदत्त है। उनकी पट्टमहिषी फुलेश्वरी वा प्रमथेश्वरीके आदेशानुसार गौरीसागर नामक वृहद् पुष्करिणी बनी और उसके पार एक शिवमन्दिरकी स्थापना हुयी। उसके मरने पर महाराजने उनकी भगिनी द्रौपदी वा अम्बिकाको विवाह कर पट्टमहिषी बनाया था। उन्होंने अपनी जेष्ठाके आदेशसे शिवसागर जिलेकी दिखु नदीके उत्तर पार किञ्चिदधिक चार सौ बीघे भूमिमें शिवसागर नाम्नी एक पुष्करिणी खोदा उसके तीर शिव, दुर्गा तथा विष्णुके तीन वृहत् मन्दिरोंकी प्रतिष्ठा की और देवसेवाके लिये बहुत सी भूमि दी। उक्त तीनों मन्दिर और पुष्करिणी आज भी विद्यमान हैं। उसी पुष्करिणीके नामानुसार उक्त देशका नाम शिवसागर पड़ा है। फिर उसीके तीर वर्तमान समुदाय राजकार्यालय और अंगरेज राजकर्मचारियोंके निवासगृह स्थापित हैं। राजा शिवनाथ सिंहके मरने पर उनके भ्राता प्रमत्त सिंह वा सुनेनफाने सिंहासन अधिकार किया। शिवसागर जिलेके अन्तर्गत दिखु नदीके दक्षिण पार रंगघर (रङ्गशाला) नाम्नी द्वितल अट्टालिका उन्हींकी बनायी है। उन्होंने हस्ती, व्याघ्र, महिष प्रभृति पशुओंका युद्ध देखनेके लिये उसे बनाया था। उनके पीछे उनके भ्राता सुराम्फा या राजेश्वर सिंह सिंहासनाधिरूढ़ हुये। उन्होंने तदानीन्तन राजप्रासादके परिवर्तमें शिवसागरकी दिखु नदीके उत्तर पार "गड़गांव" नामक वृहत् और त्रितल भवन बनाया था। कुछ समय वहां रहनेके बाद वह असन्तुष्ट हुये। फिर उक्त नदीके अपर पार रंगघरके पास उन्होंने अति वृहत् और सप्ततल राजप्रासाद बनवाया। उसका नाम रंगपुर रख गया। उसके निकट शिवसागरकी भांति वृहत् "जयसागर" नाम्नी पुष्करिणी उन्होंकी प्रतिष्ठित है। फिर तीरस्थ शिवमन्दिर भी उन्होंने स्थापित किये थे। उनके पीछे उनके भ्राता सुन्येओफा वा लक्ष्मीनाथ सिंह अभिषिक्त हुये। उन्होंने भी कतिपय देवमन्दिर स्थापित किये थे। उनमें कामरूपके अन्तर्गत मणिपर्वत पर अश्वक्रान्तका देवालय प्रधान है। उनके मरने पर उनके औरसपुत्र सुहितपांगफा या गौरीनाथ सिंह सिंहासनाधिष्ठित हुये। उनके राजत्वकालकी प्रधान घटना डिब्रुगढ़के निकटस्थ हिन्दूधर्ममें दीक्षित मटक, मोयामरीया या मरान नामक आदिम निवासी लोगोंकी विद्रोहिता है। वह दो बार विरोधी हुये। प्रथम बार तो राजाने उन्हें दमन किया, किन्तु दूसरी बार दबा न सकनेसे भागना पड़ा। उन्होंने कलकत्ते दूत भेज अंगरेज गवरनमेण्टसे साहाय्य मांगा था। उससे लार्ड कारनवालिसके आदेशानुसार कप्तान वेल्स और लेफ्टिनेण्ट मेकेगर कितने ही देशीय सैन्यके साथ आसाम पहुंचे। उन्होंने विद्रोह दबा देशमें शान्तिको स्थापना किया था। राजाके भागने पर विद्रोहियोंने अतीव निष्ठुर भावसे असंख्य निराश्रय प्रजाको मार डाला। उसीसे उन्हें मरान कहते हैं। विद्रोह-शान्तिके पीछे गौरीनाथने रंगपुर नगर छोड़ शिवसागरके अन्तर्गत जोड़हाट नामक स्थानमें नगर स्थापन किया। उसी स्थान पर वह कालग्रासमें पतित हुये। उनके पीछे कामरूपीय वंशके कमलेश्वर सिंहने राज्य पाया था। यहां यह बता देना भी उचित है कि हिन्दू धर्ममें दीक्षित होनेके समयसे अहोम राजा बराबर अहोमोंकी भांति अपने सन्तानोंका हिन्दू नाम रखते थे। फिर उनमें राजा होनेवाले अभिषेकके समय अहोम शास्त्रानुयायी कोई कार्य कर अहोम नाम ग्रहण करते थे। किन्तु उक्त कार्य अतीव व्ययसाध्य था। इसी कारण कमलेश्वर उसको कर न सके। उनके अहोम नाम न पानेका यही कारण है। उनके पीछे न तो किसी राजाने उक्त कार्य किया और न उसको अहोम नाम ही मिला। उन्होंने परिमाणवश बहुतसे

हैं। उनके मतमें पूजादि आवश्यक नहीं, एकमात्र हरिनामकीर्तनसे ही सकल कामनायें सिद्ध हो सकती हैं। इसीसे सर्वत्र सङ्कीर्तन करनेके लिये सत्र वा धर्माश्रय वर्तमान हैं। उन सत्रोंमें अधिकारी और महन्त रहते हैं। उक्त सकल सत्रोंमें माधवदेव प्रतिष्ठित बड़पेटाका सत्र ही प्रधान है। महन्त बङ्गालके गुरुव्यवसायी गोस्वामियोंकी भांति शिष्योंके प्रदत्त अर्थसे जीविका चलाते हैं। उस प्रकार अर्थ न देनेसे शिष्य समाजच्युत होते हैं। माधवके पीछे बहुतसे ब्राह्मणोंने वैष्णव बन धर्मप्रचार किया था। उन्होंने माधवके धर्मसे कुछ भिन्न भावमें वैष्णवधर्म चलाया, जिससे उनका "बामुनिया" और माधवका मत "महापुरुषीय" कहलाता है। महापुरुषीयोंमें भी एक "ठकुरिया" शाखा होती है। शङ्करके माधव आदि शिष्योंने अनेकानेक ग्रन्थ और सङ्गीतादिकी रचना की। वैष्णव पौराणिक क्रियाकलाप पर उतने आस्थावान् नहीं होते। वैष्णव व्यतीत कामरूपमें तान्त्रिक मत भी प्रचलित है। अतीतिया वा पूर्णसेवाके नामसे उक्त देशमें आजकल एक मत चल पड़ा है। उक्त सम्प्रदायी जातिभेद नहीं मानते। उनमें सकल जातीय लोग एकत्र मद्यमांसादि खाते पीते हैं। उक्त सम्प्रदायकी उपासनामें भक्तिमाता नाम्नी किसी स्त्रीका प्रयोजन पड़ता है। वह सबकी पूज्य होती है। पूर्णसेवाचारी अपने धर्मको पूर्णरूपमें शङ्करदेवके प्रचारित धर्मसे मिलता जुलता बताते हैं। किन्तु वह वामाचारी और वैष्णव मतके मिश्रणसे बना है।

कामरूपके मुसलमान सुन्नी मतावलम्बी हैं। देहाती मुसलमान विषहरी प्रभृति हिन्दू देवताओंकी पूजा करते हैं। हाजो नामक स्थानमें "पोवा मक्का" नामक एक मुसलमानोंका तीर्थस्थान है। बौद्धाचारी लोग अब कामरूपमें देख नहीं पड़ते। किन्तु जैनधर्मके माननेवाले लोग अब भी वर्तमान हैं। पलाशबाड़ी, डिब्रूगढ़ आदि स्थानोंमें इनकी संख्या काफी है। वहां जैनमन्दिर भी हैं। जैनगण प्राय व्यापार करते हैं। छोटे छोटे बहुतसे गांवोंमें भी उन लोगोंकी दुकानें हैं।

आज कल नाना धर्मोंके लोग आसाममें वर्तमान हैं। ब्राह्मणादि वर्णोंके मध्य कन्याको कुमारीकालमें वर ढूंढ़ कर विवाह करनेका नियम है। अन्य जातियोंमें उक्त नियम नहीं मिलता। ब्राह्मणोंमें विधवाविवाह प्रचलित नहीं, अन्य जातियोंमें होता है। गान्धर्वविवाहकी भांति एकप्रकार विवाह शूद्रादिके मध्य चलता है। कोई प्राप्तवयस्का विधवा अपने मातापिता वा अभिभावककी सम्मतिसे स्वीय समाजमें किसी व्यक्तिके साथ आहारादि और सहवास कर सकती है। उक्त स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न सन्तानादि विवाहिताके गर्भजात सन्तानोंकी भांति पितामाताके धनाधिकारी और समाजमें गण्य होते हैं। किसी किसी स्थलमें ऐसे दम्पतीको सधवा धान्यदूर्वासे आशीर्वाद करती हैं। एक प्रकारके स्वयम्वरकी प्रथा भी देख पड़ती है। कोई पुरुष वा स्त्री इच्छानुसार किसी स्त्री वा पुरुषके घरमें स्वामीस्त्रीरूपसे रह सकती है। उक्त सकल व्यवहारमें समाजमें कोई दोष नहीं लगता। हिन्दूधर्मके मतसे जिसका विवाह हो जाता है, उसमें स्वामीको छोड़ पत्यन्तर ग्रहण करनेका मार्ग नहीं दिखाता। किन्तु उक्त अन्य प्रथाओंके अनुसार वैसा होता है। कामरूपके लोगोंके मतमें शरीरको शुद्ध करनेके लिये ही विवाह आवश्यक है। इसी कारण विवाहके सम्बन्धमें उनका वैसा दृढ़ नियम नहीं। किसी किसी स्थलमें विधवाका विवाह अस्थिकी शुद्धिके लिये किसी पुस्तक, शिलाखण्ड वा कदलीवृक्षसे किया जाता है। कहीं दूसरे किसी पुरुषके साथ वैसेही अस्थिशुद्धिका विवाह होता है। अन्तमें उसे कुछ दक्षिणा देकर विदा करते हैं। फिर स्त्री पुरुषान्तर ग्रहण करती है।

कामरूपवासियोंमें आगन्तुकको आसन देनेका नियम नहीं। सब लोग भ्रमण करते समय अपना अपना आसन, तासका रन्धनपात्र और घट साथ रखते हैं। वह लोग धर्मके अनुसार पथ्यापथ्य और भक्ष्य आहार करते हैं। दूसरेका क्या ज्ञातिका अन्न भी ले लिया जाता है। किसी किसी स्थल पर ग्राममें एक ही स्त्री रहती है। फिर उसीके हाथका रन्धन

लोगोंको ले जा कर सैनिक कार्यमें लगाया और अत्याचारको चलाता। उसके परलोक पहुंचने पीछे भ्राता चन्द्रकान्त सिंह राजा हुये। उनके राजत्वकालमें मन्त्रियोंमें विरोध उठा था। फिर गोहाटीके राजप्रतिनिधि बदनचन्द्र ब्रह्मराज्यमें पहुंचे और कितने ही सैन्यके साथ लौट पड़े। उन्होंने राजधानीमें उपस्थित हो विपक्षियोंको दमनपूर्वक राजाको आयत्त किया और अपने ऊपर राज्यके शासनका भार लिया। ब्रह्मदेशीय सैन्य पीछे लौट गया।

उक्त सैन्यको स्वदेश जानेके पीछे बदनचन्द्रको किसी किसी विपक्षने राजमाताको प्रबोधित किया और उन्होंने उनका सिर काट लिया। उनके मरनेके बाद उनके विपक्ष प्रधान राजमन्त्री रुचिनाथ बूढ़ागोसाईंने अपरापर प्रधान राजपुरुषोंसे मिल चन्द्रकान्त सिंहको राज्यसे हटा पुरन्दर सिंहको अभिषेक किया था। उसके पीछे ब्रह्मदेशीय सैन्य आसाम पर चढ़ा। युद्धमें परास्त हो पुरन्दर सिंह भागे थे। ब्रह्मदेशीयोंने फिर चन्द्रकान्त सिंहको राज्य दे प्रस्थान किया। अनन्तर ब्रह्मदेशीय राजाने चन्द्रकान्त सिंहके निकट बन्धुताके भावसे कितने ही सैन्यके साथ एक दूत भेजा था। किन्तु मन्त्रियोंने उनका अभिप्राय न समझ अवरोध किया। उससे ब्रह्मदेशियोंने अपमानित और क्रुद्ध हो युद्धकी घोषणा की। आसामियोंका सैन्य युद्धमें परास्त हुआ। राजाने फिर पलायन किया था। उसके पीछे ब्रह्मदेशसे अधिक सैन्य भेजा गया। उसने आसामवासियोंको अत्यन्त सताया। धन और प्राणकी विशेष हानि हुयी थी। बहु कष्टके पीछे आसामका सौभाग्योदय हुआ। अंगरेज गवरमेण्टने दुर्दान्त और निदारुण ब्रह्मवासियोंको निकाल कर आसाम अधिकार किया था। १८२५ ई०की २री फरवरीको आसामकी दुःख यामिनी अस्त हुआ। प्रजा असह्य यातनासे छूटी थी। ६०० वर्ष राज्य भोग कर अहोमवंश सिंहासन च्युत हुआ।

अहोम वंशके राजाओंकी तालिका नीचे दी जाती है,—

नाम	राज्यभोगकाल
१ सुकाफा	१२२८—१२६८ ई०
२ उनके पुत्र सुतेउफा	१२६८—१२८१ ,,
३ ,, सुबिनफा	१२८१—१२९३ ,,
४ ,, सुखांगफा	१२९३—१३३२ ,,
५ ,, सुखरांगफा	१३३२—१३६४ ,,
६ उनके भ्राता सुतुफा	१३६४—१३७६ ,,
अराजक	१३७६—१३८० ,,
७ त्यावोखामती सुतुफाके भ्राता	१३८०—१३८९ ,,
अराजक	१३८९—१३९७ ,,
८ सुडांगफा, त्यावोखामतीके पुत्र	१३९७—१४०७ ,,
९ उनके पुत्र सुजांगफा	१४०७—१४२२ ,,
१० ,, सुफाकफा	१४२२—१४३९ ,,
११ ,, सुसेनफा	१४३९—१४८८ ,,
१२ ,, सुहेनफा	१४८८—१४९३ ,,
१३ ,, सुपिम्फा	१४९३—१४९७ ,,
१४ ,, सुहुंगमुंग वा स्वर्गनारायण	१४९७—१५३९ ,,
१५ ,, सुक्लेनमुंग या गढ़गायां राजा	१५३९—१५५२ ,,
१६ ,, सुखामफा या खोड़ा राजा	१५५२—१६०३ ,,
१७ ,, सुसेंगफा या बुढ़ा स्वर्ग नारायण वा प्रतापसिंह	१६०३—१६४१ ,,
१८ ,, सुरामफा वा भगा राजा	१६४१—१६४४ ,,
१९ ,, सुत्यिंगफा वा नड़िया राजा	१६४४—१६४८ ,,
२० ,, सुतामला वा जयध्वज सिंह भगानिया राजा	१६४८—१६६३ ,,
२१ ,, चारिंगिया वंशके सुपंगमुंग वा चक्रध्वजसिंह	१६६३—१६७० ,,
२२ उनके भ्राता सुन्यातफा वा उदयादित्य	१६७०—१६७२ ,,

सब लोग खाते हैं। उत्सवादिमें उन्होंको भोजन बनाना पड़ता है। अन्य स्थल पर चोखा और मुलायम दो प्रकारका चावल जलमें भिगा दधि, गुड़, कदली प्रभृति मिला साधारणत: निमन्त्रणादिमें खाया जाता है। पान खानेकी चाल बहुत है।

चैत, आश्विन और पौषकी संक्रान्ति कामरूपियोंके प्रधान उत्सवका दिन है। उक्त तीनों पर्वोंको बिहु कहते हैं। उक्त पर्वोंमें पिताको प्रणाम करते और आत्मीय कुटुम्बादिसे मिलते हैं। फिर महा आड़म्बरके साथ पानभोजनादि होता है। चैतकी संक्रान्तिको सात दिन किसी प्रकाश्य स्थल पर स्त्रीपुरुष मिल नाचते-गाते हैं। उक्त नृत्यगीतमें अश्राव्य अवाच्य अश्लील गीत और अङ्गभङ्गी प्रदर्शित की जाती है। दुर्गोत्सव, दोलिका, जन्माष्टमी और शङ्कर-माधवके मृत्युकी तिथिको साधारण पर्व मानते हैं।

कामरूप जिलेके दक्षिण प्रान्तमें किसी स्थान पर प्रस्तरनिर्मित एक स्तम्भ है। प्रवादानुसार चांद सौदागरने उसे अपने लखीन्द्र पुत्रके रखनेके लिये कोठेमें बनाया था। यह बात बहुत लोगोंको मालूम है बेहुलाके कौशल और नेता धोपानीकी उपायसे लखीन्द्र फिर जी उठे थे। मुखहोंके निकट "नेता धोपानीका घाट" नामक एक घाट अभी वर्तमान है। किन्तु आज कल उसकी भग्नावस्था है। चांद सौदागर एक विख्यात वणिक् थे।

तेजपुरके निकट दूसरे भी कई प्रस्तर-स्तम्भोंके भग्नावशेष हैं। प्रवादानुसार यह बाणराजकी कन्या उषाके प्रासाद हैं। फिर नौगांवके अंतर्गत पर्वतपर कई प्रस्तर-प्रासादोंका भग्नावशेष है। कहते हैं यह महाभारतोक्त हंसध्वजके प्रासादका भग्नावशेष है। डीमापुरमें देखे जाते भग्नावशेष महाभारतोक्त हिड़िम्बा राक्षस घटोत्कचकी राजधानीका भग्नावशेष माने जाते हैं। ग्वालपाड़ेके दक्षिणपाट परगनेमें "श्रीसूर्यपर्वत" नामका एक पहाड़ है। वहां एक गोलाकार प्रस्तर खण्ड पर ग्रहोंके निशानकी तरह कई रेखा है। किसी किसीके अनुमानसे एक समय वहां मानमन्दिर रहा।

किसी समय कामरूप प्रदेश इन्द्रजालको विद्याके लिये प्रसिद्ध था। अनेक स्त्रियां इन्द्रजाल सीखती थीं। किन्तु आज कल अंगरेजी सभ्यतामें कामरूपकी वह प्राचीन विद्या विलुप्त है।

प्राचीन कामरूप या वर्तमान आसामका विशेष विवरण जाननेके लिये Hunter's Statistical Account of Assam, 2 vols; Dalton's Ethnology of Bengal; M'cosh's Topography of Assam; Robinson's Assam; M. Martin's Eastern India, vol. III; Journal of the Asiatic Society of Bengal, vol. XLI., XLII, Gait's Assam प्रभृति ग्रन्थ देखो।

कामरूपत्व (सं० क्ली०) सिद्धिविशेष, एक करतब। कौलशास्त्रके अनुसार यह कामादिसे निर्लिप्त रहने, मन्त्रसिद्धि करने पर या किसी देवके प्रसन्न होने पर मिलता है। इससे साधक मनमाना रूप बना सकता है।

कामरूपधर (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं रूपं धारयति, काम-रूप-धृ-अच्। इच्छानुसार विविधरूप-धारक, मनमानी सूरत बना लेनेवाला।

कामरूपपति (सं० पु०) 'शारदातिलक' नामक तंत्रके टीकाकार।

कामरूपिणी (सं० स्त्री०) कामं यथेष्टं रूपं अस्त्यस्याः, काम-रूप-इनि-ङीप्। १ अश्वगन्धा, असगंध। २ सुन्दरी, खूबसूरत औरत। ३ इच्छानुसार विविधरूप धारण करनेवाली, जो मनमानी सूरत बना लेती हो।

कामरूपी (सं० पु०) कामं कमनीयं रूपं अस्यास्ति, काम-रूप-इनि। १ विद्याधर। २ गोधिका जन्तु, घेपार, एक जानवर। ३ शूकर, सूअर। (त्रि) ४ इच्छानुसार विविधरूपधारी, मनमानी सूरत बना लेनेवाला।

"[illegible] कामरूपिणः।" (रामायण)

कामरूपोद्भवा (सं० स्त्री०) कृष्णकस्तूरी, काला मुश्क।

कामरेखा (सं० स्त्री०) कामानां कामव्यापाराणां रेखा चिह्नं यस्याः सा, बहुव्री०। वेश्या, रण्डी, छिनाल।

कामल (सं० पु०) कम्-णिच्-कलच्। १ रोगविशेष, कंवलवाई। कामला देखो। २ वसन्तकाल, मौसम-बहार। ३ मरुदेश, रेगिस्तान। (त्रि०) ४ कामुक, चाहनेवाला।

नाम	राज्यभोगकाल
२३ उनके भ्राता सुक्लामफा वा रामध्वज	१६७३—१६७५ ,,
२४ आमुफ्डरीया वंशके सुहुंग राजा	१६७५ ,, (१ मास १५ दिन)
२५ सुंगखंगिया वंशके गोवर राजा	१६७५ ,, (२० दिन)
२६ डिहिंगिया वंशके सुजिनफा	१६७५—१६७७ ,,
२७ सुंगखंगिया वंशके सुदैफा	१६७८—१६७९ ,,
२८ आमुफ्डरीया वंशके सुलिकफा वा लरा राजा	१६७९—१६८१ ,,
२९ आमुफ्डरीया वंशके गदापाणि वा गदाधर सिंह वा सुपातफा	१६८१—१६९६ ,,
३० उनके पुत्र लाई वा सुखरंगफा वा रुद्रसिंह	१६९६—१७१४ ,,
३१ सुतानफा वा शिवसिंह	१७१४—१७४४ ,,
३२ उनके भ्राता सुनेनफा वा प्रमत्तसिंह	१७४४—१७५१ ,,
३३ ,, सुरामफा वा राजेश्वरसिंह	१७५१—१७६९ ,,
३४ ,, सुन्येयोफा वा लक्ष्मीसिंह	१७६९—१७८० ,,
३५ ,, सुहितपांगफा वा गौरीनाथ सिंह	१७८०—१७९५ ,,
३६ सुकलिंगफा वा कमलेश्वर सिंह	१७९५—१८१० ,,
३७ उनके भ्राता चन्द्रकान्तसिंह	१८१०—१८१८ ,,
३८ ,, पुरन्दर सिंह	१८१८—१८१९ ,,
पुनः चन्द्रकान्त सिंह	१८१९—१८२१ ,,
३९ सुंगखंगिया वंशके योगेश्वर सिंह	१८२१—१८२४ ,,

१८२५ ई०को कामरूपमें अंगरेजोंका अधिकार हुआ।

अहोमोंकी आजकल अतीव हीनावस्था है। उन्होंने निज धर्मके साथ भाषा भी छोड़ दी है, वे सम्पूर्ण भावसे हिन्दू बन गये हैं। पहले देवमन्दिरों और राजप्रासादोंका विवरण दिया गया है। उनमें प्रायः सब वर्तमान हैं। किन्तु उनकी अवस्था अति हीन है। उनका अधिकांश शिवसागर जिलेमें है। तेजपुर और नौगांव उक्त स्थान कुछ कम हैं। कामरूप जिलेमें आसामवाले राजाओंके स्थापित अनेक देव मन्दिर देख पड़ते हैं। किन्तु कामाख्याका मन्दिर आसामके राजाओंने बनाया न था। जिस समय कामरूप कोचविहारके अन्तर्गत था, उसी समय कोच-विहारके राजा नरनारायणने उसे निर्माण किया। आसामके राजाओंने पुराने मन्दिरको केवल सुधराया था। कामाख्या देखो।

आसामके राजाओंकी राजधानी शिवसागर जिलेमें रही। इसीसे कारण दूसरे किसी स्थानमें राजभवन नहीं है।

उक्त समयके पीछे कामरूपको कोई विशेष उल्लेख-योग्य घटना नहीं मिलती। केवल ई० अष्टादश शताब्दके शेषभागमें कामरूपके रहनेवाले हरदत्त और वीरदत्त नामक दो भाइयोंने अहोम-राजाओंके विरुद्ध विद्रोहभाव अवलम्बन किया। हरदत्तके पद्मकुमारी नाम्नी एक परम रूपवती कन्या थी। सम्भवतः पद्मकुमारी ही हरदत्त और वीरदत्तके द्रोहका प्रधान कारण थीं। अहोम-राजाके प्रतिनिधि कलिया-भोमोरा बड़-फूकनके साथ हरदत्त वीरदत्तका युद्ध हुआ। युद्धमें हरदत्त हार गये। कलिया-भोमोरा बड़-फूकनके किसी कुमेदान नामक सेनापतिने पद्मकुमारीका हस्तगत किया। प्रवादानुसार पद्मकुमारीके हस्त और पदमें पद्मका चिह्न था। पद्मचिह्न ही उनके पद्मकुमारी नामका मूलकारण रहा। अद्यापि कामरूपमें ग्राम्य गीत द्वारा हरदत्तका द्रोह और पद्मकुमारीका विवरण गाया जाता है।

राजा रुद्रसिंह स्वर्गदेव नदीयावासी कृष्णराम न्यायवागीश नामक किसी महाचार्यके निकट दीक्षित हुये। महाचार्यकी बहुत अलौकिक क्षमता थी। इसीसे आपामर साधारण सब लोग उन्हें देवीका पुत्र मान

कामलकोरक (सं॰ त्रि॰) कमलकोरकस्य इदम् कमल-कोरक-अण्। (कर्कोटरदपत्राद्विकोरखादण्। पा ४।१।१०।) कमलकोरक नामक कीटसम्बन्धीय, एक कीड़ेके मुताल्लिक।

कामलता (सं॰ स्त्री॰) कामस्य लता इव, उपमित-समा॰। उपस्थ, शिश्न। २ लताविशेष, एक बेल।

कामला (सं॰ स्त्री॰) कामल-टाप्। रोगविशेष, कंवल बाई। (A form of Jaundice) पाण्डुरोग अचिकित्सित रहने या पाण्डुरोगमें पित्तकर बहु आहारादि करनेसे विकृतपित्त रोगीका रक्त मांस बिगाड़ कर कामला रोग उत्पादन करता है। फिर प्रथमसे भी कामला रोग हुआ करता है। इस रोगमें चक्षु, चर्म, नख और मुखदेश हरिद्रावर्ण देख पड़ता है। मलमूत्र रक्त वा पीतवर्ण लगता है। सर्वशरीर स्वर्णभेकवर्ण बन जाता है। इन्द्रिय शक्तिहीन रहते हैं। दाह, अजीर्ण, दुर्बलता, अवसन्नता और अरुचिका वेग बढ़ता है। यह दो प्रकारकी होती है—कोष्ठाश्रया और शाखाश्रया। आमाशयादि आभ्यन्तरिक कोष्ठ समूहमें उत्पन्न होनेसे कोष्ठकामला वा कुम्भकामला और हस्त-पादादि स्थानमें निकलनेसे शाखाकामला कहलाती है। कुम्भकामलामें वमन, अरुचि, उत्क्लेश, ज्वर, क्लान्ति, श्वास और कास उपजता और मलभेद होनेसे रोगी मरता है। फिर उभयविध कामलामें मल-मूत्र कृष्ण एवं पीतवर्ण लगने अथवा मल, मूत्र तथा वमनमें रक्त पड़ने, शरीर शोथविशिष्ट एवं अवसन्न रहने और दाह, अरुचि, पिपासा, आनाह, तन्द्रा, मोह, बुद्धिनाश प्रभृति पड़नेसे भी रोगी बहुत दिन तक नहीं जीता।

वैद्यशास्त्रके मतमें इस रोगमें त्रिफला, गुलञ्चीन, दारुहरिद्रा वा निम्बका क्वाथ मधुके साथ पीना चाहिये। द्रोणपुष्पतरुके पत्रका रस आंखमें लगाते हैं। गुलञ्चीनका पत्ता पीस कर तक्रके साथ खानेसे भी लाभ होता है। आमलकी, लोहचूर्ण, शुण्ठी, पिप्पली, मरिच तथा हरिद्राचूर्ण, घृत, मधु और शर्करा मिला चाटना चाहिये। कुम्भकामलामें भी उक्त सकल औषध उपयोगी है। गोमूत्रके साथ शिलाजतु सेवन करनेसे अधिक लाभ होता है। विभीतक काष्ठसे मण्डूर जला आठ बार गोमूत्रमें डालने और मधुके साथ उसका चूर्ण चाटनेसे कुम्भकामला अच्छी हो जाती है। (भावप्रकाश)

गरुड़पुराणके मतानुसार इस रोगके निवारणार्थ मरिच और तिलपुष्प एकत्र पीस आंखमें लगाते हैं। फिर दुग्धके साथ अपामार्ग और नागरमूल पीनेसे भी कामलादि रोग अच्छे हो जाते हैं। इस औषधसे मुखरोग भी नहीं रहते।

कामलाक्षी (सं॰स्त्री॰) कामले अक्षिणी यस्याः, कामला-क-अच् ङीप्। आकर्षणकारक देवीमूर्तिविशेष।

"अनामारत्नमिश्रे च कामलाक्षीमनु' जपेत्।" (तन्त्रसार)

कामलायन (सं॰ पु॰) कमलस्य अपत्यं पुमान्, कमल-अञ्-फक्। कमलके पुत्र, एक मुनि। इनका नाम उपकोसल था।

कामलायनि, कामलायन देखो।

कामलाव्याधिहन्त्री (सं॰ स्त्री॰) नागदन्ती, हाथीसूंड।

कामलि (सं॰ पु॰) वैशम्पायनके एक शिष्य।

कामलिका (सं॰ स्त्री॰) मद्य, शराब, एक धान।

कामली (सं॰ त्रि॰) कामलो रागविशेषो ऽस्यास्ति, कामल-इनि। १ कामलारोगपीड़ित, कंवल बाईकी बीमारीसे तकलीफ उठानेवाला। (पु॰) कमलेन वैशम्पायनस्य अन्तेवासिविशेषेण प्रोक्तं अधीयते। (कलापि वैशम्पायनान्तेवासिभ्यश्च। पा ४।३।१०४।) वैशम्पायनके शिष्यका बनाया हुआ शास्त्र पढ़नेवाला।

कामली (हिं॰ स्त्री॰) क्षुद्र कम्बल, कमरी।

कामलेखा (सं॰स्त्री॰) कामानां कामव्यापाराणां लेखा चिह्नं लक्षणं यत्र, बहुव्री॰। वेश्या, रण्डी।

कामलोक (सं॰ पु॰) लोकविशेष, एक दुनिया। बौद्ध-मतानुसार यह एकादश प्रकारका होता है,—याम्य, तुषित, नरक, निर्माणरति, तिर्यक्लोक, प्रेतलोक, असुरलोक, त्रयस्त्रिंश, चातुर्महाराजिक, परनिर्मित-वशवर्ती और मनुष्यलोक।

कामलोल (सं॰ त्रि॰) कामेन कन्दर्पपीड़या लोलः चञ्चलः, ३-तत्। कामकी पीड़ासे आकुल, शहवतके जोरसे घबड़ाया हुआ।

कामवती (सं॰ स्त्री॰) कामः कमनीयता अस्त्यस्याः,

यह हिन्दुस्थानी अंगरेजोंकी प्रजा थी। सुतरां उनको दबाना लाट साहबने अपना कर्तव्य समझा। इसीसे १७९२ ई०को कप्तान वेल्स साहब ससैन्य भेजे गये। उन्होंने यहां पहुंचते ही हिन्दुस्थानियोंको दबाना चाहा था।

इधर भरतसिंह राजा हो निठुर भावसे शासन करते थे। सिपाहियोंको आदेश रहा,—"तुम जिस प्रकार हो, अहोमप्रजाको लूटो मारो।" इस साहबके बरकन्दाज और मणिपुरके सिपाही विनष्ट होनेसे उन्होंने अपना राज्य निष्कण्टक समझ लिया। उन्होंने गोहाटीके निकटस्थ कई स्थान अधिकार किये थे। राजा गौरीनाथ उक्त संवाद पा कुछ सैन्य ले उसी ओर चल पड़े। फिर कप्तान वेल्स साहब भी जा पहुंचे। राजाके मुखसे देशकी अवस्था सुन १७९२ ई०को २५वीं नवम्बरको उन्होंने गोहाटी प्रदेश उद्धार किया। मोयामरीया दल छिन्न भिन्न हो गया। गौरीनाथ गोहाटीमें ही रहे। कप्तान वेल्स ६ठीं दिसम्बरको लोहित्यके उस पार कूच गये थे। मोयामरीयावालोंका पराजय सुन कृष्णनारायणका भी सैन्य भागा। कृष्णनारायणने कहा,—"हम गौरीनाथके विपक्षमें नहीं हैं। मोयामरीया-विद्रोह निवारण करना हमारा भी उद्देश्य था। किन्तु गौरीनाथ यह बात समझ न सके। इसीसे उन्होंने हमें भी विद्रोही मान रखा है।" फिर कप्तान वेल्सने गौरीनाथ और कृष्णनारायणके मध्य सन्धि करा दी। सन्धिमें शर्त थी कृष्णनारायणको दरङ्ग, कुटिया तथा बाय-दोआबके आदमी देनेके बदले ५५०००) और भोट राज्यमें व्यवसाय करनेके लिये महसूलके हिसाबमें १०००) रु० देना पड़ेंगे। कप्तान वेल्सने गोहाटीमें रह देखा कि गौरीनाथकी बुद्धि विवेचना बड़ी न थी। फिर निष्कण्टक होते भी उनके द्वारा राज्य स्थापित होनेमें बड़ा सन्देह रहा। उन्होंने निम्नलिखित मर्मका पत्र कलकत्ते भेजा था,—"हम यह काम करके आना चाहते हैं, जिसमें राज्यका सुबन्ध रहे। हमें बोध होता कि राजाके अन्याय आचरणसे ही कृष्णनारायण प्रभृति विद्रोही हुये थे।"

१७९३ ई०के मार्च मास कप्तान वेल्सने प्रधान नगर आक्रमण करनेको पैर बढ़ाया। गौरीनाथ भी साथ थे। जिस दिन वह नगरके निकट पहुंचे, उसी दिन नगरकी अवस्था ज्ञात हो दूसरे दिन प्रातःकाल १२ सिपाही, १ जमादार, १ नायक और १ हवलदार कुल १५ आदमी नगरके निकट भेजे गये। राजा गौरीनाथ यह व्यापार देख विषण्ण हुये। उन्होंने यह सोच जयकी आशा छोड़ी थी कि ५००० मोयामरीयावालोंके साथ उन सुशिक्षित सिपाहियोंका युद्ध होगा। मोयामरीयावाले चारो ओर घेर कर खड़े हो गये। उन्होंने सोचा कि उन्हीं कई सिपाहियोंके मारनेसे जय होगा। अकस्मात् सिपाही वीरभावसे गोली छोड़ने लगे। प्रायः मोयामरीयाके लोग मरे थे। उन्हीं कई सिपाहियोंने मत्तपक्ष प्रायः निःशेष कर डाला। फिर कुछ अंगरेज सिपाहियोंने जा नगर अधिकार किया। उसके दूसरे दिन बूढ़ा गोसाईं गौरीनाथको नगरमें ले गये। १७९४ ई०के चैत्र मास कप्तान वेल्स नगरमें घुसे थे।

गौरीनाथ फिर जा कर सिंहासन पर बैठे। कप्तान साहबने बूढ़ा गोसाईं प्रभृति प्रधान कर्मचारियोंको बहुत उपदेश दिया और गवरनर जनरलका अभिप्राय समझा कर कहा,—"देशमें सुशासन रखनेके लिये कुछ वृटिश सैन्य यहां रहेगा और कामरूपकी आमदनीसे उस सैन्यदलका खर्च चलेगा।"

उधर लार्ड कार्नवालिस स्वदेश गये। १७९३ ई०को सर जान शोर गवरनर हो कर आये थे। उन्होंने कप्तानको लौटनेका आदेश किया।

फिर १८१७ ई०को पुरन्दर सिंहने चन्द्रकान्तसिंह स्वर्गदेवको बन्दी बना कर राज्य लिया था। उस समय बड़फूकनके लोगोंने ब्रह्मदेशके अधीश्वर आशुङ्ग मिङ्गि या मिनया मिङ्गिसे जा कर उक्त विषयकी सूचना की। उन्होंने सहायार्थ ३०००० सैन्य भेजा था। ब्रह्म-सेनापतिके राज्यमें प्रवेश करने पर पुरन्दर सिंहने सैन्य भेज कर बाधा दी। युद्धमें पुरन्दर सिंहका सैन्य परास्त हुआ। पुरन्दर हार कर गोहाटी भाग गये। ब्रह्मसेनापतिने चन्द्रकान्तको राजा बना पुरन्दरको पकड़नेके लिये सैन्य भेजा था। पुरन्दरके

काम-मतुप्-ङीप् मस्य वः। १ दारुहरिद्रा। कामः कन्दर्पभावः अस्त्यस्याः। २ मैथुनकी अभिलाष रखनेवाली, जिस औरतको शहवत चढ़ी हो।

कामपर (सं० त्रि०) कामादपि सौन्दर्येण परः श्रेष्ठः १ अतिसुन्दर, निहायत खूबसूरत। (पु०) २ यथेच्छ नर, मनमाना चल फिरनेवाला।

कामवल्लभ (सं० पु०) कामः कमनीयः अतएव वल्लभः प्रियः, कर्मधा०। यद्वा कामस्य कन्दर्पस्य वल्लभः, ६-तत्। १ आम्रवृक्ष, आमका पेड़। आम्रका मुकुल कन्दर्पको बहुत प्यारा है। इसीसे कन्दर्पकी पूजामें आम्रमुकुल अवश्य लगता है। २ वसन्त, बहार। ३ सारस पक्षी।

कामवल्लभा (सं० स्त्री०) कामस्य कन्दर्पस्य वल्लभा प्रिया। १ रति। २ ज्योत्स्ना, चांदनी।

कामवश (सं० त्रि०) कामस्य वशः वशीभूतः, ६-तत्। कामरिपुके वशीभूत, जो शहवतके तावेमें रहता हो।

कामवश्य (सं० त्रि०) कामस्य वश्यः वश्यतामापन्नः, काम-वश-यत्। कन्दर्पपीड़ाके वशीभूत, जो शहवतके तावेमें हो।

कामबाण (सं० पु०) कामस्य कन्दर्पस्य बाणः शरः, ६-तत्। कन्दर्पका बाण, कामदेवका तीर। कामदेव पुष्पके पांच बाण रखते हैं।

"अरविन्दमशोकञ्च चूतञ्च नवमल्लिका।
नीलोत्पलञ्च पञ्चैते पञ्चबाणस्य सायकाः॥"

पद्म, अशोक, शिरीष, आम्र और उत्पल पांचों पुष्प कन्दर्पके पञ्चबाण हैं।

पांच प्रकारके कर्मानुसार कन्दर्पबाण अन्य नामों-से भी अभिहित हैं,—

"उन्मादनस्तापनश्च शोषणः स्तम्भनस्तथा।
सम्मोहनश्च कामस्य बाणाः पञ्च प्रकीर्तिताः॥"

सम्मोहन, उन्मादन, शोषण, तापन, और स्तम्भन पांच कामबाणोंके नाम हैं।

कामवाद (सं० पु०) कामं यथेच्छं वादः। यथेच्छ-प्रवाद, मनमानी बात।

कामवान् (सं० पु०) कामः अस्त्यस्य, काम-मतुप् मस्य वः। १ अभिलाषयुक्त, ख्वाहिशमन्द। २ मैथुनेच्छायुक्त, शहवतकी ख्वाहिश रखनेवाला।

कामवासी (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं वसति, काम-वस्-णिनि। इच्छानुसार नानास्थानमें अभिलाषसे वास करनेवाला, जो ख्वाहिशके मुताबिक रहता हो।

कामविद्ध (सं० त्रि०) कामबाणेन विद्धः, ३-तत्। कन्दर्पबाणविद्ध, मैथुनकी इच्छासे आकुल।

कामविहन्ता (सं० पु०) कामस्य कन्दर्पस्य विशेषेण हन्ता नाशयिता, काम-वि-हन्-तृच्। १ महादेव। (त्रि०) २ कामरिपु जयकारी, कामदेवको जीत लेनेवाला।

कामवीर्य (सं० त्रि०) कामं पर्याप्तं वीर्यं यस्य, बहुव्री०। १ अपरिमित वीर्यशाली, खूब ताकत रखनेवाला। (क्ली०) कामस्य वीर्यम्, ६-तत्। २ कन्दर्पकी शक्ति, कामदेवका बल।

कामवृन्त (सं० पु०) कामं यथेच्छं वृन्तो यस्य, मध्यपदलो०। पाटला, वांदा।

कामवृत्त (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं निरङ्कुशं वृत्तमस्य, बहुव्री०। यथेच्छाचारी, मनमानी चाल चलनेवाला।

कामवृत्ति (सं० स्त्री०) कामेन स्वेच्छया वृत्तिः, ३-तत्। १ स्वेच्छाचार, मनमानी चाल। २ कामरिपुका कार्य, कामदेवका काम। (त्रि०) कामतो वृत्तिरस्य, बहुव्री०। ३ यथेच्छाचारयुक्त, मनमौजी।

कामवृद्धि (सं० पु०-स्त्री०) कामस्य वृद्धिर्यस्मात्, बहुव्री०। १ कामज नामक महाक्षुप, एक बड़ा झाड़। कर्णाटक देशमें इसे 'कामज' कहते हैं। कारण कामवृद्धि सेवन करनेसे कामवीर्य बढ़ता है। इसका संस्कृत पर्याय—स्मरवृद्धिसंज्ञ, मनोज्ञवृद्धि, मदनायुध, कन्दर्पजीव, जितेन्द्रियाह्व, कामोत्कर्षीय और सोमज है। राजनिघण्टुके मतसे यह मधुररस और शीत, रुचि, कामशक्ति तथा इन्द्रियकी शक्ति बढ़ानेवाली है। २ कामरिपुकी वृद्धि, कामदेवकी बढ़ती।

कामवृन्ता (सं० स्त्री०) कामं कमनीयं वृन्तं यस्याः, बहुव्री०। पाटलवृक्ष, एक पेड़।

कामशक्ति (सं० स्त्री०) कामस्य शक्तिर्नायिकाविशेषः, ६-तत्। कामदेवकी एक पत्नी। शास्त्रकारने इस कामशक्तिके पचास विभाग किये हैं,—१ रति, २ प्रीति, ३ कामिनी, ४ मोहिनी, ५ कमलप्रिया, ६ विलासिनी,

और बड़फूकनने युद्ध किया। किन्तु उनके भी हारने पर पुरन्दर भाग कर चिलमारीमें जा रहे। ब्रह्मसेनापति चन्द्रकान्तके रक्षार्थ २००० सैन्य छोड़ स्वदेश लौट गये। पुरन्दरने निरुपाय हो कलकत्ते जा १८१८ ई०के सितम्बर मास ब्रटिश गवरनमेण्टके निकट निम्नलिखित आवेदन किया था,—"यदि ब्रटिश गवरनमेण्ट सैन्य भेज कर हमारा राज्य उद्धार कर दे, तो हम उसके लिये व्यय देंगे और अवशेषको ब्रटिश गवरनमेण्टके अधीन करद राजा बननेके लिये प्रस्तुत हैं।" किन्तु ब्रटिश गवरनमेण्टने उक्त आवेदन न सुना।

उस समय कोचविहारमें मिष्टर स्काट कमिशनर थे। वह प्रतिपत्रमें गवरनमेण्टको देशकी अवस्था देखाते रहे। फिर ब्रह्मसेना रीतिके अनुसार देशमें घुस पड़ी। चन्द्रकान्तको नाममात्र राजा रख ब्रह्मसेनापति सर्वमय कर्ता बन बैठे। चन्द्रकान्त भी अन्तको उनके हाथसे देशोद्धार करनेकी चेष्टामें लगे। १८२०ई०को ब्रह्मसेनापति मिङ्गिमाहा देशकी अवस्था देखने गये थे। जयपुरके निकट एक गढ़ बनते देख उन्होंने कौशलसे वहांके बड़फूकनको मार डाला। चन्द्रकान्तने उससे भीत हो सोचा कि इस बार ब्रह्मसेनापतिने शत्रुरूपसे राज्यमें प्रवेश किया था। उसी विवेचनामें वह बूढ़ा गोसाईंको नगरके रक्षार्थ रख स्वयं गौहाटी भाग गये। मिङ्गिमाहाने वहां पहुंच कर चन्द्रकान्तको अभय दिया था। किन्तु उनके उसमें विश्वास न कर सकनेसे नगररक्षी सैन्यके साथ ब्रह्मसेनापतिका युद्ध हुवा। बूढ़ा गोसाईं हार गये। चन्द्रकान्त जोड़हाटकी ओर भागे थे।

मिङ्गिमाहा योगेश्वर नामक किसी कुमारको कहनेके लिये राजा बना स्वयं राज्यशासन करने लगे। उस समय राज्यमें प्रायः दश सहस्र ब्रह्मसेना उपस्थित थी। दरङ्गराज भी उसी समय ब्रह्मको अधीनता स्वीकार करने पर बाध्य हुये। उसके पीछे ब्रह्मसेनापतिके साथ चन्द्रकान्त और पुरन्दरका नाना स्थानोंमें युद्ध हुवा। उसी अवस्थामें ब्रह्मसेनापतिने ब्रटिश गवरनमेण्टको पत्र लिखा था कि वह किसी आसामी राजाका पक्ष ग्रहण न करें। किन्तु ब्रटिश गवरनमेण्टने उक्त आवेदन सुना न था। अथच उसने किसीकी सहायता न की।

उसी समय गारो प्रभृति असभ्य जातियोंको सभ्यता सिखाने और उनके देशमें ब्रटिश अधिकार फैलानेके लिये १८२२ ई०को १०वीं व्यवस्था निकली थी। कोचविहारके कमिशनर स्काट साहब उक्त आईन (व्यवस्था) का कार्य करनेको उसराधमके एजण्ट हुये। उसी समय रङ्गपुरसे विच्छिन्न हो ग्वालपाड़ा एक स्वतन्त्र जिला बन गया। आसाममें उस समय ब्रह्म-अधिकार होनेसे ग्वालपाड़ेमें एकदल अंगरेजी सैन्य रहा। लेफटेनेण्ट डेविडसन साहब उस सैन्यदलके नायक थे। मिष्टर डेविडसन और मिष्टर स्काट आसामियोंसे बड़ा स्नेह रखते थे।

उधर महगढ़के युद्धमें सम्पूर्ण परास्त हो चन्द्रकान्तने ग्वालपाड़े जा अंगरेजोंका आश्रय लिया। लेफटेनेण्ट डेविडसनको भय देखा ब्रह्मसेनापतिने निम्नलिखित पत्र भेजा था,—"ब्रह्मराज चाहते हैं कि कम्पनीके साथ मिलना रहे और ब्रह्मसेना किसी प्रकार अंगरेजी सीमा अतिक्रम न करे। किन्तु चन्द्रकान्तने अंगरेजोंके अधिकारमें आश्रय लिया है। अतएव उन्हें पकड़नेके लिये आदेश देना आवश्यक है।" मिष्टर डेविडसनने उक्त पत्र मिष्टर स्काटके पास पहुंचा दिया। फिर स्काटने वही पत्र गवरनर जनरलके पास भेजा था। गवरनर जनरलने ढाकेके अंगरेजी सेनापतिको आदेश दिया कि मिष्टर स्काटको आवश्यक सैन्य मिल सकता है। ब्रह्मसेना यदि अंगरेजी सीमामें घुस आवे, तो वह बलपूर्वक भगायी जावे।

१८१७ ई०को कछारके राजा गोविन्दचन्द्रने गवरनमेण्टसे आवेदन किया कि मणिपुरकी सीमा पर ब्रह्मसैन्यका आक्रमण हो सकता है। १८२० ई०को मणिपुरसे चौरजित् सिंह, मारजित् सिंह और गम्भीर सिंह नामक तीन राजकुमारोंने ब्रह्मके अत्याचारसे उत्पीड़ित हो कछार जा कर आश्रय लिया था। उसके पीछे गोविन्दचन्द्रके गृहविवादमें राज्यच्युत होने पर उक्त तीनों भ्रातावोंमें कछारके सिंहासनके लिये बड़ी हलचल पड़ी। १८२३ ई०को चौरजित्

७ कल्पलता, ८ श्यामला, ९ भविष्यिता, १० विचित्रांगी, ११ विश्वासाक्षी, १२ खेलिहाना, १३ दिगम्बरा, १४ यामा, १५ कुला, १६ धरा, १७ नित्या, १८ कल्याणी, १९ मोहिनी, २० सुलोचना, २१ सुलावण्या, २२ विमर्दिनी, २३ कलहप्रिया, २४ एकाक्षी, २५ सुमुखी, २६ नलिनी, २७ जटिला, २८ पापिनी, २९ शिवा, ३० मुग्धा, ३१ रसा, ३२ क्षमा, ३३ चारुलोला, ३४ चपला, ३५ दीर्घजिह्वा, ३६ रतिप्रिया, ३७ लोलाक्षी, ३८ श्रङ्गिणी, ३९ पाटला, ४० मालिनी, ४१ माला, ४२ हंसिनी, ४३ विद्युतीमुखी, ४४ नन्दिनी, ४५ रङ्गिनी, ४६ कान्ति, ४७ कलकण्ठी, ४८ कृशोदरा, ४९ मेघश्यामा, और ५० शपोन्नता।

ध्यानके मन्त्रमें कामशक्ति इस प्रकार वर्णित है,—

"शक्तयः कुङ्कुमनिभाः सर्वालङ्कारभूषिताः।
नीलोत्पलकरा ध्येया त्रिलोकाकर्षणक्षमाः॥"

कामको शक्ति कुङ्कुमको भांति वर्णवाली, सर्वाङ्गमें अलङ्कार पहने, हाथमें नीलोत्पल लिये और त्रिलोकको खींच सकनेवाली हैं।

कामशर (सं॰ पु॰) १ कन्दर्पवाण, कामदेवका तीर। कामस्य कन्दर्पस्य शर इव कामोद्दीपकत्वात्। २ आम्रवृक्ष, आमका पेड़।

कामशास्त्र (सं॰ क्ली॰) कामस्य अर्थादेः प्रतिपादकं शास्त्रम्, मध्यपदलो॰। १ अभीष्टसम्पादक शास्त्र, मुराद पूरा करनेवाला इल्म।

"अर्थशास्त्रमिदं प्रोक्तं धर्मशास्त्रमिदं महत्।
कामशास्त्रमिदं प्रोक्तं व्यासेनामितबुद्धिना॥"
(महाभारत, आदि, १।८)

२ रतिशास्त्र। रतिशास्त्र देखो।

कामसंयोग (सं॰ पु॰) अभिलषित विषयकी प्राप्ति, मुरादको लहसोल।

कामसख (सं॰ पु॰) कामस्य सखा, काम-सखि-टच्। १ वसन्तकाल, मौसम बहार। २ आम्रवृक्ष, आमका पेड़।

कामसखा (हि॰) कामसख देखो।

कामसुत (सं॰ पु॰) कामस्य सुतः पुत्रः, ६-तत्। कन्दर्पपुत्र, अनिरुद्ध।

कामसू (सं॰ त्रि॰) कामं अभीष्टं सूते, काम-सू-क्विप्। १ अभीष्टप्रद, मुराद पूरी करनेवाला। (पु॰) २ रौक्मिण्य। (स्त्री॰) कामं प्रद्युम्नं सूते। ३ रुक्मिणी।

कामसूत्र (सं॰ क्ली॰) कामस्य तद्व्यापारस्य प्रतिपादकं सूत्रम् मध्यपदलो॰। कामव्यापारबोधक एक शास्त्र। इसे वात्स्यायनने बनाया है।

कामसेन (सं॰ पु॰) कामवतीके एक राजा।
कामकन्दला देखो

कामसेना (सं॰ स्त्री॰) निश्चिपतिकी पत्नी।

कामस्तुति (सं॰ स्त्री॰) कामस्य स्तुतिः ६-तत्। प्रतिग्रहकी शान्तिके लिये कामदेवकी स्तुतिका एक मन्त्र। यह मन्त्र प्रतिग्रहीताको पढ़ना पड़ता है,—

"कोऽदात् कस्मा अदात् कामोऽदात् कामायादात् कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत्ते।" (यजुर्वेद ७।४८)

स्मृतिशास्त्रमें भी प्रतिग्रहकी दोषशान्तिके लिये निम्नलिखित मन्त्र पढ़नेको कहा है,—

"प्रतिग्रहणदोषस्य शान्त्यै कामस्तुतिं पठेत्।"

कामहा (सं॰ पु॰) कामं कंदर्पं हतवान्, काम-हन्-क्विप्। १ महादेव। २ विष्णु।

कामहैतुक (सं॰ त्रि॰) कामः हेतुर्यस्य, कामहेतु-कन्। १ केवल अभिप्रायजात, सिर्फ ख्वाहिशसे पैदा। २ कामरिपुसे उत्पन्न, कामदेवसे निकला हुआ।

कामा (हि॰ स्त्री॰) सुन्दरी, खूबसूरत औरत।

कामा (अ॰ पु॰ Comma) १ विराम, ठहराव। २ विरामका एक चिह्न, ठहरनेका एक निशान्। यह समान अर्थवाचक दो शब्दों या वाक्योंके बीच आता है। कामा चिह्नका रूप यह , है।

कामाख्य (सं॰ पु॰) कुमारिकाखण्ड अम्बकसुनिकुमजात शृङ्गार राजाके पुत्र। इनके पुत्रका नाम पारिजात था। (कथासरित्स १।११।७५)

कामाक्षी (सं॰ स्त्री॰) कामं रमणीयं अक्षि यस्याः, काम-अक्षि-षच्-ङीप्। १ देवमूर्तिविशेष, एक देवता। २ तन्त्रोक्त कोई पीठ।

कामाख्या (सं॰ स्त्री॰) कामयते भक्तानां कामं पूरयतीति कामा आख्या यस्याः। १ देवीविशेष, एक देवता। इनके इस नाम सम्बन्ध पर यों लिखा है,—

ब्रह्मपुराण—

"कामार्थमागता यस्मात् मया सार्द्धं महागिरौ।
कामाख्या प्रोच्यते देवी नीलकूटे रहोगता॥"

सिंहने ब्रुटिश गवरनमेण्टको एक पत्र लिखा,—"मालूम पड़ता है कि ब्रह्मराज शीघ्र ही इस अञ्चल पर आक्रमण करनेवाले हैं। अतएव हम कछार राज्य अंगरेजोंको सौंपना चाहते हैं।" ब्रुटिश गवरनमेण्ट उक्त प्रस्ताव पर सम्मत हो गयी। मारजित्‌सिंह पहले ही ब्रह्मके साहाय्यसे मणिपुर अधिकार कर वहां ब्रह्मके करद राजा बन बैठे थे।

ब्रुटिश गवरनमेण्टको कछार राज्य हाथमें लेने पर संवाद मिला कि ब्रह्मवाले आसामसे कछार आक्रमणके उद्योगमें थे। मिष्टर स्काटने ब्रह्मसेनापतिको एक पत्र लिखा,—"कछारके साथ ब्रुटिश गवरनमेण्टका सम्बन्ध है। आप इस प्रदेश पर आक्रमण न कीजिये।"

आसाम और कछारके मध्य क्षुद्र जयन्ती राज्य है। ब्रह्मसेनापतिने उक्त देशके राजाको भय देखा वशीभूत करना चाहा था। किन्तु जयन्तीराजने वश्यता न मानी। ब्रह्मसेनापति भी कछारकी अंगरेजी सेनाके भयसे हठात् उक्त राज्यको आक्रमण कर न सके।

उसके पीछे एक ही साथ आसाम और मणिपुर दोनों दिक्‌से आक्रमण करनेके लिये जयन्ती एवं कछारके प्रान्त तथा श्रीहट्टकी सीमा पर ब्रह्मसेना पहुंची थी। अंगरेजाधिकृत आराकान ब्रह्मवालोंने जीत लिया। १८२१ ई०को उन्होंने चट्टग्रामके निकटवर्ती शाहपुर नामक एक क्षुद्र द्वीप पर अधिकार किया था। लार्ड आमहर्ष्ट उस समय गवरनर जनरल थे। उन्होंने देखा कि ब्रह्मका अधिकार चट्टग्रामकी सीमा तक फैला था। फिर स्थिर रहनेसे बङ्गालके सीमान्त प्रदेशमें सब अत्याचार करेंगे। १८२४ ई०को ब्रह्मसे युद्ध करना ठहर गया। गवरनर जनरलने ढाकाके ब्रिगेडियर मेकमरिसको ग्वालपाड़े जानेका आदेश दिया था। उधर लेफटिनेण्ट डुजिङ्गमनको आसाम प्रवेश करनेकी भी अनुमति मिली। मिष्टर स्काटने समस्त प्रबन्धका भार पाया था। १८२४ ई०की २८ वीं मार्चको ब्रिगेडियर मेकमरिसने बिना युद्ध गौहाटी अधिकार कर लिया।

ब्रह्मवाले अंगरेजोंका आगमन सुनते ही नगर छोड़ भाग गये। फिर ब्रिगेडियर मेकमरिन, कप्तान हरमकस, लेफटिनेण्ट रिचार्डसन, कप्तान रिचार्डस प्रभृतिसे कलियाबर, नौगांव, रहा, मराकुब आदि स्थानोंपर कई बार युद्धमें ब्रह्मसेना परास्त हुयी। युद्धमें ब्रिगेडियरके मरनेसे कप्तान रिचार्डस प्रधान सेनापति बने थे। अन्तमें १८२४ ई०के मई मास आसाम प्रदेशमें अंगरेजोंका अधिकार हो गया। उसके पीछे जोड़हाट, जयन्ती, कछार, गौरीसागर प्रभृति स्थानोंमें शान्तिके रक्षार्थ क्षुद्र क्षुद्र युद्ध हुये। ब्रह्मके अधीनस्थ श्यामफूकन और बगली फूकनने ७०० सेनाके साथ आत्मसमर्पण किया था। योगेश्वरसिंह योगीघोपामें १८२५ ई०को परलोक गये। उनके वंशीय ब्रुटिश गवरनमेण्टके वृत्तिभोगी बने।

१८२६ ई०की २४ वीं फरवरीको यण्डाबू शहरमें अंगरेजों और ब्रह्मवासियोंसे एक सन्धि हुयी। उसके अनुसार आराकान, मार्ताबान, तेनासरीम और आसाम अंगरेजोंको मिला था। स्काट साहब उक्त नवजित राज्यके कमिशनर हुये। किन्तु वह उत्तरपूर्वाञ्चलमें गवरनर जनरलके एजण्ट एवं कमिशनर तथा कोचबिहार, रङ्गपुर, मणिपुर एवं कछारके कमिशनर और श्रीहट्टके जज थे। सुतरां एक आदमीके हाथमें उतने कार्योंकी सुविधा न पड़नेसे समस्त पूर्व-भारत निम्न और श्रेष्ठ खण्डमें विभक्त हुआ। उक्त खण्ड द्वयकी उत्तरसीमा भरली और दक्षिणसीमा धनगिरी नदी थी। सीनियर वा श्रेष्ठ खण्डके मिष्टर स्काट और जूनियर वा निम्नखण्डके कप्तान रिचार्डस कमिशनर हुये। किन्तु प्रधान कर्तृत्व स्काट साहबको ही मिला था। गौहाटी आसामकी राजधानी हुआ।

१८२५ ई०के अक्तोबर मास कप्तान रिचार्डसके पीछे कप्तान कूपर कमिशनर बने थे। श्रेष्ठ विभागके अकेले कार्य चला न सकनेसे स्काट साहबने कप्तान एडम ह्वाइटको सहकारीरूपमें ग्रहण किया। ह्वाइटसे आसाम प्रदेशकी यथेष्ट उन्नति हुयी। १८३१ ई०को चेरापूञ्जीमें वह मर गये। उनके पीछे टि, सि, रबार्टसन प्रधान कमिशनर हुये।

[illegible]
[illegible]

(कालिकापुराण)

प्रकृतार्थ कथा—महादेवी कामाख्या अभिलाष पूर्ण करनेके लिये महादेवके साथ नीलकूट गयी थीं। इसीसे कामाख्या नाम प्राप्त हुआ। वह कामदा, कामिनी, कामा, कान्ता, कामाङ्गदायिनी और कामाङ्ग-नाशिनी होनेसे "कामाख्या" कहाती हैं।

२. पीठस्थान विवरण। कामाख्यादेवी ही इस स्थानकी अधिष्ठात्री-देवता हैं। कालिका-पुराणमें इस पीठस्थानके सम्बन्ध पर लिखा है,—"दक्षके यज्ञमें सतीने देह छोड़ा था। महादेव उनका मृतदेह स्कन्ध पर रख बहुत दिन पर्यन्त इतस्ततः घूमते रहे। क्रमशः उस देहसे स्थान स्थान पर अवयव विच्युत गिरा था। उन्हीं सकल स्थानों पर एक एक पवित्र पीठ बन गया। अवशिष्टमें कुब्जिका नामक पीठ-स्थानमें देवीका योनिमण्डल गिरा। उस समय महामाया योगनिद्रा भी महादेवसे भीत थीं। उन्होंने फिर अति उच्च पर्वतका रूप धारण कर पातालमें प्रवेश किया। यह व्यापार देख ब्रह्माने पर्वतरूपसे उन्हें पकड़ा था। विष्णु भी पृथिवी आक्रमण कर उनके निकट उपस्थित हुये। उस पर्वतमय शत शत योजन उच्च थे, किन्तु देवीके आक्रमणसे अधो-गत हो एक कोश परिमित उच्च रह गये। उनके पूर्व दिक्का पर्वत ब्रह्मशैल है। उसे 'शैल' कहते हैं। वह महाशिला अधिक उच्च है। पश्चिम दिक्का पर्वत वाराह नामक विष्णुशैल है। फिर उसके मध्यदेशस्थित त्रिकोण चतुष्कोणाकृति शैलका नाम नील है। वहीं महादेवका उपाश्रय है। तद्भिन्न ईशान-दिक्के दीर्घिकाकी पर्वतकी चूड़ाका नाम 'मणि-कूट' है। चाण्डालोपविष्ट पर्वत 'मणिपर्वत' कहलाता है। उस पर्वत मौलिकका अति निकटस्थ है। नैर्ऋत्यकोणके पर्वतका नाम 'भस्माचल' है। वह महादेवका निकटस्थ है। ब्रह्मशिल-शिखरका पूर्व-भागस्थित पर्वत भी महादेवका उपाश्रय है। उसे 'श्मशान' कहते हैं।

इसी प्रकार पवित्र नीलकूट पर्वतस्थ कुब्जिकापीठमें देवी महामायाने महादेवके साथ अवस्थान किया। उनका योनिमण्डल ही गिर कर प्रस्तर बन गया था। वही कामाख्यादेवीके नामसे विख्यात हुआ। मनुष्य उस शिलाके स्पर्शसे देवत्व पाते और देव ब्रह्मलोक जाते हैं। उस स्थानका माहात्म्य अति अद्भुत है। उसमें लोह डाल देनेसे वही भस्म हो जाता है।

उस योनिमण्डल २१ अङ्गुलि दीर्घ और १ वितस्ति (बालिश्त) विस्तृत है। फिर वह सिन्दूर और कुङ्कुमादिसे शोभित है। देवी महामाया वहीं प्रकार पञ्चकामिनीमूर्तिसे अवस्थान करती हैं। पञ्चमूर्तिके नाम—कामाख्या, त्रिपुरा, कामेश्वरी, सारदा और महोत्साहा हैं। देवीकी चारो ओर अष्ट योगिनी रहती हैं। उनके नाम—गुप्तकामा, श्रीकामा, विन्ध्य-वासिनी, कोटीश्वरी, वनस्था, पाददुर्गा, दीर्घेश्वरी और प्रकटा हैं। अपराजिता भी वहीं ग्रन्थरूपसे अव-स्थित हैं। विष्णु उनके नीर कमल नामसे अवस्थान करते हैं। देवीके अङ्कमें लक्ष्मी ललिता नामसे और सरस्वती मातङ्गी नामसे अवस्थित हैं। देवीके त्रि-पुर नगदेव पर्वतके पूर्वभागमें शारदेश पर शिव नामसे रहते हैं। कल्पवृक्ष और कल्पलता, शिलिकी तथा अपराजिता रूपसे वहाँ अवस्थित हैं। वाराह-मूर्ति हरि पाण्डुनाथ नामसे परिचित हो रहे हैं। उन्होंने वहीं मधु और कैटभासुरको मार गिराया, वहीं निकट ही ब्रह्माने ब्रह्मकुण्ड बनाया है। उस ब्रह्मकुण्डके निकट गया और वाराणसीविश्व योनिमण्डलप्रभव कुण्डरूपसे अवस्थित है। कालीके पास शङ्ख एवं अभ्यास देवसे महादेवको सन्तुष्टिके लिये अमृतपूर्ण अमृतकुण्ड स्थापित किया था। उसके निकट कान्ति-नामक महापुण्यतीर्थ कामकुण्ड है। शिवकुण्ड और कामकुण्डके मध्यभागमें विदार नामक क्षेत्र है। वह देखनेमें १४ व्याम बड़ा है। उसे ब्रह्माकुण्ड भी कहते हैं। कुमकुण्डके मध्यदेशमें कामेश्वर पर्वतसे उत्पन्न त्र्यम्बक टङ्कपुरीका नाम 'कामाख्या' है। 'कामेश्वर और कामाख्याके मध्यदेशमें आम्रपालि है। पीठ-स्थानमें दीर्घेश्वरी, कौमारादिके अवस्थिता और

उत्तरखण्डमें पुरन्दर सिंह राजा माने गये थे। उन्होंने वार्षिक ५००००) रु० कर देना अङ्गीकार किया। विश्वनाथ नामक स्थानमें एक पोलिटिकल एजण्ट रखे गये। १८३२।३३ ई०को कामरूप प्रदेश दरङ्ग, कामरूप और नौगांव तीन जिलोंमें विभक्त हुआ। उसमें एक स्वतन्त्र कलक्टर और मजिष्ट्रेटकी क्षमताके साथ एक प्रधान सहकारी कमिश्नर (Chief Assistant Commissioner) रखा गया। राबर्टसनके पीछे १८३४ ई०को जेनकिन्स साहब कमिश्नर हुये। उन्होंने जिले और मौजोंका सीमाविभाग ठीक किया था। १८३५ ई० को उक्त प्रदेश बोर्ड अफ् रेविन्यूके अधीन गया। १८२६ ई० को जयन्तीराजने कम्पनीसे सन्धि कर अधीनता मानी थी। किन्तु १८३५ ई०में राजाको मासिक ५००) रु० वृत्ति दे जयन्ती प्रदेश कम्पनीके अधिकारमें लाया गया। १८३८ ई० को पुरन्दर सिंह नियमित कर दे न सके थे। इसीसे उन्हें राजच्युत कर तत्प्रदेश शिवसागर और लक्ष्मीपुर दो जिलोंमें बांटा गया। चन्द्रकान्त सिंह गोहाटीमें ५००) रु० वृत्ति पाते थे। किन्तु उस साल ही उन्होंने परलोक गमन किया। पुरन्दर सिंहको भी वृत्ति दे जोड़हाटमें रखनेकी बात उठी थी। किन्तु गर्वित पुरन्दरने वृत्ति न ली। उसी स्थान पर शुकाफा-वंशके हाथसे आसामका छत्रदण्ड अपहृत हुआ और आसाम वा प्राचीन कामरूप राज्य महान् प्रस्तावसे अंगरेजोंके अधिकारमें गया।

उसके कुछ दिन पीछे १८३९ ई०को एक कमिश्नरके हाथ शासन और विचारका भार रहनेसे कार्यमें सुशृङ्खला न देख पड़ी। इसीसे एक सहकारी नियुक्त हुआ। उक्त सहकारी नियुक्त होनेसे एक पदका नाम जुडिशल कमिश्नर और दूसरेका नाम डेपुटी कमिश्नर रखा गया।

१८६० ई० को इनकमटेक्स प्रचलित होनेसे फूलगुड़ीके लोग भड़क उठे थे। असिष्टण्ट कमिश्नर लेफटनण्ट सिंगर गड़बड़ मिटाने गये, किन्तु निहत हुये। अन्तमें बड़े कौशलसे गड़बड़ थमने पर दोषियोंको उचित शास्ति मिली।

१८६१ ई० को कमिश्नर जेनकिन्सने स्वपदसे अवसर लिया था। फिर उसी पद पर कप्तान हपकिन्सन नियुक्त हुये। १८६६ ई० को गोहाटीमें जेनकिन्स मर गये।

१८६२ ई०को खसिया और जयन्ती पर्वतमें भयानक विद्रोह उठा था। फिर १८६४ ई०में भूटानका युद्ध लगा। अंगरेज जीत गये। १८६५ ई० को सिञ्चोला नामक स्थानमें सन्धि हुयी। उक्त सन्धिके अनुसार भूटानके दक्षिण कई स्थान अंगरेजोंका मिले थे। गारो और नागाओंके कई सरदारोंने अधीनता स्वीकार की। उनमें सभ्यता फैलानेके लिये उक्त प्रदेश दो जिलोंमें बांटा गया। १८६६ ई०का गारो पर्वतमें तुरा और नागा पर्वतमें सामागुटिंग राजधानी हुवा। उसी वर्ष कोचविहार और ग्वालपाड़ा आसामवाले कमिश्नरके हाथसे निकाल स्वतन्त्र कर दिया। १८७१ ई० को लेफटेनण्ट गवरनर सर-जर्ज कामबेल उक्त देश देखने पहुंचे थे। उन्होंने वहांके विचारालयों और विद्यालयोंमें आसामी भाषा व्यवहार करनेका आदेश दिया।

१८७४ ई०को करनेल हपकिन्सनने अवसर लिया था। फिर आसाम देश बङ्गालके लेफटेनण्ट गवरनरके हाथसे निकल एक प्रधान कमिश्नरको मिला। करनल किटिंग प्रथम चीफ कमिश्नर हुये। चीफ कमिश्नर बनने पर शिलङ्ग नगर राजधानी हुवा और ग्वालपाड़ा तथा गारो पर्वत फिर आसाममें चला गया। उसके पीछे कछार और श्रीहट्ट बङ्गप्रदेशसे स्वतन्त्र हो चीफ कमिश्नरके अधीन हुवा।

उसी वर्ष असिष्टण्ट कमिश्नर लेफटेनण्ट हलकम्बने नागापर्वतकी पैमायश शुरू की थी। नौवगांवमें पहुंचने पर कई नागाओंने विश्वासघातकतापूर्वक शिविरमें घुस उन्हें मार डाला। हलकम्ब प्रभृति १९० आदमियोंमें उसी दिन ८० लोग मारे गये। ५१ लोग आहत हुये थे। कुछ दिन पीछे उन नागाओंको उपयुक्त शास्ति मिली। करनल किटिंगके पीछे सर ष्टुवर्ट बैली और उनके पीछे मिष्टर एलियट आसामके चीफ कमिश्नर हुये। सर एलियटके

कामाख्याप्रस्तरके प्रान्तदेशमें कुमाख्छी नाम्नी योगिनी रहती हैं। दक्षिण पीठमें कामेश्वरके अघोर नामक शिखरको परमार्थी, भैरव नामसे अभिहित करते हैं। उन्हीं भैरवके निकट चामुण्डा भैरवीका अवस्थान है। कामेश्वर और भैरवके मध्यवर्ती स्थानमें सुरापगा देवी हैं। सद्योजात नामक शिखरदेशमें आम्रातकेश्वर हैं। उसी स्थानमें योगरूपिणी दुर्गा नाम्नी नायिका हैं। फिर उक्त स्थानका अपक्व फलविशिष्ट लतावेष्टित आम्रातक वृक्ष ही कल्पलतावेष्टित कल्पवृक्ष है। उसी आम्रातक वृक्षके निकट स्वयं गङ्गा सिद्धगङ्गा नामसे अवस्थित हैं। उनके समीप आम्रातकक्षेत्र नामक पुष्करक्षेत्र है। ईशान दिक् तत्पुरुष नामक शिखरके उपरिभागमें भुवनेश्वर देवका पीठ है। उसके निकट कामधेनु नामसे सुरभिकी शिलामूर्ति है। मध्यदेशमें कोटिलिङ्ग नामक महाभैरवकी मूर्ति है। वह पांच मूर्ति द्वारा पांच भागमें विभक्त है। ब्रह्मपर्वतके ऊर्ध्वदेशमें भुवनेश्वरीके नाम पर महागौरीकी शिलामूर्ति है। जहां ब्रह्मा पर्वतरूपसे पर्वतरूपी महादेवके साथ मिलित हुये, वहां अपराजिता नामकी कल्पलता अवस्थित है। कामधेनुके निकट अग्निकोणमें योनिरूपा कामाख्याका पीठ है। उसी स्थान पर विन्ध्यवासिनी नामसे चण्डघण्टा, वनवासिनी नामसे स्कन्दमाता और कात्यायनी नामसे पाददुर्गा योगिनीका अवस्थान है। उक्त सकल योगिनी नीलशैलकी नैर्ऋत दिक् अवस्थित हैं। पश्चिम द्वार पर हनूमान्पीठमें पाषाणरूपी नन्दीका अवस्थान है।
(कालिकापुराण ८१ अ०)

देवीगीतामें भी कामाख्या-पीठस्थान सर्वोत्कृष्ट माना और लिखा गया है—

देवी कामाख्या प्रतिमास इस स्थानमें रजस्वला होती हैं।
(योगिनीतन्त्र, ५।६ पटलमें और कामरूप शब्द द्रष्टव्य है।)

कामाख्याकी कुमारी-पूजा भगवतीपूजाका विशेष अङ्ग है। कामाख्यामें अनेक ब्राह्मण-कुमारीका पूजाग्रहण एक व्यवसाय स्वरूप है। पूजा हो या न हो, कामाख्यादर्शनके लिये पहुंचते ही कुमारी यात्रीको घेर कर पकड़ेंगी और दक्षिणा मांगने लगेंगी। न्यूनाधिक ३०० कुमारी सर्वदा कामाख्यामें रहती हैं। अनेक समय वह यात्रियोंको दक्षिणाके लिये व्यतिव्यस्त कर डालती हैं।

कामाख्याके भीतर न्यूनाधिक ५२ तीर्थस्थान अद्यापि वर्तमान हैं। किन्तु दुःख है कि उनमें अनेक दुर्गम अरण्यसे समावृत हैं। उक्त समस्त तीर्थोंके मध्य भगवती भुवनेश्वरी और दश महाविद्याका पीठस्थान ही समधिक प्रसिद्ध है।

कामाख्याके पूजादि निर्वाहको अहोम-राजावोंने अनेक भृत्य (पायक) और निष्कर भूमिका दान किया है। पायक कार्य विशेष पर भगवतीकी सेवामें लगे रहते हैं। फिर अंगरेज गवरनमेण्टने भी पूर्व नियमसे भगवतीकी पूजाके लिये प्रबन्ध बांध दिया है। प्रायः सकल देवालयोंमें पायक निष्कर भूमि पाते हैं, जो कामाख्या, केदार और माधवमें सर्वापेक्षा अधिक है।

कामाग्नि (सं० पु०) कामः अग्निरिव, उपमितसमा०। १ कामरूप अग्नि, ख्वाहिशकी आग। २ कामरिपुकी यन्त्रणा।

कामाग्निसन्दीपन (सं० क्ली०) कामाग्नीनां सन्दीपनम्, ६-तत्। कामोद्दीपक रसविशेष, ताकृतकी एक दवा। यह एक प्रकार मोदक है। पारा २ तोला, गन्धक २ तोला, अभ्र २ तोला, यवक्षार, सर्जिक्षार, चित्रक, पञ्चलवण, शटी, यमानी, वनयमानी, कीटमारी तथा तालीशपत्र प्रत्येक ४ तोला, जीरा, तेजपत्र, दारचीनी, बड़ी इलायची, छोटी इलायची, लवङ्ग एवं जातीफल प्रत्येक ६ तोला, देवदार, शुण्ठी, मरिच तथा पिप्पली प्रत्येक ८ तोला, धन्याक, यष्टीमधु, एवं कशेरु फल दो-दो तोला, शतावरी, भूमिकुष्माण्ड, गजपिप्पली, वला, हस्तिकर्णपलाश, गोक्षुरबीज, बीजबन्धयुक्त इन्द्रयव बराबर-बराबर और सबके समान चीनी, घी तथा शहद छोड़ इस औषधका पाक करते हैं। पाक उतरने पर २ तोला कपूर डाल देते हैं। मोदक १तो०। यह औषध वृष्यसे भी वृष्य है। इसे सेवन करनेसे मनुष्य सहस्र प्रमदाको रिझा और उससे प्रमत्त नागाधिपको हरा सकता है। (भैषज्यरत्नावली।)

सिंहने वृटिश गवरमेण्टको एक पत्र लिखा,—"मालूम पड़ता है कि ब्रह्मराज शीघ्र ही इस प्रदेश पर आक्रमण करनेवाले हैं। अतएव हम कछार राज्य अंगरेजोंको सौंपना चाहते हैं।" वृटिश गवरमेण्ट उक्त प्रस्ताव पर सम्मत हो गयी। मारजित्‌सिंह पहले ही ब्रह्मके साहाय्यसे मणिपुर अधिकार कर वहां ब्रह्मके करद राजा बन बैठे थे।

वृटिश गवरमेण्टको कछार राज्य हाथमें लेने पर संवाद मिला कि ब्रह्मवासी आसाममें कछार आक्रमणके उद्योगमें थे। मिष्टर स्काटने ब्रह्मसेनापतिको एक पत्र लिखा,—"कछारके साथ वृटिश गवरमेण्टका सम्बन्ध है। आप इस प्रदेश पर आक्रमण न कीजिये।"

आसाम और कछारके मध्य क्षुद्र जयन्ती राज्य है। ब्रह्मसेनापतिने उक्त देशके राजाको भय देखा वशीभूत करना चाहा था। किन्तु जयन्तीराजने वश्यता न मानी। ब्रह्मसेनापति भी कछारकी अंगरेजी सेनाके भयसे हठात् उक्त राज्यको आक्रमण कर न सके।

उसके पीछे एक ही साथ आसाम और मणिपुर दोनों दिक्‌से आक्रमण करनेके लिये जयन्ती एवं कछारके प्रान्त तथा श्रीहट्टकी सीमा पर ब्रह्मसेना पहुंची थी। अंगरेजाधिकृत आराकान ब्रह्मवासीने छीन लिया। १८२३ ई०को उन्होंने चट्टग्रामके निकटवर्ती शाहपुर नामक एक क्षुद्र द्वीप पर अधिकार किया था। लार्ड आमहर्ष्ट उस समय गवरनर जनरल थे। उन्होंने देखा कि ब्रह्मका अधिकार बङ्गालकी सीमा तक फैला था। फिर स्थिर रहनेसे बङ्गालके सीमान्त-प्रदेशमें मग अत्याचार करेंगे। १८२४ ई०को ब्रह्मसे युद्ध करना ठहर गया। गवरनर जनरलने ढाकासे ब्रिगेडियर मेकमरिनको ग्वालपाड़े जानेका आदेश दिया था। उधर लेफटिनेण्ट ईरिडसनको आसाम प्रवेश करनेकी भी अनुमति मिली। मिष्टर स्काटमें समस्त प्रबन्धका भार दिया था। १८२४ ई० की २८ वीं मार्चको ब्रिगेडियर मेकमरिनने विना युद्ध गोहाटी अधिकार कर लिया। ब्रह्मवासी अंगरेजोंका आगमन सुनते ही नगर छोड़ भाग गये। फिर ब्रिगेडियर मेकमरिन, कप्तान हरमवरा, लेफटिनेण्ट रिचार्डसन, करनल रिचार्डस प्रभृतिसे कलियाबर, नौगांव, रहा, मराकुस आदि स्थानोंपर कई बार युद्धमें ब्रह्मसेना परास्त हुयी। युद्धमें ब्रिगेडियरके मरनेसे करनल रिचार्डस प्रधान सेनापति बने थे। अन्तमें १८२४ ई०के मई मास आसाम प्रदेशमें अंगरेजोंका अधिकार हो गया। उसके पीछे जोड़हाट, जयन्ती, कछार, शिवसागर प्रभृति स्थानोंमें शान्तिके रक्षार्थ क्षुद्र क्षुद्र युद्ध हुये। ब्रह्मके अधीनस्थ श्यामफूकन और बगली फूकनने ७०० सेनाके साथ आत्मसमर्पण किया था। योगेश्वरसिंह योगीघोपामें १८२५ ई०को परलोक गये। उनके वंशीय वृटिश गवरमेण्टके वृत्तिभोगी बने।

१८२६ ई० की २४ वीं फरवरीको यण्डाबू शहरमें अंगरेजों और ब्रह्मवासियोंसे एक सन्धि हुयी। उसके अनुसार आराकान, मार्तावान, तेनासरीम और आसाम अंगरेजोंको मिला था। स्काट साहब उक्त नवजित राज्यके कमिश्नर हुये। किन्तु वह उत्तरपूर्वाञ्चलमें गवरनर जनरलके एजण्ट एवं कमिश्नर तथा कोचविहार, रङ्गपुर, मणिपुर एवं कछारके कमिश्नर और श्रीहट्टके जज थे। इतने एक पदोंके हाथों उतने कार्योंकी सुविधा न पड़नेसे समस्त पूर्व-भारत निम्न और ऊर्द्ध खण्डमें विभक्त हुआ। उक्त खण्डद्वयकी उत्तरसीमा भरली और दक्षिणसीमा धनशिरी नदी थी। सीनियर वा ऊर्द्ध खण्डके मिष्टर स्काट और जूनियर वा निम्नखण्डके करनल रिचार्डस कमिश्नर हुये। किन्तु प्रधान कर्तृत्व स्काट साहबको ही मिला था। गोहाटी आसामकी राजधानी हुआ।

१८२७ ई० के अक्तोबर मास करनल रिचार्डसके पीछे करनल कूपर कमिश्नर बने थे। ऊर्द्ध विभागमें अकेले कार्य चला न सकनेसे स्काट साहबने कप्तान एडम व्हाइटको सहकारीरूपमें ग्रहण किया। स्काटसे आसाम प्रदेशकी यथेष्ट उन्नति हुयी। १८३१ ई०को चौरापूञ्जीमें वह मर गये। उनके पीछे टि, सि, राबर्टसन प्रधान कमिश्नर हुये।

कामाङ्कुश (सं० पु०) कामे कामोद्दीपने अङ्कुश इव। १ नख, नाखून। २ लिङ्ग, उपस्थ। (त्रि०) ३ काम-शान्तिकारक, ख्वाहिशको ठण्डा करनेवाला।

कामाङ्ग (सं० पु०) कामे कामोद्दीपके अङ्गं मुकुलं यस्य, बहुव्री०। १ महाराजचूत, एक बड़ा आम। २ आम्रवृक्ष, आमका पेड़। ३ ग्रीष्मपक्षी, बाज चिड़िया।

कामाङ्गनाशकरस (सं० पु०) वाजीकरणौषध विशेष, ताकतकी एक दवा। यह पारेके बराबर गन्धक डाल एक पहरतक दूधमें घोंटते हैं। फिर पहलेसे आधा गन्धक मिलाने पर यह तैयार होता है। मात्रा ढाई रत्ती है। मसूल इन्द्रयव, मुषली तथा शर्करा बराबर कूट पीस चूर्ण बनाने और एक रत्तीको आधे पल गोदुग्ध एवं छह बूंदके साथ खाते हैं। इसके सेवनसे मदनोदय होता है। (रसरत्नाकर)

कामाची (सं० स्त्री०) क्षुद्रकाकमाची, छोटी कोयटोंटी।

कामाता (सं० स्त्री०) १ अम्बा, चोटा। २ काक-माची, कोयटोंटी।

कामातुर (सं० त्रि०) कामेन आतुरः, ३-तत्। काम-पीड़ित, चाहका मारा हुआ।

कामात्मज (सं० पु०) कामस्य आत्मजः पुत्रः, ६-तत्। कन्दर्पके आत्मज, अनिरुद्ध।

कामात्मता (सं० स्त्री०) कामप्रधानः आत्मा यस्य तस्य भावः, कामात्मन्-तल्। १ अनुरागप्रधानचित्तता, जोशदार तबीयत। २ कामाकुलचित्तता, चाहकी मारी हुयी तबीयत।

कामात्मा (सं० पु०) कामप्रधानः आत्मा यस्य, बहुव्री०। १ अनुरागी, चाहनेवाला। कामपरीभूत, प्यारसे पड़ा-हुआ। ३ कामरत, चाहमें भरा हुआ। ४ स्त्रीअभिलाषी, औरतोंका ख्वाहिशमन्द।

कामाधिकार (सं० पु०) कामस्य अधिकारः, ६-तत्। १ कामेच्छाका अधिकार, ख्वाहिशका दौरदौरा। २ मानवाभिमान-सम्बन्धीय शास्त्रका एक भाग।

कामाधिष्ठान (सं० क्ली०) कामस्य अधिष्ठानं स्थानम्, ६-तत्। कामका स्थान अर्थात् मन, ख्वाहिशके रहनेकी जगह यानी दिल।

कामाधिक्षिप्त (सं० त्रि०) कामेन अधिक्षिप्तम्, ३-तत्। १ कन्दर्प द्वारा उपेक्षित, प्यारसे छोड़ा हुआ। (क्ली०) भावे क्त। २ कामाधिष्ठान, ख्वाहिश या प्यारकी जगह।

कामानल (सं० पु०) काम एव अनलः, काम अनल इव वा। १ कामरूप अग्नि, ख्वाहिशकी आग। २ कामकी तीव्र वासना, प्यारका गहरा दर्द।

कामानशन (सं० क्ली०) कामं अनशनं यत्र, बहुव्री०। १ इच्छापूर्वक अनाहार तपस्या। २ रागद्वेषादि रहित इन्द्रियगण द्वारा विषयका त्याग।

कामानुज (सं० पु०) कामका अनुज, क्रोध, गुस्सा, ख्वाहिशका छोटा भाई।

कामान्ध (सं० पु०) कामेन कामोद्दीपनेन अन्धयति आत्मानं करोति काम-अन्ध-णिच्-अच्। १ कोकिल, कोयल। (त्रि०) कामेन अन्धः। २ कामके वेगसे हिताहितका ज्ञान न रखनेवाला, जो ख्वाहिशके जोरसे भलाबुरा समझता न हो।

कामान्धा (सं० स्त्री०) कामं यदिष्टं अन्धयति, कामान्ध-टाप्। १ कस्तूरी, मुश्क। (कामेन अन्धा) २ कामके वेगसे हिताहितका ज्ञान न रखनेवाली स्त्री, जो औरत ख्वाहिशके जोरमें अन्धी पड़ गयी हो।

कामाभी (सं० त्रि०) १ इच्छाभागी, ख्वाहिशके मुताबिक चलनेवाला। २ स्वेच्छाचारकारी, मनमाना चलनेवाला।

कामाभिकाम (सं० त्रि०) कामस्य अभिकामो यस्य, बहुव्री०। कामभोगेच्छु, शहवतपरस्त।

कामायु (सं० पु०) कामं यथेष्टं आयुर्यस्य, बहुव्री०। १ गृध्र, गीध। २ गरुड़।

कामायुध (सं० पु०) कामस्य आयुधमिव। १ महा-राजचूत वृक्ष, बड़े आमका एक पेड़। (क्ली०) २ लिङ्ग, उपस्थ।

कामाम्र (सं० क्ली०) कामं कामना आम्रम्, कर्मधा०। मनोहर आम, खूबसूरत आम। २ कन्दर्पवन, कामदेवका बाग।

कामार्त्ता (हिं०) कामार्त्त देखो।

कामारि (सं० पु०) कामस्य अरिः शत्रुः, ६-तत्।

उत्तरखण्डमें पुरन्दर-सिंह राजा माने गये थे। उन्होंने वार्षिक ५००००) रु० कर देना अङ्गीकार किया। विश्वनाथ नामक स्थानमें एक पोलिटिकल एजण्ट रखे गये। १८३२।३३ ई०को कामरूप प्रदेश दरङ्ग, कामरूप और नौगांव तीन जिलोंमें विभक्त हुआ। उसमें एक स्वतन्त्र कलक्टर और मजिष्ट्रेटकी क्षमताके साथ एक प्रधान सहकारी कमिश्नर (Chief Assistant Commissioner) रखा गया। राबर्टसनके पीछे १८३४ ई०को जेनकिन्स साहब कमिश्नर हुये। उन्होंने जिले और मौजेका सीमा-विभाग ठीक किया था। १८३५ ई० को उक्त प्रदेश बोर्ड अफ् रेविन्यू के अधीन गया। १८३६ ई०को जयन्तीराजने कम्पनीसे सन्धि कर अधीनता मानी थी। किन्तु १८३५ ई०में राजाको मासिक ५००) रु० वृत्ति दे जयन्ती प्रदेश कम्पनीके अधिकारमें लाया गया। १८३८ ई० को पुरन्दर सिंह नियमित कर दे न सके थे। इसीसे उन्हें राजच्युत कर तत्प्रदेश शिवसागर और लक्ष्मीपुर दो जिलोंमें बांटा गया। चन्द्रकान्त सिंह गोहाटीमें ५००) रु० वृत्ति पाते थे। किन्तु उस साल ही उन्होंने परलोक गमन किया। पुरन्दर सिंहको भी वृत्ति दे जोड़हाटमें रखनेकी बात उठी थी। किन्तु गर्वित पुरन्दरने वृत्ति न ली। इसी स्थान पर तुङ्गाका-वंशके हाथसे आसामका कर्तृत्व अपहृत हुआ और आसाम वा प्राचीन कामरूप राज्य महान् प्रस्तावसे अंगरेजोंके अधिकारमें गया।

उसके कुछ दिन पीछे १८३९ ई०को एक कमिश्नरके हाथ शासन और विचारका भार रहनेसे कार्यमें सुव्यवस्था न देख पड़ी। इसीसे एक सहकारी नियुक्त हुआ। उक्त सहकारी नियुक्त होनेसे एक पदका नाम जुडिशल कमिश्नर और दूसरेका नाम डेपुटी कमिश्नर रखा गया।

१८६० ई० को इनकमटेक्स प्रचलित होनेसे फूल-गुड़ीके लोग भड़क उठे थे। असिष्टण्ट कमिश्नर लेफटनण्ट सिंगर गड़बड़ मिटाने गये, किन्तु निहत हुये। अन्तमें बड़े कौशलसे गड़बड़ थमने पर दोषियोंको उचित शास्ति मिली।

१८६१ ई० को कमिश्नर जेनकिन्सने स्वपदसे अवसर लिया था। फिर उसी पद पर कप्तान हपकिन्सन नियुक्त हुये। १८६६ ई० को गोहाटीमें जेनकिन्स मर गये।

१८६२ ई०को खसिया और जयन्ती पर्वतमें भयानक विद्रोह उठा था। फिर १८६४ ई०में भूटानका युद्ध लगा। अंगरेज जीत गये। १८६५ ई० को सिञ्चोला नामक स्थानमें सन्धि हुयी। उक्त सन्धिके अनुसार भूटानके दक्षिण कई स्थान अंगरेजोंको मिले थे। गारो और नागाओंके कई सरदारोंने अधीनता स्वीकार की। उनमें सभ्यता फैलानेके लिये उक्त प्रदेश दो जिलोंमें बांटा गया। १८६६ ई०को गारो पर्वतमें तुरा और नागा पर्वतमें सामागुटिंग राजधानी हुआ। उसी वर्ष कोचविहार और ग्वाल-पाड़ा आसामवाले कमिश्नरके हाथसे निकाल स्वतन्त्र कर दिया। १८७१ ई० को लेफटेनण्ट गवरनर सर जर्ज कमबेल उक्त देश देखने पहुंचे थे। उन्होंने यहांके विचारालयों और विद्यालयोंमें आसामी भाषा व्यवहार करनेका आदेश दिया।

१८७८ ई०को करनेल हपकिन्सनने अवसर लिया था। फिर आसाम देश बङ्गालके लेफटेनण्ट गवरनरके हाथसे निकल एक प्रधान कमिश्नरको मिला। करनल किटिंग प्रथम चीफ कमिश्नर हुये। चीफ कमिश्नर बनने पर शिलङ्ग नगर राजधानी हुवा और ग्वालपाड़ा तथा गारो पर्वत फिर आसाममें चला गया। उसके पीछे कछार और श्रीहट्ट बङ्गप्रदेशसे स्वतन्त्र हो चीफ कमिश्नरके अधीन हुवा।

उसी वर्ष असिष्टण्ट कमिश्नर लेफटेनण्ट हल-कम्बने नागापर्वतकी पैमायश शुरू की थी। नीलगांवमें पहुंचने पर कई नागाओंने विश्वासघातकतापूर्वक शिविरमें घुस उन्हें मार डाला। हलकम्ब प्रभृति १८७ आदमियोंमें उसी दिन ८० लोग मारे गये। ५१ लोग आहत हुये थे। कुछ दिन पीछे उन नागाओंको उपयुक्त शास्ति मिली। करनल किटिंगके पीछे सर ष्टुवर्ट बेली और उनके पीछे मिष्टर एलियट आसामके चीफ कमिश्नर हुये। सर एलियटके

१ महादेव। २ विद्माचोक्त धातु, किसी क्रियाका चकमक पत्थर।

कामार्त (सं॰ त्रि॰) कामेन आर्त्तः पीड़ितः, ३ तत्। कामपीड़ित, शहवतका मारा हुआ।

कामार्थी (सं॰ त्रि॰) कामं अर्थयति प्रार्थयते, काम-अर्थ-णिच्-णिनि। कामप्रार्थी, शहवत चाहनेवाला। २ अभीष्टप्रार्थी, मुरादमांगनेवाला।

कामालिका (सं॰ स्त्री॰) कामं अलति भूषयति, काम-अल्-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। मद्य, शराब।

कामालु (सं॰ पु॰) कामं यथेष्टं अलति पुष्पविकाशेन पर्याप्नोति, काम-अल्-उण्। रक्तकाञ्चन, लाल-कचनार। (त्रि॰) २ अत्यन्त कामुक, जो शहवतके लिये बड़ी ख्वाहिश रखता हो।

कामावचर (सं॰ त्रि॰) कामं यथेच्छं अवचरति, काम-अव-चर-अच्। १ स्वेच्छाचारी, मनमौजी। (पु॰) २ बौद्धोंके एक देव।

कामावतार (सं॰ पु॰) कामस्य अवतारः, ६-तत्। १ कामके अवतार, प्रद्युम्न। श्रीकृष्णके औरस और रुक्मिणीके गर्भसे इन्होंने जन्म लिया था। २ एक छन्द। इसमें छह छह मात्राके चार पाद होते हैं।

कामावसायिता (सं॰ स्त्री॰) कामेन स्वेच्छया अवसाययति, स्वचित्ते पदार्थान् निश्चिनोति तस्य भावः, काम-अव-सो-णिच्-णिनि-तल्। सत्यसङ्कल्पता, ख्वाहिशका सुधार।

कामावसाय (सं॰ पु॰) कामेन स्वेच्छया अवसायः स्वचित्ते पदार्थानां स्थिरीकरणम्। इच्छानुसार अपने चित्तमें पदार्थसमूहका स्थिरीकरण, ख्वाहिशका दबाव या सुधार।

कामावसायिता (सं॰ स्त्री॰) कामावसायिनः सत्यसङ्कल्पकारिणो भावः, कामावसायिन्-तल्। १ सत्यसङ्कल्पता, ख्वाहिशका दबाव। अणिमादि आठमें यह भी योगीका एक ऐश्वर्य है,—

"अणिमा लघिमा प्राप्तिः प्राकाम्यं महिमा तथा।
ईशित्वञ्च वशित्वञ्च तथा कामावसायिता॥"

कामावसायित्व (सं॰ क्ली॰) कामावसायिनो भावः, कामावसायिन्-त्व। सत्यसङ्कल्पता, ख्वाहिशका दबाव।

कामावसायी (सं॰ त्रि॰) कामान् स्वेच्छया अवसाययितुं शीलमस्य, काम-अव-सो-णिच्-णिनि। सत्यसङ्कल्प, ख्वाहिशको दबानेवाला।

कामाशन (सं॰ क्ली॰) कामं यथेच्छं पर्याप्तं वा अशनं भोजनम्, कर्मधा॰। १ इच्छानुसार भोजन, मनमांगा खाना। २ पर्याप्त भोजन, काफी खुराक।

कामाश्रम (सं॰ पु॰) कामः रमणीयः आश्रमः, कर्मधा॰। रमणीय आश्रम, अच्छा ठिकाना या मुकाम।

कामाश्रमपद (सं॰ क्ली॰) कामं मनोज्ञं आश्रमपदम्, कर्मधा॰। रमणीय आश्रमस्थान, अच्छी जगह।

कामासक्त (सं॰ त्रि॰) कामेन आसक्तः, ३-तत्। १ कामरिपुके वशीभूत, शहवतका तावेदार। २ अभिलाषमात्रके वशीभूत, ख्वाहिशका तावेदार।

कामासक्ति (सं॰ स्त्री॰) कामे आसक्तिर्लिप्सा, ७ तत्। कामरिपुके कार्यमात्रकी इच्छा, शहवतकी ख्वाहिश।

कामासन (सं॰ क्ली॰) काममस्यति क्षिपति अनेन, काम-अस्-ल्युट्। आसनविशेष, एक बैठक। गरुडासन कर अनिष्टाङ्गुलि भूमिमें लगानेसे यह आसन बन जाता है।

"अथ कामासनं वक्ष्ये कामवर्द्धनहेतुना।
गरुडासनमास्थाय अनिष्ठाङ्गं न्यसेद् भुवि॥" (रुद्रयामल)

कामाह्व (सं॰ पु॰) राजाम्र, बड़ा आम।

कामि (सं॰ पु॰) कामयते, कम-णिङ्-इण्। १ कामुक, शहवती। (स्त्री॰) २ कन्दर्पपत्नी, रति।

कामिक (सं॰ पु॰) काम अस्त्यस्मिन्, काम-ठन्। १ कारण्डव पक्षी, एक दरयायी चिड़िया। (कामाधिकारेण कृतो ग्रन्थः।) २ हेमाद्रि-प्रणीत एक ग्रन्थ। (त्रि॰) ३ अभिलषित, चाहा हुआ। ४ अभिलाषप्राप्त, मुराद पाये हुआ।

कामिका (सं॰ स्त्री॰) १ तकारका एक पौराणिक नाम। २ श्रावण कृष्णा एकादशी, सावन बदी ग्यारस।

कामिकी (सं॰ स्त्री॰) कामिक-ङीप्। १ कारण्डव-पक्षिणी, एक दरयायी चिड़िया। २ कामनाका कार्यादि, ख्वाहिशका काम।

"[illegible] वै पुत्रकामिकीम्॥" (महाभारत, अनुशासन)

अनन्तर जोयाई किनयड्रिक एवं बेडनेण्ड और उनके बाद क्विण्टन साहब चीफ कमिश्नर बने थे। उनके मणिपुरमें मारे जाने पर वोयार्ड साहबको चीफ कमिश्नरका पद मिला।

१८३१ ई०को सर्वप्रथम कामरूप (आसाम)में अंगरेजी विद्यालय खुला था। १८३०ई०को कोचविहारके कमिश्नर रावर्टसनने विचारसंक्रान्त कई देशीय व्यवहारसिद्ध नियम लगा दिये। उक्त नियमोंको 'आसामको कायदेकानूनों' कहते हैं। १८३८ ई० को आसाममें एक दल ईसाई मिशनरीने प्रवेश किया। उसने प्रथम जयपुर फिर शिवसागरमें शिक्षा-घर बनाया था। १८४६ई०को ईसाइयोंने आसामी भाषामें "अरुणोदय" नामक एक मासिक पत्र निकाला। १८४३ई०को दासत्वप्रथा रोकनेको कानून बना था। उसी वर्ष आसामकी प्रसिद्ध "चाय" कम्पनी भी गठित हुई। १८८१ई०को आसाममें प्रथम अहिफेनकी खेती की गई थी। अन्तमें १८६०ई०को गवरनमेण्टकी ओरसे साधारणके लिये वह बन्द हुई।

कामरूपमें ब्राह्मणोंके मध्य मतसोत सर्व श्रेष्ठ है। यहां बङ्गालियोंकी कौलीन्यप्रथा नहीं चलती। मिथिलावाली ब्राह्मणोंकी संख्या अधिक है। दैवज्ञ यहां विशेष सम्मानके पात्र हैं।

ब्राह्मण कायस्थ अपने हाथसे हल नहीं चलाते। कायस्थोंमें भूयांओंके घर विशेष विख्यात हैं।

कलिता क्षत्रियप्रधान लोग हैं। यह आचारमें श्रेष्ठ होते भी हलवाहनके दोषसे पतित हैं।

केवट आदिम जाति हैं। यह भी हलवह होते हैं। केवट कैवर्त्त (मत्स्यजीवियों)के अन्तर्गत हैं। इनको छोड़ कोच, मेच, लालुंग, नट, नापित, पटवा, कुम्हार, कमार, धोबी, डोम प्रभृति भी रहते हैं।

पहले हिन्दू धर्म पीछे बौद्धधर्म यहां प्रबल रहा। मगध भारतमें बौद्ध प्रभाव नष्ट करते शङ्कराचार्यके संस्कारका प्रभाव कामरूप पर भी पड़ा था। देवेश्वर नामक शूद्र राजा जो उसका मूल थे। दूसरे प्रदेशोंकी भांति बौद्धधर्म शीघ्र कामरूपसे दूर न हुआ। ई० ११श शताब्द भी यहां उसका प्रभाव रहा। आज भी हाजोके हयग्रीवकी मूर्तिको बहुतसे लोग बुद्धदेवका प्रतिमूर्ति मानते हैं। योगिनी तन्त्रमें भी कामरूपवाली बुद्धमूर्तिकी कथा लिखी है। पीछे शङ्करदेव और माधवदेव नामक दो व्यक्तियोंने वैष्णवधर्म प्रचार किया।

बारह भूयांओंमें चण्डीवर शिरोमणिके वंशमें कुसुम्बर शिरोमणि भूयांके एक पुत्र हुआ था। उसका नाम शङ्कर भूयां-शिरोमणि या श्रीशङ्करदेव था। उन्होंने वयःप्राप्त हो नाना तीर्थादि दर्शन कर कन्दली नामक किसी व्यक्तिसे संस्कृत भाषा पढ़ी। संस्कृत सीख कर शङ्करदेवने भागवतसे "कीर्तन दशम" नामक पुस्तकका अनुवाद और सङ्कलन किया था। (शङ्करदेव देखो) शङ्कर वैष्णव हो स्वदेशमें वैष्णवधर्म फैलाने लगे। उन्होंने देशीय भाषामें नानाविध ग्रन्थ और सङ्गीत बना धर्मप्रचारको सुविधा तथा भाषाकी श्रीवृद्धि की। उससे कामरूपमें पौराणिक इतिहासके अभिनयादि (खेल) चल पड़े। बाघुका नामक स्थानवासी दीर्घलगिरिके पुत्र माधवशङ्करके शिष्य हो गुरुको वैष्णवधर्मके प्रचारमें यथेष्ट साहाय्य किया था।

अहोमलोग उन्हींके उपदेशसे वैष्णव हुये। किन्तु उससे पूर्व अहोमोंने वैष्णवधर्मके प्रचारसे विरक्त हो शङ्करदेवके जामाता हरिको अति सामान्य अपराध पर प्राणदण्ड दिया और माधवदेवको बांध लिया था। शङ्कर उसी सूत्रसे अहोमका अधिकार छोड़ पाटवाउसी नामक स्थानमें जा कर रहे और माधव किसी उपायसे भाग उनके साथ मिल गये। ब्राह्मणों और अनाचारियोंने कई बार राजा नरनारायणके पास उनके विरुद्ध अभियोग पहुंचाया, किन्तु कोई फल न पाया था। दिन दिन बहुतसे लोगोंने वैष्णवधर्म ग्रहण किया। उसके पीछे राजाकी आज्ञा आनेसे कोचविहारमें भी उक्त धर्म प्रचारित हुआ। १४९० शकको शङ्करदेवने स्वर्गलाभ किया। आज भी कामरूप अञ्चलमें यह चैतन्यदेवकी भांति अवतार माने और बताये जाते हैं।

शङ्करदेवके पीछे माधवदेवने उनके धर्मको चलाया था। माधवदेव "महापुरुषगुरु" नामसे विख्यात

खंड, घोड़ा और रूईके अतिरिक्त माल-असबाब भेजा जाता है।

२ काम्बे राज्यका प्रधान नगर। यह मही नदीके मुहानेपर अक्षा० २२° १८' ३०" उ० और देशा० ७२° ४' पू० में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १६००० है। नगर अति प्राचीन है। पहले इस नगरके चारों ओर प्राचीर वेष्टित था। फिर भी पर लोग भी कभी रहते थे। किन्तु आज कल उसका भग्नाव-शेष मात्र लक्षित होता है। कथानुसार आरबसागरमें यहां जन्म लिया था। यह प्राचीन द्राविड़के पाण्ड्य-राजके दौत्यकार्यको रोम-सम्राट् अगष्टसके निकट भेजे गये। वहां पाटिन्य नगरमें उन्होंने धाम बनायी थी। फिर स्वच्छानगरी आरबसागर इसीमें जन्म लिये। प्रसिद्ध राजा विक्रमादित्यके भी इस स्थानमें जन्म लेनेका प्रवाद है। १२८१ ई० को मार्को पोलो नामक वेनिसके परिव्राजक इस नगर देखने गये थे। उन्होंने इसे भारतका एक बड़ा बन्दर और वाणिज्य-स्थान बताया है। उनके विवरणमें काम्बेय नामसे काम्बे नगरका उल्लेख है। वास्तविक यह भारतका प्रधान वाणिज्यस्थान था। किन्तु उपसागरका जल घट जानेसे अब वह समृद्धि देख नहीं पड़ती।

खम्भात शब्द देखो।

काम्बेमें जैनोंके प्रधान मन्दिर थे। उन्हीं मन्दिरोंके स्तम्भ निकाल १३२५ ई० को मुहम्मद शाहने जामा मसजिद बनवायी। काम्बेकी प्राचीन कीर्तियोंका भग्नावशेष आज भी पतित स्थानोंमें देख पड़ता है। एक मुसलमान नवाब यहां राज्य करते हैं। वह अंगरेजोंके अधीन करद राजा हैं।

काम्बे उपसागर—भारतकी खाड़ी। इसके पश्चिम गुजरात और पूर्व बम्बई-प्रान्त है। मुहानेके मुखसे इसका परिसर केवल ३२ कोस है। किन्तु मुखसे उत्तर भीतर प्रवेश तक प्रायः ८० कोस निकलेगा। पूर्व दिकसे नर्मदा तापी नदी, उत्तरसे साबरमती एवं मही और पश्चिम काठियावाड़से दो नदी आ पड़ी है। उपसागरके मुखके पश्चिम दिक् दोनों-दोनोंका पश्चिम दीव नामक द्वीप और पूर्व दिक् सूरत नगर अवस्थित है। सूरत, काम्बे और बड़ौच बन्दर उसीके उपकूल पर है। फिर भी नर्मदा वाणिज्यका विशेष अन्तराय उपस्थित है। प्रायः दो दो वर्षमें जल क्रमशः घट रहा है। इसी कारण भाटेके समय उसमें जल कम पड़ जाता है। फिर ज्वारके समय विषम स्रोतका वेग बढ़ता है। काम्बेके निकट प्रायः ८ कोस तक भाटाके समय बिलकुल जल नहीं रहता। उस समय पार जाते ज्वार उठनेसे जीवनकी आशा छोड़ना पड़ती है। ज्वारके वेगसे जहाज तक दूर जाता है। जो घोड़ा या जहाज किसी ज्वारके उठने का जानता, वह फिर ज्वार न पड़नेसे बच जा सकता है।

काम्बोज (सं० पु०) कम्बोजदेशे भवः, कम्बोज-अण्। १ कम्बोजदेशजात घोटक, एक घोड़ा। २ श्वेत खदिर, सफेद कत्था। ३ पुन्नागवृक्ष, एक पेड़। ४ कट्फल, कायफल। ५ वरवृक्ष, एक पेड़। (स्त्री०) ६ माषपर्णी, एक मसवन। (त्रि०) ७ कम्बोजदेश-जात, कम्बोज मुल्कका पैदा। कम्बोज देखो।

काम्बोज—पश्चिमोत्तर एक क्षत्रियजाति। सगर राजाने इन्हें मस्तक मुण्डित करा देशसे निकाल दिया था। (हरिवंश)

काम्बोजक (सं० स्त्री०) कम्बोजे भवः, कम्बोज-वुञ्। [illegible] कम्बोजदेशवासीका-स्वामादि। (त्रि०) २ कम्बोजजात।

काम्बोजि, काम्बोजी देखो।

काम्बोजिका (सं० स्त्री०) श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची।

काम्बोजी (सं० स्त्री०) काम्बोज-ङीष्। १ रक्तगुञ्जा-लता, लाल घुंघची। २ श्वेत खदिर, सफेद कत्था।

काम्बोजी (सं० स्त्री०) १ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची। २ माषपर्णी। ३ खदिर। ४ मासवनी। ५ नागवल्ली।

काम्य (सं० त्रि०) काम्यते, कम-णिङ्-यत्। १ कमनीय, चाहने लायक। २ सुन्दर, खूबसूरत। ३ कामनायुक्त, ख्वाहिशमन्द। ४ अर्चित, आर्चि-ज्ञापक।

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

५ भोग्य, पड़ने या उठाया जानेवाला। (क्लो०) ६ अभीष्टकर्म, चाहा हुवा काम। (पु०) ७ असन वृक्ष, एक पेड़।

काम्यक (सं० क्लो०) १ वनविशेष, एक जङ्गल। २ सरोवरविशेष, एक तालाव। ३ काष्ठविशेष, एक काठ।

काम्यकर्म (सं० क्लो०) काम्यञ्च तत् कर्म चेति, कर्मधा०। स्वर्गादि-अभीष्टकामनासे किया जानेवाला एक कर्म, ज्योतिष्टोमादि, जो काम किसी मतलबसे किया जाता हो।

काम्यकवन (सं० क्लो०) वनविशेष, एक जङ्गल। यह सरस्वती नदीके तीर अवस्थित था। पाण्डव बहुत दिन इस वनमें रहे।

काम्यगिर् (सं० स्त्री०) मधुर शब्द, एक खुशगवार गीत।

काम्यता (सं० स्त्री०) कामस्य भावः, काम्य-तल्। १ कमनीयता, खूबसूरती। २ भोग्यता, ऐश-आराम। ३ वाञ्छनीयता, चाह।

काम्यदान (सं० क्लो०) काम्यञ्च तत् दानञ्चेति, कर्मधा०। १ स्त्रीरत्न प्रभृति कमनीय वस्तुका दान, औरत दौलत वगैरह पसन्द आनेवाली चीज़ोंकी बख़्शिश। २ पुत्र, ऐश्वर्य, जय प्रभृति मिलनेकी कामनासे किया जानेवाला दान।

''यद्यद्विशिष्टमैश्वर्यं यत् प्रतीच्छेत्।
दानं तत् काम्यमाख्यातं ऋत्विग्भिः संविभज्यते॥'' (गरुडपुराण)

काम्यफल (सं० क्लो०) काम्यस्य फलः, ६-तत्। काम्यकर्मका वाञ्छनीय फल, चाहा जानेवाला नतीजा।

काम्यमरण (सं० क्लो०) काम्यं वाञ्छनीयं मरणम्, कर्मधा०। वाञ्छनीय मरण, आत्महत्या।

काम्यव्रत (सं० क्लो०) काम्यं काम्यफलप्रदं व्रतम्, मध्यपदलो०। अभीष्टफलप्रद व्रत।

काम्या (सं० स्त्री०) कम-णिङ् भावे यत्-टाप्। १ प्रियव्रतकी पत्नी। यह कर्दमकी कन्या रहीं। प्रियव्रत देखो। २ कामना, ख़्वाहिश।

''वर्षं शतसहस्राणि वाहीमूर्ध्नि वधूः दधः।
[illegible]कामा न गृहीतवती॥'' (मार्क० पुराण)

काम्याभिप्राय (सं० पु०) काम्यः वाञ्छनीयः अभिप्रायः, कर्मधा०। वाञ्छनीय अभिप्राय, मतलबकी बात।

काम्येष्टि (सं० स्त्री०) कामनाविशेषार्थं अनुष्ठित यज्ञ, जो यज्ञ किसी मतलबसे किया जाता हो।

काम्योपासना (सं० स्त्री०) काम्यया कामनासिद्धोच्छया उपासना, ३-तत्। कामनासिद्धिके अभिप्रायसे की जानेवाली उपासना, जो पूजा अपने मतलबसे की जाती हो।

काम्ल (सं० पु०-क्लो०) कु कुत्सितं ईषत् वा अम्ल, कोः कादेशः। १ कुत्सित अम्लरस, खराब खटाई। २ ईषत् अम्लरस, थोड़ी खटाई। (त्रि०) ३ कुत्सित वा ईषत् अम्लरस युक्त, कम खट्टा।

काय (सं० क्लो०) कः प्रजापतिर्देवता अस्य, क-अण् इदादेशश्च आदेहंसिः। अर्लोन्‌। पा ४।२।३३। १ प्राजापत्यतीर्थ। कनिष्ठा अङ्गुलिके अधोभागका नाम प्राजापत्यतीर्थ है,—

''अङ्गुष्ठमूलस्य तले ब्राह्मं तीर्थं प्रचक्षते।
कायमङ्गुलिमूले ऽग्रे दैवं पित्र्यं तयोरधः॥'' (मनु २।५८)

२ मनुष्यतीर्थ। ३ ब्रह्मतीर्थ। (कायति प्रकाशते, अच्) ४ मूर्ति, शरीर, जिस्म। शरीर देखो। ५ समूह, ढेर। ६ लक्ष्य, निशाना। ७ स्वभाव, आदत। ८ प्राजापत्य विवाह। ९ मूलधन, जमा। १० गृह, घर। ११ ब्रह्मा। १२ तदप्रकाशक, नमा। (त्रि०) १३ प्रजापति सम्बन्धीय।

कायक (सं० त्रि०) शारीरिक, जिस्मानी, बदनके मुताल्लिक़।

कायकारणकर्तृत्व (सं० क्लो०) कायस्य शरीरस्य कारणे उत्पत्तिकारणे कर्तृत्वम्। शरीरोत्पत्तिकारक कारणकी सृष्टिके विषयका कर्तृत्व, जिस्मानी कामोंकी हरकत।

कायक्लेश (सं० पु०) कायस्य क्लेशः, ६-तत्। शारीरिक परिश्रम, जिस्मानी मेहनत या तकलीफ।

कायचिकित्सा (सं० स्त्री०) कायस्य चिकित्सा, ६-तत्। आयुर्वेदोक्त अष्टाङ्ग चिकित्साका एक अङ्ग, तमाम जिस्म पर असर डालनेवाली बीमारियोंका इलाज। इसमें ज्वर, उन्माद, कुष्ठ प्रभृति शरीरव्यापी रोगोंकी चिकित्सा है।

कायजा (अ० पु०) वल्गारज्जु, लगामकी डोरी।

कायथ (हिं०) कायस्थ देखो।

शूद्रधर्मतत्त्वमें एक कायस्थकी उत्पत्ति इस प्रकार बतलाई गई है,—

"माहिष्यवनितासूनुर्वैदेहाद्यः प्रसूयते ।
स कायस्थ इति प्रोक्तस्तस्य कर्म विधीयते ॥
यथार्हं ग्रामा माहिष्या वैश्याविप्रासो वैदेहः ।
गीतानां देवजातानां लेखनं च समाचरेत् ॥
गणनं चित्रकर्म बीजवापादौ प्रभेदतः ।
अधमः शूद्रजातिभ्यः पञ्चसंस्कारभागतो ।
चातुर्वर्ण्यस्य सेवायां निर्दिष्टमनसाधनम् ॥
शिखां यज्ञोपवीतञ्च कायस्थानो विवर्जयेत् ॥"

'वैदेहके औरससे और माहिष्यपत्नीके गर्भसे जो उत्पन्न हुये हैं, वे कायस्थ हैं। देशीय लिपिका लिखना, गणना करना, शिल्प कार्य करना, बीज आदिका बोना, चार वर्णकी सेवा करना इत्यादि उनका कार्य बतलाया गया है। यह पांचों संस्कार अधम शूद्रजातिके करनेके हैं, इसलिये इनको चोटी, यज्ञोपवीत, गैरिकवस्त्र और देवताका स्पर्श न रखना चाहिये।'

इसके अतिरिक्त शब्दकल्पद्रुमोद्धृत देवीवरके "उपविष्टा द्विजाः पञ्च तत्रैव शूद्रपञ्चकाः।" इस कथनसे यही प्रमाणित होता है कि, आदिशूरकी सभामें पञ्च ब्राह्मणोंके साथ आये हुये पञ्चकायस्थ आदि शूद्र ही ठहराये गये थे।

इसके सिवा बृहद्धर्मपुराणमें भी लिखा है,—

"ब्रह्माया वै विष्णुना करणो वर्णसङ्करः॥" (उत्तर १३ अ०)

इत्यादि प्रमाणसे किसी लोगोंका मत है कि वैश्यसे उत्पन्न वर्णसङ्कर करण भी कायस्थ थे।

विरुद्धमत-खण्डन।

विरुद्धवादी लोग चित्रगुप्तके वर्ण और धर्म सम्बन्धमें जिन युक्तियोंको दिखलाते हैं, उनके उत्तरमें हम पहिले ही कमलाकरकृत वृहद्ब्रह्मखण्डका प्रमाण उद्धृत कर चुके हैं कि, ब्रह्माने उत्पत्ति कालमें ही चित्रगुप्तसे कहा था—"तुम कायस्थ' जिस स्थलसे क्षत्रिय उत्पन्न हुए हैं उसी स्थानसे उत्पन्न होनेके कारण क्षत्रिय नामसे प्रसिद्ध होगे। तुम्हारे वंशके लोग भी तुम्हारे ही समान अर्थात् कायस्थ नामसे पुकारे जायेंगे। उन लोगोंका विवाह क्षत्रिय कन्याओंके साथ होगा। क्षत्रियवर्णके लिये जो संस्कारादि कर्म बतलाये हैं, उन सबको वे मेरी आज्ञाके अनुसार करेंगे।"

ब्रह्माके इस कथनसे चित्रगुप्त और उनके वंशधर कायस्थ क्षत्रिय हैं, इसमें कुछ भी सन्देह उपस्थित नहीं होता।

मिताक्षरामें कायस्थोंको राजवल्लभ, शूलपाणिकृत दीपकलिकामें राजसम्बन्धहेतु प्रभावशाली और अपरार्क-विरचित याज्ञवल्क्यनिबन्धमें कराधिकृत या कराधिकारी कहा गया है। कायस्थ सदासे राजाओंके प्रिय होते आये हैं। यह राजकार्यमें निपुण होते हैं, और कर वसूल करनेमें इनका मुख्यतः हाथ रहता है ; इस लिये इन लोगोंके द्वारा प्रजाको अधिक पीड़ा पहुंच सकती है। अतः याज्ञवल्क्य और अग्निपुराणकार राजाओंको इन (कायस्थ) लोगोंके प्रति विशेष लक्ष्य रखनेका आदेश दे गये हैं।

कायस्थोंके हाथसे किसी किसी जगह प्रजा अधिक पीड़ित होती रही, इसी लिये औशनस-धर्मशास्त्रमें, ब्रह्मवैवर्तपुराणके जन्मखण्डमें और राजतरङ्गिणी ग्रन्थमें कायस्थोंकी निन्दा की गई है। लेकिन किसी भी शास्त्रमें कायस्थोंको हीनवर्ण नहीं कहा गया है। कमलाकरने जिन प्रतिलोमजात कायस्थोंका उल्लेख किया है, वह चित्रगुप्तके वंशधर कायस्थ नहीं हैं और न उनमें उन जगह लिखी गई बातें ही घटित होती हैं। ऐसा मालूम पड़ता है कि मिदनीपुरवासी आधुनिक 'कास्थ'-जातिका नाम संस्कृत भाषामें उन्होंने (कमलाकर)ने 'कायस्थ' रख दिया है। किन्तु चित्रगुप्तके वंशधर कायस्थोंको उन्होंने भी कायस्थ-क्षत्रिय कह कर परिचय दिया है। चित्रगुप्तने देवकन्या इरावतीके साथ विवाह किया था। "अरुणात्तोदितयशा देवारुद्धेय-सत् व्रज। भोजनाय पुरा अन्नानि दीयते विभोः ॥" इत्यादि पद्मपुराणके कथनानुसार ब्राह्मण जब चित्रगुप्तको देव मान कर पूजते थे, तब धर्मशर्माने अपनी कन्याको उनसे पाणिग्रहण कर दिया ; तो इसमें दोष कौनसा हो गया ? इसके सिवा उस समय योनसृष्टि या महदोत्पत्तिकी कोई चर्चा ही न थी ; नहीं तो ब्राह्मण

क़ायदा (अ० पु०) १ नियम, तरीका। २ रीति, दस्तूर। ३ व्याकरण, क़ानून।

कायथ (हिं०) कायस्थ देखो।

कायफल (सं० स्त्री०) कट्फल, एक पेड़। इसकी छाल औषधमें पड़ती है। हिमालयके उष्णप्रधान स्थानमें यह उत्पन्न होता है। आसामके खासिया पर्वत और ब्रह्मदेशमें भी इसकी उपज है।

कायबन्धन (सं० स्त्री०) काये बध्नाति, काय-बन्ध ल्युट्। कटिबन्ध, कमरबन्द।

क़ायम (अ० वि०) १ स्थिर, ठहरा हुआ। २ स्थापित, रखा हुआ। ३ निश्चित, ठहराया हुआ। ४ समान, बराबर।

क़ायम—क़ायम खाँका उपनाम। टोंकवाले नवाब अमीर मुहम्मद खाँके अधीन इस सेनानीके पद पर प्रतिष्ठित रहे। १८६१ ई० को इन्होंने उर्दूमें एक दीवान् बनाया था।

क़ायमजङ्ग—फ़र्रुखाबादवाले नवाब मुहम्मद खाँ बङ्गशके पुत्र। १७४३ ई० के जून मासमें इन्होंने अपने पिताका पदाधिकार लिया था। इन्होंने अयोध्याके नवाब सफ़दर जङ्गको देखा पर उन्होंसे युद्ध ठाना। किन्तु पराभव होनेपर १७४८ ई० के नवम्बर मासमें उन्होंने इन्हें मार डाला था। फिर अयोध्या इनका राज्य दबा बैठे। इनके प्रधान कर्मचारी फ़र्रुखाबादको बन्दी बनाकर ले गये। किन्तु इनकी माताको १२ लाख जिलोंके साथ फ़र्रुखाबाद नगर उनके अधिकारमें छोड़ दिया था। किन्तु दीवान नवलरायके प्रतिनिधि राजा नवल रायके अंगरक्षमें रहा। पीछे दिन बीते ही इनके भाई अहमद खाँने युद्धमें राजा नवल रायको मार, देश पर अपना अधिकार जमा लिया था।

कायमनोवाक्य (सं० त्रि०) कायः मनः वाक्यञ्च यत्र, बहुव्री०। शरीर, मन और वाक्यसे होनेवाला, जो क्रियाकलापमें करने पर बनता हो।

क़ायममुक़ाम (अ० वि०) स्थानापन्न, एवज़ी, अन्य पद पर रहनेवाला।

कायमान (सं० क्ली०) कायस्य मानमिव मानमस्य, बहुव्री०। १ तृणकुटीर, घासका झोंपड़ा। २ देहपरिमाण, जिस्मकी माप।

कायर (हिं०) कातर देखो।

कायरता (हिं०) कातरता देखो।

कायरूपसंयम (सं० पु०) पातञ्जल-कथित एक ध्यान। इसमें पड़के इसका संकेत कहा है।

क़ायल (अ० वि०) तर्क-वितर्कमें हारा माननेवाला, जो तर्क निरुत्तर होकर अपनी बात पकड़ता न हो।

क़ायली (हिं० स्त्री०) १ ग्लानि, लाज। २ क़ायलपन।

कायवलन (सं० क्ली०) काये वलति आच्छादयति कवच, काय-वल-ल्युट्। कवच, बख़्तर।

कायव्य (सं० पु०) महाभारतोक्त एक दस्युराज। इनके जन्मका विवरण इस प्रकार दिया है, कि ये निषादीके गर्भ और क्षत्रियके औरससे उत्पन्न हुए। यह दस्युदलाधिप होने भी सर्वदा धर्म-कर्ममें लगे रहते थे। दस्युओंके प्रति इनका आदेश रहा—तुम लोग ब्राह्मण, तपस्वी, भीरु, शिशु, स्त्री और युद्धसे भागे व्यक्तिको कभी मत मारो। यह सर्वदा वनवासी, तपस्वी तथा ब्राह्मणको पूजते और मृगादि मार उन्हें प्रदान आहार देते थे। इसी प्रकार दस्युवृत्ति रहते भी कायव्यने सिद्धि पायी। (महाभारत, शान्ति, १३५ अ०)

कायव्यूह (सं० पु०) काये शरीरे व्यूहः वातादीनां त्वगादीनां यथायथ स्थापनम्, ६-तत्। शरीरमें वात, पित्त, श्लेष्मा, त्वक् प्रभृति धातुओंका विन्यास, आकृतिके धारण करने पर यथाक्रम त्वक्, रक्त, मांस, स्नायु, अस्थि, मज्जा और शुक्र रहते हैं। वात, पित्त और श्लेष्मा शरीरके आदमासमें पृथक् पृथक् स्थानपर अवस्थित है।

इन लोगों दशाओंके परिवर्तन उपकारका ध्यान इस प्रकार निर्दिष्ट है,—निश्चय एवं गुरूपदेश द्वारा, एकाग्र (निश्चय एवं गुरूपदेशके ऊपर और मानसिक भक्ति एकाग्र रहता है) तथा आहारमें प्रमाण नियम और आरामग्रह छोड़नेका ध्यान है। महिदमें प्रमाणके अनुसार इन लोगोंका ध्यान देहके द्वारोंके अन्तर्गत रहते है। (८६०)

प्रत्येक दोष पाँच पाँच भागोंमें विभक्त है। इस

ऋषिकन्या शर्मिष्ठाका विवाह क्षत्रिय राजा ययातिके साथ कभी नहीं हो सकता था। शब्दकल्पद्रुममें "आचारनिर्णयतन्त्र" और "अग्निपुराणीय जातिमाला" से जो प्रमाण लिये गये हैं, वह आधुनिक रचना है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं। तन्त्रसार, महासिद्धि सारस्वत, आगमतत्त्वविलास, वाराहीतन्त्र और रुद्रयामलतन्त्रमें भिन्न भिन्न ५०। ६० तन्त्रोंका उल्लेख है। परन्तु उपर्युक्त किसी भी तन्त्रमें "आचारनिर्णयतन्त्र"का नाम तक नहीं आया है। भारतके नाना स्थानोंमें सैकड़ों तन्त्र-ग्रन्थोंका पता लगा है, परन्तु दूसरी जगह कहीं "आचारनिर्णयतन्त्र" की एक भी पोथी नहीं मिली। सिर्फ शब्दकल्पद्रुमके सङ्कलयिता राजा राधाकान्त देवके पुस्तकालयमें ही एक प्रति मिलती है। इस पुस्तकमें ७० श्लोक हैं। इसकी लिपि देखनेसे ही स्पष्ट मालूम हो जाता है कि, यह किसी आधुनिक लेखककी लिखी हुई है। यह पुस्तक किसी उद्देश्यसिद्धिके लिये ही लिखी गई है;—इस बातको वे ही हृदयङ्गम कर सकेंगे, जो इस पुस्तक को देख चुके हैं। अग्निपुराणीय जातिमालाके विषयमें भी ऐसा ही है। कलकत्तेकी एशियाटिक सोसाइटी और बम्बई आदि नाना स्थानोंसे मूल अग्निपुराण प्रकाशित हुये हैं, पर उनमेंसे किसीमें शब्दकल्पद्रुममें कही गई अग्निपुराणीय जातिमालाका एक भी श्लोक नहीं मिलता। और की तो क्या, भारतसे जितने हस्तलिखित ग्रन्थ प्राप्त हुये हैं, उनकी विवरण-पुस्तिकामें भी इस जातिमालाका उल्लेख नहीं। बङ्गालके बाहर जो चित्रगुप्तके वंशके कायस्थ रहते हैं, उन्हें भी इस जातिमालाका पता न था। बङ्गालमें सिर्फ वसु, घोष आदि उपाधिधारियोंका वास है और इसके उल्लेखसे यह जातिमाला किसी बङ्गालीकी बनाई हुई और आधुनिक ही प्रतीत होती है। इसलिये 'आचारनिर्णय तन्त्र'की तरह यह जातिमाला भी किसी विशेष उद्देश्यसिद्धिके लिये हालमें बनाई गई है इसमें सन्देह नहीं। इसी तरह शब्दकल्पद्रुमोक्त 'कुलप्रदीप'के वचन भी प्राचीन-शास्त्र-सम्मत न होनेके कारण आधुनिक हैं; और वह किसी विशेष उद्देश्यसिद्धिके लिए लिखे गये हैं, इस लिए वह भी त्याग करने योग्य हैं। 'शब्दकल्पद्रुम'में कही गई देवीवरकी उक्ति भी काल्पनिक है, क्योंकि देवीवरके मूल कुलग्रन्थमें कहीं भी ऐसे वचन नहीं हैं। उपरोक्त प्रमाणोंकी भांति "वृहद्धर्मपुराण"के वचन भी कायस्थोंके विषयमें ठीक नहीं जंचते। शब्दरत्नाकर अभिधानके—

"करण" आयने नारि पुमान् शूद्राविशोः सुते।
शूद्रे कायस्थभेदेऽपि भेदं करणमजियाम्॥"

इत्यादि प्रमाणसे करण कायस्थ और शूद्र-वैश्यासे उत्पन्न करण, सम्पूर्ण भिन्न प्रतीत होते हैं।

सान्धि-विग्रहिक।

कायस्थका अर्थ लेखक या राजाका लेखक है—इस बातको सब ही स्वीकार करते हैं। विष्णुस्मृति और वृहत्पराशरस्मृतिमें राजसभाके लेखकको ही कायस्थ कहा है। उक्त स्मृति और शुक्रनीतिसे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि, पहिले कायस्थ लोग ही हिन्दूराजाओंके समयमें सेना-विभागका हिसाब रखनेके लिए, कर वसूल करनेके लिए और विचारालयके कागजात लिखनेके लिए राजलेखक रूपसे रखे जाते थे। अर्थात् लिखनेका काम एकमात्र कायस्थोंके ही हाथमें था। पहिले हिन्दू-राजसभामें लिखनेके काममें कायस्थोंके सिवा दूसरे नहीं रखे जाते थे। इसी लिए कायस्थ या राजसभाके लेखक राज्यका साधनाङ्ग समझे जाते थे। मनुसंहिताके ८वें श्लोकके भाष्यमें मेधातिथिने ऐसा लिखा है:—

"राजप्रहारशासनान्येककायस्थ-हस्तलिखितान्येव प्रमाणी भवन्ति।"

अर्थात्—राजदत्त ब्रह्मोत्तर भूमि आदिका शासन, जो एक कायस्थके हाथका लिखा हुआ है, वही प्रमाणित है। मिताक्षरामें लिखा है,—

"सन्धिविग्रहकारी तु भवेद्यस्तस्य लेखकः।
स्वयं राज्ञा समादिष्टः स लिखेद्राजशासनम्॥"

(आचाराध्याय, ३१८ श्लोक)

जो व्यक्ति राजाका सन्धि-विग्रहकारी लेखक होगा, वह ही राजाके आदेशानुसार राजशासन लिखेगा।

अपरार्कके याज्ञवल्क्यनिबन्धमें भी व्यासके वचन ऐसे उद्धृत हैं,—

"राज्ञा तु स्वयमादिष्ट-सन्धिविग्रहलेखकः।
ताम्रपट्टे पटे वापि प्रलिखेद्राजशासनम्॥"

स्थानोंको छोड़ तीनों दोष दूसरी जगह भी रहते हैं।

वायु, कफ, और पित्त शब्द देखो।

२ कर्मभोगके लिये योगियों द्वारा कल्पित कायसमूह। योगी कर्मत्यागके लिये कायव्यूह बनाते हैं।

"नाभिचक्रे कायव्यूहज्ञानम्।" (पातञ्जलसूत्र)

नाभिचक्रमें संयम रखनेसे योगी कायव्यूह समझ सकते हैं। फिर 'महत्त्वादेव तत्प्रवृत्तेः' शाण्डिल्यसूत्रके अनुसार योगी बहुविध फल भोगनेके लिये जो शरीर बनाते, उससे चित्तमें प्रत्येक इन्द्रिय और अङ्गकी कल्पना लगाते है।

कायसम्पद् (सं० स्त्री०) कायस्य सम्पद् ६-तत्। शरीरकी सम्पत्ति, जिस्मकी दौलत। रूप, लावण्य, बल और सुगठन प्रभृतिको 'कायसम्पद्' कहते हैं।

कायसौख्य (सं० क्ली०) शरीरसुख, जिस्मका आराम।

कायस्थ (सं० पु०) कायेषु सर्वभूतदेहेषु तिष्ठति, काय-स्था-क। १ अन्तर्यामी परमेश्वर।

"कायस्थोऽपि न कायस्थः कायस्थोऽपि न जायते।
कायस्थोऽपि न भुञ्जानः कायस्थोऽपि न बध्यते॥" (उत्तरगीता १।१८)

२ जातिभेद। भारतवर्षके प्रधान प्रधान स्थानोंमें जो कायस्थ वास करते हैं, उनमेंसे सामाजिक और विशुद्ध कायस्थ मात्र अपनेको चित्रगुप्तके वंशधर बतलाते हैं। इनके सिवा और एक श्रेणीके सम्भ्रान्त और उच्चसंस्कारक कायस्थ हैं, जो चान्द्रसेनीय प्रभु कहलाते हैं। जिन क्षत्रिय वंशधरोंने युद्धवृत्ति त्याग कर उक्त प्रभु कायस्थकी वृत्ति ग्रहण की या उनके साथ सम्बन्ध जोड़ा, वे भी 'प्रभु' कहलाते हैं। चित्रगुप्त देव ही कायस्थ जातिके आदिपुरुष हैं। ऐसी दशामें सबसे पहिले चित्रगुप्तके विषयकी ही आलोचना करनी चाहिये।

चित्रगुप्तका परिचय।

हस्तलिखित भविष्यपुराणमें* लिखा है,—

"दशवर्षं सहस्राणि दशवर्षं शतानि च।
स समाधिं समास्थाय स्थितोऽभूत् कमलासने॥
स्थिते समाधौ ब्रह्मणं यद्गुं तत्रसि मे।
तच्छरीरान्महाबाहुः श्यामः कमललोचनः॥
कम्बुग्रीवो गूढशिराः पूर्णचन्द्रनिभाननः।
लेखनीच्छेदनीहस्तो मसीभाजनसंयुतः॥
निःसृत्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः।
प्रदानः सविस्मिताद्रो ध्यानस्तिमितलोचनः॥
त्यक्त्वा समाधिं साङ्गं च मे ददर्श पितामहः।
अपरोक्षं शरीरोत्थाय पुरुषमादृतः स्थितम्॥
पप्रच्छ को भवानग्रे तिष्ठसे पुरुषोत्तम।
इति पृष्टोऽब्रवीदेव ब्रह्माणं कमलोद्भवम्॥

पुरुष उवाच।

उत्पन्नो विदिता नाथ त्वच्छरीरात्र संशयः।
नामधेयं हि मे तात कर्तुमर्हस्यतः परम्।
यथोचितं च यत्कार्यं तत् त्वं मामनुशासय॥

पुलस्त्य उवाच।

इत्याकर्ण्य ततो ब्रह्मा पुरुषं स्वशरीरजम्।
प्रहस्य प्रत्युवाचेदमानन्दितमतिः प्रभुः॥
स्थिरमासीत् मे ध्यायो ध्यानस्थस्यापि सुन्दरः।

ब्रह्मोवाच।

मच्छरीरात् समुद्भूतस्तस्मात् कायस्थसंज्ञकः।
चित्रगुप्तेति नाम्ना वै ख्यातो भुवि भविष्यसि।
धर्माधर्मविवेकार्थं धर्मराजपुरे सदा॥
स्थितिर्भवतु ते वत्स। ममाज्ञां प्राप्य निश्चलाम्।
क्षत्रवर्णोचितो धर्मः पालनीयो यथाविधि॥
प्रजाः सृजस्व भोः पुत्र भुवि भारशालिनीः।
तस्मै दत्वा वरं ब्रह्मा तत्रैवान्तरधीयत॥" (पद्मपु० उत्तरख०)

ब्रह्माने जगत्‌की सृष्टि करनेके बाद स्थिरचित्तसे इन्द्रियोंको संयत कर ११०० वर्ष तपस्या की। उसी अवस्थामें ब्रह्माके शरीरसे श्यामवर्ण, पद्मलोचन, कम्बुग्रीव, गूढशिरा और परमसुन्दर एक पुरुष उत्पन्न हुआ। वह दावात-कलम ले कर ब्रह्माके सामने आ खड़ा हुआ। तब ब्रह्माने समाधि भङ्ग कर उसे नीचेसे ऊपर तक देख कर पूछा, तुम कौन हो? और मेरे सामने क्यों खड़े हो? उत्तरमें उस पुरुषने कहा,—"हे नाथ! मैं आपके शरीरसे ही उत्पन्न हुआ हूं।

* आजकल जो छपा हुआ भविष्यपुराण है, उसमें चित्रगुप्तके विषयमें ऐसी कोई बात न देख कर कोई कोई इस विवरणको कल्पित बतलाते हैं; परन्तु नारदीय महापुराणके सर्वविषयानुक्रमणीमें भविष्यपुराणकी जो विस्तृत विषय-सूची है, उसमें कार्त्तिक शुक्ला द्वितीयाके प्रसङ्गमें चित्रगुप्तदेवकी पूजा और विस्तृत विवरणका आभास मिलता है। इसके सिवा कई स्थानोंमें ऐसी हस्तलिखित पुस्तकें भी मिली हैं; जिनमें भविष्यपुराणीय चित्रगुप्तका विवरण पाया जाता है। सुप्रसिद्ध "वाचस्पत्याभिधान" और "शब्दकल्पद्रुम" महाग्रन्थोंमें भी भविष्यपुराणके वचनसे उक्त चित्रगुप्तकी कथा उद्धृत है। अतएव साफ कहना है कि, आजकलके छपे हुए भविष्यपुराणसे यह अध्याय निकाल दी गयी है।

सन्धि-विग्रह-लेखक, स्वयं राजाकी आज्ञासे ताम्र-पट्ट या कपासके कागज पर राजशासन लिखेंगे। भारतवर्षके नाना स्थानोंसे ताम्रखण्डों पर लिखे हुए जितने शासन निकले हैं, उनके सन्धिविग्रहकारी लेखक "सान्धिविग्रहिक" नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। पहिले सान्धिविग्रहिकका पद एकमात्र कायस्थोंको ही मिलता था। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें सान्धिविग्रहिक, "सन्धिविग्रह-लेखक" (अपरार्क ११८, वीरमित्रोदय और कैयदेव जयन्ती १३ अ०) "सन्धिविग्रहकायस्थ" (सोमदेवका कथा-सरित्सागर ४९।८९) और "सन्धिविग्रहाधि-करणाधिकृत" (Ind. Ant. VI p.10) नामसे प्रसिद्ध थे।

अग्निपुराणमें लिखा है :—

"सान्धिविग्रहिकः कार्यः षाड़्गुण्यादि विशारदः।" (२२०।१)

सान्धिविग्रहिक छह गुणोंमें विशारद होना चाहिये। वे षट्गुण कौन कौनसे हैं? मनुसंहिताके मतसे—

"सन्धिञ्च विग्रहञ्चैव यानमासनमेव च।
द्वैधीभावं संश्रयञ्च षड़्गुणांश्चिन्तयेत्सदा॥"

सन्धि, विग्रह, यान, आसन द्वैधीभाव और संश्रय इन छह गुणोंकी चिन्ता, गम्भीरतापूर्वक करना चाहिये। मनुसंहितामें और भी है,—

"मौलान् शास्त्रविदः शूरान् लब्धलक्षान् कुलोद्गतान्।
सचिवान् सप्तचाष्टौ वा प्रकुर्वीत परीक्षितान्॥
तैः सार्द्धं चिन्तयेन्नित्यं सामान्यं सन्धिविग्रहम्।" (७। ५४, ५६।)

सुप्रतिष्ठित वेदादि धर्मशास्त्रोंमें पारदर्शी, शूर और युद्धविद्यामें निपुण और कुलीन—ऐसे सात आठ मन्त्री, प्रत्येक राजाके पास रहने चाहिये र । सन्धिविग्रह आदिकी सलाह उन्हीं बुद्धिमान् सचिवोंसे लेनी चाहिये।

मिताक्षरामें विज्ञानेश्वरने लिखा है,—

"एवं मन्त्रिणः पूर्वं कृत्वा तैः सार्द्धं राज्ये सन्धिविग्रहादिलक्षणं कार्यं चिन्तयेत्। समस्तैर्व्यस्तैश्च अनन्तरं तेषामभिप्रायं ज्ञात्वा सकलशास्त्रार्थ-विचारकुशलेन ब्राह्मणेन पुरोहितेन सह कार्यं विचिन्त्य ततः स्वयं बुद्धा कार्यं चिन्तयेत्।"

मिताक्षराके उपर्युक्त वचनसे यह मालूम होता है कि, राजाके जो ७-८ मंत्री रहते थे, वे सब ही ब्राह्मण नहीं थे। क्यों कि; उसके बाद ब्राह्मणके साथ क्या क्या परामर्श करेंगे—यह भी लिखा है।

(याज्ञवल्क्य, १म अध्याय, ३१२वां श्लोक)

शुक्रनीतिमें स्पष्ट लिखा हुआ है,—

"पुरोधा च प्रतिनिधिः प्रधानसचिवस्तथा॥ ६९॥
मन्त्री च प्राड्विवाकश्च पण्डितश्च सुमन्त्रकः।
अमात्यो दूतइत्येता राज्ञः प्रकृतयो दश॥ ७०॥
दश प्रोक्ता पुरोधाद्या ब्राह्मणाः सर्व एव ते।
अभावे क्षत्रिया योज्यास्तदभावे तथोरुजाः॥ ४१८॥
नैव शूद्रास्तु संयोज्याः गुणवन्तोऽपि पार्थिवैः।" (२य अध्याय)

पुरोहित, प्रतिनिधि, प्रधान, सचिव, मन्त्री, प्राड़्विवाक, पण्डित, सुमन्त्र, अमात्य और दूत ये दश व्यक्ति राजाकी प्रकृति हैं। उक्त पुरोहित आदि दशों लोग ब्राह्मण होने चाहिये, ब्राह्मणके अभावमें क्षत्रिय और क्षत्रियके अभावमें वैश्य भी नियुक्त हो सकेंगे। शूद्र गुणवान् होने पर भी राजा उक्त कार्योंके लिए नियुक्त न कर सकेंगे। उपरोक्त सात-आठ सचिवोंमें एक सान्धिविग्रहिक भी थे। शुक्रनीतिमें इन्हीं सान्धिविग्रहिकका "सचिव" नामसे उल्लेख किया गया है। यह सान्धिविग्रहिक सचिव शूद्र नहीं हो सकते—इस बातका भी शुक्रनीतिमें स्पष्ट प्रमाण मिलता है। हारीतस्मृतिसे यह साफ जाहिर होता है कि, सन्धि विग्रह आदि क्षत्रियोंका ही धर्म है।

"राज्यस्थः क्षत्रियश्चापि प्रजा धर्मेण पालयन्।
कुर्यादध्ययनं सम्यग्यजेद्यज्ञान् यथाविधि॥
नीतिशास्त्रार्थकुशलः सन्धिविग्रहतत्त्ववित्।
देवब्राह्मणभक्तश्च पितृकार्यपरस्तथा॥
धर्मेण यजनं कार्यमधर्मपरिवर्जनम्।
उत्तमां गतिमाप्नोति क्षत्रियोऽप्येवमाचरन्॥"

(हारीतस्मृति २य अ०)

इन प्रमाणोंसे जब यह सिद्ध हो गया कि, सन्धि-विग्रह आदि कार्य क्षत्रियोंका ही था, तब स्मृतिमें कहे गये सन्धिविग्रहकार कायस्थ वा सान्धिविग्रहिक, क्षत्रियके सिवा दूसरी जाति नहीं हो सकते। ब्राह्मणोंके धर्मप्रतिष्ठापक गुप्तवंशीय सम्राटोंसे ले कर गोब्राह्मण-भक्त बङ्गालके सेनवंशीय राजाओंके समय तक जितने राजा हुए हैं, उनकी सभाओंमें

प्राप्त होगा आत्मज्ञान होगिये ; और फिर मिल जायें होंगिये।"

अनन्तर ब्रह्माने उनके मधुर वाक्योंको सुन कर कहा ;—"हे वत्स ; मैंने चिन्तवन करके तुमको बनाया है, इससे तुम मेरी कायसे पैदा हुए, इसलिए तुम संसारमें कायस्थ नामसे प्रसिद्ध होगे और तुम्हारा नाम चित्रगुप्त हुआ। धर्माधर्मके विचार करनेके लिए यमराजके आलयमें तुम्हारा स्थान निर्दिष्ट हुआ। तुम क्षत्रिय धर्म पालन करना और पृथिवीमें विविध प्रजा उत्पन्न करो।" इतना कह के वह ब्रह्मा वहांसे अन्तर्धान हो गये। कमलाकर-भट्टकृत शूद्रकमलाकरमें भी लिखा है,—

[illegible]

(Vyavastha Darpana by Shyamacharan Sarkar, 3rd Ed. Part I, p. [illegible].)

ब्रह्माने कहा था कि, हे चित्रगुप्त ! तुम मेरे कायसे अर्थात् कायसे पैदा हुए हो ; इसलिए तुम भी क्षत्रियवर्ण हो। तुम पृथिवीमें कायस्थ-क्षत्रिय नामसे प्रसिद्ध होगे। तुम्हारे वंशधर कायस्थ भी तुम्हारे समान कायस्थ-क्षत्रिय गिने जावेंगे। उनकी मित्रादि ... होगी और क्षत्रियकन्याके साथ उनका विवाह होगा। क्षत्रियोंमें जो जो संस्कार होते हैं, ब्रह्माकी आज्ञानुसार उनको भी वे ही संस्कार करने होंगे।" इतना कह कर ब्रह्मा वहांसे अन्तर्धान हो गये ; और चित्रगुप्त उनके वचन सुन कर प्रसन्न हुए।

पद्मपुराणमें और एक जगह लिखा है—

[illegible] ([illegible])

फिर वह जाकर चित्रकूटमें पहुंचे ; वहां ... —उसके बाद ... अर्थात् सूर्यके पुत्र आराधना करते थे। तब पद्मपुराणमें यह भी प्रमाण होता है कि, वही चित्रकूट पीछे 'चित्रगुप्तपुर' नामसे विख्यात हुआ है।

[illegible] ([illegible])

इस यमलोकमें (२० योजनमें विस्तृत) चित्रगुप्तपुर है। यहांके कायस्थ सबके पाप-पुण्यका विचार करते हैं।

देवीभागवतमें लिखा है ;—

[illegible] (१२ स्क० १० अ०)

हे राजन्! दक्षिण दिशामें यमपुरी है; वहां चित्रगुप्त आदि उनके सुन्दर भवन और उनकी समस्त ऋद्धियों सहित सूर्यके पुत्र यम विराजमान हैं।

गरुड़पुराणमें भी लिखा है,—

[illegible]

(गरुड़पुराण, [illegible])

ब्रह्माने सबके पहिले सर्वव्यापी वायुकी ; फिर निर्मोलन सूर्यकी सृष्टि की थी। उसके बाद सूर्यसे चित्रगुप्त नामक धर्मराज (यमराज) की सृष्टि की। इस तरह आदि जगत्‌की सृष्टि करके ब्रह्मा तपस्यामें रत हुए।

स्कन्दपुराणके प्रभास-खण्डमें चित्रगुप्तको कायस्थ कहा गया है। और उनकी उत्पत्तिकी कथा इस प्रकार है,—

[illegible]

दैत्यकन्या शर्मिष्ठाका विवाह क्षत्रिय राजा ययातिके साथ कभी नहीं हो सकता था। शब्दकल्पद्रुममें "आचारनिर्णयतन्त्र" और "अग्निपुराणीय जातिमाला" से जो प्रमाण लिये गये हैं, वह आधुनिक रचना है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं। तन्त्रसार, महासिद्धि सारस्वत, आगमतत्त्वविलास, वाराहीतन्त्र और रुद्रयामलतन्त्रमें भिन्न भिन्न ५०। ६० तन्त्रोंका उल्लेख है। परन्तु उपर्युक्त किसी भी तन्त्रमें "आचारनिर्णयतन्त्र"का नाम तक नहीं आया है। भारतके नाना स्थानोंमें सैकड़ों तन्त्र-ग्रन्थोंका पता लगा है, परन्तु दूसरी जगह कहीं "आचारनिर्णयतन्त्र" की एक भी पोथी नहीं मिली। सिर्फ शब्दकल्पद्रुमके सङ्कलयिता राजा राधाकान्त देवके पुस्तकालयमें ही एक प्रति मिलती है। इस पुस्तकमें ७० श्लोक हैं। इसकी लिपि देखनेसे ही स्पष्ट मालूम हो जाता है कि, यह किसी आधुनिक लेखककी लिखी हुई है। यह पुस्तक किसी उद्देश्यसिद्धिके लिये ही लिखी गई है ;—इस बातको वे ही हृदयङ्गम कर सकेंगे, जो इस पुस्तक को देख चुके हैं। अग्निपुराणीय जातिमालाके विषयमें भी ऐसा ही है। कलकत्तेकी एशियाटिक सोसाइटी और बम्बई आदि नाना स्थानोंसे मूल अग्निपुराण प्रकाशित हुये हैं, पर उनमेंसे किसीमें शब्दकल्पद्रुममें कही गई अग्निपुराणीय जातिमालाका एक भी श्लोक नहीं मिलता। और की तो क्या, भारतसे जितने हस्तलिखित ग्रन्थ प्राप्त हुये हैं, उनकी विवरण-पुस्तिकामें भी इस जातिमालाका उल्लेख नहीं। बङ्गालके बाहर जो चित्रगुप्तके वंशके कायस्थ रहते हैं, उन्हें भी इस जातिमालाका पता न था। बङ्गालमें सिर्फ वसु, घोष आदि उपाधि धारियोंका वास है और इसके उल्लेखसे यह जातिमाला किसी बङ्गालीकी बनाई हुई और आधुनिक ही प्रतीत होती है। इसलिये 'आचारनिर्णय तन्त्र'की तरह यह जातिमाला भी किसी विशेष उद्देश्यसिद्धिके लिये हालमें बनाई गई है इसमें सन्देह नहीं। इसी तरह शब्दकल्पद्रुमोक्त 'कुलप्रदीप'के वचन भी प्राचीन-शास्त्र-सम्मत न होनेके कारण आधुनिक हैं ; और वह किसी विशेष उद्देश्यसिद्धिके लिए लिखे गये हैं, इस लिए वह भी त्याग करने योग्य हैं। 'शब्दकल्पद्रुम'में कही गई देवीवरकी उक्ति भी काल्पनिक है, क्योंकि देवीवरके मूल कुलग्रन्थमें कहीं भी ऐसे वचन नहीं हैं। उपरोक्त प्रमाणोंकी भांति "वृहद्धर्मपुराण"के वचन भी कायस्थोंके विषयमें ठीक नहीं जंचते। शब्दरत्नाकर अभिधानके—

"करण" लायमें नामे पुमान् शूद्राविशो: सुते।
शुद्रे कायस्थमेदेऽपि भेदं करणमस्त्रियाम्॥"

इत्यादि प्रमाणसे करण कायस्थ और शूद्र-वैश्यासे उत्पन्न करण, सम्पूर्ण भिन्न प्रतीत होते हैं।

सान्धि-विग्रहिक।

कायस्थका अर्थ लेखक या राजाका लेखक है—इस बातको सब ही स्वीकार करते हैं। विष्णुस्मृति और बृहस्पतिसंहितामें राजसभाके लेखकको ही कायस्थ कहा है। उक्त स्मृति और शुक्रनीतिसे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि, पहिले कायस्थ लोग ही हिन्दूराजाओंके समयमें सेना-विभागका हिसाब रखनेके लिए, कर वसूल करनेके लिए और विचारालयके कागजात लिखनेके लिए राजलेखक रूपसे रखे जाते थे। अर्थात् लिखनेका काम एकमात्र कायस्थोंके ही हाथमें था। पहिले हिन्दू-राजसभामें लिखनेके काममें कायस्थोंके सिवा दूसरे नहीं रखे जाते थे। इसी लिए कायस्थ या राजसभाके लेखक राज्यका साधनाङ्ग समझे जाते थे। मनुसंहिताके ८वें श्लोकके भाष्यमें मेधातिथिने ऐसा लिखा है :—

"राजाधिकारोपलक्षणैककायस्थ-हस्तलिखितान्येव प्रमाणो भवन्ति।"

अर्थात्—राजदत्त ब्रह्मोत्तर भूमि आदिका शासन, जो एक कायस्थके हाथका लिखा हुआ है, वही प्रमाणित है। मिताक्षरामें लिखा है,—

"सन्धिविग्रहकारी तु भवेद्यस्तस्य लेखकः।
स्वयं राज्ञा समादिष्टः स लिखेद्राजशासनम्॥"

(आचाराध्याय, ३१८ श्लोक)

जो व्यक्ति राजाका सन्धि-विग्रहकारी लेखक होगा, वह ही राजाके आदेशानुसार राजशासन लिखेगा।

अपरार्कके याज्ञवल्क्यनिबन्धमें भी व्यासके वचन ऐसे उद्धृत हैं,—

"राज्ञा तु स्वयमादिष्ट-सन्धिविग्रहलेखकः।
ताम्रपट्टे पटे वापि प्रलिखेद्राजशासनम्॥"

पुत्रधामोऽथ धर्मात्मा धूपमाल्यानुलेपनैः ।
अचिन्तयत्तयोर्न्नं च षट्कालसमन्वितैः ॥ ८
वर्षैस्तु तपतस्तस्य चित्रस्य विमलात्मनः ।
तस्य तुष्टः सहस्रांशुः कालेन महता विभुः ॥ ११
अब्रवीत्तव भद्रं ते वरं वरय सुव्रत ।
सोऽब्रवीद्यदि मे तुष्टो भगवांल्लोकदीधितिः ॥ १२
प्रौढ़त्वं सर्वकार्येषु जायतां मा च सिद्धता ।
तथेति प्रतिज्ञातं सूर्येण वरवर्णिनि ॥ १३
ततः सर्वज्ञतां प्राप्तश्चित्रो चित्रकर्मोद्भवः ।
तं ज्ञात्वा धर्मराजस्तु बुद्ध्या च परया युतः ॥ १४
चिन्तयामास मेधावी लेखकोऽयं भवेद् यदि ।
ततो मे सर्वसिद्धिस्तु निर्वृतिश्च परा भवेत् ॥ १५
एवं चिन्तयतस्तस्य धर्मराजस्य भामिनि ।
अपितीर्थगतश्चित्रं ज्ञानार्थं लवणाम्बुधि ॥ १६
स तत्र प्रविष्टश्च नीतस्तु धर्मकिङ्करैः ।
हृतोऽसौ महादेवि यमादिष्टवरायणैः ॥ १७
स चित्रगुप्तनामाभूच्चित्रचारित्रलेखकः ॥"

(प्रभासखण्ड, १२६ अ०)

हे देवि! पहिले इसी भूमण्डलमें, सर्वभूतोंके प्रिय और उनके हितैषी 'मित्र' नामक एक कायस्थ थे। ऋतुकालमें स्त्रीके साथ सम्भोग करके उन्होंने चित्र नामका एक तेजस्वी पुत्र पैदा किया। मित्रके रूपवती एक कन्या भी हुई थी। पुत्र-पुत्रीके होते ही मित्र परलोक सिधारे, बादमें उनकी स्त्री भी चितामें जल कर मर गई। इनकी मृत्युके बाद असहाय पुत्र-पुत्री दोनोंका ऋषियोंके आश्रममें पालन-पोषण होने लगा; और वे दिन दूने रात चौगुने बढ़ने लगे। इन दोनोंने बालकपनमें ही व्रत आरम्भ किये; और प्रभासक्षेत्रमें गमन किया। वहां इन लोगोंने महादेव तथा सूर्यकी मूर्ति स्थापित की, और धूपमाल्यसे उनकी पूजा कर तपस्या करनी प्रारम्भ कर दी। इनकी तपस्यासे संतुष्ट हो कर सूर्यदेव वहां गये और चित्रसे कहने लगे,—

"हे सुव्रत! तुम्हारा मंगल हो; तुम हमसे वर मांगो।"

चित्रने कहा,—"हे भगवन्! आप अगर मुझसे सन्तुष्ट हुए हैं; तो मुझे यह वर दीजिये कि, मैं सब काममें दक्षता प्राप्त करूं।"

सूर्यदेवने "तथास्तु" कह कर उनको वर दिया और चित्रने सर्वज्ञता प्राप्त कर ली। चित्रको अपने समान ज्ञमतापन्न देख कर धर्मराज मन ही मन विचारने लगे,—"यदि यह बुद्धिमान् मेरा लेखक बन जाता तो मेरे सब काम सिद्ध हो जाते। हे भामिनि! एक दिन धर्मराजने, लवणसमुद्रमें नहाते हुए चित्रको अनुचरों द्वारा अपनी पुरीमें बुला लिया; और अपनी इच्छाकी पूर्ति की। यह चित्र ही "संसार-चरित्र"के लेखक हैं, और बादमें चित्रगुप्त नामसे प्रसिद्ध हुये हैं।

देवीपुराण (१८ अध्याय)-से मालूम होता है,—

"दनुनाम्ना सुतान् सर्वान् बलेनाप्यथ तान् रणे ।
अथ महाबला दृष्ट्वा देवान् दैत्यविमर्दकान् ।
उदयाद्रिसमं रुद्रं ऐरावतं सुभूषितम् ।
सिन्दूरचन्दनाभ्यां घण्टाचामरमण्डितम् ।
आरूढं च सुरपालं महावीर्यं महाबलम् ।
महोरगं... वाहनं ददाम्यहम् ।
अथ तत्र स्थितं दृष्ट्वा ज्वाली महाबलः ।
ज्वालार्कं समारुह्य दीप्तशक्तिं व्यधारयत् ।
तं दृष्ट्वा महिषं धर्मो दण्डपाणिर्महाबलः ।
आरूढश्चित्रगुप्तश्च कालकेतुसमन्वितः ।
कृतान्तो निर्ऋत इव यमदण्डी महाबलः ।
वरुणः लिखितार्थं च पुरुषे च तदानुगः ।
स्वरूपादिः सुरनाथः सहस्राक्षमयः ।
वपुर्धर्मे समारुह्य दृढधर्मे समागतः ।
अन्यो वायुर्देवो धर्म्यः कामचारकः ।
कृष्णसारं समारुह्य आह्वेन वरीरकः ॥"

महाबली बलासुर विष्णुके कौशलसे मारा गया था। इसलिये उसके पुत्र धूम्राक्षासुरने क्रोधान्ध हो कर देवों पर आक्रमण किया। उस समय दानवगणके साथ देवोंका तुमल युद्ध होने लगा। देवराज इन्द्र देवताओंको हारते देख उदयाचल पर्वतके समान ऊंचे ऐरावत हाथी पर सवार हुए। इसके बाद पुरन्दरको ऐरावत पर सवार देख कर महामहिमान् अग्निदेवने छागराज पर सवार हो कर प्रदीप्त शक्ति धारण की। उनको देखते ही महाबली यमराजने और कृतान्तके समान कठोर यमदण्डधारी महाबलपराक्रान्त चित्रगुप्तने कालकेतुके साथ महिष पर

सन्धि-विग्रह-लेखक, स्वयं राजाकी आज्ञासे ताम्रपट्ट या कपासके कागज पर राजशासन लिखेंगे। भारतवर्षके नाना स्थानोंसे ताम्रखण्डों पर लिखे हुए जितने शासन निकले हैं, उनके सन्धिविग्रहकारी लेखक "सान्धिविग्रहिक" नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। पहिले सान्धिविग्रहिकका पद एकमात्र कायस्थोंको ही मिलता था। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें सान्धिविग्रहिक, "सन्धिविग्रह-लेखक" (अपरार्क ३।८६, वीरमित्रोदय और कैयटके अयनी ६ठां अ०) "सन्धिविग्रहकायस्थ" (सोमदेवका कथा-सरित्सागर ४१।६१) और "सन्धिविग्रहाधिकरणाधिकृत" (Ind. Ant. VI p.10) नामसे प्रसिद्ध थे।

अग्निपुराणमें लिखा है :—

"सान्धिविग्रहिकः कार्यः षाड्गुण्यादि विशारदः।" (२२०।३)

सान्धिविग्रहिक छह गुणोंमें विशारद होना चाहिये। वे षट्गुण कौन कौनसे हैं? मनुसंहिताके मतसे—

"सन्धिञ्च विग्रहञ्चैव यानमासनमेव च।
द्वैधीभावं संश्रयञ्च षड्गुणांश्चिन्तयेत्सदा॥"

सन्धि, विग्रह, यान, आसन द्वैधीभाव और संश्रय इन छह गुणोंकी चिन्ता, गम्भीरतापूर्वक करना चाहिये। मनुसंहितामें और भी है,—

"मौलान् शास्त्रविदः शूरान् लब्धलक्षान् कुलोद्गतान्।
सचिवान् सप्तचाष्टौ वा प्रकुर्वीत परीक्षितान्॥
तैः सार्द्धं चिन्तयेन्नित्यं सामान्यं सन्धिविग्रहम्।" (७। ५४, ५६।)

सुप्रतिष्ठित वेदादि धर्मशास्त्रोंमें पारदर्शी, शूर और युद्धविद्यामें निपुण और कुलीन—ऐसे सात आठ मन्त्री, प्रत्येक राजाके पास रहने चाहिये र सन्धिविग्रह आदिकी सलाह उन्हीं बुद्धिमान् सचिवोंसे लेनी चाहिये।

मिताक्षरामें विज्ञानेश्वरने लिखा है,—

"एवं मन्त्रिणः पूर्वं कृत्वा तैः सार्द्धं राज्ये सन्धिविग्रहादिलक्षणं कार्यं चिन्तयेत्। समस्तैर्व्यस्तैश्च अनन्तरं तेषामभिप्रायं ज्ञात्वा सकलशास्त्रार्थविचारकुशलेन ब्राह्मणेन पुरोहितेन सह कार्यं विचिन्त्य ततः स्वयं बुद्ध्या कार्यं चिन्तयेत्।"

मिताक्षराके उपर्युक्त वचनसे यह मालूम होता है कि, राजाके जो ७-८ मंत्री रहते थे, वे सब ही ब्राह्मण नहीं थे। क्यों कि; उसके बाद ब्राह्मणके साथ क्या क्या परामर्श करेंगे—यह भी लिखा है।

(याज्ञवल्क्य, १म अध्याय, ३११वां श्लोक)

शुक्रनीतिमें स्पष्ट लिखा हुआ है,—

"पुरोधा च प्रतिनिधिः प्रधानसचिवस्तथा॥ ६९॥
मन्त्री च प्राड्विवाकश्च पण्डितश्च सुमन्त्रकः।
अमात्यो दूतइत्येता राज्ञः प्रकृतयो दश॥ ७०॥
दश प्रोक्ता पुरोधाद्या ब्राह्मणाः सर्व एव ते।
अभावे क्षत्रिया योज्यास्तदभावे तथोरुजाः॥ ४१८॥
नैव शूद्रास्तु संयोज्याः गुणवन्तोऽपि पार्थिवैः।" (२य अध्याय)

पुरोहित, प्रतिनिधि, प्रधान, सचिव, मन्त्री, प्राड्विवाक, पण्डित, सुमन्त्र, अमात्य और दूत ये दश व्यक्ति राजाकी प्रकृति हैं। उक्त पुरोहित आदि दशो लोग ब्राह्मण होने चाहिये, ब्राह्मणके अभावमें क्षत्रिय और क्षत्रियके अभावमें वैश्य भी नियुक्त हो सकेंगे। शूद्र गुणवान् होने पर भी राजा उक्त कार्योंके लिए नियुक्त न कर सकेंगे। उपरोक्त सात-आठ सचिवोंमें एक सान्धिविग्रहिक भी थे। शुक्रनीतिमें इन्हीं सान्धिविग्रहिकका "सचिव" नामसे उल्लेख किया गया है। यह सान्धिविग्रहिक सचिव शूद्र नहीं हो सकते—इस बातका भी शुक्रनीतिमें स्पष्ट प्रमाण मिलता है। हारीतस्मृतिसे यह साफ जाहिर होता है कि, सन्धि विग्रह आदि क्षत्रियोंका ही धर्म है।

"राजस्थः क्षत्रियश्चापि प्रजा धर्मेण पालयन्।
कुर्यादध्ययनं सम्यग्यजेद्यज्ञान् यथाविधि॥
नीतिशास्त्रार्थकुशलः सन्धिविग्रहतत्त्ववित्।
देवब्राह्मणभक्तश्च पितृकार्यपरस्तथा॥
धर्मेण यजनं कार्यमधर्मपरिवर्जनम्।
उत्तमां गतिमाप्नोति क्षत्रियोऽप्येवमाचरन्॥"

(हारीतस्मृति २य अ०)

इन प्रमाणोंसे जब यह सिद्ध हो गया कि, सन्धिविग्रह आदि कार्य क्षत्रियोंका ही था, तब स्मृतिमें कहे गये सन्धिविग्रहकार कायस्थ या सान्धिविग्रहिक, क्षत्रियके सिवा दूसरी जाति नहीं हो सकते। ब्राह्मणोंके धर्मप्रतिष्ठापक गुप्तवंशीय सम्राटोंसे ले कर गोब्राह्मण-भक्त बङ्गालके सेनवंशीय राजाओंके समय तक जितने राजा हुए हैं, उनकी सभाओंमें

आप मेरा नामकरण कीजिये ; और मेरे लिए कार्य दीजिये।"

भगवान् ब्रह्माने उसके मधुर वाक्योंको सुन कर बड़ी प्रसन्नतासे कहा ;—"हे वत्स ! मैंने स्थिरचित्त हो कर समाधि लगाई थी, उसी अवस्थामें तुम मेरे कायसे पैदा हुए, इसलिए तुम संसारमें कायस्थ नामसे प्रसिद्ध होगे और तुम्हारा नाम चित्रगुप्त हुआ। धर्माधर्मके विचार करनेके लिए यमराजके न्यायालयमें तुम्हारा स्थान निर्दिष्ट हुआ। तुम वहां क्षत्रिय धर्म पालन करना और पृथिवीमें बलिष्ठ प्रजा उत्पन्न करो।" ऐसा वर दे कर ब्रह्मा वहांसे अन्तर्धान हो गये। कमलाकर-भट्टोद्धृत वृहत्‌ब्रह्मखण्डमें भी लिखा है,—

"भवान् क्षत्रियवर्णश्च समस्थान-समुद्भवात्।
कायस्थः क्षत्रियः ख्यातो भवान् भुवि विराजते॥
तदंशसम्भवा ये वै तेऽपि त्वत् समतां गताः।
तेषां लेख्यादिवृत्तिश्च क्षत्रियाः स्वत्वनूपराः॥
संस्कारादीनि कर्म्माणि यानि क्षत्रियजातिषु।
तानि सर्वाणि कार्याणि मदाज्ञावशवर्त्तिनः॥
उक्त्वा प्रजापतिरिदं तत्रैवान्तर्दधे विभुः।
एवमुक्तश्चित्रगुप्तः प्रसन्नहृदयोऽभवत्॥"

(Vyavasthá Darpana by Syámácharan Sarkar, 3rd. Ed. Part I, p. 664.)

ब्रह्माने कहा था कि, हे चित्रगुप्त ! समस्थान अर्थात् कायसे पैदा हुए हो ; इसलिए तुम भी क्षत्रियवर्ण हो। तुम पृथिवीमें कायस्थ-क्षत्रिय नामसे प्रसिद्ध होगे। तुम्हारे वंशधर कायस्थ भी तुम्हारे समान कायस्थ-क्षत्रिय गिने जायंगे। उनकी लेख्यादि वृत्ति होगी और क्षत्रियकन्याके साथ उनका विवाह होगा। क्षत्रियोंमें जो जो संस्कार होते हैं, हमारी आज्ञानुसार उनको भी वे ही संस्कार करने होंगे।" इतना कह कर ब्रह्मा वहांसे अन्तर्धान हो गये ; और चित्रगुप्त उनके वचन सुन कर प्रसन्न हुए।

गरुड़पुराणमें और एक जगह लिखा है—

"प्रयाति चित्रनगरं सौचित्रो यत्र पार्थिवः।
यमस्यैवानुजः सौरिर्येन राज्यं प्रशास्ति हि॥" (उत्तरखण्ड १७ अ०)

फिर वह ऋषि चित्रनगरमें पहुंचे ; जहां सौचित्र,—यमके छोटे भाई—सौरि अर्थात् सूर्यके पुत्र राज्यशासन करते थे। उक्त गरुड़पुराणसे यह भी ज्ञात होता है कि, यही चित्रनगर पीछे 'चित्रगुप्तपुर' नामसे विख्यात हुआ है।

"चित्रगुप्तपुरं तत्र योजनानां तु विंशतिः।
कायस्थास्तत्र पश्यन्ति पापपुण्यानि सर्वशः॥" (उत्तरखण्ड १८।२)

उस यमलोकमें (२० योजनमें विस्तृत) चित्रगुप्तपुर है। वहांके कायस्थ सबके पाप-पुण्यका विचार करते हैं।

देवीभागवतमें लिखा है ;—

"याम्यायां यमपुरी तत्र दण्डधरो महान्।
सुभटैश्च स्थितो राजन् चित्रगुप्तपुरोगमैः।
निज शक्तियुतो भास्वत्तनयोऽस्ति यमो महान्॥" (१२ स्क० १० अ०)

हे राजन् ! दक्षिण दिशामें यमपुरी है ; जहां चित्रगुप्त आदि अपने सुभटों सहित और अपनी समस्त शक्तियों सहित सूर्यके पुत्र यम विराजमान हैं।

गरुड़पुराणमें भी लिखा है,—

"वायुः सर्वगतः सृष्टः सूर्यस्तेजोविवृद्धिमान्।
धर्मराजस्ततः सृष्टश्चित्रगुप्तेन संयुतः॥
सृष्ट्वा यमादिकं सर्वं तपस्तेपे तु पद्मजः॥"

(गरुड़पुराण, प्रेतकल्प, १ अ०)

ब्रह्माने सबसे पहिले सर्वव्यापी वायुको ; फिर तेजोमय सूर्यकी सृष्टि की थी। उसके बाद सूर्यसे चित्रगुप्त सहित धर्मराज (यमराज) की सृष्टि की। इस तरह आदि जगत्‌की सृष्टि करके ब्रह्मा तपस्यामें रत हुए।

स्कन्दपुराणके प्रभास-खण्डमें चित्रगुप्तको कायस्थ कहा गया है। और उनकी उत्पत्तिकी कथा इस प्रकार है,—

"मित्रः नाम पुरा देवि धर्मात्माऽभूद्धरातले॥ २
कायस्थः सर्वभूतानां नित्यं प्रियहिते रतः।
तस्यापत्यं द्वयं यस्मिं ऋतुकालाभिगामिनः॥ ३
पुत्रः परमतेजस्वी चित्रो नाम वरानने।
तथा चित्राभवत् कन्या रूपाद्याप्रतिमप्रभा॥ ४
बाल्ये तु जातमात्रौ तौ मित्रः पञ्चत्वमागतः।
अथ तस्य च सा भार्या सह तेनाग्निमाविशत्॥ ५
अथ तौ बालकौ दीनावविभिः परिपालितौ।
वृद्धिं गतौ महारण्ये बान्धवैः स्थितौ प्रति॥ ६
प्रभासं च समासाद्य तपः परममास्थितौ।
प्रतिष्ठाप्य महादेवं भास्करं वारितस्करम्॥ ७

कायस्थ ही सान्धिविग्रहिकके पद पर नियुक्त रहे हैं। इस विषयमें एक पुरातत्त्वविद् ब्राह्मणने लिखा है,—

"It is a noticeable fact that the सन्धिविग्रही or minister of war and peace and the secretary, were always Kâyasthas or men of the writer-caste. This not only occurs in the Kataka plates, but in grants or inscriptions found in Ceylon and Central India." (Indian Antiquary, Vol. V. p. 57.)

संस्कृतज्ञ अंग्रेज विद्वानोंने सान्धिविग्रहिक शब्दका इस प्रकार अर्थ किया है,—

"A great officer for making treaties and declaring war. This officer or a subordinate, is deputed at the end of the grant, to give effect to it." (Journal of the Asiatic Society of Bengal, 1875. pt. I. p. 5)

"Secretary for foreign affairs."—(Tawney's Kathâsarit Sâgar. Vol. IV. p. 383.)

कायस्थ या लेखक।

यदि कोई कहे, जो कायस्थ सान्धिविग्रहिक जैसे ऊंचे पद पर नियुक्त थे, वे या उनके वंशधर क्षत्रिय हो भी सकते हैं; परन्तु जो कायस्थ पटवारी मुहरिर आदिका काम करते थे, वे तो कमलाकरद्वारा कहे गये लाहिया और वैदेहसे उत्पन्न हुए अधम शूद्र ही हैं। प्रकृत शास्त्रमें सामान्य पटवारी और मुहरिरोंके लिए कैसा स्थान था, हमें इस बातकी जांच करना जरूरी है।

शुक्रनीतिमें लिखा है—

"आग्नेयीदूरं वर्जितं दशपालाद्धितैः सदा ॥
हस्तैर्दशमितं तु यथादिष्टं शस्त्रधराः।
पञ्चहस्तं बहिर्दूरं मन्त्रिणो लेखकाः सदा ॥" (१।३६६—७)

राजाको आग्नेय-अस्त्रसे और जहां अस्त्र गिरते हैं—ऐसे स्थानसे सदा दूर ही रहना चाहिये। राजासे दश हाथकी दूरी पर उनके प्रिय शस्त्रधारी, पांच हाथकी दूरी पर मन्त्री और उनके पास एक बगलमें लेखक रहेंगे।

शुक्रनीतिमें और एक जगह लिखा है—

"नृपोऽधिकृतसभ्याश्च स्मृतिर्गणकलेखकौ।
हेमाग्न्यम्बुस्वपुरुषाः साधनाङ्गानि वै दश ॥
एतद्दशाङ्गकरणं यस्या मध्यास्य पार्थिवः।
न्यायान्पश्येत् कृतमतिः सा सभाध्वरसम्मिता ॥" (४।५५७—८)

राजा, अध्यक्ष, सभ्य, स्मृति, गणक, लेखक, हेम, अग्नि, जल और स्वपुरुष—ये दश साधनाङ्ग हैं।

उपर्युक्त प्रमाणसे यह स्पष्ट विदित हो जाता है कि, जो लेखक राजाके ब्राह्मण-मन्त्रीके पास बैठते थे, और जो राजाके अङ्ग गिने जाते थे, वे कदापि शूद्र नहीं हो सकते।

अङ्गिरः स्मृतिमें कहा है,—

"स्पर्शनं शूद्रसम्पर्कं शूद्रेण च सहासनम्।
शूद्राज्ज्ञानागमं क्वचित् ज्वलन्तमपि पातयेत्" ॥ ४९ ॥

इस स्मृतिवचनके अनुसार जब शूद्रके साथ बैठना भी ब्राह्मणके लिये निषिद्ध है, तब हिन्दू-राजसभामें ब्राह्मण-मन्त्रीके पास जो लेखक या कायस्थ बैठते थे, वे अवश्य ही द्विजाति होने चाहिये।

अमरकोषमें भी लेखक शब्दका वर्ग क्षत्रिय बतलाया गया है और शुक्रनीतिमें भी स्पष्ट लिखा हुआ है,—

"ग्रामपो ब्राह्मणो योग्यः कायस्थो लेखकस्तथा।
शुल्कग्राही तु वैश्यो हि प्रतिहारश्च पादजः ॥" (२।४२०)

अर्थात् हिन्दू राजाओंके समयमें ग्रामोंका शासन ब्राह्मण करते थे, कायस्थ उनके सहकारी (लेखक, मुहरिर वा पटवारी) रहते थे, वैश्य कर वसूल करते थे और शूद्र नौकर (सेवक)का काम करते थे। शुक्रनीतिके उक्त वचनसे साफ जाहिर है कि, लेखक-कायस्थ ब्राह्मण नहीं, वैश्य नहीं और न शूद्र हैं। जब शास्त्रमें चार वर्णके सिवा पांचवां वर्ण ही नहीं माना गया, तब ब्राह्मण, वैश्य और शूद्र वर्णके सिवा क्षत्रियवर्ण ही बच रहता है, इस लिए कायस्थ क्षत्रियवर्ण ही प्रमाणित होते हैं। कोई कोई कायस्थोंके लिए पांचवें वर्णकी कल्पना करता है। परन्तु मनु ही जब पांचवां वर्ण नहीं है ऐसा कह गये हैं, तब पांचवें वर्णकी कल्पना अग्राह्य और अशास्त्रीय है। दाक्षिणात्यमें जो जाति अस्पृश्य

पुत्रयामास धर्मात्मा ध्रुवमाल्यानुलेपनैः ।
अर्चितश्चित्रकेण षट्पदिसमन्वितैः ॥ ८
एवं तु वर्त्तमानस्य चित्रस्य विमलात्मनः ।
तस्य तुष्टः सहस्रांशुः कालेन महता विभुः ॥ ११
अब्रवीद्गच्छ भद्रं ते वरं वरय सुव्रत ।
सोऽब्रवीद्यदि मे तुष्टो भगवांल्लोकदीधितिः ॥ १२
प्रौढत्वं सर्वकार्येषु जायतां मा कचित्कदा ।
तथेति प्रतिज्ञातं सूर्येण सर्ववेदिना ॥ १३
ततः सर्वज्ञतां प्राप्तश्चित्रो मित्रसुतोऽभवः ।
तं ज्ञात्वा धर्मराजस्तु बुद्ध्या च परया युतः ॥ १४
चिन्तयामास मेधावी लेखकोऽयं भवेद् यदि ।
ततो मे सर्वसिद्धिः स्यान्निर्वृतिश्च परा भवेत् ॥ १५
एवं चिन्तयतस्तस्य धर्मराजस्य भामिनि ।
अपितीर्थगतश्चित्रं स्नानार्थं लवणाम्भसि ॥ १६
स तत्र प्रविमग्नश्च नीतस्तु यमकिङ्करैः ।
समीपे महादेवि यमादिष्टैस्तदाथ वै ॥ १७
स चित्रगुप्तनामाभूल्लिखिताखिलशासनः ॥"

(प्रभासखण्ड, १९६ अ०)

हे देवि! पहिले इसी भूमण्डलमें, सर्वभूतोंके प्रिय और उनके हितैषी 'मित्र' नामक एक कायस्थ थे। ऋतुकालमें स्त्रीके साथ सम्भोग करके उन्होंने चित्र नामका एक तेजस्वी पुत्र पैदा किया। मित्रके रूपवती एक कन्या भी हुई थी। पुत्र-पुत्रीके होते ही मित्र परलोक सिधारे, साथमें उनकी स्त्री भी चितामें जल कर मर गई। इनकी मृत्युके बाद असहाय पुत्र-पुत्री दोनोंका ऋषियोंके आश्रममें लालन-पोषण होने लगा; और वे दिन दूने रात चौगुने बढ़ने लगे। इन दोनोंने बालकपनमें ही व्रत आरम्भ किये; और प्रभासक्षेत्रमें गमन किया। वहां इन लोगोंने महादेव तथा सूर्यकी मूर्ति स्थापित की, और धूमधामसे उनकी पूजा कर तपस्या करनी प्रारम्भ कर दी। इनकी तपस्यासे संतुष्ट हो कर सूर्य-देव वहां गये और चित्रसे कहने लगे,—

"हे सुव्रत! तुम्हारा मंगल हो; तुम हमसे वर मांगो।"

चित्रने कहा,—"हे भगवन्! आप अगर मुझसे सन्तुष्ट हुए हैं; तो मुझे यह वर दीजिये कि, मैं सब काममें दक्षता प्राप्त करूं।"

सूर्यदेवने "तथास्तु" कह कर उनको वर दिया और चित्रने सर्वज्ञता प्राप्त कर ली। चित्रको अपने समान क्षमतापन्न देख कर धर्मराज मन ही मन विचारने लगे,—"यदि यह बुद्धिमान् मेरा लेखक बन जाता तो मेरे सब काम सिद्ध हो जाते। हे भामिनि! एक दिन धर्मराजने, लवणसमुद्रमें नहाते हुए चित्रको अनुचरों द्वारा अपनी पुरीमें बुला लिया; और अपनी इच्छाकी पूर्ति की। यह चित्र ही "संसार-चरित्र"के लेखक हैं, और बादमें चित्रगुप्त नामसे प्रसिद्ध हुये हैं।

देवीपुराण (९८ अध्याय)-से मालूम होता है,—

"वृत्रभ्राता पुरा वृत्रः सर्वाग्नियोध्यम तदाहवं ।
अथ सर्वासुरा दृष्ट्वा देवान् दैत्यनिर्जितान् ।
उदयाद्रिसमं दृष्ट्वं गजराजं सुभूषितम् ॥
दिव्यगन्धवराभाढ्यं घण्टाचामरमण्डितम् ।
आरूढ़ं च सुरेन्द्रं महावीरं भयावहम् ॥
ततोऽश्रुमः स्वर्ग्गचरं हुताशनम् ।
अथ तत्र स्थितास्ते दृष्ट्वा ज्वालो महाबलः ।
कालान्तकसमाकारा दीप्तयष्टिं समाददन् ॥
तं दृष्ट्वा महिषं धर्मो दण्डपाणिर्महाबलः ।
कालदण्डसमायुक्तः कालकेतुसमन्वितः ॥
ज्वालाक्षो विवृद्ध इव यमदूतो महाबलः ।
वक्त्रं लिखितिर्मंत्रे पुरुषे च सतानुगः ॥
ब्रह्मर्षिः सुरवासः सङ्घचापधनः ।
वर्म्मणः धनुरादाय इक्षुर्भे सुमाहतः ।
वरदो मायावैर्योधे वरदः पापनाशकः ।
शूलमादाय समादाय षड्भिश्च यमीरजः ॥"

महाबली बलासुर विष्णुके कौशलसे मारा गया था। इसलिये उसके पुत्र वृत्रासुरने क्रोधान्ध हो कर देवों पर आक्रमण किया। उस समय दानव-गणके साथ देवोंका तुमुल युद्ध होने लगा। देव-राज इन्द्र देवतोंको हारते देख उदयाचल पर्वतके समान ऊंचे ऐरावत हाथी पर सवार हुए। इसके बाद पुरन्दरको ऐरावत पर सवार देख कर महामतिमान् अग्निदेवने छागराज पर सवार हो कर प्रदीप्त अग्नि धारण की। उनको देखते ही महाबली यमराजने और कृतान्तके समान कठोर दण्डदण्डधारी महाबल-पराक्रान्त चित्रगुप्तने कालकेतुके साथ महिष पर

और समाजसे बहिष्कृत होती है, वह 'पञ्चम' कहलाती है। कायस्थोंको ऐसा मानना बिल्कुल अनुचित है। कोई कोई छपी हुई 'व्याससंहिता'के "वणिक्किरातकायस्थ मालाकारकुटुम्बिनः।" इस वचनसे कायस्थोंको अन्त्यज कहता है। परन्तु यह श्लोक वास्तविक नहीं; बल्कि "वणिक् किराट-कायस्थ मालाकार-कुटुम्बिनः।" इत्यादि श्लोकका विकृत पाठ है, इस बातका अन्यत्र प्रमाण मिलेगा।

(कायस्थका वर्णनिर्णय ७ दफामें देखिये।)

अब पहिले कहे हुए पुराण और स्मृतिके प्रमाणों द्वारा कायस्थ क्षत्रियवर्ण ही ठहरते हैं। कोई कोई कहा करता है कि, स्कन्दपुराणमें रेणुकाके माहात्म्यसे दाल्भ्याश्रममें चान्द्रसेनी कायस्थोंकी उत्पत्तिकी कथामें—

"कायस्थ एव उत्पन्नः क्षत्रिण्यां क्षत्रियात्ततः।
रामाज्ञया स दाल्भ्येन क्षात्रधर्माद्बहिष्कृतः ॥६१॥
दत्तः कायस्थधर्मोऽस्मै चित्रगुप्तस्य यः स्मृतः।
प्राप्तकायस्थनामत्वात् ख्याता क्षितिभृतां ॥६२॥
तस्य भार्याऽभवत् चित्रगुप्त-कायस्थसम्भवा।
तत्प्रजाश्च कायस्थाः दाल्भ्यगोत्रास्ततोऽभवन् ॥६३॥"

इन श्लोकोंके आधार पर कोई कोई कहता है कि, विशुद्ध क्षत्रिय चन्द्रसेन राजाके औरससे उत्पन्न होने पर भी जब उनके पुत्रको "क्षात्रधर्माद्बहिष्कृतः" कहा है, तब कायस्थ और क्षत्रिय एक नहीं हो सकते। इस विषय पर महापण्डित गागाभट्टने अपने "कायस्थ-धर्मप्रदीप"में ऐसा मत प्रकट किया है,—

"रामाज्ञया स दाल्भ्येन क्षात्रधर्माद्बहिष्कृतः" इति वचनविरोधः तत्र क्षात्रधर्मशब्दश्चौर्यादिविषयसाधारणधर्मपरः न तु श्रौतस्मार्तसाधारणधर्मपरः अग्रात्रे देवार्चनादि धर्माणामपि निर्वाणात्: किन्तु तदनन्तरं महाभाग इत्याद्युपक्रम्य कायस्थानुत्पत्तिमुक्त्वा "दाल्भ्योपदिष्टमार्गे वै" इत्यादि यज्ञदानतपः शौचाचारतीर्थरताः सदा" इत्युपसंहृते उपक्रमोपसंहाराभ्यामपि चान्द्रसेनीयकायस्थानां शुद्धक्षत्रियत्वं प्रतीयते।"

(गागाभट्टकृत कायस्थधर्मप्रदीप)

महामहोपाध्याय श्रीयुत बापुदेव शास्त्रीजी और महामहोपाध्याय कैलाशचन्द्र शिरोमणिजी जैसे प्रमुख विद्वान् भी गागाभट्टके उक्त वचनका समर्थन कर गये हैं।

सह्याद्रिखण्डके अमलकीग्रामके माहात्म्यमें सहस्रार्जुनवधके प्रसङ्गमें ६६वें अध्यायमें लिखा है,—

"चन्द्रसेनस्य राजर्षेर्भार्या सा दुःखिता सती ॥६४॥
अपृच्छत् प्रणिपत्याथ रामं दाल्भ्यं च यत्नतः।
सुतोऽयं मम कायस्थो भविष्यति वचस्तव ॥६५॥
धर्मोऽस्य को भवेद्ब्रह्मन् क्षात्रधर्माद्बहिष्कृतः।
श्रुत्वा तद्वचनं रामः पुनराह महामतिः ॥६६॥

राम उवाच

क्षत्रियाणां हि संस्कारोऽध्ययनं यज्ञकर्म यत्।
तत्करिष्यति पुत्रस्ते प्रजापालनकर्मणि ॥६७॥
नियतः चित्रगुप्तस्य स्वधर्मोऽस्य भविष्यति।
उपजीव्यं भवेद्भद्रे लेखो राजसु सन्ततम्" ॥६८॥

अर्थात्—'उस समय राजर्षि चन्द्रसेनकी भार्या दुःखित हो कर राम और दाल्भ्यको नमस्कार करके पूछने लगीं, 'आपके वचनानुसार मेरा यह शिशु (पुत्र) कायस्थ नामसे प्रसिद्ध होगा यह ठीक है; परन्तु हे ब्रह्मन्! यह पुत्र जब क्षात्रधर्मसे बहिष्कृत कर दिया गया है, तब इसका कौनसा धर्म होगा?'

महामुनि परशुराम उनके इस प्रश्नको सुन कर फिर कहने लगे,—'तुम्हारा पुत्र प्रजापालनमें रत रहेगा। क्षत्रियोंका जैसा संस्कार है, जैसा अध्ययन है और जैसा यज्ञकर्म है, तुम्हारे पुत्रका भी वही होगा। अर्थात् चित्रगुप्तके समान ही रहेगा। हे भद्रे! राजाओंके पास रह कर लेखनकार्यमें ही इसकी उपजीविका होगी।' इसके बाद उक्त पुराणमें स्पष्ट ही लिखा है,—

"कायस्थ एव उत्पन्नः क्षत्रिण्यां क्षत्रियात्तथा।
रामाज्ञया स दाल्भ्येन क्षात्रधर्माद्बहिष्कृतः ॥६९॥
ततः क्षत्रियसंस्कारान् वेदमध्यापयन् मुनिः।
ततः स्वधर्मनिष्ठोऽयं गार्हस्थ्ये संनियोजितः ॥७०॥
उपजीव्यं तु वृत्तेन चित्रगुप्तस्य यत्स्मृतम्।
दाल्भ्येन मुनिना तेन सुखिनो जीवनाशनः ॥७१॥
भविष्यन्ति न सन्देहो यावच्चन्द्रदिवाकरौ।"

कायस्थ ऐसे ही क्षत्रियों द्वारा क्षत्रियाणियोंके गर्भसे उत्पन्न हुए हैं। परशुरामके आदेशानुसार वही कायस्थ क्षात्रधर्मसे बहिष्कृत होने पर भी दाल्भ्य मुनिने उन्हें क्षत्रिय संस्कारोंसे संस्कृत करके वेद अध्ययन कराया, फिर उन्हीं स्वधर्मनिष्ठ कायस्थोंको गार्हस्थ्य धर्म बतलाया। चित्रगुप्तकी उपजीविका ही उनकी उपजीविका हुई। दाल्भ्यमुनिने आशीर्वाद

आरोहण किया। इस प्रकार यमराजने अपने सुभटों और बहुतसी सेनाओंको साथ ले कर इन्द्रको युद्धमें सहायता की। पाशपाणि वरुणदेव भी मत्स्यपर सवार हो अपनी सेनाओंको साथ ले कर आ पहुंचे। इत्यादि।

श्रीहर्षके "नैषधचरित"में पाया जाता है,—दमयन्तीको स्वयम्वर-सभामें इन्द्रादि देवोंके साथ चित्रगुप्तदेव क्षत्रिय रूपमें आये थे। नैषधकारने उनका परिचय इस प्रकार दिया है,—

"इन्द्रोपदेशोऽभूदय चित्रगुप्तः कायस्थ उच्चैर्य पत्तनीव।
जानेनु यमस्य मनोरथ पत्रो मसीदेवचोत्तरि पत्रमथः।" (१४ सर्ग)

चित्रगुप्तके प्रार्थनामन्त्रमें यह भी मिलता है—

"प्रिया सह समुत्पन्न समुद्र-मथनोद्भव।
चित्रगुप्त महाबाहो ममाद्य वरदो भव॥"

उपर्युक्त भिन्न भिन्न पुराणोंसे यह प्रमाणित होता है कि, ब्रह्माके शरीरसे चित्रगुप्तकी उत्पत्ति है; और फिर कल्पभेदसे चन्द्र सूर्यादि देव जिस प्रकार नाना भाव और नाना रूपसे अवतीर्ण हुये हैं, वैसे ही चित्रगुप्त भी विभिन्न कल्पोंमें कभी सूर्यदेवके पुत्ररूपसे और कभी मित्रके पुत्ररूपसे अवतीर्ण हुए हैं। इन्द्र, चन्द्र, वायु और वरुणकी भांति वह भी देवक्षत्रिय-रूपसे देव-सैन्यमें रहते थे।

विरुद्धवादियोंका मत।

उपर्युक्त प्रमाणोंके रहते हुये भी विरुद्धवादी यह कहा करते हैं कि, चित्रगुप्तदेव चार वर्णोंकी सृष्टिके पीछे हुए हैं, इसलिये वे चार-वर्णोंमें नहीं गिने जा सकते।

कमलाकरके—"सर्वं ध्यानस्थितस्यास्य सर्वकायाद्विनिर्गतः।" इत्यादि वचनके अनुसार चित्रगुप्त ब्रह्माके समस्त शरीरसे उत्पन्न हुए हैं और ब्रह्माको "क्षत्रवर्णोचित धर्मं पालनीया यथाविधि—"इस उक्तिसे चित्रगुप्तका क्षत्रिय होना सिद्ध नहीं होता। "मत्कायोद्भवो यस्मात् कायस्थवर्ण उच्यते" इस युक्तिसे कायस्थ एक स्वतन्त्र वर्ण ही प्रतीत होते हैं।

इसके अतिरिक्त मन्वादि धर्मशास्त्रमें चित्रगुप्त अथवा कायस्थ जातिका तत्त्व निर्णीत नहीं हुआ है। किसी किसी स्मृति-शास्त्रमें चित्रगुप्त और कायस्थ नाम पाया जाता है। परन्तु इससे यह नहीं समझा जा सकता कायस्थ कौन जाति हैं?

पुराणको—"धर्मराजस्याधिकारी चित्रगुप्तो बभूव ह।" इस उक्ति द्वारा यही सिद्ध होता है कि, चित्रगुप्त यमराजके लेखक थे। विष्णु, याज्ञवल्क्य, वृहत्पराशर इत्यादि स्मृति-शास्त्रोंसे और कायस्थोंके धर्माधिकरणमें भी उनके लेखक रहनेका प्रमाण मिलता है। औशनस धर्मशास्त्र, ब्रह्मवैवर्त्तपुराण, अग्निपुराण, याज्ञवल्क्यस्मृति और राजतरङ्गिणीमें जगह जगह कायस्थोंके प्रति कठोर उक्तियोंका प्रयोग पाया जाता है। विशेषतः अहल्या-कामधेनुके नवम वत्सोद्धृत भविष्यपुराणान्तर्गत कार्तिक-शुक्ल-द्वितीया-व्रत-कथा-सन्दर्भमें कहा है,—

"एतस्मिन्नेव काले तु धर्मशर्मा द्विजोत्तमः।
अपत्यार्थी च धातारमाराध्यमभजत्तदा॥
परमेष्ठिप्रसादेन लब्ध्वा कन्यामिरावतीम्।
चित्रगुप्तं च तां दत्वा विवाहमकरोत्तदा॥"

उपर्युक्त प्रमाणसे यही मालूम होता है कि, चित्रगुप्तका विवाह ब्राह्मण धर्मशर्माकी पुत्री इरावतीसे हुआ था। इसलिये, प्रतिलोम विवाहसे उत्पन्न हुये कायस्थ कदापि श्रेष्ठवर्ण हो नहीं सकते। इसके अतिरिक्त शब्दकल्पद्रुमोद्धृत आचार-निर्णय-तन्त्रमें कहा है,—

"आदौ प्रजापतेर्जाता सुताश्चेमा महात्मनः।' इत्यादि उपक्रमसे
पादाञ्च द्वय सम्भूतिस्तिरश्चैव च वैश्यकः।
हीननामा सुतस्तस्य महोदयस्य पुत्रकः।
कायस्थस्तस्य पुत्रोऽभूत् बभूव लिपिकारकः।
कायस्थस्य त्रयः पुत्राः विख्याता जगतीतले॥
चित्रगुप्तश्चित्रसेनो विचित्रश्च तथैव च।
चित्रगुप्तो गतः स्वर्गं विचित्रो नागसन्निधौ।
चित्रसेनः पृथिव्यां वै इति शूद्रः प्रचक्षते॥
बहुशोऽस्य पुत्रो मित्रो दत्तः करण एव च।
अन्य प्रचय नामैते चित्रसेनसुता भुवि॥"

इत्यादि वचनोंसे और अग्निपुराणमें कही गई जाति-मालासे, चित्रगुप्त और उनके वंशधरोंको श्रेष्ठ वर्ण नहीं कह सकते। फिर कमलाकरके

दिया कि, जब तक चन्द्र और सूर्य रहेंगे, तब तक तुम्हारे वंशीय और तुम सुख भोग करते रहोगे।

उपर्युक्त प्रमाणोंसे यह स्पष्ट विदित होता है कि, चित्रगुप्तके वंशीय और चन्द्रसेनके वंशीय कायस्थ क्षत्रिय हैं।

चित्रगुप्तका वंश।

चित्रगुप्तकी उत्पत्तिके विषयमें सबसे पहिले जो पुराणके वचन उद्धृत किये गये हैं, उन वचनोंके साथ चित्रगुप्तके वंशका ऐसा परिचय मिलता है ;—

"चित्रगुप्तान्वये जाताः शृणु तान् कथयामि वै।
गौडाख्या माथुराश्चैव भटनागरसेनकाः॥
अहिष्ठानाः श्रीवास्तव्या सकसेनास्तथैव च।
कुलजाः सर्वशास्त्रेषु कर्मकाण्डे नराधिप॥
पुत्रान् वै स्थापयामास चित्रगुप्तो महीतले।
धर्माधर्मविवेकज्ञः चित्रगुप्तो महामतिः॥
शृणुतान् बोधयामास सर्वसाधनमुत्तमम्।
पूजनं देवतानाञ्च पितृणां यथासाधनम्॥
वर्णानां ब्राह्मणानां च सर्वं दानविधिक्रमम्।
प्रजाभ्यः करमादाय धर्माधर्मविवेचनम्।
कर्तव्यं हि प्रयत्नेन पुत्राः स्तरेण भाव्यया॥"

अहल्याकामधेनुसे उद्धृत भविष्यपुराणमें भी लिखा है :—

"चित्रगुप्तस्य या कन्या चाष्टौ पुत्रानजीजनत्।
चारुःसुचारुश्चित्राख्यो मतिमान् हिमवांस्तथा।
चित्रचारुश्चारुणश्च अष्टमोऽतीन्द्रियस्तथा॥
द्वितीया देवकन्येव दक्षिणा या विवाहिता।
तस्याः पुत्राश्च चत्वारस्तेषां नामानि मे शृणु॥
भानुश्चैव विभानुश्च विश्वभानुश्च वीर्यवान्।
पुत्रा द्वादश विख्याता विचेरुस्ते महीतले॥
मथुरायां गतश्चारु माथुरास्ततो स्मृताः।
सुचारु गौडदेशे तु तेन गौडोऽभवत् पुनः॥
भटनद्यां मतिर्यातो भटनागरिकः स्मृतः।
श्रीवासनगरे भानुस्तत्पुत्रो श्रीवास्तवः स्मृतः॥
अम्बामाराध्य हिमवान् अम्बष्ठ इति स्मृतः।
सक्सेना मतिमान् तस्या सक्सेनसमाश्रितः॥
सूर्यध्वजं विभानुश्च तेन सूर्यध्वजः स्मृतः।"

युक्तप्रदेशके कायस्थोंके "कुलग्रन्थ"में, वहांके समाजमें प्रचलित "पातालखण्ड"के कथनमें और चित्रगुप्तकी पूजापद्धतिमें गौड़, माथुर, भटनागर, सेनिक या सकसेन, अम्बष्ठ, श्रीवास्तव, अष्ठान, करण, सूर्यध्वज, वाल्मीक, कुलश्रेष्ठ और निगम—ऐसे बारह भेद चित्रगुप्तज कायस्थोंके पाये जाते हैं। इन्हीं बारह श्रेणियोंके कायस्थोंसे इक्कीस प्रकारके कायस्थ हुए हैं—ऐसा उक्त "पातालखण्ड"में लिखा है। उनके भेद इस प्रकार किये गये हैं :—

१ सूर्यध्वज, २ चन्द्रहास, ३ शूरिचन्द्रार्क, ४ चन्द्रदेव, ५ रविदास, ६ रविरत्न, ७ रविधीर, ८ रविपूजक, ९ गम्भीर, १० प्रभु, ११ वल्लभ, १२ उदारदास रवि, १३ मधुमान्, १४ भद्र, १५ सुभद्र, १६ श्रीगौड़, १७ राजधामा, १८ अलिन्द, १९ सम्भ्रम, २० विश्वास, और २१ पद्मतत्त्वज्ञ। इन इक्कीस श्रेणियोंमें भी हर एकके बीस बीस भेद हैं। पश्चिमाञ्चलके कायस्थोंके कुलग्रन्थकी भांति बङ्गालके उत्तरराढ़ीय कायस्थोंके कुलग्रन्थमें भी लिखा है :—

"चित्रगुप्तः क्रियोपेतः सर्वशास्त्रेषु पूज्यते॥१६॥
सेनोपुत्राष्टकाः पश्चात् सर्वसम्पत्तिसंयुताः।
गौडाख्यो माथुरश्चैव सकसेनः भटनागरः॥
अम्बष्ठ श्रीवास्तव्यः कर्णोवल्मीक उच्यते।"

कुलाचार्य पञ्चाननने अपनी "कुलकारिका"में ऐसा लिखा है :—

"वेदीपराद्व्यताब्दे माघे कुम्भसमाह्वये।
ख्याताः सौकालीनदेव यथा गौडस्य एव च॥
काश्यपविश्वामित्रौ च पद्ममौद्गल्यश्च ये।
कनादिकवर्णदेशे सौमघोषश्च सुधीरः॥
पुरुषोत्तमदासश्च देवदत्तो महामतिः।
सुधीरावनकश्च मित्रकुले सुदर्शनः॥
अयोध्यानिवासी सिंहो घोषश्चैव तथा पुनः।
मधुरानिवासी दासः श्रीवत्सदमागतः॥
मायापुरीनिवासिनो दत्तमित्रो तथा गतौ।"
"गत्वा दावासौरे पुरीं ददर्शेति मनोहरम्॥
अष्टवर्णमयं सौरं चित्रकर्मेव निर्मितम्॥
तदा श्रीवत्सं मत्वीकनायत् तत्पुरीश्वरः।
तत्पुत्रेण पुरीं दत्वा कर्णराजपुरं ददौ॥
तदंशजो वसुमतीति वाचाम अधिश्वरः।
तदंशजाः क्रमेणैव नानादेशान्तरं गताः॥
राजाभूतस्य पुत्रश्च राजामोदात्मजः प्रभुः।
ततःक्रमोऽनादिवरशिंकः ख्यातो महायशो॥

शूद्रधर्मतत्त्वमें एक कायस्थकी उत्पत्ति इस प्रकार बतलाई गई है,—

> “माहिष्यवनितासूनुर्वैदेहाद्यः प्रसूयते ।
> स कायस्थ इति प्रोक्तस्तस्य कर्म विधीयते ॥
> चतुर्वर्णस्य माहिष्या वैश्यादिभ्यो वैदेहः ।
> गौरवाणां देवतानां स्पर्शनं न समाचरेत् ॥
> गणकत्वं विचित्रञ्च बीजवाटी प्रभेदतः ।
> अधमः शूद्रजातिभ्यः पञ्चसंस्कारवानसौ ।
> चातुर्वर्ण्यस्य सेवाहि लिपिलेखनसाधनम् ॥
> शिखां यज्ञोपवीतञ्च कायस्थानां विवर्जयेत् ॥”

‘वैदेहके औरससे और माहिष्यपत्नीके गर्भसे जो उत्पन्न हुये हैं, वे कायस्थ हैं। देशीय लिपिका लिखना, गणना करना, शिल्प कार्य करना, बीज वाटिका बोना, चार वर्णों की सेवा करना इत्यादि उनका कार्य बतलाया गया है। यह पांचो संस्कार अधम शूद्रजातिके करनेके हैं, इसलिये इनको चोटी, यज्ञोपवीत, गैरिकवस्त्र और देवताका स्पर्श न रखना चाहिये।’

इसके अतिरिक्त शब्दकल्पद्रुमोद्धृत देवीवरके “उपविष्टा द्विजाः पञ्च सर्वे च शूद्रसञ्ज्ञकाः।” इस कथनसे यही प्रमाणित होता है कि, आदिशूरकी सभामें पञ्च ब्राह्मणोंके साथ आये हुये पञ्चकायस्थ आदि शूद्र ही ठहराये गये थे।

इसके सिवा बृहद्धर्मपुराणमें भी लिखा है,—

“शूद्रायां वै वैश्यजातः करणो वर्णसङ्करः।” (उत्तर १३ अ०)

इत्यादि प्रमाणसे किसी लोगोंका मत है कि वैश्यसे उत्पन्न वर्णसङ्कर करण भी कायस्थ थे।

विरुद्धमत-खण्डन।

विरुद्धवादी लोग चित्रगुप्तके वर्ण और धर्म सम्बन्धमें जिन युक्तियोंको दिखलाते हैं, उनके उत्तरमें हम पहिले ही कमलाकरकृत बृहद्ब्रह्मखण्डका प्रमाण उद्धृत कर चुके हैं कि, ब्रह्माने उत्पत्ति कालमें ही चित्रगुप्तसे कहा था—“तुम कायस्थ जिस स्थलसे क्षत्रिय उत्पन्न हुए हैं उसी स्थानसे उत्पन्न होनेके कारण क्षत्रिय नामसे प्रसिद्ध होगे। तुम्हारे वंशके लोग भी तुम्हारे ही समान अर्थात् कायस्थ नामसे पुकारे जायेंगे। इन लोगोंका विवाह क्षत्रिय कन्याओंके साथ होगा। क्षत्रियवर्णके लिये जो संस्कारादि कर्म बतलाये हैं, उन सबको ये मेरी आज्ञाके अनुसार करेंगे।”

ब्रह्माके इस कथनसे चित्रगुप्त और उनके वंशधर कायस्थ क्षत्रिय हैं, इसमें कुछ भी संदेह उपस्थित नहीं होता।

मिताक्षरामें कायस्थोंको राजवल्लभ, शूलपाणिकृत दीपकलिकामें राजसम्बन्धहेतुप्रभाववाले और अपरार्क-विरचित याज्ञवल्क्यनिबन्धमें कराधिकृत या कराधिकारी कहा गया है। कायस्थ सदासे राजाओंके प्रिय होते आये हैं। यह राजकार्यमें निपुण होते हैं, और कर वसूल करनेमें इनका मुख्यतः हाथ रहता है; इसलिये इन लोगोंके द्वारा प्रजाको अधिक पीड़ा पहुंच सकती है। अतः याज्ञवल्क्य और अग्निपुराणकार राजाओंको इन (कायस्थ) लोगोंके प्रति विशेष लक्ष्य रखनेका आदेश दे गये हैं।

कायस्थोंके हाथसे किसी किसी जगह प्रजा अधिक पीड़ित होती रही, इसी लिये औशनस-धर्मशास्त्रमें, ब्रह्मवैवर्तपुराणके ब्रह्मखण्डमें और राजतरङ्गिणी ग्रन्थमें कायस्थोंकी निन्दा की गई है। लेकिन किसी भी शास्त्रमें कायस्थोंको हीनवर्ण नहीं कहा गया है। कमलाकरने जिन प्रतिलोमजात कायस्थोंका उल्लेख किया है, वह चित्रगुप्तके वंशधर कायस्थ नहीं हैं और न उनमें उस जगह लिखी गईं बातें ही सङ्घटित होती हैं। ऐसा मालूम पड़ता है कि मेदनीपुरवासी आधुनिक ‘कास्थ’-जातिका नाम संस्कृत भाषामें उन्हीं (कमलाकर)ने ‘कायस्थ’ रख दिया है। किन्तु चित्रगुप्तके वंशधर कायस्थोंको उन्होंने भी कायस्थ-क्षत्रिय कह कर परिचय दिया है। चित्रगुप्तने देवकन्या सुदक्षिणाके साथ विवाह किया था। “सदक्षिणोद्भिदसुतां देवकन्यां सुभ्रुवे। भोजनान्ते तदा सन्तोषाद्ददौ विधिः।” इत्यादि पद्मपुराणके कथनानुसार ब्राह्मण जब चित्रगुप्तको देव मान कर पूजते थे, तब धर्मशर्माने अपनी कन्याका उनसे पाणिग्रहण कर दिया; तो इसमें दोष कौनसा हो गया? इसके सिवा उस समय योनसङ्कट या सङ्करोत्पत्तिकी कोई चर्चा ही न थी; नहीं तो ब्राह्मण

धार्मिकः सत्यवादी च जितेन्द्रिय सदाशयः ।
महाधनुर्धरो वीरः कुलश्रेष्ठः कुलाधिपः ॥
राजकार्यपरिज्ञाता सर्वकार्यविशारदः ।"
"चित्रगुप्तान्वये जातो विभान् उपकर्षकः ।
तस्यात्मजः सूर्यध्वजो घोषवंशमहीपतिः ॥
सूर्यदेवप्रसादेन सूर्यध्वजो नगरं वसेत् ।
तद्वंशजश्चैव नानादेशान्तरं गताः ॥
चन्द्रहासगिरौ केचित् चन्द्रहासगिरीश्वरः ।
मध्यदेशे तयोध्यायां चन्द्रात्सूर्यपदोद्भवः ।
तद्वंशः श्रीसोमघोषः गौडवंश कुलाङ्कुरः ॥"

इस विषयमें कुलानन्दने अपने उत्तरराढ़ीय 'कायस्थकारिका' नामके बङ्गला कुलग्रन्थमें जो कुछ लिखा है, उसका अक्षरशः अनुवाद नीचे दिया जाता है :—

"विधिने किया एक जन, कर्म लिखनेके लिए ।
चित्रगुप्त नाम उसका, हुआ फिर वह इस लिए ॥
कायस्थकी उत्पत्ति, हुई यमके समान ।
पापपुण्य लिखनेके, हेतु हुआ फिर विधान ॥
बादमें फिर हुए, उनके तीन जो लड़के ।
चित्रसेन चित्ररथ, नाम विचित्र उनके ॥
चित्रसेन स्वर्गमें गया विचित्र पातालमें ।
चित्ररथ मर्त्यमें आया, वैसे जो कहाता ॥
यमुना विभा करमें हरिपदे अम्बरमें ।
सुखसे निवसे वैसि-पत्नीके मन्दिरमें ॥
यमुनाके गर्भसे हुए पैदा बहुत जन ।
जो गौड़, माथुर, भट, सकसेन श्रीकरण ॥
श्रीवास्तव, अष्ठिष्ठान अम्बष्ट निगम ।
मुनिकी पूजन सभामें गोत्रका लिखन ॥
तपोबलसे श्रेष्ठ बने श्रीकरण गण्य ।
उसमें अनेक गोत्र शोभते बहुमान्य ॥
* * * *

गौड़ (देश) के महाराज आदित्यशूर नाम ।
गङ्गाके समीप वास सिंहेश्वर ग्राम ॥
आदरसे बुलाते उन्हें, विप्र पञ्चजन ।
साथ उनके पञ्चगोत्र आये श्रीकरण ।"

ध्रुवानन्दमिश्रकी "बङ्गजकायस्थकारिका"में भी ऐसा ही लिखा है :—

"चित्रदेवसुताश्चाष्टौ समासन् वै महाप्रभाः ।
शेषान्तु कन्यकामाञ्च कायस्थी जातकर्म च ॥
एकैव बहुधा भाति गोविन्दो सोमदेवता ।
तेषां मध्ये प्रवरस्य एकविंशतमः श्रुतः ॥
सूर्यध्वजो चन्द्रहासश्चन्द्राङ्गश्चन्द्रदेवकः ।
रविदासो रविरवो रविधीरश्च गौडकः ॥
इति चाष्टसुता ख्याताः कुलानां पत्योऽभवन् ।
घोषः सूर्यध्वजाज्जातश्चन्द्रहासात्सुभासा ॥
रविरवात् गुहश्चैव चन्द्रदेवात् मित्रकः ।
चन्द्राङ्गात् करणो जातः रविदासाच्च दत्तकः ॥
नन्दनश्च गौडाच्च कथ्यते वर्ण्यकारकैः ।
दासश्च नागनाथौ च करणाच्च सहस्रशः ।
मल्लुवर्ण-सुतोऽजातः देवसेनस्य पालितः ॥
सिंहश्चैव तथा ख्याताः एते पञ्चविकारकाः ।
सप्तसप्त-कुलीभूतो नित्यानन्दो नरेश्वरः ॥
तस्यापि वंशे संजाताः सप्तशीतिः प्रकीर्तिताः ।
कुलाचारप्रभेदेन विस्पृष्टस्यचश्चाभवम् ॥"

इसके अतिरिक्त बंगालके दक्षिणराढ़ीय कुलग्रन्थमें भी वसु वंशको श्रीवास्तव और दत्त वंशको अम्बष्ठ कुलोद्भव कहा है। अतएव उपरोक्त कुलग्रन्थोंके प्रमाणोंसे यह निश्चय किया जाता है कि उत्तरराढ़ीय, दक्षिणराढ़ीय और बङ्गज—क्या कुलीन और क्या मौलिक सब ही—कायस्थ चित्रगुप्तके वंशधर हैं; भारतके भिन्न भिन्न देशोंको भिन्न भिन्न श्रेणीके कायस्थोंके "दायाद" हैं। अब यह देखना चाहिये कि उक्त भिन्न भिन्न श्रेणीके कायस्थोंका पूर्व परिचय कैसा और क्या है।

प्राचीन शिलालेख और ताम्रलिपियोंमें, श्रीवास्तवोंको वास्तव्य-वंशका बतलाया है। मध्यप्रदेशके मल्हार नामक एक स्थानमें चेदिराज जाजल्लदेवकी एक प्रशस्ति मिली है। उसमें श्रीवास्तव रत्नसिंहका ऐसा परिचय दिया है :—

"काव्यपीयापयादीषनय-सिद्धान्तवेदिना ।
विपश्चिन्नरेदिनं दिनं रत्नसिंहेन धीमता ॥१२
श्रीराघवाभिक्रमनाम्नु दृशाभिर्व च-
समीर्यपततयाश्रमचोदनेन ।
वास्तव्यवंशकमनाकाभ्रानुवेधं
ग्रामसुते रचिता रचिता प्रशस्तिः ।"

आरोहण किया। इस प्रकार यमराजने अपने सुभटों और बहुतसी सेनाओंको साथ ले कर इन्द्रको युद्धमें सहायता की। पाशपाणि वरुणदेव भी मत्स्यपर सवार हो अपनी सेनाओंको साथ ले कर आ पहुंचे। इत्यादि।

श्रीहर्षके "नैषधचरित"में पाया जाता है,—दमयन्तीकी स्वयम्बर-सभामें इन्द्रादि देवोंके साथ चित्रगुप्तदेव क्षत्रिय रूपमें आये थे। नैषधकारने उनका परिचय इस प्रकार दिया है,—

"इन्द्रोपचरोऽमूदथ चित्रगुप्तः कायस्थ उच्चैर्न च पत्नीव।
कार्ण्णु यस्य मसोद एको मषीदेषबोऽरि पममथः।" (१४ सर्ग)

चित्रगुप्तके प्रार्थनामन्त्रमें यह भी मिलता है—

"क्रिया सह समुत्पन्न सहृद-मपनीध्व।
चित्रगुप्त महाबाहो ममाद्य वरदो भव॥"

उपर्युक्त भिन्न भिन्न पुराणोंसे यह प्रमाणित होता है कि, ब्रह्माके शरीरसे चित्रगुप्तकी उत्पत्ति है; और फिर कल्पभेदसे चन्द्र सूर्यादि देव जिस प्रकार नाना भाव और नाना रूपसे अवतीर्ण हुये हैं, वैसे ही चित्रगुप्त भी विभिन्न कल्पोंमें कभी सूर्यदेवके पुत्ररूपसे और कभी मित्रके पुत्ररूपसे अवतीर्ण हुए हैं। इन्द्र, चन्द्र, वायु और वरुणकी भांति वह भी देवक्षत्रिय-रूपसे देव-सैन्यमें रहते थे।

विरुद्धवादियोंका मत।

उपर्युक्त प्रमाणोंके रहते हुये भी विरुद्धवादी यह कहा करते हैं कि, चित्रगुप्तदेव चार वर्णोंकी सृष्टिके पीछे हुए हैं, इसलिये वे चार वर्णोंमें नहीं गिने जा सकते।

कमलाकरके—"वर्णं ध्यानस्थितस्यास्य, सर्वकायाद्विनिर्गतः।" इत्यादि वचनके अनुसार चित्रगुप्त ब्रह्माके समस्त शरीरसे उत्पन्न हुए हैं और ब्रह्माकी "स्ववर्णोचित धर्मं पालनीयं यथाविधि—" इस उक्तिसे चित्रगुप्तका क्षत्रिय होना सिद्ध नहीं होता। "मत्कायोऽसौ यस्मात् कायस्थवर्ण उच्यते" इस युक्तिसे कायस्थ एक स्वतन्त्र वर्ण ही प्रतीत होते हैं।

इसके अतिरिक्त मन्वादि धर्मशास्त्रमें चित्रगुप्त अथवा कायस्थ जातिका तत्त्व निर्णीत नहीं हुआ है। किसी किसी स्मृति-शास्त्रमें चित्रगुप्त और कायस्थ नाम पाया जाता है। परन्तु इससे यह नहीं समझा जा सकता कायस्थ कौन जाति हैं?

पुराणको—"धर्मराजस्याधिकारी चित्रगुप्तो बभूव ह।" इस उक्ति द्वारा यही सिद्ध होता है कि, चित्रगुप्त यमराजके लेखक थे। विष्णु, याज्ञवल्क्य, वृहत्पराशर इत्यादि स्मृति-शास्त्रोंसे और कायस्थोंके धर्माधिकरणमें भी उनके लेखक रहनेका प्रमाण मिलता है। औशनस धर्मशास्त्र, ब्रह्मवैवर्त्तपुराण, अग्निपुराण, याज्ञवल्क्यस्मृति और राजतरङ्गिणीमें जगह जगह कायस्थोंके प्रति कठोर उक्तियोंका प्रयोग पाया जाता है। विशेषतः अहल्या-कामधेनुके नवम वल्लीधृत भविष्यपुराणान्तर्गत कार्तिक-शुक्ल-द्वितीया-व्रत-कथा-सन्दर्भमें कहा है,—

"एतस्मिन्‌ च काले तु धर्मशर्मा द्विजोत्तमः।
अपत्यार्थी च धातारमाराध्यमभजत्तदा॥
परमेष्ठिप्रसादेन लब्ध्वा कन्यामिरावतीम्।
चित्रगुप्तं च तां दत्वा विवाहमकरोत्तदा॥"

उपर्युक्त प्रमाणसे यही मालूम होता है कि, चित्रगुप्तका विवाह ब्राह्मण धर्मशर्माकी पुत्री इरावतीसे हुआ था। इसलिये प्रतिलोम विवाहसे उत्पन्न हुये कायस्थ कदापि श्रेष्ठवर्ण हो नहीं सकते। इसके अतिरिक्त शब्दकल्पद्रुमाहृत आचार-निर्णय-तन्त्रमें कहा है,—

"आदौ प्रजापतेर्जाता सुधाश्रियः महारथाः।" इत्यादि उपक्रमसे
पादाच्च इव मम्प्रतिस्त्रियवंशस्य च सेवकः।
सोमनामा सुतस्तस्य महोग्रस्य पुत्रकः।
कायस्थस्तस्य पुत्रोऽभूत् बभूव लिपिकारकः।
कायस्थस्य त्रयः पुत्राः विख्याता भुवनेषु वै॥
चित्रगुप्तचित्रसेनो विचित्रस्तथैव च।
चित्रगुप्तो गतः स्वर्गं विचित्रो नागसन्निधौ।
चित्रसेनः पृथिव्यां वै पति शूद्रः प्रजापतेः॥
बहुर्णोया गुरो निम्नो दत्तः करण एव च।
शम्बष्ठश्च मन्ते चित्रसेनसुता भुवि॥"

इत्यादि वचनोंसे और अग्निपुराणमें कही गई जाति-मालासे, चित्रगुप्त और उनके वंशधरोंको श्रेष्ठ वर्ण नहीं कह सकते। फिर कमलाकरके

चेदिराजके शिलालेखमें उक्त रत्नसिंहके पुत्रोंका परिचय "निःशेषगणकग्रहदोषविशेषः" ऐसा मिलता है। मध्यप्रदेशके पलारि ग्रामसे मिले हुए, राजा हरिब्रह्मदेवके १४१० संवत्‌के शिलालेखमें यों लिखा है—

"श्रीवास्तव्यान्वयेनैषा प्रशस्तिरसनायत।
लिखिता रामदासेन पण्डितश्रीधरेण च॥"

अजयगढ़ दुर्गमें राजा भोजवर्माके समयकी (ई० बारहवीं शताब्दीके भागुराक्षरोंमें लिखी हुई) दो बड़ी बड़ी शिला-लिपियां हैं, इन्हीं शिलालिपियोंसे श्रीवास्तव वंशका विस्तृत परिचय मिला है। इनमें सब ही 'ठक्कुर' उपाधिधारी थे। कोई सर्वाधिकारी था, कोई दुर्गाधिप था, कोई कोषाध्यक्ष था, और कोई प्रधानमन्त्रीके पद पर नियुक्त था। श्रावस्तीसे मिले हुए १२०६ संवत्‌के शिलालेखसे मालूम होता है कि, श्रीवास्तव वंश कर्कोटनागका रक्षा किया हुआ वंश है (Indian Antiquary, vol. XVII. p. 62)।

काश्मीरके श्रीनगरमें श्रीवास्तवोंका आदिस्थान है—ऐसा भी इतिहास पाया जाता है। राजतरङ्गिणीसे यह मालूम होता है कि, वहांके सब अधिकारोंमें कायस्थोंका हाथ था। इसके सिवा कर्कोटवंशीय कायस्थ राजाओंने काश्मीरमें २५० वर्षसे ज्यादा राज्य किया—इसका यथेष्ट प्रमाण मिलता है। इसी वंशके राजा जयादित्यके साथ गौड़के राजा जयन्तने (कुलग्रन्थमें जिनका आदिशूर नामसे उल्लेख है) अपनी लड़की कल्याणदेवी ब्याही थी। तब ही से गौड़ोंका श्रीवास्तवोंसे वैवाहिक सम्बन्ध चला आता है। इन ही जयादित्यने पाणिनीय व्याकरणकी काशिकावृत्ति बनाई थी। इससे उनके वेदपाठ करनेका भी पता लगता है। उस समय वे ही वेदपाठ करनेके अधिकारी होते थे, जिनके संस्कारादि द्विजोंके सदृश थे। ऐसी अवस्थामें जयादित्यके संस्कारादि द्विजोंकी भांति थे—इसमें सन्देह नहीं। श्रीवास्तव कायस्थोंके सिवा माथुर, भटनागर, सकसेन, निगम, गौड़ आदि विभिन्न श्रेणियोंके कायस्थ भी, ई० ४ थी शताब्दीसे लेकर १४वीं शताब्दी तक हिन्दू राजाओंके मन्त्री, सेनापति, कराधिकारी, प्रतिनिधि, राजपण्डित आदि ऊंचे पदों पर नियुक्त थे—इसका वर्णन शिलालिपि तथा ताम्रलिपियोंमें पाया जाता है। पहले शास्त्रीय प्रमाणोंसे यह बता चुके हैं कि, गौड़देशमें रहनेवाले कायस्थ गौड़-कायस्थ कहलाते हैं। संवत् ११६१ के शिलालेखसे मिला हुआ माथुर-कायस्थोंके उच्च राजकीय पद और विद्वत्ताका परिचय (Indian Antiquary, vol. XV. p. 201), १८१८ संवत्‌की गढ़वाकी शिलालिपिमें मिला हुआ भट्टग्रामके वैदिक धर्मनिष्ठ सकसेन कायस्थ महीधर (उक्त शिलालेखके अनुवादकने इन्हीं महीधरका anointed "sacrificer" या अभिषिक्त-याज्ञिक कह कर परिचय दिया है), (Cunningham's Arch: Sur: Reports, vol. III p. 59), राजचक्रवर्ती यशोधर्माके मालवीय संवत् ५८९में लिखित मन्दसोरसे पाये गये शिलालेखसे "राजस्थानीय" तथा महापण्डित नैगम या निगम कायस्थ वंश (Fleet's Corpus Inscriptionum Indicurum, vol. III. p. 152), ग्वालियरसे मिला हुई ११५० संवत्‌की, राजा महीपाल देवकी शिलालिपिमें भट्टकायस्थ या भटनागर वंशीय कायस्थ सूरि सोम और "शाब्दिक भदन्त" सूर्यध्वज श्रीभद्रका नाम—ये सब विशेष उल्लेखयोग्य हैं।

(Cordier—Catalogue du fonds Tibetan deb Bibliotheque Nationale, p. 67.)

ई० पहिली शताब्दीसे लेकर चौथी शताब्दी तक भारतके शासनकर्त्ता शकसेन वंशीय क्षत्रिय, गुप्त वंशीय सम्राटोंका आधिपत्य नष्ट हो जानेके बाद क्षत्रिय-कायस्थके नामसे प्रसिद्ध हुए—वटुभट्टके "देववंश" नामक संस्कृत-ग्रन्थसे इस बातका पता लगा है। श्रीकरण कायस्थोंमें, "शार्ङ्गधर-पद्धति" और "सङ्गीतरत्नाकर"के बनानेवाले शार्ङ्गदेवके पिता सोढ़लका नाम प्रसिद्ध है। ये देवगिरि-यादवराजके महासान्धिविग्रहिक थे। इनकी मृत्युके बाद इनके पद पर अद्वितीय शास्त्रविशारद, "चतुर्वर्ग-चिन्तामणि"के प्रणेता हेमाद्रि नियुक्त हुए। गौड़-

देशमें कायस्थोंको उच्च पदाधिकार मिले थे। ई० ९वीं शताब्दीसे लेकर १३वीं शताब्दी तक गौड़देशके नाना स्थानोंमें ये ही कायस्थ राज्य कर गये हैं। इसके सिवा भारतके अन्यान्य देशोंमें भी गौड़-कायस्थ हिन्दू-राजसभाओंमें ऊंचे ऊंचे पदों पर नियुक्त थे; और "मन्त्राग्रणी", "धर्मशास्त्रपारसुमति", "विद्वद्भिः वन्दित", "साहित्याम्बुधिबन्धु" इत्यादि इत्यादि पाण्डित्यसूचक विशेषणोंसे विभूषित किये जाते थे। यहांतक कि, बंगालके घोष, दत्त, नाग, आदित्य आदि उपाधिधारी कायस्थ ई० १०वीं और ११वीं शताब्दीमें, कलिङ्ग और दक्षिण-कोशलके सोमवंशीय राजाओंकी सभाओंमें "राणक", "महासान्धिविग्रहिक", "महाक्षपटलिक" जैसे ऊंचे ऊंचे पदोंके अधिकारी थे। यदि इनका संस्कार द्विजोंके सदृश न होता, तो धर्मनिष्ठ हिन्दू राजाओंकी सभाओंमें इनका स्थान कदापि इतना ऊंचा नहीं हो सकता था। त्रिकलिङ्गके अधिपति महाशिव ययातिराजकी ताम्रलिपिके उद्धारकने उस ताम्रलिपिके लिखनेवाले सान्धिविग्रहिक रुद्रदत्तके विषयमें ऐसा लिखा है :—

"It is also to be noted that Rudra Datta who was Bengali Kāyastha calls himself a Rānaka, which indicates a Kshatriya origin." (Journal of Behār & Orissā Research Society, 1917, March, p. 2)

यह पहिले ही कहा जा चुका है कि, गौड़-कायस्थोंके सिवा श्रीवास्तव, सकसेन, सूर्यध्वज, माथुर इत्यादि विभिन्न श्रेणियोंके कायस्थ भिन्न भिन्न समयमें युक्तप्रदेश आदि भारतके नाना स्थानोंसे आकर गौड़देशमें रहने लगे थे। उनमें घोषवंशके सूर्यध्वज, वसुवंशके श्रीवास्तव, मित्रवंशके माथुर, और दत्तवंशके सकसेन, तथा सिंह, नाग, नाथ, दास आदि श्रीकरण श्रेणीके कायस्थ हैं। ये सब चित्रगुप्तके वंशके कायस्थ-क्षत्रिय हैं और द्विजोंकी भांति माने जाते हैं।

बङ्गीय कायस्थका सावित्रीपातका कारण।

ऊपर कहे हुए चित्रगुप्त वंशके कायस्थ जब द्विजोंकी भांति माने जाते थे; तब बङ्गीय कायस्थोंके यज्ञोपवीतको नष्ट होनेका कारण क्या है? बङ्गीय-कायस्थकुलग्रन्थमें लिखा है—

अहीलाध्याविर्के ग्रामो कायस्था विप्रमानदा।
तत्पुत्र,यमञ्च,आयमो च,तथा पुनः।
ततोकाले गते चापि पालराज्ञोऽभवत्।
[illegible]
[illegible]
[illegible]"

वास्तवमें, बौद्ध पालराजके शासनकालमें यहांके राजवल्लभ कायस्थ वैदिकाचार छोड़ कर बौद्ध तान्त्रिक हुए थे। वैदिकाचारके त्यागके साथ साथ उन्होंने वैदिक यज्ञोपवीत संस्कार भी छोड़ दिया था। वे कैसे तान्त्रिक थे या तन्त्रशास्त्रमें कैसे व्युत्पन्न थे, उसका यथेष्ट प्रमाण मौजूद है। बङ्गीय साहित्य-परिषद्से महामहोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री महोदयने "हजार वर्षके पुराने बङ्गभाषाके बौद्ध गान और दोहे" प्रकाशित किये हैं। शास्त्री महाशयके लिखे हुए उस ग्रन्थके अन्तमें, जो "बौद्धतान्त्रिक ग्रन्थकारसूची" प्रकाशित हुई है, उससे जाना जाता है कि, पाल राजाओंके समयमें कायस्थोंने सैकड़ों तान्त्रिक ग्रन्थोंकी रचना की थी। इन ग्रन्थकारोंमें बहुतसे उपाध्याय और महोपाध्याय उपाधिके धारक थे। उपर्युक्त सूचीसे यह भी जाना गया है कि, इनमें अट्ठारह ग्रन्थकार महोपाध्याय उपाधिके धारी थे। इनमेंसे गयाधर, जिनवर घोष, तथागत-रक्षित और कमलरक्षित—ये चार कायस्थ महोपाध्याय उपाधिसे विभूषित थे। इनके और अन्यान्य बहुतसे कायस्थपण्डितोंके बनाये हुए सैकड़ों तान्त्रिक ग्रन्थोंका पता लगता है। केवल बौद्ध तान्त्रिक आचार्योंकी बात नहीं; बल्कि उस समय गौड़के हिन्दू समाजमें भी बहुतसे प्रसिद्ध प्रसिद्ध पण्डित मौजूद थे। इनमें राढ़ाधिप शूर-रत्नाभरण न्यायकन्दलीके कर्त्ता श्रीधरके आश्रयदाता पाण्डुदास, गौड़के राजा रामपालके मन्त्री "तत्त्वबोध मूर्ति" बोधिदेव और उनके पुत्र "प्रज्ञानवाचस्पति", कामरूपके राजा वैद्यदेव, गौड़ाधिप मदनपालके

उनके १२ कुटुम्ब पहुंचे थे। फिर दूसरी बार बीस, तीसरी बार तीस और चौथी बार अस्सी कायस्थोंकी मण्डली मिथिला गयी। सारांश—कुल ११२ कायस्थ नान्यदेवको समय मिथिलामें जाकर रहे। अपने देशको न लौटने और मिथिलामें ही निवास ग्रहण करनेसे वह 'कर्णकायस्थ' नामसे अभिहित हुये। राजा नान्यदेवके वंशज राजा हरिसिंह देवने जब मिथिलास्थ उच्च वर्णोंकी पञ्जी बनायी, तब कायस्थोंके वंशकी विवेचना करके शुद्धाचरण और उच्च पदानुग्रहणके क्रमसे उन्हें ४ श्रेणियोंमें विभक्त किया। नान्यदेवके साथ गये १२ कायस्थोंके वंशधरोंने पञ्जीप्रबन्धके मध्य प्रथम श्रेणीमें स्थान पाया था। द्वितीय श्रेणीमें उन २० कायस्थोंके वंशज रहे, जो त्रिहुत राज्य मिलने पर बुलाये गये। फिर तीसरी बारको गये ३० कायस्थोंके वंशज तृतीय श्रेणी और चौथी बारको पहुंचे अवशिष्ट कायस्थसन्तान चतुर्थ श्रेणीभुक्त हुये।

उक्त कायस्थ मिथिलामें बस जाने पीछे अपने दूसरे भाइयोंकी भांति स्थानान्तरको नहीं गये। इसी लिये वह पुरानी मिथिलाकी सीमाके बाहर नहीं मिलते अर्थात् उसीके भीतर रहते हैं।

महाराज नान्यदेवके घरानेसे लेकर श्रोइनवार घरानेके मध्य समय तक मिथिलाके कायस्थ 'ठाकुर' कहलाते रहे। फिर किसी श्रोइनवार भूदेव-वंशावतंस महानुभावको कायस्थों और ब्राह्मणोंकी पदवीका साहश्य असङ्गत लगा। इस लिये उन्होंने गम्भीर विचारापन्न हो कर कायस्थोंकी 'ठाकुर' पदवीको अनेकानेक पदवियोंमें विभक्त किया। जो जिस विषयमें निपुण देख पड़ा, वह उसी पदवीसे विभूषित हुआ। कायस्थोंने राजोपजीवी होनेसे सहर्ष नाना प्रकारकी उक्त पदवियोंको स्वीकार कर लिया।

आजकलके मैथिल पञ्जियार कहा करते कि कर्णाटकसे मिथिलावासी होने कारण मिथिलाके कायस्थ 'कर्णकायस्थ' कहलाते हैं। परन्तु हमें समसामयिक शिलालिपि वा ग्रन्थसे इसके समर्थनका कोई प्रमाण नहीं मिला। उलटे, कर्णाटक नान्यदेवके सहयायी और प्रधान मन्त्री श्रीधर ठाकुर, जो वंशपञ्जी ग्रन्थमें कुलीन कर्णकायस्थोंके मध्य सबसे बड़े समझे गये हैं, अपनी शिलालिपिमें 'क्षत्रवङ्गालभानु' नामसे परिचित हुये हैं। दरभङ्गा जिलेमें जबदी परगनेके बीच अन्धाड़ाठाड़ी नामक एक ग्राम है। उसमें कमलादित्य मन्दिरके ध्वंसावशेषमें एक टूटी हुई विष्णुकी मूर्तिके पादपीठ पर निम्नलिखित शिलालेख उत्कीर्ण है—

"ओं श्रीमन्नान्यपतिर्जेता गुणरत्नमहार्णवः।
यत् कीर्त्योज्ज्वलितं विश्वं द्वितीयो क्षीरधी वरः॥
मन्त्रिणा तस्य नान्यस्य क्षत्रवङ्गालभानुना।
देवोऽयं कारितः श्रीमान् श्रीधरः श्रीधरेण च॥"

'जिनको कीर्तिसे विश्व उज्ज्वलित अर्थात् व्याप्त है, जो दूसरे दृहस्पतिकी बराबर वर्णन करनेयोग्य हैं और जो गुणरूप रत्नके समुद्र हैं, वही श्रीमान् नान्यपति विजयी हों। उन्हीं नान्यदेवके मन्त्री वङ्गपङ्गकाक्षत्रिय-सूर्यस्वरूप श्रीधरने उक्त श्रीधर नामक श्रीमान् देवमूर्ति प्रतिष्ठित की है।'

समसामयिक शिलालिपिमें श्रीधर ठाकुर 'क्षत्रवङ्गालभानु' लिखे गये हैं। ऐसी अवस्थामें निःसन्देह वह कायस्थ-क्षत्रिय और वङ्गवासी रहे। गौड़के सेनवंशीय कर्णाट-क्षत्रिय थे और नान्यदेव उन्हींके ज्ञाति थे। राढ़देशमें गङ्गातीर कर्णाटोंका एक प्रधान उपनिवेश रहा। सम्भवतः उसी स्थानसे नान्यदेव और श्रीधर ठाकुर अपने आत्मीय स्वजन ले करके मिथिला जीतनेको आगे बढ़े। वङ्गालके उत्तरराढ़ीय कायस्थोंके प्राचीन कुलग्रन्थमें उत्तरराढ़ीय कायस्थोंके पूर्वपुरुष 'श्रीकर्णवंशसम्भूत', 'श्रीकर्णवंशश्रेणीभुक्त' और 'श्रीकर्णके कुलानुग' कहलाये हैं। वङ्गदेशके प्रसङ्गमें उक्त प्राचीन कुलपञ्जीका प्रमाण उद्धृत हो चुका है। मालूम पड़ता कि राढ़ीय-कायस्थोंके आदिपुरुषोंकी भांति श्रीधरदास और उनके कुटुम्बी 'कर्णकायस्थ' नामसे मैथिल-समाजमें परिचित हुये हैं। वङ्गालके कायस्थोंकी भांति मैथिल कायस्थ समाजमें भी दास, दत्त, देव, कण्ठ, निधि, मल्लिक, लाभ, चौधरी, रङ्ग इत्यादि पदवी

शान्तिविधायिक वारेन्द्र कायस्थ प्रजापति नन्दी और उनके पुत्र 'रामचरित'-रचयिता 'कलिकालवाल्मीकि' सन्ध्याकर नन्दीका नाम विशेष उल्लेखयोग्य है। पाल राजाओंके समयमें बहुतसे कायस्थ बौद्ध-सङ्घके विहारमें प्रधान आचार्य भी हो गये थे।

ब्राह्मणोंके समान अधिकार होनेसे ही ये कायस्थ—ब्राह्मणोंके अभ्युदयके समयमें भी—ऐसे ऐसे ऊंचे पदोंके अधिकारी बने; और इसी लिए ही ये बङ्गीय ब्राह्मणसमाजके विद्वेषभाजन हुए थे। वैदिक ब्राह्मणोंने इन सद्धर्मियों पर कैसे कैसे अत्याचार किये हैं, इसका पता 'शून्यपुराण'के अन्तर्गत 'निरञ्जनकी रुष्मा'से खूब अच्छा लगता है। इसके फलस्वरूप बङ्गालमें बौद्धोंका प्रभाव नष्ट हो गया और ब्राह्मणोंके प्रभावसे कायस्थोंको सच्छूद्रवत् बनना पड़ा। इससे कायस्थोंको समाज-सम्बन्धी कोई हानि नहीं उठानी पड़ी, यही कुशल है। ब्राह्मणों नीचे कायस्थोंका ही स्थान था। और तो क्या; अकबर बादशाहके समयमें बङ्गालमें अधिकतर कायस्थ ही राजा थे। लाखों सैनिक, हजारों घुड़सवार और सैकड़ों तोपें उनके आधिपत्यमें रक्षाके लिए रहा करती थीं। "आइन-इ-अकबरी"में इसका स्पष्ट प्रमाण मिलता है। अकबर बादशाहके दरबारमें कायस्थोंके क्षत्रियत्वके विषयमें बड़ा भारी आन्दोलन हुआ था। उस दरबारमें मधुसूदन सरस्वती जैसे प्रमुख विद्वानोंने भी कायस्थोंके क्षत्रियत्वके अनुकूलमें अपना मत प्रकट किया था। जहांगीर बादशाहके समयमें प्रकाशित "बयान ए कायस्थ" नामक पारसी ग्रन्थमें उनके मतोंका उल्लेख ही नहीं, वरन् उद्धृत किया गया है। किसी किसी पण्डितका यह कहना है कि, बङ्गालके प्रातःस्मरणीय श्रीरघुनन्दन ही जब वसु, घोष आदिको शूद्र निर्देश गये हैं; तब बङ्गालके कायस्थ शूद्र ही समझे जावेंगे। परन्तु निरपेक्ष हो कर यदि रघुनन्दनके ग्रन्थ देखे जाय तो उनमें कहीं भी "कायस्थ" शब्द तक न मिलेगा। ऐसी दशामें उनके मतसे कायस्थ शूद्र हैं—यह कहना बिलकुल हास्यास्पद है। वसु और घोष उपाधि ब्राह्मणोंसे लेकर बङ्गालकी बहुतसी जातियोंमें पाया जाता है। ऐसी दशामें केवल रघुनन्दनोक्त वसु, घोष आदि शब्दोंसे बङ्गालके कोई कायस्थ शूद्र नहीं माने जा सकते। ई० १४वीं शताब्दीमें गौड़से कुछ कायस्थ-पण्डित राजा दुर्लभनारायणकी ओरसे कामता (कोचविहार) में बुलाये गये थे। ये वहां "बारभुंइया" कहलाये और पीछे इन्होंने वहां अपना आधिपत्य जमा लिया। इनके आचार-व्यवहार ब्राह्मणोंकी भांति ही थे। इन्हीं भुंइयाओंके अग्रणी शिरोमणि भुंइया कायस्थ चण्डीवरके वंशमें (महाप्रभु चैतन्यदेवके पहिले) ई० १५वीं शताब्दीको महापुरुष और अद्वितीय पण्डित श्रीशङ्करदेव आविर्भूत हुए। आसामके लोग लाख हिन्दू इनको भगवान्का अवतार मान कर पूजते थे और अब भी ऐसा ही है। कायस्थ-अवतार शङ्करदेवके प्रधान कायस्थ शिष्य माधवदेव भी उनकी तरह प्रचार कार्यमें दक्ष थे और इन्होंने "महापुरुषीय" सम्प्रदाय भी चलाया था। आसामके प्रधान प्रधान स्थानोंमें महापुरुषीयोंके शताधिक सत्र (पुण्यस्थान) वर्तमान हैं। उनमें कायस्थ सत्राधिकारी अब भी ब्राह्मण आदि सब वर्णोंके दीक्षागुरु और ब्राह्मणोंके सदृश संस्कारवाले देखनेमें आते हैं। उनके पूर्वज लोग गौड़बङ्गसे आ कर आसामवासी हुए थे। बङ्गीय कायस्थ पहिले द्विज कहलाते थे—इसका प्रमाण भी यही है। कृष्णदास कविराजके "श्रीचैतन्यचरितामृत"में गौड़के राजाके अमात्य केशव वसुका (ई० १५वीं शताब्दीमें) 'केशवछत्री' नामसे उल्लेख किया गया है। उत्तरराढ़ीय नन्दराम सिंह स्वयं (४०० वर्ष पहले) गोपीनाथकी पूजा करते थे। यह प्रथा ग्यारह पीढ़ियों तक चली आयी। इस वंशमें सर्वदा यज्ञकी प्रथा और प्रणवोच्चारणकी प्रथा प्रचलित रही है। शिखा रक्षाकी प्रथा और पूजाकी प्रथा भी बराबर बनी रही है। दरियावकी तरफ "बे लोकनारायणकी पञ्चाली" नामक पुस्तकका बहुत ही प्रचार है। इस पुस्तकमें लिखा है कि, चार सौ वर्ष पहिले जब चन्द्रद्वीपके राजाका दरियावमें आधिपत्य था, तब वहांके चांदसी नामक निवासी बङ्गाली

कायस्थप्रभुओंमें जाताशौच और मृताशौच १२ दिन रहता है। त्रयोदश दिवस मृतोद्देशसे श्राद्ध किया जाता है। पेशवाओंके प्राधान्यकाल उनके ज्ञातिकुटुम्बवाले कोङ्कणस्थ ब्राह्मणोंने कायस्थ प्रभुओं पर यथेष्ट अत्याचार किया। उस समय वैदिक कर्म सम्पादनको ब्राह्मण पुरोहित न मिलनेसे कोई कोई अपने आप पौरोहित्य और होमादि वैदिक कर्म कर लेते थे। आज भी किसी किसीने उक्त वृत्ति नहीं छोड़ी।* यहां तक कि ब्राह्मणोंके उक्त प्रभावकाल जिन्होंने स्वधर्मरक्षाके लिये गुजरात, कच्छ प्रभृति दूर देशोंमें जा कर आश्रय लिया और उपयुक्त पुरोहितके अभावमें बाध्य हो अनाम्नीय याजनकार्य ग्रहण किया था, आज भी उनके वंशधर पुरोहित, लेखक और ग्रामजीवी बने हैं।† इसमें सन्देह नहीं कि ब्राह्मणोंके पीड़नसे व्यथित और हताश हो कर ही कायस्थ प्रभु वैसा कार्य करने पर बाध्य हुये थे। फिर उनके किसी किसी वंशधरने उक्त उच्च अधिकार परित्याग करना उचित न समझा।

दाक्षिणात्यके प्रभुओंमें किसीकी अवस्था मन्द नहीं। दाक्षिणात्यमें वह आज भी देशपाण्डेय तथा कुलकरणी बने हैं और महाराष्ट्रनृप-प्रदत्त जागीर भोग करते हैं।

कोङ्कणके अन्तर्गत दमन नामक स्थानमें जो चान्द्र-सेनीय प्रभु रहते, उन्हें और पत्तनप्रभुवाले चन्द्रवंशीय जामपतिके दमन नामक सन्तानके वंशधरोंको 'दमनप्रभु' कहते हैं। उनका आचार-व्यवहार और संस्कारादि समस्त चान्द्रसेनीय प्रभुओंसे मिलता है। दमनश्रेणीमें चान्द्रसेनीय और पाठारीय उभय श्रेणीका मिलन देख पड़ता है।

चेउल, बसई, कुलाबा, बम्बई, थाना, पूना प्रभृति जिलाओंमें पत्तन-प्रभुओंका वास है। यह संख्यामें अति अल्प हैं। उनकी अल्प संख्याका कारण क्या है? कोई कोई समझता कि मुसलमानोंके आधिपत्यकाल उनमें अनेक चान्द्रसेनीय प्रभुओंके साथ मिल गये थे। किन्तु आजकल पत्तनप्रभु चान्द्र-सेनीय प्रभुओंका कोई सम्बन्ध स्वीकार नहीं करते। वह अपनेको विशुद्ध क्षत्रिय और चान्द्रसेनीयोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ बतलाते हैं। पेशवा अथवा कोङ्कणस्थ ब्राह्मणवंशीय प्रतिनिधियोंसे सतारेमें जिस समय चिटनवीसोंका दारुण विवाद चलता था, उसी समय अधिकांश पत्तनप्रभु ब्राह्मणोंके अत्याचारसे बचनेको स्वतन्त्र हो गये। फिर भी जो चान्द्रसेनीयोंके साथ गाढ़ मित्रता और कुटुम्बिताके सूत्रमें आबद्ध रहे, वह स्वतन्त्र हो न सके। उनके वंशधर आज भी चान्द्र-सेनीयोंके मध्य 'पाटने' उपाधि भोग करते हैं। यहां तक कि वह पत्तन-श्रेणीसे पृथक् हो गये हैं।

पत्तनप्रभुओंकी मातृभाषा अनहलवाड़ा पत्तन (पाटन) के राजपूतोंकी भाषासे मिलती है। इस लिये बहुतसे लोगोंका विश्वास है कि उक्त राजपूतोंसे ही पत्तनप्रभुओंका उद्भव और पाटन नगरसे उनका नाम-करण हुआ होगा।*

कोङ्कणस्थ ब्राह्मणों द्वारा प्रकृत क्षत्रिय स्वीकार न किये जाते भी वह बराबर यजन, अध्ययन एवं दान त्रिविध द्विजोचित कर्म सम्पादन और चान्द्रसेनीय कायस्थोंकी भांति सकल संस्कार पालन करते हैं। पत्तनप्रभु दशम वर्ष पुत्रका उपनयन देते और अशौचमें १२ दिन मात्र लेते हैं। आज भी कोङ्कणके नाना स्थानोंमें प्रभुलोग बहुतसी जागीर रखते और बड़े बड़े पद भोग करते हैं।†

महाराष्ट्रदेशमें ध्रुवप्रभु नामक एक श्रेणीके कायस्थ देख पड़ते हैं। वह अपनेको पुराणवर्णित उत्तानपादराजपुत्र ध्रुवका वंशधर कहते और पत्तन-प्रभुओंका एकश्रेणीभुक्त समझते हैं। उनके प्रधान

---

* "It is certain that some have aspired to the priesthood, an office everywhere carefully retained by the Brahmans, and so to whisper the sacred formula, perform sacrificial rites, and to officiate at the Homa, or burnt-offering." (Sherring's Tribes and Castes, Vol. II.)

† Indian Antiquary, Vol. V. p. 171.

* Bombay Gazetteer, Vol. XVIII. Pt. I. p. 18[illegible].

† पत्तनप्रभुओंके संस्कार आचार-व्यवहार सम्बन्धमें विस्तृत विवरण Bombay Gazetteer, Vol. XVIII. pt. I (Poona). p. 183-235. और हिन्दी विश्वकोषके '[illegible]' शब्दमें द्रष्टव्य है।

कायस्थ हरिनारायण दास 'विद्यासागर' उपाधिसे विभूषित थे। दक्षिणराढ़ीय कायस्थ-समाजमें सुगन्धाकी चिकित्साके व्यवहारी जहांगीर बादशाहके चिकित्सक वसुवंशीय चिन्तामणि राय 'वैद्यराज' और रत्नमणि राय 'धन्वन्तरि' उपाधिसे अलङ्कृत थे। पीछे इसी वंशमें 'तपस्वी' 'सार्वभौम' 'वाचस्पति' 'वैद्यशेखर' 'कण्ठहार' 'वैद्यतिलक' 'वैद्यविशारद' 'वैद्यचूड़ामणि' 'तर्कतीर्थ' 'वैद्यरत्न' इत्यादि इत्यादि उपाधियोंके अधिकारी हो गये हैं। इनके रचे हुए बहुतसे वैद्यक ग्रन्थ भी मिले हैं।

दिनाजपुरके वर्त्तमान कायस्थ-महाराजके समयसे ५०० वर्ष पहिले तक ब्रह्मोत्तरके दान-पत्रमें 'वर्म्मा' उपाधि देखनेमें आता है। इस वंशमें विजया-दशमीके दिन चित्रगुप्तका नमस्कार-मन्त्र पढ़ कर पुरोहित जब इनके हाथमें तलवार देते हैं, तब ये उसे ग्रहण करते हैं; और फिर उसी तलवारसे केलेके पेड़को काटते हैं। यह प्रथा पहलेके क्षत्रियोंकी मृगयाका अनुकरण है। बङ्गालके कायस्थ-समाजमें तान्त्रिकताके प्रभावसे वैदिक गायत्री आदिके त्यागने पर भी गर्भाधान, कर्णवेध और चूड़ाकरण आदि द्विजोचित संस्कार पाते हैं, ऐसी हालतमें यहांके कायस्थ कभी शूद्रोंमें नहीं गिने जा सकते।

बङ्गालके अधिकांश सामाजिक कायस्थ चित्रगुप्तके सन्तान हैं, उनमें बराबर ये संस्कार चले आये हैं। और उनमें बहुतोंने तान्त्रिक आचारको ग्रहण नहीं किया है। वे बराबर वैदिक आचार पालन करते आये हैं—इसका आभास भी ग्रन्थोंमें मिलता है। इनके सन्तान बङ्गाल और युक्तप्रदेशमें अब भी रहते हैं और ये अब भी द्विजोंके सदृश संस्कारवाले हैं। बङ्गीय १२२४ संवत्के छपे हुए "कायस्थ-धर्म-निर्णय" नामक प्राचीन बङ्गला-ग्रन्थमें ऐसा लिखा है कि,—'गौड़ और बङ्गराज्यवासी दक्षिणराढ़ी, उत्तरराढ़ी और बङ्गज कायस्थ-समाजोंको आचारमें हिन्दुस्थानी कायस्थोंके आलापन व्यवहारमें दूषित होना पड़ता है। क्योंकि हिन्दुस्थानी कायस्थ मात्रका क्षत्रिय आचार, वेदवेदाङ्गपाठ, द्वादशाह अशौच, इत्यादि देख कर सन् १२१२ बङ्गाब्दमें महाराज गोपीमोहन देव बहादुरकी सम्मतिसे तारिणीचरण मित्रज महाशयने अत्र-विवरणका आमूल सन्धान करके चित्रगुप्तवंशजात कायस्थ शूद्र नहीं, इस प्रकार प्रमाण पौराणिक पाने पर समाचारपत्रमें प्रचार किया था। उस काल नीमतलानिवासी दत्तज महाशय और वैकुण्ठवासी तारिणीचरण वसुज महाशयने अत्र विवरणका आमूल सन्धान करते केवल पौराणिक प्रमाणसे अवधारण किया, निश्चय न समझ चुपके रहे। पीछे उक्त वैकुण्ठवासी दत्तज महाशयके पुत्र गुणाकर श्रीयुक्त विश्वेश्वर दत्तज महाशय इलाहाबादसे फारसी अक्षरोंमें लिखा एक पुस्तक ले आये। जिसमें पद्मपुराणोक्त चित्रगुप्त-सन्तान कायस्थ वंशका द्वादशाह अशौच और क्षत्रिय धर्म दृष्ट होता है।' कहना वृथा है कि उक्त फारसी अक्षरोंमें लिखित कायस्थबयान् नामक हस्तलिखित ग्रन्थ महाराज गोपीमोहन देवके पुत्र राजा राधाकान्त देवके पुस्तकालयमें अद्यापि विद्यमान है। राजा गोपीमोहन देव और राजा राजकृष्णदेव बहादुरके मध्य महाराज नवकृष्णकी विपुल सम्पत्तिके उत्तराधिकार पर कलकत्तेकी सुपरीम कोर्टमें जो मुकद्दमा चला, उसमें भी दोनोंने अपनेको शूद्र और वैश्यसे भिन्न उच्च वर्णकी भांति घोषणा की है। मैकनटन साहब कर्तृक १८२४ ई० को प्रकाशित उस मुकद्दमे की कैफियत पढ़नेसे सभी जान सकेंगे।* अब बात आती है—राजा राधाकान्त देव बहादुरके पिता और पितृव्य अपनेको शूद्र वैश्यसे भिन्न उच्च वर्णकी भांति परिचित करते भी राजा राधाकान्त देवने अपने शब्दकल्पद्रुममें कायस्थोंके विषय पर अश्लाघ्नीय कथा क्यों लिखी है? जिस समय शब्दकल्पद्रुम प्रकाशित होता था, उसी समय आन्दुलके राजा राजनारायण प्रधान प्रधान पण्डितोंका मत ले कर, कायस्थ-समाजमें उपनयन-संस्कार प्रवर्तन पर अग्रसर हुये थे। राजा राधाकान्तके पिता राजा

* Consideration on the Hindu Law as it is current in Bengal, by Hon'ble Sir Francis W. Maghnaten, 1824.

व्यक्ति कहा करते हैं—'पहले हम लोगोंके साथ पत्तनीप्रभुओंका विवाह सम्बन्ध प्रचलित था।' मध्यमें उन्होंने पत्तनीप्रभुओंमें मिलनेकी चेष्टा की। पत्तनप्रभुओंने उन्हें स्वजातीयकी भांति स्वीकार करते भी समाजमें ग्रहण किया न था। उनका आचार-व्यवहार और गठनादि पत्तनप्रभुओंकी ही भांति लगता है। उनकी स्थिति भी मन्द नहीं। वह क्षत्रियोचित संस्कारादि सम्पादन करते और ब्राह्मण-व्यतीत अपर सकल जातिकी अपेक्षा अपनेको श्रेष्ठ समझते हैं। ब्राह्मणको छोड़ दूसरी किसी जातिके हाथ भुवप्रभु आहार नहीं करते। अष्टमसे दशम वर्षके मध्य वह पुत्रको उपनयन देते हैं। द्वादश दिन मृताशौच ग्रहण किया जाता है। फिर त्रयोदश दिवस मृतके उद्देश श्राद्ध-क्रिया सम्पन्न होती है। उपनयन, विवाह और श्राद्ध तीनों संस्कार महा-समारोह और बहु व्ययसे किये जाते हैं। विधवा-विवाह वा बहुविवाह उनके मध्य प्रचलित नहीं।*

सिन्धु, गुजरात और महाराष्ट्रमें ब्रह्मक्षत्रिय नामक कायस्थ रहते हैं। सह्याद्रिखण्डमें सूर्यवंशीय और चन्द्रवंशीय प्रभु ही ब्रह्मक्षत्रिय नामसे वर्णित हुये हैं। अधिक सम्भव है कि अश्वपति एवं कामपतिके सन्तानोंमें जो पैठणपत्तन अथवा अनहल-वाड़पाटनमें रहते उन्हें "पत्तनप्रभु" और गुजरात, सिन्धु तथा कर्णाट प्रभृति स्थानोंमें जो रहते उन्हें "ब्रह्मक्षत्रिय" कहते हैं। कर्णाट और सिन्धु प्रदेशमें उक्त ब्रह्मक्षत्रिय किसी समय अति प्रबल पड़ गये थे। सिन्धु और कच्छ प्रदेशमें उन्होंने बहुकाल राजत्व किया। कच्छमें बहुसंख्यक ब्रह्मक्षत्रियोंका वास है। वहां ब्रह्मक्षत्रिय कहा करते हैं—"परशुरामकी परशु-धारासे जो क्षत्रिय आत्मरक्षा कर सके थे, हम उन्हींके वंशधर हैं। सिन्धुप्रदेशमें हमारे पूर्वपुरुषोंने बहु-काल राजत्व किया। विदेशी बर्बर लोगोंके हाथ राज्यच्युत और विताड़ित हो उन्होंने हिङ्गलाज-देवीका आश्रय लिया था। उन्हीं देवीने दया करके उनको कितने ही अधिकार प्रदान किये।"* गवर्न-मेण्टने स्वीकार किया है कि काठियावाड़ और कच्छ-प्रदेशमें शान्तिस्थापन तथा ब्रटिश शासनके प्रचारकाल उक्त ब्रह्मक्षत्रिय-वंशीय सुन्दरजी शिवाजीने कर्नेल वाकर प्रभृतिको यथेष्ट साहाय्य दिया था। पेशवाओंके समय कोई कोई प्रभु जा कर उनसे मिल गये। जहां प्रभु कायस्थोंका वास अधिक और ब्रह्मक्षत्रियोंकी संख्या अल्प है, वहां उभयश्रेणीके मध्य विवाह-सम्बन्ध हो जाता है।

षष्ठसे दशमवर्षके मध्य वह पुत्रका उपनयन करते हैं। उनके विवाहका आचारादि दाक्षिणात्यके ब्राह्मणोंकी भांति है। आत्मीय और सपिण्डके मरने पर दश दिनमात्र अशौच ग्रहण करके पीछे श्राद्ध-भोजादि करते हैं। अधिकांश स्थलोंमें ब्रह्मक्षत्रिय मसिजीवी और वणिक्‌का कर्म चलाते हैं। कहीं कहीं उन्हें पौरोहित्य करते भी देखा जाता है।

ब्रह्मक्षत्रिय देखनेमें अधिकांश गुजराती ब्राह्मणों-जैसे होते हैं। सकल ही सुश्री, परिष्कृत और शिक्षित हैं।

उपकायस्थ।

भारतवर्षमें सर्वत्र कितने ही उपकायस्थ मिलते हैं। कायस्थोंसे शूद्रकन्याके अवैध संयोगमें उक्त सकल उपकायस्थोंकी उत्पत्ति है। उनके साथ प्रकृत कायस्थोंका कोई सामाजिक संस्रव नहीं। फिर भी अनेक उपकायस्थ कायस्थोंके निन्दावाद और नीच-जातित्व प्रतिपादन करनेकी चेष्टामें लगे रहते हैं। उनकी अवस्था देख कर ही सम्भवतः शौशनस धर्म-शास्त्रका वचन गठित और कमलाकर द्वारा उद्धर-कायस्थोंकी व्यवस्था लिपिबद्ध हुयी है। थोड़ीसी आलोचना करनेसे समझ पड़ेगा—भारतवर्षीय प्रकृत कायस्थ-समाजके साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं।

* प्रभुप्रभुओंके जन्मसे मृत्यु पर्यन्त आचार-व्यवहारादिका विवरण Bombay Gazetteer, Vol. XVIII, pt. I. p. 185-192 में द्रष्टव्य है।

* Indian Antiquary, Vol. V, p. 171.

गोपीमोहन १२११ सालको कायस्थोंका क्षत्रियत्व संवादपत्रमें घोषणा करते भी प्रकृत कोई कार्य कर न सके। उनके साथ आन्दुल-राजवंशको बराबर सामाजिक प्रतिद्वन्दिता रही। कहना हुआ है कि उस काल कलकत्तेके दक्षिणराढ़ीय कायस्थोंके मध्य १२ दल थे। दूसरे स्थानकी और क्या बात कहेंगे। राजा राधाकान्त देवके सुयोग्य दौहित्र स्वर्गीय आनन्दकृष्ण वसु महाशयसे सुना है कि उस सामाजिक प्रतिद्वन्दिताके समय राजा राधाकान्त देवने आन्दुलके राजा राजनारायणका विरुद्ध पक्ष अवलम्बन किया था। उसी सुयोगमें उनके शब्दकल्पद्रुमके संश्लिष्ट पण्डितने 'आचारनिर्णयतन्त्र' और 'अग्निपुराणीय जातिमाला'की रचना कर कौशलसे शब्दकल्पद्रुमके मध्य प्रक्षिप्त किया, यह विचित्र नहीं। जो हो, राजा राधाकान्त देव बहादुर वृद्ध वयसमें अपना भ्रम समझ सके थे। शब्दकल्पद्रुमका वही भ्रम संशोधन करनेके लिये वह अपने सुयोग्य और सुपण्डित जामाता अमृतलाल मित्र और प्रिय दौहित्र पण्डितवर आनन्दकृष्ण वसु महोदय पर भार अर्पण कर गये। वह केवल मुखसे ही कह कर शान्त न हुये, अपने वृद्ध वयसवाले निज पौत्रके विवाहमें द्विजोचित कुशण्डिका करके विज्ञपुरुषोंका मुखोज्ज्वल कर गये हैं। यह बात उनके आत्मीय स्वजन सब जानते हैं। इतिहासमें भी यह बात लिखी है।*

राजा राधाकान्त देव थोड़े दिन अधिक जीनेसे क्षत्रियाचार प्रवर्तनमें उद्योगी बनते, सन्देह नहीं। जो हो, आन्दुलके राजा राजनारायणकी भांति स्वर्गीय राय मोहनलाल मित्र महाशय क्षत्रिय आचारके प्रचलनमें उद्योगी हुये थे। किन्तु उस समय संस्कृत भाषामें अपरिचित शास्त्रज्ञानहीन स्वजातीयोंके निकट उपयुक्त सहानुभूति न मिलनेसे उनका महत् उद्देश सुसिद्ध हो न सका। जो हो, आन्दुलके राजा राजनारायण जो चेष्टा हो गयी है, वर्तमान कायस्थ-समाजमें संस्कृत शिक्षा-प्रचारके साथ क्रमसे वह फलफूलसे सुशोभित महीरुहमें परिणत होते आता है। आजकल बङ्गके उत्तरराढ़ीय, दक्षिणराढ़ीय, बङ्गज और वारेन्द्र इन चार श्रेणीके कायस्थोंके मध्य प्रायः सहस्राधिक कायस्थ-सन्तान द्विजोचित उपनयन-सम्पन्न हैं। उक्त चारों समाजोंके बहुकुलीन और मौलिक कायस्थ सन्तानोंने व्रात्य प्रायश्चित्तके अन्तमें उपवीत ग्रहण किया है एवं उनके मध्य त्रयोदशाहमें श्राद्धादि क्षत्रवर्णोचित आचार प्रचलित हुआ है। विशेषभावसे बङ्गके प्रधान प्रधान पण्डित भी इस स्थानके चित्रगुप्तवंशीय कायस्थोंको क्षत्रियवर्ण-सम्भूत समझते हैं। जब संस्कृत कालेजमें कायस्थ छात्र लिये जायेंगे या नहीं—बात उठी, उस समय संस्कृत कालेजके अध्यक्षरूप प्रातःस्मरणीय स्वर्गीय ईश्वरचन्द्र विद्यासागर महाशयने शिक्षा-विभागके डिरेक्टर महोदयको १८५१ ई० की २० वीं मार्चको लिखा था—"जब वैद्य कालेजमें पढ़ सकते हैं, तब कायस्थ क्यों न पढ़ सकेंगे? जब शूद्रजाति वैद्य और जब शोभाबाजारके राजा राधाकान्त देवके जामाता हिन्दू-स्कूलके छात्र अमृतलाल मित्रने संस्कृत कालेजमें पढ़नेका अधिकार पाया है, तब अन्यान्य कायस्थ क्यों पढ़ न सकेंगे? कायस्थ क्षत्रिय आन्दुलके राजा राजनारायण बहादुरने इसे प्रमाण करनेको प्रयास उठाया। कि कायस्थोंको संस्कृत कालेजमें लेना उचित है।" उसके पीछे संस्कृत कालेजके अध्यक्ष स्वर्गीय महामहोपाध्याय महेशचन्द्र न्यायरत्न महाशय बङ्गला विश्वकोषमें कायस्थ शब्द पढ़ तत्कालीन संस्कृत कालेजके स्मृति-अध्यापक स्वर्गीय मधुसूदन स्मृतिरत्न महाशयको कहा था—'कायस्थ-जाति क्षत्रियवर्ण है, यह हम अच्छी तरह समझ सके हैं।' उनके परवर्ती अध्यक्ष महामहोपाध्याय नीलमणि न्यायालङ्कार महाशयने कायस्थोंको क्षत्रियकी भांति स्वीकार किया है। (उनका रचित इतिहास ग्रन्थ) अतःपर महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री महाशय लिख गये हैं—बङ्गमें ब्राह्मण धर्मप्रतिष्ठाके लिये ही ब्राह्मणोंकी भांति कायस्थके प्रधान दश

* Ghose's Indian Chiefs, Rajas and Zamindars, 1881, Vol. II. p. 30.

पा २।३।२०। जिस विकृत अङ्ग द्वारा शरीरीका विकार देख पड़ता, उसी अङ्गविशेषमें तृतीयाका प्रयोग चलता है। इत्थम्भूतलक्षणे। पा २।३।२१। जिस चिह्न द्वारा कोई रूपान्तर लक्षित होता, उसमें तृतीया विभक्तिका प्रयोग पड़ता है। संज्ञोऽन्यतरस्यां कर्मणि। पा २।३।२२। संपूर्वक ज्ञा धातुके योगमें विकल्पसे तृतीया होती है। हेतौ। पा २।३।२३। फलसाधनयोग्य पदार्थमें तृतीया आती है।

सम्प्रदानका लक्षण है—कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्। पा १।४।३२। जिसके उद्देशसे दानकार्य सम्पादित होता, उसीको सम्प्रदान संज्ञा है। रुच्यर्थानां प्रीयमाणः। पा १।४।३३। रुचि अर्थबोधक धातुके प्रयोगमें प्रीयमाण अर्थात् प्रीतिवालेको सम्प्रदान संज्ञा होती है। श्लाघह्नुङ्स्थाशपां ज्ञीप्स्यमानः। पा १।४।३४। श्लाघ, ह्नु, स्था और शप् धातुके प्रयोगमें उनके अर्थ अनुभवकारकको सम्प्रदान संज्ञा पड़ती है। धारेरुत्तमर्णः। पा १।४।३५। णिजन्त धृ धातुके प्रयोगमें उत्तमर्णको सम्प्रदान संज्ञा होती है। स्पृहेरीप्सितः। पा १।४।३६। स्पृह धातुके प्रयोगमें अभीष्ट पदार्थको सम्प्रदान संज्ञा है। क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः। पा १।४।३७। क्रोध, अपकार, ईर्षा और असूया अर्थके प्रयोगमें जिसके प्रति क्रोध आता, वही सम्प्रदान कहाता है। किन्तु उपसर्गविशिष्ट होनेसे उसे कर्म कहते हैं। राधीक्ष्योर्यस्य विप्रश्नः। पा १।४।३९। राध और ईक्ष धातुके प्रयोगमें जिसके सम्बन्ध पर शुभाशुभ प्रश्न किया जाता, वही सम्प्रदान कहाता है। प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्ता। पा १।४।४०। प्रति और आङ् पूर्वक श्रु धातुके प्रयोगमें पूर्ववर्ती प्रवर्तन व्यापारका जो कर्ता रहता, उसका नाम सम्प्रदान पड़ता है। अनुप्रतिगृणश्च। पा १।४।४१। अनु और प्रति पूर्वक गृ धातुके प्रयोगमें प्रवर्तन-व्यापारके कर्ताको सम्प्रदान संज्ञा होती है। परिक्रयणे सम्प्रदानमन्यतरस्याम्। पा १।४।४४। जिसके द्वारा नियत कालके लिये अधिकार चलता, विकल्पसे उसका सम्प्रदान नाम पड़ता है। चतुर्थी सम्प्रदाने। पा २।३।१३। सम्प्रदान अर्थमें चतुर्थी विभक्ति होती है। सम्प्रदान्य स्थलमें भी चतुर्थी विभक्तिका विधान है, यथा—क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः। पा २।३।१४। क्रिया-वाचक उपपदविशिष्ट अप्रयुक्त तुमुन् अर्थके कर्ममें चतुर्थी लगती है। तुमर्थाच्च भाववचनात्। पा २।३।१५। तुमर्थ प्रयोगमें और भाववचनार्थमें विहित प्रत्ययके प्रयोगसे चतुर्थी आती है। नमःस्वस्तिस्वाहास्वधालंवषड्योगाच्च। पा २।३।१६। नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलं और वषट् शब्दके योगमें चतुर्थी लगती है। मन्यकर्मण्यनादरे विभाषाऽप्राणिषु। पा २।३।१७। मन धातुके अनादर अर्थ गम्यमानमें प्राणिवर्जित अन्य कर्म पद पर विकल्पसे चतुर्थी विभक्ति लगाते हैं। फिर विकल्प पक्षमें द्वितीया विभक्ति आती है। गत्यर्थकर्मणि द्वितीयाचतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनि। पा २।३।१२। गत्यर्थ धातुके कायिक व्यापार अर्थमें अध्व भिन्न कर्मस्थल पर द्वितीया और चतुर्थी विभक्ति होती है। उसको छोड़ तादर्थ्य अर्थ, क्लृप धातुके अर्थ, सम्प्रदान अर्थ, उत्पातके द्वारा ज्ञापित विषय और हित शब्दके योगमें भी चतुर्थी विभक्ति लगती है।

अपादानका लक्षण है,—ध्रुवमपायेऽपादानम्। पा १।४।२४। विश्लेष विषयमें अवधीभूत कारकको अपादान संज्ञा होती है। भीत्रार्थानां भयहेतुः। पा १।४।२५। भयार्थ और रक्षार्थ धातुके प्रयोगमें भयहेतुको अपादान संज्ञा ठहरती है। पराजेरसोढः। पा १।४।२६। परा पूर्वक जि धातुके प्रयोगमें असह्य अर्थको अपादान संज्ञा है। वारणार्थानामीप्सितः। पा १।४।२७। वारणार्थ धातुके प्रयोगमें ईप्सित विषयको अपादान संज्ञा लगाते हैं। अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति। पा १।४।२८। व्यवधान रहते जिसके द्वारा अपने अदर्शनकी इच्छा की जाती, उसको अपादान संज्ञा आती है। आख्यातोपयोगे। पा १।४।२९। अध्यापन अर्थमें जो वक्ता रहता, उसका नाम अपादान पड़ता है। जनिकर्तुः प्रकृतिः। पा १।४।३०। जन धातुके प्रयोगमें उत्पत्तिकारणको अपादान संज्ञा होती है। भुवः प्रभवः। पा १।४।३१। प्रपूर्वक भू धातुके प्रयोगमें उत्पत्ति कारणको अपादान संज्ञा है। अपादाने पञ्चमी। पा २।३।२८। अपादान कारकमें पञ्चमी विभक्ति लगती है। उसको छोड़ अन्य स्थलोंमें भी पञ्चमी विभक्ति होती है। यथा—अन्यारादितरर्तेदिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते। पा २।३।२९। अन्य, आरात्, इतर, ऋते, दिक्, अञ्चूत्तर, आच्

देशमें पाये थे। अतएव बङ्गीय कायस्थसमाजका-द्विजाचार लक्ष्य कर गत १३२१ सालके १८ आषाढ़को संस्कृत कालेजके अध्यक्ष महामहोपाध्याय डा: सतीशचन्द्र विद्याभूषणके सभापतित्वमें सकल अध्यापकोंकी एक विचारसभा हुयी। इस सभामें संस्कृत कालेजके टोल-विभागमें बङ्गीय कायस्थ छात्रोंके वेद अध्ययनका अधिकारसूचक सम्मतिपत्र प्रदत्त और वेदान्त पढ़ानेके लिये कायस्थ छात्र गृहीत हुये। बङ्गदेशीय दूसरे जो सकल प्रधान प्रधान अध्यापक हैं, उन्होंने इदानीन्तनकाल बङ्गदेशीय कायस्थोंके क्षत्रियत्व और उपनयन सम्बन्धमें व्यवस्था दी है। बङ्गदेशीय कायस्थ-सभासे प्रकाशित व्यवस्थापत्रमें उन सकल अध्यापकोंके नाम मुद्रित हुये हैं। केवल व्यवस्थापक पण्डित ही नहीं, परमहंसकल्प साधु महात्मा भी इस स्थानकी कायस्थ जातिका क्षत्रियवर्ण मानते हैं। कहनेसे क्या—काश्मीरके उत्तरप्रान्तवासी श्रीश्रीनारद बाबा बालानन्द स्वामी-महाराज बङ्गकी कायस्थजातिको आह्वान कर उसका क्षत्रियवर्णत्व और उपवीत ग्रहणकी आवश्यकता घोषणा कर गये हैं। ११ वर्ष हुये उन्होंने स्वयं दक्षिणराढ़ीय-कुलीन कायस्थ छह श्रीयुक्त विहारीलाल वसु महाशयको उपवीत-दान कर बङ्गके कायस्थोंको सम्मानित किया है। कुछ दिन हुये वारेन्द्र कायस्थ अध्यापक हेमचन्द्र सरकार महाशय और बङ्गज कायस्थ हेमचन्द्र घोषराय पुरीके शङ्कर-मठके प्रधान आचार्यके निकटसे उपवीत-संस्कार पाया था। स्वामी विवेकानन्द कायस्थ थे। वह अपनी जातिको विशुद्ध क्षत्रियकी भांति प्रचार कर गये हैं। सुतरां सामाजिक बङ्गीय-चित्रगुप्तवंशीय कायस्थ निःसन्देह द्विजवर्ण हैं, यह कहना ही वृथा है।

युक्तप्रदेश।

पञ्जाबके पश्चिमप्रान्तसे विहारके पूर्वप्रान्त पर्यन्त सर्वत्र कायस्थ रहते हैं। वह सभी अपनेको चित्रगुप्तका वंशधर बताते और अपनी उत्पत्तिके सम्बन्धमें भविष्यपुराण तथा पद्मपुराणके उपाख्यान सुनाते हैं। इसको छोड़ उनके उत्पत्ति-सम्बन्ध पर युक्तप्रदेशमें निम्नलिखित प्रवाद भी प्रचलित है :—

सबसे पहले यमपुरमें १२ यम राजत्व करते थे। उन ११ लोगोंमें शेष यमका नाम चित्र रहा। उस समय किसी स्थानमें इसी-एक नामके तीन व्यक्ति थे। उनमें एक राजा, एक ब्राह्मण और एक नापित था। राजाको काल पूरा होने पर ले जानेके लिये यमदूत आ पहुंचा। दूतने भ्रमक्रमसे राजाको छोड़ ब्राह्मण और नापितको ले जा कर वहां उपस्थित कर दिया। यम शीघ्र ही यह भ्रम समझ सके थे। ब्रह्मा भी यह संवाद सुन कर बहुत ही दुःखित हुये। ब्रह्मा इस लिये चिन्तित हो ध्यानस्थ हो गये, जिसमें वैसा फिर न हो सके। उस समय भी योन सम्बन्धसे जीवकी उत्पत्ति होती न थी। देवताके दुग्धसे जीव बनते रहे। ब्रह्माके ध्यानस्थ होनेसे सहस्र वत्सर ध्यानमें बीत गये। पीछे ब्रह्माने देखा कि उनके निकट एक श्यामवर्ण पुरुष उपस्थित था। उसके हाथमें मसिपात्र और लेखनी थी। ब्रह्माने कहा—'तुम हमारे कायासे उत्पन्न और उसी कायामें स्थित हो। इस लिये तुम्हारा नाम 'कायस्थ' है।' उसके पीछे भी ब्रह्मा बोल उठे—'तुम गुप्तभावसे हमारे शरीरमें रहे हो। इस लिये हमने तुम्हारा नाम चित्रगुप्त रखा है।' चित्रगुप्त कोटनगर जा कर देवी चण्डिकाकी पूजा करने लगे। चण्डीने सन्तुष्ट हो उन्हें तीन वर दिये थे—१ तुम दूसरेके उपकारको तत्पर रहोगे, २ तुम अपने कार्यमें दृढ़चेता होगे और ३ तुम बहुत दिन जीवोगे। उक्त वर प्रदान कर देवी अन्तर्हित हुयीं। फिर ब्रह्माने चित्रगुप्तको यमपुरीका भार सौंपा और योन सृष्टि आरम्भ करनेको आदेश दिया था। सूर्य, विष्णु, देवी भगवती, शिव तथा गणेश उनके उपास्य और ब्रह्मा इष्टदेव हुये। देवताओंने जब सुना—अब मानसी सृष्टि न होगी, तब धर्मशर्मा ऋषिने अपनी कन्या इरावतीके साथ चित्रगुप्तका विवाह कर देना चाहा। सूर्यके पुत्र मनुने भी अपनी सुन्दरी कन्या सुदक्षिणाके साथ चित्रगुप्तका विवाह करनेको आग्रह प्रकाश किया था। ब्रह्माने दोनोंकी प्रार्थना मान ली। इसी प्रकार चित्रगुप्तने दो कन्याओंका पाणिग्रहण किया। इरावतीके गर्भसे चित्रगुप्तके ८ पुत्र

और आहि शब्दके योगमें पञ्चमी लगती है। पञ्चम्यपाङ्परिभिः। पा २।३।१०। अप, आङ् और परि शब्दके योगमें पञ्चमी आती है। प्रतिनिधिप्रतिदाने च यस्मात्। पा २।३।११। प्रतिनिधि और प्रतिदान अर्थमें प्रति शब्दके प्रयोगसे पञ्चमी पड़ती है। अकर्त्तर्यृणे पञ्चमी। पा २।३।२४। कर्तृशून्य ऋण हेतुका स्वरूप होनेसे पञ्चमी आती है। विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्। पा २।३।२५। अस्त्रीलिङ्ग गुणवाचक शब्द हेतुस्वरूप रहनेसे विकल्पमें पञ्चमी होती है। पृथग्विनानानाभिस्तृतीयान्यतरस्याम्। पा २।३।३२। पृथक्, विना और नाना शब्दके योगमें तृतीया, द्वितीया एवं पञ्चमी विभक्ति लगाते हैं। करणे च स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयस्यासत्त्ववचनस्य। पा २।३।३३। अद्रव्यवाची स्तोक, अल्प, कृच्छ्र, और कतिपय शब्दके उत्तर करणमें तृतीया तथा पञ्चमी विभक्ति पड़ती है। दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च। पा २।३।३५। दूर एवं समीपार्थ शब्दके उत्तर द्वितीया और पञ्चमी विभक्ति रखते हैं। पञ्चमी विभक्ते। पा २।३।४२। जिससे कुछ निकाल लिया जाता, उसमें पञ्चमी विभक्तिका प्रयोग आता है।

अधिकरणका लक्षण है,—आधारोऽधिकरणम्। पा १।४।४५। क्रियाके आधारस्वरूप कर्ता कर्मके आधारको अधिकरण संज्ञा है। उसमें सप्तमी विभक्ति होती है। सप्तम्यधिकरणे च। पा २।३।३६। अधिकरण और दूर तथा निकटार्थ शब्दके योगमें सप्तमी लगती है। यस्य च भावेन भावलक्षणम्। पा २।३।३७। जिसकी क्रिया द्वारा क्रियान्तर लक्षित होता, उसमें सप्तमी आती है। षष्ठी चानादरे। पा २।३।३८। अनादर अर्थमें षष्ठी और सप्तमी विभक्ति होती है। स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैश्च। पा २।३।३९। स्वामी, ईश्वर, अधिपति, दायाद, साक्षी, प्रतिभू एवं प्रसूत शब्दके योगमें षष्ठी और सप्तमी विभक्ति लगती है। आयुक्तकुशलाभ्यां चासेवायाम्। पा २।३।४०। आयुक्त और कुशल शब्दके योगमें तादर्थ्य अर्थसे षष्ठी तथा सप्तमी विभक्ति होती है। यतश्च निर्धारणम्। पा २।३।४१। जाति, गुण, क्रिया और संज्ञा द्वारा एकदेश मात्र जिससे पृथक् किया जाता, उसमें सप्तमी विभक्तिका प्रयोग आता है। साधुनिपुणाभ्यामर्चायां सप्तम्यप्रतेः। पा २।३।४३। साधु और निपुण शब्दके योगमें पूजा अर्थसे सप्तमी विभक्ति लगती है। किन्तु उसमें प्रति शब्दका प्रयोग नहीं होता। प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च। पा २।३।४४। प्रसित एवं उत्सुक शब्दयोगमें तृतीया तथा सप्तमी विभक्ति रखते हैं। नक्षत्रे च लुपि। पा २।३।४५। लुबन्त नक्षत्र शब्दमें अधिकरण अर्थ पर तृतीया और सप्तमी विभक्ति लगायी जाती है। सप्तमीपञ्चम्यौ कारकमध्ये। पा २।३।७। शक्तिद्वयका मध्यवर्ती जो कालवाचक एवं अध्ववाचक शब्द रहता, उसमें पञ्चमी और सप्तमीका प्रयोग पड़ता है। यस्मादधिकं यस्य चेश्वरवचनं तत्र सप्तमी। पा २।३।९। जो जिससे अधिक अथवा ईश्वर ठहरता, उसमें सप्तमीका प्रयोग लगता है। उसको छोड़ साधु वा असाधु शब्दके प्रयोग और कर्मपदयोगसे निमित्तवाचक शब्दमें भी सप्तमी विभक्ति होती है। यथा—

"चर्मणि द्वीपिनं हन्ति दन्तयोर्हन्ति कुञ्जरम्।
केशेषु चमरीं हन्ति सीम्नि पुष्कलको हतः॥"

उक्त सकल कारकोंके मध्य उभयकी प्राप्ति-सम्भावना रहनेसे परवर्ती कारक ही लगता है। यथा—

"अपादान-सम्प्रदान करणाधारकर्म्मणाम्।
कर्त्तुश्चोभयसम्प्राप्तौ परमेव प्रवर्त्तते॥"

सम्बन्धको कारकता नहीं होती। इसीसे वह कारकोंमें गिना भी नहीं जाता। सम्बन्ध अर्थमें और कारक व्यतीत अन्य अर्थमें षष्ठी विभक्ति होती है। षष्ठी शेषे। पा २।३।५०। कारक और प्रातिपदिक अर्थ व्यतिरिक्त स्वकीय स्वामिभावादि सम्बन्धका नाम शेष है। उसीमें षष्ठी विभक्ति होती है। उक्त कारक विभक्ति-समूहकी भांति अर्थ विशेषमें भी षष्ठी विभक्तिका विधान है। यथा—षष्ठी हेतुप्रयोगे। पा २।३।२६। हेतु शब्दके प्रयोगमें हेतुवाचक और हेतु शब्द उभय स्थल पर षष्ठी विभक्ति होती है। सर्वनाम्नस्तृतीया च। पा २।३।२७। हेतु शब्दके प्रयोगमें सर्वनाम शब्द और हेतु शब्दमें षष्ठी विभक्ति लगती है। षष्ठ्यतसर्थप्रत्ययेन। पा २।३।३०। अतसुच् अर्थमें कप्रत्ययान्त शब्दके योगसे षष्ठी विभक्ति होती है। एनपा द्वितीया। पा २।३।३१। एनप् प्रत्ययान्त शब्दके योगमें द्वितीया और षष्ठी आती है। दूरान्तिकार्थैः षष्ठ्यन्यतरस्याम्।

वाल्मीक कायस्थ—चित्रगुप्तपुत्र विभानु या वीर्यभानुके सन्तान कहाते हैं। विभानुके तपस्याकाल शरीरमें वल्मीक उत्पन्न हुआ था। उसीसे उन्हों और उनके वंशधरोंने 'वाल्मीक' नाम पाया।

इनमें तीन श्रेणी हैं। बम्बईमें आनेवाले 'बम्बैया', कच्छमें आनेवाले 'कच्छी', और सुराष्ट्रमें आनेवाले 'सोरठी' कहाते हैं। वाल्मीकोंमें कुछ कुछ दाक्षिणात्यका आचार-व्यवहार भी प्रचलित है।

माथुर—कायस्थोंका नाम मथुराके वाससे पड़ा है। वह अपनेको चित्रगुप्तके पुत्र चारुका वंशधर बताते हैं। इनमें भी तीन श्रेणियां देख पड़ती हैं—देहलवी, कच्छी और लचोली। दिल्लीमें रहनेवाले 'देहलवी', कच्छमें रहनेवाले 'कच्छी' और योधपुरमें रहनेवाले 'लचोली' नामसे परिचित हैं। लचोलियोंको पचोली भी कहते हैं। उनके कथनानुसार योधपुर या मरुदेशमें पूर्वकालको पञ्चनामक एक राजा थे। उन्हींसे पचोली नाम निकला है। फिर किसीके मतमें पञ्चाल देशसे 'पञ्चाली' बना है।

सूर्यध्वज—अपना परिचय चित्रगुप्तपुत्र विभानुके नामसे देते हैं। उनका कहना है कि इक्ष्वाकुवंशीय राजा सूरसेनने यज्ञकाल विभानुको साहाय्य करनेसे 'सूर्यध्वज' उपाधि दिया था। उनका आचार-व्यवहार कुछ कुछ ब्राह्मणोंसे मिलता है।

कुलश्रेष्ठ—कायस्थ चित्रगुप्तपुत्र अतीन्द्रियके सन्तान हैं। उक्त श्रेणीके कायस्थ कहा करते कि जितेन्द्रिय (अतीन्द्रिय) परमधार्मिक रहे। वह प्रति वर्ष अपने आत्मीयोंको बुलाकर उनके पैर धो देते थे। उनका काल पूरा होने पर यमदूतोंने आ कर पूछा—'क्या आप अब स्वर्ग जाना चाहते हैं?' जितेन्द्रियने उत्तर दिया कि वह अविलम्ब स्वर्ग जाना चाहते थे। उसी समय स्वर्गसे विमान उतर पड़ा। जितेन्द्रिय विमान पर चढ़ कर अग्निलोक पहुंचे। अग्निलोकसे प्रजापतिलोक होते हुए ब्रह्मलोकमें जाकर उन्होंने अनन्त सुखभोग किया। अपना कुल उज्ज्वल करनेसे ही उनके वंशधरोंने 'कुलश्रेष्ठ' उपाधि पाया है। इनमें 'बरहेरा' और 'घरेरा' दो श्रेणियां हैं। उक्त दोनों श्रेणियोंमें पानाहार प्रचलित नहीं।

करण—कहते कि नर्मदातीर कर्णालि नामक एक ग्राम है। उसी ग्राममें उनके पूर्वपुरुषोंके वास करनेसे 'करण' नाम पड़ा है। उनमें भी दो श्रेणियां हैं—गयावाल और तिरहुतिया। गयासे गयावाल और तिरहुतसे तिरहुतिया शाखाका नामकरण हुआ है। करण कायस्थ प्रायः उड़ीसामें ही रहते हैं।

गौड़—कायस्थ नाम गौड़देशकी प्राचीन राजधानी गौड़से निकला है। वह कहते कि उनके पूर्वपुरुष भगदत्त कुरुक्षेत्रके महासमरमें निहत हुए थे। गौडकायस्थोंमें ही कालसेन या कामसेन नामक एक राजकुमार रहे। कायस्थोंमें आज भी उनकी पूजा होती है। कायस्थ-कन्याके विवाह-काल प्रदीपके कज्जलसे एक मूर्ति अङ्कित की जाती है। उसीको कालसेनकी मूर्ति मान लोग पूजा करते हैं। गौड़कायस्थ कहते और उनके कुरसीनामेमें भी पढ़ते कि गौड़ाधिप सेनराज उक्त कायस्थवंशीय ही थे। मुहम्मद-बख्तियार तुर्कने कौशलक्रमसे लक्ष्मणियासे निकट वङ्गराज्य अधिकार किया था। उसीसे अनेक गौड़कायस्थ युक्तप्रदेश भाग गये। हिमालयस्थ सुकेत, मन्दी प्रभृति स्थानके राजा आज भी अपनेको गौड़राजवंशीय बताते हैं। प्रकृत प्रस्तावमें गौड़कायस्थवंशीय होते भी आजकल वह अपना परिचय गौड़राजपूतके नामसे देते हैं।* बलबन जब बङ्गाल पहुंचे, तब वहांके कायस्थ-राजा और जमीन्दार उनके बड़े सहायक हुये। उनके पुत्र नसीर-उद्-दीनने गौड़से बहुसंख्यक कायस्थोंको बुलाकर इलाहाबाद सूबेके अन्तर्गत निजामाबाद, भदोह, कोली, झांसी और सिरियाकोट प्रभृति स्थानोंमें कानूनगोईका पद प्रदान किया था। उनके सभी वंशधर गौड़कायस्थ कहलाते हैं।

* Elliot's Races of the N. W. P. ed. by Beames, vol. II, p. 107; Sir Lepel Griffin's Panjab Rajahs; and Crook's Tribes and Castes of the N. W. P. Vol. III. p. 195.

पा २।३।३४। दूर एवं समीपार्थ शब्दके योगमें षष्ठी और पञ्चमी विभक्ति लगाते हैं। ज्ञोऽविदर्थस्य करणे। पा २।३।५१। अज्ञानार्थ ज्ञा धातुको करण विवक्षामें षष्ठी होती है। अधीगर्थदयेशां कर्मणि। पा २।३।५२। स्मरणार्थ शब्दके योगमें और दय तथा ईश धातुके प्रयोगमें कर्मविवक्षामें षष्ठी आती है। कृञः प्रतियत्ने। पा २।३।५३। कृ धातुके गुणाधानाधान अर्थमें कर्मविवक्षामें षष्ठी लगती है। रुजार्थानां भाववचनानामज्वरेः। पा २।३।५४। भावकर्तृविशिष्ट ज्वरभिन्न रोगार्थ धातुके प्रयोगमें कर्मविवक्षामें षष्ठी होती है। आशिषि नाथः। पा २।३।५५। आशीर्वादार्थ नाथ धातुके प्रयोगमें कर्मविवक्षामें षष्ठी लगती है। जासिनिप्रहणनाटक्राथपिषां हिंसायाम्। पा २।३।५६। हिंसार्थ जास, नि-प्रहन्, नाट, क्राथ और पिष धातुके प्रयोगमें कर्मविवक्षामें षष्ठी लगाते हैं। व्यवहृपणोः समर्थयोः। पा २।३।५७। वि और अव पूर्वक हृ एवं पण धातु प्रयोगमें कर्मविवक्षामें षष्ठी लगती है। दिवस्तदर्थस्य। पा २।३।५८। द्यूतार्थ या क्रयविक्रय व्यवहारार्थ दिव धातुके प्रयोगमें कर्मविवक्षामें षष्ठी होती है। विभाषोपसर्गे। पा २।३।५९। उपसर्गयुक्त होने दिव धातुको कर्मविवक्षामें विकल्पसे षष्ठी लगती है। प्रेष्यब्रुवोर्हविषो देवतासम्प्रदाने। पा २।३।६१। लोट् विभक्तिके मध्यमपुरुषके एकवचनान्त इष और ब्रू धातुके देवता सम्प्रदान अर्थमें हविष् शब्द कर्म होनेसे षष्ठी विभक्ति आती है। कृत्वोऽर्थप्रयोगे कालेऽधिकरणे। पा २।३।६४। 'कृत्वा' अर्थप्रयोगमें कालवाचक अधिकरणमें षष्ठी होती है। कर्तृकर्मणोः कृति। पा २।३।६५। कृत् प्रत्ययके योगसे कर्ता और कर्ममें षष्ठी होती है। उभयप्राप्तौ कर्मणि। पा २।३।६६। कर्ता और कर्म उभय पर प्राप्तिकी सम्भावना होनेसे कर्ममें ही षष्ठी लगेगी। क्तस्य च वर्तमाने। पा २।३।६७। वर्तमानार्थ क्त प्रत्ययके योगमें षष्ठी पड़ती है। अधिकरणवाचिनश्च। पा २।३।६८। अधिकरणवाचक क्त प्रत्ययके योगमें षष्ठी आती है। न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्। पा २।३।६९। ल, उ, उक, अव्यय, निष्ठा, खलर्थ और तृन् प्रत्ययोंमें षष्ठी होती है। अकेनोर्भविष्यदाधमर्ण्ययोः। पा २।३।७०। भविष्यत् अर्थमें अक, भविष्यत् अर्थमें आधमर्ण्य और इन प्रत्ययके योगमें षष्ठी नहीं लगती। कृत्यानां कर्तरि वा। पा २।३।७१। कृत् प्रत्ययके योगसे कर्तामें विकल्पसे षष्ठी आती है। तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यां तृतीयान्यतरस्याम्। पा २।३।७२। तुला एवं उपमा शब्द व्यतीत अन्य तुल्यार्थ शब्दके योगमें विकल्पसे द्वितीया और षष्ठी होती है। फिर तुला और उपमा शब्दके प्रयोगमें नित्य षष्ठी लगती है। चतुर्थी चाशिष्यायुष्यमद्रभद्रकुशलसुखार्थहितैः। पा २।३।७३। आशीर्वाद, आयुष्य, मद्र, भद्र, कुशल और सुखार्थ शब्दके योगमें तथा हित शब्दके योगमें विकल्पसे चतुर्थी और षष्ठी होती है।

षष्ठी विभक्ति सम्बन्ध मात्र बता देती है। वाक्यके साथ सर्वप्रकार अन्वय रहनेसे सम्बन्धको कारकता नहीं होती। क्योंकि कारकका प्रधान लक्षण है,—

"क्रियान्वयित्वं कारकत्वम्।"

क्रियाके साथ कर्तृकर्मादि भेदके अनुसार किसी प्रकारका सम्बन्ध रखनेवालेको ही कारक कहते हैं।

हिन्दीमें कर्ताका 'ने', कर्मका 'को', करणका 'से', सम्प्रदानका 'लिये', अपादानका 'से' और अधिकरण कारकका चिह्न 'में' या 'पर' है।

२ वर्षोपलजात जल, ओलेका पानी। (त्रि०) ३ कर्ता, करनेवाला।

कारकदीपक (सं० क्ली०) कारकेण दीपकम्। दीपक अलङ्कारका एक भेद। इसमें कई क्रियाओंका एक ही कर्ता रहता है। दीपक देखो।

कारकर (सं० त्रि०) कारं करोति, कार-कृ-ट। क्रियाकारक, काम करनेवाला।

कारकरदा (फा० वि०) कार्य करनेमें अभ्यस्त, जिसे काम करनेका महावरा रहे।

कारकवान् (सं० पु०) कारकोऽस्त्यस्य, कारक-मतुप् मस्य वः। १ कारकविशिष्ट, मददगार। २ कर्तृयुक्त।

कारकल—मन्द्राजप्रान्तके दक्षिण कनाड़ा जिलेकी उडीपी तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० १३° १२' ३०" उ० और देशा० ७४° १' ४०" पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः साढ़े तीन हजार है। बहुत दिनतक यहां जैनोंका प्राधान्य रहा। जैन-मन्दिरोंका भग्नावशेष आज भी देख पड़ता है। गोमटराज नामक एक व्यक्ति राजत्व करते थे। उनकी प्रस्तरमयी एक

वहांके भटनागरोंने गौड़ोंसे पहले ही मुसलमानी सरकारके अधीन कार्यको स्वीकार किया था। फिर मुसलमानोंके संस्रवसे गौड़कायस्थ भी उनमें मिल गये। भटनागर वाममार्गी रहे। उस समय उनके साथ सम्मिलित होने पर गौड़कायस्थ भी वाममार्गी बन गए और भैरवीचक्रमें पूजा करने लगे।

गौड़कायस्थोंने जब भटनागरोंको आहार करनेके लिये निमन्त्रण दिया, तब भटनागरोंने तो उनके घर जा कर खा लिया, किन्तु पीछे जब भटनागरोंने गौड़कायस्थोंको अपने घर खाने पीनेके लिए बुलाया, तब बहुत थोड़े लोगोंको छोड़ कर अधिकांश गौड़ोंने निमन्त्रणमें जानेसे अपना मुंह छिपाया; फिर जिन लोगोंने भटनागरोंके घरमें जा कर खाया था, उन्हें समाजच्युत भी ठहराया। इससे भटनागर बहुत चिढ़ गये। उस समय दिल्लीमें नसीर-उद्-दीन् सम्राट् रहे। गौड़ और भटनागर उभय श्रेणीके कायस्थ उनके अधीन कर्म करते थे। दिल्लीके भटनागरोंने जब सुना कि उनके ज्ञातिकुटुम्बके घर गौड़कायस्थोंने आहार किया न था, तब उन्होंने गौड़ोंके घर खाने-वाले सकल भटनागरोंको समाजच्युत कर दिया। बात ठहर गयी—गौड़ जितने दिन उनके घरमें न खायेंगे, उतने दिन वह भी समाजमें मिलाये न जायेंगे। इस पर समाजच्युत भटनागरोंने मुसलमान-सम्राट्के निकट नालिश की थी। सम्राट्को गौड़कायस्थोंके अन्याय आचरणका परिचय मिला। उन्होंने दिल्लीमें रहने-वाले गौड़ों और भटनागरोंको एकत्र आहार करनेके लिये आदेश दिया था। उस समय वाध्य हो दिल्लीवासी अनेक गौड़ोंने भटनागरोंके घर जा कर खा लिया। किन्तु कई गौड़ भटनागरोंके घर जा कर खानेके भयसे दिल्ली छोड़ कर चले गए। उनमें एक पूर्णगर्भा रमणी रहीं। किसी ब्राह्मणके घर आश्रय लेने पर उनके एक पुत्र उत्पन्न हुवा। बड़ा होने पर उसके साथ ब्राह्मणने अपनी कन्याका विवाह कर दिया था। अपरापर गौड़ बदायूं जिलेमें जा कर रहने लगे।

भटनागरोंके घरमें भोजन करनेवाले गौड़कायस्थ गौड़भटनागरी नामसे ख्यात हुवे। जो बदायूं भाग गये थे, दिल्लीके भटनागरोंने उनके भी वृत्तान्त सम्राट्से कह दिये। बादशाहने उन्हें पकड़ बुलानेको लिये आदमी भेजे थे। उस समय उन्होंने ब्राह्मणोंका आश्रय लिया। राजपुरुष जब पकड़नेके लिये पहुंचे, तब ब्राह्मणोंने उन्हें अपना आत्मीय बताया था। किन्तु उससे राजपुरुषोंको विश्वास न हुवा। उस समय ब्राह्मणोंको गौड़कायस्थोंके साथ एक पात्रमें खाना पड़ा। इसी प्रकार गौड़कायस्थ यहां बच गये। अभियुक्तोंको निकाल न सकने पर बादशाहने विरक्त हो भटनागरोंका आवेदन अग्राह्य किया था। उसीके साथ दूसरे भटनागरोंने भी उन्हें समाजच्युत कर दिया। उक्त समाजच्युत भटनागर गौड़भटनागर और दूसरे (गौड़ोंका अन्न ग्रहण न करनेवाले) विशुद्ध भट-नागर समझे गये। इसी प्रकार गौड़कायस्थ चार श्रेणियोंमें बंटे थे—१म आदि गौड़ हैं। वह बङ्गालके सीमान्तपर निज़ामाबाद, जौनपुर प्रभृति स्थानोंमें कानूनगोईका पद भोग करते थे। २य भटनागरोंके घर खानेवाले, ३य ब्राह्मणोंके घर आश्रय लेनेवाले और ४र्थ ब्राह्मणवंशमें पुत्रप्रसव-कारिणी रमणीके सन्तानमें मिला लेनेवाले हैं। उक्त चारों श्रेणियोंमें पहले आदानप्रदान बन्द रहा। फिर बदायूंके गौड़ निज़ामाबादमें जा कर रहे और बदायूंके ब्राह्मण उनके पुरोहित बने। २य श्रेणीके गौड़ोंने ३य श्रेणीवालोंके साथ मिलनेकी चेष्टा की थी। पहले कोई फल न निकला। अवशेषको बदायूंके ब्राह्मणोंकी चेष्टासे छोड़ाछोड़ी मिट गई। यहां तक कि उभय श्रेणियोंमें विवाहके समय आदान-प्रदान चलने लगा। किन्तु ४र्थ श्रेणी बहुदिन कन्यादान करनेको सम्मत न हुई। अवशेषको ३य श्रेणीकी चेष्टासे ४र्थ श्रेणी भी उसमें मिल गयी। १म श्रेणी उक्त तीनों श्रेणियोंको कुलमें हीन समझ उतने दिन अलग रही थी। अन्ततः जब उसने देखा कि तीन श्रेणियां परस्पर मिली हैं, तब वह भी क्रम क्रम सबमें मिलकर एक हो गयी। आज कल चारों श्रेणियोंमें आदान-प्रदान चलता है। गौड़-

प्रतिमूर्ति 'गुमटा' कहाती है। स्थानीय क्षुद्र पर्वत प्रायः ३० हाथ ऊंचा होगा। इसी पर्वतपर गोमट स्थापित हैं। यह मूर्ति १२४८ शकको बनी थी। जैनोंके अन्यान्य मन्दिर भी इसी पर्वत पर बने हैं। इस नगरमें एक प्रकाण्ड पर्वतखण्ड है। उसका तलदेश प्रशस्त है। ऊर्ध्व दिक्को पर्वतखण्ड क्रमशः सूक्ष्म पड़ गया है। नाम ध्वजस्तम्भ है। हिन्दुवोंके अनन्तदेवका मन्दिर देखने योग्य है। यहां चावलकी बड़ी आढ़त है।

कारकविभक्ति (सं० स्त्री०) कारकशक्तिबोधिका विभक्तिः, मध्यपदलो०। कर्मादि कारकबोधक द्वितीया प्रभृति विभक्ति।

कारकहेतु (सं० पु०) प्रधान कारक, खास सबब।

कारकुचीय (सं० पु०) कारकुचि-छ। १ मालवदेश, एक मुल्क। यह हिन्दुस्थानके उत्तरपश्चिम हिमालय गिरिके प्रान्तभागमें अवस्थित है। २ मालवदेशवासी।

कारकुन (फा० पु०) १ स्थानापन्न, एवजी। २ प्रबन्धकर्ता, कारिंदा।

कारखाना (फा० पु०) १ कार्यालय, कामकी जगह। २ व्यवसाय, धन्धा। ३ दृश्य, तमाशा। ४ व्यापार, काम।

कारगर (फा० वि०) १ लाभकारक, मुफीद। २ प्रभावोत्पादक, असर डालनेवाला।

कारगुजार (फा० वि०) कर्तव्य पूरा करनेवाला, जो कामको अच्छी तरह करता हो।

कारगुजारी (फा० स्त्री०) १ कर्तव्यपालन, कामको अच्छी तरह करनेकी हालत। २ पाटव, होशियारी। ३ कर्मण्यता, काम करनेकी आदत।

कारचोब (फा० पु०) १ अड्डा, लकड़ीका कोई चौखटा। इस पर वस्त्र तान जरदोजी या कसीदा बनाते हैं। २ जरदोज, कसीदेका काम बनानेवाला। ३ कसीदा या गुलकारी। यह जरीके तारोंसे लकड़ीके चौखटे पर निकाला जाता है।

कारचोबी (फा० स्त्री०) १ जरदोजी, कसीदा, गुलकारी। (वि०) २ कसीदेके मुताल्लिक।

कारज (सं० त्रि०) कारात् क्रियातो जायते, कार-जन-ड। १ क्रियाजात, कामसे पैदा। (करजात् भवः करजस्य इदं वा, करज-अण्) २ नखजात, नाखूनसे निकला हुआ। ३ नखसम्बन्धीय, नाखूनके मुताल्लिक। (पु०) ४ गजशावक, बच्चा हाथी।

कारज (हिं) कार्य देखो।

कारञ्ज (सं० त्रि०) करञ्जस्य इदम्, करञ्ज-अण्। १ करञ्जफलजात, करौंदेके फलसे निकला। २ करञ्ज-सम्बन्धीय, करौंदेसे सरोकार रखनेवाला।

कारञ्जतैल (सं० क्ली०) करञ्जात् जातं तैलम्, मध्यपदलो०। करञ्जफलजात तैल, करौंदेका तेल। यह तीक्ष्ण, लघु, उष्णवीर्य, कटुरस, कटुपाक, भेदक और वायु, व्रण, कृमि, कुष्ठ, प्रमेह तथा शिरोरोगनाशक है। (सुश्रुत)

कारञ्जसुधा (सं० स्त्री०) करञ्जचूर्ण, करौंदेकी बुकनी। यह रुचिप्रद होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

कारटा (हिं० पु०) करट, कौवा।

कारटून (अं० पु० Cartoon) हास्योत्पादक चित्र, हंसीकी तसवीर। यह कल्पित एवं उपहासपूर्ण रहता और गूढ़ रहस्य प्रकट करता है।

कारड (अं० पु० Card) १ पत्र, चिट्ठी, कागज। २ क्रीड़ापत्र, ताश।

कारण (सं० पु०-क्ली०) कार्यते अनेन, कृ-णिच्-ल्युट्। १ हेतु, सबब। जिसके व्यतीत कार्य निष्पन्न नहीं होता, उसीका नाम कारण है। उसका संस्कृत पर्याय—हेतु, बीज, निमित्त और प्रत्यय है।

कार्यके अव्यवहित पूर्वक्षण कार्याधिकरणमें जिस वस्तुका अभाव उपलब्धि नहीं पाता, वही वस्तु अन्यथा सिद्धिशून्य होनेसे कारण कहाता है। अन्यथासिद्धि देखो।

उदाहरणमें घटके प्रति मृत्तिका है। नैयायिकोंने समवायी, असमवायी और निमित्त भेदसे कारणके तीन प्रकार विभाग किये हैं। कार्य जिससे समवेत हो निकला करता, उसका नाम समवायी कारण पड़ता है। जिस प्रकार वस्त्रके प्रति तन्तु है। समवायी कारणसे समवेत कारणको असमवायी और उक्त कारणद्वयसे भिन्न कारणको निमित्त कारण कहते हैं। जैसे वस्त्रके प्रति तन्तुवाय होते हैं।

कायस्थोंकी शाखाओंका नाम खरे, दूसरे, बङ्गाली, दिल्लीमालो और बदायूंनी है।

क्या हिन्दू-राजत्व क्या मुसलमान-सरकार दोनों समय कायस्थ सान्धिविग्रहिक वा राजसभास्थ लेखकका पदभोग करते थे। उनमें अनेक संस्कृत ग्रन्थकार और सुपण्डित आविर्भूत हुये। मुसलमानोंके अधिकारमें पश्चिमके बहुतसे कायस्थोंने सैनिक-विभागका भी उच्च पद पाया था। उनमें अकबरके राजस्व-सचिव टोडरमल, महाराज नवलराय, पटनाके शासनकर्ता राजा रामनारायण प्रभृतिका नाम उल्लेखयोग्य है। आजकल भी कायस्थ वृटिश गवर्नमेण्टके अधीन क्या शिक्षा-विभाग क्या न्याय-विभाग (कचहरी-अदालत) सर्वत्र उच्च आसन और सम्मान लाभ करते आते हैं। आजकल युक्तप्रदेशके समस्त कायस्थ एकताके सूत्रमें आबद्ध होनेकी चेष्टा करते हैं। युक्तप्रदेशमें प्रायः साढ़े पांच लाख कायस्थोंका वास है।

राजपूताना।

राजपूतानेके कायस्थ प्रायः अपनेको राजधाना कहते हैं। बूंदीमें माथुर और भटनागर कायस्थोंका वास है। मारवाड़में कायस्थोंको 'पञ्चोली ठाकुर' कहा जाता है। राजपूतानेमें अजमेरी, रामसरी और फिकरी तीन श्रेणियां मिलती हैं। उनमें सभी यज्ञसूत्र धारण करते हैं। फिर अन्नाद्य भोजन करनेवालोंका यज्ञसूत्र उतार डाला जाता है। वहां सभी कायस्थ अपनेको क्षत्रिय बतानेके लिये तैयार हैं।* उनका आचार-व्यवहार अधिकांश युक्तप्रदेशके कायस्थों-जैसा है। राजपूतानेके कायस्थोंमें बहुतोंने राजद्वारमें सैनिकवृत्तिको भी अवलम्बन किया है।

बिहार।

बिहारके कायस्थ अपनेको चित्रगुप्तका प्रकृत वंशधर बताते हैं। उनमें प्रवाद है—सत्ययुगमें जब सब देवता यज्ञ करने लगे, तब यम ब्रह्मासे बोल उठे—'पितामह! इन्द्रादि सकल दिक्पाल हैं। अतएव उन्हें दण्डादि करनेका समय मिल जाता है। किन्तु हमने ऐसा क्या अपराध किया है कि हम अपने कार्यभारको एक मुहूर्तके लिये भी छोड़ नहीं सकते। आप हमें यज्ञ करनेका उपाय बता दीजिये।' ब्रह्माने यमकी उक्त प्रार्थनाके अनुसार अपने शरीरसे चित्रगुप्तको उत्पन्न करके कहा था—'यह महाभाग साहाय्य करके तुम्हारे कार्यका अवसरकाल ठहरा देंगे और सबके कर्माकर्मको वर्णना करेंगे। उसके अनुसार तुम स्वर्ग-नरकादिकी व्यवस्था कर सकोगे।'

पश्चिमी कायस्थोंकी भांति बिहारी कायस्थोंमें भी द्वादश शाखा हैं। उक्त द्वादश शाखाओंके आदि पुरुष चित्रगुप्तके वंशधर थे। बिहारी कायस्थ आज भी उपवीत धारण करते हैं। कारण उनके कथनानुसार चित्रगुप्तने सोपवीत जन्म लिया था। उनकी द्वादश शाखाका नाम है—अष्ठिठाना, अम्बष्ठ, वाल्मीक, गौड़, कुलश्रेष्ठ, माथुर, निगम, शकसेन, श्रीवास्तव, सूर्यध्वज और करण। उक्त द्वादश शाखाओंमें अष्ठिठानोंका आदिनिवास जौनपुर है। पटना और तिरहुत अञ्चलमें अम्बष्ठ शाखाके लोग ही अधिक देख पड़ते हैं। वाल्मीक शाखाका आदि वास स्थान गुजरात है। अम्बष्ठ, श्रीवास्तव और करण एक ही हुक्केमें तम्बाकू पिया करते हैं। करण और अम्बष्ठ साधारणतः सब एक जगह बैठकर खा सकते हैं।

निगम शाखाके कायस्थ बिहारमें अधिक देख नहीं पड़ते। सूर्यध्वजोंके अधिदेवता सूर्य माने जाते हैं। माथुर, शकसेन, श्रीवास्तव और भटनागर अपनेको चित्रगुप्तकी प्रथमा पत्नीका गर्भजात वंश बताते हैं। बिहारके गौड़ कायस्थोंको विश्वास है कि बङ्गालके सेन राजा उन्हींकी श्रेणीके अन्तर्गत रहे। श्रीवास्तव शाखाके दो श्रेणी विभाग हैं—खरे और दूसरे। खरे श्रेणीके लोग अन्यान्य श्रीवास्तवोंमें श्रेष्ठ होते हैं। वह अपनेको 'पांडे' बताते हैं। खरे और दूसरे लोगोंमें खानपान तथा आदान-प्रदान नहीं चलता। शकसेन शाखामें भी इसी तरह श्रेणी विभाग है। माथुर, भटनागर और शकसेन परस्पर एक दूसरेका अन्नग्रहणादि ग्रहण करते हैं।

* Rajputana Gazetteer.

पातञ्जल-दर्शनमें कारण नौ प्रकारसे विभक्त है,—

"उत्पत्तिस्थित्यभिव्यक्तिविकारप्रत्ययाप्तयः।
वियोगान्यत्वधृतयः कारणं नवधा स्मृतम्॥"
([illegible])

कारण नौ प्रकारका है—उत्पत्ति, स्थिति, अभिव्यक्ति (प्रकाश), विकार, ज्ञान, प्राप्ति, विच्छेद, अन्यत्व और धारण। कार्यके भेदसे उक्त नवविध कारणकी विभिन्नता देख पड़ती है। यथा—उत्पत्ति ज्ञानका कारण मन, शरीरकी स्थितिका कारण आहार, रूपकी अभिव्यक्तिका कारण आलोक, पचनीय वस्तुके विकारका कारण अग्नि, अग्निके प्रत्यय (ज्ञान) का कारण धूमज्ञान और विवेककी प्राप्तिका कारण योगाङ्गानुष्ठान है।

योगाङ्गका अनुष्ठान ही अशुद्धिके वियोगका कारण, स्वर्णकारी सुवर्णकार कुण्डलादि सुवर्णका अन्यत्व कारण और ईश्वर इस जगत् तथा इन्द्रिय-समूह शरीरकी धृतिका कारण है।

चार्वाकोंके कथनानुसार कारण नामका कोई पदार्थ नहीं होता। कारणके सम्बन्ध व्यतिरेक ही सब पदार्थ उत्पन्न होते हैं। वस्तुतः उनकी बात असङ्गत है। यदि कारणका अस्तित्व न रहते भी कार्यकी उत्पत्ति चलती, तो कार्यकी सर्वदा विद्यमानता उपलब्धि हो सकती है। जिस प्रकार मृत्तिकादि समुदय मिलनेसे घट बनता, उसी प्रकार उनके पूर्व भी घट बन सकता है। फिर कारणका अस्तित्व न माननेसे परचित्त-गत संशयादि दूर करनेके लिये शब्दका प्रयोगादि भी निष्फल हो जायेगा। जिस वस्तुके न रहनेसे जिस वस्तुकी विद्यमानता लाभ करनेमें कठिनता पड़ती किंवा जिस वस्तुके रहनेसे जिस वस्तुकी विद्यमानता आती, पण्डित उस वस्तुको उसी वस्तुका कारण बताते हैं। मृत्तिकाका अभाव होनेसे घटकी विद्यमानता नहीं और मृत्तिका[illegible]
घटकी विद्यमानता होती[illegible]
घटका कारण ठहरती[illegible]
वस्तु सिद्ध हो सकती है।[illegible]

नामक पदार्थ अवश्य मानना चाहिये। कणाद प्रभृति दार्शनिक परमाणुको सावयव जगत्का उपादान (समवायि-कारण) बताते हैं। उनके मतमें परमाणु समूह परस्पर संयुक्त होनेसे एक एक महदवयवी उत्पन्न होता है। किन्तु वेदान्तिक उसे नहीं मानते और कणादके मत पर दोष लगाते हैं—निरवयव परमाणुमें कभी ऐकदेशिक संयोग नहीं हो सकता। जिस वस्तुका कोई अवयव नहीं, उसका एकदेश होना असम्भव है। सुतरां उसमें आरोप्यावृत्ति (ऐक-देशिक) संयोग कैसे लग सकता है। उक्त सिद्धान्त ठहर जानेसे परमाणुके संयोगका होना असम्भव है। फिर परस्पर संयुक्त परमाणुसे महदवयवी कार्यकी उत्पत्ति भी नहीं हो सकती। सुतरां कार्य समुदय अज्ञान द्वारा परब्रह्ममें कल्पित-जैसा मानना पड़ेगा। रज्जुमें सर्पकी भांति ब्रह्ममें भी अज्ञान द्वारा कार्य-समूहकी कल्पना की जाती है। रज्जुविषयक ज्ञान द्वारा अज्ञानकी निवृत्ति होनेसे जैसे कल्पित सर्प देख नहीं पड़ता, वैसे ही ब्रह्मज्ञानसे तदीय अज्ञानकी निवृत्ति होनेसे समुदय जगत्का भ्रम मिटा करता है। जगत्की कल्पनामें ब्रह्म अधिष्ठान है। इसीसे वेदान्तिक ब्रह्मको जगत्का उपादान (समवायी) बताते हैं।

सांख्यके मतमें सत्त्व-रजः-तमोगुणात्मिका प्रकृति ही मूल कारण है। उसमें भी वेदान्तिकोंके कथनानुसार चेतनका साहाय्य न मिलने पर अचेतन प्रकृतिसे कैसे कार्यकी उत्पत्ति हो सकती है। सुतरां सांख्यवादियोंका प्रकृति-कारणवाद भ्रममूलक अनुभूत होता है।

नैयायिक पारिमाण्डल्य (अणुपरिमाण) को कारण नहीं मानते। उनके मतानुसार परिमाणमात्र स्वसमान जातीय उत्कृष्ट परिमाणका कारण है। अर्थात् जिस परिमाणसे जो परिमाण उठेगा, वही उत्पन्न परिमाण कारणीभूत परिमाणसे उत्कृष्ट
[illegible] जैसे तन्तुपरिमाणसे उत्पन्न पटपरि-
[illegible] अपेक्षा उत्कृष्टतर होता है।
[illegible] कारण माननेसे पर

पूर्वोक्त द्वादश शाखाके लाला कायस्थोंको छोड़ दूसरे कई प्रकारके नीच कायस्थ भी होते हैं। किन्तु वह आप ही अपनेको कायस्थ बताते, अपर जातीय वा पूर्वोक्त द्वादश शाखाके कायस्थ उन्हें कायस्थ कहना नहीं चाहते। सारन जिलेके सेवन नगरमें कितने ही दरजी और कितने ही ठेकेदार भी कायस्थ-नामसे अपना परिचय देते हैं। किन्तु उनके साथ लाला कायस्थोंका कोई संस्रव नहीं। बहुतसे लोग अनुमान करते कि वह वस्तुतः कायस्थ हैं, फिर भी नीच कर्म ग्रहण करनेसे समाजच्युत हो एकबारगी ही भिन्न श्रेणी समझे जाते हैं। कारण आज भी जो लाला कायस्थ वंशानुक्रमसे गांवके पटवारी होते आये हैं, बहुतसे लोग उनके घर आदान-प्रदान करना नहीं चाहते। पटवारी, कानूनगो, अखौरी, पांडे वा बख्शी उपाधिधारी कायस्थ शतगुण धनी वा सत्-कर्मशाली होते भी सामाजिक मर्यादामें हीन समझे जाते हैं।

युक्तप्रदेश और विहारके कायस्थोंका धर्मकर्म प्रायः मिलता जुलता है। किन्तु देशभेदसे आचारमें भी कुछ प्रभेद पड़ गया है।

विहारी-कायस्थोंमें वैष्णव, शैव, शाक्त, कबीरपन्थी, नानकशाही प्रभृति हुवा करते हैं। उनमें शाक्तोंकी ही संख्या अधिक है। भ्रातृद्वितीयाके दिन वह चित्रगुप्तकी पूजा करते हैं। श्रीपञ्चमी अर्थात् वसन्त पञ्चमीको दावात कलम पूजते हैं।

वङ्गदेश।

वङ्गालमें प्रधानतः चार श्रेणियोंके कायस्थोंका वास है। वह स्थानभेदसे उत्तरराढ़ीय, दक्षिण-राढ़ीय, वङ्गज और वारेन्द्र कहलाते हैं। उक्त चारो श्रेणियां अपना परिचय चित्रगुप्त-सन्तानके नामसे दिया करती हैं। उत्तरराढ़ीय कुलग्रन्थमें लिखा है—

"चित्रगुप्तः क्रियोपेतः सर्व्वशास्त्रेषु पूज्यते।
सेनी पुत्रास्तथा पृथ्व्यां सर्वसम्पत्तियुताः ॥१५
गौड़ाख्यो माथुरश्चैव शकसेनी भटनागरः।
अम्बष्ठ श्रीवास्तव्यः कर्णोपकर्ण उच्यते ॥१६
पुत्राणामष्टकानाञ्च श्रेष्ठः कर्णः प्रकीर्तितः।
श्रीकर्ण इति सञ्ज्ञः सः विख्यातो भुवि सर्वतः ॥१७
तस्य वंशे समुद्भूताः पञ्चविप्रा महात्मनः।
वात्स्यगोत्रेऽनादिवरः सोमः सौकालिनेन च ॥१८
पुरुषोत्तमो मौद्गल्यो विश्वामित्रः सुदर्शनः।
काश्यपेन देवनामा इति ते कथितं मुदा ॥"१९

(घटककेशरीकी उत्तरराढ़ीय कुलदीपिका)

अर्थात् क्रियावान् चित्रगुप्त सर्वशास्त्रमें पूजित हुये थे। उनके वंशधर सेनी रहे। इस पृथिवी पर सेनीके सर्वसम्पत्तिशाली आठ सन्तान हुवे। उनका नाम गौड़, माथुर, शकसेन, भटनागर, अम्बष्ठ, श्रीवास्तव्य, कर्ण और उपकर्ण था। आठोंमें कर्ण श्रेष्ठ रहे। इसीसे वह इस पृथिवी पर श्रीकर्ण नामसे विख्यात हुवे। उनके वंशमें पांच विप्र महात्मावोंने जन्मग्रहण किया था। पांचोंका नाम वात्स्यगोत्र अनादिवर, सौकालिन सोम, मौद्गल्य पुरुषोत्तम, विश्वामित्र सुदर्शन और काश्यप देव रहा।

उत्तरराढ़ीय-कुलाचार्य पञ्चाननकी कारिकामें कहा है—

"श्रीकर्णवंशे विख्याताः पञ्चविप्रा महात्मनाः।
वात्स्य गोत्रोऽनादिवरः सोमः सौकालिनस्तथा ॥
पुरुषोत्तमो मौद्गल्यः विश्वामित्रः सुदर्शनः।
काश्यपो देवनामा च इति ते कथितं मुदा ॥
सूर्य्यवंशोद्भवौ ख्यातौ दत्तदासौ महात्मनौ।
चन्द्रवंशोद्भवः ख्यातो मित्रकुले सुदर्शनः ॥"

श्रीकर्ण-वंशकी श्रेणीसे पांच महाजन आविर्भूत हुवे। उनमें वात्स्यगोत्र अनादिवर (सिंह), सौकालिन गोत्र सोम (घोष), मौद्गल्य गोत्र पुरुषोत्तम (दास), विश्वामित्र गोत्र सुदर्शन (मित्र), और काश्यप गोत्र देव (दत्त) थे। दत्त तथा दास सूर्यवंशीय और मित्रकुलमें सुदर्शन चन्द्रवंशीय भी कहलाते हैं।

वङ्गजकायस्थकारिकामें लिखते हैं—

"चित्रदेवसुताश्चाष्टौ समासन् मे महाशयाः।
तेषान्तु कल्पयामास कश्यपो जातकर्म च ॥
एकैव बहुधा भाति यौगिका गोत्रदेवता।
तेषां मध्ये भवस्य एकविंशतमः स्मृतः ॥
सूर्यध्वजो चन्द्रभानश्चन्द्रार्क चन्द्रदेवकः।
रविदासो रविध्वजो रविश्चैव गोत्रकः ॥

अणुपरिमाणसे उत्पन्न परिमाण अणुपरिमाणको अपेक्षा छोटा लग सकता है। जैसे महत् परिमाण जन्य परिमाणकारणीभूत परिमाणको अपेक्षा महत्तर रहता, वैसे ही अणुपरिमाणजन्य परिमाण भी अणुतर ठहरता है।

साधारण और असाधारण भेदसे कारण दो प्रकारका होता है। ईश्वरेच्छा, काल, अदृष्ट, उद्योग और प्रागभाव कई साधारण अर्थात् समुदय कार्यके कारण हैं। इसीसे उन्हें साधारण कारण कहते हैं। फिर जो विशेष कार्योंके कारण देखाते, वह असाधारण कारण कहाते हैं। जैसे आम्रवृक्षके प्रति आम्रबीज है। आम्रबीज केवल आम्रवृक्षको उत्पत्तिके ही कारण है, कण्टकवृक्षको उत्पत्तिके नहीं। सुतरां उक्त बीज उक्त वृक्षके असाधारण कारण सिद्ध हुये।

२ साधन, वसीला। यह नैयायिकोंका मत है। ३ कर्म, काम। ४ करण, कारवाई। ५ वध, क़त्ल। ६ आदि, मूल, मूल, जड़। ७ प्रमाण, सबूत। ८ इन्द्रिय। ९ शरीर, जिस्म। १० हेतु, वजह। ११ उद्देश्य, मक़सद। १२ उत्तरविशेष, कोई जवाब। १३ मद्यपानविशेष, एक शराबखोर। तान्त्रिक तन्त्रानुसार पूजादि कर मद्यपान करते हैं। उसीका नाम कारण है। १४ कायस्थ, कायथ। १५ वाद्यविशेष, कोई बाजा। १६ गानविशेष, किसी क़िस्मका गाना। १७ विष्णु। १८ शिव।

कारणक (सं० क्लो०) कारणमेव, कारण स्वार्थे कन्। कारण, सबब। यह शब्द यौगिक पदके अन्तमें आता है।

कारणकारण (सं० क्लो०) कारणस्य कारणम्, ६-तत्। १ कारणका कारण, सबब-उल्-सबब। यह भी पांच प्रकारके अन्यथासिद्धमें पड़ता है। जैसे पुत्रके जन्मविषयमें उसका पितामह है। पुत्रके जन्मका कारण पिता और पिताके जन्मका कारण पितामह होता है। सुतरां पितामह कारणका कारण ठहरते भी पुत्रके प्रति अन्यथासिद्ध है। २ परमेश्वर। ३ प्रयोजक, लगानेवाला।

"कारणकारण [illegible]।" (गीता०)

कारणगत (सं० त्रि०) कारणं गच्छति प्राप्नोति, कारण-गम-ड। कारणस्थ, सबब पर मुनहसिर या मौक़ूफ़।

कारणगुण (सं० पु०) कारणस्य गुणः, ६-तत्। उपादान कारणका गुण, सबबका वस्फ़। यही कार्यके गुणका उत्पादक है,—

"कारणगुणाः कार्यगुणमारभन्ते।" (न्याय)

कारणका गुण ही कार्यके गुणको आरम्भ करता है। जैसे रूप कारणका शुक्ल कृष्ण प्रभृति वर्ण वस्त्ररूप कार्यका भी शुक्ल कृष्णादि वर्ण उत्पादन करता है।

कारणगुणपूर्वकत्व (सं० क्लो०) कारणगुणः पूर्वं यस्य तस्य भावः, त्वं। कारणको गुणविशिष्टता, सबबकी वस्फ़ रखनेकी हालत।

कारणगुणोत्पन्नगुणत्व (सं० क्लो०) कारणगुणेन उत्पन्नो यो गुणः तस्य भावः, त्व। कारणके गुणसे निकले गुणका धर्म, सबबके वस्फ़से पैदा वस्फ़का काम। न्यायशास्त्रमें इसका लक्षण इस प्रकार निर्दिष्ट है,—

"द्वान्द्यसमवायिभावसमवेतस्वसजातीयगुणजन्यवृत्तिः पृथक्त्वस्पर्शातिरिक्ता भावनावृत्त्यन्या च या जातिस्तद्वत्त्वं कारणगुणोत्पन्नगुणत्वम्।"

कारणगुणोद्भव (सं० पु०) कारणगुणेन उद्भवो यस्य, बहुव्री०। उपादान कारणके गुणसे उत्पन्न एक गुण।

कारणगुणोद्भवगुण (सं० पु०) कारणगुणोद्भवश्चासौ गुणश्चेति, कर्मधा०। कारणगुणजात गुण, सबबके वस्फ़से निकला वस्फ़। भाषापरिच्छेदमें कारणके गुणसे निकले गुण लिखे हैं,—रूप, रस, गन्ध, अपाकज स्पर्श, द्रवता, स्नेह, वेग, गुरुत्व, एकत्व, पृथक्त्व, परिमाण और स्थितिस्थापक संस्कार।

कारणजल (सं० क्लो०) कारणरूपं जलम्। ब्रह्माण्डकी सृष्टिका कारणस्वरूप जल, दुनियाकी पैदा करनेवाला पानी। भगवान्ने ब्रह्माण्डकी सृष्टिसे पूर्व केवल जल बनाया था। फिर उसमें बीज डालके ब्रह्माण्डकी सृष्टि की।

"अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजत्।" (मनु १।८)

कारणता (सं० क्लो०) कारणस्य भावः, कारण-तल्। हेतुता, तख्मीय, कारणका धर्म।

इति चाष्टपुत्राः ख्याताः कुमारा दशोत्तरम्।
एतेषाञ्च सुताः सर्वे [illegible] कीर्त्तिताः ॥
वंशः सूर्यध्वजश्चन्द्रभासश्चन्द्रार्द्धमुख्यकाः।
रविरत्नात् सूर्यधीर चन्द्रदेहात्तु मित्रकः ॥
चन्द्रार्द्धात् करणो जातः रविदासात्तु दत्तकः।
[illegible] गौड़ च [illegible] ॥
दासश्च नागनाथौ च करणाच्च समुद्भवाः।
ततो मृत्युञ्जयो जातः देवसेनश्च पालितः ॥
सिंहश्चैव तथा ख्याताः एते पद्धतिकारकाः।
मृत्युञ्जयकुलोद्भूतो नित्यानन्दो महेश्वरः ॥
तस्यापि वंशे [illegible] कीर्त्तिताः।
कुलाचारप्रभेदेन द्विसप्ततिसमन्वितम् ॥”

चित्रगुप्तदेवके आठ महाशय पुत्र हुये थे। कश्यपने उनका जातकर्म किया। उनमें एक एकसे फिर बहुवंश (गोत्र) उत्पन्न हुये। उनके मध्य २१ वंश ही प्रधान माने जाते हैं। उस एकविंशति वंशोंमें सूर्यध्वज, चन्द्रभास, चन्द्रार्द्ध, चन्द्रदेहज, रविदास, रविरत्न, रविधीर और गोड़क कुलपति गिने गए। उनका सन्ततिगण देशनामसे भी आख्यात है। सूर्यध्वजसे घोष, चन्द्रभाससे वसु, रविरत्नसे गुह, चन्द्रदेहसे मित्र, चन्द्रार्द्धसे करण, रविदाससे दत्त और गोड़से मृत्युञ्जयको उत्पत्ति है। फिर करणसे नाग, नाथ एवं दास और मृत्युञ्जयसे देव, सेन, पालित तथा सिंह नामक प्रसिद्ध पद्धतिकारकोंने जन्मलाभ किया। मृत्युञ्जयके वंशमें नित्यानन्द नामक एक महेश्वर आविर्भूत हुये थे। उन्हींके वंशसे ८० घर कायस्थ निकले। उनमें ७२ घर कुलाचारके प्रभेदसे 'बायत्तरा' कहलाते हैं।

उत्तरराढ़ीय कायस्थकारिकामें जिस प्रकार चित्रगुप्तसे विभिन्न शाखाके कायस्थोंकी उत्पत्ति वर्णित हुयी है, चित्रगुप्तकी पूजा और व्रतकथाके मध्य भी उसी प्रकार श्लोकोंमें देख पड़ी है—

“चित्रगुप्तस्य [illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥”

उक्त दोनों कुलग्रन्थके अनुरूप होते भी इस विषयमें घोरतर मतभेद विद्यमान है। बङ्गालके किसी किसी कुलग्रन्थमें सेनक या सेनोको चित्रगुप्तका भ्राता और चित्रगुप्तव्रतकथा तथा पश्चिमाञ्चलके कायस्थकुल-परिचय-ग्रन्थसमूहमें उनको चित्रगुप्तका पुत्र बताया है। प्राचीन पुराणमें चित्रगुप्तका भ्रातृ-परिचय न रहने और पद्मपुराणधृत यमसंहिता तथा युक्तप्रदेशीय कायस्थोंके कुलग्रन्थसमूहमें चित्रगुप्तसे विभिन्न श्रेणीके कायस्थोंकी उत्पत्ति विवृत होने पर हमने प्राचीन मतके अनुसार सेनी या सेनकको चित्रगुप्तका पुत्र ही माना है। युक्तप्रदेशमें विभिन्न श्रेणीके जो सकल कायस्थ मिलते, उनके मध्य श्रीवास्तव, शकसेन, करण, सूर्यध्वज, अम्बष्ठ, राजधाना और गौड़ कई श्रेणीके कायस्थ बङ्गाल पहुंचे थे। उनके वंशधर विभिन्न स्थानमें इस समय विभिन्न श्रेणीभुक्त हो गये हैं। सुतरां कुलग्रन्थके अनुसार वसु, घोष, मित्र, दत्त, सिंह प्रभृति उपाधिधारी कायस्थ भी युक्तप्रदेशीय श्रीवास्तव प्रभृति विभिन्न शाखाके ज्ञाति होते और युक्तप्रदेशके कायस्थोंकी भांति बङ्गालके घोष, वसु, मित्र प्रभृति विशुद्ध कायस्थवंशधर क्षत्रियवर्णके अन्तर्गत ठहरते हैं।*

मिथिला।

कर्णाटकवंशीय महाराज नान्यदेव ई० ११शताब्दको मिथिला पदार्पण करते हुये अपने साथ निज अमात्य कायस्थकुलभूषण श्रीधर तथा उनके १२ सम्बन्धियोंको लाये थे। जब वह समस्त मिथिलाके अधिपति हुये, तब उनके सचिव श्रीधर और उक्त १२ कुटुम्बी अन्य उच्च पद पर नियुक्त किये गये और उन्हें खानेपीनेके लिये बहुतसे गांव मिले। उस समयसे उक्त कायस्थ मिथिलामें ही रहने लगे। उसके पीछे मन्त्रिवर श्रीधर महोदयने अपने बहुतेरे बन्धु-बान्धवोंको धीरे धीरे मिथिला बुलाया और उन्हें जीविका दिला करके मिथिलामें ही बसाया था। कायस्थ चार बारको जा कर मिथिलामें बसे। प्रथम बार (जैसा पहले लिख चुके हैं) श्रीधर और

* बङ्गके [illegible] “[illegible]”में बङ्गदेशीय कायस्थोंका परिचय और इतिहास छपता है।

कारणत्व (सं० क्लो०) कारण-त्व। हेतुता, सबबीय, कारणका धर्म।

"कारणत्वं भवेत्तस्य।" (भाषापरिच्छेद)

कारणध्वंस (सं० पु०) कारणस्य ध्वंसः, ६-तत्। कारणका नाश, सबबका जुवाल। समवायी और असमवायी कारणका ध्वंस होनेसे कार्य भी मिट जाता है, परन्तु निमित्त कारणके ध्वंससे कार्यध्वंस नहीं आता।

कारणध्वंसक (सं० त्रि०) कारणं ध्वंसते नाशयति, कारण-ध्वंस-ण्वुल्। कारणध्वंसकारक, सबबको मिटानेवाला।

कारणध्वंसी (सं० त्रि०) कारणं ध्वंसते नाशयति, कारण-ध्वंस-णिनि। कारणनाशक, सबबको बरबाद करनेवाला।

कारणनाश (सं० पु०) कारणस्य नाशः, ६-तत्। कारणका विनाश, सबबकी बरबादी।

कारणनाशक (सं० त्रि०) कारणस्य नाशकः, कारण-नश्-णिच्-ण्वुल्। कारणको नाश करनेवाला, जो सबबको मिटाता हो।

कारणभूत (सं० त्रि०) कारणं भूयते येन, कारण-भू-क्त। कारणस्वरूप, बाइस बना हुवा।

कारणमाला (सं० स्त्री०) अलङ्कारशास्त्रोक्त एक अर्थालङ्कार।

"परं परं प्रति यदा पूर्वपूर्वस्य हेतुता।
तदाकारणमाला स्यात्—॥" (साहित्यदर्पण)
'पर पर के प्रति होत जहं पूर्व पूर्व को हेत।
कारणमाला नाम तहं चतुर सुपण्डित देत॥'

पूर्व पूर्व वाक्य अपने पर परवर्ती वाक्यका हेतु होनेसे कारणमाला अलङ्कार लगता है। जैसे—

"श्रुतं क्रतधियां सङ्गात् जायते विनयः श्रुतात्।
लोकानुरागो विनयान्न किं लोकानुरागतः॥"
'पण्डितको सतसङ्ग किये श्रु तिज्ञानको होत प्रकाश अपारा।
ज्ञानसों ज्यों अभिमान मिटे तब आवति आनि घने क सभारा॥
राम अधीन सुमानिके आवत लोगनको अनुराग पसारा।
लोगनके अनुरागसों होत बड़ा न कहो नरसिंह संसारा॥'

यहां पण्डितोंका सङ्ग, शास्त्रज्ञान, विनय और लोकानुराग यथाक्रम अपने पर पर वाक्यका कारण रहनेसे कारणमाला अलङ्कार होता है।

कारणवादी (सं० पु०) कारणं वदति, कारण-वद्-णिनि। १ सकल विषयमें कारणको स्वीकार करनेवाला, जो सब बातोंमें सबबको मानता हो। २ मुद्दई, शिकायत करनेवाला।

कारणवारि (सं० क्लो०) कारणस्वरूपं वारि, मध्यपदलो०। ब्रह्माण्डकी सृष्टिका कारणस्वरूप एकार्णव जल, असली पानी।

कारणविहीन (सं० त्रि०) कारणरहित, बेसबब।

कारणशरीर (सं० क्लो०) कारणं अविद्या सैव शरीरम्, कर्मधा०। सत्वप्रधान अज्ञान, रूहके रहनेकी जगह। सुषुप्तिकाल पर जो जीवगत अज्ञान अहङ्कारादि शरीरोत्पादक पदार्थके संस्कारमात्रमें अवशिष्ट रहता, वेदान्तमतसे उसीका नाम 'कारणशरीर' पड़ता है। इसका संस्कृत पर्याय—आनन्दमय कोष और सुषुप्ति है।

कारणा (सं० स्त्री०) कारयति हिंसयति, कृ-णिच्-युच्-टाप्। ण्यासश्रन्थो युच्। पा ३।३।१०७। १ यातना, तकलीफ। २ गाढ़ वेदना, गहरा दर्द। ३ नरकयन्त्रणा, दोज़खकी तकलीफ।

कारणान्वित (सं० त्रि०) हेतुयुक्त, सबब रखनेवाला।

कारणाभाव (सं० पु०) कारणस्य अभावः, ६-तत्। कारणका अभाव, सबबकी अदममौजूदगी।

कारणिक (सं० त्रि०) करणैः कारणैर्वा चरति, करण वा कारण-ठक्। चरति। पा ४।४।८। १ परीक्षक, जांच करनेवाला। (कारणस्य इदम्, कारण-ठञ् जिठ् वा) २ कारणसम्बन्धीय।

कारणोत्तर (सं० क्लो०) कारणेन उत्तरम्, ३-तत्। असामान्य उत्तर, खास जवाब। विचारस्थलमें वादीकी बात सत्य मानते भी जो उत्तर प्रतिकूल कारण देखा कर दिया जाता, वही 'कारणोत्तर' कहाता है। इसका संस्कृत नामान्तर प्रत्यवस्कन्दन है। कारणोत्तर तीन प्रकारका होता है—बलवत्, तुल्यबल और दुर्बल। बलवत् यथा,—'वास्तविक मैंने आपसे सौ रुपये कर्ज़ लिये थे, किन्तु आपको वह दे

दिये।' तुल्यबल यथा,—'वादीने कहा—मैं पुरुषानुक्रमसे इस ज़मीन्‌को दखल करते आया हूं, इस लिये यह मेरी है।' प्रतिवादीने उत्तर दिया,—मैं भी पुरुषानुक्रमसे इस ज़मीन्‌को दखल करते आया हूं, इस लिये यह मेरी है।' दुर्बल यथा,—वादीने कहा—मैं यह ज़मीन् पुरुषानुक्रमसे दखल करते आया हूं, इस लिये यह मेरी है।' प्रतिवादीने उत्तर दिया,—मैं दश वर्षसे यह ज़मीन् दखल करते आया हूं, इस लिये यह मेरी है।' (व्यवहारतत्त्व)

कारणोपाधि (सं० पु०) ईश्वर।

कारण्डव (सं० पु०) कारण्डं वाति अथवा कारण्डस्य इदं कारण्डं तदाकारं वाति, कारण्ड-वा-क। आतोऽनुपसर्गे कः। पा ३।२।३। १ हंसविशेष, कोई बतक। २ दीर्घचरण कृष्णवर्ण पक्षी, लम्बे पैरवाली काली दरयायी चिड़िया।

कारण्डववती (सं० स्त्री०) कारण्डवाः हंसविशेषाः सन्ति अस्याम्, कारण्डव-मतुप्-ङीप् मस्य वः। नदीविशेष, एक दरया। इसमें हंस बहुत रहते हैं।

कारण्डव्यूह (सं० पु०) १ कोई बौद्ध। २ बौद्धोंका कोई शास्त्र।

कारतूस (हिं० पु०) टोंटा, एक लम्बी नली (Cartridge)। इसमें गोली छरा और बारूद भरते हैं। कारतूसको एक ओर टोपी लगती है।

कारन (हिं० पु०) १ कारण, सबब। (स्त्री०) २ करुणा, रहम।

कारनिस (अं० स्त्री० Cornice) प्राकारशीर्ष, सींका, कंगनी, कगर।

कारनी (हिं० पु०) १ ईश्वर, प्रेरक। २ भेदक, भेदिया।

कारन्धम (सं० पु०) करन्धमस्य अपत्यम्, करन्धम-अण्। १ करन्धम राजाके पुत्र, अवीक्षित् (करन्धमस्य गोत्रापत्यम्) २ करन्धमके पौत्र मरुत्त। (स्त्री०) ३ नारीतीर्थ विशेष, औरतोंका कोई तीर्थ। महाभारतमें उक्त तीर्थकी उत्पत्ति कथा लिखी है,—अर्जुनको तीर्थभ्रमणके समय तपस्वियोंने अगस्त्य, सौभद्र, पौलोम, कारन्धम और भारद्वाज पांच तीर्थ देखाये थे। अर्जुनने उन तीर्थोंको जनशून्य देख ऋषियोंसे इसका कारण पूछा। उन्होंने कहा कि उन पांचों तीर्थोंमें जलजन्तुका अत्यन्त डर था, उसीसे कोई उनमें उतरता न रहा। अर्जुन यह वाक्य सुनके एक तीर्थमें उतर पड़े। उसी समय जलजन्तुने उनका पाददेश पकड़ा था। किन्तु वह उससे न डरे। फिर उन्होंने बलप्रयोगसे कुम्भीरको नीरमें उत्तोलन किया। वह कुम्भीर नीरमें उत्थित होते ही सुन्दरी नारीकी मूर्ति बन गया। अर्जुनने वह देख नितान्त विस्मयसहकार उससे पूछा—वह कौन था, क्यों इस प्रकार कुम्भीरमूर्तिमें जलके मध्य रहता था। नारी उन्हें उत्तर देने लगीं कि वह अप्सरा थीं। किसी समय वह अपनी चार सखियोंके साथ इन्द्रालय जाती थीं। राहमें उन्होंने एक रूपवान् ब्राह्मण युवकको तपस्या करते देखा। फिर वह उनकी तपस्या भङ्ग करनेको नाचने-गाने लगीं। ब्राह्मणने उससे क्रुद्ध हो अभिशाप दिया था,—'तुम पांचो जलजन्तु बन चिरकाल जलमें विचरण करो।' उन्होंने उक्त अभिशाप सुनके रोते रोते उनसे क्षमा मांगी। उन्होंने कहा जब वह कुम्भीररूपसे किसी पुरुषको पकड़ेंगी, तभी शापमुक्त हो अपने पूर्व रूपको पहुंचेंगी। फिर वह जिन जलाशयोंमें जलजन्तुरूपसे रहेंगी, वह नारीतीर्थ नामसे पवित्र तीर्थको ख्यातिलाभ करेंगे। ब्राह्मणके उक्त वाक्यसे कथञ्चित् आश्वस्त हो वह चिन्ता करती थीं—उन्हें कुम्भीररूप धारण कर कहां अवस्थान करना पड़ेगा, जहां मुक्तिकारक पुरुषका दर्शन मिलेगा। उसी समय देवर्षि नारदने वहां पहुंच उक्त पांचो स्थान उनको बताके कहा था कि अल्प दिनमें ही अर्जुन वहां पहुंच उनको मुक्त कर देंगे। उसी आशासे वह उक्त एक एक जलाशयमें रहती थीं। फिर नारीने कहा, जैसे अर्जुनके अनुग्रहसे उन्होंने मुक्ति पायी, वैसे ही वह उनकी चारो सखियोंको भी अनुग्रहपूर्वक मुक्त करके उपकृत करें। अर्जुनने तदनुसार क्रम क्रम दूसरे चार तीर्थोंसे सखियोंको मुक्त किया।

(भारत, आदि २१० अ०)

कारन्धमी (सं० पु०) कार एव कारः तं धमति,

बनेता है। अथवा अन्य वस्तुका अभाव होनेसे सकल कार्योंमें केवल ताम्र द्वारा दीपपात्र निर्माण करते हैं। उक्त दीपमें कार्यानुसार एक, तीन, पांच या सात बत्तियां लगती हैं। अल्प कार्यमें अल्प और महत् कार्यमें अधिक संख्यक बत्तियां डालनेकी विधि है। कार्यविशेषमें सफेद, पीली, लाल, कुसुम्भी, काली और रंग रंगकी बत्तियां बनायी जाती हैं। अभावमें केवल सफेद सूतकी बत्तियोंसे काम चलाते हैं।

कार्तवीर्यके लिये इस प्रकार दीपदानकी विधि देख स्वतः सन्देह हो सकता है— वे उस प्रकार क्यों उपास्य हैं। कार्तवीर्य दत्तात्रेयसे योग लाभ कर अथवा चक्रावतार रूपसे जन्मग्रहण कर वैसी उपासनाके योग्य हुये हैं। उनके ध्यानमें चक्रावतारत्वका उल्लेख मिलता है। यथा—

"उद्यद्र्कसहस्रभासमखिलत्रैलोक्यवन्दितं
हस्ताभ्यां शतपञ्चकेन च दधन्तं चापानिषूंश्चापरान्।
कण्ठे हाटकमालया परिवृतश्चक्रावतारो हरेः
पायात् स्यन्दनगोऽरुणाभवसनः श्रीकार्तवीर्यो नृपः॥"

कार्तवीर्यारि (सं॰ पु॰) कार्तवीर्यस्य अरिः शत्रुः, ६-तत्। कार्तवीर्यके शत्रु परशुराम। कार्तवीर्यने जमदग्निके आश्रमसे होमधेनुको चुराया था। इसीसे जमदग्निके पुत्र परशुरामने इनको मार डाला।

कार्तयेश (सं॰ त्रि॰) कृतयेशस्य इदम्, कृतयेश-अण्। कृतयेशसम्बन्धीय।

कार्तस्वर (सं॰ क्ली॰) कृतस्वरे तदाख्य आकरविशेषे भवं अथवा कृताः पठिताः स्वरा येन सः कृतस्वरः सामगायकः तस्मै दक्षिणात्वेन देयम्, कृतस्वर-अण्। १ सोना। "स कार्तस्वर-भास्वराम्बरः।" (माघ १।२०) २ धुस्तूरफल, धतूरा।

कार्तान्तिक (सं॰ पु॰) कृतान्तं वेत्ति, कृतान्त-ठक्। "क्रतूक्थादि सूत्रान्ताट्ठक्।" पा ४।२।६०। ज्योतिर्विद्, नजूमी, होनहार बता देनेवाला।

कार्तायणि (सं॰ पु॰) कार्त्यस्य अपत्यम्, कार्त्य-फिञ् यलोपः। "यस्येति च।" पा ६।४।१४८। कर्तीके पौत्र।

कार्ति (सं॰ पु॰) कृतके गोत्रापत्य।

कार्तिक (सं॰ पु॰) कृत्तिका नक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी यत्र मासे, कृत्तिका-अण्। १ वैशाखादि द्वादशमासके मध्य सप्तम मास, कार्तिक, उसका संस्कृत पर्याय— बाहुल, ऊर्ज, कार्तिकिक और कौमुद है। यह चान्द्र और सौर भेदसे दो प्रकारका होता है। फिर चान्द्र-कार्तिक भी मुख्य और गौण भेदसे द्विविध है। सूर्य तुलाराशि पर आनेसे शुक्ल प्रतिपद्से आरम्भ कर अमावस्या पर्यन्त गिननेसे मुख्य चान्द्रकार्तिक और पूर्व कृष्ण प्रतिपद्से पूर्णिमा पर्यन्त गौण चान्द्रकार्तिक होता है। फिर सूर्यके तुला राशि पर अवस्थान करते सौर कार्तिक मास लिखा जाता है।

"मीनादिस्थो रविर्येषामारम्भः प्रथमक्षणे।
भवेत्तेऽब्दे चान्द्रमासास्तदा द्वादश कीर्तिताः॥" (काल)

पूर्णिमा कृत्तिकानक्षत्रसे मिलनेके कारण ही उसका नाम कार्तिकमास पड़ा है। शास्त्रमें यह पुण्यमास माना गया है। उसीसे उक्त मासके आस्तिक धर्म-पिपासु व्यक्तियोंका कर्तव्य पुराणमें इस प्रकार कहा गया है,—

कार्तिकमें प्रत्यह अति प्रत्यूष गात्रोत्थान कर प्रातः स्नान करना विधेय है। निज शरीरको किसी प्रकार व्याधिग्रस्त करनेकी इच्छा न रखनेवाले लोगोंको कार्तिकमें अवश्य प्रातःस्नान करना चाहिये। फलतः उस मास उक्त समय पर स्नान करनेसे सबको स्वास्थ्य लाभ होता है। धर्मपिपासासे नहानेवालोंको निम्न-लिखित सङ्कल्प और मन्त्र पढ़ स्नान करना चाहिये।

सङ्कल्पवाक्य—

"ओं तत्सत् अद्य कार्तिके मासि अमुकपक्षे अमुकतिथावारभ्य तुला-राशिस्थरविं यावत् प्रत्यहं अमुकगोत्रः श्रीअमुकदेवशर्मा श्रीविष्णुप्रीतिकामः प्रातःस्नानमहं करिष्ये।

स्नान मन्त्र—

"ओं कार्तिकेऽहं करिष्यामि प्रातःस्नानं जनार्दन।
प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह॥"

उक्त मास प्रत्यह निशामुखको विष्णुगृह या आकाशादिमें घृत तैलादि द्वारा प्रदीप देना कर्तव्य है। प्रदीप देते समय निम्नलिखित मन्त्र पढ़ना पड़ता है,—

"ओं दामोदराय नभसि तुलायां लोलया सह।
प्रदीपं ते प्रयच्छामि नमोऽनन्ताय वेधसे॥"

कारधा-इति पृषोदरादित्वात् साधुः। १ कांस्यकार, कसेरा। २ धातुपरीक्षक, आदमियात जाननेवाला।

कारपथव (सं॰ पु॰) देशविशेष, एक मुल्क। यह यमुनाके निकट अवस्थित है।

कारपरदाज़ (फा॰ वि॰) कर्मचारी, कारगुज़ार।

कारपरदाज़ी (फा॰ स्त्री॰) कार्यकी सञ्चालना, कारगुज़ारी।

कारबन (अं॰ पु॰ Carbon) अङ्गार, कोयला। यह एक भौतिक पदार्थ है। प्रकृतपक्षमें कारबन कोई धातु नहीं। सम्पूर्ण सकरण मिश्रणमें यह अधिकांश पाया जाता है। कारबन दहनशील है। यह दग्ध काष्ठका अधोभाग बनाता और खनिज अङ्गारमें बहुत लग जाता है। अपनी विशुद्ध स्फटिकरूप घनीभूत स्थितिमें कारबन हीरा होता है। एक परिमाणशील स्फटिकमें यह समग्र विदित पदार्थसे कठिन है। कारबन सीसेमें अधिक पहुंच जाता, मृदु देखाता और पत्राकार आता है। आक्सिजेनके साथ मिलने पर यह कारबोनिक एसिड (कोयलेका तेज़ाब) और कारबोनिक औक्साइड (कोयलेका लुब्बलुबाब) बनाता है। हाइड्रोजेन (पानीकी हवा) के साथ इसका संयोग लगने पर कई पानीकी हवायें तैयार होती हैं। उनमें प्रकाश करनेकी एक असाधारण गैस (वायु) है।

कारबोनिक (अं॰ वि॰ Carbonic) अङ्गारसम्बन्धीय, कोयलेके मुतालिक़। कोयलेके तेज़ाबको कारबोनिक एसिड (Carbonic-acid) और कोयलेके तेज़ाबकी हवाको कारबोनिक एसिड गैस (Carbonic-acid-gas) कहते हैं।

कारबोलिक (अं॰ वि॰ Carbolic) १ अङ्गारके सर्जरससे सम्बन्ध रखनेवाला, जो अलकतरेसे सरोकार रखता हो। (पु॰) २ पदार्थविशेष, एक चीज़। यह अलकतरेसे निकलता है। कारबोलिक फोड़ा फुनसी और खुजलीके कीड़े मार देता है। इससे तेल और साबुन भी बनाते हैं।

कारबोलिक एसिड (अं॰ पु॰ Carbolic acid) तैलमय द्रव्यविशेष, एक तेलिया अर्क़। यह वर्णविहीन रहता और खाया जानेसे मुखमें जलन उत्पन्न करता है। कारबोलिक एसिड अलकतरेसे बनाया जाता है।

कारभ (सं॰ त्रि॰) करभस्य इदम्, करभ-अण्। १ हस्तिशावक-सम्बन्धीय, हाथीके बच्चेके मुतालिक़। २ उष्ट्रसम्बन्धीय, ऊंटसे सरोकार रखनेवाला।

कारभ (ऊंटका) दुग्ध रूक्ष, उष्णवीर्य, किञ्चित् लवण एवं स्वादुरस, लघु और शोथ, गुल्म, उदर, अर्श, कुष्ठ, कृमि तथा विषरोगनाशक है। ऊंटके दूधका दही ईषत् क्षाररस, गुरु, भेदकारक, पाकमें कटुरस और वायु, अर्श, कृमि तथा उदररोग पर हितकारक होता है। कारभ घृत पाकमें कटुरस, अग्निदीपक और कफ, वायु, कुष्ठ, गुल्म, उदर, शोथ, कृमि तथा विषरोगनाशक है। उष्ट्रका मूत्र शोथ, कुष्ठ, उदर, उन्माद, वायु, कृमि और अर्शोनाशक होता है। (सुश्रुत)

कारभू (सं॰ स्त्री॰) कर एव कारः तस्य भूः, ६-तत्। करकी भूमि, लगानकी ज़मीन। जिस भूमि पर राजकर लगता, उसका नाम 'कारभू' पड़ता है।

कारमिहिका (सं॰ स्त्री॰) कारं जलसम्बन्धं मेहति, कार-मिह-क स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वं यद्वा कारस्य तुषारशैलस्य मिहिका नीहार इव, उपमि॰। कर्पूर, कपूर।

कारम्भा (सं॰ स्त्री॰) कु ईषत् रम्भा इव, कोः कादेशः। प्रियङ्गु, एक खुशबूदार बेल।

कारयत् (सं॰ त्रि॰) करनेकी शक्ति वा अधिकार देनेवाला, जो कराता हो।

कारयमाण (सं॰ त्रि॰) नियत कार्य करनेवाला, हुक्म बजानेवाला।

कारयितव्य (सं॰ त्रि॰) कृ-णिच्-तव्य। करानेके उपयुक्त, जो कराने लायक हो।

कारयितव्यदक्ष (सं॰ त्रि॰) किया जाने लायक, काम करनेमें होशियार।

कारयिता (सं॰ त्रि॰) कारयति, कृ-णिच्-तृच्। करानेवाला, दूसरेको काममें लगानेवाला।

कारयिष्णु (सं॰ त्रि॰) कृ-णिच्-इष्णुच्। कारयिता, करानेवाला।

प्रदीप प्रदानसे विशेष फल कामना करनेवालोंको दीप दानके पूर्व स्नानवत् सङ्कल्प कर और तदनन्तर मन्त्र पढ़ दीप देना चाहिये।

कार्तिक मासमें कृष्णपक्षकी चतुर्दशी अर्थात् भूतचतुर्दशीके दिन स्नानान्तर यमतर्पण कर निम्नलिखित मन्त्र पाठपूर्वक मस्तकोपरि अपामार्ग घुमाना पड़ता है,—

"शीतलोष्टसमायुक्तसकण्टकदलान्वित।
हर पापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः पुनः॥"

उस दिन लोकाचारके हेतु चतुर्दश शाक भोजन करना विधेय है। शास्त्रोक्त शाकोंके नाम हैं—ओल, केमुक, वास्तुक, सर्षप, काल, निम्ब, जयन्ती, शालिञ्ची, हिलमोचिका, पटोल, पित्तपापरा, गुड़ूची, भण्टाकी और सुनिसु। किन्तु लोग उक्त शाक संग्रह न कर जो पाते वही खा जाते हैं।

अनन्तर अमावस्याके दिन बालक, आतुर और वृद्ध व्यतिरेक सबको दिवाभोजन निषिद्ध है। उस दिन पार्वण श्राद्ध कर प्रदोषकालमें पितृगणके उद्देश उल्कादान करना चाहिये। किसी कारण श्राद्ध न करते भी उल्कादान देना पड़ता है। फिर प्रदोषकालमें लक्ष्मी, नारायण और कुवेरकी पूजा करना आस्तिक धार्मिकोंका कर्तव्य है।

अनन्तर प्रभात अर्थात् प्रतिपत् तिथिको अक्षक्रीड़ादि करना चाहिये। द्यूतक्रीड़ा शास्त्रनिषिद्ध होते भी उस दिन समस्त वर्षका शुभाशुभ जाननेको बहुत आवश्यक है। उस क्रीड़ामें जीतनेवालेका संवत्सर शुभ और हारनेवालेका संवत्सर अशुभ होता है। केवल उसी दिन क्रीड़ा करनेका कारण है—

"यो यो यादृशभावेन तिष्ठत्यस्यां युधिष्ठिर।
हर्षदैन्यादिरूपेण तस्य वर्षं प्रयाति हि॥"

जो व्यक्ति जिस भाव अर्थात् आनन्द वा असुखसे उस दिन काल बिताता, उसका संवत्सर उसी भावसे चला जाता है। अतएव उस विषयमें सबको सचेष्ट रहना आवश्यक है, जिससे उक्त दिवस मनोसुखसे अतिवाहित किया जा सके।

अनन्तर द्वितीया तिथि अर्थात् भ्रातृद्वितीयाके दिन दीर्घजीवनकी कामनासे भगिनीके हाथका भोजन करना विधेय है। उस दिन स्व स्व भगिनीको वस्त्रालङ्करादि द्वारा सम्मान कर और उसके हाथका बना सादर एवं आनन्दपूर्वक भोजन करना बहुत आवश्यक है। भोजनके समय यमराज, चित्रगुप्त, यमदूत और यमुनाकी पूजा कर निम्नलिखित मन्त्रपाठ पढ़ गण्डूष ग्रहण कर खाना चाहिये। कनिष्ठ भगिनी होनेसे इस प्रकार मन्त्र पढ़ती है,—

"भ्रातस्तवानुजाताहं भुङ्क्ष्व भक्तमिदं शुभम्।
प्रीतये यमराजस्य यमुनाया विशेषतः॥"

भगिनी ज्येष्ठा रहनेसे "भ्रातस्तवानुजाताहं"के स्थानमें "भ्रातस्तवाग्रजाताहं" कह कर गण्डूष प्रदान करना चाहिये।

एतद्व्यतीत कार्तिक मासमें शुक्लपक्षकी नवमी तिथिको सोमवारके दिन त्रेतायुगकी उत्पत्ति होती है। उसीसे वह दिन अतिशय पुण्याह माना गया है। फिर कार्तिक मासके शुक्लपक्षकी एकादशीसे पूर्णिमा पर्यन्त पञ्चतिथिको बकपञ्चक कहते हैं। शास्त्रके वचनानुसार उन तिथियोंमें बक भी मत्स्य भक्षण नहीं करते। अतएव बकपञ्चकमें किसीको मांसादि खाना विधेय नहीं। एतद्व्यतीत भूतचतुर्दशीके पीछे अमावस्याको कालीपूजा, शुक्ल नवमीको जगद्धात्री पूजा और संक्रान्तिके दिन कार्तिक पूजा होती है। पूजाकी पद्धति नानाविध है। उसीसे यहां उसका कोई उल्लेख नहीं किया गया।

कोष्ठीप्रदीपके मतसे कार्तिक मासमें जन्मलेनेवाले युद्धविशारद, व्यवसायपटु, नानाविध शिल्पशास्त्रवित्, सुवक्ता और अतिशय सुन्दराकृति होते हैं।

गरुड़पुराणके मतानुसार कार्तिक मासमें विष्णुके लिये तुलसीदान कर्तव्य है। उससे प्रभूत गोदानका फल मिलता है। ब्रह्मपुराणके मतसे देवगृह, आकाश और मण्डपमें घृतादि द्वारा दीपदान करना चाहिये। उससे अक्षयपुण्य होता है। ब्रह्मपुराणके मतानुसार इस मासमें हविष्यान्न खानेसे विष्णुत्व पद मिलता है। हविष्य द्रव्य यह है,—अशिव हैमन्तिक धान्य,

कारवाई (फा॰ स्त्री॰) १ काय, काम। २ कर्मण्यता, कामका लगाव। ३ प्रयत्न, तदवीर।

कारव (सं॰ पु॰) का इति रवो यस्य कुत्सितो रवो यस्य वा, बहुव्री॰। काक, कौवा।

कारवल्ली (सं॰ स्त्री॰) कारा इतस्ततो विचित्रा वल्ली यस्याः, बहुव्री॰। १ क्षुद्र कारवेलक, करेली। यह तिक्त, उष्ण, दीपन, और कफ, वात, अरोचक तथा रक्तदोष नाशक है। (राजनिघण्टु) इसका फल हिम, भेदी, लघु, तिक्त, वातल और पित्त, रक्त, कामला, पाण्डु, कफ, मेह तथा कृमिको दूर करनेवाला होता है। (भावप्रकाश) २ कटुतुम्बी, करेला।

कारवां (फा॰ पु॰) यात्रियोंका समूह, मुसाफिरोंका झुण्ड। यह एक देशसे दूसरे देशको जाता है। इसके ठहरनेकी जगह 'कारवां सराय' कहाती है।

कारवाड—बम्बई प्रान्तके अन्तर्गत उत्तर कनाड़ेका प्रधान नगर। यह अक्षा॰ १४° ५०' उ॰ और देशा॰ ७४° १४' पू॰ पर अवस्थित है। लोकसंख्या साढे तेरह हजारसे अधिक होगी। कारवाड एक बन्दर है। इस बन्दरके सामने उपसागरमें अनेक छोटे छोटे द्वीप हैं। उन्हें कस्तूरीकी द्वीपावली कहते हैं। उनमें एकका नाम देवगड़ है। देवगड़में एक आलोक-गृह बना है। समुद्रसे १४० हाथ ऊंचे उसकी अग्निशिखा प्रकाशित होती है। यह आलोक १२ कोससे देख पड़ता है। भटके हुए जहाज उक्त आलोक देख समझ सकते कि बन्दर दूर नहीं। तदनुसार उसी ओर जहाज परिचालित होते हैं।

कारवाड़के उपकूलसे ढाई कोस दक्षिण-पश्चिम समुद्रके गर्भमें अञ्जिद्वीप नामक एक छोटा द्वीप है। उसमें पोर्तगोजोंका उपनिवेश है। अति अल्प दिन हुये वह नगर बसा था। पहले यहां धीवरमात्र रहे। १८८२ ई॰ को कनाड़ेका उत्तरभाग बम्बई प्रान्तके अन्तर्गत हुआ। उसी समयसे कारवाड़की उन्नतिका आरम्भ है। आजकल उसकी म्युनिसिपलिटीके अधीन ८ ग्राम हैं।

पुराना कारवाड़ नये कारवाड़से डेढ़ कोस पूर्व काली नदीके तीर अवस्थित था। पहले यहां वाणिज्यका विलक्षण प्रादुर्भाव रहा और उक्त स्थान विजयपुरके अन्तर्गत था। कारवाड़के देशाई अर्थात् खजानेके तत्त्वावधायक विजयपुरके प्रधान कर्मचारी माने जाते थे। १६३८ ई॰ को वहां अंगरेजोंकी कार्टेन कम्पनीने वाणिज्य आरम्भ किया। उसके लोग बहुली अञ्चलमें प्रायः ५० हजार जुलाहे लगाके अच्छे अच्छे मुसलमानी कपड़े बनवा रखते करते थे। इलायची, दालचीनी, सोंठ और दहाड़ी नामक मोटे रंगका वस्त्र वहांसे बाहर भेजा जाता था। १६५६ ई॰ को महाराष्ट्राधिपति शिवाजीने वहांके अंगरेज वणिकोंसे ११२०) रु॰ शुल्क वसूल किया। फिर १६७३ ई॰ को कारवाड़के फौजदारने अंगरेजोंकी कोठी पर धावा मारा। दूसरे वत्सर उन्होंने नगरलुटाया था, किन्तु अंगरेजी कारखानेको हाथ न लगाया। वरं अंगरेज अधिवासियोंके प्रति यत्न ही किया गया। उसके पीछे शिवाजीने भी अंगरेजोंको सताया न था। किन्तु स्थानीय प्रभुओंके अत्याचारसे १६७६ ई॰ को अंगरेज अपनी कोठी उठा ले गये। तीन वर्ष पीछे फिर अंगरेजोंने कोठी खोल कार्य आरम्भ किया। दो वर्ष पीछे १६८४ ई॰ को एक विषम काण्ड हुआ। विलायती जहाजके विलायती नाविक हिन्दुओंके मवेशी चोराने लगे। यह हिन्दुओंसे सहा न गया। अंगरेजोंकी कोठी उठानेको हिन्दुओंने चेष्टा की थी। सप्तदश शताब्दीके शेष भाग तीनका अंगरेजी व्यवसाय कारवाड़से उठानेके लिये ओलन्दाज विशेष चेष्टित हुये, किन्तु कृतकार्य हो न सके। १६८० ई॰ को महाराष्ट्रोंने कारवाड़में लूटमार करके अंगरेजोंका विशेष अनिष्ट किया था। १७१५ ई॰ को नगरका पुरातन दुर्ग गिरा स्थानाधिपतिने सदाशिवगड़ नामक एक दुर्ग बनाया। फिर वह अंगरेजों पर अत्याचार करने लगे। उसमें घबरा कर १७२० ई॰ को अंगरेजोंने अपनी कोठी उठा डाली। १७५० ई॰ को वह फिर जा पहुंचे। किन्तु दो वर्ष पीछे पोर्तगोजोंने रणतरी ला सदाशिवगड़ दखल किया था। उसके पीछे कारवाड़का वाणिज्य पूर्वरीतिसे उनके हाथों चला गया। इसीसे अंगरेजोंने अपना कारबार उठा दिया था।

मुद्ग, तिल, यव, कलाय, कङ्गुधान्य, नीवारधान्य, वास्तुक, हिलमोचिका शाक कालशाक, मूलक, सैन्धव एवं समुद्रलवण, गव्यदधि, गव्यघृत, मक्खन न निकाला हुआ दुग्ध, पनस, आम्र, हरीतकी, तिन्तिड़ी, जीरक, नागरङ्ग, पिप्पली, कदली, लवली, आंवला, इक्षु और गुड़। अतैलपक्व द्रव्य द्वारा हविष्यान्नकी व्यवस्था है। नारदीयपुराणके मतसे मत्स्य, कूर्म और अन्यान्य सकल जन्तुका मांस खाना निषिद्ध है। क्योंकि वैसा करनेसे चण्डालतुल्य बनना पड़ता है। महाभारतमें भी सर्वमांस परित्यागका विधान है। ब्रह्मपुराणके मतसे कोल, पटोल, कदम्ब और अष्टाकी भोजन करना निषिद्ध है। फिर कांस्यपात्रमें भी खाना न चाहिये। कार्त्तिक मासमें ही उत्थान एकादशी होती है। उस दिन हरि शय्या त्याग करते हैं। मनुष्योंको यथानियम उपवास कर श्री-हरिकी अर्चना करना पड़ती है। पुराणके मतानुसार कार्त्तिक मासमें उक्त सब कार्य करनेसे पुण्य मिलता है। फिर उक्त कार्य प्रतिपालन न करनेसे नरकादि विविध यातनायें उठाना पड़ती हैं।

२ वर्ष विशेष, कोई साल। कृत्तिका वा रोहिणी नक्षत्रमें बृहस्पतिका उदय वा अस्त होनेसे कार्त्तिक वर्ष कहाता है। ३ कार्त्तिकेय।

"इत्था तान् कृत्तिकाः सर्वाः मयविह्वलमानसाः।

कार्त्तिकं कथयामासुर्ब्रह्मणं ब्रह्मतेजसा॥" (ब्रह्मवैवर्त पु०)

४ चरकादि चिकित्साशास्त्रके कोई संग्रहकार। ५ बम्बई प्रदेशकी एक जाति। इस जातिके लोग भेड़ आदि पशुओंको मार मार उनका मांस बेचते हैं। कसाईका काम करनेसे ये गांवके बाहर रहते हैं और हिन्दू इस जातिके लोगोंको नहीं छूते।

कार्त्तिकमहिमा (सं० पु०) कार्त्तिकस्य महिमा माहात्म्यम्, ६-तत्। १ कार्त्तिक मासका माहात्म्य। २ कार्त्तिकेय देवका माहात्म्य।

कार्त्तिकमाहात्म्य (सं० क्ली०) पद्मपुराणका एक अध्याय।

कार्त्तिकव्रत (सं० क्ली०) कार्त्तिके कर्तव्यं व्रतम्, मध्यपदलो०। कार्त्तिक मासमें किया जानेवाला प्रातःस्नानादि नियम।

कार्त्तिकशालि (सं० पु०) कार्त्तिके परिपक्वः शालिः, मध्यपदलो०। कार्त्तिक मासमें पकनेवाला धान्य; कतिकहा धान।

कार्त्तिकसिद्धान्त (सं० पु०) कार्त्तिकी पौर्णमासी अस्मिन् मासे, कार्त्तिक-ठक्। १ कार्त्तिक मास, कातिकका महीना। २ कार्त्तिकीयुक्त पक्ष, जिस पखवारेमें कातिकी पड़े। ३ कार्त्तिक नामक एक वर्ष।

कार्त्तिकी (सं० स्त्री०) कार्त्तिकस्य इदम्, कार्त्तिक-अण्-ङीप्। १ शैवशक्ति विशेष। कौमारी देखो। २ नवपत्रिकाकी जयन्तीस्थ एक देवी। ३ कृत्तिका नक्षत्रयुक्त पूर्णिमा, कातिकी। कार्त्तिकीको ब्रह्मावर्त (बिठूर)में गङ्गास्नानका बड़ा मेला लगता है।

कार्त्तिकेय (सं० पु०) कृत्तिकानामपत्यं पाल्य-त्वेन इति शेषः, कृत्तिका-ढक्। स्त्रीभ्यो ढक्। पा ४।१।१२०। शिवपुत्र। पार्वतीके साथ खेलते समय शिवका वीर्य भूमि पर गिरा था। भूमिने अग्निमें और अग्निने फिर शरवनमें उसे निक्षेप किया। वहांसे कृत्तिका-गणने उसे उठा पाला-पोसा। (ब्रह्मवैवर्तपु०)

कल्पविशेषमें कार्त्तिकेयने पुनर्वार अग्निपुत्ररूपसे जन्मग्रहण किया था। उसी समय अग्निके वीर्य और गङ्गाके गर्भसे उनका जन्म हुआ। उसके पीछे कृत्तिका-गणने उन्हें प्रतिपालन किया। कृत्तिकागणके स्तनपान काल उनके छह मुख उत्पन्न हुये थे। फिर कृत्तिका-गणके प्रतिपालित होनेसे ही वह कार्त्तिकेय नामसे विख्यात हुये हैं। (रामायण)

उभय जन्मोंका एक ही कारण समझा जाता है। दुर्दान्त तारकासुरके उत्पीड़नसे देव बहुत व्यतिव्यस्त हो गये थे। बहु चेष्टासे भी वह असुरको मार न सके। फिर उन्होंने ब्रह्मासे जाकर उसके निधनका उपाय पूछा। ब्रह्माने उनसे महादेवका ध्यान तोड़नेको कहा था। तदनुसार उन्होंने कन्दर्पके साहाय्यसे महादेवका ध्यान भङ्ग किया। कन्दर्पबाण-विद्ध महादेवने पार्श्वस्थ पार्वतीके प्रति साभिलाष दृष्टि

कारवारि (सं० क्ली०) करकाजल, ओलेका पानी। यह विशद, गुरु, रुच, स्थिर, घन, कफकारक, वातल, अतिशीत और पित्तविनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कारवी (सं० स्त्री०) कारं अवति, कृ हिंसायां स्वार्थे णिच्-क्विप्-अव-अण्-ङीप्। १ मधुरिका, सौंफ। २ कृष्णजीरक, कालाजीरा। ३ तेजपत्र। ४ गुड़त्वक्। ५ शताह्वा, सतावर। ६ अजमोदा। ७ चन्द्रशूर। ८ मेथिका, मेथी। ९ सूक्ष्म कृष्णजीरक, पतला काला जीरा। १० हिङ्गुपत्री। ११ क्षुद्रकारवेल्ली, छोटी करेली। १२ स्त्रीजाति काक, मादा कौवा।

कारवीरेय (सं० त्रि०) कारवीरेण निर्वृत्तः, करवीर-ढञ् संख्यादित्वात्। करवीरसे उत्पन्न, कनेरसे निकला हुवा।

कारवेल्ल (सं० पु०-क्ली०) कारेण वातगमनेन वेल्लति चलति, कार-वेल्ल-अच्। १ स्वनामख्यात फलशाकलता, करेलेकी बेल। इसका संस्कृत पर्याय—कठिल्ल है। भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, भेदक, लघु, तिक्तरस, और ज्वर, पित्त, कफ, रक्त, पाण्डु, मेह तथा क्रमिरोग-नाशक होता है। २ क्षुद्र कारवेल्ल, छोटा करेला। इसका संस्कृत पर्याय—कठिल्लक, सुषवी, सुषवी, कण्डुर, काण्डकटुक, सुकाण्ड, उग्रकाण्ड, कठिल्ल, नासासंवेदन और पटु है। राजवल्लभके मतानुसार इसका पुष्प धारक और क्रमि तथा पित्तरोगमें हित-कारक है। फल रुचिकर और शुक्र, कफ तथा पित्त-नाशक है। करेला देखो।

कारवेल्लक (सं० पु०-क्ली०) कारवेल्ल एव स्वार्थे कन्। करेला।

कारवेल्लिका (सं० स्त्री०) कारवेल्लक-टाप् अत इत्वम्। क्षुद्र कारवेल्ल, छोटा करेला।

कारवेल्ली (सं० स्त्री०) कारवेल्ल अल्पार्थे ङीप्। क्षुद्र कारवेल्ल, करेली।

कारव्य (वै० त्रि०) कारु (गायक) सम्बन्धीय अथर्व-वेदका एक मन्त्र। कषायभेद, एक काढ़ा। कृष्णजीरक, कुष्ठ, एरण्डमूल, जयन्ती, शुण्ठी, गुडूची, दशमूल, शटी, कर्कटशृङ्गी, दुरालभा, भार्गी तथा पुनर्णवा आठ आठ रत्ति १२ तोले गोमूत्रमें पकाने और ८ तोले शेष रहते उतारनेसे यह तैयार होता है। इसका सेवन अभिन्यासज्वरमें रोगीको लाभ-दायक है। (भैषज्यरत्नावली)

कारसाज् (फा० वि०) कार्य संभालनेवाला, जो बिगड़ा काम बनाता हो।

कारसाज़ी (फा० स्त्री०) १ कार्यसम्पादन, कामका संभाल। २ छल, फरेब, धोका।

कारस्कर (सं० पु०) कारं वधं करोति, कृ-ट। ह्रैड़ तास्किरस्यादुशौत्वेषु। पा ६।१।१५०। १ कुपीलुवृक्ष, इसका संस्कृत पर्याय—किम्पाक, विषतिन्दु, कारद्रुम, रम्यफल, कुपीलु और काकतुण्ड है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु, तिक्तरस, उष्णवीर्य और कुष्ठ, वायु, रक्त, कण्डु, कफ, अर्श तथा व्रणनाशक है। २ वृक्षसामान्य।

कारस्कराटिका (सं० स्त्री०) कारस्कर इव अटति, कारस्कर-अट्-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। कर्णजलौका, कानसलाई।

कारस्तानी (फा० स्त्री०) १ प्रयत्न, तदबीर। २ छल, धोका।

कारा (सं० स्त्री०) कीर्यते क्षिप्यते दण्डार्हो यस्याम्। कृ-अङ्, गुणः दीर्घत्वं निपातनात्। षिद्भिदादिभ्योऽङ्। पा ३।३।१०४। १ कारागार, कैदखाना। इसका संस्कृत पर्याय—बन्धनालय और वधाङ्क है। २ दूती। ३ वीणाका अधःस्थित वक्र काष्ठ सितारके नीचेकी टेढ़ी लकड़ी। ४ सुवर्णकारिका, सोनारिन। ५ बन्धन, कैद। ७ पीड़ा, तकलीफ। ८ शब्द, आवाज। ९ दुःख, दर्द।

कारा (हिं० वि०) कृष्णवर्ण, काला।

कारा—युक्तप्रान्तके इलाहाबाद जिलेकी सिराथू तह-सीलका एक नगर। यह अक्षा० २५° ४१′ ५५″ तथा देशा० ८१° २४′ २१″ पू० पर इलाहाबाद नगरसे २० कोस उत्तरपश्चिम गङ्गाकी दक्षिण दिक् अवस्थित है। लोकसंख्या कुछ हजारसे अधिक है। युक्तप्रदेशके ९ प्रधान तीर्थोंमें एक यह भी है। यहां कालेश्वरका मन्दिर बना है। उसीसे उसका एक नाम काल नगर है। पुरातन ताम्रशासनमें कालखल नामसे

डाली थी। उससे प्रथम कार्त्तिकेयका जन्म हुआ। फिर उन्होंने देवोंके सेनापति बन तारकासुरको मार डाला। दूसरे कल्पमें भी उसी प्रकार तारकासुरका उत्पीड़न बढ़ने पर ब्रह्माने देवोंसे अग्निकी आराधना करनेको कहा था। तदनुसार उन्होंने अग्निको सन्तुष्ट किया। अग्नि ब्राह्मणरूप धारण कर अतिथिरूपमें महादेवके समीप पहुंचे थे। किन्तु महादेव सब भेद समझ गये। इसीसे सुरत विघ्न समझ क्रुद्ध हो उन्होंने स्खलितवीर्य अग्नि पर फेंका था। अग्नि रुद्रका तेज धारण कर न सके। फिर उन्होंने उसे गङ्गामें डाल दिया। उसीसे कार्त्तिकेयने द्वितीय बार जन्म लिया था। उनका नामान्तर—महासेन, शरजन्मा, षडानन, पार्वतीनन्दन, स्कन्द, सेनानी, अग्निभू, गुह, बाहुलेय, तारकजित्, विशाख, शिखिवाहन, षाण्मातुर शक्तिधर, कुमार, क्रौञ्चदारण, आग्नेय, दीप्तकीर्ति, अनमिय, मयूरकेतु, धर्मात्मा, भूतेश, महिषार्दन, कामजित्, कामद, कान्त, सत्यवाक्, भुवनेश्वर, शिशु, शीघ्र, शुचि, चण्ड, दीप्तवर्ण, शुभानन, अमोघ, अनघ, रौद्र, प्रिय, चन्द्रानन, दीप्तशक्ति, प्रशान्तात्मा, भद्रकृत्, कूटमोहन, षष्ठीप्रिय, पवित्र, मातृवत्सल, कन्याभर्ता, विभक्त, स्वाहेय, रेवतीसुत, प्रभु, नेता, नैगमेय, सुदुश्चर, सुव्रत, ललित, बालक्रीड़नप्रिय, खचारी, ब्रह्मचारी, शूर, शरवणोद्भव, विश्वामित्रप्रिय, शिवक, गाङ्ग, स्वामी, द्वादशलोचन, देवसेनाप्रिय, वासुदेवप्रिय, देवसेनापति, बालचर्य, कुक्कुटध्वज, महाबाहु, गुहरूप, शिखिध्वज, पावकात्मज, रुद्रसूनु, षट्शिरा और द्वितिजात्मक है।

कार्त्तिकेयदेवका ध्यान इस प्रकार है,—

"कार्त्तिकेयं महाभागं मयूरोपरि संस्थितम्।
तप्तकाञ्चनवर्णाभं शक्तिहस्तं वरप्रदम्॥
द्विभुजं शत्रुहन्तारं नानालङ्कारभूषितम्।
प्रसन्नवदनं देवं सर्वसेनासमावृतम्॥"

महाभाग कार्त्तिकेय मयूर पर अवस्थित हैं। उनका वर्ण तप्त स्वर्णकी भांति चमकता है। शक्ति हाथमें लिये हैं। वर देनेवाले हैं। मूर्त्ति द्विभुज है। शत्रुका नाश करते हैं। नाना अलङ्कार विभूषित हैं। मुख प्रसन्न है। समुदाय सेना चारो ओर खड़ी है। (कार्त्तिकपूजापद्धति)

अनेकोंके विश्वासानुसार कार्त्तिकेयका विवाह नहीं हुआ। वह चिरकाल अविवाहित अवस्थामें हैं। किन्तु वह भ्रममात्र है। उनकी पत्नी देवसेना हैं। देवसेनाको ही हम षष्ठी कहते हैं। सम्भवतः षष्ठीको पत्नी माननेसे ही अनेक हिन्दू पुत्रकी कामनासे कार्त्तिकेयका व्रत किया करते हैं। देवसेनाके अस्त्र और वाहनादि कार्त्तिकेयके समान हैं। मार्कण्डेयपुराणमें वर्णित है,—

"कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरोपरि संस्थिता।
योद्धुमभ्याययौ तत्र अम्बिका गुहरूपिणी॥"

कुमारशक्ति कार्त्तिकेय सदृश मूर्त्ति धारण और शक्ति ग्रहण कर मयूरवाहनोपरि आरोहणपूर्वक दैत्योंसे युद्ध करने आयी।

कार्त्तिकेयपुर—युक्त प्रदेशमें कुमायूं जिलेके मध्य दानपुर परगनेको हुजूर नामक तहसीलका एक नगर। आजकल उसे वैद्यनाथ या बैजनाथ कहते हैं। वह अक्षा० २९° ५४′ २४″ उ० और देशा० ७९° १९′ २८″ पू० पर अवस्थित है। वहां रांजुला नामक एक पुरातन दुर्ग है। उसमें एक कालीमन्दिर बना है। दूसरे भी कई पुरातन मन्दिर पड़े हैं। किन्तु उनमें कोई मूर्त्ति नहीं, उनमें आजकल शस्यादि रखा जाता है। चीन-परिव्राजक युयनचुयाङ्गकी वर्णनाके अनुसार ई० १०वें शताब्दमें वहां बौद्ध धर्म प्रचलित था। मन्दिरकी दीवारमें एक स्थानपर बुद्धदेवकी मूर्त्ति आज भी देख पड़ती है। उदयपाल देवकी खोदित प्रस्तरलिपिके दो खण्ड वहां वर्तमान हैं। उन पर क्रमागत जल पड़नेसे अक्षर मिट गये हैं। वहां ११२४ शकमें इन्द्रदेवद्वारा प्रदत्त एक ताम्रलिपि आज भी पड़ी है। उसमें नीचे १४२१ शक लिखा है और गणेशकी एक मूर्त्ति है। उस मूर्त्तिके नीचे ११२५ और १२४४ शक भी बना है।

कार्त्तिकेयप्रसू (सं० स्त्री०) कार्त्तिकेयं प्रसूते या, कार्त्तिकेय-प्र-सू-क्विप्। दुर्गा, पार्वती। पार्वतीसे शिववीर्य पकड़ते देवोंने विघ्न डाला था। उसीसे वह

उसका उल्लेख है। फिर उसको कर्कोटक नगरभी कहते हैं। कथनानुसार विष्णुचक्रसे खण्डित हो सतीदेवीके करका एक अंश यहां गिरा था। मुसलमान परिव्राजक इब्न बतूताके ग्रन्थमें उक्त तीर्थकी बात लिखी गयी है। आषाढ़ मासके कृष्ण पक्षमें प्रायः लक्षाधिक लोग कारा जा गङ्गास्नान करते हैं।

वहां एक अति पुरातन दुर्ग है। वह ठीक गङ्गा पर अवस्थित है। आजकल उसका भग्नदशा है। दुर्ग दैर्घ्य एवं प्रस्थमें प्रायः ६०० और १५० हाथ होगा। संवत् १०८५ विक्रमाब्दके (१०२५ ई०) राजा यशोपालको कितनी ही मुद्रा मिली हैं। सुतरां निर्देश करना दुःसाध्य है कि—दुर्ग फिर भी कितने दिनका पुराना है। किसी किसीके कथनानुसार कन्नौजके राजा जयचन्द्रने उसे बनाया था।

दुर्गमें निम्नभागके बाजार घाट पर एक मन्दिर देख पड़ता है। उसकी चारो ओर चबूतरा या दालान है। उसमें दुर्गाकी मस्तकशून्य एक मूर्ति पड़ी है। किसी स्थान पर एक शिवलिङ्ग और स्थानान्तरमें नन्दीकी मूर्ति है। सम्भवतः मुसलमानोंने ही उस मन्दिरकी यह दशा की होगी घाटके निकट एक कूप है। उसकी चारो ओर स्तम्भाकृति मीनार उठी है।

मुसलमानोंकी भी बहुतसी इमारतें वहां देख पड़ती हैं। उनमें ख्वाजाका कबरस्तान, जामा मसजिद, शेख सुलतानका रोज़ा वगैरह प्रधान हैं। निकट ही दारानगरकी एक मसजिद और दो कबरस्तान, कबदरिया गांवके क़ुतुब आलमका रोज़ा और शाहज़ादपुरके अब्बादाद खान्‌की मसजिद भी देखने योग्य है।

पहले उक्त नगर बहुत समृद्धिशाली और विस्तृत था। गङ्गाकी पश्चिम दिक् उसकी लंबाई एक कोस और चौड़ाई आध कोस रही। पुरातन नगरका भग्नावशेष आज भी देख पड़ता है। पूर्व उक्त स्थान पर युक्तप्रदेशका प्रधान नगर था। किन्तु सम्राट् अकबर इलाहाबादको प्रधान नगर उठा ले गये। उसीसे काराकी समृद्धि नष्ट हुई।

कारा नगर मुसलमानोंकी अनेक ऐतिहासिक घटनाओंके लिये भी प्रसिद्ध है। अवधके नवाब आसफ-उद्-दौलाने कारेके अच्छे अच्छे भवन तोड़े थे। फिर उन्हींका सामान ले जाकर नवाबने लखनऊमें अपनी इमारतें बनायीं।

कारामें बढ़िया कंबल बनता है। वहां नानाविध शस्यादि भी उत्पन्न होता है। कारेका काग़ज़ भी खराब नहीं। अयोध्या और फतेहपुरके साथ कपड़े काग़ज़ और और अनाजका कारबार चलता है।

कारागार (सं० क्ली०) कारा एव आगारं कारायै बन्धनाय वा आगारम्। बन्धनगृह, कैदखाना।

कारागुप्त (सं० त्रि०) कारायां बन्धनागारे गुप्तः बद्धः, ७-तत्। कारारुद्ध, कैदी।

कारागृह (सं० क्ली०) कारा एव गृहं कारायै बन्धनाय वा गृहम्। कारागार, कैदखाना, जेल।

कारागोला—बिहार प्रान्तके पुरनिया जिलेका एक गांव। यह अक्षा० २५° २९′ १″ उ० और देशा० ८७° १०′ ५१″ पू० पर अवस्थित है। उत्तरबङ्गमें रेल निकलनेसे पहले लोग कारागोलकी राह ही दार्जिलिङ्ग जाते थे। आजकल भी साहबगञ्ज और कारागोलके बीच जहाज़ (स्टीमर) चलता है। किन्तु कारागोलके सामने रेत पड़ जानेसे वर्षाकाल व्यतीत आरोहीको एक कोस दूर ही उतार देते हैं। यहां एक बड़ा मेला लगता है। पहले यही मेला भागलपुर जिलेके पीरपैंती स्थानमें होता था। फिर कुछ समय तक मेला पुरनियामें रहा, १८५१ ई० से कारागोलेमें लगने लगा। यहां दरभङ्गाके महाराजको कुछ बालुकामय भूमि पड़ी, जो मेलाका स्थान बनी है। १० दिन धूमधाम रहती है। कितनी ही दुकानें लगती हैं। नाना प्रकारके रेशमी-ऊनी तथा सूती-वस्त्र, लौहद्रव्य और प्रयोजनीय वस्तु बिकते हैं। नेपाली छुरी, भुजाली, कुकरी, बैल, चंवर, बाघ और टट्टू आते हैं। मेलेमें कोई तीस-चालीस हज़ार लोग आते होंगे।

काराधुनी (सं० स्त्री०) कारायाः शब्दस्य आधुनी

भूमिमें गिर गया। फिर वह शरवनमें पहुंच गया, जिससे कार्त्तिकेयका जन्म हुआ। किन्तु वीर्यके पतन-विषयमें पार्वती ही मुख्य कारण थीं। इसीसे उन्होंने कार्त्तिकेयप्रसूके नामसे प्रसिद्धि लाभ की है।

कार्त्तिकोत्सव (सं० पु०) कार्त्तिक्यां कार्त्तिकी पौर्णमास्यां भवः उत्सवः। कार्त्तिकी पूर्णिमाको होनेवाला उत्सव, कतकीका जलसा।

कार्त्स्य (सं० पु०) कर्त्तुरपत्यम्, कर्त्तृ ष्य। कर्त्ताके पुत्र।

कार्त्स्न (सं० क्लो०) कृत्स्नस्य भावः, कृत्स्न-ष्यञ्। १ समुदाय, कुल्लियत। २ सम्पूर्णता, खातिमा।

कार्त्स्न्य (सं० क्लो०) कृत्स्न-ष्यञ्। १ साकल्य, कुल्लियत। २ सम्पूर्णता।

कार्दम (सं० त्रि०) कर्दमेन रक्तम्, कर्दम-अण्। १ कर्दमयुक्त, कीचड़से भरा हुवा। २ प्रजापति कर्दम सम्बन्धीय।

कार्दमिक (सं० त्रि०) कर्दम-ठक्। कार्दम, कीचड़से भरा हुवा।

कार्पट (सं० पु०) कर्पट इव आकारो ऽस्यास्ति, कर्पट-अण्। १ जतु, लाह। २ कार्यप्रार्थी, उम्मेदवार। (कर्पट एव स्वार्थे अण्) ३ जीर्णवस्त्रखण्ड, चिथड़ा।

कार्पटगुप्तिका (सं० स्त्री०) कार्पटेन वस्त्रखण्डेन गुप्ता, कार्पटगुप्ता स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। १ बटुवा। २ झोली।

कार्पटिक (सं० पु०) कार्पटं अन्तस्तत्त्वं वेत्ति-कर्पटेन चरति वा, कार्पट-ठक्। १ मर्मवेदी, मतलबकी बात समझनेवाला। २ तीर्थयात्रासेवक।

कार्पण्य (सं० क्लो०) कृपणस्य भावः, कृपण-ष्यञ्। १ कृपणता, कंजूसी। २ दीनता, दुर्दशायी।

कार्पाण (वै० क्लो०) युद्ध, लड़ाई।

कार्पास (सं० पु० क्लो०) कर्पास एव स्वार्थे अण्। १ कार्पास वृक्ष, कपासका पेड़। वैद्यकके मतमें इसके पत्रादिसे सर्पविष निवारित होता है। चिकित्साका क्रम है—दंशन मात्र पर ही रोगीको कपासकी पत्तीका ढाई तोले रस पिलाना और क्षत स्थानको जलसे परिष्कार कर वही-पत्तीका रस उस पर लगाना चाहिये। फिर उसी समय शरीरका कोई स्थान फूल जाय तो भी उस पर कपासकी पत्तीका रस ही लगाया जाता है।

कार्पास या रुई सूक्ष्म केशवत् अथच नर्म-शुभ्र पदार्थ है। वह कार्पास नामक वृक्षके फूलमें होती है। कार्पास वृक्ष इस देशमें बहुत होते हैं। उक्त जातीय वृक्ष पृथिवीके उष्ण प्रदेशमें ही प्रायः देख पड़ता है। अंगरेज उद्भिदतत्त्वविदोंने कार्पास वृक्षको Malvacae श्रेणीके अन्तर्गत रखा है। उसका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम Gossypium है। कार्पासके कई प्रकार भेद हैं। यथा—

१ Gossypium arboreum—हिन्दीमें इसको देवकपास या नुरमा, बङ्गालीमें भोगकुयकोम या बुढ़ो कसकोम, बुंदेलखण्डीमें बोगली या नुरमा, युक्तप्रदेशमें मनुआ, रधिया या नुरमा, पञ्जाबीमें कपास, मध्यप्रदेशमें मनुवा या देव, बम्बेयामें देवकपास, मराठीमें देवकपास, महिसूरीमें देवकपास, तामिलमें सेमपरुत्ती, तेलङ्गीमें पट्टी और ब्राह्मी भाषामें इसको नुवा कहते हैं।

२ Gossypium herbaceum—हिन्दुस्तानमें रुई या कपास, बङ्गालमें तुला या कापास, पञ्जाबमें रुई, सिन्धुमें बोम, बम्बईमें कपास या रुई, गुजरातमें रु या कपास, दक्षिणमें कपास, तामिलमें वनपरुत्ती या पाउत्ती, तैलङ्गमें पाउत्ती, पदुदो, परत्ती या वरित्त, ब्रह्मदेशमें-शाह या वा, अरबमें कुतन या उत्पूल और फारसमें कन्नो-पम्बा कहते हैं।

३ भारतमें एक दूसरी कपास भी होती है। उसका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम Gossypium barabaense है। भारतमें उसे अमरीकाकी रुई कहते हैं।

कार्पासका वृक्ष अपेक्षाकृत क्षुद्र होता है। पत्र करकाकार या हस्तसदृश रहते हैं। उसके देखनेसे मालूम पड़ता है मानो तीन पत्र एकत्र संलग्न हुये हैं। मध्यका अंश अपेक्षाकृत बड़ा होता है। डालमें स्वतन्त्र बोंड़ी निकलने पर पीला फूल लगता है। बोंड़ीके फटने पर भीतर रुई निकलती है। बोंड़ियां पत्तोंसे

सस्यादिका, ६-तत्। शब्दोत्पादक शङ्ख प्रभृति, एक बाजा।

कारापथ (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क। इस देशके शासनकर्ता लक्ष्मणपुत्र अङ्गद और चन्द्रकेतु थे।

"अङ्गदं चन्द्रकेतुञ्च लक्ष्मणोऽप्यात्मसम्भवम्।
शासनात् रघुनाथस्य चक्रे कारापथेश्वरौ॥" (रघुवंश १५।९०)

कारापाल (सं० पु०) कारां कारागारं पालयति रक्षति, कारा-पाल-अण्। कारागार-रक्षक, कैद-खानेका मुहाफिज।

काराभू (सं० स्त्री०) कारायै बन्धनाय भूः स्थानम्। बन्धनस्थान, कैदकी जगह।

कारायिका (सं० स्त्री०) कं जलं आरात् विचरण-स्थानत्वेन गृह्णाति, क-आ-रा-ग्रह-ण्वुल्-टाप् इत्वञ्च। १ सारसी, मादा सारस। २ बलाका, मादा बगला।

कारावर (सं० पु०) चर्मकार जातिविशेष, एक चमार निषादके औरस और वैदेही स्त्रीके गर्भसे यह जाति उत्पन्न है।

"कारावरो निषादात्तु चर्मकारः प्रसूयते।" (मनु १०।३६)

कारावास (सं० पु०) कारायां वासः, ७-तत्। कारा-गृहमें बन्द रहनेकी स्थिति, कैद।

कारावेश्म (सं० क्ली०) कारा एव कारायाः वा वेश्म गृहम्। कारागार, कैदखाना, जेल।

काराष्ट्र (सं० पु०) १ कराष्ट्रदेशीय ब्राह्मण। २ कराष्ट्र देश। महाभारतमें यह करहाटक नामसे ख्यात है। वर्तमान नाम कराड़ है। कराड़ देखो।

कारि (सं० स्त्री०) क्रियते असौ, कृ-इञ्। विभाषाख्यान-परिप्रश्नयोरिञ्च। पा ३।३।११०। १ क्रिया, फेल, काम। (त्रि०) करोति, कृ-इञ्। कर्मण्डोश्च कारुः। उण् १।१२८। २ शिल्पी, कारीगर।

कारिक (सं० स्त्री०) कारि स्वार्थे कन्। क्रिया, काम।

कारिक (हिं० स्त्री०) खरकूल, करघेकी एक चिकनी लकड़ी। यह तानेको ठीक करती है।

कारिक (सं० पु०) कुफ्रकी करनेवाला।

कारिकर (सं० वि०) कारिं क्रियां शिल्पकर्म इति यावत् करोति, कारि-कृ-ट। शिल्पकारक, कारीगर।

कारिकरी (सं० स्त्री०) कारिकर-ङीप्। शिल्प-कारिणी, कारीगर औरत।

कारिका (सं० स्त्री०) करोतीति, कृ-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। १ अभिनेत्री, नटिनी। २ क्रिया, काम। ३ विवरण, तफसील। ४ श्लोक, शेर। ५ शिल्प, कारीगरी। ६ यातना, तकलीफ। ७ वृद्धि, सूद। ८ कपटकारी, कटैया। ९ बहु अर्थबोधक अल्प अक्षर, विशिष्ट कविता, एक शायरी। इसमें थोड़ेसे बड़ा मतलब निकालते हैं। १० कर्त्री, करनेवाली। ११ मर्यादा, हद। १२ एक सङ्कीर्ण रागिणी।

कारिकाल—करमण्डल उपकूलका फरासीसी उपनिवेश और नगर। तामिल भाषामें उसे 'कारिक्काल' अर्थात् मछलीका मांस कहते हैं। उसके उत्तरपश्चिम एवं दक्षिण तञ्जोर-राज्य और पूर्व बङ्गोपसागर है। कारिकाल प्रदेशमें कोई ११० ग्राम विद्यमान हैं। लोकसंख्या ९१ हजारसे अधिक है। कावेरी नदी पांच मुख हो कर यहांसे सागरमें जा गिरी है। उक्त प्रदेशके प्रधान नगरका भी नाम कारिकाल है। यह अक्षा० १०° ५५' १०" उ० और देशा० ७९° ५२' २०" पू० पर समुद्रसे कोई पौन कोस दूर अवस्थित है। सिंहलद्वीपके साथ कारिकालका बारहो मास चावलका वाणिज्य चलता है। उसको छोड़ आण्डा-मान द्वीप और फरासीसके साथ भी वाणिज्य होता है। यहांसे नाना स्थानोंको भारतीय कुली भेजे जाते हैं। कारिकाल बन्दरमें एक आलोकगृह है। वह समुद्रसे २२ हाथ ऊपर स्थापित है।

१७२६ ई० को फरासीसियोंने कारिकालमें एक दुर्ग निर्माण किया था। अल्पकाल पीछे ही राजासे फरासीसियोंका विवाद उपस्थित हुआ। १७४४ ई० को ५ वीं अपरैलको तञ्जोरराजने ससैन्य कारिकाल पर आक्रमण किया था। किन्तु १७४९ ई० को २१ वीं दिसम्बरको उन्होंने कारिकाल और तत्-संलग्न ८१ ग्राम फरासीसियोंको दे डाले। १७६० ई० को अंगरेज-सेनाने कारिकाल घेरा था। फरासी-सियोंने दश दिन अनवरत युद्ध किया अन्तमें ५ वीं अपरैलको अंगरेजोंके हाथ आत्मसमर्पण किया। उसके पीछे फिर कारिकाल तीन बार अंगरेजोंके हाथ लगा। १८१७ ई० को १४ वीं जनवरीको उक्त स्थान सर्वदाके

डाली थी। उससे प्रथम कार्त्तिकेयका जन्म हुआ। फिर उन्होंने देवोंके सेनापति बन तारकासुरको मार डाला। दूसरे कल्पमें भी उसी प्रकार तारकासुरका उत्पीड़न बढ़ने पर ब्रह्माने देवोंसे अग्निकी आराधना करनेको कहा था। तदनुसार उन्होंने अग्निको सन्तुष्ट किया। अग्नि शुक्ररूप धारण कर अतिशीघ्र महादेवके समीप पहुंचे थे। किन्तु महादेव सब भेद समझ गये। इसीसे सुरत विघ्न समझ कर ही उन्होंने स्खलितवीर्य अग्नि पर फेंका था। अग्नि रुद्रका तेज धारण कर न सके। फिर उन्होंने उसे गङ्गामें डाल दिया। उसीसे कार्त्तिकेयने द्वितीय बार जन्म लिया था। उनका नामान्तर—महासेन, शरजन्मा, षड़ानन, पार्वतीनन्दन, स्कन्द, सेनानी, अग्निभू, गुह, बाहुलेय, तारकजित्, विशाख, शिखिवाहन, षाण्मातुर, शक्तिधर, कुमार, क्रौञ्चदारण, आग्नेय, दीप्तकीर्ति, अनामय, मयूरकेतु, धर्मात्मा, भूतेश, महिषार्दन, कामजित्, कामद, कान्त, सत्यवाक्, भुवनेश्वर, शिशु, शीघ्र, शुचि, चण्ड, दीप्तवर्ण, शुभानन, अमोघ, अनघ, रौद्र, प्रिय, चन्द्रानन, दीप्तशक्ति, प्रशान्तात्मा, भद्रकृत्, कूटमोहन, षष्ठीप्रिय, पवित्र, मातृवत्सल, कन्याभर्ता, विभक्त, स्वाहेय, रेवतीसुत, प्रभु, नेता, नैगमेय, सुदुश्चर, सुव्रत, ललित, बालक्रीड़नप्रिय, खचारी, ब्रह्मचारी, शूर, शरवणोद्भव, विश्वामित्रप्रिय, शियक, गाङ्ग, स्वामी, द्वादशलोचन, देवसेनाप्रिय, वासुदेवप्रिय, देवसेनापति, बालवय, कुक्कुटध्वज, महाबाहु, गुह-वक्र, शिखिध्वज, पावकात्मज, रुद्रसूनु, षट्शिरा और दितिजान्तक है।

कार्त्तिकेयदेवका ध्यान इस प्रकार है,—

> "कार्त्तिकेयं महाभागं मयूरोपरि संस्थितम्।
> तप्तकाञ्चनवर्णाभं शक्तिहस्तं वरप्रदम्॥
> द्विभुजं शत्रुहन्तारं नानालङ्कारभूषितम्।
> प्रसन्नवदनं देवं सर्वसेनासमावृतम्॥"

महाभाग कार्त्तिकेय मयूर पर अवस्थित हैं। उनका वर्ण तप्त स्वर्णकी भांति चमकता है। शक्ति हाथमें लिये हैं। वर वर देनेवाले हैं। मूर्त्ति द्विभुज है। शत्रुका नाश करते हैं। नाना अलङ्कार विभूषित हैं। मुख प्रसन्न है। समुदाय सेना चारों ओर खड़ी है। (कार्त्तिकपूजापद्धति)

अनेकोंके विश्वासानुसार कार्त्तिकेयका विवाह नहीं हुआ। वह चिरकाल अविवाहित अवस्थामें हैं। किन्तु वह भ्रममात्र है। उनकी पत्नी देवसेना हैं। देवसेनाको ही हम षष्ठी कहते हैं। सम्भवतः षष्ठीको पत्नी माननेसे ही अनेक हिन्दू पुत्रकी कामनासे कार्त्तिकेयका व्रत लिया करते हैं। देवसेनाके अस्त्र और वाहनादि कार्त्तिकेयके समान हैं। मार्कण्डेय-पुराणमें वर्णित है,—

> "कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरोपरि संस्थिता।
> योद्धुमभ्याययौ तत्र अम्बिका गुहरूपिणी॥"

कुमारशक्ति कार्त्तिकेय सदृश मूर्त्ति धारण और शक्ति ग्रहण कर मयूरवाहनोपरि आरोहणपूर्वक दैत्योंसे युद्ध करने आयी।

कार्त्तिकेयपुर—युक्त प्रदेशमें कुमायूं जिलेके मध्य दानपुर परगनेकी कुजूर नामक तहसीलका एक नगर। आजकल उसे वैद्यनाथ या वैजनाथ कहते हैं। वह अक्षा० २९° ५४′ २४″ उ० और देशा० ७९° १९′ २८″ पू० पर अवस्थित है। वहां रांजुला नामक एक पुरातन दुर्ग है। उसमें एक कालीमन्दिर बना है। दूसरे भी कई पुरातन मन्दिर पड़े हैं। किन्तु उनमें कोई मूर्त्ति नहीं, उनमें आजकल शस्यादि रखा जाता है। चीन-परिव्राजक युवनचुयाङ्गकी वर्णनाके अनुसार ई० १७वें शताब्दमें वहां बौद्ध धर्म प्रचलित था। मन्दिरकी दीवारमें एक स्थानपर बुद्धदेवकी मूर्त्ति आज भी देख पड़ती है। वहां पाल देवको खोदित प्रस्तरलिपिके दो खण्ड वहां वर्तमान हैं। उन पर क्रमागत जल पड़नेसे अक्षर मिट गये हैं। वहां ११२४ शकमें इन्द्रदेवद्वारा प्रदत्त एकखण्ड ताम्रलिपि आज भी पड़ी है। उसमें नीचे १४२१ अंक लिखा है और गणेशकी एक मूर्त्ति है। उस मूर्त्तिके नीचे ११२५ और १२४४ शक भी बना है।

कार्त्तिकेयप्रसू (सं० स्त्री०) कार्त्तिकेयं प्रसूते या, कार्त्तिकेय-प्र-सू-क्विप्। दुर्गा, पार्वती। पार्वतीसे शिववीर्य पड़ते देवोंने विघ्न डाला था। उसीसे वह

लिये फरासीसियोंको सौंप दिया गया। आज भी वहां फरासीसियोंका अधिकार है। भारतमें उनका प्रधान स्थान पुन्दिचेरी है। उसीके गवरनरकी देख भालमें कारिकालका शासनकार्य निर्वाहित होता है। आज भी वहां फरासीसियोंकी साधारण-तन्त्र प्रथा प्रचलित है। म्युनिसिपाल कौन्सिलको छोड़ वहां एक दूसरी सभा भी है। उसे लोकल कौंसिल कहते हैं। उसमें नगरस्थ म्युनिसपलिटीके अधिकार व्यतीत दूसरे विषयोंकी भी आलोचना होती है। उसको छोड़ दूसरी भी एक सभा है। उसका नाम कौंसल जनरल (Consul General) है। पुन्दिचेरीमें उसका अधिवेशन होता है। उसमें भारतके प्रत्येक फरासीसी अधिकृत स्थानसे प्रतिनिधि भेजे जाते हैं। प्रतिनिधि अवश्य प्रजाके निर्वाचित होते हैं। उसको छोड़ फरासीसकी सेनेट और डिप्युटी सभामें एक एक भारतीय प्रतिनिधि रहता है। वह प्रतिनिधि भारतकी प्रजा द्वारा निर्वाचित होते हैं। कारिकालके वन-विभाग, पूर्त विभाग और शान्तिरक्षाके विभागमें एक एक कर्ता (Chief) रहता है। भारतीय अंगरेज गवरनमेण्टका भी एक अंगरेज प्रतिनिधि कारिकालमें निवास करता है।

कारिख (हिं॰ स्त्री॰) १ कालिमा, स्याही, कालापन। २ कज्जल, काजल। ३ कलङ्क, धब्बा।

कारिणी (सं॰ स्त्री॰) करोति, कृ-णिनि-ङीप्। अपना कार्य निष्पादन करनेवाली स्त्री, जो औरत अपना काम कर डालती हो।

कारित (सं॰ त्रि॰) कृ-णिच् कर्मणि क्त। १ अन्य द्वारा सम्पादित, कराया हुआ। (क्ली॰) २ क्रिया-विशेष, सुताड़ी-उल्‌-सुताड़ी।

कारित (हिं॰ पु॰) काठबेल।

कारिता (सं॰ स्त्री॰) कारित-टाप्। अधिक वृद्धि, ज्यादा सूद।

"ऋणिकेन तु या वृद्धिरधिका सम्प्रकीर्तिता।
आपत्कालकृता नित्यं दातव्या कारिता तु सा॥" (मिता॰ बृह॰)

आपद् कालमें पड़नेवाले व्यक्ति जो अधिक सूद देना स्वीकार करता, उसीका नाम कारिता है।

कारितान्त (सं॰ त्रि॰) अन्तमें कारित, क्रिया रखनेवाला, जिसके आखीरमें सुताड़ी-उल्‌-सुताड़ी रहे।

कारी (सं॰ पु॰) करोति, कृ-णिनि। कारक, कर्ता, करनेवाला। यह यौगिक शब्दके अन्तमें आता है।

कारी (सं॰ स्त्री॰) कृणाति हिनस्ति कण्टकैरिति शेषः, कृ-इञ्‌-ङीप्। स्वनामख्यात क्षुपविशेष, एक पेड़। यह कण्टकारी और आकर्षकारी भेदसे दो प्रकारकी होती है। इसका संस्कृत पर्याय—कारिका, कार्या, गिरिजा और कटुपत्रिका है। राजनिघण्टुके मतसे यह कसैली एवं मीठी, पित्तनाशक, अग्निवर्धक, मल-रोधक, रुचिकारक, कण्ठशोधक और भारी होती है।

कारी (फा॰ वि॰) घातक, गहरा मर्मभेदी।

कारी (हिं॰) काली देखो।

कारीगर (फा॰ पु॰) १ शिल्पी, कारीगरी करनेवाला, जो हाथसे काम बनाता हो। (वि॰) २ निपुण, हुनरमन्द।

कारीगरी (फा॰ स्त्री॰) १ शिल्प, हाथका काम। २ रचना, बनावट।

कारीजीरी (हिं॰ स्त्री॰) कृष्णजीरक, काली जीरी।

कारीर (सं॰ क्ली॰) करीरस्य अवयवः, करीर-अण्। पलाशादिभ्यो वा। पा ४।३।१४१। १ करीर फल, करीलका फल। २ करीरपुष्प, करीलका फूल। करीलका फल कटु, गरम, उष्ण, रुचिप्रद, कफपित्तकर, किञ्चित् कषाय तथा वातनाशक है और पुष्प भेदी, कटुक, कफनाशक, पित्तकर, कषाय, रुचिकर, भव्य एवं पथ्यद होता है। (वैद्यकनिघण्टु) (त्रि॰) ३ वंशाङ्कुर निर्मित, बांसकी छड़का बना हुआ। ४ करीरफलसम्बन्धीय, करीलके फलसे सरोकार रखनेवाला।

कारीरी (सं॰ स्त्री॰) कारं (कं जलं यस्त्कृति, क-ऋ णिच्) मन्त्रभेदं ईरयति, कार-ईर्-अच्-ङीष्। वृष्टिके लिये किया जानेवाला एक यज्ञ।

कारीर्य (सं॰ क्ली॰) करीरस्य अवयवः, करीर-ष्यञ्। १ कारीर, बांसकी डाल या शाख। (त्रि॰) २ करीर-फलसम्बन्धीय, करीलके फलसे सरोकार रखनेवाला।

कारीष (सं॰ क्ली॰) करीषाणां समूहः, करीष-अण्।

भूमिमें गिर गया। फिर वह शरवनमें पहुंच गया, जिससे कार्त्तिकेयका जन्म हुवा। किन्तु वीर्यके पतन-विषयमें पार्वती ही मुख्य कारण थीं। उन्हीसे इन्होंने कार्त्तिकेयप्रसू के नामसे प्रसिद्धि लाभ की है।

कार्त्तिकोत्सव (सं० पु०) कार्त्तिक्यां कार्त्तिकी पौर्णमास्यां भवः उत्सवः। कार्त्तिकी पूर्णिमाको होनेवाला उत्सव, कतकीका जलसा।

कार्त्स्य (सं० पु०) कर्त्तुरपत्यम्, कर्तृ-ण्य। कर्तांके पुत्र।

कार्त्स्न (सं० क्लो०) कृत्स्नस्य भावः, कृत्स्न-ष्यञ्। १ समुदाय, कुलियत। २ सम्पूर्णता, खातिमा।

कार्त्स्न्य (सं० क्लो०) कृत्स्न-ष्यञ्। १ साकल्य, कुलियत। २ सम्पूर्णता।

कार्दम (सं० त्रि०) कर्दमेन रक्तम्, कर्दम-अण्। १ कर्दमयुक्त, कीचड़से भरा हुवा। २ प्रजापति कर्दम सम्बन्धीय।

कार्दमिक (सं० त्रि०) कर्दम-ठक्। कार्दम, कीचड़से भरा हुवा।

कार्पट (सं० पु०) कर्पट इव आकारो ऽस्यास्ति, कर्पट-अण्। १ जतु, लाह। २ कार्यार्थी, उम्मेदवार। (कर्पट एव स्वार्थे अण्) ३ जीर्णवस्त्रखण्ड, चिथड़ा।

कार्पटगुलिका (सं० स्त्री०) कार्पटेन खण्डवस्त्रेण गुला, कार्पटगुला स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। १ बटुवा। २ झोली।

कार्पटिक (सं० पु०) कार्पटं जगतस्तत्त्वं वेत्ति कर्पटेन चरति वा, कार्पट-ठक्। १ मर्मभेदी, मतलबकी बात समझनेवाला। २ तीर्थयात्रासेवक।

कार्पण्य (सं० क्लो०) कृपणस्य भावः, कृपण-ष्यञ्। १ कृपणता, कंजूसी। २ दीनता, मुर्दवारी।

कार्पाप (सं० क्लो०) युद्ध, लड़ाई।

कार्पास (सं० पु० क्लो०) कर्पास एव स्वार्थे अण्। १ कार्पास वृक्ष, कपासका पेड़। वैद्यकके मतमें उसके पत्रादिसे सर्वविध निवारित होता है। चिकित्साका क्रम है—दंशन मात्र पर ही रोगीको कपासकी पत्तीका ढाई तोले रस पिलाना और क्षत स्थानको जलसे परिष्कार कर वही पत्तीका रस उस पर लगाना चाहिये। फिर उसी समय शरीरका कोई स्थान फूल जाय तो भी उस पर कपासकी पत्तीका रस ही लगाया जाता है।

कार्पास या रुई सूक्ष्म केशवत् अथच नर्म शुभ्र पदार्थ है। वह कार्पास नामक वृक्षके फूलमें होती है। कार्पास वृक्ष इस देशमें बहुत होते हैं। उक्त जातीय वृक्ष पृथिवीके उष्ण प्रदेशमें ही प्रायः देख पड़ता है। अंगरेज उद्भिदतत्त्वविदोंने कार्पास वृक्षको Malvacae श्रेणीके अन्तर्गत रखा है। उसका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम Gossypium है। कार्पासके कई प्रकार भेद हैं। यथा—

१ Gossypium arboreum—हिन्दीमें इसको देवकपास या नुरमा, सथालीमें मागकुसकोम या बुदी कसकोम, बंदेलखण्डीमें बोगली या नुरमा, युक्त-प्रदेशोंमें नरमा, रधिया या नुरमा, पञ्जाबीमें कपास, मध्यप्रदेशमें नरमा या देव, बम्बेयामें देवकपास, मराठीमें देवकपास, महिसुरीमें देवकपास, तामिलमें सेमपारुथी, तेलङ्गीमें पट्टी और ब्राह्मी भाषामें उसको नु-वा कहते हैं।

२ Gossypium herbaceum—हिन्दुस्तानमें रुई या कपास, बङ्गालमें तुला या कापास, पञ्जाबमें रुई, सिन्धुमें वीम, बम्बईमें कपास या रुई, गुजरातमें रू या कपास, दक्षिणमें कपास, तामिलमें बमपरती या पारुत्ती, तैलङ्गमें पाऊत्ती, एडुदो, परत्ती या परित्त, ब्रह्मदेशमें वाह वा वा, अरबमें कुतन या उत्सून और फारसमें उसको पम्बा कहते हैं।

३ भारतमें एक दूसरी कपास भी होती है। उसका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम Gossypium barabaense है। भारतमें उसे अमरीकाकी रुई कहते हैं।

कार्पासका वृक्ष अपेक्षाकृत क्षुद्र होता है। पत्र कराकार वा हस्तसदृश रहते हैं। उसके देखनेसे मालूम पड़ता है मानो तीन पत्र एकत्र संलग्न हुये हैं। मध्यका अंश अपेक्षाकृत बड़ा होता है। डालसे लम्बी बोंड़ी निकलने पर पीला फूल लगता है। बोंड़ीके फटने पर भीतर रुई निकलती है।

१ करीषसमूह, कंडे या गोबरका ढेर। (त्रि०) २ करीषसे उत्पन्न होनेवाला जो गोबरसे निकला हो।
कारीषि (सं० पु०) १ ऋषिविशेष, कोई ऋषि। २ वंशविशेष, एक खान्दान या घराना।
कारु (सं० पु०) करोति, कृ-उण्। (कृवापाजिमिस्वदिसाध्यशूभ्य उण्। उण् १।१।) १ विश्वकर्मा, (भावे उण्) २ शिल्प, कारीगरी। ३ शिल्पी, दस्तकार। ४ कवि, शायर, घड़ाई करनेवाला (त्रि०) ५ बनानेवाला। ६ भयावह, खौफनाक।
कारुक (सं० त्रि०) कारु स्वार्थे कन्। १ शिल्पी, काम बनानेवाला। (पु०) २ कर्मरङ्ग वृक्ष, कमरखका पेड़।
कारुककर्म (सं० क्ली०) सूपकार कर्म, बवर्चीपन।
कारुचौर (सं० पु०) कारुणा शिल्पेन चोरयति, कारु-चुर-अच्। सन्धिचोर, सेंध लगानेवाला चोर।
कारुज (सं० पु०) कं जलं आरुजति, का-आ-रुज क। १ करभ, हाथीका बच्चा। २ फेन, झाग। ३ वल्मीक, चोंटीका टीला। ४ नागकेशर। ५ गैरिक, गेरू। (कारुतो जायते, कारु-जन-ड) ६ शिल्पिनिर्मित चित्र, कारीगरकी बनायी तसवीर। ७ शरीरमें स्वतः तिलकी भांति काला काला निकलनेवाला चिह्न।
तिलकालक देखो।
कारुणिक (सं० त्रि०) करुणायां शीलमस्य, करुणा-ठक्। दयालु, मेहरबान्।
कारुण्डिका (सं० स्त्री०) कारुण्डी स्वार्थे कन्-टाप्, ह्रस्व। जलौका, जोंक।
कारुण्डी (सं० स्त्री०) कुत्सिता ईषत् वा रुण्डी मूर्ध्वहीन इव कोः कादेशः। जलौका जोंक।
कारुण्य (सं० क्ली०) कारुणस्य भावः करुणा एव वा, करुणा-ष्यञ्। करुणा, मेहरबानी। स्वार्थ छोड़ दूसरेके दुःख निवारणकी इच्छाका नाम कारुण्य है।
कारुण्यसागर (सं० पु०) ज्वरातिसारका एक रस, बोखारके दस्तोंकी एक दवा। पारेका भस्म (भस्म न मिलनेसे शुद्ध पारा) १ तोला, गन्धक २ तोला तथा अभ्र २ तोला सर्षपतैलमें घोंट और भृङ्गराजके रसमें पीस प्रहर काल बालुका यन्त्र या अंधकूपटमें पकाते हैं। फिर यवक्षार, सर्जिक्षार, सोहागा, विट, सेन्धव, सौवर, सांभर, करकचलवण, त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल), चीतेकी जड़, विष, जीरा और विड़ङ्ग सबका ५ तोला कल्क डालनेसे यह औषध बनता है।
(रसेन्द्रसारसंग्रह)
कारूष (सं० पु०) करूषस्य राजा। १ करूष देशके अधिपति, दन्तवक्र। (करूषोऽभिजन एषाम्) करूष देशवासी। इस अर्थमें यह शब्द नित्य बहुवचनान्त रहता है। २ मनुके पुत्र।
कारूषक (सं० त्रि०) कारूष-स्वार्थे कन्। १ करूष देशवासी। (पु०) २ करूषदेशके राजा। सर कनिङ्गामके मतसे वर्तमान शाहाबाद जिला ही प्राचीन करूष देश है।
कारून (अ० पु०) १ हजरत मूसाके चचेरे भ्राता। यह बड़े धनी थे, परन्तु कभी खैरात न करते थे। इनके खजानेकी चाबियां चालीस खच्चरों पर चलती थीं। (वि०) २ कृपण, बखील अपार धनराशिको 'कारूनका खजाना' कहते हैं।
कारूनी (हिं० पु०) अश्वविशेष, किसी किस्मका घोड़ा।
कारूरा (अ० पु०) १ फुंकनी शीशी। इसमें रोगीका मूत्र रख वैद्यको देखाते हैं। २ मूत्र, पेशाब। ३ बारूदकी कुप्पी। यह जलाकर शत्रुपर चलायी जाती है।
कारूष (सं०पु०) करूषस्य राजा, करूष-अण्। १ करूष देशके राजा। २ करूषदेशवासी। ३ एक जाति। व्रात्य वैश्यकी सवर्ण स्त्रीसे यह जाति उत्पन्न हुयी है।

"वैश्यात् तु जायते व्रात्यात् सुधन्वाचार्य एव च।
कारूषश्च विजन्मा च मैत्रः सात्वत एव च॥" (मनु १०।२३)

कारूष्य (सं०पु०) करूषस्य राजा, करूष-ष्यञ्। १ करूषके राजा दन्तवक्र। (क्ली०) २ नेत्रमल, आंखका मैल।
कारेणव (सं० त्रि०) करेणोरिदम्, करेणु-अण्। हस्तिसम्बन्धीय, हाथीसे सरोकार रखनेवाला। हथिनीका दूध ईषत् कषाययुक्त मधुर रस, बलकारक और गुरुपाक है। हाथीका दधि—कषाययुक्त मधुर रस और मलबद्धकारक होता है। कारेणव घृत मलमूत्ररोधक, तिक्तरस, अग्निकर, लघु और कफ, कुष्ठ, विषरोग तथा क्रिमिनाशक है। मूत्र ईषत् तिक्तयुक्त लवणरस, मादक, वायुनाशक, पित्तवर्धक और तीक्ष्ण है।

ढकी रहती है। फूटनेके समय ढका अंश फैल जाता है। इसमें स्वतन्त्र फूल फूटते हो,कपास बोना जाता हैं। नहीं तो धूप या ओसमें वह बिगड़ जाता है। कार्पासके फूटसे बीज निकाल लेना पड़ता है।

स्थानभेदसे कार्पास बीजके बोनेका समय निर्दिष्ट है। प्रायः आश्विन और कार्तिक मास ही वपनका उत्तम समय है। खाक गोबर या गोरे अथवा तीनोंके एकत्र जलमें गला उसमें बीज भिगो देते हैं। एक दिन भिगोनेके पीछे बीज जलसे निकाल कर कुछ देर धूपमें सुखाते हैं। अधिक शुष्क करना भी निषिद्ध है। उसके पीछे अच्छी जोती जमीन्में एक या डेढ़ हाथके अन्तर ४।५ अंगुलि परिमाण गर्त खोद २।४ बीज डाल ऊपरसे कुछ मट्टी चढ़ा देते हैं। अल्प दिनमें ही अङ्कुर फूट आता है। अङ्कुरोंमें जो उत्कृष्ट होते, उनमें केवल दो उसी स्थान पर रख दूसरे निकाल कर स्थानान्तरमें लगाये जाते हैं। पौदा निकालने पर निरर्थक वृक्ष नष्ट करना पड़ता है। कार्पासका बीज फेंक देनेकी चीज नहीं। इसकी खलीसे अच्छी खाद बनती है। फिर बिनौला खिलानेसे गाय-भैंस दूध भी बहुत देती है। किसी जमीन्में बराबर २।३ वर्ष कार्पास उपजनेसे फिर उसमें अच्छी उपज नहीं होती। किन्तु बिनौलेकी खली खादकी तरह डालनेसे जमीनकी उर्वरताशक्ति कुछ बनी रहती है। कपासकी जमीन्में सब तरहकी खली खादकी भांति पड़ती है। खलीको अच्छी तरह चूर कर उसमें सूखी मट्टी बराबर मिला एक सप्ताह रख छोड़ना चाहिये। फिर उसे खेतमें डालनेसे अच्छा लाभ होता है। प्रायः प्रति बीघे मन या आधमन रूई उपजती है। किन्तु विशेष यत्न करने पर एक बीघेमें ६।७ मन तक कपास निकल सकती है।

हिन्दुस्थानमें लाखों बीघे कपास बोयी जाती है। प्रति वर्ष उसकी बढ़ती होती है। नर्म और मनुआ दो तरहकी कपास यहां उपजती है। इलाहाबादकी राधिया कुछ अच्छी होती है। कुमायूं और गढ़वालमें पहाड़ी कपास लगायी जाती है। कानपुरके सरकारी खेतोंमें १८८१-८२ ई० को अमेरिकाकी कपास बोयी गयी थी। फल अच्छा निकला। ध्यानसे खेती करने पर हिन्दुस्थानमें अमेरिकाकी कपास खूब उपज सकती है।

कपास खरीफकी फसल है। वर्षा आरम्भ होनेसे पहले ही जमीन्को सींच कर कपास बो देते हैं। अक्तोबरसे जनवरी मास तक फसल तैयार होती है। किन्तु नर्म और रधिया कपास अप्रेल और मई तक कोई ग्यारह महीने खड़ी रहती है। जमीन्में खाद देना पड़ती है।

प्रायः कपासके साथ अड़हर बो देते हैं। उससे कपासको धूप और ओस नहीं लगती। फिर कपासमें तिल, उड़द और मूंग भी डाल देते हैं। कपासके किनारे किनारे एरण्ड और पटसनकी गोट रहती है।

कपास बोनेके दो मास बादही फलने लगती है। जनवरी मासतक उसे बीना करते हैं। पाला पड़नेसे कपास मारी जाती है। अच्छे खेत तीन या चार दिन पीछे बीने जाते हैं। बिनाई सबेरेसे दोपहर तक होती है। कारण उस समय ओसकी तरी रहनेसे कपास निकालनेमें असुविधा नहीं पड़ती। जोरसे कपास निकालनेपर रूई खराब हो जाती है। प्रायः स्त्रियां कपास बीनती हैं, उन्हें अपनी अपनी बिनी कपासका ८वां भाग या कुछ बीनाखिरा मजदूरीको तौर पर मिलता है।

चरखोंमें कपास ओट कर रूईसे बिनौलेको अलग करते हैं। अमेरिकाके दक्षिण राज्योंमें भी ऐसी ही चरखियां चलती हैं। परन्तु आजकल कलोंसे भी बिनौले निकाले जाते हैं।

पानी भरा रहनेसे कपासको बड़ी हानि पहुंचती है। इसी लिये कपासके खेतमें पानी ठहरने नहीं देते। फलियां खुल जाने पर भी वृष्टिसे अपार क्षति होती है। क्योंकि पानीमें भीग जानेसे रंग बिगड़ जाता है। और सूत सड़ने लगता है। कपासको पालेके पड़नेसे भी हानि पहुंचती है। कीड़ा और पंखी लगनेसे भी कपासका सत्यानाश हो जाता है। प्रायः हिन्दुस्थानके खेतोंमें कपास बहुत कम उपजती है।

कारेणुपालि (सं० पु०) करेणुपालस्य अपत्यम्, करेणु-पाल-इञ्। हस्तिपालकका पुत्र, महावतका लड़का।

कारो, काणा देखो।

कारोंछ (हिं० स्त्री०) १ कालिमा, स्याही। २ धूमकी कालिम, धूयेंकी कालिख। ३ काला जाला।

कारोत्तर (सं० पु०) १ सुरा छाननेको साफी। २ सुरा-मण्ड, शराबका झाग।

कारोत्तम (सं० पु०) कारेण सुरागालनेन उत्तमः। सुरामण्ड, शराबका झाग।

कारोत्तर (सं० पु०) कारेण सुरागालनक्रियया उत्तरति, कार-उत्-तृ-अच्। १ सुरामण्ड, शराबका झाग। २ कूप, कूआं। ३ चर्मादि निर्मित पात्र विशेष।

कारोबार (फा० पु०) कामकाज, लेन देन।

कार्क (अं० पु० Cork) एक वृक्षकी त्वक्, किसी पेड़की छाल। इसका काष्ठ अत्यन्त लघु होता है। इसकी डाट बनाकर बोतलमें लगाते हैं। यह स्पेन और पोर्तगालमें अधिक उत्पन्न होता है। वृक्ष ४० फीट तक बढ़ता है। त्वक्‌की स्थूलता २ इञ्च पर्यन्त रहती है। त्वक् उतार लेनेसे चार-छह वर्ष पीछे फिर निकल आती है। वृक्ष कार्क डेढ़ सौ वर्ष जीता है।

कार्कट (सं० पु०) कर्कटवृक्ष, काकरोल।

कार्कटक, कार्कट देखो।

कार्कटेलव (सं० स्त्री०) कर्कटूनां निवासोऽस्य, कर्कटु-अण्। कोरण्। पा ४।२।८०। कर्कटु पक्षीका निवास-स्थल, एक चिड़ियोंकी रहनेकी जगह।

कार्कण (सं० त्रि०) ककणस्य इदम्, ककण-अण्। १ ककणपक्षि सम्बन्धीय, एक चिड़ियेसे सरोकार रखनेवाला। २ कृमिसम्बन्धीय, कीड़ेसे ताल्लुक रखने-वाला। ३ देहस्थ वायुविशेष सम्बन्धीय, जिस्मकी किसी हवासे सरोकार रखनेवाला। (पु०) ४ वन-कुक्कुट, जंगली मुरगा।

कार्कन्धव (सं० त्रि०) कर्कन्धूनां विकारः अवयवो वा, कर्कन्धु-अण्। बिलादिभ्योऽण्। पा ४।३।१३६। कर्कन्धु सम्बन्धीय, झड़बेरीसे सरोकार रखनेवाला।

कार्कलासेय (सं० त्रि०) ककलासस्य इदम्, ककलास-ढक्। सखादिभ्य। पा ४।२।८०। ककलास सम्बन्धीय, गिरगिटसे ताल्लुक रखनेवाला।

कार्कवाकव (सं० त्रि०) कृकवाकोरिदम्, कृकवाकु-अण्। कुक्कुट सम्बन्धीय, मुरगीसे सरोकार रखनेवाला।

कार्कश्य (सं० क्ली०) कर्कशस्य भावः, कर्कश-ष्यञ्। १ कर्कशता, कड़ीबोली। २ कठिनता, सख्ती। ३ निर्दयता, बेरहमी।

कार्कष (सं० पु०) व्यक्तिविशेष, एक शख्स।

कार्कषायणि (सं० पु०) कार्कषस्य अपत्यं पुमान्, कार्कष-फिञ्। कार्कषके पुत्र।

कार्कषि (सं० पु०) कार्कष-फिञो विकल्पविधानात् इञ्। कार्कषके पुत्र।

कार्कारी (वै० त्रि०) जिसका आवाधकर।

"कमहुत ममवों स्ट्रा गिंभे त्वा कार्कारिणोऽभवीत्।"

कार्कीक (सं० त्रि०) कर्कः श्वेतोऽश्वः स इव, कर्क-इकण्। श्वेत अश्वतुल्य, सफ़ेद घोड़ेके मानिन्द।

कार्ड (अं० पु० Card) १ स्थूलपत्र, मोटा कागज़। २ खुली चिट्ठी। यह लिखा जाता है। ३ ताश, पत्ता।

कार्ण (सं० पु०) कर्णस्य अपत्यं पुमान्, कर्ण-अण्। १ कर्णके पुत्र, वृषकेतु। (क्ली०) २ कर्णमल, कानका मैल। (त्रि०) ३ कर्णेन्द्रिय सम्बन्धी, कानसे ताल्लुक रखनेवाला।

कार्णग्राहिक (सं० पु०) कर्णग्राहस्य अपत्यं पुमान्, कर्णग्राह-ठक्। रेवत्यादिभ्यष्ठक्। पा ४।१।१४६। नाविक पुत्र, मल्लाहका लड़का।

कार्णच्छिद्रक (सं० त्रि०) कर्णच्छिद्रस्य इदम्, कर्ण-छिद्र-अण्, स्वार्थे कन्। कर्णच्छिद्रसम्बन्धीय, कानके छेदसे सरोकार रखनेवाला।

कार्णवेष्टकिक (सं० त्रि०) कर्णवेष्टकाभ्यां समपादि कर्णालङ्काराभ्यां अवश्यं शोभते इत्यर्थः, कर्णवेष्टक-ठञ्। कम्पादिभ्य। पा ५।१।८८। कर्णवेष्टन अलङ्कार द्वारा शोभित होनेवाला, जो बाली वग़ैरह पहने हो।

कार्णश्रवस (वै० क्ली०) सामभेद।

कार्णाटक (सं० पु०) कर्णाटः अभिजनोऽस्य, कर्णाट-

कभी कभी तो फसलका खर्च भी वसूल नहीं होता। लेकिन अवध और बनारसकी तरफ उपज अच्छी रहती है।

बङ्ग तथा बिहार देशके निम्नलिखित स्थानोंमें किस किस समय हल लगाते और किस किस समय कपास बीनते हैं इसकी तालिका नीचे लिखे प्रकार है—

	बोनेका समय	बीननेका समय
कटक	ज्येष्ठ, कार्तिक	आश्विन चैत्र
चट्टग्राम	वैशाख, ज्येष्ठ	अग्रहायण पौष
दरभङ्गा	कार्तिक, ज्येष्ठ	भाद्र
	आषाढ़	चैत्र, वैशाख
मानभूम	ज्येष्ठ, आषाढ़,	अग्रहायण, पौष
	अग्रहायण, पौष	चैत्र, वैशाख
मेदिनीपुर	ज्येष्ठ, आषाढ़,	आश्विन चैत्र
	कार्तिक	वैशाख, ज्येष्ठ
लोहारडागा	कार्तिक	वैशाख, ज्येष्ठ
	आषाढ़	आग्रहायण, पौष
सारन	आषाढ़	वैशाख, ज्येष्ठ
	माघ	भाद्र, आश्विन

बङ्गदेश और बिहारके मध्य कटक, चट्टग्राम, दरभङ्गा, मेदिनीपुर, मानभूम, लोहारडांगा, सारन, त्रिपुरा, जलपाईगोड़ी प्रभृति स्थानोंमें ही अधिक परिमाणमें कपास उपजती है। पटना अञ्चलमें सिर्फ खाकी रंगकी कपास होती है। सन्थाल देशके लोग उसे खड़ुवा कपास कहते हैं। और सफेद कपासको उदवा। सारनमें भागया, भोचरी, फतुवा, कोकता प्रभृति नामोंकी कपास उपजती है। गङ्गाके अञ्चलमें बङ्गीय, राढ़ी, तोचार इन तीन प्रकारकी कपास, दरभङ्गा अञ्चलमें कोकटी मेरा और भागला यह तीन प्रकारकी कपास प्रचलित है। कटकमें भोर अलुवा और हलदिया प्रसिद्ध है।

भारतमें कपासकी खपत पहले विलक्षण थी। आजकल उत्पन्न कार्पासका अधिकांश बाहर भेज दिया जाता है। बाहर भेजी जानेवाली कपासके अनेक नाम हैं। नीचे उनमें कुछ संक्षिप्त विवरण दिया गया है। अंगरेज महाजनोंके हाथ ही कपासकी रफ्तनी होती है। अतः कितने ही अंगरेजी नाम लिखे हैं।

धहेरा—बड़ोदा, कच्छ और काठियावाड़से रफ्तनी होती है। वह भावनगरी, भोवाई, बादवाडरी, बीरमूगांववाली, वेरावली, कच्छी आदि कई प्रकारकी रहती है।

बङ्गाली—बङ्गाल, पञ्जाब, युक्तप्रदेश, राजपूताना और मध्यभारतमें उपजती है।

अमरावती—के भी कई भेद हैं।

खानदेशी—खानदेशसे आती है।

उमरा—बरार प्रदेशमें होती है।

विलायती खानदेशी—अमरावती प्रभृति स्थानोंसे आती है।

वेष्टारनस—मन्द्राज, निजामराज्य और पश्चिम भारतकी कपास है।

धारवाड़ी—धारवाड़, विजयपुर और दक्षिण महाराष्ट्रमें उपजती है।

कुमता—विजयपुर, बेलगांव, कोल्हापुर और दक्षिण महाराष्ट्र प्रदेशकी कपास है।

भड़ोंची—बड़ोदा, भड़ोंच और सूरत प्रदेशसे प्राप्त होती है।

कोकनदी—लाल रंगकी होती है। यह मन्द्राजके अन्तर्गत कृष्णा जिले, नेलूर और गोदावरी प्रदेशमें उत्पन्न होती है।

तिनवली—तिनवली, कोयेम्बतूर, तञ्जोर प्रभृति स्थानोंसे आती है।

हींगनघाटी—मध्यप्रदेशमें उपजती और बम्बईसे रफ्तनी होती है।

सिन्धी—सिन्धुप्रदेशमें पैदा होती है।

आसामी—आसाममें उत्पन्न होती है।

कार्पासके असंख्य प्रकार भेद हैं। फिर भिन्न भिन्न स्थानोंमें भिन्न भिन्न प्रकारसे उत्पादन करनेकी रीति और प्रणाली प्रचलित होती है।

कार्पासका धागा जितना ही बड़ा रहेगा, उतना

अण् स्वार्थे कन्। १ कर्णाट देशवासी। (त्रि०) २ कर्णाट देशसम्बन्धीय।

कार्णाटभाषा (सं० स्त्री०) कार्णाटानां कर्णाट-देशीयानां भाषा, ६-तत्। कर्णाटदेशीयोंकी भाषा, एक बोली।

कार्णायनि (सं० त्रि०) कर्णेन निर्वृत्तम्, कर्ण-फिञ्।

कार्णि (सं० त्रि०) कर्ण-फिञ् विधानस्य विकल्पत्वात् इञ्। १ कर्ण द्वारा निष्पादित। २ कर्ण सम्बन्धीय।

कार्णिक (सं० त्रि०) कर्णस्य इदम्, कर्ण-ठञ्। कर्णसम्बन्धीय।

कार्त (सं० त्रि०) कृतस्य इदम्। १ कृत्प्रत्ययसे सम्बन्ध रखनेवाला। (क्ली०) कृतमेव स्वार्थे अण्। २ सत्ययुग। कृतः कृत्प्रत्ययस्य व्याख्यानो ग्रन्थः, कृत्-अण्। ३ कृत् प्रत्ययकी व्याख्याका एक ग्रन्थ। (पु०) ४ धर्मनेत्रके पुत्र।

कार्तकौजपादि (सं० पु०) पाणिनि व्याकरणोक्त एक गण। द्वन्द्व समासयुक्त इस गणके सकल शब्दके पूर्व-पदमें प्रकृतिस्वर लगता है। कार्तकौजपादयश्च। पा ६।२।३७। गण यथा—कार्तकौजपौ, सावर्णिमाण्डुकेयौ, अवन्त्य-श्मकाः, पैलश्यापर्णेयाः, कपिश्यापर्णेयाः, शैतिकाक्ष-पाञ्चालेयाः, कटुकवाधूलेयाः, शाकलशुनकाः, शाकल-शणकाः, शणकबाभ्रवाः, आर्चाभिमौद्गलाः, कुन्ति-सुराष्ट्राः, तण्डवतण्डाः, अविमत्तकामविद्धाः, बाभ्र-वशालङ्कायनाः, बाभ्रवदानच्युताः, कठकालापाः, कठ-कौथुमाः, कौथुमलौकाक्षाः, स्त्रीकुमारम्, मौद्गल-पार्थवाः, जरामृत्यू, याज्यानुवाक्ये।

कार्तयश (वै० क्ली०) सामभेद।

कार्तयुग (सं० पु) कृतमेव कार्तः कार्तश्चासौ युगश्चेति कर्मधा०। सत्ययुग।

कार्तवीर्य (सं० पु०) कृतवीर्यस्य अपत्यं पुमान्, कृत-वीर्य अण्। १ चन्द्रवंशीय कृतवीर्य राजाके पुत्र। उनका नामान्तर हैहय, दोःसहस्रभृत् और अर्जुन है। माहिष्मतीपुरी कार्तवीर्यकी राजधानी थी। उन्होंने दत्तात्रेयके योगबलसे युद्ध समय सहस्र हस्त धारण कर सप्तद्वीपा पृथ्वीपर अधिकार किया था। लङ्कापति रावण दिग्विजयके समय उन्हींसे हार निगड़बद्ध हुये। पीछे रावणके पितामह पुलस्त्य मुनिने आकर छुड़ा दिया। कार्तवीर्य जम-दग्निके आश्रमसे उनकी धेनु चुरा लाये थे। इसीसे जमदग्निके पुत्र परशुरामने उन्हें मार डाला। (भाग, अनु० १५२ अ०) २ कोई चक्रवर्ती राजा। इनका दूसरा नाम सुभौम था।

कार्तवीर्यदीप (सं० पु०) कार्तवीर्योद्देशेन दीयमानो दीपः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। कार्तवीर्यके उद्देशसे प्रदत्तदीप, जो दीया कार्तवीर्यके लिये दिया जाता हो। उड्डामरेश्वरतन्त्रमें उक्त दीप देनेकी विधि लिखी है। यथा—किसी शुद्ध स्थानको गोमयसे लीप उसके मध्य-स्थलमें बिन्दुयुक्त त्रिकोणमण्डल बनाना चाहिये। मण्डलकी बहिर्दिक् कुङ्कुम एवं रक्तचन्दन मिश्रित तण्डुल द्वारा षट्कोण और मण्डलके मध्यदेशमें मूल-मन्त्र लिखते हैं। मन्त्रके ऊपर घृतपूर्ण प्रदीप रख सङ्कल्प करनेकी विधि है। सङ्कल्पका मन्त्र यह है—

"कार्तवीर्यं महाबाहो भक्तानामभयप्रद।
ग्रहाण दीपं मद्दत्तं कल्याणं कुरु सर्वदा॥
अनेन दीपदानेन कार्तवीर्यः प्रीयताम्॥"

शुभफलकी कामनासे दीपदानकाल एक प्रदीप पश्चिममुख स्थापन करना चाहिये। फिर अभिचार कार्यमें तीन प्रदीप दक्षिण, उत्तर एवं पश्चिममुख और नष्ट वस्तु प्राप्तिकी कामना पर पांचसे ततोधिक विषम संख्यक प्रदीप रखते हैं। चतुर्वर्गका फल पानेको एक शत दीप और मारणके कार्यमें एक सहस्र या दश सहस्र दीपका दान विधेय है। चांदी, तांबा, लोहा, मट्टी, गेहूं, उड़द और मूंगके चूर्णसे सब दीप बनाना पड़ते हैं। स्वर्ण द्वारा प्रस्तुत करने पर कार्य सिद्धि होती है। रौप्यका दीप देनेसे जगत् वशीभूत हो जाता है। ताम्रके दीपसे शत्रुका भय छूटता है। कांस्य द्वारा निर्मित दीपसे हिंसाकार्य सम्पादित होता है। मारणके कार्यमें लौह द्वारा दीपनिर्माण करते हैं। उच्चाटनमें मृत्तिकाका दीप बनता है। गोधूम चूर्णका दीप देनेसे युद्धमें जयलाभ होता है। शत्रु-मुख स्तम्भनके लिये माषका दीप दिया जाता है। सन्धिके कार्यमें नदीके उभयकूलकी मृत्तिकाका दीप

अन्नमोंपोशाक या व्यवहृत दूष्यादिके लिये कपासकी छींटका कपड़ा खरीदनेसे क्रेता या विक्रेताको २०० पाउण्ड या २०००) रु० जुर्माना देना पड़ता था। किन्तु कार्पासके ऊपर लोगोंका इतना प्रेम रहा कि गोपनमें उसका व्यवहार चलने लगा। क्रमशः इङ्गलेण्डमें भारतीय वस्त्रपर छींटकी मोहर लगी और भारतके बने दोनों वस्त्रोंके प्रचारसे उनका आदर घटा था। फिर वस्त्र बनानेके लिये कार्पासकी भांति दूसरी सामग्री नहीं मिलती। उसका साधारणको प्रयोजन भी पड़ता है। पश्चात् उसके लिये भी कार्पासका प्रयोजन हुआ। कानूनने उसे रोकना चाहा न था। पार्लियामेण्टमें इस सम्बन्ध पर बहुत तर्क चला कि भारतीय कार्पास इङ्गलेण्डके जनका अनिष्टसाधन करता है। १६२१ ई०को ८ वीं मार्चको पार्लियामेण्टने घोरतर तर्क वितर्क कर स्थिर किया कि प्रति वर्ष यहींसे कार्पासके लिये ही ८ लाख रुपया विलायतसे बाहर जाता है। ऐसा अर्थनाश जातीय स्वार्थके लिये विशेष अनिष्टकर है। इतिहासकी यही कथा आजकल भारतमें प्रतिफलित है। मन साहब ईष्ट इण्डिया कम्पनीके एक डिरेक्टर थे। उन्होंने १६२१ ई० को हिसाब लगा कर देखा कि उस वर्ष ५०००० खण्ड कार्पास वस्त्र विलायत गया था। एक खण्ड खरीद जहाजसे भेजाने पर साढ़े तीन रुपया खर्च पड़ता, जो विलायतमें १०) रु० को बिकता था। इससे लाभ यथेष्ट रहा, कम्पनी उतना लाभ छोड़नेको प्रस्तुत न थी। आमदनीके साथ २ लाभका भाग भी बढ़ने लगा। १७०८ ई० को प्रसिद्ध अण्डिम डिफो साहबने वीकली रिव्यू (Weekly Review) नामक पत्रमें लिखा था,—"भारतके साथ यह वाणिज्य बढ़नेसे जनका कारबार आधा बिगड़ गया! इङ्गलेण्डके अधिवासियोंका अर्धांश अन्नकी भांति बलहीन हुआ।"

१७२० ई० [illegible] दूसरा कानून निकला। उसमें क्या इङ्गलेण्ड, क्या स्काटलेण्ड क्या आयरलेण्ड कहीं भी कोई व्यक्ति किसी प्रकारका कार्पासवस्त्र पहनकर परिधान कर न सकता था। कार्पासवस्त्र पहननेमें ५०) रु० जुर्मानेकी सजा थी। फिर बिछौना, तकिया परदा या किसी दूसरे काममें लगी कपड़ा लगानेसे २००) रु० जुर्माना देना पड़ता था। किन्तु कानून बननेसे जो क्या हुआ, इङ्गलेण्डीय अधिवासियोंकी दृष्टि कार्पासकी ओर लगी हुई थी वेशभूषाका कानून उनके हाथमें था। १७३६ ई०में कानूनकी कठोरता लोगोंको घटानी पड़ी। पीछे कानून निकला था—"कपासके कपड़ेका ताना पाट (लिनेन) से बुनकर रखनेसे इङ्गलेण्डमें कोई भी इच्छा करनेसे उसे बना सकेगा।" उसके पीछे २५ वर्षके बीचमें पाट आर्कराइट प्रभृति साहबोंने तरह तरहकी कलें निकालीं उनमें बहुविध सुलभ मूल्यसे उक्त वस्त्र बनने लगा। १७७४ ई० में इङ्गलेण्डमें कार्पासवस्त्र प्रस्तुत करनेके लिये व्यवस्था भी हुयी थी। फिर वस्त्रके कारखानोंमें वस्त्रवयनको कपासकी रूईका प्रयोजन पड़ा। उसीसे भारतके सर्वनाशका सूत्रपात हुआ था। भारतसे कार्पास वस्त्रके बदले कपासकी रूई इङ्गलेण्ड जाने लगी। उनके कारखानोंमें अधिक रूईकी जरूरत थी। भारतकी रूईके साथ साथ अमेरिकाकी रूई भी वहां पहुंचने लगी। १८ वें शताब्दके शेष और १९वें शताब्दके आदिमें अमेरिकाकी रूई मंगायी गयी। उससे पहले अमेरिकाकी रूई इङ्गलेण्ड जाती न थी। क्रमशः वह अधिक परिमाणमें वहां पहुंचने लगी।

ईष्ट इण्डिया कम्पनी भारतसे अधिक परिमाणमें रूई भेजना चाहती थी। किन्तु अमेरिकाकी रूई अपेक्षाकृत उत्कृष्ट थी। उसीसे उसका आदर भी अधिक रहा। १७८८ ई० को कोर्ट आफ डिरेक्टरने भारतके गवरनर-जेनरलको उत्कृष्ट रूई भेजनेके लिये पत्र लिखा था। उससे समझ पड़ा कि इङ्गलेण्डके बाजारमें अमेरिकाकी रूईके साथ भारतीय रूईको विलक्षण प्रतिद्वन्द्विता लगी थी। उस द्वन्द्वमें कभी भारत और कभी अमेरिकाने जय लाभ किया। किन्तु अमेरिकाकी लंबे आंशवाली रूईका आदर और भारतकी छोटे आंशवाली रूईका अनादर क्रमशः होने लगा। फिर भारतीय रूईमें मिलावट रहनेसे अनादर अधिक बढ़ गया। किन्तु अङ्गरेज भारतमें अमेरिकाकी भांति अच्छी रूई

पैदा करनेकी विशेष चेष्टित हुये। भारतमें कृषि एवं पुष्प समितिके सभ्यों और बहुतसे दूसरे लोगोंने उसके लिये बड़ी चेष्टा की थी। १८३० ई०में कलकत्ते-के निकट आखाड़ा नामक स्थानमें ५०० बीघे जमीन ले कपासकी खेती करायी गयी। तीन वर्ष पीछे देखने पर कोई विशेष फल न निकला। इसीसे वह परित्याग हुयी। १८३८ ई० में अमेरिकासे बीज और नये नये यन्त्रोंके साथ दश पारदर्शी लोग भारत बुलाये गये। उनसे तीन बम्बई, तीन मद्रास और चार आदमी बङ्गाल-में रहे। बहुत चेष्टा करते भी शेषको कोई स्थायी फल न मिला। फिर अमेरिकाकी रूईका बीज भारतके कृष-कोंको दिया गया। १८६२ ई० को अमेरिकामें युद्ध लगा था। उससे वहांसे रूई बाहर जा न सकी। अंगरेज भारतमें अमेरिकाकी भांति रूई पैदा करनेकी विशेष चेष्टा करने लगे। भारतकी रूई भी खूब खपी थी। १८३० ई० से पहले सिर्फ तीन करोड़की कपास विलायत जाती थी। किन्तु १८६६ ई० को ३७ करोड़की रूई भारतसे विलायत भेजी गयी। १८६७ ई० को अमेरिका विसंवाद मिटा था। उसीके साथ भारतीय रूईकी रफतनी भी घट चली। इसे वर्ष ८ करोड़ रुपयेसे भी कमकी रूई की रफतनी हुयी।

१८६६ ई० में एक बम्बई प्रदेश और एक मध्य-प्रदेशमें काटन-कमिश्नर नियुक्त हुवा था। उसी वर्ष बम्बैया रूईकी मिलावट निवारण करनेको कानून बना। शेषको विदेशीय बीज छोड़ यन्त्र द्वारा देशीय कार्पासकी उन्नति करनेकी चेष्टा हुयी। वह चेष्टा कुछ कुछ फलवती हुई थी। आज भी विलायतमें भारतकी रूईका यथेष्ट आदर है। नीचे तालिका दी जाती है कि १८७० ई० को इङ्गलैण्डमें किस किस देशसे कितनी रूईकी गांठ पहुंचीं।

अमेरिकासे १६६४०१०, भारतसे १०६१५५०, ब्रेजिलसे ४०२७६०, मिसरसे २१८८२०, और वेष्ट इण्डीज द्वीपपुञ्जसे ११२१०० गांठ। भारतकी रूईका सेर पीछे ॥<) ग्यारह आना मूल्य पड़ा था।

घट जाते भी आजकल इङ्गलैण्डमें भारतकी रूईका बहुत आदर है। इङ्गलैण्डको छोड़ भारतका रूई अन्यान्य देशोंमें भी भेजी जाती है। १८८८-८९ ई०को इङ्गलैण्ड १७ लाख, इटाली ७ लाख, अष्ट्रिया ७ लाख, बेलजियम ८ लाख, फ्रान्स ५ लाख, चीन १ लाख, जर्मनी १ लाख ८० हजार और रूस डेढ़ लाखकी रूई भारतसे पहुंची थी। एतद्व्यतीत इङ्गलैण्डसे अन्यान्य देशोंमें उसे ले जाते हैं। चीनमें सर्वत्र कार्पास उपजता है। फिर भी वहां भारतीय रूईकी जरूरत पड़ती है। किन्तु युरोपमें महासमर हो जानेसे भारतकी रूईकी कम रफतनी होती है। दूसरे महात्मा गांधीने भारतमें बीस लाख चरखे चलानेका आदेश दिया है, इसीसे रूईका बाहर निकलना अब लोग अच्छा नहीं समझते।

बाहर भेजनेके लिये रूईकी गांठ बांधना पड़ती है। फिर आने जानेमें जहाजकी सुविधा असुविधा भी देखते हैं। नियत चेष्टा होती रहती है—जहाजकी थोड़ी जगहमें कैसे ज्यादा माल भर दिया जाय। जहाजके स्थानानुसार किराया भी ठहरता है। महा-जनोंको किराया देना पड़ता है। सुतरां समझनेकी चेष्टा की जाती है—अल्प स्थानमें कितना अधिक माल लद सकेगा। उसी उद्देशसे रूईकी गांठ घटाने और उसमें ज्यादा माल लगानेकी चेष्टा हुवा करती है।

रूईके परिमाणानुसार गांठ घटती बढ़ती है। फिर जहाजके लिये रूईकी गांठ बहुत घटा दी जाती है। उससे भारतमें विलायती वाष्पीयकल प्रस्तुत हुयी है। उन कलकी संख्या दिन दिन बढ़ रही है। १८८८ ई० को भारतमें कोई ढाई सौ वैसी कलें थीं।

भारतकी रूई इङ्गलैण्ड जाती है उससे बहुतसी कलोंमें उस देशका प्रयोजन साधित होता है। फिर इङ्गलैण्ड देशके प्रयोजनसे अधिक कार्पासवस्त्र प्रस्तुत कर सकता है। शेषको कलका वस्त्रादि भारत भी भेजा जाता है। वह भारतमें आकर खपता है। क्रमशः मैनचेष्टरकी कलोंमें भारतीय लोगोंके परिधेय वस्त्रका अनुकरण होने लगा है। वह इङ्गलैण्डसे भारतको भेजा जाता है। सामान्य लोग स्वल्प मूल्यमें उसे खरीद व्यवहार करते हैं। उसीसे भारतीय तन्तुवायोंका व्यवसाय लोप होनेकी अवस्थामें आपड़ा है। व्यवसाय

कालमें संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग और विभाग पांच गुण रहते हैं। साधारण विभाग तीन प्रकार है,—भूत, भविष्यत् और वर्तमान। बीतजानेवालेको भूत, चलनेवालेको वर्तमान और आनेवाले समयको भविष्यत् कहते हैं। किसी किसी शास्त्रमें कालके कई साधारण विभाग हैं। उनके ज्योतिषशास्त्रके विभागोंको ही हम मोटा गिना करते हैं। एतद्भिन्न आयुर्वेदादि शास्त्रमें भी कालका विभाग निर्दिष्ट है। सुश्रुत-संहितामें कहा है, कि काल नित्य पदार्थ है। उसका आदि, मध्य और विनाश नहीं होता। सूर्यकी गतिके अनुसार कालको निमेष, काष्ठा, कला मुहूर्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, सम्वत्सर और युगमें बांटते हैं। लघु वर्णके उच्चारणमें जो समय लगता उसका नाम निमेष पड़ता है। १५ निमेषकी काष्ठा, ३० काष्ठाकी कला, २० कलाका मुहूर्त, ३० मुहूर्तका अहोरात्र, १५ अहोरात्रका पक्ष, २ पक्षका मास, २ मासका ऋतु ३ ऋतुका अयन, २ अयनका वत्सर और १२ वत्सरका युग मानते हैं।

न्यायके मतमें काल विभु, अर्थात् अपरिच्छिन्न परिमाणविशिष्ट और ज्येष्ठत्व तथा कनिष्ठत्व ज्ञानका कारण एक पदार्थ है। वह अनुमान द्वारा सिद्ध होता है। अतीतत्व प्रभृति व्यवहारमें कालही एकमात्र उपयोगी है। काल न रहनेसे कैसे व्यवहार किया जा सकता कि वह अतीत, वह वर्तमान और वह भविष्यत् था। कोई कोई नैयायिक काल और दिक्को ईश्वरसे अभिन्न बताते हैं। न्यायके मतमें खण्डकाल और महाकाल भेदसे काल दो प्रकारका है। खण्डकी कालका नाम खण्डकाल है, फिर विभु और प्रलयकालमें भी विनष्ट न होनेवाले कालको महाकाल कहते हैं। क्षण, दण्ड, पल, विपल, दिन, मास और वत्सर प्रभृति व्यवहारमें खण्डकाल ही कारण होता है। क्योंकि सूर्यके परिस्पन्द अर्थात् गमन द्वारा हम मास और दिन प्रभृति व्यवहार करते हैं। महाकालमें संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग और विभाग पांच गुण हैं। कोई कोई नैयायिक अन्य पदार्थ मानकर खण्डकाल बताते हैं। खण्डकालका अपर नाम कालोपाधि है। कालोपाधि चार प्रकारका होता है। १म कालोपाधि क्रियाजनित विभागको प्रागभावविशिष्ट क्रिया है। जैसे दो संयुक्त द्रव्यमें क्रियाजन्य उत्पन्न होनेसे परक्षण ही वह दोनों बंट जाते और विभागके प्रागभावका विनाश करते हैं। उसके पीछे अन्य किसी देशादिके साथ उसके संयोग और प्रागभावका नाश होता है। पीछे क्रिया भी नष्ट हो जाती है। इस स्थल पर यही देखते हैं—जिस समय क्रिया उत्पन्न हुयी उसी समय वह विभाग प्रागभावविशिष्ट बन गयी। सुतरां उत्पत्तिकाल वह क्रिया प्रथम कालोपाधि है। पूर्वसंयोगविशिष्ट विभाग २य कालोपाधि कहलाता है। जैसे पूर्वोक्त स्थलपर क्रिया उत्पन्न होनेके परक्षण विभागकी उत्पत्ति हुयी। किन्तु उस समय संयोग बना रहा। उसके दूसरे क्षण वह विनष्ट हो जायेगा। सुतरां विभागकी उत्पत्तिके समय विभाग पूर्वसंयोगविशिष्ट रहा है। पूर्वसंयोग नाशविशिष्ट परवर्ती संयोगका प्रागभाव ३य कालोपाधि होता है। पूर्वोक्त स्थलपर पूर्वसंयोगके नाश समय परवर्ती संयोगका प्रागभाव है, सुतरां पूर्ववर्ती संयोगके नाशविशिष्ट परवर्ती संयोगका प्रागभाव उस समय ३य कालोपाधि कहलाता है। उत्तर संयोगविशिष्ट क्रिया ४र्थ कालोपाधि है। पूर्वोक्त स्थलपर जब उत्तर संयोग लगेगा, तब क्रिया उत्तर संयोगविशिष्ट होनेसे ४र्थ कालोपाधि बनेगा।

अथर्ववेदमें कालको सर्वश्रेष्ठ कहा गया है,—

"कालो अश्व वहति सप्तरश्मिः सहस्राक्षो अजरो भूरिरेताः ।
तमारोहन्ति कवयो विपश्चितस्तस्य चक्रा भुवनानि विश्वा ॥१॥
कालो भूमिमसृजत काले तपति सूर्यः ।
काले ह विश्वा भूतानि काले चक्षुर्विपश्यति ॥६॥
काले मनः काले प्राणः काले नाम समाहितम् ।
कालेन सर्वा नन्दन्त्यागतेन प्रजा इमाः ॥७॥
(अथर्वसंहिता, १९ काण्ड, ५३ सूक्त)

"काले वर्षं समीरं दिवौको आगमविनम् ।
काले अ[illegible]पिनः काले [illegible] प्रतिष्ठिताः ॥३॥
काले कर्माणि [illegible] विधाश्चार्थ्यविनिश्चयः ।
[illegible] पुष्पाणि [illegible] ।
सर्वो [illegible] कालः स देवो दाता नु देवः ॥४॥"
(१०।२४ [illegible])

मालको प्रतिद्वन्द्विता रहती है। विलायतमें मजदूरी ज्यादा और भारतमें कम पड़ती है। फिर भारतसे रुई विलायत ले जाने और वहां कपड़ा बनाकर भारत पहुंचानेमें भी खर्च लगता है। भारतमें वस्त्र बुननेको कल खड़ी करनेसे वह व्यय निवारित हो सकता है। इसी विवेचनासे इङ्गलेण्डके लोगोंने यहां का कल खोलनेकी व्यवस्था की है। इससे समझ पड़ा कि इङ्गलेण्डसे कल लाने और उसके चलानेमें अन्ततः इङ्गलेण्डको। आगसे भारतको कलमें बहुत अधिक व्यय लगा था, किन्तु उसके पीछे दूसरी सब सुविधा रहीं। १८५१ को एक समिति बनी थी। १८५४ ई० को प्रथमतः बम्बईमें कपड़ेकी कल खुली। उस समयसे अंगरेज व्यवसायी क्रमशः कलोंकी संख्या बढ़ा रहे हैं। आजकल बम्बई, इन्दोर, जबलपुर, हींगनघाट, नागपुर मोरादाबाद, हैदराबाद, कुम्बर्गा, कानपुर, आगरा, कलकत्ता, मन्द्राज, बेलारी, कालिकट, कोयम्बतूर तूतकुडी, त्रिनवली, तिपाटूर, मङ्गलोर और पुंदि-चेरीमें कपड़ेकी कलें चलती हैं। उनमें कहीं सूत काता और कहीं कपड़ा बुना जाता है। प्रतिवर्ष लाखों मन रुई खर्च होती है। हजारों पुरुष, स्त्रियां, बालक और बालिकायें कामपर नियुक्त हैं।

कार्पास हाथसे रुई संग्रह कर परिष्कार की जाती है। रुईमें बीच बीच बहुतसे बीज लगे रहते हैं। उन्हें निकाल डालना आवश्यक है। इसीसे किसी समतल प्रस्तर खण्ड वा समतल स्थान पर रुई फैला देते हैं। उसपर एक हाथ लंबा लोहदण्ड रखा जाता है। फिर उसपर खड़े हो कर पैरसे माड़ते हैं। उससे बीज नीचे गिरने पर ऊपर साफ रुई रह जाती है। रुई साफ करनेको चरखी भी होती है। उसमें लोहे या लकड़ीके दो गोल डण्डे बराबर बराबर लगे रहते हैं। फिर घुमानेसे वह दोनों संलग्न भावसे घूमने लगते हैं। दाहने हाथसे मुठिया पकड़ चरखी चलाते और बायें हाथसे उन्हीं मिले हुए डण्डोंमें रुई लगायी जाती है। ऐसा करनेसे बीज [illegible] और आगे साफ रुईके

कामें इसके लिए सजिन नामक एक प्रकारकी कल भी बनी है। फिर किसी चलमें भरनेके लिए उक्त रुई पिञ्जारोंसे साफ की जाती है। उनका नाम धुनिये और कमान भी है। उसमें तांतका एक खिंचा रोदा चढ़ा रहता है। सामने रुई रख कमानको बायें हाथसे पकड़ते हैं। फिर रोदा रुई पर जमाया और उसपर एक छोटे मोटे डण्डेसे आघात लगाया जाता है। इससे रुई खूब साफ होती है।

पहले हिन्दुस्थानमें रुई हाथसे साफ की जाती थी। यह काम प्रायः स्त्रियां ही करती थीं। रुई साफ होनेपर चरखेसे सूत कातते थे। पहले हिन्दुस्थानमें घर घर चरखा चलता था। गृहस्थ-रमणी गृहस्थालीका कर्म निपटा अवकाशके समय चरखे पर बैठ सूत कातती थीं। तकुवे पर सूतकी आंटी या पोनी जमी रहती थी। वस्त्रवयन तन्तुवाय लोगोंका कार्य था। वह गृहस्थोंके घरसे आंटी खरीद ले जाते थे। तन्तुवायकी स्त्रियां चावलका मांड़ लगा सूतको दृढ़ बनाती थीं। उसका नाम आर है। तन्तुवाय उस सूतको तांतपर चढ़ा वस्त्रवयन करते थे। आज भी वैसा ही होता है। पहले देशके सब लोगोंका वस्त्र ऐसे ही बनता था। हिन्दुस्थानमें स्थान स्थानपर सुन्दर सुन्दर कार्पास वस्त्र बनते थे, जिन्हें विदेशीय वणिक् प्रसादासे मोल ले धनोपार्जन करते थे। ढाकेमें सर्वापेक्षा उत्कृष्ट वस्त्र प्रस्तुत होता था। वैसा सूक्ष्म वस्त्र कहीं देख पड़ता न था। नीचे उसके कुछ नाम लिखते हैं,—

१ मलमल—आबरोयान्, तनजेब, मलमल—सर्वापेक्षा उत्कृष्ट है। शबनम, खासा, झीना, सरकार आली, गङ्गाजल और तेरिन्दम द्वितीय श्रेणीमें परिगणित है। बाफता,—यथा कगाम, छिटी, थान, अद्दलबदल और गुलबन्द तृतीय श्रेणीमें है।

२ डोरिया—डोराकाट, मखमिल (वारिक वस्त्र) राजकोट, डाकाम, पाद्माबदार, कुन्दोदार, कागजी, कलावान।

३ चारखाना—छींट मलमल कुछ प्रकारकी थी।

ब्रह्माण्डपुराणमें भी लिखा है,—

"सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि चारों कालके युग हैं। सत्ययुग चार सिद्धाविशिष्ट श्वेतवर्ण, त्रेता त्रिसिद्धाविशिष्ट रक्तवर्ण, द्वापर युग द्विसिद्धाविशिष्ट रक्त पिङ्गलवर्ण एवं भयङ्कर; और कलि—पुनः पुनः लिङ्गमात्र एकसिद्धायुक्त तामसवर्णविशिष्ट कृष्णवर्ण होता है। ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र तीनों कालके कलात्मक हैं। समुदाय संसारमें कालके सिवा असाध्य कुछ भी नहीं। काल ही सर्वभूत सृष्ट कर फिर क्रमशः संहार करता है।"

(ब्रह्माण्डपु० अनुष०, ३१ अ०)

कालक (सं० क्ली०) कालं स्वार्थे कन् यद्वा कलयति कोष्ठगति रक्तादीन्, कल-णिच्-ण्वुल्। १ कालखण्ड, कलेजी। अमरटीका। २ यकृत्, गुरदा। (पु०) ३ जतुक, चंसनी। ४ जलगर्द सर्प, पानीका एक सांप। ५ राक्षसविशेष, एक आदमखोर। ६ असुरका एक वंश, कालकी पुत्री। ७ बीजगणितोक्त अव्यक्त राशिकी एक संज्ञा। ८ जनपदविशेष, एक बस्ती। पञ्जलिके महाभाष्य मतमें इस स्थान प्राचीन आर्यावर्तकी पूर्वसीमा था। (पा २।४।१० महाभाष्य) ९ कोई प्रसिद्ध जैनसूरि। यह महावीरनिर्वाणके ४६५ वर्ष पीछे जीवित थे। किसीके मतानुसार इन्होंने पर्युषणापर्व बदला था। कालक ही गर्दभिल्लके ध्वंसके कारण थे। १० कोई जैनसूरि। पहले भाद्रपदकी शुक्लपञ्चमीको पर्युषणापर्व होता था। अनेक लोगोंके मतमें इन्होंने महावीर-निर्वाणके ९९३ वर्ष पीछे अर्थात् ५२३ विक्रम संवत्को चतुर्थी तिथिमें पर्वदिन स्थिर किया था। इनहीके मतानुसार श्वेताम्बर जैन पर्युषण पर्व मानते हैं। परन्तु दिगम्बर जैन अब भी वही महावीर स्वामी द्वारा उपदिष्ट शुक्ल पञ्चमीको ही पर्व आरम्भ करते हैं। (त्रि०) ११ कृष्ण-वर्णयुक्त, काला। १२ कलित्व वर्णविशिष्ट, धब्बे दागदार। १३ कृष्णवर्ण, सर्प, सांप।

कालकट्ट (सं० पु०) तिलोंका वकल, तिलोटका पेड़।

कालकङ्गु (सं० स्त्री०) काला कृष्णवर्णा कङ्गुः कर्मधा०। कङ्गुभेद, काली गुरचा।

कालकचूर्ण (सं० क्ली०) चूर्णविशेष, एक बुकनी। गृहधूम, यवक्षार, पाठा, व्योष, रसाञ्जन, तेजोवा, त्रिफला, लिवक और शुद्ध लोह बराबर बराबर कूट पीस क्षौद्रके साथ मुखमें रखनेसे दन्त, मुख तथा गलरोग विनष्ट होता है। (चक्रदत्त)

कालकञ्ज (सं० क्ली०) कालं कृष्णवर्णं कञ्जम्, कर्मधा०। १ नीलपद्म, काला कंवल। (पु०) २ कोई दानव।

कालकटङ्कट (सं० पु०) कालस्य कटङ्कटः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। शिव, महादेव।

"ईश्वरो दण्डी नागी धन्वी कालकटङ्कटः।" (भारत, अनुशासन १७ अ०)

कालकण्टक (सं० त्रि०) कालः कृष्णवर्णः कण्टको यस्य, बहुव्री०। कृष्णवर्णकण्टकयुक्त, काले-कांटे-वाला। (पु०) कालकण्ठक देखो।

कालकण्टकरस (सं० पु०) रसविशेष, एक दवा। हीरकभस्म १ भाग, पारद २ भाग, अभ्र ३ भाग, स्वर्ण ४ भाग, ताम्र ५ भाग, और तीक्ष्ण लौहकिट्ट ६ भाग अम्लवर्गमें १ दिन मर्दन करते हैं। फिर यवक्षार, सज्जिक्षार, सोहागा, और पञ्च लवण एक मर्दित द्रव्यके समान डाल ३ तीन दिन निर्गुण्डीके रसमें रगड़ा जाता है। सूखने पर चूर्ण बना षष्ठभाग विषचूर्ण एवं सोहागेका फूला मिला कर १ दिन निम्बूके रसमें घोटनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। मात्रा २ गुञ्जा है। आर्द्रकके रसमें यह खाया जाता है। इसके सेवनसे वातरोग आरोग्य होता है।

(रसेन्द्रचिन्तामणि ८ अ०)

कालकण्ठ (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः कण्ठो यस्य, बहुव्री०। १ शिव, महादेव। २ पीतशाल वृक्ष, असनेका पेड़। ३ मयूर, मोर। ४ खञ्जनपक्षी, खड़रैचा। ५ कलविङ्क, चिड़ा। ६ जलकुक्कुट, मुर्गाबी। ७ कासमर्दक्षुप, कसौंदी। ८ दात्यूह, चंपा कौवा।

कालकण्ठक (सं० पु०) कालः कृष्णः कण्ठः अस्य कालकण्ठ कप् कालकण्ठ स्वार्थे कन् वा। १ दात्यूह

यथा—नन्दनशाही, अनारदाना, कबूतरखोप, सफून, बढ़ादार और कुंडिदार।

४ जामदानी—अङ्गरेज इसको नेनसुख कहते थे। साधारण यह बूटेदार होती थी। यथा—सुवरन-बूटी, कव्याल, दुबलीजाल मैल, सिरका। एतद्व्यतीत ढाकेकी धोती, ओढ़नी और साड़ी चिरप्रसिद्ध है।

ढाकेके तन्तुवायोंने दिखाया और दिखाते भी हैं—रुईका धागा कितना बारीक बन सकता और उन धागोंसे कैसा उमदा कपड़ा बुना जा सकता है। इसके सम्बन्धमें एक गल्प है। यह बात ऊपर लिखे नामोंको पढ़ते ही समझ पड़ती है कि मुसलमान बादशाहोंके समय उन वस्त्रोंका विशेष आदर रहा। कहते हैं कि औरङ्गजेबकी एक कन्या उनके निकट उक्त ढाकेके वस्त्र पहनकर पहुंची थी। पिताने उसे भर्त्सना दी कि यह लज्जाहीन है। उत्तरमें कन्याने कहा कि उसने सात तरहका कपड़ा पहना था। नवाब अलीवर्दी खांके समय किसी जुलाहेने एक धोया कपड़ा घासपर सुखानेको डाला था। उसकी गाय वहां घास चरने गयी। गायने कपड़ेको घास समझ खा लिया। सूक्ष्मताका इससे अधिक परिचय दूसरा क्या हो सका है! उक्त सूक्ष्म वस्त्र प्रस्तुत करनेमें बड़ा समय लगता है। २० हाथ लम्बा और २ हाथ चौड़ा वैसा कपड़ा बुननेमें ५।६ मास बीत जाते हैं। तिसपर भी गरमीके समय बुननेका डौल नहीं बैठता। वर्षाकाल ही वैसे कार्पासवस्त्रके बुननेका उत्तम समय है। उसका मूल्य तीन चार सौ रुपयेसे कम नहीं लगता। जो स्त्रियां वैसा सूक्ष्म सूत कातती थीं, उनमें अनेक मर रहीं दो एक आज भी बची हैं। आज उन वस्त्रोंका बिलकुल आदर नहीं होता। फिर आगा भी नहीं कभी उनका आदर होगा। आजकल विलायती कलके कपड़ेसे देश भर गया है। सौभाग्यक्रमसे आज भी देशके कुछ लोग देशीय कार्पासवस्त्र पहनते हैं। उसीसे हिन्दुस्थानमें स्थान स्थान पर देशी कपड़ा थोड़ा बहुत बनता जाता है। किन्तु सूत इङ्गलेण्डसे आता है। पहले इस देशमें वस्त्र बनाकर विदेश भेजते थे। आजकल सिर्फ रुईकी रफतनी होती है। सुतरां वस्त्रवयन करनेवालोंमें अनेक अन्नहीन और अन्यव्यवसाय-आश्रित हैं।

आसाममें आज भी देशी कार्पाससे देशी वस्त्र प्रस्तुत होता है। स्त्रियां ही सूत कातती और कपड़ा बुनती हैं। किन्तु वहां भी विलायती वस्त्रका आदर क्रमशः बढ़ रहा है। आसामियोंके बहुतसे कपड़े कपाससे बनते हैं।

युक्तप्रदेशके सिकन्दराबाद और बुलन्दशहरमें बहुत बारीक कपड़ा तैयार होता है। उसके किनारे जरीकी गोट लगती है। दुपट्टे और पगड़ीमें ही जरीकी गोटका अधिक व्यवहार है। सिकन्दराबादके दुपट्टे बहुत अच्छे होते हैं। आजमगढ़का बना बारीक कपड़ा नेपालमें बहुत खपता है। अवधका गरबती, मलमल, चारखाने, डोरिया और तारन्दम सूक्ष्म वस्त्र प्रसिद्ध है। रायबरेलीकी जईं नामक स्थान, काशी और फैजाबादके टांडेमें अतिचमत्कारी सूक्ष्म वस्त्र प्रस्तुत होता है। किन्तु अवधके अधःपतनसे उक्त कारकार्य भी बिगड़ गया है। रामपुरका कार्पासनिर्मित खेस कलकत्तेकी प्रदर्शनीमें पुरस्कृत हुआ था। मुरादाबाद, प्रतापगढ़, कानपुर, ललितपुर, शाहपुर, मिर्जापुर, अलीगढ़, भांसीके अन्तर्गत मऊ, आजमगढ़के अन्तर्गत मऊ, सहारनपुर, मेरठ, और आगरा प्रभृतिमें नानाविध कार्पासवस्त्र बनता है। उनमें कितना ही आज भी विदेश भेजा जाता है। एतद्व्यतीत गाढ़ा, गजी और धोती जोड़ा युक्तप्रदेशके प्रायः सकल स्थानोंमें प्रस्तुत होता है। देशके सामान्य लोग अधिकांश वही वस्त्र व्यवहार करते हैं।

पञ्जाबप्रदेशके पूर्व एक प्रकारके मसलिनसे सुन्दर पगड़ी बनती थी। वह वस्त्र आजकल देख नहीं पड़ता। होशियारपुर, सिरसा, जालन्धर, लोधियाना, शाहपुर, गुरदासपुर और पटियालेमें पगड़ीका कपड़ा बनता है, किन्तु वह पूर्वकी भांति उत्कृष्ट नहीं होता। रोहतकमें तंजेब नामक एक प्रकारका अपेक्षाकृत उत्कृष्ट मसलिन बनाया जाता है। जालन्धरमें घाट नामक मारकीनकी भांति मोटा कपड़ा होता है।

पक्षी, एक चिड़िया। २ पीतसालवृक्ष, असनेका पेड़।

कालकन्द (सं॰ पु॰) महाकन्द, बड़ा कन्दा।

कालकन्दक (सं॰ पु॰) कालः कन्द इव कायति प्रकाशते, काल-कन्द-कै-क यद्वा कालं कृष्णसर्पं कन्दति स्वरूपतया स्पर्धते, काल-कदि-अच् स्वार्थे कन्। जलसर्प पनिहा सांप।

कालकन्ध (सं॰ पु॰) तमालका पेड़।

कालकन्या (सं॰ स्त्री॰) जरा, बुढ़ापा।

कालकसुरक (सं॰ पु॰) कृष्णपुष्प, घण्टापाटलिका, काले फूलका वनपलाश ढाक।

कालकरञ्ज (सं॰ पु॰) काला कञ्जा।

कालकरण (सं॰ क्ली॰) समयका स्थिरीकरण, वक्तका ठहराव।

कालकर्णिका (सं॰ स्त्री॰) कालस्य कर्णिका-इव, उपमित समा॰। अलक्ष्मी, बदकिस्मती।

कालकर्णी (सं॰ स्त्री॰) कालः कर्णोऽस्याः, काल-कर्ण-अच्-ङीप्। अलक्ष्मी, बदकिस्मती। अलक्ष्मी देखो।

कालकर्म (सं॰ क्ली॰) कालं अनिष्टकारि कर्म, कर्मधा॰। १ अनिष्टकारक कार्य, बुराई पैदा करनेवाला काम।

"मैत्र्यं भीतितवान् अहता कालकर्म वा।" रामायण ६।७१

२ मृत्यु, मौत।

कालकलाय (सं॰ पु॰) कालः कृष्णवर्णः कलायः, कर्मधा॰। १ कृष्णकलाय, काला मटर। २ काला उड़द।

कालकल्प (सं॰ त्रि॰) ईषत् समाप्तः कालः, काल-कल्पप्। यमतुल्य, मौतकी बराबरी करनेवाला।

कालकवि (सं॰ पु॰) अग्नि, आग।

कालकवृक्षीय (सं॰ पु॰) कालको वृक्षो यत्र देशे तत्र भवः, कालक-वृक्ष-छ। काकचरित्रज्ञ एक ऋषि।

कालकस्तूरी (सं॰ स्त्री॰) कस्तूरी वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका बीज मसकर सूंघनेसे कस्तूरी की तरह महकता है।

कालका (सं॰ स्त्री॰) काल एव स्वार्थे कन्-टाप्। १ कालकेयनामक असुरोंकी माता। २ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। ३ दक्षमाता। ४ वैश्वानरकी कन्या।

कालकाञ्ज (सं॰ पु॰) असुरविशेष, एक राक्षस।

कालकाञ्ज (वै॰ पु॰) १ वैदोक्त कालचिह्नयुक्त पशुभेद, काले निशानका एक जानवर। २ राशिभेद।

कालकार (सं॰ त्रि॰) समय बनानेवाला, जो वक्त पैदा करता हो।

कालकारित (सं॰ त्रि॰) समयपर किया हुआ, जो वक्तसे बना हो।

कालकार्मुक (सं॰ पु॰) खरदूषणको सेनाका एक अधिपति। इसे रामने मारा था। (रामायण)

कालकाल (सं॰ पु॰) कालं कलयति नोदयति, काल-णिच्-कल-अण्। १ परमेश्वर। २ मन्द्राज प्रदेशस्थ टाइश्वरका निकटवर्ती एक प्राचीन तीर्थस्थान।

कालकीर्ति (सं॰ पु॰) एक राजा, यह असुर सुपर्णके समान थे।

कालकील (सं॰ पु॰) कालं प्रहारकालोपयुक्तं सुप्रमहारादिकं कीलयति आहणोति, काल-कील-अण्। कोलाहल, हल्ला। किसी प्रहारके समय कोलाहल उठनेसे वह प्रहार दब जाता और 'कालकील' कहलाता है।

कालकुण्ठ (सं॰ पु॰) कालेन कालरूपिणा परमेश्वरेण कुण्ठयते असौ, काल-कुण्ठ कर्मणि घञ्। यम।

कालकुष्ठ (सं॰ क्ली॰) कालात् कृष्णपर्वतात् कुष्यते, काल-कुष कर्मणि क्त। पार्वतीय मृत्तिकाविशेष, कङ्कुष्ठ पहाड़की मट्टी। कङ्कुष्ठ देखो।

कालकूट (सं॰ पु॰ क्ली॰) कालस्य मृत्योः कूटं दूत इव उपमि॰ यद्वा कालं विषमपि कूटयति अवसादयति, कालकूट अच्। १ विषसामान्य, मामूली जहर। २ चीन, चून खानेवाले। ३ वत्सनाभ, बच्छनाग। ४ काक, कौवा। ५ गिरिविशेष, एक पहाड़। यह वर्तमान कालीगङ्गक नदीके निकट अवस्थित है।

"कृतवाः कुलिन्दाश्च तु मध्येन कुरुजाङ्गलम्।
रम्यं पद्मसरो गत्वा कालकूटमतीत्य च॥" (भारत २।२०।२६)

६ स्थावर विषविशेष, काला बच्छनाग। देवासुर युद्धके समय पृथुमाली नामक कोई असुर देवगण द्वारा मारा गया था। उसके रक्तसे अश्वत्थ वृक्षकी भांति एक वृक्ष उत्पन्न हुआ। उसी वृक्षके निर्यासका नाम काल-

इसपर एक प्रकारका कारकार्य रहता है। यह बुलबुल चश्मेकी आंखके आदर्श पर बुना जाता है, इसे "बुलबुल-चश्म" कहते हैं। आजकल इस शिल्पका लोप हो रहा है।

अब तो केवल रेजा, लुंगी एवं सूसी नामक बारीक वस्त्र और दुसुती, गाढ़ा तथा गजी नामक मोटा कपड़ा ही देख पड़ता है। राजपूतानेमें भी यथोक्त चार प्रकारका वस्त्र बनता है। ग्वालियरके चांदेरी नामक स्थानमें उत्कृष्ट मसलिन तैयार होता है। इन्दौरका मसलिन भी बहुत खराब नहीं रहता। देवास राज्यके अन्तर्गत सारंगपुरमें धोती, साड़ी और पगड़ी प्रस्तुत होती है।

मध्यप्रदेशके नागपुर, भण्डारा और चांदा जिलेमें आज भी सूक्ष्म सूत कतता और उससे वस्त्र बनता है। १८६७ ई० को चांदा प्रदेशमें एक प्रदर्शनी हुयी। उसमें हाथका बना सूत देखाया गया था। वह सूत इतना बारीक रहा कि सिर्फ आध सेर सूत ५८ कोस लंबा निकला। नागपुरमें रूईका पेंच खुल जानेसे उक्त शिल्पका बहुत गौरव घट गया है। किन्तु पेंचका सूत आज भी उतना उत्कृष्ट नहीं होता। उसमें कुछ कुछ गौरव हुवा है। देशी वस्त्र अधिक दिन टिकता है। इसीसे यहांके गरीब लोग विलायतीसे देशी वस्त्रका आदर अधिक करते हैं। होशङ्गाबादमें देशी वस्त्रका व्यवसाय बढ़ रहा है।

दाक्षिणात्यके हैदराबाद अञ्चल पर रायचूर जिलेमें खाकी रंगका मोटा कपड़ा और नन्देर जिलेमें बारीक मसलिन तैयार होता है। मन्द्राज प्रान्तके अरनी नामक स्थानका बारीक मसलिन अति उत्कृष्ट रहता है।

बम्बई प्रदेशमें विलायती वस्त्रका विशेष आदर बढ़ते भी गांव गांवमें रूईका देशी मोटा कपड़ा बनता है। सामान्य लोग मोटी साड़ी और पगड़ीका विशेष आदर करते हैं।

अनेक स्थानमें रूईके सूतमें रेशम या ऊन मिला तरह तरहका कपड़ा बनाते हैं। कहीं कहीं रूईके कपड़ेमें रेशमी किनारा लगाया जाता है। फिर कहीं रेशमी बेल बूटे, जरीके बेलबूटे और रूईका काम बनाते हैं। उसके अनेक नाम हैं—जारबोटी, कलाबत्तू, चिकन, कामदानी और जामदानी। जामदानी—करेला, तोड़ेदार, बूटीदार, और तिरछा आदि कई प्रकारकी होती है।

फूलदार रूईके नानाविध वस्त्र बानकरोंके निकट बनाये जाते हैं। उनकी बिक्री हबशके बाजारमें अधिक होती है।

रूईके वस्त्रपर तरह तरहका रंग चढ़ाया जाता है। उसपर छाप भी कई प्रकारकी लगती है।

रूईका कपड़ा पहले अंगरेज कालीकटसे ले जाते थे। उसीसे उन्होंने उसको कैलिको (Calico) नामसे अभिहित किया है। रंग देनेको कैलिको-डाइङ्ग (Calico-dying) और छाप मार छींट बनानेको कैलिको-प्रिण्टिङ्ग (Calico-printing) कहते हैं। किसी किसी कपड़ेपर सुनहली छाप पड़ती है। छाप लगानेसे तरह तरहकी छींट बनती है। छींटके कपड़ेसे रजाई, तकियेका गिलाफ, तोशक, पलंगपोश, जाजिम, शामियाना वगैरह तैयार होते हैं। रंगदार कपड़ेमें माल बहुत अच्छी रहती है। फिर छापदार कपड़ेमें सुनहरीका प्रचार अधिक है। इस देशमें रजक ही रूईका कपड़ा धोते हैं।

विलायती वस्त्रके प्रभावसे देशस्थ कार्पास-शिल्प क्रमशः लुप्त हो रहा है। आशङ्का होने लगी है—जो शिल्प है वह भी काल पाकर न रहेगा। पहले कार्पासवस्त्र देशके प्रयोजनसे अत उद्वृत्त होनेपर विदेश भेजा जाता था। अब वह समय नहीं रहा। आजकल शिल्पी अन्नहीन हो गये हैं।

भावप्रकाशके मतमें कार्पासवृक्ष—लघु, ईषत् उष्णवीर्य, मधुररस और वायुनाशक है। इसका पत्र—वायुनाशक, रक्तकारक और मूत्रवर्धक होता है। बीज—स्तन्य-दुग्धवर्धक, शुक्रवर्धक, स्निग्ध, कफकारक और गुरु है।

(त्रि०) कर्पासस्य विकारः अवयवो वा, कर्पास-अण्। [illegible] २ कार्पासजात, कपासी, कपासका बना हुवा। इसका संस्कृत पर्याय—फाल और बादर है।

"इदं वसनकार्पासमविकं मृदु चाजिनं।" (भारत [illegible])

कार्पासक (सं० पु० क्ली०) कार्पास स्वार्थे कन्। कार्पास वृक्ष, कपासका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—कार्पास, कार्पासी, तुण्डकेरी और समुद्रान्ता है।

कार्पासकी (सं० स्त्री०) कार्पासी, कपास।

कार्पासतैल (सं०क्ली०) नाड़ीव्रणका तैलविशेष, कपासका तैल। तिलका तैल ४ शरावक, जल १६ शरावक और कार्पासमूल तथा हरिद्राका कल्क १ शरावक यथाविध पकानेसे यह तैल बनता है। (रत्नाकर)

कार्पासधेनु (सं० स्त्री०) कार्पासवस्त्रनिर्मिता धेनुः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। दानके लिये कार्पासनिर्मित धेनु, कपासकी गाय। वराहपुराणमें इसके दानका विधि कही है। यथा,—"विषुवसंक्रान्तिको, युगाद्यके दिन और ग्रहपीड़ा, दुःस्वप्नदर्शन एवं अरिष्ट दर्शनादि अमङ्गल पड़नेसे पवित्र देवालय अथवा विशुद्ध गोचारण स्थलपर गोमय द्वारा दानस्थान लीपना चाहिये। फिर उसके ऊपर कुश तिल फैला देते हैं। उसके पीछे उक्त स्थानके मध्यस्थलमें धेनु स्थापनकर वस्त्र, माल्य, अनुलेपन, नैवेद्य और धूप दीपादिसे पूजा करना चाहिये। अनन्तर कुशहस्त दानमन्त्र पढ़ श्रद्धाके साथ कार्पासधेनु द्विजातिको देनी पड़ती है। वह ४ भार वस्त्र द्वारा निर्मित होनेसे उत्तम, २ भार वस्त्र द्वारा निर्मित होनेसे मध्यम, और १ भार वस्त्र द्वारा निर्मित होनेसे अधम गिनी जाती है। उक्त परिमाणके चतुर्थांश द्वारा वत्स बनाना पड़ता है। फिर कार्पासधेनुके सकल दन्त नानाविध फल द्वारा, खुर रौप्य द्वारा और शृङ्ग स्वर्णद्वारा निर्माण करते हैं। उसका गर्भस्थल विविध रत्नसे पूर्ण किया जाता है। इस प्रकार यथाविधि धेनु दान करनेसे अन्तिम समय इन्द्रलोक मिलता है।"

कार्पासनासिका (सं० स्त्री०) कार्पासस्य नासिका इव, उपमि०। तर्कु, तकला, तकवा।

कार्पासपर्वत (सं० पु०) कार्पासवस्त्रनिर्मितः पर्वतः, मध्यप०। दानके निमित्त कार्पासवस्त्रनिर्मित पर्वत, रुईके कपड़ेका पहाड़। ब्रह्माण्डपुराणमें उसके दानका विधानादि इस प्रकार लिखा है,—"देवालय प्रभृति पवित्र स्थानका कियदंश गोमयसे लीप उसपर कुश और तिल फैला देना चाहिये। फिर उसके मध्य देशमें कार्पासवस्त्रनिर्मित पर्वत स्थापना कर यथाविधि पूजा समापनान्त कुशहस्त मन्त्रपाठपूर्वक द्विजातिको दान करते हैं। उक्त कार्पासवस्त्रराशि विंशति भार होनेसे उत्तम, दश भार होनेसे मध्यम और पञ्च भार होनेसे अधम गिना जाता है। उसमें विविध धान्य प्रभृति और नानाविध ओषधि तथा रस अधिविष्ट करते हैं। कार्पासपर्वत चारो दिक् स्वर्ण शिखर, विविध रत्न और नानाप्रकार भक्ष्यभोज्ययुक्त चार कुलाचल स्थापन कर दान करनेका विधि है। इस प्रकार दान करनेसे स्वीय वंश उद्धार होता है।"

कार्पाससौत्रिक (सं० त्रि०) कार्पाससूत्रेण निर्वृत्तः, कार्पाससूत्र ठक्, द्विपदवृद्धिः। कार्पासके सूत्र द्वारा निर्मित, कपासके सूतका बना हुवा।

कार्पासास्थि (सं० क्ली०) कार्पासानां अस्थि, ६-तत्। कार्पासबीज, बिनौला।

कार्पासिक (सं० त्रि०) कार्पासाज्जातम्, कार्पास-ठक्। कार्पास द्वारा निर्मित, कपासका बना हुवा।

कार्पासिका (सं० स्त्री०) कार्पासी स्वार्थे कन्-टाप् पूर्वह्रस्वः। कार्पासी, कपास।

कार्पासी (सं० स्त्री०) कार्पास-जातित्वात् ङीष्। रक्तकार्पासक्षुप, लाल कपास। इसका संस्कृत पर्याय—बदरा, तुण्डिकेरी, समुद्रान्ता, सारिणी, वन्या, तुला, गुड़ तुण्डकेरिका, मरुद्भवा, पिचु और बादर है।

कार्म (सं० त्रि०) कर्मसु शीलं अस्य छत्रादित्वात् णः, निपातनात् साधुः। १ फलकी आकांक्षा छोड़ कर्म करनेवाला, जो नतीजा मिलनेकी ख्वाहिश न रख काम करता हो। २ कर्मशील, कामकाजी।

कार्मिक, कार्मुक देखो।

कार्मण (सं० क्ली) कर्म एव, कर्म स्वार्थे अण्। तद्युक्तात् कर्मणोऽण्। पा ५।४।३६। १ मूलकर्म, जादू, टोना। औषधादिके मूलसे जो स्तम्भन, उच्चाटन, मारण, वशीकरण प्रभृति कार्य किया जाता, वही कार्मण कहाता है। २ मन्त्रतन्त्रादि योग। (त्रि०) ३ कर्मसाध्यत्वेन अस्त्यस्य, कर्मन्-अण्। ३ कर्मदक्ष, काममें होशियार।

पक्षी, एक चिड़िया। २ पीलशालवृक्ष, असनेका पेड़।

कालकन्द (सं॰ पु॰) महाकन्द, बड़ा कन्द।

कालकन्दक (सं॰ पु॰) कालः कन्द इव कायति प्रकाशते, काल-कन्द-कै-क यद्वा कालं कृष्णवर्णं कन्दति स्वरूपतया अर्थते, काल-कदि-अण् स्वार्थे कन्। जलसर्प पनिहा साँप।

कालकन्ध (सं॰ पु॰) तमालका पेड़।

कालकन्या (सं॰ स्त्री॰) जरा, बुढ़ापा।

कालकमुष्क (सं॰ पु॰) कृष्णपुष्प, घण्टापाटलिका, काले फूलका वनपलास ढाक।

कालकरञ्ज (सं॰ पु॰) काला करञ्जा।

कालकरण (सं॰ क्ली॰) समयका स्थिरीकरण, वक्तका ठहराव।

कालकर्णिका (सं॰ स्त्री॰) कालस्य कर्णिका इव, उपमित समा॰। अलक्ष्मी, बदकिस्मती।

कालकर्णी (सं॰ स्त्री॰) कालः कर्णोऽस्याः, काल-कर्ण-अच्-ङीष्। अलक्ष्मी, बदकिस्मती। अलक्ष्मी देखो।

कालकर्म (सं॰ क्ली॰) कालं अनिष्टकारि कर्म, कर्मधा॰। १ अनिष्टकारक कार्य, बुराई पैदा करनेवाला काम।

"पित्र्यं प्रोतिस्तदा महता कालकर्मणा।" रामायण ६।७२

२ मृत्यु, मौत।

कालकलाय (सं॰ पु॰) कालः कृष्णवर्णः कलायः, कर्मधा॰। १ कृष्णकलाय, काला मटर। २ काला उड़द।

कालकल्प (सं॰ त्रि॰) ईषत् असमाप्तः कालः, काल-कल्पप्। यमतुल्य, मौतकी बराबरी करनेवाला।

कालकवि (सं॰ पु॰) अग्नि, आग।

कालकवृक्षीय (सं॰ पु॰) कालकको वृक्षो यत्र देशे तत्र भवः, कालक-वृक्ष-छ। काकचरित्रज्ञ एक ऋषि।

कालकस्तूरी (सं॰ स्त्री॰) कस्तूरी वृक्ष विशेष, एक पेड़। इसका बीज मसलकर सूंघनेसे कस्तूरी की तरह महकता है।

कालका (सं॰ स्त्री॰) काल एव स्वार्थे कन्-टाप्। १ कालकेयनामक असुरोंकी माता। २ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। ३ दक्षमाता। ४ वैश्वानरकी कन्या।

कालकाच (सं॰ पु॰) असुरविशेष, एक राक्षस।

कालकाञ्ज (वै॰ पु॰) १ वेदोक्त कालचिह्नयुक्त पशुभेद, काले निशानका एक जानवर। २ राशिभेद।

कालकार (सं॰ त्रि॰) समय बनानेवाला, जो वक्त पैदा करता हो।

कालकारित (सं॰ त्रि॰) समयपर किया हुआ, जो वक्तसे बना हो।

कालकार्मुक (सं॰ पु॰) खरदूषणकी सेनाका एक अधिपति। इसे रामने मारा था। (रामायण)

कालकाल (सं॰ पु॰) कालं कालयति नोदयति, काल-णिच्-कल-अण्। १ परमेश्वर। २ मन्द्राज प्रदेशस्थ टाइवरके निकटवर्ती एक प्राचीन तीर्थस्थान।

कालकीर्ति (सं॰ पु॰) एक राजा, यह असुर सुपर्णके समान थे।

कालकील (सं॰ पु॰) कालं प्रशस्तकालोपयुक्तं कुप्रसङ्गादिकं कीलयति आहन्ति, काल-कील-अण्। कोलाहल, हल्ला। किसी प्रसङ्गके समय कोलाहल उठनेसे वह प्रसङ्ग दब जाता और 'कालकील' कहलाता है।

कालकुण्ठ (सं॰ पु॰) कालेन कालकृपया परमेश्वरेण कुण्ठ्यते असौ, काल-कुण्ठ कर्मणि घञ्। यम।

कालकुष्ठ (सं॰ क्ली॰) कालात् कृष्णवर्णतात् कुष्यति, काल-कुष कर्मणि क। पार्वतीय मृत्तिकाविशेष, कङ्कुष्ठ पहाड़की मट्टी। कङ्कुष्ठ देखो।

कालकूट (सं॰ पु॰ क्ली॰) कालस्य मृत्योः कूटं दूत इव उपमि॰ यद्वा कालं विषमपि कूटयति अवसादयति, कालकूट अच्। १ विषसामान्य, मामूली जहर। २ धोल, खून खराबी। ३ वत्सनाभ, बच्छनाग। ४ काक, कौवा। ५ गिरिविशेष, एक पहाड़। यह वर्तमान कालीगण्डक नदीके निकट अवस्थित है।

"कुरुभ्यः प्रस्थितास्ते तु मध्येन कुरुजाङ्गलम्।
रम्यं पद्मसरो गत्वा कालकूटमतीत्य च॥" (भारत २।२०।२६)

६ स्थावर विषविशेष, काला बच्छनाग। देवासुर युद्धके समय पृथुमाली नामक कोई असुर देवगण द्वारा मारा गया था। उसके रक्तसे अश्वत्थ वृक्षकी भांति एक वृक्ष उत्पन्न हुआ। उसी वृक्षके निर्यासका नाम काल-

उसपर एक प्रकारका आवरण सा रहता है। वह बुलबुल पक्षीकी आंखके आदर्श पर बुना जाता है, इसे "बुलबुल-चश्म" कहते हैं। आजकल इस शिल्पका लोप हो रहा है।

अब तो केवल खेस, लुंगी एवं सूसी नामक बारीक वस्त्र और दुसूती, गाढ़ा तथा गजी नामक मोटा कपड़ा ही देख पड़ता है। राजपूतानेमें भी यथेष्ट चार प्रकारका वस्त्र बनता है। ग्वालियरके चांदेरी नामक स्थानमें उत्कृष्ट मसलिन तैयार होता है। इन्दोरका मसलिन भी बहुत खराब नहीं रहता। देवास राज्यके अन्तर्गत सारंगपुरमें धोती, साड़ी और पगड़ी प्रस्तुत होती है।

मध्यप्रदेशके नागपुर, भण्डारा और चांदा जिलेमें आज भी सूक्ष्म सूत कतता और उससे वस्त्र बनता है। १८६७ ई० को चांदा प्रदेशमें एक प्रदर्शनी हुयी। उसमें हाथका बना सूत दिखाया गया था। वह सूत इतना बारीक रहा कि सिर्फ आध सेर सूत ५८ कोस लंबा निकला। नागपुरमें रुईका पेंच खुल जानेसे उस शिल्पका बहुत गौरव घट गया है। किन्तु पेंचका सूत आज भी उतना उत्कृष्ट नहीं होता। उससे कुछ कुछ गौरव हुआ है। देशी वस्त्र अधिक दिन टिकता है। इसीसे वहांके गरीब लोग विलायतीसे देशी वस्त्रका आदर अधिक करते हैं। होशङ्गाबादमें देशी वस्त्रका व्यवसाय बढ़ रहा है।

दाक्षिणात्यके हैदराबाद अञ्चल पर रायचूर जिलेमें गाढ़े रंगका मोटा कपड़ा और नन्देर जिलेमें बारीक मसलिन तैयार होता है। मन्द्राज प्रान्तके अरनी नामक स्थानका बारीक मसलिन अति उत्कृष्ट रहता है।

बम्बई प्रदेशमें विलायती वस्त्रका विशेष आदर बढ़ते भी गांव गांवमें रुईका देशी मोटा कपड़ा बनता है। सामान्य लोग मोटी साड़ी और पगड़ीका विशेष आदर करते हैं।

अनेक स्थानमें रुईके सूतमें रेशम या ऊन मिला तरह तरहका कपड़ा बनाते हैं। कहीं कहीं रुईके कपड़ेमें रेशमी किनारा लगाया जाता है। फिर कहीं रेशमी बेल बूटे, जरीके बेलबूटे और जरीका काम बनाते हैं। उनके अनेक नाम हैं—कारचोबी, कलाबत्तू, किंकन, कामदानी और जामदानी। जामदानी—करेला, तोड़ेदार, बूटीदार, और तिरछा आदि कई प्रकारकी होती है।

फूलदार रुईके नानाविध वस्त्र कलकत्तेके निकट बनाये जाते हैं। उनकी बिक्री हवड़ेके बाजारमें अधिक होती है।

रुईके वस्त्रपर तरह तरहका रंग चढ़ाया जाता है। उसपर छाप भी कई प्रकारकी लगती है।

रुईका कपड़ा पहले अंगरेज कालीकटसे ले जाते थे। इसीसे उन्होंने उसको कैलिको (Calico) नामसे अभिहित किया है। रंग देनेको कैलिको-डाइङ्ग (Calico-dying) और छाप मार छींट बनानेको कैलिको-प्रिण्टिङ्ग (Calico-printing) कहते हैं। किसी किसी कपड़ेपर सुनहली छाप पड़ती है। छाप लगानेसे तरह तरहकी छींट बनती है। छींटके कपड़ेसे रजाई, तकियेका गिलाफ, तोशक, पलंगपोश, जाजिम, शामियाना वगैरह तैयार होते हैं। रंगदार कपड़ेमें माल बहुत अच्छी रहती है। फिर छापदार कपड़ेमें चुनरीका प्रचार अधिक है। इस देशमें रजक ही रुईका कपड़ा धोते हैं।

विलायती टैक्सके प्रभावसे देशस्थ कार्पास-शिल्प क्रमशः लुप्त हो रहा है। सम्भावना ऐसी होने लगी है—जो शिल्प है वह भी काल पाकर न रहेगा। पहले कार्पासवस्त्र देशके प्रयोजनसे बच उद्धृत होनेपर विदेश भेजा जाता था। अब वह समय नहीं रहा। आजकल शिल्पी अन्नहीन हो गये हैं।

भावप्रकाशके मतमें कार्पासवृक्ष—लघु, ईषत् उष्णवीर्य, मधुररस और वायुनाशक है। उसका पत्र—वायुनाशक, रक्तकारक और मूत्रवर्धक होता है। बीज—स्तन्य-दुग्धवर्धक, शुक्रवर्धक, स्निग्ध, कफकारक और गुरु है।

(त्रि०) कार्पासस्य विकारः अवयवो वा, कर्पास-अण्। शिवादिभ्योऽण्। पा ४।१।११२। २ कार्पासजात, कपासी, कपासका बना हुआ। इसका संस्कृत पर्याय—फाल और बादर है।

"[illegible]" ([illegible])

क्रूर विष है। यह विष गुरु, तीक्ष्ण और समस्त दर्शनमें होता है। कालकूटको शोधित करनेके लिये प्रायः ३ दिन गोमूत्रमें भिगोकर रखते हैं। फिर [illegible] कुछ दिन बांधकर रखनेसे वह शुद्ध होता है। कालकूट प्राणनाशक, सर्वरोगप्रशमी, अग्निगुणवर्द्धक, श्लेष्म, कफ, सन्निपात रोगोंका नाशक, [illegible] गुणदायक और गुरुत्वमय है। किन्तु विशुद्ध होनेसे कालकूटके उक्त तामस गुण घट जाते हैं। ऐसे [illegible] गुण रहते भी शुद्धिगुण उसके प्रयोग करनेवाले वह रसायन औरवायु, श्लेष्मा तथा सन्निपात दोषनाशक है। (भावप्रकाश) ८ कुचिला, एक वृक्ष। इसका फल नीबूकी तरह रहता और सिक्किम तथा कोंकणदेशमें मिलता है। इस पर छोटे छोटे गोलाकार चिह्न होते हैं।

कालकूटक (सं० पुं० क्ली०) कालस्य कूटमिव कायति प्रकाशते, काल-कूट-कै-क। १ कालकूट विष, कुचिलेका पेड़। २ कालकूट फल, कुचिला। ३ शिव, महादेव।

"[illegible] दुर्दीनैः [illegible] कालकूटकम्।
[illegible]" महाभारत १।१२८ अ०

कालकूटटट (सं० पुं०) कालः कालमयः कूटटटः कर्मधा०। काल-टटट, महादेव।

कालकूटाकोद्दर (सं० पुं०) राम।

कालकूटि (सं० त्रि०) कलकूटे भवः, कलकूट-इञ्। [illegible] (पा ४।१।१७३) कलकूट-जात, कलकूट मुल्कमें पैदा होनेवाला।

कालकृत् (सं० पुं०) कालं करोति उदयास्ताभ्यां कालस्य दण्डादि परिमाणं करोति इत्यर्थः, काल-कृ-क्विप् तुगागमः। १ सूर्य, आफताब। २ परमेश्वर।

कालकृत (सं० पुं०) कालेन परमेश्वरेण कृतः स्तुतः यद्वा कालं कालपरिमाणं कृतः कर्त्ता काल-कृ कर्त्तरि क्त। १ सूर्य, सूरज। २ वाद्यविशेष, एक पुराना बाजा। इससे मियादका काल निर्दिष्ट होता है। (त्रि०) ३ काल-कार, मौत देनेवाला। ४ निर्दिष्ट, मुकर्रर। ५ कुछ समयके लिये रखा हुआ।

कालकेतु (सं० पुं०) एक दैत्यविशेष। इन्द्रपुत्र नीलाम्बर महादेवके अभिशापसे धर्मकेतु नामक व्याधके पुत्र हुये थे। उस समय उनका नाम कालकेतु पड़ा था। (कविकङ्कणचण्डी)

कालकेय (सं० पुं०) कालकायाः अपत्यम्, कालका-ढक्। एक दानव। वृत्रासुरके मारे जाने पर कालकेय समुद्रमें रहते और रात्रिकालको गुप्तभावसे देवगणका अनिष्ट साधन करते। फिर देवगणने उनमें कितनोंहीको मार डाला। अवशिष्ट कालकेय हिरण्यपुरमें जाकर ठहरे। पीछे अर्जुनने उन्हें भी निहत किया।
(हरिवंश १०१-१०२ अ०)

कालकेशी (सं० स्त्री०) कालाः केशा इव अग्रादिदलाः यस्याः कालकेश ङीष्। १ नीली, छोटा नील। २ कालकेशयुक्त स्त्री, काले बालोंवाली औरत। ३ काल देवी।

कालकोटि (सं० स्त्री०) देशविशेष, एक मुल्क।

कालकोठ (सं० पुं०) कन्दशाक विशेष, तरकारीका एक डला, इसे प्रायः लोग [illegible] कहते हैं।

कालकोठरी (हिं० स्त्री०) कारागारका स्थान विशेष, कैदखानेकी एक जगह। यह सङ्कीर्ण और अन्धकार-मय होती है। इसमें अलग रहनेवाले कैदी रखे जाते हैं। २ कलकत्तेके फोर्टविलियमकी एक जगह। इसमें सिराजुद्दौलाने कितने ही अंगरेजोंको कैद किया था।

कालक्रम (सं० पुं०) समयका प्रवाह, वक्तकी चाल।

कालक्रिया (सं० स्त्री०) काले यथाकाले निष्पन्ना अनु-ष्ठिता वा क्रिया, मध्यपदलो०। १ यथाकाल सम्पादित कार्य, वक्त पर किया हुआ काम। २ और्ध्वदैहिक कार्य। ३ कालनिर्द्धार, वक्तका ठहराव। ४ सूर्यसिद्धान्तका एक अध्याय।

कालक्लीतक (सं० क्ली०) [illegible], नीलका पेड़।

कालक्षेप (सं० पुं०) कालस्य क्षेपः ६-तत्। १ समयका अतिवाहन, वक्तकी बरबादी। २ अन्य कार्यमें समयका यापन, देर।

"[illegible]
[illegible]" (किरात [illegible])

कालक्षेपण (सं० क्ली०) कालस्य क्षेपणं अतिवाहनम्, ६-तत्। कालक्षेप, वक्तका गुजार।

कालखञ्ज (सं० पुं०) १ दानवविशेष। २ यकृत्, कलेजा।

कार्पासक (सं॰ पु॰ क्ली॰) कार्पास स्वार्थे कन्। कार्पास वृक्ष, कपासका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—कार्पास, कार्पासी, तुण्डकेरी और समुद्रान्ता है।

कार्पासकी (सं॰ स्त्री॰) कार्पासी, कपास।

कार्पासतैल (सं॰क्ली॰) माडीव्रणका तैलविशेष, कपासका तेल। जिसका तैल ४ शरावक, जल १६ शरावक और कार्पासमूल तथा हरिद्राका कल्क १ शरावक यथाविध पकानेसे यह तैल बनता है। (रत्नाकर)

कार्पासधेनु (सं॰ स्त्री॰) कार्पासवस्त्रनिर्मिता धेनुः, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। दानके लिये कार्पासनिर्मित धेनु, कपासकी गाय। वराहपुराणमें इसके दानका विधि कही है। यथा,—"विषुवसंक्रान्तिको, युगआद्यके दिन और ग्रहपीड़ा, दुःस्वप्नदर्शन एवं अरिष्ट दर्शनादि अमङ्गल पड़नेसे पवित्र देवालय अथवा विशुद्ध गोचारण स्थानपर गोमय द्वारा दानस्थान लीपना चाहिये। फिर उसके ऊपर कुश तिल फैला देते हैं। उसके पीछे उक्त स्थानके मध्यस्थलमें धेनु स्थापनकर वस्त्र, माल्य, अनुलेपन, नैवेद्य और धूप दीपादिसे पूजा करना चाहिये। अनन्तर कुशहस्त दानमन्त्र पढ़ श्रद्धाके साथ कार्पासधेनु द्विजातिको देनी पड़ती है। वह ४ भार वस्त्र द्वारा निर्मित होनेसे उत्तम, २ भार वस्त्र द्वारा निर्मित होनेसे मध्यम, और १ भार वस्त्र द्वारा निर्मित होनेसे अधम गिनी जाती है। उक्त परिमाणके चतुर्थांश द्वारा वत्स बनाना पड़ता है। फिर कार्पासधेनुके मकल दन्त नानाविध फल द्वारा, खुर रौप्य द्वारा और शृङ्ग स्वर्णद्वारा निर्माण करते हैं। उसका गर्भस्थल विविध रत्नसे पूर्ण किया जाता है। इस प्रकार यथाविधि धेनु दान करनेसे अन्तिम समय इन्द्रलोक मिलता है।"

कार्पासनासिका (सं॰ स्त्री॰) कार्पासस्य नासिका इव, उपमि॰। तर्कु, तकला, तकवा।

कार्पासपर्वत (सं॰ पु॰) कार्पासवस्त्रनिर्मितः पर्वतः, मध्यप॰। दानके निमित्त कार्पासवस्त्रनिर्मित पर्वत. रूईके कपड़ेका पहाड़। ब्रह्माण्डपुराणमें उसके दानका विधानादि इस प्रकार लिखा है,—"देवालय प्रभृति पवित्र स्थानका कियदंश गोमयसे लीप उसपर कुश और तिल फैला देना चाहिये। फिर उसके मध्य देशमें कार्पासवस्त्रनिर्मित पर्वत स्थापना कर यथाविधि पूजा समापनान्त कुशहस्त मन्त्रपाठपूर्वक द्विजातिको दान करते हैं। उक्त कार्पासवस्त्रराशि विंशति भार होनेसे उत्तम, दश भार होनेसे मध्यम और पञ्च भार होनेसे अधम गिना जाता है। उसमें विविध धान्य प्रभृति और नानाविध औषधि तथा रस सन्निविष्ट करते हैं। कार्पासपर्वत चारो दिक् स्वर्ण शिखर, विविध रत्न और नानाप्रकार भक्ष्यभोज्ययुक्त चार कुलाचल स्थापन कर दान करनेका विधि है। इस प्रकार दान करनेसे स्वीय वंश उद्धार होता है।"

कार्पाससौत्रिक (सं॰ त्रि॰) कार्पाससूत्रेण निर्वृत्तः, कार्पाससूत्र ठक्, द्विपदवृद्धिः। कार्पासके सूत्र द्वारा निर्मित, कपासके सूतका बना हुवा।

कार्पासास्थि (सं॰ क्ली॰) कार्पासानां अस्थि, ६-तत्। कार्पासबीज, बिनौला।

कार्पासिक (सं॰ त्रि॰) कार्पासाज्जातम्, कार्पास-ठक्। कार्पास द्वारा निर्मित, कपासका बना हुवा।

कार्पासिका (सं॰ स्त्री॰) कार्पासी स्वार्थं कन्-टाप् पूर्वह्रस्वः। कार्पासी, कपास।

कार्पासी (सं॰ स्त्री॰) कार्पास-जातित्वात् ङीप्। रक्तकार्पासवृक्ष, लाल कपास। इसका संस्कृत पर्याय—बदरा, तुण्डिकेरी, समुद्रान्ता, मारिषी, अध्या, तुला, गुड़ तुण्डकेरिका, मरुद्भवा, पिचु, और बादर है।

कार्म (सं॰ त्रि॰) कर्मसु शीलं अस्य छत्रादित्वात् णः, निपातनात् साधुः। १ फलकी आकाङ्क्षा छोड़ कर्म-करनेवाला, जो नतीजा मिलनेकी ख़ाहिश न रख काम करता हो। २ कर्मशील, कामकाजी।

कार्मक, कार्मुक देखो।

कार्मण (सं॰ क्ली) कर्म एव, कर्म स्वार्थे अण्। तद्युक्तात् कर्मणोऽण्। पा ५।४।३६। १ मूलकर्म, जादू, टोना। औषधादिके मूलसे जो मारण, उच्चाटन, मारण, वशीकरण प्रभृति कार्य किया जाता, वही कार्मण कहलाता है। २ मन्त्रतन्त्रादि योग। (त्रि॰) कर्मसाध्यत्वेन अस्त्यस्य, कर्मन्-अण्। ३ कर्मदक्ष, कामसें होशियार।

कालखञ्जन (सं० क्ली०) कालेन कालान्तरेण खञ्जति विकृतिं गच्छति, खञ्ज-ल्यु। यकृत्, कलेजा।

कालखण्ड (सं० क्ली०) कालं कृष्णवर्णं खण्डं मांसखण्डम्, कर्मधा०। १ यकृत्, कलेजा। २ कालप्रतिपादक एक ग्रन्थ। ३ यकृत्‌रोगभेद, कलेजेकी एक बीमारी।

कालगङ्गा (सं० स्त्री०) काली कृष्णवर्णा गङ्गा गङ्गावत् पवित्रकारिणी, कर्मधा०। १ यमुना नदी। २ सिंहलकी एक नदी।

कालगण्डका (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक दरया। आजकल इसे कालीगण्डक कहते हैं।

कालगण्डेत (हिं० पु०) सर्पविशेष, काले गण्डेवाला सांप।

कालगन्ध (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः गन्धः गन्धवत् द्रव्यम्, कर्मधा०। १ काला अगुरु नामक औषध। २ कालसेन, थोड़ा कालापन। ३ काला चन्दन। ४ सर्पविशेष, किसी किस्मका सांप।

कालगति (सं० स्त्री०) समयका प्रवाह, वक्तकी चाल।

कालग्रन्थि (सं० पु०) कालस्य ग्रन्थिरिव, उपमित समा०। वत्सर, साल, वक्तकी गांठ।

कालघाम (सं० पु०) कालस्य कृतान्तस्य घासः, ६-तत्। मृत्यु, मौत, वक्तका कौर।

कालघट (सं० पु०) एक ब्राह्मण। जनमेजयके सर्पयज्ञमें यह भी पौरोहित्य कार्यपर नियुक्त थे।

(भारत, आदि ५१ अ०)

कालघाती (सं० त्रि०) काले यथाकाले घातयति नाशयति, णिनि। यथाकाल विनाशकारक, वक्तसे मारनेवाला।

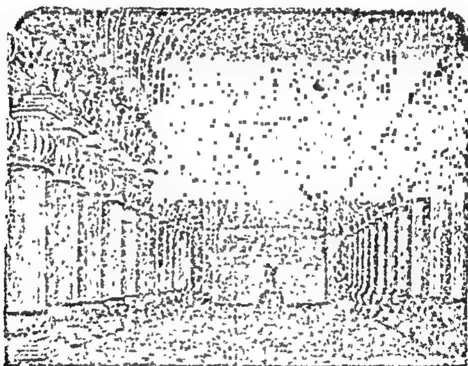
कालङ्कुर (सं० पु०) कुत्सितोऽपि अलङ्कुरः, कोः कादेशः। सुवर्णसुन्दी, सोनामुखी। २ कासमर्द, कसौंदी।

कालचक्र (सं० क्ली०) कालस्य कालगतेश्चक्रमिव, ६-तत्। १ कालरूप चक्र, वक्तका पहिया या फेर। चक्रकी भांति इसमें भी नेमि, नाभि और अरादि प्रभृति कल्पित हैं। मत्स्यपुराणके मतानुसार दिवाभागका पूर्वाह्ण, मध्याह्न एवं अपराह्ण तीन अंश तीनों नाभि, संवत्सर, परिवत्सर प्रभृति पांच अर अर्थात् शलाका और छही ऋतु कालचक्रके नेमि अर्थात् प्रान्तभाग हैं। दिवादि कालावयव नियत चक्रकी भांति घूमता है। इसीसे कालचक्रके साथ उपमित हुआ है। सुश्रुतमें लिखते हैं कि निमेषादि युग पर्यन्त कालावयव नियत घूमनेसे कुछ लोग कालचक्र कहा करते हैं। २ ज्योतिषक विशेष। ३ राजा लोगोंके विजयप्रद ८४ चक्रोंमें एक चक्र। चक्र देखो। ४ दानके लिये रौप्यनिर्मित एक चक्र। यह चक्र दान करनेसे अपमृत्युका भय नहीं रहता। ५ दण्डविशेष। ६ भोटप्रचलित एक कालज्ञापक चक्र। (पु०) ७ अस्त्रविशेष, एक हथियार।

कालचिन्तक (सं० पु०) कालं चिन्तयति विचारयति, कालचिन्ति-ण्वुल्। ज्योतिर्विद्, नजूमी, समयको विचारनेवाला।

कालचिह्न (सं० क्ली०) कालस्य मृत्योर्बोधकं चिह्नम्, मध्यप०। मृत्युज्ञापक लक्षण विशेष, मौतकी अलामत। काशीखण्डमें उसके कई लक्षण लिखे हैं,—"जिसके दक्षिण नासापुटसे एक अहोरात्रकाल निश्वास चलता, वह तीन वर्षमें अवश्य मरता है। ऐसे ही दो अहोरात्र या तीन अहोरात्र चलनेसे डेढ़ वर्ष तक आयुःकाल रहता है। नासापुटद्वय परित्याग कर वायु यदि मुखसे आता जाता, तो मनुष्य तीन दिनमात्र जीवित देखाता है। इसी प्रकार सूर्य सप्तम राशिस्थ और चन्द्र जन्मनक्षत्रस्थ होनेसे अकस्मात् मृत्यु आता है। अकस्मात् किसी व्यक्तिको जो व्यक्ति कृष्ण या पिङ्गलवर्णकी भांति समझता, वह दो वर्षमें मरता है। मल, मूत्र और शुक्र अथवा मल, मूत्र और छींक (खखार) एक साथ गिरनेसे एक वत्सरमात्र आयुःकाल रहता है। जो व्यक्ति आकाशमें इन्द्रनीलवर्ण सर्प सकल सञ्चरण करते देखता, वह छह मास जीता जागता है। फिर परिष्कार दिवसको सूर्यको विपरीत दिक् फूत्कार द्वारा छोड़ने पर यदि उसमें इन्द्रधनुः देख पड़ता, तो भी मनुष्य छह मासमें मरता है। अपनी जिह्वा, नासिकाका अग्रभाग, भ्रूद्वयका

मिलती है। गुहाके सम्मुख (बाहर) सिंहद्वार है। सिंहद्वारकी दोनों दिक् दो स्तम्भोंके होनेका अनुमान किया जाता है। किन्तु आजकल उसमें एकमात्र वर्तमान है। इसके निर्णय करनेका उपाय नहीं—दूसरे स्तम्भके स्थानमें एक छोटा प्रस्तर-मन्दिर बना था अथवा एक ही स्तम्भ बराबर रहा। स्तम्भ गोलाकार है। उस पर १२ टाकू पल बने हैं। यह भूमिसे समभावमें ऊपर उठा है। स्तम्भके उपरि भागमें कारनिस या कगर है। कगरके ऊपर चारों ओर चार सिंहमूर्ति खोदित हैं। किसी किसीके अनुमानमें उक्त चारों मूर्तियां एक चक्र धारण करती थीं। सिंहद्वार पार होते ही दूसरा एक द्वार मिलता है। उसका विस्तार प्रायः १४ हाथ होगा। उसके दोनों पार्श्व दो स्तम्भ है। दोनों स्तम्भ अष्टकोण या षट्कोणविशिष्ट हैं। उनमें नीचे या ऊपर कोई कारुकार्य देख नहीं पड़ता। फिर भी उपरिभागपर दोनों स्तम्भोंमें दो समस्त प्रस्तरफलक लगे हैं। उसके पीछे फिर कुछ ऊपरकी ओर एक अंगनी है। उसमें चार स्तम्भाकृति कुछ नीचे उतर गयी हैं। उसके अनन्तर कुछ आगे बढ़ने पर मन्दिरमें प्रवेश करनेको तीन द्वार हैं। उनमें कई उन्मुक्त हैं, किसी प्रकारके कपाट नहीं लगे। तीनों द्वार एक कतारमें प्राचीरवत् प्रस्तरखण्डसे संलग्न हैं। उक्त प्राचीर द्वारके मस्तक पर्यन्त समतल भावमें अवस्थित है। उसके उपरिभागमें शून्य है। उसी स्थानसे आलोक (रोशनी) मन्दिरमें पहुंचता है। गुम्फके अंदर बड़ी मेहराब है। मेहराब मन्दिरके प्रवेशद्वारसे शेष पर्यन्त विस्तृत है। उक्त



कार्लि।

द्वार पार होनेसे अभ्यन्तरकी अपूर्व शोभा देख कर मनमें एक अपूर्व भावका उदय होता है। कैसी शिल्प चातुरी! क्या आश्चर्य परिश्रम! दोनों पार्श्वपर दो बरामदे दोनों ओर चले गये हैं। मध्यस्थलमें चैत्य-मन्दिरका मण्डप है। प्रवेशद्वारकी अवस्थिति गुम्बज-जैसा अण्डाकार स्थान है। द्वारमें प्रवेशकर देखते हैं कि कतार बकतार स्तम्भश्रेणी दोनों पार्श्व दण्डायमान है। दोनों पार्श्वके स्तम्भोंके पीछे दोनों ओर बरामदा है, बरामदेमें मध्यस्थलको मन्दिरमें जानेके लिये दोनों पार्श्वके स्तम्भोंके मध्य स्थान विद्यमान है। भूमिसे मध्य स्थलके मेहराबके मध्यस्थान तक नापने पर प्रायः तीस हाथ अन्दाज निकलेगा। एक ही स्तम्भकी

कूट विष है। यह विष शृङ्गवेर, कोङ्कण और मलय पर्वतमें होता है। कालकूटको शोधित करनेके लिये प्रथम ३ दिन गोमूत्रमें भिगोकर रखते हैं। फिर सर्षपतैलमें जीर्ण वस्त्रखण्ड भिगो कुछ दिन बांधकर रखनेपर यह शुद्ध होता है। कालकूट प्राणनाशक, सर्वशरीरव्यापी, अग्निगुणबहुल, ओजः, रुक्षा, सन्धिबंधका शैथिल्य कारक, संयुक्त द्रव्यका गुणग्राहक और शुक्रनाशक है। किन्तु विशुद्ध होनेसे कालकूटके उक्त सकल गुण घट जाते हैं। ऐसे भयङ्कर गुण रखते भी युक्तियुक्त रूपसे प्रयोग करनेपर यह रसायन और वायु, श्लेष्मा तथा सन्निपात दोषनाशक है। (भावप्रकाश) ७ कुम्भीर, एक वृक्ष। इसका वृक्ष सोंगियाकी तरह रहता और सिकिम तथा कोटदेशमें मिलता है। इस पर छुद्र छुद्र गोलाकार चिह्न होते हैं।

कालकूटक (सं॰ पु॰ क्लो॰) कालस्य कूटमिव कायति प्रकाशते, काल-कूट कै-क। १ कारस्कर वृक्ष, कुचिलेका पेड़। २ कारस्कर फल, कुचिला। ३ शिव, महादेव।

"ततो दुर्योधनः क्रूरमपयत्कालकूटकम्।
विषं नर्वपयानाय भीमसेनजिघांसया॥" महाभारत १।१२८ अ॰

कालकूटदृट (सं॰ पु॰) कालः कालवर्णः कूटदृटः कर्मधा॰। कालकूटदृट, महादेव।

कालकूटशोहर (सं॰ पु॰) राल।

कालकूटि (सं॰ त्रि॰) कलकूटे भवः, कलकूट-इञ्। वाहीकग्रामवस्वरपकलकूटाश्मकादिञ्। पा॰ ४।१।१७३। कलकूटजात, कलकूट मुल्कमें पैदा होनेवाला।

कालकृत् (सं॰ पु॰) कालं करोति उदयास्ताभ्यां कालस्य दण्डादि परिमाणं करोति इत्यर्थः, काल-कृ-क्विप् तुगागमः। १ सूर्य, आफताब। २ परमेश्वर।

कालकृत (सं॰ पु॰) कालेन परमेश्वरेण कृतः सृष्टः यद्वा कालं कालपरिमाणं कृतः कर्ता काल-कृ कर्तरि क्त। १ सूर्य, सूरज। २ पाण्डविशेष, एक गुमाद। इसके मिटानेका काल निर्दिष्ट होता है। (त्रि॰) ३ कालकृत, वक्तसे पैदा। ४ निर्दिष्ट, मुकरर। ५ कुछ समयके लिये रखा हुआ।

कालकेतु (सं॰ पु॰) एक देवीभक्त। इन्द्रपुत्र नीलाम्बर महादेवके अभिशापसे धर्मकेतु नामक व्याधके पुत्र हुये थे। उस समय उनका नाम कालकेतु पड़ा था। (कविकङ्कण चण्डी)

कालकेय (सं॰ पु॰) कालकाया अपत्यम्, कालका ढञ्। एक दानव। वृत्रासुरके मरनेपर कालकेय समुद्रमें रहते और रात्रिकालको गुप्तभावसे देवगणका अनिष्ट साधन करते। फिर देवगणने उनमें कितनोंहीको मार डाला। अवशिष्ट कालकेय हिरण्यपुरमें जाकर ठहरे। पीछे अर्जुनने उन्हें भी निहत किया। (वनपर्व १०१-१०५ अ॰)

कालकेशी (सं॰ स्त्री॰) कालः केश इव पत्रादिर्यस्याः कालकेश-ङीष्। १ नीली, छोटा नील। २ कालकेशयुक्त स्त्री, काले बालोंवाली औरत। ३ काल-देवी।

कालकोटि (सं॰ स्त्री॰) देशविशेष, एक मुल्क।

कालकोठ (सं॰ पु॰) कन्दशाक विशेष, तरकारीका एक डण्ठा, इसे प्रायः लोग मनसाक कहते हैं।

कालकोठरी (हिं॰ स्त्री॰) कारागारका स्थान विशेष, कैदखानेकी एक जगह। यह सङ्कीर्ण और अन्धकारमय होती है। इसमें अलग रहनेवाले कैदी रखे जाते हैं। २ कलकत्तेके फोर्टविलियमकी एक जगह। इसमें सिराजुद्दौलाने कितने ही अंगरेजोंको कैद किया था।

कालक्रम (सं॰ पु॰) समयका प्रवाह, वक्तकी चाल।

कालक्रिया (सं॰ स्त्री॰) काले यथाकाले निष्पन्ना अनुष्ठिता वा क्रिया, मध्यपदलो॰। १ यथाकाल सम्पादित कार्य, वक्तसे किया हुआ काम। २ और्ध्वदेहिक कार्य। ३ कालनिर्देश, वक्तका ठहराव। ४ सूर्यसिद्धान्तका एक अध्याय।

कालक्लीतक (सं॰ क्लो॰) नीलीवृक्ष, नीलका पेड़।

कालक्षेप (सं॰ पु॰) कालस्य क्षेपः ६-तत्। १ समयका अतिवाहन, वक्तकी बरबादी। २ कर्तव्य कार्यके समयका लङ्घन, देर।

"उत्पश्यामि द्रुतमपि सखे मत्प्रियार्थं यियासोः
कालक्षेपं ककुभसुरभौ पर्वते पर्वते ते॥" (मेघदूत २२)

कालक्षेपण (सं॰ क्लो॰) कालस्य क्षेपणं अतिवाहनम्, ६-तत्। कालक्षेप, वक्तका गुजार।

कालखञ्ज (सं॰ पु॰) १ दानवविशेष। २ यकृत्, कलेजा।

वर्णना करना असम्भव है, उसकी वर्णना कौन कर सकता है। क्या ही कारीगरी है। तलभागमें क्रमान्वयसे चार स्तम्भ हैं। उनको ऊंचाई धीरे धीरे घटती गयी है। उनमें कुछ गोलाकृति है। उनके ऊपर अष्टदल हैं। पत्रोंपर स्तम्भोंके मस्तक हैं। उनपर कंगनी लगी है। कंगनी पर दोनों दिक् हस्तिमूर्ति है। हस्तिपृष्ठपर कहीं दो मानव, कहीं दो मानवी, कहीं एक मानव और कहीं एक मानवीको मूर्ति है। स्तम्भश्रेणी पार होने पर एक गुम्बज जैसी आकृति देख पड़ेगी। उसके उपरिभागमें "ф" इस चिह्नको भांति एक पदार्थ और उसपर एक छत्र है। आजकल उक्त छत्रका कुछ अंश टूट गया है। गुम्बजके पश्चाद्भागमें अष्टदलविशिष्ट दूसरे सात स्तम्भ हैं। उनकी बनावट सीधी सादी है, विशेष कारुकार्ययुक्त नहीं। मन्दिरके द्वारदेशमें उक्त स्तम्भोंके मूलदेश पर्यन्त ८४ हाथ अन्तर होगा। मध्यमें दोनों दिक्‌के स्तम्भोंका मध्यस्थान साढ़े सोलह हाथ होगा। बरामदाओंका परिसर अपेक्षाकृत छोटा है। ६ हाथसे अधिक नहीं। उक्त बड़ी मेहराबके पीछे ही काठकी कड़ियां मेहराबमें संलग्न हैं। कड़ियोंकी कतार बंधी है। वह मेहराबको एक ओरसे दूसरी ओर तक चली गयी है। कड़ियां हमारे घरकी तरह सरल भावमें अवस्थित नहीं। वह वक्र भावपर मेहराबसे मिल सरल भावपर शून्यमें अवस्थित हैं। उनका कोई आधार देख नहीं पड़ता। आजकल कोई निर्णय कर नहीं सकता—कैसे वह उस प्रकार संलग्न हुई हैं। न देखने पर वर्णनासे इस मन्दिरका सौन्दर्य कैसे अनुभूत हो सकता है। कौन कह सकता—यह चैत्य कितने दिनका पुराना है। बाहरके सिंहस्तम्भपर कोई खोदित अक्षर देख पड़ते हैं। लोगोंके कथनानुसार महाराज भूति या देवभूतिने यह अक्षर खोदाये थे। पाश्चात्य मतमें भूति राजा ई० सनाब्दसे ७८ वर्ष पूर्व राजत्व करते थे। उससे भी पूर्व मन्दिरका बनना असम्भव नहीं।

कार्मकेय (सं॰ पु॰) छगलस्य अपत्यम्, छगलाढ्य। छगल मुनिके पुत्र।

कार्मकेयीपुत्र (सं॰ पु॰) कार्मकेय्याः पुत्रः, ६-तत्। छगल ऋषिके दौहित्र, यह एक आचार्य थे।

कार्मन (दे॰ वि॰) मुक्ताविशिष्ट, मोतियोंवाला।

कार्शानव (सं॰ वि॰) कृशानोरिदम्, कृशानु-अण्। कृशानुसम्बन्धीय, आगका, गर्मी।

कार्शाश्वीय (सं॰ वि॰) कृशाश्वेन निर्वृत्तम्, कृशाश्व-छण्। कृशाश्व द्वारा निष्पन्न।

कार्श्मरी (सं॰ स्त्री॰) कार्श्मं रात्रि, कृश-स्वार्थे पिच् भावे मनिन् वा ङीप्। १ काश्मारी। २ श्योपर्णी। ३ गम्भारी वृक्ष।

कार्श्मर्य (सं॰ पु॰) गाम्भारीवृक्ष, एक पेड़।

कार्श्य (सं॰ पु॰) कृश स्वार्थे ष्यञ्। १ कर्चूरक, कपूर। २ गाम्भारीवृक्ष। ३ लकुचवृक्ष, लुकाटका पेड़। ४ क्षुद्रपाषाण। ५ शालवृक्ष। ६ गाक्रवृक्ष। (क्ली॰) कृशस्य भावः, कृश-ष्यञ्। वर्णदृढादिभ्यः ष्यञ्। पा ५।१।१२३। ७ कृशता, कमज़ोरी, दुबलापन। ८ कृशतारोग, कमज़ोरीकी बीमारी। इस रोगका कारण—वात, रूक्षान्नपान, लङ्घन, परिमिताशन, शोक वेग, निद्राविनिग्रह, नित्यरोग, अरति, नित्य व्यायाम, भोजनकी अल्पता, भीति और धनादिका ध्वंस है। (भावप्रकाश)

कार्श्यहरलौह (सं॰ पु॰) कृशताका एक औषध, कमजोरीकी कोई दवा। श्वेतपुनर्नवा, हस्तीमूल, अश्वगन्धामूल, त्रिफला, त्रिकटु, त्रिमद, शतमूली तथा श्वेतवेरेला बराबर बराबर और सबके बराबर लौह, भीमराजके रसमें घोंटनेसे यह औषध बनता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कार्ष (सं॰ त्रि॰) कृषिः शीलमस्य, कृषि-ण। छत्रादिभ्यो णः। पा ४।४।६२। कृषिकर्मकारक, काश्तकार, किसान।

कार्षक (सं॰ पु॰) कार्ष स्वार्थे कन् अथवा कर्षति कृषकन्। कर्षेर्वृद्धिश्चोदीनाम्। उण् २।३८। कृषक, खेतिहर।

कार्षापण (सं॰ पु॰ क्ली॰) कार्षस्य कार्षण या आपणः व्यवहारो यत्र, कार्षापण-अण्। १ षोड़श पण, १६ कौड़ी या रत्ती। २ कर्षपरिमाण, १६ माषा। यह सोना तौलनेको १६ माशे, चांदी तौलनेको १६ पल और तांबा तौलनेको ८० रत्तीका रहता है। ३ धन दौलत, सोना चांदी। ४ कृषक, किसान।

कालखञ्जन (सं॰ क्ली॰) कालेन कालान्तरेण खञ्जति विकृतिं गच्छति, काल-खञ्ज-ल्यु। यकृत्, कलेजा।

कालखण्ड (सं॰ क्ली॰) कालं कृष्णवर्णं खण्डं मांसखण्डम्, कर्मधा॰। १ यकृत्, कलेजा। २ कालप्रतिपादक एक ग्रन्थ। ३ यकृत्‌रोगभेद, कलेजेकी एक बीमारी।

कालगङ्गा (सं॰ स्त्री॰) काली कृष्णवर्णा गङ्गा गङ्गावत् पवित्रकारिणी, कर्मधा॰। १ यमुना नदी। २ सिंहलकी एक नदी।

कालगण्डका (सं॰ स्त्री॰) नदीविशेष, एक दरया। आजकल इसे कालीगण्डक कहते हैं।

कालगण्डैत (हिं॰ पु॰) सर्पविशेष, काले गण्डेवाला सांप।

कालगन्ध (सं॰ पु॰) कालः कृष्णवर्णः गन्धः गन्धवत् द्रव्यम्, कर्मधा॰। १ काला अगुरु नामक औषध। २ कालसेग, थोड़ा कालापन। ३ काला चन्दन। ४ सर्पविशेष, किसी किस्मका सांप।

कालगति (सं॰ स्त्री॰) समयका प्रवाह, वक्तकी चाल।

कालग्रन्थि (सं॰ पु॰) कालस्य ग्रन्थिरिव, उपमित समा॰। वत्सर, साल, वक्तकी गांठ।

कालग्रास (सं॰ पु॰) कालस्य कृतान्तस्य ग्रासः, ६-तत्। मृत्यु, मौत, वक्तका कौर।

कालघट (सं॰ पु॰) एक ब्राह्मण। जनमेजयके सर्पयज्ञमें यह भी पौरोहित्य कार्यपर नियुक्त थे।
(भारत, आदि ५१ अ॰)

कालघाती (सं॰ त्रि॰) काले यथाकाले घातयति नाशयति, णिनि। यथाकाल विनाशकारक, वक्तसे मारनेवाला।

कालङ्कृत (सं॰ पु॰) कुत्सितोऽपि अलङ्कृतः, कोः कादेशः। १ स्वर्णमुखी, सोनामुखी। २ कासमर्द, कसौंदी।

कालचक्र (सं॰ क्ली॰) कालस्य कालगतेश्चक्रमिव, ६-तत्। १ कालरूप चक्र, वक्तका पहिया या फेर। चक्रकी भांति इसमें भी नेमि, नाभि और अरादि प्रभृति कल्पित हैं। मत्स्यपुराणके मतानुसार दिवाभागका पूर्वाह्ण, मध्याह्न एवं अपराह्ण तीन अंश तीनों नाभि, संवत्सर परिवत्सर प्रभृति पांच अर अर्थात् शलाका और छहो ऋतु कालचक्रके नेमि अर्थात् प्रान्तभाग हैं। दिवादि कालावयव नियत चक्रकी भांति घूमता है। इसीसे कालचक्रके साथ उपमित हुवा है। सुश्रुतमें लिखते हैं कि निमेषादि युग पर्यन्त कालावयव नियत घूमनेसे कुछ लोग कालचक्र कहा करते हैं। २ ज्योतिश्चक्र विशेष। ३ राजा लोगोंके विजयप्रद ८४ चक्रोंमें एक चक्र। चक्र देखो। ४ दानके लिये रौप्यनिर्मित एक चक्र। यह चक्र दान करनेसे अपमृत्युका भय नहीं रहता। ५ दण्ड विशेष। ६ भोटप्रचलित एक कालज्ञापक चक्र। (पु॰) ७ अस्त्रविशेष, एक हथियार।

कालचिन्तक (सं॰ पु॰) कालं चिन्तयति विचारयति, काल-चिन्ति-ण्वुल्। ज्योतिर्विद्, नजूमी, समयको विचारनेवाला।

कालचिह्न (सं॰ क्ली॰) कालस्य मृत्योर्ज्ञापकं चिह्नम्, मध्यप॰। मृत्युज्ञापक लक्षण विशेष, मौतकी अलामत। काशीखण्डमें उसके कई लक्षण लिखे हैं,—"जिसके दक्षिण नासापुटसे एक अहोरात्रकाल निश्वास चलता, वह तीन वर्षमें अवश्य मरता है। ऐसे ही दो अहोरात्र या तीन अहोरात्र चलनेसे डेढ़ वर्ष तक आयुःकाल रहता है। नासापुटद्वय परित्याग कर वायु यदि मुखसे आता जाता, तो मनुष्य तीन दिनमात्र जीवित देखाता है। इसी प्रकार सूर्य सप्तम राशिस्थ और चन्द्र जन्मनक्षत्रस्थ होनेसे अकस्मात् मृत्यु आता है। अकस्मात् किसी व्यक्तिको जो व्यक्ति कृष्ण या पिङ्गलवर्णकी भांति समझता, वह दो वर्षमें मरता है। मल, मूत्र और शुक्र अथवा मल, मूत्र और क्षुत (छखार) एक साथ गिरनेसे एक वत्सरमात्र आयुःकाल रहता है। जो व्यक्ति आकाशमें इन्द्रनीलवर्ण सर्प सकल सञ्चरण करते देखता, वह छह मास जीता जागता है। फिर परिष्कार दिवसको सूर्यको विपरीत दिक् फूत्कार द्वारा छोड़ने पर यदि जलमें इन्द्रधनुः देख पड़ता, तो भी मनुष्य छह मासमें मरता है। अपनी जिह्वा, नासिकाका अग्रभाग, भ्रूद्वयका

कार्षापणक (सं० पुं० क्ली०) कार्षापण स्वार्थे कन्। कार्षापण, एक तौल।

कार्षापणिक (सं० त्रि०) एक कार्षापणके मूल्यवाला, जिसकी कीमत १६ कौड़िया पणी।

कार्षापणिक (सं० त्रि०) कार्षापणेन क्रीतम्, कार्षापण-टिठन्। 'कार्षापणाट्टिठन्' पा ५।१।२९ (वार्त्तिक) कार्षापण द्वारा क्रय किया हुआ, १६ कौड़ीमें मोल लिया।

कार्षि (सं० पुं०) कर्षति, कृष-स्वार्थे इञ्। १ अग्नि, आग। (स्त्री) २ आकर्षण, कशिश। ३ कर्षण, जोताई। (त्रि०) ३ कृषक, खेत जो जोतनेवाला। ४ कर्षणकारक, भीतरी मेल कुशलवाला।

कार्षिक (सं० पुं०) कर्ष स्वार्थे ठक्। १ कार्षापण, १६ कौड़ीका एक सिक्का। (कर्षः शीलमस्य) २ कृषक, किसान। (त्रि०) कर्षस्य पणम्। ३ कर्षपरिमित, सोलह माशेवाला। ४ कर्ष परिमित मूल्य द्वारा क्रय किया हुआ, जो १६ कौड़ीमें खरीदा गया हो।

कार्षिवण (वै० त्रि०) कृषक, किसान।

कार्ष्ट्य (सं० त्रि०) कष्टस्य भावः कष्ट-ष्यञ्। कष्टता, सोलाई।

कार्ष्ण (सं० त्रि०) कृष्णस्य इदम् कृष्ण-अण्। १ कृष्णमृग सम्बन्धीय, काले हिरनवाला। २ कृष्णद्वैपायन सम्बन्धीय। (कृष्णो देवता यस्य) ३ कृष्णभक्त। (क्ली०) ४ कृष्णमृगचर्म, काले हिरनका चमड़ा। (पुं०) ५ कृष्णसार मृग, काला हिरन।

कार्ष्णी (सं० स्त्री०) लघु शतावरी, छोटी सतावर।

कार्ष्णाजिनि (सं० पुं०) कृष्णाजिनस्य ऋषेरपत्यम् कृष्णाजिन-इञ्। १ कृष्णाजिन मुनिके पुत्र। २ आचार्य विशेष, एक उस्ताद। ३ अनेक विद्याविद्, कोई मुनि, मीमांसासूत्र, ब्रह्मसूत्र और कात्यायनश्रौतसूत्रमें इनका नाम मिलता है। ४ कोई स्मृतिसंग्रहकार; हेमाद्रि, हेमाद्रि, माधवाचार्य, रघुनन्दन प्रभृति ग्रन्थोंमें पण्डितोंने इनका मत उद्धृत किया है।

कार्ष्णायन (सं० पुं०) कृष्णस्य व्यासस्य गोत्रापत्यम् कृष्ण-फक्। १ व्यासवंशके अपत्य। २ पारिभ, पराशरगोत्री।

कार्ष्णायस (सं० क्ली०) कृष्णायसो विकारः कृष्णायस-अण्। १ कृष्ण लौहनिर्मित द्रव्य, काले लोहेकी बनी हुई चीज। २ लोह, लोहा। (त्रि०) ३ कृष्ण लोह निर्मित, काले लोहेका बना हुआ।

कार्ष्णि (सं० पुं०) कृष्णस्य अपत्यम् कृष्ण-इञ्। १ कामदेव। २ गन्धर्वविशेष। ३ व्यासके पुत्र शुकदेव। ४ प्रद्युम्न।

कार्ष्णी (सं० स्त्री०) कार्ष्णि-ङीष्। शतावरी, सतावर।

कार्ष्ण्य (सं० क्ली०) कृष्णस्य भावः कृष्ण-ष्यञ्। कृष्णवर्णता, स्याही कालापन।

कार्ष्णायस (सं० त्रि०) १ कृष्णायसनिर्मित, काले लोहेका बना। लोह, लोहा।

कार्ष्म (सं० क्ली०) कर्षति यत्र, कृष धातोः आधारे मनिन्। १ युद्ध, लड़ाई। भावे मनिन्। २ कर्षण, जोताई।

कार्ष्मरी (सं० स्त्री०) कार्ष्म यर्षं राति ददाति, कार्ष्म-र-ङीष्। श्रीपर्णी वृक्ष।

कार्ष्मर्य (सं० पुं०) कार्ष्मर्या विकारः, कार्ष्मरी-यत्। श्रीपर्णीवृक्षका अवयव।

कार्ष्मर्यमय (सं० त्रि०) श्रीपर्णी वृक्ष द्वारा निर्मित। कार्ष्मर्यं ... ।

कार्ष्य (सं० पुं०) कृष-क स्वार्थे ष्यञ्। शालवृक्ष।

कार्ष्यवण (सं० क्ली०) शाल वृक्षका वन।

कार्ष्टि (सं० पुं०) १ अर्जक, धूनीका पेड़। २ कृष्णसार मृग, काला हिरन।

काल (सं० क्ली०) कु ईषत् कृष्णत्वं लाति गृह्णाति, कु-ला-क, कोः कादेशः यद्वा च तुषु कृष्णवर्णतया कलति, कु-कल्-अच् कोः कादेशः। १ लोह, लोहा। २ कक्कोल, शीतलचीनी। ३ कालीयक नामक गन्धद्रव्य विशेष, एक खुशबूदार चीज। (त्रि०) ४ कृष्ण वर्ण-विशिष्ट, काला। (पुं०) ५ कृष्णवर्ण, काला रंग। ६ मृत्यु, मौत। ७ महाकाल। ८ शनिग्रह। ९ कासमर्द वृक्ष, कसौदीका पेड़। १० रक्तचित्रक, लाल चीता। ११ धूना, राल, धोवान। १२ कोकिल, कोयल। १३ शिव। १४ विष्णु। १५ पर्वतविशेष, कोई पहाड़। कलयति आयुः कल-णिच् पचाद्यच् ततोऽण् यद्वा कलयति सर्वाणि भूतानि, कल-णिच् अच्-अण्। १६ समय, वक्त। इसका पर्याय संस्कृत नाम दिष्ट और अनेहा है।

मध्यस्थल और नेत्रज्योतिः देख न पड़नेसे अल्प दिनमें ही मृत्यु होता है। नीलादि वर्ण या रसादि रस अन्यथाभावमें अनुभव करने अर्थात् वस्तुका प्रकृत वर्ण छोड़ अन्यवर्ण देख पड़ने और वस्तुका प्रकृत आस्वादन या अन्य आस्वाद मिलनेसे ६ मासके मध्य मृत्यु आजाता है। कण्ठ, ओष्ठ, जिह्वा और तालु प्रभृति स्थान निरन्तर सूखनेसे ६ मासमें मनुष्य मरता है। जिसका दन्त, नख और नेत्रकोण नीलवर्ण लगता, उसका भी आयुःकाल ६ माससे अधिक नहीं चलता। मैथुनकालमें मध्य और शेष समय छींक आनेसे ५ मासमें मृत्यु होता है। स्नानके पीछे प्रथम ही जिसका वक्षःस्थल और हस्तपद सूख जाता, वह व्यक्ति ३ मास मात्र जीवित रहता है। धूलि और कर्दमके मध्य जिसका पदचिह्न खण्डरूपसे उभरता, वह ५ मासके मध्य मरता है। देह निश्चल रहते भी जिसकी छाया हिलती डुलती, उसकी जीवितावस्था ४ मास तक चलती है। जिस व्यक्तिको प्रतिबिम्बमें अपना मुकुट और मस्तकादि देख नहीं पड़ता, वह उसी मास चल बसता है। बुद्धि भ्रान्त होना, वाक्य गिर जाना और रातको इन्द्रधनु, दो चन्द्र अथवा आकाश नक्षत्रशून्य, दिवाभागमें दो सूर्य, आकाशमें नक्षत्रसमूह, चारोदिक् एक ही समय इन्द्रधनु, पिशाच-नृत्य, एवं वृक्ष या पर्वत पर गन्धर्व देखना सब आशु मृत्युके लक्षण हैं। इनमें एक भी उपस्थित होनेसे एक मासके मध्य मृत्यु आता है। हस्त द्वारा कर्ण आवरित कर जो व्यक्ति किसी प्रकार शब्द सुन नहीं सकता, उसका जीवन जैसे-तैसे चलता है। स्थूल व्यक्ति हठात् कृश अथवा कृश व्यक्ति हठात् स्थूल हो जानेसे एक मासके मध्य मृत्यु आता है। अपनी छाया दक्षिणदिक् अवस्थित होनेसे पांच दिनमें पञ्चत्व मिलता है। जो व्यक्ति स्वप्नमें अपनेको पिशाच, असुर, काक, भूत, प्रेत, कुक्कुर, गृध्र, शृगाल, गर्दभ, शूकर, शरभ, उष्ट्र, मार्जार, श्येनपक्षी, अजगर या वृक प्रभृति जन्तु द्वारा भक्षण वा आकर्षण किये जाते देख पाता, वह एक वर्ष पीछे मर जाता है। स्वप्नमें अपना शरीर गन्ध, पुष्प और रक्तवस्त्र द्वारा भूषित देखनेसे ८ मासके मध्य मृत्यु होता है। धूलिराशि, वल्मीक, यूप अथवा दण्डः पर आरोहण करते देख ६ मासमें मनुष्य प्राण छोड़ता है। फिर स्वप्नमें गर्दभ आरोहण कर भूषित शरीर दक्षिणदिक् जाने अथवा अपना मस्तक किंवा शरीर शुष्क काष्ठ एवं तृणयुक्त देख पानेसे भी आयुःकाल ६ मास रहता है। स्वप्नमें कृष्णवस्त्र पहने और लोह-दण्ड लिये कृष्णपुरुषको सम्मुख खड़ा देखनेसे ३ मासके मध्य मनुष्य मर जाता है। स्वप्नमें अतिकृष्ण-वर्णा कुमारी आलिङ्गन करनेसे एक मासके मध्य मृत्यु आता है। स्वप्नमें वानर पर चढ़ पूर्वदिक् गमन करते देखनेसे ५ दिनमें यमलोक यात्रा होती है। कृपण व्यक्तिका हठात् दाता और दाता व्यक्तिका हठात् कृपण हो जाना भी मृत्युका एक लक्षण है।"

(काशीखण्ड, ४१ अ०)

आयुर्वेदशास्त्रमें भी मृत्युके नानाप्रकार लक्षण निर्दिष्ट हैं। जैसे सुश्रुतमें—शरीरका आचार व्यवहार स्वाभाविक अपेक्षा अकारण विकृत हो जाना संक्षेपमें मृत्युका लक्षण कहा जाता है। जो व्यक्ति किसी प्रकारका शब्द न होते भी दिव्य शब्द सुनता और इसीप्रकार जिसे समुद्र मेघ प्रभृतिका शब्द न निकलते भी दिव्य शब्दसमूह सुन पड़ता एवं शब्द होते जो नहीं सुनता अथवा अन्य शब्दकी भांति उसे समझता अर्थात् विरक्तिकारक शब्दसे सन्तुष्ट तथा सुशब्दसे असन्तुष्ट रहता; उसका मृत्यु अतिशय निकट आ पहुंचता है। शीतल द्रव्य उष्ण एवं उष्ण द्रव्य शीतल लगने, शीतपीड़ित होते उष्णस्पर्शमें कष्ट पड़ने अथवा अत्यन्त उष्ण-गात्र रहते शीतसे कंपने, प्रहार या अङ्गच्छेदन करनेसे किसी प्रकार वेदना न मालूम पड़ने, शरीरपर धूलि पड़ने, शरीरका वर्ण बदलने, या सर्व शरीरमें मल जैसा पदार्थ निकलने, स्नानके पीछे अनुलेपनादि गात्रमें लगाते, नील मक्षिका आ छुटने और अकस्मात् सुगन्धि वातकर निकल चलनेसे भी मनुष्य मृत्युग्रस्त माना जाता है। रससमूह जो व्यक्ति विपरीत भावसे आस्वादन करता और यथा-युक्त रससमूह जिसके लिये दोषवृद्धि कारक तथा

अथवायुक्त, स्तनमूल दोषव्याप्तिकारक एवं अग्निवृद्धिकारक रहता, वह अल्प दिन पीछे ही चल बसता है। सुगन्धि द्रव्य दुर्गन्ध जैसा लगने अथवा बिलकुल किसी वस्तुका गन्ध मालूम न पड़नेसे मृत्यु आसन्न समझा जायेगा। शीत, उष्ण, कालकी अवस्था एवं दिक् प्रभृति विपरीत भावमें अनुभव करने, दिवाभागमें सकल ज्योतिष पदार्थ प्रज्वलित तथा रात्रिको सूर्यकिरण, दिनको चन्द्रकिरण, मेघशून्य समयमें विद्युत्, विद्युत्से वज्रपात, निर्मल आकाश अथवा प्रासाद प्रभृति स्थानमें मेघ, वायु एवं आकाशको मूर्ति, पृथिवीको धूम, नीहार अथवा वस्त्रादि द्वारा आवरित, लोकसमूहको प्रज्वलित अथवा जलप्लावित देखेगा, वह बहुत दिन नहीं जीवेगा। फिर, आकाशमें नक्षत्रोंके साथ अरुन्धती, ध्रुव एवं आकाशगङ्गा और ज्योत्स्ना, दर्पण तथा उष्ण जलमें अपना प्रतिबिम्ब न देख सकनेवाला अथवा विकृत, एकाङ्गहीन अन्य प्राणी किंवा कुक्कुर, काक, कङ्क, गृध्र, प्रेत, यक्ष, राक्षस, पिशाच, सर्प, हस्ती वा भूतके प्रतिबिम्बकी भांति देखनेवाला भी शीघ्र ही मरता है। प्रज्वलितका वर्ण मयूरकण्ठकी भांति देखने, अथवा अग्निमें धूम न देख पड़नेसे मृत्युका लक्षण समझा जाता है। एतद्भिन्न शरीरके अवयवका प्रकाश, छायावर्ण, छाया (प्रभावर्ण) रक्तवर्णको अन्यथता, स्थिर पदार्थको अस्थिरता, अस्थिर पदार्थकी स्थिरता, बृहत्वस्तुकी (क्षुद्रता) क्षुद्र वस्तुका बृहत्त्व, दीर्घ ह्रस्व, ह्रस्व दीर्घ, निःसरणमें अनुपयुक्त वस्तुका निःसरण, निःसरणमें उपयुक्त वस्तुका अनिःसरण, अकस्मात् शरीरकी शीतलता, उष्णता, स्निग्धता, रूक्षता, स्तब्धता, विवर्णता वा अवसन्नता, अङ्ग विक्षेपका स्वस्थानसे पतन, उत्क्षेप, चक्कर खाना, निर्गत होना, प्रविष्ट होना, गुरुत्व वा लघुत्वकी उत्पत्ति, अकस्मात् रक्तवर्णका विनाश, शिरासमूहका प्रकाश, ललाट वा नासिकापर पिडकाकी उत्पत्ति, प्रातःकाल ललाटसे घर्म निकलना, नेत्ररोग व्यतीत चक्षुमें सर्वदा अश्रु निर्गत होना, मस्तकमें गोमय चूर्णकी भांति चूर्णपदार्थकी उत्पत्ति, भोजन न करनेपर भी मलमूत्रादिकी वृद्धि, भोजन करनेपर भी मलमूत्रका विनाश और दन्त, मुख, नख तथा अन्यान्य अवयवोंमें विवर्ण पुष्पका प्रादुर्भाव मालूम पड़नेसे शीघ्र मृत्यु आता है।

कथित लक्षण नीरोग वा रोगी उभयके मृत्युलक्षण माने गये हैं। निम्नलिखित मृत्युलक्षण केवल रोगीके हैं,—"स्तनमूल, हृदय एवं वक्षोदेशमें शूल उठने, शरीरका मध्यस्थल अर्थात् छाती पीठ और कमर सूजने, हस्तपद सूखने, अथवा मध्यदेश सूखने और हाथ, पांव सूजने, किंवा अर्धाङ्ग सूखने और अर्धाङ्ग सूजने और स्वर नष्ट, क्षीण, विकल वा विकृत पड़नेसे अविलम्ब मृत्यु होता है। मल, कफ एवं शुक्रका जलमें डूबना, चक्षुसे भिन्न वा विकृतरूप देख पड़ना, केशोंका तैलयुक्त मालूम होना, दुर्बल व्यक्तिको अरुचि तथा अतिसार रोग लगना, कासरोगीका तृष्णातुर होना, क्षीण व्यक्तिका वमन एवं अरुचिरोगयुक्त होना और फेन, पूय तथा रक्तमिश्रित वमन करना, सभी मृत्युलक्षण है। एक ही समय शूल एवं स्वरभङ्ग रोगसे पीड़ित होने, हस्त, पद तथा मुखदेशमें शोथ उठने, क्षीण रहते, आहारमें रुचि न उपजने, पिण्डिका, स्कन्ध, हस्त तथा पद शिथिल पड़ने, ज्वरयुक्त कास रोग लगने, ज्वरकासरोगमें पूर्वाह्नका भुक्तद्रव्य अपराह्नमें वमन करने और अपक्व अवस्थामें विरेचन होनेपर श्वासरोग उत्पन्न होकर रोगीको मार डालता है। छागकी भांति आर्तनाद कर भूमितल पर गिरनेवाले, शिथिल मुष्ककोष तथा स्तब्ध वा नष्ट लिङ्ग रखनेवाले, गात्रसेचन करनेपर हृदयस्थ जलको प्रथम सुखानेकी शक्ति रखनेवाले, लोष्टद्वारा लोष्टका काष्ठसे, काष्ठपर आघात लगानेवाले, अथवा नखद्वारा तृणछेदन करनेवाले, अधरोष्ठ काटनेवाले, उत्तरोष्ठ चाटनेवाले, कर्ण वा केश पकड़ खींचनेवाले और देवता, ब्राह्मण, गुरु, सुहृद् एवं चिकित्सकसे द्वेष रखनेवालेका भी मृत्यु अति आसन्न होता है। जिसके बलकालीन

मल्लिका, बबई। (स्त्री०) कालस्य मानं परिमाणम्। २ कालका परिमाण, वक्तकी तौल।

कालमानक, कालमान देखो।

कालमार, कालमान देखो।

कालमारिष (सं० पु०) वृहत्पत्र तण्डुलीय शाक, बड़ीपत्तीकी चौराई।

कालमाल (सं० पु०) कालेन कृष्णवर्णेन मालः सम्बन्धोऽस्य, बहुव्री०। कृष्णतुलसी, काली तुलसी।

कालमालक, कालमाल देखो।

कालमाला (सं० स्त्री०) कृष्णार्जक, काली तुलसी।

कालमुख (सं० पु०) कालं मुखं यस्य, बहुव्री०। कृष्णमुख वानर विशेष, काले मुंहका एक बन्दर। (भारत, वन २८१ अ०)। (त्रि०) २ कृष्णवर्ण मुख वा अग्रभागयुक्त, कलमुंहा।

कालमुष्क, कालमुष्कक देखो।

कालमुष्कक (सं० पु०) कालो मुष्क इव कायति प्रकाशते, काल-मुष्क-कै-क। १ घण्टापाटलवृक्ष, मोखा। २ कृष्णपुष्पघण्टा, काले फूलको मोखा।

कालमूर्ति (सं० स्त्री०) कालस्य मूर्तिः, ६-तत्। १ यममूर्ति। २ मृत्युकारक जन्तुकी मूर्ति। ३ कालयम।

कालमूल (सं० पु०) कालं मूलं यस्य, बहुव्री०। रक्तचित्रक, लाल चीत। चित्रक देखो।

कालमेघ (सं० पु०) १ क्षुद्र वृक्षविशेष, एक छोटा पेड़। यह अत्यन्त तिक्त होता है। इसे महातीता और महाभांग भी कहते हैं। यह अधिकांश मरिचके पत्रसे मिलते हैं। वृक्षके शीर्षमें चपटा फल लगता है। अनेक वैद्य इसको ज्वरनाशक बताते हैं।

२ कोई विख्यात तामिल कवि। द्राविड़के लोग इन्हें 'कालमेकम्' कहते हैं। कविता विद्रूप एवं रूपकसे परिपूर्ण है। अधिकांश श्लोक द्व्यर्थमूलक हैं। यह दो दिनमें एक काव्य लिख सकते थे। कालमेघ सम्भवतः ई० के पञ्चदश शताब्दमें जीवित थे। ठीक नहीं कहा जा सकता—इनका असल नाम क्या रहा।

कालमेशिका (सं० स्त्री०) कालो मिश्यते कालोऽयं इति पश्यते जनैरिति शेषः काल मिश-ङीप्-कन् टाप् ह्रस्व। मञ्जिष्ठा, मंजीठ।

कालमेषी, कालमेषिका देखो।

कालमेषिका (सं० स्त्री०) कालं मिषति स्पर्धते स्वकाण्डेन, काल-मिष्-अण्-ङीप् स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वत्वञ्च। १ श्यामा त्रिवृता, काली कटैया। २ मञ्जिष्ठा, मंजीठ। ३ कृष्णजीरक, काला जीरा। ४ त्रिवृता, कटैया। ५ वाकुची। ६ हरिद्रा, हलदी। ७ श्वेतजीरक, सफेद जीरा। ८ श्यामालता।

कालमेषी, कालमेषिका देखो।

कालमेही (सं० पु०) मेहरोग विशेष, जिरियाकी एक बीमारी।

कालयवन (सं० पु०) यवनोंका एक अधिपति। महादेवके नियमानुसार गार्ग्य ऋषिकी भार्याके गर्भसे इसका जन्म हुआ। उक्त ऋषिने मथुरावासियोंके प्रति जातक्रोध हो वैरनिर्यातनके निमित्त अतितप्तर नामक स्थानमें द्वादश वत्सर लौहचूर्णमात्र भक्षण और नियम अवलम्बनपूर्वक रुद्रदेवकी प्रीतिके लिये तपस्या की थी। गार्ग्यके औरस और गोपाली नाम्नी अप्सराके गर्भसे कालयवनने जन्म लिया। यह राजधर्मज्ञ, राजोचित सद्गुणसे अलङ्कृत, विद्वान्, सत्यवादी जितेन्द्रिय, रणकुशल, शूर और सुमन्त्रिसहाय थे। मगधराज जरासन्धसे इनकी संप्रीति रही। यह जरासन्धके साथ मथुरा आक्रमण करने गये। उससे पहले श्रीकृष्णने मथुरावासियोंको द्वारका भेज दिया था। वह जानते थे कि कालयवन मथुरावासियोंद्वारा मारे जाने योग्य न थे। सुतरां श्रीकृष्ण कालयवनके सम्मुखसे भाग किसी पर्वतकी गुहामें घुसकर छिप रहे। उस गुहामें सूर्यवंशीय महाराज मुचुकुन्द रणके परिश्रमसे बहुत क्लान्त हो सोते थे। कालयवनने उनमें कृष्ण समझकर उनके लात मार दी। मुचुकुन्दकी कोप दृष्टिसे फिर यह विनष्ट हो गये। (हरिवंश ११२ अ०)

कालयाप (सं० पु०) कालस्य यापः अतिवाहनम्, ६-तत्। काल अतिवाहन, वक्तका गुजारा, टालमटोल।

कालयापन (सं० स्त्री०) कालस्य यापनं अतिवाहनम्, ६-तत्। १ समयका विताव, वक्तका कटाव। २ लोकयात्राका निर्वाह, गुजारा।

यह वक्रगामी या मन्दस्थानगत हो जन्मनक्षत्रको सताने, जिसको होरा, उल्का तथा अशनिद्वारा अभिभूत होती, जिसके गृह, दार, शय्या, आसन, यान, वाहन, मणि, रत्न प्रभृति सकल उपकरण कुलक्षणयुक्त होते, उसे अचिरात् मरते देखते हैं। शरीरकी प्रभा श्याम, लोहित, नील वा पीत वर्ण पड़ते मृत्यु निकटवर्ती समझा जाता है। जिसकी कान्ति और लज्जा विनष्ट देख पड़ती, अकस्मात् जिसके शरीरमें तेजः, ओजः, स्मृति तथा प्रभा उपस्थित होती, जिसका ओष्ठ लटकने लगता, जिसका उत्तरोष्ठ ऊर्ध्वगत होता अथवा जिसके उभय ओष्ठ जामनकी भांति काले पड़ जाते, उसका जीवन अतिदुर्लभ है। सकल दन्त रक्तवर्ण श्यामवर्ण वा खञ्जनवर्ण होने, जिह्वा कृष्णवर्ण, स्तब्ध, अवलिप्त, शोथयुक्त या कर्कश लगने, नासिका कुटिल फटीफटी तथा शुष्क पड़ने, स्वर अधिक प्रकाशित अथवा बन्द हो जाने, चक्षुद्वय सङ्कुचित, स्तब्ध, रक्तवर्ण अथवा अश्रुयुक्त रहने, केश अपने आप उलझने, भ्रू द्वय झुकने और सकल अक्षिपक्ष्म गिरनेसे अविलम्ब मृत्यु होता है। जो मुखमें खाद्यवस्तु डालनेसे निगल नहीं सकता, जो अपना मस्तक धारण करनेमें असमर्थ रहता, जो एकाग्र दृष्टिकी भांति एक विषयमें चक्षु सन्निवेश करता अथवा मुग्धचित्त बनता, वह अवश्य मरता है। बलवान् वा दुर्बल व्यक्तिका बारबार मोहमें पड़ना भी मृत्यु लक्षण समझा जाता है। जो व्यक्ति सर्वदा उत्तान होकर सोता, पदद्वय विक्षेप वा प्रसारण करता, जिसका हस्त, पद एवं निश्वास शीतल पड़ जाता, जिसका श्वास छिन्न रहता और निःश्वास काकोच्छ्वासकी भांति लगता, वह अधिक दिन नहीं चलता। अविरत सोने, एकबारगी निद्रा भङ्ग न होने अथवा एकबारगीही निद्रा न पड़ने, बोलनेकी चेष्टा करनेमें मूर्छा आने, सर्वदा उद्गार देखाने, प्रेतके साथ बतलाने, विघात न होते भी रोमकूपद्वारा रक्त निकलने और वाताष्ठीला हृदयमें घटनेसे मृत्यु निकट आ पहुंचता है। किसी रोगके उपद्रव व्यतीत केवल शोथरोग (पुरुषके पदद्वयमें, स्त्रीके मुखदेशमें और पुरुष-स्त्री दोनोंके गुह्यदेशमें) लगनेसे ही प्राण विनिष्ट हो जाता है। श्वास अथवा काम रोगमें अतिसार, ज्वर, हिक्का, वमन, अण्डकोष एवं लिङ्गमें शोथ प्रभृति उपद्रव उठनेसे मृत्यु आता है। बलवान् रोगी भी खेद, दाह, हिक्का और श्वास प्रभृति उपद्रवयुक्त होनेसे नहीं बच सकता। जिस व्यक्तिकी जिह्वा श्यामवर्ण बन जाती, वामचक्षु कोटरगत होता, मुखसे पूतिगन्ध निकलता, अश्रुसे मुखमण्डल भर जाता, पदद्वयमें घर्म (पसीना) आता, चक्षु आकुल पड़ता, शरीरके सकल गुरु अवयव हठात् पतले पड़ जाते, जो पङ्क, मत्स्य, वसा, तैल और घृतका गन्ध अनुभव कर नहीं सकता, मस्तकके जूंआ जिसके ललाटपर विचरण करते, जिसके हाथसे प्रदान करनेपर काक खाद्य नहीं खाते, जिसको किसी विषयमें सन्तुष्टि नहीं आती, उसका मृत्यु अति आसन्न है। क्षीण व्यक्तिको क्षुधा तृष्णा रुचिकारक एवं हितजनक मिष्टान्न पानद्वारा निवारित न होने और एक ही काल आमाशय रोगमें शिरःशूल तथा दारुण कोष्ठशूल उठनेसे लोगोंका अचिरात् मृत्यु होता है।"

(सुश्रुत सूत्रस्थान १०, ११, ३१ अ०)

कालचोदित (सं० त्रि०) कालेन चोदितः प्रेरितः ३-तत्। यथाकाल बिना चेष्टाके उपस्थित, मौतका भेजा हुआ, जिसे समय या मृत्यु भेजे।

कालचोदितकर्मा (सं० त्रि०) भाग्यके प्रभावसे कर्म करनेवाला, जो किस्मतके जोरसे काम करता हो।

कालजानि (सं० स्त्री०) नदी विशेष, एक दरया। अलाईकुरी और टोमा नामक दो नदियां भूटानके पर्वतसे निकल जलपाईगोड़ी जिलेमें अलीपुर नामक स्थान पर आ मिली हैं। इसी सङ्गमपर उक्त दोनों नदियोंका नाम 'कालजानि' पड़ा है। यह नदी आगे चल कोचविहार राज्यको पूर्व और पहुंचो और रङ्गपुरके निकट रयक नामक नदीमें जा गिरी है।

कालजुवारी (हिं० पु०) प्रसिद्ध द्यूतकार, नामी जुवाबाज, जो खूब जुवा खेलता हो।

कालजोपक (सं० त्रि०) काले यथाकाले जुषते भोजनादि इति शेषः, काल-जुष्-खुल्। १ यथा समय

कालयुक्त (सं॰ पु॰) कालेन युक्तः, ३-तत्। १ प्रभवादि षष्टि संवत्सरोंके अन्तर्गत ५२वां संवत्सर। (त्रि॰) २ अपरिवर्तनीय कालनियमयुक्त, वक्तके मुताबिक मिला हुआ। ३ मृत्युयुक्त, मौतसे मिला हुआ।

कालयोग (सं॰ पु॰) कालस्य योगः संयोगः, ६-तत्। १ समयका सम्बन्ध, वक्तका सिलसिला।

"सहसा कालयोगेन सहसि कालमेतेर्वः।" (भारत, वन, १० अ॰)

२ ज्योतिष-शास्त्रोक्त कालरूप एक योग।

कालयोगी (सं॰ पु॰) काल एव योगः अस्यास्ति, कालयोग-इनि। शिव।

"कालयोगी महानादः सर्वकामश्चतुष्पथः।" (भारत, अनु॰, १७ अ॰)

(त्रि॰) २ कालसम्बन्धीय, वक्तके मुताबिक।

कालयोधी (सं॰ पु॰) काले यथाकाले योधः युद्धं कर्तव्यत्वेन अस्यास्ति, काल-योध-इनि। यथासमय युद्ध करनेवाला व्यक्ति, जो मौके वक्त पर लड़ता हो।

कालर (अं॰ पु॰ Collar) ग्रैवेय, पट्टा, कुरते या कमीजमें गलेकी चारो ओर लगनेवाली उठी हुयी पट्टी।

कालराति (हिं॰) कालरात्रि देखो।

कालरात्रि (सं॰ स्त्री॰) कालरूपा सृष्टिसंहारभूता रात्रिः, मध्यप॰। १ प्रलयरात्रि, कयामतकी रात। ब्रह्माकी रात्रिको कालरात्रि कहते हैं। उस समय समुदय संसार विनष्ट हो जाता है। केवलमात्र नारायण एकार्णवमें सोया करते हैं। इसीसे उस समयका नाम कालरात्रि है। २ मृत्युसूचक रात्रि, मौतकी रात। अपने वा आत्मीय व्यक्तिके मृत्युकी रात्रि कालरात्रि कहाती है। ३ भयानक रात्रि, खौफनाक रात। ४ ज्योतिषशास्त्रसे क्रियाके अयोग्य रात्रि विशेष, खराब रात। उसमें समस्त रात्रिको ८ भाग करनेका नियम है। फिर वारके अनुसार प्रतिदिन आठ भागोंमें एक भाग कालरात्रि माना जाता है। यथा—रविवारको रात्रिका षष्ठ भाग अर्थात् २० दण्डके पीछे ४ दण्ड, सोमवारको चतुर्थ भाग अर्थात् १२ दण्डके पीछे ४ दण्ड, मङ्गलवारको द्वितीय भाग अर्थात् ४ दण्ड, बुधवारको सप्तम भाग अर्थात् २४ दण्डके पीछे ४ दण्ड, वृहस्पतिवारको पञ्चम भाग अर्थात् १६ दण्डके पीछे ४ दण्ड, शुक्रवारको तृतीय भाग अर्थात् ८ दण्डके पीछे ४ दण्ड और शनिवारको प्रथम एवं शेष भाग अर्थात् प्रथम ४ दण्ड और शेषको ४ दण्ड कालरात्रि होती है। यह समुदाय कार्यारम्भमें परित्याज्य है। साधारणतः रात्रिपरिमाण ३२ दण्ड लगा यह हिसाब लिखा गया है। किन्तु रात्रिपरिमाण घटने बढ़नेसे भी इसी भाग कर उक्त नियमानुसार कालरात्रि मानी जाती है।

"रवौ षष्ठं विधो वेदं कुजवारे द्वितीयकम्।
बुधे सप्त गुरौ पञ्च भृगुवारे तृतीयकम्।
अन्त्याद्यं तथा चार्कं रात्रौ कालं विवर्जयेत्॥" (दीपिका)

५ दुर्गा देवीकी एक मूर्ति।

"कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा।" (मार्कण्डेयपु॰, ८१ अ॰)

६ दुर्गाकी कालरात्रि मूर्तिका प्रतिपादक एक मन्त्र। ७ दीपान्विता अमावस्या, दिवाली।

"दीपावली तु या प्रोक्ता कालरात्रिश्च सा मता।" (कालम)

८ यमकी भगिनी। वही सर्वप्राणीका विनाश करती है। ९ भीमरथी, अत्यन्त वृद्धावस्था। मनुष्यके आयुमें ७७वें वर्ष पर ७वें मासके ७वें दिन पड़नेवाली रात कालरात्रि कहलाती है। उसके पीछे मनुष्य नित्य-नैमित्तिक कर्मसे छुटकारा पाता है।

कालरुद्र (सं॰ पु॰) कालः कालरूपः सर्वसंहारको रुद्रः, कर्मधा॰। कालाग्निरूप एक रुद्र।

"येषु नः कालरुद्रस्य नामानीयनघद्वतः।
विविधकर्मविन्यासा इतस्ते निवर्तताः॥" (देवीपु॰)

कालरूप (सं॰ त्रि॰) प्रशस्तः कालः, काल-रूपप्। प्रशंसायां रूपप्। पा ५।३।६६। १ अत्यन्त कृष्णवर्ण, निहायत काला। २ कालसदृश, मौत-जैसा। ३ कृष्णवर्ण, काला।

कालरूपधृक् (सं॰ पु॰) कालरूपं धृष्णोति धारयति, कालरूप-धृष-क्विप्। १ यम। २ मृत्यु, मौत।

काललं (सं॰ त्रि॰) कालः कालकं तिलभेदः अस्त्यस्य, काल-लच्। सिध्मादिभ्यश्च। पा ५।२।९७। कालतिलयुक्त, काले दागवाला।

काललवण (सं॰ क्ली॰) कालं कृष्णवर्णं लवणम्, कर्मधा॰। १ विट्लवण, काला नमक। भावप्रकाशके मतमें यह अग्निदीप्तिकारक, लघु, तीक्ष्ण, उष्णवीर्य,

अल्प आहारादि द्वारा सन्तुष्ट, जो वक्त पर घोड़ा खाना पानेसे खुश रहता हो। (पु०) २ गोदविशेष।

कालज्ञ (सं० पु०) कालं उषादिसमयं जानाति, काल-ज्ञा-क। कुक्कुट, मुरगा। (त्रि०) २ उचित समयवेत्ता, ठीक वक्त समझनेवाला। ३ ज्योतिषी, नजूमी।

कालज्ञान (सं० क्ली०) कालो ज्ञायते अनेन, काल-ज्ञा करणे ल्युट्। १ ज्योतिषशास्त्र, नजूमा। (भावे ल्युट्) २ उपयुक्त समयका ज्ञान, ठीक वक्तकी पहचान। (कालो मृत्युर्ज्ञायते अनेन) ३ मृत्युबोधक चिह्न, मौतको बतानेवाला निशान्। ४ चिकित्साशास्त्रविशेष। इससे काल समझ पड़ता है। ५ रुग्विनिश्चय-शास्त्रविशेष, बीमारी पहचाननेकी एक किताब, इसे शम्भुनाथने बनाया था।

कालञ्जर (सं० पु०) कालं जरयति काल-जॄ-णिच्-अच् बाहुलकात् मुम्। १ योगिचक्रमेलक। २ भैरव विशेष। (कालेन जीर्यति) ३ मेरुके उत्तरका एक पर्वत। (विष्णुपुराण २।२।२८) ४ नगर विशेष, एक शहर। कालिंजर देखो। ५ शिव। (त्रि०) ६ मृत्युनिवारक, मौतको हटानेवाला। ७ सङ्कल्प छोड़ सत्त्व गुणमात्रमें मनोनिवेशकारक।

"आदाय सर्वसङ्कल्पान् सत्त्वे चित्तं निवेशयेत्।
सत्त्वे चित्तं समावेश्य ततः कालञ्जरो भवेत्॥" (भारत शान्ति २७ अ०)

कालञ्जरक (सं० त्रि०) कालञ्जर-वुञ्। अवृद्धादपि बहुवचनविषयात्। पा ४।२।१२५। कालञ्जर नामक जनपद सम्बन्धीय।

कालञ्जरा (सं० स्त्री०) कालं जरयति, कालम्-जॄ-णिच् अच्-टाप्, मुम्। चण्डिका, दुर्गा देवी।

कालञ्जरी (सं० स्त्री०) कालञ्जर-ङीप्। शिवपत्नी, चण्डी।

कालतम (सं० त्रि०) अयमेषामतिशयेन कालः कृष्णवर्णः, काल-तमप्। अतिशय कृष्णवर्ण, निहायत काला।

कालतर (सं० त्रि०) कालो अतिशेते कालीम् काले-तरप्। द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ (पा ५।३।५७। वार्तिक ६) कालीकी अपेक्षा भी अधिक कृष्णवर्ण, ज्यादा काला।

कालता (सं० स्त्री०) कालस्य भावः काल-तल्। कालका भाव, वरवक्तगी।

कालताल (सं० पु०) कालताय कृष्णत्वात् अलति पर्याप्नोति, कालता-अल-अच्। तमाल वृक्ष।

कालतिन्दुक (सं० पु०) कालश्चासौ तिन्दुकश्चेति, कर्मधा०। कुपीलु वृक्ष, किसी किस्मका आबनूस।

कालतिल (सं० क्ली०) कालश्चासौ तिलश्च, कर्मधा०। कृष्ण तिल, काला तिल।

कालतीर्थ (सं० क्ली०) कोशलास्थित एक तीर्थ। इस तीर्थका जल स्पर्श करनेसे एकादश वृषके दानका फल मिलता है।

"कोशलान्तु समासाद्य कालतीर्थमुपस्पृशेत्।
वृषभैकादशफलं लभते नात्र संशयः॥" (भारत, वन ८५ अ०)

कालतुण्ड (सं० क्ली०) कृष्णागुरु, काला अगर।

कालतुलसी (सं० स्त्री०) काली तुलसी।

कालतुल्य (सं० त्रि०) मृत्युके समान, मौतकी बराबर, मार डालनेवाला।

कालतुष्टि (सं० स्त्री०) समयापेक्षी सन्तोष, वक्तकी कनात। सांख्यमें समय आनेसे स्वतः कार्यको सिद्धि हो जानेका सिद्धान्त "कालतुष्टि" कहाता है।

कालतोयक (सं० पु०) प्राचीन जनपद विशेष, एक पुरानी बस्ती। महाभारत और ब्रह्माण्ड प्रभृति पुराणोंमें यह स्थान आभीर तथा अपरान्तादि जनपदके साथ उक्त हुआ है। टोलेमिने भी कोलक और एरियान् कोकल नामक जनपदको बात लिखी है। (Ptolemy, Geog. VII. ch. I. p. 58; Arrian, Indika Sec. 21.) उक्त उभय नाम कालक वा कालतोयक शब्दके रूपान्तर समझ पड़ते हैं। कराची उपसागरके उपकूलमें कालकस वा काकस नामक एक जिला है। इसी स्थानको पुराणोक्त कालतोयक जनपदका अंश मान सकते हैं।

कालत्रय (सं० क्ली०) कालस्य त्रिरवयवः, काल-त्रि-अयच्। त्रिसंख्या तयस्यायच्। पा ५।२।४२। वर्तमान, भूत एवं भविष्य तीनों काल, हाज़िर, माज़ी और आइन्दा ज़माना।

कालत्रयज्ञ (सं० त्रि०) कालत्रयं जानाति, कालत्रय-ज्ञा-क। वर्तमान, भूत एवं भविष्य तीनों कालका विषय जाननेवाला, जो हाज़िर, माज़ी और आइन्दा तीनों ज़मानेसे वाकिफ हो।

कालत्रयदर्शन (सं० क्ली०) कालत्रयस्य दर्शनं प्रत्यक्षवत् अवलोकनम्, ६-तत्। प्रत्यक्षकी भांति कालत्रयके विषयका अवलोकन, तीनों ज़मानेका देखाव।

रूक्ष, रुचिकारक, व्यवायी और विवन्ध, आनाह, विष्टम्भ, हृदयवेदना, शरीरकी रूक्षता तथा शूलनाशक है। २ काचलवण, सोंचरनोन।

काललोचन (सं॰ पु॰) एक दानव।

"प्रसभो नरको वायी वृषभः काललोचनः।" (हरिवंश, २४ अ॰)

काललोह (सं॰ क्लो॰) कालश्च तत् लोहश्चेति, कर्मधा॰। तीक्ष्णलोह, लोहा लोहा। इसका संस्कृत पर्याय कृष्णायस, शस्त्र, तीक्ष्ण और कालायस है। लोह देखो।

कालवङ्ग (सं॰ पु॰) क्षुपविशेष, एक झाड़। लोग इसे कालियाकड़ा कहते हैं।

कालवदन (सं॰ पु॰) १ दैत्यविशेष। (त्रि॰) २ कृष्णवर्ण मुखयुक्त, काले मुंहवाला।

कालवसन (सं॰ क्लो॰) कलयति उपभुनक्ति विषयम्, कल-णिच्-अच् कालस्य कायस्य वसनं आवरणं वा, ६-तत्। वर्म, कवच, ज़िरह, बख्तर।

कालवस्ति (सं॰ पु॰) वर्षाके आदिमें वात प्रभृतिके उपशमनार्थ वस्ति, शुरू बरसातमें सफाईके वास्ते लगायी जानेवाली पिचकारी। यह पञ्चदशविध होता है। पहले एक स्नेहवस्ति लगता है। उसके पीछे एक निरूहवस्ति लगाते हैं। पुनः स्नेहवस्ति लगाया जाता है। उसके पीछे निरूहवस्ति चलता है। इसी प्रकार द्वादश वस्ति अन्यतर क्रमसे लगा अन्तमें तीन स्नेहवस्ति देते हैं। (चरक)

कालवाघ—पञ्जाब प्रदेशके बन्नू ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा॰ ३२° ५७´ ५७´´ उ॰ और देशा॰ ७१° ३५´ १७´´ पू॰ पर अवस्थित है। लोकसंख्या छह हजारसे कुछ अधिक है। यह अटकसे ५२ कोस दूर सिन्धु नदीके कूल पर एक लवणका पर्वत है। कालवाघ नगर उसी पर्वतके गात्रसे संलग्न है। उक्त पर्वत लवणमय है। खण्ड खण्ड काट कर बुकनी पीस लेनेसे ही उत्तम लवण बन जाता है। यहां मारीनामक स्थानमें लवण खोद कर निकाला जाता है। राशि राशि लवण कट जाते भी पर्वत कुछ घटता मालूम नहीं पड़ता। सिन्धुनदकी लूना नाम्नी एक शाखा नदी है। उसके पश्चिमभागमें एक स्थानपर छह लवणखात है। उसको बाईं और नमकका गुदाम है। वहां लवण बिकता है। पर्वतमें लवणका एक एक प्रस्तर कहीं डेढ़ और कहीं १२ हाथ तक प्रशस्त है। वहां ३५ मन लवण काट लेनेमें सिर्फ एक रुपया देना पड़ता है। गुदाममें लानेसे मूल्य अधिक लगता है। निकट ही दूसरा पहाड़ भी है। उसमें फिटकरी भरी है। वहां फिटकरी साढ़े तीन रुपये मन बिकती है। कालवाघ नगरमें लोहेकी अच्छी चीजें बनती हैं। वहां म्युनिसिपालिटी, डाकघर, औषधालय, सराय और विद्यालय वर्तमान है।

कालवाचक (सं॰ त्रि॰) कालप्रबोधक, वक्त बतानेवाला।

कालवाची (सं॰ त्रि॰) समय बतानेवाला, जो वक्त को बताता हो।

कालवान् (सं॰ त्रि॰) कालः कृष्णवर्णः अस्त्यस्य, कालमतुप् मस्य वः। कृष्णवर्णविशिष्ट, काले रंगवाला।

कालवानर (सं॰ पु॰) कृष्णमुख वानर, काले मुंहवाला बन्दर।

कालवार—बम्बई प्रेसिडेन्सीके अन्तर्गत काठियावाड़ प्रदेशका एक नगर। यह नवनगरसे १४ कोस दक्षिणपूर्व अवस्थित है। कालवार नामक राजस्वविभागका एक महल भी है। कालवार नगर उसीका प्रधान स्थान है। नगर प्राचीर वेष्टित है। लोकसंख्या ढाई हजारसे कम है। १८७८ ई॰ को दुर्भिक्षके समय वहां कोई ३०० लोग मरे थे। बालाकाठी जातिकी बसती पास ही है। प्रवादानुसार बाला नामक किसी राजपूतने वहां जा काठी जातिकी किसी रमणीका पाणिग्रहण किया था। उसी परिणयके फलसे बालाकाठी लोग उत्पन्न हुये। अतयर्णपूर्व कालवारमें एक प्रकारका दकड़ी नामक कार्पासवस्त्र बनता था। देशस्थ राजा उसका बड़ा समादर करते थे। किन्तु आजकल वह देख नहीं पड़ता।

कालवाहन (सं॰ पु॰) महिष, भैंसा।

कालविक्रम (सं॰ पु॰) कालस्य यमस्य समयस्य वा विक्रमः, ६-तत्। १ यमका विक्रम। २ मृत्युका विक्रम, मौतकी ताकत। ३ समयका विक्रम, वक्तकी ताकत।

कालविध्वंसन (सं॰ पु॰) १ वैद्यक रसविशेष, एक दवा

कालत्रयदर्शी (सं० पु०) कालत्रयं पश्यति प्रत्यक्षवत् पर्यालोचयति, कालत्रय-दृश-णिनि। प्रत्यक्षकी भांति कालत्रयके विषयको अवलोकन करनेवाला, जो तीनों ज़मानेका हाल देखता हो।

कालत्रयवेदी (सं० त्रि०) कालत्रयं वेत्ति, कालत्रय-विद-णिनि। त्रिकालका विषय जाननेवाला, जो तीनों ज़मानेके हालसे वाकिफ़ हो।

कालदण्ड (सं० पु०) कालप्रापको दण्डः, मध्यपदलो०। १ ज्योतिषोक्त वारादि योगविशेष। (काले यथाकाले प्राप्तो दण्डः, ७-तत्) २ यथासमय प्राप्त दण्ड, वक्तसे मिली हुई सज़ा। (कालस्य दण्डः, ६-तत्) ३ मृत्युदण्ड, मौतकी चपेटा।

कालदन्तक (सं० पु०) कालो दन्तोऽस्य, कालदन्त-कप्। १ सर्पविशेष, एक सांप। यह सर्प वासुकि वंशजात रहा और जनमेजयके यज्ञमें मारा गया। (त्रि०) २ कृष्णवर्ण दन्तयुक्त, काले दांतवाला।

कालदमनी (सं० स्त्री०) कालं मृत्युं दमयति नाशयति काल-दम-ल्यु-ङीप्। मृत्यु निवारिणी दुर्गा।

कालदानी—कुर्दिस्थानके इरबी जिलेका एक ईसायी सम्प्रदाय। इन्हीं लोगोंके मुंहसे सुना जाता है कि सेण्ट टामस और उनके ७० शिष्योंमें २ लोगोंने मिलकर कालदानियोंको ईसायी बनाया था। यह पदजातिसे पृथक् रह आज भी स्वाधीन भावमें वास करते हैं। कालदानी प्रजातन्त्रप्रिय हैं। पूर्वमें यह लोग कालदी (*Kaldi pr. Chaldeans*) कहाते थे। ईसायी होते समय इन्होंने जिस भावमें नूतन धर्म ग्रहण किया, आज भी उसी प्रकार उसे मानते हैं। कालदानियोंके प्रत्येक ग्राममें एक सामान्य गिरजा रहता है। प्रति रविवारको स्त्री पुरुष एकत्र हो उपासना और उपहारादि दान करते हैं। यह लोग प्रायः उपवासी रहते हैं। इनके ग्रामके निरामिषाशी होते हैं। यह सदा युद्धके लिये प्रस्तुत रहते हैं। केवल शत्रु ही नहीं—निरीह आगन्तुकके ऊपर भी अत्याचार किया जाता है। वाम और टसर इनके मध्य पूर्वमें आमदिया (जिसतक कालदानी प्रदेश विस्तृत है। इस प्रदेशमें धान्यगोधूमादि बहुत होता है। किन्तु पार्वत्यभूमिकी कमी नहीं है।

कालदोहा (सं० स्त्री०) मोली हरा सीताफल पेड़।

कालधर्म (सं० पु०) कालस्य धर्मः, ६-तत्। १ मृत्यु, मौत; समयका काम, समयका स्वभाव, वक्तकी चाल। शीत ग्रीष्मादि ऋतुके अनुसार शीतलता और उत्तापादि जो उपजता, उसीका नाम कालधर्म पड़ता है। २ समयानुसार व्यवहार, वक्तका चलन।

कालधर्मा (सं० पु०) कालस्य धर्म इव धर्मोऽस्य, कालधर्म-अनिच्। मृत्यु, मौत।

कालधारणा (सं० स्त्री०) कालस्य धारणा नियमनमिति: ६-तत्। समयनिर्धारण, वक्तका ठहराव। २ कालकी अपेक्षाका ज्ञान, वक्तकी हालतका इल्म।

कालनगर—युक्तप्रान्तके इलाहाबाद जिलेका एक नगर, यह इलाहाबाद शहरसे २० कोस उत्तर-पश्चिम, गङ्गाके दक्षिणतीर अक्षा० २५° ४१´ ५५´´ उ० और देशा० ८१° २४´ २१´´ पू० पर अवस्थित है। आजकल इसे करा कहते हैं। यहां कालेश्वरका एक मन्दिर है। इसीसे इसको कालनगर कहते हैं।

कालनर (सं० पु०) १ अनुवंशीय एक राजा।

> "अनोः सभानरश्चक्षुः परेष्णुश्च त्रयः सुताः।
> सभानरात् कालनरः सृञ्जयस्तत्सुतः स्मृतः॥" (भागवत ९।२३)

(कालः कालचक्रं राशिचक्रमित्यर्थः नर इव मितादि) २ द्वादश राशिका मस्तकादि अवयवयुक्त पुरुष।

कालना—वङ्गालके वर्धमान जिलेका एक सबडिविजन। यह अक्षा० २३° ७´ एवं २३° २५´ ४५´´ उ० और देशा० ८८° ५६´ तथा ८८° ३० ´ ४५´´ पू० के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ढाई लाख होगी। कालना महकुमामें ७१२ ग्राम विद्यमान हैं। पहले कालना पूर्वस्थली और मन्तेश्वर, तीन स्वतन्त्र थाने थे। १८८१ ई० को यह तीनों कालना महकुमामें मिला दिये गये। इस विभागके लिये एक दीवानी और दो फौजदारी अदालतें हैं। इस विभागका प्रधान नगर भी कालना है। यह गङ्गाके दक्षिणकूल अक्षा० २३° १३´ २०´´ उ० और देशा० ८८° २४´ १०´´ पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः डेढ़ हजार है। पहले लोग अधिक रहते थे। किन्तु समानतः मलेरिया ज्वरसे आबादी घटायी है। कालना एक प्रधान वाणिज्यस्थान है। ईष्टइण्डिय-

यह पारद, स्वर्ण, रौप्य, ताम्र और हरिताल, समभाग मर्दनकर पाण्डु और आमय रोग नष्ट हो जाता है। (रसरत्नाकर)

(स्त्री०) कालस्य विध्वंसनम्। २ समयनाश, वक्तकी बरबादी।

कालविध्वंसनरस, कालविध्वंस देखो।

कालविध्वंसी (सं० स्त्री) कालं विध्वंसयति नाशयति, काल-वि-ध्वंस-णिच्-णिनि। समयनाशक, वक्त बरबाद करनेवाला।

कालविपाक (सं० पु०) समयकी परिपक्वता, वक्त पूरा होनेकी मियाद।

कालविप्रकर्ष (सं० पु०) कालस्य विप्रकर्षः दूरत्वम्, ६-तत्। समयकी दूरता, वक्तका बढ़ाव।

कालविषाणिका (सं० स्त्री०) काकोली और क्षीर काकोली।

कालवीजक (सं० पु०) महानिम्ब, बड़ी नीम।

कालवृत्त, कालवृन्त देखो।

कालवृद्धि (सं० स्त्री) वृद्धिविशेष, एक सूद। प्रतिदिवस वा प्रति मासके हिसाबसे जो वृद्धि बढ़कर द्विगुण हो जाती, वही कालवृद्धि कहाती है।

"चक्रवृद्धिः कालवृद्धिः कारिता कायिका च या।" (मनु, ८।१५३)

कालवृन्त (सं० पु०) कालं वृन्तं यस्य, बहुव्री०। कुलत्थ, कुलथी।

कालवृन्ता, कालवृन्तिका देखो।

कालवृन्ताक (सं० पु०) पेटिका, एक पेड़।

कालवृन्तिका (सं० स्त्री०) कालं वृन्तं यस्याः काल-वृन्त-ङीप् स्वार्थे कन्-टाप्, ईकारस्य ह्रस्वत्वम्। रक्तपाटलवृक्ष। २ पेटिका पिटारी।

कालवृन्ती (सं० स्त्री०) कालवृन्त-ङीप्। पाटलावृक्ष, एक पेड़।

कालवेग (सं० पु०) नागविशेष, कोई नाग। वह वासुकिके पुत्र थे।

कालवेला (सं० स्त्री०) कालस्य वेला, ६-तत्। १ समस्त दिवारात्रिके मध्य क्रियाका अयोग्य समयविशेष, तमाम दिन और रातके बीच काम न करने लायक वक्त। दिनमान और रात्रिकाल उभयमें प्रत्येकको ८ आठ भागमें बांट वारके अनुसार एक वा दो भाग कालवेला मानते हैं। रविवारको दिनका पञ्चम एवं रात्रिका षष्ठ, सोमवारको दिनका द्वितीय तथा रात्रिका चतुर्थ, मङ्गलवारको दिनका षष्ठ एवं रात्रिको सप्तम, बुधवारको दिनका तृतीय तथा रात्रिका सप्तम, बृहस्पतिवारको दिनका सप्तम एवं रात्रिका पञ्चम, शुक्रको दिनका चतुर्थ तथा रात्रिका तृतीय और शनिवारको दिनरात्रि उभयका प्रथम एवं अष्टम भाग कालवेला है। (ज्योतिषदीपिका)

कालव्यापी (सं० त्रि०) कालं व्याप्नोति काल-वि-आप-णिनि। एकरूप बहुदिन स्थायी, एक ही तरह बहुत दिन चलनेवाला।

कालशम्बर (सं० पु०) एक दानव।

कालशाक (सं० स्त्री) कालं कृष्णं शाकम्, कर्मधा०। १ शाकविशेष, करेमु, पटुआ। उसका संस्कृत पर्याय—नाड़िक, श्यामशाक और कालक है। भावप्रकाशके मतसे वह सारक, रुचिकारक, शीतल, पवित्र, वायु एवं बलवर्धक और कफ, शोथ तथा रक्त-पित्तनाशक है। २ तिलपूतिका। ३ कुलत्थ, कुलथी। ४ शर-पुङ्खा, सरफोंका। ५ तुलसी वृक्ष।

कालशालि (सं० पु०) कालः कृष्णः शालिः धान्यविशेषः, कर्मधा०। कृष्णशालि, काला धान, उस धान्यका चावल और भूसी दोनों काले होते हैं। सुश्रुतके मतानुसार वह कषाय, मधुररस, मधुरपाक, शीतवीर्य अल्प अभिष्यन्दी, मलवर्धक, लघु और षष्टिक धान्यके तुल्य गुणयुक्त है।

कालशिरा (सं० स्त्री०) काला कृष्णवर्णा शिरा, कर्मधा०। कृष्णवर्ण शिरा, काली रग।

कालशुद्धि (सं० स्त्री०) कालस्य शुद्धिः ६-तत्। शुद्धकाल, पाक वक्त। जिस समय मनुदाय शुभ कर्म सम्पादन कर सकते, उसे कालशुद्धि कहते हैं।

कालशेय (सं० क्लो०) कलश्यां शयम्, कलशी-ढक्। १ दधिमन्थनसे निकाला दधिसार तक, एक हिस्से पानी और तीन हिस्से दहीका बना मट्ठा। २ चाल, दरताल।

कालशैल (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः शैलः, कर्मधा०। पर्वतविशेष, एक पहाड़।

को राह द्रव्यादि कलकत्ते भेजनेमें जितना व्यय पड़ता मटोकी राह उससे अल्प लगता है। इसीसे नावपर लादकर हो वहांसे द्रव्यादि कलकत्ते आते हैं। उसकी समृद्धि आज भी ह्रास न होनेका यही कारण है। दीनाजपुर और रङ्गपुरसे वहां चावल जाता है। १८३१ ई० को वर्धमानके महाराज तेजश्चन्द्र बहादुरने कालनासे वर्धमान पर्यन्त एक पक्की सड़क बनवा दी थी। उसमें ४ कोसके अन्तर पर एक एक तालाव और डाकबंगला बना है। वह महाराजके गङ्गास्नानकी सुविधाके लिये तैयार किया गया था। मुसलमानोंके शासनकाल वहां एक दुर्ग रहा। उसका भग्नावशेष आज भी भागीरथीके तीर देख पड़ता है। दो पुरानी टूटी मसजिदें भी वहां गङ्गाके तीर वर्धमानराजके भवनमें १०८ शिवमन्दिर, अन्यान्य देवदेवीके मन्दिर, अतिथिशाला और समाधिस्थान हैं। समाधिस्थानमें पूर्वतन राजाओंका अस्थिपञ्जर रक्षित है। राजभवन अति मनोरम स्थान है। यहांका बाजार बहुत बड़ा है। सहस्राधिक इष्टकनिर्मित गृह देख पड़ते हैं।

कालनाग (सं० पु०) कालप्रापको नागः, मध्यपदलो०। १ नियत मृत्युकर सर्पविशेष, काला सांप। इसके काटनेसे निश्चय मृत्यु होता है। २ नागजातिकी एक श्रेणी।

कालनागिनी (सं० स्त्री०) नियत मृत्युकारिणी सर्पिणी, काली नागिन।

कालनाथ (सं० पु०) कालस्य कालभैरवस्य नाथः, ६-तत्। १ महादेव।

"कालनाथाय कल्याय कपालीपधराय च" (भारत, शान्ति २८६ अ०)

२ कातीय यजुर्वेदमञ्जरी नामक ग्रन्थकार। ३ कालभैरव।

कालनाभ (सं० पु०) कालः कृष्णः नाभिरस्य, कालनाभि संज्ञायां अच्। १ हिरण्याक्ष असुरका कोई पुत्र। (हरिवंश ४४) २ हिरण्यकशिपुका एक लड़का।

कालनिधि (सं० पु०) शिव, महादेव।

कालनियोग (सं० पु०) कालेन कृतो नियोगः, कालस्य नियोगो वा। १ दैवकी आज्ञा। २ कालकृत नियम, वक्तका कायदा।

कालनिरूपण (सं० पु०) कालस्य निरूपणं निर्धारणम्, ६-तत्। समयका निश्चयकरण, वक्तका ठहराव।

कालनिर्णय (सं० पु०) कालस्य निर्णयः निरूपणम्, ६-तत्। १ समयका निर्धारण, वक्तका ठहराव। २ माधवाचार्यप्रणीत कालमाधवीय नामक एक ग्रन्थ।

कालनिर्यास (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णो निर्यासः कर्मधा०। गुग्गुलु, गूगुल।

कालनिर्वाह (सं० पु०) कालस्य निर्वाहः अतिवाहनं। समयका अतिवाहन, वक्तका निबाह।

कालनिशा (सं० स्त्री०) १ दीपमालिकाकी रात्रि, दीवालीकी रात। २ भयङ्कर रात्रि, अंधेरी रात।

कालनेत्र (सं० त्रि०) कालं मृत्युप्रापकं कृष्णवर्णं वा नेत्रं यस्य बहुव्री०। १ मृत्युलक्षणयुक्त नेत्रविशिष्ट, आंखोंमें मौतकी अलामत रखनेवाला। २ कृष्णवर्ण चक्षुर्विशिष्ट, काली आंखवाला।

कालनेमि (सं० पु०) कालस्य मृत्योर्नेमिरिव, उपमि०। १ राक्षस विशेष, लङ्काधिपति रावणका मातुल। शक्तिशेलके आघातसे लक्ष्मण आहत हुये थे। हनूमान् उनके लिये औषध लाने गन्धमादन गये; इधर कालनेमि रावणसे अर्धराज्य मिलनेका प्रलोभन पा छद्मवेशसे हनूमान्‌को विनष्ट करने पहुंचा था। वहां कुम्भीरा द्वारा विनाश साधनेके उद्देशसे उसने हनूमान्‌को कौशल क्रमसे किसी सरोवरमें नहाने भेज दिया। जलमें प्रवेश करते ही कुम्भीराने हनूमान् पर आक्रमण किया; किन्तु उन्होंने उसे मार डाला। हनूमान्‌के हाथ मारी जाने पर वह अभिशापसे छूट गयी। उसी समय उसने कृतज्ञ हृदयसे हनूमान्‌को कालनेमिकी कपटताकी बात बतायी थी। फिर उन्होंने अत्यन्त क्रुद्ध हो कालनेमिको मार डाला। (कृत्तिवासी रामायण)

२ दानवविशेष, कोई राक्षस। इस दानवका रूपादि इस प्रकार वर्णित है,—यह दानव हिरण्यकशिपुका पुत्र था। शरीर मन्दारपर्वतको भांति बहुत् श्वेतवर्ण रहा। शत हस्त और शत मुख थे। केश धूम्रवर्ण रहे। श्मश्रु हरित्‌वर्ण था। दन्त वह्निभोग पर्यन्त विस्तृत थे। कालनेमिने स्वीय प्रतापसे

सशरीरोऽत्र मैनाकं गिरिं च तथ भारत।
समतीतोऽसि कौन्तेय कालशैलञ्च पार्थिव" (भारत, वन, ११८७)

कालसंरोध (सं॰ पु॰) कालस्य संरोधः, ६-तत्। १ चिर काल अवस्थान, हमेशा मौजूदगी। २ दीर्घ समयका अतिवाहन, लम्बे वक्तका गुजारा।

कालसहर्या (सं॰ स्त्री॰) कालेन सह्यते असौ, काल-सम-सह-कर्मणि घञ्। नववर्षीय कन्या, नौ सालकी लड़की।

"एकवर्षा भवेत् सन्ध्या द्विवर्षा च सरस्वती।
त्रिवर्षा च त्रिमूर्त्तिश्च चतुर्वर्षा तु कालिका॥
सुभगा पञ्चवर्षा च षड्वर्षा च उमा भवेत्
सप्तभिर्मालिनी साक्षात् अष्टवर्षा च कुब्जिका॥
नवभिः कालसहर्या दशभिश्चापराजिता।
एकादशे तु रुद्राणी द्वादशाब्दे तु भैरवी॥
त्रयोदशे महालक्ष्मीर्द्विसप्ता पीठनायिका।
क्षेत्रज्ञा पञ्चदशभिः षोडशे चान्नदा मता॥" (अन्नदाकल्प)

अन्नदाकल्पमें कुमारीके वयःक्रम अनुसार नामका भेद निर्दिष्ट है। यथा एक वर्ष वयस्का सन्ध्या, दो वर्षकी सरस्वती, तीन वर्षकी त्रिमूर्त्ति, चार वर्षकी कालिका, पांच वर्षकी सुभगा, छह वर्षकी उमा, सात वर्षकी मालिनी, आठ वर्षकी कुब्जिका, नौ वर्षकी कालसहर्या, दश वर्षकी अपरा, ग्यारह वर्षकी रुद्राणी, बारह वर्षकी भैरवी, तेरह वर्षकी महालक्ष्मी, चौदह वर्षकी पीठनायिका, पन्द्रह वर्षकी क्षेत्रज्ञा, और सोलह वर्षकी कुमारी अन्नदा नामसे अभिहित होती है।

कालसदृश (सं॰ त्रि॰) १ समयानुकूल, वक्तके मुवाफिक। २ मृत्युतुल्य, मौतके बराबर।

कालसम्पन्न (सं॰ त्रि॰) कालेन काले वा सम्पन्नम्। १ काल-कर्तृक सम्पादित, वक्तका किया हुआ। २ यथाकाल निष्पन्न, जो वक्त पर बना हो।

कालसर्प (सं॰ पु॰) कालः कृष्णः सर्पः, कर्मधा॰। कृष्णसर्प, काला सांप। (Coluber naga) इसका संस्कृत पर्याय—अलगर्द और महाविष है। यह फणी सर्पोंके अन्तर्भूत है। इसका वर्ण अतिशय चिक्कण कृष्ण रहता और मस्तकमें फणापर पदचिह्न देख पड़ता है। जमीनके बिलोंमें ही यह प्रायः वास करता है। किन्तु कहीं कहीं कालसर्प जलाशयमें भी रहता देख पड़ता है। अन्यान्य सर्पोंकी अपेक्षा इसमें क्रोध अतिशय अधिक होता है। यदि कोई अत्याचार करता, तो कालसर्प बहुत दूरतक दौड़कर उसे डसता है। हिन्दुस्थानमें इसका बहुत प्रादुर्भाव है। वर्षाके समय राह चलनेमें विशेष सावधान रहना पड़ता है। किन्तु सौभाग्यकी बात है किसी प्रकारका अत्याचार न करनेसे वह कम काटता है। पदका शब्द सुनते ही कालसर्प दूर हट जाता है। किन्तु जब दैवयोगसे उसपर किसीका पैर पड़ जाता तो वह क्रुद्ध हो उसे काट खाता है।

कालसार (सं॰ क्लो॰) कालः सारो यस्य, बहुव्री॰। १ पीत चन्दन। कालीयक देखो। २ कृष्णसार नामक मृगविशेष, काला हिरन। ३ कृष्णागुरु, काला अगर। ४ तिन्दुक। ५ हरिताल। ६ काली तुलसी। कृष्णसार देखो।

कालसाह्वय (सं॰ क्लो॰) कालेन समानः आह्वयो यस्य, बहुव्री॰। १ नरकविशेष, कोई दोजख। पुत्र विक्रय या कन्यापण ग्रहण करनेसे उक्त नरकमें पड़ते हैं।

"यो मनुष्यः स्वकं पुत्रं विक्रीय धनमिच्छति।
कन्यां वा जीवितार्थाय यः शुल्केन प्रयच्छति॥
सप्तावरे महाघोरे निरये कालसाह्वये।
स्वेदं मूत्रं पुरीषञ्च तस्मिन् मूढः समश्नुते॥" (भारत, अनु, ४५)

कालसि—युक्त-प्रदेशको जानसार तहसीलकी प्रधान नगरी। यह अक्षा॰ ३०° ३२´ २०´´ उ॰ और देशा॰ ७७° ५१´ २५´´ पू॰ पर अवस्थित है। देहरादूनके पास जहां यमुना और तमसा नदी मिली हैं, उसीके अति निकट कालसि नगरी बसी है। नगरी अति पुरातन है। वहां एक प्रस्तर-खण्डपर अशोक राजाकी शिलालेख खोदित है।

कालसिर (हिं॰ पु॰) नौके कूपदण्डकी शिखा, जहाजके मस्तूलका सिरा।

कालसूक्त (सं॰ क्ली॰) वैदिक सूक्तविशेष, वेदका एक सूक्त। इसमें कालको वर्णना की गयी है।

कालसूत्र (सं॰ क्लो॰) कालस्य यमस्य सूत्रमिव बन्धनहेतुत्वात्, उपमि॰। १ नरकविशेष, कोई दोजख। उक्त नरक प्रमत्त ताम्रमय है। मनुसंहितामें वह एक-

बल देवगणको हरा स्वर्ग अधिकार किया। फिर कालनेमिने स्वीय देह चार भागमें बांट देवगणकी भांति कार्य समुदाय चलाया था। विष्णुके हाथ मारे जाने पर कालनेमि परजन्ममें कंस रूपसे प्रादुर्भूत हुआ"। (हरिवंश ४८—५१ अ०)

३ मालव देशीय कोई ब्राह्मण कुमार। इनके पिताका नाम यज्ञसोम था। पिताके मरने पर इन्होंने स्वीय भ्राताके साथ पाटलिपुत्र पहुंच देवशर्मा नामक किसी ब्राह्मणसे विद्या पढ़ी। ब्राह्मणने उक्त दोनों भ्राताओंको अपनी दो कन्यायें दी थीं। किसी समय कालनेमिने प्रतिवेशियोंको धनाढ्य देख ईर्ष्यापरायण चित्तसे लक्ष्मीकी आराधना की। लक्ष्मीने आराधनासे सन्तुष्ट हो इन्हें विपुल धन और चक्रवर्ती पुत्र लाभका वर दिया था। किन्तु ईर्ष्यावश हो आराधना करनेके कारण उन्होंने अभिशाप देकर कहा था,—'तुम चोरकी भांति मरोगे।' कालक्रमसे ब्राह्मणको धन पुत्रादि प्राप्त हो गया। किन्तु पुत्रवत् राजाने इन्हें चोरकी भांत मार डाला। (कथासरित्सागर)

कालनेमिरिपु (सं० पु०) कालनेमेः रिपुः, ६-तत्। १ कालनेमिके शत्रु विष्णु। २ हनूमान्।

कालनेमिहा (सं० पु०) कालनेमिं हतवान्, कालनेमि हन्-क्विप्। १ विष्णु। २ हनूमान्।

कालनेमी (सं० पु०) कालस्येव नेमिरस्तास्य, काल-नेमि-इनि। कालनेमि, एक असुर।

कालनेम्यरि (सं० पु०) कालनेमेः अरिः शत्रु, ६-तत्। १ विष्णु। २ हनूमान्।

कालपक्व (सं० त्रि०) काले यथाकाले पक्वः, ७-तत्। यथासमय पका, अपने आप वृक्ष पर पकनेवाला।

कालपट्टी (हिं० स्त्री०) भराव, ठूंसठांस। जहाजकी दरजमें सन वगैरह भरनेको 'कालपट्टी' कहते हैं। यह शब्द पोर्तगीज 'कोलाफटो'का अपभ्रंश है।

कालपत्री (सं० स्त्री०) तालीशपत्र।

कालपथ (सं० पु०) विश्वामित्रके एक पुत्र। (भारत, अनु० ४ अ०)

कालपरिवाष (सं० पु०) ईषत् कालका ठहराव, थोड़े वक्तकेलिये ठहरनेका काम।

कालपर्ण (सं० पु०) कालं कृष्णं पर्णं पत्रं यस्य, बहुव्री। तगरवृक्ष।

कालपर्णिका, कालपर्णी देखो।

कालपर्णी (सं० स्त्री) कालं कृष्णं पर्णमस्याः। १ कृष्ण तुलसी वृक्ष, काली तुलसी। २ श्यामालता, काली बेल।

कालपर्यय (सं० पु०) कालस्य पर्ययः वैपरीत्यम्, ६-तत्। कालकी विपरीत गति, वक्तका उलटफेर। शुभदायक कालकी अशुभदायकता और अशुभदायक कालकी शुभदायकता 'कालपर्यय' कहलाती है।

"निवृत्तीका यथा राजन् क्षीयमाणाय निर्गताः।
भवन्ति पुरुषव्याघ्र कांक्षिताः कालपर्यये॥" (महाभारत विराट ७०अ०)

कालपर्वत (सं० पु०) त्रिकूटके निकटका एक पर्वत।

"त्रिकूटं समतिक्रम्य कालपर्वतमेव च।
ददर्श मकरावासं गम्भीरोदं महोदधिम्"॥ (महाभारत, वन २८०अ०)

कालपाशिक (सं० पु०) भिक्षुभेद, किसी किस्मके फकीर। यह कृष्ण वर्ण पात्र हाथमें ले भिक्षा मांगते हैं।

कालपालक (सं० क्ली०) कालं कृष्णवर्णं पालयति धारयति, काल-पाल-ण्वुल्। कंकुष्ठमृत्तिका, एक मट्टी। कंकुष्ठ देखो।

कालपाश (सं० पु०) कालस्य पाशः रज्जुरिव कालस्य मृत्योर्यमस्य वा पाशः। १ समयका बन्धन रज्जुवत् आबद्धकारक अपरिवर्तनीय नियम, वक्तकी कैद। समयके इस नियम द्वारा भूत आबद्ध हो किसी प्रकार अन्यथा कर नहीं सकते। २ यमपाश, मौतका फन्दा। यथा समय इसी पाशरूप नियमसे आबद्ध हो लोगोंको यमालय जाना पड़ता है। ३ मृत्युपाश, फांसी।

कालपाशिक (सं० पु०) कालपाशस्य नेता, कालपाश-ठक्। हाथसे मारनेवाला, जल्लाद, फांसी देनेवाला।

कालपीलु (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः पीलुः, कर्मधा०। कृष्णवर्ण पीलु, स्याह आबनूस, काला तेंदू।

कालपीलुक (सं० पु०) कालपीलु स्वार्थे कन्। कालपीलु देखो।

कालपुच्छ (सं० पु०) कालः पुच्छोऽस्य, बहुव्री०। १ मृगविशेष, एक जानवर। सुश्रुतने इस मृगको कूलचर जन्तुके अन्तर्भूत कहा है। कूलचर देखो। २ कृष्णपटक, काला पिडा।

विंशति महानरकोंके अन्तर्निविष्ट लिखा है। ब्रह्महत्या, शास्त्रके आचारका त्याग, अपथ राजाका दानग्रहण, श्राद्धमें भोजन कर शूद्रको उच्छिष्ट दान प्रभृति पाप करनेसे इस महानरक भोगना पड़ते हैं। २ मृत्युकारक सूत्र, मार डालनेवाला डोरा।

"बंधयंस्त्वं तथा बद्धः कालसूत्रेण लक्षितः।" (भारत, वनपर्व)

३ यमोकी रस्सी।

कालसूत्रक, कालसूत्र देखो।

कालसूर्य (सं॰ स्त्री॰) मृत्युकारक सूर्य, मौतका सूरज। वह कल्पान्तके समय निकलता है।

कालसेन (सं॰ पु॰) एक डोम। इसने राजा हरिश्चन्द्रको क्रय किया था।

कालस्कन्ध (सं॰ पु॰) कालः कृष्णः स्कन्धो यस्य, बहुव्री॰। १ तिन्दुक वृक्ष, तेंदूका पेड़। वह मधुर, अल्प, वृष्य, गुरु, धातुवृद्धिकर, शीत और श्रम, दाह, कफ, विषशोथ, विस्फोट एवं पित्तनाशक है। (वैद्यकनिघण्टु) २ विट्खदिर। ३ उदुम्बर वृक्ष, गूलरका पेड़। ४ जीवन्द्रुम, दुपहरियाका पेड़। ५ तमालपत्र-वृक्ष, तेजपातका पेड़। ६ कालताल, काला ताड़। ७ समयका अंग विशेष, वक्तका एक टुकड़ा।

कालस्कर (सं॰ पु॰) १ तिन्दुक वृक्ष, तेंदूका पेड़। २ तमालवृक्ष, तमालका पेड़।

कालस्थाली (सं॰ स्त्री॰) पाटल वृक्ष, एक पेड़।

कालस्वरूप (सं॰ वि॰) कालेन मृत्युना स्वरूपः सदृशः, ३-तत्। मृत्युतुल्य, मौतके बराबर।

कालहर (सं॰ पु॰) कालं मृत्युं हरति, काल-हृ-टच्। १ शिव, महादेव। २ कामरूपान्तर्गत शिवलिङ्ग विशेष, कामरूपका एक शिवलिङ्ग।

"तस्मात् पूर्वे महाभागः सर्वतस्तु त्रिलोचनः।
तत्र कालहरो नाम शिवलिङ्गं व्यवस्थितम्॥" (कालिकापु॰, ८८ अ॰)

(त्रि॰) ३ समयक्षेपक, वक्त बिगाड़नेवाला।

कालहन्दी (करौंद)—मध्यप्रदेशके सम्बलपुर जिलेकी एक जमींदारी। यह अक्षा॰ १८° ५´ उ॰ और देशा॰ २०° ३०´ पूर्वमें अवस्थित है। इसके उत्तर पाटना विभाग, पूर्व एवं दक्षिणभागमें जयपुर जमींदारी तथा मन्द्राजका विजगापत्तन जिला, पश्चिम बिन्द्रा नवागढ़ और खरियार प्रदेश है। लोकसंख्या प्रायः साढ़े तीन हजार है। कालहन्दी प्रदेश पश्चिमघाटसे अव्यवहित पश्चिम दिक् पड़ता है।

कालहन्दीमें इन्द्रवती नदी उद्भूत हो गोदावरीसे जा मिली है। इसी और रेल नाम्नी दूसरी भी दो स्रोतस्वती उक्त प्रदेशसे निकल तेल नदमें गिरी हैं। फिर तेल, सान और रावल तीन नदी एकत्र हो उत्तरको बहती हुयी उड़ीसाकी महानदीमें पतित होती हैं। चारो ओर इसी प्रकार नदी और घाट पर्यंत निकट रहनेसे कालहन्दीमें पानी बहुत पड़ता है। इसीसे उक्त स्थानकी भूमि विशेष उर्वरा है। उत्तर-पश्चिम भागमें सालवनकी लकड़ी उपजती है। चावल, दाल, अलसी, ऊख, रुई, ज्वार और गेहूं बहुत होता है। स्थान स्थान पर सप्ताहमें एक बार बाजार लगता है। प्रधान नगर भवानीपत्तनका बाजार ही सर्वापेक्षा बड़ा है। कालहन्दीका जलवायु अति उत्तम है।

कालहन्दीमें एक राजाका अधिकार है। वह अंगरेजोंको कर देते हैं। राजा प्रतापदेवको दिल्लीके दरबारमें "राजा बहादुर" उपाधि और अपने सम्मानार्थ ९ तोपोंकी सलामी मिली थी। १८८१ ई॰ को उनका मृत्यु हुआ। १८८४ ई॰ को उनके दत्तकपुत्र राजा रघुकिशोर देव राज्यके अधिपति बने थे। किन्तु उनके अप्राप्तवयस्क होनेसे राज्यका भार रानी पर पड़ा था। बालक राजा जबलपुरके राजकुमार कालेजमें पढ़नेको बैठाये गये। उक्त घटनाके पीछे ही कन्ध लोगोंने विद्रोही हो कुलता नामक ७०।८० हिन्दुओंको मार कर उनके ग्राम लूटे थे। व्यापार गुरुतर देख अंगरेजोंने अपनी पुलिससेना भेज विद्रोहका दमन किया। बलवा करनेवाले लोगोंके सरदारोंको फांसी दी गयी। उसी दिनसे उक्त प्रदेशका शासनकार्य गवरमेण्टने अपने हाथमें ले रखा है।

कालहस्ती—मन्द्राज प्रेसिडेन्सीकी एक जमींदारी। उसका कुछ अंश आर्कट और कुछ अंश नेल्लोर जिलेमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः डेढ़ लाख है।

ई॰ १५में शताब्दकी वेलमजातीय किसी पालिगारसे

कालपुच्छक, कालपुच्छ देखो।

कालपुरुष (सं० पु०) कालः कालयमः पुरुष इव उपमि०। १ यमसहाय। रामचन्द्रकी लीलाके अवसानमें देवगणके आदेशसे यह उनकी सभामें पहुंचे थे। फिर इन्होंने रामचन्द्रको निभृत स्थानपर कथनोपकथनमें नियुक्त किया। उसी समय द्वारस्थ दुर्वासाके अनुरोधसे लक्ष्मण वहां गये थे। रामचन्द्रने अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार लक्ष्मणका परित्याग किया। उसी शोकसे लक्ष्मणने सरयूजलमें अपना प्राण छोड़ा था। फिर रामादि अपर तीन भ्रातावोंने भी उसीप्रकार लीला परिवर्तन कर दी। (रामायण)

२ पुरुषकी भांति आकार विशेष, आदमीकीसी एक शकल। यह मनुष्यका शुभाशुभ गणना करनेके लिये जन्मलग्न प्रभृति द्वादश राशि द्वारा कल्पित पुरुषकी भांति बनाया जाता है। इस आकृतिमें मस्तकादि समुदाय अङ्ग-प्रत्यङ्ग चित्रित कर शुभाशुभ निर्दिष्ट होता है। इसके अनुसार लग्न पुरुषके भी उसी उसी अङ्गमें शुभाशुभ पड़ा करता है। (बृहज्जातक)

३ कालरूपीश्वरकी एक मूर्ति। यह दान करनेके लिये सुवर्णसे बनाया जाता है। भविष्यपुराणमें लिखा है कि उत्तम, मध्यम एवं अधम नियमके अनुसार उक्त मूर्ति एक शत, पञ्चाशत् वा पञ्चविंशति निष्क सुवर्णसे बनानेका विधि है। उसके दक्षिण हस्तमें खड्ग, वाम हस्तमें मांसपिण्ड, कुण्डलमें जवाकुसुम, परिधानमें रक्तवस्त्र और गलदेशमें पुष्पमाला तथा शङ्खमाला रखते हैं। फिर चतुर्दशी वा चतुर्थी तिथिको पवित्र दिन स्थिर करके यथाविधान पूजापूर्वक दक्षिणा एवं अलङ्कारादिके साथ वह ब्राह्मणको दिया जाता है। इस दानके फलसे व्याधिजन्य मृत्युभय छूटता है। फिर दानकारी विपुल ऐश्वर्यका अधिकारी और समुदाय विघ्नशून्य हो सकता है। अन्तको यथासमय देह त्याग करनेपर सूर्यलोकभेदपूर्वक परम पद मिलता है। पुण्यक्षयके पीछे वह व्यक्ति धार्मिक और राजा हो जन्म लेता है। ४ कृष्णवर्ण पुरुष, काला आदमी।

कालपुष्प (सं० क्ली०) कालं कृष्णं पुष्पं यस्य, बहुव्री०। कलायवृक्ष, मटरका पेड़। कलाय देखो।

कालपूग (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः पूगः गुवाकः, कर्मधा०। १ कृष्णवर्ण गुवाक, काली सुपारी। २ साधारण जन, मामूली लोग।

कालपृष्ठ (सं० क्ली०) कालं कृष्णं पृष्ठं यस्य बहुव्री०। १ कर्णका धनु। २ धनुमात्र, कोई कमान्। (पु०) ३ मृगविशेष, एक हिरन। ४ कङ्कपक्षी, बूटीमार।

कालपेशिका (सं० स्त्री०) १ मञ्जिष्ठा, मजीठ। २ कृष्णजीरक काला जीरा। ३ श्यामालता, काली बेल।

कालपेशी (सं० स्त्री०) श्यामालता, काली बेल।

कालपेषी (सं० स्त्री०) पिष्यते इसौ, पिष् कर्मणि घञ्, कालश्चासौ पेषश्चेति, कालपेष-ङीष्। श्यामालता, काली बेल। इसका संस्कृत पर्याय—कालपेषी, महाश्यामा, सुभद्रा, उत्पलशारिवा, दीर्घमूला, पालिन्दी और मसूरविदला है। श्यामालता देखो।

कालप्रजा—जातिविशेष, एक कौम। कई कृष्णवर्ण जाति इसी नामसे पुकारी जाती हैं। भारतवाले पश्चिमघाट नामक पर्वतके निम्नप्रदेशमें इसका वास था। आजकल इस जातिके लोग वहांसे जा सुरतमें रहे हैं। यह कृष्णवर्ण एवं अथच दृढ़काय और धनुर्बाणके व्यवहारमें सिद्धहस्त होते हैं। वनमें पशु मारना इनका प्रधान कार्य है। कृषि करना यह नहीं जानते और सामान्य शस्यसे ही अपनेको परितृप्त मानते हैं। इनके मन्दिर या पुरोहित कोई नहीं। यह किसी वृक्ष वा प्रस्तरखण्डको पूजते हैं। इनको दुर्दैवका बड़ा भय रहता है। किसी सन्तान, बैल वा कुक्कुटके मरने पर यह भयसे देश छोड़ भग जाते हैं।

कालप्रभात (सं० क्ली०) कालं कृष्णं प्रभातं यत्र, बहुव्री०। १ शरद् ऋतु। २ अनिष्टकारक प्रभात, बुरा दिन।

कालप्रमेह (सं० पु०) अश्वप्रमेह, पेशाबकी एक बीमारी। इसमें कृष्णवर्ण मूत्र उतरता है।

कालप्रवृद्ध (सं० त्रि०) कालेन प्रवृद्धः परिपक्वः। यथाकाल उत्पन्न, वक्तसे निकला हुआ।

कालप्रवृत्ति (सं० स्त्री०) कालस्य प्रवृत्तिः आरम्भः, ६-तत्। वक्त कालके व्यवहारका आरम्भ। सद्गु-

विजयनगरके राजासे इसे पाया था। पहले कालहस्ती पूर्वमें मन्द्राज एवं काञ्चीपुर और दक्षिणमें वन्दीवास तक विस्तृत थी। औरंगजेबकी दी हुई सनदमें देखते हैं कि कालहस्तीके पालिगार उस समय ५ हजार सैन्यके अधिनायक थे। १७९२ ई० को वह अंगरेजोंके हाथ लगी। १८०२ ई०को गवरनमेण्टने उसका चिरस्थायी प्रबन्ध किया था। जमीन्दारके वंशवाले एक व्यक्तिको अंगरेजोंने राजा और सी० एस० आई० (C. S. I.) का उपाधि दिया है। देशकी फसलका आधा हिस्सा प्रजा जमीन्दारको देती है। कालहस्तीकी मृत्तिका रक्तवर्ण और बालुका मिश्रित है। ताम्र और लौह वहां मिलता है। शीशेका कारखाना भी खुला है।

उक्त जमीन्दारीका प्रधान नगर कालहस्ती वा श्रीकालहस्ती है। यह अक्षा० १३° ४५' २" उ० और देशा० ७९° ४४' २९" पू० पर सुवर्णमुखी नदीके तीर मन्द्राज रेलकी उत्तर-पश्चिम शाखाके विपति ष्टेशनसे अतिनिकट अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः दश हजार है। नगरमें जमीन्दारका वासभवन बना है। वहां एक मजिष्ट्रेट भी रहता है। बाजार बहुत बड़ा है। निकटस्थ ग्राममें उत्तम वस्त्र प्रस्तुत होता है।

कालहस्ती एक तीर्थस्थान है। वहां अनेक देवमन्दिर विद्यमान हैं। उनमें शिवमन्दिर ही प्रधान है। दक्षिणके आर्त्त ब्राह्मण कालहस्तीको द्वितीय वाराणसी बताते हैं। उक्त मन्दिर-विभाग नगरके नैऋत कोणमें पर्वतके निम्नभाग पर अवस्थित है। कालहस्तीके माहात्म्यमें लिखा है,—"ब्रह्माने तपस्या करनेको कैलास पर्वतके शृङ्गका एकांश यहां लाकर रखा था। इसीसे उसका नाम दक्षिणकैलास है। ब्रह्माने स्वयं इस मन्दिरका मूल स्थापन किया है।" चोल राजा और विजयनगरके कृष्णरायने उसका अपरापर अंश बनवा दिया। महादेवकी वायुमूर्ति वहां विराजित है। कथनानुसार एक सर्प और एक हस्ती उभय महादेवकी पूजा करते थे। सर्प अपने मस्तकका मणि महादेव पर चढ़ाता और हस्ती जलाभिषेक लगाता था। किसी दिन हस्तीके अभिषेचनका जल सर्पके छू गया। उसने क्रुद्ध हो हस्तीके शुण्डमें दांत मारा था। हस्तीने भी विषकी ज्वालासे अस्थिर हो सर्पको आघात किया। अंतको दोनोंने पञ्चत्व पाया था। दो परमभक्तोंकी वैसी अवस्था देख महादेवने उन्हें फिर जीवन प्रदान किया। फिर उन्होंने उभयको चिरस्मरणीय बनानेके लिये उनके नाम पर अपने मन्दिरका भी नाम "कालहस्ती" रख दिया। (काल अर्थात् सर्प और हस्ती अर्थात् हाथी दोनों मिलकर कालहस्ती शब्द बना है।) तीर्थमाहात्म्यके मतसे कन्नापन नामक किसी व्याधने महादेवका अनुग्रह लाभ किया। वह पर्वतके ऊपर रहता था। किन्तु आहार करनेके पूर्व व्याध पर्वतसे उतरता और आहार्य द्रव्य महादेवका अर्पणकर स्वयं प्रसाद ग्रहण करता था। कुछ दिन पीछे उसके मनमें आया कि महादेवका एक चक्षु नष्ट हो गया। उसी धारणासे उसने अपना एक चक्षु नोच महादेवके नष्ट चक्षुपर लगा दिया। फिर कुछ काल उसे देख पड़ा कि देवदेवका दूसरा चक्षु भी बिगड़ा था। उसीसे उसने अपना दूसरा चक्षु भी निकाल महादेवके चक्षु पर लगा दिया। उस समय व्याधने अपना एक पैर महादेवके चक्षुके निकट रखा था। उसीसे आज भी महादेवके चक्षुमें उसका पदचिह्न देख पड़ता है। देवादिदेवने उसे सालोक्यमुक्ति प्रदान की। महादेवके निकट उसका एक स्वतन्त्र लिङ्ग विद्यमान है। महादेवके साथ उसकी भी पूजा होती है। मन्दिरके प्रवेशस्थान पर हस्ती, सर्प और ऊर्णनाभिकी मूर्ति बनी है। दूसरे स्थानोंमें महादेवकी जो मूर्ति देख पड़ती, उससे कालहस्तिकी मूर्ति स्वतन्त्र लगती है। कालहस्तीकी मूर्तिका नाम वायुमूर्ति है। साधारणतः गोलाकार दण्डके तुल्य होती है। किन्तु उक्त वायुमूर्ति चतुष्कोण है। मन्दिरमें किसी ओर वायुके प्रवेशका पथ नहीं, किन्तु लिङ्गके मस्तकपर जो दीप लटकता, वह सर्वदा अल्प हिला करता है। गृहके अभ्यन्तरमें अन्यान्य अनेक दीप हैं। किन्तु दूसरा कोई इस प्रकार नहीं हिलता। सम्भवतः उसीसे उक्त लिङ्ग "वायुलिङ्ग" कहलाता है। महादेवके साथ पार्वती देवी भी हैं।

नगरोमें चैत्र मासकी शुक्लप्रतिपत् तिथि तथा रविवारको सूर्य उदयके पीछे दिन, मास, वर्ष प्रभृति सुखको प्रवृत्ति पड़ती है। (सिद्धान्तशिरोमणि।)

कालप्रियनाथ—एक देवमूर्ति। वराहपुराणमें सूर्यकी एक मूर्तिका नाम 'कालप्रिय' लिखा है। यमुनाके दक्षिणस्थ प्रदेशमें सूर्यदेवकी यह मूर्ति पूजी जाती है। कालप्रियरूपसे सूर्यदेवका स्थापित किया हुआ शिवलिङ्ग 'कालप्रियनाथ' कहाता है। भवभूतिके 'मालतीमाधवका' प्रारम्भ पढ़नेसे समझ पड़ता है, कि कालप्रियनाथके उत्सव उपलक्षमें प्रथम मालतीमाधव अभिनीत हुआ। मालतीमाधवकी दुर्गमार्थबोधिनी नाम्नी टीकामें मानाङ्कने इनके सम्बन्धपर कोई बात नहीं लिखी। किन्तु जगद्धरने 'मालतीमाधवटीका'में इन्हें तद्देशका प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध देव माना है। नहीं कह सकते—आजकल कालप्रियनाथ कहां हैं?

कालप्रिया (सं॰ स्त्री॰) अश्वगन्धा, असगन्ध।

कालबामन (सं॰ स्त्री॰) कावच, पत्थर।

कालबलप्रवृत्त (सं॰ स्त्री॰) आधिदैविक रोगमात्र, वक्तके ज़ोरसे होनेवाली बीमारी। शीत, उष्ण, वात, वर्षा आदिके कारण लगनेवाले रोग भी दो प्रकारके होते हैं—व्यापन्नर्तुकृत और अव्यापन्नर्तुकृत। (सुश्रुत २४ अ॰)

कालबंजर (हिं॰ पु॰) पुरानी परती, बहुत दिन जोती-बोयी न जानेवाली जमीन्।

कालबाल (सं॰ पु॰) कंकुष्ठ, एक मट्टी।

कालबालक, कालबाल देखो।

कालबूत (हिं॰ पु॰) १ ढैना, कच्चा भराव। इससे मेहराब बनाते हैं। २ काठका एक सांचा। इस पर चमार जूता सीते हैं। ३ यन्त्र विशेष, एक औज़ार। इससे रस्सी बटते हैं। यह काठका फंदा होता है। इसमें रस्सी डालनेके कई छेद रहते हैं। छेदमें डालकर बटनेसे रस्सी बराबर उतरती, मोटी या पतली नहीं पड़ती।

कालबेलिये (हिं॰ पु॰) एक जाति। इन्हें सपेरे भी कहते हैं। सांप आदि विषैले जन्तुओंको पकड़कर यह खेल दिखलाते हैं। यही इनकी जीविका है।

कालभक्ष (सं॰ पु॰) महादेव, शिव।

कालभण्डी (सं॰ स्त्री॰) श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची।

कालभाण्डिका (सं॰ स्त्री॰) कालभाये कृष्णवर्णाये भण्डति, काल-भा-भडि-णवुल्-टाप् इत्वञ्च। मञ्जिष्ठा, मंजीठ। इसका क्वाथ और निर्याम प्रभृति रखनेसे आते भी प्रथमतः कृष्णवर्ण देखाता है। मञ्जिष्ठा देखो।

कालभृत् (सं॰ पु॰) कालं बिभर्ति धारयति, काल-भृ क्विप्। सूर्य, आफताब, समयको धारण करनेवाला सूरज।

कालभैरव (सं॰ पु॰) कालस्य भैरवं भयं यस्मात् काल-भीरु-अण्। काशीस्थ शिवके अंशजात एक भैरव। शिवतत्त्व न समझनेवाले ब्रह्माका पञ्चम मस्तक काटनेको महादेवद्वारा यह आविर्भूत हुये। काशीमें रहनेवाले दुष्कर्मकारीको दण्ड देना ही इनका प्रधान कार्य है। ब्रह्मा भी कल्याणमनका पाप कर काशी पहुंचे थे। इसीसे शिवकी आज्ञा पाकर कालभैरवने उनका पञ्चम मस्तक काट डाला। (काशीखण्ड।) भारतके नाना स्थानोंमें कालभैरवकी मूर्ति पूजी जाती है।

कालम (अं॰ पु॰—Column) १ पत्रभाग, कोठा। २ सैन्यभाग, पांत। ३ स्तम्भ, खम्भा।

कालमरिच (सं॰ क्ली॰) कालं मरिचम्। कृष्णवर्ण मरिच, काली मिर्च।

कालमल्लिका (सं॰ स्त्री॰) कृष्णार्जक, काली तुलसी।

कालमल्ली, कालमल्लिका देखो।

कालमसी (सं॰ स्त्री॰) काली मसीव, पुंयत्नात्। काली नदी, एक दरया।

कालमहिमा (सं॰ पु॰) कालस्य महिमा माहात्म्यम्, ६ तत्। १ समयका माहात्म्य, वक्तकी शान्। २ समयकी शक्ति, वक्तकी ताकत।

कालमाधवीय (सं॰ पु॰) माधवस्य माधवाचार्यस्य अयम्, माधव-छ, कालप्रतिपादको माधवीयः माधवकृतो ग्रंथः, मध्यपदलो॰। माधवाचार्यप्रणीत कालज्ञानबोधक एक स्मृतिग्रन्थ।

कालमान (सं॰ पु॰) कालो मन्यते अनेनेति शेषः, काल-मन-घञ्। १ कृष्णवर्ण क्षुद्र तुलसी। २ समय-

कालहस्तीमें उन्हें प्रालप्रसदा कहते हैं। कथनानुसार भगवान्‌ने उन्हें किसी समय अभिशाप दिया था। उसीसे उन्होंने नरयोनि पायी। उन्होंने तपस्याके बल मानवदेहसे महादेवको रिझाया था। महादेवने उन्हें मुक्ति दे प्रालप्रसदा नामसे अभिहित किया। तपस्याके समय दुर्गा नाम्नी कोई नारी पार्वतीकी सह-गामिनी बनी थीं। महादेवके प्रसादसे उन्होंने भी देवत्वलाभ किया; इसीसे स्वतन्त्र मन्दिरमें दुर्गा देवी पूजी जाती हैं। भूत लगने या अपुत्रक रहनेसे प्रालप्रसदा देवीके सम्मुख भीगे कपड़ों अधो-मुख लेट स्त्रियां देवीका ध्यान करती हैं, उसका नाम प्राणाचारव्रत है। जो जितनी देर ध्यान कर सकती, उसकी वासना भी उसी प्रकार फलवती होती है।

शिवमन्दिरसे दक्षिण पर्वतके पार्श्वमें भगवान् मणिकुण्डेश्वर स्वामीका मन्दिर है। किसी नारीने उक्त स्थान पर महादेवकी तपस्या की थी। महादेवने प्रसन्न हो उसके कर्णमें तारक मन्त्र प्रदान किया। उससे उसकी मुक्ति हो गयी उसीसे मुमुर्षु लोगोंको ले जाकर वहां दक्षिण पार्श्वपर सुला देते हैं। काल-हस्तीके लोगोंको विश्वास है कि मृत्युकालमें पार्श्व बदल ऊपर कर्ण रख वामपार्श्व लेटनेसे दक्षिण कर्णसे आत्मा निकलता और मृत व्यक्ति चिरानन्द भोग करता है। मणिकुण्डेश्वरमन्दिरसे दक्षिण पर्वतके पाददेशमें ब्रह्माका मन्दिर है। उसके ऊपर नानाविध मूर्ति खोदित हैं। स्थानीय तीर्थमाहात्म्यके मतानुसार ब्रह्माने यहीं बैठकर तपस्या की थी। उक्त मन्दिरसे दक्षिण पर्वतकी उपत्यकामें एक प्रशस्त पुष्करिणी है। उसकी चारो ओर पत्थरसे घाट बंधे हैं। पुष्करणीके निकट भरद्वाज स्वामीकी मूर्ति है। उसीसे उक्त स्थान भरद्वाज मुनिका आश्रम कहाता है। माघमासको यहां १० दिन महोत्सव होता है। उसमें बहुतसे लोग इकट्ठा हो जाते हैं।

कालहानि (सं० स्त्री०) कालस्य हानिः, ६-तत्। १ समयक्षति, बेफायदा वक्तकी बरबादी। २ समयका अभाव, वक्तकी तङ्गी।

कालहीन (सं० पु०) कालेन कृष्णवर्णेन हीनः, ३-तत्। लोध्रवृक्ष, लोधका पेड़। लोध देखो।

कालहोरा (सं० स्त्री०) काले कालभेदे होरा, ७-तत्। एक दिवारात्रिमें उदित द्वादश लग्नका अर्धांश। २ ढाई दण्ड परिमित काल, एक घंटे समय।

२ सिन्धुप्रदेशका एक मुसलमान राजवंश। १७४० ई०को उक्त वंशका राजत्व आरम्भ हुआ था। कालहोरा और तालपुरवंश ही सिन्धुका शेष स्वाधीन वंश रहा। उनमें प्रथमवंशीय अपनेको आरब्यके अब्बासियोंका वंशीय और शेषोक्त धर्मप्रचारक मुहम्मदका वंशोद्भव बताते हैं। किन्तु वस्तुतः वंशवाले बालूचिस्तानके लोग हैं।

मुहम्मद कालहोराने रिन्द नामक किसी बालू-चिके साहाय्यसे पंवारवंशीय राजपूत राजाको मार सिंहासन पर अधिकार किया था। खोदाबादमें उनकी कबर है। कबरके सामने कई गदा लटका करती हैं। लोगोंके कथनानुसार उन्होंने मृत्यु कालको उस प्रकार गदा लटकानेका आदेश इसलिये दिया, जिसमें लोग देखते रहें कि उन्होंने कैसी सुगमतासे सिन्धु जीता था।

काला (सं० स्त्री०) कालः वर्णः अस्त्यस्याः, काल-वर्णं आदित्वात् अच्-टाप्। १ नीलिनी, नीलिका पेड़। २ कालाञ्जन्। ३ त्रिवृत्। ४ पिप्पली, पीपल। ५ मागधा। ६ मञ्जिष्ठा, मजीठ। ७ क्षुद्र कृष्णजीरक, काली जीरी। ८ अहिंसा। ९ अश्वगन्धा, असगंध। १० पाटला। ११ दक्षकी एक कन्या।

"अदितिर्दितिर्दनुः काला अनायुः सिंहिका तथा।" (भारत १।६६ अ०)

काला (हिं० वि०) १ कृष्ण, स्याह, काजल या कोयले-के रंग जैसा। २ कलुषित, बुरा, खराब। ३ प्रचण्ड, जोरदार। (पु०) कालसर्प, काला सांप।

कालांश (सं० पु०) कालस्य अंशः। ग्रहणका दर्शनो-पयोगी अंशविशेष, ग्रहण देखने लायक एक हिस्सा।

कालाकस्द (हिं० पु०) धान्य विशेष, किसी किस्मका धान। यह अगहायण मासमें काटा जाता है। इसका चावल सैकड़ों वर्ष रखने भी नहीं बिगड़ता।

कालाकलूटा (हिं० वि०) अत्यन्त कृष्णवर्ण, निहायत

मल्लिका, बवई। (क्लो॰) कालस्य मानं परिमाणम्। २ कालका परिमाण, वक्तकी तौल।

कालमानक, कालमान देखो।

कालमार, कालमान देखो।

कालमारिय (सं॰ पु॰) कृष्णवृन्त तण्डुलीय शाक, बड़ीपत्तीकी चौराई।

कालमाल (सं॰ पु॰) कालेन कृष्णवर्णेन मालः सम्बन्धोऽस्य, बहुव्री॰। कृष्णतुलसी, काली तुलसी।

कालमालक, कालमाल देखो।

कालमाला (सं॰ स्त्री॰) कृष्णार्जक, काली तुलसी।

कालमुख (सं॰ पु॰) कालं मुखं यस्य, बहुव्री॰। कृष्णमुख वानर विशेष, काले मुंहका एक बन्दर। (भारत, वन २८१ अ॰)। (त्रि॰) २ कृष्णवर्ण मुख वा अग्रभागयुक्त, कालमुंहा।

कालमुष्क, कालमुष्कक देखो।

कालमुष्कक (सं॰ पु॰) कालो मुष्क इव कायति प्रकाशते, काल-मुष्क-कै-क। १ घण्टापाटलवृक्ष, मोखा। २ कृष्णपुष्पघण्टा, काले फूलको, मोखा।

कालमूर्ति (सं॰ स्त्री॰) कालस्य मूर्तिः, ६-तत्। १ यममूर्ति। २ मृत्युकारक जन्तुकी मूर्ति। ३ कालयम।

कालमूल (सं॰ पु॰) कालं मूलं यस्य, बहुव्री॰। रक्तचित्रक, लाल चीत। चित्रक देखो।

कालमेघ (सं॰ पु॰) १ क्षुद्र वृक्षविशेष, एक छोटा पेड़। यह अत्यन्त तिक्त होता है। इसे महातीता और महाभांग भी कहते हैं। यह अधिकांश मरिचके वनमें मिलते हैं। इसके गोदमें चपटा फल लगता है। अनेक वैद्य इसको ज्वरनाशक बताते हैं।

२ कोई विख्यात तामिल कवि। द्राविड़के लोग इन्हें 'कालमेकम्' कहते हैं। कविता विद्रूप एवं रूपकसे परिपूर्ण है। अधिकांश श्लोक द्वार्थमूलक हैं। यह दो दिनमें एक काव्य लिख सकते थे। कालमेघ सम्भवतः ई॰ के पञ्चदश शताब्दमें जीवित थे। ठीक नहीं कहा जा सकता—इनका प्रकृत नाम क्या रहा।

कालमेशिका (सं॰ स्त्री॰) कालो मिश्यते कालोऽयं इति कथ्यते जनैरिति शेषः काल मिश-ङीप्-कन् टाप् ह्रस्वश्च। मञ्जिष्ठा, मंजीठ।

कालमेशी, कालमेषिका देखो।

कालमेषिका (सं॰ स्त्री॰) कालं मिषति स्पर्धते स्वकान्त्या, काल-मिष्-अण्-ङीप् स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वत्वञ्च। १ श्यामा त्रिवृता, काली कटेया। २ मञ्जिष्ठा, मंजीठ। ३ कृष्णजीरक, काला जीरा। ४ त्रिवृता, कटेया। ५ वाकुची। ६ हरिद्रा, हलदी। ७ श्वेतजीरक, सफेद जीरा। ८ श्यामालता।

कालमेषी, कालमेषिका देखो।

कालमेहो (सं॰ पु॰) मेहरोग विशेष, जिरियाकी एक बीमारी।

कालयवन (सं॰ पु॰) यवनोंका एक अधिपति। महादेवके नियमानुसार गार्ग्य ऋषिकी भार्याके गर्भसे इसका जन्म हुवा। उक्त ऋषिने मथुरावासियोंके प्रति जातक्रोध हो वैरनिर्यातनके निमित्त ……… नामक स्थानमें द्वादश वत्सर लौहचूर्ण मात्र भक्षण और नियम अवलम्बनपूर्वक रुद्रदेवकी प्रीतिके लिये तपस्या की थी। गार्ग्यके औरस और गोपाली नाम्नी अप्सराके गर्भसे कालयवनने जन्म लिया। यह राजधर्मज्ञ, राजोचित सद्गुणसे अलङ्कृत, विद्वान्, सत्यवादी जितेन्द्रिय, रणकुशल, शूर और सुमन्त्रिसहाय थे। मगधराज जरासन्धसे इनका संप्रीति रही। यह जरासन्धके साथ मथुरा आक्रमण करने गये। उससे पहले श्रीकृष्णने मथुरावासियोंको द्वारका भेज दिया था। वह जानते थे कि कालयवन मथुरावासियोंद्वारा मारे जाने योग्य न थे। सुतरां श्रीकृष्ण कालयवनके सम्मुखसे भाग किसी पर्वतकी गुहामें घुसकर छिप रहे। उस गुहामें सूर्यवंशीय महाराज मुचुकुन्द रणके परिश्रमसे बहुत क्लान्त हो सोते थे। कालयवनने उसमें घुस कृष्ण समझकर उनको लात मार दी। मुचुकुन्दकी कोपदृष्टिसे फिर यह विनष्ट हो गये। (हरिवंश १११ अ॰)

कालयाप (सं॰ पु॰) कालस्य यापः अतिवाहनम्, ६-तत्। काल अतिवाहन, वक्तका गुजारा, टालमटोल।

कालयापन (सं॰ क्ली॰) कालस्य यापनं अतिवाहनम्, ६-तत्। १ समयका बिताव, वक्तका कटाव। २ लोकयात्राका निर्वाह, गुजारा।

स्याह, बहुत काला। प्रायः यह शब्द मानव व्यवहारमें प्रयुक्त होता है।

कालाकृष्ट (सं० त्रि०) कालेन मृत्युना आकृष्टः, ३-तत्। १ मृत्युकर्षित आकृष्ट, मौतके पंजेमें पड़ा हुवा। २ समय द्वारा आनीत, वक्तसे निकला हुवा।

कालाचरिक (सं० पु०) काले यथायोग्यकाले चचरं वेत्ति, काल-चचर-ठक्। विद्यार्थी, तालिब इल्म, ठीक वक्त पर पढ़नेवाला।

कालाचरी, कालाचरिक देखो।

कालागरु, कालागुरु देखो।

कालागांडा (हिं० पु०) काली और मोटी ऊख

कालागुरु (सं० क्ली०) कालं कृष्णं अगुरु, कर्मधा०। कृष्ण अगुरु, काला अगर। कृष्णागुरु देखो।

"चक्रयो तीर्थलोहित्ये तस्मिन् प्राग् ज्योतिषेश्वरः।
तहुगजालानतां प्राप्तैः सह कालागुरुद्रुमैः॥" (रघु० ४। ८१)

कालागौंडा, कालागांडा देखो।

कालाग्नि (सं० पु०) कालः सर्वसंहारकः अग्निः, कर्मधा०। १ प्रलयाग्नि, कयामतकी आग। २ प्रलयाग्निके अधिष्ठाता रुद्र। ३ पञ्चमुख रुद्राक्ष। उक्त रुद्राक्ष कालाग्निरुद्रको अतिप्रिय है। इसीसे उसे भी कालाग्नि कहते हैं। स्कन्दपुराणमें उसे सर्वपापनाशक बताया है,—

"पञ्चवक्त्रं स्वयं रुद्रः कालाग्निर्नाम नामतः।
अगम्यागमनाच्चैव अभक्ष्यस्य च भक्षणात्।
मुच्यते सर्वपापेभ्यः पञ्चवक्त्रस्य धारणात्॥"

पञ्चमुख रुद्राक्ष साक्षात् रुद्रदेवस्वरूप है। उसे कालाग्नि भी कहते हैं। उक्त रुद्राक्ष धारण करनेसे अगम्यागमन वा अभक्ष्य भक्षणके पापसे शुद्धि मिलती है।

कालाग्निभैरव (सं० पु०) ज्वरका एक रस, बुखार की कोई दवा। १ भाग पारद और १ गन्धकको कज्जल बना गोक्षुरके क्वाथसे भावना देना चाहिये। सूख जाने पर उसे पीस कर चूर्णके बराबर ताम्रचूर्ण, ताम्रचूर्णका अष्टांश विष, १ भाग हिङ्गुल २ भाग धुस्तूरबीज, ५ भाग हरिताल, ३ भाग मनःशिला, ३ भाग टङ्कण, ३ भाग खर्पर, ४ भाग हेमाभ, ३ भाग स्वर्णमाक्षिक, १ भाग लौह और १ भाग वङ्ग डाल सबको अर्कचीरसे मर्दन करते हैं। फिर टग्रमूल और पद्ममूलके क्वाथसे यथाक्रम एक प्रहर घोंटकर चने बराबर वटिका बनायी जाती है। (भैषज्यरत्नावली)

कालाग्निरस (सं० पु०) भगन्दरका रस विशेष, पोशीदा जगहके नालीदार जख्मकी एक दवा। शुद्ध सूत गन्धक, स्वर्णनाग, तुत्थक, जीरक और सैन्धव बराबर ले तथा कोशातकीके द्रवमें पीस कर लगाने या खानेसे भगन्दर रोग नष्ट हो जाता है। (रसरत्नाकर)

कालाग्निरुद्र (सं० पु०) कालाग्नेः प्रलयाग्नेः अधिष्ठाता रुद्रः, मध्यप०, कालाग्निरिव रुद्रो वा, उपमि०। १ प्रलयाग्निके अधिष्ठातृ-देवता रुद्र। २ उक्त रुद्रके उपासक एक ऋषि। ३ यजुर्वेदीय एक उपनिषद्।

कालाग्निरुद्ररस (सं० पु०) १ कुष्ठाधिकारका एक रस, कोढ़की एक दवा। मरिच, अभ्र एवं तीक्ष्ण भस्म, माक्षिक और गन्धकको वन्ध्याकर्कोटकीके कन्दमें डाल मट्टीसे ऊपर लेप देते हैं; फिर भूधराख्य पुटमें एक दिन पका उसका चूर्ण बना लिया जाता है। इस चूर्णमें दशमांश विष मिलानेसे उक्त औषध प्रस्तुत होता है। मात्रा ३ माषमात्र है। उक्त कालाग्निरुद्र रस दश दिनमें विसर्पको नाश करता है। अनुपानमें पिप्पली और मधु मिलाना चाहिये। २ ज्वररोगका रसविशेष, बुखारकी एक दवा। मरीच और गन्धक तुल्य डाल पंच पित्तमें भावना देना चाहिये। फिर मायूर, मत्स्य, वाराह, छाग और माहिषकी एकदिन भावना लगती है। उक्त मायूरादि द्रव्योंको समस्त अथवा व्यस्तरूपसे भी ग्रहण कर सकते हैं। पीछे २ रति गरल डालनेसे कालाग्निरुद्ररस प्रस्तुत होता है। मात्रा दो गुञ्जाके बराबर कही है। स्नान पथ्य है। (रसरत्नाकर)

कालाङ्ग (सं० क्ली०) कालं कृष्णवर्णं अङ्गम्, कर्मधा०। १ कृष्णवर्ण देह, काला जिस्म। कालस्य कालपुरुषस्य अङ्गं ६-तत्। २ कालपुरुषका अङ्ग। (त्रि०) बहुव्री०। ३ कृष्णवर्ण देहविशिष्ट, काले जिस्मवाला।

कालाचोर (हिं० पु०) १ सचतुर चोर, हुशियार चोर। २ कापुरुष, खराब आदमी।

कालाजाजी (सं० स्त्री०) कृष्णजीरक, काला जीरा।

कालाजिन (सं० क्ली०) कालस्य कृष्णमृगस्य अजिनम्,

नगरोंमें चैत्र मासकी शुक्ल-प्रतिपत् तिथि तथा रवि-वारको सूर्य उदयके पीछे दिन, मास, वर्ष प्रभृति खण्डकी प्रवृत्ति पड़ी है। (सिद्धान्तशिरोमणि।)

कालप्रियनाथ—एक देवमूर्ति। वराहपुराणमें सूर्यकी एक मूर्तिका नाम 'कालप्रिय' लिखा है। यमुनाके दक्षिणस्थ प्रदेशमें सूर्यदेवकी यह मूर्ति पूजी जाती है। कालप्रियरूपसे सूर्यदेवका स्थापित किया हुआ शिवलिङ्ग 'कालप्रियनाथ' कहाता है। भवभूतिके 'मालतीमाधवका' पाठ पढ़नेसे समझ पड़ता है, कि कालप्रियनाथके उत्सव उपलक्षमें प्रथम मालतीमाधव अभिनीत हुआ। मालतीमाधवकी दुर्गमार्थबोधिनी नाम्नी टीकामें नान्याङ्कने इनके सम्बन्धपर कोई बात नहीं लिखी। किन्तु जगद्धरने 'मालतीमाधव-टीका'में इन्हें तद्देशका प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध देव माना है। नहीं कह सकते—आजकल कालप्रिय-नाथ कहां हैं?

कालप्रिया (सं॰ स्त्री॰) अजगन्धा, असगन्ध।

कालवालन (सं॰ क्ली॰) कावच, वखतर।

कालबलप्रहत (सं॰ स्त्री॰) आधिदैविक रोगमात्र, वक्तके जोरसे होनेवाली बीमारी। शीत, उष्ण, वात, वर्षा आदिके कारण लगनेवाले रोग भी दो प्रकारके होते हैं—व्यापन्नर्तुकृत और अव्यापन्नर्तुकृत। (सुश्रुत २४ अ॰)

कालबंजर (हिं॰ पु॰) पुरानी परती, बहुत दिन जोती-बोयी न जानेवाली जमीन्।

कालबाल (सं॰ पु॰) कंकुष्ठ, एक मट्टी।

कालबालक, कालवाल देखो।

कालबूत (हिं॰ पु॰) १ ढैना, कच्चा भराव। इससे मेह-राब बनाते हैं। २ काठका एक सांचा। इस पर चमार जूता सीते हैं। ३ यन्त्र विशेष, एक औजार। इससे रस्सी बटते हैं। यह काठका फंदा होता है। इसमें रस्सी डालनेके बड़े छेद रहते हैं। छेदमें डाल-कर बटनेसे रस्सी बराबर उतरती, मोटी या पतली नहीं पड़ती।

कालबेलिये (हिं॰ पु॰) एक जाति। इसे सपेरे भी कहते हैं। सांप आदि विषैले जन्तुओंको पकड़कर यह खेल दिखलाते हैं। यही इनकी जीविका है।

कालभव (सं॰ पु॰) महादेव, शिव।

कालभण्डी (सं॰ स्त्री॰) श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची।

कालभाण्डिका (सं॰ स्त्री॰) कालभार्थं कृष्णप्रभार्थं भण्डति, काल-भा-भडि-ण्वुल्-टाप् इत्वञ्च। मञ्जिष्ठा, मंजीठ। इसका क्वाथ और निर्यास प्रभृति रक्तवर्ण आते भी प्रथमतः कृष्णवर्ण देखाता है। मञ्जिष्ठा देखो।

कालभृत् (सं॰ पु॰) कालं बिभर्ति धारयति, काल-भृ क्विप्। सूर्य, आफताब, समयको धारण करनेवाला सूरज।

कालभैरव (सं॰ पु॰) कालस्य भैरवं भयं यस्मात् काल-भीरु-अण्। काशीस्थ शिवके अंशजात एक भैरव। शिवतत्त्व न समझनेवाले ब्रह्माका पञ्चम मस्तक काटनेको महादेवद्वारा यह आविर्भूत हुये। काशीमें रहनेवाले दुष्कर्मकारीको दण्ड देना ही इनका प्रधान कार्य है। ब्रह्मा भी कन्यागमनका पाप कर काशी पहुंचे थे। इसीसे शिवकी आज्ञा पाकर कालभैरवने उनका पञ्चम मस्तक काट डाला। (काशीखण्ड।) भारतके नाना स्थानोंमें कालभैरवकी मूर्ति पूजी जाती है।

कालम (अं॰ पु॰—Column) १ पत्रभाग, कोठा। २ सैन्यभाग, पांत। ३ स्तम्भ, खम्भा।

कालमरिच (सं॰ क्ली॰) कालं मरिचम्। कृष्णवर्ण मरिच, काली मिर्च।

कालमल्लिका (सं॰ स्त्री॰) कृष्णार्जक, काली तुलसी।

कालमसी, कालमल्लिका देखो।

कालमसी (सं॰ स्त्री॰) काली मसीव, पुंवद्भावः। काली नदी, एक दरया।

कालमहिमा (सं॰ पु॰) कालस्य महिमा माहात्म्यम्, ६ तत्। १ समयका माहात्म्य, वक्तकी शान। २ समयकी शक्ति, वक्तकी ताकत।

कालमाधवीय (सं॰ पु॰) माधवस्य माधवाचार्यस्य कृतम्, माधव-छ, कालप्रतिपादको माधवीयः माधवकृतो ग्रन्थः, मध्यपदलो॰। माधवाचार्यप्रणीत कालमान-बोधक एक स्मृतिग्रन्थ।

कालमान (सं॰ पु॰) कालो मन्यते ज्ञायते अनेनेति शेषः, काल-मन-घञ्। १ कृष्णवर्ण क्षुद्र तुलसी। २ कृष्ण-

६-तत्। १ कृष्णसार मृगका चर्म, काले हिरनका चमड़ा। "कार्ष्णं चाजिनं यस्य, बहुव्री०। २ कृष्णाजिन-प्रधान देशविशेष, काले हिरनके रहनेका मुल्क। कूर्म प्रभृति पुराणके मतमें उक्त जनपद दक्षिण दिक्‌में अवस्थित है।

कालाजीरा (हिं० पु०) १ काला जीरा, मीठा जीरा। २ धान्यविशेष, एक धान। कालाजीरा देखो।

कालाञ्जन (सं० क्लो०) कालञ्च तत् अञ्जनञ्चेति, कर्मधा०। गाढ़ कृष्णवर्ण अञ्जन, खूब काला काजल।

"न चक्षुषोः कान्तिविशेषबुद्ध्या
कालाञ्जनं मङ्गलमित्युपात्तम्।" (कुमार ७। २०)

कालाञ्जनी (सं० स्त्री०) अञ्जते अनया अञ्जनी, अञ्ज-करणे ल्युट्-ङीप्। काली कृष्णवर्णा अञ्जनी पुंवद्भावः, १ कृष्णकार्पासक्षुप, नरमा, वन कपास। उसका संस्कृत पर्याय—अञ्जनी, रेचनी, शिलाञ्जनी, नीला-ञ्जनी, कृष्णाभा, काली और कृष्णाञ्जनी है। वह कटु, उष्ण, अम्ल, आमकृमिघ्न, अपामावर्तशमन और जठरा-मयघ्न होती है। (राजनिघण्टु)

२ नीली, नील।

कालाटोकरा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। उसकी शाखाप्रशाखा नीचेको झुक जाती हैं। शीत-कालको पत्र ताम्रवर्ण धारण करते हैं। काठ सुदृढ़ और ईषत् कृष्णवर्णविशिष्ट रक्तवर्ण होता है। कालाटोकरा मालव, मध्यप्रदेश और राजपूतानेमें अधिक उपजता है।

कालाण्डज (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः अण्डजः पक्षी। कोकिल, कोयल, काली चिड़िया।

कालातिक्रम (सं० पु०) कालस्य अतिक्रमः लङ्घनम्, ६-तत्। समयलङ्घन, वक्त् निकाल देनेका काम।

कालातिपात (सं० पु०) कालस्य अतिपातः अतिवाह-नम्, ६-तत्। समयक्षेपण, वक्त्का निकाल।

कालातिरेक (सं० पु०) कालस्य अतिरेकः अतिक्रमः ६-तत्। १ निर्दिष्ट समयका अतिक्रम, मुकर्रर किये हुये वक्तका टालमटोल। २ मृत्युसमयका अतिक्रम।

"कालातिरेके विदुषं भारतिर्व यच्छतेन।" (कर्मविपाक)

कालातिल (हिं० पु०) कृष्णतिल, स्याह तिल।

कालातीत (सं० क्लो०) कालस्य अतीतं अत्ययः, अति-इण् भावे क्त। १ कालातिक्रम, वक्तका टल जाना।

"कालातीते इदा पश्चात् कथयोर्मेकृतं यया।" (कालीवंश)

(त्रि०) अतीतः कालोऽस्य, निष्ठान्तत्वात् परनिपातः। २ विगत, गुजरा हुवा, जो अपना समय बिता चुका हो। (पु०) ३ न्यायशास्त्रके मतानुसार पञ्चविध हेत्वा-भासके अन्तर्गत हेत्वाभास विशेष, बुतालता, एक झूठी दलील। अतीतकाल शब्द द्वारा भी वह अभिहित होता है उसका न्यायसूत्रोक्त लक्षण इस प्रकार है,—

"कालात्ययापदिष्टः कालातीतः।" १ अ० २ आ० ९० सूत्र।

साधनकालके अभाव समय जो हेतु लगाया जाता, वह कालातीत कहाता है। अर्थात् जिसस्थानमें किसी पक्ष* पर साध्यको† अभावविषयक निश्चय ठहरता, उसी स्थानका हेतु कालातीत रहता है। यथा—"जलं वह्निमत् जलत्वात्।" अर्थात् जलमें आग है, क्योंकि वह जल है। यहां जलमें वह्निके अभाव विषयका निश्चयज्ञान है। सुतरां 'जलत्व' हेतु काला-तीत नामसे निर्दिष्ट होगा।

कालातीत शब्दके बदले बाधित शब्दका प्रयोग भी न्यायशास्त्रके अनेक स्थलोंमें देख पड़ता है।

कालात्मक (सं० क्लो०) कालेन कालस्वभावेन कृत आत्मा यस्य, काल-आत्मा-कन्। १ कालस्वभावजात, वक्त या किस्मत पर मुनहसिर।

"जन्मनः कालदांशे न हिंसि वा वहि वा सुखि।
एवं कालात्मकाः सर्वे। कालात्मकमिदं जगत्।" (भारत, अनु० १४०)

काल आत्मा यस्य। २ कालस्वरूप परमेश्वर।

कालात्यय (सं० पु०) कालस्य अत्ययः अतिक्रमणम्, ६-तत्। कालक्षेपण, वक्तकी बरबादी।

कालात्ययापदिष्ट (सं० पु०) कालात्ययेन अपदिष्टः। गौतम-सूत्रोक्त हेत्वाभासविशेष, एक झूठी दलील। कालातीत देखो।

---

* जिसके ऊपरकी साध्यका अनुमान हम करता है। जैसे—"पर्वतो वह्निमान् धूमात्" अर्थात् पर्वत वह्निमान् है। इस अनुमानमें पर्वत पक्ष, वह्नि साध्य और धूम हेतु है।

† हेतु द्वारा जिसे प्रतिपादन करते, वही साध्य कहते हैं।

कालादर्श (सं॰ पु॰) कालः शुभकर्मसम्पादककाल-विशेषः आदर्श इव, काल-आ-दृश-णिच् आधारे अच्। १ समयका दर्पण, वक्तका आईना। २ स्मृतिग्रन्थविशेष।

कालादाना (हिं॰ पु॰) १ लताविशेष, एक बेल। वह अति मनोहर होती है। पुष्प नीलवर्ण रहते हैं। पुष्प पतित होनेपर हल्ल आता जिसमें कृष्णवर्ण बीज देखाता है। निर्यास औषधमें पड़ता है। किन्तु बीज और निर्यास बहुत थोड़ी मात्रामें सेवन करते हैं। २ उक्त लताका बीज। वह बहुत रेचक होता है।

कालाह्निक (सं॰ पु॰) वैशाख मास।

कालाध्यक्ष (सं॰ पु॰) कालानां खण्डकालानां अध्यक्षः प्रवर्तकः, ६-तत्। १ सूर्य, सूरज।
"कालाध्यक्षो प्रजाध्यक्षो विश्वकर्मा तमोनुदः।" (भारत,वन, ३० अ॰)
२ समुदायकालप्रवर्तक परमेश्वर, वक्तका मालिक।

कालानर (सं॰ पु॰) सभानरके एक पुत्र। कालानल देखो।

कालानल (सं॰ पु॰) कालः सर्वसंहारकः अनलः-कर्मधा॰। १ प्रलयाग्नि, क़यामतकी आग। २ राज-विशेष, एक राजा। उसके पिताका नाम सभानर था। (हरिवंश ३१ अ॰)

कालानाग (हिं॰ पु॰) १ काल सर्प, काला सांप। २ कुटिल पुरुष, टेढ़ा आदमी।

कालानुनादि (सं॰ पु॰) काल एव कालः अव्यक्तमधुरः तम् अनुनदति, काल-अनु-नद-णिनि। १ भ्रमर, भौंरा। २ चटक, चिरौंटा। ३ चातक, पपीहा। ४ वन-कुक्कुट, जंगली मुरगा।

कालानुभावकता (सं॰ स्त्री॰) कालं अनुभवति, काल-अनु-भू-ण्वुल्, कालानुभावकस्य भावः, तल्-टाप्। समय अनुभव करनेकी शक्ति, जिस ताकतसे वक्त मालूम पड़े।

कालानुशारिवा (सं॰ स्त्री॰) कालेन कृष्णवर्णेन अनु-सृता शारिवा, मध्यप॰। १ कृष्ण-शारिवा, काली सता-वर। २ तगरपादिक, तगरमूल। ३ शीतली जटा।

कालानुसारक (सं॰ पु॰) कालं कृष्णवर्णं मृगमदं अनुसरति गन्धेन इति शेषः, काल-अनु-सृ-ण्वुल्। १ तगर। २ पीतचन्दन। (त्रि॰) समयानुसारी, वक्तके मुवाफिक।

कालानुसारि (सं॰ पु॰) कालं कृष्णवर्णं मृगमदं अनुसरति, काल-अनु-सृ-इञ्। १ शिंशपा वृक्ष। २ मूषिक, चूहा। ३ शैलज, एक खुशबूदार चीज़। ४ अगुरु, अगर।

कालानुसारिणी (सं॰ स्त्री॰) १ पिण्डीतगर। २ श्वेत शारिवा, सफेद सतावर। ३ कृष्णशारिवा, काली सतावर।

कालानुशारिवा, कालानुसारिवा देखो।

कालानुसारी, कालानुसारि देखो।

कालानुसार्य (सं॰ स्त्री॰) कालेन मृगमदेन अनु-स्रियते, काल-अनु-सृ-ण्यत्। शब्दरत्ना॰। वा १। १। १६
१ शैलज, कोई खुशबूदार चीज़। २ शिंशपा वृक्ष। ३ कृष्णचन्दन। ४ पीतचन्दन। ५ तगरपादिका। ६ तगर।

कालानुसार्यक (सं॰ स्त्री॰) कालानुसार्य स्वार्थे कन्। शैलज, एक खुशबूदार चीज़।

कालानुसार्या (सं॰ स्त्री॰) तगर।

कालानोन (हिं॰ पु॰) कावलवण, काला नमक।

कालान्तक (सं॰ पु॰) कालस्य आयुः-कालस्य अन्तकः नाशकः, ६-तत्। यम।

कालान्तकयम (सं॰ पु॰) कालान्तकश्चासौ यमश्चेति, कर्मधा॰। १ आयुःकालविनाशक यम। २ प्रलयकारक यम।

कालान्तकरस (सं॰ पु॰) १ कासाधिकारका रस-विशेष, खांसीकी एक दवा। हिङ्गुल, मरीच, त्रिकटु, टङ्कण और गन्धक समभाग अम्बीरका रस डाल याम मात्र मर्दन करनेसे उक्त औषध प्रस्तुत होता है। गुञ्जामात्र कालान्तकरस खिलानेसे कासरोग दब जाता है। २ यक्ष्माधिकारका रसविशेष, तपेदिककी एक दवा। लौहमयी मूषा ऊपरको द्वादश अङ्गुल बनाते हैं। फिर स्वर्णवाराहीको सम ग्रहकन्याके रससे मर्दन कर याममात्र लहसनसे घोंट गोला बनाकर रख देना चाहिये। उसके पीछे पूर्वोक्त मूषामें चौथाई पारा और गन्धक निर्गुण्डीके रससे पीस कर डालते हैं। फिर मूषाको लौहचक्रसे आच्छादन कर वज्रयन्त्र-में सबको फूंकना चाहिये। इसीप्रकार अष्टपुट लौह

उसी स्थान पर कीर्तिवर्मा और मदनवर्माका नाम खोदित है। उसके आगे थोड़ी दूर चढ़ते ही षष्ठ द्वार लाल-दरवाजा है। उसी स्थान पर चंदेलोंके समयकी दीर्घ शिलालिपि लगी है। द्वारको पश्चिम दिक् कल्योर कुण्डके उपरि भागमें भैरवकी प्रकाण्ड मूर्ति है। दो छोटी दूसरी मूर्ति हैं—दो भारवाहियोंके स्कन्ध पर भार है—जलपूर्ण दो कलस हैं। फिर उसके आगे ही सप्तम द्वार बदर-दरवाजा है। इसे बड़ा दरवाजा भी कहते हैं। उक्त स्थान छोड़नेसे सीतारामकी शय्या मिलती है। पर्वत काट कर एक छोटा गृह बनाया गया है। उस गृहके अभ्यन्तरमें एक चारपाई और पछौना पत्थर पर खुदा है। प्रवादानुसार रामने सीताको लङ्कासे छुड़ा यहीं आ कर श्रान्ति मिटायी थी। उक्त गृहको अभ्यन्तरस्थ शिलालिपि पढ़नेसे मालूम पड़ता कि यह ई० चतुर्थ शताब्दको हरद्वारा बनाया गया। पाण्डुकुण्ड गोलाकार जलाशय है, उसका व्यास ८ हस्तमात्र है। ऊपर पहाड़से सर्वदा जल टपका करता है। सीताशय्या पार होनेसे पातालगङ्गाको पथ है। कालंजरमाहात्म्यमें उसका पापगङ्गा नाम लिखा है। पातालगङ्गा एक गुहा है। उसमें जल रहता है। यह २६ हस्त दीर्घ और १२ हस्त प्रशस्त है। उसमें उतरना कुछ कठिन है। वहां भी स्थान स्थान पर खोदितलिपि विद्यमान हैं। उनमें कहीं १२२८, कहीं १५२४ और कहीं १६४० संवत् लिखा है। पातालगङ्गासे आगे पाण्डुकुण्ड मिलता है। फिर सीतारामके निकट सीताकुण्ड है।* दुर्गप्राकारसे उसमें उतरते हैं। उस कुण्डके उपरिभागमें एक मूर्ति है। वह हस्त पर भार डाल कर बैठी है। सामने ही एक टीकरी है। उसमें १६४० संवत् खोदित है। पाण्डुकुण्डको उत्तरपूर्व दिक् एक निम्नभूमि है। उसमें एक जलाशय भी बनाया गया है। जलाशयको चारो ओर सोपानावली है। उसको "बुढ़िया तलाव" कहते हैं। उसके जलसे अनेक रोग अच्छे हो जाते हैं। कालंजरमाहात्म्यमें यही ब्रह्मतीर्थ कहा गया है। दुर्गकी दक्षिणपूर्व दिक् एक फाटक है। उसका नाम पन्नादरवाजा या बेगकरद्वार है। आज कल वह बन्द है। उसके पास कामता और रेवा नामक दूसरे दो फाटक हैं। पर्वतके निम्नभागमें भी कालिंजर नगर विस्तृत है। उक्त द्वारसे उस भागमें प्रवेश करते हैं। पन्नाफाटकको उत्तर और प्राकारसे नीचे एक कुण्ड है। उसे भैरवकुण्ड कहते हैं। कुण्डके ऊपर भैरवको प्रकाण्ड मूर्ति है। उस स्थानमें ११८५ संवत्की शिलालिपि देख पड़ती है। पाण्डुकुण्डको उत्तर-पूर्व दिक् पथ है। उससे बुढ़ियसरोवरको जाते हैं। कुछ आगे बढ़नेपर 'सिद्धकी गुहा' 'भगवान्‌शय्या' और 'पानीका अमन' स्थान मिलते हैं।

ऋषिक्षेत्र या 'सिद्धकी गुहा' एक स्थानविशेष है। वहां लोग प्रायश्चित्तादि करते हैं। राजा जटिलाधिकी एक संस्कृत शिलालिपि उस स्थानमें मिलती है। वहां भगवान् रामचन्द्र और सीताकी प्रस्तरनिर्मित शय्या है। 'पानीका अमान' भी एक स्थान है। डेढ़ हाथके एक छोटे द्वारसे उसमें प्रवेश करना पड़ता है। चार स्तम्भोंके ऊपर उसकी छत पड़ी है। वहां मृगधार नामक दूसरा स्थान भी है। पहाड़में पत्थर खोद सात मृगकी आकृति बनायी गयी है। इसीसे उसको मृगधार कहते हैं। कहते हैं कि किसी समय सात ऋषिपुत्र गुरुकी आज्ञा न माननेसे शापग्रस्त हुए थे। प्रथम उन्होंने दशार्ण वनमें व्याध हो जन्म लिया। फिर परजन्ममें वह कालिञ्जरके मृग बने। मृगजन्मके पीछे उन्होंने क्रमान्वयसे लंकाद्वीपमें राजहंस, मानसरोवरमें हंस और कुरुक्षेत्रमें ब्राह्मण हो जन्मग्रहण किया। उससे वह मुक्त हुए। कालिञ्जरकी मृगमूर्ति उन्होंकी प्रतिकृति है। मृगधारमें भी एक

* "निशिछन्नं मादिश्य कालकोऽलम्बुजानम् ।
कालकोऽभ्यायस्तत्र दर्शयेत्र विचक्षणैः ॥
ततस्तु पूजयेद् भक्त्या सीतामीतिदायकम् ।
तत्रैव कुण्डं सीताया सीतायाः शितकारकम् ॥"
(कालञ्जरमा०, ६म अ०)

* "मयाया दर्शनं कृत्वा सिरिदर्शितमानिवः ।
तत्र स्नानं समाचरेत् पितृतृप्तकारी ॥
जलधारे यथा शार्ङ्गं तिष्ठन्तु सीतादि नियतः ॥"
(कालञ्जरमा० ३य अ०)

होनेसे औषधको अंगार पीस लेते हैं। अथ गुञ्जा-परिमित कालान्तकरस खानेसे रोगका क्लिष्ट हो जाती है। अनुपान मृगाङ्कवत् है। (रसरत्नाकर)

कालान्तर (सं० क्ली०) अन्यः कालः (मयूर० व्यं० कर्म०)। १ अन्य-समय, दूसरा वक्त। २ उत्पत्तिका परवर्ती काल, पैदायशके पीछेका वक्त। (त्रि०) ३ समयान्तर-स्थायी, दूसरे वक्तमें पड़नेवाला।

कालान्तरक्षम (सं० त्रि०) कालान्तरको वहन कर सकनेवाला, जो देरका बात बरदाश्त कर सकता हो।

कालान्तरप्राणहरमर्म (सं० क्ली०) १ मर्मस्थानविशेष, जिस्मकी एक नाजुक जगह। जहां आघात लगनेसे पक्षान्त वा मासान्तमें प्राण निकलते, उसे कालान्तर प्राणहरमर्म कहते हैं। वह तैंतीस होते हैं। यथा— आठ वक्षमें (दो स्तनमूलमें, दो स्तनरोहितमें, दो अपलापमें और दो अपस्तम्भमें), पांच सीमन्तमें, चार तलहृदयमें, चार क्षिप्रमें, चार इन्द्रवस्तिमें, दो कटि-तरुणमें, दो पार्श्वमें, दो बृहतीमें और दो नितम्बमें। (सुश्रुत)

कालान्तरविष (सं० पु०) कालान्तरे दंशनात् अन्य-स्मिन् काले विषं यस्य, बहुव्री०। १ मूषिकादि जन्तु, चूहा वगैरह। २ लूतादि, मकड़ी वगैरह, जिन जन्तुओंका विष पहले दष्ट स्थान पर मालूम न पड़ते भी पीछे देखा जाता, उन्हींका नाम कालान्तरविष आता है।

कालान्तरावृत्त (सं० त्रि०) कालान्तरे दीर्घसमयान्तरे आवृतं पराहृतम्, ७-तत्। बहुकाल प्रत्याहृत, अरसेसे छिपाया गया।

कालान्तरावृत्ति (सं० स्त्री०) कालान्तरे आवृत्तिः प्रत्यावर्तनम्, ७-तत्। समयान्तरमें प्रत्यावर्तन, दूसरे वक्तको वापसी।

कालाप (सं० पु०) कालः कृष्णः आप्यते यस्मात्, काल-आप-अप्। १ सर्प-फण, सांपका फन। २ राक्षस। कलापं तन्नामकं व्याकरणं वेत्ति अधीते वा, कलाप-अण्। ३ कलापव्याकरणवेत्ता। ४ कलापव्याकरण अध्ययनकारी। ५ एक ऋषि, उनका नाम कलाप था। वह वाशम्पायनके अध्यापक रहे।

"[illegible]" ([illegible])

कालापक (सं० क्ली०) कालापस्य कलापिना प्रोक्तस्य शाखाभेदस्य धर्मः आम्नायो वा, वुञ्। १ कलापि-शाखानुसारी एक शास्त्र। २ कलाप-व्याकरणवेत्ता।

"[illegible]" (सिद्धान्तकौमुदी)

कालापहाड़ (हिं० पु०) अत्यन्त भयानक वस्तु, निहा-यत डरावनी चीज।

कालापहाड़—१ जौनपुरवाले नबाब बहलोल लोदीके भागिनेय और उनके पुत्र बारबक शाहके सेनापति। वह एक विख्यात वीर थे। कहते हैं किसी समय बारबक शाहने दिल्लीके सुलतान सिकन्दर लोदीके विरुद्ध युद्धयात्रा की थी। युद्ध घोरतर हुआ। घटनाक्रमसे उस युद्धमें कालापहाड़ कैद किये और दिल्लीको भेजे गये। सिकन्दरने देखा कि कालापहाड़ म्लान-मुख पदव्रजसे उनके सम्मुख आ रहे थे। उन्होंने अविलम्ब अश्वसे उतर कालापहाड़को आलिङ्गन किया और कहा,—'आप हमारे पितृतुल्य हैं, हमें भी पुत्रतुल्य समझते रहिये।' कालापहाड़ उस अप्रत्या-शित समादरको देख विस्मित हुये। उन्होंने सुलतानसे कहा, कि वह सुलतानके लिये जीवन पर्यन्त उत्सर्ग करनेको प्रस्तुत थे। फिर वह पहले जिनकी ओरसे लड़ने चले थे, उनके ही विरुद्ध हो गये। बारबक शाहके सिपाही कालापहाड़को आते देख भाग खड़े हुये।

'तारीख-खान-जहान-लोदी' नामक फारसी इतिहासमें लिखा है कि ४८८ हिजरीको (१४८१ ई०) सिक-न्दरशाहने बारबकशाहको पकड़नेको लिये काला-पहाड़को अवधके अभिमुख भेजा था।

"तारीख शेरशाही" नामक मुसलमान इतिहास-के मतानुसार कालापहाड़को सुलतान बहलोलने अवध सरकार और दूसरे भी कई परगने जागीर दिये थे। मरनेके समय वह १०० मन खरा सोना और बिस्तर अशफार सम्पत्ति छोड़ गये। उनकी एक-मात्र कन्या फातिमा उत्तराधिकारिणी हुयी।

सुलतान इब्राहिम लोदीके राजत्वमें जैदापुरमें वह मर गये। युक्त-प्रदेशमें कालापहाड़का नाम विख्यात है। वह बड़े हिन्दूविद्वेषी और देवमूर्ति-चूर्णकारी थे।

सरोवर खोदा गया है। पहाड़से उसमें दिनरात बूंद बूंद पानी टपका करता है। कोटतीर्थसे उसमें जल जाता है।

दुर्गके मध्य कोटतीर्थ नामक एक सरोवर है। कालंजरमाहात्म्यमें वही कोटीतीर्थ नामसे वर्णित है। कोटीतीर्थमें स्नान करनेसे कोटि जन्मका पाप छूटता है।* सरोवरमें उतरनेके लिये प्रशस्त सोपानावली है। किन्तु उसमें सकल समय जल नहीं रहता। कोई बड़ी भारी वृष्टि हो जानेसे कुछ दिन जल देख पड़ता है। सरोवरकी चारो ओर नानाविध प्रस्तरखण्ड पतित हैं। उनमें अनेक शिलालिपि उत्कीर्ण देख पड़ती हैं। लेख अनेक स्थानोंमें मिट गये। सुतरां आजतक उनका उद्धार नहीं हुआ। सरोवरके पार्श्वमें उपरिभागपर प्रस्तरभवन और अन्यान्य गृह बने हैं, वह अत्यन्त पुरातन समझ पड़ते हैं। स्थान स्थानपर संस्कार भी किया गया है। वहां भी बहुविध पुरातन खोदित लिपि देख पड़ती है। कोटीतीर्थसे पश्चिमको बैठक और अमानसिंहका महल छोड़ दक्षिणपश्चिम नील-कण्ठ जानेका पथ है। पथमें एक फाटक लगा है। फाटक पार होनेसे प्रकृतिको अपूर्व शोभा देख पड़ती है। पर्वत उससे अधमतल हो बिलकुल नीचेको झुक गया है। जहांतक दृष्टि जाती, वहांतक अपूर्व शोभा देखाती है। पहाड़के नीचेसे बांदा नौगांवकी राह देखने पर मनमें आता, मानो उपवीतका गुच्छ पड़ा देखाता है। अदूर हो श्यामल शस्यपूर्ण प्रशस्त भूखण्ड नील नभस्थलमें जाकर मिल गया है। बीच बीच छोटे छोटे पहाड़ हैं। कहीं निर्झरिणी और कहीं स्रोतस्वती सूर्यातपमें रौप्यमय हो झरझरा रही है। क्या ही सुन्दर प्रकृतिकी अपूर्व शोभा है। उपरि उक्त फाटक पार होनेसे उस पथमें दूसरा फाटक मिलता है। उससे आगे बढ़नेपर कवि तुलसीदास और जैन तीर्थङ्करकी प्रस्तरमूर्ति देख पड़ती है। वाम और पहाड़में दूसरी कई मूर्ति हैं। स्थान स्थानपर शिलालिपि उत्कीर्ण है। मुसलमानोंके शासनसमय वहां एक गृह बना था। कलईका काम होनेसे अनेक लेख अदृश्य हो गये हैं। कुछ दूर आगे जानेसे जटाशङ्कर, शिवसागर और तुङ्गभैरवकी मूर्ति है। वहां कई गुहा भी हैं। कई स्थानमें प्रस्तर पर कितना ही लिखा है। किन्तु उसका अल्प मात्र पढ़ा गया है। कहीं "चैत सुदी ८, सन् ११८२ संवत् नरसिंह वल्लनके पुत्रने वामदेवकी मूर्ति प्रतिष्ठित की है," कहीं "जेठ सुदी ८, ११८२ संवत् दीक्षित पयोधर" और कहीं "श्रीकीर्तिवर्मा देव और सेमेश्वर देवगणको प्रणाम करते हैं" लिखा है। तुङ्गभैरवके एक स्थान पर "मदनवर्माके अनुचर सोल्लन, सोल्लनके पुत्र महाश्रपिक, उनके पुत्र वल्हालने लक्ष्मीदेवीकी मूर्ति स्थापन की, कार्तिक सुदी सप्तमी संवत् ११८८" लिखित है। इसीप्रकार दूसरा भी कितना ही लेख है। निकट ही नीलकण्ठका मन्दिर है। पहाड़के नीचेसे उस मन्दिरकी अपूर्व शोभा देख पड़ती है। वहां एक गुहा है। गुहाके सम्मुख अष्ट-कोण प्राङ्गणकी चारो ओर प्रस्तरके स्तम्भ हैं। स्तम्भोंके निर्माण-कौशलमें अति चमत्कार दिखलाया गया है। उनके उपरिभागमें विष्णुकी एक चतुर्भुज मूर्ति स्थापित है। स्तम्भ अष्टकोण मण्डपकी अष्ट दिक् अवस्थित हैं। लोगोंके कथनानुसार उपरि उपरि स्तम्भोंकी सात श्रेणी रहीं, किन्तु आजकल एक मात्र देख पड़ती है। उक्त गुहाके अभ्यन्तरमें नीलकण्ठ महादेवकी मूर्ति है। गुहाके बाहर बहुविध शिल्प-कार्य होनेका प्रमाण मिलता है। किन्तु वह समस्त चूनेके काममें छिप गया है। प्रवेशद्वारके पार्श्वमें हरपार्वती और गङ्गायमुनाकी मूर्ति हैं। शिवलिङ्ग गाढ़ नीलवर्णके प्रस्तरसे निर्मित है। उसकी उच्चता तीन हस्त होगी। नीलकण्ठदेवके तीन चक्षु हैं। स्थान देखनेसे युगपत् भय और भक्तिरसका उद्रेक हो उठता है। उक्त नीलकण्ठ देव ही कालि-ञ्जरके अधिष्ठात्र देवता हैं। कहनेकी आवश्यकता

---

* "नीलकण्ठो यत्र देवो भैरवाः चण्डनायकाः।
कोटीतीर्थं यत्र तीर्थं सुलितम् न संशयः॥
कोटीतीर्थं नरो स्नात्वा पूजयित्वा महाशिवम्।
कोटीजन्मार्जितात् पापान्मुच्यते नात्र संशयः॥
कोटीतीर्थं च संस्नाय मन्दाकिन्या महत्फलम्।"
(कालंजरमा० ११०—१२)

२ मुर्शिदाबादके नवाब दाऊदके एक सेनापति। उनका प्रकृत ना 'राजू' था। कामरूप अञ्चलमें वह पोरासुठार, पोराकुठार, कालासुठान या कालयवन नामसे विख्यात हैं। बङ्गाल और उड़ीसेके जनप्रवादानुसार कालापहाड़ पहले ब्राह्मण थे। उन्होंने किसी नवाब-कन्याके प्रेममें फंस मुसलमान-धर्म ग्रहण किया। किन्तु अकबरनामे, तारीख दाऊदी प्रभृति मुसलमान इतिहासोंमें वह 'अफगान' बताये गये हैं।

कालापहाड पहले बङ्गालके नवाब सुलेमान कर्‌रानी और पीछे दाऊदके सेनापति बने। उनकी भांति देवद्वेषी मुसलमान बङ्गालमें कभी देख न पड़ा था। देवमन्दिर भङ्ग, देवमूर्ति चूर्ण और अनेक प्रकार हिन्दुवोंको लाञ्छना करना ही उनके जीवनका प्रधान लक्ष्य रहा।

पूर्व आसाम, पश्चिम काशी और दक्षिण उड़ीसाके मध्य उस समय हिन्दुवोंके जो विख्यात देवालय थे, वह कालापहाड़के हाथसे बच न सके। उनमें कोई भग्न, कोई अङ्गहीन और कोई भूमिसात् हो मानो अद्यापि कालापहाडका दारुण अत्याचार घोषणा करता है। प्रवादानुसार कालापहाड़का नक्कारा बजते ही सकल देवमूर्ति कांप उठती थीं।

ष्टीवेनसकी मादली पञ्जीमें लिखा है (१४८१ शक),—"मुकुन्ददेवके राजत्वके अन्तिमकाल कालापहाड़ उड़ीसेमें घुसा था। मुकुन्ददेव उससे पराजित हुये। उसके पीछे मुकुन्ददेवके पुत्र गौड़िया-गोविन्दके राजा होने पर कालापहाड़ पुरी लूटने गया था। पण्डोंने जगन्नाथ देवकी मूर्ति उठा गड़ पारीकुदमें छिपा रखी। कालापहाड़को वह संवाद मिल गया। उसने पारीकुदसे जगन्नाथदेवको मंगा और अग्निमें जला समुद्रमें फेंक दिया। जगन्नाथ, उत्कल प्रभृति शब्द देखो। उसी पापसे कालापहाड़के हाथ पैर गले, जिसमें वह मरे थे।" अकबरनामेके मतानुसार मुगल सेनापति मुनीमखान्‌के दाऊदको पकड़ने कटक पहुंचने पर कालापहाड़ और कई अफगान सरदारोंने काकसाथ अधिकार किया था। किन्तु अल्पकालके मध्य ही कालापहाड़ कालीगङ्गाके तीर मुगल सिपाहियोंके साथ मारे गये। तारीख-दाऊदीके देखते ९८८ हिजरीको (१५८० ई०) उक्त घटना हुयी थी।

कालापान (हिं० पु०) ताशका हुक्म रंग।

कालापानी (हिं० पु०) १ निर्वासन, जलावतनी, देशनिकाला। २ आन्दामन, निकोबार प्रभृति द्वीप। ३ मद्य, शराब।

कालापोश (हिं० वि०) कृष्णवर्णवस्त्राच्छादित, काले कपड़े पहने हुवा।

कालाबाल (हिं० पु०) योनिदेशस्थ केश, पशम, झांट।

कालाभुजङ्ग (हिं० वि०) अत्यन्त कृष्णवर्ण, निहायत काला।

कालाभ्र (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः अभ्रः, कर्मधा०। १ जलयुक्त कालमेघ, बरसनेवाला काला बादल। २ कृष्णाभ्र, काला बादल।

कालाम (सं० पु०) अराड ऋषि। वह शाक्य मुनिके अध्यापक रहे।

कालामुख (सं० पु०) शैव सम्प्रदायविशेष।

कालामोहरा (हिं० पु०) विषतुल्य विशेष, एक जहरीला पौदा। वह सींगियासे मिलता अपनी जड़में विष रखता है।

कालाम्र (सं० पु०) काल आम्रो यत्र, बहुव्री०। द्वीपविशेष, एक टापू।

"कुरुन् वायुधराम् चैव कालाम्रदीपमेव च।" (हरिवंश १६१)

कालाम्ल (सं० क्लो०) सक्तु, सत्तू।

कालायन (सं० त्रि०) कालेन निर्वृत्तम्, काल-फक्। समयजात, वक्तसे पैदा।

कालायनि (सं० पु०) वाष्कलिके एक शिष्य।

कालायनी (सं० स्त्री०) दुर्गा।

कालायस (सं० क्ली०) कालश्च तत् अयश्चेति, कालअयस् टच्। अनश्मायः सरसां जातिसंज्ञयोः। पा ५।४।९४। १ काला लोहा, कोई लोहा। २ लोह, लोहा। लोह देखो।

कालायसमय (सं० त्रि०) काल-अयस-मयट्। काललोह निर्मित, लोहे लोहेका बना हुवा।

नहीं—कितनी दूरसे हजारों लोग जा जा कर उनकी पूजा करते हैं। नीलकण्ठ-मन्दिरकी बाम ओर एक अप्रशस्त पथ है। उसमें बहुसंख्यक लिङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित हैं। वह पथ नीलकण्ठका मन्दिर घेर अपर दिक्‌को जा निकला है। मन्दिरके स्तम्भोंके मध्य मध्य भूमिमें प्रस्तरखण्ड पर कितना ही लेख देख पड़ता है। फिर उसमें बहुत कुछ यात्रियों द्वारा खोदित है। बाहर स्थान स्थान पर भगवान्‌के दश अवतार, ब्रह्मा, हरपार्वती प्रभृतिकी अनेक मूर्ति भग्नावस्थामें इधर उधर पड़ी हैं। नीलकण्ठका मण्डप छोड़नेसे एक कुण्ड मिलता है। वह भी पहाड़ तोड़ कर बनाया गया है। उसका नाम स्वर्गारोहणकुण्ड* है। उसके दक्षिण पार्श्व पर्वतके कोणमें प्रकाण्ड कालभैरवकी मूर्ति है। वह कुण्डके जल पर खड़ी है। मूर्ति प्रायः १६ हस्त उच्च और ११ हस्त प्रशस्त है। नरमुण्डकी माला गलदेशमें दोदुल्यमान है। सर्पके कुण्डल हैं। हस्तमें सर्पके वलय पड़े हैं। गलेमें सर्पका हार है। अष्टादश हस्तमें अष्टादश अस्त्र हैं। उक्त भयानक मूर्तिके पार्श्वमें जल पर कालीकी एक मूर्ति खड़ी है। जल पर उक्त पर्वतके अभ्यन्तरमें उन दोनों मूर्तियोंको देखनेसे मनमें युगपत् भक्ति और भयका सञ्चार होता है। उक्त मूर्तिके आगे ही दूसरी गुहा है। वहां जाना दुःसाध्य है। पहले उक्त मूर्तिके निम्नभागमें एक द्वार था। उससे सिद्धगुहामें लोग जाते थे। उस स्थानसे किसी सुरंगकी राह देशीय राज्यके भीतर पहुंचते थे। अंगरेज राजपुरुषोंने वह राह बन्द कर दी है। दुर्गकी उत्तरदिक् प्राकारसे बाहर पर्वतके मध्यदेशमें १० हस्त दीर्घ और ६ हस्त उच्च एक क्षुद्र खण्डगिरि है। उसमें भी लिङ्गमूर्ति वर्तमान है। उसका नाम बालकाण्डेश्वर है। उसके पार्श्वमें एक भारवाही मूर्ति है। वह भार लिये चली जाती है। अङ्गोंकी दोनों ओर दो कलसी गङ्गाजल है। उक्त भारवाहकके चिबुकपर गुप्तवंशीय राजपदत्त शिलालिपि लगी है। पर्वतके पार्श्वमें समतल भूमि पर भी एक जगह वैसी ही मूर्ति और वैसी ही शिलालिपि है। उस स्थानका नाम भरवन है। कालिञ्जर पर्वतकी उत्तर ओर भूमिसे ४०।४५ हस्त ऊपर गङ्गासागर नामक एक सरोवर विद्यमान है। वह प्रायः १०० हस्त दीर्घ और ८० हस्त प्रशस्त है। उसकी नीम पीर सापाना-वली समान चली गयी है। एक ओर उतरनेकी छोटी सिड़ी और चारो ओर ऊंचा किनारा है। किनारे पर चढ़नेकी भी सोपान बना है। वहां ८ हस्त उच्च अनन्तदेवकी मूर्ति देख पड़ती है।

वहां दूसरी भी देखनेकी बहुत चीजें हैं। उनमें चण्डीभवन, शिवक्षेत्र, रविक्षेत्र, मातङ्गवापिका, नारायणकुण्ड, चन्द्रध्याम और सोमित्रक्षेत्र प्रसिद्ध हैं।

पर्वतके अग्निकोणमें अद्यापि श्रीरामका चरण-चिह्न बना है।

"अग्निकोणे गिरिस्थम श्रीरामचरणद्वयम्।" (कालञ्जरमाहात्म्य ७।१०)

कालिदास (सं॰ पु॰) काल्याः दासः, संज्ञायां ह्रस्वः। भारतके अति प्रसिद्ध महाकवि। लोगोंको विश्वास है कि विक्रमादित्यकी सभाके नवरत्नमें कालिदास भी एकरत्न रहे। उसके सम्बन्धपर नाना स्थानोंमें नाना प्रकार प्रवाद प्रचलित है। उनमें केवल एक प्रवाद हम नीचे लिखेंगे।*

किसी विदुषी कन्याने विद्यावलसे बहु पण्डितों-को हरा प्रतिज्ञा की थी,—'जिस पण्डितसे हम शास्त्रार्थमें हार जायेंगी, उसीको अपना पति बनायेंगी।' उनके पिता प्रतिज्ञाको सुन एक एक कर बहु पण्डित लाये थे। किन्तु कोई कन्याको पराजय कर न सका। इस प्रकार बार बार पण्डित-पाड़का

* कालञ्जरमाहात्म्यमें उक्त कुण्डका जल स्वर्गदायी लिखा है। यथा— "नीलकण्ठसमीपे तु स्वर्गं याम्याः समाहयाः। सर्वेषापा नरः कश्चिद् स्वर्गमपलता भवेत्॥" (७।१९-२१)

* मिथिलाके प्रवादानुसार कालिदास मिथिलावासी थे। (Journal. Asiatic Society of Bengal, Vol. XLVII. 1879 pt. I. p. 33.) इसी प्रकार दक्षिणदेशमें भी कई प्रवाद हैं। (See Indian Antiquary. 1876.) नाना स्थानोंके प्रवाद पढ़नेसे मालूम पड़ता है—जहां किसी समय विख्यात पण्डित रहे, वहां लोग महाकवि कालिदासको स्वदेशीय और स्व धर्मावलम्बी कहनेमें कुण्ठित न हुए। रंगपुरमें भी ऐसा ही प्रवाद चलता है। (Martin's Eastern India, III. p. 543.)

कालावड़क (सं० पु०) हक्षविशेष एक पेड़।

कालावधि (सं० पु०) नियत समय, मुकर्रर वक्त।

कालाव्यवाय (सं० पु०) समयके अन्तरालका अभाव, वक्त के बकफेकी अदम मौजूदगी।

कालाशुद्धि (सं० स्त्री०) कालस्य कर्मयोग्यसमयस्य अशुद्धिः, ६-तत्। ज्योतिषशास्त्रोक्त शुभकर्मका बाधक समय विशेष, रन्ध्र या मादाक रखका वक्त।

अशौच देखो।

कालाशोक (सं० पु०) बौद्धराज विशेष, बौद्धोंके एक राजा।

कालाशौच (सं० क्री०) कालव्याप्ति अशौचम्, मध्यप०। पिता माता प्रभृति महागुरुका मृत्यु होनेसे एक वत्सर पर्यन्त अशौच रखनेका विधय स्मृतिशास्त्रमें कथित है। उसीको कालाशौच कहते हैं। कालाशौचके समय कई कर्मोंके पालनका नियम निर्दिष्ट है।

कालासुपदाम (हिं० पु०) अवधारण मासमें उत्पन्न होनेवाला धान्यविशेष, अगहनका एक धान।

कालासुहृत् (सं० पु०) असून् प्राणान् हरति, असु-हृ-क्विप् असुहृत् प्राणनाशकः, कालश्चासौ असुहृत् चेति, कर्मधा०। १ प्राणनाशक, जान लेनेवाला। कालः भयानकः असुहृत् शत्रुः। २ भयङ्कर शत्रु, खतरनाक दुश्मन। कालस्य मृत्योः असुहृत् विनाशकः। ३ महादेव, शिव।

कालास्त्र (सं० क्री०) अद्भुतक बाणविशेष, जानसे मार डालनेवाला तीर।

कालाह्वानी (सं० स्त्री०) १ पाटला हक्ष। २ सुष्कक, मोखा।

कालाह्व (सं० पु०) १ काकतुण्डी, घुंघची। २ काकतिन्दुक, कुचलेका पेड़।

कालि (हिं० क्रि० वि०) १ कल, गये दिन। २ आगामी दिवस, आनेवाले दिन। ३ शीघ्र, जल्द।

कालिक (सं० पु०) काले वर्षाकाले चरति, काल-ठञ्, ठ इके अथवा कलति प्राप्नोति वा, कल-अच् बाहुलकात् इकन्। १ क्रौञ्चपक्षी, किसी किस्मका बगला। २ नागराज विशेष, नागोंके एक राजा। (क्री०) ३ कृष्ण चन्दन। (त्रि०) ४ समयोचित, वक्तके मुवाफिक। ५ कालसम्बन्धीय, वक्तके मुताल्लिक। ६ दीर्घकाल स्थायी, बहुत दिन चलनेवाला। इस अर्थमें 'कालिक' शब्द प्रायः समासमें लगता है। यथा मासकालिक अकालिक इत्यादि।

कालिकता (सं० स्त्री०) समय, तिथि, ऋतु, वक्त, तारीख, मौसम।

कालिकसम्बन्ध (सं० पु०) कालिकविशेषणता नाम स्वरूप सम्बन्धविशेष, कालानुयोगिक विभु भिन्न वस्तु प्रतियोगिक सम्बन्ध, वक्तका जोड़। भिन्न कालिक वस्तुद्वयके साथ उक्त सम्बन्ध नहीं लगता। किन्तु किसी नैयायिकने कालिकसम्बन्धको विभुप्रतियोगिक सम्बन्ध कहा है। विभु पदार्थ भी कालिकसम्बन्धसे कालमें हो रहता है। महाकाल और कालोपाधि समुदाय कालिकसम्बन्धमें सबका अधिकरण होता है।

कालिका (सं० स्त्री०) काली वर्णोऽस्त्यस्याः, काल-ठन् टाप्; यद्वा काल-ङीप् स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वश्च १ चण्डिका, काली। उनके नामकरण सम्बन्ध पर कालिकापुराणमें लिखा है,—"शुम्भ और निशुम्भ दैत्यके उत्पीड़नसे अत्यन्त पीड़ित हो इन्द्रादि देव हिमालय पर्वतमें गङ्गातीर्थके निकट पहुंच महामायाका स्तव करने लगे। महामायाने उनके स्तवसे सन्तुष्ट हो मातङ्गस्त्रीरूपसे वहां पहुंच कर पूछा—"तुम लोग किसकी आराधनाके लिये इस मातङ्ग आश्रममें आये हो?" देवोंके पूछने हो उनकी देहसे एक देवीमूर्तिने आविर्भूत हो कहा कि 'देव शुम्भ और निशुम्भ दैत्यके अत्याचारसे उत्पीड़ित हो उनके निधनके उद्देशसे महामायाकी आराधना करने आये हैं' वह आविर्भूत देवी प्रथम कृष्णवर्णा रहीं। उन कालके पीछे उन्होंने फिर गौरवर्ण धारण किया। किन्तु कृष्णवर्णा प्रादुर्भूत होनेसे ही वह कालिका नामसे विख्यात हुयीं। उप भयसे रक्षा करती है, इसीसे पण्डित उन्हें भय-नाशा भी कहते हैं। 'इन्होंने प्रथम कौशका नाश किया है। मस्तकमें एकमात्र जटा रहनेसे उनका नाम एकजटा भी है। कालिकामूर्त्तिका ध्यान निम्नलिखित रीतिसे किया जाता है,—

अनुसन्धान लगा उनके पिता बहुत विरक्त हो गये। सुतरां किसी गोमूर्खके साथ उस कन्याका विवाह करना एकान्त अभिप्रेत ठहरा। फिर वह चतुर्दिक् देशसे मूर्खको ढूंढ़ने लगे। किसी स्थान पर उन्होंने देखा एक व्यक्ति वृक्षमें आरोहण कर जिस शाखा पर स्वयं बैठा, उसीका मूलदेश काटता था। वह उससे बहुत सन्तुष्ट हुये और सोच गये,—'जो यह भी विवेचना नहीं कर सकता कि डाल कट जानेसे वह भी उसके साथ गिर पड़ेगा, उससे अधिक मूर्ख जगत्में कहां मिलेगा। अतएव यह उपयुक्त पात्र है।' सुतरां उन्होंने उसे कन्याके निकट ले जा कर उपस्थित किया। कन्याने उससे मौखिक प्रश्न न कर एक अङ्गुलिका संकेत दिखाया। वरने सम्भवतः उसकी अपेक्षा वीरता प्रदर्शन करनेको दो अङ्गुलि दिखा दीं। कन्याने फिर तीन अङ्गुलि देखायीं। उसके उत्तरमें वरने भी चार अङ्गुलि देखायी थीं। तब कन्याने उसे पांच अङ्गुलि देखायीं। वरने उन्हें प्रहारका उद्देश समझ कन्याको मुष्टिका संकेत किया था। वरका उद्देश्य कुछ भी हो सकता था। किन्तु कन्याने वह सङ्केत देख अपनेको पराजित मान लिया। फिर अति आनन्दसे पिताने उसको कन्या सौंप दी। विवाहके पीछे वासर-गृहमें स्वामी और स्त्रीने आलाप आरम्भ किया। स्वामीके मुखसे ग्राम्यशब्द सुन वह चमत्कृत हुयीं। फिर उन्होंने उसे अत्यन्त तिरस्कारके साथ गृहसे निकाला था। मूर्ख कालिदास स्त्रीके निकट उस प्रकार तिरस्कृत हो प्राणत्यागकी इच्छासे सरस्वतीकुण्डमें कूद पड़े। किन्तु उनका प्राण छूटा न था। मूर्ख कालिदास कवि कालिदास बन गये। सरस्वतीकुण्डके माहात्म्य अनुसार अवगाहन मात्रसे ही सरस्वतीने समीपस्थ हो वर दिया था। कालिदास वर पाते ही फिर स्त्रीके निकट जा पहुंचे। उन्होंने स्त्रीको गृहका अर्गल बन्द करते देख द्वार खोलनेके लिये अनुरोध किया। स्त्री स्वर सुनते ही स्वामीका प्रत्यागमन समझ गयी थीं। सुतरां उसने सहज ही द्वार न खोल प्रत्यागमनका कारण पूछा। कालिदासने उस पर उत्तर दिया,—"अस्ति कश्चित् वाग्विशेषः" अर्थात् उन्हें कुछ खास तौर पर कहना है। स्त्रीने फिर पूछा—'क्या विशेष कथन है'। कालिदासने द्वारदेश पर खड़े ही खड़े अस्ति, कश्चित् और वाग्विशेषः तीनों पदोंसे एक एक पद पहले बोल तीन काव्य श्लोकों सुना दिये। 'अस्ति' पदके अनुसार 'अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा' प्रथम श्लोकसे आरम्भ कर सातवां सर्ग कुमारसम्भव, 'कश्चित्' पदके अनुसार 'कश्चित् कान्ता-विरहगुरुणा स्वाधिकारप्रमत्तः' प्रथम श्लोकसे आरम्भ कर मेघदूत और 'वाग्विशेषः' पदका वाक् शब्द ग्रहण पूर्वक 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ' प्रथम श्लोकसे आरम्भ कर रघुवंश उन्होंने प्रणयन किया। उन्होंने रघुवंश और कुमारसम्भव दो महाकाव्य, मेघदूत नाम खण्ड काव्य, अभिज्ञान शकुन्तला, विक्रमोर्वशी, मालविकाग्निमित्र तीन नाटक और शृङ्गारतिलक, श्रुतबोध, पुष्पबाण-विलास, ऋतुसंहार प्रभृति ग्रन्थ बनाये हैं।

आजकल विशेष प्रमाण द्वारा प्रतिपन्न हुआ है—विक्रमादित्यके सभास्थ जिन नवरत्नोंका नामोल्लेख मिलता, वह सब एक ही समयमें न रहे। शिलालिपि और प्राचीन ग्रन्थसे भी एकाधिक विक्रमादित्यका नाम निकला है। किन्तु यह निश्चय नहीं—कौनसे विक्रमादित्यकी सभामें कालिदास थे? फिर उक्त ग्रन्थोंका छन्दबन्धन, भाषा और कवितानैपुण्य देखते भी प्रथम छह ग्रन्थोंको छोड़ अपर पुस्तक महाकवि कालिदासके हस्तप्रसूत मालूम नहीं पड़ते। इन्हीं कारणोंसे केवल प्रवाद पर निर्भर कर कालिदासकी जीवनी लिखी जा नहीं सकती।

कालिदासकी जीवनी लिखना और अन्धकार समुद्रमें कूद पड़ना एक बात है। उनके सम्बन्धमें विभिन्न लोगोंका विभिन्न मत मिलता है।

बल्लालविरचित भोजप्रबन्धके प्रमाणानुसार कालिदास उज्जयिनीनिवासी भोजराजके सभासद थे। उक्त भोजराजका राजत्वकाल ११०० ई० ठहरा है। (Journal Asiatique, Sept. 1844. p. 250.)

भोजप्रबन्धमें कालिदासके समसामयिक कई पण्डितोंका नाम मिलता है। यथा—कर्पूर, कलिङ्ग, कामदेव, कोकिल, गोपालदेव, तारेन्द्र, दामोदर,

"चतुर्भुजां कृष्णवर्णां मुण्डमालाविभूषिताम्।
खड्गं दक्षिणपाणिभ्यां बिभ्रतीन्दीवरं तथा॥
कर्त्रीं च खर्परं चैव क्रमाद्वामेन बिभ्रतीम्।
द्यां लिखन्तीं जटामेकां बिभ्रतीं शिरसा स्वयम्॥
मुण्डमालाधरां शीर्षे ग्रीवायामपि सर्वदा।
वक्षसा नागहारन्तु बिभ्रतीं रक्तलोचनाम्॥
कृष्णवस्त्रधरां कट्यां व्याघ्राजिनसमन्विताम्॥
वामपादं शवहृदि संस्थाप्य दक्षिणं पदम्।
विन्यस्य सिंहपृष्ठे तु लेलिहानां शवं स्वयम्॥
साट्टहासमहाघोररावयुक्तातिभीषणा।
चिन्तयीतादृशा सततं भक्तिमद्भिः सुधीभिः॥"

भक्तिमान् और सुधीवृन्द लोगों द्वारा कृष्णवर्ण, चतुर्भुजा, दक्षिण हस्तद्वयके मध्य ऊर्ध्व हस्तमें खड्ग एवं अधोहस्तमें पद्म तथा वामहस्तद्वयके मध्य ऊर्ध्व हस्तमें कर्त्री (दांता) एवं अधोहस्तमें खर्परधारिणी गगनस्पर्शी एक जटायुक्ता, मस्तक तथा कण्ठदेशमें मुण्डमाला एवं वक्षःस्थलमें सर्पहारभूषिता, आरक्तनयना, कृष्णवस्त्रपरिहिता, कटितटमें व्याघ्रचर्मयुक्ता, शवके हृदयपर वाम पद एवं सिंहपृष्ठपर दक्षिण पद-विन्यासपूर्वक अवस्थिता, आस्वदनमें आसक्ता, अट्टहासकारिणी और अतिभयङ्करा उपतारा सतत चिन्तत्र हैं।

कालिका देवीकी आठ योगिनी होती हैं। उनके नाम हैं,—महाकाली, रुद्राणी, उग्रा, भीमा, घोरा, भ्रामरी, महारात्रि और भैरवी। कालिकाके पूजाकाल उक्त अष्टयोगिनीकी भी पूजा करना पड़ती है।

(कालिकापुराण)

२ कृष्णता, स्याही, कालापन। ३ वृश्चिकपत्र, बिछुआकी पत्ती। ४ क्रमशः देयवस्तुका मूल्य, किस्तबन्दी। ५ धूसरी, किसरी। ६ नूतनमेघ, घटा। ७ पटोलशाखा, परवलकी डाल। ८ रोमावली, रूआं। ९ जटामांसी। १० स्त्रीजाति काक, मादा कौवा। ११ शृगाली, मादा गीदड़। १२ मेघश्रेणी, बादलकी कतार। १३ स्वर्णदोष, सोनेका ऐब। १४ दुग्धकीट, दूधका कीड़ा। १५ मसी, स्याही। १६ काकोली नामक औषधविशेष। १७ श्यामापक्षी। १८ मद्य, शराब। १९ कुज्झटिका, कुहरा। २० हरीतकीविशेष, एक हर्रे। वह हिमालय पर्वत पर उपजती और तीन शिरा रखती है। गन्धयोग्य कार्यमें उक्त हरीतकी ही प्रशस्त है। २१ मासिक वृद्धि, माहवार सूद। २२ वयोनिरूपक वाजिदन्तस्थ रेखाविशेष, उम्र बतलानेवाली घोड़ेकी दांतकी अगली रेखा। वह वक्र और कृष्ण होती है। क्रमानुसार षष्ठ, सप्तम या अष्टम अब्दमें उक्त रेखा निकलती है। २३ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। २४ यकृत्खण्ड, गुरदेका टुकड़ा। २५ कृष्णजीरक, काला जीरा। २६ वृश्चिकपत्र वृक्ष, बिछुआका पौधा। २७ एला, इलायची। २८ सौराष्ट्रमृत्तिका। २९ कर्कटीलता, ककड़ीकी बेल। ३० कालाशाक, एक काली सब्जी। ३१ नीलीवृक्ष, नीलका पेड़। ३२ कर्णस्रोतविशेष, कानकी एक नस। ३३ काली तुलसी। ३४ दक्षकन्या। ३५ कीट, खटमल। ३६ वृश्चिक, बिच्छू। ३७ चारवर्षकी कुमारी। ३८ योगिनीविशेष। ३९ वैश्वानरकी एक कन्या। ४० जैनमतानुसार चौथे अर्हतकी एक दासी। ४१ नदीविशेष, एक दरया। त्रिरात्रि उपवासपूर्वक उक्त नदीमें स्नान करनेसे समुदाय पाप विनष्ट होते हैं,—

"कालिकासङ्गमे स्नात्वा कौशिक्यारुणयोर्यतः।
त्रिरात्रोपोषितो विद्वान् सर्वपापैः प्रमुच्यते॥" (भारत, वन, ८४ अ)

कालिकाख्य (सं॰ पु॰) १ दानवविशेष, एक राक्षस। २ कृष्णवस्तुविशेष, काली आंखवाला।

कालिकापुराण (सं॰ क्ली॰) कालिकाया माहात्म्यादिप्रतिपादकं पुराणम्, मध्यप॰। एक उपपुराण। इसमें कालिका देवीका माहात्म्यादि वर्णित है।

कालिकाश्रम (सं॰ क्ली॰) पर्वतविशेष, एक पहाड़।

कालिकाव्रत (सं॰ क्ली॰) कालिकायाः प्रीत्यर्थं व्रतम्, मध्यप॰। एक व्रत। अमावस्या तिथिको इसका अनुष्ठान करना पड़ता है। स्त्रियां इसको ग्रहण करती हैं। भविष्योत्तरपुराणमें उक्त व्रतकी उत्पत्ति-कथा और अनुष्ठान प्रणाली लिखी है। यथा—"किसी समय देवराज इन्द्र सभास्थलमें अप्सरोगणका नृत्य देखते थे। उसी समय अन्यान्य देव नृत्यदर्शनसे सन्तुष्ट हो पुष्पवृष्टि करने लगे। इन्द्रने अपने निकटका एक पारिजात पुष्प उठा लिया और सूंघ कर किसी

धनपाल, प्रसन्नराघव-ग्रन्थकार, जयदेव, बाणभट्ट, भवभूति, भास्कर, मयूर, मल्लिनाथ, महेश्वर, माघ, मुचुकुन्द, रामेश्वर प्रभृति। वेदान्ताचार्यकृत विश्वगुणादर्श पढ़नेसे समझते हैं—किसी समय कालिदास, श्रीहर्ष और भवभूति भोजराजकी सभामें वर्तमान थे। किन्तु विशेष प्रमाण मिले हैं कि उक्त सकल पण्डित कालिदासके समकालीन न थे।

जयदेव, बाणभट्ट, भवभूति प्रभृति देखो।

बाणभट्टका हर्षचरित पढ़नेसे हो समझ सकते हैं कि कालिदास बाण और श्रीहर्षसे बहुपूर्व विद्यमान थे। ज्योतिर्विदाभरण नामक एक ज्योतिषग्रन्थ कालिदासका रचित माना जाता है। उसमें लिखा है,—"धन्वन्तरि, क्षपणक, अमरसिंह, शङ्कु, वेतालभट्ट, घटकर्पर, कालिदास, सुविख्यात वराहमिहिर और वररुचि विक्रमके नवरत्नोंमें हैं।* विक्रमने ८५ शक नृपतियोंको मार कलियुगमें अपना अब्द चलाया। हमने (कालिदास) ३०६८ कलि शताब्दके वैशाख मासमें इस ग्रन्थकी रचना आरम्भ कर कार्तिकमासमें सम्पूर्ण किया।" फिर २०वें अध्यायके ४६वें श्लोकमें कहा है,—"आज भी काम्बोज, गौड़, आन्ध्र, मालव और सौराष्ट्र देशके लोग विख्यात वदान्यवर विक्रमका गुण गाते हैं।"

पूर्वकथित भोजप्रबन्ध और ज्योतिर्विदाभरणको कभी प्रामाणिक ग्रन्थ मान नहीं सकते। कारण १, इसिपूर्व लिख चुके हैं कि नवरत्न विभिन्न समयके लोग थे। २, रचनाप्रणाली आलोचना करनेसे ज्योतिर्विदाभरण कालिदासका करनिःसृत समझ नहीं पड़ता। ३, ज्योतिर्विदाभरणको शेषोक्त वर्णना पढ़नेसे अनुमान करते हैं कि उसके रचित होनेसे बहु पूर्व विक्रमादित्य विद्यमान थे। फिर ज्योतिर्विदाभरणके समय विक्रमाब्द और विक्रमसम्बन्धीय प्रवाद भी चारो ओर फैला था।

जर्मन पण्डित लासनके मतानुसार कालिदास ई० द्वितीय शताब्दको समुद्रगुप्तकी सभामें विद्यमान थे।* विलफोर्ड और प्रिन्सप साहबने लिखा है कि कालिदास प्रायः १४०० वर्ष पूर्व वर्तमान रहे। जर्मन पण्डित वेबरने ई० २यसे ४र्थ शताब्दके मध्य कालिदासका आविर्भावकाल निर्णय किया है।† पीछे जेकोबी साहबने कालिदासका ज्योतिषग्रन्थ पकड़ ठहराया है कि कालिदासको ग्रीक ज्योतिषशास्त्रका ज्ञान था। उसके अनुसार वह ३५० ई० से पहलेके ‡ लोग हो नहीं सकते। ज्योतिषी केर्ण, भाऊदाजी, मोक्षमूलर प्रभृतिके मतमें—कालिदासके आविर्भावका काल ई० षष्ठ शताब्द था ¶।

हमारे वङ्गदेशीय पुरातत्त्वानुसन्धित्सुगणमें अक्षयकुमार दत्तके मतानुसार ई० ४र्थ शताब्दके मध्यभागके पीछे षष्ठ शताब्दके शेषभागके पहले और ऐतिहासिक रहस्यसमर्पीनाके मतमें ई० षष्ठ शताब्दको कालिदास विद्यमान थे। प्रधानतः देखते हैं कि अधिकांश पुराविदोंके मतमें कालिदास ई० षष्ठ शताब्दके लोग रहे। उनकी युक्ति यह है,—

उज्जयिनीराज हर्ष विक्रमादित्यने कवि मातृगुप्तके प्रति सन्तुष्ट हो उन्हें काश्मीर राज्य प्रदान किया था। फिर राजा विक्रमादित्य द्वारा कालिदासको अर्ध राज्य दिया जानेका भी प्रवाद है। कल्हण पण्डितने राजतरङ्गिणीमें राजा मातृगुप्तको कवि बताया है। हर्षचरितके प्रारम्भमें प्रवरसेन और कालिदासका उल्लेख है। प्रवरसेनने वितस्ता नदी पर एक सुवृहत् सेतु निर्माण कराया था। कालिदासने उसी सेतुके उपलक्षमें "सेतुकाव्य" रचना किया। सेतुप्रबन्धके टीकाकार रामदासके भी मतमें कालिदासने सेतुबन्ध

* १००५ विक्रम संवत्‌की बोधगयाके अमरदेवकी शिलालिपिमें उक्त नवरत्नका उल्लेख है।

* Indische Alterthumskunde, II. p. 457, 1158-60.

† Weber's Sanskrit Literature, p. 201.

‡ Monatsberichte der Koniglick Preussischen Akademie der Wissenschaften zu Berlin, 1873, p. 554-558.

¶ Kern's Brihat Sanhitā, p. 20, Bhāu Daji in the Journal of the Bombay Branch Roy. As. Soc, 1861, p. 19-30, 207-200; Max Müller's India what can it teach us, p. 320

ब्राह्मणको दे दिया। इसप्रकार इन्द्रके निकट अपमान हो ब्राह्मणने इन्हें अभिशाप दिया था,—'तुम विद्वान् हो कर व्याधके घरमें रहोगे।' तदनुसार इन्द्र भार्याके सहित किसी व्याधके घरमें रहने लगे। इधर शचीने इन्द्रका कोई अनुसन्धान न पा आहार निद्राको छोड़ा था। उन्होंने देवोंसे उनका पता पूछा। देवोंने ध्यानके बल इन्द्रको शापोद्धार अवस्थित देख शचीसे उनकी मुक्तिके लिये उस शापदाता ब्राह्मणको सेवा करनेको कहा था। शचीने ययाशक्ति परिचर्या द्वारा ब्राह्मणको परितुष्ट किया। उन्होंने इन्द्रका अपराध मार्जना कर उनकी मुक्तिके लिये शचीसे कालिका व्रतका अनुष्ठान करनेको कहा। इसी प्रकार कालिकाव्रतकी उत्पत्ति हुयी। इसके अनुष्ठानको प्रणाली नीचे लिखी है—शुद्ध कालकी किसी कृष्ण-चतुर्दशीको सङ्कल्प कर दूसरे दिन अमावस्याको स्वयं रात्रिभोजन, वाम हस्त द्वारा भोजन एवं मत्स्य, पिष्टक, रक्तशाक और अन्य भोजन परित्याग कर १२ सधवा स्त्रियोंको खिलाना चाहिये। इसीप्रकार कुछ दिन व्रत आचरण करके किसी शुभ नक्षत्रयुक्त अमावस्याको सन्ध्या प्रारम्भमें कदलीकाण्डसे गृह बना उसमें कालिका-मूर्ति स्थापन की जाती है। फिर अपराह्न, सन्ध्या अथवा रात्रिकालको यथाविधि पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, गन्धपुष्प, धूप, दीप, तथा विविध नैवेद्य प्रभृति उपचारसे देवीको पूजा होती है। पूजा समाप्त होनेपर पिष्टक, मिष्टान्न, व्यञ्जन प्रभृति बलि किसी बालकके मध्य देना चाहिये। इसप्रकार कालिकाव्रत करनेसे सत्वर कार्य सिद्धि होती है।"

कालिकामुख (सं॰ पु॰) [illegible] यक्ष, बहुव्री॰। एक राक्षस [illegible]

कालिकाराम (सं॰ पु॰) [illegible]

कालिकाश्रम (सं॰ स्त्री॰) [illegible] ह्रस्व। विपाशा नदीतीरस्थ एक [illegible] लिखा है कि उस तीर्थमें स्नान [illegible] जितक्रोध रहने पर ब्रह्मचर्यादि गुण [illegible]

''कालिकाश्रममासाद्य त्रिरात्रोपोषितो नरः। [illegible]
[illegible] (भारत, वन॰ [illegible]

कालिकास्थि (सं॰ स्त्री॰) नेत्रास्थिविशेष, आँखकी एक हड्डी।

कालिकेय (सं॰ पु॰) कोई असुर जाति। यह दक्षकी कन्या कालिकासे उत्पन्न हैं।

कालिख (हिं॰ स्त्री॰) कालिमा, स्याही, कालौंछ। यह एक प्रकारकी काली बुकनी रहती है, जो धुएँके लगनेसे वस्तुओंमें लगती है।

कालिगञ्ज—१ बङ्गदेशीय यशोहर जिलेके खुलना विभागका एक नगर ग्राम। यह अक्षा॰ २२° २०' १५" उ॰ और देशा॰ ८८° ४' पू॰में यमुना एवं कालिन्दीके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है। लोकसंख्या साढ़े पांच हजारसे अधिक है। यहां अच्छा बाजार लगता और खूब वाणिज्य चलता है। जानवरोंके सींगसे कड़ी बनानेका एक कारखाना भी है। २ आसामके रंगपुर जिलेका एक ग्राम। यह ब्रह्मपुत्रके तीर अवस्थित है। आसाम जानेवाले स्टीमर यहीं लगते हैं।

कालिङ्ग (सं॰ क्ली॰) कम् जलम् अलिङ्गति, कलिङ्ग-अण्। अथवा कालिङ्गे यायते जन्। १ तरम्बुजविशेष, किसी किस्मका तरबूज। इसका संस्कृत पर्याय—कालिन्दक, कर्कटीबीज और फलवर्तुल है। यह शीतल, मलरोधक, मधुररस, पाकमें मधुर, गुरु, विष्टम्भि, अभिष्यन्दकारक, कफ एवं वायुवर्धक और दृष्टिशक्ति, शुक्र तथा पित्तनाशक होता है। पक्वफल पित्तवृद्धिकारक, उष्ण, क्षार और कफ एवं वायुनाशक है। यह तृष्णा और रक्तस्रावक होता है। ([illegible]) (पु॰) २ भूमिकर्कोट, एक कुम्हड़ा। ३ हस्ती, हाथी। ४ सर्प, सांप। ५ लौहविशेष, एक लोहा। ६ कुटज, एक पेड़। ७ इन्द्रयव। (त्रि॰) ८ कलिङ्गदेशजात, कलिङ्गमें पैदा हुआ। ९ कलिङ्गदेशके राजा।

[illegible] कलिङ्गदेशनृपः।
[illegible] (पद्म॰ [illegible])

लिखा था। राजतरङ्गिणीके मतानुसार मातृगुप्त और प्रवरसेन समकालीन थे। मातृगुप्त प्रवरसेनको काश्मीर राज्य दे काशीवासी हुये। राघवभट्टने शकुन्तलाकी टीकामें मातृगुप्ताचार्यके कतिपय अलङ्कार-श्लोक उद्धृत किये हैं। वह पढ़नेसे प्रधान कविके बनाये समझ पड़ते और कालिदासके लेखनी-प्रसूत कहनेमें भी अच्छे लगते हैं। प्रवरसेन तोरमाणके पुत्र थे। वज्रेन्द्र-की कन्या अञ्जनाके गर्भसे उनका जन्म हुवा। पहले तोरमाणके भ्राता काश्मीरमें राजत्व करते थे। (उन्होंने तोरमाणको बन्दी बना दिया।) हिरण्य और तोर-माणके मरने पीछे प्रवरसेनको प्रथम अधिकार मिला न था। इस बात पर झगड़ा लगा—कौन राज्यका प्रकृत उत्तराधिकारी हो। उस समय उज्जयिनी-नाथ विक्रमादित्य (अपर नाम हर्ष) भारतवर्षके एकच्छत्र चक्रवर्ती थे। उन्होंने मातृगुप्तको काश्मीरका राज्य प्रदान किया। उक्त मातृगुप्त ही कालिदास थे। * मोक्षमूलरके मतमें तोरमाण ५०० ई० और प्रवरसेन ५५० ई० को विद्यमान रहे। † सुतरां कालिदास और विक्रमादित्यका विद्यमान रहना उसी समयके मध्य सम्भव था।

नहीं समझते उक्त मतोंमें कौन समीचीन है। मातृगुप्त और कालिदास दोनोंको एक ही व्यक्ति मान नहीं सकते। प्रथमतः किसी प्राचीन पुस्तकमें मातृगुप्त और कालिदास अभिन्न व्यक्ति नहीं लिखे गये हैं। राजतरङ्गिणीमें कवि मातृगुप्तके सम्बन्ध पर अनेक कथा लिखी है। किन्तु कल्हण पण्डितने उन्हें एक-बार भी कालिदास नहीं लिखा। क्षेमेन्द्र-विरचित औचित्यविचारचर्चा, सुभाषितावली और सूक्तिकर्णा-मृत ग्रन्थमें कालिदास तथा मातृगुप्तके भिन्न भिन्न श्लोक उद्धृत हुये हैं। उक्त पुस्तकसमूहसे भी मातृगुप्त और कालिदास परस्पर भिन्न व्यक्ति समझ पड़ते हैं।

* Dr. Bhau Daji, Journal of the Royal Asiatic Society of Bombay, Vol. VIII. p. 244 50.

† Max Müller's India, what can it teach us, p. 316. किन्तु शिलालिपि द्वारा तोरमाण ५०० ई० से कुछ पूर्ववर्ती और उनके पुत्र मिहिरकुल ५१५-५४० ई० के पूर्ववर्ती समझ पड़ते हैं। (Fleet's Inscriptionum Indicarum, Vol. III, p. 10-11.)

कर्पूरमञ्जरीप्रणेता वासुदेवने अपने ग्रन्थमें मातृ-गुप्तको अलङ्कार-रचयिता बताया है। सुन्दर मिश्रका नाट्यप्रदीप पढ़नेसे समझ सकते हैं कि मातृगुप्तने भरत-प्रणीत नाट्यशास्त्रकी विवृति बनायी थी। उक्त प्रमाणोंसे मातृगुप्त नामक एक स्वतन्त्र कविका होना स्पष्ट ही मालूम पड़ता है। अब देखना चाहिये—कालिदास, प्रवरसेन और हर्षविक्रमादित्यके सम-सामयिक थे या नहीं।

डाक्टर भाउदाजी प्रभृति पुराविदोंने प्रधानतः हर्षचरितमें प्रवरसेन और कालिदासका उल्लेख देख उभयको समसामयिक ठहराया है। श्लोक यही हैं,—

"कीर्त्तिः प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्ज्वला।
सागरस्य परं पारं कपिसेनेव सेतुना ॥ १५ ॥
सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः।
सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैरिव ॥ १६ ॥
निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।
प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते ॥ १७ ॥"

(किसी किसी मुद्रित पुस्तकमें "निर्गतसुरङ्गस्य कालिदासस्य सूक्तिषु" पाठ है।)

उपरि उक्त श्लोक द्वारा इसी विषयका परिचय मिलता कि प्रवरसेन और कालिदास दोनों प्रसिद्ध कवि थे। किन्तु स्पष्ट मालूम नहीं पड़ता—उभय समकालीन थे या नहीं। राजा रामदास विरचित रामसेतुप्रदीप नामक "सेतुबन्ध" की व्याख्याकी प्रस्तावनामें लिखा है—

"इह तावन्महाराजप्रवरसेननिमित्तं महाराजाधिराजविक्रमादित्येनाज्ञप्तो निखिलकविचक्रचूडामणिः कालिदासमहाशयः सेतुबन्धप्रबन्धं चिकीर्षुः।"

राजा प्रवरसेनके निमित्त विक्रमादित्यकी आज्ञासे कालिदासने सेतुबन्ध नामक प्रबन्ध रचना किया।

राजतरङ्गिणीमें लिखा है कि प्रवरसेनको काश्मीर-का राज्य मिलनेसे पहले ही हर्षविक्रमादित्यका मृत्यु हुवा था। † (राजतरङ्गिणी ३। १८२—१९०)

सुतरां विक्रमादित्यके आदेशसे प्रवरसेनके निमित्त कालिदास द्वारा प्राकृतभाषामें "सेतुबन्ध" का लिखा

* भाउदाजी, मोक्षमूलर प्रभृति इस श्लोकको छोड़ गये हैं।

† "विक्रान्तो सं शिरसा स कम्पस भूपतिः।
विक्रमादित्यमरणेन कालधर्ममुपागतम् ॥"
(राजतरङ्गिणी ३। १९०)

कालिङ्गिका (सं० स्त्री०) कालिङ्ग-ङीप् संज्ञायां कन्-टाप् अत इत्वम्। त्रिवृत, निसोत।

कालिङ्गी (सं० स्त्री०) कालिङ्ग-ङीप्। १ राजककँटी, किसी प्रकारकी ककड़ी। २ कलिङ्गदेशीया स्त्री, कलिङ्ग मुल्ककी औरत। ३ एक नदी।

कालिज (अं० पु० College) १ विद्यालय, पाठशाला, बड़ा मदरसा। इसमें उच्च शिक्षा दी जाती है।

कालिज (हिं० पु०) पक्षिभेद, एक चकोर। वह शिमलेमें होता है।

कालिञ्जर (कालञ्जर)—युक्तप्रदेशके बांदा जिलेका (बुन्देलखण्डके अन्तर्गत) एक नगर। यह अक्षा० २५° १′ उ० तथा देशा० ८०° ३२′ ३५″ पू० में बांदा नगरसे १६ कोस दक्षिण विन्ध्याचलके अन्तर्गत एक शाखा पर्वत पर अवस्थित है। पर्वतका दूसरा भी उच्च स्तर है। निम्नस्तरमें उक्त नगर स्थापित है। कालिञ्जर आध कोस विस्तृत और चारों ओर प्राचीर-वेष्टित है। नगर भूमिसे ५३० हाथ ऊंचा होगा। लोकसंख्या ४ हजारसे कम है। तन्मध्य ब्राह्मण कुछ अधिक हैं, अच्छे लोग भी कम नहीं दीख पड़ते। वहां पुलिसका थाना, डाक बंगला, बाजार, विद्यालय और औषधालय विद्यमान है।

कालिञ्जर अति पुराकालसे महातीर्थ माना जाता है। रामायण (उत्तरका० ५८ स०), महाभारत (वन० ८५ अ०) हरिवंश (२१ अ०) और गरुड़, ब्रह्माण्ड, कूर्म्म, पद्म प्रभृति पुराणोंमें उक्त महातीर्थका उल्लेख मिलता है।

पद्मपुराणीय कालञ्जर-माहात्म्यमें लिखा है,—

"अर्धंयोजनविस्तीर्णं तत् क्षेत्रं मम मन्दिरम्।
कालञ्जरेति विख्यातं मुक्तिदं शिवसन्निधौ॥
गङ्गाया दक्षिणे भागे कालञ्जर इति श्रुतः।
सर्वतीर्थफलं तत्र पुण्यञ्चैव ह्यनन्तकम्॥
कालञ्जर समं क्षेत्रं नास्ति ब्रह्माण्डगोलके॥" (१म अ०)

दो कोस विस्तृत वह क्षेत्र ही हमारा (शिवका) मन्दिर है। शिवसन्निधिप्रयुक्त वही कालञ्जर मुक्तिदायक कहाता है। गङ्गाके दक्षिण भागमें कालञ्जर-क्षेत्र अवस्थित है। कालञ्जरके समान पवित्र क्षेत्र भूमण्डलमें दूसरा नहीं। वहां सकल तीर्थोंका फल और अनन्त पुण्य मिलता है।

मुसलमान इतिहास लेखक फरिस्तेके कथनानुसार ई० ७वें शताब्दको केदार नामक किसी व्यक्तिने कालिञ्जर स्थापन किया था। मुसलमानोंके इतिहासमें लिखा कि गजनी आक्रमण करनेको जाते समय कालिञ्जरके राजाने लाहोरके राजा जयपालको साहाय्य दिया। १००८ ई० को सुलतान गजनवीने जब ४थे वार भारत आक्रमण किया, तब आनन्दपालके साथ पेशावरक्षेत्रमें एक युद्ध हुवा। उसमें कालिञ्जरके राजा आनन्दपालकी ओरसे लड़े थे। १०२१ ई०को कालिञ्जरराजने कन्नौजके राजाको पराजित किया। १०२२ ई०को महमूद गजनवी कालिञ्जर पर चढ़े थे, किन्तु अन्तको सन्धि करके लौट गये। १२०२ ई०को महम्मदगोरीके प्रतिनिधि कुतब-उद्दीनने कालिञ्जर जीत वहां मसजिद आदिको निर्माण कराया। अल्प दिनके मध्य ही वह फिर हिन्दुवोंके अधिकारमें चला गया। १२५१ ई०को मालिक नसरत-उद्दीन् मुहम्मदने उसे जय किया था। किन्तु प्रस्तरलिपिके प्रमाणसे मालूम पड़ता है कि उसके पीछे फिर कालिञ्जर हिन्दुवोंके हाथ लगा। १५३० ई० को सम्राट् हुमायूनने कालिञ्जर आक्रमण कर १२ वत्सर काल घेरा डाला था। हुमायूनके भारतसे चले जाने पर १५४५ ई० को सम्राट् शेरशाहने फिर कालिञ्जर अवरोध किया। २२ वीं मईको शेरशाहको तोपका गोला पहाड़से लग वापस आ उनके बारुदखानेमें गिरा था। उससे एक अग्निकाण्ड उपस्थित हुवा। शेरशाह पास ही थे। वह उसी अग्निकाण्डमें जल गये। उसीसे उनका मृत्यु भी हुवा। मृत्युयन्त्रणा भोग करते ही उनको संवाद मिला कि दुर्ग मुसलमानोंके हाथ लगा था। उन्होंने ईश्वरको धन्यवाद दिया और उसी समय उनका प्राणवायु निकल गया। २५वीं मईको शेरखानके पुत्र जलालखान् नवाविजत कालिञ्जरमें पितृपद पर अभिषिक्त हुये। १५७० ई० को वह एक स्वतन्त्र सरकारके अधीन किया गया। उसके पीछे कालिञ्जर बीरबल राजाको जागीरकी भांति अर्पित हुवा। कुछ दिन पीछे उक्त स्थान बुन्देलोंके हाथ लगा था। बहुत दिन बुन्देलोंका वहां अधिकार रहा।

जाना सम्भवपर नहीं। रामदास ई० षोड़श शताब्दके लोग थे। रामदास देखो। उनके पूर्ववर्ती कुलनाथने अपने विरचित रावणवधकी* टीकाकी सूचनामें लिखा है,—

"श्रीमत्प्रवरसेनकृतं प्रणम्य, देवीं प्रसाद च गिरं कुलनाथनामा।
व्याख्यायते प्रवरसेनकृतस्य सूक्तं सन्दे(?)...॥"

इस स्थानमें कुलनाथने राजा प्रवरसेनको ही 'सेतुबन्ध' रचयिता लिखा है।

औचित्यविचारचर्चा, सूक्तिकर्णामृत प्रभृति ग्रन्थ पढ़नेसे समझते हैं कि प्रवरसेन एक प्रसिद्ध कवि थे। हर्षचरितके दो श्लोक मनोनिवेशपूर्वक आलोचना करनेसे बोध होता कि बाणभट्टसे पूर्व राजा प्रवरसेन 'सेतुकाव्य' और कालिदासने काव्य तथा नाटककी रचनासे प्रसिद्धि पायी थी।

अब स्थिर हो गया कि मातृगुप्त और कालिदास विभिन्न व्यक्ति थे। कालिदासने सेतुबन्ध बनाया न था। इस पक्षमें भी कोई विशेष प्रमाण नहीं कि वह प्रवरसेन अथवा हर्षविक्रमादित्यके समकालीन थे। प्रवरसेन और विक्रमादित्य देखो।

फिर कालिदास किस समय विद्यमान थे? बाणभट्ट, वाक्पति, अलङ्कारशास्त्रप्रणेता श्रीहर्ष, क्षेमेन्द्र, वामन, जयदेव प्रभृति अनेक प्राचीन कवियोंने कालिदासका नामोल्लेख किया है। ५५६ शकको प्रदत्त चौलुक्यराज पुलिकेशीके ताम्रशासनमें भी कालिदास और भारविका नाम मिलता है,—

"येनायोजि नवेश्मस्थिरमर्थविधौ विवेकिना जिनवेश्म।
स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः॥"

सुप्रसिद्ध कुमारिलभट्टने तत्कृत तन्त्रवार्तिकमें कालिदासके शकुन्तलावर्णित "सतां हि सन्देहपदेषु" वचनको उद्धृत किया है।†

एतद्भिन्न भोटदेशीय "तेंगुर" ग्रन्थमें कालिदासका नाम और यव तथा वालिद्वीपकी कविभाषामें रघुवंश तथा कुमारसम्भवका अनुवाद देख पड़ता है। पाश्चात्य पण्डितोंके मतमें हिन्दुओंने ५०० ई० को यवद्वीप जा उपनिवेश किया था। अतएव यह असम्भव नहीं मालूम पड़ता कि हिन्दुओंके यवद्वीप जानेसे पहले कालिदास विद्यमान थे।

किसी किसी पाश्चात्य और देशीय पुराविद्के मतमें कालिदासके ग्रन्थमें होराशास्त्रीय कथा और उक्त शास्त्रके 'ग्रीक शब्द'का उल्लेख है। ग्रीकोंका होराशास्त्र ई० तृतीय शताब्दको सम्पूर्ण हुआ। अतएव उक्त शताब्दके पीछे भारतवासियोंने उक्त शास्त्र ग्रहण किया होगा।

जिस शास्त्रमें जातक, यात्रिक और विवाह-लग्नादि निरूपित हुआ, वराहमिहिरने उसको ही 'होराशास्त्र' कहा है। प्राचीन ग्रन्थमें 'होरा' शब्द न देख पड़ते भी उक्त शास्त्रका प्रतिपाद्य कितना ही मूल विषय रामायण, महाभारतादि अति-प्राचीन ग्रन्थमें विवृत है। ज्योतिष, होरा, जातक प्रभृति शब्द देखो। सुतरां यह अस्वीकार किया जा नहीं सकता कि होराशास्त्रका प्रतिपाद्य मूल तत्त्व ग्रीक होराशास्त्र बननेसे बहुत पहले भारतवासी समझते थे।

वराहमिहिरने यवनाचार्योंके ग्रन्थसे होराशास्त्रीय कितना ही विषय संग्रह किया था। वराहमिहिर देखो। इसी यवनाचार्य वा यवनेश्वरप्रणीत 'षट्कवर्गविन्दुफल' 'ताजिक शास्त्र', 'यवनचूड़ामणि', 'सोमराजजातक', 'यवनसार', 'यवनहोरा', 'रमलामृत', 'रमलचन्द्रिका', 'वृद्धयवनजातक', 'स्त्रीजातक' प्रभृति कई संस्कृत ग्रन्थ मिले हैं। वराहमिहिरने (बृहज्जातकमें) भट्टोत्पल, केशवार्क एवं मार्तण्डचिन्तामणिटीकामें विश्वनाथने यवनाचार्यके संस्कृत वचन उद्धृत किये हैं। एतद्भिन्न 'रोमकसिद्धान्त' नामक ज्योतिःशास्त्र संस्कृत भाषामें रचित प्राप्त होता है। शाकल्य-संहिता, ज्ञानरत्न, ज्ञानभास्कर प्रभृति ग्रन्थमें और वराहमिहिर प्रभृति ज्योतिर्विदोंके बनाये पुस्तकमें रोमकाचार्यके संस्कृत वचन उद्धृत हुये हैं।

उपरि उक्त प्रमाण द्वारा बोध होता भारतवर्षीय ज्योतिर्विदोंने होराशास्त्रके किसी किसी विषयमें संस्कृत भाषामें लिखित यवन एवं रोमकाचार्यके ग्रन्थसे-

* सेतुबन्धका अपर नाम रावणवध वा दशमुखवधकाव्य है।

† Weber's Sanskrit Literature, p. 208.

बुन्देला और छत्रशालके मरने पर पन्नाके अधिपति हरदेवने इसे अधिकार किया।

पन्नाके राजवंशका बहुत दिन तक कालिञ्जर पर अधिकार रहा था। फिर कायमजी नामक किसी राजवंशीय अनुचरने कालिञ्जरको अपने अधिकारमें कर लिया। महाराष्ट्रोंके प्राधान्य समय बांदेके नवाब अली बहादुरने दो वत्सर काल कालिञ्जर अवरोध किया था। किन्तु उन्हें जयलाभ न हुआ। उसके पीछे यह अंगरेजोंके अधिकारमें पहुंचा था। अङ्गरेजोंने कायमजीके वंशके किसी व्यक्ति पर उक्त स्थानका कर्तृत्वभार डाल दिया। उनका नाम दरायु सिंह था। उन्होंने अङ्गरेजोंकी अधीनता न मानी। १८१२ ई०को अङ्गरेजोंने उन्हें दबानेके लिये सेना सह करनल मार्टिण्डेलको भेजा था। उन्होंने नगर आक्रमण किया, किन्तु अधिकार न मिला। अवशेष दरायुसिंहने आत्मसमर्पण कर दिया। अङ्गरेजोंने उन्हें स्थानान्तरमें भूमि दे कालिंजरको अपने अधिकारमें रखा। सिपाही विद्रोहके समय अल्पसंख्यक अङ्गरेज सेनाने दुर्गकी रक्षा की थी। १८६६ ई० को उक्त दुर्ग तोड़ डाला गया। कालिंजरका दुर्ग बहुत प्रसिद्ध था। आल्हामें लोग गाया करते हैं,—

"किला कालिंजरका मांगत है, बैठक मांगे ग्वालियर क्यार।"

पहले कालिञ्जर चारो ओर प्राचीर-वेष्टित था। प्रवेशके लिये चार द्वार रहे। उनमें आजकल केवल तीन देख पड़ते हैं। उनके नाम कामता फाटक, पन्नाफाटक और रेवाफाटक हैं। पहले वहां एक सुदृढ़ दुर्ग था। आज भी उसका कुछ कुछ ध्वंसावशेष देख पड़ता है। उक्त दुर्ग बनानेके लिये पहाड़ खोद कर टेढ़ी राह निकाली गयी थी। दुर्गमें प्रवेशके लिये सात द्वार हैं। उनमें आलम दरवाजा प्रथम है। उसे औरंगजेब बादशाहने बनवाया था। द्वारके ऊपर मुहम्मद मुराद द्वारा प्रदत्त १०८४ हिजरी (१६७३ ई०) की उत्कीर्ण शिलालिपि है। उससमय औरंगजेबने दुर्गकी मरम्मत करायी थी। उक्त द्वारसे काफिरघाटकी राह द्वितीय द्वार गणेश फाटकमें जाना पड़ता है। उसके आगे चण्डी-दरवाजा नामक तृतीय द्वार है। वहां दो द्वार एकत्र लगे हैं। उसकी चारो ओर चार बुर्ज हैं। इसीसे उसको चौबुर्ज दरवाजा कहते हैं। वहां ११९८, १२०२, १५८० और १६०० संवत्की खोदित शिलालिपि मिलती है। उक्त द्वारके पार्श्वमें प्रस्तरखण्ड है। उस पर एक शिलालिपि उत्कीर्ण है। आज भी समझ नहीं पड़ता वह किन अक्षरोंमें लिखी है। सुतरां यह भी किसीको मालूम नहीं उसमें क्या लिखा है? रत्न नामक किसी व्यक्तिने वहां एक गृह बनाया था। उक्त प्रस्तर उसी गृहका अंशमात्र है। चतुर्थ द्वारका नाम बुधभद्र है। उसे स्वर्गारोहण भी कहते हैं। वह बहुत ही दुरारोह है। वहां १५८८ विक्रम संवत्की (१५३१ ई०) एक शिलालिपि है। निकट ही भैरवकुण्ड* है। एक ऊंची राहसे उस कुण्ड पर जाना पड़ता है। कुण्ड प्रायः ८० हाथ लंबा और ३० हाथ चौड़ा है। पहाड़के पत्थर काट वह कुण्ड बनाया गया है। उक्त स्थानसे प्रायः २० हाथ ऊंचे भैरवकी प्रकाण्ड मूर्ति है। मूर्तिके अधोभागमें पहाड़ काटकर एक गुहा बनायी गयी है। गुहाका तलभाग कुण्डके साथ समतल पड़ता है; सुतरां कुण्डका जल ग्रीष्म व्यतीत सकल समय गुहाके अभ्यन्तर पर्यन्त फैल जाता है। ग्रीष्मके समय गुहाका अभ्यन्तर बहुत शीतल रहता है। गुहाके भीतर खोदितलिपि देख पड़ती है। उसमें वारिवर्मदेव, वीरामदेव, महिका, यशोधवल प्रभृति नाम उत्कीर्ण हैं। यशोधवल नामके नीचे ११८२ संवत् लिखा है। गुहाओं पर पर्वतमें श्रमणकी मूर्ति देख पड़ती है। भैरवकुण्डसे नीचे उतर कुछ दूर जाते ही हनूमान्-दरवाजा मिलता है। वही स्थानपर हनमान् कुण्ड है फिर पर्वतके गात्रमें हनूमानकी मूर्ति भी खोदित है। वहां अनेक प्रस्तरमूर्ति देख पड़ती हैं। किन्तु अधिकांश कालके प्रभावसे बिगड़ गयी हैं। उक्त स्थानसे अल्प कुछ ऊपर चढ़ने पर काली, चण्डिका, शिव, पार्वती, गणेश, नन्दी और शिवलिंग की मूर्ति मिलती है।

* कालञ्जरमाहात्म्यके मतसे उक्त कुण्डका नाम भीमकुण्ड है—
"भाद्रपदं भैरव द्वारः कृत्वा चैव प्रदक्षिणम्।
भीमकुण्डजले स्नात्वा पुनर्जन्म न विद्यते॥" (११८)

साहाय्य लिया है। अथवा उन्होंने ग्रीक ग्रन्थ पढ़ होराशास्त्र लिखा होगा।* परन्तु यह ठीक नहीं जंचता। प्रथमतः देखना चाहिये कालिदास प्रभृतिने 'यवन' शब्दमें किस देशके लोगों या किस जातिका उल्लेख किया है। कालिदासने रघुवंशमें लिखा है,—

"पारसीकांस्ततो जेतुं प्रतस्थे स्थलवर्त्मना।
यवनीमुखपद्मानां सेहे मधुमदं न सः॥
संग्रामस्तुमुलस्तस्य पाश्चात्यैरश्वसाधनैः।
शार्ङ्गकूजितविज्ञेयप्रतियोधे रजस्यभूत्॥ ६२॥
भल्लापवर्जितैस्तेषां शिरोभिः श्मश्रुलैर्महीम्।
अपनीतशिरस्त्राणाः शेषास्तं शरणं ययुः॥ ६४॥"

(रघु) पारसीकोंको जय करनेके लिये स्थलपथसे चले थे। वह यवनियोंके वदनकमलका मदराग सह न सके। फिर उन्हीं अश्वारोही (पारसीक) यवनोंके साथ उनका घोरतर युद्ध हुआ। धूलिसे युद्धक्षेत्र भर गया था। उस समय धनुःके टङ्कार शब्दसे प्रतियोद्धा अनुमित होने लगे। महावीर रघुने यवनोंके श्मश्रुविराजित शिर भल्लास्त्रसे काट रणस्थल समाच्छन्न किया था। उस समय अवशिष्ट यवन मस्तकसे टोपी उतार उनके शरणापन्न हुये।

कालिदासने पारसीकोंको यवन और उनकी रमणियोंको यवनी लिखा है। रघुवंश व्यतीत महाभारतमें भी पारस्यके पार्श्ववर्ती वाह्लीककी रमणियोंको मद्यपानासक्त कहा गया है। शास्त्रके निरपेक्ष पाठसे समझ पड़ता है कि वाह्लीक देशके पूर्ववर्ती प्राचीन काम्बोजके लोग पहले संस्कृत भाषामें बातचीत करते थे। उधर पुराणोंके मतसे—भारतकी पश्चिम सीमा 'यवन' है। फिर महाभारतमें रोम नामक जनपद भारतके अन्तर्गत ठहराया गया है।‡ (भारत भीष्म, ९ अ०)

ऋग्वेदमें रुम नामक किसी व्यक्तिका उल्लेख है। अनेक लोग उससे रोमकी उत्पत्ति कल्पना करते हैं। सुतरां रोमकाचार्य और यवनाचार्य सुदूर ग्रीस वा वर्तमान रोमवासी समझ नहीं पड़ते।

पुरातन पारसीक यवनोंकी व्यवहृत प्राचीन जन्द भाषा (वैदिक) छन्दस भाषाका रूपान्तर और अपभ्रंश है। (जन्द देखो।) प्राचीन अवस्ताके यश्न प्रभृति ग्रंथ पढ़नेसे कुछ आभास मिलता है कि प्राचीन पारसीकोंको होराशास्त्रके मूल तत्त्वका ज्ञान था। (पारसिक देखो।)

सूर्यसिद्धान्तके मतानुसार सूर्यांशसम्भूत असुर मयने ज्योतिषशास्त्र प्रचार किया है। पाश्चात्य पण्डितोंने उसे ग्रीक ज्योतिषी तुरमय (Ptolemaios) माना है।* किन्तु हमारी विवेचनामें पारसिक अवस्ता-शास्त्रोक्त ज्योतिःप्रकाशक 'अहुरमज्द' संस्कृत 'असुरमय' समझ पड़ते हैं। असङ्गत नहीं मालूम होता कि असुरमयके प्रथम ज्योतिःशास्त्रका उद्धारक होनेसे भारतवासियोंने कोई कोई विषय प्राचीन पारसिकों अथवा उनके निकटवर्ती यवनोंसे सीख लिया होगा।†

सुतरां ग्रीक होराशास्त्रके प्रमाणसे कालिदासको चतुर्थ शताब्दका परवर्ती व्यक्ति मान नहीं सकते।‡

कालिदासने शकुन्तलामें शरासन और वनपुष्पमालाधारिणी यवनियोंको मृगयाप्रिय हिन्दूराजाओंकी सहचारिणी लिखा** है। यथा—

---

* यवनाचार्यके उक्त वचन ग्रन्थोंका यदि ग्रीकभाषामें अनुवाद होता, तो उस भाषामें उनका कोई मूल ग्रन्थ देख पड़ता। किन्तु आज तक किसीको मूल ग्रन्थ नहीं मिला।

† "पाश्चात्यैः यवनैः सह।" इति मल्लिनाथ।

‡ इटलीके रोम जनपद रोमुलस (Romulus) नामसे हुआ है। (७५३ खृ० पू०) रोमुलस ट्रय-युद्धमें ख्यातनामा ईनियसके वंशधर थे। किन्तु महाभारतमें रोमक और रोमश् जनपदका उल्लेख रहनेसे वह भिन्न जनपद ज्ञान पड़ता है।

* See Edicts of Asoka in Inscriptionum Indicarum, Vol. I. and Weber's Sanskrit Literature, p. 253.

† संस्कृत असुर, पारसिक 'अहुर' और मय "मज्द" से मिलता है। फिर जिस प्रकार सिन्धुसे 'हिन्दु' और सप्तसे 'हप्त' बनता है, उसी प्रकार संस्कृत सोमसे होम बनता है। प्राचीन पारसिक सूर्यको पूजित मानते थे। किन्तु ग्रीकोंने होरा शब्दमें उसे ज्योतिष ठहराया। इसी प्रकार 'होरा' शब्द ग्रीक भाषामें कल्पित हो गया। (See English Cyclopædia—Science, Vol. I. p. 657.)

‡ कालिदासके कुमारसम्भवमें 'जामित्र' शब्दका उल्लेख है। बहुतेरे लोग इस शब्दको ग्रीक होराशास्त्रोक्त 'दिया मिट्रन' वा डिया मेट्रन्‌का अपभ्रंश समझते हैं किन्तु ग्रीक होराशास्त्र ज्ञानके पहले और ईसाके जन्मसे बहु शताब्द पूर्व जैनग्रन्थोंमें प्रचलित रहनेसे वह शब्द देख पड़ता है। सुतरां उस शब्द पर निर्भर कर कालिदासको चतुर्थ शताब्दका परवर्ती व्यक्ति कह नहीं सकते।

** किसी दूसरे संस्कृत नाटक वा काव्यमें हिन्दू राजाकी सहचारिणी धनुर्बाणधारिणी यवनियोंका ऐसा चित्र अङ्कित नहीं हुआ। इसद्वारा भी उपरि उक्त मत कुछ कुछ समर्थित होता है।

इसी स्थान पर कीर्तिवर्मा और मदनवर्माका नाम खोदित है। इसके आगे थोड़ी दूर चलते ही षष्ठ द्वार लाल-दरवाजा है। इसी स्थान पर चंदेलोंके समयकी दीर्घ शिलालिपि लगी है। द्वारकी पश्चिम दिक् कभोर कुण्डके ऊपरि भागमें भैरवकी प्रकाण्ड मूर्ति है। दो छोटी दूसरी मूर्ति हैं—दो भारवाहियोंके स्कन्ध पर भार है—जलपूर्ण दो कलस हैं। फिर उसके आगे ही सप्तम द्वार महद्-दरवाजा है। उसे बड़ा दरवाजा भी कहते हैं। उक्त स्थान छोड़नेसे सीतारामकी शय्या मिलती है। पर्वत काट कर एक छोटा गृह बनाया गया है। उस गृहके अभ्यन्तरमें एक चारपाई और बिछौना पत्थर पर खुदा है। प्रवादानुसार रामने सीताकी सहायसे कुछ वहीं जा कर श्रान्ति मिटायी थी। उक्त गृहको अभ्यन्तरस्थ शिलालिपि पढ़नेसे मालूम पड़ता कि वह ई० चतुर्थ शताब्दकी हरदारा बनाया गया। पाण्डुकुण्ड गोलाकार जलाशय है, उसका व्यास ८ हस्तमात्र है। ऊपर पहाड़से सर्वदा जल टपका करता है। सीताशय्या पार होनेसे पातालगङ्गाको पथ है। कालंजरमाहात्म्यमें उसका पापगङ्गा नाम लिखा है। पातालगङ्गा एक गुहा है। उसमें जल रहता है। वह २६ हस्त दीर्घ और १२ हस्त प्रशस्त है। उसमें उतरना कुछ कठिन है। वहां भी स्थान स्थान पर खोदितलिपि विद्यमान हैं। उनमें कहीं १११८, कहीं १५१४ और कहीं १६४० संवत् लिखा है। पातालगङ्गासे आगे पाण्डुकुण्ड मिलता है। फिर सीतारामके निकट सीताकुण्ड है।* दुर्गप्राकारसे उसमें उतरते हैं। उस कुण्डके ऊपरिभागमें एक मूर्ति है। वह हस्त पर भार डाल कर बैठी है। सामने ही एक टोकरी है। उसमें १६४० संवत् खोदित है। पाण्डुकुण्डको उत्तरपूर्व दिक् एक निम्नभूमि है। उसमें एक जलाशय भी बनाया गया है। जलाशयको चारो ओर सोपानावली है। उसको "बुढ़िया तलाव" कहते हैं। उसके जलसे अनेक रोग अच्छे हो जाते हैं। कालंजरमाहात्म्यमें उसे हृषीकेश कहा गया है। दुर्गको दक्षिणपूर्व दिक् एक फाटक है। उसका नाम पन्नादरवाजा या बंगकाद्वार है। आज कल वह बन्द है। उसके पास कामता और रेवा नामक दूसरे दो फाटक हैं। पर्वतके निम्नभागमें भी कालिंजर नगर विस्तृत है। उक्त द्वारसे उस भागमें प्रवेश करते हैं। पन्नाफाटकको उत्तर और प्राकारसे नीचे एक कुण्ड है। उसे भैरवकुण्ड कहते हैं। कुण्डके ऊपर भैरवकी प्रकाण्ड मूर्ति है। उस स्थानमें ११८५ संवत्‌की शिलालिपि देख पड़ती है। पाण्डुकुण्डको उत्तर-पूर्व दिक् पथ है। उससे बुढ़ियासरोवरको जाते हैं। कुछ आगे बढ़नेपर 'सिद्धकी गुहा' 'भगवान्‌शय्या' और 'पानीका अमन' स्थान मिलते हैं।

स्फटिकशिला वा 'सिद्धकी गुहा' एक स्थानविशेष है। वहां लोग प्रायश्चित्तादि करते हैं। राजा जटिलाधिकी एक संस्कृत शिलालिपि उस स्थानमें मिलती है। वहां भगवान् रामचन्द्र और सीताकी प्रस्तरनिर्मित शय्या है। 'पानीका अमान' भी एक स्थान है। डेढ़ हाथके एक छोटे द्वारसे उसमें प्रवेश करना पड़ता है। चार स्तम्भके ऊपर उसकी छत पड़ी है। यहां मृगधार नामक दूसरा स्थान भी है। पहाड़में पत्थर खोद सात मृगकी आकृति बनायी गयी है। इसीसे उसको मृगधार कहते हैं। कहते हैं कि किसी समय सात ऋषिपुत्र गुरुको आज्ञा न माननेसे शापग्रस्त हुए थे। प्रथम उन्होंने दशार्ण वनमें व्याध हो जन्म लिया। फिर परजन्ममें वह कालिञ्जरके मृग बने। मृगजन्मके पीछे उन्होंने क्रमान्वयसे लङ्काद्वीपमें राजहंस, मानसरोवरमें हंस और कुरुक्षेत्रमें ब्राह्मण हो जन्मग्रहण किया। उससे वह मुक्त हुए। कालिञ्जरकी मृगमूर्ति उन्हींकी प्रतिकृति* है। मृगधारमें भी एक

* "विशिष्टशर्माणिम्य जानकीस्नानमुत्तमम्।
जानकीप्रमुखास्तत्र दर्शयित्वा विचक्षणैः॥
स्नात्वा पूजयेद् भक्त्या सीताममीविनाशनम्।
सर्वं च कृत्वा सीतायाः सीताख्यां हितकारकम्॥"
(कालंजरमा० [illegible])

* "दशार्णा दर्शन' ततो हिरिदर्पिचकाश्रिताः।
सप्त जाता' कमाजाते पितृशुश्रूषिते॥
मृगधारे वने' वार्षे' नितृषु मीयान्ति निमज्जः।"
(कालञ्जरमा० [illegible])

"एसो वासासंबहस्साओ अवरिंहि भगवदुद्धसाणाआलविहो अणिसो इदो एक्क आणब्बदि विपदवमसो।" अभिज्ञान-शकुन्तल, ६ अ

पुराविदोंने उक्त चित्रको बाह्लीक-रमणीयोंका बताया है। भूरि भूरि प्रमाण मिलता है कि अतिप्राचीन कालसे बाह्लीकोंके साथ भारतवासियोंका सम्बन्ध रहा था, किन्तु ई० १म शताब्दीसे वह सम्बन्ध टूट गया। इस प्रकारके स्थलमें असम्भव नहीं, जिससमय बाह्लीकोंके साथ भारतवासी हिन्दुओंका सम्बन्ध रहा, कालिदास उसी समयके लोग होंगे। नासिककी ई० १म शताब्दकी एक शिलालिपि निकली है, उसमें शकारि नाम मिलता है, विक्रमादित्यका एक नाम शकारि भी था। भारतके नाना स्थानोंमें प्रवाद है कि कालिदास विक्रमादित्यके समकालीन रहे। यदि उक्त प्रवादका कोई अंश सत्य हो तो मानना पड़ेगा कि ई० प्रथम शताब्दमें उक्त शकारिके राजत्वकालमें कालिदास विद्यमान थे। मेघदूतके २८ से ४१ श्लोक मनोयोगपूर्वक पढ़नेसे अनुमान कर सकते हैं कि वह उज्जयिनीके दशपुर (वर्त्तमान मन्दसोर) में रहनेवाले थे।

अनेक ग्रन्थोंमें कालिदासका नाम प्रचलित है। किन्तु उनमें सब पुस्तक महाकवि कालिदासके अलङ्कृत मालूम नहीं पड़ते। प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथने रघुवंश, कुमारसम्भव और मेघदूत तीनकाव्य कालिदासके बनाये बताये हैं। *

नाटकके मध्य अभिज्ञान-शकुन्तला और विक्रमोर्वशी दोनों उन्होंके सुकर निर्गत हैं। कोई कोई मालविकाग्निमित्र नाटक और ऋतुसंहार नामक खण्ड काव्यको भी महाकवि कालिदासका बनाया मानते हैं। किन्तु अभिज्ञानशकुन्तल और मालविकाग्निमित्रकी रचना-प्रथाको मिलानेसे घोर सन्देह उठता है वह एक ही व्यक्तिके हस्तप्रसूत हैं या नहीं।

कालिदास संस्कृत साहित्यके जगत्में एक महाकवि थे। मानवचरित्र-चित्रण, स्वभाववर्णन और सुमधुर छन्दोग्रन्थनमें उनके तुल्य कवि संस्कृत भाषामें वाल्मीकि व्यतीत किसी दूसरेने जन्म नहीं लिया। कालिदासने स्वरचित प्रत्येक ग्रन्थमें असाधारण कवित्वशक्तिका परिचय दे पाश्चात्य जगत्में भारतीय शेक्सपीयर पदलाभ किया है।

उपरि उक्त ग्रन्थ छोड़ 'अम्बास्तव', 'कालीस्तोत्र', 'काव्यनाटकालङ्कार', 'घटकर्पर', 'चण्डिकादण्डस्तोत्र', 'दुर्घटकाव्य', 'नलोदय', 'नवरत्नमाला', 'नानार्थकोष', 'पुष्पबाणविलास', 'प्रश्नोत्तरमाला', 'राक्षसकाव्य', 'लघुस्तव', 'विद्वद्विनोदकाव्य', 'वृत्तरत्नावली', 'वृन्दावनकाव्य', 'शृङ्गारतिलक', 'शृङ्गारसार', 'श्यामलादण्डक', 'श्रुतबोध', प्रभृति बहु ग्रन्थ कालिदासके नामसे ही प्रचलित हैं। किन्तु सन्देह नहीं कि उक्त पुस्तक विभिन्न व्यक्ति द्वारा विभिन्न समयमें बनाये गये हैं। सचराचर लोगोंका दृढ़ विश्वास है कि 'नलोदय' महाकवि कालिदास-विरचित है। किन्तु विशेष प्रमाण मिला है कि उस ग्रन्थको नारायणके पुत्र रविदेवने लिखा था।* उस ग्रन्थकी रामऋषिकृत प्राचीन टीकामें भी उक्त विषयका प्रमाण मिलता है।†

बलभद्र पुत्र कालिदास-प्रणीत 'कुण्डप्रबन्ध' और रामगोविन्दपुत्र कालिदास-विरचित 'त्रिपुरासुन्दरीस्तुति-टीका' ‡ भी प्रचलित है। ज्योतिर्विदाभरण, रत्नकोष, राशिचन्द्रिका, गङ्गाष्टक, और मङ्गलाष्टक प्रभृति ग्रन्थ कालिदास नामधारी भिन्न भिन्न व्यक्तिलिखित हैं। इनको छोड़ कालिदासगणकविरचित 'शत्रुपराजय शास्त्रसार', अभिनवकालिदास § विरचित 'अभिनवभारतचम्पू' तथा 'भागवतचम्पू', कात्यायन अभिनव कालिदासकृत 'शृङ्गारकोषभाण,' और नव कालिदास-विरचित 'सारसंग्रहकाव्य' मिलता है।

* "साकूतमधुरकोमलविलासिनीकण्ठकूजितप्राये।
शिक्षासमयेऽपि मुदे रतलीलाकालिदासोक्ती॥
कालिदासगिरां सारं कालिदासः सरस्वती।
चतुर्मुखोऽथवा साक्षाद्विदुर्नान्ये तु मादृशाः॥"
(रघुवंश, मल्लिनाथकृत सञ्जीवनी टीका।)

* R. G. Bhandarkar's Reports, Sanskrit Mss, (for 1883-4) p. 16.

† Prof. Peterson's 3rd Report on the Search for Sanskrit. Mss. p. 337.

‡ यह ग्रन्थ १७४१ ई० को बना था।

§ माधवाचार्यने अपने 'शङ्करविजय'में इनका परिचय दे कालिदासके सादृश्य दिया है।

बुन्देला और छत्रसालके अंशमें पर्वतोंके अधिपति हरदेवने इसे अधिकार किया।

पन्नाके राजवंशका बहुत दिन तक कालिञ्जर पर अधिकार रहा था। फिर कायमजी नामक किसी राजवंशीय अनुचरने कालिञ्जरको अपने अधिकारमें कर लिया। महाराष्ट्रोंके प्राधान्य समय बांदेके नवाब अली बहादुरने दो वत्सर काल कालिञ्जर अवरोध किया था। किन्तु उन्हें जयलाभ न हुआ। उसके पीछे यह अंगरेजोंके अधिकारमें पहुंचा था। अङ्गरेजोंने कायमजीके वंशके किसी व्यक्ति पर उक्त स्थानका कर्त्तृत्वभार डाल दिया। उनका नाम दरायु सिंह था। उन्होंने अङ्गरेजोंकी अधीनता न मानी। १८१२ ई०को अङ्गरेजोंने उन्हें दबानेके लिये सेना सह करनल मार्टिण्डेलको भेजा था। उन्होंने नगर आक्रमण किया, किन्तु अधिकार न मिला। अवशेष दरायुसिंहने आत्मसमर्पण कर दिया। अङ्गरेजोंने उन्हें स्थानान्तरमें भूमि दे कालिंजरको अपने अधिकारमें रखा। सिपाही विद्रोहके समय अल्पसंख्यक अङ्गरेज सेनाने दुर्गकी रक्षा की थी। १८६६ ई० को उक्त दुर्ग तोड़ डाला गया। कालिंजरका दुर्ग बहुत प्रसिद्ध था। आल्हामें लोग गाया करते हैं,—

"किला कालिंजरका मांगत है, बैठक मांगै ग्वालियर बजार।"

पहले कालिञ्जर चारो ओर प्राचीर-वेष्टित था। प्रवेशके लिये चार द्वार रहे। उनमें आजकल केवल तीन देख पड़ते हैं। उनके नाम कामता फाटक, पन्नाफाटक और रेवाफाटक हैं। पहले वहां एक सुदृढ़ दुर्ग था। आज भी उसका कुछ कुछ ध्वंसावशेष देख पड़ता है। उक्त दुर्ग बनानेके लिये पहाड़ खोद कर टेढ़ी राह निकाली गयी थी। दुर्गमें प्रवेशके लिये सात द्वार हैं। उनमें आलम दरवाजा प्रथम है। इसे औरंगजेब बादशाहने बनवाया था। द्वारके ऊपर मुहम्मद मुराद द्वारा प्रदत्त १०८४ हिजरी (१६७२ ई०) की उत्कीर्ण शिलालिपि है। उससमय औरंगजेबने दुर्गकी मरम्मत करायी थी। उक्त द्वारसे काफिर-घाटकी राह द्वितीय द्वार गणेश फाटकमें जाना पड़ता है। उसके बाद चण्डी-दरवाजा नामक तृतीय द्वार है। वहां दो द्वार एकत्र लगे हैं। उसकी चारो ओर चार बुर्ज हैं। इसीसे उसको चौबुर्ज दरवाजा कहते हैं। वहां ११९९, १२०२, १५८० और १६०० संवत्की खोदित शिलालिपि मिलती है। उक्त द्वारके पार्श्वमें प्रस्तरखण्ड है। उस पर एक शिलालिपि उत्कीर्ण है। आज भी समझ नहीं पड़ता वह किन अक्षरोंमें लिखी है। सुतरां यह भी किसीको मालूम नहीं उसमें क्या लिखा है? रत्न नामक किसी व्यक्तिने वहां एक गृह बनाया था। उक्त प्रस्तर उसी गृहका अंशमात्र है। चतुर्थ द्वारका नाम बुधभद्र है। इसे स्वर्गारोहण भी कहते हैं। वह बहुत ही दुरारोह है। वहां १५८८ विक्रम संवत्की (१५३१ ई०) एक शिलालिपि है। निकट ही भैरवकुण्ड* है। एक ऊंची राहसे उस कुण्ड पर जाना पड़ता है। कुण्ड प्रायः ९० हाथ लंबा और ३० हाथ चौड़ा है। पहाड़के पत्थर काट यह कुण्ड बनाया गया है। उक्त स्थानसे प्रायः २० हाथ ऊंचे भैरवकी प्रकाण्ड मूर्ति है। मूर्तिके अधोभागमें पहाड़ काटकर एक गुहा बनायी गयी है। गुहाका तलभाग कुण्डके साथ समतल पड़ता है; सुतरां कुण्डका जल ग्रीष्म व्यतीत सकल समय गुहाके अभ्यन्तर पर्यन्त फैल जाता है। ग्रीष्मके समय गुहाका अभ्यन्तर बहुत शीतल रहता है। गुहाके भीतर खोदितलिपि देख पड़ती है। उसमें वासिवमदेव, श्रीरामदेव, मल्लिका, यशोधवल प्रभृति नाम उत्कीर्ण हैं। यशोधवल नामके नीचे ११९२ संवत् लिखा है। गुहाओं पर पर्वतमें अमणकी मूर्ति देख पड़ती है। भैरवकुण्डसे नीचे उतर कुछ दूर जाते ही हनूमान्-दरवाजा मिलता है। उसी स्थानपर हनूमान् कुण्ड है फिर पर्वतके गात्रमें हनूमान्की मूर्ति भी खोदित है। वहां अनेक प्रस्तरमूर्ति देख पड़ती हैं। किन्तु अधिकांश कालके प्रभावसे बिगड़ गयी हैं। उक्त स्थानसे अल्प कुछ ऊपर चढ़ने पर काली, चण्डिका, शिव, पार्वती, गणेश, नन्दी और शिवलिंग की मूर्ति मिलती है।

* कालञ्जरमाहात्म्यके मतसे उक्त कुण्डका नाम सोमकुण्ड है—
"माघर्क्षे भैरवं द्वारा कृत्वा चैव प्रदक्षिणम्।
सोमाङ्कुशस्य यात्रा पुनर्जन्म न विद्यते॥" (११८)

कालिदास नामके हिन्दीमें भी कई कवि हो गये हैं। उनकी कविता हृदयग्राही और मनोरञ्जक है।

कालिदासकी समालोचना।

युवा कवि कालिदासको अपनी उम्मेदवारी एक ऐसे देशमें करनी पड़ी थी, जो सुन्दर और पर्वत, खाड़ी, मैदान तथा छोटी नदियोंसे परिपूर्ण था। कालिदास ब्राह्मण थे। इसी कारण वह युद्ध और राजनीतिसे अपनेको अलग रखते थे। हां, देशके साहित्यसे सम्बन्ध रखनेवाले युद्धविग्रहमें वह सम्मिलित थे। उन्हें क्या लिखना था? पूर्णावस्था और प्रकृति दोनों ही सुन्दर होती हैं। प्रकृति पदार्थोंका वर्णन करना युवा कविके लिये सबसे अच्छी चीज है। कालिदासने अपनी उम्मेदवारी ऋतुसंहार लिखनेमें बितायी। वास्तवमें उन्हें ऋतुवर्णन लिखनेका प्रलोभन शिलाफलकोंने दिया था। कारण देशमें चारों ओर जो शिलाफलक मिलते थे, उनसे प्रत्येकमें ऋतुवर्णन वर्तमान था। उन्होंने अपने मनमें विचारा—यदि वह सम्पूर्ण ऋतुओंका वर्णन एक साथ लिख सकते, तो देशका बड़ा उपकार करते। इसीसे कालिदासने ऋतुसंहार लिखनेका काम अपने हाथमें ले लिया। भाषा परिमार्जित नहीं है। उसमें पुनरुक्ति, व्याकरणविरुद्ध प्रयोगों और भाव सम्बन्धी त्रुटियां बहुत हैं। अंगरेजी कवि टामसनने "सिजन्स" नामक ऋतुवर्णनका एक ग्रन्थ लिखा है। उक्त ग्रन्थ ऐतिहासिक घटनाओंसे परिपूर्ण है। फिर स्थान स्थान पर टामसनने विभिन्न ऋतुओंमें प्राचीन समयके दृश्य दिखानेकी चेष्टा की है। किन्तु कालिदासने अपने ग्रन्थ ऋतुसंहारमें कहीं इतिहासकी ओर ध्यान नहीं दिया है। उन्होंने ग्रीष्म ऋतुसे आरम्भ किया है। कारण उत्तरभारतमें ज्योतिषी वर्षाऋतुसे ही वर्षारम्भ करते हैं। यद्यपि उनकी प्रतिभा कवित्वपूर्ण और कुशाग्र थी, तथापि पूर्णरीतिसे परिमार्जित न थी, स्त्रीत्व या प्रकृतिका सौन्दर्य उन्होंने भली भांति नहीं बताया। परन्तु उनका हृदय बहुत गुदगुदा था। जहां दूसरे कुछ नहीं देखते, वहां उन्हें सुषमा देख पड़ती है। गहरी दृष्टिका पहला झाड़ कीड़ा, घास और फूल सबको वहां ले जाता है। कालिदासने उस घासको कविकी दृष्टिसे देखा है। नाले घूम घूम कर बहते हैं। कालिदासने उनकी सांप जैसी चाल बड़े ध्यानसे देखी है, जो मेढ़कोंको डरा देता है। एक बात यही है। कालिदासकी आदि कविताका अनोखापन यह है कि उन्होंने स्त्रीसे अधिक प्रकृतिकी प्रशंसा की है।

फिर उन्होंने अपने देशके पुराण पढ़े, शिक्षा समाप्त की और अपना ध्यान रङ्गमञ्चपर लगा दिया। उनका दूसरा ग्रन्थ देशहितैषितापूर्ण एक नाटक है। विदिशा मालवका एक भाग है। कालिदासके प्रथम ऐतिहासिक ग्रन्थमें विदिशाका इतिहास परिपूर्ण है। मालवसे आगे वह भ्रमणको न गये थे। उन्होंने अग्निमित्रका इतिहास लिखा और नायिकाका नाम मालविका रखा है। उज्जैनका प्रद्योतवंश पतित हो गया था। मालवदेश मगधमें मिला लिया गया था। उसी समय अग्निमित्र ब्राह्मणके अधीन विदिशा राज्य स्थापनका वर्णन कर उन्होंने मालवके लोगोंको प्रसन्न करनेकी चेष्टा की है। वास्तवमें अशोकके बौद्धराज्यका पतन और ब्राह्मणसाम्राज्यका अभ्युदय युवा कवि कालिदासके लिये एक अच्छा विषय बन गया। इस ग्रन्थमें भी कालिदासने प्रकृतिके सौन्दर्यको अधिक अपनाया है। उन्होंने प्रायः इसप्रकारके वाक्य लिखे हैं। 'फूलदार पेड़ोंकी डालियोंका हिलना झुलना देख नाचनेवाली लड़कियां लज्जामें आ जाती हैं।' अनन्तर उनके भ्रमणकी परिसीमा बढ़ती और "मेघदूत" में वह मालवसे आगे निकलते हैं। मालवकी पूर्व सीमासे वह उसकी चारों ओर घूमते, कई आवश्यक स्थान देख भाल पूर्वमें वह फिर उसमें पहुंचते और उत्तरमें उससे बहुत आगे निकल चलते हैं। किन्तु उनकी प्रीति अभी मानसिक है, वह अभी प्रकृतिकी बहुत प्रशंसा करते हैं। किन्तु उनकी भाषा बहुत परिमार्जित हो गयी है। और उनकी लेखनशैली बहुत अधिक चित्तको आकर्षण कर लेती है।

उनकी कविताका भाव बदल जाता है। वस्तुओं और मानुषिक लालसाओंका वह अधिक विचार करते और मनुष्यके दुःखोंपर ध्यान नहीं देते। वह

अपने नायकोंके लिये भेद ढूंढते और किसी दिव्य या अर्धदिव्य पुरुषको अपने ग्रन्थका नायक चुनते हैं। उनका दूसरा नाटक विक्रमोर्वशी है। उसके दृश्य पृथिवीसे बदलकर आकाश पर पहुंच गये हैं। किन्तु उनका प्यार अभी उत्साह है और प्रकृतिकी प्रशंसा करना उनमें अभी कम नहीं पड़ा है।

उनकी कविता पर दूसरा परिवर्तन पड़ता है। वेदोंसे वह प्रसन्न नहीं होते। वह अधिक शुष्क और अधिक क्षमाविहीन थे। इसलिये वह वेदोंको छोड़ देना चाहते हैं। वह अपनी उपासनामें प्रकाश खोजते और शैवमत अवलम्बन करते हैं। अब वह चाहते हैं कि अपने देवको उचित प्रशंसा करें। उन्होंने पृथिवी और वायुके प्रत्येक द्रव्यको अच्छी भांति समझ बूझ लिया है। अब उन्हें आकाशकी ओर ध्यान देना है। मेघदूतमें जहां उन्होंने अपनी कविता समाप्त की थी, वहींसे वह प्रारम्भ करते हैं। दृश्य इन्द्रपुरीसे ब्रह्मलोक और ब्रह्मलोकसे शिवलोकको पहुंचता है। उन्होंने कामदेवके भस्म होनेकी बात लिख सौन्दर्यका अच्छा वर्णन किया है। उसके पीछे उनकी प्रीति पारलौकिक हो गयी है।

पार्वती शिवसे मिलना चाहती है, शरीरसे नहीं—आत्मासे। देशके इतिहासमें ऐसी प्रीतिका भाव अज्ञात था। इसी अलौकिक प्रीतिके सहारे कालिदासने अपने इष्टदेवका गुणगान किया है।

पहले उन्होंने ऐहिक और पीछे पारलौकिक विषय लिखे हैं। पहली बात तो साधारण थी। उसका नैतिक उद्देश्य सन्देहपूर्ण था। फिर उनकी दूसरी बात लोगोंकी समझमें आती न थी। इसलिये उन्होंने अपनी वृद्धावस्थामें मानुषिक और दैवी भावोंके मिलानेकी चेष्टा कर दो ग्रन्थ लिखे, जिनकी प्रशंसा समग्र जगत् मुक्त-कण्ठसे करता है। उनका शकुन्तला नाटक ऐहिक और पारलौकिक भावोंका मिश्रण है। शकुन्तला पृथिवी और स्वर्ग दोनोंसे सम्बन्ध रखती है। कुमारसम्भव और शकुन्तलामें उनका स्त्री-सौन्दर्य विचार बहुत बदल गया है। कुमारसम्भवमें कामदेव महादेवका ध्यान डिगा न सके और पार्वतीके पीछे जाकर छिप रहे। इससे यही भाव निकलता है कि भौतिक सौन्दर्य दिव्य भावोंके सामने तुच्छ है। शकुन्तलामें भी वह स्वर्गके उस स्थानमें पहुंच गये हैं, जहां पृथिवीकी कामिनी जा नहीं सकती।

परन्तु उनका अन्तिम और विशाल ग्रन्थ रघुवंश है। उसमें उन्होंने ईश्वरके अवतारोंका वर्णन किया है। इसमें कालिदासने वाल्मीकिसे सामना किया है। किन्तु कालिदास उनसे बहुत आगे निकल गये हैं। वाल्मीकिने केवल रामका ही वर्णन किया है। परन्तु कालिदासने उनके पूर्वपुरुषोंका भी वर्णन कर कई दिव्य गुणोंका परिचय दिया है। दलीपमें अधीनता, रघुमें शक्ति, अजमें प्रेम, दशरथमें राजोचित गुण और राममें उक्त समग्र दिव्य गुणोंका पूरा आभास पाया जाता है। इसी क्रमसे कालिदासके समग्र ग्रंथ लिखे गये हैं। उनके देखनेसे मालूम होता है कि, कालिदासने अपने विचार धीरे धीरे बढ़ाये हैं। प्रकृत पदार्थोंके वर्णनसे आरम्भ कर उन्होंने अवतारोंका स्वरूप और ईश्वर तथा मनुष्यका सम्बन्ध दिखा दिया है।

अब यह विषय विचारणीय है—क्या उक्त सातों पुस्तक एकही ग्रंथकारके लिखे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि—रघुवंश और कुमारसम्भव एक ही कविके बनाये हैं। कारण उक्त दोनों पुस्तकोंकी रचना मिलती जुलती है। फिर शकुन्तला भी उक्त दोनों पुस्तकोंके रचयिताकी ही लिखी है। कारण एकका सूक्ष्म भाव दूसरेमें बढ़ा दिया गया है। विक्रमोर्वशीके भी ४थें अध्यायका भाव मेघदूत और कुमारसम्भवमें विद्यमान है। ऋतुसंहार और मालविकाग्निमित्रके सम्बन्धमें समालोचकोंका मत नहीं मिलता। परन्तु ध्यानपूर्वक विक्रमोर्वशी, शकुन्तला और मालविकाग्निमित्र पढ़नेसे तीनों ग्रंथोंके भाव मिलते और तीनों ग्रंथ एक ही ग्रंथकारके लिखे मालूम पड़ते हैं। लोगोंका यह कहना कि मालविकाग्निमित्र किसी दूसरे कविका लिखा है, बिलकुल झूठ है। कारण कालिदासके भावोंका ऐसा अनुकरण दूसरा उस समय कर न सकता था।

जिन्हें लोग कालिदासका अनुकरण समझते, वह

ऋतु, वन, सागर, सम्भोग, विप्रलम्भ, मुनि, स्वर्ग, पुर, यज्ञ, रणप्रयाण, विवाह, मन्त्र, पुत्रजन्मादि महाकाव्यका वर्णनीय विषय है। उस सकलको यथायोग्य स्थानमें सन्निवेशित करना पड़ेगा।

साधारणतः काव्यमें दो प्रकारके भेद होते हैं। दृश्य और श्रव्य। जो काव्य अभिनयके उपयोगी रहते, उन्हें दृश्यकाव्य कहते हैं। यथा—नाटकादि। फिर जो काव्य केवल श्रवणके उपयोगी पाये जाते, वह श्रव्य कहाते हैं। दृश्यकाव्य—नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, अङ्क, वीथी और प्रहसन भेदसे दश प्रकार है। श्रव्यकाव्य गद्यपद्यभेदसे द्विविध होता है। पद्यकाव्यके दो भेद हैं—महाकाव्य और खण्डकाव्य। गद्यकाव्य भी कथा और आख्यायिका भेदसे दो प्रकारका होता है। इसको छोड़ चम्पू, विरुद और करम्भक नामक तीन प्रकारका अन्यकाव्य मिलता है। (साहित्यदर्पण)

प्रायः समुदाय काव्य श्रुतिश्रवणसुखकर, मनोमुग्धकर और रसप्रकाशक होते हैं; इसीसे काव्य आलोचना करनेपर अन्य किसी शास्त्रकी आलोचनाकी इच्छा नहीं चलती। किसी उद्भट कविने कहा है—

"काव्येन हन्यते शास्त्रं काव्यं गीतेन हन्यते।
गीतञ्च स्त्रीविलासेन स्त्रीविलासो बुभुक्षया॥"

काव्यसे नीतशास्त्र, सङ्गीतसे काव्य, स्त्रीविलाससे सङ्गीत और बुभुक्षासे स्त्रीविलास विनष्ट हो जाता है। काव्यकलाप, अमरचन्द्रकृत काव्यकल्पलता, काव्यकामधेनु, नीतभट्टविरचित काव्यकौतुक, काव्यकौमुदी, काव्यकौस्तुभ, कविचन्द्र एवं विद्यानिधिपुत्र न्यायवागीशविरचित काव्यचन्द्रिका, रत्नपाणि, राजचूड़ामणि दीक्षित, और श्रीनिवास दीक्षितकृत काव्यदर्पण, कान्तिचन्द्र और गोविन्दरचित काव्यदीपिका, धनिक विरचित काव्यनिर्णय, काव्यपरिच्छेद, भारतीकवि, विश्वनाथ भट्टाचार्य और मम्मट भट्टकृत काव्यप्रकाश, राजानक आनन्दकविकृत काव्यप्रकाशनिदर्शन, गोविन्द भट्टकृत काव्यप्रदीप, श्रीनिवासरचित काव्यसारसंग्रह, दण्डी तथा सोमेश्वररचित काव्यादर्श वाग्भट्टका काव्यानुशासन और काव्यालङ्कार, जिनसेनाचार्यकी अलंकारचिन्तामणि, रुद्रटका काव्यालङ्कार, कुवलयानन्द, साहित्यदर्पण प्रभृति अलङ्कारग्रन्थमें काव्यका लक्षणादि और विस्तृत विवरण लिपिबद्ध हुआ है।

(पु०) कवेः अपत्यं पुमान्, कवि-अण् यज् वा। २ शुक्राचार्य, उशना। पारसिकोंके प्राचीन अवस्ता ग्रन्थमें शुक्राचार्य 'कवउस्' नामसे वर्णित हुये हैं। ४ तामसमन्वन्तरीय एक ऋषि।

"ज्योतिर्धामा पृथुः काव्यश्चैत्रोऽग्निर्वनकस्तथा।
पीवरश्च तथा ह्यासन् ऋषयः सप्त तामसे॥" (मार्कण्डेयपु० ७४। ६८)

(वि०) ५ कवि या ऋषिके गुण रखनेवाला, जिसमें शायरकी सिफत रहे। ६ कविता-सम्बन्धीय, शायरीके मुताल्लिक।

काव्यचोर (सं० पु०) काव्यस्य चोर इव। १ अन्यरचित काव्य, अपना बतलानेवाला, जो दूसरेकी बनायी शायरी अपनी बताता हो। २ चन्द्रेश।

काव्यता (सं० स्त्री०) काव्यस्य भावः काव्य-तल्। काव्यका लक्षणादि, शायरी बनानेकी शर्त।

काव्यदेवी (सं० स्त्री०) काश्मीरराज्ञी विशेष, काश्मीरकी एक रानी। उन्होंने काव्यदेवीश्वर नामक शिवलिङ्ग स्थापन किया था। (राजतरङ्गिणी ५।४१)

काव्यमीमांसक (सं० पु०) काव्यस्य काव्यशास्त्रस्य मीमांसकः, ६-तत्। काव्यशास्त्रका मीमांसाकारक, इल्म फसाहतका उस्ताद।

काव्यरसिक (सं० वि०) काव्यस्य रसं वेत्ति, काव्य-रस-ठक्। काव्यवर्णित रसका अनुभवकारी, शायरीका शौकीन।

काव्यलिङ्ग (सं० क्ली०) अर्थालङ्कारविशेष। इसका साहित्यदर्पणोक्त लक्षण इस प्रकार है,—

"हेतोर्वाक्यपदार्थत्वे काव्यलिङ्गमुदाहृतम्।"

हेतुका वाक्य और पदार्थत्व अर्थात् वाक्य वा पदार्थका हेतु रहनेसे काव्यलिङ्ग अलङ्कार होता है। यथा—

"यत्त्वन्नेत्रसमानकान्ति सलिले मग्नं तदिन्दीवरं
मेघैरन्तरितः प्रिये तव मुखच्छायानुकारी शशी।
येऽपि त्वद्गमनानुकारिगतयस्ते राजहंसा गता-
स्त्वत्सादृश्यविनोदमात्रमपि मे दैवेन न क्षम्यते॥"

३ शान्तनु राजाकी स्त्री। ४ भीमसेनकी एक पत्नी। ५ अग्निशिखा विशेष, आगकी एक लौ। ६ रात्रि, रात। ७ विद्युत्, बिजली। ८ निन्दा, बदनामी। ९ नूतन मेघसमूह, घटा। १० मसी, स्याही। ११ कृष्णवर्ण स्त्री, काली औरत। १२ कृष्णवर्ण, कालारंग। १३ कीरकीट, मट्ठेका कीड़ा। १४ नीली, नील। १५ पाटला। १६ मञ्जिष्ठा, मजीठ। १७ कृष्णवेत्र, काला बेंत। १८ कृष्ण कार्पास, काली कपास। १९ कृष्णजीरक, काला जीरा। २० धूम्रिका। २१ कृष्ण त्रिवृत्, काला निसोत। २२ वृश्चिकाली, बिछुआ। २३ कण्टकारी।

काली (सं० स्त्री०) कालस्य शिवस्य पत्नी-ङीप्। कालिका देवीके ललाटसे आविर्भूता एक देवी। चण्ड वधके समय असुरोंसे लड़ते लड़ते क्रोध भरमें भगवतीमुख कृष्णवर्ण हो गया था। फिर उनके ललाट देशसे करालवदना असिपाश प्रभृति अस्त्रपाणि कालिका देवीका आविर्भाव हुआ। (मार्कण्डेयपु०, ८७।५)

कालिकापुराणमें उनका रूपादि इस प्रकार वर्णित है,—"नीलोत्पलकी भांति श्यामवर्ण है। चार हस्त हैं। दक्षिण हस्तद्वयमें खट्वाङ्ग एवं चन्द्रहास और वाम हस्तद्वयमें चर्म तथा पाश है। गलेमें मुण्डमाला पड़ी है। परिधानमें व्याघ्रचर्म विराजित है। अङ्ग कृश है। दन्त दीर्घ है। लोलजिह्वा अति भयङ्कर देख पड़ती है। चक्षु आरक्त हैं। काली भीम नाद कर रही हैं। वाहन कबन्ध है। मुख विस्तृत और कर्ण स्थूल हैं। उक्त देवी तारा और चामुण्डा नामसे भी अभिहित होती हैं। उनकी आठ योगिनियोंके नाम हैं,—त्रिपुरा, भीषणा, चण्डी, कर्त्री, हन्त्री, विधात्रिका, कराला, और शूलिनी। उक्त योगिनी भी देवीके साथ पूजित और अनुध्यात होती हैं। यावतीय देवीगणमें इन्हींकी पूजा करनेसे सर्व कामना सिद्धि मिलती है।" (कालिकापु० ६० अ०) काली दश महाविद्याओंके मध्य प्रथम महाविद्या है। यथा —

"काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा॥
बगला सिद्धविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका।
एता दशमहाविद्याः सिद्धविद्याः प्रकीर्त्तिताः॥" (तन्त्रसार)

काली, तारा, षोड़शी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगला, मातङ्गी और कमला दश मूर्तिका नाम महाविद्या है। उन्हें सिद्धविद्या भी कहते हैं। सतीने दक्षयज्ञमें जाते समय बार बार शिवसे अनुमति मांगी थी। किन्तु महादेवने उन्हें किसी प्रकार अनुमति न दी। उसीसे सतीने उक्त दशमूर्ति बना और शिवको डरा अनुमति ग्रहण की। (दशमहाविद्या देखो।)

काली मूर्तिका ध्यान इस प्रकार है,—

"करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम्।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमालाविभूषिताम्॥
सद्यश्छिन्नशिरःखड्गवामाधोर्ध्वकराम्बुजाम्।
अभयं वरदञ्चैव दक्षिणोर्ध्वाधःपाणिकाम्॥
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बरीम्।
कण्ठावसक्तमुण्डालीगलद्रुधिरचर्चिताम्॥
कर्णावतंसतानीतशवयुग्मभयानकाम्।
घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नतपयोधराम्॥
शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम्।
सृक्कद्वयगलद्रक्तधाराविस्फुरिताननाम्॥
घोररावां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम्।
बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रितयान्विताम्॥
दन्तुरां दक्षिणव्यापिमुक्तालम्बिकचोच्चयाम्।
शवरूपमहादेवहृदयोपरि संस्थिताम्॥
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम्।
महाकालेन च समं विपरीतरतातुराम्॥
सुखप्रसन्नवदनां स्मेराननसरोरुहाम्।
एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं सर्वकामार्थसिद्धिदाम्॥" (तन्त्रसार)

काली करालवदना, भयङ्करी, मुक्तकेशी, चतुर्भुजविशिष्टा और मुण्डमालाभूषिता हैं। उनके अधोवाम हस्तमें सद्यः कर्तित मुण्ड एवं ऊर्ध्व वाम हस्तमें खड्ग और ऊर्ध्व दक्षिण हस्तमें अभय चिह्न तथा अधो दक्षिण हस्तमें वरदान मुद्रिका है। वह महामेघकी भांति श्यामवर्णा उलङ्गिनी हैं। उनके कण्ठदेशमें मुण्डमाला है। उससे रक्तधारा विगलित हो रही है। कर्णद्वयमें कर्णभूषणके स्थान पर दो शव लम्बित हैं। वह भीमदशना, करालमुखी, पीनोन्नतस्तनी, शवगणहस्तसमूहनिर्मित मेखलाधारिणी और हास्यमुखी हैं। उभय ओष्ठप्रान्तसे रक्तधारा गलित होती है। उसीसे उन्हें स्फुरितमुखी भी कहते हैं। काली भयङ्कर

हे प्रिये! तुम्हारे चक्षुकी कान्तिसे अद्भुत कान्तियुक्त पद्म अवनम्र हुआ है। तुम्हारे मुखके तुल्य चन्द्र मेघ द्वारा आवरित हुआ है एवं तुम्हारे गमनके अनुकारी गतिविशिष्ट राजहंस भी देशत्यागी हुये हैं। सुतरां वस्तु विशेषमें तुम्हारा सादृश्य देख कर भी हम सन्तुष्ट होंगे, विधाता उसे भी सह नहीं सकते।

इस स्थलपर शेष वाक्यके प्रतिपूर्व तीनों वाक्य हेतु हुये हैं। इसीसे यह काव्यलिङ्ग अलङ्कार है।

पदार्थगत काव्यलिङ्ग इस प्रकार होता है,—

"त्वद्वाजिराजिनिर्धूतधूलीपटलपङ्किलाम्।
न धत्ते शिरसा गङ्गां भूरिभारभिया हरः॥"

कोई किसी राजाको लक्ष्य कर कहता है, हे राजन्! तुम्हारे घोटकसमूहकर्तृक उत्थित धूलिराशि द्वारा गङ्गा पङ्किल हो गयी हैं। इसीसे महादेव उन्हें अधिक भार वहनके भयसे मस्तकपर धारण नहीं करते।

यहां परार्धश्लोकके प्रति पूर्वार्ध श्लोकका पद कारण है। इसीसे यह भी काव्यलिङ्ग चमत्कार होता है।

काव्यशास्त्र (सं॰ क्ली॰) काव्यं शास्त्रमिव उपदेशकत्वात्, काव्यरूप शास्त्र, काव्यमें बहुविध हितोपदेश मिलता है। इसीसे काव्यको भी शास्त्र कहा करते हैं,—

"काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम्।" (भरट)

काव्यसुधा (सं॰ स्त्री॰) काव्यं सुधा अमृतमिव, उपमि॰। काव्यरूप अमृत। काव्य श्रवणसुखकर होता है। इसीसे उसकी तुलना अमृतसे करते हैं।

काव्यहास्य (सं॰ क्ली॰) काव्येन काव्यश्रवणेन दर्शनेन वा हास्यं यत्र, बहुव्री॰। प्रहसन, नाटक। अधिकांश स्थलपर हास्यरसका वर्णन रहनेसे उसे सुन या उसका अभिनय देख अतिरिक्त हास्य करना पड़ता है। प्रहसन देखो।

काव्या (सं॰ स्त्री॰) कव स्तुतिगामे बाहुलकात् ण्यत्-टाप्। १ बुद्धि, प्रज्ञा। २ पूतना। यह मायाविनी विविध स्तुतिवाक्य एवं मेजनविन्यास द्वारा बालकोंको मुग्ध कर उनसे निःसन्देहपूर्वक मार डालती थी। अनन्तको दूधमें उसका विनाश साधन किया। पूतना देखो।

काव्याटम (सं॰ पु॰) काव्यस्य शुक्राचार्यस्य गोत्रापत्यम् काव्य-अञ्। शुक्राचार्यके पुत्र प्रभृति वंशधर।

काव्यार्थापत्ति (सं॰ स्त्री॰) अर्थापत्ति नामक अलङ्कार।

काश (सं॰ पु॰-क्ली॰) काशते दीप्यते, काश-अच्। १ तृणविशेष, कास। (Saccharum spontaneum) इसका संस्कृत पर्याय-इक्षुगन्धा, पोटगल, काश, काशी, काशा, वायसेक्षु, काण्डेक्षु, अमरपुष्पक, काशक, भस्मक इत्यादि, काकेक्षु, इक्षुर, इक्षुकाण्ड, शारद, निर्ध्वप्यक, नादेय, दर्भपत्र, सेव्रक, काण्डकाण्डक, और अन्तःमकारक है। भावप्रकाशके मतमें काश मधुर, एवं तिक्तरस, पाकमें मधुर, शीतल और भेदकारक है। इससे मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, दाह, रक्तदोष, क्षय और पित्तसे उत्पन्न रोग नष्ट हो जाता है। राजनिघण्टु, और मदनपालने इसे रुचि, तृप्ति, बल एवं शुक्रकारक और शान्ति तथा कफनाशक एवं कण्ठकण्डुकारी लिखा है।

हिन्दुस्तानमें काशको कास, कागर, कौस, कुश या काश, बङ्गालमें काशरा, युक्तप्रदेशमें कांसी, अवधमें रर, कुमायूंमें कांस, पंजाबमें सरकर, राजपूतानामें काशी, सिन्धुमें काम, मध्यप्रदेशमें पदर, मारवाड़में कागर, तेलगुमें रेलुगड्डि, और ब्रह्ममें येतकियाकिन कहते हैं। यह मोटी और भारी मट्टीमें रहनेवाली घास है। काशकी जड़ें दूरतक रेंगती चली जाती हैं। भारतमें यह बहुत मिलता है। फिर हिमालयमें प्रायः ६००० फीट ऊपर तक पाया जाता है। भूमिकी प्रकृतिके अनुसार इसकी लम्बाईमें भी भेद पड़ता है। भीगी भीगी जमीन् काशका घर है। वहां उसकी फूलती हुयी डालियां १२ फीट तक बढ़ती हैं। वर्षा ऋतु समाप्त होने पर काश फूलता है। हिन्दीके महाकवि तुलसीदासजीने लिखा है,—

"फूले काश सकल महि छायी। जनु वर्षा ऋतु प्रकट बुढ़ायी॥"

काशकी जड़ बहुत सुदृढ़ लगती है। उसे खेतोंसे निकालना कुछ सरल नहीं। कहते हैं कुछ दिनोंमें वह आप ही आप नष्ट हो जाता है।

काश अधिकतर छानी छप्परके काम आता है। उससे रस्सियां और चटाइयां भी तैयार होती हैं।

काशको भैंस बड़े चावसे खाती है। नया काश हाथियोंको भी खिलाया जाता है। अंग जिलेमें यह बहुत होता है। शोणतक जिलेमें घोड़ोंको काश

शब्दकारिणी, भयङ्करमूर्ति, श्मशानवासिनी, अरुण-तुल्यलोचनत्रयविशिष्टा, करालदन्ता, दक्षिणाङ्गव्यापि-मुक्तकेशपाशयुक्ता, शवरूपिमहादेव-हृदयस्थिता, भय-ङ्करशब्दकारिशिवागणपरिवेष्टिता, महाकालके साथ विपरीत सङ्गममें आसक्ता और सुखप्रसन्नवदना हैं। इसीप्रकार सर्वकामार्थसिद्धिदायिनी कालीकी चिन्ता करना चाहिये।

महाकाली, दक्षिणाकाली, भद्रकाली, श्मशान-काली, गुह्यकाली और रक्षाकाली प्रभृति नामानुसार कालीमूर्तिके विविध भेद हैं। देवी मूलप्रकृति हैं। स्वल्पबुद्धि और दुर्बल मानवोंके उपासना कार्यमें सुविधा करनेके लिये तन्त्रादि शास्त्रमें उक्त प्रकृतिके काली, तारा प्रभृति नाम और रूप कल्पित हुये हैं। महानिर्वाणतन्त्रमें भी ऐसा ही लिखा है,—

"उपासकानां कार्याय पुरैव कथितं प्रिये।
गुणक्रियानुसारेण रूपं देव्याः प्रकल्पितम्॥"
(महानिर्वाण, १३ उल्लास)

उपासकोंके कार्यके लिये ही गुणक्रियानुसार देवीका रूप कल्पित होता है।

आद्य शक्तिकी प्रधान मूर्ति काली है। शाक्तोंमें प्रायः दश आने लोग उक्त मूर्तिके उपासक हैं। भगवतीकी जितनी मूर्ति हैं, उनमें दुर्गा और काली मूर्तिका बहुत प्रचार है। सहज ही निर्णय करना दुःसाध्य है—कितने समयसे उक्त मूर्तिकी कल्पना की गयी है। अनेक पाश्चात्य पण्डितों और तन्मतावलम्बी प्राच्य विद्वानोंके कथनानुसार कालीकी मूर्ति हिन्दुओं की मौलिक न थी, वह भारतके आदिम अधिवासी अनार्योंकी देवदेवीसे अंगृहीत हुयी। नहीं समझ पड़ता वैसी कल्पनासे कोई फल है या नहीं। कारण अनेकानेक प्राचीन पुराणोंमें भगवतीकी उक्त मूर्तिका वर्णन मिलता है। फिर भी इतना मानना पड़ेगा कि तान्त्रिक युगमें ही उक्त मूर्तिकी उपासनाका नानाविध विधि नियम बना और चला है। तंत्र की बात छोड़ आगे यह देखना चाहिये—पुराणादि-में भगवतीकी कालीमूर्तिकी उत्पत्ति, पूजा, ध्यान इत्यादिके सम्बन्धमें क्या विवरण मिलता है।

पुराणोंमें मार्कण्डेय-पुराण अपेक्षाकृत प्राचीन गिना जाता है। जिस देवीमाहात्म्यके पढ़ने या सुनने-से इन्द्रके ऐश्वर्य तुल्य ऐश्वर्य भोग किया जाता, वह चण्डी नामक अपूर्व पुस्तक भी मार्कण्डेयपुराणके ही अन्तर्गत पाया है। कालिका मूर्तिकी उत्पत्ति-कथा चण्डीमें दो स्थान पर कही है। प्रथम,—महिषासुरके वध पीछे देवता, शुम्भ—निशुम्भके अत्याचारसे उत्पीड़ित हो देवीका स्तव करते थे। उसी समय भगवतीने जाह्नवीजलमें स्नानार्थ जानेके छलसे उनके निकट उपस्थित हो पूछा था—'तुम यहां क्यों आये हो, देवताओंके उक्त प्रश्नका उत्तर देनेसे पहले ही भगवतीके शरीरसे शिवा अम्बिकाने निकल कर कहा 'दैत्यपतिकर्तृक निराकृत और तदीय भ्राता निशुम्भकर्तृक पराजित हो देवता हमारा स्तव करते हैं। अम्बिका भगवतीके शरीरकोषसे निकली थीं। इसीसे वह कौशिकी नामसे विख्यात हुयीं और हिमाचलपर रहने लगी। कौशिकीकी उत्पत्तिके पीछे भगवतीने भी स्वीय गौरवर्ण छोड़ कृष्णवर्ण धारण किया था। इसीसे वह भी 'कालिका' * कहायीं और हिमाचलपर ही रहने लगीं। उक्त स्थल पर चण्डीमें नहीं लिखा उन कालिकाका क्या रूप था? फिर द्वितीय स्थल पर चण्डीमें काली मूर्तिकी कथा इस प्रकार लिखी है,—कौशिकीके हुङ्कारसे शुम्भके सेनापति धूम्रलोचन भस्मीभूत हुये। फिर शुम्भने चण्डमुण्ड नामक दो प्रचण्ड सेनापति बहु सैन्य दे कौशिकीको पकड़नेके लिये भेजे। चण्डमुण्ड सैन्यबल-परिवृत हो महादर्पसे देवीके निकट हिमाचल पर उपस्थित हुये। देवीने उनका दर्प देख ईषत् हास्य मात्र किया था। चण्डमुण्ड पहुंचते ही उन्हें पकड़ने को आगे बढ़े। पास जाने पर देवीने महाक्रोधसे उनको ओर देखा था। क्रोधसे उनका मुखमण्डल काला पड़ गया। फिर उनको भ्रुकुटिकुटिल * ललाट-से अति शीघ्र एक देवी निकली थीं। फिर वह असुरों

* मार्कण्डेय चण्डी—इन्द्रदूत-संवाद, ८४—८८ श्लोक।

खिलाते हैं। यहां ऊंट और बकरे भी उससे सन्तुष्ट रहते हैं। किन्तु हिन्दुस्थानका काश इतना कड़ा होता है कि उसे पशु कभी नहीं खाता। काश अति पवित्र तृण है।

(पु०) केन जलेन कफात्मकेन हृत्याशयः अश्यते व्याप्यते ऽत्र, क-अश् अधिकरणे घञ्। २ क्षत, जखम, घाव। काशयति शब्दं करोति, काश-णिच् पचाद्यच्। ३ रोगविशेष, खांसीकी बीमारी।

"धूमोपघाताद्रजसस्तथैव व्यायामरूक्षान्ननिषेवणाच्च।
विमार्गगत्वादपि भोजनस्य वेगावरोधात् क्षवथोस्तथैव॥" (सुश्रुत)

मुख नासिकादि द्वारा अतिरिक्त धूम वा धूलि प्रभृतिके प्रवेश, अपरिपक्व रसके ऊर्ध्व गमन, व्यायाम, रूक्ष द्रव्यभोजन, द्रुत भोजनादि दोषमें भुक्तद्रव्यके विपथ पर गमन, मलमूत्रादिके वेगधारण और छिक्काके वेगरोधादि सकल कारणसे वायु कुपित हो अन्यान्य समुदाय दोष कुपित कर देता है। इसीसे काश विशेषकी उत्पत्ति होती है।

"पूर्वरूपं भवेत्तेषां शूकपूर्णगलास्यता।
कण्ठे कण्डूश्च भोज्यानामवरोधश्च जायते॥" (चरक चि०)

काश रोग उत्पन्न होनेसे पहले बोध होता मानो गल और मुखके मध्य कोई शूक (अनाजका रेशा) परिपूर्ण है। सुतरां गलेमें सरसर होने लगता है। फिर भोजन करते समय ऐसी यातना मालूम पड़ती मानो भुक्तद्रव्य अटका हुआ है।

"अधः प्रतिहतो वायुरूर्ध्वस्रोतःसमाश्रितः।
उदानभावमापन्नः कण्ठे सक्तस्तथोरसि॥
आविश्य शिरसः खानि सर्वाणि प्रतिपूरयन्।
आभञ्जन्नाक्षिपन् देहं हनुमन्ये तथाक्षिणी॥
नेत्रे पृष्ठमुरः पार्श्वे निर्भुज्य स्तम्भयंस्ततः।
शुष्को वा सकफो वापि कासनात् कास उच्यते॥
प्रतिघातविशेषेण तस्य वायोः स्वरंहसः।
वेदनाशब्दवैशिष्ट्यं कासानामुपजायते॥" (चरक)

निदान समूहद्वारा वायु अधोदिक् जा न सकनेसे ऊर्ध्व दिक् गमन करता है। सुतरां उदानता पाकर वह कण्ठ और वक्षःस्थलमें आसक्त हो जाता है। फिर वायु ऊर्ध्वदेहस्थ मुख, नासिका, कर्ण और चक्षु रूप छिद्र समूहमें घुस सकल छिद्र पूर्ण करता है। इसीसे वायु मुख द्वारसे विविध शब्दके साथ निर्गत होता है। उस समय रोगीका देह, हनुद्वय, मन्याद्वय, पृष्ठदेश, वक्षःस्थल, पार्श्वद्वय एवं नेत्रद्वय सङ्कुचित और हस्त पदादि आक्षिप्त हो जाता है। काशरोगमें कभी केवल वायुमात्र और कभी कफादि दोष भी उसके साथ निकलता है। वेगवान् वायु विविध भावमें प्रतिहत होनेसे नानाविध शब्द और वेदना हुआ करती है।

काशरोग कई प्रकारका है—वातज, पित्तज, श्लेष्मज, सन्निपातज, क्षतज और क्षयज।

"रूक्षशीतकषायाल्पप्रमितानशनं स्त्रियः।
वेगधारणमायासो वातकासप्रवर्तकाः॥
हृत्पार्श्वोरःशिरःशूलस्वरभेदकरो भृशम्।
शुष्कोरःकण्ठवक्त्रस्य हृष्टलोम्नः प्रताम्यतः॥
निर्घोषदैन्यस्तननदौर्बल्यक्षोभमोहकृत्।
शुष्कः कासः कफं शुष्कं कृच्छ्रान्मुक्त्वाल्पतां व्रजेत्॥
स्निग्धाम्ललवणोष्णैश्च भुक्तपीतैः प्रशाम्यति।
ऊर्ध्वं वातस्य जीर्णेऽन्ने वेगवान् मारुतो भवेत्॥" (चरक)

रूक्ष, शीतल एवं कषाय द्रव्य भोजन, अल्पपरिमाण भोजन, उपवास, अतिरिक्त स्त्रीसहवास, मलमूत्रादिके वेगधारण और परिश्रमजनक कार्यसमूह द्वारा वायु कुपित होता है। उससे अन्यान्य दोष भी कुपित हो वातज काश उत्पादन करते हैं। उस काशमें हृदय, पार्श्वदेश, वक्षःस्थल और मस्तकमें वेदना होती है। स्वरभेद पड़ता है। बार बार वक्षः, कण्ठ और मुख सूख जाता है। रोमहर्ष होता है। मूर्छा आती है। काशका अत्यन्त शब्द उठता है। शरीरको ग्लानि लगती है। मुख शुष्क रहता है। दुर्बलता आती है। क्षोभ बढ़ता है। मोह पड़ता है। फिर शुष्क कास प्रभृतिका लक्षण झलकता है। खांसते खांसते अति अल्प परिमाणमें शुष्क कफ निकलनेसे कुछ उपशम समझ पड़ता है। किन्तु स्निग्ध द्रव्य, अम्ल, लवण और उष्ण द्रव्य खानेसे उसका प्रकृत उपशम होता है। आहार जीर्ण होनेसे वातज काशका वेग बहुत बढ़ जाता है :

"कटूष्णविदाह्याम्लक्षाराणामतिसेवनम्।
पित्तकासकरं क्रोधः सन्तापश्चाग्निसूर्यजः॥

पर टूट प्रहार करने लगीं। यही देवी काली* है। इनका रूप चण्डीमें इस प्रकार बताया है,—

"काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी।
विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा।
द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसातिभैरवा।
अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा।
निमग्ना रक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा।"

काली—करालवदना (भयानकमुखवाली), असि-पाशधारिणी विचित्रखट्वाङ्गधरा, नरमुण्डमाला-शोभिता, व्याघ्रचर्मपरिधाना, शुष्कमांसा, अति-भयानक मूर्ति, अतिविस्तृतमुखमण्डला, लोल-रसना, भीषणा, गह्वरलग्ननयना और हुङ्कार शब्दसे दिङ्मण्डल-परिपूर्णकारिणी हैं। कालीने युद्धमें चण्ड-मुण्डको मार कौषिकीको उनके दोनों मुण्ड उपहार दे कहा था,—'इसने चण्डमुण्ड नामक दो महापशु मारे हैं, अब युद्ध यज्ञमें शुम्भ-निशुम्भको तुम संहार करो।' कौषिकीने हंस कर कहा,—'चण्डमुण्डको तुमने मारा है। इसीसे तुम्हारा नाम चामुण्डा विख्यात होगा।'

प्रायः जो काली वा श्यामा मूर्ति देख पड़ती उस-से साथ उस मूर्तिको सम्पूर्ण एकता नहीं लगती। फिर भी कुछ सादृश्य देख पड़ता है।

रक्तबीजके वधसमय इन्हीं कालीने जिह्वा निकाल और तदुपरि रक्तबीजका शरीर विनिर्गत समस्त रक्त लाल, पान किया था। कौषिकीके अस्त्रप्रहारसे रक्तबीज विनष्ट हुआ।

चण्डीमें कालीपूजाका कोई विधान नहीं मिलता शुम्भनिशुम्भके वध पीछे देवीने देवताओंसे जो पूजा-पद्धति कही वह शारदीय महापूजाकी कथा थी।

देवीभागवतके ५म स्कन्धमें २३ अध्याय पर कौषकी की उत्पत्तिके पीछे पार्वतीका शरीर कृष्णवर्ण पड़ने पर कालिका नामसे प्रसिद्ध होनेकी कथा लिखी है। किन्तु उनका नाम कालरात्रि बताया गया है। चण्डीकथित उक्त कालिकाका कोई कार्य नहीं मिलता, किन्तु देवीभागवतमें लिखा कि शुम्भनिशुम्भसे उनका घोर संग्राम हुआ था। फिर युद्धके पीछे उन्हींके हुङ्कार-से वह विनष्ट हो गया। वह बराबर कौषिकीके पार्श्वमें उपस्थित रहीं। देवीभागवतमें भी चण्डमुण्ड-वधके समय कौषिकीके कपालसे व्याघ्रचर्माम्बरा, क्रूरा, गजचर्मोत्तरीया, मुण्डमालाधरा, घोरा, शुष्क-वापीसमोदरा, खड्गपाशधरा, अतिभीषणा, खट्वाङ्ग-धारिणी, विस्तीर्णवदना और लोलजिह्वा कालीकी उत्पत्ति कही है। यही काली चामुण्डा नामसे विख्यात हुयीं। उन्होंने रक्तबीजका रुधिर पीया था। एतद्भिन्न अन्यान्य पुराणोंमें भी काली, भद्रकाली, महाकाली, इत्यादि नाम आये हैं। किन्तु उत्पत्तिके सम्बन्धमें कोई विशेष विवरण नहीं मिलता।

प्रतिष्ठान कालीकी पूजा, ध्यान, कवचादि एवं तान्त्रिक इत्यादि "श्यामा" शब्दमें और अवान्तर विवरण "दुर्गा" शब्दमें देखो।

कालीमूर्तिका रूप विचार कर देखनेसे समझ सकते कि वह महाकालकी प्रणयिनी हैं, अनन्तकाल-रूपी शिव पदतलमें दलित हो रहे हैं। सर्वध्वंसकारिणी शक्तिज्ञापक असि हाथमें है। भूत, वर्तमान और भविष्यत् कालवाचक त्रिनयन हैं। इत्यादि।

(भगवानकी कथा श्यामा शब्दमें देखो।)

कालीपंखी (हिं० स्त्री०) छड़्स् गुल्मविशेष, एक झाड़ी। उसके तनेसे सरल कण्टक निकलते हैं। पत्र प्रायः १२। १३ अङ्गुलि दीर्घ लगते हैं। उनका प्रान्तभाग दन्तुर रहता है। पुष्प पाटलवर्ण होते हैं। कालीपंखीके रक्तवर्ण फल पकनेसे काले पड़ जाते हैं। सिन्ध-पंजाब और गुजरातके मारवाड़में उसका सालोंतक अच्छा मिलता है। इसे पुष्पके लिये लगाते हैं।

कालीक (सं० पु०) के जले अलति पर्याप्नोति प्रभवति इत्यर्थः, क-अल-इकन् पृषोदरादित्वात् दीर्घः। क्रौञ्च, बक, किसी किस्मका बगला।

कालीघटा (हिं० स्त्री०) कृष्णवर्ण गगन मेघश्रेणी, उठता हुआ काला बादल।

कालीघाट—एक पीठस्थान। वह कलकत्तेके दक्षिण-प्रान्तमें प्राचीन गङ्गाके कछार पर अक्षा० २२° ३१′ १०″ उ० और देशा० ८८° २१′ पू० पर अवस्थित है।

* मार्कण्डेय—चण्डीपाठ, ७—८ श्लोक

पीतनिष्ठीवनाक्षित्वं तिक्तास्यत्वं स्वरामयः।
उरोधूमायनं तृष्णा दाहो मोहोऽरुचिर्भ्रमः॥
प्रततं कासमानश्च ज्योतींषीव च पश्यति।
श्लेष्माणं पित्तसंसृष्टं निष्ठीवति च पैत्तिके॥" (चरक)

कटुरस, उष्णद्रव्य, अम्लदाहकद्रव्य, अम्लरस एवं क्षार द्रव्य भोजन और क्रोध, अग्नि या रौद्रताप प्रभृति कारणसे पित्त कुपित हो अन्यान्य दोषको भी कुपित कर देनेसे पित्तजकासकी उत्पत्ति होती है। इसमें रोगी अपनी दोनों चक्षु पीतवर्ण देखता है। मुखका आस्वाद तिक्त रहता है। स्वर भङ्ग होता है। वक्षःस्थलमें धूम निर्गमकी भांति यातना उठती है। तृष्णा लगती है। दाह बढ़ता है। अरुचि मालूम पड़ती है। भ्रम भी आता है। खांसनेके समय आंखों चक्षुमें ज्योतिः निकलता है। फिर पित्तमिश्रित पीतवर्ण श्लेष्मा गिरता है।

"गुर्वभिष्यन्दिमधुरस्निग्धस्वप्नविचेष्टनैः।
वृद्धः श्लेष्मानिलं रुद्ध्वा कफकासं करोति हि॥
मन्दाग्नित्वारुचिच्छर्दिपीनसोत्क्लेशगौरवैः।
लोमहर्षास्यमाधुर्यक्लेदसंसदनैर्युतम्॥
बहुलं मधुरं स्निग्धं निष्ठीवेद् घनकं कफम्।
कासमानो ह्यरुग्वक्षः सम्पूर्णमिव मन्यते॥" (चरक)

गुरुपाक द्रव्य, क्लेदकर द्रव्य, स्निग्ध एवं मधुर भोजन तथा दिवानिद्रा, अव्यायाम प्रभृति कारणसे श्लेष्मा बढ़ वायुका पथ रोकता है। इसीसे श्लेष्मज कासकी उत्पत्ति होती है। कफज कासमें अग्नि-मान्द्य, अरुचि, वमन, पीनस रोग और उत्क्लेश बढ़ता है। शरीरमें भार बोध होता है। रोम हर्षित रहते हैं। मुखमें मिष्ट आस्वाद मालूम पड़ता है। शरीर अवसन्न हो जाता है। फिर कासके साथ मधुर स्वादयुक्त, स्निग्ध और घन कफ अधिक परिमाणमें निकलता है। वक्षःस्थल कफसे पूर्ण मालूम पड़ता है। खांसनेमें कोई वेदना मालूम नहीं पड़ती।

"अतिव्यवायभाराध्वयुद्धाश्वगजविग्रहैः।
रूक्षस्योरः क्षतं वायुर्गृहीत्वा कासमावहेत्॥
स पूर्वं कासते शुष्कं ततः ष्ठीवेत् सशोणितम्।
कण्ठेन रुजतात्यर्थं विरुग्णेनेव चोरसा॥
सूचीभिरिव तीक्ष्णाभिस्तुद्यमानेन शूलिना।
दुःखस्पर्शेन शूलेन भेदपीडाभितापिना॥
पर्वभेदज्वरश्वासतृष्णावैस्वर्यपीडितः।
पारावत इवाकूजन् कासवेगात् क्षतोद्भवात्॥" (चरक)

अतिरिक्त मैथुन, भारवहन, पथपर्यटन, युद्ध, वेगवान् अश्व या हस्तीको पकड़ उसके वेगरोध प्रभृति कार्य-द्वारा रूक्ष भोजनकारी व्यक्तिका वक्षःस्थल आहत होनेसे वायु कुपित हो क्षतज कास उत्पादन करता है। इस रोगमें प्रथमतः रोगीको सूखी खांसी आती है। पीछे कासके साथ रक्त निकलता है। कण्ठ और वक्षःस्थलमें वेदना उठती है। विशेषतः वक्षःस्थलमें सूचीवेधकी भांति यातना होती है। शूल, सन्ताप, सन्धिस्थानमें वेदना, ज्वर, श्वास, तृष्णा, स्वरभेद और पारावतके कूजनकी भांति शब्द प्रकाश पाता है।

"विषमासात्म्यभोज्यातिव्यवायाद्वेगनिग्रहात्।
घृणिनां शोचतां नॄणां व्यापन्नेऽग्नौ त्रयो मलाः॥
कुपिताः क्षयजं कासं कुर्युर्देहक्षयप्रदम्।
दुर्गन्धं हरितं रक्तं ष्ठीवेत् पूयोपमं कफम्॥
कासमानश्च हृदयं स्थानाच्च्युतमिव मन्यते।
अकस्मादुष्णशीतार्तो बह्वाशी दुर्बलः कृशः॥
प्रसन्नः स्निग्धवदनः श्रीमद्दर्शनलोचनः।
पाणिपादतलैः श्लक्ष्णैः सततासूयकस्तथा॥
ज्वरो मिश्राकृतिस्तस्य पार्श्वरुक्पीनसोऽरुचिः।
भिन्नसङ्घातवर्चस्त्वं स्वरभेदोऽनिमित्ततः॥
इत्येष क्षयजः कासः क्षीणानां देहनाशनः।
साध्यो बलवतां वा स्याद् याप्यस्त्वेवं क्षतोत्थितः॥
नवौ कदाचित् सिध्येतामपि पादगुणान्वितौ।
स्थविराणां जराकासः सर्वो याप्यः प्रकीर्तितः॥" (चरक)

विषमभाव अर्थात् न्यूनाधिकरूप भोजन, असात्म्य द्रव्य भोजन, अत्यन्त मैथुन, वेगवान् वायु प्रभृतिके वेग संरोध आदि दुष्कर कार्य और घृणा तथा शोक-वशतः अग्नि दूषित होनेसे वात, पित्त एवं कफ तीनों दोष कुपित हो क्षयज कास उत्पादन करते हैं। इस रोगमें देह क्षीण हो जाता है। हरित्वर्ण या रक्तवर्ण दुर्गन्धयुक्त और पूयकी भांति कफ निकलता है। खांसनेके समय बोध होता, मानो हृदयस्थान गिर पड़ता है। समय समय अकस्मात् उष्णता या शीत

कुब्जिकातन्त्र और शिवार्चनतन्त्रमें उक्त स्थान कालीघनामसे उक्त हुआ है। प्रवादानुसार यहां सतीका अङ्ग गिरा था। इसी कारण बहु दिनसे यह पीठस्थानके नामपर प्रसिद्ध है। भविष्य ब्रह्मखण्डमें लिखा है—

"गोविन्दपुरप्रान्ते च काली सुरधुनीतटे।"

पहले गङ्गाजी पर कालीदेवी विराजती थीं। पुराकालको सागरयात्री हिन्दू वणिक् उनके निकट घाट पर उतर कालीपूजा करते थे। उस समयसे उक्त स्थान कालीघाटके नामसे विख्यात हुआ है। निगमकल्पकी पीठमालामें कालीघाटकी सीमा इस प्रकार निर्दिष्ट है-

"दक्षिणेश्वरमारभ्य यावच्च बहुलापुरी।
धनुराकारक्षेत्रं च योजनद्वयसंख्यकम्॥
त्रिकोणे त्रिगुणाकारं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्।
मध्ये च कालिकादेवी महाकाली प्रकीर्तिता।
नकुलीशः भैरवो यत्र यत्र गङ्गा विराजिता।
कालीक्षेत्रं कालीक्षेत्रमभिहितोऽस्ति महेश्वर॥"

दक्षिणेश्वरसे बहुला पर्यन्त दो योजन-परिमित धनुराकार स्थान कालीक्षेत्र है, उसके मध्य एक कोस त्रिकोणाकार स्थानमें त्रिगुणात्मक ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर एवं मध्यस्थलमें महाकाली नाम्नी काली देवी हैं।

पहले कालीघाटकी चारों ओर घना जङ्गल था। लोगोंकी वसती न रही। उसी वनके मध्य काली देवी सामान्य पर्णकुटीमें अवस्थान करती थीं। कापालिक और संन्यासी उन्हें पूजते थे। प्रथम कालीदेवी गुप्त भावसे रहती थीं। इसीसे कुब्जिकातन्त्रमें वह गुप्तकाली नामसे उक्त हुयी हैं।

खृष्टीय षोड़श शताब्दको लिखित (मानसिंहके बङ्गाल आनेसे पहले) कविरामके दिग्विजयप्रकाशमें कहा है—

"पीठमालानुसारेण कालीदेव्याः प्रबोधतः।
वामभुजाङ्गुलिपातो जातो भागीरथीतटे॥ ६६९॥
कालीदेव्याः प्रसादेन किलकिलादेशवासिनः।
इन्दिरा पूजिता नित्यं सांकेतादिवकालतः॥ ६७०॥
प्रतापादित्यभूपस्य यशोरमन्दिरस्य च।
महाबाहुस्तथा राजन् गङ्गायां वर्तते सदा।
कायस्थानां गृहस्थाश्च वर्तते अधुना नृप।
गोविन्दपुरादिपुरं सर्वं तथाहि भद्रपल्लिकम्।
कालिदेव्याः समीपे च शृगालदहादिकं नृप॥ ६७१॥"

पीठमालातन्त्रके मतानुसार यहां भागीरथीके तीर सतीदेवीके शरीरसे वामहस्तकी अङ्गुलि गिरी थी। कालीदेवीके प्रसादसे किलकिलादेशवासी चिरकाल धन धान्यवान् रहेंगे। आजकल भागीरथीके तीर यशोरराज प्रतापादित्यका गङ्गावासस्थल है। गोविन्दपुरादि ग्राम, भद्रपल्ली, और कालीदेवीके निकटस्थ शृगालदाह (सियालदह) कायस्थोंके शासनमें है।

बोध होता कि उस समय उक्त सकल स्थान यशोरराज प्रतापादित्यके अधिकारभुक्त थे। जनश्रुति है। प्रवाद है—प्रतापादित्यके चचा वसन्तराय कालीदेवीके तत्कालीन पुजारी भुवनेश्वर ब्रह्मचारीके शिष्य थे। उन्होंके यत्नसे एक क्षुद्र मन्दिर निर्मित हुआ।

उसी समयसे कालीघाटका गुप्तपीठ साधारणको समझ देख पड़ा। उक्त विषय कविकङ्कणका चण्डीमङ्गल और तत्पूर्ववर्ती अकबरके समसामयिक त्रिवेणीनिवासी माधवाचार्यका चण्डीमाहात्म्य पढ़नेसे विदित होता है।

मालूम पड़ता है कि यशोरवाले कायस्थ राजाओंके समय यह स्थान देवोत्तर या ब्रह्मोत्तर स्वरूप दिया गया था। कारण उनके परवर्ती कालसे उक्त स्थान अपुत्रक भुवनेश्वरके दौहित्रवंशीय हालदार बराबर देवोत्तरस्वरूप भोग करते आते हैं। कालीघाटका वर्तमान कालीमन्दिर बड़िशावाले सावर्ण चौधरी-वंशीय सन्तोषरायके व्ययसे १८०९ ई० (उनके मरनेसे ५।६ वर्ष पीछे) को बना था।

कालीघाटका नकुलेश्वर लिङ्ग प्रसिद्ध है। निगमकल्प प्रभृति दो एक आधुनिक तन्त्रमें उसका उल्लेख मिलता है। पहले अति सामान्य कुटीरमें नकुलेश्वर लिङ्ग स्थापित था। १८५४ ई०को तारासिंह नामक किसी पञ्जाबी वणिक्ने प्रस्तरमय मठ निर्माण करा दिया।

कालीघाटमें काली एवं नकुलेश्वरको छोड़ श्यामराय तथा गोविन्दजीकी प्रतिमूर्ति भी सामान्य समझना न चाहिये। यह मूर्ति पहले गोविन्दपुरमें रही।

स्वरसे यातना मालूम होती है। बहु भोजन करते भी रोगी दुर्बल और क्षय रहता है। मुख प्रसन्न और स्निग्ध तथा चक्षु प्रियदर्शन लगता है। हस्त एवं पदतल मसृण पड़ जाता है। घृणा और हिंसा अधिक परिमाणमें आती है। द्विदोष वा त्रिदोषके कारण ज्वर, पार्श्ववेदना, पीनस और अरुचिका प्राबल्य होता है। कभी पतला और कभी कठिन मल निकलता है। स्वरभेद अकारण हुआ करता है।

उक्त पांच प्रकारके कासमें वातज, पित्तज और कफज साध्य है। क्षयकास स्वभावतः याप्य होता है। किन्तु क्षयज कास बहुत दुर्बल और क्षीण व्यक्तिके लिये प्राणघातक है। फिर बलवान् व्यक्तिके क्षयज कास उत्पन्न होते भी चिकित्सा करनेसे साध्य भी हुआ करता है।

एतद्भिन्न जराकास नामक एक प्रकार कास होता है। वह स्वभावतः ही याप्य है।

रूक्ष व्यक्तिको वायुजन्य कासमें प्रथमतः वायुनाशक द्रव्य समूह द्वारा सिद्ध यवागू, क्षीर, यूष एवं मांस रसादिके साथ स्निग्ध पेय द्रव्य, स्निग्ध धूम, स्निग्ध अवलेह, स्नेहाभ्यङ्ग, स्नेह परिषेक और स्निग्ध स्वेद प्रदान करना चाहिये। उसके पीछे अन्यान्य औषधादि व्यवहार करना पड़ता है। मलबद्ध रहनेसे वस्तिकर्म, ऊर्ध्ववात होनेसे भोजनके पूर्व घृतपान, पित्त एवं कफसंयुक्त वातज कासमें स्नेह विरेचन देना पड़ता है।

पित्तजन्य कासके साथ कफका विशेष अनुबन्ध रहनेसे वमनकारक घृतपान द्वारा, किंवा मदनफल, गम्भारीफल एवं यष्टिमधुके क्वाथ जल द्वारा, अथवा भूमिकुष्माण्डरस, तथा इक्षुरसके साथ यष्टिमधु और मदनफलके कल्कपान द्वारा प्रथमतः वमन कराते हैं। वमनद्वारा दोष निःसारित होनेपर शीतल और मधुररसयुक्त पेयादि पिलाना चाहिये। उसके पीछे अन्यान्य औषधका व्यवहार कर्तव्य है। किन्तु कफका अनुबन्ध अल्प रहनेसे वमन न करा मधुररसके साथ त्रिवृत् चूर्ण द्वारा विरेचन कराना चाहिये। कफ रहनेसे तिक्त रसविशिष्ट द्रव्यके साथ त्रिवृत् चूर्णका प्रयोग आवश्यक है। कफ पतला रहनेसे स्निग्ध एवं शीतल भोज्यादि और कफ घन रहनेसे रूक्ष तथा शीतल भोज्यादि व्यवहार कराना चाहिये।

कफज कासमें रोगीको बलवान् रहनेसे प्रथमतः वमन करा शुद्ध करना उचित है। उसके पीछे कटुरसयुक्त, रूक्ष और उष्ण यवागू प्रभृति सेवन करा अन्यान्य औषध व्यवहार कराना चाहिये।

क्षयज कासमें प्रथमतः शरीर तुष्टिकारक और अग्निदीप्तिकारक द्रव्यादि खिलाते हैं। दोष अधिक रहनेसे स्नेह द्रव्यके साथ मृदु विरेचन देना उचित है। उसके पीछे अन्यान्य औषध व्यवहार कराना चाहिये।

बिल्व, श्योनाक, गाम्भारी, पाटला एवं गणिकारी पञ्चमूल, अथवा शालपर्णी, चक्रमर्द, बृहती, कण्टकारी तथा गोक्षुर पञ्चमूलका क्वाथ प्रस्तुत करा पिप्पलिचूर्ण प्रक्षेपके साथ पान करनेसे वातज कासका उपशम होता है॥ १॥

भार्ग्यामलकी, बृहती, कण्टकारी, वासकत्वक् और द्राक्षा समुदायका क्वाथ शर्करा तथा मधु मिलाकर पीनेसे पित्तज कास प्रशमित होता है॥ २॥

कुष्ठ, कट्फल, ब्राह्मणयष्टिका, शुण्ठी और पिप्पलीका क्वाथ पान करनेसे श्लेष्मज कास दब जाता है। तद्भिन्न श्वास और वक्षोवेदना भी निराकृत होती है॥ ३॥

श्लेष्मज कासके साथ पार्श्ववेदना, ज्वर और श्वास रोग रहनेसे बिल्व, श्योनाक, गाम्भारी, पाटला, गणिकारी, शालपर्णी, चक्रमर्द, बृहती, कण्टकारी, तथा गोक्षुर दशमूलका क्वाथ पिप्पली चूर्णके साथ पान करना चाहिये॥ ४॥

कट्फल, गन्धतृण, ब्राह्मणयष्टिका, मुस्ता, धना, वचा, हरीतकी, कर्कटशृङ्गी, क्षेत्पापड़ा, शुण्ठी और देवदारु सकल द्रव्यका क्वाथ मधु एवं हिङ्गुके साथ पीनेसे वातश्लेष्मजन्य कास निवारित होता है। तद्भिन्न कण्ठरोग, क्षयरोग, शूल, श्वास, हिक्का और ज्वरादि उपद्रवकी भी शान्ति देख पड़ती है॥ ५॥

कण्टकारिका क्वाथ पिप्पलीचूर्णके साथ पान करनेसे सर्वविध कासका उपशम होता है॥ ६॥

तालीशादि चूर्ण, मरिचादि समशर्करचूर्ण

कालिय—बंगालके चौबीस परगनेका एक ग्राम। यह कलकत्तेसे २४ कोस दक्षिण गङ्गाके दाहने कूल पर अवस्थित है। यहां वाणिज्य बहुत होता है। समुद्रसे कलकत्ते जाते समय जहाज यहीं लङ्गर डालते हैं।

कालियक (सं० क्लि०) कलयत्ये तस्मात्, कल-ठञ्। [illegible] विधानादि।

काल्पी (कालपी) युक्तप्रदेशके जालौन जिलेकी कालपी तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा० २६° ७' ४८" उ० और देशा० ७९° ४७' २२" पू० पर जालौन नगरसे १३ कोस पूर्व अवस्थित है। पुरानी कालपीके अतिरिक्त नयी कालपी बनी है। नगर यमुना नदीके तीर पर्वतके मध्य बसा है। ऐतिहासिक फरिश्ताके मतानुसार खृष्टीय ३३०—४०० शताब्दके मध्य कन्नौजके वासुदेवने कालपीको स्थापन किया था। किन्तु स्थानीय लोग कहते कि कालियदेव राजा इसके स्थापयिता थे। ११९६ ई० को मुहम्मद घोरीके प्रतिनिधि कुतुबउद्-दीनने इसे जय किया। १४०० ई० को कालपी मुहम्मदखान्‌को दी गयी। जौनपुरके शरकी वंशीय मुसलमान नवाबोंमें इब्राहिम नामक किसी नृपतिने अधिकार करनेको अतिमात्र उत्सुक हो पञ्चदश शताब्दके प्रारम्भमें दो बार कालपी नगर आक्रमण किया था। किन्तु वह दोनों बार व्यर्थ मनोरथ हो लौट गये। १४३५ ई० को मालवराज होशङ्गने आक्रमण कर कालपीका अधिकार किया। १४४२ ई० को शरकी वंशीय महमूद राजाने होशङ्गसे कहला भेजा कि उन्होंने कालपीमें जिस प्रतिनिधिको रखा, वह मुसलमान धर्मके विरुद्ध आचरणमें लगा था। महमूदने उस प्रतिनिधिको शास्ति देनेके लिये होशङ्गसे अनुमति ली। तदनुसार महमूद शास्ति देनेके बहाने स्वयं कालपी अधिकार कर बैठे। शरकी वंशीय शेष राजा सुलतान हुसेनके साथ १४७७ ई० को दिल्लीके सम्राट्‌का एक युद्ध हुआ था। उसमें हुसेनके हार जाने पर कालपी नगर शरकी वंशके हाथसे निकल दिल्ली सम्राट्‌के अधिकारमें गया। फिर सम्राट् इब्राहीमके समय १५१८ ई० को जलाल खान् जौनपुरके शासनकर्ता बनकर और कुछ दिन पीछे कालपीमें स्वयं स्वाधीन राजा हो ससैन्य आगरे सम्राट्‌का आक्रमण करने चले। अन्तको वह हार कर लौट भागे। किन्तु गोंडजातीय राजाने उन्हें पकड़ इब्राहीमको सौंपा था। उसके पीछे मुगल सम्राटोंके शासनकाल कालपीमें अनेक घटनायें हुईं। अकबर शाहकी टकसाल कालपीमें ही थी। यहां ताम्रमुद्रा (पैसे) प्रस्तुत होती थी। महाराष्ट्रोंने कालपीको अपना अड्डा बनाया। १८०३ ई० को नाना गोविन्द रावने कालपीका अधिकार किया था। किन्तु उसी वर्ष दिसम्बर मास वह अंगरेजोंके हाथमें चली गयी। फिर कम्पनीने राजा हिम्मत बहादुरको जो राज्य दिया, कालपी नगर उसीके मध्य पड़ा था। किन्तु अल्प दिनोंमें ही उक्त राजाके मर जानेसे १८०४ ई० को कालपीमें फिर अङ्गरेजोंका अधिकार हो गया। उसके पीछे एक बार गोविन्दरावको अङ्गरेजोंने कालपी सौंप दी। किन्तु उन्होंने उसके बदले दूसरे दो स्थान ले लिये, जिससे कालपी अङ्गरेजोंके ही हाथ रह गयी। बलवेके समय झांसीकी रानी, रावसाहब और बांदेके नवाबने यहां प्रायः १२००० विद्रोही सेनादल समवेत किया था। अङ्गरेज सेनापति सर ह्यु रोजने ससैन्य प्रतिकूल यात्रा कर कालपीमें उन्हें हरा दिया।

यमुना नदी पर कालपीके पुरातन दुर्गका भग्नावशेष देख पड़ता है। दुर्गका अधिकांश यमुनाके गर्भमें है। नदीसे दुर्गमें जानेका पथ नहीं। दुर्गमें महाराष्ट्रोंके शासन कालकी कई इमारतें देखनेको मिलती हैं। पश्चिममें बहुतसी कबरों और मसजिदोंके चिह्न विद्यमान हैं। उनके वायुकोणमें समावतीका मन्दिर है। यहां एक बड़ा बाजार लगता है। वर्षाकालको उस बाजारमें बौद्ध और हिन्दुओंके शासनकालकी मुद्रा बिकती है। पुरातन हर्म्यादिके मध्य मदार साहबकी कब्र, गफूरकी कब्र, चोरबीबीकी कब्र, बहादुर शहीदकी कब्र, और चौरासी गुम्बज देखने लायक हैं। फिर दूसरी एक कब्र पर प्रकाण्ड सिंहमूर्ति है। उपरि उक्त स्थानोंमें चौरासी गुम्बज नामक हर्म्य सर्वापेक्षा प्रधान है। उस गुम्बजमें पत्थर और चूनेका बहुत अच्छा काम बना है। उसमें अनेक प्रकारके बेलबूटे

क्षयकासमें पित्त, कफ और वायु सकल दोष होनेसे कण्टकारी, वासामला एवं चक्रमर्दके कल्क और दुग्धके साथ यथानियम घृत पाक कर सेवन कराना चाहिये। कासरोगमें मूत्रकी विवर्णता रहने अथवा कष्टसे मूत्र निकलनेपर भूमिकुष्माण्ड या इक्षुरस और तामगन्धके साथ घृत या दुग्धपाक कर पिलाते हैं।

लिङ्ग, गुह्य, कटी एवं वंक्षण (कूल्हेके जोड़) में शूल और वेदना रहनेसे मधु घृतमण्ड अथवा मिश्रित घृत तथा तैलकी पिचकारी लगाना चाहिये।

इन्द्रायणी, दालचीनी और तेजपातका चूर्ण एक एक तोला, पीपलका चूर्ण ४ तोला तथा शक्कर, किश-मिश, आमूलक और पिण्डखजूर आठ-आठ तोला सकल द्रव्यों मधुके साथ वटिका बना सेवन करनेसे रक्तपित्त श्वास कास प्रभृति निवारित होता है।

(चरक० चि० ११ अ०)

कासरोगके कारण मस्तकमें वेदना, नासा एवं मुखसे जलस्राव, हृदयमें भारबोध प्रभृति उपद्रव रहने पर धूमपान कराना पड़ता है। उस धूम मुखसे खींच फिर मुख द्वारा ही निकालते हैं। इस रोगमें शिरो-विरेचक धूमपान कराने पर एक शराव (कटोराकार पात्र) में औषध रख उसमें आग लगा दूसरे छिद्रवाले शरावसे ढाक सन्धिस्थल लेपन कर देना चाहिये। फिर एक छिद्रमें नल द्वारा धूमपान किया जाता है।

मनःशिला, हरिताल, यष्टिमधु, जटामांसी, मुस्ता और इङ्गुदीफल सकल द्रव्यका धूमपान करनेसे वक्षः-लिप्त श्लेष्म विच्छिन्न हो जाते सर्वविधि कासरोग छूटता है। इस धूमपानके पीछे ईषदुष्ण दुग्ध गुड़के साथ पीना चाहिये।

प्रपौण्डरीक, यष्टिमधु, पद्मकाष्ठ, मनःशिला, मरीच, पिप्पली, द्राक्षा, एला, और सुरसामञ्जरी पीस एक टुकड़े पटवस्त्रमें लगा उसकी पुष्ट बत्ती बनाते हैं। इस वस्त्रखण्डसे बत्ती बना उसका धूमपान करनेसे भी कासरोगमें विशेष उपकार होता है। इस धूम-पानके पीछे दूध या गुड़का शरबत पीते हैं। मनः-शिला, इन्द्रायणी, मरीच, यवक्षार, रसाञ्जन, नागरमोथा, धवका गोंद, चित्रकमूल, हरिताल, वनमेथीबीज, लाक्षा और गन्धद्रव्य सकल द्रव्य पूर्वकी भांति पट्टवस्त्रमें लगा उस नियमसे ही धूमपान करना चाहिये।

इङ्गुदीफल, कण्टकारी, शुण्ठी, मालकांगनी, मनः-शिला, कार्पासबीज और अश्वगन्धा सकल द्रव्य पूर्वकी भांति नियमसे पट्टवस्त्रमें लगा धूमपान करना पड़ता है।

कासरोगोंका यावदीय मिटने किन्तु कफ बढ़नेसे यदि वक्षःस्थल और मस्तकमें कुठाराघातकी भांति वेदना रहे, तो निम्न लिखित धूमपान कर्तव्य है,—

अश्वगन्धा, अमलतासमूल, वार्त्ताकका और चक्र-मर्द सकल द्रव्य पीसकर पट्टवस्त्रमें लेपन करना चाहिये, फिर इस वस्त्रसे बत्ती बना उसका धूमपान करना पड़ता है, इस धूमपानके पीछे जीवनीयघृत पीते हैं।

मनःशिला, पलाश, वनयवानी, वंशलोचन और इङ्गुदीकी पूर्ववत् बत्ती बना धूमपान करना चाहिये। इस धूमपानके पीछे शक्करका पना, गुड़का शरबत या जलका रस पीते हैं।

मनःशिला और बटकी कच्ची जटा पीसकर पूर्व-की भांति पट्टवस्त्रमें लेपन करना चाहिये। फिर उसमें घृत लगा उसकी बत्तीका धूमपान करते हैं। इस धूमपानके पीछे तित्तिरिमांसका रस (शोरबा) पीना चाहिये। स्वेद, विरेचन, वमन, धूमपान, लघुभाव भोजन, शालितण्डुल, गेहूं, श्यामाधान्यका चावल, यव, कोदोधान बीज (चामगुना), माषकलाय, मूग एवं कुलथ कलायका यूष; ग्राम्य, जलचर, अनूप तथा धन्व-देशजात मांस, मद्य, पुरातन घृत, छागदुग्ध, छागघृत, बथुआका शाक, काकमाची शाक, बैंगन, कचीमूली, कण्टकारी, कासी कसौंदी, जीवन्ती तथा सुपेयाशाक, द्राक्षा, कुन्दरु, मातुलुङ्ग, पद्ममूल, नागक, छोटी इलायची, गोमूत्र, लहसुन, हरीतकी, सोंठ, पीपल, मरीच, उष्ण जल, मधु, नीम, दिवानिद्रा और लघु अन्नपान कासरोगमें हितकर हैं।

तैलादि स्नेह द्रव्य, दुग्ध इक्षुरस, तथा गुड़जात

कटे हैं। मोदीवंशीयोंके समय जिसप्रकारकी हर्म्य-प्रणाली प्रचलित थी, उसी गठनके साथ कालपीकी इमारतकी भी बराबरी देख पड़ती है। गुम्बज़ सम-चतुष्कोण है। उसकी एक दिक्, बाहरी ओरसे नापने पर ८२हाथ दीर्घ और ५३हाथ उच्च होगी। भीतरका स्थान शतरंजकी बिसात-जैसा है। एक एक ओर आठ आठके हिसाबसे सब ६४ स्तम्भ हैं। स्तम्भोंपर दोनों ओर ४९ ४९ कर ९८ मेहराबें लगी हैं। छत चारो ओर समतल है। मध्यस्थलमें गुम्बज बना है। चारो कोण पर चार छोटे छोटे दूसरे गुम्बज देखनेमें बहुत सुन्दर हैं। उसकी ओर दृष्टिपात करनेसे मनमें एक प्रकारका अपूर्व भाव उदय होता है। ठीक निर्णय किया जा नहीं सकता—उसका चौरासी गुम्बज नाम क्यों पड़ा? सम्भवतः चालीस गुम्बजसे चौरासी गुम्बज नाम पड़ गया होगा। वह आधुनिक नगरको पश्चिमदिक् है। नूतन नगरको पश्चिमदिक् गणेशगञ्ज और तार-नामगञ्ज है। वहां विलक्षण व्यवसाय होता है। योधाजार नामक स्थानमें सन् ८५३ हिजरीकी एक शिलालिपि देख पड़ती है। फिर पट्टी गलीके प्रवेश-द्वार पर सन् १०८१ हिजरीकी और शेख अब्दुल गफुरके कूपपर सम्राट् औरङ्गजेबके राजत्वके द्वादश वर्षकी एक लिपि अद्यापि विद्यमान है।

राजा वीरबलने कालपी नगरमें ही जन्म लिया था। वह जातिके ब्राह्मण थे। पहले उनका नाम महेश-दास था। वीरबल सम्राट् अकबरके दक्षिण हस्त थे।

कालपीकी लोकसंख्या आजकल प्रायः साढ़े चौदह हजार होगी। वर्षाकालकी झांसी और कानपुर जानेके लिये पहले यमुना पर नौका या सेतु बनता था। बहुतसे रेलवेके घाट भी हैं। उरई, हमीरपुर, बांदा, जालौन और झांसी जानेके लिये कई उत्तम पथ कालपीसे निकले हैं। वहांसे रुई, और अनाज कान-पुर, मिर्जापुर और कलकत्ते भेजा जाता है। नदीकी राह भी अनेक पण्य द्रव्य आते जाते हैं। कालपीमें बढ़िया मिसरी बनती है। कागजका कारखाना भी है। कालपीका कागज बहुत अच्छा होता है। पहले कालपीका कागज सुप्रसिद्ध था।

कानपुरसे बम्बईको ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे कालपी होकर गयी है। कालपी ष्टेशन भी है। यमुनापर पक्का पुल बंधा है।

कालपीमें एक अतिरिक्त सहकारी कमिश्नर रहता है। कई अदालतें, पुलिसके थाने, औषधालय और विद्यालय भी हैं।

काल्मक—चीनतातारवासी इलिउथोंकी एक शाखा काल्मक अपनेको अलोट कहते हैं। वह जंगर, तार्गत, खोसद और तारबेत चार जातियोंके मध्य अन्यतममें आगत हैं। १६७१ ई० को उन्होंने खलखान ही राज्य स्थापन किया था। प्रायः एक शताब्द काल उनका राजत्व रहा। शेषको काल्मक चीनावोंके अधीन हो गये। तुर्की कलीमक (अर्थात् पश्चात् परित्यक्त) वा मङ्गोलीय खोलएमक (अग्निराशि) अथवा मङ्गोलीय काल्मक (अर्थात् दुर्दान्त लोग) शब्दसे उनके नामकी उत्पत्ति है। युयेन वंशका अधःपतन होनेसे एक दल शीघ्र मरुके दक्षिण गया और कोकनर ह्रद पर्यन्त फैल पड़ा। उसी वंशके कुछ वंशधर १६७१ ई० को महाकष्टसे चीन देशको लौटे थे। काल्मक और उज-बक लोग एक मूल जातिसे उत्पन्न हैं। वासपरिवर्तन करनेसे वह काल्मक कजाक और खरघिज जातिके साथ एक प्रकार मिल गये हैं। वह चार प्रधान शाखामें विभक्त हैं। यथा—१ खासकोट वा खोसद—वह युद्ध व्यवसायी हैं। उनकी संख्या प्रायः ६०००० है। वह कोकनर ह्रदके निकट रहते हैं। फिर उनमें कुछ लोग एशियाख्य रूसकी इटिश नदीके तीर जाकर बसे हैं। शेषको उनकी द्वितीय शाखा जङ्गरोंमें मिल गयी है। उक्त जातीय दूसरा दल युरोपीय रूसके अस्त्रा-खान जिलेमें रहता है। २ जङ्गर—चीन राज्यके पश्चिम जुङ्गरिया राज्यमें उनका वासस्थान है। उन्हींके नाम-से वह स्थान भी हो गये हैं। उनकी संख्या प्रायः २०००० है। ३ तरेट, तागल या टोमद। वह जुङ्गरिया छोड़ युरोपीय रूसकी डन और इसिल नदीके तीर जा कर रहे हैं। उनकी संख्या प्रायः १५००० है। वह आजकल डन कज्जाकोंके साथ प्रायः मिल गये हैं। ४ तार्गत—वह १६६० ई० को जुङ्गरिया छोड़ अस्त्रा

भक्ष्य समुदाय, पिचकारी, नस्य, रक्तमोचण, व्यायाम, दन्तघर्षण, रौद्रादि सन्ताप, दुष्टवायु, बमपथमें गमन, मल एवं मूत्र वमनादिका वेगधारण, मत्सर, धान्य प्रभृति कन्द, सर्षप, मौको, पुदीना, दुष्ट जलपान तथा विरुद्ध, गुरुपाक और शीतल अन्नपानादि कासरोगमें अहितकर है। (पथ्यापथ्यसंग्रह)

एलापाथीके मतमें—काडलिवर (मछलीके कलेजे-का) तैल ५से १० बूंद तक ईषदुष्ण दुग्धके साथ पीनेसे कास निवारण होता और रोगी बलवान् रहता है।

होमियोपाथीके मतमें—टिंचर ब्राइयोनिया कासका महौषध है। उसे ५से १० बूंद तक आध छटांक जलमें डाल सेवन करनेसे भयानक कास भी अच्छा हो जाता है।

अकरकरहा और वच सर्वदा मुखमें रखनेसे सामान्य कास छूटता है। सर्वदा गोंद चुसते रहनेसे भी कासमें बहुत उपकार देख पड़ता है।

यक्ष्मा, चयकास और क्षीणकास रोगीके अमङ्गलका कारण है। यक्ष्मा देखो।

४ छिक्का, छींक। ५ इन्दुरविशेष, एक चूहा। ६ ऋषिविशेष। काशिराजके पिता सुहोत्र।

काशक (सं० पु०) काशते दीप्यते, काश कर्तरि ण्वुल्। १ तृणविशेष, कांस नामकी घास। २ सुहोत्रके पुत्र। उनका अपर नाम काशि था।

"काशकस्य सुतस्तस्य ग्रुत्समिहंदः।" (हरिवंश, ३२ अ०)

(त्रि०) ३ प्रकाशयुक्त, रोशन।

काशकृत्स्न (सं० पु०) एक ऋषि। वह भी एक आदिशाब्दिक ऋषियोंके अन्तर्भूत थे।

"इन्द्रश्चन्द्रः काशकृत्स्नापिशलिशाकटायनाः।
पाणिन्यमरजैनेन्द्रा जयन्त्याद्यादिशाब्दिकाः॥" (कविकल्पद्रुम)

काशकृत्स्नक (सं० त्रि०) काशकृत्स्नेन निर्वृत्तम्, काशकृत्स्न-वुञ्। काशकृत्स्नकर्तृक निष्पादित।

काशकृत्स्नि (सं० पु०) काशकृत्स्नके गोत्रापत्य।

काशज (सं० त्रि०) काशे जायते, काश-जन्-ड। काससे उत्पन्न।

काशनाशन (सं० पु०) कर्कटशृङ्गी, ककड़ा सींगी।

काशपरी (सं० स्त्री०) काशः परो यस्याः, ङीष्। काशाढ्य एक नदी।

काशपरेय (सं० त्रि०) काशपर्यां भवः, काशपरी-ढक्। काशपरी नदीसे उत्पन्न।

काशपुर—आसामके अन्तर्गत कछार जिलेका एक ग्राम। बराइल नामक गिरिश्रेणीकी दक्षिण दिक् जो शाखा गयी, उसीके मध्य काशपुर अवस्थित है। किसी किसी प्राचीन ग्रन्थमें उक्त स्थानका नाम 'खस्पुर,' 'कुशपुर' या 'खासपुर' लिखा है। वहां कछारके राजाओंका राजभवन था। उसका भग्नावशेष वहां है। कछारके राजाओंके समय वहां हिन्दूधर्म प्रबल था।

काशपुष्पक (सं० क्ली०) स्थावर विषान्तर्गत कन्दविष, एक जहरीला कन्द।

काशपौण्ड्र (सं० पु०) काशप्रधानः पौण्ड्रः, मध्यप०। एक जनपद।

"कोशलाः काशपौण्ड्राश्च कालिङ्गा मागधास्तथा।" (भारत, कर्ण, ८ अ०)

काशफरी, काशपरी देखो।

काशफरेय, काशपरेय देखो।

काशब्द (सं० पु०) 'का' 'कोलाहल' 'का' का शोर।

काशमय (सं० त्रि०) काशेन प्रचुरस्तद्विकारो वा, काश-मयट्। १ अधिक काशविशिष्ट, कांससे भरा हुआ। काशतृणनिर्मित, कांसका बना हुआ।

"कुशकाशमयं बर्हि रास्तीर्य भगवान् मनुः।" (भागवत, ३।२२।३०)

काशमर्द (सं० पु०) काशं मृद्नाति उपशमयति, काश-मृद्-अण्। क्षुद्र क्षुप विशेष, कसौंदीका पेड़। उसका संस्कृत पर्याय—अरिमर्द, कासमर्द, कासारि, कास-मर्दक, कास्न, कनक, अरण और दीपन है। Cassia Sophora काशमर्दको हिन्दुस्थानमें बनार, कसौंदा, कसौंदी, या बासकी कसौंदी, बंगलामें कालकासुन्दा, दक्षिणमें जंगली तकल, गुजरातमें कुवाड़िया, मार-वाड़में रनतोकल, तामिलमें पोन्ना-विराई, तैलगुमें पेदी संगेदु, मलयमें पोन्नामतकर और सिंहलमें उरुतोर कहते हैं।

वह भारतमें निम्न हिमालयसे सिंहल और बर्मा पर्यन्त सर्वत्र पाया जाता है। क्षुप क्षुद्र और पुष्प हरिद्रावर्ण होता है। उससे दुर्गन्ध निकलता

नहीं और रहने लगे। इन्हें आज भी लोग "वल्गावासी" काल्मक कहते हैं।

काल्मक सिवा दूसरी किसी मङ्गोलीय वा तुर्क जातिके तुर्कस्तानवासियोंकी आकृति प्रकृतिसे उनका पूर्ण सौसादृश्य नहीं पड़ता। सप्तदश शताब्दी पूर्व अरनाविट्सने हूण जातिकी वर्णना की थी। उसके साथ काल्मकोंका ही सम्पूर्ण सादृश्य देखा जाता है। किसी समय हूण दक्षिण युरोपमें फैल गये थे।

काल्मक—खर्वकाय, विस्तृत स्कन्ध, दीर्घ मस्तक, रक्ताभ गात्रवर्ण (नातिकृष्णवर्ण), अर्धमुद्रितनेत्र, सरल निम्नमुख-नासिक, अल्पश्मश्रुमालारम्भ और कुञ्चित एवं ऊर्ध्वकेश होते हैं। यह मुगल और मंचू लोगोंकी मूल जाति गिने जाते हैं। काल्मक भ्रमणशील, पशुपृष्ठवासी और बहुत ही युद्धप्रिय हैं। यह साधारणतः यवके सत्तू पानीमें घोल कर खाते और कुमिस नामक एक प्रकार पानीय (घोटकीके मट्ठे दूधसे प्रस्तुत) पीते हैं। १८२८ ई० को इनमें काल्मकोंकी शिक्षाके लिये विद्यालय प्रतिष्ठित हुये थे। उन विद्यालयोंकी शिक्षासे वह सभ्य और शिक्षित और ईसाई बन रहे हैं। किन्तु अनेक काल्मक आज भी बौद्ध ही हैं।

काल्य (सं० क्ली०) कल्यमेव स्वार्थे ष्यञ्, कल्यति चेष्टां वा, कलि-यत् प्रज्ञादित्वात् अण्। १ प्रत्यूष, सबेरा। (त्रि०) २ प्रातःकाल कर्तव्य, सबेरे किया जानेवाला।

"इतरि काल्यसमये बहे नीरानुगमन।" (भागवत, ९। १०)

काल्यक (सं० पु०) काले साधुः काल-यत् स्वार्थे कन्। आमहरिद्रा, कच्ची हलदी।

काल्या (सं० स्त्री०) कालः प्राप्तो ऽस्याः, काल-यत्-टाप्। १ गर्भधारणमासकाल प्राप्ता गौ, उठी हुयी गाय, इसका अपर संस्कृत नाम उपसर्या है। २ प्रतिवत्सर-प्रसवयोग्या गौ, हर साल ब्यानेवाली गाय।

काल्याणक (सं० क्ली०) कल्याणस्य भावः, कल्याण वुञ्। मनोज्ञादिभ्यश्च। पा ५।१।१३३। कल्याणता, भलाईका भाव।

काल्याणिनेय (सं० पु०) कल्याण्या-अपत्यं कल्याणी ढक् इनङादेशश्च। कल्याण्यादीनामिनङ्। पा ४।१।१२६। १ कल्याणीके पुत्र। (त्रि०) २ कल्याणीसे उत्पन्न।

काल्याणीकृत (वै० त्रि०) मंगल किया हुआ।

"काल्याणीकृता दैव हर्षि ...।"

(अथ् २।१।१)

काविल (हि०) कब देखो।

काव (सं० क्ली०) कविर्देवता अस्य, कवि-अण्। साम-विशेष। इसके देवता कवि हैं।

कावचिक (सं० क्ली०) कवचिनां समूहः, कवचिन्-ठञ्। कवचिनश्च। पा ४।२।४१। १ वर्मधारी योद्धागण, जिरह बखतर पहने हुये लोगोंका गिरोह। (त्रि०) २ कवच-सम्बन्धीय, बखतरके मुताल्लिक।

कावट (सं० पु०) कर्वट, १०० गांवोंका परगना या जिला।

कावड़ा—बङ्गालमें रहनेवाली एक जाति। कावड़ा चोरी करनेवाले कहाते हैं। परन्तु इनमें बहुतसे लोग खेती आदिके सहारे भी जीविका उपार्जन करते हैं।

कावर (हिं० पु०) १ अस्त्रविशेष, एक छोटा बरछा। यह जहाजको गलहीमें बांध कर रखा जाता है। कावरसे ह्वेल आदिको मारते हैं।

कावरी (हिं० स्त्री०) मुद्धी, रस्सीका फंदा। यह दो टोली रस्सियां बंटनेसे बनती है। जहाजमें उससे चीजें बांधी जाती हैं।

कावरूक (सं० पु०) १ पेचक, उल्लू। (त्रि०) २ भयानक, शोकनाशक। ३ स्त्रीभक्त, जोरूका गुलाम।

कावली (हिं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, किसी किस्मकी मछली। यह दाक्षिणात्यकी नदीमें देख पड़ती है।

कावष (सं० क्ली०) सामविशेष।

कावषेय (सं० पु०) यजुर्वेदके एक ऋषि।

कावा (फा० पु०) चक्राकार भ्रमण, चक्कर, भंवर। घोड़ेके गलेकी रस्सी पकड़ एक आदमी खड़ा हो जाता और उसे नाटनेके लिये अपनी चारो ओर घुमाता है। इसीको प्रायः कावा कहते हैं।

कावाट (सं० पु०) कु कुत्सितः ईदृग् वा वाटः, कोः कादेशः। वाचकके द्वारा कलह, जबानी झगड़ा, किचकिच।

रहता है। इसका मूलदेश कठोर पड़ता है। शिरा संयुक्त रहती है। एक गुच्छ और महीन होते हैं। चपटी छोटी, भीगी और चपिट फली लगती है। कासमर्दको एक झाड़ी समझना चाहिये। वर्षाकालको यह प्रायः सभी जगह उपजता और अपरापर साथ पुष्प निकलता है।

वैद्यक मतसे कासमर्द, रोचक, वृष्यकारक, विषघ्न, रक्तदोष निवारक, मधुर, वातश्लेष्मनाशक, पाचक, कण्ठविशोधक, पित्तघ्न, ग्राहक, लघु और कफ, हृ नाशक है।

हकीमोंके मतानुसार शिरके साथ इसकी जिया पीस कर चिकनाईसे मर्दन करनेसे आरोग्य होता है। चन्दनके साथ कासमर्द बांट कर लगानेसे दाद मिट जाता है।

कोई कोई इसका पत्र चन्दनके साथ व्यवहार करते हैं। कासमर्दका पत्र पुराना इसको मधुमें मिला कर दाद या अन्यान्य चर्म पर लगायी जाती है। बहुमूत्ररोगमें इसके काथ काममें आता है। कसौंदीकी पत्तियां पशु और मनुष्य दोनों खाते हैं। उबालनेसे इसका दुर्गन्ध निकल जाता है।

कासमर्द्दन (सं० पु०) कासं मर्दयति, कास-मृद णिच् ल्यु। कासमर्द, कसौंदी।

काशय (सं० पु०) काशिराजके पुत्र।

"काशेय काश्यो नृपः।" (हरिवंश, २९ अ०)

काशा (सं० स्त्री०) काशते इति, काश-अच्-टाप्। काश तृण, काश। 'काश' देखो।

काशाल्मलि (सं० स्त्री०) कुत्सिता शाल्मलि, कोः कादेशः। कूटशाल्मली, एक सेमलका पेड़।

काशि (सं० स्त्री०) काश-इन्। १ काशी, बनारस। (पु०) २ काशीनगरीस्थापक नृपविशेष।

[illegible]

३ मुष्टि, मूठ। ४ सूर्य। सुहोत्रके एक पुत्र। यह धन्वन्तरिके पितामह थे। (त्रि०) ५ प्रकाशित, जाहिर।

काशिक (सं० त्रि०) काशिदेश, काशिषु भवो वा, काशि-ठञ् ठिन् वा। १ काशिसम्बन्धीय, बनारसके सुवासित। २ काशिजात, बनारसका पैदा।

काशिकन्या (सं० स्त्री०) काशिवासिनी कन्या, मध्यप०। १ काशिवासिनी कुमारी, काशीके रहनेवाली लड़की। काशीखण्डमें काशीकन्याओंको पूजने और जिमानेकी विधि है। २ काशिराजकन्या, काशीके राजाकी लड़की।

काशिकसूक्ष्म (सं० क्ली०) काशीका सफेद सूत, काशीकी बढ़िया रुई।

काशिका (सं० स्त्री०) काशि स्वार्थे कन्-टाप्, यद्वा काशयति प्रकाशयति आत्मं भक्तानाम् काश-णिच्-ण्वुल्-टाप्। इत्वम्। १ काशी, बनारस। २ सबको निवृत्ति देनेवाली परमशक्ति आत्मकारिणी तीर्थश्रेष्ठ मणिकर्णिका और ज्ञानप्रवाह रूप निर्मल गङ्गाविशिष्ट अपनी बुद्धि।

"मनोनिवृत्तिः परमोपशान्तिः सा तीर्थवर्या मणिकर्णिका च।
ज्ञानप्रवाहा विमला हि गङ्गा सा काशिकाहं निजबोधरूपा॥"

३ जयादित्य और वामनकृत पाणिनिकी एक वृत्ति।

काशिकाप्रिय (सं० पु०) काशिका प्रिया यस्य, काशिकायाः प्रियो वा। काशिराज दिवोदास।

काशिकावृत्ति (सं० स्त्री०) पाणिनि-व्याकरणकी व्याख्याका एक ग्रन्थ। किसीके मतानुसार जयादित्यने प्रथम ५ अध्याय और वामनने शेष ३ अध्याय बनाये हैं। फिर किसी किसी प्राचीन हस्तलिखित प्रथम ४ अध्यायकी पुष्पिकामें 'वामन-काशिका' लिखा है। किसी किसी हस्तलिपिकी समाप्ति-पुष्पिकामें "पण्डितोपाध्यायवामनजयादित्यकृतायां काशिकायां वृत्तौ" लिखा देख पड़ता है।

भट्टोजिदीक्षित, रायमुकुट, माधवाचार्य प्रभृति वैयाकरणोंने काशिकासे जो विचार प्रमाण उठाये उनमें भी बड़ी गड़बड़ है। धातुवृत्तिमें 'शर्करा' शब्द साधनेके समय रायमुकुटने जयादित्यके नामसे (५।२।१०५ सूत्रकी) काशिकावृत्ति उद्धृत की है। फिर 'पाष्टक' शब्द साधते समय 'भागवृत्ति' पाणिनि-सूत्रके (पा ५।२।१००) व्याख्यानके प्रसङ्गमें उसमें जयादित्यका उक्त मत ग्रहण किया है।

भट्टोजिदीक्षितने पा ५।४।४२ सूत्रके अभिप्राय

कावार (सं॰ क्ली॰) कं जलं आवृणोति, क-आ-वृ-अण्। शैवाल, सेवार।

कावारी (सं॰ स्त्री॰) कावार-ङीष्। तृणादिच्छत्र, घासकी बनी छतरी। उसका संस्कृत पर्याय—जङ्गम-कुटी और भ्रमत्कुटी है।

काविराज् (सं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष, एक बहर। उसमें ८+१२+८ अक्षर होते हैं।

कावी (सं॰ स्त्री॰) कवेरियम् कवि-अञ्-ङीन्-यलोपः। शार्ङ्गरवाद्यञो ङीन्। पा ४। १। ७३। कविसम्बन्धीया, शायरसे ताल्लुक रखनेवाली।

काहक (सं॰ पु॰) कुत्सितो हक इव, ईषत् हक इव वा, कोः कादेशः। १ कुक्कुट, मुरगा। २ चक्रवाक, चकवा। ३ पीतमस्तक पक्षी, पीली चोटीकी चिड़िया।

कावेर (सं॰ क्ली॰) कस्य सूर्यस्येव आ ईषत् वेरं अङ्गं यस्य ज्योतिर्मयत्वात्। कुङ्कम, रोरी।

कावेरक (सं॰ पु॰) रजत नाभिके गोत्रापत्य।

कावेरिका (सं॰ स्त्री॰) कावेरी स्वार्थे कन्-टाप् ईकारस्य ह्रस्वत्वम्। कावेरी नदी।

कावेरी (सं॰ स्त्री॰) कं जलमिव वेरं शरीरमस्याः, कवेर-अण्। तस्येदम्। पा ४। ३। १२०। १ दक्षिणापथकी एक महानदी, दक्षिणका एक बड़ा दरया। वह अक्षा॰ १२° २५' उ॰ तथा देशा॰ ७५° ३४' पू॰ पर कुरग राज्यमें पश्चिमघाटके ब्रह्मगिरिसे निकल दक्षिण-पूर्वाभिमुख महिसुर अधित्यका अतिक्रम कर मन्द्राज प्रदेशके मध्यसे वङ्गोपसागरमें जा गिरी है। कुरग राज्यमें कावेरीकी गति अति वक्रभावापन्न है। गर्भ प्रस्तरमय है। उभय तीर नाना द्रुमसमाकीर्ण हैं। कङ्कनूर, कुम्बहोल, कक्कावे, मुत्तरेमुत्त, चिकहोल और सुवर्णवती नाम्नी कई उसकी शाखानदी हैं।

कावेरी नदी महिसुर राज्यमें अपनी परिसरसे प्रवेश कर एकबारगी ही ३०० गजसे ४०० गज तक फैल गयी है। वहां खेतोंबारीके लिये उसके कई नाले हैं। नालोंके बीच बीच बांध भी लगे हैं। उनमें बड़ा नाला प्रायः ३३ कोस विस्तृत है।

कावेरीके मध्य पुण्यतीर्थ शिवसमुद्र, श्रीरङ्गपत्तन और श्रीरङ्गम् द्वीप विद्यमान है। शिवसमुद्रके समीप कावेरी-प्रपात है। प्रायः १५० हाथ ऊंचेसे जल नीचेको उतरता है। वहां दृश्य मनोमुग्धकर है। शिव-समुद्रसे कावेरीके अपर पार पर्यन्त हिन्दू राजाओंके बनाये दो सुदृढ़ प्रस्तरसेतु हैं। यात्री उन्हीं सेतुसे शिवसमुद्रके दर्शनको जाते हैं।

महिसुरमें कावेरीकी कई शाखा हैं। यथा—हेमवती, लक्ष्मणतीर्थ, लोकपावनी, शिंशा, अर्कवती, सुवर्णवती या होनुहोला। वहां तञ्जोर और त्रिचना-पल्लीके अभिमुख कई नाले निकल गये हैं। उनमें कालिदम (कोलरुण) नामक शाखा ही प्रधान है।

मन्द्राज विभागमें कावेरीकी निम्नलिखित कई शाखा हैं—भवानी, नोयेल, अमरावती।

रामायण, महाभारत प्रभृति प्राचीन ग्रन्थोंमें कावेरी पुण्यतोया मानी गयी है। हरिवंशके मता-नुसार युवनाश्वके शापसे गङ्गाने शरीरार्धभागसे युवनाश्वकी कन्या बन जन्मग्रहण किया था। उन्हींका नाम कावेरी है। जह्नु मुनिने उनका पाणि-ग्रहण किया। कावेरीके ही गर्भसे जह्नुके सुनद्ध नामक एक धार्मिक पुत्रने जन्म लिया। (हरिवंश,२७०) शरीरार्धभागसे जन्म लेनेके कारण कावेरी "अर्धगङ्गा" नामसे ख्यात हुयी हैं। स्कन्दपुराणीय कावेरीमाहात्म्यमें लिखा है,—

"ब्रह्मतनया विष्णु माया वा लोपामुद्राने पिताके आदेशसे कावेरी नामक किसी मुनिको कन्या हो जन्म-ग्रहण किया था। फिर कावेरी मुनिके आनन्दवर्धन और मानवगणके पापमोचनको वह नदीरूपसे प्रवाहित हुयी।"

तलकावेरी और भागमण्डल नामक प्रथम सङ्गम स्थान पर अति प्राचीन देवमन्दिर हैं। कार्तिक माघ सहस्र सहस्र तीर्थयात्री उस मन्दिर दर्शन और कावेरी-सलिलमें स्नान करनेको जाते हैं। दक्षिणा-पथके लोग कावेरीको "दक्षिणगङ्गा" कहते हैं।

हिन्दुस्थानमें जिस प्रकार निष्ठावान् हिन्दू गङ्गा-स्नान काल गङ्गास्तव पाठ करते, वैसे ही दाक्षिणात्यके लोग कावेरी नहाते "कावेरीस्तोत्र" पढ़ते हैं।

कावेरी-प्रवाहित प्रदेशमें 'अक्षाकोड़ग' वा कावेरी

जयादित्यका और पा ७।१।२० सूत्रके वृत्तिकाल वामनका मत ग्रहण किया है। उसीप्रकार रायमुकुटने 'अप्सरस्' शब्द साधने काल पा ८।४।४८ सूत्र का वामनकाशिका उद्धृत की है। माधवाचार्यने धातुवृत्तिमें जयादित्य और वामनका मत ग्रहण किया है। तत्कर्तृक उद्धृत जयादित्यका मत पा १।२।५८ सूत्रकी और वामनका मत पा ८।२।१० सूत्रकी काशिकामें देख पड़ता है।

इसलिये भट्टोजिदीक्षित, रायमुकुट एवं माधवाचार्यके मतमें १ से ५ अध्याय पर्यन्त जयादित्य और ७ से ८ अध्याय पर्यन्त वामनकर्तृक विरचित हैं।

राजतरङ्गिणीमें जयादित्य काश्मीरके एक विद्योत्साही राजा और वामन उन्हींके मन्त्री बताये गये हैं।

"देशान्तरादागमय्य व्याचक्षाणः क्षमापतिः।
प्रावर्तयत विच्छिन्नं महाभाष्यं स्वमण्डले ॥ ४८८ ॥
क्षीराभिधाच्छब्दविद्योपाध्यायात् संभृतः श्रुतः।
बुधैः सह ययौ वृद्धिं स जयापीडपण्डितः ॥ ४८९ ॥
'बहुना क्षत्रियाख्येन स्वीकृत्य मर्थितः।
भट्टोऽभूदुद्भटस्तस्य भूमिभर्तुः सभापतिः ॥ ४९५ ॥
स दामोदरगुप्ताख्यं कुट्टनीमतकारिणम् ॥ ४९६ ॥
मनोरथः शङ्खदत्तश्चटकः सन्धिमांस्तथा।
बभूवुः कवयस्तस्य वामनाद्याश्च मन्त्रिणः ॥ ४९७ ॥"

(४र्थ तरङ्ग)

राजा जयादित्यने नाना देशसे लोगा पण्डितोंको महाभाष्यके संग्रहमें लगाया। उन्होंने शब्दशास्त्रविद् क्षीरस्वामीके निकट * व्याकरण पढ़ा था। क्षत्रिय प्रधान पण्डित और उद्भटभट्ट उनके सभापण्डित रहे। उन्होंने 'कुट्टिनीमत'-प्रणेता दामोदरगुप्तको प्रधान मन्त्रित्व प्रदान किया। मनोरथ, शङ्खदत्त, चटक, सन्धिमान् प्रभृति कवि उनकी सभा उज्ज्वल करते थे। वामन प्रभृति पण्डित उनके अमात्य रहे।

कायस्थराज जयापीडने ६६७ शकको सिंहासनारोहण किया था। काश्मीर और कादम्ब शब्द देखो।

अध्यापक मोक्षमूलरके मतमें—"काशिकाकार जयादित्य एक स्वतन्त्र व्यक्ति रहे। जो काश्मीरराज जयादित्यसे पूर्व विद्यमान थे। चीनपरिव्राजक इत्सिङ्गने ६९० ई० (६१२ शक) को चीन भाषाके 'दक्षिणसमुद्रयात्रा' पुस्तकमें जयादित्य विरचित 'वृत्तिसूत्र' का उल्लेख किया है। यदि इत्सिङ्गका विवरण प्रकृत निकले तो ६६० ई० से पूर्व पाणिनिवृत्तिकार जयादित्य मरे थे।" *

निःसन्देह विश्वास नहीं आता उस स्थल पर चीनपरिव्राजकका विवरण कहांतक सत्य और उनका प्रकृत आविर्भावकाल क्या था। इसप्रकारके स्थलमें राजतरङ्गिणी-वर्णित घटना पर निर्भर करनेसे नितान्त अन्याय समझ पड़ता है। फिर भी यदि काश्मीरराज जयापीड़ने काशिकावृत्तिको लिखा था, तो कल्हण पण्डितने उसका कोई उल्लेख क्यों नहीं किया? सम्भवतः राज्याभिषिक्त होनेसे पहले यौवनकालमें जयादित्यने काशिकावृत्ति बनायी होगी। कारण राजा होनेसे पूर्व जयादित्यके सम्बन्धमें कल्हणने कोई बात नहीं लिखी। जयादित्य स्वयं एक वैयाकरण और महा पण्डित थे। उन्हींके समय महाभाष्यका पुनरुद्धार साधित हुवा। वामन उनके एक सचिव थे। उसी समय ललितादित्य-अमात्य लक्ष्मणके पुत्र कैयटने वाक्यपदीयवृत्ति बनायी। जयादित्यके समयका काश्मीर-इतिहास पढ़नेसे समझ पड़ता कि वास्तविक उनके राजत्वकाल पाणिनिव्याकरण विशेष आदृत हुवा था।

जयादित्यने काशिकावृत्तिके प्रथम ५ अध्याय लिखे थे। पीछे उनके मन्त्री वामनने अवशिष्ट ३ अध्याय लिख ग्रन्थ सम्पूर्ण किया।

काशिकावृत्तिप्रकाशक पण्डित बालशास्त्रीने लिखा है,—"काशिकाके रचयिता जैन या बौद्ध थे। इसीसे अमरकोषकी भांति काशिकाके प्रारम्भमें मङ्गलाचरण लिखा नहीं गया। काशिकाकारने अनेक स्थलमें पाणिनिसूत्रका परिवर्तन किया है। यदि वह ब्राह्मण रहते, तो कभी ऐसा कर न सकते। पा १।३।२६। सूत्रके लोड् धातुका आत्मनेपदपर सम्मान अर्थमें काशिकाकारने 'चार्वाकमयमाने अर्थात् लोकायत-

* क्षीरस्वामी अमरकोषके एक प्रधान टीकाकार थे।

* Max Müller's India what can it teach us ?, pp. 342—316.

नामि मांड्यपोंका वास है। वही ब्राह्मण कन्या या कावेरीदेवीका पौरोहित्य करते हैं। वह सकल शाक्तधर्मी हैं। अवसरपर कोडग ब्राह्मणोंके साथ उनके विवाहका आदान प्रदान नहीं होता।

कावेरीके प्रथम तटमें देश और शस्यको बचानेके लिये नाना स्थानोंमें हिन्दू राजाओंके बनाये पत्थरके बांध मौजूद हैं। उनमें श्रीरङ्गके निकट प्रधान बांध है। वह एक पत्थरसे बनाया गया है। बांध १०४० फीट दीर्घ और ४० से ६० फीट तक विस्तृत है। खृष्टीय ४थे शताब्दमें पहले वह प्रस्तुत हुआ था। किन्तु आज भी उसे पुराना कह नहीं सकते।

पूजा कालको गङ्गा प्रभृति तीर्थ आवाहन करनेके मन्त्रमें कावेरी नदीका नाम सन्निविष्ट है,—

"गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥" (तीर्थवाहन मंत्र)

कावेरीका जल स्वादु, व्रणघ्न, मधु, दीपन, दद्रु, कुष्ठघ्न और मेधा बुद्धि एवं रुचिप्रद है। (राजनिघण्टु)

कुत्सितं वपितं शरीरं यस्याः। २ वेश्या, रण्डी। ३ हरिद्रा हल्दी।

काव्य (सं॰ क्लो॰) कवेरिदम्, कवेः कर्म भावो वा, कवि-ष्यञ्। १ कवितामन्य, शायरीकी किताब। २ शुक्र, देत्य गुरु, शुक्राचार्य। ३ बुद्धिमत्ता, अक्लमन्दी। ४ रसयुक्त वाक्य, मीठी बोली।

"काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यःपरनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे॥" (काव्यप्रकाश)

यश, अर्थ, व्यवहारज्ञान, अमङ्गलविनाश, सद्यः परम निर्वृति और कान्ता सकमके उपयुक्त उपदेश प्रयोगके निमित्त ही काव्य है।

"चतुर्वर्गफलप्राप्तिः सुखादल्पधियामपि।
काव्यादेव यतस्तेन तत्स्वरूपं निरूप्यते॥" (साहित्यदर्पण)

काव्यसे अल्प बुद्धि व्यक्ति भी अनायास धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूप चतुर्वर्ग फल पाते हैं। अतः उस काव्यका स्वरूप निरूपण करते हैं।

"वाक्यं रसात्मकं काव्यं दोषास्तस्यापकर्षकाः।
उत्कर्षहेतवः प्रोक्ता गुणालङ्काररीतयः॥" (साहित्यदर्पण)

रसात्मक वाक्य ही काव्य है। दोष उसका अपकर्षक होता है गुण, अलङ्कार और रीतिसे काव्यका उत्कर्ष बढ़ता है।

"आनन्दविशेषजनकत्वात् काव्यम्।" (रसगङ्गाधर)

जिस वाक्यद्वारा मनमें विशेष आनन्द आता, वही काव्य कहाता है।

"कविवाक्यनिर्मितिः काव्यम्। तत्र मनोहरचमत्कारकारिणी रचना।" (कोषक)

मनोहर एवं चमत्कारकारिणी रचनाविशिष्ट कविवाक्य द्वारा जो बनता, उसे ही विद्वान् काव्य कहते हैं।

प्रथमतः वह उत्तम, मध्यम और अधम भेदसे तीन प्रकारका होता है। यथा—ध्वनि, गुणीभूतव्यङ्ग्य और चित्रकाव्य।

अतिशय व्यङ्ग्यार्थ एवं वाच्यार्थ अपेक्षा ध्वनि अधिक रहनेसे उत्तम, गुणीभूत व्यङ्ग्य लगनेसे मध्यम और शब्दचित्र तथा वाच्यचित्र पड़ने एवं व्यंग्यार्थ-शून्य पड़नेसे अधम काव्य कहाता है।

उक्त काव्य प्रकारान्तरसे द्विविध है—महाकाव्य और खण्डकाव्य। महाकाव्यमें सर्गबन्धन पायेगा और एक देवता अथवा सद्वंशजात धीरोदात्त गुण-युक्त एक क्षत्रिय किंवा एकवंशीय सत्कुलजात बहुतर राजाको नायक बनाया जायेगा। शृङ्गार, वीर और शान्तके मध्य एक रस उसका अङ्गीभूत होगा। समस्त रस एवं समस्त नाटकसन्धि, इतिहास अथवा अन्य सज्जनाश्रित चरित्र उसके अङ्ग हैं। महाकाव्यके वर्ग चार हैं। उनमें एक फल है। प्रथम नमस्कार, आशीर्वाद, वस्तुनिर्देश, खलनिन्दा अथवा सज्जन गुणानुकीर्तन करेंगे। सर्गके प्रथम एकविध वृत्तछन्दः द्वारा और सर्गके शेषभागमें अन्यविध वृत्त द्वारा रचना की जायगी। इस प्रकारके आठ सर्ग लग सकेंगे, जो न बहुत अल्प और न बहुत दीर्घ रहें। किसी किसी के मतानुसार नाना वृत्तछन्दः द्वारा सर्गरचना भी हो सकती है। उसमें प्रति सर्गके अन्तपर भावी सर्गकी कथा-सूचना रहेगी। सन्ध्या, सूर्य, चन्द्र, रात्रि, प्रदोष, अन्धकार, दिवस, प्रातः, मध्याह्न मृगया, पर्वत,

कर्तृक प्रत्याशिनि' अर्थ लगाया है। इस स्थानपर (ब्राह्मणोंके मतमें) आर्य (आर्याव ?) शोकायन शब्दके प्रत्यासित हुए हैं। पर्शीपुराको स्वधर्म-प्रतिपाद्य दण्डसे प्रमाण उद्धृत करते हैं, वह कभी पाणिनिमतपर नहीं चलते।"

काशिकाव्याकरणका मत युक्तियुक्त समझ नहीं पड़ता। काशिकाकारने अनेक स्थलमें ब्राह्मण-शास्त्रके प्रमाण उद्धृत किया है। केवल एक स्थानपर 'श्रवं' और 'शोकायन' शब्दका प्रयोग देख हुविशार का जैन या बौद्ध कैसे कह सकते हैं। (श्रविष्ठ, इत्यादि, मन्दिर और शोकायन शब्द देखो।) जयादित्य एक परम धार्मिक हिन्दू रहे। राजतरङ्गिणीमें लिखा है कि उन्होंने विपुलकेशव नामक एक विष्णुमूर्तिको प्रतिष्ठित किया था *। (जयापीड देखो।) काशिकावृत्तिकी विभिन्न समयमें रचित कई टीका मिलती हैं उनमें निम्नलिखित टीका प्रसिद्ध है—उपमन्युविरचित 'तत्त्वविमर्शिनी', जिनेन्द्रबुद्धिविरचित 'काशिकावृत्तिविवरणपञ्जिका', मैत्रेयरक्षितकृत 'तन्त्रप्रदीप', हरदत्तरचित 'पदमञ्जरी' इत्यादि।

काशिखण्ड (सं० क्लो०) स्कन्दपुराणका एक भाग।

काशिनगर (सं० क्लो०) काशिरेव नगरम्। काशी, बनारस सिटी।

काशिनाथ (सं० पु०) काशेः काशीतीर्थस्य नगरस्य वा नाथः, ६-तत्। १ महादेव। २ काशीके राजा दिवोदास प्रभृति।

काशिप (सं० पु०) काशिं काशीपुरीं काशिदेशं वा पाति रक्षति, काशि-पा-क। १ महादेव। २ काशीके राजा।

काशिपति (सं० पु०) काशेः पतिः, ६-तत्। १ महादेव। २ काशीके राजा। दिवोदास, धन्वन्तरि प्रभृति काशीके राजा। धन्वन्तरिने कई वैद्यकग्रन्थ बनाये हैं। वह आयुर्वेदकी शिक्षा भी देते थे।

काशिपुर (काशीपुर)—युक्तप्रदेशका एक नगर। यह अक्षा० २९° १३´ उ० और देशा० ७८° ५८´ ५८˝ पू० पर मुरादाबाद नगरसे १५ कोस दूर अवस्थित है। काशिपुरमें तहसील भी है, जो नैनीताल जिलेमें लगती है। इसकी पार्श्वभूमि ऊंची और अधिकांश जङ्गलसे भरी है। मध्य मध्य उर्वर समतल भूखण्ड है। स्थान स्थान पर शस्यादि भी उत्पन्न होता है। तहसीलका परिमाण १८८ वर्गमील है। किन्तु उसमें ८८ मील परिमितभूखण्डपर शस्य उपजता है। लोकसंख्या प्रायः ७५ हजार है। तहसीलमें १ फौजदारी अदालत और २ थाने हैं। काशिपुर नगर प्राचीन कालसे प्रसिद्ध है। उसका भग्नावशेष स्थान स्थान पर मिलता है। लोकसंख्या प्रायः १५ हजार है। नैनीतालसे काशिपुर २२ कोस पड़ता है। यह एक महातीर्थ माना जाता है। १६१८ और १६९८ ई०के बीच काशीनाथ अधिकारी नामक किसी व्यक्तिने यह नगर स्थापन किया था। उन्हींके नामसे नगर भी काशिपुर कहाता है। पहले यहां ४ थाने रहे। उन्हींमें एकमें उज्जयिनी देवीका मन्दिर है। वर्तमान काशिपुरसे आध कोस पूर्व उज्जयिनीका पुरातन दुर्ग था। चीन-परिव्राजक हुयेन-सांगके भ्रमणवृत्तान्तमें गोविषाण नगरकी कथा उल्लिखित है। प्रत्नतत्त्ववित् कनिङ्गम साहबके अनुमानसे वह काशिपुरमें ही अवस्थित था। आज भी वहां स्थान स्थान पर उपवन और सरोवर देख पड़ते हैं। एक सरोवरका नाम द्रोणसागर है। प्रवाद है कि उसे द्रोणाचार्यके लिये पाण्डवने खोदा होगा। वह समचतुष्कोण है। एक एक ओर ४ सौ हाथ दीर्घ निकलेगा। बदरिकाश्रम लौटते यात्री इस सरोवरमें स्नान कर चले जाते हैं। सरोवरके कूल पर अनेक सतीस्तम्भ देख पड़ते हैं। फिर उसके पश्चिम कूल पर कई छोटे छोटे मन्दिर हैं। दुर्ग बहुत बड़ी बड़ी ईंटोंका बना है। ईंट १५ इञ्च लम्बी, १८ इञ्च चौड़ी और २१ इञ्च मोटी है। अति प्राचीन कालमें वैसी ईंटें बनती थीं, आजकल कहीं देख नहीं पड़तीं। दुर्ग चारोंओर भूमिसे प्रायः ३० हाथ ऊँचे प्राचीर द्वारा वेष्टित है। आजकल

* "बभौ यस्ते नगरीं [illegible]
[illegible]
[illegible] विपुलकेशवम्॥"
(राजतरङ्गिणी, [illegible])

दुर्गका भग्नावशेष जंगलसे भरा है। पूर्वदिक् व्यतीत तीन तरफ खाई है। उत्तरपश्चिम और दक्षिणपश्चिम दोनों दिक् दो स्थानपर दो प्रवेशद्वारका चिह्न वर्तमान है। दुर्गसे ४०० हाथ पूर्व ज्वालादेवी या उज्जयिनी देवीका मन्दिर है। छोटे छोटे मन्दिरमें नागनाथ भूतेश्वर, मुक्तेश्वर, और यक्षेश्वरको मूर्ति हैं। वह आधुनिक समझ पड़ते हैं। पुरातन मन्दिर प्रायः मृत्तिकास्तूप पर निर्मित हैं। उस प्रकारके अनेक स्तूप हैं। उनमें दुर्गको उत्तर दिक् प्राचीरके भीतर एक प्रकाण्ड स्तूप देख पड़ता है। उसे लोग 'भीमकी गदा' कहते हैं। ज्वालादेवीके मन्दिरको पूर्वदिकका स्तूप 'रामगिर गोसाईंका टीला' कहाता है।

अष्टादश शताब्दके शेष भाग नन्दराम नामक एक व्यक्ति काशिपुरके शासनकर्ता रहे। उसी समय उन्होंने स्वाधीनताका अवलम्बन किया। उनके भ्रातृपुत्र शिवलालके राजत्वकाल काशिपुर अंगरेजोंके अधिकारमें गया। अंगरेजोंने काशिपुरके राजाको मजिष्ट्रेटकी क्षमता प्रदान कर रखी है।

काशिपुरमें एक दातव्य चिकित्सालय है। वहां सूतका मोटा कपड़ा बनता है, जो स्थानान्तरमें जाकर बिकता है।

काशिपुर—बङ्गालके २४ परगनेका एक ग्रामग्राम। वह भागीरथीके तीर कलकत्तेके निकट अवस्थित है। काशिपुरमें गोलागोली बनानेका एक सरकारी कारखाना है। भगवती सर्वमङ्गला तथा चित्तेश्वरीका मन्दिर भी वहां बना है।

काशिपुरी (सं॰ स्त्री॰) काशिरेवेपुरी, मध्यप॰ काशी, वाराणस। (भारत अनुशा॰ १६८ अ॰)

काशिप्रसाद घोष—कलकत्तेके एक विख्यात ग्रन्थकार। उनके पिताका शिवप्रसाद और पितामहका नाम तुलसीराम था। ईष्टइण्डिया कम्पनीके अधीन खजांची रह तुलसीरामने प्रचुर अर्थ उपार्जन किया।

१८०८ ई॰ को ५ वीं अगस्तको उन्होंने जन्म लिया था। १२ वर्षके वयसमें उनको अक्षरपरिचय मात्र हुवा। १८२१ ई॰ को वह हिन्दू कालेजमें पढ़ने बैठे। किन्तु ४ वर्षके मध्य ही उन्होंने अच्छी योग्यता प्राप्त की थी। १८२७ ई॰को उन्होंने एक अंगरेजी पद्य लिखा "The young poet's first attempt" फिर भारत-इतिहास (History of British India.) की उन्होंने बहुत अच्छी समालोचना अङ्गरेजीमें बनायी थी। वह गवरनमेंण्ट गजट और एशियाटिक जरनलमें प्रकाशित हुयी।

कालेज छोड़ समसामयिक पत्रमें अङ्गरेजीके पद्य लिखने लगे। उनको देख अङ्गरेज लोग भी मुग्ध हो जाते थे। १८२८ और १८३० ई॰ के मध्य ही उन्होंने अधिकांश पद्य बनाये। उनके "Hindu Festivals" नामक अङ्गरेजी काव्यमें दशहरा, झूलेकी झांकी, जन्माष्टमी, दुर्गापूजा, कोजागर-पूर्णिमा, श्यामापूजा, कार्तिकपूजा, रासयात्रा, श्रीपञ्चमी, दोलयात्रा और अक्षयतृतीयादिका इतिहास तथा उत्सव वर्णित है। कप्तान रिचार्डसनने उनकी बहुत प्रशंसा की है। अर्मण्ड एलियट नामक किसी अङ्गरेजने "Views from India and China." नामक पुस्तकमें काशिप्रसादको अङ्गरेजोंसे भी बढ़ कर कवि बताया है।

गद्यमें उन्होंने निम्नलिखित पुस्तक बनाये थे,—

1. Memory of Indian Dynasties containing (a) The Scindiah of Gwalior. (b) King of Lucknow. (c) The Holkar of Indore. (d) The Nawab of Hyrabad. (e) The Giakwar of Baroda. (f) The Bhonslah of Nagpore. (g) The Nawab of Bhopal.
2. Sketches of Runjeet Singh.
3. " of King of Oudh.
4. On Bengali poetry.
5. On Bengali works and writers.
6. The Vision—a tale. (उपन्यास)

१८४५। ४६ ई॰ को उन्होंने "The Hindu Intelligencer" नामक एक बड़ा साप्ताहिक पत्र प्रकाशित किया था। वह स्वयं उसके स्वत्वाधिकारी और सम्पादक रहे। १२ वर्ष तक उक्त पत्र निकलता रहा, किन्तु १८५८ ई॰ को बलवेके कारण संवादपत्रोंके विरुद्ध कानून बनजानेसे बन्द हो गया।

"ततस्तु सौगतं रूपं निश्चाय श्रीपतिः स्वयम् ।
अतीव सुन्दरतरं त्रैलोक्यस्यापि मोहनम् ॥ ७८ ॥
श्रीः परिव्राजिका जाता नितरां सुभगाकृतिः ।......
ततः प्रोवाच पुण्यात्मा पुण्यकीर्तिः स सौगतः ।
शिष्यं विनयकीर्तिं तं महाविनयभूषणम् ॥ ८१ ॥
त्वया विनयकीर्ते यो धर्मः पृष्टः सनातनः ।
कथयाम्यहमशेषेण शृणुष्व तं वदामि ते ॥ ८२ ॥
अनादिसिद्धः संसारः कर्तृकर्मविवर्जितः ।
स्वयं प्रादुर्भवेदेष स्वयमेव विलीयते ॥ ८३ ॥
ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं यावद्देहनिबन्धनम् ।
आत्मैवैकेश्वरस्तत्र न द्वितीयस्तदीशिता ॥ ८४ ॥
देहो यथास्मदादीनां स्वकालेन विलीयते ।
ब्रह्मादिमशकान्तानां स्वकालाल्लीयते तथा ॥ ८५ ॥
विचार्यमाणे देहेऽस्मिन् किंचिदधिकं क्वचित् ।
आहारो मैथुनं निद्रा भयं सर्वत्र यत् समम् ॥ ८६ ॥
ब्रह्मादिकीटकान्तानां तथा मरणतो भयम् ॥ ८९ ॥
सर्वे तनुभृतस्तुल्या यदि बुद्ध्या विचार्यते ।
इदं निश्चित्य केनापि नो हिंस्यः कोऽपि कुत्रचित् ॥ ८७ ॥
अहिंसा परमो धर्मः पठ्यते पूर्वसूरिभिः ।
तस्मान्न हिंसा कर्तव्या नरैर्नरकभीरुभिः ॥ ९० ॥
हिंसको नरकं गच्छेत् स्वर्गं गच्छेदहिंसकः ॥ ९८ ॥
सुखेषु भुज्यमानेषु यस्याद्देहविसर्जनम् ।
अयमेव परो मोक्षो न मोक्षोऽन्यः क्वचित् पुनः ॥ १०६ ॥
वासनाकलितस्य समुच्छेदे इति ध्रुवम् ।
विज्ञानी परमो मोक्षो निश्चितस्तत्त्वचिन्तकैः ॥ १०० ॥
प्रामाणिकी श्रुतिरियं प्रोच्यते वेदवादिभिः ।
न हिंस्यात् सर्वभूतानि नान्या हिंसा प्रवर्तिका ॥ १०८ ॥
अग्निषोमीयमिति या भ्रामिका साऽसतामिह ।
न सा प्रमाणं ज्ञातृणां पशालम्भनकारिका ॥ १०९ ॥"

(काशीखण्ड ५८ अ०)

भगवान् श्रीपतिने परमंमोहन सौगत (बौद्ध) रूप और लक्ष्मी देवीने भी उसी समय 'परम मनोहर परिव्राजिका रूप धारण किया। ...पुण्यकीर्ति नामक बौद्ध परिव्राजकरूपधारी भगवान् अपने प्रिय शिष्य विनयभूषण विनयकीर्तिको सम्बोधन कर इस प्रकार निज धर्म व्याख्या करने लगे—'हे विनयकीर्ते ! तुमने सनातन धर्म विषयक जो सकल प्रश्न किये, हम अशेष प्रकारसे उनका उत्तर देते हैं। तुम सुनो। यह संसार अनादि है। इसका कोई कर्ता नहीं। यह स्वयं उत्पन्न और विलीन होता है। ब्रह्मादि स्तम्ब पर्यन्त जितने देही हैं, एक अद्वितीय आत्मा ही उन सबका ईश्वर है। उससे स्वतन्त्र अन्य किसी सत्ताका अस्तित्व समझ नहीं पड़ता। हमारा यह देह जैसे कालवश विलीन होता, वैसे ही ब्रह्मादि देवगणसे मशक पर्यंत सकल प्राणियोंका देह स्व स्व निर्दिष्ट कालके अनुसार विलय पाता है। विचारपूर्वक देखनेसे जीवगणके देहमें परस्पर किसी प्रकार न्यूनाधिक्य नहीं आता। कारण सर्वत्र सर्वदेहमें आहार निद्रा और भय सम भावसे विद्यमान है। हमें जिस प्रकार मरण भय रहता, उसी प्रकार ब्रह्मादि कीट पर्यन्त सकल देह-धारीको मरना पड़ता है। बुद्धिपूर्वक विचार करनेसे यह स्थिर होता, कि सकल प्राणी समान हैं। सुतरां यही करना चाहिये, जिसमें किसी प्रकार प्राणिहिंसा न हो। पूर्वतन पण्डितोंने कहा है—"अहिंसा परम धर्म है।" इसी कारण नरकभीत पुरुषोंको कभी प्राणि-हिंसा करना न चाहिये। हिंसाकारी भीषण नरकमें गमन करते हैं। अहिंसक व्यक्ति स्वर्ग पाते हैं। सुख भोग करते करते देह विसर्जनका नाम ही परम मोक्ष है। एतद्भिन्न अन्य कोई मोक्ष नहीं होता। वासनाके साथ पञ्चविध क्लेशका समुच्छेद होने पर विज्ञानका नाम ही यथार्थ मोक्ष है। तत्त्वज्ञानी व्यक्ति ऐसा ही निश्चय करते हैं। वेदवादी यह प्रामाणिक श्रुति कीर्तन करते हैं—'समस्त भूतगणको हिंसा करना न चाहिये' हिंसाप्रवर्तक कोई श्रुति प्रामाणिक नहीं। 'अग्निषो-मीयमें पशुहत्या करना चाहिये' इत्यादि जो श्रुति है, वह केवल असाधुओंको भ्रान्ति बढ़ानेको है। विद्वान् पण्डित उसको प्रमाणको भांति स्वीकार नहीं करते।" इत्यादि।

काशीखण्डमें काशीवासियोंको मोहित करनेके लिये विष्णुके बौद्धरूप परिग्रहकी कथा लिखी रहते वस्तुतः इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह रूपक वर्णना मात्र है। उक्त प्रस्तावसे इतना ही अनुमित होता किसी समयमें काशीमें बौद्धधर्मावलम्बियोंने प्रबल हो हिन्दूधर्मको अवमानना की थी। सम्भवतः रिपुञ्जय दिवोदास भी प्रथम बौद्ध रहे। काशीखण्डमें लिखा है,—

कासिमबाद आजकल बिलकुल खंडहरमें भी अस्ति-त्व रखते हैं। यह कासिमकी मसजिद और म्युनि-सिपालिटीके "[illegible]" कहे। १८०१ ई० को ११वीं नवम्बरको कासिमबादका मृत्यु हुआ।

कासिराज (सं० पु०) १ काशीके राजा। २ धन्वन्तरि।

कासिराजदेव—एक [illegible] ग्रन्थकार। इन्होंने [illegible] पदमें [illegible] बनाया है। यह देव या [illegible] भाते आदम थे। उनके पिताका नाम [illegible] था। यह [illegible] मिठ्ठापामें रहते थे। उनके [illegible] कहना कि [illegible] लिखा [illegible] उपकर एक ग्रन्थ [illegible] लिखा है। कहते हैं १००५ सनमें यह जीवित थे। उनकी जीवनीका विशेष विवरण विदित नहीं। २ [illegible] एक टीकाकार।

काशित (सं० त्रि०) १ काशद्रवगत, काशसे भरा हुआ। २ काशनिर्मित, काशका बना हुआ।

काशिन्दु (सं० पु०) [illegible] बाहुलकात् [illegible]। [illegible] (उणादि, [illegible])

काशी (सं० स्त्री०) भारतवर्षके मध्य हिन्दुओंका सर्व-प्रधान तीर्थ। इसका संस्कृत पर्याय—वाराणसी, [illegible], काशिका, काशि, अविमुक्त, आनन्द-वन, आनन्दकानन, अपुनर्भवभूमि, रुद्रावास, महा-श्मशान और काशीपुरी है। इन नामोंके मध्य काशी, अविमुक्त और वाराणसी ये तीनों नाम प्राचीन हैं। हिन्दीमें प्रायः बनारस कहते हैं।

काशि—शिवपुराणके मतानुसार—

"[illegible]" ([illegible])

यहां जीव शुभाशुभ कर्मसमुदाय पाकर मुक्ति पानेमें समर्थ होते हैं, इसीसे इसका नाम काशी है।

स्कन्दपुराणीय काशीखण्डके मतसे—

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

यहीं परमात्मा ज्योतिः रूप [illegible] इसीसे [illegible] काशी नाम विख्यात हुआ है।

लिङ्गपुराणमें लिखा है,—

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

यह स्थान कभी महादेवसे विमुक्त नहीं अर्थात् महादेव इसे न कभी छोड़ा न छोड़ते और न छोड़ेंगे। इसीसे यह अविमुक्त नामसे विख्यात है।

मत्स्यपुराणके मतसे—

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

अविमुक्तक्षेत्रमें हमारा निवास [illegible] है। यह क्षेत्र हम कभी परित्याग नहीं करते। इसी हेतु यह अविमुक्त नामसे विख्यात हुआ है।

कूर्मपुराणमें कहा है,—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]" ([illegible])

वाराणसीमें अवस्थित [illegible] यह [illegible] मुक्तिके साथ कभी संलग्न नहीं। इसीसे यह अविमुक्त है अर्थात् संसार [illegible] और उसे कभी देख नहीं सकते। किन्तु संसारके बन्धनसे विमुक्त महात्मा केवल ज्ञान-चक्षुसे इसे देख सकते हैं। इसीसे यह अविमुक्तनामसे प्रसिद्ध है।

काशीमें प्रवाद है कि [illegible] नामक कोई राजा यहां राजत्व करते थे। उन्हींके नामानुसार काशीका नाम वाराणसी पड़ा है।*

इतिहास—शुक्लयजुर्वेदीय शतपथब्राह्मण और कौषी-तकी-ब्राह्मणोपनिषद्में सर्व प्रथम 'काशी' शब्दका उल्लेख देख पड़ता है। (१) अति प्राचीन कालमें काशी एक विस्तृत जनपद और पवित्र यज्ञभूमि कहकर परिचित थी। [illegible] देखो।

रामायणके समय भी काशी एक विशाल जनपद थी। (किष्किन्धा०, [illegible]) उस समय [illegible] गौरव और प्राकारपरिशोभित प्रधान नगरी वाराणसी

* [illegible]

"हरिविद्यामहे राज्यमुपास्ते महेश्वरे: ॥ १० ॥
अर्द्ध धनस्विरवे सुराणामोपि दुर्लभ: ।"

असुर यह कह कर उनका (राजा रिपुञ्जय दिवोदासका) स्तव करते थे, 'आपके राज्यमें देव लोग रह नहीं सकते । सुतरां हम स्व स्वविभवके अनुसार आपकी सेवा करेंगे ।'

उक्त श्लोकसे यही अनुमित होता कि असुर अर्थात् देवविद्वेषी सर्वदा रिपुञ्जयके निकट रहते और देव अर्थात् देवभक्त ब्राह्मणादि उनके राज्यमें कम देख पड़ते थे । सम्भवत: हिन्दू धर्मके पुनरुत्थान समय काशीमें उक्त बौद्धराजा ही राजत्व करते थे और पीछे वही ब्राह्मणकर्त्तृक हिन्दूधर्ममें दीक्षित हुये । उन्हींके समयसे पवित्र वाराणसी धाममें फिर देवमन्दिर और देवमूर्तिकी स्थापना होने लगी । विष्णुपुराणमें भी एक स्थल पर लिखा है कि विष्णुने एक बार चक्र द्वारा वाराणसीको दग्ध किया था ।

(विष्णुपुराण ५ अंश, ३४ अ०)

वाराणसीमें एक काल बौद्धधर्म प्रबल होनेके अद्यापि अनेक निदर्शन मिलते हैं। वाराणसीका पार्श्ववर्ती सारनाथ बौद्धोंका एक पवित्र तीर्थस्थान कहलाता है । ई० चतुर्थ शताब्दकी चीन-परिव्राजक फाहि-यान और षष्ठ शताब्दके शेष भाग युएन चुयाङ्ग उक्त सारनाथ गये थे । उस समय भी वहां अनेक बौद्धकीर्तियां थीं । उनका ध्वंसावशेष अद्यापि वर्तमान है। सारनाथ देखो। काशीपुरीमें भी बौद्ध-कीर्तियोंका यत्सामान्य ध्वंसावशेष देख पड़ता है ।

यह निर्णय करना कठिन है—किसी समय काशीमें हिन्दूधर्मका पुनरभ्युदय हुआ । ई० षष्ठ शताब्द के शेष भाग चीन-परिव्राजक युएन चुयाङ्गके आते समय काशीमें हिन्दूधर्म प्रबल था । उन्हों ने वाराणसीधाममें शताधिक देवमन्दिर और प्राय: दश सहस्र देव उपासक देखे थे ।* श्रीक्षेत्रकी मादलापञ्जीके मत में उत्कलराज ययातिकेशरीने ५८८ शक को भुवनेश्वरका विख्यात शिवमन्दिर निर्माण कराया था । भुवनेश्वर वाराणसीके अनुकरणपर बना है। एकाम्र देखो । सुतरां यह अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा कि उससे भी पहले काशीमें हिन्दूधर्मका पुनरुत्थान हुआ ।

पतञ्जलिके महाभाष्यमें वाराणसीका उल्लेख है और इसका भी प्रमाण मिलता कि उस समय वहां शिवोपासना भी प्रचलित थी । पतञ्जलि देखो । सम्भवत: बौद्धराज अशोकके मरने पर और महाभाष्य बनते समय वाराणसीमें हिन्दूधर्म फिर बढ़ने लगा था ।

हिन्दुओंके निकट काशीकी अपेक्षा पवित्र तीर्थ जगत्में दूसरा नहीं । प्राचीन मुनि ऋषि उक्त मुक्तिधाम काशीका माहात्म्य मुक्तकण्ठसे कीर्तन कर गये हैं ।

मत्स्यपुराण निर्देश करता है—

"इदं गुह्यतमं क्षेत्रं सदा वाराणसी मम ।
सर्वेषामेव भूतानां हेतुर्मोक्षस्य सर्वदा ॥" (१८०।१७)

हमारा यह वाराणसी क्षेत्र सर्वदा गुह्यतम है । यह नियत ही समस्त जीवगणके मोक्षलाभका हेतु है।

"विषयासक्तचित्तोऽपि त्यक्तधर्मरतिर्नर: ॥ ७१ ॥
इह क्षेत्रे मृत: सोऽपि संसारे न पुनर्विशेत् ॥"

धर्मके प्रति अनुराग परित्याग कर इन्द्रियभोग्य विषय एकान्त आसक्त चित्त होते भी यदि कोई वाराणसी क्षेत्रमें मरता, तो उसे संसारमें प्रवेश करना नहीं पड़ता और अवश्य मोक्ष मिलता है ।

"अविमुक्तस्य कथितं मया ते गुह्यमुत्तमम् । ७५ ।
अत: परतरं नास्ति सिद्धिगुह्यं महेश्वरि ।"

हे देवि ! महेश्वरी ! हमने तुमसे अविमुक्तक्षेत्रका अतिशय गुह्य विषय कीर्तन किया है । फलत: इसकी अपेक्षा सिद्धि विषयमें उत्कृष्टतर विषय संसारमें दूसरा नहीं ।

"अकामो वा सकामो वा ह्यपि तिर्यग्गतोऽपि वा ।
अविमुक्ते त्यजन् प्राणान् मम लोके महीयते ।" (१८१।११)

अकाम हो या सकाम हो अथवा तिर्यग्योनिजात हो हो, अविमुक्तक्षेत्रमें प्राणत्याग करनेसे वह निश्चय हमारे लोकमें (शिवलोकमें) पूजा पाता है ।

* अब प्राय वाराणसीमें १००० लाख बौद्ध हैं ।

काशीराज्यकी राजधानी थी। (१) प्रतिष्ठान (प्रयाग) पर्यन्त काशी जनपदके अन्तर्भूत था। (२)

आजकल काशी कहनेसे ही वर्तमान वाराणसी वा बनारस नामक नगरका बोध होता है। किन्तु पूर्वोक्त प्राचीन शास्त्रादि द्वारा प्रमाणित होता कि पहले यह नगर बृहदायतन था। चीनपरिव्राजक फाहियानके ग्रन्थपाठसे समझ पड़ता कि ई० पञ्चम शताब्दको काशी एक विस्तीर्ण जनपद और वाराणसी उसका प्रधान नगर कहलाता था।*

विष्णु प्रभृति प्राचीन पुराणमें वर्तमान काशी "काशीपुरी" और "वाराणसी" नामसे अभिहित हुयी है। (विष्णु पुराण ५। ३४। २८-३१)

पुराणादिमें काशीपुरीकी सीमा और परिमाण इसप्रकार निरूपित हुआ है—

"द्वियोजनन्तु तत्रैव पूर्वपश्चिमतः स्मृतम्।
अर्धयोजनविस्तीर्णं तत्रैव दक्षिणोत्तरम्॥
वरणा हि नदी यावद् यावच्छुष्कनदी तु वै।
भीष्मचण्डिकमारभ्य पर्वतेश्वरमन्तिके॥"

(ब्रह्मपुराण, १८३। ६१—६८)

यह क्षेत्र पूर्वपश्चिम दो योजन आयत और उत्तर-दक्षिण अर्धयोजन विस्तृत है। यह वरणा नदीसे शुष्क नदी पर्यन्त और भीष्मचण्डिकसे आरम्भ कर पर्वतेश्वरके निकट पर्यन्त अवस्थित है।

फिर उसके आगे—

"द्वियोजनमथार्धञ्च तत्क्षेत्रं पूर्वपश्चिमम्।
अर्धयोजनविस्तीर्णं दक्षिणोत्तरतः स्मृतम्।
वाराणसी नदी यावत् यावच्छुष्कनदी तु वै॥"

(१८४। १८—२०)

शिवपुराणकी सनत्कुमारसंहितामें कहा है—

"क्षेत्रावसानमङ्गम्य गङ्गया सह सङ्गता।
वरणा च स सर्वत्र गङ्गासिश्च परिश्रुता॥" (४१। १११)

वरणा और गङ्गासि (असि) नाम्नी दो नदी उस क्षेत्रको अलङ्कृत कर जाह्नवीमें मिल गया हैं।

शिवपुराणका ज्ञानसंहितामें लिखा है,—

"तत्र तेजसः सारं पञ्चक्रोशात्मकं स्थलम्।" (४८। ८)

वामनपुराणमें बताया है—

"यो ऽसौ ब्रह्मणो पुण्यो मध्यदेशगतो व्ययः।
प्रयागे वसते नित्यं योगशायीति विश्रुतः॥
चरणाद्दक्षिणात्तस्य विनिर्याता सरिद्वरा।
विश्रुता वरणेत्येव सर्वपापहरा शुभा॥
सव्यादन्या द्वितीया च असिरित्येव विश्रुता।
ते उभे च सरिच्छ्रेष्ठे लोकपूज्ये बभूवतुः॥
तयोर्मध्ये तु यो देशस्तत्क्षेत्रं योगशायिनः।
त्रैलोक्यप्रवरं तीर्थं सर्वपापप्रमोचनम्॥
न तादृशं हि गगने न भूम्यां न रसातले।
तत्रास्ति नगरी पुण्या ख्याता वाराणसी शुभा॥"

(३। २७—३८)

इस पवित्र ब्रह्माण्डके मध्य प्रयागमें हमारे (विष्णुके) अंशजात अव्यय पुरुष योगशायी नामसे निरन्तर वास करते हैं। उन्होंके दक्षिण चरणसे सर्व पापप्रणाशिनी शुभङ्करी वरणा और वाम चरणसे असि नाम्नी विख्यात द्वितीय नदी निःसृत हुयी है। यह उभय नदी लोकमध्य पूजनीया हैं। उनके मध्यस्थलमें योगशायी महादेवका सर्व पापनाशन त्रिलोकके मध्य सर्वश्रेष्ठ तीर्थस्वरूप क्षेत्र है। सुविख्यात मोक्षदायिनी पुण्यमयी वाराणसी नगरी उसी स्थानमें विराजित है। ऐसा स्थान, आकाश, पाताल वा भूमण्डल कहीं मिल नहीं सकता।

---

(१) "१ विदर्भ ततो राजा यदुवंशप्रतिष्ठितम्।
प्रतर्दनं काशिपतिं परिष्वज्य च भारत॥
अथोमया तथा देवः परिवृतः सह॥
तत्रावसत् काशिपुरीं वाराणसीं तदा।
रमणीयां तथा शुभां सुदारां सुनीरजाम्॥"

(हरिवंश, ३। १५—१७)

(२) "ततः काशिषु महता विश्वासपुरवासिनाम्।
निविष्टो यतो राजा प्रतिष्ठानपुरालय॥
पुरुरवसा ततः सर्वं महायशाः।
प्रतिष्ठाने पुरवरे अभिषिक्तो महायशाः॥"

(हरिवंश, ४८। १८—१९)

महाभारत, उद्योगपर्व, ११६ अ० और १२० अ० देखो।

* Fo-Kwo-Ki, Ch. XXXIV., translated by Mr Laidley, p. 310.

शिवपुराणकी ज्ञानसंहितामें लिखा है,—

"पञ्चक्रोश्याः परं नास्ति क्षेत्रञ्च भुवनत्रये।" (४८।९२)

त्रिभुवनके मध्य पञ्चक्रोशी (वाराणसी)-की अपेक्षा उत्कृष्टतर क्षेत्र जगतमें अन्य कोई नहीं।

"धर्मस्योपनिषत् सत्यं मोक्षस्योपनिषच्छमः।
क्षेत्रतीर्थोपनिषदमविमुक्तं विदुर्बुधाः॥" (५०।११)

सत्य ही जैसे धर्मकी उपनिषत् अर्थात् उत्कृष्टतम रहस्य और शान्ति ही जैसे मोक्षका गुह्यतम विषय है वैसे ही अविमुक्त क्षेत्रको बुध लोग क्षेत्र और तीर्थका उत्कृष्टतम रहस्य समझते हैं।

लिङ्गपुराणमें लिखा है,—

"नैमिषे च कुरुक्षेत्रे गङ्गाद्वारे च पुष्करे॥ ४६॥
स्नानात् संसेवनाद्वापि न मोक्षः प्राप्यते नरैः।
इह संप्राप्यते येन तत एतद्विशिष्यते॥ ४७॥
प्रयागे वा भवेन्मोक्ष इह वा मत्परिग्रहात्।
प्रयागादपि तीर्थाग्र्यादविमुक्तमिदं शुभम्॥ ४८॥
कुबेरोऽत्र मम क्षेत्रे ह्यपि सर्वार्पितक्रियः।
क्षेत्रसंसेवनादेव गणेशत्वमवाप ह॥ ५०॥
पराशरसुतो योगी ऋषिर्व्यासो महातपाः।
मम भक्तो भविष्यश्च वेदसंस्थाप्रवर्तकः॥ ५९॥
रंस्यते सोऽपि पद्माक्षि क्षेत्रेऽस्मिन् मुनिपुङ्गवः।
ब्रह्मा देवर्षिभिः सार्धं विष्णुर्वापि दिवाकरः॥ ६०॥
देवराजस्तथा शक्रो येऽपि चान्ये दिवौकसः।
उपासते महात्मानः सर्वे मामिह सुव्रते॥ ६१॥" (९२ अ०)

हे पद्माक्षि! नैमिषक्षेत्र, कुरुक्षेत्र, गङ्गाद्वार और पुष्कर सकल तीर्थमें स्नान अथवा अवस्थानपूर्वक सेवा करनेसे जीव मोक्ष नहीं पाते, किन्तु अविमुक्तक्षेत्रमें अवश्य पा जाते हैं। सुतरां इसमें सन्देह नहीं कि अविमुक्त क्षेत्र श्रेष्ठतम है। हमारे अधिष्ठानके कारण प्रयाग और काशीमें मोक्ष लाभ होता है। काशी तीर्थश्रेष्ठ प्रयागसे भी श्रेष्ठतर है। कुबेरने समस्त क्रिया समर्पणपूर्वक हमारे वाराणसी क्षेत्रकी ही सेवा करनेसे गणेशत्व पाया है। हमारे भक्त पराशरके पुत्र योगिप्रवर महातपाः ऋषिवर व्यासदेव वेदविभागकर्ता और वेदमर्यादाके प्रवर्तक होंगे। वह मुनिवर भी वाराणसीमें ही परमानन्दसे अवस्थान करेंगे। अधिक क्या कहें—देवर्षिगणके साथ ब्रह्मा, विष्णु, दिवाकर, देवराज इन्द्र और अन्यान्य महात्मा देव सभी काशीमें हमारी उपासना किया करते हैं।

कूर्मपुराणमें कहा है,—

"ज्ञानध्याननिविष्टानां परमानन्दमिच्छताम्।
या गतिर्विहिता सुभ्रु साविमुक्ते मृतस्य तु॥ ५८॥
यानि चाव्यविमुक्तानि देवैरुक्तानि विश्वतः।
पुरी वाराणसी तेभ्यः स्थानेभ्यो ह्यधिका शुभा॥ ५९॥
यत्र साक्षान्महादेवो देहान्ते स्वयमीश्वरः।
व्याचष्टे तारकं ब्रह्म तत्रैव ह्यविमुक्तकम्॥ ६०॥
भ्रूमध्ये नाभिमध्ये च हृदयेऽपि च मूर्धनि।
यथाविमुक्तमादित्ये वाराणस्यां व्यवस्थितम्॥ ६२॥
वरणायास्तथा चास्या मध्ये वाराणसी पुरी।
वाराणस्याः परं स्थानं न भूतं न भविष्यति॥ ६३॥"

हे सुलोचने! परमानन्द लाभकी वासना कर ज्ञान और ध्यानमें निविष्टचित्त जो गति पाते, अविमुक्तमें मृत व्यक्ति भी वही गति पा जाते हैं। देव जिन सकल काम्यवर्जित स्थानोंकी कथा कहा करते, उन समस्त स्थानोंकी अपेक्षा वाराणसी श्रेष्ठतमा और शुभदायिनी है। काशीमें प्राण परित्यागके समय साक्षात् ईश्वर महादेव भ्रू, नाभि और हृदयमें तारक ब्रह्म नाम कीर्तन करते हैं। आदित्यके मध्यकी भांति वाराणसीमें भी अविमुक्तक्षेत्र अवस्थित है। वरणा और असि दो नदीके मध्यस्थलमें वाराणसी पुरी प्रतिष्ठित है। वाराणसीके तुल्य स्थान आजकल न है, न हुई और न होगी।

काशीखण्डमें कथित हुआ है,—

"अविमुक्तं महाक्षेत्रं पञ्चक्रोशपरिमितम्।
न च किञ्चित् क्वचिद्दृष्टमिह ब्रह्माण्डमण्डले॥ ८१॥
ब्रह्माण्डमध्ये न भवेत् पञ्चक्रोशप्रमाणतः॥ ८२॥
यथा यथा हि वर्धेत ब्रह्माण्डस्याण्डकं च।
तथा तथोपरिष्टादिदं क्षेत्रं प्रवर्धते॥ ८४॥
क्षेत्रमेतत् विश्वनाथे ह्यविमुक्तमिति स्थिरम्।
चतुर्दिक्षु न सूचितं नैव चान्ये दुरुद्रवः॥ ८६॥" (२६ अ०)

जहां विश्वेश्वर वास करते, उस महाक्षेत्र अविमुक्त अपेक्षा मनोरम और मङ्गलदायक वस्तु इस ब्रह्माण्डगोलकके मध्य कहीं नहीं। उक्त क्षेत्र पञ्चक्रोश परिमित है। प्रलय कालको एकार्णवका जब

काशीखण्डमें कहा है—

"असिश्च वरणा यत्र क्षेत्ररक्षाकृतौ कृते ॥
वाराणसीति विख्याता तदारभ्य महामुने ।
अद्यैव वरणायाश्च सङ्गमं प्राप्य काशिका ॥" (३०।६९-७०)

सत्ययुगमें जिस दिन काशीक्षेत्र रक्षा करनेके लिये असि और वरणा नदी निकली, हे मुनि! उसी दिनसे काशिका वरणा और असि नदीका सङ्गम लाभ कर 'वाराणसी' नामसे विख्यात हुयी है।

किसी किसी पाश्चात्य पुराविद्के मतमें वरणा और असिके मध्य रहनेसे ही काशीपुरी वाराणसी नामसे प्रथित हुयी है। किन्तु यह मत नितान्त आधुनिक है*। किन्तु हमारी विवेचनामें काशी नितान्त आधुनिक नहीं ठहरती। पुराणकी कथा छोड़ उपनिषद्की बात मानते भी उक्त पौराणिक मत समधिक प्राचीन समझ पड़ता है। यथा,—

"यत्र हि जन्तोः प्राणेषु उत्क्रममाणेषु रुद्रस्तारकं ब्रह्म व्याचष्टे, येनासावमृती भूत्वा मोक्षी भवति ; तस्मादविमुक्तमेव निषेवेत ; अविमुक्तं न विमुञ्चेत् एवमेवैतद् याज्ञवल्क्य।...सोऽविमुक्तः कस्मिन् प्रतिष्ठित इति। वरणायां नास्यां च मध्ये प्रतिष्ठित इति। का वै वरणा का च नासीति। सर्वानिन्द्रियकृतान् दोषान् वारयतीति तेन वरणा भवतीति। सर्वानिन्द्रियकृतान् पापान् नाशयतीति तेन नासी भवतीति।" (जाबालोपनिषद् १—२)

इस स्थानपर जन्तुके मरण काल रुद्र "तारकब्रह्म" नाम कीर्त्तन करते हैं। जिस हेतु उसके द्वारा जीव अमृतत्व लाभकर मोक्ष प्राप्त होता है। अतएव इस अविमुक्तक्षेत्रमें वास करना एकान्त कर्त्तव्य है ; अविमुक्तको कभी छोड़ना न चाहिये। हे याज्ञवल्क्य! हमने जो कहा, उसे सत्य समझियेगा। वह अविमुक्त क्षेत्र कहां प्रतिष्ठित है? वह वरणा और नाशी दो नदीके मध्य अवस्थित है। किसीको वरणा और किसीको नाशी कहते हैं? समस्त इन्द्रियकृत दोषराशि निवारण करनेवालीको "वरणा" और समस्त कृत पाप नाशकरनेवालीको ... है।

... जाबालदीपिकामें ...

"वर्णं ... ति यथा

"असीवरणयोर्मध्ये पञ्चक्रोशं महत्तरम्।
अमरा मरणमिच्छन्ति का कथा इतरे जनाः।"
वरणानाश्योर्मध्यदेशः प्रतिनिर्दिश्यते इत्यर्थ इति।"

बौद्धोंके आधिपत्यकाल शाक्यसिंहने उक्त वाराणसी प्रदेशके अन्तर्गत ऋषिपत्तन मृगदाव नामक स्थानमें जाकर धर्मोपदेश प्रदान किया था। (ललितविस्तर २५ अ०)। यहां तक कि खृष्टीय षष्ठ शताब्दके शेष भाग चीन-परिव्राजक युयनचुयाङ्ग जब वाराणसीस्थ बौद्ध तीर्थ दर्शनको गये, तब वाराणसी-राज्य प्रायः ३३३ कोस (४००० लि) और वाराणसी नगरी डेढ़ कोस (१८-१८ लि) दीर्घ तथा प्रायः आधकोस (५।६ लि) विस्तृत थी।

अकबर बादशाहके समय बनारस एक स्वतन्त्र सरकार रहा। आईनअकबरीमें लिखा है—"बनारस सरकारका परिमाण ३१८६९८ बीघा है। ८ महल इस सरकारके अधीन हैं। प्रधान स्थान अफराद, बनारस नगर और उसका सन्निहित स्थान सियालिसी, पन्दरहा, कसवार, कतेहर, करहया हैं।"

आजकल भी बनारस एक स्वतन्त्र विभाग है। वह युक्तप्रदेशवाले लाटके अधीन है। एक कमिश्नर उसपर तत्त्वावधान रखते हैं। भूमिका परिमाण १८३१७ वर्ग-मील है। आजमगढ़, मिर्जापुर, बनारस, गाजीपुर, गोरखपुर, बस्ती और बलिया जिला इस विभागके अन्तर्गत है। इनमें बनारस जिला ९९८ वर्गमील विस्तृत है। उक्त जिलेकी उत्तरसीमा गाजीपुर तथा जौनपुर, पूर्व शाहाबाद और दक्षिण एवं पश्चिम मिर्जापुर है। प्रधान नगर बनारस (काशीपुरी) है। आजकल उसका आयतन ३४४८ एकर मात्र है। वह अक्षा० २५° १८' ३१" उ० और देशा० ८३° १' ४" पू० पर अवस्थित है। उक्त नगर हिन्दू जातिके निकट सुपवित्र महापुण्य-काशीतीर्थ नामसे परिचित है। युक्तप्रदेशमें बनारस बड़ा ... है। अवध-रुहेलखण्ड रेलवेका

* Rev. S... City tr. by F. Hal... F... Survey Repts; N... p. 196.

... -नि-मुक्त वाराणसी है।
... Western Countries, Vol. II.

जिस प्रकार रहता महादेव उसी प्रकार उस क्षेत्रमें उपस्थित होकर ऊपर उठा करते हैं। दिनवर! काशी महादेव त्रिशूलके अग्रभाग पर अवस्थित है। वह आकाश और भूमि पर अवस्थित नहीं, मूढ़ व्यक्ति कैसे समझ सकते हैं?

काशीखण्डमें कहते हैं,—

"क्षेत्रं पवित्रं हि यथाऽविमुक्तं नान्यत्तथा यत्र तिभिः प्रयुक्तम्।
न धर्मशास्त्रैश्च तैः पुराणैः साक्षाच्छ्रुत्या हि यदविमुक्तम्॥
इडेत्यभिहिता जाबालिराख्यातोऽपिङ्गला मता।
वरणा पिङ्गला नाडी तदन्तस्त्वविमुक्तकम्॥
सा सुषुम्ना परा नाडी द्वयं वाराणसी त्वसौ।
तत्रोत्क्रमति सर्वेषां जन्तूनां हि श्रुतौ हरः॥
तारकं ब्रह्म व्याचष्टे तेन ब्रह्म भवन्ति हि।
एवं श्लोकौ प्रवदेत पाहुर्व वेदवादिनः॥
नाविमुक्तसमं क्षेत्रं नाविमुक्तसमा गतिः।
नाविमुक्तसमं लिङ्गं सत्यं सत्यं पुनः पुनः॥" (६। २६—२८)

अविमुक्त क्षेत्र जैसा पवित्र है, जगतमें कोई भी स्थान वैसा नहीं। यह नहीं कि वह केवल धर्मशास्त्र वा पुराण द्वारा प्रतिपादित हुआ है, किन्तु स्वयं श्रुति उसको प्रतिपादन करती है। अतएव सर्वदा अविमुक्त क्षेत्र आश्रय करना जीवोंका एकान्त कर्तव्य है।

सुप्रसिद्ध मुनिश्रेष्ठ जाबालिने कहा है—'हे आरुणि! असि नदी इडा, वरणा नदी पिङ्गला और उभयके मध्यस्थित अविमुक्तक्षेत्र सुषुम्ना नाड़ी कहाता है। उक्त नाड़ीत्रयको ही वाराणसी कहते हैं। उक्त वाराणसीमें प्राणत्याग करनेसे भगवान् महादेव जीवके दक्षिण कर्णमें तारकब्रह्म नाम कीर्तन करते हैं। उससे जीव ब्रह्मकी स्वरूपता पाते हैं। इस विषयमें वेदज्ञ पण्डित श्लोक कीर्तन करते हैं—'अविमुक्तके समान सद्गतिदायक स्थान दूसरा नहीं। अविमुक्तस्थित शिवलिङ्गकी तुल्य अन्य शिवलिङ्ग कहीं नहीं। उक्त वाक्य निश्चय ही सत्य है। उसमें कोई सन्देह नहीं।'

"कलौ विश्वेश्वरो देवः कलौ वाराणसी पुरी।" (९९। २५)

कलिकालमें विश्वेश्वर ही एकमात्र देव और वाराणसी ही एक मात्र मोक्षपुरी है।

देवदेव विश्वेश्वर वाराणसीके अधिष्ठात्री देवता हैं। अतिप्राचीन कालसे हिन्दू विश्वेश्वररूपी भगवान्की आराधना करते आते हैं। मत्स्य, कूर्म, लिङ्ग और शिव प्रभृति पुराणमें विश्वेश्वरका माहात्म्य वर्णित हुआ है।

"पञ्चक्रोश्याः परं नान्यत् क्षेत्रमस्ति भुवनत्रये।
अथवा पापिनां पापस्फोटनाय स्वयं हरः।
मर्त्यलोके इदं क्षेत्रं समानीय स्थितः सदा।
यथा तथापि धन्येयं पञ्चक्रोशी मुनीश्वराः॥
यत्र विश्वेश्वरो देवो ह्यागत्य संस्थितः स्वयम्।
यद्दिनं हि समारभ्य हरः काश्यामुपागतः॥ ४६॥
तद्दिनं हि समारभ्य काशी वै श्रेष्ठतरा स्मृता॥"

(शिवपुराण, ज्ञानसंहिता ४८ अ०)

हे मुनीन्द्र! पञ्चक्रोशीके तुल्य उत्कृष्ट स्थान त्रिभुवनके मध्य दूसरा नहीं। अथवा पापियोंके पाप विनाशको स्वयं महेश्वर मर्त्यलोकमें परमोत्कृष्ट स्थान स्थापनपूर्वक नियत अवस्थिति करते हैं। अतएव पञ्चक्रोशी त्रिलोकमें धन्य है। यहां स्वयं देवदेव विश्वेश्वर आकर अवस्थित हुये हैं। जिस दिनसे महादेव काशी गये, उसी दिनसे वह अतिश्रेष्ठ हुयी है।

"न केवलं ब्रह्महत्या प्राक्कृता च निवर्तते।
प्राप्य विश्वेश्वरं देवं न स भूयोऽभिजायते॥"

(मत्स्यपुराण, १८२। १७)

यहां केवल ब्रह्महत्या ही नहीं, प्राक्कृत पापपुण्यादि समस्त कर्म निवृत्त हो जाता है। देवदेव विश्वेश्वरको पाकर उक्त कर्म सकल पुनर्वार उत्पन्न हो नहीं सकता, सुतरां मोक्ष मिलता है।

चीन-परिव्राजक यूएन चुयाङ्गने वाराणसी जाकर शतहस्त उच्च ताम्रमय विश्वेश्वर लिङ्ग देखा था।*

आजकल वह शतहस्त उच्च ताम्रमय लिङ्ग कहां है? प्रायः तेरह सौ वर्ष पूर्व चीन परिव्राजकने जो शतहस्त उच्च ताम्रमय लिङ्ग देखा, आजकल उसका निदर्शन अथवा तत्परवर्ती किसी प्राचीन ग्रन्थमें उसका उल्लेख तक नहीं मिला। सम्भवतः

* La Vie de Hiouen Thsang par Stanislas Julien, p. 420.

पुरातत्व—विष्णु और ब्रह्माण्डपुराणके मतसे आयुवंशीय सुहोत्रपुत्र काश (१) प्रथम राजा थे। उनके पुत्रका नाम काशिराज या काश्य था। सम्भवतः काशिराज काश्यके नामानुसार ही उनका राज्य 'काशि' वा 'काशी' नामसे विख्यात हुआ है। काशिराजके बाद उनके पुत्र दीर्घतमाने राज्य किया। दीर्घतमाके धन्व नामक एक पुत्रने जन्म लिया था। उन्होंने बहुकाल तपस्या कर धन्वन्तरि पुत्र पाया था। (२) क्षत्रियराज धन्वन्तरिने महर्षि भरद्वाजके निकट विद्यालाभ कर आयुर्वेदको आठ भागमें विभक्त किया। आयुर्वेदको विभक्त करनेसे ही वह वैद्य नामसे विख्यात हुये। काशिराज धन्वन्तरिके औरससे केतुमान्ने जन्म लिया।(३) महाभारतके अनुशासन पर्वमें राजा केतुमान् हर्यश्व नामसे अभिहित हुये हैं। सम्भवतः हर्यश्वके राजत्व काल वाराणसी नगरी बसी थी। (४) उसी समय यदुवंशीय हैहयके पुत्रोंसे काशिराजके विवादका सूत्रपात हुआ। अवशेषमें हैहयके पुत्रोंने घोरतर युद्धकर हर्यश्वको मार डाला। हर्यश्वके मरनेपर सुदेव काशीके सिंहासनपर बैठ राज्य पालन करते रहे। हैहय लोग फिर भी शान्त न हुये। उन्होंने पुनर्वार जाकर सुदेवको मार यथास्थान प्रस्थान किया। सुदेवके पुत्र महात्मा दिवोदासने(५)पितृराज्य पाया। उस समय काशीकी राजधानी वाराणसी गङ्गाके उत्तर और गोमतीके दक्षिण कूलपर स्थापित थी। दिवोदासने शत्रुके भयसे राजधानीको सुदृढ़ किया। (महाभारत अनुशासन, ३० अ०)

(१) भागवतके मतानुसार सुहोत्रके पुत्र काश और काश्यके पुत्र काशि थे। (९।१७।३) किन्तु हरिवंश और ब्रह्माण्डपुराणके मतसे सुनहोत्रके पुत्र काश और उनके पुत्र काश्य थे।

(२) विष्णु (४।८।२।), भागवत (९।१७।४) और गरुड़ पुराण (१३९। १०)-के मतसे धन्वन्तरि दीर्घतमाके [illegible] थे। किन्तु हरिवंश (२९ अ०) और ब्रह्माण्डपुराणके मतसे दीर्घतमाके पुत्र धन्व और उनके पुत्र धन्वन्तरि थे।

(३) "तस्य गेहे समुत्पन्नो देवो धन्वन्तरिस्तदा।
काशिराजो महाराजः सर्वरोगप्रणाशनः॥ २१॥
आयुर्वेदं भरद्वाजप्रकार स भिषक्क्रियम्।
तमष्टधा पुनर्व्यस्य शिष्येभ्यः प्रददाववत्॥ २२॥ (ब्रह्माण्डपुराण)
"धन्वन्तरिसुतश्चापि केतुमानिति विश्रुतः।" (गरुड़पुराण १३९। १
(४) हर्यश्वके राजत्वकालमें सर्व प्रथम वाराणसीका उल्लेख है।
(भारत अनु० ३० अ०)

(५) विष्णु, ब्रह्माण्ड, गरुड़ और भागवतके मतमें दिवोदास भीमरथके पुत्र हैं।

हरिवंश, पद्म मत्स्य और ब्रह्माण्डपुराणके मतसे दिवोदासके पूर्व हैहयवंशीय राजा भद्रश्रेण्यने वाराणसीको अधिकार किया था। पीछे दिवोदासने उन्हें मार बहुकष्टसे पितृराज्य छीन लिया। उस समय निकुम्भके शाप और क्षेमक राक्षसके उत्पातसे महासमृद्धिशालिनी वाराणसी हतश्री एवं जनशून्य हो गयी थी। इसीसे दिवोदास गोमतीतीर एक नगर बसा राजत्व करते रहे।* हैहयवंशीय भद्रश्रेण्यके दुर्दम नामक एक पुत्र था। राजा दिवोदासने बालक समझ उसे छोड़ दिया। कालक्रमसे वही बालक हैहयवंशका उत्तराधिकार पा प्रबल पराक्रान्त हो गया। उसने दिवोदासको जीत वाराणसीको अधिकार किया।

दिवोदासके औरस और दृषद्वतीके गर्भसे प्रतर्दन † नामक एक महाबल बालकने जन्म लिया था। उसने राजा दुर्दमको युद्धमें जीत काशीराज्य अधिकार किया। कौषीतकी ब्राह्मण उपनिषत्में प्रतर्दन एक परम धार्मिक राजा कहे गये हैं। वह रामचन्द्रके समसामयिक थे। रामायण उत्तर काण्ड ४।११।१७ प्रतर्दनके पुत्र वत्स रहे। उन्हें लोग ऋतध्वज और कुवलयाश्व कहते थे।‡ परमज्ञानशीला तत्त्वदर्शिनी मदालसा उनकी पत्नी रहीं। मदालसाके गर्भसे वत्सके अलर्क नामक पुत्रने जन्म लिया अलर्कके राजत्वकाल काशीराज्य अति विस्तृत था। उन्हीं महात्माने शापावसानमें क्षेमक नामक राक्षसको मार फिर वाराणसी नगरीको प्रतिष्ठित और परम रमणीय वेशमें सज्जित किया। अलर्कके पीछे पुत्रपरम्परामें सन्नति, सुनीथ, क्षेम, सुकेतु, धर्मकेतु, सत्यकेतु, विभु, सुविभु, सुकुमार, धृष्टकेतु (यह कुरुक्षेत्रपर कुरुपाण्डव-युद्धमें उपस्थित थे) **, वेणुहोत्र, भर्ग और भार्गभूमि राजा हुये। यह सभी 'काश्य' वा 'काशेय' नामसे विख्यात हैं। परपृष्ठमें पुराणोक्त काशिराजोंकी एक तालिका दी गयी है—

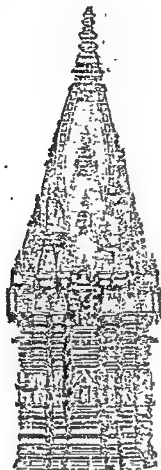
* काशिराज दिवोदासका नाम अथर्व और ऋग्वेदमें दिखाई देता है। किन्तु सन्देह है—दोनों एक व्यक्ति थे या नहीं।

† महाभारतके मतानुसार दिवोदासके औरस और माधवीके गर्भसे प्रतर्दनका जन्म था (उद्योगपर्व ११६ अ०)। ‡ मार्कण्डेयपुराणमें २० से २६ अध्याय पर्यन्त कुवलयाश्व वर्णित है। उसके आगे १० अध्यायमें अलर्कचरित वर्णित हुआ है।

** "धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान्" (भगवद्गीता १।५)

शाहबउद्दीन गोरी जिस समय वाराणसी लुण्ठन करने गये, उसी समय वह पवित्र ताम्रलिङ्ग मुसलमान कलङ्क विचर्पित अथवा विध्वस्त किया गया होगा बोध होता, हिन्दू राजाओंके समय जो लिङ्ग प्रतिष्ठित हुआ था, वही हमें देखनेको मिला।

आजकल विश्वेश्वरका स्वर्णकलस और स्वर्णचड़ा



विश्वेश्वरका मन्दिर।

विलम्बित जो सुन्दर मन्दिर नयनगोचर होता, वह शताधिक वर्ष पूर्व बना है। आजकल विश्वेश्वरके मन्दिरसे अनतिदूर औरङ्गजेबकी जहां मसजिद देख पड़ती पहले वहीं विश्वेश्वरका सुवृहत् मन्दिर था। हिन्दूविद्वेषी औरंगजेबने उक्त मन्दिर तोड़कर मुसलमानोंकी मसजिद निर्माण कराई है। अनेक लोग कहते कि वह मन्दिर ही मसजिदके रूपमें परिणत हुआ है मुसलमानोंने उसमें सामान्य ही परिवर्तन किया है। मसजिदके पश्चिमभागमें आज भी हिन्दू देवालयका यथेष्ट परिचय मिलता, उसके निम्नतलमें बौद्ध गठनका विहारगृह देख पड़ता है। किसी किसीके अनुमानमें हिन्दुओंने प्रबल हो बौद्धकीर्ति विलुप्त करनेको विहारके ऊपर ही देवालय बनाया था।

फिर कोई कहता औरंगजेबकी मसजिदसे अनतिदूर जहां आदि विश्वेश्वरका मन्दिर है, पूर्वको वहीं विश्वेश्वरका लिङ्ग प्रतिष्ठित था; उक्त मन्दिरके पार्श्वमें मुसलमानोंकी मसजिद बन जानेसे लिङ्ग स्थानान्तरित हुआ। उक्त आदिविश्वेश्वर मन्दिरके पार्श्वमें भी मसजिद है। किन्तु वह मसजिद सम्पूर्ण नहीं हुयी। वह मसजिद भी आदिविश्वेश्वरके मन्दिरका एकांश समझ पड़ती है। पूर्व जो मन्दिर था, उसको तोड़ उसीके पत्थरसे और उसीके नींवपर उक्त मसजिद बनी है। उसका कोई कोई अंश देखनेसे अति प्राचीन मालूम पड़ता है। किसीके मतमें यह प्राचीन बौद्धोंके समयकी निर्मित है।

विश्वेश्वरका वर्तमान मन्दिर समचतुरस्र प्राङ्गणपर

पुरुरवा
|
आयु
|

नहुष	क्षत्रवृद्ध
ययाति	सुहोत्र
यदु	१ काश
सहस्रजित्	२ काशिराज
शतजित्	३ दीर्घतमा
हैहय	४ धन्व
धर्मनेत्र	५ धन्वन्तरि
कुन्ति (कीर्ति)	६ केतुमान् (हर्यश्व)
सञ्जय (साहञ्जि)	७ भीमरथ
महिष्मान	८ दिवोदास
भद्रश्रेण्य	११ प्रतर्दन
१० दुर्दम	१२ वत्स
	१३ अलर्क
	१४ सन्नति वा सन्तति
	१५ सुनीथ
	१६ क्षेम
	१७ सुकेतु
	१८ धर्मकेतु
	१९ सत्यकेतु
	२० विभु
	२१ सुविभु
	२२ सुकुमार
	२३ धृष्टकेतु
	२४ वेणुहोत्र
	२५ भर्ग[१]
	२६ भार्गभूमि

ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है कि काशवंशीय २४ राजाओंने राजत्व किया था * किन्तु इसका कोई विवरण नहीं मिलता भार्गभूमिके पीछे कौन राजा हुआ।

बुद्धदेवके समय वाराणसीमें देवदत्त नामक एक राजा रहे।

सम्भवतः बौद्धधर्म बढ़ने पर काशीराज्य मगधराजके हाथ लगा।

ब्रह्माण्डपुराणमें भी बताया है—

"अष्टात्रिंशच्छतं भाव्याः प्राद्योताः पञ्च ते सुताः।
हत्वा तेषां यशः कृत्स्नं शिशुनागो भविष्यति।
वाराणस्यां सुतं स्थाप्य संयास्यति गिरिव्रजम्।"

(उपोद्घातपाद, ७४ अ०)

अनन्तर प्रद्योतवंशीय पञ्चपुत्र एक सौ अड़तीस वर्ष राजत्व करेंगे। उसके पीछे शिशुनाग उनका निखिल यशः हरण पूर्वक राजा होंगे। वह वाराणसी राज्यमें स्वीय पुत्रको संस्थापित कर (मगधराज्यस्थित) गिरिव्रजको चले जायेंगे।

बौद्ध ग्रन्थमें काशीराज ब्रह्मदत्तका नाम मिलता है। किन्तु यह मालूम करनेका उपाय नहीं किस समय उन्होंने राजत्व किया था। मगधराजगणके अधःपतनकाल काशीराज्य गुप्तराजगणके अधीन हुआ। उस राजवंशके मध्य केवल बालादित्यके पुत्र प्रकटादित्यका नाम मिलता है।† अनुमान ई० सप्तम शताब्दको वह काशीके राजासन पर आरूढ़ थे। उसके पीछे काशी सम्भवतः कन्नौजराजके शासनाधीन हुयी। ई० दशम शताब्दको कलचुरि और पालवंशीयोंने मिल कर कन्नौजराज्य आक्रमण किया था। उस समय काशीराज्य गौड़वाले पालवंशीय राजाओंके अधिकारभुक्त हुआ। काशीके पालवंशीय राजा सभी बौद्धधर्मावलम्बी थे। उनमें गौडाधिप महीपाल ही काशीके प्रथम पालवंशीय राजा रहे होंगे। वाराणसीके निकटवर्ती सारनाथमें महीपाल-

* Rev. S[illegible] tro. by F. Hall, p. [illegible] Survey Repts; N. W. P. Vol. [illegible]

[१] इत्यादि संख्या ही [illegible]

* "काशेयास्तु चतुर्विंशद्दशाविंशत्तु हैहयाः।"
(अध्या ७४।१२)

† Fleet's Inscriptions of the Early Gupta Kings, p. 246.

अवस्थित है। यह चूड़ा सहित १८ हस्त उच्च है।

ठीक समझ नहीं पड़ता—किस महात्माने उक्त मन्दिर बनवाया है। महाराज रणजीत् सिंहने मन्दिर की शिखराय, चूड़ा और समुदाय कलसके नीचेपर सोना मढ़वा दिया है। सूर्यालोकमें दूरसे दर्शन करने पर उसकी अपूर्व शोभासे नयन जल उठते हैं। स्वर्णोज्ज्वल चूड़ा पर त्रिशूल है। उसीके पार्श्वमें पताका उड़ती है।

विश्वेश्वर मन्दिरकी शिखरायके नीचे ८ बड़े घण्टे लटकते हैं। उनमें बड़ा घण्टा नेपालके राजाका दिया है। मन्दिरके उत्तर विश्वेश्वरकी सभा है। उस स्थान पर अनेक देवमूर्ति विराज करती हैं। उक्त पवित्र देवालयमें प्रवेश करनेसे मनमें अद्भुत रसका आविर्भाव होता है। आप देखेंगे कि भारतवर्षके सकल स्थानीय एवं सर्व जातीय हिन्दू भक्तिभावसे विश्वेश्वरके पवित्र लिङ्गदर्शनको उपस्थित हैं। भक्तोंके मुखसे निःसृत 'हर हर हर बंबम विश्वेश्वर' के रवसे मन्दिर प्रतिध्वनित होते हैं। कोई हाथ जोड़ देवादिदेव महादेवकी पूजा करता, कोई उदात्तादि स्वरसे वेद पढ़ता और कोई सुमधुर स्वरसे शिवस्तोत्र गान कर भक्तके हृदयमें विशुद्ध आनन्द भरता है। धन्य! भारतवर्षके नाना स्थानोंको आबाल-वृद्ध-वनिताका समावेश! ऐसा दृश्य किसी दूसरे स्थानपर देख नहीं पड़ता! भक्त हिन्दुओं की प्रकृत छवि अद्यापि विश्वेश्वरस्थलमें प्रकाशमान है। जिस समय विश्वेश्वर की सन्ध्या आरती होती और जिस समय वेदध्वनिसे हृदय हिलने लगता, उस समयका दृश्य कैसा अपार्थिव रहता है।

विश्वेश्वर मन्दिरसे अनतिदूर 'ज्ञानवापी' नामक पवित्र कूप है। शिवपुराणमें उक्त कूप "वापीजल" नामसे वर्णित हुआ है।* काशीखण्डमें लिखा है—

"रुद्ररूपी ईशानने त्रिशूल द्वारा स्थानीय भूमि खनन कर एक कूप निर्माण किया था। उस कुण्डसे पृथिवी अपेक्षा दशगुण जल निकला और उस जलसे भूमण्डल आप्लुत हुआ। उस समय रुद्रमूर्ति ईशानदेवने सहस्र कलस जल भर ज्योतिर्मय विश्वेश्वररूपी महालिङ्ग को स्नान कराया था। भगवान् विश्वेश्वरने रुद्रके प्रति प्रसन्न हो निम्नलिखित वर दिया—जो शिव शब्दका अर्थ विचारते, वह उसका अर्थ "ज्ञान" बतलाते हैं। वही ज्ञान हमारी महिमासे यहां जलरूपमें द्रवीभूत हुआ है। इसलिये यह तीर्थ "ज्ञानोद" नामसे विख्यात होगा"।* इस तीर्थ स्पर्श करनेसे सर्वपाप दूरीभूत होते हैं। फिर इसके स्पर्श और आचमनसे अश्वमेध तथा राजसूय यज्ञका फल मिलता है। इसका नाम शिवतीर्थ है। फिर यही तीर्थ शुभज्ञानतीर्थ तारकतीर्थ और प्रकृत मोक्षतीर्थ भी कहाता है। इस तीर्थके जलसे शिवलिङ्गको स्नान करानेपर सर्वतीर्थका फल लाभ होता है। ज्ञानस्वरूप हमीं यहां द्रवमूर्ति बन जीवगणकी जड़ता विनाश और ज्ञान उपदेश करते हैं।"

(काशीखण्ड, ३३ अ०)

काशीखण्डके अन्यस्थलमें कहा है—"दण्डनायक उस ज्ञानवापीका जल दुष्टगणसे बचाते और सुभ्रम तथा विभ्रम नामक गणद्वय दुष्टगणको भ्रान्ति उपजाते हैं। महादेवकी अष्ट मूर्तिका जो विषय कहा, उक्त ज्ञानदायिनी ज्ञानवापी उन्हीं अष्ट मूर्तिमें अन्यतम जलमयी मूर्ति है। (३३ अ०)

प्रवादानुसार बादशाहके काशीको सकल देवमन्दिर तोड़ने जाते समय विश्वेश्वर उक्त ज्ञानवापीके मध्य छिपे थे। आज भी सहस्र सहस्र यात्री वहां देवको पूजा करने जाते हैं।

ज्ञानवापी पर एक कुछ ऊंची छत है। वह छत पत्थरके ४० खंभों पर खड़ी है। उसका गठन अति सुन्दर है। १८२८ ई० को ग्वालियर महाराज दौलत

* 'अविमुक्ते स्वयं देवः संसारोपमोचनम्।
वापीजलं तदस्यं देवदेवस्य शूलिनः॥
स्पर्शं [illegible] तत्र [illegible]।
[illegible] शाश्वतीं गतिम्॥
[illegible]।'
(शिवपुराण, सनत्कुमारसंहिता, ४१।२६—२८)

* "शिवं ज्ञानमिति ब्रूयुः शिवशब्दार्थचिन्तकाः।
तच्च ज्ञानं द्रवीभूतमिह मे महिमोदयात्॥
अतो ज्ञानोदनामैतत्तीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम्।"
(काशीखण्ड, ३०-३१-३२)

राजकी १०१३ विक्रम संवत् (१०२६ ई०)-की प्रदत्त एक शिलालिपि मिली है ।* महीपालके पीछे उनके पुत्र स्थिरपाल और वसन्तपालके (१०८३ ई० तक) राजत्वकाल भी काशी बौद्ध पालोंके अधिकारमें रही । ११९४ ई० को कनौजराज जयचन्द्रके पराभूत होने पर शहाबुद्दीन् गोरीने वाराणसीके अभिमुख यात्रा की। उन्होंने प्रायः सहस्राधिक हिन्दूमन्दिर तोड़ डाले ।

अकबर बादशाहके समय मिर्जा चीन किलीच बनारसमें फौजदार थे । उस समय काशी इलाहाबाद सूबेके अधीन थी। औरङ्गजेबने वाराणसी बदल कर "मुहम्मदाबाद" नाम रखा था । उनके परवर्ती मुगल-आम अर्थी और अवधके नवाबके सनदोंमें वाराणसी-का नाम मुहम्मदाबाद मिलता है ।

ई० अष्टदश शताब्दके शेष भाग अवधकी सूबेदारी अधीन रहते भी वाराणसी एक स्वतन्त्र राज्य कहलाती थी

दिल्लीके बादशाह मुहम्मद शाहने हिन्दुओंके पवित्र-स्थान वाराणसीको हिन्दू राजाओंके ही अधीन रखना चाहा था। उसीके अनुसार उन्होंने १७३० ई० को वाराणसीसे पांच कोस दक्षिण अवस्थित गङ्गापुर ग्राम-के जमीन्दार मनसारामको 'राजा' उपाधि प्रदान किया। उनके पुत्र बलवन्त सिंह १७४० ई० को पितृ-राज्यके अधिकारी हो पुण्यभूमि वाराणसीके सिंहासन पर बैठे थे। १७४८ ई० को मुहम्मद शाह मर गये । उनके पुत्र अहमदशाहने सफदर जङ्गको वजीरका पद और अवध प्रदेश दिया था। उसी समय वाराणसी अवध सूबेके अन्तर्गत हुयी। बलवन्त पर सफदर जङ्गकी दृष्टि पड़ी थी । उन्होंने बलवन्तका परिचय अवधके अधीन किसी सामान्य जमीन्दारकी भांति देनेकी चेष्टा की । उस समय बलवन्तने अपनी स्वाधीनता बचानेके लिये यथेष्ट क्षमताके साथ साहस दिखाया था। १७५३ ई० को सफदरजङ्गके मरने पर उनके पुत्र शुजा-उद्-दौला सूबेदार हुये। उन्होंने भी पिताके अनुवर्ती बन बलवन्तकी पदमर्यादा खर्व करने की विशेष चेष्टा चलायी थी । उसी समय बलवन्तने नवाबके करालकवलसे राज्य रक्षा करनेके लिये राम-नगरमें एक सुदृढ़ दुर्ग बनाया। उसके पीछे आलम-गीर बादशाहके राजत्व काल उनके पुत्र मुहम्मदअली विद्रोही हो अवधके सूबेदारसे मिल गये। उस समय मीरजाफर बङ्गालके नवाब थे । मुहम्मदअली और शुजा-उद्-दौलाने मीरजाफरको पदच्युत कर बङ्गाल अधिकार करनेके लिये पटनाके अभिमुख यात्रा की । १७५९ ई० को मीरजाफर अङ्गरेजी सैन्यके साहाय्य-से पटनाके क्षेत्रमें उपस्थित हुये। दूसरे वर्ष शुजा-उद्-दौलाने फिर बङ्ग विजयका उद्योग लगाया था । उस समय मीरजाफरने बलवन्तसिंहसे सहायता मांगी । राजा बलवन्तसिंहने सैन्य द्वारा उन्हें यथेष्ट सहायता दी थी। फिर बङ्गालके नवाब और बलवन्तसिंहकी सन्धि हो गयी । उसी सन्धिके अनुसार अङ्गरेज बल-वन्त सिंहकी स्वाधीनता बचानेको विपद्काल मदद करने पर प्रतिश्रुत हुये । १७६४ ई० को २६ वीं दिसम्बरको दिल्लीके बादशाह शाह आलमने ईष्ट-इण्डिया कम्पनीको वाराणसी राज्य प्रदान किया था।* शुजा-उद्-दौलासे सन्धि होने पर १७६६ ई० को ईष्ट इण्डिया कम्पनीने वाराणसी राज्य अवधके नवाब-को सौंप दिया । उसी समय बलवन्तसिंह ब्रटिश गवरमेण्टके मित्रराजा कहलाने लगे । बीचमें शुजा-उद्-दौलाने बलवन्तसिंहका ध्वंस करनेकी चेष्टा की थी। किन्तु ईष्ट इण्डिया कम्पनीके बलवन्त-सिंहका पक्ष लेने पर उनकी आशा पूर्ण न हुयी । १७७० ई० को २२ वीं अगस्तको बलवन्तसिंहका स्वर्गवास हुआ। उसके पीछे उनकी एक क्षत्रिया रमणी-के गर्भजात चेतसिंहने राजसिंहासन अधिकार किया । १७७३ ई० को ६ठीं सितम्बरको अवधके नवाबने चेतसिंहको एक सनद दी थी। १७७५ ई० को २१वीं मईसे वाराणसी ब्रटिश गवरमेण्टके अधीन हुयी । उसके अनुसार १७७६ ई० को १५ वीं मईको चेतसिंहने ब्रटिश गवरमेण्टसे फिर एक सनद पायी। उसी समय युरोपमें फरासीसी विप्लव हो गया। सनदके

* Indian Antiquary, Vol. XIV. p. 140.

* Aitchison's Treaties etc. p. 6.

राव सेंधियाकी विधवा पत्नी बैजाबाईने उसे बनवा दिया था।

ज्ञानवापीके पूर्वमें पाल-राजप्रदत्त पांच हाथ ऊंची एक वृषभमूर्ति है। उसी स्थानपर हैदराबादकी रानीका मन्दिर बना है। निकट ही बहुतसे पवित्र स्थान भी हैं

यहां खड़े होकर उत्तर-पश्चिमदिक् दृष्टिपात करनेसे प्रथम ही ४० हस्त उच्च 'आदिविश्वेश्वरका' मन्दिर नयनगोचर होता है। उससे अदूर 'काशीकरवँट' नामक पवित्र कूप है। अनेक लोगोंके विश्वासानुसार जो डूब कर उक्त करवँट उत्तीर्ण हो सकता, उसको पुनर्जन्म नहीं मिलता। उसी उद्देश्यसे मध्यमें दो एक व्यक्ति डूब मरते थे। इसीसे गवरनमेण्टने कूपका मुख बन्द कर दिया है। उसके पीछे काशीकरवँटके पण्डोंका विस्तर आवेदन होता है। आज कल प्रति सोमवारको एक बार उसका मुख खोल दिया जाता है।

शनैश्चरेश्वरके निकट अन्नपूर्णा देवीका मन्दिर है। हिन्दुओंके विश्वासानुसार काशीमें कोई अनाहार नहीं रहता। वह अन्नदायिनीदेवी अन्न दे दीन दरिद्र सबका दुःख दूर करती हैं। अन्नपूर्णा मन्दिर जानेके पथमें असंख्य दीन दरिद्र भिक्षार्थ बैठे रहते हैं। मन्दिरसे भिक्षा स्वरूप एक मुट्ठी मटर देनेकी प्रथा है। यहां सबको भिक्षा मिलती है। अन्नपूर्णाका मन्दिर प्रायः २०० वर्ष पहले पूनाके महाराष्ट्रराजने बनवाया था। मन्दिरस्थ नाना रत्नविभूषणा त्रैलोक्यमोहिनी अन्नपूर्णाकी पवित्र मूर्ति देख दर्शकका मन प्रकृत मोहित होता है। मन्दिरकी एक ओर सप्ताश्वयोजित रथोपरि सूर्यदेवकी मूर्ति विराज करती है। एतद्भिन्न गौरीशङ्कर, गणेश और हनुमान्की मूर्ति पृथक् पृथक् स्थानमें प्रतिष्ठित है।

शनैश्चरेश्वरमन्दिरके दक्षिण शुक्रेश्वरका क्षुद्र मन्दिर है। काशीखण्डके मतमें—"पुराकालको भृगुनन्दन शुक्रने उसी स्थान पर शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा कर विश्वेश्वरकी आराधना की थी। उक्त शुक्रप्रतिष्ठित शुक्रेश्वरकी पूजा करनेसे मानव पुत्रवान्, सौभाग्यशाली और परम सुखी होता है। शुक्रेश्वरका भक्त शुक्रलोकमें वास करता है।" * (१६ अ०)

विश्वेश्वर मन्दिरसे प्रायः अर्ध क्रोश उत्तर कालभैरवका मन्दिर है। काशीखण्डमें लिखा है—"महादेवने ब्रह्माका गर्व खर्व करनेके लिये अपने कोपसे एक भैरवपुरुष बनाया था। वही पुरुष कालभैरव हैं। पूर्वको ब्रह्माके पञ्चमुख रहे। कालभैरवने उनका पञ्चम मस्तक छेदन किया। कालभैरव इस ब्रह्महत्याके पाप अपनयनको कापालिकव्रत अवलम्बन कर ब्रह्माका वही कपाल हाथमें ले पृथिवी पर घूमने लगे। उन्होंने बहु तीर्थ पर्यटन किये थे। किन्तु वह कपाल कहीं विमुक्त न हुआ। क्या आश्चर्य! काशीमें प्रवेश करते ही कालभैरवके हाथसे वह कपाल गिर पड़ा। ब्रह्महत्या भी अपके मध्य विनष्ट हुयी। 'जिस स्थान पर कपाल गिरा था, वही स्थान कपालमोचन तीर्थके नामसे विख्यात हुआ।' (कूर्मपुराण ३१।१८) उसके पीछे कालभैरवने कपालमोचन तीर्थको सम्मुख रख भक्तगणका पाप दूर करनेके लिये उसी स्थान पर अवस्थान किया। अग्रहायण मासकी कृष्णाष्टमीको उपवास कर कालभैरवके निकट रातको जागनेसे महापाप दूर होता है। कालभैरवकी पूजा करनेसे मनस्कामना सिद्ध होती है।"

(काशीखण्ड ३१ अ०)

कालभैरव या भैरवनाथकी वर्तमान मूर्ति प्रस्तरमें गठित कृष्णाभ घोर नीलवर्ण है। उसके दोनों चक्षु रौप्यमय तथा अधिष्ठान स्वर्णमय है। पार्श्वमें उनके कुक्कुरकी मूर्ति है। भैरवनाथका मंदिर देखने योग्य है। मंदिरगात्र विविध वर्णसे अलङ्कृत एवं देवलीलासे चित्रित है। विशेषतः प्रवेशद्वारके वामपार्श्व दशावतारको अतिसुन्दरमूर्ति अङ्कित हैं। मन्दिरकी चौखटमें दोनों पार्श्व द्वारपालेश्वरकी मूर्ति दण्डायमान है।

कालभैरवका वर्तमान मन्दिर प्रायः १२५ वर्ष पूर्व पूनाके बाजीरावने बनवाया था। मन्दिरके बहिर्भागमें भैरवनाथकी पुरातन मूर्ति रखी है। मन्दिरमें महादेव, गणेश और सूर्यनारायणकी मूर्ति विराज करती है। काशीमें शीतला देवीके ४ मन्दिर हैं। उनमें एक भैरव-

* शिवपुराणकी ज्ञानसंहिता (४९।११) एवं सनत्कुमारसंहिता (७०।११३) और कूर्मपुराण (३१।१८)-में इस प्रकार लिखा गया है।

अनुसार युद्धव्ययनिर्वाहार्थ गवर्नर जनरल वारन हेटिङ्गसने चेत्‌सिंहसे उनके देय वार्षिक करको छोड़ ५ लाख रुपया अधिक मांगा । प्रथम चेत्‌सिंहने ५ लाख रुपया दिया था। द्वितीय वर्ष इसी प्रकार ५ लाख देनेका समय आने पर चेत्‌सिंहने वृटिश गवर्मेण्टसे कुछ मोहलत मांगी। उससे वारन हेटिङ्गस उनसे क्रुद्ध हो स्वयं काशी जा पहुंचे । चेत्‌सिंह निरुपाय हो आत्मरक्षार्थ राजधानी छोड़ भाग गये । (१८१० ई० को ग्वालियरमें उनका मृत्यु हुआ।) चेत्‌सिंहके भाग जाने पर बलवन्तसिंहकी कन्याने वारन हेटिङ्गससे कहला भेजा कि वह बलवन्तसिंह-की एक मात्र कन्या हैं और उनका पुत्र (बलवन्तका दौहित्र) महीपनारायण ही राज्यका प्रकृत उत्तराधिकारी है। हेटिङ्गसने महीपनारायणको वाराणसीका प्रकृत राजा बना दिया। १७८१ ई० को १४वीं सितम्बरको महीपनारायणने वृटिश गवर्मेण्टसे वाराणसी जमीन्दारीकी सनद पायी थी। राजा महीपनारायणके स्वर्गवासी होने पर महाराज उदितनारायणने सिंहासन लाभ किया। १८३५ ई० को उदितनारायण भी स्वर्गगामी हुये । उनके भ्रातुष्पुत्र ईश्वरीप्रसाद-नारायण राजा बने थे। वह एक कवि और शिल्पी रहे। उनके स्वहस्तनिर्मित विविध हस्तिदन्तके कारुकार्य रामनगरके राजभवनमें विद्यमान हैं। १८८९ ई० को उन्होंने परलोक गमन किया । आजकल उनके पुत्र राजा प्रभुनारायण सिंह वाराणसीकी जमीन्दारीका स्वत्व भोग करते हैं।

तीर्थविवरण।

काशी वा वाराणसी नगरी बहुत प्राचीन कालसे हिन्दुओंका अतिपवित्र तीर्थ कही जाती है। महाभारतमें लिखा है,—

"वाराणसी जा वृषभवाहन महादेवका अर्चन और कपिलाह्रदमें स्नान करनेसे राजसूय यज्ञका फल मिलता है। उसके पीछे अविमुक्ततीर्थ पहुंच देवादिदेव महादेवका दर्शन करनेसे ब्रह्महत्याजनित पाप छूट जाता और वहां प्राणत्याग करनेसे मोक्ष पाता है।" (उद्योगपर्व, ८४ अ०।) महाभारतके उक्त विवरण पाठसे वाराणसी और अविमुक्त दो स्वतन्त्र परस्पर निकटवर्ती तीर्थ समझ पड़ते हैं। शिव, मत्स्य, कूर्म गरुड़ और लिङ्ग प्रभृति पुराणोंके मतमें काशीका ही अपर नाम अविमुक्त है। किन्तु महाभारतमें दो स्वतंत्र तीर्थ कहनेका कारण क्या है? काशीखण्डमें विश्वेश्वर और अविमुक्तेश्वर नामक स्वतन्त्र शिवलिङ्गका विवरण दिया है । सम्भवतः अविमुक्तेश्वर लिङ्गके विराज करनेका स्थान ही अविमुक्ततीर्थ नामसे ख्यात था। वस्तुतः अविमुक्ततीर्थ वाराणसीके ही अन्तर्गत है।

हरिवंशमें महादेवके वाराणसीगमनका विषय इस प्रकार लिखा गया है—

"राजर्षि दिवोदास महासमृद्धिशाली वाराणसी नगरी पाकर सुखसे वहां रहने लगे। उस समय देवादिदेव दारपरिग्रह कर श्वशुरालयमें वास करते थे । महादेवके आज्ञानुसार उनके पारिषद नाना उपायसे भगवती पार्वतीको रिझाने लगे। देवी पार्वती बहुत ही सुखी हुयीं। किन्तु उनकी जननी मेनकाको अच्छा न लगा। वह अनेक समय उभयकी निन्दा कर कहती थीं—'पार्वति ! तुम्हारे स्वामी पारिषदगणके सहित विचार-आचार-भ्रष्ट और दरिद्र हैं । उनमें कुछ भी शोभता देख नहीं पड़ती।' एक दिन स्वामीकी निन्दा सुन देवी पार्वती स्त्रीस्वभाववशतः क्रुद्ध हो गयीं। किन्तु उस समय माताले मनका भाव छिपा ईषत् हंस पड़ीं। फिर उन्होंने महादेवके पास जाकर विषण्ण वदनसे कहा था—'देव! अब हम यहां न रहेंगी। हमें अपने भवन ले चलिये।' उस समय महादेवने एक बारी सकल लोकको निरीक्षण किया। अवशेषको पृथिवी पर ही वासस्थान निर्णय कर सिद्धक्षेत्र वाराणसी नगरीको चुना था। किन्तु उसे दिवोदास द्वारा अधिकृत देख उन्होंने स्वीय पारिषद निकुम्भसे कहा—'वत्स! वाराणसीपुरी जाकर कौशल क्रमसे जनशून्य करो। किन्तु सावधान! महाराज दिवोदास अति पराक्रान्त हैं।'

"निकुम्भने वाराणसी नगर जा कण्डुक नामक किसी नापितको स्वप्नमें दर्शन दे कहा था—'देखो! तुम इस नगरीके प्रान्त भागमें कोई स्थान निर्दिष्ट कर हमारी प्रतिमूर्ति स्थापन करो । हम तुम्हारा भला

नाथ मन्दिरके निकट है। उक्त द्वीतला मन्दिरमें सप्तभगिनीकी मूर्ति है।

कालभैरवसे अनतिदूर दण्डपाणिका मन्दिर है। काशीखण्डके मतसे—"हरिकेश नामक एक यक्ष थे। बाल्यकालसे ही उनके हृदयमें शिवभक्ति उद्दीपित हुयी। वह सोते समय सर्वदा महादेवकी विभूति देखते थे। बाल्यकाल ही वह गृह परित्याग कर वाराणसी गये और शिवकी तपस्यामें प्रवृत्त हुये। बहु काल पीछे महादेवने सन्तुष्ट हो उन्हें यह वर दिया था—'हे यक्ष! तुम हमारे अत्यन्त प्रिय हो। तुम इस क्षेत्रके दण्डधर हो। आजसे तुम इस काशीके दुष्टशासक और शिष्टपालक बन कर अवस्थान करो। तुम दण्डपाणिके नामसे प्रसिद्ध होगे। हमारे संभ्रम और उद्भ्रम नामक गणद्वय सर्वदा तुम्हारे अनुगामी होकर रहेंगे। काशीवासियोंका अन्तिमकाल उपस्थित होनेसे तुम उनके गलेमें सुनील रेखा, हस्तमें सर्प वलय, भालमें लोचन, परिधानमें कृत्तिवास, मस्तकमें पिङ्गलवर्ण जटा, सर्वाङ्गमें विभूति, कण्ठमें चन्द्रकला और वाहनार्थ वृषभ प्रदान करोगे। तुम्हीं काशीवासियोंके अन्नदाता, प्राणदाता, ज्ञानदाता और मोक्षदाता होगे।' तदवधि दण्डपाणि महादेवके आदेशसे सम्यक्‌रूप द्वारा अभी शासन करते हैं।* काशीमें दण्डपाणिकी पूजा न करनेसे किसीको कैसे सुख मिलता है?"

(काशीखण्ड ३२ अ०)

दण्डपाणिकी मूर्ति प्रायः ३ हस्त उच्च है। प्रति रवि और मङ्गलवारको यात्री दण्डपाणिकी पूजा करते हैं।

दण्डपाणि और भैरवनाथ मन्दिरके बीचोबीच नवग्रहका मन्दिर है। यहां रवि, सोम, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतुकी मूर्ति पूजी जाती है।

कालभैरवसे अनतिदूर कालोदक या कालकूप है। इस तीर्थमें स्नान करनेसे पितृगणका उद्धार होता है। (काशीखण्ड ३३।१८) उक्त कूप इस भावसे अवस्थित है कि मध्याह्नके समय सूर्यरश्मि ठीक उसके जल पर पड़ता है उस समय अनेक लोग अदृष्ट परीक्षार्थ कालकूप दर्शन करने जाते हैं। काशिवासियोंके विश्वासानुसार मध्याह्नकाल जो व्यक्ति कूपके जलमें अपनी प्रतिमूर्ति देख नहीं सकता, वह ६ मासके मध्य निश्चय मरता है। कालोदकके निकट ही महाकाल और पञ्च पाण्डवकी मूर्ति है।

कालोदकसे अनतिदूर वृद्धकालेश्वरका वर्तमान मन्दिर है। काशीखण्डके मतानुसार—"दक्षिण देशके नन्दिवर्धन नामक ग्राममें वृद्धकाल राजा रहे। उन्होंने सहधर्मिणीके साथ काशी आ एक प्रासाद बनाया और उसमें शिवलिङ्ग स्थापन कराया। वही अनादि शिवलिङ्ग वृद्धकालेश्वर नामसे ख्यात है। वृद्धकालेश्वर महादेवकी सेवा करनेसे दरिद्रता, उपसर्ग, रोग पाप किंवा पापजनित फलभोग निवारित होता है।

(काशीखण्ड ३३ अ०)

वृद्धकालेश्वरका मन्दिर अति प्राचीन है।* अनेकोंके मतानुसार काशीमें आजकल जितने शिवालय देख पड़ते, उन सबमें उक्त मन्दिर पुरातन मन्दिर है।

वृद्धकालेश्वरके मन्दिर मध्य दक्षेश्वर नामक स्वतन्त्र शिवलिङ्ग विद्यमान है। उक्त मन्दिरका छोड़ दक्षिणभागमें 'अल्पमृत्युेश्वर' शिवलिङ्ग है। भक्तके विश्वासानुसार अल्पमृत्युेश्वरलिङ्ग अल्पायु मानवको दीर्घायु प्रदान करता है। इसीसे बिस्तर तीर्थयात्री उक्त लिङ्ग दर्शन और अर्चन करने जाते हैं।

किसी समय वृद्धकालेश्वरके दक्षिण पुराण-प्रसिद्ध कृत्तिवासेश्वरका मन्दिर था। काशीखण्डमें लिखा है—"महादेव द्वारा निहत होनेपर गजासुरका शरीर उक्त स्थानपर शिवलिङ्गरूपमें परिणत हुआ। शिवके गजासुरकी कृत्ति अर्थात् चर्म परिधान करनेसे ही उक्त लिङ्ग कृत्तिवासेश्वर कहाता है। यह लिङ्ग काशीस्थ सकल लिङ्गमें श्रेष्ठ है। उत्तमरूपसे सात कोटि महारुद्र जप करनेसे जो फल मिलता, काशीमें कृत्तिवासेश्वरकी पूजा करनेसे वही प्राप्त हो सकता है।" (काशीखण्ड ६८ अ०)

* काशीवासियोंके विश्वासानुसार कालभैरव ही दण्डपाणि काशीके शासनकर्ता वा कोतवाल हैं।

* लिङ्गपुराणमें भी वृद्धकालेश्वरका नाम मिलता है। (लिङ्गपुराण, ब्रह्मसंहिता १०।११)

करेंगे।' रात्रियोगमें उक्त स्वप्न देख उसने दूसरे दिन महाराज दिवोदासको सब वृत्तान्त जा सुनाया। फिर उसने नगरके द्वारपर निकुम्भकी मूर्ति स्थापन कर उक्त विषय नगरको चारोदिक् घोषणा किया फिर महासमारोहसे गणपति निकुम्भकी पूजा होने लगी। गणेश्वर पुत्रार्थीको पुत्र, धनार्थीको धन, आयुप्रार्थीको आयु, यहां तक कि लोगोंको मुंह मांगा वरदान देते थे। किसी समय दिवोदासके आदेशसे महिषी सुयशाने विविध उपचारसे गणपतिकी पूजा और अंतमें पुत्रलाभका वर मांगा। उनके बार बार जा कर यथाविधि अर्चना पूर्वक पुत्र कामना करते भी निकुम्भने स्त्रीय अभिष्ट सिद्धिके निमित्त वरदान न दिया। उसी प्रकार दीर्घकाल निकल गया। निकुम्भके आचरणसे दिवोदास बिगड़े और कहने लगे—'यह भूत हमारे ही सिंहद्वारपर रहता है। नागरिकोंपर सन्तुष्ट हो शत शत वर देता, किन्तु किसलिये हमसे मुख फेर लेता है? हमने व्याप हो महिषीद्वारा पुत्र प्रार्थना किया, किन्तु, आश्चर्य! कृतघ्नने हमको वर प्रदान न किया। अतएव अब इसकी पूजा विधेय नहीं। विशेषतः हमारे अधिकारमें फिर वह किसी प्रकार पूजा न पायगा। हम दुरात्माको स्थानभ्रष्ट कर देंगे।' ऐसा ही स्थिर कर राजा दिवोदासने गणपतिका वह स्थान तोड़ डाला। निकुम्भने आयतन टूटा देख राजाको अभिसम्पात किया—'तुमने निरपराध हमारा स्थान नष्ट किया है। इसलिये तुम्हारी यह पुरी निश्चय अभी शून्य हो जावेगी।' निकुम्भ उस प्रकार अभिशाप दे महादेवके निकट पहुंच गये। उधर निकुम्भके अभिशापसे वाराणसी जनशून्य हुयी। दिवोदासने गोमतीतीर राजधानी बनायी थी। फिर महादेव उसी शून्य वाराणसी नगरीमें आवास निर्माण कर देवीके साथ परम सुखसे विहार करने लगे। किन्तु वह स्थान देवीको प्रीतिकर न हुआ। अवशेषको उन्होंने महादेवसे कहा 'इस (जनशून्य) पुरीमें हम रह नहीं सकतीं।' महादेवने उत्तर दिया—'इस स्थानको हम नहीं छोड़ेंगे। यह हमारा अविमुक्तगृह है। हम कहीं दूसरी जगह नहीं जावेंगे। तुम्हारी इच्छा हो, चली जावो।' त्रिपुरान्तक महादेवने स्वयं वाराणसीको अविमुक्त कहा है। इसीसे यह अविमुक्त नामसे विख्यात हुयी है। वाराणसी इसी प्रकार अभिशप्त हो अविमुक्त कहलायी। यहां सर्वदेवनमस्कृत महेश्वर सत्य, त्रेता और द्वापर तीन युगमें देवीके साथ परम सुखसे वास करते हैं। कलियुग आनेसे वह अन्तर्हित हो जाती है। किन्तु महादेव उसको परित्याग नहीं करते।"*

काशीखण्डमें लिखा है—"देवदेव महादेव ब्रह्माके वाक्य प्रतिपालनको काशी छोड़ मन्दरपर्वत पर जा कर रहे थे। महादेवके गमन करने पर समस्त देव भी मन्दर पर्वत पर उपस्थित हुये। महादेव वहां जाकर तृप्त हो न सके, उनके मनमें काशीका विरह भड़क उठा। उस समय वाराणसी महाराज दिवोदासकी राजधानी थी। तपस्याके बलसे उन्होंने समस्त देवगणका रूप धारण किया था। इसलिये देव उनकी स्तुति और भजना करते थे। असुर भी सर्वदा उनके स्तवमें लगे रहते थे। उनके समान धार्मिक नृप उस समय कोई न था। दिवोदासका ही अपर नाम रिपुञ्जय था।†

"मन्दरपर्वतपर महादेवने काशीका विरह उपस्थित होनेपर देखा कि राजा दिवोदासको किसी प्रकार निकाल न सकनेसे वाराणसी लाभ होता न था। प्रथम उन्होंने ६४ योगिनीको काशी भेजा था। योगिनी काशी जाकर परमधार्मिक दिवोदासको स्वधर्मच्युत कर न सकीं। सुतरां उनके काशी जानेका उद्देश्य असफल हुआ। वह मणिकर्णिकाको सम्मुख रख काशीमें रहने लगीं।‡ कुछ दिन बीतने पर महादेवने देखा कि योगिनी लौटी न थीं। फिर उन्होंने अत्यन्त उत्कण्ठित हो सूर्यको भेजा। सूर्य काशी जाकर धार्मिक

* ब्रह्माण्डपुराणके उपोद्घातपादमें महादेवके वाराणसी आयतनका विवरण ठीक इसी प्रकार लिखा है, किन्तु पुराणान्तरमें कुछ मतभेद लक्षित होता है। एतत्प्रसङ्गमें विष्णु विवरण देखना चाहिये।

† काशीखण्डमें ४१से ५८ अध्यायके मध्य दिवोदास और रिपुञ्जयकी अनेक कथा लिखी है।

‡ यह स्थान आजकल चौंसठ योगिनीका घाट कहलाता है।

एक समय कृत्तिवासेश्वरका अति महत्प्रासाद था।

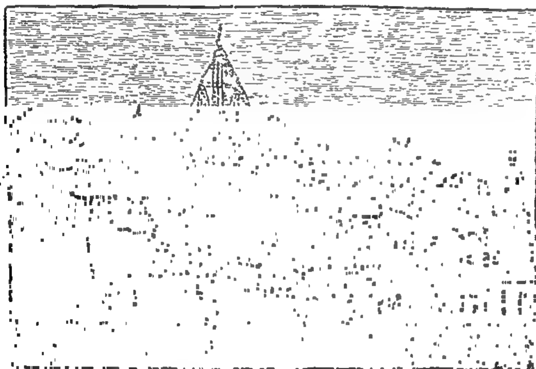
"कृत्तिवासेश्वरस्यैव प्रासादादिविनिर्मितिः।
यो दृष्ट्वापि नरो दूरात् कृत्तिवासः पदं लभेत्।
सर्वेषामपि लिङ्गानां मौलित्वं कृत्तिवाससः॥"

(काशीखण्ड, ३१। ६९—७०)

कृत्तिवासेश्वरका वृहत् प्रासाद नयनगोचर होता है। मानव दूरसे वह प्रासाद निरीक्षण करते ही कृत्तिवासत्व पा जाता है। यह मन्दिर सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है।

कृत्तिवासेश्वरके उसी प्रासादका चिह्नमात्र भी नहीं रहा। आजकल उसका कियदंश आलमगीरी मसजिद कहाता है। हिन्दूविद्वेषी औरंगजेबके राजत्वकाल मुसलमानोंने कृत्तिवासेश्वर मन्दिर ध्वंस कर उसीके साजसामानसे १६५८ ई० को उक्त मसजिद बनायी थी।

आलमगीरी मसजिदके निकट ही रत्नेश्वरका पवित्र मन्दिर है। काशीखण्डमें कहा है—"कालभैरवके उत्तरभागमें गिरिराज हिमालय पार्वतीके लिये जो समुदाय रत्न लाये थे, वह सकल पुण्योपार्जित रत्नराशि रत्नेश्वरमें रख वह अपने गृह चले गये। काशीमें जितने लिङ्ग हैं उन सकलके मध्य यह लिङ्ग रत्नभूत है। इसीसे उसको रत्नेश्वर कहते हैं। देवी



मणि कर्णिका-घाट।

पार्वतीके आदेशपर उनके विश्वविख्यात रागमत्त सुवर्णसे गण समूहने रत्नेश्वर प्रासाद निर्माण किया। जो व्यक्ति रत्नेश्वरको नमस्कार कर देशान्तर और कालपाशमें पड़ता, वह शतकोटि कल्पमें भी स्वर्गच्युत हो नहीं सकता। उसी लिङ्गकी पूर्वदिक् पार्वतीने दाक्षायणीश्वर नामक लिङ्ग प्रतिष्ठा किया था।"

(काशीखण्ड ६८ अ०)

प्रायः ८५ वर्ष पूर्व उक्त मन्दिरकी भित्तके खनन-काल मृत्तिकासे अविरत निकले थे।

काशीकी मणिकर्णिका भी सामान्य तीर्थ नहीं। शिवपुराणकी ज्ञानसंहितामें लिखा है—

"तत्र विष्णुना दृष्टा यदा विस्मितस्तद।
इत्याश्चर्ये महद् दृष्टं शिरसः कम्पनं कृतम्।
तस्य पतितः कर्णाभ्यन्त कुण्डली तथा॥
तथाभूत् पतितस्तत्र नाम्ना सा मणिकर्णिका।" (४९। १०—१४)

तदनन्तर विष्णुने उसे देख कर मनमें कहा—अहो वह अतिशय अद्भुत व्यापार था। उक्त आश्चर्य देख

दिवोदासका कोई छिद्र निकाल न सके । वहां वह काशीकी मायामें विमुग्ध हो रहने लगी । योगिनीगणकी भांति सूर्य भी लौटे न थे । उस समय महादेवने अपने गणधरको पूर्वकी भांति उपदेश दे कर काशी भेजा । वह भी यहां आकर काशीकी विमोहिनी शक्तिसे विमुग्ध हो गये और योगिनीगणकी भांति दिवोदासका अनिष्ट साधन कर न सके । इधर महादेवने उनका कोई संवाद न पा विशेषतः काशीके विरहसे अस्थिर हो गणेशको प्रेरण किया । गणपतिने काशी जा वृद्ध दैवज्ञका वेश बनाया था । फिर वह काशीवासीकी भाग्यलिपि गणनाकर सबको विस्मयाभिभूत करने और यह कहते घूमने लगे कि काशीमें रहनेसे लोगोंको घोर अनिष्ट झेलना पड़ेगा । वृद्ध दैवज्ञकी बातसे काशीवासियोंको भय हुआ । फिर बहुतसे लोग काशी छोड़ने लगे । क्रमशः वृद्ध दैवज्ञकी अद्भुत गणना कथा दिवोदासके अन्तःपुरमें पहुंची थी । इसी प्रकार गणपतिने राजाके अन्तःपुरमें प्रवेश लाभ किया । फिर वह भाग्यगणना द्वारा राजमहिलाके हृदयमें विश्वास उपजाने लगे । कपटी दैवज्ञने रानीगणके मध्य क्रमशः महासम्मान लाभ किया था । राजमहिला अभाषातसे राजासे उनके गुणकी बहुविध प्रशंसा करने लगीं । किसी दिन राजाने वृद्ध दैवज्ञको बोला बहुतसी बातें पूछी थीं । दैवज्ञरूपी गणपतिने नानाप्रकारसे राजाको मनोमुग्ध कर कहा—'महाराज ! उत्तर देशसे एक ब्राह्मण आपके निकट आवेंगे । वह जो कहें, आप उसे सर्वतोभावसे पालन करें । इससे आपके सकल विषय सिद्ध होंगे ।'

"इधर मंदरासीन महादेवने गणनायकका विलम्ब देख विष्णुके प्रति साग्रह दृष्टिनिक्षेप किया था । फिर उन्होंने अनेक कथा उपदेश कर उनसे कहा—'हे विष्णो ! देखो अन्यान्य व्यक्तिकी भांति तुम भी काशीमें आचरण न करना ।' विष्णु यथोचित उत्तर दे हृष्ट मनसे काशीको चलते हुये ।

विष्णुने लक्ष्मीके साथ काशी जा काशिवासियोंको मायासे विमुग्ध किया था । उसमें अधिकांश लोग स्वधर्मच्युत होने लगे । दूसरे दैवज्ञके उपदेशसे रिपुञ्जय दिवोदासको संसार-वैराग्य उपस्थित हुआ । वह उस ब्राह्मणकी प्रतीक्षा करने लगे । अष्टादश दिवस विष्णु ब्राह्मणके वेशमें दिवोदासके समीप उपस्थित हुये । महाराज दिवोदासने अभिप्रेत ब्राह्मणके दर्शनसे परम आनन्द लाभ किया था । उन्होंने ब्राह्मणवरको सम्बोधन कर कहा—'हे द्विजोत्तम ! बहुदिन राज्य-भारके वहनसे हम क्लान्त हो गये हैं । हमारे मनमें संसारवैराग्य उपस्थित हुआ है । आज आप हमसे जो कहेंगे, हम वही करेंगे ।' ब्राह्मणरूपी विष्णुने राजाको नाना प्रकार उपदेश दे कहा—'महाराज ! यही एक बड़ा दोष है कि आपने विश्वनाथको काशीसे दूर कर दिया है । यदि इस महापापकी शान्ति चाहें, तो आप काशीमें शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा करें । एक शिवलिङ्गकी प्रतिष्ठासे सहस्र अपराध विनष्ट होते हैं ।' महाराज दिवोदासने ज्येष्ठ पुत्र समरञ्जयको राज्यमें अभिषिक्त कर संसारका संस्रव छोड़ा था । उन्होंने विष्णुके आदेशानुसार गङ्गाके पश्चिम तटपर एक शिलालय बनवा उसमें दिवोदासेश्वर नामक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया । सप्तम दिवस शिवदूतपरिवेष्टित ज्योतिर्मय रथ आकर उपस्थित हुआ । महाराज रिपुञ्जय उस पर बैठ स्वर्गको चले गये । इसी प्रकार महात्मा दिवोदासका निर्वाण हुआ । उसके पीछे महादेव देवी पार्वतीके साथ फिर अपने प्रियतम काशीधाममें पहुंच गये ।"

काशीखण्डके विवरण पाठसे ऐसा अनुमान किया जाता है कि प्रथमतः यहां ब्राह्मण्यधर्म प्रबल था । उसके पीछे बुद्धदेवके अभ्युदय और बौद्ध राजाओंके आधिपत्यप्रभावसे वाराणसीसे हिन्दूधर्म एक बारगी ही विलुप्त हो गया, यहां तक कि वाराणसी धाम बौद्धतीर्थ कहलाने लगा । अवशेषको राजा रिपुञ्जयके राजत्वकाल शाक्त, शैव, सौर, गाणपत्य और वैष्णव क्रमशः प्रबल पड़ गये । वैष्णव द्वारा काशीसे बौद्धधर्म अथवा बौद्ध-आधिपत्य तिरोहित हुआ था । यह विषय प्रसङ्ग क्रमसे काशीखण्डमें लिखा कि काशिराज रिपुञ्जय दिवोदासके * समय काशीमें बौद्धधर्म प्रबल है । यथा—

* यह दिवोदास महाभारत और पुराणोक्त प्रतर्दनके पिता दिवोदास नहीं ह

उन्होंने शिरःकम्पन किया था। उससे उनके कानसे मणिभूषण उसके आगे गिर पड़ा। मणि पतित होनेके स्थान पर ही मणिकर्णिका है।

"नास्ति गङ्गासमं तीर्थं वाराणस्यां विशेषतः।
तत्रापि मणिकर्ण्याख्यं तीर्थं विश्वेश्वरप्रियम्॥" ([illegible]पुराण ३। ८)

गङ्गासम तीर्थ नहीं। विशेषतः वाराणसीमें विश्वेश्वरप्रिय मणिकर्णिकाके तुल्य तीर्थ दूसरे स्थान पर देख नहीं पड़ता।

"संसारचिन्तामणिरत्र यस्मात् तं तारकं सज्जनकर्णिकायाम्।
शिवोऽभिधत्ते सहसान्तकाले तद्गीयतेऽसौ मणिकर्णिकेति॥
मुक्तिलक्ष्मीमहापीठमणिस्तच्चरणाब्जयोः।
कर्णिकेयं ततः प्राहुर्यां जना मणिकर्णिकाम्॥"
(काशीखण्ड ७। ७८—८०)

संसारी जीवोंके चिन्तामणि विश्वनाथ अन्तिमकाल साधुओंके कर्णमें तारकमन्त्र उपदेश किया करते हैं। इसीसे उसका नाम मणिकर्णिका है। अथवा यह स्थान मुक्तिलक्ष्मीके महापीठका मणिस्वरूप और उनके चरणकमलका कर्णिका स्वरूप है। इसीसे मानव उसे 'मणिकर्णिका' कहते हैं।

"[illegible] महाचक्रधरं हरिम्।
[illegible] मौलिं [illegible]भूषणः॥
[illegible] पपात मणिकर्णिका।
मणिभिः खचिता रम्या ततोऽस्तु मणिकर्णिका॥
चक्रपुष्करिणी तीर्थं पुराख्यातमिदं शुभम्।
[illegible]॥
[illegible] पपातेयं यदा च मणिकर्णिका।
तदा प्रभृति [illegible] मणिकर्णिका॥"
(काशीखण्ड २६। ६१—६५)

महादेवने कहा है—'हे विष्णो! तुम्हारी महातपस्या देख हमने विस्मयसे मस्तक हिलाया था। उससे हमारे कर्णसे विचित्र मणिमुक्ताखचित मणिकर्णिका नामक कर्णभूषण यहां गिर पड़ा। इसीसे इस स्थानका नाम मणिकर्णिका है। तुम्हारे चक्रद्वारा खनन करनेसे यह पवित्र तीर्थ पहले चक्रपुष्करिणी कहाता था। पीछे हमारी मणिकर्णिका गिरनेसे यह मणिकर्णिका नामसे ख्यात हुआ।'

काशीमाहात्म्यमें लिखा है—कायिक या सांख्ययोग अथवा बहुतर व्रतद्वारा जो गति नहीं मिलती, मोक्षभूमि मणिकर्णिका मानवगणको अनायास वही गति प्रदान करती है। ब्रह्मचारी भी अन्तिम काल मुक्तिके लिये मणिकर्णिकाका आश्रय ग्रहण करते हैं। वास्तविक सहस्र सहस्र यात्री मणिकर्णिकाका वारि स्पर्श करने आते हैं।

मणिकर्णिकाके घाट पर विष्णुकी 'चरणपादुका' है। प्रवाद है—यहां भगवान् विष्णुने महादेवका आराधन किया था। एक विस्तृत मर्मर पत्थर पर पद्मकी भांति दो चिह्न हैं। वह प्राय डेढ़ हाथ विस्तृत हैं। कार्तिक मास नाना स्थानोंसे यात्री उस चरणपादुकाकी पूजा करने आते हैं। चरणामृतके निकट भी उसी प्रकार पादुकाके चिह्न हैं। मणिकर्णिका घाट पर अनतिदूर सिद्धविनायकका प्राचीन मन्दिर है। उस मन्दिरमें सिद्धविनायक व्यतीत सिद्धि और बुद्धि देवीकी भी मूर्ति है।

सिद्धविनायकके निकट अमेठीके राजा द्वारा प्रतिष्ठित एक सुन्दर देवालय है। मणिकर्णिकाके समीप सेंधिया और नागपुरके राजाका बंधाया मनोहर घाट वर्तमान है।

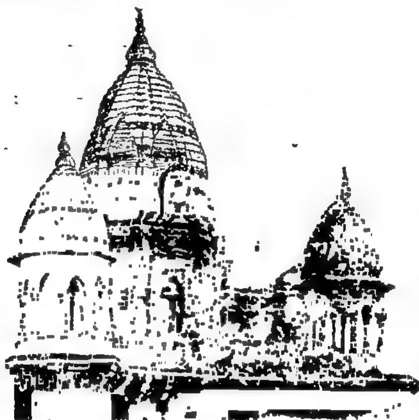
मणिकर्णिकाके बिलकुल सामने तारकेश्वरका मन्दिर है। सौरपुराणमें लिखा है—

"अन्तिमकाल तारकेश्वर काशीवासियोंको तारक ब्रह्मका ज्ञान प्रदान करते हैं।" (४।८) गङ्गाके पश्चिम घाटपर दिवोदासेश्वरका मन्दिर है। काशीखण्डके मतसे काशीपति रिपुञ्जय दिवोदासने यहां एक शिवालय बनाया, और उसमें दिवोदासेश्वर नाम शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा कराया था। वह स्थान 'भूपालश्री' तीर्थ नामसे विख्यात है (५८।११०-११)। वर्तमान मन्दिर बहुत अधिक दिनका प्राचीन समझ नहीं पड़ता। मन्दिरमें दिवोदासेश्वर लिङ्ग व्यतीत 'सिंहवाहना' नाम्नी एक देवमूर्ति है, उसके २० हाथ हैं। मन्दिरकी प्रदक्षिणाके मध्य धर्मकूप नामक एक पवित्र तीर्थ है। किसी किसी पुराविद्के मतानुसार पहले यह बौद्धोंका तीर्थ था, पीछे हिन्दुओंका बन गया। काशीखण्डके मतसे

उक्त स्थान पर पिण्डदान करनेसे पितृगणको ब्रह्मपद मिलता है। (काशीखण्ड ११ अ०) दिवोदासेश्वरमन्दिरको छोड़ कुछ आगे बढ़ने पर पार्श्वमें विशालाक्षी देवीका मन्दिर नयनगोचर होता है। (काशीखण्ड ९१। १०१)

विशालाक्षी मन्दिरके पीछे मीरघाट पर सिन्धिके पार अनेक मन्दिर देख पड़ते हैं। यहीं ललिता देवीके मन्दिर-निकट जलशायी विष्णुमन्दिर और राजवल्लभ देवालय है। गङ्गावक्षसे उक्त सकल मन्दिरका दृश्य अति सुन्दर लगता है।

वाराणसीके उत्तर-पश्चिम कोणमें नागकूप नामक



जलशायी विष्णुमन्दिर।

तीर्थ है। आजकल वह स्थान नागकुआं महल्ला कहलाता है। यह अंश वाराणसीका प्राचीन भाग समझ पड़ता है। प्रायः १९५ वर्ष पूर्व किसी राजाने उक्त कूपको विस्तर व्ययमें पुनः संस्कार करा पत्थरसे बंधा दिया था। उसकी सिढ़ी पर एक स्थानमें ३ नागमूर्ति और अपर स्थानमें एक शिवलिङ्ग देखते हैं। यहां नाग और नागेश्वरशिवकी पूजा होती है।

नागकूपसे थोड़ी दूर वागीश्वरी देवीका मन्दिर है। उसकी देवी मूर्ति अष्टधातुनिर्मित है। शिर पर वृहत् मुकुट शोभित है। वागीश्वरी देवी सिंहोपरि अवस्थित हैं। मन्दिर भी देखने योग्य है। उसके बरामदेमें नानावर्ण देवदेवीकी मूर्ति चित्रित हैं। मन्दिरके एक कोणमें अमेठी रामदत्त पत्थरकी एक सिंहमूर्ति है। एतद्भिन्न राम, लक्ष्मण, सीता प्रभृति और नवग्रहकी मूर्ति भी हैं।

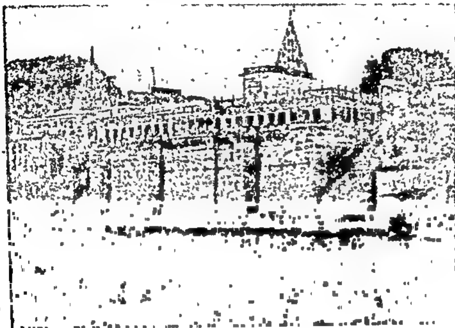
वागीश्वरीमन्दिरके निकट ही ज्वरहरेश्वरका और सिद्धेश्वरका मन्दिर है। अनेक लोगोंके विश्वासानुसार ज्वरहरेश्वर महादेवकी पूजा करनेसे सर्वप्रकार ज्वर निवारित होता है। उसी प्रकार सिद्धेश्वर मानवकी मनस्कामना सिद्ध करते हैं।

उक्त मन्दिरोंमें शिल्पनैपुण्य तथा कारुकार्य अच्छा है।

वाराणसीमें दशाश्वमेधघाट भी एक महातीर्थ है। यहां नाना मन्दिर बने हैं।

कर श्रीपार्श्वनाथका जन्म हुआ था। भदैनीघाट और भेलूपुरामें दोनों तीर्थंकरोंकी चरणपादुका तथा विशाल मंदिर हैं। भदैनीघाटका मन्दिर आरा-निवासी जमींदार प्रभुलालजीका बनवाया हुआ है। गंगाजीके किनारे यह विशाल मन्दिर अति मनोहर और सुदृढ है। नीचे पक्का घाट बंधा है, यह प्रभुघाट-के नामसे बोला जाता है। यहां दिगंबर जैनोंकी तरफसे 'स्याद्वाद जैन महाविद्यालय' नामक एक उच्चश्रेणी-का संस्कृत विद्यालय है। इसमें विना शुल्क शिक्षा दी जाती है। जैन लोगोंकी सहायतासे ही इसका सब काम चलता है।

इसके समीपही बाबू छेदीलालजीका बनाया हुआ



श्रीस्याद्वाद दि० जैन महाविद्यालय।

दूसरा जैन-मंदिर है। यह भी गंगा किनारे अति दृढ़ और विशाल है। यहांसे 'अहिंसा' नामक एक साप्ताहिक पत्र निकलता है। इसके सिवा भेलूपुरामें दो और मैदागिनपर एक जैन-मंदिर तथा विशाल धर्मशाला है। जैनियोंकी संख्या अल्प रहते भी यहां मंदिर काफी हैं। भुतई इमली महल्लेमें एक जैन-मंदिरमें स्फटिककी मूर्ति है। प्रायः हरसाल यात्री दर्शनके लिये आया करते हैं। इसी प्रकार श्वेताम्बर जैनोंके मंदिर और धर्मशाला भी अनेक हैं।

२ चित्‌शक्ति। ३ सुषुम्ना नाडी। (काशीमुक्तिविवेक।)

४ काशी देवीकी मूर्ति।

"विदिशं माधवं दृष्ट्वा दक्षपाणिश्च भैरवम्।

यत्र काशी गुहा यत्र भवानी मणिकर्णिकाम्॥"

मत्स्यार्थ छोप्। ५ क्षुद्र कार्यशुण, छोटा काम। ६ सुद्दो। (निरुक्त) (त्रि०) ७ काशरोगी, खांसीका बीमार।

काशीकरवट (हिं० पु०) काशीस्थ करवट तीर्थ। यहां पुराने समय लोग आरेसे चीरे जाने पर अपनी मुक्ति समझते थे। आज कल सरकारने उसे बंद कर दिया है।

काशीकावड़ी—बम्बईके धारवार और शोलापुरकी एक जाति। काशीकावड़ी लोग भीख मांगते घूमा करते और बता नहीं सकते—उनका आदि निवास कहां था। वह आपसमें तैलगु और दूसरोंके साथ टूटी फूटी मराठी बोलते हैं। भीख मांगनेके अतिरिक्त काशीकावड़ी यज्ञोपवीत, रुद्राक्षकी माला, दर्पण आदि छोटे मोटे वस्तु भी बेच लेते हैं। हिन्दू देवदेवी उनको मान्य हैं।

काशीदास—सम्यक्त्वकौमुदी छंदोबद्धके रचयिता जैनकवि।

काशीनाथ (सं० पु०) काश्याः नाथः, ६-तत्। १ शिव।

"[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]"
(काशीखण्ड ५२। ६६—६८)

ब्रह्माने राजर्षि दिवोदासके सहायसे काशीमें दश अश्वमेध यज्ञ किये थे। तदवधि उनके यज्ञ करनेका स्थान दशाश्वमेधतीर्थ नामसे जगत्‌में विख्यात हुआ। पुराकालको उक्त तीर्थ रुद्रसरोवर कहाता था। ब्रह्माके यज्ञावधि उसका नाम दशाश्वमेध पड़ गया।

दशाश्वमेधमें ब्रह्माने दशाश्वमेधेश्वर नामक शिवलिङ्ग स्थापन किया था।

"[illegible]
[illegible]"
(मत्स्यपुराण, १८३। ७१)

उक्त (दशाश्वमेध) तीर्थमें स्नान करनेसे मानव रोगशून्य होते और दश अश्वमेधका फल भोगते हैं।

काशीखण्डमें लिखा है कि दशाश्वमेधतीर्थमें केवल मात्र तीन आहुति प्रदान करनेसे अग्निहोत्रयाग-का फल मिलता है। (काशीख० ५२। १०८)

अद्यापि दशाश्वमेधेश्वर और ब्रह्मेश्वर नामक शिवमन्दिर बना है। काशीखण्डके मतमें उक्त उभय लिङ्ग ब्रह्माने प्रतिष्ठित किये थे। प्रथम लिङ्ग कृष्ण पंचाननमय और प्रायः ४ हाथ ऊंचा है। अभ्यन्तर एक छत्राकार रूपम मूर्ति है। काशीमाहात्म्यके मतानुसार दशाश्वमेधमें स्नान कर दशाश्वमेधेश्वरके दर्शन करने पर मानव समस्त पातकसे मुक्ति पाता है। ज्येष्ठ मासकी प्रतिपद और दशहराको विस्तर तीर्थयात्री एकत्र होते हैं। काशीखण्डके मतानुसार उक्त उभय दिन दशाश्वमेधमें स्नान करनेसे आजन्मकृत अथवा दशजन्मार्जित पाप कट जाता है। ब्रह्मेश्वरलिङ्ग दर्शन करनेसे भी मानव ब्रह्मलोक पाता है।

दशाश्वमेध-मन्दिरके निकट जो 'रुद्रसर' नामक तीर्थ है। काशीखण्डके कथनानुसार उक्त तीर्थमें स्नान करनेसे जन्मदशकृत पाप विनष्ट होता है।

दशाश्वमेध-घाटमें दशहरेश्वर प्रभृति अनेक देव-मन्दिर हैं। एक ही साथ कतार कतार इतने अधिक मन्दिर काशीमें अन्य किसी स्थान पर देख नहीं पड़ते।

दशाश्वमेधघाटके उत्तर मानमन्दिरघाटके निकट शम्भ्वेश्वर, सोमेश्वर, विष्णु, शीतला, वाराही देवी प्रभृतिके मन्दिर बने हैं।

वाराणसीसे पश्चिम नगरसीमाके बाहर पिशाच-मोचन तीर्थ है। वह एक प्राचीन स्थान है। कूर्म-पुराणमें भी उसका उल्लेख है। (कूर्मपु०, ३२। २) प्रायः काशीयात्री मात्र उक्त तीर्थके दर्शनको जाते हैं।

काशीमाहात्म्यमें कहा है:— किसी समय एक पिशाच बलपूर्वक काशी पहुंचा था। अपरापर देवता उसकी गति रोक न सके। शेषको कालभैरवने युद्ध कर पिशाचका मस्तक छिन्नमुण्ड कर डाला। फिर भैरवनाथ पिशाचका मुण्ड ले विश्वेश्वरके निकट उप-स्थित हुये। देहनाश होते भी पिशाचकी जीवनशक्ति या वाक्शक्ति गयी न थी। उसने विश्वेश्वरसे प्रार्थना की कि वह काशीसे हटाया न जाय। आशुतोषने उस की प्रार्थना ग्राह्य की। पिशाचने अवशेषको फिर कहा 'हे विश्वेश्वर! आप अनुमति दें जिससे गयायात्री बिना मुझे प्रथम दर्शन किये गया यात्रा न कर सकें।' विश्वेश्वरने वही अनुमति दे डाली। तदनुसार अनेक यात्री प्रथम पिशाचमोचनका दर्शन कर पश्चात् गया जाते हैं। कालभैरवने उस तीर्थमें पिशाचका मुण्ड फेंका था। इसीसे उसका नाम पिशाचमोचन पड़ गया। वहां प्रतिवर्ष कई मेले होते हैं। उनमें 'लोटामण्डा' मेला प्रधान है।

पिशाचमोचन घाट कुछ मीराबाई और कुछ गो-पालदास साधुके द्वारा पत्थरसे बंधाया गया। घाटका दक्षिण प्रायः तीन शत वर्ष पूर्व राजा शिवशम्भु और उत्तर अंश प्रायः शताधिक वर्ष पूर्व राजा सुरतीबरने बनवाया था।

पिशाचमोचनको पूर्व ओर दो मन्दिर हैं। उनमें एक मीराबाईका प्रतिष्ठित है। मन्दिरकी चारो दिक् अनेक देवमूर्ति हैं। कहीं शिव, कहीं उन्हींके पार्श्वमें पिशाचका छिन्न मुण्ड, कहीं विष्णु, लक्ष्मी, सूर्य, गणेश, हनुमान् प्रभृतिकी मूर्ति शोभा पाती है।

राम हमारे आनन्दको मनाया करते रहें और हमारे पहुंचनेसे पहिले देख न पड़ें।" कुचतुर कर्मचारियोंने उनका कहना मान लिया था। पहाड़के पर्वतोंमें बरफ जमा बादशाहकी क्रीड़ाका आनन्द ठीक रखा था। उनके आगमन पर्यन्तका कार्य आरम्भ होने भी बादशाहके आनन्दमें उसका प्रभाव न पड़ा। उनको जहांगीरके पहुंचने पर बरफ हटानेसे क्रीड़ाकाननमें वसन्त अनुभव पड़ा था।

काश्मीरमें नाना वर्णके मनोरम सुगन्ध पुष्प यथेष्ट हैं। सर्वप्रथम हरिद्राभ पीतवर्णका पेडमुश्क फूल खिलता है। जिस ओर देखिये, उसी ओर पुष्पका आधारण लगा हुआ मालूम पड़ेगा। काश्मीरमें फूल-के गुलदस्तोंके लिये विविध प्रकार पुष्प आहरणका कष्ट नहीं उठाते। मनुष्य जहां चाहते वहींसे दो एक हाथ जमीनके बीच प्रायः ७।८ प्रकारके फूल पा जाते हैं। वैशाखमासके मध्यकाल बादाम फूलनेसे फिर एक नयी शोभा उमड़ पड़ती है। वह काश्मीरियोंके बड़े आनन्दका समय है। धनी, निर्धन, युवा, वृद्ध, सब लोग हजार दास्तान्का पिंजड़ा हाथमें उठा हरि-पर्वत नामक स्थानको जाते और बादाम पेड़की शाखा-में पिंजड़ेको लटका बुलबुल (पक्षी) छोड़ देते हैं। हजारदास्तान् वसन्तवायु लगनेसे नाचते नाचते पुल-कित स्वरसे गाता रहता है। काश्मीरी भी मदिरापान-विभोर गान कर इतस्ततः घूमते हैं। ज्येष्ठ मासमें नगिसी फूलती है। उसका वर्ण आकाशकी भांति होता है। उसको काश्मीरी उसे "कि यासमान्" कहते हैं उक्त पुष्प वसन्तकी विदाईका फूल है। उसके खिलने-से ही वसन्तकी शोभा समाप्त हो जाती है। वैशाख बीतने पर अधिक खिलनेसे पहले पौधे क्रमानुसार क्रमशः फूल झड़ने और नवपत्र निकलने लगते हैं। आषाढ़ मास पूर्ण आता है। शस्य परिपूर्ण हो जाता है। काश्मीरमें पावसका मेघ नहीं। जब पावसके प्रभाव-से हिन्दुस्थानमें जल बरसने लगता, तब यहां साफ पर एक परिशेष पटल रखना और रातको रजाई ओढ़ना पड़ता है।

श्रावणके प्रथम ग्रीष्म शुरू रहता है। किन्तु यहांके जैसी लोग विषम नहीं होती। यहां गर्मी पड़नेके बीच स्वल्प वृष्टि हो जाती है। फिर पर्वतादि शीतलता धारण करते हैं। आश्चर्य विषय! यहां श्रावणमें मूसल-धार वृष्टि नहीं होती। शीतकालमें बरफ गिरनेके समय झड़ लगती है। उसी समय हिमवृष्टि भी होती है। अंगरेजी १८। २० इंचसे अधिक पानी नहीं बरसता। आश्विनमें फल पकता है। कार्तिक-में शीत आरम्भ होता है। सब शस्य पत्रहीन हो जाते हैं। उसी समय श्रीनगरसे १ कोस दूर पादपुर क्षेत्रमें जाफरान (केसर) उत्पन्न होती है। वहां काश्मीरके प्रति बहारकी शिव शोभा है। किसी पारसी कवितामें उक्त विषय भली भांति वर्णित हुआ है। यथा जाफरान खिलकर सबसे कहती है कि तुम काश्मीर-का पथ छोड़ हिन्दुस्थानका पथ पकड़ो, यहांकी शोभा पूरी हो गयी। शीतकालको आते देख काश्मीरी आहा-रीय संग्रह करते हैं। उस समय वह समुदाय शाक (कद्दू सक) सुखाकर रख छोड़ते हैं। किसीके बरामदे किसीके अंगने और किसीकी नावमें शुष्क खण्डित मिर्चोंकी बड़ी बड़ी माला शोभा पाती है। उन्हें देख कर समझते कि दुःसह ऋतुको आते विचार काश्मीरी भी उपयुक्त आयोजन लगा रखते हैं। २०००० फीट ऊंचे काश्मीरमें गिरिशृंग विराजित है। कार्तिक मास आते ही नीचे पार्वत्य स्थानमें बरफ गिरने लगती है। किन्तु वह कार्तिकमें जमती नहीं, गल जाती है। पौष माससे नियमानुसार बरफका जमना शुरू होता है। बरफसे चतुर्दिक् शीतमण्डित हो जाती है। उक्त दृश्य देखनेमें भी बहुत रमणीय लगता है। किन्तु उस समय काश्मीरमें रहना बहुत कष्टसाध्य हो जाता है। काश्मीरपति महाराज रणवीरसिंहके सुविज्ञ मन्त्री (१८८६ ई०) दिवान् कृपारामने अपनी काश्मीर-रत्निकामें उक्त तुषारपातके सम्बन्धपर लिखा है—'पीरपर्वतपर जो सफेद सफेद पत्थरके बुर्ज पड़े हैं, वह बरफ नहीं, आकाशने काश्मीरके सुखमें अनुग्रहार्थ दान किया है।'

वास्तविक यहां तुषारपातसे जीवन संकट होता है। उससे विधाताकी अधीन अवस्थामें जिस प्रकार शीत

उसके आगे सूर्यकुण्ड या साम्बादित्य है। काशी-खण्डमें वर्णित है,--विश्वेश्वरको पश्चिमदिक् जाम्बवती-नन्दन साम्बने आदित्य देवको उपासना की थी। वह कृष्णके अभिशापसे कुष्ठरोगाक्रान्त हुये। उक्त दारुण व्याधिसे मुक्ति लाभके लिये वह काशीमें जा एक कुण्ड निर्माण पूर्वक सूर्यको आराधना कर पापसे छूटे। साम्बप्रतिष्ठित साम्बादित्य नामक सूर्य-विग्रह भक्तगणको सर्वप्रकार सम्पद् प्रदान करता है। साम्बादित्यकी सेवा करनेसे स्त्री कभी विधवा नहीं होती। माघ मासमें रविवार पर शुक्लसप्तमीको साम्ब-कुण्डकी वार्षिक यात्रा पड़ती है। उसदिन साम्बकुण्ड-में स्नान कर साम्बादित्यको पूजनेसे उत्कृष्ट रोगभी प्रशम होता है।"

काशीखण्डोक्त साम्बकुण्डका ही वर्तमान नाम सूर्यकुण्ड है। सूर्यकुण्डके सम्मुख एक क्षुद्र मन्दिरमें अष्टाङ्ग भैरवकी मूर्ति है। हिन्दूविद्वेषी औरङ्गजेबने वह मूर्ति अङ्गहीन कर डाली थी।

उसी महल्लेमें ध्रुवेश्वरका मन्दिर है। काशीखण्ड-के मतमें ध्रुवने वह शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया था।

वाराणसी एहसानगञ्जमहल्लेमें विख्यात योगी-श्वरका मन्दिर है। उस मन्दिरकी चारो ओर प्राचीर है। मन्दिरमें अनेक देवमूर्ति प्रतिष्ठित हुयी हैं। मन्दिरकी कारीगरी अच्छी और देखने योग्य है।

एहसानगंज महल्लेके सन्निहित काशीपुरा महल्ले-में काशी देवीका मन्दिर बना है। वही काशीको अधि-ष्ठात्री देवी हैं। काशी देवीके मन्दिरसे अनतिदूर घण्टा-कर्ण तालाब है। काशीखण्डके मतमें उसे 'घण्टाकर्णह्रद' कहते हैं। उस ह्रदके निकट चित्रघण्टेश्वरी विराज करती हैं। ह्रदके तीर घण्टाकर्ण नामक गणनाथक प्रतिष्ठित घण्टाकर्णेश्वर नामक शिवलिङ्ग है।

(काशीखण्ड ११।११—१७)

घण्टाकर्ण ह्रदके तीर वेदव्यासेश्वरका मन्दिर है। उस मन्दिरमें वेदव्यासकी मूर्ति और तत्प्रतिष्ठित वेदव्यासेश्वरलिङ्ग विद्यमान है। श्रावण मासमें घण्टा-कर्णह्रद और सन्निकटस्थ मन्दिरके दर्शनको विस्तर तीर्थयात्री जाते हैं।

काशीदेवीके मन्दिरसे कुछ उत्तर भूतभैरव वा विषम भैरवका मन्दिर है। भूतभैरवका मूर्ति अद्भुत है। वहां अपरापर देवमूर्ति भी हैं। उनमें अश्वत्थ वृक्ष के प्रकाण्डसे उत्थित वृहत् शिवलिङ्ग ही प्रधान है।

उसी महल्लेमें वारणसीश और जगन्नाथदेवका मन्दिर है। एक स्थानमें दो सतीकी प्रस्तरमूर्ति हैं। उभयने पतिका सहगमन किया था। सधवा स्त्री जा कर उक्त दो सती मूर्तिकी पूजा करती है। वहां दूसरी भी अनेक अङ्गहीन पाषाणमूर्ति हैं। कालवश अथवा मुसलमान उत्पीड़नसे उन सकल देवमूर्तियोंकी वैसी दुर्दशा हुयी है। वहां प्राचीन शिल्पनैपुण्य देख चमत्कृत होना पड़ता है।

वाराणसीके मध्यस्थलमें त्रिलोचनका प्राचीन मन्दिर है। काशीमाहात्म्यमें लिखा है—"जिस समय शिव ध्यानमें निमग्न रहे, विष्णु प्रत्यह सहस्र पुष्पसे उनकी पूजा करते थे। एक दिन विष्णु शिवपूजामें निरत रहे। उसी समय शिवने उनका एक फूल उठा रखा। उसके पीछे विष्णुने पुष्पाञ्जलि देनेके समय एक एक कर ९९९ फूल देवोद्देशसे अर्पण किये। शिवको उन्होंने देखा कि एक फूल न था। किंकर्तव्यविमूढ़ होकर अवशेषको भगवन्ने अपना एक नेत्रकमल उत्सर्ग किया। कपोल देखकर वह नेत्र पड़ते ही शिवके तीन नेत्र हो गये और वह त्रिलोचन नामसे विख्यात हुये।"

त्रिलोचनका वर्तमान मन्दिर पूनाके नायूबालाने बनवाया था, मन्दिर बहुत प्राचीन नहीं। किन्तु तत्-स्थानीय सकल देवमूर्तिके पार्श्वस्थितदर्शनसे वह अधिक प्राचीन—ऐसा समझ पड़ता है। काशीखण्डके मता-नुसार—"त्रिभुवनके मध्य वाराणसी पुरी ही सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है। उस वाराणसीमें प्रणवेश्वर लिङ्ग और उससे भी उक्त त्रिलोचन लिङ्ग श्रेष्ठ है। महेश्वरने कलिकालमें त्रि-लोचनकी महिमा छिपा रखी है।' (काशीखण्ड ७५।११,११८

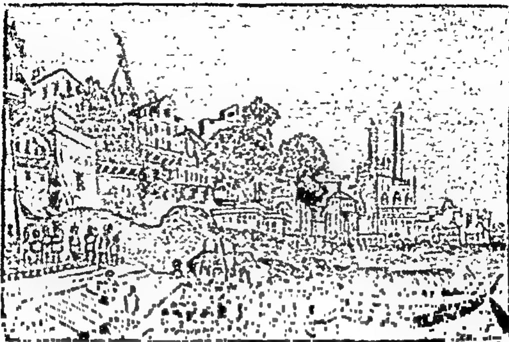
मन्दिरकी सीमामें प्रवेश करने पर विविध देव-देवी मूर्ति दर्शनसे नयन और मन आकृष्ट होता है। वहां दूसरे भी क्षुद्र क्षुद्र मन्दिर हैं। सर्वत्र प्रायः ५, १० वा २० से अधिक शिव और निकटही मन्दिमूर्ति

जगत् बचता, यह अमृतके सेवनका ही फल ठहरता है। शीतकालमें एकदण्डके लिये भी तुषारपात विश्राम नहीं लेता। उस पर मध्य मध्य झड़ और प्रबल वृष्टि पड़ती है। फिर भयङ्कर शिलापात भी होता है। कभी कभी एकादि क्रमसे एक मासके मध्य सूर्यका दर्शन नहीं मिलता। नदी ह्रदादि जम जाते हैं। कभी कभी कलसी वा अन्य पात्रादिका जल जम जानेसे पानी या जल पीनेको नहीं मिलता। काश्मीरवासी विलक्षण समझ सकते और सतर्क हो कुछ पूर्वसे गृहादिके मध्य दिवारात्रि अग्नि प्रज्वलित रख किसी प्रकार जलरक्षा और क्लेशादि निवारण करते हैं। शीतकाल पड़नेसे आबाल-वृद्ध-वनिता सबलोग छातीपर अंगरखेके नीचे एक बरोसे व्यवहार करते हैं। बरोसो महालेकी हंडी जैसा अग्नि रखनेको मृण्मय पात्र है। वह चारो ओर बांसकी खपाचसे बुनी रहती है। उसमें अग्निडाल छातीपर कपड़ेके भीतर लटका देते हैं। इसीसे काश्मीरियोंके वक्षःस्थलमें जलनेके दाग देख पड़ते हैं। बर्फ गिरनेसे कुछ दिन पहले शिशिर पड़ता है। उस समय प्रातःकाल बोध होता मानो रातको किसीने चारो ओर चूना बिछा दिया है। बर्फ गिरनेसे पहले शीत अति असह्य हो जाता है। किन्तु बर्फ पड़ जानेसे उस शैत्यके मध्य भी कुछ रमणीयता मालूम पड़ती है। जब अधिक बर्फ गिरती, तब तब प्रातःकाल उठ कर देखनेसे चारो ओर चांदी जैसी झलक उठती है। पर्वत, निम्नप्रदेश, लता,गुल्म, वृक्ष, छत, नौका, उच्चनीच भूमि,पथ, प्राङ्गण सभी मानो रौप्यमण्डित हो जाता है। घरकी छतसे शीशेका नल जैसे बर्फके नल लटका करते हैं।

शीतकालमें चाय और मांस ही काश्मीरवासियोंका प्रधान खाद्य है। शीतकालमें ही केवल कई प्रकारके जलचर पक्षी मिलते हैं। किसी किसी दिन कुछ परिष्कार होनेसे काश्मीरी जलाशय पर जा पक्षी मार लाते हैं। उस समय मृणाल भिन्न कोई शाक नहीं मिलता। काश्मीरी उसे 'नदरु' कहते और शीतकालमें रांध कर चखते हैं।

स्वास्थ्य—जगत्में यदि केवल स्वास्थ्यकर कोई स्थान है तो काश्मीर ही है। नदीका जल, ह्रदका जल इतना स्वच्छ रहता कि दश हाथ नीचे मछलीका खेल स्पष्ट देख पड़ता है। जल जैसा स्वच्छ वैसा ही सुस्वादु भी है। झरनोंका जल तो भैषज्यगुणविशिष्ट है। किसी किसी झरनेमें केवल स्नान करनेसे ही कुष्ठ पर्यन्त आरोग्य हो जाता है। जल इतना शीतल है कि ज्येष्ठ आषाढ़ मास पीते भी दांत छिन उठता है। काश्मीरके लोग स्वप्नमें भी समझ नहीं सकते ग्रीष्म या धूप किसे कहते हैं? वायु अति निर्मल, शीतल और स्वास्थ्यकर है। किसी कविने कहा है—यदि कोई दग्ध जीव भी काश्मीर आवे, तो वह जीवित हो जावे; यहां तक कि अग्निदग्ध पक्षी भी अपने पर पावे और आकाशमें उड़ता देखावे। वास्तविक एक मुखसे कह नहीं सकते काश्मीरके जलवायुमें कितने गुण हैं। काश्मीरीके रहनेके गृहादि काष्ठसे निर्मित होते हैं। काश्मीरी भाषामें उन्हें "लड़ी" कहते हैं। यहां प्रायः भूमिकम्प होते हैं। इसीसे सब लोग लकड़ीके घर बनाते हैं।

किसी किसी घरकी भित्ति प्रस्तर वा ईंटक निर्मित होती है। किन्तु अधिकांशमें नींव लगती है। बर्फके लिये सब मकानोंकी छत दोनों ओर ढालू रहती है। छत पर पहले तख्ते और पीछे भोजपत्र बिछा मट्टीसे लीप देते हैं। वसन्तकाल उस मट्टी पर तृण जमजानेसे छत पूरी हो जाती है। उस प्रकारकी छत देखनेमें बहुत सुन्दर होती है। घर छितनेमें पंच-तल पर्यन्त बनता है, वह अङ्गरेजी भवनकी भांति देख पड़ता है। खिड़कीके किवाड़े दो प्रस्थ (दुतेरफा) होते हैं। बहिर्देशके कपाटमें नाना प्रकार आकृतिकाय और क्षुद्र क्षुद्र छिद्र रहते हैं। शीतके समय उन छिद्र कागजसे बन्द कर दिये जाते हैं। उससे हिम रुकता, किन्तु आलोक पहुंचा करता है। प्रत्येक भवनमें एक 'होमाम' (धूमांकम) रहती है। बिना उसके शीतकालमें वास करना असाध्य है। किसी किसी घर विशेषतः धनियोंकी अट्टालिकाके सर्व निम्न तलमें हम्माम अर्थात् उष्ण स्नानागार होता है। उसमें किसी दिकसे वायु घुसने नहीं पाता। वहां उष्णताका तार-



अग्नितीर्थ—अग्नीश्वर घाट।

देखते हैं। दक्षिणभागमें देवसभा है और विख्यात कोटिलिङ्गेश्वरमूर्ति वर्तमान है। यह लिङ्ग २ हस्त उच्च है। लिङ्गका अङ्ग इस प्रकार गठित है कि देखते ही शत शत शिवलिङ्गका एकत्र अधिष्ठान समझ पड़ता है। मन्दिरके दक्षिण भागमें राजा अमार प्रतिष्ठित वाराणसी देवीकी मूर्ति है। एतद्भिन्न इधर उधर गणेश, सूर्य, शीतला, हनूमान् प्रभृतिकी मूर्ति भी दृष्टिगोचर होती हैं।

त्रिलोचन मन्दिरके द्वार सम्मुख युग्ममन्दिर है। यहां बाहरसे भीतर तक असंख्य देवमूर्ति विराज करती हैं। उनका दृश्य देखते ही विस्मित होना पड़ता है।

त्रिलोचन मन्दिरका बरामदा लाल रंगके आठ खंभोंपर स्थापित है। उसका पटल (छत) विविध चित्रसे चित्रित है। बरामदामें बड़ी घण्टा लटकती है। प्रवेशद्वारके वाम पार्श्वमें वृहत् श्वेत प्रस्तरकी एक वृषभमूर्ति है। यहां गणेशादि देवमूर्ति व्यतीत चित्रगुप्त कालकुमारकी प्रतिमा अङ्कित है। यहां नरक और मृत्यु नदीका दृश्य बहुत अच्छा है। यहां इस बातका सुन्दर चित्र देख पड़ता—पापी मानवगण किस प्रकार दण्ड पाता और काल नदीके उस पार जानेको कैसे व्याकुल होता है। इस मन्दिरको छोड़ कुछ दूर पर त्रिलोचनघाट है। यहां भी शिल्प और कारुकार्य शोभित सुन्दर देवालय बना है। उक्त उच्च देवालयके बाहर भीतर चारों दिक् अनेक शिवलिङ्ग रखे हैं।

त्रिलोचनघाटका प्राचीन नाम पिलपिलातीर्थ है। काशीखण्डमें कहा है—गङ्गाके सहित मिलित हो सरस्वती, यमुना और नर्मदा यहां वास करती हैं। जो पिलपिला तीर्थमें भी व्यक्ति स्नानकर पिण्डदानादि करता, उसको फिर गयामें जानेका क्या प्रयोजन पड़ता है? पिलपिलातीर्थमें स्नानान्त पिण्डप्रदान कर त्रिविष्टपलिङ्ग दर्शन करनेसे कोटितीर्थ दर्शनका फल लाभ होता है। सरस्वती, यमुना और नर्मदा तीन पापविनाशिनी त्रिलोचनकी दक्षिणदिक् त्रिविष्टप लिङ्गको स्नान करानेके लिये समवेत हुयी हैं। उक्त नदीत्रयने अपने अपने नामसे एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया है। त्रिविष्टपकी दक्षिणदिक् सारस्वतेश्वर, पश्चिमदिक् यमुनेश्वर और पूर्वदिक् सुखप्रद नर्मदेश्वर है। उक्त तीन लिङ्गके दर्शनसे महापुण्य मिलते हैं। (काशीखण्ड [illegible]—११)

अद्यापि त्रिलोचनके निकट त्रिलोचनघाटमें उक्त वृषभ प्रतिमा विराज करती है।

मङ्गलागौरीके दक्षिण घोरघाट है। उसके आगे,

राज अपनी राजधानीको बनाया करते रहे और अपने पहुँचसे बाहिर देश न रहे।" मुसलमान कर्मचारियोंने उनका यहाँ रहना सुन्दर बागों तथा पर्वतोंमें बरफ जमा बादशाहने फौजका कायम ठीक रखा था। दूसरी अफगान अमलका चाहे आरम्भ होने भी बादशाहके शासनमें उनका प्रभाव न रहा। पठानों अहमदशाहके पहुँचने पर बरफ हटानेमें कोड़ाकानलमें बहुत उत्तम रहा था।

काश्मीरमें नाना वर्णके मनोरम सुगन्ध पुष्प प्रचुर हैं। यहाँ इनका अभिराम दलवर्णका पेड़मुक्त फूल खिलता है। जिस ओर देखिये, उसी ओर पुष्पका आस्तरण बना हुआ मालूम पड़ेगा। काश्मीरमें फूल-के गुलदस्तेके लिये विविध प्रकार पुष्प आहरणका कष्ट नहीं उठाते। गन्धयुक्त बड़ी आदमी बड़ोंसे दो एक हाथ जमीनके ऊपर प्रायः ७। ८ प्रकारके फूल पा जाते हैं। वैशाखमासके मध्यभाग बादाम फूलनेसे फिर एक नयी शोभा उमड़ पड़ती है। यह काश्मीरियोंके बड़े आनन्दका समय है। धनी, निर्धन, बूढ़ा, युवा, सब लोग शराब दारासिकोहका पिंजड़ा हाथमें उठा कवि-पर्वत नामक स्थानकी भाँति और बादाम पेड़की शाखामें पिंजड़ेको लटका उद्योग (नशे) भोग देते हैं। इमारतदास्तान् पहाड़पर जानेके मानते मानते सुख-चित्त स्वरमें गाता रहता है। काश्मीरी भी भक्तिपूर्वक विष्णुका नाम कर इनका घूमते हैं। ज्येष्ठ मासके अन्तमें फूलती है। उसका वर्ण आकाशकी भाँति होता है। इसको काश्मीरी इसे "हि आसमान्" कहते हैं यह पुष्प बसन्तकी विदाईका फूल है। इसके खिलने-से ही बसन्तकी शोभा समाप्त हो जाती है। वैशाख बीतने पर अपनी खिलनेके पहले ढोढ़ि आलानुसार क्रमशः फूल झरने और नवपल्लव निकलने लगते हैं। आषाढ़ मास चला आता है। शस्य परिपूर्ण हो जाता है। काश्मीरमें पोखरा भी नहीं। इस पोखरेके प्रभाव-से हिन्दुस्तानकी सी गरमी नहीं लगता, तब यहाँ साथ पर एक पतीचेव पतला रखना और रातको रजाई ओढ़ना पड़ता है।

भादोंमें प्रथम थोड़ा कुछ बढ़ता है; किन्तु आगे कभी लोग विरत नहीं होते। यहाँ भादों पहले दौर वायुवृद्धि हो जाती है। फिर पर्वतादि शीतका आरम्भ करते हैं। आश्विन निरभ्र। यहाँ आश्विनमें मूसलधार वृष्टि नहीं होती। शीतकालमें बरफ गिरनेके समय खड़ लगती है। तभी समय हिमावृष्टि भी होती है। अंग्रेजीमें १८। १० इससे अधिक ताप नहीं बढ़ता। आश्विनमें कम कम पड़ता है। कार्तिक-में शीत आरम्भ होता है। तब सकल पत्तहीन हो जाते हैं। उसी समय श्रीनगरसे ६ कोस दूर पादपुर खेतमें जाफरान (केसर) उत्पन्न होती है। यहीं काश्मीरके प्रति बहुतकी शिव शोभा है। किसी फारसी कवितामें इस विषय भली भाँति वर्णित हुआ है। यथा जाफरान खिलकर गर्व करती है कि तुम काश्मीर-का पथ छोड़ हिन्दुस्तानका पथ पकड़ो, यहाँकी शोभा पूरी हो गयी। शीतकालको आते देख काश्मीरी आहा-रोपयोगी संग्रह करते हैं। उस समय यह समुदाय शाक (कद्दूतक) सुखाकर रख छोड़ते हैं। किसीके बरामदे किसीके आँगनमें और किसीकी नावमें सुख पश्चिम मिर्चोंकी बड़ी बड़ी माला घूमा करती है। इसे देख कर समझते कि दुःसह ऋतुकी आते विचार काश्मी-री भी उपयुक्त आयोजन लगा रखते हैं। १००००० फीट ऊँचे काश्मीरमें शिरसुधार विराजित है। कार्तिक मास आते ही नीचे पार्वत्य स्थानमें बरफ गिरने लगती है। किन्तु यह कार्तिकमें जमती नहीं, गल जाती है। पौष मासमें नियमानुसार बरफका जमना शुरू होता है। बरफसे चतुर्दिक् शीतव्याप्त हो जाती है। उस हाल देखनेमें भी बहुत रमणीय लगता है। किन्तु उस समय काश्मीरमें रहना बड़ा कष्टसाध्य हो जाता है। काश्मीरपति महाराज रणवीरसिंहके सुविज्ञ मन्त्री (१८८६ ई०) दिवान् कृपारामने स्वरचित काश्मीर-इतिहासमें इस तुषारपातके सम्बन्धमें लिखा है—'पीरपञ्जालकी एक-एक शीतपर्व बर्फीला पड़ी है, यह बरफ नहीं, आकाशने काश्मीरके कुञ्जमें चमकमात दान किया है।'

वास्तविक यहाँ तुषारपातमें जीवन दूभर होता है। यहाँके निवासियोंको यथोचित कष्ट होता है जिस प्रकार और

रामघाट पड़ता है। वहां भी विस्तर देवालय हैं। रामघाटके दक्षिण जैनमन्दिरघाट है। वहां जैनमन्दिरमें पार्श्वनाथ प्रभृति जिनमूर्ति है। उसके दक्षिण प्राचीन अग्नितीर्थ (वर्तमान अग्नीश्वरघाट) है। अग्नितीर्थके तीर अग्नीश्वर मन्दिर व्यतीत दूसरे भी अनेक देवालय हैं।

त्रिलोचनघाटके निकट आदि महादेवका एक स्वतन्त्र मन्दिर है। उस मन्दिरमें प्राचीन व्यासासन देख पड़ता है। प्रवादानुसार उक्त आसन पर बैठ वेदव्यास वेदपाठ करते थे। वहां पाषाणमयी पार्वतीश्वरी की प्रतिमा है। पूर्वतन पार्वतीश्वरीका मन्दिर विनिष्ट हो गया था। गौरजी नामक एक विख्यात गुजराती ब्राह्मणने काशीखण्ड आनुपूर्विक पढ़ प्राचीन देवमूर्ति और तीर्थ सकलको उद्धार करनेकी चेष्टा लगायी। उन्होंने प्राचीन पार्वतीश्वरीकी प्रतिमाका अनुसन्धान न पा उसके स्थानमें वर्तमान प्रतिमा प्रतिष्ठा की है।

पञ्चगङ्गाघाटका अपर नाम पञ्चनद वा धर्मनदतीर्थ है। काशीखण्डके मतमें—"धर्मनदमें धूतपापा, किरणा, सरस्वती, गङ्गा और यमुना पांच नदी जाकर मिली हैं। इसीसे इसका नाम पञ्चनद है। राजसूय और अश्वमेधके अवभृथकी अपेक्षा पञ्चनदतीर्थमें स्नान करनेसे शतगुण अधिक फल लाभ होता है।"
(काशीख०, ५९। ११२—११५)

आजकल केवल गङ्गानदी दृष्ट होती है। साधारण विश्वासके अनुसार दूसरी चारो नदी भूमिके मध्य अन्तःसलिला बहती हैं।

वहां मङ्गलागौरी और बिन्दुमाधवका मन्दिर है। काशीखण्डके कथनानुसार—पञ्चनदतीर्थमें स्नान कर बिन्दुमाधवको दर्शन करनेसे मनुष्य फिर कभी गर्भवासयन्त्रणा भोग नहीं करता। इसी प्रकार मङ्गलागौरीकी अर्चना करनेसे वन्ध्या स्त्री भी पुत्र लाभ कर सकती है। (काशीख० ५९। १२०—१२६)

इसी स्थान पर हिन्दूविद्वेषी औरङ्गजेबने पुरातन बिन्दुमाधवका मन्दिर चूर्ण करा हिन्दूदेवालयकी उच्चता खर्व करनेके लिये बहुत ऊंची मीनारसे सजी एक बड़ी मसजिद बनायी थी।

त्रिलोचनघाटसे पश्चिम कामेश्वर प्रभृति प्राचीन शिवलिङ्गके अनेक मन्दिर हैं। उक्त प्रायः सकल मंदिरका वर्ण लोहित और क्षुद्र क्षुद्र चूड़ा है। काशीखण्डके मतमें—देव कामेश्वर साधुगणकी कामना पूर्ण करते हैं। भक्तवाञ्छा पूर्ण करनेके लिये भगवान् लिङ्गमें लीन हुए हैं। इसीसे स्वलीन नाम पड़ा है।"
(काशीख० ११। ११२—११९)

इसीके निकट प्राचीन मत्स्योदरी तीर्थ था। शिवपुराणादिमें उक्त प्राचीन तीर्थका उल्लेख है। काशीखण्डके मतानुसार मत्स्योदरी तीर्थमें स्नान करनेसे मानव फिर गर्भयन्त्रणा भोग नहीं करता। उक्त तीर्थका आज कल चिह्नमात्र नहीं मिलता। प्रायः ८० वर्ष पूर्व किसी साहबने उसका लोप कर दिया था। पहले वहां अनेक तीर्थयात्री स्नान करने जाते थे। किन्तु तीर्थ लोपके साथ यात्रियोंकी संख्या भी घट गयी है।

काशीके बंगाली-टोलामें केदारेश्वरका मन्दिर है। काशीखण्डमें केदारेश्वरकी उत्पत्तिके सम्बन्ध पर लिखा है—"उज्जयिनीमें वशिष्ठ नामक एक ब्राह्मणतनय रहे। वह हिमालयस्थ केदारेश्वरके उद्देशसे यात्रा कर काशी पहुंचे। वहां उन्होंने प्रतिज्ञा की थी—'हम जब तक जीते रहेंगे, प्रति चैत्रमास केदारेश्वरके दर्शनको यात्रा करेंगे।' फिर उन्होंने ६१ बार केदारेश्वर दर्शन किया। बहुकाल पर वशिष्ठने पूर्ववत् केदारेश्वरके दर्शनार्थ सङ्कल्प किया, किन्तु अति वृद्ध देख सहचर गणने उन्हें जाने मना किया। तथापि वृद्धका उत्साह टूटा न था। उन्होंने स्थिर किया कि राहमें मरना भी अच्छा परन्तु केदारेश्वरके दर्शनको अवश्य चलेंगे। उनके आगमनसे केदारेश्वरने स्वप्नमें दर्शन दे कहा था—'हम तुम्हारे ऊपर सन्तुष्ट हुये हैं। वर मांगो।' ब्राह्मण कहने लगा—'यदि आप हमारे ऊपर प्रसन्न हुये हैं, तो हिमालयसे आकर यहां अवस्थान कीजिये।' भगवान्ने भक्तके प्रति सन्तुष्ट हो अपनी कलामात्र हिमालयमें रख उक्त स्थान पर जाकर सम्पूर्ण भावसे हरपापह्रदमें अवस्थान किया। हिमालयकी अपेक्षा काशीमें केदारेश्वरका दर्शन करनेसे सात गुणा अधिक फल मिलता है। हिमालयकी भांति काशीमें भी गौरी

जगत् अचल, यह अमृतके सेवनका ही फल ठहरता है। शीतकालमें एकदण्डके लिये भी तुषारपात विश्राम नहीं लेता। उस पर मध्य मध्य झड़ और प्रबल वृष्टि पड़ती है। फिर भयङ्कर शिलापात भी होता है। कभी कभी एकादि मासमें एक मासके मध्य सूर्यका दर्शन नहीं मिलता। नदी ह्रदादि जम जाते हैं। कभी कभी कलसी या अन्य पात्रादिका जल जम जानेसे पानी या जल पीनेको नहीं मिलता। काश्मीरवासी विलक्षण समझ सकते और उनको ही कुछ पूर्वसे गृहादिके मध्य दिवारात्रि अग्नि प्रज्वलित रख किसी प्रकार जलरक्षा और शैत्यादि निवारण करते हैं। शीतकाल पड़नेसे आबाल-वृद्ध-वनिता सबलोग छातीपर अंगरखेके नीचे एक बरोसी व्यवहार करते हैं। बरोसी मशालेकी हंडी जैसा अग्नि रखनेको मृण्मय पात्र है। वह चारो ओर बांसकी खपाचसे बुनी रहती है। उसमें अग्निडाल छातीपर कपड़ेके भीतर लटका देते हैं। इसीसे काश्मीरियोंके वक्षःस्थलमें जलनेके दाग देख पड़ते हैं। बर्फ गिरनेसे कुछ दिन पहले शिशिर पड़ता है। उस समय प्रातःकाल बोध होता मानो रातको किसीने चारो ओर चूना बिछा दिया है। बर्फ गिरनेसे पहले शीत अति असह्य हो जाता है। किन्तु बर्फ पड़ जानेसे उस शैत्यके मध्य भी कुछ रमणीयता मालूम पड़ती है। जब अधिक बर्फ गिरती, तब तब प्रातःकाल उठ कर देखनेसे चारो ओर चांदी जैसी झलक उठती है। पर्वत, निम्नस्थल, लता, गुल्म, गृह, छत, नौका, उच्चनीच भूमि, पथ, प्राङ्गण सभी मानो रौप्यमण्डित हो जाता है। घरकी छतसे शीशेका नल जैसे बर्फके नल लटका करते हैं।

शीतकालमें भात और मांस ही काश्मीरवासियोंका प्रधान खाद्य है। शीतकालमें ही केवल कई प्रकारके जलचर पक्षी मिलते हैं। किसी किसी दिन कुछ परिष्कार होनेसे काश्मीरी जलाशय पर जा पक्षी मार लाते हैं। उस समय मृणाल भिन्न कोई शाक नहीं मिलता। काश्मीरी उसे 'नदरू' कहते और शीतकालमें रांध कर खाते हैं।

जलवायु—जगत्में यदि केवल स्वास्थ्यकर कोई स्थान है तो काश्मीर ही है। नदीका जल, ह्रदका जल इतना स्वच्छ रहता कि दश हाथ नीचे मछलीका खेल स्पष्ट देख पड़ता है। जल जैसा स्वच्छ वैसा ही सुस्वादु भी है। झरनोंका जल तो भैषज्यगुणविशिष्ट है। किसी किसी उत्समें केवल स्नान करनेसे ही कुष्ठ पर्यन्त आरोग्य हो जाता है। जल इतना शीतल है कि ज्येष्ठ आषाढ़ मास पीते भी दांत हिल उठता है। काश्मीरके लोग स्वप्नमें भी समझ नहीं सकते ग्रीष्म वा धूलि किसे कहते हैं? वायु अति निर्मल, शीतल और स्वास्थ्यकर है। किसी कविने कहा है—यदि कोई दग्ध जीव भी काश्मीर आवे, तो वह जीवित हो जावे; यहां तक कि अग्निदग्ध पक्षी भी अपने पर पावे और आकाशमें उड़ता देखावे। वास्तविक एक मुखसे कह नहीं सकते काश्मीरके जलवायुमें कितने गुण हैं। काश्मीरीके रहनेके गृहादि काष्ठसे निर्मित होते हैं। काश्मीरी भाषामें उन्हें "लड़ी" कहते हैं। यहां प्रायः भूमिकम्प होते हैं। इसीसे सब लोग लकड़ीके घर बनाते हैं।

किसी किसी घरकी भित्ति प्रस्तर वा ईष्टक निर्मित होती है। किन्तु अधिकांशमें नींव लगती है। बर्फके लिये सब मकानोंकी छत दोनों ओर ढालू रहती है। छत पर पहले तख्ते और पीछे भुर्जपत्र बिछा मट्टीसे लीप देते हैं। वसन्तकाल उस मट्टी पर तृण जमजानेसे छत पूरी हो जाती है। उस प्रकारकी छत देखनेमें बहुत सुन्दर होती है। घर तिनतलेसे पंच-तल पर्यन्त बनता है, वह अङ्गरेजी भवनकी भांति देख पड़ता है। खिड़कीके किवाड़े दो प्रस्थ (दुतरफा) होते हैं। बहिर्देशके कपाटमें नाना प्रकार कारुकार्य और क्षुद्र क्षुद्र छिद्र रहते हैं। शीतके समय उन छिद्र कागजसे बन्द कर दिये जाते हैं। उससे हिम रुकता, किन्तु आलोक पहुंचा करता है। प्रत्येक भवनमें एक 'वोखारी' (धुवांकस) रहती है। बिना उसके शीतकालमें वास करना असाध्य है। किसी किसी घर विशेषतः धनियोंकी अट्टालिकाके अधः निम्न तलमें हम्माम अर्थात् उष्ण स्नानागार होता है। उसमें किसी दिकसे वायु घुसने नहीं पाता। वहां सभ्यताका नार-



चौकी घाट।

कुण्ड, हंसतीर्थ और गङ्गा आदि वर्त्तमान हैं। पुरा-काल गौरीने उस महाह्रदमें स्नान किया था। इसी से "गौरीकुण्ड" नाम विख्यात हुआ। उसका अपर नाम मानसतीर्थ है। केदारकुण्डमें स्नान करनेवाले को केदारेश्वर मुक्ति प्रदान करते हैं।

(काशीखण्ड, ७७ अ०)

चार छोटे छोटे मन्दिरोंके मध्यस्थलमें गङ्गातीर पर केदारेश्वरका बृहत्मन्दिर अवस्थित है। मन्दिर-का बरामदा लाल और सफेद है। अनेक देवमूर्त्ति शोभा पा रही हैं। अनेक मूर्त्ति ऐसे सुन्दर भावसे बनी, कि देखनेसे जीती जैसी मालूम पड़ती है। केदा-रेश्वरकी मूर्त्ति व्यतीत यहां अन्नपूर्णा, लक्ष्मीनारायण, गणेश, भैरवनाथ प्रभृतिकी प्रतिमा भी है। मन्दिरके पूर्व प्राचीरसे गङ्गातीर पर्यन्त पत्थरका घाट बंधा है। घाटकी सिढ़ीके एकपार्श्वमें एक बृहत् कूप है। काशी-खण्डमें उसका नाम [illegible] वा गौरीकुण्ड लिखा है।

केदारेश्वर मन्दिरसे उत्तर-पश्चिम थोड़ी दूर मान-सिंहस्थापित मानसरोवर नामक गम्भीर जलाशय है। उसकी चारो ओर प्रायः ५० मठ बने हैं। वहां राम-लक्ष्मणका मन्दिर भी दर्शनीय है। उस मन्दिरकी सीमा-में एक स्थान पर दत्तात्रेयकी प्रतिमा है। एतद्भिन्न उस स्थान पर नाना सांप्रदायिक देवप्रतिमा देख पड़ती है। अनतिदूर मानसिंह-प्रतिष्ठित मानेश्वर नामक शिवलिङ्गका मन्दिर भी है।

मानेश्वरके पश्चिम तिलभाण्डेश्वरका मन्दिर बना है। तिलभाण्डेश्वरकी प्रतिमा ३ हाथ ऊंची किन्तु १० हाथ चौड़ी है। साधारणके विश्वासानुसार उक्त प्रतिमा प्रत्यह तिल परिमाण बढ़ती है। इसीसे उस-को तिलभाण्डेश्वर कहते हैं। यह मन्दिर भी देखने-की चीज है। मन्दिरका कोई कोई अंश अति प्राचीन है। सुना जाता है कि चार सौ वर्ष पूर्व किसी राजाने उसे निर्माण कराया था। मन्दिरके निकट इधर उधर असंख्य देवप्रतिमा हैं। एक स्थान पर पञ्चपद एवं शिरःशोभित एक बृहत् [illegible] शिवप्रतिमा है। काशीमें सर्वत्र शिवलिङ्ग विद्यमान हैं। किन्तु वैसी बड़ी प्रतिमा एक भी देख नहीं पड़ती। एक समय उसके मन्दिर और बरामदेमें अच्छा शिल्पकार्य था छत और कारनिसमें भी अनेक प्रतिमा अङ्कित थीं। आजकल कामका वैसा दृश्य नहीं रहा।

तिलभाण्डेश्वरके निकट एक स्थानमें ऐरावत हस्ति-के ऊपर एक भग्न प्रस्तरप्रतिमा रखी है। अनेक लोग उसे वीर प्रतिमा अनुमान करते हैं। उसका नाम वीरभद्र है। उस प्रतिमाकी शिल्पनैपुण्यका जैसा परिचय मिलता, वैसा दूसरोंमें देख नहीं पड़ता।

रूप विशिष्ट ढंग साथ कानमें रहता है। कश्मीरी बाग बगीचोंमें प्रकृति और मनकी घर भी नहीं पर जाता है।

श्रीनगरमें प्रत्येक मकानका प्रधान द्वार नदीकी ओर पड़ता है। प्रत्येक घरका घाट अलग है। उस घाटमें बंधी नौका रहती है। प्रायः प्रत्येक परिवारोंकी एक नौका होती है। वह उसके घाटमें पड़ी रहती है। काश्मीरमें नौकोंमें ही प्रायः नित्यकार्य होता है। नगरके सर्वोत्कृष्टमें नगरोंका काज, व्यापारादि और व्यवहार रहता है।

नौका—नौका नाविकका घरद्वार है, स्त्रीपुरुष सब नौकामें ही रहते हैं। अनेक लोगोंके भूमि घर घरादि नहीं—पुत्रकलत्रके साथ वह नौकामें रहते हैं। काश्मीरी बालिका, युवती और वृद्धा स्त्रियां भी निपुणताके साथ नौका चला सकती हैं। यहां अपने देशकी भांति नौका नहीं होता। 'शिकारी' या 'डोंगी' नामक नौका ही भ्रमणके पक्षमें सुविधाजनक है। शिकारी नौका साधारणतः २५ हाथ लम्बी, ३। हाथ चौड़ी और १ फुट गहरी होती है। नावोंके बीचमें बैठने का स्थान चनारकी छाया रहता है। आवश्यकतानुसार उस स्थानको खोल डालते हैं। उस नौकाके चलानेका डांड 'चाप्पा' कहलाता है। वह बड़ी पाड़ जैसा होता है। शिकारीमें चाप्पा रखा नहीं रहता, हाथमें पकड़ चलाना पड़ता है। इस देशकी किसी नौकामें अग्र भाग (पेंदा) नहीं होता। पीछे एक आदमी बैठ चप्पेसे पतवारका काम चलाता है। चारोंओर भी रक्षा और आवश्यकता हिसाब शिकारी नौकामें सौलह दस तक पैसट रख सकते हैं। स्त्रियां यह नाव नहीं चलातीं।

डोंगी नामक नौका दूर भ्रमणके लिये उपयोगी है। इस नौकामें नाविक परिवारके साथ रहते हैं। इस प्रकारके नाविकको काश्मीरी भाषामें हांजी कहते हैं। डोंगी साधारणतः ५० हाथ दीर्घ, ७ हाथ विस्तृत और डेढ़ हाथ गंभीर होती है। यह भी चटाईसे छाई रहती है, इस आवश्यकमें डोंगी है। स्त्रियां भी नाव चलाती हैं। काठ

पर यह कर्मस्थानको यातायात करते हैं। उनका आहारादि नौकामें ही सम्पन्न होता है।

काश्मीरमें भारवाही बड़ी बड़ी नौका है। आकारानुसार वह बहित्र (बर्बा), डोंगा (बजरा) और बक्की (नाड़ी) कहलाती है। इसमें ५० से ८० आदमी तक अच्छी तरह बैठ सकते हैं।

अधिवासी—हिन्दुओंका राज्य होते भी काश्मीरमें मुसलमान अधिक हैं। यहां तक कि किसीही हिन्दुओंका (जो पण्डित कहाते हैं उनमें भी बहुतोंका) आचार व्यवहार ठीक मुसलमानों जैसा हो गया है। हिन्दू मुसलमानोंको छोड़ बड़ा बौद्ध भी बहुत है। काश्मीरी पुरुष गौरवर्ण, हृष्टकाय और सुडौलाङ्ग विशिष्ट हैं। वह चतुर, प्रखर बुद्धिमान् और वाग्मी होते, किन्तु साहसी नहीं। रमणी परम सुन्दरी हैं। विशेषतः पण्डितोंकी स्त्रियां असाधारण रूपवती होती हैं। भारतवर्षकी उर्वशी विद्या और कालिदासकी शकुन्तला यहां प्रतिमूर्ति प्रत्येक रमणीमें विद्यमान हैं। वे घरको छोड़ यदि पृथिवी पर रहतीं अथवा अप्सरा यदि कविकी कल्पना नहीं रहतीं, तो वह काश्मीरमें ही मिलती हैं। यहीं मुसलमानों और ब्राह्मणोंको छोड़ किसीके पक्षमें अधिक श्री देख नहीं पड़ती।

परिच्छद—पुरुषोंका परिच्छद चोगा, पायजामा (पैरहन) और कमरबंद है। क्या हिन्दू क्या मुसलमान सभी मस्तक मुण्डन करते हैं। हिन्दू शिखा रखते हैं। स्त्रियां साड़ी नहीं—केवल चोगाही पहनती हैं। कोई कोई सर पर लाल टोपी लगाती हैं। उसको पीछे सिरा दो भागमें बनाकर डाल देती हैं। पण्डिताइनोंमें कोई कोई वक्षोदेशमें पायजामाके ऊपर कमर लपेट लेती हैं। सब लोग ही खड़ाऊं पहनते हैं। कोई पुरुष काठका जूता व्यवहार करते हैं।

भारत देशमें पुरुषों और स्त्रियोंके वेशकी विभिन्नता है, किन्तु काश्मीरमें नहीं। ... प्राचीन वस्तुओंका परिच्छद मिलता है। काश्मीरी ... शिकारी देखने ... ...

दशाश्वमेध और केदारनाथके मध्य अनेक स्थानों पर कई देवमन्दिर भी हैं उनमें आधुनिक होते भी स्वर्गीय आशुतोष-देवप्रतिष्ठित सुवृहत् दुर्गेश्वर नामक शिवलिङ्ग और उनका मन्दिर उल्लेखयोग्य है।

संख्या कर नहीं सकते काशीमें कितनी दूसरी देव प्रतिमायें हैं। गङ्गाके तीर प्रति घाटमें देवालय देख पड़ते हैं। उनमें अग्नीश्वरके दक्षिण एवं चक्रपुष्करिणीके उत्तर सङ्कटाघाट, यमेश्वरघाट, चौसट्ठीघाट और ओंमठ उल्लेख योग्य है।

गङ्गाके तीर चौसट्ठीघाट पर दत्तेश्वरका मन्दिर है। उसके निकट विस्तर नागप्रतिमा विराज करती है।

गलीमें घुसते ही दूरसे एक दोला देख पड़ती है। दोलाके आगे दशभुजा दुर्गाकी मूर्ति है। वह क्या ही सुन्दर और कैसी सुसज्जित है।

काशीकी दुर्गाबाड़ी अति प्रसिद्ध है। काशीखण्ड पाठसे समझते कि वहां दुर्गामूर्ति बहुत दिनसे प्रतिष्ठित है। वर्तमान दुर्गामन्दिर रानी भवानीके व्ययसे बना था। मन्दिरका बरामदा उस समयके सूबेदारका बनाया है।

दुर्गाबाड़ीकी जनता देख आश्चर्यमें आना पड़ता है। उसकी कोई संख्या नहीं देश विदेशसे कितने तीर्थयात्री आते हैं। प्रत्यह मानो देवीके मन्दिरमें महोत्सव है। प्रत्यह देवी पार्वतीकी प्रीतिके निमित्त छागबलि होता है। प्रति मङ्गलवारको देवीके उद्देशसे मेला लगता है। प्रतिवर्ष श्रावण मासमें मङ्गलवारको बड़ा मेला होता है। इसकी संख्या नहीं—उस समय कितने तीर्थयात्री वहां आते हैं?

मन्दिरका कारुकार्य और शिल्पनैपुण्य प्रशंसाके योग्य है। वहां नेपालराजप्रदत्त एक बड़ी घण्टा लटकती है। दुर्गाबाड़ीकी प्राचीरसीमाके मध्य पवित्र दुर्गाकुण्ड है। दुर्गाकुण्डके पूर्व थोड़ी दूर कुरुक्षेत्रतलाव है। उक्त जलाशय भी रानी भवानीकी कीर्ति है।

इसी महल्लेमें प्रसिद्ध लोलार्ककुण्ड है। मत्स्यपुराण (१८४।६५), कूर्मपुराण (३४।१०) और काशीखण्डमें उक्त पवित्र तीर्थका माहात्म्य कीर्तित हुआ है। काशीखण्डमें कहा है—

"काशीके दर्शनसे सूर्यका मन अतिशय लोल हुआ था। उसीसे सूर्यका नाम लोलार्क पड़ गया।

*दक्षिणदिक् असिसङ्गमके निकट लोलार्क (सूर्यमूर्ति) अवस्थित हैं। वह सर्वदा काशीवासीका मङ्गल किया करते हैं। अग्रहायण मासके रविवारको लोलार्ककी वार्षिकी यात्रा करनेसे मानव पापमुक्त होता है। लोलार्कसङ्गममें स्नान करनेसे अनन्तकालके लिये सत्कर्म सिद्ध हो जाता है।" (काशीखण्ड ४६।४८-५०)

रानी अहल्याबाई, अमृतराय और मिथिलाधिपने लोलार्क कुण्डका संस्कार कराया था।

लोलार्ककुण्डकी चारो ओर गणेशादि नानाविध देवमूर्ति हैं। कुण्डके दक्षिण तीर भद्रेश्वरका मन्दिर बना है। भद्रेश्वरका लिङ्ग भी अति वृहत् है।

पुण्यधाम वाराणसीमें बहुत प्राचीन और अप्राचीन देवमूर्ति एवं पवित्र तीर्थ हैं। काशीखण्डमें काशीस्थ प्राचीन तीर्थका विवरण इस प्रकार दिया है—

"समस्त जगत्‌के मध्य वाराणसी पुरी अति पवित्र स्थान है। उसके भी मध्य गङ्गा और असिसङ्गम अतिशय पवित्रतर है। असिसङ्गमसे हयग्रीवतीर्थ अधिकतर पुण्यप्रद है। वहां विष्णु हयग्रीव रूपसे अवस्थान करते हैं। उक्त हयग्रीवतीर्थसे भी गजतीर्थ अधिक पुण्यप्रद है। वहां स्नान करनेसे गजदानका फल मिलता है। गजतीर्थसे कोकावराहतीर्थ पुण्यदायक है। वहां कोकावराह देवकी पूजा करनेसे फिर जन्म लेना नहीं पड़ता।

"दिलीपेश्वर महादेवके निकट दिलीपतीर्थ है। वह कोकावराह तीर्थसे श्रेष्ठतर है। सगरेश्वरके निकट सगरतीर्थ है। वह दिलीपतीर्थसे भी श्रेष्ठतर है। सप्तसागरतीर्थ, महोदधितीर्थ, कापर्दीश्वरके चौरतीर्थ, हंसतीर्थ, त्रिभुवनकेशवतीर्थ, गोव्याघ्रेश्वर तीर्थ, मान्धातृतीर्थ, मुचुकुन्दतीर्थ, पृथिवीश्वरके निकट पृथुतीर्थ, परशुरामतीर्थ, बलभद्रतीर्थ, उसके निकट दिवोदासतीर्थ, भागीरथीतीर्थ भागीरथी, [illegible] पर निष्पापेश्वरलिङ्गके निकट हरपापतीर्थ, उसके आगे दशाश्व-

* [illegible]

ततो लोलार्क इत्याख्या काश्यां जाता [illegible]" (काशीख० ४६।४८)

करते भी देशाधिकार कर न सकते थे। शेषको अकबरके अधिकार करने पर जहांगीरने परामर्शकर पुरुषोंको बलपूर्वक स्त्रीवेश धारण कराया। प्रथम प्रथम वह उक्त वेश बिना युद्ध धारण करने पर स्वीकृत हुये न थे। किन्तु शेषको उन्होंने उसे स्वीकार किया। अतएव पुरुष परिच्छेदके साथ उन्होंने पुरुषोचित-साहस भी खो दिया है।

आचार-व्यवहार—काश्मीरी बहुत अपरिष्कार रहते हैं। उनका वस्त्रादि, गात्र और वासगृह साक्षात् नरक जैसा देख पड़ता है। शीतको छोड़ देते भी अन्य किसी समय वह वस्त्रादि नहीं धोते। क्या स्त्री क्या पुरुष सभी प्रकाश्य स्थलमें नग्न हो स्नान करते हैं। सुतरां स्नानके समय भी गात्रावरणको जल स्पर्श नहीं कराते। इसीसे उसपर इतना मैल जम जाता कि यथार्थ छुटको छीनेसे मैल निकलता और झाड़नेसे पिस्सू तथा विस्तरका ढेर लगता है। वह पथ, गृहाभ्यन्तर और प्राङ्गणमें मलमूत्र त्याग करते हैं। शीतकालमें घरसे बाहर निकलना दुःसाध्य होने पर वह ऐसा करते हैं। किन्तु अभ्यासक्रमसे अन्य समय भी वह उक्त व्यवहार छोड़ नहीं सकते। लोकालय उसीसे नरक बन जाता है। श्रीनगर, जम्बू प्रभृति राजधानीमें भी ऐसा ही हाल था। फिर भी आजकल राजनियमसे बहुत कुछ परिष्कृत हुआ है। राजकर्मचारी, विदेशी और पर्यटक (अर्थात् काश्मीरी भिन्न दूसरे सभी) इसीसे लोकालय छोड़ नदीतीर-उपवाटिकामें रहते हैं।

काश्मीरी बड़े झगड़ालू होते हैं। किसीके साथ किसीका विवाद उपस्थित होनेपर समस्त दिन अविश्रान्त रूपसे कलह करते हैं। फिर सन्ध्या पड़नेसे उभय पक्ष अपने अपने चबूतरे पर टोकरी औंधा रखते हैं। दूसरे दिन प्रत्यूषके समय वही टोकरी खोल नये सिरसे झगड़ा किया करते हैं। इसी प्रकार एक दिन नहीं कई दिन झगड़ा चलता है। श्रीनगरके नीचे वितस्ता कुछ अप्रशस्त है। जिस समय इस पारके लोग उस पारके लोगोंसे झगड़ते, उस समय बड़ा कौतुक मालूम होता है। इस प्रकारका झगड़ा चलनेसे उभय पक्ष एक दूसरेके उद्देश नानाविध कुत्सित खेल खेलते हैं। वह भले आदमीयोंके देखने योग्य नहीं होता। झगड़ेकी कथा वा अङ्गभङ्गी भी कोई भला आदमी देख या सुन नहीं सकता। साधारणतः काश्मीरी विनयी, मिष्टभाषी और परोपकारी होते हैं।

वह दोनों वेला आहार करते हैं। अन्न और मत्स्य उनका नित्य खाद्य है। उत्तम अन्नकी अपेक्षा कड़ा सूखा भात, नमक मिर्च मिला चरपरा कड़म शाक, कुछ मछली और एक प्याला चाय काश्मीरियोंके लिये अति उत्तम भोजन है। इसलिये जो महीनेमें दो रुपये कमाता, उसका भी समय सुखसे कट जाता है।

चाय वह नित्य पीते हैं। नस्य और चाय आगन्तुकके लिये अभ्यर्थनाकी सामग्री है। चाय बनानेके यन्त्रको "समावार" कहते हैं। यह देखनेमें टीनके चोंगे जैसा होता है। समावारकी उच्चता १४ इञ्च होती है उसका व्यास ढाई इञ्च बैठता है। अभ्यन्तर दोहरा होता है। मध्यस्थलमें अग्नि लगाना पड़ता है। उसके बाहर चाय ढालनेके लिये टोंटी-जैसा नल लगा रहता है। अग्निको चारो ओर खाली जगहमें पानी भर देते हैं। पानी गर्म होनेसे चाय डाली जाती है। वह मीठी और नमकीन चाय पीते हैं। फूलनामक तिब्बतीय क्षार लवणस्वरूप व्यवहार करते हैं। वहें दो प्रकारकी चाय अच्छी है—पञ्जाबकी "सुरती" और लादाखकी "सब्ज"। कहीं जानेपर वह समावर कभी नहीं छोड़ते।

शिल्प—काश्मीरी शिल्पविद्यामें निपुण हैं। काश्मीरका दुशाला जगत् विख्यात है। श्रीनगरके निकट नौशेरा नामक स्थानमें कागज बनता है। वह सुचिक्कण और पार्चमेण्टकी भांति दृढ़ होता है। राजकीय व्यवहारके लिये सुवर्णमण्डित कारुकार्यविशिष्ट एक प्रकारका अति मनोहर कागज तैयार होता है। काश्मीरके जमा हुये कागजके कारुकार्यविशिष्ट कलमदान, सन्दूक, पिटारा, रकाबी प्रभृति भुवनविख्यात हैं। सोने चांदीका काम भी वह खूब करते हैं। गहनेका जैसा पेचदार नमूना दिया जाता, वह वैसा ही (चाहे कभी न बनाते भी या बनानेका

तीर्थ, यज्ञतीर्थ (यहां देवोंने दैत्यगणके संग युद्ध होने पर भगवतीका स्नान किया था), प्रयागतीर्थ, लोलार्कसङ्गमतीर्थ, मणिकर्णिकातीर्थ, चक्रपुष्करतीर्थ, ब्रह्मतीर्थ, प्रभासतीर्थ, गोमतीके पूर्वभागमें अवस्थित प्रभासतीर्थ, गङ्गतीर्थ, मत्स्योदरके पूर्वभागमें मत्स्यतीर्थ, कपालमोचनतीर्थ, त्रिपुरतीर्थ, कृत्तिवासतीर्थ [illegible] तीर्थ, ऋणमोचनके निकट धर्मतीर्थ, विशालाक्षी देवीके निकट विशालतीर्थ, ज्ञानवापीके निकट ज्ञान[illegible] तीर्थ, कपिलादेवीके निकट कपिलतीर्थ गौतम-तीर्थ, गङ्गाकेशवतीर्थ, दशाश्वमेधतीर्थ, योगिनीतीर्थ, त्रि-सन्ध्यातीर्थ, नर्मदातीर्थ, अरुन्धतीतीर्थ, वशिष्ठतीर्थ, मार्कण्डेयतीर्थ, पुष्करतीर्थ, भागीरथीतीर्थ और वीरेश्वरके निकट वीरतीर्थ, इनमेंसे [illegible] और [illegible] प्रधान है।" (काशीखण्ड ६१ अध्याय)

"पञ्चनद पादोदकतीर्थ, क्षीराब्धितीर्थ, शङ्खतीर्थ, चक्रतीर्थ, गदातीर्थ, पद्मतीर्थ, महालक्ष्मीतीर्थ, गरुड़तीर्थ, नारदतीर्थ, प्रह्लादतीर्थ, अम्बरीषतीर्थ, आदित्यकेशवतीर्थ, दत्तात्रेयतीर्थ, भार्गवतीर्थ, वामन-तीर्थ, नरनारायणतीर्थ, विदारनरसिंहतीर्थ, यज्ञ-वराहतीर्थ, गोपीगोविन्दतीर्थ, शेषतीर्थ, शङ्खमाधव-तीर्थ, नीलग्रीवतीर्थ, उद्दालकतीर्थ, सांख्यतीर्थ, स्व-र्लीनतीर्थ, महिषासुरतीर्थ, बाणतीर्थ, गोप्रतारेश्वर-तीर्थ, हिरण्यगर्भतीर्थ, प्रणवतीर्थ, पिशाचमोचनतीर्थ, नागेश्वरतीर्थ, कर्णादित्यतीर्थ, भैरवतीर्थ, खर्वनृसिंह-तीर्थ, मानतीर्थ, मङ्गलतीर्थ, मयूखमालितीर्थ, सप्त-तीर्थ, बिन्दुतीर्थ, पिप्पलादतीर्थ, ताम्रवराहतीर्थ, कालगङ्गातीर्थ, इन्द्रद्युम्नतीर्थ, रामतीर्थ, ऐरावततीर्थ मरुतीर्थ, मैत्रावरुणतीर्थ, अग्नितीर्थ, अङ्गारतीर्थ, कलशतीर्थ, चन्द्रतीर्थ, विघ्नतीर्थ, हरिश्चन्द्रतीर्थ, पर्वततीर्थ, कम्बलाश्वतरतीर्थ, सारस्वततीर्थ, उमा-तीर्थ, भद्राश्वावतारकतीर्थ, ढुण्ढितीर्थ, ईशानतीर्थ, नन्दितीर्थ, (काशीखण्ड ८३ अ०) मन्दाकिनीतीर्थ, दुर्वासातीर्थ, कपालमोचनतीर्थ, केदारतीर्थ, वृषध्वज-तीर्थ, विमलाकुण्ड, लक्ष्मीकुण्ड, पिशाचकुण्ड, गन्धर्व-कुण्ड, अप्सराकुण्ड, ऋणतीर्थ, पितामहकुण्ड, सप्त-तीर्थ, पितृकुण्ड [illegible] तीर्थ, ध्रुवेश्वर, मानसरोवर, वासुकीकुण्ड, जानकीकुण्ड, [illegible] तीर्थ प्रधान है।(काशीखण्ड [illegible] अ०)

उक्त तीर्थोंमें कई आजकल विलुप्त हो गये हैं।

आजकल काशीमें जितने देवालय देख पड़ते, उनमें निम्नलिखित स्थान प्रधान ठहरते हैं—विश्वेश्वर, अन्नपूर्णा, ज्ञानवापीश्वर, आदिविश्वेश्वर, कोटीश्वर, महेश्वर, [illegible] ईश्वर, तिलभाण्डेश्वर, वृद्धकेश्वर, मध्य-मेश्वर, [illegible] श्वर, चन्द्रेश्वर, केदारेश्वर, गभस्तीश्वर, पापभक्षेश्वर, मध्यमेश्वर, रत्नेश्वर, [illegible] श्वर, वृद्धकाले-श्वर, अमृतमृत्युञ्जयेश्वर, वालीश्वर, सिद्धेश्वर, अमृतेश्वर, कर्पूरेश्वर, अंगीरसेश्वर, व्यासेश्वर, [illegible] ईश्वर, व्याघ्रे-श्वर, [illegible] श्वर, कपर्दीश्वर, वैद्यनाथ, तारकनाथे-श्वर, त्रिलोचनेश्वर, कामेश्वर, दक्षेश्वर, स्वर्गद्वा-रेश्वर, आदिकेशवेश्वर, शूलटङ्केश्वर, नारदेश्वर, मणिकर्णिकेश्वर, आत्मवीरेश्वर, हरिश्चन्द्रेश्वर, वासु-कीश्वर, हरिश्चन्द्रेश्वर, नागेश्वर, पर्वतेश्वर, कपालमो-चनेश्वर, व्यासेश, गभस्तीश्वर, मङ्गलेश्वर, दुर्गा, सिद्धे-श्वरी, सङ्कटादेवी, विन्ध्यवासिनी, राजराजेश्वरी, सूर्य-चण्डी, कल्याणी, पुष्कर, जगन्नाथ, विन्दुमाधव, लक्ष्मी, वाराही, कपिला, गौतमा, वागीश्वरी, ढुण्ढिराज, बड़ेगणेश, कालभैरव, वटुकभैरव, दण्डपाणि, साक्षि-विनायक, दुर्गविनायक, अर्कविनायक, चिन्तामणि-विनायक, सम्बन्धविनायक, सिद्धविनायक, दृष्टविना-यक, धर्मविनायक, शीतलादेवी, चौंसठयोगिनी, हनू-मान्, वशिष्ठ और वामदेव।

उक्त देव और देवालय व्यतीत दूसरे भी सब शत लिङ्ग एवं देवमूर्तिका विवरण काशीखण्डमें वर्णित हुवा है। किन्तु आजकल उनके अधिकांशका सन्धान नहीं मिलता। मालूम पड़ता है कि मुसलमान अत्या-चारसे अनेक देवालय और लिङ्ग विलुप्त हो गये हैं।

काशीके तीर्थविवरणके सम्बन्धमें [illegible], [illegible] पुराण (१८०—१८६ अ०), कूर्मपुराण (३०—३३ अ०), [illegible] पुराण (१११ अ०), लिङ्गपुराण (९२ अ०), शिवपुराणके ज्ञानसंहिता ([illegible] अ०), [illegible] ([illegible] अ०), [illegible] ([illegible] अ०) [illegible] पुराण ([illegible] अ०) [illegible] पुराण ([illegible] अ०), [illegible] पुराणके काशी-[illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] द्रष्टव्य है।

तस्य विशिष्ट जल नाना पात्रमें रहता है। इस्मामर्में आग जलानेसे ऊपरि और-वगली घर भी गर्म पड़ जाता है।

श्रीनगरमें प्रत्येक भवनका प्रधान द्वार नदीके तीर पर है। प्रत्येक घरका घाट स्वतन्त्र है। उस घाटमें उतरनेका सोपान लगा है। प्रायः प्रत्येक अधिवासीको एक नौका होती है। वह अपने घाटमें अटकी रहती है। काष्ठके भवन होनेसे काश्मीरमें प्रायः अग्निदाह होता है। भवनके सर्वोच्चस्थानमें जलानेका काठ, रन्धनशालाका द्रव्यादि और भाण्डार रहता है।

नौका—नौका नाविकका घरद्वार है, दिवारात्रि वह नौकामें ही रहते हैं। अनेक लोगोंके भूमि पर कुटादि नहीं—पुत्रकलत्रके साथ वह नौकामें रहते हैं। काश्मीरमें बालिका, युवती और वृद्धा स्त्रियां भी निपुणताके साथ नौका चला सकती हैं। वहां अपने देशकी भांति नौका नहीं होता। 'शिकारी' या 'डोंगी' नामक नौका ही भ्रमणके पक्षमें सुविधाजनक है। शिकारी नौका साधारणतः २५ हाथ लम्बी, २॥ हाथ चौड़ी और १ फुट गहरी होती है। आरोहीके बैठनेका स्थान चतावरसे छाया रहता है। आवश्यकतानुसार उस छतको खोल डालते हैं। उक्त नौकाके चलानेका डांड़ 'चाप्पा' कहाता है। वह बड़े झाड़ जैसा होता है। शिकारीमें चाप्पा रखा नहीं रहता, हाथमें पकड़ चलाना पड़ता है। उस देशकी किसी नौकामें स्थूल भाग (पेटा) नहीं होता। पीछे एक आदमी बैठ चप्पेसे पेटेका काम चलाता है। आरोहीकी इच्छा और आवश्यकता देख शिकारी नौकामें तीनसे दश तक खेवट रखे जा सकते हैं। स्त्रियां वह नाव नहीं चलातीं।

डोंगी नामक नौका दूर भ्रमणके लिये उपयोगी है। उस नौकामें नाविक परिवारके साथ रहते हैं। उस प्रकारके नाविकको काश्मीरी भाषामें हांजी कहते हैं। डोंगी साधारणतः ४० हाथ दीर्घ, ४ हाथ विस्तृत और डेढ़ हाथ गभीर होती है। वह भी चतावरसे छायी जाती है। उक्त आवरणके शेषांशमें हांजी रहते हैं। स्त्रियां भी उसे चलाती हैं। काश्मीरी पण्डित उस पर चढ़ कर्मस्थानको यातायात करते हैं। उनका आहारादि नौकामें ही सम्पन्न होता है।

काश्मीरपतिकी कई सुदृश्य नौका हैं। आकारानुसार वह परिन्दा (पक्षी), चौकोरी (चतुष्कोण) और बच्ची (गाड़ी) कहलाती हैं। उनमें ५०से ८० आदमी तक चप्पा लेकर बैठ सकते हैं।

अधिवासी—हिन्दुवोंका राज्य होते भी काश्मीरमें मुसलमान अधिक हैं। यहांतक कि कितनेही हिन्दुवोंका (जो पण्डित कहाते हैं उनमें भी बहुतोंका) आचार व्यवहार बिगड़ मुसलमानों जैसा हो गया है। हिन्दू मुसलमानोंको छोड़ वहां बौद्ध भी बहुत हैं। काश्मीरी पुरुष गौरवर्ण, दृढ़काय और अङ्गसौष्ठवविशिष्ट हैं। वह चतुर, प्रखर बुद्धिशाली और आमोदप्रिय होते, किन्तु साहसी नहीं। रमणी परम सुन्दरी हैं। विशेषतः पण्डितोंकी स्त्रियां अनुपमरूपलावण्यवती होती हैं। भारतचन्द्रकी रूपसी विद्या और कालिदासकी शकुन्तला वहां प्रतिगृहकी प्रत्येक रमणीमें विद्यमान हैं। वे परकी परी यदि पृथिवी पर रहतीं अथवा अप्सरा यदि कविकी कल्पना नहीं ठहरतीं, तो वह काश्मीरमें ही मिलती हैं। धनी मुसलमानों और कृषकोंको छोड़ शिक्षाके एकसे अधिक स्त्री देख नहीं पड़ती।

परिच्छद—पुरुषोंका परिच्छद कौपीन, अलखाल्लक (पैरहन) और उष्णीष है। क्या हिन्दू क्या मुसलमान सभी मस्तक मुण्डन करते हैं। हिन्दू शिखा रखते हैं। स्त्रियां साड़ी नहीं—केवल अंगरखा पहनती हैं। कोई कोई स्त्री मस्तकपर लाल टोपी लगाती है। केशकी वेणी बना दो भागमें पृष्ठपर डाल देती हैं। पण्डिताइनोंमें कोई कोई कटीदेशमें अलखाल्लकके ऊपर चद्दर लपेट लेती हैं। वह थोड़ा ही गहना पहनती हैं। स्त्री पुरुष सभी काष्ठपादुका व्यवहार करते हैं।

सकल देशमें पुरुषों और स्त्रियोंके वेशकी विभिन्नता है, किन्तु काश्मीरमें नहीं। परिच्छदादि देख जातिके सत्त्वोंका परिचय मिलता है। काश्मीरी पुरुषके रमणीवेश-सम्बन्धपर इतिहासमें देखते कि दिल्लीके सम्राट उक्त स्थान आक्रमण कर सैन्य पराजय

काशीसे अदूर वर्तमान रामनगरमें व्यासकाशी है। हिन्दुवोंके विश्वासानुसार जैसे काशीमें मरनेसे मानव शिवत्व पाता वैसे ही व्यासकाशीमें शरीर छोड़नेसे गर्दभ बन जाता है। इसीसे अनेक लोग व्यासकाशीमें मरना नहीं चाहते।

काशीखण्डमें लिखा है—"वेदव्यास विष्णुसे विश्वेश्वरकी अपार महिमा सुन काशीमें वास करने लगे। वहां वह व्यासासन पर बैठ प्रत्यह शिष्यवर्गको काशीमहिमा सुनाते थे। किसी दिन महादेवने वेदव्यासकी परीक्षा लेनेके लिये भवानीको बुलाकर आदेश दिया—'अन्नपूर्णे! आज ऐसा कीजिये जिसमें वेदव्यासको कोई भिक्षा न दे।' सुतरां उस दिन वेदव्यासको किसीसे भिक्षा मिली न थी। जब नाना स्थान घूम वेदव्यासने देखा किसीने भिक्षा दी न थी तब उन्होंने अतिशय क्रुद्ध हो काशीवासीको अभिशाप दिया—'यहांके अधिवासी मुक्तिके गर्वसे भिक्षा नहीं देते अतएव इस काशीमें त्रैपुरुषी विद्या, त्रैपुरुष धन और त्रैपुरुषी मुक्ति न होगी।' इसप्रकार अभिशाप दे उन्होंने आकाशकी ओर मनोदुःखसे आंख उठाकर देखा कि सूर्यदेव अस्ताचलको जाते थे। उससमय क्या करते! क्षोभसे भिक्षापात्र दूर फेंक व्यासदेव आश्रमकी ओर अग्रसर हुये। वह गृह जाते जाते एकके सम्मुख पहुंचे ही थे कि भवानीने प्राकृत स्त्रीवेशसे द्वारपर खड़े होकर कहा—'हे भगवन्! हमारे पति बिना अतिथि-सत्कार किये भोजन करना अनुचित समझते हैं। अब तक हमें कोई नहीं मिला। इसलिये आप अतिथि हों।' वेदव्यास उनके घरमें सशिष्य अतिथि हुये। उस समय भवानीने नाना प्रसङ्गमें उनसे पूछा था—'जो व्यक्ति अपने दुर्भाग्यक्रमसे स्वार्थलाभ कर न सकने पर क्रोधमें शाप देता, वह शाप किसको लगता है?' वेदव्यासने उत्तर दिया—'वह शाप उस अविवेचक शापदाताके ही प्रति होता है।' फिर गृहस्वामी भगवान् विश्वेश्वरने कहा—'जो व्यक्ति काशीकी समृद्धि देख नहीं सकता, उसे इस स्थानमें पाप लगता है। तुम अब इस स्थानमें रहनेके योग्य नहीं शीघ्र ही क्षेत्रसे बाहर निकल जावो।' यह बात सुन व्यासने कांपते कांपते गौरीका शरण ले कहा था कि 'प्रति अष्टमी और चतुर्दशी तिथिको उन्हें उक्त क्षेत्रमें प्रवेश करनेकी अनुमति मिले।' देवीके अनुरोधसे महादेवने वही स्वीकार कर लिया। उसी समयसे व्यास क्षेत्रके बाहर रह दिवारात्रि काशीको निरीक्षण और प्रति अष्टमी तथा चतुर्दशी तिथीको क्षेत्रमें प्रवेश करते हैं।" साधारण लोगोंके विश्वासानुसार रामनगरमें आज भी व्यासदेव अपेक्षा करते हैं। उन्होंने लोगोंकी मुक्तिके लिये वहां एक तीर्थ बनाया था। माघ मास उस तीर्थमें स्नान करनेसे मानव कभी गर्दभ जन्म नहीं पाता। नाना स्थानसे यात्री उस तीर्थमें स्नान करने जाते हैं।

रामनगरके दुर्गमध्य नदीकी ओर काशिराजप्रतिष्ठित वेदव्यासका मन्दिर बना है।

व्यासकाशीमें काशिराज-प्रतिष्ठित अन्य भी अनेक देवालय और देवप्रतिमा हैं। उनकी गठन-प्रणाली हिन्दू शिल्पकी परिचायक है।

मानमन्दिर—पुण्यधाम वाराणसी हिन्दुवोंका प्रधान तीर्थ है सही, किन्तु उसमें साधारण ज्ञानपिपासुके भी देखने योग्य अनेक वस्तु हैं। उनमें अम्बरपति मानसिंह-प्रतिष्ठित मानमंदिर स्वदेशी क्या विदेशी प्रधान २ ज्योतिर्विद्मात्रको अवलोकन करना चाहिये। उक्त मानमन्दिर भी इस बातका एक परिचायक है। किसी काल हिन्दुवोंने ज्योतिर्विद्यामें कहां तक उत्कर्ष लाभ किया था। अम्बरराजवंशीय सवाई जयसिंहने मानमन्दिरके मध्य नक्षत्रादिकी गति ठहरानेको जो सकल यन्त्र प्रस्तुत कराये उन्हें देख चमत्कृत होना पड़ता है। दिल्लीश्वर मुहम्मद शाहकी अनुमतिसे नाक्षत्रिक गति समुदय ठीक करनेके लिये जयसिंहने प्राचीन आर्य ज्योतिषके आधारसे 'जयप्रकाश' 'रामयन्त्र' और 'सम्राट्यन्त्र' नामसे तीन यन्त्र बनवाये थे। शेषोक्त यन्त्रका व्यासार्ध प्रायः १२ हाथ होगा। राजा उक्त यन्त्रके बल पाश्चात्य-ज्योतिर्विद् डिलाकोम, टलमि प्रभृति प्रदर्शित युक्तियोंमें भ्रम प्रदर्शन कर सके। एतद्भिन्न जयसिंहके आविष्कृत भित्तियन्त्र, चक्रयन्त्र प्रभृति दूसरे भी कई यन्त्र मानमन्दिरके मध्य विद्यमान हैं। (जयसिंह देखो।)

करते भी देशाधिकार कर न सकते थे। शैवको मुसलमानोंके अधिकार करने पर जहांगीरने परामर्शकर पुरुषोंको बलपूर्वक स्त्रीवेश धारण कराया। प्रथम प्रथम वह उक्त वेश विना युद्ध धारण करने पर स्वीकृत हुये न थे। किन्तु शैवको उन्होंने उसे स्वीकार किया। अत एव पुरुष परिच्छेदके साथ उन्होंने पुरुषोचित-साहस भी खो दिया है।

आचार-व्यवहार—काश्मीरी बहुत अपरिष्कार रहते हैं। उनका वस्त्रादि, गात्र और वासगृह साक्षात् नरक जैसा देख पड़ता है। शीतको छोड़ देते भी अन्य किसी समय वह वस्त्रादि नहीं धोते। क्या स्त्री क्या पुरुष सभी प्रकाश्य स्थलमें नग्न हो स्नान करते हैं। सुतरां स्नानके समय भी गात्रावरणको जल स्पर्श नहीं कराते। इसीसे उसपर इतना मैल जम जाता कि यथार्थ छुटकी सीनेसे मैल निकलता और भाड़नेसे पिस्सू तथा खिलरका ढेर लगता है। वह पथ, गृहाभ्यन्तर और प्राङ्गणमें मलमूत्र त्याग करते हैं। शीतकालमें घरसे बाहर निकलना दुःसाध्य होने पर वह ऐसा करते हैं। किन्तु अभ्यासक्रमसे अन्य समय भी वह उक्त व्यवहार छोड़ नहीं सकते। लोकालय उसीसे नरक बन जाता है। श्रीनगर, जम्बू प्रभृति राजधानीमें भी ऐसा ही हाल था। फिर भी आजकल राजनियमसे बहुत कुछ परिष्कृत हुआ है। राजकर्मचारी, विदेशी और पर्यटक (अर्थात् काश्मीरी भिन्न दूसरे सभी) इसीसे लोकालय छोड़ नदीतीर हाउसबोटिकामें रहते हैं।

काश्मीरी बड़े झगड़ालू होते हैं। किसीके साथ किसीका विवाद उपस्थित होनेपर समस्त दिन अविश्रान्त रूपसे कलह करते हैं। फिर सन्ध्या पड़नेसे उभय पक्ष अपने अपने घर लौटने पर टोकरी औंधा रखते हैं। दूसरे दिन प्रत्यूषके समय वही टोकरी खोल नये सरसे झगड़ा किया करते हैं। इसी प्रकार एक दिन नहीं कई दिन झगड़ा चलता है। श्रीनगरके नीचे वितस्ता कुछ अवगम्य है। जिस समय इस पारके लोग उस पारके लोगोंसे झगड़ते, उस समय बड़ा कौतूहल मालूम होता है। इस प्रकारका झगड़ा लगनेसे उभय पक्ष एक दूसरेके उद्देश नानाविध कुत्सित चेष्टा खेलते हैं। वह भले आदमियोंके देखने योग्य नहीं होता। झगड़ेकी कथा वा अङ्गभङ्गी भी कोई भला आदमी देख या सुन नहीं सकता। साधारणतः काश्मीरी विनयी, मिष्टभाषी और परोपकारी होते हैं।

वह दोनों वेला आहार करते हैं। अन्न और मसाला उनका नित्य खाद्य है। उत्तम अन्नकी अपेक्षा कड़ा सूखा भात, नमक मिर्च मिला चरपरा कड़म शाक, कुछ मछली और एक प्याला चाय काश्मीरियोंके लिये अति उत्तम भोजन है। इसलिये जो महीनेमें दो रुपये कमाता, उसका भी समय सुखसे कट जाता है।

चाय वह नित्य पीते हैं। नस्य और चाय आगन्तुकके लिये अभ्यर्थनाकी सामग्री है। चाय बनानेके यन्त्रको "समावाट" कहते हैं। वह देखनेमें टीनके चोंगे जैसा होता है। समावाटकी उच्चता १४ इञ्च होती है उसका व्यास ढाई इञ्च बैठता है। अभ्यन्तर दोहरा होता है। मध्यस्थलमें अग्नि लगाना पड़ता है। उसके बाहर चाय ढालनेके लिये टोंटी-जैसा नल लगा रहता है। अग्निकी चारो ओर खाली जगहमें पानी भर देते हैं। पानी गर्म होनेसे चाय डाली जाती है। वह मीठी और नमकीन चाय पीते हैं। फूलनामक तिब्बतीय क्षार लवणस्वरूप व्यवहार करते हैं। उनमें दो प्रकारकी चाय अच्छी है—पञ्जाबकी "सुरती" और लादाखकी "दशा"। कहीं जानेपर वह समावट कभी नहीं छोड़ते।

शिल्प—काश्मीरी शिल्पविद्यामें निपुण हैं। काश्मीरका दुशाला जगत् विख्यात है। श्रीनगरके निकट कौंजेरा नामक स्थानमें कागज बनता है। वह सुचिक्कण और पार्चमेण्टकी भांति दृढ़ होता है। राजकीय व्यवहारके लिये सुवर्णमण्डित कारुकार्यविशिष्ट एक प्रकारका अति मनोहर कागज तैयार होता है। काश्मीरके उसी कागजके कारुकार्यविशिष्ट कलमदान, सन्दूक, पिटारा, रकाबी प्रभृति भुवनविख्यात हैं। सोने चांदीका काम भी वह खूब करते हैं। गहनेका ऐसा पेंचदार नमूना दिया जाता, वह जैसाही (पहले कभी न बनाते भी या बनानेका

१६०० ई० को मानमन्दिर मानसिंह कर्त्तृक निर्मित हुआ था। किन्तु उसमें स्थान स्थान पर प्रस्तरको अवस्था देख शिल्पशास्त्रविद् स्वीकार करते हैं कि उसका कोई कोई अंश अधिक प्राचीन है। मानमंदिरका शिल्पनैपुण्य प्रशंसायोग्य है। उसके सुन्दर वातायनकी गठन प्रणाली पर्यवेक्षण करनेसे निर्माताकी सुख्याति बिना किये कैसे रह सकते हैं? आजकल ऐसा बड़ा वातायन बहुत कम देख पड़ता है।

बकरियाकुण्ड—उत्तर-पश्चिम कोण पर अलीपुर महल्लेमें बकरियाकुण्ड है। काशीखण्डमें वह बर्करी वा छागकुण्ड नामसे वर्णित हुआ है। कुण्ड दैर्घ्यमें १६६ हाथ और प्रस्थमें १८६ हाथ है। कुण्डके उत्तरपार्श्व एक लंबा टीला पड़ा है। उस पर प्रस्तरके भग्न प्रतिमा और मठके कलस प्रभृति मिलते हैं। वह सब बौद्ध मठके ध्वंसावशेष समझ पड़ते हैं। कुण्डको पूर्व ओर भी इटका एक वृहत् स्तूप है। स्तूपके पूरब योगिवीर नामक स्थान है। यहां किसी योगीने सशरीर समाधि लाभ किया है। कुण्डके दक्षिण-पश्चिम एक दरगाह या मुसलमानोंका भजनालय है। वह भी किसी प्राचीन इटकी भित्ति पर स्थापित है। दरगाहके पूरब (१५×१२ हाथ) तीन पंक्ति पाषाणस्तम्भ पर स्थापित एक क्षुद्र मसजिद है। वह मसजिद भी बहुत पुरानी है। उसकी गठनप्रणाली देख अनेक लोगोंने स्थिर किया है कि पीछे वह बौद्धोंकी रही। आधुनिक समयमें उसे मुसलमानोंने अपनी मसजिद बना लिया है। उसमें ७७७ हिजरी (१३७५ ई०) की खोदित फिरोजशाहकी शिलालिपि है। उसके निकट बौद्ध चैत्य भी दृष्ट होता है। अनेक लोग स्वीकार करते कि एक समय बकरियाकुण्डके पार्श्वमें बौद्ध-देवालय था।*

राजघाटके दुर्गमें भी बौद्ध-विहारका निदर्शन मिलता है। उस भग्नावशेष विहारका शिल्पनैपुण्य दर्शनीय है। उसका स्तम्भ और भास्करकार्य भावोंसे बौद्ध स्तूपसे मिलता है। वह विहार भी मुसलमानोंके हाथसे बचा न था।

राजघाट दुर्गके उत्तर कालाखान, वरुणासङ्गमके अथमपुर महल्ले, बाराणसीके तैलियाले, लाटभैरव नामके स्थान, जमीन नदी, चटाई वंगूरेकी मसजिद और बरनाके पूर्व पार्श्व पंचकोशी राहके पास सोना तलावके निकट आज भी बौद्ध-चैत्य, विहार, स्तूप एवं प्रतिमाका भग्नावशेष देख पड़ता है।

अनेक लोग अनुमान करते कि भैरवको लाट बौद्धराज अशोकने प्रतिष्ठित की थी।

व्यवसाय—ऐसा नहीं कि काशी केवल पुण्यक्षेत्र ही है। यहां नानादेशीय लोगोंका समागम रहनेसे व्यवसाय भी अच्छा चलता है। काशीमें चीनी, नील और गोटेका व्यवसाय प्रधान है। जौनपुर, बस्ती, गोरखपुर प्रभृति स्थानोंका सकल प्रकार उत्पन्न द्रव्यादि यहां आनीत और विक्रीत होता है। काशीके रेशमी कपड़े, शाल, जरदोजी, हीरा जवाहरात, और खिलौने प्रसिद्ध हैं। प्रधान प्रधान सभी हिन्दूराजाओंके यहां भवन अथवा मठ हैं। हिन्दूराजा काशीमें भवन बना सकनेसे अपनेको धन्य समझते और समय समय पर आ यहां सपरिवार अवस्थिति करते हैं। सुतरां काशीमें राजभोगका भी अभाव नहीं। यहां दुर्ग, कालेज, विश्वविद्यालय, अनेक अन्यान्य विद्यालय, रेलवे स्टेशन, डाकघर, अदालत और विस्तर चतुष्पाठी विद्यमान हैं। पहले नाना स्थानसे छात्र काशी वेद पढ़ने जाते थे। आज कल भी लोग जाते हैं सही, किन्तु पूर्वकी भांति अब वह दिख नहीं पड़ता। फिर भी अद्यापि शास्त्राध्ययनके लिये प्रसिद्ध है। कुछ दिन हुये हिन्दुओंने काशीमें अपना बनारस विश्वविद्यालय खोला है। फिर काशीका "आज" नामक दैनिक समाचार-पत्र हिन्दीमें बहुत प्रख्याति रखता है। बनारस देखो।

काशी जैनियोंका भी पवित्र तीर्थ है। चौथे कालको आदिमें भगवान् ऋषभदेवने यह नगर बसाया था। सर्वप्रथम यहांके राजा अकंपन हुये। इनने अपनी पुत्री सुलोचनाका स्वयंवर कर यहां यश लाभ किया था। यहां सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ और तेईसवें तीर्थं-

* Sherring's Sacred City of the Hindus, p. 277-287; J. A. S. Bengal, XXXV. p. 53-73; Führer's Archæological Survey Lists N. W. P. Vol. I. p. 189-202.

प्रथम गोनन्दके मरने पर तत्पुत्र दामोदर काश्मीरके राजा हुये। वह बहुत अहङ्कारी थे। सुतरां पिताके मरनेसे राज्य पाकर भी दामोदर सुखी न हुये। राजतरङ्गिणीके मतमें उनके राजत्वकाल किसी गांधार राजकुमारीके स्वयम्बरोपलक्ष कृष्ण-बलराम बुलाये गये थे। दामोदरने यह बात सुन स्थिर किया कि पितृहन्ताके प्राणवधका यह सुयोग था, वैसा सुयोग त्याग करना उचित न रहा। इसी विवेचनामें उन्होंने वृहत् सैन्यदलके साथ पथिमध्य कृष्ण-बलरामका आक्रमण किया। युद्धमें कृष्णके चक्राघातसे दामोदर मारे गये।

महाभारतके पाठसे समझ पड़ता कि राजसूय-यज्ञकाल अर्जुनने काश्मीर जय किया था।*

दामोदरकी मृत्युकाल उनकी महिषी यशोमती गर्भिणी थीं। श्रीकृष्णके आदेशानुसार वही सिंहासन पर बैठ गयीं। स्त्रीके राजा होनेकी बात सुन प्रधान अमात्यने आपत्ति डाली थी। श्रीकृष्णने उन्हें उत्तर दिया—

"काश्मीराः पार्वती तत्र राजा ज्ञेयो हरांशजः।
नावज्ञेयो स दुष्टोऽपि विदुषा भूतिमिच्छता॥" (राजतरङ्गिणी)

काश्मीरकी रमणी पार्वती और काश्मीरके राजा महादेवका अंश है। दुःशील राजाओंसे भी पुण्यकामेच्छु पण्डितोंको घृणा करना न चाहिये।

यथाकाल यशोमतीके गर्भसे सुलक्षणाक्रान्त बालकने जन्म लिया था। उसका नाम २य गोनर्द पड़ा। राजतरङ्गिणीके मतसे उन्हींके समय भारतयुद्ध हुआ था। वह शिशु थे। इसीसे कौरव पाण्डवमें किसीने उनको नहीं बुलाया।*

उनके पीछे ३५ राजा हुये। किन्तु वह सभी अधर्मी और दुर्दान्त थे। इससे किसी इतिहास वा शास्त्रादिमें उनका नाम या विन्दुमात्र भी विवरण नहीं मिलता।

फिर लव नामक एक राजा हुये। कहना कठिन है—वह प्रथम गोनन्दके वंशजात थे या नहीं। वह अनेक पार्श्ववर्ती राजाओंको स्ववशमें लाये। उन्होंने "लोलोर" नामसे एक नगर स्थापन किया था, किम्बदन्तीके अनुसार उसमें ८४ लाख पत्थरके मकान रहे। उन्होंने लोलोरके अन्तर्गत लेवार नामक ग्राम ब्राह्मणोंको दिया था।

लवके पीछे उनके पुत्र कुशेशय राजा बने। उन्होंने ब्राह्मणोंको कुरुहार नामक ग्राम दान किया था।

कुशेशयके पीछे उनके पुत्र खगेन्द्र नरपति हुये। वह अतिसाहसी, नागद्वेषी और धीरबुद्धि थे। उन्होंने खागिपुर और खुनमुष ‡ नामक दो ग्राम संस्थापन किये।

एते चान्ये च राजानो बलवन्तो महारथाः।
तमन्वयुर्जरासन्धं विविशन्तो जनार्दनम्॥" (हरिवंश ९१ अ०)

जरासन्धके प्रथमवार मथुराक्रमणको वर्णनामें उक्त श्लोक मिलते हैं। उसके पीछे जिस समय कृष्ण बलराम गोमन्त पर्वत पर रहे, उस समय भी जरासन्ध सकल मित्रराजके साथ उन्हें वध करने गये थे। जरासन्धके उक्त मित्रराजोंमें भी गोनर्दका नाम मिलता है। यथा—

"मद्रः कलिङ्गाधिपतिश्चेकितानः सबाह्लिकः।
काश्मीरराजो गोनर्दः करूषाधिपतिस्तथा॥
द्रुमः किम्पुरुषश्चैव पार्वतीयाश्च मानवाः।
पर्वतासादरं पार्श्वे विप्रमारोह्यलक्ष्मी॥" (हरिवंश, ९९ अ०)

हरिवंशमें इतना ही लिखा है, किन्तु बलरामके हाथ गोनर्दके मारे जानेकी चर्चा उसमें नहीं आयी।

* "ततः काश्मीरकान् वीरान् क्षत्रियान् क्षत्रियर्षभः।
व्यजयल्लोहितञ्चैव मण्डलैर्दशभिः सह॥ १७॥
ततस्त्रिगर्तान् कौन्तेयो दार्वान् कोकनदांस्तथा।
क्षत्रिया बहवो राजन्नुपावर्तन्त सर्वशः॥ १८॥
अभिसारीं ततो रम्यां विजिग्ये कुरुनन्दनः।
उरगावासिनञ्चैव रोचमानं रणेऽजयत्॥" १९॥
(महाभारत, सभापर्व २७ अ०)

* नीलमतपुराणमें भी इसी प्रकार लिखा है—

"दामोदरानिवसत्स सूनुः राजाभवत् सुधीः॥......
अथोपसिन्धुगान्धारविषयेऽभूत् स्वयम्बरः॥
तत्राहूताः समाजग्मुः राजानो वीर्यशालिनः॥
तत्रागते समाकर्ण्य वासुदेवे स्वयम्बरे।
जगाम माधवं योद्धुं चतुरङ्गबलान्वितः॥
यादृशो वासुदेवस्य संग्रामः समभवत्।
ततः स वासुदेवेन युद्धे चक्रनिपातितः।
स्नापयित्वा तस्य पत्नीं वासुदेवोऽभ्यषेचयत्।
भविष्यत्पुत्रस्यार्थे तस्य देशस्य गौरवात्।
ततः सा सुषुवे पुत्रं बालं गोनन्दसंज्ञितम्।
बालभावात् पाण्डुपुत्रैर्नानीतः कौरवैर्न वा॥"

† वर्तमान नाम लुदरो या लधुभैरवोपाम है।

‡ खागिपुर या खगेन्द्रपुरका वर्तमान नाम काकपुर है। वह केवल

खगेन्द्रके पीछे तत्पुत्र सुरेन्द्रने सिंहासनारोहण किया। सुरेन्द्र साहसी, निर्मलचरित्र और विनयी थे। उन्होंने दरद देशके निकट सौरक नामक नगर स्थापन और उसमें "नरेन्द्रभवन" नामक एक सुन्दर प्रासाद निर्माण किया। उनके कोई सन्तान न था।

महाराज सुरेन्द्रके परलोक जानेसे गोधर नामक और भिन्नवंशीय राजा बने। उन्होंने ब्राह्मणोंको हस्तिशाला नामक ग्राम दिया था।

गोधरके पीछे तत्पुत्र सुवर्ण राज्याभिषिक्त हुये। वह बड़े दानशील रहे। उन्होंने कराल नामक स्थानमें सुवर्णमणि नाला खनन कराया था।

सुवर्णके पीछे तत्पुत्र जनकने राज्य पाया। उन्होंने विहार और जालोर नामक अग्रहार स्थापन किया था।

जनकके पीछे उनके पुत्र शचीनर पर राज्यभार पड़ा। वह उन्नतमना और क्षमावान् नरपति थे। उन्होंने समाङ्गसा और अश्मनार नामसे दो अग्रहार स्थापन किये। वह निःसन्तान रहे।

शचीनरके पीछे उनके पितृव्यपुत्र शकुनिप्रपौत्र अशोक राजा हुये। वह बौद्धधर्मावलम्बी थे। उन्होंने शुष्कलेत्र और वितस्तात्र नामक स्थानमें अनेक स्तूप निर्माण किये। वितस्तात्रपुरके अन्तर्गत धर्मारण्य विहारमें अशोकने एक अति उच्च चैत्य बनाया था। उसकी चूड़ा किसीको देख न पड़ती थी। प्राचीन श्रीनगरी* अशोक कर्तृक स्थापित है। कहते हैं कि उनके समय प्राचीन श्रीनगरमें ९६ लाख मकान थे। उन्होंने श्रीविजयेशदेवके * मन्दिरको चतुर्दिक्का ध्वंसप्राय बहिःप्राकार तोड़वा नूतन निर्माण करा दिया। फिर अशोकने श्रीविजयेश देवके मन्दिर-प्राङ्गणमें "अशोकेश्वर" नामक एक प्रासाद भी बनाया था। उनके वृद्ध वयसमें म्लेच्छों (शकों वा यौकों)-ने काश्मीर राज्य अधिकार किया। महाराज अशोकने शेष दशापर ईश्वरकी सेवामें अपना काल बिताया।

अशोकके पीछे तत्पुत्र जलौक राजा बने। वह बड़े शिवभक्त थे। उन्होंने पितृ-गृहीत बौद्धमत ग्रहण नहीं किया। जलौकने समुद्रतट पर्यन्त पीछे पड़ म्लेच्छ शत्रुओंको देशसे निकाला था। शत्रुओंका पराजय कर उन्होंने एक स्थल पर शिलाबन्धन किया। वह स्थल "उज्जटडिम्ब" नामसे प्रसिद्ध है। जलौकने वर्णाश्रमाचारको पुनः चलाया था। उनके समय काश्मीर राज्य धनधान्यशाली हो गया। उन्होंने राजकार्यकी सुशृङ्खला स्थापन कर कोषाध्यक्ष, प्रधानसेनापति, दूत प्रभृति कर्मचारियोंका पद संस्थापन किया। जलौकने वारवल नामक आश्रम और उनकी पत्नी ईशानदेवीने तोरणद्वार तथा अन्यान्य स्थलमें मातृका मूर्तिकी प्रतिष्ठा कर बड़ा सुयश पाया था। महाराज जलौकसे सोदरतीर्थ भी प्रचारित हुआ। तीर्थयात्री वहां और अन्यान्य जगह जाते रहे। सोदरतीर्थकी नन्दीशमूर्तिकी भांति उन्होंने प्राचीन श्रीनगरमें ज्येष्ठरुद्र नामक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया और तत्सन्निहित स्थानका नाम सोदरतीर्थ रख लिया।† नन्दीश्वरको चतुर्दिक्का प्रस्तर-प्राचीर उन्होंने निर्माण कराया था। फिर जलौक द्वारा ही नन्दीक्षेत्रमें शिवभूतेश लिङ्ग स्थापित हुआ। भूतेश मन्दिरको देवसेवाके लिये उन्होंने यथेष्ट अर्थ दिया था। कहा जाता है कि उन्होंने प्रथम एक बौद्धमठ नष्ट किया था। उसके पीछे जलौकने

अशोक वाममार्ग मरडुन-सुलेमानसे १ कोस दक्षिण अवस्थित है। वहां आज भी प्राचीन देवमन्दिर और पूर्व ध्वंसावशेष दृष्ट होता है।

शुष्कलेत्र (राजतरङ्गिणी १।१०२)—विल्हणके विक्रमाङ्कचरितमें शुष्कलेत्र 'श्रीमुग्ध' नामसे उक्त हुआ है। (विक्रमाङ्कचरित १८।७१) उसका वर्तमान नाम 'हुक्लो' है। यह स्थान श्रीनगरसे १ कोस उत्तर-पूर्व अवस्थित है। उसके निकट हर्षेश्वरतीर्थ और भुवनेश्वरीकुण्ड विद्यमान है।

हुक्लोके निकट जिवन नामक एक क्षुद्र ग्राम है। विल्हणने उसीका नाम 'जयवन' लिखा है।

* श्रीनगरी—वर्तमान श्रीनगरसे भिन्न थी। उसका दूसरा नाम पुराणाधिष्ठान था। वर्तमान पाण्ड्रेठन नामक ग्राममें ही प्राचीन श्रीनगरी बसी थी, पूर्वको यह नगरी मरडुन-सुलेमानसे पान्थाचौक अर्थात् पत्थरकूट पर्यन्त विस्तृत था।

* जिस स्थानपर विजयेश्वरमन्दिर था, वह स्थान अब बिजबिहारा है। यह देवहत नदीके वामतीर वर्तमान इसलामाबादसे ४ कोस दक्षिण-पूर्व अवस्थित है।

† आज भी मरडुन सुलेमान पहाड़में ज्येष्ठरुद्र नामक शिवलिङ्ग और उस से कुछ दूर जलौक प्रतिष्ठित अशोकेश्वर मन्दिरका ध्वंसावशेष देख पड़ता है

लगी कि मनुष्यका जीवन क्षणविध्वंसी और पापका शास्ता जगदीश्वर ही है। उनने केवल १ वर्ष १५ दिन राजत्व किया। उनके वानप्रस्थ अवलम्बन करने पर पितृसंगी मित्रशर्माने सस्त्रीक जलमें डूब प्राण छोड़ दिया था।

कुवलयादित्यके पीछे वज्रादित्य सिंहासन पर बैठे उन्होंने महिषी चक्रमर्दिकाके गर्भसे जन्म लिया था। लोग उन्हें बप्पियक वा ललितादित्य भी कहते थे। वह निष्ठुर देवस्वापहारी (परिहासपुरादिकी अनेक देवोत्तर सम्पत्ति उन्होंने छीन ली थी), अतिशय अत्याचारी, स्त्रीविलासी और म्लेच्छाचारी थे। अतिमात्र स्त्रीसम्भोगके फल यक्ष्मारोगसे उनकी मृत्यु हुई। उनने ७ वर्ष राजत्व किया था।

वज्रादित्यके पीछे उनके पुत्र पृथिव्यापीड़ राजा हुये। उनकी माताका नाम मञ्जरिका था। उनने ४ वर्ष १ मास राजत्व किया।

पृथिव्यापीड़के पीछे उनकी विमाता मम्माके गर्भजात संग्रामपीड़ने राज्य पाया। उनका राजत्वकाल ७ वर्ष रहा।

संग्रामपीड़के मरने पर बप्पीय वा द्वितीय ललितादित्य (वज्रादित्य)-के कनिष्ठ पुत्र जयापीड सिंहासन पर बैठे। उनने प्रयागमें जा ९९९९९ अश्व ब्राह्मणको दान किये थे। उक्त दानके पीछे जयापीड़ने प्रयागमें स्वनामसे एक स्तम्भ बनाया और उसपर निम्नलिखित विषय खोदाया—जो हमारी भांति ब्राह्मणोंको लक्ष अश्व इस स्थान पर दे सकेगा, वह हमारे इस स्तम्भको मानो तोड़ डालेगा। प्रयाग देखो।

फिर जयापीड़ गौडके अन्तर्गत पौण्ड्रवर्धनमें उपस्थित हुये। वहां उनने गौड़राज जयन्तकी कन्या कल्याणदेवी और देवनर्तकी कमलाका पाणिग्रहण किया। प्रत्यागमनकाल राहमें वह कान्यकुब्ज जीत वहांका अतिमनोहर सिंहासन उठा ले गये। काश्मीरमें उपस्थित हो जयापीड़ने सुना कि उनके पूर्व श्यालक जज्जने राज्य अधिकार किया था। उनने राज्योद्धारके लिये युद्ध घोषणा की। पुष्कलेत्र नामक ग्राममें युद्ध हुआ। उसमें जज्ज मारे गये। जज्ज देखो। जयापीड़ने राज्योद्धार कर शान्तिको स्थापन किया। महिषी कल्याणदेवीने पुष्कलेत्रकी युद्धभूमिमें कल्याणपुर नामक नगर बसाया था। जयापीड़ने स्वयं मल्हणपुर नामक नगर और उसमें केशवमूर्तिको स्थापन किया। कमलाने भी कमला नामक नगर बसाया। उस समय काश्मीरमें विद्याचर्चा बहुत थी। राजा जयापीड़ने पतञ्जलिके महाभाष्य और स्वरचित क्षीरका वृत्तिका प्रचार किया। (उनने स्वयं क्षीर नामक पण्डितके पास व्याकरण पढ़ा था।) उद्भटभट्ट, दामोदरगुप्त, मनोरथ, शङ्खदत्त, चटक और सन्धिमान नामक कवि उनकी सभामें विद्यमान थे। उद्भटभट्ट सभापण्डित रहे। उन्हें प्रतिदिन लक्ष स्वर्णमुद्रा (अशर्फी) मिलती थीं। दामोदरगुप्त प्रधानमन्त्री और कवि एवं वैयाकरण वामन उनके अन्यतम मन्त्री रहे।

जयापीड़ने पीछे जयपुर प्रभृति दूसरे भी कई नगर, जयदेवी नाम्नी देवीप्रतिमा, राम लक्ष्मण आदिकी मूर्ति और अनन्तशायी विष्णुमूर्तिकी प्रतिष्ठा किया। कहा जाता है कि विष्णुने स्वप्नमें जलवेष्टित द्वारावतीपुरी निर्माण करनेको आदेश दिया था। जयापीड़ने वैसा ही एक नगर निर्माण कराया। वह कह्लणके समय अभ्यन्तर-जयपुरके नामसे विख्यात था।

उक्त स्थानमें भी जयदत्त नामक किसी कर्मचारीने एक बौद्धमठ और मथुराधीश्वर प्रमोदके जामाता आचने आचेश्वर नामक एक शिवलिङ्ग स्थापन किया।

उसके पीछे जयापीड़ दिग्विजयार्थ हिमालय पर चढ़े थे। वहां उनने विनयादित्य नाम ग्रहणपूर्वक पूर्व दिक्को विनयादित्यपुर नामक नगर स्थापित किया। उनने उक्त स्थानको पूर्वदिक् भीमसेनराज्य और नैपालराज्य नाना कौशलसे जीत लिया।

उसके पीछे जयापीड़ने स्त्रीराज्य जीत कर्णका सिंहासन अधिकार किया। उनने युद्धादि व्ययके सुविधार्थ "गलगंज" नामसे सैन्यसमभिव्याहारी कोषागार निकाला था। जयापीड़ने कर्मपर्वत पर एक ताम्र खनिको आविष्कार कर ताम्र उत्तोलनपूर्वक उसके मूल्यसे अपने नामपर एकोनशतकोटि स्वर्णमुद्राको प्रस्तुत

प्रथम गोनन्दके मरने पर तत्पुत्र दामोदर काश्मीरके राजा हुये। वह बहुत अहङ्कारी थे। सुतरां पिताके मरनेमें राज्य पाकर भी दामोदर सुखी न हुये। राजतरङ्गिणीके मतमें उनके राजत्वकाल किसी गांधार राजकुमारीके स्वयम्वरोपलक्ष कृष्ण-बलराम बुलाये गये थे। दामोदरने यह बात सुन स्थिर किया कि पितृहन्ताके प्राणवधका यह सुयोग था, वैसा सुयोग त्याग करना उचित न रहा। इसी विवेचनामें उन्होंने बृहत् सैन्यदलके साथ पथिमध्य कृष्ण-बलरामका आक्रमण किया। युद्धमें कृष्णके चक्राघातसे दामोदर मारे गये।

महाभारतके पाठसे समझ पड़ता कि राजसूय-यज्ञकाल अर्जुनने काश्मीर जय किया था।*

दामोदरकी मृत्युकाल उनकी महिषी यशोमती गर्भिणी थीं। श्रीकृष्णके आदेशानुसार वही सिंहासन पर बैठ गयीं। स्त्रीके राजा होनेकी बात सुन प्रधान अमात्यने आपत्ति डाली था। श्रीकृष्णने उन्हें उत्तर दिया—

"काश्मीराः पार्वती तत्र राजा ज्ञेयो हरांशजः।
नावज्ञेयो स दुष्टोऽपि विदुषा भूतिमिच्छता॥" (राजतरङ्गिणी)

काश्मीरकी रमणी पार्वती और काश्मीरके राजा महादेवका अंश है। दुःशील राजायोंसे भी पुण्यलाभेच्छु पण्डितोंको घृणा करना न चाहिये।

यथाकाल यशोमतीके गर्भसे सुलक्षणाक्रान्त बालकने जन्म लिया था। उसका नाम २य गोनर्द पड़ा। राजतरङ्गिणीके मतसे उन्हींके समय भारतयुद्ध हुआ था। वह शिशु थे। इसीसे कौरव पाण्डवमें किसीने उनको नहीं बुलाया।*

उनके पीछे ३५ राजा हुये। किन्तु वह सभी अधर्मी और दुर्दान्त थे। इसीसे किसी इतिहास वा शास्त्रादिमें उनका नाम या बिन्दुमात्र भी विवरण नहीं मिलता।

फिर लव नामक एक राजा हुये। कहना कठिन है—वह प्रथम गोनन्दके वंशजात थे या नहीं। वह अनेक पार्श्ववर्ती राजाओंको स्ववशमें लाये। उन्होंने "लोलोर" नामसे एक नगर स्थापन किया था, किम्वदन्तीके अनुसार उसमें ८४ लाख पत्थरके मकान रहे। उन्होंने लोलारकेर† अन्तर्गत लेवार नामक ग्राम ब्राह्मणोंको दिया था।

लवके पीछे उनके पुत्र कुशेशय राजा बने। उन्होंने ब्राह्मणोंको कुरुहार नामक ग्राम दान किया था।

कुशेशयके पीछे उनके पुत्र खगेन्द्र नरपति हुये। वह अतिसाहसी, नागद्वेषी और धीरबुद्धि थे। उन्होंने खागिपुर और खुनसुष ‡ नामक दो ग्राम संस्थापन किये।

एते चान्ये च राजानो बलवन्तो महारथाः।
तमभ्युद्गराश्चर्ध्वं बिभिदुर्वै जनार्दनम्॥" (हरिवंश ९१ अ०)

जरासन्धके प्रथमवार मथुराक्रमणको वर्णनामें उक्त श्लोक मिलते हैं। उसके पीछे जिस समय कृष्ण बलराम गोमन्त पर्वत पर रहे, उस समय भी जरासन्ध सकल मित्रराजके साथ उन्हें वध करने गये थे। जरासन्धके उक्त मित्रराजोंमें भी गोनर्दका नाम मिलता है। यथा—

"मद्रः कलिङ्गाधिपतिश्चेकितानः सबाह्लिकः।
काश्मीरराजो गोनर्दः करूषाधिपतिस्तथा॥
द्रुमः किम्पुरुषश्चैव पार्वतीयाश्च मानवाः।
पश्चिमाम्बरं पार्श्व चिप्रमारोढ़ुमारभन्॥" (हरिवंश, ९९ अ०)

हरिवंशमें इतना ही लिखा है, किन्तु बलरामके हाथ गोनर्दके मारे जानेकी कथा उसमें नहीं आयी।

* "ततः काश्मीरकान् वीरान् क्षत्रियान् क्षत्रियर्षभः।
व्यजयल्लोहितं चैव मण्डलैर्दशभिः सह॥ १७॥
ततस्त्रिगर्तान् कौन्तेयो दार्वान् कोकनदांस्तथा।
क्षत्रिया बहवो राजन्नुपावर्तन्त सर्वशः॥ १८॥
अभिसारीं ततो रम्यां विजिग्ये कुरुनन्दनः।
उरगावासिनं चैव रोचमानं रणेऽजयत्॥" १९॥
(महाभारत, सभापर्व २७ अ०)

* नीलमतपुराणमें भी इसी प्रकार लिखा है—
"दामोदरान्निवृत्तस्य सूनु राजाभवत् सुधीः॥......
गान्धारसिन्धुगान्धारविषये ऽभूत् स्वयम्वरः॥
तत्राहूताः समाजग्मु राजानो वीर्यशालिनः॥
तत्रागतं समाकर्ण्य वासुदेवं स्वयम्वरे।
जगाम माधवं योद्धुं बन्धुवर्गसमन्वितः॥
यादृशं वासुदेवस्य गर्वेण सहाभवत्।
ततः स वासुदेवेन युद्धे चक्रनिपातितः।
अन्तर्वत्नीं तस्य पत्नीं वासुदेवोऽभ्यषेचयत्।
भविष्यत्पुत्ररक्षार्थं तस्य देशस्य गौरवात्।
ततः सा सुषुवे पुत्रं बालं गोनन्दसंज्ञितम्।
बाल्यभावात् पाण्डवैर्नीतः कौरवैर्न च॥"

† वर्तमान नाम मुदरो या दधुर्भकगोपाल है।

‡ खागिपुर या खगेन्द्रपुरका वर्तमान नाम काकपुर है। वह वेहत

आषाढ़ी शुक्ल-तृतीयाके दिन परलोक गमन किया। उस समय लौकिक अब्दके ५८ वत्सर बीते थे।*

अवन्तिवर्माके मरनेसे उत्पलवंशीय दूसरे भी बहुतसे लोग राज्यलाभार्थ उत्सुक हुये। किन्तु राजाके पारिपार्श्विक सेनापति रत्नवर्धनने अवन्तिवर्माके पुत्र शङ्करवर्माको ही राजा बनाया था। मन्त्री कर्णपोविस ने उससे विद्वेषपरवश हो सुरवर्माके पुत्र सुखवर्माको यौवराज्य प्रदान किया। उसी कारण राजा और युवराज परस्पर शत्रु हो गये। शेषको नाना युद्ध होने पर शङ्करवर्मा ही जीते थे। फिर उनने युद्धयात्राको निकल दार्वाभिसार, गुर्जर और त्रिगर्त जय किया। अधिमध्य थक्कीयकराजने वश्यता मानी थी। उनने भोज राजके कवलसे थक्कीयराजा उबारकर उनको दे डाला पीछे उन्होंने दरद और तुरुष्कका मध्यवर्ती प्रायः समस्त भूभाग जीता था। उसके पीछे शङ्करवर्माने राजाका प्रत्यावर्तनकर पञ्चसत्र प्रदेशमें अपने नामपर शङ्कर-पुर† नगर और उसी नगरमें शङ्करगौरीश नामक शिवकी स्थापना की। उनने उदकपथके राजा श्रीलल्लीकी कन्या सुगन्धासे विवाह और उनके नामानुसार "सुगन्धेश" लिङ्ग स्थापन किया था। किसी नायकने उक्त मन्दिरद्वयके निकट एक सरस्वतीमन्दिर बनवा दिया। उसके पीछे हठात् दैवविडम्बनासे शङ्करवर्माकी मति बिगड़ गयी। उनने छल बल कौशलसे स्वराज्यमें अत्याचार आरम्भ किया था। देवस्वापहरण, करवृद्धि, राजकर्मचारीके वेतन ह्रास इत्यादिसे देश विचलित हो गया। उनने पञ्चल नामक एक नगर स्थापन कर मंत्री सुखराजके भागिनेयको द्वारपतिका पद दे वहां भेजा था। किन्तु विरायक नामक स्थानमें अपने ही दोषसे उनका मृत्यु हुवा। फिर शङ्करवर्माने विरायक नगर उत्सन्नकर उत्तरापथको युद्धयात्रा की और सिन्धुतीरवर्ती कई राज्य जीत अपने राज्यमें घुसे। वहां वह हठात् किसी व्याधके वाणसे आहत हो ७७ लौकिकाब्दकी फाल्गुनी कृष्ण-सप्तमीके दिन परलोकको पहुंचे। मंत्री सुखराज नाना कौशलसे राजाका मृतदेह ६ दिन पीछे काश्मीरके अन्तर्गत बलायक नामक स्थानपर ले गये। फिर वहां उनने उनका सत्कार किया था। रानी सुरेन्द्रवती, दूसरी रानी, वालावितु तथा जयसिंह नामक २ विश्वासी अनुचर और लाड एवं वज्रसार नामक २ भृत्योंने राजाकी चितामें सहमरण किया।

शङ्करवर्माके पीछे उनके बालकपुत्र गोपालवर्माने माता सुगन्धाके अधीन राजत्व पाया था। रानी सुगन्धा किन्तु उसी समय कोषाध्यक्ष प्रभाकर देवके साथ व्यभिचारमें लिप्त हुयीं। प्रभाकरने रानीसे कौशलपूर्वक राज्यके मध्य प्रधान प्रधान पद, धन, रत्न और नाना भूभागको ले लिया। उनने शाहीराज्यके मध्य भाण्डारपुर नामक नगर स्थापनके लिये वहांके शाहीको आदेश दिया था। किन्तु उनने उसको उपेक्षा किया। उसीसे प्रभाकरने उनको पदच्युत कर ललिय शाहीके पुत्र तोरमाणशाहीको* उक्त पद दे डाला और देशका नाम बदल कमलक रख दिया। उसके पीछे प्रभाकरके अत्याचारसे राज्य अस्थिर हुवा था। महाराज गोपालने सब भेद क्रमशः समझा और एक दिन जाकर देखा कि कोषागार शून्य रहा। प्रभाकरने शान्ति मिलनेके भयपर स्वीय बन्धु रामदेवके साहाय्य और कौशलसे गोपालवर्माको जीवन्त जला डाला। गोपालवर्माने २ वत्सर मात्र राजत्व किया था। रामदेव भी अपना कार्य प्रकाशित होनेपर भयसे आत्महत्या की।

गोपालवर्माके पीछे उनके सहोदर सङ्कट केवल १० राजत्वकर मृत्युके मुखमें पतित हुये।

सङ्कटवर्माके पीछे लोकानुरोधसे रानी सुगन्धाने राज्य ग्रहण किया था। कारण गोपालवर्माकी महिषी नन्दा उस समय गर्भवती रहीं। रानी सुगन्धाने पुत्रके

---

* अवन्तिवर्माने जिस समय राज्य लाभ किया उस समय लौकिकाब्द ३१ था अतः इनका राजत्वकाल २७ साल दो मास और कुछ दिन स्थिर होता है।

† शङ्करपुरका वर्तमान नाम पत्तन है। यह भी श्रीनगरसे ८ कोस पश्चिमोत्तरभागमें अवस्थित है। यहां आज भी शाखाच्छन्न शिल्पनैपुण्यविशिष्ट प्राचीन २ शिवमन्दिर देख पड़ते हैं।

* तोरमाणशाहीको शिलालिपि मिलती है। See Epigraphica Indica, 1890, p. 238.

खगीन्द्रके पीछे तत्पुत्र सुरेन्द्रने सिंहासनारोहण किया। सुरेन्द्र साहसी, निर्मलचरित्र और विनयी थे। उन्होंने दरद देशके निकट सौरक नामक नगर स्थापन और उसमें "नरेन्द्रभवन" नामक एक सुन्दर प्रासाद निर्माण किया। उनके कोई सन्तान न था।

महाराज सुरेन्द्रके परलोक जानेसे गोधर नामक और भिन्नवंशीय राजा बने। उन्होंने ब्राह्मणोंको हस्तिशाला नामक ग्राम दिया था।

गोधरके पीछे तत्पुत्र सुवर्ण राज्याभिषिक्त हुये। वह बड़े दानशील रहे। उन्होंने कराल नामक स्थानमें सुवर्णमणि नाला खनन कराया था।

सुवर्णके पीछे तत्पुत्र जनकने राज्य पाया। उन्होंने विहार और जालोर नामक अग्रहार स्थापन किया था।

जनकके पीछे उनके पुत्र शचीनर पर राज्यभार पड़ा। वह उन्नतमना और क्षमावान् नरपति थे। उन्होंने समाङ्गसा और शमनार नामसे दो अग्रहार स्थापन किये। वह निःसन्तान रहे।

शचीनरके पीछे उनके पितृव्यपुत्र शकुनिप्रपौत्र अशोक राजा हुये। वह बौद्धधर्मावलम्बी थे। उन्होंने शुष्कलेत्र और वितस्तात्र नामक स्थानमें अनेक स्तूप निर्माण किये। वितस्तात्रपुरके अन्तर्गत धर्मारण्य विहारमें अशोकने एक अति उच्च चैत्य बनाया था। उसकी चूड़ा किसीको देख न पड़ती थी। प्राचीन श्रीनगरी* अशोक कर्तृक स्थापित है। कहते हैं कि उनके समय प्राचीन श्रीनगरमें ८६ लाख मकान थे। उन्होंने श्रीविजयेशदेवके * मन्दिरकी चतुर्दिक्का ध्वंसप्राय वहिःप्राकार तोड़वा नूतन निर्माण करा दिया। फिर अशोकने श्रीविजयेश देवके मन्दिर-प्राङ्गणमें "अशोकेश्वर" नामक एक प्रासाद भी बनाया था। उनके वृद्ध वयसमें म्लेच्छों (शकों वा यौकों)-ने काश्मीर राज्य अधिकार किया। महाराज अशोकने शेष दशापर ईश्वरकी सेवामें अपना काल बिताया।

अशोकके पीछे तत्पुत्र जलौक राजा बने। वह बड़े शिवभक्त थे। उन्होंने पितृ-गृहीत बौद्धमत ग्रहण नहीं किया। जलौकने समुद्रतट पर्यन्त पीछे पड़ म्लेच्छ यवनोंको देशसे निकाला था। यवनोंका पराजय कर उन्होंने एक स्थल पर शिलावन्धन किया। वह स्थल "उज्जटडिम्ब" नामसे प्रसिद्ध है। जलौकने वर्णाश्रमाचारको पुनः चलाया था। उनके समय काश्मीर राज्य धनधान्यशाली हो गया। उन्होंने राजकार्यकी सुशृङ्खला स्थापन कर कोषाध्यक्ष, प्रधान सेनापति, दूत प्रभृति कर्मचारियोंका पद संस्थापन किया। जलौकने वारवल नामक आश्रम और उनकी पत्नी ईशानदेवीने तोरणद्वार तथा अन्यान्य स्थलमें मातृका मूर्तिकी प्रतिष्ठा कर बड़ा सुयश पाया था। महाराज जलौकसे सोदरतीर्थ भी प्रचारित हुवा। तीर्थयात्री वहां और अन्यान्य जगह जाते रहे। सोदरतीर्थकी नन्दीशमूर्तिकी भांति उन्होंने प्राचीन श्रीनगरमें ज्येष्ठरुद्र नामक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया और तत्सन्निहित स्थानका नाम सोदरतीर्थ रख लिया।† नन्दीक्षेत्रकी चतुर्दिक्का प्रस्तर-प्राचीर उन्होंने निर्माण कराया था। फिर जलौक द्वारा ही नन्दीक्षेत्रमें शिवभूतेश लिङ्ग स्थापित हुवा। भूतेश मन्दिरकी देवसेवाके लिये उन्होंने यथेष्ट अर्थ दिया था। कहा जाता है कि उन्होंने प्रथम एक बौद्धमठ नष्ट किया था। उसके पीछे जलौकने

अशोक नामतीर्थ तख्त-सुलेमानसे ॥ कोस दक्षिण अवस्थित है। वहां आज भी प्राचीन देवमन्दिर और पूर्व ध्वंसावशेष दृष्ट होता है।

शुष्कक्षेत्र (राजतरङ्गिणी १।१८०)—विह्लणके विक्रमाङ्कचरितमें शुष्कक्षेत्र 'खोनमुख' नामसे उक्त हुआ है। (विक्रमाङ्कचरित १८।७१) उसका वर्तमान नाम 'खुनमो' है। खुनमुह श्रीनगरसे ९ कोस उत्तर-पूर्व अवस्थित है। उसके निकट बर्फ ढका पर्वत और भुवनेश्वरीकुण्ड विद्यमान है।

खुनमोके निकट जिवन नामक एक क्षुद्र ग्राम है। विह्लणने उसीका नाम 'जयवन' लिखा है।

* श्रीनगरी—वर्तमान श्रीनगरसे भिन्न थी। उसका दूसरा नाम पुराणाधिष्ठान था। वर्तमान पाण्ड्रेथन नामक ग्राममें ही प्राचीन श्रीनगरी बसी थी, पूर्वको तख्त नगरी, तख्त-सुलेमानसे पान्थाचौक अर्थात् पद्मकूट पर्यन्त विस्तृत था।

* जिस स्थानपर विजयेशमन्दिर था, आजकल उसका नाम बिजबारा है। वह वेहत नदीके वामतीर वर्तमान राजधानीसे ७॥ कोस दक्षिण-पूर्व अवस्थित है।

† आज भी तख्त सुलेमान पहाड़में ज्येष्ठरुद्र नामक शिवलिङ्ग और उससे कुछ दूर अशोक प्रतिष्ठित अशोकेश्वर मन्दिरका ध्वंसावशेष देख पड़ता है

नामानुसार गोपालपुर नामक नगर, गोपालमठ नामक मठ और गोपालकेशव देवताको स्थापन किया। फिर महिषी नन्दाके एक सन्तान हुआ। किन्तु भूमिष्ठ होते ही वह मर गया। सुगन्धाने एकाङ्गोंकी सहायतासे दो वर्ष तक राज्य किया था। एकाङ्गजातीय सेनापति और तन्त्री जातीय मन्त्री रहे। सुगन्धाने मन कष्ट पा कर किसी उपयुक्त व्यक्तिके हाथ राज्यभार डालनेके लिये मंत्रियोंको पात्रनिर्वाचनार्थ आदेश दिया था। शेषमें अवन्तिवर्माका वंश लोप होनेसे गर्भागर्भजात सुखवर्माके पुत्र निर्जितवर्माको रानी सुगन्धाने मनोनीत किया। निर्जितवर्मा दिनको सोते और रात को जागते थे। तंत्रियोंने इसीसे उनका पक्ष न लिया। कोषाध्यक्ष प्रभाकरके दुर्व्यवहारसे जो राजकर्मचारी विरक्त एवं पीड़ित रहे, उनने उस समय सुयोग देख रानी सुगन्धाको राज्यसे निकाल बाहर किया। वह हुष्कपुरमें जा कर रहने लगीं। किन्तु एकाङ्ग अल्प दिनके पीछे ही उन्हें फिर राज्य देनेके लिये बुलाने गये थे। काश्मीरीय ८८ लौकिक अब्दको उक्त घटना हुयी। तंत्रियोंने सुगन्धाके आगमनकी वार्ता सुन निर्जितवर्माके दशम वर्षीय पुत्र पार्थको राजा बनानेके अभिप्रायसे पथिमध्य रानी सुगन्धाके सैन्यदलसे लड़ किसी पुरातन जनशून्य विहारमें ९० लौकिकाब्दको रानीको मार डाला। फिर पार्थ राजा हुये। अलस यथेच्छाचारी पिता उनके रक्षक बने थे। तंत्रियोंके मध्य भी क्रमशः आत्मविच्छेद पड़ गया। अपरापर अधीन राजा स्वाधीन होने लगे। मेरु नामक मंत्रीके सन्तानोंने ज्येष्ठ शङ्करवर्धनके अधीन रह सुगन्धादित्यसे बन्धुता जोड़ भीतर ही भीतर राज्यके कोषागारको लूटा था। उनहीने श्रीमेरुवर्धन नामक विष्णुकी मूर्तिका स्थापन किया।

उसके पीछे ८९ लौकिक अब्दको राज्यमें भीषण दुर्भिक्ष पड़ा था। एक तो अराजक राज्य और दूसरे दुर्भिक्ष। सुतरां राज्य सम्पूर्ण विशृंखल हो गया। तंत्री राज्यके मध्य सबके ऊपर रहे। वह निर्जितवर्मा और पार्थ उभयके मध्य अपनी सुविधाके अनुसार कभी इसको और कभी उसको सिंहासन पर बैठा स्वयं राजत्व करने लगे। सुगन्धादित्य निर्जितवर्माको पत्नियोंमें रासलीला खेलते थे। वह सभी अपने अपने पुत्रको राजा बनानेके लिये सुगन्धादित्यको प्रचुर धनरत्न देने और अपना अपना देह बेचने लगीं। मंत्री मेरुके पुत्रोंने राज्यमें प्राधान्य लाभकी आशासे भगिनी मृगावतीके साथ निर्जितवर्माका विवाह कर दिया। किन्तु मृगावती भी अन्तःपुरमें पहुंच सपत्नियोंका पथानुसरण कर सुगन्धादित्यकी अधीन बन गयीं। ९७ लौकिक अब्दको निर्जितवर्माका मृत्यु हुवा। एकाङ्गोंने उस समय बल प्रकाश कर निर्जितवर्माकी बप्पटदेवीनाम्नी पत्नीके गर्भजात चक्रवर्माको राजा बना दिया। बप्पट राजाका रक्षणावेक्षण करने लगे। १० वर्ष इसी प्रकार बीते थे। ८म लौकिक अब्दमें मंत्रियोंने चक्रवर्माको हटा मृगावतीके गर्भजात शूरवर्माको राज्य सौंपा। किन्तु उनके मातुल उनसे अनुकूल न रहे। उनने अन्यान्य तंत्रियोंसे मिल और पार्थसे बहु अर्थ उत्कोच ले भागिनेयको राजच्युत कर पार्थको राजा बनाया। उस समय पार्थ शाम्बवती नाम्नी किसी वेश्याकी प्रणयिनी होनेसे सर्वदा अपने निकट रखते थे। उन्हीं शाम्बवतीने शाम्बेश्वरी नामक देवीमूर्तिको प्रतिष्ठा किया। ११श लौकिकाब्दको चक्रवर्माने उस समयकी रीतिके अनुसार तंत्रियोंको उत्कोच (घूंस, रिशवत) दे राज्य पाया था। किन्तु निर्बुद्धिता वश उनने मेरुवर्माके पुत्रोंको अधिक क्षमता दे डाली। उसीसे उन्होंने अपने २ नाम पर नाना स्थान अधिकार किये। उनके राजत्वमें मेरुवर्माके ज्येष्ठपुत्र शङ्करवर्धन प्रधान प्राड्विवाक् और शम्भुवर्धन प्रधान मंत्री थे। उसी वर्ष तन्त्रियोंको प्रतिश्रुत उत्कोचका रुपया चुका न सकने पर चक्रवर्माने भयसे मड़र नामक स्थानको पलायन किया। उस समय शङ्करवर्धनने राजा होनेकी आशासे शम्भुवर्धनको प्रयत्नादि करनेके लिये तंत्रियोंके निकट भेजा था। शम्भुने जाकर ज्येष्ठ भ्राताकी बात न कह अपने ही लिये प्रबन्ध कर लिया। इधर चक्रवर्माने श्रीटक्क नामक स्थानवासी डामरजातीय सर्दार संग्रामसे मिल उसे सहायता करनेके लिये प्रतिश्रुत कराया था। संग्रामने

एक बौद्धविहार निर्माण करा उसमें कृत्यादेवीकी मूर्तिको प्रतिष्ठा किया और विहारका "कृत्याश्रम" नाम रख दिया। चीरमोचनतीर्थमें महाराज जलौक और महिषी ईशानदेवीका मृत्यु हुवा।

महाराज जलौकके पश्चात् दामोदर (२य) राजा हुये। समझना कठिन है—वह अशोक वा गोनर्दवंशसम्भूत थे या नहीं। दामोदर यथेष्ट अर्थशाली और शिवभक्तिपरायण थे। उन्होंने दामोदरसूद नामक पुर स्थापन कर उसमें यक्षगण द्वारा गुदसेतु नामक सेतु निर्माण कराया था। वितस्ताके जलप्लावनसे देशरक्षाके लिये दामोदरने (यक्षोंकी सहायतासे) पत्थरका बांध बंधाया। एक दिन वह श्राद्धके उपलक्ष स्नान करने जाते थे। उसी समय कई क्षुधार्त ब्राह्मणोंने मार्गमें उनसे अन्न मांगा। किन्तु दामोदर (२ य) ने उनको प्रत्याख्यान किया था। उससे ब्राह्मणोंने उन्हें सर्प होनेको शाप दिया। किम्वदन्ती है कि गुदसेतुके निकटस्थ जलाशयमें आज भी एक सर्प इतस्ततः घूमता फिरता है।

फिर काश्मीरके सिंहासन पर तीन तुरुष्क (तुर्क) नृपति बैठे थे। नहीं मालूम पड़ता उन्होंने कैसे राज्य लाभ किया। उनका नाम हुष्क (हुविष्क), जुष्क और कनिष्क थे। कनिष्क देखो। तीनोंने अपने अपने नाम पर तीन स्वतन्त्र नगर स्थापित किये—हुष्कपुर, जुष्कपुर और कनिष्कपुर।* जुष्कने जयस्वामीपुर नामक दूसरा नगर भी स्थापन किया था। शुष्कलेत्र नामक स्थानमें उन्होंने अनेक मठ निर्माण कराये। उनके समय बौद्धधर्म अतिशय विस्तृत था। राजतरङ्गिणीके मतमें बुद्ध शाक्यसिंहके समयसे उस काल पर्यन्त १५० वत्सर अतीत हुये थे। बोधिसत्व नागार्जुन उस समय ६ दिन काश्मीरमें उपस्थित रहे।

उसके पीछे अभिमन्युने राज्य पाया। राजतरङ्गिणीमें इस बातका कुछ भी उल्लेख नहीं—वह कौन थे या कैसे राजा हुये। अभिमन्यु अज्ञातशत्रु नृपति थे। कण्ठकोत्स (कण्टकोत्स) नामक ग्राम उन्होंने ब्राह्मणोंको दान किया। अभिमन्युने एक शिवमन्दिर प्रतिष्ठा कर उसके गात्र पर अपना नाम खुदा दिया था। उन्होंने स्वनामसे अभिमन्युपुर स्थापन किया। उन्होंके समय चन्द्राचार्य प्रमुख वैयाकरणिकने प्रतिपत्ति पायी थी। उन्होंने अभिमन्यु के आदेशानुसार उनके समयका इतिहास लिखा। उसी समय नागार्जुनके अधान बौद्धोंने प्रबल हो शिवोपासना और नीलपुराणोक्त नागनियमादि बिगाड़ अपना मत प्रचार किया था। नाग लोग उससे विद्रोही हो काश्मीर ध्वंस करनेके उद्देश पर्वतसे असंख्य तुषारशिला डालने लगे और अनेक अस्त्र से बौद्धोंको मारने पर नियुक्त हुये। महाराज अभिमन्यु उसके निवारणका कोई उपाय न कर सकने पर "दार्वाभिसार" नामक स्थानको चले गये। शैवको कश्यपवंशीय चन्द्रदेव नामक एक ब्राह्मणने दैवसहायतासे नाग और यक्ष विद्रोह मिटाया। महाराज अभिमन्युने ही पतञ्जलिका महाभाष्य प्रथम काश्मीरमें प्रचार किया था।

उसके पीछे गोनन्द (३य) सिंहासन पर बैठे। उल्लेख नहीं—वह कौन थे या किस प्रकार राज्याधिकारी हुये। उन्होंने नीलपुराणानुसार नियमादि स्थापन और दुष्ट बौद्धोंके अत्याचार निवारण किये। गोनन्द (३ य)-ने राज्यमें सुखशान्ति और प्रजाके धनधान्य की वृद्धि की थी। राजतरङ्गिणीके मतसे उन्होंने ३५ वर्ष राजत्व किया।

उसके पीछे तत्पुत्र विभीषण (१म) ५३ वर्ष ६ मास काल राजा रहे। फिर इन्द्रजित् राजा हुये और उनके बाद उनके पुत्र रावणने राजा हो वटेश्वर शिवलिङ्ग स्थापन किया था। वह शिवलिङ्ग कल्हण पण्डितके समय पर्यन्त विद्यमान था। उस लिङ्गके गात्रमें बिन्दु तथा सूत्रके समान चिह्न बने थे। महाराज वटेश्वर देवके उद्देश अपना समस्त राज्य लगा दिया था।

* हुष्कपुर, जुष्कपुर और कनिष्कपुरका वर्तमान नाम यथाक्रम 'उष्कर' 'जुकर' और 'कम्पुर' है। उष्कर—चीनपरिव्राजकोक्त 'हु-ष्कि-किआ-लो' है। यह वर्तमान बरामूलके पश्चात् वितस्ताके दक्षिणतीर अवस्थित है। काश्मीरी पण्डितोंका विश्वास है कि पूर्वकाल हुष्कपुर और बराहमूल एकत्र एक ही नगर था। हुष्कपुरमें कनिष्कावासीय स्तूपाकार जिनेन्द्रबुद्धि रहते थे। जुष्कपुर वा जुकर वर्तमान राजधानीसे २ कोस उत्तर अवस्थित है।

यशोधर उनमें जा मिले। एकमात्र मंत्री नरवाहन महिषी दिद्दाके पक्षमें रहे। महिषीने शेषको ललितादित्यपुरके ब्राह्मणोंके साहाय्यसे सन्धिकर और यशोधरका कम्पन पदंश टे आशुविपद्से मुक्ति पायी अवशेषको महिमा अभिचारक्रियासे मारे गये। उसके पीछे कम्पनराज यशोधरसे डाहोराज एकाङ्गका युद्ध हुआ। रक्कादिके परामर्शसे दिद्दाने दोष विशेषणपूर्वक यशोधरको कम्पनसे निकालना चाहा था। हरामत्त, शुभधर प्रभृतिने पूर्व सन्धिको कथा स्मरण कर ससैन्य शूरमठके निकट राजसैन्यपर आक्रमण किया। सिंहद्वारपर एकाङ्ग सैन्यदल दुर्भेद्य प्राचीरकी भांति खड़ा हो लड़ने लगा, किन्तु पराजित होते होते राजकुलभट्टके ससैन्य युद्धमें पहुंच योग देनेसे राजसैन्य जीत गया। युद्धमें हिम्मक मरे और शुभधर, मुकुल, उदयगुप्त तथा यशोधर बन्दी हुये। हरामत्तने गयायात्री काश्मीरियोंसे गयाली जो कर लेते थे उसे निवारण किया। रानीने उनको गलेसे पत्थर बांध वितस्तामें डुबा दिया। अवशेषको वह मंत्री नरवाहनके परामर्शसे निरापद राजशासन करने लगी। नरवाहन राजानक पद पर अधिष्ठित हुये। रानी नरवाहनको सम्पूर्ण हिताकाङ्क्षी समझ सर्वापेक्षा आदर करती थीं। किसी धूर्त जीवाध्यक्षने उसे सह न सकने पर कौशलसे उभयके मध्य मनोमालिन्य बढ़ा दिया। क्रमशः दिन दिन महिषी नरवाहनको प्राकाश्य रूपसे अपमान और घृणा करने लगीं। नरवाहनने शेषको घबड़ा कर आत्महत्या कर डाली। उसी समयसे रानीकी निठुरता बढ़ी थी। वह डामर भरदारको सपरिवार मार डालने पर प्रवृत्त हुयीं। मंत्री फाल्गुनको फिर कार्यभार मिला था। इधर कार्तिक मासकी शुक्ल तृतीयाको (४८ लौकिकाब्दे) महाराज अभिमन्युने यक्ष्मारोगसे परलोक गमन किया।

उसके पीछे दिद्दाके अधीन उनके शिशु पौत्र (अभिमन्युके पुत्र) नन्दिगुप्त राजा हुये। इसबार पुत्रशोकसे रानी चेती थीं। वह फिर प्रजाके हितकर कार्यमें रत हुयीं। उन्होंने अभिमन्युपुर नगर, अभिमन्युस्वामी देवता, अपने नामसे दिद्दापुर नगर और दिद्दास्वामी देवताको स्थापन किया था। उसके बाद दिद्दाने स्वामीकी स्वर्गकामनासे कङ्कणपुर नगर और "दिद्दास्वामी" नामक श्वेतप्रस्तरकी विष्णुमूर्तिकी प्रतिष्ठा की। उन्होंने लोहरवासियों और काश्मीरियोंके सुविधार्थ एक पान्थनिवास और विदेशागत एक ब्राह्मणावास एवं सिंहस्वामी नामक देवताको स्थापन किया। वितस्ता और सिन्धुके सङ्गमस्थल पर दिद्दाने दूसरे भी कई देवता स्थापन किये थे। उन्होंने सब मिलाकर ६४ देवमूर्ति स्थापन की थीं। उनकी वल्गा नाम्नी वैवधिकजातीय किसी दासीने वल्गामठ नामक मठ स्थापन किया। एक वर्ष पीछे रानी दिद्दाका शोक दूर हुआ। वह फिर कुकर्ममें लग गयीं। इस बार उनने अग्रहायण मास (४९ लौकिकाब्द) अभिचारक्रियाके साहाय्यसे अपने शिशुपौत्र नन्दिगुप्तको मार उसके सहोदर त्रिभुवनगुप्तको राजा बनाया था। किन्तु २ वर्ष पीछे अग्रहायण मास को दिद्दाने उनको भी मार डाला। त्रिभुवनगुप्तके पीछे उनके दूसरे सहोदर भीमगुप्त राजा हुये। किन्तु वह भी रानीसे पितामहीके हाथ (५६ लौकिकाब्दको) मारे गये। उसी बीच मंत्रिवर फाल्गुन भी विनष्ट हुये।

भीमगुप्तके बाद दिद्दा प्रकाश्यरूपसे सिंहासन पर बैठ गयीं। उनकी कुप्रवृत्तिके साधनमें सम्मत न होनेसे अनेक व्यक्ति विनष्ट हुये। शेषको उनके प्रिय उपपति तुङ्ग मंत्री बने थे। तुङ्ग स्वीय भ्रातृपक्षसे मिल राज्य हरणकी चेष्टामें घूमने लगे। रानी दिद्दाके भ्रातुष्पुत्र विग्रहराज तुङ्गको मार डालना चाहते थे। दिद्दाने यह बात समझ षड्यन्त्रसे विग्रहराजको देशसे निकाला, कर्दमराजको मारा और तुङ्गके इच्छानुसार रक्कके पुत्र सुलक्षणादि मंत्रियोंको भी राजसभासे दूरीभूत किया। मंत्री फाल्गुनके मरनेपर राजपुरीराज विद्रोही हो गये। तुङ्गने उनको भी जीत 'राजपुरीराज' और डामरराज्य तथा कम्पन जयकर 'कम्पनराज' उपाधि ग्रहण किया था। उसके बाद दिद्दाने स्वीय भ्राता उदयराजके पुत्र संग्रामराजको युवराज बनाया। शेषको (८९ अब्द) भाद्रकी शुक्लाष्टमीके दिन दिद्दा मर गयीं।

इन्द्रजित् और रावण उभयने ३५ वर्ष ६ मास राजत्व किया। रावणके पीछे तत्पुत्र (२४) विभीषणने ३५ वर्ष ६ मास राज्य चलाया था।

विभीषण (२य) के पीछे उनके पुत्र नर या किन्नर राजा हुये। यह बड़े अविवेचक राजा थे। विभीषण प्रजाके लिये जो करते, उसीसे उनके काम बिगड़ते थे। कोई बौद्ध उनकी महिषीको भगा ले गया। महाराज किन्नरने उसी क्रोधमें सहस्र सहस्र बौद्ध मठ ध्वंस किये और वह सकल स्थान ब्राह्मणोंको दे दिये। उन्होंने वितस्तातीर किन्नरपुर नामक एक नगर स्थापन किया था। महा शोभा और धनधान्यसे परिपूर्ण होनेके कारण अनेक लोग उस नूतन नगरमें जा कर रहने लगे।

किन्नरराजके पुत्र महायशा सिद्ध थे। उन्होंने ६० वर्ष राजत्व किया। फिर उनके पुत्र उत्पलाक्ष राजा हुये। उत्पलाक्षके पीछे उनके पुत्र हिरण्याक्ष सिंहासन पर बैठे। उन्होंने अपने नाम पर "हिरण्यपुर" नगर स्थापित किया था। फिर यथाक्रम हिरण्यकुल और उनके पुत्र वसुकुलने काश्मीरका आधिपत्य पाया। वसुकुलके पुत्र मिहिरकुल रहे वह अतिशय निर्दय और प्रजापीड़क थे। उन्होंने अपने नाम पर होला नामक स्थानपर 'मिहिरपुर' नगर पत्तन किया। सिवा इसके मिहिरकुलने ब्राह्मणोंको सहस्र ग्राम अग्रोत्तर दे श्रीनगरीमें मिहिरेश्वर नामक मन्दिर बनाया और चन्द्रकुल्या नदीकी गतिको भी घुमाया था। वह असभ्य दारद और भोट (तिब्बतीय) लोगों पर बड़ा ही अनुग्रह रखते थे। मिहिरकुलके पीछे उनके पुत्र बकने सिंहासन लाभ किया। उनके द्वारा लवणोत्स- नगर स्थापित हुवा। उन्होंने बकेश मन्दिर भी प्रतिष्ठा किया था। बकके पीछे क्रमान्वयमें क्षितिनन्द, वसुनन्द, नर और अक्ष राजा हुये। अक्षने विसुग्राम और अक्षवाल नामक विहार (?) बनवाया था। अक्षके पीछे उनके पुत्र गोपादित्यको सिंहासन मिला। उन्होंने सखोल, खागि, काहाडिग्राम, स्कन्दपुर, शमाङ्ग और आड़िग्राम ब्राह्मणोंको दिया था। फिर गोपादित्यने आर्यदेशसे ब्राह्मण बुला उनको गोपाद्रिस्थ गोग्राम दान किया। उन्होंने ज्येष्ठेश्वर लिङ्गकी प्रतिष्ठा भी की थी।* उनके सुशासनमें काश्मीरमें मानो सत्ययुगका आविर्भाव हुवा।

गोपादित्यके पीछे उनके पुत्र गोकर्णने राज्य पाया। उन्होंने गोकर्णेश्वर मन्दिर प्रतिष्ठा किया था। गोकर्णके पीछे उनके पुत्र नरेन्द्रादित्य (अपर नाम खिङ्खिल)-को पितृराज्य प्राप्त हुवा। उन्होंने कई मन्दिरों, भूतेश्वर नामक शिवलिङ्ग और अचयिणी देवीमूर्तिको स्थापन किया। उनके गुरु उग्रने उग्रेश नामक शिवमन्दिर और मातृचक्रको प्रतिष्ठा की थी। नरेन्द्रादित्यके पीछे उनके पुत्र युधिष्ठिर राजा हुये। उस समय मंत्रियोंने विद्रोही हो युधिष्ठिरको अगलिका दुर्गमें कैद कर रखा था। युधिष्ठिरके कैद होने पर मन्त्रियोंने प्रतापादित्य नामक शकारि-विक्रमादित्यके ज्ञातिको अभिषिक्त किया। उनके मरने पर जलौक और जलौकके पीछे तुञ्जीनने पितृसिंहासन पाया। तुञ्जीन और उनकी प्रियतमा महिषी द्वारा अनेक सत्कार्य हुये। उभयने तुङ्गेश्वर नामक शिवमन्दिर और कतिक नगर स्थापन किया था। रानी वाक्पुष्टाने कतीमुष और रामुष नामक दो अग्रहार दानमें दिये और एक बड़ा भारी अन्नसत्र खुलवाया। उस समय काश्मीरमें भयानक दुर्भिक्ष पड़ गया। दुर्भिक्षपीड़ित मनुष्य अन्नसत्रमें आश्रय और आहार पाते थे। अन्नसत्रमें ही रानी वाक्पुष्टा पतिके साथ मर गयीं। उसी सती-मन्दिरमें कल्हणके समय तक साधारणको अन्नदान मिलता रहा। तुञ्जीनके राजत्वकाल चन्द्रक नामक नाटककार विद्यमान थे।

उनके पीछे विजय नामक अन्यवंशीय एक राजा हुये। उन्होंने विजयेश्वर नामक शिवमन्दिरको चारो ओर नगर स्थापन किया था।

विजयके पीछे उनके पुत्र जयेन्द्र नरपति बने। उनके सन्धिमति नामक एक महागेय मन्त्री थे। ऐश्वर्य

* गोपाद्रिका वर्तमान नाम 'तख्त' है। तख्तके पास गोपकार और ज्येष्ठेश्वर नामक स्थान है। यह दोनों स्थान कहलाते 'गाप' और 'ज्येठ्यर' समझते हैं।

इसप्रकार कण्टकवंशकी दश व्यक्तियोंने राजा बन ६४ वर्ष और २३ दिन राज्य किया।

संग्रामराज क्षमापतिके नामसे सिंहासन पर बैठे थे। वह गम्भीर और प्रतापशाली राजा रहे। उनके समय भी तुङ्ग महाप्रतापशाली थे। सुतरां राज्यके अन्यान्य प्रधान प्रधान मंत्री और कर्मचारी तुङ्गका प्रताप खर्व करनेके लिये विद्रोही हो गये, किन्तु विद्रोहियोंमें अनेक व्यक्ति विनष्ट हुवे। तुङ्ग शैवकी भद्रेश्वर नामक किसी कायस्थका साहाय्य ले विपद्में पड़े थे। उसी समय तुरुष्कराज हमीरने साही राज्य आक्रमण किया। त्रिलोचनपाल साहीने काश्मीरराजसे साहाय्य मांगा था। तुङ्ग ससैन्य साही राज्य जा पहुंचे। युद्धमें विपक्ष पराजित हो भागा था। किन्तु तुङ्गने त्रिलोचनके कथनानुसार पर्वतपार्श्वमें शिविर स्थापन न किया। उसीसे नूतन तुरुष्कसैन्यने आ पर्वतपार्श्वसे काश्मीरी सैन्यको छिन्न भिन्न कर दिया। तुङ्ग भाग कर राजाको लौटे थे। त्रिलोचनने हस्तिक नामक स्थानमें आश्रय लिया। साही राज्य चिरदिनके लिये हमीरके अधिकार में चला गया। तुङ्गके पुत्र कन्दर्पसिंह गर्वित और विलासी रहे। उसी समय विग्रहराज गोपनीय पत्र द्वारा तुङ्गवधके लिये भ्राताको पुनः २ अनुरोध करने लगे। राजा क्षमापति किन्तु हठात् वह कार्य कर न सके। अवशेषमें दबाव पड़नेसे किसी दिन मन्त्रणा का परामर्श करनेके छलसे उन्होंने मन्त्रगृहमें तुङ्गको बुलाया था। गृहमें प्रवेश करते ही शर्करक और अन्यान्य अनुचर तुङ्गपर टूट पड़े। तुङ्गके विनष्ट होने पर उनके पुत्र भी पकड़ कर मार डाले गये। उक्त घटनाके पीछे तुङ्गके भ्राता नाग कम्पनराज बने थे। कन्दर्पकी स्त्री नागके साथ भ्रष्टाचारमें रत हुयीं। विचित्रसिंह और भावसिंह नामक कंदर्पके दो पुत्रोंने स्व स्व माताके साथ राजपुरीको पलायन किया था। तुङ्गके मरनेके पीछे दरद, डामर और दिविर विद्रोही हो गये। क्षमापतिने स्वयं कोई प्रासाद वा मन्दिरादि बनाया न था। उनकी कन्या लोठिकाने एक अपने और एक माता तिलोत्तमाके नामसे मन्दिर प्रतिष्ठा किया। भद्रेश्वरने भी एक मठ बनाया था। श्रीलेखा नाम्नी महिषी जयाकर नामक (सुगन्धिसिंहके औरस और जयलक्ष्मीके गर्भसे उत्पन्न) तुङ्गके किसी भ्रातुष्पुत्रके साथ भ्रष्टा हो गयीं। ४ लौकिकाब्दको १ लो आषाढ़को राजा क्षमापतिने परलोक गमन किया।

क्षमापतिके पीछे उनके पुत्र श्रीलेखाके गर्भजात हरिराज राजा हुवे। वह अति सुशील प्रजारञ्जक राजा थे। हरिराज २२ दिन मात्र राजत्व कर शुक्ल-अष्टमीको कालग्रासमें पड़े। कहते हैं कि श्रीलेखा पुत्रके निकट स्वीय भ्रष्टाचारके लिये तिरस्कृत हुयीं थी। उसीसे अभिचारद्वारा उन्होंने उनको मार डाला।

उसके पीछे श्रीलेखाने स्वयं राजत्व करनेको अभिषेकका आयोजन लगाया था। उसी समय हरिराजके धात्रीपुत्र सागरने एकाङ्गोंसे मिल हरिराजके कनिष्ठ अनन्तदेवको राजा बना दिया। वृद्ध विग्रहराज प्रिय भ्रातुष्पुत्रका राज्य हरण करनेके लिये लोहरसे ससैन्य ले काश्मीरमें प्रवेश कर लोठिकामन्दिरमें रहने लगे। श्रीलेखाने संवाद पानेपर एक दल सैन्य भेज मन्दिर विद्रोहियोंका विनाश किया था। उसके पीछे वयःप्राप्त होनेसे अनन्तदेवके साहीराजपुत्र प्रियपात्र बन गये। ज्येष्ठ रुद्रपाल दस्युदल तथा कायस्थगणकी प्रतिपालन करते और राजाको आपातसुखकर मन्त्रणा देते थे। उन्होंने जालन्धरराज इन्दुचन्द्रकी अतिरूपवती ज्येष्ठा कन्या आशामतीके साथ अपना और उसकी कनिष्ठा सूर्यमतीके साथ अनन्तदेवका विवाह किया। श्रीलेखाने उसी समय अपने स्वामी और पुत्र (हरिराज) की स्वर्गकामनासे दो मन्दिर बनवाये थे। कम्पनराज त्रिभुवन डामरोंसे मिल विद्रोही हुवे। फिर उन्होंने काश्मीर आक्रमण किया। एकाङ्गोंके साहाय्यसे अनन्तदेवने उक्त विद्रोह दबाया और त्रिभुवनको भगाया था। उसके पीछे अनन्तदेवने स्वीय प्रियपात्र ब्रह्मराजको कोषाध्यक्ष बनाया। किन्तु उन्होंने रुद्रपालको प्रतिपत्ति देख हिंसासे पदत्यागपूर्वक पांच म्लेच्छराज, दरद और डामर लोगोंसे मिल दरदराजके सेनापतित्वमें काश्मीर आक्रमण किया था। रुद्रपाल और अनन्तदेव एकाङ्ग सैन्य ले चीरपुष्प

और विद्याबुद्धि दर्शनसे भीत हो काश्मीरराजने उन्हें कैद किया। मन्त्री कैद किये जाते भी दुःखी न हुये वह सर्वदा शिवके प्रेममें आनन्दित रहते थे। १० वर्ष इसी प्रकार बीत गये। अपुत्रक अवस्थामें जयेन्द्रका मृत्यु हुआ।

कुछदिन अराजकता रहने पीछे सन्धिमतिने आर्य राज नामग्रहण पूर्वक काश्मीरवासियोंके यत्नसे सिंहासन पाया था। उन्होंने अनेक सत्कार्य किये प्रवाद है कि वह प्रत्यह सहस्र शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा करते थे। ऐतिहासिक कह्लणके समय तक उक्त सकल पाषाणमय शिवलिङ्ग विद्यमान रहे। (राजतरङ्गिणी २।१३१) राजा सन्धिमतिने शिवलिङ्गकी पूजाके व्ययनिर्वाहार्थ अनेक ग्राम दान किये थे। उन्होंने अपने नामपर सन्धीश्वर*, गुरुके नामपर ईशेश्वर और थेड़ा एवं भीमा† नामसे दूसरे भी कई सुवृहत् देवालयोंकी प्रतिष्ठा की। उनके समय समस्त काश्मीर राज्य देवमन्दिर और प्रासादमण्डित हो गया। उन्होंने कुछदिन राज्यकर इष्टदेवकी सेवामें समय अतिवाहित करनेके लिये राजसिंहासन छोड़ दिया।

इधर राजा युधिष्ठिरके प्रपौत्रने गान्धारराज गोपादित्यका आश्रय लिया था। उनके मेघवाहन नामक एक पुत्र हुवा। उसने प्राग्ज्योतिषकी राजकन्याको स्वयम्बरमें पाया था। कामरूपकी राजकुमारीको लेकर लौटनेपर काश्मीरके मन्त्रियोंने उन्हें आह्वान किया। मन्त्रियोंके यत्नसे युधिष्ठिरका वंश फिर काश्मीरके राजासन पर अभिषिक्त हुवा। मेघवाहनने अभिषेक-दिवससे प्राणिहिंसारोध करनेको आदेश निकाला था। उन्होंने अपने नामपर मेघमठ, मुष्टग्राम और मेघवाहन नामक अग्रहार स्थापन किया। उनकी रानियोंने अपने अपने नामपर भिक्षुकोंके रहनेको 'विहार' बनाये थे। उक्त विहारोंके नाम रहे—अमृतभवन, खादना, मग्ना और (यूकदेवी-प्रतिष्ठित) नड़वन विहार। रानी अमृतप्रभाके पिताके गुरुने लुन्‌धारा जो नामक नगरसे गमन कर लोस्तनपा* नामक एक स्वतन्त्र स्तूप बनाया था। मेघवाहनके मरनेपर उनके पुत्र श्रेष्ठसेन (अपर नाम प्रवरसेन १म) राजा हुये। पितामाताके बहुत कुछ बौद्धमतावलम्बी होते भी उन्होंने अपने नामपर प्रवरेश्वर नामक देवमन्दिर प्रतिष्ठाकर देवसेवाके लिये त्रिगर्त राज्य दान किया था।

श्रेष्ठसेनके मरनेपर उनके पुत्र हिरण्यने, कनिष्ठ सहोदर तोरमाणके साहाय्यसे राज्य चलाया। पहले काश्मीरमें जो मुद्रा प्रचलित रही, तोरमाणने उसके बदले (किसीका अनिष्ट न कर) स्वनामाङ्कित स्वर्णमुद्रा (अशरफी) प्रचार की। उक्त कार्यसे क्रुद्ध हो हिरण्यने उन्हें सस्त्रीक कारारुद्ध किया था। कारागारमें तोरमाणकी पत्नी गर्भवती हुयी और दशमास पूर्ण होने पर किसी उपायसे भाग गयी। उन्होंने एक कुम्भकारके गृहमें आश्रय लिया और वहां एक पुत्रको प्रसव किया। शेषको वह पुत्र बड़ा हुवा। उसके मातुल (इक्ष्वाकुवंशीय) जयेन्द्र किसी प्रकार सन्धान पा भगिनी और भागिनेयको स्वराज्यमें ले गये। हिरण्यकुल ३२ वर्ष २ मास राजत्व कर निःसन्तान अवस्था पर कालग्रासमें पतित हुये।

उस समय उज्जयिनीमें हर्षविक्रमादित्य राजत्व करते थे। राजतरङ्गिणीके मतसे उन्होंने शकों और म्लेच्छोंको हराया रहा। उनकी सभामें कविवर मातृगुप्त रहते थे। हर्षविक्रमने प्रथमतः कवि मातृगुप्तका कोई सम्मान नहीं किया। मातृगुप्त शयन स्वप्न जागरणमें अनुचरकी भांति राजाके अनुगामी रहे। उनकी रात्रिको निद्रित होनेपर रक्षिवर्गकी भांति कवि मातृगुप्त भी शयनागारके द्वारपर जगा करते थे। यथाकाल राजाने समझा कि वैसे असामान्य प्रतिभाशाली पण्डितकी उपेक्षा करना अच्छा न था। इसी समय

*सम्प्रति सुलेमान पर्वतपर सन्धीश्वर मन्दिरका भग्नावशेष विद्यमान है। सन्धिमतिके नामानुसार उक्त पर्वतका नाम 'सन्धिमान्' था। मुसलमानोंने उसके बदले 'सुलेमान' नाम रख दिया है।

† वर्तमान इस्लामाबादके उत्तर-पूर्व २ कोस दूर भवनग्रामके पास भीमादेवीका गुहामन्दिर दृष्ट होता है।

* मुद्रित राजतरङ्गिणीमें 'लोस्तावा' पाठ है। यह भ्रमवश दृष्ट होकर छाप दिया गया है। (राजतरङ्गिणी ३।१०)

लो भगरका वर्तमान नाम 'ले' है। वह भारत या मध्य तिब्बतमें अवस्थित है। मूलतः तिब्बतीय शब्द है।

नामक स्थानपर युद्धार्थ उपस्थित हुये। दूसरे दिन प्रातःकाल युद्धारम्भ होना ठहर गया। इसी बीच दरद-राजने कोडाविण्डारक नामक नागके आलयमें उत्पात मचाया था। इसीसे नागोंने समझा कि युद्ध आरम्भ हो गया। फिर नाग भी आ पहुंचे थे। शेषको वास्तविक काश्मीरके सैन्यसे युद्ध होने लगा। युद्धमें म्लेच्छराज और दरदराज मारे गये। रुद्रपालने मुकुट-मण्डित दरदराजका मस्तक अनन्तदेवको उपहार दिया था। उदयनवत्स नामक दरदराजके भ्राताने फिर अभिचारक्रियाके माहात्म्यसे रुद्रपाल और उनके भ्राताओंको विनष्ट किया। उसके पीछे रानी सूर्यमती या सुभटाने वितस्तातीर सुभटामठ नामक शिवमन्दिर बनाया। उसी मन्दिरके निकट रानीने स्वीय कनिष्ठ सहोदर आशाचन्द्र या कल्लनके नामसे एक ग्राम भी स्थापन किया था। एतद्भिन्न उन्होंने स्वामीके नामसे अमरेश्वर, ज्येष्ठभ्राता सिल्लनके नामसे विजयेश्वर और त्रिशूल, बाणलिङ्ग प्रभृति शिव एवं मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। कुछदिन पीछे उनके गर्भजात शिशुसन्तान राज-राजका मृत्यु हुआ। फिर राजा और रानी दोनों राजभवन छोड़ सदाशिव-मन्दिरके निकट रहने लगे। इसी समयसे चिर दिनके लिये काश्मीरका पुरातन राजप्रासाद परित्यक्त हुआ। कारण तत्परवर्ती राजा भी उक्त मन्दिरके निकट ही जाकर रहे थे। उसी समय डक्क नामक एक देशिक भांड़ने राजाका बड़ा प्रियपात्र होनेसे यथेष्ट धनरत्न लाभ किया। यहांतक कि उससे राजकोष शून्य प्रायः हो गया। रानी सूर्यमतीने यह बात देख राजकोषको अपने हाथमें ले अपरिमित व्यय निवारण किया था। त्रिगर्तदेशीय केशव ब्राह्मण उस समय प्रधान मन्त्री रहे। गौरीश-विद्यालय नामक स्थानमें भूति नामक एक वैश्य थे। उनके तीन पुत्र रहे—हलधर, वज्र और वराह। हलधर रानी सूर्यमतीके अनुग्रहसे प्रधान मन्त्री बन गये। उन्होंने मन्त्री हो राज्यमें अनेक शुभ अनुष्ठान किये। हलधरने वितस्ता और सिन्धुके सङ्गम-स्थल पर एक स्वर्ण-मन्दिर भी निर्माण कराया था। उनके कनिष्ठ भ्राता वराहके पुत्र बिम्ब अतिशय वीर थे। उन्होंने डामरों और खशोंको वशीभूत किया, किन्तु खशयुद्धमें स्वयं प्राण दे दिया। कुछ दिन पीछे स्त्रीके कहनेसे अनन्तदेवने स्वयं सिंहासन छोड़ स्वपुत्र कलश या द्वितीय रणादित्यको राजा बनाया। मन्त्री हलधरने उक्त प्रस्तावमें बाधा डाली थी, किन्तु राजाने उनकी न सुनी। शेषमें उद्धत युवा रणादित्य पिताको और उनकी स्त्री रानी सूर्यमतीको सर्वदा ही अग्राह्य करने लगे। रणादित्य अधीन राजाओंसे जैसा सम्मान पाते, पिताको भी वैसा ही करनेका आदेश सुनाते थे। उस समय राजा और रानी उभय-को चैतन्य हुआ। हलधरने कौशलपूर्वक फिर राज्य-भार वृद्ध राजाको सौंपा था। उद्धत रणादित्य नाम-मात्रको राजा रह गये। उसी समय विग्रहराजके पुत्र क्षितिराजने राजा अनन्तके निकट जाकर कहा था—"हमारे निजपुत्र भुवनराज और पौत्र नीलने हमें राज्यसे निकाल दिया है। विग्रहराज जिन ब्राह्मणोंको समादर करते थे, उन्होंने उनके नामसे कुक्कुर पाल उनके गलेमें यज्ञोपवीत डाला है। अतएव हम उनका मुख न देखेंगे। हम आपके निज पौत्रको अपने राज्यका उत्तराधिकारी बनाते हैं। आप इस राज्यका भार ग्रहण कीजिये।" उक्त कथा कह क्षिति-राजने चक्रधरमें रह विष्णुसेवामें जीवनयापन किया। राजा अनन्तने तन्वङ्गराज नामक स्वीय विश्वस्तपुत्रको क्षितिराजके राज्यमें पौत्रके पक्ष पर शासनकर्ता बनाया। उसी समय जिन्दुराज नामक किसी व्यक्तिने उच्छृङ्खल डामर और दरद लोगोंको दमन किया था। राजाने उसे कम्पनराजका राजा बना दिया। उसके बाद हलधर मर गये। उन्होंने मरते समय कहा था—"महा-राज! कम्पनापति जिन्दुराज और कोषाध्यक्ष नागके पुत्र जयानन्दसे सावधान रहियेगा। हठात् पर-राज्यपर आक्रमण करना भी अच्छा नहीं।" उक्त परामर्शके अनुसार अनन्तने सुविधा देख जिन्दुराजको कारावद्ध किया। काल पाकर जयानन्द और साहीराजपुत्र विज्जविल्हराज तथा पाज नाममात्र राजा रणादित्य-को कुपथमें लगाने लगे। उसी समय उनके देवो-पम गुरु अमरकण्ठके मरजानेसे उनके हतभाग्य पुत्र

उन्हें स्मरण आया कि काश्मीर राज्य अराजक रहा। उन्होंने मातृगुप्तको बुलाकर कहा था—"यह पत्र लेकर आप काश्मीरके शासनकर्ताके निकट चले जाइये। पथिमध्य इसे खोलकर कभी न पढ़ियेगा।" मातृगुप्त यथासमय काश्मीर पहुंचे। मन्त्रिवर्गने हर्षविक्रमादित्यका पत्र पा मातृगुप्तको काश्मीर राज्य पर अभिषिक्त किया था। उस समय उन्होंने विक्रमादित्यको गुणग्राहिताको समझा और नानाविध उपढौकन तथा कवितादि उज्जयिनीको भेज दिया।

राजा मातृगुप्तने स्वराज्यमें पशुवध रोका था। उनकी सभामें 'हयग्रीववध' नामक काव्यप्रणेता कवि-वर भर्तृमेण्ठका अवस्थान रहा। राजा मातृगुप्तने "मातृगुप्तस्वामी" नामक विष्णुमूर्ति प्रतिष्ठाकर देवसेवाके लिये विस्तर अर्थ व्यय किया था। उनका राजत्व ४ वर्ष ९ मास १ दिन रहा।

इधर तोरमाणके पुत्र प्रवरसेन (२य)ने सुना कि उनके पितृ-पितामहके सिंहासनको किसी दूसरे व्यक्तिने अधिकार किया था। कुमार इस बातको सह न सके और काश्मीरको चल दिये। मंत्री उनके साहाय्यार्थ उपस्थित हुये थे। प्रवरसेन काश्मीरकी अवस्था देख कहने लगे—"निरपराधी मातृगुप्तका क्या दोष है? वर्तमान व्यवस्था करनेवाले विक्रमादित्यको ही हम इसका प्रतिफल देंगे।" उसके पीछे सैन्यसंग्रह कर प्रवरसेनने त्रिगर्त जीता था। फिर उन्होंने हर्षविक्रमके विरुद्ध उज्जयिनीके अभिमुख गमन किया। पथिमध्य समाचार मिला कि हर्षविक्रमादित्यका मृत्यु हुवा था। उससे बड़ी आशा मारी गयी। कुमार प्रवरसेनने खानाहार छोड़ दिया। दिवारात्रि शोकमें लीन थे।

उक्त मातृगुप्तको कवि कालिदास और हर्षविक्रमको संवताब्दप्रतिष्ठाता शकारि विक्रमादित्य मान अनेक लोग महाभ्रममें पड़ गये हैं। मातृगुप्तके सम्बन्धपर कितनी ही कथा राजतरङ्गिणीमें मिलती है। उनकी कविता, धार्मिकता और महानुभवताको कह्लणने मुक्त कण्ठसे सराहा भी है। किन्तु उन्होंने मातृगुप्तको कहीं कालिदासकी भांति नहीं लिखा। यदि मातृगुप्त कालिदास होते, तो प्रशंसा करते भी कह्लण उन्हें एक वार कालिदास न लिख देते? कालिदास देखो।

राजतरङ्गिणीमें हर्षविक्रमादित्यके शकदेश जय करनेकी बात लिखी है। किन्तु क्या निश्चयता है कि उक्त शकदेशका जय, संवतब्दप्रतिष्ठाताके ही समय हुवा था?

कुमार प्रवरसेन काश्मीर लौटकर राज्य करने लगे। उन्होंने काश्मीरके चतुःपार्श्वस्थ राज्य जीत लिये थे।

हर्षविक्रमादित्यके पुत्र उज्जयिनीराज प्रतापशील व शिलादित्यने प्रवरसेनसे क्रमान्वय ७ बार हारते भी काश्मीरको अधीनता न मानी। शेषको अष्टम वार युद्धमें जीवनसङ्कट देख स्वयं वशीभूत हो गये। कह्लणके कथनानुसार प्रतापशील शायद मयूरको भांति नाच और बोल सकते थे। फिर प्रवरसेनने शायद उसीको देख उनका जीवन बचा और उन्हें स्वाधीन बना दिया। इसी प्रकार समस्त प्रतापान्वित राज्य जीत द्वितीय प्रवरसेन पितामहपुरमें रहने लगे। उन्होंने वितस्तातीर अपने नामपर मनोहर प्रवरपुर नामक नगर स्थापन और "जयस्वामी" नामसे शिवलिङ्ग तथा देवीमूर्तिको प्रतिष्ठा किया था। प्रवरसेनपुरके* निकट विनायक भीमस्वामीका मन्दिर रहा। उन्होंने वितस्तापर सर्वप्रथम नौसेतु प्रस्तुत कराया था। उनसे पूर्व किसीने काश्मीरमें नौसेतु नहीं बनाया। उक्त नौसेतुके उद्देश उन्होंने प्रसिद्ध सेतु काव्य वा 'दशास्यवधप्रबन्ध' प्रणयन किया था। उनके मातुल जयेन्द्रने 'जयेन्द्रविहार' नामसे बौद्धविहार बनाया। उनके मन्त्री और सिंहलके शासनकर्ता मोरकने 'मोरकभवन' नामक एक सुहर्म्य प्रासाद निर्माण कराया था। महाराज प्रवरसेनके ललाटमें स्वभावतः शूलचिह्न अङ्कित रहा। उनकी महिषीका नाम रत्नप्रभा था।

प्रवरसेनके पीछे उनके पुत्र युधिष्ठिर (२य) राजा हुये। उन्होंने २१ वर्ष ३ मास राजत्व किया। उनके मन्त्री जयेन्द्रपुत्र वज्रेन्द्रने अवच्छेद नामक चैत्यादिसमाकीर्ण बौद्धग्राम स्थापन किया था। कुमारसेन

*प्रवरसेनपुर—वर्तमान श्रीनगर राजधानी है।

प्रमोदकण्ठ गुरु हुवे। मंत्री हलधरके एक दुर्दान्त पुत्र कनक मिहुरोंके शिरोमणि थे। वह बलपूर्वक प्रजाकी रमणियोंको ग्रहसे अपने दलमें पकड़ ले जाते थे। उसी प्रकार उक्त दोनो व्यक्तियोंका साथ पाकर रणादित्य यथारीति नरकके पथ पर अग्रसर हुवे। उन्होंने भी गुरु प्रमोदकण्ठकी भांति स्वीय भगिनी कलशा और कन्या नागाका सतीत्व हरण किया था। वृद्ध राजा और रानीने उक्त संवाद सुन कपाल पर कराघात कर राज्य परित्यागपूर्वक निर्जनमें रहने लगे। क्रमशः प्रजाको स्त्रीपुत्रके साथ घरमें रहना असम्भव हो गया। किसी दिन रणादित्य जिन्दुराजका पुत्रवधूपर आसक्त हो रात्रिके समय उसके घरमें घुस गये। शेषको चण्डालोंके हाथ प्रहारित हो मृतप्रायः अवस्थामें अपना परिचय दे वह भाग गये थे। वृद्धराज अनन्तदेव उस समय पुत्रको दुःशाका चरमकाल उपस्थित देख ५५ लौकिकाब्दको विजयक्षेत्र नामक स्थानमें देवसेवासे कालयापन करने लगे। तन्वङ्गराज सूर्यवर्मा और डामरराज चीरने उनका अनुगमन किया। उसके बाद रणादित्य स्वाधीन हो गये। फिर उन्होंने जिन्दुराजको स्वाधीनता दे विजयक्षेत्र पर वृद्ध पितासे लड़ने भेजा था। राज्ञी सूर्यमतीने पुत्रको दुर्बुद्धिसे उन्हें भर्त्सना किया। भाग्यक्रमसे रणादित्य उस भर्त्सनासे निरस्त हुये, किन्तु उनके दुर्व्यवहार न गये। अवशेषको वृद्धराज अनन्तदेवने पीड़ित प्रजा और अनुचरगणके कर्कश वाक्यसे उत्तेजित हो पुत्रके हाथसे राज्यभार निकालनेका आयोजन लगाया था। उधर राज्ञी सूर्यमतीने स्वीय पौत्र हर्षको बुला भेजा। हर्षने जाकर पितामह पितामहीके चरणमें प्रणिपात किया। उक्त संवाद पा कलस और रणादित्य भीत हुवे। उनने पिता-माताके निकट दूत भेज कुछ अस्थिर मूर्ति धारण की थी। राज्ञीके अनुरोधसे वृद्ध अनन्त राज्यको लौटे किन्तु दो मास राज्यमें रह उन्होंने देखा कि गुणधर पुत्र उन्हें बन्दी बनावेंगे। वह अविलम्ब राज्य छोड़ जयेश्वर-मन्दिरमें रहने लगे। रणादित्यने रात्रिकाल अग्नि लगा वह देवालय जला डाला। अग्निदाहमें वृद्धराज, रानी और अनुचरवर्गके परिहित वस्त्र मात्र व्यतीत सब कुछ जल गया। राज्ञी अग्निमें जलने जाती थीं। किन्तु तन्वङ्गके पुत्रोंने उन्हें निवारण किया। शेषको वृद्ध राजा और रानी दोनों अनुचरोंके साथ अनावृत देह नदी पार हो किसी ओर चल दिये। उन्होंने एक मणिमयलिङ्ग तक्कराजके हाथ बेच सत्तर लक्ष मुद्रा संग्रह किया। और वनमें कुटीर बना अपना डेरा डाल दिया। देवमन्दिरको जल जानेपर महाराजने फिर बनवाना चाहा था। किन्तु रणादित्यने निषेधकर भेजा और उन्हें पर्णोत्स नामक स्थान चलेजानेको कहा। राज्ञी सूर्यमतीने भी स्वामीसे वही करनेको अनुरोध किया था। किन्तु वृद्धराज वृद्धकालमें देवस्थान छोड़नेसे कातर हुये। उसी बात पर स्त्रीपुरुषमें कलह पड़ गया। वृद्धराजने स्त्रीके कर्कश वाक्यसे और क्रोधवश शूलारोहणकी भांति गोपनमें अपने तलवार भोंक ली। आंतसे रक्तकी धारा बही थी। राजाने कहा कि उन्हें रक्तातिसार हुवा था। बाहरी लोगोंने उसीपर विश्वास किया। शेषको विजयेशदेवके सम्मुख काश्मीरीय ५७ लौकिकाब्दमें कार्तिकी पूर्णिमाके दिन महाराज अनन्तदेवने इहलोक छोड़ दिया। रानीने चितारोहणका उद्योग लगाया था। कलस संवाद मिलने पर समैन्य जाकर उपस्थित हुवे। किन्तु कई अनुचरोंकी मिथ्याप्ररोचनामें मातासे न मिले। रानी उन्हीं अनुचरोंको शाप दे चिता पर चढ़ गयीं।

पितामहीका धनरत्न मिलनेसे हर्षने पितासे विवाद लगाया था। रणादित्य वा कलस उस समय निर्धन रहे। सुतरां धनवान् पुत्रको वह कौशलसे अपने वशमें लाये। विधाताकी महिमा आश्चर्यसे भरी है। उसी समयसे महाराज हर्षने सत्पथ अवलम्बन किया, किन्तु एकबारगी ही वह अपना स्वभाव छोड़ न सके थे। उन्होंने क्रमशः त्रिपुरेश्वरका स्वर्णमन्दिर बनाया और कलसेश्वर एवं अनन्तेश्वर नामक देवताको स्थापन किया। वह तुरुष्कदेशीय कई युवती हरण कर लाये थे। वृद्ध वयसमें भी उनके ७० कामिनी रहीं। जिस विजयेश्वर मन्दिरको उन्होंने जलाया, उसे फिर न बनवाया था। केवल देवमूर्तिके ऊपर स्वर्णछत्र चढ़ाया गया।

युधिष्ठिरके प्रधान मन्त्री रहे। उनकी महिषीका नाम पद्मावती था।

युधिष्ठिर (२य)-के मरने पर उनके पुत्र लक्ष्मण वा नरेन्द्रादित्य सिंहासन पर बैठे। उनकी महिषीका नाम विमलप्रभा था। वसीन्द्रके दो पुत्र वज्र और कनक राजमन्त्री रहे। नरेन्द्रादित्यने नरेन्द्रस्वामी* नामक शिवमन्दिर प्रतिष्ठा किया। उनका राज्यकाल १३ वत्सर था। उनने पुस्तकादि रक्षा करनेके लिये अपने नामपर एक भवन बना दिया।

नरेन्द्रादित्यके मरनेपर उनके कनिष्ठ भ्राता रणादित्य वा तुञ्जीनको राज्य मिला। उनके कपाल पर शङ्खचिह्न रहा। रणादित्यकी पटरानीका नाम रणरम्भा था। कह्लणने लिखा है—देवी भ्रमरवासिनी मनुष्य-देह धारण कर महारानी रणरम्भा बनी थीं। महाराजने दो मन्दिरोंमें हरि और हर मूर्तिका स्थापन किया। एतद्भिन्न उनने "रणस्वामी" और प्रद्युम्न पर्वत पर सिंहरोत्सिका नामक स्थान पर पाशुपतमठ, रणपुरस्वामी नामक सूर्यमूर्ति तथा सेनमुखी देवीमूर्ति और उनकी पत्नी रणरम्भाने रणरम्भदेव नामक शिवलिङ्गकी प्रतिष्ठा की।† उनकी दूसरी महिषी अमृतप्रभाने रणेशके पार्श्वमें अमृतेश्वर नामक शिवलिङ्ग और मेघवाहन-पत्नीके नामानुसार निर्मित विहारमें बुद्धमूर्तिको स्थापन किया। महिषी रणरम्भाने रणादित्यको हाटकेश्वर शिवका मन्त्र सिखाया था।

रणादित्यके समय ब्रह्म नामक किसी सिद्धपुरुषने रणरम्भादेवीके नियोगानुसार "ब्रह्मसत्तम" नामक देवताको स्थापन किया।

रणादित्यके पीछे उनके पुत्र विक्रमादित्यको राज्य मिला। उन्होंने विक्रमेश्वर नामक शिवको स्थापन किया था। उनके दो मन्त्री रहे—ब्रह्मा और गलून। ब्रह्माने ब्रह्ममठ स्थापन और गुल्लूनकी पत्नी रत्नावलीने एक विहार निर्माण किया। विक्रमादित्यका राजत्व-काल ४२ वर्ष रहा।

विक्रमादित्यके पीछे उनके कनिष्ठ भ्राता बालादित्य राजा बने। उन्होंने पूर्वसागर पर्यन्त राज्य फैलाया और वहां जयस्तम्भ जमाया था। फिर उन्होंने वङ्काला (बङ्गाला?) प्रदेश जीत वहां काश्मीरियोंके रहनेको कालम्ब्य नगर स्थापन किया। बालादित्यने मडव राज्यमें बदर नामक ग्राम बसाया ब्राह्मणोंको रहनेके लिये दिया था। उनकी प्रियतमा महिषीने सर्व-अमङ्गलहर बिम्बेश्वर नामक शिवको स्थापन किया। बालादित्यके खङ्ग, शत्रुघ्न और मालव नामक तीन मन्त्री रहे। उन्होंने भी अनेक प्रासाद, मन्दिर और सेतु निर्माण कराये थे।

बालादित्यके अनङ्गलेखा नाम्नी एक कन्या थीं। बालादित्यने उसे अश्वघोषवंशीय दुर्लभवर्धन नामक एक सुपुरुष कायस्थ युवाके हाथ सम्प्रदान किया।*

दुर्लभवर्धन स्वीय बुद्धिमत्ता और नम्रतासे अल्पदिन मध्य ही राज्यमें सब लोगोंके प्रिय बन गये। बुद्धिका प्राखर्य देख बालादित्यने उनका नाम 'प्रज्ञादित्य' रखा था। अनङ्गलेखा किन्तु मातापिताके आदरसे गर्वित हो स्वामीको अनादर करती।

३० वर्ष ४ मास राजत्व कर बालादित्यके स्वर्गलाभ करने पर तृतीय गोनन्दका वंश भी लोप हो गया। मन्त्री खङ्गने उस समय सुविद्वान् देख कायस्थ दुर्लभवर्धनको राज्याभिषिक्त किया।

अनङ्गलेखाने अनङ्गभवन नामक एक विहार बनाया था। किसी ज्योतिषने संक्षण नामक राजकुमारको अल्पायु बताया। उसीसे महाराज दुर्लभवर्धनने विशोक-कोट पर्वत पर पुत्रके कल्याण-उद्देश चन्द्रग्राम नामक गांव ब्राह्मणोंको दान कर पुत्र द्वारा मल्हणस्वामी नामक शिवको स्थापन कराया था। फिर उन्होंने श्रीनगरमें दुर्लभस्वामी नामक विष्णुमूर्तिकी प्रतिष्ठा किया। ३६ वत्सर राजत्वके पीछे दुर्लभवर्धनको स्वर्ग लाभ हुआ।

* वर्तमान पाण्ड्रेठन ग्राममें नरेन्द्रस्वामीका सुन्दर मन्दिर देख पड़ता है।

† वर्तमान इसलामाबादके पूर्व ३ कोस दूर मातन नामक स्थानके ऊपर प्रान्तमें मार्तण्ड नामक सूर्य-मन्दिर है। इसी रणादित्यने जो प्रतिष्ठा किया था उस सूर्यमन्दिरके दोनो पार्श्व रणस्वामी और अमृतेश्वर शिवलिङ्ग स्थान भी निर्दिष्ट है।

* कह्लण दुर्लभवर्धन और उनके वंशधरको कर्कोटनागवंशीय लिखा है। ... कायस्थ थे।

उसके पीछे राजपुरीके राजा [illegible] मर गये। उनके पुत्र संग्रामपाल राजा बने थे। किन्तु उनके पितृव्य मदनपालने राज्य आक्रमण करनेकी चेष्टा लगायी। संग्रामने छोटी कनिष्ठा भगिनी और यश-राजको काश्मीर भेज साहाय्य मांगा था। जयानन्द हठात् मर गये। मृत्यु काल जयानन्दने बिज्जके सम्बन्ध-में राजाको सतर्क किया था। राजाने बिज्जको धनी और क्षमताशाली देख कुछ न कहा। किन्तु राजाके मनोभङ्गका कारण देख सतर्क होनेके लिये विदेशको चलते हुये, किन्तु अल्प दिनमें ही मध्य मर गये। जया-नन्दके मरने पर जिन्दुराज भी चलते बने। उसी प्रकार सती सूर्यमतीका शाप फला था। जयानन्दके पीछे उनके वंशीय वामन प्रधान मन्त्री हुये। राजा कलशने उस समय अवन्तिस्वामी देवताके अर्थ देवोत्तर ग्राम छीन कलशगंज नामक धनागार स्थापन किया था। उसके पीछे मदनपालने द्वितीय बार राजपुरीमें विद्रोह उपस्थित किया। काश्मीरराजने बप्पट नामक सेनापतिसे उन्हें पकड़ मंगाया था। उसी समय बाप्पटदेवके भ्राता कन्दर्प द्वारपति हुये और मदन-पाल कम्पनापति बने। फिर राजा कलशने नील-पुर-नरेश्वर कीर्तिराजकी कन्या भुवनमतीसे विवाह किया था। ६३ लौकिकाब्दको बब्बपुरके राजा कीर्ति, चम्पाके राजा आसट, वल्लापुरके राजा कलस, राजपुरीके राजा संग्राम, लोहरराज उत्कर्ष, उरशाराज सङ्गट, कान्दके राजा गम्भीरसिंह और काष्ठवाटके राजा उत्तमराज काश्मीरमें आ उपस्थित हुये। कन्दर्पने उसके पीछे स्थाविक नामक दुर्ग जीता था। राजा कलश नृत्यगीतके बड़े भक्त रहे। उन्होंने जयवनके निकट तीन पंक्ति देवमन्दिर और कलशपुर नामक नगरको स्थापन किया था। उसी समय युवराज हर्षने नाना देशकी भाषा और सर्वशास्त्रकी शिक्षा पायी। वह महापण्डित और कवित्वसम्पन्न होनेसे सबके अत्यन्त प्रिय पात्र बन गये। वह बड़े दानशील रहे। धर्म और विज्जावट्ट नामक दो मन्त्रियोंने अनेक दिन चेष्टा करने पर उक्त हर्षको भी पिताके विरुद्ध उत्तेजित किया था। उन्होंने विज्जावट्टके परामर्शानुसार किसी दिन पिताको विनाश करनेके अभिप्रायसे अपने आलयमें बुलाया। शेषको विज्जावट्टने ही राजा कलशसे सब भेद बताया था। युवराज उक्त हत्यासे सुन उस दिन पिताके पास न गये। उसके पीछे हर्ष भी नम्र पड़े थे। किन्तु उभय पक्षके दूतोंकी गड़बड़में सदाशिव एवं सूर्यमती गौरीश-मन्दिरके निकट ६४ लौकिकाब्दको पौष मासकी शुक्ल षष्ठीके दिन पितापुत्रका एक युद्ध हो गया। युद्धमें हर्ष बन्दी हुये। हर्षको बन्दी होते सुन रानी भुवनमतीने आत्महत्या की थी। हर्ष बंधे पड़े रहे। उनके प्रिय भ्राता प्रयाग साथ ही थे। सुक्ककी पोती सुगला हर्षकी एक पत्नी रहीं। उनके रूपमें मुग्ध राजा कलश मोहित हो गये। दुष्टा सुगलाने भी श्वशुरकी प्रेमार्थिनी हो स्वामीको मन्त्री नोनकके साहाय्यसे विष दिलवा दिया, किन्तु प्रयागने भेद भाव समझ हर्षको वह खिलाया न था।

पापीकी पापेच्छा न घटी। राजा कलशने फिर दुष्कार्य आरम्भ किया था। उन्होंने सूर्यदेवकी ताम्र-मूर्ति मन्दिरसे निकाल कर फेंक दी। [illegible] विषयादि राजाको आप्य साम वह अनेकोंके सन्तान मारने लगी। क्रमशः उनके भीषण प्रमेह रोग हुआ और नाकसे रक्त बह चला। उस समय पुत्रको राज्य दान करनेके लिये उन्होंने लोहरसे उत्कर्षको बुलाया था। शेषको मृत्यु काल समस्त धनरत्न वितरण कर मार्तण्डके सूर्यमन्दिरमें रहनेको वह चले गये। मरनेके समय उन्होंने हर्षको देखना चाहा था। किन्तु उत्कर्षके लोगोंने उन्हें आने न दिया। वह बांधकर अलग रखे गये थे। उत्कर्षको बुलाकर कलशने कहा "दोनों भाई राज्य दो भागमें बांट लो" किन्तु समस्त कथा स्पष्ट कहते न कहते उनका वाक्य रुका था। ४८ वर्षके वयसमें ६५ लौकिकाब्दको अग्रहायण मासकी शुक्ल-षष्ठीके दिन महाराज कलशने पञ्चत्व पाया। सम्मानिका प्रभृति ६ रानी और जयमती नाम्नी कोई प्रेयसी सहमृता हुयीं।

उत्कर्ष राजसिंहासन पर बैठे थे। हर्ष बन्दी ही रहे। अपनी माता गाङ्गीके गर्भजात विजयमल्ल प्रभृति भ्राताओंके साथ उसी समय उत्कर्षका मनोविवाद

दुर्लभवर्धनके राजत्वकाल चीन-परिव्राजक युअन-चुयाङ्ग काश्मीर गये थे। उनको वर्णनासे समझ पड़ता कि उस समय काश्मीरराज्य ५०० कोस (७००० लि)-से भी अधिक विस्तृत था।* वह जयेन्द्रविहारमें राजमातुल कर्तृक आहूत हुवे थे।†

दुर्लभवर्धनके पीछे उनके पुत्र दुर्लभकने काश्मीरका राजत्व पाया। उन्होंने मातामहके नामानुसार प्रतापादित्य नाम ग्रहण किया था।

प्रतापादित्यके प्रतापपुर स्थापन करने पर अनेक धनी वणिक् जाकर वहां रहने लगे। उनमें रोहितक-वासी नोण नामक वणिक्ने नोणमठस्थापन कर रौहितक प्रदेशवासी ब्राह्मणोंको वासार्थ दान किया था। उस दानसे सन्तुष्ट हो महाराज प्रतापादित्यने वणिक्को निमन्त्रण दे अपने घर बुलाया। आमोद आह्लादसे वणिक् एक रात राजभवनमें रहे। प्रातः-काल महाराजने पूछा—"क्यों, रात सुखसे तो कटी?" वणिक्ने उत्तर दिया—"जो आलोक जलता था, उसने मत्था पकड़ लिया।" फिर प्रतापदित्य भी निमन्त्रित हुये। उन्होंने वणिक्के घर जाकर देखा कि एक मणि-के आलोकसे वणिक का भवन आलोकित था। महा-राज वह देख विस्मित हो गये और वणिकके आग्रह-से २।१ दिन वहां रहे।

इधर वणिक्की एक नर्तकी नरेन्द्रप्रभाको देख राजा मोहित हुये। नरेन्द्रप्रभा भी राजा पर मुग्ध हुयी थी। प्रतापादित्य घर गये, किन्तु नर्तकीको भूल न सके। परम्परासे वणिक्ने उभयका वृत्तान्त सुन वणिक्ने नरेन्द्रप्रभाको राजाके निकट भेजा और उन्होंने भी उसे रख लिया। उसको गर्भसे चन्द्रापीड़, तारा-पीड़ और अविमुक्तापीड़ नामक तीन महानुभव सद्-गुणशाली पुत्रोंने जन्म ग्रहण किया था। वह पितृ-मातामह वंशकी रीतिके अनुसार यथाक्रम वज्रादित्य उदयादित्य और ललितादित्य नामसे विख्यात हुये। ५० वर्ष राजत्व कर प्रतापादित्यने स्वर्गको गमन किया।

प्रतापादित्यके मरने पर उनके पुत्र वज्रादित्य (चंद्रा-पीड़) राजा हुवे। उन्होंने त्रिभुवनस्वामी नामसे नारायणमूर्तिको स्थापन किया। उनकी पत्नी प्रकाशा-ने 'प्रकाशिका' विहार, राजगुरु मिहिरदत्तने गम्भीर-स्वामी नामक विष्णु और नगराध्यक्ष छलितकने 'छलि-तस्वामी' नामक देवताकी प्रतिष्ठा की। वज्रादित्य तारापीड़कर्तृक नियुक्त किसी ब्राह्मणके अभिचार कार्यद्वारा मृत्युमुखमें पतित हुवे। इन महानुभव नृपतिने ८ वर्ष ८ मास राजत्व किया।

उनके पीछे कोपनस्वभाव तारापीड़ (उदयादित्य) सिंहासन पर बैठे। वह शत्रु दमन कर इतने गर्वित हुवे कि अन्तको देवतावोंके साथ भी स्पर्धा करने लगे। देवमहिमा प्रचार करनेवाले ब्राह्मणोंको राजा शास्ति देते थे। वह ४ वत्सर २४ दिन राजत्व कर किसी ब्राह्मणको अभिचारक्रिया द्वारा पञ्चत्वको प्राप्त हुवे।

तारापीड़के पीछे उनका कनिष्ठ सहोदर अविमु-क्तापीड़ (ललितादित्य) राजा हुये। वह अतिपराक्रान्त नरपति रहे। उनका राजत्वकाल केवल देश जीतनेमें ही बीत गया।

पहले १८ मन्त्री राज्यके प्रधान प्रधान कार्य चलाते थे। ललितादित्यने उक्त १८ पदोंको घटा केवल ५ पद रख छोड़े—प्रधान शान्तिरक्षक, प्रधान सेनाध्यक्ष, प्रधान अश्वाध्यक्ष, प्रधान कोषाध्यक्ष और प्रधान विचारपति। युद्धमें ललितादित्यने कन्नौजके राजाको हराया था। (कान्यकुब्ज राज्य उस समय यमुनातीरसे कालिका नदी तक विस्तृत था।) उस समय यशोवर्माको सभामें कविवर वाक्पति और भवभूति विद्यमान थे। वह ललितादित्यके साथ काश्मीर चले गये। उसके पीछे ललितादित्यने कलिङ्ग, गौड़, दक्षिणाभिमुख कर्णाट प्रभृति स्थान जय किये। रट्टा नाम्नी एक कर्णाटी सुन्दरी उस समय दाक्षिणात्यमें साम्राज्य चलाती थीं। वह भी वशीभूत हो गयीं। भारतके समस्त प्रधान स्थान जीत ललितादित्यने कम्बोज, अश्ववदना रमणीसमाकुल भूखार, भोट और दरद प्रभृति देश जय किये। फिर काश्मीरमें पहुंच

* Beal's Records of Western Countries, Vol. I. 148.

† La Vie de Hiouen Thsang par Stanislas Julien, p. 92.

उपस्थित हुआ। जिस दिन महाराज कलसने राजधानीको त्याग किया, उसी दिन उत्कर्षके लोगोंने हर्षदेवको किसी स्वतन्त्र स्थानमें बांध दिया था। दूसरे दिन उन्होंने पिताके मरने और उत्कर्षके राजा बनने का संवाद सुना। पिताके मृत्यु से उनका हृदय बहुत घबराया और अधीर हो उन्होंने रोना मचाया था। उसी समय उत्कर्षने वाद्यभाण्ड सह नगरमें प्रवेश कर उनके निकट लोगोंको भेज उन्हें स्नान करनेका अनुरोध किया। हर्षदेवने सोचा सम्भवतः उत्कर्ष उन्हें राजा बनानेवाले थे। किन्तु अनेक क्षण बीत गया उसका कोई लक्षण देख न पड़ा। अन्तको उन्होंने स्वयं आदमी भेज कहलाया था—"यदि आप चाहें तो हमें राज्यसे निकाल छोड़ दें और नहीं तो यदि हमें राज्यमें ही रखना चाहें तो हमारा प्राप्य राज्य हमें दे दें।" उत्कर्ष भी उन्हें राज्य सौंपनेकी आशा दे वृथा कालक्षय करने लगे।

उत्कर्षने राजा हो राजत्वके शासनादिका कोई प्रबन्ध बांधा न था। वह केवल इसी चेष्टामें लग गये कैसे कोषमें धन बढ़ेगा। उससे उन पर सब लोग विरक्त हुये। सुबुद्धि मन्त्री हर्षदेवको राजत्व देनेका परामर्श करते थे। उधर जयराज और विजयमल्लको उनका मासिक प्राप्य रीतिके अनुसार न मिला। विजयमल्लने स्वीय राजत्वको लौटनेका उद्योग लगाया था। उसी समय हर्षदेवने विजयमल्लसे अपनी मुक्ति की बात बतायी। विजयमल्ल और जयराजने ज्येष्ठ भ्राताके लिये दुःखित हो सैन्य संग्रहपूर्वक राजधानीको आक्रमण किया था। उधर नोनक प्रभृति कुमन्त्रियोंके परामर्शसे उत्कर्षने हर्षदेवको मारनेके लिये कारागारमें कई सैनिक भेजे थे। उन्होंने वहां पहुंच हर्षदेवके सौजन्यमें मुग्ध हो पक्षावलम्बन किया। उसके पीछे उत्कर्षने शूर नामक मन्त्रीके हाथ राजदेशकी प्रतिभू स्वरूप वधज्ञापक अङ्गुरी न भेज भ्रमक्रमसे मुक्तिज्ञापक अङ्गुरी भेज दी थी। हर्षदेव मुक्त होनेपर उत्कर्षसे जा कर मिले। उस समय भी विजयमल्लसे नगरके बाहर युद्ध हो रहा था। उत्कर्षके अनुरोधसे हर्षदेव युद्ध निवारण करने गये। विजयमल्लने ज्येष्ठको मुक्त देख आनन्दसे उत्फुल्ल हो युद्ध रोक दिया। हर्षने फिर उत्कर्षके निकट जानेको प्रासादमें प्रवेश किया था। किन्तु मन्त्री विजयसिंहने उन्हें रोककर कहा—"क्या जान बूझ कर वैरी पैरोंमें उलझाते हैं? राजप्रासादमें जाकर एक बारगी ही सिंहासन अधिकार कीजिए।" उक्त कथा कह विजयसिंह उन्हें लेकर राजप्रासादके मध्य सिंहासनकोष्ठमें उपस्थित हुये। फिर उन्होंने हर्षदेवको सिंहासन पर बैठा अन्यान्य सुबुद्धि मन्त्रियोंको संवाद दिया था। उन्होंने आकर हर्षदेवके अभिषेकका आयोजन किया। उधर विजयसिंहने स्वयं जा उत्कर्षको प्रहरिवेष्टित किसी घरमें रख छोड़ा। विजयमल्ल संवाद पाकर पहुंचे थे। नव भूपति हर्षदेव उनसे कहने लगे "भाई! तुम्हारे उद्योगसे ही हमने प्राण पाया और राज्य भी पाया है।" विजयमल्ल भ्रातृस्नेहमें मुग्ध हो गये।

कारागारमें नोनकने उत्कर्षसे मिल उन्हें स्वीय परामर्शसे कार्यकरनेको अनुयोग किया था। उत्कर्षने अनुयोगसे भग्नहृदय अन्य किसी गृहमें प्रवेश कर आत्महत्या की। सहजा और अप्या नाम्नी दो प्रेयसीने उनके साथ गमन किया था। अपर पर्वतमें उनकी दूसरी भी कई प्रियतमा उक्त संवाद सुनकर चितापर चढ़ गयीं। पर दिनमें शवदाह हुआ। किञ्चिदून २२ वर्ष वयसमें २४ दिन राजत्व कर उत्कर्ष परलोकको चले गये।

दूसरे दिन हर्षदेवने नोनक, बिम्बार, भट्ट, प्रशस्तकलस प्रभृतिको मुक्त कारागारमें डाला था। उनको बन्दी करनेके पीछे राज्यमें उसी दिन मानो शान्ति स्थापित हो गयी। विजयमल्ल हर्षदेवके दक्षिणहस्त हुये। कन्दर्प द्वारपति, मदन कम्पनपति, वज्रपुत्र सुन्न प्रधानमन्त्री और सुन्नके कनिष्ठभ्राता जयराज राजानुचराध्यक्ष बने थे। प्रहस्त और कलशादि क्षमा प्रार्थना करनेसे पूर्वपदपर नियुक्त हुये। केवल नोनकको सकल दुर्घटनाका मूल समझ फांसी दी गयी। कुछ दिन पीछे दुष्टके परामर्शमें पड़ विजयमल्लने राज्य हरण करनेकी आशासे दरद देशके डामरोंका

जालन्धर और लोहर प्रदेश सैन्यको पुरस्कारमें दिया। उनने जितने देश जीते थे, उनके प्रत्येक राज्यमें जय स्तम्भ स्थापित किया। उनने सुनिश्चितपुर, दर्पितपुर, परिहासपुर और फलपुर नगर निर्माण करा नाना प्रकार वासभवन और प्रमोदभवन सजाये थे। दिग्विजयकाम राजप्रतिनिधिने ललितादित्यके नामानुसार 'ललितादित्यपुर'* नगर स्थापन कराया। किन्तु उससे ललितादित्य उन पर अप्रसन्न हुवे। ललितादित्यने अनेक देवमन्दिर, देवमूर्ति और बौद्धस्तूप बनाये थे। उनने ललितापुरमें सूर्यमूर्ति, हुष्कपुरमें मुक्तास्वामी, परिहासपुरमें परिहासकेशव नाम्नी (८४ तोले) सोनेकी विष्णुमूर्ति, पापापमय स्वर्णनखशोभित महावाराहमूर्ति, गोवर्धनधर और बुद्धमूर्तिको प्रतिष्ठा किया। उनकी महिषी कमलावतीने कमलाकेशव, प्रधान मन्त्री मित्रशर्माने मित्रेश्वर नामक शिवलिङ्ग और सामन्तराज कय्यने श्रीकय्यस्वामी नाम्नी विष्णुमूर्ति तथा 'कय्यविहार' नामक एक विहारको स्थापना की। उसी विहारमें रह सर्वज्ञमित्र नामक किसी बौद्धने योगबलसे बुद्धपद पाया था। उनके चङ्कुन नामक किसी दूसरे मन्त्रीने चङ्कुनविहार तथा स्तूप और सोनेकी बौद्ध प्रतिमाको प्रतिष्ठा किया। चक्रमर्दिका नाम्नी ललितादित्यकी एक प्रियतमाने चक्रपुर नामक नगर बसाया था।

ललितादित्य परिहासपुरमें अन्नाध्यम स्थापन कर नित्य लाख लोगोंके भोजनोपयोगी पात्र और खाद्यका संस्थान कर देते थे। फिर उनने मरुभूमिमें एक नगर बना श्रान्त पिपासितोंके जलपानकी सुविधा लगायी।

ललितादित्यने परिहासकेशव मन्दिरके पार्श्व पर सलग्न रौप्यमन्दिरमें रामस्वामी नामक विष्णुमूर्ति और महिषी चक्रमर्दिकाने चक्रेश्वरके पार्श्व पर रूप्यस्वामी नामक दूसरी विष्णुमूर्तिको स्थापित किया। कह्लणने लिखा है—किसी समय गौड़राज ललितादित्यके निकट उपस्थित हुये थे। ललितादित्यने उनसे कहा कि श्रीपरिहासकेशवके अनुग्रहसे उनने उनका प्राणमात्र बचा दिया था। उसके पीछे त्रिग्रामी नामक स्थानपर किसी नरहत्ता द्वारा उनने उनको मरवा डाला। उस समय गौड़राज अति पराक्रान्त था। गौड़के कितने ही राजभक्त वीर काश्मीरराजके उक्त दुष्कार्यका प्रतिशोध लेनेको आशामें सरस्वती दर्शनके छलसे काश्मीर पहुंच किसी दिन श्रीपरिहासकेशवका मन्दिर लूटनेको अग्रसर हुवे। ललितादित्य उस समय वहां न रहे। गौड़वासीके मन्दिर आक्रमण करनेका सन्धान पा ब्राह्मणोंने भीम कपाट बन्द कर दिये। विदेशियोंने पार्श्ववर्ती रामस्वामीके रौप्यमय मन्दिरको ही श्रीपरिहासकेशवका मन्दिर समझ ध्वंस और देवमूर्तिको विचूर्ण किया था। उसी समय काश्मीरी सैन्य पहुंच गया और उस मुष्टिमेय गौड़ीय सेनासे युद्ध होने लगा। सभी राजभक्त गौड़वासियोंने एक एक कर प्राणदान किया। धन्य राजभक्ति! गौड़ीयोंका किसी समय उतना साहस, उतना अध्यवसाय था! रामस्वामीके मन्दिरका भग्नावशेष भूमण्डलमें गौड़वासियोंको विपुल यशोराशिकी घोषणा करता है।*

ललितादित्यने शेष अवस्थामें फिर उत्तरापथको युद्धयात्रा की थी। उसी युद्धयात्रामें उनका मृत्यु हुवा।

ललितादित्यके दो पुत्र थे—कुवलयापीड़ (कुवलयादित्य) और वज्रापीड़ (वज्रादित्य), महिषी कमलादेवीके गर्भजात ज्येष्ठ कुवलयादित्यको राज्य मिला। वह अतिशय दानशील थे। कुछदिन भ्रातृविद्रोहसे उनके राज्यमें महा विशृङ्खला रही। शेषको कुवलयापीड़का जय हुवा और वज्रापीड़को ज्येष्ठका अधीनत्व स्वीकार करना पड़ा। कुछ दिन पीछे कोई मंत्री विद्रोही हो उनके प्राण लेने पर उद्यत हुवे। महाराज कुवलयादित्यने उक्त विषयका संवाद पा मंत्रीको दलबलके साथ मारनेके लिये संकल्प किया था। किन्तु शेषको वह यह सोच राज्य परित्याग कर प्रव्रज्या अवलम्बनपूर्वक श्रीपर्वताश्रय नामक स्थानमें रहने

* ललितादित्यपुरका वर्तमान नाम लतापुर है। आजकल वह सामान्य ग्राममात्र है। लतापुर सुदरोंसे ३ कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है।

* "अद्यापि दृश्यते शून्यं रामस्वामिपुरास्पदम्।
ब्रह्माण्डं गौडवीराणां सनाथं यशसा पुनः॥" (राजतरङ्गिणी, ४।३३५)

साहाय्य लिया और शीत बीतते ही युद्धको गमन किया था। किन्तु पथिमध्य गलित तुषारसे आच्छन्न हो स्वयं इन्होंने अपना प्राण छोड़ा।

हर्षने फिर सकल बाधा विपद्‌से मुक्त हो राज्यकी उन्नतिमें मन लगाया था। इन्होंने काश्मीरमें परिच्छदादिका-उत्कर्ष साधन और कर्णाटी मुद्राके आकारमें मुद्राका प्रचार किया। वह पण्डित-प्रतिपालक रहे। कलसके राजत्वकाल विल्हण नामक किसी पण्डितने काश्मीर छोड़ कर्णाट राज्यमें जाकर महा सम्मान और विद्यापति उपाधि पाया था। वह हर्षको गुणावली सुन शोषको महाक्षुब्ध हुये। हर्षने काश्मीरको राजधानी सुहम्य सत्तसमूहसे सजायी थी। इन्होंने एक प्रमोद उद्यान निर्माण करा उसमें पम्पा नामक सरोवर खुदाया और नाना देशविदेशके पक्षी संग्रह कर उसमें प्रतिपालनका प्रबन्ध लगाया। उनकी पत्नी साढ़ी राजकुमारी वसन्तलेखाने राजधानी और त्रिपुरेश्वरमें मठादि बनाये थे।

हर्षके समय भुवनराजने लोहर अधिकार करनेकी चेष्टा लगायी। वह सैन्य ले कोटा पहुंचे थे। किन्तु द्वारपति कन्दर्पके आगमनकी वार्ता सुन भुवनराज युद्धसे विरत हो गये। उसीसमय राजपुरीके राजा संग्राम बिगड़े थे। कन्दर्प उस समय भी कोटामें ससैन्य उपस्थित थे। हर्षदेवने उन्हींसे दण्डनायकको सैन्य दे भेजा था, किन्तु वह भी लोहरके पथसे जाते जाते कोटामें सरोवरकी शोभा देख कुछ दिन वहां ठहर गये। कन्दर्प अपने विलम्बके लिये हर्षदेवके कोपभाजन हुये। पीछे हर्षका अभिप्राय समझ इन्होंने प्रतिज्ञा की थी—"हम राजपुरी जीतकर ही अन्न ग्रहण करेंगे।" दण्डनायकके सैन्यदलसे कुसराज नामक किसी सेनानीने उनका अनुगमन किया। ३०० मात्र सैन्य ले कन्दर्प विपक्षके १० हजार सैन्यसे युद्धमें प्रवृत्त हुये। ६ प्रहर युद्ध होने पीछे राजपुरी हारे थे। कन्दर्पने उस युद्धमें अग्निमय नाराचादि व्यवहार किया। उसके पीछे दण्डनायक युद्धस्थलपर जा विपक्ष अथवा हतसैन्य देख भयभीत हो गये। उन्हें कन्दर्पने हंसकर उन्हें अभय दान दिया था। एक मासके मध्य कन्दर्प काश्मीरको लौटे। हर्षदेवने आनन्दसे सिंहासनसे उठ कन्दर्पकी सम्वर्धना की थी। दुष्ट मन्त्री कन्दर्पका वह सम्मान देख हिंसानलसे जल उठे। कन्दर्प उसके पीछे परिहासपुरके शासनकर्ता हुये। कुपरामर्शसे हर्षदेवने उसी समय कन्दर्पको द्वारपतिके पदसे हटा लोहरराज पदपर बैठाया था। कन्दर्प असन्तुष्टचित्त वहां चले गये। मन्त्रियोंने देखा कि कन्दर्पने राजाके विरुद्ध कुछ कहा न था। उसीसे उन्होंने राजाको बताया कि कन्दर्प जाते समय उत्कर्षके पुत्रद्वयको अपने साथ ले गये थे। वह उनको ले कर स्वाधीन हो जाना चाहते थे। हर्षदेवने हठात् उस मिथ्यावाक्य पर विश्वासकर अमिधर और पहको भेज दिया। कन्दर्प उक्त संवाद सुनकर समोहित हुये। किसी दिन वह ओवर खेल रहे थे। उसी समय अमिधर पहुंच उन्हें बांधनेपर उद्यत हुये। किन्तु वीर कन्दर्पके दृढ़ रूपसे पकड़ते ही उनका हाथ टूट गया अमिधरने पलायन किया था। पहःफिर अग्रसर हुये। कन्दर्पने कहा—"आप राजाके आत्मीय हैं; हम आपके विरुद्ध कुछ करना नहीं चाहते। आप दुर्ग अधिकार कीजिये। हम चलते हैं।" कन्दर्प काशी चले गये। कन्दर्पके चले जाने पर अन्यान्य मन्त्रियोंमें गड़बड़ पड़ गया। राज्यमें विशृङ्खला लगी थी। धम्मट जयराजको उत्तेजित कर स्वयं राज्याधिकारकी चेष्टा करने लगे। जयराज कलसके औरसजात तो थे, किन्तु वेश्यागर्भजात होनेसे धम्मटके परामर्शसे हर्षदेवको मारडालने पर उद्यत हो गये। प्रयाग नामक भृत्यके नाना कौशलसे राजाको सब बात मालूम हो गयी। वह जयराजको मार धम्मटके उच्छेदका उपाय ढूंढने लगे। शेषमें उन्होंने कलसराजके द्वारा उन्हें द्वन्द्वयुद्धमें निनाशकर उनके रिल्हण और सहग नामक पुत्रद्वयको अपने अधीन रखा। इस प्रकार धम्मटके भ्रातुष्पुत्र और उत्कर्ष एवं विजयमल्लके पुत्र हर्षदेवके शासनमें निहत हुये।

इसप्रकार बीच लोहरके परामर्शसे हर्षदेवका मस्तिष्क बिगड़ा था। वह एक एक कर देवमन्दिर लूटने लगे। केवल राजधानी, श्रीरणस्वामी और

मार्तण्ड मन्दिरमें हर्षदेव कुछ कर न सके।

किसीदिन हर्षदेव कर्णाटराजकी परमासुन्दरी पत्नी चन्दलाकी छवि देख उनको प्राप्त करनेके लिये आकुल हो गये और राजसभामें कर्णाटराज्य ध्वंस करनेकी प्रतिज्ञा कर बैठे। कम्पनापति मदन इस कार्यमें राजाको साहाय्य करने पर उद्यत हुवे। कारण उन्होंने वह तसवीर संग्रह की थी। फलतः वह कर्णाट जा न सके। उसके बाद वह विटपथानुसार पितृव्य-पत्नी और पितृव्य-कन्यागणका सतीत्व हरण करने पर प्रवृत्त हुये।

कुछदिन बाद राजपुरीके राजा संग्रामपालने कितना ही स्वाधीन भाव अवलम्बन किया था। इसीसे राजा हर्षदेवने स्वयं बहुतर सैन्य ले राजपुरीको जा घेरा था। थोड़े दिन बाद दुर्गमें खाद्यका अभाव हुवा। संग्रामपालने सन्धिका प्रस्ताव किया था। किन्तु हर्षदेव सम्मत न हुवे। शेषको संग्रामपालने दण्डनायकको उत्कोच दे अन्य भावसे काम निकाल लिया। दण्डनायकने तुरुष्क सैन्यके आक्रमणका भय देखा, काश्मीर लौट गये।

उसके बाद हर्षदेव दरदोंके हाथसे दुग्धघात दुर्ग उद्धार करनेके लिये डामरोंके साथ मिलकर दरदराजके विरुद्ध आगे बढ़े थे। पथिमध्य उन्होंने मंत्री चम्पकको मण्डलाधिपकी आख्या प्रदान की। दुग्धघातदुर्गमें प्रथम युद्ध हुवा था। उस समय तन्वङ्गके कनिष्ठ भ्राता गर्गके पौत्र उच्चल और सुस्सलने अतिशय विक्रम प्रकाश किया। जो हो, उस युद्धमें काश्मीरराज हारे और सैन्य सामन्त छोड़ कई अनुचरोंके साथ ले भागे थे। उच्चल और सुस्सल अनेक कौशलसे छत्रभङ्ग सैन्यको विपक्षमुखसे बचा ले गये। इसीसे उक्त दोनों भाइयोंके प्रति काश्मीरके प्रजावर्गकी भक्ति आकर्षित हुयी।

उसके पीछे हर्षदेवके कौशलसे कलशराज ठक्कुर, उदय और कम्पनापति मदन निहत हुवे।

उस समय (७५ लौकिकाब्द) काश्मीरमें भयानक दुर्भिक्ष पड़ा था। अन्न और स्वर्णमुद्राओंका मूल्य बढ़ गया प्रतिदिन सैकड़ों लोग अनाहार मरने लगे। राजाने प्रजाका कष्ट देखा न था। फिर उसके ऊपर कायस्थ भी अत्याचार करने लगे। डामर विद्रोही हुवे। हर्षदेवने उन्हें समूल उच्छेद करनेके लिये मण्डलाधिप चम्पकको भेजा था। चम्पक लोहरसे ले कर समस्त डामर-राज्य लोकशून्य करने लगे। डामरवासी ब्राह्मण भी बचे न थे। शेषको जब वह क्रमराज्य (कामराज) पहुंचे, तब वहांके डामर हताश हो प्राण छोड़ युद्धमें प्रवृत्त हुवे। उस युद्धमें हार मण्डलाधिप कुछ कुछ रुक गये।

उधर लक्ष्मीधर नामक किसी व्यक्तिके घरके निकट मल्लपुत्र सुस्सल रहते थे। लक्ष्मीधरकी आकृति बिलकुल बानरके सदृश रही। इसीसे उसकी स्त्री उन्हें देख न सकती थी। सुस्सलका कार्त्तिक निन्दितरूप देख वह रमणी पागल हो गयी। लक्ष्मीधर ईर्ष्यासे राजाको पुनः पुनः अनुरोध करने लगे—"आपने अपने जब अन्यान्य क्षमताशाली आत्मीयोंको मार डाला है, तब किसी दिन सिंहासन ले सकनेवाले उच्चल और सुस्सलको क्यों बचा रखा है?" चक्रला नाम्नी किसी वेश्याको उक्त संवाद मिला था। उसने सब वृत्तान्त उच्चल और सुस्सलसे आकर कहा। दर्शनपाल नामक उनके किसी बन्धुने भी उक्त विषय समर्थन किया था। इसीसे रात को ही तीन अनुचर ले उभय भ्राता काश्मीर छोड़ गये। (७६ लौकिकाब्द, अग्रहायण)

उच्चलने* संग्रामपालका आश्रय लिया था, उत्कोच ले भ्रातृद्वयके वध करनेकी चेष्टा लगायी। उच्चलको उक्त संवाद मिल गया। उन्होंने राजपुरी छोड़ पलायन किया था। संग्रामने सुना कि शिकार भागा था। वह उसी समय ससैन्य उनके अनुसन्धानको चलते दिये। शेषको किसी स्थान पर उच्चलने युद्ध करनेकी ठानी थी। उस समय खशराजने उन्हें सन्धिकी छलना कर बुला लिया। उच्चलने भी वीरदर्पसे संग्रामके सम्मुख जा कहा था—"अब लोग देखें जिस वंशकी एक शाखा स्त्रीके अनुग्रहसे काश्मीर आज भी राजत्व रखती, उस वंशको दूसरी शाखाको बाहुबलसे राज्य मिलता है या नहीं।"

* उच्चलने संग्रामपालके सम्मुख अपना वंशका इस प्रकार परिचय दिया था

महती सेनाके समभिव्याहार परिहासपुरके निकट लड़ाई करनेको सम्मुखीन हुये। घोरतर लड़ाई हुई थी। उसमें मुगलराजकी बहुतसी सेना मारी गयी। वह अपने स्थानको भगे थे। दौलत अतिशय निष्ठुर रहे। किसी दिन फल चोरानेके अपराधमें उनने एक बालकके दोनों हाथ काट डाले थे। फिर उनके प्रताप-शाली पुत्रने मातुलके प्रति कोई अत्याचार किया था। दौलतने उसे भी मार डाला। उनके राज्यमें १८ मन्त्री रहे। अवशेषको वह गलित कुष्ठरोगसे आक्रान्त हुवे। उनने इहलोकमें नरकयन्त्रणा भोग अन्तत्व पाया था।

दौलतके बाद उनके भ्राता हुसेनखान्ने राज्यलाभ किया। वह दाता और प्रजारञ्जक थे। खान् जमान् नामक मन्त्रीने उन्हें हटा स्वयं थोड़े दिन राज्य किया। वह प्रति दिन सौ लोगोंको वध करता था। यहां तक कि दिलावरखान् द्वारा उनने अपने पुत्रको भी मरवा डाला। हुसेनखान्ने फिर जाकर मन्त्रिको मारा था। पीछे अपस्मार रोगसे हुसेनखान्का मृत्यु हुवा। उनने ७ वर्ष राजत्व किया था।

फिर उनके भ्राता अलीखान् राजा हुवे। वह प्रजा को सुखी करने पर तत्पर रहे। उसी समय घोर दुर्भिक्ष पड़ गया। ८ वर्षके राजत्व बाद अलीखान् मरे थे।

अलीखान्के बाद उनके पुत्र यूसुफशाहने राजत्व ग्रहण किया। किन्तु उनके पितृव्य अब्दुलखान्ने किसी दूतसे कहला भेजा था—"भ्राताके मरने पर भ्राता ही राजपद पाता है। आप क्यों राजलाभको आशा करते हैं।" सिकन्दरपुरमें अब्दुल और यूसुफ की लड़ाई हुई। अब्दुलने प्राणत्याग किया था। उसके बाद मुबारकखान् यूसुफसे लड़ने चले। यूसुफके सेना-पति मुहम्मदखान् उस लड़ाईमें मारे गये। उसके बाद मुबारकखान् काश्मीरके राजा हुवे। यूसुफने अकबर बादशाहसे निकट दिल्ली जा साहाय्य मांगा था। उसी समय अकोंने मुहम्मदखान्को हरा लोहर-चकको काश्मीरका राज्य दे डाला। यूसुफने अकबरके निकट से लौट वितस्ताविष्टित खयपुर ग्राममें अवस्थान किया था। लोहरचक उनसे लड़ने लगे। उस लड़ाईमें लोहर चकके मन्त्री अब्दुलमीर मारे गये। फिर यूसुफने काश्मीरका सिंहासन पाया था। उस समय लोहरखान् ने याकूबका शरण लिया। किन्तु याकूबने सुविधा देख उनके और उनके भाईके नेत्र फोड़ डाले। फिर हैदर-चकके साथ याकूबका युद्ध हुवा। उसमें हार हैदर अकबर बादशाहके पास भाग गये। यूसुफने काश्मीर जीत बहुतर उपढौकनसह अपने पुत्रको सम्राट् अक-बरके निकट भेजा था। अकबरने यूसुफके भेजे उप-ढौकन पाते भी काश्मीरके जयका अभिलाष न छोड़ा। उन्होंने भगवान्दास सेनापतिको काश्मीर भेजा था। युसुफ भगवान्दासको बहुतर धनरत्न उपहार दे अक-बरके शरणागत हुये। कुछ दिन राज्य कर वह अक-बर सम्राट्के सेवार्थ चले गये। फिर उनके पुत्र याकूब ने काश्मीरका राजत्व किया। उस समय शम्सचक अत्यन्त क्रुद्ध हो याकूबसे लड़े थे किन्तु शेषको हार गये।

फिर सम्राट् अकबरको काश्मीर विजयकी स्पृहा बढ़ी थी। उन्होंने बहुतर सैन्यके साथ कासिमखान्के अधीन २२सेनाध्यक्ष काश्मीर भेजे। कासिमखान्के आगमनको बात सुन याकूबने पलायन किया था। उनका सैन्य सकल छिन्न भिन्न हो गया। फिर शम्स चकने अल्प संख्यक सैन्य ले कासिमसे लड़ाई की। किन्तु मुगल जीते थे। हैदरचक कासिमखान्की जाति देखे गये। उसीसे लोगोंने उनका पक्ष अवलम्बन किया। कासिमखान्ने हैदरचकके साथ अनेक व्यक्तियोंको देख कर पकड़ा था। उससे काश्मीरकी बहुतसी प्रजा भयसे वनको भाग गयी। वनमें सब लोग मिले थे। लड़ाई करनेको कृतसङ्कल्प हो प्रजा याकूबखान्को ले गयी। कासिमने मोमारखान्को याकूबके विरुद्ध भेजा था। याकूबने सदाशिवपुरमें मोमारखान्की सेना पर आक्रमण किया। कासिमखान्ने काश्मीरका बहुतर सैन्य देख कारागृह-स्थित हैदरचकका मार डाला। उसके बाद कासिम और याकूबकी लड़ाई हुई। किन्तु जय पराजय समझ न पड़ा। याकूब काठराट चले गये। उस समय याकूबके पिता यूसुफ और अन्यान्य प्रधान व्यक्तिने सन्धिके लिये प्रार्थना की। कासिमने यूसुफ प्रभृति व्यक्तिको अकबरके पास भेजा था। अक-बरने उन्हें समादरसे लिया।

इसके पीछे उच्चलके राजपुरी परित्याग करनेसे युद्ध हुआ। इस युद्धमें यादेव प्रभृति डामरोंने उनका पक्ष लिया था। युद्धमें लोठायह प्रभृति मारे गये। उच्चल हारे थे। किन्तु ५।६ मास बीतते न बीतते फिर हठात् समादल संग्रह कर वह क्रमराज्यके पथसे काश्मीरको अग्रसर हुये। लोहरराज कपिल उच्चलके भयसे भागे थे। पर्णोत्स नामक स्थानमें लड़ाई हुई। राजसेना हार कर भगा था। उसके पीछे उच्चलने द्वारपति सुज्जक को बांध लिया। हर्षदेव भीत हो गये। उधर उच्चलने मण्डलराज अम्बकको मार क्रमराज्य अधिकार किया था। हर्षदेवने पट्टको हठात् कैगाटनके साथ भेज दिया। किन्तु वह पथमें विलम्ब लगाने लगे। हर्षदेवने फिर तिलकराजको भेजा था। उन्होंने भी पट्टके साथ योग दिया। पीछे दण्डनायक भेजे गये। उन्होंने भी वैसा ही किया था।

नर (दार्वाभिसार-राज, ...)
- नरवाहन
  - फुल्ल
    - सालवाहन
      - चन्दु
        - चन्दुराज
          - भीमपाल
          - सिंहराज (दिद्दाके समय लोहर शासन करते थे)
            - कान्तिराज
              - जस्सराज
                - तन्वङ्ग
                  - बाउन
                  - भटेर
                    - दिसुव
                    - भद्रप
                  - कन्दप
                    - गुङ्ग*
                - मल्ल
                  - उच्चल
                  - सुस्सल
            - उदयराज
              - संग्रामराज (दिद्दाके पोष्यपुत्र हुये)
                - अनन्त (काश्मीरराज)
                  - कलश वा रणादित्य (काश्मीरराज)
                    - हर्षदेव (काश्मीरराज)
                    - उत्कर्ष (काश्मीरराज)
                    - मजराज
            - दिद्दा (काश्मीरराज क्षेमगुप्तकी महिषी)

* किमदराज गुङ्ग और मुख सहित दूसरे माना है। यह सब कलशराजके समय विप्लवमें लिप्त हुये।

उच्चलने वाराहमूल पुष्पपुरका पथ छोड़ क्रमराज्य-में प्रवेश किया। मण्डलराज लड़ाईमें पराजित होने पर बांध लिये गये। किन्तु उन्होंने प्रलोभन दिखा उच्चलको परिहासपुर ले जाकर हर्षदेवके पास सकेना यहां पहुंचनेका पत्र भेजा था। हर्षदेव भी संवाद पा ससैन्य वहां पहुंच गये। युद्ध होने लगा था। मण्डल-राजने ससैन्य राजाको ओर योग दिया। उच्चलका सैन्य प्रायः विनष्ट हो गया। भिक्षभिक्ष नामक किसी डामर-सेनापतिने भाग कर राजविहारमें आश्रय लिया था। राजसैन्यने सोचा—"सम्भवतः उच्चलने ही विहारमें आकर आश्रय लिया है।" सिपाहियोंने मठमें अग्नि लगाया था। किन्तु उच्चल और सोमपाल अपर दिक् लड़ते रहे। शिवको वह प्रतिद्वन्द्वियोंकी संख्या अधिक देख युद्धसे अलग हो गये। फिर उन्होंने सैन्य ले ज्येष्ठ मासको परिहासपुर अधिकार किया था। किन्तु उनने परिहासकेशवमूर्तिको बचा दिया।

उधर अवमाहसे सैन्यसंग्रह कर सुस्सलने गुरपुर नामक स्थानमें काश्मीर-सेनापति माणिक्यको पराजय किया था। हर्षदेवने उस समय उच्चलको छोड़ पट्ट, मण्डलाधिप प्रभृति सुस्सलको ओर भेज दिये। इतोंन-पाल युद्धमें पराजित हो भगे थे। कम्पन-सेनापति सहेलने डर कर काश्मीरमें ही आश्रय लिया। इधर नागमूलमें उच्चल भी अग्रगामी होने लगे।

उसके बाद उच्चल लोहरके पाश्चात्य पथसे आगे बढ़े थे। हर्षदेवने उदयराजको द्वारपति और चन्द्रराजको कम्पनापतिके पदपर अभिषिक्त कर उच्चलके विरुद्ध प्रेरण किया। इसी बीच उच्चलके मातुल कम्पनराज्य अधिकार कर बैठे थे। चन्द्रराजने पर्णोत्सपुरके युद्धमें उनको मार डाला। उसके बाद चन्द्रराज सेनाको १२।१३ दलोंमें विभक्त कर धीरे धीरे विजयक्षेत्रके अभिमुख चले थे। उसीबीच लोहरके युद्धमें मण्डला-धिपका सैन्य हार गया। उसने उच्चलके निकट आश्रय लिया था। किन्तु पट्टनेयको वह हर्षदेवके विद्रोही सेनापति कपकचन्द्रके साथ मारे गये। उसके बाद हिरण्यपुरके ब्राह्मणोंने उच्चलको राजा मान अभिषिक्त किया था। हर्षदेव यह संवाद पा मन्त्रियोंके साथ

होंको स्पष्ट कहा—"हे विप्र श्रेष्ठो! इस कलियुगमें तुम्हारा ब्रह्मतेज कहां है? वा आचार ही कहां है?" इसी समय मुहम्मद शाहको फतेहशाहका गुप्तसंवाद मिला था। उसके समय अन्य किसी चक्रवर्ती राजा सन्दनि सिकन्दरने काश्मीरराज्य आक्रमण किया, किन्तु मुहम्मदने उनको हरा दिया। फिर फतेहशाहके पुत्र आदम विद्रव राजा पुनः पानेकी आशासे काश्मीर पहुंचे। उन्होंने मुहम्मदको राज्यभ्रष्ट किया था। उसके कारणवशसे फतेहशाहको काश्मीरका राजा बनाया। उसी समय काश्मीरराज्यमें तुरुष्क राजका विषम उपद्रव उठा था। प्रथम सार्वभौम चन्द्रसेने मुगलराज बाबरके निकट गमनपूर्वक काश्मीर राज्य जीतनेके लिये सैन्य मांगा। बाबरने उनको एक सहस्र सैनिक दिये थे। अनन्तर फतेहशाहके पुत्र नाजुकशाहको आगे कर निरिजयसे काश्मीर राज्यमें प्रवेश किया। उसमें तुरुष्क सैन्य द्वारा काश्मीर जीत नाजुकशाहको राजा बना दिया।

फिर मुहम्मद शाहके दोबारा राजा होने पर तुरुष्क-सैन्य अपने स्थानको चला गया। नाजुक शाहने १ वर्ष राज्य कर मुहम्मदसे यौवराज्य पाया था। ५ वर्ष पीछे पुनर्वार मुहम्मद राज्यपद अभिषिक्त हुये, उसके पीछे बाबर मर गये। उनके कामरान् और हुमायूं नामक पुत्रद्वयने काश्मीरराज्य आक्रमण किया। कुछ दिन पीछे महरम नामक सेनापति बहुतर सैन्य से काश्मीर जीतने गये थे। पोगलने प्रथम पार्वत्य प्रदेशको पलायनपूर्वक गुहादिमें आश्रय लिया। उस समय पुरोंको शून्य देख मुगलोंने राजधानीके मकान घरादि जला दिये और अनेक महत्‌ व्यक्तियोंके प्राण विनाश किये। फिर काश्मीरमें कामगरोंका उपद्रव उठा था। उसमें तुरकोंने बहु ग्राम नगरादि जला डाले और धन रत्न एवं रमणीय रत्न बलपूर्वक लूटकर ले भागे गये। इसके पीछे काश्मीरराज्यमें भयानक दुर्भिक्ष पड़ा था। मुहम्मदशाहने फिर ५ वर्ष राज्य कर शरीर परित्याग किया।

अनन्तर उनके पुत्र शम्सशाह राजा हुये। उनके समय काबचक्रपति काश्मीर आक्रमण करने केन-दुरमें चल पड़े। बाद सन्धिसूत्रसे युद्ध बन्द हो गया। शम्सशाहके बाद उनके भाई इस्माइल शाह राजा हुये। अपर मुगल हैदरी नाजुकशाह पादशाह देश जीतने सैन्य सह चले गये। नाजुकशाहके राज्यकाल काश्मीरके दक्षिण मुगल मन्सुरने दिन यापन और समस्त वैदिक क्रिया अनाथ निर्विघ्न निर्वाह किया था। उनके समय ग्राम विभाग पर कलन्दरियोंमें विरोध हो गया। इसी विरोधसे मिर्जा हैदर और दौलतचक् लड़ने लगे। एक साथ लड़ाई होनेसे पहिले दौलत (गाजीचक्) जाने थे। इसके पीछे इन्होंने राज्यशासन किया। उनके समय काश्मीरमें भयङ्कर भूमिकम्प हुआ था। उसमें अनेक स्थान विध्वंस हो गये। किसी दिन दौलतचक्ने शुभमुन स्थान पर अभिमन्यु नामक महात्मा साधुके निकट जाकर पूछा था—"हमारा राज्य किस प्रकार विनष्ट न होगा?" इस पर साधुने उत्तर दिया—"ब्राह्मणोंसे वार्षिक कर न लेने पर तुम्हारी अभीष्ट सिद्धि होगी।" यह सुनकर दौलतने कहा था—"हम म्लेच्छ हो कर आपकी आज्ञासे किस प्रकार ब्राह्मणोंका कर निवारण करेंगे?" उस पर साधुने क्रोधाविष्ट हो शाप दिया—"कतिपय दिनके मध्य ही तुम्हारी राजश्री विनष्ट जायेगी।" इसीसे दौलतकी राजसम्पत्ति विनष्ट हो गयी। उसके पीछे हबीब नामक किसी व्यक्तिके एक साथ राज्य करने पर गाजीचक्ने राज्य ग्रहण किया था। किसी दिन उनने गणकोंसे पूछा—"हमारे राज्यमें भूमिकम्पादि दुर्निमित्त क्यों होते हैं?" उनने उत्तर दिया—"आपके राज्यमें कोई घोरतर लड़ाई होगी।" कुछ दिन पीछे मिर्जा हैदरके सेनानी सुलतान् शैमदन ने काश्मीर जा पहुंचे। गाजीशाहने ससैन्य राजविर नामक स्थानमें जा युद्ध घोषणा की थी। इस लड़ाईमें हैदरके सेनानी गाजीशाहका भागमदन सैनासमूह देख, भयसे भाग गये। उसके पीछे गाजीशाहने अन्य लोगोंका युद्ध हुआ। इसमें उनने जीवनको सार जय पाया था।

मुगलराज शाह अहमद नामके बहुतर सैन्यके द्वारा काश्मीर जय करनेकी अभिलाष होने पर जीतन

स्वयं युद्ध करनेको चल दिए। मन्त्रियोंने परामर्श दिया कि जानेसे पहले भोजदेव (हर्षदेवके ज्येष्ठपुत्र) को दुर्गमें उपयुक्त रक्षियोंके हाथ सौंपना उचित था। वही किया भी गया। यद्यपि पुत्र राजाकी विपक्षता रखते थे, तथापि उच्चलके पिता मल्ल राजा हर्षदेवके वशीभूत रहे। किन्तु हर्षदेवने वृथा कुत्सामें पड़ सर्वाग्र उनका भवन आक्रमण किया था। मल्लने स्वीय अपर सन्तान भेज राजाकी अभ्यर्थना की। किन्तु राजाने शांत न हो उनको युद्धार्थ बुलाया था। मल्लदेव उस समय देवसेवामें रहे। वह उसी वेशमें असि लेकर निकल पड़े। उस युद्धमें मल्ल उदयराज, रयावट्ट तथा विजय नामक ब्राह्मणद्वय, पौरगव, कोष्टक चार सब्बा का निहत हुवे। अन्तःपुरमें राज्ञी कुसुमलेखा, राजवधू आममती तथा मरला, (सह्रण और रह्लणको पत्नी), राज्ञी नन्दा (उच्चल और सुस्सलकी माता) और चण्डा नाम्नी धात्रीने चितापर चढ़ जीवन विसर्जन किया।

पिता मरनेके दूसरे दिन सुस्सलने वह्निपुरमें विजयचेत्र पर्यन्त अधिकार किया था। युद्धमें कम्पनापति चन्द्रराज, अक्षोटमल्ल और चावरमल्ल मारे गये। उसके बाद सुस्सल क्रमशः सुवर्णसानुर और शूरपुर जीत राजधानी जा पहुंचे। हर्षदेव उस समय राजधानी छोड़ उच्चलसे लड़ने गये थे। इसीसे सुस्सलने अनायास राजधानीको हस्तगत किया। भोजदेव राजधानी आक्रान्त होने का समाचार सुन स्वयं सैन्य ले लड़ाईमें प्रवृत्त हुवे। उस लड़ाईमें भोजने जय पा सुस्सलको राजधानीसे निकाल दिया था। अल्पदिन बाद ही भोजदेवने सुना कि उच्चल ससैन्य उपस्थित हुए थे।

इधर राजा हर्षदेवने जयाख्या नदीके तीर जाकर देखा कि उसीका निर्मित नौसेतु लेकर विपक्षी सावधान रक्षा करते थे। उधर उच्चलने राजधानीको अधिकार किया था। हर्षदेव लोहरके अभिमुख चले। पथमें अनुचर उनको छोड़ कर अलग हो गये। शेषको कोई एक मंत्री, आत्मीय स्वजन और दो एक अनुचर साथ ले हर्षदेव लोहर पहुंचे थे। कपिलने आश्रय देना चाहा, किन्तु राजाने स्वीकार न किया। उसी समय राजाके अपर पुत्र भी विद्रोही हो गये और उनको छोड़ इधर उधर चल दिए। जब हर्षदेव जोहिलदेवके मन्दिरके निकट पहुंचे, तब उनका कनिष्ठ भ्राता ससुराल जानेको कह भाग गये। दण्डनायकने भी राजाका साथ छोड़ा था। उनके साथ अकेले भृत्य प्रयाग रहे। हर्षदेव फिर क्या करते। जीवनरक्षाके लिये निकटवर्ती श्मशान अरण्यके मध्य सोमेश्वर मन्दिरके निकट भिक्ष नामक किसी तपस्वीके कुटीरमें उन्होंने आश्रय लिया था।

उधर भोजदेव राज्यसे भागे थे। हस्तिकर्ण नामक स्थानमें वह २। ३ अश्वारोही अनुचरोंके साथ पहुंचे। वहां वह विद्रोही टक्कठक्क आक्रान्त हुवे और युद्धमें अपने मातुलपुत्र पद्मकके साथ मारे गये।

यथाक्रम उच्चलके साथ सुस्सल मिले थे। उच्चलने सुना कि हर्षदेवने पितृवनमें वास किया था। उसने हर्षदेवको कैद करनेके लिये डामरोंको लगाया था। उन्होंने बहु अनुसन्धानसे राजाको पकड़ लिया। छुरिका मात्र सहायतासे हर्षने अनेकोंको मारा था। शेष को कई लोगोंने मिल कर उन पर अस्त्राघात किया। वह सामान्य शृगाल कुक्कुरकी भांति कालग्रासमें पतित हुवे। यथासमय हर्षदेवका मुण्ड उच्चलके निकट लाया गया था। उच्चल घूम कर उस ओर देख न सके उन्होंने अन्त्येष्टिक्रिया करनेका आदेश भी दिया न था। किसी काठुरियाने उनके देहका सत्कार किया।

हर्षदेवके अधीन वेतनभोगी १०० तुरुष्क योद्धा रहे। उनके समय तुरुष्क महा प्रतापशाली और विस्तृत राज्यके अधीश्वर हो गये थे। यहां तक कि हर्ष के अत्याचारसे काश्मीरकी बहुतसी प्रजा म्लेच्छदेशमें जाकर रहने लगी।

उदयराजके वंशमें ६ राजाओंने ८० वर्ष ११ मास २४ दिन राजत्व किया था।

महाराज हर्षदेवके पीछे उच्चल राजा हुवे। सुस्सलने वीरदर्पसे राज्यके मध्य अत्याचार आरम्भ किया था। डामरराज्यमें उनका अत्याचार अधिक न चला। उसीसे उन्होंने उच्चलको डामर राज्य जलानेका परामर्श दिया था। उसने उसको कार्यमें परिणत न किया सही, किन्तु भ्राताके अत्याचारसे राजा पीड़ित देख उनको

-महती सेनाके समभिव्याहार परिहासपुरके निकट लड़ाई करनेको सम्मुखीन हुये। घोरतर लड़ाई हुई थी। उसमें मुगलराजकी बहुतसी सेना मारी गयी। वह अपने स्थानको भगे थे। दौलत अतिशय निष्ठुर रहे। किसी दिन फल चोरानेके अपराधमें उनने एक बालकके दोनों हाथ काट डाले थे। फिर उनके प्रताप-शाली पुत्रने मातुलके प्रति कोई अत्याचार किया था। दौलतने उसे भी मार डाला। उनके राज्यमें १८ मन्त्री रहे। अवशेषको वह गलित कुष्ठरोगसे आक्रान्त हुये। उनने इहलोकमें नरकयन्त्रणा भोग अपत्य पाया था।

दौलतके बाद उनके भ्राता हुसेनखान्ने राज्यलाभ किया। वह दाता और प्रजारञ्जक थे। खान् जमान् नामक मन्त्रीने उन्हें हटा स्वयं थोड़े दिन राज्य किया। वह प्रति दिन सौ लोगोंको वध करता था। यहां तक कि दिलावरखान् द्वारा उनने अपने पुत्रको भी मरवा डाला। हुसेनखान्ने फिर आकर मन्त्रिको मारा था। पीछे अपस्मार रोगसे हुसेनखान्का मृत्यु हुआ। उनने ७ वर्ष राजत्व किया था।

फिर उनके भ्राता अलीखान् राजा हुये। वह प्रजा को सुखी करने पर तत्पर रहे। उसी समय घोर दुर्भिक्ष पड़ गया। ८ वर्षके राजत्व बाद अलीखान् मरे थे।

अलीखान्के बाद उनके पुत्र यूसुफशाहने राजत्व ग्रहण किया। किन्तु उनके पितृव्य अब्दुलखान्ने किसी दूतसे कहला भेजा था—"भ्राताके मरने पर भ्राता ही राजपद पाता है। आप क्यों राज्यलाभको आशा करते हैं।" सिकन्दरपुरमें अब्दुल और यूसुफ की लड़ाई हुई। अब्दुलने प्राणत्याग किया था। उसके बाद मुबारकखान् यूसुफसे लड़ने चले। यूसुफके सेना-पति मुहम्मदखान् उस लड़ाईमें मारे गये। उसके बाद मुबारकखान् काश्मीरके राजा हुये। यूसुफने अकबर बादशाहके निकट दिल्ली जा साहाय्य मांगा था। उसी समय चकोंने मुहम्मदखान्को हरा लोहर-चकको काश्मीरका राज्य दे डाला। यूसुफने अकबरके निकट से लौट वितस्तावेष्टित स्वय्यपुर ग्राममें अवस्थान किया था। लोहरचक उनसे लड़ने लगे। इस लड़ाईमें लोहर चकके मन्त्री अब्दुलमीर मारे गये। फिर यूसुफने काश्मीरका सिंहासन पाया था। उस समय लोहरखान् ने याकूबका शरण लिया। किन्तु याकूबने सुविधा देख उनके और उनके भाईके नेत्र फोड़ डाले। फिर हैदर-चकके साथ याकूबका युद्ध हुवा। उसमें हार हैदर अकबर बादशाहके पास भाग गये। यूसुफने काश्मीर जीत बहुतर उपढौकनसह अपने पुत्रको सम्राट् अक-बरके निकट भेजा था। अकबरने यूसुफके भेजे उप-ढौकन पाते भी काश्मीरके जयका अभिलाष न छोड़ा। उन्होंने भगवान्दास सेनापतिको काश्मीर भेजा था। युसुफ भगवान्दासको बहुतर धनादि उपहार दे अक-बरके शरणागत हुये। कुछ दिन राज्य कर वह अक-बर सम्राट्के सेवार्थ चले गये। फिर उनके पुत्र याकूब ने काश्मीरका राजत्व किया। उस समय शम्सचक अत्यन्त क्रुद्ध हो याकूबसे लड़े थे किन्तु शेषको हार गये।

फिर सम्राट् अकबरको काश्मीर विजयकी इच्छा बढ़ी थी। उन्होंने बहुतर सैन्यके साथ कासिमखान्के अधीन २२सेनाध्यक्ष काश्मीर भेजे। कासिमखान्के आगमनको बात सुन याकूबने पलायन किया था। उनका सैन्य सकल छिन्न भिन्न हो गया। फिर शम्स चकने अल्प संख्यक सैन्य ले कासिमसे लड़ाई की। किन्तु मुगल जीते थे। हैदरचक कासिमखान्को जाते देखे गये। उसीसे लोगोंने उनका पक्ष अवलम्बन किया। कासिमखान्ने हैदरचकके साथ अनेक व्यक्तियोंको देख कर पकड़ा था। उससे काश्मीरकी बहुतसी प्रजा भयसे वनको भाग गयी। ~~वर्त्तमान लोग~~ मिले थे। लड़ाई करनेको कृतसङ्कल्प हो प्रजा याकूबखान्को ले गयी। कासिमने मोमारखान्को याकूबके विरुद्ध भेजा था। याकूबने सदाशिवपुरमें मोमारखान्की सेना पर आक्रमण किया। कासिमखान्ने काश्मीरका बहुतर सैन्य देख काराग्रह-स्थित हैदरचकका मार डाला। उसके बाद कासिम और याकूबको लड़ाई हुई। किन्तु जय पराजय समझ न पड़ा। याकूब काष्ठवाट चले गये। उस समय याकूबके पिता यूसुफ और अन्यान्य प्रधान व्यक्तिने सन्धिके लिये प्रार्थना की। कासिमने यूसुफ प्रभृति व्यक्तिको अकबरके पास भेजा था। अक-बरने उन्हें समादरसे लिया।

लोहर राज्य देकर वहाँ पहुंचाया था। सुस्सल अनर्घ्य हय हस्ती, धन्य·मल्ल और सर्वकके पुत्र प्रतापको साथ ले चल दिये। क्रमक उसी समयमें बन्दी थे। पथिमध्य वह भाग खड़े हुये और काशी जाकर गङ्गा-जलमें डूब मरे। उधर जनकचन्द्र राज्यमें ऐसा कार्य करने लगे, कि वहाँ सबके ऊपर समझ पड़े। उच्चल नाममात्रको राजा रह गये।

इरावतीराज अभयकी कन्या विजयमती हर्षदेवके पुत्र भोजदेवकी पत्नी थीं। भोजदेवके अनेक सन्तान होकर मर गये, केवल २ वर्षके कोई पुत्र जीवित रहे उनका नाम भिक्षाचार था। जनकचन्द्रके अनुरोध और कुछ कुछ दयाके परवश उच्चलने उस शिशुको विनाश न किया। उस समय समझ पड़ा जनकचन्द्र जिस भावसे कार्य करते, उससे वह स्वयं राजा होनेकी आशा रखते या उस शिशुको राजा बनाना चाहते थे। उच्चलने शेषमें जनकचन्द्रको भी द्वारपतिके पदपर अभिषिक्त कर राज्यसे दूर भेज दिया। भीमदेव उससे चिढ़े थे। शेषको जनकचन्द्रसे भीमदेवका युद्ध होने लगा। संग्राममें कालपाल नामक भीमदेवके किसी सेनानीके हाथ जनकचन्द्र आहत और भीमदेवके हाथ निहत हुये। गग्ग और मड्ड नामक जनकके दो भ्राता भी आहत हो लोहरको भगे थे। संग्रामस्थलमें उच्चल ससैन्य उपस्थित रहे। उनने कोई पक्ष लिया न था। कारण जनकको क्षमताको खर्व करना उनको भी ईप्सित रहा। शेषको उच्चल क्रमशः राज्यमें शान्ति स्थापन कर मडवराज्य चले गये। वहाँ उनने विद्रोही डामरोंके प्रधान कालिय प्रभृति और हलाराजको मारा था। फिर देशको शासन कर उच्चलने प्रस्थान किया। गग्ग उसी समयसे उनके विश्वासपात्र बन गये।

उच्चलने दग्धावशिष्ट नन्दीशेव मठादि चक्रधर, योगेश और स्वयम्भू मन्दिरको पुनर्निर्माण कराया। हर्षदेव कर्तृक श्रीपरिहासकेशवमूर्ति विनष्ट हुयी थी। उच्चलने उसे फिर प्रतिष्ठा किया। त्रिभुवनस्वामी के मन्दिर और तत्संलग्न सुकावली प्रासादको भी हर्षदेवने भस्मी कर डाला था। उच्चलने उसे फिर पूर्वकी भांति अलङ्कारी और सौन्दर्यपूर्ण कर दिया।

जयापीड़ जयपीड़ने जो सिंहासन बनाये थे, उच्चलके राजधानी अधिकार करते समय वह कुछ कुछ जल गया। उनने फिर उसे नूतन निर्माण कराया था।

उच्चलने कायस्थोंका अत्याचार देख सर्वथा समस्त कायस्थोंको राजकाजसे अलग कर दिया। लोटधरादि दुष्ट कायस्थोंको यथारीति शास्ति मिली थी। कम्पनापतिके टंगक महाप्रतापशाली होनेसे उच्चलके क्रोधभाजन बने और विपनाटाको भाग जाते भी खसों द्वारा विनष्ट हुये। द्वारपति रक्क उसी दोषसे विजयसिंहको निकाले गये और उनको दी हुयी सामान्य संख्यक मुद्रासे जीविका चलाने लगे। माणिक्य, तिलक, जनका प्रभृति और भी उसी प्रकार देशसे निकाले गये थे। फिर मड्डके पुत्र रड्ड, छुड्ड और व्यड्ड मन्त्री हुये। यम, ऐल, अभय और याच प्रभृति अपरिचित व्यक्तियोंने द्वारपति आदि उच्चपद पाये थे। हद कन्दर्प भी कार्यपक्ष्यार्थ आहूत हुये। किन्तु उच्चलकी मति बिगड़ी देख वह न गये।

उधर सुस्सलने लोहरमें रह राज्य लोभसे उच्चलके विरुद्ध अस्त्रधारण किया था। वराहवर्त नामक स्थानमें दोनों भ्राताओंमें प्रथम लड़ाई हुई। सुस्सल पराजित हो लोहरको भगे थे। उच्चलको किन्तु संवाद मिला कि सुस्सल दूसरे दिन लौटनेवाले रहे। उसीसे गग्गचन्द्रके साथ एक दल सैन्य भेजा गया। पथिमध्य सुस्सलसे लड़ाई होने लगी। लड़ाईमें सुस्सलके अच्छे अच्छे योद्धा निहत हुये। शेषको उच्चलने भी क्रमराज्य पर्यन्त भ्राताका अनुसरण किया था। शिल्पपुरकी लड़ाईमें हार सुस्सल लोहरके पार्वत्य पथसे स्वराज्यको लौट गये। उच्चलने मेक्ष्यपुरके डामरराज लोद्दकको मार डाला। कारण उनने स्वराज्यसे सुस्सलको भागनेमें सहायता की थी। उच्चल भ्रातृद्वेषमें पड़ लोहर पर्यन्त सुस्सलके पीछे न गये।

उधर भीमदेव राजाने कलशके एक सन्तान भोजको सिंहासन पर बैठा दरदराज जगद्दलको सहायार्थ बुलाया था। दर्शनपालके भ्राता यशपालभी हर्षदेव-पुत्र पक्षमें मिल गये। दरदराज राहमें सब सबे बढ़नेके लिये उनको ओर बढ़े थे। किन्तु उथापमें अर्थ

इसी समय काश्मीरमें तुवास्यान आरम्भ हुआ। याकूबने मर्जा काशगरके मिर्जा हुसैनसेनाको आक्रमण किया था। १ मास तक लड़ाई चली। आखिरमखान्की पराजितकाय हुए अकबरने युसुफखान्को काश्मीर लौटनेके लिये आदेश किया था। युसुफखान्ने जाकर याकूबका पराजय किया। वह फिर अकबरके निकट लौट गये। १५८६ ई० को काश्मीर अकबरके हाथ लगा। उस समय अकबर काश्मीर देखने लाहोरसे चले थे। काश्मीरमें उपस्थित होने पर याकूब अकबरके शरणागत हुये। अकबरने उन्हें पांच सामन्तोंके अधीन सेनाध्यक्ष बनाया था। फिर वह युसुफखान्को काश्मीरका शासनकार्य सौंप हिन्दुस्तानको चले गये। युसुफ काश्मीरराज्यका शासन करने लगे। किन्तु कारण युसुफ अकबरके विरागभाजन हुये थे। अकबरने युसुफके प्रति क्रुद्ध हो काजी अलीको काश्मीरके शासन कार्यमें नियुक्त किया। काजी अलीके काश्मीर पहुंचते ही समस्त धन व्यय कर डालने से सुलतानोंमें परस्पर विरोध उपस्थित हुआ। उसमें मिर्जा यादगारने काश्मीरियोंसे मिल काजी अलीके साथ लड़ाई की। काजी अली हार कर पर्वत पर भाग गये और वहीं मर गये।

अनन्तर मिर्जा यादगारने काश्मीरके शासनकर्ता हो अकबरकी अधीनता माना न थी। अकबरने शेख फरीदको सेना साथ काश्मीर भेज दिया। युद्धमें मिर्जा यादगार अपने अनुचरोंके ही हाथों मारे गये। शेख फरीदके शासनकाल अकबर फिर काश्मीर पहुंचे थे। उस बार उन्होंने अनेक यात्रायें कीं। उन्होंने सुना कि ब्राह्मण कोहकराज्यमें देवालयको जाते थे। उसीसे प्रथम अकबरने अकबरियोंसे तीर्थिक कर लेना निषेध किया। फिर उन्होंने ढिंढोरा पिटवाया था—"काश्मीरका जो व्यक्ति ब्राह्मणोंकी पूजा करेगा उसको तदुपयुक्त पारितोषिक मिलेगा। यहां तक ब्राह्मणोंसे कर लेना, शुल्क: कर तथा समय भिन्न दिया जायेगा।" फिर ब्राह्मण उन्हें आशीर्वाद देने लगे। अकबरके कोई राजदास काश्मीरियोंको ब्राह्मणोंका नियत उपकार करते थे। वह ब्राह्मणोंको दैवज्ञ हो सर्वदा दे देते रहे। उन्हें कुछ भी अभिमान न था। प्रवाद है कि उन्होंने प्रत्येक ब्राह्मणके घर जो जो चाहे और एक एक अशर्फी बांटी थीं। अकबर भी काश्मीरी ब्राह्मणोंको विशेष रूपसे परिचय रखते थे। किसी दिन उन्होंने मस्तक सर्वसुद्धा दरिद्र ब्राह्मणोंको दे डाले।

अकबरने युसुफखान्को पुनर्वार काश्मीरका शासनकर्तृत्वभार सौंप लौटाया था। वह प्रजाका कोई अनिष्ट न कर शान्तभावसे शासन करने लगे। कुछ दिन पीछे युसुफखान्के अकबरके साथ साधनार्थ चले जानेसे उनके पुत्र मिर्जाबहादुर काश्मीरके शासनकर्ता हुये। उन्होंने निम्नलिखित आदेश निकाला था—"जो व्यक्ति काश्मीर-निवासियोंको सतायेगा, वह तत्क्षण अपने अपराधका फल पायेगा।" मिर्जाबहादुरके ८ वर्ष शासन करने पर अकबरने अपने अशरफखान् और उनके पीछे अहमादखान् तथा सुलतान मुराद कुली खान्को काश्मीरका शासनभार प्रदान किया। उनसे काश्मीर का दुर्नीतिको पकड़ा था। इसी समय अकबरके आदेशसे उक्त दोनों शासनकर्ताओंने प्रवरपुरके निकट एक नागरनगर और शारिका पर्वतके पास नगर नामक नगर निर्माण कराया। वर्तमान श्रीनगर जैन-उल-आब्दीन निर्मित पुरातन नगरके उत्तरमें हो बना था। किसी दिन अकस्मात् काबुलको पुरातन नगरी अकस्मात् जलने लगी। दो सहस्र गृहसमन्वित वह नगरी अल्प समयमें ही भस्मीभूत हुयी। उस समय नवीन नगरी अपनी विभाससे विद्युत् रश्मियोंकी भांति फूल कर आनन्द प्रकाश करने लगी।

काश्मीर अकबरके पुत्र जहांगीरका अतिप्रिय स्थान था। वह प्रियतमा नूरजहान्के साथ सर्वदा यहां चलतालीला करते थे। काश्मीरमें अद्यापि नूरजहान्के लीला-उद्यान और मनोरम प्रासादका भग्नावशेष देख पड़ता है।

क्रमशः दिल्लीके मुगल बादशाहोंका प्रताप घटता था, तबतक काश्मीरराज उनके अधीन रहा। उस समय कोई शासनकर्ता दिल्लीके अधीन राजकार्य

बन्धुभावसे ग्रहण कर मिष्ट कथामें स्वराज्यको लौटा दिया। मल्लणभी दरदराजके साथ चले गये। भोजराज्य और स्वदेशका भरी थे। किन्तु पथिमध्य वह पकड़े गये उन्हें दस्यु की भांति शास्ति मिली थी। देवेश्वरके पुत्र विहृकने डामरोंके साहाय्यसे राज्यलाभकी चेष्टा लगायी, किन्तु उनसे कुछ बन न पड़ा। रामल नामक किसी स्वाद्यविक्रेताने अपनेको मल्लका पुत्र बता राज्य पानेकी चेष्टा की थी। अनेक निर्बोध राजाओंने भी उसको साहाय्य करना चाहा। किन्तु राजभृत्योंने कौशलसे पकड़ उसकी नाक काट डाली।

उस समय भिक्षाचार (भोजदेवके पुत्र) किशोर अवस्थापन्न थे। उच्चलने सुना कि वह रानी जयमती पर आसक्त थे। उसीसे उनको विनाश करनेकी आज्ञा निकली। घातकोंने उनको वितस्ताके खरस्रोतमें फेंक दिया। भाग्यवलसे वह किसी ब्राह्मण द्वारा रक्षित हुवे। राजीराजकन्या दिद्दा उक्त संवाद पा भिक्षाचारको अपने घर ले गयीं। फिर उनने निरापद रखनेके लिये उनको मालवराज्य भेज दिया। मालवराजने परिचय पा भिक्षाचारको लड़का जैसा और पढ़ना लिखना सिखाया था।

उसी समय उच्चलने पिता और भगिनीके नाम पर एक एक मठ स्थापन किया। रानी जयमतीने भी एक मठ और एक विहार बनवाया था। उसके बाद उच्चल क्रमराज्यके वर्द्धटक्क नामक तीर्थको दर्शन करने गये। पथिमध्य चण्डाल दस्युओंने उनको आक्रमण किया था। साथमें अधिक अनुचर न रहनेसे वह भागने पर बाध्य हुवे। शेषको वनमध्य दिक् भ्रम होनेसे उनने घने जंगलमें प्रवेश किया। उधर नगरमें संवाद पहुंचा कि उच्चलको चण्डालोंने मार डाला था। कामदेव-वंशीय रड्डके भ्राता नगराध्यक्ष कुड्ड नगरमें शान्ति स्थापन कर राज्यलाभार्थ परामर्श करने लगे। कायस्थोंके परामर्शसे कुड्डने ही राजा बननेकी चेष्टा लगायी थी। किन्तु उच्चलके जीवित रहनेका संवाद सुन वह उनको मार डालनेकी चिन्तामें पड़ गये। उधर उच्चलने किसी कारण जयमती पर विरक्त हो वर्तुलाकी राजकन्या विज्जलासे विवाह कर लिया था।

उसी समय राजपुरीके राजा संग्रामसिंह मर गये। उनके पुत्र सोमपाल ज्येष्ठको बन्दी बना राजा हुवे। इसलिये उच्चल क्रुद्ध हो लड़ने चले थे। किन्तु सोमपालका राज्यशासन और प्रजाप्रियता देख उनने उनके साथ स्वीय कन्याका विवाह कर दिया। फिर उच्चलने भोगसेन पर विरक्त हो उनको पदच्युत किया था। उसके बाद भोगसेन एवं रड्ड और व्यड्ड तथा सड्ड कई लोगोंने मिलकर उच्चलको मार डालनेके लिये चण्डालोंको लगा दिया। राजा किसी रातको प्रियतमा विज्जलाके घर जाते थे। उसी समय सकल दुर्वृत्तोंने मिलकर उनपर आक्रमण किया और उपर्युपरि अस्त्र चला भूमिपर उनको गिरा दिया। शेषको सड्डके अस्त्राघातसे काश्मीरीय ८७ लौकिकाब्द पौष मासकी शुक्लपक्षीके दिन ४१ वर्षके वयसमें महाराज उच्चल इहलोकसे चल बसे।

रड्ड रक्ताक्त कलेवर उसी रातको सिंहासन पर बैठे थे। उसीसे उनके बन्धु उनसे लड़ पड़े। वह अप युद्ध होने पर रड्ड मारे गये। रड्डने महाराज उपाधि धारणकर रातको एक पहर और एक दिन राजत्व किया था। उसके बाद गर्गचन्द्रने विद्रोहियोंमें किसीको मार, किसीको पकड़ और किसीको देशसे निकाल उपद्रव मिटाया। रानी विज्जला चिता पर चढ़ गयीं।

सबने गर्गको राजा बनाना चाहा था। किन्तु गर्गने अपनी ओरसे उच्चलके शिशु पुत्रको राज्य देनेका प्रस्ताव किया। महाराजके औरस और रानी श्वेताके गर्भसे सल्हण, लोठन एवं रल्हण नामक तीन पुत्रोंने जन्म लिया था। उनमें रल्हण पहले ही मर गये। महाराज (रड्ड) के भयसे लोठन और सल्हणने नवमठमें आश्रय लिया था। विद्रोह मिटने पर मन्त्रियोंने उन्हें गर्गके निकट ले जाकर उपस्थित किया। गर्गने सल्हण-को राजा बनाया था। उसके बाद गर्गने सुस्सलके निकट दूत भेजा। वह काश्मीरके अभिमुख चले थे। किन्तु पथिमध्य सल्हणके राजा होनेका संवाद मिला। सुस्सल उस समय राजपुरीसे वाहवाट पहुंचे थे। गर्ग भी उस ओर ससैन्य हुष्कपुर गये। भोगसेन और मल्लकोष्ठ-ने सुस्सलके साथ योग दिया था। किन्तु भोगसेन पथमें

निर्वाह करता था। १७५२ ई० को पठान-वीर अहमद साह दुरानीने काश्मीर राज्य जीता था। फिर कुछ कालतक पठानोंका प्रभाव रहा। १८१९ ई०को महाराज रणजीत् सिंहने काश्मीर अधिकार किया। उस समय सिखराजके अधीन कोई शासनकर्ता भेजा जाता और काश्मीरका शासनकार्य चलाता था। १८४६ ई०को जम्मु, लादक और बलतिस्तानके साथ काश्मीरभूमि गुलाबसिंहको मिल गयी। १८४६ ई० को, सोब्राउन युद्धके बाद गुलाबसिंहने ७५ लाख रुपये दे अंगरेजोंसे काश्मीरराज्य क्रय किया था। गुलाबसिंह अंगरेज गवर्नमेण्टके एक मित्र राजा बने। युद्धकाल वह अंगरेज गवर्नमेण्टको साहाय्य करने पर बाध्य थे। किन्तु वह स्वाधीन भावसे हिन्दू राजनीतिके अनुसार राज्य करते थे। गुलाब सिंह देखो। १८५८ ई० का गुलाब सिंहके मरने पर उनके पुत्र रणवीर सिंह राजा हुये। उन्होंने १८८२ ई०को अंगरेज सरकारसे २१ तोपोंकी सलामी, 'वृटिशसेनापतित्व' और 'महारानीका मन्त्रित्व' पाया था। १८८५ ई०को, जम्बु नगरमें रणवीरसिंह मर गये। फिर उनके ज्येष्ठपुत्र प्रतापसिंहने सिंहासन लाभ किया। उनकी सभामें वृटिश रेसीडण्ट घुस गये। प्रतापसिंहको वृटिश गवर्नमेण्टने जी. सी. एस. आई. उपाधि, परंपराके लिये 'महाराज' पद और श्रेष्ठ सम्मानकी सूचक २१ तोपोंकी सलामी प्रदान की है।

काश्मीरराज महारानी भारतेश्वरीको प्रतिवत्सर एक घोड़ा, [illegible] सेर पश्म और और प्रत्युत्कृष्ट काश्मीरी दुशाले कर स्वरूप देते थे। अब काश्मीरराज्य सम्पूर्ण रूपसे वृटिश सरकारके अधीन है।

कल्हणने लौकिक संवत् ६२८से लौकिक संवत् ६४१ तक अर्थात् प्रथम गोनन्दसे लेकर बालादित्य तक जिन राजाओंके नामका उल्लेख किया है। उन्होंने अवश्य काश्मीरके सिंहासनपर आरोहण कर राज्य किया था। ऐसा निःसन्देह उन लोगोंका कीर्ति सूचक चिह्न और किंवदंतियोंसे ज्ञात होता है। परन्तु उनके नामोंकी सूची जिस क्रमसे उल्लिखित है वह ठीक वैसी ही है इसमें पूरा पूरा सन्देह है और उसके साथ यह तो निश्चय है कि—उन लोगोंका शासनकाल अवश्य ही कुछ गलत है।...शं। कर्कोटक-वंशसे आगे कल्हणने जो कुछ लिखा है वह अवश्य ठीक है और इसलिये इतिहासवेत्ता उस प्रकरणसे वास्तविक कालानुसार इतिहास ग्रहण करते हैं।

काश्मीरके राजाओंकी तालिका।

राजाका नाम	अभिषेकवर्ष	राज्यकाल
गोनन्द १म (कल्हणके मतमें ६५३ कल्यब्द तथा ६२८ लौकिक संवत्)		
दामोदर १म		
यशोवती		
गोनन्द २य		
(३५ राजाओंका विवरण लुप्त है।)		
लव	[illegible]	
कुश	[illegible]	
खगेन्द्र	[illegible]	
सुरेन्द्र	[illegible]	१२११ लौ० सं० ६९८-१८६४
गोधर	[illegible]	
सुवर्ण	[illegible]	
जनक	[illegible]	
शचीनर	[illegible]	
अशोक	[illegible]	
जलौक	[illegible]	
दामोदर २य	[illegible]	
हुष्क, जुष्क, कनिष्क, *	[illegible]	
अभिमन्यु १म	[illegible]	
गोनन्दवंश।		
गोनन्द ३य	१८६४-०-० लौ० सं०	३५ वर्ष
विभीषण १म	१९२२-०-०	,, ...५३ ,, ६ मास
इन्द्रजित्	१९७५-६-०	,, ...३५ ,,
रावण	२०१०-६-०	,, ...३० वर्ष ६ मास
विभीषण २य	२०८०-६-०	,, ...३५ वर्ष ६ मास
नर (प्रथम) वा किन्नर	२०८१-६-०	,, ...४० वर्ष ९ मास
सिद्ध	२१२१-३-०	,, ...६० वर्ष
उत्पलाक्ष	२१८१-३-०	,, ...३० वर्ष ६ मास
हिरण्याक्ष	२२११-९-०	,, ...३७ वर्ष ७ मास
हिरण्यकुल	२२४९-४-०	,, ...६० ,,
वसुकुल वा वसुकुल	२३०९-४-०	,, ...६० ,,

* यह तीनों राजा ई० प्रथम शताब्दको विद्यमान थे। कनिष्क देखो।

† मिस्टर थीर और थोमीव सिंहके अनुसार यह ई०पू० ५३ शताब्दीमें विद्यमान थे

गर्गद्वारा आक्रान्त और विपन्न हुये। इसके बाद गर्गके सेनापति पृथ्वी साथ कटाहमें हार सुस्सल लोहरको भागे थे। गर्गके लोहरसे लौटते बड़ी विपद् पड़ी। वह जाते ही राजाके मित्रपात्रोंको मारने लगे। इसीसे सब लोग डर गये। तिलकसिंहादिने अपेक्षा न कर गर्गके भवनको आक्रमण किया था। गर्ग भी संवाद पाकर भीत हुये। राजा सहरने विद्रोह न रोक लोठनको सैन्यसह गर्गका पथ रोकनेको भेजा था। केशव नामक कोई धनुर्धर (लोठिकामठके अध्यक्ष) रहे। उन्हींके कौशलसे गर्गका घर बचा और लोठनका बहुत सा सैन्य मारा गया। इसके बाद सुस्सल और गर्गमें सन्धि हुयी। गर्गकी ज्येष्ठ कन्या राजलक्ष्मीके साथ सुस्सल और कनिष्ठ कन्या गुणलेखाके साथ सुस्सलके पुत्रका विवाह किया गया।

दुष्ट सहर भोगसेनकी पतिव्रतापरायणी पत्नी मला पर अत्याचार करने लगे। इनने इनके भ्राता डिल्लभट्टारकको विषप्रयोगसे मार डाला। मला चितारोहण करनेसे उनके हाथ न लगीं।

सुस्सलने उपयुक्त समय देख काश्मीर आक्रमणार्थ मल्लपालको भेजा था। अचिमध्य द्वारपति लक्ष्मकको बन्दी बना मल्लपाल अग्रसर हुये। सुस्सल भी जा पहुंचे थे। काष्ठवाटका राजप्रासाद अवरुद्ध हुआ। सुस्सलने ससैन्य नगर प्रवेश किया। राजसैन्यने द्वार रोक दिया था। किन्तु अपर पथसे मल्लपालके घुसते ही भीषण युद्ध होने लगा। युद्धमें सहरके मन्त्री अजक(?) निहत हुये। सुस्सल जीते थे। सहर और लोठनने आकर सुस्सलका शरण लिया। इनने भी इनको अभयदान दे आलिङ्गन किया था।

८८ लौकिकाब्दकी वैशाखी शुक्लतृतीयाके दिन ४ मास २७ दिन राजत्व करने पीछे सहर राज्यच्युत हुये।

सुस्सल सिंहासन पर बैठे थे। उनके शासनगुणसे राज्यमें सुखशान्ति उत्पन्न पड़ी। वह दयालु, विनयी, साहसी, प्रतापशाली, दुष्टशासक और शिष्टपालक थे। इसी समय गर्गने उच्चलके शिशुपुत्रके लिये पक्ष आरम्भ किया। सुस्सलने भ्रातुष्पुत्रको लानेके लिये बार बार आदमी भेजा था, किन्तु गर्गने उसको न दिया। शेषको वितस्ता-सिन्धु-सङ्गमके निकट महायुद्ध हुआ था। उस युद्धमें सुस्सलके और शृङ्गार, कलिश, कर्द, गुण्ड प्रभृति मन्त्री और मारे गये। विजयक्षेत्रके युद्धमें भी सिद्ध, कम्पनापतिके बहुतेरे और मन्त्रीवीर निव्याज(?) हत हुये, किन्तु गर्ग पीछे न हटे। अवशेषको वह स्वजय दुर्गमें जीवन सङ्कट देख उच्चलके पुत्रको ले सुस्सलके शरणागत हुये।

मल्लकोष्ठ(?), यशोराज प्रभृतिने सुस्सलके राज्यारोहणमें विशेष सहायता दी थी। इसीसे वह बहुत गर्वित और दुर्दान्त हो गये। सुस्सल सभी सह न सके थे। उनने उनको राज्यसे निर्वासित किया। उनने भी सहस्रमङ्गलका पक्ष लिया था। सहस्रमङ्गलके पुत्र प्राय सैन्य ले कान्द पथसे काश्मीर आक्रमण करने गये। किन्तु पथमें राजसैन्यद्वारा यशोराज आहत हुये। उसीसे वह भीत हो लौटे थे। उधर चम्पापति जासट, वल्लापुरराज वज्रधर, वर्तुलराज सहजपाल और वल्लापुरके आनन्दराज कुरुक्षेत्र जाकर भिक्षाचारसे मिल गये। जासटने स्वीय-कन्याका विवाह भिक्षाचारसे कर दिया। ठक्कुर गयापालने यथेष्ट सैन्यसह भिक्षाचारका पक्ष लिया था। पड्ड(?) नामक स्थानमें वह राजसैन्यसे लड़े। युद्धमें दर्पक मारे गये। यथेष्ट सैन्य क्षय भी हुआ। भिक्षाचार सर्वथा ही दुर्दशामें पड़ गये। शेषको उनने श्वसुर जासटके राज्यमें आश्रय लिया। किन्तु जासट उनपर अत्याचार करने लगे। चन्द्रभागाके ठक्कुर देवशर्मने उनको ले जाकर आदरसे स्वभवनमें रखा और अपनी कन्याके साथ उनका विवाह किया।

इसी बीच सहस्रमङ्गलके पुत्र फिर सैन्य ले सिन्धुपथसे आगे बढ़े थे। राजसैन्यने पथमें आक्रमण कर उनको बांध लिया।

सुस्सलने वितस्तातीर तीन बड़े मन्दिर बनाये थे। उनमें उनने एकका अपने, एकका स्वीय पत्नी और एकका साढ़के नाम नामकरण किया। भग्नप्राय दिद्दाके विहारका भी संस्कार हुआ। किसी दिन गर्गको संवाद मिला कि सुस्सलने उनको पकड़नेका परामर्श किया था। वह काल विलम्ब न लगा पुत्र कल्याणचन्द्रके साथ अपने घर लौट गये।

[illegible]

Vide Kalhan's Chronicle of the Kings of Kashmir, by M. A. Stein, Vol. I (Intr. p. 67.)

उसके बाद सन्धि हुयी। किसी दिन राजा स्नानागारमें उनको जाते देख बिगड़े थे। उनने उनको तत्क्षण निरस्त्र कर बन्दी बनाया। कल्याण, विदेह प्रभृति गर्गके पुत्र और उनकी पत्नी मल्लादेवी सब लोग पकड़े गये। ३ मास पीछे (८४ लौकिकाब्दको) गर्गादि राजाके आदेशसे निहत हुये।

फिर मल्लकोट, पृथ्वीहर, विजय प्रभृति सबने मिल कर भिक्षाचारका पक्ष अवलम्बन पूर्वक सुस्सलके साथ हिरण्यपुर और महाश्मरित् स्थान पर लड़ कर राजधानीमें प्रवेश किया। राज्य भिक्षाचारके अधिकारमें गया था। राजा सुस्सलने अवशेष (८६ लौकिकाब्द) को अग्रहायण मास कम्पनराज्यमें आश्रय लिया। तिलकसिंहने समस्त अपमान भूल उन्हें यत्नसे रखा था। तिलक सैन्य संग्रह कर फिर युद्धका उद्योग लगाने लगे। उधर नगराध्यक्षकी कन्याके साथ भिक्षाचारका विवाह हो गया। उसके बाद भिक्षाचार राजसिंहासन पर बैठे।

कुछ दिन बाद भिक्षुने हो सुस्सलके विरुद्ध आगे बिम्बको भेजा था। पर्णोत्स, विटोला और सदाशिव नामक स्थानमें युद्ध हुवा। बिम्बके पराजित होने पर सुस्सलने सम्पूर्ण जयलाभ किया था। भिक्षाचार भाग गये। किन्तु अल्प दिन बाद पृथ्वीहर और भिक्षाचार मिल विजयक्षेत्रमें जय पा राजधानीके अभिमुख अग्रसर हुवे।

उसके बाद नाना स्थानोंमें युद्ध हुवा। भिक्षाचार या सुस्सल कोई सम्पूर्ण जय पा न सका। सुस्सलके अनुपस्थिति काल डामर राजधानीमें नाना स्थानों पर आग लगाने लगे। वितस्ताके उभय पार जितने काष्ठ निर्मित घर रहे, प्रायः सभी जल गये। निरीह प्रजा राजधानी छोड़ भगने लगी। सुस्सल राजधानीको लौटे। उसी समय उत्पल व्याघ्र प्रभृति साजिश कर राजाके प्राणनाशकी चेष्टा करने लगे। सुस्सलने उसका आभास पाया, किन्तु विश्वास आया न था। किसी दिन वह स्नानागारमें नहा रहे थे। उसी समय उत्पल और व्याघ्रने आकर देखा कि राजाका कोई रक्षक न था। उत्पलने द्वार बन्द कर दिया। सुस्सल उनका काण्ड देख "राजद्रोह" कह कर चिल्ला उठे। किन्तु उनके तीक्ष्ण आघातसे महाराज चिरदिनके लिये निद्रित हुवे। उनका छिन्नमस्तक भिक्षाचारके पास भेजा गया। राजपूत सिंहदेवको उक्त संवाद मिला था। सिंहदेव राजा बने। उन्होंने मन्त्रियोंके परामर्शसे राजधानी सुरक्षित रखनेको चारो ओर पहरो बैठाये थे। दूसरे दिन मध्याह्न काल भिक्षाचारने ससैन्य नगरमें प्रवेश किया। उसी समय गर्गपुत्र पञ्चचन्द्र विस्तर सैन्य ले राजासे जा मिले। घोरतर युद्ध हुवा था। भिक्षाचारने गड़बड़ देख राजधानीको परित्याग किया। उसके बाद विजयक्षेत्र प्रभृति कई स्थानों पर घोरतर लड़ाई हुई। किन्तु भिक्षाचारकी मनस्कामना सिद्ध न हुई।

सुस्सलके पुत्र जयसिंहने राजा हो राज्योन्नतिकी ओर दृष्टिपात तो किया किन्तु प्रतीहार पर राज्यका प्रधान भार डाल दिया। प्रतीहारने शान्ति स्थापनके लिये राजविद्रोहियोंसे सन्धि की थी। जयसिंह अनेक कीर्ति कर गये। उनके समय कल्हण पण्डितने राजतरङ्गिणी नामक संस्कृत इतिहास प्रणयन किया।

जयसिंहने राजा हो २२ वर्ष राजत्वके बाद ३० लौकिकाब्दको फाल्गुणकी शुक्ला द्वादशीके दिन परलोक गमन किया। वह नियत प्रजागणके हितसाधनमें तत्पर रहे। उसके बाद जयसिंहके पुत्र परमाणुक काश्मीरके सिंहासन पर बैठे। उन्होंने पहले प्रजा रक्षणादि कार्य परित्याग पूर्वक किसी न किसी प्रकार स्वीय धनकोष भरनेकी चेष्टा की थी। अवशेष को उनके धूर्त मन्त्रियोंने बालककी भांति उन्हें फुसला और भय दिखा समस्त धन अपहरण किया। वह ८ वर्ष ६ मास १० दिन राजत्व कर ४० लौकिकाब्दको कालग्रासमें पतित हुवे। परमाणुकके बाद उनके पुत्र वर्तिदेवने राजा हो ७ वत्सर राजत्व किया। वर्तिदेवके मरने पर वोप्पदेवको राजसिंहासन मिला था। उन्होंने ८ वर्ष ४ मास २१ दिन राजत्व किया। यह मूर्खोंके शिरोमणि रहे। फिर उनके कनिष्ठ भ्राता जस्सदेव राजा हुवे। उन्होंने १८ वर्ष ११ दिन

जज्ज (जयापीड़के श्यालक और मन्त्री उनके अनु-पस्थिति कालमें)	३८११-३-२८	लौ॰ सं॰	३ वर्ष
जयापीड वा विनयादित्य	३८१८-३-२८	"	३१ "
ललितापीड	३८४९-३-२८	"	१२ "
पृथिव्यापीड वा संग्रामापीड २य	३८६१-३-२८	"	७ "
चिप्पट जयापीड (बृहस्पति)	३८६८-३-२८	"	१२ "
अजितापीड	३८८९	"	३७ "
अनङ्गापीड	३९२६	"	३ "
उत्पलापीड	३९२९	"	२ "

उत्पल वंश।

अवन्तिवर्मा	८५५।६	ई॰	
शङ्करवर्मा	८८३	"	
गोपालवर्मा	९०२	"	२ वर्ष
सङ्कट	९०४	"	१० दिन
सुगन्धा	९०४	"	२ वर्ष
पार्थ	९०६	"	
निर्जितवर्मा वा पङ्गु	९२१	"	
चक्रवर्मा	९२२	"	
शूरवर्मा (प्रथम)	९३३	"	१ वर्ष
पार्थ (२य बार)	९३४	"	
चक्रवर्मा (२य बार)	९३५	"	
शम्भुवर्धन	९३५	"	
चक्रवर्मा (तृतीयबार)	९३६	"	
उन्मत्तावन्ति	९३७	"	
शूरवर्मा २य	९३९	"	
यशस्कर,	९३९	"	९ वर्ष
वर्णट	९४८	"	१ दिन
संग्रामदेव	९४८	"	
पर्वगुप्त	९४९	"	
क्षेमगुप्त	९५०	"	
अभिमन्यु	९५८	"	
नन्दिगुप्त	९७२	"	
त्रिभुवन	९७३	"	
भीमगुप्त	९७५	"	
दिद्दा	९८०।१	"	
संग्रामराज	१००३	"	
हरिराज	१०२८	"	२२ दिन
अनन्त	१०२८	"	
कलश	१०६३	"	
उत्कर्ष	१०८९	"	२२ दिन
हर्ष	१०८९	"	
उच्चल	११०१	"	
रड्ड वा शङ्खराज	११११	ई॰	१ दिन
सल्हण	११११	"	३ मास २७ दिन
सुस्सल	१११२	"	
भिक्षाचार	११२०	"	६ मास १२ दिन
सुस्सल २य बार	११२१	"	
जयसिंह	११२८	"	२२ वर्ष
परमाणुक	११५५	"	९ वर्ष ६ मास १० दिन
वन्तिदेव	११६०	"	७ वर्ष
वप्पदेव	११६७	"	३ वर्ष ६ मास
जस्सदेव	११७०	"	१८ वर्ष १२ दिन
जगदेव	११८८	"	१४ वर्ष ३ मास
राजदेव	१२०२	"	२३ वर्ष ३ मास २७ दिन
संग्रामदेव	१२२५	"	१६ वर्ष १ मास १० दिन
रामदेव	१२४१	"	२१ वर्ष १ मास १३ दिन
लक्ष्मणदेव	१२६२	"	१३ वर्ष ३ मास १२ दिन
सिंहदेव	१२७६	"	१४ वर्ष ५ मास २७ दिन
सुहदेव	१२९०	"	१९ वर्ष १ मास २५ दिन
रिञ्चन (तिब्बतदेशीय)	१३०९	"	३ वर्ष २ मास १९ दिन
उदयानदेव	१३१२	"	१५ वर्ष २ मास १० दिन
रानी कोटादेवी (बराजक)			

मुसलमान वंश।

शाहमीर (साहराजकुलीय) वा

शमस उद्-दीन	११४२	ई॰	३ वर्ष ११ मास २५ दिन
१८ मुसलमानराज			
कामार (जमशेद)	१३५०	"	१ वर्ष २ मास
अला उद्-दीन	१३५१	"	१२ वर्ष ८ मास १३ दिन
शहाब्-उद्-दीन	१३६४	"	२० वर्ष
कुतुब-उद्-दीन	१३८४	"	१५ वर्ष
सिकन्दर	१४१०	"	२२ वर्ष ९ मास ६ दिन
अलीशाह	१४१६	"	६ वर्ष ९ मास
जैन-उल्-आबदीन	१४२२	"	५२ वर्ष
हाजी हैदर शाह	१४७२	"	१ वर्ष २ मास
हुसेन खान्	१४७४	"	१२ वर्ष ५ मास
मुहम्मद शाह	१४८६	"	२ वर्ष ७ मास
फतेह शाह	१४८९	"	९ वर्ष १ मास
मुहम्मदशाह (द्वितीयबार)	१४९५	"	९ मास ९ दिन
फतेह शाह (द्वितीयबार)			१ वर्ष १ मास
मुहम्मद शाह (तृतीयबार)			३१ वर्ष १० मास १० दिन
इब्राहीम			८ मास २५ दिन
नाजुकशाह	१५२०	"	१ वर्ष
मुहम्मदशाह (चतुर्थबार)			५ मास
हम्सी (शमस शाह)			२ मास
इस्माइल			२ वर्ष ९ मास

राजत्व किया था। वह भी अतिशय मूर्ख रहे। सुप्प और भीम नामक २ धूर्त ब्राह्मण उनको बहुत प्रिय थे। फिर उनके पुत्र जगद्देवने राज्य पा १४ वर्ष ३ दिन राजत्व किया। वह विनयी और प्रजाप्रिय थे। इनने क्रौंच राज्यके मध्य सुव्यवस्थाको स्थापन और राज्यका समस्त शत्रु संहार किया। राहुल नामक उनके सर्वगुणाकर मन्त्री रहे। उनके सत्परामर्शसे राजाने समस्त शत्रुओंको विनाश किया। महाराज जगद्देवने रुद्रपुरमें स्वर्णशिखरका प्रासाद बनाया था। द्वारपति पद्मने इन्हें गुप्त भावसे विष दे कर मार डाला। जगद्देवके मरनेके पीछे उनके पुत्र राजदेवने राजा हो २१ वर्ष ३ मास १० दिन राज्य शासन किया। उनने दिक्पालक पद्मके भयसे काष्ठवाट नामक स्थान पर स्थापित दुर्गमें आश्रय लिया था। द्वारपतिने जाकर उन्हें चारो ओरसे वेष्टन किया। द्वारपति समस्त हो गये थे। उसी समय किसी चण्डालने उन्हें मार डाला। राजदेवने शत्रुको विनाश कर और प्रजापुञ्जको विशेष निष्कण्टक किया।

उनके पीछे उनके पुत्र संग्रामदेव सिंहासन पर बैठे थे। उन्होंने १६ वर्ष १० दिन राजत्व किया। संग्रामदेवने विजयेश्वर नामक स्थानमें गोब्राह्मणगणके निमित्त २१ उत्तम धर्मशाला बनायी। वह सर्वदा प्रजागणके मङ्गल साधनको व्यस्त रहते थे। पद्मवंशीय राजाओंने उन्हें मार डाला।

संग्रामदेवके मरनेके पीछे उनके पुत्र रामदेव राजा हुये। उन्होंने स्वीय प्रभूत शौर्यबलसे समस्त विद्रोहियोंको विनाश किया। रामदेवने लेदरीके दक्षिण पार महार नामक स्थानमें स्वनामचिह्नित दुर्ग बनाया और उदयपुरके विष्णुका जीर्ण एवं भग्नदशापन्न प्रासाद उत्तमरूपसे सुधरवाया था। उन्होंने २१ वर्ष १ मास १२ दिन राजत्व किया। चन्दनतरुवर पुष्पकी भांति विधाताने उन्हें पुत्र दिया न था। उनने भिवायकपुरस्थित किसी ब्राह्मणके लक्ष्मण नामक पुत्रको गोद ले काश्मीर राज्यपर अभिषिक्त किया। उनकी समुद्रानाम्नी महिषीने वितस्ताके नदीके तीरदेश पर समुद्रामठ बनाया था।

रामदेवके पीछे लक्ष्मणदेव राजा हुये। उनके राजत्व काल मध्य यवनोंने राज्यमें विषम उत्पात आरम्भ किया था। महिमानाम्नी उनकी पापपरिशून्या महिषीने स्वीय गुरुनिर्मित मठके पार्श्वदेशमें एक नूतन मठ बनवाया। लक्ष्मणदेव १३ वत्सर ३ मास १२ दिन राजत्व कर तुरुष्कराज कज्जलके हाथ मारे गये।

लक्ष्मणदेवके परलोक गमन करने पर अन्य वंशजात नीतिविशारद लेदरीनायक सिंहदेवने काश्मीर राज्यके राजा हो १४ वत्सर ५ मास २७ दिन राजत्व किया। उनने गुरुके साथ मिल ध्यानोद्दार नामक स्थानमें नृसिंहदेवका मन्दिर बनाया था। उनके मन्त्रोपदेष्टा गुरुका नाम शङ्करस्वामी रहा। राजाने उनको पद्मादम मठका ऐश्वर्य दक्षिणास्वरूप देकर पूजा था। किन्तु शेषको सिंहदेव भ्रान्तिकबुद्धि और विनयादि विसर्जन कर भगिनीके साथ आसक्त हुये। उनके भगिनीपतिने छलपूर्वक उनको मार डाला।

अनन्तर उनके भ्राता सुहदेव राजा हुये। उनके निकट सुखलाभ करनेको दिन दिगन्तरसे अनेक ब्राह्मणादि प्रजाने आकर आश्रय लिया था। वह पञ्चगह्वर देशमें पार्थकी भांति पूजित हुये। उनके पुत्र अभ्युदयगने गर्भेश्वरपुर स्थापन किया था। उनका राज्य १८ वर्ष ९ मास २५ दिन रहा।

सुहदेवके मरने पर म्लेच्छराज कज्जलने आकर उनका राज्य नाश किया था। दारगोस भोटवंशोद्भव (तिब्बत देशवासी) रिञ्चन काश्मीरराजके सिंहासन पर बैठ गये। वह इन्द्रतुल्य पराक्रमशाली रहे। उनके शासनकाल प्रजाकुलको सन्तोषवृद्धि और उन्नति साधित हुयी। उनने ३ वर्ष २ मास १८ दिन राजत्व कर ८८ लौकिकाब्दको परलोक गमन किया था। फिर उनकी पत्नीने ४ मास तक मन्त्रीके साथ राज्य किया। उनने काश्मीरमण्डलमें कोटा पत्तन किया था। उसी समय सिंहदेवके ज्ञाति उद्यानदेवने राज्यपद आक्रान्त कर राज्य पा १५ वर्ष १ मास १० दिन शासन किया था। उनके गतासु होनेपर कोटादेवी ६ मास १५ दिन रानी रहीं।

उनके बाद शाहमीर नामक मन्त्रीने अन्यान्य मन्त्रियों और विप्रोंके साहाय्यसे प्रमुख राजाओंको मार स्वयं

[illegible]

Vide Kalhana's Chronicle of the Kings of Kashmir, by M. A. Stein, Vol. I (Intro., p. 47.)

राज्यशासन किया। उसी समयसे काश्मीर राज्य मुसलमान शासकोंके अधीन हो गया। शाहमीर शम्स उद्दीन नामसे विख्यात रहे। पश्चगह्वर देशजात १८ मुसलमान काश्मीर देशके सिंहासन पर बैठे। उनमें ताहराज कुलजात शम्स-उद् दीन काश्मीरके प्रथम मुसलमान राजा थे। वह अतिशय बलशाली रहे। उनने भिक्षणभट्टोंको मार बलपूर्वक राज्य लिया था। शम्स उद् दीनके मरनेपर उनके पुत्र जमशेदने साम्राज्य पाया। उनने १वर्ष १० मास राजत्व किया। अनन्तर उनके कनिष्ठ भ्राता अला उद् दीन राजा हुवे उनने १२वत्सर ११ मास १३ दिन सुनियममें प्रजापालन किया अनन्तर उनके पुत्र शहाब उद्-दीन दिग्विजयी राजा हुये। उनने २० वर्ष राज्य बलपूर्वक समस्त राजाओंके साथ प्रतिस्पर्धाको प्रकाश किया था। फिर उनके कनिष्ठ भ्राता कुतुब उद् दीन १५ वर्ष ५ मास २ दिन तक राजा रहे। कुतुब-उद् दीनके बाद उनके पुत्र सिकन्दरने २२ वर्ष ८ मास ६ दिन राजत्व किया। उन्होंने बहुतर संस्कृत पुस्तक अग्निमें फेंक जला डाले थे। सिकन्दरके मरने पर उनके पुत्र अली शाहने राजा हो ६ वर्ष ८ मास राजत्व किया। अली शाहके बाद प्रजादिके पुण्यबलसे उनके सहोदर प्रजारञ्जक जिन-उल्-अब-दीनको राज्य मिल गया।

वह अतिशय विद्योत्साही रहे। अपने निकट किसीके हृदयग्राहिणी कविता अथवा कोई उत्कृष्ट शिल्प उपस्थित करनेसे वह यथायोग्य पुरस्कार देते थे। सिन्धु और हिन्दुवाड़ादि देश जयकर उन्होंने विविध शिल्पसमन्वित एक यन्त्रागार निर्माण कराया। उनके आदम खान्, हाजीखान् और बहरमखान् नामक तीन पुत्र हुवे। हाजीखान्से बहरमखान् लड़ पड़े थे। उसमें हाजीखान् जीत गये। जिन-उल-अब-दीन्‌ने राज्यका बहुविध मङ्गलकर कार्यसाधनकर ५२ वर्ष राज्य शासनपूर्वक शरीर छोड़ा था। उसके बाद हाजी खान् राजा हुवे। उनने मुद्रापर "हैदरशाही" नाम अङ्कित कराया था। रिक्षेतर नामक कोई नापित राजाको अत्यन्त प्रिय रहा। वह मन्त्री हो प्रजाको अतिशय कष्ट देता और राजाको कुकार्यमें फांस दीन दुःखी प्रजासे उत्कोच लेता था। हाजी खान्‌ने स्वीय कर्मचारी और मंत्री प्रभृतिको प्रवर्तनासे द्विजोंको सताया और अपनी पितृप्रदत्तसम्पत्तिसे ब्राह्मणोंको दूर भगाया। उनने १ वर्ष २ मास राजत्व किया।

बाद उनके पुत्र हसनशाह राजा हुवे। उनने दिद्दामठके निकट मनोहर राजधानी बनायी थी। वहीं उनकी माताने एक धर्मशाला भी निर्माण करायी। राजा हसन खान्‌ने अनेक मसजिद धर्मवास प्रभृति बनाये थे। फलतः उन्होंने मठ, अग्रहार दान, देवमन्दिरनिर्माण, अतिथिपूजा आदि सत्कार्य द्वारा अपनी राजसम्पत्तिका साफल्य सम्पादन किया। वह अनेक संस्कृत पद समझते थे। हसन संगीतशास्त्रज्ञ भी रहे। वह स्वयं उत्तम रूपमें राग आलाप कर सकते थे। उनके समय प्रजाने सुखसे कालातिपात किया। पितृव्य बहरामखान् राज्यलाभकी वासनामें हसनसे लड़कर हारे थे। उनने ६० लौकिकाब्दकी चैत्रमास १२ वर्ष ५ दिन राज्य भोगके बाद प्राण त्याग किया।

हसनके बाद उनके पुत्र मुहम्मद शाह काश्मीरका राज्यलाभ कर २ वर्ष ७ मास राजा रहे। उनका राज्य मंत्रियोंकी दुष्ट अभिसन्धिसे डोल उठा था। वह सैयदवंशीयोंके दौहित्र रहे। इसीसे सैयदोंने उनके राज्यमें प्राधान्य पाया था। मुहम्मदके समय मद्रों और सैयदोंका महाविप्लव उपस्थित हुवा। बाद उनके पितृव्य फतेहशाहने काश्मीरका सिंहासन आरोहण किया। उनके समय प्रजाने स्वधर्मनिरत और दयादाक्षिण्यादि विभूषित हो सुखसे समय बिताया था। वह ८ वर्ष १ मास शासन कर राज्यभ्रष्ट हुवे। उनके कोई चन्द्रवंशीय व्यसनशून्य सोमराजानक नामक विनयी मंत्री रहे। किन्तु उनने मीर शेखके आदेशसे ब्राह्मणोंसे पूर्वप्रदत्त सकल भूमि छीन देवालयस्थित भृत्योंको प्रधान बनाया था।

अनन्तर मुहम्मदशाहने पुनर्वार काश्मीरके राजा हो ११ वर्ष १० मास १० दिन शासन चलाया। उनके समय कण्ठभट्टादि महोदयोंने सोमराजानककर्तृक विलुप्त हिन्दू क्रियाका पुनरुद्धार किया था। किन्तु खोजा मीर अहमदने यत्न बाह कर निर्मलादि ब्राह्म-

(जयापीड़के श्यालक और मन्त्री उनकी अनुपस्थिति कालमें)	१८१५-२-२८ लौ० सं०	३ वर्ष
जयापीड़ वा विनयादित्य	१८१८-२-२८ "	३१ "
ललितापीड़	१८४९-२-२८ "	१२ "
पृथिव्यापीड़ वा संग्रामापीड़ २य	१८७१-२-२८ "	७ "
चिप्पट जयापीड़ (बृहस्पति)	१८७८-२-२८ "	१२ "
अजितापीड़	१८८९ "	३० "
अनङ्गापीड़	१९१९ "	३ "
उत्पलापीड़	१९१९ "	२ "

उत्पलवंश ।

अवन्तिवर्मा	८५५ । ६ ई०	
शङ्करवर्मा	८८३ "	
गोपालवर्मा	९०२ "	२ वर्ष
संकट	९०४ "	१० दिन
सुगन्धा	९०४ "	२ वर्ष
पार्थ	९०६ "	
निर्जितवर्मा वा पङ्गु	९२१ "	
चक्रवर्मा	९२३ "	
शूरवर्मा (प्रथम)	९२३ "	१ वर्ष
पार्थ (२य बार)	९२४ "	
चक्रवर्मा (२य बार)	९२५ "	
शम्भुवर्धन	९२५ "	
चक्रवर्मा (तृतीयबार)	९३६ "	
उन्मत्तावन्ति	९३७ "	
शूरवर्मा २य	९३९ "	
यशस्कर,	९३९ "	९ वर्ष
वर्णट	९४८ "	१ दिन
संग्रामदेव	९४८ "	
पर्वगुप्त	९४९ "	
क्षेमगुप्त	९५० "	
अभिमन्यु	९५८ "	
नन्दिगुप्त	९७२ "	
त्रिभुवन	९७३ "	
भीमगुप्त	९७५ "	
दिद्दा	९८०।१ "	
संग्रामराज	१००३ "	
हरिराज	१०२८ "	२२ दिन
अनन्त	१०२८ "	
कलश	१०६३ "	
उत्कर्ष	१०८९ "	२२ दिन
हर्ष	१०८९ "	
उच्चल	११०१ "	
रड्ड वा शङ्खराज	११११ ई०	१ दिन
सल्हण	११११ "	३ मास २७ दिन
सुस्सल	१११२ "	
भिक्षाचार	११२० "	६ मास १२ दिन
सुस्सल २य बार	११२१ "	
जयसिंह	११२८ "	२२ वर्ष
परमाणुक	११४१ "	९ वर्ष ६ मास १० दिन
वन्तिदेव	११६० "	७ वर्ष
बप्पदेव	११६७ "	३ वर्ष ६ मास
जस्सदेव	११७० "	१८ वर्ष १३ दिन
जगदेव	११८८ "	१४ वर्ष ६ मास
राजदेव	१२०२ "	२३ वर्ष ३ मास २७ दिन
संग्रामदेव	१२२५ "	१६ वर्ष १ मास १० दिन
रामदेव	१२४१ "	२१ वर्ष १ मास १३ दिन
लक्ष्मणदेव	१२६२ "	१३ वर्ष ३ मास १२ दिन
सिंहदेव	१२७६ "	१४ वर्ष ५ मास २७ दिन
सूहदेव	१२९० "	१९वर्ष ३ मास २५ दिन
रिंचन (तिब्बतदेशीय)	१३०२ "	३ वर्ष २ मास १९ दिन
उदयानदेव	१३१२ "	१५ वर्ष १मास १० दिन
रानी कोटादेवी (अराजक)		

मुसलमान वंश ।

शाहमीर (ताहरराजकुलीय) वा

शमस उद्-दीन	१३३९ ई०	३वर्ष ११मास २५ दिन
१८ मुसलमानराज		
जमशेद (जमशेद)	१३४० "	१ वर्ष २ मास
अला उद्-दीन	१३४१ "	१२ वर्ष ८ मास १३ दिन
शहाब्-उद्-दीन	१३५४ "	२० वर्ष
कुतुब-उद्-दीन	१३७४ "	१५ वर्ष
सिकन्दर	१३९० "	२२ वर्ष ९ मास ६दिन
अलीशाह	१४१६ "	६ वर्ष ९ मास
जैन-उल-आबदीन	१४२२ "	५२ वर्ष
हाजी हैदर शाह	१४७४ "	१ वर्ष २ मास
हुसेन शाह	१४७५ "	१२ वर्ष ३ मास
मुहम्मद शाह	१४८६ "	२ वर्ष ७ मास
फतेह शाह	१४८६ "	९ वर्ष १ मास
मुहम्मदशाह (द्वितीयबार)	१४९५ "	९ मास ९ दिन
फतेह शाह (द्वितीयबार)		१ वर्ष १ मास
मुहम्मद शाह (तृतीयबार)		११ वर्ष १० मास १० दिन
इब्राहीम		८ मास २५ दिन
नाजुकशाह	१५२० "	१ वर्ष
मुहम्मदशाह (चतुर्थबार)		५ मास
मस्ती (शमस शाह)		२ मास
इस्माईल		२ वर्ष ९ मास

यों को मरवा डाला—"हे विप्र लोगो! इस कलियुग में तुम्हारा ब्रह्मतेज कहां है? वा आचार ही कहां है?" इसी समय मुहम्मद शाहको फतेहशाहका मृत्युसंवाद मिला था। उनके समय अन्य किसी चक्रवर्ती राजा सम्राट् सिकन्दरने काश्मीरराज्य आक्रमण किया, किन्तु मुहम्मदने उनको हरा दिया। फिर फतेहशाह के पुत्र मानू विहृव्व राजा पुनः पानेको आशासे काश्मीर पहुंचे। उसने मुहम्मदको राज्यभ्रष्ट किया था। इसके बाद बाबरने इब्राहीमको काश्मीरका राजा बनाया। उसी समय काश्मीरराज्यमें तुरुष्क राजका विषम उपद्रव उठा था। प्रथम मार्गेश्वर अब्दलने मुगलराज बाबरके निकट गमनपूर्वक काश्मीर राज्य जीतनेके लिये सैन्य मांगा। बाबरने उनको एक सहस्र सैनिक दिये थे। अब्दलने फतेहशाहके पुत्र नाजुकशाहको आगे रख गिरिपथसे काश्मीर राज्यमें प्रवेश किया। इसने तुरुष्क सैन्य द्वारा काश्मीर जीत नाजुकशाहको राजा बना दिया।

फिर मुहम्मद शाहके दोबारा राजा होने पर तुरुष्क-सैन्य अपने स्थानको चला गया। नाजुक शाहने १ वर्ष राज्य कर मुहम्मदसे यौवराज्य पाया था। ५ वर्ष पीछे पुनर्वार मुहम्मद राज्यपर अभिषिक्त हुये, उनके पीछे बाबर मर गये। उनके कामरान् और हुमायूं नामक पुत्रद्वयने काश्मीरराज्य प्राप्त किया। कुछ दिन पीछे महरम नामक सेनापति बहुतर सैन्य से काश्मीर जीतने गये थे। पौरगणने भयसे पार्वत्य प्रदेशको पलायनपूर्वक गुहादिमें आश्रय लिया। उस समय पुरीको शून्य देख मुगलोंने राजधानीके मकान घरादि जला दिये और सहस्र सहस्र व्यक्तियोंके प्राण विनाश किये। फिर काश्मीरमें काशगरोंका उपद्रव उठा था। उन्होंने तुरकोंमें बहु ग्राम नगरादि जला डाले और धन रत्न एवं रमणीय वस्त्र बलपूर्वक स्वदेश को चले गये। उसके पीछे काश्मीरराज्यमें भयानक दुर्भिक्ष पड़ा था। मुहम्मदशाहने फिर ५ वर्ष राजत्व कर शरीर परित्याग किया।

अनन्तर उनके पुत्र शमसशाह राजा हुये। उनके समय काशगरपति काश्मीर आक्रमण करने आने- हुये बन पड़े। बाद सन्धिसूत्रसे युद्ध बन्द हो गया। शमसशाहके बाद उनके भ्राता इस्माइल शाह राजा हुये। उधर सुगल सैनाने नाजुकशाह आपड़ जैन जीतने सैन्य सह चले गये। नाजुकशाहके राजत्वकाल काश्मीरको प्रजाने कुछ स्वच्छन्दसे दिन यापन और समस्त वैदिक क्रिया कलाप निर्विघ्न निर्वाह किया था। उनके समय ग्राम विभाग पर शासनादिकोंमें विरोध हो गया। इसी विरोधसे मिर्जा हैदर और दौलतखान् लड़ने लगे। एक मास लड़ाई होनेके पीछे दौलत (गाजीखान्) भागे थे। इसके पीछे उन्होंने राज्यशासन किया। उनके समय काश्मीरमें भयङ्कर भूमिकम्प हुआ था। उससे अनेक स्थान विध्वस्त हो गये। किसी दिन दौलतखान्ने सुलसुल स्थान पर अभिमन्यु नामक महात्मा साधुके निकट जाकर पूछा था—"हमारा राज्य किस प्रकार विध्वस्त न होगा।" उस पर साधुने उत्तर दिया—"ब्राह्मणोंसे वार्षिक कर न लेने पर तुम्हारी अभीष्ट सिद्धि होगी।" यह सुनकर दौलतने कहा था—"हम म्लेच्छ हो कर आपको आज्ञासे किस प्रकार ब्राह्मणोंका कर निवारण करेंगे?" उस पर साधुने क्रोधाविष्ट हो शाप दिया—"अल्पदिन-के मध्य ही तुम्हारी राजश्री विनष्ट जायेगी।" उसीसे दौलतको राजसम्पत्ति विनष्ट हो गयी। उसके पीछे हबीब नामक किसी व्यक्तिके एक मास राजत्व करने पर गाजीखान्ने राज्य ग्रहण किया था। किसी दिन उसने गणकोंसे पूछा—"हमारे राज्यमें भूमिकम्पादि दुर्निमित्त क्यों होते हैं?" उसने उत्तर दिया—"आपके राज्यमें और घोरतर लड़ाई होगी।" कुछ दिन पीछे मिर्जा हैदरके सेनानी हबत् सैय्यदन से काश्मीर जा पहुंचे। गाजीखांकी सुसैन्य रानावर नामक स्थानमें जा युद्ध घोषणा की थी। उस लड़ाईमें हैदरके सेनानी गाजीखांका सामन्तदल सेनासमूह देख भयसे भाग गये। उसके पीछे गाजीखांके साथ भोटोंका युद्ध हुआ। उसमें उनने हबीबको हार जय पाया था।

हुसेनखान शाह अब्दल मालीके कहनेसे सौभाग्यमद काश्मीर जय करनेको उपस्थित होने पर दौलत

[illegible] ([illegible])		[illegible]
[illegible] ([illegible])		[illegible]
[illegible]	[illegible] ई०	[illegible]
[illegible] ([illegible])		[illegible]
[illegible] }		[illegible]
[illegible]	[illegible] ई०	[illegible]
[illegible]		[illegible]
[illegible]	[illegible] "	[illegible]
[illegible]		[illegible]
[illegible]		[illegible]
[illegible] ([illegible])		[illegible]
[illegible]		[illegible]
[illegible] ई० से [illegible] ई०		
[illegible]	[illegible] "	
[illegible]	[illegible] ,, [illegible]	
[illegible]	[illegible] ,,	
[illegible]	[illegible] ,,	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible] ,,	

प्राचीन मन्दिर और भग्नावशेष—मुसलमान ऐतिहासिक काश्मीरमें भी बहुतसी पुरानी चीजें देखने लायक हैं। इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है कि काश्मीरमें प्रायः प्रथम हिन्दूराजाओंके द्वारा अथवा उनके शासनमें [illegible] नाना स्थानोंमें बहुत बहुत देवमूर्ति एवं देवमन्दिर प्रतिष्ठित हुये थे। कालक्रम उनमें अधिकांश विनष्ट गये। फिर भी उनकी संख्या बहुत कम नहीं। आज भी श्रीनगर, पाण्ड्रेथन्, अवन्तिपुर, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], तथा [illegible] दिखने लायक स्थान और [illegible] प्राचीन देवालय [illegible] पड़े हैं। इन प्राचीन मन्दिरोंका [illegible] देखनेसे [illegible] होना पड़ता है। [illegible] देवमन्दिर दर्शन करनेसे किसी [illegible] उनका [illegible] और [illegible] आदि देखने [illegible] है। प्राचीन [illegible] प्रभृति [illegible] है।* [illegible] प्राचीन [illegible] करने [illegible] है। [illegible]

[illegible] भी [illegible] व्यापार [illegible] होता है। [illegible] जाता है। [illegible] होती है। [illegible] भी [illegible] है। [illegible] भी [illegible] व्यापार [illegible] जाता, [illegible] अधिकांश [illegible] है। किन्तु [illegible] हैं, जिनके [illegible] व्यापारको [illegible] नहीं [illegible]। [illegible] की बात कहेंगे।

[illegible]—श्रीनगरसे [illegible] पर एक [illegible] है। [illegible] एक [illegible] करते हैं। यहां [illegible] और [illegible] देवी [illegible] पूजा करते हैं। [illegible] कभी [illegible], कभी [illegible], कभी [illegible] [illegible] धारण करता है। [illegible] होता है [illegible] वैज्ञानिक [illegible] सकता है।

[illegible]—श्रीनगरके [illegible] होता है। [illegible] और [illegible] है [illegible] बड़े [illegible] हैं। [illegible] पर [illegible] हैं। [illegible] भी [illegible] पूजा करते हैं। [illegible] है। [illegible] आते हैं।

* Asiatic J. [illegible] Vol XXV [illegible] [illegible] [illegible]

कुण्डसंयोग—काश्मीरके दक्षिण भागमें देवसर पर गनेके बीच वासुकिनागकुण्ड है। उससे प्रायः १० कोस दूर पीरपंजालके दूसरे पार्श्वपर गुलाबगढ कुण्ड पड़ता है। आश्चर्यका विषय है कि उन दोनों कुण्डोंसे एकमें जल रहने पर दूसरा सूख जाता है। इसी प्रकार प्रत्येकमें छह छह मास जल रहता है।

जटागङ्गा—श्रीनगरके दक्षिण छेसू परगनामें चनहामा ग्राम है। उस ग्राममें जटागङ्गा नामक कोई कुण्ड है। वह संवत्सर शुष्क रहता है। केवल भाद्रमासकी शुक्लाष्टमी तिथिको उच्च भूमिमें जल आ अकस्मात् उसको परिपूर्ण कर देता है। उसीप्रकार काश्मीरमें नित्य कई अद्भुत नैसर्गिक व्यापार होते हैं। सामान्य मानव उनके प्रकृत तथ्यके निर्णयमें अक्षम है।

जाति—काश्मीरमें नाना जातिका वास है। इनमें प्राचीन अधिवासी ब्राह्मण हैं। कितने ही ब्राह्मणोंने मुसलमान धर्म ग्रहण कर लिया है। काश्मीरका वर्तमान राजपरिवार डोगरा राजपूत जातिभुक्त है। डोगरा लोग जम्बू उपत्यकामें अधिक देख पड़ते हैं। इस जातिके मध्य सकल ही प्रायः हिन्दू होते हैं।

पश्चिमांशमें सिन्धुप्रवाहित गिरिप्रदेश अवधि छिबी तथा बम्बा जाति और दक्षिणांश एवं झिलमके पश्चिम गक्खर, गुज्जर, खतीर, अवन, जच्छू प्रभृति लोगोंका वास है। पूर्वांशमें लादख और बलतिस्तानमें प्रधानतः भोट जाति रहती है। जम्बूमें डोम, मेघ, हिन्दूपहाड़ी, गद्दी, चांवाल प्रभृति मिलते हैं। उत्तरांशमें प्रायः सर्वत्र चम्पा और दरद जाति देख पड़ती है।

* काश्मीरके सम्बन्धमें विस्तृत विवरण मालूम करनेकी इच्छा हो तो निम्नलिखित पुस्तक द्रष्टव्य हैं—कल्हण पण्डित राजतरङ्गिणी; जोनराजकृत राजावली; श्रीवरपण्डित जैनराजतरङ्गिणी; प्राज्यभट्टकृत राजावलिपताका, शाकभाजपक्ष काश्मीरतीर्थसंग्रह, तारीख-ई-काश्मीरी, नवादिर-उल्-अखबार, गुलशन्-ई-आजिमका वाकियात काश्मीर, बदर-उद्-दीनका तारीख-ई-आजम-दीदमारी, तबकात-काश्मीरी, तबकात अकबरी, Malleson's Native States; Moorcroft's Travels, Forester's Journal, Vol II; Baron Hugele's Travels in Kashmir; Vigne's Travels; Cunningham's Ancient Geography of India; Drew's Jummoo and Kashmir; Schonberg's Travels in Kashmir; Bellew's Kashmir etc.

(त्रि०) ५ काश्मीरदेशवासी, कश्मीरका रहनेवाला।

काश्मीरक (सं० त्रि०) काश्मीरे भवः, काश्मीर-वुञ्। १ काश्मीरदेशीय, कश्मीरमें पैदा होनेवाला। (पु०) २ काश्मीरदेशवासी, काश्मीरका बाशिन्दा। ३ काश्मीर देशका राजा।

काश्मीरज (सं० क्ली०) काश्मीरे जायते, काश्मीर-जन-ड। सप्तम्यां जनेर्डः। पा ३।२।९७। १ कुङ्कुम, जाफरान, केसर। २ कुष्ठभेद, एक दवा। ३ पुष्करमूल। ४ अतिविषा।

काश्मीरजन्मा (सं० क्ली०) काश्मीरे जन्म यस्य, बहुव्री०। कुङ्कुम, जाफरान, केसर।

काश्मीरजा (सं० स्त्री०) अतिविषा, अतीस।

काश्मीरजीरक (सं० क्ली०) शुक्लजीरक, सफेद जीरा।

काश्मीरपुष्प (सं० क्ली०) गाम्भारी वृक्ष, गम्भारीका पेड़।

काश्मीरा (सं० स्त्री०) काश्मीरे भवः, काश्मीर-अण्-टाप्। तत्र भवः। पा ४।३।५३। १ अतिविषा, अतीस। २ कपिल-द्राक्षा, काला दाख। ३ स्थल पद्मिनी।

काश्मीरा (हिं० पु०) १ वस्त्रविशेष, कोई कपड़ा। यह मोटे ऊनसे तैयार होता है। २ किसी किस्मका अंगूर।

काश्मीरिक (सं० त्रि०) काश्मीरे भवः, काश्मीर-ठञ्। काश्मीरदेशीय, कश्मीरमें पैदा होनेवाला।

काश्मीरी—काश्मीर देशकी भाषा। यह किसी अपभ्रंश भाषासे उत्पन्न हुई है। इसके पहले पिशाची प्राकृत भाषा थी। वर्तमानकी काश्मीरी भाषा उसका दूसरा संस्करण है। इसको बोलनेवाले दशलाखसे ऊपर मनुष्य हैं।

काश्मीरी (सं० स्त्री०) काश्मीर-ङीप्। १ गाम्भारी वृक्ष, गम्भारीका पेड़। २ कपिलकृष्णनाभि, काली कस्तूरी।

काश्मीरी (हिं० वि०) १ काश्मीरदेश-सम्बन्धीय, काश्मीरसे तअल्लुक रखनेवाला। २ काश्मीरदेशवासी, कश्मीरका बाशिन्दा। (पु०) ३ बबरका पेड़। ४ काश्मीरका ब्राह्मण। काश्मीरमें नाना स्थानों पर विदेशीय लोग देख पड़ते भी पुरातन हिन्दू अधिवासी मात्र ब्राह्मणके नामसे अभिहित हैं। भारतवर्षमें नाना स्थानों पर जो शाखाभेद रहता है, वह काश्मीरियोंमें देख नहीं पड़ता। सब अपनेको 'काश्मीरिक' या 'सारस्वत' शाखाभुक्त बतलाते हैं। अति पूर्वकालसे काश्मीर

कासन्दीवटिका (सं॰ स्त्री॰) १ कासघ्न औषध, खांसी मिटानेवाली दवा । २ एक अचार, कसौंदी । राजवल्लभ के मतानुसार वह रुचिकारक, अग्निवर्धक, वायु एवं मल अनुलोमक और वातश्लेष्मज रोगनाशक होती है।

कासपीडित (सं॰ त्रि॰) कासेन कासरोगेण पीडितः, ३-तत् । कासरोगी, खांसीका बीमार, जिसको खांसी आती हो।

कासभञ्जन (सं॰ पु॰) पटोल, परवल ।

कासमर्द (सं॰ पु॰) कासं मृद्नाति, कास-मृद्-अण् । कर्मण्यण्। पा। ३।२।१। स्वनामख्यात पत्रशाकविशेष, कसौंदा।

कासमर्दका पञ्चनरसमें प्रयोग करते हैं, वह अग्निदीपन और स्वादु होता है। (राजवल्लभ) कासमर्द तिक्त, उष्ण, मधुर, कफवातघ्न, अजीर्णघ्न, कासपित्तघ्न और कण्ठशोधन है। (राजनिघण्टु) कासमर्दका पर्ण-पाकमें कटु, हृद्य, उष्ण, लघु और श्वास, कास तथा अरुचिघ्न है। पुष्प श्वास-कासघ्न तथा वातविनाशन होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

२ वेशवारविशेष, कसौंदी। ३ पटोल, परवल। ४ कासघ्न औषध, खांसीको मिटानेवाली दवा।

कासमर्दक, कासमर्द देखो

कासमर्दकपत्र (सं॰ क्ली॰) कासमर्दकदल, कसौंदेका पत्ता।

कासमर्ददल, कासमर्दकपत्र देखो।

कासमर्दन (सं॰ पु॰) कासं मृद्नाति, कास मृद् कर्तरि ल्यु। पटोल, परवल।

कासमर्दिका (सं॰ स्त्री॰) कासमर्द, कसौंदा।

कासर (सं॰ पु॰) के जले आसरति, क-आ-सृ-अच् । महिष, भैंसा; उसे अधिक समय तक जलमें रहना अच्छा लगता है। (हिं॰ स्त्री॰) २ काली भेड़। इसके पेटके रोयें लाल होते हैं।

कासरोग (सं॰ पु॰) रोगविशेष, खांसीकी बीमारी। कास देखो।

कासलक्ष्मीविलास—वैद्यकोक्त औषधविशेष, खांसीकी कोई दवा। वङ्ग, लौह, अभ्र, ताम्र, कांस्य, पारद, गन्धक, हरिताल मनःशिला और खर्पर प्रत्येक एक पलके हिसाबसे एकत्र मिलाना चाहिये। फिर केशराजके रस तथा कुलत्थ कलायके क्वाथमें तीन दिन भावना दे उसमें इलायची, जायफल, तेजपात, लौंग, अजवाइन, जीरा, त्रिकटु, त्रिफला, नागपादुका, गुड़त्वक् और वंशलोचन प्रत्येक दो दो तोला डालते हैं। अंतको केशराजके रस और कुलत्थ कलायके क्वाथमें लपेट चणक प्रमाण वटिका बना ली जाती है। अनुपान शीतल जल है। मत्स्य, मांस, दुग्ध और स्निग्ध आहार पथ्य होता है। शाकाम्लको छोड़ देना चाहिये। उक्त औषध सेवन करनेसे कास, यक्ष्मा, श्वास, ज्वर, पाण्डुरोग, शोथ, शूल, अर्श प्रभृति रोग शान्त होते हैं। फिर कासलक्ष्मीविलास बलवर्धक और तृष्णा तथा अरुचिनाशक भी है। (भैषज्यरत्नावली)

कासलनाडू—तैलङ्ग ब्राह्मण जातिका ६ ठा भेद। ऐलिस्वरोपाध्यायने यह भेद डाले थे।

काससंहारभैरव (सं॰ पु॰) वैद्यकोक्त कासरोगका औषधविशेष, खांसीकी एक दवा। पारद, गन्धक, ताम्र, शङ्खभस्म, कौड़ीकी भस्म, लौह, मरिच, कुष्ठ, तालीशपत्र, जातीफल, लवङ्ग प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले एकत्र मिला भेकपर्णी, केशराज, निर्गुण्डी, काकमाचिका, द्रोणपुष्पी, शालची, मीनसुन्दर, भार्गी, हरीतकी तथा वासाके रससे घोंटना चाहिये। पञ्चगुञ्जाके समान वटिका सेवन करनेसे कासरोग दूर होता है। (रसरत्नाकर)

कासहरवर्ग (सं॰ पु॰) कासरोगनाशक दश द्रव्य समूह, खांसीकी बीमारी दूर करनेवाली दश चीजोंका जखीरा। इसमें द्राक्षा, अभया, आमलक, पिप्पली, दुरालभा, शृङ्गी, कण्टकारी, वृश्चीर, पुनर्नवा और तमालका डालते हैं। (चरक)

कासहाक्वाथ (सं॰ पु॰) १ कण्टकारीजात पिप्पलीचूर्णयुक्त कासहर क्वाथ, खांसीका कोई काढ़ा। वह कण्टकारीसे बनता और उसमें पिप्पलीचूर्ण पड़ता है। २ धूमपान विशेष। उसमें धूमकी नाड़ी १६ अङ्गुली रहती है। धूम द्रव्यको अङ्गारकोषणमें जलाना चाहिये।

कासाम्लकरस (सं॰ पु॰) कासाधिकारका रसविशेष, खांसीकी एक दवा। पारद, गन्धक, शङ्खविष, शाल-

ब स्पृश्य होते भी इनके कार्य यहाँ इनका प्रवेश निषिद्ध कि मालके भोगा जाते हैं ये सब ब्राह्मण ब्राह्मणोंमें गये हैं। बङ्गालके राजतरङ्गिणीमें मालवा, कान्यकुब्ज, गौड़, गौड़ प्रभृति स्थानोंसे ब्राह्मणोंके आनेकी कथा कही है।

आजकल यह काश्मीरी ब्राह्मण एक सम्प्रदायभुक्त है। सभी दशरथ यज्ञ पञ्च और यज्ञोपवीतादि किया करते हैं। किन्तु इनके समाजमें सबके साथ योनि सम्बन्ध नहीं चलता। आचार-व्यवहार भारतके अपर ब्राह्मणोंकी भांति है। फिर भी देशभेदसे कुछ पार्थक्य पड़ गया है। यह दाक्षायण उपनयन ग्रहण करते हैं। उपनय उपर्युक्त होने पर यथानियम प्रायश्चित्त भी किया जाता है। प्रायश्चित्त न करनेसे राजद्वारमें दण्डनीय होते हैं। हिन्दुस्तानमें ब्राह्मणसन्तान छेद उपनयनके ११० दिन पीछे नियमा योग रखते, काश्मीरमें वैसे नहीं करते। यह दीक्षाके पीछे आजीवन कामरूप पर यज्ञोपवीत और दक्षिणहस्तमें कुशको लिपटा रखते हैं। इनके द्वारा वैदोक्त कर्मकाण्ड तथा नियम पालन किये जाते हैं। फिर भी बहुतोंने शास्त्रचर्चा छोड़ दी है। कितने ही पण्डितोंने कागजी पढ़ नाना उपायोंसे जीविका चलाते हैं। काश्मीरी ब्राह्मणोंमें कुछ व्यतिक्रम देख पड़ता है।

यह प्रायः सभी शैव हैं। शाक्ताचार तान्त्र बहुत अल्प हुए होते हैं। इनमें अधिक शैव, शाक्त और भागवत वैष्णव हैं। आजकल प्रायः तीन प्रकारके काश्मीरी ब्राह्मण देख पड़ते हैं—१म श्रेणीके ब्राह्मण 'पण्डित' नामसे प्रसिद्ध हैं। यह केवल शास्त्रचर्चामें अधिष्ठीन जप तथा श्राद्धादि कर्मकाण्ड द्वारा एवं राजवृत्ति-भोगसे कामको निबाहते हैं। २य 'राजवान' हैं। यही प्रधान राजकर्मचारी और व्यवसायी होते हैं। ये संस्कृत भाषा छोड़ फारसी पढ़ते हैं। ३य बाछ-भट्ट होते हैं। यह शैवाल, पुजारी और तीर्थस्थलमें दलालोंका काम करते हैं। १म श्रेणीके ब्राह्मण ३य श्रेणी-वालोंसे मन ही मन घृणा करते और कन्यादान करना ठीक नहीं समझते। पण्डित और राजवान भी परस्पर-दानादि ग्रहण करते हैं। १म श्रेणीके ब्राह्मण प्राय जो काश्मीरमें एक महाविहार पर नियुक्त होते हैं।

काश्मीरी ब्राह्मण सभी वेद पाठ किया करते हैं। कोई कोई अपनेको यजुर्वेदी बतलाते हैं। किन्तु यह काठकशाखायुक्त हैं।

गोत्र—१म पण्डितवंशीयोंके मध्य १ शाण्डिल्य, २ कौशिक, ३ भारद्वाज, ४ उपमन्यु, ५ दत्तात्रेय, ६ गार्ग्य और ७ आत्रेय गोत्र हैं।

२य-राजवानोंमें गौतम, कौशाद्य और दत्तात्रेय गोत्र पाया है।

३य-बाछभट्टोंमें विश्वामित्र और भारद्वाज प्रचलित हैं।

शैव सम्प्रदाय वैदोक्त विधि और शाक्त शास्त्र पर वीरतन्त्र के क्रियाकाण्डानुसार तान्त्रिक पूजादि सम्पन्न करते हैं।

काश्मीर्य (सं० त्रि०) काश्मीर-ष्यञ्। १ काश्मीरदेशीय, काश्मीरवाला। (स्त्री०) २ कुङ्कुम, जाफरान्, केसर।

काश्य (सं० क्ली०) कुत्सितं अश्यं यस्मात्, बहुव्री०। १ मद्य, शराब। (पु०) २ काशिराजविशेष, काशीका कोई राजा। (भाग ९।१७।४८।)

काश्यक (सं० पु०) काश्य स्वार्थे संज्ञायां वा कन्। राजविशेष, कोई राजा।

काश्यप (सं० पु०) कश्यपस्य गोत्रापत्यम्, कश्यप-अण्। १ कणाद मुनि। २ मृगविशेष, कोई हिरन। ३ मत्स्य विशेष, एक मछली। ४ गोत्रविशेष। ५ काश्यप स्व-रामगोत्र एक मुनि। ६ अरुणका नामान्तर। ७ ब्राह्मण-विशेष। काश्यप ब्राह्मण विषविद्यामें पारदर्शी रहे। महाभारतमें इनका विवरण इस प्रकार लिखा गया है—"जिस समय राजा परीक्षित शापके वश तक्षक साँपको काटनेसे मरनेको हुये, उसी समय काश्यप ब्राह्मण उनको बचानेके लिये गये। पथिमध्य तक्षकसे भेंट हो गई। तक्षकने विषविद्याकी देखनेको अश्वत्थ वृक्ष को दंशन द्वारा भस्मीभूत कर फिर जीवित करनेको कहा। उन्होंने अपने विद्याबलसे अश्वत्थ वृक्ष पुनर्जीवित कर दिया। फिर तक्षकने सोचा, यह तो अवश्य परीक्षितको फिर जिला सकेंगे। इससे उन्होंने ब्राह्मणको प्रचुर धनादि दे रास्तेसे वापस लौटा दिया।" (महाभा० आदि० ४२ अध्याय)

चर्बी और धान्यक प्रत्येकका चूर्ण समभाग तथा सर्व-चूर्णके सम परिमाण चीनी डाल कर गुड़ाके तुल्य मधुके साथ सेवन करनेसे कासरोग आरोग्य होता है।

(रवीन्द्रनाथ घोष)

कासार (सं॰ पु॰) कास-आरन्, कस्य जलस्य आसारो यत्र। (उणादि॰ ३। १३८।) १ हृहत् सरोवर, बड़ा तालाब। २ दण्डकजातीय छन्दोविशेष। इस छन्दमें ३० रगण रहते हैं। ३ भावप्रकाशोक्त पक्वान्नविशेष, एक मिठाई। माषचूर्ण (उड़द), शृङ्गाटक (सिंघाड़ा), कसेरु, शालूक प्रभृति द्रव्य पेषण कर चतुष्कोण खण्ड बनाना पड़ते हैं। उसके पीछे उन खण्डोंको तप्त घृतमें भून चीनीको चाशनीमें डालते हैं। कासार—रुचिकारक और अधिक रुच तथा पिच्छिल न होनेवाला है। यह वमनेच्छा, कफ और पित्तका नाश करता है। (भावप्रकाश)

कासारि (सं॰ पु॰) कासस्य अरिः नाशकः, ६-तत्। कासमर्द, कसौंदा।

कासालु (सं॰ पु॰) कासजनक आलु, मध्यपदलो॰। गौड़प्रदेशप्रसिद्ध आलुविशेष। इसका संस्कृत पर्याय—कासकन्द, कन्दालु, आलुक, आलु, विशाल-पत्र और वनालु है। राजनिघण्टुके मतसे यह मधुर-रस, उष्णवीर्य, शिरःशोधक, अग्निकारक और कण्ठ, वायु, प्रमेहरोग तथा मद्यविनाशक होता है।

कासिका (सं॰ स्त्री॰) १ कफ, खांसी। २ वगमुख, बगलेकी चोंच।

कासिद (अ॰ पु॰) पत्रवाहक, हरकारा।

कासिप—राजपूतोंकी एक जाति। कासिप लोग युक्त-प्रदेशमें रहते हैं। अपने मतसे यह कश्यपवंशीय क्षत्रिय हैं। परन्तु बहुतसे लोग इन्हें क्षत्रिय नहीं मानते।

कासिम—बसराके शासनकर्ता हजाजके भ्रातुष्पुत्र। खृष्टीय अष्टम शताब्दको भारतललनाके रूपकी कथा सुलतान खलीफाके अन्तःपुरमें निकली थी। खलीफा-को लोभ लग गया। शासधारी अब उसकी मनस्तुष्टि के लिये अर्थवर्षणमें लग दिये। सिन्धुप्रदेशके देवल नामक बन्दरमें भारतवासियोंने अरबी पोतको आक्र-मण किया था। उक्त घटनाका समाचार खलीफाको मिला। अरबोंकी मानरक्षाके लिये विंशतिवर्षीय मुह-म्मद कासिम ६०० पदातियों और १००० अश्वारोहियोंके साथ भेजे गये। युवकने विपुल साहससे देवलबन्दर आक्रमण किया। उस समय समस्त सिन्धुदेश मुल-तान सह हिन्दू राजा डाहिरके अधीन था। महाराज डाहिर राज्यकी रक्षाके लिये आसिमसे बहुत लड़े। वह स्वयं हाथी पर चढ़ रणमें गये थे। घटनाक्रमसे मुसलमानोंके फेंके अग्निगोलक द्वारा उनका हस्ती आहत हुआ और प्रबल वेगसे आरोहीके साथ नदीके अभ्यन्तरमें गिर पड़ा। हिन्दुओंका सैन्य राजाकी यह अवस्था देख भागा था। और कासिम उस समय सुविधा देख अपनी मुष्टिमेय सैन्यसे डाहिरकी अगार महती विपुल वाहिनीको विध्वस्त करने लगे। शत शत ब्राह्मण और राजपूत मुसलमानोंके हाथ निहत हुये। दुर्भाग्य क्रमसे हिन्दूराजने यादवकुल कालका आतिथ्य स्वीकार किया था।

कासिम देवलक्षेत्र परित्याग कर ब्राह्मणाबादसे अभिमुख अग्रसर हुये। राजभक्त ब्राह्मण और राजपूत डाहिरकी आकस्मिक विपद् देख अधीर गये थे। सुतरां सामर्थ्य रहते भी किसीने राजधानीकी रक्षा-के लिये विशेष यत्न न किया।

मुहम्मद कासिमने ब्राह्मणाबाद नगरमें जाकर देखा कि एक ओर गगनस्पर्शी प्रज्वलित चिता सज्जित रही और दूसरी ओर महाराज डाहिरकी वीर महिषी ससैन्य विपक्षके गतिरोधार्थ उपस्थित थीं। हिन्दू वीरबाला अनेक चेष्टा करने पर भी राज्य बचा न सकीं। उन्होंने देखा कि भीरु ब्राह्मणोंको देखा देखी उनका राजपूत सैन्य भी पृष्ठ प्रदर्शन करता था। उस समय पतिके मानकी रक्षाको रानीने सपत्नी और पुरमहिलाओंके साथ उसी ज्वलत् चितापर आरोहण किया। कासिम अनेक उपायोंके पीछे दो राजकन्याओं-को बन्दी बना स्वदेश लौट गये। सुलतान खलीफाने शासनकालकी सभामें उन दोनों राजकन्याओंको बुलाया था। ज्येष्ठा कन्या सभामें आकर रोने लगी। खलीफाने रोनेका कारण पूछा था। राजबालाने उत्तर दिया—

(क्ली०) ८ मांस, गोश्त। (त्रि०) ८ काश्यप प्रजापतिवंश वा गोत्रसम्बन्धीय।

काश्यपायन (सं० पु०) कश्यपस्य गोत्रापत्यम्, कश्यप-फक्। अश्वादिभ्य-फञ्। पा ४।१।११०। काश्यपके गोत्रापत्य वा वंशधर।

काश्यपि (सं० पु०) कश्यपस्य अपत्यम्, कश्यप बाहुल-कात् इञ्। १ अरुण, सूर्यके सारथी। २ गरुड़।

काश्यपिन् (सं० पु०) काश्यपेन प्रोक्तं अधीयते इति, काश्यप-णिनि। शौनकादिभ्यश्छन्दसि। पा ४।३।१०६। काश्यप-प्रणीत शाखाविशेषके अध्ययनकर्ता।

काश्यपी (सं०स्त्री०) कश्यपस्य इयम्, काश्यप-अण्-ङीप्। तस्येदम्। ४।३।१२०। १ पृथिवी, जमीन्। २ प्रजा, रैयत।

काश्यपीबालाक्यामाठरीपुत्र (सं० पु०) वेदशाखा प्रवर्तक एक ऋषि।

काश्यपेय (सं० पु०) काश्यपी अदितिः तत्र भवः, काश्यपी-ढक्। १ सूर्य, सूरज।

"जवाकुसुमसङ्काशं काश्यपेयं महाद्युतिम्।
ध्वान्तारिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्॥" (सूर्यप्रणाम)

२ देवमात्र। ३ असुरमात्र। ४ गरुड़।

काश्यायन (सं० पु०) काश्यस्य काशिराजस्य गोत्रा-पत्यम्, काश्य-फक्। काशिराजवंशीय।

काश्मरी (सं० स्त्री०) काश-वनिप् ङीप् रश्च। वनो-र च। ४।१।७ क्षुद्र गाम्भारी वृक्ष, गम्भारीका छोटा पेड़।

काष (सं० पु०) कष्यते अनेन, कष करणे घञ्। १ कष्टि-प्रस्तर, कसौटी। २ ऋषिविशेष।

काषाय (सं० त्रि०) काषायेण रक्तम्, कषाय-अण्। कषायद्रव्य द्वारा रञ्जित, सुर्ख लाल।

"काषायपरिवीतस्तु कथं रामो भविष्यति।" (रामायण २।१२।८८)

काषायकन्थ (सं० पु०) काषाया कन्था यस्य, बहुव्री०। कषाय द्रव्य द्वारा रक्तवर्ण कन्थाधारी भिक्षुकविशेष।

काषायण (सं० पु०) कषस्य ऋषेः गोत्रापत्यम्, काष फक्। काषऋषिगोत्रीय कोई ऋषि। वह वाजस-नेय शाखायुक्त थे।

काषायवसन (सं० त्रि०) काषायं कषायरक्तं वसनं यस्य, बहुव्री०। काषायवस्त्र वर्जित, गेरुवे कपड़े पहने हुआ।

काषायवासिक (सं० पु०) काषाये कषायरक्तवस्त्रे वासोऽस्यास्ति, काषाय-वास-ठन्। कीटविशेष, एक कीड़ा। वह सौम्य और सविष होता है। उसके काटने-से श्लेष्मजन्य रोग हो जाता है।

काषायी (सं० पु०) कषायिणा प्रोक्तमधीते, कषाय शौन-कादित्वात् णिनि। १ कषाय ऋषिकथित शाखाध्यायी। (स्त्री०) २ सविष मक्षिका विशेष, कोई जहरीली मक्खी।

काष्ठ (सं० क्ली०) काशते दीप्यते अनेन, काश-क्थन्। हनि कुषिनीरमिकाशिभ्यः क्थन्। उण् २।२। दारु, लकड़ी, काठ। काष्ठका लक्षण इस प्रकार कहा गया है—

"असारमतिशुष्कं यत् मुष्टिमध्ये समेयति।
तत्काष्ठं काष्ठमित्याहुः खदिरादिसमुद्भवम्॥"

खदिर प्रभृति वृक्ष समूहका जो खण्ड सारयुक्त, अत्यन्त शुष्क और मुष्टि द्वारा ग्रहण करनेके उपयुक्त होता, वही काष्ठ कहाता है।

काष्ठक (सं० क्ली०) काष्ठं सत् कायति, काष्ठ कै-क। यद्वा काष्ठं विद्यतेऽस्य, काष्ठ-क कुक्-कस्य लुक्। १ अगुरु। २ काष्ठागुरु। ३ कृष्णागुरु। (त्रि०) ४ काष्ठयुक्त।

काष्ठकदली (सं० स्त्री०) काष्ठवत् काष्ठमा कदली, मध्यपदलो०। वन्य कदलीविशेष, कठकेला। उसका संस्कृत पर्याय-सुकाष्ठा, वनकदली, काष्ठिका, शिला रम्भा, दारुकदली, फलाढ्या, वनमोचा और अश्म-कदली है। राजनिघण्टुके मतानुसार वह रुचिकारक, रक्तपित्तनाशक, शीतल, गुरु, मन्दाग्निकारक, दुष्पच्य और मधुररस होती है। उसके खानेसे तृष्णा, दाह, मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त, विस्फोटक और अश्मिरोग दूर होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

काष्ठकीट (सं० पु०) काष्ठे जातः कीटः काष्ठच्छेदको कीटो वा, मध्यपदलो०। काठको काटनेवाला कीड़ा, घुण, घुन।

काष्ठकीय (सं० त्रि०) काष्ठस्य इदम्, काष्ठ-छ। अगुरु काष्ठसम्बन्धीय।

काष्ठकुटक, काष्ठकुट्ट देखो।

काष्ठकुट्ट (सं० पु०) काष्ठं कुट्टति, काष्ठ-कुट्ट-अण्। शत-च्छद, कठफोड़वा। उसका मांस लघु, वातहर, अग्नि-

"मैं आपके अयोग्य हूं। कासिमने मेरा धर्म बिगाड़ डाला है।" यह बात सुनते ही खलीफाने आदेश निकाला था,—"शीघ्र ही उस दुर्दान्त कासिमको खाल खींच कर यहां ले आओ।" आदेश पालित हुआ। कासिमका देह राजसभामें लाया गया था। राजकन्याने हंसकर कहा—"मेरी मनस्कामना सिद्ध हुयी मैंने जो दोष लगाया, प्रकृत पक्षमें कासिम उसका पात्र न था। जिसने मेरा पितृवंश नाश किया, उसीसे मैंने बदला चुका लिया।"

७१४ ई० को मुहम्मद कासिम मर गये।

कासिम—१ जाफरनामा-अकबरी नामक ग्रन्थके रचयिता। इस पुस्तकमें दोस्त मुहम्मद खान्‌के पुत्र अकबर खान्‌के विजयका वर्णन है। इसे कासिमने १८४४ ई० को सम्पूर्ण किया था। पुस्तक पद्यात्मक है। अंगरेजोंके काबुल-युद्धका विषय भी इसमें सन्निविष्ट है। आगरेमें रहनेसे लोग इन्हें कासिम अकबराबादी कहते हैं। २ अकीस मीर कुदरत-उल्लाका उपनाम। उन्होंने एक तजकिरा (कवियोंका जीवनवृत्तान्त) लिखा था।

कासिम अलीखान् (मीर)—बङ्गालवाले नवाब मीरजाफर अलीखान्‌के जामाता। साधारणतः इन्हें लोग मीरकासिम कहते थे। १७६० ई० को अङ्गरेजोंने इन्हें ससुरके पदपर प्रतिष्ठित किया। कारण इन्हें बङ्गालकी आर्थिक अवस्था भली भांति विदित रही। किन्तु थोड़े दिन पीछे ही इन्होंने मुङ्गेरमें जा निवास किया और अंगरेजोंको बङ्गालसे निकालनेका बीड़ा उठा लिया। मीरकासिमको अंगरेजोंके राजनीतिक अधिकार और व्यवसायिक प्रसारकी वृद्धि अच्छी लगती थी। १७६३ ई० को २री अगस्तको उदयनाले पर युद्ध हुआ। उसमें इनकी सेना हारी थी। फिर यह बङ्गालके सिंहासनसे उतारे गये। नवाब जाफर अलीको पुनः अपना पद प्राप्त हुआ। मीरकासिम यह हाल देख पागल बन गये थे। इन्होंने मुङ्गेरसे भाग पटनेमें जा आश्रय लिया और वहांके समस्त अंगरेजोंको वध करनेका आदेश दिया। उस समय छोटे बड़े सब मिलाकर १५० अंगरेज रहे। ५वीं अक्तोबरको सोम्बर नामक किसी जर्मनकी आज्ञासे सबके सब मारे गये। अक्तोबर मासमें ही अंगरेजोंने मुङ्गेर अधिकार किया था। फिर ६ठीं नवम्बरको पटने पर आक्रमण पड़ा। मीरकासिम अपनी फौज और दौलत ले लखनऊको भागे थे। १७६४ ई० की २३वीं अक्तोबरको बक्सरमें जो युद्ध हुआ, उसमें सुजा-उद-दौलाकी फौजको मेजर कारनाकने पूर्णरूपसे हरा दिया। दूसरे ही दिन मुगल-बादशाह शाह आलम अंगरेजोंसे आ मिले। फिर अंगरेजी फौज अवधको आक्रमण करनेके लिये चली थी। मीरकासिमको लूट लेते भी लखनऊके नवाबने अंगरेजोंके हाथ सौंपना न चाहा। मीरकासिम फिर रुहेलखण्डका भगे और वहां आनन्दसे रहने लगे। इनके पास कुछ बहुमूल्य रत्न और मित्र बच गये थे। किन्तु अपने कपट-प्रबन्धके कारण इन्हें वहांसे भी भाग गोहादके राजाके पास जाकर रहना पड़ा। कुछ वर्ष पीछे फिर यह योधपुर गये और वहांसे दिल्ली पहुंच १७७४ ई०को शाह आलमके नौकर बने। १७७७ ई० को इनका मृत्यु हुआ। इन्हींके साथ बङ्गालकी सुबेदारी मिटी थी।

कासिम अलीखान् नवाब—रामपुरवाले नवाबके चाचा। १८६८ ई० को यह बरेलीमें रहते थे। १८६८ ई० को २२ वीं दिसम्बरको ही इनकी दुहिताका वध हुआ।

कासिम कादिरी शेख—एक मुसलमान साधु। इन्हें लोग शाह कासिम सुलेमानी भी कहते थे। कब्र चुनारमें बनी है। इनके पुत्र शेख कबीर १६४४ ई० को कनौजमें मरे और गड़े थे। साधारणतः लोग इन्हें बालापीर कहते रहे। शाह कासिम सुलेमानीके मकबरेका व्यय कररहित भूमि और मास रोजीना पेनशनसे चलता है।

कासिम कादी मौलाना—एक सैयद। इनका यथोचित नाम नजम-उद-दीन् और उपाधि अबुल कासिम रहा। यह अबदुल रहमान्‌जामीके शिष्य थे। इन्होंने हिरातसे बादशाह हुमायूंके भ्राता मिर्जा कामरान्‌के साथ

न छूनेपर भी स्वीय दरमें इनका प्रवेश निषिद्ध कि भारतके अन्य स्थानोंके जैसा ब्राह्मण काश्मीरमें नहीं है। बहुतसी राजपुतियोंमें मुसलमान, काश्मीरक, मेमन, बोर प्रभृति जातोंके ब्राह्मणोंके भांतिकी प्रथा नहीं है।

आजकल सब काश्मीरी ब्राह्मण एक समानभुक्त है। सभी परस्पर एक पङ्क्ति और भोजनादि किया करते हैं। किन्तु उनके समाजमें सबके साथ यौनि सम्बन्ध नहीं चलता। आचार-व्यवहार भारतके अपर ब्राह्मणोंकी भांति है। फिर भी देशभेदसे कुछ पार्थक्य पड़ गया है। यह यथाकाल उपनयन ग्रहण करते हैं। समय चाहें होने पर यथानियम प्रायश्चित्त भी किया जाता है। प्रायश्चित्त न करनेसे राजदरबारमें दण्डनीय होते हैं। हिन्दुस्तानके ब्राह्मणसमाज जैसे उपनयनके बाद दिन पीछे शिखा रोक रखते, काश्मीरमें वैसे नहीं करते। यह दोनोंके पीछे आजीवन बालपन पर यज्ञोपवीत और दक्षिणहस्तमें कुशकी मुद्रा रखते हैं। उनके द्वारा वैदिक कर्मकाण्ड तथा नित्य पालन किये जाते हैं। फिर भी बहुतोंने शास्त्रचर्चा छोड़ दी है। जिनमें से पंडितोंको फारसी पढ़ नाना उपायोंसे जीविका चलाते हैं। काश्मीरी ब्राह्मणोंमें कुछ व्यतिक्रम देख पड़ता है।

यह प्रायः सभी शैव हैं। कामाचार मांस बहुत खाया करते हैं। इनमें अधिक शैव, बौद्ध और भागवत वैष्णव थे। आजकल प्रायः तीन प्रकारके काश्मीरी ब्राह्मण देख पड़ते हैं—१म श्रेणीके ब्राह्मण 'पण्डित' नामसे प्रसिद्ध हैं। यह केवल शास्त्रचर्चामें अग्निहोत्र स्नान तथा श्राद्धादि कर्मकाण्ड द्वारा एवं राजपुरोहितोंसे आयको निकालते हैं। २य 'राजगार' हैं। यही प्रधान राजकर्मचारी और व्यवसायी होते हैं। ये संस्कृत भाषा छोड़ फारसी पढ़ते हैं। ३य बाचभट्ट होते हैं। यह ज्योतिष, पुजारी और तीर्थस्थानमें पण्डेका काम करते हैं। इस श्रेणीके ब्राह्मण ३य श्रेणीवालोंसे सम्बन्धादि पूजा करने और कर लेना अच्छा ठीक नहीं समझते। पण्डित और कारबार भी आदान-प्रदानादि पालन करते हैं। इस श्रेणीके ब्राह्मण चार जो काश्मीरके इनकी कर्मविचार पर निकृष्ट होते हैं।

काश्मीरी ब्राह्मण सभी वेद पाठ किया करते हैं। कोई कोई अपनेको यजुर्वेदी बताते हैं। किन्तु यह काठकशाखायुक्त हैं।

१म—३य श्रेणियोंके मध्य १ वाशिष्ठ, २ कौशिक, ३ भारद्वाज, ४ उपमन्यु, ५ दत्तात्रेय, ६ गार्ग्य और ७ भार्गव गोत्र हैं।

२य-राजगारोंमें गौतम, कौशिक और दत्तात्रेय गोत्र होता है।

३य-बाचभट्टोंमें विश्वामित्र और कश्यपगोत्र प्रचलित है।

शैव सम्प्रदाय वैदिक विधि और समय समय पर भौमतन्त्र के क्रियाकाण्डानुसार तान्त्रिक पूजादि सम्पन्न करते हैं।

काश्मीर्य (सं० त्रि०) काश्मीर-ष्यञ्। १ काश्मीरदेशीय, काश्मीरवाला। (क्ली०) २ कुङ्कुम, जाफरान्, केसर।

काश्य (सं० क्ली०) कुत्सितं अश्यं यस्मात्, बहुव्री०। १ मद्य, शराब। (पु०) २ काशिराजविशेष, काशीका कोई राजा। (भारत १।१४१।८८।)

काश्यक (सं० पु०) काश्य स्वार्थे संज्ञायां वा कन्। राजविशेष, कोई राजा।

काश्यप (सं० पु०) कश्यपस्य गोत्रापत्यम्, कश्यप-अण्। १ कणाद मुनि। २ मृगविशेष, कोई हिरन। ३ मत्स्यविशेष, एक मछली। ४ गोत्रविशेष। ५ काश्यप एक राजसभाके एक मुनि। ६ अरुणका नामान्तर। ७ ब्राह्मणविशेष। काश्यप ब्राह्मण विषविद्यामें पारदर्शी रहे। महाभारतमें उनका विवरण इस प्रकार लिखा गया है—"जिस समय राजा परीक्षित शापसे तक्षक सर्पके डसनेसे मरनेको अभिशप्त हुये, उसी समय काश्यप ब्राह्मण उनको बचानेके लिये गये। पथिमध्य तक्षकसे भेंट मिली। तक्षकने चिकित्साशक्ति देखनेको अन्धुत्थ कोई वटवृक्ष दंशन द्वारा भस्मीभूत कर उन्हें जीवित करनेको कहा। उन्होंने अपने विद्याबलसे तत्क्षण वह वृक्ष पुनर्जीवित कर दिया। उसको देख तक्षकने सोचा, यह अवश्य परीक्षितको फिर जिला सकेंगे। इसलिये उन्होंने ब्राह्मणको प्रचुर धनादि दे राजाके पास जानेसे रोक दिया।" (भारत आदिपर्व ४३ अध्याय)

सकलेकी दासा थीं। फिर १५४० ई० को उनके मरने पर यह बादशाह अकबरके समय भारत आये थे। इन्होंने बहुत समय तक अलीकुली खान्‌के भ्राता बहादुर खान्‌के साथ कामोंमें निवास किया और उनके मारे पर वहाँसे लौट आगरेमें डेरा डाल दिया। १५८० ई० को १० वीं वर्षमकी आगरेमें ही इनका मृत्यु हुआ।

कासिम खान्—१ बङ्गालके कोई नवाब। इसलामखान्‌के मरने पर जहांगीरने कासिमखान्‌को बङ्गालका सूबेदार बनाकर भेजा था। उस समय निम्नबङ्गमें मग लोगोंका उत्पात रहा। यह दौरात्म्य निवारण कर न सके। इसीसे पदच्युत होने पर १६१८ ई० को दिल्ली-को लौट गये।

२ मीरजाफरके भाई। सीराज-उद्-दौलाके समय कासिमखान् राजमहलके एक सेनाध्यक्ष रहे। सीराज-उद्-दौलाने अंगरेजोंके भयसे जब राजधानी छोड़ दाना-शाह नामक मुसलमान फकीरका आश्रय लिया, तब कासिमखान्‌ने खबर पाते ही गुप्तभावसे जाकर नवाबको बांध लिया और मीरजाफरके पास भेज दिया। सीराज-उद्-दौला और मीरजाफर देखो।

कासिम खान् जवीनी—बङ्गालके कोई मुसलमान नवाब। नवाब फिदाखान्‌के मरने पर दिल्लीश्वर शाहजहान्‌ने १६२० ई० कासिमको बङ्गालकी सूबेदारी दी थी। यह धर्मभीरु, साहसी, वीर और सुकवि रहे। उनके समय पोर्तगीज बङ्गालमें प्राधान्य लाभ करते थे। कासिमने शाहजहान्‌की अनुमति ले १६३२ ई० को हुगलीमें उन्हें आक्रमण किया। ३ मास अवरोधके पीछे पोर्तगीजोंने हुगली छोड़ी थी। प्रायः सहस्राधिक पोर्तगीज मारे और चार हजार पकड़े गये थे। उस समय अनेक पोर्तगीज-रमणी शाहजहान्‌के अन्तःपुर-गोमायें दिल्लीको प्रेरित हुयीं। पोर्तगीज देखो। हुगली जयके अल्पकाल पीछे ढाकानगरमें कासिम मर गये।

कासिम खान् जवीनी मवाफ—बादशाह जहांगीर और शाह-जहांकी सभाके एक सभासद। इनके अधि-कारमें ५००० सवार रहे। यह हसनारके अधिकारी थे। मनीजा बेगमसे इनका विवाह हुआ। यह नूरजहांकी भगिनी रहीं। इसीसे कभी कभी सभासद इन्हें हंसीमें खानीम खान् मनीजा कहते थे। यह एक दीवान्‌के दस्तकार रहे। उपनाम कासिम था। १६२८ ई० को इन्हें शाहजहांके समय फिदाई खान्‌के स्थान पर बङ्गालकी सूबेदारी मिली। इन्होंने और १०००० पोर्तगीजोंको मार और बालकोंको भगा हुगली अधिकार किया। इस घटनाके ३ दीन पीछे १६३१ ई० को इनका मृत्यु हुआ। इन्होंने आगरेमें २० बीघे भूमि पर एक बृहत् भवन बनाया और १० बीघे भूमि पर एक उद्यान लगाया था। किन्तु अब उसका कोई चिह्न देख नहीं पड़ता।

कासीम खान् शेख—इसलाम खान्‌के भ्राता। इनका निवासस्थान फतेहपुर-सीकरी और उपाधि मुहतशिम खान् रहा। बादशाह जहांगीरके समय इन्हें ४०००० सवारोंपर अधिकार मिला था। १६१३ ई० को भाईके मरने पर जहांगीरने इन्हें बङ्गालका सूबेदार बनाया। इन्होंने आसाम आक्रमण किया था। किन्तु आसामि-योंने रातको धावा कर इनकी बहुतसी फौज मार डाली थी। इसीसे यह दिल्ली वापस बुलाये गये। फिर इनका मृत्यु हुआ।

कासिम बरीद शाह १—दक्षिणमें बरीदशाहीवंश-के प्रतिष्ठाता। यह एक तुर्की या जार्जीय गुलाम रहे। धीरे धीरे ये दक्षिणके २य मुहम्मदशाह नवाबके वजीर हुये और अपने प्रभावसे राज्यके प्रभु बन गये। फिर १४९२ ई० को इन्होंने आदिल शाह, निजाम शाह और इमाद शाहके परामर्शानुसार अपने-को स्वतन्त्र बनाया तथा अपने नामका सिक्का चलाया। नवाबको केवल अहमदाबाद बीदरका नगर और दुर्ग मिला था। १२ वर्ष राज्य करनेके पीछे इनका १५०४ ई० को मृत्यु हुआ। फिर इनके पुत्र अमीर बरीदने राज्य-का उत्तराधिकार पाया था। इन्होंने अपना वैभव खूब बढ़ाया और महम्मद शाहको अपने पितासे भी अधिक नीचा दिखाया। इस वंशके जिन सात पुरुषोंने अहमदाबाद बीदरका राज्य चलाया, उनका नाम नीचे लिखे अनुसार है —

काष्ठरजनी (सं० स्त्री०) दारुहरिद्रा।

काष्ठरज्जु (सं० स्त्री०) लकड़ी बांधनेकी रस्सी।

काष्ठलेखक (सं० पु०) काष्ठं लिखति, काष्ठ-लिख ण्वुल्। घुणकीट, घुन।

काष्ठलौही (सं० पु०) काष्ठेन युक्तं लौहं विद्यते यत्र, यद्वा काष्ठञ्च लौहञ्च ते स्तोऽत्र, काष्ठ-लौह-इनि। बाणादि, लौहयुक्त मुद्गर।

काष्ठवल्लिका, (सं० स्त्री०) काष्ठवत् शुष्का वल्लिका, मध्यपदलो०। १ कटुका, कुटकी। २ कटुकवल्ली, एक लता

काष्ठवाट (सं० पु०) काश्मीरदेशस्य स्थानविशेष काश्मीरकी एक जगह।

काष्ठवान् (सं० त्रि०) काष्ठं अस्यास्ति, काष्ठ-मतुप् मस्य वः। काष्ठविशिष्ट, लकड़ी रखनेवाला।

काष्ठवास्तुक (सं० पु०) वास्तुकशाकभेद, किसी किस्मका बथुवा।

काष्ठविवर (सं० क्ली०) काष्ठस्य विवरम्, मध्यपदलो०। तरुकोटर, पेड़की खोह।

काष्ठशारिवा (सं० स्त्री०) काष्ठमिव शुष्का शारिवा, उपमि०। अनन्ता, अनन्तमूल।

काष्ठशालि (सं० पु०) रक्तशालि, लालधान।

काष्ठशारिवा (सं० स्त्री०) श्वेतशारिवा, सफेद सतावर।

काष्ठस्तम्भ (सं० पु०) काष्ठेन निर्मितः स्तम्भः। काष्ठका स्तम्भ, लकड़ीका खंभा।

काष्ठा (सं० स्त्री०) काशते प्रकाशते, काश-क्थन् प्रत्ययेन त्वलम्-टाप्। १ दिक्, जानिब, तर्फ। २ स्थिति, हालत। ३ सीमा, हद। ४ उत्कर्ष, बड़ाई।

"पुरुषान्न परं किञ्चित् सा काष्ठा सा परा गतिः।" (कठ श्रुति)

५ समयविशेष, कोई वक्त। सुश्रुतसंहिता और विष्णुपुराणके मतसे १५ लघुनिमेषमें १ काष्ठा होती है। किन्तु मनुने १८ निमेषको ही १ काष्ठा माना है।

"निमेषा दश चाष्टौ च काष्ठा त्रिंशत्तु ताः कला।" (मनु १।६४)

६ कश्यपकी कोई पत्नी। (भागवत ६।६।२५) ७ दारुहरिद्रा।

काष्ठागार (सं० क्ली०) काष्ठनिर्मितं आगारम्, मध्यपदलो०। काष्ठगृह, लकड़ीका मकान।

काष्ठागुरु (सं० क्ली०) पीतवर्ण अगुरु पीला-अगर। वह कटु, उष्ण, लेपमें रूक्ष और कफघ्न होता है (राजनिघण्टु)

काष्ठामलकी (सं० स्त्री०) काष्ठधात्री, छोटा आंवला।

काष्ठाम्बुवाहिनी (सं० स्त्री०) अम्बूनां जलानां वाहिनी, काष्ठनिर्मिता अम्बुवाहिनी, मध्यपदलो०। जलसेचनके लिये काष्ठनिर्मित पात्रविशेष, द्रोणी।

काष्ठालु, काष्ठालुक देखो।

काष्ठालुक (सं० क्ली०) काष्ठमिव कठिनं आलुकम् मध्यपदलो०। काष्ठवत् कठिन कन्दविशेष, लकड़ी जैसी कड़ी एक आलू। वह मधुररस, शीतल, गुरु, शुक्र एवं स्तन्यवर्धक और रक्तपित्तनाशक होता है। (सुश्रुत)

काष्ठासन (सं० पु०) घुण, घुन।

काष्ठासन (सं० क्ली०) काष्ठनिर्मितं आसनम्, मध्यपदलो०। काष्ठका आसन, लकड़ीको चौकी वगैरह।

काष्ठिक (सं० त्रि०) काष्ठमस्यास्ति, काष्ठ-ठन्। १ बहु काष्ठयुक्त, बहुत लकड़ी रखनेवाला। (पु०) २ काष्ठवाहक, लकड़िहारा।

काष्ठिका (सं० स्त्री०) काष्ठ-अल्पार्थे ङीप्, काष्ठी स्वार्थे कन्-टाप् प्रत्यय। १ क्षुद्र काष्ठखण्ड, लकड़ीका छोटा टुकड़ा। २ काष्ठकदलीवृक्ष, कठकेलेका पेड़।

काष्ठरसा (सं० स्त्री०) कदली वृक्ष केलेका पेड़।

काष्ठिला (सं० स्त्री०) १ कदलीवृक्ष, केलेका पेड़। २ राजार्क, बड़ा मदार।

काष्ठी (सं० त्रि०) काष्ठं अस्यास्ति, काष्ठ-इनि। बहु काष्ठयुक्त, लकड़ीवाला।

काष्ठील (सं० पु०) काष्ठिना इल्यते क्षिप्यते, काष्ठि-इल् कर्मणि घञ्। राजार्कवृक्ष, बड़ा मदार। २ कुलिशमत्स्य, एक मछली।

काष्ठीला (सं० स्त्री०) कुत्सिता ईषत् वा अष्ठीलेव, कोः कादेशः। १ राजार्क, बड़ा मदार। २ कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

काष्ठीलिका, काष्ठीला देखो।

काष्ठेक्षु (सं० पु०) काष्ठवत् कठिनकाण्ड इक्षुः, उपमि०। श्वेतेक्षु० सफेद ऊख। वह कान्तारके समान गुणयुक्त और वातकोपन होता है।

काष्ठोडुम्बरिका (सं० स्त्री०) काष्ठप्रधाना उडुम्बरिका, मध्यपदलो०। काकोडुम्बरिका, कठगूलर।

कासिम् वरीद १म	...	१४९२ ई०
अमीर वरीद	...	१५०४ "
अली वरीद (प्रथम नवाव)...		१५४२ "
इब्राहीम वरीदशाह	...	१५६२ "
कासिम वरीद शाह २य	...	१५६९ "
अली वरीद शाह २य	...	१५७२ "
अमीर वरीद शाह २य	...	१६०९ "

कासिम वरीद शाह २य—अहमदाबाद बीदरके एक नवाव। १५६९ ई० को इन्हें अपने भ्राता इब्राहीम वरीदशाहका उत्तराधिकार मिला था। किन्तु १५७२ ई०को ३ वर्ष राज्य करनेके पीछे इनका मृत्यु हुआ। फिर इनके पुत्र २य मीर्जा अली वरीदने राज्य पाया था। उन्होंने २७ वर्ष राज्य चलाया। १६०९ ई०को २य अमीर वरीदने इन्हें मार राज्य अधिकार किया। यह अपने वंशके अन्तिम नवाब थे।

कासिमबाजार—बंगालके मुर्शिदाबाद जिलेका एक पुराना शहर। वह अक्षा २४° ८´ ४०´´ उ° और देशा० ८८° १७´ पू० गंगाके तट पर अवस्थित है। ई० १८ श शताब्दको वहां पोर्तगीजों, फरासीसियों और अंगरेजों की कोठी थी। रेशमका बड़ा व्यापार होता था। आज-कल वह बात नहीं। कासिमबाजारमें कई बड़े बड़े जमीन्दार रहते हैं।

कासियारि—बङ्गालका एक प्राचीन ग्राम। वह मेदनीपुरसे प्रायः ३०० मील दूर दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। वहां अनेक प्राचीन कीर्तियोंके भग्नावशेष पड़े हैं। उनमें कुरुम्बर दुर्गका वहिःप्राचीर आज भी बहुत कम बिगड़ा है। वह रक्तवर्ण बालुका-प्रस्तरसे बना है। कुरुम्बर दुर्ग प्रायः १० फीट ऊंचा है। प्राचीरके बगलमें चार मेहराबोंवाला बरामदा है। अभ्यन्तरकी पूर्वदिक्के प्रान्तभागमें शिवमन्दिर बना है। उक्त मन्दिरके अन्तवर्ती किसी कूपमें शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित है। ठीक मन्दिरके सामने पश्चिम प्रान्तमें एक मसजिद है। वहां उड़ीया भाषामें खोदित शिलालिपि लगी है। उसके पाठसे समझ पड़ता है कि औरङ्गजेबके राजत्वकाल मुहम्मद ताहरने वह मसजिद बनवायी थी, ११०२ हिजरीको उसका निर्माणकार्य शेष हुआ।

पूर्वदिक् एक गभीर दीर्घिका (तलैया) है। उसे योगेश्वरकुण्ड कहते हैं। वह कुण्ड कुम्भीरसे परिपूर्ण है। वहां मुगलपाड़ा नामकी एक पल्ली (गांव) है। उसमें मुगलों द्वारा निर्मित अनेक मसजिदें और इमारतें खड़ी हैं। मुगलोंके शासनकाल कासियारि ग्राम उत्तर वाणिज्यका केन्द्रस्थल और तहसीलदारोंका सदर थाना था। किसी मसजिदमें अरबी भाषामें खोदित एक प्रस्तरलिपि है। उससे भी मालूम पड़ता है कि वह औरङ्गजेबके समय बनी थी। ध्वंसावशेषके मध्य किसी स्थान पर एक मुसलमान फकीरकी प्रस्तरमूर्तिका भग्नखण्ड पड़ा है। उसके गात्रमें फारसी भाषामें खोदित एक शिलालिपि है। उसमें भी औरङ्गजेबका ही समय मिलता है।

कासियारिसे कुछ दक्षिण मुगलमारी ग्राम है। मुसलमानोंने सर्वप्रथम कुरुम्बरके हिन्दुओंको हरा मन्दिरादि ध्वंसकर उनके स्थानमें मसजिद बनायी थी। फिर मराठोंने मुगलमारीमें ही मुसलमानोंको पराजय किया। सम्भवतः उक्त पराजयके पीछे ही मुगलमारी नाम पड़ गया।

कुरुम्बरके सम्बन्धमें स्थानीय प्रवाद इस प्रकार है—उड़ीसाके देवराजवंशीय महाराज कपिलेश्वरने यह मन्दिर बनवाया था। फिर उन्होंने इसमें गगनेश्वर नामक शिवलिङ्ग स्थापन किया। कहते हैं वह स्थान पहले जंगलसे घिरा था। सुवर्णरेखा बहरही थी। उस समय वहां बाघराज नामक कोई राजा रहे। बाघराज नामसे ही सम्भवतः बाघभूमि परगना कहाया है। उनके अनेक दुग्धवती गायें थीं। उनको लेकर कोई रक्षक प्रतिदिन सुवर्णरेखाके पश्चिम तीर चराने जाता था। कुछ दिन पीछे एक गायका दुग्ध प्रत्यह घटने लगा। राजाने सुनकर सोचा सम्भवतः रक्षक क्षुधातुर होनेपर वनमें दुहकर पी जाता होगा। उन्होंने किसीदिन रक्षकोंको वृथा विस्तर तिरस्कार किया था। रक्षक तथा तिरस्कृत हो दूसरे दिन दूध घटनेका पता लेनेके लिये उसी गायके पीछे पीछे फिरता रहा। गायने वनमें जाकर प्रथम पेट भर घास खायी, फिर

[illegible] और [illegible] होता है। ([illegible])

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible] जाता है।

[illegible], [illegible] देखो।

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० त्रि०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible] (त्रि०) [illegible]

[illegible], [illegible] देखो।

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible] देखो।

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible] होता है। ([illegible])

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible], [illegible] देखो।

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० त्रि०) [illegible]

[illegible] (सं० त्रि०) [illegible] और [illegible]

[illegible] (सं० त्रि०) [illegible]

"[illegible]" ([illegible])

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० त्रि०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible] है।

वह भट्ठी था। वो पूर्वमुख एक वनमें चली गयी। ग्वालेने पहुंच उसका अनुसरण किया था। कुछ दूर जाकर उसने देखा कि गाय शिवलिङ्ग पर दुग्धधारा छोड़ती थी। उसने उसी दिन घर आ राजासे उक्त घटना बता दी। बादशाहने फिर यह बात महाराज कपिलेश्वरसे कही। कपिलेश्वरने उस शिवलिङ्ग पर कुण्डेश्वरका मन्दिर बनवाया और गंगेश्वर लिङ्गका नाम रखाया। उन्होंने योगेश्वरकुण्ड भी खनन कराया था। मुसलमानोंके समय अहमद नामक किसी पठित मुसलमान फकीरने बलपूर्वक उक्त मन्दिर अधिकार और उसमें गोहत्या कर मन्दिरकी पवित्रता बिगाड़ डाली थी। फिर उन्होंने शिवलिङ्गको स्थानान्तरित कर उसके मध्य तीन मसजिदें बनायीं। कहते हैं कि गोरक्ष मन्दिर कलङ्कित होने पर महादेवकी लिङ्गमूर्ति अन्तर्हित हो पगरा नामक स्थानमें प्रकाशित हुयी थी। फकीरके पहुंचनेसे पहले 'गांजिया महाराज' नामक कोई महन्त महादेवके पूजक रहे। 'चिंचियाबुड़ी' नाम्नी उनकी कोई भैरवी थी। लोगोंके कथनानुसार महादेवके अन्तर्हित होने पर महन्त और उनकी भैरवी दोनों पैशाचिकके बल सूपमें बैठ आकाशपथसे पूर्वमुख उड़े चले जाते थे। किन्तु पथिमध्य भैरवी किसी जलपूर्ण स्थान पर गिर पड़ी। उसीसे गांजिया महाराजको भी उतरना पड़ा। उनके उतरनेका स्थान "कुलासनि" ग्राम कहाता है। उस ग्राममें आज भी महन्त और भैरवीकी मूर्ति स्थापित है। महन्तमूर्तिकी पूजा होती है। कालक्रमसे उक्त स्थान घने जंगलसे भर गया है। वहां कोई सहज ही घुस नहीं सकता। बंगाली सन् १२११ को बनमाली पण्डा नामक किसी व्यक्तिने मेदिनीपुर कलक्टरके आदेशसे जंगल कटाया और कूपके मध्य दो खण्ड महादेवकी भग्न लिङ्गमूर्तिको पाया था।

कुण्डेश्वरमन्दिरमें आज भी अनेक मूर्तियां अक्षुण्ण भावसे दण्डायमान हैं। उक्त महामन्दिर देखनेमें अतिमनोरम है। वह २०० हाथ लम्बा और १६० हाथ चौड़ा है। मन्दिरकी पश्चिम दीवारमें उड़िया भाषाकी एक शिलालिपि विद्यमान है। किन्तु उसके प्रायः समस्त अक्षर बिगड़ गये हैं। सुतरां इस समय तक उसका पाठोद्धार नहीं हुआ। प्रवाद है कि मुसलमानोंने यह शिलालिपि बिगाड़ डाली है।

कासी (सं० त्रि०) कासो इस्यास्ति, कास-इनि। कासरोगविशिष्ट, खांसीका बीमार। (हिं०) काशी देखो।

कासीमृत्तिका (सं० स्त्री०) सौराष्ट्रमृत्तिका, एक मट्टी।

कासीस (सं० क्ली०) कासीं क्षुद्रकासं अस्यति नाशयति, कासी-असु-क। १ उपधातुविशेष, कसीस। २ मात्रिक सुराविशेष, एक शराब। ३ तुत्थक, तूतिया। कासीस अम्लकटु, किञ्चित् अम्ल और अवदाह होता है। (वैद्यक)

कासीसद्वय (सं० क्ली०) धातु कासीस और पुष्पकासीस। पुष्प कासीस किञ्चित् पीत और तुवर रस होता है। (वैद्यक)

कासुन्द (सं० पु०) कासमर्द, कसौंदा।

कासुम्भो (सं० पु०) कौसुम्भोशालि, एक धान।

कासर (सं० पु०) महिष, भैंसा।

कासू (सं० स्त्री०) कासति कुत्सितं शब्दं गच्छति, कास-ऊ, पृषोदरादित्वात् गत्व सत्वम्। (उण् १।८०।) १ विकलवाक्य, अस्फुट बात। २ शक्ति-अस्त्र, बरछी भाला। ३ दीप्ति, चमक। ४ भाषा, जबान। ५ रोग, बीमारी। ६ बुद्धि, समझ।

कासूतरी (सं० स्त्री०) ह्रस्वा कासूः, कासू-तरप्। (कासूगोणीभ्यां ष्टरच्। पा ५।३।९०।) क्षुद्र शक्ति-अस्त्र, छोटी बरछी।

कासृति (सं० स्त्री०) कुत्सिता सृतिः सरणम्, कोः कादेशः। कुत्सित गमन, खराब चाल।

कासेक्षु (सं० पु०) क्षुद्र काशतृण, छोटा कांस।

कासोनी (सं० स्त्री०) अतिबला, एक बूटी।

कास्कन्द. कासमर्द देखो।

कास्टक (अं० पु० Caustic) क्षारक, तेजाब। इसके पड़नेसे चर्म जल जाता या फफोला उभर आता है।

कास्त—महाराष्ट्रकी एक ब्राह्मण जाति। कास्त लोग खेतीबारीका काम करते और अधिकतर पूना तथा खानदेशमें रहते हैं। दूसरे ब्राह्मणोंसे उनका पद

काष्ठरजनी (सं॰ स्त्री॰) दारुहरिद्रा।

काष्ठरज्जु (सं॰ स्त्री॰) लकड़ी बांधनेकी रस्सी।

काष्ठलेखक (सं॰ पु॰) काष्ठं लिखति, काष्ठ-लिख ण्वुल्। घुणकीट, घुन।

काष्ठलोही (सं॰ पु॰) काष्ठेन युक्तं लोहं विद्यते यत्र, यद्वा काष्ठस्य लोहस्य ते स्तोऽस्य, काष्ठ-लोह-इनि। वामर्दि, लोहयुक्त मुद्गर।

काष्ठवल्लिका, (सं॰ स्त्री॰) काष्ठवत् शुष्का वल्लिका, मध्यपदलो॰। १ कटुका, कुटकी। २ कटुकवल्ली, एक लता

काष्ठवाट (सं॰ पु॰) काश्मीरदेशस्य स्थानविशेष काश्मीरकी एक जगह।

काष्ठवान् (सं॰ त्रि॰) काष्ठं अस्यास्ति, काष्ठ-मतुप् मस्य वः। काष्ठविशिष्ट, लकड़ी रखनेवाला।

काष्ठवास्तुक (सं॰ पु॰) वास्तुकशाकभेद, किसी किस्मका बथुवा।

काष्ठविवर (सं॰ क्ली॰) काष्ठस्य विवरम्, मध्यपदलो॰। तरुकोटर, पेड़की खोह।

काष्ठशारिवा (सं॰ स्त्री॰) काष्ठमिव शुष्का शारिवा, उपमि॰। अनन्ता, अनन्तमूल।

काष्ठशालि (सं॰ पु॰) रक्तशालि, लालधान।

काष्ठसारिवा (सं॰ स्त्री॰) श्वेतशारिवा, सफेद सतावर।

काष्ठस्तम्भ (सं॰ पु॰) काष्ठेन निर्मितः स्तम्भः। काष्ठका स्तम्भ, लकड़ीका खंभा।

काष्ठा (सं॰ स्त्री॰) काशते प्रकाशते, काश-क्थन् तथेति त्वलम्-टाप्। १ दिक्, जानिब, तर्फ। २ स्थिति, हालत। ३ सीमा, हद। ४ उत्कर्ष, बड़ाई।

"पुरुषान्न परं किञ्चित् सा काष्ठा सा परा गतिः।" (कठ श्रुति)

५ समयविशेष, कोई वक्त। सुश्रुतसंहिता और विष्णुपुराणके मतसे १५ लघुनिमिषमें १ काष्ठा होती है। किन्तु मनुने १८ निमिषकी ही १ काष्ठा मानी है।

"निमेषा दश चाष्टौ च काष्ठा त्रिंशत्तु ताः कला।" (मनु १। ६४)

६ कश्यपकी कोई पत्नी। (भागवत ६। ६। २४) ७ दारुहरिद्रा।

काष्ठागार (सं॰ क्ली॰) काष्ठनिर्मितं आगारम्, मध्यपदलो॰। काष्ठगृह, लकड़ीका मकान।

काष्ठागुरु (सं॰ क्ली॰) पीतवर्ण अगुरु पीला-अगर। यह कटु, उष्ण, लेपमें रूक्ष और कफघ्न होता है (राजनिघण्टु)

काष्ठामलकी (सं॰ स्त्री॰) काष्ठधात्री, छोटा आंवला।

काष्ठाम्बुवाहिनी (सं॰ स्त्री॰) अम्बूनां जलानां वाहिनी, काष्ठनिर्मिता अम्बुवाहिनी, मध्यपदलो॰। जलसेचनके लिये काष्ठनिर्मित पात्रविशेष, द्रोणी।

काष्ठालु, काष्ठालुक देखो।

काष्ठालुक (सं॰ क्ली॰) काष्ठमिव कठिनं आलुकम् मध्यपदलो॰। काष्ठवत् कठिन कन्दविशेष, लकड़ी जैसी कड़ी एक आलू। यह मधुररस, शीतल, गुरु, शुक्र एवं स्तन्यवर्धक और रक्तपित्तनाशक होता है। (सुश्रुत)

काष्ठाशन (सं॰ पु॰) घुण, घुन।

काष्ठासन (सं॰ क्ली॰) काष्ठनिर्मितं आसनम्, मध्यपदलो॰। काष्ठका आसन, लकड़ीकी चौकी वगैरह।

काष्ठिक (सं॰ त्रि॰) काष्ठमस्यास्ति, काष्ठ-ठन्। १ बहु काष्ठयुक्त, बहुत लकड़ी रखनेवाला। (पु॰) २ काष्ठवाहक, लकड़िहारा।

काष्ठिका (सं॰ स्त्री॰) काष्ठ-अल्पार्थे ङीप्, ततो स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वश्च। १ क्षुद्र काष्ठखण्ड, लकड़ीका छोटा टुकड़ा। २ काष्ठकदलीवृक्ष, कठकेलेका पेड़।

काष्ठिरसा (सं॰ स्त्री॰) कदली वृक्ष केलेका पेड़।

काष्ठिला (सं॰ स्त्री॰) १ कदलीवृक्ष, केलेका पेड़। २ राजार्क, बड़ा मदार।

काष्ठी (सं॰ त्रि॰) काष्ठं अस्यास्ति, काष्ठ-इनि। बहु काष्ठयुक्त, लकड़ीवाला।

काष्ठील (सं॰ पु॰) काष्ठिना इल्यते क्षिप्यते, काष्ठि-इल् कर्मणि घञ्। राजार्कवृक्ष, बड़ा मदार। २ कुलिशमत्स्य, एक मछली।

काष्ठीला (सं॰ स्त्री॰) कुत्सिता ईषद् वा अष्ठीलेव, कोः कादेशः। १ राजार्क, बड़ा मदार। २ कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

काष्ठीलिका, काष्ठीला देखो।

काष्ठेक्षु (सं॰ पु॰) काष्ठवत् कठिनकाण्ड इक्षुः, उपमि॰। श्वेतेक्षु॰ सफेद ऊख। यह कान्तारके समान गुणयुक्त और वातकोपन होता है।

काष्ठोडुम्बरिका (सं॰ स्त्री॰) काष्ठप्रधाना उडुम्बरिका, मध्यपदलो॰। काकोडुम्बरिका, कठगूलर।

सामान्य समझा जाता है। वह बहुत कम लिखते पढ़ते और वैष्णव धर्म पर चलते हैं। कहते हैं उनको उत्पत्तिका कुछ ठिकाना नहीं। दूसरे पूनाके ब्राह्मण कास्तोंको शूद्र समझते हैं। पेशवा सरकारको आज्ञासे इन्हें आज तक दानपुण्य नहीं मिलता।

कास्तीर (सं० क्लो०) ईषत्तीरं अस्यास्ति, को: कादेश: निपातनात् सुट् च। कास्तीराजस्तुन्दे नगरे। पा ६।१।१५५। १ ईषत्तीरयुक्त नगरविशेष। २ तीक्ष्णलौह, तीखा लोहा।

काम्मर्य (सं० पु०) काश्मर्य पृषोदरादित्वात् शस्य स:। गाम्भारी, गम्भारी।

काहँ, कहँ देखो।

काह (हिं० क्रि० वि०) क्या, कौन चीज।

काहका (सं० स्त्री०) काहला पृषोदरादित्वात् लस्य क:। काहला वाद्य, एक बाजा।

काहल (सं० क्ली०) कुत्सितं अस्पष्टं हलं वाक्यं ध्वनि-र्वा यत्र, बहुव्री०। १ अस्पष्ट वाक्य, समझमें न आने-वाली बात। (पु०) २ कुक्कुट, मुरगा। ३ विडाल, बिलाव। ४ शब्दमात्र, कोई आवाज। ५ वृहत् ढक्का, बड़ा ढोल। उसका अपर संस्कृत नाम महानाद है। (त्रि०) ६ शुष्क, सूखा। ७ विशाल, बड़ा। ८ बुरा।

काहला (सं० स्त्री०) कुत्सितं हलति शब्दं करोति, कु-हल-अच्-टाप्, को कादेश:। १ वाद्ययन्त्रविशेष, एक बाजा। २ अप्सरोविशेष, कोई परी।

काहलापुष्प (सं० पु०) काहलाकृतिरिव पुष्पमस्य। श्वेतधुस्तूर वृक्ष, सफेद धतूरेका पेड़।

काहिल (सं० पु०) कं सुखं आहलति ददाति, क-आ-हल्-इन्। महादेव।

"सुकोऽसुव्यय ईश्वर काहलि: सर्वकामद:।" (भारत, अनु० १७ अ०)

काहली (सं० स्त्री०) कं सुखं आहलति ददाति, क-आ-हल्-इन्-ङीप्। १ युवती, जवान औरत। (पु०) २ किसी ऋषिका नाम। ३ एक छोटी जाति। यह उड़ीसाकी तरफ पाई जाती है।

काहावाह (सं० क्ली०) आंतोंमें होनेवाला गड़बड़ शब्द।

काहार (कहार) जातिविशेष, एक कौम। उच्चवर्ण पिताके औरस और निम्न जातीय माताके गर्भसे कहारोंकी उत्पत्ति है। उनकी प्रधान उपजीविका खेती करने, पालकी ढोने, बहङ्गी ले जाने, मछली पकड़ने और नौकरी करनेसे चलती है। कहारका सामाजिक व्यवहारादि साधारण हिन्दुओंकी भांति है। वह अपनेको जरासन्धका वंशोद्भव मानते हैं। उनमें एक अद्भुत प्रवाद प्रचलित है। कहार कहते हैं कि गिरि-एक पहाड़में मगधराजका एक उपवन रहा। किन्तु अतिवृष्टिसे वह नष्ट हो गया। कुछ काल पीछे मगध-राजने फिर उपवन लगाना चाहा था। उन्होंने घोषणा की 'जो व्यक्ति एक रात्रिके मध्य हमारा उपवन गङ्गा जलसे पूर्ण कर सकेगा, उसे हम अपनी कन्या और आधा राज्य दान करेंगे।' कहारोंमें उस समय चन्द्रा-वत् नामक कोई प्रधान व्यक्ति रहा। वह राजकन्या और राज्यके लोभसे उक्त कार्य करने पर स्वीकृत हुवा। उसने असुरबांध नामक एक बड़ा बांध बांधा था। फिर चन्द्रावत्ने बावनगङ्गाका जल ले जाकर अपने अधीनस्थ कहारोंके साहाय्यसे उक्त जलद्वारा पर्वतका उपवन पूर्ण कर दिया। उधर मगधराजने देखा कि चन्द्रावत् शीघ्र ही उपवनको जलसे भर उनकी कन्या और अर्ध राज्य ले लेनेवाला था। उस समय उन्होंने चन्द्रावत्को कन्या देना अनुचित समझ एक कौशल उद्भावन किया था। उनकी आज्ञासे प्रभात होनेके पूर्व ही काक बोलने लगा। कहारोंने देखा कि प्रभात हुवा था, किन्तु उनका कार्य चलता रहा। फिर मगध-राजके भयसे व्यस्त हो भागने लगे। जिसके हाथमें बांस रहा, वह कहार हो गया। फिर रस्सी रखने-वाले मगहिया ब्राह्मण बने थे। किन्तु गल्पमें यह बात नहीं मिलती, कहारोंकी धानुक और राजवार शाखा कहांसे निकली है। अवशेषको मगधराजने सन्तुष्ट हो उन्हें प्राय: साढ़े तीन सेर धान्य प्रभृति शस्य दिया था।

कहार जाति विभिन्न शाखामें विभक्त है—रवानी; सुड़िया, धीमर, अघवार, गड़हक, तुड़ा, मगहिया प्रभृति। कहारोंके कथनानुसार प्रथम कोई श्रेणी-विभाग न रहा। पहले वह गया जिलेके रमपुर नामक स्थानमें बसते थे। कहारोंकी जातिके प्रधान

[illegible] (सं० पु०) [illegible] [illegible] (हि०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० त्रि०) [illegible]

[illegible] (सं० त्रि०) [illegible] (पु०) [illegible] और [illegible] है।

[illegible] (सं० पु०) [illegible] और [illegible] है। [illegible] (वैद्य)

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible] (त्रि०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (हिं० पुं०) [illegible], एक पौधा। (C[illegible]) [illegible] है। [illegible] हुआ है।

[illegible]

[illegible] और [illegible] है। [illegible] और [illegible] होता है।

[illegible] है। [illegible] और [illegible] है। [illegible] होता है। [illegible] है।

[illegible] होता है। [illegible] है। [illegible] होता है।

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

ब्राह्मणसे दो विवाह किये। किन्तु पर्वोदयके मध्य भिन्न विवाह होता था। उसीसे उन्होंने दोमें एक स्त्रीको राजपूत भेज दिया। राजपूत कामेश्वरी स्त्रीसे धाम्हार और दूसरीसे रवानी हुये हैं। मगध और बङ्गालके कहारोंमें गाय और बकरा मारने की प्रथा देख पड़ती है। कहार उत्तम मान पुरुषोंका सम्पर्क देख विवाह करते हैं। विवाहपद्धति साधारण हिन्दुओंके समान है। कहारोंकी स्त्री विशेष अपराध होनेसे पञ्चायतके अनुमतिक्रमसे पतिको छोड़ फिर विवाह कर सकती है। उनकी पञ्चायत अधिक क्षमता रखती है। उसे कोई अमान्य समझ नहीं सकता। धर्म सम्बन्धमें कहार शैव, शाक्त और वैष्णव हैं। उनमें वैष्णव बहुत अल्प होते हैं। यह अनार्य देवताओंकी भी उपासना करते हैं। कहारोंमें नौकरी करनेवाले अन्यान्य श्रेणीकी अपेक्षा सामाजिक सम्मानमें श्रेष्ठ हैं।

युक्तप्रदेशके कहार द्विजातिके घर पानी भरते, विवाहादि अवसरोंमें अन्यान्य कार्य भी यथायोग्य करते हैं। वृष्टि होने पर वह तालाबोंमें सिंघाड़ा डाल देते हैं। शरत्‌ऋतुमें सिंघाड़ा फलनेसे उसे कच्चा-पक्का बेच अपनी जीविका चलाते हैं। डोली ले चलनेका कार्य भी उन्होंके जिम्मे है।

काहारक (सं० पु०) कुत्सितं शिविकादिवहनरूपमीषत्कर्म आहरति जीवनयात्रां निर्वाहयति, कु-आ-हृ-ण्वुल्, कोः कादेशः। शिविकादि वाहक जाति-विशेष, कहार।

"कहाराः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रसङ्करजातयः।
[illegible]"
([illegible])

काहि (हिं० सर्व) किसको, किसे।

काहिल (अ० वि०) १ अलस, सुस्त। २ रुग्न, बीमार। ३ दुर्बल, कमजोर। ४ [illegible]।

काहिली (अ० स्त्री०) आलस्य, सुस्ती।

काही (सं० स्त्री०) ईषत् आपूर्णा आह्वयति कु-आ-ह्वे-ड-ङीष्। कुटज वृक्ष, कुटकीका पेड़।

काही (हिं० वि०) १ नील हरित्, घासा-ऐसा घासके रंगवाला। (पु०) २ वर्णविशेष, कोई रंग। यह नील-हरित् रहता और नील, हल्दी तथा फिटकरी मिलानेसे बनता है।

काहु, काहू देखो।

काहू (हिं० सर्व०) किसी।

काहू (फा० पु०) सलाद, खस। काहूको अङ्गरेजीमें लेटस, सलाद, लातिनमें लक्तुका, हिन्दुमें काहु और सिन्धीमें सलद कहते हैं। (Lactuca Scariola) काहू पश्चिम हिमालयमें गांवसे कुमाऊं तक सात हजारसे दश हजार फीट ऊंचे उत्पन्न होता है। यह पश्चिम तिब्बतमें भी मिलता है। उसमें कुछ कुछ कांटे रहते हैं। फिर साइबेरियासे काहू अङ्गरेजों द्वारा और कनारीज तक चला गया है।

यह गोभीकी भांतिका पौधा है। पत्र दीर्घ और कोमल होते हैं। शीतकालको भारतके उद्यानोंमें उसी शाककी भांति बोते हैं।

काहूके बीजसे स्वच्छ, मधुर और स्फटिकवत् तैल निकलता है। गत १८६४ ई० को पञ्जाबप्रदर्शिनीके समय लाहोरमें उसका नमूना दिखाया गया था।

काहू शीतल और क्लान्तिनाशक है। भारतका काहू ईरानके काहूसे अच्छा होता है। किन्तु भारतके औषधालयोंमें उसका व्यवहार कम है। काहू युरोपियोंके काम आता है। खृष्टीय संवत्से प्रायः ४०० वर्ष पूर्व यह ईरानके बादशाहोंके भोजनमें व्यवहृत होता था। भारतीय काहू नहीं खाते।

यूरोपमें फरवरी मासतक काहू उत्पन्न होता है। गोभीकी भांति उसमें भी एक डण्ठल निकलता, जो ऊपरको रहता है। उसीमें फूल और बीज आते हैं। काहूकी अफीम पक्की नहीं होती।

काहूजी (सं० पु०) ज्योतिषग्रन्थ-रचयिता महादेवके पिता।

काहून—झेलम प्रदेशकी एक कृषक-जाति। इनकी संख्या दश हजारके करीब है।

काहूय (सं० पु०) कहूयस्य अपत्यम्, कहूय-अण्। शिवादिभ्योऽण्। पा ४।१।११२। कहूयके पुत्र।

काहे (हिं० क्रि०) क्यों, क्या बात है।

कासन्दीवटिका (सं० स्त्री०) १ कासघ्न औषध, खांसी मिटानेवाली दवा। २ एक अचार, कसौंदी। राजवल्लभ के मतानुसार यह रुचिकारक, अग्निवर्धक, वायु एवं मल अनुलोमक और वातश्लेष्मज रोगनाशक होती है।

कासपीडित (सं० त्रि०) कासेन कासरोगेण पीड़ितः, ३-तत्। कासरोगी, खांसीका बीमार, जिसको खांसी आती हो।

कासभञ्जन (सं० पु०) पटोल, परवल।

कासमर्द (सं० पु०) कासं मृद्‌नाति, कास-मृद्‌-अण्। कर्मण्यण्। पा ३।२।१। स्वनामख्यात पत्रशाकविशेष, कसौंदा।

कासमर्दका व्यञ्जनरसमें प्रयोग करते हैं, वह अग्निदीपन और स्वादु होता है। (राजवल्लभ) कासमर्द तिक्त, उष्ण, मधुर, कफवातघ्न, अजीर्णघ्न, कासपित्तघ्न और कण्ठशोधन है। (राजनिघण्ट) कासमर्दका पर्ण-पाकमें कटु, वृष्य, उष्ण, लघु और श्वास, कास तथा अरुचिघ्न है। पुष्प श्वास-कासघ्न तथा वातविनाशन होता है। (वैद्यकनिघण्ट)

२ वेशवारविशेष, कसौंदी। ३ पटोल, परवल। ४ कासघ्न औषध, खांसीको मिटानेवाली दवा।

कासमर्दक, कासमर्द देखो।

कासमर्दकपत्र (सं० क्ली०) कासमर्दकदल, कसौंदेका पत्ता।

कासमर्ददल, कासमर्दकपत्र देखो।

कासमर्दन (सं० पु०) कासं मृद्‌नाति, कास मृद कर्तरि ल्यु। पटोल, परवल।

कासमर्दिका (सं० स्त्री०) कासमर्द, कसौंदा।

कासर (सं० पु०) के जले आसरति, क-आ-सृ-अच्। महिष, भैंसा; उसे अधिक समय तक जलमें रहना अच्छा लगता है। (हिं० स्त्री०) २ कानी भेड़। इसके पेटके रोयें लाल होते हैं।

कासरोग (सं० पु०) रोगविशेष, खांसीकी बीमारी। कास देखो।

कासलक्ष्मीविलास—वैद्यकोक्त औषधविशेष, खांसीकी कोई दवा। वङ्ग, लौह, अभ्र, ताम्र, कांस्य, पारद, गन्धक, हरिताल मनःशिला और खर्पर प्रत्येक एक पलके हिसाबसे एकत्र मिलाना चाहिये। फिर केशराजके रस तथा कुलत्थ कलायके क्वाथमें तीन दिन भावना दे उसमें इलायची, जायफल, तेजपात, लौंग, अजवाइन, जीरा, त्रिकटु, त्रिफला, तगरपादुका, गुड़त्वक और वंशलोचन प्रत्येक दो दो तोला डालते हैं। अंतको केशराजके रस और कुलत्थ कलायके क्वाथमें लपेट चणक प्रमाण वटिका बना ली जाती हैं। अनुपान शीतल जल है। मत्स्य, मांस, दुग्ध और स्निग्ध आहार पथ्य होता है। अम्लको छोड़ देना चाहिये। उक्त औषध सेवन करनेसे कास, यक्ष्मा, श्वास, ज्वर, पाण्डुरोग, शोथ, शूल, अर्श प्रभृति रोग शान्त होते हैं। फिर कासलक्ष्मीविलास बलवर्धक और वृष्य तथा अरुचिनाशक भी है। (भैषज्यरत्नावली)

कासलवाडू—तैलङ्ग ब्राह्मण जातिका ६ ठां भेद। ऐलिस्वरोपाध्यायने यह भेद डाले थे।

काससंहारभैरव (सं० पु०) वैद्यकोक्त कासरोगका औषधविशेष, खांसीकी एक दवा। पारद, गन्धक, ताम्र, शङ्खभस्म, सोहागेकी फूली, लौह, मरिच, कुष्ठ, तालीशपत्र, जातीफल, लवङ्ग प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले एकत्र मिला भेकपर्णी, केशराज, निर्गुण्डी, काकमाचिका, द्रोणपुष्पी, गालवी, ग्रीष्मसुन्दर, भार्गी, हरीतकी तथा वासाके रससे घोंटना चाहिये। पञ्चगुञ्जाके समान वटिका सेवन करनेसे कासरोग दूर होता है। (रसरत्नाकर)

कासहरवर्ग (सं० पु०) कासरोगनाशक दश द्रव्य समूह, खांसीकी बीमारी दूर करनेवाली दश चीजोंका जखीरा। इसमें द्राक्षा, अभया, आमलक, पिप्पली, दुरालभा, शृङ्गी, कण्टकारी, वृश्चीर, पुनर्नवा और तमालका डालते हैं। (चरक)

कासहाक्वाथ (सं० पु०) १ कण्टकारीजात पिप्पलीचूर्णयुक्त कासहर क्वाथ, खांसीका कोई काढ़ा। वह कण्टकारीसे बनता और उसमें पिप्पलीचूर्ण पड़ता है। २ धूमपान विशेष। उसमें धूमकी नाड़ी १६ अङ्गुली रहती है। धूम द्रव्यको चन्द्र कोषमें जलाना चाहिये।

कासान्तकरस (सं० पु०) कासाधिकारका रसविशेष, खांसीकी एक दवा। पारद, गन्धक, शुद्धविष, शाल-

काहोड़ (सं॰ पु॰) कहोड़स्य अपत्यम्, कहोड़-अण्। कहोडवंशीय।

कि (हिं॰ क्रि॰ वि॰) १ कैसे, किस प्रकार, क्या। (अव्य॰) २ संयोजक शब्द। ३ अथवा, या।

किं (सं॰ अव्य॰) १ क्या, जिज्ञासाबोधक शब्द। २ आश्चर्य वा विस्मयबोधक शब्द। ३ निषेधवाचक शब्द। ४ विमर्श। ५ निन्दा।

किंगरई (हिं॰ स्त्री॰) तृणविशेष, एक पौदा। वह लाजवंतीसे मिलती और कंटीली रहती है। किंगरईके सींके ७।८ इंच लंबे होते हैं। पत्तोंका दैर्घ्य चौथाई इंच है। आषाढ़ श्रावण मास इसमें फूल आते हैं। पुष्प प्रथम रक्तवर्ण रहते, किन्तु पश्चात् श्वेतवर्ण धारण करते हैं। पत्र और बीज औषधमें व्यवहृत होता है। लकड़ीके कोयलेसे बारूद बनती है। किंगरई भारतवर्षमें सर्वत्र मिलती है।

किंगरिया-एक नीच जाति। इसका पेशा भीख मांगना है। युक्तप्रदेशके पूर्वीय भागमें इस जातिके लोग विशेषतया पाये जाते हैं।

किंगिरी (हिं॰ स्त्री॰) वाद्यविशेष, एक बाजा। यह छोटे चिकारे या सारंगी—जैसी होती है। भट और योगी किंगरी बजा कर भीख मांगा करते हैं।

किंगोरा (हिं॰ पु॰) क्षुपविशेष, एक झाड़ी। वह ४।५ हाथ ऊंचा और कंटीला होता है। किंगोरा भूमि पर दूर तक नहीं फैलता, सीधा ऊपर उठता है। पत्र ४।५ अंगुलि दीर्घ रहते हैं। उनके प्रान्तभागमें दूर दूर दांत होते हैं। किंगोरेमें क्षुद्र क्षुद्र पुष्प और लाल या काली काली फलियां आती हैं। फलियोंको लोग खाया करते हैं। किंगोरामें दारुहल्दीकी भांति गुण होता है। इसे किलमोरा और चित्रा भी कहते हैं।

किंडरगार्डन (अं॰ पु॰) शिक्षा-प्रणालीविशेष, तालीमकी एक तरकीब। इसे किसी जर्मन विद्वान्ने निकाला था। उसने बालकोंके लिये उद्यानमें एक पाठशाला खोली। उसमें अनेक प्रकारकी ऐसी सामग्री एकत्र की, जिससे वह अक्षरों अंकों आदिके अभ्यासके साथ साथ अपने मनको भी बहला सकें। किंडरगार्डन अब अनेक देशोंमें चल गया है। उसके द्वारा बालकोंको चित्रविचित्र काष्ठखण्डोंसे शिक्षा दी जाती है। कानपुर जिलेके मसवानपुरनिवासी पण्डित गौरीशङ्कर भट्टने हिन्दीका बहुत अच्छा किंडरगार्डन बनाया है।

किंयु (वै॰ त्रि॰) किं इच्छति, किं वैदिकत्वात् क्यच्-उ। किमिच्छुक, क्या चाहनेवाला।

किंराजन् (सं॰ पु॰) कः कुत्सितो राजा किम्-राजन् निन्दार्थत्वात् न टच्। १ कुत्सित राजा, खराब बादशाह। (त्रि) २ निन्दित राजयुक्त, बुरे बादशाहवाला।

किंशारु (सं॰ पु॰) किं किञ्चित् कुत्सितं वा शृणाति, किम्-शॄ-ञुण्। किशरयोः किचः। उण् १।४। १ शस्यशूक, अनाजका रेशा। २ वाण, तीर। ३ कङ्कपक्षी, एक चिड़िया। ४ रोटक, रोटी।

किंशुक (सं॰ पु॰) किं किञ्चित् शुकः शुकावयवविशेष इव, उपमि॰। पलाशवृक्ष, ढाक या टेसूका पेड़। किंशुकका पुष्प आकृति और वर्णविषयमें शुकपक्षीके चञ्चु-जैसा होता है। इसी हेतु किंशुक नाम पड़ा। उसका संस्कृत पर्याय—पलाश, पर्ण, यज्ञिय, रक्तपुष्प, क्षारश्रेष्ठ, वातहर, ब्रह्मवृक्ष और समिद्वर है। (भावप्रकाश। ढाक देखो। २ नन्दीवृक्ष। ३ पुराणोक्त वनभेद।

"तुहिन किंशुकवने तथा बदरवने च।" (लिङ्गपुराण, ४९।६१)

किंशुकक्षार (सं॰ पु॰) पलाशक्षार, ढाकका नमक।

किंशुकतैल (सं॰ क्लो॰) पलाशबीजतैल, ढाकका तेल। वह पित्तश्लेष्मघ्न होता है।

किंशुका (सं॰ स्त्री॰) १ पलाशवृक्ष, ढाकका पेड़। २ ज्योतिष्मती, रतनजोत। ३ नन्दीवृक्ष।

किंशुकादिगण (सं॰ पु॰) किंशुक प्रभृति द्रव्यसमूह, ढाक वगैरह चोजोंका जखीरा। उसमें निम्नलिखित द्रव्य सम्मिलित हैं— किंशुक, काश्मरी, बिम्ब, पश्निमत्य, विकण्टक, श्योणाक, शालपर्णी, सिंहपुच्छिद्वय, स्थिरा, पाटला, कण्टकारी, वृहती और विल्व।

(रत्नेश्वार-संग्रह)

किंशुलुक (सं॰ पु॰) किंशुक निपातनात् साधुः। १ हस्तिकर्णपलाश, बड़ा ढाक। २ मोनरङ्ग पक्षी।

कास (सं० पु०) कासते शब्दायते अनेन, कास-घञ्। चरक ।१।१३ १ रोगविशेष, खांसी। भावप्रकाश। २ शोभाञ्जनवृक्ष। ३ कासतृण, एक घास। ४ कफ। (त्रि०) ५ हिंसक, खूंखार।

कासकन्द (सं० पु०) कासहेतुः कन्दः, मध्यपदलो०। कासालुक, कसेरू।

कासकर (सं० त्रि०) कासं करोति, कास-कृ-अच्। कासरोगोत्पादक, खांसी पैदा करनेवाला।

कासघ्न (सं० त्रि०) कास-हन्-टक्। १ कासरोग-नाशक, खांसी मिटानेवाला। (पु०) २ विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़। ३ कासमर्द, कसौंदी। ४ कण्टकारी, कटैया। ५ मोदकविशेष, एक लड्डू। यह हरीतकी, पिप्पली, शुण्ठी, मरिच और गुड़के योगसे बनता और कासरोगको नाश करता है।

कासघ्नधूम (सं० पु०) पञ्चविध धूमपानान्यतम धूम, पीनेसे खांसीको मिटानेवाला एक धुवां। यह वृहती, कण्टकारी, त्रिकटु, कासमर्द, हिङ्गु, इङ्गुदीत्वक् और मनःशिला जलानेसे निकलता है। उक्त सकल द्रव्योंका कल्क बना लेना चाहिये। (सुश्रुत)

कासघ्नी (सं० स्त्री०) कासघ्न ङीप्। १ कण्टकारी, कटैया २ भार्गी।

कासजित् (सं० स्त्री०) कासं जयति, कास-जि-क्विप् तुगागमश्च। १ भार्गी, ब्राह्मणयष्टिका। (त्रि०) २ कासरोगनाशक, खांसी मिटानेवाला।

कासनाशिका (सं० स्त्री०) १ अश्वविट्‌क। २ कर्कट-शृङ्गी, ककड़ासींगी।

कासनाशिनी (सं० स्त्री०) कासं नाशयति, कास-नश्-णिच्-णिनि-ङीप्। कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।

कासनी (फा० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक पौदा। (Cichorium Intybus) यह भारतके पञ्जाब, चीन, पारस्य और इजिप्टमें उपजती है। कासनी शाक केवल भारतवर्षके लोग ही नहीं, वरन् बहुत दिन युरोपीय भी खाते हैं। थोफ्रिष्ट, प्लिनि प्रभृति प्राचीन पाश्चात्य पण्डितोंके ग्रन्थमें इसका विवरण लिखा हुआ है।

मुसलमान हकीमोंके मतानुसार यह शाक शीतल और पित्तनाशक है। इसका मूल उष्ण, बलकर और ज्वरहर होता है।

पश्चिमकी कासनीका भी आदर विशेष है। यह पञ्जाब तथा काश्मीरसे उत्तर आष्ट्रेलिया, समस्त युरोप और अफ्रीकामें भी बहुत उत्पन्न होती है। युरोपीय इसका शाक बड़े आदरसे खाते और मूलको भुनकर बना कहवाके साथ पी जाते हैं। भारतवर्षमें इसका वैसा प्रचार नहीं। युरोपकी भांति भारतमें इसकी कृषिमें यत्न भी कम करते हैं। पञ्जाबकी काङ्गडा उपत्यकामें इसके बीजका सामान्य पत्र देख पड़ता है। उक्त सामान्य रूपसे जिस विशेष लाभकी सम्भावना है, उसे बहुतसे लोग नहीं समझते। अकेले इङ्गलैण्डमें ही प्रति वर्ष लाखों रुपयेकी कासनी बिकती है। यह बलकारक, स्निग्धकर और शीतल होती है। कासनी-का बीज रक्तनिःसारक है। बीजका चूर्ण पैत्तिक-वमननिवारक और सर्वज्वरहर होता है। कासनी-का मूल खानेमें कटु लगता है। औषधादिमें यही व्यवहार किया जाता है। युरोपमें कहवाके बदले, कुछ लोग कासनीके मूलका चूर्ण पिस कर सेवन करते हैं। मूलमें प्रायः चौथाई भाग शर्करा होता जलमें सड़ा यथानियम निचोड़ लेनेसे उत्कृष्ट शोरा सुरा बन जाती है। कासनी अच्छे परिश्रम करनेसे बहुत उत्पन्न हो सकती है। इसमें लाभकी भी अधिक सम्भावना है।

यह हाथ डेढ़ हाथ ऊंची होती है। कासनी देखने-में बहुत खूबसूरत मालूम पड़ती है। पत्तियां छोटी छोटी रहती और पासकोंसे मिलती जुलती हैं। डण्ठ-लमें तीन तीन चार चार अङ्गुलीके अन्तर पर ग्रथित होती है। उसीमें नीलवर्ण पुष्पके गुच्छ निकलते हैं। फूल गिर जानेसे बीज आते हैं। कासनीका मूल डण्ठल और बीज समस्त अंश औषधमें व्यवहृत होता है। हिन्दुस्तानमें कासनी ठण्डाईमें डालकर पी जाती है। २ कासनीका बीज। ३ वर्णकविशेष, एक रंग। यह नीला और कासनीके फूल जैसा होता है। ४ नीलवर्ण-कपोत, नीला कबूतर।

कासन्दी ... कास:दी·क·

व्यक्तिसे दो विवाह किये । किन्तु दक्षिणके मध्य भिन्न विवाह होता था । वर्णोंसे कर्मोंसे दोमें एक दक्षोंको मगहर मिल दिया । सम्प्रति जातियों दक्षोंसे मगहार और दूसरोंसे रवानी हुये हैं । बनारस प्रान्तके रवानियोंमें नाम और कच्छप नामसे दो श्रेणी देख पड़ती हैं । कहार जातिगत नाम पुरुषोंका सम्पर्क देख विवाह करते हैं । विवाहप्रथा साधारण हिन्दुओंके समान है । कहारोंकी स्त्रियां विशेष अपराध होनेसे पञ्चायतके अनुमतिक्रमसे पतिको छोड़ फिर विवाह कर सकती हैं । इनकी पञ्चायत अधिक क्षमता रखती है । उसे कोई अमान्य नहीं कर सकता । यहां कहारोंमें कहार शैव, शाक्त और वैष्णव हैं । इनमें वैष्णव बहुत अल्प होते हैं । यह ग्राम्य देवताओंकी भी उपासना करते हैं । कहारोंमें भीतरी काम करनेवाले ग्राम्यवृत्ति लोगोंकी अपेक्षा सामाजिक सम्मानमें श्रेष्ठ हैं ।

युक्तप्रदेशके कहार हिन्दुओंके घर पानी भरते विवाहादि अवसरोंमें अन्यान्य कार्य भी यथायोग्य करते हैं । वृष्टि होने पर यह तालाबोंमें बीज डाल देते हैं । शरत्‌ऋतुमें सिंघाड़ा बननेसे उसे कच्चा-पका बेच अपनी जीविका चलाते हैं । डोली ले जानेका कार्य भी इन्हींके जिम्मे है ।

काहारक (सं० पु०) कुत्सितं शिबिकादिवहनरूपमोत्कृष्टकर्म्म आहरति जीवनयात्रा निर्वाहयति, कु-आ-हृ-ण्वुल्, कोः कादेशः । शिबिकादि वाहक जातिविशेष, कहार ।

"[illegible]

[illegible]"

([illegible])

काहि (हिं० सर्व०) किसको, किसे ।

काहिल (अ० वि०) १ अलस, सुस्त । २ रुग्ण, बीमार । ३ दुर्बल, कमजोर । ४ लग्न, दुखना ।

काहिली (फा० स्त्री०) आलस्य, सुस्ती ।

काही (पु० स्त्री०) एक धातुका [illegible] ।

काही (हिं० वि०) १ नील हरित्, घास-जैसा रंगके रंगवाला । (पु०) २ वर्णविशेष, कोई रंग । यह नील-हरित् रहता और घास, पत्तो तथा फिटकरी मिलानेसे बनता है ।

काहु, काह देखो ।

काहू (हिं० सर्व०) किसी ।

काहू (फा० पु०) सलाद, खस । काहूको बहुधा काहू, सलाद, खासिनी सलात, सेवतुरे काहू और सिंहलीमें सलाद कहते हैं । (Lactuca Scariola) काहू पश्चिम हिमालयमें काश्मीरसे कुमायूं तक सात हजार फुट तक ऊंचे उत्पन्न होता है । यह पश्चिम तिब्बतमें भी मिलता है । इसमें कुछ कुछ कांटे रहते हैं । फिर साइबेरियासे काहू पञ्जाबसे दोनों ओर कमायोन तक चला गया है ।

यह गोभीको भांतिका पौधा है । पत्र दीर्घ और कोमल होते हैं । शीतकालको भारतके उद्यानोंमें इसे शाककी भांति बोते हैं ।

काहूके बीजसे स्वच्छ, मधुर और स्फटिकवत् तैल निकलता है । गत १८६४ ई० को पञ्जाबप्रदर्शिनीके समय लाहोरमें इसका नमूना दिखाया गया था ।

काहू शीतल और शान्तिजनक है । भारतका काहू ईरानके काहूसे अच्छा होता है । किन्तु भारतके औषधालयोंमें उसका व्यवहार कम है । काहू युरोपियोंके काम आता है । खृष्टीय संवत्‌से प्रायः ४०० वर्ष पूर्व यह ईरानके बादशाहोंके भोजनमें व्यवहृत होता था । भारतीय काहू नहीं खाते ।

यहांवाले कहवां सामान्य काहू उत्पन्न होता है । गोभीको भांति उसमें भी एक डण्ठल निकलता, जो सवाको रहता है । उसमें फूल और बीज आते हैं । काहूको अफीम अच्छी नहीं होती ।

काहूजी (सं० पु०) ज्योतिषग्रन्थ-रचयिता महादेवके पिता ।

काहून—हिमालय प्रदेशकी एक क्षत्र-जाति । इनकी संख्या दश हजारके करीब है ।

काहूय (सं० पु०) कोऽहम् अहम्, काहूय-अच् [illegible] (पा० ५।१।१२४) [illegible] ।

काहे (हिं० क्रि०) क्यों, क्या काम है ।

काशोड़ (सं० पु०) कशोड़स्य अपत्यम्, कशोड़-अण्। कशोडवंशीय।

कि (हिं० क्रि० वि०) १ कैसे, किस प्रकार, क्या। (अव्य०) २ संयोजक शब्द। ३ अथवा, या।

किं (सं० अव्य०) १ क्या, जिज्ञास्यबोधक शब्द। २ आश्चर्य या विस्मयबोधक शब्द। ३ निषेधवाचक शब्द। ४ वितर्क। ५ निन्दा।

किंगरई (हिं० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक पौधा। वह माजंदरानीमें मिलती और कंटीली रहती है। किंगरईके सींके ७। ८ इञ्च लंबे होते हैं। पत्तोंका दैर्घ्य चौथाई इञ्च है। आषाढ़ श्रावण मास उसमें फूल आते हैं। पुष्प प्रथम रक्तवर्ण रहते, किन्तु पश्चात् श्वेतवर्ण धारण करते हैं। पत्र और बीज औषधमें व्यवहृत होता है। लकड़ीके कोयलेसे बारूद बनती है। किंगरई भारतवर्षमें सर्वत्र मिलती है।

किंगरिया—एक नीच जाति। इसका पेशा भीख मांगना है। युक्तप्रदेशके पूर्वीय भागमें इस जातिके लोग विशेषतया पाये जाते हैं।

किंगिरी (हिं० स्त्री०) वाद्यविशेष, एक बाजा। यह छोटे चिकारे या सारंगी—जैसी होती है। नट और योगी किंगरी बजा कर भीख मांगा करते हैं।

किंगोरा (हिं० पु०) क्षुपविशेष, एक झाड़ी। वह ४।५ हाथ ऊंचा और कंटीला होता है। किंगोरा भूमि पर दूर तक नहीं फैलता, सीधा ऊपर उठता है। पत्र ४।५ अंगुलि दीर्घ रहते हैं। उनके प्रान्त-भागमें दूर दूर दांत होते हैं। किंगोरेमें क्षुद्र क्षुद्र पुष्प और लाल या काली काली फलियां आती हैं। फलियोंको लोग खाया करते हैं। किंगोरामें दारुहल्दीकी भांति गुण होता है। उसे किलमोरा और चित्रा भी कहते हैं।

किंडरगार्डन (अं० पु०) शिक्षा-प्रणालीविशेष, तालीमकी एक तरकीब। इसे किसी जर्मन विद्वान्ने निकाला था। उसने बालकोंके लिये उद्यानमें एक पाठशाला खोली। उसमें अनेक प्रकारकी ऐसी सामग्री एकत्र की, जिससे वह बच्चे अक्षरों आदिके अभ्यासके साथ साथ अपने मनको भी बहला सकें। किंडरगार्डन अब अनेक देशोंमें चल गया है। उसके द्वारा बालकोंको चित्रविचित्र काष्ठखण्डोंसे शिक्षा दी जाती है। कानपुर जिलेके भगवानपुरनिवासी पण्डित गौरीशङ्कर भट्टने हिन्दीका बहुत अच्छा किंडरगार्डन बनाया है।

किंयु (वै० त्रि०) किं इच्छति, किं वैदिकत्वात् क्यच्-उ। जिज्ञासुक, क्या चाहनेवाला।

किंराजन् (सं० पु०) कः कुत्सितो राजा किम्-राजन् निन्दार्थत्वात् न टच्। १ कुत्सित राजा, खराब बादशाह। (त्रि) २ निन्दित राजयुक्त, बुरे बादशाहवाला।

किंशारु (सं० पु०) किं किञ्चित् कुत्सितं वा शृणाति, किम्-श-ञुण्। किंशरयोः किच:। उण् १। ४। १ शस्यशूक, अनाजका रेशा। २ वाण, तीर। ३ कङ्कपक्षी, एक चिड़िया। ४ रोटक, रोटी।

किंशुक (सं० पु०) किं किञ्चित् शुकः शुकावयव-विशेष इव, उपमि०। पलाशवृक्ष, ढाक या टेसूका पेड़। किंशुकका पुष्प आकृति और वर्णविषयमें शुकपक्षीके चञ्चु-जैसा होता है। उसी हेतु किंशुक नाम पड़ा। उसका संस्कृत पर्याय—पलाश, पर्ण, यज्ञिय, रक्तपुष्प, क्षारश्रेष्ठ, वातहर, ब्रह्मवृक्ष और समिद्वर है। (भावप्रकाश) ढाक देखो। २ नन्दीवृक्ष। ३ पुराणोक्त वनभेद।

"शूर्पमं किंशुकवने तथा बदरवल च।" (लिङ्गपुराण, ४९। ६९)

किंशुकक्षार (सं० पु०) पलाशक्षार, ढाकका नमक।

किंशुकतैल (सं० क्ली०) पलाशबीजतैल, ढाकका तेल। वह पित्तश्लेष्मघ्न होता है।

किंशुका (सं० स्त्री०) १ पलाशवृक्ष, ढाकका पेड़। २ ज्योतिष्मती, रतनजोत। ३ नन्दीवृक्ष।

किंशुकादिगण (सं० पु०) किंशुक प्रभृति द्रव्यसमूह, ढाक वगैरह चीजोंका जखीरा। उसमें निम्नलिखित द्रव्य सम्मिलित हैं— किंशुक, काश्मरी, विल्व, अग्निमन्थ, विकण्टक, श्योणाक, शालपर्णी, सिंहपुच्छिदय, सिरा, पाटला, कण्टकारी, बृहती और पिल्य।
(रसेन्द्रसार-संग्रह)

किंशुलुक (सं० पु०) किंशुक निपातनात् साधुः। १ हस्तिकर्णपलाश, बड़ा ढाक। २ सोनपलाश पक्षी।

वनोकर रहती और फल, मूल तथा पत्र खाकर जीविका निर्वाह करती हैं। (रामायण, उत्तर, ८८ सर्ग)

३ जम्बु द्वीपाधिपति अग्नीध्रके एक पुत्र। (विष्णुपुराण. २।१।१९) ४ जम्बुद्वीपके नवखण्ड मध्य हिमालय और हेमकूटके बीचका एक क्षेत्र वा देश।

"स श्वेतपर्वतं वीर समतिक्रम्य वीर्यवान्।
देशं किम्पुरुषावासं द्रुमपुत्रेण रक्षितम्॥"
(भारत, सभा, २८।१)

५ कुत्सितपुरुष, खराब आदमी।

किम्पुरुषाधिप (सं० पु०) किम्पुरुषान् अधिपाति रक्षति, किम्पुरुष-अधि-पा-क। कुबेर, किम्पुरुषों या किन्नरोंके राजा।

"धनदस्य धनाध्यक्षो यथा किम्पुरुषाधिपः।" (हरिवंश)

किम्पुरुषेश्वर (सं० पु०) किम्पुरुषस्य किम्पुरुषाणां वा ईश्वरः, ६-तत्। १ किम्पुरुषवर्षके राजा। २ कुबेर।

किम्पुरुष (सं० क्ली०) किम्पुरुषनामक वर्षविशेष, एक मुल्क।

किम्प्रकार (सं० अव्य०) किं कीदृशः प्रकारोऽस्मिन् कर्मणि। १ किस प्रकार, कैसे। २ किस उपायसे, किस तदबीरसे।

किम्प्रभाव (सं० त्रि०) किं कीदृशः प्रभावोऽस्य, बहुव्री०। किस प्रकार प्रभावविशिष्ट, कैसे असरवाला।

किम्बल (सं० त्रि०) किं कीदृशः बलः यस्य, बहुव्री०। किस प्रकार सैन्यविशिष्ट, कैसी फौज या ताकत रखनेवाला।

किम्भरा (सं० स्त्री०) किञ्चित् बिभर्ति, किम्-भृ-अच्-टाप्। नली नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज।

किम्भूत (सं० त्रि०) किं कीदृशं भूतम्, कर्मधा०। किस प्रकारका, कैसा।

किमय (सं० त्रि०) किं स्वरूपम्, किम्-मयट्। किमात्मक, किस तरहका।

किम्वान् (सं० त्रि०) किमपि अस्यास्ति, किम्-मतुप् मस्य वः। १ किञ्चित् विशिष्ट, कुछ रखनेवाला। २ किम्विशिष्ट, क्या रखनेवाला।

किम्वदन्ति (सं० स्त्री०) किम् वद-णिच्। जनश्रुति, प्रवाद, अफवाह।

किम्वदन्ती (सं० स्त्री०) किम्-वद्-णिच्-ङीप्। जनश्रुति, अफवाह। सत्य हो या असत्य बहुतसे लोग जो बात विश्वासपूर्वक बताते रहते, उसीको किम्वदन्ती कहते हैं।

"अस्ति किरेषा किम्वदन्ती यथाहं कुले क्वापि कस्यचित्। नाम वाचसी मनुपस्यते।" (प्रबोधचन्द्रोदय)

किम्वा (सं० अव्य०) किं च वा च, द्वन्द्वः। अथवा, या तो, विकल्प। किम्वाका संस्कृत पर्याय—उताहो, यदि वा, यद्वा और नेति है।

किम्वद् (सं० त्रि०) किं वेत्ति, किम्-विद्-क्विप्। किस विषयमें अभिज्ञ, क्या जाननेवाला।

किम्वीर्य (सं० त्रि०) किं कीदृशं वीर्यमस्य, बहुव्री०। किस प्रकारका बलशाली, कैसा ताकतवर।

किम्व्यापार (सं० त्रि०) किं कीदृशो व्यापारोऽस्य, बहुव्री०। १ किस प्रकारका व्यापारविशिष्ट, कैसे काममें लगा हुआ। (पु०) कीदृशो व्यापारः, कर्मधा०। २ किस प्रकारका कार्य, कैसा काम।

कियत् (सं० त्रि०) किं परिमाणमस्य, किम्-वतुप् वस्य घः किमः कि आदेशश्च। किमिदंभ्यां वो घः। पा ५।२।४०। क्या परिमाणविशिष्ट, किस मिकदारवाला, कितना।

"गतमपसि कियदिव्यक्तमदुपाया।" (साहित्यदर्पण)

कियती (सं० स्त्री०) कियत्-ङीप्। कितनी।

"लिखितो यदि मुखशिखापदे भवति सा कियतीमिव न व्ययाम्।"
(नैषध, ४ र्थ सर्ग)

कियत्काल (सं० पु०) कियान् किम्परिमितः कालः, कर्मधा०। १ क्या परिमित काल, कितना वक्त। २ किञ्चित् काल, थोड़ा समय।

कियदेतिका (सं० स्त्री०) उद्योग, कोशिश।

कियद्दूर (सं० त्रि०) किं परिमितं दूरं व्यवधानम्, कर्मधा०। कितनी दूर।

कियन्मात्र (सं० त्रि०) किं परिमिता मात्रा यस्य, बहुव्री०। क्या मात्राविशिष्ट, किस मिकदारवाला।

कियन्मूल्य (सं० त्रि०) किं परिमितं मूल्यमस्य, बहुव्री०। क्या मूल्यविशिष्ट, किस कीमतवाला।

कियारी (हिं० स्त्री०) १ खेत वा उद्यानमें अल्प अल्प

किंशुकादि (सं० पु०) किंशुकप्रधानः निदिः प्रत्ययस्य दीर्घत्वम्। ... पाणिनिव्याकरणोक्त चतुर्थ्यन्तक प्रत्ययविशिष्ट शब्दगण, टाकके पहले इक लगनेवाला शब्द।

किंशुकादि (सं० पु०) पाणिनिव्याकरणोक्त शब्दगण विशेष, शब्दोंका एक समूह। इसमें निम्नलिखित शब्द आते हैं— किंशुक, शाल्व, नड़, अञ्जन, भञ्जन, लोहित और कुक्कुट।

किंस (सं० त्रि०) किं कुत्सितं स्यति छिनत्ति, किम् सो-क। कुत्सित छेदनकारी, खराब काटनेवाला।

किंसखि (सं० पु०) कः कुत्सितः सखा। कुत्सित सखा, बुरा दोस्त।

"न किंसखा स्यात् न सखि कोऽपि किम्।" (किरातार्जुनीय)

किंसारु, किंशारु देखो।

किंस्वित् (सं० अव्य०) १ प्रश्नार्थबोधक शब्द। २ सन्देहवाचक शब्द।

किक (अं० स्त्री० —Kick) पदाघात, पैरकी ठोकर, लात।

किकरी—एक शूद्र जाति। इस जातिके लोग डलिया टोकरी आदि बनाकर आजीविका चलाते हैं।

किकि (सं० पु०) कक-इन् पृषोदरादित्वात् अत इत्वम्। १ चाषपक्षी २ नीलकण्ठ। ३ नारिकेल, नारियल।

किकिदिव (सं० पु०) किकि इति अव्यक्तशब्देन दाव्यति क्रीडति, किकि-दिव-क। चाषपक्षी, नीलकण्ठ। इसका पर्याय—स्वर्णचातक, चाष, चाम, किकिदिवि, किकीदिवि, किकीदिव, किकिदीव, किकिदिव और स्वर्णचूड़ है।

किकिदीविति (सं० पु०) कुक्कुट, मुरगा।

किकियाना (हिं० क्रि०) १ कोलाहल करना, शोर मचाना, चिल्लाना। २ रोदन करना, रोना। ३ कें कें करना, दबना।

किकिर (सं० पु०) १ कोकिल, कोयल। २ पक्षी, चिड़िया। ३ अश्व, घोड़ा।

किकिरा (सं० अव्य०) क प्रत्यये कर्मणि क पृषोदरादित्वात् साधुः। ... छोटा बड़ा शब्द।

किकी, किकि देखो।

किकीदिव, किकिदिव देखो।

किकीदिवि, किकिदिव देखो।

किकीटीवि, किकिदिव देखो।

किकोरी (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पौधा।

किक्किट (सं० त्रि०) कुत्सित, खराब।

"किक्किटाचोल ..."
(...)

किक्किश (सं० पु०) १ कृम्यादिक कीटविशेष, बालपर रह उड़ानेवाला एक कीड़ा। केश, रोम, नख, दन्त आदि स्थानोंमें कीड़ेको किक्किश कहते हैं। (सुश्रुत) २ लोमहारक रोग, चमड़ा झड़ानेवाली बीमारी। इस रोगमें बहुत-सा जलमें तेल पूत मिला मलमें और लगाते हैं। फिर गोमय रगड़नेसे भी उपकार होता है। (भेषज्यरत्नावली)

किक्किस, किक्किश देखो।

किक्किसाद (सं० पु०) राजिमत् सर्पविशेष, एक सांप। किक्किसाद राजिमान् सर्पोंके अन्तर्भूत है। मध्यपवन को मलका पित्त अति प्रबल रहता है। किक्किसादके दंशनसे त्वगादिको शुक्लता, शीतज्वर, रोमहर्ष, स्तब्धता, दष्टस्थानमें शोथ, मुख नासिका द्वारा कफस्राव, वमन, चक्षुद्वयमें निरन्तर कण्डु, कण्ठदेशमें सूजन, घुर्घुरशब्द, निःश्वास अवरोध, अन्धकारमें प्रवेश करनेकी भांति अनुभव और अन्यान्य कफजन्य वेदना होती है। विशेष विवरण विषचिकित्सा देखो।

किक्रम (सं० पु०) इसे पूर्व चलानेका दाना।

किखि (सं० स्त्री०) खदति हिनस्ति, निपातनात् साधुः। १ अल्पशृगाल, लोमड़ी। (पु०) २ वानर, बन्दर।

किङ्कणी (सं० स्त्री०) किञ्चित् कणति, किम्-कण-इन्-ङीप्। छोटे छोटे घुंघरू।

किङ्कर (सं० त्रि०) किञ्चित् करोति, किम्-कृ-ट। दास, नौकर।

किष्टगोविन्द—बुन्देलखण्डके अधिवासी एक कवि। इनका जन्म १७४६ ई०में हुआ था और शान्तिरसमें कविता करते थे।

[illegible]

खिराज (सं० पु०) [illegible]

[illegible]

खिर (सं० पु०) [illegible] (त्रि०) [illegible]

खिरेंटा (हिं० पु०) [illegible] (Christian) [illegible]

खिरक (सं० पु०) [illegible]

खिरका (हिं० पु०) [illegible]

खिरकिरी (हिं० स्त्री०) [illegible]

खिरकिन (हिं० पु०) [illegible]

खिरकिया (हिं० [illegible]) [illegible]

किङ्करसेन—एक बंगाली कायस्थ । दिल्लीवाले मुगल-सम्राट बहादुर शाहके समय उनके पुत्र आजिम् उश्-शान् बङ्गाल-बिहार-उड़ीसाके नाजिम और दीवान् रहे । उसी समय हुगलीमें एक जैन-उद्-दीन फौजदार थे । आजिमके साथ जैन-उद्-दीनकी सम्प्रीति न रही उसीसे उन्हें पदच्युत होना पड़ा । आजिमने अपने प्रियपात्र वालीबेगको हुगलीका फौजदार बनाया था । पदच्युत फौजदार जैन-उद्-दीनके अधीन किङ्करसेन पेशकार रहे । वह अति चतुर और कार्य-दक्ष थे । जैन-उद्-दीनकी उन पर प्रीति तो रही, किन्तु वह किङ्करसेन पर पूर्ण विश्वास न रखते थे । कारण किङ्करसेनकी बुद्धि और क्षमताको उस समय कोई राजपुरुष पाता न था । जैन-उद्-दीनने निश्चय किया कि वालीबेगके पहुंचते ही वह उन्हें फौजदारी-का कागजपत्र समझा दिल्ली चले जायेंगे । किन्तु आनेमें विलम्ब देख जैन-उद्-दीनने उन्हें अपना उद्देश बता शीघ्र चलनेको अनुरोध किया था । वालीबेग भी किङ्करसेनको जानते और उनपर विश्वास भी रखते थे । उन्होंने जैन-उद्-दीनको कहला भेजा कि किङ्करसेनको कागज़पत्र बता वह दिल्ली जा सकते थे । जैन-उद्-दीनने अपने मनमें सोचा—'किङ्करसेन किसी समय हमारे ही अधीनस्थ कर्मचारी रहे । उनको कागजपत्र समझा देनेकी बात कह वालीबेगने हमारा अपमान किया है ।' उक्त विवेचनासे उन्होंने कागज़ पत्र छोड़े न थे । वालीबेगने उसी सूत्रपर जैन-उद्-दीनसे युद्ध छेड़ दिया । फरासडांगीके निकट युद्ध हुवा । फरासी-सियों और ओलन्दाजोंने जैन-उद्-दीनका पक्ष लिया था । वालीबेगने दिलपत् नामक किसी व्यक्तिके अधीन नवाबका सैन्य भेजा था । किन्तु जैन-उद्-दीनने सन्धिका प्रस्ताव कर दिलपत्के पास आदमी पहुंचाया । उसके पहुंचते ही अचानक वा पूर्वके किसी षड़यन्त्रा-नुसार फरासीसी तोपका एक गोला दिलपत्सिंहके जाकर लगा था । सेनाध्यक्ष हत होनेसे नवाबकी फौजमें गड़बड़ पड़ गयी । जैन-उद्-दीन उसी सुयोगमें किङ्कर-सेनको ही साथ ले दिल्ली चले गये । वहां पहुंचते ही वह मर गये । किङ्करसेन स्वदेशको लौटे और निर्भीक-चित्त मुरशिदाबाद जाकर नवाबसे मिले । नवाब उन्हें जैन-उद्-दीनका आदमी समझ क्रुद्ध हो गये, किन्तु उस क्रोधको छिपा मुखसे मीठी मीठी बातें कहने लगे । फिर उन्होंने किङ्करसेनको ही हुगलीके कर-संग्राहकपद पर बैठाया था । एक वर्ष पीछे नवा-बने उनसे हिसाब तलब किया । किङ्करसेन हिसाब समझाने मुरशिदाबाद गये थे । कागजपत्रोंको झूठ बता नवाबने उन्हें कैद किया था । कैदखानेमें उन्हें भैंसका दूध नमक डालकर खानेको दिया जाता था । १७०८ ई० के पीछे किसी समय किङ्करसेनने पर-लोक गमन किया । उनका घर सम्भवतः फरासडांगीमें रहा । फरासडांगीका एक स्थान आज भी 'किङ्करसेनका गड़' कहाता है ।

किङ्करी (सं० स्त्री०) किङ्कर-ङीष् । दासी, टहलुई ।

किङ्कर्तव्य (सं० त्रि०) क्या हूंकरना उचित, कौन फर्ज़ वाजिब ।

किङ्कर्तव्यता (सं० स्त्री०) किङ्कर्तव्यस्य भावः किङ्कर्तव्य-तल् । क्या करना पड़ेगा जैसी चिन्ता ।

किङ्कर्तव्यविमूढ (सं० त्रि०) किङ्कर्तव्ये कर्तव्यतानिर्णये विमूढः, ७-तत् । कर्तव्य निर्णय करनेको असमर्थ, जो अपना फर्ज़ ठहरा न सकता हो ।

किङ्किण (सं० पु०) सात्वतवंशीय कोई राजा ।

"भजमानस्य निम्लोचिः किङ्किणो धृष्टिरेव च ।" (भागवत)

किङ्किणी (सं० स्त्री०) किमपि किञ्चिदा कणति किम्-कण-इन्-ङीप् पृषोदरादित्वात् साधुः । १ कटिदेशका आभरणविशेष, कमरका एक गहना, करधनी । उसका संस्कृत पर्याय—क्षुद्रघण्टिका, कङ्कणी, किङ्कि-णिका, किङ्किणि, क्षुद्रघण्टी प्रतिसरा, किङ्किणीका, कङ्कणिका, क्षुद्रिका और घर्घरी है । २ अम्लरसयुक्त द्राक्षाविशेष,एक खट्टा अंगूर । ३ वृक्षविशेष, एक पेड़ । ४ देवीमूर्तिविशेष । ५ विकङ्कत वृक्ष, बैंची । ६ युद्धास्त्र-विशेष, लड़ाईका एक हथियार । (रामायण, १ । २७ सर्ग)

किङ्किणीका (सं० स्त्री०) किङ्किणी स्वार्थे कन्-टाप् । क्षुद्रघण्टिका, करधनी ।

किङ्किणीकाश्रम (सं० पु०-क्ली०) एक तीर्थ । उक्त तीर्थमें रहनेसे परजन्म अप्सरोलोक मिलता है ।

(भारत, अनु० २५ अ०)

किरकिराना (हिं० क्रि०) १ पीड़ा करना, दुखाना। २ अच्छा न लगना, बुरा मालूम पड़ना। ३ किटकिटाना, दांत पीसना।

किरकिराहट (हिं० स्त्री०) १ चक्षुपीड़ाविशेष, आंख का दर्द। किरकिराहट आंखमें गर्द या तिनकेका छोटा टुकड़ा पड़ जानेसे होती है। २ दांतके नीचे कंकड़ पड़नेकी आवाज। ३ कंकरीलापन।

किरकिरी (हिं० स्त्री०) किरकिटी, गर्द या तिनकेका छोटा टुकड़ा। २ अपमान, बेइज्जती, हेटी।

किरकिल (हिं० पु०) १ कृकलास, गिरदान, गिरगिट। (स्त्री०) २ शरीरस्थ वायुविशेष, एक हवा। किरकिल छींक लाती है।

किरकिला (हिं० पु०) पक्षिविशेष एक चिड़िया। किरकिला आकाशसे टूट मत्स्यको आक्रमण करता है।

किरकी (हिं० स्त्री०) अलङ्कार-विशेष, एक गहना।

किरकी (खाड़की) पूने जिलेकी हवेली तहसीलका एक कसबा। यह अक्षा० १८° ३४´ उ० और देशा० ७३° ५१´ पू० पर अवस्थित है। बंबईसे ११६ मील दक्षिणपूर्व और पूनेसे ४ मील उत्तर-पश्चिम यह पड़ता है। लोकसंख्या ग्यारह हजारके करीब है। गुदाम तयार करनेका यहां बहुत बड़ा कारखाना है।

किरच (हिं० स्त्री०) १ अस्त्रविशेष, एक हथियार। किरच सीधी तलवार जैसी रहती है। उसे अग्रभागकी ओर सीधे भोंक देते हैं। २ खण्डविशेष, नोकदार टुकड़ा।

किरचिया (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। किरचिया बगलेसे छोटा होता है। उसके पंखोंकी झिल्ली सुनहली रहती है।

किरची (हिं० स्त्री०) १ किसी किस्मका मुलायम रेशम। किरची बंगालमें उपजती है। २ रेशमकी लच्छी।

किरटा (सं० स्त्री०) कुसुम्भवीज, कुसुमका बीज।

किरण (सं० पु०) कीर्यन्ते विक्षिप्यन्ते रश्मयोऽस्मात्, कृ-क्यु। कॄपृवृजिमन्दिनिधाञ्भ्यः क्युः। उण् २।८१। १ सूर्य, सूरज। कीर्यते परितः क्षिप्यते असौ। २ सूर्यरश्मि, सूरजकी किरण। ३ चन्द्ररश्मि, चांदकी किरण। ४ रत्नरश्मि, जवाहिरकी किरण। किरणका संस्कृत पर्याय—अभ्र, मयूख, अंशु, गभस्ति, घृणि, धृष्णि, भानु, कर, मरीचि, दीधिति, त्विट्, द्युति, आभा, विभा, प्रभा, रुक्, रुचि, भाः, छवि, दीप्ति, रश्मि, अभीशु, महः, ज्योतिः, महः, रोचिः, शोचिः, त्विषा, वृष्णि, प्रकाश, आतप, द्योत, पाद, आलोक, वसु, ऋष्टि, भास, घर्म, लोक, अर्चि, वीचि, दीप्ति, धाम, वर्च, शुभ, तेजः और ओजः है।

"भवति विरलभक्तिर्म्लानपुष्पोपहारः
स्वकिरणपरिवेषोद्भेदशून्याः प्रदीपाः।" (रघु० ५।७४)

किरणतन्त्र—माधवाचार्यने अपने सर्वदर्शनसंग्रहमें इस नामके एक शैवतंत्रका उल्लेख किया है।

किरणमय (सं० वि०) किरण-मयट्। १ किरणस्वरूप। २ किरणविशिष्ट।

किरणमाली (सं० पु०) किरणानां माला अस्त्यस्य, किरणमाला-इनि। सूर्य, आफताब।

किरणावली (सं० पु०) किरणानां आवली श्रेणी। किरणश्रेणी, किरनोंकी कतार। २ किरणावली नामके संस्कृत भाषामें बहुतसे ग्रन्थ हैं। उनमें उदयनाचार्य-विरचित वैशेषिकसूत्रके प्रशस्तपादकी व्याख्या मुख्य है। फिर इसके ऊपर भी बहुतसी टीका हैं। जैसे—पद्मनाभकृत किरणावलीभास्कर, वर्धमानकृत द्रव्यकिरणावलीप्रकाश, चंद्रशेखरभारतीकृत द्रव्यकिरणावलीशब्दविवरण, महादेवकृत गुणकिरणावलीरहस्य, रामभद्रकृत गुणरहस्य, वरदराज और अण्णकृत टीका आदि। किरणावलीकी उन टीकाओं पर भी और बहुतसे विवरण उपलब्ध होते हैं। उनमेंसे कुछके नाम ये हैं—मेघभगीरथकृत किरणावलीप्रकाशप्रकाशिका, रुद्रन्यायवाचस्पतिकृत रघुनाथीय द्रव्यकिरणावलीपरीक्षा, माधवदेवकृत गुणरहस्यप्रकाश, रघुनाथकृत गुणप्रकाशविवृति, मथुरानाथकृत गुणप्रकाशदीधिति और गुणप्रकाशदीधितिमंजरी नाम्नी विवृतिटीका। इनके सिवा रुद्रभट्टाचार्यकृत गुणप्रकाशविवृति-भावप्रकाशिका, रामकृष्णभट्टाचार्यविरचित गुणप्रकाशविवृतिप्रकाशिका और जयरामभट्टाचार्यविरचित दीधितिप्रकाशिका भी प्रचलित है।

३ दादाभाई विरचित सूर्यसिद्धान्तटीका। ४ गदाधरकृत एक अलंकार निरूपक ग्रंथ।

झिङ्गिनीका (सं० त्रि०) झिङ्गिनीति तस्या आर्दीन पत्राणि, झिङ्गिनी-कान्त्, झिङ्गिनीका: शुष्कपत्रिका या पत्राणि, झिङ्गिनीक-इति । शुष्कपत्रिकायुक्त, सूखी पत्तियोंवाला ।

झिङ्गिनीतैल (वैद्यक)—वैद्यकोक्त किसी झिङ्गिका तैल । इस तैलके व्यवहारसे कानमें सन सन शब्दका होना, कान बहना, बधिरता, शिरोरोग, कर्णरोग, कण्ठरोग और मन्याग्रहादि मिट जाता है । प्रस्तुत करनेका नियम यह है—पाकके लिये पादित्यमना ही २ सेर चार कुल १६ सेर पकाकर पका ४ सेर रहने तक उतार लेना चाहिये । फिर, कामधुक् और सिन्दूरको प्रत्येक २ सेर परिमाण और गन्धमिश्रमें फिर तीन प्रकारका कल्क बनाते हैं । कल्कार्थ ४ सेर सर्जरस, हरिताल, पिप्पली, मुस्ता, गन्धक, कुष्ठ, कुशनाभा, कर्कटशृङ्गी, पादित्यमलाबीज, धुस्तूरबीज, रास्ना, मधुरिका, स्फटिकामूल, देवदारुका मूल, विषमाधुक, सप्तिका और मजीठको प्रत्येक ४ तोला डाल कर पकाना चाहिये ।

झिङ्गिनि (सं० पु०) झिङ्गी देखो ।

झिङ्गिनी (सं० स्त्री०) १ विकङ्कतवृक्ष, बैंची । २ पारद्राक्षा, बड़ा अंगूर ।

झिङ्गिर (सं० स्त्री०) झिं कुत्सितं शब्दादि किरति किरति, झिम्-कृ-क । १ हस्तिकुम्भ, हाथीका मस्तक । (पु०) २ बृहत् कृष्णमक्षिका, भौंरा । ३ कोकिल, कोयल । ४ घोटक, घोड़ा । ५ कामदेव । ६ रक्तवर्ण, लाल रंग । (त्रि०) ७ रक्तवर्णविशिष्ट, सुर्ख लाल ।

झिङ्गिरा (सं० स्त्री०) झिं कुत्सितं यथा तथा किरति यस्मात् निःसरति, झिम्-कृ-क-टाप् । १ रक्त, खून, लहू । २ विकङ्कतवृक्ष, बैंचीका पेड़ ।

झिङ्गिराट (सं० पु०) १ कण्टक वृक्ष, बबूलका पेड़ झिङ्गिराट शीतल, भेदक, पाचक और कफ, कुष्ठ, कृमि एवं विषनाशक माना है । (वैद्यकनिघण्टु)

झिङ्गिराल (सं० पु०) झिङ्गिरं रक्तवर्णं भवति पुष्पाणि यस्य, झिङ्गिर-भल-पञ् । १ शालि पुष्प । २ रुद्र । ३ रक्तवर्ण, लाल । ४ कोकिल, कोयल । ५ गान्धारदेशोद्भवारक्त अशोकपुष्प, एक प्रकार अंगूरी बटवारिया । ६ वृक्षविशेष, एक वृक्ष । इसका संस्कृत पर्याय—हिमगौर, शीतल, शीतसद्ग, विषमाक्षी, शीतलपत्र और शरदालक्ष्य है । राजनिघण्टुके मतसे झिङ्गिराल कषाय एवं तिक्तरस, शान्तिकर, अग्निदीपक और कफ, वायु, रक्त, रोग, रक्त तथा चक्षुदोषनाशक है । फिर भावप्रकाशमें इसे पिपासा, दाह, शोथ, कृमि और कृमिनाशक भी कहा है ।

झिङ्गिराल (सं० पु०) झिङ्गिराल रक्तवर्ण भवति पराजोति, झिङ्गिर-भल-अण् । कर्कट वृक्ष, बबूलका पेड़ ।

झिङ्गिरी (सं० पु०) झिङ्गिरं रक्तवर्णमस्य अस्त्यस्मिन्, झिङ्गिर-इनि । विकङ्कतवृक्ष, बैंची ।

झिझिक (सं० अव्य०) झिं च झिम च, द्वन्द्व: । १ क्रोधमें । २ अत्यन्त अधीर ।

झिझिमाल (सं० पु०) अशोकवृक्ष ।

झिण्ठ (सं० त्रि०) झिं झिमपरिमाणं अपयाति, बहुव्री० । जिसमें समग्रता, जिसमें सबमें सम्पत्, जिसको देशमें बना हुआ ।

झिण्टीक (सं० त्रि०) झिं झिमानमपि गोत्रमस्य, बहुव्री० । कौन गोत्रीय, किस वंशजात, किस गोत्र या वंशवाला ।

झिनझिन (हिं० स्त्री०) १ निरर्थक वादविवाद, झूठा झगड़ा । २ वाक युद्ध, तकरार ।

झिनझिनाना (हिं० क्रि०) १ क्रोधके कारण दन्तघर्षण करना, दांत पीसना । २ पूर्ण कम्परोग करना, पूरी ताकत लगाना । ३ कुढ़ होना, गुस्सा आना ।

झिनझिनाहट (हिं० स्त्री०) क्रोध, गुस्सा, दांत पिसाई ।

झिनझिनी (हिं० स्त्री०) क्रोध, गुस्सा, झिनझिनाहट ।

झिनविन (हिं० त्रि०) १ छलनयन, छिन्नभिन्न । २ अस्पष्ट, जो साफ न हो ।

झिपड़ाना (हिं० क्रि०) पानीमें कीचड़ आना, पानी उठना ।

झिपरझिपर, झिपाझिपर, झिपझिप देखो ।

झिम (सं० अव्य०) झिम् न च न इत्यादि: । १ पार्श्वमें, सामने । २ अनुयत पर, पीछेसे । ३ पाकस्थमें । ४ सम्यकत:, सामिलत् । ५ भेदपूर्वक, पंडताहि ।

झिपन (सं० पु०) झिल-ल्युट्-अण् । १ अतिशय

किरच (हिं० स्त्री०) १ किरच, शीशेकी कनी। २ भालाकार तलवार। किरच अंगरेजी या बादशाही जमाने और कहीं तक फौजोंमें काममें आता है।

किरचा (हिं०) किरच देखो।

किरवान (हिं०) कृपाण देखो।

किरन (हिं० पु०) १ रश्मि, शोभा। २ कोरविशेष, किरिनदार।

किरनई (हिं० स्त्री०) मरणाविद, किसी किरनकी गाढ या भाव।

किरनपाल (सं० पु०) भास्करपुत्र, अतिरमणीयका चिह्न।

किरनमाली (हिं०) किरणमाली देखो।

किरमिच (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। किरमिच बारीक टाट जैसे रहता और पाल, जूता, थैले वगैरह बनानेमें लगता है। यह शब्द अंगरेजीके कानवास (Canvas) शब्दका अपभ्रंश है।

किरमिज (हिं० पु०) १ किसी कीड़ेका रंग, किरम-जी, घोड़ा भूरा किरमिजदाना। २ घोड़विशेष, किर-मिजी घोड़ा।

किरमिजी (हिं० वि०) किरमिजीका रंग रखनेवाला, मटमैला करौंदिया।

किरयात (हिं० पु०) किरात, चिरायता।

किरराना (हिं० क्रि०) १ दन्तघर्षण करना, दांत पीस-ना। २ क्रुद्ध होना, गुस्सा खाना। ३ किरकिर करना।

किरवंत, किरमंत—द्रविड़ देशकी एक ब्राह्मण जाति। यह त्रिविक्रम ब्राह्मणोंकी एक शाखा है।

किरवार (हिं० पु०) करवाल, तलवार।

किरवारा (हिं० पु०) आरग्वध, अमिलतास।

किरांची (हिं० स्त्री०) शकटविशेष, बड़ी गाड़ी। किरांची-में दो या चार पहिये लगते हैं। यह माल असबाब ढोनेमें प्रयुक्त होती है। किरांचीमें प्रायः कपास और भूसा लादते हैं। बैलगाड़ीके पूर्व इसको भी किरांची कहते हैं। यह अंगरेजीके कैरेज (Carriage) शब्दका अपभ्रंश है।

किराटिका (सं० स्त्री०) किर इत्यव्यक्त शब्दं अटति, किर-अट् ण्वुल् टाप् अत इत्वम्। सारिका, मैना।

किराड—एक ब्राह्मण जाति। यह पूना जिलेमें पाई जाती है। इनके सम्बन्धमें करहाड़ ब्राह्मणोंकी भरहद इस जातिके लोग अधिक पाये हैं। इनकी भाषामें मराठी, मुल्की और कनाड़ी मिश्रित होती है। ये अपने किन्हीं और ब्राह्मण जातिके हाथका नहीं खाते हैं।

किरात (सं० पु०) किरं पर्यन्तभूमिं अतति गच्छति, किर-अत-अच्। १ जातिविशेष, कोई कौम। २ व्याध, बहेलिया। ३ भूनिम्ब, चिरायता। किरात—सारक, तिक्त, कफपित्तघ्न, ज्वरघ्न, शोथ, तृषा और कुष्ठनाशक होता है। (राजनिघ०) ४ घोटक-रक्षक, साईस। ५ वामन, अल्पाङ्ग। वामन प्रभृति पुराणोंके मतसे भारतके पूर्वभागमें किरात हैं। महा-भारतमें लिखा कि प्राग्ज्योतिषाधिप भगदत्तने चीन और किरातका सैन्य ले कुरुक्षेत्र युद्ध किया था।

"स किरातैश्च चीनैश्च वृतः प्राग्ज्योतिषोऽभवत्।
अन्यैश्च बहुभिर्योधैः सागरानूपवासिभिः॥"

(सभा० अ० २६।९)

इस श्लोकसे मालूम पड़ता है कि प्राग्ज्योतिषके निकट ही किरात और चीन था। प्राग्ज्योतिषका वर्तमान नाम आसाम है। अतएव किरात आसामके पूर्वदिक् ही होना सम्भव है। रामायणमें अपर स्थान पर कहा है—

[illegible]

(किष्कि० ४० अ०)

इस श्लोक द्वारा भी ज्ञात होता है कि हिमालयके पूर्व और दक्षिणके भागमें किरात रहते हैं। प्राचीन भौगोलिक टलेमिने Cirrhadae नामसे एक जाति का उल्लेख किया है। उनके मतसे किरात भारतके पूर्व प्रान्तवासी हैं। पुरातत्त्वविद् ह्वीलर-ह्विल्सन प्रभृ

पलाश, बड़ा ढाक। (अव्य०) २ कोई अनिर्दिष्ट वस्तु या चीज। ३ अल्प, थोड़ा। ४ अमाकल्य।

किञ्जनक (सं० पु०) नागराजविशेष, नागोंके एक राजा।

किञ्चिच्चीरितपत्रिका (सं० स्त्री०) शाकपत्रविशेष, पलांकी।

किञ्चित् (सं० अव्य०) किम् च चित् च इयोर्द्वन्दः। १ अल्प, कम, थोड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—ईषत्, मनाक् और अमाकल्य है।

"आवर्जिता किञ्चिदिव स्तनाभ्याम्।" (कुमारसम्भव)

२ कोई अनिर्दिष्ट वस्तु। (वि०) ३ चतुर्थांश, चौथाई।

किञ्चित्कर (सं० त्रि०) किञ्चिदपि करोति, किञ्चित्-कृ-ट। अल्पकार्यकारक, थोड़ा काम करनेवाला।

किञ्चित्पाणि (सं० पु०) कर्षमितमान, दो तोलेकी तौल।

किञ्चिदुष्ण (सं० त्रि०) किञ्चित् ईषत् उष्णम्, कर्मधा०। ईषत् उष्ण, थोड़ा गर्म। इसका संस्कृत पर्याय—कोष्ण और कवोष्ण है।

किञ्चिदून (सं० त्रि०) किञ्चित् अल्पपरिमाणं ऊनं न्यूनं यस्य, बहुव्री०। अल्प न्यून, कुछ कम।

किञ्चिन्मात्र (सं० त्रि०) किञ्चित् अल्पा मात्रा यस्य, बहुव्री०। अल्पपरिमित, थोड़ासा।

किञ्चिलिक (सं० पु०) किञ्चित् चुलुम्पति, किम्-चुलुप् (सौत्रधातुः)-ड संज्ञायां कन् पृषोदरादित्वात् साधुः। गण्डूपद, केंचुवा।

किञ्चिलुक (सं० पु०) किञ्चित् चुलुम्पति, किम्-चुलुम्प-डु-संज्ञायां कन्। गण्डूपद, केंचुवा। इसका संस्कृत पर्याय—महीलता, गण्डूपद, गण्डूपदी, भूलता और कुसु है।

किञ्चुलुक, किञ्चिलिक देखो।

किञ्छन्दस् (वै० त्रि०) किस वेदका अवलम्बन करनेवाला।

किञ्ज (सं० क्ली०) किञ्चित् जलं यत्र, पृषोदरादित्वात् ल-लोपः। १ किञ्जल्क, कमलका रेशा। २ मृणाल, कमलकी डण्डी। ३ नागकेशरपुष्प।

किञ्जप्य (सं० क्ली०) किञ्चित् जप्यं यत्र, बहुव्री०। तीर्थविशेष। उक्त तीर्थमें स्नान करनेसे अपरिमित जपका फल मिलता है। (भारत, वन, ८३ अ०)

किञ्जल (सं० पु०) किञ्चित् जलं यत्र, बहुव्री०। १ पद्मकेशर, कमलका रेशा। २ किञ्जल्कमात्र।

किञ्जल्क (सं० पु०-क्ली०) किञ्चित् जलति अपवारयति, किम्-जल बाहुलकात् कः। १ नागकेशरपुष्प। २ नागकेशरवृक्ष। ३ पद्मकेशर, कमलका रेशा। यह बीज कोषकी चारों ओर वेष्टित रहता है। इसका संस्कृत पर्याय—मकरन्द, केशर, पद्मकेशर, किञ्ज, पीतपराग, तुङ्ग और चाम्पेयक है। राजनिघण्टुके मतमें वह मधुर एवं कटुरस, रुक्ष, शीतल, रुचिकारक और पित्त, तृष्णा, दाह तथा मुखव्रणनाशक है। फिर भावप्रकाशमें किञ्जल्कको कफ, रक्तार्श, विष और शोथरोगनाशक कहा है।

किञ्जल्की (सं० त्रि०) किञ्जल्कोऽस्यास्ति, किञ्जल्क-इनि। केशरयुक्त, रेशेदार।

"किञ्जल्किनी' दरी चाभिर्नीलामलामदञ्जनात्।" (देवीभागवत ५। ११)

किञ्जवालुक (सं० क्ली०) कांकुड़, एक पहाड़ी मट्टी।

किटकिट (हिं० पु०) वादविवाद, झगड़ा, झंझट।

किटकिटाना (हिं० क्रि०) १ दन्तघर्षण करना, दांत पीसना, किचकिचाना। २ दांतोंके नीचे कड़ड़ पड़ना।

किटकिना (हिं० पु०) १ कोई दस्तावेज। उसके द्वारा ठीकेदार अपना ठेका अपनी ओरसे दूसरे असामियोंके नाम कर देता है। २ यन्त्रविशेष, एक ठप्पा। किटकिने पर सोनार सोना चांदीके पत्रों या तारोंको पीट कर बेलबूटे बनाते हैं।

किटकिनादार (हिं० पु०) ठेकेदारसे ठेके पर कोई चीज लेनेवाला आदमी।

किटकिरा, किटकिना देखो।

किटि (सं० पु०) केटति गच्छन् प्रतिवेगेन गच्छति, मल्लादीन् उद्दिश्य गच्छति वा, किट् गतौ इन् इगुपधात् किच। १ वनशूकर, जङ्गली सूअर। २ वाराहीकन्द।

किटिदंष्ट्रा (सं० स्त्री०) शूकरदंष्ट्रा, सूअरकी डाढ़।

जातिका निवास वर्तमान आराकान बताते हैं।

ब्रह्मदेश और कम्बोज (काम्बोडिया)-से खृष्टीय ५म ६ष्ठ शताब्दकी शिलालिपि आविष्कृत हुयी है। उसमें ब्रह्म और कम्बोजके आदिम अधिवासियोंका किरात नाम लिखा है।

उक्त सकल प्रमाणद्वारा समझ पड़ता है कि सी समय हिमालयके पूर्वांशमें वर्तमान भूटान और आसामके पूर्वांश मणिपुर, ब्रह्मदेश तथा चीनसमुद्र कूलवर्ती कम्बोज तक किरात जातिका वास था। फिर उक्त समस्त स्थान समय समय पर किरातजनपद कहे जाते थे। आज भी नेपालके पूर्वांशसे आसाम अञ्चलके पवत पर्यन्त किरात रहते हैं। नेपालमें उनको 'किरांति' कहते हैं। किन्तु वहां किरात अपनेको लोम्बो या किरावा बताते हैं। अद्यापि किरात जातिके नामानुसार नेपालका एक जिला 'किरान्ति' नामसे अभिहित है।

वर्तमान किरान्ति जाति तीन भागमें विभक्त है—वल्लो किरान्त, माझ किरान्त और पल्ल किरान्त। वल्लो किरान्तोंमें लिम्बु, यख (यच?) और रयस् (रयस्?) नामसे श्रेणीभेद है। लिम्बू किरान्ति पत्नी क्रय करते हैं। जिसके क्रय करनेको अर्थ नहीं रहता, वह श्वशुरके घर कुछ दिन नोकरी करता है। फिर पारिश्रमिक अर्थके परिवर्तनमें उसे पत्नी मिलती है। किरात पहाड़ पर शवदेहको ले आकर जलाते हैं। पीछे उस शवके भस्मको समाधि दिया जाता है। समाधि पर ३।४ हाथ पत्थरको एक छड़ बना कर रखनेकी प्रथा है।

नेपालका पार्वतीय वंशावली नामक इतिहास पढ़नेसे समझ पड़ता है कि आहिरवंशके पीछे किरातवंशीय २८ राजाओंने नेपालमें राजत्व किया था। उसके पीछे भी बहुत दिन किरातोंकी क्षमता रही। अवशेषमें नेपालराज पृथ्वीनारायणने उन्हें एक बारगी ही नीचे गिरा दिया।

सिकिम और नेपालके किरातोंमें कुछ लोग बौद्ध और कुछ हिन्दूधर्मावलम्बी हैं।

वराहमिहिरको वृहत्संहितामें भारतके दक्षिण-पश्चिम 'किरात' नामक किसी जनपदका उल्लेख है शक्तिसङ्गमतन्त्रके मतमें—

"तप्तकुण्डं समारभ्य रामक्षेत्रान्तकं शिवे।
किरातदेशो देवेशि विन्ध्यशैलेऽवतिष्ठते॥"

तप्तकुण्डसे लेकर रामक्षेत्रान्त पर्यन्त किरात देश है। वह विन्ध्यशैलमें अवस्थित है। (त्रि०) ७ अल्पशरीर, छोटे जिस्मवाला।

किरात (हिं॰ स्त्री॰) परिमाणविशेष, एक तौल। किरात ४ यवके बराबर रहती और रत्नादि तौलनेमें लगती है। वह अरबीके 'क़ेरात' शब्दका अपभ्रंश है। २ औंसका २४वां हिस्सा। ३ मुद्राविशेष, एक सिक्का। वह बहुत छोटो और मूल्यमें पाईसे भी न्यून होती थी।

किरातक (सं॰ पु॰) किरात एव स्वार्थे कन्। १ चिरायता। २ युद्धप्रिय जातिविशेष, एक लड़ाका कौम।

किरातकान्त (सं॰ क्लो॰) कोङ्कणप्रसिद्ध शबरचन्दन, किसी किस्मका सन्दल।

किराततिक्त (सं॰ पु॰) किरातो भूनिम्बः सएव तिक्तः, कर्मधा॰। भूनिम्ब, चिरायता। किराततिक्तका संस्कृत पर्याय—भूनिम्ब, अनार्यतिक्त, कैरात, काण्डतिक्तक, किरातक, चिरतिक्त, तिक्तक, सुतिक्तक, कटुतिक्त और रामसेनक है। भावप्रकाशके मतमें यह भेदक, रुच, शीतल, तिक्तरस, लघु, एवं सन्निपात ज्वर, श्वास, कफ, पित्त, रक्त, दाह, कास, शोथ, तृष्णा, कुष्ठ, ज्वर, व्रण और क्रिमिरोगनाशक है।

किराततिक्तक (सं॰ पु॰) किराततिक्त स्वार्थे कन्। भूनिम्ब, चिरायता।

किराततिक्तादि, किरातादि देखो।

किरातपति (सं॰ पु॰) शिव, किरातोंके राजा महादेव।

किरातपुर—बिजनौर जिलेमें नजीबाबाद तहसीलका एक कसबा। यह अक्षा॰ २८° ३०´ उ॰ और देशा॰ ७८° १३´ पू॰ पर बिजनौरसे १० मील उत्तर अवस्थित है। जनसंख्या १५ हजारके करीब है। इसके दो विभाग हैं—किरातपुर खास और बस्ती।

किरातसिंह—१ धौलपुर रियासतके सबसे प्रथम राणा। २ चंदेला वंशके अंतिम राजा।

किटिभ (सं० पु०) किटिरिव भाति, किटि-भा-क। १ केशकीट, जूं। २ क्षुद्ररोगभेद, किसी किस्मका कोढ़। (स्त्री०) ३ गुरुच, गुर्चा।

किटिभकुष्ठ (सं० पु०) कुष्ठरोगभेद, किसी किस्मका कोढ़। इसमें घाव रूखा खरको भांति स्याहरंग और कठोर पड़ जाता है।

किटिम (सं० स्त्री०) १ क्षुद्ररोगभेद, किसी किस्मका चमड़ा कोढ़। अत्यन्त कण्डुविशिष्ट एवं स्रावयुक्त स्निग्ध स्पर्शमें गोलाकार घनमविशिष्ट विकृत स्थितिको किटिभकुष्ठ कहते हैं। कुष्ठ देखो। वाग्भटके मत कपालिकाकुष्ठको किटिम बोल कर बतानेसे यह रोग अच्छा हो जाता है।

किटिमूलक (सं० पु०) वाराहीकन्द, शूकरकन्द।

किटिश्याम, किटिमूलक देखो।

किट्टी, किटि देखो।

किट्ट (सं० क्ली०) कटति लोहादि धातुसम्बन्धात् किट्‌-क्त बाहुलकात् अनित्यत्वात् नेट्। १ लोह आदि धातुका मैल, लोहे आदिका मोरचा। शतवर्ष-का उत्तम, क्योंकि सबका मध्यम और अस्सी वर्षका अधम होता है। इसमें लोह किट्ट विगुणा है। इस-में लोहका भी गुण रहता है। (भावप्रकाश) किट्टका शोधन इस प्रकार है—किट्टको अग्निमें तपाते तपाते जब अग्निवर्ण हो जावे, तब गोमूत्रमें बुझा लेना चाहिये। इसी प्रकार कमसे ७ बार शोधन करते हैं। फिर किट्टको चूर्ण कर त्रिफलाके द्विगुण काढ़ेमें पकाते हैं। इसे मधुके साथ सेवन करने पर पाण्डुरोग आरोग्य होता है। किट्ट मधुर, कटु, उष्ण, और कृमि, वात, शूल, पित्त, गुल्म, एवं शोषघ्न है। (भावप्रकाश) २ पुरीष, मैला। ३ कर्दम, कीट। ४ मूत्र, वीर्य। ५ तैलमल, काट, कीट।

किट्टक, किट्ट देखो।

किट्टवर्जित (सं० क्ली०) किट्टेन मलेन वर्जितम्, ३-तत्। १ अभ्रधातु। अभ्र देखो। (त्रि०) २ मलशून्य, निर्मल, साफ, जो मैला न हो।

किट्टाल (सं० पु०) किट्टेन मलेन अलति पर्याप्नोति, किट्ट-अल्-अच्। १ लोहगूथ, लोहेका मोरचा। २ ताम्रकलश, तांबेका घड़ा। (स्त्री०) ३ ताम्र, तांबा। ४ मंडूर।

किट्टिम (सं० क्ली०) क्षुद्ररोगविशेष, एक रक्तका रोग।

किटकना (हिं० क्रि०) चल देना, खिसकना।

किड़किड़ाना (हिं० क्रि०) किटकिटाना, दांत पीसना।

किण (सं० पु०) कण गतौ अच् पृषोदरादित्वात् अत इत्वम्। १ मांसग्रन्थि, शरीरकी गांठ। २ व्रण, घाव।

"[illegible]"

(अभिज्ञानशाकुन्तल)

३ चिह्न, दाग। ४ कठोर, कड़ा। ५ कीटाणु। ६ अधिलो-हित कठिनाम चमड़ा, जहाँ कुछ लोग पर छाप बैठी हो। ७ योनिकन्दरोग, एक बीमारी। ८ घर्षण चिह्न, रगड़का निशान। ९ शुष्क व्रणचिह्न, सूखे जख्म-का निशान।

किणवान् (सं० पु०) किणोऽस्त्यस्मिन्, किण-मतुप् मस्य वः। किणविशिष्ट, घट्ठा, कड़ा।

किणशाल (सं० पु०) इक्षुका मालाकार।

किणि (सं० स्त्री०) किणाय त्वचिकाठिन्याय प्रभवति, किण बाहुलकात् इन्। अपामार्ग, लटजीरा। अपामार्ग देखो।

किणिहि, किणिही देखो।

किणिही (सं० स्त्री०) किणः चर्मग्रन्थिः, किण-हन्ति किणिनो प्रधान् हन्ति, किणि-हन्-ड-ङीप्। १ अपा-मार्ग, लटजीरा। २ लताकरञ्जभेद, एक पेड़। ३ लोहितीकर्णी।

किण्व (सं० पु०-क्ली०) कण-क्वन् बहुलवचनात् इत्वम्। उणादि १।१५१। १ सुराबीज, शराबका मद्य बनानेवाली एक चीज। २ पाप, गुनाह।

किण्वक, किण्व देखो।

किण्वमूलक (सं० पु०) बकुलवृक्ष, मौलसिरीका पेड़।

किण्वी (सं० पु०) १ अश्व, घोड़ा। (त्रि०) २ पापयुक्त, गुनाहगार।

कित (सं० पु०) मुनिविशेष।

कित (हिं० क्रि० वि०) १ कुत्र, कहां। २ किस ओर, किधर।

कितक (हिं० क्रि० वि०) कितना, कितना।

किरातादि (सं० पु०) ज्वरचिकित्साका कषायविशेष, बुखारका एक काढ़ा। चिरायता, नागरमोथा, गुरुच, धनियेकी और पटोलका काढ़ा बना पीनेसे पाच दोष का सन्निपातज्वर छूट जाता है। इसको चक्रदत्त ने कहा है। (चक्रदत्त) फिर किरातादि—चिरायता, दशमूल, गुडूची, इन्द्रयव, पटोल, मुस्तक, रक्त चन्दन और ... भी बनता है। (भैष-ज्यरत्ना०) एक किरातादि—चिराता, नागर, मुथा और गुरुचीके योगसे बनाया जाता है। ... चिराता, कुटज, गुरुचीय, ... , हरीतकी, ... , सोंठ, ... और दूसरी ... ११ ... २१ ... अमृत ... ८ तोले ... होते हैं। ... चिरायता, कटुकी, पिप्पली, कुटज, ... , रास्ना, पिप्पलीमूल, देवदारु, ... , मरिच, मुस्ता, ... , ... , ... , पुष्करमूल, चित्रक, कण्टकारी, और ... २ तोले जाय बना ... ... भाग पहुंचता है।

किरातादिचूर्ण (सं० क्ली०) चूर्णविशेष, एक बुकनू। चिरायता, त्रिफला, ... , पिप्पली, त्रिवृत, कटुकी और ... सम भागसे चूर्ण बना मधुके साथ सेवन करने पर दुर्निवार ... शान्त हो जाता है। (भैष०)

किरातादितैल (सं० क्ली०) तैलविशेष, एक तैल। मूर्च्छित कटुतैल ४ सेर, दहीका पानी ४ सेर, ... , कांजिक ४ ... तथा किरातादि काथ ४ ... एक साथ पकाते और उसमें मूर्वामूल, ... , हरिद्रा, दारुहरिद्रा, मंजिष्ठा, इन्द्रवारुणी, कुट, ... , ... , गजपिप्पली, त्रिवृत, ... , इन्द्रयव, ... , ... , त्रिफला, ... , ... , ... , देवदारु और ... प्रत्येक १ ... ... एक ... तैल प्रस्तुत होता है। किरातादितैल ... ... मानते हैं।

दूसरा, किरातादितैल एक प्रकार बनाया जाता है—कटुतैल ८ सेर, चिरायतेका काथ ३२ सेर, मूर्वामूलका काथ ८ सेर, लाक्षाका काथ ८ सेर, कांजिक ८ सेर और दहीका पानी ८ सेर ३२ सेर ... ११ सेर ... ... । फिर चिरायता, ... , ... , ... , इन्द्रवारुणी, मूल, मंजिष्ठा, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, मूर्वामूल, ... , ... , ... , ... , ... , ... , ... , ... , ... , ... , ... , ... , ... , देवदारु, ... , ... , ... , ... , पिप्पली, ... , ... , ... , ... , ... , कण्टकारी, ... , ... , ... , ... , ... , ... , ... , ... , ... और दूसरी ... १ तोला ... ... बनाते ... तैल प्रस्तुत करते हैं। ... तैल ... ... , ... , ... और ... , ... एवं ... बढ़ता है।

किरातार्जुनीय (सं० क्ली०) किरातश्च अर्जुनश्च तयो रधिकृत्य कृतम्, किरात-अर्जुन छ। भारविकवि-प्रणीत एक महाकाव्य। साधारणतः लोग इस काव्यको 'भारवि' कहा करते हैं। दुर्योधनके साथ द्यूतक्रीड़ामें पराजित हो युधिष्ठिर अपने भाइयों समेत वनमें रहते थे। उसी समय व्यासदेव उनके निकट जाकर उपस्थित हुये। पाण्डवोंको दुर्योधनके ऊपर विजय करानेके लिये उन्होंने अर्जुनको उपदेश दिया—'तुम तपस्या द्वारा देवताओंके निकट अस्त्र ग्रहण करो।' तदनुसार अर्जुन हिमालयके निकट प्रथम इन्द्रकी तपस्या की थी। इन्द्रने सन्तुष्ट हो अर्जुनको शिवकी तपस्या करनेके लिये उपदेश दिया। फिर वह महादेवकी भी तपस्या करने लगे। महादेव उनकी तपस्यासे सन्तुष्ट हुये थे। किन्तु वे अर्जुनको परीक्षा करनेके लिये किरातके वेशमें एक शूकरके साथ ... उनके पास उपस्थित हुये। शूकरके निकट पहुंचने पर अर्जुनको आक्रमण किया था। तुरन्त दोनों ही उसके ऊपर बाण चलाया। किरातवेशी महादेवने भी अर्जुनके बाणके साथ अपना बाण निक्षेप किया था। अर्जुनने

कितना (हिं॰ वि॰) कियत, किस कदर। २ अधिक. कैसा। यह शब्द क्रियाविशेषणकी भांति भी व्यवहृत होता है।

कितव (सं॰ पु॰) कितं वायति कितेन वाति वा, कित-वा-क। १ पाशाक्रीडक, किमारबाज, जुवारी २ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पेड़। ३ मत्त, मतवाला आदमी ४ वञ्चक, धोकेबाज। ५ धूर्त, ठग। ६ खल, नामाकूल ७ गोरोचना नामक गन्धद्रव्य। ८ पाश्चात्य, गन्धद्रव्य विशेष। ९ चोर। वस्तु, सूडार चोज।

कितवराज (सं॰ पु॰) धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पेड़।

किता (अ॰ पु॰) १ काट छांट कतर व्योंत। २ ढङ्ग, चाल। ३ संख्या, अदद। ४ विस्तारभाग, सतहका हिस्सा। ५ प्राङ्गण भूभाग, जमीनका टुकड़ा।

किताब (अ॰ स्त्री॰) १ पुस्तक, ग्रन्थ। २ बहीखाता, रजिष्टर।

किताबी (अ॰ वि॰) पुस्तकाकार, किताब जैसा। सदा पुस्तक पाठ करनेवालेको 'किताबी कीड़ा' कहते हैं।

कितिक, कितना देखो।

कितेक, कितना देखो।

कितो, कितना देखो।

कित्ता, कितना देखो।

कित्ति (हिं॰ स्त्री॰) कीर्त्ति, नामवरी।

कित्तूर—बेलगाम जिलेका पुराना शहर। यह अक्षा॰ १५° २६″ उ॰ देशा॰ ७४° ४८′ पू॰ पर बागवानसे दक्षिण १४ मील चलकर अवस्थित है। लोकसंख्या ७५००के लग भग है। यहां स्कूल, पोष्ट आफिस और सोमवार तथा वृहस्पतिवारको बाजार लगता है।

किदारा, केदारा देखो।

किधर (हिं॰ क्रि॰ वि॰) कुत्र, कहां, किस ओर।

किधों (हिं॰ अव्य॰) अथवा, या ता।

किन (हिं॰ सर्व॰) १ 'किस' का बहुवचन। (क्रि॰ वि॰) २ क्यों नहीं। ३ अवश्य, बेशक। (पु॰) ४ घर्षणचिह्न, रगड़का दाग।

किनका (हिं॰ पु॰) कणिक, अनाजका टुकड़ा।

किनहा (हिं॰ वि॰) कीटयुक्त, किरहा।

किनवर—एक जाति। युक्तप्रदेशमें इस जातिके लोगोंकी संख्या अधिक पाई जाती है। ये अपनेको क्षत्रिय बतलाते हैं, परंतु और लोग इन्हें क्षत्रिय नहीं मानते।

किनाट (सं॰ क्ली॰) वृक्षका अभ्यंतरस्थ वल्कल, पेड़-की भीतरी छाल।

किनारी (हिं॰ स्त्री॰) पक्षीविशेष, एक चिड़िया। यह पक्षी सरोवरके निकट रहता है। इसका वक्षः हरिद्वर्ण और शिर तथा कण्ठ श्वेतवर्ण होता है। अण्डा देनेका समय मई और सितम्बर मासका मध्य भाग है।

किनार, किनारा देखो।

किनारदार (हिं॰ वि॰) किनारेवाला, जिसमें कोर रहे।

किनारपेच (हिं॰ पु॰) एक डोर। यह दरीके तानेकी दोनों तरफ लगता है। किनारपेच दरीके ताने-बानेसे कुछ ज्यादा मोटा रहता और तानेको बचानेकेलिये लगता है।

किनारा (फा॰ पु॰) तीर, कूल प्रान्तभाग।

किनारी (हिं॰ स्त्री॰) १ गोट, हाशिया। २ सुनहला या रुपहला गोटा।

किनी (सं॰ स्त्री॰) ह्रस्व सुहती, छोटी कटैया।

किन्तनु (सं॰ पु॰) किं कुत्सिता तनुरस्य, बहुव्री॰। ऊर्णनाभ, मकड़ा।

किन्तमाम् (सं॰ अव्य॰) इदमेषामतिशयेन किं कुत्सित इत्यर्थः, किम्-तमप्-आमुः। दो कुत्सित द्रव्योंके मध्य अतिशय कुत्सित, बदतर।

किन्तु (सं॰ अव्य॰) किञ्च तु च द्वयोर्द्वन्द्वः। परन्तु, लेकिन, पूर्ववाक्यका सङ्कोचबोधक। २ पूर्ववाक्यका विकल्पबोधक, वरन्, बल्कि। ३ फिर भी।

किन्तुघ्न (सं॰ पु॰) ज्योतिषशास्त्रोक्त ववादि एकादश करणोंके अन्तर्गत एक करण। किन्तुघ्न करणमें जन्म लेनेसे मनुष्यका मित्र एवं अमित्र और धर्म तथा अधर्ममें कोई भेदज्ञान नहीं रहता। फिर वह स्तव और विचारकार्य प्रिय होता है। (कोष्ठीप्र॰)

किन्दत (सं॰ पु॰) महाभारतोक्त तीर्थविशेष। किन्दत-तीर्थमें तिलप्रस्थ प्रदान करनेसे मनुष्य समस्त

बाणसे विद्ध हो वराह मर गया। किन्तु निश्चय न हुवा किसके बाणसे वराह मरा था। फिर दोनों 'हमने मारा है' कहते वादानुवाद करने लगें। क्रमसे उभी पर दोनोंमें युद्ध चलने लगा। उस युद्धमें महादेव अर्जुनका वीरत्व देख सन्तुष्ट हुवे। फिर उन्होंने अर्जुनको पाशुपत अस्त्र प्रदान किया। किरातार्जुनीयमें उक्त समस्त विषय विस्तृतभावसे वर्णित है। काव्यकी रचनाप्रणाली अति निगूढ़ भावविशिष्ट है। लोग कहा करते हैं—

"उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
नैषधे पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः॥"

किरातार्जुनीय काव्य १८ सर्गमें समाप्त हुवा है। भारवि देखो।

किराताशी (सं॰ पु॰) किरातान् निषादान् अश्नाति, किरात-अश-णिनि। गरुड़। महाभारतमें लिखा है—किसी समय गरुड़ माता विनताका दासीत्व छुड़ानेके लिये अमृत लाने जाते थे। उस समय उन्होंने क्षुधार्त हो मातासे खाद्य मांगा। माताने कह दिया—'समुद्र तीर एक निषाददेश है। वहां सहस्र सहस्र निषाद रहते हैं। तुम उन्हें भक्षण कर क्षुधा निवारणपूर्वक अमृत ले आवो। गरुड़ने भी माताकी आज्ञाके अनुसार किरातोंको खाया था।

किराति (सं॰ स्त्री॰) किरेण समन्तात् जलधियेण अतति गच्छति, किर-अत-इन्। गङ्गा।

किरातिनी (सं॰ स्त्री॰) किरातदेश उत्पत्तिस्थानत्वेन अस्त्यस्याः, किरात-इनि-ङीप्। १ जटामांसी। २ किरातजातिकी स्त्री।

किराती (सं॰ स्त्री॰) किरात किराति वा ङीष्। १ दुर्गा। जिस समय महादेव अर्जुनकी परीक्षाके लिये किरातवेश धारण कर उनके निकट जाते थे। दुर्गाने भी उसी समय किराती वेश बना उनका अनुगमन किया। २ किरातस्त्री। ३ स्वर्गगङ्गा। ४ कुट्टिनी, कुटनी। ५ चामरधारिणी, चंवर डुलानेवाली।

किरान (अ॰ क्रि॰ वि॰) निकट, नज़दीक, पास।

किराना (हिं॰ पु॰) लवण, हरिद्रादि नित्यव्यवहार्य द्रव्य, नमक हलदी वगैरह रोज काममें आनेवाली चीज। किराना पंसारियोंके पास बिकता है। (क्रि॰) २ पछोरना, साफ करना, सूपसे बनाना।

किरानी (हिं॰ पु॰) १ युरेशियन, कर्णटा, दोगला युरोपियन। किरानी अंगरेजीके क्रिश्चियन (Christian) शब्दका अपभ्रंश है। २ क्लर्क, मुंशी।

किराया (अ॰ पु॰) भाटक, भाड़ा। जो मूल्य अन्यकी वस्तुको कार्यमें लगानेके परिवर्त उस वस्तुके स्वामीको दिया जाता, वह किराया कहाता है।

किरायादार (फा॰ पु॰) भड़ैतिया, किसीकी चीज भाड़े पर लेनेवाला।

किरार (हिं॰ पु॰) जातिविशेष, एक कौम।

किरारि (सं॰ पु॰) ललितविस्तरोक्त कोई व्यक्ति। विरारि पाठ भी मिलता है।

किराव (हिं॰ पु॰) कलाय, मटर।

किरावल (हिं॰ पु॰) १ युद्धक्षेत्र ठीक करनेके लिये अग्रगामी सैन्य, लड़ाईका मैदान दुरुस्त करनेके लिये आगे जानेवाली फौज। २ बन्दूकसे शिकार खेलनेवाला शख्स। किरावल तुर्कीके 'करावल' शब्दका अपभ्रंश है।

किरासन (हिं॰ पु॰) केरोसीन, मट्टीका तेल। किरासन अंगरेजीके केरोसीन। (Kerosene) शब्दका अपभ्रंश है।

किरि (सं॰ पु॰) किरति समतभूमिमिति शेषः, कृ-इ। कृगृशॄपृकुटिभिदिछिदिभ्यः। उण् ४। १४२। १ शूकर, सूअर। २ वाराहीकन्द। किरति विक्षिपति जलम्। ३ मेघ, मेह, बादल।

किरिक (सं॰ पु॰) किरिर्मेघ इव कायति प्रकाशते, किरि-कै-क। रुद्रविशेष। किरिक अग्नि, वायु और सूर्य मूर्तिधर रुद्र हैं। वह वृष्टि द्वारा जगत् पालन करते हैं।

"नमो वः किरिकेभ्यो देवानां हृदयेभ्यः।" (यजुस्, १६। ४६)
"किरिकेभ्य इति वृष्ट्यादि दानं कृत्वा जगत् कुर्वन्ति किरिकाः तेभ्यः।"

(महीधरभाष्य)

किरिकिल्किका (सं॰ स्त्री॰) सङ्गीतविद्याविषयक यंत्रविशेष, गाने बजानेका एक औजार।

किरिच (हिं॰ स्त्री॰) कठोर वस्तुका क्षुद्र खण्ड, कड़ा

की कुछ समय बाद मृत्यु हुई है। (भारत, आदि० ११८ अ०)।

किन्दम (सं० पु०) ऋषिविशेष। किन्दम ऋषि मृग-रूप धारणकर मृगरूपिणी पत्नीके साथ विहार करते थे। उसी समय महाराज पाण्डुने उन्हें मार डाला। मरते समय किन्दमने पाण्डुको अभि-शाप दिया था—'तुम भी स्त्रीसंगमके समय मरोगे।' (भारत, आदि० ११८ अ०)।

किन्दर्भ (सं० पु०) कोई ऋषि।

किन्दान (सं० क्लो०) किञ्चिदपि दानं यत्र, बहुव्री०। कुरुक्षेत्रस्थ तीर्थविशेष। किन्दान तीर्थमें स्नान करनेसे अपरिमित दानका फल मिलता है। (भारत, वन० ८३ अ०)।

किन्दास (सं० पु०) कः कुत्सितो दासः, कर्मधा०। कुत्सित दास, खराब नौकर।

किन्दी (सं० पु०) घोटक, घोड़ा।

किन्दुबिल्व (सं० पु० क्लो०) राढ़देशीय एक ग्राम। किन्दुबिल्व वर्धमानजिलेके अन्तर्गत है। इसे केन्दुबिल्व, केन्दुबिल और किन्दुबिल भी कहते हैं। प्रसिद्ध वैष्णव कवि जयदेव गोस्वामीने इस ग्राममें जन्मग्रहण किया था। यहां प्रति वर्ष माघ मासको 'जयदेवका मेला' लगता है। आजकल इसे केन्दुली कहते हैं। जयदेव देखो।

किन्देवत (सं० त्रि०) कः देवतास्य, किम्-देवता-अच्। १ किस देवताका उपासक, किस देवताकी पूजा करनेवाला। २ किस देवतासम्बन्धीय।

किन्देवतता (सं० स्त्री०) किन्देवतस्य भावः, किन्देवत-तल्। किन्देवतका धर्म।

किन्धी (सं० पु०) किं कुत्सिता धीः बुद्धिर्यस्य, किम्-धी बहु०। अश्व, घोड़ा।

किन्नर (सं० पु०) किं कुत्सितो नरः, कर्मधा०। १ देवयोनिविशेष, एक प्रकारके देव। किन्नरका मुख अश्वकी भांति रहता, किन्तु अवशिष्ट समस्त अवयव मनुष्यतुल्य देख पड़ता है। इसका संस्कृत पर्याय— किम्पुरुष, तुरङ्गवदन, मयु, अश्वमुख, गीतमोदी और हरिणनर्तक है। किन्नर अतिशय सङ्गीतप्रिय होता है। तुम्बुरु प्रभृति गन्धर्वगायक भी इस जातिके ही हैं। २ वर्णसंकर। ३ [illegible] गीत-वादक।

किन्नर (हिं० पु०) १ [illegible], [illegible]। २ [illegible]। ३ [illegible]।

किन्नरकण्ठ—वैद्यकोक्त औषधविशेष. यह दवा पारद, गन्धक, ताम्र, हरताल, रसाञ्जन एवं और प्रत्येक २ तोला, मैनसिल ४ तोला, स्वर्ण २ माशा तथा लौह १ तोला सबको भावना, [illegible], हरड़, [illegible] और [illegible] इनमें भिन्न भिन्न पृथक् भावना देना चाहिये। फिर २ रत्ती की बराबर गोली बना छायामें सुखा लेनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। किन्नरकण्ठरस रोज दिन नियमित व्यवहार करनेसे किन्नरकी भांति सुस्वर, स्वरभङ्ग, श्वास, ग्रास, एवं कफज रोग दूर होता है।

किन्नरवर्ष (सं० पु०) वर्षविशेष, एक भूखण्ड। किन्नर-वर्ष हिमालय पर्वतके उत्तरभागमें अवस्थित है।

किन्नरी (सं० स्त्री०) किन्नर-ङीष्। किन्नर जातीय स्त्री।

"कोचदन्ति च दरे ह किन्नराणां काननैः।
यत्र [illegible] किन्नरीगणैः।"
(कुमार, १।११।८८)

किन्नरीवीणा (सं० स्त्री०) किन्नरी प्रभृतिका बीनाबाजा। पूर्वकालमें यह सब जातिके लोगोंमें प्रचलित था। आज कल भी पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा बङ्गालादि प्रान्तमें भी प्रचलित है। यह वाद्य तीवसे बजानेवाले अपेक्षा आसानीसे सुन्दर होता है। किन्नरी-जातीय वीणा को प्राचीन सङ्गीतमें 'किन्नर' और हिन्दोस्तानीमें 'तम्बूरा' कहते थे। यह दो प्रकारकी होती है—बड़ी और छोटी। इनमें तीन तुम्बे लगते हैं।

किन्नरेश (सं० पु०) किन्नरोंके ईश्वर राजा। किन्नर-राज कुबेर। काशीखण्डमें लिखा है—कुबेरने महा-तपस्यासे एक महादेवके निकट गुह्यक, यक्ष, किन्नर प्रभृतिका आधिपत्य और धनेश्वरत्व पद पाया था।
(काशीखण्ड, १३ अ०)

किन्नरेश्वर (सं० पु०) किन्नराणां ईश्वरः, ६-तत्। कुबेर। कुबेर देखो।

किन्नामधेय (सं० त्रि०) किं नामधेयमस्य, बहुव्री०। किस नाम सहित, किस नामवाला।

[illegible] है।

किरिटि (सं० स्त्री०) [illegible]

किरिट-किरीट [illegible] (पु०) [illegible]

किरिटी, किरीटी देखो।

किरिन (हिं०) किरण देखो।

किरिम (हिं०) कृमि देखो।

किरिमदाना (हिं० पु०) [illegible], किरमिजी कीड़ा। [illegible]

किरिया (हिं० स्त्री०) १ शपथ, कसम, सौगन्ध। २ कर्म, [illegible]। ३ मृतकर्म, [illegible]।

किरीट (सं० पु०-क्ली०) [illegible] १ मुकुट, ताज। २ [illegible]। ३ छन्दोविशेष। [illegible] ४ [illegible]।

किरीटमाली (सं० पु०) [illegible] अर्जुन।

किरीटवर्षी (सं० पु०) [illegible] १ अर्जुन। (त्रि०) २ मुकुटधारी, ताज पहने हुए।

किरीटी (सं० पु०) किरीटोऽस्यास्ति, किरीट इनि। १ अर्जुन। [illegible] किरीटी नामसे प्रसिद्ध हुये।

[illegible] (त्रि०) २ मुकुटयुक्त, ताज पहने हुए। "[illegible]" ([illegible])

किरीस, [illegible] देखो।

किरोलना (हिं० क्रि०) [illegible], खुरचना।

किरवा (हिं० पु०) कृमि, कीड़ा।

किर्च, किरच देखो।

किर्मिज (हिं० पु०) १ [illegible], [illegible] बुकनी, एक रंग। २ [illegible], किरमिजी कीड़ा।

किर्मीर (सं० त्रि०) [illegible], [illegible]।

"[illegible]" ([illegible])

"[illegible]" ([illegible])

किल (सं० स्त्री०) [illegible] १ [illegible]। २ [illegible]। ३ [illegible]। ४ [illegible]।

किलकि (सं० पु०) [illegible] १ [illegible]। २ [illegible]। ([illegible]) ३ [illegible]। (त्रि०) ४ [illegible]।

किलकिल (सं० पु०) [illegible]

किलकिलम् (सं० स्त्री०) [illegible]

किलकिलत, [illegible] देखो।

किलकिलिन्, [illegible] देखो।

किलकिलक, [illegible] देखो।

किलकिला, [illegible] देखो।

किलकिलि, [illegible] देखो।

किलकिल (सं० त्रि०) [illegible]

किलकी (सं० पु०) [illegible]

किला (हिं० स्त्री०) [illegible]

किन्नामा (सं० त्रि०) किं नाम यस्य, बहुव्री० । किन्नामधेय देखो।

किन्निमित्त (सं० त्रि०) किं निमित्तं कारणं यस्य, बहुव्री० । किस कारण, किस लिये।

किन्नु (सं० अव्य०) किं च नु च द्वयोर्द्वन्द्वः । १ प्रश्न क्यों, क्या। २ वितर्क, शायद । ३ सादृश्य, कैसे। ४ स्थान, जहां, कहां। ५ कारण, क्योंकर, कैसे।

किप्य (सं० पु०) मलज कृमिविशेष, मैलेका एक कीड़ा। कृमि देखो।

किफ़ायत (अ० स्त्री०) १ अलम होनेका भाव, काफी होनेकी हालत। २ मितव्ययिता, कमखर्ची।

किफ़ायती (अ० वि०) मितव्ययी, कमखर्च, संभल कर चलनेवाला।

क़िबलई (हिं० स्त्री०) पश्चिमदिक्, मगरिवकी सिम्त ।

क़िबला (अ० पु०) १ पश्चिमदिक्, मगरिवकी सिम्त । मुसलमान् उसी ओर मुख रख नमाज पढ़ते हैं । २ मक्का।

क़िबला आलम (अ० पु०) १ ईश्वर, सबका मालिक । २ सम्राट्, बादशाह ।

क़िबलागाह (अ० पु०) पिता, वालिद, बाप ।

क़िबलागाही, किबलागाह देखो।

क़िबलानुमा (फा० पु०) यन्त्रविशेष, एक औजार। किबलानुमा पश्चिमदिक्‌को बहता है। अरब नाविक उक्त यन्त्रको व्यवहार करते थे। उसमें एक सूई ऐसी लगती जो पश्चिम ओरको ही अपना मुख रखती है।

किम् (सं० अव्य०) कु बाहुलकात् डिमु । १ कुत्सा, निन्दा, छी छी। २ वितर्क, कौनसा। ३ निषेध, नहीं। ४ प्रश्न, क्यों, क्या।

किम् (सं० त्रि०) १ त्याग। २ वितर्क। ३ निन्दा। ४ प्रश्न।

किमपि (सं० अव्य०) किं च अपि च द्वयोर्द्वन्द्वः । १ कोई भी। २ अनिर्वचनीय, कह कर बताया न जानेवाला।

"अनवरतमौरव्यप्रमितिप्रम्बर्मणानेकशमिक्ष्यं निवावाः
सामार्थ किमपि रमनीय वपुरिदम्" । (शकुन्तला, १ अ०)

किमरिक (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, किसी किसमका कपड़ा। किमरिक चिक्कण, श्वेत तथा सूक्ष्म रहता और सनसे बनता है। किन्तु आज कल लोग उसे रुई से भी बना लेते हैं। उक्त शब्द अंगरेजीके केम्ब्रिक (Cambrick) का अपभ्रंश है।

किमर्थं (सं० अव्य०) किं अर्थं प्रयोजनं अत्र, बहुव्री० । किस कारण, किस लिये, क्यों।

किमाकार (सं० त्रि०) किं कीदृशः आकारोऽस्य, बहुव्री० । किस प्रकार आकारविशिष्ट, कैसी सूरत शक्लवाला।

किमाख्य (सं० त्रि०) का आख्या अस्य, बहुव्री० । क्या नामविशिष्ट, किस नामवाला।

किमाछु (हिं० पु०) केवांच।

किमाम (हिं० पु०) किवाम, खमीर, एक शर्बत । किमाम शहदकी तरह गाढा बनाया जाता है।

क़िमारखाना (फा० पु०) द्यूतक्रीड़ास्थल, जुवा खेलनेकी जगह।

क़िमारबाज (फा० वि०) द्यूतक्रीड़क, जुवारी, जुवा खेलनेवाला।

क़िमारीबाजी (फा० स्त्री०) द्यूतक्रीड़ा, जुयेका खेल।

क़िमाश (अ० पु०) १ रीति, ढंग। २ गंजीफेका ताजा रंग।

किमि (हिं० क्रि० वि०) किस रीतिसे, क्योंकर, कैसे।

"किमि पठव ई तुम बहरनायक" (तुलसीदास)

किमिच्छक (सं० पु०) किमिच्छतीति प्रश्नेन दानार्थं कायति शब्दायतेऽत्र पृषोदरादित्वात् साधुः। १ व्रतविशेष। उक्त व्रत करनेके समय प्रार्थियोंसे पूछना पड़ता है वह क्या चाहते हैं। फिर वह जो मांगते, वही व्रतकारी उन्हें देते हैं। मार्कण्डेयपुराणमें लिखा है—महाराज करन्धमके पुत्र अवीक्षित् किसी स्वयम्वरमें उपस्थित हो राजकन्याको बलपूर्वक ग्रहण करने पर उद्यत हुवे। उस समय सभाके समस्त राजाओंने उनके विरुद्ध अस्त्र धारण किया। महावीर अवीक्षित्‌ने अपने बाहुबलसे अकेले ही उन समस्त राजावोंको हरा दिया था। परंतु राजावोंने निरस्त न हो युद्धमें अन्याय ग्रहण कर अवीक्षित् को पराजित कर दिया। अवीक्षित्‌ने इस प्रकार अपमानित हो कभी विवाह न करने का

किल (सं॰ अव्य॰) किल्-क। १ वास्तवमें, दरहकीकत असलमें। २ अर्थात्, यानी। ३ सम्भवतः, गालिबन् शायद।

"इदं किलाव्याज मनोहरं वपुस्तपःक्षमं साधयितुं य इच्छति।"

(शाकुन्तल, १ अ॰)

किलक (हिं॰ स्त्री॰) १ हर्षध्वनि, खुशीकी आवाज। २ प्रसन्नता, खुशी। (फा॰) ३ तृणविशेष, किसी किस्मका नरकट। किलकका कलम बनता है।

किलकना (हिं॰ क्रि॰) हर्षध्वनि करना, खुशीकी आवाज निकालना, किलकारना।

किलकार (हिं॰ स्त्री॰) हर्षध्वनि, खुशीकी आवाज। किलकार गम्भीर तथा अस्पष्ट रहती और आनन्द एवं उत्साहके समय मुंहसे निकलती है।

किलकारना, किलकना देखो।

किलकारी, किलकार देखो।

किलकिञ्चित (सं॰ क्ली॰) किल अलीकेन किं ईषत् चितं रचितम्, ३-तत्। शृङ्गारभावजन्य क्रियाविशेष, एक अदा। "स्मितशुष्करुदितहसितत्रासक्रोधश्रमादीनाम्।

साङ्कर्यं किलकिञ्चितमभीष्टतमसङ्गमादिजाद्धर्षात्॥"

(साहित्यदर्पण, ३।१०९)

प्रियनायकके समागममें अतिमात्र हृष्ट हो उसी नायकसे स्त्री शुष्कहास, रोदन, भय, क्रोध और श्रान्ति प्रभृति मिश्ररूपसे जो भावप्रकाश करती है, उसीको किलकिञ्चित् कहते हैं।

"अपि चौरविरागतो परं दमयन्तीकिलकिञ्चितं किल।

तदवीक्षत एव वीक्ष्यते मणिहाराचलिरामणीयकम्॥"

(नैषध, ३य सर्ग)

किलकिल (सं॰ पु॰) १ महादेव। २ नगरविशेष, कोई शहर।

किलकिला (सं॰ स्त्री॰) किल्-क प्रकारे वीप्सायां वा द्वित्वम् टाप्। १ हर्षध्वनि, किलकार। २ वीरोंका सिंहनाद, ललकार। ३ दिग्विजयप्रकाशोक्त वङ्गदेशके अन्तर्गत सरस्वती और कालिन्दी नदीका मध्यवर्ती कोई जनपद, बंगालकी एक बस्ती। कलकत्ता देखो।

किलकिला (हिं॰ स्त्री॰) १ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। किलकिला छोटी रहती और मछली खाकर अपना पेट भरती है। वह मछलियोंको देख पानीके ऊपर १० हाथ ऊंचे उड़ा करती है। घात लगते ही किलकिला मछली पर एकाएक टूट उसे पकड़ कर ले जाती है। (पु॰) २ समुद्रका एक भाग। किलकिलाकी लहरें भयानक शब्द करती हैं।

किलकिलाना (हिं॰ क्रि॰) १ हर्षध्वनि करना, किलकना। २ कोलाहल करना, शोर मचाना। ३ वादविवाद लगाना, झगड़ा उठाना। ४ खुजलाना। ५ क्रोध करना।

किलकिलाहट (हिं॰ स्त्री॰) १ हर्षध्वनि, किलकार। २ खाज, खुजली। ३ क्रोध, गुस्सा। ४ वादविवाद, झगड़ा।

किलकी (हिं॰ स्त्री॰) यन्त्रविशेष, एक औजार। बढ़ई किलकीसे नापके मुवाफिक लकड़ीपर चिह्न लगाते हैं।

किलकैया (हिं॰ पु॰) १ रोगविशेष, एक बीमारी। किलकैयेसे पशुओंके खुरोंमें कीड़े पड़ जाते हैं। २ हर्षध्वनिकारी, किलकार लगानेवाला।

किलटा (हिं॰ पु॰) करण्डविशेष, किसी किस्मका टोकरा। किलटा ऐसी युक्तिसे बनाया जाता है कि उसमें रखी हुयी चीजका भार ढोनेवालेके कंधोंपर आ जाता है।

किलना (हिं॰ क्रि॰) १ कीला जाना, अभिमन्त्रित होना। २ वशमें लाया जाना, तावेदारीमें आना।

किलनी (हिं॰ स्त्री॰) कीटविशेष, एक कीड़ा। किलनी गाय, बैल, भैंस, कुत्ते, बिल्ली वगैरह जानवरोंके चिपटी रहती और उनका रक्त पान कर अपना शरीर पोषण करती है। उसे किल्ली और किल्लीनी भी कहते हैं।

किलपादिका (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रजलौका, छोटी जोंक।

किलबिलाना (हिं॰ क्रि॰) कुलबुलाना, धीरे धीरे चलना फिरना।

किलमी (हिं॰ पु॰) नौकाका पश्चाद्भाग, जहाजका पिछला हिस्सा। २ पिछले हिस्सेके मस्तूलका बादबान।

किलमोरा (हिं॰ पु॰) दारुहरिद्राविशेष, किसी

[illegible]

किमीटी (हिं० पु०) [illegible]

किम् (सं० अव्य०) [illegible]

किमुत (सं० अव्य०) [illegible]

किमिदि—[illegible]

[illegible]

किम्पच (सं० त्रि०) [illegible]

किम्पचान (सं० त्रि०) [illegible]

किम्पराक्रम (सं० त्रि०) [illegible]

किम्परिमाण (सं० त्रि०) [illegible] कितना परिमाणविशिष्ट, कितनी तादादका।

किम्पर्यन्त (सं० क्रि० वि०) कितनी दूर पर्यन्त, कहां तक।

किम्पाक (सं० त्रि०) [illegible]

किम्पुना (सं० स्त्री०) [illegible]

किम्पुरुष (सं० पु०) [illegible]

[illegible]

[illegible] (सं० [illegible]) [illegible]

[illegible] (पु०) [illegible]

[illegible]

[illegible] ([illegible]) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible] है। [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०-स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible]

[illegible] (सं० त्रि०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० त्रि०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible]

[illegible] (सं० त्रि०) [illegible]

[illegible] (सं० पु०) [illegible]

[illegible] (सं० स्त्री०) [illegible] है।

किल (सं० अव्य०) किल्-क। १ वास्तवमें, दरहकीकत असलमें। २ अर्थात्, यानी। ३ सम्भवतः, गालिबन् शायद।

"इदं किलाव्याज मनोहरं वपुस्तपःक्षमं साधयितुं य इच्छति।"

(शाकुन्तल, १ अ०)

किलक (हिं० स्त्री०) १ हर्षध्वनि, खुशीकी आवाज। २ प्रसन्नता, खुशी। (फा०) ३ तृणविशेष, किसी किस्मका नरकट। किलकका कलम बनता है।

किलकना (हिं० क्रि०) हर्षध्वनि करना, खुशीकी आवाज निकालना, किलकारना।

किलकार (हिं० स्त्री०) हर्षध्वनि, खुशीकी आवाज। किलकार गम्भीर तथा अस्पष्ट रहती और आनन्द एवं उत्साहके समय मुंहसे निकलती है।

किलकारना, किलकना देखो।

किलकारी, किलकार देखो।

किलकिञ्चित (सं० क्ली०) किल अव्ययेन किं ईषत् चित्तं रचितम्, इ-तत्। शृङ्गारभावजन्य क्रियाविशेष, एक अदा। "स्मितशुष्करुदितहसितत्रासक्रोधश्रमादीनाम्।

साङ्कर्यं किलकिञ्चितमभीष्टतमसङ्गमादिजाद्धर्षात्॥"

(साहित्यदर्पण, ३।१०८)

प्रियनायकके समागममें अतिमात्र हृष्ट हो उसी नायकसे स्त्री शुष्कहास, रोदन, भय, क्रोध और श्रान्ति प्रभृति मिश्ररूपसे जो भावप्रकाश करती है, उसीको किलकिञ्चित् कहते हैं।

"अपि धीर विराजते परं दमयन्तीकिलकिञ्चितं किम।

तदवीलत एव धीयते मधिसाराधिरासमशीकम्॥"

(नैषध, ३म सर्ग)

किलकिल (सं० पु०) १ महादेव। २ नगरविशेष, कोई शहर।

किलकिला (सं० स्त्री०) किल्-क प्रकारे वीप्सायां वा द्वित्वम् टाप्। १ हर्षध्वनि, किलकार। २ वीरोंका सिंहनाद, ललकार। ३ दिग्विजयप्रकाशोक्त वङ्गदेशके अन्तर्गत सरस्वती और कालिन्दी नदीका मध्यवर्ती कोई जनपद, बंगालकी एक बस्ती। कलकला देखो।

किलकिला (हिं० स्त्री०) १ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। किलकिला छोटी रहती और मछली खाकर अपना पेट भरती है। वह मछलियोंको देख पानीके ऊपर १० हाथ ऊंचे उड़ा करती है। घात लगते ही किलकिला मछली पर एकाएक टूट उसे पकड़ कर ले जाती है। (पु०) २ समुद्रका एक भाग। किलकिलाकी लहरें भयानक शब्द करती हैं।

किलकिलाना (हिं० क्रि०) १ हर्षध्वनि करना, किलकना। २ कोलाहल करना, शोर मचाना। ३ वादविवाद लगाना, झगड़ा उठाना। ४ खुजलाना। ५ क्रोध करना।

किलकिलाहट (हिं० स्त्री०) १ हर्षध्वनि, किलकार। २ कण्डू, खुजली। ३ क्रोध, गुस्सा। ४ वादविवाद, झगड़ा।

किलकी (हिं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, एक औजार। बढ़ई किलकीसे नापके मुवाफिक लकड़ीपर चिह्न लगाते हैं।

किलकैया (हिं० पु०) १ रोगविशेष, एक बीमारी। किलकैयेसे पशुओंके खुरोंमें कीड़े पड़ जाते हैं। २ हर्षध्वनिकारी, किलकार लगानेवाला।

किलटा (हिं० पु०) करण्डविशेष, किसी किस्मका टोकरा। किलटा ऐसी युक्तिसे बनाया जाता है कि उसमें रखी हुयी चीजका भार ढोनेवालेके कंधोंपर आ जाता है।

किलना (हिं० क्रि०) १ कीला जाना, अभिमन्त्रित होना। २ वशमें लाया जाना, ताबेदारीमें आना।

किलनी (हिं० स्त्री०) कीटविशेष, एक कीड़ा। किलनी गाय, भैंस, भेड़, कुत्ते, बिल्ली वगैरह जानवरोंके चिपटी रहती और उनका रक्त पान कर अपना शरीर पोषण करती है। उसे किल्ली और किलौनी भी कहते हैं।

किलपाटिका (सं० स्त्री०) क्षुद्रनखालुका, छोटी लाजवन्ती।

किलबिलाना (हिं० क्रि०) कुलबुलाना, धीरे धीरे चलना फिरना।

किलमी (हिं० पु०) नौकाका पश्चाद्भाग, जहाजका पिछला हिस्सा। २ पिछले हिस्सेके मस्तूलका बादबान।

किलमोरा (हिं० पु०) दारुहरिद्राविशेष, किसी

श्वेतवर्ण, चित्रवर्ण, श्यामवर्ण, रक्ताभ, रक्तश्वेत, रक्तोदर, नीलोदर, पीतरक्त, नीलपीत, रक्तनील, नीलशुक्ल एवं रक्तपिङ्गलवर्ण प्रभृति वर्णयुक्त और परिमाणमें एक पर्व, एक पर्वकी अपेक्षा भी क्षुद्र अथवा दो पर्व वृश्चिक-समूह महाविष तथा प्राणनाशक है। पूतिसर्पदेह वा सर्पदष्ट व्यक्तिके देहसे उसका जन्म है। उसके काटनेसे सर्पविषकी भांति विषवेगकी प्रवृत्ति, स्फोट, भ्रम, दाह, ज्वर और शरीरस्थ छिद्रपथसे रक्तस्राव होनेपर प्राण छूट जाता है।

सुश्रुतके मतमें—किसी समय राजा विश्वामित्रने वशिष्ठकी कामधेनु अपहरण की थी। उससे वह अत्यन्त कुपित हुवे। उसी समय उनके ललाटदेशसे अति-तेजस्वी स्वेदबिन्दु निकला था। वह छिन्न तृणमें गिर पड़ा। उससे लूता (मकड़ी) नामक कीट उत्पन्न हुवा। आकार, वर्ण और प्रकृतिभेदसे नानाविध लूता केवल षोड़श प्रकारमें विभक्त किया गया है। सब प्रकारकी लूताका विष भयानक है। उसमें आठ प्रकारकी लूता कष्टसाध्य और आठ प्रकारकी एकबारगी ही असाध्य निर्दिष्ट हुयी है। त्रिमण्डला, श्वेता, कपिला, पीतिका, आलविषा, मूत्रविषा, रक्ता और कसना लूताका विष कष्टसाध्य है। उसके दंशन करनेसे शिरोरोग, कण्डू, दष्टस्थान पर वेदना और वातश्लेष्मिक रोग समूहकी उत्पत्ति होती है। सौवर्णिका, लाजवर्णा, जालिनी, एणीपदी, कृष्णा, अग्निवर्णा, काकाण्डा और माला-गुणा—आठ प्रकारकी लूताका विष असाध्य है। उसके दंशन पर दष्टस्थानसे रक्त निकलता, दष्टस्थान सड़ता और ज्वर, दाह, अतिसार प्रभृति त्रिदोषजात रोग, विविध पिड़का, गात्रमें बड़ा बड़ा चकता और रक्तवर्ण अथवा श्यामवर्ण एवं मृदु अचल शोथ हुवा करता है। दंशनव्यतीत भी उक्त प्रकारकी लूताकी लाला, नखा-घात, दंष्ट्राघात, मूत्र, रजः, मल और इन्द्रियस्पर्शसे भी विष-पीड़ित होना पड़ता है। लालाके विषसे कण्डू एकस्थानस्थायी, अल्पमूलकोठ और अल्प वेदना होती है। नखाघातके विषसे शोथ, एवं कण्डूका वेग बढ़ता और मनुष्य अकड़ रहता है। दंष्ट्राघातके विषसे दष्ट-स्थान उग्र, कठिन एवं विवर्ण पड़ जाता और शरीरमें एकस्थानस्थायी मण्डल निकला आता है। मूत्र-स्पर्शसे दष्टस्थान गलने लगता और उसका मध्यदेश कृष्णवर्ण तथा प्रान्तभाग रक्तवर्ण देख पड़ता है। रजः, मल एवं इन्द्रियके स्पर्शसे पक्व पिलु फलकी भांति पाण्डुवर्ण स्फोटक उठता है। लूताका किसी प्रकार विष-लक्षण एक ही बारमें समस्त प्रकाशित नहीं होता। दंशके पीछे पहले दिन अव्यक्तवर्ण और कण्डू विशिष्ट अचल चकते उभरा करते हैं। दूसरे दिन उन मण्डलोंका मध्यभाग, निम्न और चतुर्दिक्का प्रान्त-भाग फूल उठता है। तीसरे दिन विषका लक्षण देख पड़ता है। चतुर्थ दिन शरीरस्थ विष कुपित होता है। पञ्चम दिन विषकोपसे रोगसमूह उभर आता है। षष्ठ दिन विष सर्वशरीरमें फैल विशेषरूपसे मर्मस्थान-समूहको आश्रय करता है। सप्तम दिन विषप्रकोप बहुत बढ़ जाता है। तीक्ष्ण या प्रचण्ड विष होनेसे उसी दिन रोगीका प्राण विनष्ट होता है। मध्यम-विषविशिष्ट लूताके दंशनसे सप्तम दिवसके पीछे और मन्द विषयुक्त लूताके दंशनसे एक पक्षकाल मध्य मृत्यु आ सकता है।

चिकित्सा—उग्रविष कीटोंके काटनेसे सर्पदंशनकी भांति ही चिकित्सा करना पड़ती है। स्वेद, प्रलेप और जल-सेकादि उष्ण क्षार व्यवहार करना चाहिये। दष्टस्थान पक या सड़ जाने और मूर्च्छादि उपद्रव बढ़ आनेसे वमन विरेचनादि संशोधन कार्य और विनाशक क्रिया-समुदायसे लाभ होता है। उक्त सकल उपद्रवमें शिरीष, कुटकी, कुष्ठ, वचा, हरिद्रा, सैन्धवलवण, गव्यदुग्ध, मज्जा, वसा, गव्यघृत, शुण्ठी, पिप्पली और देवदारुका पुलटिस बांधना चाहिये। अथवा प्रथम शालपर्णीचूर्ण कर उसका स्वेद लगाना उचित है। किन्तु वृश्चिक दंशनमें स्वेद अहितकर है। त्रिकण्टकके विषमें कुष्ठ, अपक्व सिन्धुवार, वचा, बिल्वमूल, विदकर्णी, सुवर्चिका, कज्जल, हरिद्रा और दारुहरिद्राका प्रलेपादि हितकर है। गलगोली (सर्पविशेष)-के विषमें कज्जल, हरिद्रा, अपक्व सिन्धुवार, कुष्ठ और पलाशवानसे उपकार होता है। शतपदी (कानखजूरा) के विष पर कुङ्कुम, तगर-पादुका, शोभाञ्जन, पद्मकाष्ठ, हरिद्रा और दारुहरिद्रा

पानीमें पीस कर प्रलेप लगाना चाहिये। सकल प्रकार मण्डूक-विष, शिरीषादि, वचा, त्रिकटु, स्वर्णतैल, मञ्जिष्ठा और माणकके प्रयोगसे नष्ट हो जाता है। विश्वम्भर कीटके काटनेसे वचा, अश्वगन्धा, पीतवाल्ला-मका, शोभाञ्जनका, चक्रमर्द और नागपर्णी प्रयोग करना चाहिये। अहिण्डुका कीटके दंशन करनेसे शिरीष, तगरपादुका, कुष्ठ, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, शालपर्णी, पृश्निपर्णी और माषपर्णी हितकर है। कण्डूमकाके काट खानेसे रात्रिकालको शीतल क्रियासमूह करना पड़ता है। कारण दिनको सूर्यरश्मि द्वारा विष अधिक प्रकुपित होनेसे शीतल क्रियासे कोई फल नहीं मिलता। शूकवृन्त (झांझा) के विषमें वचा, हिङ्गुसार, कुष्ठ और अपामार्ग प्रयोग करते हैं। अथवा कल्पवल्लीकी मट्टी भृङ्गराजके रसमें पीस कर प्रलेप चढ़ाना चाहिये। पिपीलिका, मक्षिका और मशक दंशन पर कृष्णवल्मीककी मट्टी गोमूत्रके साथ पीस कर प्रलेप देते हैं। प्रतिसूर्यक (गुहेरा)-के दंशन करने पर सर्पदंशनकी भांति चिकित्सा करना पड़ती है।

उग्रविष और मध्यविष वृश्चिकके दंशनमें सर्पदंशनकी भांति चिकित्सा कर्तव्य है। मन्दविष वृश्चिकके काट खानेसे चक्रतैल अथवा विदार्यादि गणोक्त द्रव्य समूहके साथ सुसिद्ध घृत लगाकर सेक देना चाहिये। अथवा विषघ्न द्रव्यसमूहके पुलटिससे स्वेद लगा दष्टस्थान पर हरिद्रा, सैन्धव, त्रिकटु, शिरीषबीज और शिरीष पुष्पके चूर्ण द्वारा घर्षण करते हैं। तुलसीकी मञ्जरी, बिजौरा और गोमूत्रके साथ पीसकर प्रलेप करनेसे भी वृश्चिकके विषकी शान्ति होती है। उक्त विषमें ईषदुष्ण गोमयका प्रलेप और स्वेद हितकर है।

कुसुमपुष्प तथा कोद्रव प्रत्येक १ भाग और हरिद्रा २ भाग चूर्णसे मिला गुह्यदेशमें धूप प्रदान करनेसे वृश्चिकविष शीघ्र निवारित होता है।

लूता (मकड़ी)-के विभागानुसार प्रत्येक जातीय लूतादिकमें पूर्वोक्त साधारण लक्षणकी अपेक्षा अनेक विभिन्न लक्षण देख पड़ते हैं।

त्रिमण्डला लूताके दंशनादिसे दष्टस्थान विदीर्ण हो जाता है। उससे कृष्णवर्ण रक्त बहता है। फिर बधिरता, चक्षुकी आविलता और चक्षुद्वयका दाह होता है। उसमें अर्कमूल, हरिद्रा, नाकुली और चक्रमर्दको अम्लद्रव, पान, अञ्जन और नस्यरूपमें प्रयोग करना चाहिये।

श्वेता लूताके दंशन करनेसे श्वेतवर्ण और कण्डुयुक्त पिड़का उत्पन्न होती है। दाह, मूर्च्छा, ज्वर, विसर्प, क्लेद और वेदना भी उठती है। उसपर चन्दन, रास्ना, एला, रेणुका, नल, [illegible], कुष्ठ और चक्रमर्द—सकल द्रव्य प्रत्येक १ भाग एवं विदामूल २ भाग एकत्र प्रलेपादिमें व्यवहार करना चाहिये।

कपिला लूताके काटनेसे ताम्रवर्ण एवं एकस्थान-व्यापी पिड़का, मस्तक भार, दाह, अन्धकार दर्शन और भ्रम होता है। उसमें पद्मकाष्ठ, कुष्ठ, एला, करञ्जत्वक्, अर्जुनत्वक्, शालपर्णी, पद्म, अपामार्ग, दूर्वा और ब्राह्मी—सकल द्रव्य हितकर है।

पीतिकाके काटनेसे पिड़का, वमि, ज्वर एवं शूल आता और चक्षु रक्तवर्ण पड़ जाता है। उसपर कुटजत्वक्, विदामूल, पद्मकेशर, पद्मकाष्ठ, अशोक, शिरीष, अपामार्ग, अङ्कोठ, कदम्ब और अर्जुनत्वक् उपकारक है।

आलविषाके दंशनसे दष्टस्थान पर रक्तवर्ण मण्डल (चकत्ता), सर्षपकी भांति पिड़का, तालुशोष और दाह होता है। उसपर विडङ्ग, वालक, कुष्ठ, विदामूल एवं अशोक अथवा शतपुष्पा और परूषक तथा बटका अङ्कुर एकत्र प्रयोग करनेसे उपकार पहुंचता है।

मूत्रविषके काटनेसे दष्टस्थान सड़ जाता तथा पर्व रक्तवर्ण पिड़का पड़ती और कास, श्वास, वमन, मूर्च्छा, ज्वर तथा दाह होता है। उसपर मनःशिला, हरिताल, यष्टिमधु, कुष्ठ, चन्दन, पद्मकाष्ठ और विदामूल पीसकर मधुके साथ प्रलेप चढ़ाना चाहिये।

रक्तलूता काट खानेसे दष्टस्थानको वृद्धि, रक्तवर्ण हो जाती है और पाण्डुवर्णकी पिड़का पड़ जाती है। फिर क्लेद और दाह भी होता है। इस पर रास्ना, चन्दन, विदामूल एवं पद्मकाष्ठ अथवा अर्जुन, अङ्कोठ तथा श्लेष्मातकको त्वक्का प्रलेप लगाया जाता है।

हरीतकीको एक बत्ती बना आम्रवृक्षके पत्र और वल्कलके रसकी भावना देते हैं। फिर वटके दूधसे दूसरी भावना दे उसे ताम्रप्रदीपमें जलाना पड़ता है। उसकी मसीको ग्रहण कर पुनर्वार हरीतकीके क्वाथकी भावना लगाते हैं। अन्तको उक्त मसी कटुतैलमें मिला अधिकतर मर्दन करनेसे किलास रोग आरोग्य होता है। (सुश्रुत)

किलासघ्न (सं० पु०) किलासं हन्ति, किलास-हन्-टक्। कर्कोटक, कांकरोल। किलासघ्नका संस्कृत पर्याय-कर्कोट, तिक्तपत्र और सुगन्धक है। कर्कोटक देखो।

किलासनाशन (सं० त्रि०) किलासं नाशयति किलास-नश्-णिच्-ल्यु। किलासरोगनाशक।

किलासी (सं० त्रि०) किलासं अस्यास्ति, किलास-इनि। किलासरोगयुक्त, कोढ़ी।

किलि (सं० अव्य०) कण्ठकूजित, किलकार।

किलिक (फा० स्त्री०) किलक देखो।

किलिञ्च (सं० क्ली०) किल्यते अनेन, किल-इनि, किलिं चिनोति, किलि-चि-ड पृषोदरादित्वात् साधुः। सूक्ष्म-काष्ठ, पतला तख्ता।

किलिञ्चन (सं० पु०) १ राल, धूना। २ मीनभेद, एक मछली।

किलिञ्ज (सं० पु०) किलिनं जायते, किलि-जन्-ड-मुम् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ सूक्ष्मकाष्ठ, पतला तख्ता। २ वीरणादि कट, चटाई। ३ परदा। किसी किसी स्थान पर किलिञ्ज क्लीबलिङ्ग भी देख पड़ता है।

किलिञ्जक (सं० पु०) किलिञ्ज स्वार्थे कन्। १ कट, चटाई। २ काशादि निर्मित रज्जु, एक रस्सी। किलिञ्जकसे धान्यादि रखनेके मरार (कोठी) को वेष्टन करते हैं।

किलिन (हिं० पु०) नौस्थानविशेष, बेड़ासकी मोड़, जहाजकी एक जगह। किलिन जहाजका वह पिछला हिस्सा है, जहां बाहरी तख्त मुड़कर मिलते हैं।

किलिनकिल (सं० पु०-क्ली०) नगरविशेष, किसी शहरका नाम।

किलिम (सं० क्ली०) किल-इमन्। १ देवदारु वृक्ष। २ धूनक।

किलोवा (हिं० पु०) वंशविशेष, किसी किस्मका बांस। किलोवा ब्रह्मदेशमें पेगू और मर्तबानके वनमध्य उत्पन्न होता है। वह ६० से १२० फीट तक लम्बा और ५से ८ इञ्च तक मोटा रहता है। उसका वर्ण धूसर होता है। उससे नावके मस्तूल बनाये जाते हैं।

किल्लोल (हिं०) कलोल देखो।

किलोनी, किलनी देखो।

किल्की (सं० पु०) घोटक, घोड़ा।

किरकी—खानदेश जिलेका एक गांव। यहांके राजा भील हैं, जिन्हें दत्तकपुत्र लेनेका अधिकार नहीं।

किल्लत (अ० स्त्री०) १ न्यूनता, कमी। २ सङ्कोच, तंगी। ३ अड़चन।

किल्ला (हिं० पु०) १ मेख, खूंटा, कील। २ जांतेकी मेख। किल्ला जांतेके बीचमें गाड़ा जाता है। ३ नवीन शाखा, अङ्कुर।

किल्लाना, किलकिलाना देखो।

किल्ली (हिं० स्त्री०) १ कील, मेख, खूंटी। २ बिल्ली, सिटकिनी। ३ मुठिया या दस्ता। किल्ली घुमानेसे कल या पेंच चलने लगता है। ४ कुञ्जी।

किलिकेतर (कतावू) बेलगांवजिलेकी पशु रखने और चित्र दिखानेवाली जाति। यह सांवगांव, चिकोदी, पारस-गढ़, गोकाक और अथनीमें मिलते हैं। किलिकेतर मराठों जैसे ही होते और कोल्हापुर या सतारेसे आये समझ पड़ते हैं। प्रत्येक परिवारमें १ कुत्ता, २ या ४ भैंस, २ या ३ गाय और ४ या ५ बकरे रहते हैं। पुरुष स्वच्छ, सुथरे, भले, मितव्ययी और शान्त होते हैं। यह मृगछालापर बने पाण्डवों और कौर-वोंके चित्र रातको दिखा जीविका निर्वाह करते हैं। एक मनुष्य चित्रके पीछे दीपक लेकर बैठता और दूसरा आगे उसको घटना समझाता है। स्त्रियां बाजा बजाया करती हैं। यह प्रदर्शन रातको ८ या १० बजेसे आरम्भ हो ५ या ७ घण्टे चलता है। स्त्रियां गोदनेका काम अच्छा करती हैं। कन्याओंका विवाह ४ या ५ और बालकोंका १० और १२ वर्षके बीच होता है। इनमें विधवा-विवाह प्रचलित है। शवको समाधि दिया जाता है। निर्धन होते भी यह किसीके ऋणी नहीं।

कसनाके दंशनपर दष्टस्थानसे पिच्छिल एवं शीतल रक्त गिरता और कास तथा श्वासरोग उपजता है। उसमें रक्तलूताकी भांति ही चिकित्सा करना चाहिये।

कृष्णाके दंशनपर दष्टस्थानसे विष्ठाकी भांति गन्धयुक्त रक्तस्राव होता और ज्वर, मूर्च्छा, वमि, दाह, कास तथा श्वासरोग उठा करता है। उस पर एला, चक्रमर्द तथा चन्दन प्रत्येक १भाग और गन्धनाकुली २ भाग एकत्र पेषण कर प्रलेप चढ़ाते हैं।

अग्निवर्णाके दंशनसे अत्यन्त रक्तस्राव होता और ज्वर, यातना, कण्डू, रोमहर्ष, दाह तथा स्फोट उपजता है। उसपर कृष्णाविषाकी भांति चिकित्सा करना पड़ती है।

अनन्तमूल, श्वेतामूल, यष्टिमधु, रक्तचन्दन, सौगन्धिकपुष्प, पद्मकाष्ठ, श्लेष्मातक और अश्वत्थत्वक् पूर्वोक्त समुदाय लूताविषपर प्रयोग करते हैं।

सौवर्णिकाके काटनेसे मत्स्यकी भांति गन्धयुक्त और फेनमिश्र रक्तादिस्राव होता है। फिर कास, श्वास, ज्वर, तृष्णा और मूर्च्छारोग भी दबा बैठता है।

लाजवर्णाके दंशनसे अपक्व अथवा पूति रक्तस्राव होता और दाह, मूर्च्छा, अतिसार, तथा शिरोरोग उपजता है।

जालिनीके काटने पर दष्टस्थान सूक्ष्म सूक्ष्म शिरा उठ आनेसे फट जाता और स्तम्भ, श्वास, अन्धकार-दर्शन तथा तालुशोष हुआ करता है।

एणीपदीके दंशनसे कृष्णतिलकी भांति चिह्न पड़ता और तृष्णा, मूर्च्छा, ज्वर, वमि, कास तथा श्वासरोग लगता है।

काकाण्डाके काटनेसे दष्टस्थान पाण्डु वा रक्तवर्ण पड़ जाता और उसमें अत्यन्त वेदना होती है।

मालागुणाके दंशनसे दष्टस्थानसे धूमकी भांति गन्ध निकलता, अत्यन्त वेदना होती, बहुतधा स्थान फट जाता और दाह, मूर्च्छा तथा ज्वर आता है।

उक्त समस्त लूताओंके काटने हो दष्टस्थान वृद्धिपत्र शस्त्र द्वारा एकबारगी ही काट कर अग्नितप्त जम्बोष्ठ शलाकासे जलाना पड़ता है। किन्तु मर्मस्थानमें काट खाते अथवा ज्वरादि उपद्रव बढ़ आनेसे चीर फाड़ करना न चाहिये। उस पर प्रियंगु, हरिद्रा, कुष्ठ, मञ्जिष्ठा और यष्टिमधु पीसकर मधु तथा सैन्धवलवणके साथ प्रलेप चढ़ाते हैं। वटादि क्षीरीवृक्षका क्वाथ बना शीतल होनेपर दष्टस्थान सेचन किया जाता है। फिर वमन विरेचन द्वारा संशोधन और जलौका द्वारा रक्त मोक्षण कर अन्यान्य विषघ्न प्रयोग करना चाहिये।

सर्वप्रकार कीट दंशनमें व्रण तथा शोथ आरोग्य होने पर निम्बपत्र, त्रिवृत्, दन्ती, कुसुमवीज, हरिद्रा, मधु, गुग्गुलु, सैन्धव, सुराबीज और कपोतकी विष्ठा द्वारा दंष्ट्र (डंक) निकाल डालते हैं। (सुश्रुत)

युरोपीय प्राणितत्त्वविद्‌के मतमें—कीट स्वभावतः शिरदंष्ट्राहीन अस्थियुक्त क्षुद्र जीव (Insects) हैं। उनके मस्तक, वक्षः, उदर, मस्तक पर दो स्पर्शेन्द्रिय और वक्षकोटरके छह पैर होते हैं। अधिकांश स्थलमें धात्री-कीटके पक्ष रहते, किन्तु अति अल्पके ही देख पड़ते हैं।

वह प्रधानतः कीटजातिको ३ श्रेणीमें भाग करते हैं। १म श्रेणीके बहुतसे कीट जन्मसे मृत्यु पर्यन्त रूपान्तर ग्रहण नहीं करते। छोटे बड़े सबका गठन एक प्रकार होता है। केवल वयोवृद्धिके अनुसार देह छोटा बड़ा रहता है। पक्ष नहीं होते। चक्षु अति सामान्य लगते। कोई कीट चक्षुहीन भी होता है। (Ametabola)



१, गूक (कड़ावाल)
२, कीटकी शेष अवस्था।



१ मस्तक, २ वक्षकोटर (Thorax), ३ उदर; ४ पक्षमूल, ५ पक्ष; ६ स्पर्शेन्द्रिय वा कीटकी सूंड।

२य श्रेणीके बहुतसे बड़े होने पर भी सम्पूर्ण रूपान्तर नहीं पाते। वह प्रथम गूक (कड़ेवाल) की भांति देख पड़ते हैं। आकारमें भी कुछ पार्थक्य

किल्विष (सं० क्ली०) किल्-टिषच्-बुक् आगमश्च। १ पाप, गुनाह। २ अपराध, जुर्म। ३ रोग, बीमारी।

किल्विषी (सं० त्रि०) किल्विषं अस्त्यस्य, किल्विष-इनि। पापी, गुनाहगार।

किल्ली (सं० पु०) किल् भावे क्विप्; किल् अस्त्यस्य, किल्-विनि। घोटक, घोड़ा।

किवांच (हिं० पु०) केवांच।

किवाड़ (हिं० पु०) कपाट, दरवाजा बन्द करनेके लिये लगनेवाले लकड़ीके दो तख्ते।

किशटा (हिं० पु०) किसी किस्मका शफतालू। किशटेका मुरब्बा बनाते हैं। और गुठलीसे चांदी चमकाते हैं। यह शब्द फारसीके 'किश्टा'से निकलता है।

किशमतालू (हिं० पु०) वृक्षविशेष, किसी किस्मका आडू। उसका तालू काला रहता है। किशमतालूको बहुत शुभ समझते हैं।

किशमिश (फा० पु०) सुखाया हुआ अंगूर, सूखी दाख। अंगूर देखो।

किशमिशी (फा० वि०) १ किशमिशवाला, जिसमें किशमिश रहे। २ किशमिशका रंग रखनेवाला। (पु०) ३ किसी किस्मका रंग। प्रथम वस्त्रको धोकर अघौतकीके जलमें बोर देते हैं। फिर गेरिक डाल कर हरिद्रामें उसे रंगते हैं। वस्त्रको चमारकी हाममें रंगनेसे बराबर किशमिश रंग चढ़ जाता है। दूसरी रीतिपर प्रथम वस्त्रको ईंगुरसे रंगकर सुखा लेते हैं। फिर कटहलकी छाल, कुसुम, हरसिंगार और तुनके फूलसे रंगनेसे बराबर किशमिशी रंग चढ़ता है।

किशर (सं० पु०-क्ली०) किम्-शॄ-अच्-पृषोदरादित्वात् साधुः। सुगन्धद्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज।

किशरा (सं० स्त्री०) किञ्चित् शृणाति हिनस्ति, किम्-शॄ-अच्-टाप् पृषोदरादित्वात् ...

किशरादि (सं० पु०) गन्ध... विशेष। किशरादिमें किशर, नगर, गुग्गुल, कपूर, ... सम्मिलित हैं। ... गन्धोंके ...

किशरी...)।

किशल (सं० पु० क्ली०) किञ्चित् शलति चलति, किम्-शल-अच् समोपः पल्लव, नया पत्ता।

किशलय (सं० पु०-क्ली०) किञ्चित् शलति, किम्-शल् बाहुलकात् कयन् समोपः पृषोदरादित्वात् साधुः। कोमल पल्लव, मुलायम नया पत्ता।

"अधरः किशलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।"

(शकुन्तला, १ अ०)

किशलयतल्प (सं० पु०-क्ली०) किशलयनिर्मितं तल्पम् मध्यपदलो०। पल्लवनिर्मित शय्या, पत्तोंका बिछौना।

किशलयशयन, किशलयतल्प देखो।

किशुनगढ़, कृष्णगढ़ देखो।

किशनचन्द—दिल्लीवाले अचलदास खत्रीके पुत्र। इनका उपनाम इखलास रहा। अचलदासके निकट अच्छे अच्छे विद्वान् आते थे। अपने पिताके मरनेपर वह कविता बनानेमें लगे। १७२३ ई० को हमेशबहार नामक एक जीवन-वृत्तान्त इन्होंने लिखा था। इस पुस्तकमें २०० कवियोंका वर्णन है। वह भारतवर्षमें जहांगीरके समयसे मुहम्मद शाहके समय तक हुये थे।

किशनसिंह—किशुनगढ़के एक राजा।

किशनसिंह—जोधपुर महाराज उदयसिंहके २य पुत्र। इनका जन्म १५७५ ई०को हुआ था। यह १५८३ ई० तक अपनी मातृभूमिमें ही रहे, पीछे जोधपुर महाराज शूरसिंह अपने बड़े भाईसे कुछ अनबन होने पर अजमेरमें जा बसे। अकबरसे परिचय होने पर इन्होंने हिन्दौनका जिला पाया जो अब जयपुरमें लगता है। फिर सेठोंसे सरकारी खजाना छुड़ाने पर इन्हें सेठोलाव और कुछ दूसरे जिले माफी मिले। १६११ ई०को इन्होंने कृष्णगढ़ बसाया था। अकबरके समय इनका उपाधि राजा रहा, परन्तु जहांगीरने इन्हें महाराजका उपाधि प्रदान किया। १६१५ ई०को यह स्वर्गवासी हुए।

किशोर (सं० पु०) किञ्चित् शृणाति, किम्-शॄ-ओरन्। ... उण् १।६४। १ अश्वशिशु, बछेड़ा। २ तैल-... ३ सूर्य, सूरज। ४ तरुणावस्था, ... पञ्चदश वर्ष पर्यन्त किशोर अवस्था ... सकलेति बुधैः।" (...) ५ शिशु, कशोरयुक्त, छोटी उम्रवाला।

कीट (त्रि० पु०) मेघ अथवा ऊँचे बैठा हुआ मेघ।

कीटक (पुं० पु०) कीट संज्ञायां स्वार्थे वा कन्। कीड़ा।

कीटगर्दभक (सं० पु०) कीटविशेष, गदहिला। इसके दंशनसे अनेक रोग उत्पन्न होते हैं।

कीटघ्न (सं० पु०) हन्ति कीट-हन्-टक्। गन्धक, कीड़ोंको मारनेवाली चीज।

कीटज (सं० क्ली०) कीटात् जायते, कीट-जन्-ड। १ रेशम, लाह, कीड़ोंसे पैदा होनेवाली चीज। (त्रि०) २ कीटजात, कीड़ेसे पैदा। ३ रेशमका बना हुआ।

"[illegible]" (भाग० [illegible])

कीटजा (सं० स्त्री०) कीटेभ्यो जायते कीट-जन्-ड-टाप्। लाक्षा, लाह, लाख।

कीटमाता (सं० स्त्री०) जलपिप्पलिका, जल पिप-पली।

कीटपर्याय (सं० पु०) कीटकाके निर्माणक्रमके प्रति परिवर्तन, तीतरके जिनिसोंकी सबसेबो।

कीटपादिका (सं० स्त्री०) कीटाः पादे मूलेऽस्याः, कीट-पाद-कप्-टाप् अत इत्वम्। १ हंसपदीलता, एक बेल। २ जलपिप्पलिका, जल पिपली।

कीटपादी, कीटपादिका देखो।

कीटभुक्-उद्भिद्—कीटको आहार करनेवाले तृणादि, कीड़ोंको खानेवाले पौधे। आजतक उन पौधोंके जितने उद्भिद् आविष्कृत हुये हैं, उनमें निम्नलिखित कई एक प्रधान हैं।

(१) बिहारप्रदेशके खेतोंमें और पर्वतके ढालू स्थानोंपर सामान्यतः भारतवर्षके पार्वत्यप्रदेशमें एक तृण होता है उसके पत्र छोटे, गोल और कुछ कुछ लाल रहते हैं। इसके डण्ठल लम्बे और सुगठित रहते हैं। दूरसे यह तृण देखनेमें समान पतला, मानो भूमिपर कोई लाल चीज पड़ी है। पत्र बहुत घने होते हैं। पत्रकी धारों किंक् डिम्बाकार कई पतले उत्पन्न होते हैं। उन पतलोंके अग्रभागमें किसी रंगकी भाँति एक बुन्दी जैसी लगी रहती है। सूक्ष्मदर्शक द्वारा देखा होता है। उस बीचमें एक लस्य पदार्थ रहता है। अब फिर सूर्यकिरणसे अति उज्ज्वलता धारण करता है। परन्तु उसके चहुँ ओर झलकता हुये जल या मधु समान कर कीड़ोंके लिये अमर पड़ते हैं। उक्त रस कीड़ोंको सरस चिपचिपा होता है। परन्तु एक बार बैठ जानेसे फिर किसी तरहसे उड़ नहीं सकता। उसके पीछे क्रमशः पत्रकी पास वाले धारोंसे सिकुड़ने लगते हैं और कुछ समय बाद उसको ढक कर खा जाता है। परीक्षा द्वारा देखा गया है कि परन्तु जब रसमें उस क्रमशः अम्लीय जाते होते शोषणके बाद भीता और कीटदेहको भी रसमें गलाकर लिया जाता है। पत्रमें इसमें ऐसा स्पष्ट विदित है कि अगर किसी पत्थर या कीमत वस्तु द्वारा पत्र स्पर्श होते ही वह सिकुड़ जाते और प्रायः एक घण्टा मुद्रित रह खुल जाते हैं। उक्त जातीय उद्भिद्को अंगरेजी उद्भिद्शास्त्रमें ड्रोसेरा ब्रुमनी (Drosera Brumanni) कहते हैं।

(२) हमारे देशके तालाबोंमें भी कोई उद्भिद्, वह भी कीट भक्षण कर अपना निर्वाह करती है। इस घास जिसे पाईका पत्ता समझते, वह सूक्ष्म नल्याकार पत्रावृत्त उठते हैं। उस नल्याकार पत्राकृति मुख सर्वदा खुला नहीं रहता। उसके मुख पर एक ढक्कन होता है। वह भीतरकी ओर खुल जाता है। नलके मध्य गोंद जैसा बन रहता है। जो सकल अतीव कीटाणु जलके साधारण प्रतीत वस्तुसे हिल नहीं सकते, वह जलमें घूमते समय उक्त नलोंके मध्य पहुँचते हैं। उसी समय नलका ढक्कन खुल जाता है। कीट स्वपानके लिये उसके भीतर प्रवेश करता है। उसके घुसते ही ढक्कन बन्द और कीट क्रमशः गल सड़कर तृणके रसमें मिल जाता है।

(३) अमेरिकामें एक प्रकारका तृण होता है। अंगरेजीमें उसे वीनस फ्लाई-ट्राप (Venus fly-trap) कहते हैं। उसके पत्र दो भागमें विभक्त हैं। उनके ऊर्ध्वभाग और निम्नभागके मध्यस्थलमें पत्रको केवल संयोजित रखते हैं। ऊर्ध्वखण्डकी धारों और सूक्ष्म कण्टक विद्ध होते हैं। फिर ऊर्ध्वखण्डके पत्र पर भी कई कण्टक निकलते हैं। उन कण्टकोंका मुख भीतर दिक्को मुड़ा रहता है। पत्रके निकट कोई पतङ्ग उड़नेसे उसको आकर्षित रखनेको लगा रहता है। परन्तु एक मनोहर वर्णके पत्रको मधुरं तुम्ब पाकर

किशोरसिंह—कोटाराज माधवसिंहके कनिष्ठ पुत्र। १६५८ ई०को उज्जैनके पास औरङ्गजेबके विरुद्ध युद्ध करनेमें यह घोररूपसे आहत हुये थे, परन्तु पीछे अच्छे हो गये। इन्होंने १६७०से १६८६ ई० तक राजत्व किया। यह औरङ्गजेबके बहुत चतुर सेनापति थे और अरकाटके अवरोधमें मारे गये।

किशोरसूर—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म १७०४ई० को हुआ। इन्होंने बहुतसे छप्पय बनाये हैं। सरदार कवि और हरिश्चन्द्रने इनकी कविता उद्धृत की है।

किशोरिका (सं० स्त्री०) किशोरी स्वार्थे कन्-टाप् ईकारस्य ह्रस्वत्वञ्च। किशोरी, ग्यारहसे १५ वर्ष तककी स्त्री।

किशोरी (सं० स्त्री०) किशोर-ङीप्। किशोरिका देखो।

किश्त (फा० स्त्री०) १ शतरञ्जके खेलमें बादशाहका किसी मोहरेकी मारमें आनेकी चाल।

किश्तवार (हिं० पु०) पटवारीका एक कागज। किश्तवारमें खेतका नम्बर, रकबा वगैरह लिखा रहता है।

किश्ती (फा० स्त्री०) १ नौका, नाव। २ पात्रविशेष, किसी किस्मकी थाली या तश्तरी। किश्तीमें कोई उपढौकन रख कर दिया जाता है। ३ शतरंजका हाथी, मोहरा।

किश्तीनुमा (फा० वि०) नौकासदृश, नाव जैसा।

किष्किन्ध (सं० पु०) किं किं दधाति, किम्-धा क पूर्वस्य किमो मलोपः सुट् पत्वञ्च। १ महिसुरदेशीय एक पर्वत। २ उक्त पर्वतकी गुहा।

किष्किन्धा (सं० स्त्री०) कष्किन्ध देखो।

किष्किन्धाकाण्ड (सं० क्लो०) रामायणका ४र्थ काण्ड। किष्किन्धाकाण्डमें सुग्रीवादिसे रामका मिलना और वालिवध प्रभृति विषय वर्णित है।

किष्किन्धी (सं० स्त्री०) किष्किन्ध-ङीप्। किष्किन्ध-पर्वतकी गुहा।

किष्किन्ध्य (सं० पु०) किष्किन्ध स्वार्थे यत्। किष्किन्ध-पर्वत।

किष्किन्ध्या (सं० स्त्री०) किष्किन्ध्य-टाप्। किष्किन्ध्य-पर्वतकी गुहा। किष्किन्ध्यामें ही वालि राजाकी राजधानी रही। पीछे रामने वालिको मार वह स्थान सुग्रीवको प्रदान किया।

किष्किन्ध्याकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड देखो।

किष्किन्ध्याधिप (सं० पु०) किष्किन्ध्याया अधिपः, ६-तत्। १ किष्किन्ध्याके राजा वालि। २ सुग्रीव।

किष्कु (सं० पु०-स्त्री०) कै-कु पारस्करादित्वात् सुट् षत्वञ्च निपातनात् साधुः। १ द्वादशांगुल परिमाण, १२ अङ्गुलकी नाप। २ हस्त, हाथ। ३ वितस्त, विता। ४ प्रकोष्ठ। ५ शालस्कन्ध। ६ वंश, बांस। ७ इक्षुभेद, किसी किस्मकी ऊख। (त्रि०) ८ कुत्सित, खराब।

किष्कुपर्वा (सं० पु०) किष्कुमितं पर्व यस्य, बहुव्री०। १ इक्षु, ऊख। २ वंश, बांस। ३ नल, एक घास।

किस् (सं० अव्य०) कर्त्ता, करनेवाला।

"चर्षं यो होता किस् ... ... देवा:।"
(ऋक् १०।११।१)

किस (हिं० सर्व०) "कौन"-का रूपान्तर। विभक्ति लगनेसे 'कौन'-का 'किस' हो जाता है। 'किस' में 'ही' लगानेसे दोनोंको मिलाकर 'किसी' हो जाता है।

किस (सं० पु०) सूर्यके एक अनुचर।

किसनई (हिं० स्त्री०) कृषि, खेती, किसानका काम।

किसबत (अ० पु०) नापित, स्यूतविशेष, नाईका एक थैला। किसबतमें उस्तरा, कैंची आदि रखते हैं।

किसबी (हिं० पु०) कसबी, श्रमजीवी, मजदूर।

किसर (सं० पु०-स्त्री०) किञ्चित् सरति, किम्-सृ-अम् अच् पृषोदरादित्वात् साधुः। सुगन्धिद्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज।

किसरिक (सं० त्रि०) किसरं पण्यं यस्य, बहुव्री०, किसर-ठन्। किसर नामक सुगन्धि द्रव्य-विक्रेता।

किसल, किसय देखो।

किसलय, किसलय देखो।

किसलयित (सं० त्रि०) किसलयं सञ्जातमस्य, किसलय-इतच्। नूतनपल्लवविशिष्ट, नये पत्तेवाला।

किसान (हिं० पु०) १ कृषक, खेतिहर। २ नार, बारी वगैरहके कमानेका घर।

किसानी (हिं० स्त्री०) १ कृषिकर्म, खेतीका काम। (त्रि०) २ कृषकसम्बन्धीय, खेतीके मुतालिक।

किसी (हिं० सर्व० वि०) 'कोई' का रूपान्तर। विभक्ति लगनेसे 'कोई' का 'किसी' हो जाता है।

किसू, किसी देखो।

उस पर बैठता है। उसके बैठते ही पत्र सिकुड़ता और कण्टकोंके आघातसे कीट मरता है। पीछे कीटको गल जाने पर पत्र शोषण कर लेता है।

(४) हमारा चिरपरिचित तम्बाकूका पेड़ भी कीटभुक् है। उसके पत्तों और कच्चे डण्ठलोंमें चिपचिपा रस रहता है। उसमें एक अच्छा मधुवत् गंध उठता है। उक्त गन्धसे आकृष्ट हो अनेक कीट-पतङ्ग पत्ते और डण्ठलमें जाकर चिपक जाते हैं। तम्बाकू उसमें कीड़ा न गलते भी जब वह उसके शोषनेको शक्ति रखता, तब कीड़ेसे उसको अवश्य कोई न कोई उपकार पहुंचता है।

(५) रक्तरेणु भी उसी प्रकार गुणविशिष्ट है। उसपर कीटादि बैठते ही गात्रवर्ण काला पड़ जाता और केशरवत् पत्राग्रसे रस निकल आता है। फिर उक्त रस उसको गला डालता और वह वृक्ष शरीरको पालता है।

(६) कोई दूसरा वृक्ष भी होता है। उसके पत्रके अग्रभागमें किसी पेपोटा शीर्षके आगे एक भाण्डाकार पत्र रहता है। उक्त भाण्डका मध्यभाग रससे पूर्ण और उसके मुख पर एक ढक्कन होता है। पूर्वकाल लोग विश्वास करते थे कि पथिकोंको पिपासा मिटानेको भगवान्ने उक्त भाण्ड बना उसमें सुशीतल भरकरके रखा था। किन्तु अब परीक्षासे स्थिर हुवा है कि वह भाण्ड कीट-पतङ्गादि पकड़नेके लिये कौशलस्वरूप है। कीट-पतङ्ग उसके रसके गन्धसे मुग्ध हो भाण्डगर्भमें पतित होते हैं। उनके गिरते ही ढक्कन बन्द हो जाता और मध्यमें कीट गलकर अपना प्राण गंवाता है।

उक्त जातीय उद्भिद्का मूल बहुत दीर्घ नहीं होता। किन्तु घासके मूलकी भांति संख्यामें अधिक आता है।

अनेक लोग तर्ककर कहते हैं कि उक्त कीटादिसे वृक्षके शरीर-पोषणमें कोई साहाय्य नहीं पहुंचता। किन्तु यदि वैसा न होता, तो उसके गलनेसे रस क्यों वृक्षके शरीरमें जा पहुंचता। बहुविज्ञ परीक्षकोंने स्व स्व आलयमें उक्त सकल उद्भिदोंका कलम लगा और किसीको कीट खिला तथा किसीको न खिला इहिसे अच्छमसे स्थिर किया है कि कीटभुक् उद्भिद्के लिये कीटादि भोजन एकान्त आवश्यक है, नहीं तो उनको पूर्ण रूपसे वृद्धि होनेमें बाधा पहुंचती है।

बहुतसे लोगोंने इस प्रकार मीमांसा की है कि चाय, नील, इक्षु प्रभृतिके खेतमें तम्बाकूका पौदा लगानेसे उनमें कीड़ा नहीं लगता। क्योंकि तम्बाकूकी डालों और पत्तोंमें लगकर वह मर जाता है।

कीटभृङ्ग (सं० पु०) न्यायविशेष। अनेक वस्तु एक रूप हो जानेसे कीटभृङ्ग न्याय लगता है। कहते हैं कि भृङ्ग दूसरे कीड़ोंको पकड़ और बिलमें लेजाकर अपने ही रूपका बना डालता है।

कीटमणि (सं० पु०) कीटेषु मणिरिव, उपमि०। १ खद्योत, जुगनू। २ पतङ्गभेद, तितली।

कीटमर्दरस (सं० पु०) कृम्यधिकारका रसविशेष, कीड़े पड़नेकी एक दवा। शुद्धसूत, शुद्धगन्धक, अजमोद, विड़ङ्ग, विषमुष्टि और ब्रह्मदण्डी यथाक्रम गुणोत्तर ले कूट पीसकर १ निष्क मधुके साथ खाने पर मनुष्य कृमिजित् हो जाता है। पीछे मुस्ताका क्वाथ पीना चाहिये।

कीटमाता (सं० स्त्री०) कीटानां माता इव, उपमि०। हंसपदीलता, एक बेल। उसके मूलसे बहुसंख्यक कीट उत्पन्न होते हैं।

कीटमारी (सं० स्त्री०) कीटं मारयति, कीट-मृ-णिच्-अण्-ङीप्। रक्त-लज्जालुका, लाल लाजवन्ती।

कीटमेष (सं० पु०) कीटो मेष इव, उपमि०। उच्चिटिङ्ग जातीय कीटविशेष, झींगुरकी किस्मका एक कीड़ा। वह नदीतीर बालुकाके मध्य गर्त बना वास करता है। आकारमें कीटमेष उच्चिटिङ्ग जैसा रहता और उसी प्रकार कूद कूद कर चलता है। किन्तु उच्चिटिङ्गकी अपेक्षा उसकी आकृति कुछ बड़ी होती है। कीटमेष पृथक् पृथक् गर्तमें वास करते हैं। दो को एकत्र कर देनेसे उनमें भयङ्कर युद्ध आरम्भ होता है। दोनोंमें एकके निहत न होने तक युद्ध चला करता है।

तप्ततैलमें एक कीटमेष तलकर व्यवहार करनेसे पाण्डु रोग आरोग्य होता है।

किस्त (अ० स्त्री०) १ ऋण चुकानेकी एक रीति, कर्ज देनेका कोई तरीका। किस्तमें एक सामयिक ऋण नियत समय थोड़ा थोड़ा चुकाया जाता है। २ निश्चित समय पर दिया जानेवाला ऋणका एक अंश, मुकर्रर वक्त पर अदा होनेवाला कर्जका हिस्सा। ३ ऋण परिशोधका निश्चित समय, कर्ज अदा करनेका मुकर्रर वक्त।

किस्तबन्दी (फा० स्त्री०) अंशतः ऋण परिशोध करनेका नियम, थोड़ा थोड़ा कर्ज अदा करनेका कायदा।

किस्तवार (फा० क्रि० वि०) १ किस्तके नियमानुसार, किस्तके तौर पर। २ प्रत्येक किस्त पर, हरेक किस्तके वक्त।

किस्म (अ० स्त्री०) १ प्रकार, तरह। २ रीति, चाल।

किस्मत (अ० स्त्री०) १ भाग्य, नसीब, तकदीर। २ कमिश्नरी, प्रान्तका बड़ा विभाग। किस्मतमें कई जिले लगते, जो कमिश्नरके अधीन रहते हैं।

किस्मतवर (फा० वि०) भाग्यशाली, तकदीरी।

किस्सा (अ० पु०) १ कथा, कहानी। २ समाचार, हाल। ३ विषम काण्ड, झगड़ा।

किंवकम (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

की (हिं० प्रत्यय) १ 'का'का स्त्रीलिङ्ग। यथा—उस-की माया। 'की' सम्बन्ध कारकका चिह्न है। (क्रि०) २ 'किया'का स्त्रीलिङ्ग। यथा—रामने रणमें बड़ी वीरता की। (अव्य०) ३ क्या। ४ अथवा, या तो।

कीक (हिं० स्त्री०) १ चीत्कार, शोर, हल्ला। २ वानर-रव, बन्दरकी आवाज।

कीकट (सं० पु०) की गतेर्ङ्कतं वा कटति गच्छति, की-कट-अच्। १ घोटक, घोड़ा। २ देशविशेष, कोई मुल्क। कीकट मगधका पैदोश नाम है।

"चरणाद्रि' समारभ्य गृध्रकूटान्तकं शिवे।
तावत् कीकटदेशः स्यात् तदन्तर्मगधो भवेत्॥" (शक्तिसङ्गमतन्त्र)

चरणाद्रि (चुनार)से गृध्रकूट (गिद्धौर) पर्यन्त प्रदेश कीकटदेश है। मगधदेश इसीके अन्तर्भुक्त है। ३ कीकटदेशज अश्व, मगधका घोड़ा। ४ मरुत-पुत्र-विशेष। (भागवत, ६।६।६) ५ अनार्य जातिविशेष, एक कौम। ६ ऋषभके एक पुत्र। (त्रि०) ७ निर्धन, गरीब। ८ लुब्ध, कमीन, कंजूस।

कीकटक, कीकट देखो।

कीकटी (सं० पु०) वन्यवराह, जंगली सूअर।

कीकना (हिं० क्रि०) चीत्कार करना, चिल्लाना।

कीकर (सं० पु०-स्त्री०) ग्रामविशेष, एक गांव।

कीकर (हिं० पु०) बर्बूरवृक्ष, बबूलका पेड़।

कीकरी (हिं०स्त्री०) १ बर्बूरभेद, किसी किस्मका बबूल। कीकरीके वृक्ष बहुत सुन्दर होते हैं। २ किसी शिल्प-की दस्तकारी। कीकरीमें कपड़ा कतरकर नकशदार या कंगूरेदार बनाते हैं।

कीकश (सं० पु०-स्त्री०) कीति कशति शब्दायते, की-कश्-अच्। १ चण्डाल, हत्यारा। (शब्दचिन्तामणि, ३।६०) २ कृमिजाति, कीड़ा मकोड़ा। ३ अस्थि, हड्डी।

कीकस (सं० पु०-स्त्री०) की कुत्सितं यथास्यात्तथा कसति गच्छति, की-कस्-अच्। १ कीटजाति, कीड़ा मकोड़ा। की कुत्सितेन रक्तादिना कसति उत्पद्यते। २ अस्थि, हड्डी। (त्रि०) ३ कर्कश, कड़ा।

कीकसमुख (सं० पु०) कीकसं अस्थिरूपं अस्थि मुखं यस्य, बहुव्री०। पक्षी, चिड़िया।

कीकसास्य, कीकसमुख देखो।

कीकसेश्वर (सं० पु०) कीकसाया ईश्वरः, ६-तत्। शिव।

कीका (हिं० पु०) कीकट, घोड़ा।

कीकि (सं० पु०) कीति शब्दं कायति, की-कै बाहुल्यात् कि। चाषपक्षी, नीलकण्ठ।

कीच (हिं० स्त्री०) कर्दम, कीचड़।

कीचक (सं० पु०) चीकयति शब्दायते चीक-वुन्। (वाचस्पतिमिश्र उण् ५। ३५।) १ वंशभेद, किसी किस्मका बांस, वायुभरनेसे कीचक शब्द करता है। २ रन्ध्रवंश, छेददार बांस। ३ राक्षसविशेष। ४ दैत्यविशेष। ५ नल, एक घास। ६ वृक्षविशेष, कोई पेड़। ७ विराट-राजाके श्यालक और सेनापति। कीचकके पिताका नाम केकयराज था। द्रौपदीके प्रति अत्याचार करनेकी इच्छा रखनेसे भीमसेनने उन्हें मार डाला। महाभारतमें उनकी मृत्यु कथा इसप्रकार लिखी है—"पाण्डवोंके अज्ञात-वासका समय उपस्थित होनेपर वह छद्मवेशसे विराट-राज्य पहुंचे और छद्मवेशमें वो विविध कार्यमें नियुक्त

कीटरिपु, कीटघ्न देखो।

कीटमारि (सं० पु०) कीटानां मारिः, ६-तत्। १ हयवि- शेष, कीड़े वेड़। २ गन्धक। ३ विड्ङ्ग। (त्रि०) ४ कीटनाशक, कीड़े मारनेवाला।

कीटसंज्ञ (सं० पु०) कीटः संज्ञा यस्य, बहुव्री०। हरिद्र- राजि, विष्णुका मुकुट।

कीटारि, कीटघ्न देखो।

कीटाणु (सं० पु०) कीटेषु अणुः सूक्ष्मः, ७-तत्। कीट समूह मध्य अति सूक्ष्म कीट, आंखसे न देख पड़नेवाला कीड़ा।

कीटाणुकीट (सं० पु०) कीटादपि अणुः सूक्ष्मः कीटः। कीटसे अधिक भी अति सूक्ष्म कीट, बारीकसे बारीक कीड़ा।

कीटाद (सं० त्रि०) कीटान् अत्ति कीट-अद्-अण्। कीट- भक्षक, कीड़े खानेवाला।

कीटारि (सं० पु०) कीटानां अरिः शत्रुः, ६-तत्। कीटघ्न देखो।

कीटारिरस (सं० पु०) औषधविशेष, कीड़े मारने- वाली एक दवा। शुद्धपारद, इन्द्रयव, अजमोदा, मनः- शिला, पलाशबीज और गन्धक समपरिमाणमें ले देव- दालीके रसमें समस्त दिन भाव कर रत्ती रत्तीकी बटी बनाना चाहिये। अनुपान चीनी और वनमुद्गका रस है।

कीटारिष्ट (सं० क्ली०) अश्वका कोटवेधरोग, घोड़ेके पेटमें कीड़े पड़नेकी बीमारी। मन्द, निदाघ और शमके नियमसे निरवधान घास खिलानेसे कीटक (कीटारिष्ट) रोग हो जाता है। फिर अनकाल नीच पीनेसे उनके उदरमें कीट-जन्तु पड़ते हैं। ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीयाको उनमें कीड़े निकलते हैं। (जयदत्त)

कीड़ा (हिं० पु०) १ उड़ने या रेंगनेवाला क्षुद्र कीट, मकोड़ा, पतङ्ग। २ कृमि, बारीक कीट। ३ सर्प, सांप। ४ उत्कुण मत्कुण प्रभृति, जूं खटमल वगैरह। ५ छोटा बच्चा।

कीड़ी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्रकीट, छोटा कीड़ा। २ पिपी- लिका, चींटी।

कीट्टिर (सं० पु०) कीर-पक्षक् ... मत्स्य कीट- मत्स्य, एक मछली।

कीनसिका (सं० स्त्री०) पटिकाया, मुकट्टी, [illegible]।

कीदृक् (सं० त्रि०) क इव दृश्यतेऽसौ, किम्-दृश्-क्विन् यत्यादेशः। [illegible] किस प्रकार, किस तरह, कैसा।

"[illegible]
[illegible]"
([illegible])

कीदृश (सं० त्रि०) क इव दृश्यते असौ, किम्-दृश्- कञ् अत्यादेशश्च। किस प्रकारका, कैसा।

कीदृक्ष (सं० त्रि०) क इव दृश्यते असौ, किम्-दृश्-क्स। किस प्रकारका, कैसा।

"[illegible]
[illegible]"
(भारत, अनुशासन)

कीन (सं० क्ली०) मांसधातु, गोश्त।

कीनखाब (हिं० स्त्री०) कमखाब, एक बढ़िया कपड़ा।

कीनना (हिं० क्रि०) क्रय करना, मोल लेना।

कीनराजवंश—राजविशेष, एक चीनी खानदान। ख्रीष्टीय ८म शताब्दके मध्य यह राजवंश पूर्वमंगोलिया, कोरिया और चीनका उत्तरभाग अधिकार कर राजत्व करता था। उस समय यह प्रबल पराक्रमी हो गया। आधुनिक पाश्चात्य पण्डितोंके मतमें कीन राजवंशसे ही मञ्चुरियाके वर्तमान राजवंशकी उत्पत्ति है। कीन तातार जातीय हैं। उनके नामका अर्थ हेमन् अभिज्ञान होता है। इसीसे उन्हें 'स्वर्णवर्ण तातार जाति' कहते हैं। पाश्चात्य पण्डितोंने मञ्चुरियाके प्रवाद एवं इतिहासादिके अनुसार नानाविध अनुसन्धानसे स्थिर किया है कि वर्तमान मञ्चु कीन-तातार जातिसे ही उत्पन्न हुये हैं। कीन-तातारोंका आदिनिवास सुङ्गारि और आमूर नदीका तीर है। यहांके नामोंकी सुचि कहते हैं।

जिस समय ताङ्ग राजवंश उत्तर चीनके प्रदेशों राजत्व करता था, सुङ्गारितीरस्थ सुचियोंमें प्रबल हो ... नामक तातार राजवंशका प्रभुत्व बढ़ाया और आमूरतीरस्थ सुचियोंको जीता दिखाया। खितान वंशीय तातारोंका राज्य स्थापन किया था। फिर यह खितानवंशके अधीन हो गया था अधीनस्थ सुचि-

ही रहने लगी। उसी समय कीचक सैरिन्ध्री-रूपिणी द्रौपदीको देख अत्यन्त कामार्त हुवे और अन्य किसी प्रकार अभीष्ट सिद्ध न सकनेपर बलात्कार करने पर तुल गये। फिर उन्होंने भगिनीसे अनुरोध किया कि वह द्रौपदीको उनके घर भेज दे। भगिनीने सुरा मंगानेके बहाने द्रौपदीको कीचकके गृह पहुंचाया था। उनके उपस्थित होते ही कीचक उनको आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुवे। किन्तु वह चीत्कारपूर्वक वहांसे दौड़ कर राजसभाको भाग गयीं और उनके हाथ न लगीं। पीछे भीमसेनसे परामर्शकर द्रौपदीने कीचकको सङ्केतस्थान नाट्यशालामें बुलाया था। उसीके अनुसार वह वहां जाकर उपस्थित हुवे। परन्तु भीमसेन उक्त स्थानपर पहलेसे ही नारीवेशमें बैठे थे। कीचकको देखते ही मार डाला। (भारत, विराट, १२ अ०) जैन हरिवंशपुराणमें इसकी कथा इस भांति लिखी है—जिस समय कीचक द्रौपदी पर आसक्त हो संकेतस्थान पर पहुंचा तो उसे छद्मवेशी भीमसेनने बहुत मारा और उसका याचना करते पर छोड़ दिया। इसके बाद विषयोंसे विरक्त हो उसने एक दिगम्बर जैन मुनिसे दीक्षा ले तप किया एवं घोर तपश्चरण द्वारा कर्म नष्टकर मुक्ति पाई।

कीचकजित् (सं० पु०) कीचकं जितवान्, कीचक-जि भूतेर्थे क्विप्। भीमसेन।

कीचकनिसूदन, कीचकजित् देखो।

कीचकभित्, कीचकजित् देखो।

कीचकवध (सं० पु०) कीचकस्य वधः मारणम्, ६-तत्। १ कीचकका वध। कीचकस्य वधः विनाशकथा वर्णितो यत्र, बहुव्री०। २ कीचकवधके विवरणका पुस्तक।

कीचकाद्रय (सं० पु०) १ रन्ध्रवंश, छिद्दार बांस। २ नल, एक घास।

कीचड़ (हिं० पु०) कर्दम, कीच। २ पहुमल, आंखका मैल।

कीज (वै० पु०) कथं जातः पृषोदरादित्वात् साधुः। अद्भुत, अनोखा। "यः शक्रो मृधो यश्च्यो यो वा कीजो हिरण्ययः। (ऋक् ८।६६।३) 'कीज इत्यद्भुतनाम।' (भाष्य)

कीट (सं० पु०) कीट-अच्। १ क्षुद्रजीवभेद, कीड़ा, मकोड़ा। कीट बहुविध और नाना प्रकार होता है। सुतरां उसे निर्देश कर नहीं सकते। सुश्रुतने कई कीटोंके दंशनसे उत्पन्न रोगोंकी चिकित्साके लिये सर्पसमूहके शुक्र, मल, मूत्र एवं शव, पूति तथा अण्डजात कई कीटोंकी प्रकृति, दंशनजन्य रोग और उनकी चिकित्साका निर्देश किया है। उक्त सकल कीटोंके मध्य कुछ वायुप्रकृति, कुछ पित्तप्रकृति, कुछ श्लेष्मप्रकृति और कुछ त्रिदोषप्रकृति होते हैं। सर्वापेक्षा त्रिदोषप्रकृति कीट ही भयङ्कर होता है।

कुम्भीनस, तुण्डिकेरी, शृङ्गी, शतकुलीरक, उच्चिटिङ्ग, अग्निनामा, चिच्चिटिङ्ग, मयूरिका, आवर्तका, उरभ्र, सारिका, मुखवैदल, शरावकुर्द, अभीराजी, परुष, चित्रशीर्षक, शतबाहु और रक्तराजि—१८ प्रकारके कीट वायुप्रकृति होते हैं। उनके दंशन करनेसे वायुजन्य रोग उत्पन्न होता है।

कौण्डिन्यक, कणभक, वरटी, पत्रवृश्चिक, विनासिका, ब्राह्मणिका, बिन्दुल, भ्रमर, वाह्यकी, पिच्चिट, कुम्भी, वर्चःकीट, पाकमत्स्य, कृष्णतुण्ड, अरिमेदक, पद्मकीट, दुन्दुभिक, मकर, शतपदिक, पञ्चालक, गर्दभी, क्लीत, कृमिसरारि और उत्क्लेशक—२४ प्रकारके कीट पित्तप्रकृति होते हैं। उनके दंशनसे पित्तजन्य रोग उठता है।

विश्वम्भर, पञ्चशुक्ल, पञ्चकृष्ण, कोकिल, सैरेयक, प्रचलक, वलभ, किटिभ, सूचीमुख, कृष्णगोधा, कषायवासिक, कीटगर्दभक और त्रोटक—१३ प्रकारके कीट श्लेष्मप्रकृति हैं। उनके दंशनसे श्लेष्मजन्य रोग लग जाता है।

तुङ्गीनाम, विचिलक, तालक, वाहक, कोष्ठागारी, कृमिकर, मण्डलपुच्छक, तुङ्गनाभ, सर्षपिक, अवल्गुली, शम्बुक और अग्निकीट—१२ प्रकारके कीट सन्निपात-प्रकृति हैं। उनके दंशन करनेसे सर्पदंशनकी भांति तीव्र यातना उठती और सान्निपातिक रोग समूहकी उत्पत्ति होती है। उक्त कीटोंके काटनेसे दष्टस्थान क्षार वा अग्निदग्धकी भांति विदग्ध बन जाता और रक्त, पीत, श्वेत वा अरुणवर्ण दिखाता है।

कहलाने लगी। पोहाइयोंके अधीन दूसरे जुर्चि स्वाधीन वा दुर्दम्य जुर्चिके नामसे ख्यात थे। दुर्दम्य जुर्चि तातारोंसे ही कोना-तातारोंकी उत्पत्ति है। वह उस समय माञ्चूरियाके पूर्वांश, कोरियानिकटस्थ भूभाग और आमूर-तीरवर्ती जनपदमें स्वाधीनभावसे राजत्व करते थे। खितानोंने पोहाइयोंको उच्छेद कर सर्वप्रधान क्षमता पायी। दुर्दम्य जुर्चि उनकी अधीनता स्वीकार तो करते, किन्तु उनके विधिनियम शासनादि मानते न थे।

कीन-राजवंशके आदिपुरुषका नाम पुखां वा कुखां था। उन्होंने कोरियामें जन्म ग्रहण किया। चियान-पु वा कियान-कु उनका उपाधि था। उन्होंने ६० वर्षके वयसमें अपने कनिष्ठ सहोदर आओ-हो-लिके साथ पुकान नदीके तीर यि-लान नामक स्थानमें वनियान लोगोंके मध्य जाकर वास किया। पुकान नदीका आधुनिक-नाम कानहुई है। वहां आज भी वनियान लोग रहते हैं।

पुखांके वहां जाने पर वनियान जातिके साथ फिर एक जातिका विवाद उठा था। उस समय वनियानोंने उभय पक्ष पर पुखांको मध्यस्थ मान विवाद मिटाने कहा और स्वीकार किया यदि पुखां विवाद मिटा सकेंगे, तो वही उनके सरदार बनेंगे और वह उन्हें एक अलौकिक बुद्धिमती साठ वर्षकी अनूढ़ा कन्यादान करेंगे। क्रमसे वही हुवा। पुखां वनियानोंके सरदार बने और उनको दी हुई षष्टिवर्षीया कन्यासे विवाह कर वु-लु तथा वु-आलु नामक २ पुत्र और चु-से-पान नामक एक कन्याको उत्पादन किया। कीन-राजवंश पुखांको आदिपुरुष (चि-तसु) बताते हैं। पिताके मरने पर वुलु टे-वाङ्-टि नामसे राजा हुवे। वुलुके पुत्र पोहाई यन-यङ्टो और पोहाईके पुत्र सुइको चिंगेनत्सु थे। उनके राजत्वके समय भी दुर्दम्य जुर्चियोंके गृहादि न थे। कोई गृहादि बनाना जानता भी न था। वह पर्वतकी मूल मृत्तिकाके मध्य गर्त बना घास फूससे ढांक शीतकालको रहते थे। फिर ग्रीष्मकालको गवादि पशु और स्त्रीपुत्रादि ले वह घूमा करते थे। सुइको राजाने उन्हें सर्वप्रथम हइकू नदी-तीर गृहादि बना उनमें रहना और कृषिकर्म द्वारा जीविका निर्वाह करना सिखाया था। क्रमशः वह आनचुहो नदी-(स्वर्णनदी, उसमें स्वर्णरेणु मिलती थी)-तीर पर्यन्त फैल गये। सुइकोके पुत्र शिलूने उनमें सर्वप्रथम कई राजविधि और समाजविधिका प्रचार किया। शिलूके पुत्र उकु-नाईने १०२१ ई०को जन्म लिया था। उन्होंने सर्वप्रथम जुर्चियोंको लौह-अस्त्र बनाना और चलाना सिखाया। उकु-नाईके पुत्र हिलि-पुने १०३२ ई० को जन्मग्रहण किया था। १०७४ ई० को पिताके मरने पर वह राजा हुवे। उनके भ्राता पुलासुने १०४२ ई० को जन्म लिया था। पुलासु पिता और ज्येष्ठ भ्राताके राज्यमें कुएसियान (प्रधान मन्त्री) थे। वही अपने समयकी घटनावली लकड़ीके तख्ते या मट्टीके खपरे पर अक्षरार्थ लिख गये। उनके मरने पर कनिष्ठ इनकु ४२ वर्षके वयसमें राजा हुवे। हिलिपुके एक पुत्र अगुट बड़े वीर थे। उन्होंने विद्रोहियोंके अनेक शत्रुओंका दमन किया। उनके परामर्शसे राज्यमें अनेक व्यवस्थायें और शृङ्खलायें स्थापित हुईं। फिर उन्होंने नाना क्षुद्र क्षुद्र राज्योंको वशीभूत किया था। ११०३ ई० को इनकु मर गये। अगुटके ज्येष्ठ उयासु राजा हुवे। उनसे राजत्वकाल खितान-साम्राज्य बिगड़ गया। १११३ ई० को ज्येष्ठका मृत्यु होनेसे अगुट राजा बने। उन्होंने खितान-साम्राज्यका पुनर्गठन और माञ्चूरिया राज्यको स्थापन किया। अगुटने १०६८ ई० को जन्म लिया था। उन्होंने १११५ ई० को स्वर्णके पत्र पर राजसभाका आदेशादि चलाया और अपने राज्यकालको 'टिएनकु' (स्वर्गका साहाय्य काल) बताया। १११७ ई० को उन्होंने नियम निकाला—कोई अपने वंशकी कन्यासे विवाह कर न सकेगा। उसी समय खितान-साम्राज्य पर चीनके सुङ्ग सम्राट्से अगुटका विवाद हुवा था। उसी विवादमें अगुटने समस्त खितान साम्राज्य पर अधिकार किया। पीछे चीनराजके साथ सन्धि हो गयी। ११२३ ई० को अगुटने पुटु ह्रदके तीर ५५ वर्षके वयसमें सूर्यग्रहणके दिन परलोक गमन किया। उनके छरपाय पिकिं नगरमें एक स्मृतिलिपि स्थापित है।

ज्वर, अङ्गमर्द, रोमाञ्च, वमन, अतीसार, तृष्णा, दाह, मोह, जृम्भा, कम्प, श्वास, हिक्का, शोथ, पिडकानिर्गम, शोथ, ग्रन्थि, मण्डल, दद्रु, कर्णिका, चोमर्प, विटिभ प्रभृति रोग भी उनके काटनेसे होते हैं। एतद्व्यतीत दूसरे भी कई कीट और उनके दंशनके चिह्नादि सुश्रुतमें उपदिष्ट हैं। यथा—

त्रिकण्टक, कुणी, हस्तिकक्ष और अपराजित—चार प्रकारके कीटोंका नाम कणभ है। उनके काटनेसे तीव्रवेदना, शोथ, अङ्गमर्द एवं गात्रगौरव आता और दष्टस्थान काला पड़ जाता है। प्रतिसूर्य, पिङ्गभास, बहुवर्ण, महाशिरा और निरुपम—पांच प्रकारके कीट गोधेरक कहाते हैं। उनके दंशनसे यातना अधिक, विविधरोग और भयङ्कर ग्रन्थि निकलती है। गलगोली, श्वेतकृष्ण, रक्तराजी, रक्तमण्डला, सर्वश्वेता और सर्षपिका छह प्रकारके कीड़ोंमें सर्षपिका व्यतीत अन्य पांच प्रकारके कीटोंके दंशनसे दाह, शोथ और क्लेद आता है। फिर सर्षपिकाके काटनेसे हृदयपीड़ा और अतिसार रोग उपजता है। कर्कशपरी, विचित्रवर्ण और कृष्ण, पीत, श्वेत, कपिल तथा अग्निवर्ण भेदसे शतपदी कीट ८ प्रकारका होता है। उनके दंशनसे दष्ट स्थान पर शोथ एवं वेदना और हृदयमें दाह उठता है। विशेषतः श्वेतवर्ण और अग्निवर्ण शतपदी के काटनेसे दाह, मूर्च्छा और श्वेतवर्ण पिड़का उत्पन्न होती है। कृष्णसार, कुहक, हरित, रक्त एवं यववर्ण और भृकुटी तथा कोटिक नाम भेदसे मण्डूक (मेंढ़क) ८ प्रकारका है। उनमें विष रहता है। दंशन करनेसे दष्ट स्थान खुजलाने लगता और मुखसे फेन निकल पड़ता है। विशेषतः भृकुटी और कोटिक मण्डूकके काटनेसे वाधिका विष दाह, वमन और अत्यन्त मूर्च्छा आया करती है।

विश्वम्भर नामक कीटके दंशनसे दष्ट स्थान पर सर्षपकी भांति छुद्र छुद्र पिड़का पड़ती और शीतज्वर आता है।

अहिण्डुक नामक कीटके काटनेसे सूई चुभनेकी भांति पीड़ा, दाह, कण्डू, शोथ और मोह होता है।

कण्डूमक नामक कीटके काटनेसे अङ्ग पीतवर्ण पड़ जाता और वमन, अतीसार तथा ज्वरादिसे युक्त आता है।

शूकवृन्त प्रभृति कीटके काटनेसे कण्डू होती, शरीर में चकते और दष्ट स्थानमें शूक भी दिखाई देता है।

पिपीलिका छह प्रकारकी होती है। यथा—स्थूलशीर्ष, संवाहिका, ब्राह्मणिका, अङ्गुलिका, कपिलिका और चित्रवर्णा। उनके काटनेसे दष्टस्थान पर शोथ और अग्निस्पर्शकी भांति दाह हुआ करता है।

कान्तारिका, कृष्णा, पिङ्गलिका, मधुलिका, काषायी और स्थालिका नामभेदसे मक्षिका भी छह प्रकारकी होती है। उनके काटनेसे दष्ट स्थान पर दाह और शोथ उठता है। स्थालिका और काषायीके काटनेसे अन्य उपद्रवके साथ साथ पिड़का भी पड़ जाती है।

मशक पांच प्रकार है—सामुद्र, परिमण्डली, हस्तिमशक, कृष्ण और पार्वतीय। उनके काटनेसे दष्ट स्थान पर शोथ और अत्यन्त कण्डू होती है। किन्तु पार्वतीय मशकके काटनेसे प्राणनाशक कीटदंशनमें जो समस्त लक्षण कहे गये हैं, वह समस्त देख पड़ते हैं। उक्त स्थान पर नख द्वारा छिन्न होनेसे अत्यन्त पिड़का पड़ जाती और वह पक जाती है।

वृश्चिक कीट मन्द, मध्य और महाविष भेदसे तीन प्रकारका होता है। पूति गोमयसे जो सकल वृश्चिक उपजते, वह मन्दविष रहते हैं। काष्ठ और इष्टकसे जन्म लेनेवाले मध्यविष होते हैं। फिर पूतिसर्पदेह और विषसे जो उपजते, वे महाविष कहते हैं।

कृष्ण, श्याव, चित्र, पाण्डु, गोमूत्र, कर्कश, छिन्न, कृष्ण, श्वेत, रक्त एवं हरितवर्ण और रक्तलोमगुरु वृश्चिक मन्दविष होता है। उनके काटनेसे वेदना, कम्प, गात्रस्तम्भ, दष्ट स्थानमें कृष्णवर्ण, रक्तस्राव तथा शोथ, ज्वर एवं हस्तपादादिमें दंशन करनेसे यातना और वेगकी क्रमशः ऊर्ध्वगति देख पड़ती है।

रक्तवर्ण एवं पीतवर्ण, किन्तु उदरदेश कपिलवर्ण और सर्व शरीर धूम्रवर्ण वृश्चिक मध्यविष है। उनके शरीरका परिमाण ३ पर्व होता है। उसकी उत्पत्ति सर्पकी पूति, मल मूत्र और अण्डसे है। उनके काटनेसे जिह्वा पर शोथ, कण्ठनालीमें भुक्त द्रव्यका अवरोध और अत्यन्त मूर्च्छा आती है।

चन्द्रदेवके पीछे उनके अन्तिम उत्तराधिकारी राजा हुये। उनके समय कोशलराज्य [illegible] गया। दूसरी बार कोल [illegible] अधिकारमें आया तथा कोल उनका- [illegible] एक महाराजको वार्षिक २५०००० कौड़ी दोष-मुक्त कर दिया गया। यही समय पीछाईं यहीं आया राजाकी मौखर गंगवंशीयोंकी। [illegible] देव-विग्रह नगर (वर्तमान विर्जि) में स्थापित हुयी। कोणार्क राज्यमें विजिनाग्र [illegible] नगरको उदय हुयी। किन्तु उसी समय कोलकाराजके राज्यमें मुसलमानोंने अपना अधिकार जमा लिया था।

शिवको मुसलमानोंने लगभग १२३४ ई० को उक्त वंश-मात्रो राजवंश नष्ट हो गया।

कोना (फा० पु०) ऐंठ, मुलुक, दुम्बनी।

कोनार (दे० पु०) १ कृषक, किसान। २ व्यवसायी, मजदूर। "कोनारैं [illegible]" (भाग० १०। १०६। १०)

कीनाश (सं० पु०) क्लिश्नाति दिनमिति क्लिश-क्नन् उपधाया ईत्वं ककारश्च कीनाशः नामागमश्च। क्लिशेरीच्चोपधायाः कन् लोपश्च लो नाम् च। उण् ५। ५६। १ यम। २ वानरविशेष, किसी किस्मका बन्दर। ३ राक्षसविशेष। (त्रि०) ४ कृषक, किसान। ५ क्षुद्र, छोटा। ६ पशुघातक, जानवरोंको वध करनेवाला। ७ लोभी, कंजूस। ८ गुप्तहत्याकारी, छिपकर मार डालनेवाला।

कोप (हिं० स्त्री०) कीच लुगदी, एक बोली। यह छोटे सुंअरके पायमें मैल आदि बाहर न निकलनेके लिये लगायी जाती है।

कीमत (अ० पु०) मूल्य, दाम, किसी चीजके बदले बिकने पर मिलनेवाला रुपया पैसा।

कीमती (अ० वि०) बहुमूल्य, महँगा।

कीमा (अ० पु०) मांसविशेष, किसी किस्मका गोश्त। कीमा मांसको बारीक काटनेसे बनता है।

कीमिया (फा० स्त्री०) रसायन, रासायनिक क्रिया।

कीमियागर (फा० पु०) रसायन बनानेवाला, जो धातुको कीमियागरीसे कीमियागर हो।

कीमियागरी (फा० स्त्री०) रसायन बनानेकी विद्या।

कीमुख्त (फा० पु०) गदहे या घोड़ेकी पीठ या पुट्ठेका चमड़ा। कीमुख्त हरा और दानेदार होता है। इससे जूते बनाये जाते हैं।

कीर (सं० पु०) कीर्यति व्याप्नोति गगनम्, कीर-इगुपध कः। १ मांस, गोश्त। (पु०) कीर्यति अव्यक्त शब्दं ईरयति, कीर-ईर-क्विप्-अण्। २ शुकपक्षी, तोता, सुआ।

"[illegible]" (नैषध, [illegible])

३ काश्मीरदेश और काश्मीरवासी।

कीर—कीरा देखो।

कीरक (सं० पु०) कीर संज्ञायां कन्। १ वृक्षविशेष, एक पेड़। २ कीरदेशवासी। ३ शुकपक्षी, तोता। ४ [illegible], [illegible]।

कीरग्राम—कोट-कांगड़ाके निकट एक प्राचीन ग्राम। आजकल उसे वैद्यनाथ कहते हैं। यहां वैद्यनाथ और सिद्धनाथका मन्दिर बना है। ८०४ ई०को यह मन्दिर बनाया गया था। [illegible] ई० को राजा संसारचन्द्रने इसे परखत और परिवर्तित कर दिया।

कीरट (सं० पु०) बहुधातु, रांगा।

कीरटा (सं० स्त्री०) कीरट देखो।

कीरमुखा (सं० स्त्री०) [illegible], [illegible]।

कीरति, (हिं०) कीर्ति देखो।

कीरनासा (सं० पु०) शुकनासा, तोतेकी नाक।

कीरसवि (सं० पु०) पूर्वाषाढ़वाली, एक चिड़िया।

कीरवर्ण (सं० क्ली०) कीरस्येव वर्णो यस्य, कीर-वर्ण-अच्। स्थौणेयक नामक सुगन्धि द्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज। स्थौणेय देखो।

कीरशप्ता (सं० स्त्री०) [illegible]। उसमें [illegible], एक [illegible] और [illegible] नाम [illegible] है।

कीरः (सं० पु०) क-ईर-क्विप् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ काश्मीरदेश। २ काश्मीरदेशीय व्यक्ति। यह शब्द नित्यबहुवचनान्त है।

कीरि (सं० पु०) कीर्तिं विशिष्टं, कृ बाहुलकात् कि। १ स्तव, [illegible]।

श्वेतवर्ण, चित्रवर्ण, श्यामवर्ण, रक्ताभ, रक्तश्वेत, रक्तोदर, नीलोदर, पीतरक्त, नीलपीत, रक्तनील, नीलशुक्ल एवं रक्तपिङ्गलवर्ण प्रभृति वर्णयुक्त और परिमाणमें एक पर्व, एक पर्वकी अपेक्षा भी क्षुद्र अथवा दो पर्व वृश्चिक-समूह महाविष तथा प्राणनाशक है। पूतिसर्पदेह वा सर्पदष्ट व्यक्तिके देहसे उसका जन्म है। उसके काटनेसे सर्पविषकी भांति विषवेगकी प्रवृत्ति, स्फोट, भ्रम, दाह, ज्वर और शरीरस्थ छिद्रपथसे रक्तस्राव होनेपर प्राण छूट जाता है।

सुश्रुतके मतमें—किसी समय राजा विश्वामित्रने वशिष्ठकी कामधेनु अपहरण की थी। उससे वह अत्यन्त कुपित हुवे। उसी समय उनके ललाटदेशसे अति-तेजस्वी स्वेदबिन्दु निकला था। वह छिन्न तृणमें गिर पड़ा। उससे लूता (मकड़ी) नामक कीट उत्पन्न हुवा। आकार, वर्ण और प्रकृतिभेदसे नानाविध लूता केवल षोड़श प्रकारमें विभक्त किया गया है। सब प्रकारकी लूताका विष भयानक है। उसमें आठ प्रकारकी लूता कष्टसाध्य और आठ प्रकारकी एकवारगी ही असाध्य निर्दिष्ट हुयी है। त्रिमण्डला, श्वेता, कपिला, पीतिका, आलविषा, मूत्रविषा, रक्ता और कसना लूताका विष कष्टसाध्य है। उसके दंशन करनेसे शिरोरोग, कण्डू, दष्टस्थान पर वेदना और वातश्लेष्मिक रोग समूहकी उत्पत्ति होती है। सौवर्णिका, लाजवर्णा जालिनी, एणीपदी, कृष्णा, अग्निवर्णा, काकाण्डा और माला-गुणा—आठ प्रकारकी लूताका विष असाध्य है। उसके दंशन पर दष्टस्थानसे रक्त निकलता, दष्टस्थान सड़ता और ज्वर, दाह, अतिसार प्रभृति त्रिदोषजात रोग, विविध पिड़का, गात्रमें बड़ा बड़ा चकता और रक्तवर्ण अथवा श्यामवर्ण एवं मृदु चञ्चल शोथ हुवा करता है। दंशनव्यतीत भी उक्त प्रकारकी लूताकी लाला, नखा-घात, दंष्ट्राघात, मूत्र, रजः, मल और इन्द्रियस्पर्शसे भी विष-पीड़ित होना पड़ता है। लालाके विषसे कण्डू एकस्थानस्थायी, अल्पमूत्रकोष्ठ और अल्प वेदना होती है। नखाघातके विषसे शोथ, एवं कण्डूका वेग बढ़ता और मनुष्य अकड़ रहता है। दंष्ट्राघातके विषसे दष्ट-स्थान उग्र, कठिन एवं विवर्ण पड़ जाता और शरीरमें एकस्थानस्थायी मण्डल निकला आता है। मूत्र-स्पर्शसे स्फुटस्थान गलने लगता और उसका मध्यदेश कृष्णवर्ण तथा प्रान्तभाग रक्तवर्ण देख पड़ता है। रजः, मल एवं इन्द्रियके स्पर्शसे पक्व बिल्व फलकी भांति पाण्डुवर्ण स्फोटक उठता है। लूताका किसी प्रकार विष-लक्षण एक ही वारमें समस्त प्रकाशित नहीं होता। दंशके पीछे पहले दिन अव्यक्तवर्ण और कण्डू विशिष्ट अस्थिर चकते उभरा करते हैं। दूसरे दिन उन मण्डलोंका मध्यभाग, निम्न और चतुर्दिकका प्रान्त-भाग फूल उठता है। तीसरे दिन विषका लक्षण देख पड़ता है। चतुर्थ दिन शरीरस्थ विष कुपित होता है। पञ्चम दिन विषकोपसे रोगसमूह उभर आता है। षष्ठ दिन विष सर्वशरीरमें फैल विशेषरूपसे मर्मस्थान-समूहको आश्रय करता है। सप्तम दिन विषप्रकोप बहुत बढ़ जाता है। तीक्ष्ण या प्रचण्ड विष होनेसे उसी दिन रोगीका प्राण विनष्ट होता है। मध्यम-विषविशिष्ट लूताके दंशनसे सप्तम दिवसके पीछे और मन्द विषयुक्त लूताके दंशनसे एक पक्षकाल मध्य मृत्यु आ सकता है।

चिकित्सा—उग्रविष कीटोंके काटनेसे सर्पदंशनकी भांति ही चिकित्सा करना पड़ती है। स्वेद, प्रलेप और जल-सेकादि उष्ण कर व्यवहार करना चाहिये। दष्टस्थान पक या सड़ जाने और मूर्च्छादि उपद्रव बढ़ जानेसे वमन विरेचनादि संशोधन कार्य और विनाशक क्रिया-समुदायसे लाभ होता है। उक्त सकल उपद्रवमें शिरीष, कुटकी, कुष्ठ, वचा, हरिद्रा, सैन्धवलवण, गव्यदुग्ध, मज्जा, वसा, गव्यघृत, शुण्ठी, पिप्पली और देवदारुका पुलटिस बांधना चाहिये। अथवा प्रथम शालपर्णीचूर्ण कर उसका स्वेद लगाना उचित है। किन्तु वृश्चिक दंशनमें स्वेद अहितकर है। विकण्टकके विषमें कुष्ठ, अपक्व सिन्धुवार, वचा, बिल्वमूल, शिखर्णी, सुवर्टिका, कज्जल, हरिद्रा और दारुहरिद्राका प्रलेपादि हितकर है। गलगोली (सर्पविशेष)-के विषमें कज्जल, हरिद्रा, अपक्व सिन्धुवार, कुष्ठ और अन्नाशयशोधनसे उपकार होता है। शतपदी (कानखजूरा)-के विष पर कुङ्कुम, तगर-पादुका, शोभाञ्जन, पद्मकाष्ठ, हरिद्रा और दारुहरिद्रा

"कीरिणा देवान्नमसोपशिक्षन्।" (ऋक् ५।४०।८)

'कीरिणा स्तोत्रे च।' (सायण)

(त्रि०) २ स्तवादिमें आसक्त, तारीफ करनेमें लगा हुआ।

"वस्ता हदा कीरिणा मन्यमानः।" (ऋक् ५।३।१०)

'कीरिणा स्तुत्यादिषु विनिवेशेन हृदा।' (सायण)

३ स्तोता, तारीफ करनेवाला।

कीरिचोदन (सं० त्रि०) कीरीन् चोदयति प्रेरयति, कीरि-चुद्-णिच्-ल्यु। स्तवकारकोंका प्रेरक।

"सखायं कीरिचोदनम्।" (ऋक्, ६।४५।१८)

'कीरीणां स्तोतृणां चोदनं प्रेरयितारम्।' (सायण)

कीरी (हिं० स्त्री०) १ कीटविशेष, एक महीन कीड़ा। कीरा गेहूं, जो वगैरहको बालमें घुस दूध पी जाती है। २ पिपीलिका, चींटी। ३ बहेलियेकी स्त्री। ४ सूक्ष्म कीट, बहुत बारीक कीड़ा।

कीरेष्ट (सं० पु०) कीरस्य शुकस्य इष्टः, ६-तत्। १ आम्रवृक्ष, आमका पेड़। २ आक्षोटवृक्ष, अखरोटका दरख्त। ३ जलमधूक। ४ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़।

कीर्ण (सं० त्रि०) कीर्यते स्मेति, कॄ कर्मणि क्त। १ आच्छन्न, ढका हुआ। २ विक्षिप्त, फैला हुआ। ३ निहित, छिपा हुआ। ४ हिंसित, मारा हुआ। ५ पूर्ण, भरा हुआ

कीर्णपुष्प (सं० पु०) चीरमोरट, एक लता।

कीर्णि (सं० स्त्री०) कॄ भावे क्तिन् निपातनात् साधुः। १ आच्छादन, ढकन, ओढ़ना। २ विक्षेप, फैलाव। ३ हिंसाकार्य, मार पीट। ४ व्याप्ति, भराव।

कीर्तक (सं० त्रि०) कीर्तयति, कृत्-णिच्-ण्वुल्। कीर्तन-कारक, बयान् करनेवाला।

कीर्तन (सं० क्ली०) कृत् भावे ल्युट्। १ वर्णन, बयान्।

"रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम।" (मार्कण्डेय-पुराण, ९२।१२)

२ यशःप्रकाश, शोहरतका इजहार। ३ गुणकथन, तारीफका बयान्। ४ कृष्णलीलाविषयक सङ्गीतविशेष।

सङ्कीर्तन देखो।

कीर्तनिया (हिं० पु०) कीर्तनकारक, कृष्णलीला सम्बन्धी भजन गानेवाला।

कीर्तनी (सं० स्त्री०) नीलीवृक्ष, नीलका पेड़।

कीर्तनीय (सं० त्रि०) कृत्-णिच्-अनीयर् यद्वा कीर्तने गुणकथने साधुः, कीर्तन-छ। १ वर्णनीय, बयान्के काबिल। २ गणनीय, गिना जानेवाला।

कीर्तन्य (वै० त्रि०) कीर्तनाय साधुः, कीर्तन-यत्। कीर्तनके उपयुक्त, जो गाये जानेके लायक हो।

कीर्ति (सं० स्त्री०) कृत्-इन् इरादित्। इपिसिहिकिशिसिखिदिछिदिकीर्तिभ्यश्च। उण् ४।११८। १ पुण्य, सवाब। २ यशः, शोहरत। कीर्तिका संस्कृत पर्याय—यशः, समज्ञा, समाज्ञा, समाख्या, समभ्या, अभिख्या, श्लोक, वर्ण और कीर्तना है। कोई कोई यशः और कीर्तिमें यह भेद बताते हैं—"दानादिप्रभवा कीर्तिः शौर्यादिप्रभवं यशः।"

दानादि कार्यमें जो सुख्याति होती, वह कीर्ति कहाती है। फिर वीरत्वादिके प्रकाशसे होनेवाली सुख्यातिको यशः कहते हैं।

किसीके मतमें जीवित व्यक्तिकी प्रशंसाका नाम यशः और मृत व्यक्तिकी प्रशंसाका नाम कीर्ति है।

किन्तु उक्त मत ठीक समझ नहीं पड़ता। अनेक स्थलपर जीवित व्यक्तिकी भी कीर्तिका वर्णन मिलता है— "इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्।" (मनु० २।९)

३ प्रसाद, खुशी। ४ शब्द, आवाज। ५ दीप्ति, चमक। ६ मातृकाविशेष। ७ विस्तार, फैलाव। ८ कर्दम, कीचड़। ९ सीताकी सखीविशेष, जानकीकी एक सहेली। १० आर्याछन्दभेद। उसमें १४ गुरु और १८ लघुवर्ण लगते हैं। ११ दशाक्षरी वृत्तविशेष। उसके प्रत्येक चरणमें ३ सगण और १ गुरु वर्ण रहते हैं। १२ एकादशाक्षरी वृत्तविशेष। यह इन्द्रवज्राके संयोगसे उत्पन्न होता है। उसके प्रथम चरणका पहला अक्षर लघु रहता है। शेष तीन चरणोंमें पहले गुरु अक्षर ही लगाते हैं। १३ तालविशेष। १४ दक्षकन्याविशेष। वह धर्मकी पत्नी रहीं।

कीर्तिकर (सं० त्रि०) कीर्तिं करोति जनयति, कीर्ति-कृ ट। कीर्तिकारक, शोहरत पैदा करनेवाला, जिससे नामवरी रहे।

कीर्तिकूट—किसी पर्वतका नाम, एक पहाड़।

(हेमाद्रिखं, १२।१।१०)

कीर्तिचन्द्र—१ वर्धमानके कोई राजा। (

ज्वर, अङ्गमर्द, रोमाञ्च, वमन, अतीसार, तृष्णा, दाह, मोह, जृम्भा, कम्प, श्वास, हिक्का, शीत, पिड़कानिर्गम, शोथ, ग्रन्थि, मण्डल, ददु, कर्णिका, विसर्प, किटिभ प्रभृति रोग भी इनके काटनेसे होते हैं। इनके अतिरिक्त दूसरे भी कई कीट और उनके दंशनके चिह्नादि सुश्रुतमें उपदिष्ट हैं। यथा—

त्रिकण्टक, कुणी, हस्तिकक्ष और अपराजित—चार प्रकारके कीटोंका नाम कणभ है। इनके काटनेसे तीव्रवेदना, शोथ, अङ्गमर्द एवं गात्रगौरव आता और दष्टस्थान काला पड़ जाता है। प्रतिसूर्य, पिङ्गभास, बहुवर्ण, महाशिरा और निरुपम—पांच प्रकारके कीट गौधेरक कहाते हैं। इनके दंशनसे यातना, आवेग, विविधतोद और भयङ्कर ग्रन्थि निकलती है। गल-गोली, श्वेतकृष्ण, रक्तराजी, रक्तमण्डला, सर्वश्वेता और सर्षपिका छह प्रकारके कीड़ोंमें सर्षपिका व्यतीत अन्य पांच प्रकारके कीटोंके दंशनसे दाह, शोथ और क्लेद आता है। फिर सर्षपिकाके काटनेसे हृदयपीड़ा और अतिसार रोग लगता है। कर्कशपरुषा, चित्रित-वर्ण और कृष्ण, पीत, श्वेत, कपिल तथा अग्निवर्ण भेदसे शतपदी कीट ८ प्रकारका होता है। इनके दंशनसे दष्ट स्थान पर शोथ एवं वेदना और हृदयमें दाह उठता है। विशेषतः श्वेतवर्ण और अग्निवर्ण शतपदीके काटनेसे दाह, मूर्च्छा और श्वेतवर्ण पिड़का उत्पन्न होती है। कृष्णसार, कुहक, हरित, रक्त एवं यववर्ण और भ्रुकुटी तथा कोटिक नाम भेदसे मण्डूक (मेंढक) ८ प्रकारका है। इनमें विष रहता है। दंशन करनेसे दष्ट स्थान खुजलाने लगता और मुख फेन निकल पड़ता है। विशेषतः भ्रुकुटी और कोटिक मण्डूकके काटने-से निद्रा मिश्र दाह, वमन और अत्यन्त मूर्च्छा आया करती है।

विश्वम्भर नामक कीटके दंशनसे दष्ट स्थान पर सर्षपकी भांति छूट छूट पिड़का पड़ती और शीत-ज्वर आता है।

अहिण्डुक नामक कीटके काटनेसे सूई चुभनेकी भांति पीड़ा, दाह, कण्डू, शोथ और मोह होता है।

कण्डूमक नामक कीटके काटनेसे अङ्ग पीतवर्ण पड़ जाता और वमन, अतीसार तथा ज्वरादिसे कष्ट आता है।

शूकवृन्त प्रभृति कीटके काटनेसे कण्डू होती, शरीरमें चकत्ते और दष्ट स्थानमें शूक भी दिखाई देता है।

पिपीलिका छह प्रकारकी होती है। यथा—स्थूल-शीर्ष, संवाहिका, ब्राह्मणिका, अङ्गुलिका, कपिलिका और चित्रवर्णा। इनके काटनेसे दष्टस्थान पर शोथ और अग्निस्पर्शकी भांति दाह हुआ करता है।

कान्तारिका, कृष्णा, पिङ्गलिका, मधुलिका, काषायी और स्थालिका नामभेदसे मक्षिका भी छह प्रकारकी होती है। इनके काटनेसे दष्ट स्थान पर दाह और शोथ उठता है। स्थालिका और काषायीके काटनेसे सब उपद्रवके साथ साथ पिड़का भी पड़ जाती है।

मशक पांच प्रकार है—सामुद्र, परिमण्डली, हस्ति-मशक, कृष्ण और पार्वतीय। इनके काटनेसे दष्ट स्थान पर शोथ और अत्यन्त कण्डू होती है। किन्तु पार्वतीय मशकके काटनेसे प्राणनाशक कीटदंशनका जो समस्त लक्षण कहे गये हैं, वह समस्त देख पड़ते हैं। उस स्थान पर नख द्वारा छिन्न होनेसे अत्यन्त पिड़का पड़ जाती और वह पक जाती है।

वृश्चिक कीट मन्द, मध्य और महाविष भेदसे तीन प्रकारका होता है। पूति गोमयसे जो सकल वृश्चिक उपजते, वह मन्दविष रहते हैं। काष्ठ और इष्टकासे जन्म लेनेवाले मध्यविष होते हैं। फिर पूतिसर्पदेह और विषसे जो उपजते, उन्हें महाविष कहते हैं।

कृष्ण, श्याव, चित्र, पाण्डु, गोमूत्र, कर्कश, छिन्न, लम्ब, पीत, रक्त एवं हरितवर्ण और रक्तशीर्षयुक्त वृश्चिक मन्दविष होता है। इनके काटनेसे वेदना, कम्प, गात्रस्तम्भ, दष्ट स्थानमें कृष्णवर्ण, रक्तस्राव तथा शोथ, ज्वर एवं हस्तपादादिमें दंशन करनेसे यातना और वेगकी क्रमशः ऊर्ध्वगति देख पड़ती है।

रक्तवर्ण एवं पीतवर्ण, किन्तु उदरदेश कपिलवर्ण और सर्व शरीर धूम्रवर्ण वृश्चिक मध्यविष है। इनके शरीरका परिमाण ३ पर्व होता है। इनकी उत्पत्ति सर्पकी पूति, मल मूत्र और अण्डसे है। इनके काटनेसे जिह्वा पर शोथ, कण्ठनालीमें भुक्त द्रव्यका अवरोध और अत्यन्त मूर्च्छा आती है।

को मुहरमें चमड़ा, टट और मस्तक तक दिया जाता है। उसकी आकृति गालिमुखकी सिरोमणि जाता, यह कील कहलाता है। (दक्ष) ८ वाहनकाक, नवईोला दपट। ९ सूर्यांशाकी दर्द आकृतिकी कील। १० रतिबन्धविशेष, एक योगा। ११ कुन्ताके भालेकी नोंक। १२ नालिके कीलकी नोंक। १३ माला। १४ कुहनीकी मार। १५ शिव।

कील (हिं० स्त्री०) काठविशेष, किसी किस्मकी कटाम कीलनेकी या देवदारु लकड़ीकी और नाकमें पहनी शोभाकी वस्तु गाड़ी जाती है।

कीलक (सं० पु०) कीलति बध्नाति अनेन, कील कर्त्तरि ण्वुल्। १ स्तम्भविशेष, किसी किस्मकी मेख। २ पशुओंके बांधनेका खूंटा। ३ तन्त्रोक्त देवताविशेष। (पु०) ४ तन्त्रविशेष। ५ ज्योतिषशास्त्रोक्त प्रभवादि ६० वर्षके अन्तर्गत एक वर्ष। इस वर्षमें सांसारिक जन चञ्चल और रोगसमूहमें दुर्भिक्ष, अनावृष्टि तथा उपद्रवादि नष्ट हो सुखमय हुआ करता है। ६ स्तवविशेष। मन्त्रोंके पाठकालमें कीलकस्तव पढ़ना पड़ता है। ७ केतुविशेष।

कीलकान्त कील देखो।

कीलन (सं० क्ली०) कील-ल्युट्। १ बन्धन, बन्दिश। २ तन्त्रमन्त्रविशेष।

"तद् बध्नाति कीलन कीलने कीलितम्।" (तन्त्रसंग्रह)

कीलना (हिं० क्रि०) १ कील लगाना, मेख ठोंकना। २ कील देना, अभिमन्त्रित करना। ३ सर्पको वशमें करना। ४ वशीभूत करना, तावेदार बना लेना।

कीलपादिका (सं० स्त्री०) हंसपादीक्षुप, एक भाजी।

कीलमुद्रा (सं० स्त्री०) लिपिविशेष, एक प्रकारके अक्षर। इसके अक्षर कील जैसे होते हैं। इस लिपिके पहले लेख ई० से सहस्रों वर्ष पूर्व पारसिक देशमें लिखे हैं।

कीलसंधि (सं० पु०) कुच्छ्रककुष्ठ।

कीलसंस्थं (सं० पु०) कीलं संस्थवति, कील-सं-स्था-क्त। लिङ्गकण्टक, लिंगका रोग।

कीला (सं० स्त्री०) कील टाप्। १ कील, मेख। २ रतिप्रहारविशेष। ३ रतिबन्धविशेष।

कीलाटक (सं० पु०) कीलाट देखो।

कीलाट (सं० पु०) गोधिनदोहदिकस्।

कीलाल (सं० क्ली०) कीलं बन्धमितस्ततः अलति धारयति, कील-अल्-अच्। १ जल, पानी। २ रक्त, खून। ३ अमृत। ४ मधु, शहद। ५ पशु, पालतू जानवर। ६ मत्स्यनिर्यासक, बन्दिश मौसमिश्रणका।

"अमर्घ्य ततस्तैरिक्ष्वाकुभिः कीलालं पपुः।" (रघुवंश, ९।८०)

"कीलो मद्यं मधुरसं पातुम्, कीलालं सर्वतः पिबेद्।" (भट्टिकाव्य)

७ नवकौरव।

कीलालज (सं० क्ली०) कीलालात् जायते, कीलाल-जन-ड। मांस, गोश्त।

"तद्द्रीहं वाढवेन्द्रस्य दत्त्वा विश्वामित्रोऽपि।

कीलालजं न बाहुभिः अतिथिं भगवन्तम्।" (भारत, १४)

कीलालधि (सं० पु०) कीलालं जलं धीयतेऽस्मिन् कीलाल-धा-कि। समुद्र, सागर।

कीलालप (सं० पु०) कीलालं रुधिरं पिबति, कीलाल-पा-क। १ राक्षस। २ जलाहारी, जोंक।

कीलालपा (सं० पु०) कीलाल-पा-विच्। "कीलालपाः..." (ऋक् १।१२१।१) १ अग्नि। २ यम।

कीलिका (सं० स्त्री०) काष्ठविशेष, किसी किस्मका मेख। २ काष्ठविशेष, किसी किस्मकी लकड़ी। कीलिका अग्रभाग एवं आवरण आदि लगा रहता है।

कीलित (सं० त्रि०) कीलयति स्म, कील कर्मणि क्त। १ बद्ध, बंधा हुआ।

"कीलित क्वचित्... कीलितम्।"

(रामायण, १०।११)

२ कीलकद्वारा अन्वित, मेख लगा हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ३ बन्धन, कैद।

कीलिया (हिं० पु०) दाता, पुरवोला, जो मोटके बैलोंको हांकता हो।

कीली (हिं० स्त्री०) कीलविशेष, एक खूंटी। यह किसी चक्रके मध्य लगायी जाती है। जिसके पर चक्र घूमता है।

कीवत् (सं० त्रि०) किंवत्, कुत्सितादित्वात् साधुः। कृश, थोड़ा।

कौश (सं० पु०) को इति शब्द ईष्टे, को-ईश्-क यद्वा कस्य वायोरपत्यम्, क-अत-इञ् किः हनुमान् स ईशो यस्य। वानर, बन्दर। के आकाशे ईष्टे प्रभवति, क-ईश्-क। २ सूर्य, सूरज। ३ पक्षी, चिड़िया। (त्रि०) ४ नग्न, नंगा।

कौशपर्ण (सं० पु०) कौशं वानरः तस्य लोमेव पर्णं पत्रमस्य, बहुव्री०। अपामार्ग, लटजीरेका पेड़।

कौशपर्णी (सं० स्त्री०) कीशपर्ण जातौ ङीप्।
कौशपर्ण देखो।

कौशफल (सं० क्ली०) कक्कोल, शीतल चीनी।

कौशरोमा (सं० स्त्री०) कपिकच्छु, केवांच।

कौशाण—जातिविशेष, एक कौम। कौशाणोंको नागेश्वर भी कहते हैं। वह लोहारडांगा, पलामूं, यशपुर और सरगुजा प्रभृति स्थानोंमें रहते हैं। वनके मध्य उनका वास और कृषि ही उनकी उपजीविका है। कौशाण बाघकी उपासना करते हैं। वह उसे वनके राजाको भांति पूजते हैं। एतद्भिन्न सूर्य, महादेव, महीधुनिया, शिकरिया और मृत पितृगणके उद्देश भी पूजा की जाती है। शिकरिया देवताके आगे छाग और सूर्य देवताके उद्देश श्वेत हंस बलि देते हैं। उनके ग्राम्यदेवताका नाम दरहा है। उक्त ग्राम्यदेवके स्थानमें 'वामनी पाट' 'अन्दरीपाट' इत्यादि नामधेय कई पाट हैं। कौशाण कोलजातिकी भांति नाचते गाते हैं। उनकी स्त्रियां गोदना गोदानेमें अपने समाजमें हेय और समाजच्युत समझी जाती हैं।

कौस (हिं० पु०) १ कोश, जरायुज, गर्भकी थैली। २ कीश, बन्दर।

कौसा (फा० पु०) थैली, जेब।

कौस्त (वै० पु०) स्तव, स्तुति।

"शिनो यदी कौस्ताशो अनियतो ममवन।" (ऋक् १।११०।७)

कु (सं० अव्य०) कु-डु। १ पाप, दुराव, राम राम। २ निन्दा, छी छी। ३ ईषत्, थोड़ा। ४ निवारण, दूर दूर। ५ मन्द, धीरे धीरे। (त्रि०) ६ निन्दनीय, बदनाम।

कु (सं० स्त्री०) कु-डु। पृथिवी, जमीन्।

कुंअर (हिं०) कुमार देखो।

कुंअरपुरिया (हिं० पु०) हरिद्राभेद, किसी किस्मकी हलदी। वह कटकके निकट कुंअरपुर राज्यमें उत्पन्न होता है। ५ वर्ष पीछे उसे खेतसे खोदते हैं। मूल और पत्र बृहत् तथा दीर्घ होता है। भैंसके गोबरकी खाद देनेसे कुंअरपुरिया बहुत पनपता है।

कुंअरविलास (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किस्मका चावल।

कुंअरेटा (हिं० पु०) कुमार, छोटा कुंवर।

कुंआ (हिं० पु०) कूप, चाह, कुवां।

कुंआरा (हिं० वि०) अविवाहित, बेब्याहा, जिसकी शादी न हुई हो।

कुंइयां (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कूप, छोटा कुवां।

कुंईं (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र कूप, छोटा कुवां। २ कुमुदिनी।

कुंकुमफूल (हिं० पु०) पुष्पविशेष, दुपहरियाका फूल।

कुंकुमा (हिं० पु०) लाखका एक पोला गोला। होलीको उसमें गुलाल डाल कर मारते हैं।

कुंचो (हिं०) कुञ्चिका देखो।

कुंज (हिं० पु०) वृक्ष लतादि द्वारा आच्छादित स्थान, पौदों और बेलोंसे ढकी हुई जगह। २ हाथी दांत। ३ दुशालेके कोनेका बूटा। ४ कोनिया, घडेरके कोने पर मिलनेवाली खपरैल या छप्परकी छाजनकी एक लकड़ी।

कुंजगली (हिं० स्त्री०) १ पादपलतादि द्वारा आच्छादित पथ, पौदों और बेलोंसे ढकी हुई राह। २ अप्रशस्तमार्ग, तङ्गकूचा।

कुंजड़ (हिं० पु०) कुंदुर, विस्तेका गोंद। वह पौषधमें बढ़ता और रूमीमस्तगी—जैसा रहता है।

कुंजड़ा (हिं० पु०) जातिविशेष, एक कौम। कुंजड़ा तरकारी और फल बेचते हैं। वह सबके सब [illegible] मान हैं।

कुंजा (हिं० पु०) कूजा, पुरवा, मिलोरा।

कुंड़ (हिं० पु०) हल [illegible]

कुंदरुई (हिं॰ स्त्री॰) कुंदरूकी, कुंदरुकी दुम। यह कुन्दरुओंका एक जातिविशेष है, इसी पौदेके फूलने पर कुंदरुई होती है।

कुंदरुको, कुंदरु देखो।

कुंदरूको, कुंदरू देखो।

कुंदा (हिं॰ पु॰) १ कुन्दन, अस्त्रमाकार देखो। २ गेंडुआ।

कुंदा (हिं॰ पु॰) कुंदा, मटका।

कुंडलिया (हिं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष, एक छन्द। यह दोहा और रोला छन्दके योगसे बनती है। दोहेका चरम शब्द रोलाके आदिमें और दोहाका आदिम शब्द रोलाके आखिरमें आता है। गिरिधरदासकी कुण्डलिया प्रसिद्ध है।

कुंडा (हिं॰ पु॰) १ पात्रविशेष, एक बरतन। यह मिट्टीका बनता और चौड़े मुंह गहरा रहता है। २ कोठा। इसमें सोलह मन तक अनाज जमा रखा जाता है। ३ कुश्ती का दांवविशेष, कुश्तीका एक पेंच। जोड़े यदि दूसरे पहलवानके दाहने रहे तो अपनी दाहनी टांग उसकी गरदनमें बायीं ओरसे डाल उसकी दाहनी बगलके निकाली जाती है। फिर अपने बायें घुटनेके भीतर मांसपेशी दबा उसके सिर पर बैठने और बायें हाथसे उसका जांघिया पकड़ उसे चित करते हैं। ४ सिरकट, भारी ढोल, कहारके उससे समूहका बोझा लिखा।

कुंडल (हिं॰ पु॰) पात्रविशेष, मट्टीका कुंडा या दबरी। उसमें कलावत् बनानेवाले टिकुलिटी पर कलावत् लपेट कर रखते हैं।

कुंडिया (हिं॰ स्त्री॰) १ मत्स्यविशेष, एक चौकुंटा मछली। यह नदीके आस्थानोंमें रहती है। कुंडिया ४ हाथ चौड़ी, ४ हाथ लम्बी और १ हाथ गहरी होती है। मोरा बनानेको उसमें नीला लिया जाता है और बारीक भाग डालते हैं। २ पात्रविशेष, एक बरतन। इसमें चोटनेके लिये कादमा रखा जाता है। ३ दबरी, कटोरा या कटोरी-जैसा छोटा बरतन। ४ कलोंदी, काठका बरतन।

कुंडी (हिं॰ स्त्री॰) पात्रविशेष, पत्थर या लकड़ीका एक छोटा बरतन। यह कटोरा-जैसी बनती और प्रायः भांग घोंटने रखनेके काममें आती है। २ सांकल की कड़ी। ३ सांकल। ४ अंगरखा बंद बटन। ५ कुण्डी भैंस। उसके सुद्ध सींग रहते हैं।

कुंदु (हिं॰ पु॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसका रंग काला होता है। किन्तु कण्ठ स्वच्छ शुभ्र श्वेत और पुच्छ नीलवर्ण रहता है। उसका दैर्घ्य प्रायः ११ इंच है। भारतीयके प्रायः सब कुंदु पाया जाता है, यह अधिकतर भी रहते हैं।

कुंदवा (हिं॰ पु॰) पात्रविशेष, मट्टीका मिट्टीका या पुरवा।

कुंदनी (हिं॰ स्त्री॰) मक्षिका भेद, एक छोटी मक्खी। उसके छत्तेमें 'दामर' नामका मोम होता है। कुंदनीके डंक नहीं रहता। भारतमें कई स्थानोंमें यह पायी जाती है।

कुंदन (हिं॰ पु॰) १ स्वर्णपत्रविशेष, सोनेका एक पत्तर। यह बहुत स्वच्छ और साफ सोनेसे बनता है। कुंदन रख पर नगीना जड़ा जाता है। २ स्वर्ण, खालिस सोना। (वि॰) १ स्वच्छ, खालिस, चोखा।

कुंदनसाज (हिं॰ पु॰) १ स्वर्णपत्र प्रस्तुतकारक, सोनेका बारीक पत्तर बनानेवाला। २ जड़िया, नगीना जड़नेवाला।

कुंदना (हिं॰ पु॰) बालकेकी एक बीमारी।

कुंदरू (हिं॰ स्त्री॰) लताफल, एक बेल। इसे हिन्दुस्तानमें बिम्ब या कुंदरूकी बेल, बंगालमें तेलाकुचा, सिन्धुमें गोलाद, गुजरातमें टमेंडू, बम्बईमें तेंडुली, मारवाड़में किरटी, नासिकमें तोंडले, तिलगुमें दोंड, मलयमें कोवेल, कनाड़ामें तोंडेकाई, पारसीमें कबार हिन्दी, अरबमें बनबंद और सिंहलमें कोबका कहते हैं। (Cephalandra indica)

कुंदरू भारतवर्षमें साधारणतः पाया जाता है। इसके चार-पांच अङ्गुलि प्रमाण दीर्घ फल होते हैं। कुंदरूको तरकारी बनाकर खाते हैं। पक्व दशामें फल अधिक रक्तवर्ण हो जाता है। इसीसे कवि कुंदरूसे ओष्ठकी उपमा देते हैं। यह चार-पांच अङ्गुलिप्रमाण दीर्घ और पञ्चकोणविशिष्ट रहते हैं। पुष्प श्वेत आते

बरई या तंबोली पानोंकी भीरमें कुंदरूकी बेल लगाते हैं। कहते हैं कुंदरू खानेसे बुद्धि मारी जाती है। बहुमूत्र प्रमेहमें उसके मूलको बांट कर पीनेसे लाभ होता है। कुंदरूके मूलका रस जमकर गोंद बन जाता है।

कुंदला (हिं० पु०) शिविरविशेष, किसी किस्मका खेमा या तंबू।

कुंदा (हिं० पु०) १ लकड़ा, लकड़ीका मोटा टुकड़ा। २ निहटा, लकड़ीका एक टुकड़ा। उसपर गढ़ाई पिटाई वगैरह होती है। ३ बन्दूकका पिछला हिस्सा। वह त्रिकोणाकार रहता है। कुंदामें हो घोड़ा और नली लगाते हैं। ४ अपराधीके पैर ठोंकनेकी एक लकड़ी, काठ। ५ मुष्टि, मूठ, बेंट। ६ लकड़ीकी बड़ी मोगरी। उससे कपड़ोंपर कुंदी की जाती है। (पु०) ७ पक्षमूल, डैना। ८ कुश्तीका कोई पेंच। कूंदा देखो। ९ रद्दा, घस्सा, एक मार। १० मावा, खोवा।

कुंदी (हिं० स्त्री०) १ कपड़े की कुटाई। वह धुले और रङ्ग धुये कपड़ों पर तह करके की जाती है। कुंदीसे कपड़ेकी सिकुड़न और रुखाई मिटती है। २ कड़ी मार।

कुंदीगर (हिं० पु०) कुंदी करनेवाला।

कुंदुर (अ० पु०) निर्यासविशेष, किसी किस्मका गोंद। वह सुगन्धि और पीतवर्ण होता है। कुन्दुर किसी कंटीले पौदेसे निकाला जाता है। वह पौदा २ हाथ ऊंचा रहता और अरबके यमन आदि पार्वत्य प्रदेशमें मिलता है। उसका फल तथा बीज कटु होता है। सूर्यके कर्कराशि पर रहते गोंद निकालते हैं। हकीमोंके मतानुसार वह बलवीर्यवर्धक, हृद्य और रक्तस्रावनाशक है।

कुंदेरना (हिं० क्रि०) खरोंटना, छीलना।

कुंदेरा (हिं० पु०) कुनेरा, खरादी।

कुंबी (हिं०) कुम्भी देखो।

कुंभनदास—व्रजके एक कवि। वह अष्ट छापके कवियोंमें एक कवि थे। कुंभनदास सखाभावसे कृष्णकी उपासना करते थे।

कुंभिलाना (हिं० क्रि०) म्लान पड़ना, मुरझाना।

कुंवर (हिं०) कुमार देखो।

कुंवरि (हिं० स्त्री०) राजकुमारी, बादशाहकी बेटी।

"कुंवरि मनोहर विजयबड़ि कीरति अति कमनीय।
पावनहार बिरंचि जनु, रचेउ न धनु दमनीय।" (तुलसी)

कुंहकुंह (हिं० पु०) कुङ्कुम, जाफरान, केशर।

कुआं (हिं०) कूप देखो।

कुआड़ी (हिं० स्त्री०) सङ्गीतकी एक लय। इसमें बराबर और छोटी दोनों लय रहती हैं।

कुआर (हिं० पु०) आश्विन मास।

कुआरा (हिं० वि०) आश्विनसम्बन्धीय।

कुइंदर (हिं० पु०) गर्तविशेष, एक गड्ढा। वह कुयेंके बैठ जानेसे बनता है।

कुइयां, कुंइयां देखो।

कुएनलुन—तिब्बतकी एक पर्वतमाला। वह ऊंची उपत्यका भूमिकी उत्तर ओर अवस्थित है। निकटवर्ती अधिवासी उसे विभिन्न नामसे अभिहित करते हैं। यथा—बेलुर-ताग, (तुषार पर्वत), बुलुट-ताग (मेघपर्वत), सुयनाग, कराकार कोरम (कृष्णपर्वत) टसुन-लुन (पदनाग्र पर्वत) और तियानशान (स्वर्गीय पर्वत)। वह समुद्रपृष्ठसे १४२१५ फीट ऊंचा है। जन्द-अवस्ता ग्रन्थमें उक्त पर्वतका नाम हरो-बेरेजइति लिखा है। वह प्रायः १५५० मील विस्तृत और मध्य एशियाकी उत्तर तथा दक्षिण अव-वाहिकाके मध्यस्थलमें दण्डायमान है। दक्षिणकी अववाहिका सिन्धुनदादि एवं साम्पू (ब्रह्मपुत्र) और उत्तर अववाहिका गोबी मरुकी ओर प्रवाहित है। उक्त पर्वतके गिरिवर्त्ममें हो तिब्बतको उत्तरसीमा अतिक्रमण करना पड़ती है। उसके मध्यस्थलमें जेट—जैसा प्रस्तरस्तर है। मरमर और पुड्डिङ्ग दोनोंकी भांति एक प्रकारका कठिन एवं स्वच्छ पत्थर भी मिलता है।

कुक (सं० वि०) कुक-क। १ समर्थ, ताकतवर। २ अदा करनेवाला, जो देता हो। ३ स्वीकार करनेवाला, जो मानता हो। (पु०) ४ चक्रवाकपक्षी।

कुकटी (हिं० स्त्री०) कार्पासभेद, किसी किस्मकी कपास। उसकी रुई लालो लिये सफेद होती है। इसे गोरखपुर, बस्ती प्रभृति जिलोंमें बोते हैं।

कुंडपुजी (हिं० स्त्री०) कुंडमुदनी, कुंडकी पुजा। यह कृषकोंका एक वार्षिकोत्सव है। रबी बोयी जा चुकने पर कुंडपुजी होती है।

कुंडबुजी, कुंडपुजी देखो।

कुंडमुदनी, कुंडपुजी देखो।

कुंड़रा (हिं० पु०) १ कुण्डल, मण्डलाकार रेखा। २ गेंडुरी।

कुंडरा (हिं० पु०) कुंडा, मटका।

कुंडलिया (हिं० स्त्री०) छन्दोविशेष, एक बहर। यह दोहा और रोला छन्दके योगसे बनती है। दोहेका प्रथम शब्द रोलाके अन्तमें और दोहाका अन्तिम शब्द रोलाके आदिमें आता है। गिरिधरदासकी कुण्डलियां प्रसिद्ध हैं।

कुंडा (हिं० पु०) १ पात्रविशेष, एक बरतन। यह मिट्टीका बनता और चौड़े मुंह गहरा रहता है। २ कोढ़ा। उसमें सांकल लगा ताला डाला जाता है। ३ हस्त लाघवविशेष, कुश्तीका एक पेंच। नीचे गये हुवे पहलवान्‌के दाहने खड़े हो अपनी दाहनी टांग उसकी गरदनमें बायीं ओरसे डाल उसकी दाहनी बगलसे निकाली जाती है। फिर अपने बायें टेरके घुटनेके भीतर मोजेको दबा उसके शिर पर बैठते और बायें हाथसे उसका जांघिया खींच उसे चित करते हैं। ४ मिरकट, तावर डोल, जहाजके अगले मस्तूलका चौथा हिस्सा।

कुंडला (हिं० पु०) पात्रविशेष, मट्टीकी कुंडी या पथरी। उसमें कलाबत्तू बनानेवाले टिकुरियों पर कलाबत्तू लपेट कर रखते हैं।

कुंडिया (हिं० स्त्री०) १ गर्तविशेष, एक चौखूंटा गड्ढा। वह शोरेके कारखानोंमें रहती है। कुंडिया २ हाथ चौड़ी, ५ हाथ लंबी और १ हाथ गहरी होती है। शोरा बनानेको उसमें नोना मिट्टी पानीके साथ डालते हैं। २ पात्रविशेष, एक बरतन। उसमें घोटनेके लिये बादला रखा जाता है। ३ पथरी, पत्थर या कटोरी-जैसा छोटा बर्तन। ४ कठौती, काठका बरतन।

कुंडी (हिं० स्त्री०) पात्रविशेष, पत्थर या लकड़ीका एक छोटा बरतन। वह कटोरा-जैसी बनती और प्रायः चटनी चीजें रखनेके काममें लगती है। २ जञ्जीर की कड़ी। ३ सांकल। ४ लंगरका बड़ा छल्ला। ५ मुर्गा भैंसा। उसके शृङ्ग वेष्टित रहते हैं।

कुंडू (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। उसका रंग काला होता है। किन्तु कण्ठ तथा मुख श्वेत और पुच्छ पीतवर्ण रहता है। उसका दैर्घ्य प्रायः ११ इञ्च है। काश्मीरसे आसाम तक कुंडू पाया जाता है। उसे कस्तूरा भी कहते हैं।

कुंढ्या (हिं० पु०) पात्रविशेष, मट्टीका सिकोरा या पुरवा।

कुंतली (हिं० स्त्री०) मक्षिका भेद, एक छोटी मक्खी। उसके छत्तेमें 'डामर' नामका मोम होता है। कुंतली‑के डंक नहीं रहता। भारतमें कई स्थानोंमें वह पायी जाती है।

कुंदन (हिं० पु०) १ स्वर्णपत्रविशेष, सोनेका एक पत्तर। वह बहुत अच्छे और साफ सोनेसे बनता है। कुंदन रख कर नगीना जड़ा जाता है। २ स्वर्ण, खालिस सोना। (वि०) ३ स्वच्छ, खालिस, चोखा।

कुंदनसाज (हिं० पु०) १ स्वर्णपत्र प्रस्तुतकारक, सोनेका बारीक पत्थर बनानेवाला। २ जड़िया, नगीना जड़नेवाला।

कुंदना (हिं० पु०) बाजरेकी एक बीमारी।

कुंदरू (हिं० स्त्री०) रक्तफला, एक बेल। उसे हिन्दुस्थानमें बिम्ब या कुंदरूकी बेल, पंजाबमें घोल, बंगालमें तेलाकुचा, सिन्धुमें गोलाह, गुजरातमें गलेदू, बम्बईमें तेंडुली, मारवाड़में जिददी, तामिलमें कोवई, तेलगुमें दोंद, मलयमें कवेल, कनारामें तोंदेवलि, अरबमें कबार हिन्दी, ब्रह्ममें केमयंग और सिंहलमें कोवका कहते हैं। (*Cephalandra indica*)

कुंदरू भारतवर्षमें साधारणतः पायी जाती है। फल चार-पांच अङ्गुलि प्रमाण दीर्घ होते हैं। कुंदरू की तरकारी बनाकर खाते हैं। फल पकने पर अधिक रक्तवर्ण हो जाता है। इसीसे कवि कुंदरूसे ओष्ठकी उपमा देते हैं। पत्र चार-पांच अङ्गुलिप्रमाण दीर्घ और पञ्चकोणविशिष्ट रहते हैं। पुष्प श्वेत आते हैं।

बरई या तंबोली पानोंकी भीटमें कुंदरूकी बेल लगाते हैं। कहते हैं कुंदरू खानेसे बुद्धि मारी जाती है। बहुमूत्र प्रमेहमें इसके मूलको बांट कर पीनेसे लाभ होता है। कुंदरूके मूलका रस जमकर गोंद बन जाता है।

कुंदला (हिं॰ पु॰) शिविरविशेष, किसी किस्मका खेमा या तंबू।

कुंदा (हिं॰ पु॰) १ लक्कड़, लकड़ीका मोटा टुकड़ा। २ निहटा, लकड़ीका एक टुकड़ा। इसपर मढ़ाई पिटाई वगैरह होती है। ३ बन्दूकका पिछला हिस्सा। यह त्रिकोणाकार रहता है। कुंदामें ही घोड़ा और नली लगाते हैं। ४ अपराधीके पैर ठोकनेकी एक लकड़ी, काठ। ५ मुष्टि, मूठ, बेंट। ६ लकड़ीकी बड़ी मोगरी। इससे कपड़ों पर कुंदी की जाती है। (पु॰) ७ पक्षमूल, डैना। ८ कुश्तीका कोई पेंच। ९ कुंआ देखो। ९ रद्दा, घस्सा, एक मार। १० मावा, खोवा।

कुंदी (हिं॰ स्त्री॰) १ कपड़े की कुटाई। यह धुले और रङ्ग हुये कपड़ों पर तह करके की जाती है। कुंदीसे कपडेकी सिकुड़न और रुखाई मिटती है। २ कड़ी मार।

कुंदीगर (हिं॰ पु॰) कुंदी करनेवाला।

कुंदुर (अ॰ पु॰) निर्यासविशेष, किसी किस्मका गोंद। यह सुगन्धि और पीतवर्ण होता है। कुन्दुर किसी कंटीले पौदेसे निकाला जाता है। यह पौदा २ हाथ ऊंचा रहता और अरबके यमन आदि पार्वत्य प्रदेशमें मिलता है। उसका फल तथा बीज कटु होता है। सूर्यके कर्कराशि पर रहते गोंद निकालते हैं। हकीमोंके मतानुसार यह बलवीर्यवर्धक, हृद्य और रक्तस्रावनाशक है।

कुंदेरना (हिं॰ क्रि॰) खरोटना, छीलना।

कुंदेरा (हिं॰ पु॰) कुनेरा, खरादी।

कुंबी (हिं॰) कुम्भी देखो।

कुंभनदास—व्रजके एक कवि। यह अष्ट छापके कवियोंमें एक कवि रहे। कुंभनदास सख्याभावसे कृष्णकी उपासना करते थे।

कुंभिलाना (हिं॰ क्रि॰) म्लान पड़ना, मुरझाना।

कुंवर (हिं॰) कुमार देखो।

कुंवरि (हिं॰ स्त्री॰) राजकुमारी, बादशाहकी बेटी।

"कुंवरि मनोहर विजयबड़ि कीरति अति कमनीय।
पावनहार विरंचि जनु, रचेउ न धनु दमनीय।" (तुलसी)

कुंहकुंह (हिं॰ पु॰) कुङ्कुम, जाफरान, केसर।

कुआ (हिं॰) कूप देखो।

कुआड़ी (हिं॰ स्त्री॰) सङ्गीतकी एक लय। इसमें बराबर और छोटी दोनों लय रहती हैं।

कुआर (हिं॰ पु॰) आश्विन मास।

कुआरा (हिं॰ वि॰) आश्विनसम्बन्धीय।

कुइंदर (हिं॰ पु॰) गर्तविशेष, एक गड्ढा। यह कुयेंके बैठ जानेसे बनता है।

कुइयां, कुंइयां देखो।

कुएनलुन—तिब्बतकी एक पर्वतमाला। यह ऊंची उपजाऊ भूमिकी उत्तर ओर अवस्थित है। निकटवर्ती अधिवासी इसे विभिन्न नामसे अभिहित करते हैं। यथा—वेलुर-ताग, (तुषार पर्वत), बुलुट-ताग (मेघपर्वत), मुसताग, कराकार कोरम (कृष्णपर्वत) टसुन लुन (पवनाण्ड पर्वत) और तियानशान (स्वर्गीय पर्वत)। यह समुद्रपृष्ठसे ११२१५ फीट ऊंचा है। जन्द-अवस्ता ग्रन्थमें इस पर्वतका नाम हरो-बेरेजइति लिखा है। यह प्रायः १५५० मील विस्तृत और मध्य एशियाकी उत्तर तथा दक्षिण अववाहिकाके मध्यस्थलमें दण्डायमान है। दक्षिणकी अववाहिका सिन्धुनदादि एवं साम्पु (ब्रह्मपुत्र) और उत्तर अववाहिका गोबी मरुकी ओर प्रवाहित है। इस पर्वतके गिरिवर्त्मसे ही तिब्बतको उत्तरसीमा अतिक्रमण करना पड़ता है। उसके मध्यस्थलमें घोट—जैसा प्रस्तरस्तर है। मरमर और पुडिङ्ग दोनोंकी भांति एक प्रकारका कठिन एवं स्वच्छ पत्थर भी मिलता है।

कुक (सं॰ त्रि॰) कुक-क। १ समर्थ, भाकतवर। २ अदा करनेवाला, जो देता हो। ३ स्वीकार करनेवाला, जो मानता हो। (पु॰) ४ चक्रवाकपक्षी।

कुकटी (हिं॰ स्त्री॰) कार्पासभेद, किसी किस्मकी कपास। उसकी रुई भारी लिये सफेद होती है। इसे गोरखपुर, बस्ती प्रभृति जिलोंमें बोते हैं।

कुकड़ना (हिं॰ क्रि॰) सङ्कुचित होना, सिकुड़ना।

कुकड़बेल (हिं॰ स्त्री॰) इंद्रायन।

कुकड़ी (हिं॰ स्त्री॰) १ कुड़ा, अंटी, तकलेसे कात कर उतारा हुवां कच्चे सूतका लपेटा हुवा लच्छा। २ मदारका फल, मकोड़ेकी बोंड़ी। ३ खुखड़ी।

कुकथा (सं॰ स्त्री॰) कु निन्दिता कथा, कर्मधा॰। १ खराब बात।

कुकनू (यू॰ पु॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। कहते हैं कि वह अकेले ही उपजता और अपना जोड़ा नहीं रखता। कुकनू गानेमें बहुत निपुण होता है। उसके चंचुमें अनेक छिद्र रहते, जिनसे विभिन्न स्वर निकलते हैं। उसके विलक्षण गानेसे अग्नि निर्गत होता है। पूर्ण युवा होनेपर कुकनू वर्षाऋतुमें लकड़ियां एकत्र कर उनपर बैठता और गाया करता है। फारसी में उसे "आतशजन" कहते हैं।

कुकभ (सं॰ क्ली॰) कुत्सेन भादानेन भानेन इत्यर्थः भाति, कुक-भा क। मद्य, शराब।

कुकर (सं॰ त्रि॰) कुत्सितः करो यस्य, बहुव्री॰। कुत्सित हस्तविशेष, खराब हाथोंवाला। उसका संस्कृत पर्याय—कुणि, कूणि और कोणि है।

कुकर—औघड़ नामक शिवसम्प्रदायकी एक शाखा। गुजरातमें कोई दशनामी संन्यासी रहे। उन्हें गोरखनाथके अनुग्रहसे ब्रह्मगिरि नाम मिला। वही ब्रह्मगिरि औघड़ सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। औघड़ शैव कहते कि गोरखनाथने ब्रह्मगिरिको कानके मुंदरे (अलङ्कार) और कई चिह्न प्रदान किये। पीछे ब्रह्मगिरिने फिर वह गुदर, सुखर, रुखर, भूखर और कुकरको पांच शिष्योंको दे डाले। तदनन्तर उन पांचों लोगोंने स्व स्व नाम पर एक एक दल बनाया था। उनके मध्य गुदर एक कानमें मुंदरा और दूसरे कानमें गोरखनाथका पदचिह्नित एकखण्ड ताम्र पहनते हैं। सुखर और रुखर दोनों कानोंमें पीतलका मुंदरा धारण करते हैं। कानका मुंदरा देखनेसे ही औघड़के सम्प्रदायका पता लग जाता है। भूखर और कुकर दलकी संख्या अल्प है। प्रथम ३ दल अपने अपने भिक्षापात्रमें धूप नहीं सुलगाते। किन्तु शेषोक्त २ दल उसे करते हैं। कुकर कामीडाडी नामक मृन्मय पात्रमें भिक्षा मांगते और उसीमें पकाते खाते हैं। उखर नामक दलका भी नाम सुन पड़ता है। उक्त सब लोग शैव हैं। वह कभी अपना धर्म नहीं छोड़ते। प्रत्येक दलपति मठाध्यक्ष होता है।

कुकरी (हिं॰ स्त्री॰) १ मुरगी, जंगली मुरगी। २ पीड़ा, दर्द। ३ भिल्ली। ४ करोटि, खोपड़ी।

कुकरौंधा (हिं॰ पु॰) कुक्कुरद्रु, एक छोटा पौदा। (Blumea Lacera) उसे हिन्दीमें ककरौंदा, कुकुरवन्दा या जंगली मूली, बंगलामें कुकुरसुंगा, बम्बैयामें निमुर्दि, दक्षिणीमें जंगली कासनी, तामिलमें कत्तुमुल्लांगि, तेलगुमें कारुपोगाकु, संस्कृतमें कुक्कुरद्रु, अरबीमें कमाफितूस, और ग्राह्मीमें मैयगान कहते हैं।

कुकरौंधा साधारणतः भारतके मैदानोंमें होता है। वह उत्तर-पश्चिम (हिमालय पर २००० फीट ऊंचे तक)-से सिंहापुर, सिंगापुर और सिंहल तक पाया जाता है। पत्र बड़े होते हैं। उनसे एक प्रकारका गन्ध छूटता है। वर्षाऋतु बीतने पर आर्द्र स्थानोंमें अथवा नालियोंके निकट कुकरौंधा उगता है। उसके सुदीर्घ पत्रशाखा निकलनेसे छोटे पड़ जाते हैं। शाखापत्र क्षुद्र क्षुद्र रोम द्वारा आच्छादित रहते हैं। हाथ डेढ़ हाथ बढ़ने पर मञ्जरी आती है, उसमें जो बीज होते, वह जलमें डालनेसे फूलते हैं। कुकरौंधा रक्तस्राव रोकनेके लिये व्यवहार किया जाता है। रैलेमें काली मीर्च मिलाकर उसे पिलाने पर उपकार पहुंचता है। उसकी आंख धोनेका अच्छा पानी तैयार होता है। कोङ्कनके लोग उसे मक्खियों और कीड़ोंके भगानेमें व्यवहार करते हैं। कुकरौंधेकी पत्तियोंसे तैल भी निकाल सकते हैं। क्षमिरोगमें उसके पत्रका रस निकाल कर पिलाया जाता है। नवीन मूलको मुखमें डाल लेनेसे खुश्की दूर होती है। उसे कुकुरमुत्ता भी कहते हैं।

कुकर्म (सं॰ क्ली॰) कुत्सितं कर्म, कर्मधा॰। १ लोकनिन्दित और शास्त्रनिन्दित कर्म, बुरा काम। (त्रि॰) २ कुकर्मयुक्त, बुरा काम करनेवाला।

कुकर्मकारी (सं॰ त्रि॰) कुकर्म करोति, कु-कर्मन्-

र्म-णिनि। कुकर्म करनेवाला, जो बुरा काम करता हो।
कुकर्मशाली (सं० त्रि०) कु कर्मणा शालते, कु-कर्मन् शाल्-णिनि। कुकर्मयुक्त, जो बुरा काम करता हो।
कुकर्मा (सं० पु०) कुत्सितं कर्म यस्य, बहुव्री०। कुत्सित कार्यकारी, बुरा काम करनेवाला शख्स।
कुकर्मी (सं० पु०) कु कुत्सितं कर्म कार्यत्वेन अस्यास्ति कु-कर्मन्-इनि। कुत्सित कार्यकारी, बुरा काम करनेवाला।
कुकाञ्चन (सं० क्ली०) पित्तल, पीतल।
कुकापन्थी—एक सिखसम्प्रदाय। लुधियानेसे साढ़े तीन कोस दक्षिण-पूर्व भैणी नामक एक क्षुद्र ग्राम है। यहां रामसिंह नामक किसी बढ़ईने जन्म लिया था। वही रामसिंह उक्त सम्प्रदायके प्रवर्तक हुये। १८४५ ई० को रामसिंह सिख-सैन्यमें काम करते थे। अंगरेजोंके कौशलसे सिखोंका प्रभाव खर्व होने पर उन्होंने युद्धवृत्ति परित्याग कर सिखधर्मके पुनः संस्कार पर मन लगाया। अल्प दिनके मध्य ही धर्मोपदेशके गुणसे सहस्र सहस्र व्यक्ति उनके शिष्य बनने लगे। यहां तक कि १८६७ ई० तक लक्षाधिक लोग उनके अनुवर्ती हो गये थे। मन्त्रोच्चारणके समय उक्त सम्प्रदायवालोंके मुखसे 'कुक' 'कुक' शब्द निकलता है। उसीसे उनका नाम 'कुकापन्थी' है।

अपर सिखसम्प्रदायकी भांति कुका-गुरुके भी १० आदेश हैं। उनमें पांच पालनीय और पांच निषिद्ध हैं। पाल्य आदेशोंको 'क' विधि कहते हैं। यथा—करद, काछ, कर्पस, ककती और केश अर्थात् लौहभूषण, छोटा कांछिया, लौहास्त्र, चिरुणि और केश। शेष पांचको नरमार (नरहत्या करनेवाले), कुरिखार (धूमपान करनेवाले), सिरकट्टा (मुण्डन करानेवाले), मुनत कट्टा (मुण्डितमस्तक रखनेवाले) और धीरमालिया (कर्तारपुरवाले गुरुके शिष्य) कहते हैं। प्रथम दो कार्य हैं और शेषोक्त तीन प्रकारके व्यक्तियोंके कन्यादान निषिद्ध है।

नानकशाहियोंकी भांति कुकापन्थी भी कठिन नियममें बद्ध हैं। सभी एकप्रकार निर्दिष्ट चिह्न व्यवहार करते हैं। वह शवदेहका कोई यत्न नहीं करते। उनके कथनानुसार जीवात्माने जब देह छोड़ दिया तब यथाशीघ्र उक्त मृतदेहको वस्तुसे अलग रखना ही अच्छा है। उसे कोई देखने न पाये।

उनमें किसीका आसन्नकाल उपस्थित होनेसे बड़ी धूम पड़ती है। वह बड़े उल्लाससे मिष्टान्न खाते और अपने धर्मका प्रतिपाद्य ग्रन्थ पढ़ते जाते हैं। मृत्यु होनेसे किसीके लिये शोक नहीं करते। उस समय १२ दिन दिवारात्र ग्रन्थ पाठ होता है। उसके पीछे जाति कुटुम्ब सब मिलकर एक दिन पानभोजन और आमोद प्रमोद करते हैं।

१८७२ ई० को विषनसिंह नामक किसी कुकादलपतिने धर्म प्रचार करने जा लोगोंको उत्तेजित किया था। उसीसे उन्हें फांसी हुयी। पीछे उनके देहका सत्कार किया गया। उनके पुत्रने अस्थावशिष्ट देहका एक अस्थि हरिद्वार ले जाकर समाहित किया।
कुकार्य (सं० क्ली०) कु कुत्सितं कार्यम्, कर्मधा०। मन्दकार्य, बुरा काम।
कुकि—भारतकी पूर्वप्रान्तवासी एक जाति। आसामसे मणिपुर और चट्टग्रामसे त्रिपुराके मध्य पर्वत और वनमें कुकिलोग रहते हैं। साधारणतः उन्हें 'लेङ्गटा' कहते हैं। कुकि अनेकश्रेणियोंमें विभक्त है-पुरातन कुकि, नूतन कुकि और अन्य श्रेणीभुक्त कुकि। पुरातन कुकियोंमें भी दूसरी कई शाखा हैं। उनसे कछारमें रङ्गकुल, खेलमा तथा बेत और अन्यान्य स्थानोंमें छोटो, भाइमोल रङ्गलङ्ग, पुरुम, मल्लक, कोम, कोइरेंग और काइम प्रधान है। नूतन कुकि त्रिपुरा और चट्टग्रामसे आ कर उत्तराञ्चलमें वास करते हैं। वहां ठदन, चङ्गसेल, थिङ्गसन और लङ्गम शाखा मिलती हैं। त्रिपुराके पहाड़ी अञ्चलमें आमरई, कुतलङ्ग, ह्लम, बाचई और कोचक कुकि पाये जाते हैं।

कपुर्ढके दक्षिण आजकल दुर्दान्त लोङ्गशइ कुकि आकर रहे हैं। उसके दक्षिण उक्त कुकियोंसे भिन्न तथा एक वंशीय अथच भिन्न शाखाभुक्त पई, शक्ति, सौति एवं लुसाई प्रभृति पराक्रान्त कुकियोंका वास है। मणिपुर और उत्तर तथा दक्षिण कछारको चारो ओर भी लोङ्गशई कुकियोंका रहना होता है। आज कल वह उक्त शाखासे भिन्न हो गये हैं। मणिपुरके

अतिनिकट अनल सम्फू नामक कुकियोंका एक दल रहता है। किन्तु, मणि और लुशाई कुकि अति प्रबल और दुर्धर्ष हैं। उनमें कोई लिखना पढ़ना न जानते भी सब लोग बन्दूक प्रभृति नानाप्रकार अस्त्रशस्त्र चला सकते हैं। निविड़ अरण्यवासी कुकि आज भी विवस्त्र रहते हैं। किन्तु आसाम, श्रीहट्ट प्रभृति कई स्थानोंमें अंगरेज गवर्नमेण्टके शासनमें उन्होंने कपड़ा पहनाना सीख लिया है।

कुकि लोग स्वभावतः बलशाली हैं। देखनेमें वह मणिपुरवासी खसिया नागोंसे मिलते जुलते हैं।

कुकि प्रति पल्लीमें प्रायः डेढ़ सौ दो सौके हिसाबसे रहते हैं। उनका घर ३।४ हाथ मट्टी छोड़ माचे पर बांससे बनाया जाता है। पर्वतके उच्चस्थान पर तथा जलके निकट वह पल्ली निर्वाचन करते हैं।

नूतन कुकियोंके प्रत्येक दलमें राजा, मन्त्री प्रभृति पद विद्यमान हैं। दलपतिको वह 'लाल' कहते हैं। सकल दलों पर फिर एक अधिपति रहते हैं। उन्हें कुकि 'प्रधान' कह कर पुकारते हैं। नूतन कुकि कहते हैं कि उन्हों और मगोंने एक पिताके औरससे जन्म लिया है। उनके आदिपुरुषके २ स्त्री रहीं। प्रथमाके गर्भसे मगों और द्वितीयाके गर्भसे कुकियोंका जन्म हुआ। जन्म होनेके अल्प दिन पीछे ही कुकियोंको माता मर गयीं। विमाता उन्हें देख न सकती थीं। वह अपने पुत्रको कपड़े पहनातीं, किन्तु कुकिको नंगा ही रखती थीं। इसीसे कुकि वनमें जाकर रहने लगे।

कुकियोंमें प्रत्येक गृहस्थ अपने परिवारको ले स्वतन्त्र गृहमें वास करता है। उनकी विधवाके लिये अलग घर रहता है। सब लोग मिल कर विधवाके रहनेको अलग घर बना देते हैं। आजकल उनमें पुरुष बड़े बड़े कपड़े पहनते हैं। कोई एक वस्त्र पहन दूसरेको कमरमें बांधता, जिसका कुछ अंश लटका करता है। स्त्रियोंने अब कुछोंसे वस्त्र टांकना सीखा है। विवाहित रमणी वक्ष खुला रखती, किन्तु अविवाहिता उसे ढांक लेती हैं। स्त्रियोंको केशोंकी चूड़ा बांधती हैं। दूसरे पहाड़ियोंकी भांति, कुकि भी गात्र नहीं धोते। १२।१३ वर्ष वयस होते ही वह रात्रिकालको गृहमें नहीं रहते, प्रहरीगृहमें रात्रियापन करते हैं। उसके पीछे वयस होने पर विवाह किया जाता है। फिर कुकि घरमें रातको रह सकते हैं। विवाहित व्यक्तिका मृत्यु, होनेसे उसके आत्मीय कुटुम्बी सब एकत्र हो दुःख प्रकाश करते हैं। मृतदेहके वाम पार्श्व तरकारी, भात और उसके साथ एक काठका या मट्टीका बरतन रख दिया जाता है।

कुकियोंको धनस्पृहा नहीं होती। धनके लिये वह कभी लूटमार करना नहीं चाहते। फिर भी वह जो बीच बीच दलबद्ध हो निकटस्थ स्थान आक्रमण करते उसका अभिप्राय भिन्न रखते हैं। कुकियोंका कोई राजा या दलपति मरनेसे उसके प्रेतात्माकी तुष्टिके लिये नरबलि आवश्यक होता है। उसीसे वह मध्य मध्य किसी स्थानको आक्रमण कर वहांसे कई अधिवासियोंको पकड़ लाते और उन्हें दुर्गम स्थानमें छिपाते हैं। प्रयोजन पड़नेसे उनमें एकको बलि दे अभीष्ट सिद्धि करते हैं। किसी अपर असभ्य जातिके साथ विवाद बढ़ने पर यदि शत्रु गुप्तभावसे राजाको मार जाते, तो सब पार्वतीय कुकि एकत्र हो उसका प्रतिशोध लेनेकी चेष्टा करते हैं। वह आयोजन बहुत भयानक होता है। शत शत व्यक्तियोंके स्वार्थसाधन करने जा कालपाशमें पड़ते भी कुकि पीछे नहीं हटते। यदि वह एक शत्रुको मार आते, तो फिर फूले नहीं समाते। उक्त मृतव्यक्तिका मुण्ड सम्मुख रख सब लोग पान भोजन और उल्लाससे नृत्य गीत किया करते हैं। पीछे वही मुण्ड खण्ड विखण्ड कर पर्वतोपर दलपतियोंके निकट भेजा जाता है।

कुकि भ्रमणशील लोग है। वह अधिक काल एक स्थानमें वास नहीं करते। विजन कानन और दुर्गम पर्वतकी उपत्यकाभूमि उनका रम्यस्थान और कृषिकार्य सदजीविका है।

कुकियोंमें किसी किसीने हिन्दूधर्म ग्रहण किया है। अधिकांश लोग अहोपासक हैं।

चतुर्थ भाग सम्पूर्ण।